(पृष्ठ १-६०८ तक गुजरातीप्रिन्टिंगप्रेस प्रिन्टर मणिलाल इच्छाराम देशाईके यहां और पृष्ठ ६०९-७०४
तक प्रिन्टर नटवरलाल इच्छाराम देशाई, सासून बिल्डींग, एलफिन्स्टन सर्कल, फोर्ट मुंबई.
और सूची पृष्ठ १ से ५२ निर्णयसागरमे छपाहै)

पब्लिशरः-वै० पं० हरिप्रपन्नजी, श्रीभास्कर-औषधालय, तीसरा भोईवाडा, मुंबई. पो० नं० २

प्रिन्टरः-रामचंद्र येसू शेडगे "निर्णयसागर" छापखाना,
२६-२८ कोलभाट लेन, मुंबई.

जल्दीकरो अलभ्यलाभसे वंचित न रहो

रसयोगसागर—का द्वितीयभागभी छपगया रसचिकित्साकेलिये इससे वढकर दूसरा कोईभी ग्रन्थ नहींहै-कारण कि इसमे दुष्प्राप्य और प्रामाणिक हस्तलिखित ५८ और मुद्रित ५३ ग्रन्थोंके रसोंका सङ्ग्रहहै इसके अतिरिक्त जगहजगह ग्रन्थकर्तानें अपना अनुभव प्रकट किया है-वर्तमानसमयके अनुकूल मात्राओंके निर्धारणपर विशेष विवेचन कियागयाहै वहुतसे रस सङ्केतमे लिखेहुयेथे जैसे कि कासीसादिरसप्रभृतिहैं उनका कुछभी अर्थ न लगनेसे निकम्मे पडे हुयेथे उनपर भाष्यकरके उनका आशय खुलाकरदियाहै। ग्रन्थलेखकोंने जहांजहा कुछ गुरुगम्यता रक्खीथी उसेभी यथाशक्य विसष्ट कर दीहै। ग्रन्थाशय न समझकर टीकाकारोंने जहांजहां कुछ गलतियां कीहैं उन्हें सप्रमाण दिखाकर यथार्थसिद्धान्तका आविष्कार कियागयाहै। एकहि रसमे पद्यविशेषरचनाके कारण आयेहुए औषधोंके नामान्तरोंको देखकर रसान्तरता समझकर जो पृथक् २ नामरखकर एकभारी जाल फैलाया हुआथा उसे एकान्ततः दूर करदियागयाहै। वस्तु और फल समान होनेपरभी यत्किञ्चित् क्रियाभेदसे जो रसान्तरता लिखीहुईथी उसे सप्रमाण लिखकर लोगोंकीवुद्धिको उत्तेजितकीहै जैसे कि रविताण्डवप्रभृतिमेहै। दशवीशरसोंके मौलिकपदार्थ और प्रमाणों को एकत्रितकर योग्यताऽनुसार उनको एकदोही रसोंमे समाविष्ट करनेकी युक्ति प्रदर्शितकीहै जैसे कि हिरण्यगर्भपोट्टलीप्रभृति. इनयुक्तियोंसे ग्रन्थस्थरसोंहिके वनानेकी कुशलतामात्र प्राप्त नहीं होतीहैं किन्तु योग्यतानुसार नवीनरसोंके निर्माणकरनेकीभी वुद्धिमे जागृति होतीहै। अकारादिमातृकानुसार रसोंको लिखनेसे विशेषअनुकूलता यह होगई है कि किसीकी इच्छा होवें कि अग्निकुमारनामके कितने रस हैं; तव मातृकाक्रमसे प्रथम अग्निकुमारसेलेकर अन्त्यतक देखजावें वाजार भरा नजर पडेगा सख्याजाननेकी जरूरत हो तो अखीरकी सख्यादेखनेसे संख्या अनायाससे मालूमहो सकेगी इसीतरह तमाम रसनामोंमे समझलीजिये, इसतरह अकारादितवर्गान्त प्रथमभागहै इसमे करीवन् १८०० रसोंका सङ्ग्रह है। इसेछपे ३।४ वर्षहोगयेहैं इसकामूल्य १२) रुपयेहैं। इसके आदिमे अंग्रेजी और संस्कृतमे दो विस्तृत भूमिकायें लिखीगईहैं उनमे दिखायागयाहैकि आयुर्वेदका अखिल वेदोंसे लेकर आजतक अविच्छिन्न चला आरहा है—इसको देखकर यह सप्रमाण सिद्ध होजाताहै कि आजतक जितनीभी पद्धतियां (पैथियां) दुनियामे चलीहुई देखनेमे आतीहैं उन सवका मूल आयुर्वेदहै। सङ्कोचविकासकीचर्चातो स्वतन्त्रहै वीज प्रायः सङ्कुचितभावहीमे मिलाकरताहै। इसमेदियेहुये **त्रिदोषविवरण**को अच्छीतरह मनन करनेसे त्रिदोषसिद्धान्तकितना उपयोगी और सत्यहै इसका अनायाससे पता चलजाताहै। उससे आजतकके आयुर्वेदसिद्धान्ताऽनभिज्ञलोगोंसे कियेहुये आक्षेपोंका निराकरण होजाताहै. और भविष्यकेलिये किसीभी व्यक्तिका आयुर्वेदकी नींव मनःकल्पितसिद्धान्तपरहै ऐसा कहनेका साहस न होगा। वौद्धसमयमे यज्ञ, और शस्त्रचिकित्सापर एकान्ततः अङ्कुश होनेके कारण **क्लोमा**दि शारीराऽवयवोंमे छायेहुये घोरान्धकारका एकान्ततः नाशहोजाताहै कारण कि सन्दिग्धावयवोंका सप्रमाण वेद तथा व्राह्मण और आयुर्वेदीयसंहिताओंके सूत्र तथा मन्त्रोंके दियेहुये उद्धरणोंसे संशय विच्छिन्न होजाताहै। डाक्तरी तथा आयुर्वेदीय शारीरज्ञानजिज्ञासुओंकेलिये आर्षशारीरतत्त्व नामक प्रकरण तो एक अलभ्यरत्नहै, इसरत्नका रसयोगसागरको छोडकर अन्यत्र मिलनेका अभाव हि नहिं किन्तु असम्भवहै इसमे कईतरहकी विशेपतायेंहैं उनका रहस्यज्ञान विना मननके नहिं होसक्ताहै इसतरह इसकी भूमिका वैद्य-हकीम-डाक्तर याज्ञिक तथा सशोधकोंकेलिये वहुतही सहारेकी वस्तुहै।

रसयोगसागरके द्वितीयभागमे पकारादिज्ञपर्यन्त २०८२ रसहैं इसतरह इनदोभागोंमे यह ग्रन्थ समाप्त हुआहै। इसकेवाद अर्थात् पृ० ६१२ से-६२३ तक सिद्धसम्प्रदाय अर्थात् अगस्त्य और व्यासप्रोक्तरसप्रकरण दियाहै यह वहुतही महत्वका है। इसकेवाद पृष्ठ ६२५ तक आन्ध्रादिदेशप्रसिद्ध कृष्णभूपालीयप्रभृतिग्रन्थोंके प्रयोग दियेगयेहैं। इसकेवाद कईकारणोंसे सङ्ग्रहकरनेकेसमय दोनोंभागोंके छूटेहुये रसोंका पृष्ठ ६४३ तक सङ्ग्रहहै। इसकेवाद सङ्ग्रहकरनेमे छूटेहुये ग्रन्थोंके नाम तत्तद्रसोंमे दाखिलकरनेकी सूचना पृष्ठ ६६१ तक दीगईहै। इसके वाद आपाततः प्रतीयमान विभिन्नरसोंके एकीकरणका दिग्दर्शन करायाहै। ६६३ पृष्ठसे आगे ग्रन्थान्तरमे नामान्तरसे आयेहुये रसोंकी सूची दीगईहै-जिसरसका दोनोंभागोंमे पता न चले और देखनेवालेको दूसरे नाम यादहोवें उनलोगोंसे प्रार्थनाहै कि वेलोग इससूचीको देखनेका कष्टकरें इसमे उन्हें यह पता चल जागया कि इसरसका यथार्थनाम यह है उसे देखकर आइन्दहकेलिये उसीनामसे उसका व्यवहारकरें इसकेउदाहरणार्थ अमरसुन्दरी अन्त.स्थ ५०४ मे इसकानाम **विजय**भैरव आयाहै सो वहांपर देखनेसे इसके ग्रन्थभेदोंसे कितनेनामहैं और क्या २ विशेषहैं इसकापता अनायाससे चलजायगा इसीतरह अन्य २ रसोंकोभी देखनेका कष्टकरें प्रथमभागके छपनेपर वहुतसे वैद्यमहानुभावोंके आक्षेपसूचक पत्र आयेथे कि रसयोगसागरमे इतनाप्रसिद्धभी रस छूटगया सो उनसज्जनोंके लिये यह सूची दीगईहै जिससेकि उनका वह भ्रम दूरहोजाय, देखिये इसीरसकी टिप्पणीमे इसके ८।१० नामआयेहैं उनमेसे जो आदमी इसे चन्द्रप्रभाके नामसे जानता होगा वह चन्द्रप्रभाकेपाठोंमे इसे न देखकर मनमे जरूर कहेगा कि इसमें सङ्ग्रहकर्ताकीभूलहै परन्तु वहां ऐसा मनमे न लाकर इससूचीको देखनेका कष्टकरें इससे

उनके मनको अभीष्ठ सन्तोष होयजायगा. हां इसमे वेनाम जरूर न मिलेंगे जोकी हालके कल्पितहैं । कल्पितनामोंका प्रतिष्ठित ग्रन्थोंमे उल्लेखकहांसे आवेगा इसवातको विद्वान् व्यक्ति स्वयं समझसक्तीहै इसमे विशेष विवरणकरनेकी आवश्यकताही क्या है. द्वितीयभागमे सब मिलकर करीबन् २४०० रसहैं । ६७१ और ६७२ मे अंग्रेजी उपोद्घातके विषयोंकी सूचीहै. पृष्ठ ६७३ और ६७४ मे संस्कृत उपोद्घातके विषयकी सूचीहै । पृष्ठ ६८० तक प्रथमभागका शुद्धिपत्रकहै । ६८१ मे रोगानुसारिणी और अधिकारपरत्वसूचीरहस्यहै यद्यपि यहविषय द्विविधसूचीके अव्यवहित आदि अथवा अन्त्यमे आना उचितथा परन्तु ३ प्रेसोंमे छपवानेकेकारण स्थानान्तर होगयाहै इसकेलिये पाठक क्षमाकरें द्वितीयावृत्तिमे यह यथास्थान पर चलाजागया । पृष्ठ ६८२ के आधेसे ७८३ के आधेतक दक्षिणदेशप्रसिद्ध **स्त्यानवातादि**रोगविशेषोंके लक्षण दियेहैं । ६८३ के आधेसे लेकर ६९१ तक **मान** (तोल) विवरण दियाहै यह प्रकरण इतना गहन है कि दशवीसवार सावधानीसे वाचकर मनन कियेविना इसका याथातथ्य अच्छेअच्छोंकेभी चित्तमें आरूढहोना दुस्तरहै–इसमे सुश्रुत चरक कृष्णात्रेयके मानोंके आपातत: आयेहुये अन्तरके कारणको दिखलाकर एकता करनेकी युक्तिदिखलाईहै इसजगह डल्हण और चक्रपाणिदत्त-प्रमृति टीकाकारोंके स्खलनका दिग्दर्शन करायागयाहै यहांपर मननकरनेसे विशिष्ट विद्वानोंकोही ज्ञानहोगा कि यह कितने दिनसे भ्रष्टहुवाहै और कितने २ लोगोंको इसने धोकेमे डालाहै ? । इसकेबीचमे कालिङ्ग और मागधतोलका रहस्य खोला-गयाहै. वर्तमानसमयमे कालिङ्ग तथा मागधमानकी क्या दुर्दशाहुईहै. इसअन्धेरीकोठड़ीमेसे निकलनेके बाद आयुर्वेदमें इस विप्लवकेहोनेसे स्कूलोंमेंभी क्या दुर्दशा होरहीहै इसका अच्छी तरह अभिज्ञान होगा, इसका कुछ दिग्दर्शन करायाभीगयाहै यूनानीवजनमे सबसे ज्यादह विप्लव दिखाईदेताहै जितनीकिताबेंहैं एकदूसरीकेसाथ मेल नहि खातीहैं पीछेके लोगोंनेभी अमुक साहब ऐसा फर्मातेहैं और दूसरे ऐसा कहतेहैं बस इसकेसिवाय निर्णयकी बात ही नहींहै. इसी कारणसे उनके नुसखोंमे आयुर्वेदकी तरह सीधा हिसाब नहिं आताहै यह सब मूलमानकी भ्रष्टतासे हुवाहै इसका भ्रम अच्छीतरह विचारनेसे दूर-होजागया सबलोगोंको उचितहै कि दुराग्रहको छोडकर मानको सुधारलेवें यूनानीप्रमृतिपद्धतियोंका जन्मदाता आयुर्वेदहि है इसमे किसीको सदेह हो तो इसके उपोद्घातको देखनेका कष्ट करें ।

मानवधर्मशास्त्रीयमानका उल्लेखभी इसमे आयाहै परन्तु उसका आयुर्वेदके मानकेसाथ सम्बन्धनहिं है वह केवल दण्डविधानार्थसाङ्केतिक नियमहै । यदि वह मन्तव्य होता तो आयुर्वेदमे स्वतन्त्रमानकेलिए प्रयत्न न कियाजाता । संसारमें जुदे २ व्यवहारोंकेलिये जुदे २ मान प्रचलितथे इस वातका पता वैजयन्तीकोषके मानकोष्ठकको देखनेसे अनायास लगजायगा. यह कोष्ठक पृष्ठ ६९० और ६९१ मेहै इसकोष्ठकमे कई अज्ञातसङ्केतोंकाभिपता दियाहुआहै इससे यह निर्धारितहोताहै कि मानकी भिन्नता व्यवहारपरत्वे अवश्यथी, पृष्ठ ६८९ मे सुश्रुतादि मानवोधककोष्ठकदियाहुआहै उससे ग्रन्थपरत्वेन किस २ जगह क्या भेदहै इसका हस्तामलकवत् ज्ञान होजागया, इस मानपरिभाषामे वहुतकुछ ज्ञातव्यांश भराहुआहै उसके लिये हम उसे मनन करनेकी सलाहदेतेहैं । पृष्ठ ६९२ से लेकर पृष्ठ ७०४ तक स्नेह और आसवोंका विधानहै इसमें "आर्द्रद्रव्याणा च द्विगुणम्" इस सुश्रुतीयवाक्यमें लेखकप्रमादसे वकारस्थ यकारके निकल जानेसे अज्ञतावश पीछेके लोगोंने वनाइहुई द्रवद्वै-गुण्यपरिभाषाका सप्रमाण विस्तृत रूपसे खण्डनकियागयाहै। इसीतरह पृ० ६९९ मे "**काथसिद्धमरिष्टं तद्भिन्न आसवः**" **अपिधानमुखे** पात्रे जलं दुर्जरता व्रजेत् । तस्मादावरणं त्यक्त्वा क्काथादीना विनिश्चय । पृ० ७०४ मे द्रव्यादष्टगुणं क्षीरं क्षीराच्चीर चतुर्गुणम्० इनमेभी परिभाषात्वका खण्डन कियाहै । पृ० ७०२ से ७०४ तक नस्यमात्राकेविप्लवको दूरकियाहै । इसके आगे क्काथादिककीनिरुक्ति दीहै । इसकेवाद रोगपरत्व और अधिकारपरत्व दोप्रकारकी सूची दीहैं इनके देनेसे चिकित्सकोंको वहुतही सरलता होगईहै उसकेवाद रत्न १ सुवर्ण २ ताम्र ३ नाग ४ कान्तलोह ५ लोह ६ माक्षिक ७ अभ्रक ८ ताल ९ रजत १० वङ्ग ११ यशद १२ पित्तलकास्य १३,१४ कासीस १५ तुत्थ १६ इनका शोधन और मारण दियाहै । इसके समनन्तर पारद १ गन्धक २ मन:शिला ३ वत्सनाभ ४ विषमुष्टि (कुचिला) ५ मृद्दारशृङ्ग ६ भल्लातक ७ धत्तूर ८ करिहारी ९ करवीरमूल १० शिलाजतु ११ इनकी शुद्धि दीहै । अब इस अकेलेग्रन्थके सङ्ग्रहकरनेसे अन्य रसग्रन्थोंकी पासमेरखनेकी कोईभी आवश्यकता अवशिष्ट नहिं रहजातीहै । देखो इसके अन्त्यमे विशिष्टविद्वानोंके अभिप्राय । इस-द्वितीयभागकी कीमत् १०) रुपया रक्खीहै दोनोंभागसाथमे लेनेवालेको १८) रुपयेमे दोनों भाग दिये जायगे डाकखर्च लेनेवालेको देना होगा । समग्र ग्रन्थमंगवानेवालेको ५) और १ भागकेलिये ३) रु० पेशगी भेजना चाहिये जवावकेलिये जवाबीकार्डदेना उचितहै ।

पुस्तकमिलनेका पत्ता–

वैद्य पं० हरिप्रपन्नजी

श्रीभास्कर औषधालय तीसरा भोईवाडा पोष्ट नं० २ मुम्बई.

रसयोगसागरः

(द्वितीयोभागः)

अथ मङ्गलाचरणम् ।

यदाऽऽकाशेऽकाशे परिसृतविकाशे परिवृतौ,
यदस्थूलेस्थूले स्थितिमति भृशङ्गन्तरि विधौ ।
रवावृक्षे नक्तन्दिनभिदि कलाकालकलने,
रसस्सोऽहंसोऽहं वितरतु सदा सिद्धिमतुलाम् ॥

यत्—अनिर्वचनीयं वस्तु, **आकाशे**—सर्वतेजसामाकर्षणकर्तरि, **काशे**—तेजसि "**काशृ**" दीप्तावित्यस्मात्पचाद्यचि प्रकाशार्थे पर्यवसानं भवति, आङुपसर्गस्याऽऽकर्षणाऽर्थद्योतने वृत्तिर्वोध्या, उपसर्गाणामनेकार्थत्वादत एव कृषधातुसमभिव्याहारे सर्वैरपि तथात्वमवगम्यते । **कदाचित्** सोऽयं कर्षधातोरेवाऽस्त्युपसर्गाणा वैयाकरणनिकाये द्योतकत्वस्वीकृतत्वादिति वाच्यम् ? तथात्वे येनकेनाऽप्युपसर्गेण सम्बन्धे तस्यार्थस्या-(आकर्षणरूपस्य)ऽभिव्यक्ति स्वीकरणीया स्यादतस्तत्तदुपसर्गसमभिव्याहारे एवाऽर्थविशेषस्याऽभिव्यक्ति भवतीति नियमोऽन्वयव्यतिरेकाभ्यां वैयाकरणैरप्यगत्या स्वीकरणीय एवाऽस्ति। अत एव "**विनापि** प्रत्ययं पूर्वोत्तरपदयोर्लोपो वा वक्तव्य" इति वार्तिकं निरमिमीत वार्तिककार । अयं वार्तिक. तिरोहिता अर्था प्रकरणविशेषवशादूहनीया इत्यर्थ समभिव्यनक्ति, न तूच्छृङ्खलतया सर्वत्र पूर्वपदादिलोपेनाऽनर्था उपस्थापयितव्या इत्यर्थ बोधयति, तथात्वे सति नियताऽर्थस्य क्वचिदप्यसद्भावे महानुपप्लव प्रसज्ज्येत । महाप्रलये सर्वाण्यपि तेजासि परमात्मनि लीयन्ते सर्वजगता मूलकारणत्वात् । अथ च अकाशे=तमोरूपे जगति, आसीदिदं, तमोभूतमप्रज्ञातमलक्षणमिति मनुना सूचितरूपे । **परिसृतविकाशे**—परित सर्वतो विकाशे महदादिमहाभूतान्तकार्यनिर्माणे पुनरपि सृष्टिप्रादुर्भावे इति यावत् । **परिवृतौ**—परितस्सर्वतो वृतौ विविधव्यापारे स्थितावित्यर्थ । जगत स्थितौ भवति जीवाना परिवृति । "वृङ् सम्भक्तौ" क्र्यादि, "वृञ् वरणे" स्वादि, "वृञ् आवरणे" चुरादि, इत्यादिभ्यस्तन्त्रैकशेषादिना परिवृतिशब्दस्य निष्पन्नत्वात् । तस्मिन् समये जीवाना भवति नानाविधो व्यापार, कश्चिन्म्रियते कश्चिज्जायते कश्चित्किञ्चिद्याचते कश्चित्किञ्चिज्जहाति किञ्चिद्गृह्णाति कश्चित्कस्याश्चियोनावावृतो भवति इति कृत्वा यथार्थत साऽवस्था परिवृतिस्तत्र । **अस्थूले**—सूक्ष्माऽतिसूक्ष्मपरिमाणयुक्ते । अथ च **स्थूले**—तद्विपरीते महामहीधरादिषु । **स्थितिमति**—स्थावरसञ्ज्ञके वृक्षादौ **भृशङ्गन्तरि**—जङ्गमे इत्यर्थ, स्थितिशील स्थावरो भृशङ्गन्ता हि जङ्गम इति भाष्यम् । वृक्षादयोऽपि मूलादिप्रसरणरूपेण गच्छन्ति परन्तु तदपेक्षया योऽयं भृशङ्गन्ता स जङ्गम इति भाष्यकारेण निरधारि । **विधौ**—चन्द्रे, **रवौ**—सूर्ये, **ऋक्षे**—नक्षत्रसमूहे । **नक्तन्दिनभिदीति**—समस्तं पदम्, रात्रिभेदे दिनभेदे चेत्यर्थ, ब्रह्मादीना मनुष्यान्ताना जीवानां नक्तन्दिनभेदस्याऽसङ्ख्यरूपत्वात् । **कलाकालकलने**—कलाश्चतुष्षष्टिर्विद्या, अथ च गर्भाऽनुकूलशुक्रशोणितादिसंयोगाऽनन्तरं वातकृताऽसङ्ख्यविभागानां यथास्थितिस्थापकाऽऽवरणरचनाविशिष्टाऽऽवरणानि तेषु, अस्य विशेषविवरणमुपोद्घाते कलाटिप्पण्यां द्रष्टव्यम् । **कालः**—काल्यन्ते विभक्तीक्रियन्ते सृज्यन्ते वा, सर्वे पदार्था अनेनेति काल. । "कल" संख्याने चुरादिः, करणाधिकरणयोश्चेति घञ् । **सुश्रुते** तु स सूक्ष्मामपि कला न लीयते इति काल इति निरुक्तप्रक्रियया साधुत्वं प्रदर्श्य सङ्कलयति कालयति वा भूतानीति काल इति पचाद्यचि साधित (सु सू ६।३)। तत्र लघ्वक्षरोच्चारणमात्रोऽक्षिनिमेष इत्यादिना परमस्थूलस्वरूप प्रदर्शितम्, सूक्ष्मस्वरूपविवरणं संस्कृतोपोद्घाते सप्तचत्वारिंशति पृष्ठे द्रष्टव्यम् । कलाना कालस्य च कलने सम्पादने सङ्ख्याने चेत्यर्थ । एतस्मिन्नेतस्मिन् किङ्कारणमिति सन्देहे श्वासोच्छ्वासाभ्यां सोऽहं सोऽहमित्युत्तरयति **तद्रसः** सर्वसारभूतं परमेश्वररूपं (रस शब्दस्यविशेषविवरणं पूर्वार्द्धमङ्गलाचरणटीकाया द्रष्टव्यम्) सदा निरन्तर स्वभक्तानामित्यध्याहार ग्रन्थकर्तुरिति वा । **अतुलां**—अनुपमा मोक्षरूपा ग्रन्थपरिसमाप्तिरूपा वा सिद्धि **वितरतु** ददातु । अस्य मन्त्रस्यार्थविचारपुर सर तल्लीनताया एव ब्रह्मविद्यारूपत्वात्, ब्रह्मविदश्च सर्वा. सिद्धयो दासीभवन्तीत्यविवादम् । इयं ब्रह्मविद्या परमगोप्यरूपेणोपनिषदादावाख्यायिकादिभिर्व्यज्यते न तु साक्षान्निर्दिश्यते साक्षात्कारस्तु गुरुमुखादेवाऽवगन्तव्य "इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम् । विवस्वान् मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत् ॥ एवं परम्पराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदु । स कालेनेह महता योगो नष्ट परन्तप ॥ स एवाऽयं मया तेऽद्य योग प्रोक्त पुरातन । भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्यं ह्येतदुत्तमम्" (भगवद्गीता अ ४) भगवताप्याख्यायिकयैव सूचिताऽस्ति । न च वाच्य ? प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाऽभ्यन्तरचारिणावित्यादिना प्रकटीकृताऽस्तीति, तत्राऽपि गुरुगम्य एव मार्गोऽस्ति, अत एव "तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया । उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञान ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिन । येन भूतान्यशेषेण द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मयि" (भगवद्गीता अ ४।३४) इत्यनेन स्पष्टतया ब्रह्मविद्याया गोप्यत्वमुक्तम् । एतन्मन्त्रार्थप्रदर्शनरूपस्य तत्सवितुर्वरेण्यमिति मन्त्रस्य महागायत्र्यर्थरूपत्वाद्गायत्रीति सञ्ज्ञा शास्त्रे कृताऽस्ति, महागायत्र्या परमगोप्यत्वेन सर्वत्राऽप्रकाश्यत्वम्, तत्स्मरणमन्तरा च लौकिकसमस्तकर्मणां निष्फलत्वञ्चेति समीक्ष्य ऋषिभि परमं तप अधिष्ठाय महागायत्र्यर्थरूपां तत्सवितुरित्यादिवर्णाऽऽनुपूर्वी

ससारकल्याणाय दिव्यध्यानेन दृष्ट्वा लोके गायत्रीनाम्नैव प्राचारीति गूढं रहस्यमत एवोपनयनसमये एव सर्वसाधारण्येन महागायत्र्यर्थरूपो मन्त्र उपदिश्यते। महागायत्री तु काम-क्रोधादीना सर्वत· शान्तोद्रेके सति सत्त्वगुणसमभ्युदयान्निर्मलान्त करणे कोऽहं कस्मादागत किञ्चाऽनुष्ठेयमितिजिज्ञासोदये सति ब्रह्मविद्यानिधानं सद्गुरुं गवेपयते गुरुश्च तं सम्यक् परीक्ष्योपदिशति। अत एव ऋग्वेदे गायत्रीमन्त्र· साक्षान्निर्दिष्टो यथा "तत्सवितुर्वरेण्यम्० (ऋ वे ३।६२।१०) सायणभा०—य सविता देव· नोऽस्माकं धिय कर्माणि धर्मादिविपया वा बुद्धी प्रचोदयात् प्रेरयेत्। तत्तस्य सर्वासु श्रुतिपु प्रसिद्धस्य देवस्य द्योतमानस्य सवितु सर्वान्तर्यामितया प्रेरकस्य जगत्स्रष्टु परमेश्वरस्य आत्मभूतं वरेण्यं सर्वैरुपास्यतया ज्ञेयतया च सभजनीयं भर्ग.—अविद्यातत्कार्ययोर्भर्जनाद्भर्ग स्वयंज्योति परब्रह्मात्मकं तेजो धीमहि तयोहंसोऽसौ योऽसौ सोऽहमिति वयं ध्यायेम। यद्वा तदितिभर्गोविशेषणं सवितुर्देवस्य तत्तादृश भर्ग धीमहि, किं तदित्यपेक्षायामाह—य इति लिङ्गव्यत्यय यद्भर्गो धिय प्रचोदयात् तद्ध्यायेमेति समन्वय। यद्वा य सविता सूर्य धिय कर्माणि प्रचोदयात् प्रेरयति तस्य सवितु सर्वस्य प्रसवितुर्देवस्य द्योतमानस्य सूर्यस्य तत्सर्वैर्दृश्यमानतया प्रसिद्धं वरेण्य सर्वै संभजनीयं भर्ग पापाना तापक तेजोमण्डलं धीमहि ध्येयतया मनसा धारयेम। यद्वा भर्ग शब्देनान्नमभिधीयते य सविता देवो धिय प्रचोदयति तस्य प्रसादाद्भर्गोऽन्नादिलक्षणं फलं धीमहि धारयाम तस्याऽऽधारभूता भवेमेत्यर्थ। भर्गश्शब्दस्यान्नपरत्वे धीशब्दस्य कर्मपरत्वे च आथर्वणं—वेदाश्छन्दासि सवितुर्वरेण्य भर्गो देवस्य कवयोन्नमाहु। कर्माणि धियस्तदुते प्रब्रवीमि प्रचोदयन्त्सवितायाभिरेतीति।

टी०—अत्र च महागायत्रीगततच्छन्दस्यार्थे किमस्तीतिशङ्कायां **सवितुः**—लोकान् प्रसावयितु **देवस्य**—महाप्रलयेऽपि द्योतमानस्य सर्वमूलकारणत्वात **वरेण्यं**—वरणीयं **भर्गः** सर्वपापभर्जनसमर्थन्तेज **धीमहि**—ध्यायेम। किमर्थं तद्ध्यानमित्युत्थिताऽऽकाङ्क्षा शान्तयितुमाह **यः**—यत् भर्गो **नः**—अस्माकं **धियः**—बुद्धी अन्त करणानीति यावत्। **प्रचोदयात्**—शुभकर्मसु नियुञ्ज्यात्। इति महागायत्रीरूपसमुदायस्यैकाक्षरमात्रस्याऽर्थ प्रदर्शित। समग्राऽर्द्धस्य० "हंस शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत। नृपद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतम्॥ ऋ ४।४०।१४॥ (सा० भा०) अनया सौर्यर्चा य एषोन्तरादित्ये हिरण्मय पुरुषो दृश्यते हिरण्यश्मश्रुरित्यादिश्रुत्योक्तो मण्डलाऽभिमानी देवोऽस्ति, यश्च सर्वप्राणिहृदि चिद्रूप स्थित परमात्मा यच्च निरस्तसमस्तोपाधिकं पर ब्रह्म तत्सर्वमेकमेवेति प्रतिपाद्यते **हंसः**—हन्तिर्गत्यर्थ सर्वत्र सर्वदा गन्ता यो हसोऽसावित्यादिश्रुत्युक्तप्रकारेणैकीकृत्योपास्य, परमात्ममन्त्रप्रतिपाद्य आदित्य स च शुचौ दीप्ते द्युलोके सीदतीति शुचिषत्। अथ यदत परोदिवो ज्योतिर्दीप्यत इत्यादिश्रुते। अनेन द्युस्थान आदित्यः प्रतिपादितः, स एव मध्यस्थानो वायुरित्याह वसु·—सर्वस्य वासयिता वायु. स **चान्तरिक्षसत्** अन्तरिक्षगचारी। अथ तस्यैव क्षितिस्थानवैदिकाग्निरूपतामाह **होता**—देवानामाह्वाता होमनिष्पादको वा **वेदिषत्**—वेद्या गार्हपत्यादिरूपेण स्थित **अतिथिरतिथिवत्सर्वदा** पूज्योऽग्नि **दुरोणसत्**—दुरोणं गृहनाम तत्र पाकादिसाधनत्वेन स्थित. अनेन लौकिकाग्न्यात्मकत्वमुक्तम्। **नृषत्**—नृषु मनुष्येषु चैतन्यरूपेण सीदतीति नृषत् अनेन परमात्मरूपत्वमुक्तम्। पुनरप्यादित्यात्मतामाह—**वरसत्**—वरे वरणीये मण्डले सीदतीति वरसत् आदित्य· वरं वा एतत्मध्ना यस्मिन्नेव आसन्नस्तपतीति हि श्रूयते ऋत सत्य ब्रह्म यज्ञो वा तत्र सीदतीत्यृतसत् अग्नि. व्योमान्तरिक्षं तत्र सीदतीति व्योमसद्वायु। इदानीमादित्यतोच्यते **अब्जाः**—उदकेषु जातः उदकमध्ये खल्वय जायते **गोजाः** गोषु रश्मिषु जात ऋतं सत्य संवर्दृश्यत्वेन सत्याज्जात न यागाविन्द्रादिवत्परोक्षो भवति। यद्वोदकेषु वैद्युतरूपेण वा वाडवरूपेण वा जात **अद्रिजाः**—अद्रावुदयाचले जात एव महानुभाव आदित्य **ऋतं**—सत्यमबाध्यं सर्वाधिष्ठान ब्रह्म तत्त्वं तद्रूपोह्यमावेवादित्यस्योक्तरूपत्व हस शुचिषदित्येष वै हस शुचिषदित्यादिना ब्राह्मणे समाम्नातम् इति। यत्तु सायणादिभिरयम्मन्त्र. सूर्यपरत्वेन व्याख्यातस्तदपि ब्रह्मविद्यायास्स्वरूपाच्छादनार्थं कृतमिति वा स्यात्पूर्वव्याख्यातृपथोवाऽनुसृतस्स्यादित्यनुमीयते। महागायत्रीमन्त्र साक्षात्क्वाऽपि निर्दिष्टो व्याख्यातो वा नोपलभ्यत इति तस्य परमगोप्यत्वम्।

केचित्तु बालिशास्तत्सवितुर्वरेण्यमित्यादिमन्त्रमेव ब्रह्मविद्या वदन्ति तन्न सम्यक्? एकाक्षरमात्रस्यार्थरूपत्वात्, प्रशब्दार्थमात्रज्ञातरि प्रजापतिशब्दार्थाऽभिज्ञत्वकथनवदनुपपत्तेस्तस्मात्समग्रमहामन्त्रार्थज्ञातर्येव यथार्थब्रह्मवित्त्वम्। तन्त्रशास्त्रे देवप्रतिमायन्त्रादीना प्राणप्रतिष्ठापने सर्वेषु सम्प्रदायेषु पाशाङ्कुशगर्भितमायाबीजमुच्चार्य वायुवह्निजलवरुणोष्मादिबीजोच्चारणपुरस्सरं महामन्त्र एव विन्यस्यते न तु क्वचिदपि ॐ तत्सवितुर्वरेण्यमित्यादिमन्त्र समुपन्यस्तो दृश्यते। **किञ्च** तत्सवितुरितिमन्त्राऽऽराधनेऽप्यजपाजपनिवेदनमन्तरा स्वस्यासिद्धेरप्यभावात्कथन्तन्मन्त्रे ब्रह्मविद्यात्वम्। ब्रह्मविद्याप्राप्तौ तु सर्वमेव ज्ञेय समाप्यते इति सर्वैरपि स्वीकार्यमतो न तत्सवितुर्वरेण्यमित्यादिमन्त्रार्थज्ञाने समग्रतया ब्रह्मवित्त्वं समाप्यत इति शान्ताऽन्त - करणै स्सहृदयैराकलनीयमिति प्रथमोऽर्थ॥ १॥

द्वितीये तु—**यत्**—अनिर्वचनीयस्वरूपं वस्तु **आकाशे** आकाशगमने **अकाशे** तमश्छन्नप्रदेशे अवकाशरहिते शरीरान्त प्रवेशे वा। **परिस्रुतविकाशे**—मुखीकरणसुवर्णादिग्रासदानचारणजारणादिरूपसस्कारेणोद्बुद्धप्रकाशप्राचुर्ये। **परिवृतौ**—सर्वतोबद्धाऽवस्थायामग्निस्थायिसस्कारे इति यावत्, अग्निस्थायिताया पारदे वेधादिकरणशक्तीना सहस्रश प्रादुर्भावायथार्थतस्साऽवस्था परिवृतिरूपा भवति तस्या परिवृतौ **अस्थूले**—कृशे, **स्थूले**—मेद स्विनि, **स्थितिमति**—स्थावरे, **भृशङ्गन्तरि**-

जङ्गमे, **विधौ**—चन्द्रक्रियायां (रजतीकरणे), **रवौ**—सूर्यक्रियायां, **ऋक्षे** दलसिद्धौ (इमे धातुवादप्रसिद्धास्सङ्केता.) **नक्तंदिनभिदि**—लाक्षणिकावेतौ शब्दौ वर्णवाचकताया पर्यवसन्नौ तेन कृष्णरक्तादिवर्णभेदने अन्यथाकरणे इति यावत् । **कलाकालकलने**—कलाना विद्यानां कलने सम्पादने कालस्य दीर्घमितियुक्तस्य कलने सङ्ख्याने चेत्यर्थः दीर्घाऽऽयुस्सिद्धावेतद् द्वयमपि सम्भवति । एतस्मिन्नेतस्मिन् कि समर्थ भवतीत्यपेक्षायामुत्तरयति-**रसः**—पारद. कथम्भूत' सन्नित्यपेक्षायामाह **हंसो-हंस**—इति एकोहंसशब्द उत्कृष्टगुणयुक्तावोधक । द्वितीयस्तु सञ्ज्ञापरिचायक उत्कृष्टगुणयुक्तो हंसो यथा आकाशगमनादौ समर्थो भवति तद्वच्छुद्धस्वरूपतामापादित पारदोऽपि खेचरीसिद्धयादिप्रदाने समर्थो भवति, तथाविध पारद' परिशीलित साधकानाम्—**अतुलां**—अनुपमां **सिद्धिं वितरतु**—ददातु । महामन्त्राऽऽराधकस्य रससिद्धिर्भवतीति ध्वनि । महामन्त्रैर्वाऽलौकिकसामर्थ्योदयात् रसविद्या योगिनामेव सिद्धयतीति दृढं निश्चयस्तदभावाद्वेदानीं खेचरीसिद्धिप्रदगुटिकादय शास्त्रे लिखिता अपि न सिद्धयन्ति इति रहस्यम् । न च योगिनान्तु स्वयमेव सिद्धय उदयन्ते किन्तेषु (योगिषु) पारदेन प्रयोजनमिति वाच्यम् ? योगसिद्धयुदये यथा वहुकालाऽपेक्षत्वं न तथा पारदे इति वह्वन्तरम् । योगमार्गाऽवलम्वने महामन्त्राऽऽराधनवत्सिद्धपारदोपि सेवनीय इति रहस्यम् । पारदे सिद्धे योगसिद्धिरपि सुकरा भवति अत एव " स्थिरदेहेऽभ्यासवशात्प्राप्य ज्ञानं गुणाऽष्टकोपेतं। प्राप्नोति ब्रह्मपद न पुनर्भववासजन्मदु खानि" इति रसहृदयतन्त्रादौ समाहितम् । अन्यार्थानामप्रासङ्गिकतया नोपन्यास इति सुहृद्भि क्षमणीयम् ।

अथ पकारादिरसाः

१ पक्तिशूलहरो रसः

टङ्कणं मूर्च्छितं सूतं यवक्षारं समं ततः ।
चूर्णितं भक्षयेन्मापं मधुना पक्तिशूलनुत् ॥ १ ॥

र. क., र क ल, पक्तिशूले । र. क. ल. (टङ्कणसूत)

भाषा—भुनासुहागा, रससिन्दूर, यवक्षार, सव समभाग लेकर १–२ रोज खरलकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा मधुके साथ चाटनेसे पक्तिशूल नष्टहोता है ॥ १ ॥

२ पञ्चगर्भकम्

हेमाऽर्कगन्धाऽभ्रसेन्द्रमेघाः
समीकृता मन्दहुताशसिद्धाः ।
मधुप्लुतेनाऽऽज्यलवेन लीढाः
प्रोक्ताः समासादखिलाऽऽमयघ्नाः ॥ २ ॥

लो प., (स.) समस्तरोगाऽधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण, ताम्र, अभ्रक, इनकी भस्में, शुद्धगन्धक और पारा ये सव समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर वहुतमन्द आंचसे गलाकर पर्पटी बनाले अथवा आतशीशीशीमें रखकर मन्दआंचसे यहांतक पकावे कि एकदम द्रव हो जाय । स्वाङ्गशीतलहोनेपर शीशीको फोड़कर निकालले । इसमेंसे घी और मधुके साथ ३–३ रत्तीकी मात्रा लेनेसे यह समस्तरोगोंको नष्ट करताहै ॥ २ ॥

३ पञ्चगुञ्ज रसः

जातीद्वयं कणा विश्वं मरिचं गन्धकं रसम् ।
त्रिक्षारं पञ्चलवणं गगनञ्च समांशकम् ॥ ३ ॥
मरिचं सर्वमेकत्र युक्त्या सञ्चूर्ण्य भावितम् ।
ताम्वूलपत्रस्वरसैस्तथैवाऽऽर्द्रकजै रसैः ॥ ४ ॥
पञ्चगुञ्ज इति ख्यातो देयः पर्णेन वाऽऽर्द्रकैः ।
अग्निमान्द्ये त्वजीर्णे च सामे श्लेष्माऽनिले तथा ॥ ५ ॥
आमज्वरे त्रिदोषोत्थे ज्वरे मेहे विशेषतः ।
कासे श्वासे तथाऽऽनाहे गुल्मेऽर्शसि विशेषतः ॥ ६ ॥

यो. म, अग्निमान्द्ये ।

भाषा—जायफल, जावित्री, त्रिकटु, शुद्ध गन्धक और पारा, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, पाचों नमक, अभ्रकभस्म, सव समभाग, इन सवकी वरावर मरिच लेकर सबका वारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर पान, अदरख इनके रसोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर ५–५ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली नागरवेलके पान अथवा अदरखके रसके साथ देनेसे मन्दाग्नि, अजीर्ण, सामवातश्लेष्म, आमज्वर, त्रिदोषज्वर, प्रमेह, कास, श्वास, आनाह, गुल्म, विशेषकर ववासीर इन सवको यह नष्ट करता है ॥ ३ ॥

४ पञ्चगुल्महरो रसः

चित्रमूलहरीतक्यौ वज्रदन्ती च सैन्धवम् ।
अजमोदं व्योषमर्कं गुटिकां समभागत' ॥ ७ ॥
कुबेराक्षमितां कुर्यात्पञ्चगुल्मनिवृत्तये ।
निहन्यात्सर्वरोगांश्च ज्ञानज्योतेर्मुनेर्वचः ॥ ८ ॥

र ज्ञा., सर्वरोगे ।

भाषा—चित्रकमूल, हर्रे, वज्रदन्ती (काश्मीरकी तरफ प्रसिद्ध है—उसके अभावमें मराठी) सेंधानमक, अजमोद, त्रिकटु, आककीजड़की छाल, ताम्रभस्म ये सव समभाग लेकर वारीक चूर्णकर अदरख वगैरहके रससे करञ्जवीजके वरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे यह समस्त रोगोंको दूर करता है विशेषतया गुल्मको मिटाता है ।

टि०—मूल श्लोकमें अर्क शब्द आया है सो भी व्योषके आगे होनेसे आककी जड का वोध करता है परन्तु सर्वरोगहरत्व गुणहोनेसे ताम्र और आक दोनों दिये जाय तो अच्छा है ॥ ४ ॥

५ पञ्चनिम्बादिचूर्णम्

मूलं पत्रं फलं पुष्पं त्वचं निम्वात्समाहरेत् ।
सूक्ष्मचूर्णमिदं कुर्यात्पलैः पञ्चदशोन्मितैः ॥ ९ ॥

लोहभस्महरीतक्यौ चक्रमर्दकचित्रकौ ।
भल्लातकं विडङ्गानि शर्कराऽऽमलकं निशा ॥ १० ॥
पिप्पली मरिच शुण्ठी वाकुची कृतमालकः ।
गोक्षुरश्च पलोन्मानमेकैकं कारयेद्बुधः ॥ ११ ॥
सर्वमेकीकृतं चूर्णं भृङ्गराजेन भावयेत् ।
अष्टभागाऽवशिष्टेन खदिराऽसनवारिणा ॥ १२ ॥
भावयित्वा च संशुष्कं कर्षमात्र ततः पिबेत ।
खदिराऽसननीयेन सर्पिषा पयसाऽथवा ॥ १३ ॥
मासेन सर्वकुष्ठानि विनिहन्ति रसायनम् ।
पञ्चनिम्बमिदं चूर्णं सर्वरोगप्रणाशनम् ॥ १४ ॥

गा. स, ना वि, यो चि, वृ. यो त., ग. नि, वै र, रसायनसं, वै चि, नि र, कुष्ठे ।

टि०–रसायनसङ्ग्रहे कुष्ठविभीतकाद्यधिकतया नियोजिता तयोरत्रापि प्रक्षेपे गुणवृद्धिरेव । नि र, वै र वैद्यचिन्तामणीषु निम्बपत्रोऽत्र खदि-राऽसनक्वाथभावना प्रदाय समस्तवस्तूनि नियोज्याऽन्ते भृङ्गभावना प्रद-त्ताऽस्ति, निम्बभावनापेक्षया समस्तद्रव्ये भावना ज्यायसी ।

भाषा–अपनेअपने समयमें मूल, पत्र, फल, पुष्प और त्वक् ये प्रत्येक ३ पल निम्बके लेवे और लोहभस्म, हर्रे, चकवड़, चित्रकमुल, भिलावे, विडङ्ग, नक्कर, आवले, हल्दी, पीपल, मरिच, सोंठ, वाकुची, अमिलतास, गोखरू १–१ पल लेकर सबका चूर्णकर भागरेके रस और सर्वद्रव्यकी बराबर खदिर तथा असनकी छालके अष्टभागावशिष्ट काढ़ेमे १–१ भावना देकर सुखाकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ तोला खदिर और असनके काढेसे अथवा घी या दूधके साथ लेनेसे यह समस्त कुष्ठोंको दूर करता है और रसायन है–अर्थात् समस्त रोगोंको दूरकर आयुको वढाता है ॥ ५ ॥

६ पञ्चनिम्बाऽवलेहः

रसायनं प्रवक्ष्यामि ब्रह्मणा यदुदाहृतम् ।
मार्कण्डेयप्रभृतिभिर्यत्प्रागुक्तं महर्षिभिः ॥ १५ ॥
पुष्पकाले तु पुष्पाणि फलकाले फलानि च ।
सङ्गृह्य पिचुमर्दस्य त्वङ्मूलानि दलानि च ॥ १६ ॥
द्विरंशानि समाहृत्य भागिकानि प्रकल्पयेत् ।
त्रिफला त्र्यूषण ब्राह्मी श्वदंष्ट्राऽरुष्कराऽग्नयः ॥ १७ ॥
विडङ्गसारो वाराही लोहचूर्णं स्मृताः समाः ।
निशाद्वयाऽवल्गुजकं व्याधिघातः सशर्करः ॥ १८ ॥
कुष्ठमिन्द्रयवाः पाठा चूर्णमेषान्तु संयुतम् ।
खदिराऽसननिम्बानां घनक्वाथेन भावयेत् ॥ १९ ॥
सप्तधा पञ्चनिम्बन्तु मार्कवस्य रसेन च ।
स्निग्धः शुद्धतनुर्धीमान् योजयेत्तच्छुभे दिने ॥२०॥
मधुना तिक्तहविषा खदिराऽसनवारिणा ।
लेह्यमुष्णाम्भसा वापि कोलवृद्ध्या पलं भवेत् ।
जीर्णे तस्मिन् समश्नीयात्स्निग्धं लघु हितञ्च यत्॥२१॥

विचर्चिकोदुम्बरपुण्डरीक-
कपालदद्रूकिटिमालसादि ।
शताऽरुविस्फोटविसर्पमालाः
कफप्रकोपं त्रिविधं किलासम् ॥ २२ ॥
भगन्दरश्लीपदवातरक्त-
जडान्ध्यनाडीव्रणशीर्षरोगान् ।
सर्वान् प्रमेहान् प्रदरांश्च सर्वान्
दंष्ट्राविषं मूलविषं निहन्ति ॥ २३ ॥
स्थूलोदरः सिंहकृशोदरः स्या-
त्सुस्निग्धसर्पैर्भुजगोपयोगात् ।
सदोपयोगादपि ये दशन्ति
सर्पादयो यान्ति विनाशमाशु ।
जीवेच्चिरं व्याधिजराविमुक्तः
शुभ्रेनरश्चन्द्रसमानकान्तिः ॥ २४ ॥

भा प्र, च. द, ग. नि, र र, ग सा., कुष्ठादिरोगे । चक्रदत्ते कुष्ठहरचूर्णमिति नाम ।

भाषा–अपने अपने समयमें निम्बके पञ्चाङ्गोंको सङ्ग्रहकर २–२ भाग लेकर त्रिफला, त्रिकटु, ब्राह्मी, गोखरू, भिलावा चित्रक, विडङ्गतण्डुल, वाराहीकन्द, लोहभस्म, हल्दी, दारुहल्दी, वाकुची, अमिलतास, शक्कर, कुठ, इन्द्रजव, पाठा ये सब १–१ भाग लेकर कूटकपडछानकर सबके बराबर खदिर, असन और नीमके अष्टभागावशिष्टक्वाथोंसे और भांगरेके रसमें ७–७ बार भावनाएं देकर रखछोडे । इसमेंसे पञ्चकर्मकर शुभमुहूर्तमें मधु और तिक्तघृत अथवा खदिर और असनके क्वाथ, अथवा गरम-पानी से आधे तोलेसे प्रारम्भ कर एक तोले तक बढाकर लेवे । जीर्णहोनेपर स्निग्ध और हितकारक भोजन करनेसे विचर्चिका, उदुम्बर, पुण्डरीक, कपाल, दद्रु, किटिभ, अलस, शतारुक, विस्फोटक, विसर्प, गण्डमाला, कफप्रकोप, तीन प्रकारका श्वित्र, भगन्दर, श्लीपद, वातरक्त, जड़त्व, अन्धत्व, नाडीव्रण, शीर्ष-रोग, समस्तप्रमेह, प्रदर, दंष्ट्राविष, मूलविष, मेद इन सबको यह नष्ट करता है । इसके अधिकदिन सेवनकरनेवालेको यदि सर्पकाटगया हो तो सर्प ही मरजाताहै और मनुष्य अधिक दिन जीता है ॥ ६ ॥

७ पञ्चपञ्चामृतरसः

पञ्च पञ्चाऽमृतं प्रोक्तं पञ्चधा पञ्चधा कृतम् ।
पञ्चानाञ्चापि धातूनां पञ्चरोगहरं परम् ॥ २५ ॥
पञ्चानुपानयोगेन पञ्चानां पाचनान्वितम् ।
पञ्चपातकिपापघ्नं पञ्चरोगहरं परम् ॥ २६ ॥
सुवर्णं रजतं ताम्रं नागं वङ्गसमन्वितम् ।
सुवर्णं कान्तलोहञ्च रजतं ताम्रमभ्रकम् ॥ २७ ॥
समौक्तिकं हेमवज्रं रसाभ्रकसमन्वितम् ।
नागं वङ्गं घनं लोहं नेपालं पञ्चमं स्मृतम् ॥ २८ ॥

पारदं रजतं ताम्रं साऽभ्रकं हेमपञ्चमम्।
पञ्चपञ्चामृतान्याहुः सर्वरोगहराणि च ॥ २९ ॥
स्वानुपानविशेषेण वेदनाशमनानि च।
वहुवर्षोत्थविषमं कुष्ठं घोरतरं क्षयम् ॥ ३० ॥
प्रमेहं पाण्डुरोगञ्च हन्यान्नात्र विचारयेत्।
यथारोगानुपानेन पाचनं वापि कारयेत् ॥ ३१ ॥

टी०, सर्वरोगे।

भाषा—भस्मकियेहुए सुवर्ण, रजत, ताम्र, नाग, वङ्ग (१) सुवर्ण, कान्तलोह, रजत ताम्र, अभ्रक (२) मोती, सुवर्ण, हीरा, शुद्धपारा, अभ्रक, (३) नाग, वङ्ग, अभ्रक, लोह, और ताम्र, (४) शुद्धपारा, रजत, ताम्र, अभ्रक, सुवर्ण (५) ये पाच पञ्चामृत हैं। इनमेंसे किसीएकको उचिताऽनुपानके साथ उचितमात्रामें देनेसे वहुतपुराना और विषम कुष्ठ, भयङ्करक्षय, प्रमेह, पाण्डुरोग इन सबको ये नष्ट करते है ॥ ७ ॥

८ पञ्चवलोरसः

तीक्ष्णहिङ्गुलनागानां तारहेमरसान्वितम्।
क्रमवृद्धया तु सङ्गृह्य चाङ्गेर्या मर्दनं कुरु ॥ ३२ ॥
सर्वार्द्धं गन्धकं दत्त्वा रसस्य त्रिगुणीकृतम्।
वृहद्भाण्डे विनिक्षिप्य वालुकायां प्रयोजयेत् ॥ ३३ ॥
अग्निं प्रज्वालयेच्चण्डं प्रमाणं युगसङ्ख्यया।
रसः पञ्चवलो नाम वल्लः क्षौद्रघृतान्वितः ॥ ३४ ॥
वीर्यस्तम्भं तीक्ष्णमात्रं गात्रसङ्कोचनं तथा।
आलस्यं वहुनिद्राञ्च वेदनाः सर्वसन्धिषु ॥ ३५ ॥
कासं श्वासं प्रसक्तिञ्च निशायां तप्तगात्रताम्।
आध्मानमग्निमान्द्यञ्च यक्ष्माणञ्चापि नाशयेत् ॥ ३६ ॥

र. शं., वाजीकरणे।

भाषा—फोलाद, शिंगरिफ, नाग, रजत, सुवर्ण, पारा इनसवकी भस्में क्रमवृद्धभागसे लेकर खट्टीतिपतियाके रससे १—२ रोज़ मर्दनकर सवसे आधा शुद्धगन्धक मिलाकर वड़ी आतशी शीशीमें भरकर वालुकायन्त्रमें ४ पहरकी तीक्ष्ण आंच दे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३—३ रत्ती घृत और मधुके साथ देनेसे वीर्यका अत्यन्त स्तम्भन करता है औरशरीरकी शिथिलता दूरकर दृढ वनाता है। आलस्य, अतिनिद्रा, सन्धियोंकी पीडा, कास, श्वास, प्रसेक, रात्रिज्वर, आध्मान, मन्दाग्नि इन सवको यह नष्टकरता है ॥ ८ ॥

९ पञ्चवाणोरसः (प्रथमः)

रसाऽभ्रनागाऽयसगन्धवङ्गं
कापर्दिकं तत्समभागयुक्तम्।
रसेन हेम द्विगुणं प्रदद्यात्
क्षीरेण भाव्यञ्च गवां त्रिवारम् ॥३७॥
त्रिः सप्तकृत्वो विजयारसेऽस्य
ततश्च दद्यात्कनकस्य सप्त।
लवङ्गजातीफलकुङ्कुमैश्च
कङ्कोलकाऽऽकल्लगजेन्द्रकैश्च ॥३८॥
कृष्णाहरेश्चन्दनतोयभाव्याः
प्रत्येकमेकस्य च सप्तसप्त।
दर्पेण चैकाञ्च ददीत भावनां
सिद्धो रसः स्यादिति पञ्चवाणः ॥३९॥
वीर्यस्य वृद्धिञ्च करोति पुंस्त्वं
नष्टेन्द्रियाणां हि शुभावहश्च।
यदीयगेहेऽगणिता रमण्य-
स्तेनैव कार्यो रसराज एषः।
कान्ताप्रियत्वं वहुशुक्रताञ्च
शेफाऽभिवृद्धिं वितनोति सद्यः ॥ ४० ॥

वृ. यो त, र. मु., यो. र., र. वो., वाजीकरणे। र. मु, रसकपञ्चवाणः।

भाषा—शुद्धपारा, अभ्रक, नाग, लोह इनकी भस्में, शुद्धगन्धक, वङ्ग और कौड़ीभस्म ये सव १—१ भाग, सुवर्णभस्म २ भाग, लेकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर गायके दूध से ३, भागरेके रससे २१, धतूरा, लौंग, जायफल, केसर, शीतलचीनी, अकलकरा, गजपीपल, पीपल सफेदचन्दन इनप्रत्येकके रसोंसे सात, कस्तूरीसे एक भावनादेनेसे यह पञ्चवाणरस सिद्धहोगा। इसकी ३-३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १—१ गोली उचिताऽनुपानके साथ देनेसे वीर्यवृद्धि, इन्द्रियोंकी ख़रावी, इन सवको नष्टकर वहुतसी स्त्रियोंको तृप्तकरनेकी शक्ति देता है ॥ ९ ॥

१० पञ्चवाणो रसः (द्वितीयः)

कनकं रसभूतिञ्च निरुत्थं लोहमभ्रकम्।
कस्तूरीं नागवङ्गौ च मर्दयेच्छ्लक्ष्णताऽवधिम् ॥ ४१ ॥
धात्रीफलं दारुयुग्मं लवङ्गं कुङ्कुमं तथा।
शुण्ठी भल्लातकञ्चैव विजया कनकं मधु ॥ ४२ ॥
एतैर्द्रव्यैः क्रमेणैव भावयेत्सप्तवारतः।
पञ्चवाणरसो नाम्ना सुसिद्धो जायते ध्रुवम् ॥ ४३ ॥
दिनान्ते भक्षयेद्यस्तु स गच्छेत्प्रमदाशतम्।
अतिस्तम्भं हरेच्छीघ्रं व्योषजम्बीरनीरयुक् ॥ ४४ ॥

र शं, वाजीकरणे।

भाषा—सुवर्ण, पारा, लोह और अभ्रक इनकी भस्में, कस्तूरी, नाग—वङ्गभस्म सव समभागलेकर वारीकपीस आवला, देवदारु, दारुहल्दी, लौंग, केसर, सोठ, भिलावे, भाग, धतूरा इन प्रत्येकके रसोंकी क्रमसे ७—७ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १—१ गोली तत्तद्रोगहराऽनुपानके साथ लेनेसे यह समस्तरोगोंको दूर करता है। सन्ध्याकालमें दूधके साथलेनेसे अत्यन्तस्तम्भन होता है। उसको दूर करना हो तो त्रिकटु और जंभीरीकारस पीवै ॥ १० ॥

११ पञ्चबाणो रसः (तृतीयः)

नागं वङ्गञ्च कान्तञ्च हेमताराऽर्करौप्यकम् ।
सूतं क्रमाद्भागवृद्धं वैक्रान्तं सूतभागिकम् ॥ ४५ ॥
विशुद्धगन्धं सर्वांशं पर्पटीं पातयेच्छनैः ।
कामिप्रियोक्तविधिना भावितं भावनौषधैः ॥ ४६ ॥
माषपूरणसंयावे पाचितं घृतमध्यतः ।
यथाशक्त्योत्सवं कृत्वा ततः सिद्धो भवेद्रसः ॥
पञ्चबाण इति ख्यातो रमयेत्कामिनीशतम् ॥ ४७ ॥

र. शं., ना. वि., वाजीकरणे ।

भाषा—नाग १ भा., वङ्ग २ भा, कान्तलोह ३ भा, सुवर्ण ४ भा, मोती ५ भा, ताम्र ६ भा, चांदी ७ भा, पारा ८ भा, वैक्रान्त ८ भाग इन सबकी भस्में और शुद्ध गन्धक सबकीबराबर मिलाकर पर्पटीके विधानसे पर्पटी बनाकर कामवर्धक गणसे भावना देकर गोलाबनाय ३–४ पानों में लपेटकर उड़दके आटेकी बाटीमें कवलितकर घीके अन्दर धीमीआंचसे पकावे । जब बाटी सिककर जलने को हो तब नीचे उतार दे । स्वाङ्गशीतल होनेपर अन्दरसे रसको निकालकर कुमारिका प्रभृतिका पूजनकर रखछोड़े । इसमें से ३-३ रत्ती तत्तद्रोगहराऽनुपानके साथ देनेसे यह तमामरोगों को दूर करता है और स्तम्भन की दवाओंके साथ सेवन करने से बहुतसी स्त्रियोंको खुश करसक्ता है ॥ ११ ॥

१२ पञ्चबाणो रसः (चतुर्थः)

म्लेच्छं सूत्रविवेष्टितं पलमितं माषस्य पिण्डे क्षिपेत
प्रस्थे धूर्तजतैलजे हुतवहे सम्पाच्य पिण्डान्नयेत् ॥
मुक्ताविद्रुमसूतभस्म रविजं स्वर्णञ्च वङ्गं समं
तार ताप्यककान्तभस्म सुभगंचाऽभ्रं द्विभागं ततः ॥
अहिवलिमपि वज्र नागफेनन्तु भागं,
करहटरसघृष्टं कोकिलाक्षस्य बीजैः ॥
फणिफलजभवाद्भिः केसरैर्देवपुष्पैः,
त्रिकटुघनजटाभ्यां भावयेच्छाल्मलीभिः ॥ ४९ ॥
मधुकमुशलिकन्दैर्मर्कटीकोलजाती-,
फलनलदसुजातीपत्रिकाहस्तिकन्दैः ।
त्रिफलजलगुडूची साऽश्ववाराहकन्दै-,
र्दहनमृगमदाभ्यां भावयेद्वह्निसङ्ख्यम् ॥ ५० ॥
रमयति बहुकान्तास्तीव्रमेहाऽपहारी,
समधुघृतसिताभ्यां पञ्चबाणोद्दिवल्लः ।
बहुतरमपि वीर्यं कुर्वतः क्षीरपानं,
गुरुतरमपि सेव्यं स्वादुमिष्टञ्च भोज्यम् ॥ ५१ ॥

र. रा., वाजीकरणे ।

भाषा—रूमीसिंगरिफ ४ तोले लेकर चौगुना कच्चा सूत-लपेटकर गेंद जैसा गोला बनावे ऊपर दो २ अंगुल मोटा उड़दके आटे का लेप देकर गहरे पेंदेकी कड़ाही में रखके एक सेर धतूरे के बीजोंका तैल डालकर मन्दाग्नि से पकावे । आटा लाल होकर काला होने लगे तब नीचे उतार दे । स्वाङ्गशीतल होनेपर बीरज में निकालकर रखछोड़े । वाजीकरण योगों में इसी का प्रयोगकरे । नागकर इस योगमें इसी को डालना । मोती, प्रवाल, पारा, नीलम अथवा ताम्र, सुवर्ण, वङ्ग इन-सबकी भस्में १–१ भाग, चांदी, सोनामाखी, कान्तलोह, शिंगरिफ, अभ्रकभस्म ये सब २–२ भाग, गन्धक, सीसाभस्म और अफीम १–१ भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर अकलकरा, तालमखाना, खुरासान, केशर, लौंग, त्रिकटु, नागरमोथा, सेमलका मुसला, मुलहटी, मुसली, केवाच, बेर, जायफल, नाग, जावित्री, हाथीकन्द, त्रिफला, तगर, गिलोय, असगन्ध, वाराहीकन्द, चित्रक, कस्तूरी, इन प्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा काथोंसे ३-३ भावनाएं देकर ६–६ रत्तीकी गोलियें बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधु, घृत और शक्करकेसाथ लेकर दूधपीनेसे बहुतस्त्रियोंके साथ रमणकरसक्ता है इसकेसेवनसे अग्नि इतना प्रदीप्तहोताहै, कि कितनाही दुर्जरपदार्थ खायाहो सब जीर्ण होजाताहै ॥ १२ ॥

१३ पञ्चबाणो रसः (पञ्चमः)

गन्धकाऽभ्रकधत्तूरगरलानां चतुष्टयम् ।
पूर्वोक्ततैलात्समभ्यर्च्य दोलायन्त्रे विपाचयेत् ॥ ५२ ॥
गुटिकां तिलजाते च तैले प्रस्थप्रमाणके ।
तैले निःशेषिते पक्त्वा बस्तगोखरवाजिनाम् ॥५३॥
मूत्रैश्च पूर्ववत्पक्त्वा मातुलुङ्गफले क्षिपेत ।
तद्द्वारमन्धितं कृत्वा पुटयेत्स्वल्पमात्रकम् ॥ ५४ ॥
पश्चादुद्धृत्य तद्रसम सर्षपं विनियोजयेत ।
सर्षपद्वयमात्रन्तु ब्रह्मरन्ध्रे विलेपयेत् ॥ ५५ ॥
त्रिदोषजानि सर्वाणि सर्वसर्पविषाणि च ।
भूतप्रेतपिशाचादिग्रहण्यादिशिरोगदान् ॥ ५६ ॥
कर्णाक्षिरोगानन्यांश्च नाशयेत्क्षणमात्रतः ।
पादाङ्गुष्ठे च लेपेन सर्ववातान्विनाशयेत् ॥ ५७ ॥
सूचीमुखप्रमाणन्तु नागवल्लीदलान्वितम् ।
भेदयेन्मलजालानि गुल्मांश्च विविधानपि ॥ ५८ ॥
कुक्षिरोगानशेषांश्च नाशयेन्नाऽत्र संशय ।
महिषीदधिसंयुक्तं पाण्डुजालं विनाशयेत् ॥ ५९ ॥
कदलीफलसंयुक्तं भक्षयेच्च पिबेत्पयः ।
सर्वाङ्गं लेपयेद्गन्धैः कर्पूरेण च संयुतैः ॥ ६० ॥
मदनोद्रेकसंयुक्तो महामत्तगजेन्द्रवत् ।
निरन्तरमहागाढरतिं कुर्वन्मदोद्धतः ॥ ६१ ॥
यामत्रयं भवेत्स्तम्भः स्त्रीषु वाजीव गच्छति ।
मुहुर्मुहुः पिबेद्दुग्धं शर्करासंयुतं पयः ॥ ६२ ॥
नारिकेलोदकञ्चैव पिबेच्छैत्योपचारवान् ।
कर्पूरान्विततांबूलं कुरुते सत्त्ववान्नरः ॥ ६३ ॥
वृद्धिश्च स्तम्भनञ्चैव कुरुते च निरन्तरम् ।

जम्बीरफलबीजानां चूर्णमुष्णेन वारिणा ॥ ६४ ॥
पिबेत्तत्क्षणमात्रेण तदुद्रेकं विनाशयेत् ।
सर्वेषामपि रोगाणामनुपानविशेषतः ॥ ६५ ॥
तदौषधप्रयोगेऽस्मिन्नप्रमत्तः प्रयोजयेत् ।
पञ्चवाणरसः ख्यातस्सर्वलोकोपकारकः ॥ ६६ ॥

र. कौ (ज्ञा) वाजीकरणे.

भाषा—शुद्धगन्धक, अभ्रकभस्म, धतूरेके बीज और बछनाग इनचारोंका वारीक चूर्ण कर सहिजन. डंडाथूहर. करञ्ज, आककी जड़कीछाल, भुंइआवला, बछनाग, लाल और सफेदगुञ्जा इन सबके यथासम्भवबीज और जड अथवा जडकी छाल लेकर जवकुटकर पातालयन्त्रसे तैल निकाल इसमें गोलीवंधनेतक घोटकर गोलीबनाकर कपडेमें बांधकर इसी तैलमें दोलायन्त्रसे पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर सेरभर तिलके तैलमें यहातक पकावे कि समस्ततैल समाप्त होजाय फिर इसमेंसे निकालकर बकरा, गाय, गधा, घोड़ा, इनके खुरोंके तैलमें पकावे फिर इन प्रत्येकके मूत्रमें ४–४ पहर पकाकर स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर विजोरेके फलमें रखकर उसीकी डाटसे बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर इतनी आचदे कि विजोरानीबू जलजाय । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमें से १ सर्षपभरमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानके साथ खिलावे और ब्रह्मरन्ध्रपर पाछदेकर २ सरसों के बराबर घिसे तो त्रिदोषजरोग-समस्तसर्पविष, भूत, प्रेत, पिशाचादि, ग्रहणी, शिरोरोग, कान और आखके रोगोंको यह क्षणमात्रमें दूरकरताहै । पैरके अंगूठेपर पाछदेकर मालिशकरने से समस्त वातविकारों को नष्ट करता है । सूईके अग्रभागजितना पके पानमें खानेमे समस्तमल, नानातरहके गुल्म, और कुक्षिरोग नष्ट होवैं । भैंसके दही केसाथ पाण्डुरोग नष्ट होता है केलेके फलके साथ खाकर दूध पीनेसे और कपूर मिले हुए गन्धका अङ्गमें लेपकरनेसे मद्यमत्तहाथीकीतरह कामसे व्याकुलहोकर ३ पहर तक स्तम्भनहोकर स्त्रियोंमें अश्वकीतरह रतिको करता है । इसमें शक्करमिलाहुआ गायकादूध वारम्वार पीवे, अधिक दाह होने, पर नारियलका जल वगैरह शीतोपचार करे । कपूरयुक्त पान खावे । इसके सेवनसे वीर्यकीवृद्धि और अत्यन्तस्तम्भन होता है । जंभीरीके वीजोंका चूर्ण गरमपानीसेलेनेसे तत्क्षण वीर्यस्खलन होताहै । इसका यथार्थप्रयोगकरनेसे समस्तरोग नष्ट होते हैं । पर इसकाप्रयोग वैद्य सावधान होकर अपने समक्षमें करावे ॥ १३ ॥

१४ पञ्चभद्रकम्

हेमाम्बुदायोऽभ्ररसेन्द्रकाञ्चनं
समं निवाते पुटितं लघीयसा ।
पुटेन भृङ्गद्वयवारिणाऽऽप्लुतं
जयेद्विलीढं मधुना ससर्पिषा ॥ ६७ ॥
गुदामयं पाण्डुगदं सकामलं
प्रमेहमर्शांसि च ह्याममारुतम् ।
गदं ग्रहण्याः प्रदराऽस्रपित्त-
मुखानतीसारमतीव दुस्तरम् ॥ ६८ ॥

लो प. (स), अर्शसि ।

भाषा—शुद्ध धतूरे के वीज, नागरमोथा, लोह, अभ्रक, पारा, सुवर्णभस्म ये सब समभाग लेकर दोनों भंगरों के रससे मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर सुखाकर लघुपुटकी आंच दे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती मधु और घीकेसाथ मिलाकर चटानेसे गुदरोग, पाण्डुरोग, कामला, प्रमेह, ववासीर, आमवात, ग्रहणी, प्रदर, रक्तपित्त, अतिसार इन सबको यह नष्टकरताहै ॥ १४ ॥

१५ पञ्चमूर्ति रसः

नेपालं मूषपाषाणं द्वितुत्थं तालकं समम् ।
गृहकन्यारसे मर्द्य द्वियामं च प्रयत्नतः ॥ ६९ ॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं तन्नीत्वा मत्स्यपित्तके ।
भावितं क्षणमात्रञ्च देयं दुग्धाऽनुपानतः ॥ ७० ॥
त्र्याहिकाऽस्थिगतं शीतं हन्ति सत्यं न संशयः ।
पञ्चमूर्तिरसो नाम प्राणिनां हितकारकः ॥ ७१ ॥

वै. चि , वा., ज्वरे ।

टि०—वाहटे दुग्धानुपानत इत्यस्य स्थाने गुञ्जानुपानत इति पाठः, तत्र गुञ्जशब्देन तन्मूल पत्रमूलस्वरसौ वा ग्रहीतव्यौ ।

भाषा—ताम्रभस्म, शुद्धसोमल, तुत्थक और खर्पर, हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य ये सब समभाग लेकर घीकुंवार के रसमें दोपहरतक मर्दनकर गोला वनाय चारतह कपड़े में बांधकर दोलायन्त्र वनाय घीकुवारकेरसमें एकपहर स्वेदनकर निकालकर सुखाकर रोहूमछलीके पित्तसे भावनादेकर ज्वारके वरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली दूधकेसाथ देनेसे त्र्याहिक और अस्थिगत शीतज्वर इनको यह नष्ट करता है ॥ १५ ॥

१६ पञ्चलोहभूपतिरसः

पलं रसं गन्धकवत्सनाभौ
शुल्वञ्च तीक्ष्णं रवितारकञ्च ।
ताप्यं ह्ययस्कान्तसुचारुपुष्पं
सर्वं विमर्द्य धृतराष्ट्रतोये ॥ ७२ ॥
तच्छोषयेदातपवर्जितञ्च
वटीकृतं काचघटे निदध्यात् ।
मृद्भाण्डमध्ये सिकताऽऽख्ययन्त्रे
क्रमाऽग्निना षोडश याममेतत् ॥७३ ॥
गाढाऽग्निमुद्दीप्य यथाक्रमेण
तदौषधं वह्निसमानवर्णम् ।
संघर्षणाद्यत्र च रक्तरेखा
पूर्वार्धयुक्तं दृढवत्सनाभम् ।
पलं मरीचस्य सुमर्दितं तत्
ताम्बूलवल्लीदलकं समानम् ॥ ७४ ॥

गुञ्जमात्रां वटीं कृत्वा सम्यक् छायाविशोषिताम्।
पिबेद्युक्ताऽनुपानेन विषमज्वरनाशनम्॥ ७५॥
सर्वाऽऽमयहरं सद्यः सदा विजयवर्धनम्।
वाताऽर्दितं वातमेहं श्वासकासादिरोगनुत्॥ ७६॥
क्षतक्षयं कफोत्थञ्च पाण्डुकामलशूलनुत्।
सन्निपातं निहन्त्याशु चाऽम्लपित्तं नियच्छति॥७७॥
अजीर्णमामवातञ्च ह्यर्शांसि ग्रहणीगदम्।
अन्नद्वेषमुदावर्तमाध्मानं सोमरोगकम्।
पञ्चलोहक्षितीशश्च विंशतिक्षयरोगनुत्॥ ७८॥

रसायन सं, सर्वाऽऽमये।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, और वछनाग, ताम्र, लोह, माणिक्य, रजत, सोनामाखी, कान्तलोह, शुद्ध कसीस ये सब समभाग लेकर हंसराज के रस से १–२ रोज़ छायामें मर्दनकर गोलियें बनाय छायाशुष्ककर ४–५ कपड़मिट्टी दीहुई आतशी शीशीमें डालकर मुंह बन्दकर मिट्टी की नादमें वालुकायन्त्र बनाय १६ प्रहरकी क्रमाग्नि देकर अखीरमें प्रचण्डाऽग्निकरे। स्वाङ्गशीतल होनेपर धीरज से निकालकर देखे, इसका रंग मयूरकी गर्दन के समान होगा और कसौटी वगैरहपर घर्षण करने से लालरेखा निकले तब समझना कि यह यथार्थ सिद्ध हुआ है। इसमें पहिले से आधे प्रमाणमें पका हुआ शुद्ध वछनाग और इससे दूनी मरिच तथा सबकी बराबर पके पान मिलाकर २–२ रोज़ घोटकर १–१ रत्ती की गोलियें बनाय छायामें सुखाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे विषमज्वर, वातरोग, वातमेह, श्वास, कास, क्षत, क्षय, कफरोग, पाण्डु, कामला, शूल, सन्निपात, अम्लपित्त, अजीर्ण, आमवात, अर्श, ग्रहणी, अरुचि, उदावर्त, आध्मान, सोमरोग, इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै॥ १६॥

१७ पञ्चलोहरसायनम्

मृताऽभ्रं कान्तलोहञ्च नागवङ्गौ सुमारितौ।
यथोत्तरं भागवृद्ध्या खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत्॥७९॥
तलपोटेन वाराह्या शतावर्या हिमाम्बुना।
भावनाऽत्र प्रकर्तव्या यामं याम पृथक् पृथक्॥८०॥
चणमात्रां वटीं कृत्वा नवनीतेन सेवयेत्।
प्रातरुत्थाय विधिना सर्वमेहकुलान्तकम्॥ ८१॥
शाल्यन्नं सपटोलञ्च तन्दुलीयकवास्तुकम्।
मत्स्याक्षीं मुद्गयूषञ्च ह्यपक्वं कदलीफलम्॥ ८२॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषमूत्रकृच्छ्राऽश्मरीं हरेत्।
कामलापाण्डुशोफांश्च ह्यपस्मारक्षतक्षयान्।
रक्तकासं विशेषेण पञ्चलोहरसायनम्॥ ८३॥

नि र, वै चि, व रा, प्रमेहे।

भाषा—अभ्रक १ भा, कान्तलोह २ भा, नाग ३ भा, वङ्ग ४ भा, इनकी भस्में लेकर तुवरक की जड़, वाराही, शतावर इनके अङ्गस्वरस से १–१ पहर घोटकर चने प्रमाण गोलियें बनाय छायाशुष्ककर रखलेवे। इनमें से १–१ गोली मक्खन के साथ सुबह में खानेसे समस्तप्रमेह, अर्श, ग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, कामला, पाण्डु, शोथ, अपस्मार, क्षत, क्षय, रक्तकास इनसबको यह नष्टकरता है। इसमें सफेद चावल, परवल, चौलाई, बथुवा, मछेछी, मूंग, कच्चाकेला, इनका शाक पथ्य है॥ १७॥

१८ पञ्चवक्त्रो रसः (मृत्युञ्जयः) १

शुद्धं सूतं विषं गन्धं मरिचं टङ्कणं कणा।
मर्दयेद्धूर्तजद्रावैर्दिनमेकन्तु शोषयेत्॥ ८४॥
पञ्चवक्त्रो रसो नाम द्विगुञ्जः सन्निपातहा।
अर्कमूलकषायं तु सत्र्यूषमनुपाययेत्॥ ८५॥
युक्तं दध्योदनं पथ्यं जलयोगञ्च कारयेत्।
रसेनाऽनेन शाम्यन्ति सक्षौद्रेण कफादयः॥ ८६॥
मध्वाऽऽर्द्रकरसञ्चानु पिबेदग्निविवृद्धये।
यथेष्टं घृतमांसाशी शक्तो भवति पावकः॥ ८७॥

र सं, र चि, र चं, सु प्र, वृ यो त, र क यो, भा प्र, वै. र, टो, भै. र., र. र स, यो म, चि. र, र. र. दी, नि. र., र सु, वै चि, रसायन सं, भै. सा, र. प्र. सु., शा स., व रा, र सि, र मु, र क ल, यो.–च., र प्र, वा, चि क्र, र. को., यो र, र का, र त., ज्वरे। रसायनसं पञ्चानन।

टि०–र स, भै र, र सु, र च, यो र, व रा, र त., एषु ग्रन्थेषु मृत्युञ्जय रस इति नाम स्थापितम्, परमाश्चर्यमेतद्यदेतेषु पाठद्वय स्थापितमनयो केवलोऽनुपाने विशेषोऽस्ति तज्ज्ञानार्थं मृत्युञ्जयस्य पाठोऽवस्तादृतोऽस्ति यथा—

अव्यक्त सिद्धिद शुद्धो रोगघ्न कीर्तिवर्धन।
यश प्रद शिव साक्षान्मृत्युञ्जयरस स्मृत॥
विषस्यैकस्तथा भागो मरिच पिप्पलीकणा।
गन्धकस्य तथा भागो भाग स्याट्टङ्कणस्य च॥
सर्वत्र समभाग स्याद्धिङ्गुलन्तु द्विभागिकम्।
चूर्णयेत्खल्वमध्ये तु मुद्गमाना वटीश्चरेत्॥
जम्बीरस्य रसेनाऽत्र कार्यं हिङ्गुलशोधनम्।
रसश्चैतसमभाग स्याद्धिङ्गुल नेष्यते तदा॥
गोमूत्रशोधितश्चात्र विष मोरविशोषितम्।
मृत्युरूप ज्वर हन्ति मृत्युञ्जयरस स्मृत॥
मृत्युर्विनिर्जितो यस्मात्तेन मृत्युञ्जयो रस।
मधुना लेहन प्रोक्त सर्वज्वरनिवृत्तये॥
दध्युदकाऽनुपानेन वातज्वरनिवर्हण।
आर्द्रकस्य रसै पान दारुणे सान्निपातिके॥
जम्बीरद्रवयोगेन ह्यजीर्णज्वरनाशन।
अजाजीगुडसयुक्तो विषमज्वरनाशन॥
तीव्रज्वरे महाघोरे पुरुषे यौवनान्विते।
पूर्णमात्रा प्रदातव्या पूर्णा वटिचतुष्टयम्॥
स्त्रीबालवृद्धक्षीणेषु चार्धमात्रा प्रकीर्तिता।
अतिवृद्धे च क्षीणे च शिशौ चाऽल्पवयस्यपि॥
तुर्यमात्रा प्रदातव्या व्यवस्था सारनिश्चिता।
नवज्वरे महाघोरे यामैकान्नाशयेद्ध्रुवम्॥

मध्यज्वर तथा जीर्णं त्रिरात्रान्नाशयेद्ध्रुवम् ।
सप्ताहात्सन्निपातोत्थ ज्वराजीर्णकमञ्जकम् ॥ इति ॥

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग और गन्धक, मरिच, भुनासुहागा, पीपल ये सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर धतूरेके पत्तोंके रससे एक रोज मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमें से १-१ गोली अदरखवगैरह के रस के साथ देकर ऊपर से ३ माशे आककी जड़की छाल के काढेमें ३ माशे त्रिकटु का चूर्ण मिलाकर पिलावे, ऊपर से दहीभात खानेको दे । अधिक दाह मालूम होनेपर मस्थेपर जलधाराका प्रयोग करे, तो इससे घोरसन्निपात नष्ट होता है । मधुके साथ देनेसे कफरोग निवृत्त होते है । मन्दाऽग्निमें मधु और अदरखके रसकेसाथ देनेसे अग्नि प्रवल होता है ॥ १८ ॥

१९ पञ्चवक्त्रो रसः (द्वितीयः)

सूतं गन्धं कर्षयुग्मप्रमाणं,
तत्पादांशां कारयेद्वै शिलाख्याम्,
व्योषं ताप्यं पिप्पलीं तत्समानां,
प्रत्येकं वै भेषजं चूर्णयेच्च ॥ ८८ ॥
भाव्यं पित्तैर्मत्स्यमायूरजैर्वै,
घर्मे कृत्वा सप्तवारं हि सम्यक् ।
गुञ्जायुग्मं भक्षित. पञ्चवक्त्रो
मूर्च्छां हन्यात्सन्निपातोद्भवां वै ॥ ८९ ॥

र. प्र सु , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक २-२ कर्ष, शुद्धमैनसिल, त्रिकटु, सोनामाखी और पीपल ये सव आधाआधा कर्ष लेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर मछली और मोरके पित्तोंसे धूपमें ७-७ भावनाएं देकर २-२ रत्तीकी गोलियें वनाकर सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे सन्निपातहराऽनुपान के साथ १-१ गोली देनेसे यह सन्निपातजमूर्च्छाको दूरकरताहै ॥ १९ ॥

२० पञ्चवक्त्रो रसः (तृतीयः)

मृतं सूतं मृतं ताम्रं हिङ्गु पुष्करमूलकम् ।
सैन्धवं गन्धकं तालं कटुकीं चूर्णयेत्समम् ॥ ९० ॥
पुनर्नवादेवदाल्योर्निर्गुण्डीमेघनादयोः ।
तिक्तकोपातकीद्रावैर्दिनैकं मर्दयेद् दृढम् ॥ ९१ ॥
माषमात्रं लिहेत्क्षौद्रै पञ्चवक्त्रो रसः स्मृतः ।
रक्तपित्तं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥ ९२ ॥

रसायन सं रक्तपित्ते ।

भाषा—पारा और ताम्रभस्म, भुनाहींग, पोहकरमूल, सेंधानमक, शुद्धगन्धक, रसमाणिक्य, कुटकी सव समभाग लेकर वारीक चूर्णकर पुनर्नवा, वंदाल, निर्गुण्डी, काटेवाली चौलाई, कड़वीतरोई, इनके स्वरसोंसे १-१ रोज़ मर्दनकर १-१ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुके साथ देनेसे यह रक्तपित्तको इसतरह नष्ट करता है जैसे कि सूर्य अन्धकार को नष्ट करता है ॥ २० ॥

२१ पञ्चवक्त्रो रसः (चतुर्थः)

सूतगन्धाऽमृतं स्वर्णवीजं तुल्यं समाहरेत् ।
त्र्यूषणं सर्वतुल्यं स्यान्मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥ ९३ ॥
पञ्चवक्त्रो भवेत्सूतो गुञ्जामात्रो ज्वरापहः ।
सिताऽऽर्द्रकरसेनैव भुक्तो मुद्गरसाशिनाम् ॥ ९४ ॥
समांश्च विषमान्हन्ति निम्बुनीरसितायुतः ।
अतिसारं महाघोरं रात्रिजागरणं परम् ॥ ९५ ॥

र , अतिसारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, वछनाग और धतूरे के वीज ये सव समभाग, त्रिकटु सव के वरावर लेकर वारीक चूर्णकर दो रोज़ सुखा अथवा पानीसे मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली शक्कर और अदरख के रसकेसाथ देनेसे यह ज्वरको दूरकरता है । इसमें पथ्य मूंगका यूष लेवे । नींबूके रस और शक्करके साथ लेनेसे यह सम और विषमज्वर, घोरअतिसार और रात्रिजागरणसे होनेवाले दोषोको दूर करता है ॥ २१ ॥

२२ पञ्चवक्त्रो रसः (पञ्चमः)

रसं गन्धकं तित्तिरीकं वराटं,
विषं टङ्कणं सर्वमेकत्र तुल्यम् ।
ततस्त्रैफलव्योषचूर्णेन युक्तं,
समं मर्दयेद्भृङ्गराजद्रवेण ॥ ९६ ॥
रसः पञ्चवक्त्राऽभिधानोऽयमेको-
जयेत्सन्निपातानशेषान् प्रयुक्तः ।
ततो वल्लमात्रं प्रयुञ्जीत युक्त्या,
ज्वरे वातिके श्लैष्मिके रक्तजे वा ॥९७॥

र शं., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और जमालगोटा, कौड़ीभस्म, शुद्धवछनाग, भुनासुहागा सव समभाग, इनसवकी वरावर त्रिफला और त्रिकटुका चूर्ण मिलाकर भंगरेके रससे १-२ रोज़ मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त सन्निपात, वातिक, श्लैष्मिक और रक्तविकारज ज्वर इनसवको यह नष्ट करता है ॥ २२ ॥

२३ पञ्चवक्त्रो रसः (षष्ठः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं गन्धपादश्च टङ्कणम् ।
ताम्रपात्रे क्षिपेत्पिष्ट्वा जयन्त्या मर्दयेद्द्रवैः ॥ ९८ ॥
तिलपर्णी तथा जाती पिप्पलीमूलपत्रकम् ।
द्रवैरेषाञ्च सप्ताहं पेष्यं शोष्यं पुनः पुनः ॥ ९९ ॥
ताम्रपात्रात्समुद्धृत्य कृत्वा गोलं विशोषयेत् ।
पञ्चवक्त्रो रसो नाम द्विगुञ्जः सन्निपातजित् ॥१००॥

अर्कमूलकषायश्च सन्यूषमनुपाययेत्।
सक्षीरं दापयेत्पथ्यं जलयोगञ्च कारयेत् ॥ १०१ ॥

र का, र को, सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ तोला, सुनासुहागा ३ माशे लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर तावेकी खरल अथवा कड़ाहीमें डालकर जैत, हुरहुर, चमेली, पिपलामूल, पत्रज, इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे सातरोज मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमें से १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानके साथ अथवा त्रिकटु मिलेहुए आककी जड़की छालकेकाढेकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै। इसकेदेनेसे अधिक दाह मालूम होनेपर सिरपर जलकी धारा देना ॥ २३ ॥

२४ पञ्चवक्त्रो रसः (सप्तमः)

सूतं गन्धं विषं तुल्यं नागं वङ्गं द्वयं द्वयम्।
पञ्चवक्त्ररसो नाम सन्निपातकुलान्तकः ॥ १०२ ॥

र क यो, सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और वछनाग १–१ भाग, नाग और वङ्गभस्म २–२ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर अदरखवगैरहके रससे १–२ रोज मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमें से १–१ गोली सन्निपातहरानुपानके साथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै ॥ २४ ॥

२५ पञ्चशरो रसः

रसेन युक्तं शाल्मलिजेन सूतं
त्रिसप्तवाराणि वलि विमर्द्य।
पृथक् तयोः कज्जलिकां विपक्वां
घृते रसः पञ्चशरोऽयमुक्तः ॥ १०३ ॥
वल्लोऽहिवल्लीदलसम्प्रयुक्तो-
वीर्यातिवृद्धिं कुरुतेऽस्य नूनम्।
मांसाऽन्नमद्य गुरुपायसञ्च
पयः पिवेन्माहिषमत्र सिद्धम् ॥ १०४ ॥

यो र, र.र दी, र सु, रसायनस, स्त्री वि, यो म, र क-रु (ना), रसायने वाजीकरणे च। रसायन सं (अनङ्गसुन्दरः)

भाषा—शुद्धपारे और गन्धकको अलग २ सेमलकेकन्दके रसमें तीन २१ दिन मर्दनकर सुखाकर दोनोंकी कज्जली बनाकर कड़ाहीमें थोडासा घी डालकर कज्जलीको गलाकर पर्पटी बनाले, फिर उस पर्पटीको सेमलकेरसमें २१ बार भावना देकर रखछोड़े। इसमेंसे २–३ रत्ती पके पानके साथ देकर ऊपर अधौटा गरम दूध पिलानेसे और मांसयुक्त अन्न, मद्य, खीर वगैरह देनेसे यह रसवीर्यकी वृद्धि करता है और आयुको बढाता है॥२५॥

२६ पञ्चसायकः

मृतं सूतं मृतं चाभ्रं सुशुद्धं दरदं तथा।
अहि[illegible] फेनं जातीपत्री च तत्फलम् ॥१०५ ॥
करहाटं तथा गोधा वानरी कोकिलाक्षकः।
एतानि समभागानि श्लक्ष्णे चूर्णीकृतानि च ॥ १०६ ॥
विजयाशाल्मलीमूलैरसितस्वर्णबीजकैः।
शताह्वापोस्तुमधुकनागवल्लीदलद्रवैः ॥ १०७ ॥
भागांशकर्पूरयुतो रसोऽयं पञ्चसायकः।
मात्रा वल्लद्वयी चाऽस्य मधुना त्रिफलायुता ॥ १०८ ॥
पथ्यं क्षीरं यथासात्म्यं गच्छेच्च प्रमदाशतम्।
निशामुखे रसो ग्राह्यो ह्यम्लवर्गञ्च वर्जयेत् ॥ १०९ ॥

रसायन सं, वृ यो. त, रसायने वाजीकरणे च।

टि०—गोधाख्यवनस्पतेरप्रसिद्धत्वात्प्रकरणौचितीमनुसृत्य यथाकथञ्चिदतिवलापत्रेषु गोधापदसादृश्यात्तन्मूलमत्र नियोजनीयत्वेनोक्तमिति सुधीभिर्विभावनीयम्

भाषा—पारद और अभ्रककी भस्म, शुद्धशिगरिफ, समुद्रशोष, शुद्धअफीम, जावित्री, जायफल, अकलकरा, अतिवला, (गुलसिकरीहि) केवाच के बीज, तालमखाना, ये सब समभाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर भाग, सेमर, कालेधतूरे के बीज, सोफ, पोस्तकेडोडे, मुलहठी, पान इनके रसोंसे १–१ भावना देकर सुखाकर सोलहवा हिस्सा शुद्धकपूर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ६–६ रत्तीकी मात्रा मधु और त्रिफलाके साथ देकर ऊपरसे दूध पिलानेसे सैकड़ों स्त्रियोंके साथ रमण कर सक्ताहै। इसका सेवन सन्ध्याकेसमय करना उचित है। इसमें अम्लवर्ग का सेवन निषिद्ध है ॥ २६ ॥

२७ पञ्चसारो रसः (पञ्चाननः) १

शुद्धं सूतं समं गन्धं धात्रीपत्रद्रवैर्दिनम्।
यष्टिखर्जूरद्राक्षाणां क्वाथेन मर्दयेद्दिनम् ॥ ११० ॥
पञ्चसाररसो नाम भक्षयेन्माषमात्रकम्।
धात्रीचूर्णं सितां चानु पिबेद्धृद्रोगजिद्भवेत् ॥ १११ ॥

र र, व रा, र का, र च, चि क्र, र सि, र सं, र कौ, ध, र सु, रसायनसं, र चि, र. क, यो. म, हृद्रोगे। र सं इत्यादिषु **पञ्चानने**ति नाम। र का, **पञ्चाऽमृते**ति नाम।

भाषा—शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर ताज़े आवलेके पत्तोंका रस, मुलहठी, खजूर और द्राक्षके क्वाथोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली खाकर ऊपरसे आवलेका चूर्ण और शक्कर खाकर दूध पीनेसे यह हृदयके रोगोंको दूरकरताहै ॥ २७ ॥

२८ पञ्चसारो रसः (द्वितीयः)

रसेन्द्रहेमाऽनललोहगन्धकं
समसमं भृङ्गरसेन मूर्च्छितम्
लघौ पुटे सिद्धिमुपैत्यथाऽऽज्यव-
न्मधुप्लुतं पथ्यभुजा निषेवितम् ॥ ११२ ॥
जयेज्ज्वरं पाण्डुगदप्रमेहा-
नष्टोदरार्शोग्रहणीविकारान्।
यक्ष्माणमुग्रं परिणामशूलं
हृद्रोगमाध्मानमुरःक्षतञ्च ॥ ११३ ॥

को प. (स.), प्रमेहे।

भाषा—शुद्धपारा, सुवर्णभस्म, चित्रक, लोहभस्म, शुद्धगन्धक ये सब समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भंगरेके रससे २–३ रोज़ मर्दनकर गोला बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर कपड़मिट्टीकर एकबालिस्तभरके खड्डेमें आंचदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती मधु और घीके साथ खिलानेसे ज्वर, पाण्डु, प्रमेह, आठ प्रकार के उदर, ववासीर, संग्रहणी, राजयक्ष्मा परिणामशूल इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २८ ॥

२९ पश्चाङ्गलोहम्

अथ जलप्लुतमद्रिजमायसे
विनिहितं मृदिनं धृतमातपे ।
तदनु भानुमयूखविशोषणाद्
दधिसराभमुपस्थितमूर्द्ध्वतः ॥ ११४ ॥
तदभिगृह्य खरांशुखरानना-
दनु विशोष्य विशोष्य मुहुर्मुहुः ।
दलितकज्जलकोज्ज्वलमादरा-
चपलधीर्विदधीत घनं रजः ॥ ११५ ॥
तदपरं पुनरन्यजलप्लुतं
तपनतापवशाद्धनताङ्गतम् ।
तदभिगृह्य च पूर्ववदर्यम-
त्विपि विशोष्य तदप्यथ चूर्णयेत् ॥ ११६ ॥
इति पुनःपुनरत्र शिलोद्भवे
विधिमुदारमतिर्विदधीत च ।
भवति यावदिदं जलसङ्गमा-
द्विगतरोगपरिग्रहविग्रहम् ॥ ११७ ॥
सृतमिदं यदि वा सलिलप्लुतं
घनपटे परिपूतमनेकधा ।
पुनरिदं मृदुपाकदशावशा-
त्कठिनतां गतमेव विचूर्णयेत् ॥ ११८ ॥
अथ तदर्कसुवर्णघनायसां
सममिदं ननु चूर्णमनेकधा ।
क्वथितवीरतरादिवरीवरा-
जलपरिप्लुतमातपशोषितम् ॥ ११९ ॥
पुनरिदं परिचूर्णितमादरान्-
मधुघृतान्वितमेव निषेवितम् ।
जयति शूलमथाऽनलमार्दवं
क्षयमुरःक्षतपाण्डुगुदाऽङ्कुरान् ॥ १२० ॥

लो.प (स.), उर क्षते ।

भाषा—शिलाजतुको लोहेकी कड़ाहीमें उबलते हुए पानीमें डालकर ग्रीष्मर्तुकी धूपमें छत वग़ैरह पर रख दे जहा कि सूर्योदयसे सूर्यास्त तक कड़ी धूप लगे । एक दो दिन वाद इसको खूब मसलडाले जिसमें कि कोई ककड़ी वाकी न रह जाय, हाथोंको गरम पानीसे उसीमें धो डाले, उस पानीपर मलाई के सदृश तह जमजायगी उसको वीरेसे निकालकर दूसरे लोहेके पात्रमें रखले और उस पानीको फिरसे खूब चलादे । दो चार दिन वाद फिर आईहुई पपड़ीको निकालकर चलादे, जब देखे कि पानी गाढ़ा-होगया तो फिर उसमें वही उवलता हुआ पानी डाल दे । ऐसे लगातार २ महीने तक करनेसे शिलाजतुका तमामहिस्सा पपड़ी होकर निकल आवेगा । उस पानीके नीचे निःसार धूल रह जायगी उसको फेंक देना और निकाली हुई पपड़ियोंको धूपमें सुखालेना । कदाचित् अधिक पानी रहगयाहो तो बहुतमन्द आंचसे गाढ़ा कर लेना यह शुद्ध शिलाजतु तैयार हुआ । इस विधिके करनेमें असमर्थ हो तो गरमपानीमें उबालकर गाढेवस्त्र अथवा फिल्टरिंगपेपर (Filtering paper) में कईवार छानकर अग्निपर पकाकर कठिन कर लेना । फिर शुद्धशिलाजतु, ताम्र, सुवर्ण, अभ्रक और लोहभस्म सब समभाग लेकर वीरतर्वादिगण, शतावर, त्रिफला इनके क्वाथोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर धूपमें सुखाकर रखछोड़े । इसमें से ४–४ रत्तीकी मात्रा मधु और घीके साथ मिलाकर खानेसे शूल, मन्दाग्नि, क्षय, उर क्षत, पाण्डु, ववासीर, श्वास, कास और प्रमेह इनसबको यह नष्ट करता है । वाजीकर और रसायन है ॥ २९ ॥

३० पश्चात्मको रसः (सूताभ्रयोगः)

मृतसूताऽभ्रकं ताम्रं गन्धकश्चाऽम्लवेतसम् ।
विषं फलत्रयं तुल्यं चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥ १२१ ॥
विषमुष्टिजयावासाविजयारक्तशालिनी-।
बृहतीजैर्महाराष्ट्रीधत्तूरपद्मपत्रजैः ॥ १२२ ॥
नन्द्यावर्ताऽमृताजम्बूक्वाथैर्नीलोत्पलद्रवैः ।
समांशं पश्चलवणं दत्त्वाऽऽर्द्रकरसेन च ॥ १२३ ॥
करञ्जेन्द्रयवास्तुल्यं पाययेदुष्णवारिणा ।
कर्षैकमनुपानं स्याद्वातशूलहरं परम् ॥ १२४ ॥

यो. म., र. सं, र. सु, घ, शूले ।

टि०–अत्र धातुवर्ग एक । अम्लवेतसादिर्द्वितीय । विषमुष्ट्यादिभिर्भावनात्मकस्तृतीय । समागपञ्चलवणमिश्रणरूपश्चतुर्थ । सर्वस्याऽऽर्द्रकरसेन भावनाऽऽत्मक पञ्चम । इथ येन केन प्रकारेण पश्चात्मकत्व निर्वोढव्यम । रसेन्द्रसारसङ्ग्रहादौ अर्द्धांश पञ्चलवणमिति पाठो दृश्यते । पर शूले समागलवणभागस्यैव ज्यायस्त्वम् ।

भाषा—पारद, अभ्रक, ताम्र इनकी भस्में, शुद्धगन्धक, अम्लवेत, शुद्धवछनाग, त्रिफला ये सब समभाग लेकर कपडछान चूर्णकर कुचिला, जैत, अडूसा, भाग, गोरखमुण्डी, भटकटैया, महाराष्ट्री (मराठी), धतूरा, पद्मपत्र, पीपल, गुडूची, जामुन, नीलोफर, इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर सुखाकर सबकी बराबर पाचोंनमक मिलाकर अदरखके रसकी २–३ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली लेकर करञ्ज और इन्द्रजवका समभाग चूर्ण १ तोला गरम पानीके साथ पिलानेसे यह वातशूलको दूरकरताहै ॥ ३० ॥

३१ पञ्चाननकल्पः

मृतं सूतं तथा गन्धं कान्तं चाऽभ्रकमेव च ।
ताम्रभस्म मृतं कर्ष निष्कार्धं शिखितुत्थकम् ॥१२५॥
सिन्दुवारस्य भृङ्गस्य पत्रचूर्णं पलत्रयम् ।
खादिरं द्विपलश्चैव सर्वं सञ्चूर्ण्य यत्नतः ॥ १२६ ॥
स्निग्धभाण्डे विनिःक्षिप्य द्विकालं भक्षयेत्सुधीः ।
निष्कार्धमात्रं सेवेत पथ्यं तक्रौदनं हितम् ॥ १२७ ॥
लवणक्षारकाऽम्लानि वर्जयित्वा निषेवयेत् ॥
त्रिकालसमुद्भूतं हन्ति स्नायुकसञ्ज्ञिकम् ॥ १२८ ॥

व रा, वै चि, स्नायुवाते ।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धगन्धक, कान्तलोह, अभ्रक और ताम्रभस्म ये प्रत्येक १ कर्ष, शुद्धतुत्थक २ मासे, संभालू और भंगरेकेपत्तोंका चूर्ण ३–३ पल, खैरसार २ पल, इनसवका वारीक चूर्णकर चिकने वर्तनमें रखछोड़े। इसमेंसे २–२ मासे दोनों वक्त पानीवगैरहके साथ खानेसे और छाछभात पथ्यसेवनकरनेसे वहुतदिनका भयाहुआ स्नायुकवात नष्टहोताहै। इसमें लवण, क्षार और अम्लपदार्थका परित्याग करदेना चाहिये ॥३१॥

३२ पञ्चाननज्वराङ्कुशो रसः

शम्भोः कण्ठविभूषणं समरिचं दैत्येन्द्ररक्तं रविः,
पक्षौ सागरलोचनं शशियुतं भागाऽर्कसंख्यान्वितम् ।
खल्वे तत्किल मर्दितं रविजलैर्गुञ्जैकमात्रं भजेत्,
सिद्धोऽयं ज्वरदन्तिदर्पदलनः पञ्चाननाऽऽख्यो रसः॥
पथ्यश्च देयं दधितक्रभक्तं,
सिन्धूत्थमौद्गं सितया समेतम् ।
गन्धाऽनुलेपो हिमतोयपानं,
दुग्धञ्च देयं त्वथ दाडिमाम्भः ॥ १३० ॥

र. मं, रससारसङ्ग्रह, रसायनसं, र का, यो चि, र मु, र को, र सं, यो म, भै र, यो सं., र. शं, र, र क ल, र क, ज्वरे ।

भाषा—शुद्धवछनाग २ भा०, मरिच ४ भा०, शुद्ध गन्धक २ भा०, शिंगरिफ १ भा०, ताम्रभस्म १२ भाग, लेकर वारीक चूर्णकर आकके अङ्गस्वरससे एकरोज मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली समयोचिताऽनुपानके साथदेकर दही, छाछ, भात, सेंधानमक, मूंग, शकर, इनका भोजन करानेसे यह समस्तज्वरोंको नष्ट करता है। इसके देनेके वाद अधिकदाह मालूमहोतो चन्दनवगैरहकालेप, ठंढापानी, दूध, अनार, ये देने चाहियें ॥ ३२ ॥

३३ पञ्चाननो रसः (प्रथमः)

सूतं गन्धकचित्रकं त्रिकटुकं मुस्ता विषं त्रैफलं,
चैतेभ्यो द्विगुणैर्गुडैश्च गुटिका वल्लप्रमाणा हरेत् ।
कुष्ठाऽष्टादशगुल्मशूलमुदरं शोफप्रमेहादिकं,
रोगानीककरीन्द्रदर्पदलने ख्यातो हि पञ्चाननः॥१३१

वै र, र मं, चि. र, र को, यो चि, र क ल, र. (मा), र शं, र मु, यो. म, र का, र. क यो., रसायनसं, ना वि, कुष्ठे ।

टि०—कुत्रचिन्मुस्ताविषचित्रकाणि नैव दृश्यन्ते, चित्रकस्थाने यत्र-कुत्रचित् गुडूची प्रक्षिप्ता यथा चिकित्साक्रमकल्पवल्ल्या, तत्र नाम च गजचर्मपञ्चानन इति स्थापित, तदेव रसकामधेनावपि स्थितम् । चिकित्सासार, रसायनस, र मु, एषु वातगजसिंह इति नाम, तत्र गुडस्थाने द्विगुणमार्कवरसेन भावना प्रदत्ता । रसकामधेनौ विषाऽभाव, गुडूच्या सर्ववस्तुसमता, गुडस्य द्विगुणभाव इति विशेषो दृश्यते । तथापि तत्र न रसान्तरता, तत्र पाठभ्रमादिह सर्वं निष्पन्नमिति प्रतिभाति, कुष्ठे विषमज्ञावस्याऽवश्यकत्वात्, किन्च विषरहितश्चेद्योग स्यात्तर्हि द्विगुञ्जिकी मात्रा न स्यादिति गूढ रहस्यम । र चि, र ल, र नु, रसायनम, र क, र मि, एतेषु रुजादलन इति नाम। र कौ, र क. ल, र को, एतेषु मेहदलनवटीति नाम । र मि, शम्भवीवटीति नाम, अहो कीदृगाश्चर्यं यदेकस्मिन्नेव पुस्तके एकस्यैव योगस्य विविधनामानि स्थापितानि, सर्वमेतदज्ञानविलसितमस्ति इति दिक् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, चित्रकमूल, त्रिकटु, नागरमोथा, शुद्धवछनाग, त्रिफला, ये सब समभाग लेकर सबसे दूना गुड मिलाकर २–२ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे १८ प्रकारके कुष्ठ, गुल्म, शूल, उदररोग, शोफ और प्रमेहादिक रोगसमुदाय इनसवको यह नष्ट करता है ॥ ३३ ॥

३४ पञ्चाननो रसः (द्वितीयः)

मृतं कान्तं सुवर्णञ्च शुल्वताराऽभ्रभस्मकम् ।
पृथगक्षमितं सर्वं पटचूर्णं कृतं मृदु ॥ १३२ ॥
रसगन्धककज्जल्या तुल्यया सह मर्दितम् ।
सार्धद्विपलमानेन ताप्यचूर्णेन मर्दयेत् ॥ १३३ ॥
द्विपलं मूषिकामध्ये विनिक्षिप्याऽऽलचूर्णकम् ।
ततस्तु कज्जलीं क्षिप्त्वा मनोह्वां तावतीं क्षिपेत्॥१३४॥
ततो निरुद्ध्य यत्नेन परिशोष्य पुटेन्निशि ।
पुटेन गजसञ्ज्ञेन स्वतःशीतं विचूर्णयेत् ॥ १३५ ॥
चतुर्गुणेन गन्धेन निर्मितां रसकज्जलीम् ।
क्षिप्त्वा पूर्वरसे लुङ्गवारिणा परिमर्दयेत् ॥ १३६ ॥
पचेत्कोडपुटेनैव दशवारमतः परम् ।
एवं तालककज्जल्या दशवारं पुनः पुनः ॥ १३७ ॥
ततश्च मृतवैक्रान्तभस्मना च कलांशतः ।
ततो विचूर्ण्य यत्नेन करण्डान्तर्विनिक्षिपेत् ॥१३८॥
इमं पञ्चाननन्नाम गुञ्जामात्रं प्रयोजयेत् ।
श्रेष्ठः सर्वरसेन्द्रेषु महारससमो गुणैः ॥ १३९ ॥
पथ्यासूरणशुण्ठीभिः सघृताभिर्निषेवितः ।
सर्वान् पाण्डुगदान्हन्ति कृतघ्न इव सत्कृतिम् ॥१४०॥
यक्ष्माणं जठरं हलीमकरुजं वातार्तिविड्बन्धनं,
कुष्ठञ्च ग्रहणीं ज्वरातिसरणं श्वासञ्च कासाऽरुची ।
श्लेष्मव्याधिमशेषतो गलगदान् दुर्नाम मन्दाऽग्नितां,
मेहं गुल्मरुजं च किं वहुगिरा हन्याद्गदान्दुस्तरान्॥१४१

सेव्यमाने रसे चाऽस्मिन् बिल्वमेकञ्च वर्जयेत् ।
स्वस्थः सर्वं समश्नीयाद्वद्दी पथ्यं गदापहम् ॥१४२॥

र. र. स, र. को., उदराधिकारे ।

भाषा—कान्तलोह, सुवर्ण, ताम्र, रजत और अभ्रक इनसबकी भस्में १-१ कर्ष, इनसबकी बराबर शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जली मिलाकर अच्छीतरह मर्दनकर २॥ पल शुद्ध-सोनामाखी मिलाकर सबकी कज्जली बनाले, फिर वज्रमूषामें २ पल हरितालका चूर्ण बिछाकर इसकज्जलीको ऊपर बिछादे। इसपर २ पल शुद्ध मॅनसिलका बारीकचूर्ण बिछाकर कपडमिट्टी कर अच्छीतरह सुखाकर रात्रिमें गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्ग-शीतल होनेपर १ कर्ष शुद्धपारेमें ४ कर्ष शुद्धगन्धक मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर पूर्वरसमें मिलाकर बिजोरेके रससे एकरोज़ मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर अच्छीतरह कपड़मिट्टी देकर सुखाकर वराहपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् कज्जली मिलाकर मर्दनकर वराहपुटमें आंचदे। ऐसे दस-बार आंचदेकर १ कर्ष पारे और ४ कर्ष हरितालकी कज्जली बनाकर पूर्वकी तरह १० आंचें दे। स्वाङ्गशीतल होनेपर इसमें सोलहवां हिस्सा वैक्रान्तभस्म मिलाकर शीशीमें रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा हर्रे, सूरण और सोंठ इनके ३ माशे चूर्ण और घीके साथ अथवा तत्तद्रोगहरानुपानके साथ मिला-कर देनेसे समस्त पाण्डुरोग, यक्ष्मा, उदररोग, हलीमक, वात-रोग, विड्विबन्ध, कुष्ठ, ग्रहणी, ज्वर, अतिसार, श्वास, कास, अरुचि, श्लेष्मरोग, गलरोग, बवासीर, मन्दाग्नि, प्रमेह, गुल्म इत्यादि समस्तरोगोंको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे कृतघ्नआ-दमी कृतोपकारको नष्टकरताहै। इसके सेवनमें केवल बेल नहीं खाना। विशेषकर वर्तमान रोगोंको दूरकरनेवाली चीज़ों का सेवन करना चाहिये ॥ ३४ ॥

३५ पञ्चाननो रसः (तृतीयः)

लोहाऽभ्रगन्धाऽरुणपारदानां
समं रजो वर्तुलपर्णिकायाः ।
द्रवेण सिक्तं लघुना पुटेन
प्रसाधितं क्षौद्रघृताऽवगाढम् ॥ १४३ ॥
निषेवितं तद्विधिना नराणां
निहन्ति पाण्डूदरशोथमेहान् ।
हलीमकं कामलिकाऽतिसार-
मर्शांसि कुष्ठानि च वह्निमान्द्यम् ॥ १४४ ॥

लो. प (स) पाण्डुरोगे ।

भाषा—लोह और अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, शिगरिफ और पारद ये सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर **वर्तुल-पर्णिका** (इसका पत्ता ब्राह्मीके आकारका गोल छत्री जैसा होता है और पीला फूल आता है प्रायः जलके किनारे रहती है पत्तेका रंग पीला रहता है दूरसे देखनेमें ग्रीष्मऋतुकी ब्राह्मीका सन्देह होता है पर यह स्वतन्त्रचीज़ है ब्राह्मीका पत्ता कटाहुआ रहता है इसका समग्र गोल और अक्षत रहता है, ब्राह्मीकी लता चलतीहै इसके पत्ते खड़े रहते हैं लता नहीं होती) के रससे मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आंच देकर स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा घी और मधुकेसाथ मिलाकर खानेसे पाण्डु, उदर, शोथ, प्रमेह, हलीमक, कामला, अतिसार, बवासीर, कुष्ठ और मन्दाग्नि ये सब नष्टहोतेहैं ॥ ३५ ॥

३६ पञ्चाननो रसः (चतुर्थः)

गौरं म्लेच्छं रसं गन्धं गोलाञ्च सुपवीरसैः ।
मर्दनं त्रिदिनं कार्यं शुल्वपत्रेषु लेपयेत् ॥ १४५ ॥
वालुकाऽऽख्ये पचेद्यन्त्रे सम्यग्यामचतुष्टयम् ।
स्वाङ्गशीतं समुत्तार्य सताम्रं परिमर्दयेत् ॥ १४६ ॥
गुञ्जाद्वयमितः सूतः ससितो विषमज्वरम् ।
शीतोष्णपूर्वं सहसा जयेत्पञ्चाननो रसः ॥ १४७ ॥
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च तथा त्रिदिवसज्वरम् ।
चातुर्थिकं महाघोरं दुग्धभक्ताशिनां द्रुतम् ॥ १४८ ॥

र., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध सोमल, शिगरिफ, पारा, गन्धक और मैन सिल सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंगलीकरेलेके रससे ३ रोज़ मर्दनकर सबके बराबर शुद्ध तांबेके कण्टकवेधी पत्रोंपर लेपकर सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख ४ पहरकी तीक्ष्ण अग्नि देकर स्वाङ्गशीतल होनेपर निका-लकर तांबेसहित मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे २-२ रत्तीकी मात्रा शक्करके साथ देनेसे विषमज्वर, शीत और उष्णपूर्वक-ज्वर, एकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक इनसबको यह दूर करता है। पथ्य दूध और भातदे ॥ ३६ ॥

३७ पञ्चाननो रसः (पञ्चमः)

प्रत्येकं पिचुरीशगन्धतपनाऽयष्टङ्कणं सैन्धवं,
तुत्थं तीक्ष्णहलाहलावथ पले वैश्वानरश्रेष्ठयो ।
शुद्धो गुग्गुलुरञ्जलिर्घृतयुजामेषां द्विमाषा वटी,
सा श्रेष्ठा कथिताऽऽमवातपवनाऽऽतङ्केभपञ्चाननः ।

रसायनसं, आमवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, लोहभस्म, भुनासुहागा, सैन्धव, शुद्धतुत्थ, फोलादभस्म, सर्पविष अथवा शुद्धवछनाग ये सब १-१ कर्ष, चित्रक और त्रिफला १-१ पल लेकर बारीकचूर्ण कर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलावे, फिर १६ तोले गुग्गुलुको थोड़ासा घी देकर कूटे, जब इसका द्रव हो जाय तब पूर्वोक्तचूर्ण थोड़ा थोड़ा डालकर कूटे, जब सबचीजें मिलजाय तब २-२ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह आमवात और वातव्याधियोंको नष्ट करता है ॥ ३७ ॥

३८ पञ्चाननो रसः (षष्ठः)

सूतं गन्धं मृतं लोहं मृतमभ्रं समांशिकम्।
सर्वेषां द्विगुणं वङ्गं मधुना मर्दयेद्दिनम् ॥ १५० ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय शीततोयं पिबेदनु।
प्रमेहान्विंशतिं हन्ति मूत्राघातांस्तथाऽश्मरीम् ॥
मूत्रकृच्छ्रं हरेदुग्रमयं पञ्चाननो रसः॥ १५१ ॥

भै. र, प्रमेहे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, लोह और अभ्रकभस्म सब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर सबसे दूनी वङ्गभस्म डालकर एकरोज मधुमें मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली प्रात कालमें ठंडे पानीके साथ देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, मूत्राघात, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३८ ॥

३९ पञ्चाननो रसः (सप्तमः)

रौप्यलौहवियद्वज्राऽऽकल्लकं समभागिकम्।
वरीविदारीमुशलीद्रावैः पञ्चाननो भवेत् ॥ १५२ ॥
सर्वरोगविनिर्णाशी रामाऽऽह्लादनतत्परः।
प्रमदाशतमभ्येति जरादोषविवर्जितः ॥ १५३ ॥

रसावतार (मा०), वाजीकरणे।

भाषा—रजत, लोह, अभ्रक, हीरा इनसबकीभस्में और अकलकरा समभागलेकर शतावर, विदारी और मुशली इनके स्वरसोंसे कमसेकम २१ रोज़ मर्दनकर आधी आधी रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली पानवगैरहमें खानेसे समस्तरोग और वलीपलितको दूरकर सैकड़ों स्त्रियोंके साथ सम्भोगकरनेकी शक्तिको देताहै ॥ ३९ ॥

४० पञ्चाननवटी (प्रथमा)

स्वर्णताराऽर्ककान्तश्च तीक्ष्णचूर्णं समंसमम्।
द्वन्द्वमेलापलिप्तायां मूषायां चाऽन्धितं धमेत् ॥१५४॥
तत्खोटं चूर्णितं कृत्वा चाऽभिषिक्तं तु पूर्ववत्।
समुखे जारयेत्सूते यावत्पञ्चगुणं क्रमात् ॥ १५५ ॥
दिव्यौषधद्रवैस्तं तु मर्दयेद्दिवसत्रयम्।
अन्धमूषागतं ध्मातं जायते गुटिका शुभा ॥ १५६ ॥
नाम्ना पञ्चानना धार्या वक्त्रे संवत्सरावधि।
वलीपलितनिर्मुक्तो दीर्घमायुरवाप्नुयात् ॥ १५७ ॥
हस्तिकर्ण्याः समूलायाश्चूर्णं मध्वाज्यसंयुतम्।
स्निग्धभाण्डे तु तद्बद्ध्वा धान्यराशौ निवेशयेत् ॥
त्रिसप्ताहात्समुद्धृत्य पलैकं भक्षयेदनु ॥ १५८॥

र सं, रसायने।

भाषा—सुवर्ण, रजत, ताम्र, कान्तलोह, फोलाद, इन सबका बारीक चूर्ण समभाग लेकर नागवङ्गलिप्तमूषामें बन्दकर ४ पहर धमन करानेसे यह खोट तैयार होगा, फिर इसे दिव्यौषधियोंके क्वाथ अथवा स्वाङ्गद्रवसे ७–८ दिनतक मर्दनकर बुभुक्षित पारदमें क्रमसे पञ्चगुण जारणकर पारदको दिव्यौषधियोंके द्रावमें ३ दिन मर्दनकर स्वाभीष्ट आकारकी गोली बनाय अन्धमूषामें धमनकरानेसे यह गोली तैयार होगी। इसको एकसालभर रोजाना २–४ घंटे मुंहमें रखकर हस्तिकर्णपलाशके पञ्चाङ्गका चूर्णकर इसमें मधु और घृत अन्दाज़माफिक डालकर घृतके भाण्डमें बन्दकर धान्यराशिमें २१ रोजतक रखकर गोली रखनेके बाद १–१ पल भक्षण करनेसे वलीपलितसे निर्मुक्त होकर दीर्घजीवी होता है ॥ ४० ॥

४१ पञ्चाननवटी (द्वितीया)

शुद्धं सूत पलार्धञ्च तत्समं शुद्धगन्धकम्।
तयोः समं ताम्रपत्रं लिप्त्वा मूषान्तरे क्षिपेत ॥१५९॥
आच्छाद्य पञ्चलवणैर्लिप्त्वा गजपुटे पचेत्।
सिद्धं ताम्रं समादाय पलमेकं विमर्दयेत् ॥ १६० ॥
पारदस्य पलञ्चैव गन्धकस्य पलन्तथा।
पुटदग्धस्य लोहस्य गगनस्य पलंपलम् ॥ १६१ ॥
यमानी शतपुष्पा च त्रिकटु त्रिफलाऽपि च।
त्रिवृता चविका दन्ती शिखरी जीरकद्वयम् ॥ १६२॥
एतेषां पलिकैर्भागैर्घण्टकर्णकमानकम्।
ग्रन्थिकं चित्रकञ्चैव कुलिशानां पलार्धकम् ॥ १६३ ॥
आर्द्रकस्वरसैः पिष्ट्वा गुटिकां माषकोन्मिताम्।
पञ्चाननवटी ख्याता सर्वरोगविनाशिनी ॥ १६४ ॥
अम्लपित्तमहाव्याधिनाशिनी च रसायनी।
महाऽग्निकारिका चैषा परिणामव्यथापहा ॥ १६५ ॥
शोथपाण्ड्वामयाऽनाहप्लीहगुल्मोदरापहा।
गुरुवृष्याऽन्नपानानि पयोमांसरसा हिताः ॥ १६६ ॥

भै. र, र र, अम्लपित्ते।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक आधा आधापल लेकर बिजोरे वगैरहके रससे मर्दनकर एकपल शुद्धतांबेके पत्रोंपर लेपकर सुखाकर शरावसम्पुटमें लवणके बीचमें बन्दकर शरावपर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर गजपुटकी आच दे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर शुद्ध पारा, और गन्धक, लोह, अभ्रक, इनकी भस्में १–१ पल लेकर अजवाइन, सौंफ, त्रिकटु, त्रिफला, निशोत, चव्य, दन्तीमूल, अपामार्ग, दोनोंजीरे इनका चूर्ण १–१ पल, घण्टकर्ण (पहाड़ीभाषामें घनेली नाम लता प्रसिद्ध है अभावमें हंस अथवा व्याघ्रनखी) मानकन्द, गठिवन (अभावमें पिपलामूल), चित्रक, हड़जोड, ये प्रत्येक २ तोले लेकर सबके बारीकचूर्णको पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर अदरखके रससे १–२ रोज़ मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियें बनाय छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे भयंकर अम्लपित्त, मन्दाग्नि, परिणामशूल, शोथ, पाण्डु, आनाह, प्लीह, गुल्म और उदररोग इनको दूरकर रसायनका काम करती है। इसमें भारी गरिष्ठ तथा वाजीकर अन्नपान, दूध और मांसरस ये पथ्य हैं ॥ ४१ ॥

४२ पञ्चामृतचूर्णम्

पारदं गन्धकं लोहं ताम्रमभ्रकमेव च ।
एषां माषकमेकैकं जम्बीरद्रवभावितम् ॥ १६७ ॥
देयं त्रिकटुना तुल्यं सम्यग्गुञ्जाचतुष्टयम् ।
तप्ततोयानुपानेन वह्निमान्द्यहरं परम् ॥ १६८ ॥

र. र., र. बो , अजीर्णे ।

भाषा—शुद्ध पारा तथा गन्धक, लोह, ताम्र और अभ्रक-भस्म सबसमभागलेकर जंभीरीके रससे मर्दनकर ४–४ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली त्रिकटुके चूर्णकेसाथ मिलाकर देवे और ऊपरसे गरमपानी पिलावे तो उससे मन्दाग्नि, शूल, श्वास, कास और वातरोग दूरहोवें ॥ ४२ ॥

४३ पञ्चामृतपर्पटी (प्रथमा)

अष्टौ गन्धकमाषका रसदलं लोहं तदर्धं शुभं,
लोहार्धञ्च वराऽभ्रकं सुविमलं ताम्रं तथाऽभ्रार्धकम् ।
पात्रे लोहमये च मर्दनविधौ चूर्णीकृतञ्चैकतो,
दर्व्या बादरवह्निनाऽतिमृदुना पाकं विदित्वा दले१६९
रम्भाया लघु ढालयेन्मृदुरियं पञ्चामृता पर्पटी,
ख्याता क्षौद्रघृतान्विता प्रतिदिनं गुञ्जाद्वयाद्वर्द्धिता ।
लोहे मर्दनयोगतः सुविमलं भक्ष्यक्रिया लोहवत्,
गुञ्जाष्टावथवा त्रिकं त्रिगुणितं सप्ताहमेवं भजेत् १७०
नानावर्णग्रहण्यामरुचिसमुदये दुष्टदुर्नामकाऽऽदौ,
छर्द्यां दीर्घाऽतिसारेज्वरभरकलिते रक्तपित्ते क्षयेऽपि ।
वृष्याणां वृष्यराशी वलिपलितहरा नेत्ररोगैकहन्त्री,
तुन्दं दीप्तस्थिराग्निं पुनरपि नवकं रोगिदेहं करोति
पाकोऽस्यास्त्रिविधः प्रोक्तो मृदुर्मध्यः खरस्तथा
आद्ययोर्दृश्यते सूतः खरपाके न दृश्यते ॥ १७२ ॥
मृदौ न सम्यग् भङ्गोऽस्ति मध्ये भङ्गश्च रौप्यवत् ।
खरेऽलघुर्भवेद्भङ्गो रूक्षः श्लक्ष्णोऽरुणच्छविः ॥
मृदुमध्यौ तथा खाद्यौ खरस्त्याज्यो विषोपमः १७३

र सं , र. चं , भै र., र चि., र सु , वै. क., र. र , रससारसं , रसायनसं., र. क., र. का , यो. म , ग्रहण्यधिकारे । रससारसङ्ग्रहे लोहाऽभ्राऽर्करसान् समान्भागान्नियोज्य गन्धको द्विगुणो नियोजित इति विशेष ।

भाषा—शुद्ध गन्धक ८ मासे, शुद्ध पारा ४ मा , लोह २ मा., अभ्रक १ मा , ताम्रभस्म ४ रत्ती लेकर लोहेके पात्रमें लोहेके डंडेसे मर्दनकर नीलवर्ण कज्जली तैयारकरे । फिरलोहेकी कड़ाहीमें थोड़ा घी लगाकर बेरके कोयलों पर गलावे, गलनेपर ताज़े गोबर-पर रक्खेहुए ताज़े केलेके पत्तेपर डालकर ऊपर दूसरा पत्ता रख गोबरसे दबादे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे घी और मधुकेसाथ २–२ रत्ती लोहेके बर्तनमें घोटकर खावे और रोज़ाना २–२ रत्ती बढ़ावे । ४–८ अथवा २१ रत्ती तक सातरोज़में मात्रा पूरीकरनेसे नानातरहकी ग्रहणी, अरुचि दुष्ट बवासीर, छर्दि, बहुतदिनका अतिसार, ज्वरसमुदाय, रक्त-पित्त, क्षय, वली पलित, नेत्ररोग, मन्दाग्नि, मेद इनसबको दूर-कर रोगीके शरीरको नया बनादेतीहै । इस पर्पटीका मृदु, मध्य और खर तीनतरहका पाकहोताहै; मृदुमें अच्छीतरह भङ्गनहीं होता, मध्यमें चादीकीतरह चमकदार टुकड़े होतेहैं, खरमें रूक्ष, चिकने और ललाईलियेहुए टुकड़े होते हैं । मृदु और मध्यमें पारा नज़र आताहै खरपाकमें नज़र नहीं आता । मृदु और मध्य खाने चाहियें, खरपाकको ज़हरकी तरह छोड़देना चाहिये ॥ ४३ ॥

४४ पञ्चामृतपर्पटी (द्वितीया)

पलपरिमितशुद्धं पारदं कर्षमेकं,
बलिमपि परिशुद्धं सूततुल्यञ्च सूर्यम् ।
मृतमथ शिववीर्यं कण्ठगं तस्य तुल्यं,
परिमृदितमशेषं तद्दिनैकं ततश्च ॥ १७४ ॥
बलिमथ सकलांशं मर्दयेद्वा दिनैकं,
पुनरथ परिशुष्कं घर्ममध्ये विशोष्य ।
अपि घृतपरिलिप्ते लोहपात्रे विपाच्य,
द्रुतमखिलमदस्तन्माचिकापत्रखण्डे ॥ १७५ ॥
प्रपतितमथ पत्रोत्थापितं पर्पटी सा,
हरति च गजचर्माऽऽतङ्कमेवंप्रभावा ।
अखिलगदगणानां नाशिनी नित्यमुक्ता,
द्रवमनुपरिसेवेद्वाकुचीनाञ्च तस्याः ॥१७६॥

चि. क , कुष्टे ।

टि०—अस्मिन्योगे मर्दनशोषणस्याऽऽगतत्वान्मर्दनद्रवस्याऽकथितत्वात्त्र केन द्रवेण मर्दनं कर्तव्यमित्याकाङ्क्षाया उत्थितत्वात् पर्पटीपातन माचिकापत्रके कृतम् । अनुपाने वाकुचीद्रवो नियोजित इति प्रकरणपर्यालोचनेन सन्निहितत्वाद् द्रवद्वयमत्र मर्दने नियोजितमिति सुधीभिराकल्नीयम् । चर्मभेदिरसेन माकमापाततोऽस्य साम्य प्रतीयते परन्तु गन्धकादीना प्रमाणस्य वैचित्र्याद्भावनाया विशेषत्वाच्चर्मभेदिरसे पारदभस्मनोऽनागतत्वाच्च स्वतन्त्र एवाऽय रस इति ज्ञातव्यम् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ पल, शुद्धगन्धक १ कर्ष, ताम्रभस्म, पारदभस्म और शुद्धवछनाग १–१ पल लेकर सबकी नीलवर्ण कज्जलीकर मकोय और बाकुचीकेरससे १–१ रोज़ मर्दनकर धूपमें सुखाय कज्जलीकी बराबर शुद्धगन्धक देकर १–१ रोज़ द्रवोंसे मर्दनकर धूपमें अच्छीतरह सुखालेवे । फिर लोहेकी कड़ाहीमें थोड़ा घी डालकर बेरके कोयलोंपर कज्जलीको गरमकरे, घीकी तरह द्रवहोनेपर ताज़े गोबरपर रक्खे हुए मकोयके पत्तोंकी राशिपर इसे डालकर ऊपरसे मकोयके बहुतसे पत्तोंकी तह जमाय ताज़े गोबरसे दबादे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्ती घी और मधुकेसाथ सेवनकर ऊपरसे बाकुचीका क्वाथ पीवे । रोज़ाना २–२ रत्ती बढ़ाता जाय । ऐसे २१ रोज़तक बढ़ाकर बैसेही कम करे और पूर्वोक्त-पथ्यका पालनकरे तो यह गजचर्मको दूरकरदेती है और तत्तद्रोग-हरानुपानकेसाथ देनेसे अन्य तमामरोगोंको नष्टकरती है ॥४४॥

४५ पञ्चामृतपर्पटी (तृतीया)

सूतकं भागमेकन्तु द्वौ भागौ गन्धकस्य च।
भागमेकं क्षिपेल्लोहं भागैकं ताम्रमेव च ॥ १७७ ॥
द्विभागं गगनं दद्यात्सर्वं कज्जलसन्निभम्।
आयसे पाचयेत्पात्रे रम्भापत्रे विनिःक्षिपेत् ॥१७८॥
ऊर्ध्वाऽधो गोमयं दत्त्वा पर्पटीरससिद्धये।
कासातिसारज्वरनुत्कामलापाण्डुमेहजित ॥ १७९ ॥

चि र, र वो, कासेऽतिसारे च।

भाषा—शुद्धगन्धक और अभ्रकभस्म २–२ भा., शुद्धपारा लोह और ताम्रभस्म १–१ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर लोहेके पात्रमें प्रथमपर्पटीकी तरह तैयारकर उसीतरह २–२ रत्तीसे अथवा रोगीकी शक्तिके अनुसार २१ रोजतक बढावे और वैसेही कमकरे तो कास, अतिसार, ज्वर, कामला, पाण्डु और प्रमेह इनको यह नष्ट करती है ॥ ४५ ॥

४६ पञ्चामृतपर्पटी (चतुर्थी)

सुवर्णं रजतं ताम्रं सत्त्वाऽभ्रं कान्तलोहकम्।
क्रमवृद्धमिदं सर्वं शाणेयौ नागवङ्गकौ ॥ १८० ॥
द्रावयित्वैकतः सर्वं रेतयित्वा ततश्चरेत्।
पृथक् पलमितं गन्धं शिलाऽऽलं विनिधाय च॥१८१॥
सर्वं खल्वे विनिक्षिप्य मर्दयेदम्लवर्गतः।
ताप्यं नीलाञ्जनं तालं शिलां गन्धञ्च चूर्णितम्॥१८२॥
दत्त्वा दत्त्वा पुटेत्तावद्यावद्विंशतिवारकम्।
लोहाद् द्विगुणसूतेन ततो द्विगुणगन्धतः ॥ १८३ ॥
विधाय कज्जलीं श्लक्ष्णां क्षिप्त्वा तां लोहपात्रके।
द्रावयेद्बदराङ्गारैर्मृदुभिश्चाऽथ निक्षिपेत ॥ १८४ ॥
हेमादिपञ्चलोहानां भस्म चाऽथ विलोडयेत्।
अथ तत्कदलीपत्रे गोमयस्थे विनिक्षिपेत् ॥ १८५ ॥
पत्रेणाऽन्येन संच्छाद्य कुर्याद्यत्नेन पर्पटीम्।
तस्योपरि क्षिपेत्सद्यो गोमयं स्तोकमेव च ॥१८६॥
ततः शीतं समाहृत्य पटपूतं विधाय च।
निक्षिपेदूर्ध्वदण्डायां पालिकायां ततः परम् ॥१८७॥
पूर्ववद्बदराङ्गारैर्मृदुभिर्द्रावयेच्छनैः।
तुल्याऽऽलकशिलागन्धं पलार्धविषभावितम् ॥१८८॥
पूर्वपर्पटिकातुल्यं तस्मादल्पं मुहुर्मुहुः।
जारयेत्पालिकामध्ये दह्येत च न पर्पटी ॥ १८९ ॥
पालिकेतिविनिर्दिष्टा स्नेहक्षेपणयन्त्रिका।
जीर्णे तालादिके चूर्णे पटपूतं विधीयताम् ॥ १९० ॥
पूतीकरञ्जषट्कोलव्याघ्रीशोभाञ्जनाद्भिभिः।
एतैः पञ्चपलैः क्वाथं षोडशांशाऽवशेषितम् ॥१९१॥
तेन क्वाथेन संस्वेद्य शोषयेत्सप्तधा हि ताम्।
विषतिन्दुफलोद्भूतै रसैर्निर्गुण्डिकोत्थितैः ॥ १९२ ॥
विभाव्य पलिकामध्ये क्षिप्त्वा बदरपावके।
ईषत्प्रस्वेदनं कृत्वा स्थापयेदतियत्नतः ॥ १९३ ॥
उक्ता भैरवनाथेन स्यात्पञ्चामृतपर्पटी।
व्योपाऽऽज्यसहिता लीढा गुञ्जाबीजेन सम्मिता १९४
सर्वलक्षणसम्पूर्णं विनिहन्ति क्षयाऽऽमयम्।
श्वासं कासं विसूचीश्च प्रमेहमुदराऽऽमयान् ॥१९५॥
अरोचकञ्च दुःसाध्यं प्रसेकं छर्दिदुर्द्दमम्।
सर्वजं गुदरोगञ्च शूलकुष्ठान्यशेषतः ॥ १९६ ॥
वातज्वरञ्च विद्रधिं ग्रहणीं कफजान्गदान्।
एकद्वन्द्वत्रिदोषोत्थान् रोगानन्यान्महागदान् ॥१९७॥
अग्निमान्द्यं विशेषेण हन्तीयं पर्पटी ध्रुवम्।
एवं समूह्य दातव्या रोगेषु भिषगुत्तमैः ॥ १९८ ॥
तत्तद्रोगहरैर्योगैस्तत्तद्रोगाऽनुपानतः।
क्षयादिसर्वरोगघ्नी स्यात्पञ्चामृतपर्पटी ॥ १९९ ॥
तैलसर्षपबिल्वाऽम्लकारवेल्लकुसुम्भकम्।
त्यजेत्पारावतं मांसं वृन्ताकं कुक्कुटं तथा ॥ २०० ॥

र र स, र सु, र को, राजयक्ष्मणि।

टि०—रत्नराजसुन्दरे शाणेयौ नागवङ्गकावित्यारभ्य सर्वं खल्वे विनिक्षिप्य इत्यन्तस्त्रुटितः पाठोऽस्ति। अत्र ताप्यं नीलाञ्जनं तालं शिलां गन्धञ्च चूर्णितमित्यत्र प्रमाणाऽभावोऽस्ति, अतः पृथक् पलमिति पूर्ववाक्यमेव परामर्शनीयं, ततश्च प्रत्येकं पलपरिमितानां ताप्यादिपञ्चद्रव्याणां विंशतिकर्षकाणि द्रव्याणि भवन्ति, तेषाञ्च विंशतिभागान् प्रकल्प्य प्रत्येकपुटे कर्षं द्रव्यं प्रक्षिप्य पुटानि देयानीति व्यवस्था करणीया। तुल्याऽऽलकशिलागन्धं पलार्द्धविषभावितमित्यत्राऽपि तदेव प्रमाणमनुसरणीयम्, अयमेवार्थं विस्पष्टयितुं पूर्वपर्पटिकातुल्यमिति दत्तमस्ति। कैश्चिन्महाशयैस्तु पलार्धमिति छेदं विधाय प्रत्येकं पलार्धमित्यर्थः कृतोऽस्ति, परन्तु तथाकरणे पूर्वपर्पटिकातुल्यमित्यस्याऽसङ्गतिः स्यादिति प्रत्यक्षविरोध इति सहृदयैराकलनीयम्।

भाषा—सुवर्ण १ कर्ष, रजत २ क, ताम्र ३ क, अभ्रक सत्त्व ४ क, कान्तलोह ५ क, नाग और वङ्ग ४–४ माशे लेकर सबको इकट्ठे गलाकर बारीकरेता करले, फिर शुद्धगन्धक मैनसिल और हरिताल ४–४ कर्ष मिलाकर सबको इकट्ठे मिलाय अम्लवर्गमें १–२ रोज मर्दनकर सोनामाखी, सुरमा, हरिताल, मैनसिल और गन्धक ४–४ कर्षका मिलकर चूर्ण एक कर्ष डाल कर अम्लवर्गसे मर्दनकर छोटीछोटी टिकिया बनाकर सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ५ सेर कण्डोकी आचदे, एसे सातपुट देनेके बाद १–१ सेर प्रत्येक पुटमें कण्डे बढाता-जाय ऐसे ताप्यादिकोंका प्रक्षेप देदेकर २० पुटें देवे, फिर १० कर्ष शुद्धपारा और २० कर्ष शुद्ध गन्धक की नीलवर्णक-जलीको लोहेकेपात्रमें घी लगाकर बेरके कोयलोंपर रखकर गलावे, इसकी द्रुति होजानेपर पूर्वसिद्धकिये हुए रसको इसमें डालकर चलावे, एकजीवहोनेपर गोबरपर रक्खेहुए केलेके पत्तेपर डालकर दूसरा केलेकापत्ता ऊपरसे रखगोबरसे टकदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर कपडछानचूर्णकर तैल, घी निकालनेकी लंबे डंडेकी पलीमें इसचूर्णको डालकर बेरकेकोयलोंपर रखकर गलावे और हरिताल, मैनसिल तथा गन्धक १–१ पल लेकर बारीक चूर्णकर आधेपल वत्सनागके काढ़ेसे मर्दनकर सुखाकर

इसमेंसे थोड़ा थोड़ा द्रुतकज्जलीमें डालकर चलाताजाय पर यह ध्यान रक्खे कि पलीवालीपर्पटी न जलने पावे। जब तालादिचूर्ण समग्र समाप्त होजाय तब इसको ठंडाकर कपड़छानचूर्ण करले, फिर घुडकरञ्ज, पद्मपण, भटकटैया और सहिजनकी जड़की छाल, ये प्रत्येक ५-५ पललेकर १६ सेर पानीमें षोडशांशावशेष क्वाथकर इस क्वाथकेसात विभागकर पलीमें १-१ भागको सुखाकर दवाको धूपमें सुखादेवे। फिर मर्दनकर दूसराभागक्वाथका डालकर सुखावे, इसीतरह सातों भागोंको सुखावे, फिर कुचिला और निर्गुण्डीके पत्तोंका रस डालकर १-१ वार पलीमें स्वेदनकरके सुखाकर कपडछान चूर्णकर शीशीमें रखछोड़े। यह भैरवनाथकी कहीहुई पञ्चामृतपर्पटी है। इसमेंसे १-१ रत्तीलेकर ३ मासे त्रिकटुके चूर्ण और घृतकेसाथ रोजलेनेसे समस्तलक्षणयुक्त राजयक्ष्मा, श्वास, कास, विसूचिका, प्रमेह, उदररोग, अरुचि, दु.साध्यप्रसेक, छर्दि, हृद्रोग, सन्निपातजगुदरोग, शूल, समस्तकुष्ठ, वातज्वर, विड्विवन्ध, ग्रहणी, कफरोग, एकज द्विज और त्रिदोषज तथा अन्यसमस्तरोग विशेषकर मन्दाग्नि नष्ट होतेहैं। यक्ष्मातिरिक्त रोगोकेलिये तत्तत्सामयिक अवस्थाको देखकर अनुपानोंका योगकरना और सरसों, वेल, अम्ल, करेला, कुसुम्भ, कबूतरका मांस, वृन्ताक, कुक्कुट इनको छोड़देवे॥४६॥

४७ पञ्चामृतपर्पटी (पञ्चमी)

ताप्यार्कलोहेशजगन्धकाः समाः
प्राक् पर्पटीवद्विपचेच्च भावयेत्।
सेयञ्च पञ्चामृतपर्पटीक्षये
वल्लोन्मिता सा सकलाऽऽमयाञ्जयेत्॥ २०१॥

र. (मा.) ना. वि., कासे श्वासे च। ना. वि, अर्कस्थाने अभ्र नियोजितम् तथा च इयं पर्पटी त्वक्पत्रजातिकुसुमलवङ्गैरनुयोजिता।

भाषा—सोनामाखी, तावा, लोह इनकी भस्में, शुद्धपारद और गन्धक सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर प्रथमपर्पटीकी तरह पर्पटी वनाय ३-३ रत्तीकी मात्रा समयोचितानुपानके साथ देनेसे यह क्षय तथा समस्तरोगोंको नष्टकरती है॥ ४७॥

४८ पञ्चामृतपर्पटी (षष्ठी)

रसगन्धकताम्राऽभ्रैः समैर्द्विगुणलोहकैः।
लोहपात्रे खादिराऽग्नौ मृदुपाको भवेद्रसः॥ २०२॥
पञ्चामृतपर्पटिका महत्यग्निप्रदीपिका।
अर्शोऽतिसारग्रहणीकामलापाण्डुकुष्ठनुत्॥ २०३॥
प्लीहाऽऽमगुल्मशूलाऽऽमवातघ्नी च त्रिदोषहा।
जलोदरमम्लपित्तं भगरोगञ्च नाशयेत्॥
मुद्गौदनौ घृतं क्षीरं रोगोक्तं पथ्यमाचरेत्॥ २०४॥

र. (मा), अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और अभ्रकभस्म १-१ भाग, लोहभस्म २ भाग, लेकर नीलवर्णकज्जलीकर प्रथमपर्पटीकी तरह खैरके कोयलेपर पर्पटी वनाकर रखछोडे। इसका मृदुपाकलेवे। इसकी ३-३ रत्ती समयोचितानुपानके साथ लेनेसे मन्दाग्नि, ववासीर, अतिसार, ग्रहणी, कामला, पाण्डु, कुष्ठ, प्लीहा, आम, गुल्म, शूल, आमवात, सन्निपात, जलोदर, अम्लपित्त, भगरोग, इनसवको यह नष्ट करती है। मूंग, चावल, घी, दूध इत्यादि रोगोचित पथ्य देवे॥ ४८॥

४९ पञ्चामृतपर्पटी (सप्तमी)

सूतायसी च ताम्राभ्रं समं द्विगुणगन्धकम्।
लोहपात्रे बादराग्नौ मृदुपाको भवेद्रसः॥ २०५॥
ढालयेत्कदलीपत्रे कर्तव्या रसपर्पटी।
पञ्चामृता पर्पटी च रसो वह्निप्रदीपनः॥ २०६॥
ज्वरातिसारकासघ्नी कामलापाण्डुमेहजित्।
अनुपानं मले वद्धे ज्वरे जीर्णे च मूत्रकम्॥
पलं पथ्यं तु तैलाम्लवर्ज्यमन्यच्च युक्तितः॥ २०७॥

नि र, रसायनसार, र. सु, वै. द, र. कौ., र. म.-मा, र. प्र., र. शं., वै चि., वै. जी., र. मु., यो. च., र. प, र पा, अतिसारे।

भाषा—शुद्धपारा, लोह-ताम्र और अभ्रकभस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भा, लेकर सवकी नीलवर्णकज्जलीकर प्रथमपर्पटीकी तरह पर्पटी वनाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती रोगोचितानुपानके साथ देनेसे ज्वर, अतिसार, कास, कामला, पाण्डु, प्रमेह इनको यह नष्ट करती है। मलविवन्ध और जीर्णज्वरमें गोमूत्रकेसाथदेना और तैल तथा खटाईको छोड़कर पथ्य देना॥ ४९॥

५० पञ्चामृतपर्पटी (अष्टमी)

रविरसभुजगायोवज्रतो गन्धकस्य,
द्विगुणरचितभागं द्रावयेल्लोह उष्णम्।
समविनिहितपङ्कस्थायिरम्भादलस्थं,
तदितरदलयोगात्प्रद्रुतं यत्समन्तात्॥ २०८॥
तदा तु पञ्चामृतपर्पटीति
स्मृतं ज्वराशेषविशेषहारि।
कासक्षयाऽर्शोग्रहणीगदघ्नं
वल्लद्वयं क्षौद्रकणाऽवलीढम्॥ २०९॥

वै र., र, र का, र. वो, यो. च., कासक्षये। रसावतारे पर्पटीसूतः।

भाषा—ताम्र, नाग, लोह और वज्र इनकी भस्में और शुद्धपारा १-१ भाग, शुद्धगन्धक सबसे दूना लेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीपुतेहुए लोहेके पात्रमें प्रथमपर्पटीकी तरह पर्पटी तैयार करके रखछोड़े। इसमेंसे ६-६ रत्तीकी मात्रा पीपलके चूर्ण और मधुके साथ खानेसे कास, क्षय, ववासीर, ग्रहणीरोग, इनको यह नष्ट करती है॥ ५०॥

५१ पञ्चामृतपर्पटी (नवमी)

मृतं ताम्रं मृतञ्चाभ्रं कुटिलं तुल्यगन्धकम्।
रसभस्मसमायुक्ता पर्पटी मेहनाशिनी॥ २१०॥

र क., प्रमेहे।

भाषा—ताम्र, अभ्रक, शङ्ख, पारद इनकी भस्मे समभाग, शुद्धगन्धक सबकी वरावर लेकर नीलवर्णकज्जलीकर पर्पटी बनाकर १–१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूर करती है ॥ ५१ ॥

५२ पञ्चामृतपोट्टलीरसः

प्रत्येकमेकगद्याणं शुद्धसूतसुवर्णयोः।
खल्वे पिष्ट्वा त्र्यहं कार्या पिष्टिः सूक्ष्मा सुवर्णजा २११
वस्त्रे क्षिप्त्वाऽथ तां पिष्टिं ग्रन्थिं बद्ध्वा दृढं ततः।
मृन्मयी गोस्तनाकारा मूषा कार्या दृढा ततः ॥२१२॥
स्थालिका वालुकापूर्णा मूषां तत्रान्तरे क्षिपेत्।
चुल्ल्यामारोप्य तां स्थालीं हठाग्निं ज्वालयेदधः २१३
शुद्धगन्धकगद्याणानष्टौ मूषान्तरे क्षिपेत्।
गलिते गन्धके जाते तिलतैलेन सन्निभे ॥ २१४ ॥
प्रक्षिपेद्धेमजां पिष्टिं ग्रन्थिबद्धाञ्च गन्धके।
क्षेप्यो गन्धकगद्याणो मुहुर्दग्धे च गन्धके ॥ २१५ ॥
एवमेवमहोरात्रं स्वेद्या पिष्टिश्च हेमजा।
शुद्धगन्धकगद्याणद्वययुक्तां दिनद्वयम् ॥ २१६ ॥
वज्रीक्षीरेण सम्पेष्य प्रक्षिपेच्च शरावके।
भूमावेव पुटो देयो लावकः पुटसप्तकम् ॥ २१७ ॥
युक्त्याऽनया मृतं हेम चूर्णं कृत्वा सुसूक्ष्मकम्।
पीतानाञ्च कपर्दीनां गद्याणा वेदसङ्ख्यका ॥ २१८ ॥
शङ्खस्याऽपीह चत्वारो ह्यष्टानां सूक्ष्मचूर्णकम्।
द्व्यहं सेहुण्डदुग्धेन ह्यर्कदुग्धेन च द्व्यहम् ॥ २१९ ॥
चित्रकाऽऽर्द्ररसेनैव द्व्यहं खल्वे प्रमर्दयेत्।
एवं षड्वासरान्पिष्ट्वा गद्याणान्वसुसङ्ख्यकान् ॥२२०॥
मृतकान्ताद्रसाद्वेदा गद्याणो मृतहेमजः।
गद्याणान्सप्तदशकानार्द्रचित्ररसेन च ॥ २२१ ॥
दिनैकं मर्दयेत्खल्वे गुटीः कृत्वाऽथ शोषयेत्।
तास्ता दग्धाऽश्मचूर्णाक्ताः पक्वकुड्मलकान्तरम्२२२
लिप्त्वा शुष्के वटीः क्षेप्याश्चूर्णलिप्तपिधानकम्।
दत्त्वा वस्त्रमृदा लिप्त्वा देयं गर्ते पुटद्वयम् ॥ २२३ ॥
पेपयेच्च समाकृष्य शीतकुड्मलकाद्वटीः।
रसोऽसौ जायते श्रेष्ठः पञ्चाऽमृतसुपोट्टली ॥ २२४ ॥
वल्लाः पञ्च रसस्याऽस्य द्वात्रिंशन्मरिचैः समम्।
घृतमिश्राः प्रदातव्या ह्यतिसारे ज्वरं विना ॥ २२५ ॥
देयः सर्वातिसारेषु शूलेषु विविधेषु च।
वलक्षीणेषु मन्दाग्नौ वातव्याधिषु रोगिषु ॥ २२६ ॥
अष्टादशसु मेहेषु ह्यजीर्णे च विशेषतः।
चत्वारः शर्करावल्ला रसवल्लैश्च पञ्चभिः ॥ २२७ ॥
मधुना च समं देया ह्यतिसारे च रक्तजे।
सत्त्वं गुडूच्याश्चत्वारो रसवल्लैश्च पञ्चभि· ॥ २२८ ॥
मिश्रिता मधुना देया ह्यतिसारे ज्वरोद्भवे।
एते रोगाः प्रलीयन्ते क्रमात्संसेविते रसे ॥ २२९ ॥
कांस्यपात्रे न भोक्तव्यं क्षाराम्लं वर्जयेत्सदा।
शाल्यो दधिदुग्धादि गौल्यं मिष्टाऽन्नभोजनम् २३०

र कं., रसचि, गर्वरोग।

भाषा—शुद्ध सुवर्ण और पारा ६–६ माशे लेकर तीनरोज़ मर्दनकर गोली बनाकर वस्त्रमें कड़ीग्रन्थि बांधले, फिर मिट्टीकी गोस्तनाकार मज़बूत मूषा बनाय वालुकाभरेहुए पात्रमें मूषाको रख हठाग्नि जलावे। मूषा गर्म होनेके बाद ४ तोले शुद्धगन्धक मूषामें डालदे, जब गन्धक गलकर तिलतैलके सदृश हो जाय तब पूर्वोक्त सूतपिष्टीको उसमें रखदे और ऊपरसे आधातोला गन्धक डालदे। जब ऊपरवाला गन्धक जलकर पिष्टी उघड़ने लगे तब आधा तोला गन्धक और डालदे। इसतरह बारम्बार गन्धक देता हुआ एक अहोरात्र पिष्टीका स्वेदन करे। एक अहोरात्रके बाद १–१ तोला गन्धक देकर दोदिनतक पूर्ववत स्वेदन करे। चौथेरोज़ पिष्टीको मूषामेंसे निकालकर गन्धकको छुडाकर अलग करदे और थूहरके दूधसे अच्छी तरह मर्दनकर गोली बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर खुले प्रदेशमें लावपुट दे। इसतरह सातपुटें देकर सुवर्णकी भस्म बनाले। फिर पीली कौडी २ तो., शुद्धशङ्खचूर्ण २ तो., लेकर दोनोंको थूहर और आकके दूधमें २–२ रोज़ मर्दनकर चित्रक और अदरखके रसमें १–१ रोज़ मर्दन कर ६ रोज़के बाद कान्तलोहभस्म और शुद्धपारा २–२ तो., और पूर्व कीहुई सुवर्णभस्म ६ मा, इसतरह सब मिलकर ८॥ तोलेको अदरख और चित्रकके रसमें १–१ रोज मर्दनकर इसकी छोटी २ गोलियें बनाकर सुखाले फिर पत्थरके चूनेमें रखकर हिलादे, जिसमेंकि गोलियोंपर चूना चढ़जाय। फिर मिट्टीके पके हुए कुल्हडको चूनेसे भीतरकी तरफ पोतकर सुखादे, उसमें इन गोलियोंको रख ऊपर चूनापुते हुए दीवेसे ढककर समस्तपर ३–४ कपडमिट्टी करके सुखाकर खड्डेमें लघुपुटदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर दूसरा पुटदे। सम्पुट टूटा न होतो खोलनेकी जुरूरत नहीं, दैववशात् सम्पुट फटगया हो तो दूसरा बदल देवे। दूसरे पुट देनेके बाद स्वाङ्गशीतल होनेपर कुल्हड़मेंसे गोलियें निकालकर रखछोडे। यह **पञ्चामृत** पोटली रस तैयार हुआ। इसरसकी १५ रत्ती लेकर ३२ कालीमिर्चोंके साथ मिलाकर घीके साथ देनेसे ज्वररहित समस्त अतिसार, समस्त शूल, बलकी क्षीणता, मन्दाग्नि, वातव्याधि, १८ प्रकारके प्रमेह, अजीर्ण ये सब नष्ट होते है। १५ रत्ती रसको १२ रत्ती शक्करकेसाथ मधुमिलाकर रक्तातिसारमें देवे। गिलोयसत्व १२ रत्ती, रस १५ रत्ती मधुमें मिलाकर अतिसारज ज्वरमें दे। इसमें पथ्य पुराने चावल, दही, दूध, मक्खन, गुलगुले वगैरह मिष्टान्न भोजन करे। कास्यके पात्रमें भोजन, क्षार और अम्लका परित्याग करे ॥ ५२ ॥

५३ पञ्चामृतमण्डूरम्

लौहं ताम्रं गन्धमभ्रं पारदञ्च समांशकम्।
त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडङ्गं चित्रकन्तथा ॥ २३१ ॥

किरातं देवकाष्ठञ्च हरिद्राद्वयपुष्करम्।
यमानी जीरयुग्मञ्च शटीधान्यकचव्यकम्॥ २३२॥
प्रत्येकलोहभागञ्च श्लक्ष्णचूर्णन्तु कारयेत्।
सर्वचूर्णस्य चार्द्धांशं सुशुद्धं लोहकिट्टकम्॥२३३॥
गोमूत्रे पाचयेद्वैद्यो लोहकिट्टं चतुर्गुणे।
पौनर्नवाऽष्टगुणितं क्वाथं तत्र प्रदापयेत्॥ २३४॥
सिद्धेऽवतारिते चूर्णं मधुनः पलमात्रकम्।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय कोकिलाक्षाऽनुपानतः॥ २३५॥
ग्रहणीं चिरजां हन्ति सशोथां पाण्डुकामले।
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं ज्वरं जीर्णं व्यपोहति॥ २३६॥
प्लीहगुल्मौ यकृच्चैवमुदरञ्च विशेषतः।
कासं श्वासं प्रतिश्यायं कान्तिपुष्टिविवर्धनम्॥२३७॥

भै. र., र. चं, र. सु., वै क, पाण्डुरोगे।

भाषा—लोह, ताम्र, और अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक और पारद त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोथा, विडङ्ग, चित्रक, चिरायता, देवदारु, हल्दी, दारुहल्दी, पोहकरमूल, अजवाइन, दोनोंजीरे, कचूर, धनियां, चव्य येसव १–१ भाग लेकर सवका वारीक चूर्णकर सवसे आधी मण्डूरभस्म मिलाकर समस्तसे चतुर्गुणित गोमूत्र और अष्टगुणित पुनर्नवाका क्वाथ कड़ाहीमें डालकर लोह और मण्डूरभस्म डालकर पकावे। जवपककर गोलियें वंधनेलायक होजाय तव अन्यसवचीजें डालकर उतारकर स्वाङ्गशीतलहोनेपर ८ तोले मधु मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे ३–३ माशेकी मात्रा तालमखानेके क्वाथके साथ देनेसे शोथयुक्त पुरानीसङ्ग्रहणी पाण्डु, कामला, मन्दाग्नि, जीर्णज्वर, प्लीहा, गुल्म, यकृत्, उदररोग, कास, श्वास, और प्रतिश्याय इनसवको नष्टकर कान्ति और पुष्टिको वढाताहै॥ ५३॥

५४ पञ्चामृतयोगः

पारदं रजतं ताम्रं साभ्रकं हेम पञ्चकम्।
पञ्चामृतकमित्याहुः सर्वरोगनिवारणम्॥ २३८॥
अनुपानविभेदेन वेदनानाशकं परम्।
वहुवर्षञ्च विषमं कुष्ठञ्चोरःक्षतक्षयम्॥
प्रमेहं पाण्डुरोगञ्च हन्यान्नाऽत्र विचारणा॥ २३९॥

ना. वि., ज्वराधिकारे।

भाषा—पारद, रजत, ताम्र, अभ्रक और सुवर्ण इनकीभस्में समभागमें मिलानेसे यह पञ्चामृतयोगकहलाताहै इसको वयोवलके अनुसार मात्राका निर्धारणकर तत्तद्रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तरोग, नानातरहकीवेचैनी, पुराना विषमज्वर, कुष्ठ, उर क्षत, क्षय, प्रमेह, पाण्डुरोग इनसवको यह नष्टकरताहै॥५४॥

५५ पञ्चामृतरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं समादाय गन्धकं भागतः समम्।
त्रिभागं टङ्कणं देयं विषभागत्रयं तथा॥ २४०॥
भागत्रयं तथा देयं मरिचस्य प्रयत्नतः।
चूर्णीकृतं जलेनापि पिष्ट्वा रक्तिमितां वटीम्॥२४१॥
शृङ्गवेररसेनैव भक्षयेद्वटिकामिमाम्।
जलदोषोद्भवे शोथे घोरेऽत्युग्रे जलोदरे॥ २४२॥
सन्निपातेषु घोरेषु सर्वस्मिञ्श्लैष्मिके गदे।
ज्वरातिसारसंयुक्ते शोथे चैव गलग्रहे॥ २४३॥
शिरःशूलगदे घोरे नासारोगे सपीनसे।
पञ्चामृतरसो ह्येष सर्वरोगोपशान्तिकृत्॥ २४४॥

भै र., र. सं, र. चं, वै. क., र. सु., र त, नासारोगे।

टि०–कुत्रचित्केचित्तोल्कमित विष वदन्ति। यथास्थितपाठेऽपि शुद्धविषेण न कापि हानिर्दरीदृश्यते प्रत्युत गुणे शीघ्रकारित्वमुपलभ्यते।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक १–१ भाग, भुनासुहागा, शुद्धवच्छनाग और मरिच ३–३ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर जलकेसाथ घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाय सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे जलदोषसे भयेहुए शोथ, अत्युग्रजलोदर, घोरसन्निपात, समस्तश्लेष्मरोग, ज्वरातिसारयुक्तशोथ, गलग्रह, घोरशिर.शूल, नासारोग, पीनस इनसवको यह नष्टकरताहै॥ ५५॥

५६ पञ्चामृतरसः (द्वितीयः)

कृष्णाभ्रकान्तकुलिशं सरसं सहेम
सम्मर्दितं कनकपत्ररसेन गाढम्।
तद्गोलकं कमठयन्त्रगतं विपक्वं
मूषागतं नियमकृद्विविधौषधीभिः॥ २४५॥
पञ्चाऽमृतोऽस्य घृतमाक्षिकसम्प्रयुक्ता
गुञ्जा गदान्हरति देहगदांश्च मासात्।
आरोग्यसौख्यवलपुष्टिकरी नराणां
संसेविता भगवतीव महेशकान्ता॥ २४६॥

र ल., र. शं, रसायन सं, वै वि., क्षये। रसायन सं. धातुपञ्चामृतः। सर्वरोगहराधिकारे च।

भाषा—कृष्णाभ्रक, कान्तलोह, हीरा, पारा, सुवर्ण इनप्रत्येककीभस्म समभागलेकर धतूरेके पत्तोंकेरससे १–२ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय सुखाकर ४ तह मोटेकपड़ेमें लपेटकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर अच्छीतरह सुखाकर सोलहगुनी वालूभरेहुए यन्त्रके वीचमें रख ४ पहरकी मध्यमाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर नियामकवर्गकी औषधियोंसे यथालाभमर्दनकर मिट्टीकी मूषामें वन्दकर लघुपुटकी यथाशक्ति आंचें देकर रखछोड़े। इसकी १–१ रत्ती घी और मधुकेसाथ देनेसे एकमहीनेमें समस्तशरीरके रोगोंको दूरकर आरोग्य, सुख, वल और पुष्टिको करताहै॥ ५६॥

५७ पञ्चामृतरसः (तृतीयः)

समसूताऽभ्रलोहानां शिलाजतु विषं समम्।
गुडूचीत्रिफलाक्वाथैः संस्कृतं गुग्गुलुन्तथा॥२४७॥
मृतं नेपालताम्रञ्च सूतस्थाने नियोजयेत्।

एकीकृत्य नियोज्यन्तद्विगुञ्जं राजयक्ष्मनुत् ॥
पञ्चामृतरसो ह्येष चानुपानश्च पूर्ववत् ॥ २४८ ॥

र. र., र चं., र. र. स., नि र., र. को , र का , र. क यो , वै चि , र. क. ल., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारा, अभ्रक, औरलोहभस्म १–१ तोला, शिलाजतु, शुद्धवछनाग, गिलोय और त्रिफलाके काथसे शोधनकियाहुआगुग्गुलु ३–३ तोले लेकर सबको इकट्ठेकर १–२ रोज मर्दनकर थोडासा घीकाहाथदेकर कूटे फिर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे राजयक्ष्म दूरहोताहै । यदिपारदभस्म न मिलेतो नेपाली ताम्रभस्मसे कामचलालेना ॥ ५७ ॥

५८ पञ्चामृतरसः (चतुर्थः)

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि रसं परमदुर्लभम् ।
पञ्चामृतमिदं ख्यातं सर्वरोगहरं परम् ॥ २४९ ॥
शास्त्रे सौख्यप्रदं नृणां भुवि रोगनिवारणम् ।
पथ्यापथ्यविनिर्मुक्तं विष्णुना परिकीर्तितम् ॥२५०॥
सूतकान्तरविव्योम्नां शुद्धानां भस्मकं शुभम् ।
मारितं माक्षिकश्चैव प्रत्येकश्च पलं पलम् ॥२५१॥
गन्धं पञ्चपलं दत्त्वा श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।
आर्द्रकस्य रसं दत्त्वा त्रिदिनं मर्दयेत्ततः ॥ २५२ ॥
क्वाथे च दशमूलस्य वह्निमूलरसेन वा ।
युक्त्या तु क्वथितेनापि मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥२५३॥
शोषयित्वा ततो घर्मे चूर्णयेत्तदनन्तरम् ।
त्रिवर्गत्रितयाम्भोदतिन्दुतुम्बुरुरेणुकम् ॥ २५४ ॥
भार्ङ्गीभूनिम्बतिक्ताश्च जातीफलकशेरुकम् ।
पलार्धमानं सर्वाणि प्रत्येकैकं भवन्ति च ॥ २५५ ॥
निधाय श्लक्ष्णचूर्णानि रसेन सह मेलयेत् ।
काकमाची च निर्गुण्डीवर्षाभूर्मुण्डिका तथा ॥२५६॥
कषायेणाऽऽर्द्रकाम्भोभिर्भावनाः परिकल्पयेत् ।
कषायेण गुडूच्याश्च शिग्रुमूलरसेन वा ॥ २५७ ॥
पुनरार्द्रकतोयेन भावयित्वा विमर्दयेत् ।
बदरास्थिप्रमाणेन कर्तव्या गुटिका ततः ॥ २५८ ॥
मरिचानान्तु विंशत्या वटीमेकान्तु भक्षयेत् ।
तत्तद्रोगहरो योगः सर्वरोगं विनाशयेत् ॥ २५९ ॥

हन्यात्सर्वविधं ज्वरक्षयकरं
पाण्डुञ्च शूलाऽऽमयं,
मन्दाग्निं ग्रहणीं गदांश्च कफजान्
वातोद्भवांश्चाऽऽमयान् ।
गुल्मव्याध्यरुची च पित्तजनितान्
द्वन्द्वोद्भवान् स्रोतजान्,
कासश्वासयथासमांश्च विविधान्
पञ्चामृतो देहिनाम् ॥ २६० ॥

यस्य रोगानुरूपेण पेयमत्र भिषग्वरैः ।
तक्रभक्तं प्रदातव्यं पथ्याय परिनिर्मितम् ॥
देयः स्तनन्धयस्यापि सोऽयं पञ्चामृतो रसः ॥२६१॥

र. र , ध , रससागर, रसायने ।

भाषा—पारा, कान्तलोह, ताम्र, अभ्रक, और सोनामाखी इन प्रत्येककी भस्म १–१ पल, शुद्धगन्धक ५ पल लेकर अदरखके रस, दशमूल और चित्रकमूलके काथोंमें ३–३ रोज़ मर्दनकर धूपमें सुखाकर त्रिकटु, त्रिफला, त्रिजात, नागरमोथा, कुचिला, तुम्बुल, रेणुका, भारङ्गी, चिरायता, कुटकी, जायफल, कशेरू, ये प्रत्येक २ तोले लेकर वारीकचूर्णकर रसकेसाथ मिलाकर मकोय, निर्गुण्डी, पुनर्नवा, गोरखमुण्डी इनप्रत्येकके काथोंमें १–१ भावना देकर अदरखकारस, गुडूचीकाथ, सहिजनकी जड़कारस, अदरखकारस इनकीक्रमसे १–१ भावनादेकर वेरकी गुठलीके वरावर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली २० कालीमिर्चोंके चूर्णकेसाथ मिलाकर तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे समस्तज्वर, पाण्डु, शूल, मन्दाग्नि, ग्रहणी, कफरोग, वातरोग, गुल्म, अरुचि, पित्तरोग, द्वन्द्वज, स्रोतोज, कास, श्वास, नानातरहके विषमज्वर, इनसवको यह नष्टकरताहै । खानेको छाछभात देना । दूधपीनेवाले बच्चोंकेलिये-यह बहुतहितकरहै ॥५८॥

५९ पञ्चामृतरसः (पञ्चमः)

सूतं मृतं तथा चाभ्रं वज्रं ताम्रश्च कान्तकम् ।
मेलयित्वा समांशेन मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥ २६२ ॥
घर्षितां जलयोगेन वटीमेकाञ्च चूर्णयेत् ।
भक्षितो वल्लमात्रो हि कृष्णाक्षौद्रेण संयुतः ॥
कासश्वासाग्निहन्त्याशु तमः सूर्योदये यथा ॥ २६३ ॥

र प्र सु , र. चं , कासेश्वासे च ।

भाषा—पारा, अभ्रक, वज्र, ताम्र और कान्त इनप्रत्येककीभस्म समभागमें लेकर घीकुंवारके रससे १–२ रोजमर्दनकर इसकीबरावर सुगन्धवाला (हिवेर सं , तगरगंठोला गु)काचूर्ण मिलाकर एकघडीतकमर्दनकर सुखाकर चूर्णकरके रखछोडे । इसमेंसे ३–३ रत्तीकी मात्रा चौंसठपहरी पीपल और मधुकेसाथ देनेसे कास, श्वास, पीनस, हस्तपादादिदाह, स्वरभेद, अरुचि, जीर्णज्वर इनसवको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसेकि सूर्यकाउदय अंधेरेको नष्टकरताहै ॥ ५९ ॥

६० पञ्चामृतरसः (षष्ठः)

शुद्धसूतस्य भागैकं भागौ द्वौ गन्धकस्य च ।
भागद्वयं मृतं ताम्रं मरिचं दशभागिकम् ॥ २६४ ॥
मृताभ्रञ्च चतुर्भागं भागमेकं विषं क्षिपेत् ।
अम्लेन मर्दयेत्सर्वं माषैकं वातकासनुत् ॥
अनुपानं लिहेत्क्षौद्रैर्विभीतकफलत्वचम् ॥ २६५ ॥

भै. र , वै क , कासाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा १ भा , गन्धक २ भा , ताम्रभस्म २ भा , मरिच १० भा., अभ्रकभस्म ४ भा , शुद्धवछनाग १ भा , लेकर

सबका कपड़छान चूर्णकर अम्लवर्गसे १–२ रोज़ मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली बहेडेकी छालके चूर्ण और मधुकेसाथ देनेमे वातजकास निवृत्तहोताहै और अनुपानविशेषसे देनेमे प्राय सभीरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६०॥

६१ पञ्चामृतरसः (सप्तमः)

भस्मीभूतसुवर्णतारदिनकृत्सूताभ्रसत्त्वैः क्रमात्,
संवृद्धैस्त्रितयत्रयक्रिमिहराम्भोदैर्युतः कट्फलैः।
निर्गुण्डीदशमूलवह्निरजनीव्योषाऽऽर्द्रकैर्भावितो,
गोलीकृत्य विशोषितो निगदितः पञ्चामृताख्यो रसः॥
नानेन सदृशः कोऽपि रसोऽस्ति भुवनत्रये।
निहन्ति सकलान्रोगान् भवरोगमिवाऽच्युतः ॥२६७॥
सर्वरोगहरः सूतस्तत्तद्रोगाऽनुपानतः।
अयं पञ्चामृतो नृणां त्रिदशानामिवाऽमृतम् ॥२६८॥

यो.र., नि.र., र चं., वृ.यो. त., ध , रसायन सं., यो. त , र. का., र.र , क्षये।

भाषा—सुवर्ण १ भा., रजत २ भा., ताम्र ३ भा., पारद ४ भा., अभ्रकसत्त्व ५ भा , त्रिफला, त्रिकटु, त्रिजात, विडङ्ग, नागरमोथा ये सब १–१ भागलेकर बारीकचूर्णकर पूर्वरसोंमें मिलाकर १–२ पहर सुखा मर्दनकर कायफल, निर्गुण्डी, दशमूल, चित्रक, हल्दी, सोंठ, मिर्च, पीपल, और अदरख इनके क्वाथोंसे १–१ भावनादेकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर अच्छीतरह सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे समस्तरोगोंको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे भवरोगको परमेश्वर नष्टकरताहै। देवताओंकेलिये जैसे अमृत उपकारकहै वैसेही यह रोगियोंको उपकारकहै ॥ ६१ ॥

६२ पञ्चामृतरसः (अष्टमः)

स्वर्णरौप्यरविपन्नगलोहं
चन्द्रदृक्शिखिचतुःशरभागम्।
मर्दितं तनुतरं दिनमेकं
भावितं मकरपित्तरसेन ॥
वल्लमात्रमखिलज्वरशान्त्यै
शर्कराऽऽर्द्रकरसेन ददीत ॥ २६९ ॥

नि.र., र ल , र.रां , रसायनस., र. का , वै वि., टी , ज्वराधिकारे।

भाषा—सुवर्णभस्म १ भा., रजतभस्म २ भा., ताम्रभस्म ३ भा., नागभस्म ४ भा., लोहभस्म ५ भा., लेकर एकदिनसूखी मर्दनकर मकरके पित्तसे यथालाभभावितकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर सुखाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली शक्कर और अदरखके रसकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरोंको दूरकरताहै ॥६२॥

६३ पञ्चामृतरसः (नवमः)

पारदश्च क्रियाशुद्धं तुल्यं शुद्धश्च गन्धकम्।
अभ्रकन्तु द्वयोस्तुल्यं त्रिभिस्तुल्यस्तु गुग्गुलुः॥२७०॥
सर्वांशममृतासत्त्वं भावयेदौषधैः पृथक्।
निर्गुण्डीगोक्षुरच्छिन्नाकोकिलाख्याङ्घ्रिजै रसैः २७१
सप्तवारं ततो गुञ्जाऽद्वातरक्ते त्रिवल्लकम्।
कोकिलाऽऽख्यस्य मूलानां पानीयमनुपाययेत् ।२७२।

नि.र , रसायनसं., यो. र., वै. चि , वातरक्ते।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक१–१ भा., अभ्रकभस्म २भा., शुद्धगुग्गुलु ४ भा , गुड्चीसत्त्व सबकी बराबर लेकर निर्गुण्डी, गोखरू, गिलोय, तालमखानेकीजड़, इनप्रत्येकके रसोंसे ७–७ बारमर्दनकर १५–१५ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तालमखानेकी जड़के पानीकेसाथ देनेसे यह वातरक्तको दूरकरताहै ॥ ६३ ॥

६४ पञ्चामृतरसः (दशमः)

हेममाक्षिकवज्राऽभ्रकान्तभस्म प्रवेशयेत्।
रसे सहेंऽग्नि सप्ताहं मूलिकारसमर्दिताम् ॥ २७३ ॥
तां पिष्टिं यन्त्रयोगेन पचेत्पञ्चामृताह्वयः।
रसोऽयं मधुसर्पिर्भ्यां युक्तः सर्वरुजाहरः ॥ २७४ ॥

र.र.स., रसायने।

भाषा—एकभाग शुद्धस्वर्णको गलाकर किसी छोटेमुंहके पात्रमें डालकर उसमें १ भाग शुद्धपारा डाले फिर सोनामाखी, कान्तलोह, वज्राभ्रकभस्म १–१ भाग मिलाकर दिव्यमूलिकाओंकेरससे (दिव्यमूलिकाए रसेन्द्रचूडामणिप्रभृतिमें देखलेना) यथालाभ ७–७ रोज़ मर्दनकर पिष्टीबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें रख ४ पहरकीकड़ीआंचसे पकावे, स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती अथवा योग्यमात्रामें मधु और घीकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६४ ॥

६५ पञ्चामृतरसः (एकादशः)

पूर्वोऽक्तं शुद्धमादाय पातितं स्वेदितं रसम्।
खल्वमध्ये विनिक्षिप्य मर्दयेदौषधद्रवैः ॥ २७५ ॥
तुरूटदुग्धैः शाखोटदुग्धैरर्कतरूद्भवैः।
चन्द्रवल्लीचाऽऽखुकर्णीकृष्णधत्तूरकद्रवैः ॥ २७६ ॥
एतैः समस्तैर्व्यस्तैश्च मर्दयेत्तं दिनत्रयम्।
ततश्च पीतवेणीजैश्चन्द्रवल्लीरसेन च ॥ २७७ ॥
एवमेतैश्च सम्मर्द्य नष्टपिष्टं रसं चरेत्।
दिनषट्कं प्रमृद्यैवं यन्त्रे सोमानले क्षिपेत् ॥ २७८ ॥
त्रिदिनं तं पचेद्यन्त्रे पुनरुद्धृत्य मर्दयेत्।
पातनं मर्दनं त्वेवं यावद्व्रजति भस्मताम् ॥ २७९ ॥
तावदेवं चरेद्धीमानित्थं भस्म जायते।
पलं भस्मीकृतात्सूताल्लोहभस्म पलन्तथा ॥ २८० ॥
कृष्णाभ्रसत्त्वभस्मैकं पलं ग्राह्यं शिलाजतु।
एकं पलं किशोरस्य गुग्गुलोश्च पलन्तथा ॥ २८१ ॥
एतत्सर्वं खल्वमध्ये मर्दयेदतियत्नतः।
शिलाजतुरसेनैव करण्डे विनिवेशयेत् ॥ २८२ ॥

वल्लपञ्चकमानेन मधुसर्पिर्युतो रसः ।
प्रयोज्यो रोगराजस्य मूलच्छेदचिकीर्षुणा ॥ २८३ ॥
एवं संसेव्यमानोऽयं रसेन्द्रो रोगराजजित् ।
त्रिभिर्मासै र्न सन्देहः षड्भिः स्यान्न पुनर्भयम् २८४
वर्षद्वयप्रयोगेण वलीपलितहा भवेत् ।
एष पञ्चामृतो नाम्ना रसेन्द्रः परिकीर्तितः ॥ २८५ ॥
पथ्यं मृगाङ्कवज्ज्ञेयमुपचारोऽपि तादृशः ।
स्वसंवेद्यादिशास्त्रोक्तरीत्या सोऽयं प्रकीर्तितः ॥२८६॥
रोगराजप्रणाशार्थं सम्प्रदायप्रयोगतः ।
गुडूचीत्रिफलाक्वाथैर्दशमूलभवैस्तथा ॥ २८७ ॥
संस्कृतो गुग्गुलुः प्रोक्तः किशोर इति वैद्यकै ।
ज्ञायतां सम्प्रदायेन सर्ववातनिवारणः ॥ २८८ ॥

रसालं, क्षयाधिकारे ।

भाषा—बुभुक्षान्तसंस्कारकियेहुए पारेको खरलमें डाल तुवरक, शाखोट (सीहोर) और आक इन प्रत्येकका दूध सोमलता (थोरवेल, पोरबंदर । Sarcostemma Brevistigma, इ.) मूषाकर्णी, कालाधतूरा इनके अलग २ और मिलेहुए द्रवोंसे ३–३ रोज़ मर्दनकर पीलेवन्दालकेफल और सोमलताके रसोंसे ३–३ रोज मर्दनकर नष्टपिष्टी बनाकर डमरूयन्त्रमें रख तीनरोज़की अग्नि देकर ऊर्ध्वपातनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर यन्त्रको उघाड़कर ऊपर लगेहुएऔर नीचे वचेहुए पारेको इकट्ठा मिलाय पूर्ववत् मर्दनकर उड़ावे । इसतरह जवतक सम्पूर्णपारा तलस्थ न होजाय तवतक करताजाय । फिर यह पारदभस्म, लोहभस्म, कृष्णाभ्रकसत्त्वभस्म शिलाजतु, कैशोरगुग्गुलु ये प्रत्येक १–१ पल लेकर खरलमें इकट्ठे मर्दनकरे, जवगोली वधनेलायकहोजाय तव १५–१५ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधु और घीकेसाथ लेनेसे तीनमहीनेमें रोगराज (राजयक्ष्म) नष्टहोताहै और ६ महीनेके सेवनकरनेसे पुनरुत्थानकाभय चलाजाताहै । दोवर्षके प्रयोगसे वलीपलितसे रहितहोजाताहै इसमें पथ्य और उपचार सव मृगाङ्ककीतरह समझना । यह स्वसंवेद्यादिरचितग्रन्थोंकी रीतिसे और सम्प्रदायके क्रमसे कहागयाहै । गुडूची त्रिफला और दशमूल के क्वाथसे शुद्धकियेहुए गुग्गुलुको किशोरगुग्गुलु कहतेहैं इसमें वातनाशकशक्ति अधिक होजातीहै ॥ ६५ ॥

६६ पञ्चामृतोरसः (द्वादशः)

गन्धकः पारदः शुद्धो मृतं नागं विषं तथा ।
मरिचं शङ्खनाभिश्च समानेतान् विचूर्णयेत् ॥२८९॥
गुञ्जाद्वयमितो देयो नासाकर्णप्रपूरणे ।
शृङ्गवेररसेनाऽयं त्रिदोषक्षयकासनुत् ॥ २९० ॥
ज्वरितस्य हित· सूतो रोगघ्नः स्तम्भनाशकः ।
रसः पञ्चामृतो नाम सर्वरोगहरो भवेत् ॥ २९१ ॥

र.का., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्धगन्धक और पारा, नागभस्म शुद्धवछनाग । मरिच, शङ्खनाभि ये सब समभाग लेकर १–२ पहर खरलकर रखछोड़े । इसमेंसे अदरखके रसकेसाथ १–२ रत्ती नाक तथा कानमें डालनेसे त्रिदोषजक्षय, कास, ज्वर, स्तम्भ इनका नाश करताहै ॥ ६६ ॥

६७ पञ्चामृतरसः (त्रयोदशः)

मृतरसपलमेकं सत्त्वमेकं गुडूच्या-
स्त्रिकटुकपलयुग्मं रक्तचित्रस्य चैव ।
त्रिफलपुरकटूकीनेत्रसङ्ख्यापलानि
इति मिलितसमस्तं सोरसारेण घृष्टम् ॥ २९२ ॥
घृतमधुसितमिश्रं मर्दितञ्चैकरात्रं
प्रतिदिनमिह खादेन्माषकाणां दशैव ।
हरति विविधरोगान् राजरोगञ्च पाण्डुं-
हृदयजठरशूलं श्वासकासाऽग्निमान्द्यम् ॥ २९३ ॥
शिरसिजगुदरोगाऽर्शांसि गुल्मोदराणि
हरति किल चिरोत्थान्याशुकुष्ठादिकानि
वलिपलितविनाशो वज्रकायो वलिष्ठो
रविशशिसमकालचाऽऽयुराप्नोति विद्वान् ।२९४।

रसेन्द्रमं., सर्वरोगे ।

भाषा—पारदभस्म १ पल, गुडूचीसत्त्व १ पल, त्रिकटु, रक्तचित्रक, त्रिफला, गुग्गुलु और कुटकी २–२ पल लेकर सवको कूटकपड़छानकर शिलाजतुकेसाथ १–२ रोज़ मर्दनकर सुखाकर इसकी वरावर घृत, मधु और शक्कर मिलाकर स्निग्धभाण्टमें रखछोड़े । इसमेंसे १०–१० माशे तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे राजरोग, पाण्डु, हृद्रोग, जठर, शूल, श्वास, कास, मन्दाग्नि, शिरोरोग, गुदरोग, अर्श, गुल्म, उदर, चिरोत्थकुष्ठ, वलीपलित इत्यादि दुस्तररोगोंको यह नष्टकर दीर्घायुको देताहै ॥ ६७ ॥

६८ पञ्चामृतरसः (चतुर्दशः)

शुद्धगन्धकसूतौ च माक्षिकं कान्तलोहकम् ।
अभ्रकञ्च समांशञ्च वह्निक्वाथेन पेषयेत् ॥ २९५ ॥
पथ्य क्षीरौदनं देयं तापे दधीक्षुशर्कराः ।
पञ्चामृतरसो नाम सर्वज्वरनिषूदनः ॥ २९६ ॥

वा., ज्वरे ।

भाषा—शुद्धपारा गन्धक, सोनामाखी, कान्तलोह, अभ्रक इनकीभस्में समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर चित्रककेक्वाथसे १–२ रोज़मर्दनकर ३ रत्तीसे ६ रत्तीतककी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै । अत्यन्तदाह मालूमहोनेपर दही, ईख और शकरका प्रयोगकरे पथ्यमें दूधचावल देवे ॥ ६८ ॥

६९ पञ्चामृतरसः (पञ्चदशः)

मृतसूताऽभ्रलोहानि वङ्गनागौ समं पृथक् ।
सर्वतुल्यं वलिं दत्त्वा मर्दयेदारनालकैः ॥ २९७ ॥

तालमूलीशतावर्योर्गोक्षीरेण विदारिका
वाराह्यजाश्वगन्धानां मर्दयेत्सप्तधा पुनः ॥ २९८ ॥
भूधरे च पचेत्पश्चात्स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
द्विगुञ्जो रसराजेन्द्रः सर्वरोगक्षयान्तकृत् ॥ २९९ ॥
वलीपलितनिर्मोची सेवितः सन् जराञ्जयेत् ।
प्रमेहं ग्रहणीश्चार्शः क्षयं कुष्टं हलीमकम् ॥ ३०० ॥
नाशयेन्नात्र सन्देहो यथा सूर्योदयस्तमः ।
शतवर्षाधिकस्यापि पुंसो रेतो विवर्धनः ॥
आमवाताऽस्थिशूलश्च रसः पञ्चामृतो हरेत् ॥३०१॥

रससागर, रसायने।

भाषा—पारद, अभ्रक, लोह, वङ्ग और नाग इनकीभस्में समभाग, इनसवकी वरावर शुद्धगन्धक मिलाकर काञ्जी, कालीमुसली, शतावरी, गोदुग्ध, विदारी, वाराही, अजगन्धा (ववई), असगन्ध, इनप्रत्येकके रसोंसे ७–७ वारमर्दनकर गोलावनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर भूधरयन्त्रमें ४ पहरकी अग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह क्षयादि समस्तरोगोंको नष्टकरताहै। वली, पलित, प्रमेह, ग्रहणी, अर्श, क्षय, कुष्ठ, हलीमक, आमवात, अस्थिशूल इनसवको नष्टकर दीर्घायुको करताहै॥६९॥

७० पञ्चामृतरसः (चक्रादि) १६

शुद्धसूतस्य गन्धस्य तोलं तोलं सतैलकम् ।
सम्मर्द्य लोहपात्रे च निक्षिपेदम्लकाञ्जिकम् ॥ ३०२ ॥
तयोः समश्च कैदारं ताम्रभस्माऽखिलैः समम् ।
व्योषैश्चतुष्पलैः सार्धं कृत्वा भृङ्गजलैः सह ॥३०३॥
मरिचप्रमिता कार्या वटी घर्मेण शोषयेत् ।
सन्निपाते च वाते च प्रतिश्याये च पीनसे ॥ ३०४ ॥
कफवातभवे रोगे शूले मन्दानले तथा ।
अतिसारे ग्रहण्याञ्च सर्वश्लेष्मसरुद्गदे ॥
चक्रपञ्चामृतो नाम हितो नृणामिवेश्वरः ॥ ३०५ ॥

रससागर, रसायने।

भाषा—शुद्धपारा, और गन्धक १–१ तोला लेकर लोहेकेपात्रमें नीलवर्णकज्जलीकर कटुतैलसे एकरोज़मर्दनकर अम्लकाञ्जीसे १ रोजमर्दनकरे फिर कालीमिट्टी २ तो, ताम्रभस्म ४ तो. और त्रिकुटाचूर्ण ४ पल लेकर सवको इकट्ठे मिलाय भंगरेके रससे २–३ रोज़मर्दनकर मरिचवरावर गोलियें वनाकर धूपमें सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे सन्निपात, वातरोग, प्रतिश्याय, पीनस, कफवातरोग, शूल, मन्दाग्नि, अतिसार, ग्रहणी, श्लेष्मवातरोग इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ७० ॥

७१ पञ्चामृतरसः (सप्तदशः)

पूर्वं यानि विशोधितानि च पुनः
कान्ताऽभ्रशुल्वानि च,
पक्वान्येव हरेच्च गन्धकसमा-
न्येतानि सम्मेलयेत् ।
तच्चूर्णं सघृतश्च शोधितरसं
शास्त्रक्रमाद्वै भिषक्,
तस्मिंश्च स्थिरमानसः सुविधिना
क्वाथं सुतप्तं क्षिपेत् ॥ ३०६ ॥
पञ्चामृतमूलेन दशमूलेनाऽष्टवर्गमूलेन ।
मधुसञ्जीवनीमार्कवविदारिमूलेन च क्वाथः ॥ ३०७ ॥
गुडूची हस्तिकर्णी च मुशली श्रावणी तथा ।
शतावरी च पञ्चैताः क्वाथः पञ्चामृतो मतः ॥ ३०८ ॥
ऋषभकजीवकयुक्तं मेदायुग्मश्च ऋद्धिवृद्धी च ।
काकोलीद्वयसहितं क्वाथः कथितोऽष्टवर्गस्य ॥ ३०९ ॥
श्रीपर्णिका च वृहती च वसन्तदूती,
व्याघ्र्यग्निमन्थशुकनासकशालपर्ण्यः ।
बिल्वश्च गोक्षुरकमेव सुपृष्ठपर्णी,
क्वाथो वुधैश्च कथितो दशमूलसञ्ज्ञः ॥३१०॥
ज्वलनस्थं तत्सर्वं शनैः शनैरेव पचनीयम् ।
प्रभाततश्चाऽऽरम्भितमस्तं याति दिवाकरे यावत् ३११
पाकाऽवसानसमयं ज्ञात्वा तत्रैव चित्रकं शृङ्गीम् ।
त्रिकटुकचूर्णञ्च तथा रसमानं तद्विनिक्षिपेत्प्राज्ञः ३१२
गुडपाकसमानेन च वह्निस्थे तान्यौषधानि भिषक् ।
उत्तारणीयमग्नेर्भूमौ संस्थापनीयश्च ॥ ३१३ ॥

रसेन्द्रसं, र., रसायने।

टि०–पूर्वं ग्रन्थारम्भे यानि साम्प्रतमेव कथयिष्यमाणानि विशोधितानि मर्दनादिभिर्विशुद्धिमापादितानि पुटैश्च पुन विशोधितानि भस्मीकृतानीत्यर्थ। एतदर्थस्य स्पष्टीकरणार्थं पक्वान्येवेति विशेषण दत्तम्। तानि कानीत्यपेक्षाया कान्ताऽभ्रशुल्वानि इति त्रीणि, चतुर्थो गन्धक, शोधितरसश्च पञ्चम, एतेषा शास्त्रोद्दिष्टक्रमेण पर्पटी सम्पाद्य पुनर्भावना दातव्येति रहस्यमवगन्तव्यम्। रसावतारे तु "रसगन्धकतत्रेभ्यस्तुल्य लोह विमर्दयेत्। पञ्चामृताऽष्टवर्गाभ्या दशमूलेन वा पुन' ॥ क्वाथ कृत्वा यथालाभ स्वेदनीय मुहुर्मुहु सर्वरात्रिं दीपकेन निक्षिप्याऽऽयसपात्रके। रसतुल्य त्रिकटुक चित्रकश्च विनि क्षिपेत्॥ गुडतुल्यो जातपाक सिद्धसूतस्तदाभवेत्।" इति पाठेन विलक्षणता प्रदर्शिता सा ज्ञानपूर्वा वा स्यादज्ञानपूर्वा वा स्यादिति सुधीभिर्विभावनीयम्॥

भाषा—कान्तलोह, अभ्रक और ताम्रभस्म १–१ तोला, गन्धक ३ तो, शुद्धपारा ३ तो, लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें सवको मिलाकर घृताक्तलोहेकी कड़ाहीमें वेरके कोयलोंपर गलाकर ताजे गोवरपर रक्खेहुए केलेके पत्तेपर ढालकर दूसरे केलेके पत्तेसे दवाकर गोवरसेदवादे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर वारीकचूर्णकर लोहेकी कड़ाहीमें डालकर अग्निपर चढावे फिर पञ्चामृतमूलकाथ, दशमूलकाथ, अष्टवर्गमूलकाथ, मीठीडोडी, भंगरा, विदारीमूल इनका अष्टमांशावशिष्ट उष्णकाथ थोड़ा २ देकर प्रत्येकमे १–१ पहरपकावे, एककेवाद दूसरा काथडाले। सूर्योदयमे आरम्भकर सूर्यास्ततक सवके काथोंमे पकालेवे फिर चित्रक, काकड़ासींगी, त्रिकुट सव समभागलेकर

कपड़छानचूर्णकर ९ तोले कड़ाहीमें डालकर पकावे, यहध्यान रक्खेकि कड़ाहीमें नीचे लगने न पावे, जबगुड़की चाशनीके सदृश होजाय तब नीचे उतारले, स्वाङ्गशीतलहोनेपर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से ३ गोलीतक कुष्ठघ्नाऽनुपानकेसाथदेनेसे ऋष्यजिह्वकादि समस्तकुष्ठ दूरहोतेहैं। गिलोय, हस्तिकर्णपलाश, मुशली, गोरखमुण्डी, शतावरी यह पञ्चामृत क्वाथहै। बेलगिरी, सोनापाठा, गंभारी, पाटला, अरणी, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, गोखरू, दोनोंकटेरी यह दशमूलहै। काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि यह अष्टवर्गहै ॥ ७१ ॥

७२ पञ्चामृतरसः (अष्टादशः)

रसगन्धकवङ्गाऽभ्रं लोहभागं समांशकम्।
पञ्चवक्त्रेण सम्प्रोक्तः पञ्चामृतरसोत्तमः ॥ ३१४ ॥
पञ्चवल्लमिमं खादेत्कणाक्षौद्रेण संयुतम्।
धातुक्षयाऽग्निमान्द्ये च कासं पञ्चविधन्तथा ॥३१५॥
जीर्णज्वरमजीर्णञ्च शोफपाण्डुहलीमकम्।
अनुपानाऽनुयोगेन नाशयेन्नात्र संशयः ॥ ३१६ ॥

रसायनसं, क्षये।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, वङ्ग, अभ्रक, लोह इनकीभस्में सब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ पहरघोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १५–१५ रत्तीकीमात्रा मधुपीपल अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ खानेसे धातुक्षय, अग्निमान्द्य, ५ प्रकारका कास, जीर्णज्वर, अजीर्ण, शोफ, पाण्डु, हलीमक इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ७२ ॥

७३ पञ्चामृतरसः (ऊनविंशः)

मृतं शुल्वं मृतं तीक्ष्णं मृतं स्वर्णञ्च तुत्थकम्।
सर्वतुल्यं गन्धकञ्च शुद्धं तद्दत्त्वमर्दयेत् ॥ ३१७ ॥
पुटेद्गजपुटे वारमेकं सिद्धो भवेद्रसः।
एष पञ्चामृतो नाम्ना मुखरोगनिवारण ॥ ३१८ ॥
ओष्ठताल्वादिशमनो वलीपलितनाशनः।
मुखरोगी त्यजेन्नित्यं लवणञ्चोष्णभोजनम् ॥
कफकारि च यत्सर्वं मिष्टान्नञ्च दधीनि च ॥ ३१९ ॥

र. म. मा, ना वि, मुखरोगे।

भाषा—तांबा, लोहा, सोना, तुत्थ इनकीभस्में १–१ भाग, शुद्धगन्धक ४ भा, लेकर पानवगैरहकेरससे १–२ रोज मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे, स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानके-साथ देनेसे ओष्ठ और तालुकेरोग, वलीपलित इनसबको यह नष्टकरताहै। पथ्यमें लवण, उष्ण, कफकारी, मिष्टान्न और दहीको छोड़कर उचितवस्तुका सेवनकरे ॥ ७३ ॥

७४ पञ्चामृतरसः (विंशः)

जातीफलं जातिपत्रं लवङ्गं केसरन्तथा।
चातुर्जातकशुण्ठ्यौ च पिप्पली मरिचानि च ॥३२०॥
चित्रकं पिप्पलीमूलं वरी मूलन्तु वंशजम्।
सर्वं पिष्ट्वा सुसूक्ष्मञ्च वाससा परिशोधयेत् ॥ ३२१ ॥
लोहचूर्णमथाऽभ्रं वा ताम्रभस्म च वङ्गकम्।
रसराजञ्च नागञ्च चूर्णस्याऽर्धं प्रयोजयेत् ॥ ३२२ ॥
नागवल्लीरसेनैव ह्यथवा माक्षिकेण च।
गुटिका तस्य कर्तव्या माषद्वयप्रमाणिका ॥ ३२३ ॥
दोषमग्निं बलं वीक्ष्य यथोक्तं भक्षयेद्बुधः।
गोदुग्धस्याऽनुपानञ्च ह्युष्णञ्चैव विशेषतः ॥ ३२४ ॥
वर्धनं सर्वधातूनां वीर्यबुद्धिबलप्रदम्।
वल्लभाकान्तिरुचिदमग्नेः सुदीप्तिकारकम् ॥ ३२५ ॥
कफरोगहरञ्चैव बुद्धिज्ञानादिकारणम्।
वन्ध्या च लभते गर्भं पण्ढोऽपि पुरुषायते ॥ ३२६ ॥
नपुंसको याति पुंस्त्वं रामाः कामयते शतम्।
वज्रकायः शुद्धधातुर्दिव्यदृष्टिस्तुजायते ॥
जराव्याधिविनिर्मुक्तो वर्षसेवी यदा भवेत ॥ ३२७ ॥

व. से., रसायने।

भाषा—जायफल, जावित्री, लोंग, केसर, चातुर्जात, सोंठ, पीपल, मरिच, चित्रक, पिपलामूल, शतावर, बंसलोचन सब सम-भागलेकर कपडछानचूर्णकर रखले फिर लोहभस्म अथवा अभ्रक-भस्म, ताम्र, वङ्ग, पारद और नागभस्म, ये पांचों मिलकर पूर्व-चूर्णमे आधेप्रमाणमें मिलाकर पानकेरस अथवा मधुमें १–२ दिन घोटकर २–२ माशेकीगोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली अथवा दोष और अग्निबल देखकर मात्रा कायम-कर उष्णगोदुग्धकेसाथ देनेसे धातु, वीर्य, बुद्धि, बल और रुचिइनकाह्रास, मन्दाग्नि, कफरोग, बुद्धिमान्द्य, वन्ध्यात्वदोष, पण्ढत्व, दृष्टिदौर्बल्य इनसबको दूरकर बुढापेको दूरकरताहै ॥७४॥

७५ पञ्चामृतरसः (एकविंशः)

कर्षं रसाद्गन्धकतश्च कर्षं
विमर्द्य खल्वेऽभ्रकमेव तावत्।
क्षेप्यं तथा ताप्यमयोरजश्च
गव्येन चाऽऽज्येन विमिश्र्य किञ्चित् ॥३२८॥
शरावयुग्मस्थमतो मृतं तत्
समुद्धृतं सर्वमपि प्रयत्नात्।
पांशुप्रपूर्णे च निधाय पात्रे
तदेव पात्रं सुमृदा प्रलिम्पेत् ॥ ३२९ ॥
मन्दंमन्दं वन्हिना क्राथयेत्त-
द्यावद्यामानां त्रयं स्वाङ्गशीतम्।
ग्राह्यं देयं रक्तिकैकप्रवृद्ध्या
यावन्माषो नाऽधिकं मानवेभ्यः ॥ ३३० ॥
कृत्वा वन्हेर्दीपनं हन्ति रोगान्
पाण्डुप्लीहोन्मादुदुर्नाममेहान्।
पित्तं साऽम्लं साऽतिसारं ज्वरञ्च
सद्यः शूलान् विग्रहण्यामयांश्च ॥ ३३१ ॥

अयं हि पञ्चामृतनामधेयो
रसेन्द्रयोगः क्षयरोगहारी।
वाताऽस्रकुष्ठं श्वयथुं च हन्यात्
स्वयोगयुक्तः सकलान् विकारान् ॥ ३३२ ॥

र मृ क्षयाद्यौ

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक अभ्रक सोनामाखी और लोहभस्म ये सब समभाग लेकर पारे गन्धक की नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर थोड़े गायके घी का प्रक्षेप देकर मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्द कर ४–५ कपड़मिट्टीदेकर अच्छीतरह सूखनेपर लावपुटकी अग्नि दे फिर स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर तुलसी प्रभृतिके स्वरसमें एकदोरोज मर्दन कर सुखाकर पुन कज्जली कर आतशी शीशीमें भरकर वालुका यन्त्र में बन्द कर तीन प्रहरकी मन्दाग्निमें पकावे स्वाङ्गशीतल होनेपर निकाल रखछोडे इसमेंसे १ एक रत्ती उचिताऽनुपानके साथ आरम्भकरे और रोज एकएक रत्ती बढाकर एक माशेकी मात्रा कायमकर उचितसमयतक खानेसे मन्दाग्नि, पाण्डु, प्लीहा, उन्माद, ववासीर, अम्लपित्त, ज्वराऽतिसार, सद्य शूल, संग्रहणी, वातरक्त, शोथ, इत्यादि समस्तरोगोंको यह बहुत शीघ्र नष्टकरता है ॥ ७५ ॥

७६ पञ्चामृतरसायनम्

भस्मसूताऽभ्रवङ्गाऽयोयुक्तं द्विघ्नं शिलाजतु।
तद्वरामधुना सेव्यं द्विमाषं सर्वमेहजित् ॥ ३३३ ॥
पञ्चामृतमिदं वृष्यं सुभगञ्च रसायनम्।
स्वयोगयुक्त्या कृच्छ्राऽश्मशुष्कपाण्डुक्षयापहम् ।३३४।
वरास्थाने भवेद्धात्री कुर्याद्वा गुणसत्तमाम्।
केवलं वाऽथ मधुना मेहघ्नी वलवर्धिनी ॥ ३३५ ॥

र ग्नि., मेहे।

भाषा—पारद, अभ्रक, वङ्ग, लोह इनसबकीभस्में समभाग, इनसबसे द्विगुणशुद्ध शिलाजतु मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १ या २ माशे लेकर त्रिफलाकेचूर्ण औरमधुके साथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको नष्टकरताहै। तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ इसका प्रयोगकरनेसे मूत्रकृच्छ्र, पथरी, शुष्कपाण्डु और क्षय नष्टहोतेहैं। अनुपानमें त्रिफलाके स्थानमें आंवले अथवा इन्हें वा केवलमधुसे कामलेसक्तेहैं। यह रसायन धातु औरवलको वढ़ानेवालीहै और खानेमें कष्टप्रद नहींहै ॥ ७६ ॥

७७ पञ्चामृतलोहगुग्गुलुः

रसगन्धकताराऽभ्रमाक्षिकाणां पलंपलम्।
लोहस्य द्विपलञ्चापि गुग्गुलोः पलसप्तकम् ॥३३६॥
मर्दयेदायसे पात्रे दण्डेनाऽप्यायसेन च।
कटुतैलसमायोगाद्यामद्वयमतन्द्रितः ॥ ३३७ ॥
माषमात्रप्रयोगेण गदा मस्तिष्कसम्भवाः।
स्नायुजा वातजाश्चापि विनश्यन्ति न संशयः ॥३३८॥
यं पञ्चामृतलौहाख्यो गुग्गुलुर्न हरेद्गदम्।
नासौ सञ्जायते देहे मनुजानां कदाचन ॥ ३३९ ॥

भै र., परिशिष्ट।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, रजत, अभ्रक, सुवर्णमाक्षिक इनकीभस्में प्रत्येक १ पल, लोहभस्म २ पल, गुग्गुलु ७ पल लेकर लोहेके वर्तनमें लोहेके डंडेसे थोड़ासाकडवातैल डालकर दोपहरतक लगातार मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे मस्तिष्करोग, स्नायु, वातव्याधि इनसबको यह नष्टकरताहै। शरीरमें ऐसाकोईरोगनहींहै जिसको यह (पञ्चामृतगुग्गुलु) नष्टनहींकरसक्ताहो ॥ ७७ ॥

७८ पञ्चामृतलोहम्

कनकभास्करताप्यघनायसां
यदि रजस्त्रिफलाम्बुपरिप्लुतम्।
खरमयूखविशोपितशोषितं
दलितमाज्यसितामधुयोजितम् ॥ ३४० ॥
हरति हृद्रुजमामसमीरणं
क्षयमुदारमुरःक्षतपीनसम्।
प्रकुरुते रमणीरमणीयतां
हृतहृदां सुहृदां रतिपाटवम् ॥ ३४१ ॥

लो प (स), ना वि., क्षये।

भाषा—सुवर्ण, ताम्र, सोनामाखी, अभ्रक, लोह इनसबकी भस्में समभागलेकर त्रिफलाके काढेसे कड़ीधूपमें कईभावनाएं देकर कपड़छान चूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे २ या ३ रत्तीकी मात्रा घी, शक्कर और मधुकेसाथ मिलाकर खानेसे हृद्रोग, आमवात, क्षय, अत्यन्तवढ़ाहुआ उर क्षत, पीनस, नपुंसकता इनसबको यह दूरकरताहै। स्त्रियोंके सौन्दर्यको वढ़ाताहै। शृङ्गार रससे शून्य हृदयोंकोभी रतितत्पर करताहै ॥ ७८ ॥

७९ पञ्चामृतवटी

पारदं गन्धकं ताम्रमभ्रकं मरिचानि च।
समभागमिदं चूर्णं चाङ्गेरीरसमर्दितम् ॥ ३४२ ॥
मर्दितं हि रसे भूयो जयन्तीसिन्धुवारयोः।
भावनाऽपि च कर्तव्या गुञ्जापरिमिता वटी ॥ ३४३ ॥
तप्तोदकानुपानेन चतस्रस्तिस्र एव वा।
वह्निमान्द्ये प्रदातव्या वट्यः पञ्चाऽमृताः शुभाः ३४४

र सं, र. सु, र. क, र र., अजीर्णे।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, ताम्र, अभ्रकभस्म, मरिच ये सब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जली में मिलाकर खट्टी तिपतियाके रससे २–४ रोज़ मर्दनकर जैत और निर्गुण्डीके स्वरसकी १–१ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे ३ अथवा ४ गोलियें गरमपानीके साथ देनेसे मन्दाग्नि, गुल्म, यकृत्, प्लीह जीर्णज्वर इत्यादि रोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ७९ ॥

८० पत्रवासकपाकः

पत्रवासः प्रस्थमेकं क्षीरे द्रोणमिते पचेत्।
घृतप्रस्थसमायुक्तं विपचेन्मृदुवह्निना ॥ ३४५ ॥

खण्डं शुद्धं तुलार्धञ्च प्रस्थार्धञ्च मधु क्षिपेत्।
स्निग्धभाण्डे विनिक्षिप्य स्थाप्यं सर्वं प्रयत्नतः ३४६
चातुर्जातं लवङ्गानि पिप्पली च पुनर्नवा।
नागार्जुनी स्वगुप्ता च गोक्षुरं पिचुमात्रया॥ ३४७॥
मञ्जिष्ठा चाऽश्वगन्धा च ह्यक्षमात्रं तथैव च।
नागवल्लीसमुद्भूतं वङ्गाभ्रकसमं तथा॥ ३४८॥
लोहं शुल्वं तथैकैकं शाणकद्वयमानकम्।
धीरासत्त्वं तवक्षीरं पलार्धञ्च प्रकल्पयेत्॥ ३४९॥
वालकं चन्दनं मांसी कर्पूरं वंशलोचनम्।
जातीफलं जातिपत्री केशरं तगरं तथा॥ ३५०॥
पलमात्रं प्रदातव्यं महाव्याधिनिवारणम्।
कासं श्वासं तथा पाण्डु प्रमेहस्य विनाशनम्॥३५१॥
पित्तोद्भवं महादोषं मूत्रकृच्छ्रञ्च दारुणम्।
ये चान्ये शुक्रजा दोषा एष सर्वान्विनाशयेत्॥
बलवीर्यकरः पुंसां पत्रवासाऽवलेहकः॥ ३५२॥

चि र भ, पा व, महाव्याधौ।

टि०—अत्र पत्रवास शब्देन शाखिरण्टो ग्रहीतव्य, गुर्जरभाषया शाखिरण्टस्यैव पटवासेति नाम्ना प्रसिद्धे।

भाषा—एकसेर माईकेचूर्णको १६ सेर गोदुग्धमें पकावे, उसमें १ सेर गोघृत डाले, जब मावा तैयारहोजाय तब ५० पल खाड डालकर चाशनीकरले। स्वाङ्गशीतलहोनेपर ८ पल मधु मिलाकर चिकने वर्तनमें रखछोडे। इसमें चातुर्जात, लौंग, पीपल, पुनर्नवा, छोटीदूधी, केवाचकेबीज, गोखरू, मजीठ, असगन्ध येसब १–१ तोला, पानकीजड, वङ्ग, अभ्रक, लोह-ताम्रभस्म ६–६ मासे, गिलोयसत्त्व, तीखुर २–२ तोले, सुगन्धवाला, चन्दन, जटामासी, कपूर, वंसलोचन, जायफल, जावित्री, केशर, तगर ये सब १–१ पल डालकर मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ तोला अथवा अग्निबल देखकर मात्रा लेनेसे कास, श्वास पाण्डु, प्रमेह, पित्तरोग, भयंकर मूत्रकृच्छ्र, दु साध्यशुक्ररोग, इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ८०॥

८१ पथ्यादिलोहम् (प्रथमम्)

पथ्या लोहरजः शुण्ठी तच्चूर्णं मधुसर्पिषा।
परिणामोद्भव शूलं सद्यो हन्ति त्रिदोषजम्॥ ३५३॥

र र, र प्र, वृ यो त, टो, रसायनसं, नि र, र चि, यो-म, च द, भा प्र, यो र, वै द, र का, वृ मा., ग नि, परिणामशूले। कुत्रचित्कणा अधिकतया दृश्यते।

भाषा—हर्रै, लोहभस्म सोंठ, सबसमभागलेकर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा मधु और घीकेसाथ लेनेसे त्रिदोषज परिणामशूल नष्टहोताहै॥ ८१॥

८२ पथ्यादिलोहम् (द्वितीयम्)

तुल्या अयोरजः पथ्या हरिद्रा क्षौद्रसर्पिषा।
चूर्णिताः कामली लिह्याद्गुडक्षौद्रेण वाऽभयाम्।३५४।

च सं, नि र, च द, वै चि, टो, कामलायाम्। वै चि, अयोरजः प्रभृति चूर्णम्।

भाषा—लोहभस्म, हर्रै, हल्दी येसब समभागलेकर मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ माशा अथवा यथाबलानुसार मात्रा मधु और घीकेसाथ लेनेसे कामलारोग नष्टहोवे अथवा इसके अभावमें गुड और मधुके साथ हर्रै खावे॥ ८२॥

८३ पथ्यादिलोहम् (तृतीयम्)

पथ्यारजः सममयोरजसा त्रिफला
गोमूत्रके समगुडं विधिवत्प्रयुक्तम्।
शूलं निहन्ति परिणामसमुद्भवं तद्-
भागीरथीजलमिवाखिलदुष्कर्मणः॥ ३५५॥

लो प (ग.), परिणामशूले।

भाषा—हर्रै और लोहा १ समभागलेकर इनको गोमूत्रमें धीरे २ पकावे, पाकहोनेपर उतारकर गुडमिलाकर रखछोडे। इसमेंसे १ माशासे ३ मासेतक यथायोग्य अनुपानके साथ लेनेसे परिणामशूलको यह ऐसेही नष्टकरताहै जिसतरह गंगोदक कियेहुये पापको नष्टकरताहै॥ ८३॥

८४ परमेश्वरो रसः

रसं वज्रं स्वर्णकान्ते मुण्डञ्च मारितं समम्।
माक्षिकं गन्धकं शुद्धं सर्वं जम्बीरजैर्द्रवैः॥ ३५६॥
सप्ताहं मर्दयेत्खल्वे तद्गोलं चाऽन्धितं पुटेत्।
भूधरे दिनमेकन्तु स्यात्तः सिद्धरसः परः॥ ३५७॥
गुञ्जैकं मधुना लेह्यं सर्वान्मृत्युजरापहम्।
दिव्यकायो नरः सिद्धो भवेद्विष्णुपराक्रमः॥ ३५८॥
श्वेतपौनर्नवं मूलं क्षीरपिष्टं सदा पिबेत्।
भक्षयेद्वा सितासार्धं कामकं परमं रसे॥ ३५९॥

र मं, रसायने।

भाषा—शुद्धपारा, हीरा, सुवर्ण, कान्त, मुण्ड इनकी भस्में, शुद्धसोनामाखी और गन्धक समभागलेकर उसे खरलकर जंभीरीके रसमें ७ रोजमर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर एकदिन भूधरयन्त्रमें पकानेसे यह रस सिद्धहोगा। इसमेंसे १–१ रत्ती मधुकेसाथ १ वर्षतक खानेसे दिव्यकाय होताहै इसरसके खानेकेबाद सफेद पुनर्नवाकीजड १ तोला दूधमें पीसकरपीवे अथवा शक्करकेसाथ कामकचीजोंका सेवनकरे॥ ८४॥

८५ परशुरामकुठारो रसः

नागगन्धरसञ्चैव कर्परी तु द्विभागतः।
वेदभागं चित्रकञ्च जम्बीररसमर्दितम्॥ ३६०॥
गुञ्जामात्रां तु वटिकां ह्यनुपानेन सेवयेत्।
सन्निपातकुलं हन्ति जामदग्न्यकुठारकः॥ ३६१॥

वै चि, ज्वराधिकारे।

भाषा—नागभस्म, शुद्धगन्धक और पारा १–१ भाग, खर्पर २ भा, चित्रक ४ भा, सबका कपड़छान चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर जंभीरीकेरससे १ रोजमर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१

गोली तत्तत्समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातके कुलको नष्टकरतीहै ॥ ८५ ॥

८६ परहितरसः

श्वेतां पाठां जटां श्वेतां श्वेतां चैव पुनर्नवाम् ।
पिष्ट्वा जलेन ताः कल्कैः प्रकुर्यान्मल्लमूषिकाम् ॥३६२॥
स्थालीमध्ये च तां क्षिप्त्वा क्षिपेत्संशोधितं रसम् ।
क्षिपेदुपरि सम्पेष्य द्व्यञ्जलिप्रमितं पटुम् ॥ ३६३ ॥
पिधानं तन्मुखे दत्त्वा सन्निरुध्याऽतियत्नतः ।
अधस्ताज्ज्वालयेद्वह्निं पिधान्यामम्बुनिक्षिपेत् ॥३६४॥
यामत्रितयपर्यन्तं जातेऽथ शिशिरे ततः ।
क्रोडकेशैः समाकृष्य मृतं पारदमाहरेत् ॥
नचेदेतावता भस्म पुनरेव पुटेद्रसम् ॥ ३६५ ॥
तद्भस्मातिविषं विषं कृमिहरं व्योषोत्तमा गन्धजं,
चूर्णं द्वादशहाटकं खलु गुडो द्वात्रिंशदंशोन्मितः ।
तत्सर्वं परिचूर्णितं प्रतिदिनं वल्लैश्चतुर्भिर्मितं,
चेत्थं हन्ति समस्तरोगनिवहं नागं गरुत्मानिव ।३६६।
विशेषात्सर्वकुष्ठघ्नो रसोऽयं परिकीर्तितः ।
ख्यातः परहितो नाम्ना भानुना भूरिभानुना ।३६७।

र र. स,. कुष्ठे ।

टि०—श्वेतादीना पारदस्यच प्रत्येक पलमानम् ।

भाषा—सफेदफूलकीकोयल, पाठाकीजड़, वच, सफेदपुनर्नवा, इनसवको जलमें पीस मूषावनाय अन्दर शोधनकियाहुआ पाराडालकर मूषाको हंडीमें रखदे, मूषाके ऊपर वारीकपिसाहुआ ३२ तोले सेंधानमकडालकर हंडीकामुंहवंदकर चूल्हेपर रख ऊपरके ढक्कनमें पानीभरदे फिर तीनपहरतक कड़ीआचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे सम्पुटकोखोलकर सुअरके वालोंके कूंचेसे हंडीमेंसे पारेको निकालले । यदि इतनेमें भस्म न हुईहो तो फिर दुवारापूर्ववत्करे । फिर यह पारदभस्म २ तोला अतीस, शुद्धवछनाग, विडङ्ग, त्रिकटु, त्रिफला और गन्धक १–१ तोले, पुरानागुड़ ३२ तो, लेकर सवचीजोंका कपड़छानचूर्णकर गुड़में १२–१२ रत्तीकी गोलियें वनाकररखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको इसतरह नष्टकरताहै जैसेकि गरुड़ सर्पोका नाशकरताहै विशेषकर कुष्ठ और उपदंशको दूरकरताहै यह सूर्यका कहाहुआहै ॥ ८६ ॥

८७ परानन्दो रसः

मृतसूताऽभ्रकं गन्धं तुल्यं सप्तदिनावधि ।
शिग्रुमूलदलैर्मर्द्यं तद्गोलं भाण्डमध्यगम् ॥ ३६८ ॥
रुद्ध्वा पक्त्वा लघुत्वेन शाककाष्ठैर्दिनावधि ।
परानन्दो रसो नाम घृतैर्वल्लं सदा लिहेत् ॥३६९॥
दिनैकं त्रिफलाक्वाथैः कुष्ठं सम्यग्विपाचयेत् ।
तच्चुष्कं चूर्णितं कर्षं मध्वाज्याभ्यां लिहेदनु ॥
संवत्सरप्रयोगेण जीवेद्रोगविवर्जितः ॥ ३७० ॥

र खं, रसायनखं, रसायने ।

भाषा—शुद्धपारा, अभ्रकभस्म, गन्धक सवसमभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर ७ दिनतक सहिजनकीजड़ और पत्तोंकेरससे मर्दनकर कपडमिट्टीदीहुईहंडीमें वन्दकर सागकीलकडीसे ४ पहरपकाकर स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती घीकेसाथ खाकर त्रिफलाकेक्काथमें पकायेहुए कुठके चूर्णको १ कर्ष मधु और घीकेसाथ ऊपरसे चाटे । ऐसे एकवर्षतक इसका प्रयोगकरनेसे मनुष्य रोगरहितहोकर दीर्घजीवी होताहै ॥ ८७ ॥

८८ परिकररसः (माणाद्यगुटी)

नागरं तालवल्लौ च प्रत्येकन्तु त्रिकार्षिकम् ।
विडसौवर्चलक्षारपिप्पलयश्चापि कार्षिकाः ॥३७१॥
एतच्चूर्णीकृतं सर्वं गोमूत्रस्याढके पचेत् ।
सान्द्रीभूतं गुटीः कुर्याद्दत्त्वा त्रिपलमाक्षिकम् ॥३७२॥
यकृत्प्लीहोदरहरो गुल्मार्शोग्रहणीहरः ।
योगः परिकरो नाम्ना वह्निसन्दीपनः परः ॥३७३॥

यो.म , उदरे ।

भाषा—सोंठ, हरिताल, वङ्गभस्म, विडनोंन, संचल, यवक्षार,पीपल ३–३ तोले लेकर सवका वारीकचूर्णकर ४ सेरगोमूत्रमें पकावे, गाढ़ाहोनेपर उतारकर रखदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर ३ पल शहद डालकर ३–३ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यकृत्, प्लीह, उदर, गुल्म, ववासीर, ग्रहणी, मन्दाग्नि इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ८८ ॥

८९ परिस्राव्युदरहरो रसः

नभोलोहगन्धं शिलाताम्रकुष्ठं,
रसव्योषनिम्बाग्निदीप्याग्नियुक्तम् ।
विषं शर्वरी तालमूल्या च पिष्टं,
परिस्राविणं हन्ति माक्षीकयुक्तम् ॥३७४॥

चि.क , उदरे ।

भाषा—अभ्रक, लोह, ताम्रभस्म, शुद्धगन्धक, पारा, मैनसिल, कुठ, त्रिकटु, नीमकीछाल, चित्रक, भिलावा, शुद्धवछनाग, हल्दी, येसव समभागलेकर वारीकचूर्णकर तालमूलीके रससे मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधु अथवा व्रणघ्नानुपानकेसाथ देनेसे यह परिस्राव्युदरको नष्ट करताहै ॥ ८९ ॥

९० पर्पटीरसः (मल्लपर्पटी)

राले चतुःपलमिते द्रवितेऽग्नियोगा-
त्सम्मेल्य शुक्लविषमर्धपलप्रमाणम् ।
खल्वे क्षिपेत्सपदि पर्पटिका रसोऽयं,
हन्यात्कफानिलमतिभ्रमवान्तिवेगान् ॥३७५॥

सि भे म ज्वराधिकारे ।

भाषा—४ पल सफेदरालको गलाकर आधापलसफेद सोमलका वारीकचूर्णमिलाकर उसकीपर्पटी वनाकर खरलमें डाल

दोतीनरोज़तकमर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे आधीआधीरत्ती समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे कफवातरोग, मतिभ्रम, वमन इत्यादिरोगोंको यह तत्क्षण दूरकरताहै इसको वहुतसंभालकर वर्तना उचितहै, वैद्यको चाहियेकि ऐसी दवाइया रोगीको अपनेसामने खिलावे, दसवीसपुड़िया इकट्ठी वनाकर न दे ॥ ९० ॥

९१ पलितारिरसः

रसगन्धाऽभ्रताम्रञ्च कान्तलोहयुतन्तथा।
त्रिफलाभृङ्गनिर्गुण्डीपत्रैः मर्द्यं दिन पृथक् ॥ ३७६ ॥
ततः सुमर्दयेदेभिः सिद्धोऽसौ पलितापहः।
त्रिफलाभृङ्गराजाभ्यां माषः पलितनाशनः ॥ ३७७ ॥
मुखकक्षादिलेपेन व्यङ्गव्यकण्डूहिपूतनम्।
जयेत्कासीसतुत्थाऽऽलरोचनाताक्ष्यशैलकम् ॥३७८॥
रक्तपत्रावरानार्क्ष्यशिलापक्कमजाघृतम्।
तत्राऽहिपूतनां हन्ति चिरोत्थामपि दुष्कराम् ॥३७९॥
र., पलिते।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, अभ्रक, ताम्र, कान्तलोह, इनकीभस्में समभागलेकर त्रिफला, भागरा औरनिर्गुण्डीकेपत्ते इनप्रत्येकके रस अथवा क्वाथसे १–१ रोज़ मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली त्रिफला और भंगराकेरसकेसाथलेनेसे पलितको नष्टकरताहै। मुख, कक्षा प्रभृतिस्थानोंमें त्रिफला और भंगरेके रससे लेपकरनेसे व्यङ्ग, कण्डू, अहिपूतन इनको यह नष्टकरताहै तथा कासीस, तुत्थ, हरिताल, गोरोचन, रसाञ्जन, मैनसिल इनका त्रिफला और भंगराके रससे लेपकरनेसे पूर्वोक्तकार्यहोताहै। अथवा मेंहदी, त्रिफला, रसौत, मैनसिलइनके कल्क, क्वाथादिसे पकायाहुआ वकरीका घी वहुतदिनकी दु साध्य अहिपूतनाको नष्टकरताहै ॥ ९१ ॥

९२ पशुपतिचूर्णम्

सुरतरुकृतमालौ व्यालदारू वरा च,
तपनकनकपुष्प्यौ चापि गौरी विशाला।
समकृतशशिरेखं सूतभस्म प्रयुक्तम्,
पशुपतिकृतचूर्णं श्वेतकुष्ठं निहन्ति ॥ ३८० ॥
वै चि, श्वित्रे।

भाषा—देवदारु, अमिलतास, चित्रकमूल, दारुहल्दी त्रिफला, आककीजड़कीछाल, सत्यानाशीकीजड़ अथवा रेवनचीनी, हल्दी, इन्द्रायण, पारदभस्म येसव समभाग, इनसवकीवरावर वाकुचीकेवीजोंका चूर्ण मिलाकररखछोड़े। इसमेंसे ३–३ माशेकी मात्रा कुष्ठहरानुपानकेसाथ देनेसे यह श्वेतकुष्ठको दूरकरताहै। इसका काञ्जीके साथलेपकरना चाहिये ॥ ९२ ॥

९३ पाञ्चजन्यरसः

लोहार्काऽभ्रं हरजभुजगं कासमर्दाऽम्बुघृष्टं,
शुष्कं गोल पुटय सुदृढं सूरणान्तस्त्रिगुञ्जम्।
व्योपश्रेष्ठागुडवलियुतं भक्षयेन्मासमात्र,
सर्वान् रोगाञ्जयति जनयेद्दीपनं पाञ्चजन्यः ॥३८१॥
र. र शि., सर्वरोगे।

भाषा—लोह, ताम्र, अभ्रक, पारा, नाग, इनकीभस्में समभागलेकर कसौंजीके रससे १–२ रोजमर्दनकर गोलावनाय पकेहुए सूरणकन्दमें भीतररख उसीकी डाटमेवन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर सुखाकर गजपुटकीआंचदे, स्वांगशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती त्रिकटु, त्रिफला, गुड़ औरगन्धक समभागके ३ माशेचूर्णमें मिलाकर खानेसे १ महीनेमें समस्तरोगोंको दूरकर अग्निको प्रदीप्तकरताहै ॥ ९३ ॥

९४ पाणिजड्डुकरसः (प्रथमः)

नागवङ्गौ समौ शुद्धौ द्रावयेत्खर्परोपरि।
भागमेकं रसं दत्त्वा वद्धं खल्वे विमर्दयेत् ॥ ३८२ ॥
हालाहलं द्विभागञ्च पित्तैश्च परिमर्दयेत्।
स्नुहीचित्रकतोयेन शुष्कोऽयं पाणिजड्डुकः ॥ ३८३ ॥
र. क. यो., सन्निपाते।

भाषा—समभाग शुद्धनागवङ्गको खपरेमें गलाकर एकभाग शुद्धपारा डालकर उतारले फिर १ रोजमर्दनकर दोभाग शुद्धवछनाग मिलाकर पञ्चपित्त, थूहरकेदूध और चित्रकके क्वाथसे १–१ भावना देकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तसन्निपातोंको दूर करताहै ॥ ९४ ॥

९५ पाणिजड्डुकरसः (द्वितीयः)

शुद्धनागं शुद्धवङ्गं द्रावितं खर्परोपरि।
शुद्धसूतन्तु संयोज्य मत्स्यपित्तेन मर्दयेत् ॥ ३८४ ॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम्।
शम्भुना कथितः पूर्वं रसोऽयं पाणिजड्डुकः ॥ ३८५ ॥
र क. यो., सन्निपाते।

भाषा—समभाग शुद्ध नागवङ्गको गलाकर १ भाग शुद्धपारा मिलाकर मछलीके पित्तसे १ रोजमर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको दूरकरताहै ॥ ९५ ॥

९६ पाणिवद्धरसः (वडवाग्निः)

गन्धकं पारदञ्चैव भस्मलोहाष्टकं समम्।
जीरकस्य कषायेण मर्दितं याममात्रकम् ॥ ३८६ ॥
कूपिकायां विनिक्षिप्य वालुकाग्निप्रयोजितम्।
गाढाग्नौ त्रिदिनञ्चैव स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ॥ ३८७ ॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं पैत्ये पादकरे स्मृतम्।
निहन्यात्सर्वपित्तार्तिं योगोऽयं पाणिवद्धकः ॥३८८॥
वै चि, व. रा, पित्तरोगे।

टि०—अयमेवयोग कुमारीस्वरसभावनया वालुकायन्त्रपाक विना च निष्पादितस्तस्य नाम च वडवाग्निरिति स्थापितम् तयो रेव ग्रन्थयो रत कुमारीजीरकाभ्यामुभाभ्या भावना दत्त्वा पाकाऽपाकयो कामचार। यद्यपि क्रमपाके गुणविशेषोऽस्ति तथापि प्रत्युपस्थितकार्यनिर्वाहणार्थं तद्रहितस्य प्रयोग इति वोध्यम्।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, आठोंलोहोंकी भस्म समभाग लेकर इकट्ठे मिलाय जीरेके काढ़ेसे १ पहर मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशी शीशीमें डालकर वालुका यन्त्रमें तीनदिन खराग्नि देकर पकावे । स्वाँङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती हाथपैरोंकी जलन तथा तमाम पित्तके विकारोंमें देनेसे सबको नष्ट करता है ॥९६॥

९७ पाणिवुडो रसः

पूर्वशुद्धो रसो ग्राह्यो भस्मीभूतः पलात्मकः ।
तावन्मानो गन्धकः स्याद्भागावेकत्र मर्दयेत् ॥३८९॥
चित्रकस्य कषायेण भावयेदेकवासरम् ।
दिनत्रयं प्रमृद्नीयान्मुशलीरसतस्तथा ॥ ३९० ॥
दिनानि सप्त सम्मर्द्य पश्चात्पित्तैश्च भावयेत् ।
माहिषैः सप्तधा भाव्यः काकपित्तैस्तथैव च ॥३९१॥
सौकरैश्च तथा पित्तैः सप्तधा भावयेद्भिषक् ॥
रसस्य षोडशांशेन श्रृङ्गिकश्च विषं क्षिपेत् ॥३९२॥
तदभावेन हारिद्रमष्टमांशेन योजयेत् ॥
मेषशृङ्गिकसञ्ज्ञं वा चतुर्थांशेन योजयेत् ॥३९३॥
सक्तुकं त्वर्धमानेन वत्सनाभं समं क्षिपेत् ॥
निष्पिष्य मध्ये निक्षिप्य दद्यात्पश्चाच्च भावनाः ।३९४।
मारिचैः सलिलैः सप्त पिप्पलीसलिलैस्तथा ॥
शुण्ठीजीराऽऽर्द्रकरसैश्चित्रकस्य रसैस्तथा ॥३९५॥
एवं विभाव्य तं सूतं पूर्ववद्धूमपानकम् ॥
कृत्वा सम्मर्द्य वटिकामार्द्रकस्य रसैः कुरु ॥ ३९६ ॥
वल्लप्रमाणा वटिका सन्निपाते प्रदीयताम् ॥
आर्द्रकस्याऽनुपानन्तु कुर्वीताऽत्रापि पूर्ववत् ।३९७।
यावच्छीतं भवेत्तावदुदकं ढालयेत्तथा ॥
सम्यक् शैत्ये समापन्ने शरीरे रोगिणस्तदा ॥३९८॥
दधिभक्तं भोजयेत्तं खण्डशर्करया युतम् ॥
अतिश्लेष्मोत्तरश्चेत्स्याद्दुग्धभक्तं प्रयोजयेत् ॥३९९॥
शाकार्थमार्द्रकं दद्यात्कुस्तुम्बुरुजपल्लवम् ॥
मातुलुङ्गरसाऽऽप्लावं सैन्धवं तत्र निक्षिपेत् ॥४००॥
वृन्ताकं भर्जितं कृत्वा शाकार्थे सम्प्रयोजयेत् ॥
कर्पूरं चन्दनोशीरं निष्पिष्याङ्गं प्रलेपयेत् ॥ ४०१ ॥
कर्पूरं दापयेच्छश्वद्रोगिणस्तापशान्तये ॥
शीतोदकेन संस्नाप्य सर्वमुष्णं विवर्जयेत् ॥ ४०२ ॥
अयं पाणिवुडो नाम सन्निपातनिकृन्तनः ॥
देवीशास्त्रानुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ ४०३ ॥

रसाल., ज्वराधिकारे ।

टि०—अस्मात्पूर्ववर्ती प्रतापलङ्केश्वरोऽस्ति तत्र निर्दिष्टक्रियावदत्राऽपि सर्वमनुष्ठेयम् ।

भाषा—शुद्धकरके भस्मकियाहुआ पारा, शुद्धगन्धक दोनों समभाग मिलाकर चित्रकके काढ़ेसे १, मुसलीके रससे ३, पित्तोंसे ७ दिन मर्दनकर भैंसा, कौआ और सूअरके पित्तोंसे ७–७ भावनाएं देकर इससे १६ वा हिस्सा शुद्धश्रृङ्गिकविष मिलावे, उसके अभावमें आठवां हिस्सा हारिद्रक मिलावे । इसकेभी अभावमें मेषश्रृङ्गिकविष चतुर्थांश मिलावे । इसके अभावमें शक्तुकविष अर्धभागमें मिलावे । शक्तुकके अभावमें वछनाग समभागमें मिलावे । फिर इन सबको इकट्ठेकर मरिच, पीपल, सोंठ, जीरा, अदरख, चित्रक, इन प्रत्येकके रस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाएं देकर कल्कका ऊपरके घड़ेके भीतर लेप देकर नीचेके घड़ेमें दशांश वछनागका चूर्ण पानीमें पीसकर लेप लगा दे । फिर दोनोंका मुंह बन्दकर चूल्हेपर रख दोपहरकी मन्द आंच दे जिसमें कि नीचेका विष जलकर तमाम धुआं रसमें व्याप्त हो जाय । स्वाङ्गशीतल होनेपर अदरखके रसमें ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली इससे पूर्व कहे हुए लघुप्रतापलङ्केश्वर की तरह काममें ले अथवा अदरखके रससे १–१ गोली देकर मत्थेपर पानीकी धारा दे । जब एकदम शरीर ठंढा पड़जाय तब शक्कर डालकर दहीभात भोजन दे । यदि कफका अत्यन्त ज़ोर हो तो दहीके स्थानपर दूध देवे, शाकोंमें अदरख और धनिया देवे । खटाईमें विजोरा, नमकमें सैन्धव तथा भुनाहुआबेंगन देवे । कपूर, चन्दन और खसका शरीरपर लेप करे । ज्वर उतारनेके लिये वारम्वार कपूर खिलावे । स्नान शीतोदकसे करावे । इसमें उष्णक्रिया सब वर्जितकरे, यह रस देवीशास्त्रके अनुसार बहुत संभालकर बनाया है । इसके प्रयोगसे तमाम सन्निपात नष्ट होते है ॥ ९७ ॥

९८ पाण्डुकथाशेषरसः

तुत्थताम्राऽभ्रलोहानां वस्त्रपूतेषु भस्मसु ।
तुल्यहारिद्रचूर्णेन गोमूत्रं षड्गुणं पचेत् ॥ ४०४ ॥
हंसमण्डूरतुल्यं तद्द्व्यतक्रेण चेद्भजेत् ।
पाण्डुर्हलीमकश्चापि कथामात्रेण शिष्यते ॥ ४०५ ॥

रसायनसार, पाण्डुरोगे ।

भाषा—तुत्थ, ताम्र, अभ्र, लोह इनप्रत्येककी भस्मको कपड़ेमें छानकर समभागमें हल्दीका चूर्ण मिलाय ६ गुना गोमूत्र डालकर पकावे । यह हंसमण्डूरके समान । तैयारहोगा । इसको गायकी छाछकेसाथ उचितमात्रामें देनेसे पाण्डु, और हलीमक, इनकी केवल कथामात्र शेषरहजातीहै ॥ ९८ ॥

९९ पाण्डुगजकेसरीरसः

रविभागन्तु मण्डूरं तत्समं लोहभस्मकम् ।
शिलाजतु तदर्धं स्याद्गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ॥ ४०६ ॥
पञ्चकोलं देवदारु मुस्ता व्योषं फलत्रयम् ।
पृथगर्द्धं विडङ्गञ्च पाकान्ते चूर्णितं क्षिपेत् ॥ ४०७ ॥
पाययेदक्षमात्रन्तु तक्रेणाऽल्पाशनो भवेत् ।
पाण्डुग्रहणिमन्दाग्निशोथार्शांसि हलीमकम् ॥
ऊरुस्तम्भक्रिमिप्लीहगलरोगान्विनाशयेत ॥ ४०८ ॥

र. चि., पाण्डुरोगे ।

भाषा—तावा, मण्डूर, लोहभस्म येसब समभागलेकर सबसे आधा शिलाजतु मिलाकर अठगुने गोमूत्रमें पकावे । जब पाक-तैयार होजाय तब पञ्चकोल, देवदारु, नागरमोथा, त्रिकटु, त्रिफला, विडङ्ग ये प्रत्येक आधाआधाभाग मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ तोला छाछकेसाथ देवे और हल्का भोजनकरे तो पाण्डु, सङ्ग्रहणी, मन्दाग्नि, शोथ, बवासीर, हलीमक, ऊरुस्तम्भ, क्रिमि, प्लीहा, गलरोग, येसब नष्टहोतेहैं ॥ ९९ ॥

१०० पाण्डुदलनरसः

हेमरौप्यरविसूतगन्धका-
स्तुल्यभागमिलिता विमर्दिताः ।
धातुमाक्षिकयुता द्विलोहका
देवदारुशिखितोयभाविता ॥ ४०९ ॥
पाचिताः कमठयन्त्रके क्षणं
पाण्डुरोगदलनः प्रजायते ।
वल्लमात्रमशितो मरिचाऽऽज्यैः
पिप्पलीमधुयुतः श्वयथुञ्च ॥ ४१० ॥

र, पाण्डुरोगे ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, ताम्र इनकी भस्में, शुद्धपारा, गन्धक और सोनामाखी सब १–१ भाग, लोहभस्म २ भा, लेकर सबको पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर देवदारु और अपामार्गके क्वाथोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर सुखाकर आतशीशीशीमे भरकर एकपहरकी अग्निमें पकानेसे पाण्डुदलनरस तैयारहोगा । इसमेंसे २–२ रत्ती मरिच और घीकेसाथदेनेमे पाण्डु, पीपल और मधुकेसाथ देनेसे शोथ नष्टहोताहै ॥ १०० ॥

१०१ पाण्डुनाशनरसः (प्रथमः)

स्वर्णरौप्यमथ शाणमात्रकं
शुद्धताम्रमथ तत्समं कुरु ।
रसवरं सकलेन समन्ततः
पिष्टिकां कुरु विमर्द्य गोलकम् ॥ ४११ ॥
गन्धकेन परिवेष्ट्य गोलकं
पाचयेच्च मतिमान् भिषक् सदा ।
भूमिमध्यनिहितं नियन्त्रितं
यामषट्कमथवाऽष्टकन्ततः ॥ ४१२ ॥
गन्धमन्यमपि निक्षिपेत्पुटे
एवमत्र परिजारयेद्बुधः ।
निम्बुजेन परिपेष्य षड्गुणं
गन्धचूर्णमथ लोहचूर्णकम् ॥ ४१३ ॥
योजयेच्च पलमानतस्ततः
लोहपात्रकुहरे पुटत्रयैः ।
पाचयेच्च चिरबिल्ववह्निना
पाण्डुनाशनरसस्ततो भवेत् ॥
वल्लमस्य मधुपिप्पलीयुतं
लेहितं सकलपाण्डुनाशकम् ॥ ४१४ ॥

र.प्र.सु, र च, पाण्डुरोगे ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, ताम्र इनकी भस्में ३–३ माशे, शुद्धपारा सबकीबराबर मिलाकर एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय सबकी बराबर गन्धकको किसी अम्लद्रवरससे पीसकर उस-पर लपेटकर, १–२ कपड़मिट्टी लगाकर सुखाकर भूधरयन्त्रमें बन्दकर ६ अथवा ८ पहरकी आचदे जिसमेंकि गन्धक जलजाय । बादमें निकालकर इसीतरह फिर गन्धकमें लपेटकर पूर्ववत् पकावे । इसतरह गोलेसे षड्गुणगन्धक जारणकर शुद्धगन्धक और लोहचूर्ण १–१ पल मिलाकर लोहेके सम्पुटमें बन्दकर साधारण-पुटदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर १ पलगन्धक मिलाकर नीबूके रससे मर्दनकर फिर वही लघुपुटदे । ऐसे ३ पुटदेकर स्वाङ्गशीतल होनेपर कुटकरञ्ज और चित्रकके रसोंसे गन्धकयुक्त घोटकर दोपुट अलग २ दे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा मधु और पीपलकेसाथ देनेमे यह समस्त पाण्डुरोगोंको नष्टकरताहै ॥ १०१ ॥

१०२ पाण्डुनाशनरसः (द्वितीयः)

सूक्ष्मं ताम्रदलं विलिप्य बलिना सूतेन गाढन्तथा,
स्थालीमध्यगतं सुखावितमिदं यामद्वयं वह्निना ।
नागं गन्धकसंयुतञ्च पुटितं चित्राऽऽर्द्रसम्मिश्रितं,
चूर्णीकृत्य समं सुशोभनरसं संयोजयेच्छास्त्रवित् ४१५
शोथपाण्डुकरुवातनाशनो
रक्तिकैकपरिमाणतस्त्वयम् ।
सेवयेच्च लघु चान्नभोजनं
तैलमम्ललवणाऽऽमिषं विना ॥ ४१६ ॥

र प्र सु, पाण्डुरोगे ।

भाषा—शुद्धतावेके बारीकपत्रोंको बराबरके शुद्धपारेके साथ नीबूके रससे मर्दनकरे । जबपारा पत्रोंपर चढजाय तब पारेकी बराबर गन्धक नीबूके रसमें पीसकर पत्रोंपर लपेटकर तह जमादे । सूखनेपर पत्रोंको हंडीमें रख ऊपरसे शरावसे ढकदे फिर गुड़चूनेसे सन्धिबन्दकर ऊपर एकबालिस्त सफेद राख अथवा पिसाहुआनमक भरके २ पहरकी कड़ी आचदे । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसीतरह शुद्धनागको गन्धकका चूर्णदेकर भस्मकरले फिर बराबरका गन्धक देकरचित्रक और अदरखकेसाथ घोटकर छोटी २ टिकिया बनाय सुखाकर शराबसम्पुटमें बदकर ३–४ सेर कण्डोंकी आचदेकर स्वाङ्गशीतल-होनेपर निकालकर फिरपूर्ववत् घोटकर पुटदे ऐसे नागकी भस्म न हो तबतक करे फिर पूर्ववाला ताम्र और यह नागभस्म दोनों-कोमिलाकर चित्रक और अदरखके रससे १–१ रोज़ घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ देनेमे शोथ, पाण्डु, कफ, वायु इनसबको यह नष्टकरताहै पथ्यमें हल्का भोजनदे । तैल, अम्ल, लवण औरमास भूलकरभीनदे ॥ १०२ ॥

१०३ पाण्डुपञ्चाननरसः

लोहाऽभ्रकञ्च ताम्रञ्च पलिकानि पृथक्पृथक् ।
त्रिकटु त्रिफला दन्ती चविकं कृष्णजीरकम् ॥ ४१७ ॥

चित्रकञ्च निशे द्वे च त्रिवृता मानमूलकम् ।
कुटजस्य फलं तिक्ता देवदारु वचा घनम् ॥ ४१८ ॥
प्रत्येकमेषां कर्षन्तु निक्षिपेत्पाकविद्भिषक् ।
सर्वस्य द्विगुणं देयं शुद्धमण्डूरचूर्णकम् ॥ ४१९ ॥
गोमूत्रेऽष्टगुणे पक्त्वा सिद्धशीते प्रदापयेत् ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय चोष्णतोयाऽनुपानतः ॥ ४२० ॥
हलीमकं शोथपाण्डुमूरुस्तम्भञ्च नाशयेत् ।
रसायनवरश्चैव वलवर्णाऽग्निकारकः ॥
यकृतं प्लीहगुल्मञ्च सर्वरोगहरः परः ॥ ४२१ ॥

भै. र , र. च , पाण्डुरोगे ।

भाषा—लोह, अभ्रक, ताम्र इनकीभस्में १–१ पल, त्रिकटु, त्रिफला, दन्तीमूल, चव्य, कालीजीरी, चित्रकमूल, हल्दी, दारुहल्दी, निशोत, मानकन्द, इन्द्रजव, कुटकी, देवदारु, वच, नागरमोथा येप्रत्येक १–१ तोला लेकर कपड़छानचूर्णकर रखछोड़े फिर सबसेदूनी मण्डूरभस्ममें अष्टगुणित गोमूत्र डालकर पकावे, जब घनहोनेलगे तब उतारकर रखदे ठंढा होनेपर पूर्वोक्तचूर्ण मिलाकर १ माशेसे २ माशेतककी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली गरमपानीकेसाथ प्रातःकाल देनेसे यह हलीमक, शोथ, पाण्डु, ऊरुस्तम्भ, वलवर्णाग्निनाश, यकृत्, प्लीह और गुल्म इनसबको नष्टकर दीर्घायुको करता है ॥ १०३ ॥

१०४ पाण्डुरोगविध्वंसनो रसः

तारं ताम्रसुहेमसूतकसमं कृत्वा पृथग्गोलकं,
ताप्यं तुत्थककान्तमभ्रकरजो वैक्रान्तमेभिर्युतम् ।
दत्त्वा खल्वतले सुमर्दितरसे व्याघ्रीसुवर्षाभवे,
नागिन्या घननादजेन मतिमान् कृत्वा पुनर्गोलकम् ॥
तं पक्वं वदरीरसेन सहसा यत्नेन सञ्चालये,-
द्यावद्भस्म भवेद्विपाच्य च ततश्चुल्यास्समुत्तारयेत्,
तद्वयाद्दशमांशसक्तुकविषं गन्धाऽश्मचूर्णान्वितं,
घृष्टं लुङ्गरसेन वेतसयुतं तत्पाण्डुरोगापहम् ॥४२३॥

यो.म., रसेन्द्र मं , पाण्डुरोगे ।

भाषा—रजत, ताम्र, सुवर्ण इनका वारीकचूर्ण और शुद्धपारा सबसमभागलेकर १–२ दिन मर्दनकर इसकी पिष्टी बनाले फिर सोनामाखी, तुत्थ, कान्तलोह, अभ्रक, वैक्रान्त, इनप्रत्येककीभस्में पारेकी वरावर डालकर भटकटैया, इटसिट, पान, काटेवालीचौलाई इनप्रत्येककेरसोंसे १–१ रोजमर्दनकर गोला वनाय सुखाकर लघुपुटकी आंचदे । ऐसे चारआंचें देनेकेवाद मिट्टीकी कड़ाहीमें रखकर चूल्हेपर चढावे और नीचे वेरकीलकड़ीकीआंचदे गरमहोनेकेवाद वेरके पत्तोंका रस देकर चलातारहे जब इसकी चमकरहित भस्म होजाय तब नीचे उतारले । स्वाङ्गशीतलहोनेपर इसतमामसे दशवा हिस्सा शुद्धवछनाग और गन्धक मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती विजोरा अथवा अम्लवेतकेरसके साथ देनेसे यह पाण्डुरोगका नाशकरताहै १०४

१०५ पाण्डुरोगान्तकरसः (लोहरसः)

लोहभस्म द्विपलिकं पलमेकञ्च पारदम् ।
पलार्धं गन्धकस्याऽपि त्रयमेकत्र मर्दयेत् ॥ ४२४ ॥
श्वेताङ्गभावनाः सप्त जम्बीराद्भावनात्रयम् ।
चित्रकस्य द्रवैर्भाव्यं सप्तवारं पुनः पुनः ॥ ४२५ ॥
शृङ्गवेररसैनैकमेकं निर्गुण्डिकारसैः ।
शिग्रुमूलरसैर्भाव्यं कासमर्दरसेन च ॥ ४२६ ॥
वातारिमूलतोयेन दशमूलेन च त्रिधा ।
पाण्डुरोगान्तको नाम सर्वशोफनिवारणः ॥ ४२७ ॥
कासं श्वासं क्षयं हन्ति वन्हिमान्द्यं हरेद्ध्रुवम् ।
पिप्पलीमधुना योज्यं षड्गुञ्जांश्चाऽस्य दापयेत् ॥
सर्वरोगनिवृत्त्यर्थमश्विनीदेवभाषितः ॥ ४२८ ॥

रसायनसं., पाण्डुरोगे ।

भाषा—लोहभस्म २ पल, शुद्धपारा १ पल, शुद्धगन्धक २ कर्ष लेकर तीनोंकी नीलवर्णकज्जलीकर अर्जुनके रससे ७, जंभीरीसे ३, चित्रककेकाथसे ७, अदरख, निर्गुण्डी, सहिजनकी जड़कीछाल, कसोंजी, एरण्डकी जड़की छाल, इन प्रत्येकके स्वरसोंसे १–१, दशमूलके स्वरससे ३ भावनाएं देकर १ या २ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पीपल और मधुकसाथ अथवा तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेमे पाण्डु, शोफ, कास, श्वास, क्षय, मन्दाग्नि इत्यादिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ १०५ ॥

१०६ पाण्डुसूदनरसः (प्रथमः)

रसं गन्धं मृतं ताम्रं जयपालञ्च गुग्गुलुम् ।
समांशमाज्यसंयुक्तां गुटिकां कारयेद्भिषक् ॥ ४२९ ॥
एकैकां भक्षयेन्नित्यं पाण्डुशोथप्रशान्तये ।
शीतलञ्च जलं चाम्लं वर्जयेत्पाण्डुसूदने ॥ ४३० ॥

र, सं , र चि , भै. र , र सु , र का , ध , नि र , वै चि , र च , भै सा , र कौ., यो म , र. को , रसायनसं , र सि , र क , र र स , र शं , र (मा.), पाण्डुरोगे । र. सं , ध , भै र , र सु , र क ल , र र , र का, एषु ग्रन्थेषु द्वितीयस्थाने **पञ्चाननवटी** इति नाम । र र स., र को , एतयो ग्रन्थयो **जयपालरसः** इति । र क ल , **त्रिनेत्ररस** इति । र. शं., **पाण्डुहरेति** नाम ।

टि०–पञ्चाननवट्या अभ्रकमधिकतया नियोजितम् । जयपालरसे तु "देवदाल्यास्तु पञ्चाङ्गं चूर्णं क्षीरैश्च वा जलैः । निष्कमात्रं पिवेन्नित्यं मासात्पाण्डुगदापहम् ॥" इत्यधिक पाठ ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, जमालगोटा और गुग्गुलु ताम्रभस्म येसव समभाग लेकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर थोड़ा घी डालकर घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानके साथ देनेसे पाण्डु और शोथ इनको यह नष्टकरताहै । इसके प्रयोगमें ठंढापानी और अम्ल छोड़दे ॥ १०६ ॥

१०७ पाण्डुसूदनरसः (द्वितीयः)

सूतं तीक्ष्णकमेव गन्धसहितं भागेन संवर्धितं,
पश्चात्खल्वतले विमर्द्य विधिना चूर्णीकृतं गोलकम्।
कूप्यां संविनिवेश्य वै सुमृदुना संलेपितायां पचेत्,
यामद्वादशमात्रकं हि सिकतायन्त्रेण वैद्यः सदा॥४३१
प्रक्षिपेच्च वरशालमलीरसं
त्रैफलश्च गुडवल्लिकाद्रवम्।
पाचयेच्च मृदुवह्निना दिनं
स्वाङ्गशीतलतमं प्रगृह्य च ॥ ४३२ ॥
त्र्यूषणार्द्रकरसेन भावयेत्
पाण्डुसूदनरसोऽयमीरितः।
शुष्कपाण्डुविनिवृत्तिदायको
रोगराजहरणः प्रकीर्तितः ॥ ४३३ ॥

र प्र. सु, र चं, र म मा, पाण्डुरोगे। र म मा, लोहसुन्दरेति नाम।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, लोहभस्म २ भा०, शुद्धगन्धक ३ भा० लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर ३–४ कपड़मिट्टी दीहुई आतशी शीशीमें डालकर वालुकायन्त्रमें १२ पहरतक पकावे। स्वाङ्गशीतल होनेपर सेमल, त्रिफला, गिलोय इनप्रत्येकके रसमें घोटकर वालुकायन्त्रकी १ दिनआचदे फिर निकालकर त्रिकटु और अदरखके रसोंसे १–१ भावनादेकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह पाण्डुरोगको नष्टकरता है ॥ १०७ ॥

१०८ पाण्डुरीरसः

रसगन्धाऽभ्रलोहानि मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः।
तद्गोलकञ्च सरुद्ध्य पुटेदेवं पुटैस्त्रिभिः ॥ ४३४ ॥
चतुर्वल्लो रसो भुक्तो हन्ति पाण्डुञ्च कामलाम्।
शोथं हलीमकञ्चैव वह्नेर्वृद्धिं करोति च ॥ ४३५ ॥

भै सा, र (मा), नि र, रसचि, र प्र, र सु, चि सा, रसायनसं, र. चि, र का, यो म, वै चि, पाण्डुरोगे। योगमहार्णवे कुमारीस्वरसोऽनुपानत्वेन गृहीत।

भाषा—शुद्धपारा औरगन्धक, अभ्रक, लोहभस्म सब समभागलेकर घीकुंवारके रसमें १–२ रोज मर्दनकर सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर लघुपुटकी आचदे। इसतरहतीनपुटें देकर रखछोडे। इसमेंसे १२ रत्तीकीमात्रा समयोचितानुपानके साथ देनेसे पाण्डु, कामला, शोथ, हलीमक, मन्दाग्नि येसव नष्टहोतेहैं ॥ १०८ ॥

१०९ पानीयभक्तवटी (प्रथमा)

त्रिवृता मुस्तकञ्चैव त्रिफला त्र्यूषणन्तथा।
प्रत्येकन्तु पलं भागं तदर्धौ रसगन्धकौ ॥ ४३६ ॥
लोहाऽभ्रकविडङ्गानां प्रत्येकञ्च पलद्वयम्।
एतत्सकलमादाय चूर्णयित्वा विचक्षण. ॥ ४३७ ॥
त्रिफलायाः कषायेण वटिकां कारयेद्भिषक्।
एकैकां भक्षयेत्प्रातस्तक्रञ्चापि पिबेदनु ॥ ४३८ ॥
हन्ति शूलं पार्श्वशूलं कुक्षिवस्तिगुदे रुजम्।
श्वासं कासं तथा कुष्ठं ग्रहणीदोषनाशिनी ॥४३९॥

र मं, र. चि, ध., च से, र का, र नं, र सु, भै र., चि क, र र, र क, अम्लपित्ते। चि क. भक्तवारीतिनाम।

भाषा—निशोत, नागरमोथा, त्रिफला, त्रिकटु १–१ पल, शुद्धपारा औरगन्धक आधाआधापल, लोहभस्म, अभ्रकभस्म और विडङ्ग २–२ पललेकर सवका वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर त्रिफलांकेकाढेमें १–२ रोज घोटकर १–१ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली छाछकेसाथ देनेसेउदरशूल पार्श्वशूल, कुक्षि वस्ति और गुदाकी पीडा, श्वास, कास कुष्ठ और ग्रहणी इनसवको यह नष्टकरतीहै ॥ १०९ ॥

११० पानीयभक्तवटी (द्वितीया)

कृष्णाऽभ्रलोहमलशुद्धविडङ्गचूर्णं,
प्रत्येकमेकपलिकं विधिवद्विधाय।
चव्यं कटुत्रयफलत्रयकेशराज-
दन्तीपयोदचपलाऽनलघण्टकर्णाः ॥ ४४० ॥
मानोल्वकन्दबृहतीत्रिवृताः ससूर्या-
वर्ताः पुनर्नविकया सहितास्त्वमीषाम्।
मूलं प्रतिप्रति विशोधितमक्षमेकं,
चूर्णं तदर्धरसगन्धकमेकसंस्थम् ॥ ४४१ ॥
कृत्वाऽऽर्द्रकीयरससंवलितञ्च भूयः,
सम्पिष्य तस्य वटिका विधिवद्विधेयाः।
हन्त्यम्लपित्तमरुचिं ग्रहणीमसाध्यां,
दुर्नामकामलभगन्दरशोथगुल्मान् ॥ ४४२ ॥
शूलञ्च पाकजनितं सततऽग्निमान्द्यं
सद्यः करोत्युपचितिं चिरणष्टवह्नेः।
कुष्ठं निहन्ति पलितञ्च वलिं प्रवृद्धां
श्वासञ्च कासमपि पाण्डुगदं निहन्ति ॥४४३॥
वार्यन्नमांसदधिकाञ्जिकतक्रमत्स्य-
रूक्षाम्लतैलपरिपक्वभुजोयथेष्टम्।
शृङ्गाटबिल्वगुडकञ्चटनालिकेर-
दुग्धानि सर्वविदलानि विवर्जयेत्तु ॥ ४४४ ॥

र सं., र र, भै र, र. क, र का, र. चि, रसायनसं, ग्रहण्याम् ॥

भाषा—कालाअभ्रक, लोह, मण्डूर इनकीभस्में और विडङ्गतण्डुल येप्रत्येक ४ तोले लेकर कपड़छानचूर्णकर चव्य, त्रिकटु, त्रिफला, भंगरा, दन्तीमूल, नागरमोथा, पीपल, चित्रकमूल, घण्टकर्ण (हँस अथवा वघनहा), मानकन्द, जगलीसूरण, वनभाटा, निशोत, हुरहुर या सूर्यमुखी, पुनर्नवा इनप्रत्येकका चूर्ण १–१ तोला, इनसवसे आधी पारेगन्धककी

कज्जली मिलाकर अदरखकेरसमें १–२ रोज घोटकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तप्त-द्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे अम्लपित्त, अरुचि, असाध्य ग्रहणी, ववासीर, कामला, भगन्दर, शोथ, गुल्म, शूल, परिणामशूल, मन्दाग्नि, कुष्ठ, वलीपलित, श्वास, कास, पाण्डुरोग, इनसवको यह दूरकरतीहै। इसके सेवनके समय जलमें रक्खाहुआ भात (पखाल वं.), मास, दही, काञ्जी, छाछ, मछली, कोकम, और तैल इनका सेवनकरे। सिघाड़े, वेल, गुड़, मरसा, नारियल, दूध, सबतरहकीदाल इनका त्यागकरे ॥ ११० ॥

१११ पानीयभक्तवटी (तृतीया)

विडङ्गकृष्णाभ्रकलोहचूर्णं
पलंपलं व्योषफलत्रयाऽब्दम्।
सवह्निमाषाऽष्टकसख्यमेत-
त्पानीयभक्तस्य जलेन पिष्टम् ॥ ४४५ ॥
सार्धं चतुर्माषकमौदकाम्लं
पानीयमत्यग्निवलानुकारि।
अर्शांसि निर्णाशयति प्रसह्य
क्षिप्रं जरानाशमुपैति चित्रम् ॥ ४४६ ॥

टो, अग्निमान्द्ये।

भाषा—विडङ्ग, कृष्णाभ्रक और लोहभस्म १–१ पल, त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोथा, चित्रकमूल येप्रत्येक ८ माशे लेकर कपड़छान चूर्णकर भातकी काञ्जीसे वारीक पीसकर ४॥ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली भातकी काञ्जीकेसाथ लेनेसे अग्निके अत्यन्त वलको करतीहै अर्श और बुढापेको दूर करतीहै ॥ १११ ॥

११२ पानीयभक्तवटी (चतुर्थी)

रसोऽर्धभागिकस्तुल्या विडङ्गमरिचाऽभ्रकाः।
भक्तोदकेन सम्मर्द्य कुर्याद्गुञ्जासमां वटीम् ॥ ४४७ ॥
भक्तोदकानुपानेन सेव्या वह्निप्रदीपिनी।
वार्यन्नभोजनश्चाऽत्र प्रयोगे सात्म्यमिष्यते ॥ ४४८ ॥

च द., नि. र, र चि, रसायनसं, यो म, अग्निमान्द्ये। र. का., शूलाधिकारे।

भाषा—विडङ्ग, मिरच और अभ्रक समभाग, इनसवसे आधी पारदभस्म अथवा रससिन्दूर लेकर चावलोंकी काञ्जी अथवा माडमें दोतीनरोज़ मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाय सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्तिके अनुसार भातके पानीके साथ देकर पकाकर पानीमें रक्खेहुए भातका पथ्य देनेसे शूल और मन्दाग्नि नष्ट होतेहैं ॥ ११२ ॥

११३ पानीयभक्तवटी (पञ्चमी)

त्रिफलात्रिकटुकमुस्तकविडङ्गभल्लातककेशराजानाम्
करिवर्तच्छदन्त्यस्तण्डुलिका पुनर्नवा त्रिवृता।४४९।
चित्रद्विजीरचूर्णान्येकत्र कर्षमितानि कार्याणि।
गन्धशिलाकर्षार्धं गगनपलं मारितं विधिवत् ॥४५०॥
अम्लशुक्तभक्तपयसि पक्त्वा कुर्यादर्धमाषिकां वटिकां
अम्लं वार्यनुपेयं कार्यं तदनु–विहितं पथ्यम् ॥४५१॥
कफातिदुष्टवह्नेर्नात परमत्र भेषजं दृष्टम्।
हन्यात्तदामवातं ग्रहणीगदगुल्मशूलरुजः ॥ ४५२ ॥

वं. से. रसायनाधिकारे, र का शूलाधिकारे।

भाषा—त्रिफला, त्रिकटु, नागरमोथा, विडङ्ग, भिलांवां, काला भंगरा, गजपीपल, पत्रज, दन्तीमूल, काटेवालीचौलाईकी जड़, पुनर्नवाकी जड़, निशोत, चित्रक, दोनोजीरे ये प्रत्येक १ कर्ष शुद्धगन्धक ८ माशे, निश्चन्द्र अभ्रकभस्म ४ कर्ष लेकर अच्छीतरह कपड़छान चूर्णकर खट्टासिरका अथवा भातकी काञ्जी सव दवासे अठगुनी डालकर पकावे। जवगोलीवंधने लायक होजाय तव आधे आधे माशेकी गोलियें बनाय सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली खट्टी काञ्जीकेसाथ लेनेसे और काञ्जीभातखानेसे कफातिदुष्ट अग्नि प्रदीप्त होताहै। इसके वरावर कफदुष्ट ग्रहणीका। दूसरा औषध नहीं है इसके सेवनसे आमवात, ग्रहणीरोग, गुल्म, शूल और पीडा ये सव दूर होतेहैं ॥ ११३ ॥

११४ पानीयभक्तवटी (षष्ठी)

विडङ्गं पिप्पलीमूलं त्रिफला मुनिजं फलम्।
लोहकं गन्धकं चित्रं पलार्धं चूर्णितं पृथक् ॥ ४५३ ॥
त्र्यूषणं चूर्णितं ग्राह्यं सार्धं द्विपलिकं पृथक्।
अम्लमारिताऽभ्रपलं कर्षार्धं पारदस्य च ॥ ४५४ ॥
अस्थिसंहारनिर्गुण्डीनागवल्ल्यार्द्रकैः शुभैः।
रसैश्चतुष्पलैरेवं भावयित्वा पृथक्पृथक् ॥ ४५५ ॥
यथाऽग्नि भक्षयेदेनां वटीमनुपिबेज्जलम्।
वारिभक्तश्च भुञ्जीत कुर्यात्पूर्वोक्तकान्गुणान् ॥४५६॥

वं से., रसायनाधिकारे। र का शूलाधिकारे

भाषा—विडङ्ग, पिपलामूल, त्रिफला, हिंगोटनकीगिरी, लोहभस्म, शुद्धगन्धक, चित्रकमूल, ये प्रत्येक २ कर्ष सोठ, मिर्च, पीपल २॥–२॥ पल, अम्लवर्गसे माराहुआ अभ्रक १ पल, शुद्धपारा ८ माशे, इन प्रत्येकका अलग २ चूर्णकर हड़जोड़, निर्गुण्डी, नागवला, अदरख इन प्रत्येकका १–१ पल रस डालकर क्रमसे घोटकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अथवा यथाग्निवल मात्रा देकर काञ्जी अथवा भक्ताऽधिवासित जल पिलावे। भूखलगनेपर जलाधिवासित भात खिलावे तो आमवात, ग्रहणी, गुल्म, शूल ये सव नष्टहोतेहैं ॥ ११४ ॥

११५ पानीयभक्तवटी (सप्तमी)

ग्रन्थिकं त्रिफला चित्रं त्रिवृल्लोहितकुम्भकम्।
एषां कर्षार्धकं चूर्णं प्रत्येकं तावदुन्मितम् ॥ ४५७ ॥
त्र्यूषणं लवणं पाक्यं विडङ्गं कार्षिकं पृथक्।
पलं कृष्णाऽभ्रकञ्चैव मन्तर्दग्ध्वा विनिः क्षिपेत् ४५८

शिलायां पेषणं कृत्वा सर्वमेकत्र योजयेत् ।
शिखर्यार्द्रकनिर्गुण्डीनागवल्ल्यस्थिसंहृता ॥ ४५९ ॥
रसैर्द्विपलिकैरेषां भावयित्वाऽक्षसम्मिताम् ।
कृत्वैकां भक्षयेत्प्रातरम्लवारि पिबेदनु ॥ ४६० ॥
वातश्लेष्माऽऽमयान्हन्ति वह्निसादं ज्वरं वमिम् ।
आमवातं जरत्पित्तं वारिभक्तवटी मता ॥ ४६१ ॥

वं से. रसायनाधिकारे । र का. शूलाधिकारे ।

भाषा—वाराहीके फल अथवा पिपलामूल, त्रिफला, चित्रक, निशोत, भैंसागूगल ये प्रत्येक ८ माशे, त्रिकुट ३॥ कर्ष सेंधानमक, संचलनमक, विडङ्ग १–१ कर्ष पुटपाकसेमारा-हुआ काला अभ्रक १ पल, लेकर सवका चूर्णकर इकठ्ठे मिलाकर अपामार्ग, अदरख, निर्गुण्डी, नागरवेल, हड़जोड़ इनप्रत्येकका रस २–२ पल लेकर अलग २ भावना देकर साधारणरुद्राक्षके वरावर (१ माशा) की गोलियें वनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली प्रात काल काञ्जीकेसाथ लेनेसे वातश्लेष्मरोग, मन्दाग्नि, ज्वर, वमन, आमवात, परिणामशूल इनसवको यह तत्कालनष्टकरतीहै । इसमें पथ्य जलाधिवासित भात देना-चाहिये ॥ ११५ ॥

११६ पानीयभक्तवटी (अष्टमी)

शुद्धौ गंधरसौ कर्षौ विडङ्गमरिचाऽऽर्द्रकाः ।
त्रिवृता त्रिफला वह्निः कणा दन्ती पुनर्नवा ॥ ४६२ ॥
स्नुक्क्षीरं मानकुलिशयावाग्ररोगखण्डिकाः ।
प्रत्येकैकं पलं चूर्णमम्लपानीयकं हविः ॥ ४६३॥
आभ्रं चतुष्पलं भस्म चैकीकृत्याऽऽर्द्रकाम्बुना ।
त्रिफलापयसा भाव्या कोलार्धमानका वटी ॥४६४॥
भक्तोदकाऽनुपानेन सेव्या वह्निप्रदीपनी ।
अम्लपित्ताऽऽमवातादीन् हन्याद्दुग्धान्नभोजनात् ५६५

व से रसायनाऽधिकारे । र का शूलाधिकारे ।

भाषा—शुद्धगन्धक और पारा १–१ कर्ष विडङ्ग, मिरच, अदरख त्रिफला, निशोत, चित्रकमूल, पीपल दन्तीमूल, पुनर्नवा, थूहरकादूध, मानकंद, जगलीसूरण, यवक्षार, कुष्ठ, खाड, चाव-लकीकाञ्जी, पुरानाघी, येसव १–१ पल, अभ्रकभस्म ४ पल, लेकर सवको इकठेकर अदरख, त्रिफला और दूध इनकी १–१ भावना देकर २–३ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली भक्ताधिवासित पानीके साथ देनेसे और दूधभात खानेसे मन्दाग्नि, अम्लपित्त और आमवातप्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ११६ ॥

११७ पानीयभक्तवटी (नवमी)

मानकन्दोऽश्वकर्णश्च त्रिवृता मुस्तक तुणि. ।
त्रिकटु त्रिफला भृङ्गमपामार्गश्च दाडिमम् ॥ ४६६ ॥
तुम्वी वृहतिका जातीद्वयञ्च शतपुष्पिका ।
सूर्यावर्तस्तालमूली चूर्णमेषाञ्च कार्षिकम् ॥ ४६७ ॥
कर्षद्वयं विडङ्गानां वलेः पादोनकर्षकम् ।
शुद्धच्यभ्रकमण्डूरान् प्रत्येकं वेदकार्षिकान् ॥ ४६८ ॥
सुचूर्णमाभ्रकं चस्रगालितं काञ्जिके क्षिपेत् ।
अम्ले पयसि वा पश्चादुद्धरेत्पञ्चमेऽहनि ॥ ४६९ ॥
निर्वापयेच्च मण्डूरं त्रिफलाया रसे शुभे ।
सूर्यावर्तरसे वाऽथ चोभयत्र च वा भिषक् ॥ ४७० ॥
तत्तु सञ्चूर्णित वस्त्रशोधितं योजयेद्भिषक् ।
मण्डूरेण समं पेष्यं वंशपत्ररसेन तु ॥ ४७१ ॥
ततः पुटानि देयानि वक्ष्यमाणैर्महौषधैः ।
वंशपत्ररसैः पूर्वं पुटयेदातपे भिषक् ॥ ४७२ ॥
मण्डूकपर्णी चित्रश्च दन्तीमूलपुनर्नवे ।
पटोलंत्रिवृतावालमस्थिसंहार एव च ॥ ४७३ ॥
आर्द्रकं तालमूली च सूर्यावर्तश्च शिम्बिका ।
केशराजो भृङ्गराजः शतमूली च मुस्तकम् ॥ ४७४ ॥
प्रक्षिपेत्पूर्वचूर्णानि हिङ्गु कर्षचतुष्टयम् ।
सप्तधा पेषयेद्गाढं त्रिफलाक्वाथवारिणा ॥ ४७५ ॥
तेनैव गुटिकां कुर्यान्माषैकैकप्रमाणिकाम् ।
वटिकाद्वितयं भक्ष्य मम्लवार्यनुपानतः ॥ ४७६ ॥
वयोऽवस्थामग्निबलं व्याधिं प्रकृतिमेव च ।
दृष्ट्वा मात्रां प्रयुञ्जीत यथाशेषं प्रदीयते ॥ ४७७ ॥
ग्रहणीमम्लपित्तञ्च पित्तश्लेष्माणमेव च ।
अर्शांसि वह्निसादश्च प्लीहानमरुचिन्तथा ।
वटिकेयं निहन्त्याशु नाऽत्र कार्या विचारणा ॥४७८॥

व मे रसायनाधिकारे, र. का. शूलाधिकारे।

टि०—अत्र वटिकाविधानमन्तेऽभ्रकसंस्कारस्य समागतत्वात्क्रमात्पाठो जनैर्व्यत्यासिना प्रापित सोऽस्माभिर्यथास्थानं निवेशित । रसकामधेनु-रचयिता मण्डूरसंस्कारस्य विप्रयोजनमिति मत्वा तत्पाठेन त्यक्तेति बोध्यम् । वृहतिकाजातीद्वयमिति समस्तमेकपदं क्रियते तर्हि वृहतिकाद्वन्द्व जातीद्वयश्चेति प्रत्युपतिष्ठते द्वयशब्दस्य द्वन्द्वान्त्यपातित्वात् । जातीद्वयमि-त्यत्र च जात्याद्वयमिति समासेन जात्या अवयवद्वय ग्राह्यमिति साधा-रणोपस्थितावपि प्रकरणबलेन जात्या पत्र फलश्च ग्रहीतव्यमिति निश्चेतव्यम् ।

भाषा—मानकन्द, अश्वकर्ण (सखुआकीछाल), निसोत, नागरमोथा, तुन, त्रिकटु, त्रिफला, भगरा, अपामार्ग, अनार-दाना, तुम्बी, भटकटैया, वनभाटा, जायफल, जावित्री, सोंफ, हुरहुर, तालमूली इनप्रत्येकका चूर्ण १–१ कर्ष, विडङ्गतण्डुल २ कर्ष, शुद्धगन्धक १२ माशे, गिलोय, शुद्धअभ्रक औरमण्डूर चार ४ कर्ष लेकर गिलोयतक समस्तचीजों का वारीकचूर्णकर रखलेवे । अभ्रकका धान्याभ्रक वनाकर कपड़छानकर खट्टीकाञ्जी अथवा दूधमें डालदे, पाचवें रोज़ निकाले । १०० वर्षसे ऊपरके मण्डूरको वहेड़ेके कोयलोंमें तपा तपाकर त्रिफला अथवा हुरहुर या दोनोंके रसमें जवतक शीर्ण न हो तवतक वुझावे । शीर्ण होनेपर चूर्णकर वस्त्रसे छानकर खट्टीकाञ्जीकी यथाशक्तिभावना देकर रखछोड़े । यह मण्डूर उस अभ्रककी वरावर मिलाकर वंशपत्रीके रसमें दोतीन रोज़ मर्दनकर वारीक करले, फिर वंश-

पत्री, ब्राह्मी, चित्रक, दन्तीमूल, पुनर्नवा, पटोल, निशोत, वाला, हड़जोड़, अदरख, तालमूली, हुरहुर अथवा सूर्यमुखी, सेम, कालाभंगरा, भंगरा, शतावर, नागरमोथा इनप्रत्येकके रस अथवा क्वाथोंकी सूर्यके कड़े धूपमें भावना देकर सुखालेवे, यह अभ्रक और मण्डूरकी विशेषशुद्धिहै। इसीतरह शुद्धकरके पूर्वचूर्णमें डालकर ४ तोले भुनाहुआ उत्तम हींग मिलाकर ७ रोज़तक त्रिफलाके क्वाथसे धूपमें मर्दनकरावे और आठवेंरोज़ १–१ माशेकी गोलियें बनाकर छायाशुष्ककरले। इसमेंसे २–२ गोली अथवा, रोगीकी अवस्थासमय, अग्नि, व्याधि और प्रकृति इनका बलाबल देखकर न्यूनाधिक मात्रासे खट्टेपानीके साथ देवे। कामपड़नेपर अनुपान तथा प्रक्षेपविशेषकी योजनाकरे। इसके सेवनसे ग्रहणी, अम्लपित्त, श्लेष्मपित्त, सबप्रकारके बवासीर, मन्दाग्नि, प्लीहा, अरुचि येसब नष्ट होतेहैं. इसमें किसीतरहका सन्देह नहीं ॥ ११७ ॥

११८ पानीयवटिका (प्रथमा)

अनाथनाथो जगदेकनाथः
श्रीलोकनाथः प्रथमः प्रसिद्धः।
जगाद पानीयवटीं प्रसिद्धां
तामेव वक्ष्यामि गुरुप्रसादात् ॥ ४७९ ॥
जयार्कसुरसांश्चैव निर्गुण्डीं वासकं तथा।
वाट्यालकं करञ्जञ्च सूर्यावर्तकचित्रकौ ॥ ४८० ॥
ब्राह्मीं च सर्पपश्चैव भृङ्गराजं विचूर्णयेत्।
दन्ती च त्रिवृता चैव तथाऽऽरग्वधपत्रकम् ॥४८१॥
सहदेवाऽमरं भण्डी तथा त्रिपुटभण्डिके।
शाल्मली पिप्पली चैव द्रोणपुष्पी च वायसी ॥४८२॥
गजाङ्किनी केशराजस्तथा योजनवल्लिका।
असारुनेति विख्यातं धत्तूरकनकास्तथा ॥ ४८३ ॥
त्रैलोक्यविजया चैव तथा श्वेताऽपराजिता।
प्रत्येकं कार्षिकश्चैव स्वरसन्तत्र दापयेत् ॥ ४८४ ॥
स्नुह्या दुग्धं चार्कदुग्धं वटदुग्धन्तथैव च।
प्रत्येकं कार्षिकं क्षीरं पुनर्दत्त्वा विमर्दयेत् ॥ ४८५ ॥
नूनं सुमर्दितं ज्ञात्वा यदा पिण्डत्वमागतम्।
द्रव्याण्येतानि सञ्चूर्ण्य वस्त्रपूतानि निक्षिपेत् ॥४८६॥
दग्धहीरं चातिविषं विषतिन्दुकमभ्रकम्।
शोधितं पारदश्चैव गन्धकं विषमाह्वयम् ॥ ४८७ ॥
माक्षिकं शोधितश्चैव प्रत्येकं माषकद्वयम्।
नूनं सुमर्दितं दृष्ट्वा चाङ्गेरीस्वरसेन च ॥ ४८८ ॥
गुटिकां सुदृढाञ्चैव तिलमात्रां प्रकल्पयेत्।
लङ्घनैर्वालुकास्वेदैः क्रान्तोऽति दीनदर्शनः ॥४८९॥
प्रपूज्य करुणाधानं प्रणम्य नाथसर्पणम्।
शरावे वारिणा घृष्ट्वा विंशत्येकां पिबेन्नरः ॥ ४९० ॥
पाययित्वौषधं पश्चाद्वस्त्रेणाच्छादयेन्नरम्।
रसदाहं समाज्ञाय दद्याद्वारि सुशीतलम् ॥ ४९१ ॥
शरावेण मितं वारि पातव्यञ्च पुनः पुनः।
सन्निपातज्वरश्चैव दाहं हन्ति सुदुस्तरम् ॥ ४९२ ॥
कासं श्वासं ज्वरं हिक्कां प्रमेहञ्चाश्मरीन्तथा।
कफपित्तकृतश्चैव दाहं हन्ति न संशयः ॥ ४९३ ॥
मूत्रवेगविबन्धे तु पातव्यं क्षीरसंयुतम्।
तृणपञ्चकृतं क्वाथं पातव्यञ्च पुनः पुनः ॥ ४९४ ॥
पानीयवटिका ह्येपा लोकनाथेन निर्मिता।
लोकानामुपकाराय वटिका कथिता पुरा ॥ ४९५ ॥

र र, र.सु., भै.र., ज्वराऽधिकारे।

टि०—अय योगो लोकनाथनाम्ना गोरक्षनाथसम्प्रदायवर्तिना केनचित्साधुना कस्मैचिच्छ्रद्धालवे स्वशिष्याय निर्दिष्टस्तेन यथाकथञ्चित्संस्कृते निबद्धोऽतएवाऽस्मिन् पद्यग्रथनायां संस्कृतनामनियोजने च शैथिल्यं सञ्जातमतएव विषमाह्वयमित्यादिना यवनवैद्यकीयनामान्यपि निवेशितानि तानि च द्रष्टार भ्रमगह्वरे निवेशयन्ति तत एव टीकाकारैर्नानाऽऽकारतया पाठा प्रकल्पिता यथा असारुनेतिपदस्थानेऽर्थाऽज्ञानाल्कैश्चिदासारणेति पाठ प्रकल्प्य असनवृक्षो निरधारि। अन्यैर्जयपालबीजानि नियोजितानि। केषुचित्पुस्तकेषु आगारमेति पाठो दृश्यते तत्सर्वमप्यभिप्रायाऽज्ञानमूलकम्।

भाषा—अरणी, आक, तुलसी, संभालू, अड़ूसा, नागबला, करञ्ज, हुरहुर अथवा सूर्यमुखी, चित्रक, ब्राह्मी, पीलीसरसों, भंगरा ये सब १–१ कर्पलेकर बारीककपडछान चूर्णकरके दन्तीमूल, सफेदनिसोत, अमलतास, पत्रज, सहदेवी, अमरकन्द, सिरस, गोखरू, वनभाटा, सेंमलकामुसला, पीपल, गूमा, मकोय, गुञ्जा, कालाभंगरा, मजीठ, असारूनसफेद, धतूरा, कसोंदी, भाग, सफेद अपराजिता, इन प्रत्येकका १–१ कर्ष स्वरस पूर्वचूर्णमें मिलाकर मर्दनकरे, फिर सेहुण्ड, आक और वटका दूध १–१ कर्ष डालकर यहांतकमर्दन करेकि उसका गोला बंधजाय फिर हीरेकीभस्म अथवा अकीकभस्म, अतीस, शुद्धकुचिला, अभ्रकभस्म, शुद्धपारा, गन्धक, विखमा, (यूनानी) शुद्धसोनामाखी, येप्रत्येक २–२ माशे डालकर अमलोनियाकेरससे १–२ रोज़ मर्दनकर तिलप्रमाण गोलियें बनाकर छायाशुष्क कर रखछोडे। असाध्यरोगग्रस्त आदमीको लङ्घन तथा बालुकास्वेदोसे शुद्धकर शङ्करकीपूजाकर सर्पणनाथको नमस्कारकर मिट्टीके कोरे शरावमें पानीसे २१ गोली घिसकर रोगीको पिलावे और बन्द मकानमें खटियापर सुलाकर कपड़ेसेढकदे। जिसवक्त शरीरमें दाहमालूमहो उससमय ठंढाजल उसीमिट्टीके शरावको भरकर बारबार पिलावे। इसके सेवनसे सन्निपातज्वर, दुस्तरदाह, कास, श्वास, ज्वर, हिचकी, प्रमेह, पथरी और कफपित्तजनित दाह नष्टहोताहै। मूत्राघातमें इनगोलियोंको। दूधकेसाथ देवे और तृणपञ्चमूलका क्वाथ बारबार पिलवे। इसप्रयोगका **पानीयवटी** नामहै और लोगोके उपकारकेलिये लोकनाथ सिद्धने बनाईहै ॥ ११८ ॥

११९ पानीयवटिका (द्वितीया)

रसमाषकचत्वारि सम्यक् शुद्धानि कारयेत्।
राजिकार्द्रकपानीयैर्मर्दयेद्बहुशो भिषक् ॥ ४९६ ॥

स्वर्णधत्तूरजैर्द्रावैर्वृद्धदारुद्रवैस्तथा ।
कन्यकोत्थद्रवैस्तद्वद्रसशोधनमाचरेत् ॥ ४९७ ॥
गन्धकं रसतुल्यन्तु प्रक्षाल्य तण्डुलाम्बुना ।
कृत्वा तैलसमं दर्व्यां निर्वाप्य चित्रकद्रवे ॥ ४९८ ॥
द्वयोः कज्जलिकां कृत्वा लोहचूर्णस्य माषकम् ।
सुवर्णमाक्षिकमपि तत्र लोहसमं कुरु ॥ ४९९ ॥
घर्मयन्त्रादिसंयोगात्ताम्रपत्रं मृतिं व्रजेत् ।
एकीकृत्य तु तत्सर्वं ततः प्रस्तरभाजने ॥ ५०० ॥
मर्दयेत्ताम्रदण्डेन दत्त्वा चैषां निजं द्रवम् ।
प्रथमे केशराजश्च द्वितीये ग्रीष्मसुन्दरः ॥ ५०१ ॥
तृतीये भृङ्गराजश्च चतुर्थे भेकपर्णिका ।
पञ्चमे चन्द्रसूरश्च षष्ठे च रसपूतिका ॥ ५०२ ॥
सप्तमे पारिभद्रः स्यादष्टमे रक्तचित्रकः ।
शक्राशनश्च नवमे दशमे काकमाचिका ॥ ५०३ ॥
एकादशे तथा नीली द्वादशे हस्तिशुण्डिका ।
अमीषामौषधीनान्तु प्रत्येकन्तु पलं द्रवम् ॥ ५०४ ॥
मर्दयेत्तु प्रयत्नेन द्वादशाहैस्तु साधकः ।
ततः पारदमानन्तु दत्त्वा त्रिकटुचूर्णकम् ॥ ५०५ ॥
वटिकां राजिकातुल्यां छायाशुष्कां समाचरेत् ।
ततः शम्बूकजे पात्रे कर्तव्या वटिका त्वियम् ॥५०६॥
शरावे शङ्खपात्रे वा कृत्वा सलिलगालितम् ।
अत्यन्तदोषदुष्टाय ज्ञानशून्याय रोगिणे ॥ ५०७ ॥
ऊर्ध्वयोनिं समभ्यर्च्य प्रदद्याद्वटिकाद्वयम् ।
ढक्कयेत्तं ततः पश्चान्नरं स्थूलपटादिभिः ॥ ५०८ ॥
मलमूत्रागमात्सद्यः स साध्यो भवति ध्रुवम् ।
दध्यन्नन्तु ततो दद्यात्पिवेद्वारि यथेच्छिकम् ॥ ५०९ ॥
दद्याद्वातहरं तैलमभ्यङ्गाय सदैव हि ।
चिरज्वरे पिवेद्वारि पञ्चमूलीप्रसाधितम् ॥ ५१० ॥
ग्रहण्यां रक्तपाते च पिवेदतिविषां गदी ।
पिवेत्पर्पटजं वारि घोरे कम्पज्वरे तथा ॥ ५११ ॥
तथा ज्वराऽतिसारे च जीरकस्य जलं पिवेत् ।
मन्दाग्नौ कामलायाश्च सङ्ग्रहग्रहणीगदे ॥
कासे श्वासे सदा देया पानीयवटिका शुभा ॥५१२॥
भै र , र सु , ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्धकिये हुए ४ माशे पारेको राई और अदरखके स्वरससे कईवार मर्दनकरे फिर कसोंदी, धतूरा, विधारा, घीकुआर इनके रसोंमें अलग २ मर्दनकरके ऊर्ध्वपातनसे पारेको साफकरके रखले। पारेकीवरावर शुद्धगन्धकको चावलोंकेधोवनमे धोकर धूपमें सुखाकर लोहकीकडछीमें अग्निके सयोगसे तैलके सदृश द्रव वनाकर चित्रकके पत्रस्वरस अथवा सर्वाङ्गक्वाथमें बुझादे, फिर दोनोंका ४ पहरमर्दनकर नीलवर्णकज्जली वनाकर १ माशालोहका वारीकचूर्ण और स्वर्णमाक्षिकमिलादे । इसमें नीबूका स्वरस अथवा कुमारीका रस मिलाकर लेपके योग्य वनाले, फिर कण्टकवेधी शुद्धताम्रके ४ माशे पत्र पर लेपकरके गण्डपत्रमें लपेट तांबेके पात्रमें रखकर कडीधूपमें रखदे । चारपहरकेपश्चात् धूपमेंसे उठाकर कपड़मिट्टी लपेटकर धान्यराशिमें रखदे । तीनरोजकेबाद निकालकर पत्थरकी खरलमें डालकर तांबेकेदण्डसे सबको मर्दनकरडाले, यह तांबेकपत्रकीभस्म होजावेगी । इसमें भांगरेका रस डालकर एकरोजमर्दनकरे । दूसरेदिन ग्वारपाठा, तीसरेदिन भंगरा, चौथेदिनब्राह्मी, पांचवेंदिन बथुआ, छठेदिन चिरपोटन, सातवें दिन करहट, आठवेंदिन लालचित्रक, नवेंदिन भांगा, दसवेंदिन मकोय, ग्यारहवेंदिन नील, वारहवेंदिन हाथीशुण्डी इन प्रत्येक औषधोंका रसडालकर मर्दनकरे । प्रत्येकदिन पूर्वोक्तक्रमसे प्रत्येक औषधिकारस १-१ पलसेकम न गुनावे, ऐसे १२ दिनमें इसेमर्दनकर तेरहवेंदिन ४ माशे त्रिकटुका वारीकचूर्ण मिलाकर राईके वरावर गोलियें वनाकर छायाशुष्ककर कांचकी शीशीमें रखछोडे । ज्वर वा त्रिदोषप्रकोपावस्थामें ज्ञानसंज्ञारहितरोगीको उससमय सराला, शङ्ख अथवा सिप्पीके कोषपात्रमें २ गोली पानीकेसाथ घिसकर ब्रह्मा और महादेवकी पूजाकर रोगीको पिलाकर रजाईवगैरह गर्मकपडा ओढादे । इसके देनेके वाद दस्त और पेशाव होजावें तो रोगीको साध्य समझना अन्यथा असाध्य, है. मलमूत्रत्यागकेवाद जवरोगीको अत्यन्त भूखलगे तो दहीभात खिलाकर गरम या ठंडा जैसी रोगीकी इच्छाहो वैसापानी पिलाना । कोईभी वातहर तैल अभ्यङ्गकरनेको देना । ज्वर अगर वहुतदिनका होतो वृहत्पञ्चमूलमें पकाया हुआ पानी देना । ग्रहणीमें जिससमय रक्तयुक्तदस्त होतेहों उसमय अतीसका काढा देना । अत्यन्त कम्पज्वरमें पित्तपापड़ेका क्वाथ और ज्वराऽतिसारमें जीरेका पानी देना इसीतरह मन्दाग्नि, कामला, सङ्ग्रहग्रहणी, कास, श्वास इत्यादि रोगोंमें उचितानुपानकेसाथ इस गोलीका प्रयोग करना ॥ ११९ ॥

१२० पापरोगान्तको रसः

अथ शुद्धस्य सूतस्य मृतस्य मूर्च्छितस्य च ।
धवला पिप्पली धात्री रुद्राक्षघृतमाक्षिकैः ॥ ५१३ ॥
पापरोगान्तको योगः पृथिव्यामेव दुर्लभः ।
वल्लश्चाऽस्य प्रयोक्तव्यो वाकुचीक्वाथसंयुतः ॥५१४॥
र चि , रसायनखं , र र , र चं., र सि , र कौ , यो. म , र का , र.स , र सु , मसूरिकायाम्। र का पापाङ्कुयोगः। र.सं , र सु , एतयोर्ग्रन्थयो दुर्लभरस इति नाम स्थापितम्। तथा च धवलापिप्पलीस्थाने द्विवला पिप्पलीतिपाठ ।

टि०—योगमहार्णवे अनुपानविशेषेण मसूर्यां मूर्च्छितपारदस्य योगक्रमोऽस्ति तथाहि-"विल्वपत्ररसेनैव मूर्च्छितं पारदो रस । दिलमोचीरसे पीतो हन्ति माक्षिकम्युत ॥ मसूरीं सर्वजा शीघ्रमस्थिजा सर्वदेहजाम् ॥ इति ॥

भाषा—शुद्धकियेहुएपारेकीभस्मकेसाथ वच, अथवा धवलवरुआ, पीपल, आवले, रुद्राक्ष, घी और शहदका योगकरके उचिताऽनुपानके साथ देनेसे मसूरिकारोगका अन्तहोताहै । अगर पारेकी भस्म न मिलेतो रससिन्दूरप्रभृतिमूर्च्छाऽऽपन्नपारेका

उपयोगकरना। इसकी ३ रत्तीकीमात्रा वाकुचीके काढेकेसाथ-देना। घी और मधुको छोड़कर तमामका प्रमाण समभाग लेना उसकी तीनरत्तीकीमात्रा समझनी चाहिये। घृत तथा मधु योग्यताप्रमाणदे, जहा रससिन्दूरप्रभृतिकाभी अभावहो वहा कज्जली देसक्तेहै ॥ १२० ॥

१२१ पारङ्ग्यादि रसायनम् (गन्धकरसायनम्)

त्रिंशत्पलानि वृद्धदारु वातारेस्तन्मितानि च
हिंस्राद्वयं चित्रमूलमिङ्गुदीमूलकन्तथा ॥ ५१५ ॥
मरीचकाण्डं मूलञ्च शरपुङ्खी च पूतिका।
अश्वगन्धा च वरुणः प्रत्येकं पलषोडशम् ॥ ५१६ ॥
तदष्टगुणकं शुद्धं जलमादाय निक्षिपेत्।
शनैर्मृद्वग्निना सम्यक् पाचयेत्सप्तरात्रकम् ॥ ५१७ ॥
चतुर्भागाऽवशेषे तु कषाये सुपरिस्रुते।
पुराणस्य गुडस्याऽपि तुलां कल्कानि दापयेत् ॥५१८॥
कषायद्रव्यमूलानि चूर्णीकृत्य प्रयत्नतः।
प्रत्येकं द्विपलं ग्राह्यं त्रिंशद्भल्लातजानि च ॥ ५१९ ॥
वृद्धदारुपलञ्चैव वातारेश्च चतुष्पलम्।
कटुत्रयञ्च खदिरं रास्नाकुष्ठविडङ्गकम् ॥ ५२० ॥
दीप्यद्वयं जातिपत्रं तत्फलं त्रुटिकेसरम्।
भार्ङ्गीटङ्कणमांसीनां प्रत्येकं पलमात्रकम् ॥ ५२१ ॥
गन्धं चाऽष्टपलञ्चैव चूर्णीकृत्य यथाविधि।
योजयेद्रससिन्दूरमष्टनिष्कप्रमाणकम् ॥ ५२२ ॥
क्षौद्रं तुलार्द्धकञ्चैव तदर्धं घृतमेव च।
लेह्यं पाकं तथा कृत्वा सुपक्वमपि कारयेत् ॥ ५२३ ॥
विष्वक्सेनं समभ्यर्च्य धन्वन्तरिमथाऽर्चयेत्।
देवब्राह्मणपूजां च वैद्यभागं प्रदापयेत् ॥ ५२४ ॥
प्रत्यहं प्रातरुत्थाय भक्षयेत्कर्षमात्रकम्।
तदर्धं चैव सायाह्ने सेवयेन्मण्डलं क्रमात् ॥५२५॥
मेहव्रणांश्च सर्वांश्च मेहरोगांश्च सर्वशः।
भगन्दरञ्चपिडिकां कासश्वासाऽरुचीस्तथा ॥५२६॥
सर्ववातान्हरेच्चाशु सर्वव्रणनिवारकम्।
पारङ्ग्यादिकनामेदमश्विभ्यां निर्मितं पुरा ॥ ५२७ ॥

वै चि,

भाषा—विधारेकीजड़ ३० पल, एरण्डकीजड़ ३० पल, काला और सफेदहँस, चित्रक और हिङ्गोटकीजड़, मिर्चेकी-शाखा और जड़, शरपुङ्खकी जड़, घुडकरञ्जीकी छाल अथवा गन्धप्रसार, असगन्ध, वरुणकी छाल ये प्रत्येक १६ पललेकर सबको जोकुटकर अष्टगुणितपानीमें वहुतमन्दआचसे सातदिनरात पकावे और चतुर्थांश वाकीरहनेपर छानकर ४०० कर्ष पुराना-गुड़ डालदे। जिनद्रव्योंका काढ़ा वनायाहै उनकीजड़ २–२ पल, मिलावे ३० नग विधारेकीजड़ १ पल, एरंडकीजड ४ पल त्रिकटु, खैरसार, रास्ना, कुठ, विडङ्ग, देशी और खुरासानी अजवाइन, जावित्री, जायफल, इलायची, केसर, भारङ्गी, सुहागा, जटामांसी येप्रत्येक १–१ पल, शुद्धगन्धक ८ पल, इनसवका कपडछानचूर्णकर उसमें डाले। रससिन्दूर ८ टङ्क (३२ माशे), मधु २०० कर्ष, घी १०० कर्ष, इनसवको इकठ्ठा चढाकर मन्दऑचसे पकावे। जव लेह जैसा तैयारहोजाय तव विश्वक्सेन तथा धन्वन्तरि और देव तथा ब्राह्मणोंकी पूजाकर वैद्यका भाग (११ वा अंश) देवे। दररोज प्रात काल १–१ तोलालेवे और शामको ६ माशेलेवे। इसतरह १ मण्डल सेवनकरनेसे प्रमेहपिडिका समस्तमेहरोग, भगन्दर, कास, श्वास, अरुचि, समस्तवात समस्तव्रण येसव नष्ट होतेहै ॥ १२१ ॥

१२२ पारदद्रुतिः

यूनो नरस्य केशांस्तु विमृद्योपलया धिया।
निर्मलीकृत्य नीरेण सूक्ष्मसूक्ष्माऽतिखण्डकान् ५२८
कृत्वा शरावमध्ये च स्थापयेदेकरात्रकम्।
नीहारे सम्पुटीकृत्य मृदाऽधश्छिद्रसंयुतम् ॥ ५२९ ॥
आकाशयन्त्रके वह्निं कुक्कुटेन पुटेन तु।
दत्त्वा तच्छिद्रतो बिन्दूंश्वेतपीतसुलोहितान् ॥५३०॥
गृह्णीयान्न च तान् कृष्णान् केशतैलमितीरितम्।
तत्तैलमर्धसेहुण्डक्षीरेण परिमृद्य च ॥ ५३१ ॥
तद्यन्त्रेणैव सङ्गृह्य तुर्यांशं नवसादरम्।
सम्मर्द्य तेन संलिप्य काचसम्पुटकान्तरम् ॥ ५३२ ॥
पारदञ्च विमृद्नीयाद्यामद्वितयकावधि।
रुद्ध्वा सम्पुटके तस्मिंस्स्थापयेद्गर्भगर्तके ॥ ५३३ ॥
सद्यो युवाश्वमलके संरुद्ध्यत्रिदिवसत्रयम्।
सश्चित्याऽजशकृत्सप्त दिनान्येवं स्थितिर्भवेत् ॥५३४॥
अष्टमे दिवसे तत्तु गृह्णीयाद्भिषजांवरः।
स्वच्छा सलिलरूपा सा पारदस्य द्रुतिर्भवेत् ॥५३५॥
गुञ्जातुरीयभागेन यथारोगाऽनुपानतः।
सर्वरोगहरी ख्याता शूलगुल्मादिकान् गदान् ॥
क्षिप्रं विनाशयत्येव शङ्करोक्तमितीरितम् ॥ ५३६ ॥

र. का. गुल्माधिकारे।

भाषा—जवान आदमीके काले केशोंको (यदि गर्भमेंसे आये हुए मिलसकें तो अत्युत्तमहै) शक्करकेसाथ एकदो घण्टे मसलकर स्वच्छपानीसे धोकर साफ करले जिसमेंकि मलका अंश न रहजाय, फिर इन्हें कपड़ेसे पोंछकर साफकरके कैंचीसे जहातक होसके वारीक काटडाले। तदनन्तर मजवूत तथाकोरे दो शराव लेकर एकमें ३–४ वारीक छिद्रकरके उसमें उनके-शोंको रखकर ओसमें एकरातभर रखदे, फिर दूसरा शराव ढककर दोनोंका कपड़मिट्टीसे छिद्रवन्दकरदे, फिर आकाशयन्त्रमें (चूल्हेपर छिद्रसहितठीकरेको रखकर छिद्रपर शरावको रखकर मिट्टीसे दोनोंका अन्तर वन्दकरदे जिसमें कि नीचे रानवगैरह न जाय फिर मुद्राको सुखाले यही आकाशयन्त्रहै) कुक्कुट पुट देवे। नीचेके छिद्रोंमेंसे सफेद, पीले और लालरङ्गके क्रमसे विन्दु गिरेंगे इनसवको लेलेवे जव काले विन्दु आने लगें तव न

ले यह केश तैल तैयार हुआ । इसकेशतैलसे आधा सेहुण्डका दूध डालकर मर्दनकरे जब गोला बनजाय तब पूर्वोक्त यन्त्रसे इसकातैल निकाले, फिर उसतैलमें चतुर्थांश नवमादर मिलाकर मर्दनकरले यह एकतरहका मरहमके सदृश तैयारहोजायगा इसको काचकी खरलमें लेपकरदे और लेपकीवरावर पारा डालकर दोपहरतक काचकी मूसलीसे मर्दनकरे । फिर उसखरलका सम्पुट वनाय कमरभर खड्ढा खोदकर आधेमें जवान घोड़ोंकी ताजी लीद भरदे । उसपर इससम्पुटको रखकर ऊपरसे दूसरी लीद भरदे चौथेरोज़ लीद निकालदे और । वकरोंकी ताजी मींगणी पूर्ववत् भरदे । यदि वकरोंकी इतनी ताज़ी मींगणी मिलनेका संयोग न हो तो पूर्वगर्तसे आधा या चौथाई गर्तकरे और सातदिनतक रहने दे । आठवेंरोज़ वहुत धीरजसे शरावसम्पुटको निकालकर मुद्राको खोलदे, उसखरलमें पानीके सदृश स्वच्छ द्रुति मिलेगी इसको काचकी शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे एकरत्तीका चतुर्थभाग यथोचित रोगानुपानकेसाथ देनेसे शूल, गुल्मप्रमृति समस्तरोगोंको यह दूरकरतीहै ॥ १२२ ॥

१२३ पारदवटी (प्रथमा द्वितीया च)

पारावताण्डमध्ये सूतं टङ्कद्वयं क्षिपेद्युक्त्या ।
तैरेव तावदण्डं सेव्यं यावत्तु शावकोत्पत्तिः ॥५३७॥
तं सूतं गुटिकाभं सम्यग्योगेषु योजयेन्मतिमान् ।
अथवाऽसितधत्तूरशाखास्कन्धे निवेशयेद्विधिना ॥
सूतं यावन्मासं भवति च गुटिकाप्रभो नियतम् ५३८

यो. म , रसायने ।

भाषा—कवूतरी जिसवक्त अण्डा दे उसीसमय उसके परोक्ष एक अण्डेमें सुईसे छिद्रकरके ८ मासे पारा भरदेवे परन्तु यह ध्यान रक्खे कि यह वात कवूतरीको मालूम न हो नहींतो वह उसको सेवेगी नहीं, क्रिया व्यर्थ जायगी । जब औरोंमेंसे फोड़कर वह वच्चेको निकालले तव वहापर पारेकी वंधीहुई गोली मिलेगी । अथवा कालेधतूरेकी शाखामें पारेको भरकर छोड़दें ऊपरसे गोवर अथवा आटेसे छिद्रको वन्दकरदें और उसपर भिगोकर कपड़ा वाधदें तो एकमहीनेवाद इसकी गोली वंध जायगी । इन गोलियोंको दूधमें उवालकर पीनेसे शुक्रकी वृद्धि होतीहै कमरमें वाधनेसे स्वप्नदोष और प्रमेह निवृत्त होताहै और वद्धपारदका योग जहा आयाहो वहापर इनसे कामले सक्तेहैं ॥ १२३ ॥

१२४ पारदवटी (तृतीया)

रसं खल्वे विनिक्षिप्य धुत्तूररसमर्दितम् ।
रजतेन विमर्द्याऽथ गुटिकाः कारयेद्बुधः ॥ ५३९ ॥
धुत्तूरभृङ्गराजोत्थरसेन वचया सह ।
पाचयेद्दोलिकायन्त्रे गुटिकां वस्त्रसञ्चिताम् ॥५४०॥
वदने धारयेत्तेन वीर्यस्तम्भनमुत्तमम् ।
वशीकरश्च लोकानां स्त्रीणाञ्चाऽपि शतं व्रजेत् ॥५४१॥

र. क यो , रसायने ।

भाषा—शुद्धपारेमें चादीकीभस्म अथवा रेता इतना मिलावे कि पारा मूर्च्छित होजाय फिर धतूरेके रसकेसाथ मर्दन करे जब मक्खनके सदृश होजाय तब इसकीगोलियां बनाकर सुखाले । फिर धतूरा और भंगरेका रस समभाग मिलाकर अष्टमांश वचका चूर्ण मिलाकर गोलियोंको अलग २ कपड़ेमें वाधकर दोलायन्त्रमे स्वेदन करनेसे गोली कड़ी होजायगी । इनको मुहमें रखनेसे वीर्यस्तम्भन और वशीकरण होताहै ॥ १२४ ॥

१२५ पारदादि चूर्णम्

रसवलिघनसारकोलमज्जाऽ-
मरकुसुमाम्बुधरः प्रियङ्गुजश्च ।
मलयजमगधात्वगिन्द्रयवं
दलितमिदं परिभाव्य चन्दनाद्भिः ॥
मधुमरिचयुतं रजोऽस्य माषं
जयति वमिं प्रबलां विलिह्य मर्त्यः ॥ ५४२ ॥

र कौ , वृ यो त , रसायनसं , र सु., नि. र., छर्दिरोगे ।

टि०—अत्र योगे घनोऽभ्रकम्, नागो लोहम् । केचित्तु घनसारशब्देन कर्पूरं नियोजयन्ति, परन्तु स लोहाऽभ्रकयोगान्यूनबलो योगो भवतीति बोध्यम् ।

भाषा—पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जली, अभ्रक और लोहभस्म, वेरकी मज्जा, लौंग, नागरमोथा, फूलप्रियङ्गु (अभावमें मालकागनी), सफेदचन्दन, पीपल, तज, इन्द्रजव, येसब समभाग लेकर वारीकचूर्णकर सफेदचन्दनके काढेकी ६—७ भावनायें देकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ मासे चूर्णमें ७ या २१ मरिच मिलाकर मधुकेसाथ चटानेसे असाध्य भी वमन निवृत्त होतीहै ॥ १२५ ॥

१२६ पारदादिधूपः

रसं वङ्गञ्च खदिरं हरीतक्याश्च भस्मकम् ।
तरुणीकदलीभस्म पूगस्य फलजन्तथा ॥ ५४३ ॥
एकतोलकमानं स्याद्धिङ्गुलं हरितालकम् ।
गन्धकं तुल्यकञ्चाऽपि पद्मकं सरलन्तथा ॥ ५४४ ॥
द्वे चन्दने देवदारु वकमं काष्ठमेव च ।
तथा केशरकाष्ठञ्च माषमानं प्रकल्पयेत् ॥ ५४५ ॥
एकीकृत्य विचूर्ण्याऽथ सर्वं चाङ्गेरिकाद्रवैः ।
तुलसीपत्रजरसैः पुरातनगुडेन च ॥ ५४६ ॥
घृतेन सह षट् कार्या वटिका मन्त्ररक्षिताः ।
वेदनायामुत्कटायां चतुर्भिः शुक्लवस्त्रकैः ॥ ५४७ ॥
वेष्टयित्वा च निर्धूमाऽङ्गारोपरि प्रदापयेत् ।
तं धूमं प्रतिगृह्णीयान्नरो वस्त्रादिवेष्टित ॥ ५४८ ॥
मुखनासाकर्णवर्हिर्नि श्वासस्य निरोधनात् ।
स्वेदे जातेऽस्य नैरुज्यं सायं प्रातर्दिनत्रयम् ॥ ५४९ ॥
मासमात्रन्तु पथ्याशी शाकाम्लदधिवर्जनम् ।
गुर्वन्नपायसादीनि चाऽपथ्यानि विवर्जयेत् ॥ ५५० ॥
दिनत्रये व्यतीते तु स्नानमुष्णाम्बुना चरेत् ।
एवं धूमे कृते शान्ति व्रणाश्च पिडिका अपि ५५१

तथा शोथश्चामवातः खञ्जता पङ्गुताऽपि च ।
कुष्ठोपदंशशान्त्यर्थं भैरवेण प्रकीर्तितः ॥ ५५२ ॥

ध., भै. र., उपदंशे ।

भाषा—पारा, वङ्गभस्म, कत्था, हर्रेकीभस्म, केलेके कोमलपत्तोंकीभस्म, सुपारीकीभस्म, येसब १–१ तोला, हिङ्गुल, हरिताल, गन्धक, तुत्थ, पद्मकाठ, सरल, दोनोंचन्दन, देवदारु, वक्कमकीलकड़ी, केशरकाष्ठ (गु हळदरवो) की जड़ येसब १–१ माशा लेकर सबका बारीक चूर्णकर अमलोनियां, तुलसीकेपत्ते, पुरानागुड़ और घृत, ये अन्दाज़से डालकर ६ गोलियें बनावे । जिससमय उपदंशीको किसीतरह कल न पड़तीहो उससमय चारतह सफेद कपड़ेसे ढककर निर्धूम अङ्गारोपर एक गोली रखकर धूंआं देवे और तमामअङ्गमें धुंए को लगने देवे। धुंआ लेते समय मुंह, नाक, कान सबके ढकेरहनेसे और श्वासके वन्दकरनेसे पसीनाहोगा उसीरास्तेसे शरीरका तमामविष वाहरनिकल जायगा इसतरह सुवहशामलेवे । गेंहूं, चना, घी और शक्कर इनको चाहे जिसतरह खाय । इनके अतिरिक्त कोई चीज़ न खाय और यह पथ्य एकमहीने तक चलावे । जवतक धुआले तबतक स्नान न करे, चौथेदिन गरमपानीसे स्नानकरे । केवल धुंएके ग्रहणसे घाव, फुंसी, शोथ, आमवात, खञ्जता, पङ्गुता, कुष्ठ और उपदंश येसब शान्त होतेहैं ॥ १२६ ॥

१२७ पारदादि मलहरम् (प्रथमम्)

रसगन्धकयोश्चूर्णं तत्समं मर्दशृङ्गकम् ।
सर्वतुल्यन्तु कम्पिल्लं किञ्चित्तुत्थसमन्वितम् ॥५५३॥
सर्वं सम्मेलयेद्दत्त्वा घृतं सर्वचतुर्गुणम् ।
पिचुप्लोतं प्रदातव्यं दुष्टव्रणविशोधनम् ॥ ५५४ ॥
नाडीव्रणहरञ्चैव सर्वव्रणनिषूदनम् ।
ये व्रणा न प्रशाम्यन्ति भेषजानां शतेन च ।
अनेन ते प्रशाम्यन्ति सर्पिषा स्वल्पकालतः ॥५५५॥

वृ. यो. त , र. कौ., रसायनसं., व्रणे ।

भाषा—पाराऔरगन्धक समभागलेकर नीलवर्ण कज्जली करना । इनदोनोंकी वरावर मुर्दासङ्ग और सवकी वरावर कमीला तथा षोडशांश नीलाथोथा लेकर सबका वारीकचूर्णकर सबसे चौगुना घृत डालकर एकदो पहरघोटकर इसतरहका मरहम वनावेकि सब एकजीवहोजायं । इसको कपड़ेपरलगाकर घावपर रखना चाहिये । गम्भीर अथवा नाडीव्रण होतो इसकी पत्तीभी रक्खे । इसके उपयोगसे दुष्टव्रण शुद्धहोकर अच्छाहोजाताहै नाड़ीव्रण भरजाताहै। जो व्रण सैकड़ों दवाओंके करनेसे शान्त न हुएहों वे इस मरहमसे बहुतथोड़ेही कालमें शान्तहोजातेहैं। इसको चाहे जिस व्रणमें लगासक्ते ॥ १२७ ॥

१२८ पारदादि मलहरम (द्वितीयम्)

रसगन्धकसिन्दूरराल्लाकम्पिल्लमार्दिकम् ।
तुत्थं खादिरजं चूर्णं घृतं देयं चतुर्गुणम् ॥ ५५६ ॥
युक्त्या सम्मेल्य पिचुना व्रणे देयं विजानता ।
सर्वव्रणप्रशमनं घृतमेतन्न संशयः ॥ ५५७ ॥

वृ यो. त., र. कौ., यो. र , रसायनसं , व्रणे ।

भाषा—पारा, गन्धक, सिन्दूर, राल, कमीला, मुर्दासङ्ग, नीलाथोथा, कत्था, येसव समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर दूसरी चीज़ोंका कपड़छान चूर्णकर सबसे चौगुणा घी मिलाकर मरहम बनावे । इसको कपड़ेपर लगाकर सबतरहके व्रणोंपर लगावे । इसके लगानेसे सबप्रकारके व्रण शान्त होतेहैं ॥ १२८ ॥

१२९ पारदादि योगः

सूतं सवर्णं व्योमसत्त्वं तारं ताम्रञ्च रोचनम् ।
वीजञ्च शरपुङ्खोत्थं कृष्णधत्तूरवीजकम् ॥ ५५८ ॥
सर्वं मर्द्यं वटक्षीरैः कुवेराक्षस्य वीजकैः ।
तत्क्षिप्त्वा धारयेद्वक्त्रे वीर्यस्तम्भकरं चिरम् ॥५५९॥

र सं., वीर्यस्तंभे ।

भाषा—शुद्धपारा, सुवर्णभस्म, अभ्रकसत्त्व, रजतभस्म, ताम्रभस्म, गोरोचन, सरफोंका और कालेधतूरेके वीज येसव समभाग लेकर पारे और रजत की जल्का वनाकर सवचीजोंको मिलादे फिर इसमें वटका दूध डालकर मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली करञ्जकी गुठलीमें डालकर मुंहमें रखनेसे वीर्यस्तम्भन होताहै और यथायोगानुपानकेसाथ खिलानेसे यह समस्त रोगोंको दूरकरताहै १२९

१३० पारदादि लेपः (प्रथमः)

श्वेतस्य कणवीरस्य मूलस्य त्वक्पलार्धकम् ।
रक्तस्याऽपि च तन्मानं हरितालं पलार्धकम् ॥५६०॥
धूर्तबीजं पलार्धं स्यात् पलार्धं गन्धकं मतम् ।
रसं पलार्धं कथितं तिलतैलं ततः परम् ॥ ५६१ ॥
कथितं पञ्चपलिकं औषधीनाञ्च चूर्णकम् ।
कर्तव्यं सूक्ष्मकं चाऽथ रसस्य वलिना सह ॥ ५६२ ॥
कज्जलिं सूक्ष्मिकां कृत्वा तस्मिन्दद्यात्तुचूर्णकम् ।
तैले सम्मिश्रितं कृत्वा वस्त्रार्धं संप्रलेपयेत् ॥ ५६३ ॥
वर्तिं कृत्वा प्रज्वलितां रक्षणीया जलोपरि ।
अधोमुखीतः पतितं जले तैलं समाहरेत् ॥ ५६४ ॥
तत्तैलं मर्दयेल्लिङ्गे उपरिस्थं ततः परम् ।
श्लेष्मातकस्य पत्रं तु मृदु लिङ्गोपरि न्यसेत् ॥५६५॥
सूत्रेण वेष्टयित्वा च सूक्ष्मवस्त्रेणानन्तरम् ।
द्विवारं सप्तदिवसं हस्तकर्मरतस्य च ॥ ५६६ ॥

र [illegible]

भाषा—[illegible]

लेपकर वीचमें लोहेकी शलाका रखकर वत्तीकी तरह लपेटदे और वत्तीको वीचमें चीमटेवगैरहसे पकड़कर दोनों तर्फ आग-लगादे। वत्तीकेनीचे चौड़ेपात्रमें पानीभरकर रखदे जिसमें कि वत्तीमेंसे टपकाहुआ तैल पानीमें गिरकर ठंढाहोजाय। वत्तीके गुलको तोड़कर फेंकताजाय नहींतो तैलनहीं निकलेगा। तमामवत्तीजलजानेके वाद स्वाङ्गशीतलहोनेपर तैलको निकाल-कर शीशीमें रखछोड़े। इसमेंसे १–२ वूंद तैल लेकर सीवन और सुपारीको छोड़कर इन्द्रियपर लेपकरे और वहुत कोमल लिसोड़ेकापत्ता लगाकर कच्चेसूतसे लपेटकर वारीककपडावांधदे, लंगोट न लगावे। इसतरह करनेसे ७ दिनमें हस्तकर्मकृतदो-षसे निर्मुक्तहोताहै इसतैलको खानेके काममें लेनाहो तो हरि-ताल, पारा, गन्धक इनको शुद्धकरके डाले। इसतैलकी एकएक शलाका पानमें रखकर खिलावे और ऊपरसे दूधपिलावे ॥१३०॥

१३१ पारदादिलेपः (द्वितीयः)

पारदं मरिचं कुष्ठं तगरं कण्टकारिका।
अश्वगन्धा तिलाः क्षौद्रं सैन्धवं श्वेतसर्षपाः॥ ५६७॥
अपामार्गो यवा मापाः पिप्पली च समं जलैः।
पिष्टा विमर्दयेत्तेन लिङ्गं मासमहर्निशम्॥ ५६८॥
वर्धते हस्तमात्रन्तत्स्थौल्येन मुशलोपमम्।
वराहवसयाक्षौद्रैर्लिङ्गं मासं विलेपयेत्।
अतिदीर्घं दृढं स्थूलं जायतेनाऽत्र संशयः॥ ५६९॥

र खं, ध्वजवृद्धौ।

भाषा—शुद्धपारा, मरिच, कुठ, तगर, भटकटैया, अस-गन्ध, तिल, मधु, सेंधानमक, पीलीसरसों, अपामार्ग, जव, उडद और पीपल येसव समभागलेकर जलमें पीसकर लिङ्गपर लेपकरके मर्दनकरे। एकमहीनेतक इसीतरह प्रयोगकरनेसे स्थूलता और कठिनता यथेष्ट प्राप्तहोतीहै। वराहकी वसा और मधुको मिलाकर लेप करनेमे एकमहीनेमें ध्वजकी लम्वाई और स्थूलता यथेष्टहोजातीहै॥ १३१॥

१३२ पारदादि वटी (प्रथमा)

सुवर्णं रसभस्माऽथ माक्षिकं चाऽभ्रसत्त्वकम्।
मुक्ताफलसमायुक्तं सर्वं खल्वे विमर्दयेत्॥ ५७०॥
जम्वीरफलजैर्द्रावैर्मर्दयेत्रिदिनं भिषक्।
आर्द्रकस्वरसेनैव मर्द्यं यामचतुष्टयम्॥ ५७१॥
चित्रमूलकपायेण मर्दयेत्रिदिनं भिषक्।
हंसपादीरसे चैव मर्दयेद्दिवसत्रयम्॥ ५७२॥
आतपे शोपयित्वाऽथ कूपिकायां निवेशयेत्।
सप्तभिर्मृत्तिकावस्त्रैर्वालुकायन्त्रमार्गतः॥ ५७३॥
पचेद्विंशतियामन्तु स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
वाराह्या च शतावर्या गोक्षुरेण च मर्दयेत्॥ ५७४॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य पूर्ववत्परिपाचयेत्।
गुञ्जाद्वयं सदा खादेदनुपानविशेषतः॥ ५७५॥
सर्वव्याधिविनिर्मुक्तो दृढदीपनपाचनः।
वृद्धेषु सेवयेन्नित्यं पूर्णचन्द्रोदयो यथा॥ ५७६॥
वीर्यवृद्धिर्दण्डवृद्धिः पण्ढोऽपि पौरुषं भजेत।
अस्य सेवनमात्रेण वहुस्त्रीवल्लभो भवेत॥ ५७७॥

र क यो, वाजीकरणे।

भाषा—सोनेकीभस्म अथवा वर्क, पारेकीभस्म, माक्षि-कभस्म, अभ्रकसत्त्वभस्म और मोती सव समभाग लेकर जंभीरी नीवूके रससे ३ रोज़, अदरखके रससे ४ पहर, चित्र-कमूलके काढेसे ३ रोज़ और हंसपदीके रससे ३ रोज़ मर्दनकर गोली वनाय धूपमें सुखाकर सातकपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें डालकर मुखवन्दकर वालुका यन्त्रमें २० पहर आंच देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर वाराहीकन्द, शतावरी, गोखरू, इन प्रत्येकके स्वरससे मर्दनकर पूर्ववत् वीस २० पह-रकी आंच देवे, वस यह रस तैयार होगया। इसमेंसे २–२ रत्ती यथोचितानुपानके साथ सेवन करनेसे समस्तव्याधियां दूर होकर अग्नि दीप्त होताहै। पाचनशक्ति एकदम वढकर वृद्धभी पूर्णचन्द्रकी तरह जवान हो जातेहैं। पण्टभी वीर्यवृद्धिको प्राप्त होकर वहुत स्त्रियोंका पति हो सक्ताहै॥ १३२॥

१३३ पारदादिवटी (द्वितीया)

पारदः पञ्चमापः स्याल्लवङ्गं पञ्चमापकम्।
पुराणमिष्टकाचूर्णं मापद्वयमितं भवेत्॥ ५७८॥
द्रोणपुष्पीरसेनैव कांस्यपात्रे विमर्दयेत्।
वटिकाः सप्तकं कृत्वा प्रातरेकाञ्च भक्षयेत॥
फिरङ्गव्याधिनाशाय भोजनन्तु यथेच्छया॥ ५७९॥

यो म, उपदंशे।

भाषा—शुद्धपारा और लवङ्ग ५–५ मासे, पुरानीईटका चूर्ण २ मासेलेकर यहांतक मर्दनकरे कि पारा अदृश्य होजाय फिर गूमाके रससे कासीके पात्रमें मर्दनकरे। गोली वधने-लायक होनेपर इसकी सात गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली सुवहमें पानीके साथ निगलवादेवे तो फिरङ्गरोग नष्टहो। इसमें भोजन इच्छानुसार करें॥ १३३॥

१३४ पारदादिवटी (तृतीया)

निष्कत्रयमितो गन्धः पारदस्तत्समांशकः।
पटूशाणं श्वेतखदिरं गुडं द्वादशशाणिकम्॥ ५८०॥
तुलसीस्वरसेनैव लोहपात्रे विमर्दयेत्।
निम्वकाष्ठेन तत्सर्वं द्वियामं गुटिकास्ततः॥ ५८१॥
कार्याश्च सप्तसङ्ख्याका एकैकां भक्षयेत्ततः।
ताम्वूलं भक्षयेच्चाऽनु पानीयं स्वल्पसेवयेत्॥ ५८२॥
भोजनञ्च यथाकामं निवातगृहगोचरः।
दुःसाध्यव्रणपीडाभ्यां युक्तास्तस्य मसूरिकाः॥
वेगेनप्रशमं यान्ति योगेनाऽनेन नाऽन्यथा॥ ५८३॥

यो. म., मसूरिकायाम्।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक ३–३ टङ्क, सफेदकत्था ६ टङ्क, पुरानागुड १२ टङ्क लेकर तुलसीके स्वरससे लोहके पात्रमें नीमके डंडेसे दोपहरतक मर्दनकर सबकी सात गोलियें वनालेवे । इनमेंसे १–१ गोली प्रात.काल पानीकेसाथ निगलजाय, ऊपरसे एक पानका वीडा खाकर थोड़ासा पानी पीवे । भोजन यथेच्छितकरे, वायुरहित घरमेंरहे । इसके सेवनसे दु साध्य व्रण और पीडायुक्तमसूरिकाए वहुतजल्दी शान्त हो जातीहैं ॥१३४॥

१३५ पारदादिवटी (चतुर्थी)

शुद्धं शिवांशमेकांशमेकांशं फणिफेनकम् ।
द्व्यंशं गन्धमिति त्रीणि पिष्ट्वा कुर्वीत पर्पटीम् ।५८४।
विषमुष्टिकधत्तूरवीजजातीफलान्यपि ।
एकांशानि पृथक्तत्र दत्त्वा मसृणतां नयेत् ॥ ५८५ ॥
दाडिमीतिन्तिडीतोयैर्भावयेत्सप्तधा पृथक् ।
वटीर्वध्नीत जरणक्षौद्रैस्ता ग्रहणीच्छिदः ॥ ५८६ ॥

सि. भे म., ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा और अफीम १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर वेरके कोयलोंपर लोहकी कड़छीमें गलाकर अफीमडालदे । मिलजानेपर भैंसके ताजे गोवरपर रक्खेहुए कोमल केलेके पत्तेपर ढालकर ऊपरसे दूसरा पत्ता रखकर दूसरे गोवरसे दवादे । चार पहरके वाद धीरेसे पर्पटीको निकालकर फिरसे कज्जली वनाकर शुद्धकुचिला, धतूरवीज और जायफल ये प्रत्येक पारेकी वरावर वारीक पीसकर पर्पटीमें मिलाकर १–२ पहर खरलकरके अनारके स्वरसकी सातभावना देकर पकीहुई इमलीका घोल वनाकर उसकी सातभावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाय सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे एक अथवा दोदो गोलिया योग्यतानुसार १ माशा जीरेकेसाथ गोलियोंको पीसकर मधुमें चटानेसे ग्रहणीरोग नष्ट होताहै ॥ १३५ ॥

१३६ पारदादिवटी (पञ्चमी)

पारदं गन्धकं तारममृतं चानु शुल्वकम् ।
त्रिफला त्रिसुगन्धश्च चित्रकोशीररेणुकाः ॥ ५८७ ॥
रजनीद्वयसंयुक्तं सम्पेष्य वटकीकृतम् ।
ग्रहणीं विविधं शूलं शोथाऽतिसारकञ्जयेत् ॥ ५८८ ॥

नि. र , र. सु., वै. चि , ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और वच्छनाग, रजत और ताम्रभस्म, त्रिफला त्रिसुगन्ध (तज, पत्रज, इलायची), चित्रकमूल, खस, रेणुकवीज, हल्दी, दारुहल्दी ये सव समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर अन्य वस्तुओंको वारीक पीसकर कुटजकीछालप्रभृति सङ्ग्राहक द्रव्योंके स्वरसकेसाथ, मधु अथवा जलकेसाथ ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली योग्यतानुकूल अनुपानकेसाथ देनेसे ग्रहणी, नानातरहकेशूल, शोथ और अतिसार ये सव नष्ट होतेहैं ।

टि०—रेणुका नामक औषधि आजकल वैद्योंके परिचयसे वाहर निकलगईहै इसके अभावमें संभालूके वीज लिये जातेहैं परन्तु यह भूलहै रेणुकाके गुण शीतप्रधानहैं उष्णताशामकहैं, संभालूके वीज अत्यन्त गरमहैं इसलिये इनको डालना उचित नहीं, हरिद्वारसे लेकर वदरिकाश्रमतक एक वृक्षहोताहै जिसकी शकल कम्पिल्लकसे वहुतअंशोंमें मिलती जुलतीहै । दूरसे देखनेमें इसका फलभी कम्पिल्लकके सदृशही मालूमपड़ताहै भेद इतनाहीहै कि कम्पिल्लकका फल पकजानेपर स्वयं फूट जाताहै और उसमेंसे लाल रज निकल पड़ताहै उसेही कम्पिल्लककरके व्यवहारमें लाते है । रेणुकका वीज अत्यन्त पत्थरके सदृश कठिन होताहै फोड़ने पर प्रयत्नसे फूटताहै काष्ठप्राय होताहै । पहाड़में इसवृक्षको **रोण के** नामसे वहाके तमामवाशिंदे जानतेहैं हरिद्वार और हृषीकेशके अनभिज्ञलोग वाविडङ्कके नामसे पुकारतेहैं पर जैसेही पहाड़के ऊपर जाओ कि वच्चोंसे लेकर बुड्ढोंतक 'रोण, नाम प्रसिद्धहै । यह नाम रेणुक अथवा रेणु शब्दसे अपभ्रंश हुआ मालूम पड़ताहै इसकी दातन करनेका वहुत रिवाजहै मुखपाकमें इससे वहुत लाभ होताहै हमेशहके अभ्याससे दातों पर कुछललाई आजातीहै । वृक्षके तोड़नेसे कुछलाल रङ्गका द्रव निकलता मालूम होताहै इसीको रेणुका शब्दसे ग्रहण किया जाय तो रेणुका युक्त योगोंमें विशेष लाभ होनेका सम्भवहै ॥१३६॥

१३७ पारदादिवटी (षष्ठी)

पारदं गन्धकं नागं ताम्रं व्योषाऽनलैः समम् ।
स्वर्जीरसेन सञ्चूर्ण्य प्रदेया भावना दश ॥ ५८९ ॥
पुनः पर्णरसैः सम्यक् चार्द्रकस्य रसैस्तथा ।
सम्मर्द्य वटिका कार्या कफरोगनिकृन्तनी ॥ ५९० ॥
मन्दाग्निकफरोगेषु श्वासकासे विशेषतः ।
आध्मानप्रतिनाहेषु प्रदेया सुखकारिणी ॥ ५९१ ॥

नि. र , रसायनसं , वै चि , श्वासाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्ण कज्जली, नाग और ताम्रभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, चित्रकमूल ये सव समभाग लेकर काष्ठौषधियोंका चूर्ण वनाकर २–३ पहर मर्दनकर वड़ीलोनी, पके पान और अदरखके रसोंकी १०–१० भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानके साथ देनेसे कफरोग, मन्दाग्नि, श्वास, कास, पेटका फूलना और गुड़गुड़ाहट येसव नष्ट होतेहैं ॥१३७॥

१३८ पारदादिवटी (विजयवटी) (सप्तमी)

समौ रसाऽभ्रकौ रत्नवर्गेण परिभूषितौ ।
गुटिका करसंस्था तु मुखस्था युद्धवारणी ॥ ५९२ ॥

र , रसेन्द्रमं , र. क., रसवन्धाऽधिकारे । रसेन्द्रमङ्गलेव्योमगुटीतिनाम ।

भाषा—शुद्धपारा, अभ्रकसत्त्व और रत्नवर्ग (पन्ना, पुखराज, माणिक्य, पद्मराग[१], नीलम, मरकत, गोमेद, मोती और मूंगा) समभाग लेना । प्रथम पारेको अभ्रकग्राससे बुभुक्षितकर

न्त्रोंका ग्रास देनेसे गुटिकाका आकार हो जायगा । इस गुटिकाको मुखमें रखनेसे शस्त्रवगैरह का घाव नहीं लगता और युद्धमें विजय होताहै। इसीलिये वहुतसे ग्रन्थोंमें इसका **विजय-**वटीभी नाम रक्खाहै। दूसरे लोग पारद वगैरहकी भस्म लेकर तुलसी वगैरहके रसमें इकट्ठी खरलकर पोटलीके प्रकारसे इसकी गोली पकाना लिखतेहैं। पर वह गोली रसायन व वाजीकरण का कामकरेगी किन्तु "मुखस्था युद्धवारणी' यह अर्थ सिद्ध नहीं करसकी। कदाचित् मुखस्थाको लाक्षणिक समझकर खाना अर्थ करें और उससे ताकत आनेपर शत्रुओंका सामना करके जीतना अर्थ रक्खें तो यथाकथञ्चित् हो सक्ताहै पर यथावस्थित अर्थसिद्धि नहीं हो सक्ती, इस तरहकी गोलियों का वावना आजकल असम्भव जैसा मालूम होताहै यह सव सम्प्रदाय-विच्छेदका कारणहै । राजतरङ्गिणीके समयमें यह सम्प्रदाय चालू था इसको पुनरुज्जीवित करनेके लिये वैद्यसमुदायको ध्यान देना चाहिये ॥ १३८ ॥

१३९ पारदादिवटी (अष्टमी)

पारदं गन्धकन्तालं हिङ्गुलञ्च मनःशिलाम् ।
मोदारसङ्कर्क शङ्खजीरकञ्च समंसमम् ॥ ५९३ ॥
सुरसापल्लवरसैर्भाव्यं छायाविशोषितम् ।
धत्तूरपल्लवरसैर्मर्दयेत्पुनरेव च ॥ ५९४ ॥
गुञ्जाभा वटिका कार्या गोघृतेन नियोजयेत ।
पथ्यं सघृतगोधूममन्यत्सर्वं विवर्जयेत् ॥
पारदाद्या गुटी नाम ह्युपदंशविनाशिनी ॥ ५९५ ॥

रसायनस, उपदंशे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल, शिगरिफ, मैनसिल, मुर्दासंग और सफेदजीरा येसव समभाग लेकर तुलसीके रसमे एकदिन मर्दनकर छायाशुष्क करे फिर धतूरेके पत्तोंके रसमे मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलियें वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १ अथवा २ गोलिया गायकेघीमें लपेटकर निगलजाय। घी और गेहूंकी रोटी खानेहोवे, इसके सिवाय सब चीज़का त्यागकरे तो उपदंश नष्टहो ॥ १३९ ॥

१४० पारदादिवटी (नवमी)

पारदस्य पलञ्चैव गन्धकं नागरङ्गके ।
पृथक् पलमितं प्रोक्तं त्रयाणाञ्च विशेषतः ॥ ५९६ ॥
मल्लके [illegible] समानीय द्रावं कुर्याद्यथाविधि ।
सूतञ्च प्रक्षिपेत्तत्र पुनर्भूम्यान्तु निक्षिपेत ॥ ५९७ ॥
ततो भूत्वा मर्दयेत्तु कज्जलीं कारयेद्बुधः ।
शुद्धामृतं पलमितं मरिचस्य पलाष्टकम् ॥ ५९८ ॥
सम्मर्द्य [illegible] समाचरेत् ।
शिग्रुस्वरसैर्मर्द्य पुटानि त्रीणि दापयेत ॥ ५९९ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव त्रिपुटं दापयेत्ततः ।
[illegible] कार्या वटिका कफनाशिनी ॥ ६०० ॥
श्वासकासौ निहन्त्याशु शीतवातन्तथैव च ।
शूलरोगहरी प्रोक्ता रसादिवटिका त्वियम् ॥ ६०१ ॥

र.सु, कासे ।

भाषा—शुद्धपारा, जस्त, नाग और वङ्ग येप्रत्येक १ पललेकर जस्त, नाग और वङ्गको अग्निपर गलाकर मिट्टीके वर्तनमें रक्खेहुए पारेमें डालदेवे, यह एकजातिकी नरमधातु होजायगी। इसको खरलमें डालकर कज्जली वनालेवे फिर शुद्धवछनाग १ पल और मरिच ८ पल का वारीक चूर्णकर उसमें मिलाकर एकदो पहर घोटकर सहजनकीछाल और अदरखके रससे ३–३ भावनाएं देकर मटरवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली यथोचितानुपानकेसाथ देनेसे कफ, श्वास, कास, शीतवात, शूलरोग इन सवका नाश होताहै ॥१४०॥

१४१ पारदादिवटी (दशमी)

पारदं सैन्धवं गन्धं नागं व्योषाऽनलैः समम् ।
शिग्रूरसेन सञ्चूर्ण्य प्रदेया भावना दश ॥ ६०२ ॥
पुनः पत्ररसैः सम्यक् चाऽऽर्द्रकस्य रसैस्तथा ।
मरिचप्रमाणा कफजित्कार्या सा गुटिकोत्तमा ६०३
मन्दाग्निकफरोगेषु कासश्वासे विशेषतः ।
आध्मानपवनार्तौ च प्रदेया सुखकारिणी ॥ ६०४ ॥

रसायनसं, कफरोगे ।

भाषा—पारा और गन्धककी नीलवर्णकज्जली, सैन्धव, नागभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल और चित्रकमूल सव समभाग लेकर वारीक चूर्णकर सहिजन और अदरखके रसकी १०–१० भावनाएं देकर मरिच वरावर गोलियें वनाकर रखछोडे। इनमेंसे योग्यतानुसार २–३ गोली देनेसे मन्दाग्नि, कफरोग, कास श्वास, आध्मान और वातव्याधि ये सव नष्ट होतेहै ॥ १४१ ॥

१४२ पारिजातटङ्कणम् (तालकेश्वरः)

दिनैकं कदलीद्रावैष्टङ्कणं मर्दयेद्दिनम् ।
हरिद्राया द्रवे द्रावे निशापामार्गभस्मजे ॥ ६०५ ॥
तृतीयांशञ्च तालञ्च दत्त्वा पालाशपुष्पजे ।
सप्ताहञ्च रविक्षीरैः श्वेतैरण्डस्य वीजतः ॥ ६०६ ॥
यामद्वादशकं वह्निः काचकूप्यां गतस्य च ।
तत्त्रिधा जायते सत्त्वमूर्ध्वाऽधो भेदतः पुनः ॥ ६०७ ॥
ऊर्ध्वं सत्त्वमधः किट्टं पुष्पितश्च प्रजायते ।
पुष्पितश्चोर्ध्वसत्त्वञ्च पूर्वोक्तविधिना पुनः ॥ ६०८ ॥
विमृद्य काचकूप्याञ्च निक्षिप्याऽग्निं प्रदापयेत् ।
त्रिवारमेवं हि कृते तलस्थं तत्प्रयोजयेत् ॥ ६०९ ॥
अथ तस्य चतुर्थांशं दरदं न्यस्य मर्दयेत् ।
भृङ्गामार्कवदुःस्पर्शाधत्तूरकपलाशजैः ॥ ६१० ॥
प्रत्यहञ्च दिवाम्भोभिः सप्ताहं मर्दयेद्दृशम् ।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य वह्निं यामांस्तु षोडश ॥६११॥
दत्त्वैव हि त्रिवारञ्च पलाण्डुस्वरसैस्ततः ।
रसोनमानरसतः प्रत्यहं मर्दयेद् दृढम् ॥ ६१२ ॥

एकोनविंशतिविधाः शङ्खद्रावस्य भावनाः ।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य यामद्वादशकं पचेत् ॥ ६१३ ॥
त्रिवारमेवं हि कृते दिव्यं तलगतं भवेत् ।
रक्तिका सर्वरोगघ्नी स्वरभेदक्षयादयः ॥
दत्तमात्रेण नश्यन्ति तूलराशिरिवाऽग्निना ॥ ६१४ ॥

र. का. स्वरभेदे ।

भाषा—केलेकी जड़के रससे सुहागेको १ दिन, हल्दीके स्वरससे १ दिन, हल्दीऔर अपामार्गके क्षारके पानीसे एक २ दिन मर्दनकर तृतीयांश हरितालका सुरमासदृश वारीक चूर्ण डालकर पलाशके पुष्पोंके रस, आकके दूध और सफेद एरण्डके बीज स्वरससे ७–७ दिन मर्दन करे । फिर ७ कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भरकर १२ पहरकी क्रमवृद्ध अग्निदेना, इसकी डाट वन्दकरदेनी चाहिये । स्वाङ्गशीतल होनेपर कपड़मिट्टीको अलगकर तैलमें एक डोरीको भिगोकर शीशीके मुंहपर लगादे और अग्नि जलादे । जव डोरी जलजाय तव भीगेहुए कपड़ेसे पोंछदे तो अनायास शीशी फूट जायगी । इसमें ऊपर सत्त्व, वीचमें पुष्प और नीचे किट्ट इसतरह तीनविभाग मिलेंगे । इसमेंसे किट्टको छोड़कर वाकी (सत्त्व और पुष्प) को लेकर पूर्वोक्त-रीतिसे मर्दन करे और काचकूपीमें अग्निदेवे । इसतरह तीनवार करने के वाद तलस्थ को भी शामिल करले । फिर इसमे चतुर्थांश शिंगरिफ देकर भाग, भंगरा, जवास, धतूरा, पलाशपुष्प और हरें इन प्रत्येकके स्वरसोंमें ७–७ रोज़ मर्दनकर काचकूपीमें डालकर १६ पहरकी अग्निदे । इसतरह ३ वार करके प्याज मानकन्द और लशुनके स्वरसमें ७–७ रोज़ मर्दनकर १९ भावनाए शङ्खद्रावकी देकर १२ पहरकी अग्निदे। इसतरह तीनवार करनेके वाद तलस्थजो पदार्थहै उसको लेकर रखछोड़े । यह **पारिजात** टङ्कण तैयार हुआ । इसकी १–१ रत्ती उचितानुपानके साथ देनेसे स्वरभेद, क्षयप्रभृति समस्तरोग इस तरह नष्ट होतेहैं जैसे अग्निस्पर्शसे कपासका पुंज नष्ट होताहै ॥ १४२ ॥

१४३ पारिभद्रो रसः

मूर्च्छितं पारदं धात्रीफलं निम्बस्य चाहरेत् ।
तुल्यांशं खादिरैः क्वाथैर्दिनं मर्द्यञ्च भक्षयेत् ॥
निष्कैकं दद्रुकुष्ठघ्नः पारिभद्राह्वयोरस ॥ ६१५ ॥

र सं , वै. चि , र. चि , र सु , र. मं , रसायनसं , यो म , व. रा., र का , र. र कौ., कुष्ठाऽधिकारे ।

भाषा—मूर्च्छितपारा, आवले और नीमकी निवोलीकीमज्जा समभागलेकर कूटछानकर खैरके क्वाथसे एकदिन मर्दनकर ४–४ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली खैरके काढे अथवा महामञ्जिष्ठादिक्वाथसे देनेसे यह दद्रुऔर कुष्ठको नष्टकरताहै ॥ १४३ ॥

१४४ पार्वतीरसः

पार्वती काशिसम्भूतो दरदो मधुपुष्पकम् ।
गुडूची शाल्मली द्राक्षाधान्यभूनिम्बमार्कवम् ॥६१६॥
तिलमुद्गपटोलश्च कूष्माण्डं लवणद्वयम् ।
यष्टिकाधान्यजं भस्म चान्तर्दग्धं समंसमम् ॥ ६१७ ॥
मुखरोगं निहन्त्याशु पार्वतीरस उत्तमः ।
चिरजं पैत्तिकं हन्ति तिमिरञ्च तृषामपि ॥ ६१८ ॥

र. सं., र. सु., र. चि., मुखरोगे ।

भाषा—शुद्धगन्धक, पारा और शिंगरिफ, महुआके फूल, गिलोय, सेंमलका मुसला, द्राक्ष, धनियां, चिरायता, भंगरा, तिल, मूंग, पटोल, कोंहडा, सेंधा, सांभर, मुलहठी, धनियेकी अन्तर्धूमविदग्धभस्म येसव चीजें समभागलेकर वारीकपीसकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ माशा मधुकेसाथ अथवा पित्तपापड़े-केकाढेकेसाथ देनेसे मुखरोग, वहुतदिनका पित्तज्वर, तिमिर और प्यास इनसवको यह वहुतजल्दी नष्ट करताहै ॥ १४४ ॥

१४५ पाशुपतास्त्रो रसः (प्रथमः)

पारदं म्लेच्छभस्माऽथ गन्धकञ्च मनःशिला ।
पाषाणद्वितयञ्चाऽथ भृङ्गीनीरेण मर्दयेत् ॥ ६१९ ॥
द्विदिनं वालुकायन्त्रे चण्डाग्नौ च द्वियामकम् ।
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यमार्द्रकञ्चाऽनुपानकम् ॥
पाशुपताऽस्त्रनामाऽयं सर्वाऽहिकं ज्वरं हरेत् ॥६२०॥

व रा , रसायनसं., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और मैनसिल, ताम्रभस्म, काला और सफेद शुद्धसखिया येसव समभागलेकर भागरेके रससे दोरोज़ मर्दनकर वालुकायन्त्रमें तीक्ष्ण अग्निसे दोपहरतक पकावे। स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २ रत्ती अदरखके रसके साथ देनेसे सार्वाहिकज्वर नष्टहोताहै ॥ १४५ ॥

१४६ पाशुपतास्त्रो रसः (द्वितीयः)

द्विपाषाणं द्वितुत्थञ्च नेपालं तालकं विषम् ।
सर्वतुल्यं शुद्धसूतमर्कक्षीरेण मर्दयेत् ॥ ६२१ ॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं समुद्धृत्य विचूर्णयेत् ।
भावितं फणिपित्तेन गुञ्जामात्रं भिषग्वरः ॥ ६२२ ॥
लशुनस्य च तैलेन ब्रह्मद्वारे विलेपयेत् ।
तत्क्षणेन निहन्त्याशु सन्निपातांस्त्रयोदश ॥
रसः पाशुपतास्त्रोऽयं शङ्करेण प्रकल्पितः ॥ ६२३ ॥

वै चि , वा , सन्निपाते ।

भाषा—काला और सफेद शुद्धसंखिया, दानेफिरङ्ग और तूतिया, शुद्धजमालगोटा, हरिताल और वछनाग येसव समभाग लेकर इनसवकी वरावर शुद्धपारा डालकर कज्जली वनाकर आककेदूधके साथ मर्दनकर गोलावनाय आककेदूधसे दोलायन्त्रमें १ पहर स्वेदनकरके निकालकर घोटकर सुखाले । इसमें कालेसापके पित्तेकी दो अथवा एक भावना देकर १–१ रत्ती लशुनके तैलमें मिलाकर तालुएके वाल निकालकर लेपकरनेसे तेरहप्रकारके सन्निपातोंको यह तत्क्षण नष्टकरताहै ॥ १४६ ॥

१५० पाषाणभेदी रसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं शिखितुत्थरसान्वितम् ।
श्वेतापुनर्नवावासारसैः श्वेतवचाद्रवैः ॥ ६३९ ॥
प्रतिद्रावैरहं मर्द्य शुष्कं तद्द्रावसंयुतम् ।
स्वेदयेद्दोलिकायन्त्रे दिनैकं तं विचूर्णयेत् ॥ ६४० ॥
रसः पाषाणभिन्नाम द्विगुञ्जश्चाश्मरीहरः ।
गोपालकर्कटीदोग्ध्रीभूधात्रीमूलचूर्णकम् ॥ ६४१ ॥
कुलत्थकाथसंयुक्तमनुपानं प्रशस्यते ।
सघृतं गोक्षुरकाथं रात्रौ तस्मै प्रदापयेत् ॥ ६४२ ॥

रसायनसं , र र , वै. क , ध., र. चं., र को.,चि. र भ.,र. दी , व. रा., वै. चि , भै. र., अश्मर्यधिकारे । कुत्रचिच्छिखितुत्थस्थाने शिलाजतु गृहीतम्, भावनायां श्वेतवचाद्रवस्थाने श्वेताऽपराजिता गृहीता ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा., शुद्धतूतिया और रसौत १–१ भा., लेकर सबकी नीलवर्ण कज्जलीकर सफेदपुनर्नवा, अड्सा, श्वेतवच इन प्रत्येकके स्वरससे ३–३ रोज़ मर्दनकरे परन्तु प्रत्येक भावनाके बाद गोलाबनाकर जिसकी भावनी दीहो उसीके रसमें १–१ रोज़ दोलायन्त्रसे स्वेदनकर सुखादे फिर दूसरे रसकी भावना देकर स्वेदन दे । अखीरमें इसकी २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली एरण्डककड़ी, छोटीदूधी, भूधात्री इनकी जडका चूर्ण कुल्थीके काथमें मिलाकर इसके साथ लेनेसे पथरीरोग दूर होताहै रात्रीको सोतेसमय गोखरूके काथमें घी डालकर पिलाना ॥ १५० ॥

१५१ पाषाणभेदीरसः (द्वितीयः)

रसेन सितवर्षाभ्वा रसं द्विगुणगन्धकम् ।
घृष्टं पचेच्च मूषायां द्वौ माषौ तस्य भक्षयेत् ॥६४३॥
गोपालकर्कटीमूलं कुलत्थोदैः पिबेदनु ।
गोकण्टकसदाभद्रामूलक्वाथं पिबेन्निशि ॥
अयं पाषाणभिन्नाम्ना रसः पाषाणभेदकः ॥ ६४४ ॥

र र. स , अश्मर्यधिकारे ।

टि०—चिरकालात् गोपालकर्कटी १ गोरक्षकर्कटीति च शब्दौ स्वार्थबोधनाऽसमर्थौ सञ्जातौ दृश्येते टीकाकारैश्च तत्तत्स्थाने स्वस्वमनीषितमालपि, तत्तन्नामनिर्देशनधायुर्वेदज्ञानज्योतिषोनिर्वाणतां प्रकटयिष्यतीतिकृत्वा मौनाऽऽलम्बनमेव श्रेयस्करम्, ताभ्या शब्दाभ्या कि वस्तु ग्रहीतव्यमिति विचार तु एरण्टकाकडी हिं० पोपैयू गु० इतिप्रसिद्धमेव द्रव्य ग्रहणीयमिति वदाम "गोपालकर्कटीमूल पिष्ट पर्य्युपिताम्भसा । पीयमान त्रिरात्रेण पातयत्यश्मरीं हठात्" इति राजमार्तण्डीयपद्यभाषानुवादने जयपुरपत्तनाऽधिपतिमहाराजैर्नियुक्तभिषक्समित्योपरिनिर्दिष्ट एवाऽर्थो निरधारि, तथाचाय राजमार्तण्डीय प्रयोगो बहुधाऽस्माभीरोगिषु नियुज्याऽऽशीर्वादो गृहीतो गृह्यते च अन्यैरपि भिषग्वर्य्यै रेतत्प्रयोगे प्रयतितव्यमिति नम्रनिवेदनम् इन्द्रवारुण्या कर्कट्या चैतादृशी शक्तिर्नास्त्येवेति निश्चयेन ब्रूम । तृतीयपाषाणभेदि रसे **गोपालकर्कटी दुग्ध**मितिपाठेन चाऽस्मत्सिद्धान्तस्य दृढा पुष्टिरस्ति कर्कटीजातावन्यत्र कुत्रचिदपि दुग्धवत्त्वाऽभावात् । यत्रतत्राऽर्थाऽज्ञानाद्गोपालकर्कटीस्थाने पातालकर्कटीति पाठश्चोऽस्ति पातालतुम्बिकेत्यपरपर्यायाया पातालकर्कट्यामप्यश्मरीभेदनशक्तेरभावात्स पाठो नितरामुपेक्ष्य इत्यलमतिविस्तरेण ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा लेकर दोनोंकी नीलवर्ण कज्जलीकर सफेद इटसिट (पंजाबी) के रससे १–२ रोज़ मर्दनकर शरावसम्पुटकर लवणयन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर इसमेंसे २ माशे फाककर एरण्डककड़ीकी १ तोला जड़को ५ तोले कुलथीके अष्टावशेष काढ़ेमें मिलाकर पीवे । रातको सोते समय गोखरू और गंभारीकी जड़का काढापीवे इससे पथरीके टुकड़े टुकड़े होकर निकल जातेहै ॥ १५१ ॥

१५२ पाषाणभेदीरसः (तृतीयः)

रसं द्विगुणगन्धेन मर्दयित्वा प्रयत्नतः ।
वसुः पुनर्नवा वासा श्वेता ग्राह्या प्रयत्नतः ॥ ६४५ ॥
तद्द्रवैर्भावयेदेनं प्रत्येकन्तु दिनत्रयम् ।
पक्वं मूषागतं शुष्कं स्वेदयेज्जलयन्त्रतः ॥ ६४६ ॥
पाषाणभेदी नामाऽयं नियुञ्जीताऽस्य वल्लकम् ।
गोपालकर्कटीदुग्धे भूम्यामलकमूलिकाम् ॥
कुलत्थक्वाथतोयेन पिष्ट्वा तदनु पाययेत् ॥ ६४७ ॥

र. र स , र क , यो. स , र मृ., अश्मर्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा १ भा , शुद्ध गन्धक २ भा., दोनोंकी नीलवर्णकज्जली कर सफेदपुनर्नवा, लालपुनर्नवा, अड्सा, वच अथवा सफेदकोयल इन प्रत्येकके रसोंसे ३–३ रोज़ मर्दनकर गोला बनाय मूषामें रखकर सुखाले और जलयन्त्रसे १ दिन स्वेदन कर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती एरण्डककड़ीके दूधमें मिलाकर खिलावे और ऊपरसे भुंईआवलेकी जड़का चूर्ण आधातोला कुलथीके काढेमें मिलाके पिलानेसे पथरी दूर होतीहै ॥ १५२ ॥

१५३ पाषाणवज्ररसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं रसैः श्वेतपुनर्नवैः ।
मर्दयित्वा दिनं खल्वे रुद्ध्वा तद्भूधरे पचेत् ॥ ६४८ ॥
दिनान्ते तत्समुद्धृत्य मर्दयेद्गुडसंयुतम् ।
अश्मरीं वस्तिशूलञ्च हन्ति पाषाणवज्रकः ॥ ६४९ ॥
गोरक्षकर्कटीमूलकाथं कौलत्थकन्तथा ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं बुद्ध्वा दोषबलाबलम् ॥ ६५० ॥

र. चि , र सं , वै चि., र सु , र च , ध , यो म , र कौ., चि क , र र , रसायनसं , ना वि., अश्मर्यधिकारे ।

टि०—यो म , वै चि , गुटस्थाने पाषाणभेदचूर्णं गृहीतम् ।

भाषा—शुद्धपारा १ भा , शुद्धगन्धक २ भा., लेकर नीलवर्णकज्जलीकर श्वेतपुनर्नवाके रससे एकरोज़ मर्दनकर गोला बनाय भूधरयन्त्रमें बन्दकर दिनभरकी अग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर १ माशेकी मात्रा बराबरके पुराने गुडकेसाथ देकर एरण्डककड़ीकीजड़ २ तोलेका अथवा कुलथीका अष्टावशेषक्वाथ पिलावे अथवा दोषबलाबल देखकर कामकरे ॥ १५३ ॥

१५४ पाषाणवज्ररसः (द्वितीयः)

द्विगन्धसूतस्त्रिदिनं विमृद्य
पुनर्नवाश्वेतवसुद्रवेण ।
पुटेन मूषाकुहरे निवेश्य
कालन्नमानच्छगणैः प्रयत्नात् ॥ ६५१ ॥
समूलतक्रस्य रसेन मर्द्यो
गोक्षूरतोयेन दिनत्रयञ्च ।
पाषाणभिच्छर्करया च वल्ल-
द्वयोन्मितश्चाश्मरिरोगनुत्स्यात् ॥ ६५२ ॥

र , अश्मरीरोगे ।

टि०—भावनाया मनुपाने च विशेषात्प्रथमयोगात् पृथक् पाठ कृतोऽस्ति, अत्र समूलतक्रस्य रसेनेति पद सगयग्रस्तम्, तक्राऽऽख्यक्षुपस्याऽप्रसिद्धत्वात् । परन्तु तत्स्थाने गोपालकर्कट्या (एरण्डककडी हिं०) मूल व्यवहरणीयम् । अश्मरीभेदने निष्कासने चाऽद्भुतशक्तिमत्त्वात् ।

भाषा—प्रथमपाषाणवज्रकी चीजोंको पूर्ववत् भूधरयन्त्रमें पाककर एरण्डककड़ी और गोखरूके रससे ३–३ रोज़ मर्दनकर ६ रत्तीकीमात्रा शक्करके साथदेनेसे अश्मरीरोग दूरहोताहै। इसयोगमें तक्र नामकी वनस्पति आईहै वह प्रसिद्धनहींहै इसलिये एरण्डककड़ीसे कामलेना यह उससेकम काम नहीं करती ॥१५४॥

१५५ पाषाणवज्ररसः (तृतीयः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं श्वेतपौनर्नवद्रवैः ।
भावनात्रितयं देयं रुद्ध्वा तं भूधरे पुटेत् ॥ ६५३ ॥
पाषाणभेदचूर्णन्तु समं संयोज्य मर्दयेत् ।
निष्कमश्मरिकां हन्ति पूर्वोक्तादनुपानतः ॥
योगवाहान् प्रयुञ्जीत रसानश्मरिशान्तये ॥ ६५४ ॥

र चि , चि सा , र को , नि र , यो र , र र , व रा., रसायनस , अश्मर्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारेसे दूना शुद्धगन्धक लेकर नीलवर्णकज्जलीकर सफेदपुनर्नवाके रससे ३ भावनाए देकर भूधरयन्त्रमें पकाकर उसकी बराबर पाषाणभेदका चूर्ण मिलादे । इसमेंसे २ माशेकी मात्रा देकर एरण्डककड़ी की जड़काहिम अथवा कुलथीका क्वाथ पिलानेसे अश्मरीरोग नष्ट होताहै ॥ १५५ ॥

१५६ पिङ्गलेश्वररसः

भस्मसूतं विषं शुण्ठी वचा वह्निः फलत्रिकम् ।
ब्रह्मबीजं विडङ्गानि भृङ्गिभल्लातगन्धकम् ॥ ६५५ ॥
गिरितुल्यं कणातुल्यं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ।
त्रिफलाक्वाथसंयुक्तं कान्तपात्रे स्थितं निशि ॥६५६॥
कर्षमात्रं लिहेत्प्रातः सर्वकुष्ठनिवृत्तये ।
षण्मासात्पलितं हन्ति रसोऽयं पिङ्गलेश्वरः ॥६५७॥

र. मु , चि. क्र , र., का , र को., कुष्ठे ।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धबच्छनाग, सोंठ, वच, चित्रकमूल, त्रिफला, पलासबीज, विडंग, भंगरा, शुद्धभिलावा और गन्धक, तुल्यभस्म, पीपल य सब समभाग लेकर चूर्णकर रक्खे । इसमेंसे १ तोला दवाको २ तोले त्रिफलाके काढ़ेमें मिलाकर कान्तलोहके पात्रमें रखकर रातभर रहनेदे सुवहमें खावे । ऐसा ६ महीनेतक करनेसे समस्तकुष्ठ और वलीपलित नष्ट होतेहै ॥१५६॥

१५७ पित्तकुन्तनो रसः

सूतकञ्च मृततारभस्मकं
गन्धकेन सहितं समांशकम् ।
मर्दितं हि खलु भृङ्गवारिणा
चाऽर्धयाममपि कुक्कुटे पुटे ॥ ६५८ ॥
पाचितं हि सकलं विचूर्णितं
लेहितं हि मधुशर्करायुतम् ।
पित्तदोषशमनं मयोदितं
पित्तकुन्तनमिदं प्रशस्यते ॥ ६५९ ॥

र प्र.सु , र म मा , र चं., पित्तरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा, चादीकीभस्म, शुद्धगन्धक सव समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर भंगरेके रसमें १–२ रोज मर्दनकर शरावसम्पुटमें वन्दकर कुक्कुटपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २ या ३ रत्तीकी मात्रा शक्करमधुके साथ देनेसे पित्तोल्वण दोष शान्तहोताहै ॥ १५७ ॥

१५८ पित्तगजाऽङ्कुशो रसः

शुद्धगन्धकटङ्कञ्च तालकञ्च मनःशिला ।
सर्वं हंसपदीद्रावैर्दिनमेकं विमर्दयेत् ॥ ६६० ॥
वालुकायन्त्रके पाच्यं षड्यामान्तं निरुध्य च ।
देया गुञ्जानुपानेन मधुपित्तं विनाशयेत् ॥ ६६१ ॥

व रा , वै चि , मधुपित्ते ।

भाषा—शुद्धगन्धकऔर टङ्कण, हरिताल और मैनसिल समभागलेकर नीलवर्ण कज्जलीकर हसराजके रससे एकरोज मर्दनकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें ६ पहर पाचनकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानके साथ देनेसे मधुपित्त नष्टहोताहै । मधुपित्तका लक्षण वसवराजीयमें देखलेना ॥१५८॥

१५९ पित्तप्रभञ्जनो रसः

प्रवालं माक्षिकं तुल्यं त्रिवारमार्द्रवारिणा ।
मर्दितं दुग्धसितया सेव्यं पित्तनिवारणे ॥ ६६२ ॥
मध्वाज्येन सितायुक्तं सेवितं वातपित्तनुत् ।
पित्तप्रभञ्जनो योगः पित्तं नाशयति क्षणात् ॥ ६६३ ॥

र. चं , पित्तरोगे ।

भाषा—प्रवालभस्म और माक्षिकभस्म समभागलेकर अदरखकेरससे तीनभावनादेकर रखछोड़े । इसमेंसे ३ रत्तीकीमात्रा शक्करमिलाएहुए दूधकेसाथ देनेसे पित्तरोग नष्टहोताहै । मधु, घी और शक्करकेसाथ देनेसे वातपित्त नष्टहोताहै ॥१५९॥

१६० पित्तभञ्जनरसः

पारदं गन्धकं ताम्रं मुसलीरसमर्दितम् ।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य वालुकायन्त्रके तथा ॥६६४॥

पचेद्दिपक्कं च सञ्चूर्ण्य खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ।
त्रिक्षारं पञ्चलवणं हिङ्गुगुग्गुलुकुष्ठकम् ॥ ६६५ ॥
कटुत्रयञ्च त्रिफला गान्धारी जातिकाद्वयम् ।
दीप्यत्रयं त्रिफेनञ्च मूषाम्लं विषवत्सकम् ॥ ६६६ ॥
एलाद्वयञ्च सौभाग्यं कुबेरो वह्निमूलकम् ।
तिन्तिडीफलग्रन्थी च चूतं च दाडिमीफलम् ॥६६७॥
समभागानि सञ्चूर्ण्य खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
भावयेत्सप्तवारांश्च शृङ्गबेररसेन च ॥ ६६८ ॥
गुञ्जैकं मधुना लेह्यं यामे यामे च भक्षयेत् ।
अम्लपित्तं निहन्त्याशु ग्रहणीं दुस्तरां तथा ॥६६९॥

व. रा., वै. चि., अम्लपित्ते । अस्मिन्योगे मात्राया निष्कार्धमितिमूले दृश्यते परन्तु वस्तुयोगस्याति तीक्ष्णत्वान्निष्कार्धस्थाने गुञ्जैकमिति पाठ कृतोऽस्ति

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, तावेकाचूरा समभागलेकर मुसलीकेरससे २–३ रोज़मर्दनकर सुखाकर सातकपड़मिट्टीकीहुई आतशी शीशीमें रखकर वालुकायन्त्रमें वन्दकर ४ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर सज्जी, सुहागा, यवक्षार, पाचोंनमक, भुनाहींग, गूगल, कूठ, त्रिकुटु, त्रिफला, भटकटैया, जायफल, जावित्री, दीप्यत्रय (अजवाइन देशी, खुरासानी और खरजवाइन), त्रिफेन (अहिफेन, समुद्रफेन और अम्बर) शुद्धसोमल, शुद्धवछनाग और इन्द्रजव, छोटी तथा वड़ी इलायची, सुहागा, करंजकेवीज, चित्रककी जड़, इमलीके फल, पिपलामूल, आमकी मज्जा, अनारदाना येसव समभाग लेकर कपडछान चूर्णकर अदरखके रससे ७ भावनाएं देकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्ती मधुकेसाथ पहर २ के अन्तर पर लेनेसे अम्लपित्त और दुस्तरग्रहणीरोग नष्टहोतेहैं ॥ १६० ॥

१६१ पित्तभञ्जीज्वराङ्कुशः

मृताऽभ्रके भूमिनिम्बक्वाथै र्दद्यात्सुभावनाः ।
सप्ताहं कृतमालस्य गुडूच्याश्च दिनत्रयम् ॥ ६७० ॥
तिक्ताया विंशतिदिनं ततो गजपुटे पचेत् ।
सप्तवारान् गजपुटे पाचनीयं भिषक्तमैः ॥ ६७१ ॥
रक्तिकापञ्चकं देयं पिप्पल्या ज्वरिताय वै ।
एष पित्तज्वरं हन्ति विषमाख्यं महाबलम् ॥ ६७२ ॥
जीर्णज्वरं बहुविधं चातुर्थादिज्वरं तथा ।
क्षीणानां बलकृच्चैव बालानां रोगनाशनः ॥ ६७३ ॥
गर्भिणीनां ज्वरहरः पित्तभञ्जी ज्वराङ्कुशः ।
पथ्यं दध्योदनं देयं ससितं मुद्गजं तथा ॥ ६७४ ॥
यूषो मांसरसो वाऽथ गोदुग्धमथवा भवेत् ।
सर्वपित्तविकाराणां विषमाणां निवारणः ॥ ६७५ ॥

र म मा, ना. वि., ज्वराधिकारे ।

भाषा—अभ्रकभस्ममें चिरायतेके क्वाथकी ७ दिन, अमलतास और गिलोयकी ३–३ दिन, कुटकीके क्वाथकी २० दिन भावनाए देकर गोलाबनाय सुखाकर शरावसम्पुटकर गजपुटकी आंचदे । इसीतरह सात गजपुट देकर रखछोड़े । इसमेंसे ५ रत्ती पीपलकेसाथ देनेसे पित्तप्रधान विषमज्वर नानाप्रकारका जीर्णज्वर, और चातुर्थकादि वारीकाज्वर नष्ट होताहै । क्षीणोंको वल देताहै वालकोंके तमामरोगोंको दूर करताहै । गर्भिणीके ज्वरको दूर करताहै । इसपर पथ्य शक्कर, दही, भात दूध अथवा मूंगका यूष अथवा मांसरस या केवल गोदुग्ध रोगीकी अवस्थानुसार देना। समस्त पित्तविकारोंके लिये और विषमरोगोंके लिये यह अत्युत्तम औषध है ॥ १६१ ॥

१६२ पित्तभञ्जीरसः

व्योमपारदगन्धाश्मजयपालकटङ्कणान् ।
वह्निचन्द्ररसद्विद्विभागाञ्जम्भाम्भसा त्र्यहम् ॥६७६ ॥
कलायप्रमिताः कृत्वा गुटिकाः पित्तभञ्जिकाः ।
वितरेदामशूलादौ कृमिशूले विशेषतः ॥
पथ्यं तक्रौदनं चाऽत्र स्तम्भार्थे शीतला क्रिया ॥६७७॥

रसायनसं, र. चि, र क, वै चि, नि. र, र का, शूलाधिकारे। नि र, वै चि, पीडारीति नाम। र का., शूलभञ्जीति नाम। कुत्रचिद् व्योमस्थाने व्योषं गृहीतम्।

भाषा—अभ्रकभस्म, शुद्धपारा, गन्धक, जमालगोटा और सुहागा ये क्रमश ३–१–६–२–२ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरीके रससे ३ रोज़ मर्दनकर मटरवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ अथवा २ गोली योग्यताऽनुसार आमशूल और क्रिमिशूलोंमें देना इससे दस्तहोगे, मात्रासे अधिकरेचन होनेपर छाछभात खानेको देकर तमाम शीतलक्रिया करना ॥ १६२ ॥

१६३ पित्तमुद्गररसः

पारदं हिङ्गुलोत्थञ्च ह्यूर्द्ध्वपातनतो नयेत् ।
कुक्कुटाण्डरसाद्भागटङ्कणक्षारमेव च ॥ ६७८ ॥
गन्धकस्य तथा भागो घृतेन परिमर्दयेत् ।
सिद्धं रसं समादाय जीरतोयेन दापयेत् ॥ ६७९ ॥
माषत्रयं प्रतिदिनं ग्रहणीरक्तदोषनुत् ।
ज्वरदाहविनाशश्च रक्तपित्तं नियच्छति ॥ ६८० ॥

व रा, रक्तपित्ते ।

भाषा—ऊर्द्ध्वपातनयन्त्रसे शिगरिफमेंसे निकालाहुआपारा, कुक्कुटाण्डकीजर्दी, सुहागा और शुद्धगन्धक ये सव समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर अन्यचीज़ोंको मिलाकर थोड़ीदेर मर्दनकरे । गाढ़ा होनेपर अन्दाज़से गायका घी डालकर फिर मर्दनकरे । गोलिया वनानेलायक हो तव गोलिया वनाकर रखछोडे अथवा अवलेहरूपमें रक्खे । इसमेंसे ३ माशेकी मात्रा जीरेके पानीकेसाथ देनेसे ग्रहणीदोष, रक्तदोप, ज्वर, दाह और रक्तपित्त ये सव नष्ट होतेहैं ॥ १६३ ॥

१६४ पित्तलरसायनम्

रीतिकान्ताऽभ्रतालानि विडङ्गं त्र्यूषणं तिलाः ।
दीप्यचित्रकभल्लातमज्जानः सहदेविका ॥ ६८१ ॥

ब्रह्मवृक्षफलं विष्णुप्रियाया मूलमुत्तमम्।
भ्रामराज्यसमायुक्तं निष्कमात्रं प्रयोजयेत् ॥ ६८२ ॥
दुग्धाशी सूर्यमाराध्य श्वित्रक्षयति मण्डलात्।
कासश्वासादिशमनं पित्तलस्य रसायनम् ॥ ६८३ ॥

नू क, रसायने।

भाषा—पीतल, कान्तलोह, अभ्रक, हरिताल इनकीभस्में, विडङ्ग, त्रिकटु, तिल, अजवाइन, चित्रकमूल, भिलावेकीमज्जा, सहदेवी, पलाशवीज, तुलसीकीजड़, येसव समभाग लेकर कूट-कपड़छानकर मधु और घीमें मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ माशेकीमात्रालेवे और केवल दूधपीकर सूर्यनारायणकी आराधना करे तो ४९ दिनमें श्वेतकुष्ठ और कासश्वासादि दूरहों ॥ १६४ ॥

१६५ पित्तविध्वंसनरसः
(भद्रकालीरस., वातसम्मोहनः)

शुद्धं सूतं विषञ्चाऽभ्रं त्र्यूषणं गन्धटङ्कणम्।
धूर्तवीजं सैन्धवञ्च तुल्यं तुल्यं विचूर्णितम् ॥ ६८४ ॥
खल्वमध्ये विनिःक्षिप्य कठिल्लद्रवमर्दितम्।
वज्रमूषागतं कृत्वा वालुकायन्त्रके पचेत् ॥ ६८५ ॥
द्वियामान्ते समुद्धृत्य माषमेवाऽनुपानतः।
भक्षयेच्चर्मपित्ते तु सर्वपित्तनिवारणम् ॥ ६८६ ॥

व रा, वै चि, चर्मपित्ते।

टि०—अस्य रसस्य वैद्यचिन्तामणौ ज्वरे पाठं विन्यस्य कठिल्लद्रवस्थाने मत्स्यपित्तं निहितं तस्य नाम च भद्रकालीरस इति स्थापितं तत्राऽयं विचारः—पित्तशमनार्थं चेद्रसः सम्पादनीयस्तर्हि कारवल्लीद्रवभावना दातव्या, ज्वरार्थं चेत्तदोभयोरपि भावनाया न कोऽपि दोषः वातसम्मोहनरसोऽपि एतैरेवद्रव्यैः तत्रैव विलोमवाते पठितः।

भाषा—शुद्धपारा और वच्छनाग, अभ्रकभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, शुद्धगन्धक, सुहागा और धतूरेकेवीज, सेंधानमक येसव समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर सव-चीजें वारीककरके मिलाकर जङ्गलीकरेलोंके रससे मर्दनकर गोलावनाय वज्रमूषामें सम्पुटकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें दोप हर पाककरे पर वालू अधिक न दे केवल २–२ अङ्गुलही चारोंतरफ वालूसे ढकारहे अन्यथा दोपहरमें पाक न होगा। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा समयोचितानुपानके साथ देनेसे चर्मपित्तादि समस्तपित्तविकार नष्टहोतेहैं ॥ १६५ ॥

१६६ पित्ताऽग्निवारिदरसः

अयोमहेशोद्भववङ्गरुक्मं
विभावयेद्दाडिमगोस्तनीजैः।
रसैस्त्रिधाऽयं युगवल्लमात्रः
सितापयोभिर्विनिहन्ति पित्तम् ॥ ६८७ ॥

रस स, पित्तरोगे।

भाषा—लोहभस्म, शुद्धपारा, वङ्गभस्म, सुवर्णभस्म येसव समभागलेकर १–२ पहर मर्दनकर अनार और द्राक्षकेरससे ३–३ भावनाएं देकर ६–६ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्करके पानीके साथदेनेसे समस्तपित्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ १६६ ॥

१६७ पित्ताऽङ्कुशरसः

शुद्धपारदगन्धञ्च टङ्कणञ्चाऽभ्रभस्मकम्।
एतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥६८८॥
भद्रमुस्तकषायेण मर्दयेत्त्रिदिनं तथा।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य पुटमेकन्तु भूधरम् ॥ ६८९ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य गुञ्जामात्रं प्रदापयेत्।
मूर्च्छापित्तविनाशाय सर्वपैत्त्यनिवारणम् ॥६९० ॥

वै चि, पित्तरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक औरसुहागा, अभ्रकभस्म सव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर नागरमोथेके काढेकी ३ रोज भावना देकर सुखाकर अच्छीतरह कपडमिट्टीकीहुई आतशीशीशीमें भरके भूधरयन्त्रमें पुटदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर १ रत्ती उचितानुपानके साथ देनेसे मूर्च्छापित्त प्रभृति समस्त पित्तविकारोंको यह नष्ट करताहै ॥ १६७ ॥

१६८ पित्तान्तकरसः (प्रथमः)

जातीकोषफले मांसी कुष्ठं तालीसपत्रकम्।
माक्षिकं मृतलोहञ्च अभ्रं दिव्यं समांशिकम् ॥६९१॥
सर्वतुल्यं मृतं तारं समं निष्पिष्य वारिणा।
द्विगुञ्जाभा वटी कार्या पित्तरोगविनाशिनी ॥ ६९२ ॥
कोष्ठाश्रितञ्च यत्पित्तं शाखाश्रितमथाऽपि वा।
शूलञ्चैवाऽम्लपित्तञ्च पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥ ६९३ ॥
दुर्नामभ्रान्तिवान्तीश्च क्षिप्रमेव विनाशयेत्।
रसः पित्तान्तको ह्येष काशिराजेन भाषितः ॥६९४॥

र सं, र सु., पित्तरोगे।

भाषा—जायफल, जावित्री, जटामासी, कूठ, तालीसपत्र, सोनामाखी, लोह और अभ्रकभस्म सव समभाग लेकर सवकी वरावर रजतभस्म डालकर पानीकेसाथ पीसकर दोदो रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानके साथ देनेसे कोष्ठ अथवा शाखाश्रित पित्त, शूल, अम्लपित्त, पाण्डुरोग, हलीमक, ववासीर, वान्ति, भ्रान्ति, इन सवको यह नष्ट करताहै ॥ १६८ ॥

१६९ पित्तान्तकरसः (वातपित्तान्तकः) (द्वितीयः)

मृतसूताभ्रमुण्डार्कतीक्ष्णमाक्षिकतालकम्।
गन्धकं मर्दयेत्तुल्यं यष्टिद्राक्षाऽमृताद्रवैः ॥ ६९५ ॥
जलमण्डपजैः पाठाद्रवैः क्षीरविदारिजैः।
मर्दयेच्च दिनं खल्वे सिताक्षौद्रयुता वटी ॥ ६९६ ॥
वल्लमात्रा निहन्त्याशु पित्तं पित्तज्वरं क्षयम्।
दाहतृष्णाभ्रमांश्छोपं हन्ति पित्तान्तको रसः ॥६९७॥

सिताक्षीरं पिवेच्चानु यष्टिकाथं सिताऽन्वितम् ।
पिवेद्वा पित्तशान्त्यर्थं शीततोयेन वालकम् ॥ ६९८ ॥

व रा., र. र. कौ., र क., र. सं, र. र., र. चं., र. क. ल, र र स, र को., वै. चि, चि क्र., पित्तरोगे।

टि०-र सं, र र, एतयोर्ग्रन्थयोस्तथा च रसचण्डाशौ द्वितीयस्थाने वातपित्तान्तक इति नाम। र र कौ, र र स, एतयो ग्रन्थयो' दश-सारपित्तान्तक नामेति। वातपित्तान्तकनाम्नि जलमण्डपजै र्द्रावैरित्यस्य स्थाने धात्रीशतावरीद्राव॑रिति दृश्यते। मृतसूताभ्रमुण्डार्कत्यत्र मुण्टस्थाने मुस्ता निहिता दृश्यते, अतस्तस्याऽत्रैवाऽन्तर्भाव समुचित। धात्रीशता-वर्योर्भावनाविशेषे मूलद्रव्ये च मुस्तानिवेशनेनाऽपि नाऽस्ति विप्रतिपत्तिः।

भाषा—पारा, अभ्रक, मुण्ड, ताम्र, लोह, माक्षिक, हरिताल इनसवकी भस्में और शुद्धगन्धक समभाग लेकर वारीक-पीसकर मुलहठी, द्राक्ष, गिलोय, शेवाल, पाठा, क्षीरविदारी, इन प्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथोंमे १—१ रोज़ मर्दनकर ३—३ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १—१ गोली शक्कर और शहदकेसाथ मिलाकर खानेसे पित्त, पित्तज्वर, क्षय, दाह, तृषा ये सव नष्ट होतेहैं। इसको खानेकेवाद शक्कर डालाहुआ दूध अथवा मुलहठीका क्काथ पीवे अथवा ठंढे पानीकेसाथ सुगन्धवाला मिलाकर पीवे ॥ १६९ ॥

१७० पित्तान्तकरसः (सर्वपित्तविनाशकः) (तृतीयः)

रसेन्द्रो वत्सनाभश्च गगनं दरदं वलिः।
तालं तुल्यानि सर्वाणि खल्वे कज्जलिकां कुरु ॥६९९॥
दिनैकं भृङ्गनीरेण मर्दयेच्च ततो भिषक्।
कूपिकोदरमध्यस्थं दिनमेकं विपाचयेत् ॥ ७०० ॥
मात्रा चणोन्मिता योज्या पित्तजेषु गदेषु च।
रसः पित्तान्तको नाम पित्तरोगनिकृन्तनः॥ ७०१ ॥

रसायनसं, वै. चि, व. रा, पित्तरोगे।

भाषा—शुद्धपारा और वछनाग, अभ्रकभस्म, शुद्धशिंग-रिफ, गन्धक और हरिताल सव समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें ये सव चीजें मिलाकर भंगरेके रसमें एकरोज़ मर्दनकर सुखाकर आतशीशीशीमें भरके १ रोज़ वालुकायन्त्रमें पकाकर रखछोड़े। इसमेंसे चनेप्रमाणमात्रा उचितानुपानके साथ देनेसे समस्तपित्तरोग दूर होतेहैं ॥ १७० ॥

१७१ पिनाकपाणिरसः

वङ्गताप्यं सूतगन्धं नागांशाष्टङ्कणः शिला।
शिलाजतु द्वितीयांशा विंशतिश्चाऽऽयसं रविः ॥७०२॥
तृतीयांशस्तिन्तिडीजं त्रिंशांशैश्च विचूर्णयेत्।
कपित्थकाञ्चनरसैर्भावितो वल्लमात्रकः ॥ ७०३ ॥
यष्ट्या पाण्डूदरप्लीहगुल्मकृच्छ्रविनाशनः।
पिनाकपाणिनामाऽयं रसो योगीन्द्रसूचितः ॥ ७०४ ॥

र ग, पाण्डुरोगे।

भाषा—वङ्गभस्म, शुद्धसोनामाखी, पारा और गन्धक १—१ भाग, शुद्धसुहागा और मैनसिल ⅛ आठवा भाग, शिलाजीत २ भा., लोहभस्म वीसवा $\frac{1}{20}$ भा, ताम्रभस्म तीसरा ⅓ भाग, इमली तीसवा $\frac{1}{30}$ भाग लेकर सवको इकट्ठा मिलाय कैथ और कचनारके रससे भावना देकर ३—३ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १—१ गोली मुलहठीकेसाथ लेनेसे पाण्डु, आठप्रकारके उदररोग, गुल्म, मूत्रकृच्छ्र इन सवको यह नष्ट करताहै ॥ १७१ ॥

१७२ पिप्पलीखण्डः

पिप्पलीप्रस्थमादाय पचेत्क्षीरे चतुर्गुणे।
अर्द्धाऽऽढकं घृतं गव्यं शुद्धं खण्डाऽऽढकं तथा ॥७०५॥
विपचेत्पाकवद्वैद्यः पश्चाच्चैतानि दापयेत्।
चातुर्जातं नवं व्योषं श्रीखण्डं नलदाऽम्बुदे ॥ ७०६ ॥
कर्पूरं जातिपत्रञ्च कुङ्कुमं मधुकं नतम्।
पृथक् शुक्तिमितं सर्वं चूर्णीकृत्य विनिक्षिपेत् ॥७०७॥
मृताऽभ्रं कुडवोन्मानं मधुनः कुडवं तथा।
विमिश्र्य नित्यसेवेत वल्यं वाजीकरं परम् ॥ ७०८ ॥
दाहं तृष्णां भ्रमं छर्दिं मूर्च्छामग्निवधञ्जयेत्।
कासं श्वासं क्षयं पाण्डुं प्रमेहं विषमज्वरम्।
जयेदोजो वलं कुर्यादश्विभ्यां चाऽतिपूजितम् ॥७०९॥

ना. वि., श्वासे।

भाषा—एकसेर पीपल लेकर चारसेर दूधमें, पकावे, मावा होजानेपर गायका घी २ सेर और शक्कर ४ सेर डालकर चाशनी तैयारकरे फिर तज, पत्रज, इलायची, सोंठ, मिर्च, पीपल, नारियल, खस, नागरमोथा, शुद्धकपूर, जावित्री, केशर, मुलहठी और तगर २—२ कर्ष, अभ्रकभस्म १६ कर्ष, मधु १६ कर्ष येसव उसमें डालकर अच्छीतरह मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे अग्निवलानुसार एकएक अथवा दोदो तोलेकी मात्रा लेकर दूध पीनेसे यह वलको वढ़ाताहै वाजीकरहै दाह, तृषा, भ्रम, वमन, मूर्च्छा मन्दाग्नि, कास, श्वास, क्षय, पाण्डु, प्रमेह, विषमज्वर, और ओजःक्षय इनसवको दूरकरताहै ॥ १७२ ॥

१७३ पिप्पलीपाकः (वृहन्) (प्रथमः)

प्रस्थन्तु पिप्पलीचूर्णं क्षीरे पलशतद्वये।
पचेन्मन्दाग्निना धीमान् घृतप्रस्थेन संयुतम् ॥७१०॥
घनीभूते मधुनिभे सुगन्धीनि विनिःक्षिपेत्।
खण्डप्रस्थत्रयं तस्मिन्मधुप्रस्थाऽर्द्धमेव च ॥ ७११ ॥
सुनिष्पन्नेऽवलेहे तु द्रव्याणीमानि दापयेत्।
चातुर्जातं पञ्चकोलं मरिचं तगरं तथा ॥ ७१२ ॥
जातीफलं जातिपत्री देवपुष्पं कुवेरदृक्।
आकल्लकाऽब्धिशोषश्च तगरं जीरकद्वयम् ॥ ७१३ ॥
शतपुष्पा शटी धान्यं विडङ्गं ताम्रमेव च।
सुवर्णमाक्षिकं लोहं प्रत्येकन्तु पलार्धकम् ॥ ७१४ ॥
तुगाकर्पूरयोः शुक्तिश्चूर्णमेषां विनिक्षिपेत्।
सुनिष्पन्नोऽवलेहस्तु स्थाप्योऽयं शुभभाजने ॥७१५॥
सदा सेव्यो नरैस्त्वेष आयुर्मेधाऽभिकाङ्क्षिभिः।
शुक्रवृद्धिं करोत्याशु वाजीकरणमुत्तमम् ॥ ७१६ ॥

वलीपलितनिर्मुक्तः पूर्णधातुः प्रजायते ।
अनेन सेव्यमानेन स्त्रीशतं रमयेन्नरः ॥ ७१७ ॥
सर्वरोगविनिर्मुक्तो दृढकायो महाबली ।
तेजोवृद्धिं करोत्याशु कन्दर्पोऽऽक्रान्तरूपकः ॥६१८॥
यथाबलं नरैः सेव्यः स्त्रीपुंभिर्बालवृद्धकैः ।
अशीतिं वातजान्रोगान्नाशयत्येव वेगतः ॥ ७१९ ॥
तथाऽष्टादश कुष्ठानि विंशन्मेहमरोचकम् ।
गुल्मं प्लीहं तथा श्वासं कासञ्च तमकादिकम् ७२०
वातरक्तं रक्तपित्तं तथाऽष्टावुदराणि च ।
महाव्याधिमपस्मारमुन्मादं नाशयत्यपि ॥ ७२१ ॥
गुणानन्यांश्च कुर्याद्वै रोगानीकं विनाशयेत् ।
नराणाममृतं ह्येष देवानाञ्च यथा सुधा ॥ ७२२ ॥

पा. व , वीर्यवृद्धौ ।

भाषा—एकसेर पीपलके चूर्णको ८०० तोले दूधमें मन्द आंचसे पकावे, पाक होतेसमय १ सेर घी डालदेवे । मधुकी तरह गाढा होनेपर शक्कर ३ सेर और मधु ½ सेर डालकर पकावे । चासनी तैयार होनेपर तज, पत्रज, इलायची, पञ्चकोल (पीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ), मरिच, तगर, जायफल, जावित्री, लौंग, करञ्ज, अकलकरा, समुद्रशोष, तगर, स्याहसफेदजीरा, सोंफ, कचूर, धनिया, विडङ्ग, ताम्रभस्म, सोनामाखी, लोहभस्म, शुद्धकपूर और वसलोचन ये सब २–२ तोले बारीक चूर्णकर चासनीमें डालकर अच्छीतरह मिलाकर रखछोड़े । सातदिन बीतनेके बाद अग्निबल देखकर १–१ अथवा २–२ तोले खाकर दूध पीनेसे आयु, मेधा, शुक्र इनकी वृद्धि और उत्तम वाजीकरण होताहै । वलीपलितसे निर्मुक्त होकर समस्त धातुओंसे शरीर परिपूर्ण हो जाताहै इसके सेवनसे ८० वातरोग, १८ प्रकारके कुष्ठ, २० प्रकारके प्रमेह, अरुचि, गुल्म, प्लीहा, तमकादिश्वास, कास, वातरक्त, रक्तपित्त, ८ उदररोग, अपस्मार, उन्माद, इन सबको यह नष्ट करताहै ॥ १७३ ॥

१७४ पिप्पलीपाकः (द्वितीयः)

पिप्पलीप्रस्थमादाय पचेत्क्षीरे चतुर्गुणे ।
प्रस्थार्द्धकं घृतं दिव्यं शुद्धखण्डाढकं तथा ॥ ७२३ ॥
लेहं पचेद्धनं तावद्यावत्पाकं सुपाचितम् ।
ततो द्रव्याणि चैतानि सुश्लक्ष्णानि प्रयोजयेत् ॥७२४॥
एलात्वङ्नागपुष्पञ्च लवङ्गं नलदं तथा ।
नागरं पिप्पली मुस्ता श्रीखण्डं मरिचं नतम् ॥७२५॥
कटुत्रिकं जातिपत्री कुङ्कुमं मधुकं तिलाः ।
प्रत्येकं चाऽक्षमात्राणि रसभस्मयुतानि च ॥ ७२६ ॥
सर्वैः समांशं तच्चूर्णं लेहवत्साधु साधयेत् ।
मधुनः कुडवं दत्त्वा खादेदग्निबलं यथा ॥ ७२७ ॥
वृष्यं पुष्टिकरं रुच्यं चक्षुष्यञ्चाऽग्निवर्धनम् ।
बल्यं दार्ढ्यकरञ्चैव छर्दिमूर्च्छाभ्रमापहम् ॥ ७२८ ॥
दाहतृष्णाप्रशमनमोजस्यं धातुवर्धनम् ।
बोधनं चेन्द्रियाणां वै प्रमेहान्हन्ति विंशतिम् ॥७२९॥
दोषत्रयप्रशमनं क्षयरोगविनाशनम् ।
वीर्यस्तम्भकरञ्चैव तथा वाजीकरं परम् ॥
वातान्तकरणं बल्यं पिप्पलीपाकसञ्ज्ञकम् ॥ ७३० ॥

पा व , वाजीकरणे ।

भाषा—१ सेरपीपलकेचूर्णको चौगुने दूधमें पकावे । मावाहोनेपर घी आधासेर, शक्कर ४ सेर डालकर चासनीहोने-तक पकाकर इलायची, तज, नागकेशर, लौंग, खस, सोंठ, पीपल, नागरमोथा, नारियल, मरिच, तगर, त्रिकटु, जावित्री, केशर, मुलहठी, तिल और पारदभस्म येसब १–१ तोला डाल-कर २॥ तारकी चासनी बनाकर उतारले । ठण्ढाहोनेपर पावभर शहद मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे अग्निबल देखकर मात्रा खाकर ऊपरसे दूधपीनेसे वृष्यता, पुष्टि, रुचि, नेत्रज्योति और अग्निको बढाताहै । बल और दृढताको करताहै छर्दि, मूर्च्छा, भ्रम, दाह, तृष्णा, धातुक्षीणता इन्द्रियदौर्बल्य, २० प्रकारके प्रमेह, क्षय, धातुका पतलापन, वातवृद्धि इनसबको यह नष्टकर शरीरको मजबूत बनाताहै ॥ १७४ ॥

१७५ पिप्पलीपाकः (तृतीयः)

अर्द्धद्रोणं शुभं दुग्धं कणाप्रस्थार्द्धमेव च ।
दर्वीसंघट्टसान्द्रे तु खण्डप्रस्थद्वयान्वितम् ॥ ७३१ ॥
वानरीमुसलीकन्दं चातुर्जातकरोचना ।
करभो देवकुसुमं मस्तकी करहाटकम् ॥ ७३२ ॥
ग्रन्थिकं नागरं धान्यं शटी खदिरसारकम् ।
लौहं प्रत्येककर्षैकमेतान्येव विचूर्णयेत् ॥ ७३३ ॥
घनसारोऽर्द्धकर्षेण शीतले क्षौद्रकौडवम् ।
क्षिपेत्कणाऽवलेहोऽयं प्रमेहार्शोबलक्षयान् ॥
कासं श्वासं ज्वरं हिक्कां छर्दिं मूर्च्छाक्षयञ्जयेत ७३४

चि र भ ,

भाषा—आठसेर दूधमें ½ सेर पीपल डालकर पकावे, जब कडछीमें लगनेलगे तब खाट २ सेर, छिलकेरहित केवाचकेबीज, दोनोंमुसली, तज, पत्रज, इलायची, नागकेशर, गोरोचन, ऊटक-टालेकीजड़, लौंग, मस्तगी, अक्लकरा, पिपलामूल, सोंठ, धनिया, कचूर, कत्था, लोहभस्म ये प्रत्येक १–१ तोला मिलाकर आधातोला शुद्धकपूरमिलादे । एकदम ठण्ढाहोजानेपर १६ तोले शहद मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे अग्निबल देखकर १–२ तोलेकी मात्रा लेकर दूध पीनेसे प्रमेह, बवासीर, धातुक्षय, ओज क्षय, कास, श्वास, क्षय, हिक्का, छर्दि, और मूर्च्छा येसब नष्टहोतेहैं १७५

१७६ पिप्पलीलोहयोगः

पिप्पलीलोहचूर्णञ्च पयसा प्लीहनाशनम् ।
मन्दाग्निगुल्मवातांश्च जयेन्नित्यनिषेवणात् ॥ ७३५ ॥

ग नि , उदररोगे ।

भाषा—दो बड़ीपीपलको पीसकर ३ रत्ती लोहभस्म मिलाकर दूधकेसाथ पीजावे । ऐसा २१ रोज़तककरनेसे जीर्णज्वर, असाध्यप्लीहा और अरुचि नष्टहोतेहैं । प्रतिदिन सेवन रखनेसे मन्दाग्नि; गुल्म, वातरोग, येसव दूरहोतेहैं ॥ १७६ ॥

१७७ पिप्पल्यादिरसायनम् ।

पिप्पल्या दश षट् पलं मरिचजं भार्ङ्गीविडङ्गाह्वयम्,
विश्वाजाजिचतुष्पलं दहनकं भृङ्गीरजश्चव्यकम् ।
लोहग्रन्थि पलद्वयं सितपलातोऽष्टौ मधुप्रस्थकौ,
तत्सर्वं परियोज्य धान्यपुटके पक्षस्थितं सेवयेत् ७३६
कासश्वासौ च मन्दाग्निं क्षयं पाण्डुमरोचकम् ।
हन्याद्दुःस्वप्नविषमं पिप्पल्यादिरसायनम् ॥ ७३७ ॥

वै चि., कासश्वासे ।

भाषा—पीपल १० पल, मिर्चे ६ पल, भारङ्गी, विडङ्ग, सोंठ और जीरा ४-४ पल चित्रकमूल, भंगरा चव्य, लोहभस्म, पिपलामूल २-२ पल, मिश्री ८ पल, मधु ३२ पल लेकर सबको इकट्ठे मिलाय मुंहवन्दकर अनाजकी राशिमें रखदे । १५ दिनके वाद निकालकर अग्निवल देखकर एकएकतोला खानेसे कास, श्वास, मन्दाग्नि, क्षय, पाण्डु, अरुचि, और खरावस्वप्न का आना येसव नष्टहोतेहै ॥ १७७ ॥

१७८ पिप्पल्यादिलोहम् (प्रथमम्)

पिप्पल्यामलकीद्राक्षाकोलाऽस्थिमधुशर्करा-
विडङ्गपुष्करै र्युक्तं लौहं हन्ति सुदारुणाम् ॥
छर्दिं हिक्कां तथा तृष्णां त्रिरात्रेण न संशयः ॥७३८॥

र सं , नि र , ध , र र., भै र., र. सु , र. चं , र कौ , र. को , र चि , र. सि., र क , हिक्काश्वासे ।

भाषा—पीपल, आंवला, द्राक्ष, वेरकीगिरी, मधु, शक्कर, विडङ्ग, पोहकरमूल, लोहभस्म येसव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ माशे मधु अथवा दूधके साथलेनेसे भयङ्कर छर्दि, हिचकी और प्यास ये ३ रात्रिमें नष्टहोतेहै ॥ १७८ ॥

१७९ पिप्पल्यादिलोहम् (द्वितीयम्)

पिप्पलीमूलचित्राऽभ्रत्रिकत्रयेन्दुसैन्धवम् ।
सर्वचूर्णसमं लौहं हन्ति सर्वोदरामयम् ॥ ७३९ ॥

र स , र सु., र चि , र र , उदराऽधिकारे ।

भाषा—पीपलामूल, चित्रक, अभ्रकभस्म, सोंठ, मिर्चे, पीपल, त्रिफला, तज, पत्रज, इलायची, शुद्धकपूर और सैंधव येसव समभाग, लेकर वारीकचूर्णकर सबकीवरावर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३ या ४ रत्तीकी मात्रा योग्यतानुसार मधु अथवा दूधके साथ देनेसे समस्त उदररोग दूरहोतेहै ॥ १७९ ॥

१८० पिप्पल्यादिवटी (मधुवातारिः)

पिप्पली पिप्पलीमूलं हिङ्गुलञ्च शिलाजतु ।
गुग्गुलुं वर्धमानञ्च माक्षिकेण गुडेन वा ॥ ७४० ॥
पथ्याशुण्ठ्यमृताक्वाथं पिप्पलीचूर्णमिश्रितम् ।
भक्षयेन्निष्कमात्रन्तु मधुवातं विनाशयेत् ॥ ७४१ ॥

वै चि., व रा , मधुवाते ।

भाषा—पीपल, पिपलामूल, शुद्धशिंगरिफ, शिलाजतु, गूगल, एरण्डकी जड ये सव समभाग लेकर वारीक चूर्णकर मधु अथवा गुड़के साथ ४-४ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली हर्रे, सोंठ, गिलोय, इनकेकाढ़ेमें पीपलके चूर्णका प्रक्षेप देकर ऊपर पीनेसे **मधुवात** नष्ट होताहै ॥१८०॥

१८१ पीतकं चूर्णम् (प्रथमम्)

पटोलदार्वीमधुकं प्रियङ्ग्वतिविषाघनम् ।
सनागपुष्पं त्रायन्ती भूनिम्बं तिक्तरोहिणी ॥ ७४२ ॥
विभीतकं दाडिमत्वग्घरितालं मनःशिला ।
समांशानि त्रिभागांशं सशैलेयं रसाञ्जनम् ॥ ७४३ ॥
पीतकं चूर्णमेतद्धि मध्वाक्तं प्रतिसारणम् ।
दन्तमूलगतास्योष्ठजिह्वाताल्वविकारनुत् ॥ ७४४ ॥

ग. नि , दन्तरोगे ।

टि०-यद्यप्यय योगो ग्रन्थकारेण प्रतिसारणे नियुक्तस्तथाऽपि भक्षणेऽस्य प्रयोगाज्जीर्णज्वरसङ्ग्रहणीप्रतिश्यायाऽतिसारकासश्वासाद्यश्शीघ्रमुपशान्ति यान्त्यन्तीति रहस्य न विस्मरणीयम् ।

भाषा—पटोलपत्र, मुलहठी, प्रियङ्गु, अतीस, नागरमोथा, नागकेसर, त्रायमाण, चिरायता, कुटकी, वहेडे और अनारकी छाल, हरिताल, मैनसिल ये सव १-१ भाग, शिलाजीत, छड़ीला और रसौत तीसरा भाग मिलाकर रखछोडे । इसका मधुमें मिलाकर मञ्जन करनेसे दन्तमूल, मुंह, ओष्ठ, जिह्वा, तालु इनके विकारोंको यह नष्ट करताहै । यद्यपि यहयोग ग्रन्थकारने दन्तमञ्जनरूपसे लिखाहै परन्तु इसको समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह जीर्णज्वर, सङ्ग्रहणी, प्रतिश्याय, अतिसार, श्वास, कास इत्यादिरोगोंको नष्ट करेगा । खानेके लिये इसको वनाना हो तो हरिताल और मैनशिलकी भस्म डालना । भस्म न मिलसके तो शुद्धकरके देना ॥ १८१ ॥

१८२ पीतकं चूर्णम् (द्वितीयम्)

मनःशिला यवक्षारं हरितालं ससैन्धवम् ।
दार्वी त्वक् चेति तच्चूर्णं माक्षिकेण समायुतम् ७४५
मूर्च्छितं घृतमण्डेन कण्ठरोगेषु धारयेत् ।
मुखरोगेषु च श्रेष्ठं पीतकं नाम कीर्तितम् ॥ ७४६ ॥

यो म , वृ मा., र. का., भै. र., ध , र र , टो., च सं , यो त , मुखरोगे ।

भाषा—मैनसिल, यवक्षार, हरिताल, सैन्धव, दारुहल्दीकी छाल, इन सवका वारीकचूर्णकर घी और मधुमें मिलाकर मुखमें रखनेसे मुखके समस्तरोग दूर होतेहैं ॥ १८२ ॥

१८२½ पीतकं चूर्णम्

कुष्ठं दार्वी रोध्रमब्दं समङ्गा ।
पाठा तिक्ता तेजिनी पीतिका च ॥

चूर्णं शस्तं घर्षणं तद् द्विजानां ।
रक्तस्रावं हन्तिकण्डूं रुजञ्च ॥

ग नि.,

भाषा—कुठ, दारुहल्दी, लोध, नागरमोथा, मजीठ, पाठा, कुटकी तेजवलकी छाल अथवा तुम्बुल शुद्ध मैनशिल और हरताल सब समभाग लेकर चूर्ण बना रक्खे सुबह साम इसके मञ्जनसे दांतोंसे लोहिका जाना खुजली और पीड़ा ये सब नष्ट होतेहैं ।

१८३ पीतमृगाङ्करसः (मस्कमृगाङ्कः)

संशुद्धं पारदश्चैव सुशुद्धं गन्धकं भवेत् ।
वङ्गं शुद्धं समादाय नवसागरमेव च ॥ ७४७ ॥
समभागानि सर्वाणि मर्दयित्वा सुखल्वके ।
काचकूप्यां विनिःक्षिप्य पावकेस्थापयेद्बुधः ॥ ७४८ ॥
मुखे मुद्रा च नो देया धूमं संलक्षयेत्ततः ।
निर्धूमे जायमाने तु सिद्धः पीतमृगाङ्ककः ॥ ७४९ ॥
मधुमेहन्तु मेहानां गणं नाशयते ध्रुवम् ।
मधुना भक्षयेच्चैव सूक्ष्मैलाचूर्णकेन च ॥
रससागरसिद्धान्ते सुश्रेष्ठं स्वर्णभस्म तत् ॥ ७५० ॥

र. चं , प्रमेहे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक वङ्ग और नवसादर समभाग लेकर वङ्गको गलाकर पारेमें डालदे समभागसेन्धानमक और नीवूरस डालके खरल करे काला होनेपर पानी फेंकदे और दूसरानमक और नीवूका रस डालके घोटे काला होनेपर फेंकदे ऐसे वारंवार करे जब कालापन दूर हो जाय तो पिष्टि का पानी सुखाकर सबचीजोंकेसाथ चारपहर मर्दनकर आतशी शीशीमें भरके चूल्हेपर रखदे, मुंहको खुला रहनेदे, भीतरसे गन्धक तथा नवसादरका धूंआ निकलना वन्दहोजाय तभी अग्नि निकालले अथवा वैसेही अङ्गारोंपर रहनेदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर शीशीको फोड़कर अन्दरसे रसको निकालले यह एकदम सुवर्णके रङ्गका निकलेगा । इसकी २–२ रत्ती मधुकेसाथ अथवा इलायचीके चूर्णकेसाथ देनेसे यह मधुमेहको नष्ट करताहै । इसको लोग सुवर्णभस्म कहकर अज्ञलोगोंको दियाकरतेहैं कितनेही लोग स्वर्णमृगाङ्कके नामसे व्यवहार करतेहैं ॥ १८३ ॥

१८४ पीयूषघनरसः (प्रथमः)

हेमाऽभ्रताराणि मृतानि सूते
दत्त्वा तु सूतेन सम च गन्धम् ।
गन्धेन तुल्यं दरदश्च दत्त्वाऽ-
मृतारसेनैकदिनं विमर्द्य ॥ ७५१ ॥
कौरण्टभृङ्गाऽग्निविषै र्दिनैकं
सूतेन तुल्येऽथ विनिक्षिपेत्तु ।
पुटे सुताम्रस्य मृदा च लिप्त्वा
सामुद्रपूर्णेऽथ पुटेत भाण्डे ॥ ७५२ ॥
ससम्पुटं तच्च विमर्द्य यामं
गुडूचिकात्र्यूषणशृङ्गवेरैः ।
दद्दीत वल्लं गदिताऽनुपानै
र्ज्वरेषु पीयूषघनो रसेन्द्रः ॥ ७५३ ॥

र दी., र चं., ज्वराधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण, अभ्रक,रजत इनकीभस्म, शुद्ध पारा, गन्धक और शिंगरिफ सब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर सब चीजें मिलाकर गिलोयके स्वरस अथवा क्वाथमें एकरोज़ मर्दनकर कटसरैया, पीतकटसरैया, भंगरा, चित्रकमूल और वछनाग इनप्रत्येकके स्वरस अथवा काढेमें १–१ रोज मर्दनकर पारेकीवरावरके तांवेके सम्पुटमें रखकर ३–४ कपड़मिटी देकर सुखाकर लवणयन्त्रमें रखकर ४ पहरकी आंच देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रसछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती गिलोय, त्रिकटु, अदरख यथोचिति इनकेसाथ अथवा त्रैलोक्यचूडामणिरसमें कहेहुए अनुपानोंकेसाथ देनेसे समस्तज्वर नष्टहोतेहै ॥ १८४ ॥

१८५ पीयूषघनरसः (द्वितीय.)

गन्धं रसेन्द्रं दरदञ्च मुक्तां
विमर्द्य ताम्रस्य पुटे पुटेत ।
पूर्वप्रकारेण गतौषधीभि-
र्विमर्दितस्याऽथ दद्दीत वल्लम् ॥ ७५४ ॥
ज्वरेषु सर्वेषु यथाऽनुपानैः
शूलेषु सर्वेष्वपि मान्द्यकार्श्ये ।
शीतज्वरे श्रीतुलसीरसेन
पिष्ट्वा मरीचानि दद्दीत वल्लम् ॥ ७५५ ॥
नीरस्य पादेन नियोज्य दुग्धं
कुस्तुम्बुरीनीरयुतं पचेत ।
दुग्धाऽवशेषं कणया युतञ्च
दद्दीत चोष्णज्वरनाशनाय ॥ ७५६ ॥
ऐकाहिके तण्डुलवारिपिष्टं
दद्दीत मेघध्वनिमूलचूर्णम् ।
चातुर्थिकादौ विजयां स्वशक्ति-
प्रमाणयुक्ताञ्च कटुत्रयेण ॥ ७५७ ॥
पित्तोत्तरे चामलशर्कराभ्यां
गव्येन दुग्धेन घृतेन पक्वम् ।
धत्तूरवीजै र्मृतशुभ्रमभ्रं
दद्दीत वा तण्डुलवारिणा वा ॥ ७५८ ॥
गोजिह्विकामूलरसैर्मृतस्य
ताम्रस्य गुञ्जा च विरेचनाय ।
शुण्ठीगुडूचीन्द्रयवाम्बुवाह-
भूनिम्बधान्यातिविषाकषायम् ॥
सर्वाऽतिसारेषु नियोजयेच्च
ज्वरेषु सर्वेष्वपि चारनालैः ॥ ७५९ ॥

र. च , र. दी., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, शिंगरिफ और मोती समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर पूर्वोक्तरसकी तरह औषधोंके स्वरसोंमें मर्दनकर पारेकी बराबरके ताम्रसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपडमिट्टी देकर लवणयन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देकर निकालले। इसमेंसे ३–३ रत्ती पूर्वोक्तानुपानसे देनेसे समस्तज्वर, शूल, अग्निमान्द्य इनको यह नष्ट करताहै। शीतज्वरमें तुलसीके रससे १ माशा मरिचकेसाथ ३ रत्ती मिलाकर देवे। पानीमें चतुर्थांश दूध मिलाकर उसमें आधातोला धनिया डालकर पकावे। जब पानी जलकर दूधमात्र रहजाय तब पीपल डालकर देनेसे उष्णज्वरका नाश होताहै। ऐकाहिक ज्वरमें तुलसीके रसकेसाथ इसको देकर ऊपरसे चावलके पानीमें १ तोला काटेवाली चौलाईकी जड़ पीसकर देवे। चातुर्थिकादिज्वरोंमें रोगीकी शक्तिके अनुसार त्रिकटु और भागकेसाथ देवे। पित्तप्रधानज्वरमें आवलेके चूर्ण औरशक्करकेसाथ देकर ऊपरसे घृतयुक्त पकाया हुआ दूध दे, अथवा शुद्ध धतूरेके बीजोंके ३ रत्ती चूर्णकेसाथ ३ रत्ती अभ्रकको देकर ऊपरसे चावलोंका धोवन पिलावे। गोभीकी जड़के रससे मरेहुए तावेकी १ रत्ती देनेसे रेचन होताहै। सोंठ, गिलोय, इन्द्रजव, नागरमोथा, चिरायता, धनिया, अतीस, इनके काढेके साथ देनेसे समस्त अतीसार नष्ट होतेहैं। समस्तज्वरोमें खट्टी काजीकेसाथ देनेसे भी लाभ होताहै ॥ १८५ ॥

१८६ पीयूषवल्लीरसः

सूतमभ्रं गन्धकञ्च तारं लौहं सटङ्कणम्।
रसाञ्जनं माक्षिकञ्च शाणमेकं पृथक्पृथक् ॥ ७६० ॥
लवङ्गं चन्दनं मुस्तं पाठाजीरकधान्यकम्।
समङ्गाऽतिविषा लोध्रं कुटजेन्द्रयवं त्वचम् ॥ ७६१ ॥
जातीफलं विश्वविल्वं कनकं दाडिमीच्छदम्।
समङ्गा धातकी कुष्ठं प्रत्येकं रससम्मितम् ॥ ७६२ ॥
भावयेत्सर्वमेकत्र केशराजरसैः पुनः।
चणकाभा वटी कार्या छागीदुग्धेन पेषिता ॥ ७६३ ॥
अनुपानं प्रदातव्यं दग्धविल्वं समं गुडैः।
हन्ति सर्वानतीसारान् ग्रहणीं चिरजामपि ॥ ७६४॥
आमसम्पाचनो सम्यग्वह्निवृद्धिकरस्तथा।
पीयूषवल्ली नामाऽयं ग्रहणीरोगनाशनः ॥ ७६५ ॥

र स भै.र, र.सु, ग्रहण्यधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा औरगन्धक, अभ्रक, रजत औरलोहभस्म, भुनासुहागा, रसाञ्जन और माक्षिक ४–४ माशे, लवङ्ग, लालचन्दन, नागरमोथा, पाठा, जीरा, धनिया, मजीठ, अतीस, लोध, कुटज, इन्द्रजव, तज, जायफल, सोंठ, बेल, शुद्ध धतूरेकेबीज, अनारकीछाल, लज्जालु, धावड़ीके फूल और कुठ येप्रत्येक पारेकीबरावर डालकर काले भंगरेके रससे मर्दनकर सुखाले। फिर बकरीके दूधसे पीसकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली देकर बेलकी राख समभाग गुड़केसाथ मिलाकर ३ माशे देनेसे सवप्रकारके अतीसार और पुरानी संग्रहणी नष्टहोतेहै। इसके देनेसे आमका परिपाक होताहै और अग्निकी वृद्धि होतीहै ॥ १८६ ॥

१८७ पीयूषसागररसः

नागं वङ्गञ्च कान्तञ्च गगनं हेम सूतकम्।
दरदं टङ्कणं ताम्रं समं सर्वं विमर्दयेत् ॥ ७६६ ॥
निशाकन्याघनोशीरलवङ्गसलिलैः पृथक्।
त्रिवारं भावयेत्सिद्धो रसः पीयूषसागरः ॥ ७६७ ॥
वल्लमात्रः सिताक्षौद्रयुक्तो हरति शुक्रजान्।
विकारान्नाशयेत्सद्यो वन्ध्यानां नष्टरेतसाम् ॥७६८॥
शुक्रक्षयवतां शीघ्रद्राविणां पूयरेतसाम्।
अवीजधर्मिणां छिन्नशुक्राणां क्षतशोषिणाम् ॥७६९॥
बालानाञ्चैव वृद्धानां षण्ढानां शुक्रशोषिणाम्।
सेवनात्पुत्रदः शीघ्रं जायते नाऽत्र संशयः ॥ ७७० ॥

रसायनसं., षाण्ढ्यचिकित्सिते।

भाषा—सीसा, वङ्ग, कान्तपाषाण तथा कान्तलोह, अभ्रक, सुवर्ण, पारा, शिंगरिफ, सुहागा और ताम्र इनसवकीभस्में समभाग लेकर हल्दी, घीकुंआर, नागरमोथा, खस और लौंग इनके यथालाभ स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ भावनाएंदेनेसे यह **पीयूषसागर** नामकारस तैयारहोगा। इसमेंसे ३ रत्ती शक्कर और मधुकेसाथदेनेसे यह समस्तशुक्रदोषोंको नष्टकरताहै। वन्ध्या, नष्टशुक्र, शुक्रक्षीण, शीघ्रद्रावी, अवीजधर्मी, छिन्नशुक्र, क्षती और शोषी, इनसवकेलिये यह उपकारकहै और पुत्रोत्पत्तिको देनेवालाहै ॥ १८७ ॥

१८८ पीयूषसिन्धुरसः (प्रथमः)

शुद्धः सूतो मौक्तिकं तुल्यगन्धौ
कान्तं ताम्रं कांस्यरौप्यं सुनीलम्।
स्वर्णं वज्रं ताप्यमाणिक्यतार्क्ष्यं
राजावर्तो रीतिका वङ्गनागौ ॥ ७७१ ॥
सर्वं मर्द्यं रुष्ककोलद्रवेण
वज्रीपाठाग्रन्थिजैः सूरणस्य।
दन्तीमुण्डी काकमाची हलाख्या-
भृङ्गाऽर्काऽग्निव्योषतीक्ष्णाभिरेवम् ॥ ७७२ ॥
शुष्कं कृत्वा कूपिकां पूरयित्वा
सम्यग्योगे योगिनीं पूजयित्वा।
माषं दद्यादार्द्रसिन्धूत्थयुक्तं
सूतेन्द्रोऽसौ हन्ति पीयूषनामा ॥ ७७३ ॥
अर्शस्तापं मूत्रकृच्छ्रं प्रमेहं
शूलं पाण्डुं वह्निमान्द्यं क्षयञ्च।
वातं गुल्मं विद्रधिं प्लीहहिक्के
शोफं तूनीं चोदरं पीनसञ्च ॥ ७७४ ॥
श्वासं कासं रक्तपित्ताऽम्लपित्तं
कुष्ठं मेदः कामलायां ग्रहण्याम्।

सर्वा तन्द्रीं नाढ्यवाताऽद्भुतञ्च
भूताऽऽवेशं नाशयेदाशु सत्यम् ॥
पथ्यं सात्म्यञ्चाऽम्लवर्ज्यञ्च सर्वं
नाद्याद्वर्ज्यं सर्वरोगप्रशान्त्यै ॥ ७७५ ॥

र शं., अर्श सु।

भाषा—शुद्ध पारा, मोती, तूतिया और गन्धक, कान्तपाषाण तथा लोह, ताम्र, कासा, रजत, नीलम, सुवर्ण, हीरा, सोनामाखी, माणिक्य, पन्ना, राजावर्त, पीतल, वङ्ग और नाग इनसवकीभस्में समभाग लेकर पारे गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर भिलावा, वेर, डंडाथूहर, पाठा पिपलामूल, सूरण, दन्तीमूल, गोरखमुण्डी, मकोय, कलिहारी, भागरा, आक, चित्रकमूल, सोंठ, मिर्च, पीपल और राई इनप्रत्येकके स्वरस अथवा काढेकी १–१ दिन भावना देकर सुखाकर रखछोडे। अच्छे मुहूर्तमें योगिनीकी पूजाकरके १ माशाकी मात्रा अदरख, सैंधव, चित्रकमूल इनकेसाथ देनेसे ववासीर, ज्वर, मूत्रकृच्छ, प्रमेह, शूल, पाण्डु, अग्निमान्द्य, क्षय, वायु, गुल्म, विद्रधि, प्लीह, हिचकी, शोथ, तूनी, उदररोग, पीनस, श्वास, कास, रक्तपित्त, अम्लपित्त, कुष्ठ, मेदोवृद्धि, कामला, ग्रहणी, सवप्रकारकीतन्द्रा, नाढ्यवात, भूताऽऽवेश इनसवको यहशीघ्र नष्टकरताहै। खटाईको छोड़कर जो रोगीकेलिये सात्म्यहो वह सब पथ्यहै। जिस २ रोगमेजिस २ पदार्थका निषेधहै उसको न खाय १८८

१८९ पीयूषसिन्धुरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं षड्गुणं जीर्णगन्धं
काचे पात्रे वालुकायन्त्रयोगात्।
भस्मीभूतं योजयेदत्र हेम
तत्तुल्यांशं भस्म लोहाऽभ्रयोश्च ॥ ७७६ ॥
सूतात्तुल्यं गन्धकं मेलयित्वा
खल्वे मर्द्यं सूरणस्य द्रवेण।
दन्तीमुण्डीकाकमाचीहलाख्या
भृङ्गाऽर्कीणामग्निजातं द्रवञ्च ॥७७७॥
क्षिप्त्वा पश्चाद्धान्यराशौ त्रिघस्रं
चूर्णीभूतं माषमात्रं ददीत।
अर्शोरोगे दारुणे च ग्रहण्यां
शूले पाण्डावम्लपित्ते क्षये च ॥ ७७८ ॥
श्रेष्ठं क्षौद्रं चाऽनुपानं प्रशस्तं
रोगोक्तं वा मासषट्कप्रयोगात्।
सर्वे रोगा यान्ति नाशं जरायां
वर्षद्वन्द्वं सेवनीयं प्रयत्नात् ॥ ७७९ ॥
पथ्यं दद्यादम्लतैलादियोषि
द्वर्ज्यं देयं सर्वरोगप्रशान्त्यै।
पुष्टिं कान्तिं वीर्यवृद्धिं सुदार्ढ्यं
सेवायुक्तो मानवः संलभेत ॥ ७८० ॥

र. चि., र चं रसायनस, र. सु, र को., नि र, र. शं., यो. म, र का., रसपारिजात, अर्श. सु।

भाषा—आतशीशीशीमें षड्गुणगन्धकजारण किया हुआ शुद्धपारा, सुवर्ण, लोह और अभ्रकभस्म शुद्धगन्धक सव समभाग लेकर सूरण, दन्ती, गोरखमुण्डी, मकोय, करिहारी, भंगरा, चित्रकमूल इन सातोंके रसोंसे १–१ भावना देकर गोलाबनाय एरण्डपत्र वगैरहमें लपेटकर अनाजकी राशिमें ३ रोज़ रखकर सुखाय चूर्णकर रखलेवे, अथवा १–१ मासेकी गोलिया वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली मधु अथवा रोगाऽनुकूल द्रव्यके साथ देनेसे भयकर ववासीर, ग्रहणी, शूल, पाण्डु, अम्लपित्त, क्षय इनसवको यह नष्ट करताहै। छ महीने लगातार इसका प्रयोग करनेसे समस्तरोग नष्ट होतेहैं। दोवर्ष सेवन करनेसे बुढापा दूर होताहै। खटाई, तेल, स्त्रीगमन इनको छोड़कर यथेष्ट आहार विहार करे। यथार्थ सेवन करनेसे पुष्टि, कान्ति और वीर्य इनकी वृद्धी होकर शरीरकी दृढताको प्राप्त होताहै ॥ १८९ ॥

१९० पीयूषसुन्दररसः

सूतटङ्कणगन्धाश्मवल्लिजानां समांशकाः।
तत्तुल्यसितया युक्ताः सर्वं सम्मर्द्य यत्नतः ॥ ७८१ ॥
ताम्राक्षमत्स्यपित्तेन भावयेच्च त्रिवारकम्।
पीयूषसुन्दरं देयं गुटिकावल्लसम्मिता ॥ ७८२ ॥
देयाऽऽर्द्रकरसेनाऽथ नवज्वरविनाशिनी।
वार्ताकसहितं दद्यात्तक्रभक्तं हितं ततः ॥
शीतोपचारता सद्यः विदध्याज्ज्वरशान्तये ॥ ७८३ ॥

र क. यो, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, सुहागा और गन्धक तथा मरिच समभाग लेकर सवकी वरावर शक्कर डालकर ३–४ पहर मर्दनकर भैंसा और मछलीके पित्तोंकी ३–३ भावनाए देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रससे देनेसे नवज्वरका नाश होताहै। वृन्ताकके साथ छाछभात खानेको देना और शीतोपचार करना ॥ १९० ॥

१९१ पीयूषादि वटी (भृगुवटी)

वत्सनाभं विषं शुद्धमाकल्लकषडूषणम्।
लवङ्गं कुङ्कुमं जातीफलं जातीदलं समम् ॥ ७८४ ॥
तुर्यांशं प्रथमाच्छुद्धं भर्जितं टङ्कणं क्षिपेत्।
षष्ठांशा द्वादशांशा वा कस्तूरी प्रथमाच्छुभा॥७८५॥
सम्मर्द्याऽऽर्द्रकजद्रावै वटी माषनिभा कृता।
भक्षिता मधुना किं वा ताम्बूलेन सुसात्म्यतः ७८६
पीयूषाख्या वटी हन्यादभ्यासाद्वातजान्गदान्।
पित्ताऽविरोधिनी चैषा वलधातुविवर्धिनी ॥ ७८७ ॥
शैत्यापनोदिनी रम्या मुखसौरभ्यकारिणी।
भृगुणा स्नानशीलेन ऋषिणा निर्मिता वटी ॥७८८॥
अस्याः संसेवनात्तस्य शीताम्भोभिः सदा मुनेः।
न पीडा स्नानतः काचिदभवच्छ्रेयसी ततः ॥ ७८९ ॥

रसायनसं., सर्वरोगे।

भाषा—शुद्धवच्छनाग, अकलकरा, षड्षण (पीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, मिर्च), लौंग, केसर, जायफल, जावित्री, सब १–१ तोला, भुनासुहागा ३ माशे और उत्तम कस्तूरी २ माशे अथवा १ माशा लेकर वारीक चूर्णकर अदरखके रससे मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु अथवा पानके रससे देनेसे वातजन्यरोगोंको दूर करतीहैं पित्तको भडकाती नहीं । बल और धातुओंको बढातीहैं शीतको दूर करतीहैं मुखमें सुगन्धि देतीहैं। अधिक स्नानकरनेके अभ्यासी भृगुऋषिने इसको बनायाहै। इसके सेवनसे उनको अविकस्नानजन्य कोई पीड़ा नहीं होतीथी ॥ १९१ ॥

१९२ पुत्रप्रदरसः

शुद्धसूतं त्र्यहं स्वेद्यं मन्दाग्नौ दध्नि माहिषे ।
त्रुटिते त्रुटिते दद्याद्दधि तुर्येऽह्नि चोद्धरेत् ॥ ७९० ॥
तस्मिन् स्वर्णं क्षिपेत्प्राज्ञश्चतुःषष्टितमांशकम् ।
मर्दयेन्निम्बुनीरेण यावदैक्यं हि जायते ॥ ७९१ ॥
पुनः संस्वेद्य तं सूतं वटशुङ्गाऽहिवल्लिजैः ।
काकमाच्या च जीवन्त्या रसः स्याद्यामयुग्मकात् ७९२
दिनं शीताऽम्बुकुम्भस्थं दिनैकं दध्नि माहिषे ।
एवं सिद्धरसाद्वल्लं प्रत्यहं ब्रह्मचर्यधृक् ॥ ७९३ ॥
मासैकं सेवते भर्ता सितादुग्धौदनप्रियः ।
त्रिफलानिम्बकार्पासीरसैर्नारी क्रमात्पृथक् ॥ ७९४॥
सप्त सप्तदिनं पीत्वा पश्चादृतुसमागमे ।
रसं वल्लं त्र्यहं चैकं कार्पास्यम्बुसितायुतम् ॥ ७९५ ॥
टङ्कणः स्फटिका सूतः पक्वाम्लिकरसान्वितः ।
त्रिदिनं मधुना योनौ लेपः शुद्धिकरः परः ॥ ७९६ ॥
महिष्या दधिमध्यस्थं दिवा सूतं त्रिमाषकम् ।
स्त्रीसेवासमये रात्रौ भक्षयेद्दधिसंयुतम् ॥ ७९७ ॥
सम्भोगाऽन्ते तथा स्थेयं यामार्धं सम्पुटेन च ।
सर्वलक्षणसम्पन्नं सुतं जनयते वरम् ॥ ७९८ ॥
तापादिके समुत्पन्ने देयं द्राक्षासितादिकम् ।
कार्यः शीतोपचारश्च युवत्या भिषजा सदा ॥७९९॥
आयुर्वृद्धिं बलं कान्ति नष्टवीर्यविवर्धनम् ।
कुर्याद्रोगहरः पुत्रप्रदो रुद्रविनिर्मितः ॥ ८०० ॥

र. सं. क , रसायनसं., र को , स्त्री वि , पुत्रप्राप्तये ।

भाषा—शुद्धपारेको भैंसके दहीमें दोलायन्त्रसे मन्दाग्निपर ३ रोज स्वेदनकरे, दही समाप्त होनेपर नया डालताजाय। चौथेरोज़ निकालकर उसपारेसे चौंसठवा हिस्सा सुवर्ण मिलाकर नींबूकारस डालकर जवतक दोनों एक न होजायं तवतक मर्दनकरे। फिर इसकी पोटली वनाय वटके दूसे और पान, मकोय, अर्कपुष्पी (अभावमें डोडी) इनप्रत्येकके रस अथवा क्वाथोसे अलग अलग १–१ रोज़ स्वेदन करके कोरे घडेमें ठंढा पानीभर उसमें एकरोज पोटलीको रक्खे फिर एकरोज़ भैंसके दहीमें रक्खे इसतरह यह रस तैयार होगा। इसमेंसे ब्रह्मचर्यका पालन करता-हुआ ३–३ रत्ती यथोचिताऽनुपानके साथ १ महीनेतक देवे। शक्कर, दूध और चावलके सिवाय कुछ न खाय, इसतरह पुरुष सेवनकरे। स्त्रीको ऋतु आगमनके सातरोज़ पहिले त्रिफला, नीम और कपासके रसकेसाथ १–१ गोली रोज़ाना देवे। अखीरमें कपासके रससे ३ रोज़तक ३–३ रत्ती पूर्वोक्तरसकी देवे। फिर सुहागा, फिटकरी और पारा समभाग लेकर पकीइमलीकेरससे घोटकर मधु मिलाकर तीनदिन तक योनिमें लेपकरे इससे योनि शुद्ध होजायगी। भैंसके दहीमें सूर्योदयके समय ३ माशे ऊपरका पारा डालकर रात्रिमें स्त्रीसम्भोगके समय दहीकेसाथ उसपारेको खावे। सम्भोगके अन्तमें स्त्रीपुरुष दोनो यथाऽवस्थित आधे पहरतक रहें। इसतरह करनेमे समस्त शुभलक्षणयुक्त पुत्रको पैदा करताहै। अगर ज्वर वगैरह होजायतो द्राक्ष और शक्कर का शरवत देना स्त्री शीतोपचार करे। इसके निरन्तरसेवन करनेमे आयु, वल, कान्ति और शुक्रकी वृद्धि होती है ॥ १९२ ॥

१९३ पुत्रवर्धमानरसः

पलार्धप्रमिते स्वर्णे ताम्रं दत्त्वाऽक्षमात्रया ।
निर्वापयेच्छतं वारान्निक्षिप्य शुकपिच्छकम् ॥८०१॥
ततश्च सारणायन्त्रे सूत्रस्थाने प्रकाशिते ।
सारणातैलसंयुक्ते जीर्णषड्गुणगन्धकम् ॥ ८०२ ॥
रसं हि द्विपलं क्षिप्त्वा सारणाविधियोगतः ।
सारयित्वा ततः पश्चात्पिष्टीभूतं शनैःशनैः ॥ ८०३ ॥
तस्माद्यन्त्रात्तु निष्कास्य गालयित्वा च वाससा ।
मातुलुङ्गरसैः पिष्टं चतुर्निष्कमितं त्वनु ॥ ८०४ ॥
गन्धकं विधिना यावज्जारयित्वा चतुर्गुणम् ।
तमादाय रसं सम्यग्विचूर्ण्य परिगाल्य च ॥ ८०५ ॥
षष्ठांशेन मृतं वज्रं समवैक्रान्तकं मृतम् ।
निक्षिप्य मातुलुङ्गस्य रसैः पिष्ट्वा च वासरम् ॥८०६॥
पुटेद् द्वादश वाराणि रुद्ध्वा द्वादशकोत्पलैः ।
बन्धुजीवरसेनाऽथ लक्ष्मणास्वरसेन च ॥ ८०७ ॥
पुनः सञ्चूर्ण्य सम्पूज्य योगिनीः पितृदेवताः ।
पुत्रिण्या पुत्रनाथाश्च पूजितव्या विधानतः ॥ ८०८ ॥
इति सा प्राप्नुयाद्गर्भं रामा संवत्सराऽन्तरे ।
आदिवन्ध्यादिदोषा या याश्चान्या दुष्टयोनयः ॥८०९॥
प्राप्नुयु जीवितं पुत्रं भाग्यसौभाग्यसंयुतम् ।
पुंसामपि च वन्ध्यत्वं स्वल्परेतस्त्वमेव च ॥ ८१० ॥
बीजदोषा विविधाश्च विनश्यन्ति न संशयः ।
एवं यः सेवयेत्सूतं वर्धमानः सपुत्रकैः ॥ ८११ ॥

स्त्री वि , पुत्रप्राप्तये ।

भाषा—आधेपल शुद्धसुवर्णको गलाकर शुद्धताबा १ कर्ष मिलावे और विजोरेके रसमें षोडशांश गन्धक मिलाकर बुझावे, ऐसें १०० वार बुझावे यह सुवर्णताम्र बीज तैयार हुआ। इसके वाद षड्गुणगन्धकजारित २ पल शुद्धपारेको सारणायन्त्रमें रखकर मूषाका अर्धभाग सारणातैलसे भरदे। फिर केंचुओंकी

मिट्टी, मधु, काकविष्ठा, आक परकी टिड्डी, जवानभैंसो के दोनोंकानोंका मल, येसव समभाग लेकर खरलकर कपड़छानचूर्णकरले। इसचूर्णका विजोरेके रसमें कल्क बनाय सारणा तैलमें चतुर्थांश देकर पकावे। पकनेपर छानकर रखलेवे (मछली, कछुआ, पीलामेंढक, जहरीजोंक, मेंढा, सुअर इन सबकी चर्बीको समभाग मिलाना। इसका सारणतैल साकेतिक नामहै) प्रथमोक्त वीजमें चतुर्थांश भूनागादिचूर्ण डालकर विजोरेकेरससे २–३ पहर मर्दनकर गोली बनाकर सारणातैलमें भीगे हुए चारतहकपड़ेमें पोटली बनाय मध्यच्छिद्रयुक्त ढकनीपर रखकर मूषाके ऊपर ढकदे और सारणातैलमें एककपड़े को भिगोकर दोनोंक मुंहपर लपेटकर नमक अथवा राखको विजोरेके रसमें भिगोकर सन्धि वन्द करदे। फिर मूषाके तृतीयांशप्रमाणका गर्त बनाकर मूषाको उसमें रखकर मिट्टीसे गर्तको जमीन बराबर करदे। मूषाके मुंहपर खदिर वगैरहके सारिष्ट कोयले रखकर धौंकनीसे धौंके। जब देखे कि वीज गलकर भीतर चलागया तब धौंकना वन्दकरदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर कपड़ेमें छानले जितना हिस्सा वीज का न मिलाहो उसको फिर इसीतरह करके मिलावे। जब नि शेष वीज पारेमें प्रविष्ट होजाय और छाननेसे कुछभी न निकले तब इसपर विजोरेके रसमें पीसाहुआ गन्धक १ कर्ष देकर कच्छपयन्त्र वगैरहमें जारणकरे। ऐसे पारेमें चौगुना गन्धक जल जाय तब इसको घोटकर कपड़छानकरले फिर पारेसे पष्ठांश हीरा और समभाग वैकान्तभस्म मिलाकर विजोरे का रसदेकर एकदिनभर मर्दनकर गोला बनाय शराव सम्पुटकर १२ जङ्गली कण्डोंकी आचदे। इसीतरह दुपहरियाके रसमें मर्दनकर आच देनेके बाद लक्ष्मणाके स्वरससे मर्दनकर आचदे। यह **पुत्रवर्धमानरस** तैयार हुआ। इसको शीशीमें रख योगिनी, पितृदेव, और बालग्रहोंकी विधिपूर्वक पूजाकर सुमुहूर्तमें एक सर्षप प्रमाण मात्रा नागकेसर प्रभृति पुसवन द्रव्यके साथ सेवन करे और ककाराष्टक तथा तीक्ष्ण पदार्थोंमे परहेज करेतो एकवर्षके भीतर स्त्री गर्भको धारणकरे। जिनको गर्भधारणके पहिले या मध्यमें या अन्तमें कुछ खराबिया होतीहों किंवा जिनकी योनि दूषित हो वेभी इसके सेवनसे दीर्घायु और सौभाग्ययुक्त पुत्रको प्राप्त होतीहै। पुरुषोंकोभी वन्ध्यत्व, स्वल्परेतस्त्व प्रभृति विचित्र २ दोषहुआकरतेहैं वे सब इसके सेवनसे नष्टहोजातेहैं। जिसको पुत्रप्राप्तिकी उत्कट इच्छाहो वे स्त्रीपुरुष दोनों इसका सेवनकरें। परन्तु इसरसको बनाकर तुरतही किसीको नहीं खिलाना चाहिये नहींतो इससे महा अनर्थ होनेकी सम्भावनाहै कमसे कम एकसालभरके बाद देना। इसमें गलती करनेसे लोक परलोक दोनों विगड़ेंगे १९३

१९४ पुनर्नवागुग्गुलुः

पुनर्नवामूलशतं विशुद्धं
रुबूकमूलञ्च तथा प्रयोज्यम्।
दत्त्वा पलं षोडशकञ्च शुण्ठ्याः
सङ्कुट्य सम्यग्विपचेत्सुपात्रे ॥ ८१२ ॥
पलानि चाऽष्टादश कौशिकस्य
तेनाष्टशेषेण पुनः पचेच्च।
एरण्डतैलं कुडवञ्च दद्या-
द्दत्त्वा त्रिवृच्चूर्णपलानि पञ्च ॥ ८१३ ॥
निकुम्भचूर्णस्य पलं गुडूच्याः
पलद्वयञ्च द्विपलं प्रतीह।
फलत्रयं त्र्यूषणचित्रकाणि
सिन्धूत्थभल्लातविडङ्गकानि ॥ ८१४ ॥
कर्षं तथा माक्षिकधातुचूर्णं
पुनर्नवाचूर्णपलं तथैकम्।
चूर्णानि दत्त्वाप्यवतार्य शीतं
खादेन्नरो निष्कसमप्रमाणम् ॥ ८१५ ॥
वाताऽस्रजं वृद्धिगदांश्च सप्त
जयत्यवश्यं त्वथ गृध्रसीञ्च।
जङ्घोरुपृष्ठत्रिकवस्तिजञ्च
तथाऽऽमवातस्य बलं निहन्ति ॥ ८१६ ॥

र का, वातरक्ताऽधिकारे।

भाषा—पुनर्नवा और एरण्डकी ताजी साफकीहुईजड़ सौ १०० कर्ष, सोंठ १६ पल लेकर सबको कूटकर मिट्टीके नवीन पात्रमें अठगुना पानी डालकर पकावे। अष्टाऽवशेष रहनेपर छानकर उसमें १८ पल भैंसागुग्गुलु डालकर पकावे। फिर इसमें एरण्डतैल पावभर, निशोतका चूर्ण ५ पल, शुद्ध जमालगोटा अथवा इसकी जड़ १ पल, गिलोय, त्रिफला, त्रिकटु, चित्रक, सैंधव, भिलावा और विडङ्ग ये प्रत्येक २ पल, शुद्ध सोनामाखी १ कर्ष और पुनर्नवाका चूर्ण ४ कर्ष डालदे। जब गोलीबंधने लायक होजाय तब उतारकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ माशेकी गोलिया बनाकर खानेसे वातरक्त, सातप्रकारकी अण्डवृद्धि, गृध्रसी, जाघ, ऊरु, पृष्ठ, त्रिक और वस्तिवात, आमवात इनके बलको यह नष्टकरताहै ॥ १९४ ॥

१९५ पुनर्नवादियोगः

पुनर्नवा नागवला वाजिगन्धा शतावरी।
गोक्षुरं मुशलीकन्दं मृतं सूतं समंसमम् ॥ ८१७ ॥
चूर्णं मध्वाज्यसंयुक्तं निष्कं भुक्त्वा पिबेत्पयः।
तण्डुलं वानरीबीजं चूर्णयेत्सितया समम् ॥ ८१८ ॥
आलोडयेद्गवां क्षीरैस्तेनकुर्यादपूपिकाम्।
तां घृते भक्षयेच्चाऽनु रमयेत्कामिनीकुलम् ॥ ८१९ ॥

र खं., वाजीकरणे।

भाषा—पुनर्नवा, नागबला, असगन्ध, शतावर, गोखरू, मुसली, पारदभस्म, सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर १–२ पहर खरलकरके रखछोड़े। इसमेंसे ४ माशे चूर्ण मधु और घीकेसाथ चाटकर दूधपीवे। चावल, छिलकेरहित केवाचके बीज इनका बारीकचूर्णकर बराबरकी शक्कर डालकर गायके दूधमें सानकर पूड़ी बनावे। इनपूड़ियोंको घीकेसाथ खानेसे बहुतसीस्त्रियोंका सङ्गकरसक्ताहै ॥ १९५ ॥

१९६ पुनर्नवादिलेहः

पुनर्नवाया मूलानां तुलामानं पचेत्ततः ।
हस्तिकर्णी चाश्वगन्धा शैलेयं शिग्रुमूलकम् ॥८२०॥
कुनिम्बाऽऽरग्वधौ नीली वरा दारु द्विकुण्डली ।
निर्गुण्डी नीलिनी शिम्बी नागरं वह्निरूपिके ॥८२१॥
अग्निमन्थो द्वितुलसी सुनिषण्णश्च गोक्षुरम् ।
एतानि समभागानि पृथग्दशपलानि च ॥ ८२२ ॥
द्रोणे पादाऽवशेषेऽस्मिन् कषाये च परिस्रुते ।
त्रिंशत्पलं गुडं दत्त्वा पुराणं च विपाचयेत् ॥ ८२३ ॥
त्रिकटु त्रिफला रास्ना नतचव्याऽग्निग्रन्थिकम् ।
तालीसं जातिका पत्रं वराटं धनिका निशा ॥ ८२४॥
विडङ्गश्चाजमोदश्च चातुर्जातश्च रामठम् ।
तक्कोलं माषकं भार्ङ्गी कान्तलोहश्च पुष्करम् ॥ ८२५ ॥
जीरद्वयश्च मण्डूरं सैन्धवं हस्तिपिप्पली ।
सर्वमेतत्समश्चैव पृथक्कर्षं विचूर्णयेत् ॥ ८२६ ॥
सान्द्रपाकं भवेत्तस्याः युक्त्या पुष्परसं क्षिपेत् ।
लेहराजं चावतार्य द्विकालं सेवयेत्ततः ॥ ८२७ ॥
कामलापाण्डुरोगघ्नं कासं श्वासं हलीमकम् ।
ऐकाहिकं द्व्याहिकं च पुराणं श्वयथुं हरेत् ॥ ८२८ ॥
स्वरसादक्षयहरं रक्तपित्तश्च विद्रधिम् ।
नाशयेन्नाऽत्र सन्देहः कश्यपो मुनिरब्रवीत् ॥ ८२९ ॥

वै. चि., पाण्डुकामलयोः ।

भाषा—पुनर्नवाकी जड़ १०० पल लेकर अष्टगुणित पानीमें पकावे, चतुर्थांशावशेष रहनेपर छानकर अलग धरदे । फिर हस्तिकर्णपलाश, असगन्ध, छड़ीला, सहिजनकी जड़, चिरायता, अमिल्तासका गूदा, नीलकीजड़, त्रिफला, देवदारु, विधारा, गिलोय, संभालू, कालादाना, सेम, सोंठ, चित्रकमूल, नीला-आक, अरणी, स्याह और सफेद तुलसी, सुरवारी, गोखरू, ये प्रत्येक १० पल लेकर जवकुटकर ३२ सेर पानीमें काढ़ा बनावे । चतुर्थांशाऽवशेष रहनेपर छानले फिर दोनोंकाढ़े इकट्ठे मिलाय ३० पल पुरानागुड़ डालकर पकावे । दर्वीलेप होनेपर त्रिकटु, त्रिफला, रास्ना, तगर, चव्य, चित्रकमूल, पिपलामूल, तालीसपत्र, जावित्री, कौड़ीभस्म, धनिया, हल्दी, विडङ्ग, अजमोद, चातुर्जात, भुनाहींग, शीतलचीनी, माषपर्णी, भारङ्गी, कान्तलोह-भस्म, पोहकरमूल, स्याह औरसफेद जीरा, मण्डूरभस्म, सैन्धव, गजपीपल ये सब १–१ तोला लेकर वारीक चूर्णकर डालदे । गोली बंधने लायक होनेपर उतारकर ठंढा होनेपर इतना मधु डाले कि चाटने लायक हो जाय । इसमेंसे १–१ तोला दोनों समय रोज़ाना खानेसे कामला, पाण्डु, कास, श्वास, हलीमक, रोज़ाना अथवा तीसरे दिन आनेवाला ज्वर, जीर्णज्वर, शोथ, स्वरभङ्ग, क्षय, रक्तपित्त, विद्रधि, येसब नष्ट होतेहै ॥ १९६ ॥

१९७ पुनर्नवामण्डूरम् (प्रथमम्)

पुनर्नवा त्रिवृद् व्योषं विडङ्गं दारु चित्रकम् ।
कुष्ठं हरिद्रे त्रिफला दन्ती चव्यं कलिङ्गकाः ॥ ८३० ॥
पिप्पली पिप्पलीमूलं मुस्तश्चेति पलोन्मितम् ।
मण्डूरं द्विगुणं चूर्णात् गोमूत्रे द्व्याढके पचेत् ॥८३१॥
कोलवद्गुटिकाः कृत्वा तक्रेणाऽऽलोड्य ना पिबेत् ।
ताः पाण्डुरोगान् प्लीहानमर्शांसि विषमज्वरम् ॥
श्वयथुं ग्रहणीदोषं हन्युः कुष्ठं क्रिमींस्तथा ॥ ८३२ ॥

च. सं., भा. प्र., ग नि., नि. र., च. द, वै. चि., वृ. मा, मै. र., चि. र., र. र, रससागर., टो., यो. म., पाण्ड्वधिकारे । गदनिग्रहस्य प्रथमपुस्तके पिप्पलीस्थाने तिक्ता गृहीता ।

भाषा—पुनर्नवा, निसोत, सोंठ, मिर्च, पीपल, विडङ्ग, देवदारु, चित्रकमूल, कुठ, हल्दी, दारुहल्दी, त्रिफला, दन्ती, चव्य, इन्द्रजव, पीपल, पिपलामूल, नागरमोथा, ये प्रत्येक १ पल, मण्डूरभस्म सवसे दूनी लेकर सबको आठसेर गोमूत्रमें पकावे । गोली बंधने लायक हो जाय तव वेर वरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे अग्निवलके अनुसार १–१ अथवा २–२गोली तक्रमें मिलाकर पीनेसे पाण्डुरोग, प्लीहा, अर्श, विषमज्वर, शोथ, ग्रहणीदोष, कुठऔर क्रिमि इन सबको यह नष्ट करताहै ॥१९७॥

१९८ पुनर्नवामण्डूरम् (द्वितीयम्)

पुनर्नवा त्रिवृद्व्योषं विडङ्गं दारु चित्रकम् ।
कुष्ठं हरिद्रात्रिफला दन्ती चव्यं कलिङ्गकम् ॥८३३॥
कटुका पिप्पलीमूलं मुस्तं शृङ्गी च कारवी ।
यवानी कट्फलश्चेति पृथक् पलमितं समम् ॥८३४॥
मण्डूरं द्विगुणं चूर्णाद्गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ।
गुडेन वटकान् कृत्वा तक्रेणाऽऽलोड्य तान् पिबेत् ८३५
पुनर्नवादिमण्डूरवटकोऽश्विविनिर्मितः ।
पाण्डुरोगं निहन्त्याशु कामलाश्च हलीमकम् ॥८३६॥
श्वासं कासश्च यक्ष्माणं ज्वरं शोथं तथोदरम् ।
शूलं प्लीहानमाध्मानमर्शांसि ग्रहणीं क्रिमीन् ॥
वातरक्तश्च कुष्ठश्च सेवनान्नाशयेद् ध्रुवम् ॥ ८३७ ॥

भा. प्र., नि. र, र सु., र. कि., चि क., पाण्डुरोगे । चि. क, पुनर्नवादिवटीति नाम ।

भाषा—पुनर्नवा, निसोत, सोंठ, मिर्च, पीपल, विडङ्ग, देवदारु, चित्रकमूल, कुठ, हल्दी, त्रिफला, दन्तीमूल, चव्य, इन्द्रजव, कुटकी, पिपलामूल, नागरमोथा, काकडासींगी, कारवी (अभावमें मगरैल,) अजवाइन, कायफल, ये प्रत्येक १ पल, मण्डूर सवसे दूना लेकर सवको अठगुने गोमूत्रमें पकावे । गोमूत्र क्षीण होनेपर मण्डूरके वरावर गुड़ डालकर पकावे । चासनी होनेपर वेर वरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली छाछमें मिलाकर पीनेसे पाण्डु, कामला, हलीमक, श्वास, कास, यक्ष्मा, ज्वर, शोथ, उदरशूल, प्लीहा, अर्श, ग्रहणी, कृमि, वातरक्त और कुठ इनसवको यह नष्ट करताहै ॥ १९८ ॥

१९९ पुनर्नवामण्डूरम् (तृतीयम्)

वर्षाभू वरुणो मानो लोहकिट्टं मयूरकम्
भार्ङ्गी च समभागानि मूत्रे दशगुणे पचेत् ॥८३८॥

अन्तर्धूमविपक्वेन मधुसर्पिर्युतञ्च तत।
एतत्त्रिदोपजं हन्ति शूलञ्च परिणामजम् ॥ ८३९ ॥

र. का, शूलाधिकारे।

भाषा—[illegible] (पंसारी), [illegible], [illegible], [illegible], शुद्धतूतिया, भारकी येसब समभाग लेकर [illegible] गोमूत्र डालकर मुंहबन्दकरके पकावे जब गोमूत्र जल जाय तब उतारकर शीतल करके रखछोड़े। इसमेंसे एकमाशा मधु और घीके साथ लेनेसे यह त्रिदोपज परिणाम शूलको नष्टकरताहै ॥ १९९ ॥

२०० पुरन्दरवटी

सूतकाद्द्विगुणं गन्धमेकधा कज्जलीकृतम्
त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं प्रत्येकं सूतसम्मितम् ॥ ८४० ॥
अजाक्षीरेण सम्भाव्य वटिका कारयेत्ततः।
आर्द्रकस्य रसैः सेव्या शीततोयं पिबेदनु ॥ ८४१ ॥
कासश्वासप्रशमनी विशेषाद्वह्निवर्धिनी।
इयं यदि सदा सेव्या तदा स्याद्योगवाहिका॥
वृद्धोऽपि तरुणः शक्तः स्त्रीशतेषु वृषायते ॥ ८४२ ॥

र. सं, र. चं., ध, र. सु, कासाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारेसे द्विगुण शुद्धगन्धक लेकर नीलवर्ण कज्ज लीकर त्रिकटु, त्रिफला ये प्रत्येक पारेकी बराबर डालकर एकदिन बकरीके दूधकी भावना देकर १–१ मासेकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसमें मिलाकर सेवनकरे और ऊपरसे १–२ चुल्लू ठंढा पानी पीवे तो इसमे कास, श्वास, मन्दाग्नि ये सब नष्टहोवे हैं। यह वटी योगवाहिका है। इसके निरन्तरसेवनकरनेसे बुड्ढा भी जवान होजाताहै ॥ २०० ॥

२०१ पुष्पधन्वारसः (प्रथमः)

हरजभुजगलौहञ्चाऽभ्रकं वङ्गभस्म,
कनकविजययष्ट्यः शाल्मलीनागवल्ल्यौ।
घृतमधुसितदुग्धं पुष्पधन्वा रसेन्द्रो,
रमयति शतरामा दीर्घमायु र्बलञ्च ॥८४३॥

भै र, रसायनसं, आ. वि., वृ यो. त, र क, र मु, यो. त, यो र, रसपारिजात, ध्वजभङ्गे वाजीकरणे च। योगतरङ्गिण्या सूतवङ्गौ न दृश्येते।

भाषा—पारा, सीसा, लोह, अभ्रक, वङ्ग इनसवकी भस्में, शुद्ध धतूरेके बीज, विजयसार, मुलहठी, सेमरका मुसला, पानकी जड़ सब समभाग लेकर खरलकरके रखछोड़े। अथवा पानके रसमें घोटकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली खाकर घी, मधु और शकर युक्त दूध पीनेसे सैकड़ों स्त्रियोंको सन्तुष्ट करसक्ताहै। इसके सेवनसे शरीरमें बल और आयु बढ़तेहैं ॥ २०१ ॥

२०२ पुष्पधन्वारसः (द्वितीयः)

मृतरसरविवङ्गं हैमभस्म प्रयुक्तं,
दरदगगनचन्द्रं ताप्यकं कान्तभस्म।
अहिपतिलतिकारसं मर्दयेत्तस्य गोलं
[illegible] ॥८४४॥
[illegible]
[illegible]भिः।
[illegible]
[illegible] ॥८४५॥
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] भोज्यम् ॥
रमयति [illegible]
समधुघृतसिताभिः पुष्पधन्वा [illegible] ॥८४६॥

[illegible]

भाषा—[illegible] ॥२०२॥

२०३ पुष्पधन्वारसः (तृतीयः)

रम्भाकन्दे हेमताराऽर्कपिष्टिं
पक्त्वा यन्त्रे भूधरे तां पचेत।
गन्धं दत्त्वा षड्गुणार्द्धं क्रमेण
पश्चात्कान्तं तेन तुल्यं क्रमेण ॥ ८४७ ॥
दत्त्वा खल्वे शाल्मलीयष्टितोयैः
पश्चैकं तन्मर्दयेन्नागवल्ल्याः।
नीरैं यामं पुष्पधन्वा रसःस्या
द्वल्लं दद्यादस्य पूर्वोक्तयुक्त्या॥
पुष्टिं वीर्यं दीपनं सोऽत्र दद्या-
द्धन्याद्रोगान्रोगयोग्याऽनुपानैः ॥ ८४८ ॥

र र. स., र चं, र. दी, वाजीकरणे। र. दी, पूर्णेन्दुरस इति नाम।

भाषा—शुद्धपारेमें शुद्ध सुवर्ण, रजत और ताम्र इनका बारीक चूर्ण डालकर पिष्टी बनाले। इसपिष्टीको केलेके कन्दमें रखकर भूधरयन्त्रमें पकाकर सबसे तिगुना शुद्धगन्धक कच्छपयन्त्र वगैरहमें जारणकरे। फिर इसकी बराबर कान्तलोहभस्म मिलाकर सेमल और मुलहठी के स्वरस अथवा क्वाथमें ७–७

दिन मर्दनकर अन्तमें पकेपानके रसमें एक पहर मर्दनकरनेसे यह पुष्पधन्वा रस तैयार होगा। इसकी ३–३ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली घृत, मधु और शक्कर-युक्त दूधके साथ पीनेसे अनेक स्त्रियोंकी तृप्ति करता हुआ भी वीर्यसे परिपूर्ण रहताहै। तत्तद्रोगहराऽनुपानके साथ देनेसे यह तत्तद्रोगका नाश करताहै ॥ २०३ ॥

२०४ पुष्पधन्वारसः वृद्धाद्यः (चतुर्थः)

कनकहरजकान्तं ताप्यकं वृद्धिभागं,
द्विजकुवलययष्टीशाल्मलीनागिनीभिः।
घृतमधुपयखण्डैः पुष्पधन्वा द्विवल्लो,
रमयति वहुकान्ता दीर्घमायुर्विधत्ते ॥८४९॥

यो. र., र. शं., र. शि., वाजीकरणे।

भाषा—सुवर्ण १ भाग, पारा २ भा., कान्तलोह ३ भा., सुवर्णमाक्षिक ४ भा, इनसवकी भस्में इकट्ठी मिलाय १–१ पहर खरलकर पलाशकीछाल, कोंईके फूल, मुलहठी, सेमलका मुसला, पान इनके रसोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली घी, मधु और शक्करयुक्त दूधके साथ सेवनकरनेसे वहुतसी स्त्रियोंके साथ रमणकरता हुआभी दीर्घायु और वलको प्राप्त होताहै ॥२०४॥

२०५ पुष्पधन्वारसः (पञ्चमः)

रसभस्मत्रयो भागाः षड्भागा गन्धकस्य तु।
चतुर्थं मौक्तिकं हाटं द्विभागं तालकं शिला ॥८५०॥
तारमभ्रकलोहौ च वङ्गमाक्षिकनागकम्।
अयश्चाऽष्टौ प्रवालश्च सर्वं खल्वे विमिश्रयेत् ॥८५१॥
त्रिदिनं मर्दयेद्गाढं शुद्धं द्रव्यं विमर्दयेत्।
भावना गव्यदुग्धेन नलदं केतकी जया ॥ ८५२ ॥
क्वाथे मर्कटिवीजानां पौण्ड्रकेक्षुजभावितम्।
वलाऽश्वगन्धामाषाणां दशवारं पृथक् पृथक् ॥८५३॥
लवङ्गेक्षुरजातीनां सिद्धार्थं चञ्चु मर्कटी।
जातीकोषः पुनर्भूश्च त्वगेलागोक्षुरास्तथा ॥ ८५४ ॥
दद्रुवीजं वरा शृङ्ग्योऽशोकवीजं शतावरी।
मुशली धूर्तवीजानि क्षीरीमोचरसौ तथा ॥ ८५५ ॥
यवानीद्वयकं रम्भा खर्जूरंवह्निवीजकम्।
प्रियङ्गुश्च जटामांसी अक्षवीजञ्च गोस्तनी ॥ ८५६ ॥
आकल्लकश्च कक्कोलं कर्पूरं धान्यपञ्चकम्।
एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ ८५७॥
भाण्डे च द्विपलं स्थाप्यं द्विभागे वारिषोडशे।
मृद्वग्निना पचेत्सम्यग्द्विपलं शेषयेत्ततः ॥ ८५८ ॥
मर्दयेत्तेन कल्केन दिनानां द्वादशाऽवधिम्।
अहिजं स्वेदयेद्दुग्धे द्विपादं साधयेत्ततः ॥ ८५९ ॥
सप्तरात्रं दृढं मर्द्य दिनान्ते तत्समुद्धरेत्।
अनेन भावना देयाः सप्तषष्टिमिता वुधैः ॥ ८६० ॥
रसः सिद्धोऽयमाख्यातो वल्लमात्रं प्रयोजयेत्।
अनुपानयुतं लेह्यं मधुशर्करया सह ॥ ८६१ ॥
गोदुग्धमोदनं भुञ्ज्यात्सर्पिः शर्करया सह।
मैथुने दृढलिङ्गः स्यादङ्गनानां शतत्रयम् ॥ ८६२ ॥
प्रत्यहं रमते सेवी स्त्रीणाञ्च प्राणवल्लभः।
प्रातरुत्थाय सेवेत सद्यो द्रवति कामिनी ॥ ८६३ ॥
नष्टेन्द्रियतां मेहं मूत्रकृच्छ्रं तथाऽश्मरीम्।
योनिशूलं शिरःशूलं सर्वांश्च ग्रहणी जयेत् ॥ ८६४ ॥
सर्वाऽतिसारशोफश्च सर्वदाहांश्च निश्चितम्।
अयं धन्वन्तरिख्यातो रसोऽयं रतिवल्लभः ॥८६५॥
पुष्पधन्वा रसः पूज्यो लोकानन्दकरस्तथा।
नारीणां रक्षयेत्प्राणान्नराणां सिद्धिदायकः ॥
पूज्यः साक्षाद्रतिपति वैद्यानां भुक्तिदायकः ॥ ८६६ ॥

रसपारिजाते, वाजीकरणे।

भाषा—पारदभस्म ३ भाग, शुद्धगन्धक ६ भा., मोती ४ भा, सुवर्णभस्म २ भा., हरिताल, मैनसिल, रजत, अभ्रक, वङ्ग, सोनामाखी, सीसा इनसवकीभस्में २–२ भाग, लोह और प्रवालभस्म आठ ८ भाग लेकर सवको ३ रोज़ मर्दनकर गोदुग्धकी भावना देकर खस, केवड़ा, भाग, केवांचकेवीज, ईख इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथकी १–१ भावना देकर वला, असगन्ध और उड़दके क्वाथोंकी १०–१० भावनाएं देवे। फिर लौंग, तालमखाना, जावित्री, सरसों, छूंछ (कागलहरी हिं) केवांच, जायफल, इटसिट, तज, इलायची, गोखरू, पवाडकेवीज, त्रिफला, काकड़ासींगी और मेंढासींगी, अशोकवीज, शतावर, दोनोंमुसली, शुद्धधतूरेके वीज, वंसलोचन, मोचरस, देशी तथा खुरासानी अजवाइन, केलेकाकन्द, छुआरा, चित्रकमूल, विजयसारकीछाल, प्रियङ्गु, जटामासी, रुद्राक्षके वीज, द्राक्ष, अकलकरा, शीतलचीनी, कपूर, धान्यपञ्चक(धनिया, सोंठ, नागरमोथा, सुगन्धवाला और वेलगिरी) येसव १–१ भाग लेकर सूक्ष्म चूर्णकरके इसके ५ भागकरे। एकभागको ३२ कर्ष पानीमें मन्द अग्निपर पकावे जव २ पल जल वाकी रहजाय तव उतारकर इसकल्कको मिलाकर ऊपरवाली दवाओंको १२ दिनतक मर्दनकरे। १२ दिनकेवाद सुखादे फिर उसीतरह दोपल जो दूसराभागहै उसको ३२ कर्ष पानीमें पकाकर २ पल शेषरहनेपर १२ रोज़तक मर्दनकरे। इसतरह ६० दिन तक मर्दनहोगा। फिर एकभाग अफीमको सेरभर दूधमें स्वेदनकरे। जव दूध आधा वाकी रहजाय और सव अफीम दूधमें चलाजाय तव उस दूधको दवामें डालकर दिनभर मर्दनकरे। दूसरे रोज़ सुखाकर फिर इसीतरह मर्दनकरे, ऐसी सातभावनाएं दूधकी दे। ये सव मिलकर ६७ भावनाएं हुई। इसकी ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु और शक्करके साथ अथवा मधु, शक्करयुक्त दूधके साथ सेवनकरे और गोदुग्ध, भात, शक्कर तथा घी खायतो ध्वजकी शिथिलता विना वहुतसी स्त्रियोंके साथ रमण करसक्ताहै। इस रसके सेवन करनेसे

कैसीभी दुर्बलता हो यह तत्काल शान्त होजातीहै इसलिये यह पुरुष स्त्रियोंका प्राणवल्लभ होताहै । कामार्थ इसको सेवन करनाहोतो मैथुनसे एक घण्टा पहिले सेवनकरे । शरीरस्वास्थ्यार्थ सेवन करनाहोतो प्रातःकाल इसका सेवनकरे । इसके सेवनसे इन्द्रियोंकी अशक्ति, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, योनिशूल, शिर:शूल, सबप्रकारकी सङ्ग्रहणी, अतिसार, शोथ और दाह नष्टहोते है । स्त्रियोंके प्राणोंकी रक्षा करताहै और पुरुषोंको सिद्धि देताहै । यह रस साक्षात् कामदेवहै, वैद्योंको यश देनेवालाहै इसलिये वैद्योंको इसे हमेशा तैयार रखना चाहिये ॥ २०५ ॥

२०६ पुष्पधन्वारसः (पष्ठ)

शिलाऽऽलताप्याऽभ्रभुजङ्गवङ्ग
प्रवालवैदूर्यशशिद्विभागम् ।
सूतस्त्रिधाऽष्टाऽऽयसमम्प्रयुक्तं
सुवर्णपत्रोद्भवतो विमर्द्य ॥ ८६७ ॥
विभावयेत्स्तन्यकवालधूर्त-
जयाम्बुभि र्वानरिजाम्भसा च ।
माषाऽश्वगन्धोरगवल्लितोयै-
र्भाव्यं पृथग्द्विग्दिनकं तथैव ॥ ८६८ ॥
लवङ्गजातीफलपत्रफञ्जी
सिद्धार्थचञ्चिक्षुरगोक्षुरैला-
विश्वैः पुनर्भूत्वगिभाऽग्धिशोप-
कङ्कोलदन्तूफलत्वग्गुडूच्या ॥ ८६९ ॥
पलाण्डुशिग्रुद्वयमीरुताली-
दीप्यद्वयाऽऽरुष्करक्तसारैः ।
खर्जूरमोचारसमोचकन्द
प्रियङ्गुमांसीशटिधान्यपद्मैः ॥ ८७० ॥
द्राक्षा तुगावल्कलनारिकेलाऽ-
गुरुं समानं द्विपलं विचूर्ण्य ।
भाण्डे पचेदष्टपले च तोये
मृद्वग्निना तद्द्विपलाऽवशेषम् ॥ ८७१ ॥
विभावयेत्तेन जलेन घर्मे
पुनः पुनस्तं मुनिवासराणि ।
पलद्वयं याममफेनमग्नौ
मृदौ विपक्कं पयसा तथैनम् ॥ ८७२ ॥
कल्केन भाव्यं शरवासराणि
विभावयेत्तं शतपत्रनीरैः ।
शुष्कं विमर्द्य विधिवत्प्रयोज्यो
वल्लः सितानागलतादलाभ्याम् ॥ ८७३ ॥
पथ्यं सुदुग्धं मधुरं प्रदद्या-
त्प्रमेहवाते क्षयमूत्रकृच्छ्रे ।
शोफाऽतिसारे ग्रहणीप्रलापे
प्रवाहयोनीष्वखिलाऽऽमयेषु ॥ ८७४ ॥
धन्वन्तरिप्रथितपुष्पधन्वा
प्रत्यो नृणां ह्यायपते [illegible] ।
लिङ्गे [illegible]
[illegible] ॥ ८७५ ॥

र. यो., शं., र. स. सा., र. प्र. सो., [illegible] ।

टि० —[illegible]

भाषा—[illegible] भाग, [illegible] भाग, [illegible] रस, [illegible] तक [illegible] । फिर [illegible], पीलीमुरगों, [illegible] (हि [illegible]), [illegible], पत्तोंसेधीज, [illegible], गिलोय, प्याज, [illegible] और [illegible], दोनों [illegible], [illegible], गिलोय, चीतकवार ([illegible]), [illegible], प्रियङ्गु, जटामांसी, [illegible], [illegible] ([illegible], [illegible], [illegible]), [illegible], नारियल और अगर ये सब १–१ भाग लेकर [illegible] २ पलकी पान पुडिया बनालेना । इनमेंसे एक पुडियाको १६ पल पानीमें उबाले, जब २ पल पानी [illegible] तब छानकर इस पानीसे [illegible] भिगोकर सुखावे, ऐसे इसकी [illegible] भावनाएं देकर सुखाकर २ पल शुद्ध [illegible] ८ पल [illegible] डालकर मन्द आंचसे १ प्रहरतक पकावे और [illegible] २ मिलाकर पाँचरोज घोटकर सुखालेवे फिर [illegible] १ भावना देकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखलेवे । इनमेंसे १–१ गोली पकेपानमें [illegible] डालकर दूधके साथ खानेसे प्रमेह, वातविकार, क्षय, मूत्रकृच्छ्र, शोथ, अतिसार, सङ्ग्रहणी, प्रलाप, प्रवाह (पेचिश), समस्त योनिरोग, लिङ्गशैथिल्य, अल्पशुक्रता और नष्टशुक्रता इनसबरोगोंको यह नष्टकरताहै और स्त्रियोंका द्रावणकरताहै । यद्यपि यह पाठ पञ्चम पाठसे बहुत अंशोंमें मिलताहै परन्तु द्रव्य और भावनाओंमें बहुत अन्तरहोनेसे स्वतन्त्र रक्खागयाहै ॥ २०६ ॥

२०७ पुष्परागरसायनम्

पुष्परागोद्भवं भस्म पलार्धप्रमितं शुभम् ।
तदर्द्धं पीतकं वङ्गं तदर्धं ताम्रभस्मकम् ॥ ५७६ ॥
ताम्रस्यार्द्धञ्च रजतं जातरूपं तदर्द्धकम् ।
वज्रभस्म तदर्धञ्च सर्वतुल्यं मृताऽभ्रकम् ॥ ८७७ ॥
तत्समं सूर्यकान्तञ्च मारितं वलिना सह ।
तुल्येन वलिना सार्द्धं दशवारं पुटेत्खलु ॥ ८७८ ॥
नीलाञ्जनाऽऽलताप्यानां पृथक्कृतानि पुटानि च ।
इति सिद्धमिदं प्रोक्तं पुष्परागरसायनम् ॥ ८७९ ॥

क्षयादि सर्वरोगघ्नं कुष्ठव्याधिहरं परम्।
गुदगुल्मार्तिशमनं पुत्रीयं वृष्यमुत्तमम्॥ ८८० ॥
क्षिप्रं गुल्महरं स्त्रीणां नानाव्याधिनिषूदनम्।
दीपनं परमं प्रोक्तं कामलापाण्डुनाशनम्॥
बहुनाऽत्र किमुक्तेन सर्वरोगविनाशनम्॥ ८८१ ॥

र. चू., रसायने।

भाषा—पोखराजकीभस्म २ तोले, पीतल और वङ्गभस्म १-१ तोला, ताम्रभस्म ६ माशे, रजतभस्म ३ माशे, सुवर्णभस्म १॥ मासा, सुवर्णसे आधी हीरेकीभस्म और इनसवकी वरावर अभ्रकभस्म तथा समगन्धकदेकर मारक द्रव्यस्वरसकेसाथ घोटकर दस गजपुट देकर भस्म कियाहुआ सूर्यकान्त अभ्रककी वरावर डालदेना। फिर सवचीज़ोंको मिलाकर सवकी वरावर गन्धक देकर उसीतरह मारकद्रवमें घोटकर १० गजपुटदे। फिर नीलाञ्जनभस्म, हरिताल और सोनामाखी इनप्रत्येकको अलग २ समभाग मिलाकर पूर्ववत् मर्दनकर १-१ गजपुट देनेसे यह पुष्परागरसायन सिद्धहुआ। इसको वनाकर एकवर्षभर रहनेदेना। इसके वाद एकएक अथवा आधी आधी रत्तीकी मात्रा तत्तद्रोगोचितानुपानके साथ देनेसे क्षय, कुष्ट, गुदव्याधि, गुल्म, वन्ध्यत्व, नपुंसकत्व, रक्तगुल्म, कामला, पाण्डु, मन्दाग्नि, इन सव रोगोंको यह दूरकरताहै॥ २०७॥

२०८ पुष्पाऽङ्कुशरसः

सूतं साऽभ्रविषं लोहं व्योषञ्च यवशूकजम्।
मर्दयेत्सुरसावह्निभृङ्गद्रावै दिनत्रयम्॥
गुञ्जामात्रं प्रयुञ्जीत स्थौल्यादौ स्वाऽनुपानतः॥८८२॥

रसायनसं., मेदोरोगे।

भाषा—पारद और अभ्रकभस्म, शुद्धवछनाग, लोहभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, यवक्षार सव समभाग लेकर तुलसी, चित्रक, भंगरा, इनके स्वरसोंसे ३-३ रोज़ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मेदोवृद्धिप्रभृतिरोगोंमें अपने २ अनुपानकेसाथ देनेसे यह तत्तद्रोगोंको दूरकरताहै॥ २०८॥

२०९ पूगपाकः (रतिवल्लभः) (प्रथमः)

पूगं दक्षिणदेशजं दशपलोन्मानं भृशं कर्तयेत्,
तत्स्विन्नं जलयोगतो मृदुतरं संकुट्य चूर्णीकृतम्।
तच्चूर्णं पटशोधितं वसुगुणे गोशुद्धदुग्धे पचेत्,
गव्याज्याऽञ्जलिसंयुतेऽतिनिविडे दद्यात्तुलार्धां सिताम्।
पक्वं तज्ज्वलनात्क्षितिं प्रतिनयेत्तस्मिन्पुनः प्रक्षिपेत्,
दद्यात्तत्तदुदीरयामि बहुला दृष्ट्वाऽऽदरात्संहिताः।
एला नागवला बला सचपला जातीफलं लिङ्गिनी,
जातीपत्रकपत्रपत्रकयुगं तच्च त्वचासंयुतम्॥ ८८४॥
विश्वा वीरणवारिवारिदवरा वांशी वरी वानरी,
द्राक्षासेक्षुरगोक्षुराथ महती खर्जूरिका क्षीरिका।
धान्याकं सकसेरुकं समधुकं शृङ्गाटकं जीरकम्,
पृथ्वीकाऽथ यवानिका वरटिका मांसीमिसी मेथिका।
कन्देऽप्यत्र विदारिकाथ मुशली गन्धर्वगन्धा तथा,
कर्चूरं करिकेसरं समरिचं चारस्य वीजं नवम्।
वीजं शाल्मलिसम्भवं करिकणावीजञ्चराजीवजम्,
श्वेतंचन्दनमत्र रक्तमपिच श्रीसंज्ञपुष्पैःसमम्॥८८६॥
सर्वञ्चेति पृथक् पृथक् पलमितं सञ्चूर्ण्य तत्र क्षिपेत्,
सूतं वङ्गभुजङ्गलोहगगनं सन्मारितं स्वेच्छया।
कस्तूरीघनसारचूर्णमपिच प्राप्तं तथा प्रक्षिपेत्,
पश्चादस्य तु मोदकान्विरचयेद्बिल्वप्रमाणानथ ८८७
तान्भुक्त्वाऽतिसदा यथाऽनलबलं भुञ्जीत नाऽम्लं रसं,
पूर्वस्मिन्नशिते गते परिणतिं प्राग्भोजनाद्भक्षयेत्।
नित्यं श्रीरतिवल्लभाऽऽख्यकमिमं यः पूगपाकं भजेत्,
स स्याद्वीर्यविवृद्धिवृद्धमदनो वाजीव शक्तो रतौ८८८
दीप्ताऽग्निर्वलवान्वलीविहरते हृष्टः सुपुष्टः सदा,
वृद्धो योऽपियुवेव सोऽपिरुचिरः पूर्णेन्दुवत्सुन्दरः।
एतस्मिन्रतिवल्लभे यदिपुनः सम्यक् खुरासानिका,
धत्तूरस्य च,वीजमर्ककरभः पाथोधिशोषस्तथा।८८९।
सन्माजूफलकं तथा खसफलं त्वक् चाऽपि निक्षिप्यते,
चूर्णाऽर्द्धा विजया तथा सहि भवेत्कामेश्वरो मोदकः

यो. र., भा. प्र., वृ. यो. त., र. कि, पा. व., यो. म, टो., वाजीकरणे। यो. म. कामेश्वरमोदकेति नाम। रतिवल्लभे कियद्वस्तूनामधिकतया प्रक्षेपान्महाकामेश्वर॥

भाषा—चिकनीसुपारी १० पल लेकर सरोतेसे वारीक टुकडेकर दोलायन्त्र वनाय पानीकी भापसे स्वेदनकरे। जव एकदम कोमलहोजाय तव कूटकर कपडछान चूर्णकरले। इसचूर्णको अठगुने गायकेदूधमें (द्रवहोनेकेकारण १६ गुनाभी लेसक्ते है) पकावे। अग्निमन्दरक्खे और धीरे २ चलातारहे, कड़ाहीके पेंदेमें न लगनेपावे। मावा होजानेपर आधसेर घी डालकर खूवभूने। अच्छीतरह सिकजानेपर ५० पल शक्करकी एकतारीचाशनी होनेपर मिलादे और चलातारहे। दोतारी चाशनी होनेपर अग्निपरसे उतारकर छोटीइलायची, नागवला, खरेटी, पीपल, जायफल, शिवलिङ्गीके वीज, जावित्री, पत्रज, तालीसपत्र, तज, सोंठ, खस, सुगन्धवाला, नागरमोथा, त्रिफला, वंसलोचन, शतावर, छिलकेरहित केवाचके वीज, वीजरहित द्राक्ष, तालमखाना, गोखरू, छुहारा, खिरनी, धनिया, कसेरू, मुलहठी, सिघाड़ा, जीरा, वड़ीइलायची, देशी अजवाइन, कौडीभस्म, जटामासी, सोफ, मेथी, विदारीकन्द, स्याह व सफेद मुसली, असगन्ध, कचूर, नागकेसर, सफेद मरिच, चिरोंजी, सेमलके वीज, गजपीपल, कमलगट्टा, सफेद तथा लालचन्दन और लवङ्ग इनका वारीकचूर्ण १-१ पल, पारा, वङ्ग, नाग, लोह और अभ्रक इनकीभस्में १-१ कर्षसे २-२ कर्षतक, कस्तूरी २ कर्ष, कपूर १ कर्ष मिलाकर एकएक पलके लड्डू वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे अग्निवल देखकर आधा अथवा एक लड्डू

खाकर ऊपरसे दूधपीवे। पचजानेपर पथ्यभोजन करे। इसके सेवनसे वीर्यकीवृद्धि, वाजीकरण, अग्निकी दीप्ति, वल, पुष्टि इनसवको प्राप्तहोकर दीर्घायुको प्राप्त होताहै। इस योगमें खुरासानी अजवाइन, शुद्ध धतूरेके वीज, अकलकरा, समुद्रशोष, माजूफल, खसखस और तज १-१ पल और सबसे आधी भुनीहुई भाग डालनेसे यह महाकामेश्वरमोदक कहलाताहै २०९

२१० पूगपाकः (बृहन्) (द्वितीयः)

पाच्यं पूगरजो दशाऽभ्रममलं मार्दे कटाहेऽग्निना,
स्विन्नञ्चाऽष्टगुणे पयस्यपि घृतप्रस्थाऽर्द्धकेऽस्मिन्घने।
जातीकोषफले च षट्कटुशटी द्राक्षा वरा वानरी,
चातुर्जाततुगाऽब्दधान्यमुसलीदीप्याजयष्टीक्षुरम् ॥
अश्वा शीतवलात्रयं करिकणा मांसी वरी मेथिका,
शृङ्गाटं मिशिजीरवारिविजया गोक्षूरखर्जूरकम्
धात्री शाल्मलिकोलचोरकनकं कुम्भत्रिनेत्राऽभ्रकं,
पृथ्वीकाऽभयवङ्गदेवकुसुमं दद्यात्पृथक्कार्षिकम् ८९१
पञ्चाशत्पलखण्डपाकललितः स्यात्पूगपाकः पृथु-,
र्वृष्यः षाण्ढ्यहरः प्रमेहदलनो रेतो विवृद्धिप्रदः।
पित्ताऽस्रे प्रदरे क्षये करपदे दाहेऽम्लपित्ते वपु-,
र्दाहे पाण्डुगदे हुताशनहतावेतेषु शस्तो मतः ॥८९२॥

वृ. यो त., प्रमेहे।

भाषा—१० पल चिकनी सुपारीका वारीक चूर्णकर मिट्टीकी कड़ाहीमें अठगुना गायका दूध डालकर पकावे। मावा होनेपर आधसेर घी डालकर भूनले फिर ५० पल शक्करकी दोतारकी चाशनी मिलाकर जायफल, जावित्री, षट्कटु (सोंठ, मिर्च, पीपल, चव्य, चित्रक, पिपलामूल), कचूर, द्राक्ष, त्रिफला, छिलके रहित केवाचके वीज, तज, पत्रज, इलायची, वंसलोचन, नागरमोथा, धनिया, स्याह और सफेद मुसली, देशी व खुरासानी अजवाइन, अजमोद, मुलहठी, तालमखाना, असगन्ध, शुद्धकपूर, वला, नागवला, अतिवला (गुलसिकरी), गजपीपल, जटामासी, शतावर, मेथी, सिघाड़े, सोंफ, जीरा, सुगन्धवाला, भांग, गोखरू, छुहारे, आवले, सेमल का मुसला, वेरकी मज्जा, चोरक (खरजवाइन), शुद्धधतूरेके वीज, दन्ती, सफेद निसोतकी जड़कीछाल, रुद्राक्ष, अभ्रकभस्म, वडी इलायची, खस, वङ्गभस्म, लौंग, येसव १-१ तोला लेकर वारीक चूर्णकर मिलाकर रखदे। इसमेंसे, २-२ तोले खाकर ऊपरसे दूध पीनेसे षण्ढत्व, धातुक्षीणता, प्रमेह रक्तपित्त, प्रदर, क्षय, हाथपैरोंकीजलन, अम्लपित्त, तमाम शरीरका दाह, पाण्डुरोग और मन्दाग्नि इनसवको यह नष्ट करताहै ॥ २१० ॥

२११ पूर्णकलावटी

रसं गन्धं घनं लौहं धातकीपुष्पविल्वकम्।
विषं कुटजवीजञ्च पाठाजीरकधान्यकम् ॥ ८९३ ॥
रसाञ्जनं टङ्कणञ्च शिलाजतु पलं तथा।
पलं जातीफलं मुस्ता प्रत्येकं तोलकत्रयम् ॥ ८९४ ॥
भेकपर्णी पञ्चमूली वलाकञ्चटदाडिमम्।
शृङ्गाटं केशरं जम्बू दधिमस्तु जयन्तिका ॥ ८९५ ॥
केशराजो भृङ्गराजः प्रत्येकं तोलकद्वयम्।
द्विमाषा वटिका कार्या तक्रेण परिपेषिता ॥ ८९६ ॥
इयं पूर्णकला नाम ग्रहणीगदनाशिनी।
शूलघ्नी दाहशमनी वह्निदा ज्वरनाशिनी ॥
भ्रमच्छर्दिच्छेदकरी सङ्ग्रहग्रहणीञ्जयेत् ॥ ८९७ ॥

र. सं, र. क., ग्रहण्याम्।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, अभ्रक और लोहभस्म, धावड़ीके फूल, वेलगिरी, शुद्धवछनाग, इन्द्रजव, पाठा, जीरा, धनिया, रसौत, भुनासुहागा येसव ३-३ तोले, शिलाजीत, जायफल, नागरमोथा ये प्रत्येक १-१ पल, ब्राह्मी, लघुपञ्चमूल (शालपर्णी, पृश्निपर्णी, भटकटैया, वनभाटा और गोखरू), वला, चौलाईकी जड़, अनारकाछिलका, सिघाड़े, केशर, जामुनकी छाल, दहीका पानी, जैत, स्याह और सफेद भगरा, येप्रत्येक २-२ तोले लेकर सवका वारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर छाछसे ४ पहर घोटकर २-२ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली छाछकेसाथ लेनेसे ग्रहणी, शूल, दाह, मन्दाग्नि, ज्वर, भ्रम, वमन येसव नष्टहोते है ॥ २११ ॥

२१२ पूर्णचन्द्रोदयरसः (प्रथमः)

शुद्धञ्च तालकं लौहं गगनञ्च पलंपलम्।
कर्पूरं पारदं गन्धं प्रत्येकं वटकोन्मितम् ॥ ८९८ ॥
जातीकोषो मुरा पत्रं शटी तालीसकेशरम्।
व्योषं चोचं कणामूलं लवङ्गं पिचुसम्मितम् ॥ ८९९॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय गुरुदेवद्विजार्चकः।
नानारूपमतीसारं ग्रहणीं सर्वरूपिणीम् ॥ ९०० ॥
अम्लपित्तं तथा शूलं शूलञ्च परिणामजम्।
रसायनवरश्चाऽयं वाजीकरण उत्तमः ॥ ९०१ ॥

र सं, र चं, अतिसारे।

भाषा—रसमाणिक्य, लोह और अभ्रकभस्म १-१ पल, शुद्धकपूर, पारा और गन्धक १-१ कर्ष, जायफल, जावित्री, मुरामासी, पत्रज, कचूर, तालीसपत्र, केशर, सोंठ, मिर्च, पीपल, तज, पिपलामूल, लौंग, ये प्रत्येक एककर्ष लेकर सबका वारीक चूर्णकर एकजगह मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती उचिताऽनुपानकेसाथ देनेसे नानाप्रकारका अतिसार, सङ्ग्रहणी, अम्लपित्त, शूल, परिणामशूल, ये सव नष्टहोतेहै। यह रसायनहै और उत्तम वाजीकरणहै ॥ २१२ ॥

२१३ पूर्णचन्द्रोदयरसः (द्वितीयः)

गन्धताम्ररसटङ्कणनागं
तारकाञ्चनसुमाक्षिकयुग्मम्।
कान्तविद्रुमसुवङ्गमौक्तिकं
तीक्ष्णलोहमृगनाभिरभ्रकम् ॥ ९०२ ॥

कुङ्कुमताररजचन्दनचन्द्र-
मालतीपुष्पसुमर्दितयामम् ।
वल्लमात्ररसयोजितयुक्ति-
रार्द्रकस्वरसपानविशेषम् ॥ ९०३ ॥
श्वासकासमथपीनसरोगं
मेहकुष्ठरुधिराऽऽमयनाशम् ।
राजयक्ष्महरदेहसुवर्ण-
दीप्तिकारकमिदं हि सुवृष्यम् ॥ ९०४ ॥
पूर्णचन्द्रोदयो नाम रसः सर्वार्थसिद्धिदः ।
युक्त्या सुयोजितः पुंसां नानाऽऽतङ्कविनाशनः॥९०५॥

रसायन सं , वै चि. (ल) सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्धगन्धक, पारा और सुहागा, ताम्र, नाग, रजत, सुवर्ण, सोनामाखी, कांसामाखी, कान्तलोह, मूंगा, वङ्ग, मोती, फोलाद, अभ्रक इनसवकीभस्में, कस्तूरी, केशर, रूपामाखी, सफेदचन्दन, शुद्धकपूर येसव समभागलेकर वारीक चूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर मालतीपुष्परससे एक पहर मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली अदरखवगैरह उचिताऽनुपानकेसाथ लेनेसे श्वास, कास, पीनस, प्रमेह, कुष्ठ, रक्तविकार, राजयक्ष्म, धातुक्षीणता इनसवको नष्टकर शरीरमें सुवर्णके सदृश कान्तिको पैदा करताहै । अनुपानादि युक्तिविशेषसे यदि इसका प्रयोग कियाजायतो यह नानाप्रकारके रोगोंको दूरकरताहै ॥ २१३ ॥

२१४ पूर्णचन्द्रोदयसिन्दूरम्

तुल्यं तुल्यं रसं गन्धं खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
कपित्थमूलसारेण मर्दितञ्च दिनत्रयम् ॥ ९०६ ॥
वटिकां छायया शुष्कां भाण्डमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य वालुकाभिः प्रपूरयेत् ॥९०७॥
दीप्ताऽग्नौ च द्विपडयामं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
कपित्थमूलसारेण त्रिदिनं मर्दयेत्क्रमात् ॥ ९०८ ॥
बिल्वमूलकपायेण मर्दयेत्त्रिदिनं पुनः ।
चातुर्जातककर्पूरलवङ्गकुसुमान्वितम् ॥ ९०९ ॥
सर्वं रससमञ्चैव मेलयित्वाऽथ चूर्णकम् ।
लाजचूर्णं सितामिश्रं मधुना सह सेवयेत् ॥ ९१० ॥
वल्लद्वयमितः सूतो वमनस्तम्भनस्तथा ।
कासादिपञ्चछर्दीनामरुचेर्नाशकः परः ॥ ९११ ॥
हृद्रोगं स्वरभङ्गञ्च मन्दाग्निञ्च निवारयेत् ।
पूर्णचन्द्रोदयो नाम निर्मितः शूलपाणिना ॥ ९१२ ॥

व रा , वै. चि , छर्द्याम् ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर कैथकी जड़की छालके रससे ३ रोज़ मर्दनकर छोटी छोटी गोलिया वनाकर सुखाले और ६–७ कपड़मिट्टीकीहुई आतशी शीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रखकर १२ पहरकी तेज अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर कैथकीजड़की छाल और वेलकी जड़ इनके स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ रोज़ मर्दनकर तज, पत्रज, इलायची, नागकेशर, शुद्धकपूर, लौंग इनसवका वारीक चूर्णकर रसकी वरावर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ६–६ रत्तीकी मात्रा लाजचूर्ण, मिश्री और मधुकेसाथ सेवन करनेसे वमन, कास, सव प्रकारकी छर्दि, अरुचि, हृद्रोग, स्वरभङ्ग, मन्दाग्नि इन सव रोगोंको यह नष्ट करताहै ॥ २१४ ॥

२१५ पूर्णचद्रोरसः (बृहन्) (प्रथमः)

द्विकर्षं शुद्धसूतस्य गन्धकञ्च द्विकार्षिकम् ।
लोहभस्म पलञ्चाऽभ्रं जारितञ्च पलांशिकम् ॥९१३॥
द्वितोलं रजतञ्चैव वङ्गभस्म द्विकार्षिकम् ।
सुवर्णं तोलकञ्चैव ताम्रं कांस्यञ्च तत्समम् ॥ ९१४ ॥
जातीफलञ्चेन्द्रपुष्पमेलाभृङ्गञ्च जीरकम् ।
कर्पूरं वनिता मुस्तं कर्षकर्षं पृथक् पृथक् ॥ ९१५ ॥
सर्वं खल्वतले क्षिप्त्वा कन्यारसविमर्दितम् ।
भावयित्वा वरातोयैः केबुकानां रसेन च ॥ ९१६ ॥
एरण्डपत्रैरावेष्ट्य धान्ये रात्रिदिनोषितम् ।
उद्धृत्य मर्दयित्वा तु वटिकां चणसम्मिताम् ॥९१७॥
खादेच्च पर्णखण्डेन संयुक्तां व्याधिनाशिनीम् ।
सर्वव्याधिविनाशाय काशीनाथेन भाषितः ॥ ९१८ ॥
पूर्णचन्द्ररसो नाम सर्वरोगेषु योजयेत् ।
वल्यो रसायनो वृष्यो वाजीकरण उत्तमः ॥ ९१९ ॥
अयमष्ठीलिकां हन्ति कासश्वासमरोचकम् ।
आमशूलं कटीशूलं हृच्छूलं पित्तशूलकम् ॥ ९२० ॥
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च ग्रहणीं चिरजामपि ।
आमवातमम्लपित्तं भगन्दरमपि द्रुतम् ॥ ९२१ ॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च प्रमेहं वातशोणितम् ।
नातः परतरः श्रेष्ठोविद्यते वाजिकर्मणि ॥ २२२ ॥
रसस्याऽस्य प्रसादेन नरो भवति निर्गदः ।
मेधाञ्च लभते वाग्मी तुष्टिपुष्टिसमन्वितः ॥ ९२३ ॥
मदनस्य समां कान्तिं मदनस्य समं वलम् ।
गीयते मदनेनैव मदनस्य समं वपुः ॥ ९२४ ॥
प्रियाश्च मदनप्रायाः पश्यन्ति मदनाऽऽकुलम् ।
स्त्रीणां तथाऽनपत्यानां दुर्वलानाञ्च देहिनाम् ॥९२५॥
क्षीणानामल्पशुक्राणां वृद्धानां वातरेतसाम् ।
ओजस्तेजस्करश्चाऽयं स्त्रीषु कामविवर्धनः ॥ ९२६ ॥
अभ्यासेन निहन्ति मृत्युपलितं सर्वामयध्वंसकः,
वृद्धानां मदनोदयोदयकरः प्रौढाङ्गनासङ्गमे ।
नित्यानन्दकरः सुखाऽतिसुखदो भूपैः सदा सेव्यते,
दृष्टः सिद्धफलो रसायनवरः श्रीपूर्णचन्द्रो रसः ९२७

र सं , भै. र , र र , ध , र सु , र चं , व रा , वाजीकरणे ।

टि०—केवुकेतिशब्दो घनाऽन्धकारे पतितोऽस्ति, केचिन्नालीशाक वदन्त्यन्ये क्रमुकमित्यादीत्यादि भ्रमजनकानि वचनानि लिखितवन्त । परन्तु क्रमुकनामसु नालीनामसु च केवुकेति नाम न दृश्यतेऽत तदेतो न हृदयङ्गमतामामादयति । भावप्रकाशेन कन्देषु कसेरुकन्दात्पूर्वं दत्तमनो

विज्ञायते जलवर्तिपदार्थोऽयम्। गुणदृष्ट्या स्वल्पकमलाकारपत्र्या जलवृष्ट्या वर्तते यत्फल मुकुलाकार तदन्तर्वर्तीनि रससदृशानि असंख्येयानि बीजानि परिपूरितानि भवन्ति तानिचाऽऽस्वादे मधुराण्यति स्निग्धानि च भवन्ति। अत एव गुर्जरदेशे तत्फलाना घीतेलेति नाम प्रसिद्धम्। तदेव वस्तु ग्रहीतव्यमित्यस्माकं सम्मति।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक २-२ तोले, लोह और अभ्रकभस्म ४-४ तोले, चादी और वङ्ग भस्म दो २ तोले, सुवर्ण, ताम्र, कास्य इनसवकी भस्में, जायफल, लौग, इलायची, भंगरा, जीरा, कपूर, वनिता (प्रियङ्गु अथवा अनन्तमूल), नागरमोथा ये प्रत्येक १-१ तोला लेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर घीकुंआर, त्रिफला और केवुक (घीतेला गु०) के रस अथवा क्वाथोंसे १-१ रोज मर्दनकर एरण्डपत्रोंमें लपेटकर धान्यराशिमें रखदे। चौथेरोज निकालकर एरण्डपत्रोंको फेंकदे और गोलेको मर्दनकर चने वरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली पानके साथ खानेसे अष्ठीलिका, कास, श्वास, अरुचि, आमशूल, कटिशूल, हृच्छूल, पित्तशूल, अग्निमान्द्य, अजीर्ण, पुरानी सङ्ग्रहणी, आमवात, अम्लपित्त, भगन्दर, कामला, पाण्डुरोग, प्रमेह, वातरक्त इत्यादि समस्तरोगोंको दूरकरताहै। यह उत्तमवृष्य, वाजीकरण और रसायनहै वन्ध्यास्त्रियोंको पुत्र पैदा करताहै। दुर्वल, क्षीण, अल्पशुक्र, वातशुक्र इनसवको दूरकरताहै। खानेसे वहुतही शीघ्र अपना प्रभाव दिखाताहै इसलिये यह राजालोगोंके सेवन करने योग्यहै॥ २१५॥

२१६ पूर्णचन्द्रोरसः (द्वितीयः)

मृतसूताऽभ्रलोहं वै शिलाजतुविडङ्गकम्।
तार्प्यं क्षौद्रघृतं तुल्यमेकीकृत्य विमर्दयेत्॥ ९२८॥
पूर्णचन्द्ररसो नाम्ना माषैकं भक्षयेत्सदा।
शाल्मलीपुष्पचूर्णञ्च क्षौद्रैः कर्षं पिबेदनु॥ ९२९॥
दुर्वलो वलमाप्नोति मासैकेन यथा शशी।
कृशानां वृंहणं देयं सर्वं पानान्नभेषजम्॥
निद्रा चैव दिवा रात्रौ छागमांसाशनं तथा॥ ९३०॥

र. र स., र स., र सु, र क, भै र, रसायनस, र चं, चि क, व रा, र र दी, र कौ, ना वि, रसपारिजात, र क. ल (ना) रसायनाऽधिकारे।

भाषा—पारा, अभ्रक, लोह इनकीभस्में, शिलाजीत, विडङ्ग, शुद्धसोनामाखी, मधु और घी सव समभाग लेकर मर्दनकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ माशा खाकर सेमलके फूलोंका चूर्ण १ तोला मधुके साथ चाटनेसे एक महीने में जिसतरह चन्द्रमा वढताहै उसीतरह दुर्वल आदमी वलवान् होजाताहै। कृश आदमियोंके लिये वृहण अन्नपान देना और वकरेका मास खानेको देना, रातदिन सोनेकी छुट्टी रखनी चाहिये॥ २१६॥

२१७ पूर्णचन्द्रोरसः (तृतीयः)

सूतं गन्धञ्चाऽश्वगन्धां गुडूचीं
यष्टीतोये मर्दयेदेकघस्रम्।
क्षुद्रं शङ्खं मौक्तिकं लोहकिट्टं
भस्मीभूतं सूततुल्यञ्च दद्यात्॥ ९३१॥
भूकूष्माण्डे वासरं तद्विमर्द्य
गोलं कृत्वा भूधरे तं पुटेत्तु।
चूर्णं कृत्वा नागवल्लीरसेन
दद्यादेवं मर्दयित्वैकयामम्॥ ९३२॥
मध्वाज्याभ्यां पूर्णचन्द्रो रसेन्द्रः
पुष्टिं वीर्यं दीपनञ्चैव कुर्यात्।
प्रायो योज्यः पित्तरोगे ग्रहण्या-
मर्शोरोगे पित्तजे वोलयुक्तः॥ ९३३॥
स्त्रीणां रोगे शाल्मलीनीरयुक्तो
शैलेयं वा शर्करातुल्यभागम्।
शुद्धं गन्धं वाजिगन्धाञ्च यष्टीं
पक्त्वा दुग्धे तच्च कार्श्ये ददीत॥ ९३४॥
एवञ्चाऽऽज्यं पाचयित्वा प्रदद्या-
द्यद्वा यष्टी मागधी चाऽश्वगन्धा।
मध्वाज्याभ्यां शाल्मलीसत्त्वमुक्ताः
शम्बूकैर्वा भर्जितैराज्यमिश्रैः॥ ९३५॥

र दी, र. चि, र. सु, ध., यो म, रसायनसं, र. क, र. र, र र स, र च, नि. र, वै. चि, र का, वाजीकरणे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धककी नीलवर्णकज्जली, असगन्ध और गिलोय समभाग लेकर चूर्णकर मुलहठीके क्वाथमे १ रोज मर्दनकर सखला, मोती और मण्डूरकी भस्म, प्रत्येक पारेकी वरावर डालकर भुंईकोहळाके रससे एकदिन मर्दनकर गोला वनाय भूधरयन्त्रमें पुटदेवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर चूर्णकर पानके रससे एकरोज मर्दनकर भूधरयन्त्रमें पकावे फिर एक पहर मधु और घीमें मर्दनकर १ माशेसे २ माशेतककी मात्रा देनेसे यह पुष्टि और वीर्यको वढाताहै अग्निको दीप्त करताहै। पित्तके रोग, ग्रहणी, पित्तज ववासीर इन सवको नष्ट करताहै। प्राय पित्तप्रधान रोगमें एलुआ (मुसव्वर) के साथ देना। स्त्रीरोगोंमें सेमलकी छालके रसके साथ अथवा पाषाणभेद और शक्कर समभागके साथ देना। कृश आदमीको यह रस देनेके वाद शुद्ध गन्धक, असगन्ध, मुलहठी ये आधेआधे तोले दूधमें पकाकर पिलाना अथवा इनमें घी पकाकर पिलाना अथवा मुलहठी, पीपल, असगन्ध समभागका चूर्ण १ तोला मधु और घीके साथ ऊपरसे चटाना। अथवा सेमलका मुसला, गिलोयसत्त्व और मोती ३ माशे दूधके साथ देना अथवा घोंघेके कीड़ेको घीमें भूनकर घी सहित खिलाना॥ २१७॥

२१८ पूर्णचन्द्रोरसः (चतुर्थः)

हैमी भूतिः सूतभूत्या समाना
तद्वद्वाला गन्धकं मौक्तिकञ्च।
घस्रैकं तं शृङ्गवेराऽम्बितोयै-
र्मर्द्यः शोष्यो वस्त्रमृद्भ्यां प्रवेष्ट्य॥ ९३६॥

भाण्डके सलवणके क्षिपेच्च त-
द्गोमयेन परिवेष्ट्य भाजनम् ।
शोषयेच्च पुटयेत्तृणाऽग्निना
पूर्णचन्द्र इति जायते रसः ॥ ९३७ ॥
यक्ष्माणं जयति प्रसह्य चपलाक्षौद्राऽन्वितः शूलनुत्,
सामुद्रेण ससर्पिषा ससितया धात्र्याऽम्लपित्ताऽपहः।
कुण्डल्यम्बुयुतो जयत्यपि महातापश्च पित्तोद्भवं,
शाल्मल्यम्बुगुडूचिकाम्बुसहितः पाण्डुं सितासंयुतः॥
पुष्टिदृष्टिबलवीर्यवर्धनो
जायतेऽखिलगदाऽपहारकः ।
स्त्रीगदापहरणः शिशुरक्षा-
कारकः स्वगदजानुपानकैः ॥ ९३९ ॥

र, र. शं, र. प्र सु, र.दी, र. चं, वाजीकरणे । रसचण्डांशुरसप्रकाशसुधाकरयो विषं मौक्तिकञ्च न दृश्यते तत्स्थाने नागो दृश्यते, भावनाया केवलं चित्रकेण मर्दनम् ।

भाषा—सुवर्ण, पारा इनकी भस्में, शुद्धवछनाग और गन्धक, मोतीभस्म सब समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर अदरख और चित्रकमूलके रस अथवा क्वाथसे १-१ दिन मर्दनकर गोला वनाय सुखाकर ४ तह कपड़ा लपेटकर ऊपरसे १-२ कपड़मिट्टी करके खूब सुखाले फिर लवणके भीतर वन्दकर गोवरसे वर्तनके मुंहको वन्दकरके सुखाले और निर्वात स्थानमें इतने घासकी अग्नि दे कि वह नमक गरम होकर कपड़ा जलजाय । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ अथवा २ रत्तीकी मात्रा पीपल और मधुके साथ देनेसे यह यक्ष्माको दूर करताहै। सैन्धव, घी और शक्करके साथ देनेसे शूलको मिटाता है, आवलेके रससे अम्लपित्तको दूर करताहै । गिलोयके हिम अथवा क्वाथके साथ देनेसे पित्तजनित घोर दाहको शान्त करताहै । सेमलकी छाल और गिलोयके काढ़ेके साथ देनेसे पाण्डुको दूर करताहै । शक्करके साथ देनेसे पुष्टि, नेत्रज्योति, वल, वीर्य इनको वढ़ाताहै । अपने २ अनुपानके साथ देनेसे स्त्री और वालकोंके रोगोंको दूर करताहै ॥ २१८ ॥

२१९ पूर्णचन्द्रोरसः (पञ्चमः)

चपला पर्पटीयुक्ता जम्बीररसमर्दिता ।
तयो र्द्विगुणमामिश्र्य शुक्तिचूर्णं विचक्षणैः ॥९४०॥
कुक्कुटीपुटपाकेन तद्रसम वल्लमात्रकम् ।
प्रयोगो ज्वरनाशाय पूर्णचन्द्रोयमीरितः ॥ ९४१ ॥

र.क.यो., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—पीपल और रसपर्पटी दोनों समभाग लेकर कज्जली वनाय जंभीरीके रससे मर्दनकर दोनोंसे दूना मोतीकी सीपका चूना मिलाकर खरलकर गोला वनाय कुक्कुटीपुटसे पाचनकर ३ रत्तीकी मात्रा उचितानुपानके साथ देनेसे यह ज्वरको दूरकरताहै ॥ २१९ ॥

२२० पूर्णाऽभ्रकरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धमभ्रकञ्च मनःशिलाम् ।
चूर्णितं वरुणद्रावै मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥ ९४२ ॥
काचकूप्यां निवेश्याऽथ वालुकायन्त्रके पचेत् ।
षड्यामान्ते समुद्धृत्य सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ॥
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं शीतपैत्यनिवारकम् ॥ ९४३ ॥

वै चि, व. रा., पित्तरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक वरावरलेकर नीलवर्णकज्जलीकरले । फिर अभ्रकभस्म और शुद्ध मैनसिल वरावर २ मिलाकर वरुणके अङ्गस्वरससे दोदिन मर्दनकर गोला वनाय आतशी शीशीमें रखकर वालुकायन्त्रमें रक्खे और ६ पहरकी अग्नि देकर स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालले । इसकी २ रत्तीकी मात्रा उचिताऽनुपानके साथ देनेसे शीतपित्त निवृत्त होताहै ॥ २२० ॥

२२१ पूर्णप्रतिज्ञरसः

सूतं गन्धकतालकं मणिशिला शुल्वं मृतं हिङ्गुलं,
भागैकं निखिलं समांशरसकं खल्वे विमर्द्याऽम्भसा ।
निर्गुण्डीसुरसाम्भसाऽऽर्द्रकरसै र्देयं द्विगुञ्जोन्मितं,
तारुण्याऽखिलतापजे च विषमे जीर्णज्वरे धातुगे ॥
दोषे चैव हि सन्निपातवहुले सामे निरामे सति
हन्याद्द्वे घटिकाऽर्द्धकेन सकलान् पूर्णप्रतिज्ञो रसः ९४४

रसायनसं., रससागर, ज्वराऽधिकारे । रससागरे वृद्धवसन्तमालतीति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल, शिलाजीत अथवा मैनसिल, ताम्र और शिगरिफभस्म १-१ भाग लेकर सवकी वरावर शुद्ध खपरिया डालकर पानीसे घोटकर २-२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे २-२ गोली निर्गुण्डी, तुलसी और अदरखके रसोंके साथ देनेसे तरुणज्वर, विषम, जीर्ण, धातुग, सन्निपात, साम और निराम ज्वर इन सवको यह नष्टकरताहै ॥ २२१ ॥

२२२ पूर्णेन्दुरसः (प्रथमः)

शाल्मल्युत्थै र्द्रवै मर्द्यं पक्षैकं शुद्धपारदम् ।
यामद्वयं पचेच्चाऽपि वस्त्रे वद्ध्वाऽथ मर्दयेत् ॥ ९४५ ॥
दिनैकं शाल्मलीद्रावै र्मर्दयित्वा वटीकृतम् ।
वेष्टयेन्नागवल्ल्याऽथ निक्षिपेत्काचभाजने ॥ ९४६ ॥
भाजनं शाल्मलीद्रावैः पूर्णं यामद्वयं पचेत् ।
वालुकायन्त्रमध्यस्थं द्रवे जीर्णे समुद्धरेत् ॥ ९४७ ॥
द्विगुञ्जं भक्षयेत्प्रात र्नागवल्लीदलान्तरे ।
मुसलीं ससितां क्षीरं पलैकं पाययेदनु ॥ ९४८ ॥
रसः पूर्णेन्दुनामाऽयं सम्यग्वीर्यकरो भवेत् ।
कामिनीनां सहस्रैकं नरः कामयते ध्रुवम् ॥ ९४९ ॥

यो. र., वृ यो. त., र मं., ध, र. कौ, रसायनसं., र र, वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्धपारेको सेमलकीछालके पानीसे १५ दिन तक मर्दनकर गोली वनाय वस्त्रमें बाधकर २ पहर सेमलकी छालके-रसमें दोलायन्त्रसे स्वेदनकरे। फिर सेमलके रससे मर्दनकर गोलीवनाय पानमें लपेटकर आतशी शीशीमें रखकर सेमलका-रस भरदेवे और वालुकायन्त्रमें रखकर दोपहरतक पकावे, द्रव-जीर्ण होनेपर निकालले। इसमेंसे २ रत्ती पानके रसके साथ देकर मुशली, शक्कर और दूध १ पल ऊपरसे पिलावे। इसके सेवनसे वीर्य स्थिर होताहै और वहुतसी स्त्रियोंके साथ रमण करसक्ताहै ॥ २२२ ॥

२२३ पूर्णेन्दुरसः (द्वितीयः)

क्षारैश्च लवणै र्वह्निराजिकाभ्याञ्च काञ्जिकम्।
दत्त्वा दत्त्वा दिनं सम्यक् पारदं मर्दयेत्ततः॥ ९५० ॥
क्षालयेत्काञ्जिकैरेव मर्दयेत्कटुकैरपि।
क्षालयेत् श्लक्ष्णसम्पिष्टराजिकाविषहिङ्गुजाम् ॥९५१॥
मूषां कृत्वा तदन्तःस्थं सूतं तं वस्त्रवेष्टितम्।
स्वेदयेत्काञ्जिके दोलायन्त्रे तं क्षालयेत्पुनः ॥ ९५२ ॥
गुरुदृष्टाऽनुमार्गेण शिवादिकृतपूजनः।
अङ्घ्रिणा तारपत्रेण रसपिष्टिं विधाय च ॥ ९५३ ॥
तां पिष्टिं स्वेदयेद्रम्भागर्भे स्वल्पेन वह्निना।
ततस्तां स्वेदयेदेतै र्दोलायन्त्रगतां पुनः ॥ ९५४ ॥
गुडूचीदुग्धशम्बूकच्छागरक्तैश्च गोक्षुरैः।
रम्भाफलवरीहस्तिपिप्पलीकोकिलाक्षकैः ॥ ९५५ ॥
धत्तूरपत्रमूलोत्थैः क्वाथः खाखसवल्कलैः।
अहिफेनजयानीरैः क्वाथैरग्निसमुद्भवैः ॥ ९५६ ॥
अपामार्गद्वयक्वाथै र्वाट्यालकभवैरपि।
गोकर्णीतिलपर्णी च निर्गुण्डी काकमाचिका ॥९५७॥
राजिका छिक्किका गुञ्जा खुरासानी तदुद्भवैः।
अश्वाऽरिभृङ्गमण्डूकीजयन्तीमुनिवासकैः ॥ ९५८ ॥
नागार्जुनीकासमर्दीब्राह्मीतुलसिकारसैः।
दशमूलभवैः क्वाथैरर्कमूलदलोद्भवैः ॥ ९५९ ॥
पञ्चकोलभवैः क्वाथैस्तथा ज्योतिष्मतीभवैः।
अर्कपुष्पीशङ्खपुष्पीधातकीभार्ङ्गिकोद्भवैः ॥ ९६० ॥
मातुलोद्भवतैलेन मर्दनं सप्तवासरान्।
दृढेन वाससा गोलं वद्ध्वा सम्पीडयेद् दृढम् ॥९६१॥
गतस्नेहं विमुच्याऽथ पूर्ववत्स्वेदनं चरेत्।
पुरन्दरभवैः पुष्पैः सोपर्णै र्जातिजातकैः ॥ ९६२ ॥
चातुर्जातै र्जातिपत्रैराकारकरभैरपि।
वानरीशर्करामापैः पूर्णेन्दुः स्याद्रसोत्तमः ॥ ९६३ ॥
कार्पासमज्जया सेव्यो वल्लोऽस्य सितया सह ।
यस्य सन्ति गृहे लक्षं पीनोन्मत्तपयोधराः ॥ ९६४ ॥
रसायनसं, र र दी, र क, वाजीकरणे।

भाषा—क्षार, लवण, चित्रक, राई और काञ्जी डालकर पारेको मर्दनकर काञ्जीसे धोकर साफ करले फिर त्रिकटुसे मर्दनकर धोडाले। इसके वाद खूब वारीक पिसीहुईराई, वछ-नाग और हींगकी मूषामें रखकर वस्त्रसे वेष्टित करके काञ्जिकपूर्ण दोलायन्त्रमें ८ पहर स्वेदनकर साफकरले फिर सम्प्रदाय विधिसे शिवादिकोंका पूजनकर पारेसे चतुर्थांश चांदीके वर्क डालकर पिष्टी वनाले फिर इस पिष्टीको केलेकेकन्दमें रखकर वहुतमन्द अग्निसे स्वेदन करे अर्थात् वहुत थोडी अग्नि देवे जिसमें कि केलेका कन्द भुनजाय पर जले नहीं। फिर गिलोय, दूध, सखलेके कीडोंका मास और वकरेका रक्त, गोखरू, केलेका फल, शता-वरी, गजपीपल, तालमखाना, धतूरेके पत्ते और जड़, पोस्त, अफीम, भाग, चित्रक, दोनों अपामार्ग, खरेटी, गोकर्ण, हुरहुरके पत्ते, निर्गुण्डी, मकोय, राई, नकछिकनी, सफेदगुञ्जा, खुरासानी अजवाइन, कनेर, भंगरा, ब्राह्मी, जेंत, अगस्त्य, अडूसा, छोटी दूधी, कसौंदी, ब्राह्मी, तुलसी, दशमूल, आककी जड़ और पत्ते, पञ्चकोल (पीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ), मालकागनी, अर्कपुष्पी, शङ्खपुष्पी, धावड़ी, भारङ्गी, इनके यथासम्भव अङ्गस्वरस अथवा क्वाथोंसे दोलायन्त्रमें क्रमसे १–१ रोज स्वेदनकर धतूरेके वीजोंके तेलमें ७ रोज़ लगातार मर्दनकरे फिर ४ तह कपडेमें उठाकर खूबजोरसे दवाकर तैल निकाल दे और साफ़करले। इसके वाद सफेद अर्जुन (सारढोल) कोरइयाके फूल, मरिच, जायफल, तज, पत्रज, इलायची, जावित्री, अकलकरा, केंवाच, शक्कर, मानकन्द अथवा उड़द इनके १६ गुने कल्कमें उस गोलेको वन्दकर भूधरयन्त्रमें स्वेदन करे। यह **पूर्णेन्दुरस** तैयार हुआ। इसमेंसे ३–३ रत्तीकी मात्रा ३ माशे कपासकी मज्जाके साथ सेवन करनेसे वहुतसी स्त्रियोंको सन्तुष्ट कर सक्ताहै। तत्तद्रोगोचिताऽनुपानके साथ देनेसे यह तमाम रोगोंको दूर करताहै ॥ २२३ ॥

२२४ पूर्णेन्दुरसः (तृतीयः)

शुद्धसूतत्रयो भागा भागैकं ताम्रचूर्णकम्।
कृत्वा पिष्टीं निरुद्ध्याऽथ रम्भाकन्दोदरे पुनः ॥९६५॥
मृल्लिप्तं शोषितं पक्त्वा दिनैकं करिषाऽग्निना।
एवं सप्तदिनं पक्त्वा कन्देकन्दे दिनंदिनम् ॥ ९६६ ॥
उद्धृत्य वन्धयेद्वस्त्रे दृढे चैव चतुर्गुणे।
क्षुद्रशम्बूकमांसाक्तं छागरक्तगतं पचेत् ॥ ९६७ ॥
दोलायन्त्रे त्र्यहं यावद्देयं रक्तं पुनःपुनः।
गुडूच्या गजपिप्पल्या कदल्या कोकिलाक्षकैः ॥९६८॥
गोक्षुरीवानरीमूलजातीमूलभवैर्द्रवैः।
पाचयेत्तत्कषायैर्वा दोलायन्त्रे दिनत्रयम् ॥ ९६९ ॥
ततः क्षीरे सितायुक्ते तद्वत्पक्त्वा दिनावधि।
उद्धृत्य मुशलीक्वाथै मर्द्यं यामचतुष्टयम् ॥ ९७० ॥
रसः पूर्णेन्दुनामाऽयं खादेन्मांससितायुतम्।
गोक्षुरो वानरीवीजं गुडूची गजपिप्पली ॥ ९७१ ॥
कोकिलाक्षस्य वीजानि मज्जा कार्पासवीजजा।
शतावरी च रम्भायाः फलं सर्वं समं भवेत् ॥९७२॥

सर्वतुल्या सिता योज्या मधुना लोडितं लिहेत् ।
पलार्द्धमनुपानं स्यात्ततः पेयं गवां पयः ॥
कामिनीनां सहस्रैकं रमते कामदेववत् ॥ ९७३ ॥

र. खं., भै सा., यो म., र सि., रसायने वाजीकरणेच ।

टि०—अन्यग्रन्थेषु तारे पिष्टि सम्पादिना, रसायनखण्डे तु तारस्थाने ताम्र दृश्यते तल्लेखकप्रमादाद्वा स्याज्ज्ञानपूर्वक वा स्यादिति न निश्चीयते । परन्तु ताम्रेण सम्पादितपिष्टान्तिभ्रान्त्यादिपर भविष्यति, अतस्तारेणैव सम्पादनीयमिति युक्त प्रतिभाति । र. सि अस्मिन् विच्छित्र' पाठ ।

भाषा—शुद्धपारेके तीनभागोंमें १ भाग शुद्धताम्रका वारीक चूर्ण डालकर पिष्टी वनाकर केलेके कन्दमें रखकर उसीकी डाटसे वन्दकर २–३ कपड़मिट्टी करके सुखाले और एकदिन करीषकी अग्निमें पकावे । इसतरह ७ दिन नये नये कन्दोंमें रखकर स्वेदनकरे । फिर ४ तह मोटेवस्त्रमें वाधकर पोटली वनाय घोंघेका मास मिलेहुए वकरेके रक्तमें दोलायन्त्रसे ३ रोज़ तक पकावे, रक्त वारम्वार देताजाय । इसके वाद गिलोय, गजपीपल, केला, तालमखाना, गोखरू, केवाचकी जड़, चमेलीकी जड़, शक्करडालाहुआ दूध इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवाक्वाथोंसे १–१ रोज़ स्वेदनकर मुसलीके क्वाथसे १ रोज़ मर्दन करनेसे **पूर्णेन्दुरस** तैयार होगा । इसमेंसे १ या २ रत्तीकी मात्रा मास और शक्करके साथ खाकर गोखरू, केवांचके वीज, गिलोय, गजपीपल, तालमखाना, कपासकी मज्जा, शतावर, पका केला सव समभागलेकर सवकी वरावर शक्कर मिलाकर मधुसे चाटन वनाकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ तोले खाकर ऊपरसे गायका दूधपीवे । इसके सेवनसे हजारों स्त्रियोंको कामदेवकी तरह सन्तुष्ट करसक्ताहै । टि०—इसकी पिष्टी वनानेमें रसायनखण्डने यद्यपि ताम्र दियाहै परन्तु और ग्रन्थोंमें ताम्रकी जगह तार (चादी) मिलताहै । इसलिये तारके स्थानमें ताम्र होना लेखक प्रमादसेभी होसक्ताहै । कदाचित् ज्ञानपूर्वक लिया होतो तांवेका चूर्ण नहीं किन्तु ताम्रकी श्वेतभस्मका प्रयोग करना ॥ २२४ ॥

२२५ पूर्णेन्दुरसः (चतुर्थः)

पिष्टो रसः सहेमाऽङ्घ्रिः स्वेद्यो रम्भाऽङ्घ्रिजै रसैः ।
तत्पिष्टं वस्त्रदोलायां यन्त्रे पाच्यं पृथग्दिनम् ॥९७४॥
केतकीशाल्मलीदुग्धमुशलीक्षौद्रजैः द्रवैः ।
वानरीगोक्षुरच्छिन्नाशिवाकदलिधात्रिजैः ॥ ९७५ ॥
पूर्णेन्दुः स्यात्त्रिगुञ्जोऽयं कुर्यात्स्वास्थ्यन्तु वल्लयुक् ।
पुष्टिदस्तुष्टिदः कामवृद्धिदः कान्तिवर्द्धनः ॥ ९७६ ॥
सेव्यं तालीं वरीं कच्छूं वाजिगन्धां पुनर्नवाम् ।
श्वदंष्ट्रां शर्करां रात्रौ शृतक्षीरेण पाययेत् ॥ ९७७ ॥

ना वि., रसायने ।

भाषा—शुद्धपारेमें शुद्धसुवर्णका चतुर्थांश चूर्ण या वर्क मिलाकर पिष्टी वनाकर केलेके कन्दके रसमें स्वेदनकरे । इसके वाद केवड़ा, सेमल, गोदुग्ध, मुसली, मधु, केवाच, गोखरू, गिलोय, हर्रे, केला, आवला इनके रसोंमें १–१ रोज़ स्वेदन-करनेसे यह रस तैयारहोगा । इसमेंसे ३–३ रत्ती खस, मुसली, शतावर, केवांच, असगन्ध, पुनर्नवा, गोखरू, शक्कर इनको डालकर पकाए हुए दूधके साथ देनेसे पुष्टि, हर्ष, काम और कान्ति वढतेहै ॥ २२५ ॥

२२६ प्रचण्डखेचरी गुटिका

चूर्णमश्वखुरस्यैव बुभुक्षिते समं क्षिपेत् ।
त्रिदिनं मातुलुङ्गाऽम्लैस्ततस्सर्वं मर्दयेद् दृढम् ॥९७८॥
सूततुल्यं मृतं वज्रं तस्मिन् क्षिप्त्वाऽथ मर्दयेत् ।
तप्तखल्वे दिनं चाऽम्लैस्तद्गोलं चाऽन्धितं पुटेत्॥९७९॥
दिनैकं भूधरे यन्त्रे भागैकं पूर्वपारदम् ।
क्षिप्त्वा तस्मिन् दृढं मर्द्यं मातुलुङ्गद्रवैर्दिनम् ॥९८०॥
रुद्ध्वाऽथ पूर्ववत्पक्त्वा पुनर्देयश्च पारदः ।
मर्द्यं पाच्यं यथापूर्वमेवं कुर्याच्च सप्तधा ॥ ९८१ ॥
रसं पुनःपुनर्दत्त्वा स्यादेवं भस्मसूतकः ।
योजयेत्सर्वरोगेषु जरामृत्युहरो भवेत् ॥ ९८२ ॥
भागैकं नागचूर्णस्य भागैकं पूर्वभस्मनः ।
द्रुतसूतस्य भागैकं खोटं कुर्याच्च पूर्ववत् ॥ ९८३ ॥
तद्ध्माप्यं गते नागे द्रावितं जारयेत्पुनः ।
पूर्ववल्लोहरत्नान्तं जीर्णे वद्धा स्थिता मुखे ॥ ९८४ ॥
प्रचण्डखेचरी नाम्नी गुटिका खे गतिप्रदा ।
पूर्ववल्लभते वीर्यं फलमत्यन्तदुर्लभम् ॥
निर्गुण्डीमूलचूर्णन्तु कर्षं तक्रैः पिबेदनु ॥ ९८५ ॥

र खं, रसायने ।

भाषा—वुभुक्षित पारेमें घोड़ेके खुरका चूर्ण समभाग डालकर विजोरेके रससे तीनरोज़ मर्दनकरके चौथे रोज़ पारेके वरावर हीरेकी भस्म तप्तखरलमें डालकर विजोरेके रससे १ रोज़ मर्दनकर गोला वनाय अन्धमूषामें वन्दकर १ दिन भूधरयन्त्रमें पकाकर एकभाग वुभुक्षित पारेका देकर एकदिन पूर्ववत् मर्दनकर गोला वनाकर एकदिन भूधरयन्त्रमें पकावे । ऐसे ७ वार करनेसे यह प्रचण्डखेचरी गुटिका तैयार होगी । इसमेंसे १–१ रत्ती तत्तद्रोगहराऽनुपानके साथदेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर जरा और मृत्युको हटातीहै । शुद्ध सीसेका चूर्ण शुद्ध द्रुतपारा और यह भस्म सव समभाग लेकर अन्धमूषामें रखकर धमन करनेसे खोट तैयार होगा । फिर इसको धमनकरके इसमेंसे नागको जलादेना । इसके वाद इसे गलाकर इसमें यथासम्भव लोह और रत्नोंका जारणकर गोली वनाकर मुहमें रखनेसे आकाशगामी होताहै और अत्यन्त दुर्लभ जो वीर्यवृद्ध्यादि गुणहै उनको प्राप्तहोताहै । गोलीको एक घण्टेके वाद मुंहमेंसे निकालकर निर्गुण्डीकी जडका एकतोला चूर्ण छाछके साथ पीवे ॥ २२६ ॥

२२७ प्रचण्डभैरवोरसः (प्रथमः)

कासीसं गन्धकं सूतं दरदं मधुपुष्पकम् ।
गुडूची शाल्मली धान्यं भूनिम्बोऽमरतुम्बुरू ॥९८६॥

तिलमुद्गपटोलानि द्राक्षां कूष्माण्डभस्म च ।
झिण्टिका कन्यका भार्ङ्गी वलाढ्यसमायुतम् ॥९८७॥
सर्वमेतत्समाहृत्य मध्वाज्ये गुटिकाः शुभाः ।
छर्द्यपस्मारमुन्मादवातरोगांश्च दुस्तरान् ॥ ९८८ ॥
कासं श्वासं क्षयं हिक्कां दुर्नामश्च प्रमेहकम् ।
पित्तज्वराऽरुचिश्चैव तिमिरं चक्षुरामयम् ॥
गलरोगेषु सर्वेषु कर्णस्तम्भं हरेद्ध्रुवम् ॥ ९८९ ॥

र र, अपस्मारे ।

भाषा—शुद्धकसीस, गन्धक, पारा और शिगरिफ, महुआ, गिलोय, सेंमलका मुसला, धनिया, चिरायता, देवदारु, तुम्बुल, तिल, मूग, पटोल, द्राक्ष, पेठेकीभस्म, पीला कटसरैया, घीकुआर, भारङ्गी, वला, नागवला, सब समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें शिगरिफ और कसीसको मिलाकर १ पहर घोटकर दूसरी चीजोंका वारीक चूर्ण मिलाकर ४ पहर घोटे। फिर मधु और घी मिलाकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली यथारोगाऽनुपानसे देनेसे छर्दि, अपस्मार, उन्माद, दुस्तर वातरोग, कास, श्वास, क्षय, हिचकी, ववासीर, प्रमेह, पित्तज्वर, अरुचि, तिमिर, चक्षुरोग, गलरोग, कर्णस्तम्भ, इनसवरोगोंको यह नष्ट करताहै ॥ २२७ ॥

२२८ प्रचण्डभैरवोरसः (द्वितीयः)

शुद्धौ सूतेन्द्रगन्धौ च ताम्रभस्म समांशकम् ।
जम्बीरनागवल्ल्युत्थै रसैः सम्यग्विमर्दितम् ॥ ९९० ॥
ताम्रसम्पुटके रुद्ध्वा कुक्कुटाख्ये पुटे पचेत् ।
अर्धाङ्गकम्पवातार्तो भक्षयेत्तु द्विगुञ्जकम् ॥
दाहसन्तापमूर्च्छासु वायौ पित्तसमन्विते ॥ ९९१ ॥

व रा, मूर्च्छायाम् ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, ताम्रभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर जंभीरी और पानके रसोंसे एकदिन मर्दनकर गोला बनाय उसी प्रमाणके ताम्रसम्पुटमें बंदकर कुक्कुटपुटसे पाचन करना । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखलेना। इसमेंसे २–२ रत्ती तत्तद्रोगहराऽनुपानके साथ देनेसे अर्धाङ्ग और कम्पवात, दाह, सन्ताप, मूर्च्छा, वातपित्तयुक्त तमामरोग नष्ट होतेहै ॥ २२८ ॥

२२९ प्रचण्डरसः

अमृतं पारदं गन्धं मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ।
सिन्धुवाररसैः पश्चाद्भावयेदेकविंशतिम् ॥ ९९२ ॥
तिलप्रमाणं दातव्यं नवज्वरविनाशनम् ।
उद्वेगे मस्तके तैलं तक्रं चाऽति प्रदापयेत् ॥
अनुपिबेदार्द्ररसं प्रचण्डसञ्ज्ञिके रसे ॥ ९९३ ॥

भै र, रसचि, र सु, र क (प्रवरः), वै क, ज्वराऽधिकारे। वै क **नवज्वरविनाश** इति नाम ।

टि०—भै र, र ह्य, र क, एषु द्वितीयस्थाने, यो म एषु **पर्ण-खण्डेश्वर** इति नाम, तत्र शिलामधिकतया प्रक्षिप्य निर्गुण्डीशृङ्गवेराभ्यां तिस्रस्तिस्रो भावना प्रदत्ताः । अत्र तु आर्द्रकरसोऽनुपानत्वेन नियोजित । अस्मिन्नेव रसे शिलां प्रक्षिप्य निपातनामको रसः ।

भाषा—शुद्धवछनाग, पारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकज्जली कर संभालूकेरससे २१ भावनाएं देकर तिलप्रमाण गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रससे देनेसे नवज्वर नष्ट होताहै । यदि घबराहट मालूमहो तो मस्तकमें ताजा तिलकातैल लगावे और छाछपीनेको देवे ॥२२९॥

२३० प्रतापतपनोरसः

गन्धकं गरलं तालं सूतकं लोहटङ्कणम् ।
खर्परं स्वर्जिकाक्षारं मञ्जिष्ठां हिङ्गुलं समम ॥९९४॥
रसेन मर्दितं पिण्डं निर्गुण्डीहस्तिशुण्डयोः ।
अष्टयामं पचेत्कूप्यां निरुद्ध्य सिकतालये ॥ ९९५ ॥
ततः सिद्धं समादाय रक्तिकामार्द्रकेण तु ।
सन्निपातविनाशाय प्रतापतपनो रसः ॥
दधिभक्तं तथा दुग्धं छागमांसञ्च योजयेत् ॥ ९९६ ॥

भै. र, र सु, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध गन्धक, गरल, पारा और सुहागा, हरिताल, लोह, खपरिया इनकीभस्में, सज्जी, मजीठ, शुद्धहिङ्गुल ये सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर निर्गुण्डी और हाथीशुण्डीके रससे १–१ रोज़ मर्दनकर सुखाकर आतशी शीशीमें भरकर वालुका यन्त्रमें ८ पहरतक पकावे, स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती अदरखके रसके साथ देनेसे सन्निपात नष्ट होताहै । भूख लगनेपर दहीभात, दूध अथवा वकरेका मास देवे ॥ २३० ॥

२३१ प्रतापमार्तण्डरसः (प्रथमः)

सूतं गन्धं हतं शुल्वं विषं हिङ्गुलयुग्मकम् ।
निर्गुण्डीशृङ्गवेराऽद्भि र्दत्तं हन्ति ज्वरं क्षणात् ॥९९७॥
तैलाऽभ्यङ्गं जलस्नानं तृष्णाऽऽर्ते तक्रसेचनम् ।
गात्रे चन्दनमालेप्यं पश्चात्ताम्बूलभक्षणम् ॥
इक्षुमोदफलेनैव देयं हन्ति ज्वरं क्षणात् ॥ ९९८ ॥

र. क यो., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, शुद्ध वछनाग और दोनों शिगरिफ (हंसपाद और शुकतुण्ड) समभाग लेकर वारीक पीस पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर निर्गुण्डी और अदरखके रससे एकरोज़ मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली निर्गुण्डी अथवा अदरखके रसके साथ देनेसे यह नवज्वर को तत्क्षण नष्ट करताहै । अधिक गर्मी लगे तो तैलकी मालिश कराके स्नान करावे। प्यास अधिक हो तो छाछकी धारा शिरपर डाले। सर्वाङ्गमें दाह हो तो चन्दनका लेप करे और ताम्बूल खानेको दे । इक्षुरस और पके आमके रसमें देनेसे ज्वर तत्क्षण उतर जाताहै ॥ २३१ ॥

२३२ प्रतापमार्तण्डरसः (द्वितीयः)

रसहिङ्गुलनेपालमर्कक्षीरं समानकम् ।
दन्तित्वचा च संयुक्तं याममात्रं तु मर्दयेत् ॥९९९॥
गुञ्जामात्रांस्तु वटकान् गुडेन सह सेवयेत् ।
पथ्यं दध्योदनं देयं चतुर्यामज्वरं हरेत् ॥
रसः प्रतापमार्तण्डः सर्वज्वरनिवारणः ॥ १००० ॥

र. क. यो , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—पारा, शिंगरिफ और ताम्रभस्म, आकका दूध, दन्ती, दालचीनी ये सब समभाग लेकर एक पहर आकके दूधमें मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गुड़के साथ देनेसे ४ पहरके ज्वरको नष्ट करताहै, पथ्यमें दहीभात देना ॥ २३२ ॥

२३३ प्रतापमार्तण्डरसः (तृतीयः)

विषं टङ्कणनेपालं हिङ्गुलं क्रमवर्धितम् ।
जम्बीरफलजद्रावैः मर्दयेद्यामयुग्मकम् ॥ १००१ ॥
मरिचप्रमाणवटिकाश्छायाशुष्कास्तु कारयेत् ।
रसः प्रतापमार्तण्डः सर्वज्वरनिवारणः ॥ १००२ ॥

र क यो , र सं , भै र , ना. वि., र सु., रससारसङ्ग्रह, वा., रसायनप , ज्वराऽधिकारे। ना. वि. (मार्तण्डोदयभास्करः), ना. विलासे टङ्कणस्थाने हिङ्गुलं हिङ्गुलस्थाने टङ्कणं दृश्यते । अनुपाने गुडाऽम्लिकाभि. सह इति विशेषः ।

भाषा—शुद्ध बछनाग, सुहागा, जमालगोटा और शिंगरिफ क्रमवृद्ध भागसे लेकर बारीक चूर्ण कर जम्भीरीके रससे २ पहर घोटकर मरिच प्रमाण गोलियें बनाकर छायामें सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली रोगावस्थोचित अनुपानके साथ खानेसे तमाम ज्वर दूर होतेहै ॥ २३३ ॥

२३४ प्रतापमार्तण्डरसः (चतुर्थः)

रसहिङ्गुलजेपालं पृथ्वीदन्त्यम्बुमर्दितम् ।
दिनाऽर्धेन ज्वरं हन्याद्गुडेन सितया सह ॥
चतुर्वल्लमिदं खादेत्सर्वज्वरप्रशान्तये ॥ १००३ ॥

व. रा , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, शिगरिफ और जमालगोटा समभाग लेकर कालीजीरी और दन्तीके स्वरस अथवा क्वाथसे दोपहर मर्दनकर डेढ़ १॥ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली गुड़ अथवा शक्करके साथ लेनेसे समस्तज्वर नष्ट-होतेहैं ॥ २३४ ॥

२३५ प्रतापलङ्केश्वररसः (प्रथमः)

अपामार्गस्य मूलानां चूर्णं चित्रकमूलजैः ।
वल्कलैर्मर्दयित्वाऽथ रसं निष्पीड्य रक्षयेत् ॥१००४॥
तेन सूतसमं गन्धमभ्रकं दरदं विषम् ।
टङ्कणं तालकञ्चैव मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ १००५ ॥
त्रिदिनं मुशलीतोयैर्भावयेद्घर्मरक्षितम् ।
मूषाञ्च गोस्तनाकारामापूर्य परिरक्षितम् ॥ १००६ ॥
सप्तभिर्मृत्तिकावस्त्रैर्वेष्टयित्वा पुटेल्लघु ।
रसतुल्यं लोहवङ्गं रजतं ताम्रकं तथा ॥ १००७ ॥
मधूकसारजलदौ रेणुका गुग्गुलुः शिला ।
चाम्पेयश्च समांशं स्याद्भागार्धं शोधितं विषम् १००८
तत्सर्वं मर्दयेत्खल्वे भावयेद्भिषनीरतः ।
आतपे सप्तधा तीव्रे मर्दयेद्घटिकाद्वयम् ॥ १००९ ॥
कटुत्रयकषायेण कनकस्य रसेन च ।
समुद्रफलनीरेण विजयावारिणा तथा ॥ १०१० ॥
चित्रकस्य कषायेण ज्वालामुख्या रसेन च ।
प्रत्येकं सप्तधा भाव्यं तद्वत्पित्तैश्च पञ्चभिः ॥ १०११ ॥
सर्वस्य समभागेन विषेण परिधूपयेत् ।
गुञ्जैकं वह्निचूर्णेन शृङ्गवेररसेन च ॥ १०१२ ॥
ददीत रोगिणं तीव्रमौढ्यविस्मृतिशान्तये ।
क्षुरेण तालुन्याहत्याऽऽर्द्रकनीरेण मर्दयेत् ॥ १०१३ ॥
नोद्घाट्यन्ते यदा दन्तास्तदा कुर्यादमुं विधिम् ।
सेचयेन्मन्त्रविद्भिश्च धाराकुम्भशतैर्नरम् ॥ १०१४ ॥
भोजनेच्छा यदा तस्य जायते रोगिणः परम् ।
दध्योदनं सितायुक्तं दद्यात्तक्रं सजीरकम् ॥ १०१५ ॥
पाने पानं सिताजातं यदीच्छेत्तत्सदन्तिकम् ।
एवं कृतेन शान्तिः स्यात्तापस्य रसजस्य च ॥१०१६॥
सचन्द्रचन्दनरसाऽऽलेपनं कुरु शीतलम् ।
तूलिकामल्लिकाजातीपुन्नागवकुलाऽऽवृताम् ॥१०१७
विधाय शय्यां तत्रस्थं लेपयेच्चन्दनैर्मुहुः ।
हावभावविलासोक्तिकटाक्षैश्चाऽवलोकनैः ॥ १०१८ ॥
पीनोत्तुङ्गकुचोत्पीडैः कामिनी परिरम्भणैः ।
रम्यवीणानिनादाद्यैर्गायनैः श्रवणाऽमृतैः ॥ १०१९ ॥
पुण्यश्लोककथाद्यैश्च सन्तापहरणं कुरु ।
एभिः प्रकारैस्तापस्य जायते शमनं परम् ॥ १०२० ॥
वर्जयेन्मैथुनं तावद्यावन्न बलवान्भवेत् ।
दद्यात्सर्वेषु वातेषु सिद्धगुग्गुलुवह्निभिः ॥ १०२१ ॥
दद्यात्कणामाक्षिकाभ्यां कामलाक्षयपाण्डुषु ।
तत्तद्रोगाऽनुपानेन सर्वरोगेषु योजयेत् ॥
अयं प्रतापलङ्केशः सन्निपातनिकृन्तनः ॥ १०२२ ॥

रसायनसं , र. म , र. शं , र.क , र का , भै र , यो म., र सु , सन्निपाते ज्वरे च ।

भाषा—अपामार्गकी जड़के चूर्णको चित्रकमूलके स्वरससे मर्दनकर कल्क बनाले, फिर इसकी बराबर शुद्ध पारा डालकर ४ पहर मर्दनकर पारेकी बराबर शुद्ध गन्धक, अभ्रकभस्म, शुद्ध शिगरिफ, बछनाग, सुहागा और हरिताल डालकर ७ रोज मर्दनकरे फिर ३ रोज मुसलीके स्वरससे धूपमें मर्दनकरे । इसके बाद गोस्तनाकार मूषामें रखकर ७ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर लघुपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर लोह, वङ्ग, रजत और ताम्र, महुएकासार, नागरमोथा, रेणुका, गूगल, मैनसिल, चम्पाके फूल, ये प्रत्येक पारेकी बराबर और

पारेसे आधा शुद्ध वछनाग लेकर वछनाग के स्वरस अथवा काढ़ेकी सात भावनाएं देकर कड़े धूपमें २ घण्टेतक रक्खे फिर त्रिकटु, धतूरा, समुद्रफल, भाग, चित्रकमूल, ज्वालामुखी इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाएं देकर पञ्चपित्तोंसे १–१ भावना देकर सब दवाके बराबरके वछनागकी धूनी देकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीकी मात्रा चित्रकमूलके चूर्ण अथवा अदरखके रसके साथ देनेसे तीव्रसञ्ज्ञा-नाश और विस्मृतिको नष्टकरताहै। खानेसे दवा काम न करे तो तालुमें छुरेसे पाछ देकर अदरखके रसमें दवाको मिला-कर उसजगह मर्दनकरे तो होश आजायगा। यदि इसपर भी होश न आवे और दात न खुलें तो मन्त्रशास्त्र कुशल आदमी पानीके १०० घड़ोंकी मत्थे पर धारादें। होश आने पर अगर रोगीको तीव्र भूख लगी हो तो दही, भात, शक्कर अथवा जीरा मिलीहुई छाछदेवे। प्यास अधिक हो तो शक्करका शरबत दे, अधिक कहनेसे क्या जो वह मागे सो देवे। अगर इसतरह करने परभी ज्वर शान्त न होतो कपूरके साथ चन्दनको घिसकर ठंढा लेपकरे। रुई, मोगरा, चमेली पुन्नाग और मौलश्रीके पुष्पोंमे शय्या वनाकर उसपर वैठालकर वारम्वार चन्दनका लेप करे। हावभावके साथ कटाक्ष युक्त अवलोकन करती हुई नवयुवतियोंका आलिङ्गन करावे। वीणा वगैरहकी मधुर आवाज़ और श्रवणप्रिय गायन, परमेश्वरकी कथा इत्यादि प्रकारोंसे तापका शीघ्र शमन हो जाताहै। मैथुन तवतक वर्जन करे जब तक कि बलवान् न हो। वातविकारोंमें वातहर योगराजादि गूगल और चित्रकमूलके साथ देवे। कामला, क्षय और पाण्डुमें पीपल और शहदसे दे। तत्तद्रोगहराऽनुपानके साथ देनेसे यह समस्त रोगोंको दूर करताहै और सन्निपातकी खास औषध है॥ २३५॥

२३६ प्रतापलङ्केश्वररसः (द्वितीयः)

प्रत्येकं रसगन्धयो र्द्विपलयोः कृत्वा शुभां कज्जलीं,
तस्यां म्लेच्छकुलायलोचनमनोधात्रीप्रकुश्चत्रयम्।
पथ्याया वदरत्रिकं त्रिकटु पट्टशाणं वचा धर्मिणी,
वेल्लाम्भोधरपत्रकछिरदकिञ्जल्काऽश्वगन्धाह्वयम्१०२३
पिष्ट्वैतत्समधूकसारमखिलं कर्षोन्मितं न्यस्य तत,
प्रोन्मर्द्याऽर्द्धकरञ्जकाऽमृतयुतं सागस्तिकत्र्यूषणैः।
भूधात्रीविजयासरित्पतिफलै र्ज्वालामुखीभृङ्गजैः,
प्रत्येकं विदधीत निश्चलमतिः सप्त क्रमाद्भावनाः १०२४
पित्तैरथो पञ्च विधाय पञ्चभिः
करञ्जमात्राऽमृतधूपनं ततः।
दत्त्वाऽऽर्द्रकस्य स्वरसेन तन्दुलाऽऽ-
कृतिं विदध्याद्गुटिकां भिषग्वरः॥ १०२५॥
देयैका सन्निपातेप्रतिहतकरणे मोहनेत्रप्रसुप्त्योः,
स्याद्गुल्मे साऽजमोदापवनविकृतिषु त्र्यूषणेन ग्रहण्याम्।
दातव्या जीरकेण द्विपतुरगनृणां प्राणसंरक्षणाय,
कारुण्याऽम्भोधिरेतममृतसमरसं वैद्यनाथोऽभ्यधत्त॥

र र स., र, र. को., र. मु., र. ग., र. का, र. मृ. ज्वराऽ-धिकारे। र. को प्राणेश्वर इति नाम। र. का कारुण्याम्भोधि-रिति नाम।

टि०—प्रोन्मर्द्याऽर्द्धकर [illegible] ऽमृतयुतमित्यत्र ग्रन्थकारस्याऽभिप्रायमज्ञाय नानाव्यामोहस्थानानि घटितानि, [illegible] न भावनीय-स्थिति भवति। रसराजसुन्दर प्रमाणे न्यस्याम. [illegible] न निष्पादनीय इति विशेषसूचना।

भाषा—दो २ पल शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर ताम्रभस्म, शुद्ध गुग्गुलु और मनसिल ३–३ पल, हर्रे, सोंठ, मिर्च, पीपल, वच, अनन्तमूल अथवा रेणुका, विडङ्ग, नागरमोथा, पत्रज, नागकेशर, कमल, असगन्ध ये प्रत्येक १॥ कर्ष महुएकाहीर १ कर्ष लेकर वारीक चूर्णकर एक दो पहर शुष्कखरलकर सब योगसे आधा करञ्ज और शुद्ध वछनाग मिलाकर अगस्त्य, सोंठ, मिर्च, पीपल, भुंईआवला, भाग, समुद्रफल, ज्वालामुखी (अग्निशिखा) और भगरेके यथा-सम्भव स्वरस अथवा क्वाथों मे ७–७ भावनाएं देकर पॉच-पित्तों (मछली, भैंसा, सूअर, वकरा और मोर इनके पित्तों) की १–१ भावना देकर करञ्ज फलकी वरावर वछनागकी धूनी देकर अदरखके रससे घोटकर १–१ चावल भरकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली देनेसे घोर सन्निपात निवृत होताहै। गुल्ममें अजमोदके साथ, वात-विकारोंमें त्र्यूषणके साथ, ग्रहणीमें जीरेके साथ देनेसे इन सवका नाश होताहै। हाथी, घोडा और मनुष्य वगैरहके प्राणोंकी इससे रक्षा होतीहै इसलिये इसका प्राणेश्वर नाम रक्खा गयाहै॥ २३६॥

२३७ प्रतापलङ्केश्वररसः (तृतीयः)

विषादिकाघ्नं रसगन्धटङ्कणं
सताम्रकुष्ठायसपिप्पलीरजः।
विमर्दितं काञ्चनपत्रवारिणा
प्रतापलङ्केश्वरसञ्ज्ञको रसः॥ १०२७॥

र र स, र र को, र क, चि क, रसेन्द्रसं., कुष्ठाऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सुहागा, ताम्रभस्म, कुठ, लोहभस्म, पीपल सव समभाग लेकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें सवचीजें मिलाकर कचनारके पत्तोंके रससे २–३ रोज़ मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इन-मेंसे १–१ गोली मधुके साथ खानेसे वैपादिककुष्ट नष्ट-होताहै॥ २३७॥

२३८ प्रतापलङ्केश्वररसः (चतुर्थः)

एकेन्दुचन्द्राऽनलवार्धिकाष्ठा-
फलैकभागैः क्रमशो विमिश्रम्।
सूताऽभ्रगन्धोपणलोहशङ्ख-
वन्योत्पलाभस्म विषं सुपिष्टम्॥ १०२८॥
प्रसूतिचापाऽनिलदन्तवन्ध-
मार्द्राम्बुना घोरसुसन्निपातान्।

पुरामृताऽऽर्द्रत्रिफलायुतोऽयं
गुदाऽङ्कुरान् वल्लमितो निहन्ति ॥ १०२९ ॥
निजाऽनुपाने निजपथ्ययुक्त्या
सर्वाऽतिसारग्रहणीगदांश्च ।
प्रतापलङ्केश्वरनामधेयः
सूतः प्रयुक्तो गिरिराजपुत्र्या ॥ १०३० ॥

र.ल.,रसायनसं , र गं.,र. कौ , वै र ,र. को.,र.च , बृ. यो त , वं से.,वै.वि.,यो सं , यो.म.,वै. चि., र , टो., चि र.भ , भै. सा , र. मु., यो र., र. का., र.चो , र. क. यो., रस-पारिजात, सुतिकारोगे ।

टि०—अत्र नानाप्रकारेण सङ्ख्या सङ्केता लिखिता सन्ति परन्तु रसराजलक्ष्मीस्थ सङ्केतो युक्तियुक्तो दृश्यतेऽत स एवाऽस्माभि स्थापित । वन्योत्पलेति स्थाने विश्वोत्पलेति पाठस्तु प्रामादिक तथाकृते सङ्ख्याया न्यूनत्वापत्ति र्गुणाऽपकर्षश्चेति सुधीभिर्विभावनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, अभ्रकभस्म १ भा , शुद्ध गन्धक १ भा , मरिच ३ भा , लोहभस्म ४ भा., शङ्खभस्म ८ भाग, जङ्गलीकण्डोंकी भस्म १६ भा., शुद्धवछनाग १ भाग लेकर सबको बारीक पीसकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर २–३ रोज़ घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती अदरखके रसकेसाथ देनेसे प्रसूतिवात, धनुर्वात, दन्तबन्ध, घोरसन्निपात इनको यह नष्टकरताहै । शुद्धगूगल, गिलोय, अदरख और त्रिफलाके साथ देनेसे यह बवासीरको नष्टकरताहै । अपने अपने अनुपान और पथ्योंके सेवनके साथ लेनेसे समस्त अतिसार और ग्रहणी प्रभृति रोग नष्टहोतेहैं ॥ २३८ ॥

२३९ प्रतापलङ्केश्वररसः (पञ्चमः)

आदौ प्रतापलङ्केशस्तत्क्रमोऽयं निरूप्यते ।
दशधा शुद्धियोगेन पातितं समुखीकृतम् ॥ १०३१ ॥
जीर्णवीजं कलांशेन षाड्गुण्याज्जीर्णगन्धकम् ।
पलद्वयं समादाय भानुदुग्धेन मर्दयेत् ॥ १०३२ ॥
त्रिदिनं वज्रदुग्धेन हृत्पर्णीक्वाथवारिणा ।
वत्सनाभेन तत्पश्चाज्ज्वालामुख्या रसेन तु ॥१०३३॥
त्र्यहंत्र्यहं मर्दयित्वा चैकैकेन यथाक्रमम् ।
ततः सोमाऽनले यन्त्रे मर्दितं स्थापयेद्रसम् ॥१०३४॥
दत्त्वाऽथ सुदृढं लेपं चुल्ल्यामारोपयेद्बुधः ।
जलपूर्णं ततः कृत्वा ह्यधस्ताज्ज्वालयेत्क्रमात् ॥१०३५॥
मृदुमध्योत्तमं वह्निं सप्तसप्तदिनावधि ।
एकविंशद्दिने पूर्णे यन्त्रादुत्तारयेद्रसम् ॥ १०३६ ॥
भस्मीभूतं रसं कृत्वा शुद्धं तत्र वलिं क्षिपेत् ।
षट् च साम्येन लोहानि भस्मीभूतानि निःक्षिपेत्१०३७
अभ्रसत्त्वं कान्तसत्त्वं भस्मीभूतं नियोजयेत् ।
कल्पयेद्भावनामानं रससाम्येन बुद्धिमान् ॥ १०३८ ॥
मर्दयेत्सर्वमेकत्र काकमाचीरसेन तु ।
खल्वे दत्त्वा दिनैकन्तु कृष्णधत्तूरकद्रवैः ॥ १०३९ ॥
एरण्डनीरै र्भूधात्रीरसैस्त्रिकटुकद्रवैः ।
आर्द्रकस्य रसै र्ज्वालामुखीनीरै र्जयारसैः ॥१०४०॥
भृङ्गीरसै र्वैजयन्तीरसैस्तिलदलारसैः ।
अम्लवेतसनीरेण जम्बीरोद्भववारिणा ॥ १०४१ ॥
मण्डूकपर्णिकातोयै रसतुल्यै रसैः क्रमात् ।
मर्दयित्वा तत्र दद्याच्छृङ्गीविषमनुत्तमम् ॥१०४२ ॥
रसाच्च दशमं भागं हारिद्रं तदभावतः ।
तदभावे साकुकं स्यात्सर्वाऽभावेऽमृतं क्षिपेत्॥१०४३॥
मर्दयेत्सर्वमेकत्र विजयारसयोगतः ॥
दिनमेकं ततो देया भावना पित्तसम्भवा ॥ १०४४ ॥
मायूरं मत्स्यजं पित्तं शौकरं छागसम्भवम् ।
माहिषं रौहिपं कार्कं दिवाभीतभवं तत. ॥ १०४५ ॥
हारिणं व्याधजञ्चेति पित्तान्येतानि निर्हरेत् ।
सप्तसप्त प्रदातव्या भावनाः पित्तसम्भवाः ॥१०४६॥
तिस्रोऽभावे प्रदातव्यास्ततोन्यूना न कारयेत् ।
आदौ तु कृष्णसर्पस्य गरलेन च भावना ॥ १०४७ ॥
धन्वनागस्य गरलै र्भावयेदेकवारकम् ।
पारावतस्य पित्तेन सर्वस्याऽन्ते विमर्दयेत् ॥१०४८॥
गृहीत्वा सिद्धसूतं तमूर्द्ध्वभाण्डे विलेपयेत् ।
अधोभाण्डे वत्सनाभं रसतुल्यं विमर्दितम् ॥१०४९॥
निक्षिप्य सुदृढं क्षिप्त्वा यन्त्रं चुल्ल्यां निवेशयेत् ।
मन्दवह्निमधः कुर्यात्प्रहरद्वयमादृतः ॥ १०५० ॥
एवं कृते रसः सिद्धो भवत्येव न चाऽन्यथा ।
योगिनीभैरवान् सिद्धान् क्षेत्रपालं गुरूंस्तथा॥१०५१॥
गन्धपुष्पादिनैवेद्यै र्वलिदानै र्यथोचितैः ।
पूजयित्वा स्वर्णकूप्यां रसेन्द्रं स्थापयेद्बुधः ॥१०५२॥
महाप्रतापलङ्केशनामाऽयं रसभूपतिः ।
सन्निपातं महाघोरं दण्डाऽऽलसकमेव च ॥ १०५३ ॥
अपस्मारं धनुर्वातं कण्ठकुब्जकमेव च ।
क्षयादिकांस्तथा रोगान् रोगयोगोक्तयुक्तितः ॥१०५४॥
रसेन्द्रो हरति व्याधीन्नरकुञ्जरवाजिनाम् ।
आर्द्रकस्य रसेनाऽथ सन्निपाते नियोजयेत् ॥१०५५॥
पित्तोत्तरे तथा देयः कर्पूरेण रसेश्वरः ।
श्लेष्मोत्तरे त्रिकटुना रक्तिकामानयोगतः ॥ १०५६ ॥
सन्निपातं निहन्त्येव रसेन्द्रो नाऽत्रसंशयः ।
रसवीर्यविवृद्ध्यर्थमुदकं ढालयेत्ततः ॥ १०५७ ॥
यावद्देहे भवेत्कम्पः सर्वथा दुःसहस्त्वत. ।
चन्दनं चाऽथ कर्पूरं द्वादशांशं विनिःक्षिपेत् ॥१०५८॥
इक्षवश्च तथा देया द्राक्षाखर्जूरखारिकाः ।
तवराजं शर्करां वा योजयेद्वीर्यवृद्धये ॥ १०५९ ॥
श्लेष्मोत्तरे सन्निपाते दुग्धभक्तं प्रयोजयेत् ।
अन्यत्र दधिभक्तं स्यात्खण्डशर्करया युतम् ॥१०६०॥
दिनत्रयं प्रयत्नेन यथेष्टं भोजयेद्भिषक् ।
रसवीर्यविघाताय कारवेल्लं न योजयेत् ॥ १०६१ ॥

स्वर्णं रौप्यं रविस्तीक्ष्णं त्रपुसीसाऽभ्रकान्तजम्।
सत्त्वमित्यष्टलोहानि कथितानि रसाऽऽगमे ॥१०६२॥
एतेषां मारणं वक्ष्ये शिवचोदितवर्त्मना।
जम्बीरवारिणा पिष्ट्वा रसभस्माऽथ पूरजैः ॥१०६३॥
निम्बुकीवारिणा वाऽथ स्वर्णपत्राणि लेपयेत्।
समभागेन सूतेन सम्पुटं रचयेद् दृढम् ॥ १०६४ ॥
पुटित्वाऽऽरण्यजैश्छाणैं भस्मीभूतं समाहरेत्।
पुटेनैकेन भस्म स्यान्नाऽत्र कार्या विचारणा १०६५
एवं सर्वाणि लौहानि भस्मीकुर्याद्विचक्षणः।
रसभस्म यदा न स्याद्धेममाक्षिकयोगतः ॥ १०६६ ॥
पूर्वोक्तैश्च रसैः पिष्ट्वा लोहपत्राणि लेपयेत्।
पुटयेद्भस्मतां यान्ति निरुत्थान्नि तथा कृते ॥१०६७॥
एवमेतानि लोहानि मारयित्वा ततः परम्।
पुरा यद्वक्ष्यमाणेन क्रमेण च यथाक्रमम् ॥ १०६८ ॥
अर्कक्षीरेण पुटयेदष्टोत्तरशतं बुधः।
वज्रीक्षीरेण पुटयेद्वाराष्टकमतः परम् ॥ १०६९ ॥
द्रवारसेन पुटयेद्वत्सनाभेन यत्नतः।
पुनश्चार्कपयोभिस्तद्भावयेदेकविंशतिम् ॥ १०७० ॥
एवं सिद्धानि लोहानि रसेन्द्रे निक्षिपेद्बुध.।
अन्यथा नैव योज्यानि सन्निपातादिभेषजे ॥ १०७१ ॥

रसालं, सन्निपाते।

भाषा—शोधनद्रव्योंमें १० वार मर्दनकरके पातनकरनेपर बुभुक्षित वनाकर पोडशांश वीज और षड्गुणगन्धक जारणकियाहो ऐसा शुद्धपारा २ पल लेकर आकका दूध, डंडाथूहरका दूध, अमलोनिया, वछनाग, ज्वालामुखी इन प्रत्येकके द्रवसे ३–३ रोज़ क्रमसे मर्दनकर सोमाऽनलयन्त्रमें स्थापनकर मज़बूत कपड़मिट्टीसे सन्धि वन्दकर सुखाकर चूल्हेपर रख ऊपरकी हंडीमें जल भरदे और नीचे मृदु, मध्य तथा तीक्ष्ण ऐसेक्रमसे ७–७ दिन अर्थात् २१ दिन तक अग्नि देकर अखीरमें कोयलोंपर रहनेदे। इससमय भैरवादिकोंको वलिदेवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर यन्त्रमेंसे पारेको निकालकर शुद्धगन्धक, पट्लोह (सुवर्ण, रजत, ताम्र, नाग, वङ्ग और लोह) की भस्में, अभ्रक सत्व और कान्तसत्त्वकी भस्म सव समभाग लेकर पारे गन्धककी कज्जलीकर शेषचीजोंको मिलाकर मकोय, कालाधतूरा, एरण्ड, भूधात्री, त्रिकटु, अदरख, ज्वालामुखी, भाग, भंगरा, वैजयन्ती, हुरहुर, अम्लवेत, जम्भीरी, ब्राह्मी, इन प्रत्येकका यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथ रसकी वरावर डालकर १–१ रोज मर्दनकरके रसमे दशवा हिस्सा शुद्ध श्रृङ्गीविष, अभावमें हारिद्रक, तदभावमें साकुक, इनसवके अभावमें शुद्ध वछनाग मिलाकर भागके रससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर मोर, मछली, सूअर, वकरा, भैंसा, रोज, कौआ, उल्लू, हरिण, वाघ इन प्रत्येकके पित्तकी क्रमश ८–७ भावनाए देवे। अधिकपित्तके अभावमें ३–३ भावना देवे इनसे न्यून न देवे। इसके वाद कालेसापका ज़हर, धामिन सांपका ज़हर, कबूतरकापित्त, इनकी क्रमसे १–१ भावना देवे। फिर मुहघिसकर वरावर कीहुई दोहंडी लेकर एकमें इस रसका लेपकरदे और एकमें पारेकी वरावर शुद्धवछनागको पानीमें पीसकर लेपकरदे। फिर इनदोनोंका डमरूयन्त्र वनाय ६–७ कपड़मिट्टीसे सन्धिवन्दकर धूपमें सुखाकर चूल्हेपररक्खे। यह ध्यान रहे कि रसवाली हंडी ऊपर और विपवाली नीचेरहे। नीचे दोपहर तक मन्दाग्नि जलावे, स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर योगिनी, भैरव, रससिद्ध, क्षेत्रपाल और गुरुलोगोंकी विधिपूर्वक गन्ध–पुष्प–नैवेद्य और वलिदानसे पूजाकर सोनेकी डिब्बीमें इसको रखवे। इसमेंसे १ रत्तीकी मात्रा अदरखके रससे देनेसे महाघोरसन्निपात, दण्डाऽलसक, अपस्मार, धनुर्वात और कण्ठकुब्जकको यह नष्टकरताहै। तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे मनुष्य, हाथी और घोड़ोंके क्षयादिक रोगोंको नष्टकरताहै। पित्तप्रधानव्याधिमें कपूरकेसाथ, कफप्रधानव्याधिमें त्रिकटुके चूर्ण अथवा क्वाथकेसाथ देवे। इसरसमें पित्तोंकी भावना आईहै और पित्तयुक्तरसोंमें जवतक पानी सिरपर न डालाजाय तवतक उनकी शक्ति प्रकट नहीं होती, इसलिये परमेश्वर का नाम लेकर सन्देहको छोड़कर जवतक रोगीको कम्पपैदा न हो तवतक सिरपर पानी डाले। रसकीगर्मी किसीतरह सहन न होसक्तीहो तो ऐसे स्थानपर सफेदचन्दन और शुद्धकपूर वारहवें हिस्सेका रसमें मिलाकरदे। ईख, द्राक्ष, खजूर, वंशलोचन, शक्कर इनका प्रयोगकरे। श्लेष्मप्रधान सन्निपातमें दूधभातदे अन्य रोगावस्थामें दही, भात और शक्करदे। इसके वाद ३ रोज़तक इच्छानुसार खानेकोदे। रसवीर्यका नाश न हो इसलिये करेले खानेमें न दे।

सुवर्ण, चादी, ताम्र, फोलाद, रांगा, सीसा, अभ्रक और कान्तकासत्व ये रसतन्त्रमें लोह शब्दसे कहेजातेहैं। इनका मारण शिवजीके कहेहुए प्रकारसे मैं लिखताहूं। इसीतरहसे मारणकर इस रसमें इनका योग करना तव यथावत् फल होगा अन्यथा नहीं। पारेकी भस्मको जंभीरी अथवा विजोरे या साधारण नीवूके रसमें मर्दनकर सुवर्णके वारीक पत्रोंपर लेपकर शरावसम्पुटमें वन्दकर २० कण्डोंकी आचदे। इसमें पारेको सुवर्णकी वरावरलेना इससे एकही पुटमें भस्म होगी। इसीतरह तमामलोहोंकी भस्म करले। जहांपर पारेकी भस्म न हो वहापर सुवर्णमाक्षिकको शुद्धपारेके साथ घोटकर लोहके पत्रोंपर लेपकरे, घोटनेके लिये पूर्वोक्त नीवुओंका रसदे। इसतरह करनेसे पूर्वोक्त तमामलोहोंकी निरुत्थ भस्म होगी। इनभस्मोंको समभाग मिलाकर आकके दूधकी १०८ पुट, डंडाथूहरके दूध, अमलोनिया और वछनागके द्रवोंकी ८–८ भावनाएं देकर आकके दूधकी २१ भावनाए देनेसे यह लोह सिद्ध होंगे। इन्हींको योगोंमें देना अन्यथा नहीं ॥ २३९ ॥

२४० प्रतापलङ्केश्वररसः (लघुः) (पष्ठः)

शुद्धं भस्मीकृतं सूतमाहरेद् द्विपलं वलिम्।
तावन्मानन्तु सङ्गृह्य मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥ १०७२ ॥

नष्टपिष्टत्वमापन्नं ग्राहयेद्रसराजकम् ।
माहिषाऽक्षपुरादर्द्धं हृत्पर्णी तावती स्मृता ॥१०७३॥
गद्याणत्रितयं व्योषं षड्गद्याणा हरीतकी ।
वचाकर्षं भद्रमुस्ता कर्षमेकं विडङ्गजम् ॥ १०७४ ॥
अश्वगन्धा कर्षकं स्याच्चित्रमूलत्वचस्तथा ।
पत्रकं कर्षमेकं स्याद्रेणुका कर्षकं तथा ॥ १०७५ ॥
मधुसारस्य कर्षः स्यान्नागकेसरकर्षकम् ।
वत्सनाभं पलं प्रोक्तं भृङ्गी गद्याणकं भवेत् ॥१०७६॥
सर्वमेतच्छ्लक्ष्णचूर्णं सूतचूर्णेन मेलयेत् ।
ततः प्रमर्दयेत्त्रीणि दिनान्यथ विभावयेत् ॥ १०७७॥
भृङ्गराजरसैः सप्तवारान् मुनिरसैस्तथा ।
समुद्रफेनजैस्तद्वद्धृत्पर्णीभावना तथा ॥ १०७८॥
ज्वालामुखीरसेनैव त्रिकटो विजयारसैः ।
वाराहपित्तेन तथा पित्तै रोहितमत्स्यजैः ॥ १०७९ ॥
माहिषै रौहितैः पित्तै र्मायूरैश्छागलैस्तथा ।
कृष्णसर्पस्य पित्तेन गरलेन च भावना ॥ १०८० ॥
पारावतस्य पित्तेन हरिणस्य च पित्ततः ।
भावयित्वा ततः कल्कं सम्पुटस्योर्द्ध्वपात्रगम् ॥१०८१॥
विलिप्य चाऽधोभाण्डस्य चूर्णितं निक्षिपेद्विषम् ।
पूर्ववत्सम्पुटीकृत्य चुल्ल्यामुपरि धारयेत् ॥ १०८२ ॥
मन्दाग्निं ज्वालयेत्पश्चात्प्रहरद्वयमादृतः ।
चुल्ल्या यन्त्रं समुत्तार्य स्वाङ्गशीतलतां गतम् ॥१०८३॥
उद्धृत्य यन्त्रात्सूतेन्द्रं खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
मर्दयित्वाऽऽर्द्रकरसै र्वटिकास्तण्डुलोपमाः ॥ १०८४ ॥
कृत्वा करण्डके स्थाप्याः शीतं वायुं विवर्जयेत् ।
सन्निपाते दद्दीतैकां निःसञ्ज्ञत्वमुपागते ॥ १०८५ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैवाऽनुपानं चार्द्रजं रसम् ।
रसेश्वरप्रदानेन दन्तोत्कीलस्तदाभवेत् ॥ १०८६ ॥
सर्वथा ग्रहणाऽशक्ते निःसंज्ञत्वेऽथवा तथा ।
आर्द्रकस्य रसेनैव सूतं सम्मर्द्य कर्णयोः ॥ १०८७ ॥
नाल्यां सम्भृत्य प्रधमेन्नासाविवरयोस्तथा ।
लिङ्गद्वारेऽथवा कुर्याद्भ्रूमध्यं वा विदार्य च ॥१०८८॥
रसं निक्षिप्य मृद्गीयाद्घटिकार्धं प्रयत्नतः ।
ब्रह्मद्वारेतथा कुर्यात्सूतयोगं भिषग्वरः ॥ १०८९ ॥
रसप्रयोगमात्रेण नेत्रमुद्घाटयेत्क्रमात् ।
कर्णाभ्यां संश्रृणोत्येवं दन्ता उत्कीलिता-क्षणात् १०९०
सावधानस्ततो दद्याद्रसेन्द्रं तण्डुलाऽवधिम् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव दद्यान्मुद्गरसं ततः ॥ १०९१ ॥
वमनं यदि जायेत जीवत्येव न संशयः ।
वान्तिश्च नैव जायेत म्रियते च विनिश्चयः ॥१०९२॥
जातायामथ वान्त्यान्तु पानीयं ढालयेद्दृढु ।
यावच्छैत्यं स्वभावेन शरीरे सम्प्रजायते ॥ १०९३ ॥
दाधिकं भोजयेत्पश्चाच्छर्करासहितं हितम् ।
वटिकाभिश्च तिसृभिः सन्निपातो निवर्तते ॥१०९४॥
ताम्बूलपत्रेण समं वटीमेकां ततोऽर्पयेत् ।
क्षयरोगेषु योक्तव्यो नागवल्लीदलेन वै ॥ १०९५ ॥
क्षयरोगं निहन्त्येव ग्रहणीरोगमुत्कटम् ।
जीरकेण समं दद्याद्गुल्मे चैवाऽजमोदकैः ॥ १०९६ ॥
अन्नश्च राजिकाशाकं राजिकासंयुतं तथा ।
तैलं वृन्ताककारीरं कर्कोटीकारवेल्लकौ ॥ १०९७ ॥
कलिङ्गमथ कूष्माण्डं यत्किञ्चिच्चिर्भटात्मकम् ।
वर्जयेदम्लसेवाञ्च दिवा स्वापं तथैव च ॥ १०९८ ॥
रसस्योपद्रवेऽत्यर्थं खण्डजीरन्तु भक्षयेत् ।
अथवा चणकाम्लेन जीरकं खण्डसंयुतम् ॥ १०९९ ॥
कलम्बं श्वेतसञ्ज्ञञ्च अश्वगन्धामथापि वा ।
सर्वथोपद्रवश्चेत्स्याद्वमनं कारयेद्भिषक् ॥ ११०० ॥
शर्करां दधिसंयुक्तां खादयेदथवा पयः ।
तवराजेन संयुक्तमाकण्ठं पाययेद्भिषक् ॥ ११०१ ॥
शीतोदकेन च स्नानं सर्वदा कारयेत्तथा ।
श्रीखण्डेन प्रलिम्पेत्तं निर्वाते स्वापयेत्ततः ॥ ११०२॥
वितरेदार्द्रवस्त्राणि व्यञ्जनानि च वर्जयेत् ।
एवं प्रयोगमात्रेण सर्वे रोगाः प्रयान्ति वै ॥ ११०३ ॥
यस्य रोगस्य यो योगस्तेनैव सहयोगतः ।
रसेन्द्रो हरति व्याधिं नरकुञ्जरवाजिनाम् ॥ ११०४ ॥
इत्येष सूतकः प्रोक्तो देवीशास्त्राऽनुसारतः ।
सन्निपातादिरोगाणां विनाशकरणे क्षमः ।
लघुः प्रतापलङ्केशः कथितोऽयं महारसः ॥ ११०५ ॥

रसालं., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध करके भस्म किया हुआ पारा और शुद्ध गन्धक २-२ पल लेकर दोरोज़ मर्दनकरे फिर नष्टपिष्टी किया-हुआ पारा २ पल इसमें मिलाकर मर्दनकरदे । फिर भैंसागूगल और अमलोनिया १-१ पल, सोंठ, मिर्च, पीपल ६-६ माशे, हरें ३ तोला, वच, नागरमोथा, विडङ्ग, असगन्ध, चित्रकमू-लकीछाल, पत्रज, रेणुका, महुएकाहीर अथवा मुलहठी का सत्त्व, ये प्रत्येक १ कर्ष, शुद्ध वछनाग १ पल, भंगरा ६ माशे, इनसवका वारीक चूर्णकर पूर्वकज्जलीमें मिलाकर भंगरेकेरससे ३ दिन, अगस्त्य, समुद्रफेन, अमलोनिया, ज्वालामुखी, त्रिकटु, भाग इनकेरस अथवा क्वाथोंकी ७-७ भावनाएं देकर सुअर, रोहूमछली, भैंसा, रोझ, मोर, वकरा, कालासांप इनके पित्तोंकी ७-७ भावनाएं और काले सापका ज़हर, कबूतर तथा हरिणकेपित्तोंकी १-१ भावना देकर एकहण्डीमें लेपनकरदे । दूसरी हण्डीमें पूर्ववत् कहेहुए विषोंमेंसे किसीएकका चूर्णकर पारेकी भस्मके वरावर रखदे । फिर इसका डमरूयन्त्र वनाय चूल्हेपर विषवाली हण्डीको रखदे और दोपहरतक मन्दाग्नि जलावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर रसको निकालकर अदरखके रससे १ रोज़ मर्दनकर १-१ चावलभरकी गोलिया वनाकर शीशीमें रखदे । यह ध्यान रक्खे कि यन्त्रमेंसे रसको ऐसे निर्वातस्थानमें निकाले कि जहा वायुका अधिक स्पर्श न हो ।

शीशीको हमेशा शीत और वायुसे बचावे । इनमेंसे १-१ गोली सन्निपातमें रोगीको सञ्ज्ञारहितहोनेपर अदरखके रसके-साथ देकर ऊपरसे अदरखकाही रस थोड़ासा और पिलावे । यदि अत्यन्त वेहोशी होनेकी वजहसे मुंहमें दवा न जासकीहो तो अदरखके रसमें एकगोली मिलाकर कानोंमें डाले और एक दुमुही नली नाकोंमें लगाकर रसको मुंहमें भरकर नलीद्वारा नाकोंमें फूंकदे । अथवा लिङ्गके रास्तेसे पिचकारी द्वारा दवाको चढ़ावे अथवा भ्रूके मध्यमें पाछदेकर १ गोलीको वारीक पीस उसजगह पर आधी घड़ी तक घर्षण-करे, इसीतरह ताळु पर भी प्रयोगकरे। रसप्रयोगप्रभावसे चेतना आकर नेत्रोंको उघाड़ेगा, और कानोंसे सुनने लगेगा और दात खुलजायगे । इसतरह सञ्ज्ञा प्राप्तहोनेके वाद १ गोली अदरखके साथ खिलाकर मूंगका यूप देना उससे यदि वमन हो जाय तो समझना कि रोगी वच जायगा यदि वमन न हो तो वह नहीं जीवेगा इसतरह निश्चय ही समझलेना । वान्ति होनेपर मत्थेपर ठंढा पानी डाले । जव असह्य होकर शरीर कापनेलगे तव पानीका डालना वन्दकर शक्करके साथ दहीभात दे । इसतरह ३ गोलीसे सन्निपात दूर हो जाताहै । अखीरमें ताम्बूलके साथ १ गोली देकर वन्दकरदे । इसीतरह ताम्बूलमें १-१ गोली देनेसे क्षय निवृत्त होताहै । सङ्ग्रहणीमें जीरा, गुल्ममें अजमोद अनुपान समझना । पथ्य अन्न देना । राईका शाक अथवा राईकी चीजें, तैल, वेंगन, करीर, ककोड़ा, करेला, ताम्बूल, कोहळा, छोटी वड़ी सव तरहकी ककड़ी, खटाई, दिनका सोना इनको छोड़ देवे । इस रसके खानेसे वान्ति प्रभृति उपद्रव हों तो जीरेका चूर्ण शक्कर मिलाकर देवे अथवा खाड और जीरेके ऊपर चनेका खार देवे। कड़म्व (करमीरी) का शाक, वच अथवा असगन्ध देवे। अगर किसीतरह वमन शान्त न हो तो वमनकारक पदार्थ देकर पेटको साफ करे। उसके वाद शक्कर और दही खानेको दे अथवा दूधमें जवास की शक्कर डालकर कण्ठतक भरपेट पिलावे। इसमें स्नान हमेशा ठंढे पानीसे कराना चाहिये । दाह होनेपर सफेद चन्दनका लेपकर निर्वात स्थानमें सुलावे और भीगेकपड़े पहिनावे। इसतरह प्रयोग करनेसे समस्तरोग दूर होते है। जिसरोगका जो अनुपानहै उसके साथ देनेसे मनुष्य, हाथी और घोड़े वग़ैरह के सव रोग अच्छे होते हैं। देवीशास्त्रके अनुसार यहरस कहा गयाहै ॥२४०॥

२४१ प्रतापलङ्केश्वररसः (सप्तमः)

गन्धेशकट्फलव्योषजातीफलदलानि च ।
अश्वमाराऽऽकल्लकश्च समं सर्वं विचूर्णितम् ॥११०६॥
चित्राऽऽर्द्रकजलैस्त्रिस्त्रि र्भावितं गुटिकीकृतम् ।
वल्लमात्रं निहन्त्याशु पाण्डुवातभगन्दरान् ॥ ११०७ ॥

र.का , पाण्डुरोगे।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, कायफल, सोंठ, मिर्च, पीपल, जायफल, जावित्री, दूधमें स्वेदन कीहुई सफेद कनेरकी जड़ और अकलकरा समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर चित्रकमूल और अदरख के क्वाथ और द्रवमें ३-३ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानके साथ देनेसे पाण्डु, वातव्याधि, और भगन्दर नष्ट होतेहैं ॥ २४१ ॥

२४२ प्रतापलङ्केश्वररसः (अष्टमः)

गन्धं ताप्यजतालकञ्च गगनं तीक्ष्णं समांशीकृतं,
ताम्रं चूर्णितभागमिश्रितगरं सर्वैर्द्विनिघ्नं रसम् ।
एकीकृत्य सुसिन्धुवारहुतभुग्यावासकर्कोटिका-
शिग्रूसूरणवह्निमान्ग्यहरणीकृष्णारसैर्मर्दयेत् ॥११०८॥
कृत्वा तद्वरगोलकं सुशिशिरं गन्धाश्मसिद्धार्थजै-,
स्तैलैर्मध्यविपाचितं च सुधिया युक्त्या च वद्धा वटीः
भूतोन्मादसुसन्निपातजगदान् शूलानुदावर्तकान् ।
गुल्माऽपस्मृतिजान्रुजश्च सकलान् हन्याद्बुधैर्योजितः॥

रसेन्द्रमं ,

भाषा—शुद्ध गन्धक, सोनामाखी और हरिताल, अभ्रक और फोलादकी भस्म १-१ भाग, ताम्रभस्म और शुद्ध वछनाग चतुर्थ ¼ भाग, पारा सवसे दूनालेकर कज्जलीकरले फिर संभालु, चित्रक, जवासा, ककोड़ा, सहिजन, सूरण, हर्रे, पीपल इन सवके स्वरस अथवा क्वाथोंकी १-१ भावना देकर गोला वनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर कुक्कुटपुटकी आच दे । स्वाङ्गशीतल होनेपर शुद्ध गन्धक और पीली सरसोंका तैल इनमें पोटलीके प्रकारसे पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर मधु वग़ैरहके साथ २-२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े अथवा वैसेही रहनेदे । इसमेंसे १ मात्रा उचितानुपानके साथ देनेसे भूतोन्माद, सन्निपात, शूल, उदावर्त, गुल्म, अपस्मार इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ २४२ ॥

२४३ प्रतापलङ्केश्वररसः (नवमः)

रसगन्धाऽमृतं नागं वङ्गं चेक्षुकटुत्रयम् ।
जम्बीराऽऽर्द्रकसंयुक्तं माषमात्रन्तु दापयेत् ॥१११०॥
मागध्या वचया युक्तं सर्ववातनिकृन्तनम् ।
सर्वज्वरहरं श्रेष्ठमन्यैश्च विषमीकृतम् ॥ ११११ ॥
सूतिकावातसम्भूतं हन्ति शीघ्रं न संशयः ।
प्रतापादिकलङ्केशः सर्वरोगनिवारणः ॥ १११२ ॥

र. क. यो.,

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और वछनाग, सीसे और रागे कीभस्म, इक्षुमूल, त्रिकटु, येसव समभाग लेकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर अन्य सवचीजोंको मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१माशा जंभीरी अथवा अदरखके रसके साथ अथवा पीपल और वचके साथ देनेसे समस्तवातविकार, अन्यदवाओंसे विषमताको प्राप्तहुआज्वर, सूतिकावात प्रभृति नष्टहोतेहैं २४३

२४४ प्रतापलङ्केश्वरोरसः (दशमः)

द्विपलं रसश्च गन्धं
मृदितं कज्जलयेच्च चतुःपलन्तत् ।
दरदस्य पलं पुरस्य
त्रिकटूनां निदधीत सार्द्धकर्षम् ॥ १११३॥
हीरामणेरथ पलञ्च शिवाञ्च मुस्ता
मेथी विडङ्गघनचित्रकपत्रकौन्तीः ।
मधूकसारगजकेशरवाजिगन्धाः
कर्षोन्मिताः पृथगमू विदधीत चूर्णम ।१११४।
विषं विघृष्याऽम्बुभिरर्द्धनिष्कं
तत्सिक्तमेतत्सकलं विमृद्य ।
भृङ्गेन सामुद्रकफेनकार्पा-
सजैर्मुनित्र्यूषणभार्गवीभिः ॥ १११५ ॥
ज्वालामुखीभार्ग्यनलाऽऽर्द्रकैश्च
पृथक् पृथक् सप्त विभावनाः स्युः ।
मयूरमत्स्याऽऽजवराहवाह-
द्विपाश्च पित्तैः पृथगेकवारम् ॥ १११६ ॥
भाण्डद्वयं सम्पुटितं निधाय
रसं विलिम्पेदुपरिस्थभाण्डे ।
विषञ्च गद्याणमितं विघृष्टं
मध्यस्थभाण्डे विनिधाय रुद्धा ॥ १११७ ॥
चुल्ल्यां विपाच्य शिखिना मृदुनाऽहरेकं
शीतं समाधिकृतमर्दितमार्द्रकेण ।
कुर्वीत तण्डुलमितान्वटकान्प्रताप-
लङ्केश्वरो भजति सिद्धिमयं रसेन्द्रः ॥१११८॥
तत्रैकं वटकमुपास्य वैद्यवर्यो-
प्युज्जीवेज्जगति विजित्य सन्निपातम् ।
नासायामथ विधमेदमुष्य चूर्णं
व्याघाते करणगतेहनुग्रहे च ॥ १११९ ॥
कृत्वा तण्डुलमात्रमन्तविवशे मौद्गन्तु यूषं पिबेत्,
वान्तौ जीवति शीतलेन पयसा सिक्तः प्रकम्पाऽवधि ।
कृष्णेक्षावथ भक्षिते दधिसिताभक्तं मुहूर्तद्वया-,
द्भुञ्जानः सुखमेति रोगहरणादुल्लाघफुल्लाननः ।११२०।
प्रत्यहं च वटकैकमिहाश्नन्यक्ष्मकुष्ठवनसुप्तिजयी स्यात् ।
क्षुद्यदा भवति यत्र न काले क्षेपतोऽभ्यवहरेत रुजार्थम् ॥
व्योषेण वातरोगेऽद्याद्ग्रहण्यां जीरसंयुतम् ।
नोष्णं भजेद्रसव्याप्तौ वचां जीरञ्च भक्षयेत् ॥११२२॥
मूलं वा वाजिगन्धायाः पाण्डुरं वा कदम्बकम् ।
चणकाऽम्लपटोलाऽम्भोजीरजातीफलैः पिबेत् ।११२३।
अतिव्याप्तौ वामतश्च दुग्धं शर्करया पिबेत् ।
मधुराऽऽहारमश्नीयात्संसिक्तः शीतलाऽम्भसा ११२४
मलयजरसलिप्तो मालतीमल्लिकाभिः
परिमलितमुशीरावासमध्यास्य शीतम् ।
गलकलितमरालोदारकर्पूरहारः,
शितमृदुपरिधानं सन्दधानो जलाऽऽर्द्रः ॥
समणिवलयरुच्चाच्छालमञ्जीकराग्रात्,
कलितसलिलयन्त्रात्प्रोच्छलच्छीकरार्द्रः ।
किसलयशयनीये कीर्णपुष्पे शयानः,
परिहरति रसातिप्राप्तिजं देहदाहम् ॥११२६॥

र. मृ , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा २ पल, गन्धक ४ पल, शुद्ध शिंगरिफ और गूगल १–१ पल, सोंठ, मिर्च, पीपल डेढ़ १॥ कर्ष, हीरा, भस्म १ पल, हर्रे, नागरमोथा, मेथी विडङ्ग, वन्दाल, चित्रक, पत्रज, रेणुका (रोण पहाड़ी), महुएकाहीर, नागकेसर, असगन्ध १–१ कर्ष लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर पानीमें पिसेहुए २ माशे वछनागके द्रवसे एक भावना देवे । फिर भंगरा, समुद्रफेन, लाल कपासके फूल, अगस्त्य, त्रिकटु, सफेददूव, अग्निशिखा, भारङ्गी, चित्रक और अदरखके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाएं देकर मोर, मछली, बकरा, सूअर और भैंसे के पित्तोंकी १–१ भावना देकर एक घड़ेके भीतर तमामका लेप करदे । दूसरे घड़ेमें ६ माशे पिसाहुआ शुद्ध वछनाग विछाकर पूर्वघड़ेको ऊपर रखकर डमरूयन्त्र वनाय ६–७ कपड़मिट्टीसे सन्धिको वन्दकर सुखाकर चूल्हेपर रख एक दिनकी बहुतमन्द आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर अदरखके रसकी एक भावना देकर १–१ चावलभरकी गोलिया बनाय छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली बारीक पीसकर सन्निपातमें नस्य देवे तो कानोंसे सुनने लगे और हनुग्रहसे निवृत्त हो । कण्ठ खुलनेपर १ गोली अदरख वगैरहके रसकेसाथ देकर मूंगका यूष पिलावे । यदि वमन हो जाय तो समझना कि जीवेगा, अन्यथा नहीं । दाह मालूम होनेपर कम्प होनेतक सिरपर ठंढे पानीकी धारादेवे । कालागन्ना चुसाके दो घड़ीकेवाद दही शक्कर और भात खानेको देवे । इसके खिलानेसे सन्निपाती रोगरहित होजाताहै । इस रसकी रोज़ एकएक गोली खिलानेसे राजयक्ष्म, कुष्ठ, सुप्तगात्रता प्रभृति नष्ट होतेहैं । इसके देनेके वाद जवतक भूख न मालूम हो तवतक न खाय । वातरोगमें त्रिकटुके साथ, ग्रहणीमें जीरेके साथ देवे । रसप्रयोगके वाद गरमचीज़ें न खाय । रसको शरीरमें फैलानेके लिये वच, जीरा, असगन्धकी जड़, सफेद कदम्बकी छाल, इनमेंसे किसी एकके ३ माशे चूर्णको चनेके-क्षार, परवलके स्वरस, जीरा तथा जायफलके क्वाथ प्रभृतिके, साथ पीवे । यदि रसका अधिक असर होनेसे वमन होने लगा हो तो शक्कर मिला हुआ दूध पिलावे, मधुर आहार देवे, शीतल जलकी शिरपर धारा छोड़े, चन्दनकालेपकरे । मालती और मोगरे प्रभृतिसे सुगन्धित और खसकी टट्टी वगैरहसे ठंढे किये हुए मकानमें बैठे । कपूरकी माला, सफेद और बारीक कपड़े पहिने । गुलाव जल वगैरहसे कपड़ोंको तर रक्खे । मणियुक्त कङ्कणकी आवाज़ और उछलते हुए कर्धनीके घुंघरोंके गुच्छे-

वाली स्त्रियोंके हाथों में लिये हुए गुलावजलवगैरहके फहुहारोंसे उड़ते हुए जलकणोंसे भीगता हुआ नवीन पल्लवोंसे निर्मित, सुगन्धितपुष्पोंसे आच्छादित विछोनेमें सोनेसे रसकी अतिव्याप्तिसे पैदा हुआ देहका दाह दूरहोताहै ॥ २४४ ॥

२४५ प्रतिज्ञावाचकोरसः

सूतं शुद्धं भागमेकञ्च तालाद्
द्वौ भागौ चेद्वेदसङ्ख्या शिलायाः।
ताम्रस्यैवं भागयुग्मं प्रकुर्या-
द्भल्लातं वै वेदभागं तथैव ॥ ११२७ ॥
अर्कक्षीरे भावयेच्च त्रिवारं
कृत्वा चूर्णं कारयेद्गोलकं तत्।
स्थालीमध्ये स्थापितं तच्च गोलं
दत्त्वा मुद्रां भस्मना सैन्धवेन ॥ ११२८ ॥
धूमस्यैवं रोधनञ्च प्रकुर्या-
च्छाणे दद्यात्स्वेदनं मन्दवह्नौ।
पश्चात्तोयेनैव भाव्यञ्च चूर्णं
गोलं कृत्वा मन्दवह्नौ विपाच्य ॥ ११२९ ॥
पश्चादेनं भक्षयेद्वै रसेन्द्रं
वल्लश्चैकं शर्कराचूर्णमिश्रम्।
तद्वत्कृष्णामाक्षिकेणैव जूर्ति
हन्यादेतत्सर्वदोषोत्थितां वै ॥ ११३० ॥

र. प्र. सु, र (मा) ज्वराधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध हरिताल २ भा, मैनसिल ४ भा, ताम्रभस्म २ भा, भिलावा ४ भा लेकर भिलांवोंको वारीक कूटले और पारे प्रभृतिकी कज्जलीकरके मिलादे। फिर इसमें आकका दूध डालकर ३ दिनतक धूपमें मर्दनकरे और गोला वनाकर ६–७ कपड़मिट्टीकीहुई हंडीमें रखकर गोलेको एक टक्कनीसे बन्दकर उसपर छनीहुई राखभरदे। राखपर वारीक पीसाहुआ सेंधानमक रखकर जङ्गलीकण्डोंकी ४ पहरतक मन्द आंच देवे। धूआ न निकलने पावे, कहींसे निकलता हो तो नमक अथवा भस्मसे वन्दकरदे स्वाङ्गशीतल होनेपर गोलेको निकालकर केवल पानीसे घोटकर पूर्ववत् गोला वनावे और ४ पहरकी मन्दाग्निमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती शक्कर, पीपल अथवा शहदके साथ देनेसे यह सब प्रकारके ज्वरोंको दूरकरताहै ॥ २४५ ॥

२४६ प्रतिश्यायहरोरसः (गन्धमर्दनः)

सुलभासमगन्धकसूतवरं
गिरिकर्णिरसे कृतमर्दनकम्।
चपलारसशुण्ठिरसैस्त्रिदिनं
मृदितं घनघोणरुजार्तिहरम् ॥ ११३१ ॥

रसेन्द्रम, प्रतिश्याये।

भाषा—तुलसी, शुद्धपारा और गन्धक समभागलेकर तुलसी का वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर कोयल, पीपल और सोंठ के स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गरम दूधके साथ लेनेसे प्रतिश्याय (जुकाम) दूरहोताहै। नाकमें कीड़े पड़ेहो अथवा घाव होगयाहो तो इसगोलीको कोयलके रसमें घिसकर नस्यदे और घावपर लगावे, शोथ हो तो ऊपरसे लेपकरे ॥ २४६ ॥

२४७ प्रदरान्तकलोहम् (प्रथमम्)

लोहभस्म द्विकर्षं स्याद्वङ्गं कर्षमितं भवेत्।
खर्परं कैरवाख्यञ्च गैरिकं घृतपाचितम् ॥ ११३२ ॥
शाल्मलीशालनिर्यासौ कर्षमानौ पृथक्पृथक्।
दूर्वादाडिमधात्रीणां स्वरसैः सप्त भावयेत् ॥ ११३३ ॥
पाषाणभेदमापैस्त्रि वल्लं वल्लं प्रयोजयेत्।
विविधे प्रदरे घोरे वैद्यवृन्दविवर्जिते ॥ ११३४ ॥

नू. क प्रदरे।

भाषा—लोहभस्म दोकर्ष, वङ्गभस्म और खपरिया, अभावमें जस्तकी भस्म, कहरवा, घीमें पकायाहुआ सोनागेरू, मोचरस, राल, ये प्रत्येक १ कर्ष लेकर सवका वारीक चूर्णकर दूव, अनार और आंवलेके स्वरसोंकी ७–७ भावनाए देकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती पाषाणभेदके चूर्णके साथ देकर शक्कर मिलाकर दूध पिलानेसे और केवल दूधभातका भोजनमें उपयोगकरनेसे नानाप्रकारके प्रदर जिनको कि वैद्योंनें असाध्य कहकर छोड़दियाहो उनको यह नष्टकरताहै। पाषाणभेद देशभेदसे बहुततरहका आताहै परन्तु जो कि हिमाद्रि प्रभृति ठंढे प्रदेशोंमें वटपत्रके सदृश पत्रवाली छोटीलता पत्थरोंमें सटीहुई रहतीहै उसका नाम पहाड़ीलोग 'पाखनभेद, कहते है प्राय सभीलोग जानतेहैं। वचा के सदृशटुकड़े लालरङ्गके वाज़ारमें मिलतेहै इसीका प्रयोगकरनेसे इसमें यथार्थ लाभ होगा। यह रस तैयार नहो तो ३ रत्ती मुर्दासङ्ग शक्करमें मिलाकर फकादे और पाषाणभेदके चूर्णमें वरावरकी शक्कर मिलाकर ३ माशे ऊपरसे फंकाकर दूध पिलादे। इस प्रयोगसे वहुतही विलक्षण फायदा होताहै। परन्तु कच्चा मुर्दासङ्ग अधिक दिन तक नहीं देना,, अधिक देनेसे वान्ति होतीहै और शरीरमें एकतरहकी ऐंठन पैदाहोतीहै इसलिये शुद्धकरके देना चतुर्थांश सेंधानमक मिलाके चौगुना पानी देकर १ प्रहर घोटके रखदे दूसरे दिन पानी को निकालदे और नवीन सेंधानमक मिलाकर घोटके रखदे ऐसे २१ रोज़ करनेसे यह सफेद होजाताहै और तमाम दुर्गुणोंसे रहितहोजाताहै यह औपदंशिक विकारों की परमौषध है ॥ २४७ ॥

२४८ प्रदरान्तकलोहम् (द्वितीयम्)

हरितालं लोहताम्रं वङ्गमभ्रं वराटिका।
त्रिकटु त्रिफला चित्रं विडङ्गं पटुपञ्चकम् ॥ ११३५ ॥
चविका पिप्पली शङ्खं वचा हपुषपाकलम्।
शटी पाठा देवदारु द्राविडी वृद्धदारुकम् ॥ ११३६ ॥

एतानि समभागानि सञ्चूर्ण्य वटिकां कुरु ।
शर्करामधुसंयुक्तं घृतेन भक्षयेत्पुनः ॥ ११३७ ॥
रक्तञ्च प्रदरं हन्याच्छ्वेतपीतञ्च नीलकम् ।
योनिशूलं कुक्षिशूलं कटिशूलञ्च सर्वजम् ॥ ११३८ ॥
मन्दाग्निमरुचिं पाण्डुं कृच्छ्रश्वासञ्च कासकम् ।
आयुःपुष्टिकरं वल्यं रजोवर्णप्रसादनम् ॥ ११३९ ॥

र सं., र.क , र मु., प्रदरे ।

भाषा—हरिताल, लोह, ताम्र, वङ्ग, अभ्रक, पीलीकौड़ी इनकीभस्में, त्रिकटु, त्रिफला, चित्रकमूल, विडङ्ग, पाचोंनमक, चव्य, पीपल, शङ्खभस्म, वच, हाउवेर, कुठ, कचूर, पाठा, देवदारु, छोटी इलायची और विधारा सब समभागलेकर एकजगह मिलाकर आंवलेके रसमें १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोलीकाचूर्ण शक्कर, मधु और घृतमें मिलाकर खानेसे रक्त, श्वेत, पीत और नील प्रदर, योनिशूल, कुक्षिशूल, कटिशूल और साधारणतया समस्तशूल, मन्दाग्नि, अरुचि, पाण्डु, मूत्रकृच्छ्र, श्वास, कास इन सबको नष्टकर आयु और पुष्टिको वढाताहै रजको साफ़ करताहै और शरीरके वर्णको अच्छा करताहै ॥ २४८ ॥

२४९ प्रदरान्तकोरसः

शुद्धः सूतस्तथा गन्धो वङ्गभस्म च रौप्यकम् ।
खर्परञ्च वराटश्च शाणमानं पृथक् पृथक् ॥ ११४० ॥
तोलकत्रितयञ्चैव लोहचूर्णं क्षिपेद् बुधः ।
दिनैकं कन्यकानीरै मर्दयेच्च भिषग्वरः॥
असाध्यं प्रदरं हन्ति भक्षणान्नाऽत्रसंशयः ॥ ११४१ ॥

र. सं., र.मु , ध., र.चि., र.चं., र र , व.रा., भै.र., प्रदरे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, वङ्ग, चांदी, खपरिया, पीलीकौड़ी इनसवकी भस्में ४–४ माशे और ३ तोले लोहभस्म लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर १ दिन घीकुआरके रससे मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली दूधवगैरहके साथ देनेसे असाध्यभी प्रदर दूरहोताहै ॥ २४९ ॥

२५० प्रदरारिरसः (प्रथमः)

रसं गन्धं सीसं मृतमिति समस्तैस्तु रसजं,
समानं सर्वैः स्यात्तुलितमपि लोध्रं वृषरसैः ।
दिनं पिष्टं नाम्ना प्रदररिपुरेषोऽपहरति,
द्विवल्लः क्षौद्रेण प्रदरमतिदुःसाध्यमपि च ॥ ११४२ ॥

वृ यो त , वै. र , र चं., र कौ , वै क., नि र., रसायनसं., यो. र., प्रदरे। रसायनसं. प्रदररिपुरिति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक तथा नागभस्म १–१ भाग, रसौत ३ भा., लोध ६ भा , लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर अड़साके रसमें १–२ रोज मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली मधुके साथ देनेसे दु साध्यभी प्रदर नष्ट होताहै ॥२५०॥

२५१ प्रदरारिरसः (द्वितीयः)

पारदगन्धकटङ्कानेकैकभागसम्मिश्रान् ।
चतुरो भागान्रसकाद्गोद्रवेण विभावितान् ॥ ११४३ ॥
मधुना सुभावितं तत् स्त्रीपुरुषाणाञ्च गुह्यजान्रोगान् ।
हन्याद्वल्लप्रमितं दुग्धाऽनुपानतो नियमात् ॥ ११४४ ॥

र. शं., प्रदरे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सुहागा १–१ भाग, खपरिया ४ भाग, लेकर सबकी कज्जलीकर गायके दूधसे १–२ रोज मर्दनकर मधुमें ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली दूधके साथ देनेसे स्त्री और पुरुषोंके गुह्यरोगोंको यह नष्ट करताहै ॥ २५१ ॥

२५२ प्रदरारिरसः (तृतीयः)

मोचं निशां मधुकखर्परवङ्गभस्मा-
न्यादाय चूर्णमिह सूक्ष्मतमं विधाय ।
पक्वाऽर्कपत्रजजलेन समं गृहीतः सर्वा-
ण्यसौ रसवरो प्रदराणि हन्ति ॥ ११४५ ॥

र मु., र. सं , प्रदरे । र सं. मधुकादिचूर्णमिति नाम ।

भाषा—मोचरस, हल्दी, दारुहल्दी, मुलहठी, खपरिया और वङ्गभस्म समभाग लेकर वारीक चूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १ माशा चूर्ण आकके पकेहुए पत्तोंके जलके साथ देनेसे यह समस्त प्रदरोंको दूर करताहै ॥ २५२ ॥

२५३ प्रदरारिलोहम्

वत्सकस्य तुलां सम्यग्जलद्रोणे विपाचयेत् ।
अष्टभागाऽवशेषन्तु कषायमवतारयेत् ॥ ११४६ ॥
वस्त्रपूते घनीभूते द्रव्याणीमानि दापयेत् ।
समङ्गां शाल्मलं पाठां विल्वं मुस्तञ्च धातकीम् ॥११४७॥
अरुणां व्योमकं लोहं प्रत्येकन्तु पलंपलम् ।
वल्लमात्रं प्रयुञ्जीत कुशमूलपयो ह्यनु ॥ ११४८ ॥
श्वेतं रक्तं तथा नीलं पीतं प्रदरमुत्कटम् ।
कटिशूल कुक्षिशूलं देहशूलञ्च सर्वगम् ॥ ११४९ ॥
प्रदरारिरयं लौहो हन्ति रोगान् सुदुस्तरान् ।
आयुःपुष्टिकरश्चैव वलवर्णाऽग्निवर्धनः ॥ ११५० ॥

भै. र., ध., प्रदरे ।

भाषा—कुड़ाकी छाल ४०० तोले लेकर १६ सेर पानीमें पकावे । अष्टमाशाऽवशेष रहनेपर उतारकर छानले और अग्निपर चढ़ाकर पकावे । जब गाढ़ा होजाय तब मजीठ, लज्जावती, मोचरस , पाठा, वेलगिरी, नागरमोथा, धावड़ीके फूल, अतीस, अभ्रक और लोहभस्म ये प्रत्येक १ पल मिलाकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ अथवा २ गोली कुशकी जड़के काढ़ेके साथ देनेसे सफेद, लाल, नीला और पीला दुस्तर प्रदररोग, कटिशूल, कुक्षिशूल और समस्त देहमें फैलनेवालाशूल इत्यादि प्रदरोपद्रवभूत समस्त दुस्तररोगोंको यह नष्टकर आयु, पुष्टि, वल, वर्ण और अग्निको वढ़ाताहै ॥ २५३ ॥

२५४ प्रभाकरवटी

माक्षिकं लोहमभ्रञ्च तुगाक्षीरीं शिलाजतु।
क्षिप्त्वा खल्वोदरे पश्चाद्भावयेत्पार्थवारिणा॥११५१॥
वल्लद्वयमितां कुर्याद्वटीं छायाविशोषिताम्।
प्रभाकरवटी सेयं हृद्रोगानखिलाञ्जयेत्॥ ११५२॥

भै र, हृद्रोगे।

भाषा—शुद्ध सोनामाखी, लोह और अभ्रकभस्म, वंसलोचन, शिलाजीत, सब समभाग लेकर वारीक चूर्णकर अर्जुनकी छालके स्वरस अथवा क्वाथसे १ दिन मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली अर्जुनकी छालके काढ़ेके साथ देनेसे यह हृदयके तमाम रोगोंको दूर करती है॥ २५४॥

२५५ प्रभावतीवटी (प्रथमा)

हेमाऽभ्राऽऽलकतीक्ष्णताप्यकमलान्येषां समं सप्तकं,
सूतञ्च द्विगुणं विशोधनवधूस्नुग्वह्निशोभाञ्जनम्।
पाठासूरणसिन्धुवारविजयैरण्डद्रवै मर्दितं,
तैले कङ्गुणिगन्धके पटुभवे कल्काद्वटीं कल्पयेत् ११५३
प्रभावतीति कथिताऽऽर्द्रकद्रावे निषेविता।
ततश्चाऽनुपिबेत्तोयं दशमूलप्रसाधितम्॥ ११५४॥
सपिप्पलीकं पिबतो जलञ्जये-
न्मरुद्विकाराण्युदराण्यपस्मृतिम्॥
गुल्मानुदावर्तचयं चलाऽचलं
शूलं विसूचीप्रभवं धनुश्चलम्॥ ११५५॥

र र. स., वातव्याधौ।

टि०—तैले कङ्गुणिगन्धके पटुभवे कल्काद्वटीं कल्पयेदिति पद स्वार्थाऽववोवेऽसमर्थं प्रतिभाति, तत्र छन्दोनुरोधार्थं पद्यगुम्फनस्य दोषोऽस्ति। तिल्तैले ज्योतिष्मतीगन्धकौ समानौ निक्षिप्य सम्पुट कृत्वा वन्योत्पलैरुद्दीपयेत्। स्वाङ्गशीतलत्वाङ्गते श्वेत भस्म निष्कास्य तेन प्रतिसारणीय क्षार कृत्वा तेन वर्टी प्रकल्पयेदिति पद्यरचयितुरभिप्राय। सोऽयमेकस्मिन् पद्ये न समाविष्टस्तन्यैपदोपोऽस्तीति विद्वद्भि र्विभावनीयम्।

भाषा—सुवर्ण, अभ्रक, हरिताल, फोलाद, सोनामाखी, और ताम्र, इनकीभस्में १-१ भाग, पारदभस्म २ भा, लेकर सबका वारीक चूर्णकर दन्ती, प्रियङ्गु अथवा अनन्तमूल, थूहरका दूध, चित्रकमूल, सहिजनकी छाल, पाठा, सूरण, संभालू, भाग और एरण्डकी जड इन प्रत्येकके यथालाभ स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ रोज़ मर्दनकर सुखाले। और तिलकेतैलमें मालकागनी तथा गन्धक समभाग डालकर शरावसम्पुटकरके १० सेर जङ्गली कण्डोंमें फूंकदे जिसमें कि जलकर सबकी सफेद राख हो जाय। फिर इस सफेदभस्मको लेकर १६ गुने पानीमें खूब मसलदे। दो रोज़के बाद ऊपरका पानी नितारले और उसको कडाहीमें ओटाकर गुडकी एकतारी चाशनीके सदृश कल्क बनाकर इसीके साथ पूर्वोक्त रसकी ६-६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १ अथवा २ गोली खिलाकर १ माशा पीपलका प्रक्षेप दिया हुआ दशमूलका काढापीवे तो इससे जलोदर वातविकार, उदरविकार, अपस्मार गुल्म, समस्त उदावर्त, चल अथवा अचल हैज़ेका शूल, और धनुर्वात ये सब नष्ट होजातेहै॥ २५५॥

२५६ प्रभावतीवटी (द्वितीया)

भागमेकन्तु कर्पूरं तदर्धं शुद्धगन्धकम्।
तत्समानि विडङ्गानि जातीपत्रलवङ्गकम्॥ ११५६॥
जातीफलं तथा चैला व्योषञ्चाऽपि समंसमम्।
श्लक्ष्णचूर्णमिदं सर्वं मर्दयेद्यामसात्रकम्॥ ११५७॥
गुडेन माषमात्रान्तु वटिकां कारयेद्बुधः।
इयं प्रभावती नाम्ना ह्याढ्यवातविनाशकृत्॥११५८॥

व रा, आढ्यवाते।

भाषा—शुद्ध कपूर १ तोला, शुद्ध गन्धक, विडङ्ग, जावित्री, लौंग, जायफल, इलायची, सोंठ, मिर्च और पीपल ६-६ माशे लेकर वारीक पीस १-२ पहर सूखा मर्दनकर बराबरका पुराना गुड़ मिलाकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली दूध वगैरहके साथ लेनेसे ऊरुस्तम्भ नष्ट होताहै॥ २५६॥

२५७ प्रमदानन्दोरसः

अयो रौप्यं तथा हेम रसं गन्धं शिलाजतु।
वह्निद्रवेण सम्मर्द्य रक्तिमाना वटीश्चरेत्॥ ११५९॥
नाम्नाऽसौ प्रमदानन्दो रसो ह्याशु विनाशयेत्।
त्रिफलातोययोगेन सर्वाञ्जरायुजान्गदान्॥ ११६०॥
जरायुरोगिणीनारी नच सेवेत पूरुषम्।
न खादेदुग्रवीर्याणि नाऽपि कुर्यादतिश्रमम्॥११६१॥

आ वि, जरायुरोगे।

भाषा—लोह, चादी, सुवर्ण इनकीभस्में, शुद्ध पारा, गन्धक और शिलाजीत सब समभाग लेकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें सब चीजोंको मिलाकर चित्रककी जड़के काढ़ेसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली त्रिफलाके काढेसे देनेसे जेरके अटकनेसे जितने उपद्रव होतेहै उनसबको यह नष्ट करताहै। जरायुरोगिणी स्त्री पुरुषका सङ्ग न करे, उग्रवीर्यचीजें न खाय और अत्यन्त परिश्रम न करे॥ २५७॥

२५८ प्रमदेभाऽङ्कुशोरसः

विशुद्धो रसो मासमुन्मत्ततैले
दशाऽहानि तैले तथोषर्बुधस्य।
विपाच्योऽप्ययामैः क्षति बैल्वतैली
मृदुस्वर्णपत्राणि सूताऽष्टमांशात्॥ ११६२॥
दिनं पेषयेत्तत्समं गन्धकं हि
कृतां कज्जलीं तां विपाच्यार्कयामम्।
यथा त्यक्तगन्धोर्ध्वकूप्यां प्रयाति
स्वशीतं समादाय सिन्दूरकल्पम्॥११६३॥

त्र्यहं खाखसत्वक्कषाये विमर्द्य
त्र्यहं वेजये जातिसारे दिनैकम् ।
तथा कोकिलाक्षस्य वस्त्रं कषाये-
विदार्याऽथ भूमौ क्षिपेद्गोलकं तम् ॥११६४॥
मृदा द्व्यङ्गुलोन्मानयाऽऽच्छाद्य पश्चा-
दरण्योपलद्वन्द्ववह्निं विधाय ।
सुशीतं मृदुस्वेदमाप्तं रसेन्द्रं
गृहीत्वा ततो भागमानं वदामः ॥ ११६५ ॥
रसाद्व्योमवैक्रान्तजातीप्रसूनं
लवङ्गं द्विभागं त्रिभागं भुजङ्गम् ।
सितं कान्तसञ्ज्ञं विषं केशराख्यं
त्रिजातं तथा वङ्गभस्म द्विभागम ॥११६६॥
अहेःफेननागीजयोरर्द्धभागं
विमर्द्याऽथ यामं मरुद्रूप्रसूनैः ।
विदारीवरावासकै र्नागवल्ली-
वलाशाल्मलीमर्कटीमूलजातैः ॥ ११६७ ॥
पयोभिश्च गोधाऽङ्घ्रिरम्भासमुत्थैः
शताह्वासहादीप्यमुण्डीसमुत्थैः ।
महापत्रिकायष्टिहस्तिद्रवैश्च
विभाव्यं त्रिवारं ततो गोलमस्य ॥ ११६८ ॥
दिनं स्वेदयेत्खाखसत्वकषाये-
र्निवध्याऽम्बरे दोलिकायन्त्रमध्ये ।
अकूपारशोपस्य तैलेन भाव्यो
द्विवारं तथा स्वर्णवीजस्य तैलैः ॥ ११६९ ॥
तथा वैजयै र्जातिसारस्य तैलै-
र्द्विवारं विभाव्योऽथ गोलं निवध्य ।
ततो मृत्पटैस्त्रिर्धराधारयन्त्रे
पचेत्पूर्ववत्स्वाङ्गशीतं ततस्त्रिः ॥ ११७० ॥
उशीरेण भाव्यः सुगन्धेन तद्व-
त्तथाऽजोङ्ककेनाऽथ कस्तूरिकाद्भिः ।
विभाव्यं शिवद्विट्कुचाद्भिः शिफाली-
द्रवैः शातपत्रोद्भवैः सिद्ध एषः ॥११७१॥
तमेनं स्वतुर्यांशकर्पूरयुक्तं
निषेवेत वल्लद्वयं वाऽस्य मात्रा ।
लवङ्गं सिता पुष्पसारोऽनुपानं
हितं क्षीरपानं विवर्ज्योऽम्लवर्गः ॥ ११७२ ॥
पठित्वा च पञ्चाऽक्षरं राजमन्त्रं
कुमारीश्च यन्त्राणि सम्पूज्य यत्नात् ।
निषेवेत पूर्वोक्तरीत्या रसेन्द्रं
निषेवेदसौ कामिनीसङ्गमञ्च ॥ ११७३ ॥
त्रिदोषघ्न एषोऽवलागर्वहारी
वशीकार्यकारी महास्तम्भकारी ।
सदा पुंध्वजोत्थानकारी नराणां
तथा पातकारी न चार्वाक् च कारी ॥७४॥
यामेकवारं भजते नवाऽङ्गनां
साऽऽजन्मदास्यं भजते विनिश्चला ।
बहुप्रकारं भजतोऽपि सङ्गमं
तेजो बलं नैव जहाति किञ्चित् ॥ ११७५ ॥
रसमेनं सेवयित्वा न सेवेत स्त्रियं यदि ।
निर्गच्छेन्नेत्रयो वीर्यं नेत्रनाशस्तथा भवेत् ॥ ११७६ ॥
नाऽङ्गं शैथिल्यभावं व्रजति न च कदा-
त्रुट्यते तस्य कान्तिः,
हेमाभा जायतेऽष्टादशविधमतुलं
नाशमेति प्रमेहम् ।
नष्टं वीर्यं प्रपन्नं भवति यदि पुमान्
सेवते रम्यकान्तां,
षण्ढो वा वाजितुल्यो जनयति तनयान्
सिंहतुल्यप्रतापान् ॥ ११७७ ॥
एनं रसञ्च प्रमदा भजेत
कुमारिकातुल्यवपुष्मती स्यात् ।
एतद्रसास्वादनतः पुमांस्तां
युवाऽपि यातुं न समर्थ एव ॥ ११७८ ॥
गर्भाशयगतान्दोषान्हन्ति वातकफोद्भवान् ।
प्रमदेभाङ्कुशो नाम रसराजः सुसिद्धिदः ॥ ११७९ ॥

वृ.यो.त , र. म. मा., टो., र मु., रसपारिजात, रसायनप., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्धपारेको एकमहीनेतक धतूरेकेतैलमें पकावे फिर १०रोज़तक चित्रकके तेलमें पकावे । पकातेसमय अग्नि इतनी देनी चाहिये कि रातदिनमें १ पल तैल जले इसतरह पारेका शोधनकर सोनेके कण्टकवेधी पत्र पारेसे आठवा हिस्सा डालकर घोटे, जव सुवर्ण अदृश्य होजाय तव पारेकी वरावर शुद्धगन्धक डालकर नीलवर्ण कज्जली कर ६–७ कपड़मिट्टी कीहुई आतशी शीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख १२ पहर तीक्ष्ण अग्निदे । शीशीका मुंह खुला रहनेदे । जव गन्धक शीशीका मुह रोकले तव लोहेकी गरमशलाकासे उसे जलादे, ऐसे ३–४ पहरतक करतारहे फिर शलाकाको शीशीके पेंदे तक डालकर देखे, जव धूमरहित शलाकामें लगाहुआ भाग लाल वर्णका होजाय तव शीशीके मुंहमें खड़ियामिट्टी अथवा ईटकी डाट लगाकर कपड़मिट्टी करदे, आच थोड़े समयतक कमकरदे, कपड़मिट्टी सूखनेपर फिर अधिककरदे । इसतरह १२ पहरकी आच देकर लकड़ी लगाना वन्दकरदे और उन्हीं कोयलों पर रहने दे । वालूके स्वाङ्गशीतल होनेपर शीशीकी कपड़मिट्टी हटाकर सावधानीसे शीशीको फोडकर सिन्दूरके रङ्गके रसको चाकूसे छुड़ाले । फिर इसे पोस्तके क्वाथसे ३ रोज़ मर्दनकर मुर्गीके अण्डेकी जर्दी अथवा गाजेके वीजोंके तैलसे ३ रोज मर्दनकर जायफलके तैलसे १ रोज मर्दनकरे । तदनन्तर तालमखाने के काढेमें एकरोज़ मर्दनकर गोलावनाय गढेमें रखकर ऊपरसे दोअंगुल मिट्टीसे दवाकर दो जङ्गली कण्डोंकी आचदे ।

स्वाङ्गशीतल होनेपर स्वेदित पारेको निकालकर अभ्रक और वैक्रान्तभस्म, जावित्री और लौंग ये पारेसे २ भाग, नागभस्म ३ भाग, चादी और कान्तलोहकीभस्म, शुद्ध वछनाग. केसर, तज, पत्रज, इलायची और वङ्गभस्म ये प्रत्येक २ भाग, अफीम और सोनामाखी आधा ½ भाग मिलाकर शङ्खपुष्पीके फूलोंसे १ पहर मर्दनकर विदारी, त्रिफला, अड्सा, पान, वला, सेमलका मुसला, केवाचकीजड़, गोदुग्ध, लज्जालु, केलाकंद, सोंफ, माषपर्णी और मुद्गपर्णी अजमोद, गोरखमुण्डी, कंघी, मुलहठी, हाथीका मद अथवा हस्तिकर्ण पलाशकी छाल इन सवके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ वार भावना देकर गोला वनाय कपड़ेमें वाधकर दोलायन्त्रमें पोस्तका क्वाथ भरकर १ रोज़ स्वेदनकर समुद्रशोषके तैलसे दो भावनाएं देकर धतूरेका तैल, मुर्गीके अण्डेकी ज़र्दी अथवा गाजेके वीजोंका तैल, जायफलका तैल इन प्रत्येककी २–२ भावनाएं देकर गोला वनाय तीन-कपड़े लपेटकर मूषयन्त्रमें पूर्वोक्त प्रकारसे दो जङ्गली कण्डोंकी आच देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर खस, एलादिगण, अगरु, कस्तूरी, केवड़ेकीजड़ हारसिगार और कमल इनके यथासम्भव स्वरस अथवा काढ़ेकी ३–३ भावनाएं देनेसे यह **प्रमदेभाङ्कुशरस** तैयार हुआ। इसमेंसे ६ रत्तीकी मात्रा लेकर १॥ रत्ती शुद्धकपूर, लौंग २ नग, मिश्री और मधु मिलाकर खावे और ऊपरसे दूधपीवे । इसमें अधिक दुग्धका सेवन हितकारकहै अम्लवर्गका त्यागकरे । लेनेके पहिले ॐनम शिवाय इस पञ्चाक्षर मन्त्रका जपकरे, कुमारी और यन्त्रकी पूजाकरे। इसके सेवनमें स्त्रीप्रसङ्ग करना उचितहै, यह त्रिदोषघ्नहै स्त्रियोंके गर्वको हरण करताहै वशीकरणहै और अत्यन्त स्तम्भनकारकहै पुरुषोंकी नपुंसकताको दूर करता है। जिस स्त्रीकेसाथ एकवारभी इसरसका सेवन करनेवाला सङ्ग करे तो वह जीने तक अन्य पुरुषोंकी तरफ मनोवृत्तिको न दौड़ाती हुई अनन्यभक्ता होतीहै वह पुरुषभी अनेक प्रकारोंके वन्धोंके साथ रमणकरता हुआभी तेज और वलकी किसीतरहकी हानिको नहीं प्राप्त होता। इस रसका सेवनकरके अगर स्त्रीसङ्ग न करे तो नेत्रोंका वीर्य कम होजाताहै अथवा नेत्र ही नष्ट हो जाते हैं। क्रमपूर्वक यदि इस रसका सेवनकरे तो कोईभी अवयव शिथिल नहीं होता। बुढ़ापेमें प्राय मनुष्योंकीकमर झुकजाया करतीहै सो इसरसके सेवन करनेवालेकी नहीं होती और सुवर्ण सदृश कान्ति वनी रहतीहै । अठारह प्रकारके प्रमेह, शुक्रदोष, नपुसकता, इन सवको यह दूर करताहै। इसरसको यदि वुड्ढी औरत खावे तो कन्यासदृश अवयव हो जातेहैं युवावस्थापन्नभी पुरुष इसके सन्तोष देनेके लिये समर्थ नहीं होता । स्त्रियोंके वात और कफमे उत्पन्न होनेवाले गर्भाशयके रोगभी इससे नष्ट हो जातेहै ॥ २५८ ॥

२५९ प्रमेहकुञ्जरकेसरीरसः (प्रथमः)

रसगन्धकताम्राऽभ्रजयावङ्गात्क्रमोत्तरम् ।
भागाः स्युस्तुलितास्तत्र गुडूचीसत्वसम्भवाः ॥११८०॥
विमर्द्य मुशलीरम्भाशालमलीगोक्षुरद्रवैः ।
द्विमाषं ससितं खादेन्मेहकुञ्जरकेसरी ॥ ११८१ ॥

र. को., र क. ल., प्रमेहाऽधिकारे।

टि०—रसकल्पलतायां मुशलीरम्भागोक्षुराणां भावना न दृश्यते, दृश्यते त्वश्वत्थभावना। अत्राऽप्यश्वत्थस्य भावनया न कोऽपि दोष ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और अभ्रकभस्म, भाग, वङ्गभस्म ये सव क्रमवृद्धभागसे लेवे और सवकी वरावर गिलोयका सत्त्व मिलाकर मुसली, केलेकाकन्द, सेमलकी छाल और गोखरू इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्करके साथ खाकर ऊपरसे दूध पीनेसे सव प्रकारके प्रमेह नष्टहोतेहैं ॥ २५९ ॥

२६० प्रमेहकुञ्जरकेसरीरसः (द्वितीयः)

रसगन्धाऽऽयसाऽभ्राणि नागवङ्गौ सुवर्णकम् ।
वज्रकं मौक्तिकं सर्वमेकीकृत्य विचूर्णयेत् ॥ ११८२ ॥
शतावरीरसेनैव गोलकं शुष्कमातपे ।
बुद्ध्वा शुष्कं तमुद्धृत्य शरावे सुदृढे क्षिपेत् ॥११८३॥
सन्धिलेपं मृदा कुर्याद्गर्ते च गोमयाऽग्निना ।
पुटेद्यावच्चतुर्यामं चोद्धृत्य स्वाङ्गशीतलम् ॥ ११८४ ॥
श्लक्ष्णं खल्वे विनिक्षिप्य गोलञ्च मर्दयेद्दृढम् ।
देवब्राह्मणपूजाञ्च कृत्वा धृत्वा करण्डके ॥ ११८५ ॥
खादेद्रक्तिमितं प्रातः शीतं दुग्धं पिवेदनु ।
अष्टादश प्रमेहांश्च जयेन्मासप्रयोगतः ॥ ११८६ ॥
तुष्टिं तेजो वलं वर्णं शुक्रवृद्धिमनुत्तमाम् ।
अग्ने र्वलं वितनुते मेहकुञ्जरकेसरी ॥
दिव्यं रसायनं श्रेष्ठं नाऽत्र कार्या विचारणा ॥११८७॥

नि र., र चं, र.र कौ, व रा, वै चि, रसपारिजात, प्रमेहे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अभ्रक, नाग, वङ्ग, सुवर्ण, हीरा और मोती इन सवकीभस्में समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर १–२ पहर शतावरीके रससे घोटकर गोला वनाय धूपमें सुखावे। सूखनेपर सम्पुटमें रखकर ६–७ कपडमिट्टीसे वन्दकर गढ़ेमें इतने कण्डोंकी आचदे कि ४ पहरमें ठंटी होजाय। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर वारीक पीसकर देवता और ब्राह्मणोंका पूजनकर शीशीमें भरदे। इसमेंसे १–१ रत्तीकी मात्रा लेकर ठंढा दूध पीवे। इसतरह १ महीने तक करनेसे यह १८ प्रकारके प्रमेहोंको नष्ट कर उत्साह, तेज, वल, वर्ण, शुक्रवृद्धि, अग्निवल इन सवको करके वलीपलितादिकोंसे रहित करताहै ॥ २६० ॥

२६१ प्रमेहकुञ्जरकेसरी रसः (तृतीयः)
(हेमकुञ्जरकेसरी)

हेमखर्परकाऽयोऽभ्रवङ्गाश्च भागवर्द्धिताः ।
पारद. पञ्चभागः स्याद्गुडूच्याः सत्वकन्तथा ॥११८८॥

मर्दयेन्मुसलीरम्भाशाल्मलीगोक्षुरद्रवैः ।
सिद्धो वल्लद्वयमितो मेहकुञ्जरकेसरी ॥ ११८९ ॥
सेवितो मधुना सार्द्धं धात्रीगोक्षुरतस्तथा ।
क्वाथं मधुसमायुक्तमनुपानाय दापयेत् ॥ ११९० ॥
पिबेन्मधुसमायुक्तं रात्रौ पेयः शिवारसः ।
मासत्रयप्रयोगेण मेहान् सर्वान् व्यपोहति ॥ ११९१ ॥
अश्मर्यां मातुलुङ्गस्य मूलं पर्युषिताऽम्बुना ।
वेल्लाश्मभिज्जलयुता मूत्रकृच्छ्रनिवारणः ॥ ११९२ ॥
गर्भिणीशूलविष्टम्भे ज्वराऽतीसारयोस्तथा ।
यथोक्तेनाऽनुपानेन दातव्यो भिषजा सदा ॥११९३॥

र. शं., र. मु., रसपारिजात, प्रमेहे । रसपारिजाते मेहेभकेसरीति नाम ।

भाषा—सुवर्ण, खपरिया अथवा जस्त, लोह, अभ्रक, वङ्ग इनसवकी भस्में क्रमवृद्धभागसे लेना । पारदभस्म और गिलोयका सत्त्व ५–५ भाग लेकर सवको १–२ पहर शुष्क-मर्दनकर मुसली, केलेका कंद, सेमलकी छाल और गोखरू इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे भावना देकर ६–६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ देकर आवले और गोखरूके काढेमें मधु डालकर ऊपरसे पिलानेसे यह समस्त प्रमेहोंको ३ महीनेमें नष्टकरताहै । रातको सोतेसमय हर्रेकाकाढ़ा मधु मिलाकर पिलाना चाहिये । पथरीमें बिजोरेकी जड बासीपानीमें घिसकर देवे । मूत्रकृच्छ्र और गर्भिणीके शूल, विष्टम्भ, ज्वर तथा अतिसारमें विडङ्ग और पाषाणभेद के चूर्णके साथदेवे ॥ २६१ ॥

२६२ प्रमेहकुलान्तकोरसः (प्रथमः)

सूतं वङ्गं मृतं तुल्यं मृताऽभ्रं सूतकात्त्रिधा ।
लशुनं सर्वतुल्यांशं सर्वमेकत्र पेषयेत् ॥ ११९४ ॥
बदरामां वटीं कुर्यात्प्रमेहस्य कुलान्तकः ।
लशुनं छागमूत्रेण वसामेही पिबेदनु ॥ ११९५ ॥

र. र., र. को., र. क. ल., रसायनसं., व. रा., र. का., यो. म., प्रमेहे ।

भाषा—पारा और वङ्गभस्म १–१ भाग, अभ्रकभस्म ३ भाग, लशुन ५ भाग लेकर १–२ रोज़ मर्दनकर बेरवरावर गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली खाकर बकरेके मूत्रमें लशुनमिलाकर पीनेसे वसामेह निवृत्तहोताहै ॥ २६२ ॥

२६३ प्रमेहकुलान्तकोरसः(मेहकुलान्तकः)(द्वितीयः)

मृतं वङ्गं मृतञ्चाऽभ्रं शुद्धं पारदगन्धकम् ।
भूनिम्बं पिप्पलीमूलं त्रिकटु त्रिफला त्रिवृत् ॥११९६॥
रसाञ्जनं विडङ्गाब्दबिल्वगोक्षुरदाडिमम् ।
प्रत्येकं तोलकं ग्राह्यं शुद्धमश्मजतोः पलम् ॥११९७॥
गोपालकर्कटीमूलस्वरसै र्वटिकां कुरु ।
प्रमेहान्विंशतिं हन्ति मूत्रकृच्छ्रं हलीमकम् ॥११९८॥
अश्मरीं कामलां पाण्डुं मूत्राऽऽघातमरोचकम् ।
अनुपानं प्रयोक्तव्य छागीदुग्ध पयोऽथवा ॥
धात्रीफलस्य निर्यासं क्वाथं कौलत्थजं पिबेत् ॥११९९

भै., र., ध., प्रमेहे ।

भाषा—वङ्ग और अभ्रकभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक, चिरायता, पिपलामूल, त्रिकटु, त्रिफला, निसोत, रसौत, विडङ्ग, नागरमोथा, वेलगिरी, गोखरू, अनारके छिलके ये सब १–१ तोला, शुद्ध शिलाजीत १ पल लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर एरण्डखरबूजेकी जड़के रसमें घोटकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली बकरी अथवा गायके दूध, आवलेकेरस अथवा कुलथीके क्वाथकेसाथ रोगकी अवस्था देखकर देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, हलीमक, अश्मरी, कामला, पाण्डु, मूत्राऽऽघात, अरुचि, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २६३ ॥

२६४ प्रमेहकेतूरसः (प्रमेहसेतुः)

सूतमभ्रं वटक्षीरै र्मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ।
विशोष्य पक्वं मूषायां सर्वरोगे प्रयोजयेत् ॥१२००॥
विशेषान्मेहरोगेषु त्रिफलामधुसंयुतम् ।
युञ्जीत वल्लमेकन्तु रसेन्द्रस्याऽस्य वैद्यराट् ॥१२०१॥

र. चं., र. का., रसायनस., र. सि., र. सं., र. चि., र. सु., प्रमेहे । र. चं., र. का., एतौ द्वौ ग्रन्थौ विहाय सर्वेषु ग्रन्थेषु प्रमेहसेतुरितिनाम्ना व्यवहृत ।

भाषा—पारे और अभ्रककी भस्मको २ पहर बटके दूधमें मर्दनकर गोलाबनाय भूधरयन्त्रमें पानके अन्दर स्वेदनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचिताऽनुपानके साथ देनेसे यह सबरोगोंको नष्टकरताहै । प्रमेहोंमें मधु और त्रिफलाके साथ देना ॥ २६४ ॥

२६५ प्रमेहगजकेसरीरसः (प्रथमः)

मृताऽभ्रकान्ततीक्ष्णानि सूतभस्माऽब्धिशोषकम् ।
मृतं नागं मृतं वङ्गं मृतमण्डूरमेव च ॥ १२०२ ॥
तुल्यं तुल्यं विचूर्ण्याऽथ मेहारे बींजकन्तथा ।
दिनन्तु त्रिफलाद्रावे पञ्चाङ्गैराकुलीरसैः ॥ १२०३ ॥
कतकस्य च सारेण भावयेच्चूर्णयेद्भिषक् ।
त्रिवल्लसेवनाच्चैव गोतक्रेण दिनेदिने ॥ १२०४ ॥
मेहानां विंशतिं चैव मूत्राऽऽघातञ्च नाशयेत् ।
मेहकेसरिनामाऽयं हरपादेन निर्मितः ॥ १२०५ ॥

वै. चि., प्रमेहे ।

भाषा—अभ्रक, कान्तलोह, फोलाद, पारा, नाग, वङ्ग, मण्डूर इनसबकी भस्में और समुद्रशोष, समभाग लेकर सबकी बराबर बकायनके बीज लेकर बारीक चूर्णकर सबको इकट्ठा मिलाय त्रिफला, अङ्कोलका पञ्चाङ्ग, निर्मलीकाहीर इनके यथालाभ स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर ९–९ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली

गोतक्रके साथ देनेसे सब प्रकारके प्रमेह और मूत्राऽऽघात नष्ट होतेहै ॥ २६५ ॥

२६६ प्रमेहगजकेसरीरसः (द्वितीयः)

मृतं वङ्गं सुवर्णञ्च कान्तलोहञ्च पारदम् ।
मुक्तां गुडत्वचञ्चैव सूक्ष्मैलां पत्रकेसरम् ॥ १२०६ ॥
समभागं विचूर्ण्याऽथ कन्यानीरेण भावयेत् ।
द्विमाषां वटिकां खादेद्दुग्धाऽन्नं प्रपिबेत्ततः ॥१२०७॥
प्रमेहं नाशयत्याशु केसरी करिणं यथा ।
शुक्रप्रवाहं शमयेत्त्रिरात्रान्नाऽत्र संशयः ॥
चिरजातं प्रवाहञ्च मधुमेहञ्च नाशयेत् ॥ १२०८ ॥

र. चि., र च , र. सु , र स , प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—वङ्ग, सुवर्ण, कान्तलोह, पारा और मोती इनकी भस्में, दालचीनी, छोटी इलायची, पत्रज, नागकेसर, सब समभाग लेकर वारीक चूर्णकर घीकुआरके रसमें १–२ रोज़ मर्दनकर २–२ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली खाकर दूधभात खानेसे यह शुक्रके प्रवाहको ३ दिनमें नष्ट करताहै। इसीतरह वहुतदिनके प्रमेह और मधुमेहको नष्ट करताहै ॥ २६६ ॥

२६७ प्रमेहगजसिंहोरसः (मेहद्विरदसिंहः) (प्रथमः)

पारदाऽभ्रकयो भस्म मृतं लोहाऽष्टकं समम् ।
टङ्कणञ्चैव मध्वाज्यं प्रत्येकं सूततुल्यकम् ॥ १२०९ ॥
चाण्डालीराक्षसीपुष्पैः दिनं मर्द्य निरुद्धय च ।
मूषायां भूधरे पक्व दिनैकं तच्च चूर्णयेत् ॥ १२१० ॥
मेहद्विरदसिंहोऽयं रसः क्षौद्रे द्विरक्तिकम् ।
लिहेच्चाऽनुपिबेत्तक्रै निष्कैकं टङ्कणं सदा ॥ १२११ ॥

र र , व रा , यो म , र क यो , र को , प्रमेहे।

भाषा—पारा, अभ्रक, अष्टलोहों (सुवर्ण, चांदी, तावा, फोलाद, वङ्ग, नाग, अभ्रक और कान्तका सत्त्व) कीभस्में, भुनासुहागा, मधु और घृत सव समभाग लेकर सेंमल और कपासके फूलोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय भूधरयन्त्रमें एकदिन स्वेदनकर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती मधुकेसाथ चाटकर ४ माशे भुनासुहागा छाछमें डालकर पिलानेसे तमाम प्रमेह नष्टहोतेहै ॥ २६७ ॥

२६८ प्रमेहगजसिंहोरसः (द्वितीयः)

चाण्डालीराक्षसीपुष्परसमध्वाज्यटङ्कणम् ।
रसं समांशोपरसं समं हेम्ना विमर्दितम् ॥ १२१२ ॥
समांशं पूतिलोहं वा मूषायां विपचेत्क्रमात् ।
प्रमेहगजसिंहोऽयं रसः क्षौद्रे द्विरक्तिकः ॥ १२१३ ॥

र र स , र सु., र को , र का , प्रमेहे।

भाषा—सेमल और लालकपासके फूलोंकारस, मधु, घी, सुहागा, पारा और उपरस (हरिताल, फिटकरी, गन्धक, मुर्दासन, मैनसिल, सोनागेरू, सफेद सुरमा और कसीस) येसव समभाग, इनसवकीवरावर सुवर्ण अथवा नाग–वङ्गभस्म लेकर मर्दनकर गोलावनाय भूधरयन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती मधुकेसाथ चाटनेसे सबप्रकारके प्रमेहोंको यह नष्टकरताहै २६८

२६९ प्रमेहगजाङ्कुशोरसः (मेहगजाङ्कुशः)

रसेनतुल्यं कनकस्य भस्म
पुनर्नवामूलरसेन मर्द्यम् ।
तच्छाल्मलीमूलरसेन वाऽपि
दिनत्रयं चामलकीरसेन ॥ १२१४ ॥
तदभ्रकेणैवसमानभागं
विमर्दयेद्द्राक्षनिकारसेन ।
सिद्धो भवेन्मेहगजाङ्कुशाख्योऽ-
प्यशेषमेहाञ्जयति प्रसह्य ॥ १२१५ ॥
सितामधुभ्यां सकणामधुभ्यां
वा पिप्पली शर्करया समेतः ।
वल्लो जयत्याशु यथाऽनुपानै-
रशुक्रलं पथ्यमिहोपदिष्टम् ॥ १२१६ ॥
विवर्जयेन्मेहगदाऽभिभूतः
क्षीरं दधिक्षौद्रगुडाऽम्लमद्यम् ।
सामुद्रनिद्रा लशुनाऽम्लतीक्ष्ण-
वार्ताकयोषिद्बृहतीफलञ्च ॥ १२१७ ॥

र , रसपारिजात, प्रमेहे।

भाषा—पारा और सुवर्णभस्म वरावर लेकर पुनर्नवा अथवा सेंमलकी जड़के रससे ३ रोज मर्दनकर ३ रोज़ आवलेके रससे मर्दनकरे। फिर इसमें समान अभ्रकभस्म मिलाकर द्राक्षके रसकी भावना देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्कर, मधु अथवा पीपल, मधु अथवा पीपल और शक्करके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्ट करताहै। शुक्रको न वढ़ानेवाली जो चीज़ेंहै वे खानेकोदे। दूध, दही, मधु, गुड़, खटाई, मद्य, समुद्रतटपरसोना, लहसन, तीक्ष्णपदार्थ, वेंगन, स्त्री, भटकटैया इन सवका त्याग करे ॥२६९॥

२७० प्रमेहदावानलरसः

शैवभीमवलयः समांशका-
स्ताम्रभस्म कुरु तत्समांशकम् ।
तच्च गव्यपयसा विमर्दितं
वासरत्रितयकं निरन्तरम् ॥ १२१८ ॥
ततः शिवामर्कटिवीजयष्टि
द्राक्षेक्षुगोक्षूरकखर्जुरीभिः ।
मांसीशिवाखण्डसितामराल-
पादीदधित्थाऽम्बुरसेनवाऽपि ॥ १२१९ ॥
जम्बीरनारङ्गरसेन कृत्वा
गुडूचिकासत्त्वरसेन चाऽपि ।
विभावितः सिद्धिमुपैति सूतो
द्विवल्लमात्रो जयति प्रमेहान् ॥ १२२० ॥

स्वीयाऽनुपानैर्मधुना शिवाया
नीरेण वा शर्करया समेतः ।
मोचाऽङ्घ्रिनीरेण तथा प्रसूता-
नीरेण वा गोपयसा प्रदेयः ॥ १२२१ ॥
मधुप्लुतो हन्त्यखिलान्गुदाऽङ्कुरां-
स्तथाऽश्मरीं कृच्छ्ररुजं प्रसह्य ।
प्रमेहदावानल एष सूतः
सर्वप्रमेहेषु नियोजनीयः ॥ १२२२ ॥

र., प्रमेहे ।

भाषा—पारा, सीसाभस्म और शुद्धगन्धक ये सब समभाग और ताम्रभस्म सबकी बराबर लेकर गायके दूधसे लगातार ३ रोज़तक मर्दनकर हर्रे, केवांचके बीज, मुलहठी, द्राक्ष, ईख, गोखरू, खजूर, जटामांसी, हर्रे, खांड, मिश्री, हंसराज, कैथ, सुगन्धवाला, जंभीरी, नारङ्गी, गिलोयका सत्त्व इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर ६–६ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु, हर्रे, शक्कर, केलेकाकंद, स्त्रीदुग्ध, गोदुग्ध इनसबमेंसे रोगोचिती देखकर किसी एकके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्ट करताहै। मधुके साथ देनेसे बवासीर, पथरी और मूत्रकृच्छ्रको दूर करताहै ॥ २७० ॥

२७१ प्रमेहध्वान्तभास्करोरसः

शम्भो र्बीजं रौप्यतुर्यांशयुक्तं
लोहं ताम्रं खञ्च सूतेन तुल्यम् ।
मर्द्यं कन्यारात्रिपथ्याशिवाम्बु-
कृष्णाऽनन्तापाटलानां रसेन ॥ १२२३ ॥
सिद्धः सूतो रक्तियुग्मप्रमाणो
हन्यान्मेहं शर्करारात्रियुक्तः ।
पथ्याऽङ्कोल्लक्षौद्रयुक्तोऽपिनूनं
मेहध्वान्तध्वंसने भास्करोऽयम् ॥१२२४॥
बृंहणं शीतलं वृष्यमनुपानादिकञ्च यत् ।
तत्सर्वं वर्जयेद्यत्नात्प्रमेही धर्ममाचरेत् ॥ १२२५ ॥

र., प्रमेहे ।

भाषा—रजतभस्म ४ तो., पारा, लोहा, ताम्र, अभ्रक इनसबकी भस्में १–१ तोला लेकर २–३ पहर सूखी खरलकर घीकुंआर, हल्दी, हर्रे, आवला, सुगन्धवाला, पीपल, अनन्तमूल, पाढर, इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंकी १–१ भावना देकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्कर और हल्दीके चूर्णके साथ अथवा हर्रे, अङ्कोलकीछाल और मधुके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्टकरताहै। धातुओंको बढ़ानेवाली, ठंढी, वृष्यचीज़ें अनुपानादिकोंमें प्रमेही न ले और धर्मका सेवनकरे ॥ २७१ ॥

२७२ प्रमेहध्वान्तविवस्वान्रसः

रसाऽभ्रकौ तुत्थसमानभागौ
जम्बीरनीरैस्त्रिदिनं विमर्द्य ।
कुर्वीत मूषाकुहरे निवेश्य
वह्नौ ततस्तस्य पुटानि सप्त ॥ १२२६ ॥
बीजाह्वमुष्काऽक्षयुगैश्चतस्रः
स्युर्भावना द्वे ककुभात्त्रिवारम् ।
यष्टीसिताकेतकजीररम्भा-
खर्जूरिकाजातिदलैः प्रतिस्वम् ॥ १२२७ ॥
एवं हि सिद्धस्य रसस्यवल्लो
मधुप्रयुक्तः सहसा शिशूनाम् ।
सन्तापशोषौ बलहीनताञ्च
तृषाञ्च वासासलिलैः प्रमेहान् ॥ १२२८ ॥
निवर्तयेद्द्रासरसप्तकेन
दुग्धौदनं स्यादिह भोजनाय ।
नीरेण बब्बूलनवप्रवाला-
न्निषेव्य तैः शर्करया समेतैः ॥ १२२९ ॥
सर्वप्रमेहान्विनिहन्ति दत्तो
दिनत्रयं विंशतिवत्सरस्य ।
अन्नं ससर्पिः ससितं प्रयोज्यं
दिनानि सप्तत्रिगुणानि चाऽत्र ॥ १२३० ॥
वरामधुभ्यां सहितश्च यस्य
पञ्चाऽधिका वत्सरविंशतिः स्यात् ।
हैयङ्गवीनेन गवाञ्च पथ्यं
त्रिःसप्तसङ्ख्यानि दिनानि कार्यम् ॥१२३१॥
प्रस्विन्नगोधूमरसेन हन्ति
सत्रिंशदब्दस्य दिनत्रयेण ।
अन्नं ससर्पिः सगुडञ्च देयं
मध्विक्षुदण्डैस्त्रिदिनं विधातुम् ॥ १२३२ ॥
अङ्गानि सम्यग्विनिदाघसङ्ग-
गतानि खानि स्फुटनं ददीत ।
चिञ्चागुडाभ्यां युतमन्नमस्मि-
न्द्राक्षादिनीरेण विमिश्रितं सत् ॥
दिनत्रयं लङ्घनजं विशोषं
विनाशयेद्गोस्तनिकासिताभ्याम् ॥ १२३३ ॥
पथ्यं देयमुमाशम्भुवासुदेवैर्विनिर्मिते ।
पातु जगन्ति कृपया मेहध्वान्तविवस्वति ॥

र. र स., र. को., र. र कौ, र क, र क यो, प्रमेहे।

टि०—र र कौ हरगौरीरस इति नाम। र. क प्रमेहहर इति नाम। र क यो उमाशम्भुरितिनाम, स उकारे गत, तत्र गन्धको विशेषतया नियोजित कदलीरसेनाऽन्तेतिस्रो भावना दत्ता इति विशेष । नीरेण बब्बूलनवप्रवालानित्यस्य स्थाने ताम्बूलपह्लवाम्भोभिरिति त्वयोग्यमेव, प्रमेहहरणे बब्बूलपल्लवेषु विशेषशक्तिमत्त्वात् इत्थ बीजस्य बीजपूरार्थेकरणमप्यनुचितम् ।

भाषा—पारा और अभ्रकभस्म आधा ½ भाग, तुत्थभस्म १ भाग, लेकर जंभीरीके रससे ३ रोज़ मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर १० सेर कण्डोंकी आचदे। ऐसे ७ आंचे-

देकर वीजक(वीवळा म) अभावमें असन, मोखा, वहेड़ा, रुद्राक्ष इनके क्वाथोंकी ४-४ भावनाए देकर कडुएकी छालके काढ़े की २, मुलहठी, शक्कर, केवड़ा, जीरा, केलेकाकंद, खजूरकी ताड़ी, जावित्री इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंकी ३-३ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाथ देनेसे वर्चोकाज्वर, शोष, कृशता और प्यास दूरहोतीहै। अड़ूसेके रसकेसाथ देनेसे ७ रोज़में प्रमेहोंको नष्टकरताहै इसमें भोजन दूधचावलदेना। ववूलकी नईपत्तियोंके रसमें शक्कर डालकर देनेसे २० वर्षके आदमीके प्रमेहोंको ३ दिनमें नष्टकरताहै। यहांपर अन्नको घी और शक्करकेसाथ देना, पथ्य २१ दिनतककराना। २५ वर्षके आदमीको त्रिफला और मधुकेसाथ देना और गायके मक्खनकेसाथ २१ दिन तक पथ्य देना। ३० वर्षके आदमीको गेहूंके काढेकेसाथ देना यहापर तीनरोज तक घी, गुड़, मधु, ईख इनकेसाथ अन्नदेना। ऐसा न करनेसे अङ्गोंमें दाह होकर सूक्ष्मच्छिद्रोंसे रक्तपित्तनिकलने लगेगा। ऐसीहालत होजाय तो इमली और गुड़केसाथ अन्नदेना और द्राक्षा वगैरहका रस पिलाना। द्राक्ष और शक्करकेसाथ ३ रोज़तक देनेसे लङ्घनकृत शोषको दूरकरताहै॥ २७२॥

२७३ प्रमेहनाशनोरसः (मेहनाशनः)

लोहभस्म रसभस्म ताप्यकं
गन्धकेन सहितं समांशकम्।
वत्सवीजकरसेन भावितं
लेहितं सकलमेहनाशनम्॥ १२३५॥

र. प्र सु, प्रमेहे।

भाषा—लोह, पारा, सोनामाखी इनकीभस्में और शुद्ध गन्धक सव समभाग लेकर ४ पहरतक सूखा मर्दनकर इन्द्रजवके रससे १-२ दिन भावना देकर ३-३ रत्तीकी गोलियां घनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली उचिताऽनुपानके साथ देनेसे यह तमाम प्रमेहोंको नष्ट करताहै॥ २७३॥

२७४ प्रमेहनिकृन्तनोरसः (मेहनिकृन्तनः)

पारदस्य पले द्वे च चत्वारि गन्धकस्य च।
लोहाऽभ्रस्वर्णमाक्षीणां नागं वङ्गं पलोन्मितम्॥१२३६॥
सर्वं तद्वालुकायन्त्रे पचेन्मृद्वग्निना क्षणम्।
ब्राह्मीकुमारीमाण्डूकीभृङ्गराजरसैः सह॥ १२३७॥
पुनरालोड्य यत्नेन पचेद्गोमयवह्निना।
एष सिद्धो रसो ज्ञेयः सर्वान्मेहान्निकृन्तति॥१२३८॥

र को, प्रमेहे।

भाषा—शुद्ध पारा २ पल, शुद्ध गन्धक ४ पल, लोह, अभ्रक, सोनामाखी, नाग और वङ्ग इनकीभस्में १-१ पल लेकर वारीक चूर्णकर वालुकायन्त्रमें थोड़ीदेर पकाकर स्वाङ्गशीतल होनेपर ब्राह्मी, घीकुंआर, हुरहुर, भंगरा इन प्रत्येकके रसोंमें १-१ रोज मर्दनकर गोला वनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ७ कपड़मिट्टी देकर २ सेर कण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती उचिताऽनुपानके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको दूर करताहै॥ २७४॥

२७५ प्रमेहवद्धोरसः

सूतभस्म मृतं कान्तं मुण्डभस्म शिलाजतु।
शुद्धं ताप्यं शिलां व्योषं त्रिफलाऽङ्कोलवीजकम् १२३९
कपित्थं रजनीचूर्णं भृङ्गराजेन भावयेत्।
त्रिंशद्वारं विशोष्याऽथ मधुयुक्तं लिहेत्सदा॥१२४०॥
माषमात्रो हरेन्मेहान्मेहवद्धरसो महान्।
महानिम्बस्य वीजानि पिष्ट्वा षट्सङ्ख्यकानि च १२४१
पलं तण्डुलतोयेन घृतनिष्कद्वयेन च।
एकीकृत्य पिवेच्चाऽनु हन्तिमेहं चिरन्तनम्॥ १२४२॥

शा सं., र र. कौ, र र स., नि र, वै चि, र क यो., यो. त, यो. म, र का, र. प्र सु., र. सु., चि. र. भ, रसायनसं, रसचि., भै. सा, व. रा, प्रमेहे।

टि०—र च, र चि, ध, र म., एषु प्रमेहवज्रेति नाम तत्र मुण्डस्थाने लोह गृहीतम्। अङ्कोल्वीजकस्थाने विल्वजीरक कृतम्। महानिम्बवीजानि पणिष्कमितानि गृहीतानि, एतावान्विशेष। र स., र चि, र क ल., र सु, नि र, वृ यो त, यो त, यो र, टो, र को., र र दी, एषु मेघनादेति नाम, मुण्टस्थानेऽभ्रक गृहीतम्, अङ्कोल्वीजकस्थानेऽङ्कोठजीरक कृतम्। कपित्थरजनीचूर्णमित्यस्य स्थाने कार्पासवीज रजनीतिकृत, भावनाया भृङ्गस्थाने चित्रकगृहीतमेतावान्विशेष। रसरत्नाकरे मेघवन्धेति नामेदानीं दृश्यते तत्तु लेखकप्रमादाद्बोध्यम्। वैद्यचिन्तामणौ गन्धकमधिकतया प्रक्षिप्य मेघनादेति नाम्ना द्वितीयो योग कृतोऽस्ति, इतिविशेष। सूतभस्मगन्धकमुण्डतीक्ष्णाऽभ्रभस्मशिलाजतुताप्यव्योपत्रिफलाऽङ्कोल्वीजविल्वजीरककपित्थकार्पासवीजरजनीना समभागान् गृहीत्वा भृङ्गचित्रकभावनया रससम्पादने भवति सर्वेषा समावेशो गुणाऽधिक्यश्च। अत सर्वे योगा अस्मिन्योगेऽन्तर्भावनीया इत्यस्माक सम्मति। माणिक्यचन्द्रजैनीयरसावतारे रसराजसुन्दरस्य तृतीयस्थाने हेमवद्धेति नाम तत्र सर्वतोऽधिको रसराजसुन्दरेऽज्ञानविलास।

भाषा—पारा, कान्त, मुण्ड, इनकी भस्में शिलाजतु, शुद्ध सोनामाखी, और मैनसिल, सोंठ, मिरच, पीपल, त्रिफला, अङ्कोलवीज, कैथ और हल्दी सव समभाग लेकर वारीक चूर्णकर एकजगह मिलाकर भंगरेके रससे ३० वार भावनाएँ देकर १-१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाथ खाकर वकायनके वीज ६ नग चावलके धोवनसे पीसकर उसमें ६ माशे घी डालकर पीनेसे वहुत पुराने प्रमेह नष्ट होतेहैं। मूलमें इसकी मात्रा निष्कमात्र कीथी वह आजकलके जमानेमें सहन नहीं होसक्ती इसलिये माषमात्र यह पाठकर दिया है॥ २७५॥

२७६ प्रमेहभैरवोरसः (मेहभैरवः)

रसं गन्धं विषं लोहं जातीपत्रञ्च तत्फलम्।
अब्धिशोषाऽहिफेनञ्च पारसीकञ्च चित्रकम्॥१२४३॥
देवपुष्पं समं सर्वं सर्वैस्तुल्यं मृताऽभ्रकम्।
भावयेत्ससधा सर्वं चित्रमूलकषायकैः॥ १२४४॥

यथासात्म्येन संयोज्यं सर्वमेहापनुत्तये ।
अर्शांसि ग्रहणीं शोथं पाण्डुं शुक्रक्षयं नृणाम् ॥
यथाऽनुपानतो हन्ति सिद्धः श्रीमेहभैरवः ॥ १२४५ ॥

र. सु, टी., र. र. दी., प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और वछनाग, लोहभस्म, जावित्री, जायफल, समुद्रगोष, शुद्ध अफीम और खुरासानी अजवाइन, चित्रकमूल, लौंग ये सब समभाग इन सबकी बराबर अभ्रकभस्म डालकर सबका वारीक चूर्णकर चित्रककी जड़के काढ़ेसे भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली उचिताऽनुपानके साथ देनेसे समस्त प्रमेह, अर्श, सद्ग्रहणी, शोथ, पाण्डु, शुक्रक्षय इनको यह अपने अपने अनुपानसे दूर करताहै ॥ २७६ ॥

२७७ प्रमेहमर्दनोरसः (मेहमर्दनः)

शुद्धसीसोद्भवं भस्म निर्व्यूढं व्योम्नि सप्तधा ।
ततो विचूर्ण्य तन्मध्ये कान्तभस्म समं क्षिपेत् ॥१२४६
गोमूत्रकशिलाधातुद्रवेण परिमर्दयेत् ।
शोषयित्वा विमर्द्याऽथ क्षिपेन्नागकरण्डके ॥१२४७॥
मेहमर्दननामाऽयं दिष्टो भालुकिना खलु ।
गुञ्जाद्वयमितो देयो निम्बाऽऽमलकसंयुतः ॥ १२४८ ॥
निहन्ति सकलान्मेहान् सर्वोपद्रवसंयुतान् ।
तत्तद्रोगहरै द्रव्यैः सर्वरोगनिवर्हणः ॥
रोगाऽनुरूपं दातव्यं पथ्यमत्र यथोचितम् ॥ १२४९ ॥

र. र. स., र. सु., र. को, र. क. ल, र र कौ, प्रमेहे। रसरत्नकौमुद्यां "व्योम्नि सप्तधा" इत्यस्य स्थाने "हेम्नि सप्तधा" इति पाठ.।

भाषा—शुद्ध नागभस्मको मित्रपञ्चकके साथ मिलाकर अभ्रकसत्त्वमें डालकर धौंके । इसतरह इसे ७ वार करनेसे यह भस्मरूपमें होजायगा । इसमें कान्तलोहभस्म वरावरकी डालकर समस्तसे षोडशांश शुद्ध मैनसिलको गोमूत्रमें मिलाकर उससे ३-४ पहर मर्दनकर सुखाकर सीसेकी डिब्बीमें रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती वकायन और आंवलेके चूर्णकेसाथ देनेसे समस्त उपद्रवयुक्त असाध्य प्रमेह नष्टहोतेहैं । तत्तद्रोगहराऽनुपानके साथ देनेसे अन्य समस्तरोगोंको दूरकरताहै । इसमें पथ्य रोगाऽनुकूल देना ॥ २७७ ॥

२७८ प्रमेहमुद्गरोरसः (मेहमुद्गरः)

रसाञ्जनं विडं दारु विल्वं गोक्षुरदाडिमम् ।
भूनिम्बपिप्पलीमूलं त्रिकटु त्रिफला त्रिवृत ॥१२५०॥
प्रत्येकं तोलकं देयं लोहचूर्णन्तु तत्समम् ।
पलैकं गुग्गुलुं दत्त्वा घृतेन वटिकां कुरु ॥ १२५१ ॥
माषैका निर्मिता चेयं मेहमुद्गरसञ्ज्ञिका।
श्रीमद्गहननाथेन लोहनिस्तारकारिणा ॥ १२५२ ॥
अनुपानं प्रकर्तव्यं छागीदुग्धं जलञ्च वा ।
मेहानां विंशतिं हन्यान्मूत्रकृच्छ्रं हलीमकम् ॥१२५३॥
अश्मरीं कामलां पाण्डुं मूत्राऽऽघातमरोचकम्
अर्शांसि व्रणकुष्ठञ्च वातरक्तं भगन्दरम् ॥ १२५४ ॥

र. सं., र सु, र. चं., र चि., भै. र., र.र., प्रमेहे ।

भाषा—रसौत, विड (जो कि वीजोंके जारणमें काम आतेहैं), विडनमक, देवदारु, वेलगिरी, गोखरू, अनारके छिलके, चिरायता, पिपलामूल, त्रिकटु, त्रिफला और निसोत येसव १-१ तोला, लोहभस्म सवकी वरावर, शुद्ध गूगल १ पल लेकर सबका कपड़छान चूर्णकर ३-४ पहर गोघृत देकर कुटेहुए गूगलमें धीरे २ मिलावे । थोड़ा २ घृत डालता जाय । जब एकजीव होजाय तब १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली वकरीके दूध अथवा जलके साथ देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, हलीमक, पथरी, कामला, पाण्डु, मूत्राऽऽघात, अरुचि, ववासीर, व्रण, कुष्ठ, वातरक्त और भगन्दर इनसवको यह नष्ट करताहै ॥ २७८ ॥

२७९ प्रमेहमृगाङ्को रसः (मेहमृगाङ्कः)

पारदो गन्धकं वङ्गं मृगनाभिश्च हिङ्गुलुम् ।
धान्यकं कुङ्कुमं चैव धात्री चैवैलवालुकम् ॥ १२५५ ॥
त्रिकटु त्रिफला मुस्ता कर्पूरश्च समंसमम् ।
श्रीगन्धवारिणा चापि मर्दयेद्यामयुग्मकम् ॥ १२५६ ॥
रक्तमूत्रविकारांश्च हन्ति मेहकुलानि च ।
शर्कराज्याऽनुपानेन महादाहञ्च नाशयेत् ॥
ख्यातो मेहमृगाङ्कोऽयं काश्यपेन विनिर्मितः॥१२५७॥

वै. चि., प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, वङ्गभस्म, कस्तूरी, हिङ्गुलभस्म, धनिया, केसर, आवला, गेंहुंला, त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोथा, कपूर येसव समभाग लेकर वारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर सफेद चन्दनके काढ़ेसे २ पहर मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शक्कर और घीके साथ देनेसे सब प्रकारके प्रमेह और महादाह मिटतेहैं ॥ २७९ ॥

२८० प्रमेहरसायनम् (मेहरसायनम्)

रजतञ्चैकभागं स्याद्गन्धकश्च द्विभागिकः ।
वङ्गभस्म त्रयो भागाश्चत्वारो नागभस्मनः ॥१२५८॥
पञ्चभागो भवेत्सूतो हिङ्गुलो रसभागिकः ।
खल्वे निधाय कदलीस्वरसेन विमर्दयेत् ॥ १२५९ ॥
दिनत्रयञ्च खर्जूरीकषायेण विमर्दयेत् ।
माषोन्मितां भस्ममात्रां युञ्ज्याद्युक्ताऽनुपानतः॥१२६०
पाददाहं हस्तदाहं गुल्मं लालाप्रमेहकम् ।
वहुमूत्रं मूत्रकृच्छ्रं प्रमेहं पित्तसम्भवम् ॥ १२६१ ॥
श्वासं कासं पीनसञ्च पाण्डुं यक्ष्माणमेव च ।
अतीसारं वीर्यहानिं वातांश्च विविधाञ्जयेत् ॥१२६२॥
शूलमष्टविधं हन्ति सर्वज्वरहरं परम् ।

सर्वाङ्गसौन्दर्यकरं सर्व मेहघ्नमुत्तमम् ॥
इदं रसायनवरं सर्वरोगनिवर्हणम् ॥ १२६३ ॥
रसायनसं, प्रमेहे ।

भाषा—रजतभस्म १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा., वङ्गभस्म ३ भा, नागभस्म ४ भा, पारदभस्म ५ भाग, हिङ्गुलभस्म ६ भाग, लेकर सबको वारीक पीसकर २ पहर सूखा मर्दनकर केला और खजूरके स्वरस अथवा काढेसे ३–३ रोज़ मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली रोगोचिताऽनुपानके साथ देनेसे हस्तपाददाह, गुल्म, लालाप्रमेह और वहुमूत्र, मूत्रकृच्छ्र, पित्तप्रमेह, श्वास, कास, पीनस, पाण्डु, राजयक्ष्म, अतीसार, वीर्यहानि, नानाप्रकारके वायु, आठ प्रकारका शूल, समस्तज्वर ये सव दूरहोतेहै ॥ २८० ॥

२८१ प्रमेहशत्रुरसः

कान्ताऽभ्रमण्डूरहरीतकीनां
विचूर्णितानां क्रमशः शरांशम् ।
रसांशभूतांशमथो शरांशं
द्वात्रिंशदग्रोत्तरमुत्तमायाः ॥ १२६४ ॥
श्लक्ष्णं मृदित्वा गुटिकां विधाय
तक्रेण पीतं तलपोटकस्य ।
वीजञ्च तेषां द्विगुणं प्रकल्प्य
मेहामयानाशु जयेत्प्रमेही ॥ १२६५ ॥
र र. स., र. र. कौ, प्रमेहे ।

भाषा—कान्तलोहभस्म ५ भाग, अभ्रकभस्म ६ भाग, मण्डूरभस्म और हर्रे ५–५ भाग, त्रिफला ४० भाग, लेकर वारीक चूर्णकर पानीसे ३–४ पहर मर्दनकर २–२ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली ४ माशे तुवरकके वीजोंको छाछमें पीसकर इसके साथ लेनेसे सवप्रकारके प्रमेह नष्ट होतेहै ॥ २८१ ॥

२८२ प्रमेहसेतुरसः

पक्वः सूतो द्विधा वङ्गो द्वाभ्यां द्विगुणगन्धकः ।
कूपीपक्वो महासेतु र्वङ्गस्थानेऽथवा विधुः ॥१२६६॥
र. चि, रसायनसं, र. को, र चं, र का., प्रमेहे । र का, रसायनसं, र को., एवु महासेतुरिति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, वङ्गभस्म २ भा., शुद्धगन्धक ६ भाग लेकर सवकी नीलवर्णकज्जलीकर गन्धक जारण तक वालुकायन्त्रमें पकाकर स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालले । यहांपर वङ्गकीजगह चादीका विकल्पहै चाहे वङ्ग डाले चाहे चांदी डाले इसमें आच अधिक नहीं देना । क्योंकि वङ्ग अथवा चादीका जो योगहै वह केवल संस्कारार्थ नहींहै किन्तु सहयोगार्थहै । अधिक आचदेनेसे पारा ऊपर चला जायगा और गन्धक जलजायगा इसलिये गन्धक जारण तकही आचदेना । अथवा गन्धककी द्रुतिहोकर कुछ हिस्सा गन्धक का जलने लगे उससमय आच वन्दकरदेना । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकाल लेना । यह पाक प्रायः दोपहरमें होजायगा इसमें गन्धक भी शामिल रहेगा ॥ २८२ ॥

२८३ प्रमेहसिन्धुतारकोरसः

निष्काऽष्टादशकस्सूतो गन्धकस्य च विंशतिः ।
तालसत्त्वाच्च दश द्वौ तद्वत्सोममलस्य च ॥१२६७॥
वङ्गस्य षट् षड्रसकात्सीसकादथ चाऽभ्रकात् ।
अर्कक्षीरेण सम्मर्द्य पुटेद्गजपुटेन च ॥ १२६८ ॥
त्रिरष्टौ द्वादश तथा द्वात्रिंशत्प्रहरं पुनः ।
वह्निस्त्रिधाऽर्कक्षीरेण भावयित्वा पुनःपुनः ॥१२६९॥
एवं पुटैस्त्रिभिः सिद्धः कपोतग्रीवसन्निभः ।
मेहरोगहरोऽयं स्याद्रसो मेहाऽब्धितारकः ॥१२७०॥
र का, प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा ४॥ कर्ष., शुद्धगन्धक ५कर्ष, हरितालसत्त्व और सोमल ३–३ कर्ष, शुद्ध वङ्ग, खर्पर, सीसा और धान्याऽभ्रक डेढ २ कर्ष लेकर सवका वारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर ३–४ दिन आकके दूधमें मर्दनकर गोला वनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटमें ३ पहरकी आचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दनकर ८ पहरकी आचदे । तीसरीवार १२ पहरकी, चौथीवार ३२ पहरकी आचदे । इसके वाद आकके दूधमें ३ भावनाएं देकर गोलावनाय पूर्ववत् ३–८ और १२ पहरकी तीन आचेंदे । येसव मिलकर सात आंचें हुईं, यह कबूतरकी गर्दनके रङ्गका रस सिद्धहोगा । इस जगह कपोतग्रीवसन्निभ रसकामधेनुवालेने लिखाहै पर इसका रंग लालहोगा । जिस धातुको आकके दूधकी अधिक भावनाएं दीजातीहैं उसका रङ्ग प्राय करके लाल हुआकरताहै । इसरसकी १ अथवा २ रत्ती वलावल देखकर मलाई वगैरहके साथ देनेसे यह असाध्य प्रमेहोंको दूरकरताहै ॥ २८३ ॥

२८४ प्रमेहहरो रसः (प्रथमः)

वीर्यं पुरारे र्वलिमभ्रसत्त्वं
जम्बीरनीरेण विमर्द्य भस्म ।
रसाऽर्धभागेन ददीत शुल्वं
सर्वं ततो गोपयसा विमर्द्य ॥ १२७१ ॥
खर्जूरमत्स्यण्डिकहंसपादी-
द्रावेण सत्त्वेन गुडूचिकायाः ।
मांसीशिवामर्कटरुच्यदन्ती-
वीजैस्तदीयैः सलिलै र्विभाव्य ॥ १२७२ ॥
ततो रसः सिद्ध्यति वल्लमस्य
शुक्रप्रमेहे सति शाल्मलीनाम् ।
मूलाऽम्बुना वा कुसुमाऽम्बुना वा
दद्यात्पयोभक्तकमत्र योज्यम् ॥
क्षौद्रेण दुर्नाम्नि तथाऽश्मरीषु
गवां पयोभि र्निखिलप्रमेहे ॥ १२७३ ॥
र. र. स, र. को, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, धान्याऽभ्रक तीनों समभाग लेकर जंभीरीकेरससे मर्दनकर टिकियावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटकी आंचदे। ऐसे पारा और गन्धक वारवार देता जाय। जव निश्चन्द्रभस्म होजाय तव इसभस्मसे आधी ताम्रभस्म मिलाकर गोदुग्ध, खजूरकी ताड़ी, राव, हंसराज, गुडूचीसत्त्व, जटामासी, हर्रे, केवांच, जमालगोटा, इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्काथोंसे १–१ भावना देकर ३–३ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ गोली सेमलकी जड़ अथवा फूलके रसके साथ देनेसे शुक्रप्रमेह नष्टहोताहै। गायके दूधके साथ देनेसे तमाम प्रमेह नष्ट होतेहैं। ववासीर और पथरीमें मधुके साथ देना। इसके प्रयोगमें दूधभातके सिवाय और कुछ नहीं देना॥ २८४॥

२८५ प्रमेहहरोरसः (मेहहरः) (द्वितीयः)

गन्धेन सूतं द्विगुणं प्रगृह्य
विमर्दयेद्गोक्षुरनीरयुक्तम्।
शुष्कञ्च कृत्वाऽथ सुतप्तताम्र-
चक्रञ्च तस्योपरि विन्यसेच्च॥ १२७४॥
चक्रे विलग्नञ्च ततः प्रगृह्य
मूषोदरे ध्मापय टङ्कणेन।
हेम्नः सुतारस्य रसेन पिष्टिं
ताम्रस्य चाऽस्मिन् सततं क्षिपेच्च॥१२७५॥
संसेवयेत्तक्रयुतञ्च वल्लं
त्रिसप्तकान्मेहविमुक्तये तत्।
नानाप्रमेहा विलयं प्रयान्ति
पथ्याशिनः कादिविवर्जितस्य॥ १२७६॥

र. दी., र. चि., र. सु., र. का. र. को, प्रमेहे। र. को. **हरगौर** इति नाम। र. दी. **हेमताररसः**।

टि०—सम्प्रत्युपलभ्यमानपुस्तकेष्वन्तिम साऽर्द्धश्लोकस्त्रुटितोऽस्ति स हस्तलिखितरसदीपिकायामासादित.।

भाषा—शुद्धगन्धक १ भा, शुद्ध पारा २ भाग लेकर गोखरूके रससे मर्दनकरे। जव पारेकी चमक मिटजाय तव इसकी टिकिया वनाकर सुखाले। इस टिकियाको मिट्टीके वर्तनमें रखकर टिकियाकी वरावर शुद्धतावेकी टिकिया वनाकर अग्निमें लालकरके पारेगन्धककी टिकियापर रखदेवे। इसमेंसे गन्धक जलजायगा और पारा तांवेकी टिकियापर लगजायगा। इस चक्रिकाको मूषामें रख सुहागा डालकर धमनकरे तो इसका खोट तैयार होगा। इस खोटमें सुवर्ण तथा तारपिष्टीको खोटकी बराबर डालकर टङ्कणके योगसे धमनकरे। जव इसकी भस्म होजाय तव निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती छाछके साथ सेवन करनेसे २१ रोजमें नानाप्रकारके प्रमेहनष्टहोंगे। इसके प्रयोगमें ककारादिगण और प्रमेहवर्धक चीजें वर्जितहैं॥२८५॥

२८६ प्रमेहहरोरस (मेहहरः) (तृतीयः)

रसस्य कर्षमादाय खल्वे निःक्षिप्य बुद्धिमान्।
रक्ताऽगस्त्यप्रसूनानां स्वरसेन विमर्दयेत्॥ १२७७॥
सप्तरात्रं तथा साधु श्वेतदूर्वारसेन च।
निष्कद्वयं टङ्कणकं दत्त्वा खदिरसारतः॥ १२७८॥
कर्पूरं रसतुल्यञ्च सर्वमेकत्र मर्दयेत्।
यावच्चिक्कणतां याति युक्ता चन्दनवारिणा॥१२७९॥
हरेणुमात्रान्वटकांश्छायायां परिशोषयेत्।
प्रातर्निशायां मध्याह्ने सेवनीयः प्रयत्नतः॥ १२८०॥
अयं मेहहरः प्रोक्तस्तथा शोषहरः परः।
रसो मेहहरः सर्वपिडिकानाशनः परः॥ १२८१॥

र क., प्रमेहे।

भाषा—एकतोला शुद्ध पारा लेकर लाल अगस्त्यके रससे ७ रोज़ मर्दनकर सफेद दूवके रससे ७ रोज़ मर्दनकर सुखादे। फिर इसमें सुहागा और खैरसार ८–८ मारो, शुद्ध कपूर १ तोला डालकर मर्दन करे। जव एकदम वारीक हो जाय तव सफेदचन्दनके काढ़ेसे मटर वरावर गोलियें वनाकर छायामें सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली रोगोचिताऽनुपानके साथ रोज़ाना तीनों समय देनेसे पिडिका सहित समस्तप्रमेह नष्ट होतेहैं॥ २८६॥

२८७ प्रमेहहरोरसः (मेहसूदनः) (चतुर्थः)

समांशकौ सूतवली विमृष्टौ
ताभ्याञ्च लोहात्त्रितयं समानम्।
श्वदंष्ट्रया मर्द्य च भूधराख्यं
दत्त्वा पुटं मेहहरो रसः स्यात्॥ १२८२॥
वल्लैकमात्रञ्च सितामधुभ्यां
धात्रीरसक्षौद्रयुतं प्रयुक्तम्।
वरामधुभ्यामपि मेहयोगै-
र्विनाशयत्येव समस्तमेहान्॥ १२८३॥

रसायनसं., प्रमेहे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ तोला, सोना, चांदी और लोहभस्म २–२ तोले लेकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर गोखरूके रससे मर्दनकर गोला वनाय भूधर पुटमें आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती शक्कर, मधु, अथवा आवलेका रस और मधु अथवा त्रिफला और मधु अथवा अन्य प्रमेहनाशक अनुपानोंके साथ देनेसे यह तमाम प्रमेहोंको नष्ट करताहै॥२८७॥

२८८ प्रमेहहरोरसः (मेहहरः) (पञ्चमः)

मृतं सूतं मृतं ताम्रं तारभस्म च हाटकम्।
हंसपादीरसेनैव समभागञ्च खल्वके॥ १२८४॥
दिनैकं मर्दयेद्गोलं काचकूप्यां निवेशयेत्।
वालुकायन्त्रके चैव द्वियामं परिपाचयेत्॥ १२८५॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य गुञ्जामात्रं प्रदापयेत्।
पञ्चाङ्गैर्निम्बतुल्यानां कषायमनुपाययेत्॥
हन्ति हारिद्रकं मेहं सर्वमेहकुलान्तकः॥ १२८६॥

व. रा., प्रमेहे।

भाषा—पारा, तावा, चादी और सुवर्ण इनकी भस्में समभाग लेकर हंसराजके रससे १ रोज़ मर्दनकर गोला बनाय काचकी शीशीमें डालकर वालुकायन्त्रमें दो पहरतक पकावे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्तीकी मात्रा नीमके सदृश तिक्तवृक्षोंके पञ्चाङ्गके काढ़ेके साथ देनेसे यह हारिद्रक प्रमेहको नष्ट करताहै। साधारणतया प्रमेहहर योगोंके साथ देनेसे साधारण प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥२८८॥

२८९ प्रमेहहरोरसः (षष्ठः)

रससौम्यशिलाताम्रं मर्दयेद्भेदयामकम्।
कुमार्या च कदल्या च छिक्काकूष्माण्डजै रसैः ॥१२८७॥
तद्रसैरेव संस्वेद्य मर्दयेद्रजनीद्रवैः।
पुटेद्गजपुटेऽश्वत्थपलाशोदुम्बरेन्धनैः ॥
चिञ्चाक्षाराऽन्तरेऽयं तु रसो मेहहरोभवेत् ॥१२८८॥

र का, प्रमेहे।

भाषा—पारा, चादी, तावा इनकी भस्में, शुद्ध मैनसिल सव समभाग लेकर घीकुंआर, केलेका कन्द, नकछिकनी, सफेद कोंहड़ा इनके रसोंसे ४-४ पहर मर्दनकर गोला वनाय ४ पहरतक इन्हींके रसमें स्वेदनकर इमलीके क्षारमें वन्दकर गजपुटमें पीपल, पलाश अथवा गूलर इनकी लकड़ियोंकी आचदे। ऐसे प्रत्येक भावनामें अलग २ मर्दन, स्वेदन और पुट देता जाय। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्ती प्रमेहहराऽनुपानके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥ २८९ ॥

२९० प्रमेहहरोरसः (सप्तमः)

राजावर्तस्य रत्नस्य भस्म गन्धकसाधितम्।
तुल्यञ्च भस्मना तेन घनसत्त्वञ्च काञ्चनम् ॥ १२८९ ॥
मर्दयेत्तुल्यसूतञ्च तत्तन्मारणकैं द्रवैः।
सत्त्वतुल्येन सूतेन तावता गन्धकेन च ॥ १२९० ॥
कज्जल्या कृतया सार्धं पूर्वभस्मानि मेलयेत्।
त्रिदिनं मर्दयित्वा तु मूषायां विनिरुद्ध्य च ॥१२९१॥
पञ्चाढकमितैः शालितुषैश्च पुटमाचरेत्।
स्वतःशीतं समाहृत्य भावयेत्तदनन्तरम् ॥ १२९२ ॥
आकुलीमूलवब्बूलवीजगुञ्जाजटोद्भवैः।
कषायैरष्टवारान्हि पटच्चूर्णं विधाय च ॥ १२९३ ॥
विनिःक्षिपेत्करण्डाऽन्ते यत्नेन स्थापयेत्ततः।
तत्तन्मेहहरै द्रव्यैः संयुक्तो रसराडयम् ॥ १२९४ ॥
निहन्ति सकलान्मेहान् दुरात्मानं विवर्जयेत्।
अयं हि सर्वमेहघ्नो भेषजेषु प्रशस्यते ॥ १२९५ ॥
देयो धर्मवतामर्थे मानवानां विशेषतः।
रसोऽयं नन्दिनाऽऽदिष्टः प्रकृष्टो मेहनाशनः ॥१२९६॥

र को, र. र स, मेहाऽधिकारे।

भाषा—गन्धकयोगसे सिद्धकी हुई लाजवर्दकी भस्म, अभ्रकसत्त्व, सुवर्णभस्म और शुद्ध पारा सव समभाग लेकर सवको इकट्ठा मर्दनकर यथालाभ मारकवर्गोंके स्वरससे मर्दनकरे फिर अभ्रकसत्त्वकी वरावर शुद्ध पारा और गन्धककी नीलवर्ण कज्जली मिलाकर मारकद्रव्योंके स्वरससे ३ रोज़ मर्दनकर मूषामें वन्दकर ५ सेर धानके छिलकोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर अङ्कोलमूल, वब्बूलवीज, सफेद गुञ्जाकीजड़ इन प्रत्येकके क्राथोंसे ८-८ वार भावना देकर सुखाकर वस्त्रसे छानकर शीशीमें रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा मेहहरानुपानके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको दूर करताहै। इसे दुरात्माको नहीं देना ॥ २९० ॥

२९१ प्रमेहहरोरसः

वङ्गस्य भस्म भागैकं कर्पूरो भाग एव च।
द्वौ भागौ जातिपत्र्याश्च द्विभागं करहाटकम् ॥१२९७॥
विदार्याश्चतुरो भागा धात्रीतालीसकास्समाः।
षड्भागा सिकता प्रोक्ता सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ॥
गोदुग्धाद्यनुपानेन सर्वमेहहरो भवेत् ॥ १२९८ ॥

र वो, प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—वङ्गभस्म, शुद्धकपूर १-१ भाग, जावित्री, अकरकरा २-२ भाग, विदारीकन्द, आवले और तालीसपत्र ४-४ भाग, शक्कर ६ भाग, लेकर सवका वारीक चूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ माशे गोदुग्ध वगैरहके साथ लेनेसे समस्तप्रमेह नष्ट होतेहै ॥ २९१ ॥

२९२ प्रमेहान्तकोरसः (लघु) (प्रथमः)

हाटकश्चैकभागश्च रजतश्च द्विभागिकम्।
वङ्गभस्म त्रिभागं स्यान्नागभस्म चतुर्गुणम् ॥ १२९९ ॥
रसभस्म वाणभागं षड्भागं हिङ्गुलं तथा।
सर्वं खर्जूरतोयेन दिनानि त्रीणि मर्दयेत् ॥ १३०० ॥
मेहान्तको रसो नाम्ना सर्वमेहनिवारणः।
सिताक्षौद्रयुतं दद्यान्मात्रां वल्लमितां भिषक् ॥१३०१॥

रसायनस, प्रमेहे।

भाषा—सुवर्ण १ भाग, रजत २ भाग, वङ्ग ३ भाग, नाग ४ भाग, पारा ५ भाग, हिङ्गुल ६ भाग इन सवकी भस्में लेकर सवको एकजगह मर्दनकर खजूरकी ताड़ीसे ३ रोज़ मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शक्कर और मधुके साथ मिलाकर चटानेसे यह सव प्रकारके प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥ २९२ ॥

२९३ प्रमेहान्तकोरसः (महान्) (द्वितीयः)

स्वर्णं रौप्यञ्च गगनं रसभस्म तथैव च।
कान्तलोहं ताम्रभस्म नागं विद्रुममौक्तिकम् ॥१३०२॥
शङ्खभस्म च सर्वेषां चैकैको भाग ईरितः।
वङ्गस्य रसभागाः स्युः वलिश्च रसभागिकः ॥१३०३॥
कान्तभस्म चतुर्भागं सम्यक् शुद्धं समाहरेत्।
भाव्यञ्च त्रिफलाक्काथैश्चित्रमूलरसेन च ॥ १३०४ ॥

चन्दनस्य कषायेण वाजिदन्तरसेन च ।
मर्दयेत्सप्तदिवसान्मात्रावल्लद्वयोन्मिता ॥ १३०५ ॥
बहुमूत्रं चेक्षुमेहं लालामेहं क्षयन्तथा ।
पाण्डुरोगं श्वासकासौ तिमिरं वातजं हरेत् ॥१३०६॥
हस्तदाहं पाददाहं नष्टवीर्यत्वमेव च ।
वन्ध्या स्त्री पुत्रसम्पन्ना भवेदेव न संशयः ॥
महामेहाऽन्तको नाम रसो लब्धो महागुरोः ॥१३०७॥

रसायनसं, प्रमेहे ।

भाषा—सुवर्ण, चादी, अभ्रक, पारा, कान्तलोह, ताम्र, नाग, विद्रुम, मोती, शङ्ख इन सबकी भस्में १–१ भाग, वङ्गभस्म और गन्धक ६–६ भाग, कान्तभस्म ४ भाग, लेकर सबको वारीक पीस त्रिफला, चित्रकमूल, सफेदचन्दन, वड़ी दन्ती इनसबके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७ रोज़ मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचिताऽनुपानके साथ देनेसे वहुमूत्र, इक्षुमेह, लालामेह, क्षय, पाण्डुरोग, श्वास, कास, वातजतिमिर, हाथपैरका दाह, नष्टशुक्रता, इनसवको यह नष्टकरताहै । इसरसको वन्ध्या खाय तो पुत्रवती होय ॥ २९३ ॥

२९४ प्रमेहान्तकोरसः (तृतीयः)

स्वर्णञ्च ताराऽमृतसूतमभ्रं
　मण्डूरतीक्ष्णं रविनागभस्म ।
प्रवालवैक्रान्तकमौक्तिकानि
　कान्तं वलिं वङ्गमथ द्विभागम् ॥ १३०८ ॥
खल्वे विनिक्षिप्य सुमर्दितं तत्
　फलत्रयेणाऽथ दिनत्रयञ्च ।
तद्गोलकीकृत्य पुटं प्रदाय
　पुनर्विमर्द्याऽथ सुगाढमेतत् ॥ १३०९ ॥
तद्द्रव्यजाताच्च चतुर्थभागं
　शिलोद्भवं सूतविषं तदर्द्धम् ।
लवङ्गजातीफलकुङ्कुमञ्च
　कस्तूरिका निष्कमितं पृथक् पृथक्॥१३१०॥
सपिप्पलीकं मधुनाऽवलीढं
　कोलप्रमाणं पयसाऽथवाऽद्यात् ।
घृताक्तया शर्करया युतं वा
　युक्ताऽनुपानै विनिहन्ति रोगान् ॥ १३११ ॥
प्रमेहधातुक्षयधातुजाग्दा-
　न्मूत्रस्य कृच्छ्राणि विवृद्धदाहम् ।
श्वासञ्च कासं विनिहन्ति तूर्णं
　जीर्णज्वराऽरोचकगुल्मरोगान् ॥ १३१२ ॥
वन्ध्या च सम्यग् भजते च गर्भं
　नष्टेन्द्रिये वीर्यविवर्धनं स्यात् ।
मेहान्तको नाम रसोत्तमः स्या-
　च्छुद्धे च काये विनियोजनीयः ॥ १३१३ ॥

धै. चि. (ल), प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण और रजतभस्म, शुद्ध वछनाग, पारा, अभ्रक, मण्डूर, फोलाद, तांवा, नाग, प्रवाल, वैक्रान्त, मोती, कान्तलोह और वङ्ग इनकीभस्में शुद्धगन्धक २–२ भाग लेकर १–२ पहर इकठ्ठे मर्दनकर त्रिफलाके क्वाथसे ३ रोज़ घोटकर गोला वनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर २० सेर कण्डोंकी आचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर फिर त्रिफलाके काढेसे ३ रोज़ मर्दनकर आधेमन कण्डोंकी आचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर तोलकर चतुर्थांश शुद्ध मैनसिल और मैनसिलसे आधी पारदभस्म और शुद्धवछनाग, तथा लौंग जायफल, केसर, कस्तूरी, येसव ४ ४ मासे लेकर सवका वारीक चूर्णकर पूर्वचूर्णमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती मधु और पीपल केसाथ अथवा दूधकेसाथ अथवा घी, शक्करके साथ अथवा तत्तद्रोगहराऽनुपानोंके साथ देनेसे प्रमेह, धातुक्षय, धातुगतरोग, मूत्रकृच्छ्र, वढ़ीहुई जलन, श्वास, कास, जीर्णज्वर, अरोचक, गुल्म, वन्ध्यत्व, नष्टेन्द्रियत्व इन सवको यह नष्टकरताहै । इसका प्रयोग करते समय वमन विरेचनादिकसे रोगीको शुद्धकरलेना ॥ २९४ ॥

२९५ प्रमेहान्तकोरसः (चतुर्थः)

वङ्गं नागं चाऽभ्रकञ्च लोहं कान्तञ्च पारदम् ।
ताम्रञ्च तीक्ष्णदरदं गन्धकं टङ्कणन्तथा ॥ १३१४ ॥
रसकञ्च समांशानि खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
हंसपादीरसेनैव मर्दितञ्च दिनत्रयम् ॥ १३१५ ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य वालुकायन्त्रमध्यगम् ।
यामद्वयेन सम्पक्वं स्वाङ्गशीतं विचूर्णयेत् ॥ १३१६ ॥
कर्पूरं कुङ्कुमञ्चैव चातुर्जातञ्च चन्दनम् ।
जातीफलं जातिपत्रं चूर्णांशं सकलं क्षिपेत् ॥१३१७॥
विम्बीपत्ररसेनैव मर्दितञ्च दिनत्रयम् ।
पुनस्तु गोलकं कृत्वा छायाशुष्कं सुषेवयेत् ॥१३१८॥
शर्करानवनीताभ्यां हन्ति मेहांश्चिरोत्थितान् ।
मेहान्तकरसो नाम रसोऽयं सर्वरोगजित् ॥ १३१९ ॥

वै चि., (ल), मेहे ।

भाषा—वङ्ग, नाग, अभ्रक, लोह, कान्तलोह, पारा, ताम्र, फोलाद इनसवकीभस्में, शुद्ध शिगरिफ, गन्धक और सुहागा, खर्परभस्म येसव १–१ तोले लेकर हंसराजके रससे ३ रोज मर्दनकर सुखाकर काचकी शीशीमें भरकर वालुकायन्त्रमें दोपहर पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर पीसकर शुद्धकपूर, केसर, तज, पत्रज, इलायची, नागकेसर, सफेदचन्दन, जायफल, जावित्री सव डेढ १॥ तोले लेकर वारीक चूर्णकर पूर्वोक्तरसमें मिलाकर कुंदुरूके पत्रस्वरससे ३ दिन मर्दनकर १–१ मासेकी गोलियें वनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मक्खन और मिश्रीकेसाथ देनेसे वहुतदिनके प्रमेहोंको यह नष्टकरताहै । और तत्तद्रोगहराऽनुपानोंकेसाथ देनेसे सभीरोगोंको दूरकरताहै ॥ २९५ ॥

२९६ प्रमेहान्तकोरसः (पञ्चमः)

रसभस्मत्रयो भागाश्चतुर्थांशन्तु हाटकम्।
रौप्यं तीक्ष्णं ताम्रकञ्च नागं वैक्रान्तमभ्रकम् ॥१३२०॥
शिलागन्धकचूर्णञ्च प्रत्येकं सूततुल्यकम्।
सुमुहूर्ते क्षिपेत्खल्वे त्रिफलाद्रवमर्दितम् ॥ १३२१ ॥
मोदकांश्छायया शुष्कांस्त्रिःपुटेत्स्वाङ्गशीतलम्।
उशीरचन्दनरसे चतस्रो भावनास्तथा ॥ १३२२ ॥
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन शर्करामधुसंयुतम्।
मधुमेहं चेक्षुमेहं दाहतापौ च नाशयेत् ॥ १३२३ ॥
उदकं शुक्रमेहञ्च लालातन्तुविनाशनम्।
क्षयमेहं वातभेदं कासश्वासान्निहन्ति च ॥ १३२४ ॥
अङ्गदाहं शिरोदाहं नानारोगान्निवारयेत्।
वन्ध्या च लभते गर्भं नष्टवीर्यः प्रसन्नताम् ॥१३२५॥
बलपुष्टिकरं ह्येतद् भक्षणादमृतं भवेत्।
मेहान्तकरसो नाम्ना मूत्ररोगनिवारणः ॥ १३२६ ॥

वै. चि., प्रमेहे।

भाषा—पारदभस्म ३ भा, सुवर्णभस्म १ भा, चादी, फोलाद, तांवा, सीसा, वैक्रान्त, अभ्रक इनकीभस्में, शुद्ध मैनसिल और गन्धक ३–३ भाग लेकर सवका वारीक चूर्णकर अच्छे मुहूर्तमें त्रिफलाके काढ़ेसे १–२ रोज़ मर्दनकर वेर वरावर गोलिया वनाकर छायामें सुखाय शरावसम्पुटमें वंदकर ५ सेर कण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर ३ रोज़ त्रिफलाके काढेमें मर्दनकर आचदे। इसप्रकार ३ आचें देकर खस और सफेद चन्दनके काढेकी २–२ भावनाएं देकर ४–४ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्कर और मधुके साथदेनेसे मधुमेह, इक्षुमेह, दाह, ताप, उदकमेह, शुक्रमेह, लालामेह, तन्तुमेह, क्षयजन्यमेह, वातमेह, कास, श्वास, अङ्गदाह, शिरोदाह, इनरोगोंको यह नष्टकरताहै। इसके सेवनसे वन्ध्या पुत्रको प्राप्त होतीहै। नष्टवीर्य प्रसन्नताको प्राप्तहोताहै वल और पुष्टिको करताहै ॥ २९६ ॥

२९७ प्रमेहान्तकोरसः (षष्ठः)

स्वर्णञ्च तारं मृतमभ्रलूतं
कान्तञ्च तीक्ष्णं रविनागभस्म।
प्रवालमुक्ताभसितेन युक्तं
प्रत्येकमेतच्च चतुःप्रमाणम् ॥ १३२७ ॥
वैक्रान्तभस्म त्रपुगन्धकौ च
तथैकभागेन नियोजयेत।
मुहूर्तमात्रं विनिपिष्य यत्ना-
त्फलत्रयं वा रविचूर्णयुक्तम् ॥ १३२८ ॥
लामज्जकैश्चन्दनवालकाभ्यां
वसन्तदूत्या कमलस्य कन्दैः।
विभाव्य सम्यक् स्वरसैश्च सप्त
सर्वैः समा चात्र सिता प्रयोज्या ॥१३२९॥
माषैकमानेन निषेवणीयः
सितामधुभ्यां कणया समेतः।
सुष्ठुःप्रयुक्तः करपाददाहं
लालेक्षुमेहं बहुमूत्रजातम् ॥ १३३० ॥
निहन्ति शीघ्रं क्षयमेहपाण्डून्
श्वासञ्च कासं तिमिरं निहन्ति।
अर्शांसि कुष्ठं ह्युदरं दरञ्च
काकादिवन्ध्या लभते च गर्भम् ॥
नष्टेन्द्रियो वीर्यभरश्च शीघ्रं
मेहान्तको नाम रसोत्तमोऽयम् ॥ १३३१ ॥

र. क. यो, प्रमेहे।

भाषा—सुवर्ण, चादी, अभ्रक, पारा, कान्तलोह, फोलाद, तावा, सीसा, प्रवाल, मोती इनकी भस्में प्रत्येक ४ तोले, वैक्रान्त और वङ्गभस्म, शुद्ध गन्धक १–१ तोला लेकर सवका वारीक चूर्णकर ३ पल आककी जड़की छालका चूर्ण मिलावे। फिर पतलीखस, चन्दन, सुगन्धवाला, पाढर, कमलकन्द इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाएं देकर सुखाकर सवकी वरावर शक्कर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा शक्कर, मधु और पीपलके साथ सेवन करनेसे हाथ-पैरोंकी जलन, लालामेह, इक्षुमेह, वहुमूत्र, क्षयप्रमेह, पाण्डु, श्वास, कास, तिमिर, ववासीर, उदररोग, प्रदर, काकवन्ध्यादि दोष, नष्टेन्द्रियत्व और मूर्च्छादिरोग इन सवको यह नष्ट करताहै ॥ २९७ ॥

२९८ प्रमेहारिरसः (प्रथमः)

सूतस्ताम्रमयोऽभ्रकञ्च कुलिशं सर्वं समांशीकृतं,
तच्छ्रेष्ठाजलदद्रवेण दिवसं सम्मर्दयेद्यत्नतः।
सक्षौद्रो जयति प्रसह्य सितया वा मेहवृन्दं महा,-
मूत्राघातमपि प्ररूढगुदजान् वल्लोन्मितो मेहहा ॥१३३२॥

र, र पा. प्रमेहे। रसपारिजाते प्रमेहप्रभञ्जनेति नाम।

भाषा—पारा, तांवा, लोहा, अभ्रक, हीरा इनकीभस्में वरावर लेकर वारीक चूर्णकर त्रिफला और नागरमोथेके काढ़ेसे १–१ रोज़ भावना देकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती मधु अथवा शक्करके साथ सेवन करनेसे प्रमेह, मूत्राऽऽघात, ववासीर इन सवको यह नष्ट करताहै ॥ २९८ ॥

२९९ प्रमेहारिरसः (द्वितीयः)

सूतखर्परकासीसं मर्दयेद्दिवसत्रयम्।
एला जातीफलं यष्टिमधुकं हिमवालकम् ॥ १३३३ ॥
मधूकपुष्पं खदिरः शिवा गोक्षुरकस्तथा।
कर्पूरं जटिलाऽङ्कोलौ तेन तुल्यं विमिश्रयेत् ॥१३३४॥
लाङ्गली तुम्बिनी दुग्धं दधिमुद्गरसैः पृथक्।
मर्दयेत्त्रिदिनं सिद्धस्ततो मेहगणाऽपहः ॥
मधुना निष्कमात्रोऽयं भवेत्क्षीरौदनाशिनाम् ॥१३३५॥

र., प्रमेहे।

भाषा—शुद्ध पारा, खपरिया और कसीस १–१ तोला लेकर ३ रोज़ शुष्क मर्दनकर कज्जली बनाले फिर इलायची, जायफल, मुलहठी, सफेदचन्दन, सुगन्धवाला, महुआ, खैर, हर्रे, गोखरू, भीमसेनीकपूर, जटामांसी, अङ्कोलकीमज्जा, ये सब १–१ तोला लेकर बारीक चूर्णकर पूर्वयोगमें मिलाकर कलिहारी, कड़वीतूंबी, दही और मूंग इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ रोज़ मर्दनकर ३–३ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ खानेसे तमाम प्रकारके प्रमेह नष्ट होतेहैं ॥ २९९ ॥

३०० प्रमेहारिरसः (तृतीयः)

रसकर्पूरकात्कर्षं कर्षं बलिरसायनम् ।
तैलटङ्कणतः कर्षं मरिचं शुक्तिमात्रकम् ॥ १३३६ ॥
कज्जलीं कारयेदेषां मर्दयेन्निम्बुजै रसैः ।
पादपालिकैस्ततो वश्यः कार्याश्चणकमात्रिकाः १३३७
सशर्करं ततः खादेच्चत्वारिंशद्दिनावधि ।
प्रमेहारिरसं नाम्ना पथ्यहीनोऽपि शीलयेत् ॥१३३८॥

रसायनसं., उपदंशे ।

भाषा—रसकपूर, गन्धकरसायन, तैल और सुहागा १–१ तोला, मरिच २ तोला इनसबकी कज्जलीकर ६ पल नीवूके रसमें मर्दनकर चने प्रमाण गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली शक्करके साथ खानेसे यह ४० दिनमें उपदंशजन्य व्याधि और तमाम प्रमेहोंको नष्टकरताहै । इसे पथ्यहीन आदमीभी खाकर लाभ उठासक्ताहै ॥ ३०० ॥

३०१ प्रमेहारिरसः (चतुर्थः)

रसग्लौ मरिचं कम्बुजीरं मृद्दारसञ्ज्ञिकम् ।
मायाफलं खादिरश्च भसितं वटपत्रजम् ॥ १३३९ ॥
सितपूगस्य भसितं प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ।
माषो भर्जिततुत्थस्य कांस्ये ताम्रेण मर्दयेत् ॥१३४०॥
गवां घृतं मेलयित्वा स्थापयेत्कूपिकोदरे ।
शर्कराघृतमिश्रन्तत्खादेन्नागदलैः सह ॥ १३४१ ॥
वल्लप्रमाणं पथ्यार्थे गोधूमं जूर्णतूवरी ।
घृतं सितां पटोलञ्च कोशातक्यश्च मेथिका ॥१३४२॥
आर्द्रकं सूर्यभक्ता च शुण्ठी च जीरकन्तथा ।
जीर्णं फैरङ्गजं दोषमुपदंशकुलोद्भवम् ॥
गुतं तच्छमयेदाशु नाऽत्र कार्या विचारणा ॥१३४३॥

रसायनसं, उपदंशे ।

भाषा—रसकपूर, मरिच, शङ्खजीरा, मुर्दासङ्ग, माजूफल, खैर, वटपत्र और सफेद सुपारीकी भस्म ये सब १–१ तोला, तुत्थभस्म १ माशा, लेकर सबको बारीकपीसकर कासेके वर्तनमें तावेके डंडेसे गायके घीकेसाथ २–३ रोज़ मर्दनकर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती शक्कर और घीमें मिलाकर पानकेसाथ खानेसे पुरानेसे पुराना उपदंश और फिरङ्गरोग नष्टहोतेहैं । गेहूं, ज्वार, अरहर, घी, शक्कर, परवल, तुरई, मेथी, अदरख, हुरहुर, सोंठ, जीरा ये सब इसमें पथ्यहै ॥ ३०१ ॥

३०२ प्रमेहारिरसः (पञ्चमः)

टङ्कणञ्च रसराजगन्धकं सीसकञ्च रसकेन संयुतम् ।
नागवल्लिजरसेन मर्दितं सर्वमेहकृतरोगनाशनम् १३४४

र. प्र सु , र. चं., नि र., र. क ल., प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध सुहागा, पारा और गन्धक, सीसा और खपरिया भस्म समभाग लेकर पानके रससे दोतीन रोज मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मक्खन वगैरहमें कवलित करके खानेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥ ३०२ ॥

३०३ प्रमेहारिरसः (षष्ठः)

पारदभस्म शिलाजतु कृष्णा
लोहमलं त्रिफलाऽङ्कुलबीजम् ।
ताप्यनिशारजतोपलकान्त-
व्योषरजः खपुरश्च कपित्थात् ॥ १३४५ ॥
सर्वमिदं परिचूर्ण्य समांशं
भृङ्गरसेन विभाव्य सुवैद्यः ।
विंशतिवारमिदं मधुलीढं
विंशतिमेहहरं शतदृष्टम् ॥ १३४६ ॥

र. र. स., प्रमेहे ।

भाषा—पारदभस्म, शिलाजीत, पीपल, मण्डूरभस्म, त्रिफला, अङ्कोलके बीज, सोनामाखी, हल्दी, चादीभस्म, कान्तपाषाणभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, गूगल, और कैथ, सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर भागरेके रससे २० वार भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधुके साथ लेनेसे यह २० प्रकारके प्रमेहोंको नष्ट करताहै। यह सैकड़ों वारका अजमाया हुआहै ॥ ३०३ ॥

३०४ प्रमेहारिरसः (सप्तमः)

सूतहेमाऽभ्रकान्तानि गवां क्षीरेण मर्दयेत् ।
त्रिदिनं क्षीरकाकोली मर्दितं दिवसत्रयम् ॥१३४७॥
ततो लघुपुटं दद्याद्गुञ्जामात्रं प्रयोजयेत् ।
सितामधुभ्यामथवा त्रिफलाक्षौद्रतोऽपि वा ॥१३४८॥
वीर्यवृद्धिं बलं पुष्टिं कान्तिश्चाऽपि प्रयच्छति ।
मेहानां नाशनं श्रेष्ठं परं वृष्यं रसायनम् ॥ १३४९ ॥

र० पा०, प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—पारा, सोना, अभ्रक, कान्तलोह इनकीभस्में समभाग लेकर बारीक चूर्णकर गोदुग्ध और क्षीरकाकोलीके रससे ३–३ रोज मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ सेर कण्डोंकी आंच देवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती शक्कर, मधु अथवा त्रिफला और मधुके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्ट करताहै । वीर्य, बल, पुष्टि, कान्ति और वृष्यताको देताहै तथा रसायनहै ॥ ३०४ ॥

३०५ प्रमेहारिरसः (अष्टमः)

सूतं चाष्टमितं बलिं शशिमितं सम्मर्द्य तत्कज्जलीं,
कृत्वा मागधिकाशिवोत्थसलिलैः सम्मर्द्य घस्रं पुनः ।
कूप्यां पाचककाचिकां सुपिहितां मृत्स्नां शुकैः सप्तभिः,
संवेष्ट्य त्रिदिनं विशोष्य लवणाऽऽपूर्णे क्षिपेद्भाण्डके ॥
पक्त्वा यामचतुष्टयं तु शिशिरां भित्त्वा च तां कूपिकां,
तं सूतं क्रिमिजं त्वचञ्च गगनं लोहं लवं मर्दयेत् ।
मिश्रो वल्लमितः सितामुमधुना वत्सादनीसत्त्वतो,
गोक्षीरेण कषायुतश्च तरसा सर्वप्रमेहाञ्जयेत् ॥
संग्राही ज्वरपाण्डुकामलहरिद्राभत्वपित्तोद्भवान्,
सर्वांश्च प्रमेहामयान्विजयते मेहारिनामा रसः ।१३५१।

र.रा.,प्रमेहे ।

मेहेभकेसरी नाम धात्रीचूर्ण भवेदनु ।
अनुपानविशेषेण मधुना सर्वमेहजित् ॥ १३५४ ॥

र क यो , प्रमेहे ।

भाषा—सुवर्ण १, पारा २, लोह ३, अभ्रक ४ और वङ्ग ५ इनसबकी भस्में क्रमवृद्धभागसे लेकर शुद्धवछनाग ५ भाग डालकर सबका बारीक चूर्णकर मालती और गोखरूके रसकी ७–७ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली आवलेके चूर्ण और मधुके साथ अथवा तत्तद्योगहराऽनुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्टकरताहै ॥ ३०७ ॥

३०८ प्रलयानलोरसः

पारदं वत्सनाभञ्च हिङ्गुलं टङ्कणं समम् ।
त्रिक्षारं पञ्चलवणं दीप्यकं कृष्णजीरकम् ॥ १३५५ ॥
मृतं तीक्ष्णं मृतं ताम्रं सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।
कटुत्रयकषायेण वालुकायन्त्रके पचेत् ॥ १३५६ ॥
षड्यामान्ते समुद्धृत्य फणिपित्तेन भावयेत ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ॥
अनुपानविशेषेण रसोऽयं प्रलयानलः ॥ १३५७ ॥

वै चि.,सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, वछनाग, शिंगरफ, और सुहागा, सज्जी, यवक्षार, पलाशक्षार, पाचोंनमक, अजवाइन, कालीजीरी, लोह और ताम्रभस्म सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर त्रिकटुके काढेमें एकदिन मर्दनकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें ६ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर कालेसर्पके पित्तकी १ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ गोली अनुपानविशेषसे देनेसे यह समस्त सन्निपातों को दूरकरताहै ॥ ३०८ ॥

३०९ प्रलयानलरुद्ररसः
(प्रमत्तभैरवः, कालाग्निभैरवः)

हिङ्गुलोत्थरसाद्भागो द्वौ भागौ गन्धकस्य च ।
वाणभागौ स्वर्गोदन्ती कालभागा मनःशिला॥१३५८॥
टङ्कणं नेत्रभागञ्च रसकाद्वसुभागकाः ।
एकभागन्तु नेपालं नेत्रभागं हलाहलम् ॥ १३५९ ॥
दग्धं चाऽग्निभागञ्च द्वौ द्वौ च ताम्रलोहयोः ।
खल्वे रसेरन्वेषयन्तु क्षीरिणाऽर्कस्य मर्दयेत ॥१३६०॥
सिन्दुवाराऽग्निपत्त्रजम्बीर. कारवेल्लकैः ।
निर्यत्ताम्रयामान्ते छिद्यात् वालुकाऽग्निना ॥१३६१॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य खल्वमध्ये विमर्दयेत् ।
गन्धमानं विषं स्नेहं भागार्धं निक्षिपेत्ततः ॥१३६२॥
[illegible]रसेन मर्दयेद्यामयुग्मकम् ।
पिप्पलीमूलपिप्पलीचित्रकस्वरसेन मर्दयेत ॥ १३६३ ॥
पञ्चपित्तरसेनैव मर्दयेद्यामयुग्मकम् ।
[illegible]रसेन च ॥ १३६४ ॥

योजयेत्तरुणे पित्तश्लेष्मवातज्वरेऽपि च ।
द्व्याहिके तरुणे चाऽपि चातुर्थिकत्रिरात्रिके ॥१३६५॥
प्रत्यहान्तरिते वाऽपि धातुगे चाऽस्थिगेऽपि वा ।
अन्यैश्च विविधै दोषै र्जनिते रुजि योजयेत् ॥१३६६॥
दाहस्वेदोल्वणे जाते मुहुर्मुहुरुपागते ।
पयः शाल्योदनं पथ्यं दधितक्रसमन्वितम् ॥ १३६७ ॥
सितयामिश्रतोयेन नारिकेलाम्बुना तथा ।
कदलीफलपक्वानि सर्वे च मधुरा रसाः ॥ १३६८ ॥
ताम्बूलं चन्द्रसंयुक्तं देयं तत्र भिषग्वरैः ।
वापीकूपतडागादिस्नानं कुर्याद्यथेच्छया ॥ १३६९ ॥
प्रलयानलरुद्राऽऽख्यो रसः कालाऽग्निभैरवः ।
प्रसन्नभैरवो नाम्ना कथ्यते प्राणिनां हितः ॥
शिवेन वलिनाऽचिन्त्यकिरातेनोदित. पुरा ॥१३७०॥

र. क यो., वा., व. रा , वै. चि , रसायनसं., र. प. ज्वराधिकारे ।

टि०—रसायनसं. प्रलयकालाग्निरुद्ररस इति नाम । रसपद्धत्या मृत्युञ्जय इति नाम अग्निपाकाऽनन्तर विहितप्रक्षेपमत्र न दृश्यते । वहुग्रन्थसम्वादाद्रसपद्धतिकोरण त्रुटित पाठ समासादित इति प्रतीयते ।

भाषा—हिङ्गुलोत्थ पारा १ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग, अभ्रक और गोदन्तीहरिताल ५–५ भाग, शुद्धमैनसिल ३ भाग, भुनासुहागा २ भाग, शुद्धखर्पर अथवा जस्तभस्म ६ भाग, शुद्धजमालगोटा १ भाग, सर्पका विष अथवा शुद्ध वछनाग २ भाग, शुद्धसिंगरिफ ३ भाग, ताम्र और लोहभस्म २–२ भाग, लेकर सबका वारीक चूर्णकर पारदगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर आकका दूध, सभालू, चित्रकमूल, धतूरा, जंभीरी, करेला इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज मर्दनकर गोला वनाय ताम्रपात्रमें वन्दकर वालुकायन्त्रमें २ पहर की आंच देवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर शुद्ध गन्धक, हरिताल, वछनाग और शिंगरफि आधा आधा भाग मिलाकर वृशमूल, पीपल, वनभाटेके फल, पञ्चकोल इनके क्वाथोंसे २–२ पहर मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अदरखके स्वरससे देनेसे तरुण पित्तश्लेष्मज्वर, वातज्वर, द्व्याहिक, चातुर्थिक, त्रिरात्र, सतत, धातुग, अस्थिग, नानातरहके दोषोंसे होनेवाला ज्वर, दाह और स्वेद युक्त ज्वर इन सबको दूर करताहै पथ्यमें दही, छाछके साथ भात अथवा दूधभात देना, शक्करका शरवत, नारियलका पानी, पकेकेले, सब तरहके मधुरपदार्थ, कपूरयुक्त ताम्बूल, ये सब देना । वावड़ी, कुआ, तालाव वगैरहमें यथेष्ट स्नान करे । इसको कहीं **प्रलयाऽनलरुद्र,** कहीं **कालाऽग्निभैरव** और कहीं **प्रसन्नभैरव** नामसे पुकारतेहै ॥ ३०९ ॥

३१० प्रलापान्तकरसः

सौभाग्यमागधीशुण्ठीमरिचानां पृथक् पिचून् ।
शुद्धधत्तूरजं बीजं नवमाषकसम्मितम् ॥ १३७१ ॥
लवङ्गत्रिफलागन्धपारदान्प्रतिकोलकान् ।
नलजम्बूकजद्रावैः पिष्ट्वा गुञ्जाद्वयोन्मितताम् ॥१३७२॥
अष्टादशाङ्गक्वाथेन व्याघ्र्यादिजनितेन वा ।
बृहद्दार्व्यादिजातेन वटीं दद्यात्प्रलापके ॥ १३७३ ॥

नू क , सन्निपाते ।

भाषा—भुनासुहागा, पीपल, सोंठ और मरिच १–१ तोला, शुद्धधतूरेके बीज ९ माशे, लौंग, त्रिफला, शुद्ध गन्धक और पारा ६–६ माशे लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर नलसर और सोनापाठाके क्वाथोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अष्टादशाङ्ग अथवा व्याघ्र्यादि अथवा बृहद्दार्व्यादिक्वाथके साथ देनेसे प्रलापक सन्निपातदूरहोताहै ॥ ३१० ॥

३११ प्रवालपञ्चामृतोरसः

प्रवालमुक्ताफलशङ्खशुक्ति-
कपर्दिकानाञ्च समांशभागम् ।
प्रवालमात्रं द्विगुणं प्रयोज्यं
सर्वैः समांशं रविदुग्धमेव ॥ १३७४ ॥
एकीकृतं तत्खलु भाण्डमध्ये
क्षिप्त्वा मुखे बन्धनमत्र योज्यम् ।
पुटं विदध्यादतिशीतले च
उद्धृत्य तद्भस्म भरेत्करण्डे ॥ १३७५ ॥
नित्यं द्विवारं प्रतिरोगयोगैः
वल्लप्रमाणेन प्रयोज्यमेव ।
गुल्मोदरप्लीहविबद्धकास-
श्वासाऽग्निमान्द्यान्कफमारुतोत्थान् ॥
अजीर्णमुद्गारहृदामयघ्नं
बालग्रहार्तौ परमं प्रशस्तम् ॥ १३७६ ॥
मेहामयं मूत्ररोगं मूत्रकृच्छ्रं तथाऽश्मरीम् ।
नाशयेन्नाऽत्र सन्देहः सत्यं गुरुवचो यथा ॥१३७७॥
पथ्याश्रितं भोजनमादरेण
समाचरेन्निर्मलचित्तवृत्त्या ।
प्रवालपञ्चामृतनामधेयो
योगोत्तमः सर्वगदाऽपहारी ॥ १३७८ ॥

यो र , रसायनसं., नि र , र च., गुल्मे ।

भाषा—मूगा २ भाग, मोती, शङ्ख, मोतीकीसीप, पीलीकौड़ी इनकी भस्में १–१ भाग लेकर सबकी बरावर आकका दूध डालकर मिट्टीके वर्तनमें भर मुखमुद्राकरके गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती सुवह शाम मधु प्रभृति तत्तद्रोगोचितानुपानों के साथ देनेसे गुल्म, उदर, प्लीहा, बद्धोदर, कास, श्वास, मन्दाग्नि, कफवातरोग, अजीर्ण, उद्गार, हृद्रोग, ग्रहोपद्रव, प्रमेह, मूत्ररोग, मूत्रकृच्छ्र, पथरी, इनसव रोगोंको यह दूरकरताहै । पथ्य रोगोचित करना । इसको तत्तद्रोगहराऽनुपानकेसाथ देनेसे यह तमामरोगोंको दूरकरताहै ॥ ३११ ॥

३१२ प्रवालयोगः (प्रथमः)

पिबेत्तथा तण्डुलधावनेन
प्रवालचूर्णं कफमूत्रकृच्छ्रे।

च सं, ग नि., मूत्रकृच्छ्रे।

भाषा—चावलोंके धोवनसे प्रवालकी पिष्टी करररक्खे। इसमेंसे १–१ माशा चावलोंके धोवनकेसाथ देनेसे कफमूत्रकृच्छ्र निवृत्तहोताहै॥ ३१२॥

३१३ प्रवालयोगः (द्वितीयः)

प्रवालमुक्ताञ्जनशङ्खचूर्णं
लिह्यात्तथा काञ्चनगैरिकोत्थम्॥ १३७९॥

मु सं, पाण्ड्वधिकारे।

भाषा—मूगा, मोती, सफेदसुरमा और शङ्खभस्म इनको गोमूत्रके साथ देनेसे अथवा सोनागेरूकीभस्म गोमूत्रकेसाथ देनेसे पाण्डुरोग निवृत्त होताहै॥ ३१३॥

३१४ प्रवालयोगः

एला प्रवालकं हिङ्गु लवणञ्च समं भवेत्।
मद्येनोष्णेन तत्पीत मेहं ससिकतञ्जयेत्॥ १३८०॥

भे सं., प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—इलायची, प्रवालभस्म, भुनाहींग, सेंधानमक येसब समभागलेकर वारीकचूर्णकर १–१ माशेकी मात्रा उष्ण-मद्यके साथ लेनेसे यह सिकतासहित प्रमेहोंको नष्टकरताहै ३१४

३१५ प्रवालरसायनम्

चतुःपलं प्रवालस्य भस्मनो मृततारकम्।
तत्समं द्विगुणं ताम्रं प्रवालमर्द्धभागिकम्॥ १३८१॥
त्रिंशद्विभागिकं वज्रं षोडशांशञ्च नीलकम्।
व्योमसत्त्वं समं सर्वैस्तालकं सर्वतः समम्॥ १३८२॥
विमर्द्य लिङ्गिनीतोयै र्यावद्दिनचतुष्टयम्।
सर्वार्द्धशुद्धसूतेन तस्माद्द्विगुणगन्धकैः॥ १३८३॥
विहितां कज्जलीं सम्यग्द्रावयित्वा यथापुरा।
प्रवालादीनि भस्मानि विनिक्षिप्य विमिश्र्य च॥१३८४
निर्वाप्य गोघृतैः सम्यग्द्वादशाऽब्दपुरातनैः।
शरावसम्पुटे रुद्धा घृताक्तं स्वेदयेच्छनैः॥ १३८५॥
विचूर्ण्य भावयेद्भृङ्गरसै र्वारांश्च सप्त च।
व्योषाऽऽज्यसहितं हन्ति जूर्तिरोगं दिनैस्त्रिभिः१३८६
क्षयञ्च मण्डलार्धेन ग्रहणीं पाण्डुकामले।
कुन्तकामलिकारोगमुदावर्तं महोदरम्॥ १३८७॥
प्रमेहं मेदसो वृद्धिं वातव्याधिं कफाऽऽमयम्।
गुदरोगञ्च मन्दाग्निं मूत्रघातमशेषतः॥ १३८८॥
स्मरमन्दिरजं व्याधिं वन्ध्यारोगांश्च गात्रजान्।
व्योषाऽऽज्यचित्रतोयैश्च मद्यपानमशेषतः॥ १३८९॥
भूयोभूयो विसूच्यर्ति र्देहिनो यस्य जायते।
रक्षोऽयं तस्य दातव्यो मण्डलानां त्रयं खलु॥
आमरोगे च दातव्यो मितमितं वत्सरावधि॥१३९०॥

र चू., रसायने।

भाषा—प्रवाल और रजतभस्म ४–४ पल, ताम्रभस्म ८ पल, ताम्रसे आधी प्रवालपिष्टी और ३० वा भाग, हीरेकीभस्म तथा षोडशांश नीलमभस्म और सबकी बराबर अभ्रकसत्त्व, इन-सबचीजोंके बराबर शुद्धहरिताल लेकर सबका वारीक चूर्णकर शिवलिङ्गीके अरसस्वरससे ४ रोज़ मर्दनकरे। सब पिण्डसे आधा शुद्ध पारा और पारेसे दूना शुद्ध गन्धक लेकर नीलवर्णकज्जलीकर बेरके कोयलों पर इसको पिघलाकर प्रवालादिक समस्त द्रव्य धीरे २ मिलावे। फिरइसपर खजायतो १२ वर्षका पुराना गायका घी डालकर एकजीवकरे। फिर इसको गोघृतमें चिकनेकियेहुए शरावमें डालकर शरावसम्पुटकर भूधरयन्त्रमें स्वेदनकरे। स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर वारीकचूर्णकर भंगरेके रससे ७ दिन मर्दनकर १–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली त्रिकटु और घीके साथ देनेसे ३ रोज़में यह ज्वरको नष्टकरता है। आधे मण्डलमें क्षय, ग्रहणी, पाण्डु, कामला, कुन्तकामला (कुम्भकामला), उदावर्त, महोदर (जलोदर), प्रमेह, मेदोवृद्धि, वातव्याधि, कफरोग, गुदरोग, मन्दाग्नि, मूत्रघात, योनिरोग, वन्ध्यारोग, शरीरजरोग, इनसबको यह नष्टकरताहै। त्रिकटु, घी और चित्रकक्काथ इनके साथ देनेसे समस्त मद्यपानज रोगोंको नष्टकरताहै। जिस आदमीको वार-म्वार हैज़ा हुआ करताहै उस आदमीको ३ मण्डलतक देना। आमरोगमें १ वर्षतक देना॥ ३१५॥

३१६ प्राचेतसं चूर्णम्

त्वक् सप्तपर्णात्कुटजात्सनिम्बा-
द्वद्रामयोशीरनतानि ताप्यम्।
रोध्रं विदध्यान्नवमं नवाङ्गं
प्राचेतसं चूर्णमुदाहरन्ति॥ १३९१॥
लौहेऽथ हैमे त्वथ राजते वा
पात्रे स्थितं सद्मनि भूपतीनाम्।
क्षौद्रेण लीढं सचराचराणि
विषाणि हन्याद्भुवि मानुषाणाम्॥ १३९२॥

चि क, विषाधिकारे।

टि०—अत्र नवम=नवमद्रव्य लोध्र तत् नवाङ्ग नव अङ्गानि अर्था-द्भागा यस्य तन्नवाङ्गमिति व्याख्येयम्। कैश्चित्तु नवाङ्ग प्राचेतस विद-ध्यादिति नियोजित तन्न सम्यक्? नवम नवाङ्ग विदध्यादित्यनर्थक स्यादिति मद्भद्रैराकलनीयम्।

भाषा—सप्तपर्ण, कुटज, नीम, नागरमोथा, कुठ, खस, तगर, शुद्ध सोनामाखी येसब १–१ भाग और लोध ९ भाग लेकर सबका इकट्ठा चूर्णकर लोह अथवा सुवर्ण अथवा चादीके पात्रमें रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ माशे मधुके साथ चाटनेसे स्थावर और जङ्गम दोनों विषोंको यह नष्टकरताहै। राजालोगोंके घरमें इसका हमेशा रहना अत्यावश्यक है॥ ३१६॥

३१७ प्राणदापर्पटी

सूताऽऽभ्राऽयोऽहिवङ्गोषणविषमखिलां-
शेन गन्धेन लौह्यां,
कोलाग्नौ विद्रुतेन क्षणमथ मिलितं
ढालितं गोमयस्थे।
रम्भापत्रेऽमुनाऽन्येन च दृढपिहितं
प्राणदा पर्पटीस्या-
त्पाण्डौ रक्ते ग्रहण्यां ज्वररुजि कसने
यक्ष्ममेहाऽग्निमान्द्ये ॥ १३९३ ॥
प्राणदा पर्पटी सैषा भाषिता शम्भुना स्वयम्।
तत्तद्रोगाऽनुपानेन सर्वरोगविनाशिनी ॥ १३९४ ॥

वृ यो.त ,नि.र ,र.च.,यो र., क्षयाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा, अभ्रक, लोह, नाग, वङ्ग इनकीभस्में, कालीमिर्च, शुद्ध वछनाग, येसव समभाग और सबकी बराबर शुद्ध गन्धक लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जली कर बेरके कोयलोंपर लोहेकी कड़ाहीमें घृतयोगसे गलाकर बाकी चीजोंको मिलादे। एकदम गलजानेपर ताज़े गोबरपर रक्खे हुये केलेके पत्तेपर टालकर दूसरे पत्तेसे ढक्कर गोबरसे दबादे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे पीपलप्रभृतिकेसाथ आधीरत्तीसे ५ रत्तीतक मात्रा बढ़ाकर खावे और उसीक्रमसे कमकरे। ऐसे जबतक पूर्ण आरोग्यलाभ न हो तबतक इसीक्रमको जारी रक्खे । एकदम आराम होनेपर आधी रत्तीकी मात्रा पर लाकर छोड़दे । इसके सेवनसे पाण्डु, प्रवाहिका, ग्रहणी, ज्वर, कास, यक्ष्म, प्रमेह और अग्निमान्द्य नष्ट होतेहै। तत्तद्रोगोचिताऽनुपानके साथ देकर रोगोचित पथ्य पालन करनेसे यह सभीरोगोंको नष्टकरतीहै ॥ ३१७ ॥

३१८ प्राणनाथरसः (प्रथमः)

लोहभस्म पलैकन्तु द्विपलं भृङ्गजद्रवम्।
वराभार्ङ्गीभवं द्रावं पलैकैकं नियोजयेत् ॥ १३९५ ॥
पलैकस्मिंस्त्रैफलोत्थे सर्वं भर्ज्यञ्च खर्परे।
लोहांशं माक्षिकं शुद्धं मर्द्यं पूर्वोदिते द्रवैः ॥ १३९६ ॥
रुद्ध्वा त्रिभिः पुटैः पाच्यं द्रवे मर्द्य पुनः पुनः।
मृतं सूतं मृतं वङ्गं निष्कं निष्कं विमिश्रयेत् ॥१३९७॥
द्वौ निष्कौ शुद्धगन्धस्य चतुर्निष्का वराटिका।
एकीकृत्य पुटे पाच्यं पूर्वलोहविमिश्रितम् ॥ १३९८ ॥
पूर्वोक्तैस्तु द्रवै मर्द्य पुटेनैकेन पाचयेत्।
सप्तनिष्कान्मरीचानां तुत्थटङ्कणयो र्दश ॥ १३९९ ॥
मेलयेच्च पृथक् सर्वं प्राणनाथाऽऽह्वयो रसः।
भक्षयेन्निष्कपादार्धमसाध्यं राजयक्ष्मनुत् ॥
शोफोदराऽर्शोग्रहणीज्वरगुल्महरं तथा ॥ १४०० ॥

नि.र., र को., र का., र र., क्षयाऽधिकारे। र र. **प्राणनाथरस** इति नाम । तथाच "वराभार्ङ्गीभवं द्रावं पलैकैकं नियोजयेत्।" इति पाठो न दृश्यते, तथा च वङ्गस्थाने नागं नियोजितम्।

भाषा—लोहभस्म १ पल, भंगरेका रस २ पल, त्रिफला और भार्ङ्गीका रस १-१ पल लेकर पहिले त्रिफलाका रस मिट्टीके खपड़ेमें डालकर उसमें लोहेको मिलाकर सेके । रस सूखजानेपर लोहकी बराबर शुद्ध सोनामाखी डालकर भंगरा और भारङ्गीके रसोंसे क्रमसे मर्दनकरे । रससूखजानेपर गोला बनाय भूधरयन्त्रमें रखकर २ सेर कण्डोकी आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर फिर दोनो रसोंसे मर्दनकर पुटदे। ऐसे तीनवार करके चौथीवार पारद और वङ्गभस्म ४-४ माशे मिलाकर शुद्धगन्धक ८ माशे, पीलीकौड़ीकी भस्म १ कर्ष मिलाकर पूर्वोक्तरसोंसे मर्दनकर १ पुटदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर मिर्च १॥। कर्ष, शुद्धसुहागा २॥ कर्ष मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ माशा उचिताऽनुपानके साथ देनेसे असाध्यराजयक्ष्म, शोथ, उदर, बवासीर, ग्रहणी, ज्वर और गुल्म इनसबको यह नष्ट करता है ॥ ३१८ ॥

३१९ प्राणनाथरसः (द्वितीयः)

अयोरजो विंशतिनिष्कमानं
विभावितं भृङ्गरसाऽऽढकेन।
धत्तूरभार्ङ्गीत्रिफलारसैश्च
तुल्यांशताप्यं विपचेत्पुटेषु ॥ १४०१ ॥
सूतञ्च निष्कं समभागतुत्थं
गन्धोपलाद्वौ चतुरो वराटान्।
पक्त्वा पुटाऽग्नौ समलोहचूर्णा-
त्पचेत्तथा पूर्वरसेन मिश्रान् ॥ १४०२ ॥
चूर्णेऽस्मिन्मरिचान्सप्त तौत्थटङ्कणकान्दश।
संसृजेत्तत्पृथङ्निष्कान् प्राणनाथाऽऽह्वयोदितः॥१४०३॥
अर्द्धपादो रसाद्भक्ष्यः केवलाद्राजयक्ष्मिभिः।
शोफोदरार्शोग्रहणीज्वरगुल्माद्युपद्रुतैः ॥१४०४॥

र.र स , रसचि., राजयक्ष्मणि।

टि०—प्रथमप्राणनाथाद्द्रव्येषु साम्यमावहन्नपि प्रक्रियायामन्तरत्वात्पृथक् पाठो गृहीत इति विभावनीयम्।

भाषा—शुद्धलोहेका बारीकचूरा ५ कर्ष लेकर भंगरा, धतूरा, भारङ्गी, और त्रिफलाके ४-४ प्रस्थ रसोंकी भावना देकर सुखाले फिर ५ कर्ष शुद्धसोनामाखी डालकर भंगरेके रसमें घोट टिकिया बनाय सुखाकर गजपुटकी आचदे फिर धतूरा, भारङ्गी और त्रिफलाके रसोंमें घोटघोटकर गजपुटकी आचदे। ऐसे ४ गजपुट देनेकेबाद शुद्धपारा और तुत्थ ४-४ माशे, शुद्धगन्धक ८ माशे, पीली कौड़ी १ कर्ष लेकर सब चीजें पारे गन्धक की नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर पूर्वरसोंसे टिकिया बनाय गजपुटकी आच देवे । इसकेबाद लोहभस्म ५ कर्ष, मरिच १॥। कर्ष, शुद्ध तूतिया और सुहागा ढाई २॥ कर्ष मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ४-४ रत्ती उचिताऽनुपानकेसाथ देनेसे राजयक्ष्म, शोप, उदररोग, बवासीर, ग्रहणी, ज्वर और गुल्मादिक सब नष्ट होतेहैं ॥ ३१९ ॥

३२० प्राणवल्लभोरसः (प्रथमः)

दरदादुत्थितं सूतं काश्मीरोद्भवगन्धकौ ।
लौहं ताम्रं वराटञ्च तुत्थं हिङ्गुफलत्रिकम् ॥१४०५॥
स्नुहीक्षीरं यवक्षारो जैपालो दन्तिका त्रिवृत् ।
प्रत्येकं शाणभागन्तु छागीक्षीरेण पेषयेत् ॥१४०६॥
चतुर्गुञ्जां वटीं खादेद्वारिणा मधुना सह ।
प्राणवल्लभनामाऽयं गहनानन्दभाषितः ॥१४०७॥
श्लेष्मदोषं समाऽऽलोक्य युक्त्या च त्रुटिवर्धनम् ।
निहन्ति कामलां पाण्डुमानाहं श्लीपदं तथा ॥१४०८॥
गलगण्डं गण्डमालां व्रणानि च हलीमकम् ।
ऊरुस्तम्भं शूलशोथौ सङ्ग्रहग्रहणीञ्जयेत् ॥१४०९॥
वान्तिं मूर्च्छां श्रमं दाहं कासं श्वासं गलग्रहम् ।
असाध्यं सन्निपातञ्च रक्तगुल्ममरोचकम् ॥१४१०॥
वातरक्तं तथा शोषं कण्डूं विस्फोटकाऽपचीम् ।
नाऽतःपरतरं किञ्चित्कामलाऽर्तिरुजापहम् ॥१४११॥

र सं., ध, र. चि., भै र, र क, र. सु, र चं, पाण्डुरोगे ।

टि०—केषुचिद्ग्रन्थेषु अयं पाठो गुल्मेऽपि पठितस्तत्र पूर्वाऽपरज्ञानविस्मृति मूलम् । उपरितनाऽर्द्धश्लोकोऽपि लेखकप्रमादादपगत इति तु केनाऽपि न विचारितम् ।

भाषा—शिंगरिफसे निकालाहुआ पारा, केशर, शुद्ध गन्धक, लोह, ताम्र, पीलीकौड़ी और तुत्थ इनकीभस्में, भुनाहींग, त्रिफला, थूहरकादूध, यवक्षार, शुद्ध जमालगोटा, दन्ती और निशोत ये प्रत्येक ४–४ माशे लेकर वारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर वकरीके दूधमें २–३ दिन मर्दनकर ४–४ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधु अथवा जलके साथ देना । श्लेष्मकी न्यूनाऽधिकता देखकर मात्रामें न्यूनाऽऽधिक्य करलेना । इसके सेवनसे कामला, पाण्डु, आनाह, श्लीपद, गलगण्ड, गण्डमाला, व्रण, हलीमक, ऊरुस्तम्भ, शूल, शोथ, सङ्ग्रहग्रहणी, वमन, मूर्च्छा, श्रम, दाह, कास, श्वास, गलग्रह, असाध्यसन्निपात, रक्तगुल्म, अरोचक, वातरक्त, शोष, खुजली, विस्फोटक, अपची इनसवको यह नष्टकरताहै । कामलाको दूरकरनेमें इसके सदृश अन्ययोग नहींहै ॥ ३२० ॥

३२१ प्राणवल्लभोरसः (द्वितीयः)

रसं विषं मल्लमभ्रं गन्धकञ्च मनःशिलाम् ।
मर्दितं पर्पटद्रावैर्वज्रमूषाऽन्तरे क्षिपेत् ॥१४१२॥
विपाच्य भूधरे यन्त्रे स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ।
खल्वमध्ये विनिःक्षिप्य मत्स्याजशिखिपित्तकैः १४१३
पाचितं याममात्रन्तु गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ।
गुल्फवातं निहन्त्याशु सर्ववातविकारनुत् ॥१४१४॥

व रा, वै चि, गुल्फवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग, सोमल, अभ्रक भस्म, गन्धक और मैनसिल सब समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर पित्तपापड़ेके रससे १–२ रोज मर्दनकर गोला वनाय वज्रमूषामें वन्दकर भूधरयन्त्रमें अग्निदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर मछली, वकरा और मोरके पित्तोंसे १–१ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली वातहरानुपानके साथ देनेसे गुल्फवात किंवा समस्त वातविकारोंको यह नष्टकरता है ॥ ३२१ ॥

३२२ प्राणिकल्पद्रुमोरसः

सूतं गन्धं कान्तपाषाणमिश्रं
ब्राह्मे बीजे मर्दयेदेकघस्रम् ।
गोलं कृत्वा टङ्कणेन प्रवेष्ट्य
पश्चान्मृत्स्नागोमयाभ्यां धमेत्तम् ॥१४१५॥
शुष्के यन्त्रे सत्त्वपातप्रधाने
किट्टे सूतो बद्धतामेति नूनम् ।
शुद्धं पश्चात्क्षारकाचप्रयोगा-
द्धेम्नातुल्यं सूतमावर्तयेत्तत् ॥ १४१६ ॥
वक्त्रे गोलः स्थापितोवत्सरार्धं
रोगान्सर्वान् हन्ति सौख्यं करोति ।
यद्वा दुग्धे गोलकं पाचयित्वा
दद्याद् दुग्धं पिप्पलीभिः क्षये तु ॥१४१७॥
लौहे पात्रे पाचयित्वा तु देयं
शुष्के पाण्डौ कामले पित्तरोगे ।
वाते गोलं व्योषवातारितैलं
पक्त्वा तैलं गन्धतैलं ददीत ॥ १४१८ ॥
भार्ङ्गीमुण्डीकासमर्दाऽऽटरूष-
द्रावे गोलं पाचयेच्छ्लेष्मनुत्यै ।
कासे श्वासे तञ्च दद्यात्कषायं
माध्वीकाक्तं पिप्पलीचूर्णयुक्तम् ॥१४१९॥
यस्मिन्रोगे यःकषायोऽस्ति चोक्त-
स्तस्मिन्गोलं पाचयित्वाकषायम् ।
दद्यात्तद्रोगनाशाय पथ्य-
मुक्तोगोलः प्राणिकल्पद्रुमोऽयम् ॥ १४२० ॥

यो म., रसायनसं, आ प्र, र. दी, रसायने ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, कान्तपाषाण और पलाशके वीज समभाग लेकर १ रोज मर्दनकर पानीके सयोगसे गोलावनाय ऊपर सुहागेकालेप करदेना । सूखनेपर मिट्टी और गोवरका लेपकरदेना फिर सत्त्वपातनयन्त्रमें रखकर धमनकरना । इससे पारा किट्टरूप-होकर वन्धको प्राप्त हो जायगा । इसको सुहागा और काचकेसाथ गलाकर साफ करके वरावरके सुवर्णके साथ गोलीरूपमें ढाललेना । इसगोलीको वर्षभर मुहमें रखनेसे समस्तरोग दूरहोकर आदमी सुखी होताहै । अथवा इसगोलीको दूधमें डालकर थोड़ा गरमकर पिप्पलीका थोड़ासा चूर्ण डालकर पिलानेसे क्षय दूर होताहै । लोहेके पात्रमें दूधके साथ पकाकर पिलानेसे शुष्कपाण्डु, कामला और पित्तरोग नष्टहोते है । त्रिकटुके कल्कसे एरण्डीका तैल पकाकर उसतैलमें इसगोलीको थोड़ी देर पकाकर निकाललें और

उसतैलमें गन्धकका तैल मिलाकर देनेसे वातव्याधि दूरहोताहै । भारङ्गी, गोरखमुण्डी, कसौंदी, अडूस इनके रसोंमें इसगोलीको पकाकर देनेसे श्लेष्मरोग दूरहोतेहैं। कास श्वासमें भारङ्ग्यादिक्काथमें महुएका आसव और पीपलका चूर्ण डालकर देना । जिसरोगका जो काढ़ाहै उस उसमें इसगोलीको पकाकर देनेसे तत्तत् समस्त रोगोंको दूरकरतीहै ॥ ३२२ ॥

३२३ प्राणेश्वररसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं मृताऽभ्रं विषसंयुतम् ।
समं तन्मर्दयेत्तालमूलीनीरैस्त्र्यहं बुधः ॥ १४२१ ॥
पूरयेत्कूपिकां तेन मुद्रयित्वा विशोषयेत् ।
सप्तभि र्मृत्तिकावस्त्रै र्वेष्टयित्वाऽथ शोषयेत् ॥१४२२॥
पुटेत्कुम्भप्रमाणेन स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
गृहीत्वा कूपिकामध्यान्मर्दयेच्च दिनं ततः ॥ १४२३ ॥
अजाजी चित्रकं हिङ्गु स्वर्जिका टङ्कणं जगत् ।
गुग्गुलुः पञ्चलवणं यवक्षारो यवानिका ॥ १४२४ ॥
मरिचं पिप्पली चैव प्रत्येकञ्च समानतः ।
एषां कषायेण पुनर्भावयेत्सप्तधाऽऽतपे ॥ १४२५ ॥
नागवल्लीदलयुतः पञ्चगुञ्जो रसेश्वरः ।
दद्यान्नवज्वरे तीव्रे कोष्णं वारि पिबेदनु ॥ १४२६ ॥
प्राणेश्वररसो नाम्ना सन्निपातप्रकोपजित् ।
शीतज्वरे दाहपूर्वे गुल्मे शूले त्रिदोषजे ॥ १४२७ ॥
वाञ्छितं भोजनं दद्यात्कुर्याच्चन्दनलेपनम् ।
तापोद्रेकप्रशमनो नानाऽतीसारनाशनः ॥
भवेच्च नाऽत्र सन्देहः स्वास्थ्यञ्च लभते नरः ॥१४२८॥

र. सं., र. मं., भै. र., र कौ., यो म., र सु., र. का., रसायन सं., ज्वरे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भा, गन्धक २ भा., अभ्रकभस्म और शुद्धवछनाग १–१ भागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर तालमूलीके स्वरससे ३ रोज मर्दनकर सुखाकर ७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें बन्दकर कपड़मिटीसे मुंहबंदकर कुम्भपुटकी आच देवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर शीशीमेंसे निकालकर एकरोज मर्दनकर जीरा, चित्रकमूल, भुनाहींग, सज्जी, सुहागा, फिटकड़ी, गूगल, पाचों नमक, यवक्षार, अजवाइन, मरिच और पीपल ये प्रत्येक इसयोगकी बराबर लेकर सबका क्वाथ बनाकर ७ वार धूपमें भावना देकर ५–५ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पानमें रखकर नवज्वरोंमें देवे । यदि ज्वर बहुततीव्र मात्रामें होतो थोड़ा ऊपरसे गरमपानी पिलादे । इसके सेवनसे सन्निपात, शीतज्वर, दाहज्वर, त्रिदोषजगुल्म और शूल येसब नष्ट होतेहैं । इसके देनेके बाद रोगीकी जिस चीजपर इच्छाहो वह खानेको देना । चन्दनप्रभृति शीतवस्तुओंका लेपकरना । यह ज्वरकी उत्कटताको दूरकरताहै । और अतिसारका नाशकरताहै ॥ ३२३ ॥

३२४ प्राणेश्वररसः (सर्वाङ्गसुन्दरः) (द्वितीयः)

अभ्रसत्त्वं पातयित्वा भस्मीकुर्याद्विचक्षणः ।
त्रिफलातालमूलीजै रसैः सम्मर्द्य सम्पुटेत् ॥१४२९॥
शरावसम्पुटे क्षिप्त्वा वाराहेण ततः परम् ।
यावद्भस्मीभवेत्सर्वं मर्दयित्वा पुटेत्क्रमात् ॥ १४३० ॥
इत्थं भस्मीकृतं व्योम समं सूतं मृतं तथा ।
गन्धकं शोधितं कृत्वा प्रत्येकञ्च पलंपलम् ॥ १४३१ ॥
खल्वे निक्षिप्य मुशलीनीरैः सम्मर्दयेद् दृढम् ।
दिनत्रयं प्रयत्नेन कल्कं सम्पादयेत्ततः ॥ १४३२ ॥
सनालायां काचकूप्यां तं कल्कं निक्षिपेद् बुधः ।
काचकूप्या मुखं रुन्ध्यात्खटिन्या यत्नतो भिषक्१४३३
कूपिकां लेपयेत्पश्चान्मृदा कर्पटयुक्तया ।
सर्वाङ्गं शोषयेत्पश्चादातपेऽतिखरे बुधः ॥ १४३४ ॥
क्षिपेद् भूधरके यन्त्रे कूपिकां तां त्रिभागिकाम् ।
कुक्कुटोच्चपुटं दत्त्वा स्वाङ्गशीतलतां गतम् ॥१४३५ ॥
निर्धूय कर्पटमृदं खटिनीरससंयुताम् ।
कूपिस्थं मर्दयेत्सर्वं सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ॥ १४३६ ॥
तन्मध्ये प्रक्षिपेदेतदौषधं चूर्णितं भृशम् ।
क्षारत्रयं पञ्चपटु त्रिकटु त्रिफला पुरम् ॥ १४३७ ॥
वाह्लीकजं भद्रयवं त्रिजगद्विजयादलम् ।
वैश्वानरश्चाजमोदो यवानी च समांशतः ॥ १४३८ ॥
पारदस्य प्रमाणेन ग्राह्यं सर्वमिदं ध्रुवम् ।
सूक्ष्मचूर्णं विधायैतत्सर्वं सूते विनिःक्षिपेत् ॥१४३९॥
शुष्कमर्दनयोगेन सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।
एवं सिध्यति सूतेन्द्रः सर्वरोगकृते पटुः ॥ १४४० ॥
नागवल्लीदलेनैनं सूतं युञ्जीत बुद्धिमान् ।
गुञ्जापञ्चप्रमाणेन सूतेन्द्रः सर्वरोगहा ॥ १४४१ ॥
अहर्मुखे समुत्थाय सूतेन्द्रं भक्षयेद्बुधः ।
अनुपानं प्रयुञ्जीत कवोष्णं सलिलं सदा ॥ १४४२ ॥
चुलुकद्वयमानञ्च नाऽधिकं सम्प्रपाययेत् ।
तृडभावे वारमेकं शीतं वारि पिबेद्दिने ॥ १४४३ ॥
क्षाराऽम्लविदलं वर्ज्यं भोजनं तैलसम्भवम् ।
तैलाभ्यङ्गं शाकजातं वर्जयेच्छयनं दिवा ॥ १४४४ ॥
आचरेद्ब्रह्मचर्यञ्च हितसेवी सदा भवेत् ।
अहितं वर्जयेद्यत्नाद्रससेवाविधौ नरः ॥ १४४५ ॥
एवं संसेव्यमानोऽयं रसो रोगान्निवर्तयेत् ।
निश्चेतनत्वं यो याति सन्निपातात्कथञ्चन ॥ १४४६ ॥
प्राणेश्वरं रसं दद्यात्तस्याऽपि भिषगुत्तमः ।
पूजयित्वा देवविप्रकुमारी योगिनी रसम् ॥ १४४७ ॥
निजशक्त्यनुसारेण रसेन्द्रं योजयेत्ततः ।
अन्यथा नैव सिद्धिः स्याद्रसेन्द्रे सेवितेऽपि च ।१४४८।
सन्निपातं निहन्त्येष रसो युक्त्या निषेवितः ।
ज्वरान् सर्वांश्च प्लीहानं गुल्मं पञ्चविधं हरेत् ॥१४४९॥

विकारान् वातजांश्छूलं परिणामभवं हरेत्।
कामलां पाण्डुरोगञ्च मन्दाग्निं ग्रहणीमपि ॥१४५०॥
शिववत्सेवितो हन्ति रसः प्राणेश्वरो रुजः।
इति प्राणेश्वरो नाम्ना रसः सर्वगदाऽपहः ॥१४५१॥
दृष्टप्रभावः सृष्टोऽत्र लोकोपकृतिहेतवे।
देवीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥१४५२॥

रसालं., र.र स., रससागर, र मृ., गुल्मे।

टि०—रसाऽलङ्कारे गजाऽङ्किनी शब्दाऽज्ञानात्तत्स्थाने त्रिजगद्विजयादल नियोजितम्। गजाङ्किनीशब्देन हुब्बुलकिलकिलेति यूनानी वैद्यके प्रसिद्ध बीज योज्यम्। केचित्तु गुञ्जाकिनीति पाठ मत्वा गुञ्जा नियोजयन्ति तत्तु न सम्यग्गुञ्जायामेतद्द्रव्यभावात्। गुञ्जावदङ्कते माद्दस्य गच्छतीति गुञ्जाकिनी अत्राऽपि स एवाऽर्थ प्रकटीभवति गुञ्जाफलेन तत्प्राय सादृश्यमावहति। अतएवाऽज्ञा कृष्णगुञ्जया तद्व्यवहार कुर्वन्तीति विभावनीयम्।

भाषा—अभ्रकका सत्त्व निकालकर त्रिफला और तालमूलीके रससे १–१ रोज़ मर्दनकर सुखाकर वराहपुटकी आचदे जवतक भस्म न हो तवतक पूर्वोक्तरसोंमें मर्दनकरके पुट देता जाय। जव भस्म होजाय तव उसमें पारेकीभस्म और शुद्ध गन्धक १–१ पल मिलाकर तीनरोज़ मुशलीके रससे मर्दनकर कल्कवनाले। उसकल्कको आतशी शीशीमें भरके खड़ियामिट्टी की डाट लगादे और ऊपरसे ६–७ कपड़मिट्टीकर अच्छीतरह सुखाकर खड्डेमें ३ भागतक गाड़कर कुक्कुटके वरावर ऊंचा जङ्गलीकण्डोंका पुटदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर कपड़मिट्टी और डाटको हटाकर शीशीको साफ़करके रसको निकालले। फिर उसमें सज्जी, सुहागा, यवक्षार, पाचोंनमक, त्रिकटु, त्रिफला, गूगल, भुनीहींग, इन्द्रजव, भाग, चित्रकमूल, अजमोद, अजवायन इनसवको समभाग लेकर वारीक चूर्ण करके पारेके वरावर मिलाकर १–२ रोज मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ५–५ रत्ती पके पानके रसमें खाकर दो चुल्लू थोड़ागरम जल पीवे, प्यास न हो तो एकही चुल्लू पीवे। क्षार, अम्ल, दाल, तैलके पदार्थ, तैलाभ्यङ्ग, सम्पूर्ण शाक, दिनका शयन, इनको छोड़कर हितकारक पदार्थ और ब्रह्मचर्य का सेवनकरे। सन्निपातकी निश्चितनावस्थामें देव, ब्राह्मण, कुमारी और योगिनीका शक्त्यनुसार पूजनकर इसरसका योगकरे, पूजनके विना फल नहीं होता। इसरसके देनेसे सन्निपातादिकज्वर, प्लीहा, पाचप्रकारका गुल्म, वातजविकार, शूल, परिणामशूल, कामला, पाण्डु, मन्दाग्नि और ग्रहणी येसव नष्ट होतेहैं। यह कईवारका परीक्षितहै ॥ ३२४ ॥

३२५ प्राणेश्वररसः (सिद्धाद्यः) (तृतीयः)

गन्धेशाऽभ्रं पृथग्वेदभागमन्यच्च भागिकम्।
स्वर्जीटङ्कयवक्षाराः पञ्चैव लवणानि च ॥ १४५३ ॥
वराव्योपेन्द्रवीजानि द्विजीराऽग्नियवानिकाः।
सहिङ्गुवीजसारञ्च शतपुष्पा सुचूर्णिता ॥ १४५४ ॥
सिद्धप्राणेश्वरः सूत. प्राणिनां प्राणदायकः।
माषैकं सम्प्रयेद्रस्य नागवल्लीदले युतम् ॥ १४५५ ॥
उष्णोदकाऽनुपानञ्च दद्यात्तत्र पलत्रयम्।
ज्वराऽतिसारेऽतिसृतौ केवले वा ज्वरेऽपि वा १४५६
ज्वरे त्रिदोषजे घोरे ग्रहण्यादिगदेऽपि च।
वातरोगे तथा शूले शूले च परिणामजे ॥ १४५७ ॥

र सं., र चं., र. क., भै. र., र. चि, रसायनसं, र. सु., र का., यो म, र. सि., ज्वराऽतिसारे।

टि०—र म, र च. एतयोर्ग्रन्थयोर्द्वितीयस्थाने भाग व्यत्यास कृत्वा सर्जरसधाऽधिकतया प्रक्षिप्य पाठान्तर स्थापित. स नोचित, सर्जरसस्त्वत्रैव निवेशनीय इति सुधीभिराकल्पनीयम्।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, अभ्रकभस्म ४–४ भाग, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, पाचोंनमक, त्रिफला, त्रिकटु, इन्द्रजव, सफेदजीरा, स्याहजीरा, चित्रक, अजवाइन, भुनाहींग, विडङ्गतण्डुल और सोफ येसव १–१ भाग लेकर सवका वारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ पहर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा पानमें रखकर खाकर ऊपरसे गरमजल पीनेसे ज्वरातिसार, अतिसारकी अधिकता, साधारण ज्वर, त्रिदोषज ज्वर, ग्रहणी, वातरोग, शूल, परिणामशूल इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ३२५ ॥

३२६ प्राणेश्वररसः (चतुर्थः)

शम्बूकतुल्यं रसगन्धकल्क
पित्तैर्विमर्द्याऽथ पुटं ददीत।
जयारसेनैकदिनं विमर्द्य
वल्लाष्टकं वातभवे ददीत ॥ १४५८ ॥
मरीचचूर्णेन घृतान्वितेन
प्राणेश्वरः सप्तदिनं त्रिसप्त।
मरीचमाज्येन युतं निशायां
जयां निषेवेत ततः सुखी स्यात् ॥१४५९॥

र. दी., र मृ. अतिसारे।

टि०—केपुचित्पुस्तकेपु शम्बूकतुर्यमिति पाठो दृश्यते, तत्र शम्बूकभस्मनश्चत्वारो भागा ग्राह्या पारदगन्धयोस्त्वेकैक इति विशेष।

भाषा—घोंघाकीभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर यथालाभ पञ्चपित्तोंसे मर्दनकर गोलावनाय भूधरपुटमें आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर एकदिन भागके रससे मर्दनकर ३–३ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली घृत और कालीमिर्चोंके साथ ७ अथवा २१ दिनतक देनेसे वातजअतिसार निवृत्त होता है। रातमें सोतेसमय शक्त्यनुसार मिर्चे, घी और भागका सेवन करे ॥ ३२६ ॥

३२७ प्राणेश्वररसः (पञ्चमः)

रस गन्धं समं शुद्धं मृतं ताम्रं मृतं रसम्।
दिनैकं तालमूल्याश्च वाराह्या रसमर्दितम् ॥१४६०॥
मुसल्या वा द्रवै मर्द्य यथालाभं दिनं ततः।
निरुद्धं काचकूप्यां तु वालुकायन्त्रगं पचेत् ॥१४६१॥

दिनं वा भूधरे पक्त्वा समादाय विचूर्णयेत् ।
त्रिक्षारं पञ्चलवणं त्रिफलाव्योषचित्रकैः ॥ १४६२ ॥
सजीरकैः सेन्द्रयवैः हिङ्गुगुग्गुलुदीप्यकैः ।
सर्वैः समैः पूर्वसमं चूर्णीकृत्य विमिश्रयेत् ॥ १४६३ ॥
माषमात्रं प्रदातव्यं किञ्चिदुष्णोदकं पिवेत् ।
सन्निपाताऽचले वज्रं सज्वरग्रहणीप्रणुत् ॥
कुर्यात्प्राणपरित्राणमतः प्राणेश्वरो रसः ॥ १४६४ ॥

नि. र., र. सु, र. का., र क. यो, र. को, सू. प्र., सन्निपाते।

टि०-र र स., र म मा, टो, र श, व. रा, र पा., एषु ग्रन्थेषु अस्मिन्नेव पाठे ताम्रस्थानेऽभ्रक नियोज्य रसान्तरता स्वीकृता ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और पारदभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर तालमूली, वाराहीकन्द और मुसलीके रसोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें पकावे अथवा एकरोज़ भूधरयन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर सज्जी, सुहागा, यवक्षार, पाचोनमक, त्रिफला, त्रिकटु, चित्रक, जीरा, इन्द्रजव, हींग, गूगल और अजवाइन सब समभाग लेकर वारीक चूर्णकर पूर्वरसमें वरावर प्रमाणसे मिलाकर एक पहर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा गरमपानीके साथ देनेसे सन्निपात और ज्वरसहित ग्रहणी नष्ट होती है ॥ ३२७ ॥

३२८ प्राणेश्वररसः (लघुः) (षष्ठः)

त्रिक्षारं ग्रन्थिकं त्र्यूषद्विजीरकयवानिकाः ।
तेजोवती धूर्तबीजलवङ्गाऽर्ककराऽनलम् ॥ १४६५ ॥
रसगन्धौ विषं शिग्रु निर्गुण्ड्यार्द्रकधूर्तजैः ।
विधाय भावना गुञ्जाढ्यं द्विगुणशर्करम् ॥ १४६६ ॥
सद्यो जलाऽनुपानेन रसः शीतज्वराऽपहः ।
लघुःप्राणेश्वरः सोऽयं रसो गुप्तो ज्वरे मतः ॥ १४६७ ॥

र. का, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—सज्जी, सुहागा, यवक्षार, पिपलामूल, त्रिकटु, दोनोंजीरे, अजवाइन, तेजवलकी छाल, शुद्ध धतूरेकेवीज, लौंग, अकलकरा, चित्रकमूल, शुद्ध पारा, गन्धक, वछनाग, और सहिजनकीछाल, येसव समभाग लेकर वारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर संभाल, अदरख और धतूरेकी १–१ भावना देकर २–२ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शक्करके साथ देकर ताज़ा पानी पिलानेसे यह शीतज्वरको नष्टकरता है ॥ ३२८ ॥

३२९ प्राणेश्वररसः (सप्तमः)

पुनर्नवाहाटकवेणिकानां
पाठासुदुग्धाकलहप्रियाणाम् ।
शुद्धद्रवैः सूतवरः सुपिष्टः
स्विन्नश्च गन्धेन चतुर्गुणेन ॥ १४६८ ॥
योज्योऽथ मर्द्यो हलिनीजलेन
ब्राह्मीसहास्वर्णपुनर्नवानाम् ।
कासघ्नमाचीहरिवल्लभानां
दिनत्रयं गोलमथो विधाय ॥ १४६९ ॥
स्थाल्यां पचेत्तल्लिकताख्ययन्त्रे
रसैर्विमर्द्यो दिवसं रसः स्यात् ।
प्राणेश्वरः शुष्कतमेऽल्पभृष्टे
कटुत्रयं टङ्कणयुक्कलांशम् ॥ १४७० ॥
अस्मिन् प्रयुञ्ज्याद्बलवर्णकान्ति-
पुष्टिप्रदे बुद्धमुखोद्गते च ।
आदौ तथाऽन्ते ससितो द्विमाषः
प्रवक्ष्यमाणेषु गदेषु देयः ॥ १४७१ ॥
ज्वरे त्रिदोषप्रभवे क्षये च
श्वासे सकासे ग्रहणीविकारे ।
गुल्मेऽथ पित्ताऽसृजि पाण्डुरोगे
तथाऽतिसारेऽतिकृशेऽतिरूक्षे ॥ १४७२ ॥
ततस्तु तैलेन विमर्द्य देहं
मूर्ध्न्यंसयुग्मेऽङ्घ्रियुगस्य सन्धौ ।
सीमन्तिनीनां करपल्लवस्थैः
सुवर्णकुम्भैः सलिलप्रयोगम् ॥ १४७३ ॥
विण्मूत्ररेकाऽवधि सन्निपाते
ज्वरे त्वजीर्णे कुशलै र्विदध्यात् ।
कण्ठाऽवगाहे ग्रहणीगदेषु
गुल्मेष्वतीसारनिपीडितेषु ॥ १४७४ ॥
पाण्डौ क्षये सेचनमेव शस्तं
पित्ताऽधिके क्षीणतमे जरत्सु ।
अन्येषु रोगेषु विचार्य शक्तिं
कार्योऽम्बुयोगः सकलाऽऽमयघ्नः ॥ १४७५ ॥
देयो न कुष्ठे न च भूतदोषे
कृम्यर्दिते नैष रसः कदाचित् ।
अन्यान् जयत्येष गदान् स्वशक्त्या
सम्यक् प्रयुक्तः सलिलप्रयोगात् ॥ १४७६ ॥
दध्योदनं शर्करया समेतं
पथ्यञ्च मुद्गाम्बु हितं कृशेऽल्पे ।
वृन्ताकवल्लीफलजीरकाणि
सदाऽहितान्यत्र च कारवेल्लम् ॥ १४७७ ॥

रसायनसं, र का, र र. दी, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—पुनर्नवा, अकलकरा, वन्दाल, पाठा, चमारदूधी, करिहारी, इनके रसोंसे १–१ दिन पारेको मर्दनकर गोला वनाय चतुर्गुणित गन्धकको गलाकर वीचमें रखदे, दो पहरतक गन्धकको मन्दाग्निपर रहनेदे फिर नीचे उतारदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर गन्धकको खुरचकर निकालदे और पारेको करिहारी, ब्राह्मी, सुद्दपर्णी, मापपर्णी, धतूरा, पुनर्नवा, कसोंदी, मकोय, तुलसी इनप्रत्येकके रसोंसे ३ रोज़ मर्दनकर गोला वनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर वालुकायन्त्रमें पकावे । स्वाङ्ग-

शीतल होनेपर निकालकर १-१ रोज़ पूर्वोक्त रसोंसे मर्दनकर सुखादे फिर अग्निपर थोड़ासेककर त्रिकटु और भुनासुहागा सम-भागका चूर्ण सोलहवा हिस्सा मिलादे और १-२ पहर घोटकर रखले। यह वल, वर्ण, कान्ति और पुष्टिको करताहै, इसमेंसे २-२ माशेकी मात्रा शक्करके साथ देनेसे त्रिदोषज ज्वर, क्षय, श्वास, कास, ग्रहणी, गुल्म, रक्तपित्त, पाण्डु, अतिसार, अत्यन्तकृशता और अत्यन्तरूक्षता इनसवको यह दूरकरताहै। दवा लेनेके वाद तैलसे मालिशकर मत्था, स्कन्ध और पैरोंकीसन्धियोंपर ठंढेपानीकी धारादे। जव असह्य ठंढ लगने लगे तव वन्दकरदे। ग्रहणी, गुल्म और अतिसारमें कण्ठपर्यन्त पानीमें प्रवेशकरावे। पित्ताऽधिकव्याधि और अत्यन्त क्षीणताप्रभृतिरोगोंमें रोगीकी शक्ति देखकर जलप्रयोगकरना। कुष्ठ, भूतदोष, कृमिदोष इनमें जलप्रयोग नहीं करना। जलप्रयोगके वाद दही, शक्कर के साथ भातदेना, कृश और अल्पप्राण आदमीको मुद्गका यूप देना। वेंगन, कोंहळा, जीरा और करेले सर्वदा अहितकारकहैं इसलिये इसप्राणेश्वरके प्रयोगमें भूलकरभी न देवे ॥३२९॥

३३० प्राणेश्वररसः (अष्टमः)

दुग्धिकानान्तु मध्ये यां वेष्टयन्ति पिपीलिकाः।
सञ्जाते तां करस्पर्शे त्यक्त्वा गच्छन्ति दूरतः १४७८
मधुसञ्जीवनी नाम पञ्चाङ्गां तां समानयेत्।
वर्तितां खरमूत्रेण स्थापयेद्दिनसप्तकम् ॥ १४७९ ॥
गालयित्वा च वस्त्रेण ग्रहीतव्यं पलद्वयम्।
चुल्ल्यां खर्परमारोप्य वह्निं संज्वालयेदधः ॥१४८०॥
शुद्धसूतस्य गद्याणान् विंशतिं खर्परे क्षिपेत्।
आटरूषककाष्ठेन परेणाऽगस्त्यजेन वा ॥ १४८१ ॥
काष्ठाभ्यां चालयेत्सूतं क्षिप्त्वा मूत्रं मुहुर्मुहुः।
वस्त्रपूते शनैः क्षिप्ते निक्षिपेद्दुग्धिकारसे ॥ १४८२ ॥
ध्मातो रीत्याऽनया सूतो मृतः स्याद्भस्मसन्निभः।
रौप्यं वङ्गं तथा ताम्रं स्वर्णञ्च तत्त्रिवर्णजम् ॥१४८३॥
कान्तायसं तथा नागं पण्णां पत्राणि वै पृथक्।
कृत्वा कण्टकवेध्यानि स्वच्छान्येकाङ्गुलानि च १४८४
निम्बुकस्य रसे क्षिप्त्वा विन्यसेन्मृतपारदम्।
शरावसम्पुटे क्षिप्त्वा सूताभ्यक्तदलानि च ॥१४८५॥
छाणकानाञ्च विंशत्या लोहं लोहे क्रमात्पुटम्।
एवं दिनाऽष्टकं स्वेद्यं सूतेन हेमजानि च ॥ १४८६ ॥
स्वाङ्गशीतं क्षिपेत्खल्वे दुग्धगन्धकसंयुतम्।
भृङ्गराजरसेनैकं वासरं मर्दयेच्च तम् ॥ १४८७ ॥
काञ्चनारतरो मूलं त्वचा श्रीखण्डमर्दितम्।
वज्रीक्षीरेण चैकाहमर्कक्षीरेण वासरम् ॥ १४८८ ॥
एवं चतुर्दिनं पिष्ट्वा कार्यो वर्तुलगोलकः।
शरावसम्पुटे क्षिप्त्वा चतुर्भिश्छाणकैः पुटम् ॥१४८९॥
दह्यते गन्धको यावत्तावद्देयं मुहुर्मुहुः।
मृतश्वेताभ्रकं चूर्णं तावत्स्यान्मृतताम्रजम् ॥१४९०॥
चूर्णं पीतकपर्दीनां शङ्खचूर्णं तुरीयकम्।
प्रत्येकं पट्ट च गद्याणान् क्षिपेत्पीठीञ्च हेमजाम् १४९१
सूक्ष्मां खल्वे कृतां पिष्ट्वा वज्रीक्षीरेण वासरम्।
एकाहं चाऽर्कदुग्धेन पिष्ट्वा चैकात्मतां गतम् ॥१४९२॥
पूपान् कृत्वा विनिक्षिप्य शरावे सम्पुटे च तान्।
वस्त्रमृत्तिकया लिप्त्वा देयं गर्तान्तरे पुटम् ॥१४९३॥
स्वाङ्गशीतं क्षिपेत्कूप्यां खल्वे सञ्चूर्णयेद् दृढम्।
तच्चूर्णं कुम्पके क्षेप्यं सञ्जातः सत्त्वरो रसः।१४९४।
साज्यं वल्लत्रयं ग्राह्यं द्वाविंशन्मरिचैः सह।
अष्टादशप्रमेहेषु गुल्मयो वातरक्तयोः ॥ १४९५ ॥
वद्धकोष्ठे च मन्दाग्नौ क्षये शूले त्रिदोषजे।
कामहीने वलक्षीणे श्लेष्मरोगिषु वायुषु ॥ १४९६ ॥
मरीचाऽऽज्यैरजीर्णेऽपि ज्वरेपूष्णोदकेन च।
मरिच्याज्यादिकं नैव देयं सर्वज्वरेषु च ॥ १४९७ ॥
तैलक्षाराम्लवर्ज्यैश्च भोज्यं मधुरभोजनम्।
क्रमाद्रोगा विलीयन्ते मासैकानन्तरं ध्रुवम् ॥
रसं गृह्णाति यो नित्यं स भवेद्धेमकान्तिभः ॥१४९८॥

र कं. ली., रसचि.,

भाषा—दूधीके भेदोंमें जिसपर कीड़ियां लदीरहतीहैं और हाथके लगतेही उसे छोड़कर दूर भगजातीहैं उस जड़ीका नाम मधुसञ्जीवनीहै। इसके पञ्चाङ्गको लाकर सिलपर पीस जवानगधेके चतुर्गुणित मूत्रमें घोलकर हंडीमें वन्दकर ७ दिनतक एकान्तमें रखदे, आठवें दिन कपड़ेसे छानकर रखले। इसकेवाद १० तोले शुद्धपारेको मिट्टीके नये खपड़ेमें डालकर चूल्हेपर चढादे और नीचे वेर वग़ैरहकी सारिष्ठलकड़ीकी आच जलावे। उसमें २ पल मधुसञ्जीवनीका वनाया हुआ द्रव डालकर अड़ूसा और अगस्त्यकी दो लकड़ियोंसे चलावे। द्रव जलजानेपर दूसरा डालता जाय। इसतरह करते २ पारा जव मूर्च्छित होजाय तव इसको मूपामें डालकर कोयलोंपर रखकर धमन करे और द्रव डालता जाय तो यह एकदम सफेदराखकी तरह होजायगा। फिर चादी, वङ्ग, ताम्र, उत्तमसुवर्ण, कान्तलोह और सीसा इन छ धातुओंके वारीक २ कण्टकवेधी १-१ अङ्गुलके १०-१० तोले पत्र वनाकर सुवर्णके पत्र और पारेकीभस्मको नीवूके रसमें डालदे। फिर शरावसम्पुटकरके २० जङ्गलीकण्डोंकी आचदे, ऐसे आठ आचें देवे। फिर इसमें दूधमें शोधाहुआ १० तोले गन्धक डालकर भंगरा, कचनारकी छाल, सफेद चन्दन, थूहर और आकका दूध इनप्रत्येकमें १-१ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ४ कण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर फिर पूर्ववत् रसोंमें घोटकर आचदे। जव गन्धक सारा जलजाय तव आचदेना वन्द करदे। फिर चादीके पत्रोंको डालकर पूर्ववत् आचेंदे और उसीतरहसे वङ्ग, तावा, कान्तलोह और सीसेके पत्रोको डालकर जारण करे। पूर्वलोहकेमरजानेपर दूसरेको डाले। फिर सफेद अभ्रक, तावा, पीलीकौड़ी और शङ्खकी ३-३ तोले भस्में पूर्व-

भस्ममें मिलाकर थूहर, आक इन प्रत्येकके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर छोटी २ टिकड़ियां बनाकर छायाशुष्ककर शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर थूहर और आकके दूधमें १–१ रोज़ मर्दनकर आतशी शीशीमें भरके १ दिनरातकी वालुकायन्त्रमें आंचदेवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर खरलकर शीशीमें भरदे। इसमेंसे ९–९ रत्ती २२ कालीमिर्चोंकेसाथ देनेसे १८ प्रमेह, दोनोंतरहके गुल्म, वातरक्त, बद्धकोष्ठ, मन्दाग्नि, क्षय, त्रिदोषजशूल, शुक्रक्षीणता, श्लेष्म और वायुरोग इनसवको यह दूरकरताहै। मरिच और घीके साथ देनेसे जीर्णज्वरनष्टहोताहै। साधारणज्वरमें गरमपानीके साथ देना। मरिच, घी, तैल, क्षार और अम्ल येसव ज्वरोंमें न देवे, मधुरभोजनकरावे। इसतरहकरनेसे एकमहीनेमें असाध्यसे असाध्यरोग नष्टहोतेहैं और सुवर्णके सदृश कान्ति होतीहै ॥ ३३० ॥

३३१ प्राणेश्वररसः (नवमः)

सूतं गन्धकमभ्रकं सममहस्तालीद्रवै र्मर्दितं,
कूपिस्थं खटिकानिरुद्धवदनं मृद्वस्त्रवद्धं पुटेत्।
पीतो भृङ्गिकया युतो रसनृपः प्राणेश्वरः साऽमृतो,
व्योपक्षारजयायुतोऽथ मधुना सर्वाऽतिसाराञ्जयेत् ॥

र शं., अतिसारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रकभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर एकरोज़ तालमूलीके रससे मर्दनकर आतशीशीशीमें कल्ककोभरके खड़ियामिट्टीसे डाट लगाकर समस्तपर २–३ कपड़मिट्टी देकर सुखावे। शीशीको ३ भागतक खड्डेमें बन्दकर कुक्कुटोच्च पुटदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ५–५ रत्तीकी मात्रा भंगरे अथवा गिलोयके रसके साथ अथवा त्रिकटु, तीनोंक्षार और भागके साथ अथवा मधुकेसाथ औचिती देखकर देनेसे यह समस्त अतिसारोंको दूरकरताहै ॥ ३३१ ॥

३३२ प्राणेश्वररसः (दशमः)

रसाऽभ्रगन्धान्सविपान्समानान्
सुशुद्धियुक्तान्निपुणः प्रगृह्य।
पुनर्नवालाङ्गलिदेवदाली-
सुवर्णदुग्धीजरसेन वृक्याः ॥ १५०० ॥
दिनं दिनं घर्मविभावितं त-
च्चूर्णं विधायाऽथ पुनश्च तत्र।
धत्तूरकासघ्नसुकाकमाची-
ब्राह्मीसहादेव्यपराजितानाम् ॥ १५०१ ॥
सर्वोत्थवारिभिश्च विमर्द्य सम्यक्
मृत्कर्पटैः सम्पुटके निरुद्ध्य।
भाण्डे पचेद्वालुकसम्भृते त-
मूर्द्धपुटेत्त्र्यूषणटङ्कणाख्यैः ॥१५०२॥
कलांशकं तत्र विषं नियोज्यं
प्राणेश्वरोऽयं शिव एव साक्षात्।
पात्रेऽष्टकोणे विरचय्य पद्मं
मध्ये रसं सर्वदले दिगीशान् ॥१५०३॥
सम्पूज्य वल्लं सहनागवल्ली-
दलेन सिद्धं सिकताऽनुपानम्।
ज्वरग्रहण्योरतिसारगुल्म
क्षयेष्वजीर्णे सहकासपाण्डौ।
जीरेण देयं न तु पौत्रिकाणि
मांसानि शस्तोऽत्र जलाभियोगः ॥१५०४॥

र शं, अतिसारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और वछनाग, अभ्रकभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर पुनर्नवा, करिहारी, बन्दाल धतूरा, दूधी और पाठाके रसोंसे १–१ दिन भावना देकर सुखाले। फिर धतूरा, कसोंदी, मकोय, ब्राह्मी, माषपर्णी, मुद्गपर्णी, मूर्वा, अपराजिता इन प्रत्येकके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर इससे सोलहवां हिस्सा त्रिकटु, सुहागा और शुद्ध वछनागका चूर्ण मिलाकर २–३ पहर घोटकर रखछोड़े। अष्टकोण पात्रमें अष्टदल पद्म बनाय वीचमें रसको रक्खे, आठों दलोंमें दिक्पालोंको स्थापनकर पूजाकरे। फिर इसमेंसे ३ रत्ती पानमें रखकर देवे और ऊपरसे शक्करका पानी पिलावे तो ज्वर, ग्रहणी ये नष्टहों। अतिसार, गुल्म, क्षय, अजीर्ण, कास, पाण्डु, इनमें जीरेकेसाथ देवे। सुअरकामास भूलकरभी न दे। जलयोग इसमें प्रशस्तहै ॥ ३३२ ॥

३३३ प्राणेश्वररसः (महान्) (एकादशः)

गन्धकाऽभ्रं समं सूतं वाराहीरसमर्दितम्।
हंसपादीरसेनाऽपि मर्दयेत्त्रिदिनं मृदु ॥ १५०५ ॥
काचकूप्यन्तरे क्षिप्त्वा मुखं तस्य निरुद्ध्य च।
पाचयेद्वालुकायन्त्रे तथा यामचतुष्टयम् ॥ १५०६ ॥
स्वाङ्गशीतलमादाय मर्दयेदेभिरौषधैः।
पञ्चकोलञ्च त्रिक्षारं जीरकद्वयदीप्यकम् ॥ १५०७ ॥
मरिचं पञ्चलवणं गुग्गुलुञ्च विषद्वयम्।
त्रिजातकं लवङ्गञ्च वराराम्नाऽश्वगन्धिका ॥१५०८॥
जम्बीराऽऽर्द्रकभृङ्गाणां रसैः सम्मर्दयेत्पृथक्।
सप्तरात्रं ततो गुञ्जाप्रमाणं वटकीकृतम् ॥ १५०९ ॥
तत्तद्रोगाऽनुपानेन सेवयेत्सर्वरोगजित्।
सन्निपातमभिन्यासं धनुर्वातञ्च तान्द्रिकम् ॥१५१०॥
कासश्वासाऽग्निमान्द्यञ्च पाण्डुकामलिपीनसान्।
शोफं गुल्मं तथाऽर्शांसि क्षयञ्च ग्रहणीगदान् ।१५११।
ज्वरं कुष्ठं प्रमेहञ्च नाशयेन्नाऽत्र संशयः।
सर्वेषां वातरोगाणां महाप्राणेश्वरो रसः ॥ १५१२ ॥

व. रा, वै चि., वातव्याधौ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, अभ्रकभस्म समभाग लेकर वाराही और हसराजकेरससे ३–३ दिन मर्दनकर आतशी

शीशीमें भरकर मुंहपर खड़ियामिट्टीकी डाटदेकर समस्तपर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखादे। सूखनेपर ४ पहरतक वालुकायन्त्रमें अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर पञ्चकोल, त्रिक्षार, दोनोंजीरे, अजवाइन, मरिच, पञ्चलवण, गूगल, मर्पविष, वच्छनाग, त्रिजात, लौंग, त्रिफला, रास्ना, असगन्ध, जंभीरी, अदरख, भंगरा, इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ रोज़ मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेमे सन्निपात, अभिन्यास, धनुर्वात, तान्द्रिक, कास, श्वास, अग्निमान्य, पाण्डु, कामला, पीनस, शोथ, गुल्म, ववासीर, क्षय, ग्रहणी, ज्वर, कुष्ठ, प्रमेह, वातरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ३३३

३३४ प्लीहशार्दूलरसः

सूतकं गन्धकं व्योषं समभागं पृथक् पृथक्।
एभिः समं ताम्रभस्म योजयेच्चैव बुद्धिमान् ॥१५१३॥
मनःशिला वराटश्च तुत्थं रामठलोहकम्।
जयन्ती रोहितश्चैव क्षारटङ्कणसैन्धवम् ॥ १५१४ ॥
विडं चित्रं कानकञ्च रसतुल्यं पृथक् पृथक्।
भावयेत्त्रिदिनं यावत्त्रिवृच्चित्रकणाऽऽर्द्रकैः ॥१५१५॥
गुञ्जामात्रां वटीं खादेत्सद्यः प्लीहविनाशिनीम्।
पिप्पलीमधुसंयुक्तां द्विगुञ्जां वा प्रयोजयेत् ॥१५१६॥
प्लीहानमग्रमांसञ्च यकृद्गुल्मं सुदुस्तरम्।
आमाशयेषु सर्वेषु चोदरे शोथविद्रधौ ॥ १५१७ ॥
अग्निमान्द्ये ज्वरे चैव प्लीह्नि सर्वज्वरेषु च।
श्रीमद्गहननाथेन प्लीहशार्दूल ईरितः ॥ १५१८ ॥

र सं, र चि, र. सु., प्लीहाऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, त्रिकटु, ये प्रत्येक १ तो० ताम्रभस्म ५ तो०, शुद्धमैनसिल, पीलीकौड़ी, तुत्थ और लोह इनकी भस्में, भुनाहींग, जेंत, रोहिड़ा, यवक्षार, सुहागा, सैन्धव, विडक्षार अथवा विडनमक, चित्रकमूल, धतूरेके वीज, येसव एक १ तोला लेकर सवका वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलादे। फिर निसोत, चित्रक, पीपल और अदरखके रसोंसे ३–३ रोज़ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ अथवा २ गोली पीपल और मधुके साथ देनेसे प्लीहा, अग्रमास (हृदयादिकोंके रक्तवहादिस्रोतोमें मासवृद्धि), यकृत्, गुल्म, आमाशयकेरोग, उदररोग, शोथ, विद्रधि, अग्निमान्द्य, ज्वर, सम्पूर्णज्वर येसव नष्टहोते हैं ॥ ३३४ ॥

३३५ प्लीहान्तकोरसः

हतं शुल्वञ्च ताराञ्च गगनाऽऽयसशुक्तिकाः।
दरदं पुष्करं सूतं गन्धकं नवमं तथा ॥ १५१९ ॥
गुग्गुलुं त्रिकटू रास्ना तथा जैपालबीजकम्।
त्रिफलां कटुकां दन्तीं देवदालीं तु सैन्धवम् ॥१५२०॥
त्रिवृतां तु यवक्षारं वातारिंतैलमर्दितम्।
अष्टोदराणि पाण्डुत्वमानाहं विषमज्वरम् ॥ १५२१ ॥
अजीर्णमामं पित्तञ्च कफञ्च सर्वशूलकम्।
कासं श्वासञ्च शोथञ्च सर्वमाशु व्यपोहति ॥
प्लीहान्तको रसो नाम प्लीहोदरविनाशनः ॥१५२२॥

वै क, भै, र, व., प्लीहाऽधिकारे।

भाषा—ताम्र, चांदी, अभ्रक, लोह, मोतीकीसीप और शिंगरिफ इनकीभस्में, पोहकरमूल, शुद्ध पारा और गन्धक, गूगल, त्रिकटु, रास्ना, शुद्ध जमालगोटेकेवीज, त्रिफला, कुटकी, दन्तीमूल, वन्दाल, सैन्धव, निसोत और यवक्षार समभाग लेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर १–२ पहर शुष्कमर्दनकरे। फिर एरण्डके तैलमें मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानके साथ देनेसे ८ प्रकारके उदररोग, पाण्डु, आनाह, विषमज्वर, अजीर्ण, आम, पित्त और कफकेरोग समस्तशूल, कास, श्वास, शोथ येसव नष्टहोते हैं ॥ ३३५ ॥

३३६ प्लीहारिरसः (प्रथम.)

कर्षकं तालचूर्णस्य तत्पादांशं सुवर्णकम्।
पलार्द्धं मृतताम्रञ्च तत्समं शुद्धमभ्रकम् ॥ १५२३ ॥
मृगाऽजिनस्य भस्माऽपि कर्षमत्र प्रदापयेत्।
लिम्पाकाऽङ्घ्रित्वचस्तद्वत्सर्वमेकत्र कारयेत् ॥१५२४॥
अस्य गुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेत्ततः।
मधुना वह्निचूर्णेन खादेन्नित्यं यथावलम् ॥ १५२५ ॥
असाध्यमपि प्लीहानं हन्त्यवश्यं न संशयः।
याकृतं पाण्डुरोगञ्च गुल्मादिकभगन्दरान् ॥ १५२६ ॥

र सं, र सु, प्लीहाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धहरिताल १ तोला, सुवर्णभस्म ३ माशे, ताम्र और अभ्रकभस्म २–२ तोले, मृगचर्मभस्म तथा अमिलतासकी जड़की छाल १–१ तोला लेकर सवका वारीकचूर्णकर अमिलतासकीजड़कीछालके रससे २–३ रोज मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली चित्रकमूलके चूर्ण और मधुकेसाथ देनेसे असाध्यप्लीहा, यकृत, पाण्डु, गुल्म और भगन्दर येसव नष्टहोतेहैं ॥ ३३६ ॥

३३७ प्लीहारिरसः (द्वितीयः)

पारदं गन्धकं टंकं विषं व्योषं फलत्रिकम्।
तोलैकैकं समादाय जैपालञ्च तदर्द्धकम् ॥ १५२७ ॥
किंशुकस्य रसेनैव याममात्रन्तु मर्दयेत्।
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा छायायां शोषयेत्ततः ॥१५२८॥
वटिकैका प्रदातव्या शृङ्गवेररसेन च।
गुदाऽङ्कुरे गुल्मशूले प्लीहशोथे कफात्मके ॥ १५२९ ॥
उदावर्ते वातशूले श्वासकासज्वरेषु च।
रसः प्लीहारिनामाऽयं कोष्ठामयविनाशनः ॥
आमवातगदच्छेदी श्लेष्माऽऽमयविनाशनः ॥१५३०॥

भै.र, वै.क., प्लीहयकृदधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा और वछनाग, त्रिकटु, त्रिफला, ये सब १–१ तोला, शुद्धजमालगोटा सबसे आधा लेकर सबका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर पलाशके रससे १ पहर मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसके साथ देनेसे ववासीर, गुल्म, शूल, प्लीहा, कफात्मकशोथ, उदावर्त, वातशूल, श्वास, कास, आमाशयकेरोग, आमवात, श्लेष्मविकार इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ३३७ ॥

३३८ प्लीहार्णवरसः

हिङ्गुलं गन्धकं टङ्कमभ्रकं विषमेव च ।
प्रत्येकं पलिकं भागं चूर्णयेदतिचिक्कणम् ॥१५३१॥
पिप्पलीमरिचञ्चैव प्रत्येकञ्च पलार्द्धकम् ।
मर्दयित्वा वटीं कुर्याद्वल्लमानां प्रयत्नतः ॥१५३२॥
सेव्या शेफालिदलजै वटी माक्षिकसंयुता ।
प्लीहानं षट्प्रकारञ्च हन्ति शीघ्रं न संशयः ॥१५३३॥
ज्वरं मन्दानलञ्चैव कासं श्वासं वमिं भ्रमम् ।
प्लीहार्णव इति ख्यातो गहनानन्दभाषितः ॥१५३४॥

र. सं., र चि , र चं , र सु , प्लीहाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धशिगरिफ, गन्धक और सुहागा, अभ्रकभस्म और शुद्धवछनाग १–१ पल लेकर वारीकचूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर घोटकर कज्जलसमानकरके पीपल और मिर्च २–२ तोले लेकर वारीकचूर्णकर मिलादे। फिर रस और हारसिंगारके पत्तोंकेरससे मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ देनेसे छ प्रकारकी प्लीहवृद्धि, ज्वर, मन्दाग्नि, कास, श्वास, वमन और भ्रम नष्टहोतेहैं ॥ ३३८ ॥

३३९ प्लीहोदरगुल्महरोरसः

क्ष्मागुणौ सूतकवङ्गौ विमर्दितौ पक्वसूर्यपत्ररसैः ।
कृत्वा गोलं पुटयेत्तद्वत्स्नुकूसलिलेन मर्दयेत्त्रिदिनम् ॥
प्लीहोदरहृत्सूतो रोहितकक्वाथयुग्वल्लः ।
सैन्धवयुक्तो गुल्मे स्नुग्रसयुक्तोऽपि मण्डलत्रितयात् ॥
प्लैहेयपृष्ठे रुधिरं विस्राव्याऽर्कपयः क्षिपेत् ।
प्लीहोपशान्तिस्तेन स्याद्वासवप्रमिते दिनैः ॥१५३७॥
दारु कुष्टं हैमवती शताह्वाहिङ्गुसैन्धवाः ।
अर्कक्षीरयुतो लेपः सर्वोदरगदापहः ॥ १५३८ ॥

र , प्लीहोदरे ।

टि०—अस्य रसस्यापाततो द्वितीयवङ्गेश्वरेण साम्य प्रतीयत परमावना दावतिविशेषत्वात्स्वतन्त्रण्वाऽत्र स्थापित इति विद्वद्भिराकलनीयम् ।

भाषा—पारा १ भाग और वङ्गभस्म ३ भाग लेकर पकेहुए आकके पत्तोंके रससे मर्दनकर गोलावनाय वराहपुटकी आच देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर थूहरके दूधसे ३ रोजमर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली रोहिषकेक्काथसे देनेसे प्लीहा नष्टहोताहै। सैन्धव अथवा थूहरके रसकेसाथ २१ रोजतक देनेसे गुल्म नष्टहोताहै। प्लीहाकी पीठपरसे जोंकवगैरहसे रक्त निकलवाकर आकका दूध डालदे। इससे ८ रोजमें प्लीहाकी शान्ति होजातीहै। देवदारु, कुठ, रेवचीनी, सोंफ, हींग और सैन्धव सब समभागलेकर आकके दूधमें घोटकर लेपकरनेसे उदररोग नष्टहोतेहैं ॥ ३३९ ॥

३४० फणिपतीरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं चाऽभ्रकं लोहभस्मकम् ।
ताम्रभस्म समं मर्द्यं जम्भनीरेण संयुतम् ॥ १५३९ ॥
द्विदिनं गुटिका कार्या काचकूप्यां विनिक्षिपेत् ।
विलिप्य मृत्तिकावस्त्रं वालुकायन्त्रके पचेत् ॥१५४०॥
षड्यामान्ते समुद्धृत्य गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ।
अनुपानविशेषेण शुक्रवातं निहन्ति च ॥ १५४१ ॥

व. रा , शुक्रवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक, लोह और ताम्रभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर जंभीरीनीबूके रसमें २ रोज घोटकर छोटी छोटी गोलियें वनाय सुखाकर आतशी शीशीमें भरके समस्तपर ३–४ कपडमिट्टी देकर अच्छीतरह सूखनेपर वालुकायन्त्रमें रखकर ६ पहरकी अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती अनुपान विशेषसे देनेसे शुक्रवात (शुक्रवात) नष्टहोताहै ॥ ३४० ॥

३४१ फणिभूषणरसः

पारदं दरदं वङ्गं मृतनागं मृताऽभ्रकम् ।
सर्वैः समं शुद्धतालं मर्द्यो निर्गुण्डिजे रसे ॥ १५४२ ॥
पाचितो वालुकायन्त्रे द्वियामं मन्दवह्निना ।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य मात्स्यमाहिषकच्छपैः ॥१५४३॥
वाराहशिखिजैः पित्तै र्भावितश्च पृथक्पृथक् ।
अनुपानविशेषेण देयो वल्लद्वयो हितः ॥ १५४४ ॥
सन्निपातान्निहन्त्याशु त्विच्छापथ्यं समाचरेत् ।
शम्भुना कथितः पूर्वं रसोऽयं फणिभूषणः ॥१५४५॥

वै चि , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और शिगरिफ, वङ्ग, नाग और अभ्रकभस्म सवसमभाग लेकर इनसवकी वरावर शुद्धहरिताल डालकर एकदोदिन मर्दनकर संभालूके रससे एकदिन घोटकर गोला वनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर दो पहर वालुकायन्त्रमें अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर मछली, भैंसा, कछुआ, सूअर और मोरके पित्तोंसे एक एक भावना देकर ६–६ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अनुपान विशेषसे देनेसे यह सन्निपातोंको नष्टकरताहै। भूखलगनेपर इच्छानुसार पथ्य देना ॥ ३४१ ॥

३४२ फणियोगः

मृतस्य कृष्णसर्पस्य शीर्षपुच्छान्त्रवर्जितम् ।
अन्तर्धूमपुटे दग्धं तद्भस्म न्यूषसंयुतम् ॥ १५४६ ॥

वचा चाऽतिविषा कुष्ठमभ्रभस्म समं भवेत्।
भक्षयेत्फणियोगोऽयं वल्लैकं गलिताऽपहः ॥१५४७॥
वाकुचीवीजचूर्णञ्च निम्बपञ्चाङ्गसंयुतम्।
मध्वाज्याभ्यां लिहेत्कर्ष कुष्ठघ्नमनुपानकम् ॥१५४८॥
र.क.ल., गलितकुष्ठे।

भाषा—तत्काल मरेहुए कालेसापका शिर, पुच्छ और अन्तड़िया निकालकर हंडीमें वन्दकर अन्तर्धूम दग्धकरे। स्वाङ्गशीतल होंनेपर निकालकर त्रिकटु, वच, अतीस, कुठ और अभ्रकभस्म सव समभाग लेकर एकजगह खरलकर रखछोडे। इसमेंसे ३–३ रत्ती लेकर वाकुचीकेवीज और निम्बपञ्चाङ्गके ३ माशे चूर्ण और मधु तथा घृतमें मिलाकर खानेसे गलितकुष्ठ दूरहो ३४२

३४३ फिरङ्गकुठारोरसः (प्रथमः)

खदिरं रसकर्पूरं त्रिफला कुष्ठकं मधु।
कौशिकश्च लवङ्गैला समं सर्वं नियोजयेत् ॥१५४९॥
चतुर्विधा यवानी च गन्धकं शुद्धसूतकम्।
भल्लातकं गुडश्चैव कर्षकर्ष विचूर्णयेत् ॥ १५५० ॥
कर्षमात्रं निषेवेत वलवर्णविवर्जितः।
सप्तके तु व्यतिक्रान्ते गच्छेत्पक्वं फिरङ्गकम् ॥१५५१॥
र र कौ, फिरङ्गे।

भाषा—खेर, रसकपूर, त्रिफला, कुठ, मधु, गूगल, लौंग, इलायची, देशी तथा खुरासानी अजवाइन, अजमोद, खरजवाइन, शुद्ध गन्धक, पारा और भिलावे तथा गुड़ १–१ तोला लेकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर अन्य वस्तुओंके चूर्णमें मिलाकर एकजीव होनेतक कूटे। इसमेंसे १–१ तोला दही वगैरहके साथ निगलवादे और खानेको घी तथा गेंहूचनेकी रोटी देवे। इसप्रकार ७ दिन वीतनेपर भयकरावस्थापन्न फिरङ्गरोग नष्ट होता है ॥ ३४३ ॥

३४४ फिरङ्गकुठारोरसः (द्वितीयः)

आकारकरभो दन्तीवीजञ्चैव समांशकम्।
रसं कुरण्टजे द्रावे मर्दयित्वा नियोजयेत् ॥ १५५२ ॥
फिरङ्गारण्यदावाग्निः कुष्ठव्रणकुठारकः।
यथेच्छं भोजनं कुर्यात्कटुतैलगुडांस्त्यजेत् ॥ १५५३ ॥
र र कौ, फिरङ्गरोगे।

भाषा—कटसरैयाके रसमें २–३ दिन घोटाहुआ पारा अकलकरा और जमालगोटा समभाग लेकर १–२ पहर मर्दनकर रखछोड़े। अथवा कटसरैयाके रसमें १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पानीकेसाथ देनेसे फिरङ्ग, कुष्ठ और व्रण नष्ट होते है। कड़वातैल और गुड़को छोड़कर यथेष्ट भोजन करे ॥ ३४४ ॥

३४५ फिरङ्गनाशनचूर्णम्

नागञ्च पारदश्चैव प्रत्येकं निष्कमात्रकम्।
तयोस्तुल्यं भृष्टहिङ्गु तदर्द्धमहिफेनकम् ॥१५५४॥
एकीकृत्याऽखिलञ्चूर्णं मापैकं भक्षयेन्नरः।
क्षाराऽम्लं वर्जयेत्तावद्यावत्खादति भेषजम् ॥
इत्येवं नाशयेत्क्षिप्रं फिरङ्गाऽऽमयमुद्धतम् ॥१५५५॥
र.र.कौ, फिरङ्गरोगे।

टि०–अग्निरित्यंग निष्कसरिमिना मानाऽतिभयाकार आर्मीदनोऽस्य स्थाने मापैकमिति पाठ कृतोऽस्मि।

भाषा—नाग और पारदभस्म (अभावमें रससिंदूर) समभाग, इनदोनोंकी वरावर भुनाहींग और आधा अफीम लेकर सवको इकट्ठा मर्दनकर कज्जली वनाले। इसमेंसे १–१ माशा जलकेसाथ देनेसे यह भयङ्करफिरङ्गरोगको नष्टकरताहै। दवाका प्रयोग चले तवतक क्षार और खटाई न खाय ॥ ३४५॥

३४६ फिरङ्गनाशिनीवटी (प्रथमः)

आकारकरभश्चैव दीप्यं जातीफलन्तथा।
दरदं निष्कमात्रांश्च विचूर्ण्य गुटिकाश्चरेत् ॥
नागवल्लीरसेनैव सेव्या नित्यं फिरङ्गजित् ॥ १५५६ ॥
र र कौ., फिरङ्गरोगे।

भाषा—अकलकरा, अजवाइन, जायफल और शिंगरफ समभागलेकर पानकेरसमें मर्दनकर ४–४ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पानकेसाथ देनेसे फिरङ्ग रोग नष्टहोताहै ॥ ३४६ ॥

३४७ फिरङ्गनाशिनीवटी (द्वितीयः)

दरदं सूतकश्चैव निष्कमात्रं पृथक्पृथक्।
जीर्णं गुडं पलं दत्त्वा लोहपात्रे विमर्दयेत् ॥१५५७॥
तुलसीस्वरसेनैव निम्बदण्डाद्दिनत्रयम्।
निम्बपत्रञ्च खदिरं सूर्यभक्तां पलंपलम् ॥ १५५८ ॥
फणिफेनं त्रिशाणञ्च सर्वमेकत्र चूर्णयेत्।
सायं प्रातश्च भोक्तव्यं मापैकं स्वाऽनुपानतः ॥
दुग्धौदनं चरेत्पथ्यं सप्ताहेन फिरङ्गजित् ॥१५५९॥
र.र कौ, फिरङ्गरोगे।

भाषा—शुद्ध शिंगरफ और पारा ४–४ माशे, पुरानागुड़ ४ कर्ष लेकर लोहेकेपात्रमें तुलसीके रसकेसाथ नीमके डण्डेसे ३ दिन मर्दनकर नीमकेपत्ते, खैर और हुरहुर १–१ पल, अफीम १२ माशे डालकर सवको एकजगह घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशे उचितानुपानके साथ देवे। पथ्यमें दूधभात खिलानेसे फिरङ्गरोगनष्टहोता है ॥ ३४७ ॥

३४८ फिरङ्गनाशिनीवटी (तृतीय)

लवङ्गजातीफलहिङ्गुलं स्या-
दाकारचन्द्रं विडकं समांशम्।
कर्षोन्मितं सर्वमवेहिकुर्या-
द्दपिप्रमाणान्वटकान् प्रभाते ॥
भुक्त्वा च दुग्धौदनपथ्यमश्न-
न्निहन्ति रोगं प्रवलं फिरङ्गम् ॥ १५६० ॥
र र कौ, फिरङ्गरोगे।

भाषा—लौंग, जायफल, शिंगरिफ, अकलकरा, रसकपूर, विडङ्ग येसब १–१ तोलालेकर पानीकेसाथ ७ गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली प्रातःकाल ७ रोज़तक लेनेसे प्रबलफिरङ्गरोग नष्टहोताहै। इसमें पथ्य दूधभात देना ॥३४८॥

३४९ फिरङ्गविध्वंसनोरसः

पारदश्च लवङ्गश्च मस्तकी जातिपत्रिका।
समभागानि सर्वाणि रसार्द्धं गन्धकं शुभम् ॥१५६१॥
गन्धकस्य दशांशं तु शुद्धं फेनाश्म निक्षिपेत्।
नागवल्यारसेनैव गुटिका मुद्गसन्निभा ॥ १५६२ ॥
देया प्रभातसायाह्ने गोधूमसघृताशने।
सप्तरात्रेण हन्त्याशु रसः फैरङ्गनाशनः ॥ १५६३ ॥

चि. र.भ., फिरङ्गरोगे।

भाषा—शुद्धपारा, लौंग, मस्तगी और जावित्री १–१ भाग, शुद्धगन्धक ½ भाग, शुद्धसोमल ¹⁄₂₀ भाग लेकर सबकी कज्जली-कर पानके रसमें घोटकर मूंगबराबर गोलिया बनावे। इनमेंसे १–१ गोली सुबहशाम पानीकेसाथ खानेसे सातदिनमें फिरङ्ग-रोग नष्टहोताहै ॥ ३४९ ॥

३५० फिरङ्गशमनीवटी (प्रथमा)

गैरिकं रसकर्पूरमुपलाञ्च पृथक् पृथक्।
टङ्कमात्रं विनिष्पिष्य ताम्बूलीदलजैः रसैः ॥ १५६४ ॥
वट्यश्चतुर्दश ज्ञेयाः फिरंगगदघातिकाः।
सायं प्रातः समश्नीयादेकैकां दिनसप्तकम् ॥ १५६५ ॥
गोधूमविकृती दद्याद् घृतेन सितया सह।
फिरङ्गव्याधिनाशाय वटिकेयमनुत्तमा ॥ १५६६ ॥

र प्र., फिरङ्गरोगे।

भाषा—गेरू, रसकपूर, मिश्री ४–४ माशे लेकर पानके-रसमें पीसकर १४ गोलिया बनावे। इनमेंसे १–१ गोली, सुबहशाम पानीकेसाथ खानेसे सातरोज़में फिरङ्गरोग नष्ट-होताहै ॥ ३५० ॥

३५१ फिरङ्गशमनीवटी (द्वितीया)

टङ्कैकपारदमितं खदिरद्विटङ्क-
माकारकादिकरभश्च विघृष्य सप्त।
कृत्वा वटीश्च खलु माक्षिकरामटङ्कैः
प्रात. फिरङ्गशमनाय गिलेच्च नित्यम् १५६७
कट्वम्ले च परित्याज्ये भोज्यं रूक्षं विशेषतः।
सप्तभिर्दिवसैर्नृणां फिरङ्गो नश्यति ध्रुवम् ॥१५६८॥

चि क., भै र (परिशिष्टे) फिरङ्गरोगे।

भाषा—४ माशे शुद्धपारा लेकर १२ माशे मधुमें मिलने तक घोटकर खैर और अकलकरा ८–८ माशे डालकर एक जीवहोनेपर ७ गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली प्रातःकाल पानीकेसाथ निगलनेसे ७दिनमें फिरङ्गरोग नष्टहोताहै। कटु, अम्ल और रूक्षभोजन न करे ॥ ३५१ ॥

३५२ फिरङ्गशमनीवटी (तृतीया)

कर्षद्वयं श्रीशिवयोश्च वीर्य-
मक्षप्रमाणानि च तण्डुलानि।
पिष्ट्वा बलायाः स्वरसैश्च सप्त
त्रिघ्ना वटीः सप्तदिनै नियोज्याः ॥१५६९॥
वटीत्रयस्याऽपि निषेव्य नित्यं
धूमञ्च यो बाह्यफिरङ्गरोगी।
स सप्तभिर्वा दिवसैश्च तस्मा-
द्विमुच्यतेऽम्लं लवणं त्यजेच्चेत् ॥ १५७० ॥

चि क, भै र., फिरङ्गरोगे। भैषज्यरत्नावल्या परिशिष्टे धूम-प्रयोगेति नाम्ना व्यवहृत.।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, चावल १–१ कर्ष लेकर चावलोंको वारीक पीसकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्ज-लीमें मिलाकर बलाके अङ्गस्वरससे घोटकर २१ गोलिया बना-कर रखछोड़े। इनमेंसे रोज़ाना तीन वक्त निवातस्थानमें १–१ गोलीका धूंआले। अम्ल और लवण छोड़दे तो ७ रोज़में बाह्यफिरङ्गव्याधिसे निर्मुक्त होजाता है ॥ ३५२ ॥

३५३ फिरङ्गशमनीवटी (चतुर्थी)

मुशल्याकुलकृच्चाऽपि पारसीकयवानिका।
भल्लातकफलश्चाऽपि पलमानं पृथक्पृथक् ॥१५७१ ॥
पलार्द्धमानः सूतः स्यात् षट्पलोऽत्र गुडः स्मृतः।
एकीकृत्याऽखिलं कुर्याद्वटीः कर्षप्रमाणतः ॥१५७२॥
खादेदेकां वटीं प्रात र्यावदारोग्यदर्शनम्।
गोदध्नश्चाऽनुपानेन फिरङ्गाऽऽमयनाशिनीम् ॥
निम्बुकेन विना नैव वर्जनीयमिहाऽपरम् ॥ १५७३ ॥

र प्र फिरङ्गे।

भाषा—मुसली, अकलकरा, खुरासानीअजवाइन, भिलावा ये सब ४–४ कर्ष, शुद्धपारा २ कर्ष, पुरानागुड़ ६ पल लेकर पहिले गुड़में मिलनेतक पारेको घोटकर दूसरी चीजें डालकर एकजीव होनेतक कूटकर मिलावे और इसकी १–१ तोलेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गायके दहीके साथ निगले जबतक कि पूरा आरोग्य प्राप्त न हो। इसमें नीबूको छोड़कर और सबचीज़ें खावे ॥ ३५३ ॥

३५४ फिरङ्गशमनीवटी (पञ्चमी)

यवानी द्विपला ग्राह्या खदिरश्चाऽष्टटङ्कक:।
पलङ्कपाऽष्टटङ्का स्यात्तत्र सूतं विनिक्षिपेत् ॥१५७४॥
सपादटङ्कतुलितं दरदोत्थमनुत्तमम्।
भल्लातकफलान्यत्र नवसङ्ख्यमितानि च ॥ १५७५ ॥
पञ्चकर्षाऽऽज्यसंयुक्ताः कार्या वट्यश्चतुर्दश।
तास्वेकां भक्षयेत्प्रातःसायङ्काले च बुद्धिमान् ॥१५७६॥
उपदंशान् समस्तांश्च तद्भवाः पिडिका अपि।
सशोथं ग्रन्थिवातञ्च पूयस्रावादिकञ्जयेत् ॥ १५७७ ॥

उपदंशसमुद्भूतां पीडाश्चाशु व्यपोहति।
यस्येन्द्रियस्य मांसानि शीर्यन्ते प्रतिवासरम्॥
तदुद्भवान् कृमींश्चाऽपि शीघ्रमेव विनाशयेत्।१५७८।

र. प्र., फिरङ्गरोगे।

भाषा—अजवाइन२ पल, खैर २ कर्ष, गूगल २ कर्ष, शिगरिफसे निकालाहुआ शुद्धपारा ५ माशे, भिलांवा ९ नग लेकर गूगलमें पाचकर्षघीमिलाकर नरम होनेतक कूटे फिर इसमें पारा डालकर एकजीव होनेतक घोटकर और चीज़ोंका वारीक चूर्ण मिलाकर १४ गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली सुबहशाम खानेसे सवप्रकारके उपदंश, फुंसी, शोथ, गठिया, पूयश्राव और पीडा येसव शान्त होतेहैं। जिसकी इन्द्रियकामास दररोज़ गिरताहो उसकोभी इसकेप्रयोगसे तमाम कीड़े मरकर आराम होंजायगा॥ ३५४॥

३५५ फिरङ्गारियोगः

मार्कवस्त्रिफला दन्ती ताम्रचूर्णमयोरजः।
उपदंशं निहन्त्येष वृक्षमिन्द्राशनि र्यथा॥ १५७९॥

सु सं, उपदंशे।

भाषा—भंगरा, त्रिफला, दन्ती अथवा जमालगोटा, तावा और लोहेकी भस्म सव समभाग लेकर तावे और लोहेकी भस्मको भंगरा और त्रिफलाके रसकेसाथ १–२ रोज़ मर्दनकर सवचीज़ोंका वारीक चूर्णकर मिलाकर ४–४ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे एक अथवा दोगोली जलप्रभृति उचितानुपानके साथ देनेसे समस्त उपदंशोंको यह नष्टकरताहै ३५५

३५६ फिरङ्गारिरसः (प्रथमः)

रसकर्पूरमरिचं लवङ्गं बृहदेलिका।
समभागानि सर्वाणि नागवल्ल्या दलद्रवैः॥१५८०॥
गुटिका कोलमात्रा स्यात्प्रातः सायं प्रदापयेत्।
गोधूमं सघृतं पथ्यं फिरङ्गारीरसो वरः॥ १५८१॥

चि. र. भ, फिरङ्गरोगे।

भाषा—रसकपूर, मरिच, लौंग, वड़ी इलायची सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पानके रससे वेरवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली जलप्रभृतिकेसाथ सुवहशाम देनेसे फिरङ्गरोग नष्टहोताहै। घीकेसाथ गेंहूंकीरोटी पथ्यमें देना॥ ३५६॥

३५७ फिरङ्गारिरसः (द्वितीयः)

रसकर्पूरतुत्थञ्च राला हिङ्गुलकं त्रुटिः।
खदिरश्चैव सौभाग्यं पूगं कङ्कोलकन्तथा॥१५८२॥
तुल्यंतुल्यं समादाय नागवल्ल्या गुटी कृता।
देया कोलप्रमाणेन द्वे सन्ध्येऽलवणाऽम्लिकम् १५८३
फिरङ्गारी रसः ख्यातो सर्वोपद्रवनाशनः।
सप्तकेन न सन्देहो गोधूमं मुद्गतण्डुलैः॥ १५८४॥

चि र भ, फिरङ्गरोगे।

भाषा—शुद्ध रसकपूर, शुद्धतुत्थ अथवा भस्म, राल, शिगरिफ, इलायची, खैर, भुनासुहागा, सुपारी, शीतलचीनी सव समभाग लेकर वारीक चूर्णकर पानके रसमें घोटकर वेरवरावर गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली सुवहशाम देनेसे समस्त उपद्रवसहित फिरङ्गरोग ७ दिनमें नष्टहोताहै। खानेको मूंग, चावल और गेंहूं देना॥ ३५७॥

३५८ फिरङ्गारिलेपः (प्रथमः)

सौराष्ट्रीं गैरिकं तुत्थं पुष्पकासीससैन्धवम्।
रोध्रं रसाञ्जनं दार्वी हरितालं मनःशिलाम्॥१५८५॥
हरेणुकैले च तथा सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्।
तच्चूर्णं क्षौद्रसंयुक्तमुपदंशेषु पूजितम्॥ १५८६॥

सु सं, उपदशे।

भाषा—फिटकड़ी और मगमाटी (कच्छी), गेरू, तुत्थ, पुष्पाञ्जन (कज्जल), हीराकसीस, सेंधव, लोध, रसौत, दारुहल्दी, हरिताल, मैनसिल, हरेणुक (रोण, पहाड़ी) इलायची सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर घीमें मिलाकर लगानेसे सवप्रकारके उपदंश निवृत्तहोतेहैं॥ ३५८॥

३५९ फिरङ्गारिलेपः (द्वितीयः)

स्वर्जिका तुत्थकासीसं शैलेयञ्च रसाञ्जनम्।
मनःशिलासमैश्चूर्णं व्रणवीसर्पनाशनम्॥१५८७॥

सु. सं., उपदशे।

भाषा—सज्जी, तुत्थ, कसीस, छड़ीला, रसौत और मैनसिल समभागलेकर वहुतवारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसको सौवार धोएहुए घीवगैरहके साथ मिलाकर लगानेसे सवप्रकारके व्रण और विसर्प नष्टहोतेहैं॥ ३५९॥

३६० वदरीपाकः

कुबेरप्रस्थमादाय क्षिप्त्वा रात्रौ चतुर्गुणे।
क्षीरे प्रात. पचेत्सम्यग्घृतार्द्धप्रस्थसंयुतम्॥१५८८॥
खण्डं वर्णकृतं कृत्वा सुगन्धं सुविनिक्षिपेत्।
कर्पूरवासिते पात्रे मृन्मयेऽगुरुधूपिते॥१५८९॥
तस्मिन् सङ्कुट्य चूर्णानि दापयेद्भिषगुत्तमः।
चातुर्जातं त्रिकटुकं जातीपत्रफलन्तथा॥ १५९०॥
देवपुष्पं विडङ्गञ्च मिशि र्नागवला घनम्।
निशाद्वयं तथा लोहं शुल्वं वङ्गं पलार्द्धकम्॥१५९१॥
प्रत्येकं चूर्णितं कृत्वा भक्षयेच्च पलं बुधः।
सर्वान् वाताऽऽमयांश्छूलानग्निमान्द्यं बलक्षयम्१५९२
प्रमेहं मूत्रकृच्छ्रञ्च शर्कराऽश्मरिपाण्डुनुत्।
पीनसं ग्रहणीरोगमतीसारमरोचकम्॥ १५९३॥

चि र भ, वातादौ।

टि०—अत्र क्षीरशब्देन जलं ग्राह्यम्, रात्रौ क्षीरे बदरीफलप्रक्षेपे तद्विकृतिभावात्पाकाऽयोग्यत्वात्। क्षीरप्रक्षेपे दुराग्रहश्चेत्प्रातर्वदरीफलकाथं कृत्वा घृतेन मांकमत्युष्ण विधाय तत्र दुग्ध नियोजनीयम्, विकृतिभावाऽऽशङ्काविरहात्।

भाषा—एकसेर सूखे पकेझरवेर लेकर रातमें ४ सेर पानीमें डालकर सवेरे पकावे । सेरभर पानी रहनेपर मसलकर छानले फिर आधसेर घी और एकसेर शक्कर डालकर पकावे । खौलनेपर ४ सेर दूध डालकर दोतारकी चाशनी बनाकर उतारले । फिर चातुर्जात, त्रिकटु, जावित्री, जायफल, लौंग, विडङ्ग, सोंफ, नागवला, नागरमोथा, हल्दी, दारुहल्दी, लोह, ताम्र और वङ्ग-भस्म ये प्रत्येक २ कर्ष लेकर कपड़छान चूर्णकरके चाशनीमें मिलाकर अगरसे धूप देकर कपूरसे वासित कियेहुए मिट्टीके वर्तनमें रखदे । ६–७ दिनके बाद ४–४ तोले दूध वगैरहके साथ लेनेसे सब प्रकारके वातव्याधि, शूल, मन्दाग्नि, वलक्षय, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, शक्कर, पथरी, पाण्डु, पीनस, ग्रहणी, अतिसार और अरुचि इनको यह नष्टकरता है ॥ ३६० ॥

३६१ बलादिमण्डूरम्

बला शतावरीमूलं यवैरण्डं पलद्वयम् ।
गुडस्य द्विपलं दत्त्वा पचेत्सान्द्रत्वमागतम् ॥१५९४॥
जीरकस्य पलञ्चैव पिप्पल्याश्च पलन्तथा ।
चातुर्जातकचूर्णन्तु प्रत्येकं द्रङ्क्षणं क्षिपेत् ॥ १५९५ ॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि मण्डूरं द्विगुणं तथा ।
गोमूत्रे त्रिफलाक्वाथे निषिक्तं श्लक्ष्णचूर्णितम् १५९६
एतद्बलादिकं नाम मण्डूरं हन्ति दुस्तरम् ।
अम्लपित्तं सुदुर्वारं शूलं तीव्रं नियच्छति ॥१५९७॥

र. का., अम्लपित्ते ।

भाषा—बला, शतावरीकेमूल, जव, एरण्डकीजड़ और गुड़ २–२ पल लेकर सबसे चौगुना पानी डालकर पकावे । चाशनी होनेपर जीरा, पीपल १–१ पल, चातुर्जात (तज, पत्रज, इलायची और नागकेसर) ८–८ माशे, गोमूत्र और त्रिफलाके क्वाथमें बुझाकर फूंकाहुआमण्डूर २० तोले डालकर खूबमिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा उचितानुपानकेसाथ देनेसे असाध्य अम्लपित्त और तीव्रशूल नष्टहोताहै ॥ ३६१ ॥

३६२ बस्त्यामयान्तकं चूर्णम्

त्रिजातकं त्रिपुष्पञ्च चन्दनोशीरवालुकम् ।
घनसारं शिलासारं कर्पूरकतकोत्पलम् ॥१५९८॥
सितनामा कृष्णरम्भा धान्यकाऽमृतशर्करा ।
गोक्षुरश्च मृणालञ्च पद्मकं पद्मकेसरम् ॥ १५९९ ॥
सर्वेषाञ्च समंकुर्यान्मृद्धिकां त्रिफलां सिताम् ।
घृतेन मधुना वाऽपि पिबेत्सर्वत्र मेहनुत् ॥ १६०० ॥
मूत्राऽऽमयान्मूत्रकृच्छ्रान् सोमरोगान्निहन्ति तत् ।
बस्त्यामयान्तकं चूर्णं शम्भुना निर्मितं पुरा ॥१६०१॥

वै. चि., मूत्रकृच्छ्रे ।

भाषा—त्रिजात, त्रिपुष्प (बला), सफेदचन्दन, खस गेंहुला, अभ्रक और लोहभस्म, कपूर, निर्मली, कमलगट्टा, सफेद कोयल, नील, केलेका कन्द, धनिया, गिलोय, शक्कर, गोखरू, भसींड, पद्माक, पद्मकेसर ये सब समभाग, इन सबकी बराबर मुनक्का, त्रिफला और शक्कर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे रोगीका बलाबल देखकर घी और मधुकेसाथ ६–६ माशे देनेसे मूत्ररोग, मूत्रकृच्छ्र, सोमरोग और बस्तिके तमामरोग नष्टहोतेहै ॥ ३६२ ॥

३६३ बहुमूत्रघ्नवटी

बीजबन्धेक्षुरक्लीतं वांशी सिल्हकसालिमम् ।
शुक्तिविद्रुमयोर्भूती मज्जानावक्षपथ्ययोः ॥ १६०२ ॥
शिलाजतु त्रुटिर्वङ्गः सर्वं सञ्चूर्ण्य माक्षिकैः ।
वटीं बधान सुखदां बहुमूत्रप्रमेहिणाम् ॥ १६०३ ॥

सि. भे. म , बहुमूत्रप्रमेहे ।

भाषा—बीजबन्द, तालमखाना, मुलहठी, वंसलोचन, बेरजा, सालिममिश्री, मोतीकीसीप और मूंगेकीभस्म, बहेड़ा और हर्रेकी मज्जा, शिलाजीत, इलायची, वङ्गभस्म सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर बिरोजा, शिलाजीत और मधुमें मिलाकर २–२ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली सुबह शाम अनुपान विशेषसे देनेसे यह बहुमूत्रप्रमेहको दूर-करतीहै ॥ ३६३ ॥

३६४ बहुमूत्रान्तकोरसः (प्रथमः)

रसं गन्धमयोऽभ्रञ्च वङ्गं सर्वं समंसमम् ।
रसस्य पादिकं हेमरम्भापुष्परसेन च ॥ १६०४ ॥
मर्दयित्वा वटी कार्या चणकाभाऽनुपानतः ।
रसो गुडूच्या दातव्यो बहुमूत्रान्तकाभिधः ॥१६०५॥

आ. वि., बहुमूत्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अभ्रक और वङ्गभस्म येसब १–१ कर्ष, सुवर्णभस्म ४ माशे लेकर सबकी नीलवर्ण कज्जलीकर केलेके पुष्पके रससे घोटकर चनेप्रमाण गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली गिलोयके रसकेसाथ देनेसे बहुमूत्र नष्टहोताहै ॥ ३६४ ॥

३६५ बहुमूत्रान्तकोरसः (द्वितीयः)

सिन्दूरञ्च तथा लौहं वङ्गाऽहिफेनसारकौ ।
उदुम्बरभवं बीजं बिल्वमूलं सुरप्रिया ॥ १६०६ ॥
सर्वं समं जन्तुफलरसैः सम्मर्दितं भवेत् ।
रक्तिद्वयमितां खादेद्वटिकामनुपानतः ॥ १६०७ ॥
औदुम्बरफलद्रावं दद्यान्मेहप्रशान्तये ।
मांसप्रधानं भक्ष्यञ्च तथा गोधूमपिष्टकम् ॥ १६०८ ॥
बहुमूत्रं तथा चाऽन्यान्रोगांश्चैव तदुद्भवान् ।
बहुमूत्रान्तकरसो नाशयेदविकल्पतः ॥ १६०९ ॥
तृष्णाऽधिक्ये प्रदातव्यं शृतशीतमिदं शुभम् ।
सारिवा मधुकं द्राक्षा दर्भः सरलचन्दने ॥ १६१० ॥
पथ्या मधूकपुष्पञ्च सर्वञ्च समभागिकम् ।
जले संस्थाप्य रजनीं पराह्णे वस्त्रगालितम् ॥
प्रोक्तो गहननाथेन सद्यस्तृष्णाहरः परः ॥ १६११ ॥

र चं., बहुमूत्रमेहे ।

भाषा—रससिन्दूर, लोह और वंग भस्म, शुद्ध अफीम जमालगोटा, गूलरकेवीज, वेलकीजड़, तुलसी सव समभाग लेकर वारीकपीस गूलरके फलोंकेरसके साथ मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गूलरके फलके रसकेसाथ देनेसे बहुमूत्र और तदुद्भव उपद्रव इनसवको यह नष्ट करता है। प्यास ज्यादा लगनेपर सारिवा, मुलहठी, द्राक्ष, दर्भ, चीढ़, चन्दन, हरें,और महुएके फूल समभाग लेकर काढा-बनाकर ठंडाकरके पिलावे। इन्हीं चीजोंको रातमें जलमें भिगो-कर सुवहमें वस्त्रसे छानकर देसक्तेहैं खानेको मांसप्रधानभक्ष्य और गेहूंकी रोटी देना॥ ३६५॥

३६६ वाकुची वटी

द्वात्रिंशत्पलवाकुचीं शुभजलद्रोण्यां विशुष्कां पुन,-
विंशांशेनपुरस्य कान्तरसयो र्निष्कैः पृथक् पञ्चभिः।
ताम्बूलीरसमर्दितैस्तिलदलाऽङ्गस्याऽमृतैं लैपितं,
पक्वं वाऽथ विधानतोऽथ भजनात्कुष्ठामयध्वंसकः॥

र र कौ ,कुष्ठे।

भाषा—३२ पल वाकुचीको १६ सेर पानीमें उवालदे। जव सव पानी जलजाय तव उतारकर ६॥ कर्प शुद्ध गूगल कान्तलोह और पारेकीभस्म सवा १। कर्ष मिलाकर पान और हुरहुरकारस डालकर १–२ रोज मर्दनकर मिट्टीके पात्रमें लेपन-कर फिर हंडीका मुंहवन्दकर २–३ कपड़मिट्टी लगाकर सुखाले। फिर इसे भूधरयन्त्रमें कुक्कुटपुटसे स्वेदितकरे। इसमेंसे ३–३ माशे जलवगैरहके साथ देनेसे यह कुष्ठोंको दूर करताहै॥३६६॥

३६७ वाकुच्यादिचूर्णम्

पलानि सङ्गृह्य दशेन्दुराज्याः
फलत्रयस्याऽपि समानमेतत्।
विडङ्गसारस्य पलानि सप्त
शिलाजतोऽर्द्धञ्च पुरस्य चैकम्॥ १६१३॥
शतञ्च भल्लातकसत्फलानां
पलं तथा पुष्करमूलनाम्नः।
पलत्रयं लोहभवं सुचूर्णं
तुरी पलार्द्धा ह्यथ कर्षभागाः॥१६१४॥
सपत्रमुस्ताकणयष्टिकानां
सचित्रकग्रन्थिककेशराणाम्।
न्यग्रोधमूलोपणकुङ्कुमाना-
मेकत्र सञ्चूर्ण्य समं तु खण्डम्॥१६१५॥
खादेद्यथाग्नि प्रयतस्तु मात्रां
कुष्ठान्यशेषाण्यपयान्ति नाशम्।
अर्शोविकाराः षडपि प्रवृद्धाः
श्वित्राणि चित्राण्युदराणि चाऽष्टौ॥१६१६॥
क्षयाश्च कृच्छ्रः खलु पाण्डुरोगः
कण्ठामया विंशतिरेव मेहाः।
उन्मादरोगज्वरनेत्ररोगा
नासोद्भवाः पञ्चविधाश्च गुल्माः॥ १६१७॥
वातमशीतिविकारं चत्वारिंशत्प्रभेदजं पित्तम्।
श्लेष्माणं विंशतिकं विनाशमायाति दुष्टमपि॥१६१८॥
भवति रुचिरदीप्तिर्गौरवर्णो मनुष्यः,
समधिकशतवर्षं जीवतीह प्रगल्भम्।
विघटितघनरोगो वह्निमासप्रयोगा,-
द्युवतितपनहारी हृष्टपुष्टो नृपश्च॥ १६१९॥

ग नि., कुष्ठाऽधिकारे।

भाषा—वाकुची और त्रिफला १०–१० पल, विडङ्ग-तण्डुल ७ पल, शिलाजीत ३॥ पल, शुद्ध गूगल १ पल, भिलावे १०० नग, पोहकरमूल १ पल, लोहभस्म ३ पल, भुनी फिटकड़ी २ तो., जड़पत्तेसहित नागरमोथा, पीपल, मुलहठी, चित्रक, पिपलामूल, नागकेसर, वटकीजड़की-छाल, मरिच और केसर १–१ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर सवकी वरावर शक्कर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे अग्निवल देखकर आधा अथवा १ तोला खानेसे समस्तकुष्ठ, ६ प्रकारके अर्श, श्वित्र, चित्र, आठों उदररोग, क्षय, कृच्छ्र, पाण्डु, कण्ठविकार, २० प्रमेह, उन्माद, ज्वर, नेत्र तथा नासिकाकेरोग, पाचप्रकारकेगुल्म, ८० वातव्याधि, ४० पित्तरोग, २० कफरोग येसव नष्टहोतेहैं। इसके सेवनसे उत्तमकान्ति और गौरवर्ण होजाताहै। १०० वर्षतक निरामयहोकर जीताहै जटिलरोगमें ३ महीनेके प्रयोगसे निरामय होकर हृष्टपुष्ट होजाताहै॥ ३६७॥

३६८ वाकुच्यादि लेहः

शशाङ्कलेखा सविडङ्गसारा
सपिप्पलीका सहुताशमूला।
सायोमला सामलका सतैला
कुष्ठानि सर्वाणि निहन्ति लीढा॥ १६२०॥

ग नि ,कुष्ठे।

भाषा—वाकुची, विडङ्गतण्डुल, पीपल, चित्रकमूल, मण्डूर, आवले और तिलका तैल सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर तैल मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे यथाग्निवल खानेसे समस्तकुष्ठ दूरहोतेहैं॥ ३६८॥

३६९ वाकुच्यादि लोहम्

वाकुची त्रिफला कृष्णा विडङ्गं सुरसाऽमृता।
अयोमधुस्थितं पक्वं जरामृत्युविपापहम्॥ १६२१॥

ग नि ,रसायने।

भाषा—वाकुची, त्रिफला, पीपल, विडङ्ग, तुलसी, गिलोय और लोहभस्म सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे यथाग्निवल खानेसे यह वुढापा, मृत्यु और विषको दूरकरताहै॥ ३६९॥

३७० वालचन्द्र रसः

चन्द्रवह्न्यर्कभागांश्च स्वर्णगैरिकचन्द्रजान् ।
मर्दयेद्वल्लमात्रेण वालचन्द्रो नियोजितः ॥ १६२२ ॥
वमिक्षयाऽतिसारार्ति हृल्लासाऽरुचिपीनसान् ।
गरदूषीविषश्वासांत्रक्तपित्तं निहन्त्यलम् ॥ १६२३ ॥

र. शं., र. चि., क्षये ।

भाषा—सुवर्णभस्म १ भाग, सोनागेरू ३ भाग, मोती १२ भाग, लेकर सवका वारीक चूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती यथारोगानुपानकेसाथ लेनेसे वमन, क्षय, अतिसार, जी मिचलाना, अरुचि, पीनस, कृत्रिमजहर, दूषीविष, श्वास, रक्तपित्त इनसवको यह नष्टकरता है ॥ ३७० ॥

३७१ वालयकृदरिलोहम्

सहस्रपुटितश्चाऽभ्रं लोहश्चैव तथा रसः ।
जम्बीरवीजातिविषे मूलं प्लीहारिसम्भवम् ॥१६२४॥
रक्तचन्दनमश्मघ्नः प्रत्येकञ्च समांशकम् ।
गुडूचीस्वरसेनैव धान्यद्वयमिता वटी ॥ १६२५ ॥
बालानां याकृतं घोरं ज्वरं प्लीहानमेव च ।
शोथं विवन्धं पाण्डुञ्च कासं मुखगदं तथा ॥१६२६॥
उदरं नाशयेदाशु भास्कर स्तिमिरं यथा ।
वालयकृदरि नाम लोहः श्रीशिवभाषितः ॥१६२७॥

आ. वि., यकृद्रोगे ।

भाषा—सहस्रपुटी अभ्रक, लोह और पारेकी भस्म, जंभीरीके वीज, अतीस, शरपुङ्खकी जड़, लालचन्दन, पाषाणभेद सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर गिलोयके स्वरस अथवा क्राथसे मर्दनकर २–२ चावलकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे एक अथवा दो गोलियां औचिती देखकर अवस्थोचित अनुपानके साथ देनेसे वचोंका घोर यकृत्, ज्वर, प्लीहा, शोथ, विवन्ध, पाण्डु, कास, मुखकेरोग और उदररोग नष्ट होतेहैं ॥३७१ ॥

३७२ वालरोगान्तको रसः (वैद्यनाथवटी)

पलं शुद्धस्य सूतस्य गन्धकस्य च तत्समम् ।
सुवर्णमाक्षिकस्याऽपि चार्द्धभागं नियोजयेत् १६२८
ततः कज्जलिकां कृत्वा पात्रे लोहमये दृढे ।
केशराजस्य भृङ्गस्य निर्गुण्ड्याः पर्णसम्भवम् १६२९
स्वरसं काकमाच्याश्च ग्रीष्मसुन्दरकस्य च ।
सूर्यावर्तकवर्षाभूभेकपर्णीरसैस्तथा ॥ १६३० ॥
श्वेताऽपराजितायाश्च रसं दद्याद्विचक्षणः ।
देयं रसार्द्धभागेन चूर्णं मरिचसम्भवम् ॥ १६३१ ॥
शुभे शिलामये पात्रे यामं दण्डेन मर्दयेत् ।
शुष्कमातपसंयोगाद्गुटिकां कारयेद्भिषक् ॥ १६३२ ॥
प्रमाणे सर्षपाकारां वालानाञ्च प्रयोजयेत् ।
हन्ति त्रिदोषसम्भूतं ज्वरञ्चैव सुदारुणम् ॥ १६३३ ॥
कासं पञ्चविधञ्चाऽपि सर्वरोगं निहन्ति च ।
शिशूनां रोगनाशाय निर्मितोऽयं महारसः ॥१६३४॥

र. सं., भै र, र. सु., र. र., र. चं., ध., र. क., वालरोगे । र.सु., र र., र. चं., ध., एषु ग्रन्थेषु वालरस इति नाम ।

टि०—र र, ध, र सु, र. च, भै र., र स., एषु द्वितीयस्थाने रसकल्पद्रुमे च ग्रहणीरोगे वैद्यनाथवटीति नाम्ना एको रसो निहितोऽस्ति तत्र माक्षिकमरिचयोरभावोऽस्ति, भावनासु कुचेलाजयन्तीन्द्राशनोल्कटा विशेषतया निहिता सन्ति, काकमाचीवर्षाभूसूर्यावर्तकानाञ्चाऽभावोऽस्ति, इत्यापाततो विशेषो दृश्यते परन्तु सोऽकिञ्चित्कर, माक्षिकमरिचसयोगेन गुणाऽधिक्यात् । कुचेलाजयन्तीन्द्राशनोल्कटाना भावनास्त्वत्राप्यनुष्ठेया इति सर्वस्याऽपि सामञ्जस्यात् । एव खसर्पणवट्या अप्यत्रैवाऽन्तर्भाव. करणीय ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ भाग, सोनामाखी ½ भाग लेकर नीलवर्णं कज्जलीकर लोहके पात्रमें स्याह सफेद भंगरा, निर्गुण्डीके पत्ते, मकोय, हरमल, हुरहुर, इटसिट, ब्राह्मी, सफेद कोयल इनके स्वरसोंकी १–१ भावना देकर इससे आधा मरिचका चूर्ण मिलाकर पत्थरके खरलमें एकपहर घोटकर सर्षपप्रमाण गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे त्रिदोषज्वर, पांचप्रकारकी खासी इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३७२ ॥

३७३ वालसुन्दररसः

सुशुद्धं श्वेतवैक्रान्तं सप्ताहं भाव्यमातपे ।
अम्लवेतसरसम्पिष्टं तेनैव द्रुतिमाप्नुयात् ॥ १६३५ ॥
एतां द्रुतिं शुद्धसूतं समं क्षौद्रे दिनत्रयम् ।
मर्दितं लेहयेन्माषं मासाद्बालो भवेन्नरः ॥ १६३६ ॥
वत्सराद्ब्रह्मतुल्यः स्याद्रसोऽयं वालसुन्दरः ।
वाकुचीवीजकर्षैकं मध्वाज्याभ्यां लिहेदनु ॥ १६३७॥

र खं, रसायन सं., रसायने ।

भाषा—अच्छीतरह शुद्धकिये हुए सफेद वैक्रान्तको अम्लवेतके रसमें कड़ीधूपमें ७ रोज़तक रक्खे तो इसका द्रवहोजाताहै । इसकी वरावर शुद्ध पारा मिलाकर शहदकेसाथ ३ रोज़ मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे सरसोंसे लेकर मरिच प्रमाण तक मात्रा लेकर वाकुचीके वीजोंका चूर्ण, मधु और घीकेसाथ चटानेमे वालक निरोग होकर हृष्टपुष्ट होजाताहै यदि इसका वर्षभर लगातार प्रयोग किया जायतो वच्चा निरामय होकर दीर्घायु होजाताहै । टि० इस प्रयोगमें वाकुचीके १ कर्ष वीजोंका चूर्ण अनुपानमें लिखाहै तथा १ महीनेमें जवान और १ वर्षमें ब्रह्मसमान होना समझमें नहीं आता । इसके अनुसार इसकी मात्रा अधिकसे अधिक ३ माशेकी होनी चाहिये, परन्तु यह मालूम होताहै कि ग्रन्थकारने केवल अनुमानसे इसप्रयोगको लिखदियाहै किसीको खिलाया नहीं और स्वयं तो खायनेही क्यों ? इनसे यह सिद्ध होताहै कि इसमें प्रशंसार्थवादसे अधिक काम लियागयाहै । इसलिये वच्चोंको सर्षपमात्रासे देना और वाकुचीके वीजोंका चूर्ण ३ रत्तीसे ६ रत्तीतक देना ॥ ३७३ ॥

३७४ वालसूर्योदयोरसः (प्रथमः)

एकभागं रसं दद्याद्विभागं हिङ्गुलन्तथा।
त्रिभागं गन्धकञ्चैव वसुभागा च खर्परी॥ १६३८॥
नागं विंशतिभागञ्च जीर्णं व्योम चतुर्गुणम्।
पुटानां शतसङ्ख्या च कुमारीरसमर्दितम्॥ १६३९॥
मर्दयेदार्द्रकरसै र्भावना परिसंयुतम्।
माषमात्रमिदं सेव्यं क्षीराऽऽज्यमधुसंयुतम्॥१६४०॥
जीर्णज्वरं सन्निपातं पाण्डुज्वरमरोचकम्।
भगन्दराख्यञ्चाऽर्शांसि मूत्रसन्तापदाहकम्॥१६४१॥
अपस्मारञ्च भ्रमणमुन्मादं कामलां तथा।
पुराणं द्वन्द्वजं छर्दिं सर्वरूपं क्षयं तथा॥ १६४२॥
सर्वधातुज्वरञ्चैव सन्निपातांस्त्रयोदश।
अशीतिं वातसम्भूतां विंशतिं श्लेष्मसम्भवाम्॥
सर्वरोगं हरेच्छीघ्रं वालसूर्योदयो रसः॥ १६४३॥

वै चि (ल), सर्वरोगे।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धशिंगरिफ २ भाग, शुद्धगन्धक ३ भाग, शुद्धखपरिया ८ भाग, नागभस्म २० भाग, अभ्रकभस्म ४ भाग, लेकर सवका वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर घीकुंआर और अदरखके रसोंकी क्रमसे भावना देताहुआ वराहपुटकी आचदे। ऐसे १०० पुट पूरे होनेपर दोनोंके रसोंकी ७–७ भावनाएं देकर १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली दूध, घी और मधुके साथ देनेसे जीर्णज्वर, सन्निपात, पाण्डु, अरोचक, भगन्दर, ववासीर, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, अपस्मार, भ्रम, उन्माद, कामला, पुराना द्वन्द्वज ज्वर, वमन, सर्वरूप क्षय, धातुगतज्वर, ८० वातरोग २० कफरोग इनसवको यह नष्टकरताहै॥ ३७४॥

३७५ वालसूर्योदयोरसः (द्वितीयः)

सूतात्त्रैगुण्यगन्धं विषकनकयुगं भानुतीक्ष्णे च नेत्रे,
तालाख्यं तच्चतुर्थं गगनशरमितं कान्तमभ्रेण तुल्यम्।
मारीचञ्चाऽष्टभागं त्रिचतुरकयुतौ नागवङ्गौ क्रमेण,
तारे द्वे सूक्ष्मचूर्णं मुनिदिवसमितं वासकेक्षोरसेन॥
एतं दद्याद्धन्तं ज्वरवनदहनंश्वासकासादि छर्दिं,
पाण्डुं शूलप्रमेहाञ्जयति गुदरुजःप्लीहगुल्मानशेषान्।
वातव्याधेः कुठारः क्षयमुदररुजःपीनसांश्चैव सर्वान्,
हिक्कादीन्रक्तपित्तश्वसनकफकृतान्-
लिङ्गदोषांश्च सर्वान्॥
योषाणांयोनिदोषानपहरति तथा मूत्रकृच्छ्रांश्च सर्वान्,
नाम्नाऽयं वालसूर्यः सकलगदहरः-
ख्यापितोऽयं मुनीन्द्रैः॥ १६४५॥

र. क यो, वा, व रा, सर्वरोगे।

टि०—अय पाठ आपाततो द्वितीयचण्डभानुना सम प्रतिभाति, तथाऽपि अनयो प्रत्येक द्रव्यमख्याया प्रमाणे च वैशेष्यात् पृथगेव द्वौ पाठाविति वोद्धव्यम्।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक ३ भाग, शुद्धवछनाग और धतूरेकेवीज, ताम्र और लोहभस्म २–२ भाग, हरिताल-भस्म ४ भाग, अभ्रक और कान्तलोहभस्म ५–५ भाग, मरिच ८ भाग, नागभस्म ३ भाग, वङ्गभस्म ४ भाग, रजतभस्म २ भाग, लेकर सवका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर अड्सा और ईखके रसोंमें ७–७ रोज़भावना देकर २–२ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अवस्थोचितानुपानकेसाथ देनेसे दाह, ज्वर, श्वास, कास, वमन, पाण्डु, शूल, प्रमेह, ववासीर, तिल्ली, गुल्म, वातव्याधि, क्षय, उदररोग, पीनस, हिचकी, रक्तपित्त, वात और कफके रोग, लिङ्गदोष, योनिदोष, मूत्रकृच्छ्र इनसवको यह नष्टकरताहै ३७५

३७६ वालार्करसः

रसकञ्च प्रवालञ्च शृङ्गभस्म च हिङ्गुलम्।
कर्पकर्चूरकेणाऽऽढ्यं केशरन्तु समांशकम्॥१६४६॥
मर्दयेज्जलयोगेन जलेनैनं प्रदापयेत्।
वातश्लेष्मातिसारेषु क्रिमिकासज्वरार्तिहृत्॥१६४७॥

रसायनसं., वालरोगे।

भाषा—खपरिया, प्रवाल, मृगशृङ्ग, शिगरिफ इनकीभस्में और कचूर १–१ तोला, केशर सवकी वरावर लेकर पानीमें घोटकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली जल अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे वातश्लेष्मविकार, अतिसार, क्रिमि, कास और ज्वर नष्टहोताहै॥ ३७६॥

३७७ विभीतकाद्योवटकः

विभीतकाऽयोमलनागराणां
चूर्णं तिलानाञ्च गुडञ्च मुख्यम्।
तक्रानुपानो वटकः प्रयोज्यः
क्षिणोति घोरानपि पाण्डुरोगान्॥ १६४८॥

ग नि, सु सं, पाण्डुरोगे।

भाषा—वहेडेकीछाल, मण्डूरभस्म, सोंठ और तिल समभाग लेकर सवकी वरावर पुराना गुड़ मिलाकर ३–३ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली छाछकेसाथ देनेसे घोर पाण्डुरोग दूरहोतेहै॥ ३७७॥

३७८ विल्वादिलेहः

तुलार्द्धं विल्वमूलञ्च तदर्द्धं सरसीरुहम्।
द्रोणं द्रोणार्द्धसलिलमष्टभागाऽवशेषितम्॥ १६४९॥
आर्द्रकस्य रसं प्रस्थं प्रस्थार्द्धं भृङ्गजं रसम्।
कार्पासफलमज्जा च कपित्थफलसारकम्॥ १६५०॥
आमलक्या रसञ्चैव प्रस्थार्द्धञ्च पृथक्पृथक्।
तुलार्द्धशर्करायुक्तं स्निग्धभाण्डे विनिःक्षिपेत्॥१६५१॥
त्रिजातकं त्रिकटुकं धान्यं मुस्ता यवानिका।
जीरकद्वयसिन्धूत्थं मधुकञ्चाऽयसो रजः॥ १६५२॥
प्रत्येकं पलमात्रञ्च लवङ्गञ्च पलद्वयम्।
सूक्ष्मचूर्णमिदं सर्वं गृह्णीयाद्वस्त्रगालितम्॥ १६५३॥

गोघृतं कुडवञ्चैव माक्षिकं कुडवद्वयम् ।
धान्यराशिषु दातव्यं पक्षं वा मासमेव वा ॥१६५४॥
अनुपानविशेषेण यथारोगं यथावलम् ।
अरोचकञ्च वमनमुद्गारञ्चाऽग्निमन्दताम् ॥ १६५५ ॥
शोथमाध्मानहृच्छूले श्वासकासौ च गुल्मकम् ।
ऊर्ध्वश्वासञ्च भ्रान्तिञ्च क्षयच्छर्दिविनाशनः ॥१६५६॥
मेहपाण्डुहरश्चैव पैत्याऽसृग्दरनाशनः ।
एप विल्वादिको लोहश्चन्द्रवाक्चन्द्रभाषितः ॥१६५७॥

वा., सर्वरोगे ।

भाषा—वेलकीजड़ ५० पल, कमल २५ पल लेकर जवकुट चूर्णकर ३२ अथवा १६ सेर पानीमें पकावे । अष्टभागावशेष रहनेपर उतारकर छानले । इसमें अदरखकारस १ सेर, भंगरेका रस, कपास और कैथकी मज्जा, आवलेका रस आधा ½ सेर, शक्कर ५० पल मिलाकर चिकने वर्तनमें रखकर त्रिजात, त्रिकटु, धनिया, नागरमोथा, अजवाइन, स्याहसफेदजीरा, सेंधानमक, मुलहठी और लोहभस्म १–१ पल, लौंग २ पल इनसवका वारीक चूर्णकर मिलादे । फिर गोघृत ४ पल, मधु ८ पल डालकर मुंहवन्दकर धान्यराशिमें १ महीना अथवा १५ दिन तक रखकर निकालले । इसमेंसे अनुपानविशेषसे शरीर और रोगवलको देखकर उचितमात्रा कायमकरके देवे । साधारणमात्रा १ तोले तककी है । इसके सेवनसे अरुचि, वमन, उद्गार, अग्निमान्य, शोथ, आध्मान, हृदयशूल, श्वास, कास, गुल्म, ऊर्ध्वश्वास, भ्रान्ति, क्षयकीवमन, प्रमेह, पाण्डु, रक्तपित्त इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ३७८ ॥

३७९ बुभुक्षुवल्लभोरसः (प्रथमः)

सूतगन्धकसिन्दूरशङ्खशुक्तिवराटिकाः
भर्जिते स्फटिकाटङ्के तत्समं पञ्चकोलकम् ॥ १५८ ॥
वीजपूराऽम्बुना कृत्वा वटीः सेवेत प्रत्यहम् ।
वुभुक्षार्थी मिताहारैरजीर्णे नाऽभिभूयते ॥ १६५९ ॥

रसायनसार, अजीर्णे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, रससिंदूर, शङ्ख, सीप और पीली कौड़ी इनकी भस्में, भुनी फिटकड़ी और सुहागा ये सव समभाग इनसवकी वरावर पञ्चकोल (पीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ) लेकर सवका वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर विजोरेकेरससे १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली खाकर मिताहार रखनेसे वुभुक्षार्थी अजीर्णसे पीडित नहीं होता ॥ ३७९ ॥

३८० बुभुक्षुवल्लभोरसः (द्वितीयः)

यद्वा भल्लाततैलेन गालितं परिवापितम् ।
वीजपूराम्बु गन्धकं लिह्यात्क्षौद्रेण भुक्तये ॥ १६६० ॥

रसायनसार, अजीर्णे ।

भाषा—भिलावे के तैलके साथ गन्धकको गलाकर विजोरे के रसमें वुझाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ माशे मधुकेसाथ खानेसे अत्यधिकभोजन करनेपरभी अजीर्ण नहीं होता ॥ ३८० ॥

३८१ बुभुक्षुवल्लभो रसः (तृतीयः)

ईश्वराऽनुगृहीतश्चेच्छतगन्धेन रञ्जितम् ।
स्वर्णसिन्दूरमेवाद्यादजीर्णादिरुजापहम् ॥ १६६१ ॥

रसायनसार, अजीर्णे ।

भाषा—ईश्वरानुग्रहसे यदि शतगुणगन्धक जारणकिये हुए पारेका स्वर्णसिन्दूर वनाकर एक अथवा दो रत्तीकी मात्रामें खायाजाय तो अजीर्णकी शङ्का नहीं रहती ॥ ३८१ ॥

३८२ बृहत्यादिलोहम्

वृहतीशर्करानागतिलसारसमन्वितम् ।
लोहं कुष्ठं निहन्त्याशु सर्वरोगहरो हि सः ॥ १६६२ ॥

र. र., कुष्ठे ।

भाषा—भटकटैया, शक्कर, नागकेशर, साफकियेहुएतिल ये सव समभाग लेकर सवकी वरावर लोहभस्म मिलाकर २–३ पहर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्ती शहदकेसाथ खानेसे यह कुष्ठको दूरकरता है । और तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे समस्त रोगोको दूरकरता है ॥ ३८२ ॥

३८३ वोलपर्पटी रसः

सूतगन्धककृतकज्जलिकायाः
पर्पटी समयुता समभागम् ।
बोलचूर्णविहितं प्रतिवाप्यं
स्याद्रसोऽयमसृगामयहारी ॥ १६६३ ॥
वल्लयुग्मयुगलं प्रतिदेयं
शर्करामधुयुतः किल दत्तः ।
रक्तपित्तगुदजस्रुतियोनि-
स्रावमाशु विनिवारयतीशः ॥ १६६४ ॥

यो र, रसायनस., र. चं., र. सि, र मु, र. को, र, पा. नि र., र क ल, र. का, र. शं, र ल, र प्र., यो. त, रक्तपित्ते। र. सि **वोलवद्धरक्तारिः** । रसकामधेनौ **सिद्धोदयेति** नाम, द्वितीयस्थाने वायसीचित्रवाव्यालनीरैस्त्रिवारं भावना प्रदाय पश्चात्पर्पटी कार्येति विशेष । नाम च **वोलवद्धरस** इति, अतिसाराऽधिकारे स्थापितम् । र शं., र. ल, र. प्र एषु **रक्तारिरस** इति नाम ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर लोहेकीकड़छीमें वेरके कोयलों पर गलाकर कज्जलीके वरावर हीरादक्खिनका चूर्ण डालकर एकजीवहोनेपर गोवरपर रक्खेहुए केलेके पत्तेपर डालकर पर्पटी वनाले । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । अथवा कज्जलीकी पर्पटी वनाकर उसकी वरावर हीरादक्खनका चूर्णमिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ६ रत्तीकीमात्रा शक्कर और मधुके साथ देनेसे रक्तपित्त, खुनी ववासीर, योनिस्राव इनसवको यह नष्टकरता है ॥ ३८३ ॥

३८४ बोलबद्धरसः (प्रथमः)

गुडूचिकासत्त्वसमं रसेन्द्रं
गन्धं समांशं निखिलेन वर्बरः।
विमर्दयेच्छाल्मलिकाभवाद्भिः
स्याद्बोलबद्धो मधुयुक् त्रिमाषः॥१६६५॥
रक्तार्शसां नाशकृदेष सूतः
पित्तार्शसां पित्तजविद्रधेश्च।
रक्तप्रमेहस्य खुडस्य चाऽपि
स्त्रीणां प्रवाहस्य भगन्दरस्य॥ १६६६॥

नि.र, वै र., वृ यो त, रसायन सं., र चं, र प्र, र, चि. र भ, र.कौ, र सि, र.पा., अर्शोऽधिकारे। र शुक्रप्रमेहाऽधिकारे, रसेश इति नाम।

टि०—"गोल वङ्गरसेशयो सुरकृता सत्त्वाशको वोल्क, दत्त्वा तुर्यविभागिक दिवसक श्लेष्मातमूल्द्रवै। कृत्वावेष्ट्य पुटं ददीत तुपत शीत समाकृष्य तद्, दद्याद्वल्लमितश्च वीजकरसै शुक्रप्रमेहे रस॥" इति शुक्रमेहे रसावतारे पाठोऽस्ति तत्र वोल चतुर्थांशेन नियोजितम्, शाल्मलीस्थाने श्लेष्मातमूल नियोजितम्। तुषाग्निना पाकश्च कृतोऽस्ति परन्तु पाककरणाद्बोलगुडूचीसत्त्वयोर्भस्मीभावात्सा प्रक्रियाऽनुचितैव प्रतिभाति, वीजकरसैः शुक्रप्रमेहेऽनुपानन्तु समीचीनमेवाऽस्ति, अतस्तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भाव करणीय।

भाषा—गिलोयकासत्त्व, शुद्ध पारा और गन्धक समभाग तथा हीरादक्खन सबके बराबर लेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें सबको मिलाकर सेंमलकेमुसले के स्वरस अथवा छालके काढ़ेमें मर्दनकर ३–३ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे खूनी और पित्तज बवासीर, पित्तज विद्रधि, रक्तप्रमेह, वातरक्त, प्रदर और भगन्दर इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ३८४॥

३८५ बोलबद्धरसः (द्वितीयः)

रसभस्म विषं तुल्यं गन्धकं द्विगुणं मतम्।
बोलतालकवाह्लीककर्कोटीमाक्षिकं निशा॥ १६६७॥
कण्टकारी यवक्षारो लाङ्गली जीरसैन्धवम्।
मधूकसारं सञ्चूर्ण्य सप्ताहं चाऽऽर्द्रकद्रवैः॥१६६८॥
गुटिकां वदराकारां श्लेष्मकासापनुत्तये।
भक्षयेद्बोलबद्धोऽयं रसः सश्वासपाण्डुजित्॥१६६९॥

र र स., र सु, र को, नि र, व रा, र क ल, र.का, कासाऽधिकारे। र का वाह्लीकस्थाने पाठाऽपी दृश्यते।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धवच्छनाग १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग, हीरा दक्खन, हरितालभस्म, भुनाहींग, खेखसाकी जड़, सोनामाखी, हल्दी, भटकटैया, यवक्षार, शुद्धकरिहारी, सफेदजीरा, सेंधानमक, महुएका हीर येसब १–१ भागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर ७ रोजतक अदरखके रसमें घोटकर बेर बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली यथारोगानुपानके साथ देनेसे श्लेष्मरोग, खांसी, श्वास, पाण्डु इन सबको यह नष्टकरताहै॥ ३८५॥

३८६ बोलबद्धरसः (महान्) (तृतीयः)

पारदं गन्धकञ्चैव टङ्कणं चन्द्रकं पृथक्।
एतानि कर्षमात्राणि द्विभागं धूर्तबीजकम्॥१६७०॥
त्रिभागा विजया प्रोक्ताऽहिफेनं त्रुटिरेव च।
वेदभागास्ततो नागवङ्गयोश्च रसाह्वयाः॥ १६७१॥
बोलस्य मुनिभागाः स्युरेकीकृत्य विमर्दयेत्।
भावनात्रितयं दद्यात्कतकक्वाथवारिणा॥ १६७२॥
गुञ्जाभां वटिकां कृत्वा यष्टीमधुकजीरकैः।
दद्यात्सितामधुभ्यां वाऽसृग्दरे ह्यतिसारके॥१६७३॥
सोमरोगे क्षये पाण्डौ प्रमेहे मूत्रकृच्छ्रके।
रक्तमूत्रे मूत्रदाहे मूत्राघाते प्रयोजयेत्॥
बोलबद्ध इति ख्यातो महापूर्वपदानुगः॥ १६७४॥

रसायन सं., असृग्दरादौ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा और कपूर ये प्रत्येक १–१ भाग, शुद्धधतूरेके बीज २ भाग, भाग ३ भाग, अफीम और इलायची ४–४ भाग, नाग और वङ्गभस्म ६–६ भाग, हीरादक्खन ७ भाग लेकर सबका वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर निर्मलीके काढेकी ३ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ अथवा २ गोली मुलहठी और जीरेकेसाथ, अथवा शक्कर और मधुकेसाथ देनेसे अतिसार, सोमरोग, क्षय, पाण्डु, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, रक्तमूत्र, मूत्रदाह, मूत्राघात इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ३८६॥

३८७ बोलबद्धरसः (चतुर्थः)

रसेन बोलं द्विगुणं दिनैकं
विमर्दयेच्छाल्मलिकारसेन।
पुटेत्ततो भूधरयन्त्रमध्ये
गुडूचिकाशाल्मलिकोत्थनीरैः॥१६७५॥
तं भावयित्वाऽथ ददीत वल्ल-
चतुष्टयं तद्द्विगुणं तु यद्वा।
बब्बूलजं क्वाथमिहानुदद्या-
द्भल्लातकं वा त्रिफलातिलैश्च॥
क्वाथं पिबेद्वा कुटजस्य रात्रौ
क्षौद्रेण संयोज्य फलत्रयेण॥ १६७६॥

र.दी, अर्शोऽधिकारे।

भाषा—हीरादक्खनसे दूना शुद्धपारालेकर १ रोज़ सेमलकी छालकेकाढेसे मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें कुक्कुटपुट दे। स्वाङ्गशीतल होनेपर गिलोय और सेमलके क्वाथोंसे १–१ रोज़ भावना देकर डेढ १॥ मासेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली बब्बूलके क्वाथकेसाथ दे। अथवा भिलांवा त्रिफला और तिलोंके क्वाथकेसाथ देनेसे सब प्रकारके बवासीर नष्टहोते हैं। रात्रिमें कुरैयाकी छालका काढा त्रिफला और मधु मिलाकर देवे॥ ३८७॥

३८८ बोलादिवटी

बोलं सुगन्धेन समं गुडूची-
सत्त्वेन तुल्यं त्रिफलाजलेन।
विमर्दयेच्छालमलिकारसेन
दिनत्रयं वाऽथ निषेवयेत॥
गद्याणयुग्मं मधुना तु मासं
पित्तोद्भवाऽर्शांसि लयं प्रयान्ति॥ १६७७॥

र. दी., पित्ताऽर्शसि।

भाषा—शुद्धगन्धक, हीरादक्खन और गिलोयका सत्त्व समभाग लेकर त्रिफला और सेंमलकी छालके काढ़ेसे ३—३ रोज़ मर्दनकर १—१ तोला मधुके साथ १ महीने तक खानेसे पित्तज बवासीर नष्टहोता है॥ ३८८॥

३८९ ब्रह्मपञ्जर रसः

चतुःपलं शुद्धसूतं पलैकं मृतहाटकम्।
पलाशकुड्मलद्रावैस्तत्तैलैश्च दिनत्रयम्॥ १६७८॥
मर्दयेत्तप्तखल्वे तु सर्वतुल्यञ्च गन्धकम्।
शोधितं निक्षिपेत्तस्मिन्पूर्वोक्ते मर्दयेद्दिनम्॥१६७९॥
माषमात्रां वटीं खादेद्वत्सरान्मृत्युजिद्भवेत्।
जीवेद्ब्रह्मदिनं वीरो रसोऽयं ब्रह्मपञ्जरः॥ १६८०॥
वानरीकाकतुण्डद्युत्थवीजञ्चूर्णं समंसमम्।
शाल्मलीत्वग्दलद्रावैर्भावयेद्दिवसत्रयम्॥ १६८१॥
त्र्यहञ्च भृङ्गजैर्द्रावैर्भावितं चूर्णयेत्ततः।
पुरातनगुडैस्तुल्यं कर्षैकमनुभक्षयेत्॥ १६८२॥

र. खं, रसायनसं., रसायने।

भाषा—शुद्धपारा ४ पल, सुवर्णभस्म १ पल लेकर पलाशकी कलियोंके स्वरस और पलाशवीजोंके तैलसे ३—३ दिन मर्दनकर सुनहरीरंगका शुद्ध गन्धक सवकी वरावर मिलाकर कज्जलीकर पूर्वोक्तद्रवोंसे १—१ दिन मर्दनकर १—१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १—१ गोली खाकर केवाच और काकनासिकाके वीज समभाग लेकर सेमलकी छाल और भांगरेके रससे ३—३ रोज़ मर्दनकर सुखाय वारीकपीसकर इसमेंसे १—१ तोला पुराने गुड़के साथ मिलाकर खानेसे एक-वर्षभरमें वलीपलितसे रहितहोकर दीर्घायुको प्राप्त होताहै॥३८९॥

३९० ब्रह्मरन्ध्ररसः

रसाऽभ्रगन्धकं तालं हिङ्गुलं मरिचं तथा।
टङ्कणं सैन्धवोपेतं सर्वांशममृतं तथा॥ १६८३॥
सर्वपादसमोपेतमर्हिषीपित्तमर्दितम्।
ब्रह्मरन्ध्रे प्रयोक्तव्यं सन्यासज्ञानविभ्रमे॥ १६८४॥
सहस्रकलशैः स्नानं लेपनं चन्दनादिभिः।
इक्षुमुद्गरसं भोज्यं तक्रंभक्तं यथेप्सितम्॥ १६८५॥

भै. र., र. सु., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और हिङ्गुल, अभ्रक-भस्म, मरिच, भुनासुहागा और सेंधानमक समभाग, शुद्धवछ-नाग सवकीवरावर लेकर सवसे चतुर्थांश भैंसेके पित्तकी भावना देकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे संन्यास और ज्ञानविभ्रम सन्निपातमें ब्रह्मरन्ध्रमें पाछलगाकर मसले तो इससे सन्निपाती चेतनामें आजाता है। उससमय एकहज़ार ठढे पानीके घड़े सिर-पर डाले और चन्दन वगैरहकालेपकरे। ईख, मूंग, तक्र और भात यथेष्ट खावे॥ ३९०॥

३९१ ब्रह्मरसः (प्रथमः)

भागैकं मूर्च्छितं सूतं गन्धावल्गुजचित्रकान्।
चूर्णन्तु ब्रह्मवीजानां प्रतिद्वादशभागिकम्॥१६८६॥
भागांस्त्रिंशद्गुडस्याऽपि क्षौद्रेण गुटिका कृता।
अयं ब्रह्मरसो नाम्ना ब्रह्महत्याविनाशनः॥ १६८७॥
द्विनिष्कं भक्षणाद्धन्ति प्रसुप्तिकुष्ठमण्डलम्।
पातालगारुडीमूलं जलैः पिष्ट्वा पिवेदनु॥१६८८॥

र. सं., र चि., र मं., र. र. कौ., रसायनसं, र. सु., र. चं, र. का, यो. म., र. सि., कुष्ठे।

भाषा—मूर्छितपारा १ भाग, शुद्धगन्धक, वाकुची, चित्रक और पलाशकेवीज १२—१२ भाग, पुरानागुड़ ३० भाग लेकर सवका वारीक चूर्णकर मधुमें ८—८ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १—१ गोली पातालगारुड़ीकी जड़ १ तोला पानीमें पीसकर इसकेसाथ लेनेसे सुनवहरी और मण्डल इत्यादि कुष्ठों को यह नष्टकरताहै॥ ३९१॥

३९२ ब्रह्मरसः (द्वितीयः)

सूतगन्धकमाक्षिकलौहं पिष्टं फलत्रयक्वाथे।
प्रहरचतुष्कं भूधरगर्भे पाकं विधाय गुञ्जैकम्॥१६८९॥
सज्वरानीरः सूतो ब्रह्माख्यो रक्तपित्तादीन्।
जयति हितौषधयोगैः पथ्याक्षौद्रेण चाऽम्लपित्तादीन्

र. ल, अम्लपित्तादिरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सोनामाखी और लोहभस्म समभागलेकर सवकी नीलवर्ण कज्जलीकर ४ पहर त्रिफलाके काढेमें घोटकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर भूधरयन्त्रमें एक पुटदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १—१ रत्ती त्रिफलाके काढ़ेकेसाथ अथवा हर्रे और मधुकेसाथ अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह रक्तपित्त और अम्ल-पित्त प्रभृतिको नष्टकरताहै॥ ३९२॥

३९३ ब्रह्मरसः (तृतीयः)

रसं ब्रह्म प्रवक्ष्यामि पारदं गन्धकं समम्।
किंशुकस्य च वीजानि टङ्कणञ्च मनःशिला॥१६९१॥
अपामार्गस्य वीजानि केशरञ्जनकस्य च।
जम्बीरस्य रसे सर्वं दिनानां पञ्च मर्दयेत्॥१६९२॥

शुष्कं कुर्यात्पुनः सर्वं मर्दयेन्मत्स्यमेदसा ।
दिनत्रयं पचेदेवं कटुत्रयविमिश्रितम् ॥ १६९३ ॥
मेदसा तिमिजातेन मर्दयेच्च दिनद्वयम् ।
आर्द्रकस्य रसैः पञ्च दिनानि परिमर्दयेत् ॥
श्लेष्मज्वरविनाशः स्यादेकविंशतिवासरैः ॥१६९४॥

सू. प्र , ज्वरे ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, पलाशके बीज, शुद्ध सुहागा और मैनसिल अपामार्ग और भागरेके बीज समभागलेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर जंभीरीके रसमें ५ दिन मर्दनकर सुखाकर मछलीकी चर्वीसे दो ३ रोज मर्दन कर समभाग त्रिकटुका चूर्ण मिलाकर मछलीकी चर्वीसे २ दिन और अदरखके रससे ५ दिन मर्दनकरके १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसवगैरहके साथ २१ रोज़तक देनेसे कफज्वर नष्टहोजाता है ॥ ३९३ ॥

३९४ ब्रह्मराक्षसरसः

वेदकर्षो रसः प्रोक्तो नवसारस्तु कर्षकः ।
सूततुल्यं गन्धकं स्यात्तदर्धं तालकं मतम् ॥ १६९५ ॥
तालतुल्यो यवक्षारो नागः कर्षमितो भवेत् ।
काकमाच्या रसैं भाव्यं सप्तवारं प्रयत्नतः ॥ १६९६ ॥
उन्मत्तस्य रसेनाऽपि सप्तवारन्तु भावयेत् ।
पचेत्तं वालुकायन्त्रे द्वादशप्रहरावधि ॥ १६९७ ॥
पुनस्तत्र क्षिपेद्गन्धं वेदकर्षञ्च भावयेत् ।
पूर्वोक्तैस्तु द्रवै र्यन्त्रे वालुकाख्ये पचेत्ततः॥ १६९८ ॥
अधःस्थो भस्मतामेति तावत्कूपीषु योजयेत् ।
सप्तमे भस्मतामेति ब्रह्मराक्षसपारदः ॥ १६९९ ॥
नानाऽनुपानमात्रेण सर्वरोगान्निकृन्तति ।
मणेकं भुज्यते नित्यं नरेणैतत्समासतः ॥ १७०० ॥

र कौ , रसायनस., सर्वरोगे ।

टि०—अयरसो रससिंदूरादभिन्नोऽस्ति तथाऽपि प्रक्रियाविशेषेण तल स्थताऽऽपादनात्सिन्दूरेभ्य पृथङ्निहित , सिन्दूरता त्वन्याहतैवाऽस्ति मणेक भुज्यते नित्य नरेणेति फलभागे यत्किञ्चिदङ्गोऽर्थवादस्याऽस्तीति बोद्धव्यम् ।

भाषा—शुद्धपारा ४ तोले, नवसादर १ तो , शुद्धगन्धक ४ तो , शुद्धहरिताल और यवक्षार २–२ तोले, शुद्धनाग १ तोला लेकर शीशेको गलाकर पाराछोड़दे । फिर गन्धकमिलाकर कज्जलीकर हरितालका बारीकचूर्णमिलाकर ४ पहर मर्दनकरके यवक्षार मिलादे । फिर मकोय और धतूरेकेरससे ७–७ भावनाएं देकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशी शीशीमें भरकर खुलामुंह रखकर १२ पहरकी आचदे । इसतरह करनेसे जिससमय पारेका उड़ना बन्दहोजाय तब सिद्धसमझना चाहिये । इसमें प्राय. सातवीं शीशीमें तलस्थ पारा होजायगा । भाग्यवशात् कहीं आच न लगनेसे कसर रहजानेसे कुछभाग पारेका ऊपर उड़ा हो तो १–२ शीशिया और उतारलेना । इसमें यह ध्यान रखना कि कहीं आच अधिक लगनेसे पारा अधिक उड़जायगा तो शीशीमें नीचे बैठा हुआ केवल क्षार मिलेगा, यह क्षार निकम्माहै केवल श्वास कासपर काम करेगा । इसलिये बहुत संभलकर इतनी आंचदेकि गन्धकजलकर सिन्दूर तैयार होजाय । इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त रोगोंको दूरकरताहै । इसके खानेसे बहुतज्यादा भूख लगने लगेगी । कुछदिनके अभ्याससे वलीपलितादिकसे निर्मुक्त होजायगा ॥ ३८४ ॥

३९५ ब्रह्मवटी

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं रसतुल्यं विषं क्षिपेत् ।
कृष्णाभ्रताम्रलोहञ्च मर्दयेत्त्र्यूषणद्रवैः ॥ १७०१ ॥
आर्द्रकस्य द्रवैः पश्चात्क्रमाद्भाव्यं दिनं दिनम् ।
कृष्णजीरकपत्राङ्गमजमोदा जयन्तिका ॥ १७०२ ॥
यवानी तिलपर्णी च ब्राह्मी धत्तूरभृङ्गिराट् ।
यवान्यश्वार्द्रकर्णीकौ शिग्रुहस्तिकशुण्डिके ॥ १७०३ ॥
श्वेतापराजिता वासा चित्रकश्चेतिक्वाथतः ।
भावयेद्वटिका कार्या वदरास्थिसमा शुभा ॥ १७०४ ॥
योज्येयं यामयामान्ते मरिचैरार्द्रकद्रवैः ।
इयं ब्रह्मवटी नाम सन्निपातकुलान्तिका ॥
पथ्यं स्यान्मुद्गयूषेण दिवास्वापञ्च वर्जयेत् ॥ १७०५ ॥

र. सु , र का., र को , ज्वराऽधिकारे । र. को प्रभावती वटीति नाम ।

टि०—अत्र कर्णीकशब्देन कर्णिकाराऽपरपर्याय आरग्वधो ग्रहीतव्य । गिरोलीकन्दमिति केषाचिद्व्याख्यानन्त्वमूलकम् ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग, शुद्ध बछनाग, कृष्णाभ्रक, तावा, लोह इनकीभस्में १–१ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जली बनाय त्रिकटु, अदरख, कालाजीरा, पतङ्ग, अजमोद, जैंत, खुरासानीअजवाइन, हुरहुर, ब्राह्मी, धतूरा, भंगरा, अजवाइन, अदरख, अमिलतास, सहिजन, हाथीशुण्डी, सफेदकोयल, अड़सा और चित्रक इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज़ भावना देकर बेरकी गुठलीके बराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मरिच और अदरखके रसके साथ १–१ पहरबाद देनेसे यह तमामसन्निपातोंको नष्टकरतीहै । मूंगके यूषकेसाथ चावल पथ्यमें देवे । दिनमें सोना वर्जितहै ॥ ३९५ ॥

३९६ ब्रह्माण्डगुटिका

नागवल्लीदलद्रावैः सप्ताहं शुद्धपारदम् ।
मर्दयेत्तप्तखल्वे तु क्षालयेत्काञ्जिकैस्ततः ॥ १७०६ ॥
तत्क्षिपेद्द्विपकन्दस्य गर्भे निष्कचतुष्टयम् ।
द्विषेण तन्मुखं रुद्ध्वा स्थूलवाराहमांसजे ॥१७०७॥
पिण्डगर्भे निरुध्याथ मुखं सूत्रेण सीवयेत् ।
सन्ध्याकाले वलिं दत्त्वा कुक्कुटं मदिरायुतम् ॥१७०८॥
ततश्चुल्ल्यां लोहपात्रे तैले धत्तूरसम्भवे ।
तं पचेद्विंशतिपले सुपिण्डं मन्दवह्निना ॥ १७०९ ॥

सन्ध्यामारभ्य यत्नेन यावत्सूर्योदयं तथा ।
हठाज्जागरणं कुर्यादन्यथा तन्न सिद्ध्यति ॥१७१०॥
प्रातरुद्धृत्य गुटिकां क्षीरभाण्डे विनिःक्षिपेत् ।
तत्क्षीरं शुष्यति क्षिप्रमेतत्प्रत्ययमद्भुतम् ॥ १७११ ॥
दष्ट्रा तां धारयेद्वक्त्रे वीर्यस्तम्भकरीं रतौ ।
क्षीरं पीत्वा रमेद्रामाः कामाकुलकलान्विताः ।१७१२।
मुखाद्धस्ते यदा प्राप्ता तदा वीर्यं पतत्यलम् ।
ब्रह्माण्डगुटिका नाम शोषयन्ती महोदधिम् ॥१७१३॥

र खं., र (मा.) र सु., र, र मं., र. र, वृ. यो. त., र सि., टो., यो. म., र क. ल. (ना) वीर्यस्तम्भने। र मं, वृ यो त., र. का. एषु वीर्यरोधिनीति नाम ।

टि०–माणिक्यचन्द्रजैनीयरत्नावतारे "विपजटास्थितशोभनपारदो वनवराहवसा परिवेष्टित । कनकबीजजतलविपाचितो व्रजति यामयुगेन सुबद्धताम् ॥ एव सुबद्धा गुटिका मुखान्तर्धृता यदा स्यान्मधुरान्नभोक्तु । वीर्यं निरुन्ध्यात्सुरतप्रसङ्गे शत स भुञ्जीतमनोनुकूल्या ॥" इत्याकारक स्वतन्त्रतया पाठ प्रकल्पित, परन्तु स न रसान्तर, इति सुधीभिर्विभावनीयम् । वृद्धयोगतरङ्गिण्यां द्वितीयस्थाने "रस कनकतैलेन मार्द्धशाणकत्रयम् । दिनानि सप्त सम्मर्द्य विपग्रन्थौ समाक्षिपेत् ॥ रसतल्लञ्च निक्षिप्य तन्मुख रोधयेद्विपात् । सप्तभि मृत्तिकाभिश्च वेष्टयित्वा विशोषयेत् ॥ माहिषे मासपिण्डे तु स्थूले क्षिप्त्वाऽथ सीवयेत् । मासस्य पोट्टलीं कृत्वा दृढ वस्त्रेण वेष्टयेत् ॥ तत्क्षण वेष्टयेत्सप्तमृत्स्नाकर्पटसञ्ज्ञके । गोमयेन च सलिप्य गोल तत्पूजयेद्भिषक् ॥ हस्तत्रयमितो गर्तो गोशकृत्पिण्डपूरित । तन्मध्ये निक्षिपेद्गोल दग्ध्वा शीत समुद्धरेत् ॥ तत्रस्था गुटिका ग्राह्या दिव्यकौतुकदायिनी । सा मुखे येन निक्षिप्ता रमयेत्सोऽङ्गनाशतम् ॥ यावत्सा गुटिका वक्त्रे तावन्न द्रवते नर ॥" अय पाठो वीर्यरोधिनीनाम्ना निहितोऽस्ति, अत्राऽपि विपकन्दे निधान तत्समानमेव केवलमग्निदाने विशेष । हस्तत्रयमितगर्ताग्नौ पारद स्थास्यति नवेति सुतरा सन्देह. । तदपेक्षया सर्षपतैलपरिपाको विश्वासार्ह प्रतीयतेऽनस्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव करणीय । गर्तपाकस्तु कृत्वा परीक्षणीय । अग्निस्थायित्वाऽभिलपणीयाऽस्ति सा केनाऽपि प्रकारेण करणीयैवाऽस्तीत्यत्र नास्ति केपाञ्चिदपि विवाद ।

भाषा—४ माशे शुद्धपारेको पके पानके रससे ७ दिनतक तप्तखल्वमें मर्दनकर काञ्जीसे धोकर साफकरले फिर वछनागके गीलेकन्दमें रखकर उसीकी चकत्तीसे कन्दका मुंह बन्दकर जंगली सूअरकी मासपेशीमें रखकर डोरेसे सींदे। फिर सन्ध्याकालके अच्छे मुहूर्तमें कुक्कुट और मद्यकी रसराजको वलि देकर लोहेकी कढ़ाहीमें मांसपेशीको रखकर धतूरेका तैल ८० तोले डालकर मन्दाग्निसे सन्ध्यासमयसे आरम्भकर सूर्योदयतक पकावे। इसमें जागरण हठसे करना चाहिये । अगर निद्रा आ जायगी तो यह सिद्धि नहीं होगी। प्रात स्वाङ्गशीतल होनेपर उसगोलीको निकालकर गोदुग्धके घड़ेमें डाले, डालतेही दूध सूखजायतो समझना कि यह सिद्ध होगई। इस गोलीको मुंहमें रख दूध पीकर बहुतसी स्त्रियोंके साथ प्रसङ्ग करनेपरभी मुंहमेंसे इसे हाथमें न लेले तबतक वीर्य स्खलित नहीं होता है ॥३९६॥

३९७ ब्रह्मास्त्ररसः (प्रथमः)

ब्रह्मास्त्रमथवक्ष्यामि सद्यः प्रत्ययकारकम् ।
सूतभस्म त्रिगन्धश्च तत्समं गरलं त्वहेः ॥ १७१४ ॥
त्रिभिः समं विषं योज्यं मरिचं सर्वतुल्यकम् ।
वराहकेकिमहिषपित्तैः सप्त विभावितम् ॥ १७१५ ॥
लाङ्गल्या देवदाल्या च ज्वालामुख्यार्द्रकद्रवैः ।
एकविंशतिधा भाव्यं प्रत्येकं घर्मशोषितम् ॥ १७१६ ॥
द्विगुञ्जामात्रनस्येन मृतमुत्थापयेद्ध्रुवम् ।
दध्यन्नं ससितं पथ्यमुपचाराश्च शीतलाः ॥ १७१७ ॥
सर्वोदरगदघ्नोऽयमसाध्यमपि साधयेत् ।
अस्थिशूलानि सर्वाणि नाशयत्येव सर्वथा ॥१७१८॥

वृ यो. त, रसायनसं., चि क, र. का, र. म. मा., यो. त, ज्वराऽधिकारे।

टि०–अत्र त्रिगन्धशब्देन गन्धकसदृशद्रव्यत्रयसमूहोऽभिप्रेत स च गन्धकहरितालमन शिलात्मको भवितुमर्हति, तद्गणना तु त्रिगन्धेन एकात्मिकत्व कृताऽस्ति अतस्त्रिभि सममिति न विरुध्यते । चिकित्साक्रमकल्पवल्लीकारेण तु त्रिभिरितिलिङ्गात्त्रित्वसङ्ख्याविशिष्टो गन्ध इति मत्वा गौरीरज शुद्धमिह त्रिभाग मित्यग्रन्थि । रसकामधेनौ तु त्रिगन्धानीति पाठ विधाय शङ्का निरासीति ज्ञातव्यम् ।

भाषा—पारदभस्म, गन्धक, हरिताल, और मैनसिल १–१ तोले सर्पविष ४ तोले, शुद्ध वछनाग ८ तोले, मरिच १६ तोले लेकर सबका बारीक चूर्णकर २–३ पहर सूखा मर्दनकर सूअर मोर और भैंसाके पित्तोकी ७–७ भावनाएं देकर सुखाले फिर करिहारी, वन्दाल, हुरहुर और अदरखके रसोकी २१–२१ भावनाएं देकर सुखाकर रखछोड़े। प्रत्येक भावना सुखासुखाकर देनी चाहिये। इसमेंसे २ रत्ती नस्य देनेसे मृतावस्थभी सन्निपाती होशमें आजायगा। भूखलगनेपर शक्कर, दही, भात देना और शीतोपचार करना । इससे समस्त उदररोग और सब प्रकारके शूल नष्ट होते है ॥ ३९७ ॥

३९८ ब्रह्मास्त्ररसः (द्वितीयः)

द्वितुत्थञ्च त्रिपाषाणं गन्धकञ्च शिला विषम् ।
नेपालं दरदं चाऽभ्रं सैन्धवं मरिचं विडम् ॥१७१९॥
त्रिक्षारं टङ्कणं हिङ्गु सर्वतुल्यन्तु पारदम् ।
ज्योतिष्मत्यास्तु तैलेन मर्दयेद्दिनपञ्चकम् ॥ १७२० ॥
दोलायन्त्रे दिनं पक्त्वा ततः खल्वे विमर्दयेत् ।
मयूरमहिषीमत्स्यवाराहच्छागपन्नगाः ॥ १७२१ ॥
शशका जम्बुकाः श्वान एषां पित्तैस्तु भावयेत् ।
गुञ्जामात्रं क्षुरैर्भित्त्वा ब्रह्मद्वारे विनिक्षिपेत् ॥१७२२॥
नश्यन्ति तत्क्षणेनैव सन्निपाताः सुदारुणाः ।
मूकतापस्मृतिर्हिक्का बाधिर्यश्वासकासकाः ।
ब्रह्मास्त्रोऽयं रसः ख्यातः सन्निपातकुलान्तकः।१७२३

व रा, र क. यो सन्निपाते ।

टि०—आपातत पाशुपताऽस्त्रेपि एतत्समानता प्रतीयते परन्तु द्रव्यप्रमाणयोर्भावनायाञ्च महदन्तरत्वात्स्वतन्त्र एवाऽय पाठोऽस्ति । अत्र धातुवादोक्ता वडवामुखाग्निप्रभृतयो विटशब्देन ग्राह्या अथवा नरसाराऽऽख्य ग्रहीतव्यम् । चूलिका गन्धपाषाण कान्तस्य च मुख प्रिये । एकैकमेव पर्याप्त लोहचूर्णस्य जारणे ॥ रसार्णवे ९ प० । इति ॥

भाषा—शुद्ध तूतिया, दाने फिरंग, स्याह-सफेद और पीला सोमल, गन्धक, मैनसिल, वछनाग, जमालगोटा, शिंगरिफ, अभ्रकभस्म, सेंधानमक, मरिच, यथासम्भव धातुवादोक्त विड अथवा नवसादर, तीनोंक्षार (सज्जी, अपामार्ग और यवक्षार), भुनासुहागा और हींग समभाग, इनसबकी बराबर शुद्धपारा लेकर सबकी नीलवर्णकज्जली बनाय मालकांगनीके तैलमे ५ रोज़ मर्दनकर दोलायन्त्रमें एकरोज़ इसी तैलमें स्वेदनकर मोर, भैंसा, मछली, सूअर, बकरा, साप, खरगोश, गीदड़ और कुत्तेके पित्तोंकी १–१ भावना देकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्ती लेकर ब्रह्मरन्ध्रमें पाछलगाकर मसलनेसे दारुणसन्निपात, मूर्च्छा, अपस्मार, हिचकी, वधिरता, श्वास, कास येसब नष्ट होते हैं ॥ ३९८ ॥

३९९ ब्रह्मास्त्ररसः (मृत्युञ्जयः) ३

सूतं गन्धं शिला ताल वत्सनाभेन संयुतम् ।
गिरिकर्णीजबीजैश्च कटुत्रयसमन्वितम ॥ १७२४ ॥
एतत्सर्वं समं कृत्वा कङ्गुणीतैलमर्दितम् ।
नष्टपिष्टीकृत पश्चात्क्षिपेद्द्रव्यकरण्डके ॥ १७२५ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव दद्यान्माषार्धमात्रकम् ।
सन्निपातो महाघोरस्तत्क्षणादेव नश्यति ॥ १७२६ ॥
अर्द्धरक्तिकमात्रन्तु नस्य देय क्षुताऽवधि ।
क्षुतश्च वमनञ्चैव यदि योज्या रसोत्तमः ॥ १७२७ ॥
ततो न जायते मृत्यु र्न स्याद्यतो यमालयम् ।
भिषजा तद्दिनं त्याज्यं भैषज्यं नैव दापयेत् ॥१७२८॥

र.क.यो ,र.प सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मैनसिल, हरिताल और वछनाग, कोयलके वीज और त्रिकटु समभागलेकर पारे वगैरहकी नीलवर्णकज्जलीकर वछनाग वगैरहके वारीकचूर्णमें मिलाकर २–३ पहर सूखा घोटकर मालकागनीके तैलसे ४ पहर मर्दनकर काचकी शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे आधेआधे माशेकी खुराक अदरखके रसकेसाथ देनेसे महाघोर सन्निपात तत्क्षण नष्टहोताहै । इसमेंसे आधीरत्तीका नस्यदेना । अगर एकवारके देनेसे छींक न आवे तो दूसरीवारदेना । इसके देनेसे छींक और वमन होजायतो दूसरीवार मात्रादेना, वहरोगी वचेगा । यदि दोनों न होंतो उसमें यत्न नहीं करना वह उसीदिन मरजायगा । इसलिये लोगोंके दुराग्रह करनेपरभी उसरोज दूसरी मात्रा न देनी ३९९

४०० ब्रह्मास्त्ररसः (चतुर्थः)

कृष्णचित्रकमूलञ्च कृष्णामलकमेव च ।
कृष्णनिर्गुण्डिकामूलं कृष्णञ्च तुलसीदलम् ॥१७२९॥
एतत्सर्वं समं कृत्वा पटपूतं विधाय च ।
कृष्णवर्ण सूतभस्म लोहवङ्गाऽहिभस्म च ॥ १७३० ॥
चतुर्भस्म समङ्कृत्वा तदर्द्धं कृष्णपारदम् ।
तदेकांशं गन्धकञ्च तालकञ्च मनःशिला ॥ १७३१ ॥
नेपालं त्रिफला व्योषं रामठं माक्षिकं तथा ।
एतत्सर्वं समं पूर्वं पटपूतंविधाय च ॥ १७३२ ॥
ततसर्वं निक्षिपेत्खल्वे कृष्णोन्मत्तरसेन च ।
भृङ्गनिम्बार्द्रकरसै र्जम्बीररसवरसेन च ॥ १७३३ ॥
मर्दयेद्दशवारांश्च सम्यगञ्जनतुल्यकम् ।
मरीचबीजमात्रेण वटकान् कारयेद्भिषक् ॥ १७३४ ॥
एवमुष्णाम्बुना युक्तं नासायाञ्च प्रयोजयेत् ।
नागवल्ल्यमृतेन्द्राणीरसै र्युक्तं प्रयोजयेत् ॥ १७३५ ॥
अर्धमण्डलमात्रेण वातजालं विनाशयेत् ।
सप्तवारं त्रिवारं वा वातानेतान्विनाशयेत ॥ १७३६॥
हरीतक्याऽथ गोमूत्रे मधुना भृङ्गजाम्भसा ।
इदृग्विधानुपानैश्च कुष्ठानाञ्च प्रयोजयेत् ॥ १७३७ ॥
सर्वे कुष्ठा विलीयन्ते श्वेतकुष्ठं विशेषतः ।
षण्मासं सेवयेन्नित्यं कुष्ठवर्जं वपु र्भवेत् ॥ १७३८ ॥
पुनःषण्माससेवायां रक्तवर्णं भवेद्वपुः ।
त्रिमासं सेवयेत्पश्चात्कृष्णं भवति तद्वपुः ॥ १७३९ ॥
देहसिद्धि र्भवेत्तस्य जीवेदाचन्द्रतारकम् ।
अनुपानविशेषेण ज्वरादीन्नाशयेद्ध्रुवम् ॥ १७४० ॥

र.क.यो ,र.को. (शा) कुष्ठे ।

भाषा—कालेचित्रककी जड़, पुराने आमले, काले संभालूकी जड़, कालीतुलसीकीजड़ सब १–१ तोला लेकर वारीक चूर्णकर पारेकी कालीभस्म, लोह, वङ्ग, नाग इनकीभस्में १–१ तोला, कालापारा २ तोले, शुद्धगन्धक, हरिताल, मैनसिल, जमालगोटा, त्रिफला, त्रिकटु, भुनीहींग, सोनामाखी, ये प्रत्येक १–१ तोला लेकर सबको इकट्ठे मिलाय कालाधतूरा, भंगरा नीम, अदरख, जंभीरी इन प्रत्येकके रसोंसे १०–१० वार मर्दनकर कज्जलसदृश होनेपर मरिच प्रमाण गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली गरमपानीकेसाथ देवे और पकेपान, गिलोय, महर इनके रसोंमें मिलाकर नस्य देवे । सातदिनके प्रयोगसे यह समस्तवातविकारोंको दूरकरताहै । हर्रे, गोमूत्र, मधु तथा भंगरा इनमेंसे किसीएकके साथ ७ वार अथवा ३ वार देनेसे सम्पूर्णकुष्ठोंको दूरकरताहै विशेषकर श्वेतकुष्ठमें लाभदायकहै । छ महीनेतक सेवनकरनेसे शरीर कुष्ठरहितहोजाताहै उसकेवाद छ महीनेतक सेवन करनेसे रक्तवर्ण होजाताहै । एकवर्षके सेवनके वाद ३ महीने सेवनकरनेसे शरीर काला होजाताहै और देहसिद्धिको प्राप्तहोकर दीर्घायु होजाताहै ॥ ४०० ॥

४०१ ब्राह्मीवटी

त्वग्जातीफलदेवपुष्पमरिचाऽयोभस्मजातीच्छदाः,
विश्वाऽऽकल्लकधान्यकेसरिकणाश्चित्राऽजमोदावचाः
कुष्ठं तुम्बुरुभूमिनिम्बदरदाऽगुर्वश्च गन्धाऽम्बरं,
मुक्तावंशजकृष्णजीरककणामूलं विडङ्गानिच ॥१७४१॥
माणिक्यं शतपुष्पिका मलयजं चन्द्रोदयः पौष्करं,
कस्तूरी शतमूलिनी तृणमणि र्नीलं त्रिवृद्विद्रुमम् ।

दीप्यं यावनदेशजं यशभकं निष्कैकमेषां पृथक्,
ब्राह्मयाश्चाऽर्द्धपलं सुवर्णभसितन्निष्कञ्च तन्मर्दयेत् ॥
ब्राह्मयद्भिर्मधुना विधाय च वटीः
सम्यक् त्रिगुञ्जामिताः,
श्वासाऽपस्मृतिसन्निपातक-
सनोन्मादापतन्त्राऽपहाः ।
बुद्धिभ्रंशधनुःसमीरणगदौ
यक्ष्माणमुग्रं वल-,
क्षीणत्वं ग्रहणीं हरन्त्यथ गदा-
न्योग्यानुपानै र्लघु ॥ १७४३ ॥

वृ. क., अपस्मारादौ ।

भाषा—तज, जायफल, लौंग, मरिच, लोहभस्म, जावित्री, सोंठ, अक्लकरा, धनियां, गजपीपल, चित्रकमूल, अजमोद, बच, मीठीकुठ, तुम्बुल, चिरायता, शुद्धशिगरिफ, अगर, असगन्ध, अम्बर, मोती, नीलकण्ठीवंसलोचन, स्याहजीरा, पिपलामूल, विडङ्ग, माणिक्यभस्म, सोंफ, सफेदचन्दन, चन्द्रोदय, पोहकरमूल, कस्तूरी, शतावर, कहरवा, नीलमकीभस्म, सफेदनिसोत, मूंगेकीभस्म, अजवाइन देशी, खुरासानी अजवाइन, संगेयशवकीभस्म ४–४ माशे, ब्राह्मी २ तोले, सुवर्णभस्म ४ माशे लेकर ब्राह्मीके रसकी एकभावना देकर सुखाकर मधुसे ३–३ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे श्वास, अपस्मार, सन्निपात, खांसी, उन्माद, अपतन्त्रक (हिस्टीरिया), बुद्धिभ्रंश, धनुर्वात और समस्तवायुरोग, उग्रवेग यक्ष्मा, वलक्षीणता, ग्रहणी, इनसवको नष्टकरतीहै ॥ ४०१ ॥

४०२ ब्राह्मयरसायनम्

पञ्चानां पञ्चमूलानां भागान्दशपलोन्मितान् ।
हरीतकीसहस्रञ्च त्रिगुणामलकं नवम् ॥ १७४४ ॥
विदारिगन्धां वृहतीं पृश्निपर्णीं निदिग्धिकाम् ।
विद्याद्विदारिगन्धाद्यं श्वदंष्ट्रापञ्चमं गणम् ॥ १७४५॥
विल्वाऽग्निमन्थश्योनाकं काश्मर्यमथ पाटलीम् ।
पुनर्नवाशूर्पपर्ण्यौ वलामेरण्डमेव च ॥ १७४६ ॥
जीवकर्षभकौ मेदां जीवन्तीं सशतावरीम् ।
शरेक्षुदर्भकाशानां शालीनां मूलमेव च ॥ १७४७ ॥
इत्येष पञ्चमूलानां पञ्चानामुपकल्पयेत् ।
भागान्यथोक्तांस्तत्सर्वं साध्यं दशगुणेऽम्भसि १७४८
दशभागावशेषन्तु पूतं तद्ग्राहयेद्रसम् ।
हरीतकीश्च ताः सर्वाः सर्वाण्यामलकानि च ।१७४९।
तानि सर्वाण्यनस्थीनि फलान्यापोथ्य कूर्चनैः ।
विनीय तस्मिन् निर्यूहे चूर्णानीमानि दापयेत् १७५०
मण्डूकपर्ण्याः पिप्पल्याः शङ्खपुष्प्याः प्लवस्य च ।
मुस्तानां सविडङ्गानां चन्दनाऽगुरुणोस्तथा ॥१७५१॥
मधुकस्य हरिद्राया वचायाः कनकस्य च ।
भागांश्चतुष्पलान् कृत्वा सूक्ष्मैलायास्त्वचस्तथा १७५२
सितोपलासहस्रञ्च चूर्णितं तुलयाऽधिकम् ।
तैलस्य द्व्याढकं तत्र दद्यात्त्रीणि च सर्पिषः॥१७५३॥
साध्यमौदुम्बरे पात्रे तत्सर्वं मृदुनाऽग्निना ।
ज्ञात्वा लेह्यमदग्धञ्च शीतं क्षौद्रेण संसृजेत् ॥१७५४॥
क्षौद्रप्रमाणं स्नेहार्द्धं तत्सर्वं घृतभाजने ।
तिष्ठेत्सम्मूर्च्छितं तस्य मात्रां काले प्रयोजयेत् १७५५
यानोपरुन्ध्यादाहारमेवं मात्रां जरां प्रति ।
षष्टिकः पयसा चाऽत्र जीर्णे भोजनमिष्यते ॥१७५६॥
वैखानसा वालखिल्यास्तथा चान्ये तपोधनाः ।
रसायनमिदं प्राप्य वभूवुरमिताऽऽयुषः ॥ १७५७ ॥
मुक्त्वा जीर्णं वपुश्चाऽग्र्यमवापुस्तरुणं वयः ।
वीततन्द्राक्लमश्वासा निरातङ्काः समाहिताः ।१७५८।
मेधास्मृतिवलोपेताश्चिररात्रं तपोधनाः ।
ब्राह्मं तपो ब्रह्मचर्यं चेरुश्चात्यन्तनिष्ठया ॥ १७५९ ॥
रसायनमिदं ब्राह्ममायुष्कामः प्रयोजयेत् ।
दीर्घमायुर्वयश्चाऽग्र्यं कामांश्चेष्टान् समश्नुते ॥१७६०॥

च सं., रसायने।

भाषा—शालपर्णी, वनभांटा, प्रश्निपर्णी, भटकटैया, गोखरू यह **विदारिगन्धादि** १ पञ्चमूल है। विल्व, अरणी, सोनापाठा, गंभारी, पाटला, यह **विल्वादि** पञ्चमूल २ है। पुनर्नवा, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, वला, एरण्ड यह **पुनर्नवादि** ३ पञ्चमूल है। जीवक, ऋषभक, मेदा, जीवन्ती (अर्कपुष्पी), शतावरी यह **जीवकादि** ४ पञ्चमूल है। नरकट, ईख, डाभ, कास, धान यह **शरादि** ५ पञ्चमूल है। इन प्रत्येक पञ्चमूलके १० पल लेकर जवकुटकर दशगुना पानी डालकर मिट्टीके पात्रमें क्वाथ करें और उसमें एकहजार नग हर्रे, तीनहजार नग आवले डालदे। जव हर्रे और आवले पकजावें तव इनको अलग निकालले और मसलकर कपड़ेमें छानले। दशमभागावशिष्ट क्वाथको छानकर कड़ाहीके आकारके बनाए हुए गीले गूलरके पात्रमें डाले। पात्रपर ६–७ कपड़मिट्टी लगादे अथवा २–३ अङ्गुल कीचड़ लगाकर चढ़ावे और उसीमें हर्रे तथा आवलोंके कल्कको डालकर मिलादे। फिर ब्राह्मी, पीपल, शङ्खपुष्पी, नागरमोथा, मोथा, विडङ्ग, सफेदचन्दन, अगर, मुलहठी, हल्दी, वच, सुवर्णभस्म और छोटी इलायचीके छिलके ४–४ पल, शक्कर १००० पल, लेकर वारीक पीसकर उसीमें डालदे। इसकेवाद तिलका तैल ८ सेर, घी १२ सेर डालकर वहुत मन्द आंचसे पकावे। परन्तु यह ध्यान रक्खे कि अवलेह जल न जाय, गूलरकेही कड़छेसे चलाता रहे। जव अवलेहकी गोली वंधने लगे तव उतारकर रखले। एकदम ठंढा होनेपर १० सेर मधु मिलाकर घीके वर्तनमें रखकर १५–२० दिनवाद इतनीमात्राले जोकि अन्नके समयमें वाधा न पहुंचावे। दवाके अच्छीतरह पचजानेपर साठी चावल दूधकेसाथ खावे। इसके सेवनसे वैखानस, वालखिल्य प्रभृति ऋषिलोग नवीन शरीरको प्राप्त होकर तन्द्रा, क्लम, श्वास वगैरह समस्त रोगोंसे निर्मुक्त हुए और मेधा,

स्मृति, वलसे युक्त होकर ब्रह्मचर्यसे रहकर ब्राह्म्य तपकिया। यह ब्राह्म्यरसायन सेवन करता हुआ मनुष्यभी दीर्घायु, उत्तम शरीर और इष्टमनोरथको प्राप्तकरताहै ॥ ४०२ ॥

४०३ भक्तभस्मवटी

चूर्णीकृतं पञ्चपलं तुपाऽम्ले
स्विन्नं शिवायुग्विषतिन्दुवीजम्।
हिङ्गुः क्रिमिघ्नं त्रिपटु त्रिदीप्यं
पलं पृथक् त्र्यूषणगन्धयुक्तम् ॥ १७६१ ॥
चूर्णीकृतं निम्बुरसेन भाव्यं
कोलास्थिमात्रा वटिका विधेया।
संसेविता हन्ति नृणामजीर्णं
हृद्रोगगुल्मं क्षतजोत्थगुल्मम् ॥ १७६२ ॥
प्लीहाऽग्निमान्द्यार्तिमथाऽऽमवातं
शूलातिसारं ग्रहणीरुजञ्च।
जलोदरार्शःक्रिमिजांश्च रोगा-
न्हन्याद्वहून्वातकफोद्भवांश्च ॥ १७६३ ॥

र सु अजीर्णाऽधिकारे।

टि०—अस्य योगस्य मूलमग्निमत्रिभा वत्यन्ति तदीयपाठस्य जटिलत्वात्तस्मात्पृथक्त्याऽय पाठ सुगम स्यादिति बुद्ध्या स्वतन्त्रपथे वैद्य परन्तु तस्मात्पारद निष्कास्य त्रिपटूनि दत्तानि तेन तस्माद्योगादय स्वतन्त्र इव प्रतिभाति, परन्त्वन्य वीज स एव योग। पारदनिष्कासनेन तस्माद्योगाद्धीनकार्यकारीति सुधीभि विभावनीयम्। मूलयोगादन्य प्रमाणे च वैचित्र्य मजातमिति भेद दर्शयितुमेवाऽस्माभि स्वतन्त्रतया पाठो गृहीत।

भाषा—पांच ५ पल कुचिला और हर्रेको तुपाऽम्लमें ४ पहर स्वेदितकर छीलडाले और भीतरका अङ्कुरभी निकालदे। उसीतरह हर्रेके वीजोंको निकालदे और दोनोंकी चटनीसी वनाकर भुनाहींग, विडंग, सेंधा, संचल साभरनमक, तीनों अजवाइन (देशी, खुरासानी और खरजवाइन), सोंठ, मिर्च, पीपल और शुद्धगन्धक, १–१ पल लेकर सवका वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ पहर शुष्क मर्दनकर नीवूके रससे १ दिन घोटकर वेरकी गुठलीके वरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उष्णजल प्रभृतिकेसाथ लेनेसे अजीर्ण, हृद्रोग, गुल्म, रक्तगुल्म, प्लीह, अग्निमान्द्य, आमवात, शूल, अतिसार, ग्रहणी, जलोदर, ववासीर, क्रिमिरोग और कफवातजरोग इनसवको यह दूरकरतीहै ॥ ४०३ ॥

४०४ भक्तविपाकवटी

माक्षिकं रसगन्धौ च हरितालं मनःशिला।
गगनं कान्तलौहञ्च यथायोग्यं समाहरेत् ॥ १७६४ ॥
त्रिवृद्दन्ती वारिवाहं चित्रकञ्च महौपधम।
पिप्पली मरिचं पथ्या यमानी कृष्णजीरकम् ॥ १७६५ ॥
रामठं कटुका पाठा सैन्धवं साऽजमोदकम।
जातीफलं यवक्षारं समभागं विचूर्णयेत् ॥ १७६६ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव निर्गुण्ड्याः स्वरसेन तु।
सूर्यावर्तरसेनैव ज्योतिष्मत्या रसेन च ॥ १७६७ ॥
आतपे भावयेद्वैद्यः खल्वपात्रे च निर्मले।
पेपयित्वा वटीं कुर्याद्गुञ्जाफलसमप्रभाम् ॥
भक्षयेच्छाणमानेन लवङ्गस्य च योगतः ॥ १७६८ ॥

र र., र चं., र सु, रसं, अजीर्णे।

टि०—रसरत्नाकरे रसायनाधिकारे पाठ। र सु, भुक्तोत्तरीया वटीति नाम।

भाषा—शुद्ध सोनामाखी, पारा, गन्धक, हरिताल और मैनसिल, अभ्रक और कान्तलोहभस्म सव समभाग, निसोत, दन्तीमूल, नागरमोथा, चित्रकमूल, सोंठ, पीपल, मरिच, हर्रे, अजवाइन, स्याहजीरा, भुनाहींग, कुटकी, पाठा, सेंधानमक, अजमोद, जायफल, यवक्षार, सवसमभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ पहर सूखीघोटकर अदरख, निर्गुण्डी, हुरहुर, मालकागनी इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली ४ मासे लौंगकेचूर्णकेसाथ खानेसे अग्नि एकदमप्रदीप्त होजाताहै अजीर्णकी शङ्काभी नहीं रहती ॥ ४०४ ॥

४०५ भक्तोत्तरचूर्णम्।

अभ्रकं गन्धकञ्चैव पिप्पली लवणानि च।
त्रिक्षारं त्रिफला चैव हरितालं मनःशिला ॥ १७६९ ॥
पारदञ्चाऽजमोदा च यमानी शतपुष्पिका।
जीरकं हिङ्गु मेथी च चित्रकं चविका वचा ॥ १७७० ॥
दन्ती शैलेयकं मुस्ता त्रिवृता मृतलोहकम्।
अञ्जनं निम्ववीजानि पटोलं वृद्धदारकम् ॥ १७७१ ॥
सर्वाणि चाऽक्षमात्राणि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्।
शतं कनकवीजानि शोधितानि प्रयोजयेत् ॥ १७७२ ॥
सर्वमेकीकृतं युक्त्या यथाशक्त्या प्रदापयेत्।
एतदग्निविवृद्ध्यर्थमृपिभिः परिकीर्तितम् ॥ १७७३ ॥
श्लीपदान्यन्त्रवृद्धिञ्च वातवृद्धिञ्च दारुणाम्।
अरुचिञ्चाऽऽमवातञ्च शूलं वातसमुद्भवम् ॥ १७७४ ॥
गुल्मञ्चैवोदरव्याधीन्नाशयत्याशु तत्क्षणात्।
भक्तोत्तरमिदं चूर्णमश्विभ्यां निर्मितं पुरा ॥ १७७५ ॥

वै क, भै र, अन्त्राऽण्डवृद्ध्यधिकारे।

भाषा—अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, पीपल, पाचोंनमक, तीनोंखार, त्रिफला, हरिताल और मैनसिलकी भस्म, शुद्धपारा, अजमोद, अजवाइन, सोंफ, जीरा, भुनाहींग, मेथी, चित्रकमूल, चव्य, वच, दन्तीमूल, छड़ीला, मोथा, निसोत, लोहभस्म, सफेद सुरमा, नीमकेवीजोंकी गिरी, परवल, विधारा येसव १–१ तोला और शुद्ध धतूरेके वीज १०० नग लेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर १–२ पहर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ मासा उचितानुपानकेसाथ

देनेसे मन्दाग्नि, श्लीपद, अन्त्रवृद्धि, भयङ्करवातवृद्धि, अरुचि, आमवात, वातशूल, गुल्म, उदररोग इनसवको यह नष्ट करताहै ॥ ४०५ ॥

४०६ भगन्दरहरोरसः (व्याधिहरणः)

सूतस्य द्विगुणं गन्धं तथैव रसचन्द्रकम् ।
प्रसारिण्या रसैः पश्चान्मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ १७७६ ॥
घर्मे विशोष्य तत्सर्वं काचकूप्यां विनिक्षिपेत् ।
मुद्रयित्वा मुखं तस्यास्ताश्च भूमौ निधापयेत् ।१७७७।
ऊर्ध्वोऽधश्च मलं दत्वा घोटकस्य विचक्षणः ।
त्रिमासाऽन्ते समुद्धृत्य खादेद्गुञ्जाचतुष्टयम् ॥
भगन्दरं निहन्त्येप साध्याऽसाध्यं न संशयः ॥१७७८॥

वै. द., र. प्र., भगन्दरे ।

टि०-नि. र., वै. क., र. च., व. रा., वै. चि., एपुग्रन्थेपूपदंशाऽधिकारे व्याधिहरणनाम्ना एकः पाठो निहितोऽस्ति स च बहुलांशेऽनेनसमानः केवलं पाके विशेषः स यथा—"हिङ्गुलोत्थं रसं भागं द्विभागं रसचन्द्रकम् । रसतुल्यं बलिं दद्यात्खल्वमध्ये तु कज्जलीम् ॥ पञ्चमृत्स्नापुटे रुद्ध्वा दद्यादण्डे वालुकागतम् । दिनैकन्तुक्रमाद्वह्निं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ पूजयेद्गुरुविप्रादीन्यथारोगं प्रयोजयेत् । गुञ्जाचतुष्टयं साज्यनागवल्लीदलैर्युतम् ॥ पण्ढोऽपि लभते पुंस्त्वं वाजीकरणमुत्तमम् । अपुत्रः पुत्रमाप्नोति जीवेच्च शरदां शतम् ॥ वलीपलितहच्छूलवातश्लेष्मनिवर्हणम् । अयं व्याधिहरः सूतः पूज्यपादेन निर्मितः ॥

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक और रसकपूर २–२ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर प्रसारिणीके रससे ७ दिनतक मर्दनकर धूपमें सुखाकर आतशीशीशीमें भरके मुँहवन्दकरदे और कमरवरावर खोदेहुए गढ्ढेमें घोड़ेकी ताज़ीलीदमें दवादे । तीन महीनेके वाद निकालकर इसमेंसे ४–४ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे साध्य अथवा असाध्य भगन्दर नष्टहोताहै ॥४०६॥

४०७ भगन्दरारी रसः

सूतं गन्धं मृतं ताम्रमभ्रकं दरदं समम् ।
मरिचं द्विगुणं दत्वा मर्दयेच्चित्रकाऽम्बुना ॥१७७९॥
त्रिदिनं भावयित्वाऽथ भक्षयेद्रक्तिकाद्वयम् ।
भगन्दरं पञ्चविधं जयेच्छ्रीशम्भुशासनात् ॥१७८०॥

र. म. मा., र. का. भगन्दरे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र, अभ्रकभस्म शुद्धशिंगरिफ समभाग और सवसे दूनी मरिच लेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ पहर शुष्कमर्दनकर चित्रकमूलके क्राथसे ३ रोज़ मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली महामञ्जिष्ठादिकाथ प्रभृतिके साथ देनेसे यह भगन्दरको जल्दी नष्टकरताहै ॥४०७॥

४०८ भगन्दरोपदंशारीरसः

रससोरककासीसतुवरीटङ्कणं विषम् ।
विपचेड्डमरूयन्त्रे वेदयामान्भिषग्वरः ॥ १७८१ ॥
लवङ्गपिहितं दद्याद्गुञ्जायुग्ममितं रसम् ।
भगन्दरोपदंशानां नाशकं श्रेष्ठमौषधम् ॥ १७८२ ॥

र. का., उपदंशे ।

भाषा—शुद्धपारा, शोरा, कसीस, फिटकड़ी, सुहागा और वछनाग सव समभागलेकर कज्जलीकर डमरूयन्त्रमें ४ पहरकी चूल्हेपर अग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्ती लवङ्गके कल्कमें कवलितकर निगलवादे और नमकरहित भोजन देवे तो भगन्दर तथा उपदंश नष्टहोवें ॥४०८॥

४०९ भङ्गादिगुटिका

भङ्गाऽष्टपलिका ग्राह्या तथा ज्योतिष्मती मता ।
द्वादशप्रमिता ग्राह्या पारसीकयवानिका ॥ १७८३ ॥
नवटङ्कमितो ग्राह्यो ह्यजमोदस्तथा मतः ।
टङ्काऽष्टादशकस्तद्वद्वर्जितं धूर्तबीजकम् ॥ १७८४ ॥
टङ्कषट्कमिता ग्राह्या जातिपत्री तथैव च ।
नवटङ्कमितं प्रोक्तं फलं जात्याश्च तत्समम् ॥ १७८५ ॥
अहिफेनं तथैव स्यात्सर्वमेकत्र चूर्णितम् ।
गुडश्च द्विगुणस्तस्माद्रसभस्माऽर्द्धकर्षकम् ॥१७८६॥
लेहवत्साधयेत्तेषु कृतं चूर्णं विनिःक्षिपेत् ।
गुटीं निष्कमितां दद्यात्पिवेद्दुग्धमहर्निशम् ॥ १७८७ ॥
पण्ढः पौरुषमासाद्य मोदेन रमते स्त्रियम् ।
दुर्वलोऽपि वलं प्राप्य हठेन रमते स्त्रियम् ॥१७८८॥
एकवारं रतिसहश्चतुर्वारं स्त्रियं भजेत् ।
हस्तकर्मकृतं दोषं नाशमायाति निश्चितम् ॥
नष्टवीर्यविवृद्धिःस्याद्बृंहणत्वंप्रपद्यते ॥ १७८९ ॥

र. कु. वाजीकरणे ।

भाषा—भाग और मालकागनी ८–८ पल, खुरासानी अजवाइन (जोकि कालेरङ्गकीनहो) १२ पल, अजमोद ९ टङ्क, भुनेहुए धतूरेके वीज १८ टङ्क, जावित्री ६ टंक, जायफल, और शुद्ध अफीम ९–९ टङ्क लेकर वारीकचूर्णकर अफीमकेसाथ थोड़ाथोड़ा मिलाकर घोटदे जिसमेंकि अफीम ठीक तौरपर मिलजाय । फिर इसचूर्णसे दूने पुरानेगुड़की २॥ तारकी चासनी वनाकर धीरेधीरे सव दवाइया मिलाकर पारेकीभस्म आधाकर्ष मिलावे और ४–४ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली दूधकेसाथ लेकर केवल दूधही पीनेसे पण्ढत्व, दौर्वल्य, हस्तकृतदोष, नष्टवीर्यत्व इनसवको दूरकरके हृष्टपुष्ट वनातीहै और आयुको वढातीहै ॥ ४०९ ॥

४१० भल्लातकपाकः (प्रथमः)

भल्लातान् परिगृह्य वृन्तरहितान्प्रस्थोन्मितानम्भसि,
प्रस्थै विंशतिमानके हुतभुजि श्रातान् पयस्याढके ।
कल्कीभावमुपागते च कुडवे घार्ते पुन भर्जितान्,
खल्वे सूक्ष्मतया विमर्दिततनून् कृत्वा भिषग् दापयेत्
वङ्गं पारदभूतिकां कनकजां कर्षार्द्धमानं पृथक्,
त्वक्क्षीरीं मदयन्तिकां मणिशिलां कर्षप्रमाणाः क्षिपेत्
रत्नज्योतिलवङ्गकेशरमिशित्वग्जातिपत्रं पृथक्,
कर्षद्वन्द्वमितं सुचन्दनपलं कर्षार्द्धकस्तूरिकाम् १७९१

एलां वल्कलपत्रविश्वमगधाः शृङ्गी शिवायुग्मकम्,
धात्रीं जीरयुगोपकुञ्चिमरिचं धान्यं तिलान् कार्षिकान्।
प्रस्थे फेनविवर्जिते मधुभवे सम्मिश्रय सर्वं सुधीः,
सौवर्णेऽप्यथ राजते मणिभवे मार्तेऽपि वा स्थापयेत्
कर्पार्द्धं विनियुज्य प्रातरस्माद्युक्ताऽनुपाने क्षणाद्,
वाताऽस्रं गलिताऽस्थिपादकरजं त्वग्दाहपिडकान्वितं
पामस्फोटविचर्चिकाः किटिभकं कण्डूग्रतापाऽन्वितम्,
शुक्रर्तुत्रुटिवातरोगनिवहं हन्त्यक्षिमूर्धादिजान् १७९३
नू क ,कुष्ठाऽधिकारे।

भाषा—वृन्तरहित ताजे और मोटे एकप्रस्थ भिलावोंको २० प्रस्थ पानीमें डालकर मन्द आचसे पकावे । चतुर्थांश रहनेपर भिलावोंको निकालकर पानीको फेंकदे । फिर १ आढक गोदुग्धमें डालकर पकावे । चतुर्थांश दूध वाकी रहनेपर भिलावोंको निकालकर दूधको फेंकदे फिर पावभर गोघृतमें इन्हें मन्द आचसेभूने । अच्छीतरह सिकजानेपर उतारकर ठंढाहोनेपर मक्खनके सदृश वारीक पीसे फिर वङ्ग, पारा, सुवर्ण इनकी-भस्में आधाआधाकर्ष, तज, वंसलोचन, मेंहदीके फूल, २१ वार गोमूत्रमें बुझाईहुई मैनसिल येसव १–१ कर्ष, रतनजोत, लौंग, केशर, सोंफ, कलमीतज, जावित्री, येसव २–२ कर्ष, सफेद-चन्दनकाचूर्ण १ पल,अच्छीकस्तूरी आधाकर्ष,इलायची,भोजपत्र, तमालपत्र, सोंठ, पीपल, काकड़ासींगी, मेंढासींगी, दोनोंहर्रे आवला, स्याह-सफेदजीरे, मगरैल, मरिच, धनिया और तिल १–१ कर्ष इनसवको इकठे मिलावे और गरमकर फेननिकालेहुए १ प्रस्थ ठंढेमधुमें मिलाकर सुवर्ण, चादी, मणि अथवा मिट्टीकेवर्तनमें रखछोड़े । इसको ७ दिन धान्यकीराशिमें रखकर निकालले फिर ७ दिनवाद आधा २ तोला तत्तद्रोग हरानुपानकेसाथ प्रात कालमें देनेसे वातरक्त, गलितकुष्ठ जिसमेंकि हड्डी,पैर नख गलने लगेहों दाह और पिडकाओंसे युक्तहो। पामा, स्फोट, विचर्चिका, किटिभ, कण्डू, प्रचण्डदाहयुक्त कुष्ठ, शुक्र और ऋतुदोष, भयकर वातरोग, आख और मस्तककेरोग, श्वास, कास, इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ४१० ॥

४११ भल्लातकपाकः (द्वितीयः)

भल्लातकानां द्वौ प्रस्थौ द्रोणे दुग्धे विपाचयेत्।
द्विप्रस्थञ्च घृतं दद्यात्प्रस्थं शुद्धाञ्च शर्कराम् ।१७९४।
त्रिफलां त्रिपलां मुस्तां मञ्जिष्ठां धान्यजीरके।
चातुर्जातकह्रीवेरयष्टीपत्रककेसरान् ॥ १७९५ ॥
लवङ्गजातीकङ्कोलं विदारीकन्दमुत्पलम्।
वंशजं लोहताम्रे च कर्पूरं खदिरंसमम् ॥ १७९६ ॥
प्रस्थार्द्धं निक्षिपेच्चूर्णं भक्षयेत्कर्षमात्रकम्।
रक्तपित्तञ्च कुष्ठञ्च दद्रुपामाविचर्चिकाः ॥ १७९७ ॥
चक्रितं वातरक्तञ्च प्रवहत्पूयशोणितम्।
अङ्गस्फुरणबाधिर्यं शैथिल्यञ्च कुलोद्भवम् ॥
वातव्याधिमशेषञ्च पित्तकृन्ति परित्यजेत् ॥१७९८॥
पा व.,

भाषा—दोसेर टोपीनिकाले हुए भिलावोंके टुकड़ेकर १६ सेर गायके दूधमें पकावे । मावा होनेपर भिलावोंको निकाल-कर फेंकदे और मावेमें घी २ सेर, शक्कर १ सेर डालकर इतना पकावे कि मावे का पानी जलजाय और शक्कर गलकर मावे के साथ एक जीव होजाय । फिर नीचे उतारकर त्रिफला ३ पल, नागरमोथा, मजीठ, धनिया, दोनोंजीरे, चातुर्जात (तज, पत्रज, इलायची और नागकेसर,) हाऊबेर, मुलहटी, पत्रज, केसर, लौंग, जायफल, शीतलचीनी, विदारीकन्द, कमलगट्टा, वंसलोचन, लोह और ताम्रभस्म, शुद्धकपूर और खैरसार येसव डेढ १॥ कर्ष, लेकर वारीक चूर्णकर पाकमें मिलाकर घीके वर्तनमें रखछोड़े । ६–७ दिनकेवाद इसमेंसे १–१ तोला खानेसे रक्तपित, कुष्ठ, दद्रु, पामा, विचर्चिका, चकत्ते, पीव और लोहू निकलता हुआ वातरक्त, अङ्गोंका फड़कना, वधिरता, कुलपरम्परागत शिथिलता और तमाम वातव्याधि नष्टहोतेहैं । पित्त-कारक पदार्थोंकात्याग करे ॥ ४१२ ॥

४१२ भल्लातकरसायनम् (प्रथमम्)

भल्लातकी शतपला तदर्द्धं विल्वमूलकम्।
काश्मरी कण्टकारी च व्याघ्री तुण्डा च पाटला ।१७९९।
गोक्षुरद्वयनिर्गुण्ड्यौ शतमूली सुगन्धकः।
मरीचानि यवासाश्च पटोली रेणुकण्टकौ ॥ १८०० ॥
पुनर्नवा वंशमूलं शरपुङ्खी त्रिवृद्बला।
वज्रवल्ली यष्टिमधु लामज्जो झिण्टिकुण्डलम् ॥१८०१॥
चित्रमूलं हस्तिकर्णी घनमूलमयीश्वरी।
मूर्वा च पद्मकन्दश्च ह्यार्द्रकं निम्बमूलकम् ॥१८०२॥
चतुस्त्रिंशच्च मूलानि विल्वमूलार्द्धकं क्षिपेत्।
अष्टद्रोणजले पाच्यमष्टभागाऽवशेषितम् ॥१८०३॥
आदाय स्वरसांश्चाऽस्मिन् भृङ्गी मत्स्याक्षिका तथा।
हंसपादी काकमाची तुलसी गणकारिका ॥१८०४॥
एतेषां स्वरसञ्चैव प्रस्थ प्रस्थं विनिःक्षिपेत्।
त्रिकटु त्रिफला चव्यं रास्ना भार्ङ्गी मधुस्नुही ।१८०५।
ग्रन्थिकञ्च विडङ्गानि कणामूलञ्च रेणुकम्।
जीरद्वयञ्च कुष्ठञ्च धान्यकं कटुरोहिणी ॥ १८०६ ॥
लाक्षा च रजनी मांसी मुस्ता श्रीगन्धचोरकम्।
हयगन्धिमरालञ्च शिलाजतु शिलाफलम् ॥१८०७॥
जातीफलञ्च तत्पत्रं कुङ्कुमं नागकेसरम्।
द्राक्षोशीरञ्च खर्जूरमुदीच्यं रोचनं तथा ॥१८०८॥
गन्धकं वृद्धदारञ्च लोहभस्म च वङ्गकम्।
अभ्रकं नागभस्माऽथ श्रीगन्धवंशरोचनाः ॥१८०९॥
जटामांसी गजकणा वाराही च शतावरी।
तालीसपत्रं तक्कोलं मिसी धान्यं लवङ्गकम् ।१८१०।
कृष्णाऽगुरु तुगाक्षीरी मुसली तगरं तथा।
एतानि समभागानि प्रत्येकं पलमानकम् ॥१८११॥
नरिकेलजलञ्चैव नारिकेलफलन्तथा।
आर्द्रकस्याऽपि स्वरसः स्नुग्जम्बीररसौ तथा ।१८१२।

गोक्षीर प्रस्थमादाय गोघृतं प्रस्थमात्रकम् ।
पुराणं तालजगुडं मधुप्रस्थद्वयं क्षिपेत् ॥ १८१३ ॥
धन्वन्तरिं पूजयित्वा कर्षमात्रं तु सेवयेत् ।
हन्त्यष्टादश कुष्ठानि गुल्मशूलनिवारणम् ॥ १८१४ ॥
सर्ववातमपस्मारमुदरं श्वासरोगकम् ।
मूत्राघातं मूत्रकृच्छ्रं वातरोगं हरेत्तथा ॥ १८१५ ॥
रक्तमेहं तन्तुमेहं व्रणश्च मधुमेहकम् ।
हस्तिमेहं सुरामेहं पुराणज्वरनाशकम् ॥१८१६॥
अशीतिं वातजान्रोगान् सर्वशूलं व्यपोहति ।
तुरङ्गजवसंयुक्तो मत्तङ्गबलविक्रमः ॥ १८१७ ॥
गच्छेद्गन्धर्वदर्पाङ्गः कन्दर्प इव मूर्तिमान् ।
शतं वाऽपि सहस्रं वा रमयेद्वनिताः पुमान् ॥१८१८॥
सोमरोगं ग्रन्थिवातं शुक्लरोगं विनाशयेत् ।
वीर्यवृद्धिकरं पुंसां चर्मदोषनिवारणम् ॥१८१९॥
सर्वं कुष्ठं क्षयं हन्ति सर्वान् मेहान् व्यपोहति ।
महाभल्लातको नाम ह्यश्विनीदेवनिर्मितः ॥ १८२० ॥

वै चि., रसायने ।

भाषा—टोपीनिकालेहुए भिलावे १०० पल, वेलकीजड़ ५० पल, गंभारी, भटकटैया, वनभांटा, काकनासिका, पांढर, दोनों गोखरू, दोनों संभालू, शतावर, कुकरोंधा, मरिच, जवासा, परवल, रेणुका (रोण पहाड़ी), मैनफल (मींढोळ गु), पुनर्नवा, वासकी जड़, शरपुङ्ख, निसोत, वला, हड़जोड़, मुलहठी, वारीकखस, कटसरैया, महर, चित्रककीजड़, हस्तिकर्णपलाश, नागरमोथा, इसरोड, मरोडफली, पद्मकन्द, अदरख, नीमकी जड़, इन चौंतीस चीज़ोंकी जड़ २५-२५ पल लेकर सवका जवकुट चूर्णकर १६ द्रोण पानीमें उवाले । अष्टभागावशेषरहनेपर छानले फिर भंगरा, मछेछी, हंसराज, मकोय, तुलसी, अरणी, इनप्रत्येकका अङ्गस्वरस १-१ सेर, त्रिकटु, त्रिफला, चव्य, रास्ना, भारङ्गी, डंडाथूहर, गठिवन, विडङ्ग, पिपलामूल, रेणुका (रोण. पहाड़ी), दोनोंजीरे, कुठ, धनिया, कुटकी, पीपलकीलाख, हल्दी, रोहण, नागरमोथा, विरोजा, खरजवाइन असगन्ध, हंसराज, शिलाजीत, हजरतयहूद, जायफल, जावित्री, केसर, नागकेसर, द्राक्ष, खस, छुआरे, सुगन्धवाला, गोरोचन, शुद्धगन्धक, विधारा, लोह, वङ्ग, अभ्रक, और सीसेकीभस्म, सफेदचन्दन, वंसलोचन, जटामासी, गजपीपल, वाराहीकन्द, शतावर, तालीसपत्र, शीतलचीनी, सोफ, धनिया, लौग, कालाअगर, तीखुर, स्याह सफेद मुसली और तगर १-१ पल, नारियलका जल तथा गिरी, अदरख, डंडा थूहर और जंभीरीकारस, गायका दूध ये प्रत्येक १-१ सेर-गोघृत १ सेर, पुराना ताड़का गुड़ और मधु २-२ सेर लेवे । इनमेंसे सुखीदवाओंको अलग निकालकर कपड़छान चूर्णकरले । फिर पूर्वमें किया हुआ क्वाथ और पीछेके स्वरस, घी, दूध तथा गुड़ इनसवको इकट्ठा मिलाकर पकावे । जव कड़छेमें कल्क लाने लगे उससमय चूर्णको डालकर चलावे । जव गोली वंधने लगे और हाथके न लगे उससमय उतारकर रखले । ठंढाहोनेपर मधु मिलाकर चिकने वर्तनमें रखछोड़े । ६-७ दिन वीतजानेपर इसमेंसे १-१ तोला उचितानुपानकेसाथ सेवनकरनेसे १८ प्रकारके कुष्ठ, गुल्म, शूल, समस्त वातव्याधि, मृगी, उदररोग, श्वास, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, रक्तमेह, तन्तुमेह, व्रण, मधुमेह, हारिद्रमेह, सुरामेह, पुरानाज्वर, समस्तशूल, सोमरोग, ग्रन्थिवात, शुक्ररोग, वीर्यनाश इनसवको दूरकर आदमीको वल, वीर्य, वर्णयुक्त वनाकर कन्दर्पसदृश वनादेता है ॥ ४१२ ॥

४१३ भल्लातकरसायनम् (द्वितीयम्)

विडङ्गलौहभल्लातशुण्ठीराज्यमधुप्लुताः ।
सेवेत नियतो नित्यं ब्रह्मचारी व्रते स्थितः ॥१८२१॥
रक्ताऽल्पत्वकृता रोगा नाशमायान्ति सत्वरम् ।
वलीपलितनिर्मुक्तो मासत्रितयसेवनात् ॥ १८२२ ॥

नृ. क रसायने ।

भाषा—विडङ्ग, लोहभस्म, शुद्धभिलावे और सोंठ समभाग लेकर वारीक चूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ माशे मधु और घीमें मिलाकर प्रात काल सेवन करनेसे पाण्डु, वलीपलित, अशक्ति और तमाम धातुओंके अभावको दूरकर मनुष्यको दीर्घायु वनाता है । इसका प्रयोग कमसेकम ३ महीनेतक करना चाहिये ॥ ४१३ ॥

४१४ भल्लातकलोहम्

चित्रकं त्रिफला मुस्तं ग्रन्थिकं चविकाऽमृता ।
हस्तिपिप्पल्यपामार्गदण्डोत्पलकुठेरकाः ॥ १८२३ ॥
एषां चतुष्पलान्भागाञ्जलद्रोणे विपाचयेत् ।
भल्लातकसहस्रे द्वे छित्त्वा तत्रैव दापयेत् ॥ १८२४ ॥
तेन पादाऽवशेषेण लोहपात्रे पचेद्भिषक् ।
तुलार्द्धं तीक्ष्णलोहस्य घृतस्य कुडवद्वयम् ॥ १८२५ ॥
त्र्यूषणं त्रिफलां वह्निं सैन्धवं विडमौद्भिदम् ।
सौवर्चलं विडङ्गञ्च पलिकांशं प्रकल्पयेत् ॥ १८२६ ॥
कुडवं वृद्धदारस्य तालमूल्यास्तथैव च ।
सूरणस्य पलान्यष्टौ चूर्णं कृत्वा विनिक्षिपेत् ॥१८२७॥
सिद्धे शीते प्रदातव्यं मधुनः कुडवद्वयम् ।
प्रातर्भोजनकाले वा ततः खादेद्यथाबलम् ॥ १८२८ ॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषं पाण्डुरोगमरोचकम् ।
क्रिमिगुल्माश्मरीमेहांश्छूलञ्चाशु व्यपोहति ॥१८२९॥
करोति शुक्रोपचयं वलीपलितनाशनम् ।
रसायनमिदं श्रेष्ठं सर्वरोगहरं परम् ॥ १८३० ॥

वृ.मा., र. चि., रसायनसं., लो. प., र. क , रससागर., टो , हा. सं , यो. म , र का , अर्शोरोगे ।

भाषा—चित्रकमूल, त्रिफला, नागरमोथा, गठिवन, चव्य, गिलोय, गजपीपल, अपामार्ग, ब्रह्मदण्डी, जंगलीतुलसी, इनप्रत्येकके ४ पल लेकर जवकुटकर एकद्रोण (१६ सेर) पानीमें लोहेके पात्रमें पकावे और पकातेसमय २००० भिलावे कूटकर डालदे । चतुर्थांशावशेष रहनेपर छानकर सीठीफेंकदे । फिर

फौलादभस्म ५० पल, घी आधसेर, त्रिकटु, त्रिफला, चित्रक, सेंधानमक, नवसादर, खरियानमक, संचल, विडङ्ग येसव १–१ पल, विधारा, तालमूली ४–८ पल, सूरण ८ पल इनसवका वारीकचूर्णकर उसीमें डालकर पकावे । सिद्धहोजानेपर उतारकर एकदम ठंढाहोनेपर आधसेर मधु मिलाकर चिकने वर्तनमें रखछोड़े । ३–४ दिनवाद इसमेंसे ६–६ माशे सुवह अथवा भोजनके समय खानेसे ववासीर, ग्रहणी, पाण्डु, अरुचि, क्रिमि, गुल्म, पथरी, प्रमेह, शूल, वलीपलित, इनसवको नष्टकर आदमीको जवान वनाता है ॥ ४१४ ॥

४१५ भल्लातकाऽमृतम्

भल्लातकचतुष्षष्टिपलं दुग्धश्च तत्समम् ।
दुग्धाच्चतुर्गुणं वारि पाच्यं दुग्धाऽवशेषितम् ॥१८३१॥
दुग्धतुल्यं घृतं योज्यं घृतपादां सितां क्षिपेत् ।
मधुधात्र्यौ सितातुल्ये सिताऽर्द्धमभयारजः ॥१८३२॥
मृतलोहं गुडूच्याश्च प्रत्येकमभयाऽर्द्धकम् ।
क्षिपेत्स्निग्धघटे सर्वं धान्यराशौ निवेशयेत् ॥१८३३॥
सप्ताहादुद्धृतं तत्तु खादेन्निष्कत्रयं त्रयम् ।
भल्लातकाऽमृतं नाम हन्ति रक्तार्शसां वलम् ॥
क्षारं तीक्ष्णं न भोक्तव्यं तैलाभ्यङ्गञ्च वर्जयेत् ॥१८३४॥

व.रा , वै चि , र को , अर्शोधिकारे ।

भाषा—६४ पलदूधमें टोपीउतारकर टुकड़े किये हुए भिलावे ६४ पल डालकर चौगुना पानी मिलाकर पकावे । दुग्धमात्र अवशेष रहनेपर भिलावोंको निकालकर घृत ६४ पल और शक्कर, मधु तथा आवले १६–१६ पल, हर्रेकाचूर्ण ८ पल, लोहभस्म, गिलोयका सत्त्व ये प्रत्येक ४–४ पल लेकर वारीक चूर्णकर पहिले दूधमें घी डालकर मावा वनाकर सेकले फिर नीचे उतारकर सवचीजें मिलादे। एकदम ठंढाहोनेपर मधुमिलाकर चिकने वर्तनमें वन्दकर अनाजके ढेरमें दवादे । सातदिनवाद निकालकर १–१ तोला रोजाना खानेसे यह खूनीववासीर के वलको नष्टकरताहै । क्षार और तीक्ष्णपदार्थ न खाय, तैलाभ्यङ्ग न करावे ॥ ४१५ ॥

४१६ भस्मामृतरसः (प्रथम.)

धान्याऽभ्रं सूतकं तुल्यं मर्दयेन्मारकद्रवैः ।
दिनैकं तिलकल्केन पटे लिप्त्वाऽथ वर्तिकाम् १८३५
कृत्वैव तस्य तैलेन विलिप्य च पुन पुनः ।
प्रज्वाल्य तामधः पात्रे सतैलं पारदं पचेत् ॥१८३६॥
स दिनं भूधरे पक्वो भस्मीभवति नाऽन्यथा ।
योजितो रसयोगेशस्तत्तद्रोगहरो भवेत् ॥ १८३७ ॥
मर्दनं तप्तखल्वेऽस्य विशेषादग्निकारकः ।
अत्र प्रकरणे वक्ष्ये शुद्धसूतस्य मारिकाः ॥ १८३८ ॥
औषधी र्याः समस्ता वा व्यस्ताऽव्यस्ता दशोत्तराः ।
योजिता घ्नन्ति देवेशि सूतं गन्धं विनाऽपि ताः ॥
मेघनादो वज्रवल्ली देवदाली च चित्रकम् ।
वला शुण्ठी जयन्ती च कर्कोटी तुम्बिका तथा १८४०
कटुतुम्बीकन्दरम्भाकन्दश्यारणशुण्डिकाः ।
कापोतस्यमृताकन्दं कन्यका चक्रमर्दकम ॥ १८४१ ॥
सूर्यावर्तः काकमाची गुञ्जानिर्गुण्डिका तथा ।
लाङ्गली सहदेवी च गोक्षुरः काकतुण्डिका ॥१८४२॥
जातीलज्जालुकटुकाहंसपादीभृङ्गराजकम ।
ब्रह्मवीजश्च भूधात्री नागवल्ली धरी तथा ॥ १८४३ ॥
स्नुह्यर्कदुग्धं तुलसी धुस्तूरो गिरिकर्णिका ।
गोपाली पटुरेताभि वज्रमूषागतं पचेत् ॥ १८४४ ॥
प्रावाणश्च तुषा दग्धा दग्धा वल्मीकमृत्तिका ।
लोहकिट्टञ्च यमार्द्धमजाक्षीरेण मर्दयेत् ॥
नृकेशशणसंयुक्ता वज्रमूषा प्रकीर्तिता ॥ १८४५ ॥

र. चि , रसायने ।

भाषा—धान्याभ्रक और शुद्धपारा समभागलेकर मारकगणोक्त औषधियोंके रस और तिलके कल्कसे एकदिन मर्दनकर साफकपड़ेपर लेपकरके वत्ती वनाय तिलके तेलमें वारम्वार डुवाकर वीचमेंसे चीमटेसे पकड़कर पात्रमें रखकर आग लगावे, वत्ती जलती जायगी और पारसहित तेल टपकता जायगा । इसपारे सहित तैलको मूषामें वन्दकर एकदिन भूधरयन्त्रमें अग्नि देनेसे भस्महोगी । इसमेंसे १–१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरता है । इसपारेको तप्तखल्वमें मर्दन करनेसे अग्निवर्धक गुण अधिक होजाताहै । प्रकरणानुरोधसे पारेको मारनेवाली दवाओंका नाम लिखा जाताहै ये गन्धकके विनाही पारेकीभस्मको करदेतीहैं । काटयालीचौलाई, तिधारीहड़जोड़, वन्दाल, चित्रक, वला, सोंठ, जेंत, खेखसा, कड़वीतूवी, तूंवीकीजड़, केलेकाकन्द, हाथीशुण्डी, कड़वीतोरई, गुडूचीकन्द, घीकुंआर, चकवड़, हुरहुर, मकोय, गुञ्जा, निर्गुण्डी, करिहारी, सहदेवी, गोखरू, काकनासिका, जाती, लज्जालु, राई, हंसराज, भागरा, ढाककेवीज, भूधात्री, पान, शतावरी, सेहुण्ड, आकका दूध, तुलसी, धतूरा, कोयल, गोपालीलता, (गोवाली० म०) और नमक इनमें घोटकर वज्रमूषामें रख पकानेसे पारेकी भस्म होती है । पत्थर, जलेहुएतुष, जलीहुईविम्वीकी मिट्टी, लोहकिट्ट सव समभागलेकर आधेपहर वकरीके दूधमें मर्दनकर मनुष्यके केश और शणको वारीक कतरके उसमिट्टीमें कूटकूटकर एकजीव करदे । इससे वनाईहुई मूषाको वज्रमूषा कहते है ॥ ४१६ ॥

४१७ भस्मामृतरसः (द्वितीयः)

अभ्रसूतगवां मूत्रैः पेषयेद्रक्तमूलिकाः ।
तद्द्रव मर्दयेत्सूतं तुल्यगन्धकसंयुतम् ॥ १८४६ ॥
तप्तखल्वे चतुर्यामम विच्छिन्नं विमर्दयेत् ।
तत्पिण्डं पाचयेद्यन्त्रे त्रिसंघट्टे महापुटे ॥१८४७॥
एवं दशपुटैश्चैव मर्द्यं पाच्यं पुनः पुनः ।
तदुद्धृत्य पुन मर्द्यं वज्रमूष्यां निरोधयेत् ॥ १८४८ ॥

भूधराख्ये पचेद्यन्त्रे दशधा भस्मतां व्रजेत् ।
द्रवैः पुनःपुनर्मर्द्य सिद्धोऽयं भस्मसूतकः ॥१८४९॥
मूलिकामारितः सूतो जारणाक्रमवर्जितः ।
न क्रमेद्देहलौहेषु रोगहर्ता भवेद्ध्रुवम् ॥ १८५० ॥

र चि., यो. म. सर्वरोगे ।

टि०—"गर्त वाधे भवेद्गर्तो मध्ये गर्तं रस कुरु । चक्रयन्त्रमिदं सिद्ध वाधे गर्तं प्रयत्नतः" इति चक्रयन्त्रलक्षणम् । चक्रयन्त्रादन्यत्राऽस्ति किञ्चिदपि विलक्षणाख्यनाम । योगमहार्णवे रससिन्दूरेति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर रतनजोत वगैरह लालमूलिकाएं बछड़ीके मूत्रमें पीसकर इसद्रवसे ४ पहर निरन्तर मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर चक्रयन्त्रमें महापुटदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर फिर इसीतरह मर्दनकर आचदे । इसतरह दसपुटके बाद मर्दनकर गोला बनाय भूधरयन्त्रमें १० पुट देनेसे भस्म होजाता है । इसमेंसे १–१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे यह तमामरोगोंको दूर करताहै । जारणाक्रमविना मूलिकाओंसे माराहुआ पारा देह और लोहमें वेधन नहीं करताहै केवल रोगोंको दूरकरताहै । इसलिये प्रथम बीजादिका जारणकर पारेकी भस्मकरनी अच्छी है ॥

४१८ भस्मेश्वररसः

भस्म षोडशनिष्कं स्यादारण्योपलकोद्भवम् ।
निष्कत्रयञ्च मरिचं विषनिष्कञ्च चूर्णयेत् ॥१८५१॥
अयं भस्मेश्वरो नाम सन्निपातनिकृन्तनः ।
पञ्चगुञ्जामितं खादेदार्द्रकस्य रसेन तु ॥ १८५२ ॥

र. सं., वृ. यो. त., नि. र., भा. प्र., र. सु., टो., र. मं., र. र.–दी., रसायनसं., र चि., र. क. ल., र. का., यो म., र. क यो., र. सि., सन्निपाते । यो. म. आमवाते । रसकामधेनौ अरण्योपलभस्मार्द्धमरिचं नियोजितम् ।

भाषा—जङ्गलीकण्डोंकीभस्म ४ कर्ष, मरिच १२ मासे, शुद्धवच्छनाग ४ मासे, लेकर सबका वारीक चूर्णकर २–३ पहर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे ५–५ रत्ती अदरखके रसकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै ॥ ४१८ ॥

४१९ भार्गोत्तरवटी

रसभागो भवेदेको गन्धको द्विगुणो भवेत् ।
त्रिभागा पिप्पली पथ्या चतुर्भागो विभीतकः ।१८५३
पञ्च भागस्तथा वासा षड्गुणा सप्तभागिका ।
भार्गी सर्वमिदं चूर्णं भाव्यं वब्बूलजैर्द्रवैः ॥१८५४॥
एकविंशतिवारांस्तु मधुना गुटिका कृता ।
विभीतकप्रमाणेन प्रातरेकान्तु भक्षयेत् ॥
कासं श्वासं हरेत्क्षुद्राक्वाथस्तदनु कृष्णया ॥१८५५॥

भै. र., र. म. मा., र. को., र. क. ल., वै. चि., यो. र., रसायनसं., र. सु., नि. र., र. का., यो. चि., र. चं., टो., व. रा., र र दी., र. सं., ध., र. क., र. शं., र. र. स., चि. क्र., र. सं. क., यो. त., र. कौ., र., वै. मृ., वृ. यो. त., वै र., र. पा., र. मृ., श्वासे कासे च ।

टि०—चि क्र., र. स. क., र. कौ., र. पा., वृ. यो. त., वै. र., एतेषु ग्रन्थेषु तथाच नि र., र. का., यो त., र को.. रसायनस., एषु ग्रन्थेषु द्वितीयस्थाने कासकर्तरीति नाम स्थापितम् । सर्वं समान खदिरसारचूर्णमधिक दृश्यते । र. सुन्दरे एकस्थाने सप्तोत्तरावटीति नाम स्थापितम् । व रा. विजयभैरव रस इति । र. स., ध., र क., एषु ग्रन्थेषु र. सु., द्वितीयस्थाने च रसगुटीति नामस्थापितं । र शं. श्वासकासारीति नाम । र को. बब्बुलादिवटी । र. च., सप्तामृतवटी वैद्यामृते भार्गीस्थाने विप्रयष्टिका दृश्यते नाम च कासश्वासारीति स्थापितम् । रसावतारे भार्ङ्गीस्थाने यष्टिका नियोज्य भूतांकुशेति नाम स्थापितम् । र. का., र. क ल., र र स., नि. र., र को. एषु ग्रन्थेषु भार्गी निष्कास्य अग्निरस इति नाम दत्त तेन किमसाधारण फल प्रकटितमिति न ज्ञायते पाठाधिक्यञ्च वैद्यशिर सु न्यस्तमिति स्पष्टमेव अतस्तत्पाठस्यानावश्यतैवाऽस्तीति सहृदयैराकलनीयम् ॥

भाषा—शुद्धपारा १ भा., शुद्धगन्धक २ भा., पीपल ३ भा., हर्रे ४ भा., बहेड़ेकी छाल ५ भा., अडूसकी जड़की छाल अथवा पत्ते ६ भा., भारङ्गी ७ भा., लेकर सबका वारीकचूर्णकर बबूलकी छालकेकाढ़ेसे २१ भावनाएं देकर सुखाकर मधुकेसाथ बहेड़ेकी गुठलीके बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली भटकटैयाके रस और पीपलके काथके साथ देनेसे यह कासश्वासको नष्टकरतीहै ॥ ४१९ ॥

४२० भाण्डयरसः

रसकर्पूरकं धृत्वा फले दन्तशठस्य वै ।
आरण्योपलसम्भूते निर्धूमेऽङ्गारके पचेत् ॥१८५६ ॥
द्रवं शुष्कं भवेद्यावत्तावत्पाच्यं प्रयत्नतः ।
एवमेव प्रकारेण वसुसङ्ख्ये फले पचेत् ॥ १८५७ ॥
गृहीत्वा तु ततस्तस्मिन् तुर्यांशं दरदं क्षिपेत् ।
खल्वे खलु विमर्द्याऽथ काचपात्रे निधापयेत् ॥१८५८॥
ततो निम्बूफलार्द्धे च क्षिप्त्वा गुञ्जाद्वयं बुधः ।
विधायोष्णं चोषयित्वा पुनर्निम्बूफलत्रयम् ॥ १८५९ ॥
चोषयेत्तत्क्षणं तञ्च घटिकार्द्धञ्च स्वापयेत् ।
एवं सप्तदिनाभ्यासादुपदंशान्निहन्ति वै ॥ १८६० ॥
वातरक्तं निहन्त्याशु नाम्ना भाण्डयरसस्त्वयम् ।
किञ्चित्सितामिश्रञ्च पथ्यं केवलमोदनम् ॥१८६१॥

र. क. ल., फिरङ्गे ।

भाषा—रसकर्पूरकी कंकडी कमरखके फलमें रखकर जङ्गलीकण्डोंकी निर्धूम आचमें रक्खे । द्रवसूखनेपर निकालकर दूसरे फलमें रखकर रससुखावे । इसतरह ८ फलोंमें पकानेके बाद चतुर्थांश शिंगरफ मिलाकर वारीक घोटकर काचकी शीशीमें रखदे । इसमेंसे २ रत्ती दवा लेकर आधेनीबूके फलमें रखकर गरमकरके चुंसवादे । फिर तीन नीबुओंको गरमकरके चुंसवाकर आधीघड़ी सुलादे । इसतरह ७ दिनतक करनेसे उपदंश और वातरक्तको यह नष्टकरताहै । थोड़ी शक्कर मिलाकर केवल भात खानेको देवे और कुछ न खाय ॥ ४२० ॥

४२१ भानुचूडामणिरसः

सुवर्णं रससिन्दूरं प्रवालं वङ्गमेव च ।
लौहं ताम्रं पत्रजञ्च यमानीं विश्वभेषजम् ॥ १८६२ ॥
सैन्धवं मरिचं कुष्ठं खदिरं रजनीद्वयम् ।
रसाञ्जनं माक्षिकञ्च समभागञ्च कारयेत् ॥ १८६३ ॥
वारिणा वटिका कार्या रक्तिद्वयप्रमाणतः ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय सर्वज्वरकुलान्तिकाम् ॥ १८६४ ॥

र. स., ज्वराधिकारे ।

भाषा—सुवर्णभस्म, रससिन्दूर, प्रवाल, वङ्ग, लोह और ताम्रभस्म, पत्रज, अजवाइन, सोंठ, सेंधानमक, मरिच, कुठ, खैर, दोनोंहल्दी, रसौत, शुद्धसोनामाखी, सब समभाग लेकर वारीकचूर्णकर जलसे ४ पहर घोटकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानके-साथ देनेसे यह समस्त ज्वरोंको दूरकरताहै ॥ ४२१ ॥

४२२ भारतीरसः

वचा पारदगन्धाऽभ्रं वत्सनाभं समं समम् ।
मुण्डीद्रावे दिनं मर्द्य मूषायां भूधरे पुटे ॥ १८६५ ॥
पाच्यं चटकपित्तेन भावितं दिवसद्वयम् !
अनुपानविशेषेण देयं गुञ्जाप्रमाणकम् ॥
सर्वज्वरान्निहन्त्येव नाम्नाऽयं भारतीरसः ॥१८६६॥

वै चि ,सर्वज्वरे ।

भाषा—वच, शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रकभस्म, शुद्ध-वछनाग सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नील-वर्णकज्जलीमें मिलाकर गोरखमुण्डीके रससे १ दिन मर्दनकर गोलेको मूषामें वन्दकरके भूधरपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर चिड़ेके पित्तकी दोदिन तक भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अनुपानविशेषसे देनेसे सवप्रकारके ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ४२२

४२३ भास्कराऽमृताभ्रम्

वासाऽमृताकेशराजपर्पटीनिम्बभृङ्गकम् ।
मुस्तं वृश्चीरबृहतीवलामूलं शतावरी ॥ १८६७ ॥
एषां स्वत्वै मलोन्मुक्तं मर्दितं विमलाऽभ्रकम् ।
सहस्रपुटितं तत्र शतावर्या रसं क्षिपेत् ॥ १८६८ ॥
वारद्वादशकं दत्त्वा वटिकां कारयेद्भिषक् ।
भास्कराऽमृतनामेदमम्लपित्तं नियच्छति ॥ १८६९ ॥
शूलमन्नद्रवं शूलं शूलञ्च परिणामजम् ।
छर्दिहृल्लासमरुचिं तृष्णां कासञ्च दुर्जयम् ॥ १८७० ॥
हृद्ग्रहं कामलां रक्तपित्तं यक्ष्माणमेव च ।
दाहं शोथं भ्रमं तन्द्रां विस्फोटं कुष्ठमेव च ॥
श्वासं मूर्च्छाञ्च मन्दाग्निं यकृत्प्लीहोदरं तथा॥१८७१॥

भै र , अम्लपित्ताऽधिकारे ।

भाषा—अडूस, गिलोय, कालाभंगरा, पित्तपापड़ा, नीमकी-छाल, सफेदभंगरा, नागरमोथा, सफेदपुनर्नवा, वनभाटा, वला-मूल, शतावरी, इनप्रत्येकके शुद्धरससे सहस्रपुटी बनायेहुए अभ्रकको मर्दनकर अन्तमें शतावरीके रसकी १२ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे अम्लपित्त, शूल, अन्न-द्रवशूल, परिणामशूल, वमन, मिचली, अरुचि, तृषा, दुर्जय खासी, हृदयका जकड़ना, कामला, रक्तपित्त, राजयक्ष्म, दाह, शोथ, भ्रम, तन्द्रा, विस्फोट, कुष्ठ, श्वास, मूर्च्छा, मन्दाग्नि, यकृत्, प्लीहा, उदररोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४२३ ॥

४२४ भास्करोत्कीर्तिरसः

अलरसवलिताप्यं टङ्कणं म्लेच्छगोलं,
मुनिसमहतताम्रं सैन्धवेनाऽथ युक्तम् ।
रसदलविषमिश्रं मर्दयेन्निम्बुनीरै-
र्जयति सकलवानं भास्करोत्कीर्तिनामा ॥
व्योषाऽऽर्द्रकैः गुञ्जमितं प्रयोज्यं
दुर्नामपाण्डामयशूलकुष्ठे ।
अपित्तजे योऽखिलसन्निपाते
रामाय दत्तः सुखदः शिवेन ॥ १८७३ ॥

र. शि अर्शसि ।

भाषा—शुद्ध हरिताल, पारा, गन्धक, सोनामाखी, सुहागा, सिंगरिफ और मैनसिल सब समभाग लेकर नीम्बूप्रभृतिके रसमें मर्दनकर सबकीवरावरके शुद्धतांबेके पत्रेपरलेपकर सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर लवणयन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतल होने-परनिकालकर पूर्ववत् हरिताल प्रभृतिमिलाकर नीबू वगैरहके रसमे घोटकर गोलावनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर पूर्व-वत् लवणयन्त्रमें पकावे । इसप्रकार ७ वार पुटदेकर इससे आधा शुद्धवछनाग मिलाकर नीबूकेरससे ८ पहर मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली त्रिकटु और अदरखके रसके साथ देनेसे अर्श, पाण्डु, शूल, कुष्ठ, पित्तरहित सन्निपात इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ४२४ ॥

४२५ भास्कररसः (प्रथमः)

सूतमाक्षिकशिलाऽऽलगन्धकाः
खर्परञ्च कुरु तुल्यभागिकम् ।
निम्बुनीरपरिमर्दितं दृढं
स्वेदितं लवणमूत्रके दिनम् ॥ १८७४ ॥
तुल्यहेमरविसम्पुटावृतं
लेप्य कर्पटमृदा पुटेत्ततः ।
पूर्ववद्भवति यक्ष्मिणां हितः
शूलगुल्मकृमिमान्द्यनाशनः ॥ १८७५ ॥

र , क्षये ।

भाषा—शुद्ध पारा, सोनामाखी, मैनसिल, हरिताल, गन्धक और खपरिया सव समभाग लेकर कज्जली वनाय नीवूकेरससे ४ पहर मर्दनकर गोलावनाय लवणयुक्तमूत्रमें १ दिन स्वेदनकर इसकी वरावर सुवर्णका चूरा मिलाकर गोला वनाय सवकी

बराबर तांबेके सम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपडमिट्टी देकर सुखादे। फिर इसे लवण अथवा भस्ममें दबाकर ४ पहरकी अग्निदेकर पकावे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर नीबूके रससे मर्दनकर सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर पकावे। ऐसे ७ पुट देनेके बाद निकालकर रखछोडे। इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ देनेमे शूल, गुल्म, कृमि और अग्निमान्द्य येसब नष्टहोतेहैं॥ ४२५॥

४२६ भास्करोरसः (द्वितीयः)

पारदं गन्धकं व्योषं द्वौ क्षारौ लवणानि च।
टङ्कणश्चेति तुल्यानि जैपालं सकलैः समम्॥ १८७६॥
भावना बीजपूरस्य शुष्कं सूक्ष्मं विचूर्णयेत्।
सङ्ग्राह्य रक्तिकायुग्ममामवातविनाशनम्॥ १८७७॥
गोदुग्धं केवलं पथ्यं देयमुष्ट्रीपयोऽथवा।
अन्नञ्च वर्जयेत्तावद्यावच्छोफं निवारयेत्॥ १८७८॥

चि. र., आमवाते।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, त्रिकुटु, सज्जी, जवाखार, पांचोंनमक, भुनासुहागा सब समभाग, शुद्ध जमालगोटा सबकी बराबर लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर बिजोरेके रसकी एकभावना देकर सूखनेपर चूर्णबनाकर अथवा २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली पानीकेसाथ देनेसे आमवात नष्टहोताहै। पथ्यमें गाय अथवा ऊंटनीका दूध देवे। जबतक सूजन न उतरजाय तबतक अन्न न देवे॥ ४२६॥

४२७ भास्करोरसः (तृतीयः)

तालं तार्प्यं गन्धकं सूतकञ्च शैलाह्वं वै खेचरंचेत्समं हि।
चूर्णं कृत्वा चाऽऽटरूषेण मर्द्य साद्रेणैवं सौरसेयै रसैश्च॥
मर्दितं हि तदनु ताम्रनिर्मिते धारयेच्च सकलं हि सम्पुटे।
मृत्स्नया च परिवेष्ट्य सम्पुटं पाचयेच्च सततं दृढाऽग्निना
याममुग्ममितमेव मात्रया यन्त्रके हि कुरु शीतलं स्वयम्
जायतेऽतिरुचिरो महारसो पूर्ववद्भवति भास्करोदयः
चित्रकार्द्रकरसेन योजितो राजयक्ष्मकफवातनाशनः॥

र. प्र. सु., र. दी., राजयक्ष्मणि।

भाषा—शुद्धहरिताल, सोनामाखी गन्धक, पारा, मैनसिल, कसीस सब समभागलेकर सबकी कज्जली बनाय अडूसा, अदरख और तुलसी इनप्रत्येकके रसोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर गोला बनाय तांबेके सम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर लवण अथवा भस्मयन्त्रमें बन्दकर २ पहरकी कड़ी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर ताम्रसम्पुटमेंसे निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ अथवा २ रत्ती चित्रक और अदरखके रससे देनेसे राजयक्ष्म, कफ और वायुको यह नष्टकरताहै॥ ४२७॥

४२८ भास्करोरसः (चतुर्थः)

विषं सूतं फलं गन्धं त्र्यूषणं टङ्कजीरकम्।
एकैकं द्विगुणं लोहं शङ्खमभ्रवराटकम्॥ १८८२॥
सर्वतुल्यं लवङ्गञ्च जम्बीरै र्भावयेद्भिषक्।
सप्तवासरपर्यन्तं ततः स्याद्भास्करो रसः॥ १८८३॥
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन वटीं कुर्याद्विचक्षणः।
ताम्बूलीदलयोगेन वटीं सञ्चर्व्य भक्षयेत्॥१८८४॥
शूलरोगेषु सर्वेषु विसूच्यामग्निमान्द्यके।
सद्यो वह्निकरो ह्येष तन्त्रनाथेन भाषितः॥१८८५॥

भै. र., र सु., अग्निमान्द्याधिकारे।

भाषा—शुद्धबच्छनाग, पारा, त्रिफला, शुद्धगन्धक, त्रिकुटु, भुनासुहागा, जीरा येप्रत्येक १ भाग, लोह, शङ्ख, अभ्रक और कौडीभस्म २–२ भाग लेकर सबकी बराबर लौंग मिलाकर जंभीरीके रसकी ७ दिनतक भावना देकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पानकेसाथ खानेसे समस्तशूल, हैज़ा, अग्निमान्द्य इनसबको यह नष्टकरताहै॥४२८॥

४२९ भीमपराक्रमोरसः

तुल्याभ्यां रसगन्धाभ्यां कृत्वा कज्जलिकां त्र्यहम्।
द्रावयित्वाऽऽयसे पात्रे मृदुना बदराऽग्निना॥१८८६॥
निरुत्थमष्टमांशेन सीसभस्म विनिक्षिपेत्।
सम्मिश्रय कदलीपत्रे निक्षिप्य तदनन्तरम्॥१८८७॥
आकृष्य परिपेष्याऽथ सीसभस्मप्रमाणतः।
कान्ताऽभ्रसत्त्वयो र्भस्म राजावर्तकभस्म च॥१८८८॥
परिसिद्धं सगोमूत्रं शिलाधातुं निधाय च।
खल्वे निक्षिप्य तत्सर्वं यत्नेन परिमर्दयेत्॥१८८९॥
तुल्यगुञ्जाऽङ्कुलीबीजचूर्णकल्कोत्थवारिणा।
कतकाऽङ्घ्रिकषायेण निम्बपत्ररसेन च॥ १८९०॥
ततः संशोष्य सञ्चूर्ण्य क्षिप्त्वा लोहस्य भाजने।
त्रिफलानां कषायेण सप्तधा परिभावयेत्॥१८९१॥
अङ्कुलीबीजबर्बूरनिर्यासौ भृष्टचूर्णितौ।
समौ रससमौ कृत्वा रसेन सह मर्दयेत्॥ १८९२॥
इति सिद्धरसः सोऽयं भवेद्भीमपराक्रमः।
नामतः सर्वमेहघ्नो दृष्टप्रत्ययकारकः॥ १८९३॥
वल्लद्वयमितो ग्राह्यो जलैः पर्युषितैः सह।
पथ्यं मेहोचितं देयं वर्ज्यं सर्वं विवर्जयेत्॥ १८९४॥

र र.स, र सु, र को., र र. कौ., प्रमेहे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धककी ३ रोजतक घोटकर कज्जलीकर बेरके कोयलोंपर लोहेकी कड़छीमें पिघलाकर कज्जलीसे अष्टमांश निरुत्थ सीसेकीभस्म डालकर ताज़े गोबरपर रक्खेहुए केलेके पत्तेपर ढालकर दूसरेपत्तेसे ढक गोबरसे दबादे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर कान्तलोह, अभ्रकसत्त्व, लाजवर्द, गोमूत्रमें शुद्धकिया हुआ मैनसिल ये प्रत्येक नागभस्मकी बराबर डालकर शुद्ध सफेदगुञ्जा और अङ्कोलकीमज्जाकेकल्ककेरससे ३–४ पहर मर्दनकर निर्मलीकी जड़काकाढा, नीमकेपत्तोंका-रस इनप्रत्येककी १–१ भावना देकर सुखाकर लोहेके बर्तनमें

डालकर त्रिफलाके काढ़ेकी ७ भावनाएं दे । अङ्कोलकेबीज, वबूलका गोंद, दोनोंको भूनकर पूर्वरसकी वरावर डालकर मर्दनकर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ६–६ रत्ती ठंढेपानीकेसाथ देनेसे समस्तप्रमेहोंको यह नष्टकरताहै । प्रमेहोक्त पथ्य देना और तद्वर्धकका निषेध करना ॥ ४२९ ॥

४३० भीममण्डूरम्

यवक्षारः कणा शुण्ठी कोलं ग्रन्थिकचित्रकौ ।
प्रत्येकं पलमादाय प्रस्थं लोहस्य किट्टतः ॥ १८९५॥
शनैः पचेदयःपात्रे यावद्दर्वीप्रलेपनम् ।
दत्त्वाऽष्टगुणगोमूत्रं किट्टाच्छुद्धाद्विचक्षणः ॥१८९६॥
ततोऽक्षमात्रान्वटकान्योजयेत्सप्तरात्रतः ।
आदिमध्याऽवसानेषु भोजनस्योचितस्य वै ॥१८९७॥
स भीमवटको ह्येष परिणामरुगन्तकः ।
रससर्पिर्यूपपयोमांसैरश्नन्नरो निवारयति ॥
अन्नविवर्तनमन्ते गुल्मं प्लीहाऽग्निसादांश्च ॥१८९८॥

नि र , वृ.यो.त., यो. र , र.का., च द , टो., रससागर., वृ. मा , र., यो म , ग नि , परिणामशूलाऽधिकारे । कुत्रचित् चित्रकस्याऽभावो दृश्यते ।

टि०–कोलादिमण्डूर, चविकादिमण्डूर, भीममण्डूरश्चेति त्रयो मण्डूरवटका सन्ति, तेषु सर्वेष्वपि एकजातीयानि द्रव्याणि सन्ति । केवल मण्डूरप्रमाणे विशेषोऽस्ति स यथा कोलादिके मण्डूरस्येतरद्रव्यसमताऽस्ति । चविकादिमण्डूरेऽष्टपलानि मण्डूरस्य निक्षिप्तानि तत्र क्षारशब्देन यवक्षारमात्रस्य ग्रहण क्रियेत चेद् द्रव्याणा पञ्च पलानि भवन्ति, क्षारशब्देन साधारणतया क्षारत्रय गृह्येत तर्हि द्रव्येभ्य मण्डूरस्यैक पलमधिक भवतीति, भीममण्डूरे च प्रस्थमात्र मण्डूरस्य नियोजित तत्रेतरद्रव्येभ्यो द्विगुणामपि मात्रामतिक्रामति, इममेवमेद स्वीकृत्य स्थानत्रये त्रिनाममिश्रय पाठा दत्ता सन्ति, तत्र रोगिणि प्रकृत्यादिक समीक्ष्य यदुचित योग भिषड्मन्येत त प्रयोजयेत् संक्षेपत वद्धकोष्ठे कोलादिमण्डूर प्रयोजयेत् साधारणे चविकादि मण्डूर, ग्रहण्याद्यवस्थायान्तु भीममण्डूरमिति विवेचना ।

भाषा—यवक्षार, पीपल, सोंठ, वेर, गठिवन, चित्रक १–१ पल, मण्डूर १ प्रस्थ लेकर दवाओंका वारीक चूर्णकर मण्डूरसे अठगुने गोमूत्रमें सवचीजें मिलाकर लोहेकी कड़ाहीमें मन्द आचसे पकावे । जव कड़छीमें दवा लगनेलगे तव १–१ तोलेके गोले वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे दोषविशेषप्रकोपकी औचिती समझकर भोजनके आदि, मध्य और अन्तमें १–१ गोलेका ७ दिनतक योगकरनेसे परिणामजशूलको यह नष्ट करताहै ४३०

४३१ भीमरुद्ररसः

सूतराजस्य तोलैकं गन्धकस्य तथैव च ।
अभ्रात्कर्ष ततो देयं तोलैकं कान्तलोहकम् ॥१८९९॥
परोक्तेनौपधेनैव भावयेच्च पृथक्पृथक् ।
विशालावृहतीब्राह्मीसौगन्धिकसुदाडिमैः ॥ १९०० ॥
मर्कट्याश्चात्मगुप्तायाः स्वरसेन पृथक्पृथक् ।
मापकैकप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥१९०१॥
वटीमेकां भक्षयित्वा पिवेच्छीतं जलं ततः ।
भीमरुद्रो रसो नाम चाऽसाध्यमपि साधयेत् ॥
कुक्कुरस्य शृगालस्य विषंहन्तिसुदुस्तरम् ॥१९०२॥

र सं., र.सु , ध., र र., र.चं., विषाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक तथा कान्तलोहभस्म १–१ तोला लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर महर, वनभांटा, ब्राह्मी, कुकरोंधा, अनार, अपामार्ग, केवांच, इनप्रत्येकके स्वरसमे १–१ दिन भावना देकर १–१ मासेकी गोलियां वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली ठंढे पानीके साथ देनेसे यह वावले कुत्ते और शृगालके दुस्तर विषको दूरकरताहै ॥४३१॥

४३२ भीमवटी

सिन्दूरं विषमुष्टिकं घनमितं लोहस्य भागास्त्रयः,
हिङ्गोरब्धिमिता मरीचनिकराद्बाणाः कुमारीघनात् ।
षट् स्यु र्गुग्गुलुकस्य सप्त मिलितं चित्रद्रवे मर्दितं,
गुञ्जायुग्ममिता वटी कवलिता भीमाख्यया भ्राजते ॥
अग्निमान्द्यकृतान्दोषानपतन्त्रसमुद्भवान् ।
सङ्ग्रहग्रहणीं हन्यादामवातसमुद्भवान ॥ १९०४ ॥
श्वासकासौ च हिक्कांश्च वातरक्तकृतान्गदान् ।
शूलगुल्मौ स्वानुपानैस्तत्तद्रोगहरी हरेत ॥१९०५॥

नू क. अग्निमान्द्ये ।

भाषा—रससिन्दूर और शुद्धकुचिला २–२ तोले, लोहभस्म ३ तो., भुनाहींग ४ तो , मिर्च ५ तो , एलुआ ६ तो , गूगल ७ तो लेकर सवका वारीक चूर्णकर चित्रकके काढेसे तीनरोज़ मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली दूध अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, हिस्टीरिया, सङ्ग्रहग्रहणी, आमवात, श्वास, कास, हिचकी, वातरक्त, शूल, गुल्म, इनसवको यह नष्टकरतीहै । यह मन्दाग्निके लिये उत्तमयोगहै ॥ ४३२ ॥

४३३ भुक्तपाकरसः (प्रथमः)

गन्धकं सूतकञ्चैव भृङ्गराजेन मर्दयेत् ।
हिङ्गुभागो विडङ्गानि रोहिणी च दशांशकम् ॥१९०६॥
वचा त्रिकटुका युक्ता भागमेकं हि सैन्धवम् ।
निर्गुण्डीरसतो मर्द्य गुटी चामलकीफला ॥ १९०७॥
भोजनान्ते च तद्भुक्तं भुक्तपाको महारसः ।
सर्वव्याधीन् हरेच्चाऽथ वलवीर्यविवर्धनः॥ १९०८ ॥

र ज्ञा., अग्निमान्द्यादिसर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा १–१ भाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर भंगरेकेरससे एकदिन मर्दनकर सुखादे । फिर हींग १ भा., विडङ्ग और कुटकी दशवा $\frac{1}{10}$ भाग, वच, त्रिकटु और सेंधानमक १–१ भाग लेकर सवका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर संभालूके रससे एकदिन मर्दनकर आवलेके फलके वरावर गोलियां वनाकर रखछोड़े ।

इनमेंसे १-१ गोली भोजनके अन्तमें देनेसे यह खाएहुएको पाचनकरके वल और वीर्यको वढ़ाताहै ॥ ४३३ ॥

४३४ भुक्तपाकरसः (द्वितीयः)

वज्रमृत्स्नासमालिप्तकाचकूप्यां रसं क्षिपेत् ।
चित्रमूलं समानीय विल्वपर्णेन पेपयेत् ॥ १९०९ ॥
समभागं ततः क्षिप्त्वा कूपीमध्ये च मेलयेत् ।
निर्धूमवह्नौ तद्धार्यमर्द्धाऽर्द्धं च पुनः क्षिपेत् ॥१९१०॥
स्थाप्यं यामद्वयं पश्चात्प्रयत्नेन समुद्धरेत् ।
जातीफलं त्रिकटुकमेलां मुस्तां विशेषतः ॥१९११॥
मेलयेत्सर्वरोगांश्च भुक्तपाको विनाशयेत् ।
ज्ञानज्योतिस्तु कृपया कौतुकार्थमभाषत ॥ १९१२ ॥

र. ज्ञा , सर्वरोगे ।

टि०—यद्यप्यत्र साधारणतया समविल्वपत्रेण चित्रमूलपेषण कृत्वा काचकूप्या स्थितस्य पारदस्योपरि निक्षेप उक्तस्तथापि यथास्थित पारद कूप्या न निक्षिप्य किन्तु षोडशांश चित्रकमूलचूर्णं दत्त्वा विल्वपत्ररसेन साकं द्वित्रिदिनावधि पारदं सम्पेष्य कूप्या निक्षेपणीय इति रहस्यम् ।

भाषा—षोडशांश चित्रकमूलका चूर्णमिलाकर पुटपाकसे निकालेहुए अथवा खूब कूटकर वस्त्रसे निकालेहुए विल्वके पत्ररससे २ तीन रोज़ घोटाहुआ शुद्धपारा वज्रमिटीलगाईहुई काचकी शीशीमें डालकर चित्रकमूल और वेलकेपत्ते समभागलेकर वारीकपीसकर दोभागवनावे । एकभागको शीशीमें डालकर चलाकर पारेमें मिलादे और निर्धूम अग्निपर रखदे । जव रस जलजाय तव दूसराभागभी दवाका डालदे । इसको दोपहरतक अङ्गारोंपर रक्खे । इतनेमें पत्ते जलजांयगे और पारा उन्हींमें अदृश्य होजायगा । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर जायफल, त्रिकटु, इलायची, नागरमोथा ये प्रत्येक पारेकी वरावर मिलाकर १-२ पहर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह भोजनको पचाकर समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ४३४ ॥

४३५ भुक्तपाकवटी

अभ्रं गन्धकपारदौ सदरदौ ताम्रं सतालं शिला,
वङ्गश्च त्रिफला विषश्च कुनटी भाव्याश्च दन्त्यम्वुना ।
शृङ्गी व्योषयवानिचित्रकजलं द्वे जीरके टङ्कणं,
एला पत्रलवङ्गहिङ्गु कुनटी जातीफलं सैन्धवम्१९१३
एतान्यार्द्रकचित्रदन्तिसुरसामूर्वारसै र्विल्वजैः,
प्रत्येकं दिनसङ्ख्ययाऽथ सकलं गाढं विमर्द्याऽन्यतः ।
खादेद्वल्लमितं तथा च सकलव्याधौ प्रयुञ्ज्याद्बुधः,
विड्वन्धे कफजे त्रिदोषजनिते ह्यामानुवन्धेऽपि च ॥
मन्दाग्नौ विषमज्वरे च सकले शूले त्रिदोषोद्भवे,
हन्त्याधीनपि भुक्तपाकवटिका भूयश्च सम्भोजयेत् ॥

र.सु.,र.स ,अजीर्णाऽधिकारे। र.सं. भक्तपाकवटीति नाम।

भाषा—अभ्रकभस्म, शुद्ध गन्धक, पारा और शिगरिफ, ताम्र, हरिताल, दन्तीकी भावना दियाहुआ मैनसिल, वङ्ग इनकीभस्में, त्रिफला, शुद्ध वछनाग, काकडासींगी, त्रिकटु, अजवाइन, चित्रककी जड़, सुगन्धवाला, दोनोंजीरे, भुनासुहागा, इलायची, पत्रज, लौंग, भुनाहींग, कुटकी, जायफल, सेंधानमक ये सव समभाग लेकर वारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर अदरख, चित्रक, दन्ती, तुलसी, मरोड़फली, वेल, इन प्रत्येकके स्वरसोंसे ७-७भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे यह समस्तव्याधियोंको दूरकरतीहै । विशेषकर विड्विवन्ध, कफप्रधान सन्निपात, आम, मन्दाग्नि, विषमज्वर, समस्तशूल इनसवको यह नष्टकरतीहै ॥ ४३५ ॥

४३६ भूतनाथभैरवोरसः

आकाशवल्लीरसतो रसं षोढा विभावयेत् ।
वृहतीफलजै र्द्रावैस्तालो मुनिविभावितः ॥ १९१५ ॥
षड्भागप्रमितं सौम्यं धूर्तात्पञ्चदशद्रवैः ।
चतुरंशाष्टङ्कणस्य शिवाक्षेणविभावनाः ॥ १९१६ ॥
षड्जैपालाऽहिफेनांशा लवङ्गमरिचानि च ।
शिवनेत्रपुटैस्त्रेधा वचा व्राह्मी च वाकुची ॥ १९१७ ॥
त्र्यंशा भृङ्गराजस्य ददेद्द्वादश भावनाः ।
निम्वकाष्ठेन घृष्टोऽयं भूतनाथादिभैरवः ॥
तत्तद्रोगानुपानेन सर्वज्वरहरोमतः ॥ १९१८ ॥

र. का , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—आकाशवेलके रससे ६ रोज़ पारेको मर्दनकरे और वनभाटेके फलोंके रससे पारेकी वरावर हरितालको घोटे । पारेसे ६ भाग संखियेको लेकर १५ गुने धतूरेके रससे मर्दनकर सुखावे । सुहागा ४ भाग लेकर रुद्राक्षकी भावनादे । जमालगोटा और अफीम ये ६-६ भाग, लौंग और मिर्चें ३-३ भाग लेकर वारीकचूर्णकर वच, व्राह्मी और वाकुचीकी ३-३ भावनाएं देकर सवको इकट्ठा मिलाय भंगरेके रसकी १२ भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इसके घोटनेमें नीमका ताज़ा डण्डा काममें लेना चाहिये। इसमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे समस्तज्वर नष्टहोतेहै ॥ ४३६ ॥

४३७ भूतनाथरसः

सूतं ताम्रमयोऽभ्रकं समलवं सर्वैः समं गन्धकं,
हेमार्काऽग्निहयारिपुष्कररसै र्मर्द्यः पृथग्वासरम् ।
कूप्यन्ते विनिवेशितं लवणमृच्चीरैः समावेष्ट्य तत,
यन्त्रे सैकतके निवेश्य विपचेन्नत्वा गणेशं दिने १९१९
स्वाङ्गे शीतलतामुपागतमपि त्यक्त्वा च कूप्यादिकं,
भूपांशेन विषेण खल्वतलगं तन्मर्दयेद्यत्नतः ।
गुञ्जा स्पर्शचलापनोदनकरी रुक्शर्करासंयुता,
भूतेशस्य सुलेपनं हितकरं स्यात्कृष्णलाभिः कृतम् ॥

र,र. दी., र.मृ , र दी **सर्वेश्वर** इति नाम। रसदीपिकाया भावनाया पुष्करस्थाने वासा दृश्यते । रसामृते तु एकस्मादेव वस्तुनो द्विगुणो गन्धो नियोजित , अन्यत्र सर्वं सम इति विशेष ।

भाषा—शुद्धपारा, तावा, लोहा, अभ्रक इनकी भस्में सब समभाग, सबकी बराबर शुद्धगन्धक देकर नीलवर्णकज्जलीकर धतूरा, आक, चित्रक, सफेद कनेर, पोहकरमूल इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ दिन मर्दनकर शुष्कक-ज्जलीकर काचकीशीशीमें भरके नमक और मिट्टीमें कपड़ेको भिगोकर ६-७ कपड़मिट्टीकरे। सूखनेपर वालुकायन्त्रमें रखकर १२ पहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर षोड-शाश शुद्धवछनागका चूर्णमिलाकर २-३ पहर मर्दनकर रखछोड़े। इसकी १-१ रत्ती कुठ और शक्करके साथ मिलाकर देनेसे स्पर्श-वातको नष्टकरतीहै। वेदनास्थानमें गुञ्जाके चूर्णके साथ गोमू-त्रवगैरहमें पीसकर लेपकरना ॥ ४३७ ॥

४३८ भूतभैरवरसः (प्रथमः)

रसः सतालः सशिलः सलोहः
स्रोतोऽञ्जनं सार्कमिदं हि गन्धम्।
पिष्टं नृमूत्रेण समं समन्ता-
द्देयोद्विभागोऽथ वलिः पचेच्च ॥ १९२१ ॥
लौहे क्षणं हन्ति घृतेन माषोऽ-
पस्मारमप्युन्मदमानसत्वम्।
पिवेदनुव्यूषणहिङ्गुयुक्तं
सर्पिर्नृमूत्रं रुचकेन सार्धम् ॥ १९२२ ॥
भूतोन्मादेषु सर्वेषु रसोऽयं भूतभैरवः।
स्वर्णजैः पंचभि र्वीजै र्देयः सर्पिर्विमिश्रितः ॥१९२३॥

यो.र, भा. प्र, र सं, र र, व, र सु, र को, वृ यो. त, र क ल, र क, नि र, चि र भ, र.र दी, रसायनसं, टो, वै चि, व रा., र का, यो म, भै र, यो त, अपस्मारे। भैषज्यरत्नावल्या वन्वन्तरे द्वितीयस्थाने च चण्डभैरव इति नाम दृश्यते। अत्र गोमूत्रेण भावना दृश्यते, अनुपाने च "हिङ्गु सौवर्चलं कुष्ठं गवा मूत्रेण सर्पिषा। कर्षमात्रं पिवेच्चाऽनु रसेऽस्मि-श्चण्डभैरवे" इत्यधिकः।

भाषा—शुद्ध पारा, हरिताल और मैनसिल, लोहभस्म, सफेदसुरमा, ताम्रभस्म और शुद्धगन्धक येसब १-१ भाग लेकर-मनुष्यके मूत्रसे २-३ रोज मर्दनकरफिरसे शुद्धगन्धक १२ भाग मिलाकर सबकी नीलवर्णकज्जली वनाय पर्पटीके प्रकारसे पर्पटी वनाकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ माशा घीकेसाथ मिलाकर चटावे और ऊपरसे त्रिकटु, हींग, घी, मनुष्यकामूत्र और कालानमक मिलाकर पिलानेसे अपस्मार और उन्माद नष्ट होतेहैं। भूतोन्मादोंमें धतूरेके बीज ५ नग घीमें मिलाकर इसके साथ मात्रा देनी चाहिये ॥ ४३८ ॥

४३९ भूतभैरवरसः (द्वितीयः)

नं. १-पातः स्वेदो मुखं स्वर्णजारणं गन्धजारणम्।
कृत्वा प्रागुक्तमार्गेण सद्द्राय प्रोक्तमेण च ॥१९२४॥
रसेन्द्रस्य समादाय पलमेकं प्रमर्दयेत्।
कृष्णधत्तूरतैलेन दिनत्रयमतन्द्रितः ॥ १९२५ ॥
यन्त्रेऽथ कच्छपे दत्त्वा कृष्णधत्तूरतैलतः।
गन्धकं भावयेत्पश्चाच्छोधितं प्रोक्तयुक्तितः ॥१९२६॥
ऊर्ध्वाऽधो गन्धकं दत्त्वा पादांशेन पुटेद्रसम्।
पुटाष्टकं प्रदातव्यमेवमुक्तक्रमेण वै ॥ १९२७ ॥
अयं रसेन्द्रो म्रियते तैलगन्धकयोगतः।
भस्मीभूतं तमादाय रसेन्द्रं रोगनाशनम् ॥ १९२८ ॥
गुञ्जामानेन संदद्यात् त्रिदोषविषमज्वरे।
कासे श्वासे पीनसे च मारुते च भगन्दरे ॥१९२९॥
कुष्ठे प्रमेहेऽग्निमान्द्ये क्षयरोगोदरामये।
पाण्डुरोगे सन्निपाते भूतभैरवनामकम् ॥ १९३० ॥
नं. २-व्योषार्द्रवीजपूरेण षड्भिः कोष्णवारिणा।
रसेन्द्रं वितरेत्सन्निपातोत्थश्लेष्मभेदने ॥ १९३१ ॥
देवदालीफलोत्थेन चूर्णेन सह योजितः।
रसेन्द्रो नस्यतो हन्ति मूर्च्छायं सन्निपातजम् १९३२
यद्वा शुण्ठी च मरिचं गोमूत्रं सैन्धवं समम्।
शिरीषवीजं सूतेन्द्र मर्दयित्वाऽञ्जयेद् दृशि ॥१९३३॥
गाढां मूर्च्छां सन्निपातोद्भवां प्रहरति क्षणात्।
नं. ३-तालं क्षारं समाक्षीकजीरकं गन्धकं तथा १९३४
वन्ध्याकन्दं लाङ्गलीयं पीनं शुण्ठीञ्च सार्द्रिकाम्।
मधूकवीजममृतं सर्वं सञ्चूर्णयेत्समम् ॥ १९३५ ॥
प्रत्येकं तत्समं कृत्वा रसेन्द्रं मर्दयेत्ततः।
निर्गुण्डी निजतोयेन दिनमेकं निरन्तरम् ॥ १९३६ ॥
गुञ्जाप्रमाणां वटिकां कृत्वा दद्याज्ज्वरार्दिते।
सद्यो ज्वरं निहन्त्येव रसेन्द्रो नाऽत्र संशयः ॥१९३७॥
नं. ४-विषं तार्प्यं त्रिकटुकं सूतेन्द्रं योजयेत्समम्।
रीतिभूति नागभस्म मृतताम्रं समांशतः ॥ १९३८ ॥
मर्दयित्वा महिषजै रौहितैः शिखिसम्भवैः।
सम्भाव्य पित्तैस्त्रीन्वारान् गुञ्जामाना वटीः किरेत् ॥
सन्निपाते महाघोरे सर्वसञ्ज्ञाविवर्जिते।
ददीत वटिकामेकां सद्य उत्थापयेद्बुधः ॥ १९४० ॥
नं ५-तालश्च वत्सनाभश्च गुणान् षोडश संहरेत्।
रसेन्द्रं विषमानेन मेलयेन्मर्दयेत्ततः ॥ १९४१ ॥
उदग्वारुणिकादुग्धे निर्गुण्डीवारिणा ततः।
त्रिजगद्विजयानीरै र्बहुशो भावयेद्रसम् ॥ १९४२ ॥
यद्वा तालं समं ग्राह्यं रसेन्द्रेणाऽमृतेन च।
मायूरै र्भावयेत्पित्तै रोहिपित्तैश्च छागजैः ॥ १९४३ ॥
आरण्यमाहिषोत्थैश्च त्रींस्त्रीन्वारान्विभावयेत्।
वटीः कृत्वा ततो दद्यात्सन्निपातार्दिताय वै ॥१९४४॥
आर्द्रकस्य रसेनैव सन्निपातं क्षणाद्धरेत्।
नं ६-भस्म सूतं वलिवसां समभागं समाहरेत् ॥१९४५॥
तैले गन्धं गालयित्वा ढालयेच्चित्रजे रसे।
उक्षमूत्रैस्ततः कुर्यात्कज्जलीं पारदेन वै ॥ १९४६ ॥
कज्जलीपादभागेन लोहभस्म नियोजयेत्।
गुडं तार्प्यं नटशिलां गन्धकं सर्वमेकतः ॥ १९४७ ॥

गुडेन मर्दयेत्सर्वं ताम्रपत्राणि लेपयेत्।
तत्समानि ततो ध्मात्वा भास्करं भस्मतां नयेत् १९४८
मेलयित्वा सन्निपातभूतभैरवपारदे।
मर्दयेत्सिन्दुवाराद्भिः भृङ्गराजरसैस्तथा ॥ १९४९ ॥
मण्डूकिनीरसैश्चित्रनीरैश्च पिचुमन्दजैः।
तरुणीजैः काकमाचीरसैः शक्रासनोद्भवैः ॥ १९५० ॥
मर्दयेत्ताम्रदण्डेन पात्रे ताम्रभवे ततः।
पश्चात्प्रभावयेत्पित्तैः प्रागुक्तैस्त्रिस्त्रिवारकम् ॥१९५१॥
राजिकामात्रगुटिकाः कुर्यात्सूतवरस्य वै।
सन्निपाते महाघोरे तिस्रो दद्याद्गुटी बुधः ॥ १९५२ ॥
वटीप्रदानतो पश्चान्निर्याते मलमूत्रके।
जीवेत्सद्यस्तदा रोगी ह्यन्यथा तं परित्यजेत् ॥१९५३॥
भोजयेद्दधिकं भक्तं सलिलं ढालयेत्ततः।
यथेष्टमशनं दद्यात्सन्निपातचिकित्सने ॥ १९५४ ॥
ज्वरे वातभवे कुर्यात्क्वाथञ्च दशमूलजम्।
अनुपानाय वातारितैलेनाऽङ्गं प्रमर्दयेत् ॥ १९५५ ॥
कम्पज्वरे पर्पटजं क्वाथं दद्याद्विचक्षणः।
ग्रहण्यां जीरकभवं ज्वरेऽथ विषमेऽपि च ॥ १९५६ ॥
अतीसारे च मन्दाग्नौ क्षयरोगे च कामले।
शुण्ठीश्वदंष्ट्रयोः क्वाथं कासश्वासगुदामये ॥१९५७॥
आमवाते वटी देया प्रागुक्तक्वाथयोगतः।
इति प्रोक्तः सन्निपातभूतभैरवसञ्ज्ञकः ॥ १९५८ ॥

रसाल., ज्वरे।

भाषा—(नं. १) पातन, स्वेदन, मुखकरण, स्वर्णजारण और गन्धकजारण ये संस्कार पारेके करके एकपल लेकर काले धतूरेके वीजोंके तैलसे ३ दिनतक मर्दनकरे। शुद्धगन्धक १ तोला लेकर वारीकचूर्णकर कच्छपयन्त्रमें आधा नीचे विछाकर ऊपर पारेको रख ऊपरसे आधातोला गन्धक रखकर काले-धतूरेकातैल इतना डाले कि पारा और गन्धक डुबजाय। फिर यन्त्रपर कपड़मिट्टीकर भूधरपुटदेवे। ऐसे ८ पुट देनेसे पारेकी भस्महोजायगी। इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे त्रिदोष, विषमज्वर, कास, श्वास, पीनस, वातरोग, भगन्दर, कुष्ठ, प्रमेह, मन्दाग्नि, क्षय, उदररोग, पाण्डु, येसव नष्टहोतेहैं।

२—त्रिकटु, अदरख, विजोरा, पाचों नमक और गरम-जलकेसाथ देनेसे वात और श्लेष्मप्रधानसन्निपातको नष्टकरताहै। वन्दालके वीजोंके चूर्णकेसाथ नस्य देनेसे सन्निपातजमूर्च्छाको दूरकरताहै। अथवा सोंठ, मिर्च, सेंधानमक, गोमूत्र, सिरसके बीज सव समभागके चूर्णकेसाथ इसपारेको मिलाकर अञ्जन कर-नेसे सन्निपातज गाढमूर्च्छा दूरहोतीहै।

३—शुद्धहरिताल, तीनोंक्षार, सोनामाखी, जीरा, शुद्ध-गन्धक, वाझखेखसा और करिहारीका पुष्टकन्द, सोंठ, अदरख, महुएकेवीज, शुद्धवछनाग, ऊपरकहीहुई पारेकी भस्म सव सम-भाग लेकर वारीकचूर्णकर संभालूके कन्द अथवा जड़के रससे १ रोज निरन्तर मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रख-छोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह तत्काल आयेहुए ज्वरको नष्टकरतीहै॥

४—शुद्धवछनाग, सोनामाखी, त्रिकटु, पारद, पीतल, नाग और ताम्र इनकी भस्में येसव समभाग लेकर १–२ पहर मर्दन-कर भैंसा, रोहू, मोरके पित्तोसे ३–३ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली सञ्ज्ञा-रहित महाघोरसन्निपातमें देनेसे यह उसको नष्टकरताहै।

५—शुद्ध हरिताल ३ भा , वछनाग और पारदभस्म सोलह १६ भाग लेकर वारीकचूर्णकर चमारदूधीके दूध, निर्गुण्डी और भागके स्वरससे ७–७ भावनाएं देकर तैयारकरे अथवा हरिताल, वछनाग और पारदभस्म समभाग लेकर मोर, रोहू, वकरा और जङ्गलीभैंसेके पित्तोंसे ३–३ भावनाए देकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रस अथवा समयोचितानुपानके साथ देनेसे यह सन्निपातको एक-क्षणमें दूरकरताहै।

६—पारदभस्म, शुद्ध गन्धक और ताम्रभस्म समभाग लेकर संभालू, भंगरा, ब्राह्मी, चित्रक, नीम, कपास, मकोय, गांजा इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे तावेके पात्रमें तावेके डण्डेसे १–१ रोज़ मर्दनकर पूर्वोक्तपित्तोंसे ३–३ भावनाएं देकर राईके वरावर गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे ३–३ गोलिया उचितानुपानकेसाथ मूर्च्छायुक्त सन्निपातमें देनेसे यदि मलमूत्रत्यागहोजाय तो साध्य समझना अन्यथा असाध्यहै, उसकेलिये यत्न नहीं करना। सञ्ज्ञा आनेपर दहीभात खानेको देना और शिरपर पानीकी धारा छोड़ना। एकदम अच्छाहोनेपर यथेष्ट भोजनकरना। वातज्वरमें दशमूलका काढ़ा देना, और एरण्डके तैलकी मालिशकराना। कम्पज्वरमें पित्तपापड़ेका काढ़ा और ग्रहणी तथा विषमज्वरमें जीरेकाक्वाथदेना। अतिसार, मन्दाग्नि, क्षय और कामलामें सोंठ और गोखरूका क्वाथ देना। कास, श्वास, ववासीर, आमवात इनमें दशमूलका क्वाथ देना। इस छठे भूतभैरवमें धतूरेके तैलमें गन्धकको गलाकर चित्रकके क्वाथ और वैलकेमूत्रमें बुझाना। गुड़, सोनामाखी, मैनसिल और गन्धक सवको गुड़केसाथ मर्दनकर इसकी वरावरके तावेके पत्रों-पर लेपकर धमनकरनेसे भस्महोगी यह भस्म काममें लाना दूसरी नहीं॥ ४३९॥

४४० भूतभैरवरसः (तृतीयः)

अंशाः पञ्चदशाऽत्र तालकभवाः शुद्धाच्च सद्गन्धकात्,
सप्ताऽष्टौ नव तिन्तिडीफलभवा विल्वाद्दश द्वौ वरा।
हेमाह्वा त्रय एव सप्त कथिता चित्रस्य पथ्याश्च षट्,
षट् सूतस्य विशोधितस्य महतां भल्लातकानां दश॥
सेहुण्डार्कपयोभिरेभिरभितः सञ्चूर्ण्य तद्भाव्यते,
रोहीतस्य जटाजलेन मृदितं सूक्ष्मं कृतं खल्वगम्।
एकीकृत्य समस्तमेतदमृतं भागैकमत्र क्षिपेत्,
ताम्बूलोद्भववारिणा सुमृदितं शस्याम्भसा वा ततः॥

मिश्रं चायसपात्रकेऽथ सकल रुद्ध्वा च धान्याऽऽकरे,
धार्यं तत्खलु चैकविंशतिदिनं चोद्धृत्य मात्रां शुभाम्
दद्याच्छागलमूत्रकञ्च नियत तच्चाऽनुपाने हितं,
प्राज्ञो व्याधियुताय नित्यमनया रीत्या ददीतोपधम्॥
नीलं दोषभवं तथा बहुरुजं धातौ गतञ्चाऽरुणं,
श्वेतं स्फीतमनल्पकं भृशरुजं कुष्ठञ्च तूर्णं हरेत्।
कुष्ठाऽष्टादश भूतभैरवरसो हन्याच्च तूर्णं क्षितौ,
वातव्याधिनिकृन्तनस्तनुभवान्दोपानयं नाशयेत्॥
एवं समासात्खलु सर्वकुष्ठानयं रसो वै क्षपयेद्धि तूर्णम्
निराकरोत्येव च धातुदोषान्भवत्यवश्यं सुभगं शरीरम्
भुञ्जीतभक्तं सततं न शाकं घृतञ्च गोधूमयुतं भजेत।
कोष्णंश्रृतंदुग्धमवश्यमद्यात्पथ्यार्थमेतत्प्रदिशन्तिसंत.

रसचि., र.सु., र सं , र चि , र चं , र.का , कुष्ठे।

भाषा—शुद्ध हरिताल और गन्धक १५-१५ भाग, इमली ९ भाग, बेलगिरी १० भा., त्रिफला २ भा , सत्यानाशीकी जड़ ३ भा , चित्रक ७ भा., हरें और शुद्ध पारा ६-६ भाग, बड़े भिलावे १० भाग, लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे, गन्धक, और हरितालकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर सेहुण्ड और आकके दूधसे १-१ दिन मर्दनकर रोहिड़ेकी जड़की छालके पानीसे एकदिन मर्दनकर उबसे चतुर्थांश शुद्ध वछनाग डालकर पान अथवा दूबके रससे एकदिन घोटकर लोहेके पात्रमें रख मुंहबन्दकर अनाजकी खत्तीमें दबादे इक्कीसवें दिन निकालकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली बकरेके मूत्रकेसाथ देनेसे नील, अधिकपीडायुक्त, धातुगत, लाल, सफेद, फैलाहुआ, ये सब कुष्ठ नष्टहोतेहै। तत्तद्रोगोचितानुपानके साथ देनेसे यह समस्त रोगोंको नष्टकरताहै। इसके सेवनसे आदमीका दिव्यशरीर होजाताहै। धातुगत जितने दोपहैं उनसबको दूरकरताहै चावल,गेहूं, घी, गरमदूध, खानेको दे, शाक किसीभी चीजका नदे॥ ४४०॥

४४१ भूतभैरवरसः (चतुर्थः)

आखुहा गरुडनागरसञ्ज्ञा हारगौरसकलं क्रमवृद्धम्।
कारवल्लिरसमर्दितं पचेत्ताम्रजे शिरसि लाजपाकतः॥
भूतभैरवरसो गुडान्वितो वल्लिजैः सह निषेवितश्चिरम्
शीतपूर्वलशुनं समश्नतां हन्ति शीत मतिमात्रमाशितः

र.शं , टो , र शि , र वो , ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध सोमल १ भा , सोनामाखी २ भा , सोंठ ३ भा., पारा ४ भा , गन्धक ५ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर करेलेके रससे ३ रोज मर्दनकर गोला बनाय ताम्रके सम्पुटमें बन्दकर २-३ कपड़मिट्टी करके सुखाले फिर लवण अथवा भस्म या वालूमें रखकर नीचे क्रमवृद्ध आंचदे। जब ऊपर धान डालनेसे फूलजाय तब आंच देना बन्द करदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर कपड़मिट्टीको हटादे और तांबेके सम्पुटसहित घोटकर रखले। तांबेके सम्पुटका जो कच्चाभाग रहाहो उसे निकालदे। इसमेंसे १-१ रत्ती गुड़ और कालीमिर्चके साथ सेवन करके दही, भातकेसाथ लशुन खिलानेसे शीतपूर्वक आनेवाले ज्वरको यह नष्टकरताहै ४४१

४४२ भूतभैरवरसः (पञ्चमः)

सूतसूर्यविषटङ्कगन्धैः कृष्णधूर्तभवतैलनिबन्धैः।
भूतभैरवरसः शशियुक्तः सन्निपातमुपहन्त्युपभुक्तः॥

र (मा.), रससारसङ्ग्रह, सन्निपाते।

भाषा—शुद्धपारा, ताम्रभस्म, शुद्धवछनाग, सुहागा, गन्धक सब समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर काले धतूरेकेतेलसे १-२ रोज़ मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली कपूरकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको दूरकरताहै४४२

४४३ भूतभैरवरसः (षष्ठः)

पारदं गन्धकं ताम्रं मर्द्य वह्निकषायके।
वज्रमूषान्तरे पाच्यं वालुकायन्त्रके दिनम्॥ १९६८॥
मार्जारजम्बुजैः पित्तै र्भावितं प्रहरद्वयम्।
गुञ्जामात्रं चानुपानै र्देयं शीतोदकेन च॥ १९६९॥
सन्धिकं तत्क्षणं हन्ति दध्यन्नं पथ्यमाचरेत्।
नारिकेलोदकं दाहे रसोऽयं भूतभैरवः॥ १९७०॥

वै चि , र प., वा , सन्धिकसन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म समभागलेकर कज्जली बनाकर चित्रकके क्वाथमें एकरोज मर्दनकर वज्रमूषामें रखकर वालुकायन्त्रमें एकदिनरातकी अग्नि देकर बिल्ली और गीदडकेपित्तोंसे २-२ पहर मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली ठंडे पानीकेसाथ देनेसे सन्धिकसन्निपातको यह तत्क्षणदूरकरताहै। भूखलगनेपर दहीभात देना। दाहहोनेपर नारियलका जल पिलाना॥४४३॥

४४४ भूताङ्कुशोरसः (प्रथमः)

सूतायस्ताम्रमभ्रञ्च मुक्ताश्चाऽपि समं समम्।
सूतपादोत्तमं वज्रं शिलागन्धकतालकम्॥ १९७१॥
तुत्थं रसाञ्जनं शुद्धमब्धिफेनं शिलाञ्जनम्।
पञ्चानां लवणानाञ्च प्रतिभागं रसोन्मितम्॥१९७२॥
भृङ्गचित्रकवज्रीणां दुग्धैश्चाऽपि विमर्दयेत्।
दिनान्ते पिण्डिकां कृत्वा रुद्ध्वा गजपुटे पचेत्॥१९७३॥
भूताङ्कुशरसो नाम नित्यं गुञ्जाद्वयं लिहेत्।
आर्द्रकस्य रसेनाऽपि भूतोन्मादनिवारणम्॥१९७४॥
पिप्पल्यार्कं पिबेच्चाऽनु दशमूलकषायकम्।
स्वेदयेत्कटुतुम्ब्या च तीक्ष्णं रूक्षञ्च वर्जयेत्॥१९७५॥
माहिषञ्च घृतं क्षीरं गुर्वन्नमपि भक्षयेत्।
अभ्यङ्गः कटुतैलेन हितो भूताङ्कुशो रसः॥ १९७६॥

र.सं , र चं., र सु , व , र.र , रसायनसं., र को , भै र , चि र.म., र का., र र कौ , उन्मादे। र.र कौमुद्या प्रायोऽशुद्ध. पाठ।

भाषा—शुद्धपारा, लोह, ताम्र, अभ्रक और मोती इनकी-भस्में १–१ तोला, हीराभस्म ३ माशे, शुद्धमैनसिल, गन्धक, हरिताल, तूतिया और रसौत, समुद्रफेन, काले सुरमे की भस्म ये प्रत्येक ६–६ भाग लेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नील-वर्णकज्जलीमें मिलाकर भंगरा और चित्रकके स्वरस तथा सेहुण्डके दूधसे १–१ दिन मर्दनकर गोला वनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे २–२ रत्ती अदरखके रससे देकर पीपलके प्रक्षेपयुक्त दशमूलका काढ़ा पिलानेसे और कड़वीतूंवीके स्वरस का स्वेद देनेसे भूतोन्माद नष्टहोता है । तीक्ष्ण और रूक्ष पदार्थोंका त्यागकरे । भेंसकाघी, दूध और भारी अन्न इनका-भक्षणकरे । कड़वे तैलकी मालिश इसमें हितकरहै ॥ ४४४ ॥

४४५ भूताङ्कुशोरसः (द्वितीयः)

शुद्धसूतस्य भागैकं द्विभागं शुद्धगन्धकम् ।
भागद्वयं मृतं ताम्रं मरिचं दशभागिकम् ॥ १९७७ ॥
मृताऽभ्रस्य चतुर्भागं भागमेकं विषं क्षिपेत् ।
भूताऽङ्कुशस्य भागैकं सर्वमम्लेन भावयेत् ॥१९७८॥
सोऽयं भूताङ्कुशो नाम यामैकं वातकासजित् ।
अनुपानं लिहेत्क्षौद्रैर्विभीतकफलत्वचम् ॥ १९७९ ॥

र र , र.सु , र क.ल., नि.र , वै चि , यो. चि , चि र. भ , र को., र म मा , व रा., र र स , र. का-, यो. म., कासाऽधिकारे । र र स. स्वयमग्निरस इति नाम । योगमहार्णवे त्रिभागं ताम्रं योजितम् ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग., शुद्धगन्धक और ताम्रभस्म २–२ भाग, मरिच १० भा., अभ्रकभस्म ४ भा , शुद्ध वछनाग और धतूरेकेवीज १–१ भाग लेकर नीवूके रससे मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली खाकर ऊपरसे वहेड़ेकीछालकाचूर्ण मधुसे चाटनेसे वातजखासी निवृत्त होतीहै ॥ ४४५ ॥

४४६ भूतेश्वररसः (प्रथमः)

ताम्राऽभ्रलोहानि रसोऽमृतञ्च
फलत्रयं गुग्गुलुकः शिलाजतु ।
करञ्जवीजं विषतिन्दुवीजं
सर्वाणि चैतानि समानि पिष्ट्वा ॥ १९८० ॥
निक्षिप्य तत्सप्तदिनञ्च भाण्डे
गद्याणमेकं मधुना च साज्यम् ।
सेवेत दुग्धेन युतञ्च पथ्यं
नीरेण वा स्त्री तु विवर्जनीया ॥ १९८१ ॥

र दी , कुष्ठे ।

टि०—अय प्रथमकुष्ठकुठारेण वहुधा साम्यमावहति परन्तु द्रव्यप्रमाणे विशेषत्वात्पृथक्तया पाठो गृहीत । अतएव रसदीपिकायामुभयस्योल्लेखोऽस्ति । अस्मिन्योगे उग्रद्रव्ययोगत्वाद्गद्याणिकी मात्रा न समीचीनाऽस्ति कदाचित्कुष्ठिपु नैतस्योग्रत्वमनुभूयेत तथाऽपि प्रथमतो माषादारभ्य शनैर्मात्रा वर्द्धनीयेति सुहृत्सु विज्ञप्ति ।

भाषा—ताम्र, अभ्रक, लोह और पारा इनकीभस्में, शुद्धवछनाग, त्रिफला, शुद्धगूगल और शिलाजतु, पूतीकरञ्जवीज, कुचिला सव समभाग लेकर १–२ पहर मर्दनकर शीशीमें भरले । सातदिनकेवाद इसमेंसे १ माशेसे आरम्भकर धीरे २ छ माशेतककी मात्रा घी और शहदकेसाथ देवे । जहा मात्रा असह्य मालूमपड़े वहा रुकजानाचाहिये । इसके सेवनसे समस्तकुष्ठ नष्टहोतेहै । इसमें दूध अथवा जलकेसाथ पथ्य देना और स्त्रीसङ्ग वर्जितकरना ॥ ४४६ ॥

४४७ भूतेश्वररसः (द्वितीयः)

विश्वोषणं टङ्कणपारदञ्च
सगन्धकं चूर्णसमांशशुक्रम् ।
नेपालवीजं त्रिवृता च गुञ्जा
गुञ्जाप्रमाणा गुटिका प्रसिद्धा ॥१९८२॥
विरेचनी मूत्रविकारशोधिनी
अग्नेर्हिता दीपनपाचनी च ।
जलोदरे प्लीहि गुदाऽङ्कुरे च
संशोधिनी शीतजलेन पीता ॥
सङ्ग्राहिणी चूर्णजलेन सत्यं
भूतेश्वरो नाम च सुप्रसिद्धः ॥१९८३॥

र.क यो , उदररोगे

भाषा—सोंठ, मिर्च, भुनासुहागा, शुद्धपारा, गन्धक, जमालगोटा, निसोत और सफेदगुञ्जा समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर पानीके योगसे गुञ्जाप्रमाण गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेसे १–१ गोली ठंढे जलकेसाथ देनेसे मलावरोध, मूत्रविकार, मन्दाग्नि, जलोदर, प्लीहा, ववासीर, इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ४४७ ॥

४४८ भूतेश्वररसः (तृतीयः) (पित्तकालान्तकः—नाराचः—लक्ष्मीविलासः)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं नेपालं दरदं समम् ।
मर्द्य वह्निकषायेण दोलायन्त्रे दिनं पचेत् १९८४ ॥
मत्स्यपित्तस्नुहीक्षीरै र्द्वियामं खल्वमध्यके ।
माषैकमार्द्रकैर्देयं ज्वरं हन्ति न संशयः ॥ १९८५ ॥
अर्कमूलकषायेण सन्निपातं निहन्ति च ।
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं तृषि तक्रं पिवेदनु ॥
भूतेश्वररसो नाम भूतेश्वरविनिर्मितः ॥ १९८६ ॥

वै चि , ज्वराऽधिकारे ।

टि०—वसवराजीयवैद्यचिन्तामण्यो शिर पित्ताऽधिकारे द्विरावृत्त पाठ लिखित्वा तस्य पित्तकुलान्तक इति नाम स्थापित, तत्राऽनुपानादीनामभावोऽस्ति केवल शिर पित्त नियच्छतीति कृत्वा समापितम्, तत्र छिन्नाकाथादिक योजनीयम् । जद्वावाते पुनर्लक्ष्मीविलास इति लिखित्वा इममेव पाठ विन्यस्य मूले नाराचोऽय महारस इति लिखित तत्र पित्तकुलान्तके मत्स्यपित्तेन भावना नाऽस्ति, अन्यत्र तु सर्वत्रैव मत्स्यपित्तस्नुहीक्षीराभ्यामुभाभ्या भावनाऽस्तीति विशेषोऽवधार्य ।

भाषा—शुद्धपारा, वछनाग, गन्धक, जमालगोटा और शिगरिफ सब समभाग लेकर कज्जलीकर चित्रकके काढ़ेसे मर्दनकर गोलाबनाय चित्रकके क्वाथमें दोलायन्त्रसे १ दिन पकाकर मत्स्यपित्त और सेहुण्डके दूधसे २-२ पहर मर्दनकर १-१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे यह ज्वरको नष्टकरता है। आककी जड़केकाढ़ेसे देनेसे सन्निपातको नष्टकरताहै। पथ्य दहीभात है, प्यासलगनेपर छाछ पिलाना ॥ ४४८ ॥

४४९ भृङ्गादिचूर्णम्

भृङ्गी ब्राह्मी च शुण्ठी त्रिफलकणवचा-
वाकुचीकुष्ठयुक्तं,
भल्लातं चाऽश्वगन्धा शिखिगरलनिशा-
षोडशं भस्मसूतम्।
कांस्ये पात्रे रजश्च त्रिफलजलयुतं
प्रातरुत्थाय पीतं,
षण्मासाद्रोगहारी पलितवलिहृ-
त्स्वर्णदेही शरीरी ॥ १९८७ ॥

वै चि, रसायने।

भाषा—भंगरा, ब्राह्मी, सोंठ, त्रिफला, पीपल, वच, वाकुची कुठ, शुद्धभिलावे, असगन्ध, चित्रक और अपामार्ग, शुद्धवछनाग, हल्दी और पारेकीभस्म सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ माशा कासेके पात्रमें त्रिफलाके काढ़ेके साथ प्रातःकाल पीनेसे ६ महीनेके प्रयोगसे समस्तरोगदूरहोकर वलीपलितरहित होजाताहै ॥ ४४९ ॥

४५० भेदकमञ्जरीरसः

समांशमरिचैः सार्द्धं तालकं टङ्कणो बलिः।
मत्स्यपित्तं तृतीयांशं शर्करा सकलैः समा ॥१९८८॥
शृङ्गवेररसेनाऽत्र द्विगुञ्जतुलितो रसः।
दद्यो नवज्वरं हन्याज्जलयोगञ्च कारयेत् ॥ १९८९ ॥

र. सु, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—मरिच, शुद्धहरिताल, सुहागा और गन्धक सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर इससे तृतीयांश मछलीका पित्त और बराबरकी शक्कर मिलाकर अदरखके रससे मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली देकर मत्थेपर जलकी धारा देनेसे नवज्वर दूरहोताहै ॥ ४५० ॥

४५१ भेदीज्वराङ्कुशोरसः

पारदं वत्सनाभञ्च प्रत्येकं निष्कसम्मितम्।
द्विनिष्कं गन्धकञ्चैव टङ्कणञ्च द्विनिष्ककम् ॥१९९०॥
मरिचं पञ्चनिष्कं स्यात् षण्निष्कं दन्तिवीजकम्।
सिंहीफलरसैर्मर्द्य द्वियामं श्लक्ष्णतां नयेत् ॥१९९१॥
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा छायाशुष्काञ्च कारयेत्।
आर्द्रकद्रवसंयुक्तां ज्वरे जीर्णे प्रयोजयेत् ॥
सर्वज्वरहरा शीघ्र नाम्ना भेदी ज्वराङ्कुशः ॥१९९२॥

व. रा., वै. चि., ज्वराऽधिकारे। वैद्यचिन्तामणौ हिङ्गुलमधिकं नियोजितम्।

भाषा—शुद्ध पारा और वछनाग ४-४ माशे, शुद्धगन्धक और भुनासुहागा ८-८ माशे, मरिच २० माशे, शुद्धजमालगोटा २४ माशे, लेकर सबकी कज्जलीकर भटकटैयाके फलोंके रससे २ पहर मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर छायामें सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे यह जीर्णज्वरको शीघ्रनष्टकरताहै ॥ ४५१ ॥

४५२ भैरवगुग्गुलुः

एरण्डमूलस्य लघो र्गुडूच्याः
पुनर्नवायाः सफलत्रयस्य।
प्रत्येकशः प्रस्थमथार्द्धप्रस्थं
शुण्ठ्या जलद्रोणयुगे पचेत्तत् ॥ १९९३ ॥
अष्टाऽवशिष्टेन पुरस्य प्रस्थं
पचेत्कषायाद्भवति स्म सान्द्रम्।
त्रिवृत्कणाशुण्ठिमरीचकानां
पलं पलं माक्षिकधातुकर्षौ ॥ १९९४ ॥
सद्गन्धकस्य द्विपलं यवानी
कृमिघ्नकुष्ठे लवणञ्च दन्ती।
फलत्रयं कार्षिकमानमुच्चै-
राचूर्ण्य सन्निक्षिपति स्म शीते ॥ १९९५ ॥
श्रीभैरवो गुग्गुलुरेष रोगा-
न्निहन्ति वृद्धांश्छ्वयथूनशेषान्।
क्षयं प्रवृद्धं गलगण्डयुक्तम्
कुष्ठौघजातं कसनान्समस्तान् ॥
वाताऽस्रमात्रं यदि दुस्तरञ्च
श्रीशम्भुना कीर्तित एष योगः ॥ १९९६ ॥

र. क, कुष्ठाऽधिकारे।

भाषा—छोटे एरण्डकीजड़, गिलोय, पुनर्नवा, त्रिफला १-१ सेर और सोंठ आधासेर लेकर जवकुट चूर्णकर ३२ सेर पानीमें औटावे। अष्टमांश शेषरहनेपर छानकर १ सेर शुद्धगूगल डालकर पकावे। जब गूगल गलकर रावके सदृशहोजाय तब निसोत, पीपल, सोंठ, मिर्चे १-१ पल, शुद्ध सोनामाखी २ कर्ष, शुद्धगन्धक २ पल, अजवाइन, विडङ्ग, कुठ, सेंधानमक, दन्तीमूल, त्रिफला ये १-१ कर्ष लेकर इनका बारीक चूर्ण डालकर पकावे। जब गोली बंधनेलायक होजाय तब उतारकर १-१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ अथवा २ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे बढ़ेहुए शोथ, क्षय, गण्डमाला, कुष्ठसमुदाय, सम्पूर्णखासी, दुस्तर वातरक्त इन सबको यह नष्ट करना है ॥ ४५२ ॥

४५३ भैरवरसः (प्रथमः)

रसं गन्धं विषं टङ्कं मरिचं चव्यचित्रकम् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव सम्मर्द्य वटिकां ततः ॥ १९९७ ॥
गुञ्जात्रयप्रमाणेन खादेत्तोयाऽनुपानतः ।
स्वरभेदं निहन्त्याशु श्वासं कासं सुदुस्तरम् ॥१९९८॥

र. सं., ध., र. चं., र. सु., भै. र, स्वरभेदे ।

टि०—भैषज्यरत्नावल्यादौ बहुत्र स्थानेषु टङ्कणस्थाने व्योषमिति दृश्यते, तत्तु न सम्यक् प्रतिभाति मरिचस्य पृथक् सर्वत्रोपलब्धे श्वासादौ टङ्कणस्याऽतिमहत्वाच्च, तथा च श्वासभैरव इति नाम स्थापित हिक्काश्वासाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, वछनाग और सुहागा, मरिच, चव्य, चित्रक सबसमभाग लेकर बारीक चूर्णकर अदरखके रससे एकरोज़ मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली जलकेसाथ लेनेसे स्वरभेद, दुस्तरश्वास, कास येसब नष्टहोतेहैं ॥ ४५३ ॥

४५४ भैरवरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं ग्रहीतव्यं रक्तिकाशतमात्रकम् ।
त्रिगुणां शर्करां लौहे निम्बदण्डेन मर्दयेत् ॥ १९९९ ॥
याममात्रं ततो दद्याच्छ्वेतखादिरचूर्णकम् ।
सूततुल्यं ततः कुर्यान्मर्दनात्कज्जलोपमम् ॥ २००० ॥
विंशति वटिकाः कार्याः स्थाप्या गोधूमचूर्णके ।
निःशेषनिःसृता ज्ञात्वा पिडिकास्ताः कलेवरे २००१
भैरवं देवमभ्यर्च्य वलिं तस्मै प्रदाय च ।
विधाय योगिनीपूजां दुर्गामभ्यर्च्य यत्नतः ॥ २००२ ॥
वटिकास्ताः प्रयोक्तव्या भिषजा जानता क्रियाम् ।
दिवसत्रितयं दद्यात्तिस्रस्तिस्रो विजानता ॥ २००३ ॥
चतुर्थाह्न समारभ्य एकामेकां प्रयोजयेत् ।
एवं चतुर्दशदिने नीरोगो जायते नरः ॥ २००४ ॥
पथ्यं शर्करया सार्द्धमुष्णाऽन्नं घृतगन्धि च ।
कुर्यात्साकाङ्क्षमुत्थानं सकृद्भोजनमिष्यते ॥ २००५ ॥
जलपानं जलस्पर्शं कदाचन न कारयेत् ।
दुःसहायान्तु तृष्णायामिक्षुदाडिमकादिकम् ॥२००६॥
शौचकार्येऽप्युष्णवारि वाससा प्रोञ्छनं द्रुतम् ।
वाताऽऽतपाऽग्निसम्पर्कान् दूरतः परिवर्जयेत् ॥२००७॥
मेघाऽऽगमे वा शीते वा कार्यमेतद्विजानता ।
मुखरोगे तु सञ्जाते मुखरोगहरी क्रिया ॥ २००८ ॥
श्रमाऽध्वभाराध्ययनस्वप्नालस्यानि वर्जयेत् ।
ताम्बूलं भक्षयेन्नित्यं कर्पूरादिसुवासितम् ॥ २००९ ॥
क्रिया श्लेष्महरी युक्ता वातपित्ताऽविरोधिनी ।
लवणं वर्जयेदम्लं दिवा निद्रां तथैव च ॥ २०१० ॥
रात्रौ जागरणञ्चैव स्त्रीमुखालोकनन्तथा ।
सप्ताहद्वयमुक्तस्य स्नानमुष्णाम्बुना चरेत् ॥२०११॥
पथ्यं कुर्याद्धितमिदं जाङ्गलानां रसादिभिः ।
व्यायामाद्यं वर्जनीयं यावन्न प्रकृतिं भजेत् ॥२०१२॥
एवं कृतविधानस्तु यः करोत्येतदौषधम् ।
स एव पापरोगस्य पारं याति जितेन्द्रियः ॥ २०१३ ॥
पिडका विलयं यान्ति वलं तेजश्च वर्धते ।
रुजा च प्रशमं याति ग्रन्थिशोथश्च शाम्यति ॥२०१४॥
अस्थ्नां भवति दार्ढ्यञ्च आमवातश्च शाम्यति ।
भैरवेण समाख्यातो रसोऽयं भैरवाभिधः ॥२०१५॥

र. सं., भै. र, उपदंशे ।

भाषा—शुद्धपारा १०० रत्ती, शक्कर ३०० रत्ती लेकर लोहेकेपात्रमें नीमके डंडेसे १ पहर मर्दनकर पारेकी वरावर सफेदखैरकाचूर्ण डालकर कज्जली वनावे, इसकी २० गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे ३–३ गोली सनेहुएगेहूंके आटेमें कवलितकर भैरवको वलिदेकर योगिनी और दुर्गाकी पूजाकर निगलवादे । तमामशरीर फूटगयाहो तथा पिडकाओंसे व्याप्त-होगयाहो तो तीनरोज़तक ३–३ गोलियादे, चौथे दिनसे १–१ गोली ११ दिनतकदे । ऐसे १४ दिनमें मनुष्य नीरोग होजा-यगा । पथ्यमें थोड़ाघी और शक्करकेसाथ गरमअन्न देवे । एकदम भूख लगे उसवक्त एकवार भोजनदेवे, जलपान और जलस्पर्श भूलकरभी न करे । यदि असह्यतृष्णाहो तो ईख और अनार-प्रभृतिकारसदेवे । शौचकार्यमेंभी गरमपानीसे प्रक्षालनकेवाद तुर्त कपड़ेसे पोंछडाले । वायु, धूप और अग्निका दूरसे परित्याग-करे । वर्षा अथवा शीतकालमें इसप्रयोगका करना उचितहै । मुंह आकर दु सहहोनेपर मुखरोगको दूरकरनेवाली क्रियाकरनी । परिश्रम, मार्गचलना, भार उठाना, दिनका सोना, रात्रिजाग-रण और आलस्य इनको छोड़दे । मुंहका स्वाद खरावहोनेपर कपूरवगैरहसे वासित पान खावे । वातपित्तकी अविरोधक श्लेष्म-हर क्रियाकरनी, नमक और खटाईको छोड़दे स्त्रीके मुखतक-को न देखे । चौदहदिनकेवाद गरमजलसे स्नानकरे और जङ्गली जानवरोंके मासरससे हितकारकपथ्यले । जवतक प्रकृ-तिस्थ न हो तवतक परिश्रम न करे । जो इसतरह पथ्यकरता-हुआ इस औषधिका सेवनकरेगा वही जितेन्द्रिय इसपापरोगसे छूटेगा । इसके सेवनसे फुडिया नष्टहोजातीहैं वल और तेज वढ़ताहै । पीड़ा, गाठें और सूजन तथा आमवात नष्टहोजातेहै हड्डिया मज़वूत होजातीहैं ॥ ४५४ ॥

४५५ भैरवरसः (तृतीयः)

द्विगुणितशुचिगन्धं पारदं कन्यकाद्वि–,
दिनमृदितमशेषं विन्यसेत्कूपिकायाम् ।
वसनमृदवलिप्तं सप्तशः सैकते त–,
द्विपच तरणियामं वह्निवृद्ध्या क्रमेण ॥ २०१६ ॥
तदनु दरदतुल्यं कूपिकानाललग्नं,
रसममलमतन्द्रो मूर्च्छितं चाददीत ।
हरिदलविजयाम्भोमर्दितं चातपे तत,
त्रिगुणितमुनिवारान् सप्तकृत्वो विमर्द्य ॥ २०१७ ॥

क्षितितलगतयन्त्रे सल्लवङ्गात्तजाती,-
फलगलितसुतैलाद्भैरवोऽयं छिवल्लः ।
निशि सह सितया यैः सेवितो दुग्धभोज्यै,-
र्दृढयति बहुशुक्रं नान्यथा यावदुक्तिः ॥ २०१८ ॥

र. श., टी., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्धपारा १ भा, गन्धक २ भा. लेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुंआरके रससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें रखकर वालुकायन्त्रमें १२ पहरकी क्रमवृद्ध अग्निदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर रसको निकालकर तुलसी और भागके रसोंसे २१ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय भूधरयन्त्रमें स्वेदितकर लौंग और जायफलसे निकालेहुए तैलसे २–४ भावनाएं देकर रखछोड़े । इसमेंसे ६–६ रत्ती शक्करकेसाथ सेवनकरके ऊपर दूधपीनेसे वातुगतसमस्तविकार दूरहोतेहैं । रात्रिमें विषयसे २ घंटे पहिले लेनेसे यह शुक्रस्तम्भन करता है पर विषयकी अभिलाषासे इसका सेवन किया जायतो उसदिन केवल दूध लेनाचाहिये । इसका हमेशा सेवन रखनेसे समस्तरोग दूरहोतेहै ॥ ४५५ ॥

४५६ भैरवरसः (चतुर्थः)

सुवर्णं पारदं कान्तं मृतं सर्वं समं भवेत् ।
शतावर्याः शिफाद्रावै र्भावयेद्दिवसत्रयम् ॥ २०१९ ॥
त्रिदिनं त्रिफलाक्वाथै भृङ्गद्रावै र्दिनत्रयम् ।
भावितं मधुसर्पिर्भ्यां भक्षयेद्भैरवं रसम् ॥ २०२० ॥
माषैकैकं वर्षमात्रं जीवेच्चन्द्रार्कतारकम् ।
मूलचूर्णं शतावर्याः कृष्णाजपयसा युतम् ॥
पलैकैकं पिवेच्चानु क्रामकं परमं हितम् ॥ २०२१ ॥

र. खं., रसायनसं., रसायने ।

भाषा—सुवर्ण, पारा, कान्तलोह इनकीभस्में समभागलेकर शतावरी, त्रिफला और भंगराके अङ्गस्वरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा मधु और घीकेसाथ १ वर्षतक निरन्तर सेवनकरनेसे दीर्घायु होताहै शतावरीका चूर्ण ४ तोले कालीवकरीके दूधके साथ ऊपरसे लेनेसे शरीरमें इसका क्रामण होताहै ॥ ४५६ ॥

४५७ भैरवरसः (पञ्चम.)

शुद्धं रसं समाहृत्य वेदमात्रपलं शुभम् ।
अभ्रकं गन्धकञ्चैव तावन्मात्रं प्रदापयेत् ॥ २०२२ ॥
श्वेतं सौवीरकञ्चाऽपि चतुर्थांशञ्च सैन्धवम् ।
जम्बीरस्य च नीरेण मर्दयेत्सर्वमेकतः ॥ २०२३ ॥
निक्षिप्य काचकूप्यां तन्निरुद्ध्य चाऽतियत्नतः ।
वालुकाभिः समापूर्य याममात्रं ततः परम् ॥ २०२४ ॥
अग्निश्च मध्यमं कुर्यात्ततः शीतं समुद्धरेत् ।
कनकस्य पलात्पश्चात्पत्रं सूक्ष्मं विधाय च ॥२०२५॥
माक्षिकस्य पलञ्चाऽत्र गन्धकस्य चतुष्टयम् ।
द्वयमेकत्र तत्कृत्वा गन्धकं माक्षिकन्तथा ॥ २०२६ ॥
हेम्नः पत्रञ्च तन्मध्ये धृत्वा दद्या शरावके ।
उपर्यपि भवेच्चाऽन्यः शरावः सन्धिमुद्रितः ॥२०२७॥
कुक्कुराख्यः पुटो मुख्यस्तत्र देयः सुसंयतः ।
स्वाङ्गशीतं तमादाय भस्मीभूतञ्च काञ्चनम् ॥२०२८॥
सूक्ष्मं तच्चाऽपि सञ्चूर्ण्य पूर्वसूतेन मेलयेत् ।
ज्वालामुखीरसैः सूतं मर्दयेदेकतोऽखिलम् ॥२०२९॥
ततो गव्येन हविषा रसञ्च मर्दयेद् दृढम् ।
कृत्वा तद्गोलकं सर्वं मृन्मूषान्तर्गतञ्च तत ॥ २०३० ॥
विमुद्रय सकलं भाण्डे मृन्मये तत्र दीयते ।
अग्नि हि वालुकाभिस्तं दिनसप्तावधि यथा॥२०३१॥
अग्निं तत्र शनैः कुर्याच्छीतमादाय पारदम् ।
विचूर्ण्य रक्ष्यते भाण्डे राजते वाऽथ काञ्चने॥२०३२॥
गुञ्जामेकामतो दद्यात्प्रतिवासरमुत्तमम ।
कासे श्वासे ज्वरे मेहे गुल्मे दुष्क्षये तथा ॥२०३३॥
व्योषेण मधुना साकं रसं गुग्गुलुनाऽथवा ।
घृतेन सह दातव्यः कुष्ठे क्वाथं वराभवम् ॥
अग्निमान्द्ये च दातव्यो रक्तरोगे महारसः ॥ २०३४ ॥

रसचि., रक्तरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा, अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक और सफेद सुरमा ४–४ पल, सेंधानमक १ पल लेकर सबकी कज्जलीकर जंभीरीके रससे १–२ रोज मर्दनकर २–३ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें डालकर मुंहबन्दकरदे । फिर वालुकायन्त्रमें रख एकपहरकी मध्यम अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । एकपल सोनेके वारीकपत्रकराके शुद्धसोनामाखी १ पल और गन्धक ४ पल लेकर वारीक चूर्णकर शरावसम्पुटमें सोनेकेपत्रोंके ऊपरनीचे रखकर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर सोनेकी भस्मको निकालकर पहिलेरसमें मिलाकर हुरहुर और गायकेघीसे १–१ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय मिट्टीकी मूषामें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रखकर ७ दिनकी मन्द आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सोने अथवा चादीके पात्रमें रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती रोज़ाना त्रिकटु और मधुकेसाथ अथवा गूगलकेसाथ अथवा घीकेसाथ देनेसे कास, श्वास, ज्वर, प्रमेह, गुल्म, दुष्क्षय और मन्दाग्नि इनको यह नष्टकरताहै । कुष्ठमें घीकेसाथ देकर त्रिफलाका क्वाथ देना । इससे रक्ताश्रित तमामरोग दूरहोंगे ॥ ४५७ ॥

४५८ भैरवरसः (षष्ठः)

पीतेन गन्धकेनैव तुल्यः स्याच्छुद्धपारदः ।
लाङ्गल्यफेनकासीससूताच्चूर्णन्तु षड्गुणम् ॥२०३५॥
कृष्णोन्मत्तरसेनैतद्भावयेच्च दिनत्रयम् ।
वल्लयुग्मप्रमाणेन वन्धनीया वुधैर्वटी ॥ २०३६ ॥
नारङ्गाऽऽर्द्ररसै र्देया सन्निपातविमुक्तये ।
स्नानं जलेन शीतेन भोजने दधिभक्तकम् ॥
सन्निपातमसाध्यन्तु हन्त्यसौ भैरवो रसः ॥२०३७॥

यो. स., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा १–१ तोला, शुद्ध करिहारी, अफीम और कसीस २–२ तोले लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी-नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर कालेधतूरेके रससे ३ दिन भावना देकर ६–६ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली नारङ्गी और अदरख के रससे देनेसे और शीतजलसे स्नानकराकर दहीभात खिलानेसे यह असाध्य सन्निपातको दूरकरताहै ॥ ४५८ ॥

४५९ भैरवरसः (सप्तमः)

पीतेन गन्धेन समश्च सूतः
सत्वं गुडूच्या अपि तत्समानम्।
शिलाविषं चाऽप्यपराजिता च
भागस्त्वमीषां द्विगुणो नियोज्यः ॥ २०३८ ॥
कटुत्रिकाऽङ्कोलकदेवदाल्य-
स्त्रिभागिकाः स्युः परिचूर्ण्य सर्वम्।
तथा रसैः शिग्रुदलोद्भवैश्च
सम्मर्द्य सार्द्धं गुटिका विधेया ॥
वल्लप्रमाणा विषमे त्रिदोषे
कर्पूरसार्द्धं भिषजा प्रदेया ॥ २०३९ ॥

यो. सं., सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, गिलोयसत्त्व १–१ भाग, शुद्ध अथवा भस्मकियाहुआ सोमल, कोयल २–२ भाग, त्रिकटु, अङ्कोलकीछाल और वन्दाल ३–३ भाग लेकर सवका वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर सहिजनकी जड़कीछालके रससे मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली कपूरकेसाथ देनेसे त्रिदोष और विषमज्वर नष्टहोतेहै ॥ ४५९ ॥

४६० भैरवरसः (अष्टमः)

सूतं गन्धं लोहमण्डूरकिट्टं
सर्वैस्तुल्यो वत्सनाभो नियोज्यः।
आर्द्रं भृङ्गं वीजपूरं जयन्ती
निर्गुण्ड्येषां वस्त्रपूतैर्द्रवैश्च ॥ २०४० ॥
युक्त्या वैद्यो भावयित्वा विधेया
शाणाऽर्द्धाऽर्द्धाः सन्निपातस्य नुत्यै।
शीतैर्नीरैर्निर्मलैः स्नानमत्र
पथ्ये दुग्धं शर्कराभिर्हितञ्च ॥ २०४१ ॥

यो सं., सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और मण्डूरभस्म समभाग, सवकी वरावर शुद्धवछनाग लेकर सवका वारीक चूर्णकर अदरख, भंगरा, विजोरा, जैत, निर्गुण्डी इन प्रत्येकके रसोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात नष्ट होता है ठढेजलसे रोगीको स्नानकराना और पथ्यमें शक्कर, दूध और भात देना ॥ ४६० ॥

४६१ भैरवरसः (नवमः)

आदौ नागरसस्य योगविधया गद्याणकं निःक्षिपेत्,
एकैकं विषशुल्वलोहगगनं तालञ्च गद्याणकम्।
खल्वे जातिदलस्य वासकरसैर्भृङ्गोद्भवैः सप्तधा,
सिद्धः सिद्धरसस्त्रिदोषशमनः स्वामी रसो भैरवः ॥
किं क्वाथैः क्वथितैश्च किंशुकभवैः किंवाऽग्निदाहैर्घनैः,
किंवा मद्यविभूषणैः किमखिलैरन्यैरुपायैरपि।
हेलानिर्जितसर्वरोगनिवहप्रागल्भ्यलब्धध्वजः,
प्राप्तोऽयं यदि सन्निपातशमनः स्वामी रसो भैरवः ॥
मुक्तैः सर्वचिकित्सकैः किमखिले जाते त्रिदोषे ज्वरे।
वल्लद्वन्द्वमितं हि भैरवममुं सम्यङ्नियुज्याऽऽदरात्,
पश्चाच्चेदनुपानकल्पनमदो जातीफलं सज्जलं,
स्नानं भक्तमशालिकं दधिसितामिश्रञ्च दद्याद्बुधः ॥

र को, र. का., र (मा), सन्निपाते। र (मा) सन्निपातभैरव इति नाम।

टि०–रसेभविषशुल्वाऽभ्र लोहैर्वासारमान्वितै। सप्तकृत्वस्त्रिदोषान्तकोऽयं भैरवो भवेदिति भैरवनाम्ना रसकामधेनु रसावतार (माणिक्यचन्द्र) यो. स्वतन्त्र. पाठ कल्पित', परन्त्वस्मादयूनगुणोऽस्ति हरितालरहितत्वान्न्यूनद्रव्यभावनावत्त्वाच्चाऽतो न पृथक्तया सङ्गृहीत इति विद्वद्भिर्विभावनीयम्।

भाषा—निरुत्थ नागभस्म, शुद्धवछनाग, तावा, लोह, अभ्रक और हरितालभस्म ६–६ माशे लेकर सवका वारीक चूर्णकर जावित्री, अड्सा, भगरा इनकेरसोंसे ७–७ रोज़ मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानके साथ देनेसे यह तमाम व्याधियोको नष्टकरताहै। इसरसके रहतेहुए क्वथित (क्वाथ), टेसूप्रभृतिका सेक, अग्निप्रभृतिसे दाह, मद्य अथवा, आभूषण इनसमस्त उपायोंकी क्या जुरूरतहै क्योकि यह अकेलाही सवरोगोंको दूरकरदेताहै फिर अधिक तकलीफ उठानेकी क्या आवश्यकताहै जिससमय वैद्योंने रोगीको छोड़ दियाहो तव त्रिदोषज्वरमें ६–६ रत्तीकी मात्रादेकर जायफल और थोड़ागरमजल देवे। स्नानकराके लाल चावल दही और शक्कर मिलाकर देवे ॥ ४६१ ॥

४६२ भैरवीवटी (प्रथमा)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं मर्दयेदिक्षुकद्रवैः।
दिनं भाव्यञ्च मर्द्यञ्च शोषयित्वा तु भृङ्गिजैः ॥२०४५॥
चतुर्धा भावयेद्द्रावैस्तिलपर्ण्या द्रवैस्तथा।
भावितश्च विशोष्याऽथ चूर्णयेद्वस्त्रगालितम् ॥२०४६॥
चूर्णतुल्यं मृतं ताम्रं ताम्राद्दष्टांशकं विषम्।
कृष्णाशीतविडङ्गानि कृष्णाजीराऽसनं वला ॥२०४७॥
ताम्राऽर्द्धं प्रतिचूर्णं स्यात्सर्वमेकत्र कारयेत्।
यामैकं भृङ्गजद्रावैर्मर्दयेत्कल्कतां गतम् ॥ २०४८ ॥
स्निग्धभाण्डगतं पाच्यं पिण्डं यामं कृशाऽग्निना।
चणमात्रा वटी योज्या चित्रकाऽऽर्द्रकसैन्धवैः॥२०४९॥

सम्यक् त्रिदोषजं हन्ति सन्निपातं सुदारुणम्।
भैरवी गुटिका ख्याता दध्यन्नं पथ्यमाचरेत्॥२०५०॥

नि र, र सु, र को,, र का, र. क. यो., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा १ भा, गन्धक २ भागलेकर नीलवर्ण-कज्जलीकर ईखकेरससे १ दिन मर्दनकर सुखाय भंगरा और हुरहुरकेरसकी ४–४ दिन भावनाएंदेकर सुखाले। फिर बराबरकी ताम्रभस्म और अष्टमांश शुद्धवछनाग, पीपल, कपूर, विडङ्ग, कालीजीरी, असन, वला ये प्रत्येक ताम्रसे आधे मिलाकर १–२ पहर घोटकर भंगरेकेरससे एकरोज़ मर्दनकर चिकने वर्तनमें डालकर मन्दाग्निसे १ प्रहर पकावे। गोलीबननेलायक होनेपर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली चित्रक और सेंधानमककेसाथ देनेसे दारुणसन्निपातको यह नष्टकरतीहै इसमें पथ्य दहीभात देना॥ ४६२॥

४६३ भैरवीवटी (द्वितीया)

पाठापारदगन्धकाऽमृतलतामाक्षीकतालाऽनलैः,
काश्मीरीविषतिन्दुलाङ्गलिजटायष्टीसवोलौषधैः।
कर्कोट्याऽपि च मोघया बृहतिकानिर्गुण्डिवारापृथक्,
भाव्यं, सप्तदिनं जयेत्सविषमान्दध्नाज्वरान्कोलिका॥

र प, ज्वरे।

भाषा—पाठा, शुद्ध पारा और गन्धक, गिलोय, सोना-माखी, हरिताल, चित्रक, गंभार, शुद्ध कुचिला और कलिहारीकी जड़, मुलहठी, हीराबोल सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर खेखसा, पांढर, वन-भाटा, संभालू इनप्रत्येककेरसोंसे ७–७ रोज़ भावनाएंदेकर वेरकी गुठलीके बराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली दहीकेसाथ देनेसे सद्योज्वर और विषमज्वर नष्टहोतेहैं॥४६३॥

४६४ भैरवीवटी (तृतीया)

पिप्पली मरिचञ्चैव टङ्कणं दरदं तथा।
शुद्धं मनःशिलागन्धं हरितालं तथैव च॥ २०५२॥
विशुद्धं पारदं प्रोक्तं तथा शुद्धं विषं स्मृतम्।
रौप्यभूतिश्चाऽभ्रकञ्च पलमानं पृथक्पृथक्॥२०५३॥
चूर्णं सूक्ष्मं विधायाऽथ भावयेत्तु रसैः पुनः।
कदलीमूलकं चित्रं धत्तूरस्य च मूलकम्॥ २०५४॥
पृथक्पृथक् पलमितं कुट्टयित्वा जले क्षिपेत्।
षोडशांशे क्वाथयित्वा वस्त्रपूतं समाचरेत्॥२०५५॥
खल्वे क्षिप्त्वा भावयेत्तु कुर्यान्मुद्गनिभां वटीम्।
भैरवाख्या वटी ख्याता रसशङ्करसञ्ज्ञिता।
कासश्वासौ निहन्त्येषा सर्वव्याधिविनाशिनी २०५६

र सु, श्वासे।

भाषा—पीपल, मरिच, शुद्ध सुहागा, हिंगरिफ, मैनसिल, गन्धक, हरिताल, पारा और वछनाग, चांदी और अभ्रकभस्म १–१ पल लेकर बारीकचूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर केलाकन्द, चित्रक, धतूरेकीजड़ १–१ पल लेकर अलग २ कूटकर १६ गुने पानीमें क्वाथकरे। चतुर्थांशावशेष रहनेपर छानले फिर इसक्वाथसे पूर्वोक्तरसको मर्दनकर मूंगप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ अथवा २ गोली उचितानुपानके साथ देनेसे कास श्वासादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरतीहै ४६४

४६५ भैरवीवटी (चतुर्थी)

तिन्तिडीकं विषं शुद्धं दग्धशङ्खं नियोजितम्।
जातीफलं त्रुटियुतं सर्वमेकत्र कारयेत्॥ २०५७॥
रसं गन्धं समरिचं निम्बूरसविमर्दितम्।
चित्रकेण तु वारैकं वटिका माषमात्रिका॥ २०५८॥
देया यत्नेन सततं नाम्ना मन्दाग्निभैरवी।
कासे श्वासे प्रतिश्याये विषरोगादिके ज्वरे॥
सर्वरोगेषु विख्याता वटी भैरवसञ्ज्ञिता॥ २०५९॥

र. सु., अजीर्णे।

भाषा—तिन्तिडीक (समाक यूनानी), शुद्धवछनाग, शङ्ख-भस्म, जायफल, इलायची, शुद्ध पारा और गन्धक, मरिच सब समभाग लेकर नीबू और चित्रकके रससे १–१ भावना देकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानके साथ देनेसे मन्दाग्नि, कास, श्वास, प्रतिश्याय, विष, ज्वर इत्यादिरोगोंको यह नष्टकरतीहै॥ ४६५॥

४६६ भोगसुन्दरीवटी

हिङ्गुलञ्च चतुर्जातं लवङ्गौषधचन्दनम्।
जातिजं केशरं कृष्णा त्वाकल्लमहिफेनकम्॥ २०६०॥
कस्तूरीन्दु समं सर्वं तत्समे विजयासिते।
क्षुद्रकोलमिता कार्या वटिका भोगसुन्दरी॥ २०६१॥

रसायनसं, र. कौ, वृ यो. त, वाजीकरणे।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, चातुर्जात, लौंग, सोंठ, सफेदचन्दन, जायफल, केसर, पीपल, अकलकरा, अफीम, कस्तूरी, कपूर सबसमभाग लेकर बारीकचूर्णकर इसकी बराबर भांग और शक्कर मिलाकर छोटेबेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली दूधकेसाथ खानेसे यह वीर्यका स्तम्भन करतीहै और मन्दाग्नि, सङ्ग्रहणी तथा श्वास कास को नष्टकरतीहै ४६६

४६७ भोगपुरन्दरीवटी

आकारकरभं ग्राह्यं पलैकं केशरस्तथा।
हिङ्गुलञ्च फलं जात्याः पञ्चटङ्कप्रमाणकम्॥ २०६२॥
त्रिटङ्कं देवकुसुमं टङ्कैकं दरदं मतम्।
तन्मानमहिफेनञ्च जलेनैव विमर्दयेत्॥ २०६३॥
सूक्ष्मकोलफलोन्मानां गुटिकां रचयेद्बुधः।
एकैकां भक्षयेद्रात्रौ पयः पेयं यथेप्सितम्॥ २०६४॥
किञ्चिदुष्णं बलं कृत्वा गुटी भोगपुरन्दरी।
वीर्यस्तम्भकरी नृणां स्त्रीणां सौख्यप्रदायिनी॥२०६५॥

र कु., वीर्यस्तम्भे।

भाषा—अकल्करा १ पल, केशर २ टंक, जायफल ५ टंक, लौंग ३ टंक, शुद्धशिंगरिफ और अफीम १–१ टंक लेकर सबका बारीकचूर्णकर जलकेसाथ १–२ पहर घोटकर छोटेबेर-बराबर गोलियां बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली रतिसमयसे २ घंटेपहिले दूधकेसाथ लेनेसे शरीरमें तेज़ी लाकर वीर्यका स्तम्भनकरतीहै और स्त्रियोंको आनन्ददेतीहै ४६७

४६८ भ्रमनाशिनीवटी

रसं त्रिपं गन्धकदन्दशूकौ समाक्ष स्त्रैः त्रिगुणोपणञ्च।
सशृङ्गवेरेण समं विमर्द्य वटीञ्च कुर्यान्मरिचप्रमाणाम्॥
कृष्णा शताह्वा शुण्ठी च पथ्या यासा पलपलम।
पटुपली सुगुडश्चाऽत्र गुटिका भ्रमनाशिनी॥ २०६७॥
ब्राह्मीरसेनाष्टगुणेन हैय-
ङ्गवीनमेभिः परिपाचनीयम्।
ब्राह्मीवचापिप्पलिकुष्ठविश्वा-
नीलोत्पलैः सैन्धवमिश्रितैश्च॥ २०६८॥

यो. सं., रसायन सं., रससारसङ्ग्रह, र. सि, भ्रमरोगे।

टि०—रसायन स, रससारसंग्रह, र. सि, एषु नागार्जुनीति नाम्ना एको योगोऽस्ति सोऽस्मिन्नेवान्तर्भवति। नागस्थाने टङ्कणन्तु भ्रमात्सञ्जातमिति बोद्धव्यम्।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग और गन्धक, नागभस्म १–१ तोला, मरिच ३ तोले लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नील-वर्णकज्जलीमें मिलाकर अदरखके रसमें मरिचबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। यह प्रथमगुटिका तैयारहुई। पीपल, सौंफ, सोंठ, हर्रे, धमासा १–१ पल, पुरानागुड़ ६ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर गुड़मिलाकर ३–३ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े, यह द्वितीयगुटिका तैयारहुई। ब्राह्मी, वच, पीपल, कुठ, सोंठ, नीलोफर और सेंधानमक इनका कल्क डालकर ८ सेर ब्राह्मीके रसमें १ सेर मक्खन पकाकर रखछोड़े। फिर भ्रम-रोगीके वमनविरेचनादिसे शुद्धकर प्रातःकालमें १ गोली प्रथम-रसमेंसे ब्राह्मीरसके साथदे। मध्याह्नमें द्वितीय गोली दे और रात्रिको दूधके साथ यथाशक्ति ब्राह्मीघृत दे। इसप्रयोगसे समस्तप्रकारके भ्रम, अपस्मार, श्वास, कास और वातगुल्म नष्टहोते है॥ ४६८॥

४६९ मकरध्वजरसः (प्रथमः)

स्वर्णभागौ च वङ्गञ्च मौक्तिकं कान्तलोहकम्।
जातीकोषफले रूप्यं सिन्दूररसकांस्यकम्॥ २०६९॥
कस्तूरी विद्रुमं चन्द्रमभ्रकञ्चैकभागिकम्।
स्वर्णसिंदूरतो भागांश्चत्वारः कल्पयेद्बुधः॥ २०७०॥
गुञ्जा द्विगुञ्जं वल्लं वा सम्यग्वीक्ष्य बलाऽबलम्।
यथासात्म्याऽनुपानेन सर्वरोगेषु दापयेत्॥२०७१॥
नातः परतरः श्रेष्ठः सर्वरोगनिषूदनः।
सर्वलोकहितार्थाय शिवेन परिकीर्तितः॥ २०७२॥

र. सं, र. सु, रसायने वाजीकरणे च।

भाषा—सोनेकीभस्म २ भाग, वङ्ग, मोती, कान्तलोह, जावित्री, जायफल, चांदी और कास्यभस्म, रससिन्दूर, कस्तूरी, प्रवालभस्म, कपूर, अभ्रकभस्म १–१ भाग, स्वर्णसिन्दूर ४ भाग लेकर सबको मिलाकर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतककी मात्रा बलाबल देखकर तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोको दूरकरताहै। इसकी बराबर सर्वरोगहर दूसरी औषधि नहींहै॥ ४६९॥

४७० मकरध्वजरसः (द्वितीयः)

सिन्दूरं हेमलौहञ्च देवपुष्पं सचन्द्रकम्।
जातीफलं मृगमदञ्चैकत्र परिमर्दयेत्॥ २०७३॥
पर्णाम्भसा ततः कुर्याद्वटिकां वल्लसम्मिताम्।
सेविता छागपयसा प्रमेहांस्तत्कृतान्गदान्॥ २०७४॥
क्लैव्यं धातुक्षयं कासं जीर्णञ्च विषमज्वरम्।
रसोऽयं क्षपयेत्तूर्णं मकरध्वजसञ्ज्ञकः॥ २०७५॥

भै. र, प्रमेहपिडिकाऽधिकारे।

टि०—"जातीफल लवङ्गञ्च कर्पूर मरिच तथा। प्रत्येक तोलकं दत्त्वा सुवर्णस्य च मापकम्॥ अण्डज मापमानञ्च सर्वतुल्यमथेश्वरम्। यत्नतो मर्दयेत्खल्वे चतुर्गुञ्जा वटी चरेत्॥ एप चन्द्रोदयो नाम रसो वाजीकर. पर.। हन्तिरोगानशेपाश्च बलवीर्याऽग्निवर्धन॥" इति भैषज्यरत्नावल्या ध्वजभङ्गाऽधिकारे पाठो दृश्यते सोऽस्मिन्नेवान्तर्भावनीय पृथक् पाठस्याऽनावश्यकत्वात्। प्रमाणवैचित्र्यस्याऽप्यनावश्यकत्व समप्रमाणेनाऽद्भुत-कार्यकरत्वात्।

भाषा—रससिन्दूर, सुवर्ण और लोहभस्म, लौंग, शुद्धकपूर, जायफल, कस्तूरी समभाग लेकर पानकेरससे एकरोज मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे बकरीके दूधसे १–१ गोली सेवनकरनेसे समस्तप्रमेह, षण्ढता, धातुक्षय, कास, जीर्ण और विषमज्वर इनसबको यह नष्टकरता है॥४७०॥

४७१ मकरध्वजरसः (तृतीयः)

वज्रहेमार्कसूताऽभ्रलोहभस्म क्रमोत्तरम्।
सर्वं कन्याद्रवै मर्द्यं शाल्मल्याश्च द्रवैस्त्र्यहम्॥२०७६॥
तद्रुद्ध्वा काचकूप्यन्त वालुकायां त्र्यहं पचेत्।
तत्कल्कं मुशलीक्वाथे वज्रार्कक्षीरसंयुतैः॥ २०७७॥
दिनैकं मर्दयेत्खल्वे रुद्ध्वाऽन्तर्भूधरे पुटेत्।
यामादुद्धृत्य सञ्चूर्ण्य सिताकृष्णात्रिजातकैः॥२०७८॥
समैः समं विमिश्याऽथ गुञ्जैकं भक्षयेत्सदा।
मागधी मुशली यष्टी वानरीबीजकं समम्॥२०७९॥
चूर्णं सिताऽऽज्यगोक्षीरैः पलाऽर्द्धं पाययेदनु।
कामिनीनां सहस्रैकं रममाणो न मुह्यति॥
सेवनाद् दृढकायः स्याद्रसोऽयं मकरध्वजः॥२०८०॥

रसायन खं, रसायने।

टि०—चतुर्थकोलाश्रिरुद्रे उपादानद्रव्याणि वज्रसूताऽभ्रस्वर्णाऽर्क-तारतीक्ष्णानि क्रमवृद्धानि सन्ति, द्वितीयकाल्कण्टके च वज्रसूताऽभ्रहे-मार्कतीक्ष्णमुण्डानि क्रमवृद्धानि सन्ति एव पञ्चममदनकामदेवेऽपि, तृतीय-मकरध्वजस्य च वज्रहेमार्कसूताऽभ्रलोहभस्मानि सन्ति इत्यत्र आपाततो

बह्वन्तरं न प्रतीयते परन्तु प्रमाणे भावनासु पाकाऽपाकयोः निक्षेपद्रव्येषु च महदन्तरत्वात्स्वतन्त्रा एव चत्वारः पाठाः स्थापिता इति बोद्धव्यम्।

भाषा—हीरा १ भा, सोना २ भा, तावा ३ भा, पारा ४ भा, अभ्रक ५ भा, लोह ६ भा, इनसवकीभस्में लेकर १–२ पहर मर्दनकर घीकुंआर और सेंमलकीछालके रसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें भरकर ३ रोज़तक वालुकायन्त्रमें पाककरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मुशलीकेकाढे, सेहुण्ड और आकके दूधसे १–१ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर भूधरयन्त्रमेंरख १ पहरकी आच देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इसकी वरावर शक्कर, पीपल और त्रिजात मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती खाकर पीपल, मुसली, मुलहठी, केवाचकेवीज सव समभागका चूर्णकर शक्कर, घी और गायके दूधकेसाथ २ तोले लेनेसे वहुतसी स्त्रियोंकेसाथ सम्भोगकरताहुआभी स्खलित नहींहोता। चिरकालतक सेवनकरनेसे दीर्घायु होता है ॥४७१॥

४७२ मकरध्वजरसः (चतुर्थः)

लोहं वलिः पारदभस्म सर्वं
तुल्यं घनं गोक्षुरमोचताल्यः।
चतुर्भवं गोस्तनिकाश्वगन्धा-
खर्जूरिकामर्कटिकावरीभिः ॥ २०८१ ॥
एषां लवान्सर्वसमांश्च खण्डं
स्यात्पञ्चभागं सिकताऽथवाऽपि।
सर्वं वराक्वाथजलेन घृष्टं
वारान्दश द्वौ च तथेक्षुवार्भिः ॥२०८२॥
कर्षप्रमाणं वटकञ्च खादे-
द्दुग्धं ततो विंशतिकर्षमानम्।
पिवेदलं स्याद्रतिशक्तिसक्तो
विवर्जनीयं मकरध्वजेन ॥ २०८३ ॥

र श, वाजीकरणे।

भाषा—लोहभस्म, शुद्ध गन्धक और पारदभस्म १–१ तोला, अभ्रकभस्म, गोखरू, मोचरस, तालमूली, चातुर्जात, वड़ीद्राक्ष, असगन्ध, छुहारे, केवाचकेवीज, शतावर ये सव ३–३ माशे लेकर सवका वारीक चूर्णकर इसचूर्णसे पचगुनी खाड मिलाकर त्रिफलाके क्काथसे आठ, और ईखके रससे वारह भावनाए देकर १–१ तोलेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली खाकर पावभरदूध पीवे तो वहुतसी स्त्रियोंके साथ यथेष्ट रमणकरसक्ताहै और चिरकालतक उचितानुपानकेसाथ सेवन करनेसे समस्तरोगोंसे मुक्त होसक्ताहै ॥ ४७२ ॥

४७३ मञ्जिष्ठादियोगः

मञ्जिष्ठा त्रापुषं वीजं जीरकञ्च शतपुष्पिका।
धात्रीफलञ्च दरदं गन्धकञ्च मनःशिला ॥ २०८४ ॥
एतेषां समभागानां चूर्णं टङ्कमितं नरः।
भक्षयेन्मधुना सार्धं पतेत्तस्याऽश्मरी ध्रुवम् ॥२०८५॥

र प्र, अश्मरीरोगे।

भाषा—मजीठ, खीरेकेवीज, जीरा, सोंफ, आंवले, शुद्ध शिंगरिफ, गन्धक और मैनसिल सव समभाग लेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ माशे मधुकेसाथ खानेसे पथरी गिरपड़तीहै ४७३

४७४ मणिपर्पटी

वज्रं मरकतं पुष्पमिन्द्रनीलं सुचूर्णितम्।
रसं द्विगुणगन्धञ्च कज्जलीं कारयेद्बुधः ॥ २०८६ ॥
द्रावितां लोहपात्रे तु पर्पट्याकारतां नयेत्।
निर्गुण्डी तुलसीशिग्रूधत्तूरार्कचिवह्निजैः ॥ २०८७ ॥
रसैर्व्योषवरारम्भासुरसैरपि भावयेत्।
आर्द्रकस्य रसेनाऽपि सप्तधा परिभावयेत् ॥२०८८॥
एवं सिद्धो रसो नाम्ना विख्याता मणिपर्पटी।
कासश्वासक्षयोन्मादषाढ्यमौढ्यतमोभ्रमान् ॥२०८९॥
सन्निपातज्वराऽजीर्णवातव्याधिभगन्दरान्।
नासिकागलजान्रोगानपतन्त्रविसूचिकाः ॥
गुञ्जाप्रमाणतो हन्ति तत्तद्रोगानुपानकैः ॥ २०९० ॥

र. र स, र. र. कौ, र क ल, र को, नासारोगे।

भाषा—हीरा, पन्ना, पुखराज और नीलमकीभस्में, शुद्ध-पारा १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर वेरकीलकड़ीकेकोयलोंपर लोहेके पात्रमें गला-कर भस्मोंको मिलादे। फिर ताज़ेगोवरपर रक्खेहुए केलेके पत्तेपर डालकर दूसरेकेलेकेपत्तेसे ढककर ताजेगोवरसे दवादे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर दुवारा कज्जलीवनाय संभाल, तुलसी, सहिजन, धतूरा, आक, चित्रक, त्रिकटु, त्रिफला, केलाकन्द इनके स्वरसोंसे १–१ भावना देनेकेबाद अदरखके रसकी ७ भावनाए देकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रख-छोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे कास, श्वास, क्षय, उन्माद, नपुंसकता, जड़ता, तम, भ्रम, सन्निपात, ज्वर, अजीर्ण, वातव्याधि, भगन्दर, नासिका और गलेकेरोग, अपतन्त्रक, हैजा, इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरतीहै ४७४

४७५ मण्डूरचूर्णम्

श्लक्ष्णचूर्णञ्च मण्डूरं गोमूत्रैः पाचयेद्दिनम्।
वज्रवल्ल्या रसैः पेष्यं चित्रकुड्मलसंयुतम् ॥
भक्षितं टङ्कमात्रञ्च ह्यसाध्यं श्वयथुं जयेत् ॥२०९१॥

र र., व रा, वै. चि, शोथाऽधिकारे।

टि०–व रा, वै चि अनयोर्वज्रमण्डूरेति नाम, चित्रकुड्मलसंयुतमित्यस्य स्थाने चिञ्चालकुक्षारसंयुतमिति पाठो दृश्यते तत्र द्वयोरपि क्षेपे न काऽपि हानिः।

भाषा—मण्डूरभस्मको एकदिन गोमूत्रमें पकाकर हड़जोड़के रससे १ रोज मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४माशेकी मात्रा १ तोला चित्रकके टूसोंके साथ देनेसे यह असाध्यशोथ को दूरकरताहै ॥ ४७५ ॥

४७६ मण्डूरपाकः

पुरातनं वर्षशते व्यतीते
किट्टं समानीय पलानि चाऽष्टौ ।
त्रिःसप्तवेलं ज्वलनेतितप्तं
मूत्रे गवां सिक्तमथो विचूर्ण्य ॥ २०९२ ॥
प्रस्थार्द्धमानेन गवां जलेन
सार्द्धं ततः पक्वमतीव गाढम् ।
भाण्डात्समुत्तार्य कटाहकान्ते
संस्थाप्य तापे परिशोषणीयम् ॥ २०९३ ॥
मध्ये प्रदेया त्रिफला समाना
तस्मिन् कृते सूक्ष्मपरागरूपे ।
मूत्रेण पिण्डं विपुले शरावे
युग्मे विनिर्माय विमोचनीयम् ॥ २०९४ ॥
द्वयं ततः कर्पटमृत्तिकाभ्यां
संवेष्ट्य सन्धौ छगणैः कृतेऽग्नौ ।
यामत्रयञ्च ज्वलमानवह्नौ
क्वाथेन तेन त्रिफलोद्भवेन ॥ २०९५ ॥
संसिच्य संसिच्य तथा विधेयं
धूमो यथा गच्छति याति शोषम् ।
पक्वं समाकृष्य विचूर्ण्य मध्ये
क्षेप्यं चतुर्थांशविनष्टलोहम् ॥ २०९६ ॥
पलैकमात्रां त्रिफलाजलेन
ततोऽप्सु निष्काथ्य चतुर्गुणासु ।
क्वाथं समादाय जलार्द्धभागं
किट्टं कटाहे परिमोचनीयम् ॥ २०९७ ॥
चूर्णीकृतं तं परिभावनीयं
रसेन भूपस्य दिनं समग्रम् ।
मुण्ड्या द्वितीये दिवसे रसेन
शार्दूलनीरेण दिने तृतीये ॥ २०९८ ॥
पाकादमुष्मात्प्रबभूव पाको
मण्डूरनाम्ना प्रथितो धरायाम् ।
नागाऽर्जुनेन प्रकटीकृतोऽयं
हिताय लोकस्य निपीडितस्य ॥ २०९९ ॥
शोफामपाण्ड्वानलमन्दतायां
भगन्दरे कृच्छ्रगुदार्त्तिशूले ।
प्लीहाभिवृद्धौ क्रिमिकण्ठरोगे,
मण्डूरपाकः कथितो मुनीन्द्रैः ॥ २१०० ॥

र (मा), पाण्ड्वधिकारे ।

भाषा—कमसेकम १०० वर्षपुरानामण्डूर ८ पल लेकर वहेड़ेकेकोयलोंमें गरमकर २१ वार गोमूत्रमें बुझाकर वारीकचूर्णकर आधसेर गोमूत्रकेसाथपकावे और गाढाहोनेपर कान्तलोहकी कड़ाहीमें डालकर धूपमें सुखाले फिर इसके वरावर त्रिफलाकाचूर्णमिलाकर गोमूत्रमें मर्दनकर गोलावनाय वड़ेशरावमें वन्दकर कपड़मिट्टी देकर ३ पहर कण्डोंकी अग्निमें गरमकर त्रिफलाके काढ़ेमें बुझादे। इसतरह कईवार करके इसमें चौथाभाग लोहभस्म मिलाकर एकपलत्रिफलाके अर्द्धावशेष काढेमें डालदे और अग्निपर चढ़ाकर क्वाथको जलादे । फिर अमिलतास, गोरखमुण्डी, और चित्रकके स्वरस अथवा क्वाथोसे १–१ रोज़ भावनादेकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ रत्तीसे ९ रत्तीतककीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे शोफ, आम, पाण्डु, मन्दाग्नि, मूत्रकृच्छ्र, शूल, ववासीर, भगन्दर, प्लीहा, क्रिमि और कण्ठरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४७६ ॥

४७७ मण्डूरयोगः (प्रथमः)

शतवर्षं समादाय लोहसिङ्घाणकं शुभम् ।
पलानि पञ्च तच्चूर्णं तुल्यक्षौद्रसमन्वितम् ॥ २१०१ ॥
भल्लातकाऽस्थ्यग्रशतं विनिक्षिप्य विदाहयेत् ।
तदक्षमात्रं तक्रेण पीत्वा जीर्णे च तक्रभुक् ॥
एवं लभेत सप्ताहात्पाण्डुरोगी सुखं परम् ॥ २१०२ ॥

ग. नि., पाण्डुरोगे ।

भाषा—सौवर्षका पुराना लोहेकाकिट्ट ५ पल लेकर कूटडाले फिर इसकी वरावर मधु और मिलावे ८०० नग डालकर जलादे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर कूटछानकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ तोला छाछकेसाथ पीकर छाछहीपर रहनेसे सातदिनमें पाण्डुरोग नष्टहोताहै ॥ ४७७ ॥

४७८ मण्डूरयोगः (द्वितीयः)

क्षुद्राद्वयञ्च निर्गुण्डी भृगन्धी विम्बिका तथा ।
अर्ककार्पासभृङ्गाह्वभृङ्गराजविषाणि च ॥ २१०३ ॥
तोयं पर्पटकं ब्राह्मी सूर्यमूर्वे च कारवी ।
एरण्डोऽतिविषा शुण्ठी चित्राऽपामार्गमत्स्यदक् ॥
एकैकपलमात्रेण गोमूत्राऽऽढकपाचितम् ।
मण्डूरं जीर्णपाकञ्च क्षिपेद्रम्यकरण्डके ॥ २१०५ ॥
भुक्तोत्तरमिदं खादेत्कामलापाण्डुशोफजित् ।
श्वासकासक्षयहरं मण्डूरं सर्वरोगजित् ॥ २१०६ ॥

र क यो , पाण्ड्वधिकारे ।

भाषा—दोनो भटकटैया, निर्गुण्डी, सुरमकी, कुंदरू, सफेदआक, कपास, भंगरा, कालाभंगरा, समस्तविष, सुगन्धवाला, पित्तपापड़ा, ब्राह्मी, लालआक, मरोडफली, कालीजीरी, एरण्ड, अतीस, सोंठ, चित्रक, अपामार्ग, मछेछी ये सव १–१ पल लेकर जवकुटकर ४ सेर गोमूत्रमें चतुर्थांशावशेष काढ़ाकरे, फिर छानकर उसमें १०० वर्षपुराने मण्डूरका चूर्ण १ पल डालकर पकावे। रस जलजानेपर मण्डूरका वारीकचूर्णकर रखले। भोजनकेवाद ३–३ माशे खानेसे कामला, पाण्डु, सूजन, श्वास, कास, क्षय वगैरह समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४७८ ॥

४७९ मण्डूरयोगः (महान्) (विजयानलमण्डूरम्) ३

कुण्डलीचित्रकाऽलर्कमूलं शुभपुनर्नवाम् ।
त्रिफला लोहकिट्टञ्च पृथग्दशपलं भवेत् ॥ २१०७ ॥

गोमूत्रद्रोणसंयुक्तं पचेत्पादावशेषितम् ।
भृङ्गराजरसप्रस्थं मोरटस्वरसं तथा ॥ २१०८ ॥
हरिद्राऽऽर्द्रकयोश्चापि गोमयस्वरसन्तथा ।
त्र्यूषणञ्च विडङ्गानि त्रिफला चित्रकं तथा ॥ २१०९ ॥
देवदारु हरिद्रे द्वे पिप्पलीमूलमेव च ॥
हिङ्गुचव्यवचाः पाठा कालजीरकमेव च ॥ २११० ॥
एषां हि कार्षिकान्भागांश्चूर्णं कुर्यात्पृथक्पृथक्
मण्डूरं पेषितं श्लक्ष्णं शुद्धमञ्जनसन्निभम ॥ २१११ ॥
एतद्गोमूत्रसंयुक्तं शनै मृद्वग्निना पचेत् ।
समान् प्रकुर्याद्वटकान् प्रभाते देवतापरः ॥ २११२ ॥
उपयुञ्जीत तक्रेण पाण्डुरोगं भगन्दरम ।
पञ्चकासाग्निहन्त्याशु मुखदन्तरुजो हरेत् ॥ २११३ ॥
अर्शांसि कामलां शोफमुदरञ्च विनाशयेत् ।
महामण्डूरकं ह्येतदात्रेयानुमतं शुभम् ॥ २११४ ॥

र. क यो , वै चि , पाण्डुरोगे ।

भाषा—गिलोय, चित्रक, आक और पुनर्नवाकी जड़, त्रिफला, पुरानामण्डूर, ये सब १०–१० पल लेकर जवकुटचूर्णकर १६ सेर गोमूत्रमें पकावे । चतुर्थांश काढा रहनेपर छानले परन्तु मण्डूरके टुकड़ोंको अलग छाटकर रखले । फिर काढेको कड़ाहीमें डालकर मण्डूरको सुरमेकेसदृश वारीककर उसमें डालकर भगरा, लताकरज, हल्दी, अदरख और गोवरका १–१ सेर रस, त्रिकटु, विडङ्ग, त्रिफला, चित्रक, देवदारु, दोनोंहल्दी, पिपलामूल, हींग, चव्य, वच, पाठा, कालाजीरा ये प्रत्येक १–१ तोले लेकर अलग २ चूर्णकर पूर्वकाढेमें डालदे और मन्दाग्निसे पकाकर जलको जलादे । फिर नीचे उतारकर १–२ दिन मर्दनकर शीशीमें रखले अथवा गोमूत्रमें घोटकर ३–३ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली प्रातःकाल इष्टदेवताका स्मरणकर छाछकेसाथ लेनेसे पाण्डु, भगन्दर, पाचप्रकारके कास, मुखदन्तरोग, कामला, शोथ और उदररोग ये सब नष्टहोतेहै ॥ ४७९ ॥

४८० मण्डूरयोगः (चतुर्थः)

मण्डूरस्य रजो लोहं भृङ्गराजरसाऽऽप्लुतम् ।
लोहघृष्टं रजो यावत् कृष्णाचूर्णार्द्धसंयुतम् ॥ २११५ ॥
द्वाभ्यां तुल्यगुणोपेतं सङ्ग्रहग्रहणीहरम् ।
आमशूलाऽम्लपित्तघ्नं वलपुष्ट्यग्निकारकम् ॥ २११६ ॥
कामलापाण्डुरोगघ्नं पथ्यं पाचनदीपनम् ।
भेषजं चामवातेषु हितं तक्रेण केवलम् ॥ २११७ ॥

र क , शूले ।

भाषा—मण्डूर और लोहभस्म समभाग लेकर भंगरेके स्वरससे १–२ दिन लोहेके वर्तनमें लोहेकेडण्डेसे खरलकर सुखावे । फिर इससे आधा पीपलका चूर्ण और सवकी वरावर पुरानागुड़ मिलाकर आधे आवे तोलेकी गोलिया वनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली तक्र वगैरहके साथ देनेसे, सङ्ग्रहग्रहणी, आम, शूल, अम्लपित्त, मदाग्नि, कामला, पाण्डु, आमवात इनसबरोगोंको यह नष्टकरताहै । आमवातमें केवल छाछपर रखना ॥ ४८० ॥

४८१ मण्डूरयोगः (पञ्चमः)

अतिरक्तं यदाऽर्शोभ्यो निपतत्यतिपीडनात ।
दृश्यते रक्तमत्यन्तं लोहकिट्टं तदाऽऽनयेत् ॥ २११८ ॥
गवां मूत्रेण तत्पक्त्वा ततस्तत्सूक्ष्मचूर्णितम ।
अतिसूक्ष्माञ्च सम्पिष्य त्रिफलां कटुकान्विताम ॥ २११९ ॥
किट्टस्याऽर्द्धेन सम्मिश्र्य चूर्णं शर्करया युतम ।
दीयते त्रिदिनादूर्द्ध्वं रक्तं तिष्ठति नाऽन्यथा ॥ २१२० ॥
मुद्गान्नञ्च मसूरान्नं दीयते पथ्यभोजनम ।
अर्शांसि प्रशमं यान्ति कार्श्यं चैवाऽनिवेगतः ॥
अत्यन्तं वलमाप्नोति परमां रतिमश्नुते ॥ २१२१ ॥

र. का , अर्शोऽधिकारे ।

भाषा—रक्तार्शमें दवजाने या कटजानेकी वजहसे जव अत्यन्तरक्तआनेलगे तव गोमूत्रमें शुद्धकियेहुए मण्डूरका अत्यन्त वारीकचूर्णकर त्रिफला और कुटकीकाचूर्ण मण्डूरसे आधेप्रमाणमें मिलाकर सवकीवरावर शक्कर मिलाय रखछोडे । इसमेंसे ३–३ माशेकी मात्रा वनगोभीके स्वरस, रसौत अथवा छाछके साथ देनेसे और केवल छाछपर रखनेसे ३ दिनमें रक्त वन्द होजाताहै । मूंग, मसूर खानेको देना । इसके सेवनसे सवतरहके ववासीर और कृशता नष्टहोतीहै ॥ ४८१ ॥

४८२ मण्डूरयोगः (सप्तमः)

दग्ध्वाऽक्षकाष्ठै र्मलमायसन्तु
गोमूत्रनिर्वापितमष्टवारान् ।
विचूर्ण्य लीढं मधुना चिरेण
कुम्भाह्वयं पाण्डुगदं निहन्ति ॥ २१२२ ॥

सु सं , यो म , वै चि , वृ मा , ग नि , नि. र., भा प्र., कुम्भकामलायाम् ।

टि०—यो म , च द , एतयो " मण्डूरं शोधित पथ्यां लोहजां वा गुडेन तु । भक्षयन्मुच्यते शूलात्परिणामसमुद्भवात् ॥ " इति पाठो दृश्यते सोऽस्यैवयोगस्य प्रपञ्चोऽस्ति । योगमहार्णवीयगोमूत्रमण्डूरस्याऽप्यत्रैवान्तर्भाव ।

भाषा—सौवर्षसे पुराने मण्डूरको वहेड़ेकीलकड़ीके कोयलोंमें लालकरके आठवार गोमूत्रमें वुझाकर वारीक चूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा मधुकेसाथ चाटनेसे वहुतशीघ्र कुम्भकामला और पाण्डुरोगको यह दूरकरताहै ॥ ४८२ ॥

४८३ मण्डूरयोगः (अष्टमः)

मण्डूरयष्टीमधुपिप्पलीना-
मेलासितापत्रजगोस्तनीनाम् ।
चूर्णं समांशं मधुदुग्धयुक्तं
क्षीणत्वजीर्णज्वरदाहहन्तृ ॥ २१२३ ॥

रसायनसं , जीर्णज्वरादौ ।

भाषा—मण्डूरभस्म, मुलहठी, पीपल, इलायची, शक्कर, पत्रज, द्राक्ष, सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे

३–३ माशे मधु और दूधकेसाथ सेवनकरनेसे कृशता, जीर्णज्वर और दाह इनको यह नष्टकरताहै ॥ ४८३ ॥

४८४ मण्डूररसायनम्

मण्डूरं शाम्बुकं भस्म गन्धं खण्डघृतान्वितम् ।
रोगान्हन्ति बलं धत्ते शूलघ्नं दीपनं परम् ॥ २१२४ ॥

र शि., शूलाऽविकारे ।

भाषा—मण्डूर और घोंघाकीभस्म, शुद्धगन्धक सब समभाग मिलाकर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा लेकर १–१ तोले घी और शक्करकेसाथ मिलाकरखानेसे यह शूल और मन्दाग्निको नष्टकर बलको उत्पन्नकरताहै ॥ ४८४ ॥

४८५ मण्डूरलवणम्

कृत्वाऽग्निवर्णं मलमायसन्तु
मूत्रेऽभिषिञ्चेद्बहुशो गवाञ्च ।
तत्रैव सिन्धूत्थसमं विपाच्यं
निरुद्धधूमञ्च विभीतकाग्नौ ॥ २१२५ ॥
तक्रेण पीतं मधुनाऽथवाऽपि
मण्डूरमिश्रं लवणं प्रयुक्तम् ।
पाण्ड्वामयिभ्यो हितमेतदस्मा-
त्पाण्ड्वामयघ्नं नहि किञ्चिदन्यत् ॥२१२६॥

नि र , र.(मा), वृ. यो. त , चि. क , यो. र , टो , वै. चि , सु स., पाण्डुरोगे ।

टि०—सुश्रुते सिन्धूद्भवनिर्वापितगोमूत्रे मण्डूरस्य निर्वापो विहित, अत्र तु मण्डूरनिर्वापिते गोमूत्रे सिन्धूद्भवनिर्वाप इति विशेष, तत्र सुश्रुतीयशैली भद्रतरा प्रतिभाति क्षारयुक्तगोजले निर्वापेण मण्डूरस्य शीघ्र भस्मीभावात् । चिकित्साकलिकाया विभीतकलवणमिति नाम स्थापितम् ।

भाषा—सौ वर्षके पुराने मण्डूरको बहेड़ेकेकोयलोंमें लालकर गायकेमूत्रमें चूर्णहोनेतक बुझावे । फिर इसकी बराबर सेंधानमकमिलाय सबसे चौगुना गोमूत्र डालकर हंडीमें बन्दकर बहेड़ेकी लकड़ीसे ४ पहरकी अग्निदेकर पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ माशे छाछ अथवा मधुकेसाथ देनेसे पाण्डुरोग नष्टहोताहै । पाण्डुरोगियोंकेलिये इससे उत्तम अन्य औषधि नहींहै ॥ ४८५ ॥

४८६ मण्डूरवटकः (प्रथमः)

त्र्यूषणं त्रिफलामुस्तं विडङ्गं चव्यचित्रकौ ।
दार्वी त्वङ्माक्षिकोधातु ग्रन्थिकं देवदारु च ॥२१२७॥
एषां द्विपलिकान्भागांश्चूर्णं कृत्वा पृथक्पृथक् ।
मण्डूरं द्विगुणं चूर्णाच्छुद्धमञ्जनसन्निभम् ॥ २१२८ ॥
मूत्रे चाऽष्टगुणे पक्त्वा तस्मिंस्तु प्रक्षिपेत्ततः ।
उदुम्बरसमान्कुर्याद्वटकांस्तान्यथाऽग्नि च ॥ २१२९ ॥
उपयुञ्जीत तक्रेण सात्म्यं जीर्णे च भोजयेत् ।
मण्डूरवटका ह्येते प्राणदाः पाण्डुरोगिणाम् ॥२१३०॥
कुष्ठान्यजरकं शोफमूरुस्तम्भकफामयान् ।
अर्शांसि कामलां मेहं प्लीहानं नाशयन्ति च ॥२१३१॥

च. सं , वृ. मा , र. का., ध , भै. र., रससागर, भा. प्र , टो., वै. चि., र. क. यो., च.द , वृ यो. त., ग. नि., चि र., र प्र., रसायनसं , अ ह , नि र., र. र. टी., वै द., र. को , अ सं., र. का., व रा , र म मा , र र स., चि सा., र र , र सं , यो. र., वै. र , र को., र सु., र चं , ग नि , वैं वि., चि. र भ., वै. क., यो. म., चि क , पाण्डुविकारे ।

टि०—अस्य मण्डूरवटकस्य **मण्डूरवटक, मण्डूरवज्रवटक, हंसमण्डूर, त्र्यूषणादिमण्डूर** इति नामानि गृहीतानि । तत्र मण्डूरवटक, मण्डूरवज्रवटक, त्र्यूषणादिमण्डूरेषु मण्डूर समस्तद्रव्याद् द्विगुण, हसमण्डूरे च समम् । मण्डूरवटके माक्षिकस्य योगोऽस्ति । हसमण्डूरमण्डूरवज्रवटकयो र्माक्षिक न दृश्यते, माक्षिकनिष्कासनस्य प्रयोजन न प्रतिभाति ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोथा, विडङ्ग, चव्य, चित्रक, दारुहल्दी, तज, सोनामाखी, पिपलामूल, देवदारु, ये सब २–२ पल लेकर सबका अलग २ चूर्णकररक्खे । फिर एकदम सुरमाके सदृश पीसेहुए सबसे द्विगुणमण्डूरको अठगुने गोमूत्रमें पकाकर ऊपरके चूर्णको डाल १–१ तोलेके गोले बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोला छाछकेसाथ देनेसे और जीर्णहोनेपर सात्म्यभोजनकरानेसे पाण्डु, कुष्ठ, अजीर्ण, शोथ, ऊरुस्तम्भ, कफविकार, ववासीर, कामला, प्रमेह और प्लीहा इनसबको ये नष्टकरतेहैं ॥ ४८६ ॥

४८७ मण्डूरवटकः (द्वितीयः)

लोहस्य किट्टं त्रिफलानिषिक्तं
पुटैश्च पक्वं त्रिफलोदकेन ।
कटुत्रयं चव्यफलत्रयञ्च
तत्तुल्यमानञ्च गुडं पुराणम् ॥ २१३२ ॥
गोमूत्रकञ्च द्विगुणं प्रगृह्य
कृशानुतोयेन विपाचयेच्च ।
पिण्डत्वमायाति हि यावदेव
ततस्तुमासं विनिवेश्य भाण्डे ॥२१३३॥
ततोऽक्षमात्रं परिषेवणीयं
निहन्ति शूलं परिणामजञ्च ।
दुर्नामरोगञ्च कफञ्च मेहं
श्वासञ्च कासं ग्रहणीं निहन्ति ॥२१३४॥

र. दी , पाण्डुरोगे ।

भाषा—सौवर्षसे पुराने मण्डूरको बहेड़ेके कोयलोंमें तपाकर त्रिफलाके काढेमें बुझाबुझाकर चूर्णकरके त्रिफलाके काढेमें घोटकर जबतकभस्म न होजाय तबतक पुटदे, फिर त्रिकटु, चव्य, त्रिफला समभाग, इनसबकी बराबर मण्डूरभस्म और पुरानागुड़ डालकर सबसे दूने गोमूत्र और चित्रककेकाथमें डालकर पकावे जब गाढाहोजाय तब उतारकर चिकनेवर्तनमें रखछोड़े । एकमहीनेके बाद इसमेंसे १–१ तोला खानेसे परिणामशूल, ववासीर, कफप्रमेह, श्वास, कास, और सङ्ग्रहणी येसब नष्टहोतेहैं ॥ ४८७ ॥

४८८ मण्डूरवटी

मण्डूरं चूर्णितं कृत्वा मुस्ताखदिरमूलकम् ॥
कणा शुण्ठी यवक्षारं पञ्चानां चूर्णितं समम् ॥२१३५॥
चूर्णतुल्यन्तु मण्डूरं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ।
तत्तुल्ये च गवां क्षीरे पचेन्मृद्वग्निना शनैः ॥ २१३६ ॥
पिण्डितं कोलमात्रं तद्भक्षयेच्छूलनुद्भवेत् ।
प्रातर्मध्यन्दिने रात्रौ भक्षयेद्वटिकात्रयम् ॥ २१३७ ॥

यो. म , शूलाऽधिकारे ।

भाषा—नागरमोथा, खैरकीजड़, पीपल, सोंठ, यवक्षार, ये सब समभाग, मण्डूरभस्म सबके बराबर लेकर सबका बारीक चूर्णकर अठगुने गोमूत्रमें पकावे । घनहोजानेपर बराबरके दूधमें डालकरपकावे । जब गोलीबननेलायक होजाय तब ६–६ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली सुबह, शाम और मध्याह्नमें खानेसे समस्तशूल नष्टहोतेहै ॥ ४८८ ॥

४८९ मण्डूराद्यवलेहः

मण्डूरलोहाऽग्निविडङ्गपथ्या
व्योषांशकं सर्वसमानताप्यः ।
मूत्रे श्रुतोऽयं मधुनाऽवलेहो
पाण्ड्वामयं हन्त्यचिरेण घोरम् ॥ २१३८ ॥

ग. नि , यो म , सु सं , पाण्डुरोगे।

भाषा—मण्डूर और लोहभस्म, चित्रकमूल, विडङ्ग, हर्रे, त्रिकटु सब समभाग, सोनामाखी सबकी बराबर लेकर सबका बारीक चूर्णकर अठगुने गोमूत्रमें पकाकर अवलेह तैयार करे । इसमेंसे ३–३ माशेकी गोलियां बनाकर उचितानुपानकेसाथ लेनेसे यह बहुतहीशीघ्र पाण्डुरोगको नष्टकरताहै ॥ ४८९ ॥

४९० मण्डूरारिष्टम्

मण्डूरस्य तु शुद्धस्य तुलाऽर्द्धं परिकल्पितम् ।
तद्वल्लोहस्य पत्राणि तिलोत्सेधप्रमाणतः ॥ २१३९ ॥
गुडाज्जीर्णात्तु पञ्चाशत्कोलप्रस्थत्रय तथा ।
निकुम्भचित्रकाभ्यां च पले द्वे द्वे सुचूर्णिते ॥२१४०॥
पिप्पलीनां विडङ्गानां कुडवं कुडवं पृथक् ।
त्रींश्चाऽपि त्रिफलाप्रस्थान् जलद्रोणे विपाचयेत्२१४१
अर्द्धमासस्थितो धान्ये पेयोऽरिष्टः प्रमाणतः ।
दोषानुभयतो न्यस्य पाण्डुरोगं नियच्छति ॥ २१४२ ॥
क्रिमीनर्शांसि कुष्ठञ्च कासश्वासकफामयान् ।
मण्डूरारिष्टको ह्येषः शोफपाण्ड्वामयापहः ॥२१४३॥

ग नि , यो र , शोफपाण्ड्वामये ।

भाषा—शुद्धमण्डूर, लोहेके पत्र अथवा बारीकचूर्ण और पुरानागुड ५०–५० पल, जङ्गलीबेर ३ सेर, दन्तीमूल और चित्रकका चूर्ण २–२ पल, पीपल और विडङ्ग ४–४ पल, त्रिफला ३ सेर लेकर १६ सेर जलमें पकावे । चतुर्थांश जलजानेपर उतारकर चिकनेबर्तनमें बन्दकरके अनाजकी गर्मिमें दबादे । १५ दिनबाद यह अरिष्ट तैयार होजायगा । इसमेंसे १–१ अथवा २–२ तोले सुबहशाम अथवा भोजनकेबाद पीनेसे पाण्डु, क्रिमि, अर्श, कुष्ठ, कास, श्वास, कफरोग और सूजन ये सब नष्टहोतेहै ॥ ४९० ॥

४९१ मदनहरीगुटिका

त्वक् पत्रं केशरञ्चैला चन्द्रभा जातिपत्रिका ।
कणा गोक्षुरकं जातीफलञ्चाऽभ्रकवङ्गकौ ॥ २१४४ ॥
लोहचूर्णन्तु टङ्कं प्रत्येकं कारयेद्बुधः ।
चतुःपलं मधु प्रोक्तं तथा चाऽन्यानि निःक्षिपेत् २१४५
आकारकरभञ्चैव रोचनां कपिकच्छुजम् ।
गुन्द्रा मस्तङ्गिकञ्चैव मुशली मरिचानि च ॥ २१४६ ॥
लवङ्गसहितं ह्येतत्सर्वं टङ्कैकसम्मितम् ।
भृङ्गा सार्धपला प्रोक्ता सम्यग्धौताऽर्द्धभर्जिता २१४७
सिता पञ्चपला प्रोक्ता कालपेया प्रकीर्तिता ।
सर्वेषाञ्च सुजात्यानां सूक्ष्मचूर्णं विधाय च ॥२१४८॥
मधूष्णं कारयेत्तेषु सर्वं चूर्णं विनिःक्षिपेत् ।
भर्जयेद्विजयापत्रं यदा गन्धः प्रजायते ॥ २१४९ ॥
शतपत्रीयपानीयं जातीतैलं समं ददेत् ।
मानमात्रं प्रदातव्यं भङ्गां सम्मर्दयेत्ततः ॥ २१५० ॥
लेह्ये च दरदं देयं पुनश्चूर्णं सितां ततः ।
कर्पूरमृगनाभिभ्यां प्रतिवापं प्रदापयेत् ॥ २१५१ ॥
एतन्मदकरी रम्या विशेषाद्धातुवर्द्धिनी ।
कामिनां कामदा नित्यं विशेषाद्गुणदायिनी ॥ २१५२ ॥

र कु , वाजीकरणे

भाषा—तज, पत्रज, नागकेसर, इलायची, कचूर, जावित्री, पीपल, गोखरू, जायफल, अभ्रक, वङ्ग और लोहभस्म ४–४ माशे, मधु ४ पल, अकलकरा, गोरोचन, केवाचके बीज, बबूलका गोंद, मस्तगी, मुसली, मरिच, लौंग १–१ टङ्क, धोई अधभुनी भाग १॥ पल, कालपीमिश्री ५ पल लेकर सबका कपड़छान चूर्णकरे । गोंदको घीमें मन्द आंचपर सेककरचूर्णकरे । मस्तगीको कपड़ेमें बाध अत्युष्णपानीमें २–३ गोते देकर निकालकर चूर्णकरके मिलादे । फिर सब दवाओके बराबर गुलाबजल और जायफल या जावित्री का तैललेवे । पहिले मिश्री, शहद और गुलाबजलकी ढेतारकी चाशनीकरे और शुद्धकियाहुआ शिंगरिफ १ टंक बारीकचूर्णकर मिलादे । इसकेबाद तैलको मिलाकर अन्य औषधोको मिलादेवे । ठढाहोनेपर शुद्धकपूर और कस्तूरी ३–३ माशे मिलाकर ३–३ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली दूध और शक्करकेसाथ लेनेसे श्वास, कास, सङ्ग्रहणी, मन्दाग्नि, धातुक्षीणता, उन्माद, नपुंसकत्व येसब नष्टहोतेहै । रतिसमयसे २ घण्टे पहिले लेकर दूधपीनेसे यथेष्टस्तम्भन और वीर्यवृद्धि होतीहै । यदि गोली स्तम्भनार्थ ली हो तो उसवक्त दूधके सिवाय कोई चीज न खावे ॥ ४९१ ॥

४९२ मदनकामदेवरसः (प्रथमः)

अथाऽन्यं सम्प्रवक्ष्यामि कामवृद्धिकरं परम् ।
रोगराजप्रशमनं बलपुष्टिविवर्धनम् ॥ २१५३ ॥
अक्षीणशुक्रकरणं वाजीकरणमुत्तमम् ।
प्रागुक्तेन विधानेन दशधा पातितं रसम् ॥ २१५४ ॥
स्वेदितं प्रोक्तयुक्त्यैव तस्य चोत्पादयेन्मुखम् ।
खल्वे लोहमये स्थाप्यो रसेन्द्रो वह्नितापिते ॥२१५५॥
तप्तेन लोहजेनैव मर्दकेन प्रमर्दयेत् ।
सिंही निर्यासयोगेन तथा कैञ्चुलिकैः समम् ॥२१५६॥
एकविंशद्दिनं यावदहोरात्रमतन्द्रितः ।
खल्वं तप्तं सदा कार्यं शीते दोषस्य दर्शनात् ॥२१५७॥
सर्वदोष्णो रसः कार्यो रसाद्गुणमभीप्सुना ।
एवं जातमुखे सूते बीजं दद्यात्कलांशकम् ॥ २१५८ ॥
सौवर्णं स्वेदयेद्दोलायन्त्रे च त्रिदिनं रसम् ।
पटुक्षाराम्लवज्रार्कलिप्ते पत्रेऽथ भूर्जके ॥ २१५९ ॥
रसं दत्त्वा वहिर्दद्याद् दृढं वस्त्रं चतुःपुटम् ।
सूत्रेण पोट्टलीं बद्ध्वा दोलायाञ्च निवेशयेत् ॥२१६०॥
अम्लकाञ्जिकयोगेन स्वेदयेद्दिवसत्रयम् ।
सक्षारमूत्रजे वाऽथ चतुर्थेऽह्नि समुद्धरेत् ॥ २१६१ ॥
ग्रासस्तु जीर्यते सर्वोऽप्यथ स्वेदनमर्दने ।
पूर्ववद्विदधीताऽत्र यावद्ग्रासः सुजीर्यति ॥ २१६२ ॥
ततः सूतं निवेश्याऽथ यन्त्रे क्ष्माधरसञ्ज्ञके ।
पूर्वोक्तयुक्त्या दैत्येन्द्रं जारयेत् षड्गुणं बुधः ॥२१६३॥
तं सूतं मर्दयेत्खल्वे काकमाचीरसे बुधः ।
तारबीजं पादभागं दत्त्वा किञ्चुलजै रसैः ॥ २१६४ ॥
यावत्पिष्टि र्भवेत्सूते मर्दयेत्तमनारतम् ।
सञ्जातायां तथा पिष्ट्यां दिनपञ्चकमर्दनम् ॥ २१६५ ॥
काकीकिञ्चुलजै र्नीरैस्ततः कुर्वीत गोलकम् ।
काकीकिञ्चुलकान् पिष्ट्वा गोलं सम्यक् प्रवेष्टयेत् २१६६
विन्यसेद्गोलकं मूषामध्ये तद्वक्त्ररोधनम् ।
कृत्वा भूधरयन्त्रस्थां मूषां सम्पाचयेत्ततः ॥ २१६७ ॥
करीषाऽग्निं ततो दद्यात्त्रिदिनं स्वेदमाचरेत् ।
उद्धृत्य मूषां तद्यन्त्राद्रसेन्द्रं तारपत्रके ॥ २१६८ ॥
तवराजस्य मध्ये तं रसेन्द्रं विनिवेशयेत् ।
ततः सूतं प्रयुञ्जीत तवराजेन संयुतम् ॥ २१६९ ॥
विचूर्ण्य पयसाऽर्जुन्या गर्भिण्या वल्लकद्वयम् ।
अनुपानञ्च तद्दुग्धं पिबेच्छर्करया समम् ॥ २१७० ॥
अम्लं वर्ज्यञ्च सक्षारं लवणञ्च विदाहि यत् ।
कटुकञ्च कषायञ्च सर्वमत्र विवर्जयेत् ॥ २१७१ ॥
भुञ्जीत मधुरं शश्वच्छाकार्थे कदलीफलम् ।
बालस्य नारिकेलस्य मज्जानं सम्प्रभक्षयेत् ॥ २१७२ ॥
खण्डयुक्त नारिकेलीजलं पेयञ्च पानसम ।
फलं पक्वमपक्वं वा रसवीर्यविवृद्धिदम् ॥ २१७३ ॥
इत्येवमादि यद्द्रव्यं तत्सर्वं भक्षयेद्बुधः ।
एवं संसेव्यमानस्य रसेन्द्रस्य गुणांश्छृणु ॥ २१७४ ॥
क्षयरोगः क्षयं याति नष्टशुक्रश्च शुक्रवान् ।
अशीतिवर्षदेश्यो वा जराजर्जरितोऽपि वा ॥२१७५॥
ऊर्ध्वलिङ्गः सदा तिष्ठेद् द्रावयेद्वनिताशतम् ।
अप्रहीणबलो ग्लानिवर्जितः सम्प्रहर्षवान् ॥ २१७६ ॥
अस्याऽनुपानं वक्ष्यामि शास्त्रोक्तं कामवर्धनम् ।
वल्लद्वयं शर्करया स्वीकृत्याऽऽदौ रसं ततः ॥ २१७७ ॥
विदारीकन्दचूर्णञ्च मधुयष्टीं च माषकान् ।
तवराजयुतानेतान् गोदुग्धेन समं पिबेत् ॥ २१७८ ॥
अक्षीणरेता जायेत यदि स्त्रीणां शतं व्रजेत् ।
शतावरीगोक्षुरकान्विस्तुषं माषचूर्णकम् ॥ २१७९ ॥
निस्तुषांस्तु तिलान्खण्डं सुवर्णेक्षुरसं तथा ।
रात्रौ पिबेच्च सूतेन्द्रमेतै द्रव्यैः समं ततः ॥ २१८० ॥
कर्पूरं लेशतो दत्त्वा सः स्यात्स्त्रीशतकामुकः ।
मध्वाज्ययुक्तं स्वरसै र्भावितञ्च विदारिजम् ॥ २१८१ ॥
शतशः कपिकच्छूजे बीजैश्च समभागिकम् ।
समशर्करया युक्तं गोदुग्धेन समं पिबेत् ॥ २१८२ ॥
अक्षीणरेताः स पुमान् जायते नाऽत्र संशयः ।
मातुलुङ्गस्य बीजानि गोमूत्रेण विभावयेत ॥ २१८३ ॥
एकविंशतिवारांस्तु विचूर्ण्याऽथ रसेश्वरम् ।
विनिष्पिष्य सुखोष्णेन गोदुग्धेन समं पिबेत् ॥२१८४॥
एकविंशद्दिनं यावज्जायते पूर्णवीर्यवान् ।
ज्ञायते नाऽत्र सन्देहो रसेन्द्रस्य प्रभावतः ॥ २१८५ ॥
सूतेन्द्रं सेवते यस्तु न स्यादस्याऽङ्गनाशनम् ।
न कामणै र्महाबाधै र्ज्वराद्यैरुपपीड्यते ॥ २१८६ ॥
एष सूतवरः प्रोक्तः शुक्रवृद्धिकरः परः ।
मदनाद्यः कामदेवो रसः परमदुर्लभः ॥ २१८७ ॥
रसालं, वाजीकरणे ।

भाषा—अन्यधातुसंयोगरहित अथवा शिंगरिफसे निकालाहुआ पारा लेकर हल्दी, ईंट, गृहधूम सब समभागलेकर पारेसे षोडशांश इससमुदायमेंसे मिलाकर बिजोरे वगैरहके रसमें १–१ रोज मर्दनकर सुखाकर डमरूयन्त्रसे ऊर्द्ध्व, तिर्यक् अथवा अधःपातनकरे। ऐसे दसवारकरके काञ्जीमें ४ पहर स्वेदनकर लोहेके तप्तखल्वमें रखकर इसके बराबर केंचुओंको डालकर १–२ पहर शुष्कमर्दनकर भटकटैयाके रससे २१ रोज दिनरात मर्दनकरे, बीचमें खरल ठंडा न हो। २२ वें रोज ऊर्द्धपातनकरले अथवा गरमकाञ्जीसे धोकर साफकरले। इसमें षोडशांश सोनेके वर्कलेकर थोड़ा थोड़ा तप्तखल्वमें डालकर मर्दनकरे, चारपहरके मर्दनसे एकजीवहोजायगा फिर सेंधानमक, सज्जी, सुहागा और यवक्षार, नीबूकारस, सेहुण्ड और आकका दूध मिलाकर लेपकियेहुए चारतहभोजपत्रमें रखकर ऊपरसे ४ तह मलमलके कपड़ेमें भूर्जपत्रको रख दोलायन्त्र बनाय खट्टीकाञ्जी अथवा क्षारयुक्त गोमूत्रसे तीनदिन स्वेदनकरे। चौथेदिन निकालकर

तोलकर देखे, ग्रास समस्त जीर्ण न होगयाहो तो फिर इसीतरह स्वेदन और मर्दनकरे । जब ग्रासजीर्ण होजाय और पारेका असली वजन आजाय तब भूधरयन्त्रमें रखकर षड्गुणगन्धक जारणकरे । फिर मकोयके रसमें तप्तखल्वमें एकरोज मर्दनकर अष्टमाश चांदीकेवर्क मिलाकर १–२ पहर मर्दनकर केंचुओंका रस डालकर मर्दनकरे । पिष्टीरूप होजानेपर काक और केंचुओंके रससे ५–५ दिन मर्दनकर गोलाबनाय काक और केंचुओंके लुगदेमें गोलेको रखकर मूषामें रखदे और मुद्रबन्दकर भूधर-यन्त्रमें रखकर करीषकी अग्निसे तीनदिन स्वेदनकरे । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे ६–६ रत्ती की मात्रा चांदीकेवर्क और तीनुरकी गोली बनाय उसके अन्दर कवलितकर खावे । तीनुरकेसाथ ६ रत्ती मिलाकर छोटीदूधीके रसकेसाथ गर्भिणीगायको देवे, जब उसकाबच्चा पैदाहो तब उसका शक्करमिला हुआ दूध अनुपानमें रक्खे । अम्ल, क्षार, लवण, विदाहि, कटु, कषाय इनसबका परित्यागकरे, मधुरान-खावे । केलेके फलका शाक, कच्चे नारियलकी गिरी और शक्कर मिलाहुआ नारियलका जल, केलेका पका या कच्चाफल इत्यादि जो जो वृष्य पदार्थहैं उनका सेवनकरे । इसप्रयोगसे क्षय, नष्टशुक्रता येसब नष्टहोकर अस्सीवर्षका जर्जरित बुड्ढाभी फिरसे शुक्रपूर्णहोकर ग्लानिरहितहोकर बहुतसीस्त्रियोंकसाथ उत्साहपूर्वक रमणकरसक्ताहै । शास्त्रोक्त कामवर्धन इसका अनुपान इसतरहहै कि ६–६ रत्ती इसरसको शक्करके साथ खाकर विदारी, मुलहटी और तीनुर ये प्रत्येक १–१ माशा गोदुग्धकेसाथ पीनेसे अक्षीणशुक्र होताहै अथवा शतावर, गोखरू, धुलीहुई उड़दकीदाल, तिल, खांड, शुद्धकपूर, पीली ईखकारस इनकेसाथ रातमें इसरसराजको लेनेसे अक्षीण शुक्रहो-ताहै । अथवा विदारीकन्दके चूर्णको विदारीकन्द स्वरससे कई-वार भावितकर बराबरका केवाचके बीजोंका चूर्ण डालकर दोनोंकी बराबर शक्कर मिलावे । इसकेसाथ रसराजको देकर गोदुग्ध पिलावे। अथवा बिजोरेके बीजोंको २१ दिनतक गोमूत्र-में भिगोकर सुखाकर चूर्णकरले । इसकेसाथ रसकोलेकर ऊपर गोदुग्धपीनेसे २१ दिनमें वीर्यसे पूर्णहोजाताहै इसके सेवन करनेसे बुढापा और रोग आक्रमण नहीं करते ॥ ४९२ ॥

४९३ मदनकामदेवरसः (द्वितीयः)

एरण्डशृङ्गवेराऽम्बुकाकमाचीद्रवे रसः ।
प्रत्येकमर्दनाच्छुद्धो जायते दोषवर्जितः ॥ २१८८ ॥
श्वेताऽद्रिकल्कमूषायां सप्तकृत्वोऽथ शोषयेत् ।
क्षिप्त्वा सूतं साऽग्निचूर्णं मूषायामेवमेव हि ॥२१८९॥
एवं शुद्धं रसं कृत्वा समगन्धेन योजयेत् ।
काकमाच्याः शुभैस्तोये मर्दयित्वा द्वयं शनैः ॥२१९०॥
क्षिप्त्वा काचघटीमध्ये मृदा कर्पटसञ्ज्ञया ।
काचपात्रीमुखं रुद्ध्वा दत्त्वा वक्त्रेऽथ चक्रिकाम् २१९१
मृल्लिप्तकर्पटे बद्ध्वा काचपात्रमधो मुखम् ।
लिम्पेद्धस्त्रमृदा गाढमङ्गुलद्वयमुत्थितम् ॥ २१९२ ॥
शोषयित्वा क्षिपेद्भाण्डे वालुकाभिः प्रपूरिते ।
अधोमुखं काचपात्रं पचेद्यामत्रयं शनैः ॥ २१९३ ॥
स्वाङ्गशीतं समादाय योजयेद्रोगशान्तये ।
गुञ्जाद्वयं क्रमेणैव पर्णखण्डेन संयुतम् ॥ २१९४ ॥
शतावरी गोक्षुरश्च बीजञ्च कपिकच्छुजम् ।
गाङ्गेरुकी चातिबला बीजमिक्षुरकोद्भवम् ॥ २१९५ ॥
अनुपानं पिबेद्दुग्धमस्य चूर्णस्य कर्षकम् ।
सतिलं भक्षयेन्नित्यं कदलं शर्करान्वितम् ॥ २१९६ ॥
हृद्यं वृष्यं श्रमहरं रसं मांसं पयो घृतम् ।
शाल्यन्नं माषगोधूमं पायसं सेवयेद्भिषक् ॥ २१९७ ॥
यत्किञ्चिच्छीतलं द्रव्यं तत्सर्वमविचारतः ।
अत्र देयं प्रयत्नेन रसवीर्यविवृद्धये ॥
अनेनाऽशीतिवर्षोऽपि युवेव सुरते क्षमः ॥ २१९८ ॥

र. रु , रसायने ।

भाषा—एरण्डबीज, अदरख और मकोयके रसोंमें ३–३ दिन मर्दनकर शुद्धकियेहुए पारेको लेकर सफेद पुनर्नवाकी चौगुनी जड़केकल्ककी मूषाबनाय पारेकी बराबर चित्रकमूलका बारीकचूर्ण बीचमें डालकर उसपर पारेको रख उसी चूर्णसे दबा कर कल्कसे मूषाका मुख बन्दकरदे, और १–२ कपड़मिट्टी देकर सुखादे । फिर जङ्गलीकण्डोंकी निर्धूम अग्निपर लौटपौट-कर सुखावे । जब कपड़मिट्टी जलजाय तब निकालकर नीचे रखले । स्वाङ्गशीतल होनेपर धीरेसे पारेको निकालकर पूर्ववत् द्रवोंमें मर्दनकर मूषामें बन्दकर अग्निपर सुखावे । ऐसे ७ बार सुखाकर बराबरकी गन्धक मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर मकोयके रससे १–२ रोज मर्दनकर आतशीशीशीमें भर ईंट अथवा खड़ियामिट्टीकी डाट लगाकर ३–४ कपड़मिट्टी समन्तात् लगा-कर रुई डालकर कूटीहुई मिट्टीका दो अङ्गुल मोटा लेप चढाकर धूपमें सुखादे । सूखनेपर अधोमुख वालुकायन्त्रमें रखकर ३ पहरकी मध्यम अग्निसे पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकाल-कर रखछोडे । इसमेंसे २–२ रत्ती पर्णपानमें रखकर खिलादे और ऊपरसे शतावर, गोखरू, केवाचकेबीज, गंगेरन (गुलसि-करी), कङ्घी, तालमखाना सब समभाग लेकर बारीकचूर्ण-कर, इसमेंसे १ तोला दूधकेसाथ अनुपानके तौरपर देना चाहिये । तिल और शक्करकेसाथ पकाकेला हमेशा खिलावे । इससे हृदय और धातुओंकी निर्बलता, ग्लानि, राजयक्ष्म, वन्ध्यत्व, नपुसकत्व प्रभृति असाध्य रोग दूरहोतेहैं । रात्रिमें सम्भोगके पहिले सेवन करनेसे यथेष्ट स्तम्भन होताहै । इसमें मांसरस, मास, दूध, घी, उत्तमचावल, उड़द, गेहू, खीर तथा जो कुछभी ठंढी चीजें हैं सबका प्रयोगकरनेसे रसकेवीर्यकी वृद्धि होतीहै । इसके हमेशा सेवनसे ८० वर्षका बुड्ढाभी जवान कीतरह रति करसक्ताहै ॥ ४८३ ॥

४९४ मदनकामदेवरसः

प्रत्येकं चतुरंशको रसबली तारं मृतं चांऽशकं,
तावद्धेम ततश्च शाल्मलिरसात्तत्सर्वमामर्दयेत् ।

काकोल्याऽथ सुदुग्धयाऽप्यपरया त्रिस्त्रिर्विदार्याशता-, वर्या त्रिस्त्रिरथो विभाव्य सकलं काचस्य कूप्यां क्षिपेत्,
पक्वं यामचतुष्टयं सिकतिका-
यन्त्रात्स्वतः शीतलं,
प्रोद्धृत्याऽत्र विभावना वितनुया-
त्सप्ताऽथ वारान् क्रमात् ।
रक्तादुत्पलतः क्षुरेण च शता-
वर्या विदार्या रसैः,
तालीजातरसेन नागवलया
पश्चाद्रसैश्शाल्मलैः ॥ २२०० ॥
पद्मकन्दरसतोऽथ गोस्तनी-
शर्करेक्षुरसतोऽश्वगन्धया ।
आमलक्युदककोलकन्दतो
हस्तिकन्दरसतश्च भावयेत् ॥ २२०१ ॥
पृथगेभिरौपधगणे र्विभावितो
रस एप सिद्धिमुपयाति रोगिणाम् ।
अनुरागदो मदनकामदेव इत्य-
भिविश्रुतो रतिविशेषफलदायकः ॥ २२०२॥
गुञ्जाचतुष्टयमितं सितया समेतं
द्राक्षान्वितं समुपयुज्य कलाविलासी ।
क्षीरेण चेक्षुकरसेन कृताऽनुपानः
शाल्यन्नमुद्गवटकामिषमाषभुक् स्यात् २२०३
कलमान्नञ्च भुञ्जानः
कलरवपललेन जाङ्गलेनाऽपि ।
मदन इव कामदेवो
महिषीशतशो मनोरमा रमयेत ॥ २२०४ ॥
वृद्धमिह कामदेवं जग्धवतो ह्यश्वगन्धरसादस्य ।
सुरतं भवति वधूभिः सुरतरुणीभि र्यथा सुरेन्द्रस्य ॥
चाम्पेयगौर्यश्चपलायताक्ष्यः
कल्हारगन्धाः कमनीयवेपाः ।
काञ्चीरणत्काररणन्नितम्बा
विम्बाधरास्तं रमयन्ति कान्ताः ॥ २२०६ ॥
अर्धोन्मीलितलोचनान्तसुभगा निर्धूतमानग्रहा,
धम्मिल्लोभ्रहनोपदर्शितभुजामूलाः सलीलाङ्गनाः ।
हाराऽलङ्कृतकन्धरा युवतयः स्मेराननास्तं सदा,
श्लिष्यन्त्यो रससेविनं शिथिलतक्रोधा रतिं कुर्वते ॥
किमत्र मलयाऽनिलैः किमिह सान्द्रचन्द्राऽऽतपैः,
किमङ्गधृतचन्दनैः किमरविन्दसौगन्धिकैः ।
मनांसि हरिणीदृशां मदयतीह संसेवितो,
मनोजरतिवल्लभो मदनकामदेवो रसः ॥ २२०८ ॥
वलेन नारी परितोपमेति
न हीनवीर्यस्य कदापि सौख्यम् ।
अतो बलार्थे रतिलम्पटस्य
वीर्याऽभिवृद्धिं प्रथमं विदध्यात् ॥ २२०९ ॥

र. मृ, र. क, स्त्रीविलास, वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ४–४ भाग, रजत और सुवर्णभस्म १–१ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर सेमलकीजड़, काकोली, छोटी और बड़ी दूधी, विदारीकन्द, शतावर इन प्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ रोज़ मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके मुहबन्द-कर ४ पहर वालुकायन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर लालकमल, तालमखाना, शतावरी, विदारी, मुसली, नागवला, सेमल, पद्मकन्द, द्राक्ष, शक्कर, ईख, असगन्ध, आवले, सुगन्धवाला, वाराही, हस्तिकन्द इनप्रत्येकके यथालाभस्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाएं देकर सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे ४–४ रत्ती शक्कर अथवा द्राक्षकेसाथ लेकर दूध अथवा ईखकारस पीवे । पुराने चावल, मूंग, वड़े, मास, उड़द, कोयल, जंगली जानवरो-कामास अथवा मांसरस सेवनकरनेसे अकथनीय रतिसुखको प्राप्तहोताहै । असगन्धकेसाथ सेवनकरनेसे वृद्धमनुष्यभी वहुतसी स्त्रियोंकेसाथ रति करसक्ता है । कामशास्त्रोक्त सर्व-लक्षणसम्पन्न स्फुटभावोंकेसाथ क्रोधयुक्तस्त्रियोंका भी क्रोध इस-रसके सेवकको देखकर नष्टहोजाता है । मलयानिल प्रभृति कामोद्दीपक सामग्रीकी कोई जुरूरत नहीं पड़ती क्योंकि यथेष्ट-शक्ति न रहनेपर उद्दीपकभावोंका आश्रयण कियाजाता है । इसरसके सेवनकरनेवालेके लिये उद्दीपकभावोकी कोई अत्याव-श्यकता नहीं रहती । रतिके विपयमें वीर्यकी दृढ़ता मुख्य है और इसरसके सेवनसे वह नितान्त पुष्ट होजाताहै । हमेशा व्रह्मचर्यपूर्वक यदि इसकासेवन किया जायतो समस्त धातुक्षय, राजयक्ष्म, समस्तप्रमेह, अपस्मार, उन्माद, पुरुष तथा स्त्रीका वन्ध्यत्व दोष इत्यादि असाध्यरोगोको नष्टकर यह आदमीको रोगरहित चिरजीवी वनाता है ॥ ४९४ ॥

४९५ मदनकामदेवरसः (चतुर्थः)

गोलं गन्धकसूतयोस्त्रिकटुकक्वाथेन वद्धाऽथ भू-
कूष्माण्डान्तरवस्थितं विपिहितं तेनैव लिप्त्वोपरि ।
मापै र्द्व्यङ्गुलमाज्यपक्वमथ तत्कूष्माण्डमध्याद्धरे-,
त्तच्चूर्णेन च संयुतः सुरक्तताचूर्णस्य मुष्टिद्वयम् २२१०
जया शतावरी कृष्णा कपिकच्छुफलं तिलाः ।
प्रत्येकं पलसम्माना यवाः पञ्चपलोन्मिताः ॥२२११॥
तावन्मोचफलं द्वे च यष्टीं मुष्टिद्वयां शुभाम् ।
निक्षिप्य सप्त सप्ताऽत्र भावनाः क्रमशश्चरेत् ॥२२१२॥
महावलावलानागवलाभि र्द्राक्षयाऽपि च ।
कृष्णाधात्रीक्षुभिश्चाऽपि दन्तपात्रे निवेश्य च २२१३
मत्स्यपिण्डिकायुतं वल्लद्वयमानं भजेन्निशि ।
अनुपानमिहप्रोक्तं धारोष्णं सुरभेः पयः ॥२२१४ ॥
दोषमार्तवजं हत्वा कुर्याद्वीर्यप्रवर्धनम् ।
ध्वजोत्साहं तथा स्त्रीषु वाजीकरणमुत्तमम् ॥२२१५॥
अलं मलयवायुना कुमुदवान्धवेनाऽप्यलं,
मधुव्रतसहायकाः कलितपञ्चमाः के पिकाः ।

अमुं भज विशङ्कितं रतिसरोजिनीभास्करं,
मनोजपरिदैवतं मदनकामदेवं रसम् ॥ २२१६ ॥

र र.स., वाजीकरणे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्ण-कज्जलीकर त्रिकटुके क्काथसे एकरोज़ मर्दनकर गोलावनाय भुंई-कोंहळेके भीतर रखकर उसीकी डाटलगाकर भुंईकोंहळेकेरससे उड़दके आटेको भिगोकर दोअङ्गुलमोटा लेपचढ़ादे। फिर घीमें मन्दअग्निसे पकावे, जब आटा जलनेलगे तब उतारकर रखले। स्वाङ्गशीतल होनेपर भुंईकोंहळेमेंसे कज्जलीके गोलेको निकालले। फिर तुलसीकाचूर्ण २ पल, भाग, शतावर, पीपल, छिलकेरहित केवाचकेवीजऔरतिल १–१ पल, जव और केलेका सूखाफल ५–५ पल, दोनों प्रकारकी मुलहठी २–२ पल लेकर वारीक-चूर्णकर १–२ पहर इकट्ठे मर्दनकर कट्वी, खरेंटी, नागबला, द्राक्ष, पीपल, आवला और ईख इनके रसोंसे ७–७ भावनाएं देकर हाथीदातके पात्रमें रखदे। इसमेंसे ६–६ रत्ती रावके साथ रात्रिको खाकर गायका धारोष्णदूध पीवे। इसके सेवनसे रज और वीर्यके दोष, ध्वजभङ्ग प्रभृति नष्टहोकर उत्तमवाजीकरण-होताहै। इसरसकेसेवनकरनेपर मलयाद्रिका वायु, चन्द्रमा, भौंरे और कमलप्रभृति कामको जागृतकरनेवालोंकी कोई आवश्यकता नहीं, इसके खानेमात्र हीसे मनुष्य कामान्ध होजाताहै॥४९५॥

४९६ मदनकामदेव रसः (पञ्चमः)

तारं वज्रं सुवर्णञ्च ताम्रं सूतकगन्धकम्।
लोहं क्रमविवृद्धानि कुर्यादेतानि मात्रया ॥ २२१७ ॥
विमर्द्य कन्यकाद्रावे न्यसेत्काचमये घटे।
विमुच्य पिठरीमध्ये धारयेत्सैन्धवाऽऽवृते ॥ २२१८॥
पिठरीं मुद्रयेत्सम्यक् ततश्चुल्ल्यां निवेशयेत्।
वह्निं शनैः शनैः कुर्याद्दिनैकं तत उद्धरेत् ॥ २२१९ ॥
स्वाङ्गशीतञ्च सञ्चूर्ण्य भावयेदर्कदुग्धकैः।
अश्वगन्धा च काकोली वानरी मुसली क्षुरा॥२२२०॥
त्रित्रिवेलं रसैरेषां शतावर्याश्च भावयेत्।
पद्मकन्दकसेरूणां रसैः काशस्य भावयेत् ॥ २२२१ ॥
रक्तिकैकां रसस्याऽस्य चूर्णेनैतेन योजयेत्।
कस्तूरीव्योषकर्पूर कङ्कोलैलालवङ्गकम् ॥ २२२२ ॥
प्रति रक्तिद्वयञ्चैतच्छर्करासमकं भजेत्।
गोदुग्धद्विपलेनैव मधुराहारसेवकः ॥ २२२३ ॥
अस्य प्रभावात्सौन्दर्यं लभेताऽत्र न संशयः।
तरुणी रमयेद्बह्वीः शुक्रहानि र्न जायते ॥ २२२४ ॥

शा.सं, र सु, रसायनसं, र कौ., र क, र.मं., यो र, चि र भ., भै सा, बृ यो त, र क, वाजीकरणे। बृ यो. त मदनकामेश्वर इति नाम।

भाषा—चादी १ भा., हीरा२ भा, सोना ३ भा, तावा ४ भा इनकी भस्में, शुद्धपारा ५ भा, शुद्ध गन्धक ६ भा., लोहभस्म ७ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें सव-चीज़ोंको मिलाकर १–२ दिन घीकुंआरके रससे मर्दनकर सुखा-कर आतशीशीशीमें भरके मिट्टीकेपात्रमें रक्खे। शीशीके चारों तरफ़ वारीकपीसाहुआ सेंधानमक ऊपरतकभरदे। फिरधीरे २ एकरोज़ अग्निदेकर अङ्गारोंपर रहनेदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर आकका‌दूध, असगन्ध, काकोली, केंवांच, मुशली, तालमखाना, शतावर, पद्मकन्द, कसेरू और कास इनप्रत्येकके रसोंसे ३–३ वार भावनाएं देकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीलेकर कस्तूरी, त्रिकटु, शुद्धकपूर, शीतलचीनी, इला-यची और लौंग २–२ रत्ती लेकर वारीकचूर्णकर वरावरकी शक्कर मिलाकर २ पल गायके दूधकेसाथ सेवनकरनेसे और मधुर आहार खानेसे सौन्दर्यको प्राप्तहोकर बहुतसी स्त्रियोंके साथ रमणकरनेपरभी शुक्रकीहानि नहींहोती ॥ ४९६ ॥

४९७ मदनकामदेवरसः (षष्ठः)

रौप्यभस्म शुभं ग्राह्यं दशगद्याणसम्मितम्।
पारदेन हतञ्चैव पूर्वप्रोक्तविधानतः ॥ २२२५ ॥
दशकं तुत्थपाषाणात्तारमाक्षिकतो दश।
सर्वं खल्वे विनिक्षिप्य सूक्ष्मं कार्यं प्रयत्नतः ॥२२२६॥
वाससा गालयेच्चूर्णमर्कदुग्धेन पेषयेत्।
दिनैकं दिनमेकञ्च धत्तूरस्य रसेन च ॥ २२२७ ॥
दिनैकं वत्सनाभस्य श्रीखण्डेन च वासरम्।
करवीरस्य मूलेन पुनः श्रीखण्डवारिणा ॥ २२२८ ॥
सर्वौषधैरेवमेवं शुष्कं शुष्कं विमर्दयेत्।
गोलं कृत्वा शरावस्थं वस्त्रमृत्तिकया ततः ॥२२२९॥
गर्ते हस्तप्रमाणेऽथ क्षिप्त्वाऽग्निं ज्वालयेदधः।
स्वाङ्गशीतञ्च तच्चूर्णं कृत्वा कुम्भे क्षिपेत्सुधीः २२३०
मदने कामदेवोऽयं जायते वीर्यकृद्रसः।
गुञ्जामात्रस्तु दातव्यः सेव्योऽयं पौष्टिकौषधैः २२३१
अवीर्ये शुष्कवीर्ये च द्रवद्वीर्ये तथैव च।
अनुत्थानेऽपि लिङ्गस्य निष्कामेऽस्वच्छवीर्यके २२३२
वलक्षीणे तथा षण्ढे देयोऽयं वीर्यकृद्रसः।
स्थातव्यं ब्रह्मचर्येण यावदायाति पूर्णताम् ॥२२३३॥
रसो निरन्तरं ग्राह्यो ह्यम्लवर्जञ्च भोजनम्।
सेव्यमानेप्रतिदिनं प्रकारेणाऽमुना रसे ॥ २२३४ ॥
भवेत्षोडशवर्षीयः कामदेवसमो नरः।
मदहानिकरः स्त्रीणां भवेच्चाऽत्यन्तवल्लभः ॥ २२३५॥

रसचि., वाजीकरणे।

भाषा—उदयचन्द्ररसमें कहेहुए प्रकारसे पारदयुक्तभस्म-कीहुई चादी, दानेफिरङ्ग और रूपामाखीकीभस्म ५–५ तोले लेकर सवको खरलमें डालकर आकका‌दूध, धतूरा, वछनाग, चन्दन, सफेदकनेरकी जड़कीछाल और सफेदचन्दन इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा क्काथोंसे १–१ दिन पीसकर गोला वनावे। इसमें प्रत्येक भावना सुखासुखाकर देनीचाहिये। फिर गोलेको शरावसम्पुटमें वन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर

सुखाकर एकहाथगहरे खड्डेमें पहिले अभिरख आधेतककण्डेभरके सम्पुटको रख ऊपर तक कण्डोंसे भरदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर शीशीमें रखलेवे। इसकी १–१ रत्ती पौष्टिक अनुपानोंके साथ देनेसे वीर्यकाअभाव, शुष्कवीर्यता, शीघ्रपात, लिङ्गानुत्थान, इच्छाराहित्य, अस्वच्छवीर्य, वलक्षीणता, पण्ढता येसब नष्टहोकर कामरूपी वनजाताहै। जबतक वीर्यसे परिपूर्ण न होजाय तबतक ब्रह्मचर्य रक्खे। इसरसका सेवनकरनेवाला स्त्रियोंके दर्पको दूरकर उनका अत्यन्तप्रिय होताहै ॥ ४९७ ॥

४९८ मदनकामदेववटी

आकल्लकं केशरदेवपुष्पं
जातीफलोटिङ्गणहंसपाकम्।
एतानि चूर्णानि समानि कृत्वा
मूलार्द्धमात्रं कुरु नागफेनम् ॥ २२३६ ॥
क्षीरेण फेनं परिपाच्य वद्धं
मूलात्सिता षड्गुणमानयोज्या।
विमर्द्य चूर्णं गुटिकां निशायां
मुखे स्थिता कामयते शतानि ॥ २२३७ ॥

र. (मा.) वाजीकरणे।

टि०—केचित्त्विमा वटिका भिन्नरीत्या निष्पादयन्ति तद्यथा—आकल्लक, केसर, लवङ्ग, जातीफल, लवङ्गदलानि प्रति टङ्कत्रितयप्रमाणानि। कङ्कोलोटिङ्गणे प्रति टङ्कचतुष्के, खाखसाहिफेने च प्रति टङ्कद्वय गृहीत्वा सूक्ष्मचूर्णं विधाय अहिफेनमार्द्रकरसे घृष्ट्वौषधराशौ मेलयेत्। अर्द्धाढकपोस्तानि कुट्टयित्वा त्रिसेटकजले क्वाथयित्वा पादाऽवशिष्टेन क्वाथेन अर्द्धप्रस्थशर्करा मेलयित्वा सार्द्धद्वयतन्तुलिका विधाय सर्वं वस्तुजात तत्र निक्षिप्य घर्षणेनैकरसता सम्पाद्य वदरीफलप्रमाणा वटिका विधाय रक्षयेत्। तास्वेकैका रतिसमयाद्धटिकाद्वयात्प्राग् दुग्धेन निषेव्य सोल्लासो रमणीषु रमते, इति।

भाषा—अकलकरा, केसर, लौंग, जायफल, उटिङ्गन और शिंगरिफभस्म समभाग, सबसे आधी दूधमें पकाईहुई अफीम और ६ गुनी शक्कर लेकर काष्ठौषधियोंका चूर्णकर अफीमकेसाथ घोटकर एकजीव करदे फिर शक्कर मिलाकर चूर्णरूपमें रखछोड़े, अथवा शक्करकी चाशनीमें १–१माशेकी गोलियां वनाकर रक्खे। इनमेंसे १–१गोली मुंहमें रखकर रतिकरनेसे बहुतदेरतक स्तम्भन होताहै। ब्रह्मचर्यपूर्वक दूधकेसाथ सेवनकरनेसे श्वास, कास, मन्दाग्नि, ग्रहणी, अरुचि, नपुंसकत्व प्रभृतिरोग नष्टहोतेहैं ॥४९८॥

४९९ मदनकामरसः

पद्मबीजं कसेरुञ्च कन्दं नालञ्च कर्णिकाम्।
मुशलीभृङ्गराड् द्राक्षा पक्वं श्लेष्मातकं फलम् २२३८
विजयामर्कटीमाषाः शणवीजानि वै तिलाः।
कोकिलाक्षस्य वीजानि भूकूष्माण्डी शतावरी २२३९
शृङ्गाटं चिर्भिटं फञ्जीवीजानि चाऽश्वगन्धिका।
एतत्सर्वं समं पिष्ट्वा पादांशं चाहरेत्पृथक् ॥ २२४० ॥
पादांशस्याऽष्टमांशेन शुद्धं सूतं विमिश्रयेत्।
पारदादष्टमांशञ्च कर्पूरं तत्र निःक्षिपेत् ॥ २२४१ ॥
चातुर्जातकमेकैकं कर्पूराद्द्विगुणं भवेत्।
सूततुल्या सिता योज्या मर्द्यं रम्भाद्रवे दिनम् २२४२
तद्गोलं डमरौ यन्त्रे क्रमवृद्ध्याऽग्निना पचेत्।
दिनान्ते चोर्द्धलग्नं तद्ग्राह्यं रम्भाद्रवे दृढम् ॥ २२४३ ॥
मर्दितं सितया तुल्यं मापैकं भक्षयेत्सदा।
रसो मदनकामोऽयं वलवीर्यविवर्धनः ॥ २२४४ ॥
दिव्यरूपा भजेद्रामाः कामाकुलकलान्विताः।
भागत्रयन्तु यत्पूर्वं पृथक् चूर्णं सुरक्षितम् ॥ २२४५ ॥
कुलीरमांसच्छागाण्डचटकाण्डानि वै पृथक्।
प्रत्येकं चूर्णयेत्तुल्यं सर्वतुल्यं गवां पयः ॥ २२४६ ॥
तत्सर्वं चालयन्दर्व्या पचेद्यावत्सुपिण्डताम्।
प्रसार्य काष्ठपात्रान्तश्छायाशुष्कं विचूर्णयेत् ॥२२४७॥
अस्य चूर्णस्य कर्पूरं चतुःषष्ठ्यंशकं क्षिपेत्।
चातुर्जातकचूर्णन्तु क्षिपेद्द्वात्रिंशदंशतः ॥ २२४८ ॥
सर्वतुल्या सिता योज्या रक्षयेन्नूतने घटे।
कर्षद्वयं गवां क्षीरैरनुपानैः सदा पिवेत् ॥ २२४९ ॥

र. ख, वाजीकरणे।

भाषा—कमलगट्टा, कसेरू, कमलकंद, कमलनाल और कर्णिका, मुसली, भंगरा, द्राक्ष, लसोड़ेके पकेफल, भांग, केवांचके वीज, उड़द, शणकेवीज, तिल, तालमखाना, भुंईकोंहळा, शतावर, सिंघाड़े, कचरी, फांगकेवीज, असगन्ध येसव १–१ तोले लेकर चूर्णकरले। इसमेंसे चतुर्थांश लेवे और पारा $\frac{1}{2}$ माशा, कपूर $\frac{1}{2}$ रत्ती, तज, पत्रज, इलायची, नागकेशर १–१ रत्ती, शक्कर $\frac{1}{2}$ माशा डालकर केलेकेकन्दकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय डमरूयन्त्रमें रखकर क्रमवृद्धाग्निसे दिनभरपकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कदलीकन्दके रससे मर्दनकर सुखाय वरावरकी शक्कर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा खाकर दूध पीनेसे वल और वीर्य वढ़ताहै और दिव्यरूप स्त्रियोंकेसाथ रमणकरनेमें समर्थ होताहै। पूर्वोक्त औषधियोंका ३ भाग अवशिष्ट चूर्णलेकर केकड़ेकामास, वकरे और चिड़ेके अण्ड, येसव समभाग लेकर वारीक पीसकर सवकी वरावर गायके दूधमें डालकर कड़छीसे चलाताहुआ पकावे। जव पिण्ड होजाय तव काष्ठके पट्टेपर विछाकर छायाशुष्ककर चूर्णकरले। इसचूर्णसे ६४ वां हिस्सा शुद्धकपूर और ३२ वा हिस्सा चातुर्जात छोड़कर सवकी वरावर शक्कर मिलाय नये वर्तनमें रखछोड़े। इसमेंसे २–२ तोले गायकेदूध अथवा पौष्टिक अनुपानोंके साथ सेवन करनेसे उत्तम वाजीकरण होताहै ॥ ४९९ ॥

५०० मदनगोलकः

शुद्धसूतसमं गन्धं माक्षिकं तत्समं कुरु।
मर्दयेन्मातुलुङ्गाम्लैः स्वर्णपत्राणि लेपयेत् ॥ २२५० ॥
मारयेत्पुटयोगेन यावता भस्मतां व्रजेत्।
तद्भस्म तारवङ्गञ्च प्रवालं मौक्तिकाऽभ्रकम् ॥२२५१॥
कान्तं वैक्रान्तशुल्वञ्च रसभस्म च वृद्धितः।
वन्ध्याकर्कोटकीकन्दगोजिह्वास्वरसैस्तथा ॥२२५२॥

भावयेत्सप्तवाराणि रवितापेन शोषयेत् ।
गोलं मृत्कर्पटैर्योज्यं त्रिधा वेष्ट्य विशोषयेत् ॥२२५३
लवङ्गं पूरयेद्भाण्डे तन्मध्ये गोलकं क्षिपेत् ।
भाण्डवक्त्रं निरुद्धयाऽथ चतुर्यामं विपाचयेत् २२५४
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य भावयेत्तदनन्तरम् ।
शाल्मल्या च विदार्या च हलिन्या शतवीर्यया २२५५
कपिकच्छुत्रिकण्टेन केतकीस्तनवारिणा ।
रुदन्त्या च मुसल्या च गौर्या धात्र्या विशालया २२५६
वासातगरतक्राख्यै मालत्या शतपत्रकैः ।
कुङ्कुमेन ततो भाव्यो रसो मदनगोलकः ॥ २२५७ ॥
वल्लद्वयकृता मात्रा गोक्षुरेक्षुरकेण च ।
शिलाजतुसमायुक्तो कर्कोटीरसतोऽपि वा ॥ २२५८ ॥
अश्मरीं शर्करां भित्त्वा शतखण्डान् करोति वै ।
बलं पुष्टिं तथा तुष्टिं कान्तिञ्च कुरुतेऽनलम् ॥२२५९॥
सप्तधातुगतं शोषं जयेत्कासं सुदारुणम् ।
क्षीणानां व्याधिभिश्चैव पण्ढानां क्षीणरेतसाम् २२६०
रामा यस्य गृहे सन्ति तेन सेव्यो रसोत्तमः ।
सेवनात्कामसम्प्राप्तिः कामिनीदर्पहारकः ॥ २२६१ ॥

रसायन सं., र. मु., रसायनेवाजीकरणेच ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और सोनामाखी १–१ तोला लेकर नीलवर्णकज्जलीकर विजोरेकेरससे मर्दनकर ३ तोले सुवर्णके वारीक पत्तोंपर लेपकरे । फिर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर १५ सेर कण्डोंकी आंचदे । इसतरह भस्म होनेतक वारम्वार करताजाय । यही सुवर्णभस्म, रजत, वङ्ग, प्रवाल, मोती, अभ्रक, कान्तलोह, वैक्रान्त, तांवा, पारदभस्म येसव क्रमवृद्धभागसे लेकर वाझखेखसेकेकन्द और जङ्गलीगोभीके रसोंसे ७–७ भावनाएं देकर गोलावनाय धूपमें सुखाले । गोलेपर सुखासुखाकर तीन कपड़मिट्टी देवे । फिर एकहंडीमें आधेतक लौंग भरकर गोलेको रखकर ऊपरतक लौंगोंसे भरकर कपड़मिट्टी करदे और सूखनेपर ४ पहरकी चूल्हेपर अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर सेमल, विदारीकन्द, करिहारी, शतावर, केवांच, गोखरू, केवड़ेके कोमलडंडे, रुदन्ती, मुसली, हल्दी, आंवले, इन्द्रायण, अडूसा, तगर, तक्र ?, मालती, गुलाव और केशरके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर ६–६ रत्तीकी मात्रा गोखरू, तालमखाना, शिलाजीत, इनके साथ अथवा खेखसेकेसाथ देनेसे यह अश्मरीके सैकड़ों टुकड़े करडालताहै वल, पुष्टि, उत्साह, कान्ति और अग्निको वढ़ाताहै । सातोंधातुओंमें प्राप्तहुए शोष और भीषण खांसीको नष्टकरताहै । रोगोंसे क्षीण, क्षीणशुक्र, इनसवकेलिये उत्तम औषधहै जिसके घरमें वहुतसी स्त्रियें हों उसको इस रसका सेवन करनाचाहिये ५००

५०१ मदनजनकोरसः

सूतं कान्तं कनकगगनं ताप्यरौप्यञ्च तुल्यं,
यामं मर्द्यं मदकजलतः कुप्पिकाभाण्डपक्वम् ।
जीर्णे नीरं पुनरपि तथा शाल्मलीनाम्रवल्ली–,
भूकूष्माण्डीमदनजनकं सेवयेद्वल्लयुग्मम ॥ २२६२ ॥
धात्रीखण्डं मुसलितुरगीक्षौद्रसर्पिर्युतञ्च,
दुग्धं पीत्वा रमयति शतं कामिनीकामदाता ।
दीर्घं जह्याद्वलितपलितं सायमिष्टञ्च भोज्यं,
सर्वान्रोगाञ्जयति जनयेत्कीर्तिवीर्यस्य पुष्टिम ॥२२६३॥

र. सं., र चि., वाजीकरणे । र. चि. पुष्पधन्वावलेह ।

भाषा—पारा, कान्तलोह, सोना, अभ्रक, सोनामाखी और रजतभस्म सव समभागलेकर मदकके जलसे एकजगह मर्दनकर सुखाय काचकी कूपीमें भरके वालुकायन्त्रमें रखकर आंचदे । पानी जलजानेपर दुवारा डालदे । फिर सेमल, मजीठ, भुंई-कोंहला इनके स्वरस अथवा काढ़ेसे १–१ भावना देकर ६–६ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली आंवला, मुसली, असगन्ध, मधु और घीकेसाथ देकर दूध पिलानेसे सैकड़ोंस्त्रियोंकेसाथ सम्भोगकरनेपरभी शुक्र क्षीणनहींहोता । वहुतदिनतक सेवनकरनेसे वलीपलितको दूरकर पुष्टि और वलको वढ़ाकर मनुष्यको युवावस्थापन्न करताहै । इसके सेवनमें विदाहीपदार्थ और स्त्रीका त्यागकरना ॥ ५०१ ॥

५०२ मदनभैरवोरसः

रसं मणिशिलां गन्धं सैन्धवं मृतताम्रकम् ।
बृहतीफलजद्रावे मर्दितं गुटिकीकृतम् ॥ २२६४ ॥
मूषायां भूपुटे यामं वालुकायन्त्रके पचेत् ।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य गव्यपित्तेन भावयेत् ॥२२६५॥
चणमात्रं प्रदातव्यं नारिकेलजलेन च ।
अथवा त्रिकटुद्रावे नाशयेच्चित्तविभ्रमम् ॥
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं रसो मदनभैरवः ॥ २२६६ ॥

वै चि, वा, रसायन प, चित्तविभ्रमे ।

भाषा—शुद्धपारा, मैनसिल और गन्धक, सेंधानमक, ताम्रभस्म सव समभाग लेकर सवकी नीलवर्णकज्जलीकर वनभाटेके-फलोंके रसमें एकदिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर मूधरयन्त्रमें १ पहर स्वेदनकर वालुकायन्त्रमें एकपहरकी आंचदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर गायकेपित्तसे एक भावना देकर चनेप्रमाण गोलिया वनाकर रखलेवे । इनमेंसे १–१ गोली नारियलके जल अथवा त्रिकटुके क्वाथसे देनेसे यह चित्तविभ्रमको नष्टकरताहै । इसमें पथ्य दहीभातदेना ॥ ५०२ ॥

५०३ मदनमञ्जरीवटिका

चत्वारो व्योमभागास्तदनु निगदितं भागयुग्मञ्च वङ्गं,
भागैकं शम्भुवीजं त्रितयमपि मृतं तत्समा सिद्धमूली ।
चातुर्जातं सजातीफलमरिचकणा नागरं देवपुष्पं,
जातीपत्रञ्च भागद्वितयमथ पृथक् सर्वमेकत्र चूर्णम् ॥
सर्वद्व्यंशा सिता स्याद्धृतमधु-
सहिता मोदकीकृत्य चैतत्,

खादेदग्निं समीक्ष्य प्रसभ-
मभिनवानन्दसंवर्धनाय ।
योगो वाजीकराख्योऽयमिह
निगदितो भैरवानन्दनाम्ना,
निःशेषव्याधिहन्ता दलित-
बहुवधूद्दामकन्दर्पदर्पः ॥ २२६८ ॥

बृ यो.त.,भा.प्र ,वै र.,चि.र.भ.,रसायनसं.,वाजीकरणे। रसायनसङ्ग्रहे भैरवानन्द इति नाम ।

भाषा—अभ्रकभस्म ४ भाग, वङ्गभस्म २ भा., पारदभस्म १ भाग, शतावर ७ भा., चातुर्जात, जायफल, मरिच, पीपल, सोंठ, लौंग और जावित्री २–२ भाग लेकर सबका वारीकचूर्णकर सबसेदूनी शक्कर मिलाकर घी और मधु अन्दाज़से देकर ३–३ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली दुग्ध प्रभृति उचितानुपानकेसाथ देनेसे श्वास, कास, धातुक्षय, प्रमेह और क्लीवताको नष्टकर उत्तम वाजीकरणको करताहै ॥ ५०३ ॥

५०४ मदनमोदकः (प्रथमः)

उन्मत्तस्याऽर्द्धभागेन मृताऽभ्रं सह भर्जितम् ।
कणाऽऽकराहिसिन्धूत्थं सकुष्ठं चाऽऽङ्घ्रिसंयुतम् ॥
कङ्कोलकं वलायुग्मं हिस्रामोचाऽश्वगोक्षुरम् ।
क्षुरं मर्कटी क्रौञ्चं जात्याः पत्रं फलन्तथा ॥२२७०॥
चन्दनं देवकुसुमं चारं सारुष्कराऽन्तकम् ।
वरी शुक्राग्निवाराह्यौ मुशली सुपवी जलम् ॥२२७१॥
वांशीमधुस्रवाशोपांशयुक् सफलफाणितम् ।
यावन्त्येतानि द्रव्याणि तावती विजया मता ॥२२७२॥
सर्वतुल्या सिता ग्राह्या यावदायाति वन्धनम् ।
घृतेन मधुना मिश्रं मोदकान् कारयेद्भिषक् ॥२२७३॥
त्रिसुगन्धिसमायुक्तं कर्पूरेणाऽधिवासितम् ।
स्थापयेत्स्निग्धभाण्डे च श्रीमन्मदनमोदकम् २२७४
सर्वरोगहरं ह्येतद्विशेषाद्ग्रहणीहरम् ।
मेधायुः कान्तिधैर्यञ्च वलपुष्टिविवर्धनम् ॥ २२७५ ॥
दृढदेहकरं नृणां वलीपलितनाशनम् ।
वर्षत्रयं सदा सेव्यं चिरजीवी भवेत्तदा ॥ २२७६ ॥

र. शि., वाजीकरणे ।

भाषा—धतूरेके शुद्धवीजोंका चूर्ण १ तोला, अभ्रकभस्म ६ माशे, लेकर दोनोंको एकपहर मर्दनकर कड़ाहीमें रखकर मन्द अग्निसे सेके, फिर पीपल, अकलकरा, नागभस्म, सेंधानमक, कुठ, शीतलचीनी, वला, नागवला, हैंसकीजड़, केलेकाकन्द, असगन्ध, गोखरू, तालमखाना, केवांचकेवीज, कसेरू, जायफल, जावित्री, सफेदचन्दन, लौंग, चिरोंजी, भिलावे, लालकचनार, शतावर, क्षीरविदारी, चित्रककीजड़, वाराहीकन्द, मुसली, स्याहजीरा, सुगन्धवाला, वंसलोचन, महुआ, समुद्रशोष, विधारा, रात्रकीपापड़ी येसब ३–३ माशे इन सबकी वरावर भाग लेकर सबका वारीकचूर्णकर इकट्ठे मिलाय एकपहर खरलकर सबकी वरावर शक्कर डालकर त्रिसुगन्धि १–१ तोला, शुद्धकपूर ३ माशे मिलाकर घी और मधुसे ३–३ माशेकी गोलियां वनाकर चिकनेवर्तनमें रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली यथोचितानुपानके साथ देनेसे समस्तरोग नष्ट-होतेहैं । विशेषतया ग्रहणी, निर्वुद्धिता, कान्ति-धैर्य और वल तथा पुष्टिका ह्रास, वलीपलित येसव नष्टहोतेहैं । तीनवर्षतक लगातार इसका सेवनकरनेसे चिरजीवी होजाताहै ॥ ५०४ ॥

५०५ मदनमोदकः (द्वितीयः)

स्वर्णसिन्दूरलोहाभ्रवङ्गवानीरचीनजाः ।
शाल्मलीधन्वकाश्मीरजीरजातीलवङ्गकान् ॥२२७७॥
शोषव्योषत्वगाक्षीर्यैः पृथक् कोलमितान्क्षिपेत् ।
जातीपत्रवरीद्राक्षावलाकर्कटशृङ्गिकाः ॥२२७८॥
एलातमगुप्ताकुष्ठाऽऽब्दविदारीद्वयकेशरान् ।
मांसीकर्पूरकङ्कोलगोक्षुराणां पिचुद्वयम् ॥२२७९॥
सर्वस्मादर्धभागेन मातुलानीं सुभर्जिताम् ।
सर्वस्मान्नेत्रभागेन सितां दद्याद्विशोधिताम् ॥२२८०॥
निर्माय तन्तुलीं तस्याः क्षिपेत्सर्वमनुक्रमात् ।
शाणमात्रमनुक्रम्य वर्धयेदर्द्धकर्षकम् ॥२२८१॥
उष्णं पयः पिवेच्चाऽनु वर्धयेदग्न्यपेक्षया ।
नष्टेन्द्रिया नष्टशुक्रा वलीपलितजर्जराः ॥ २२८२ ॥
सेवनादस्य जायन्ते युवान इव हर्षिताः ।
स्त्रीणां मदनमूढानां भवन्ति प्राणवल्लभाः ॥२२८३॥
ग्रहणीश्वासकासार्शःप्रमेहमधुमेहजाः ।
व्याधयो विनिवर्तन्ते ह्यद्यो वृष्यो रसायनः ॥२२८४॥

नू क., वाजीकरणे ।

भाषा—स्वर्णसिन्दूर, लोह, अभ्रक और वङ्गभस्म, वेतकेवीज, चोपचीनी, सेमलका मुसला, धामनकीछाल, केशर, जीरा, जायफल, लौंग, समुद्रशोप, त्रिकुट, वंसलोचन अथवा तीखुर ४–४ माशे, जावित्री, शतावर, द्राक्ष, वला, काकड़ासींगी, इलायची, केवांचकेवीज, कुठ, नागरमोथा, क्षीरविदारी और काष्ठविदारी (भुंईकोंहळा), नागकेशर, जटामासी, शुद्धकपूर, शीतलचीनी और गोखरू २–२ तोले, इनसबसे आधी भुनीभाग और सबसे दूनी स्वच्छशक्करकी तीनतारी चाशनीलेकर ऊपरकी चीज़ोंका वारीकचूर्ण क्रमसे मिलाकर ४–४ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ गोलीसे आरम्भकर क्रमश दो-गोलीतक वढाकर गरमदूधकेसाथ सेवनकरे, पाचनशक्ति वढनेपर दूधको वढ़ाताजाय । इसकेसेवनसे नष्टेन्द्रिय, नष्टशुक्र और वलीपलितव्यासजर्जरितभी जवानोंकी तरह हर्षयुक्तहोकर मदोन्मत्तस्त्रियोंके प्राणवल्लभ होतेहैं और ग्रहणी, श्वास, कास, ववासीर, प्रमेह, मधुमेह इनसबको नष्टकर मनुष्यको हृष्टपुष्ट वनाकर पुन. युवावस्थामें लाताहै ॥ ५०५ ॥

५०६ मदनसञ्जीवनरसः

त्रिपलं पारदं शुद्धं गन्धकञ्च चतुष्पलम् ।
मृतमभ्रकसत्त्वञ्च स्वर्णं कान्तञ्च कार्षिकम् ॥ २२८५॥

द्विपलं हेमविमलं भूनागायः पलत्रयम्।
एभिः सर्वैश्च सम्पेष्य प्रकुर्यान्नष्टपिष्टिकाम् ॥२२८६॥
वालुकायन्त्रविन्यस्तलोहपात्रे क्षिपेत्तदा।
अधस्ताज्ज्वालयेदग्निं मर्दयेत्तदनन्तरम् ॥ २२८७ ॥
मण्डूक्या ब्राह्मिकायाश्च मुशल्याश्चित्रकस्य च।
हस्तिशुण्ड्यास्तथा कृष्णनिर्गुण्ड्या गोक्षुरस्य च २२८८
रस कुडवमानेन क्षिपेत्खल्वे मुहुर्मुहुः।
तत आकृष्य सम्पिष्य मधुना सह यत्नतः ॥२२८९॥
मल्लमूषोदरे क्षिप्त्वा विनिरुद्ध्य विशोष्य च।
दशभिश्छगणै र्देयं पुटं सम्पूज्य भैरवम् ॥
करण्डे क्षेपयेत्पिष्ट्वा समभ्यर्चितकन्यकः ॥ २२९० ॥
रसः ख्यातो नाम्ना भुवि मदनसञ्जीवन इति,
द्विवल्लाभ्यां तुल्यो घृतमधुसितादुग्धसहितः।
निपीतः सप्ताहं प्रचुरमधुराहारसहितो,
नरं कुर्यान्नारीशतसुरतसुप्रीतहृदयम् ॥ २२९१ ॥
हन्यादुन्मादमुग्रं क्षयगदमरुचिं कामलामम्लपित्तं,
सर्वान्पित्तोर्द्ध्वरोगान्रुधिरभवगदान् रक्तपित्तज्वरांश्च।
रक्तार्शः पित्तगुल्मं सततमतिमहानाहमन्तर्विदाहं,
पाण्डुं मेहांश्च मोहं प्रदरगदमपि स्त्रीजनस्योग्रमाशु ॥
र. र स., र को, वाजीकरणे।

भाषा—शुद्धपारा ३ पल, शुद्धगन्धक ४ पल, अभ्रकसत्त्व, सुवर्ण और कान्तलोहभस्म १–१ कर्ष, सुवर्णमाक्षिक २ पल, नमकके पानीमें वान्तिकरायेहुए केंचुए और लोहभस्म ३–३ पल लेकर पारे और केंचुओंको ४ पहर मर्दनकरनेसे नष्टपिष्टिका होजायगी। इसकेवाद सुवर्ण, अभ्रकसत्त्व, सोनामाखी, लोहभस्म और गन्धक इनको क्रमसे डालकर २–२ पहर लोहेके खरलमें मर्दनकर वालुकायन्त्रपर इसखरलको अथवा दूसरे लोहेके पात्रको रखकर इसकज्जलीको डालदे और नीचे अग्नि जलावे। गरमहोनेपर छोटी और वड़ी ब्राह्मी, मुशली चित्रक, हाथीशुण्डी, कालासंभालु, गोखरू, इन प्रत्येकका १–१ पाव क्रमसे रस सुखावे। सवकारस एकदम सूखजानेपर निकालकर मधुमें खरलकर गोला वनाय सोमलकी मूषामें रखकर शरावसम्पुटमें वन्दकर २–४ कपड़मिट्टी देकर सुखादे। फिर दस जङ्गलीकण्डोंकी आच देकर निकालकर भैरव और कन्याओंका पूजनकर पीसकर शीशीमें रखछोड़े। इसमेंसे ६–६ रत्ती घी, मधु, शक्कर और दूधकेसाथ लेनेसे और मधुरआहारकरनेसे वहुतसी स्त्रियोंको खुश करसक्ताहै और यथोचितानुपानकेसाथ देनेमें भयंकर उन्माद, क्षय, अरुचि, कामला, अम्लपित्तादि समस्तपित्तोपद्रव, रुधिर और रक्तपित्तजविकार, रक्तार्श, पित्तगुल्म, आनाह, भीतरकीजलन, पाण्डु, प्रमेह, मोह, प्रदर, इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ५०६ ॥

५०७ मदनसन्दीपनचूर्णम्

गोक्षुरः क्षुरको मेघो मर्कटी शतपुत्रिका।
मधुकं क्षीरकाकोली तालमूल्यमृताऽम्बु च ॥ २२९३॥
शाल्मलीलोहगगने विदारी तालमस्तकम्।
हस्तिकर्णो वला धात्री जातीफलकसेरुकम् ॥ २२९४ ॥
शृङ्गाटको माषपर्णी भृङ्गराट् कुङ्कुमं वचा।
शिलाजतु शिवावीजं पारदं धातुमाक्षिकम् ॥ २२९५॥
वटस्य कोमलाः पादा एलायष्टिकतण्डुलाः।
रक्तशालिश्च गोधूममाषका यवकास्तथा ॥ २२९६ ॥
एतच्चूर्णीकृतं सर्वं सितशर्करया समम्।
विडालपदकं खादेत्सर्पिषा मधुना सह ॥ २२९७ ॥
शीतं पयोऽनुपानश्च कामिनीं कामयेन्नरः।
वीर्यहीनो भवेद्यस्तु जीर्णो व्याधिप्रपीडितः ॥२२९८॥
प्रमेही मूत्रकृच्छ्री च स्त्रीदोषात्पतितध्वजः।
सोऽशीतिवार्षिको वृद्धो युवेव रमतेऽङ्गनाः ॥ २२९९॥
पुत्रश्च जनयेद्वीरमरोगं दीर्घजीविनम्।
भेषजैर्विविधैः किं स्यादन्यैश्च शतसङ्ख्यकैः ॥२३००॥
फलं न किञ्चित्तत्राऽस्ति केवलं गौरवं वहु।
वालसस्यं यथातोयै र्वर्धते च दिनेदिने ॥ २३०१ ॥
तथाऽनेन नृणां देहः पुष्टो भवति नान्यथा।
योऽस्ति मण्डलमात्रन्तु स गच्छेत्प्रमदाशतम्।
जगतस्तु हितार्थाय चूर्णं मदनदीपनम् ॥२३०२॥
ध., र र, वाजीकरणे।

भाषा—गोखरू, तालमखाना, नागरमोथा, केवाचकेवीज, शतावर, मुलहठी, क्षीरकाकोली, तालमूली, गिलोय, सुगन्धवाला, सेमलकामुसला, लोह और अभ्रकभस्म, विदारीकन्द, ताड़फलकी मज्जा, हस्तिकर्णपलाशकी छाल, वला, आवले, जायफल, कशेरु, सिघाड़े, माषपर्णी, भृङ्गराज, केसर, वच, शिलाजीत, हर्रेकी मींगी, पारा और सोनामाखीकीभस्म, वटकीजटा, इलायची, मुलेठी, सुगंधिचावल, साठीचावल, गेंहूंकासत, उड़दकीदाल, छिलकेरहित जव, सव समभाग लेकर वारीक चूर्णकर सवकीवरावर शक्कर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ तोला मधु और घीके साथ खाकर धारोष्ण दूध पीनेसे अशक्तभी आदमी यथेष्ट स्त्रीसङ्ग करसक्ताहै। इसके निरन्तर सेवनकरनेसे वीर्यहानि, व्याधिसेजीर्णता, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, योनिदोषसे पतितध्वज, वन्ध्यत्व, इनसव दोषोंको यह दूरकरताहै ॥५०७॥

५०८ मदनसुन्दररसः (प्रथमः)

माक्षीकं धातुमाक्षीकं लौहचूर्णं शिलाजतु।
पारदश्च वराञ्चैव गन्धकञ्च समं समम् ॥२३०३॥
घृतेन भावयित्वा तु पात्रे कृत्वा तु चाऽऽयसे।
निष्कमात्रप्रमाणन्तु भक्षयेत्प्रत्यहं नरः ॥२३०४॥
मत्स्याण्डं तिलपिष्टञ्च घृतेन च परिप्लुतम्।
क्षीरेणाऽनुपिवेद्रात्रौ शर्करामधुमिश्रितम् ॥२३०५॥
मासमात्रं पिवेन्नित्यं वीर्यवृद्ध्यै दिनेदिने।
स पुमान्रमयेन्नारीमजस्रं चटको यथा ॥२३०६॥
र र., ध, वाजीकरणे।

भाषा—रूपामाखी, सोनामाखी, लोहभस्म, शिलाजीत, शुद्धपारा त्रिफला और गन्धक समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें सवचीजें मिलाकर घीसे लोहेके पात्रमें १–२ रोज मर्दनकर लोहेकेपात्रमें रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ माशे रोज़ खाकर मछलीकाअंडा, तिलकल्क और घी मिलाकर दूधकेसाथ रात्रिमें पीनेसे वीर्यकीवृद्धि और वाजीकरण होताहै । शक्कर और मधुकेसाथ एकमहीनेतक खानेसे स्त्रियोको चटककी तरह रमणकरताहुआभी वीर्यकी हानिको नहीं प्राप्तहोता ॥ ५०८ ॥

५०९ मदनसुन्दररसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं गन्धकं देवपुष्प-
मेला मस्तिः स्याद्वराङ्गं तथैव ।
अब्धेः शोषः कल्ककङ्कोलमभ्रं
जातीपत्री खाखसीयं फलञ्च ॥२३०७॥
सर्वं समं म्लेच्छयवानिका च
तत्केसरं कुङ्कुमवल्लिजञ्च ।
जातीफलं हिङ्गुलकं विषञ्च
योज्यं त्रिभागं त्वहिफेनकञ्च ॥ २३०८ ॥
एतत्समानं कनकस्य वीजं
भाव्यं जयाद्भि र्मुनिसंख्यया च ।
मात्रां पिवेदात्मवलानुरूपां
घृतं सुदुग्धं ससितं प्रपेयम् ॥
शुक्रं च्युतं नैव भवेद्व्यवाये
निम्बूफलास्वादनतोऽन्तरेण ॥२३०९॥

टो., र. पा. वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लौग, इलायची, मस्तगी, तज, समुद्रशोष, अकलकरा, शीतलचीनी, अभ्रकभस्म, जावित्री और पोस्त १–१ तोला, खुरासानी अजवाइन, नागकेशर, केशर, मरिच, जायफल, शुद्ध शिगरिफ, वछनाग और अफीम ३–३ तोले, इनसवके वरावर शुद्धधतूरेके वीज लेकर सवका वारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भागके स्वरससे ७ दिनतक मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ गोलीसे लेकर ३ गोलीतक आत्मशक्त्यनुसार लेकर दूधमें घी और शक्कर डालकर पीनेसे रतिसमयमें नीवूकेचूंसेविना शुक्र स्खलितनहींहोता । इसे उचितानुपानकेसाथ देनेसे कास, श्वास, सङ्ग्रहणी, उन्माद, गठिया येसव नष्टहोतेहै ॥

५१० मदनाङ्कुशटङ्कणम्

टङ्कणात्तु तृतीयांशं सैन्धवं लवणं न्यसेत् ।
पञ्चमांशं सोममलं षडंशं हरितालकम् ॥२३१०॥
एकादशांशं सूतञ्च मर्दयेच्च शिवाम्बुना ।
रसोनभल्लातरसे वातहारिरसे पुनः ॥ २३११ ॥
काचकूप्यां विनिःक्षिप्य वह्निं यामांस्तु षोडश ।
दत्त्वा तस्मात्सवर्णं टङ्कणं मदनाङ्कुशम् ॥
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन स्वरभेदादिनाशनम् ॥२३१२॥

र.का., स्वरभेदे ।

भाषा—सुहागा १ भा , सेंधानमक $\frac{1}{3}$ भा , सफेदसोमल $\frac{1}{5}$ भा., शुद्धहरिताल $\frac{1}{6}$ भा., शुद्धपारा $\frac{1}{11}$ भाग लेकर सवको हर्रेकाकाढ़ा, लशुनकास्वरस, भिलावेकातैल, एरण्डकास्वरस इनमें क्रमसे १–१ दिन मर्दनकर सुखाकर कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें वालुकायन्त्रमें १६ पहरकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्ती उचितानुपानके साथ देनेसे स्वरभेद, श्वास, कास, आनाह, आध्मान इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ५१० ॥

५११ मदनोदयरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं रक्तोत्पलदलद्रवैः ।
यामं मर्द्य पुनर्गन्धं सार्धं तत्र विनिःक्षिपेत् ॥२३१३॥
पूर्वद्रावै र्दिनं मर्द्य रसार्द्धं गन्धकं पुनः ।
दत्त्वा तद्वद्दिनं मर्द्य काचकूप्यां निरोधयेत् ॥ २३१४ ॥
दिनैकं वालुकायन्त्रे पक्वमुद्धृत्य चूर्णयेत् ।
भूकूष्माण्डीकषायेण भावयेद्दिनसप्तकम् ॥ २३१५ ॥
छायायां तत्सितातुल्यं निष्कैकं भक्षयेत्सदा ।
शणमूलं सबीजञ्च मुशली शर्करा समम् ॥ २३१६ ॥
गवां क्षीरैः पलार्द्धं तु अनु रात्रौ सदा पिवेत् ।
अनन्तं वर्धते वीर्यं रसोऽयं मनोदयः ॥ २३१७ ॥

र. खं , ध , र. र , रसमञ्जरी, र कौ , रसायनसं , र. क , रससागर, रसायने ।

टि०—रसेन्द्ररत्नकोषरससागरयो जभिनवकामदेव नाम्नाऽयमेव पाठ उद्धृतोऽस्ति, तत्र रक्तोत्पलशङ्खिन्यो र्भावने प्रदत्तोऽत्र तु पाकोत्तर भूकूष्माण्डीभावनाऽस्ति, अनुपाने च शणवीजमूले परित्यक्ते इति विशेषो दृश्यते परन्तु सोऽकिञ्चित्कर शङ्खिनीभावनयाऽस्य रसस्योत्पादने सर्वत्र सामञ्जस्य भविष्यति, पाठद्वयकल्पने तु महद्गौरवमिति वोद्धव्यम् । अय पाठोऽनङ्गसुन्दरेणाऽऽपातत सादृश्यमावहति परन्तु पाकभेदमादाय पृथक् पाठ स्वीकृतोऽस्तीति विद्वद्भिरालोचनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धककी समानभागमें नीलवर्णकज्जलीकर लालकमलकेफूलोंकेरससे एकपहर मर्दनकर कज्जलीसे आधी गन्धक मिलाकर पूर्वद्रवसे एकदिन मर्दनकर पारेसे आधी शुद्धगन्धक फिर डालकर एकरोज़ मर्दनकर सुखाकर आतशीशीशीमें डालकर वालुकायन्त्रमें एकदिनरात पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर भुंईकोहड़ेकेरससे ७ रोज़ भावना देकर छायामें सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ माशेकी मात्रा वरावरकी शक्कर मिलाकर खावे और ऊपरसे शणकीजड़ और वीज, मुशली तथा शक्कर सव समभागका चूर्ण २ तोले फाककर गायका दूध पीवे तो वीर्यकी अत्यन्तवृद्धिहोतीहै ॥५११॥

५१२ मदनोदयरसः (द्वितीयः)

वैक्रान्तकान्तगगनं रसहेमतुल्यं
नागं लवं तदनु चार्द्धपवि विमर्द्य ।
धात्रीवरीमुसलिशाल्मलिमर्कटीभि-
रेभिश्च दुग्धसितया मदनोदयाख्यः ॥ २३१८ ॥

वल्लयुग्मं दिनान्ते च प्रातरुत्थाय गोघृतैः ।
नास्त्यस्माद्धिपरं कामवर्धनं वा रसायनम् ॥२३१९॥

र. शं., र. चि , रसायने ।

भाषा—वैक्रान्त, कान्तलोह, अभ्रक, पारा, सुवर्ण इनकी-भस्में १–१ तोला नागभस्म ३ माशे, हीरेकीभस्म १॥ माशा लेकर सबको १–२ पहर शुष्कमर्दनकर आंवले, शतावर, मुशली, सेमलका मुसला, केवाच इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली सुबहशाम घीके साथ खाकर शक्करमिलाहुआ-दूधपीनेसे काम और आयुकी वृद्धिहोतीहै । इससे बढ़कर कामवर्धन अन्यकोई रसायनयोग नहींहै ॥ ५१२ ॥

५१३ मदनोरसः

शुद्धं रसं खाखसवल्कतोय-
घृष्टं समुत्थाप्य यथात्रिवारम् ।
समेन गन्धेन तु भस्म कृत्वा
संयोजयेत्तत्किल सूतकेऽस्मिन् ॥२३२०॥
सूताऽभ्रगन्धाहिशिलागुरुत्वग्-
लवङ्गवङ्गैः सहजातिजातैः ।
हृद्धात्रिकापत्रयुतैः समांशे-
र्द्वात्रिंशभागेन विषेण युक्तैः ॥ २३२१ ॥
सम्भावयेत्खाखसवल्कवारा
द्वात्रिंशवारं मदनो रसः स्यात ।
गुञ्जाढ्यं शर्करयाऽस्यभुक्तं
वीर्याऽतिवृद्धिं दृढताञ्च लिङ्गे ॥२३२२॥
करोति पुंसां सहसा समर्थः
क्षयाऽग्निमान्द्यं ग्रहणीं जयेच्च ।
पिवेत्पयः खाखसवल्कसिद्ध-
मस्यानुभोज्यं मधुरं सदुग्धम् ॥२३२३॥

रसायनसं ,स्त्री वि ,र क ,र.र दी ,र कल्प ,रसायनवाजीकरणे

भाषा—शुद्धपारेको पोस्तकेपानीसे मूर्च्छितकर उड़ावे, फिर मर्दनकर दूसरीवार उड़ावे । ऐसे तीनवार ऊर्द्ध्वपातनकर पोस्तकेपानीमें कईवार बुझायाहुआगन्धक समभागमें मिलाकर रससिन्दूर बनाले फिर इसमें शुद्धपारा, अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, नाग और मैनसिलभस्म, अगर, तज, लवङ्ग, वङ्गभस्म, जायफल, जावित्री, अमलोनियाकेपत्ते सब समभाग, शुद्धवछनाग ३२ वा भाग लेकर सबका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण-कज्जलीमें मिलाकर पोस्तके स्वरस अथवा क्वाथसे ३२ वार भावनाएं देकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े इनमेंसे १–१ गोली शक्करकेसाथ खानेसे नष्टवीर्यता, लिङ्गशैथिल्य, क्षय, मन्दाग्नि, ग्रहणी इत्यादि समस्तरोग नष्टहोतेहैं । इसपर पोस्तकेडोंडे डालकर औटायाहुआ दूध शक्कर मिलाकर पीवे और मधुरभोजन करे ॥ ५१३ ॥

५१४ मदात्ययभञ्जनरसः

सचव्यहिङ्गु रुचकं धान्याकं विश्वदीप्यकम् ।
चूर्णं ससूतं मद्येन पीतं पानात्ययं जयेत् ॥ २३२४ ॥

र स , र सु., र र. दी., मदात्यये ।

टि०–र रा सुन्दरे र र दीपिकायाञ्च धान्याकस्थाने पूरक नियोज्य सूतभस्मेतिनाम स्थापितम् ।

भाषा—चव्य, भुनाहींग, संचल, धनियां, सोंठ, अजवा-इन और पारदभस्म इनसबका वारीकचूर्णकर १–२ पहर खरलकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ माशे मद्यके साथ सेवन करनेसे मदात्यय रोग नष्टहोताहै ॥ ५१४ ॥

५१५ मदेभसिंहरसः

रसगन्धवराटताम्रशङ्ख-
विषवङ्गाभ्रककान्ततीक्ष्णमुण्डम् ।
अहिहिङ्गुलटङ्कणं समांशं
सकलं तत्त्रिगुणं पुराणकिट्टम् ॥ २३२५ ॥
पशुमूत्रविशोधितं सुभृष्ट्वा
त्रिफलाभृङ्गभवाऽऽर्द्रकोत्थनीरैः ।
सुविशोष्य वरामृतालिवासा-
स्वरसैरष्टगुणैः पुनर्नवोत्थैः ॥ २३२६ ॥
पृथगग्निकृतं घनं विपाच्य
गुटिका माषयुता निजानुपानैः ।
ज्वरपाण्डुतृषास्रपित्तगुल्म-
क्षयकास स्वरसादाग्निसादमूर्च्छाः ॥२३२७॥
पवनादिसुदुस्तराष्टरोगान्
सकलपित्तहरं मदावृतञ्च
बहुना किमसौ यथार्थनामा
सकलव्याधिहरो मदेभसिंहः ॥ २३२८ ॥

रसायन सं , नि र ,र चं ,र सु , वै चि , यो र , पाण्डुरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, पीलीकौड़ी, ताम्र और शङ्ख-भस्म, शुद्धवछनाग, वङ्ग, अभ्रक, कान्ततीक्ष्ण, और मुण्डलोह, नाग तथा शिगरिफ इनकीभस्में, भुनासुहागा सब समभाग, इनसबसे तिगुनी गोमूत्रमें कीहुई मण्डूरभस्म लेकर सबका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर त्रिफला, भंगरा, अदरख इनसबके रसोंसे १–१ भावना देकर अच्छीतरह सुखाकर त्रिफला, गिलोय, भंगरा, अडूसा और पुनर्नवा इन प्रत्येकके अठगुने रससे मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर आंचदेवे । यह क्रम प्रत्येकभावनाके अन्तमें करनाचाहिये । तैयार होनेपर १–१ माशेकी मात्रा तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे ज्वर, पाण्डु, तृषा, रक्तपित्त, गुल्म, क्षय, कास, स्वरभेद, मदात्यय, मन्दाग्नि, मूर्च्छा, वात और पित्तकृत दुस्तररोग, मदात्यय इनसबको यह नष्टकरताहै । इनके अतिरिक्त उचितानुपानके साथ देनेसे तमाम रोगोंको दूरकरताहै ॥ ५१५ ॥

५१६ मधुपक्वहरीतकी योगः (प्रथमः)

सुपक्वपथ्यापलपञ्चकञ्च
मूत्रे गवां प्रस्थमिते विपाच्य ।
प्रस्थे पुनः काञ्जिकदुग्धतक्रे
पक्त्वा ततो निष्कुलिका विधाय ॥२३२९॥
व्योषं यवानी कुटजस्य बीजं
मुस्ता जलं दाडिमम्लवेतम ।
सुधातकीपुष्पमजाजियुग्मं
कणाजटा मोचरसं सुविल्वम ॥ २३३० ॥
सौवर्चलं सैन्धवमश्मभेदं
जम्ब्वाम्रमज्जाऽतिविषाऽतिपाठाः।
लवङ्गजातीफलतुर्यजाता-
न्येतानि तुल्यानि च तत्र जातम् ॥ २३३१ ॥
कपित्थमण्डूरमयो दशांशं
समस्तचूर्णार्द्धमिता सिता च ।
अनेन पथ्याः परिपूरणीयाः
सूत्रेण युक्त्या परिवेष्टनीयाः ॥ २३३२ ॥
स्थाल्यां ततस्ताः क्रमशो निधाय
तृणानि मुक्त्वा परितो विमुच्य ।
मन्दाग्निना याममथो विमुच्य
विधाय शीता मधु निक्षिपेच्च ॥
ताः सेव्यमाना ग्रहणीप्रमेह-
श्वासापहा वह्निकराः सुवृष्याः ॥ २३३३ ॥

पा. व, ग्रहण्यादौ ।

भाषा—अच्छीतरह पकीहुई काबुली हर्रे ५ पलको एक-१ सेर गोमूत्र, काजी, दूध और छाछमें क्रमसे पकाकर गुठली निकाल त्रिकटु, अजवाइन, इन्द्रजव, नागरमोथा, सुगन्धवाला, अनारदाना, अम्लवेत, धावड़ीके फूल, दोनोंजीरे, पीपल, जटामांसी, मोचरस, वेलगिरी, संचल, सेंधानमक, पाषाणभेद, जामुन और आमकीगिरी, अतीस, वड़ीपाठा, लौंग, जायफल, तज, पत्रज, इलायची ये सब समभाग, कैथकीमज्जा, मण्डूर और लोहभस्म ये प्रत्येक सबसे दशवा भाग और सबसे आधी शक्कर लेकर वारीक चूर्णकर हर्रोंमें भरकर कच्चेसूतसे बांधदे फिर एकहण्डीमें घास विछाकर वहुतसंभालकर चुनकर रखदे और ऊपरसे घाससे दवाकर वहुतही मन्द अग्निसे एकपहरतक पकाकर नीचेउतारले । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर मधुमें डालकर रखदे । इनमेंसे यथाग्निवल सेवन करनेसे ग्रहणी, प्रमेह श्वास, मन्दाग्नि, धातुक्षीणता येसव नष्टहोतेहैं ॥ ५१६ ॥

५१७ मधुपक्वहरीतकीयोगः (द्वितीयः)

हरीतक्याः शतं द्रोणे पयसः परिपाचयेत् ।
कृतावशेषमुत्तार्य निष्कुलीकृत्य च क्षणात् ॥२३३४॥
रसगन्धकलोहानां पलेनापूर्य वेष्टयेत् ।
सूत्रेण मासमेकन्तु मधुमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥ २३३५॥
पथ्याशी भक्षयेदेकां सर्वरोगविमुक्तये ।
क्षयपाण्ड्वाममन्दाग्निमेहग्लानी व्यपोहति ॥ २३३६ ॥

रसायनस., क्षये ।

भाषा—अच्छीतरह पकीहुई मोटीहर्रे १०० नग लेकर १६ सेर दूधमें पकावे । खोआ होजानेपर उतारकर हर्रोकी गुठली निकाल शुद्धपारा और गन्धक तथा लोहभस्म १-१ पलकी कज्जलीकर हर्रोमें भरकर कच्चेसूतसे बाधकर मधुमें डालदे । ६-७ दिनके बाद इनमेंसे १-१ हर्रे खानेसे क्षय, पाण्डु, आम, मन्दाग्नि, प्रमेह और ग्लानि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥५१७॥

५१८ मधुमण्डूरम्

गृहीत्वा भिषक् प्रस्थमण्डूरभागं
शृते त्रैफले मर्दयित्वा च यामम ।
पुटे पाचयेद्यामयुग्मं कृशानौ
पुटानीह देयानि चन्द्राक्षिवारम् ॥ २३३७ ॥
तथा धेनुमूत्रे कुमारीरसे च
विधेयश्च पञ्चामृते योगराजः ।
भवेत्सिन्धुनागैः पुटैः सिद्धिदोऽय-
मचिन्त्यप्रभावश्च मण्डूर एषः ॥ २३३८ ॥
मधुमण्डूर एष कणामधुना
चिरपाण्डुगदं ननु हेममितः ।
जनको रुधिरस्य परं बलदो
विविधार्तिहरस्त्वनुपानवलैः ॥ २३३९ ॥

रसायनसं, वै वि, नि र., र सु., यो. र, वै चि, पाण्डुरोगे।

भाषा—एकसेर पुराना मण्डूर लेकर त्रिफलाके काढ़ेमें मर्दनकर साफ़कर दोपहर अग्निमें गरमकर गोमूत्रमें बुझावे । इसतरह २१ भावनाएं देकर गोमूत्र, घीकुंआर और पञ्चामृतमें २१-२१ भावनाए देवे । प्रत्येकभावनाकेअन्तमें २-२ पहरकी आच देनीचाहिये । इसतरह ८४ भावनाएं तथा पुट देनेसे यह अचिन्त्यप्रभाव मण्डूर तैयार होगा । इसमेंसे १-१ माशाकी मात्रा पीपल और मधुके साथ देनेसे पाण्डुरोग मिटताहै और नया रुधिर पैदाहोकर वलबढताहै । अनुपानविशेषसे यह सवरोगोंको दूरकरताहै ॥ ५१८ ॥

५१९ मधुमालिनीवसन्तः

दरदमथ खर्गे वै भावयेत्सप्तवारं,
लकुचफलभवाद्भिश्छायया शोषयेद्वै ।
तदनु मृदुकृशानौ धारयेल्लोहपात्रे,
दरदपिचुकतुल्यैस्ताम्रचूडोत्थगोलैः २३४०
जनितसकलतोयं ढालयेत्तस्य चोर्द्ध्वे,
असकृदयोदर्व्या घर्षयेत्सावकाशम् ।
गुलिकगमनमात्रं शुष्कताञ्च प्रयातम्,
भवति तु यत्प्रमाणं कर्चुरं स्यात्तदर्धम् २३४१
मरिचनिभमथैवं गौरवल्लीजचूर्णं,
लकुचजनिततोयैर्भावयेत्सप्तवारम् ।

कृतमरिचसमानं दापयेदाज्यखण्डै,-
हरति शिशिरतापं जीर्णजूर्ति समीरम्॥२३४२
मधुमालिनिनामाऽयं वसन्तो वैद्यपूजितः।
अनुपानविशेषेण वलपुष्टिप्रदायकः॥ २३४३॥
गर्भवृद्धिकरश्चाऽसौ गर्भिणीनां सुखावहः।
रोगनाशात्परं दद्याद्वलकृद्वह्विवर्धनम्॥२३४४॥
र चं, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शिंगरिफ और खपरियाको वड़हरके रससे ७—७ वार घोटकर छायामें सुखाय वेरकीलकड़ीके कोयलोंपर लोहेकी कड़ाहीमें रख जितनेतोले शिगरिफहो उतनेही मुर्गीके अण्डे लेकर उनकी सफेदी और ज़र्दी धीरे २ डालकर सुखावे और लोहेकीकड़छीसे वारम्वार चलाताजाय, जव गोलियां फूटजाय और शुष्कहोजाय तव दवासे आधे कचूरके मिर्चवरावर टुकड़े करके डाले और उतनाही सफेदमिर्चका चूर्ण डालकर सवको वड़हरके फलके रसकी ७ भावनाएं देकर १—१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १—१ गोली घी और शक्करकेसाथ देनेसे शीत तथा जीर्णज्वर और वायुको यह दूरकरताहै। अनुपानविशेषसे वल, पुष्टि, गर्भवृद्धि, अग्नि इनसवको वढ़ाताहै॥

५२० मधुसूदनरसः (प्रथमः)

सूताऽभ्रगन्धं लवणानि पञ्च
ताप्यञ्च सर्वन्तु समानभागम्।
विचूर्ण्य ताम्रस्य पुटे निवेश्य
सूतेन तुल्येन पुटं ददीत॥ २३४५॥
सर्वं विचूर्ण्याऽथ पुटेत नीरै-
र्जयन्तिकामर्कटशर्वरीयैः।
उन्मत्तवासाविपतिन्दुचित्रै-
र्विषेण पश्चात्परिपाचयेत॥ २३४६॥
लोहस्य पात्रे घटिकाद्वयञ्च
रसस्ततः स्यान्मधुसूदनोऽयम्।
वल्लप्रमाणेन ददीत चामुं
शुण्ठीघृताक्तं द्विदलं विवर्ज्यम्॥२३४७॥
र दी, शूलाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा, अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, पाचोंनमक और सुवर्णमाक्षिक १—१ तोला लेकर कज्जलीकर एकतोले तावेके सम्पुटमें रख कपड़मिट्टी देकर ५ सेर कण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर भस्महुये सम्पुटसहित खरलकर जेंत, केवाच, हल्दी, धतूरा, कुचिला, चित्रक, वच्छनाग इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १—१ भावना देकर सुखाकर लोहेके सम्पुटमें वन्दकर दो घड़ीकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ३—३ रत्ती सोंठ और घीमें मिलाकरदेनेसे समस्त शूल नष्टहोतेहैं॥५२०॥

५२१ मधुसूदनरसः (तृतीयः)

वङ्गेशाभ्रं दिनं मर्द्यं मधुना मधुसूदनः।
पक्वोदुम्बरमध्वाढ्यस्तन्माषोवहुमूत्रजित॥ २३४८॥
रसायनसं., वहुमूत्रमेहे।

भाषा—वङ्ग, पारा, अभ्रक इनकी भस्में समभाग लेकर एकदिन मधुकेसाथ मर्दनकर १—१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १—१ गोली पकेगूलरकेफल और मधुकेसाथ देनेसे यह वहुमूत्रको नष्टकरताहै॥ ५२१॥

५२२ मनोभैरवरसः

त्रिक्षारं पञ्चलवणं मृतताम्रं रसं समम्।
अर्कमूलकषायेण दिनानि त्रीणि मर्दयेत्॥ २३४९॥
संशोष्य वालुकायन्त्रे दिनैकं वज्रमूषया।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य खरपित्तेन भावयेत्॥ २३५०॥
दातव्यं माषमात्रञ्च मधुकस्याऽनुपानतः।
तत्क्षणेन विनश्येत्तु तान्द्रिकः सन्निपातकः॥
मनोभैरवनामाऽयं रसः सर्वत्र पूज्यते॥ २३५१॥
वै चि. (सन्धिके), वा. तन्द्रिके।

भाषा—तीनोंक्षार, पाचोंनमक, ताम्र और पारदभस्म सव समभाग लेकर आककीजड़कीछालके काढेसे तीनदिन मर्दनकर गोलावनाय सुखाकर वज्रमूषामें रख वालुकायन्त्रमें एकदिन पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर गधेकेपित्तसे १ भावना देकर १—१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १—१ गोली मुलहठीकेकाढ़ेकेसाथ देनेसे तन्द्रिक और सन्धिक सन्निपात नष्टहोताहै॥ ५२२॥

५२३ मनःशिलादियोगः (प्रथमः)

मनःशिलायाः फलपूरकस्य
रसैः कपित्थस्य च पिप्पलीनाम्।
क्षौद्रेण चूर्णं मरिचैश्च युक्तं
लिह्यञ्जयेच्छर्दिमुदीर्णवेगाम्॥ २३५२॥
च सं, छर्दिरोगे।

भाषा—शुद्धमैनसिलको विजोरा, कैथ और पीपलके रसोंसे १—१ दिन मर्दनकर १—१ माशेकी मात्रा लेकर २१ मरिचोंके चूर्ण और मधुकेसाथ देनेसें असाध्य वमन वन्दहोताहै॥५२३॥

५२४ मनःशिलादियोगः (द्वितीयः)

चन्दनं तगरं कुष्ठं हरिद्रे द्वे त्वगेव च।
मनःशिला तमालश्च रसः केशर एव च॥ २३५३॥
शार्दूलस्य नखश्चैव सुपिष्टं तण्डुलाम्वुना।
हन्ति सर्वविषाण्येव वज्रिवज्रमिवासुरान्॥ २३५४॥
च स, विषाऽधिकारे।

भाषा—सफेदचन्दन, तगर, कुठ, दोनोंहल्दी, तज, मैनसिल, तमालपत्र, पारदभस्म, केशर और शेरका नाखून सव समभाग लेकर वारीक चूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे चावलकेधोवनकेसाथ १—१ माशा देनेसे असुरोंको इन्द्रके वज्रकीतरह यह समस्त विषोंको दूरकरताहै॥ ५२४॥

५२५ मनःशिलादियोगः (तृतीयः)

मनःशिला व्याघ्रनखसुरसैरम्वुपेषितैः।
पाननस्याञ्जनालेपाः सर्वशोथविषापहाः॥ २३५५॥
च स, विषाऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध मैनसिल, वाघकानख और तुलसी समभाग लेकर पानीमें पीसकर पिलाने, नस्यदेने, अञ्जन और लेपकरनेसे समस्त शोथ और विषोंको यह दूरकरताहै ॥ ५२५ ॥

५२६ मनःशिलादिवटी

मनःशिलाकुष्ठकरञ्जवीज-
शिरीपकाश्मीरभवैः समांशैः ।
विनिर्मिता वृश्चिकसम्भवस्य
संहारिणी स्याद्गुटिका विपस्य ॥ २३५६ ॥

रा.मा., वृश्चिकविषे ।

भाषा—शुद्धमैनसिल, कुठ, करञ्ज और सिरसकेवीज, केशर येसव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पानीसे गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पानीकेसाथ खिलावे और दंश-स्थानपर लगावे तो विच्छूकाविष दूरहो ॥ ५२६ ॥

५२७ मन्थानभैरवरसः (प्रथमः)

तृतीयपञ्चवक्त्रोद्द्रष्टव्यः

र मं., र को, शा सं, र प्र सु, र चि, र र स, र सु, चि.र.भ, र च., चि क, र.क, र.का, र सि, टो., र म मा., रसायन सं, श्वासकासाधिकारे ।

टि०—र का, टङ्कणस्थाने कटुकीनियोजिता । रसायनसङ्ग्रहकारेणाऽस्य नाम पञ्चवक्त्रेति ज्ञानाद्वाऽज्ञानाद्वा स्थापित तदेकान्ततोऽनुचित, वहुग्रन्थेषु मन्थानभैरवेति नाम्ना प्रसिद्धस्य योगस्य नामान्तरकरणाऽयोग्यत्वात् । किञ्च अन्तिमश्लोके रक्तपित्त निहन्त्याशु भास्करस्तिमिर यथेति पाठपरिवर्तनस्याऽपि फल न ज्ञायते दृष्टसामग्र्या रक्तपित्तनाशकत्वस्याऽयोग्यत्वात् । दैववशादुपद्रवभूतरक्तपित्तनाशकत्वेनाऽनुभूय तथा कृत स्यादित्यनुमीयते परन्तु सर्वत्र तथात्वोल्लेखकरणस्याऽयोग्यत्वात् ।

५२८ मन्थानभैरवरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं गन्धकं ताम्रभस्म
सर्वं पिष्ट्वा चाऽथ जम्वीरमध्ये ।
दोलायन्त्रे पाचयेत्तद्दिनैकं
पक्वं पिष्ट्वा चाऽपि जम्वीरमध्यात् ॥२३५७॥
नीत्वा भाव्यं वक्ष्यमाणद्रवैस्त-
त्पिष्ट्वा पिष्ट्वा खल्वमध्ये यथावत् ।
हिङ्गुद्रावैश्चाटरूषेन्द्रनिम्ब-
जातै द्रावैः सर्पनेत्र्या रसैश्च ॥ २३५८ ॥
ब्राह्मीद्रावै मीननेत्रीरसैश्च
द्रावैस्तद्वद्धंसपाद्या रसैश्च ।
हस्तीशुण्डीरुद्रपादीसुवर्ण-
द्रावैस्तद्वद्वातशत्रैः क्रमेण ॥ २३५९ ॥
द्रावैस्तद्वद्वायसीसम्भवैश्च
नित्यं नित्यं चैकमेकं दिनं तत् ।
सर्वं पिष्ट्वा लोहपात्रे विमुद्र्य
पक्त्वा यन्त्रे वालुकायां दिनैकम् ॥ २३६० ॥
विशालिकाचित्रकदीप्यजीर-
कटुत्रयाणां सविषैरजोभिः ।
समं विमिश्रं खलु सन्निपाते
रक्तित्रयं मुद्गजयूषभोक्त्रे ॥ २३६१ ॥

चि क. सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और ताम्रभस्म समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरीकेरसमें गोलावनाय चारतहकपड़ेमें लपेट पकेजम्वीरकेवीचमेंरख उसीके रसमें दोलायन्त्रसे एकदिन पकाकर हींग, अडूसा, इन्द्रजव, नीमकीछाल, सर्पाक्षी, ब्राह्मी, मत्स्याक्षी, हंसराज, हस्तिशुण्डी, रुद्रजटा, धतूरा, एरण्डके पत्ते और मकोयके स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज़ भावना देकर गोलावनाय लोहेकेसम्पुटमें वन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीदेकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें एकदिन पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर इन्द्रायण, चित्रक अजवाइन, जीरा, त्रिकटु, शुद्ध वछनाग, इनसवका समभागका चूर्ण इसरसकी वरावर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती मूंगके यूष और भातकेसाथ देनेसे समस्त सन्निपात नष्टहोतेहैं ॥ ५२८ ॥

५२९ मन्थानभैरवरसः (तृतीयः)

सूतं शुल्वशिलालकाऽम्वरवलिं सङ्कुट्य मिश्रीकृतं,
कुष्ठं नागवलाविदारिकवरीगोकण्टकैरण्डकम् ।
दत्त्वा खल्वतले विमर्दितदृढं वर्षाभुवः स्वे रसे,
वल्लैकैकमिता निवद्धगुटिका वातञ्च पित्तञ्जयेत् ॥

र मं, र, वातपित्तयो. ।

टि०—अत्र द्वितीयपादे विदारि च वरी पाठो दृश्यते तन्न समीचीन' दत्त्वेति क्त्वान्तेन सह सम्वन्धात् । अत उन्मीयते छन्दो भङ्गभिया विदारिकाशब्दस्थाने विदारि इति प्रयुक्तमुन्मीयते, अथवा विदारीति कन्दार्थे विदारिकन्दम् । कवरी इति शब्देन लघुवब्बूलिका ग्राह्या, अथवा वर्वरी अभिप्रेता स्यादिति विद्वद्भिराकलनीयम् ।

भाषा—पारा और ताम्रभस्म, शुद्ध मैनसिल और हरिताल, अम्वर, शुद्धगन्धक येसव समभागलेकर वारीकचूर्णकर कुठ, नागवला, विदारी, ववई अथवा ववूलकीपत्ती, गोखरू, एरण्डकी जड़, इटसिट इनप्रत्येकके रसोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानसे देनेसे वात और पित्तकेरोग नष्टहोतेहैं ॥ ५२९ ॥

५३० मन्थानभैरवरसः (चतुर्थः)

शुद्धं सूतं तथा गन्धं लोहं ताम्रञ्च सीसकम् ।
मरिचं पिप्पलीं विश्वं समभागानि चूर्णयेत् ॥२३६३॥
अर्द्धभागं विषं दद्यान्मर्दयेद्वासरद्वयम् ।
शृङ्गवेराऽनुपानेन दद्याद्गुञ्जाद्वयोन्मितम् ॥ २३६४ ॥
नवज्वरे महाघोरे सन्निपाते सुदारुणे ।
शीतज्वरे दाहपूर्वे गुल्मे शूले त्रिदोषजे ॥
वाञ्छितं भोजनं दद्यात्कुर्याच्चन्दनलेपनम् ॥ २३६५ ॥

र सु, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, ताम्र और नाग-भस्म, मरिच, पीपल, सोंठ, येसव १–१ तोला, शुद्ध बछनाग ६ माशे लेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर अदरखके रससे दोरोज़ मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली नवज्वर, महाघोर सन्निपात, दारुण शीतज्वर, दाहपूर्वज्वर, गुल्म और त्रिदोषजशूल इनसबको यह नष्टकरताहै। त्रिदोषजन्याधिमें इच्छानुसार भोजन देना। दाह अधिकहो तो चन्दनका लेप करना ॥५३०॥

५३१ मन्मथरसः

मुसलीकदलीकन्दवाजिगन्धाकसेरुकैः।
मर्दितं हेमसूताऽभ्रं मूपास्थं पुटपाचितम् ॥ २३६६ ॥
गन्धकेन रसः पिष्टः कल्हाररसमर्दितः।
विपक्वो वालुकायन्त्रे चतुर्यामैः क्रमाऽग्निना ॥२३६७॥
शाल्मलीचूर्णसंयुक्तं वासराण्येकविंशतिम्।
भक्षयित्वा चतुर्गुञ्जं गव्यं क्षीरं पिवेदनु ॥ २३६८ ॥
सर्वाङ्गोद्वर्तनं कुर्यात्सयवैः शाल्मलीरसैः।
अन्वहं मधुराहारः रमेत स्त्रीसहस्रकम् ॥ २३६९ ॥

र को, र र स, वाजीकरणे।

टि०–हेमसूताऽभ्राणा गन्धकरसयोश्च पृथक पाक कृत्वा एकत्र मिश्रय्य मुसलीकदलीकन्दवाजिगन्धाकसेरुककल्हाराणा रसैः क्रमश एकैकदिन मर्दयित्वा व्यवहार कर्तव्य इति रहस्यम्। लेखनशैलीशैथिल्याद द्विर सतयाप्रतिभानाद द्वौ रसौ स्थापितौ, वस्तुतस्त्वेक एव रस। द्वयो सयोगेनैव मूलस्थफलश्रुतिरुदेति न पृथक्त्वेति सहृदयैर्विभावनीयम्।

भाषा—सुवर्ण, पारा और अभ्रकभस्म समभाग लेकर मुसली, केलेका कन्द, असगन्ध, कसेरु इनके रसोंमें १–१ रोज मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ४ पहर क्रमाग्निसे वालुकायन्त्रमें पकावे, फिर समभाग शुद्धगन्धक और पारेकी कज्जलीको सफेदकमलके रससे मर्दनकर गोलावनाय वालुकायन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्वरसकीवरावर इसका मिश्रणकर मुसली, केलेकाकन्द, असगन्ध, कसेरु और सफेदकमलके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ४–४ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली सेमलके मुसलेके ४ माशेचूर्णके साथ खाकर ऊपरसे गायकादूध पीवे। ऐसे ब्रह्मचर्यपूर्वक २१ दिनतक करनेसे वहुतसी स्त्रियोंके साथ रमण करसक्ताहै इसमें मधुराहारका सेवनकरनाचाहिये ॥५३१॥

५३२ मन्मथाभ्ररसः

रसगन्धकयो र्ग्राह्यं पलमेकं सुशोधितम्।
अभ्रं निश्चन्द्रकं दद्यात्पलार्द्धञ्च विचक्षणः ॥ २३७० ॥
कर्पूरं तोलकं दद्याद्वङ्गञ्च कोलसम्मितम्।
ताम्रं तोलार्द्धकं तत्र निःशेष मारितं पुनः ॥ २३७१ ॥
लौहकर्पं सुजीर्णञ्च वृद्धदारकजीरकम्।
विदारीं शतमूलीञ्चेक्षुरवीजं वलान्तथा ॥ २३७२ ॥
मर्कट्यतिविषाञ्चैव जातीकोषफले तथा।
लवङ्गं विजयावीजं श्वेतसर्जं यमानिकाम् ॥ २३७३ ॥
शाणभागान् गृहीत्वैतानेकीकृत्यैव पेषयेत्।
गुञ्जाद्वयन्तु कर्तव्यं कोष्णं क्षीरं पिवेदनु ॥ २३७४ ॥
गृहे यस्य शतं नार्यो विद्यन्तेऽतिव्यवायिनः।
न तस्य लिङ्गशैथिल्यमौषधस्याऽस्यसेवनात ॥२३७५॥
न च शुक्रं क्षयं याति न वलं ह्रासमाव्रजेत।
कामरूपी भवेन्नित्यं वृद्धः षोडशवर्षवत् ॥ २३७६ ॥
रसः श्रीमन्मथाऽभ्रोऽयं महेशेन प्रकाशितः।
अस्य भक्षणमात्रेण काष्ठं जीर्यति तत्क्षणात ॥
नाशयेद् ध्वजभङ्गादीन् रोगान्योगकृतानपि ॥२३७७॥

भै र., र सु, र.सं, रसायने।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ पल, निश्चन्द्र अभ्रकभस्म २ कर्ष, शुद्धराकपूर १ तोला, वङ्गभस्म ४ माशे, ताम्रभस्म ६ माशे, लोहभस्म १ कर्ष, विधारा, सफेदजीरा, क्षीरविदारी, काष्ठविदारी, शतावर, तालमखाना, वला, केवाच, अतीस, जावित्री, जायफल, लौंग, गाजेकेवीज, सफेदराल, अजवाइन सव ४–४ माशे लेकर सवका वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ रोज़ मर्दनकर रखछोड़े। अथवा ऊपरकहीहुई दवाओंके अङ्गस्वरससे भावना देकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गरमदूधकेसाथ सेवनकरनेसे अव्याहतवेगहोकर वहुतसी स्त्रियोंका सङ्गकरताहुआभी शुक्र और वलकी क्षीणताको प्राप्त नहीं होताहै। वृद्ध आदमी भी १६ वर्षके सदृश दिखाई देताहै। अग्नि इतना प्रदीप्तहोताहै कि काष्ठको भी हजम करसक्ताहै टोटकादिकसे कियेहुए ध्वजभङ्ग वगैरहको यह नष्टकरताहै ५३२

५३३ मलदारणगुटिका

सपारदं गन्धकलोहचूर्णं
नेपालताम्रं त्रिकटोः समेतम्।
अफेनकं चित्रकवत्सनाभं
सटङ्कणाऽङ्कोलयुतं समानम् ॥ २३७८ ॥
आकल्लकं भृङ्गरसेन वज्र्या
देवालिकाभावनया प्रसिद्धः।
कासे ज्वरेऽजीर्णविसूचिकायां
श्वासोदरे चैवमरोचके च ॥
जीर्णज्वरौघे मलशोषिवृन्दे
मूर्च्छायवालग्रहसन्निपाते ॥ २३७९ ॥

र (मा) ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोहभस्म, शुद्धजमालगोटा, ताम्रभस्म, त्रिकटु, अफीम, चित्रकमूल, वछनाग, भुनासुहागा, अङ्कोलकीजड़ और अकलकरा समभाग लेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भंगरा, डंडाथूहर और नागकेसरके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंकी १–१ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे कास, ज्वर,

अजीर्ण, विसूचिका, श्वास, उदररोग, अरोचक, जीर्णज्वर, मलशोष, मूर्च्छा, बालग्रह और सन्निपात नष्टहोतेहैं ॥ ५३३ ॥

५३४ मलदारणसुन्दररसः

आमोदपारदखरद्युतिटङ्कणानां
भागाः समं द्विगुणमेलितगोलकानाम् ।
गीर्वाणदालिरसभावनया निबद्धः
सिद्धो रसो हि मलदारणसुन्दरोऽयम् २३८०

र (मा.) विड्विबन्धे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, ताम्रभस्म, शुद्धसुहागा सब समभाग लेकर सबसे दूने शुद्धजमालगोटे डालकर ४ पहर घोटकर बन्दालके रससे एकदिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे शक्ति अथवा कार्यानुसार १ से ३ गोलीतक ठंढे पानीके साथ देनेसे बंधाहुआ मल द्रुतहोकर निकल जाताहै और मलजनित जितनी शिकायतें हैं वे सब निवृत्त होजातीहैं ॥ ५३४ ॥

५३५ मल्लचूर्णम्

सोमक्षारस्य चूर्णं वै कार्पासान्तरसंस्थितम् ।
धारयेद्गुदतोऽदूरे त्रिदिनं तच्च भेषजम् ॥ २३८१ ॥
पक्वानि स्फोटयित्वाऽऽशु तथाऽपक्वानि नाशयेत् ।
न पीडा जायते तत्र न व्यथाऽपि भवेद्गुदे ॥
न रोहन्ति पुनर्देहे गुदपार्श्ववलित्रये ॥ २३८२ ॥

र का., अर्शोऽधिकारे ।

भाषा—सफेदसोमलका बारीकचूर्णकरके कपासके बीचमें लपेटकर गुदाके भीतर मस्सोंके पास ३ दिनतक रखनेसे पके-हुए फटकर गिरपड़तेहैं नये उत्पन्न नहींहोते और किसीतरहकी विशेष पीडा भी नहींहोती ॥ ५३५ ॥

५३६ मल्लपञ्चरत्नरसः

स्फाटिको धवलश्चैव रक्ताभः कृष्णपीतको ।
एतान् पञ्चाखुपाषाणान् गृह्णीयात्समभागिकान् २३८३
खल्वे किञ्चिद्विचूर्ण्याऽथ क्षिपेड्डमरुयन्त्रके ।
रम्भाकन्दरसश्चैव प्रतिकर्षं चतुर्गुणम् ॥ २३८४ ॥
दापयेत्तत्समश्चैव लिङ्गिनीस्वरसं तथा ।
सन्धिलेपं ततः कृत्वा चुल्योपरि निधापयेत् ॥२३८५॥
मन्दाग्नौ पाचयेद्यामचतुष्टयविधानतः ।
मूर्ध्नि दत्त्वाऽऽर्द्रवस्त्रन्तु स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥२३८६॥
सर्ववातविकारेषु वातश्लेष्मगदे तथा ।
श्वासे कासेऽथ विषमज्वरे चैव त्रिदोषजे ॥२३८७॥
देयं गुञ्जार्द्धगुञ्जं वा पथ्यं तक्रौदनं हितम् ।
घृतशर्करया देयं सर्ववातगदेषु च ।
पेयं शीतोदकञ्चात्र पञ्चरत्नरसोत्तमे ॥ २३८८ ॥

र. चं, वातरोगे ।

भाषा—स्फटिकके सदृश चमकदार, चूनेके सदृश चमकर-हित, लाल, काला और पीला इन पांचतरहके संखियोंको सम भागमें लेकर खरलमें छोटी २ कंकड़ियाकर एकघड़ेमें डालकर सोम-लसे चौगुना केलेकेकन्दका रस और उतनाही शिवलिङ्गीकारस डालकर दोनों घड़ोंके मुंहपर कपड़मिट्टीसे दृढ़ संन्धि बन्दकरदे । थोडा सूखजानेपर चूल्हेपर चढ़ाय ४ पहरकी आंचदेवे । कभी २ ऊपरके घड़ेपर ४ तह भीगाहुआ कपड़ा रखदे । चार-पहरकेबाद कोयलोपर रखकर लकड़ी लगाना बन्द करदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर ऊपरके घड़ेमें लगेहुए फूल मिलेंगे । इन्हें धीरेसे उतारकर रखछोड़े । इनमेंसे आधी अथवा १ रत्ती घी और शक्करके साथ मिलाकर देनेसे समस्त वातविकार नष्टहोतेहै । प्यासलगनेपर ठंढा पानीपीवें । पथ्यमें छाछभात देना चाहिये ।

विशेष सूचना—यद्यपि मूलमें एकबारही उड़ानेको लिखाहै परन्तु इसतरह बारम्बारकरे जबतककि समस्त सोमल अध स्थायी न होजाय । यह १० या १२ आंचमें बिल्कुल अध - स्थायी होजायगा उससमय इसकी १ रत्तीकी कमसेकम दश मात्राएं करनी चाहियें । अध स्थायी करनेसे इसमें कचेकी अपेक्षा अधिक तीक्ष्णता आजातीहै ॥ ५३६ ॥

५३७ मल्लप्रयोगः

शङ्खः पूरितकुक्षिः शतमल्लयुजा दिनेशदुग्धेन ।
दन्तावलपुटसिद्धः श्वासे कासे ज्वरे प्रसिद्धोऽयम् ॥

सि. भे. म, श्वासाऽधिकारे ।

भाषा—साफमोटेशङ्खमें ५ तोले संखिया पीसकर डालदे और आककेदूधसे भरके आककेही पत्तोंसे मुंहको ढककर मुलतानीमिट्टीकेसाथ कुटीहुई रूईसे मजबूतकपड़मिट्टी करके हंडीमें रखदे । हंडीपर साधारणकपड़मिट्टी देकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती उचितानुपानके साथ देनेसे श्वास, कास और शीतज्वरको यह नष्टकरताहै ॥ ५३७ ॥

५३८ मल्लसिन्दूररसः (प्रथमः)

नवकर्षमितः सूतो रसचन्द्रश्च तत्समः ।
चतुःकर्षमितो मल्लः सार्द्धपञ्चाक्षसम्मितः ॥ २३९० ॥
गन्धकश्चेति तत्सर्वं काचकूप्यां निधापयेत् ।
क्रमवृद्धाग्निना सम्यग्वालुकायन्त्रगं पचेत् ॥ २३९१ ॥
वह्निं षोडशयामञ्च दत्त्वा शीतं समुद्धरेत् ।
रसोऽयं मल्लसिन्दूरः सर्ववातविकारनुत् ॥
युक्तानुपानतो हन्यात्सन्निपातादिकान्गदान् ॥२३९२॥

रसायनसं , सि भे म , वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और रसकपूर ९-९ कर्ष, सफेदसोमल ४ कर्ष, शुद्धगन्धक ५॥ कर्ष लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर ६-७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें भरकर वालुकायन्त्रमें मन्द, मध्य और खर इसप्रकारसे १६ पहर अग्निदेवे । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर ऊर्द्धनलीमें लगेहुए मल्लसिन्दूरको निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती उचितानुपानके साथ देनेसे सन्निपात, श्वास, कास और तमाम वातविकार नष्टहोतेहै ५३८

५३९ मल्लसिन्दूररसः (मल्लचन्द्रोदयः) (द्वितीयः)

नैम्बूकनीरेण दिनत्रयन्तु
श्वेतादिरूपांश्चतुरोऽपि मल्लान् ।
यथोत्तरं तूग्रबलान्मिथस्तान्
समांशसूतेन विमर्दयेत ॥ २३९३ ॥
ताभ्यां समानेन सुगन्धकेन
कृत्वा मसीं कूपिकया पचेत ।
सर्वार्थकर्या खलु कोष्ठिकायां
यामत्रयं शीतलमुद्धरेत ॥ २३९४ ॥
मल्लादिचन्द्रोदयमामनन्ति
सर्वौषधेभ्योऽपि प्रधानवीर्यम ।
विसूचिकासन्निपतत्त्रिदोषान्
व्याधीनपाकर्तुमनन्यशक्तम ॥ २३९५ ॥

रसायनसार, सन्निपाते ।

भाषा—श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण सोमल समभाग लेकर सबकी वरावर पारा डालकर यहातक मर्दनकरे कि पारा मिलजाय फिर इसकी वरावर शुद्ध गन्धक डालकर वालुकायन्त्रमें रख सर्वार्थकरी भट्टीमें ३ पहरकी अग्निदेकर स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १—१ रत्ती उचितानुपानके साथ देनेसे हैज़ा, सन्निपात और त्रिदोषजव्याधिया नष्टहोतीहैं ५३९

५४० मल्लसिन्दूररसः (मल्लचन्द्रोदयः) (तृतीयः)

स्नुहीपयस्स्वर्कपयस्सु मल्लं
त्रिर्भावितं मर्दनशुष्करूपम् ।
बुभुक्षुसूतद्विगुणेन शुद्ध-
गन्धेन घृष्ट्वा च मसिं विदध्यात् ॥ २३९६ ॥
तां कूपिकास्थां सिकताऽऽख्ययन्त्रे
यथा वहिर्धूमविधि प्रवोद्धा ।
पिपक्षुरह्नोऽर्द्धमतो ददीत
शीशीमुखे मृत्कवलीं सुरुद्धाम् ॥ २३९७ ॥
अर्द्धद्वितीयं दिनमग्नितापं
वर्व्वूरकाष्ठस्य ददीत तीव्रम् ।
कृत्वा स्वयं शीतमथोर्द्ध्वशीशी-
गलस्थचन्द्रोदयमाददीत ॥ २३९८ ॥
कर्पूरजातीफलदेवपुष्प-
कस्तूरिकानक्रमदैलिकाभिः ।
लिह्यादिमं मासमशक्तशुक्र
आरोग्यहेतो मधुना मनुष्यः ॥ २३९९ ॥

रसायनसार, सर्वरोगे ।

भाषा—डडाथूहर और आकके दूधमें ३ रोज सोमलको घोटकर सुखादेवे। इसकी वरावर बुभुक्षितपारा और दूना शुद्धगन्धक डालकर नीलवर्णकज्जलीकर आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख आंचदे। दोपहरतक शीशीका मुह खुला रक्खे धुएको वाहरजानेदे। जवगन्धक जलजाय तव शीशीका मुहवन्दकर डेढदिनकी वव्वूलकेकाष्ठसे तीक्ष्ण अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर युक्तिसे शीशीको फोटकर गलेमें लगेहुए सिन्दूरको निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १—१ रत्ती शुद्धकपूर, जायफल, लौंग, कस्तूरी, अम्बर और इलायचीके साथ मिलाकर मधुसे एकमहीनेतक सेवनकरनेसे तमामरोगोंसे मुक्तहोताहै ५४०

५४१ मल्लसिन्दूररसः (मल्लचन्द्रोदयः) (चतुर्थः)

मनःशिलालाऽसितप्रस्तराणां
मन्दारदुग्धेन सुभावितानाम ।
दिनानि चत्वारि विधाय गोलं
छायासु शुष्कं च पयोभिरार्कैः ॥ २४०० ॥
समन्ततो द्व्यङ्गुलमुच्छ्रयं त-
च्चाऽऽच्छाद्य शुष्कं निखनेत्पृथिव्याम ।
त्रिंशद्दिनान्येव ततो बुभुक्षु-
सूतेन तुल्येन विमर्दयेत ॥ २४०१ ॥
ताभ्यां समानेन च गन्धकेन
दुग्धाज्यशुद्धेन मसिं विदध्यात ।
चन्द्रोदयभ्राष्ट्रिकया पचेत
दिनानि चत्वार्यवधानचेताः ॥ २४०२ ॥
घटीश्चतस्रोऽनलके तु गत्या
रुद्धोग्रवेगं ग्रसिताग्निकेतुम् ।
स्वयञ्च शीते सिकताख्ययन्त्रे
कूपीगलस्थं रसमाहरेत ॥ २४०३ ॥
अत्यन्तमुग्रं यदि तं विधित्सु-
र्नलीडमर्वाख्यविधे तु पूर्वम ।
षट्सप्तविंशाधिकजीर्णगन्धं
सूतं नियुञ्ज्यादिह कर्मसिद्धौ ॥ २४०४ ॥

रसायनसार, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध मैनसिल, हरिताल और कालासोमल समभाग लेकर ४ दिनतक आकके दूधसे घोटकर गोला वनाय छायामें सुखाकर आकके दूधमें डुवाकर रखदे। दूध सूखजानेपर फिर डुवादे। इसतरह जवतक गोलेके चारोंतरफ दो २ अङ्गुल दूध न चढ़जाय तवतक करतारहे। फिर उसपर कपड़मिट्टी लपेटकर ३० दिनतक ज़मीनमें गाड़दे। इकत्तीसवें दिन निकालकर सुवर्णग्रासदिये हुए बुभुक्षित पारेको समभागमें मिलावे और सवकी वरावर शुद्धगन्धक डालकर नीलवर्णकज्जलीकर आतशीशीशीमें डालकर वालुकायन्त्रमें चढ़ाकर ४ घड़ीतक शीशीका मुह खुलारक्खे। वादमें डाटलगाकर कपड़मिट्टी करदे और ४ रोज़तक अग्निदेकर पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसे अत्यन्त उग्रवीर्य वनानाहो तो नलीडमरुयन्त्रमें ६, ७, २० अथवा जहातक इच्छाहो उतनेगुण गन्धकजारणकर पारा डालनाचाहिये तो वैसीही उग्रता आजायगी ॥ ५४१ ॥

५४२ मल्लादिवटी (प्रथमा)

शतमल्लं पीतवर्णं पञ्चशाणमितं तथा ।
दशपञ्चमितं शाणं खादिरं तत्र निक्षिपेत् ॥ २४०५ ॥

यमयोः कज्जलीं कृत्वा नागवल्लीरसेन च ।
पिष्ट्वा कुर्याच्च वटिकां गुञ्जिकाद्वयमानतः ॥ २४०६ ॥
सायं प्रातश्च भोक्तव्या मासैकं पर्णखण्डकैः ।
गोदुग्धं केवलं पथ्यं फिरङ्गञ्चोद्धतं जयेत् ॥ २४०७ ॥

र र.कौ., फिरङ्गे ।

भाषा—पीतवर्ण शुद्धसोमल १। कर्ष, कत्था ४॥ कर्ष डालकर कज्जलीकर पानकेरससे १–२ रोज़ मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर सुवहशाम पानमें खानेसे १ महीनेमें बढ़ाहुआ फिरङ्गरोग दूरहोताहै। इसमें गोदुग्धके सिवाय और कुछ खानेको न देना ॥ ५४२ ॥

५४३ मल्लादिवटी (द्वितीया)

सितं सोमलं तालकञ्चाऽपि तुल्यं
त्र्यहङ्कारवेल्या रसेन प्रमर्द्य ।
वटी क्षुद्रमुद्गप्रमाणा निहन्या-
ज्ज्वरांश्शीतपूर्वान् क्षणेनैव सर्वान् ॥२४०८॥

र.प्र, वै.द, वा, ज्वराऽधिकारे। वाहटे शिलाक्षारो द्विगुणितो योजित. नाम च शीतज्वरनिवारणेति स्थापितम्।

भाषा—शुद्ध सफेद सोमल और हरिताल समभाग लेकर दोनोंका अत्यन्तसूक्ष्मचूर्णकर तीनरोज़ करेलेके रसमें मर्दनकर छोटे मूंग बरावर गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली ज्वर आनेसे एकघण्टा पहिले तुलसीकेपत्ते अथवा भाग १ रत्ती, भटकटैया १॥ माशा और धतूरेका आधापत्ता इसकेसाथ देकर २,३ घंटे पानी पीनेको न देनेसे रोज़का, तृतीयक, चातुर्थिक और तमाम विषमज्वर नष्टहोतेहै। टि०—यद्यपि मूलमें करेलेका रस बताया हुआहै परन्तु उसकी जगह ककोड़ेका रस दिया जायतो अधिक काम करताहै यह हमारा निजी अनुभवहै। बिगड़ेहुए प्रतिश्यायमें १–१ गोली गायके धारोष्ण दूधसे देनेसे बहुत अल्पसमयमें तमाम दोषोंसे निर्मुक्त होजाताहै। परन्तु पहिले मलशुद्धि करलेना और ताजे प्रतिश्यायमें न देना उससमय उष्ण औषध देनेसे कफशुष्कहोनेकेकारण आधासीसी अथवा अर्धावभेदमे आदमी पीडितहोताहै। कदाचित् भूलसे ऐसा होगयाहो तो मुलहठी, बीदाना, गाजुवां, बनफ्सा, रेशाखतमी, द्राक्ष, और लसोड़ा १–१ तोलेलेकर जवकुटकर इसकी ७ पुडिया बनाना। एकपुड़िया १० तोले पानीमें रातको भिगोदेना सुवहमें थोड़ा मसलकर छानकर शक्कर डालकर पिलादेना और दूसरी पुड़िया भिगोदेना उसे सायंकालमें पिलाना। ऐसे ७ पुड़ियोंके समाप्तकरनेसे नवीन प्रतिश्यायमें उष्णोपचारसे पैदाहुई तमामशिकायतें दूर होजातीहै उसी हिमको प्रभापात (लूलगना) मेंभी देनेसे अद्भुत गुण होताहै ॥ किसीको स्वाभाविक श्वास कास हो और शीतोपचार प्रतिकूल हो तो इसका क्वाथ करके देना ॥ ५४३ ॥

५४४ मल्लादिवटी (तृतीया)

गायत्रीशौ बलिर्मल्लः पृथग्वल्लचतुष्टयम्।
समुद्रान्तारसैः कार्या गुडाः सर्षपसोदरा ॥२४०९॥
सन्धिवातगलत्कुष्ठदुष्टनाडीव्रणज्वरान् ।
फिरङ्गशोथपवनकफमान्द्योदरापहाः ॥ २४१० ॥
कासश्वसनहिक्कादीन्निघ्नन्त्येव न संशयः ।
अनुपानं जलं शीतं तैलाम्लादि विवर्जयेत् ॥२४११॥

सि भे. म., वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—कत्था, शुद्धपारा, गन्धक और सोमल समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जवासके रससे १–२ रोज़ घोटकर सरसोंके बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली ठंढेजलकेसाथ देनेसे सन्धिवात, गलितकुष्ठ, दुष्टनाडीव्रण, घावसे उत्पन्नहुआ ज्वर, उपदंश, सूजन, वायु, कफ, मन्दाग्नि, जलोदर, कास, श्वास, हिचकी वगैरहको यह नष्टकरतीहै इसके प्रयोगमें तेल, खटाई वगैरह न खाय ॥ ५४४॥

५४५ मसूरिकारी रसः (मूर्च्छितरसः)

विल्वपत्ररसेनैव मूर्च्छितः पारदेश्वरः ।
हिलमोचीरसेनैव पीतो मधुसमायुतः ।
मसूरीं सर्वजां हन्ति ह्यस्थिजां सर्वदेहजाम् ॥२४१२॥

र का, मसूरिकाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारेको वेलपत्रके रससे यहातक मर्दनकरे कि मूर्च्छित होजाय। इसमेंसे १–१ रत्ती वथुआ अथवा हुरहुरके रस और मधुके साथ देनेसे अस्थिपर्यन्त धातुओंमें व्याप्त मसूरिका को यह नष्टकरताहै ॥ ५४५ ॥

५४६ महाकल्पः

रसगन्धकयो र्भागं गन्धमूलीरसं तथा ।
तत्समं मर्दयेत्प्राज्ञो भाण्डे यत्नेन धारयेत् ॥ २४१३ ॥
भूमौ निधापयेन्मासं ततः पश्चात्समुद्धरेत् ।
गुटिका मुद्गमानेन भक्षणीया दिनेदिने ॥
षण्मण्डलानि सेवेत महाकल्पो भवेद्ध्रुवम् ॥ २४१४ ॥

र ज्ञा, रसायने।

टि०—अत्र गन्धमूलीत्यप्रसिद्धा ग्रन्थकारस्य का वा अभिप्रेतेति न निश्चयसाधनम्, टीकायामुत्पलशारिवागन्धगट्योरुल्लेखस्त्वानुमानिक कृतोऽस्ति ।

भाषा—समभाग शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर अनन्तमूल अथवा कपूरकाचरीके रससे दोतीनरोज मर्दनकर किसीपात्रमेंडालकर एकहाथ गहरे गड्ढेमें दवादे। एकमहीनेकेवाद निकालकर मूंगवरावर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली दूधवगैरहकेसाथ ६ मण्डल (२९४ दिन) तक खानेसे वलीपलितादिकसे निवृत्तहोकर युवावस्थाको प्राप्तहोताहै ॥५४६॥

५४७ महागन्धकः

रसगन्धकयोः कर्षं ग्राह्यमेकं सुशोधितम् ।
ततः कज्जलिकां कृत्वा मृदुपाकेन साधयेत् ॥२४१५॥
जातीफलं तथा कोषं लवङ्गाऽरिष्टपत्रके ।
सिन्धुवारदलञ्चैवमेलावीजं तथैव च ॥ २४१६ ॥

एषाञ्च कर्षमात्रेण तोयेनाऽथ विमर्दयेत् ।
मुक्तागृहे पुनः स्थाप्यं पुटपाकेन साधयेत् ॥ २४१७ ॥
घनपङ्कं वहिर्लिप्त्वा पुटमध्ये निधापयेत् ।
गुञ्जाषट्कप्रमाणेन प्रत्यहं भक्षयेन्नरः ॥ २४१८ ॥
एतत्प्रोक्तं कुमाराणां रक्षणाय महौषधम् ।
ज्वरघ्नं दीपनञ्चैव वलवर्णप्रसाधनम् ॥ २४१९ ॥
दुर्वारं ग्रहणीरोगं जयत्येव प्रवाहिकाम् ।
सूतिकाञ्च जयेदेतद्रक्तार्शो रक्तसम्भवम् ॥ २४२० ॥
पिशाचा दानवा दैत्या वालानां विघ्नकारकाः ।
यत्रौषधवरस्तिष्ठेत्तत्र सीमां न यान्ति ते ॥ २४२१ ॥
वालानां गदयुक्तानां स्त्रीणाञ्चैव विशेषतः ।
महागन्धकमेतद्धि सर्वव्याधिनिषूदनम् ॥ २४२२ ॥

र. स , भै र., र. सु , र च , अतिसारे ।

टि०—अय रसो वकुलत्वगर्धकर्षेण सह मापोन्मित्या दत्तो रक्तप्रदरेऽतिकार्यकारी भवति, साय मध्याह्ने पूर्वाह्णे चेति प्रयोग कर्तव्य । द्वित्रदिनाऽभ्यन्तरे एव महाप्रवाह रुणद्धीति सुधीभिराकलनीयम् ।

भाषा—१–१ कर्ष पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर मृदुपाककी पर्पटी वनाले फिर जायफल, जावित्री, लौंग, नीम तथा सभालूकेपत्ते, इलायची इनप्रत्येकक‍ाचूर्ण १–१ तोला लेकर पर्पटी मिलाय पानीसे १–२ दिन मर्दनकर गोलावनाय मोतीकीसीपमें भरके सम्पुटकर दो २ अङ्गुल कालीमिट्टी लगाकर जलतेहुए कण्डोंमें रखदे । जव गोला लालहोजाय तव निकालकर रखले । स्वाङ्गशीतलहोनेपर ६–६ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे ज्वर, झड़ी (प्रवाहिका), दुर्निवार ग्रहणी, सूतिकारोग, रक्तार्श इत्यादि समस्त व्याधियोंको दूरकरताहै । और वच्चोंके तमामरोगोंको नष्टकरताहै । जिसघरमें यह औषध रहताहै वहां वालग्रहोंका तथा अन्य भूतादिकोंका वच्चोंपर असर नहींहोता इसीतरह स्त्रियोंके प्रदरादि समस्तव्याधियोंमें यह अत्यन्त उपकारीहै ॥ ५४७ ॥

५४८ महाज्वालमरीचिप्रयोगः

मरिचानि समानीय महिषीपित्तमध्यतः ।
शोषयित्वा ततः पश्चाद्भावयित्वा समुद्धरेत् ॥२४२३॥
अश्वगन्धावत्सनाभरसैर्दद्यात्पुटं वुधः ।
टङ्कणं वारिणा पिष्ट्वा ततो दद्यात्तथाऽऽतपे ॥२४२४॥
हरितालं तथा दत्त्वा दिनान्ते शोपयेद्दृशम् ।
गन्धकञ्च तथा देयं चित्रमूलं तथैव च ॥ २४२५ ॥
जयपालं तथा दत्त्वा धुत्तूरस्य फलं तथा ।
भृङ्गीरसं तथा दत्त्वा शोपयेदातपे सुधीः ॥ २४२६ ॥
मधुनाऽपि तथा शोष्यं सर्वं ग्रामचतुष्टयम् ।
शोपयेन्महिषीपित्तमध्ये सप्ताहमादरात् ॥ २४२७ ॥
चतुर्दिनं वराहस्य मत्स्यपित्ते दिनद्वयम् ।
एवं सुविधिना कृत्वा शुष्कीभूतानि कारयेत् ॥२४२८॥
एकैकं दापयेद्धीमान् रोगाणां तत्त्वविद्भिपक् ।
असाध्ये मानवे दद्यात्सन्निपातसमाकुले ॥ २४२९ ॥
महाज्वरे शैत्यशून्ये महीभूते च तिष्ठति ।
अरिष्टसन्निपाते च जलोदरमहारुजि ॥ २४३० ॥
पादे पादभवे शोफे महाहिमसमागमे ।
दिगम्वरे तथाकाशवासिनेऽपि प्रशस्यते ॥ २४३१ ॥
जले प्रपतिते वाऽथ कुशासनमहीगते ।
रोगिणां रोगशान्तिः स्यादेकैकस्य च भक्षणात् २४३२
कालश्च वञ्चयत्येषः कुटिलेषु न दापयेत् ।
इति प्रकाशितो योगो ज्ञानज्योतिर्यतीश्वरैः ॥२४३३॥

र. ज्ञा , सन्निपाते।

भाषा—धोईहुई मिर्चे लेकर भैंसके पित्तमें डालकर सुखाले। इसीतरह असगन्ध और वछनागके क्वाथसे १–१ पुट देकर इसकी वरावर सुहागेको पानीमें घोलकर एक पुट देवे । फिर मिर्चोंसे दशवांभाग पानीमें पीसेहुए हरिताल और गन्धककी १–१ भावना देकर चित्रकमूल, जमालगोटा, धतूरेकेफल, भंगरा, मधु इनप्रत्येककी १–१ रोज़ भावना देकर सुखावे । इसके वाद भैंसके पित्तेकी ७ रोज, सूअरके पित्तेकी ४ रोज़ और मछलीके पित्तेकी २ रोज भावनाए देकर अच्छीतरह सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ मरिच प्रमाण असाध्य सन्निपात, महाज्वर, सर्वाङ्गशीतता, वेहोशी, अरिष्टयुक्तसन्निपात, जलोदर, पादरोग, पादशोथ येसव नष्टहोतेहैं । अत्यन्तशीत हिमालय आदि प्रदेश अथवा ऋतुमें, जलमें डूवेहुएको तथा मरणासन्नको देनेसे तत्काल सञ्ज्ञाहोतीहै । यह कालको वञ्चित करताहै इसे कुटिल आदमियों को न वताना ॥ ५४८ ॥

५४९ महावलविधानाभ्रम्

गगनं कज्जलसदृशं स्निग्धमशेषदोषरहितञ्च ।
वहुशोदूर्वाऽलम्वुपमूलै र्युक्तं वस्त्रे निवद्धञ्च ॥ २४३४॥
दत्त्वा सलिलं तावत्करेण घर्षेञ्च पङ्कतां नीतम् ।
निपुणं गृहीतमुदकादञ्जनपुञ्जघनीभूतम् ॥ २४३५ ॥
द्वित्रिवारपरिपुटितं रवितरुमथिताऽल्पदुग्धकादिरसे।
चूर्णितमिदं शिलायां कुडवमेकं तदादाय ॥ २४३६ ॥
प्रथमं चतुरष्टगुणे गोमूत्रे वा पचेन्मृदुज्वालम् ।
निपुणोवन्हिं दत्त्वा समुद्रयामं तथा दुग्धे ॥ २४३७ ॥
श्लक्ष्णं विडङ्गचूर्णं गगनार्धं त्रिकटुसम्भवञ्च रजः ।
त्रिकटुसमं त्रिफलोत्थं पृथक् तदर्द्धञ्च वन्ध्याया. २४३८
नतकरिकर्णी वृद्धरक्तानलनीलिकानाञ्च ।
मूलस्य तालमूल्या रक्ताश्वमारहपुषाणाम् ॥ २४३९ ॥
पत्रकसुवाजिगन्धाशतावरीमूलसम्भवञ्चाऽपि ।
अमलिनपुनर्नवार्कतर्करीवलामूलानाम् ॥ २४४० ॥
चूर्णं कण्टकपर्णीभवं साऽमृतभृङ्गराजस्य ।
त्रिवृताख्यायास्त्रिभुवनविजयस्य केशराजस्य २४४१
सुविदितपाकं शीतं गगनचूर्णञ्च भाजने सर्वम् ।
समधुसितैरनुरूपैः सम्मिश्र्यसर्पिपोऽष्टविल्वेन २४४२

पिष्टं तदनु शिलायां सुस्निग्धभाण्डे निधाय सुविधिज्ञः
सोत्साहः सुविनीतो गृह्णीयाद्वराऽभ्रकं कल्पम् २४४३
मृदुकृतवमनविरेकं वैद्यप्रद्दिष्टेन सात्म्ययोगेन ।
याति शरीरविशुद्धिं दीपितदेहानलो नीरुक् २४४४
पूजितगुरुदेवाऽनलवितिथिसिद्धसाधुमान्यजनः ।
स्निग्धौदनपरितृप्तः दीनग्लानिसहितः सत्कृत्यः२४४५
स्थिरसङ्कल्पविनीतः प्रशान्तसर्वेन्द्रियः सर्वात्मा च ।
परिकृतपरोपकारः परिहितवासाः समुज्झितक्रोधः ॥
श्रद्धावानश्नीयाद्भेषजराजस्य माषकानष्टौ ।
पुण्ये दिवसे कृत्वा गुटिकां तथा भक्षयेत्प्रातः॥२४४७॥
अनुपानं शीतजलं सततमन्नातिभोजनं नाऽत्र ।
हिताहिताद्यं सुखदं शाकाम्लदधिपरिहीणञ्च २४४८
अतितिक्तकटुकषायक्षाराऽभिष्यन्दितीक्ष्णरूक्षाणि ।
वातलविदाहिदुर्जरगुरूण्यसेव्यानि वस्तूनि ॥२४४९॥
पानं दूराध्ययनं रतिमतिशीतलं दिवास्वप्नम् ।
प्रत्युपदेशं द्वेषं वातातपजागरणोद्धृतान् ॥ २४५० ॥
चिन्ताशोकविषादव्यायाममदकरोन्मादकरान् ।
पिशितञ्चानूपदेशं शीतपानं वर्जयेदनिशम् ॥ २४५१ ॥
कुक्करमयूरकलावकतित्तिरिशशकाजमेषसारङ्गम् ।
जाङ्गलपिशितं श्यामं माषं पटोलञ्च वार्ताकम् २४५२
भुञ्जीत पिशितरसं सैन्धवं सघृतकं सधान्याकम् ।
स्वस्तिकषष्टिकलोहितशालीनतिनिस्तुषान्मुद्गान् ॥
क्रमुकफलानि द्राक्षा पक्वाम्रफलानि चैव शस्तानि ।
स्वादु च परिणतिमधुरं केलिकरञ्चाऽपि वासवं तोयम्
प्रतिसप्ताहक्रमेतत्क्रमाद्वा प्रवर्द्धयेद्धीमान् ।
युक्तिविचाराऽभिज्ञो भेषजस्य पर्यन्तं भवति ॥२४५५॥
रसायनराजं कुर्वन्मनुजो मनोऽभिलाषं प्राप्नोति ।
नागार्जुनोपदिष्टं षण्मासोपविहितविधिना च॥२४५६॥
अपगतसकलव्याधि र्वलिपलितवर्जितोऽतिमहातेजाः
शूरः प्राज्ञो वाग्मी त्रिवर्गफलभाजनो दक्षः ॥२४५७॥
मदमत्तकुञ्जरवलः सौकुमार्योत्साहसम्पन्नः ।
षोडशवर्षवयाः स्याद् वहुप्रसूतः सुचिरजीवनोपेतः ॥
जीवेद्वर्षसहस्रं सतताभ्यासाच्च सर्वसंपन्नः ।
चन्द्रकमनीयकान्तिः पवनवलो धामसमधामा २४५९
यकृदतिसारप्लीहाऽपस्मारसिध्मयक्ष्मशोषान् ।
कासश्वासविसर्पग्रहणीगुल्माश्मरीशोथान् ॥२४६०॥
प्रदरजलोदरभस्मकवमिपामाश्लीपदप्रमेहांश्च ।
विवन्धभगन्दरकुष्ठविषमज्वरपाण्डुरोगांश्च ॥२४६१॥
श्रुतिवदनोदरलोचनमस्तकरोगान्समूत्रकृच्छ्रांश्च ॥
आशु रसायनराजः शमयति युक्त्या प्रयुक्तस्तु २४६२

सामं समीरमुपहन्ति कफं सपित्तं
सास्रञ्च पित्तमथ जाठरवह्निमान्द्यम् ।
वातप्रकोपजनितान् कफजांश्च सर्वान्
पित्तोद्भवांश्च निखिलान्स गदांस्तथैव२४६३

वं.से , रसायनाऽधिकारे ।

भाषा—धान्याभ्रकको कज्जलीके सदृश वारीक पीस दूव और गोरखमुण्डीकी जड़ साथमें डालकर वस्त्रमें पोट्टली वनाय पानीमें मसलकर निकाललें । पानीको १–२ रोज रखकर नितारकर अलग करदे और नीचे जमेहुए अभ्रकको धूपमें सुखादे। फिर आककेदूधमें २–३ दिन घोटकर टिकिया वनाय सुखाकर गजपुटकी आच दे । ऐसे २–३ आचें देकर सिद्ध कियाहुआ अभ्रक ४ पल लेकर इसमें चौगुना अथवा अठगुना गोमूत्र देकर मन्द आचमें सुखावे। इसीतरह गोदुग्ध डालकर ४ पहरकी मृदु अग्निसे पकावे । इसके वाद अभ्रकसे आधा आधा विडङ्ग, त्रिकटु और त्रिफलाका चूर्ण डाले, फिर वाङ्गखेखसेकी जड़, तगर, हस्तिकर्णपलाश, विधारा, रक्तचित्रक, कालादाना तालमूली, लालकनेरकेफूल, झाऊ, पत्रज, असगन्ध, शतावर, निर्मलीकेवीज, पुनर्नवा, आक, अरणी, वलामूल, भटकटैया, गिलोय, भंगरा, निसोत, भाग, कालाभंगरा, येसव चीजेंमिलकर ५ पल उसीपाकमें मिलाके पकावे । पाकहोनेपर उतारकर ठंढाहोनेपर इनसवकीवरावर शक्कर और ३२ तोला घी तथा गोली वंधनेलायक मधु डालकर २–३ पहर घोटकर एकजीव होनेपर चिकनेवर्तनमें रखछोड़े । निपुणवैद्यकीसलाहसे सात्म्यद्रव्यसे मृदुवमनविरेचन लेकर कोष्ठकी शुद्धिकरके अग्निको प्रदीप्त कर गुरु, देव, अग्नि, अतिथि, सिद्ध, साधु और मान्यजनोंका सत्कारकर श्रद्धा रखताहुआ इसमेंसे आठमाशे दवा खावे । दवा पचनेपर घृतयुक्त चावल, और दूधप्रभृति सात्त्विक भोजन करे । दीनोंपर दयारखकर वुरेकामोंसे डरे । संकल्प स्थिर रक्खे, इन्द्रियोंको कावूमेंकरे, सवमें अपनी आत्माको देखता हुआ यथाशक्ति परोपकार करे और क्रोधको छोड़दे । दवाके ऊपर प्यास लगनेपर ठंढा जलपीवे, भोजन नियमसे करे । शाक, अम्ल, दही इनसे रहित और हिताहितका विचार करताहुआ पथ्यका पालनकरे । अत्यन्तचरपरा, कड़वा, कसैला, क्षार, अभिष्यन्दि, तीक्ष्ण, रूक्ष, वातल, विदाही, दुर्जर और भारी पदार्थोंका सेवन न करे । मद्यपान, जोरसे पढ़ना, अत्यन्तविषयोंमें लीनहोना, अधिक ठंढाजल, दिनकासोना, जवावदेना, द्वेष, अत्यन्तवायु और धूपका सेवन, जागरण, चिन्ता, शोक, विषाद, कसरत, मद और उन्मादकारकपदार्थ, जलप्रायदेशजन्यमास, शीतप्रकृति मद्यप्रभृति पीनेकेपदार्थ इनसवको छोड़दे । कुक्कर, मयूर, लवा, तीतर, खरगोश, वकरा, मेंढा, सारस और तमाम जंगलीमास, कालेउड़द, परवल वेंगन, मास, मासरस, सेंधानमक, घी, धनिया, सुरवारीशाक, साठी, लाल और सफेद चावल, मूंगकी धुलीहुईदाल, सुपारी, द्राक्ष, पके और मीठे आमकेफल, खानेमें स्वादिष्ट और पाकमें मधुर पदार्थ, उत्साहजनक पदार्थ, ऊपररोकाहुआ वरसातका पानी येसव प्रशस्तहै । इस दवाकी मात्रा प्रतिदिन अथवा प्रतिसप्ताह वढ़ाकर अथवा जैसा योग्यलगे उसप्रकारसे ६ महीनेमें पूर्वोक्त समस्त दवाको खतम करनाचाहिये । यह नागार्जुन का कहाहुआ रसायनहै । इसका यथोपदिष्टविधिसे निरन्तर

सेवन करनेसे समस्तव्याधि और वलीपलितसे रहित होजाताहै । अत्यन्त तेजस्वी, शूरवीर, विद्वान्, वाचाल, त्रिवर्गकासाधन-करनेवाला, वलसे परिपूर्ण, सुकुमारता और उत्साहसे सम्पन्न, १६ वर्षकी आकृतियुक्त वहुतसी प्रजावाला होकर हज़ारवर्षकी आयुको भोगताहै पूर्णमासीके चन्द्रमाकीतरह दिव्यकान्ति और पवनकेसदृशवेगवाला होजाताहै । यकृत्, अतिसार, प्लीहा, अपस्मार, सिध्म, राजयक्ष्म, शोष, कास, श्वास, विसर्प, ग्रहणी, गुल्म, पथरी, शोथ, प्रदर, जलोदर, भस्मक, वमन, पामा, श्लीपद, प्रमेह, विवन्ध, भगन्दर, कुष्ठ, विषमज्वर, कान, मुंह, उदर, नेत्र और मस्तकके समस्तरोग, मूत्रकृच्छ्र, वायु, कफ, पित्त, रक्तपित्त, मन्दाग्नि, वात, पित्त और कफके प्रकोपसे होनेवाले समस्त उपद्रव, इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ५४९ ॥

५५० महारसः

भस्म सूतस्य तीक्ष्णस्य मरिचाज्यं समंसमम् ।
स्नुक्क्षीरकाकमाचीभ्यां मर्दयेद्याममात्रकम् ॥२४६४॥
निरुद्ध्य भूधरे पाच्यं दिनैकेन महारसम् ।
निष्कार्द्धं भावयेच्चानु पाययेद्दधिसंयुतम् ॥
सर्पाक्षीं कर्षमात्रान्तु पीत्वा वातातिसारनुत्॥२४६५॥

नि. र., र. को , र सु , वै चि , चि र भ , अतिसारे।

भाषा—पारद और फोलादकीभस्म, मरिच और घी समभाग लेकर थूहरकेदूध और मकोयकेरससे १–१ पहर मर्दनकर गोलावनाय भूधरयन्त्रमें एकदिनपकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ माशे दहीकेसाथ मिलाकर १ कर्ष सर्पाक्षीका चूर्ण डालकर पीनेसे वातातिसार नष्टहोताहै ॥ ५५० ॥

५५१ महार्णवरसः

विषं सूतं गन्धकञ्च तालकञ्च विमर्दयेत् ।
वज्रदन्तीरसं मर्द्य गुटिका माषमात्रिकाः ॥ २४६६ ॥
एकैकां भक्षयेद्यस्तु मलज्वरविनाशिनीम् ।
हरते सर्वरोगांश्च महार्णवरसो मतः ॥ २४६७ ॥

र ज्ञा., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध वछनाग, पारा, गन्धक और हरिताल समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर मराठीके रससे १ रोज़ मर्दनकर उड़दवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे मलज्वरप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५५१ ॥

५५२ महाभैरवरसः

मृतं सूतं मृतं ताम्रं मृतंलोहं मृताऽभ्रकम् ।
मृतं कान्तं समं खल्वे मर्द्यं हंसपदीरसे ॥ २४६८ ॥
विशोष्य वालुकायन्त्रे काचकूप्यन्तरे दिनम् ।
पक्वं विचूर्णयेत्खल्वे कोलपित्तेन मर्दयेत् ॥ २४६९ ॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वथा सन्निपातजित् ।
महाभैरवनामाऽयं रसो भैरवनामतः ॥ २४७० ॥

वै चि , ज्वरे ।

भाषा—पारा, तांवा, लोहा, अभ्रक और कान्तलोह इनकी भस्में समभाग लेकर हंसराजके रसमें एकदिन मर्दनकर सुखाय आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें १ दिनकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर जङ्गलीसूअरके पित्तेसे मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानके साथ देनेसे यह सन्निपातादिकोंको नष्ट करता है ॥ ५५२ ॥

५५३ महेन्द्ररसः (प्रथमः)

संशुद्धं गरलं सूतं तालकञ्च मनःशिला ।
गौरीपाषाणकं तुल्यं सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ॥ २४७१ ॥
धत्तूरपत्रजरसे दिनैकं मन्दवह्निना ।
दोलायन्त्रे विपाच्याऽथ श्लक्ष्णचूर्णन्तु कारयेत् २४७२
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यमनुपानविशेषतः ।
सन्निपातान्निहन्त्याशु महेन्द्रः स रसोत्तमः ॥२४७३॥

वै चि , ज्वरे ।

भाषा—शुद्ध वछनाग, पारा, हरिताल, मैनसिल और संखिया समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर धतूरेकेपत्तोंकेरससे १ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय कपड़ेमें वाधकर दोलायन्त्रमें धतूरेके रससे १ दिन मन्दअग्निसे स्वेदितकरे । फिर सुखाकर चूर्णकर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात और सम्पूर्णवातव्याधियां नष्ट होतीहैं ॥५५३॥

५५४ महेन्द्ररसः (द्वितीयः)

एकभागं रसं शुद्धं हेमभागसमन्वितम् ।
द्विगुणं गन्धकं दद्याद्दिव्यौषधिविभावितम् ॥ २४७४ ॥
चक्रराजेन तं पक्त्वा यावदेष स्थिरायते ।
भृङ्गराजेन सम्भाव्य वध्नीयाद्वटिकां शुभाम् २४७५
महेन्द्ररसनामाऽयं कामलादिगदापहम् ।
निहन्ति सकलान्रोगान् क्रामणेन समन्वितः ॥२४७६॥

र का , पाण्डुरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और सोनेके वर्क १–१ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग लेकर पारेमें १–१ सोनेकावर्क डालकर घोटताजाय, जव इसकी पिष्टिका होजाय तव थोड़ा २ गन्धक देकर नीलवर्णकज्जलीहोनेतक घोटकर दिव्यौषधियों (रसेन्द्रचूड़ामणिमें सोमदेवने सोमवल्लीप्रभृति ६४ वनस्पतियां गिनाई हैं उनमेंसे १–२ अथवा जितनी मिलसकें उनके) के रसमें इसकज्जलीको १–२ दिन मर्दनकर गोलावनाय चक्रयन्त्रमें पारद अग्निस्थायी होनेतक पकावे, फिर भंगरेकेरसकी भावनाए देकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १ से ३ गोलीतक अग्निवलावल देखकर तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे कामलादि समस्तरोगोंको यह नष्ट करताहै ।

टि०—गर्तके वीचमें एकवालिस्त सम्पुट आनेलायक गर्त वनाकर नीचे दो अङ्गुल वालू रखकर सम्पुटको रख वालूसे भरदे और ऊपरके गर्तमें आचदे । यह चक्रयन्त्र कहलाता है ॥५५४॥

५५५ महोदधिवटी (प्रथमा)

एकैकं विषसूतञ्च जातीटङ्कं द्विकं द्विकम् ।
कृष्णात्रिकं विश्वषट्कं द्विकं गन्धं कपर्दकम् ॥२४७७॥
देवपुष्पं बाणमितं सर्वं सम्मर्द्य यत्नतः ।
नाम्ना महोदधिवटी नष्टमग्निं प्रदीपयेत् २४७८ ॥

र. सं., रसायनसं., र सु, ना. वि, भै. र., यो. म., र. क., र. चं., नि. र., र. मं, र. चि, र का., अग्निमान्द्ये। रसकामधेनौ द्वितीयस्थाने अग्निकुमारेति नाम दृश्यते ।

भाषा—शुद्ध वच्छनाग और पारा १–१ भाग, गन्धक, कौड़ीभस्म, जायफल और सुहागा २–२ भाग, पीपल ३ भाग., सोंठ ६ भाग., लौंग ५ भाग, लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर चित्रकमूलक्वाथ, पान, अथवा अदरखके रससे ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रख-छोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह नष्टाग्निको प्रदीप्त करतीहै ॥ ५५५ ॥

५५६ महोदधिवटी (बृहती) (द्वितीया)

दन्तीबीजमकल्मषं सदहनं शुण्ठीलवङ्गं समं,
गन्धं पारदटङ्कणञ्च मरिचं श्रीवृद्धदारं विषम् ।
खल्वे दण्डयुगं विमर्द्य विधिना दन्तीद्रवे भावनाः,
देयाः पञ्चदशानुनिम्बुकजलैस्त्रेधा त्रिधा चित्रकैः ॥
त्रेधा चाऽऽर्द्रकजैरसैः शुभधिया सम्यैव चाऽऽवेगितः,
पश्चाच्छुष्ककलायसम्मितवटी कार्या भिषक्सम्मता।
क्षुद्बोधं जनयेत् त्रिशूलशमनी जीर्णज्वरध्वंसिनी,
कासारोचकपाण्डुतोदरगदस्तोमामलुञ्चशिनी ॥
वस्त्याटोपहलीमकाऽऽमयहरी मन्दाग्निसन्दीपनी,
सिद्धेयं तु महोदधिप्रकटिता सर्वामयघ्नी सदा२४८१

रसायनसं, र सु, बृ. यो त, नि र., यो. र, र का, र सं, अग्निमान्द्ये। र.का शूलारीतिनाम ॥

टि०—रसेन्द्रसारसङ्ग्रहेऽयमेवपाठो निहितोऽस्ति तत्र भवनाया निम्बुकस्थाने वृद्धदारुर्गृहीतस्तस्याऽप्यत्र सङ्ग्रहे न काऽपि हानि प्रतीयते पाठस्त्वेक एव स्थापनीय ।

भाषा—शुद्धजमालगोटा, चित्रकमूल, सोंठ, लौंग, शुद्ध पारा, गन्धक और सुहागा, मरिच, विधारा, शुद्धवच्छनाग सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर दोपहर खाली घोटकर दन्तीमूलके रसकी १५ भावनाए देवे, फिर नीबू, चित्रक और अदरख इनप्रत्येककी क्रमसे तीन ३ भावनाएं देकर अमिलतासके गूदेको पानीमें घोलकर ७ भावनाएं देकर सूखेमटरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, शूल, जीर्णज्वर, खासी, अरुचि, पाण्डु, उदररोग, आमवात, वस्ति-शोथ, हलीमक, इत्यादि समस्तरोगोंको यह दूरकरतीहै ५५६

५५७ महोदधिवटी (चतुर्थी)

रसं गन्धं तथा हेम वज्रविद्रुममौक्तिकम् ।
गृहीत्वा समभागेन मर्दयेत्त्रिफलाम्बुना ॥२४८२॥
ततो रक्तिमिताः कुर्याद्वटीश्छायाप्रशोषिताः ।
एकैकां दापयेदासां यथादोषानुपानतः ॥ २४८३ ॥
रुद्धान्त्रत्वमन्त्रवृद्धिं तथाऽन्यानन्त्रजान्गदान् ।
वातपित्तकफोत्थांश्च सर्वान्हन्ति महोदधिः ॥ २४८४ ॥

भै., र., अन्त्रवृद्ध्यधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सोना, हीरा, मूंगा इनकी-भस्में और मोतीकी पिष्टी समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर त्रिफलाके रससे २–३ रोज़ मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचि-तानुपानकेसाथ देनेसे अन्त्रावरोध और अन्त्रवृद्धिप्रभृति समस्त आंतोकेरोग तथा वात, पित्त, कफोत्थ समस्तरोग नष्ट होतेहैं५५७

५५८ महोदयप्रत्ययसारः

रसग्रस्तसमुद्गीर्णगन्धकस्य पलत्रयम् ।
मृतसूताऽभ्रताम्राऽयः कर्षं कर्षं पृथक् पृथक्॥२४८५॥
पलं हिङ्गुलचूर्णस्य माक्षिकस्य पलत्रयम् ।
पलं कम्पिल्लकस्याऽपि विषस्याऽर्द्धपलं तथा॥२४८६॥
सप्ताहं मर्दयेत्सर्वं दत्त्वा चूर्णोदकं मुहुः ।
ततस्तद्गोलकं कृत्वा सप्ताहं चातपे क्षिपेत् ॥ २४८७ ॥
गुडचूर्णं शिलाचूर्णं लिम्पेदङ्गुलिकाघनम् ।
त्रिपलं गन्धकं दत्त्वा क्रौञ्च्यामथ च गोलकम् २४८८
गोलकस्योपरिष्टाच्च क्षिपेत्तालपलत्रयम् ।
संरुद्ध्याऽतिप्रयत्नेन दद्याद्गजपुटं खलु ॥ २४८९ ॥
स्वाङ्गशीतलमाहृत्य गोलकं लेपनैः सह ।
विचूर्ण्य सप्तवारं हि विषतिन्दुफलोद्भवैः ॥ २४९० ॥
द्रवैरथाऽऽतपे शुष्कं क्षिपेद्रम्ये करण्डके ।
त्रिंशदंशेन वैक्रान्तभस्म तस्मिन् विनिक्षिपेत् २४९१
अयं हि नन्दीश्वरसम्प्रदिष्टो
रसो विशिष्टः खलु रोगहन्ता ।
निःशेषरोगेष्वहतप्रतापो
महोदयप्रत्ययसारनामा ॥ २४९२ ॥
हन्यात्सर्वगुदामयान्क्षयगदं कुष्ठञ्च मन्दाग्नितां,
शूलाध्मानगदं कफं श्वसनतामुन्मादकापस्मृती ।
सर्वा वातरुजो महाज्वरगदान्नानाप्रकारांस्तथा,
वातश्लेष्मभवं महामयचयं दुष्टग्रहण्यामयम् ॥२४९३॥

र. र स., अर्शोरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभागकी कज्जलीकर आतशीशीशीमें भरके अथवा अन्यप्रकारसे गन्धकको अलग करले। इसतरहका गन्धक ३ पल, पारा, अभ्रक, ताम्र और लोह इनकीभस्में १–१ कर्ष, शुद्धशिगरिफ १ पल, माक्षिकभस्म ३ पल, कमीला १ पल, शुद्धवच्छनाग २ कर्ष, लेकर बारीकचूर्णकर १–२ पहर शुष्कमर्दनकर चूनेके पानीसे ७ रोज मर्दनकर गोला बनाय कड़ीधूपमें सुखाकर गुड़, सीप और पत्थरका चूना लेकर थोड़ापानी डालकर कूटे और दोअङ्गुलमोटा गोलेपर गाढ़ालेपकर

सुखाले। फिर एक कुठालीमें शुद्धगन्धक ३ पल बिछाकर गोलेको रख ऊपरसे ३ पल शुद्धहरितालका बारीकचूर्ण रखकर ढकदे फिर वज्रमिट्टीसे ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर मिट्टीमात्र निकालकर लेपसहित घोटकर कुचिलेके फलके रससे ७ भावनाए देकर धूपमें सुखाले और ३० वा भाग वैक्रान्तभस्म मिलाकर १–२ पहर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे सब-प्रकारके अर्श, क्षय, कुष्ठ, मन्दाग्नि, शूल, अफारा, कफ, श्वास, उन्माद, अपस्मार, समस्तवातविकार, सम्पूर्णज्वर, वातश्लेष्मोद्भवविकार, राजयक्ष्म, दुष्टग्रहणीरोग इनसबको यह नष्ट करताहै॥ ५५८॥

५५९ महोदयावटी

प्रागुक्तेन प्रकारेण सूतं सम्यङ्निपातयेत्।
निपातितश्च तं सूतं खल्वमध्ये निवेशयेत॥ २४९४॥
पञ्चभि र्लवणे र्मर्द्यस्त्रिभिः क्षारैस्तथैव च।
व्योषैरार्द्रकनिर्यासैः सर्वैरम्लैस्ततः परम्॥ २४९५॥
मर्दयित्वाऽथ तं सूतं प्रत्येकञ्च दिनत्रयम्।
अम्लैः प्रक्षालयेत्सूतं पादांशं वर्जयेज्जलम॥ २४९६॥
रामठं श्वेतमरिचं क्षाराणाञ्च चतुष्टयम्।
लवणानि तथा पञ्च व्योषमार्द्रकमेव च॥ २४९७॥
राजिका चित्रमूलत्वङ् मूलकं कटुरोहिणी।
एतत्सर्वं विचूर्ण्याऽथ मर्दयेत्पूर्वजैर्जलैः॥ २४९८॥
तत्पिण्डमध्ये तं सूतं विदधीत विचक्षणः।
दोलायन्त्रेऽथ तं बद्धा धान्याम्लैः स्वेदयेत्ततः २४९९
दिनानि सप्त यत्नेन स्वेदयेद् दृढवह्निना।
यथा न क्षीयते काञ्जी तथा कुर्याद्विचक्षणः॥२५००॥
एवं संस्वेद्य सूतेन्द्रं यन्त्रादुत्तार्य बुद्धिमान्।
अम्लेन क्षालयित्वाऽथ क्रमेणैते र्विमर्दयेत्॥२५०१॥
गिरिकर्णीरसैः पूर्वं भृङ्गीनीरैस्ततः परम्।
निर्गुण्डिकारसैः पश्चाज्जयन्तीशृङ्गवेरयोः॥ २५०२॥
मण्डूकीतिलपर्ण्योश्च काकमाच्युरुबूकयोः।
धत्तूरत्रिजगज्जेत्र्या रसतुल्यै रसैः क्रमात्॥ २५०३॥
मर्दयित्वा प्रयत्नेन तथा पित्तै र्विभावयेत्।
पूर्वोक्तै र्दशभिः सूतं सूततुल्यै र्यथाक्रमम्॥ २५०४॥
धूपयेच्च ततः पश्चात्पूर्वोक्तविधिमार्गतः।
मरीचमाना गुटिकाः कर्तव्या रससम्भवाः॥ २५०५॥
सन्निपातनिवृत्त्यर्थं प्रयुञ्जीत विचक्षणः।
इयं श्रीलोकनाथेन प्राणिनां करुणावशात्॥ २५०६॥
वटिका सम्प्रदिष्टा हि दृष्टप्रत्ययकारिणी।
इमां प्राप्य वटीं कश्चित्सन्निपातान्न नश्यति॥२५०७॥
वटीं दत्त्वाऽऽर्द्रकनिर्यासैस्त्रिकटोरनुपानकम्।
कुर्वीत ढालयेत्तत्र सुशीतानि जलानि वै॥ २५०८॥
व्यञ्जनानि प्रयुञ्जीत श्रीखण्डै र्लेपयेत्तनुम्।
पथ्यञ्च दधिसक्तं स्यात्तदानीमेव दीयते॥ २५०९॥
इक्षवश्च तथा योज्या रसवीर्यविवृद्धये।
शर्करा खण्डकारीका द्राक्षा योज्या विशेषतः २५१०
शीतद्रव्यैर्भवेद्वीर्यं पित्तवृद्धीरसोत्तमे।
लोकनाथमतेनेयं वटी प्रोक्ता महोदया॥ २५११॥

रसा०, सन्निपात।

भाषा—अच्छीतरह शुद्धकियेहुए पारेको तीनप्रकार पातन कर खरलमें डालकर पांचोंनमक, तीनोंक्षार, त्रिकुटु, अदरख, यथालाभ समस्त अम्ल इनप्रत्येकमें ३–३ रोज़ मर्दनकर खटाई के पानीसे साफकरले। मर्दनकरतेउसमय प्रत्येक चीजें पारेसे चतुर्थांश देना केवल जलका स्पर्श न होनेदना। हींग, सफेद-मरिच, चारों क्षार (सज्जी, सुहागा, जवखार और नवसादर), पाचोंनमक, त्रिकुटु, अदरख, राई, चित्रकमूल, मूली, कुटकी इनसबका बारीक चूर्णकर पूर्वद्रवोंसे गोला बनाय उसके बीचमें पूर्वोक्त पारेको रखकर दोलायन्त्र बनाय धान्याम्लोंसे ७ रोज़ तक तीक्ष्णाग्निसे स्वेदनकरे। काञ्जी सूखने न पावे इसका ध्यान रक्खे। इसतरह स्वेदनकर स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर काञ्जीप्रभृति अम्लद्रवमें धोकर कोयल, भगरा, निर्गुण्टी, जैंत, अदरख, ब्राह्मी, हुरहुर, मकोय, एरण्ड, धतूरा, भांग ये प्रत्येक पारेकी बराबर देकर १–१ रोज मर्दनकर सुखादे फिर यथा-लाभ पित्तोंसे भावना देकर कोयलको छोड़कर पूर्वोक्त दस चीजें पारेकीबराबर अग्निपर डालकर पारेको धूपदे। इसके बाद मरिच प्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली सम-योचितानुपानके साथ देनेसे किसीभी सन्निपातसे आदमी नहीं मरता। गोलीको अदरखके रससे देकर त्रिकटुकाक्काथ मिला-कर ठंडेजलकी धारादे। भूख लगनेपर इच्छानुसार भोजन दे। दाह मालूमपड़नेपर चन्दनका लेप दे। ज्वर उतरनेकेबाद तुर्त दहीभात खानेको दे। रसकी शक्ति बढ़ानेकेलिये ईख, शक्कर, छुहारे और द्राक्ष देवे। इसरसमें शीतद्रव्योंसे शक्ति और पित्तकी वृद्धिहोतीहै॥ ५५९॥

५६० माणिक्यरसायनम् (प्रथमम्)

सुजातिगुणमाणिक्यभस्म कर्षमितं शुभम्।
कनकाऽभ्रकताम्राणां कान्तस्य भसितं पृथक्॥२५१२॥
त्रिगुणत्वेन संवृद्धं मर्दयेत्समगन्धकैः।
पुटेद्वनगिरिण्डैश्च पञ्च वाराणि यत्नतः॥ २५१३॥
एवं शिलालकाभ्याञ्च पुटेन्नीलाञ्जनेन च।
तुल्यगन्धाश्मसूताभ्यां विहितां कज्जलीं शुभाम्२५१४
लौहे पात्रे परिद्राव्य बादरेणाल्पवह्निना।
माणिक्यादीनि भस्मानि क्षिप्त्वा तत्र विमिश्रयेत्॥
अथाऽऽर्द्रकरसैस्तां तु सस्याद्भि र्वाऽथ कज्जलीम्।
सम्यक् कृत्वा विचूर्ण्याथ क्षिपेद्रम्यकरण्डके॥२५१६॥
व्योषाज्यसहितं ह्येतन्माणिक्याद्यं रसायनम्।
व्योषाऽऽज्यसहितं लीढं षण्मासं पथ्यभोजिना२५१७

निहन्ति सकलान्रोगान् जरापलितसंयुतान् ।
जीवेद्वर्षशतञ्चैव त्रिवारकृतभोजनः ॥
क्षयादिजान्नादान्सर्वांस्तत्तद्रोगानुपानतः ॥ २५१८ ॥
र चू., रसायने ।

भाषा—उत्तमजातिके माणिक्यकीभस्म १ कर्ष, सुवर्णभस्म ३ कर्ष, अभ्रकभस्म ९ कर्ष, ताम्रभस्म २७ कर्ष, कान्तभस्म ८१ कर्ष, इनसवकीबरावर शुद्धगन्धक डालकर २–३ पहर सूखा मर्दनकर अदरखके रससे १–२ रोज घोटकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे । इसतरह ५ आंचेंदेवे और गन्धक वारम्वार देताजाय । इसीतरह शुद्ध मैनसिल, हरिताल और नीलाञ्जन लेकर रसके बराबर मिलावे और अदरखके रसमें घोटकर शरावसम्पुटकर १–१ पुट देवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर इसकी बराबर शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर लोहेकीकड़ाहीमें बेरकी लकड़ी अथवा कोयलोंकी मन्द आंचपर गलाकर माणिक्य वगैरहसमस्तवस्तुओंको मिलाकर उतारकर पर्पटी बनाले । स्वाङ्गशीतल होनेपर बारीकचूर्णकर अदरख अथवा दूबकेरससे १–२ रोज़ मर्दनकर सुखाकर अच्छी मज़बूतशीशीमें रखदे । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा ३ माशे त्रिकटुकेसाथ मिलाकर घीमें डालकर पथ्यपूर्वक ६ महीने तक सेवनकरनेसे जरा और पलितकेसाथ समस्तरोगोको नष्ट करताहै । इससे अग्नि इतना प्रदीप्त होताहै कि तीनवारभोजन करना पड़ताहै । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह क्षयादि समस्तरोगोंको दूरकरताहै । इसको ६ महीनेतक सेवनकरनेसे १०० वर्षकी आयु होतीहै ॥ ५६० ॥

५६१ माणिक्यरसायनम् (द्वितीयम्)

माणिक्यहेमरजतोद्भवविद्रुमाणि
ताक्ष्र्यस्य भस्म मृगमादनिका विदारी ।
तुल्यानि तानि गृहकन्यकया विदार्या
आप्लाव्य भानुदिवसैः घृतशर्कराभिः २५१९
माषद्वयं प्राश्य पयोनिषेविणां
वीर्यन्न पातं भजतेऽङ्गनाऽऽगमे ।
यक्ष्मक्षयौ कासभगन्दरार्बुदाः
विसूचिका सङ्ग्रहणी न लक्ष्यते ॥ २५२० ॥
नृ क, वाजीकरणे ।

भाषा—माणिक्य, सुवर्ण, चादी, मूगा, पन्ना इनसवकीभस्में, कस्तूरी, विदारीकंद सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर घीकुंआर और विदारीकन्दकेरससे १२–१२ दिन भावना देकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ माशे दूधकेसाथ सेवनकरनेसे और भोजनमें केवल दूधका सेवन रखनेसे स्त्रियोंके साथ रतिकरनेमें शुक्रपात नहीं होता । राजयक्ष्म, धातुक्षय, कास, भगन्दर, अर्बुद, हैज़ा और सङ्ग्रहणी समूल नष्टहोतेहैं ॥ ५६१ ॥

५६२ माणिक्यरसः (प्रथमः)

पलं तालं पलं गन्धं शिलायाश्च पलार्द्धकम् ।
चपलः शुद्धसीसश्च ताम्रमभ्रमयोरजः ॥ २५२१ ॥
एतेषां कोलभागश्च वटक्षीरेण मर्दयेत् ।
ततो दिनत्रयं घर्मे निम्बक्वाथेन भावयेत् ॥ २५२२ ॥
गुडूचीबालहिन्तालवानरीनीलझिण्टिकाः ।
शोभाञ्जनमुराऽजाज्योनिर्गुण्डीहयमारकौ ॥ २५२३ ॥
एषां शाणमितं चूर्णमेकीकृत्य सरित्तटे ।
मृत्पात्रे कठिने कृत्वा मृदम्बरयुते दृढे ॥ २५२४ ॥
एकाकी पाकविद्वैद्यो नग्नः शिथिलकुन्तलः ।
पचेदवहितो रात्रौ यत्नात्संयतमानसः ॥ २५२५ ॥
शनैर्मध्यमवेगेन वह्निना प्रहरद्वयम् ।
प्रातः सम्पूज्य मार्तण्डं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥२५२६॥
यदि भाग्यवशादेतन्माणिक्याभं शुभं भवेत् ।
तद्धि जानीहि भैषज्यं सर्वकुष्ठविनाशनम् ॥ २५२७ ॥
सर्पिषा मधुना लौहपात्रे तद्दण्डमर्दितम् ।
द्विगुञ्जं सर्वकुष्ठानां नाशनं बलवर्द्धनम् ॥ २५२८ ॥
शीतलं सारसं तोयं दुग्धं वा पाकशीतलम् ।
आनीतं तत्क्षणादाजमनुपानं सुखावहम् ॥ २५२९ ॥
वातरक्तं शीतपित्तं हिक्काञ्च दारुणाञ्जयेत् ।
ज्वरान्सर्वान् वातरोगान् पाण्डुं कण्डूञ्च कामलाम् ।
श्रीमद्गहननाथेन निर्मितो बहुयत्नतः ॥ २५३० ॥
र सं, र चं., र चि, र मु, कुष्ठाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध हरिताल और गन्धक १–१ पल, शुद्धमैनसिल २ कर्ष, शुद्धपारा, नाग, ताम्र, अभ्रक और लोह इनकीभस्में आधा आधा कर्ष लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर वटकेदूधमें ३ रोज़ मर्दनकर धूपमें सुखाकर नीमकीछालके काढेमें ३ रोज घोटकर सुखादेवे फिर गिलोय, कोमलताड़, केवाच, नीलेफूलका कटसरैया, सहिजन, मुरमकी, जीरा, निर्गुण्डी और सफेदकनेर कीजड़ ४–४ मासेकाचूर्णमिलाकर नदीकेकिनारे जहां किसीका आगमन न होताहो वहापर मजबूतमिट्टीके पात्रपर कपड़मिट्टी लगाकर एकाकी पाकको जाननेवाला वैद्य नग्न होजाय और चोटीकी गाठ खोलदे । फिर उसपात्रको चूल्हेपर चढाकर इसरसको बहुतधीरे २ एकपहर पकाकर एकपहरकी मध्यम आचदे । प्रात काल स्वाङ्गशीतल होनेपर सूर्यदेवताका पूजनकर इसे निकालकर देखे । भाग्यवशसे इसकापाक माणिक्यके सदृशहोगयाहोतो शुभपाक समझना चाहिये । इसमेंसे २–२ रत्ती घी और मधु मिलाकर लोहेके पात्रमें लोहेके डंडेसे मर्दनकर खानेसे यह समस्तकुष्ठोंको दूरकरताहै और बलको बढ़ाताहै । इसरसके ऊपर ठंढा तालावकाजल अथवा औटाकर ठंढाकियाहुआ दूध अथवा बकरीका धारोष्णदूध पीना उचितहै । इसकेसेवनसे वातरक्त, शीतपित्त, भयंकर हिचकी, समस्तज्वर, वातरोग, पाण्डु, खुजली, कामला ये सव नष्टहोतेहैं ॥ ५६२ ॥

५६३ माणिक्यरसः (द्वितीयः)

अभ्रसम्पुटगं तालं किञ्चिदङ्गारसाधितम् ।
वातश्लेष्मज्वरे शस्तं माणिक्यरसशब्दितम् ॥२५३१॥
मि भे म, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—सफेद अभ्रकके पत्रेपर हरितालकाचूर्ण बिछाकर अग्निपर धरे जब हरिताल गलकर उड़नेलगे तब दूसरापत्र अभ्रक का रखकर दबादे और थोडीदेरतक उसे अग्निपर रहनेदे । जब देखेकि हरितालगलगया तब उतारकर नीचे रखले । स्वाङ्गशीतलहोनेपर चाकूसे इस माणिक्यरसको निकालकर रखछोड़े । यह माणिक्यके सदृश चमकताहुआ रस तैयारहोगा । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक पान अथवा मधुप्रभृतिकेसाथ देनेसे वातश्लेष्मज्वर और सन्निपात नष्टहोतेहैं ॥ ५६३ ॥

५६४ माणिक्यरसः (कुमुदः) (तृतीयः)

तालं कुट्टितमभ्रपत्रपुटगं संस्थाप्य मृत्खर्परे,
तद्रन्ध्राणि नवीनकोलदलजैः कल्कीकृतैः पूरयेत् ।
आकण्ठं महिषीमलं तदुपरि प्रोत्कीर्य यामार्धतः,
कुर्याद्वह्निमयं हिनस्ति कुमुदः सर्वज्वरान् दुस्तरान्

सि. भै म , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध तबकी हरितालका बारीकचूर्णकर सफेद अभ्रकके दो टुकड़ोंके बीचमें दबावे और उनकी सन्धिको बेरके कोमलपत्तोंके कल्कसे बन्दकर मिट्टीके खपड़ेमें रखकर ऊपरसे ताज़ेगोबरसे सम्पूर्णको भरके आधे पहरतक मध्यम आंचदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर बीरजसे सम्पुटको निकाल साफकरके अन्दर से माणिक्यके रङ्गके रसको निकालकर कज्जलके सदृश बारीक घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह तमामज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ५६४ ॥

५६५ माणिक्यरसः (चतुर्थः)

तालकं वंशपत्राख्यं कूष्माण्डसलिले क्षिपेत् ।
सप्तधा वा त्रिधा वाऽपि दध्नाऽम्लेन तथैव च २५३३
शोधयित्वा पुनः शुष्कं चूर्णयेत्तण्डुलाकृति ।
ततः शरावके पात्रे स्थापयेत्कुशलो भिषक् ॥२५३४॥
बदरीपत्रकल्केन सन्धिलेपञ्च कारयेत् ।
अरुणाभं ह्यधःपात्रं तावज्ज्वाला प्रदीयते ॥ २५३५ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य माणिक्याभं हरेद्रसम् ।
तद्रक्तिद्वितयं खादेद्घृतभ्रामरमर्दितम् ॥ २५३६ ॥
सम्पूज्य देवदेवेशं कुष्ठरोगाद्विमुच्यते ।
स्फुटितं गलितं कुष्ठं वातरक्तं भगन्दरम् ॥ २५३७ ॥
नाडीव्रणं व्रणं दुष्टमुपदंशं विचर्चिकाम् ।
नासाऽऽस्यसम्भवान्रोगान् क्षतान्हन्ति सुदारुणान ॥
पुण्डरीकं चर्मदलं विस्फोटं मण्डलं तथा ॥ २५३८ ॥

र सं , भै र , र र को , ध , र चि , र सु , र च , वै क , र त , कुष्ठे ।

टि०—सिद्धभेषजमणिमालाख्ययोरुभयोरपि माणिक्यरसयो रयमेव मूलमिति विद्वद्भिर्विभावनीयम् ।

भाषा—शुद्ध तबकीहरितालको सफेदकोंहड़ेकेरस और दही अथवा अन्य किसी खटाईमें दोलायन्त्रसे ७ अथवा ३ दिन स्वेदनकर सुखाकर तण्डुलोंके सदृश चूर्णकर शरावमें रख दूसरे शरावसे ढकदे । और बेरकेकोमलपत्रोंके कल्कसे सन्धि बन्दकर चूल्हेपर रख आंचदे । जबनीचेका ढक्कन एकदम लाल होजाय तब आचदेना बन्दकरदे फिर मुंह खोलकर देखे उसमें माणिक्यकी तरह नीचे जमाहुआ रस मिलेगा । इसकीमात्रा १ से २ रत्तीतक घी और भौंरेके मधुके साथ खानेसे फूटाहुआ और गलित कुष्ठ, वातरक्त, भगन्दर, नाड़ीव्रण, दुष्टव्रण, उपदंश, विचर्चिका, नासिका और मुखके समस्तरोग, पुण्डरीक, चर्मदल, विस्फोटक और मण्डलकुष्ठ इनसबको यह नष्टकरताहै ५६५

५६६ माणिक्यरसः (पञ्चमः)

शुद्धं सूतं पलान्यष्टौ कुनटी तालकं समम ।
नागपत्रं चाष्टपलमष्टौ भागाश्च गन्धतः ॥ २५३९॥
एकत्र कज्जलीं कृत्वा काचकूप्यां विनिःक्षिपेत ।
वालुकायन्त्रमध्ये तु वह्निः षोडशयामकम् ॥ २५४० ॥
भवेन्माणिक्यवर्णोऽयं शुक्रस्तम्भं करोति च ।
जराव्याधिविनाशाय राजरोगकुलान्तकृत ॥ २५४१ ॥
दशरात्रप्रयोगेण महाव्याधिविनाशनम् ।
रक्तिकार्द्धं सदा पथ्यं वृद्धः संयाति यौवनम्॥२५४२॥

र चं , र सु , यो म , र. म. मा , राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मेनसिल, हरिताल, सीसेके बारीक पत्र, येसब ८–८ पल लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर कपड़मिट्टीकीहुई आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख १६ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे आधीआधीरत्ती उचितानुपानसे देनेसे यह शुक्रस्तम्भन करताहै और बुढापा, राजरोगका समूह, महाव्याधि (कुष्ठादि), इनसबको नष्टकरताहै ॥ ५६६ ॥

५६७ माणिक्यरसः (षष्ठः)

शुद्धसूतसमं गन्धं कज्जलीं कारयेद्बुधः ।
षोडशांशं सुवर्णञ्च माणिक्यञ्च तदर्द्धकम् ॥ २५४३ ॥
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य कन्यानीरेण भावयेत् ।
काचकूप्यां सप्तमृद्भिर्लिप्तायां तन्निवेशयेत् ॥२५४४॥
धारयेत्सिकतायन्त्रे वह्निं प्रज्वालयेच्छनैः ।
यामषोडशपर्यन्तं शलाकाञ्च ददीत वै ॥ २५४५ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य सूतं माणिक्यसञ्ज्ञितम् ।
गन्धकञ्च पुनर्दत्त्वा पुनर्माणिक्यहेमके ॥ २५४६ ॥
पूर्ववन्मर्दयेत्तञ्च पाचयेत्तद्वदेव हि ।
एवं षड्गुणकं कार्यं सर्वयोगोपकारकम् ॥ २५४७ ॥
जायते सिद्धिदं देहे सर्वप्रत्ययकारकम् ।
सेवयेद्रोगनाशाय तत्तद्रोगाऽनुपानतः ॥ २५४८ ॥
वल्लं वा वल्लयुग्मं वा मधुना कणया सह ।
सेविनं कामिनीं यामं दर्शयेद्रतिकौतुकम् ॥
वीर्यबन्धकरश्शीघ्रं योषामदविनाशनम् ॥ २५४९ ॥

रसायनसं , सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर षोडशांश सोनेकेवर्कोंसे आधी माणिक्यभस्म डालकर कज्जलीमें मिलाकर घीकुंआरके रससे एकभावना देवे । सूखनेपर सातकपडमिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख १६ पहरकी अग्निदेवे । शीशीका मुंह खुला रखनेके लिये वीचवीचमें लोहेकी गरमशलाका भीतर डालकर गन्धक जारण करे। गन्धकजारण होनेपर मुंहवन्दकरदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर पूर्वके वरावर गन्धक, सुवर्ण और माणिक्यभस्म डालकर पूर्ववत् मर्दनकर वालुकायन्त्रमें पकावे । इसतरह षड्गुणगन्धकजारणकरनेसे यह रस सिद्धहोताहै । इसको रोगनिवृत्यर्थ देनेमें सवतरहके विश्वासको पैदाकरताहै । इसमेंसे ३ अथवा ६ रत्तीकीमात्रा मधु और पीपलकेसाथ देनेसे १ पहरतक शुक्रस्तम्भन होताहै रतिमें कौतुकको दिखाताहै वीर्यको जल्दी वाधताहै और स्त्रियोंके मदको नष्टकरताहै ॥ ५६७ ॥

५६८ माणिक्यरसः (बृहद्दिग्वादिः) (सप्तमः)

शुद्धं सूतं पञ्चपलं कुनटीं तत्समां क्षिपेत् ।
हाटकन्तु पलं पञ्च माणिक्यन्तु चतुःपलम् ॥२५५०॥
मुक्ताञ्च विद्रुमञ्चैव प्रत्येकं द्विपलन्तथा ।
नागपत्रं पलञ्चैकं शुद्धगन्धकमष्टकम् ॥ २५५१ ॥
एकत्र कज्जलीकृत्य काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् ।
वालुकायन्त्रगं चाग्निं यामषट्त्रिंशकं हठात् ॥२५५२॥
भवेन्माणिक्यदिव्योऽयं कामाग्निवलवर्धनः ।
क्षीणेन्द्रिया नष्टशुक्रा वलमांसाऽग्निवर्जिताः ॥२५५३॥
व्यवायरहितानाञ्च धातुपुष्टिकरः परः ।
वातिकाः श्लैष्मिकाश्चैव व्याधयः सम्भवन्ति ये २५५४
अस्य प्रभावाद्ग्रहणी कासश्वासाऽरुचिक्षयाः ।
वातश्लेष्मप्रतिश्यायाः प्रशमं यान्ति वेगतः ॥२५५५॥
तिमिरं पटलं काचं पिल्लं नक्तान्ध्यमर्जुनम् ।
आसन्नतिमिरं यच्च शशिनः पश्यति द्वयम् ॥२५५६॥
जराव्याधिविनाशाय राजरोगविनाशनम् ।
दशरात्रप्रयोगेण महाव्याधिविनाशनम् ॥
रक्तिकार्द्धं सदा सेव्यो वृद्धस्तरुणतां व्रजेत् ॥२५५७॥

रसायनसं, सर्वामये ।

भाषा—शुद्ध पारा, मैनसिल और सुवर्णभस्म ५–५ पल, माणिक्यभस्म ४ पल, मोती और मूंगेकीभस्म २–२ पल, शुद्ध नागपत्र १ पल, शुद्धगन्धक ८ पल, लेकर पहिले पारेमें नागपत्र डालकर घोटे फिर गन्धक मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर सवचीजोंको मिलाकर आतशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें ३६ पहरकी तीव्रअग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे आधीआधीरत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे कामाग्नि और वलको वढ़ाताहै । क्षीणेन्द्रिय, नष्टशुक्र, वल, मास और अग्निरहित, रतिकरनेमेंअसमर्थ और धातुक्षीणपुरुषोंको यह रोगरहित वनाताहै । वातिक तथा श्लैष्मिक व्याधियोंको अन्धकारको सूर्यकी तरह नष्टकरताहै । ग्रहणी, कास, श्वास, अरुचि, क्षय, वातश्लेष्मप्रधानप्रतिश्याय, इनको नष्ट करताहै । तिमिर, जाला, मोतियाविंद, खील, रतोंधी, अर्जुन, एकवस्तुकी दो दीखना इनसवको खाने तथा लगानेसे नष्टकरताहै । लगानाहोतो मधुमें प्रयोग करना । इसके दशरोज् लगातारसेवनसे असाध्यव्याधि नष्टहोताहै । वुढ़ापा और राजरोग कुछदिनोके सेवनसे नष्टहोतेहै ॥ ५६८ ॥

५६९ मानसूरणाद्यं लोहम्

मानसूरणभल्लातत्रिवृद्दन्तीसमन्वितम् ।
त्रिकत्रयसमायुक्तं लोहं दुर्नामनाशकम् ॥ २५५८ ॥

र सं, र. सु., भै. र, र र. अर्शोऽधिकारे ।

टि०—रसरत्नाकरीयत्रिकत्रयादिलौहेनाऽस्य समानतामावहति केवल मानसूरणौ वाकुचीस्थाने निहितौ स्त । अस्मिन्नेव योगे वाकुचीं मिश्रय्य निष्पादिते सति द्वयोरपि समावेश सुष्ठुतया भविष्यति, अधिकारभेदोऽप्यकिञ्चित्कर मिश्रितयोगस्योभयकार्यकरणक्षमत्वात् । रसरत्नाकरे तु स्थौल्याधिकार' ।

भाषा—मानकंद, सूरण, भिलांवें, निसोत, दन्तीमूल, तज, पत्रज, इलायची, अथवा—नागरमोथा, चित्रक, विडङ्ग, त्रिकटु और त्रिफला येसव समभाग, इनसवकी वरावर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा रक्तार्शमें पाषाणभेद और शक्करकेसाथ, अथवा १ माशा रसौतके साथ अथवा वनगोभीके रसकेसाथ, शुष्कार्शमें दूध अथवा चित्रककीजड़के क्वाथके साथ देवे । इससे सवतरहके ववासीर और मेदोवृद्धि अच्छी होतीहै ॥ ५६९ ॥

५७० मानिनीमानभञ्जनरसः

सूतस्यैको विषस्यैकः पञ्च कृष्णाभ्रभस्मनः ।
शुद्धगन्धस्यैकपलं पलञ्च रसभस्मनः ॥ २५५९ ॥
खल्वे च मुनिसंख्यातं मोचासत्त्वेन भावयेत् ।
चिञ्चायाः स्वरसैस्तद्वन्मुशल्या दशधा तथा॥२५६०॥
कोकिलाक्षकतोयेन गोक्षीरेणैव सप्तधा ।
सप्त धत्तूरतोयेन सर्पवल्लीरसात्तथा ॥ २५६१ ॥
अहिफेनाच्च सप्तैव चातुर्जातफलत्रयम् ।
जातीफलं जातिपत्री सुराह्वकुसुमानि च ॥ २५६२ ॥
प्रत्येकं पलमेतेषां शाणः कर्पूरकेसरात् ।
कस्तूरिकाञ्च निक्षिप्य तत्सर्वं परिमर्दयेत् ॥ २५६३ ॥
नागवल्लीरसेनैव गुटिका चणकोपमा ।
कृत्वैकां भक्षयेच्चाऽहिपत्रैः क्षीरं पिवेदनु ॥ २५६४ ॥
वीर्यं प्रचुरतां याति कामिनी सुरतार्थिनाम् ।
ध्वजोत्थानञ्च कुरुते स्त्रीयोनिदलनक्षमः ॥ २५६५ ॥
रममाणो न तृप्येत्तु स्त्रीणामानन्दवर्धनः ।
रसो हि शिष्टैराख्यातो मानिनीमानभञ्जनः ॥२५६६॥

रसायनसं, र मु, वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और वछनाग १–१ पल, कृष्णाभ्रकभस्म ५ पल, पारदभस्म १ पल, लेकर सवकी नीलवर्णकज्जलीकर केलेका रस और इमलीका पना इनकी ७–७

भावनाएं देकर मुशलीके स्वरस अथवा क्वाथकी १०, तथा तालमखानेका क्वाथ, दूध, धतूरा और पानकारस, अफीमका द्रव इनकी ७–७ भावनाएं देकर सुखाले फिर चातुर्जात, त्रिफला, जायफल, जावित्री, लौंग १–१ पल, शुद्धकपूर, केशर और कस्तूरी ४–४ माशे मिलाकर पानकेरससे १–२ रोज़मर्दनकर चनेवराबर गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पानकेसाथ खाकर दूध पीनेसे वहुतसी स्त्रियोंकेसाथ रतिकरनेपरभी शुक्रक्षीण नहीं होता इन्द्रियभी शिथिल नहीं होतीहै ५७०

५७१ मार्कण्डेयचूर्णम्

शुद्धं सूतश्च गन्धश्च हिङ्गुलं टङ्कणन्तथा ।
व्योषं जातीफलञ्चैव तमालं देवपुष्पकम् ॥ २५६७ ॥
एलावीजं चित्रकञ्च मुस्तकं गजपिप्पली ।
तगरं सजलञ्चाऽभ्रं धातक्यतिविषा तथा ॥ २५६८ ॥
शिग्रुबीजं शाल्मलञ्च विशुद्धं नागफेनकम् ।
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥ २५६९ ॥
खादेदस्मात्प्रतिदिनं मापकं सितया सह ।
सङ्ग्रहग्रहणीं हन्ति मन्दाग्नित्वञ्च नाशयेत् ॥ २५७० ॥
धातुवृद्धिं वयोवृद्धिं वलपुष्टिं करोत्यपि ।
मार्कण्डेयनामेदं महादेवेन निर्मितम् ॥ २५७१ ॥

वै क, भै र, ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, शिगरिफ और सुहागा, त्रिकटु, जायफल, पत्रज, लौंग, इलायचीकेवीज, चित्रकमूल, नागरमोथा, गजपीपल, तगर, सुगन्धवाला, अभ्रकभस्म, धावड़ीकेफूल, अतीस, सहिजनकेवीज, मोचरस, अफीम, येसव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिला कर १–२ रोज घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा शक्करकेसाथ लेनेसे सङ्ग्रहग्रहणी, मन्दाग्नि, धातुक्षय, वुढ़ापा, वलहानि इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ५७१ ॥

५७२ मार्तण्डभैरवरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं गन्धात्पादांशटङ्कणम् ।
ताम्रपात्रे क्षिपेत्पिष्टं जयन्त्यालोडयेद्द्रवैः ॥ २५७२ ॥
शिग्रुमूलरसेनाऽथ भावयेच्च खरातपे ।
कटुत्रयस्य वासाया वह्निरुद्रजटाद्रवैः ॥ २५७३ ॥
तिलपर्ण्या तथा जातीपिप्पलीपत्रमूलकैः ।
द्रवैरेव तु सप्ताहं शोष्यं शोष्यं विभावयेत् ॥ २५७४ ॥
ताम्रपात्रात्समुद्धृत्य कृत्वा गोलं विशोषयेत् ।
वद्ध्वा वस्त्रमृदा चाऽथ भूधरे स्वेदयेत्पुटे ॥ २५७५ ॥
द्वियामान्ते समुद्धृत्य चूर्णयेदौषधैः सह ।
विषकर्पूरजात्येला रसस्य दशमांशतः ॥ २५७६ ॥
भावयेद्विजयाद्रावैर्दिनमेकञ्च भक्षयेत् ।
चतुर्गुञ्जं सकर्पूरमधुना सन्निपातजित् ॥ २५७७ ॥
मार्तण्डभैरवो नाम रसोऽसाध्यञ्च साधयेत् ।
दशमूलं पिबेच्चानु पथ्यं स्यान्मुद्गयूपकम् ॥ २५७८ ॥

रसचि, नि र, र सु, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ तोला, सुहागा ३ माशे लेकर सवकी नीलवर्णकज्जलीकर ताम्रके विशुद्धपात्रमें डालकर जेंतका रसभरकर धूपमें रखदे । सूखनेपर सहिजनकी जड़कीछालका स्वरस डालकर कड़ीधूपमें सुखावे । इसीतरह त्रिकटु, अड़्सा, चित्रकमूल, रुद्रजटा (ईसरजटा स० अभावमें अमरवेल), हुरहुर, जावित्री, पीपलकेपत्ते और जड़, इनप्रत्येकके रसोंसे ७–७ रोज़ भावनाएं देकर गोलावनाय सुखाले । फिर ३–४ तह कपड़े लपेटकर २–३ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर दोपहरतक भूधरयन्त्रमें आच देकर स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर वछनाग, कपूर, जावित्री, इलायची, समभागलेकर वारीक चूर्ण कर परिपक्वरससे दशांश मिलाकर भांगके स्वरस अथवा क्वाथकी २–४ भावनाएं देकर ४–४ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली आधीरत्ती कपूर और मधुकेसाथ देकर दशमूलका काढ़ा पिलानेसे यह असाध्य सन्निपातको नष्टकरताहै । भूखलगने पर मूंगकायूष देना ॥ ५७२ ॥

५७३ मार्तण्डरसः

रसश्च गन्धकं म्लेच्छं विषं नेपालकं तथा ।
फलत्रयं त्रिकटुकं जीरकं चित्रकं तथा ॥ २५७९ ॥
समभागानि चैतानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
भृङ्गस्य रसकैर्मर्द्य गुटिका गुञ्जमात्रिका ॥ २५८० ॥
वटकान्भक्षयेन्नित्यं मरिचैश्च समन्वितान् ।
सर्वज्वरहरं नित्यं सदा शीतज्वरं हरेत् ॥ २५८१ ॥
हृद्रोगञ्च कफं प्रोक्तमम्लपित्तं सुदारुणम् ।
सर्वशूलं तथा गुल्मं क्षयपाण्ड्वोश्च नाशनः ॥ २५८२ ॥
दीपनं पाचनञ्चैव समीरपित्तरोगजित् ।
रोगान्निर्मूलयेत्सत्यं मूलरोगविनाशनः ॥
आधिव्याधिहरश्चैष सर्वव्याधिनिवारणः ॥ २५८३ ॥

र क यो., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, शिगरिफ, वछनाग और जमालगोटा, त्रिफला, त्रिकटु, जीरा, चित्रकमूल सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर भंगरेके रससे १–२ रोज़ मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे शीतज्वर, हृद्रोग, कफ, अम्लपित्त, समस्तशूल, गुल्म, क्षय, पाण्डु, मन्दाग्नि, वात और पित्तकेरोग, अर्श प्रभृति समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ ५७३ ॥

५७४ मार्तण्डीगुटिका

शुद्धसूतसमं गन्धं मर्दनात्कज्जलीकृतम् ।
तत्ताम्रसम्पुटे रुद्ध्वा लवणेन मृदा दृढम् ॥ २५८४ ॥
पचेद्दीपाग्निना शुष्कं यामैकं भस्मयन्त्रके ।
सम्पुटस्योर्द्ध्वलग्नं तत्समुद्धृत्याऽथ मर्दयेत् ॥ २५८५ ॥
तुल्यपारदसंयुक्तं पूर्ववत्सम्पुटे पचेत् ।
उद्धृत्य तुल्यसूतेन संयुक्तं मर्दितं पचेत् ॥ २५८६ ॥

इत्येवं सप्तधा कुर्यात्पुनः पारदटङ्कणम् ।
तुल्यं तुल्यं क्षिपेत्तस्मिन्दिनं सर्वं विमर्दयेत् ॥ २५८७॥
वज्रमूषागतं रुद्ध्वा ध्माते खोटो भवेद्रसः।
मार्तण्डी गुटिका ह्येषा वर्षैकं यस्य वक्त्रगा ॥२५८८॥
वलीपलितमुक्तोऽसौ जीवेदाचन्द्रतारकम् ।
पलाशवीजजं तैलं पलैकं क्षीरतुल्यकम् ॥ २५८९ ॥
क्रामणं प्रपिवेन्नित्यं तत्क्षणान्मूर्च्छितो भवेत् ।
तस्य वक्त्रे गवां क्षीरं स्तोकं स्तोकं निषेचयेत् २५९०
प्रवुद्धे क्षीरमन्नं स्याद्भोजने परमं हितम् ।
तस्य मूत्रपुरीषाभ्यां ताम्रं भवति काञ्चनम् ॥
वायुवेगो महासिद्धश्छिद्रां पश्यति मेदिनीम्॥२५९१॥
र. खं., र का., रसायने।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर तांवेकेसम्पुटमें वन्दकर ३-४ कपड़मिट्टी देकर सुखादे। सूखने पर भस्मयन्त्रमें रख एकपहर दीपाग्निकी आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर ऊपरके सम्पुटमें लगेहुए पदार्थको खुरचकर उसकी वरावर कच्चा पारा मिलाकर पहिलेकी तरह सम्पुटमें वन्दकर पकावे। इसतरह ७ वारकरनेकेवाद आठवींवार सम्पुटसे निकालेहुए पदार्थकी वरावर पारा और सुहागा मिलाकर एकदिनभर मर्दनकर वज्रमूषामें वन्दकर धोंकनेसे खोट तैयारहोगा। इसको एकपहर मुंहमें रखकर पलाशके वीजोंके एकपल तैलमें वरावरका गोदुग्ध मिलाकर पीनेसे तत्क्षण मूर्च्छा होगी। मूर्च्छितसाधकके मुंहमें ताजा गायकादूध डाले, होश आनेपर दूधभात खानेको देवे। इसप्रकार एकवर्षतक प्रयोग करनेपर इसके मलमूत्रसे तावा सुवर्णहोगा। वायुके सदृश वेग वढ़ेगा और सिद्धियोंको प्राप्तहोगा। इसकेलिये आकाश पातालमे कोईभी जगह जानेकी रुकावट नहीं होगी। और ज़िमीनमें गढ़ाहुआनिधि प्रत्यक्ष दिखाई देगा ५७४

५७५ मार्तण्डेश्वररसः

समताप्ययुतं शुल्वं पलविंशतिमानकम् ।
प्रध्मातं हि चतुर्वारं खण्डयित्वा ततश्चरेत् ॥ २५९२॥
तत्तुल्यमाक्षिकोपेतं पुटेद्विंशतिवारकम् ।
गन्धकेन पुटेत्तावद्यावत्पलमितं भवेत् ॥ २५९३ ॥
क्षिपेत्पलमितं तत्र गन्धकेन हतं रसम् ।
शाणमात्रं मृतं वज्रं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ २५९४॥
इति सिद्धो रसेन्द्रोऽयं मार्तण्डेश्वरनामवान् ।
कीर्तितो लोकनाथेन लोकानां हितकाम्यया ॥२५९५॥
मरीचघृतसंयुक्तः सेवितो मण्डलार्द्धतः ।
वाताद्यष्टमहारोगांश्श्वासकासयुतं क्षयम् ॥ २५९६ ॥
हलीमकञ्च पाण्डुञ्च ज्वरानपि सुदुस्तरान् ।
इत्यादिकगदान्सर्वान्विनाशयति निश्चितम् ॥ २५९७॥
करोति दीपनं तीव्रं दीप्तानलशतोपमम् ।
सन्निपातं जयत्याशु व्योषाऽऽर्द्रकसमन्वितः ॥
सर्वसौख्यकरो नृणां स्त्रीणां वन्ध्यत्वनाशनः ॥२५९८॥
र.र स., र. सु., र चं., र स.मा., वातव्याध्यधिकारे।

भाषा—२० पल सोनामाखीका चूर्णकर नीबू वगैरहमें घोटकर उसके वरावरके तांवेकेपत्रपर लेपकरके मूषामें रख धमनकरनेसे पिण्ड सदृश वनजायगा। इसमें वरावरकी सोनामाखी डालकर २० पुट देवे। इसकेवाद वरावरका गन्धक देकर वारम्वार धमनकरे। जव १ पल तावा रहजाय तव पुटदेना वन्दकरदे। फिर इसकी वरावर केवल गन्धकसे माराहुआ पारा १ पल, हीरेकीभस्म ४ माशे लेकर सवको एकत्र मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे दो चावलकी मात्रा मिर्च और घीके साथ सातदिनतकखानेसे वातादि आठ महारोग, श्वास, कास, क्षय, हलीमक, पाण्डु, दुस्तरज्वर, मन्दाग्नि, प्रभृति रोगोंको दूरकरताहै। त्रिकटु और अदरखकेसाथ देनेसे सवप्रकारके सन्निपात और स्त्रियोंका वाझपना नष्टहोताहै ॥ ५७५ ॥

५७६ माहेश्वररसः (प्रथमः)

रसं भस्मीकृतं कोलं गन्धकं शोधितं समम् ।
लौहं कर्षद्वयं ताम्रमर्द्धकोलकसम्मितम् ॥ २५९९ ॥
सुवर्णं जारितं दद्याच्छाणार्द्धं चन्द्रभस्मकम् ।
अभ्रं कर्षद्वयं दद्याच्छाणार्द्धं सुविचक्षणः ॥ २६०० ॥
श्यामावीजं वरीञ्चैव वलामतिवलान्तथा ।
एलाञ्च शङ्खपुष्पञ्च शाणमानं विनिक्षिपेत् ॥ २६०१ ॥
जलेन वटिकां कृत्वा गुञ्जामात्रां प्रदापयेत् ।
सेवनादस्य कन्दर्परूपो भवति मानवः ॥ २६०२ ॥
सहस्रं याति नारीणामुत्साहो जायतेऽधिकः ।
नित्यं स्त्रीसेवनाद्यस्तु क्षीणशुक्रो भवेन्नरः ॥ २६०३॥
पूर्णशुक्रो भवेत्सोऽपि सेवनादस्य नाऽन्यथा ।
महावलो महावुद्धिर्जायते नाऽत्र संशयः ॥ २६०४ ॥
स्थूलानां कर्षकः श्रेष्ठः कृशानां पुष्टिकारकः ।
रसो विनाशयेद्रोगान् सप्तसप्ताहभक्षणात् ॥ २६०५॥
र सं., र सु., रसायनवाजीकरणयो ।

भाषा—पारदभस्म और शुद्धगन्धक आधाआधाकर्ष, लोहभस्म २ कर्ष, ताम्रभस्म ४ माशे, सुवर्णभस्म २ माशे, अभ्रक और रजतभस्म २–२ कर्ष, कालादाना २ माशे, शतावर, वला, गंगेरन, इलायचीकेवीज, शंखपुष्पी ये ४–४ माशे लेकर सवका वारीकचूर्णकर जलकेसाथ एकरोज़ घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियांवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानके साथ देनेसे वहुतसी स्त्रियोंकेसाथ रतिकरने परभी शुक्रका क्षय नहीं होता। जो अत्यन्त स्त्रीसङ्गकरनेसे क्षीणशुक्रहोगयाहो वहभी इसके सेवन करनेसे शुक्रसे परिपूर्ण होजाताहै। इसके सेवनसे वल और वुद्धि वढतेहैं स्थूलोको कृश और कृशोंको स्थूल वनाताहै असाध्यरोगोको ७ सप्ताहमें नष्टकरताहै ॥५७६॥

५७७ माक्षिकवद्धगुटी

व्योममाक्षिकसत्त्वञ्च तारं ताम्रं सुरायसम् ।
सूतकेन समायुक्तं रक्तादिगुणभूपिता ॥ २६०६ ॥

गुटी बद्धा वरारोहे मधुरत्रयसंयुता।
वक्त्रस्था नाशयेत्साक्षात्पलितं नाऽत्र संशयः २६०७

रसेन्द्रमं., रसायने।

भाषा—अभ्रक तथा स्वर्णमाक्षिकसत्त्व, शुद्धचादी, तावा, सुवर्ण और पारा समभाग लेकर गलाकर किसी साचेमें छिद्रयुक्त गोली वनाले। उसमें लाल अथवा काला डोरा डालकर मुंहमें रक्खे और ध्यानरहे कि गलेमें न उतरजाय, इसीलिये डोरेका विधान कियागयाहै। इसके वाद शक्कर, घी और मधु तीनों समभाग मिलाकर मुंहमें भररक्खे और थोड़ा २ गलेमें उतरने दे जिसमें कि मुंहमें १–२ घंटा गोली पड़ीरहे इसतरहका यत्न करे। इसप्रयोगसे सफेदकेश फिरसे काले होजायगे॥ ५७७॥

५७८ माक्षिकयोगः

एवञ्च माक्षिकं धातुं तापीजममृतोपमम्।
मधुरं काञ्चनाभासमम्लं वा रजतप्रभम्॥ २६०८॥
पिबन् हन्ति जराकुष्ठमेहपाण्ड्वामयक्षयान्।
तद्भावितः कपोतांश्च कुलत्थांश्च विवर्जयेत्॥२६०९॥

सु.सं, वै.क, यो.र., वै चि, प्रमेहाऽधिकारे।

टि०—वैद्यकल्पद्रुमादौ "माक्षिक धातुना लीढ मेह हरति सर्वथा" इति पाठो दृश्यते तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावोऽस्ति यो र., वै चि, एतयो "गुडूचीसत्त्वसयुक्त पित्तमेह व्यपोहति" इत्यधिक पाठ।

भाषा—तापीतटोद्भव सुवर्णमाक्षिक मधुरहोताहै और कञ्चनकेसदृश कान्तिहोतीहै तथा रजतमाक्षिक अम्लहोताहै। इनदोनोंकी भस्में समभाग मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ रत्तीसे १ माशेतककी मात्रा दूधकेसाथलेनेसे बुढ़ापा, कुष्ठ, प्रमेह, पाण्डु और क्षय इनसवको यह नष्टकरताहै। इसका सेवन करनेवाला कबूतर और कुलथीका परित्याग करे॥ ५७८॥

५७९ माक्षिकवटकः

माक्षिकं तालकमितं तदर्द्धं गन्धकं रसम्।
तथाऽभ्रञ्च समादाय मुक्तास्वर्णौ च पादिकौ २६१०
काकमाचीपत्ररसैस्त्रिधा सम्भाव्य यत्नतः।
रक्तिद्वयमिता कार्या माक्षिकादिवटीशुभा॥ २६११॥
वेष्टिता पद्मपत्रेण धान्यराशौ निधापिता।
यथायोग्याऽनुपानेन सेविता संहरेन्नृणाम्॥
नेत्ररोगांश्च निखिलान्नानोपद्रवसंयुतान्॥ २६१२॥

आ.वि., नेत्ररोगाऽधिकारे।

भाषा—सुवर्णमाक्षिक और हरितालभस्म १–१ तोला, शुद्धपारा, गन्धक और अभ्रकभस्म ६–६ माशे, मोती तथा सुवर्णभस्म ३–३ माशे लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर मकोयकेपत्तोंकेरससे तीनदिनमर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर छायामें अर्द्धशुष्ककर कमलके ताजेपत्तेमें लपेटकर सूतसे वाधकर धान्यकीराशिमें ७ दिनतक रखकरनिकालले और अच्छीतरह सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ सेवनकरनेसे नानातरहकेउपद्रवोंकेसाथ नेत्रोंके समस्तरोगोंको यह दूरकरतीहै॥ ५७९॥

५८० माक्षिकादिचूर्णम्

माक्षिकं पारदं गन्धं खर्परं गिरिमृत्तिकाम्।
शिलाजत्वभ्रलोहानि शाल्मल्याः कुसुमं त्वचम् २६१३
विदारीं गोक्षुरं बीजं चैकत्र परिमर्दयेत्।
माषमात्रं प्रयुञ्जीत शुक्रमेहनिवृत्तये॥ २६१४॥

भै.र, शुक्रमेहे।

भाषा—माक्षिकभस्म, शुद्धपारा, गन्धक, खपरिया, गेरू, शिलाजतु, अभ्रक और लोहभस्म, सेमलकेफूल तथा छाल, विदारीकन्द, गोखरू, हीरादक्खन, सव समभागलेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ रोज़ सुखामर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा दूध वगैरहकेसाथ देनेसे यह शुक्रप्रमेहको नष्टकरताहै॥ ५८०॥

५८१ मांसजारणरसः

नागवल्लीदलोद्भूतवारिसाधितपारदः।
वन्ध्याकर्कोटकीकन्दपुटितो म्रियते क्षणात्॥ २६१५॥
सूतं नागं विषं व्योषं सैन्धवञ्च सुवर्चलम्।
समांशं भक्षितं चूर्णं मांसाहारविनाशनम्॥ २६१६॥
अजीर्णशूलमाध्मानच्छर्दिमारुतनाशनम्।
विसूचिकागुल्मकासानूर्द्ध्ववातं तथैव च॥ २६१७॥

र (मा), र.वो., अजीर्णाऽधिकारे।

भाषा—पके नागरवेलके पानोंकेरससे शुद्धपारेको पिष्टीहोनेतक घोटकर गोलीवनाय वाझखेखसाके कन्दमें रखकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर दोसेर कण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकरदेखे यदि भस्म होनेमें कुछ कसररहीहो तो दुवारा करे। इसतरह कीहुई पारदभस्म, नागभस्म, शुद्धवछनाग, त्रिकटु, सेंधा और सचल नमक येसव समभाग लेकर खरलकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे अत्यधिकखायाहुआमास जल्दी पचजाताहै। अजीर्ण, शूल, आध्मान, वमन, वातप्रकोप, हैज़ा, गुल्म, कास, ऊर्द्ध्ववात इनसवको यह नष्टकरताहै॥ ५८१॥

५८२ मिहिरोदयरसः

माक्षिकं रजतं लोहं सिन्दूरं वह्निवारिणा।
भावयित्वा विमर्द्याऽथ कृत्वा रक्तिमिता वटीः २६१८
एकैकां खादयेदासां त्रिफलाद्भिरहर्मुखे।
मिहिरोदयनामाऽयं स्नायुमूलं रसो हरेत्॥ २६१९॥

आ.वि., स्नायुरोगे।

भाषा—सुवर्णमाक्षिक, चादी और लोहभस्म, रससिन्दूर सव समभागलेकर चित्रकमूलकेक्काथसे २–३ रोज़ मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली त्रिफलाकेक्काथसे प्रातःकाललेनेसे यह नहरुवेको जड़से खोताहै॥

५८३ मिहिरोदयवटी

लौहमभ्रं सुवर्णञ्च विद्रुमं राजपट्टकम्।
सर्वं समं प्रदातव्यं सिन्दूरञ्च द्विभागिकम्॥ २६२०॥

एरण्डमूलजेनैव रसेन परिभावयेत्।
क्वाथैस्तथा जटामांस्या वटी रक्तिद्वयात्मिका २६२१
पथ्यापयोऽनुपानेन वटीयं मिहिरोदया।
अर्द्धावभेदकं हन्ति पीता वातमनन्तकम् ॥ २६२२ ॥
सूर्यावर्त तथा शङ्खश्चैकजञ्च द्विदोषजम्।
त्रिदोषजं शिरोरोगं साध्यासाध्यं न संशयः ॥२६२३॥

आ. वि., शिरोरोगे।

भाषा—लोह, अभ्रक, सुवर्ण, मूंगा, राजावर्त इनकीभस्में १–१ भाग, रससिन्दूर २ भाग लेकर सबको वारीकपीस एरण्डमूल और जटामासीके क्वाथसे १–१ रोज़ मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली हर्रेके काढ़ेकेसाथ लेनेसे अर्धावभेद, अनन्तवात, सूर्यावर्त, शङ्खक, एकदोषज, द्विदोषज और त्रिदोषज साध्य अथवा असाध्य शिरकेरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५८३ ॥

५८४ मुक्तागर्भपोट्टलीरसः (प्रथमः)

मौक्तिकं कनकसूतगन्धकं वृद्धितोऽग्निपयसा विमर्दयेत्
वासरं पृथुवराटकांस्ततः पूरयेच्च पुटयेच्च पूर्ववत् ॥
मुक्तगर्भवरपोट्टलीरसो जायते क्षयविनाशनः परः।
रक्तिकात्रयमितं रसं पिवेद्वल्लषट्कमरिचै घृतप्लुतैः ॥
सर्वरोगविनिवृत्तये तथा योजयेन्न कुरु तत्र संशयम्।
रोगजालरहितेऽपि योजयेत्पुष्टिदीप्तिधृतिवीर्यवृद्धये॥

र. शं, र. दी., क्षये।

भाषा—मोतीकीभस्म १ भाग, सुवर्णभस्म २ भा., शुद्धपारा ३ भा. और गन्धक ४ भाग लेकर चित्रकमूलके क्वाथसे एकरोज़ मर्दनकर वड़ेकौडोंमें भरके गुड़, सुहागा और चूनेसे मुंहवन्दकर हंडीमें रख ढक्कनलगाकर ३–४ कपड़मिट्टी करदे। सूखनेपर एकमन कण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा १८ रत्ती कालीमिर्चोंके चूर्णकेसाथ घीमें मिलाकर खानेसे यह समस्तरोगोंको निवृत्तकरताहै। इसको रोगरहितमनुष्य खाय तो पुष्टि, अग्निदीप्ति, धैर्य और वीर्यकीवृद्धि होतीहै ॥ ५८४ ॥

५८५ मुक्तागर्भपोट्टलीरसः (द्वितीयः)

मृतं स्वर्णं मुक्ता विषचपलमंशं समवलिं,
द्विघस्रं सम्मर्द्य ज्वलनपयसा गोलकमिदम्।
समुद्रस्त्रैर्वेष्ट्यं मुनिमितमथो रोपय पुटे,
सुभाण्डस्थं भाण्डे विपच दिनमेकं हिममिदम् ॥
तथा गुञ्जे पाण्डौ ज्वररुजि समेहे गदपतौ,
विशुक्रे मुक्तापोट्टलिरथ मरीचाज्यविहिता ॥

र शं, क्षये।

भाषा—सुवर्ण और मोतीभस्म, शुद्ध वछनाग और पारा १–१ भाग, शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें सबचीजें मिलाकर चित्रकमूलकेक्वाथसे दोरोज़ मर्दनकर गोलाबनाय २–३ तह मलमलके कपड़ेमें लपेटकर ७ कपड़मिट्टी देकर सुखावे। फिर शरावसम्पुटमें वन्दकर लवण अथवा भस्म अथवा वालुकायन्त्रमें रख एकदिनकी मध्यम अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती मरिच और घीकेसाथ देनेसे जीर्णज्वर, प्रमेह, राजरोग, शुक्रक्षय, इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ५८५ ॥

५८६ मुक्तादिचूर्णम्

मुक्ताप्रवालवैदूर्यशङ्खस्फटिकमञ्जनम्।
ससारगन्धकाचाऽर्के सूक्ष्मैला लवणद्वयम् ॥ २६२८ ॥
ताम्राऽयोरजसी रूप्यं ससौगन्धि कशेरुकम्।
जातीफलं शणाद्वीजमपामार्गस्य तण्डुलाः ॥ २६२९ ॥
एषां पाणितलं चूर्णं तुल्यानां क्षौद्रसर्पिषा।
हिक्कां श्वासञ्च कासञ्च लीढमाशु नियच्छति॥२६३०
अञ्जनात्तिमिरं काचं नीलिकं पुष्पकं तमः।
पैल्यं कण्डुमभिष्यन्दं मन्दञ्च तत्प्रणाशयेत् ॥ २६३१ ॥

च. स., अ सं, हिक्काश्वासकासेषु।

टि०—"शङ्ख समुद्रफेनञ्च मण्डूकीञ्च समुद्रजाम्। स्फटिकं कुरुविन्दञ्च प्रवालाश्मन्तकन्तथा ॥ वैदूर्योपलक मुक्तामयस्ताम्ररजांसि च। समभागानि सम्पिष्य सार्द्धं स्रोतोऽञ्जनेन तु ॥ चूर्णाऽञ्जन कारयित्वा भाजने मेषश्रृङ्गजे। सस्थाप्योभयत कालमञ्जयेत्सतत बुध ॥ अर्माणि पिडका हन्यात् सिराजालानि तेन वै ॥ सु स., उ अ १५।२५–२८,, इति सुश्रुतीयप्रयोगे प्राय प्रधानानि द्रव्याणि समागतानि परन्तु स अञ्जनतया विन्यस्त, अग्निवेशेन तु द्वित्रवस्तुषु व्यत्यय कृत्वा तद्भक्षणे प्रयुक्तमिति सुधीभिर्विभावनीयम्। सुश्रुतीयप्रयोगोऽपि भक्षणे प्रयुक्तश्चेच्चरकोक्तगुणानप्यतिशयिष्यत इत्यस्माकमभिप्राय। एव–"सप्तौ भागानञ्जनस्य नीलोत्पलसमद्युते। औदुम्बर शातकुम्भ राजतञ्च समासत ॥ एकादशैतान्भागास्तु योजयेत्कुशलो भिषक। मूषाक्षिप्त तदाध्मातमावृत जातवेदसि ॥ खदिराऽश्मन्तकाङ्गारै गोशकृद्भिरथापि वा। गवा शकृद्रसे मूत्रे दध्नि सर्पिषि माक्षिके ॥ तैलमद्यवसामज्जसर्वगन्धोदकेषु च। द्राक्षारसेक्षुत्रिफलारसेषु सुहिमेषु च ॥ सारिवादिकषाये च कषाये चोत्पलादिके। निषेचयेत्पृथक् चैन ध्मात ध्मात पुन पुन ॥ ततोऽन्तरीक्षे सप्ताह प्लोतबद्ध स्थित जले। विशोष्य चूर्णयेन्मुक्ता स्फटिक विद्रुम तथा॥ कालानुसार्यञ्च तथा शुचिरावाप्य योगत। एतच्चूर्णाञ्जन श्रेष्ठ निहित भाजने शुभे ॥ दन्तस्फटिकवैदूर्यशङ्खशैलासनोद्भवे। शातकुम्भेऽथ शार्ङ्गे वा राजते वा सुसस्कृते ॥ सहस्रपाक्तवरपूजा कृत्वा राज्ञ. प्रयोजयेत्। तेनाऽञ्जिताक्षो नृपति भवेत्सर्वजनप्रिय. ॥ अधृष्य' सर्वभूताना दृष्टिरोगविवर्जित ॥ सु स उ. १८।८५,, अयमपि योगो भक्षणे चरकोक्तयोगगुणानतिशयिष्यते प्रधानतया प्रमेह, ग्रहणी, पाण्डु, धात्वोज-क्षयादिक शीघ्र शमयिष्यति इति रहस्यम्।

भाषा—मोती, मूगा, लसनियां, शङ्ख, स्फटिक, श्वेताञ्जन, सुवर्ण इनकी भस्में, शुद्ध गन्धक, श्वेतकाचभस्म, सूर्यकान्तभस्म अथवा आककी जड़की छाल, छोटीइलायची, सेंधा और सांभरनमक, ताम्र, लोह और चादीभस्म, सहस्रदलकमल (श्रीकमल नामक भूटान की तर्फ होताहै), कसेरू, जायफल, शणकेबीज, अपामार्गके चावल येसव समभाग लेकर वारीक चूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ माशेसे ६ माशेतक प्रकृति, देश और कालादिकको विचारकर मधु और घीकेसाथ देनेसे हिचकी, श्वास, कास, इनसवको यह नष्टकरताहै। अञ्जनकरनेसे तिमिर, मोतिया,

नीलिका, पुष्प और तम, खील, खुजली, आसोंका दुखना, मन्ददृष्टि इनसबको नष्टकरताहै । यहापर यह विशेषकर ध्यानमें रखना उचितहै कि जब इसयोगको अञ्जनकेनिमित्त बनानाहो तव धातुओंकीभस्में न लेकर शुद्धकरके बहुत बारीकरेता करके अंगरा-वगैरहकेरससे यहांतक घोटे कि धातुओंकेकण नाबूद होजांयं ॥

५८७ मुक्तापञ्चामृतरसः

मुक्ताप्रवालखुरवङ्गककम्बुशुक्ति-
भूतिं वसूद्धिदिगिन्दुसुधांशुभागाम् ।
इक्षो रसेन सुरभेः पयसा विदारी-
कन्यावरीसुरसहंसपदीरसैश्च ॥ २६३२ ॥
सम्मर्द्य यामयुगलञ्च वनोपलाभि-
र्दद्यात्पुटानि मृदुलानि च पञ्चपञ्च ।
पञ्चामृतं रसविभुं भिषजा प्रयोज्यं
गुञ्जाचतुष्टयमितं चपलारजश्च ॥ २६३३ ॥
पात्रे निधाय चिरसूतपयस्विनीनां
दुग्धेन च प्रपिबतः खलु चाल्पभोक्तुः ।
जीर्णज्वरः क्षयमियादथ सर्वरोगाः
स्वीयानुपानकलिताश्च शमं प्रयान्ति २६३४

यो. र , नि र , र त., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—मोती ८ भाग, मूंगेकीपिष्टी ४ भाग, हिरण-खुरीरागाकी भस्म २ भा , शङ्ख और मोतीसीपभस्म १–१ भा , लेकर बारीकपीसकर ईखकारस, गायकादूध, विदारीकन्द, घीकुंआर, शतावर, तुलसी, हंसराज, इनसबकेरसोंसे २–२ पहर मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर दो सेर जङ्गलीकण्डोंकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर इसीतरह आचदे । ऐसे प्रत्येक औषधिकी ५–५ पुटें देकर पञ्चामृतकी पाचआंचें देवे। इसमेंसे ४–४ रत्तीकीमात्रा पीपलके-चूर्णकेसाथ मधुमें मिलाकर खावे ऊपरसे बहुतदिनकी व्यायीहुई-गायका दूधलेकर थोड़ाभोजनकरनेसे जीर्णज्वर, क्षयप्रभृति समस्तरोग अपने २ अनुपानोंकेसाथ लेनेसे शान्त होतेहैं ॥५८७॥

५८८ मुक्ताभस्मयोगः

कटुकागैरिकाभ्याञ्च मुक्ताभस्म तथैव च ।
बीजपूरस्य तोयेन ताम्रं तद्वत्समाक्षिकम् ॥ २६३५ ॥

यो र , र सु , र चं , रसायनसं , र क.ल हिक्कायाम् ।

टि०–हिक्काश्वासनिर्वहणमिति पूर्वस्मादधिक्रियते ।

भाषा—कुटकी, सोनागेरू और मोतीभस्म समभाग लेकर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ माशेकीमात्रा विजोरेकेरससे लेनेसे हिचकी और श्वास नष्टहोते हैं । इसीतरह ताम्र और सुवर्णमाक्षिकभस्म समभागमिलाकर २रत्तीकी मात्रा विजोरेके-रसकेसाथलेनेसे श्वास और हिचकी नष्टहोते हैं ॥ ५८८ ॥

५८९ मुक्तामृगाङ्करसः

रुक्मं तीक्ष्णञ्च कान्तं रजतरसभवं भस्म वङ्गाहि तुल्यं,
मुक्ता सर्वैः समाना द्विगुणमथ रसाद्गन्धकं टङ्कणञ्च ।
पादांशं सर्वमेतत्तुपभवमृदितं पूर्ववद्यन्त्रपक्वं
स्वाङ्गं शीतं मृगाङ्कं मृगमदतुलितं यक्ष्मरोगे प्रशस्तम्॥

र प , राजयक्ष्माऽधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण, फोलाद, कान्तलोह, चांदी और पारा इनकीभस्में १–१ भाग, वङ्ग और नागभस्म ढाई २॥ भाग, मोतीकीभस्म १० भा., शुद्धगन्धक २ भा., भुनासुहागा ५॥ भा., लेकर सबका बारीकचूर्णकर तुषाम्लमें ४ पहर मर्दनकर गोलाबनाय मैनफलके पत्तोंसे लपेटकर ३–४ कपड़मिट्टी लगा-कर सुखाले । सूखनेपर नई हंडीमें पिसेहुए समुद्रके नमकमें गोलेको दबाकर ४ पहरकी मृदुआच देकर पकावे । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर धतूरा, भांग, खसखस, तिल और घीकुंआर इनप्रत्येकके स्वरसोंसे ४–४ पहर मर्दनकर गोलाबनाय सेंधानमक बारीकपीसकर गोलेपर बुरकादे फिर धतूरेप्रभृतिके रसमें उड़दके आटेको सानकर गोलेपर चढ़ाय लवणयन्त्रमें रग ३ पहर मन्दअग्निसे पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा बराबरकीकस्तूरीकेसाथ मिलाकर देनेसे उपद्रवोंसहित राजयक्ष्मको यह नष्टकरताहै ५८९

५९० मुखरोगहरीवटी (प्रथमा)

रसगन्धौ समौ ताभ्यां द्विगुणञ्च शिलाजतु ।
गोमूत्रेण विमर्द्याऽथ सप्तधाऽऽर्द्रद्रवेण च ॥ २६३७ ॥
जातीनिम्बमहाराष्ट्रीरसैः सिद्ध्यति पाकहा ।
कणामधुयुता हन्ति मुखरोगं सुदारुणम् ॥ २६३८ ॥
गुञ्जाऽष्टकमिता तालुगलोष्ठदन्तरोगनुत् ।
महाराष्ट्र्यश्वगन्धाभ्यां मुखञ्च प्रतिसारयेत् ॥२६३९॥
धारणात्सेवनाच्चैव हन्ति सर्वान्मुखामयान् ।
सर्वास्यामयजित्सेव्यो मधुना पर्पटीरसः ॥ २६४० ॥

र सं , र सु , र चि , रसायन सं , र. कौ , भै. र , र का , र. सि., र क मुखरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ भाग, शुद्धशिलाजीत ४ भा , लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर शिलाजीतमें मिलाकर गोमूत्र, अदरख, चमेली और नीमकीछाल तथा महा-राष्ट्री (मराठी) इनके रसोकी ७–७ भावनाए देकर ८–८ रत्तीकीगोलियें बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पीपल और मधुकेसाथ खानेसे यह मुखके समस्तरोगोंको दूरकरतीहै । मुखमेंरखनेसे गले, ओष्ठ और दातोंके रोगोंको नष्टकरतीहै । मराठी और असगन्धके चूर्णसे दन्तमञ्जन करना-चाहिये । इसगोलीको खानेमें तथा दांतोंमें घिसनेकेकाममें लानाचाहिये । इसीतरह मधुकेसाथ पर्पटीरसके लेनेसे भी समस्त मुखरोग नष्टहोतेहैं ॥ ५९० ॥

५९१ मुखरोगहरीवटी (द्वितीया)

अभ्रककम्बुकभवजयुतं
त्रिफलाग्निपलाशफलैस्त्रिदिनम् ।
प्रमटङ्कणकेन विमर्दय तं
वटिकां कुरु तां तु सुवेष्ट्य मृदा॥२६४१॥

गुडगुग्गुलुगोमयटङ्कणकैः
क्रमतश्च सुवेष्ट्य विशोषय ताम् ।
धमयेत दृढानलयन्त्रवरे
ध्रुवबन्धनमेति सकिट्टयुतः ॥ २६४२ ॥
सितकाचसुटङ्कणकाज्ययुतं
निपुणं धमयेच्च मलं सकलम् ।
विजहाति स तेन समं कनकं
वरतारसुशुल्वदलं यदि वा ॥ २६४३ ॥
रसराजसमं कुरु तत्त्रितयं
धमयेत रसेन तु लेपय तम् ।
सुदिने गुरुसंयुतमान्यनरा-
नुपचारगणैरुपपूज्य ततः ॥ २६४४ ॥
वदने गुटिका प्रणयेत धृता
दशने दृढदा मुखरोगहरा ।
अनिलादिगदानपहन्ति सदा
किल माससुधारणयाऽथ भवेत् ॥
वरबुद्धिकरा बलदा प्रबला
पलितादिहरा च समायुगले ॥ २६४५ ॥

र. दी. मुखरोगे ।

भाषा—अभ्रकसत्त्व अथवा धान्याभ्रक, शुद्ध, शुद्धपारा, समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेमें मिलाकर एकदिन सूखा-मर्दनकर त्रिफला, चित्रक, पलाशकेबीज इनके क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर सबकी बराबर सुहागा मिलाकर तीनोंके इकट्ठेक्वाथसे एकदिन मर्दनकर गोली बनाय पुराने वस्त्रके कतरन और मिट्टीको कूटकर एकजीव होनेपर एकलेपदेकर सुखावे । फिर गुड़, गूगल, गोबर और सुहागा इनका १–१ लेपदेकर सुखाकर कुठालीमें रख दृढाग्निसे धमनकरनेसे खोट (किट्टसदृशपदार्थ) तैयार होगा। इससमस्तको इकट्ठाकर सफेदकाच, सुहागा और घी मिलाकर कुठालीमें रखकर धमनकरनेसे मल अलग होकर रस पृथक् होजायगा । फिर सुवर्ण, चांदी और तावा इनका बारीकरेता अथवा वर्क रसकीबराबर मिलाय गलाकर पत्र बनावे और पूर्वरसके ऊपर लपेटकर गोलीकेसदृश बनाले । शुभमुहूर्तमें गुरु और पूज्यलोगोकी पूजाकर इसगोलीको मुंहमें रखनेसे दन्तरोग, मुखरोग, वात, पित्त तथा कफरोग एकमही-नेमें दूरहोतेहैं । बुद्धिकी मन्दता, धातुओंकी कमज़ोरी, वली और पलित दोवर्षमें नष्टहोतेहैं ॥ ५९१ ॥

५९२ मुखरोगहरीवटी (तृतीया, चतुर्थी)

कनकार्क सुतारयुतं भवजं
यदि वा कुरु तं वदने निहितम् ।
यदि वाऽर्कजचक्रनिबद्धरसं
घनकान्तयुतं वदने सुखदम् ॥ २६४६ ॥

र. दी , मुखरोगे ।

भाषा—शुद्ध सोना, तावा, चादी और अग्निस्थायी पारा इनसबको गलाकर गोलीबनाय मुखमें रखनेसे मुख और दांतोंके रोग दूरहोकर अग्नि प्रदीप्तहोताहै । अथवा अनलरस (सं. १२५) में कहेहुए प्रकारसे पारेको बाध अभ्रकसत्त्व और कान्तसत्त्वको मिलाकर नियामकगणसे २–३ दिन घोटकर कुठालीमें रखकर गलावे और गोलीके आकारमें बनाकर रखले । इसगोलीको मुंहमेंरखनेसे तमाम मुखरोग नष्टहोतेहैं ॥ ५९२ ॥

५९३ मुद्राघोटक रसः

पारदो गन्धकश्चैव त्रिक्षारं लवणत्रयम् ।
गुग्गुलुर्वत्सनाभश्च प्रत्येकन्तु द्विमाषकम् ॥ २६४७ ॥
कृष्णोन्मत्तजटानीरैः र्भावयेत्सप्तवारकम् ।
गोक्षुरेन्द्रकमारीपकरञ्जचित्रतेजिकाः ॥ २६४८ ॥
भूकुरुवकलताभिश्च त्रिफलावृहतीरसैः ।
मर्दिता वटिका कार्या कृष्णलाफलसन्निभा ॥२६४९॥
ततो वटीद्वयं दत्त्वा यत्नात्पाठादिभिर्युतः ।
रसः सर्वज्वरं हन्ति क्षणमात्रान्न संशयः ॥ २६५० ॥

भै र., र. सु , ज्वराऽधिकारे ।

टी०—अत्र रसे भूकुरुवकलताभिश्चेति पाठे केनचिद् भूमिझिण्टीति व्याख्यात तन्न सम्यक्? भूमिझिण्टेरप्रसिद्धत्वात् । तस्माद्भूरिति पृथग्वस्तु तच्च पृथ्वीकाशब्देन सुश्रुताद्यै व्यवहृत, लोके तस्य कालीजीरीति नाम। यद्यपि डल्हणादिभि तत्स्थाने बहुप्रकार स्वाऽज्ञानमुद्भावि परन्तु तत्स-र्वमाचार्यस्य नाऽभिप्रेत प्रकरणानुरोधा-द्वनस्पतिविवरणे एतद्विस्त-रेण विवेचयिष्याम । अमरप्रभृतिभि र्वनस्पतिविज्ञान रसातलमनाय्यत-स्तदर्वाचीनै पृथ्वीशब्दो बृहदेलिकाया सङ्केतित , तदनुसारेण चेदत्र भूशब्दस्य व्याख्या क्रियेत तर्हि बृहदेलिका ग्रहीतव्या। कुरुवकेन सहचरो ग्राह्यो रक्तवर्णाद्यन्यतर , लताशब्देन मञ्जिष्ठा ग्राह्या प्रकरणानुरोधात् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, तीनोंक्षार (सज्जी सुहागा और यवक्षार), तीनोंनमक (सेंधा, साभर और संचल), गूगल, शुद्धवछनाग ये प्रत्येक २–२ माशे लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर कालेधतूरेकीजड़के-रससे सातवार भावनाए देकर गोखरू, कुरैया, मरसा, करंज, चित्रक, तेजबल अथवा तुंबुल, कालीजीरी, पियावासा, मजीठ, त्रिफला, बनभाटा, इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर गुञ्जाप्रमाण गोलियांबनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ गोली पाठा, खस, सुग-न्धवालाकेक्वाथ अथवा हिमकेसाथ देनेसे सबप्रकारकेज्वर क्षणमात्रमें नष्टहोजातेहैं ॥ ५९३ ॥

५९४ मुशलीपाकः

मुशलीकन्दचूर्णन्तु क्षीरेऽष्टगुणिते पचेत् ।
प्रस्थमात्रं प्रदातव्यं चूर्णमेषां पृथक् पलम् ॥ २६५१ ॥
व्योषं त्रिजातं हपुषा शताह्वा शतमूलिका ।
अजाजी दीप्यकश्चैव चित्रको गजपिप्पली ॥ २६५२ ॥
यवानी ग्रन्थिकं धात्री शटी गोक्षुरधान्यकम् ।
अश्वगन्धाऽभयामेधाः सिन्धुशोषो लवङ्गकम्॥२६५३॥
जातीफलं जातिपत्री नागकेसरकं क्षुरः ।
बला चातिबला नागबला मर्कटबीजकम् ॥ २६५४ ॥

यष्टी शालमलिनिर्यासः शृङ्गाटाऽम्बुजवीजकम्।
त्वक्क्षीरिका वालकश्च कङ्कोलाऽऽकल्ककं हिमम्॥२६५५॥
लुञ्चितानां तिलानान्तु प्रस्थाऽर्द्धमिह योजयेत्।
भस्मसूतपलाऽर्द्धन्तु पलमभ्रकलोहयोः॥२६५६॥
सर्वद्विगुणखण्डस्य पाकं कृत्वाऽत्र योजयेत्।
भैषज्यानां गणं सर्वं वटीः कुर्याद्विचक्षणः॥२६५७॥
अर्धमुष्टिमितास्तास्तु शुभेऽहनि विचक्षणः।
इष्टदेवं समभ्यर्च्य खादेदेकामहर्मुखे॥२६५८॥
ततः किञ्चित्पयः पेयं खादेद्भक्ष्यकमुत्तमम्।
मन्दाग्निगुल्ममेहार्शःश्वासकासव्रणक्षयान्॥२६५९॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च शुक्रक्षैण्यञ्च दृक्क्षयम्।
वातरोगं पित्तरोगं कफरोगं तथैव च॥२६६०॥
पाण्ढ्यञ्च प्रदरं स्त्रीणां शुक्रदोषमुरःक्षतम्।
रजोदोषं मूत्रकृच्छ्रं मूत्राघातं तथाऽश्मरीम्॥२६६१॥
मलदोषं तथाऽऽनाहं कार्श्यप्रावल्यमुल्वणम्।
वातरक्तञ्च हन्त्येष मुशलीकन्दलेहकः॥२६६२॥
अग्निकृत्कान्तिकृत्तेजोवृद्धिकृत्कामवृद्धिकृत्।
अश्विभ्यां निर्मितो योगो वलीपलितनाशनः॥२६६३॥
क्षीणशुक्रान्नरान्दृष्ट्वा नारीश्च क्षीणवीर्यकाः।
तालमूल्यवलेहोऽयं निर्मितो धरणीतले॥
नास्त्यनेन समो योगो विशेषाच्छुक्रवृद्धये॥२६६४॥

रसायन सं., वृ यो त, रसायने।

भाषा—एकसेर मुशलीकाचूर्ण लेकर ८ सेर दूधमें मन्द आंचसे पकावे। मावाहोजानेपर त्रिकटु, तज, पत्रज, इलायची, हाउवेर, सोंफ, शतावर, जीरा, अजमोद, चित्रक, गजपीपल, अजवाइन, गठिवन, आंवला, नरकचूर, गोखरु, धनियां, असगन्ध, हर्रे, नागरमोथा, समुद्रशोष, लौंग, जायफल, जावित्री, नागकेसर, तालमखाना, वला गगेरन, कंघी, नागवला, केवाच, मुलहठी, मोचरस, सिघाड़े, कमलगट्टा, तीखुर, सुगन्धवाला, शीतलचीनी, अकलकरा, सफेदचन्दन, येसव १-१ पल, छिलकेरहित तिल आधसेर, पारदभस्म आधापल, अभ्रक और लोहभस्म १-१ पल लेकर सवसे दूनी शक्करकी चाशनीकर मावेको डालकर कुछपानीकाअंशहोतो सुखादना। फिर सवचीजें मिलाकर २-२ तोलेके मोदकवनालेना। इनमेंसे १-१ मोदक शुभमुहूर्तमें इष्टदेवकापूजनकर प्रात कालखाकर थोड़ा गरमदूध पीवे। इसकेसेवनसे मन्दाग्नि, गुल्म, प्रमेह, अर्श, श्वास, कास, व्रण, क्षय, कामला, पाण्डु, शुक्रकी क्षीणता, दृष्टिकीकमजोरी, वात, पित्त तथा कफकेरोग, नपुंसकत्त्व, प्रदर, शुक्रदोष, उरःक्षत, रजोदोष, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, पथरी, मलदोष, आनाह, कृशता, वटाहुआवातरक्त इनसवको यह नष्टकरताहै। हमेशा सेवनकरनेसे समस्तरोगोंसे निर्मुक्तहोकर दीर्घायु होताहै॥ ५९४॥

५९५ मुस्तादिमण्डूरम्

मण्डूरं चूर्णितं कृत्वा मुस्ता वदरमूलकम्।
कणा शुण्ठी यवक्षारं पञ्चानां समचूर्णकम्॥२६६५॥
चूर्णतुल्यञ्च मण्डूरं गोमूत्राऽष्टगुणं भवेत्।
तत्तुल्यञ्च गवां क्षीरं पचेन्मृद्वग्निना शनैः॥२६६६॥
पिण्डितं कोलमात्रन्तु भक्षयेच्छूलनुद्भवेत्।
प्रातर्मध्याह्नरात्रीषु भक्षयेद्वटिकात्रयम्॥
मांसं पिष्टञ्च गुर्वन्नं माषादींश्च विवर्जयेत्॥२६६७॥

व रा, शूले।

भाषा—१०० वर्षपुरानेमण्डूरकीभस्म और नागरमोथा, झरवेरीकीजडकीछाल, पीपल, सोंठ, यवक्षार सवसमभागकाचूर्ण मण्डूरकीवरावर लेकर अठगुना गोमूत्र और दूध डालकर लोहेकी कड़ाहीमें मन्दाग्निसे पकावे। गुड़कीतरह चाशनीहोनेपर उतारकर चिकनेवर्तनमें रखछोड़े। इसमेंसे सुवह, मध्याह्न और रात्रिमें आधेआधे तोलेकी दो अथवा तीन गोलिया खावे। मास, पिष्टमयपदार्थ, उड़द और भारीचीजें न खाय। इसके सेवनसे समस्तशूल, पाण्डु और कामला प्रभृति रोग नष्टहोतेहैं ५९५

५९६ मूत्रकृच्छ्रहररसः

विदारी गोक्षुरं यष्टी केशरञ्च समं पचेत्।
तत्कषायं पिवेत्क्षौद्रै रसभस्मयुतं पुनः॥
मूत्रकृच्छ्रं हरेत्सर्वं सप्ताहात्पित्तसम्भवम्॥२६६८॥

भै. र, ध, मूत्रकृच्छ्रे।

भाषा—विदारी, गोखरू, मुलहठी, नागकेसर, सव समभाग लेकर दो तोलेका चौगुने पानीमें काढावनावे। चतुर्थांशावशेष रहनेपर छानकर मधुका प्रक्षेपदेकर एकरत्ती पारदभस्म मधुमें चाटकर काढ़ा पीवे तो सातदिनकेसेवनसे पित्तोत्थ मूत्रकृच्छ्र नष्टहोवे॥ ५९६॥

५९७ मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः (प्रथमः)

शतावरीरसैः पिष्ट्वा मृतं सूतञ्च तालकम्।
शिखितुत्थञ्च तुल्यांशं दिनैकं मर्दयेद् दृढम्॥२६६९॥
तद्गोलं सार्षपे तैले पाच्यं यामञ्च चूर्णयेत्।
मूत्रकृच्छ्रान्तकश्चाऽस्य क्षौद्रैर्गुञ्जाचतुष्टयम्॥२६७०॥
भक्षणान्नाऽत्र सन्देहो मूत्रकृच्छ्रं निहन्त्यलम्।
तुलसीं तिलपिण्याकं विल्वमूलं तुषाम्बुना॥
कर्षैकं वाऽनुपानेन सुरया वा सुवर्चलैः॥२६७१॥

र स, ध, र र, यो म, र सु, र चि, र क., र चं, र र. कौ, चि क्र, र. र स., र का, व रा, र. क ल, र. को, मूत्रकृच्छ्रे। र. क शिखितुत्थस्थाने गन्धकं नियोजितम्। कुत्रचित्तालस्थाने ताम्रं नियोजितम्। र का. मूत्रकृच्छ्रारिः। यो म मृतसूतः।

भाषा—पारद, हरिताल और तुत्थभस्म समभाग लेकर शतावरीके अङ्गस्वरससे एकरोज़ मर्दनकर गोलावनाय सरसोंके तेलमें एकपहर मध्याग्निसे पाचनकरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ४-४ रत्ती मधुकेसाथ देकर तुलसी, तिलकीखली, वेलकीजड़कीछाल सव समभाग लेकर १ तोला तुषाम्बु अथवा मद्य अथवा सञ्चलकेजलकेसाथ लेनेसे मूत्रकृच्छ्र नष्टहोताहै॥ ५९७॥

५९८ मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः (द्वितीयः)

रसगन्धयवक्षारं सितातक्रयुतं पिबेत्।
मूत्रकृच्छ्राण्यशेषाणि निहन्ति नियतं नृणाम्॥२६७२॥

र. सं, र का, र. चं., र. र दी, रसायन सं., मूत्रकृच्छ्रे। र का., र.र.दी., गन्धो न दृश्यते नाम च सूतभस्मप्रयोगः।

भाषा—शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जली, यवक्षार और शक्कर सब समभाग मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ माशे छाछकेसाथ लेनेसे सवप्रकारके मूत्रकृच्छ्र नष्टहोतेहैं ॥ ५९८ ॥

५९९ मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः (तृतीयः)

पारदाभ्रकवैक्रान्तहेमकान्तानि गन्धकम्।
मौक्तिकं विद्रुमश्चैव प्रत्येकं स्यात्समं समम्॥२६७३॥
जम्भारसेन सम्मर्द्य मूपायां सन्निरोधयेत्।
पञ्चविंशत्पुटं दत्त्वा ततः सूतं विचूर्णयेत्॥ २६७४॥
मापमात्रं रसं दद्यान्नवनीतसितायुतम्।
मूत्रकृच्छ्राश्मरीमेहवातपित्तकफामयान्॥
क्षयानखिलरोगांश्च नाशयेन्नाऽत्र संशयः॥ २६७५॥

वै. चि., मूत्रकृच्छ्रे।

टि०—यद्यप्यत्र पुटविशेषनाम न निर्दिष्टम् तथाऽपि गजपुट उन्नेयः। पारदगन्धकौ च वारम्वार दत्त्वा जम्भाम्भसासम्मर्द्य पुटान्तरं देयमिति विद्वद्भिराकलनीयम्।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक, वैक्रान्त, सुवर्ण, कान्तलोह, मोती, प्रवाल इनकीभस्में सव समभाग लेकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें सवको मिलाय जंभीरीकेरससे ४ पहर मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्वकीवरावर पारेगन्धककी कज्जली मिलाय जंभीरीकेरससे गोलावनाय गजपुटकी आचदे। ऐसे २५ आंचें देनेकेवाद निकालकर एकरोज़ मर्दनकर शीशीमें रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा मक्खन और शक्करकेसाथ देनेसे मूत्रकृच्छ्र, पथरी, प्रमेह, वात-पित्त और कफके तमामविकार तथा क्षयादि समस्तरोग इससे नष्टहोतेहै ॥ ५९९ ॥

६०० मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः (चतुर्थः)

स्थाल्यर्द्धमम्भसाऽऽपूर्य पिधाय तनुवाससा।
बद्ध्वा सूत्रेण तद्वक्त्रं श्रीवासञ्च प्रसारयेत्॥ २६७६॥
पचेन्मन्दाग्निना तावद्यावद्द्रुत्वा जले पतेत्।
श्रीवासः स्वाङ्गशीतेऽत्र क्षिप्त्वापानीयमाहरेत् २६७७
तलस्थं घनमस्यांशं चाऽष्टमं मकरध्वजम्।
षड्गुणे गन्धकं जीर्णं सिन्दूरं रसमुत्तमम्॥ २६७८॥
खादेन्मापद्वयी मात्रां मूत्रकृच्छ्रान्तकाद्रसात्।
श्रीवासः केवलो वैष सफलः सितया युतः॥२६७९॥

रसायनसार, मूत्रकृच्छ्रे।

भाषा—नईहडीमें आवेतकपानीभरके मुंहपर वारीककपड़ा ढककर सुतलीसे कसकर वाधदे। ऊपर साफविरोजा फैलाकर चीनीकेप्यालेसे ढकदे। उसहंडीको चूल्हेपर रख मन्द अग्नि जलावे, वीचवीचमें देखता रहे जव विरोजा गलकर तमाम पानीमें पड़जाय तव नीचे उतारकर रखले। स्वाङ्गशीतलहोनेपर पानीको फेंकदे और विरोजेको किसी शीशीमेंभरके रखले। इसमें अष्टमांश मकरध्वज अथवा षड्गुणगन्धकजारित रससिन्दूर मिलाकर १–२ पहर घोटकर २–२ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली प्रात. और सायंकाल देनेसे सव तरहके मूत्रकृच्छ्र दूरहोतेहै। केवल शुद्धकियाहुआविरोजाभी शक्करकेसाथ देनेसे काम करताहै ॥

विशेष सूचना—यद्यपि इसमें केवल पानीमें इसका पातनलिखाहुआहै पर १ सेर गेंहूमें १६ सेर पानी डालकर कोरे मिट्टीके वर्तनपर कपड़ावाधकर २० तोले विरोजारक्खे और धीरे २ गेंहुओंको पकावे केवल वाष्प विरोजेमें लगे, उफान आकर पानीका सम्पर्क न हो। गेंहूं पकनेतक ऊपरका विरोजा पिघलकर नीचे वर्तनके पेंदेमें जा लगेगा। पानी ठंढा होनेपर धीरेसे गेंहुओंको निकालकर पशुओंको खानेको देदेना और पानीको फेंककर विरोजेको निकाल लेना इसेही विरोजेका सत्त्व कहतेहैं। जहा दवामें इसका उपयोग हो वहां इसीको काममें लेना ॥ ६०० ॥

६०१ मूत्रदोषाङ्कुशरसः

अभ्रकं पारदं स्वर्णं लोहं वङ्गं शिलाजतु।
समभागानि चैतानि वसुनीरैर्विमर्दयेत्॥ २६८०॥
त्रिदिनं मुशलीतोयैस्त्रिकण्टकरसेन च।
मूत्रदोषाऽङ्कुशस्याऽस्य वल्लयुग्मं प्रदापयेत्॥२६८१॥
वातकुण्डलिका नाम मूत्रसङ्गाश्मरीगदान्।
वातोल्वणान् जयेद्दोषान् वह्निसन्दीपनः परः॥२६८२॥

र. म मा, मूत्राघाते।

भाषा—अभ्रक, पारा, सुवर्ण, लोह और वङ्ग इनकीभस्में, शिलाजीत येसव समभाग लेकर इटसिट, मुसली और गोखरूके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ रोज़ मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे वातकुण्डलिका, मूत्रसङ्ग, पथरी और वातप्रधानदोष नष्टहोतेहै तथा जठराग्नि प्रदीप्तहोताहै ६०१

६०२ मूर्च्छासूदनरसः

मृतं सूतं मृतं ताप्यं तुल्यभागं प्रकल्पयेत्।
अस्य गुञ्जाद्वयं खादेन्मधुना मरिचैः सह॥ २६८३॥
पिबेत्तदनुभूतघ्न्याः स्वरसं कर्पसम्मितम्।
जीर्णज्वरकफध्वंसी कासश्वासविनाशनः॥ २६८४॥
अग्निमान्द्यविवन्धघ्नो राजयक्ष्मविमर्दनः।
धातुपुष्टिकरश्चैव वलदः कान्तिकारकः॥
मूर्च्छायाञ्च प्रयोक्तव्यो दृष्टप्रत्ययकारकः॥ २६८५॥

वै. द., मूर्च्छायाम्।

भाषा—पारा और सुवर्णमाक्षिकभस्म समभागलेकर १–२ पहर मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्तीकी मात्रा मधु और ७–१४ अथवा २१ कालीमिर्चोंकेचूर्णकेसाथ लेकर ऊपरसे शङ्खाहूलीका १ तोलारस पीनेसे जीर्णज्वर, कफ, कास, श्वास, अग्निमान्द्य, मलमूत्रविवन्ध, राजयक्ष्म, धातुक्षीणता, वल तथा कान्तिका ह्रास और मूर्च्छा इनसवको यह नष्टकरताहै ॥६०२॥

६०३ मृगजरसः (प्रथमः)

मृतं सूतं मृतं तीक्ष्णं तुल्यं वासाद्रवै र्दिनम् ।
मर्दितं माषमात्रन्तु भक्षयेन्मृगजं रसम् ॥
सर्पाक्षीमधुना लेह्यमनुस्याद्रक्तपित्तके ॥ २६८६ ॥

र र.रसायन सं , यो म., रक्तपित्ते ।

भाषा—पारा और लोहभस्म समभाग लेकर अडूसेके पत्तोंकेरससे एकरोज़ मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली खाकर अन्धाहूलीका १ तोला रस ३ माशे मधु मिलाकर ऊपरपीनेसे रक्तपित्त नष्टहोताहै ६०३

६०४ मृगजरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं टङ्कणञ्च मनःशिला ।
एलात्वक्कोलजाजी च समभागञ्च खल्वके ॥ २६८७ ॥
शतावरीकषायेण दिवसं मर्दयेद् दृढम् ।
शर्करामधुसंयुक्तं सूर्यावर्तं निहन्ति च ॥ २६८८ ॥

व.रा., वै चि., शिरोरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा और मैनसिल, इलायची, तज, वेरकीमज्जा, सफेदजीरा, येसव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर शतावरीके स्वरससे एकदिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शक्कर और मधुकेसाथ मिलाकर देनेसे सूर्यावर्त नष्टहोताहै ॥ ६०४ ॥

६०५ मृगमालारसः

मार्कण्डी त्रपुसं शीर्षं सुदग्धं मृगशृङ्गकम् ।
कार्पासवीजमज्जाश्च तुल्यमङ्कोलवीजकम् । ॥२६८९॥
पेषयेन्महिषीतक्रे र्दिनैकं वटकीकृतम् ।
माषद्वयं सदा खादेन्मृगमाला प्रमेहजित् ॥ २६९० ॥
अक्षपाठाऽभयादार्वीकषायमनुपाययेत् ।
मासमात्रप्रयोगेण प्रमेहगणनाशनम् ॥ २६९१ ॥

र. र., र. को., व रा , यो म , रसायनसं , र सु , प्रमेहाधिकारे । र सु. **नागभस्मादियोगः** ।

टि०—अत्रार्थाऽज्ञानान्मार्कण्डीस्थाने मारितमितिपाठो नियोजित । मार्कण्डीशब्देन भूम्याहुली ग्राह्या ।

भाषा—आवळ (गु) का पञ्चाङ्ग, वङ्ग, नाग और मृगशृङ्ग इनकी भस्में, कपासकेवीजोंकीमज्जा सव समभाग, सवकी वरावर अङ्कोलकीमज्जा लेकर भैंसकेमठेसे एकरोज़ मर्दनकर २–२ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली खाकर ऊपरसे वहेडा, पाठा, हर्रे और दारुहल्दी का क्वाथ पीनेसे एकमहीनेमें सवप्रकारके प्रमेह नष्टहोतेहैं ॥ ६०५ ॥

६०६ मृगाङ्कपोट्टलीरसः

भूर्जवत्तनुपत्राणि हेम्नः सूक्ष्माणि कारयेत् ।
तुल्यानि तानि सूतेन खल्वे क्षिप्त्वा विमर्दयेत्॥२६९२
काञ्चनाररसेनैव ज्वालामुख्या रसेन वा ।
लाङ्गल्या वा रसैस्तावद्यावद्भवति पिष्टिका ॥२६९३॥
ततो हेम्नश्चतुर्थांशं टङ्कणं तत्र निक्षिपेत् ।
पिष्टमौक्तिकचूर्णञ्च हेमद्विगुणमावपेत् ॥ २६९४ ॥
तेषु सर्वसमं गन्धं क्षिप्त्वा चैकत्र मर्दयेत् ।
तेषां कृत्वा ततो गोलं वासोभिः परिवेष्टयेत् ॥२६९५॥
पश्चान्मृदा वेष्टयित्वा शोषयित्वा च धारयेत् ।
शरावसम्पुटस्यान्ते तत्र मुद्रां प्रदापयेत् ॥ २६९६ ॥
लवणापूरिते भाण्डे धारयेत्तञ्च सम्पुटम् ।
मुद्रां दत्त्वा शोषयित्वा वहुभिर्गोमयैः पुटेत् ॥२६९७॥
ततः शीते समाहृत्य गन्धं सूतसमं क्षिपेत् ।
घृष्ट्वा च पूर्ववत्खल्वे पुटेद्गजपुटेन च ॥ २६९८ ॥
स्वाङ्गशीतं ततो नीत्वा गुञ्जायुग्मं प्रकल्पयेत् ।
अष्टभि र्मरिचै र्युक्तः कृष्णात्रययुतोऽथ वा ॥२६९९॥
विलोक्य देया दोषादीनेकैका रसरक्तिका ।
सर्पिषा मधुना वाऽपि दद्याद्दोषाद्यपेक्षया ॥ २७०० ॥
लोकनाथसमं पथ्यं कुर्यात्स्वस्थमनाः शुचिः ।
श्लेष्माणं ग्रहणीं कासं श्वासं क्षयमरोचकम् ॥२७०१॥
अग्निमान्द्यं धातुशोषं प्रवलान् कफजान्गदान् ।
मृगाङ्कोऽयं रसो हन्यात्कृशत्वं वलहीनताम् ॥२७०२॥

शा. सं , नि र., रसायन स , रस सं., भै सा., ना वि , र प्र., र (मा), चि र. भ , वै द., र प्र सु , टो , यो म , र का , राजयक्ष्मणि । योगमहार्णवे ज्वालामुखीस्थाने कार्पासकुसुमभावना दृश्यते ।

भाषा—यथासम्भव वुभुक्षान्तसस्कारकियाहुआ पारा खरलमें डालकर सुवर्णकेवर्क १–१ करके डालताजाय, एकवर्क मिलजानेपर दूसराडाले । इसतरह वरावरके वर्कोंको मिलाकर पिष्टी वनाले फिर कचनार, हुरहुर, करिहारी, इनप्रत्येकके अङ्गस्वरससे १–१ रोज़ मर्दनकर सुवर्णसे चतुर्थांश सुहागा और द्विगुण मोतीकीपिष्टी और सवकीवरावर शुद्धगन्धक डालकर १–२ रोज़ पूर्वोक्तरसोंसे मर्दनकर गोलावनाय चारतह मलमलके कपड़ेमें वाधकर ऊपरसे १–१ अङ्गुल कपड़ेकेसाथ कुटीहुईमिट्टीका लेपदेकर सुखादे । फिर शरावसम्पुटमें वन्दकर लवणयन्त्रमें रखकर कपड़मिट्टी देकर अच्छीतरह सुखाकर इतने कण्डोंकी आंचदे कि गन्धकमात्र जले । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पारेकी वरावर गन्धक देकर पूर्वरसोंमें १–१ रोज मर्दनकर पूर्ववत् लवणयन्त्रमें वन्दकर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से २ रत्तीतककी मात्रा आठकालीमिर्चे अथवा तीनपीपलके चूर्णकेसाथ देवे अथवा घी और मधुकेसाथ देवे । लोकनाथरसमें कहेहुएके अनुसार पथ्यकरावे ।

इसके सेवनसे कफ, ग्रहणी, कास, श्वास, क्षय, अरुचि, मन्दाग्नि, धातुशोष, उत्कटकफरोग, कृशता, निर्बलता, इनको यह नष्टकरताहै ॥ ६०६ ॥

६०७ मृगाङ्करसः (प्रथमः)

स्याद्रसेन समं हेम मौक्तिकं द्विगुणं भवेत् ।
गन्धकश्च समं तेन रसतुल्यन्तु टङ्कणम् ॥ २७०३ ॥
तत्सर्वं मृदितं कृत्वा काञ्जिकेन च पेषयेत् ।
भाण्डे लवणपूर्णेऽथ पचेद्यामचतुष्टयम् ॥ २७०४ ॥
मृगाङ्कसञ्ज्ञको ज्ञेयो राजयक्ष्मनिकृन्तनः ।

चित्रकके क्वाथ और आकके दूधसे १–१ रोज मर्दनकर गोला-बनाय चारतह मलमलके कपड़ेमें पोट्टलीवनाय लवण, चिथड़े और मिट्टीसे १–१ लेप देकर इसगोलेके बरावर नागरवेलके पत्तोंमें लपेटकर सूतसे वेष्टितकर उड़द अथवा गेंहूके आटेकी वाटीमें कवलितकर धीमें पकावे । आटा कालाहोनेलगे तव उतारलेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर इसमेंसे वहुत धीरजसे मिट्टीवगैरहके सम्पुटको हटाकर रसको रखले । इसमेंसे ४–४ रत्तीकीमात्रा बरावरके हर्रेके चूर्णकेसाथ देनेसे क्षयप्रभृति सम्पूर्ण महाव्याधियोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६०८ ॥

भाषा—पारा और सुवर्णमाक्षिकभस्म समभागलेकर १–२ पहर मर्दनकर रसछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्तीकी मात्रा मधु और ७–१४ अथवा २१ कालीमिर्चोंकेचूर्णकेसाथ लेकर ऊपरसे शङ्खाहूलीका १ तोलारस पीनेसे जीर्णज्वर, कफ, कास, श्वास, अग्निमान्द्य, मलमूत्रविवन्ध, राजयक्ष्म, धातुक्षीणता, वल तथा कान्तिका ह्रास और मूर्च्छा इनसबको यह नष्टकरताहै ॥६०२॥

६०३ मृगजरसः (प्रथमः)

मृतं सूतं मृतं तीक्ष्णं तुल्यं वासाद्रवै र्दिनम्।
मर्दितं माषमात्रन्तु भक्षयेन्मृगजं रसम्॥

६०६ मृगाङ्कपोट्टलीरसः

भूर्जवत्तनुपत्राणि हेम्नः सूक्ष्माणि कारयेत्।
तुल्यानि तानि सूतेन खल्वे क्षिप्त्वा विमर्दयेत्॥२६९२॥
काञ्चनाररसेनैव ज्वालामुख्या रसेन वा।
लाङ्गल्या वा रसैस्तावद्यावद्भवति पिष्टिका ॥२६९३॥
ततो हेम्नश्चतुर्थांशं टङ्कणं तत्र निक्षिपेत्।
पिष्टमौक्तिकचूर्णञ्च हेमद्विगुणमावपेत्॥ २६९४॥
तेषु सर्वसमं गन्धं क्षिप्त्वा चैकत्र मर्दयेत्।
तेषां कृत्वा ततो गोलं वासोभिः परिवेष्टयेत् ॥२६९५॥

रसयोगसागरे द्वितीयभागे

पृ. १७७—६१० मृगाङ्करस (चतुर्थ) टिप्पणी।

यह योग शक्तिवल्लभविद्वद्विरचितरसकौमुदीमे मिलाहै उसकी दूसरी प्रति अत्यन्तगवेषणाकरनेपरभी न मिली इसलिये सङ्ग्रहकालमे यथाऽवस्थितपाठरखदियागयाथा. इसकी प्रथमपङ्क्तिमे "नरसारं सैन्धवञ्च पञ्चविल्वमितं पृथक्" यह पाठमिलाहै परन्तु इसके चतुर्थश्लोकके चतुर्थपादको देखकर सन्देह होताहै कि इसमे पारदयोग न रहनेसे स्वर्णाभकूपीतलस्थ भस्म कैसे होगी? कारण कि पारदयोगविना उत्तमरङ्गनहिं आसकताहै। कदाचित् नरसारकेहोनेसे यद्वातद्वा रङ्गआवे तो भी "मारितात्स्वर्णाद्भवेद्गुणशताऽधिकम्" यह फलभाग निष्पन्न नहिं होसकताहै। इसलिये इसमे पारदसद्भाव अनुमितहोताहै। प्रारम्भमे पञ्चविल्वमितं पृथक् इसपादमे पञ्चशब्दनिरर्थक प्रतीतहोताहै कारण कि अगाडी जितने पुष्प निकलें उनकीबराबर वङ्गमिलानालिखाहै और सबकी बराबर गन्धकयोग दियाहै इसमे पञ्चशब्दकी सार्थकता नहिं आई इससे स्पष्टप्रतीतहोताहै कि पञ्चशब्द रसशब्दकीजगह आयाहै। उसके आनेकाकारण ऐसाप्रतीतहोताहै कि मूलपुस्तकको कीटोंने खाई हो और उसमेसे "रस"यह खण्डित होगयाहो और उसजगह संशोधक या लेखकने अनुमानसे पञ्चशब्दको जोडदियाहो. परन्तु उसका कुछ प्रयोजन नहिं प्रतीत होनेसे अनर्थक सिद्ध होरहाहै इसलिये पञ्चकीजगह "रसं" पाठ रखना उचितहै. ऐसाहोनेहिंसे यहपाठ सङ्गत होसकताहै अन्यथा नहिं। जिसपुस्तकसे हमने प्रत्यन्तर कियाहै वह पुस्तक उससमय लगभग १०० वर्षकी थी और २२ वर्ष हमको प्रत्यन्तरकिये होगये परन्तु शक्तिवल्लभका समय निश्चित नहिंहै और उन्होंने इसपाठको किसरसग्रन्थसे सङ्गृहीत कियाथा और वह कब सङ्गृहीत हुआथा इसकाभी कुछ पता नहिं चलताहै तथाऽपि हालमे पीतमृगाङ्क स्वर्णमृगाङ्क मस्कमृगाङ्क और स्वर्णवङ्गादिक नामसे जो पाठ वैद्यसमाजमे प्रचलितहै उसकामूल यहि पाठनिश्चितहोताहै इसपाठकी यथार्थविधि न मिलनेसे प्रचलितपाठ चलपडाहै–रसकौमुदीमे प्रथम पुष्पउडानेसे नरसारकेयोगसे पारद मूर्च्छित होकर रसकर्पूरकेस्वरूपको धारणकरलेताहै. फिर वङ्ग और गन्धकके योगसे तलस्थहोकर वङ्गकोमारकररञ्जितकरदेताहै। इससे यह यथार्थविधानहै. इसमे सबवस्तुकामिश्रणमिलताहै और प्रचलितपाठमे गन्धक पारा और नरसारका कुछ हिस्सा आकाशगामी होजाताहै और कुछ शीशीकीनलीमे लम्वायमानरहताहै और वङ्गकच्चीहि नीचे पडीरहतीहै इसलिये इसयोगको रसकौमुदीनिर्दिष्ट प्रकारसे बनानेकी वैद्योंसे प्रार्थनाहै। पीतमृगाङ्कके पाठको स्वतन्त्र न समझाजाय वह इसयोगका त्रुटित प्रकारहै उसे द्वितीयावृत्तिमे हटादिया जायगा। **नरसारं सैन्धवञ्च रसं विल्वमितं पृथक्।** इसतरह योगके प्रारम्भको सुधारलेवें। और नोसादर. सैंधानमक. और विशुद्धपारा १–१ पललेकर ४ प्रहर निरन्तरखरलकर डमरुयन्त्रमेरख ४ प्रहरकी अग्निदे। ऐसाटीकामेसुधाराकरलेवें। विल्वशब्दको निरर्थक न समझें इसप्रमाणसे योगबनानेसे ठीकउतरेगा कारणकि १६ अथवा १२ प्रहरकी अग्निका जो प्रमाण दियाहै वह इसीद्रव्यप्रमाणकोलेकर निर्धारितकियाहै। १६ और १२ प्रहरके विकल्पसे अग्निकी साधारणता और तीक्ष्णताका भानकरायाहै। अर्थात् जब अग्नि तीक्ष्ण हो तो १२ हि प्रहर पर्याप्तहै। और अग्नि साधारण हो तो १६ प्रहरकी अग्नि देनी उचितहै इसबातकोलक्षितकरायाहै।

इसबातपर ध्यान दिया जायगा तभी योग यथेष्ट उतरेगा। **इति।**

इसके सेवनसे कफ, ग्रहणी, कास, श्वास, क्षय, अरुचि, मन्दाग्नि, धातुशोष, उत्कटकफरोग, कृशता, निर्बलता, इनको यह नष्टकरताहै ॥ ६०६ ॥

६०७ मृगाङ्करसः (प्रथमः)

स्याद्रसेन समं हेम मौक्तिकं द्विगुणं भवेत् ।
गन्धकञ्च समं तेन रसतुल्यन्तु टङ्कणम् ॥ २७०३ ॥
तत्सर्वं मृदितं कृत्वा काञ्जिकेन च पेषयेत् ।
भाण्डे लवणपूर्णेऽथ पचेद्यामचतुष्टयम् ॥ २७०४ ॥
मृगाङ्कसञ्ज्ञको ज्ञेयो राजयक्ष्मनिकृन्तनः ।
गुञ्जाचतुष्टयं चास्य मरिचैः सह भक्षयेत् ॥ २७०५ ॥
पिप्पलीदशकै र्वाऽपि मधुना सह लेहयेत् ।
पथ्यन्तु लघुभि र्मांसैः प्रयोगेऽस्मिन् प्रयोजयेत् २७०६
व्यञ्जनै र्घृतपक्वैश्च नातिक्षारैरहिङ्गुभिः ।
एलाजाजीमरीचैस्तु संस्कृतैरविदाहिभिः ॥ २७०७ ॥
वृन्ताकबिल्वतैलानि कारवेल्लञ्च वर्जयेत् ।
स्त्रियं परिहरेद्दूरं कोपञ्चाऽपि विवर्जयेत् ॥ २७०८ ॥

र. सं, र. मं., वृ यो त, र. सि, र र, नि र., र सु., भै. र., चि. र. भ., यो. र, रसायनसं., र. क ल., र. चं., र. गं., र को., र. र दी, टो., र. शि, वै. द, र. (मा), र चि, र, र कौ., र. प्र., र. का., यो. म., वै. चि, र वो, रस सं, र. प., र. पा. राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा और सुवर्णभस्म १–१ भाग, मोती और गन्धक २–२ भाग, भुनासुहागा १ भा, लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर काञ्जीकेसाथ १–२ रोज़ मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लवणयन्त्रमें रखकर चार पहरतक पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्तीकी मात्रा ७, १४ अथवा २१ कालीमिर्चोंके चूर्णकेसाथ अथवा १० पीपल और मधुकेसाथ लेवे । लघुमासका भोजनकरे । इलायची, जीरा, मरिच, इनसेसंयुक्त और अविदाही, अत्यन्तहींग और क्षारोंसे रहित घीमें पकाए हुए व्यञ्जनोंका सेवनकरे। बेंगन, बेल, तैल, करेला, स्त्री और क्रोधको बिल्कुल छोड़देवे । ॥ ६०७ ॥

६०८ मृगाङ्करसः (द्वितीयः)

सूतं शङ्खं वराटं रविमपि निखिलं तुल्यगन्धञ्च मुक्तां,
मुक्तार्द्धं लोकनाथं विषमपि तुलितं भूपभागेन तस्य।
अग्न्यम्भोभि र्दिनैकं दिनकरपयसा वासरैकं सुघृष्टं,
गोलं कृत्वा सुवेष्ट्यं लवणवसनमृन्नागवल्लीदलाद्यैः ॥
पाच्योसौ पिष्टयन्त्रेक्षयगदहरणःस्यान्मृगाङ्काभिधानः,
तुल्यः पथ्यानुपानैः प्रभवति च महाव्याधिसङ्घापनुत्यै

र, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा, शङ्ख, कौडी, तावा इनकीभस्में समभाग, इनसबकी बराबर शुद्धगन्धक और मुक्तापिष्टी, मोतीसे आधा लोकनाथरस, इनसबसे सोलहवा हिस्सा बच्छनाग डालकर चित्रकके क्वाथ और आकके दूधसे १–१ रोज़ मर्दनकर गोलाबनाय चारतह मलमलके कपड़ेमें पोटलीबनाय लवण, चिथड़े और मिट्टीसे १–१ लेप देकर इसगोलेके बराबर नागरवेलके पत्तोंमें लपेटकर सूतसे वेष्टितकर उड़द अथवा गेंहूके आटेकी बाटीमें कवलितकर घीमें पकावे । आटा कालाहोनेलगे तब उतारलेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर इसमेंसे बहुत धीरजसे मिट्टीवगैरहके सम्पुटको हटाकर रसको रखले । इसमेंसे ४–४ रत्तीकीमात्रा बराबरके हरेंके चूर्णकेसाथ देनेसे क्षयप्रभृति सम्पूर्ण महाव्याधियोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६०८ ॥

६०९ मृगाङ्करसः (तृतीयः)

हैमी भूति र्द्विगुणिता सूतभूत्या द्विमौक्तिका ।
चतुर्गन्धा सूतपादटङ्कणा दृढमर्दिता ॥ २७१० ॥
निम्ब्वम्बुना पिष्टयन्त्रे पक्वो यामचतुष्टयम् ।
सर्वं मृगाङ्कवज्ज्ञेयं मृगाङ्को रोगनाशनः ॥ २७११ ॥

र., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारदभस्म १ भाग, सुवर्णभस्म और मोती २–२ भाग, शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर पारेसे चतुर्थांश सुहागा डालकर एकरोज़ नीबूकेरससे मर्दनकर गोलाबनाय चारतह मलमलके कपड़ेमेंलपेटकर उड़द अथवा गेंहूकी बाटीमें बन्दकर ४ पहर घीमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ रत्ती मरिच, पीपल और मधुकेसाथ देनेसे राजयक्ष्मादि महाव्याधियोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६०९ ॥

६१० मृगाङ्करसः (चतुर्थः)

नरसारं सैन्धवञ्च पञ्चबिल्वमितं पृथक् ।
निधाय डमरूयन्त्रे वह्निं यामचतुष्टयम् ॥ २७१२ ॥
प्रज्वालयेदूर्ध्वभाण्डलग्नं सत्त्वं समाहरेत् ।
तत्सत्त्वं चूर्णितं रङ्गं समं गन्धं तयोः समम् ॥२७१३॥
विचूर्ण्यैकत्र काचोत्थकूपिकायां विनिःक्षिपेत् ।
मृल्लिप्तवालुकायन्त्रस्थितायां दिवसद्वयम् ॥ २७१४ ॥
चुल्ल्यामग्निमधो दत्त्वा यामान् द्वादश वा पचेत् ।
कूपीतलस्थं तद्भस्म स्वर्णाभं स्वाङ्गशीतलम् ॥२७१५॥
गृह्णीयान्मारितात्स्वर्णाद्वेद्गुणशताऽधिकम् ।
वृष्यमायुःप्रदं सर्वमेहानाञ्च विनाशनम् ॥ २७१६ ॥
काम्यं परममेतद्धि मृगाङ्को गुरुगोपितः ।
प्रमेहोपशमे धातुवर्धने निश्चितं हि तत् ॥ २७१७ ॥

र कौ, सि भे म., क्षये ।

भाषा—नौसादर और सेंधानमक ५–५ पल लेकर बारीक पीस डमरूयन्त्रमें रख ४ पहरकी अग्नि दे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे हंडीकामुह उघाड़कर ऊपर उड़ेहुए नौसादरकेफूलोंको निकालले फिर इसकी बराबर अपामार्गके पञ्चाङ्गप्रभृतिसे कियाहुआ रांगकाचूरा और दोनोंकीबराबर गन्धक डालकर बारीकचूर्ण कर कपड़मिट्टीकीहुई आतशीशीशीमें रखकर वालुकायन्त्रमें दोरोज अथवा १२ पहरकी अग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर कूपीमेंसे

सुवर्णकेसदृश भस्मको निकालकर रखछोड़े। यहभस्म सुवर्णभस्मसे सौगुनी गुणकारकहोतीहै। इसमेंसे ३-३ रत्ती उचितानुपानके-साथदेनेसे यह प्रमेहमात्रको निश्चितरूपसे नष्टकर धातुओंको वढाताहै, वृषता, आयु तथा कामकीवृद्धि करताहै ॥ ६१० ॥

६११ मृगाङ्करसः (पञ्चमः)

श्वेतमल्लस्तु भागैको तत्समं तालकं शिला।
काङ्क्षिका मल्लभागा तु सर्वं खल्वे विचूर्णयेत् ॥२७१८॥
पञ्चरत्नस्य विधिना पाचयेन्मन्दवह्निना।
स्वर्णाभो ह्यूर्द्धगो ग्राह्यो मृगाङ्को रस उत्तमः॥२७१९॥
सर्ववातगदे चैव हिक्कायां कुष्ठरोगिणि।
घृतशर्करया देयो दुग्धान्नं पथ्यमुत्तमम ॥
तक्रान्नं वा शीतवारि उष्णद्रव्यं विवर्जयेत् ॥ २७२० ॥

र. चं., वातरोगे।

भाषा—शुद्धसफेदसोमल, हरिताल, मैनसिल, फिटकरी, सब समभाग लेकर वारीक चूर्णकर **मल्लपञ्चरत्नरसमें** कहेहुए प्रकारसे वहुतमन्द आंचसे ४ पहर पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर ऊपरके पात्रमें सुवर्णकेरंगके फूल मिलेंगे इन्हें निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे आधी अथवा १ रत्ती घी और शक्करकेसाथ देकर दूधभात अथवा छाछभात खानेकोदे। ठंढापानी पीवे, गरमचीजोंसे परहेज़ रक्खे। इसके सेवनसे सवप्रकारके वातरोग, हिचकी, कुष्ठ, कास, श्वास प्रभृति तमामरोग नष्टहोतेहैं ॥६११॥

६१२ मृगाङ्करसः (षष्ठः)

नागभस्म रसभस्मना समं
माक्षिकञ्च कुरु तत्समानकम्।
मौक्तिकं निखिलतस्समांशकं
पोट्टली च समभागिकाऽखिलैः ॥ २६२१ ॥
गन्धकं समलवं निखिलांशैः
सूततुर्यलवभागटङ्कणम्।
मर्दितं तुषजलेन दिनान्तं
वस्त्रकैः सलवणैः समृत्तिकैः ॥ २७२२ ॥
वर्तुलञ्च विदधीत गोलकं
वेष्टयेच्च परिशोष्य चाऽऽतपे।
पाचितो भवति सैष मृगाङ्कः
कामठे लवणयन्त्रके तथा ॥ २७२३ ॥
पूर्ववत्क्षयविनाशहेतुकः
सर्वरोगविनिवारणक्षमः।
दीपनोऽथ वलपुष्टिवर्धनः
सूतिकागदविनाशकारणम् ॥ २७२४ ॥
पथ्यानुपानप्रभृति सर्वं पूर्वमृगाङ्कवत्।
नियोक्तव्यं प्रयत्नेन भिषजा सिद्धिमिच्छता ॥२७२५॥

र, राजयक्ष्मणि।

भाषा—नाग और पारद १-१ भाग, सुवर्णमाक्षिक २ भाग, मोती ४ भाग, मृगाङ्कपोट्टली ८ भाग, शुद्धगन्धक १६ भाग, सुहागा ¼ भागलेकर तुपाम्लमें एकरोज़ मर्दनकर गोला-वनाय चारतहकपड़ेमें वाधकर नमक और मिट्टीसे अलग २ क्रमश. कपड़ेको भिगोकर कपड़मिट्टी लगाय सुखाकर भूधर अथवा लवणयन्त्रमें ४ पहरकी अग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, मन्दाग्नि, वलराहित्य, कृशता, सूतिकारोगप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै। पथ्य और अनुपानप्रभृति महामृगाङ्ककीतरह देवे। अवान्तरउपद्रवोंको वहुतगमभालकर निवृत्तकरे।६१२॥

६१३ मृगाङ्करसः (सप्तमः)

सुवर्णताम्रयोर्भस्म कर्षं कर्षं पृथक्पृथक्।
गन्धश्च द्विगुणं दत्त्वा कुमारीस्वरसेन वै ॥ २७२६ ॥
विमर्द्य मृगशृङ्गान्ते कृत्वा रुद्धं ततो मुखम्।
टङ्कणेनार्कदुग्धेन मर्दयित्वा पुटेत्पुनः ॥ २७२७ ॥
पुटेन कुञ्जराख्येन स्वाङ्गशीतञ्च भक्षयेत्।
हरीतकीमधुयुतं मापमात्रं प्रयत्नतः ॥ २७२८ ॥
सगुडां घृतसम्मिश्रां भक्षयेद्वा हरीतकीम्।
विड्वायवोश्चाऽनुलोम्यार्थं वेदनायाश्च शान्तये॥२७२९॥
पक्तिशूलप्रशमनो दाहं मन्दानलञ्जयेत्।
पार्श्वशूलं तथाऽऽध्मानं प्रस्वेदञ्च जयेद्ध्रुवम्॥२७३०॥

ना. वि., र म मा, शूले।

टि०—"ग्राह्येन्मृगशृङ्गाग्रमष्टाङ्गुलमित नवम्।"

भाषा—सुवर्ण और ताम्रभस्म १-१ कर्ष, शुद्धगन्धक २ कर्ष लेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुआरकेरससे १-२ रोज़मर्दनकर मृगशृङ्गके आठअङ्गुलअग्रभागमें भरके शृङ्गकेभीतर निकलीहुई हड्डीकीडाटसे वन्दकर सुहागेको आकके दूधमें मर्दनकर कपड़ेपर इसकालेप चढाकर कपड़ेको समस्तसींगपर लपेटकर ६-७ कपड़मिट्टी देकर खूव सुखाले और गजपुटकी अग्निदेकर स्वाङ्गशीतलहोनेपर कपड़मिट्टीको हटाकर सींगसहित पीसकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ माशा हर्रे और मधुकेसाथ अथवा गुड़, घृत और हर्रेकेसाथ लेनेसे मलमूत्रविवन्ध, शरीरकीपीडा, पक्तिशूल, दाह, मन्दाग्नि, पार्श्वशूल, आध्मान, अतिस्वेद येसव नष्टहोतेहैं ॥ ६१३ ॥

६१४ मृगाङ्करसः (अष्टमः)

रसवलितपनीयं योजयेत्तुल्यभागं,
तदनु युगलभागं मौक्तिकानां शुभानाम्।
यवजचरणभागं मर्दयेत्सर्वमेत-
द्दिनमपि तुपवारा गोलकं लघ्वमत्रे ॥२७३१॥
निधाय मुद्रां विदधीत भाण्डे
चुल्ल्यां समुद्रे लवणेन पूर्णे।
दिनं पचेच्चारुमृगाङ्कनामा
क्षयाऽग्निमान्द्ये ग्रहणीविकारे ॥ २७३२ ॥
योज्यः सदा वह्निजसर्पिषा वा
कृष्णामधुभ्यां सततं त्रिगुञ्जः।

वर्ज्यं सदा पित्तकरं हि वस्तु
लोकेशवत्पथ्यविधि निरुक्तः ॥ २७३३ ॥
वै. वि क्षये ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और सुवर्णभस्म सब समभाग, मोती २ भाग, जवाखार ½ भाग लेकर सबकी नीलवर्ण कज्जली-कर तुषाम्लसे एकरोज़ मर्दनकर गोलावनाय चारतहकपड़ेमें लपेटकर २–३ कपड़मिट्टी लगाकर सुखावे । इसगोलेको दो शरावोंमें वन्दकर लवणयन्त्रमें रख मन्द, मध्य और खराग्निसे दिनभर पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर वारीक पीसकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा २१ या २९ काली-मिर्चे और घीकेसाथ अथवा ३ या ७ पीपल और मधुकेसाथ देनेसे क्षय, मन्दाग्नि, सङ्ग्रहणी प्रभृति रोगोंको यह नष्टकरताहै । इसमें पित्तकारकवस्तुओंका परहेजकरे ॥ ६१४ ॥

६१५ मृगाङ्करसः(नवरत्न राजमृगाङ्कः रत्नगर्भमृगाङ्कः)

माणिक्यं वज्रमेकं गरुडवमिभवं नीलकं पुष्परागं,
गोमेदं विद्रुमं द्विविदुरमणिमथो भस्म शङ्खस्य शुक्तेः।
तार्प्यं नागञ्च वङ्गं दरदशिखिगलं टङ्कणं राजवर्तं,
गन्धं त्रिर्हेमतारं रविघनममलं तालकं हृच्छिला च ॥
वैक्रान्तं कान्तलोहं रसकयुगलकं वेदभागां सुमुक्ताम्,
सूतं सर्वाऽष्टमांशं त्रिदिनमविरतं मर्दनीयं सुयत्नात्।
त्रिर्भाव्यं कन्यकाग्नि विषदहनवलावारिणा सप्तवारं,
गोलं मृत्कर्पटे वा लवणविरचिते पाचयित्वा दिनैकम्
सम्मर्द्य स्वाङ्गशीतं मृगमदसलिलैः पिप्पलीक्षौद्रयुक्तं
हन्याच्छ्वासञ्च कासं क्षयतमकगदान्रत्नगर्भो मृगाङ्कः॥
र प , क्षये ।

भाषा—माणिक्य, हीरा, पन्ना, नीलम, पुखराज, गोमेद, प्रवाल, लसनिया, शङ्ख, सीप, सोनामाखी, नाग, वङ्ग, शिग-रिफ, तूतिया, सुहागा, लाजवर्द, इनप्रत्येककीभस्में १–१ भाग, शुद्धगन्धक ३ भाग, सुवर्ण, रजत, ताम्र, अभ्रक, हरिताल, मैनसिल, वैक्रान्त, कान्तलोह, खपरिया, दानेफिरङ्ग इनसवकीभस्में १–१ भाग, मोती ४ भाग, पारदभस्म सवसे अष्टमांशलेकर इकट्ठे मिलाय तीनरोज़ निरन्तर शुष्कमर्दनकर घीकुंआर, वछ-नाग, चित्रक, वला, इनप्रत्येककेरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भाव-नाए देकर गोलावनाय सुखाकर चारतहकपड़ेमें लपेट २–३ कप-ड़मिट्टी देवे । सूखनेपर लघुशरावमें लवणकेवीच रखकर एक-रोज भूधर अथवा लवणयन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कस्तूरीकेजलसे मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वना-कर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पीपल और मधुकेसाथ लेनेसे श्वास, कास, क्षय, तमकश्वास इत्यादिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६१५ ॥

६१६ मृगाङ्करसः (वालादिः) (दशमः)

कनकपत्रसमं शुचि पारदं
विमलखल्वतले पिशितैः शनैः ।
दृढतरं सततं दिवसत्रयं
शुभमुहूर्तदिने परिमर्दयेत् ॥ २७३६ ॥
पारदाद्विगुणमौक्तिकं रजो
मौक्तिकाद्विगुणगन्धकोऽमलः ।
पारदाऽर्धशुचिटङ्कणस्ततोऽ-
प्येवमेव विधिना प्रकल्पयेत् ॥ २७३७ ॥
काञ्चनाररसकेन चूर्णकं मर्दयेत्परिविधाय गोलकम् ।
सङ्क्षिपेत्तदनु गर्भगुप्तके वह्निरप्यथ दिनं समुज्ज्वलः ॥
इति च शिशुमृगाङ्कः सम्भवेद्राजयोग्यो,
मधुसहितकणाभि र्वा मरीचाज्यकेन ।
सकलरुजि गृहीतः शीघ्रमारोग्यदायी,
हिमकरसमकान्ति यस्तनौ सन्तनोति२७३९
र मु , क्षये ।

भाषा—सोनेकेवर्क, शुद्धपारा, समभागलेकर शुभमुहूर्त देखकर वकरे वगैरहके मांससे तीनरोज़ मर्दनकर पारेसे दूने मोतीकीपिष्टी और पिष्टीसे दूनागन्धक तथा पारेसे आधासुहागा देकर कचनारकेरससे ३ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुट-में वन्दकर भूधरयन्त्रमें रखकर एकदिनकी अग्नि देवे । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकी मात्रा मधु और पीपल अथवा मिर्चे और घीकेसाथ लेनेसे यह समस्त-रोगोंको नष्टकर चन्द्रमाकेसदृश शरीरकीकान्तिको वढाताहै ६१६

६१७ मृगाङ्करसः (वालादिः) (एकादशः)

रसभस्म पलं सुशुद्धमेव
पलकं वै शुचिहाटकस्य भस्म ।
शुचिगन्धपलद्वयं सुशुद्धं
पलकाङ्घ्रिः शुचिमालतीभवश्च ॥ २७४० ॥
सकलस्य विचूर्णकं विधेयं
युग्मभागविमलाविशालमुक्ताः ।
सह चामलकीफलोद्भवै र्वा
यवजै र्धान्यरसै र्विमर्दयेद्वा ॥ २७४१ ॥
परिमर्द्य दिनानि सप्त खल्वे
शुभगोलं परिसंविधाय तस्य ।
दृढमूषयुगं विधाय पश्चा-
त्तनुमध्ये परिमोचनीय एव ॥ २७४२ ॥
अपि मूषयुगं निरुध्य पश्चा-
त्परिमुञ्चेच्छुभवालुकाह्वयन्त्रे ।
अपि यन्त्रवरं विमुच्य चूल्यां
दिनमेकं ज्वलनैः शनैर्विधेयः ॥ २७४३ ॥
सकलैः कथितैः प्रकारवर्यैः
रचनेशस्य भवेत्सुभद्रकैव ।
ननु वालमृगाङ्कः सुरम्यः
क्षयहारी सुखदायको गदारि. ॥ २७४४ ॥
हैमे पात्रे रौप्यके वा विशाले
मन्दं मन्दं मोचनीयो मृगाङ्कः ।

चूर्णं कृत्वा खल्वमध्ये सुरम्ये
कष्टे रोगे सेवनीयो हि राजा ॥ २७४५ ॥

र. मु , क्षये ।

भाषा—पारा और सुवर्णभस्म १–१ पल, शुद्धगन्धक २ पल, भुनासुहागा १ तोला, रूपामाखी, हींगबोल और मोती २–२ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर पकेआवलोंकेस्वरस अथवा धान्यकेस्वरससे सातरोज़ मर्दनकर गोलाबनाय चारतह मलमल के कपड़ेमें पोट्टली बनाय शरावसम्पुटमें रख ६–६ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें रखकर एक अहोरात्रकी आंच देवे स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सुवर्ण अथवा चादीकी डिब्बीमें रखलेवे। इसमेंसे एकसे तीनरत्ती तक तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे क्षयप्रभृति असाध्यरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६१७ ॥

६१८ मृगाङ्करसः (वालादिः) (द्वादशः)

सौभाग्यसिद्धिरथ मौक्तिकहेमगन्ध,
कल्कः सभूनयनभूयुगतुल्यभागः ।
धान्याम्लपीडितवपुःपरिशोपितस्य,
भाण्डे ततः परिभृतः पुटितो दिनान्तः२७४६
क्षयं विपं हेमरुजं भ्रमाद्यं गुल्मं ज्वरं सङ्ग्रहणीञ्च कुष्टम्
श्वासञ्च कासञ्च गुदामयं वै निहन्ति वै बालमृगाङ्क एषः

र. मु , क्षये ।

भाषा—सुहागा १ भाग, पीलीसरसों २ भाग, मोती १ भाग, सुवर्ण भस्म ४ भाग, गन्धक ८ भाग लेकर सबको पारे-गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर धान्याम्लसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर चारतहकपड़ेमें पोट्टली बनाय शरावसम्पुटमें रख ३–४ कपड़मिट्टी देवे। सूखनेपर भस्म, लवण अथवा वालुकायन्त्रमें रखकर ४ पहरकी अग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतककीमात्रा योग्यतादेखकर तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, स्थावर तथा जङ्गमविष, कामला, भ्रम, गुल्म, ज्वर, सङ्ग्रहणी, कुष्ठ, श्वास, कास, गुदरोग, इत्यादिकोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६१८ ॥

६१९ मृगाङ्करसः (वालादिः) (त्रयोदशः)

विषभागो भवेदेको द्विभागं गैरिकं मतम् ।
भूमुक्तानां त्रयो भागा सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ २७४८ ॥
वल्लोमधुकणायुक्तः पथ्यं दुग्धौदनं हितम् ।
वातरोगेषु सर्वेषु कासेषु ग्रहणीषु च ॥ २७४९ ॥
अनुपानविशेषेण करोति विविधान् गुणान् ।
रसो बालमृगाङ्कोऽयं जीर्णज्वरहरः परः ॥ २७५० ॥

रसायनसं , वातरोगे।

भाषा—शुद्धवच्छनाग १ भाग, शुद्धसोनागेरू २ भाग, श्रेष्ठ मोती ३ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती मधु और पीपलकेसाथ देनेसे समस्त वातरोग, खांसी, ग्रहणी, जीर्णज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य दूधभात देना ॥ ६१९ ॥

६२० मृगाङ्करसः (वालादिः) (चतुर्दशः)

पूर्ववत्पातितं सूतं दशवारांश्च शुल्वतः ।
अभ्रपिण्डीं ततः कृत्वा दशवारांश्च पातयेत् ॥२७५१॥
अधःपातं ततः कुर्यात् त्रिफलाशिग्रुवह्निभिः ।
पञ्चभि र्लवणैः क्षारै राजिकाव्योपभानुभिः ॥२७५२॥
वज्रीदुग्धे वत्सनाभे नेत्रपिष्टं रसं चरेत ।
अम्लवर्गेण सम्मर्द्य विलिम्पेत्पात्रमूर्द्धगम् ॥ २७५३ ॥
तेन कल्केन संरुध्य सम्पुटं दीप्तवह्निना ।
उपरिष्टात्प्रदत्तेन ज्वलद्भिश्छाणकैः पुटेत ॥ २७५४ ॥
अधः पतति सूतेन्द्रस्त्यक्त्वा दोषानशेषतः ।
जम्वीरं वीजपूरञ्च नारङ्गं चाम्लवेतसम् । २७५५ ॥
चाङ्गेरीमम्लिकाञ्चैव बदरं चणकाम्लकम् ।
शिग्रुश्च वज्रकन्दश्च सूरणं मीनलोचनम ॥ २७५६ ॥
वह्निं घनरवां वर्षाभुवं वसुभटं तथा ।
हलिनीं विपनाल्यौ च यवचिञ्चीं कटुत्रयम् ॥२७५७॥
पटूनि पञ्च क्षारांश्च नवसारञ्च रामठम् ।
चर्मारं नाम क्षारं स्यादुपक्षारं समाहरेत ॥ २७५८ ॥
एतत्सर्वन्तु सञ्चूर्ण्य सन्ध्यात्ताम्रभाण्डके ।
दिनानि सप्त संस्थाप्य ततस्त्वेनं प्रमर्दयेत् ॥२७५९॥
दिनानि सप्त संक्षाल्य तप्तकाञ्जिकयोगतः ।
तप्तखल्वे रसं दत्त्वा भूलताभिः प्रमर्दयेत् ॥ २७६० ॥
गृहकन्यारसे युक्तं दिनत्रयमनारतम् ।
जायते पारदः सोऽयं जारणे चरणे क्षमः ॥ २७६१ ॥
चतुःपष्ट्यंशभागेन हेमवीजञ्च चारयेत् ।
द्वात्रिंशद्भागतः पश्चाद्विंशतिं पोडशं तथा ॥ २७६२ ॥
चारयित्वा जारयित्वा यन्त्रे भूधरके क्षिपेत् ।
गन्धकं जारयेत्पश्चात् स्तोकं स्तोकं यथाक्रमम्२७६३
आदौ तु राजिकामात्रं पश्चात्सर्षपमात्रया ।
यवमानं द्वियवकं त्रियवञ्च चतुर्यवम् ॥ २७६४ ॥
पञ्च पट् सप्त नव च दशैकादशसङ्ख्यया ।
क्रमवृद्ध्या च गद्याणमानं भवति यावता ॥ २७६५ ॥
पश्चाद्गद्याणकं जार्यं रसेन्द्रे च पुटे पुटे ।
एवञ्च षड्गुणं यावद्गन्धकं जारयेद्बुधः ॥ २७६६ ॥
अधिकञ्चेज्जारयेच्च गुणाश्चैवाऽधिको भवेत् ।
षड्गुणे गन्धके जीर्णे रसो भवति रोगहा ॥ २७६७ ॥
एवं संस्कृतसूतेन्द्रं पुनः खल्वे निवेशयेत् ।
कृष्णधत्तूरकद्रावैस्त्रिदिनं मर्दयेत्ततः ॥ २७६८ ॥
यन्त्रे सोमानले क्षिप्त्वा ज्वालयेच्च दिनत्रयम् ।
मर्दनञ्च पुनस्तद्वत्पुनर्यन्त्रे विपाचयेत ॥ २७६९ ॥
एवं रसेश्वरं कुर्यात्संस्कारेण समन्वितम् ।
तावत्कार्या क्रिया चैवं यावद्भस्मीभवेद्रसः ॥ २७७०॥
रसभस्म पलैकं स्याद्धेमभस्म पलं तथा ।
शुद्धस्य दानवेन्द्रस्य पलद्वयमुदाहृतम् ॥ २७७१ ॥

मौक्तिकं द्विपलं दद्यात्पादांशो मालतीभवः ।
तत्सर्वं मर्दयेत्खल्वे चाम्लवेतसयोगतः ॥ २७७२ ॥
तदभावे तु यवजकाञ्जिकेन प्रमर्दयेत् ।
दिनानि सप्त सम्मर्द्य तत्कल्कं गोलकं चरेत् ॥२७७३॥
छायायां शोषयेत्तञ्च मूषायां गोस्तनाकृतौ ।
निक्षिप्य चाऽन्धयेन्मूषां तां मूषां सागराह्वये २७७४
यन्त्रे विनिक्षिपेद्धीमांश्चुल्लीमारोपयेत्तु तत् ।
चतुःप्रहरमात्रं तं रसेन्द्रं स्वेदयेद्बुधः ॥ २७७५ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य रसेन्द्रं यत्नतः क्षिपेत् ।
विचूर्ण्य स्वर्णजे पात्रे शीतवातविवर्जितम् ॥२७७६॥
स्वर्णाऽभावे रौप्यपात्रे नाऽन्यस्मिन् स्थापयेद्रसम् ।
अयं बालमृगाङ्काख्यो रोगराजस्य घातकः ॥२७७७॥
च्यवनाद्यनुभूतोऽयं कथ्यते शास्त्रवर्त्मना ।
भैरवं योगिनीचक्रं सम्पूज्य मुरघातिनम् ॥ २७७८ ॥
अग्निं विप्रांस्तोषयित्वा कृतपापविनिष्कृतिम् ।
यथाशास्त्रोक्तमार्गेण शुद्धात्मानं द्विजोक्तितः ॥२७७९॥
रसेशं सम्प्रपूज्याऽथ नमस्कार्य रसं गुरून् ।
वृद्धान्देवान् द्विजान् पश्चात्कृतमाङ्गलिकं भिषक्२७८०
रसेन्द्रं सेवयेन्नित्यं चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः ।
आज्येन मरिचैः सार्धं सेवयेच्च रसेश्वरम् ॥ २७८१ ॥
दशभिः पिप्पलीभिर्वा मधुना सह सेवयेत् ।
घृतपक्वानि शाकानि रामठं वर्जितानि च ॥ २७८२ ॥
सैन्धवं मणिमन्थञ्च लवणार्थं नियोजयेत् ।
एलामजाजीं मरिचं संस्कारे धान्यकं भवेत् ॥२७८३॥
अविदाहीनि शाकानि तथा संस्कृत्य योजयेत् ।
वृन्ताकभेदं सर्वन्तु वर्जयेत्कारवेल्लकम् ॥ २७८४ ॥
श्रीफलं चिर्भटीजातिं सर्वामत्र विवर्जयेत् ।
अङ्गनासङ्गतिर्वर्ज्या कोपं यत्नाद्विवर्जयेत् ॥ २७८५ ॥
न स्वप्याद्दिवसे धीमान् रात्रौ नैव प्रजागरः ।
वर्जयेत्तिलसम्भूतं विकारं तैलमेव च ॥ २७८६ ॥
सर्षपादीनि तैलानि सर्वाणि परिवर्जयेत् ।
अभ्यङ्गञ्च घृतेनैव शिरःस्नानं समाचरेत् ॥ २७८७ ॥
नात्युष्णैरम्बुभिः स्नानं नातिशीतैः समाचरेत् ।
क्वाथं पिबेन्निशीथिन्यां त्रिकटोश्चूर्णसंयुतम् ॥ २७८८ ॥
वल्लीतुवरिकामूलं पलमष्टाऽवशेषितम् ।
त्रिशूलीमूलमथवा क्वाथयेत्पलमात्रकम् ॥ २७८९ ॥
कासनाशाय योक्तव्यो व्योषयुक्तो निशागमे ।
भक्षयेत्काकिनीमूलं रामठेन समायुतम् ॥ २७९० ॥
सर्ववान्तिप्रशान्त्यर्थं भक्षयेद्येषु सर्वदा ।
क्ष्मावर्तकीपत्रचूर्णं गुटिकां मधुना कृताम् ॥ २७९१ ॥
मुखे सन्धारयेच्छ्वासकासकन्दविनाशिनीम् ।
कोविदारत्वचं दध्ना जीरकेण च भोजयेत् ॥८७९२॥
सर्वाऽरुचिप्रशान्त्यर्थं भृष्टजीरकमेव वा ।
कोकिलाक्षस्य बीजानि जीरकेण गुडेन च ॥२७९३॥
ईषत्कर्पूरसंयुक्तं रसतापे प्रयोजयेत् ।
जातीफलं वक्त्रशुद्धौ योजयेत्सततं बुधः ॥ २७९४ ॥
वक्त्रशोषो यदा तु स्यात्पाटलामेघनादयोः ।
मत्स्याख्या मूलमथवा धारयेद्वदने बुधः ॥ २७९५ ॥
सद्यः शोषो निवर्तेत प्रत्येकं मिलितैरथ ।
रक्तं वमेद्यदा रोगी कुर्यात्तत्र चिकित्सितम ॥२७९६॥
लवङ्गमथ कङ्कोलं श्रीखण्डं रक्तचन्दनम् ।
उशीरं तगरं शुण्ठी पिप्पलीं नागकेशरम् ॥ २७९७ ॥
एलां कालाऽगुरुं मुस्तां कर्पूरमथ पत्रकम् ।
जातीफलं तवक्षीरं समभागं विचूर्णयेत् ॥ २७९८ ॥
अष्टौ भागास्तथा ग्राह्यास्तवराजस्य धीमता ।
विचूर्ण्य सर्वमेकत्र योजयेद्रक्तवान्तिहृत् ॥ २७९९ ॥
हृत्तापश्च निवर्तेत चूर्णेनाऽनेन निश्चितम् ।
एवं प्रयोगान् कुर्वीत क्षयरोगस्य शान्तये ॥ २८०० ॥
भिषग्दक्षः सदा भूयाच्चिकित्सासु सुजागृतिः ।
ये ये विकारा जायन्ते तांस्तान् यत्नान्निवर्तयेत् ॥२८०१॥
चिरप्रवृद्धरोगश्च शक्तिशून्यश्च भोजने ।
भग्नगात्रमुपेक्षेत रहस्यं भिषजामिदम् ॥ २८०२ ॥
कथञ्चिद्बलसम्पत्तौ कृत्वा वान्तिविरेचने ।
रसेश्वरं प्रयुञ्जीत नान्यथा सम्प्रयोजयेत् ॥ २८०३ ॥
सामुद्रकं सुसञ्चूर्ण्य भानुदुग्धेन भावयेत् ।
पाययेद्गव्यदुग्धेन कण्ठस्थमलशुद्धये ॥ २८०४ ॥
यवचिञ्चीश्च सम्पिष्य खादयेच्छर्करायुताम् ।
अतितापस्य शोफस्य कर्तनी रेचनी तथा ॥
स्वसंवेद्यप्रकारेण रसेशःसम्प्रकीर्तितः ॥ २८०५ ॥

रसाल , क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—पातनान्तसंस्कारकियेहुए पारेमें चतुर्थांश अथवा समभाग शुद्धतावेका चूरा डालकर जंभीरीप्रभृतिकेरससे पिष्टी-होनेतक मर्दनकर सुखाके दसवार पातनकरे । इसीतरह अभ्रक-सत्त्वकेसाथ दशवार पातनकरे । फिर त्रिफला, सहिजन, चित्र-कमूल, पाचोंनमक, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, राई, त्रिकटु, आक और सेहुण्डकादूध, वच्छनाग इनप्रत्येककी १–१ भावना देकर अम्लवर्गमें मर्दनकर पिष्टीबनाय घड़ेके भीतर लेपकर दूसरे घड़े-पर इसको उल्टा रखकर ६–७ कपड़मिट्टी से सन्धिबन्दकर सुखाले और खाली घड़ेको खड्डेमें रख ऊपरके घड़ेपर जलतेहुए कण्डे इसअन्दाज़से रक्खे कि कल्कसे पारा अलगहोकर नीचेके वर्तनमें चलाजाय । स्वाङ्गशीतल होनेपर पारेको निकालकर जंभीरी, बिजोरा, नारङ्गी, अम्लवेत, अम्लोनिया, इमली, बेर, चनेकाखार, सहिजन, जुहरी और साधारण सुरण, मछेछी, त्रिवृत्, बन्दाल, इन्द्रमिट, पुनर्नवा, कलिहारी, वच्छनाग, नारी, तिनली, त्रिकटु, पांचोंनमक, यवक्षार, सज्जी, सुहागा, शोरा, नवसादर, हींग, सफेद सोमल, उपक्षार (तुत्थ और हीराक-सीस) येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर तांबेकी सरल तपाकी कढ़ाहीमें शुद्धपारेके बराबर नीचे ऊपर रख बीचमें पारेको दा-

कर तावेके वर्तनसे ढकदे । सातदिनकेवाद ७ दिनतक तावेके डण्डेसे मर्दनकर गरमकाञ्जीसे धोकर पारेको अलगकरले । फिर तप्तखल्वमें रख केंचुए और घीकुंआरके द्रवोंसे ३–३ दिन निरन्तरमर्दनकरनेसे पारा धातुओंके खाने और जारणकरनेमें समर्थ होजाताहै । चोंसठ, वत्तीस और पोडशांश सुवर्णकावीज पारेमें क्रमसे ग्रासदेकर जारणकरे फिर थोड़ा २ गन्धकडालकर भूधरयन्त्रमें जारणकरे । एकतोलेमें राई, सरसों, एकयव, दोयव, तीन, चार, पाच, छ , सात, नव, दश और ग्यारह यव,इसक्रमसे ६ माशे तक प्रमाण वढावे । इसतरह कमसेकम षड्गुणगन्धक जारणकरे । षड्गुणसे अधिक जारणकरनेसे अधिक गुणहोताहै।इसतरह पारेका संस्कारकर काले धतूरेके रससे तीनरोज मर्दनकर सोमानल (डमरू) यन्त्रमें तीनदिनकी अग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दन और पातनकरे । जवतक पारदभस्म तलस्थ न होजाय तवतक इसक्रमको वारम्वार करतारहे । यह पारदभस्म और सुवर्णभस्म १–१ पल, शुद्धगन्धक और मोती २–२ पल, सुहागा १ कर्ष लेकर सवकी कज्जलीकर अम्लवेतकेरससे ७ रोजतकमर्दनकर गोला वनाय छायामें सुखावे । अम्लवेतके अभावमें जवकीकाञ्जीमें मर्दनकरे । फिर गोलेको गोस्तनाकृतिमूषामें रख स्वेदनयन्त्रमें चूल्हेपर चढाकर ४ पहर स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सुवर्णके पात्रमें रक्खे, शीत और वायु न लगे । सुवर्णपात्रके अभावमें चादीके पात्रमें रक्खे, इनके अतिरिक्त अन्यपात्रमें न रक्खे । यह रोगराजका नाशकरनेवाला वालमृगाङ्करस तैयार हुआ । इसका च्यवनादिकोंने अनुभवकियाहै । भैरव,योगिनीचक्र, मुरारि, अग्नि, ब्राह्मण, इनका पूजनकर प्रायश्चित्त करे और शास्त्रोक्तमार्गसे आत्माको शुद्धकर रसेश,रस,गुरु,वृद्ध,देव,द्विज,इनका यथाशक्ति पूजनकर स्वस्तिवाचन और नान्दीश्राद्धका अनुष्ठान करके ४रत्तीकीमात्रा घी और मरिचके साथ अथवा १० पीपल और मधुकेसाथ सेवनकरे । हींगरहित घीमें पकेहुए शाक, सेंधानमक, इलायची, जीरा, मरिच, धनिया येसव मसालेमें डाले । दाहकरनेवाले शाकोंको न खाय, सवतरहके वेंगन, करेला, नारियल, ककडी, स्त्रीप्रसङ्ग, कोप, दिनकीनिद्रा, रात्रिजागरण, तिलयुक्तपदार्थ, तैल, सरसों, उवटन, शिरस्नान, अत्यन्तगरम या ठढे जलसे स्नान, इनसवको छोड़देवे । रात्रिको प्यास लगे तो त्रिकटुका काढा वनाकर थोड़ासा त्रिकटुका चूर्ण मिलाकर पीवे । मुद्गपर्णी अथवा त्रिशूली (संभालू) कीजड़ १–१ पलका अष्टावशेष क्वाथ वनाकर त्रिकटुका चूर्ण डालकर रात्रिमें पीनेसे खासी नष्टहोतीहै । गुञ्जाकीजड़ हींगके साथ लेनेसे सवप्रकारकी वमन वन्दहोतीहै । आवळ अथवा सनायके पत्तोंकेचूर्णकी मधुमें गोली वनाकर मुंहमें रखनेसे सवतरहकी खासी नष्टहोती है । सवतरहकी अरुचिको नष्टकरनेके लिये सफेदफूलके कचनारकीछालकाचूर्ण दही अथवा जीरेके साथ देवे अथवा केवल भुनाहुआजीरा देवे । अथवा मछेछीकीजड़ मुंहमें रक्खे । अथवा पाढर, कांटेवाली चौलाई, मछेछी इनसवकीजड़की गोलियें वनाय मुंहमें रखनेमे तत्काल मुखशोष मिटताहै । अगर रससेवनसे रक्तकी वमन हो तो लौंग, शीतलचीनी, सफेद और लालचन्दन, खस, तगरगण्ठोला (गुजराती), सोंठ, पीपल, नागकेसर, इलायची, काला अगर, नागरमोथा, कपूर, पत्रज, जायफल, तीखुर ये सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर चूर्णसे अठगुना वंसलोचन डालकर एकरोज मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा मधुप्रभृतिकेसाथ देनेसे रक्तकीवमन वंदहोतीहै और हृदयका ताप निश्चितरूपसे निवृत्तहोताहै इसतरह उपद्रवोंको संभालताहुआ क्षयरोगकी चिकित्सा करे इनके अतिरिक्त और उपद्रव उपस्थित हों तो उनको यत्नसे दूरकरे। जिसकारोग वहुत वढ़गयाहो और भोजनकरनेकी शक्ति जातीरहीहो, गात्र सूखगयेहों । नेत्र भीतर उतरगयेहों उसे मरणासन्न समझकर छोड़दे । जिसका शरीर फूटगया हो उसकीभी चिकित्सा न करे । शरीरमें वलसम्पत्ति अच्छीहोनेपर वमन विरेचन कराके प्रस्तुत रसको दे । समुद्रकानमक आकके दूधमें भिगोकर ३–३ रत्ती गायके दूधकेसाथ लेनेसे कण्ठकेमलकी शुद्धि होगी तितलीको पीसकर शक्करकेसाथ १ माशा खिलानेसे अत्यन्तज्वरको दूरकरती है और मलको रेचनकरतीहै ॥ ६२० ॥

६२१ मृगाङ्करसः (महदाद्यः) (पञ्चदशः)

शुद्धं सूतं स्वर्णभस्म जम्बीरे मर्दयेद्दिनम् ।
तयोर्द्विगुणितं ताम्रं त्रिभिस्तुल्यन्तु गन्धकम् २८०६
टङ्कणं गन्धकाऽर्द्धञ्च सर्वं जम्बीरजै द्रवैः ।
मर्द्य यामैश्चतुर्भिस्तद्वस्त्रे वद्ध्वा विपाचयेत् ॥ २८०७ ॥
दोलायन्त्रे सारनाले यामादुद्धृत्य शोषयेत् ।
ततो मृन्मयभाण्डान्तर्लवणञ्चाऽङ्गुलद्वयम् ॥ २८०८ ॥
ऊर्द्ध्वाऽधः पृष्ठतः कृत्वा गोलकं वस्त्रवेष्टितम् ।
लवणैः पूरयेद्भाण्डमन्धयित्वा दिनं पचेत् ॥ २८०९ ॥
चुल्यां क्रमाग्निसिद्धः स्याद्रसो महामृगाङ्ककः ।
अनेनैव प्रकारेण मृगाङ्कान् पाचयेद्रसान् ॥ २८१० ॥
राजरोगनिवृत्त्यर्थं देयं गुञ्जामितं घृतैः ।
दशभिर्मरिचैः सार्द्धं पिप्पलीमधुनाऽपि वा ॥२८११॥

र र , चि. र भ , र का , र क यो , र को , राजयक्ष्मणि।

टि०–चिकित्सारत्नाभरणे तयोर्द्विगुणित ताम्रमित्यस्य स्थाने तयोर्द्विगुणिता मुक्तामिति पाठोऽस्ति । स्वर्णभस्मस्थाने स्वर्णपत्रमितिपाठोऽस्ति।

भाषा—शुद्धपारा और सुवर्णभस्म समभागलेकर जभीरीके रससे एकरोज मर्दनकर दोनोंसे दूनी ताम्रभस्म, तथा तीनोंकीवरावर शुद्धगन्धक और गन्धकसे आधासुहागा डालकर सवको जभीरीके रससे चारपहर मर्दनकर गोलावनाय चारतहकपड़ेमें लपेटकर दोलायन्त्रमें एकपहरकाञ्जीसे स्वेदनकर मिट्टीकेवर्तनमें दोअङ्गुल पिसाहुआ नमकविछाकर गोलेको रख नमकसे वर्तनको भरदे और मुखमुद्राकर एकदिनकी क्रमाग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक घीकेसाथ अथवा दशमरिच और मधुकेसाथ अथवा तीन पीपल और मधुकेसाथ देनेसे यह राजरोगको निवृत्त करताहै ६२१

६२२ मृगाङ्करसः (महदाद्यः) षोडशः)

निरुत्थं भस्म सौवर्णं द्विगुणं भस्म सूतकम्।
त्रिगुणं भस्म मुक्तोत्थं शुकपिच्छं चतुर्गुणम्॥२८१२॥
मृततार्प्यं पञ्चभागं तारभस्म चतुर्गुणम्।
सप्तभागं प्रवालञ्च रसतुल्यञ्च टङ्कणम्॥ २८१३॥
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य त्रिदिनं लुङ्गवारिणा।
ततश्च गोलकं कृत्वा शोषयित्वा खरातपे॥ २८१४॥
लवणैः पात्रमापूर्य तन्मध्ये गोलकं क्षिपेत्।
तन्मुखन्तु मृदा रुद्धां पचेद्यामचतुष्टयम्॥ २८१५॥
आकृष्य चूर्णयेच्छुद्धं चतुःषष्टिविभागतः।
वज्रं वा तदभावे तु वैक्रान्तं षोडशांशिकम् ॥२८१६॥
महामृगाङ्कः खलु एष सिद्धः
श्रीनन्दिनाथप्रकटीकृतोऽयम्।
वल्लोऽस्य सेव्यो मरिचाऽऽज्ययुक्तः
सेव्योऽथवा पिप्पलिकासमेतः॥ २८१७॥
तत्रोपचाराः कर्तव्याः सर्वे क्षयगदोदिताः।
वल्यं वृष्यञ्च भोक्तव्यं त्यजेत्सूतविरोधि यत् ॥२८१८॥
यक्ष्माणं बहुरूपिणं ज्वरगणं गुल्मं तथा विद्रधिम्।
मन्दाग्निं स्वरभेदकासमरुचिं वान्तिञ्च मूर्च्छां भ्रमम्॥
अष्टावेव महागदान् गरगदान् पाण्ड्वामयान् कामलाः।
पित्तोत्थांश्च समग्रकान् बहुविधानन्यांस्तथा नाशयेत्॥

र सं., र मु, र चं, भै र, र पा., र क, र क यो., राजयक्ष्मणि। रसपारिजाते ताप्यस्थाने ताम्रं नियोजितम्।

भाषा—निरुत्थ सुवर्णभस्म १ भाग, पारदभस्म २ भाग, मोतीभस्म ३ भाग, शुद्ध गन्धक ४ भाग, सुवर्णमाक्षिकभस्म ५ भा., रजतभस्म ४ भा, प्रवालभस्म ७ भा, सुहागा ? भाग लेकर सबका वारीकचूर्णकर १–२ पहर केवल मर्दनकर विजोरेकेरससे तीनदिनतक मर्दनकरे। फिर गोलावनाय कड़ीधूपमें सुखाकर चारतहकपड़ेमें लपेट २–३ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर लवणयत्रमें रख मुखमुद्राकर चारपहरकी अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर वारीक पीसकर इससे ६४ वा हिस्सा हीरेकीभस्म अभावमें सोलहवा हिस्सा वैक्रान्तभस्म मिलाकर रखछोड़े। यह नन्दिकेश्वरका कहाहुआ मृगाङ्करसहै। इसमेंसे ३–३ रत्ती मरिच और घी अथवा पीपल और घीकेसाथलेनेसे सब उपद्रवयुक्त यक्ष्मा, ज्वरसमुदाय, गुल्म, विद्रधि, मन्दाग्नि, स्वरभेद, कास, अरुचि, वमन, मूर्च्छा, भ्रम, आठमहारोग, वनावटी ज़हर, पाण्डुरोग, कामला, पित्तोत्थसमग्ररोग, इत्यादिकोंको यह अनुपानभेदसे नष्टकरताहै॥ ६२२॥

६२३ मृगाङ्करसः (महदाद्यः) (सप्तदशः)

स्वर्णं तारं समुक्तं व्रततिकिसलयं माक्षिकं वज्रसूतौ,
लोहं चाभ्रञ्च शुल्वं मृतममलतरौ नागवङ्गौ च गन्धम्
भागैर्वृद्धं दिनेकं घनतरघटनैः मर्दयेत्त्रित्रिवारं,
कन्याधात्रीविदारीमुशलिवरिजयाशाल्मलीधूर्तमूलैः॥
गोलं वेष्ट्यं पलाशैर्मदनतरुभवैर्मृत्स्नया चाऽपिशुष्कं,
गर्ते सामुद्रपूर्णे लघुतरदहने पाचितं वेद्यामम्।
दत्त्वा तत्षोडशांशं विषमतिविमलं गन्धकं तेन तुल्यं,
मर्द्यं धूर्तैर्जयाभिःखसखसतिलजैर्वारिभिः कन्यकोत्थैः
पिण्डं सिन्धूद्भवेन प्रविलुलितमथो वेष्टितं माषपिष्टैः।
स्थाप्यं यन्त्रे त्रियामं लवणविरचिते पाचयेदग्निना तु
स्वाङ्गं शीतं कुमारीवटुकबलियुतं पूजितं वल्लमात्रं,
कृष्णाक्षौद्रैः मृगाङ्कः क्षयतिमिररविर्भाषितो जीर्णवैद्यैः

र.प, क्षयरोगे।

टि०–"हेम तार तथा मुक्ता विद्रुम माक्षिक पविः। रस लोहाऽभ्रक शुल्व वङ्गनागौ च गन्धकम्॥ आदाय भागवृद्ध्यैतत्तत्तुल्य टङ्कण क्षिपेत्। मर्दयेद्द्रावयेद्धीमानेकैकेन दिनत्रयम्॥ कुमारी चाऽमृता धात्री विदारी शाल्मली वरी। मुशली विजया हेमद्रव खाऽसवल्कजम्॥ वल्कलैर्विजयाहेमकुमारीणा पृथग्द्वयम्। सिन्धुचूर्णान्वित माषटङ्कणाभ्याञ्च लेपयेत्॥ स्थाप्य लवणयन्त्रे तु त्रियाम पाचयेन्मृदु। स्वाङ्गशीत समुद्धृत्य पूजयेत्कुलदैवतम्॥ वलिपूजाविधियुत सुमुहूर्ते विचूर्णयेत्। महामृगाङ्कको ह्येष तीक्ष्णक्षयतमोरवि॥ पिप्पलीमधुसयुक्तो वल्लमात्र प्रयुज्यते।" इतिपाठो रसायनसङ्ग्रहे नागवङ्गीयप्रमाणे व्यत्यय कृत्वा वत्सनाभ निष्काश्य सर्वसमटङ्कण नियुज्य पाठान्तर स्थापितोऽस्ति परन्तु तीक्ष्णचिह्नयुक्तक्षयेविधानात् टङ्कणयोगस्याऽनुकूल्यावहत्वात्तद्योग कृत्वा गुडूची भूर्यपत्रस्वरसाभ्या यथास्थानमधिकभावनया निष्पादिते योगे द्वयोर्योगयोरेकत्रसमावेशो भविष्यति गुणाऽधिक्यमपि स्पष्टतरैव।

भाषा—सुवर्ण १ भाग, रजत २ भा., मोती ३ भा, प्रवाल ४ भा., सोनामाखी ५ भा., हीरा ६ भा, पारा ७ भा., लोह ८ भा, अभ्रक ९ भा, तावा १० भा., सीसा ११ भा, रागा १२ भा, इनसवकीभस्में और शुद्धगन्धक १३ भा, लेकर १–२ पहर सूखे घोटकर घीकुंआर, आवला, विदारीकन्द, मुसली, शतावर, भांग, सेमरका मुसला, धतूरेकी जड़, इनप्रत्येककेस्वरससे ३–३ दिन मर्दनकर गोलावनाय मदनवृक्षके पत्तोंमें लपेटकर ४–५ कपड़मिट्टी देकर सुखावे। सूखनेपर एकवालिस्त लंवेचौड़े गर्तके वीचमें आठअङ्गुलगहरा और गोलेके आनेलायक दूसरागर्त खोदकर नीचेथोड़ासा सैन्धव विछाकर गोलेको रख ऊपरसे सेंधानमक भरदे। ऊपरके गर्तमें थोड़े २ कण्डोंकी ४ पहरतक आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर औषधसे सोलहवा हिस्सा शुद्धवछनाग और गन्धक मिलाकर धतूरा, भाग, खसखस, तिल, घीकुंआर इनप्रत्येककेरसोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय इन्हींदवाओंकेरससे सेंधेनमकको घोटकर गोलेपर आधाअङ्गुलमोटा लेपदेकर सुखाकर उड़दके आटेमें वन्दकर लवणयत्रमें ३ पहर कोयलोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। फिर कुमारी, और वटुककी पूजा और भैरवको वलि निवेदनकर इसरसकी ३ रत्तीकीमात्रा ३ या ७ पीपल और मधुकेसाथ देनेसे यह क्षयरोगको नष्टकरताहै ६२३

६२४ मृगाङ्करसः (महाराजादिः) (अष्टादशः)

रसभस्म त्रिभागञ्च भागैकं तारभस्मकम्।
मुक्ताफलञ्च स्फटिकं काश्मीरञ्च त्रिभागिकम्॥२८२४॥
गोमेदकञ्च द्विगुणं काश्मीरेण नियोजयेत्।
पद्मरागेन्द्रनीले च राजावर्तञ्च भागिकम्॥ २८२५॥

गरुडोद्गारवैक्रान्तं प्रवालं हेममाक्षिकम् ।
शङ्खशुक्तिवराटानां पृथग्भागान्नियोजयेत् ॥ २८२६ ॥
सुवर्णं रसतुल्यं स्यात्ताम्रं हेमसमांशकम् ।
कांस्यञ्च ऋतुभागञ्च रीतिकाभागमात्रकम् ॥
मण्डूरं भागमात्रं स्यात्सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ।
सुवर्णं रसतुल्यञ्च तीक्ष्णं कान्ताऽभ्रगन्धकम् ॥२८२८॥
वङ्गं भुजङ्गं भागञ्च रसपाकश्च पूर्ववत् ।
एष राजमृगाङ्कः स्यात्सर्वरोगविनाशनः ॥ २८२९ ॥
क्षये प्रयोज्यो मधुपिप्पलीभ्यां
श्वासे च भार्ङ्गीमधुनागरैश्च ।
मध्वाज्यतैलेन मरीचकैश्च
पाण्डौ गदे नीरमधुप्लुतोऽसौ ॥ २८३० ॥
शतावरीशर्करया समेतो
वीर्यस्य वृद्धिं कुरुतेऽवलीढः ।
वासारसक्षौद्रयुतो निहन्या-
त्पित्तं सरक्तं सितयाऽम्लपित्तम् ॥ २८३१ ॥

र क यो , सर्वरोगे ।

टि०—"रसभस्मत्रयो भागा पद्भाग हेमभस्मकम् । मृततारञ्च भागैक वज्रमेक चतुर्गुणम् ॥ गोमेदकञ्च द्विगुण काश्मीर सप्त मौक्तिकम् । पद्मरागेन्द्रनीलञ्च राजावर्तं तथैव च ॥ गरुडोद्गारवैक्रान्त प्रवाल हेम-माक्षिकम् । वैदूर्यं पुष्परागञ्च नागवङ्ग तथैव च ॥ तीक्ष्ण कान्त व्योम-गन्ध त्रिफलाचित्रकाम्भसा । भावना गव्यदुग्धेन सेक्षुवासागणेन च ॥ उशीरद्वयनीरेण पृथक् सप्तकसङ्ख्यया । पश्चान्मृगमदे भाव्य सुसिद्धो रसराड्भवेत् ॥ वल्लमात्र प्रयुञ्जीत मधुना मेहनाशनम् । वलीपलितहृत्पथ्य कामद सुखवर्धनम् ॥ वसन्तकुसुमाख्यातो वसन्तपदपूर्वक ॥" इति पाठोऽपि रत्नाकरौषधयोगे एव वसन्तकुसुमाकरनाम्ना लिखितोऽस्ति परन्तु पाठद्वयकल्पने गौरवाक्रमोत्पादकत्वादधिकारसाम्याच्चैक एव पाठ कल्पनीय ॥

भाषा—पारदभस्म ३ भाग, रजतभस्म १ भा , मुक्ता-पिष्टी, स्फटिक और केशर ३–३ भाग, गोमेद ६ भा , माणिक्य, नीलम और लाजवर्द १–१ भा , पन्ना, वैक्रान्त, प्रवाल, सुवर्णमाक्षिक, शङ्ख, सीप, पीलीकौड़ी इनसबकीभस्में १–१ भाग, सुवर्ण और ताम्रभस्म ३–३ भा , कास्यभस्म ६ भा , पीतल और मण्डूरभस्म १–१ भा., कहरवा ३ भा , फोलाद और कान्तलोहभस्म, अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, वङ्ग और नागभस्म, येसब १–१ भाग लेकर ३–४ पहर शुष्कमर्दनकर हींगके पानीसे ४ दिन मर्दनकर गोलाबनाय कड़ीधूपमें सुखाय ४ तह कपड़ेमें पोटली बनाय २–४ कपड़मिट्टी लगाकर सुखादे । फिर सज्जीखार, जवाखार और पाचोंनमक समभागमें मिलेहुए ४ सेरको बारीक पीसकर उसकेबीचमें गोलेकोरख मुहबन्दकर ४ पहरकी मध्यम अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से ३ रत्तीतककीमात्रा मधु और पीपलके साथ क्षयमें, भारङ्गी, सोंठ और मधुके साथ अथवा मधु, घी, तेल और मरिचकेसाथ श्वासमें दे । पाण्डुमें मधुके शरबतकेसाथ दे । वीर्यवृद्धिके लिये शतावर और शक्करकेसाथदे । अडूसेकेरस और मधुकेसाथ रक्तपित्तमें और शक्करके साथ अम्लपित्तमें देवे ।

इसतरह यह ऊपरकहे हुएरोगोंको और अनुपानभेदसे अन्यरोगोंको भी नष्टकरताहै ॥ ६२४ ॥

६२५ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (ऊनविंशः)

अथाऽपरं प्रवक्ष्यामि रोगराजस्य भेदनम् ।
प्रागुक्तेन प्रकारेण सूतेन्द्रं शोधयेद्बुधः ॥ २७३२ ॥
मुखमुत्पादयेत्तद्वद्रसेऽग्निस्थायितां नयेत् ।
पूर्वोक्तेन प्रकारेण दद्याद्ग्रासचतुष्टयम् ॥ २८३३ ॥
पूर्वोक्तेन प्रकारेण जारयेद्गन्धकाच्छतम् ।
गुणानभ्रकसत्त्वस्य षड्गुणं जारयेद्रसे ॥ २८३४ ॥
ताप्यसत्त्वसमायुक्तं ताप्यचूर्णप्रवापितम् ।
शुद्धसौवर्णबीजन्तु चारयेच्च समांशतः ॥ २८३५ ॥
एवं जीर्णे रसे वज्रं जारयेच्च शतांशतः ।
भूनागसत्त्वं हेम्ना च समावृत्तं तु कारितम् ॥२८३६॥
ततः कृत्वा वज्रभस्म वक्ष्यमाणक्रमेण तु ।
भस्मना तेन वज्रस्य मारयेत्तं रसेश्वरम् ॥ २५३७ ॥
चतुःषष्टिगुणे सूते वज्रभस्म विनिःक्षिपेत् ।
मर्दयेदम्लवर्गेण नानाधत्तूरकद्रवैः ॥ २८३८ ॥
एकविंशद्दिनं यावन्मर्दयेच्च निरन्तरम् ।
यन्त्रे सोमानले क्षिप्त्वा दिनान्यधिकविंशतिम् ॥२८३९
ज्वालयित्वा वीतिहोत्रं स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ।
गृह्णीयाद्भस्मतां यातं रसेन्द्रं वज्रयोगतः ॥ २८४० ॥
पश्चात्तद्भस्मना हेम भस्मी कुर्वीत बुद्धिमान् ।
तद्भस्मनैव रजतं भस्मीकुर्याद्विचक्षणः ॥ २८४१ ॥
ताम्रं तीक्ष्णं वङ्गनागावभ्रकान्तं प्रमारयेत् ।
सूतसाम्येन सर्वेषां लोहानां भागमाहरेत् ॥ २८४२ ॥
मुक्ताचूर्णन्तु सर्वेषां समानं परिगृह्य च ।
रसाच्च द्विगुणं गन्धं टङ्कणं पादतः क्षिपेत् ॥ २८४३ ॥
तत्सर्वं मर्दयेद्यत्नात्काञ्जिकैश्च यथोद्भवैः ।
दिनत्रयं प्रयत्नेन पश्चाद्गोलकमाचरेत् ॥ २८४४ ॥
छायाशुष्कञ्च तं गोलं पक्वमूषागतं कृतम् ।
सागरे यन्त्रराजे तं दत्त्वा पाकं समाचरेत् ॥ २८४५ ॥
चतुर्यामप्रमाणेन मध्ये वह्निं विधाय वै ।
ततः सिद्धं रसेन्द्रं तं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ २८४६॥
सम्मर्च्य ब्रह्मविष्णवीशान् योगिनीभैरवादिकान् ।
बलिं दत्त्वा भूतवर्गे पावकं तर्पयेद्धृतैः ॥ २८४७ ॥
सहस्रादधिकं हुत्वा गुरुविप्रान् प्रपूज्य च ।
एवं कृत्वा रसेन्द्रो वै ग्राह्यो नैवान्यथा बुधैः ॥२८४८॥
विचूर्ण्य स्थापयेत्पात्रे सौवर्णे राजतेऽथवा ।
नित्यं सम्पूजयेद्देवं रसेन्द्रं सिद्धिकामुकः ॥ २८४९ ॥
अन्यथाऽपहरेद्देवो भैरवो रसमुत्तमम् ।
ततो रसेश्वरं दद्याद्रोगराजनिवृत्तये ॥ २८५० ॥
राजसर्षपमात्रन्तु नाधिकं योजयेद्बुधः ।
घृतेन मधुना साकं व्योषचूर्णेन संयुतम् ॥ २८५१ ॥

अनुपानञ्च धारोष्णं गव्यं दुग्धं प्रयोजयेत् ।
तवराजेन संयुक्तमजादुग्धमथापि वा ॥ २८५२ ॥
पथ्यञ्च पूर्ववत्कुर्याच्चिकित्सा तद्वदेव हि ।
एकमण्डलयोगेन रोगराजं निहन्त्यसौ ॥ २८५३ ॥
रसेन्द्रो नाऽन्यथा चिन्त्य एतदीश्वरभाषितम् ।
षण्मासस्य प्रयोगेण छिद्रं पश्यति मेदिनीम् ॥२८५४॥
ब्रह्मलोकावधि जगत्पश्येत्करतलाम्बुवत् ।
संवत्सरप्रयोगेण खेचरो जायते नरः ॥ २८५५ ॥
अदृश्यः सर्वभूतेषु बलवान् स्यान्मुरारिवत् ।
स्वच्छन्दचरितो गौरीकान्तवज्जायते नरः ॥ २८५६ ॥
तस्य मूत्रपुरीषाभ्यां शुल्वं भवति काञ्चनम् ।
सर्वान् रोगान्निहन्त्येष रसेन्द्रो नाऽत्र संशयः ॥२८५७॥
अनुपानविशेषेण तत्तद्रोगोक्तयोगतः ।
अयं राजमृगाङ्काख्यो रसेन्द्रः सम्प्रकाशितः ॥२८५८॥
यत्कीर्तनात्सर्वरोगा विनश्यन्ति न संशयः ।
यद्दर्शनाच्च पापानि विलयं यान्ति तत्क्षणात् ॥
देवीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥२८५९॥
रसालं ,क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—पूर्वोक्तप्रकारसे अग्निस्थायी संस्कारपर्यन्त क्रियाकर पूर्ववत् चारग्रास देकर शतगुणित गन्धक और षड्गुण अभ्रकसत्त्व जारणकर सुवर्णमाक्षिकसत्त्वका ग्रास देकर शुद्धसुवर्णमाक्षिकके चूर्णका अग्निपर प्रक्षेप देवे । सुवर्णमाक्षिकसत्त्व निःशेषतया जारितहोनेपर शुद्धसुवर्णबीज बराबरके हिस्सेका जारणकरे फिर सौवां हिस्सा हीरा जारणकरे। केंचुओंके सत्त्वको सुवर्णके बराबर लेकर गलावे और इसमें शुद्धहीरेको लपेटकर व्याघ्रीकन्दप्रभृतिमें बन्दकर भस्म बनावे । इसभस्मका एकहिस्सा ६४ गुने पारेमें मिलाकर यथासम्भव अम्लवर्गको एकत्रितकर उनके रसोंसे मर्दनकर जितनी धतूरेकीजाति मिलसकें उनप्रत्येकके रसोंसे २१ दिनतक निरन्तर मर्दनकर डमरूयन्त्रमें बन्दकर २१ दिनकी क्रमवृद्ध अग्निदेकर पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर वज्रकेयोगसे मरेहुएपारेको निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे एकहिस्सा ६४ गुने सुवर्णमें डालकर पूर्ववत् अम्ल और धत्तूरवर्गसे २१ रोज़ मर्दनकर डमरूयन्त्रमें २१ रोज़की अग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इसमें ६४ गुनी रजत मिलाकर पूर्ववत् मर्दन और पाचनकरे। इसरजतभस्ममें ६४ गुना ताँबेका चूरा मिलाकर पूर्ववत् भस्मकरे । इस ताम्रभस्मसे फौलाद और फौलादसे वङ्ग, वङ्गसे नाग, नागसे अभ्रक और अभ्रकसे कान्तलोहकी भस्म करे । पारदभस्मके बराबर आठों लोहोंकी भस्म लेवे और इनसबकी बराबर मोतीकाचूर्ण, रससे दूना शुद्धगन्धक, रससे चतुर्थांश सुहागा मिलाकर सबको काञ्जी और यवके मद्यसे ३-३ रोज़ मर्दनकर गोलाबनाय छायाशुष्ककर पकीहुई मूषामें बन्दकर वालुकायन्त्रमें ४ पहर मध्यम अग्निमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ब्रह्मा, विष्णु, ईश, महादेव, योगिनी, भैरव प्रभृतिको बलि देकर अग्निको सहस्राहुतिसे तर्पणकर गुरु, ब्राह्मण इनकी यथाशक्ति पूजाकर पारेको खरलकर सुवर्ण अथवा चांदीके वर्तनमें रखकर विधिपूर्वक रोज़पूजाकरे अन्यथा दवाके गुणको भैरव हरणकरलेंगे । इसतरह सुरक्षितकियेहुए रसको मोटीराईके प्रमाण लेकर घी, मधु और त्रिकटुकेचूर्णकेसाथ मिलाकर खिलादे ऊपरसे धारोष्णदुग्ध पिलावे अथवा वंसलोचनकाचूर्ण डालकर बकरीका दूध पिलावे । पथ्य बृहद्राजमृगाङ्ककीतरह करे । उपद्रवोंकी प्रतिक्रियाभी वैसेहीकरे । इसतरह एकमण्डलतक करनेसे यह रोगराजको नष्टकरताहै । ६ महीनेतक प्रयोगकरनेसे पृथ्वीमें ऐसाकोईहिस्सा नज़र नही पड़ता कि जहांसे उसे जानेका रास्ता न मिले । ब्रह्मलोकतक संसारको हस्तगत आमलकवत् देखेगा । एकवर्षके प्रयोगसे आकाशगामिता सिद्धहोतीहै । समस्तभूतोंके अदृश्य होताहुआ दिव्यबलयुक्त होताहै । स्वच्छन्दगतिको प्राप्तहोकर महादेवके सदृश गुणोंको प्राप्तकरताहै । उसकेमूत्र और पुरीषसे तांबा सुवर्णहोजाताहै । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै । उसमनुष्यके दर्शनकरनेसे समस्त पाप नष्टहोतेहैं ॥ ६२५ ॥

६२६ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (विंशः)

एकैकभागेन सुवर्णसूत-
वैक्रान्तभस्मान्यथ गन्धकञ्च ।
भागद्वयं मौक्तिकभस्म देयं
तुर्यांशतो हीरकभस्महेम्नः ॥ २८६० ॥
ततः परं टङ्कणकञ्च सूत-
तुर्यांशकं सद्द्विपजा प्रदेयम् ।
सर्वाणि चैकत्र निधाय खल्वे
जम्बीरनीरेण दिनं विमर्द्यम् ॥ २८६१ ॥
तद्गोलकं शुष्कमनातपे च
मृत्कर्पटेनाऽपि च वेष्टयित्वा ।
ततो वितस्तिप्रमिते च भाण्डे
दशाङ्गुलायामयुतेसमं तत् ॥ २८६२ ॥
विस्तीर्णवक्त्रे चतुरङ्गुलीभिः
किट्टं क्षिपेत्तत्र षडङ्गुलीकम् ।
तस्योपरिष्टादथ गोलकं तं
निधाय भाण्डे पृथुचुल्लिकायाम् ॥२८६३॥
दीपाग्निनाऽऽदौ प्रहरं पचेच्च
मध्याग्निनाऽथप्रहरद्वयञ्च ।
चण्डाग्निना चाऽपि समुद्रयाम-
मेवंपुटो वासर एक एव ॥ २८६४ ॥
तं स्वाङ्गशीतं स्वत उद्धरेत
तद्योजयेद्भैरवमेव वह्निम् ।
कुमारिकाणामथ योगिनीनां
तृप्तिं बहूनामपि सद्द्विजानाम् ॥२८६५॥
सम्पूज्य सिद्धेश्वरविघ्नराजं
खल्वे च चूर्णं विदधीत तस्य ।

उदीरितो राजमृगाङ्क एष-
स्ततो भवानीं प्रति शम्भुनाऽसौ॥२८६६॥
क्षौद्रेण सेव्यो दशपिप्पलीभि-
श्चूर्णेन साकं भिषजां समीपे।
क्षयं निहन्त्याशु च वह्निदायी
पाण्डुं प्रमेहं ग्रहणीं पिनष्टि॥ २८६७॥
शूलं समूलं सकलं निहन्ति
चार्शांसि सर्वज्वरसन्निपातान्।
रोगान् ग्रहग्रस्तान् प्रसभं पिनष्टि
हरिं यथा पातकसङ्घमाशु॥ २८६८॥

र. सु, र. शं, राजयक्ष्मणि।

भाषा—सोना, पारा, वैक्रान्तभस्म और शुद्धगन्धक १–१ भाग, मोतीकी पिष्टी अथवा भस्म २ भा., हीरेकीभस्म १/४ भा, सुहागा १/४ भा, लेकर सबको ३–४ पहर सूखा मर्दनकर जंभीरीकेरससे एकदिन घोटकर गोलाबनाय छायाशुष्ककर चारतह मलमलके कपड़ेमें लपेटकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर अच्छीतरह सुखाय एक बालिस्तलम्बा दशअङ्गुलचौडा और चारअङ्गुलचौड़े मुहका वर्तनलेकर उसमें ६ अङ्गुलतक लोहेकेकिट्टका चूरा बिछाकर ऊपर गोलेकोरख किट्टके चूर्णसेही ऊपरतक भरदे फिर वालुका अथवा लवणयन्त्रमें रखकर बड़े चूल्हेपर रख एकपहर दीपाग्नि, फिर दोपहर मध्यमाग्नि अखीरमें ४ पहर चण्डाग्नि देकर पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। भैरव, अग्नि, कुमारी, योगिनी, सुपात्रब्राह्मण इनकी अच्छीतरह तृप्तिकर गणेशका पूजनकर भवानी और शङ्करको प्रणामकर दशपीपल और मधुकेसाथ इसरसकी १ से ४ रत्तीतककी मात्रा देनेसे क्षय, अग्निमान्द्य, पाण्डु, प्रमेह, ग्रहणी, शूल, अर्श, ज्वर, सन्निपात इनसबको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे परमेश्वरका स्मरण पापसङ्घातको नष्टकरताहै॥ ६२६॥

६२७ मृगाङ्करसः (नवरत्नाद्यः राजाद्यः) २१

सूतं गन्धकहेमताररसकं वैक्रान्तवज्राऽऽयसं,
वङ्गं नागजविद्रुमं सुविमलं माणिक्यगारुत्मजम्।
ताप्यं मौक्तिकपुष्परागजलजं वैदूर्यकं शुल्वकं,
शुक्तीतालकमभ्रहिङ्गुलशिला गोमेदनीलं समम्॥२८६९
गोक्षुरैः फणिवल्लिसिन्धुवदरीमुण्डीकगाचित्रकैः,
शोफघ्नीशतपुष्पिकामधुकजै भङ्गेक्षुकङ्कोलजैः।
छिन्नानागबलात्रिजातकघनै विष्णुप्रियावालकैः,
अम्बष्ठाऽतिविषाऽऽटरूषमुशलीवन्ध्याविदारीवरी–
कन्याजैः स्वरसैः विभाव्य सकलं कृत्वाऽथ तद्गोलकं,
यन्त्रे सागरराजजे पुटयुगे यामद्वयं पाचयेत्।
पश्चात्स्वाङ्गसुशीतलं सुमृदितं गोक्षीरसम्भावितं,
सर्वैश्चेक्षुरसैश्च मालतिसुमैः कर्पूरकस्तूरिजैः॥२८७१॥
सिद्धं दन्तकरण्डके सुनिहितं गुञ्जाद्वय योजयेत्,
सर्वव्याधिषु चाऽनुपानकभिदा तं वक्ष्यमाणेषु च।
सर्वाशेषु च पिप्पलीमधुयुतं भल्लातयुक्तं क्षयं,
श्यामाभिर्दशभिर्घृतेन मधुना चैकोनविंशोषणैः॥२८७२
पित्ते चेन्दुकचेन चाऽम्लविजये श्रीखण्डखण्डायुतः,
स्थौल्ये चाऽऽर्द्रमधुप्लुतं ग्रहणिकां जीरेण शोथं जयेत
शूले रामठजासवेन सहितं श्वासे च कासे तथा,
व्याघ्रीभार्ङ्गियुतश्च गुल्मविषये द्राक्षाशिवासंयुतम्॥
मेहे शर्करया तथा च तुवरैरम्लास्रपित्ते सिता,
क्षौद्राभ्यां ज्वरदोषशान्तिषु हितं जीरेण धान्येन च।
इत्थं राजमृगाङ्कमेनमखिलं व्याधौ प्रयुञ्ज्याद्भिषक्,
यस्याऽऽकर्णनमात्रतोऽपि सकला रोगाः प्रणश्यन्ति हि

र. सु (राजयक्ष्मणि), नि. र, र सु., र चो., रसायनसं., यो. र., एषु नवरत्नराजमृगाङ्क इति नाम।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सुवर्ण, चांदी, खपरिया, वैक्रान्त, हीरा, लोहा, वङ्ग, नाग, प्रवाल, रूपामाखी, माणिक, पन्ना, सोनामाखी, मोती, पुखराज, शङ्ख, लसनिया, ताम्र, मोतीकीसीप, हरिताल, अभ्रक, शिंगरिफ, मैनसिल, गोमेद, नीलम, इनसबकी भस्मे समभाग लेकर दोपहर शुष्कमर्दनकर गोखरू, नागरवेल, विधारा, बेर, गोरखमुण्डी, पीपल, चित्रक, पुनर्नवा, सोंफ, मुलहठी, भाग, ईख, शीतलचीनी, गिलोय, नागवला, तज, पत्रज, इलायची, नागरमोथा, तुलसी, तगरगण्ठोला (गुजराती), पाठा, अतीस, अडूसा, मुसली, वाझखेखसा, विदारीकन्द, शतावर, घीकुंआर इन प्रत्येकके रसोंसे १–१भावना देकर गोलाबनाय छायाशुष्ककर चारतह मलमलके कपड़ेमें बांधकर ऊपरसे २–३ कपड़मिट्टी देकर छायाशुष्ककर दोशरावोंमें लवणकेबीच गोलेकोरख सन्धि बन्दकर दे। सुखनेपर दोपहरकी अग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर गोदुग्धकी भावना देकर पूर्वोक्तवस्तुओंकी क्रमसे १–१ भावना देकर तमाम जातिकीईख, मालतीकेफूल,कपूर और कस्तूरीकी क्रमसे भावनाएं देकर २–२ रत्तीकी गोलियाबनाकर छायामेंसुखाय हाथीदातकी डिब्बीमें बन्दकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह तमामरोगोंको नष्टकरताहै। साधारणतया पीपल, मधु और भिलावेकेसाथ क्षयको नष्टकरताहै। १० पीपल, घी और मधु अथवा १९ मरिच, घृत और मधुकेसाथ पित्तको नष्टकरताहै। शुद्धकपूर और तगरगण्ठोला अथवा सफेद चन्दन और खाडकेसाथ अम्लपित्तको, तथा अदरख और मधुकेसाथ स्थूलताको नष्टकरताहै। जीरेकेसाथ ग्रहणी और शोथको नष्टकरताहै। हिङ्ग्वासवकेसाथ शूलको नष्टकरताहै। भटकटैया और भारङ्गीकेसाथ श्वासकासको, द्राक्ष और हरेंकेसाथ प्रमेहको नष्टकरताहै। शक्कर और मधुकेसाथ अम्लपित्त और रक्तपित्तको एवं जीरे और धनियेकेसाथ ज्वरोंकेउपद्रवोंको नष्टकरताहै। इसतरह तत्तदनुपानविशेषकेसाथ समस्तरोगोंमें इसका प्रयोग अव्याहतवीर्य होताहै॥ ६२७॥

६२८ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (द्वाविंशः)

मृतं मृतं मृतं ताप्यं तुल्यभागं प्रकल्पयेत्।
अस्य गुञ्जाद्वयं दद्यान्मधुना मरिचैः सह॥ २८७५॥

तदनु स्वरसो योज्यस्तुलस्याः कर्षसम्मितः ।
जीर्णज्वरकफध्वंसी श्वासकासविनाशनः ॥ २८७६ ॥
अग्निमान्द्यविबन्धघ्नो राजयक्ष्मविमर्दनः ।
धातुपुष्टिकरश्चैव बलदः कान्तिकारकः ॥ २८७७ ॥

वै. द., जीर्णज्वरे ।

टि०—मृगाङ्केषु प्रायश पाक समायाति परन्त्वत्र तदभावेऽपि मृगाङ्क इति नामदाने ग्रन्थकारः प्रष्टव्य ।

भाषा—पारेकीभस्म (अभावमें चन्द्रोदय) और सुवर्णमाक्षिकभस्म समभाग लेकर १–२ पहर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा मधु और २९ कालीमिर्चोंकेसाथ लेकर ऊपरसे एकतोला तुलसीकारस पिलावे । इससे जीर्णज्वर, कफ, श्वास, कास, अग्निमान्द्य, मलमूत्रविबन्ध, राजयक्ष्म, धातु, बल और कान्तिकाह्रास इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६२८ ॥

६२९ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (त्रयोविंशः)

मृतं ताम्रं मृतं स्वर्णं मृतं लोहं सगोनसम् ।
प्रत्येकं पलमानञ्च द्विगुणञ्च शिलाजतु ॥ २८७८ ॥
प्रवालं मौक्तिकं शुद्धं कर्षं कर्षञ्च चूर्णयेत् ।
खल्वे विमृद्य तत्सर्वं वरुणस्य रसेन वै ॥ २८७९ ॥
साधयेत्सप्तदिवसात्तच्चुर्णं भक्षयेन्नरः ।
गुञ्जामात्रं द्विगुञ्जं वा यथाबलमथाऽपि वा ॥ २८८० ॥
सूक्ष्मैलाचूर्णसंयुक्तं मधुना तद्दिनेदिने ।
मूत्रसादं वीर्यनाशं प्रमेहं राजरोगकम् ॥
प्रणश्यति न सन्देहो यथा सूर्योदयस्तमः ॥ २८८१ ॥

ना वि, वाजीकरणे ।

भाषा—तांबा, सुवर्ण, लोह और वैक्रान्त १–१ पल, शुद्धशिलाजीत २ पल, प्रवाल और मोतीकीपिष्टी १–१ कर्ष लेकर १–२ पहर खालीमर्दनकर सातदिनतक वरुणकेरससे मर्दनकर गोलाबनाय चारतहकपड़ेमें लपेट शरावसम्पुटमें बन्दकर २–३ कपड़मिट्टी चढाय सुखाकर लवणयन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे एकरत्तीसे दोरत्तीतक औचिती देखकर छोटीइलायचीकेचूर्ण और मधुकेसाथदेनेसे मूत्राघात, शुक्रनाश, प्रमेह, राजरोग प्रभृति रोगोंको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे सूर्योदय अंधेरेको नष्टकरताहै ६२९

६३० मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (चतुर्विंशः)

स्वर्णं तारं तपनकुटिलं नागवैक्रान्तवृद्धया,
सर्वैस्तुल्यो रस इति पृथक् गन्धकं सूततुल्यम् ।
दत्त्वा दत्त्वा मदकसलिले मर्दयेदष्टवारं,
मूषास्वेद्यो पुटनविधिना भूधराख्ये रसेन्द्रः ॥ २८८२ ॥
इमं रसेन्द्रं निखिलाऽऽमयघ्नं
वल्लैकमानं त्वनुपानयोगात् ।
श्रीशङ्करेणोक्तमिदं भवान्यै
रसो वरो राजमृगाङ्कनामा ॥ २८८३ ॥
ककारादिवर्ज्यं रसे योगवाहे
सदक्षं पलं आङ्गलं योजनीयम् ।
विशेषः परो यो यथोक्तः स कार्यो
मुनीनां मतं वेत्ति कः पण्डितोऽपि ॥ २८८४ ॥

र. शि., सर्वरोगे ।

भाषा—सुवर्ण १ भाग, रजत २ भा., ताम्र ३ भा., शङ्ख ४ भा, नाग ५ भा, वैक्रान्त ६ भा., इनसबकीभस्में लेकर सबकी बराबर २ शुद्धपारा और गन्धक डालकर सबकीनीलवर्णकज्जलीकर सुलफा (कृत्रिमद्रव्य) काद्रव थोड़ा २ डालकर आठपहरतक मर्दनकर गोलाबनाय चारतहकपड़ेमें लपेटकर १–२ कपड़मिट्टी चढ़ाय शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें चारपहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे राजयक्ष्मादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै इसमें ककारादिवर्गका निषेधकरना ॥ ६३० ॥

६३१ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (पञ्चविंशः)

मृतं सूतं मृतं ताम्रं मृतं तीक्ष्णं मृताऽभ्रकम् ।
नवरत्नजभस्मानि कान्तसिन्दूरकिट्टकम् ॥ २८८५ ॥
समांशं चित्रकद्रावैः कुमारीहंसपादजैः ।
घृष्ट्वा तन्मूषिकामध्ये वालुकायन्त्रके पचेत् ॥ २८८६ ॥
त्रिदिनं पाचयेदेतत्स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
वाराहीकन्दधात्र्यक्षकिंशुकाऽसृग्विमर्दितम् ॥ २८८७ ॥
रसो राजमृगाङ्कोऽयं नागार्जुनविभाषितः ।
तच्चूर्णं वल्लमात्रेण रोगजालं निहन्ति च ॥ २८८८ ॥

र क. यो., सर्वरोगे ।

भाषा—पारा, तांबा, फोलाद, अभ्रक, नवरत्न इनसबकी भस्में, कान्तसिन्दूर और मण्डूरभस्म समभाग लेकर १–२ पहर सुखा मर्दनकर चित्रकमूल, घीकुआर, हंसराज इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–२ रोज़ मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर चारतह कपड़ेमें लपेट २–३ कपड़मिट्टी चढ़ाकर कड़ीधूपमें सुखाय शरावसम्पुटमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें ३ दिनतक क्रमवृद्ध अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर वाराहीकन्द, आंवले, बहेड़े पलाशकेफूल और जड़, इनप्रत्येकके स्वरसोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतककीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥

६३२ मृगाङ्करसः (राजादिः) (षड्विंशः)

समरसरसके द्वे मौक्तिकं गन्धकञ्च,
निखिलदलकलांशैः काञ्चनीयैरुपेतम् ।
पचनमतिसुयुक्त्या लावणे यन्त्रके च,
जयति सकलरोगं राजरोगं विशेषात् ॥ २८८९ ॥

र क. यो, यक्ष्माऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और खपरिया १–१ भाग, मुक्तापिष्टी और शुद्धगन्धक २–२ भाग, सुवर्णभस्म सबसे ३२ वांभाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर चित्रक, घीकुंआर और हंसराजकेस्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर चारतहकपड़ेमें लपेट २–३ कपड़मिट्टी देकर कड़ीधूपमें

मुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर लवणयन्त्रमें चारपहरकी अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतककीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह राजयक्ष्म-प्रभृति समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६३२ ॥

६३३ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (सप्तविंश)

शुद्धस्य पलमादाय पारदस्य शुभेऽहनि।
हेमरौप्यं पृथक्कान्तं टीनारद्वयसम्मितम् ॥ २८९० ॥
गन्धकश्च द्विनिष्कं स्याच्चतुर्निष्कं तु माक्षिकम्।
तन्मात्रं लोहभस्म स्यादेकीकृत्याऽखिलं रसैः॥२८९१॥
वाकुच्याः खल्वयेद्धस्रत्रितयं पाचयेत्पुनः।
कुमार्याः स्वरसेनैव सप्तवारन्तु मार्कवैः ॥ २८९२ ॥
त्रिवारं नागवल्ल्यास्तु पञ्चवारान्रसैस्तथा।
रेणुकाक्वाथतस्त्रिः स्युरेका जातिफलद्रवैः ॥२८९३॥
पञ्च धात्र्याश्च तोयेन वास्तुलोणीरसैस्तथा।
निर्गुण्ड्या. स्वरसैः कार्यं पञ्चाङ्गप्रभवैर्नरैः॥२८९४॥
मूषिकायां निरुद्ध्याऽथ सप्तधा पुटमाचरेत्।
पञ्चाङ्गप्रभवैस्त्वेवं मुण्ड्याश्च स्वरसैस्तथा ॥२८९५॥
द्विवारं विश्वजनितैस्त्रिधा कृष्माण्डकादिभिः।
विडङ्गशारिवाक्वाथै र्भावयित्वा पुनः पुटेन ॥२८९६॥
सप्तधा मत्स्यभूनागभेककर्कटकोद्भवैः।
पित्तैः सम्मर्दयेत्तद्वाऽसृजा कुक्कुटकस्य च ॥ २८९७॥
छागरक्तेन सम्मर्द्य सप्तधा पुटयेद्विपक्।
श्लक्ष्णं कृत्वा तु तं सूतं शुभे कारण्डके क्षिपेत ॥२८९८॥
गुञ्जामात्रं प्रयुञ्जीत वातक्षयनिवृत्तये।
घृतौदनं भवेत्पथ्यं सिद्धार्थस्नेहलेपनम् ॥ २८९९ ॥
समुद्रफलभार्ङ्गीभ्यां श्लेष्मक्षयनिवर्हणम्।
घृतौदनं समरिचं पथ्यमभ्यङ्गकर्मणि ॥ २९०० ॥
शुण्ठीघृतविमिश्रं हि तक्रैः सप्ताहमाचरेत्।
भार्ङ्गीसिताऽनुपानेन पित्तश्लेष्मक्षयापहम् ॥२९०१॥
पथ्यं सक्षीरमरिचं घृतं गव्यं हितं भवेत्।
अभ्यङ्गे घृततैलं स्यात्पिप्पलीशर्कराऽन्वितम् ॥२९०२॥
वातपित्तक्षयं हन्ति भोजनं सघृतौदनम्।
भार्ङ्गीक्षुस्वरसै र्युक्तं श्लेष्मवातक्षयापहम् ॥ २९०३ ॥
शीतं घृतौदनं पथ्यमभ्यङ्गं तिलतैलतः।
निर्गुण्डीकाकमाचीभ्यां क्षयं हन्ति त्रिदोषजम्॥२९०४॥
शर्करापिप्पलीसर्पि र्मिश्रमन्नं हितं भवेत्।
दधिसर्पिर्युतं कुर्यादभ्यङ्गं सप्तधा परम् ॥ २९०५ ॥
रहस्यं कथितं सम्यग्रसेन्द्रो राजयक्ष्मणि।
मृगाङ्क इति विख्यातः प्राणिनां धातुपोषकः॥२९०६॥

र.क यो., राजयक्ष्मणि।

भाषा—शुभमुहूर्तमें शुद्धपारा १ पल, सुवर्ण, रजत, कान्त-लोहभस्म और शुद्धगन्धक २–२ तोले, सुवर्णमाक्षिक और लोह-भस्म ४–४ तोले लेकर सबको पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर एकरोज शुष्कमर्दनकर वाकुचीके स्वरस अथव क्वाथसे तीनरोज मर्दनकर सुखावे फिर कुमारीके स्वरससे ७ दिन, भांगरेकेरससे ३ दिन, पानकेरससे ५ दिन, रेणुकाक्वाथसे ३ दिन, जायफलकेक्वाथसे १ दिन, आंवला, बथुआ, लूणी और निर्गुण्डीकापञ्चाङ्ग इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ५–५ दिन भावनाए देकर गोलाबनायसुखाकर ४ तहकपडेमें लपेटकर ४–५ कपड़मिट्टी लगाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर २–३ कपड़मिट्टी लगाई। सूखनेपर भूधरयन्त्रमें ५–५ सेरकण्डोंकी सात आचेदे। औषधको सम्पुटमेंसे न निकाले। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर गोरखमुण्डीके पञ्चाङ्गकेस्वरससे २, सोंठकेकाढ़ेसे ३, कूष्माण्डादिगण (कूष्माण्ड, कटुक, कालशाक, कर्कटी, कर्कन्धु, कर्कोटक, कलिङ्ग, करमर्द, करीर, कनरु, कशेरु, काञ्जिक), विडङ्ग और शारिवाके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ भावनाएं देकर पूर्ववत् शरावसम्पुटान्त क्रियाकर सात आचें दे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर मछलीकापित्त, केंचुओंका स्वरस, मेंडककापित्त, केंकडेका स्वरस, पार्चोपित्त, कुक्कुट और बकरेका रक्त इनप्रत्येकको १–१ भावनादेकर गोला बनाय सुखाकर चारतहकपड़ेमें लपेट २–३ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर शरावसम्पुट-में बन्दकर पूर्ववत् ५–५ सेर कण्डोंकी भूधरयन्त्रमें ७ आचें दे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर पीसकर शीशीमें रखछोडे। इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा घी, मलाई, मक्खन प्रभृति वातहरानुपान-केसाथ वातक्षयमेंदे। घी और चावल पथ्यमें दे, कटुतैलका-अभ्यङ्गकरे। समुद्रफल और भारङ्गीकेसाथ श्लेष्मक्षयमेंदे। घी, चावल और मिर्च पथ्यमेंदे, सोंठ घी और छाछका ७ दिनतक अभ्यङ्ग करावे। भारङ्गी और शक्करकेसाथ पित्तश्लेष्मक्षयमेंदे, गायकाघी, दूध, और मरिच पथ्यमेंदे, घी, तैल और पीपलका अभ्यङ्गकरावे। पीपल और शक्करकेसाथ वातपित्तक्षयमेंदे, घी और चावल पथ्यमेंदे, भारङ्गी और ईखकेरसकेसाथ श्लेष्मवात-क्षयमेंदे, ठंढे चावल और घी पथ्यमेंदे, तिलकेतैलसे अभ्यङ्ग करावे। संभालू और मकोयके रसमे त्रिदोषक्षयमेंदेकर शक्कर, पीपल और घीमिश्रित अन्न पथ्यमेंदे। घीमिलेहुए दहीसे अभ्यङ्ग करावे। इसतरह तत्तद्रोगहरानुपान, पथ्य और अभ्यङ्गकेसाथ इसका प्रयोगकरनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६३३ ॥

६३४ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (अष्टाविंशः)

स्याद्रसेन समं तीक्ष्णं तुत्थञ्च द्विगुणं तयोः।
गन्धकं तैः समं प्रोक्तं रसपादञ्च टङ्कणम् ॥ २९०७ ॥
शुक्तिकन्दरसैः पिष्ट्वा तत्सर्वं गुलिकीकृतम्।
भाण्डे लवणपूर्णे तत्पचेद्यामचतुष्टयम् ॥ २९०८ ॥
मापकत्रितयेनाऽथ माहिपाऽऽज्येन संयुतम्।
दशमागधिकायुक्तं देयञ्च मधुनाऽथवा ॥ २९०९ ॥
गुञ्जोन्मितं मरीचैश्च नागवल्लीदलान्वितम्।
मृगाङ्कनामयोगोऽयं राजयक्ष्मनिवर्तकः ॥ २९१० ॥

र.क. यो , राजयक्ष्मणि।

भाषा—पारा और लोहभस्म १–१ भाग, तुत्थभस्म २ भा , शुद्धगन्धक ४ भा , सुहागा $\frac{1}{4}$ भाग लेकर सबका बारीक

चूर्णकर लहसनकेरससे १–२ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय सुखाकर चारतहकपड़ेमें लपेटकर ३–४ कपडमिट्टीदेवे । सुखनेपर शरावसम्पुटमें वन्दकर २–३ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर लवणयन्त्रमें रख चारपहरकी मध्यम अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा ३ माशे मैंसके घीकेसाथ अथवा १० पीपल और मधुके साथ अथवा १० मरिच और पानकेरसकेसाथ देनेसे यह सवप्रकारके राजयक्ष्मको नष्टकरताहै ॥ ६३४ ॥

६३५ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (ऊनत्रिंशः)

नीलवज्राऽहिवैदूर्यं महानीलं प्रवालकम् ।
गोमेदं मौक्तिकञ्चैव माणिक्यं पुष्परागकम् ॥२९११॥
ताम्रं तीक्ष्णाऽभ्रकं किट्टं कान्तसिदूरहाटकम् ।
गन्धसूतं विषं तालं समांशं चित्रकद्रवैः ॥ २९१२ ॥
तन्मूलिकारसै मर्द्यं वालुकायन्त्रके पचेत् ।
दिनाऽर्ध लवणैर्युक्तं स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ॥ २९१३ ॥
वाराहीटङ्कणद्राक्षाकिंशुकैश्च सुभावितः ।
मृगाङ्को योगराजोऽयं दृष्टः प्रत्ययकारकः ॥
भक्षयेद्रक्तिकामात्रं क्षयरोगादिनाशनः ॥ २९१४ ॥

र.क. यो., राजयक्ष्माधिकारे ।

भाषा—नीलम, हीरेकीभस्म, सर्पका जहरमोहरा (सर्पका जहरमोहरा न मिलनेपर चाहे जिसका डालसक्तेहै), लसनिया, ऊचेदर्जेकानीलम, प्रवाल, गोमेद, मोती, माणिक्य, पुखराज, ताम्र, फोलाद, अभ्रक और मण्डूर इनसवकी भस्में, कान्तलोहकीलालभस्म, सुवर्णभस्म, शुद्धगन्धक, पारा, वछनाग और हरिताल सवसमभाग लेकर सवका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ रोज़ मर्दनकर चित्रकमूलके काथसे ७ रोज़मर्दनकर गोलावनाय सुखाकर चारतह कपड़ेमें लपेट ३–४ कपड़मिट्टी देकर शरावसम्पुटमें वन्दकर १–२ कपड़मिट्टी लगाकर सुखनेपर लवणयन्त्रमें दोपहरकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर वाराहीकन्द, सुहागा, द्राक्ष और ढाक इनके स्वरस अथवा क्वाथोसे ३–३ भावनाए देकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे क्षयप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६३५ ॥

६३६ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (त्रिंशः)

त्र्योंऽशा मारितात्सूतादेकोंऽशो हेमभस्मतः ।
एकोंऽशो मृतताम्रस्य शिलागन्धश्च तालकम्॥२९१५॥
प्रत्येकं भागयुग्मं स्यादेतत्सर्वं विचूर्णयेत् ।
वराटीः पूरयेत्तेन छागीक्षीरेण टङ्कणम् ॥ २९१६ ॥
पिष्ट्वा तेन मुखं रुद्ध्वा भाण्डे ताश्च धारयेत् ।
शुष्कं पचेद्गजपुटे स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ २९१७ ॥
रसो राजमृगाङ्कोऽयं चतुर्गुञ्जः क्षयापहः ।
मरिचैरूनविंशत्या कणाभि र्दशभिस्तथा ॥ २९१८ ॥
मधुना सर्पिषा चाऽपि दद्यादेतं रसं भिषक् ।
अनेन नश्यति क्षिप्रं वातश्लेष्मभवः क्षयः ॥ २९१९ ॥

भा. प्र., र. सं., वृ. यो. त., र. सु., र. र स., र र., वै. र., भै. र., ध., र क, चि. सा., र चि, रसचि., वा, र. मं., र. र. दी, नि. र., शा. सं., यो. त., र प्र. सु., रसायनसार, र. म. मा., र च, र को, रसायनसं, चि. र भ., र. प्र., चि. क्र., र. सं. क., यो र., र. का., यो म., र. क यो., वै. चि, रस.सं., र. क.ल., टो., र पा., राजयक्ष्मणि ।

टि०—वै. चि, वा. क्षयमृगाङ्केति नाम । कुत्रचित्ताम्रस्थाने तार नियोजितम् । रसकौमुद्या योगचन्द्रिकायाञ्च "सूतभस्म त्रिभाग धुमणिभवमथो हेममेकैकवृद्धमिति पाठो नूतनतया कल्पित. परन्तु एकैकवृद्धत्वे मूलराशेरनिर्दिष्टत्वात्सूतभस्मनश्च त्रिभागत्वेन समीपवर्तित्वात्तदपेक्षयैव एकैकवृद्धत्वे बुद्धे पर्यवसानात्ताम्रभस्मनि चतुर्भागत्व हेमभस्मनि च पञ्चभागत्व प्रत्युपस्थातम् परन्तु अत्र पद्यरचयितुरकौशलेनैतद्धटितम् । अस्य पाठस्य मूलन्तु उपरिनिर्दिष्ट पाठ एवाऽस्ति वहुग्रन्थसम्वादात् । रसरत्नदीपिकादीना प्रत्युपस्थितरसग्रन्थेषु सर्वत्र पूर्ववर्तित्वात्सूतस्ताम्रभस्मन एकभागत्व हेमभस्मनश्च द्विभागत्व मनसि सकल्पित प्रतिभाति । चतुर्भागपञ्चभागयो कल्पना तु पद्यरचनाऽपाटवेन प्रतिफलितम् तन्नाऽदरणीयम् । हेमभस्मनो द्विगुणत्वेन योगस्तु न किञ्चित्क्षतिकर इति विद्वद्भिर्विभावनीयम् । "वाताबाधाम्लपित्त क्षयकसनमहाश्वासपाण्डुप्रमेहोन्मादाऽपस्मारजेता प्रतिदिनमगितो–नैकयोषित्पतीष्ट ,, इति फलभागे विशेषस्त्विष्ट एव ॥

भाषा—पारदभस्म ३ भाग, स्वर्णभस्म १ भा., ताम्रभस्म १ भा , शुद्धमैनसिल, गन्धक और हरिताल २–२ भाग लेकर कज्जलीकर पीलीकौड़ियोंमेंभरदे । फिर सुहागेको वकरीकेदूधमें पीसकर कौड़ियोंका मुंहवन्दकर मिट्टीकेवर्तनमें भरके सम्पुटकर सुखाकर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्तीकीमात्रा १९ कालीमिर्च अथवा १० पीपल और मधु तथा घीकेसाथ देनेसे वातश्लेष्मप्रधानक्षय नष्टहोताहै ॥ ६३६ ॥

६३७ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (एकत्रिंशः)

हेमसूतेन्द्रमुक्तानां गन्धस्य रविभस्मनः ।
रजतस्य प्रवालस्य भागयुक्तं क्रमाद्भवेत् ॥ २९२० ॥
सर्वमेतत्तु सम्पिष्य वाराहीकन्दवारिणा ।
त्रिदिनं गोलकं कृत्वा मूषायां सन्निरोधयेत् ॥२९२१॥
भाण्डे लवणपूर्णे तु पचेद्यामचतुष्टयम् ।
उद्धृत्य तस्मिन् शीते च विषमुष्टिशत क्षिपेत् २९२२
निरुत्थं निहित वज्रमलाभे षोडशांशतः ।
वैक्रान्तभस्म क्षेतव्यं रोगे मधुकणायुतम् ॥ २९२३ ॥
क्षयं मान्द्यं श्वासकासावम्लपित्तमरोचकम् ।
गुल्मं प्लीहोदरं मेहं सर्वान् वातान् सकामलान् २९२४
एतत्सर्वामयान् हन्ति सशूलं चाऽश्मरीगदम् ।
दिव्यतेजोबलं कान्तिमायुः प्रज्ञायशोऽर्थकृत् २९२५

रसायनसं., राजयक्ष्मणि ।

टि०—अय पोटशमृगाङ्केन बहुष्वंशेषु साम्य विभर्ति परन्तु पूर्वस्मिन्रजतस्य चत्वारो भागा अत्र तु षड्भागा सन्ति, अत्र शतविषमुष्टीना प्रक्षेपोऽस्ति

पूर्वस्मिन्स नास्ति पूर्वस्मिन्नसतुल्य टङ्कणमस्ति अत्र तु तन्नाऽस्ति इति महानिविशेषोऽस्ति, वस्तुतस्तु पूर्वरसस्यैवाऽयमपभ्रंशोऽस्तीति गूढ रहस्यम्।

भाषा—सुवर्ण, पारा, मोती इनकीभस्में, शुद्धगन्धक, ताम्रभस्म, रजत और प्रवालभस्म येसब क्रमवृद्धभागसे लेकर कज्जलीकर वाराहीकन्दके स्वरससे तीनदिनतक मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर चारतहकपड़ेमें लपेट २–३ कपड़मिट्टी कर सुखनेपर शरावसम्पुटमें बन्दकर कपड़मिट्टीलगाकर सुखादे फिर लवणयन्त्रमें ४ पहरकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर १०० नग शुद्धकुचिलोंका चूर्ण और निरुत्थ हीरेकीभस्म मोलहवा भाग मिलावे। हीरेके अभावमें वैक्रान्तभस्म डालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती मधु और पीपलकेसाथ देनेसे क्षय, मन्दाग्नि, श्वास, कास, अम्लपित्त, अरुचि, गुल्म, प्लीहा, उदररोग, प्रमेह, समस्तवातविकार, कामला, शूल, पथरी इनसबको नष्टकर तेज, कान्ति, आयु, बुद्धि और यशको बढ़ाताहै ॥ ६३७ ॥

६३८ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (द्वात्रिंशः)

रसभस्म त्रिभागं स्यात् षड्भागं हेमभस्मकम्।
मृततारञ्च भागैकं वज्रञ्चैव चतुर्गुणम ॥ २९२६ ॥
गोमेदकं द्विगुणकं काश्मीरं सप्त मौक्तिकम्।
पद्मरागञ्च नीलञ्च राजावर्तं तथैव च ॥ २९२७ ॥
तार्क्ष्यं सुपर्णवैक्रान्तौ प्रवालं हेममाक्षिकम्।
वैदूर्यं पुष्परागञ्च नागवङ्गौ च तीक्ष्णकम ॥२९२८॥
कान्तं गन्धं व्योमसत्त्वं पञ्चभागं पृथक्पृथक्।
शतपत्ररसेनैव मर्दितञ्च दिनत्रयम् ॥ २९२९ ॥
काचकूप्यां विनिःक्षिप्य यन्त्रे विद्याधरे पचेत्।
कुङ्कुमाऽगुरुकस्तूरिमर्दितञ्च पृथक्पृथक् ॥ २९३० ॥
ख्यातो राजमृगाङ्कोऽयं रोगराजं निवारयेत्।
पीनसं श्वासकासौ च पाण्डुकामलशीतलम ॥२९३१॥
शोफोदरार्शोग्रहणीवातपित्तहलीमकान्।
दीपनं वृष्यमायुष्यं श्रीकान्तिबलवर्धनम ॥ २९३२ ॥
योजयेदनुकूलैश्चाऽथवार्द्रकणान्वितम्।
वातघ्नैरेव तत्पीतं वान्तिशीतनिवारणम् ॥
भोजनं हेमपात्रे स्यादथवा कदलीदले ॥ २९३३ ॥

वै चि, र क यो, वा, र पा, क्षये।

टि०—र क. यो सुवर्णमृगाङ्क, वा महाक्षयमृगाङ्क इति नाम। रसपारिजाते एकभाग स्वर्णभस्म नियोजित नाम च नवरत्नराजमृगाङ्क इति स्थापितम्।

भाषा—पारदभस्म ३ भाग, सुवर्णभस्म ६ भा., रजतभस्म १ भा, हीराभस्म ४ भा, गोमेदभस्म २ भा, केसर और मोती ७–७ भा, माणिक्य नीलम, लाजवर्द, पन्ना, कहरवा, वैक्रान्त, मूगा, सुवर्णमाक्षिक, लसनियां, पुखराज, नाग, वङ्ग, फौलाद, कान्तलोह और अभ्रकसत्त्व इनसबकी भस्में तथा शुद्ध गन्धक ५–५ भाग लेकर सबकी कज्जलीकर कमलकेफूलोंके रससे तीनदिनमर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें डालकर वालुकायन्त्रमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर केसर, अगर, कस्तूरी इनप्रत्येककी १–१ भावना देकर सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै। विशेषत पीनस, श्वास, कास, पाण्डु, कामला, शीतपित्त, सूजन, आठ उदररोग, बवासीर, सङ्ग्रहणी, वातपित्त, हलीमक, इनसबको नष्टकरताहै। पीपल और मधुकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, नपुंसकता, अल्पायु, श्री, कान्ति और बलके अभावको दूरकरताहै वातघ्न अनुपानोंकेसाथ देनेसे वान्ति और शीतको निवृत्त करताहै। इसके सेवनकरनेवालेको सुवर्णपात्र अथवा केलेके पत्तेमें भोजन देना चाहिये ६३८

६३९ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (त्रयस्त्रिंशः)

मुक्तातारपविप्रवालशिलजं स्वर्णं निरुत्थं पुनः,
गन्धं पारदटङ्कणे विषयुते सम्मर्द्दयेदार्द्रकैः।
माच्या नागलतादलाऽथवृषापामार्गीरसेण गोलं पचे–,
द्यन्त्रे लावणिके दिनं रसवरः सिद्धो मृगाङ्काऽभिधः॥
मान्द्ये चोपणसर्पिषा मधुकणा मेदःक्षये गुल्महृत,
शुण्ठ्याऽजाजियुतोऽधिवल्ल–
मशितः सोऽयं त्रिदोषज्वरे।
देयो मोहतृषासु शोफजठरे चातुर्थिकादौ ज्वरे,
मेहप्लीहमरुद्गदाऽङ्कुरगदे श्वासे च पाण्डौ क्षये २९३५
षाण्ढ्येऽपस्मृतिपीनसे ज्वररुजां भूतेषु बालामये,
रोगानेकविधाऽनुपानवशतस्तत्सौख्यदोऽयं रसः।
आयुः पुष्टिबलप्रसादकरणो लावण्यकान्तिप्रदो–,
नित्याऽभ्यासवशादनन्तफलदो भूपैः सदा सेव्यताम् ॥

र अ, राजयक्ष्मणि।

भाषा—मोती, रजत, हीरा, मूंगा, मैनसिल, सुवर्णइनकीभस्में, शुद्धगन्धक, पारा, सुहागा और बछनाग समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर अदरख, मकोय, पान और अड़ूसाके रसोंसे १–१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर चारतह कपड़ेमें लपेट २–३ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर शरावसम्पुटमें बन्दकर ऊपरसे २–३ कपड़मिट्टी देकर लवणयन्त्रमें एकदिनकी मध्यम अग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक औचिती देखकर मरिच और घीकेसाथदे। मधु और पीपलकेसाथ मेदोजनितक्षयमेंदे। सोंठ और जीरेकेसाथ गुल्ममें दे। त्रिदोषजज्वर, मोह, प्यास, शोफ, उदररोग, चातुर्थिकादि विषमज्वर, प्रमेह, प्लीहा, वायु, बवासीर, श्वास, पाण्डु, धातुक्षय, नपुंसकता, अपस्मार, पीनस, साधारणज्वर, भूतबाधा, बालरोग, इत्यादि समस्तरोगोंको यह तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे नष्टकरताहै। इसके रोज़ाना सेवनसे आयु, पुष्टि, बल, लावण्य और कान्ति बढ़तीहै ॥ ६३९ ॥

६४० मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (चतुस्त्रिंशः)

सूतं गन्धं दरदकुनटी तालकं ताम्रभस्म,
स्वर्णं नागं गगनरसकं मौक्तिकं ताप्यवज्रम।

एतत्सर्वं त्रिदिनमृदितं रत्नमालाद्रवेण,
गुञ्जा चैका हरति सकलान्रोगराजादिरोगान् ॥
र. शं., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, शिंगरिफ, मैनसिल और हरिताल, ताम्र, सुवर्ण, नाग, अभ्रक, खपरिया, मोती, सोनामाखी और हीरा इनकीभस्में समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रतनजोतके स्वरससे तीनरोज़ मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर चारतह कपड़ेमें वांधकर २–३ कपड़मिट्टी लगाकर सुखादे । फिर शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें दोसेर कण्डोंकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह क्षयप्रभृति समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६४० ॥

६४१ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (पञ्चत्रिंशः)

सूताऽहिवज्रकनकं गन्धमौक्तिकविद्रुमम् ।
लोहताराऽर्कताप्यं शङ्खं चित्रकवारिणा ॥ २९३८ ॥
मर्दयित्वा विचूर्ण्याऽथ तेनाऽऽपूर्य वराटकान् ।
टङ्कणेनाऽर्कपयसा लिम्पेत्तेषां मुखानि तु ॥ २९३९ ॥
चूर्णाक्तभाण्डनिहिताञ्छुद्धा गजपुटे पचेत् ।
निर्गुण्ड्याद्रांऽग्निपयसा भावयेत्सप्तधा पृथक् ॥२९४०॥
रक्तिकाप्रमितं त्वेतत्पिप्पलीक्षौद्रसंयुतम् ।
घृतोषणकयुक्तो वा रोगराजं निकृन्तति ॥
सर्वरोगेषु वा दद्याद्रसं राजमृगाङ्ककम् ॥ २९४१ ॥
र. शं., र. क. यो., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारा, नाग, हीरा, सुवर्ण इनकीभस्में, शुद्धगन्धक और मुक्तापिष्टी, मूंगा, लोह, रजत, तावा, सोनामाखी और शङ्ख इनकीभस्में सब समभाग लेकर कज्जली वनाय १–२ रोज़ चित्रकमूलके क्वाथसे मर्दनकर बड़ेकौड़ोंमें भरके आकके दूधमें पीसे हुए सुहागेसे इनका मुंह बन्दकर सुखाकर चूनापुतेहुए शरावोंमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी चढाकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर निर्गुण्डी, अदरख और चित्रक केरसोंसे ७–७ भावनाएं देकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा पीपल और मधु अथवा घी और मरिचकेसाथ देनेसे यह राजयक्ष्मको नष्टकरताहै । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६४१ ॥

६४२ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (षट्त्रिंशः)

माणिक्यं नीलपुष्पञ्च लशुनं स्फटिकं वलिम् ।
गोमेदकं मरकतं शुक्तिशङ्खकपर्दकम् ॥ २९४२ ॥
परिवेषं शङ्खनाभिं क्षुल्लमेकैकशाणकम् ।
तुत्थकञ्च शिलां तालं रीतिकाधातुवज्रकम् ॥२९४३॥
ताम्रमण्डूरकान्ताऽयस्तारं ताप्यं भुजङ्गमम् ।
वङ्गं काञ्चनताप्यञ्च रसकस्य च सत्त्वकम् ॥ २९४४ ॥
अयोरसकरौप्यञ्च मुक्ता च विद्रुमन्ततः ।
वैक्रान्तः सूतजं भस्म तुत्थं माषोत्तरं भवेत् ॥२९४५॥
हेम सर्वांशकं सर्वसमानं गगनं वरम् ।
एकीकृत्य ततः सर्वं भावयेदातपे खरे ॥ २९४६ ॥
गव्यक्षीरेक्षुरजनीवालद्वयमुमुस्तकम् ।
शतावरीकुमार्यग्निवासापाठाफलत्रिकम् ॥ २९४७ ॥
तामलक्यमृता शृङ्गी भार्ङ्गी कट्वी कटुत्रिकम् ।
विदारी कदलीकन्दं कसेरु मधुयष्टिका ॥ २९४८ ॥
काश्मर्यगोक्षुरं पद्मे जयन्ती भृङ्गराजकम् ।
अगस्त्यो लाङ्गली तालमूली मुण्डी च जीरकम् २९४९.
पञ्चमूली मोचरसः पलाशाऽङ्घ्रिं वलाद्वयम् ।
श्रीमूलं वटशृङ्गाणि पद्मकन्दश्च पावकम् ॥ २९५० ॥
चातुर्जातशटीमांसीकुष्ठजातीफलोद्भवैः ।
शतपत्रैः पृथक् सप्त हिमकुङ्कुमयोः क्रमात् ॥२९५१॥
कर्पूरमृगनाभिभ्यां रसराजोत्तमो भवेत् ।
वल्लद्वयञ्चपलया सितया मधुसर्पिषा ॥ २९५२ ॥
मेहाऽर्शःक्षयगुल्मोष्णवातव्याध्युदराणि च ।
ग्रहणीदोषकुष्ठानि पाण्डुशूलाऽम्लपित्तकम् ॥२९५३ ॥
कासश्वासाऽग्निमान्द्यञ्च रक्तपित्तं भगन्दरम् ।
प्लीहाऽतिसारहिक्काश्च वातरक्तव्रणज्वरान् ॥ २९५४ ॥
वलिं जरां स्त्रौषधैश्च रोगानन्याञ्जयेत्परम् ।
अमितायु र्वलं पुष्टिं वीर्यवृद्धिं दृढां दृशम् ॥२९५५॥
स्त्रीपुंसपुत्रदश्चैव श्रियं प्रज्ञां स्मृतिं शुभाम् ।
रसो राजमृगाङ्कोऽयं परं प्रोक्तं रसायनम् ॥ २९५६ ॥
र. शं., र. वो., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—माणिक्य, नीलम, पुखराज, लसनिया, स्फटिकमणि, गोमेद, पन्ना, सीप, शङ्ख, पीलीकौड़ी, गोमतीचक्र, शङ्खनाभि, छोटे सखले इनसवकी भस्में और शुद्धगन्धक ४–४ माशे, शुद्धतूतिया १ मा., मैनसिल २ मा., हरिताल ३ मा., पीतलभस्म ४ मा., हीराभस्म ५ मा., तावा ६ मा., मण्डूर ७ मा., कान्तलोह ८ मा., रूपामाखी ९ मा., नाग १० मा., वङ्ग ११ मा., सोनामाखी १२ मा., खर्परसत्त्व १३ मा., लोह १४ मा., खर्पर १५ मा., चांदी १६ मा., मोती १७ मा., मूंगा १८ मा., वैक्रान्त १९ मा., पारा २० मा., तुत्थ २१ माशे इनसवकी भस्में तथा सुवर्णभस्म सवसे चतुर्थांश और अभ्रकभस्म सवकी वरावर लेकर सवको एकदिन शुष्कमर्दनकर गोदुग्ध, ईखकारस, हल्दी, तगरगण्ठोला, नागरमोथा, मोथा, शतावर, घीकुंआर, चित्रक, अडूसा, पाठा, त्रिफला, भुंईआंवला अथवा इलायची, गिलोय, काकडासींगी, भारङ्गी, कुटकी, त्रिकटु, विदारी, कदलीकन्द, कसेरू, मुलहठी, गभारी, गोखरू, लाल और सफेद कमल, जेंत, भंगरा, अगस्त्य, करिहारी, तालमूली, गोरखमुण्डी, जीरा, पञ्चमूली (मोरसेंडा म०), मोचरस, पलाशकी जड़की छाल, दोनों खरेंटी, वेलकीजड़, वटकेटूसे, पद्मकन्द, भिलावा चातुर्जात, कचूर, जटामासी, कुठ जायफल, गुलाव इनप्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथोंसे और सफेदचन्दन, केसर, कपूर, कस्तूरी इनप्रत्येकके द्रवोंसे ७–७ भावनाएं देकर सुखाकर रखछोड़े ।

इसमेंसे ३ से ६ रत्तीतककीमात्रा औचिती देखकर पीपल, शक्कर, मधु और घीकेसाथ देनेसे प्रमेह, ववासीर, क्षय, गुल्म, उष्णवात, उदररोग, सङ्ग्रहणी, कुष्ठ, पाण्डु, शूल, अम्लपित्त, कास, श्वास, मन्दाग्नि, रक्तपित्त, भगन्दर, प्लीहा, अतिसार, हिचकी, वातरक्त, सवतरहकेव्रण, ज्वर, वलीपलित, बुढ़ापा इनसवको यह दूरकरताहै। हमेशा सेवनकरनेसे आयु, वल, पुष्टि, वीर्य, दृष्टि, कान्ति, बुद्धि, स्मृति येसब वढ़तेहैं ॥६४२॥

६४३ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (सप्तत्रिंशः)

सुवर्णं रजतं कान्तं ताम्रं त्रपुससीसकम्।
भस्मीकृत्य च तत्सर्वं क्रमवृद्ध्या कृतांशकम् ॥२९५७॥
व्योमसत्त्वभवं भस्म सर्वैस्तुल्यं प्रकल्पयेत्।
कज्जलीं सूतराजस्य सर्वैरेतैः समांशिकाम् ॥ २९५८ ॥
प्रद्राव्य लोहपात्रेऽथ पूर्वभस्मचयं क्षिपेत्।
काष्ठेनाऽऽलोड्य तत्सर्वं सद्रवं हि समाहरेत् ॥२९५९॥
ततो विचूर्ण्य तत्सर्वं सप्तवारं विभावयेत्।
आकुलीवीजसम्भूतक्वाथलेहेन यत्नतः ॥ २९६० ॥
रुद्ध्वं तन्मल्लमूषायां सर्वं संस्वेदयेच्छनैः।
इति सिद्धो रसेन्द्रोऽयं चूर्णितः पटगालितः ॥२९६१॥
कान्तपात्रस्थितो रात्रौ जलैस्त्रिफलसंयुतैः।
गुञ्जात्रयमितः प्रातर्दातव्यो मेहरोगिणाम् ॥ २९६२ ॥
मृगचारिमुनीन्द्रेण मेहव्यूहविनाशनः।
निर्दिष्टोऽयं रसो राजमृगाङ्क इति कीर्तितः ॥ २९६३ ॥
दीपनः पाचनो वृष्यो ग्रहणीपाण्डुनाशनः।
तापघ्नो रुचिकृत्सर्वरोगघ्नो योगसंवृतः ॥ ३९६४ ॥

र र स, र को., र सु, प्रमेहे। र को सिंहशार्दूल इति नाम।

भाषा—सुवर्ण १ भाग, रजत २ भा, कान्तलोह ३ भा, ताम्र ४ भा, वङ्ग ५ भा., नाग ६ भा, इनसवकीभस्में, अभ्रकसत्त्वभस्म २१ भाग, शुद्धपारे और गन्धककीकज्जली ४२ भाग लेकर लोहेके कड़छेमें कज्जलीको गलाकर पूर्वकी समस्तभस्मोंको डालकर काष्ठसे चलाकर एकजीवकरदे। द्रवको पर्पटी विधानसे ठंडाकर वारीक पीसकर अङ्कोलवीजोंके घनसे १–२ रोज मर्दनकर गोलावनाय सुखाकर चारतह सफेदकपड़ेमें वांधकर १–२ कपड़मिट्टी करदे। सूखनेपर शरावसम्पुटमें वन्दकर २–३ कपड़मिट्टीकरके सुखाकर मूधरयन्त्रमें दोसेर कण्डोंकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ रत्तीकीमात्रा मधुमें मिलाकर कान्तलोहके पात्रमें रातभर रहनेदे। सुवहमें त्रिफलाके जलकेसाथ इसको लेनेसे यह तमाम प्रमेहोंको नष्टकरताहै। तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, नपुसकता, ग्रहणी, पाण्डु, ज्वर, अरुचि इत्यादिरोगोंको नष्टकरताहै ६४३

६४४ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (अष्टत्रिंशः)

सूताऽभ्रांश हिरण्यतारविक्रान्ताऽयस्त्रपुन्नागकान्,
शौक्तिकस्फटिकमवज्रवरहतसुमानण्डान्समानान्हरेत्।
एकीकृत्य सुगाढमेव खके सम्मर्द्य तद्भावये,–
च्चातुर्जातविदारिगोक्षुरगुडूचीव्यालरम्भाजलैः॥
कार्चूरैः सुरसाह्वशीतवृषकै गोक्षीरतः सप्तधा,
भाव्यो भृङ्गशतावरीमुशलिकानीरैः कृतं गोलकम्।
शुष्कं सम्पुटयोगतो लवणजे यन्त्रे पचेद्यामकं,
मन्दं मन्दमथोऽवतार्य सुहिमं सिद्धांस्ततः पूजयेत्॥
कस्तूर्या स च भावितश्च रसराण्नाम्ना मृगाङ्को भवेत्,
सेव्यो वल्लमितः कणामधुयुतः सर्वानशेषाञ्जयेत्।
यक्ष्माणं ग्रहणीं प्रमेहनिचयं शोफोदरं क्षीणतां,
अर्शोऽरोचकवातरोगनिवहाञ्जीर्णज्वरान्धातुगान्॥

र वो, राजयक्ष्मणि।

भाषा—पारा, अभ्रक, सुवर्ण, रजत, सूर्यकान्त, फोलाद, वङ्ग, नाग, सीप, प्रवाल, हीरा, वैक्रान्त और ताम्र इनसवकी भस्में समभाग लेकर एकदिन खाली मर्दनकर चातुर्जात (तज, पत्रज, इलायची, नागकेसर), विदारीकन्द, गोखरू, गिलोय, चित्रक, केलेकाकन्द, कचूर, तुलसी, सफेदचन्दन, अडूसा, गायकादूध, भगरा, शतावर और मुसली इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाएं देकर गोला वनाय सुखाकर चारतह कपड़ेमें लपेट २–३ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर शरावसम्पुटमें वन्दकर एकपहर लवणयन्त्रमें मन्द आंचदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सिद्ध और साधुओंका पूजनकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा १० पीपल और मधुकेसाथ देनेसे राजयक्ष्म, सङ्ग्रहणी, प्रमेह, सूजन, उदररोग, क्षीणता, अर्श, अरुचि, वातरोग, जीर्णज्वर, धातुगतज्वर, इन सवको यह नष्टकरताहै। इसके अतिरिक्त तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६४४ ॥

६४५ मृगाङ्करसः (राजाद्य.) (ऊनचत्वारिंशः)

कर्षैकमानौ रसगन्धकौ हि
स्याद्धेमभस्मप्रभवः पिचुश्च।
शुद्धस्य वङ्गस्य पिचुश्च तद्व-
त्तथा च मुक्तां द्विपिचुप्रमाणाम् ॥ २९६८ ॥
पादांशतट्टङ्कणकं प्रदद्या-
त्खल्वे विमर्द्याऽथ सहाऽम्लवेतम्।
तद्भावयेद्वै यवकाञ्जिकेन
प्रमर्द्य सर्वं दिनसप्तकेन ॥ २९६९ ॥
गोलं विधायाऽर्ककरै विशोध्य
मूषागतं तं खलु पाचयेद्धि।
शीतं समुद्धृत्य ततो रसेन्द्रो
विचूर्ण्य धार्यो वरहेमपात्रे ॥
हेम्नस्त्वभावे रजतस्य पात्रे
नाऽन्यस्य पात्रेषु निवेशनीयः ॥ २९७० ॥
अयं राजमृगाङ्काऽऽख्यो रोगराजस्य घातकः।
पथ्यं पूर्वोक्तविधिना कारयेन्मतिमान् भिषक् ॥२९७१॥

र प्र सु, रस मं र क यो, राजयक्ष्मणि।

टि०—रससारसङ्ग्रहे वङ्गस्थाने स्फटिको नियोजित, भावनाया जम्बीरमात्र गृहीतम् । अस्मिन्नेव पाठे स्फटिकस्याऽधिकतया प्रक्षेपे न काऽपि हानिर्गुणवृद्धिरेव भविष्यतीत्यस्माकं मतम् । रत्नाकरौषधयोगे वङ्गस्फटिकयो र्द्वयोरप्यभावेनैको योग कृतोऽस्ति, तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावोऽस्तीति बोध्यम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सुवर्ण और वङ्गभस्म १–१ कर्ष, मुक्तापिष्टी २ कर्ष, भुनासुहागा १ टङ्क, लेकर सवकी नीलवर्ण कज्जलीकर विजोरे अथवा जंभीरीकेरस और यवकी काञ्जीमें ७–७ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय सुखाकर चारतह कपड़ेमें लपेट २–३ कपड़मिट्टी देकर सुखाले । फिर शरावसम्पुटमें वन्दकर लवण अथवा भूधरयन्त्रमें एकदिनकी आचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर वारीक चूर्णकर सुवर्णकी डिव्वीमें रक्खे । सुवर्ण न हो तो चादीके पात्रमें रक्खे अन्यमें नहीं । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा २९ मरिच और घीकेसाथ सुवर्ण अथवा चादीकेपात्रमें सेवनकरनेसे श्वास, कास, क्षय, वातातिसार, मन्दाग्नि, सङ्ग्रहणी प्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै॥

६४६ मृगाङ्करसः (राजाद्यः, चन्द्रप्रभः) ४२

त्रयो विभागा मृतपारदस्याऽ-
प्येको विभागो मृतहाटकस्य ।
एको विभागो मृततारराजोऽ-
प्येको विभागो सुमृताऽभ्रकस्य ॥ २९७२ ॥
अर्द्धो विभागो मृतशुल्वकस्याऽ-
प्यर्द्धो विभागो मृतवङ्गकस्य ।
अर्द्धो विभागो मृतनागराजोऽ-
प्येको विभागः शुचिवज्रकस्य॥ २९७३॥
भागद्वयं शोधितमौक्तिकाना-
मीशाऽर्द्धभागः शुचिटङ्कणस्य ।
चतुर्विभागाः शुचिगन्धकस्य
भागद्वयं स्यात्कुनटीसुचूर्णम् ॥ २९७४ ॥
भागद्वयं ताप्यकभस्मनः स्या-
त्सर्वस्य चूर्णञ्च विधेयमेव ।
सुनालिकेरस्य रसस्य तिस्र
स्तिस्रश्च ताम्बूलरसस्य सप्त ॥ २९७५ ॥
स्युराटरूषस्य रसस्य तद्व-
त्सुवीजपूरस्य रसस्य सप्त ।
विमर्द्य चूर्णं सुदृढश्च कृत्वा
क्षिपेत्ततः सुन्दरकाचकूप्याम् ॥ २९७६ ॥
दत्त्वा मृदं कर्पटकैश्च सप्त
क्षिपेत्ततो वालुकयन्त्रमध्ये ।
सुवह्निना चारुतमंविपाच्यं
दिनानि चाऽष्टौ किल मन्दमन्दम् ॥२९७७॥
एतैः प्रकारैश्च भवेच्च सिद्धः
सुपाचितो गर्भमृगाङ्कराजः ।
उद्धृत्य पश्चात्किल शीतलश्च
क्षिपेत्ततः सुन्दरहेमपात्रे ॥ २९७८ ॥

गुञ्जाचतुष्टयमितो मरिचाऽऽज्ययुक्तो,
युक्तोऽथवा मधुकणैः किल चाऽत्र पथ्यम् ।
छागं पयो दधि घृतं लघु भोज्यमेव,
चन्द्रप्रभोऽयमुदितो क्षयकृत्क्षयस्य॥२९७९॥

र मु., र शं., र (मा), राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारदभस्म ३ भाग, सुवर्ण, रजत और अभ्रकभस्म १–१ भा., ताम्र, वङ्ग और नागभस्म आधा ½ भाग, हीरेकीभस्म १ भा., शुद्धमोती २ भा., शुद्धसुहागा ६ भा., शुद्धगन्धक ४ भा , शुद्धमैनसिल और सोनामाखी २–२ भा., लेकर सवकी कज्जलीकर नारियलकेजल औरपानसे ३–३, अड्सा और विजोराके स्वरससे ७–७ भावनाएं देकर सुखाकर चूर्ण वनाय ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें डालकर मुंहमें डाटलगाकर ३–४ कपड़मिट्टीसे वन्दकर आठदिनकी मृदु आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सुवर्णके पात्रमें रखलेवे । इसमेंसे ४–४ रत्तीकीमात्रा मरिच और घी अथवा मधु और पीपलकेसाथ देनेसे यह राजयक्ष्मको दूरकरताहै । पथ्यमें वकरीका दूध, दही, घृत और लघुभोजन देवे ॥ ६४६ ॥

६४७ मृगाङ्करसः (हेमाद्यः) (त्रिचत्वारिंशः)

रसभस्म स्वर्णभस्म पृथङ्निष्कं प्रकल्पयेत् ।
शङ्खगन्धकमुक्तानां द्वौद्वौ निष्कौ च चूर्णितम् ॥२९८०॥
मुक्तापादं वराटानां रसपादश्च टङ्कणम् ।
वरारसेन क्वाथेन मर्दयेत्प्रहरत्रयम् ॥ २९८१ ॥
तद्गोलकं विशोष्याऽथ भाण्डे लवणपूरिते ।
पचेद्यामचतुष्कञ्च मृगाङ्कोऽयं रसोत्तमः ॥
राजरोगनिवृत्त्यर्थं चतुर्गुञ्जामितं घृतैः ॥ २९८२ ॥

र क. यो., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारा और सुवर्णभस्म १–१ भाग, शङ्ख, गन्धक और मोती २–२ भाग, कौड़ीभस्म आधाभाग, भुनासुहागा ¼ भाग लेकर सवकी कज्जलीकर त्रिफलाकेरस अथवा क्वाथसे तीनपहर मर्दनकर गोलावनाय सुखाकर चारतह कपड़ेमें लपेटकर २–३ कपड़मिट्टी करदे । सूखनेपर शरावसम्पुटमें वन्दकर लवणयन्त्रमें चारपहरकी मन्द अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्तीकीमात्रा घीकेसाथदेनेसे यह राजयक्ष्मको नष्टकरताहै ॥ ६४७ ॥

६४८ मृतकजीवनरसः

सूतनागविषगन्धकपर्दं भावितं सकलमेव चित्रजैः ।
कल्कपादमथ भाजने क्षिपेत्तस्य चोपरि सुवर्णपत्रकम्
पत्रकोपरि शरावकं न्यसे-
त्तस्यचोपरि विभूतिकां नवाम् ।
याममेकमथ मन्दवह्निना
तं पचेच्च कुरु शीतलं ततः ॥ २९८४ ॥
एवमन्यमपि निक्षिपेत्ततो याममेकमपि पाचयेत्क्रमात
मृत्युमेति किल हेमपत्रिका पात्रिकोदरगतश्च सूतकः॥

चूर्णयेत्तदनु हेमपत्रिकां सूतभस्म विषगन्धमौक्तिकम् ।
वृद्धितश्च परिमर्दयेत्ततश्चित्रकाऽऽर्द्रकरसेन यत्नतः ॥
पूर्णचन्द्रवदयं विपाचितो जायते मृतकजीवनो रसः ।
पूर्णचन्द्रवदयश्च योजितो रोगहा भवति वीर्यपुष्टिदः ॥

र दी., र., सर्वरोगे ।

टि०—अस्य पाठस्याऽऽशयमबुद्ध्वा रसाऽवतारे स्वकपोलकल्पनयाऽन्यः पाठो ग्रथितस्स सुहृद्भिरनादेय इति रहस्यम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग, गन्धक, कौड़ी और नागभस्म, सब समभाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर चित्रकके काथसे १–२ रोज मर्दनकर कल्क बनाकर चारभागकरे । एकभागको शरावमें बिछाकर ऊपरसे कल्कके बराबरवज़नका सुवर्णका बारीक पत्र रख दूसरे शरावसम्पुटसे बन्दकर २–३ कपड़मिट्टीदेकर किसी ठीकरेमें रखदे । ऊपरसे चारअङ्गुल ताज़ी राखको जमाय एक पहरकी साधारण आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरेसे मुद्रा उघाड़कर कल्कका दूसराभाग पूर्ववत् जमाकर दूसरी आंचदे । ऐसेही तीसरी और चौथी आंचदे । ऐसाकरनेसे सुवर्णपत्रकी भस्म होजायगी और शरावमें सफेदकणोंकी पारदभस्म मिलेगी उसे खुरचकर अलग रखले फिर सुवर्णभस्म १ भा, पारदभस्म २ भा, शुद्धवछनाग ३ भा, शुद्धगन्धक ४ भा, मौक्तिकपिष्टी ५ भाग लेकर चित्रकके रससे १–२ रोज मर्दनकर पूर्णचन्द्ररसकी तरह पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसको पूर्णचन्द्ररसकी तरह देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर वीर्यकी पुष्टिकरताहै ॥ ६४८ ॥

६४९ मृतकन्दर्पजीवनरसः

रसभस्माऽभ्रकं वङ्गं तीक्ष्णं कस्तूरिकाञ्चनम् ।
आकल्लकं लवङ्गञ्च दरदं जातिपत्रिका ॥ २९८८ ॥
जातीफलं धूर्तबीजं सममेकत्र मर्दयेत् ।
ताम्बूलीस्वरसेनैव तथाऽऽर्द्रकरसेन वै ॥ २९८९ ॥
वल्लैकप्रमिता मात्रा लेहयेन्मधुसर्पिषा ।
शृतशीतं पयः पीत्वा ताम्बूलं भक्षयेत्सुधीः ॥२९९०॥
मासमात्रप्रयोगेण मृतकन्दर्पजीवनम् ।
रमेद्रामाशतं नित्यं कामतुल्यो नरो भवेत् ॥ २९९१ ॥
सतताऽभ्यासयोगेन वृद्धोऽपि तरुणायते ।
जीवेद्वर्षशतं साग्रं वलीपलितवर्जितः ॥ २९९२ ॥
सर्वान् रोगान्निहन्त्याशु नाऽत्र कार्या विचारणा ।
तत्तद्रोगाऽनुपानेन सर्वरोगेषु योजयेत् ॥
स्निग्धाऽन्नं भोजयेन्नित्यं तैलाऽम्लं वर्जयेत्सुधीः ॥

र चं, वाजीकरणे ।

भाषा—पारा, अभ्रक, वङ्ग और फोलादभस्म, कस्तूरी, सुवर्णभस्म, अकलकरा, लौंग, शिंगरिफभस्म अथवा विशेषशुद्धियुक्त, जावित्री, जायफल, शुद्धधतूरेकेबीज सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पान तथा अदरखकेरससे १–१ रोज़ मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधु और घीकेसाथलेकर अधौटा दूध पीकर ताम्बूलभक्षणकरे । इसतरह एकमहीनेके प्रयोगसे नामर्दभी मर्दहोकर अनेक स्त्रियोंकेसाथ रमणकरनेकी शक्तियुक्त होजाताहै । इसके निरन्तर अभ्यासकरनेसे बुड्ढाभी वलीपलितसे निर्मुक्त तथा सबरोगोंसे रहितहोकर १०० वर्षतक जीताहै । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै । इसमें स्निग्धअन्नका भोजन और तैल खटाईसे परहेज़ करे ॥ ६४९ ॥

६५० मृतकजीवनी गुटिका

पारदं सारलौहञ्च कान्तलौहसमन्वितम् ।
माक्षिकस्याऽपि सत्त्वञ्च सत्त्वं गगनसम्भवम् २९९४
एतानि समभागानि मर्दयेच्च प्रयत्नतः ।
निचुलोद्भवतोयेन गोलकं कारयेत्ततः ॥ २९९५ ॥
नवाङ्गुलप्रमाणे च मूषागर्भेऽथ तं न्यसेत् ।
निर्गुण्डीं काकमाचीञ्च गोजिह्वां दुग्धिकान्तथा ॥
गृहकन्यांमधूकञ्च सैन्धवञ्चोपरि न्यसेत् ।
स्वेदयेत्पुटयोगेन सा पिण्डी दृढतां व्रजेत् ॥
स्थापिता मुखमध्ये तु वीर्यस्थैर्यकरी भवेत् ॥२९९७॥

र र., ध., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा, फोलाद, कान्तलोह, माक्षिक और अभ्रकसत्त्व येसब शुद्ध और समभाग लेकर जलवेतकेरससे मर्दनकर गोलाबनाय ९ अङ्गुल प्रमाणकी मूषामें इसे रख निर्गुण्डी, मकोय, वनगोभी, दूधी, घीकुंआर, महुआ, सैन्धव, येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर टिकियाके ऊपर रख मूषाका सम्पुट बनाकर भूधरयन्त्रमें बालुकासे दबाकर कुक्कुटपुटसे स्वेदनकरनेसे वह गोली दृढ होजायगी। इसे मुहमेंरखनेसे वीर्य स्थिरहोताहै ॥

६५१ मृतप्राणदायीरसः

रसं गन्धकं टङ्कणं वत्सनाभं
समं मर्दयेद्धूर्तबीजेन यामम् ।
ततो वत्सनाभेन हैमैश्च बीजै
रसैर्भावयेच्च त्रिवारं त्रिवारम् ॥ २९९८ ॥
कटुत्र्यादिजैः पञ्चवारं ततः स्या-
दयं सूतराजो मृतप्राणदायी ।
ज्वरे सन्निपाते ज्वरे नूतने वा
महाश्लेष्मरोगे च गुञ्जाप्रमाणम् ॥ २९९९ ॥
पयः पायसं दाधिकं तक्रभक्तं
सिता वा नवे हि ज्वरे चाऽऽर्द्रनीरैः ।
ज्वरे चाऽतिसारे घनद्रावयुक्ते
ग्रहण्यर्शसां क्षौद्रयुक्तं सिताऽऽढ्यम् ३०००
चले स्नायुगे त्रिकटुत्रिपीतं
प्रकम्पेऽपबाहुक एकाङ्गवाते ।
अपस्मारमुन्मादवातं निहन्ति
प्रयुक्तः सितापञ्चभिर्धूर्तबीजैः ॥ ३००१ ॥

चि सा, नि र, रसायनप, र र दी., र चो., टो (मृतसञ्जीवनी), रसायनसं., र. शं., वै. वि, र पा., एषु सूतराजेति

नाम तत्र त्रिवारं त्रिवारमित्यस्य स्थाने दन्तिवारा त्रिवारमिति पाठः।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा और वछनाग समभाग, धतूरेकेबीज सबकीबराबर, सबकी नीलवर्ण कज्जलीकर वछनाग, और धतूरेकेबीज इनकेरसोंसे ३–३ रोज़ मर्दनकर त्रिकुटके रससे ५ दिनतक मर्दन करनेसे यहरस (मृतप्राणदायी) तैयार होताहै। इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानसे लेनेसे ज्वर, सन्निपात, नवीनज्वर, महाश्लेष्मरोग येसब नष्टहोतेहैं। दूध, खीर, दहीकेपदार्थ, छाछ, चावल, शक्कर येसबपथ्यमेंदे। नवीनज्वरमें अदरखकेरससे, ज्वर और अतिसारमें नागरमोथेकेकाढ़ेसे, ग्रहणी और बवासीरमें मधु तथा शक्करकेसाथदे। वातज्वरमें त्रिकटु और चित्रककेसाथ, प्रकम्प, अपबाहुक, एकाङ्गवात, अपस्मार, उन्माद इनमें शक्कर और ५ नग धतूरेकेबीजोंकेसाथदेनेसे इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ६५१॥

६५२ मृतसञ्जीवनरसः (प्रथमः)

गरलाऽमृतसौभाग्यशिलातापीजतालकम्।
नतेशजातिपत्राणि गन्धहिङ्गुलमागधीः॥ ३००२॥
ऋक्षाऽजकिरिचूडालशिखिमत्स्योत्थमायुभिः।
भावयित्वा वटीः कुर्याल्लघुसर्षपसन्निभाः॥ ३००३॥
नागवल्लीदलद्रावैस्तुलसीपत्रसम्भवैः।
शृङ्गवेररसैर्वाऽपि सन्निपाते प्रदापयेत्॥ ३००४॥
श्वासाद्युपद्रवाऽऽविष्टे गतसञ्ज्ञेऽल्पचेतने।
मृतसञ्जीवनः सोऽयं सञ्जीवयति मानवम्॥ ३००५॥

र. क., सन्निपाते।

भाषा—कालेसांपकाजहर, शुद्धवछनाग, सुहागा, मैनसिल सोनामाखी, हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य, तगर, पारदभस्म अथवा रससिन्दूर, जावित्री, शुद्धगन्धक और शिगरिफ, पीपल सब समभाग लेकर वारीक चूर्णकर रीछ, बकरा, सूअर, मुर्गा, मोर और मछलीके पित्तोंसे १–१ भावना देकर छोटे सरसोंके बराबर गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पान, तुलसी और अदरख इनमेंसे किसी एकके रससे देनेसे श्वासादि उपद्रवयुक्त होकर सञ्ज्ञानष्टहोगईहो और यत्किञ्चित् प्राणवायु बाकी रहगयाहो इसतरहके सन्निपातको नष्टकर मनुष्यको फिरसे जीवनदेताहै॥ ६५२॥

६५३ मृतसञ्जीवनरसः (द्वितीयः)

गन्धकं गगनं तालं माक्षिकञ्च मनःशिला।
पारदश्चाऽश्वगन्धा च नेपालं टङ्कणं तथा॥ ३००६॥
सुवचा रोहिणी चैव कटुकाऽलाबुबीजकम्।
मरिचं मागधी चैव मधूकस्य च बीजकम्॥ ३००७॥
वङ्गताम्रविभीतश्च ह्यभया धरणीफलम्।
पञ्चक्षारयुतं चैव समभागानि योजयेत्॥ ३००८॥
खल्वोदरे विनिःक्षिप्य कारवल्लीरसद्रवैः।
निम्बजम्बीरधत्तूरमातुलुङ्गरसेन च॥ ३००९॥
कटुकाऽर्करसैश्चिञ्चाताम्बूलोत्थै रसैर्मुहुः।
वह्निना सैन्धुवारैश्च रसै धीमान् विमर्दयेत्॥ ३०१०॥
श्लक्ष्णभाण्डे विनिःक्षिप्य वालुकाग्नौ विपाचयेत्।
बलिमन्त्रविधानैश्च ग्राहयेत्स्वाङ्गशीतलम्॥ ३०११॥
करण्डशीशके स्थाप्यं रक्षयेन्मृत्युमृत्युदम्।
कालसंहरणं नाम पूजयेदीश्वरं शिवम्॥ ३०१२॥
आर्द्रकस्वरसेनैव गुञ्जामात्रं प्रदापयेत्।
मृतसञ्जीवनो नाम रसोऽयं भैरवोदितः॥ ३०१३॥
प्रलयानिलसंहारे यथा मेघाऽनिलेन च।
तथैव सन्निपातश्च नष्टो भवति तत्क्षणात्॥ ३०१४॥
मृतवत्काष्ठतुल्योऽपि बोध्यते शीघ्रमद्भुतम्।
प्राणानेव प्रसुप्तेभ्यः पुनरावर्तयेद्ध्रुवम्॥ ३०१५॥
विषोपविषसङ्घातैरभिन्यासादिदोषकैः।
उन्मादभ्रान्तिसम्भूते मूर्च्छार्तस्य प्रयोजयेत्॥ ३०१६॥
कासे श्वासे महाशूले पक्षाघाते जलोदरे।
अनुपानविशेषैश्च सर्वान्नाशयति क्षणात्॥ ३०१७॥

र. क. यो., सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध गन्धक, अभ्रक, हरिताल और सोनामाखीकीभस्म, शुद्ध मैनसिल और पारा, असगन्ध, जमालगोटा, भुनासुहागा, ताजीवच, रोहण, कुटकी, कड़वीतूमड़ीकेबीज मरिच, पीपल, महुआकेबीज, वङ्ग और ताम्रभस्म, बहेडा और हर्रेकीछाल भुंईकोंहड़ा, यव, तिल, पलाश, अपामार्ग, सेहुण्ड इनपाचोंकेक्षार, येसब चीज़ें समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमेंमिलाकर करेला, नीम, जंभीरी, धतूरा, बिजोरा, कुटकी, आक, इमली, पान, चित्रक, संभालू इनप्रत्येकके रसोंकी ३–३ भावनाएं देकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भर मुहबन्दकर वालुकायन्त्रमें रखकर ४ पहरकी क्रमाग्नि देकर पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर भैरवको बलि देकर निकालकर काचकी शीशीमें रखछोड़े। शिवजीका पूजनकर इसमेंसे १–१ रत्तीकी मात्रा अदरखके रसकेसाथ देनेसे सन्निपात तत्क्षण नष्टहोताहै। जो सन्निपाती मुर्देकीतरह निश्चेष्ट और अकड़कर काष्ठकीतरहहोगयाहो वहभी इसकेदेनेसे शीघ्र सञ्ज्ञाको प्राप्तहोजाताहै। विष, उपविष अथवा अभिन्यास, उन्माद, भ्रान्ति प्रभृतिसे मूर्च्छितको देनेसे सोएहुओंकी तरह फिरसे सञ्ज्ञाको प्राप्तकराताहै। अनुपानविशेषसे कास, श्वास, महाशूल, पक्षाघात, जलोदरप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ६५३

६५४ मृतसञ्जीवनरसः (तृतीयः)

म्लेच्छस्य भागाश्चत्वारो जैपालस्य त्रयो मताः।
द्वौ भागौ टङ्कणस्यैव भागैकममृतस्य च॥ ३०१८॥
तत्सर्वं मर्दयेच्छ्लक्ष्णं शुष्कं यामं भिषग्वरः।
शृङ्गवेराऽम्बुना देयो व्योषचित्रकसैन्धवैः॥ ३०१९॥
गुञ्जाद्वयमितस्तापं हरत्येष विनिश्चयः।
घनसारेण सारेण चन्दनेन विलेपनम्॥ ३०२०॥

विद्ध्यात्कांस्यपात्रे च सेचयेद्रोगिणं भिषक्।
शाल्यन्नं तक्रसहितं भोजयेदिक्षुसंयुतम् ॥ ३०२१ ॥
सन्निपाते महाघोरे त्रिदोषे विषमज्वरे।
आमवाते वातशूले गुल्मे प्लीह्नि जलोदरे ॥ ३०२२ ॥
शीतपूर्वे दाहपूर्वे विषमे सततज्वरे।
अग्निमान्द्ये च वाते च प्रयोज्योऽयं रसेश्वरः।
मृतसञ्जीवनो नाम विख्यातश्च रसायने ॥ ३०२३ ॥

र सं, वै.क, नि र, र.चं, रसायनसं, र सु., भै.र., र मं, व.रा, र.(मा), टो., र का, यो. म., ना वि, रसायनप., ज्वराऽधिकारे।

टि०—अत्र म्लेच्छशब्देन कैश्चित्ताम्रं गृहीतं कैश्चिच्च हिङ्गुलं गृहीतं।

भाषा—ताम्रभस्म ४ भाग, शुद्धजमालगोटा ३ भा, भुनासुहागा २ भा., शुद्धवछनाग १ भाग लेकर सबको एकपहर तक इकट्ठे मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्तीकी मात्रा अदरखके रसमें त्रिकटु, चित्रक और सैन्धवका चूर्ण डालकर लेनेसे यह ज्वरको तत्क्षण नष्टकरताहै। सन्निपाती मृतप्राय होगयाहोतो एक अथवा दोमाशेकी मात्रा देना। दाहमालूमहोनेपर सफेदचन्दन, कपूर और मक्खनका लेपकरना, कासेकी कटोरीसे हाथपैरोंको घिसवाना, सिरपर ठढेजलकी धारा देना। भूख लगनेपर पुरानेचावलोंकाभात छाछकेसाथ देना। प्यास लगनेपर ईखकारसप्रभृति शीतद्रवदेना। महाघोरसन्निपात, त्रिदोषोत्थरोग, विषमज्वर, आमवात, वातशूल, गुल्म, प्लीहा, जलोदर, शीतपूर्व अथवा दाहपूर्व विषमज्वर, सततज्वर, मन्दाग्नि, असाध्य वातरोग इनसबमें इसरसका प्रयोग संभालकर करना ६५४

६५५ मृतसञ्जीवनरसः (चतुर्थः)

रसगन्धौ समौ ग्राह्यौ सूतपादं विषं क्षिपेत्।
सर्वतुल्यं मृतञ्चाऽभ्रं मर्द्यं धुस्तूरजै र्द्रवैः ॥ ३०२४ ॥
सर्पाक्ष्याश्च द्रवे र्यामं कषायेणाऽथ भावयेत्।
धातक्यतिविषा मुस्तं शुण्ठीजीरकवालकम् ३०२५
यमानी धान्यकं विल्वं पाठा पथ्या कणान्विता।
कुटजस्य त्वचं बीजं कपित्थं दाडिमं बलाम् ॥३०२६॥
प्रत्येकं कर्षमात्रं स्यात्कुट्टितं क्वाथयेज्जलैः।
चतुर्गुणं जलं दत्त्वा यावत्पादाऽवशेषितम् ॥ ३०२७ ॥
अनेन त्रिदिनं भाव्यं पूर्वोक्तं मर्दितं रसम्।
रुद्ध्वा तद्वालुकायन्त्रे क्षणं मृद्वग्निना पचेत् ॥ ३०२८ ॥
मृतसञ्जीवनो नाम चाऽस्य गुञ्जाचतुष्टयम्।
दातव्यमनुपानेन चासाध्यमपि साधयेत् ॥ ३०२९ ॥
षट्प्रकारमतीसारं साध्याऽसाध्यं जयेद्ध्रुवम्।
नागराऽतिविषामुस्तं देवदारुकणा वचा ॥ ३०३० ॥
यमानी वालकं धान्यं कुटजत्वग्घरीतकी।
धातकीन्द्रयवौ विल्वं पाठा मोचरसं समम् ॥
चूर्णितं मधुना लेह्यमनुपानं सुखावहम् ॥ ३०३१ ॥

र. सं., र. चि, र. र, वृ. यो त., नि. र, रसायनस., यो. र., र को., टो., र. र. टी., र. क., चि. र, नि. र भ, र का, यो. म, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ तोला, शुद्धवछनाग ३ माशे, अभ्रकभस्म सबकी बराबर लेकर नीलवर्णकज्जलीकर धतूरा और अन्धाहूलीके स्वरससे १–१ पहर मर्दनकर धावड़ी, अतीस, मोथा, सोंठ, जीरा, सुगन्धवाला, अजवाइन, धनियां, वेलगिरी, पाठा, हर्रे, पीपल, कुटजकीछाल और बीज, कैथ, अनार, वला येसब १–१ कर्ष लेकर जवकुटकर चौगुने पानीमें डालकर चतुर्थांशावशेष क्वाथकर छानकर रक्खे, इससे तीनदिनतक मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें द्रुतहोनेतक पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे ६ प्रकारके साध्य अथवा असाध्य अतिसारोंको यह नष्टकरताहै। सोंठ, अतीस, नागरमोथा, देवदारु, पीपल, वच, अजवाइन, सुगन्धवाला, धनियां, कुंय्याकीछाल, हर्रे, धावड़ी, इन्द्रजव, वेलगिरी, पाठा, मोचरस सब समभाग लेकर वारीक चूर्णकर ६ माशे मधुकेसाथ ऊपरसे चटानाचाहिये ॥ ६५५ ॥

६५६ मृतसञ्जीवनरसः (विसूचीविध्वंसः) (पञ्चम.)

टङ्कणं माक्षिकं शुण्ठी पारदं गन्धकं विषम्।
गरलं समभागेन सर्वेषां हिङ्गुलं समम् ॥ ३०३२ ॥
मर्दयेज्जम्भजै र्द्रावैः वटी कार्या प्रयत्नतः।
श्वेतसर्षपतुल्या च मृतसञ्जीवनो रसः ॥ ३०३३ ॥
विसूचीं नाशयत्याशु दध्यन्नं पथ्यमाचरेत्।
त्रिदोषोत्थमतीसारं हन्त्युपद्रवसंयुतम् ॥ ३०३४ ॥

भै र, र सु, विसूच्यधिकारे।

भाषा—भुनासुहागा, सोनामाखी, सोंठ, शुद्ध पारा, गन्धक, और वछनाग, सर्पका जहर येसब समभाग, शुद्ध शिगरिफ, सबकीवरावर लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर जंभीरीके रससे मर्दनकर सफेदसरसोंकीवरावर गोलियावनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे हैजा, उपद्रवसहित त्रिदोषातिसारको यह नष्टकरताहै भूखलगनेपर पथ्य दही भात देना ६५६

६५७ मृतसञ्जीवनरसः (षष्ठः)

रसनागौ समभागौ सम्मर्द्य समेन शिलाजतुना।
निक्षिप्य पञ्चमूत्रे जारयेत्स्वेदयेत्पुटत्रय्या ॥ ३०३५ ॥
एकत्र तच्च सर्वं मृद्नीयाज्जाङ्गलाऽम्भसा त्रिदिनम्।
पश्चात्सामान्यपुटै र्दग्ध्वा बहु भावयेच्च क्रमादगदैः ॥
कन्याभृङ्गमयूरकमागधिकानागरै र्विडङ्गैश्च।
मधुकापलाशबीजै र्वाजिभवलाङ्गलमुशलिकाकन्दैः ॥
स हि सर्वसन्निपाते लकुचाम्भसा सैन्धवै र्देयः।
वल्लत्रयमात्रोऽसौ दिनत्रयेणैव निर्जयेद्रोगम् ॥३०३८॥
तत्तत्स्यादनुपानं चतुरोऽशीतिश्च निर्जयेद्वायून्।
अष्टज्वराग्निहन्यात्सर्वाण्यपि हरति गुल्मजातानि ॥

त्रिफलाक्वाथेन युतो विष्टम्भं कामलां पुनर्नवया।
गोपयसा विष्टम्भं शूलञ्चैरण्डजे जयति ॥ ३०४० ॥
स्वेदं चित्रकरसतः कटुकाशीतयाऽश्ममेहरुजः।
कफवातक्रिमिदोषं हरति कुमारीरसेन रसराजः ३०४१

र. मृ., वातरोगे।

भाषा—पारा और नागभस्म समभाग, दोनोंकीवरावर शिलाजीत मिलाकर पञ्चमूत्र (गाय, भैंस, गधी, वकरी और भेड़कामूत्र) में मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर भूधरयन्त्रमें स्वेदनकरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मूत्रडालकर मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर भूधरपुटमें स्वेदनकरे। ऐसे तीनपुटदेकर जङ्गली जानवरोंके मूत्रसे तीनरोज़ मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर साधारणपुटकी आंचदे। तीनआंचें देनेकेवाद नीचेलिखे अगदोंकीभावनाएं दे। यथा–घीकुंआर, भंगरा, अपामार्ग, पीपल और सोंठ (१) विडङ्ग, मुलहठी, टाककेबीज (२) असगन्ध, कलिहारी, मुशली (३) इनकी क्रमसे १–१ भावना देनेकेवाद ९–९ रत्ती वडहलकेजल और सेंधेनमककेसाथ देनेसे तीनरोज़केभीतर रोगोंको दूरकरताहै। वातघ्न अनुपानकेसाथदेनेमें ८४ प्रकारके वातरोगोंको दूरकरताहै। त्रिफलाकेक्वाथकेसाथदेनेसे आठप्रकारके ज्वर, गुल्मसमूह और विष्टम्भप्रभृतिको नष्टकरताहै। पुनर्नवाकेसाथ कामलाको, गायकेदूधसे विष्टम्भको और एरण्डकीजड़केक्वाथकेसाथ शूलको नष्टकरताहै। चित्रककेस्वरसकेसाथ स्वेदको, कुटकी और मिश्रीकेसाथ पथरी तथा प्रमेहको नष्टकरताहै। घीकुंआरकेरससे कफवात और क्रिमिदोषको नष्टकरताहै ॥ ६५७ ॥

६५८ मृतसञ्जीवनरसः (सप्तमः)

रसभागो भवेदेको गन्धको द्विगुणोमतः।
विषतालककङ्कुष्ठशिलाहिङ्गुललोहकम् ॥ ३०४२ ॥
वह्नित्रिकटुभृङ्गाह्वहेममाक्षिकमभ्रकम्।
हस्तिशुण्डी विषं कुम्भी तन्दुलीयकताम्रकौ॥३०४३॥
एषां प्रत्येकमेकैकं भागमादाय चूर्णयेत्।
आर्द्रकस्य द्रवेणैव मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥ ३०४४ ॥
जम्बीरस्य रसो ग्राह्यः पलत्रयपरीक्षितः।
त्रिफलायाश्च निर्गुण्ड्याः प्रत्येकञ्च पलत्रयम्॥३०४५॥
रसस्य पलमानन्तु चाङ्गेर्याः परिकीर्तितम्।
काचकूप्यां विनिःक्षिप्य यन्त्रे क्षिप्त्वा प्रयत्नवान्३०४६
उद्धृत्याऽऽर्द्रकनिर्यासै मर्दयित्वा विशोषयेत्।
मृतसञ्जीवनो नाम रसोऽयं विदितो भुवि ॥
गुञ्जाद्वयं ददीताऽस्य सन्निपातापनुत्तये ॥ ३०४७ ॥

र र स., नि र, र सु, चि क., रसायनस, र. का, र क. यो, सु प्र, र. को, र र दी, भै र, र शं., र स, व रा, ज्वराऽधिकारे।

टि०–र क यो. वालुकायन्त्रे चतुर्दशदिनाऽवधिपाको विहितः, यत्र कुत्रचित्कङ्कुष्ठस्थाने वराटी गृहीताऽस्ति, भावनाया त्रिफलास्थाने विजया गृहीता। अत्रैवाऽधिकवस्तूनां प्रक्षेपेण रससम्पादने न काऽपि क्षति। रसाऽयोव्योषकङ्कुष्ठेत्यादिना रसरत्नसमुच्चये द्वितीय पाठ कृतोऽस्ति सोऽप्यत्रैवाऽन्तर्भावनीय। रसरत्नदीपिकायामस्य सञ्जीवनरस इति नामस्थापितम्, तदर्थमवुद्ध्वा रसराजसुन्दरे स्वतन्त्र एव पाठ सङ्गृहीतस्तन्मूलमज्ञानमेव।

भाषा—शुद्ध गन्धक २ भाग, शुद्धपारा, डकरा (वछनागभेद), हरिताल, कङ्कुष्ठ, (मुर्दासङ्ग), मैनसिल और शिंगरिफ, लोहभस्म, चित्रक, त्रिकटु, भंगरा, सुवर्णमाक्षिक और अभ्रकभस्म, हाथीशुण्डी, शुद्धवछनाग, निसोत, काटेवाली चौलाईकीजड़, ताम्रभस्म येसव १–१ भाग लेकर सवका वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर अदरखकेरससे तीनरोज़ मर्दनकर जंभीरी, त्रिफला, निर्गुण्डी इनकास्वरस ३–३ पल, अमलोनियाकारस १ पल लेकर सवको ७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें भरके ईंटकी डाटसे मुंहवन्दकर ७–८ कपड़मिट्टीलगादे। सूखनेपर वालुकायन्त्रमें रख क्रमवृद्ध तीनपहरकी अग्निदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर अदरखके रससे २–३ रोज़ घोटकर २–२ रत्तीकीगोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपातादि समस्त दुर्धररोग निवृत्तहोतेहैं ॥ ६५८ ॥

६५९ मृतसञ्जीवनरसः (अष्टमः)

नागं सुद्रावितं कृत्वा शुद्धं सूतं समं क्षिपेत्।
सूताद्द्विगुणगन्धञ्च चूर्णीकृत्य शनैः शनैः ॥ ३०४८ ॥
निक्षिप्य चालयेद्दण्डैः सार्द्रनिर्गुण्डिसम्भवैः।
नागं सूतं मृतं ज्ञात्वा हिमज्वालानिवर्तितम् ॥३०४९॥
चुल्ल्या उत्तार्य यत्नेन क्षारं धवलनाभिजम्।
चूर्णितं सूततुल्यञ्च निक्षिपेन्मर्दयेत्तथा ॥ ३०५० ॥
दरदं पारदं तुल्यं योजयेत्सम्प्रदायवित्।
यवनेष्टभवं चूर्णं तुल्यं संयोज्य यत्नतः ॥ ३०५१ ॥
विमृद्य वस्त्रपूतञ्च कृत्वा रक्षेत्सुभाजने।
गुञ्जैकं वा द्विगुञ्जं वा ह्यार्द्रकस्वरसेन च ॥ ३०५२ ॥
जिह्वके सन्निपाते च प्रकुर्यात्प्रतिसारणम्।
प्रकृतिश्चाऽऽनयेज्जिह्वास्तम्भश्चाऽपि हनुग्रहम् ३०५३
तथा च पिच्छिलास्यञ्च मन्यास्तम्भं शिरोग्रहम्।
अर्दितञ्च जयेदाशु श्रीमद्गोरक्षशासनात् ॥ ३०५४ ॥
गुञ्जामात्रञ्च दातव्यं वहुदोषे धृते सति।
शुष्कां विचेष्टितां जिह्वां शुकजिह्वोपमां तथा ॥३०५५॥
प्रकृतिश्चानयेत्क्षिप्रं नाऽत्र कार्या विचारणा।
मृतसञ्जीवनो ह्येष सम्प्रदायक्रमागतः ॥
नागादिद्रावणार्थेषु लोहपात्रं प्रकल्पयेत् ॥ ३०५६ ॥

र सु, टो, ज्वराऽधिकारे।

टी०—रसराजसुन्दरे धवलनाभिशब्दस्य टङ्कणाऽर्थं कृतोऽस्ति तदज्ञानादेवेति वोध्यम्, तत्र नाभिशब्दस्य निरर्थकत्वात्।

भाषा—शुद्धसीसेको लोहेकी कड़ाहीमें गलाकर वरावरका शुद्धपारा डालदे। पारेसे दूने शुद्धगन्धकका वारीकचूर्णकर थोड़ा

२ डालताजाय और संभालूके ताजेडण्डेसे चलाताजाय। इन-दोनोंकीसफेदभस्महोनेपर चूल्हेसे उतार पारेकी बराबर शुद्ध-नाभिकीभस्म डालकर एकपहर मर्दनकर शुद्धशिगरिफ और पारा १–१ भाग कच्चा डालकर सबकी बराबर लहसनका कल्क मिलाकर यहांतक मर्दनकरे कि सूखजाय, फिर कपडेमें छानकर शीशीमें रखछोडे। इसमेंसे १ या २ रत्ती की मात्रा अदरखके रसमें मिलाकर जिह्वकसन्निपातमें जीभपर मलनेसे जिह्वास्तम्भ, हनुग्रह, मुहकी चिपचिपाहट, मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ, शिरका-जकड़ना, लकवा येसब नष्टहोतेहै। यदिरोगकीप्रवलताहो तो एकरत्ती अदरखकेरसमेंमिलाकर खानेकोदेनेमे मूर्खी, चेष्टा-रहित और शुककी जिह्वाकेसदृश रंगवाली जीभ प्रकृत्यापन्न होजातीहै ॥ ६५९ ॥

६६० मृतसञ्जीवनरसः (नवमः)

पारदं सुमृतं ताम्रं तार्प्यं मौक्तिकमेव च।
हेमवज्रप्रवालञ्च सर्वमेकत्रचूर्णयेत् ॥ ३०५७ ॥
चतुर्थांशं शुद्धगन्धं दत्त्वा कूप्यां सुधीः पचेत्।
खादेद्गुञ्जाद्वयञ्चाऽस्य यथाबलमथाऽपि वा॥ ३०५८॥
पिप्पलीमधुना चैवं पिप्पलीखण्डकेन वा।
गुडशुण्ठिकया वाऽपि पञ्चकोलेन वाऽथवा॥३०५९॥
मृतसञ्जीवनो नाम शिरोरोगं निकृन्तति।
अनुपानप्रभेदेन सर्वशीर्षामयापहः॥ ३०६० ॥

र म मा, ना वि, शिरोरोगे।

भाषा—पारा, तांबा, सोनामाखी, मोती, सोना, हीरा, मूंगा इनकीभस्में समभाग, शुद्धगन्धकसबसे चतुर्थांश डालकर कज्जलीकर आतशीशीशीमें भर वालुकायन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देकर पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २ रत्ती अथवा योग्यतानुसार पीपल, मधु अथवा पीपल, शक्कर अथवा गुड, सोंठ अथवा पञ्चकोलकेसाथ देनेसे तमाम शिरोरोग दूरहोतेहैं। और अनुपानभेदसे यह अवान्तर शिरोरोगोंकोभी नष्टकरताहै ॥ ६६० ॥

६६१ मृतसञ्जीवनरसः (दशमः)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं हिङ्गुलं कटुरोहिणीम्।
भृङ्गराजस्य नीरेण मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ ३०६१ ॥
माषमात्रां वटीं कुर्यादार्द्रकस्याऽनुपानतः।
देयो हि मृतसञ्जीवी रसोऽयं सन्निपातनुत् ॥३०६२॥

व रा, वै चि, वा, सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा, वच्छनाग, गन्धक और शिगरिफ, कुटकी सब समभागलेकर कज्जलीकर भंगरेकेरससे ३ रोज मर्दनकर १–१ माशेकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरख के रसकेसाथदेनेमे यह सन्निपातको दूरकरताहै ॥ ६६१ ॥

६६२ मृतसञ्जीवनरसः (एकादशः)

मरिचं टङ्कणं सूतं माक्षिकं कान्तलोहकम्।
अभ्रकञ्च समांशानि वह्निक्वाथेन मर्दयेत् ॥ ३०६३ ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य वालुकायन्त्रपाचितम्।
मरीचाऽऽर्द्रकसंयुक्तं द्विगुञ्जं भक्षयेत्सदा ॥ ३०६४ ॥
पथ्यं क्षीरोदनञ्चैव तापे दद्यात्सशर्करम्।
प्रातःकाले तु सेवेत सद्यः स्वेदं विमुञ्चति ॥ ३०६५॥

व.रा, स्वेदपित्ते।

भाषा—मरिच, शुद्ध सुहागा और पारा, सोनामाखी, कान्तलोह और अभ्रकभस्म येसब समभागलेकर बारीककज्जली-बनाकर चित्रकके क्वाथसे १–२ रोजमर्दनकर सुखाकर कपड़-मिट्टीकीहुई आतशीशीशीमें भर वालुकायन्त्रमें ४ पहरपकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती मरिच और अदरखकेसाथ देनेसे अत्यन्त पसीनेका निकलना बन्दहोताहै। दाहहोनेपर दूधभात दे। ज्वरहोनेपर शक्करकेसाथ दूधभात दे इसकाप्रयोग सुबहमें करे ॥ ६६२ ॥

६६३ मृतसञ्जीवनीकल्पः

चित्रकेण तथा पूर्वस्तथा शुण्ठीविडङ्गतः।
लोहेन भृङ्गराजेन वलया निम्बपञ्चकैः ॥ ३०६६ ॥
खादिरेण च निर्गुण्ड्या कण्टकार्याऽथ वासकात्।
वर्षाभुवा तद्रसैर्वा भावितो वटिकीकृतः ॥ ३०६७ ॥
चूर्णं घृतैर्वा मधुना गुडाद्यं वारिणा तथा।
ओं हूं स इतिमन्त्रेण मन्त्रितो योगराजकः॥
मृतसञ्जीवनी कल्पो रोगे मृत्युञ्जयो भवेत् ॥ ३०६८ ॥

आ पु, रसायनाऽधिकारे।

भाषा—चित्रक, सोंठ, विडङ्ग, लोहभस्म, भगरा, बला, निम्बपञ्चाङ्ग, खैरकीछाल, संभालू, भटकटैया, अड़ूसा, इटसिट येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर इनप्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ भावनाएं देकर २–३ माशेकी गोलियां बनाकर अथवा चूर्णरूपमें रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ माशेकीमात्रा मधु, गुड़ अथवा जलप्रभृति अनुपानकेसाथ "ॐ हूं स" इसमन्त्रसे १०८ वार अभिमन्त्रितकर लेनेसे समस्तरोगोंको यह नष्ट-करताहै और आयुको बढ़ाताहै इसीलिये इसका मृतसञ्जीवनी कल्प नाम रक्खागयाहै ॥ ६६३ ॥

६६४ मृतसञ्जीवनीवटी (प्रथमा)

कटुतुम्बी काकमाची निर्गुण्डी च कुमारिका।
गोजिह्वा सैन्धवं गुञ्जा ह्यार्द्रकञ्च समंसमम् ॥३०६९॥
पिष्ट्वा तेन प्रलेपन्या मूषा सर्वाऽङ्गुलावधि।
पारदं व्योमसत्त्वञ्च कान्तं तीक्ष्णञ्च मुण्डकम् ३०७०
ताप्यसत्त्वञ्च तुल्यांशं सर्वं सञ्चूर्ण्य मर्दयेत्।
दिनं जम्बीरजैर्द्रावैस्तन्मूषायां विनिःक्षिपेत्॥३०७१॥
आच्छाद्याऽऽलेप्य कल्केन चान्धयित्वा विशोषयेत्।
करीषाग्नौ दिवारात्रं पुटे पक्त्वा समुद्धरेत् ॥३०७२॥
पुनः प्रलिप्तमूषायां क्षिप्त्वा रुद्ध्वा पुटेत्ततः।
इत्येवं दशमूषासु प्रलिप्तासु विपाचयेत ॥ ३०७३ ॥

जायते गुटिका दिव्या मृतसञ्जीवनी परा ।
वक्त्रे शिरसि कण्ठे वा कर्णे वा धारिता करे ३०७४
हेम्ना सुवेष्टिता सम्यग्वयःस्तम्भकरी परा ।
वलीपलितखालित्ये मृत्युशङ्काविनाशिनी ॥ ३०७५ ॥
वर्षमात्रान्न सन्देहो जीवेद्वर्षशतत्रयम् ।
शुद्धगन्धपलैकन्तु गवां क्षीरैः पिबेत्सदा ॥
अनेन त्वनुपानेन देहे सङ्क्रमते रसः ॥ ३०७६ ॥

र. खं., र म. मा , र. का , रसायने ।

भाषा—कड़वीतूंवी, मकोय, निर्गुण्डी, घीकुआर, वनगोभी, सेंधानमक, सफेदगुञ्जा और अदरख येसव समभाग लेकर वारीकपीस मूषाकेभीतर चारोंतरफ़ १-१ अङ्गुल मोटा लेपकरके शुद्धपारा, अभ्रकसत्व, कान्तलोह, फोलाद, मुण्डलोह, स्वर्णमाक्षिकसत्त्व सवसमभागका वारीकचूर्णकर पारेमें मिलाय एकरोज़ घोटकर जंभीरीकेरससे मर्दनकर गोलावनाय उसीमूषेमें डाल ढक्कन देकर पूर्वोक्तकल्कसे सन्धिवन्दकर कल्ककीही १ अङ्गुलमोटी खोल चढ़ादे । खोलपर २-३ कपड़मिट्टी चढ़ाकर सुखनेपर करसीकी अग्नि इसप्रमाणसे देवे कि एकदिनरातमें शान्त होजाय । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर उसीतरह मर्दन लेपनकर अग्निदेवे । इसतरह दश मूषाओंमें पकानेसे गुटिका तैयारहोगी । इसमें पारा हरवक्त नया देताजाय । इस गोलीको सुवर्णमें मढ़वाकर मुंह, सिर, कण्ठ, कान, हाथ इनमेंसे किसीभी स्थानमें धारण करनेसे अवस्थाके ह्रासको टिकातीहै । वली, पलित और खालित्यको दूरकर मृत्युकी शङ्काको दूरकरतीहै । एकवर्षभरके निरन्तर प्रयोगसे ३०० वर्षकी आयु होतीहै । शुद्ध गन्धक ४ तोले लेकर गायकेदूधसे रोज़ पीना चाहिये । इससे शरीरमें गोलीकाप्रभाव व्याप्तहोताहै ॥ ६६४ ॥

६६५ मृतसञ्जीवनीवटी (द्वितीया)

शुद्धसूतं वज्रभस्म सत्त्वमभ्रकताप्ययोः ।
कान्तलोहसमं हेम जम्बीरै र्मर्दयेद् दृढम् ॥ ३०७७ ॥
सप्ताहं सर्वतुल्यांशं गोलं कृत्वा समुद्धरेत् ।
गोजिह्वावायसीवन्ध्यानिर्गुण्डीमधुसैन्धवैः ॥३०७८॥
लेपयेद्वज्रमूषान्ते गोलकं तत्र निक्षिपेत् ।
तत्कल्कश्छादितं कृत्वा पक्षैकं भूधरे पचेत् ॥ ३०७९ ॥
यामं यामं समुद्धृत्य लिप्त्वा मूषां पुनः पुनः ।
रुद्ध्वाऽथ पूर्ववत्पाच्यमेनं पक्षात्समुद्धरेत् ॥ ३०८० ॥
यवचिञ्चीपलाशाख्यराजीकार्पासतण्डुलैः ।
एतैः प्रलेपयेन्मूषां गुटिकां तत्र निक्षिपेत् ॥ ३०८१ ॥
टङ्कणं श्वेतकाचञ्च दत्त्वा यामे दृढंदृढम् ।
खदिराङ्गारयोगेन द्रुतोऽयं जायते रसः ॥ ३०८२ ॥
मूषायां विड्योगेन समं हेम च जारयेत् ।
ततस्त्रियामकै र्मर्द्य सगोमूत्रं दिनैकतः ॥ ३०८३ ॥
अन्धमूषागतो ध्मातो बद्धो भवति वज्रवत् ।
मृतसञ्जीवनी नाम गुटिका वक्त्रमभ्यगा ॥ ३०८४ ॥
वर्षमात्राज्जरां मृत्युं हन्ति सत्यं शिवोदितम् ।
शस्त्रस्तम्भञ्च कुरुते ब्रह्मायुर्जायते नरः ॥ ३०८५ ॥

र. मं., रसायनसं., र र स , र. का , रसायने । रसायनसङ्ग्रहे ताप्यस्थाने तालं दृश्यते ।

भाषा—शुद्धपारा, हीरा, अभ्रक और सुवर्णमाक्षिकसत्त्व, कान्तलोह और सुवर्ण इनसवकीभस्में समभाग लेकर जंभीरीके रससे ७ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय वनगोभी, मकोय, वाझ खेखसा, निर्गुण्डी, मधु और सेंधानमक सवसमभागलेकर वारीकपीस वज्रमूषामें चारोंतरफ १-१ अङ्गुलमोटा लेप लगाकर उसमें गोलेको रख ढक्कनलगाय उसीकल्कसे सन्धिवन्दकर १-१ अङ्गुलमोटी खोल चढ़ाकर ३-४ कपड़मिट्टी मुलतानी और रुईको कूटकरलगादे । सुखनेपर एक पहर भूधरपुटकी अग्नि दे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दन, लेपन तथा अग्निका विधानकरे । इसतरह १५ दिनतककरनेकेवाद तितली, ढाक, राई, विनौले, इनके कल्कसे मूषेको पूर्ववत् लेपदेकर जभीरीके रसमें पूर्ववत् घोटकर गोलीकोरख सुहागा, सफेदकाच, षोडशांश मूषेमें डालकर औषधकल्कसे सन्धिवन्दकर उसीकी खोल चढाकर ३-४ कपड़मिट्टी देवे। सुखनेपर खैरकी आचसे दृढ धमनकरनेसे इसरसकी द्रुतिहोजायगी । मूषेका ढक्कन हटाकर गोलीकी वरावर सुवर्णका चूर्ण थोड़ा २ देवे । मिलजानेपर विडोंका प्रक्षेप करे जिससे कि पहिले दियाहुआ सुवर्ण जलजाय । जलजानेपर दूसरा सुवर्ण दे और विडोंका प्रक्षेपकरे । इसतरह समान सुवर्णका जारण होनेपर अग्निसे निकाल खरलमें डालकर ३ पहर गोमूत्रसे मर्दनकर गोलावनाय अन्धमूषामें वन्दकर धमनकरनेसे वज्रकीतरह कठिनहोजाता है। इसगोलीको एकवर्षभर मुंहमें रखनेसे जरा और मृत्युरहितहोकर वहुत दिनतक जीता है और उसके शरीरको कोईभी शस्त्र क्षति नहीं पहुंचासकता ॥ ६६५ ॥

६६६ मृतसञ्जीवनीवटी (तृतीया)

यः पूर्वोक्तः सूतो लक्षादूर्ध्वञ्च वेधते लोहान् ।
बद्धः सारणयोगै र्मुखस्थश्च जारयेद्रत्नम् ॥ ३०८६ ॥
युक्तः समांशनागैः सुरलोहायस्कान्तताप्यसत्त्वैश्च ।
अभ्रकसत्त्वसमेता गुटिका मृतसञ्जीवनी नाम ३०८७
हेमयुता गुलुच्छके मुकुटे वा कण्ठसूत्रकर्णे वा ।
मृत्युभयशोकरोगविषशस्त्रजरासततदुःखसङ्घातम् ॥
यस्याऽङ्गे निहितेयं गुटिका मृतसञ्जीवनी नाम ।
सोऽसुरयक्षकिन्नरपूज्यतमः सिद्धयोगीन्द्रैः ॥ ३०८९ ॥
प्रक्षाल्य तोयमध्ये गुटिका घटिकाद्वयं ततः क्षिप्त्वा ।
तच्चेयं वदनगता मृतकस्योत्थापनं कुरुते ॥ ३०९० ॥
तोयं तदेव पिवति स्वस्थं पथ्यान्वितस्ततः पुरुषः ।
लभते दिव्यं स वपु र्मृत्युजरावर्जितः सुदृढम् ३०९१

र ह रसायने ।

भाषा—पहिले शुद्धकियाहुआ पारा जो कि लक्षसे ऊपर धातुओंका वेधन करसक्ताहो उसमें डालेहुए रत्नोंको सारणा-

तैलोंसे जो जारण करसक्ताहो ऐसा गुटिकारूप पारद लेकर नाग, सुवर्ण, लोह, कान्तलोह सुवर्णमाक्षिक और अभ्रकसत्व, येसव समभाग लेकर बद्धपारेमें बराबर प्रमाणसे मिलाकर गोलीबनाय सुवर्णसे वेष्टितकर चोटी, मुकुट, माला, कान इनमें रखनेसे मृत्यु, भय, शोक, रोग, विष, शस्त्र, बुढापा और निरन्तर दुःख-सङ्घात इनसबको नष्टकरती है। जिसकिसीके शरीरपर इसगुटिकाको रखदे वह असुर, यक्ष, किन्नर, सिद्ध और योगियोंसे सम्मानित होताहै। इसगोलीको धोकर दो घण्टे पानीमें रख उसपानीको सन्न्यास रोगादिकोंमें मृतप्राय होगयाहो उसके मुंहमें डालकर इस गोलीको रखनेसे सञ्ज्ञाको प्राप्तहोकर उसपानीको पीजाताहै। भूखलगनेपर पथ्यदेना उससे मृत्यु, बुढ़ापा प्रभृतिसे-रहित सुदृढ दिव्य शरीरको प्राप्तहोताहै॥ ६६६॥

६६७ मृतसञ्जीवनीवटी (चतुर्थी)

कर्पूरं रसगन्धकश्च दरदं तीक्ष्णाद्भवं भस्मकं,
कालेयेन्द्रयवाऽजमोदहुतभुक् चिञ्चास्थिकं धातकी।
एला मांसिलवङ्गशाल्मलिमलं जातीफलं टङ्कणं,
नीली सिन्धुभवं विषं सममिदं प्रत्येकनिष्कान्वितम्॥
सर्वेषां सदृशश्च बिल्वफलकं कान्ताऽभ्रसिन्दूरकं,
सिन्दूरश्च सफेनकं सुविमलं धुस्तूरबीजं नवम्।
भङ्गापत्रककोकिलाक्षसहितं निष्कप्रमाणं पृथक्,
धुत्तूरस्वरसेन सन्ततमिदं सम्मर्दयेद्यामकम्॥३०९३॥
जम्बीरस्वरसेन मर्दितमिदं गुञ्जाप्रमाणा वटी,
सेव्या चेन्मधुना जयेद्रुशमिमं रक्तातिसारं परम्।
सर्वेषु ग्रहणीगदेषु विविधेष्वामातिसारेषु च,
तद्वच्छूलयुतांश्च दुस्तरतरान्नानाऽतिसारव्रजान्॥

व रा., ग्रहण्यतिसारयो।

भाषा—शुद्ध रसकपूर, पारा, गन्धक और शिंगरिफ, फोलादभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर रखछोड़े। इसमें केशर, इन्द्रजव, अजमोद, चित्रक, इमलीकेबीजोंकीगिरी, हड़जोड़, धावड़ीकेफूल, इलायची, जटामासी, लौंग, मोचरस, जायफल, भुनासुहागा, नील, सेंधानमक, शुद्धवछनाग येसब ४–४ माशे, बेलगिरी सबकेबराबर, कान्तसिन्दूर, अभ्रसिन्दूर, रससिन्दूर, समुद्रफेन, शुद्धरूपामाखी और धतूरेकेबीज, भांगकेपत्ते, तालमखाना, येसब ४–४ माशेलेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय धतूरा और जंभीरीकेस्वरससे १–१ पहर मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथदेनेसे रक्तातिसार, समस्तग्रहणीरोग, नानातरहके आमातिसार, शूल्युक्तदुस्तर अतिसार, इनसबको यह नष्टकरतीहै॥ ६६७॥

६६८ मृतसञ्जीवनीवटी (पञ्चमी)

रसराजशुल्वगन्धकसुरतिक्तैः पीतभृङ्गमरिचैश्च।
ब्राह्मीद्वितयरसाढ्या गुटिकाः कार्याश्च चणकाभाः॥
एका देया प्रथमं त्रिदोषविकलस्य मूर्च्छितस्याऽपि।
अन्या मुहूर्तपरतः प्रहराद्न्याऽपरा नैव॥ ३०९६॥
जीवति मृतोऽपि पुरुषस्त्रिदोषजान्विततन्द्रिकायुक्तः।
श्रीनागार्जुनगदिता गुटिका मृतसञ्जीवनी ख्याता॥

र म. क., र. का., रसायनसं, सन्निपाते।

भाषा—पारा और ताम्रभस्म, शुद्धगन्धक, सुवर्णभस्म, चिरायता, पीलाभंगरा, मरिच सबसमभाग लेकर बारीकचूर्णकर मण्डूकपर्णी और ब्राह्मीके रसकी ३–३ भावनाएं देकर चने-प्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे तान्द्रिकसन्निपात-प्रभृतिमूर्च्छिताऽवस्थामें एकगोली दोनोंब्राह्मीके रसोंकेसाथदेना, थोड़े समयकेबाद दूसरी गोली देना। यदि दोनोंकेदेनेसे मूर्च्छा जागृत न हो तो एकपहरकेबाद तीसरीगोली देना। इसके देनेसे मूर्च्छासे विमुक्त होजाताहै। यदि तीसरीगोली देनेसभी दैववशात् मूर्च्छा जागृत न हो तो उसकीचिकित्सा गतायु समझकर न करना॥ ६६८॥

६६९ मृतसञ्जीवनीवटी (षष्ठी)

मधुयष्टि लवङ्गश्च शिलाजतु त्रुटिस्तथा।
सुघस्रे भावना कार्या नवतण्डुलवारिणा॥ ३०९८॥
याममात्रं दृढं मर्द्य वटी कोलसमा स्मृता।
कृष्णकार्पासनीरेण तृष्णादाहज्वराञ्जयेत्॥ ३०९९॥
मूर्च्छाद्युग्ररोगश्च वातपित्तश्च नाशयेत्।
मृतसञ्जीवनी प्रोक्ता पूज्यपादैरुदीरिता॥ ३१००॥

वै चि., दाहाऽधिकारे।

टि०—सुघस्रे इत्यस्य स्थाने सहस्रमिति वर्तमानसमये पाठो दृश्यते परन्तु इयता दीर्घपरिश्रमेण साधारणवटिकानिर्माणस्याऽकिञ्चित्करत्वात् तत्स्थाने सुघस्रे इत्येव पाठोऽस्माभिः प्रकल्पित इति विद्वद्भिः क्षमणीयम्। किञ्च सप्तमवट्या सहस्रशब्देन सहस्रवेधिपाषाणो गृहीतो न तु सहस्रभावना दत्ता अतोऽत्र वैद्यचिन्तामणिकारस्य भ्रमजनित एव तथाविधपाठोऽस्तीत्यवगन्तव्यम्।

भाषा—मुलहठी, लौंग, शिलाजीत, इलायची सब समभाग-लेकर बारीकचूर्णकर नवीनचावलोंके धोवनसे एकपहरतक दृढ-मर्दनकर बेरबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली कालेकपासके पानीकेसाथ देनेसे तृष्णा, दाह, ज्वर, मूर्च्छादिभयङ्कररोग और वातपित्त इनको यह नष्टकरतीहै ६६९

६७० मृतसञ्जीवनी वटी (सप्तमी)

यष्टीमधुलवङ्गश्च शिवावल्कं त्रुटिस्तथा।
सहस्रवेधी कतकबीजं तण्डुलवारिणा॥ ३१०१॥
यामत्रयं दृढं मर्द्य वटिका कोलसम्मिता।
कृष्णकार्पासनीरेण तृष्णादाहज्वराञ्जयेत्॥ ३१०२॥
मूर्च्छाभ्रमादिरोगांश्च वातपित्तश्च नाशयेत्।
सुधासञ्जीवनी नाम पूज्यपादैरुदीरिता॥ ३१०३॥

र र कौ, र पा, तृष्णायाम्।

भाषा—मुलहठी, लौंग, हरेंकीछाल, छोटीइलायची, सहस्रवेधीपाषाणकीभस्म, निर्मलीकेबीज सबसमभागलेकर बारीक-

चूर्णकर नवीन चावलोंके धोवनसे तीनपहर मर्दनकर बेरबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली कालीकपासके स्वरससे देनेसे तृष्णा, दाह, ज्वर, मूर्च्छा, भ्रम, वातपित्तादि-जनिततमामरोग, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ६७० ॥

६७१ मृतोत्थापनरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं शिला च विषहिङ्गुलम् ।
मृतकान्ताऽभ्रताम्राऽयस्तालकं माक्षिकं समम् ॥३१०४॥
अम्लवेतसजम्बीरचाङ्गेरीणां रसेन च ।
निर्गुण्डीहस्तिशुण्ड्योश्च द्रवे मर्द्यं दिनत्रयम् ॥३१०५॥
रुद्ध्वा तु भूधरे पाच्यं दिनान्ते तत्समुद्धरेत् ।
चित्रकस्य कषायेण मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥ ३१०६ ॥
माषमात्रं प्रदातव्यं हिङ्गुव्योषार्द्रकद्रवैः ।
सकर्पूरानुपानं स्यान्मृतस्योत्थापने रसे ॥ ३१०७ ॥
पीडितं सन्निपातेन गतं वाऽपि यमालयम् ।
तत्क्षणाज्जीवयत्येष पथ्यं क्षीरैः प्रयोजयेत् ॥३१०८॥

भैं र , र. शं , र सु , नि. र , व. रा., र को , र प्र , सू प्र , सन्निपाते । र. को आनन्दभैरवः ।

भाषा—शुद्धगन्धक २ भाग, शुद्धपारा, मनसिल, वछनाग और शिगरिफ, कान्तलोह, अभ्रक, ताम्र, लोह, हरिताल और सोनामाखीभस्म सब १–१ भाग, लेकर कज्जलीवनाय बिजोरा, जंभीरी, अमलोनिया, संभालू, हाथीशुण्डी इनप्रत्येकके स्वरसोंसे ३–३ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ४ पहरतकभूधरयन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर चित्रकके काढ़ेसे दोपहर मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली हींग, त्रिकटु, अदरखका रस और शुद्धकपूर इनकेसाथ देनेसे मृतावस्थापन्न सन्निपाती तत्क्षण उठकर बैठजाता है । भूखलगनेपर दूधभात खाने को देना ६७१

६७२ मृतोत्थापनरसः (द्वितीयः)

अभ्रं ताम्रं तथा लोहं प्रत्येकं संस्कृतं पलम् ।
सर्वमेतत्समाहृत्य गृह्णीयात्कुशलो भिषक् ॥ ३१०९ ॥
आज्ये पलद्वादशके दुग्धे तत्स्वरसद्वयके ।
क्षिप्त्वा तत्र क्षिपेच्चूर्णं सुपूतं घनतन्तुना ॥ ३११० ॥
विडङ्गत्रिफलावह्नित्रिकटूनां तथैव च ।
पिष्ट्वा पलोन्मितानेतान्यथासम्मिश्रतां नयेत् ॥३१११॥
ततः पिष्ट्वा शुभे भाण्डे स्थापयेत्तद्विचक्षणः ।
आत्मनः शोभने चाऽह्नि पूजयित्वा गुरुं रविम् ३११२
घृतेन मधुना मद्यैः पाययेन्माषकाऽधिकम् ।
अष्टौ माषान् क्रमेणैव वर्धयेत्तु समाहितः ॥ ३११३ ॥
अनुपानञ्च दुग्धेन नारिकेलोदकेन वा ।
जीर्णे देयञ्च शाल्यन्नं मुद्गमांसरसादयः ॥ ३११४ ॥
रसपानाऽविरुद्धानि द्रव्याण्यन्यानि योजयेत् ।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च आमवातं कटिग्रहम् ॥ ३११५ ॥
गुल्मशूलं शिरःशूलं यकृत्प्लीहादिकं तथा ।
अग्निमान्द्यं क्षयं कुष्ठं कासं श्वासं विचर्चिकाम् ॥
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रञ्च योगेनाऽनेन साधयेत् ॥३११६॥

र. र. स., शूलाऽधिकारे ।

भाषा—अभ्रक, ताम्र और लोहभस्म ४–४ तोले, गायका घी ४८ तोले, गायकादूध २८ तोले लेकर सबको लोहेकी कड़ाहीमें डालकर मधुर आंचसे यहातक पकावे कि दूध, घी तमाम जलजाँय । फिर इसको कपड़छानकर विडङ्ग, त्रिफला, चित्रक, त्रिकटु, ये प्रत्येक ४–४ तोले का बारीक चूर्णकर परिपक्व रसमें मिलाकर ३–४ पहर मर्दनकर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे रोगी और वैद्यके शुभनक्षत्रमें गुरु और सूर्यकी पूजाकर घृत, मधु अथवा मद्यकेसाथ १ माशेके लगभग देवे और प्रकृतिकी औचिती देखकर क्रमसे आठमाशे तक बढावे । पूर्वाऽनुपान अनुकूल न पड़ेतो दूध अथवा नारियलके जलकेसाथ दे । इसके पचजानेपर पुराने चावल, मूंगकायूष, मासरस और रसके अविरुद्ध द्रव्योंको दे । इसके सेवनसे हृदयशूल, पार्श्वशूल, आमवात, कटिग्रह, गुल्मशूल, शिरःशूल, यकृत् प्लीहादि उदररोग, मन्दाग्नि, क्षय, कुष्ठ, कास, श्वास, विचर्चिका, पथरी, मूत्रकृच्छ्र येसब नष्टहोतेहैं ॥ ६७२ ॥

६७३ मृतोत्थापनरसः (तृतीयः)

क्षारत्रयं शम्भुवीर्यं दरदं देवपुष्पकम् ।
पञ्चटङ्कमितानेतान् द्विटङ्कांश्चाऽप्यतः परम् ॥ ३११७॥
शिला शुद्धा प्रयोक्तव्या तालकं गन्धकं वचा ।
मस्तकी गरलं कुष्ठं मृतताम्राऽभ्रटङ्कणम् ॥ ३११८ ॥
लोहभस्म च सम्मेल्य कटुतैलेन मर्दयेत् ।
कूपिकां वालुकायन्त्रे विपचेद्यामयुग्मकम् ॥ ३११९ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
लशुनस्याऽथ तैलेन नेपालवीजतैलतः ॥ ३१२० ॥
चित्रकस्य कषायेण ह्यार्द्रकस्य जलेन वा ।
सन्निपातं निहन्त्याशु गुञ्जामात्रप्रमाणतः ॥ ३१२१ ॥
मृतः सोऽपि पुनर्जीवेद्रोगमृत्युभयापहः ।
मिष्टान्नं पायसं दद्यादुपचारैश्च शीतलैः ॥ ३१२२ ॥
राजोपचारैः कुर्वीत गात्रलेपंसुचन्दनैः ।
मृतोत्थापनको नाम रसोऽयं सर्वरोगजित् ॥ ३१२३ ॥

र. शं , वा , र क यो , सन्निपाते ।

भाषा—यवक्षार, सज्जी, सुहागा, शुद्धपारा, शिगरिफ और लौंग येसब ५–५ टङ्क, शुद्धमैनसिल, हरिताल और गन्धक, वच, मस्तगी, सर्पकाजहर, कुठ, ताम्र और अभ्रकभस्म, भुनासुहागा, लोहभस्म येसब २–२ टङ्क लेकर कज्जली बनाय ४ पहर कटुतैलसे मर्दनकर कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भर वालुकायन्त्रमें दो पहरतक पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर लशुन और जमालगोटे का तैल, चित्रककी जड़काकाढा, अदरखका स्वरस इनसे १–१ रोज़ मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानु-

पानकेसाथ देनेसे मृतकल्पभी सन्निपाती फिरसे जीवित और तमाम उपद्रवोंसे रहित होजाता है। भूखलगनेपर मिष्टान्न और खीर देवे। दाहहोनेपर शीतोपचारकरे, चन्दनलेपनादि तमाम राजोचित उपचारकरे ॥ ६७३ ॥

६७४ मृत्युञ्जयभैरवोरसः

रसवली मधुपद्रवषट्पुटै
रविपुटैरपि वायसितो विषम्।
तिथिपुटै र्वचया जयपालकं
शितिगलाद्रवकैश्च हिडिम्बिकाम् ॥ ३१२४॥
क्रमविवृद्धवतीः सुविभाव्य ताः
सकलतुल्यकणामपि षट्पुटैः।
विटरसस्य च निम्बुरसैः समं
युतिफलेन समः स च मृत्युजित् ॥ ३१२५॥
तत्ताम्बुना पिप्पलीभिः सर्वज्वरहरो मतः।
सर्वत्र पुटशब्दोऽत्र भावनार्थेऽभिधीयते ॥
कणातत्ताऽम्बुयोगेन सर्वरोगेषु शस्यते ॥ ३१२६ ॥

र का, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी कज्जलीको मधुकी ६ भावनाएं देवे। शुद्ध वछनागको मकोयकेरसकी १२ भावनाएं देवे। शुद्ध जमालगोटे को वचके स्वरस अथवा क्वाथकी १५ भावनाएं देवे। मैनसिलको नीलीके रसकी १५ भावनाएं दे और इन सबकीवरावर पीपलका चूर्णमिलाय खदिर, नीबू और विछुआके अङ्गस्वरससे ६–६ भावनाएं देकर १ से ३ रत्तीतककी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गरमजल अथवा पीपलकेसाथदेनेसे सवप्रकारके ज्वरोंको यह नष्टकरताहै। अञ्जनकरनेसे तमामविषोंको दूरकरताहै। तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६७४ ॥

६७५ मृत्युञ्जयरसः (प्रथमः)

विषं सूतकगन्धौ च पित्तं मत्स्यवराहयोः।
आजमायूरपित्ते च महिषस्याऽपि योजयेत् ॥३१२७॥
हरितालञ्च सव्योषं वानरीवीजसंयुतम्।
अपामार्गं चित्रमूलं जयपालञ्च कल्कयेत् ॥ ३१२८ ॥
एतत्सर्वं समांशेन अजामूत्रेण मर्दयेत्।
माषेण सदृशी कार्या वटिका सन्द्रिपग्वरैः ॥ ३१२९ ॥
महाज्वरे महाशीते महाशीतज्वरेऽपि च।
मज्जागते सन्निपाते विसूच्यां विषमज्वरे ॥ ३१३० ॥
असाध्ये मानवे युञ्ज्यादेकाहाज्ज्वरनाशिनी।
जलोदरेऽङ्गशैथिल्ये नासास्रावे च पीनसे ॥ ३१३१ ॥
अजीर्णे मूर्च्छनोत्थाने श्लेष्मोत्थानेऽतिदुर्जये।
शोथकामलपाण्ड्वादिसर्वरोगापहारकः ॥ ३१३२ ॥
मृत्युञ्जयो रसो नाम ज्ञानज्योतिःप्रकाशितः।
भृङ्गराजरसेनाऽयं रसराजः प्रदीयते ॥ ३१३३ ॥
निर्वातनिर्जनस्थाने वहुवस्त्रसमावृते।
प्रस्वेदः क्षणमात्रेण जायते चिह्नमीदृशम् ॥ ३१३४ ॥
मूर्च्छितः पतितो भूमौ दह्यमानः पुनः पुनः।
एवं चिह्नं समालोक्य वदेन्नैरुज्यमातुरे ॥ ३१३५ ॥
पथ्यं यद्याचते रोगी तद्दातव्यं प्रयत्नतः।
दध्योदनं शीतजलं दातव्यं तद्विचक्षणैः ॥ ३१३६ ॥
एवं महारसः श्रेष्ठः शम्भुना प्रेरितो भुवि।
कृपया सर्वभूतानां ज्ञानज्योतिःप्रकाशितः ॥ ३१३७ ॥

र. ज्ञा, भै र, र. सु., सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध वछनाग, पारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर मछली, सूअर, वकरा, मोर, भैंसा इनके पित्त, शुद्धहरिताल, त्रिकटु, केवाचकेवीज, अपामार्ग, चित्रककीजड़, शुद्धजमालगोटा, येसव समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय वकरीकेमूत्रमें २–३ रोज़ मर्दनकर उड़द वरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली भगरेके रसकेसाथदेनेसे भीषणज्वर, शीताङ्ग, अत्यन्त ठंढदेकर आनेवालाज्वर, मज्जाप्रभृति धातुगत तथा सन्निपातज्वर, हैज़ा, विषमज्वर जलोदर, अङ्गशैथिल्य, नासास्राव(जुकाम), पीनस, अजीर्ण, मूर्च्छाकाप्रारम्भ, अतिदुर्जयश्लेष्मकाउभार, शोथ, कामला, पाण्डु, इनसवको यह नष्टकरताहै। इसकाप्रयोग निर्जन और निर्वातस्थानमें करके वहुतसे वस्त्र ओढ़ानेसे थोड़े समयमें सर्वाङ्गमें पसीना शुरूहोजायगा और दाहकेमारे चिल्लाने लगेगा तव समझना कि यह रोगसे निर्मुक्तहोचुका। यदि दवाके देनेसे वैसाही मृतप्राय पड़ा रहेतो उसपर किसीभी दवाका प्रयोग न करना वह अवश्य यमालयको जायगा। होशमें आकर खानेको मागे तो दहीभात और ठंढा जल देना ॥ ६७५ ॥

६७६ मृत्युञ्जयरसः (द्वितीयः)

सूतं गन्धकटङ्कणं शुभविषं धुस्तूरवीजं कटुं,
नीत्वा भागमथोत्तरं द्विगुणितं चोन्मत्तमूलाम्बुना।
कुर्यान्माषवटीं सुखाऽतिसुखदां सर्वाज्ज्वरान्नाशये,-
देष श्रीशिवशासनात्प्रजनितः सूतश्च मृत्युञ्जयः ३१३८
नारिकेलसितायुक्तं वातपित्तज्वरञ्जयेत्।
मधुना श्लेष्मपित्तोत्थं ज्वरं निर्णाशयेद्ध्रुवम् ॥
सन्निपातज्वरं घोरं नाशयेदार्द्रनीरतः ॥ ३१३९ ॥

भै र, र सु., ध, सन्निपाते।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भा, सुहागा ३ भा वछनाग ४ भा, धतूरेकेवीज ५ भा, कुटकी ६ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर धतूरेकेरससे १–२ रोज मर्दनकर उड़द वरावर गोलियें वनाकररखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली नारियलकेजल और मिश्रीकेसाथदेनेसे वातपित्तज्वर नष्टहोवै। मधुकेसाथदेनेसे श्लेष्मपित्तज्वर, अदरखकेरससे साधारण और सन्निपातज्वर नष्टहोताहै ॥ ६७६ ॥

६७७ मृत्युञ्जयरसः (तृतीयः)

रसविषदितिपुत्रान्व्योषवार्भृत्फलोत्थै,-
र्मिहिरतुरगवारान्भावयेत्तुल्यमानान्।

दश च तदनु देया भावनाः सिन्दुवारै-,
स्त्रिरथ हृदभयाऽऽर्द्रै र्वर्हिमत्स्याऽऽजपित्तैः॥३१४०॥
गुञ्जामात्रः प्रयोक्तव्यः सद्यः सर्वज्वरापहः ।
सिद्धो मृत्युञ्जयो नाम रसोऽयं भुवि दुर्लभः ॥३१४१॥
र.शि ,ज्वरे ।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर त्रिकटुकेक्वाथकी १२,वंदालकेफलोंकेरसकी ७, संभालूके रसकी १०, अमलोनियां, हर्रे, अदरख, मोर, मछली और वकरेके पित्तसे ३-३ भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरोंको तत्क्षण नष्टकरताहै६७७

६७८ मृत्युञ्जयरसः (चतुर्थः)

मृतताम्राऽभ्रकं तालं हरवीर्यञ्च गन्धकम् ।
समुद्रफेनञ्च समं खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥ ३१४२ ॥
लाङ्गलीद्रावकै र्मर्द्यं कृत्वा गजपुटे पचेत् ।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य शिखिच्छागाऽहिमत्स्यजैः ३१४३
पित्तै र्भाव्यं चतुर्यामं देयं वल्लैकमानकम् ।
अनुपानविशेषेण सर्वथा सन्निपातनुत् ॥
रोगमृत्युभयं हन्ति मृत्युञ्जयरसो हितः ॥ ३१४४ ॥
वै.चि ,ज्वरे ।

भाषा—ताम्र और अभ्रकभस्म, रसमाणिक्य, शुद्ध पारा और गन्धक, समुद्रफेन येसव समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर करिहारीके अङ्गस्वरससे मर्दनकर गोला वनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मोर, वकरा, सर्प, मछली इनप्रत्येकके पित्तोंकी ४-४ पहर भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अनुपानविशेषसे सन्निपातको दूरकर रोग और मृत्युके भयको नष्टकरतीहै ॥ ६७८ ॥

६७९ मृत्युञ्जयरसः (पञ्चमः)

पारदभस्म शिलाजतुयुक्तं
तीक्ष्णजभस्म सुमेलय तावत् ।
दानवभस्म विभागयुतं वै
भस्मयुतं जलजातकपर्दात् ॥ ३१४५ ॥
सर्वमिदं परिमृद्य समांशं
नागलतादलतोययुतञ्च ।
चित्रकमूलजलैः परिमृद्य
माषसमानवटीः परिकुर्यात् ॥ ३१४६ ॥
आर्द्रकजेन रसेन वटीं वै
दापय नित्यमतन्द्रितबुद्धिः ।
दोषसमूहभवज्वरवेगं
यन्न याति परिपक्वकषायात् ॥
मृत्युविजेतरि नामरसेऽस्मिन्
व्याधिगणा न गदा गणनीयाः ॥ ३१४७ ॥
र क.यो. ज्वरे।

भाषा—पारदभस्म, शिलाजीत, फौलादभस्म, गन्धकभस्म (अभावमें ताम्रभस्म), शङ्ख और कौडीभस्म सव समभाग-लेकर एकपहर शुष्कमर्दनकर पान और चित्रककी जड़के स्वरसोंसे १-१ रोज़ मर्दनकर उड़दवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेमे जो कि क्वाथ वगैरहसे कावूमें न आताहो ऐसे त्रिदोषज्वरको यह तत्क्षण नष्टकरताहै और अनुपानविशेषसे तमामरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६७९ ॥

६८० मृत्युञ्जयरसः (सिद्धाद्यः) (षष्ठः)

गन्धाऽश्मा वत्सनाभो
रसवरसहितः सप्तधा भावनीयो,
व्योपाम्भोराशिवीजै-
स्त्रिदशसुरसजै र्भार्गिचित्राऽऽर्द्रजैश्च ।
त्रिर्वारानेव पित्तै-
रजतिमिशिखिजैश्छायया शोषयित्वा,
दत्तो गुञ्जाप्रमाणो मरणभयहरः
सिद्धमृत्युञ्जयोऽयम् ॥ ३१४८ ॥
र क यो ,ज्वरे।

भाषा—शुद्ध गन्धक, वछनाग और पारा समभागलेकर नीलवर्ण कज्जलीकर त्रिकटु, वंदालकेवीज, तुलसी, भारङ्गी चित्रक और अदरख, इन प्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे सात २ भावनाएं देकर वकरा, मछली और मोर अथवा कुक्कुट इनकेपित्तोंसे १-१ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलिया वनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको दूरकरताहै६८०

६८१ मृत्युञ्जयरसः (सप्तमः)

बलिः सूतो निम्बूरससमरसो भस्मसिकता-,
ह्वये यन्त्रे कृत्वा समरविकणाट्ङ्कणरजः ।
त्रिघस्रं लुङ्गाम्भोलवकदलितः क्षौद्रहविषा-,
ऽवलीढोवल्लैकं दरयति समस्तं गदगणम् ॥
जरां वर्षैकेण क्षपयति च पुष्टिं वितनुते,
तनौ तेजःस्फारं रमयति वधूनामपि शतम् ।
रसः श्रीमान्मृत्युञ्जय इति गिरीशेन गदितः,
प्रभावं को वाऽन्यः कथयितुमपारं प्रभवति ॥
वृ यो त ,र.कौ ,र चि ,र ल ,यो म.,आ प्र ,रसायने।

टि० अस्य रससिन्दूरत्वेपि प्रक्षेपदानात्स्वतन्त्रता स्वीकृताऽस्ति।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारेकीनीलवर्णकज्जलीकर नीवूके रससे यहातक मर्दनकरे कि सूखनेपर धूपमेंभी चमक न मालूमपड़े। फिर कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके भस्म अथवा वालुकायन्त्रमें रख अन्तर्धूमविदग्धक्रियासे रससिन्दूर वनावे (अन्तर्धूमविदग्धकी क्रिया चन्द्रोदयप्रथमकी टीकामें देखो)। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इसकीवरावर ताम्रभस्म, पीपल और भुनासुहागा मिलाकर तीनरोज़तक विजोरेकेरसमे मर्दनकर

सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती मधु और घीकेसाथ मिलाकर खानेसे समस्तरोगदूरहोकर शरीर पुष्टहोताहै शरीरमें तेजको वढाताहै, नपुसकताको दूरकरताहै एकवर्षतक लगातार प्रयोगकरनेसे वुढापेको दूरकरताहै ॥ ६८१ ॥

६८२ मृत्युञ्जयरसः (अष्टमः)

छिक्षारं त्र्यूषणं पञ्चलवणं शतपुष्पिकाम् ।
समभागमिदं सर्वं पटचूर्णं समाचरेत् ॥ ३१५१ ॥
तत्समौ रसगन्धौ च कृत्वा कज्जलिकां शुभाम् ।
सर्वमेकत्र सम्मेल्य मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥३१५२ ॥
अयं मृत्युञ्जयो नाम्ना रसः शीघ्रफलप्रदः ।
कथितो मय्यलार्येण सन्निपातहरः परः ॥ ३१५३ ॥
सन्निपाते प्रयोक्तव्यो रक्तिकापञ्चमात्रकः ।
चित्रकाऽऽर्द्रकसिन्धूत्थकटुभि र्वा समन्वितः॥३१५४॥
पीततोयं त्रिदोषार्तं निर्वाते शाययेत्ततः ।
पथ्यं दध्योदनं देयं याचमानाय नाऽन्यथा ॥
गुणो न जायते यस्य तस्य देयो रसः पुनः ॥३१५५॥
हन्याद्वातगदं तथा कफगदं मन्दानलत्वं ज्वरं,
शूलं सर्वमहामयाञ्जठरजां पीडां यकृत्पाण्डुताम् ।
शोफं गुल्मरुजं तथा ग्रहणिकां प्लीहामयं विड्ग्रहं,
वान्ति गुल्मकृतां सकासमभितःश्वासञ्चहिक्कामपि ॥
आदौ सर्वोदराणाञ्च देयमुक्तं विरेचनम् ।
गोमूत्रे वाऽथ गोक्षीरे योज्यमैरण्डतैलकम् ॥
कर्षमात्रं प्रयत्नेन शुद्धे देयो रसः पुनः ॥ ३१५७ ॥

र र.स , र सु , र.को , र प्र., र म मा , उदराऽधिकारे।

भाषा—सज्जी, यवक्षार, त्रिकटु, पाचोंनमक, सौंफ, सव-समभाग लेकर वारीक चूर्णकर सवसे दूनी शुद्धपारद और गन्धककी नीलवर्णकज्जली मिलाकर तीनरोज शुष्कमर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ५–५ रत्ती चित्रक, अदरख, सेंधानमक और कुटकी इनकेसाथ देकर थोडाजलपिलाकर निर्वात स्थानमें सुलादेना। पसीना आनेपर पथ्यमागे तो दहीभात देना अन्यथा नहीं। इसके देनेसे कुछ असर न मालूम हो तो एक घण्टे वाद दूसरी मात्रा देना। इसके प्रयोगसे त्रिदोपजनितव्याधि, वातरोग, कफरोग, मन्दाग्नि, ज्वर, शूल, समस्त महारोग, उदररोग, यकृत्, पाण्डु, शोथ, गुल्म, ग्रहणी, प्लीहा, मलावरोध, गुल्मजनितवान्ति, कास, श्वास, हिक्का इनसवको यह नष्टकरताहै। उदररोगोंमें देनेकेपहिले गोमूत्र अथवा गोदुग्धकेसाथ एरण्डतैलका विरेचन देना। कोष्ठशुद्धहोनेपर रसका प्रयोग करना ६८२

६८३ मृत्युञ्जयरसः (नवमः)

त्रिकटु त्रिफला सूतगन्धकौ टङ्कणं विषम् ।
यष्टी निशा कुबेराक्षी दन्तिबीजमथाऽपि च ॥३१५८॥
एतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
भृङ्गराजरसेनैव मर्दयेत्त्रिदिनं भिषक् ॥ ३१५९ ॥
गुटिका माषमात्रास्तु छायाशुष्काश्च कारयेत् ।
अनुपानविशेषेण सर्वरोगेषु योजयेत् ॥
मृत्युञ्जयो रसो नाम सर्वरोगविदारणः ॥ ३१६० ॥

यो र क्षये ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, शुद्ध पारा, गन्धक, टकण और वच्छनाग, मुलहठी, हल्दी, करंजकेवीज, शुद्धजमालगोटा येसव समभाग लेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भंगरेकेरससे ३ रोज मर्दनकर उड़दवरावर गोलिया वनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥६८३॥

६८४ मृत्युञ्जयरसः (दशमः)

वज्रभस्म रसभस्म मौक्तिकं
मर्दितञ्च खलु निम्बुवारिणा ।
तच्च कुक्कुटपुटेन पाचितं
चूर्णयेन्मधुयुतं हि वल्लकम् ॥
वर्षमात्रमपि सेवितं जये-
न्मृत्युमेव सकला रुजा अपि ॥ ३१६१ ॥

र प्र सु रसायने ।

भाषा—हीरा, पारा और मोतीभस्म समभाग लेकर नीवूकेरसमें १–२ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय चारतहकपड़ेमें लपेटकर २–३ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर कुक्कुटपुटमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती मधुकेसाथ एकवर्षतक सेवनकरनेसे वुढ़ापा और समस्तरोग दूरहोतेहै ॥ ६८४ ॥

६८५ मृत्युञ्जयरसः (एकादशः)

प्रवालमुक्ताफलवज्रताराः
सुवर्णताम्राऽभ्रकनागसाराः ।
यथोत्तरा वङ्गशिलाऽऽलगन्धाः
पलोन्मिताः सूतकसप्तभागाः ॥ ३१६२ ॥
चतुश्चतुः शङ्खकपर्दकानां
सुतिक्तजम्बीरविमर्दितानाम् ।
अफेनमाक्षीकविषत्रयाणां
पलं पलं दन्तिफलान्वितानाम ॥ ३१६३ ॥
समस्तमेकीकृतमत्र चूर्णं
दिनद्वयं चित्रकवारिपूर्णम् ।
विशुष्कमङ्गारककाकतुण्डयौ
स्नुगर्कधूर्ताऽमरनागशुण्ठ्यः ॥ ३१६४ ॥
किरातभल्लातनिकुम्भकुम्भाः
कुठेरवीराकरवीररम्भाः ।
वलात्रिवृन्नागवलाऽऽखुकर्णी
कटुत्रिकं शीतशिवाऽऽर्द्रकण्यः ॥ ३१६५ ॥
नताऽमृते काण्डरुहा सलज्जा
विषं वृषाक्षा भृगुजा सगुञ्जा ।

अमीभिरुर्वीभुजगार्तियुक्ते-
वराहगोधाशिखिमीनपित्तैः ॥ ३१६६ ॥
पृथक्पृथक्साधितमन्तरस्थं
दृढे पुटे ताम्रमये विपक्कम् ।
सुशीतमुद्धृत्य कृतं रजश्च
रसो हि मृत्युञ्जयनामधेयः ॥ ३१६७ ॥
प्रणम्य मृत्युञ्जयमीशमर्क-
मुपेन्द्रवज्राऽधिपकाशिराजान् ।
प्रपूज्य विप्रान्भिषजश्च सम्य-
ग्रसं प्रयुञ्जीत यवप्रमाणम् ॥ ३१६८ ॥
सितोपलारक्तियुगेन मिश्रं
नराय दद्यात्कृतमङ्गलाय ।
सितादिसर्वं मधुरं फलानि
सुदाडिमादीनि च मांसवर्गम् ॥ ३१६९ ॥
बलं विदित्वा सकलं विदध्या
न्नचाऽत्रकिञ्चित्परिहार्यमस्ति ।
विहाय कर्कारुककङ्कुकोल-
कपित्थकर्कोटककारवेल्लम् ॥ ३१७० ॥
करीरकोशातकिकाकमाची-
सविल्ववृन्ताकतिलादिकं स्यात् ।
विजित्य मृत्युं वहुदोपमुग्रं
रोगी पुनर्जीवति तत्प्रभावात् ॥
अशेषदोपान्तकरो रसोऽय-
मतस्तु मृत्युञ्जयनामधेयः ॥ ३१७१ ॥

टो., यो चि.. ज्वराधिकारे ।

भापा—प्रवाल १ तो, मोती २ तो, हीरा ३ तो, रजत ४ तो., सुवर्ण ५ तो, ताम्र ६ तो, अभ्रक ७ तो, नाग ८ तो, फोलाद ९ तो., (इनसवकीभस्में) वङ्गभस्म, शुद्ध-मैनसिल, हरिताल और गन्धक ये सव ४–४ तोला, शुद्धपारा ७ तो., शङ्ख और कौडीकीभस्म ४–४ तोले लेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय चिरायता, और जभीरीके रसोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर अफीम, सोनामाखी, शुद्ध वछनाग, साकुक और हारिद्रक, शुद्ध जमालगोटा १–१ पल लेकर सवका वारीकचूर्णकर पूर्वपिण्डमें मिलाकर दोरोज़ चित्रकके रससे मर्दनकर सुखाकर पीयावासा, काकनासिका, थूअर, आक, धतूरा, देवदारु, करिहारी, सोंठ, चिरायता, भिलावा, जमालगोटा, विधारा, जंगलीतुलसी, शतावर, कनेर, केला, वला, निसोत, नागवला, मूपाकर्णी, त्रिकटु, सफेदचन्दन, अदरख, गोकर्ण, तगर, गिलोय, दूव, लज्जालु, वछनाग, अडूसा, इन्द्रायण, भारङ्गी, सफेदगुञ्जा, कचरी, पान, कुठ, इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वार्थोसे १–१ भावना देकर सूअर, गोह, कुक्कुट अथवा मोर और मछलीके पित्तोसे १–१ भावना देकर गोलावनाय समस्तपिण्डकेवरावर तावेके सम्पुटमें भरके ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखनेपर वालुकायन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि-देकर पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे जवप्रमाण मात्रा महादेव, सूर्य, उपेन्द्र, इन्द्र, धन्वन्तरि इनसवकी पूजाकर ब्राह्मण और वैद्योंको सन्तुष्टकर दो तोले शक्करके साथ मिलाकर कृतमङ्गलरोगीको देना । शक्कर वगैरह मधुरपदार्थ, अनारवगैरहफल, मासवर्ग रोगीके वलानुसार देना । ककड़ी, आड़ू, कागनी, वेर, कैथ, ककोड़ा, करेला, करीर, तरोई, मकोय, वेल, वेंगन, तिल इनको छोड़कर सवचीज खाय । इसकेसेवनसे समस्तसन्निपात और असाध्यरोग नष्ट होकर मनुष्यफिरसे जी उठताहै । समस्तदोपोका नाश करनेसे इसका नाम मृत्युञ्जयहै ॥ ६८५ ॥

६८६ मृत्युञ्जयरसः (द्वादशः)

भागैकं मरिचञ्च लोहमपि सद्गन्धाश्म भागद्वयं,
लौहे न्यस्य गवां घृतेन घटिकामेकां पचेत्पावके ।
तालं वह्निलवं समुद्रलविकं म्लेच्छं शरांशं विषं,
सर्वांशं जयपालकञ्च कटुकीक्वाथात्तथा चित्रकात् ॥
भाव्यं राममितं तथाऽऽर्द्रकरसात्त्रिः सप्तकृत्वो दृढं,
सम्मर्द्याऽऽतपशोपितं शतदलैः पुष्पैः समभ्यर्चितम् ।
युञ्ज्याद्गुञ्जमितं ज्वरे तु सहसा सामे निरामे नवे,
जीर्णे वा विपमे समीरणभवे पित्तोत्थिते श्लेष्मजे ॥
द्वन्द्वोत्थे घनसन्निपातजनिते सोपद्रवेऽप्युल्वणे,
शैत्ये स्वेदयुतेऽपि मान्द्यजठराऽऽनाहेषु सर्वार्तिषु ।
शुष्के शोफयुतेऽपि पाण्डुगदके विष्टम्भजत्वादिषु,
व्योषाऽऽर्द्रेण ससैन्धवेन च सकृज्जीराऽम्बुना पित्तजे॥
पित्ते क्षौद्रसितादिना तदनु वा वार्यं भवेच्छीतलं,
सोष्णं वा तिलतैललेपिततनुः तापाऽनुरूपं पुनः ।
रेके जीवति नाऽन्यथाऽप्यतिरुचौ मुद्गाम्बु सच्छर्करं,
पथ्यं भक्तमरिष्टदुग्धदधियुक् द्राक्षेक्षुसद्दाडिमम् ॥
खर्जूरंससितञ्च लेपनमहो कर्पूरकस्तूरिका,
काश्मीरं शितनीपजं तदनु वा रम्भादलैः संस्तरः ।
पीनोद्वृत्तकुचस्थलीसुललनास्वालिङ्गनं चुम्बनं,
पथ्यं मृत्युजये रसे समुचितं सत्तालवृन्ताऽनिलः॥

र शं, र. प, र वो, ज्वराधिकारे ।

टि०—रसपद्धत्या जयपाल पद्मागो नियोजित । रसवोधचन्द्रोदये गन्धाऽश्मभागद्वयमित्यस्य स्थाने दुग्धाऽश्मभागद्वयमिति नियोजित तत्र दुग्धाश्मशब्देन श्वेतमल्लो ग्रहीतव्य, तन्नियोजनमपि साधु प्रतिभाति परन्तु तन्मात्रा मुद्गसमा कर्तव्या, मल्लयोजनेन तीक्ष्णवीर्यत्वात् । रसवोधचन्द्रोदयरसपद्धत्यो र्भाव्य राममितमित्यस्य स्थाने सर्वमिति पाठोऽस्ति, अन्यत्सर्वं समानम् ।

भापा—मरिच और लोहभस्म १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग, लेकर लोहेकेवर्तनमें डालकर सवकी वरावर गायका घी डालकर एकघड़ी पकावे । घीसूखनेपर उतारकर हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य ३ भा, ताम्रभस्म ४ भा, शुद्धवछनाग ५ भा शुद्धजमालगोटा सवकीवरावर मिलाकर कुटकी, चित्रक, इनके स्वरस अथवा क्वाथमें ३–३ भावनाए देकर अदरखकेरसकी

२१ भावनाए देकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर धूपमें सुखावे। फिर शीशीमें भर गुलाबकेफूलप्रभृतिसे पूजनकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ साम अथवा निराम, जीर्ण, विषम, वातज, पित्तज, श्लेष्मज, द्वन्द्वज, उपद्रवसहितघोरसन्निपातज, शीताग, वहुस्वेद, मन्दाग्नि, आनाह, सवजगहका दर्द, शुष्क तथा शोथयुक्तपाण्डु, विष्टम्भ इत्यादि-रोगोंको यह नष्टकरताहै। वातप्रधानरोगोंमें त्रिकटु, अदरख और सैन्धवकेसाथ देना। पित्तजरोगोंमें जीरेके पानीकेसाथ अथवा मधु और शक्करकेसाथ देकर ऊपरसे ठंढा अथवा कदुष्ण पानी पिलावे। तिलकेतैलकी मालिशकरे और दोषानुरूप उपचारकरे। रेचन होनेपर समझना कि जीवेगा अन्यथा नहीं। अत्यन्तभूख लगनेपर मूंगकापानी शक्कर डालकर देना। पथ्यमेंभात, दूध, दही, आसव, अरिष्ट, द्राक्ष, ईख, मीठाअनार, छुहारे और शक्कर देवे। कपूर, कस्तूरी, केशर, सफेदचन्दन, कदम्बकेपुष्पोंकीधूली, इनका लेपनकरे। केलेके पत्तोंकी शय्याकरे। अधिकगर्मी मालूमहोनेपर ताड़केपङ्खेकी हवा करे ६८६

६८७ मृत्युञ्जयरसः (त्रयोदशः)

गोलाहिङ्गुलतालकाऽमृत रसाः
स्वर्णोपलाद्रावजाः,
सर्वैस्तुल्यगुणो रविः समलवः
शर्वेण मर्द्यं दृढम्।
जम्वीरस्य रसेन वासरयुगं
वा तच्च वह्नयम्बुना,
सिद्धः स्यादिति चाऽऽर्द्रका-
म्बुसहितो वल्लैकमात्रो जयेत्॥ ३१७७॥
पाण्डुर्शोग्रहणीहलीमकमपि
श्लेष्माणमूर्द्धोद्भवम्,
वातान्देहसमाश्रयान्प्रविततां-
श्च्छ्वासाऽग्निमान्द्याऽरुचीः।
वातश्लेष्मभवं महाज्वरमपि
श्लेष्मोद्भवं वा ज्वरं,
विश्वाचीं प्रतितूनिकामपि रसो
मृत्युञ्जयो नाशयेत्॥ ३१७८॥

र पाण्डुरोगे।

भाषा—शुद्ध मैनसिल, शिगरिफ, हरिताल, वछनाग और पारा, सुवर्णभस्म, मिश्री, शिलाजीत सव समभाग, ताम्रभस्म सवकीवरावर लेकर सवका वारीकचूर्णकर धतूरा, जंभीरी और चित्रकमूलके स्वरससे २–२ रोज मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे पाण्डु, ववासीर, संग्रहणी, हलीमक, प्रतिश्याय, शिरोरोग, वातरोग, श्वास, मन्दाग्नि, अरुचि, वातश्लेष्मज्वर, श्लेष्मज्वर, विश्वाची, प्रतितूनी, इनसवको यह नष्टकरताहै॥ ६८७॥

६८८ मृत्युञ्जयरसः (चतुर्दशः)

ताप्यतालकनेपालवत्सनाभमनःशिलाः।
ताम्रगन्धकसूताश्च मुशलीरसमर्दिताः॥ ३१७९॥
मृत्युञ्जय इति ख्यातः कुक्कुटीपुटपाचितः।
वल्लद्वयं प्रयुञ्जीत यथेष्टं दधि भोजनम्॥
नवज्वरं सन्निपातं हन्यादेष महारसः॥ ३१८०॥

र र स, र सु, रसायन स, र को., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—स्वर्णमाक्षिक और हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य, शुद्ध जमालगोटा, वछनाग और मैनसिल, ताम्रभस्म, शुद्धगन्धक और पारा सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर मुशलीकेस्वरससे मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर कुक्कुटपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ६–६ रत्ती उचितानुपानके साथ देनेसे नवज्वर और सन्निपातको यह नष्टकरताहै। इसमें दहीके साथ यथेष्ट भोजन देना॥ ६८८॥

६८९ मृत्युञ्जयरसः (पञ्चदशः)

तालं ताम्ररजो रसश्च गगनं गन्धश्च नेपालकं,
दीनारप्रमितं तदर्द्धमुदितं टङ्कं शिला माक्षिकम्।
दीनारद्वितयं विषस्य शिखिनः पिष्ट्वा रसैः पाचितो,
यश्चिन्तामणिवज्ज्वरौघविजयी नाम्ना तु मृत्युञ्जयः

र र स, रसायनस, यो. चं, र, को, र. क ल, र कौ, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्धहरिताल, ताम्रभस्म, शुद्धपारा, अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक और जमालगोटा १–१ तोला, भुनासुहागा, शुद्ध मैनसिल और सोनामाखी ६–६ माशे, शुद्धवछनाग २ तोले लेकर सवका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर अपामार्ग और चित्रकके स्वरससे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर भूधरयन्त्रमें एकदिनकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरोंको दूरकरताहै॥ ६८९॥

६९० मृत्युञ्जयरसः (षोडशः)

एकांशं प्रक्षिपेत्स्वर्णं रौप्यं वज्रञ्च तत्समम्।
मुशल्या चाऽऽखुकर्ण्या च भाव्यं लुङ्गरसैस्त्र्यहम्॥
मोचाऽऽत्मगुप्तास्वरसैस्तदा मृत्युञ्जयो रसः।
सर्वरोगहरो ह्येष सेवितः पथ्यशीलिभिः॥ ३१८३॥
राजयक्ष्मादिरोगांश्च प्रमेहान्विंशतिन्तथा।
जीर्णज्वराननतीसारान् ग्रहणीं वहुमूत्रताम्॥ ३१८४॥
तेन तेनाऽनुपानेन नाशयेन्नाऽत्र संशयः।
किमत्र वहुनोक्तेन जरामृत्युहरस्तथा॥ ३१८५॥
वज्रदेहो भवेत्सेवी द्रावयेद्वनिताशतम्।
न रेतस. क्षयस्तस्य पण्ढोऽपि तरुणायते॥ ३१८६॥

ऊर्द्धलिङ्गः सदा तिष्ठेल्ललनासु प्रियो भवेत् ।
तप्तहाटकसंकाशः धर्मधीमेधाविभूषितः ॥ ३१८७ ॥
हयवेगो मयूराक्षो वाराहश्रुतिरेव स. ।
अपरः कामदेवो वा मानिनीमानमर्दनः ॥ ३१८८ ॥
शाल्यन्नं गोपयः खण्डं सिता जाङ्गलमामिषम ।
गोधूमजान्विकारांश्च माषान्नं कदलीफलम ॥३१८९॥
पनसञ्चाऽपि खर्जूरं वातामं नारिकेलकम् ।
मधुरञ्च भजेत्प्राज्ञो वर्षमात्रमतन्द्रितः ॥
मात्राऽस्य माषप्रमिता सदा सेव्या नरोत्तमैः ॥३१९०॥

र. सु., रसायनगं., र. मं. क , र. ग. ना , र प्र , प्रमेहाऽधिकारे

भाषा—सुवर्ण, रजत, हीरा इनकीभस्में समभाग लेकर मुसली, मूषाकर्णी, बिजोरा, मोचरस, केवाच इनके रसोंसे ३–३ दिन भावना देकर उड़दबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे राजयक्ष्म, सबप्रकारके प्रमेह, जीर्णज्वर, अतिसार, ग्रहणी, बहुमूत्रता, धातुक्षीणता, नपुंसकता, इनसबको यह दूरकरताहै । बुढ़ापेको हटाकर बुद्धि और कान्तिको बढ़ाताहै । स्त्रियोंके मानको भङ्ग करताहै । चावल, गायकादूध, शक्कर, जाङ्गलमांस, गेहूं और उड़दके पदार्थ, केला, कटहर, खजूर, बादाम, नारियल, समस्त मधुरपदार्थ इसमें सेवनकरनेयोग्यहै ॥ ६९० ॥

६९१ मृत्युञ्जयरसः (लघुः) (सप्तदशः)

कर्षं शम्भुद्रवस्यैकं कर्षं स्याद्दरदस्य च ।
जैपालस्य च शुद्धस्य त्रयमेतद्दिनद्वयम ॥ ३१९१ ॥
वृद्धदारकनीरेण खल्वे कृत्वा विमर्दयेत ।
अथोदुम्बरपर्णानां स्वरसेन विभावयेत् ॥ ३१९२ ॥
शृङ्गवेररसेनाऽमुं रविवारं विमर्दयेत ।
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा सितया सह भक्षयेत् ॥
मृत्युञ्जयरसो नाम नवज्वरहरः परः ॥ ३१९३ ॥

र प्र , र सु , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—पारदभस्म, शुद्ध शिंगरिफ और जमालगोटा समभाग लेकर एकपहर सुखामर्दनकर विधारा, गूलर, इनके रसोंसे २–२ दिन और अदरखके रससे १ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शक्करकेसाथ खानेसे नवज्वरका नाश होताहै ॥ ६९१ ॥

६९२ मृत्युञ्जयरसः (महान्) (अष्टादश.)

सूतकञ्च विषं नागं गन्धकञ्च चतुष्टयम् ।
समं सर्वं विघृष्टव्यं शिखिना तद्दिनद्वयम् ॥ ३१९४ ॥
तस्य कल्कस्य पादैकं मृन्मये दृढभाजने ।
क्षिप्त्वा हेम्नोऽपि कर्तव्या पत्रेण समपत्रिका ॥३१९५॥
दातव्या तस्य कल्कस्य ह्युपरिष्टाद् दृढीयसी ।
पुनः शरावके दत्त्वा कुर्यात्सन्धिनिरोधनम् ॥ ३१९६ ॥
विशोष्य वालुकां दद्यादुपरिष्टात्समन्ततः ।
याममेकमथो चूल्यां पाचयेन्मन्दवह्निना ॥ ३१९७ ॥
अनेनैव विधानेन पत्रिकां मारयेत्क्रमात् ।
समाप्यैवञ्च सकलं हेमचूर्णं रसस्य च ॥ ३१९८ ॥
विषं भागकमेकञ्च चतुर्भागञ्च मौक्तिकम् ।
गन्धकं भागमेकं स्यात्पश्चात्सर्वं तदौषधम् ॥३१९९॥
मर्दयेदेकतः कृत्वा चित्रकस्य रसेन च ।
पुटित्वा किञ्चिदेवैतत्पिष्टरूपं तदुद्धरेत् ॥ ३२०० ॥
क्षये कासेऽम्लपित्ते च श्वासे कण्ड्वामयेषु च ।
शालमलीद्रवसंमिश्रं पुष्टिहेतोः प्रयोजयेत् ॥ ३२०१ ॥
मरिचैन समं देयो कफरोगेषु पारदः ।
शूले च परिणामे च घृताक्तमधुमिश्रितः ॥ ३२०२ ॥
गुडूचीजीरकैर्युक्तः स्वरभङ्गे प्रदापयेत् ।
पित्ताऽधिकेषु रोगेषु शालमलीद्रवमिश्रितः॥३२०३॥
अन्यान् सर्वानयं रोगान्रोगयोग्याऽनुपानतः ।
नाशयत्यचिरेणाऽयं दुस्तरानतिवेगतः ॥ ३२०४ ॥
तैलं राजीवविल्वञ्च वर्जयेदम्लसेवनम् ।
अयं मृत्युञ्जयो नाम रसो रोगारिरुत्तमः ॥ ३२०५ ॥
वारणप्रमितं कुर्याच्छरीरमजराऽमरम् ।
न शक्यन्ते गुणा वक्तुं रसस्याऽस्य नरै ध्रुवम्॥३२०६॥

रसचि , र सु , र प्र , सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग और गन्धक, नागभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर चित्रककेरससे दोरोज़-मर्दनकर चार विभाग करदे । कल्कसे चतुर्थांश सुवर्णलेकर पत्तेके-सदृश बारीकपत्र बनाकर उसपर एकभाग कल्कको लपेटकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीदेकर सुखाय वालुका-यन्त्रमें १ पहर पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इसीतरह से लेपनकर पकावे । ऐसे चारपुटोंमें कल्कको समाप्तकरनेपर सुवर्णकीभस्म होजायगी । परन्तु क्रमसे अग्निको १–१ पहर बढावे, चौथीआग ४ पहरकी देनी चाहिये नहींतो कचा रहेगा । यह सुवर्णभस्म, पारदभस्म, शुद्धवछनाग और गन्धक १–१ भाग, मोतीकीपिष्टी अथवा भस्म ४ भाग लेकर सबको एकदिन चित्रककेरससे इकट्ठे घोटकर गोलाबनाय पानोंमें अच्छीतरह लपेटकर कच्चेसूतसे बाधदे । फिर एकवालिस्तका खड्डा खोद बीचमें दूसरा खड्डा गोलाआनेलायक खोदकर ऊपर ४ अङ्गुल वालूसे ढकदे । बाकीके खड्डेमें जङ्गलीकण्डोंके टुकड़ेभरके आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पानसहित घोटकर १ से २ रत्ती-तककीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचि-तानुपानकेसाथ क्षय, कास, अम्लपित्त, श्वास और खुजलीमें दे । पुष्टिकेलिये मोचरसकेसाथ दे । कफरोगोंमें ७–१४ अथवा २९ मरिचोंकेसाथ, शूल और परिणामशूलमें घी और मधुके-साथदे । स्वरभङ्गमें गिलोय और जीरेकेसाथ, पित्ताधिकरोगोंमें मोचरसकेसाथ दे । इसप्रकार अत्यन्त दुस्तररोगोंको यह योग्या-नुपानसे देनेसे नष्टकरताहै । तैल, कमल, वेल, अम्लपदार्थोंको छोड़दे । इसके हमेशा सेवनकरनेसे समस्तरोगोंसे मुक्तहोकर दीर्घायुको प्राप्तहोताहै ॥ ६९२ ॥

६९३ मृत्युञ्जयरसः (ऊनविंशः)

गायत्रिकामन्त्रितमामलक्या
रसेन लीढं कनकस्य चूर्णम्।
धात्रीरजस्तुल्यमिदं नराणां
रिष्टं समुत्पन्नमपाकरोति ॥ ३२०७ ॥

लो प (स) अरिष्टनाशे।

टि०—यद्यप्यस्मिन्योगे रिष्ट समुत्पन्नमपाकरोतीति सामान्यतया सरलरीतिरुद्दिष्टा परन्तु नैतावता उत्पन्नरिष्टस्य निरसन बुद्ध्यारूढ भवति। अनयैव सरलरीत्या चेदरिष्ट नाशमायास्यत् तर्हि इदानीमपि योगकारेण माकमस्मदादीनाम् सम्भाषणादिकमपि समुदयिष्यत। तेन रोचकता-फलमात्रमिद वाक्य प्रतिभाति अत पूर्वकृतगायत्रीपुरश्चरण सुश्रुतीयमे-वायुष्कामीयरसायनोपदेशविधानेन विल्वकल्पेन तुल्यमस्य पुरश्चरण कर्तव्य तदारिष्टोपशान्ति सम्भावनीया। यथा "मन्त्रौषधसमायुक्त मम्वत्सरफलप्रदम्। विल्वस्य चूर्ण पुष्ये तु हुत वारान् सहस्रश। श्रीसूक्तेन नर कल्ये ससुवर्ण दिने दिने। ससर्पिर्मधुयुत लिह्यादलक्ष्मीनाशन परम्।" इत्यादीत्यादि सुश्रुत चि, २८।८।१० पुरश्चरणमन्तराप्यनेन योगेन शुभावाप्त्यवश्य भवितव्येति मत्वा प्रयोगकरणे धात्रीरजसोऽर्ध कर्ष कर्ष वा यथाबल गृहीत्वा सुवर्णभस्मनो रक्तिकैक निक्षिप्य घृत-मधुभ्या ममालोड्य लीढ्वा यथाशक्ति यथोचिति वा धात्रीरसानुपान कर्तव्यम् शनै शनै कनकभस्मप्रमाण रक्तिचतुर्थभागादारभ्य रक्ति-त्रितयपर्यन्त वर्द्धन कर्तव्यमिति कल्परहस्य मधुघृतसमावापस्तु यथोचिति कर्तव्य इति दिक्।

भाषा—परिपक्व और छायाशुष्क किये हुए आवलोंके चूर्णकी वरावर आवलोंके रससे निरुत्थभस्म किया हुआ सुवर्ण, ये दोनों समभाग मिलाकर रखछोड़े इसमेंसे दो रत्तीसे चार रत्तीतक-कीमात्रा लेकर परिपक्वआवलोंका आधेतोले से एकतोलेतक रस मिलाके "अजपा" गायत्री अथवा ब्रह्मगायत्रीसे एक हजार अभिमन्त्रितकर चाटनेसे उत्पन्नारिष्टभी दीर्घायुको प्राप्त होताहै।

६९४ मृत्युञ्जय लोहम् (प्रथमम्)

त्रिफला लोहजं चूर्णं रक्तचित्रकजा जटा।
चूतकोशाम्रजं बीजं पालाशं क्षुद्रदुग्धिका ॥ ३२०८ ॥
एतदष्टकमादाय पृथक् पञ्चपलोन्मितम्।
मिश्रयित्वा पलाशस्य सर्वाङ्गरसभावितम् ॥ ३२०९ ॥
महाकालजबीजानां भागत्रयमथाऽऽहरेत्।
भागं कृष्णतिलस्यैकं मिश्रयित्वा निपीडयेत् ॥३२१०॥
तेन तैलेन तच्चूर्णं पिण्डीकार्यं विमर्दनात्।
स्निग्धे भाण्डे तदाधाय शरावेण निरोधयेत्॥३२११॥
लिप्त्वा तदा सुधान्यस्य पलालौघे निधापयेत्।
मासमात्रात्समाहृत्य पूजयित्वा शिवां शिवम् ३२१२
तोलैकं भक्षयेत्प्रातस्तोलैकं भोजनोपरि।
एवं मासत्रयाऽभ्यासात्पलितं हन्त्यसंशयम् ॥
वर्षैकेण जरां हत्वा मृत्युं जयति मानवः ॥ ३२१३ ॥

यो म, रसायनाऽधिकारे।

भाषा—त्रिफला, लोहेकावारीकरेता, लालचित्रककीजड़, आम और जङ्गलीआमकी गुठली, पलाशपापड़ा, छोटीदूधी ५–५ पल लेकर वारीकचूर्णकर पलाशके पञ्चाङ्गके रससे ३–४ भावनाएं देकर वरावरकेकालेतिल और तिगुना महर (महावारुणी) केवीजोंका तैल डालकर एकदिनमर्दनकर चिकनेवर्तनमें रखकर शरावसे ढक कपड़मिट्टीकर जव या गेहूंकी राशि अथवा पयारमें दवादे। एक महीनेकेवाद निकालकर रखछोड़े। फिर शिव और गौरीका पूजनकर अच्छे मुहूर्तमें इसमेंसे १–१ तोला सुवह और भोजनके ऊपर खावे, भोजनमें दूध, भातकेसिवाय कुछ न ले। इसतरह ३ महीनेतककरनेसे वाल कालेहोजातेहैं। एकवर्षतक प्रयोगकरनेसे वुढ़ापेको दूरकर मनुष्य मृत्युको जीतता है। टि०—लोहेकेरेतेमें त्रिफलाकाचूर्ण और पलाशके पञ्चाङ्गकास्वरस डालकर यहातक मर्दनकरे कि लोहेकीभस्म होजाय इसमें त्रिफलाकाचूर्ण थोड़ा २ देना चाहिये। इसतरह लोहभस्मतैयारहोनेपर सवचीजें मिलावे ॥ ६९४ ॥

६९५ मृत्युञ्जयलोहम् (द्वितीयम्)

शुद्धं सूतं समं गन्धं जारिताऽभ्रं तथा समम्।
गन्धकाद्द्विगुणं लौहं मृतताम्रं चतुर्गुणम् ॥ ३२१४ ॥
द्विक्षारं टङ्कणविडं वराटमथ शङ्खकम्।
चित्रकं कुनटी तालं कटुकीं रामठं तथा ॥ ३२१५ ॥
रोहीतकं त्रिवृच्चिञ्चे विशाला धवलाङ्कठम्।
अपामार्गस्ताललिण्डमम्लिका च निशायुगम् ३२१६
कानकं तुत्थकञ्चैव यकृन्मर्दं रसाञ्जनम्।
एतानि क्षितिभागानि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥३२१७॥
आर्द्रकस्वरसेनैव गुडूच्याः स्वरसेन च।
मधुनः कुडवाद्धार्यं वटिका माषमात्रतः ॥ ३२१८ ॥
अनुपानं प्रदातव्यं वुद्ध्वा दोषानुसारतः।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय सर्वरोगकुलान्तकम् ॥ ३२१९ ॥
प्लीहानं ज्वरमुग्रञ्च कासञ्च विषमज्वरम्।
चिरजं कुलजञ्चैव श्लीपदं हन्ति दारुणम् ॥ ३२२० ॥
रोगानीकविनाशाय धन्वन्तरिकृतं पुरा।
मृत्युञ्जयमिदं लौहं सिद्धिदं शुभदं नृणाम् ॥ ३२२१ ॥

र सं, र सु, भै र, ध, र चि, उदराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रकभस्म १–१ भाग, लोहभस्म २ भा, ताम्रभस्म ४ भा, यवक्षार, सज्जीखार, भुनासुहागा, नवसादर, पीलीकौड़ी तथा शङ्खभस्म, चित्रक, शुद्ध मैनसिल और हरिताल, कुटकी, भुनाहींग, मारवाडी रोहिड़ेकीछाल, निसोत, इमली, इन्द्रायण, सफेद अङ्कोलकीजड़, अपामार्ग, ताड़वाली, अमलोनिया, हल्दी, दारुहल्दी, धतूरेके-वीज, शुद्धतूतिया, शरपुङ्ख, रसौत येसव १–१ भाग लेकर सवका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर अदरख और गिलोयके स्वरससे १–१ रोज़ मर्दनकर १६ तोले मधुमें घोटकर १–१ माशेकीगोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ प्रात काल देनेसे प्लीहा, उग्रज्वर, भीषणकास, विषमज्वर, वहुतदिनका तथा वंशपरम्परागत फीलपाव, इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ६९५ ॥

६९६ मृत्युद्वारीरसः

अयः पत्रं तिलोत्सेधं प्रतप्तं चतुरङ्गुलम् ।
एकविंशतिपर्यायं धात्र्या निर्वापयेद्रसे ॥ ३२२२ ॥
ततः शतपलं स्थाल्यां क्षिप्त्वा धात्रीरसोत्तमम् ।
कृत्वा ततः सुपिहितं भस्मराशौ विनिःक्षिपेत् ३२२३
मासिमासि समुद्धृत्य लोहदण्डेन घट्टयेत् ।
तस्मिन्विशुष्यति प्राग्वद्रसं धात्र्या विनिःक्षिपेत् ३२२४
द्रवीभवति तत्सर्वं वत्सरात्पत्रमायसम् ।
ततः समन्ततोऽङ्गुष्ठपर्वमात्रमुखेन तु ॥ ३२२५ ॥
आयसेन स्रुवेणाऽयःपात्रे कल्कीकृतं ततः ।
भुक्तं पृथक् समांशेन सेवेत मधुसर्पिषा ॥ ३२२६ ॥
जीर्णे साऽऽज्यं रसक्षीरयूषान्यतममिश्रितम् ।
षष्टिकौदनमश्नीयादुपयुञ्ज्यीत वत्सरम् ॥ ३२२७ ॥
वर्षमन्यच्च शिष्टाशी यन्त्रितात्मा कुटीं वसेत् ॥
अगम्यो रुजरामृत्युशस्त्राऽग्निविषतोऽरिभिः ।
जीवेद्वर्षसहस्रं वै सर्वभावेष्वनीन्द्रियः ॥ ३२२८ ॥

र. र. स., रसायने ।

भाषा—तिलभरमोटे और ८-८ अंगुल चौड़े लोहेके पत्र बनवाकर गरमकरके पकेहुएआवलोंके स्वरसमें २१ बार बुझावे । इसप्रकार १०० पल लोहेको बुझाय किसी मज़बूत मिट्टीकी हंडीमें भरदे । हंडीमें उतनाही आवलोंकारस भरके ढक्कन लगाय अच्छीतरह कपड़मिट्टीदेकर मनुष्यकेबराबर ऊंची भस्मकी ढेरीमें दबादे । १-१ महीनेबेबाद निकालकर लोहेके डण्डेसे मर्दनकर फिर रसभरकर दबादे । ऐसे १ वर्षबाद निकालकर अंगूठेके प्रथमपर्वके बराबरमोटे लोहेके दण्ड अथवा कड़छीसे घोटकर कल्क बनाले । इसमेंसे १-१ तोला कल्क लेकर अग्निपर रख पकाकर सुखाले, इसमें मधु और घी मिलाकर सेवनकरे । पाचन होनेपर घीकेसाथ मासरस, दूध और मृगकेयूषकेसाथ साठीचावल खाय और एकवर्षतक उत्तम अन्नका सेवनकरे । इसका सेवन कुटीप्रवेशविधिसे जितेन्द्रियहोकर करनेसे व्याधि, बुढ़ापा, मृत्यु, शस्त्र, अग्नि, विष और शत्रुओंसे अगम्य होकर एकहजारवर्षकी आयुको प्राप्तहोताहै ॥ ६९६ ॥

६९७ मृद्दारभस्मयोगः

खण्डं मृद्दारशृङ्गस्य निक्षिपेन्निम्बुजे त्र्यहम् ।
शरावसम्पुटे न्यस्य पुटं दद्यात्प्रयत्नतः ॥ ३२२९ ॥
जायते शोभनं भस्म भावयेत्त्रिफलाऽम्बुभिः ।
कुमारीमूत्रजम्बीरैस्त्र्येकैकं त्रिःक्रमेण वै ॥ ३२३० ॥
सिद्धं भस्म ततो जातं योज्यं मेहोपदंशयोः ।
हरिद्रामधुसंयुक्तं मेहे गुञ्जामितं लिहेत् ॥ ३२३१ ॥
देवपुष्पमरीचाभ्यामुपदंशेऽथवा घृतैः ।
अथवा शर्करामिश्रं सेवयेद्रोगमुक्तये ॥ ३२३२ ॥

रसायन स, मेहाधिकारे ।

भाषा—मुर्दासङ्गके टुकड़ेकर नीबूकेरसमें ३ रोज़ भिगोकर शरावसम्पुटमें बन्दकर १० सेर कण्डोंकी आच देनेसे उत्तमभस्म होजातीहै । इसको त्रिफला, घीकुंआर, गोमूत्र और जंभीरीके स्वरसोंकी ३, १, १, ३ इसक्रमसे भावनाएं देकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्तीकी मात्रा हल्दी और मधुकेसाथ प्रमेहमेंदे । लौंग और मरिचकेचूर्ण अथवा घृत अथवाशक्करकेसाथ उपदंशमें देवे तो इनरोगोंसे निवृत्त होजाताहै ॥ ६९७ ॥

६९८ मृद्विरेचनम्

इन्दुलोचननेत्राणि शिखिभागश्च योजयेत् ।
त्रुटिगन्धकमृद्दारशतपुष्पाविचूर्णितम् ॥ ३२३३ ॥
माषद्वयं गवां दुग्धैः सेवयेद्दिनपञ्चकम् ।
रेचयेन्मृत्तिकां शुद्धां शिशूनां हितमौषधम् ॥ ३२३४ ॥

र. च, पाण्डुरोगे ।

भाषा—इलायची १ भाग, गन्धक २ भा., मुर्दासङ्ग २भा., सौंफ ३ भा., लेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ माशे गोदुग्धकेसाथ देनेसे ५ दिनमें बच्चोंकी खाईहुईमिट्टी दस्तमें निकलजातीहै ॥ ६९८ ॥

६९९ मेघडम्बररसः

तण्डुलीयद्रवैः पिष्टं सूततुल्यञ्च गन्धकम् ।
वज्रमूषागतं कृत्वा भूधरे भस्मतां नयेत् ॥ ३२३५ ॥
दशमूलकषायेण भावयेत्प्रहरद्वयम् ।
गुञ्जाद्वयं जयत्याशु हिक्काश्वासव्रणज्वरान् ॥ ३२३६ ॥
अनुपानेन दातव्यो रसोऽयं मेघडम्बरः ।
अभया पिप्पली भार्ङ्गी पुष्करं कर्कटी शटी ॥
शर्कराऽष्टगुणे योज्यमनुपानं सुखावहम् ॥ ३२३७ ॥

र र., र. को, नि र, रसायनसं, र सु, र को., वै चि., र चि., र च, भै सा., र सि, र (सा.) र म., र. का, यो म., व. रा., र क ल, टो, हिक्काश्वासयो । वसवराजीये अनुपाने अभयास्थाने नागर दृश्यते ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर काटेवालीचौलाईके रससे २-३ दिनमर्दनकर गोलीबनाय मुर्गी अथवा बतख़के अण्डेमें छोटीअङ्गुली जानेलायक गोलछिद्रकर अन्दरका पदार्थ निकालकर गोलीकोरख चौलाईका रसभरके दूसरे अण्डेकी खोल चढ़ाय सफेदअभ्रक और चूनेकोपानीमें बारीक पीस आधा अङ्गुलमोटा लेपचढ़ादे । सूखनेपर पुरानीरुई और मुलतानीमिट्टीको बारीककूटकर एकखोल और चढ़ादे । सूखजानेपर भूधरयन्त्रमें रख कुक्कुटपुटकी अग्निदे । ऐसे ४-५ अग्नियें देकर पारेकी भस्म बनाले । अथवा वज्रमूषामें गोलेको रख रसभरकर सम्पुटप्रभृति कियाकर आचदेकर भस्म बनावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर दशमूलके काढेसे २ पहरतक घोटकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली हर्रे, पीपल, भारङ्गी, पोहकरमूल, काकड़ासींगी, और कचूर समभाग लेकर अठगुनी शक्करमिलाकर इसकेसाथ देनेसे हिचकी, श्वास, ज्वर, और व्रणमात्रको यह दूरकरताहै ॥ ६९९ ॥

७०० मेघनादरसः (प्रथमः)

सूतांशकौ साररवी समांश-
गन्धो विपक्वः स्वकषायपिष्टः।
रसः क्रमान्मापमितश्चलादि-
ज्वरेषु नाम्ना किल मेघनादः॥ ३२३८॥

र र स, सु प्र. ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा, फोलाद और ताम्र समभागलेकर सवकी-वरावर शुद्धगन्धक मिलाकर वारीकचूर्णकर जिसज्वरकेलिये तैयारकरनाहो उसके काढ़ेमें घोटकर भस्महोनेतक पुटें दे। अथवा ज्वरप्रवर्गसे इनकीभस्म वनारक्खे और तत्तद्दोषघ्नकाथकेसाथ उड़दवरावर देनेसे यह वातादि समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै ७००

७०१ मेघनादरसः (द्वितीयः)

आरं कांस्यं मृतं ताम्रं त्रिभिस्तुल्यश्च गन्धकम्।
रसेन मेघनादस्य पिष्ट्वा वद्ध्वा पुटे पचेत्॥ ३२३९॥
भक्षयेत्पर्णखण्डेन विषमज्वरनाशनम्।
अस्य मात्रा द्विगुञ्जा स्यात्पथ्यं दुग्धौदनं हितम्॥
पञ्चामृतपलञ्चैकमनुपानं प्रयोजयेत्॥ ३२४०॥

र. सं, र चि, भै र, नि. र., चि र भ., रसायनसं., र सु, व रा, यो स, र क, र. का, ज्वराऽधिकारे।

टि०—र का आरस्थाने ताल दृश्यते। द्वितीयस्थाने "आर कांस्य मृत ताम्रं त्रिभिस्तुल्य च गन्धकमित्यस्य स्थाने अभ्रक सूतक ताल त्रिभिस्तुल्यन्तु गन्धकमिति दृश्यते।

भाषा—पीतल, कासा और तावा इनकीभस्में समभाग लेकर सवकी वरावर शुद्धगन्धक डालकर कटेवालीचौलाईके रसमें पीस टिकिया वनाय सुखाकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्ग-शीतल होनेपर फिर इसीतरहसे करे। ऐसे भस्म होनेतक क्रिया-कर सिद्धहोनेपर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती पके पानमें रखकर देनेसे विषमज्वरको यह नष्टकरताहै। पथ्यमें दूधभात देकर ४ तोले पञ्चामृत पिलावे॥ ७०१॥

७०२ मेघनादरसः (तृतीयः)

रसं नूनं प्रवक्ष्यामि सन्निपातनिषूदनम्।
मण्डूरस्य पलं ग्राह्यं भाव्यं जम्वीरवारिणा॥३२४१॥
दिनत्रयात्परं दद्यात्पुटं कुञ्जरसञ्ज्ञकम्।
टङ्कणं भस्मनस्तस्य योजयेत्पादसम्मितम्॥३२४२॥
मधुना पेषयित्वा तु तदर्द्धं गन्धकं क्षिपेत्।
तदर्द्धं शङ्खभस्माऽपि तदर्धं पारदन्तथा॥ ३२४३॥
गन्धकं भस्मना युक्तं पेषयेन्निम्ववारिणा।
रसेन मेलयित्वा तु खल्वयेत्कुक्कुटीद्रवे॥ ३२४४॥
तत्कल्कं गोलयित्वा तु पुटं दद्यात्प्रयत्नतः।
ततो मात्स्येन पित्तेन श्लक्ष्णखल्वे विमर्दयेत्॥३२४५॥
आर्द्रकस्य रसेनैव रसं दद्यात्त्रिवल्लकम्।
रसप्रभावव्याप्त्यर्थं निषेको वारिणा हितः॥ ३२४६॥
पथ्यमत्र प्रदातव्यं दधिमिश्रं भिषग्वरः।
रसोपद्रवशान्त्यर्थं दाडिमीरस इष्यते॥ ३२४७॥
नवनीतेन सन्तापे हितमङ्गविमर्दनम्।
मेघनाद इति ख्यातः सन्निपातं जयेद्रसः॥ ३२४८॥

सु. प्र., सन्निपाते।

भाषा—एकपल शुद्ध मण्डूर लेकर जंभीरीकेरससे ३ रोज मर्दनकर टिकड़ी वनाय गजपुटकी आंचदे। फिर भुनासुहागा १ कर्ष मिलाकर मधुमें घोटकर शुद्धगन्धक २॥ कर्ष, शङ्खभस्म १। कर्ष और शुद्धपारा १० माशे लेकर कज्जलीकर सवदवाको एकजगहमिलाकर नीम और सेंमलके अन्तस्वरससे १–१ रोज मर्दनकर गोला वनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर २–४ कपड़मिट्टी देकर सुखनेपर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर मछलीके पित्तेसे एकभावनादेकर ९–९ रत्तीकी गोलिया वनाकर रख-छोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथ देकर सिरपर पानीकी धारादे। अत्यन्तभूखलगनेपर दहीभात दे। अधिकगर्मी मालूमहोनेपर अनारका रस देकर मक्खनकी मालिशकरे॥७०२॥

७०३ मेघनादरसः (चतुर्थः)

षट्पलं मृतराजश्च तदर्द्धं गन्धकं मतम्।
विश्वं गन्धसमं योज्यं शिलातालकसीसकम्॥३२४९॥
दरदं वत्सनाभश्च पर्पटं धूर्तवीजकम्।
प्रत्येकाऽर्द्धपलं दद्याच्छुष्के खल्वे भिषग्वरः॥३२५०॥
सम्मर्द्य कज्जलीं कृत्वा कन्यानीरेण भावयेत्।
काकमाचीशिफातोये हस्तिशुण्डीजले ततः॥३२५१॥
हंसपादीरसे सम्यगष्टधा परिभावयेत्।
ततः काचघटे देयं घटी सैकतयन्त्रगाम्॥ ३२५२॥
कृत्वा द्वादश यामान्वै ज्वालयेत्तदधोऽनलम्।
स्वाङ्गशीतं समुत्तार्य खल्वे कृत्वा विचूर्णयेत्॥३२५३॥
पुनः शिलादिकं योज्यं भावयेत्कन्यकादिभिः।
सिकताख्ये पुनर्देयो वह्निर्यामार्कमानतः॥
स्वाङ्गशीतं समुत्तार्य मेघनादो रसोत्तमः॥ ३२५४॥
करोति वह्निं वलपुष्टिकान्ति
हन्याच्च वातं कफपित्तमुग्रम्।
श्वासं सकासं परिणामशूल-
मेवाग्निहन्यात्किल मेघनादः॥ ३२५५॥

टो., प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा ६ पल, शुद्धगन्धक और सोंठ ३–३ पल, शुद्धमैनसिल, हरिताल, हीराकसीस, शिंगरिफ और वछ-नाग, पित्तपापड़ा, शुद्धधतूरेकेवीज ये सव २–२ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ पहर घोटकर घीकुंआर, मकोय, हस्तिशुण्डी, और हंसराजके स्वरसोंसे ८–८ भावनाए देकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख १२ पहरकी अग्नि दे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मैनसिल वगैरह उतनेहीप्रमाणमें डालकर घीकुंआर वगैरहकी भावना देकर १२ पहरकी अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतकमात्रा वलावल देखकर देनेसे उत्कटकफपित्तरोग,

श्वास, कास, परिणामशूल इनको नष्टकर अग्निको प्रदीप्त करताहै और शरीरको पुष्टवनाताहै ॥ ७०३ ॥

७०४ मेघनादरसः (पञ्चमः)

कृष्णोन्मत्तकवीजकल्कसलिले चक्रीविषं खण्डशः,
क्लिन्नं सप्तदिनै विशोष्य किरणैरादित्यजैश्चूर्णितम् ।
पश्चाद्धिङ्गुलमिश्रितं घनरवः स्यात्सन्निपातान्तकः,
कृष्णार्क्षीरयवेन तूलितयुतः शैत्यादिनाशक्षमः ३२५६

र. शि., सन्निपाते ।

भाषा—वछनागके चनेप्रमाण टुकड़े वनाकर कालेधतूरेके वीजोंके स्वरसमें ७ दिनतक भिगोकर धूपमें सुखादे । अच्छीतरह सूखनेपर वछनागके वरावर शिगरिफ मिलाय घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती पीपल और इन्द्रजवमिलाकर देनेसे शीताङ्गप्रभृति समस्तसन्निपातोंको यह नष्टकरताहै ॥७०४॥

७०५ मेघनादरसः (षष्ठः)

सूतं कान्तं गन्धतीक्ष्णे ताप्यं व्योषं फलत्रिकम् ।
शिलाजतु सिताऽङ्कोलवीजं चित्रकपित्थकम् ॥३२५७॥
त्रिःसप्तकृत्वो भृङ्गाऽद्भि भावयेन्निष्कसङ्ख्यकः ।
मेघनादाऽऽख्य सूतोऽयं सर्वान्मेहान्विनाशयेत् ३२५८

र का, मेहे ।

भाषा—शुद्धपारा, कान्तलोहभस्म, शुद्धगन्धक, फोलाद और सोनामाखीकीभस्म, त्रिकटु, त्रिफला, शिलाजीत, सफेद अङ्कोलके वीज, चित्रककीजड़ और कैथ येसव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भंगरेके रससे २१ भावनाएं देकर ४–४ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे आध्मानादि समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ ७०५ ॥

७०६ मेघनादरसः (सप्तमः)

अमृतस्यैकभागन्तु द्वौ भागौ हिङ्गुलस्य च ।
टङ्कणस्य त्रयो भागा नेपालं चाऽष्टभागिकम् ॥३२५९॥
मेघनादरसो नाम राजयोग्यं विरेचनम् ।
गुञ्जामात्रप्रयोगेण धात्रीफलसमन्वितम् ॥ ३२६० ॥

वा, उदररोगे ।

भाषा—शुद्धवछनाग १ भाग, शुद्धशिगरिफ २ भाग, भुनासुहागा ३ भाग, शुद्धजमालगोटा ८ भाग, लेकर सवको ४ पहरतक शुष्कमर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली आवलेकेरसकेसाथदेनेसे आध्मान प्रभृति समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ ७०६ ॥

७०७ मेघनादरसः (अष्टम.)

गन्धाऽश्मचूर्णेन घनं सुमारितं
रसेन्द्रराजे च शतेन चारितम् ।
कषायवर्गेण दृढं सुमूर्च्छितं
निहन्ति वातज्वरवातजामयान् ॥ ३२६१ ॥

रसेन्द्रसं, ज्वराधिकारे ।

भाषा—गन्धककेयोगसेमाराहुआ अभ्रक लेकर मुखसस्कार कियेहुए पारेमें सौवा हिस्सा जारणकर वातज्वरनाशककार्थोंमें मर्दनकर मूर्च्छितकरके १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली वातघ्न काढ़ेकेसाथ देनेसे वातज्वर और वातज तमामव्याधियोंको यह नष्टकरताहै ७०७

७०८ मेघनादरसः (नवमः)

शुचिरसवलिताभ्रं भागतस्तुल्यभागं,
द्विगुणितशरभागो पक्षभागोऽपि गौरः ।
प्रहरमपि चतुष्कं निम्बुनीरेण भाण्डे,
पचनमुपगतोऽग्नौ जायते मेघनादः ॥३२६२॥
जयति विषममुग्रं कारवेल्ल्यम्वुयुक्तः,
त्रिकटुकरसयुग्वा चक्रपर्ण्यम्वुयुग्वा ।
सुरभिसलिलयुग्वा गुञ्जमानः सिताऽऽढ्यो,
गुडजरणयुतो वा क्षीरभक्ताशिनाश्च ॥ ३२६३ ॥

र, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा औरगन्धक, ताम्रभस्म १–१ भाग, शुद्धसोमल १० अथवा १५ भाग लेकर सवकी नीलवर्णकज्जली कर नीवूकेरससे १–२ रोज़ मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुईआतशीशीशीमेंभरके मुंहवन्दकर वालुकायन्त्रमें ४ पहर की आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा करेलेका स्वरस, त्रिकटुकाकाथ, कालीतुलसीकास्वरस, गोमूत्र, शक्कर–गुड और जीरा, इनमेंसे औचिती देखकर किसी एककेसाथ देनेसे अत्यन्तभीषण ज्वरको यह दूरकरताहै । इसमें खानेको दूधभात देना ॥ ७०८ ॥

७०९ मेघनादरसः (दशमः)

कार्पासीयविकामुनीन्द्रसुरसाव्याघ्रीजयावासका-,
रिष्टाभिः पुटितो वलिः समरसो विद्रावितः पात्रके ।
लौहे भृङ्गजलै विमृद्यसुपवीनीरेण वा मर्दितः,
सिद्धिं यात्युपकुञ्चिकागुडयुतो वल्लैकमात्रो रसः ॥
खण्डेन जीरकयुतेन सिताकणाभ्यां,
धातुस्थजानपि महाप्रलयाऽग्निरूपान् ।
तापाञ्जयेद्भिनवान्विषमांश्च सर्वान्,
गोतक्रभक्तमशिनामपि मेघनादः ॥ ३२६५ ॥

र, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—कपास, तितली, अगस्त्य, तुलसी, भटकटैया, भाग, अडूसा, नीम इनकेस्वरसोंमें शुद्धायाहुआगन्धक, शुद्धपारा, समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर लोहेकेपात्रमें गलाकर भगरा अथवा करेलेकेरससे ४ पहरमर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली कालीजीरी और गुड़, खाड और जीरा, शक्कर और पीपल इनमेंसे औचिती देखकर किसीभी अनुपानकेसाथ देनेसे अतिदु साध्य धातुस्थ और समस्त विषमज्वर इनसवको यह नष्टकरताहै । पथ्यमें गायकी छाछ और भात देना ॥ ७०९ ॥

७१० मेघनादरसः (एकादशः)

तारं तार्प्यं बलिरससहितं मर्दितं वासरैकं,
कन्याऽनन्तासुरतरुजलै र्बालकाऽद्भिर्विभाव्यम् ।
देयं तृष्णाश्रमविषमथिते भ्रान्तचित्ते व्यथार्ते,
सिद्धस्तृष्णादवगणदलने मेघनादो रसेशः ॥३२६६॥

र , तृष्णायाम् ।

भाषा—रजत और सोनामाखीकीभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक, समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुवार, जवास, देवदारु, सुगन्धवाला इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज़मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे तृष्णा, श्रम, विषमज्वर, चित्तविक्षेप, और तमाम पीडाओंको यह नष्टकरताहै ७१०

७११ मेघनादरसः (द्वादशः)

दरदं टङ्कणञ्चैव सैन्धवञ्च कटुत्रयम् ।
त्रिफला हारहूरा च कृमिघ्नं रामठं तथा ॥ ३२६७ ॥
दस्युदीप्यं समानञ्च दन्ती सर्वाऽर्द्धभागिका ।
जम्बीरवारा सम्मर्द्य चणकस्य प्रमाणतः ॥ ३२६८ ॥
उष्णोदकानुपानेन कृम्यामान्तं विरेचनम् ।
तस्योपरि हितं देयं पथ्यं दध्योदनं परम् ॥ ३२६९ ॥
उदरे पाण्डुशोफे च शोफोदरजलोदरे ।
सर्वज्वरे च विषमे मेघनादः प्रशस्यते ॥ ३२७० ॥

र चं , र शं , यो र , रेचनाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, सुहागा, सेंधानमक, त्रिकटु, त्रिफला, हुरहुर, विडङ्ग, हींग, चोरक, अजवाइन येसव समभाग, शुद्धजमालगोटा सबसे आधा लेकर सबका बारीक चूर्णकर जभीरीकेरससे १–२ रोज मर्दनकर चनेप्रमाणगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गरमजलकेसाथदेनेसे कृमि और आम निकलनेतक विरेचनहोताहै। भूखलगनेपर दही और चावल देना। इसकेदेनेसे उदर, पाण्डु, शोथोदर, जलोदर, समस्त विषमज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ७११ ॥

७१२ मेघनादरसः (त्रयोदशः)

कारयेच्छोधनैः शुद्धताम्रगन्धकपारदान् ।
गन्धकं द्विगुणं ताम्रात्खल्वे दुग्धेन पेषयेत् ॥३२७१॥
तस्य पूपाद्वयस्यान्तस्ताम्रपत्रं क्षिपेद्बुधः ।
शरावसम्पुटे क्षिप्त्वा वस्त्रमृद्भ्याञ्च वेष्टयेत् ३२७२
उत्पलैः पूर्णगर्तायामध्ये प्रक्षिप्य दीपयेत् ।
तन्मध्यात्ताम्रमाकृष्य खल्वे नीरेण पेषयेत् ॥ ३२७३ ॥
तच्च मृत्स्नान्धमूषायां ध्मातं दोषैः प्रमुच्यते ।
ताम्रतुल्यं चतुर्थांशं स्वंस्वं गन्धकसूतयोः ॥ ३२७४ ॥
सम्पेष्य कज्जलीं कृत्वा ताम्रचूर्णे क्षिपेत्सुधीः ।
ताम्रादष्टगुणं चूर्णमतो माचीरसं क्षिपेत् ॥ ३२७५ ॥
मिश्रचूर्णे समं चूर्णं मरीचीनां क्षिपेत्ततः ।
ताम्रस्याऽर्द्धं वत्सनाभं विषखण्डेन भावयेत् ३२७६
मेघनादरसो नाम्ना निष्पन्नः सर्वरोगहा ।
वल्लमात्रो जलसमं मरिचस्य क्रमेण वै ॥ ३२७७ ॥
स गद्याणकमात्रो हि दातव्यो दृढरोगिषु ।
पित्तक्षयाऽबलाऽजीर्णाऽतीसारांश्च वर्जयेत ॥३२७८॥

र रु.ली , सर्वरोगे ।

टि०—अत्र काकमाचीशब्दस्थाने अन्यपुस्तकेऽपि मार्कीशब्दः सन्निवेशित इति ज्ञातव्यम् ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भाग, शुद्धताम्रपत्र १ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर दूधकेसाथ कज्जलीको पीसकर ताम्रके पत्रपर रोटीकी तरह चढ़ादे फिर शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीलपेटदे। सूखनेपर पूरे गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर मिट्टीकी अन्धमूषामें धमनकरके गलानेसे यह समस्तदोषोंसे रहितहोजायगा। फिर ताम्रकी बराबर गन्धक और चतुर्थांश पारा लेकर नीलवर्णकज्जलीकर ताम्रकेसाथ मिलाकर ताम्रसे अठगुना पत्थरकाचूना और चूनेसे अठगुना मकोयकारस, इस समस्तपिण्डकी बराबर मरिचकाचूर्ण, ताम्रसे आधा शुद्धबछनाग मिलाकर बछनागकेरस अथवा क्वाथसे एकरोज़ घोटकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे १ मरिच प्रमाणसे ३ रत्तीतक धीरे २ बढावे और ३ रत्तीपर मात्रा कायमकरे। इसतरह ६ मासेतक सेवनकरनेसे बहुतपुराने और हठीले मूलबद्धरोगोंको यह दूरकरताहै। पित्तक्षयी, कृश, अजीर्णी और अतिसारी पर इसप्रयोगको न करना ॥ ७१२ ॥

७१३ मेथीपाकः

मेथीपलचतुष्कञ्च कणा द्विपलमानतः ।
सञ्चूर्ण्य घटदुग्धेन पाचयेद्वह्निना ततः ॥ ३२७९ ॥
प्रस्थद्वयमितं खण्डं मुच्यते चूर्णकं तदा ।
सूतं लवङ्गं त्रिगुडं लोहं केशरमभ्रकम् ॥ ३२८० ॥
पुष्पं जातीफलं जातीपत्री नागकुबेरकैः ।
एतेषां पलमानेन सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ ३२८१ ॥
प्रभाते पलमानेन योजयेद्भाग्ययोगतः ।
तस्य सर्वशिरोत्पन्नं रोगजालं ध्रुवं हरेत् ॥ ३२८२ ॥
सर्ववातसमूहञ्च भ्रमच्छर्दिकफव्यथाम् ।
मेथिकापाकनामाऽयं वृद्धानां प्राणदायकः ॥ ३२८३ ॥

रसायनसं , वातरोगे ।

भाषा—मेथी ४ पल, पीपल २ पल लेकर बारीकचूर्णकर १६ सेर दूध डालकर मावा बनावे। तैयारहोनेपर २ सेर शक्कर डालकर चाशनीकरले फिर पारदभस्म अथवा रससिन्दूर, लौंग, खजूर, ताड और ईखकागुड़, लोहभस्म केशर, अभ्रकभस्म, नागकेशर, जायफल, जावित्री, नागभस्म, करंजके बीजोंकी गिरी, येसब १–१ पल मिलाकर रखछोड़े इसमेंसे १–१ पल दूधकेसाथलेनेसे समस्तशिरोरोग, वातविकार, भ्रम, छर्दि, कफरोग, इनसबको यह नष्टकर बुड्ढोंको फिरसे जवानी देताहै ॥ ७१३ ॥

७१४ मेदिनीसाररसः

पलत्रयमितं लोहं मृतं शुल्वं पलत्रयम्।
भृङ्गराजाऽम्बुगोमूत्रत्रिफलाकथितैः पृथक् ॥३२८४॥
पुटेत्त्रिवारं यत्नेन ततस्तस्मिन्विनिःक्षिपेत्।
अत्यम्लकाञ्जिकं पश्चात्पचेद्यामचतुष्टयम् ॥ ३२८५ ॥
पुनश्च तुल्यगन्धेन दद्याच्च पुटविंशतिम्।
पलमात्रं मृतं सूतं रुद्रांशममृतं तथा ॥ ३२८६ ॥
कटुत्रयं समं सर्वैः पिष्ट्वा सम्यग्विधारयेत्।
रसोऽयं मेदिनीसारो नन्दिना परिकीर्तितः ॥३२८७॥
सेवितो वल्लमानेन घृतत्रिकटुकान्वितः।
हन्ति कुष्ठानि सर्वाणि चित्राणि विविधानि च ॥३२८८॥
गुल्मप्लीहामयं हिक्कां शूलरोगं हरेत्तथा।
उदावर्तं महारोगं कफं मन्दानलन्तथा ॥ ३२८९ ॥
गलग्रहं मदोन्मादं कर्णदन्तव्यथां तथा।
सर्पादिजं विषं घोरं व्रणं लूतां भगन्दरम् ॥ ३२९० ॥
विद्रधिश्चाऽन्त्रवृद्धिश्च शिरस्तोदश्च नाशयेत्।
दधिमूलकमाषान्नविदाहीनि गुरूणि च ॥
पापकर्माणि सर्वाणि कुष्ठयुक्तो विवर्जयेत् ॥ ३२९१ ॥

र. म मा., र. को., र र. स., र. र कौ, कुष्ठे।

भाषा—लोह और ताम्रभस्म ३—३ पललेकर भंगरा, गोमूत्र और त्रिफलाकेक्वाथसे ३—३ भावनाएं देकर एकदमखट्टी काञ्जी मिलाकर ४ पहर मन्द अग्निसे पकावे। फिर अग्निपरसे उतारकर ठंढाहोनेपर वरावरका शुद्धगन्धक मिलाकर पूर्वोक्तद्रवोंकी २० पुटें देकर पारदभस्म १ पल, शुद्धवछनाग पलका ११ वा भाग, त्रिकटु सवकीवरावर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३—३ रत्तीकी-मात्रा घी और त्रिकटुकेसाथ लेनेसे चित्रविचित्र तमामकुष्ठ, गुल्म, प्लीहा, हिक्का, शूल, उदावर्त, महारोग, कफरोग, मन्दाग्नि, गलग्रह, मद, उन्माद, कान और दांतोंकीपीडा, सर्पादिकोंका जङ्गमविष, व्रण, मकड़ीकाविष, भगन्दर, विद्रधि, अन्त्रवृद्धि (सारनगाठ), शिरकीवेदना, इनसवको यह नष्टकरताहै। दही, मूली, उड़द, विदाही और गरिष्ठ पदार्थ, समस्तपापकर्म इनसवका कुष्ठी त्यागकरे॥ ७१४ ॥

७१५ मेदोध्वंसीरसः

रसगन्धकतालानां शुद्धानां भागमुत्तमम्।
दन्तीवीजश्च मतिमान्निक्षिप्यैकत्र मर्दयेत् ॥ ३२९२ ॥
त्रिदिनं कटुकीद्रावैः कृतमालद्रवैस्तथा।
पुनर्नवायाः सप्ताहं ततो गजपुटे पचेत् ॥ ३२९३ ॥
एवं कृत्वा त्रिवारं तु ततः सिद्धो भवेद्रसः।
रक्तिकाद्वितयं खादेत्क्षौद्रतोयं पिवेत्पुनः ॥
मेदसः सप्तरात्रेण निवृत्तिर्जायते ध्रुवम् ॥ ३२९४ ॥

र. म. मा, ना. वि, मेदोरोगे। ना वि मेदोहर इति नाम।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल और जमालगोटा समभागलेकर कज्जलीवनाय कुटकी और अमिलतासके क्वाथोंकी ३—३ दिन, पुनर्नवाके स्वरसकी ७ दिन भावना देकर गोला वनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर कपड़मिट्टीकरदे। सुखनेपर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर इसीक्रमसे मर्दनकर आंचदे। इसप्रकार ३ वार करनेसे यहरस तैयार होगा। इसमेंसे २—२ रत्ती मधुकेसाथ खाकर मधुका शरवत पीनेसे ७ दिनमें मेदोवृद्धि नष्टहोतीहै ॥ ७१५ ॥

७१६ मोहाद्रिवज्रपातरसः

कर्षैकं रसकं त्र्यक्षं पिष्ट्वा गन्धं पलद्वयम्।
पलं नागाऽभ्रयोः सर्वं सञ्चूर्ण्य सिकताघटे ॥ ३२९५ ॥
पक्वं मूषागतं यामं पचेद्भूयः क्षिपन्द्रवम्।
केतकाऽऽकल्लनिर्गुण्डीशिग्रुग्रन्थिकचित्रकम् ॥३२९६॥
वन्ध्याऽहिवल्लीकर्णोत्थव्याघ्रीलुङ्गरसोद्भवम्।
अश्वगन्धाभवं वारान्द्विधा द्वित्रिप्रसागरान् ॥ ३२९७ ॥
षड्रसैः सप्तवसुदिक्द्वित्रिभुवनतः क्रमात्।
कुमार्या पुटयेत्प्रौढो रसो मोहाद्रिवज्रकः ॥ ३२९८ ॥
भुक्तो माषो निहन्त्याशु सर्वाऽर्शोऽरोचकग्रहान्।
मन्दाग्न्युन्मादमेदांसि गण्डमालाऽर्वुदाऽपचीः ॥
क्षुद्ररोगांश्च विविधान् गरुडः पन्नगानिव ॥ ३२९९ ॥

र कौ, अर्शोरोगे।

भाषा—शुद्धखपरिया और पारा १—१ कर्ष, गन्धक २ पल, नाग और अभ्रकभस्म १—१ पल लेकर वालुकायन्त्रमें स्वेदनकर निकालकर फिरसे कज्जली वनाय केवडेकेस्वरसकी २, अकल्कराकी २, निर्गुण्डी ३, सहिजन ४, पिपलामूल ६, चित्रक ६, वाझखेखसा ७, पान ८, गोरखमुण्डी १०, भटकटैया २, विजोरा ३ और असगन्धकी १४ इनसवके स्वरस अथवा क्वाथोंसे उक्तसङ्ख्यामें क्रमशः भावनाएं देकर घीकुंवारकेरसमें १—२ रोज़ घोटकर १—१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १—१ गोली रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सम्पूर्ण ववासीर, अरुचि, गलग्रह, मन्दाग्नि, उन्माद, मेद, गण्डमाला, अर्वुद, अपची, क्षुद्ररोग इनसवकोयह सांपोंको गरुडकी तरह नष्टकरताहै ॥ ७१६ ॥

७१७ मोहान्धसूर्यरसः

गन्धेशौ लशुनाऽम्भोभिर्मर्दयेद्याममात्रकम्।
तस्योदकेन संयुक्तं नस्यं तत्प्रतिवोधकृत् ॥
मरिचेन समायुक्तं हन्ति तन्द्रां प्रलापकम् ॥ ३३०० ॥

र. चि., र क, रसायनसं, चि र. भ., र. सु, टो, भै र., र. र दी., र. का, यो म, र. सि, र. सं, व रा., वै क., सन्निपाते। र सं अञ्जनरसः; व रा. महागन्धसूर्यरसः, वै क. ज्वराङ्कुश इति नाम।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर एकगाठवाले लहसनके रससे १ पहर घोटकर रखछोड़े। इसको लहसनके रसमें मरिचके साथ घोटकर नस्यदेनेसे तन्द्रा और प्रलापको यह दूरकरताहै ॥ ७१७ ॥

७१८ मौक्तिकभस्मप्रयोगः

कटुकीगैरिकाभ्याञ्च मुक्ताभस्म तथैव च।
बीजपूरस्य तोयेन ताम्रं तद्वत्समाक्षिकम्॥ ३३०१॥

र का, र सु, हिक्काश्वासयो।

भाषा—कुटकी और गेरूकेसाथ मोतीकीभस्म तथा बिजोरेके रसकेसाथ सोनामाखी और ताम्रभस्म देनेसे हिक्का और श्वास नष्टहोतेहैं॥ ७१८॥

७१९ मौक्तिकरसायनम्

जयन्तीरससम्पिष्टं शुकपिच्छेन मारितम्।
मौक्तिकं रसमात्रं हि द्विगुणं स्वर्णभस्मकम्॥३३०२॥
त्रिगुणं कान्तजं भस्म व्योमसत्त्वं चतुर्गुणम्।
दत्त्वा च गन्धसौभाग्यं शृङ्गवेरेण भावितम्॥३३०३॥
पुटैर्द्विंशतिवाराणि विद्राव्य पटगालितम्।
सर्वतुल्येन बलिना रसेन कृतकज्जलीम्॥ ३३०४॥
विद्राव्य पूर्ववद्भस्म मुक्तादीनां विनिःक्षिपेत्।
विमिश्य निक्षिपेत्तत्र क्षीरं छागीसमुद्भवम्॥३३०५॥
संशोषितं विचूर्ण्याऽथ काचकूप्यां विनिःक्षिपेत्।
पिप्पलीमधुना सार्द्धं सेवितं वल्लमात्रया॥ ३३०६॥
रसायनविधानेन कुरुते वत्सरेण हि।
वलीपलितनिर्मुक्तं वार्द्धकेन विवर्जितम्॥ ३३०७॥
नयनद्वयसम्पन्नं शतायु र्ज्ञानशालिनम्।
दिव्यश्रवणसम्पन्नं मत्तदन्तिबलावृतम्॥ ३३०८॥
विवादे जयदं नित्यं धीधैर्यविनयान्वितम्।
लीढं मध्वाज्यतैलैश्च कणोपेताश्वगन्धया॥ ३३०९॥
क्षयरोगं निहन्त्येव मण्डलाऽर्द्धेन निश्चितम्।
तत्तद्रोगानुपानैश्च निहन्ति सकलामयान्॥ ३३१०॥
वन्ध्यापुत्रप्रदं ह्येतत्सूतिकामयनाशनम्।
बालानां परमं पथ्यं वृष्यमायुष्यमुत्तमम्॥ ३३११॥
नागोदरोपविष्टञ्च हन्ति स्त्रीणाञ्च वेगतः।
हैयङ्गवीनसंयुक्तं तवराजेन संयुतम्॥
गर्भिणीसर्वरोगेषु प्रशस्तं परिकीर्तितम्॥ ३३१२॥

र चू, रसायने।

भाषा—जैतकेरसमेंपिसेहुएशुद्धगन्धकके योगसे मारीहुई मोतीकीभस्म ६ भाग और उसीतरह मारीहुई स्वर्णभस्म २ भाग, कान्तलोहभस्म ३ भाग, अभ्रकसत्त्वभस्म ४ भाग, शुद्धगन्धक और सुहागा ४—४ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर अदरख केरसकी २० भावनाएं देवे। सुखाकर आतशीशीशीमें अथवा लोहेकी कड़छीमें गलाकर पर्पटीबनाय कपड़छानचूर्णकरे। फिर सबकी बराबर शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर पर्पटीबनाय कपड़छान चूर्णकर पूर्वराशिमें मिलावे। इनदोनोंको मिलाकर १—२ पहर सूखा मर्दनकर बकरीके दूधसे १—२ रोज मर्दनकर ३—३ रत्तीकी गोलियां बनाकर अथवा चूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १—१ गोली अथवा ३ रत्तीचूर्णको रसायनविधिसे एकवर्षभर खानेसे वली, पलित और बुढापेका नाशहोताहै। दोनों नेत्रोंकी ज्योति फिरसे आतीहै सौवर्षकी आयु होतीहै। दिव्यज्ञान, श्रवण, बल, बुद्धि, धैर्य, विनय, इनसे युक्त होताहै। विवादमें अजेय होताहै। रोगप्रशमनार्थ प्रयोगकरना हो तो मधु, घी, तैल अथवा पीपल और अश्वगन्धाकेसाथ खानेसे २५ दिनमें क्षयरोगको दूरकरतीहै और तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरतीहै। वन्ध्या पुत्रको प्राप्तकरतीहै। सूतिका रोगोंसे निर्मुक्तहोतीहै। बालकोंके लिये बहुतगुणकारकहै उत्तमवृष्य और आयुष्यहै। स्त्रियोंके नागोदर और उपविष्टकको बहुतजल्दी दूरकरताहै। मक्खन और वंशलोचनकेसाथ देनेसे गर्भिणियोंके समस्तरोग दूरहोतेहैं॥ ७१९॥

सर्वेशानदयालवेन रसयोगाऽब्धौ निरस्याऽजनि,
नानादेशविदेशजायुभिषजां विज्ञानराश्याऽऽश्रयम्।
श्रित्वा विघ्नभरेण मध्यसमये किङ्कृत्यताशून्यतां,
यातामाशु हरिप्रपन्नरचिते ग्रन्थः पवर्गाऽवधिः॥

अथ यकारादिरसाः॥

१ यकृत्प्लीहारि लोहम्

हिङ्गूलसम्भवं सूतं गन्धकं लौहमभ्रकम्।
तुल्यं द्विगुणताम्रन्तु शिला च रजनी तथा॥ १॥
जयपालं टङ्कणञ्च शिलाजतुसमं रसात्।
एतत्सर्वं समाहृत्य चूर्णीकृत्य विमिश्रयेत॥ २॥
दन्ती त्रिवृच्चित्रकञ्च निर्गुण्डी त्र्यूषणं तथा।
आर्द्रकं भृङ्गराजश्च रसैरेषां पृथक्पृथक्॥ ३॥
भावयित्वा वटीं कुर्याद्बदराऽस्थिमितां भिषक्।
प्लीहानं यकृतञ्चैव चिरकालानुबन्धिनम्॥ ४॥
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव सर्वदोषभवं तथा।
हन्यादष्टोदराणीह ज्वरं पाण्डुञ्च कामलाम्॥ ५॥
शोथं हलीमकं हन्ति मन्दाग्नित्वमरोचकम्।
यकृत्प्लीहारिनामेदं लौहं जगति दुर्लभम्॥ ६॥

भै र, ब, उदराऽधिकारे।

भाषा—हिङ्गुलसे निकालाहुआ पारा, शुद्धगन्धक, लोह और अभ्रकभस्म, मैनसिल, हल्दी, शुद्ध जमालगोटा, भुनासुहागा और शिलाजीत १—१ भाग, ताम्रभस्म २ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय दन्तीमूल, निशोत, चित्रक, निर्गुण्डी, त्रिकटु, अदरख, भागरा इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १—१ भावना देकर बेरकीगुठलीके बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १—१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे बहुतदिनके, एकज, द्वन्द्वज, और सर्वदोषज प्लीहा और यकृत, उदररोग, ज्वर, पाण्डु, कामला, शोथ, हलीमक, मन्दाग्नि, अरोचक इनसबको यह नष्टकरताहै॥ १॥

२ यकृत्प्लीहोदरहरलोहम्

दिव्यौषधिहतं लौहं पुटितं पुटनौषधैः ।
प्लीहोदरविनाशाय दद्याद् द्वे द्वे पुटे पृथक् ॥ ७ ॥
माणेन घण्टकर्णेन सूरणेनाऽधिकं पुनः ।
अभ्रकं निहतं कृष्णं मृतकं विधिमूर्च्छितम् ॥ ८ ॥
लौहाऽर्द्धमभ्रकं शुद्धं सूतमभ्राऽर्द्धभागिकम् ।
त्रिगुणामयसश्चूर्णात्त्रिफलामभ्रसंयुतात ॥ ९ ॥
द्विरष्टवारिणो भागमष्टशेषन्तु कारयेत् ।
तेन चाऽष्टाऽवशेषेण समेनाऽऽज्येन यत्नतः ॥ १० ॥
रसेन वहुपुत्राया द्विगुणक्षीरसम्मितम् ।
अयसश्चाऽर्द्धभागं तु पूर्वं पाके विनिःक्षिपेत ॥ ११ ॥
लौहमय्या पचेद्दर्व्या पात्रे चायसि मृन्मये ।
पचेत्पाकविधिज्ञस्तु वह्निना मृदुना शनैः ॥ १२ ॥
कन्दकार्पासिका चव्यं विडङ्गं सवृहद्दलम् ।
शरपुङ्खाश्च पाठाश्च चित्रकश्च महौषधम् ॥ १३ ॥
लवणानि च सर्वाणि सक्षारं वृद्धदारुकम् ।
दीप्यकश्च तथा शीधुमायसाऽभ्रसमं क्षिपेत् ॥ १४ ॥
प्लीहोदरयकृत्मान्हद्धन्ति शस्त्राऽग्निभि विना ।
प्रयोज्योऽयं महावीर्यो लौहो लौहविदां वरैः ॥ १५ ॥

भै र., ध, र र, र क., उदराऽधिकारे ।

भाषा—मैनसिल और अमलोनियाके योगसे वारितर-क्रियाहुआ और मानकन्द, हैम अथवा वघनहा, और सूरणके रसकी १–१ भावना दियाहुआ लोह २ तो, निश्चन्द्र कृष्णाऽभ्रकभस्म १ तो, विधिपूर्वकमूर्च्छितकियाहुआ पारा आधा-तोला. (रससिन्दूर) लेवै। फिर अभ्रक और लोहभस्मसे तिगुनी त्रिफलाको १६ गुनेपानीमें उवाले। अष्टभागावशेष रहनेपर छानकर सीटीकोफेंकदे। क्राथकी वरावर घी और शतावरीका-रस और क्राथसे दूना गायकादूध, लोहभस्ममेंसे आधीलोह-भस्म, डालकर मन्दअग्निसे पकावे। मावेका पानीजलजानेपर कल्ककी गोली वनने लगे तव उतारकर पहिली अवशिष्टभस्में और सूरण, जंगलीकपास, चव्य, विडङ्ग, एरण्डमूल, शरपुङ्ख, पाठा, चित्रकमूल, सोंठ, तमाम नमक और क्षार, विधारेकी-जड़, अजवाइन, थूहरकादूध, ये प्रत्येक अवशिष्ट लोह और अभ्रकके वरावर लेकर सवका वारीकचूर्णकर पूर्वपाकमें मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे २ माशेसे ४ माशेतककी मात्रा गरमजल-वगैरह समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे प्लीहा, उदररोग, यकृत्, गुल्मइत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै॥ २ ॥

३ यकृदरिलोहम् (प्लीहारि)

द्विकर्षं लोहचूर्णस्य चाऽभ्रकस्य पलाऽर्द्धकम ।
कर्षं शुद्धं मृतं ताम्रं लिम्पाकाऽङ्घ्रित्वचं पलम् ॥१६॥
मृगाऽजिनभस्म पलं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
नवगुञ्जा प्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ १७ ॥
यावत्प्लीहोदरश्चैव कामलाश्च हलीमकम् ।
कासं श्वासं ज्वरं हन्याद्बलवर्णाऽग्निकारकम् ॥
यकृदरि त्विदं लौहं वातगुल्मविनाशनम् ॥ १८ ॥

र सं, र चि, र चं., भै र, र सु, उदररोगे।

टि०—अत्र द्विकर्षं लोहचूर्णस्य चाऽभ्रकस्य पलाऽर्द्धकमिति पाठेन साधारणतया लोहचूर्णं शुद्धमभ्रकमिति प्रतीतिर्भवति परन्तु उभयो-र्भस्मेव ग्रहीतव्यम् । र स, र चि, र सु, एषु ग्रन्थेषु प्लीहारिनाम्ना स्वतन्त्र पाठो दृश्यते तत्र अभ्रकस्थाने पारदगन्धकौ नियोजितौ अन्य-त्सर्वं समानमस्तीत्यतोऽत्रैव पारदगन्धककज्जली प्रदाय एक एव रसो निष्पादनीय । पारदगन्धककज्जल्या अधिकत्वेन दाने क्षत्यभावो गुण-वृद्धिस्तु सुतरामेवाऽस्ति, एकपाठह्रासश्च महत्फलम् ।

भाषा—लोह और अभ्रकभस्म २–२ कर्ष, ताम्रभस्म १ कर्ष, अमलतासकी जड़कीछाल १ पल, मृगचर्मकीभस्म १ पल लेकर सवको इकट्ठेकर अमिलतासकीजडकी छालके काढेसे १–२ रोज मर्दनकर ९–९ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ लेनेसे प्लीहा, यकृत्, कामला, हलीमक, कास, श्वास, ज्वर, बलवर्णाग्निनाश, वातगुल्म इन सवको यह नष्टकरताहै ॥ ३ ॥

४ यकृद्दारणसिंहरसः

सिन्दूरमभ्रकं तालं लौहं कर्षप्रमाणतः ।
माक्षिकश्चाऽभयाक्वाथे मर्दयेदतियत्नतः ॥ १९ ॥
वल्लमात्रां वटीं कृत्वा छायाशुष्कां समाचरेत् ।
यकृद्दारणसिंहोऽसौ रसो यकृन्निकृन्तनः ॥ २० ॥

आ. वि, उदराऽधिकारे।

भाषा—रससिन्दूर, अभ्रक हरिताल, लोह, सुवर्णमाक्षिक इनसवकी भस्में १–१ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर हर्रेकेकाढेसे १–२ रोज़ मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर छायाशुष्ककर रख-छोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह यकृत् रोगको दूरकरताहै और तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे कासश्वासादिकको नष्टकरताहै ॥ ४ ॥

५ यक्ष्मदावाऽग्निरसः

सूतगन्धरविमौक्तिकं समं
शृङ्गवेरदहनाऽग्निमर्दितम् ।
सूततुल्यरविसम्पुटाऽऽवृतं
पूर्ववद्भवति यक्ष्मिणां हितम् ॥ २१ ॥

र, क्षयाऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, मौक्तिकपिष्टी-सवसमभाग लेकर अदरख तथा चित्रककेस्वरस और भिलावेके तैलसे १–१ रोज मर्दनकर गोलावनाय पारेकीवरावर शुद्धतावेके सम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर तावेके सम्पुटकी जितनी भस्म होगईहो उससवको मिलाकर पूर्वके वरावर शुद्धपारा और गन्धक मिलाकर अदरख वगैरहके रसोंसे पूर्ववत् मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखनेपर पूरे गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े।

इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह राजयक्ष्मको दूरकरताहै ॥ ५ ॥

६ यक्ष्मशत्रूरसः (महदग्निकुमारः)

स्वर्णं ताम्रं पारदं चाऽष्टभागं
गन्धाद्भागाः षोडश स्युश्च शुद्धात् ।
सर्वं खल्वे न्यस्य भाव्यं दिनैकं
पार्थक्येन व्योषलुङ्गाऽऽर्द्रकाऽद्भिः ॥ २२ ॥
वह्निद्रावैस्त्रैफलै भृङ्गवारा
कन्याम्भोभिः शोणकार्पासपुष्पैः ।
ब्राह्मीमुण्डीन्द्राणितालीसगुप्ता-
भूकूष्माण्डीन्दीवरीवारिणा च ॥ २३ ॥
गुञ्जावीजैः कज्जलीं काचकूप्यां
क्षिप्त्वा किञ्चिट्टङ्कणश्चाऽत्र देयम् ।
पाच्यं यामान् षोडशैवं प्रयत्ना-
त्सिद्धः सूतो जायते यक्ष्मशत्रुः ॥ २४ ॥
ताम्बूलीनां पत्रयुग्मे लवङ्गैः
सायं प्रातः सप्तभिः सेवनीयः ।
अग्नौ मन्दे मारुते क्षीणदेहे
कासे श्वासे रोगराजे प्रशस्तः ॥ २५ ॥
वर्ज्यश्चाऽस्मिन् प्रायशो भोज्यमाषा-
स्तैलं तीक्ष्णं राजिकामत्स्यमांसम् ।
अश्विभ्यां वै षण्मुखे चोपदिष्ट-
स्ताभ्यामुक्तस्तारकानायकायै ॥ २६ ॥

रसायनस , अग्निमान्द्ये ।

भाषा—सुवर्ण और ताम्रभस्म, शुद्धपारा ८–८ भाग, शुद्धगन्धक १६ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर त्रिकटु, विजोरा, अदरख, चित्रक, त्रिफला, भगरा, घीकुआर, लालकपासकेफूल, ब्राह्मी, गोरखमुण्डी, इन्द्रायण, तालीसपत्र, केवाच, काष्ठविदारी, शतावर, सफेदगुञ्जाकेवीज इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज़ भावना देकर सुखाकर फिरसे कज्जलीवनाय ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके ऊपरसे पिसाहुआसुहागा १६ वा हिस्सा डालकर वालुकायन्त्रमें रखकर १६ पहरकी मन्द आचमे पकावे । शीशीकामुह एकदम वन्दहोजाय तो गरम शलाकासे खोलदें पर हरवक्त शलाका न डालें क्योंकि गन्धक जारणकरना अभीष्ट नहींहै । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–२ रत्तीकी मात्रा दो पान और ७ लवङ्गके वीडेमें रखकरदे । ऐसे सायं प्रातः दोनोंवक्त देनेसे मन्दाग्नि, वातक्षीणता, कास, श्वास, राजयक्ष्म इनसबको यह नष्टकरताहै । इसमें उड़द, तैल, तीक्ष्णपदार्थ, राई, मछली और मासमे परहेज करे ॥ ६ ॥

७ यक्ष्महररसः

शुद्धसूतविषकं च हाटकं गन्धकेन सहितं समांशकम् ।
मर्द्य चाऽऽर्द्रकरसेन चित्रकैः प्रक्षिपेच्च सुदृढे सुभाजने
ताम्रभाजनमथोपरिस्थितं रोधयेत्पटमृदा सदैव हि ।
याममात्र पुटितं शनैःशनै निक्षिपेच्च जलमूर्द्धभाजने ॥
ताम्रपात्रकुहरे रसो भवेद्रोगराजविनिवर्हणक्षमः ॥२८॥

र.प्र सु , र.चं ,राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा और वछनाग, सुवर्णभस्म, शुद्धगन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर अदरख और चित्रकके स्वरसोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर मजबूत मिट्टीके घड़ेमें डालकर ऊपरतावेका वर्तन रख दोनोंकी सन्धि वन्दकर चूल्हेपर चढ़ाय एक पहरकी मन्द आचदे । ऊपरके वर्तनमें पानीभरदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर सम्पुटको खोलकर रसको निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह उपद्रवसहित राजयक्ष्मको नष्टकरताहै ॥ ७ ॥

८ युवतिलीलारसः

एकभागश्शुद्धसूतो माक्षिकं गन्धकस्तथा ।
विषं ताम्रं नेत्रसङ्ख्यं द्विगुणं शुद्धमभ्रकम् ॥ २९ ॥
द्वौ भागौ नागवङ्गाभ्यां तारभस्म त्रिभागिकम् ।
जातीफलस्य भागौ द्वौ तदर्द्धा जातिपत्रिका ॥ ३० ॥
त्रिकटोश्च त्रयोभागाश्चातुर्जातं च तुल्यकम् ।
ज्योतिष्मत्याश्च द्वौ भागौ त्रिगुणं हेमबीजकम् ॥ ३१ ॥
मर्कटयशोकवीजश्च विडङ्गं मूर्तिभागिकम् ।
कुष्ठश्च शिग्रुवीजानि भृङ्गवीजश्च तत्समम् ॥ ३२ ॥
चन्द्रसङ्ख्यं चाजमोदं दीप्यकश्चैकभागिकम् ।
प्रियालं वदरीजीरौ कदम्बं नारिकेलजम् ॥ ३३ ॥
चन्दनं मधुकोशीरं दशभागं पृथक्पृथक् ।
गुडूचीसारभागैकं विदारी मुशलीक्षुरम् ॥ ३४ ॥
मधुयष्टिश्चाऽश्वगन्धा कोकिलाक्षाणि धान्यकम् ।
शतावरी च कदली शैरीषं शालमलीभवम् ॥ ३५ ॥
टङ्कणं रविपुष्पाणि खर्जूरोर्वारुवीजकम् ।
रक्ताऽश्वमारपुष्पाणि दशषट्षोडशांशकम् ॥ ३६ ॥
अपामार्गस्यैकभागस्त्रिफला च त्रिभागिका ।
सर्वं सूक्ष्मीकृतं चूर्णं खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥ ३७ ॥
भावना गव्यदुग्धेन विदारीद्रवकेण च ।
नारिकेलोदकै भाव्यं शालमलीसारभावितम् ॥ ३८ ॥
रम्भासारेणेक्षुरसैः कृष्णोन्मत्तरसैः क्रमात् ।
अलर्कं पलमात्रन्तु छायाशुष्कञ्च मेलयेत् ॥ ३९ ॥
शर्करासर्पिषा युक्तमपराह्णे च भक्षयेत् ।
पथ्यञ्च क्षीरमाज्यञ्च शर्करा कदलीफलम् ॥ ४० ॥
नारिकेलं प्रियालञ्च खर्जूरं पनसन्तथा ।
एतानि पथ्यान्याहारे स्वजोच्छ्रायः प्रजायते ॥ ४१ ॥
शुक्रवृद्धिकरं श्रेष्ठं युवतीशतसङ्गदम् ।
महामोहकरं वर्ण्यं रतिदं मदकारकम् ॥ ४२ ॥
अश्ववेगयुतं कृत्वा महारतिसुखप्रदम् ।
रामारञ्जनकान्त्याल्स्त्रीणामत्यन्तसौख्यदम् ॥ ४३ ॥

नष्टेन्द्रियत्वं मेहत्वं मूत्राघाताऽश्मरीरुजम् ।
योनिदोषं रजोदोषं लिङ्गसङ्कुचितोन्नतिम् ॥ ४४ ॥
क्षयञ्च रक्तपित्तञ्च वातरक्तमसृग्दरम् ।
हन्ति पाण्डुञ्च ग्रहणीं शूलं सर्वाऽतिसारकम् ॥ ४५ ॥
नराणां तनुते पुष्टिं सर्वव्याधिविनाशकः ।
नाम्ना युवतिलीलाख्यो रसः पुष्टिकरः परः ॥ ४६ ॥

र.क.यो. वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा, सोनामाखी और गन्धक १–१ भाग, शुद्धवछनाग, ताम्र, अभ्रक, नाग और वङ्गभस्म २–२ भाग, रजतभस्म ३ भा., जायफल २ भा, जावित्री १ भा., त्रिकटु ३ भा., चातुर्जात, तुत्थभस्म, मालकांगनी २–२ भाग, शुद्धधतूरेकेबीज ३ भा., केवाच और अशोककेबीज, विडङ्ग, कूठ, सहिजन और भंगरेकेबीज; अजमोद, अजवाइन १–१ भाग, चिरोंजी, बेरकीमज्जा, जीरा, कदम्ब, नारियल, सफेदचन्दन, देशीमुलहठी; खस ये प्रत्येक १० भाग, गिलोयसत्त्व, विदारीकन्द, मुसली, गोखरू, मुलहठी (ईरानी), असगन्ध, तालमखाना, धनियां, शतावर, केला, सिरस और सेंमल के बीज, भुनासुहागा १–१ भाग, आककेफूल १० भा., छुआरा और ककड़ीकेबीज ६–६ भाग, लालकनेरकेफूल १६ वा हिस्सा., अपामार्ग १ भा , त्रिफला ३ भा , लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर गायकादूध, क्षीरविदारी और काष्ठविदारी, नारियल, मोचरस, केलेकाकन्द, ईख, कालाधतूरा, इनकेयथासम्भव स्वरस अथवा क्राथोंसे १–१ भावना देकर सफेद आककीजड़कीछाल १ पल मिलाकर डेढ १॥ माशेकीमात्रा शक्कर और घीकेसाथ शामको खाय । पथ्यमेंदूध, घी, शक्कर, केले, नारियल, चिरोंजी, छुहारे और कटहलखावे । इसकेसेवनसे ध्वज और शुक्रकीवृद्धिहोतीहै । उत्तम वाजीकरणहै । मोह और वन्ध्यको करनेवालाहै । रति और मदको करताहै । नष्टेन्द्रियत्व प्रमेह, मूत्राघात, पथरी, योनिरोग, रजोदोष, लिङ्गसङ्कोच, क्षय, रक्तपित्त, वातरक्त, रक्तप्रदर, पाण्डु, ग्रहणी, शूल, समस्त अतिसार इत्यादि समस्त रोगोंको दूरकर स्त्रियोंको अत्यन्त आनन्ददायक होताहै । स्तम्भनार्थप्रयोगकरना हो तो उसरात्रिको अन्न न खावे ।

९ योगराजगुग्गुलुः (प्रथमः)

नागरं पिप्पली चव्यं पिप्पलीमूलचित्रकौ ।
भृष्टं हिङ्ग्वजमोदञ्च सर्षपा जीरकद्वयम् ॥ ४७ ॥
रेणुकेन्द्रयवाः पाठा विडङ्गं गजपिप्पली ।
कटुकाऽतिविषा भार्ङ्गी वचा मूर्वेतिभागतः ॥ ४८ ॥
प्रत्येकं शाणिकानि स्यु र्द्रव्याणीमानि विंशतिः ।
द्रव्येभ्यः सकलेभ्यश्च त्रिफला द्विगुणा भवेत् ॥ ४९ ॥
एभिश्चूर्णीकृतैः सर्वैः समो देयस्तु गुग्गुलुः ।
वङ्गं रौप्यञ्च नागञ्च लोहं सारं तथाऽभ्रकम् ॥५०॥
मण्डूरं रससिन्दूरं प्रत्येकं पलसम्मितम् ।
गुडपाकसमं कुर्यादिमं दद्याद्यथोचितम् ॥ ५१ ॥
एकपिण्डं ततः कृत्वा धारयेद्घृतभाजने ।
गुटिकाः शाणमात्रास्तु कृत्वा ग्राह्या यथोचिताः ५२
गुग्गुलु र्योगराजोऽयं त्रिदोषघ्नो रसायनः ।
मैथुनाऽऽहारपानानां त्यागो नैवाऽत्र विद्यते ॥ ५३ ॥
सर्वान्वातामयान्कुष्ठान्यर्शांसि ग्रहणीगदम् ।
प्रमेहं वातरक्तञ्च नाभिशूलं भगन्दरम् ॥ ५४ ॥
उदावर्तं क्षयं गुल्ममपस्मारमुरोग्रहम् ।
मन्दाग्निश्वासकासांश्च नाशयेदरुचिं तथा ॥ ५५ ॥
रेतोदोषहरः पुंसां रजोदोषहरः स्त्रियाम् ।
पुंसामपत्यजनको वन्ध्यानां गर्भदस्तथा ॥ ५६ ॥
रास्नादिक्काथसंयुक्तो विविधं हन्ति मारुतम् ।
काकोल्यादिशृतात्पित्तं कफमारग्वधादिना ॥ ५७ ॥
दार्वीशृतेन मेहांश्च गोमूत्रेण च पाण्डुताम् ।
मेदोवृद्धिञ्च मधुना कुष्ठं निम्बशृतेन वा ॥ ५८ ॥
छिन्नाक्काथेन वाताऽस्रं शोथं शूलं कणाशृतात् ।
पाटलाक्काथसहितो विषं मूषिकजं जयेत् ॥ ५९ ॥
त्रिफलाक्काथसहितो नेत्रार्तिं हन्ति दारुणाम् ।
पुनर्नवादेः क्काथेन हन्यात्सर्वोदराण्यपि ॥ ६० ॥

शा.सं., रसायन सं , ना वि., ध , र कि., बृ मा , यो. त., वातादिरोगे ।

टि०—ना वि , ध , र कि., बृ मा , यो त इत्यादिषु ग्रन्थेषु धातुरहित पाठोऽस्ति । रसकिन्नरे भार्ग्या अग्रे "वचा मूर्वा च पत्रकम् । देवदारुकणे कुष्ठ रास्ना मुस्ता च सैन्धवम् ॥ फल त्रिकण्टक पथ्या धान्यकञ्च विभीतकम् । धात्री त्वचमुशीरञ्च यवक्षारोऽखिलान्यपि ॥ एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् । यावन्त्येतानि चूर्णानि तावदेवाऽत्र गुग्गुलु." इतिपाठो दृश्यते तत्र फलशब्देन मदनफल ग्राह्यम् । पथ्याविभीतकधात्रीणा शृङ्गीग्राहिकतान्यायेन स्वतन्त्रनामग्रहणान्नागरादिसङ्घाते सन्निविष्टत्वान्न सर्वसङ्घातद्वगुण्य किं वा सङ्घातसमता भवति, केवलगुग्गुलावेव सर्वसमताकाङ्क्षाऽस्ति इति विशेषत्वात्स पृथगेव योग स्वीकरणीय । नागरादीना प्रत्येक पञ्चतोलकपरिमिताना सङ्घाते कर्णिकारफलमज्जा, पुनर्नवमूल, सिन्धुवारपत्राणि, श्वेतत्रिवृन्मूल, निम्बत्वक्, श्रावणिका, हसपदी इति सप्तवस्तूनि प्रत्येक दशतोलकपरिमितानि । इन्द्रवारुणिकामूलं वरुणत्वक् च प्रत्येक विंशतितोलकपरिमित दत्त्वा स्वानुभवाद् वय योगराज निष्पादयाम इत्यपि पृथग्योग । अयञ्च योगोऽन्ययोगाऽपेक्षयाऽधिकतमगुणावहोऽस्ति, अनयव युक्त्या सर्वेऽपि यशोऽभिलाषिणो वैद्या इम योग निष्पादयन्त्विति विनीताऽस्माक प्रार्थना । अस्मिन्योगे मैथुनाऽऽहारपानाना त्यागो नैवाऽत्र विद्यते इति लिखित दृश्यते परन्तु धातुघटितयोगे इद न सङ्गच्छते, एतत्सेविन ककाराष्टकसेवाया विकृते प्रत्यक्षदृष्टत्वात्, तस्मात् ककाराष्टकपरिवर्जनमवश्य करणीयम् । धातुरहितयोगे तु यथालिखित रमणीयमेवाऽस्ति, इति भिषग्भिर्हृद्याकलय्य प्रयोग. करणीय ।

भाषा—सोंठ, पीपल, चव्य, पिपलामूल, चित्रक, भुनाहींग, अजमोद, पीलीसरसों, स्याहसफेदजीरा, रेणुका (रोण पहाड़ी), इन्द्रजव, पाठा, विडङ्ग, गजपीपल, कुटकी, अतीस, भारङ्गी, वच, मूर्वा (मरोडफली), १–१ टङ्क, सबसे दूनीत्रिफला, इनसबकी बराबर शुद्धगूगल, वङ्ग, रजत, नाग, लोह, फोलाद, अभ्रक, मण्डूर इनकीभस्में तथा रससिन्दूर १–१ पल

लेकर गिलोय अथवा दशमूलकेक्वाथमें गूगलको पकाकर छानले और फिरसे गुड़की चाशनीके सदृश पकाकर सवचीजें मिलाकर ४-४ माशेकी गोलिया बनाकर घीके वर्तनमें रखछोड़े, यह शार्ङ्गधरका सिद्धान्तहै। परन्तु रसकिन्नरप्रभृतिग्रन्थोंमें विशुद्ध गूगलको ऊखलप्रभृतिमें गोघृतकेसाथ यहातक कुटवाना कि उसका द्रवहोजाय फिर इसमें ऊपरके चूर्णको धीरे २ डालकर कूटताजाय। समस्तवस्तु मिलजानेपर पूर्ववत् गोलिया बनाकर रखछोड़े। इसतरह इसका विधान मिल्ताहै पर इतनीहीविधिसे इसे तैयार न समझना। सवचीजें मिलजानेपर लोहेके खरलमें लोहेकी मूसलीसे ६-७ रोज़ मर्दनकराना जिसमें कि गूगल और दवाओंका जुदापन कोशिशकरनेपरभी मालूम न हो। इसमें मात्रा ४ माशेकी लिखी हुई है सो धातुरहितकी समझनी। शार्ङ्गधरने इसका खुलासा नहीं किया यह उनकी भारी भूलहै क्योंकि उनके लिखे मुताविक पाठसे गूगल वगैरह द्रव्य और धातुएं लगभग समप्रमाण होजातीहै। इसकी ४ माशेकी मात्रा आजकलके ज़मानेमें धातुयुक्तगूगलकी तो दरकिनार केवल गूगलकी इतनीमात्राको कोई सहन नहीं कर सकता। इसलिये इसकी अधिकसे अधिक १ माशेकी गोली होसक्तीहै इसेभी सवलोग सहन नहीं करसक्ते अत ३-३ रत्तीकी गोलिया बाधनी चाहियें और धातुरहित गूगलकी २ माशेकी गोलीसे अधिक नहीं बाधना। अपवादरूपसे कोई ४ माशेकी गोली कदाचित् हज़मकरसके पर इससे सवके लिये ४ माशेकी गोलीका प्रमाण बाधना अनुचितहै। इसके सेवनमें मैथुन, आहारपानादिकके परहेज़ करनेकी आवश्यक्ता नहीं बताईहै परन्तु यह धातुरहितके प्रयोगमें समझना। धातुसहितके सेवनमें कमसेकम ककारादिवर्ग का त्यागकरना अत्यावश्यक समझना। इसकी १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ लेनेसे समस्तवातविकार, कुष्ठ, अर्श, ग्रहणी, प्रमेह, वातरक्त, नाभिशूल, भगन्दर, उदावर्त, क्षय, गुल्म, अपस्मार, ऊरुस्तम्भ, मन्दाग्नि, श्वास, कास, अरुचि, शुक्र और रजोदोष, स्त्री तथा पुरुषका वन्ध्यत्वदोष, इनसवको यह नष्टकरताहै। दिग्दर्शनार्थ अनुपानोंकीकल्पना नीचेलिखे प्रकारोंसे करना। रास्नादिक्वाथकेसाथ नानातरहके वातविकार, काकोल्यादिसे पित्तविकार, आरग्वधादिसे कफविकार, दारुहल्दीके काढ़ेसे प्रमेह, गोमूत्रसे पाण्डुता, मधुसे मेदोवृद्धि, निम्बपञ्चाङ्गके क्वाथसे कुष्ठ, गुडूचीके क्वाथसे वातरक्त, पीपलके काढेसे शोफ और शूल, पाढरकेक्वाथसे चूहेकाविष, त्रिफलाके क्वाथसे नेत्रोंकी भयंकरपीडा, पुनर्नवादिक्वाथसे समस्त उदररोगोंको यह नष्टकरताहै। इसतरह जहा जैसी औचिती हो वहापर अनुपानकायोग वैद्य अपनीवुद्धिसेकरे॥ ९॥

१० योगराजगुग्गुलुः (द्वितीयः)

त्रिकटु त्रिफला पाठा शताह्वा रजनीद्वयम्।
अजमोदा वचा हिङ्गु हपुषा हस्तिपिप्पली॥ ६१॥
उपकुञ्चिका शटी धान्यं विडं सौवर्चलन्तथा।
सैन्धवं पिप्पलीमूलं त्वगेला पत्रकेसरम्॥ ६२॥
फणिज्झकश्च लौहश्च सर्जकश्च त्रिकण्टकम्।
रास्ना चाऽतिविषा शुण्ठी यवक्षाराऽम्लवेतसम्॥६३॥
चित्रकं पुष्करश्चव्यं वृक्षाम्लं दाडिमं स्नुः।
अश्वगन्धा त्रिवृद्दन्ती वदरं देवदारु च॥ ६४॥
हरिद्रा कटुका मूर्वा त्रायमाणा दुरालभा।
विडङ्गं मृतवङ्गश्च यमानी वासकोऽभ्रकम्॥ ६५॥
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्।
शोधितं गुग्गुलुञ्चैव सर्वचूर्णसमं नयेत्॥ ६६॥
घृतेन कुट्टयित्वा च स्निग्धे भाण्डे निधापयेत्।
रसवातेन ये भग्नाः कटिभग्नाश्च ये जनाः॥ ६७॥
एकाङ्गं शुष्यते येषां कुष्टं वाऽपि क्षतोत्तरम्।
पादौ विस्तारितौ येषां येषां वा गृध्रसीग्रहः॥ ६८॥
सन्धिवातं क्रोष्टुशीर्षं वातं सर्वशरीरगम्।
अशीतिं वातजान्रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान्॥ ६९॥
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव हन्त्यवश्यं न संशयः।
अयं वृहद्योगराजगुग्गुलुः सर्ववातहा॥ ७०॥

भै र, आमवाताऽधिकारे।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, छोटी और वड़ी पाठा, सोंफ देशी और रूमी, हल्दी, दारुहल्दी, अजमोद, वच, भुनीहींग, झाऊकीपत्ती या फल, गजपीपल, कालीजीरी, मगरैल, कचूर, धनिया, विडनमक, संचल, सैन्धव, पिपलामूल, तज, इलायची, पत्रज, केशर, मरुवा, लोहभस्म, राल, गोखरू, रास्ना, अतीस, सोंठ, यवक्षार, अमलवेत, चित्रक, पोहकरमूल, चव्य, कोकम, अनार, एरण्डकीजड़, असगन्ध, निसोत, दन्तीमूल, वेरकीछाल, देवदारु, हल्दी, कुटकी, मरोड़फली, त्रायमाण, जवासा, विडङ्ग, वङ्गभस्म, अजवाइन, अड्डसा, अभ्रकभस्म ये प्रत्येक समभाग लेकर वारीकचूर्णकर ऊखलवगैरहमें शुद्धगूगलको डालकर गोघृत देकर द्रवहोनेतक कुटवाकर सवचीज़ोंके चूर्णको थोड़ा थोड़ा मिलाकर कुटवावे। अन्तमें २-३ रोज़ मर्दनकराके चिकने वर्तनमें रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेसेलेकर २ माशेतक उचितानुपानकेसाथ देनेसे आमवात, कटिवात, एकाङ्गशोष, कुष्ठ, उर क्षत, खञ्जता, गृध्रसी, सन्धिवात, क्रोष्टुशीर्ष, समस्तशरीरस्थवातविकार, ८० प्रकारकी वातव्याधि, ४० पित्तरोग और २० कफरोगोंको यह नष्टकरताहै। तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ समस्तरोगोंको दूरकरताहै॥ १०॥

११ योगराजरसः

त्रिफलायास्त्रयो भागास्त्रयस्त्रिकटुकस्य च।
भागाश्चित्रकमूलस्य विडङ्गानां तथैव च॥ ७१॥
पञ्चाऽश्मजतुनोभागास्तथा रूप्यमलस्य च।
माक्षिकस्य च शुद्धस्य लौहस्य रजसस्तथा॥ ७२॥
अष्टौ भागाः सितायाश्च तत्सर्वं सूक्ष्मचूर्णितम्।
माक्षिकेणाऽऽप्लुतं स्थाप्यमायसे भाजने शुभे॥७३॥
उदुम्बरसमां मात्रां ततः खादेद्यथाऽग्निना।
दिनेदिने प्रयुञ्जीत जीर्णे भोज्यं यदीप्सितम्॥ ७४॥

वर्जयित्वा कुलत्थानि काकमाची कपोतकम् ।
योगराज इति ख्यातो योगोऽयममृतोपमः ॥ ७५ ॥
रसायनमिदं श्रेष्ठं सर्वरोगहरं शिवम् ।
पाण्डुरोगं विषं कासं यक्ष्माणं विषमज्वरम् ॥ ७६ ॥
कुष्ठान्यजीर्णकं मेहं शोषं श्वासमरोचकम् ।
विशेषाद्धन्त्यपस्मारं कामलां गुदजानि च ॥ ७७ ॥

च स., अ ह, र प्र, ग नि., टो., वै.द., वै चि, र र.यो. र., अ सं, र.चं, वृ.यो त, वै क., लो.प., र का., नि.र., र सु, यो.म, ना वि., पाण्डुकामलाऽधिकारे।

टि०—गदनिग्रहे "मुस्ताकम्पिल्लयोर्भागो देयश्चाऽपि पृथक्पृथक्, इत्यधिक पाठो दृश्यते। लो प. अश्मजतुस्थाने मण्डूर नियोजितम्। चरके "ताप्याऽद्रिजतुरौप्याऽयोमला. पञ्चपला पृथक्। चित्रकत्रिफलाव्योषविडङ्गैः पालिकैः सह ॥ शर्कराऽष्टपलोन्मिश्रा चूर्णिता मधुना प्लुता।,, इत्याकारक योगं विलिख्य त्रिफलायास्त्रयो भागा इत्यधस्ताल्लिखितम्। तत्र पाठान्तरताया न भ्रमितव्य उपरिष्टान्निर्दिष्टस्यैव त्रिफलायास्त्रयो भागा इत्यादिना विवरण कृतमस्ति। र च ताप्यादियोग।

भाषा—त्रिफला, त्रिकटु, चित्रक, विडङ्ग ३–३ भाग, शुद्धशिलाजीत, रूपामाखी, सोनामाखी, लोहभस्म ५–५ भाग, शक्कर ८ भाग लेकर सबका वारीकचूर्णकर मधुमें मिलाकर लोहेकेपात्रमें रखकर ६–७ रोज़ धान्यराशिमें रखछोड़े। इसमेंसे अग्निवल देखकर ३ मासेसे १ तोलेतककी मात्रा प्रतिदिन सेवनकरे। जीर्णहोनेपर कुलथी, मकोय और कबूतरको छोड़कर इच्छानुसार भोजनकरे। यह अमृतसदृशयोगहै समस्तरोगोंको नष्टकर रसायनकेफलको देताहै। पाण्डु, विष, कास, राजयक्ष्म, विषमज्वर, कुष्ठ, अजीर्ण, प्रमेह, शोष, श्वास, अरुचि, कामला, ववासीर इनको यह नष्टकरताहै विशेषतया अपस्मारको दूरकरताहै ॥ ११ ॥

१२ योगराजलोहम्

त्रिफला वाकुचीवीजं भृङ्गराजकटुत्रिकम् ।
गुडूच्यैडगजाबीजं केशराजं समुस्तकम् ॥ ७८ ॥
धात्रीखदिरसिन्धूत्थं यमानी जीरकद्वयम् ।
कान्तभस्म विडङ्गानि सर्वचूर्णानि कारयेत् ॥ ७९ ॥
लोहं सर्वसमं ह्येष योगराज इतिस्मृतः ।
सर्वकुष्ठविकारेषु विहितो लोहकोविदैः ॥ ८० ॥

र र, र.क., कुष्ठे।

भाषा—त्रिफला, वाकुचीकेवीज, भंगरा, त्रिकटु, गिलोय, पवाड़केवीज, कालाभंगरा, नागरमोथा, आवला, खैरसार, सेंधानमक, अजवाइन देशी तथा खुरासानी, स्याह और सफेदजीरा, कान्तलोहभस्म, विडङ्ग, सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर सवकी वरावर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े। अथवा इसयोगमें कहीहुई त्रिफला वग़ैरहवनस्पतियोंके स्वरस अथवा काथोंसे १–१ भावना देकर १–१ मासेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली कुष्ठहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तकुष्ठोंको नष्टकरताहै ॥ १२ ॥

१३ योगवाहक रसः (प्रथमः)

गन्धकं चूर्णयित्वा च नवनीतेन संयुतम् ।
वस्त्रे वेष्ट्वा प्रदीपस्य शिखायाः सन्निधिं कुरु ॥८१॥
तदुद्भूतेन तैलेन रसपिण्डं सटङ्कणम् ।
बद्ध्वा चूर्णेन वस्त्रेण गौरीयन्त्रे विनिःक्षिपेत् ॥ ८२ ॥
तदूर्ध्वं गन्धकं दत्त्वा पिधायाऽग्निं शनैः शनैः ।
षड्गुणे गन्धके जीर्णे रसो भवति रोगहा ॥ ८३ ॥
रसस्य तुर्यभागेन ताम्रपिष्टिं प्रकल्पयेत् ।
इष्टिकायां तथा क्षिप्त्वा षड्गुणं गन्धकं क्षिपेत् ॥ ८४॥
पिष्टिं तां तु समुद्धृत्य मत्स्याक्षीद्रवमध्यगाम् ।
शिलाभेदद्रवै र्युक्तां स्वेदयेन्मृदुवह्निना ॥
योगवाहकसञ्ज्ञोऽयं योज्यो योगेषु निर्भयः ॥ ८५ ॥

र मृ सर्वरोगे।

भाषा—शुद्धगन्धकका वारीकचूर्णकर मक्खनमें मिलाकर खादीकेकपड़ेपर लेपकरके वीचमलोहेकीशलाका डालकर शिथिलवत्तीवनाय दोनोंओर आग लगादे और नीचे कांसेकी थाली रखदे। इसमेंसे जितना तैल टपके उसको किसीशीशीमेंभरले, यह गन्धकद्रुति तैयार हुई। शुद्धपारेमें चतुर्थांश सुहागा देकर इसतैलसे यहांतक मर्दनकरे कि चमकरहित होकर गोली वंधजाय। इसगोलीको चूनापुतेहुए वस्त्रमें पोट्लीके आकारमें वाधकर चूनापुतेहुए गौरीयन्त्र (योगवाहक—नं ३ में कहेहुए) में पारेकी वरावर नीचे ऊपर गन्धक देकर वीचमें पोट्लीको रख ऊपरसे अश्वखुराकार ठीकरा रखकर ऊपर जङ्गलीकण्डोंके छोटे २ टुकड़े जमाय निर्वातस्थानमें अग्नि लगादे। पर यह ध्यान रक्खे कि गन्धकमात्र जलजाय, पारा न उड़े। स्वाङ्गशीतलहोनेपर पूर्ववत् दूसरागन्धक रखकर आचदे। ऐसे षड्गुणगन्धक जारणकरके पारेसे चतुर्थांश शुद्धताम्रका चूर्णमिलाकर गन्धकद्रुतिके सहारेसे पिष्टी वनाय पूर्ववत् षड्गुणगन्धकजारणकर मत्स्याक्षी और पाषाणभेदकेस्वरस अथवा काथमें दोलायन्त्रवनाय ४–४ पहर पकानेसे यह योगवाहकरस तैयारहोताहै। निडरहोकर इसका तमामरोगोंमें प्रयोगकरे ॥ १३ ॥

१४ योगवाहकरसः (द्वितीयः)

मेघनादवचाहिङ्गुरसोनानां हि गोलकम् ।
कृत्वा तन्मध्यगं वीर्यं लवणेऽथ निवेशयेत् ॥ ८६ ॥
संरुद्ध्य सम्पुटं सम्यगूर्ध्वं देहि सुगोमयम् ।
चुल्ल्यां यन्त्रं समारोप्य वह्निं यामचतुष्टयम् ॥ ८७ ॥
मध्यज्वालं समुज्ज्वाल्य स्वाङ्गशीतलतां नयेत् ।
ऊर्ध्वलग्नं समादाय वस्त्रे वद्ध्वा च गन्धकम् ॥ ८८ ॥
मध्यगं पारदं कृत्वा सोमानलेन तापयेः ।
ऊर्ध्वगेशस्य चत्वारो गन्धकस्याऽष्टभागकाः ॥ ८९ ॥
सैन्धवस्य च भागौ द्वौ श्वेताजयन्तिकाद्रवैः ।
मृद्गीहि त्रीण्यहानि त्वं गोलकं तं विशोषयेः ॥ ९० ॥
तप्तां मूषां जले क्षिप्त्वा गृहाण रसभस्मकम् ।
संस्कृत्य कण्टकार्याद्यैर्यथेष्टं विनियोजयेः ॥ ९१ ॥

तत्तद्रोगहरै द्रव्यैः सम्यग्युक्त्या नियोजितः ।
निहन्ति रोगसङ्घातं दृष्टप्रत्ययकारकः ॥ ९२ ॥

र. मृ , सर्वरोगे ।

भाषा—कांटेवालीचौलाई, वच, उत्तमहींग और एकअंड़ियालहसन समभागलेकर कल्कबनाले । उसकल्ककेगोलेमें पूर्वोक्त (योगवाहक नं. १ मेंकहीहुई) गोलीको बन्दकर गोलाबनाय डमरूयन्त्रमें लवणके भीतर रख ४-५ कपड़मिट्टी देकर मुंह इसतरह बन्दकरे कि सन्धिसे पारा न निकलने पावे । फिर यन्त्रको चूल्हेपर रख ऊपरके घड़ेके पेंदेपर गोवर रखदे । चूल्हेमें ४ पहरकी मध्यमाग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर यन्त्रको उघाड़ ऊपरके घड़ेमें लगेहुए पारेको निकालकर इसके समभाग गन्धकको नीचे ऊपर रख पहिलेकी तरह डमरूयन्त्र बनाय ४ पहर की आच देकर पारेको उड़ावे । इसपारेके ४ भाग, शुद्धगन्धक ८ भा , कांचकीतरह चमकदार सैन्धव २ भाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीबनाय सफेदकोयल और तितलीके रसोंसे ३-३ रोज़ मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर कण्डोंमें लालकर इन्द्रीके रसोंमें बुझावे । इसीप्रकार भटकटैया वगैरह मारकगणोंके रसोंमें बुझावे और मर्दनकर गरमकरे । ऐसे जबतक पारा अग्निस्थायी न होजाय तबतककरे । अग्निस्थायी होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसको तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ १४ ॥

१५ योगवाहकरसः (तृतीयः)

रसस्य तुर्यभागेन ताम्रचूर्णं प्रकल्पयेत् ।
जम्बीरोत्थद्रवै मर्द्य दिनान्ते तत्समुद्धरेत् ॥ ९३ ॥
वस्त्रे बद्धेष्टिकायन्त्रे तुल्यं गन्धेन पाचयेत् ।
एवन्तु षड्गुणं यावत्कार्यं गन्धकजारणम् ॥ ९४ ॥
पाषाणभेदिमत्स्याक्षीद्रवैः पिष्टन्तु मर्दयेत् ।
तद्गोलं वेष्टयेद्वस्त्रे कल्के पाषाणभेदजे ॥ ९५ ॥
मत्स्याक्ष्याश्च घनालेपं दत्त्वा पातनयन्त्रके ।
स्वेदयेद्याममात्रन्तु रसोऽयं योगवाहकः ॥ ९६ ॥
गुञ्जाद्वयं प्रदातव्यं हिध्मावैस्वर्यश्वासजित् ।
दशमूलं पिबेच्चाऽनु सकुलत्थं कषायकम् ॥ ९७ ॥

र. को , र क , र सु , र. का , व रा , यो म , हिक्कायाम् ।

टी०—अत्रेष्टिकायन्त्रस्य गौरीयन्त्रमिति नामान्तरम्, तल्लक्षणं यथा— "कृत्वा चाऽष्टाङ्गुलोच्छ्रायां चतुरस्रां समेष्टिकाम् । शीर्षभागात्समुत्कल्य मध्ये चूर्णेन लेपयेत् ॥ श्लक्ष्णां रसकृता पिष्टिं कृत्वा प्राग्वद्धनाम्रजाम् । रौप्यजा हेमजा वाऽपि सत्त्वेनाऽपि विनिर्मिताम् ॥ निवेश्य तत्र चोर्द्ध्वाऽधो बलेश्चूर्णं पिधाय च । तस्या पिष्ट्याश्चतुर्थांशं वारवारं विशोधयेत् ॥ वस्त्रे खर्परचक्री तु दत्त्वाऽऽलिप्य विशोष्य च । ऊर्द्ध्वं हयखुराकारं पुटं दद्यात्तु तूर्णकं ॥ गौरीयन्त्रमिदं प्रोक्तमिष्टिकायन्त्रकन्तथा,, इति ।

भाषा—एकभाग शुद्धपारेमें शुद्धताम्रचूर्ण चतुर्थांश मिलाकर जंभीरीके रससे एकरोज मर्दनकर गोलीबनाय बारीक मलमलके कपड़ेमें बांधकर पोटली बनाले फिर ८ अङ्गुल ऊंची और १ बालिस्त चोड़ी चौखूटीईंटमें किसी तीक्ष्णशस्त्रसे खोदकर बीचमें इतनागहरा खड्डा बनावे कि जिसमें पारदपिष्टीकी पोटली आसानीसे रहसके और नीचे ऊपर चतुर्थांश गन्धककाचूर्णभी रहसके । फिर इसखड्डेको सीप अथवा पत्थरकेचूनेसे पोतकर सुखाले और पोटलीसे चतुर्थांश गन्धक नीचे तथा ऊपर देकर पोटलीको रखदे । इसगर्तके ऊपर घोड़ेकेखुरके आकारका लम्बा ठीकरा रखकर छोटे २ जङ्गलीकण्डोंके टुकड़े जमाकर इतनी आचदे जिसमें कि ईंटके अन्दरका गन्धक जलजाय पर पारा न उड़े । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े इसतरह १२ बार आच देकर षड्गुणगन्धकजारणकरके पाषाणभेद और मत्स्याक्षीके रसोंसे १-१ रोज़ मर्दनकर गोलीबनाय पूर्ववत् बारतह कपड़ेमें रख कच्चेडोरोंसे लपेटकर गोली बनाले । इस गोलीपर पाषाणभेदके कल्कका आधाअङ्गुल लेपदेकर एककपड़ा लपेट फिर मत्स्याक्षीकालेप देकर सुखाय डमरूयन्त्रमें रखकर ६-७ कपड़मिट्टीसे मुंह बन्दकर एकपहरतक मन्दाग्नि देकर स्वेदितकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्तीकी मात्रा कुलथीमिलेहुए दशमूलकेकाढ़ेकेसाथ देनेसे हिचकी स्वरभङ्ग और श्वासको यह नष्टकरताहै तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ १५ ॥

१६ योगवाहकरसः (चतुर्थः)

सूतं ताम्रं कान्तपाषाणगन्धं
कार्पासास्थिक्वाथतो वासरैकम् ।
घर्षेत्पश्चात्पाचनाख्ये च यन्त्रे
शौल्वेपात्रे यत्नतः पाचयेच्च ॥ ९८ ॥
ताम्रे लग्नं नागवल्लीगुडूची-
नीरे सूतं मर्दयेद्वासरैकम् ।
उक्तः सूतो योगवाहोऽस्य वल्लं
दद्याद्रोगेषूक्तमानेन नूनम् ॥ ९९ ॥

र दी , सर्वरोगाऽधिकारे

भाषा—शुद्धपारा, ताम्र और कान्तपाषाणभस्म, शुद्धगन्धक सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर कपासकेबीजोंके क्वाथसे १ रोज़ मर्दनकर गोलीबनाय इसकेबराबर शुद्धताम्रपत्रके सम्पुटमें बन्दकर ४-५ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर लवणयन्त्रमें एकरोज़ क्रमवृद्ध अग्निसे पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ताबेकेसम्पुटमें लगेहुएभागको गोलीकेसाथ लेकर नागरवेल और गिलोयके स्वरससे १-१ रोज़ मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ १६

१७ योगवाहीरसः

रसं टङ्कणं तालगन्धं समानं
महातप्ततोयं प्रदद्याद्विमर्द्य ।
दिनान्विंशतिद्वे मितं सिद्धयोगं
मुदे दर्शितश्चाऽत्र वीरेश्वरस्य ॥ १०० ॥

महावातहारी क्षुधादीप्तिकारी
समस्ताऽऽमये योगवाही प्रदिः।
प्रसूतस्त्रियां वालकानां कृशानां
महाव्याधिविध्वंसनोऽयं रसः स्यात् ॥१०१॥

र सि., सर्वरोगे।

भापा—शुद्ध पारा, सुहागा, हरिताल और गन्धक सव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर खौलताहुआपानी देताहुआ २२ रोजतक निरन्तर मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह भयङ्कर व्याधियोंको नष्टकरताहै। प्रसुता स्त्री, वालक और कृश इनके भयङ्कररोगोंको दूरकरताहै ॥ १७ ॥

१८ योगसारचूर्णम्

द्राक्षाऽभयात्रुटिकणाशटिविश्वभार्गी-
शृङ्गीनिदिग्धिकयुताः पृथगेकभागाः।
भागद्वयं सुमृततीक्ष्णभवञ्च चूर्ण-
चत्वार एव जतुनोऽद्रिभवस्य भागाः॥१०२॥
सर्वं विचूर्ण्य मधुना धरणोन्मितं त-
त्स्वादेन्निहन्ति खलु पञ्चविधञ्च कासम्।
श्वासं क्षयं कफसमीरणसम्भवांश्च
रोगाँस्तमांसि सवितेव सुदृष्टमेतत् ॥१०३॥

यो. म , हिक्कायाम्।

भापा—द्राक्ष, हर्रे, इलायची, पीपल, कचूर, सोंठ, भारङ्गी, काकड़ासींगी, मेंढासींगी, भटकटैया येसव १–१ भाग, लोह भस्म २ भा., शिलाजीत ४ भागलेकर वारीकपीसकर ४–४ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ सुवहशाम देनेसे पांचप्रकारकी खासी, श्वास, क्षय, कफरोग और हिचकीप्रभृति दु साध्य वातरोग इनसवको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे सूर्य अन्धकारको। यह कईवारका अनुभूतहै ॥ १८ ॥

१९ योगसाररसः

सूतं गन्धं विपं ताम्रभस्म नेपालतालके।
क्षारत्रयं पटोलञ्च पञ्चकोलं सरामठम् ॥ १०४ ॥
शङ्खचूर्णं समालोड्य जम्बीराम्लेन मर्दयेत्।
लशुनस्य कषायेणाऽप्यक्षजेन रसेन च ॥ १०५ ॥
ताम्बूलवल्लीनिर्गुण्डीमातुलुङ्गार्द्रकद्रवैः।
ततश्च वटिकां माषमात्रां कृत्वा प्रयोजयेत् ॥ १०६ ॥
सर्वगुल्मेषु शूलेषु श्वासकासोदरेषु च।
आनाहे चाऽप्युदावर्ते सन्निपाते च दारुणे ॥ १०७ ॥
योगसाररसो ह्येष जातुकर्णेन निर्मितः।
उदावर्ते समभ्यज्य स्विन्नगात्रमुपाचरेत् ॥
आनाहे च तथा कार्यं वस्त्या वर्त्याश्च कर्मणा ॥१०८॥

व.रा., गुल्मे शूले च।

भापा—शुद्ध पारा, गन्धक और वछनाग, ताम्रभस्म, शुद्धजमालगोटा, रसमाणिक्य, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, पटोलपत्र, पञ्चकोल, भुनाहींग, शङ्खभस्म सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर जभीरी, लहसन, वहेडा, पान, संभालू, विजोरा, अदरख इनके रसोंसे १–१ भावना देकर १–१ माशेकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे सवप्रकारके गुल्म, शूल, श्वास, कास, उदररोग, आनाह, उदावर्त, प्रचण्डसन्निपात इनको यह नष्टकरताहै। उदावर्तमें वातहरतैलोसे समस्तअङ्गमें मालिशकराके स्वेदनकरे। आनाहमें वस्ति और वर्तियोंका प्रयोगकरे ॥ १९ ॥

२० योगसाराऽभ्रकम्

कणाशिलोद्भेदसमानमभ्रं
विलीढमाज्येन पयोऽनुपानम्।
निहन्ति यक्ष्माणमपि प्रवृद्धं
ससैन्यमेवाऽत्र न चित्रमस्ति ॥ १०९ ॥

लो. प., यक्ष्मरोगे।

भापा—पीपल और शिलाजीत १–१ भाग, अभ्रकभस्म २ भागलेकर सवको इकट्ठा घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती घीके साथ सेवनकर गरमदूधपीनेसे अत्यन्तवढ़ाहुआ उपद्रवसहित राजयक्ष्म नष्टहोताहै। इसमें संशय नहीं करना २०

२१ योगामृतोरसः

शुद्धसूतपलान्यष्टौ शुद्धं ताम्रं पलद्वयम्।
चूर्णितं सूतकं मर्द्य कुर्यात्तत्राष्टपिष्टिकाम् ॥ ११० ॥
शुद्धं गन्धं द्विद्विपलं तत्तुल्यं कटुतैलकम्।
तयो र्मध्ये ताम्रपिष्टीं लोहपात्रेऽल्पवह्निना ॥ १११ ॥
पचेद्यावद्द्रवं जीर्णं समुद्धृत्य विचूर्णयेत्।
विषं वचा त्र्यूषणञ्च तुल्यं मुस्ताविडङ्गकम् ॥ ११२ ॥
विषस्य त्रिगुणं योज्यं सर्वमेकत्र चूर्णयेत्।
सर्वं सूतसमं चूर्णं क्षौद्रमिश्रं वटीकृतम् ॥ ११३ ॥
द्विगुञ्जं भक्षितं हन्ति प्रसुप्तिं मण्डलं तथा।
गुडेन भक्षितो हन्ति सर्वकुष्ठनिकृन्तनः ॥ ११४ ॥

र का., कुष्ठाऽधिकारे।

भाषा—८ पल शुद्धपारेमें २ पल शुद्धतांवेका चूर्ण मिलाकर ४ पहर मर्दनकर वहुत वारीक कपड़ेमें रखकर गोलीवनाले। फिर शुद्धगन्धक २ पल कड़ाहीमें विछाकर पोटलीरख २ पल गन्धक ऊपर रखकर दवादे। ऊपरसे कड़वातैल ४ पल डालकर वहुतमन्दआंचसे पकावे। द्रवसूखजानेपर उतारकर रखले। स्वाङ्गशीतलहोनेपर ऊपरसे गन्धकको खुरचकर ताम्रपिष्टीका वारीकचूर्णकर शुद्धवछनाग, वच, त्रिकटु १–१ भाग, नागरमोथा और विडङ्ग ३–३ भागलेकर वारीकचूर्णकर पूर्वोक्तपिष्टीमें समभागसे मिलाकर मधुकेसाथ घोटकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गुड़केसाथ लेनेसे शून्यगात्रता और मण्डलादि समस्तकुष्ठोंको यह नष्टकरताहै ॥ २१ ॥

२२ योगीरसः (त्रिमूर्त्यादिः) (प्रथमः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं चतुर्भागं मृताऽभ्रकम् ।
निर्गुण्डीकारवल्लीभ्यां धुत्तूराऽऽर्द्रकचित्रकैः ॥ ११५॥
गिरिकर्णीजयन्तीभ्यां तिलपर्ण्या भृङ्गराजकैः ।
कार्पासीकाञ्चनीदन्तीकदम्बकेशराजकैः ॥ ११६ ॥
मर्दयित्वा तु तच्छुष्कं कटुतैलेन सेचयेत् ।
शरावसम्पुटे रुद्ध्वा वालुकायन्त्रके पचेत् ॥ ११७ ॥
स्वाङ्गशीतलमादाय हेमभस्म तु तारकम् ।
नागवङ्गौ पञ्चपटु त्रिक्षारं हिङ्गुलं समम् ॥ ११८ ॥
पूरयेद्वालुकायन्त्रे त्रियामं पाचयेद् दृढम् ।
स्वाङ्गशीतलमाकृष्य विषं पादमितं क्षिपेत् ॥ ११९ ॥
वल्लीजपञ्चभागांश्च पञ्चपित्ते विभावयेत् ।
नानाऽनुपानैः संयुक्तं रेणुमात्रं प्रयोजितम् ॥ १२० ॥
साध्याऽसाध्यांश्च दोषांश्च सर्वरोगान्विनाशयेत् ।
सर्वशास्त्राऽनुसारेण योगीरस उदाहृतः ॥ १२१ ॥

र क यो , सर्वरोगेषु ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा , अभ्रक-भस्म ४ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर संभालू, करेला, धतूरा, अदरख, चित्रक, कोयल, जेंती, हुरहुर, भंगरा, कपासकेफूल, हल्दी, दन्तीमूल, कदमकेफूल, कालाभंगरा इनप्रत्येककेरसोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर सुखाकर कटुतैलसे मर्दनकर गोलावनाय चारतहकपड़ेमें पोट्ली वनाय ३–४ कपड़मिट्टी लगादे। सूखनेपर शरावसम्पुटमें वन्दकर २–३ कपड़मिट्टी लगाकर सुखाय वालुकायन्त्रमेंरख ४ पहरकी मन्द अग्निमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सुवर्ण, रजत, नाग और वङ्ग इनकीभस्में, पांचोंनमक, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, शिगरिफ येसव मिलकर समभागमें मिलाकर पूर्वद्रवोंसे १–१ रोज मर्दनकर तैलसे पूर्ववत् गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर वालुकायन्त्रमें तीनपहरकी कड़ीआचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इससे चतुर्थांश शुद्धवछनाग और ५ भाग मरिच मिलाकर ५ पित्तोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे रोणकेवीजवरावर मात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह साध्य अथवा असाध्य समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २२ ॥

२३ योगेन्द्ररसः

विशुद्धं रससिन्दूरं तदर्द्धं शुद्धहाटकम् ।
तत्समं कान्तलौहञ्च तत्समञ्चाभ्रमेव च ॥ १२२ ॥
विशुद्धं मौक्तिकञ्चैव वङ्गञ्च तत्समं मतम् ।
कुमारिकारसैर्भाव्यं धान्यराशौ दिनत्रयम् ॥ १२३ ॥
ततो रक्तिद्वयमितां वटीं कुर्याद्विचक्षणः ।
योगवाही रसो ह्येष सर्वरोगकुलान्तकः ॥ १२४ ॥
वातपित्तभवान् रोगान् प्रमेहान्वहुमूत्रताम् ।
मूत्राघातमपस्मारं भगन्दरगुदामयम् ॥ १२५ ॥
उन्मादमूर्च्छे यक्ष्माणं पक्षाघातं हतेन्द्रियम् ।
शूलाऽम्लपित्तकं हन्ति भास्करस्तिमिरं यथा ॥ १२६॥
त्रिफलारसयोगेन शुभया सितयापि वा ।
भक्षयित्वा भवेद्रोगी कामरूपी सुदर्शनः ॥ १२७ ॥
रात्रौ सेव्यं गवां क्षीरं कृशानाञ्च विशेषतः ।
योगेन्द्राख्यो रसो नाम्ना कृष्णात्रेयविनिर्मितः ॥ १२८॥

भै र , ध , वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—रससिन्दूर १ भाग, सुवर्ण, कान्तलोह, अभ्रक, मोती और वङ्ग इनकीभस्में आधा आधाभाग लेकर एकरोज घीकुआरके रसमें मर्दनकर गोलावनाय एरण्डके पत्तोंमें लपेटकर कच्चे डोरेसे वाधकर धान्यराशिमें तीनरोज़तक रक्खे। चौथेरोज़ निकालकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर छायाशुष्ककर रख-छोड़े। इनमेंसे १–१ गोली रोगावस्थोचितानुपानकेसाथ देनेसे वातपित्तजरोग, प्रमेह, वहुमूत्रता, मूत्राघात, अपस्मार, भगन्दर, गुदरोग, उन्माद, मूर्च्छा, राजयक्ष्म, पक्षाघात, इन्द्रियोंकी कमज़ोरी, शूल, अम्लपित्त इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै। त्रिफलास्वरस अथवा शक्करकेसाथ इसका सेवन करनेसे मनुष्य कामरूपी होजाताहै। कमज़ोरोंको रात्रिमें एक गोली देकर गायकादूध पिलानाचाहिये ॥ २३ ॥

२४ योगेश्वररसः

मृतकं गन्धकं लौहं नागञ्चापि वराटिकाम् ।
ताम्रकं वङ्गभस्मापि व्योमकञ्च समांशकम् ॥ १२९ ॥
सूक्ष्मैलापत्रमुस्तञ्च विडङ्गं नागकेसरम् ।
रेणुकाऽऽमलकञ्चैव पिप्पलीमूलमेव च ॥ १३० ॥
एषाञ्च द्विगुणं भागं मर्दयित्वा प्रयत्नतः ।
भावना तत्र दातव्या धात्रीफलरसेन च ॥ १३१ ॥
मात्रा चणकतुल्या च गुटिकेयं प्रकीर्तिता ।
अश्मरी वहुमूत्रञ्च प्रमेहं मूत्रकृच्छ्रकम् ॥ १३२ ॥
व्रणं हन्ति महाकुष्ठमर्शांसि च भगन्दरम् ।
योगेश्वरो रसो नाम महादेवेन भाषितः ॥ १३३ ॥

र चि , र स , र सु , प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, नाग, पीलीकौड़ी, ताम्र, वङ्ग और अभ्रक इनकीभस्में १–१ भाग, छोटीइलायची, पत्रज, नागरमोथा, विडङ्ग, नागकेशर, रेणुका (रोण–पहाड़ी), आवले, पिपलामूल, येसव २–२ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर आवलेके रसकी ३–४ भावनाएं देकर चनेप्रमाण गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे पथरी, वहुमूत्र, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, नानाप्रकारकेव्रण, महाकुष्ठ, ववासीर और भगन्दर इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ २४ ॥

२५ योगोत्तमावटी

त्र्यूषणं त्रिफला क्षारौ लवणान्यथ चित्रकम् ।
तालीसं चविकं शृङ्गी निशे द्वे गजपिप्पली ॥ १३४ ॥

एला त्वचं विडङ्गानि पौष्करं नागकेसरम् ।
ताप्यकं दीप्यको मुस्ता समभागानि कारयेत ॥१३५॥
यावन्त्येतानि द्रव्याणि तावन्मात्रमयोरजः ।
तावच्छिलाजतु देयः सर्वैस्तुल्यस्तु गुग्गुलुः ॥१३६॥
सङ्कुट्य गुटिकां कुर्यादक्षमात्रप्रमाणतः ।
खादेन्मा मधुना युक्त्या तोयक्षीररसाशनः ॥ १३७ ॥
निर्यन्त्रितं सदा भोज्यं सर्वर्तुषु निरत्ययम् ।
अशीतिं वातजान्रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ॥१३८॥
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव प्रमेहांश्चैव विंशतिम् ।
उदराणि तथा चाऽष्टौ श्वयथुं पवनात्मकम् ॥ १३९ ॥
विंशतिं मूत्रकृच्छ्राणि दुष्टनाडीव्रणानि च ।
हन्त्यष्टादश कुष्टानि सप्त चैव महाक्षयान् ॥ १४० ॥
कासं श्वासं तथा हिक्कां हृच्छूलं छर्घरोचकम् ।
गुल्मांश्च पाण्डुरोगञ्च जयेत्पञ्चप्रकारजम् ॥ १४१ ॥
चत्वारो ग्रहणीदोषाः षडर्शांसि तथैव च ।
सर्वांस्तान्नाशयत्याशु तमः सूर्योदयो यथा ॥ १४२ ॥
तथाऽर्बुदं गण्डमालां विद्रधिं सभगन्दरम् ।
हरते सर्वरोगांश्च वृक्षमिन्द्राशनि र्यथा ॥
योगोत्तमेति विख्याता गुटिका वैद्यपूजिता ॥ १४३॥

ग नि., यो म., सर्वरोगे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, सज्जी, यवक्षार, पाचोंनमक, चित्रकमूल, तालीसपत्र, चव्य, काकड़ासींगी, मेंढासींगी, हल्दी, दारुहल्दी, गजपीपल, इलायची, तज, विडङ्ग, पोहकरमूल, नागकेशर, शुद्धसोनामाखी, अजमोद, नागरमोथा येसब सम-भाग, इनसवकीवरावर लोहभस्म और शिलाजीत, इनसवकी-वरावर शुद्धगूगललेकर योगराजगूगलकीविधिसे १-१ तोलेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाथ खाकर जल, दूध, अथवा मासरसलेवे। भूखलगनेपर यथेष्ट भोजन करे। यह सव ऋतुओंमें अनुकूल पड़ताहै। इसकीमात्रा मूलमें १ तोलेकी लिखीहै परन्तु वह सवकेलिये अनुकूल नहीं होसक्ती। इसलिये ४ माशेकी गोलियें वनाकर मुश्किलसे इस जमानेमें चलसकेगी इसलिये २-२ माशेकी गोलियें वनाकररक्खे। इसकेसेवनसे ८० वातरोग, ४० पित्तरोग, २० श्लेष्मरोग, २० प्रमेह, ८ उदररोग, वातप्रधानसूजन, २० मूत्रकृच्छ्र (मूत्राघातको मिलाकर), दुष्टनाडीव्रण, १८ कुष्ठ, ७ धातुक्षय, ५-५ प्रकारकेकास, श्वास, हिचकी, हृच्छूल, वमन, अरुचि, गुल्म, पाण्डुरोग, ४ प्रकारकीग्रहणी, ६ ववासीर, अर्बुद, गण्डमाला, विद्रधि, भगन्दर इनसवको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे सूर्योदय तमको और इन्द्रकावज्र वृक्षोंको ॥ २५ ॥

२६ योनिकन्दोन्मूलनरसः

मृतं कांस्यं मृतश्चाऽभ्रं गन्धतुल्यं पुटैः पचेत् ।
सिद्धं गुञ्जात्रयं खादेद्योनिदोषं व्यपोहति ॥ १४४ ॥

ना. वि., योनिरोगे ।

भाषा—कांस्य और अभ्रकभस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर रक्तशोधक महामञ्जिष्ठादिप्रभृतिक्काथोंसे १०-२० पुटदेकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती योनिदोषहरानुपानके-साथदेनेसे और निम्बकल्कमें मिलाकर अन्दरलेपकरनेसे योनि कन्दादि समस्तरोग दूरहोतेहै ॥ २६ ॥

२७ योनिदोषहरोरसः

गन्धे वा तारताम्रे वा कृत्वाऽऽदौ भस्मसूतकम् ।
युक्त्या क्रमे प्रयोक्तव्यं योनिदोषविनाशनम् ॥ १४५॥

यो म., रसेन्द्रसं, स्त्रीरोगाधिकारे ।

टि०—"मृत सूत मृत ताम्र त्रिक्षाक्षाराम्बुनादिनम । भावयेद्रक्ष-येन्माप मुशलीचाऽऽर्द्रकद्रवे ॥ अनुपान लिहेन्नित्य कफशूलप्रशान्तये ।" इति योगमहार्णवे शूलाधिकारे पाठोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भाव. कर-णीय. । विशेषभावनाऽनुष्ठानन्तु कृतमपि गुणावहमेव सम्पत्स्यते, अनु-पानानि तु सर्वत्रऽवाऽनिल्यतानि भवन्ति ।

भाषा—शुद्धगन्धक, रजत और ताम्रभस्म इन एकएकमें अथवा सवमें समभाग पारदभस्म मिलाकर योनिदोषहरानुपानके-साथ देनेसे यह योनिरोगोंको नष्टकरताहै। इसमें यदि गन्धक-केसाथ पारदभस्म मिलाई हो तो ३ रत्तीतककीमात्रा देसक्तेहै यदि रजत अथवा ताम्रभस्मकेसाथ मिलाई हो तो २ रत्तीकी मात्रा समझनी। निम्बकल्ककेसाथ मिलाकर लेपभी करसक्तेहै २७

२८ योषिद्वल्लभरसः

सिन्दूरमभ्रं रौप्यञ्च वैक्रान्तं हेमटङ्कणम् ।
वराम्भसा भावयित्वा वल्लमात्रा वटीश्चरेत् ॥ १४६॥
योषिद्वल्लभनामाऽयं रसोऽण्डाधारसम्भवान् ।
निहन्ति निखिलान्रोगान् हर्यक्षो हरिणानिव ॥ १४७॥

आ वि., अण्डाधारगदाधिकारे ।

टि०—अण्डाधारगदस्य लक्षणानि—"उदरोरुव्यथा कृच्छ्रा मूत्र-स्याल्पंत्वरक्तते । ज्वराऽरोचकहृल्लासा अरति र्वल्सक्षयः ॥ धमनी वेगिनी क्षुद्रा जिह्वा रक्तोज्ज्वला तथा॥अण्डाधारगदस्यैता प्रोक्ता आकृतयो बुधैः॥"

भाषा—रससिन्दूर, अभ्रक, रजत, वैक्रान्त और सुवर्णभस्म, शुद्धसुहागा सव समभाग मिलाकर २-३ रोज त्रिफलाकेक्काथसे भावनादेकर ३-३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे स्त्रियोंके समस्त-रोगोंको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे सिह मृगोंको ॥ २८ ॥

२९ रक्तपित्तकुलकण्डनरसः (रक्तपित्तकुठारः)

शुद्धपारदवलिप्रवालकं हेममाक्षिकभुजङ्गरङ्गकम् ।
मारितं सकलमेतदुत्तमं भावयेच्च पृथगथ द्रवैस्त्रिशः॥
चन्दनस्य कमलस्य मालतीकोरकस्य वृषपल्लवस्य च ।
धान्यवारणकणाशतावरीशाल्मलीवटजटागुडूचिभिः

रक्तपित्तकुलकण्डनाभिधो
जायते रसवरोऽस्रपित्तिनाम् ।
प्राणदो मधुवृपद्रवैरयं
सेवितस्तु वसुकृष्णलो मतः ॥

नाऽस्त्यनेन सममत्र भूतले
भेषजं किमपि रक्तपित्तिनाम् ॥ १५० ॥

नि र., बृ. यो. त., र. सु, र. क. ल, रसायनसं., र. चं., र. कौ., यो. त., यो. र, चि. क्र., र. का, वै चि, रक्तपित्ते। वै. चि, यो. र., र सु, नि. र. रक्तपित्तकुठारः।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, प्रवाल, सुवर्णमाक्षिक, नाग और वङ्ग इनकीभस्में समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सफेदचन्दन, कमल और मालतीकेफूल, अडूसेकेपत्ते, धनिया, गजपीपल, शतावर, सेमलकामुसला, वटकीजटा और गिलोयके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ भावनाएं देकर ८–८ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अडूसेकेरस और मधुकेसाथ देनेसे यह रक्तपित्तको जडसे नष्टकरताहै। रक्तपित्तकेलिये इसकी वरावर और कोई दवा नहींहै इसलिये रक्तपित्तकेरोगियोंकेलिये यह प्राणप्रदहै ॥ २९ ॥

३० रक्तपित्तप्रमेहहारीरसः।

खल्वे समादाय विशुद्धसूत-
कर्षञ्च रक्तस्य घटोद्भवस्य।
प्रसूननीरेण च सप्त वारा-
न्वासारसेनाऽपि च तावदेव ॥१५१॥
दूर्वारसेनाऽपि च तद्वदेव
वारान्विमर्द्याऽप्यथ टङ्कणञ्च।
द्विनिष्कमात्रं खदिरस्य सारः
कर्षप्रमाणश्च शिवश्च चन्द्रः॥ १५२ ॥
तुल्यः पुनश्चन्दनवारिणाऽपि
सम्मर्द्य कुर्याच्च हरेणुतुल्याम्।
छायाविशुष्काश्च वटीं प्रभुज्य
मेहाञ्जयेदार्द्रकनीरखण्डैः॥
सरक्तपित्तां पिडिकाश्च हन्या-
त्प्रमेहजान् प्रातरलं मनुष्यः॥ १५३ ॥

चि क्र, रक्तपित्ते प्रमेहे च।

भाषा—एककर्ष शुद्धपारालेकर अगस्त्यके लालफूल, अडूसेकेपत्ते, सफेददूब इनके रसोंसे ७–७ वार मर्दनकर भुनासुहागा ८ माशे, खैरसार, सफेदचन्दन औरकपूर १–१ कर्ष डालकर चन्दनकेक्वाथसे ७ दिन मर्दनकर मटर वरावर गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरस और शक्करकेसाथ मिलाकर प्रात काल खानेसे फुड़ियोंसहितरक्तपित्त और प्रमेहोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३० ॥

३१ रक्तपित्तशामकरसः

षड्गन्धजीर्णेन रसेन हेम-
माक्षीकभस्म द्विगुणं प्रघृष्टम्।
पित्ताऽस्नरोगोपशमाय सेव्यं
वासाऽम्बुना माक्षिकमिश्रितेन ॥ १५४ ॥

रसायनसार, रक्तपित्ते।

भाषा—षड्गुणगन्धकजारितपारा (रससिन्दूर) १ भाग, सुवर्णमाक्षिकभस्म २ भाग लेकर अडूसेकेपत्तोंकेरससे २–४ दिन घोटकर रखछोड़े। इनमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतककीमात्रा अडूसेकेपत्तोंकेरस और शहदकेसाथदेनेसे यह रक्तपित्तको नष्टकरताहै। ३१।

३२ रक्तपित्तहरोरसः (प्रथमः)

मृतं सूतं मृतं ताम्रं तीक्ष्णं वासारसैर्दिनम्।
मर्दितं मासमात्रन्तु भक्षयेद्रक्तपित्तनुत् ॥ १५५ ॥
वृषपत्राणि निष्पीड्य रसं समधुशर्करम्।
पिबेत्तेन शमं याति रक्तपित्तं सुदारुणम् ॥ १५६ ॥

र म. मा, र. सु., ना वि, रक्तपित्ते।

भाषा—पारा, तावा और लोहा इनकीभस्में समभाग लेकर अडूसेके पत्तोंकेरससे एकरोज़ मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली खाकर एकतोले अडूसेके रसमें ३–३ माशे मधु और शक्कर मिलाकर पीनेसे १ महीनेमें घोररक्तपित्त नष्टहोताहै ॥ ३२ ॥

३३ रक्तपित्तहरोरसः (मृगाङ्करसः) (द्वितीयः)

कडारमायसं चूर्णं सूतेन्द्रे समचारितम्।
लोहारिवर्गसंघृष्टं रक्तपित्तहरं परम् ॥ १५७ ॥

रसेन्द्रसं०, र सु., रक्तपित्ते।

टि०—रसराजसुन्दरे "पटोलमायसञ्चूर्णं सूतेन्द्रसमचारितम्। लोहारिमृगमसृष्टं रक्तपित्तहरं परम् ॥" इत्याकारेण मन्दप्रज्ञतया विचारमकृत्वैव पाठो विन्यस्त.। लोहारिवर्गो यथा—त्रिफला त्रिवृता दन्ती कटुकी तालमूलिका। वृद्धदारश्च वृश्चीरवृषपत्रकचित्रका॥ शृङ्गबेरविडङ्गौ च भृङ्गभल्लातकोषधम्। दाडिमस्य च पत्राणि शतपुत्री पुनर्नवा॥ कुठारक्रामकौ कन्दस्तन्त्री भेकस्य पर्णिका। हस्तिकर्णपलाशश्च कुलिशः केशराजक॥ माण खण्डितकर्णश्च गोजिह्वा लोहमारका॥" यथाप्राप्त्येभिरोषधैरिमं रसं मर्दयित्वा प्रयोग करणीय इति रहस्यम्॥

भाषा—बुभुक्षित पारेमें समभागसे कडारलोहके चूर्णको चारितकर लोहारिवर्गमें २–४ दिन घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती रक्तपित्तहरानुपानकेसाथ लेनेसे यह रक्तपित्तको नष्टकरताहै ॥ ३३ ॥

३४ रक्तपित्ताङ्कुशोरसः (पित्तमुद्गर.)

पित्तमुद्गरो द्रष्टव्यः

र च, र र स, र सु, व रा, रक्तपित्ते।

टि०—वमवराजीये पित्तमुद्गरनाम्नाऽयं रसो निहितोऽस्ति तत्र प्रथमश्लोकपूर्वार्द्धे पारद हिङ्गुलोत्थञ्च ह्यूर्द्ध्वपातनतो नयेदिति क्रमस्ति तदपेक्षया पारद दरदञ्चैव पूर्वं यन्त्रेण मेलयेदिति पाठ समीचीन।

३५ रक्तपित्तान्तकोरसः

सूतद्विभागे बलिमाक्षिके च
शिलाजमेतत्त्रयतुल्यमस्य।
तुल्या गुडूची हिमधान्यधात्र्यो
द्राक्षाकिरातेन्द्रयवद्रुमत्वक् ॥ १५८ ॥

वासारसोद्भावितशुष्कपिष्टं
नीतं सितायष्टिमधुप्रमाणम्।
धारोष्णदुग्धेन निषेवणीयं
पित्ताऽस्रुरोगं नयतेऽन्तमेतत्॥ १५९॥

रसायनसार, रक्तपित्ते।

भाषा—शुद्ध पारा २ भाग, शुद्धगन्धक, सुवर्णमाक्षिक और शिलाजीत येतीनों पारेकी वरावर, गिलोय, सफेदचन्दन, धनिया, आवला, मुनक्का, चिरायता, इन्द्रजव और कुरैयाकी-छाल येसव मिलकर पूर्वगणकी वरावर लेकर वारीक चूर्णकर १–२ पहर शुष्कमर्दनकर अड्सेकेपत्तोंके रससे १–२ रोज़ मर्दनकर १ से २ माशेतककी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्कर, मुलहठी और मधुकेसाथ खाकर ऊपरसे धारोष्णदूधपीनेसे उपद्रवोंकेसहित यह रक्तपित्तको नष्टकरताहै॥

३६ रक्तमाहेश्वरोरसः

सूतं गन्धं मृतं स्वर्णं रससिन्दूरकान्तकम्।
सर्वद्विगुणमभ्रञ्च ताम्रभस्म द्विभागकम्॥ १६०॥
वङ्गं नागं तथा रौप्यं प्रत्येकं सूतसाम्यकम्।
लोहभस्म त्रिभागञ्च मुण्डसिन्दूरकन्तथा॥ १६१॥
सर्वं खल्वे विनिःक्षिप्य मर्दयेदतियत्नतः।
खर्जूरं यष्टिका द्राक्षा मधुपुष्पं शतावरी॥ १६२॥
लोध्रकाश्मर्यह्रीबेरपद्मकेसरपद्मकम्।
मृणालचन्दनोशीरनीलोत्पलघनं समम्॥ १६३॥
श्रीगन्धं वालकं कुष्ठं वलाशाल्मलिमूलकम्।
रम्भाकन्दं गोक्षुरकं माधवी सहदेविका॥ १६४॥
परूषककषायेण भावयेच्छतवारकम्।
वल्लप्रमाणकञ्चैव शर्करामृतमाक्षिकैः॥ १६५॥
भक्षयेद्धृतमिश्रन्तु रक्तपित्तहरं परम्।
सर्वपैत्तहरो नृणां रक्तमाहेश्वरोरसः॥ १६६॥

व. रा, पित्तरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सुवर्णभस्म, रससिन्दूर और कान्तभस्म १–१ भाग, अभ्रकभस्म १० भा, ताम्रभस्म २ भा., वङ्ग, नाग, रजतभस्म १–१ भाग, लोहभस्म और मुण्डसिन्दूर ३–३ भाग लेकर सवका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर छुहारा, ब्रह्मदण्डी, मुलहठी, द्राक्ष, महुआ, शतावर, लोध, गंभारीकेफल, हाऊवेर, पद्मकेसर, कमलगट्टा, भसींड, सफेदचन्दन, खस, नीलोफर, नागरमोथ, विरोजा, गेंहुला, कुठ, खरेटी, सेमलकामुसला, केलेकाकन्द, गोखरू, माधवीलता, सहदेवी और फालसा येसव २६–२६ तोले लेकर जवकुटकर इसके १०० भाग वनाकर रखले। इनमेंसे १–१ भागका अठगुने जलमें चतुर्थभागावशिष्ट क्वाथकरे। इसक्वाथसे ऊपरकेरसको सुखानेतक मर्दनकरे। फिर दूसरेभागको पूर्ववत् उवालकर काढावनाय उसमें मर्दनकरसुखावे। ऐसे १०० भावनाएं देकर इसरसको तैयारकरे। यद्यपि इसरसकेतैयार करनेमें वहुतदिनलगेंगे परन्तु यथार्थगुणतभीहोगा। अनुकल्पसे तैयार करनाहो तो तप्तखल्वमें दवाको रखकर पूर्वोक्तद्रवको शोषणकरता जाय तो इसतरह अधिकसेअधिक एकसप्ताहमें यह रस तैयारहोजायगा। इसकी ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली शक्कर, घी और मधुकेसाथ लेनेसे रक्तपित्त और समस्त रक्तविकारोंको यह नष्टकरताहै। इसमें घृतयुक्त पथ्य देना॥ ३६॥

३७ रक्तवातान्तकरसः

शुद्धं सूतं विषञ्चाभ्रं गन्धं त्रिकटुकं समम्।
चित्रमूलकषायेण दिनं मर्द्यञ्च वासया॥ १६७॥
अर्कमूलकषायेण दिनं जम्बीरनीरकैः।
दोलायन्त्रे पचेद्यामं माषमात्रञ्च भक्षयेत्॥
क्षीणवातं निहन्त्याशु रक्तवातं विनाशयेत्॥ १६८॥

व. रा., वै चि, क्षीणवाते।

टि०—भावनाविशेषस्यलोहभस्मनश्चाऽभावाद्द्वितीयेकामधेनौ नाऽन्तर्भवति।

भाषा—शुद्ध पारा और वछनाग, अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, त्रिकटु सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर चित्रककीजड़, अडूसा, आककीजड़कीछाल, जंभीरी इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज़मर्दनकरनेकेवाद उन्हींद्रवोंमें १–१ पहर स्वेदनकर १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह क्षीणवात और रक्तवातको नष्टकरताहै। क्षीणवात और रक्तवातकेलक्षण वसवराजीयमें देखलेना॥ ३७॥

३८ रक्तारिरसः

रसं गन्धं समं मर्देत्कज्जलीं लिङ्गिकारसैः।
काकिनीरससंयुक्तं भागैकं वोलचूर्णकम्॥ १६९॥
पर्पटीकदलीपत्रे पात्याऽस्याश्चूर्णकं लिहेत्।
रक्तपित्तकमर्शांसि रक्तप्रदरनुत्स्त्रियाः॥ १७०॥

र. शं, रक्तपित्ते।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर १ भागहीरादक्खनका चूर्णमिलाय शिवलिङ्गी और सफेदगुञ्जाकीपत्तीके रसोंसे १–१ रोज़मर्दनकर पर्पटीविधानसे पर्पटीवनाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ रत्तीसे १ माशेतक क्रमवृद्धिसे चढ़ावे और ह्रासकरे। अनुपान रोगावस्थाको देखकर युक्तकरे। इसकेसेवनसे रक्तपित्त, खूनीववासीर और रक्तप्रदर नष्टहोतेहैं। यद्यपि वोलको लोगोंने हीरावोललिख्याहै परन्तु उसके डालनेसे योगोक्तगुण नहींहोगा इसलिये जहांजहां रक्तको वन्दकरनेकेलिये खानेमें आताहै वहां सवजगह योजकनियोजकका ग्रहणकरना। यह आकारसाम्यहोनेसे भ्रम होगयाहै॥ ३८॥

३९ रजतादिलोहम्

भस्मीभूतं रजतममलं तत्समं व्योमचूर्णं,
सर्वैस्तुल्यं त्रिकटु सवरं लाय आज्येन युक्तम्।

लीढं प्रातः क्षपयतितरां यक्ष्मपाण्डूदरार्शः
श्वासं कासं नयनजरुजः पित्तरोगानशेषान्॥१७१

र स, र च., र क, र सु, यक्ष्मणि।

भाषा—चांदी और अभ्रक भस्म १–१ भाग, त्रिकटु, त्रिफला और लोहभस्म २–२ भाग लेकर वारीकचूर्णकर एकरोज़ घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ रत्तीसे १ माशेतक घीकेसाथ प्रातःकाललेनेसे राजयक्ष्म, पाण्डु, उदररोग, ववासीर, श्वास, कास, नेत्ररोग और तमामपित्तरोग इनसवको यह नष्टकरताहै ३९

४० रजतादिवटी (महदादिः)

कर्षप्रमाणं रजतं मौक्तिकं स्वर्णगैरिकम्।
कालमानन्तु वैक्रान्तं सिन्दूरं सशिलाजतु॥ १७२॥
लौहमभ्रप्रवालश्च त्रिधा चित्रकवारिणा।
काकमाचीरसेनापि सप्तधा च विभावयेत्॥ १७३॥
गुञ्जाद्वयमितां कृत्वा वटिकां पयसा सह।
प्रातः प्रातः प्रयुञ्जीत स्नायुरोगनिवृत्तये॥ १७४॥

मै र, स्नायुरोगे।

भाषा—रजत और मोतीभस्म, सोनागेरू १–१ कर्ष, वैक्रान्तभस्म, रससिन्दूर, शुद्धशिलाजीत, लोह, अभ्रक और प्रवालभस्म ३–३ कर्ष लेकर वारीक घोटकर चित्रककेकाढ़ेसे ३, और मकोयके रससे ७ भावनाए देकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली हमेशा प्रातःकाल दूधकेसाथलेनेसे यह स्नायुरोगको नष्टकरताहै॥ ४०॥

४१ रतिकान्तसुन्दररसः (मदनसुन्दरः)

रौप्यवङ्गरसलोहहेमकं वैकृताऽभ्रमपि सप्तभावितम्।
मोचजेन रतिकान्तसुन्दरः स्यादिहप्रवलवीर्यवृद्धये॥
क्षीरमोचरसशोपशर्करासंयुतो द्विगुणरक्तिकामितः।
मृष्टसात्म्यहितवल्यभोजनाद्योगवाहि परमं रसायनम्

र शं, वाजीकरणे।

भाषा—रजत, वङ्ग, पारा, लोह, सुवर्ण, वैक्रान्त, अभ्रक इनसवकी भस्में समभाग लेकर मोचरससे ७ भावनाए देकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मोचरस, समुद्रशोष और शक्करमिलेहुएदूधकेसाथ सेवनकरनेसे स्तम्भनकर रतिसुखको देताहै और अत्यन्त वीर्यकी वृद्धिको-करताहै। शुद्ध और सात्म्य, हितकारक, वल्य भोजनकरनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर अत्यन्तरसायनका कामकरताहै ४१

४२ रतिकामरसः

प्रारम्भरजसा स्त्रीणां मर्दयेद्रसमसूतकम्।
मृतं तारञ्च ताम्रञ्च गन्धकञ्च समं दिनम्॥ १७७॥
सितामध्वाज्यसंयुक्तं वल्लं भुक्त्वा पिवेत्पयः।
रतिकामरसो नाम कामिनीरमणे हितः॥ १७८॥
वानरीमूलगोधूमं कोकिलाक्षस्य वीजकम्।
मापाश्चेक्षुरसे. सर्वं लोहितं पाचयेद्घृतैः॥ १७९॥
तेनैव वटकाः कार्या नित्यं खादेद् द्वयंद्वयम्।
अनुपानमिदं सिद्धं सेवनाद्रमयेच्छतम्॥ १८०॥

र स., रसायने।

टि०—मूलपाठे नैष्फीमात्राऽऽसीत्तत्स्थाने वल्लमिति कृतमस्ति। अत्र प्रारम्भरजसा स्त्रीणा मर्दयेद्रसमसूतकमिति सन्दर्भेण सूततारताम्रभस्मानि शुद्धगन्धकञ्च समभाग गृहीत्वा प्रारम्भरजसा दिनैक मर्दयित्वा निष्कमाना वटिका कृत्वा भक्षयेदित्यर्थः प्रतीयते। परन्तु "स्त्रियोऽत्रपान नखरोममूत्रविटार्तवैर्युक्तमसाधुवृत्ताः। यस्मै प्रयच्छन्त्यरयो गरांश्च दुष्टाम्बुदूषीविषसेवनाद्वा॥ तेनाशु रक्तं कुपिताश्च दोषा कुर्वन्ति घोरं जठरं त्रिलिङ्गम्॥ सु. नि ७। ११–१२,, इत्यादिना रजोभक्षणाद्दूष्योदरोद्भवकथनाद्धर्मशास्त्रविरुद्धत्वाच्च स्त्रीणा प्रारम्भरजसा मर्दनं विधाय भस्म सम्पादयेदिति क्रियाऽध्याहारेण अन्यमङ्गति कर्णीया। भस्मप्रकारस्तु टीकाया प्रदर्शितोऽस्ति, मर्दनोपकरणे पालाशमूलद्रवो ग्रहीतव्य इति वोद्धव्यम्।

भाषा—वुभुक्षान्तसंस्कारकियेहुए पारेको प्रथमार्तवमें घुटवाकर गोलीवनाय वज्रमूषा अथवा कुक्कुटाण्डमें वन्दकर खड़िया और सफेद अभ्रकको वारीक घुटवाकर लेपकर इसीकी एक-खोलचढ़ाकर ४–५ कपड़मिट्टी देकर सुखाले। सूखनेपर लघु-पुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालले। कुछ कसररहे तो दुवारा इसीतरहकरनेसे भस्महोगी। यहभस्म, रजत और ताम्रभस्म, शुद्धगन्धक सव समभागलेकर नवीनपलाशकी जड़केद्रवसे एकरोज़ मर्दनकर ३–३ रत्तीकीगोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली दूधकेसाथ रतिसमयसे २ घटा-पूर्वलेनेसे यथेष्टस्तम्भन होताहै। विशेपस्तम्भनकी इच्छा हो तो केवाचकी ताजीजड़, निशास्ता, तालमखाना और उड़द समभाग लेकर ईखकेरससेसानकर १–१ तोलेके वड़ेवनाकर घीसे पकावे, अधिकदिन रखनेहों तो चाशनीमें डालदे। इनमेंसे २–२ वड़े रोज अनुपानरूपसे खानेसे वहुतसी स्त्रियोंकेसाथ रमणकरसकताहै खटाई अथवा नमक खानेसे स्खलन होगा॥४२॥

४३ रत्नकरण्डोरसः

भूनागाऽभ्रकयोः सत्त्वं कान्तहेमाभ्ररूप्यकम्।
मुक्ताफलानि रत्नानि ताप्यं वैक्रान्तमेव च॥ १८१॥
भस्मीकृतमिदं सर्वं पृथङ्निष्कमितं मतम्।
निष्कमात्रमितं शुद्धं राजावर्तरजस्तथा॥ १८२॥
एतत्सर्वं समं योज्यं मर्दयित्वाऽम्लवेतसैः।
रुद्ध्वा मूषोदरे कोष्ठ्यां धमेदाकाशदर्शनम्॥ १८३॥
शतवारं धमेदेवं मर्दयित्वाऽम्लवेतसैः।
ततः सञ्चूर्णिते चास्मिन्मुक्ताभस्म द्विशाणकम् १८४
मरिचं पञ्चशाणेयं क्षिप्त्वा सम्मर्द्य यत्नतः।
रम्ये करण्डके क्षिप्त्वा स्थापयेत्तदनन्तरम्॥ १८५॥
सोऽयं रत्नकरण्डको रसवरो मध्वाज्यसङ्क्रामणो,
हन्याच्छ्वासगदं ज्वरं ग्रहणिकां कासञ्च हिध्माऽऽमयम्
शूलं शोपमहोदरं वहुविधं कुष्ठञ्च हन्याद्गदान्,
वल्यो वृष्यकरः प्रदीपनकरः स्वस्थोचितो वेगवान्॥

र र स, र को, श्वासकासयो।

भाषा—केंचुए और अभ्रककासत्त्व, कान्तपाषाण और कान्तलोह, सुवर्ण, अभ्रक, रजत, मोती, नवरत्न (हीरा, पन्ना, माणिक्य, पुखराज, नीलम, लसनियां, गोमेद, मोती औरमूंगा) सुवर्णमाक्षिक, वैक्रान्त, लाजवर्द इनसवकीभस्में ४–४ माशे लेकर अमलवेत अथवा विजोरेकेरससे १–२ रोज़ मर्दनकर कुठालीमें रखकर धमन करावे। धूमरहितरूवर्णहोनेकेवाद वाहरनिकालकर ठंढाकरले। फिर पूर्ववत् १–२ पहर विजोरेमें मर्दनकर धमनकरे। इसतरह सौवार करनेकेवाद मोतीभस्म ८ माशे, मरिच २० माशे डालकर एकरोज़मर्दनकर शीशीमेंभरदे। इसमेंसे १ चावलसेलेकर २ चावलतककीमात्रा मधु और घीकेसाथ देनेसे श्वास, ज्वर, सङ्ग्रहणी, कास, हिचकी, शूल, शोष, उदररोग, नानाप्रकारकेकुष्ठ, धातुओंकीक्षीणता, पण्ढत्व, मन्दाग्नि इनसवको यह नष्टकरताहै। स्वस्थ आदमीके सेवनकरनेमें आयुकी वृद्धिकोकरताहै ॥ ४३ ॥

४४ रत्नगर्भपोट्टली

रसं वज्रं हेमतारं नागं लौहञ्च ताम्रकम्।
तुल्यांशं मरिचं देयं मुक्ताविद्रुममाक्षिकम् ॥ १८७ ॥
शङ्खं तुत्थञ्च तुल्यांशं सप्ताहं चित्रकद्रवैः।
मर्दयित्वा विचूर्ण्याऽथ तेनपूर्या वराटिकाः ॥ १८८ ॥
टङ्कणं रविदुग्धेन मुखं लिप्त्वा निरोधयेत्।
मृद्भाण्डे ता निरुद्ध्याऽथ सम्यग्गजपुटे पचेत् १८९
आदाय चूर्णयेत्सर्वं निर्गुण्ड्या सप्त भावयेत्।
आर्द्रकस्य रसैः सप्त चित्रकस्यैकविंशतिः ॥ १९० ॥
द्रवै र्भाव्यं ततः शोष्यं देयं गुञ्जाप्रमाणकम्।
क्षयरोगं निहन्त्याशु साध्याऽसाध्यं न संशयः ॥१९१॥
योजयेत्पिप्पलीक्षौद्रैः सघृते मरिचैस्तथा।
महारोगाऽष्टके कासे श्वासे चैवाऽतिसारके ॥
पोट्टली रत्नगर्भेयं सर्वरोगकुलान्तिका ॥ १९२ ॥

र.सं, र.र., चि.क, र च, र मु, यो र, वृ यो त, र. चि, र.मं, नि र, र.वो, रसायनस, भै र, र क, यो म, र शं, टो, र (मा), भै.सा., र.को, र का, र क यो, यक्ष्मणि।

टि०—केषुकेषु पुस्तकेषु "राजावर्तञ्च वैक्रान्तं गोमेदं पुष्परागकम्।" इति पद्य दृश्यते, ताम्रस्थाने प्रचुरपुस्तकेषु अभ्रक गृहीतम्। "तुल्यांश मरिच" इत्यस्य स्थाने तुल्यांश मारितमिति पाठ।

भाषा—पारा, हीरा, सुवर्ण, चांदी, नाग, लोह, तावा, मोती, प्रवाल, सोनामाखी, शङ्ख और तुत्थ इनसवकीभस्में १–१ तोला, सफेदमिर्च ७ तोले लेकर वारीकचूर्णकर चित्रकके स्वरस अथवा क्वाथसे ७ रोज़ मर्दनकर सुखाकर रसकेवरावर पीलीकौडियोंमें भरके सुहागेको आककेदूधमें मर्दनकर कौडियोंका अच्छीतरह मुंहवन्दकर मिट्टीकी मजवूतकुल्हड़ीमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीकरदे। अच्छीतरहसूखनेपर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर निर्गुण्डी और अदरखकेरससे ७–७ भावनाएं देकर सुखाकर चित्रकके स्वरस अथवा क्वाथकी २१ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पीपल, मधु अथवा घी और मिर्चोंकेसाथ देनेसे साध्य अथवा असाध्य क्षयरोग, आठप्रकारके महारोग (वातव्याधि, प्रमेह, कुष्ठ, अर्श, भगन्दर, अश्मरी, मूढगर्भ और उदर) काम, श्वास और अतिसार इनसवके वंशको यह नष्टकरताहै। तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ४४ ॥

४५ रत्नगिरीरसः (प्रथमः)

सूताऽभ्रस्वर्णताम्राणि गन्धं चार्द्धांशलोहकम्।
लौहार्द्धं मृतवैक्रान्तं मर्दयेद्भृङ्गजद्रवैः ॥ १९३ ॥
पर्पटीरसवत्पाच्यं चूर्णितं भावयेत्पृथक्।
शिग्रुवासकनिर्गुण्डीगुडूच्युग्राऽग्निभृङ्गजैः ॥ १९४ ॥
क्षुद्रामुण्डीजयन्तीभि मुनिब्राह्मीसुतिक्तजैः।
कन्यायाश्च द्रवै र्भाव्यं त्रिस्त्रिवारं पृथक्पृथक् ॥१९५॥
ततो लघुपटे पाच्यं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
वल्लं दद्यात्कणाधान्ययुक्तं चाऽभिनवज्वरे ॥ १९६ ॥
मुद्गान्नं मुद्गयूषं वा सनीरं तक्रभक्तकम्।
रसे चोक्तं पथ्यमस्मिन् शाकं सर्वज्वरोदितम् ॥१९७॥

र.चि., र मं., भै.र, रसायनसं, र शि., नि र, र को, र शं, यो म, व.रा, टो., र.सु, र का., र क.यो., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—पारा, अभ्रक, सुवर्ण, ताम्र इनकीभस्में, शुद्धगन्धक १–१ भाग, इनसवसेआधी लोहभस्म, लोहसे आधी वैक्रान्तभस्म लेकर सवको एकजगह भंगरेकेरससे एकरोज़ मर्दनकर सुखाकर २–३ कपडमिट्टीकीहुई आतशीशीशीमें रखकर २–३ पहर अग्निपर पकावे और शलाका डालकर देखतारहे। एकजीव होनेपर ताज़ेगोवरपर रक्खेहुए केलेकेपत्तेपर डालकर दो तीन केलेके पत्तोंसे ढककर गोवरसे दवादे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे निकालकर सहिजन, अड़ूसा, निर्गुण्डी, गिलोय, वच, चित्रक, भंगरा, भटकटैया, गोरखमुण्डी, जेंती, अगस्त्य, ब्राह्मी, चिरायता, घीकुमार इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ भावनाएं देकर गोलावनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर ५ सेरकण्डोंकी आचदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा पीपल और धनियेकेसाथ मधुवगैरहमें मिलाकर देनेसे यह तत्काल नवज्वरको नष्टकरताहै। ज्वर उतरनेपर अच्छीतरह भूखलगेतो मूंगकायूष अथवा दाल अथवा उचित हो तो छाछ, भात और ज्वरोक्तशाक देवे ॥ ४५ ॥

४६ रत्नगिरीरसः (द्वितीयः)

रसाऽभ्रहेमं रवितारहेम-
गन्धं द्विनिघ्नं सकलं विमृद्य।
भृङ्गोत्थनीरैः कदलीदले च
पाच्यं ततो रत्नगिरि र्भवेत्सः ॥ १९८ ॥
श्वासे च कासेऽप्यनिवारितेऽन्यैः
क्षतोद्भवे यक्ष्मणि पीनसे च।

पाण्डौ सशोथे पवने सरक्ते
वल्लः प्रयोज्यो मधुपिप्पलीभ्याम ॥१९९॥

र.शं , श्वासे कासे च।

भाषा—पारा, अभ्रक, स्वर्णमाक्षिक, तांवा, चांदी और सुवर्ण इनकीभस्में १–१ भाग, शुद्धगन्धक १२ भाग लेकर सबको कज्जलकीतरह घोटकर भंगरेकेरससे एकरोज मर्दनकर अच्छीतरह सुखाकर घृताक्तलोहेकीकड़छीमें गलाकर गोवरपररक्खेहुए केलेके पत्तेपर ढालकर दूसरेपत्तेसे ढक गोवरसे दवादे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती मधु और पीपलकेसाथ देनेसे अन्ययोगोंसे असाध्य क्षतोद्भव श्वास और कास, राजयक्ष्म, शोथयुक्तपाण्डु, वातरक्त इनसवको यह नष्टकरताहै ४६

४७ रत्नप्रभारसः

स्वर्णमौक्तिकमभ्रञ्च नागवङ्गौ च पित्तलम्।
माक्षिकं रजतं वज्रं लौहं तालञ्च खर्परम् ॥ २०० ॥
कदल्याः काकमाच्याश्च वासकस्योत्पलस्य च।
स्वरसेन जयन्त्याश्च कर्पूरसलिलेन च ॥ २०१ ॥
भावयित्वा यथाशास्त्रमहोरात्रमतः परम्।
सम्मर्द्याऽतन्द्रितः कुर्याद्द्विपगुञ्जामिता वटीः ॥२०२॥
एकैकाञ्च प्रयुञ्जीत प्रातरासां वलाम्वुना।
उष्णेन पयसा वाऽपि केशराजरसेन वा ॥ २०३ ॥
इयं रत्नप्रभा नाम्नी वटिका सर्वसिद्धिदा।
सर्वस्त्रीरोगहन्त्री च वल्या वृष्या रसायनी ॥ २०४ ॥

भै र , परिशिष्ट (रसायने)

भाषा—सुवर्ण, मोती, अभ्रक, नाग, वङ्ग, पीतल, सोनामाखी, चादी, हीरा, लोह, हरिताल और खपरिया इनसवकीभस्में समभागलेकर केलेकाकन्द, मकोय, अडूसा, कमल, जेंती और कपूर इनसवके स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ अहोरात्र मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली खरेंटीकेस्वरस अथवा गरमदूध अथवा भंगरेकेरससे देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर वल और वृषताको देकर दीर्घायुको करतीहै और खासकर स्त्रीरोगोंकी परमौषधहै ॥ ४७ ॥

४८ रत्नभागोत्तररसः

वज्रं मरकतं पद्मरागं पुष्पञ्च नीलकम्।
वैदूर्यं वाऽथ गोमेदं मौक्तिकं विद्रुमं तथा ॥ २०५ ॥
क्रमवृद्धमिदं सर्वं वैक्रान्तं चाऽष्टभागकम्।
तत्तुल्यं ताप्यजं भस्म तद्वद्विमलभस्म च ॥ २०६ ॥
सर्वतस्त्रिगुणां तुल्यरसगन्धककज्जलीम्।
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य छागीदुग्धेन तद् द्व्यहम् ॥ २०७ ॥
विधाय पर्पटीं यत्नात्परिचूर्ण्य प्रयत्नतः।
वन्ध्याकर्कोटकीकन्दरसेन परिमर्दयेत ॥ २०८ ॥
काननोत्पलविशत्या पुटेत्षोडशवारकम्।
एवं रसोविनिष्पन्नो रत्नभागोत्तराभिधः ॥ २०९ ॥
महावन्ध्यादिवन्ध्यानां सर्वासां सन्ततिप्रदः।
देवीशास्त्रे विनिर्दिष्टः पुंसां वन्ध्यन्यरोगनुत ॥ २१० ॥
सोऽयं पाचनदीपनोगदहरो वृष्यस्तथा गर्भिणी,-
सर्वव्याधिविनाशनो रतिकरः पाण्डुप्रचण्डार्तिनुत।
धन्यो वुद्धिकरश्च पुत्रजननः सौभाग्यकृद्योपितां,
योन्यातङ्कमपाकरोति सहसा पुंसामशेषार्तिनुत् २११

र र स , र चं , स्त्री वि , र को , र र. कौ , सन्तानार्थे।

भाषा—हीरा, पन्ना, माणिक्य, पुखराज, नीलम, लसनिया, गोमेद, मोती, प्रवाल, इनसवकी शास्त्रोक्तविधानसे वनीहुईभस्में क्रमवृद्धभागसे लेवे। फिर वैक्रान्त, सुवर्णमाक्षिक और रौप्यमाक्षिक इनप्रत्येककीभस्में पूर्वद्रव्योंसे अठगुनी और सवसे तिगुनी शुद्धपारेगन्धककीकज्जली मिलाकर सवको दोरोज वकरीकेदूधमें मर्दनकर सुखाकर फिरसे कज्जलीवनाय घृताक्तलोहेकीकड़छीमें वेरकीलकड़ीके कोयलोंपर गलाकर गोवरपर रक्खेहुए केलेके पत्रपर ढालकर दूसरे केलेके पत्तेसे ढककर गोवरसे दवादे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कज्जलीवनाय वाझखेखसाके कन्दकेरससे १–२ रोज मर्दनकर गोरखमुण्डीके स्वरसकी १६ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे स्त्री और पुरुषोंके महावन्ध्यत्वादि समस्तदोषोंको दूरकर शुभसन्ततिको पैदाकरताहै। मन्दाग्नि, षण्ढत्व, पाण्डु, वुद्धिनाश, योनिज और पुरुषोंके षण्ढत्वादि समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ ४८ ॥

४९ रत्नाकरचिन्तामणीरसः

अष्टसत्त्वञ्च हेमाद्यं ताप्याद्यष्टद्रुतिस्तथा।
सर्वतुल्यं रसं क्षिप्त्वा तदर्द्धमभ्रकद्रुतिम् ॥ २१२ ॥
मीनाक्षी चैव सर्पाक्षी व्याघ्रीकन्दं पुनर्नवा।
सिंहनेत्री तथाऽऽवर्ता काकमाची तुला मपी ॥२१३॥
पीतपर्णी घुणा कुम्भी विशाला च रुदन्तिका।
सोमवल्ली मृगी हंसी द्राविका प्लविकास्तथा ॥२१४॥
एतासामोपधीनाञ्च प्रत्येकं सप्तधा पुटेत्।
काचकूप्यां तथा क्षिप्त्वा पक्षैकञ्च हठाग्निना ॥ २१५ ॥
धूमवेधी रसो दिव्यः पड्धातून् वेधयेदयम्।
एवमेव प्रकर्तव्यं सप्तधा च प्रयत्नतः ॥
स्पर्शवेधी रसो दिव्यो नाम्ना रत्नाकरो रसः ॥२१६॥

रससागर, रसायने।

भाषा—सुवर्णादि अष्टधातुओंकी निरुत्थभस्म वनाय यथाशक्य सवका सत्त्व निकाले और सुवर्णादिधातु तथा उनके कच्चेधातुओं (उपधातु)की द्रुतिया सवसमभाग लेकर सवकी वरावर शुद्धपारा, पारेसे आधी अभ्रकद्रुति मिलाकर ७–८ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें डालकर मत्स्याक्षी, सर्पाक्षी, व्याघ्रीकन्द, पुनर्नवा, सिंहनेत्री ?, आवर्तकी (आवळ गु०) मकोय, सफेदगुञ्जा, गगनधूल (गोलछत्ताककीधूल), पीतपर्णी, अतीस, जलकुम्भी, इन्द्रवारुणी, रुदन्ती, सोमवल्ली, मृगी, हंसी, धातुओंको द्रुतकरनेवाली और जलपर विनाआधार तैरनेवाली जितनी औषधिया है उन प्रत्येककारस डालकर अग्निपर सुखावे। ऐसे

७–७ पुटदेकर काचकीकूपीमें डालकर १५ दिनतक हठाग्निसे धमन करनेपर यह धूमवेधी रस तैयार होगा और सातोधातुओंको स्वकीयधूमसे सुवर्ण वनावेगा । इसकेस्पर्शसे महान्व्याधियोंसे निवृत्तहोकर दीर्घायुको प्राप्तहोताहै ॥ ४९ ॥

५० रत्नाकररसः

हेमहीरकवैक्रान्तवङ्गाऽभ्ररसगन्धकाः ।
समभागमिता योज्याःसर्वतुल्यमयो मतम् ॥ २१७ ॥
खल्वे निःक्षिप्य सर्वाणि भावयेत्ककुभाम्भसा ।
गोधूमस्य यवस्यापि क्वाथेन समधा पृथक् ॥२१८॥
ततः कन्याऽम्बुना प्राज्ञस्त्रीन्वारान परिपेचयेत् ।
रक्तशाल्यन्तरे पिण्डं निशाः सप्त च धापयेत् ॥२१९॥
समुद्धृत्य वटींश्चाऽथ कुर्यात्स्विन्नकलायवत् ।
अर्जुनस्य कषायेण काञ्जिकेनाऽऽसवेन वा ॥ २२० ॥
गोधूमस्य यवस्यापि क्वाथेन हविषाऽपि वा ।
यथादोषानुपाने वा प्रदद्यात्परमौषधम् ॥ २२१ ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चाऽपि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
क्रिमिजं हृद्गदञ्चाऽपि कौष्ठिकं पृथुकं तथा ॥ २२२ ॥
तथा वरणिकं घोरं गदं विक्षेपकाभिधम् ।
मेदःसूत्राभिधञ्चाऽपि परिक्षयगदं तथा ॥ २२३ ॥
आयामिकाञ्च यक्ष्माणं वातपित्तकफामयान् ।
हन्त्ययं निखिलान्रोगान् वृक्षानिन्द्राशनि र्यथा ॥२२४॥

आ. वि , हृद्रोगाऽधिकारे ।

टि०–कौष्ठिकादीना लक्षणानि आयुर्वेदविज्ञाने निहितानि तानि च यथा—आमवातादभीघातात्तथाऽऽवरणिकाद्गदात् । हृत्कोष्ठे जायते शोथो गद एष हि कौष्ठिक ॥ १ ॥ ज्वरो दाहोऽरुचि कम्पो वैवर्ण्य वह्निसक्षय । श्वास कासो राजयक्ष्मा कोष्ठे पूयस्य सञ्चय ॥ २ ॥ मूर्च्छाऽऽक्षेप प्रलापश्च नाडीविषमवाहिनी । गदाद घोरतरात्स्मात् भाग्यात्कोऽपि प्रमुच्यते ॥ ३ ॥ इति **कौष्ठिक** ॥ शोणितस्य गतौ कोष्ठे व्याहतायामनात्मन । तत्पेशी पृथुता याति मिथ्याऽऽहारविहारत ॥ ४ ॥ हृद्वेपथु र्व्यथा तत्र दौर्बल्य श्वासकृच्छ्रता । अरति र्भ्रममोहौ च चिह्नानि पृथुकेगदे ॥ ५ ॥ **इति पृथुक** ॥ आमवाताद् वृक्कदोषात् शीतार्द्रत्वनिपेवणात् । हृत्कोष्ठावरणी क्षिप्रं पीड्यते ह्यकृतात्मन ॥ ६ ॥ तत्र दाहोष्णता शोफोगौरव महती व्यथा । कोष्ठसंवेपन कासो दौर्बल्य श्वासकृच्छ्रता ॥ ७ ॥ नामामार्गेण रक्तस्य स्रुति वह्नेश्च मन्दता । शाखासु शोफो धमनी भवेद्विषमगामिनी ॥ ८ ॥ नाम्ना वरणिको ह्येष व्याधि र्विद्भिरुच्यते । जातमात्रश्चिकित्स्योऽय नैवोपेक्ष्य कदाचन ॥ ९ ॥ इति **वरणिक** ॥ हृत्कोष्ठाक्षेपको व्याधि र्नाम्ना विक्षेपिका मता । जातेऽस्मिन् महति व्याधौ कोष्ठदेशेऽप्युरोऽस्थ्यध ॥ १० ॥ सव्यासास्थ्नि सव्यबाहौ ग्रीवाया पृष्ठदेशत' । वेदना जायते तीव्रा मर्मप्राणप्रपीडनी ॥ ११ ॥ तोदभेदौ समाकर्षो दाहस्तत्र च जायते । मुहुर्मुहु श्वासरोध शीता त्वक् स्वेदनिर्गम ॥ १२ ॥ आध्मानानाहमोहाश्च वैवर्ण्य कृशताऽरुचि । क्रमादिन्द्रियविध्वसो मरणञ्चाऽप्यनात्मन ॥ १३ ॥ इति **विक्षेपिका** ॥ हृत्कोष्ठपेशीसूत्रेषु मेद कणचयो गद । मेद सूत्राख्यया प्रोक्तो मुनिभिस्तत्त्ववेदिभि ॥ १४ ॥ मन्द मन्द व्रजेन्नाडी भवेद्धृदयवेपथु । अवसादो भ्रमो मूर्च्छा स्नायूना बलसक्षय ॥ १५ ॥ हृद्वृते वापि सभेदान्मृत्युश्च सहसा भवेत् । जातमात्रश्चिकित्स्योऽय व्याधि परमदारुण ॥ १६ ॥ इति **मेद.सूत्रम्** ॥ क्षयात्मजायते घोरो व्याधि र्नाम्ना परिक्षय । कोष्ठपेश्या क्षय श्वासो दौर्बल्य सदन भ्रम ॥ १७ ॥ हृद्वेपथु र्वह्निमान्द्य क्रमाच्छोफश्च जायते । एतैरन्यैश्च विज्ञेयश्चिह्नै र्व्याधि परिक्षय. ॥ १८ ॥ इति **परिक्षय** ॥ हृत्कोष्ठप्रसृति र्नाम्ना व्याधिरायामिको मत । श्वास शोथो भ्रमो मूर्च्छा हृत्कम्पो वह्निमन्दता ॥ १९ ॥ जलोदरमनिद्रत्व बलमासपरिक्षय । एभिरन्यैश्च विज्ञेयश्चिह्नैरायामिको गद. ॥ २० ॥ **इत्यायामिका** ॥

भाषा—सुवर्ण, हीरा, वैक्रान्त, वङ्ग, अभ्रक इनकीभस्में, शुद्धपारा और गन्धक सव समभाग और सवकीवरावर लोहभस्म लेकर कहुआ, गेंहूं, जव इनप्रत्येकके काथोंसे ७–७ भावनाए देकर घीकुंआरकेरसमें ३ भावनाएं देवे फिर गोला वनाय एरण्डपत्रमें लपेटकर डोरेसे वाधकर लालचावलोंकीराशिमें ७ रोज़तक दवादे । आठवेंरोज निकालकर उवलेहुए मटरवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अर्जुनकाकाढ़ा, काञ्जी, आसव, गेंहूं तथा जवका काढा, घी इनमेंसे किसी एककेसाथ अथवा दोषानुसार अनुपानोंकेसाथ देनेसे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, क्रिमिज, कौष्ठिक, पृथुक, आवरणिक, विक्षेपक, मेद सूत्र, परिक्षय, आयामिका प्रभृति समस्त हृदयके रोग और यक्ष्माको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे कि इन्द्रका वज्र वृक्षोका नाशकरताहै ॥ ५० ॥

५१ रत्नेश्वररसः (प्रथमः)

वज्रं वैक्रान्तमभ्रञ्च सिन्दूरमपि माक्षिकम् ।
मौक्तिकं हेमरौप्यञ्च सममिक्षुजवारिणा ॥ २२५ ॥
शतावरीरसेनाऽपि विदार्याः स्वरसेन च ।
विभाव्य वटिकाः कुर्याद्रक्तिकाप्रमिता भिषक् ॥२२६॥
त्रिफलाजलयोगेन रसो रत्नेश्वरो हरेत् ।
मस्तिष्कस्नायुजान्व्याधीनंशुघातं विशेषतः ॥
अंशुघाते प्रकर्तव्यो विधि र्मूर्च्छानिषूदनः ॥ २२७ ॥

आ वि अंशुघाते ।

टि०—अंशुघातलक्षण यथा—"चण्डाशोरंशुना शीर्ष्णि तप्ते चण्डेन जायते । अंशुघाताऽभिधो व्याधि प्राणिना प्राणपीडन ॥ १ ॥ तृष्णाऽतिघोरा त्वग्रूक्षा भ्रमो नेत्रस्य रक्तता । मूत्रवेगश्च मूर्च्छायो हृल्लासो विषमाऽधरा ॥ २ ॥ श्वासकृच्छ्र स्पर्शहानिराक्षेपश्चात्र सम्भवेत् । प्राय' काराऽवरुद्धाना भटाना जायते च स ॥ ३ ॥ इति,

भाषा—हीरा, वैक्रान्त, अभ्रक, रससिन्दूर, सोनामाखी, मोती, सुवर्ण, चादी इनकीभस्में समभागलेकर ईख, शतावर और विदारीके स्वरसोंसे १–१ रोज मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली त्रिफलाके पानीकेसाथ देनेसे मस्तिष्क, स्नायु, अंशुघातादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै । अंशुघातमें विशेषकर मूर्च्छाको दूरकरनेवाले उपाय करने चाहियें ॥ ५१ ॥

५२ रत्नेश्वररसः (द्वितीयः)

अर्द्धभागेन सूतेन तारं ताम्रेण मेलयेत् ।
मारयेत्सिकतायन्त्रे शिलाहिङ्गुलगन्धकैः ॥ २२८ ॥
अयं रत्नेश्वरः सूतः सर्वरोगनिकृन्तनः ।
अलं ज्ञात्वा चतुःषष्टिरोगांस्तैस्तैश्च लक्षणैः ॥ २२९ ॥

एष रत्नेश्वरः सूतः सर्वरोगेषु युज्यते।
हेम्नोऽन्तर्योजितो ह्येषो हेमतां प्रतिपद्यते ॥ २३० ॥
शेषोऽर्कश्चेद्गन्धकै र्वा कुनट्या वा हतद्विपैः।
शोधयेत्कनकं सम्यगन्यै र्वा कालिकापहैः ॥
वर्णह्रासे तु ताप्येन कारयेद्वर्णमुत्तमम् ॥ २३१ ॥

रसायनसं., यो म., रसायने।

टि०—योगमहार्णवे अर्धपादोनतुल्येन तार ताम्रेण योजयेदिति पाठो दृश्यते परन्तु तत्र श्रद्धास्पद पारदरहिते वर्णान्तरापाढकत्वाऽभावात्।

भाषा—शुद्धपारा २ भाग, चांदी और तावेका वारीकचूरा १–१ भागलेकर १–२ रोज़ इकट्ठा मर्दनकर तीनोंकी वरावर मैनसिल मिलाकर घीकुंआरके रसमें १–२ रोज मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर अच्छीतरह सूखनेपर वालुकायन्त्रमें एकरोज़ पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर उसीतरह क्रमसे हिङ्गुल और गन्धक देकर पाककरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। दोषोंके ६४ भेदोंको तदीयलक्षणोंसे अच्छीतरह समझकर अथवा वैसेही इसमेंसे १–१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै। इसभस्मकी वरावर सुवर्णमिलाकर धोंकनेसे सव सुवर्णहोजाताहै यदि धोंकनेसे तावा अलग होजायतो गन्धक अथवा मैनसिल अथवा नागभस्म देकर धमनकरे। मिलानेपर सोनेमें कालिमा आजायतो कालिकाको दूरकरनेवाली चीजोंका योगकर धमनकरे। रंगकी न्यूनता होनेपर सोनामाखीकेसाथ गलानेसे उत्तमवर्णहोजाताहै ॥ ५२ ॥

५३ रत्नेश्वरवटी

कान्तंशुल्वं समं चूर्ण्यं वज्रमूषान्धितं धमेत्।
तत्खोटसिद्धचूर्णन्तु गन्धकाम्लेन मर्दयेत् ॥ २३२ ॥
रुद्ध्वा सम्यक् पुटे पक्त्वा समुद्धृत्याऽथ मर्दयेत्।
पूर्ववत्क्रमयोगेन पुटेद्वारांश्चतुर्दश ॥ २३३ ॥
वज्रेण द्वन्द्वितं स्वर्णमनेनैव तु रञ्जयेत्।
मूषामध्ये धमन्नेवं सप्तवारं समं क्षिपेत् ॥ २३४ ॥
तत्खोटं चूर्णितं भाव्यं स्त्रीपुष्पेण दिनावधि।
तत्तुल्यं द्रुतसूतन्तु सर्वं यामं विमर्दयेत् ॥ २३५ ॥
वेष्टयेद्भूर्जपत्रेण वस्त्रेवद्ध्वा पचेत्त्र्यहम्।
दोलायन्त्रे सारनाले जातं गोलं समुद्धरेत् ॥ २३६ ॥
गान्धारी जीवनी चैव लाङ्गली चेन्द्रवारुणी।
एतासां पिण्डकल्केन वेष्टयेत्पूर्वगोलकम् ॥ २३७ ॥
अन्धयित्वा दिनं पक्त्वा भूधरे तं समुद्धरेत्।
पुनर्लेप्यं पुनः पाच्यं चतुर्दश दिनावधि ॥ २३८ ॥
गुटिका जायते दिव्या नाम्ना रत्नेश्वरी तथा।
वक्त्रस्था वर्षमात्रन्तु नन्दितुल्यो भवेन्नरः ॥ २३९ ॥
जीवेद्वर्षसहस्राणि दिव्यतेजा महावलः।
वर्षद्वादशपर्यन्तं यस्य वक्त्रे स्थिता तु सा ॥ २४० ॥
तस्य संस्वेदसम्पर्कादष्टलोहानि काञ्चनम्।
जायन्ते नात्र सन्देहः सत्यमीश्वरभाषितम ॥
पञ्चाङ्गचूर्णं मध्वाज्यै रुदन्त्युत्थं लिहेदनु ॥ २४१ ॥

र. स., रसायने।

भाषा—शुद्धकान्तलोह और ताम्रसमभागलेकर वज्रमूषामें वन्दकर धमनकरे। गलजानेपर अग्नि वन्दकरदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर खोटको निकालकर गन्धकके तेजावसे १–२ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर फिर पूर्ववत् करे, ऐसे १४ वार पुटदेनेके वाद शीशीमें भरकर रखछोड़े। हीराकी द्रुतिकेसाथ मिलायेहुए सुवर्णको गलाकर वरावरके हिस्सेमें इसे डालनेसे असलीरङ्ग आजायगा। इसमें वरावरके चूर्णको डालकर वज्रमूषामें वन्दकर ४ पहर धमनकरे, ऐसे सातवार करनेकेवाद यह खोट तैयार होगा फिर इसका चूर्णकर स्त्रीपुष्पसे एकदिन भावनादेकर उसकी वरावर द्रुतपारद डालकर फिर एकदिन स्त्रीपुष्पसे मर्दनकर गोलीवनाय भोजपत्रमें लपेट चारतहकपड़ेमें वाधकर काञ्जीमें दोलायन्त्रसे तीनदिनतक पकावे फिर गान्धारी ? जीवनी ? करिहारी और इन्द्रायणके कल्कसे पूर्वोक्त गोलेको लपेटकर वज्रमूषामें वन्दकर एकदिन भूधरयन्त्रमें आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर फिर पूर्ववत् पाककरे। ऐसे १४ दिनकरनेकेवाद रत्नेश्वरी गुटिका तैयारहोगी। इसे एकवर्ष मुहमें रखनेसे नन्दिकेश्वरकेवरावर दिव्यतेज और वलयुक्तहोकर १००० वर्षतक जीताहै। वारहवर्षतक जिसके मुंहमें यह गोली रहजाय उसके पसीनेके छूनेसे आठोंलोह कञ्चन होजातेहैं। इसगोलीको मुंहमें रखनेवाला रुदन्तीके पञ्चाङ्गके चूर्णको मधुमें मिलाकर खावे, यह इसका अनुक्रामण है ॥ ५३ ॥

५४ रविताण्डवरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं कुमारीरसमर्दितम्।
त्र्यहान्ते गोलकं कृत्वा ततस्तेन प्रलेपयेत् ॥ २४२ ॥
तयोः समं ताम्रपत्रं हण्डिकान्तर्निवेशयेत्।
तद्भाण्डं भस्मनाऽऽपूर्य चुल्यां तीव्राग्निना पचेत् २४३
द्विदिनान्ते समुद्धृत्य चूर्णयेत्स्वाङ्गशीतलम्।
जम्बीरस्य रसैः पिष्ट्वा रुद्ध्वा सप्तपुटैः पचेत् ॥ २४४ ॥
गुञ्जैकं मधुनाऽऽज्येन लिह्याद्धन्ति भगन्दरम्।
मुशलीं लवणञ्चानु ह्यारनालयुतं पिवेत् ॥ २४५ ॥
भुञ्जीत मधुराहारं दिवास्वापञ्च मैथुनम्।
वर्जयेच्छीतलाहारं रसेऽस्मिन्रविताण्डवे ॥ २४६ ॥

र सं., र त, र चं, वै चि, र क, र र स, भै. सा, र र, व. रा., यो त., र. क, टो, र. क यो, र र कौ, भगन्दरे।

टि०—र स, र त, र च, वै चि, र क, र र स, भै सा, र र, व रा, र का, र क यो, टो, र र कौ, एषु रविताण्डव इति नाम। ताण्डवभैरव इति रसायनसङ्ग्रहे। र चि, र सु, र क. ल, र र दी एषु वारिताण्डव इति नाम। भै र, व, एतयोश्चित्रविभाण्डेति। र दी, भगन्दरघ्न इति। र को, र क ल एतयो पिनाकपाणिरिति। रसावतारे रसराज इति। र म, र प्र,

चि र म., र. सि, र. कौ., र का, र. सु, र. पा, र म (मा) एषु **भगन्दरहर** इति । र र., र दी., अनयोस्त्रिगुणाख्य इति । र र. कौ., र. चि, यो म, एषु **भगन्दरकेसरीति** नाम । र. स, द्विस्थाने पाठोऽस्ति । रसनरक्षिण्यामेकस्थाने । र च. एकस्थाने । वै. चि एकस्थाने । र. क एकस्थाने । र र स. एकस्थाने । भै सा एकस्थाने । र र एकस्थाने । व रा एकस्थाने । र का द्विस्थाने । र क यो. एकस्थाने । टो एकस्थाने । र. र कौ. द्विस्थाने । र चि द्विस्थाने । र सु द्विस्थाने । र क. ल द्विस्थाने । र र दी एकस्थाने । भै र एकस्थाने । ध एकस्थाने । र. दी द्विस्थाने । र को एकस्थाने । र एकस्थाने । र प्र एकस्थाने । चि र म. एकस्थाने । र सि एकस्थाने । र. कौ. एकस्थाने । र कौ. एकस्थाने । र म (मा) एकस्थाने । र र एकस्थाने । यो म. एकस्थाने । एकस्यैव योगस्य दशनामस्थापने महाव्यामोहकरत्वमतः सर्वेषां रवितापडवे एवाऽन्तर्भाव कृतोऽस्ति ।

रसेन्द्ररत्नकोशे रसायनाऽधिकारे **उदयादित्यनाम्ना** "आवर्तिते रसपल क्षिप्त्वा द्विगुणगन्धकं । आर्द्रकद्रवमुष्टीना विंशत्या मर्दितं पचेत् ॥ मृदृढ ताम्रमूषाया तं गुञ्जाप्रमित रसम् । समर्पिनागर भुक्त्वा तप्ताम्बुप्रसृत पिबेत् ॥ रसोऽयमुदयादित्य स्याज्जरारजनीहर ॥" अय योगो रसायनाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

र चि., र सु, भै. र, र का, एषु ज्वराऽधिकारे **ज्वरशूलहरनाम्ना** "रसगन्धकयो. कृत्वा कज्जली भाण्डमध्यगाम् । तत्राऽधोवदना ताम्रपात्री सरुद्धय गोपयेत् ॥ पादाङ्गुष्ठप्रमाणेन चुल्ल्या काष्ठेन ता पचेत् । यामद्वय ततस्तत्स्थ रसपात्र समाहरेत् ॥ सञ्चूर्ण्य गुञ्जायुगल त्रितय वा विचक्षण । ताम्बूलदल्योगेन दद्यात्सर्वज्वरेष्वमुम् ॥ जीरसैन्धवसलिप्तवक्त्राय ज्वरिणे हितम् । स्वेदोद्गमो भवत्येव देवि सर्वेषु पाप्मसु ॥ चातुर्थिकादीन्विषमान्नवमागामिन ज्वरम् । साधारण सन्निपात जयत्येव न सशय ॥" अय योगो निहितोऽस्ति ।

यो, च. द एतयोर्ग्रन्थयो ग्रहण्यधिकारे **ताम्रयोग** इति नाम्ना "स्थाल्या सम्मर्द्य दानव्यौ मापिकौ रसगन्धकौ । नखक्षुण्ण तदुपरि तण्डुलीय द्विमापिकम् ॥ ततो नैपालताम्रस्य विधाय सुकपालकम् । त्र्यूपणे पूरयेदूर्द्ध सर्वा स्थाली ततोऽनल ॥ स्थाल्यधो नालिका यावद्देयस्तेन मृतस्य च । रक्तिकैका समादाय त्रिफलाचूर्णरक्तिकाम् ॥ रक्तिमेका त्र्यूपणस्य विडङ्गस्य च रक्तिकाम् । घृतेन मधुनाऽऽलेह्य प्रथमे दिवसे तत ॥ रक्तिवृद्धि प्रतिदिन कुर्यात्ताम्रादिषु त्रिषु । स्थिराविडङ्गरक्तिस्तु यदा भेदोऽविवक्षित' ॥ रक्तदुष्टौ विडङ्गस्य भेदोऽय सम्प्रदर्शित । तदा विडङ्ग त्वधिकमन्यथा रक्तिकाद्वयम् ॥ द्वादशाह योगवृद्धिस्ततो ह्रासक्रमोऽप्ययम् । ग्रहणीमम्लपित्तञ्च क्षय शूलञ्च सर्वथा ॥ ताम्रयोगो जयत्येप वल्वर्णाग्निवर्धन. ॥" अय योगो निहितोऽस्ति ।

र र म, र च, र को, र सु, र र कौ, र म मा एषु ग्रन्थेषु "विमर्दिताभ्या रसगन्धकाभ्या नीरेण कुर्यादिह गोलक तम् । भाण्डे नवीने विनिवेश्य पश्चात्तदा स्वकस्योपरि ताम्रपात्रम् ॥ सार्ध मुहूर्त विनिरुद्धय धीमानुद्दीपयेद्दीप्तकृशानुनाऽस्य । अधस्तत सिद्धयति पर्पटीय नवज्वरारण्यकृशानुमेघ ॥ विलिप्य पूर्व रसनाञ्च तालुदेशञ्च सिन्धूद्भवजीरकार्द्रै । वह्नोन्मिता चाऽऽर्द्रकतोयमिश्रामेना नियोज्य स्थगयेत्पटेन ॥ घर्मोद्गमो यावदत परञ्च तक्रौदन पथ्यमिह प्रयोज्यम् । कुर्याद्दिनाना त्रितय यदीत्थं ज्वरस्य शङ्काऽपि तदा भवेत्किम् ॥" अय योगो नवज्वराऽधिकारेऽस्ति तत्र र र. स, र को, र र कौ., र म मा. एषु **नवज्वरारण्यकृशानुमेघेति** नाम, र च **ज्वराङ्कुशेति**, र सु **पर्पटीरस** इति नाम स्थापितम् । र र स, र र कोशयोर्द्वितीयस्थाने **नवज्वरारीति** नाम ।

रसामृते **भगन्दरनाशनरस** इति नाम्ना भगन्दराऽधिकारे "रस द्विगुणगन्धेन कुमारीद्रवसयुतम् । दिनत्रय विमर्द्दीयात्ततो गोलकमानयेत् ॥ ताम्रस्य पुटक कृत्वा तत्समाशमध. क्षिपेत् । सम्यङ्निरुद्धय यत्नेन भस्मना परिपूरयेत् ॥ अग्निं प्रज्वालयेच्चण्ड प्रहरद्वयमात्रत. । सञ्चूर्ण्य पुटयेत्सप्त जम्बीरद्रवसयुतम् ॥ गुञ्जामात्र समश्नीयाद्घृतेन मधुना युतम् । भगन्दरादिनुत्यर्थमाहार मधुर चरेत् ॥" अय योगो निहितोऽस्ति ।

निघण्टुरत्नाकरे सन्निपाताऽधिकारे माहेश्वर (मोरेश्वर) नाम्ना "शुद्ध सूत द्विधा गन्ध दिनैकञ्चाऽऽर्द्रकद्रवै । मर्दयित्वा च त गोल गोलाऽर्द्ध ताम्रसम्पुटे ॥ क्षिप्त्वा निरुद्धय तत्सन्धि मृन्मूषाया निरुद्धय च । रात्रौ गजपुटे पाच्य प्रातरादाय चूर्णयेत् ॥ गुञ्जैक नागरसम सघृत सन्निपातनुत् । अनुपान पिबेत्पश्चात्तप्त वारि पलद्वयम् ॥ दध्यन्न दापयेत्पथ्य तृषाया शीतल जलम् । कृशञ्च कुरुते स्थूल नर माहेश्वरो रस" अय योगो निहितोऽस्ति ।

र सु, र को., र का., र क ल एषु ग्रन्थेषु ज्वराऽधिकारे **रक्तमाहेश्वरेति** नाम्ना "शुद्ध सूत द्विधागन्ध दिनैकञ्चाऽऽर्द्रकद्रवै. । मर्दयित्वा तु तद्गोल गोलाशे ताम्रसम्पुटे ॥ क्षिप्त्वा निरुद्धय तत्सन्धि मूषान्ते च निरुद्धय च । रात्रौ गजपुटे पाच्य प्रातरादाय चूर्णयेत् ॥ गुञ्जैक नागरै सार्ध सघृत सन्निपातनुत् । अनुपान पिबेत्पश्चात्तप्तवारि पलत्रयम् ॥ दध्यन्न दापयेत्पथ्य तृषार्ते शीतल जलम् । कृशञ्च कुरुते स्थूल रक्तमाहेश्वरो रस. ॥" अय योगो निहितोऽस्ति ।

र र स, र म मा., र र, टो., र प, र क, र प्र, चि सा, र को, ध, शा. स, यो. म, र स, वृ यो त, र. र, र सु, र चि, भै र, चि. क्र, र च., नि र, भै सा., र कौ, रसायनस, र. प्र. सु, चि र म, र म, वै र, र का, ना. वि, व रा, र पा एषु ग्रन्थेषु **शूलगजकेसरीति** नाम्ना "शुद्ध सूत द्विधा गन्ध यामैक मर्दयेद् दृढम् । द्वयोस्तुल्ये शुद्धताम्रसम्पुटे तन्निरोधयेत् ॥ ऊर्द्ध्वाऽधो लवण दत्त्वा मृद्भाण्डे धारयेद्भिषक । रुद्ध्वा गजपुटे पाच्य स्वाङ्गशीत समुद्धरेत् ॥ सम्पुट चूर्णयेत्सूक्ष्म पर्णखण्डे द्विगुञ्जकम् । भक्षयेत्सर्वशूलार्तो हिङ्गुशुण्ठी च जीरकम् ॥ वचामरिचक चूर्ण कर्षमुष्णजलै पिबेत् । असाध्य नाशयेच्छूल रस स्याच्छूलकेशरी ॥" अय योग. शूलाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

व रा, वै चि, एतयो **शोफाङ्कुशेति** नाम्ना "ताम्रपत्र त्रिभागेन रसगन्धेन लेपयेत् । निम्बद्रवेण सयोज्य सर्यताप विनि क्षिपेत् ॥ ऊर्द्ध्वाऽधो गन्धक दत्त्वा पाचयेदतियत्नत । मत्स्याक्षीमर्दित कृत्वा मृद्भाण्डे वालुकान्विते ॥ याममात्रञ्च पक्त्वैव स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् । गुञ्जामात्रा वटी कृत्वा ह्यभयागुडसयुताम् ॥ आर्द्रकस्य रसेनाऽपि शोफपाण्डुविभेदनम् । शोफाङ्कुशरसो नाम्ना लोकाना हितकारक ॥" अय योग शोफाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

रसावतारे **श्लेष्मोदरारण्यकृशानुमेघ** इति नाम्ना "गन्धकेन तुलित शिववीज मर्दयेत्कनकपत्ररसेन । ताम्रपात्रकुहरे निवेश्य तद्वालुकान्तरगत पुटनीयम् ॥ पाठार्कधत्तूरकृशानुलाङ्गलीवचारसै भावय सप्तसप्त । श्लेष्मोदरारण्यकृशानुरेप वह्नोन्मित श्लेष्मजगुल्मनुत्स्यात् ॥ शुण्ठीगुडाभ्याञ्च गुडार्द्रकाभ्यामार्द्रद्रवेणाऽपि गुडान्वितेन । वह्नयम्बुना सैन्धवसयुतेन घृतोपर्णवातजगुल्मशान्त्यै ॥ वीजस्य काष्ठेन सवोल्केन रक्तोत्थगुल्मस्य विनाशनाय । नि सार्य रक्त त्वथ गुल्मदेशे कन्थारिकासैन्धवशिग्रुलेप ॥" अय योग उदराऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

रसमुक्तावल्या **श्वासकासारिरस** इति नाम्ना "गन्धश्चन्द्रमितं रस यममित याम कुमारीद्रवै,मर्ध्य वह्निमितार्कपत्रममल तत्कल्कसह्लेपितम् । भाण्डे यामचतुष्टय पच दृढ सुस्वाङ्गशीतो रस, श्वासध्वान्तरविस्वराशुगुणद कास द्विगुञ्जो जयेत् ॥ चूर्णं दारुसुरेन्द्रवारुणिजटाव्याघ्यामलाना कृत, तद्वादे तमकादिकासदलन सुप्यादनु प्रत्यहम् । गोप्याद्गोप्यतर सुखेन सुलभ सर्वत्र सिद्ध सदा, स्यादेव प्रतिभासुयोगिसुखद श्रीशम्भुना निर्मित ॥" अय योग श्वासकासाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

चि र, यो. च एतयो **श्वासजेतारस** इति नाम्ना "सूताऽर्द्धं वलिमेकयाममभित कन्यारसै मर्दयेत्—तद्द्वन्द्वेन सम तु शुल्वजदल लिप्त्वा

घटीयन्त्रके। क्षिप्त्वा वालुकयन्त्रतोऽग्निमभितो दद्यादिमन्बुद्धिमान्। पक्त्वैकाहमथाहरेन्निगदितो वह्नोन्मित. श्वासजित् ॥" अय योग श्वासाऽधिकारे निहितोऽस्ति।

र चि, र च, नि र, वै चि., एषु ग्रन्थेषु श्वासहेमाद्रिरस इति नाम्ना "आच्छादितशिला ताम्रीं द्विगुणा वालुकाहये। पक्त्वा सञ्चूर्ण्य गन्धेशो दिनार्द्धं ता पुन पचेत्॥ श्वासहेमाद्रिनामाऽय महाश्वासविनाशन। वर्णवृद्धिकरी ह्येष सुवर्णस्य न सशय ॥" अय योग श्वासकासाऽधिकारे निहितोऽस्ति।

र म., र र स, शा. स, र र, र. क, ध, भै र, नि र, वै र., र सु, र प्र सु, र च, र प्र, र चि., र श, रसायनस, भै मा, यो म, र (मा.), र को, चि र म, यो. च, व रा., र वो, र. मि, र. को, र का, र क यो, वै चि, र क ल, र त, चि क्र एषुग्रन्थेषु श्वासाऽधिकारे सूर्यावर्तनाम्ना "गन्धक सूतक मर्द्य यामैक कन्यकाद्रवै। द्वयोस्तुल्य ताम्रपत्र पूर्वकल्केन लेपयेत्॥ दिनक हण्डिकायन्त्रे पचेच्छीत समुद्धरेत्। सूर्यावर्तरसोनाम द्विगुञ्ज श्वासकासनुत्॥ इन्द्रवारुणिकामूल देवदारुकटुत्रयम्। शर्करामहित खादेदूर्द्ध्वश्वासनिवृत्तये॥" अय पाठो निहितोऽस्ति। रसराजशङ्करे अस्यैवयोगस्य श्वासकुठारेति नाम। चिकित्साक्रमकल्पवल्ल्या ताम्रपाकनाम्नाऽय रसो विन्यस्त, विशेषे गन्धको द्विगुण इति वोद्धव्यम्। अनुपानादौ विशेषो यथा—"वमनमथविरेक कारयित्वा च पश्चात्समधुकमधुयुक्त रक्तिकैकप्रमाणम्। सघृतमथ च तक्र वाऽनुधान्याम्लकञ्च, भिषगिदमनुपान जीर्णधान्यस्य पथ्यम् ॥ यदि कथमपि दद्यादम्लपित्तञ्चकास श्वसनमपि च शोष कामलापाण्डुरोगम्। अपहरति च कुष्ठानक्तपित्त तथार्शो, गदमथ रुधिर वा वातपूर्व निहन्यात्॥ खालित्यमेहतिमिराश्च विजित्य वृद्धदेहोऽपि ताम्रतनुराशुभवेन्मनुष्य.। यो ताम्रपाकरसमत्ति समस्तरोगैर्मुक्तस्समाश्शतमल परिजीवतीह॥" यत्रकुत्रचित्सूताऽर्द्ध गन्धकमिति पाठो लभ्यते तत्प्रयोजन तु न प्रतिभाति, गन्धकाऽधिक्ये तु सम्यक् ताम्रमारणमिति प्रत्यक्षफलम्।

रसचि, र का, एतयो स्वच्छन्दभैरव इति नाम्ना ज्वराधिकारे "वेदकर्षो रसो ग्राह्यो गन्धो द्वादशकर्षक। कृत्वा कज्जलिकामादौ क्षिपेताम्रस्य सम्पुटे॥ अष्टकर्षप्रमाणेऽस्मिन् धृत्वा सूत विलेपयेत्। सन्धिलेप विधायाऽथ स्थालिकायन्त्रके क्षिपेत्॥ शरावेण पिधायाऽथ मृदा सम्यग्विलेपयेत्। अहोरात्र विधेय. स्याद्वह्निस्तत्र च पारदे॥ उत्तार्य शीतल तच्च मधुना सम्प्रदापयेत्। श्लैष्मिके च ज्वरे देयस्त्रिगुञ्जो मरिचै सह॥ वातिकेऽथ ज्वरे दद्याद्द्विगुञ्ज पिप्पलीयुतम्। रोगयोग्याऽनुपानेन देय स्वच्छन्दभैरव ॥ त्रिफलारससयुक्त सर्वरोगे प्रयुज्यते॥" अय योगो ज्वराऽधिकारे निहितोऽस्ति।

न्यूनाऽधिकप्रमाणेन गन्धेशयो कज्जलीं विधाय केवलया येनकेनाऽपि स्वरसेन भावितया वा तया ताम्रपात्रस्योपरिष्टान्मध्यतो वा लेप दत्त्वा गोल विधाय तस्या उपरि ताम्रपात्रमाच्छाद्य वा यन्त्राऽग्नि प्रदत्तस्तेन च यावतोभागस्य ताम्रपात्रस्य पत्राणा वा भस्म सञ्जात तेन केवलेन सम्पुटितेन भावितेन वा नानाऽनुपानैर्विविधेषु रोगेषु प्रयोग कृतोऽस्ति तेषा योगाना प्रयोगसौष्ठवाय रविताण्डवे सङ्ग्रह कृतोऽस्ति। अस्मिन्योगे वान्तिर्विरेचने अप्यभिप्रेते इति गूढ रहस्यम्। दोषनिस्सारणायाऽवशेषितयोस्तयो र्न दोषावाहकत्वमिति सुधीभिर्हृदि विभावनीयम्। ते च योगा यथा—उदयादित्य, १ ज्वरशूलहर, २ ताम्रयोग ३ नवज्वरारण्यकृशानुमेघ, ४ भगन्दरनाशन ५ माहेश्वर, ६ रक्तमाहेश्वर, ६ शूलगजकेसरी, ७ शोफाङ्कुश, ८ श्लेष्मोदरारण्यकृशानुमेघ, ९ श्वासकासारि, १० श्वासजेतारस, ११ श्वासहेमाद्रि, १२ सूर्यावर्त १३ स्वच्छन्दभैरव १४ इति।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग और गन्धक २ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुंआरके रसमें ३ दिन मर्दनकर ३ भाग ताम्रकेपत्रोंपर लेपलगाय ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई हण्डीमेंरख पिण्डको शरावसे ढककर सन्धिवन्दकर छनीहुई किसीभी राखको हण्डीके मुंहतक दवादवाकर भरके दोअङ्गुल सेंधानमक वारीकपीसकर राखपर दवाके थोड़ेसे पानीके छींटे लगाय ढक्कनरख सन्धि वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी लगाकर सुखाकर दो दिनरातकी कड़ीआचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर जंभीरीके रससे एकरोज मर्दनकर छोटी २ टिकिया वनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर ७ गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती मधु और घीकेसाथ देनेसे यह भगन्दरको नष्टकरताहै। गुगली, और सेंधेनमकको काञ्जीकेसाथमिलाकर अनुपानकी जगहलेवे। मधुराहार सेवनकरे। दिनका सोना और ठढाभोजन छोड़देवे ५४

५५ रविताण्डवरसः (द्वितीयः)

दशभागं ताम्रभस्म दरदो दशभागिकः।
उभयोः कज्जलीं कृत्वा लुङ्गनीरेण मर्दयेत् ॥ २४७ ॥
पत्रीकृतस्य नागस्य दशभागान् प्रकल्पयेत्।
कूप्यां निधाय वै पश्चात्क्रमवृद्धाऽग्निना दिनम् ॥२४८॥
एवं कुर्वीत नवधा वह्निं दद्याद्यथाविधि।
रसः कुङ्कुमवर्णः स्यात्प्रोक्तोऽयमनुभूतितः॥ २४९॥

रसायनस, रसायने।

टि०—द्वितीयनागसिन्दूरेणाऽय बहुष्वशेषु साम्यमावहन्नपिप्रक्रियाभेदात्स्वतन्त्रतया निहितोऽस्ति वस्तुतस्तु ताम्रखर्परयोरुभयोरपियोग विधायैकरसत्वे वाधकाऽभावोऽस्ति।

भाषा—ताम्रभस्म और शिंगरफ १०–१० भागलेकर दोनोंको विजोरेकेरससे एकदोरोज़ मर्दनकर १० भाग शुद्धकियेहुए सीसेकेपत्रोंपर लेपदेकर आतशीशीशीमेंभरदे। फिर अच्छीतरहमुखमुद्रादेकर क्रमवृद्ध अग्निसे एकदिन पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर शिंगरफका लेपदेकर एक एक दिन पकावे। इसतरह ९ आचें देनेसे यह कुङ्कुमकेसदृश तैयारहोगा। इसमेंसे १–१ रत्ती अथवा अग्निवलदेखकर देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ५५॥

५६ रवि[illegible]रसः

रवीमेशं त्र्यहं भाव्यं कपित्थाङ्घ्रीरविप्रभः।
वल्लो मेहे सिताक्षौद्रैः प्रातः सायं सिताज्ययुक् ॥२५०॥

रसायनस, मेहाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धतावा, नाग और पारेकीभस्मोंको इकट्ठामिलाय कैथकेरसमें ३ रोज़ मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा शक्कर और मधु अथवा शक्कर और घीकेसाथ सुवहशाम देनेसे यह प्रमेहोंको दूरकरताहै ॥ ५६ ॥

५७ रविसुन्दरोरसः

ससिन्धुजं चित्रकवीजशङ्खं
मरीचयुक्तं विषभागयुक्तम्।

दन्तीरसे भावनया त्रियुक्तं
रसः प्रसिद्धो रविसुन्दरोऽयम ॥ २५१ ॥
वातज्वरार्ति सकलाऽऽमयत्वं
मन्दाऽनलत्वं शिरसो गुरुत्वम् ।
सर्वं निहन्त्युग्रतरं विकारं
गुञ्जाप्रमाणा वटकीकृता वा ॥ २५२ ॥
कुलत्थयूषं त्वथवा तु कृष्ण-
शाल्युन्थमण्डं प्रपिबेच्छितेन ।
कोष्ठाऽग्निवृद्धिं विदधाति रूपं
निहन्ति वातज्वरवातदोषम ॥ २५३ ॥

र. चं., र सु, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—सैंधानमक, चित्रकबीज, शङ्खभस्म, मरिच, शुद्ध-वच्छनाग सब समभाग लेकर दन्तीकेस्वरसमें ३ भावनाएं देनेसे यह रस तैयारहोगा। इसकी १–१ रत्तीकीमात्रा कुल्थीके यूष अथवा शाहजीरा चावलोंके माटकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, वात-ज्वर तथा अन्य वातविकारोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५७ ॥

५८ रविसुन्दरीवटी (प्रथमा)

विषं गन्धो रसः शुण्ठी मरीचाऽऽमलवेतसम ।
पिप्पलीधूर्तबीजानि समं स्नुक्क्षीरभावितम ॥२५४॥
भावना च त्रिधा देया दन्तीमूलस्य सतधा ।
चित्रकस्याऽपि हेमन्ध त्रिवृतश्चार्द्रकस्य च ॥ २५५॥
मुद्गप्रमाणा वटिका रविसुन्दरसञ्ज्ञिका ।
करोत्यग्निबलं पुंसां ज्वरं कासं व्यपोहति ॥ २५६ ॥
वातश्लेष्मभवान्रोगानन्यांश्च श्लेष्मसम्भवान् ।
अजीर्णं षड्विधं जित्वा कोष्ठाग्निं वर्धयेत्सदा ॥ २५७॥

र. सु, अजीर्णाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धवच्छनाग, गन्धक और पारा, सोंठ, मिरच, अम्लवेत, पीपल, शुद्धधतूरेकेबीज सबसमभाग लेकर बारीकचूर्ण-कर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर थूहरके दूधसे ३ भावनाएं देकर दन्तीमूल, चित्रक, धतूरा, निसोत और अदरख के यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंकी ७–७ भावनाए देकर मूगबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, ज्वर, कास, वातश्लेष्मजरोग, ६ प्रकारका अजीर्ण इनसबको यह नष्टकरताहै५८

५९ रविसुन्दरीवटी (द्वितीया)

वृक्षोत्थरसगन्धांश्च मल्लाद्द्विगुणतां नयेत् ।
पिचुमन्दरसैर्धत्तूरैरर्कस्नुग्दलजाम्भसा ॥ २५८ ॥
भावयेदेकविंशत्या वटिका राजिकाऽऽकृतिः ।
धातुगे सन्निपातोत्थे जीर्णे चोपद्रवै र्युते ॥
निहन्ति च ज्वरं सर्वं रविस्तिमिरकं यथा ॥ २५९ ॥

चि. र., ज्वरे ।

भाषा—शुद्ध वच्छनाग, पारा और गन्धक २–२ भाग, शुद्धसोमल १भाग लेकर सबकी नीलवर्ण कज्जलीकर नीम, धतूरा, आक और थूहरकेपत्ते इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे २१–२१ वार भावनाए देकर राईके बराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे धातुग, सन्निपातज और उपद्रवोंकेसाथ जीर्णज्वरोंको यह अन्धकारको सूर्यकीतरह नष्टकरताहै ॥ ५९ ॥

६० रसकन्दर्परसः

सूतभस्माऽहिवङ्गञ्च ताम्रं बलिसुवर्णकम ।
रौप्यकान्तप्रवालाऽभ्रं कर्षञ्च पृथगीरितम् ॥ २६० ॥
मौक्तिकञ्च द्विभागं स्यात्सर्वमेकत्र कारयेत् ।
भावनाश्च पृथग्दद्याद्धंसपाद्यग्निकन्यका– ॥ २६१ ॥
तालमूलीविदारीभूशर्कराशाल्मलीद्रवैः ।
कूप्यां पुनर्द्रवैरेभि विपचेच्च शलाकया ॥ २६२ ॥
कूपीमध्यात्समाहृत्य सूक्ष्मतां प्रतिपादयेत् ।
भावयेत्तत्पुनः सर्वं निर्गुण्डीभृङ्गजैस्तथा ॥ २६३ ॥
चन्द्रकस्तूरिकाभ्याञ्च सुसिद्धो रसराड् भवेत् ।
गुरून्वृद्धांश्च सिद्धांश्च कुमारीयोगिनीगणान् ॥ २६४॥
पूजयित्वा यथाऽध्यायं ब्राह्मणान्वेदपारगान् ।
ध्यात्वा शिवं शिवां देवीं देवं धन्वन्तरिं तथा ॥२६५॥
रसः कन्दर्पनामाऽयं कामिनामर्थसाधकः ।
नवपञ्चाक्षरे देवीं जपेदयुतसङ्ख्यया ॥ २६६ ॥
हुत्वाऽग्नौ भोजयेद्विप्रान् देयः सर्वार्थसिद्धये ।
सिताकृष्णामधुयुतो वल्लोऽस्य जयति ध्रुवम् ॥२६७॥
क्षयमेहादिकान्सर्वान् स्वौषधैश्च प्रयोजितः ।
वन्ध्या प्रसूयते पुत्रं वृद्धोऽपि तरुणो भवेत् ॥ २६८ ॥
सर्वव्याधिविनिर्मुक्तो रमते स्त्रीसहस्रकम् ।
रसः कन्दर्पनामाऽयं शम्भुनाथेन निर्मितः ॥ २६९ ॥

र धं, क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—पारा, नाग, वङ्ग, ताम्र, सुवर्ण, चादी, कान्तलोह, कान्तपाषाण, प्रवाल, अभ्रक इनकीभस्में और शुद्धगन्धक १–१ कर्ष, मुक्तापिष्टी २ कर्षलेकर बारीक चूर्णकर एकजगह मिलाकर हंसराज, चित्रक, घीकुंआर, तालमूली, विदारीकन्द, दीमकका मूलघर, सेंमलका मुसला इनप्रत्येककी १–१ भावना देकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीकीहुई आतशीशीशीमें डालकर वालु-कायन्त्रमें रख पूर्वोक्तद्रव क्रमसे डालकर पकावे और लोहेकी शलाकासे चलातारहे। द्रव समाप्तहोनेपर शीशीमेंसे निकालकर सुखनेपर बारीकचूर्णकर पूर्वोक्तद्रवोंसे १–१ भावना देकर निर्गुण्डी, भंगरा, कपूर और कस्तूरी, इनकी १–१ भावना देकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर सुखाकर रखछोड़े। गुरू, वृद्ध, सिद्ध, कुमारी, योगिनी, वेदपारगब्राह्मण, शिव, उमा और धन्वन्तरिका यथासम्प्रदाय पूजनकर नवार्ण (ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे) और पञ्चाक्षर (ॐनमः शिवाय) मन्त्रोंका दश–दशहज़ार जपकरे। जपका दशाश हवनकर ब्राह्मणभोजन-कराय इसरसकी १–१ गोली शक्कर, पीपल और मधुकेसाथ

भयङ्करकुष्ठ, प्रमेह, क्षय, गुल्म, शूल, मलाजीर्ण, भ्रम, कण्ठशूल, ज्वर, सन्निपात, हैज़ा, विषमज्वर, इनसवको यह नष्टकरताहे ६८

६९ रसचूडामणीरसः

सूतभस्म विषं ताम्रं जयपालं सुगन्धकम्।
हेमतैलेन सम्मर्द्य ततो लघुपुटं ददेत्॥ ३०३॥
भावयेत्कनकद्रावैरजामहिषमीनजैः।
पित्तैः पृथक् सप्तमितं विषधूमेन शोषयेत्॥ ३०४॥
सप्तवारं त्रिवारं वा पश्चादार्द्रेण भावयेत्।
रसचूडामणिः सिद्धःसाक्षाच्छ्रीभैरवं महः॥ ३०५॥
ततोऽस्य रक्तिकां गुञ्जयाद्दुआर्द्धं चाऽऽर्द्रनिम्बुयुक्।
महारोगे सन्निपाते नवे वाऽप्यनवे ज्वरे॥ ३०६॥
जलाऽवगाहनं कुर्यात्सेचनं व्यजनाऽनिलम्।
तत्क्षणान्मङ्गलस्नानं कुङ्कुमं चन्द्रचन्दनम्॥ ३०७॥
पथ्ये यथेप्सितं खाद्यं स्वादुद्राक्षेक्षुदाडिमम्।
सितां समुद्गकरसां काञ्जिकं स्नानमेव वा॥ ३०८॥
शूले गुल्मेऽग्निमान्द्यादौ ग्रहण्युदरपाण्मसु।
वाते सर्वाङ्गकैकाङ्गगते वाऽप्यनिले तथा॥ ३०९॥
प्रसूतिवाते सामे वा स्वानुपानैः प्रयोजयेत्।
रक्तदोषं विना चैनं योजयेद्वर्जयेदिह॥ ३१०॥
तैलाऽम्लराजिकामीनक्रोधशोकाऽध्वचङ्क्रमम्।
विल्वारनालसुषवीफलवृन्ताकमैथुनम्॥ ३११॥

वृ यो त, रसायनस, र क, र सु, र. चि, र स, यो म, र का, टो, ज्वरे सन्निपाते च।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धवछनाग, ताम्रभस्म, शुद्धजमालगोटा और गन्धक सव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर धतूरेकेतैलसे १–२ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर लघुपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर धतूरेकारस, वकरा, भेंसा और मछलीकेपित्तोंमे ७–७ भावनाएं देकर इस रसकीवरावर वछनागकीधूनी ७ वार या ३ वार देकर अदरखकेरससे १ रोज भावनादेकर आधीआधीरत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ गोलीसे २ गोलीतक अदरख और नीबूकेरसकेसाथ देनेसे महारोग, सन्निपात, नया या पुरानाज्वर येसव नष्टहोतेहै। इसरसको देकर जलमें वैठावे या जलकी सिरपर धारादे। पंखेकी हवाकरे। अमह्यशीत मालूमहोनेपर जलसे अलगकर केसर, कपूर और चन्दनका शरीरमें लेपकरे। भूख मालूमहोनेपर यथेच्छ भोजनदे। मीठीद्राक्ष, ईख, अनार, शक्कर, और मूंगकायूष यथेष्टदेवे, काञ्जीमे स्नानकरावे। शूल, गुल्म, अग्निमान्द्य, ग्रहणी, उदररोग, एकाङ्ग अथवा सर्वाङ्गवात, प्रसूतिवात, आमवात, इन रोगोंमें अपनेअपने अनुपानोंकेसाथ देनेसे सबको नष्टकरताहै। रक्तदोषवालेको छोड़कर अन्यसवरोगोंमें इसे देसकतेहैं। इसमें तैल, खटाई, राई, मछली, क्रोध, शोक, रास्ना, वेग, काञ्जी, करेला, वेंगन और मैथुनका त्यागकरे॥ ६९॥

७० रसनायकद्वयम् (रत्नगर्भेश्वरः)

स्वर्णरौप्यरविवङ्गनागकाः
कान्तविद्रुमपविमुक्तमाक्षिकाः।
सर्वमेकसममभ्रसूतकाः
धूर्तभृङ्गहलिभानुभाविताः॥ ३१२॥
अब्जयन्त्रविहितो रसराजो
वल्लमात्रमशितो गदहन्ता।
रत्नगर्भ इति कीर्तिमुपेतः
शम्भुना निगदितः प्रभुणाऽसौ॥ ३१३॥
सूतवज्रकनकाऽभ्रककान्ता-
धूर्तवज्रिरविदुग्धमर्दिताः।
जायते पुटितमर्दनयोगा-
त्सर्वरोगहरणे समर्थकः॥ ३१४॥

र शि., राजयक्ष्मणि।

भाषा—सुवर्ण, चादी, ताम्र, वङ्ग, नाग, कान्तलोह, कान्तपाषाण, प्रवाल, हीरा, मोती, सोनामाखी, अभ्रक, पारा इनकी भस्में समभागलेकर धतूरा, भंगरा, करिहारी, आक इनकेरसोंसे १–१ रोज मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमेंवन्दकर ६–७ कपड़मिटीदेवे। सूखनेपर वालू, राख अथवा नमक इनमेंसे किसीएकमें हण्डीमें दवाकरऊपर शरावसम्पुटदकर ४ पहरकी तीक्ष्ण अग्निमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। अथवा पारा, हीरा सोना, अभ्रक, कान्तलोह इनकीभस्में समभागलेकर धतूरेकेरस, सेहुण्ड और आककेदूधमें १–१ रोज मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर पहिलेकीतरह भस्म, लवण अथवा वालुकायन्त्रमें पकाकर रखछोडे। येदोनों रसनायकरस तैयार होंगे। इनकी आधीआधीरत्तीकीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे ये समस्तरोगोंको दूरकरतेहैं॥ ७०॥

७१ रसपर्पटी (प्रथमा)

जयापत्ररसेनाऽपि वर्धमानरसेन च।
भृङ्गराजरसेनाऽपि काकमाच्या रसेन च॥ ३१५॥
रसं संशोध्य यत्नेन तत्समं शोधयेद्बलिम्।
भृङ्गराजरसैः पिष्ट्वा शोषयेदर्करश्मिभिः॥ ३१६॥
सप्तधा वा त्रिधा वाऽपि पश्चाच्चूर्णञ्च कारयेत्।
चूर्णयित्वा समं तेन रसेन सह मर्दयेत्॥ ३१७॥
नष्टसूतं यदा चूर्णं भवेत्कज्जलसन्निभम्।
निर्धूमे वदराङ्गारे द्रवीकुर्यात्प्रयत्नतः॥ ३१८॥
महिषीमलविन्यस्ते तत्र तत् कदलीदले।
निक्षिप्य तदुपर्यन्यत्पत्रं दत्त्वा प्रपीडयेत्॥ ३१९॥
शीतलत्वं गते पत्रात्समुद्धृत्य विचूर्णयेत्।
एवं सिद्धा भवेद् व्याधिघातिनी रसपर्पटी॥ ३२०॥
ज्वरादिव्याधिभिर्व्याप्तं विश्वं दृष्ट्वा पुरा हरः।
चकार कृपया युक्तः सुधावद्रसपर्पटीम्॥ ३२१॥

रक्तिकासम्मितां तावद्भृष्टजीरकसंयुताम् ।
गुञ्जाऽर्द्धभ्रष्टहिङ्ग्वाढ्यां भक्षयेद्रसपर्पटीम् ॥ ३२२ ॥
रोगानुरूपभैषज्यैरपि तां भक्षयेद्बुधः ।
पिबेत्तदनु पानीयं शीतलं चुलुकत्रयम् ॥ ३२३ ॥
प्रत्यहं वर्धयेत्तस्या एकैकां रक्तिकां भिषक् ।
नाऽधिकां दशगुञ्जातो भक्षयेत्तां कदाचन ॥ ३२४ ॥
एकादशदिनाऽऽरम्भात्तां तथैवाऽपकर्षयेत् ।
एवमेतां समश्नीयान्नरो विंशतिवासरान् ॥ ३२५ ॥
शिवं गुरुं तथा विप्रान् पूजयित्वा प्रणम्य च ।
श्रद्धया भक्षयेदेतां क्षीरमांसरसाशनः ॥ ३२६ ॥
ज्वरञ्च ग्रहणीञ्चाऽपि तथाऽतीसारमेव च ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शूलप्लीहजलोदरम् ॥ ३२७ ॥
एवमादीन्गदान्हत्वा हृष्टः पुष्टश्च वीर्यवान् ।
जीवेद्वर्षशतं साग्रं वलीपलितवर्जितः ॥ ३२८ ॥

भा प्र, चि.क., र सु., र क ल, नि र, यो. म, र.त., भै. र, र सु, रससागर, र.प्र सु, र मृ, ज्वराऽधिकारे ।

टि०—"कालक रस्य तास्य यस्त्र परिकीयते । विजयाख्या तु सा ज्ञेया सर्वरोगनिषूदनी ॥" इति रसेन्द्रसारसङ्ग्रहे दृश्यते परन्तु त्रयाणामधिकतया योगे पञ्चामृतपर्पटीति नाम स्थापयितुमुचितं न तु विजयपर्पटीति । रससागरे गिरिकर्णीवर्धमानकाकमाचीशृङ्गवेररसैः पारदस्य स्वेदनादिकं विहितम् । भैषज्यरत्नावल्याञ्च जयन्त्येरण्डाऽऽर्द्रककाकमाचीभिः रसशोधनं विहितम् । र.प्र. सु, र मृ. एतयोरेरण्डमूलार्द्रकगिरिकर्णीकाकमाचीदाडिमबीजरसैः प्रत्येकं पारदस्य मर्दनं विहितमतो दाडिमीबीजस्वरसोऽप्यत्र नियोजनीयः । भावप्रकाशादौ स्वेदनं विहितम् । रससागरे निर्विशेषं शोधनं विहितम् । एवं भैषज्यरत्नावल्यामपि मर्दनशोषणरूपेण शोधनं निर्दिष्टम् । अधिकं तु न तद्धानिरितिन्यायानुकूल्येन जयाजयन्तीगिरिकर्ण्यैरण्डभृङ्गकाकमाचीदाडिमीबीजानीति सर्वौषधद्रवैर्मर्दनस्वेदनादिभिः रसशोधनं विधाय सर्वेषां ग्रन्थानां सामञ्जस्यं सम्पाद्यैक एव पाठः सम्पादनीय इत्यस्माकं सम्मतिः । र चि, यो र, वृ यो त, ना वि, र. च, रसायनम, र नि, नि र., र का, यो म, टो, र म, र क ल, ध, र र. टी, र. सु, चि र म, चि. क, र. र स, र कौ, वै. र, र मृ., ग्रहण्यधिकारे । एषु ग्रन्थेषु "गन्धेशकज्जलीं लौहे द्रुतां बादरवह्निना । गोमयोपरि विन्यस्तकदलीदलपातनात् ॥ कुर्यात्पर्पटिकाकारामस्या रक्तिद्वयं क्रमात् । दशकृष्णलकं यावत्प्रयोगं प्रहरार्द्धतः ॥ तदर्द्धं बहुपूगस्य भक्षणं दिवसे पुनः । तृतीय एव मासाज्यदुग्धमत्र विधीयते ॥ वर्ज्यं विदाहिक्षीररम्भामूलं तैलञ्च सार्षपम् । ग्रहणीक्षयतृष्णार्शःशोथाजीर्णादिनाशिनी ॥" ईदृश पाठो दृश्यते, तत्र पारदगन्धकयोः शुद्धिनिष्कासनाऽतिरिक्तो विशेषो न दृश्यतेऽतस्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भावः करणीयः । कार्योऽन्ययिकतायाः शुद्धयवकाशाऽभावे तु गौणकल्पोपदेशाऽभावेऽपि जनानां स्वाभाविकी प्रवृत्तिर्भवतीति कृत्वा तदर्थं स्वतन्त्रपाठकल्पनस्याऽन्याय्यत्वमिति सुधीभिर्विभावनीयम् । साधारणपाठे च टोडरानन्दे द्वितीयस्थाने बीजकशाल्मलिविट्चूर्णमधूनि अनुपानत्वेन विहितानि सङ्ग्रहण्यां तदतिप्रशस्ततरम् । कुत्रचित् "इन्द्रवारुणिकामूलं सवचं क्षीरपाचितम् । पर्पटीरससंयुक्तं सप्ताहादश्मरीप्रणुत् ॥" इति पाठोऽश्मरीरोगे अनुपानत्वेन गृहीतः । कुत्रचित् "कृष्णधत्तूरजे बीजे पञ्चभिः पर्पटीरसः । सम्प्रयोज्य प्रशमयेदुन्मादं भूतसम्भवम्" इति पाठः उन्मादे अनुपानत्वेन गृहीतः । चि. क. एकविंशतिवाराणि पर्पटीं रसपूर्विकाम् । स्नुहीदुग्धेन सम्भाव्य निस्याध्माने प्रदापयेदितिविशेषः । र कौ, वै र एतयोः "पर्पट्या द्विगुणो नीरस्तुर्यांशो रामठस्य च । दीयते मधुना चैषा शिरोगुञ्जाचतुष्टयम् ॥ श्लेष्मपित्ताऽनिलश्वासकासपीनसपाण्डुताः । प्लीहहृल्लासदाहशूलानि हन्यादश्माज्ज्वरं नवम् ॥" इत्यधिकतया पाठो दृश्यते । तत्राऽनुपानानामनियतत्वात्र तद्भेदेन पाठभिन्नता भवितुमर्हत्यतः सोऽपि पाठोऽत्रैवाऽन्तर्भवतीति बोध्यम् । भैषज्यरत्नावल्याञ्च पर्पटीसेवनप्रपञ्चविस्तरो निरूपितः सोऽधस्तादस्माभिर्द्रष्टव्यः । स यथा—

श्रीविन्ध्यवासिपादौ नत्वा धन्वन्तरिञ्च सुरभिषजम् ।
रसगन्धकपर्पटिकापरिपाटीपाटवं वक्ष्ये ॥
सप्त रसे जयन्त्याः पश्चादेरण्डसम्भृते ।
आर्द्रकरसे च सूत पत्ररसे काकमाच्याश्च ॥
सप्तसुदिनाऽनुपूर्व्या मर्दनशुष्कं करेण गृह्णीयात् ।
प्रस्तरभाजनमध्ये शुद्धिरियं पारदस्योक्ता ॥
शुकपिच्छसमच्छायो नवनीतसमद्युतिः ।
मसृणः कठिनः स्निग्धः श्रेष्ठो गन्धक उच्यते ॥
कृत्वा भद्र गन्धकमतिकुशलः क्षुद्रतण्डुलाकारम् ।
तद्भृङ्गराजरसैरनन्तरं भावयेत्पात्रे ॥
तदनु च शुष्कं कुर्यात्त्रिलिप्तमानञ्च सप्तधा रौद्रे ।
तदनु च शुष्कं चूर्णं कृत्वा विन्यस्य लौहिकामध्ये ॥
निर्धूमबदरकाष्ठाङ्गारे न्यस्त विलाप्य तैलसमम् ।
पात्रस्थितभृङ्गराजरसमध्ये ढालयेन्निपुणः ॥
तस्मिन् प्रविष्टमात्रं काठिन्यं याति गन्धकचूर्णम् ।
पुनरपि रौद्रे शुष्कं केतकरजसा समानतां नीतम् ॥
शुद्धे सूते शोधितगन्धकचूर्णेन तुल्यता कार्या ।
तावन्मर्दनमनयोर्यावन्न कणोऽपि दृश्यते सूते ॥
पश्चात्कज्जलसदृशं चूर्णं लौहीस्थितं यत्नेन ।
निर्धूमबदरकाष्ठाऽङ्गारे न्यस्त विलाप्य तैलसमम् ॥
सद्यो गोमयनिहिते कदलिदले ढालयेन्मृदुनि ।
लौहीस्थितमवशिष्टं कठिनं तत्र ग्रहीतव्यम् ॥
पश्चात्पर्पटरूपा पर्पटिका कीर्त्यते लोकैः ।
मयूरचन्द्रिकाकारं लिङ्गं यत्र तु दृश्यते ॥
तत्र सिद्धिं विजानीयाद्वैद्यो नैवाऽत्र संशयः ।
सुदिवसे कार्या भक्ष्या च पर्पटी मनुजैः ॥
जीरकगुञ्जे हिङ्गोरर्द्धं खादेच्च वातले जठरे ।
जीरकहिङ्गुरसेन त्वनुपानं सलिलधारया कार्यम् ॥
रसगन्धकपर्पटिका भक्षणमात्रे तु नाम्भसः पानम् ।
प्रथमं गुञ्जायुगलं प्रतिदिनमेकैकवृद्धितो भक्ष्यम् ॥
दशगुञ्जापरिमाणान्नाऽधिकमदनीयमेकविंशतिदिनानि ।
वाताऽऽतपकोपमनश्चिन्तनमाहारसमयवैषम्यम् ॥
व्यायामश्चाऽऽयासः स्नानं व्याख्यामहितमत्यन्तम् ।
पाके स्तोकं सर्पिर्जीरकधान्याकवेशवारैश्च ॥
सिन्धूद्भवेन रन्धनमोदनधान्यानि शाल्यो भक्ष्याः ।
कृष्णं वार्ताकुफलमविद्धकर्णी च वास्तूकम् ॥
अक्षतमुद्गममेतं कदलिदलसहितं पटोलञ्च ।
क्रमुकफलशृङ्गवेरौ भक्ष्यौ शाकेषु काकमाची च ॥
लावकवर्तकतित्तिरि मयूरमासञ्च हितकरं भवति ।
मद्गुररोहितमीनौ वाऽदनीयौ कृष्णमत्स्याश्च ॥
नीरक्षीरं व्यञ्जनमदनीयं पक्वकदली च ।
रम्भाफलदलवल्कलमूलानां वर्जनं कार्यम् ॥
तिक्तं निम्बादिकमपि नाद्यं नोष्णं तथाऽन्नञ्च ।
आनूपमांसजलचरपतत्रिपललञ्च सर्वथा त्याज्यम् ॥
स्त्रीणां सम्भाषणमपि राटकश्च कृष्णमत्स्येषु ।
नाऽम्लं न दधिशाकं पर्पट्या भक्षणे भक्ष्यम् ॥

गुडखण्डशर्करादिकं इक्षुविकारो न भक्ष्य इक्षुश्च ।
न दलं न फलं न लताप्यदनीया कारवेल्लस्य ॥
स्तोकं घृतमिह भक्ष्यं पथ्ये माकाङ्क्षमुत्थानम् ।
क्षुत्पीडाया भोजनमवश्यमेव महानिशायाञ्च ॥
समजलमिश्रं पक्वं क्षीरं यद्वाऽधिकजलपक्वञ्च ।
कथमपि भोजनसमयातिक्रमे जाते ज्वरे विरेके च ॥
वमने च नारिकेलसलिलं दुग्धञ्च पातव्यम् ।
स्वप्ने जाते रमिते विरेकने क्षीरमेव पातव्यम् ॥
न ज्ञायते बुभुक्षा लक्ष्याऽलक्ष्या प्रतीयते यदि वा ।
अशक्तिश्चिनिश्चिनमस्तकशूलाद्यैः नूनमवधार्या ॥
किं वहु वाच्यं रोगी यदा यदा भवति साकाङ्क्षः ।
पाययितव्यं दुग्धं तदा तदा निर्भयीभूय ॥
विहिताकरणे चास्यामविहितकरणे च रोगाधन्नानाम् ।
व्यापत्तयोऽपि बहुधा दृष्ट्वा प्रामाणिकैर्बहुशः ॥
तस्मादवधातव्यं भवितव्यं भोजने निपुणं ।
एवमियं क्रियमाणा भवति श्रेयस्करी नियतम् ॥
अर्शोरोगं ग्रहणीं मामां शूलाऽतिसारौ च ।
कामलपाण्डुव्याधीन्प्लीहानञ्चाऽतिदारुणं हन्ति ॥
गुल्मजलोदरभस्मकरोगं हन्त्यामवाताश्च ।
अष्टादशैव कुष्ठान्यशेषशोथादिरोगांश्च ॥
इयमम्लपित्तशमनी त्रिदोषदमनी क्षुधातिकमनीया ।
अग्निं निमग्नमुदरे ज्वालाजटिलं करोत्याशु ॥
रसगन्धकपर्पटिका त्वपवार्य व्याधिसङ्घातम् ।
वलीपलितशून्यं पुरुषं दीर्घायुषं कुरुते ॥
व्याधिप्रभावहरणादपमृत्युत्रासनाशकरणाच्च ।
मर्त्यानाममृतप्रदी रसगन्धकपर्पटी जयति ॥
शम्भुं प्रणम्य भक्त्या पूजां कृत्वा च विष्णुचरणाब्जे ।
रसगन्धकपर्पटिका भक्ष्या तेनाऽतिसिद्धिदा भवति ॥
नृणां सृजा ध्रुवमियमारोग्यं सततशीलिना कुरुते ।
श्रीवत्साङ्कविनिर्मिता सम्यग्रसपर्पटी श्रेष्ठा ॥
उक्तमेव हि कर्तव्यं नानाशास्त्रगतया तथा ।
औषधक्रिययैवाऽत्र कर्तव्या चोत्तरक्रिया ॥
प्रत्यवायविनाशार्थं क्षेत्रपालबलिं न्यसेत् ।
कृतमङ्गलकः प्रातः योगिनीनामतः परम् ॥ इति ॥

विशेषसूचनम्

"प्रथमं गुञ्जायुगलं प्रतिदिनमेकैकवृद्धितो भक्ष्यम् । दशगुञ्जापरिमाणान्नाऽधिकमदनीयमेकविंशतिदिनानि ॥" इति विन्ध्यवासिप्रयोगे गुञ्जाद्वयात्प्रथममारम्भं कृत्वा प्रतिदिनमेकैकगुञ्जाप्रमाणं वर्धयित्वा नवमदिने दशगुञ्जापरिमाणं भविष्यति ततोऽनन्तरं द्वादशदिनानि यावत् तत्प्रमाणं स्थिरं भवति द्वाविंशतितमं दिनमारभ्य प्रतिदिनमेकैकगुञ्जाया ह्रासः कर्तव्यः इत्थं त्रिंशद्दिनैः प्रयोगः समाप्यते । भावमिश्रादिमते प्रथमं गुञ्जात आरभ्य प्रतिदिनमेकैकगुञ्जाया वृद्धिः, एकादशदिनादारभ्य प्रतिदिनमेकैकगुञ्जाया ह्रासः इत्थं विंशतिदिनैरेकः प्रयोगः समाप्यते । एतावता कालेन रोगस्य दैववशान्निःशेषता सम्पद्यते तर्हि द्वितीयप्रयोगाऽऽरम्भो निरर्थकोऽस्ति । दैववशात्प्रथमप्रयोगेणोऽरोग्यता न दृश्येत तर्हि द्वितीयतृतीयादिप्रयोगा अपि समाचरणीयाः । विन्ध्यवासिमते द्वितीयः प्रयोगो मासद्वये समाप्यते । भावमिश्रादिमते तु चत्वारिंशता दिनैरिति विशेषः । एतस्मिन्नुभयविधप्रयोगे जलनिषेधमत्यावश्यकं मन्यन्ते चिकित्सकाः । केचित्तु गुदप्रक्षालनादिकमपि दुग्धादिना कारयन्ति । जलस्पर्शनमात्रेणाऽपि मृत्युः सम्पत्स्यते इत्यादीत्यादिविभीषिकां प्रदर्श्य रोगिणमर्द्धप्राणायितं कुर्वन्ति तत्र कीदृग्याथातथ्यमिति विचारे—प्रथमतो जलतत्त्वगवेषणाऽत्यावश्यिकी प्रतिभाति । अप एव ससर्जादौ तासु बीजमवासृजदिति मनुवाक्येन स्थूलसृष्टिनिर्माणे जलस्य प्रधानत्वमायाति । प्रत्यक्षतोऽपि स्त्रीपुंससंयोगे च्युतयो रजःशुक्रयो गर्भोपादानकारणत्वादन्यतत्त्वाऽपेक्षया शरीरे जलीयभागस्याऽत्यधिकत्वादेकान्ततो जलवर्जनं न युक्तिसहम्, दुग्धादावपि प्रचुरजलीयभागत्वादुत्कटतृष्णोद्गमाऽभावाद् दुष्टजलेन मन्दाग्न्यादिरोगसङ्करोदयाच्च जलवर्जने तात्पर्येण तथाविधवचनान्युपलभ्यन्ते, उत्कटतृष्णोद्गमे तु स्वच्छजलग्रहणे दोषाऽभावोऽस्तीति बोध्यम् । यत्र तु स्वच्छजलाऽभावोऽस्ति तत्र कृत्रिमरीत्यापि तत्स्वच्छता सम्पादनीया । फलीयस्वरसन्तु पौरस्त्यपाश्चात्यवैद्या ऐकमत्येन व्यापारयन्त्येव तत्र न कश्चित्प्रत्यवायो दृश्यत इति प्रत्यक्षविषयः । "तृतीय एव मांसाऽऽज्यदुग्धमत्र विधीयते" इत्यादिवाक्यं केनाऽभिप्रायेण निहितमस्तीति न ज्ञायते, ग्रहणीरोगाऽभिभूतस्य तृतीय एव दिवसे तादृग्वह्न्युदयाऽभावात् । पर्पटीसेवने मार्गद्वयम् दुग्धतक्रफलसेवनेनैको, लवणसेवनेन द्वितीय । तत्र प्रथमो मुख्यकल्पो द्वितीयस्तु बालभीरुसुकुमारस्त्रीव्रणानामशक्त्योपयोगित्वान्निकृष्ट । प्रथमकल्पे स्वस्वप्रकृत्यानुकूल्येन तक्रदुग्धयो र्निर्णयः करणीयः । केवलतक्रप्रयोगे रात्रावपि तत्सेवाया दोषाऽभावोऽस्ति । यत्र तु द्वयोरपि समयपरत्वेनोपयोगः क्रियते तत्र तु रात्रौ दुग्धस्यैवोपयोगः करणीयो न तक्रस्य । तक्रस्य सम्यक् पाकोत्तरं दुग्धस्य प्रयोगे दुग्धपाकोत्तरं तक्रस्योपयोगे च न कश्चित्प्रत्यवायोपस्थानं भवति । यत्र तु द्वयो र्मध्ये जन्मप्रभृत्येकस्य विरुद्धताऽस्ति तत्र तत्सेवने दुराग्रहो न करणीयः । फलेषु मधुरसुपक्वतुजाम्रसेवा सर्वोत्तमाऽस्ति । मिष्टनिम्बूकसेवाऽपि तादृगेवाऽस्ति । बद्धकोष्ठताया गोपालकर्कटी सेवनीया, वेगाऽधिक्ये कर्तिकायाञ्च सा नोपयोज्या, अन्यानि लघूनि मधुराण्यनम्लानि फलानि यान्युपलभ्यन्ते तानि प्रकृत्यनुकूलानि चेत्प्रयोज्यानि । प्रयोगसमाप्तावन्नसेवा विरेचनकल्पवत्करणीयेति रहस्यम् ।

भाषा—भाग, एरण्ड, भंगरा और मकोयकेरसोंसे १-१ दिनपारेको स्वेदनकरे । भंगरेके रससे शुद्धगन्धकको वार २ मर्दनकर धूपमें ३ वार या ७ वार सुखावे । फिर इसतरहके पारे और गन्धकको समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीपुती-हुईलोहेकीकड़छीमें निर्धूम वेरकेकोयलोंपर गलाकर ताजे भैंसके गोवरपर रक्खेहुए केलेकेपत्तेपर ढालकर ऊपरसे दूसरा केलेकापत्ता रख गोवरसे दवादे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । शिव, गुरु तथा ब्राह्मणलोगोंकी पूजाकर इसमेंसे १-१ रत्तीकी-मात्रा १ माशा भुनेहुएजीरे और आधीरत्तीभुनीहींगके साथ अथवा केवल आधीरत्तीहींगके साथ अथवा तत्तद्रोगहरानुपानके

साथ खाकर २ चुल्लू ठण्ढापानीपीवे । इसकीमात्रा रोज़ १–१ रत्ती बढ़ावे और १० रत्तीतकबढ़ाकर ग्यारहवें दिनसे १–१ रत्तीकमकरे । इसतरह श्रद्धापूर्वक इसकासेवनकरनेसे ज्वर, सङ्ग्रहणी, अतिसार, कामला, पाण्डु, शूल, प्लीहा, जलोदर इत्यादि समस्तरोगोंको दूरकर आदमीको हृष्टपुष्ट और वीर्ययुक्त बनाकर वलीपलितादिकको दूरकर सौ वर्षसे अधिक आयुको करतीहै ॥७१॥

७२ रसपर्पटी (द्वितीया)

विमृद्य बलिपारदं तुलसिजेन कृत्वा वटीम् ।
निधाय नवभाजने तदनु गोलकस्योपरि ॥ ३२९ ॥
निधाय दृढशुल्वजं त्रिघटिकं निरुद्धं पचेन् ।
प्रदीपदहनेन सिद्ध्यति ततोऽपरं पर्पटी ॥ ३३० ॥
विघृष्य जरणादिना तु रसनामथो काकुदम् ।
तथाऽऽर्द्रकरसान्वितं तुलितवल्लमेवाऽश्नतः ॥ ३३१ ॥
पटावृतशरीरमास्थितवतश्च घर्मोद्गमा- ।
दधि प्रति समश्नतः सुनवतकशाल्योदनम् ॥ ३३२ ॥
दिनत्रयेण निश्चितं नवज्वराननेकशः ।
शमं व्रजन्ति यानलं न जेतुमौपधीबलम् ॥ ३३३ ॥

यो.च, रसायनसं., र सि, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर तुलसीकेरससे एकरोज़ मर्दनकर गोलाबनाय मिट्टीके नयेवर्तनमें रखकर ऊपरसे तांबेकीकटोरीसे ढककर दृढसन्धिबन्दकरदे और कटोरीको बालूसेटककर दीपाग्निसे ३ घड़ीतक आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर बारीकपीसकर रखछोड़े । इसमेंसे २–३ रत्तीकीमात्रा अदरखकेरसकेसाथ मिलाकर खिलावे । खानेसेपहिले जीरेप्रभृतिकेचूर्णसे जीभ और तालुवगैरहको साफकरले । दवादेनेकेवाद गर्मकपड़ा ओढ़ाकर सुलादे । एकखुराकसे यदि पसीना न हो तो आधेघण्टेकेवाद दूसरीखुराकदेदे । खूबपसीनाहोनेकेवाद अच्छीतरह शरीरको पोंछडाले । भूखलगनेपर ताज़ीछाछ और पुरानेचावलदे । इसतरह तीनरोजकरनेसे अन्य औषधियोंसे जो नवज्वर शान्त नहींहोतेहैं उनको यह पर्पटी नष्टकरतीहै ७२

७३ रसपर्पटी (तृतीया)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं मर्द्यं भृङ्गीरसैः क्षणम् ।
पाचयेल्लोहपात्रस्थं चाल्यं लघुपुटेन च ॥ ३३४ ॥
लोहभस्माऽथवा ताम्रं पादांशेन विनिःक्षिपेत् ।
पाच्यं प्रचालयन्नेव यामार्द्धं मृदुवह्निना ॥ ३३५ ॥
तत्क्षिपेत्कदलीपत्रे गोमयस्योपरि स्थिते ।
तत्पत्रं धारयेदूर्द्धं तदूर्ध्वं गोमयं क्षिपेत् ॥ ३३६ ॥
ततः सञ्चूर्णयेत्खल्वे निर्गुण्ड्या भावयेद्दिनम् ।
जयन्तीत्रिफलाकन्यावासाभार्ङ्गीकटुत्रयैः ॥ ३३७ ॥
भृङ्गवह्निमुनिमुण्डीभि र्भावयेत्प्रत्यहं पृथक् ।
आर्द्रकस्य द्रवैः पश्चाद्भावयेद्दिनसप्तकम् ॥ ३३८ ॥
अङ्गारैः स्वेदयेत्पश्चात्पर्पटाख्यो महारसः ।
अष्टगुञ्जं प्रदातव्यं शुष्कान्नं पथ्यमाचरेत् ॥ ३३९ ॥
वरुणस्य त्वचो मूलं क्वाथयित्वा पिबेदनु ।
त्रिसप्ताहप्रयोगेण चान्तःस्थां विद्रधिं जयेत् ॥ ३४० ॥
चतुर्गुञ्जामितं देयः सम्यक् श्लेष्माऽधिके ज्वरे ।
वासाशुण्ठ्यभयाक्वाथमनुपानं प्रकल्पयेत् ॥
त्र्यूषणस्य रसै र्वाऽथ पेया श्लेष्मज्वरापहा ॥ ३४१ ॥

र सु., र.दी, चि.र भ, नि.र, सु.प्र., र को., र.शि, यो.म., यो.त., यो स., र का, र.(मा.) श्लेष्मज्वरे ।

टि०—र का, र.(मा) एतयो मृतसञ्जीविनीति नाम । र (मा) लोहताम्रयदेकमताराभ्यामपि विकल्प. प्रदर्शित, भावनायाञ्च सुरसामार्कण्डीभ्यामधिका प्रदत्ता इति विशेष । रसदीपिकाया लोहस्थाने स्वर्ण विकल्पित भावनायाञ्च मुनिचित्रकस्थाने सुरसामेघनादौ नियोजितौ इति विशेष । र म, र च, र र, ध, वै क, र सु, भै र, र क ली., रमचि, र श, टी एषु हिक्काश्वासाऽधिकारे नाम च लोहपर्पटीति यथा—"भागो रसस्य गन्धस्य द्वावेको लोहभस्मन । एतद्धृष्ट द्रवीभूत गृहसौ कदलीदले ॥ पातयेद्गोमयगते तथैवोपरि योजयेत् । तत पिष्ट्वा द्रवैरभि. सप्तधा भावयेत्पृथक् ॥ भार्ङ्गी मुण्डी मुनिवह्नि जया निर्गुण्डिका तथा । व्योषवासककन्यार्द्रद्रवैस्तस्मात्पुटं पचेत् ॥ आगन्ध खर्परे ताम्रे पर्पट्याख्यो रसो भवत ॥" इति ॥ र चि, नि र, वै चि, यो र, र क ल, रसायनस., भै सा, र का, र र टी एषु ग्रन्थेषु क्षयाऽधिकारे भार्ङ्गीमुण्डीचाऽतिवलारसैश्च विजयाद्रवै । कन्याद्रवैश्च घोषाजै शुष्क शुष्क पुटेद्दु ॥" इत्येक श्लोक भावनावैलक्षण्यबोधक विन्यस्त तस्याऽप्यत्र महत्त्वाद् क्षत्यभावात्सोऽप्यत्रैवाऽन्तर्भावनीय । कुत्रचिद्रसगन्धकयो समानयो कज्जली कृत्वा भावना निष्कास्य ग्रहण्यधिकारे प्रयोगो योजितो यथा र च, भै र, वै क इत्यादिषु ग्रन्थेषु । तथा च बहुषु स्थानेषु लोहस्थाने ताम्र प्रक्षिप्य ताम्रपर्पटिका कृता । रसकामधनौ तु तुल्याभ्या रसगन्धाभ्या द्विगुण ताम्र प्रक्षिप्य नवे वातश्लेष्मज्वरे सार्धवल्लद्वय गुडार्द्रकरसाभ्या नियोजितम् भावनाश्च न दृश्यन्ते नाम च मृतसञ्जीवनीति स्थापितम् । "लोह पारदतुल्य गन्धक मर्दयेत्खल्वे । वासाकृष्णापथ्यास्वरसैर्भाव्य सप्तवार तु ॥ सिद्धो भवति रसेन्द्रो हन्यात्पित्त सरक्तञ्च । वासकरसपरिभावितो हरीतकीचूर्णसयुक्त ॥ मधुयुग्वलमितो वा वासारसमधुयुतो वापि । कुरुते पुष्टिं परमा सास्रपित्त जयेदाशु ॥" इति पाठो रक्तपित्ताऽधिकारे रसावतारे रसेन्द्ररस इति नाम्ना दृश्यते सोऽप्यत्राऽन्तर्भावनीय । पर्पटीकरणेन गुणान्तरवृद्धिर्भविष्यति । र प्र सु, र. म मा, रससागर, र का, एषु ग्रन्थेषु तु लोहताम्रयोरुभयोरपि योग विधाय एक पाठो निहितोऽस्ति यथा—

रसवर पल्युग्ममित शुभ रुचिरताम्रमय समभागिकम् ।
बलिवसाञ्च घृतेन विमर्दयेदतिकृशाग्निकृते द्रवति स्वयम् ॥
तदनुताम्रमथो विनिवेश्यता त्रयमिद सरसञ्च विमूर्च्छितम् ।
विघटयेदथ लोहसुदर्विणा तदनु मोचदलोपरि ढाल्यते ॥
भवति सारतमा रसपर्पटी सकलरोगविघातकरी हि सा ।
कुरु समानकटुत्रयसयुता मरिचसप्तमिता सुखदा भजेत् ॥
अनुपाने प्रयोक्तव्या त्रिफला क्षौद्रसयुता ।
पर्पटी भक्षयेत्प्रातस्तथा त्र्यूषणसयुताम् ॥
सन्निपातहरा सा तु पञ्चकोलेन सयुता ।
भक्षिता मधुना सार्धं सर्वज्वरविनाशिनी ॥
कणाक्षौद्रेण सहिता सर्वशोफान्निकृन्तति ।
श्यामात्रिकटुकेनाऽपि वातजा ग्रहणीञ्जयेत् ॥
गुग्गुलत्रिफलायुक्ता वातरक्त विनाशयेत् ।
वातशूलहरा सम्यग्घिङ्गुपुष्करसयुता ॥

व्योषे कन्यारसे वाऽपि कफामयविनाशिनी।
दशमूलशृतेनाऽपि वातज्वरनिवर्हणी॥
वाकुचीवीजकल्केन कण्डुपामे विनाशयेत्।
आरुष्करेण सहिता सा तु सिध्मविनाशिनी॥
गोमूत्रेणाऽनुपानेन चार्शसा हि विनाशिनी।
नक्तमालेऽर्जुनश्चैव चित्रको भृङ्गराजक॥
शाल्मली निम्बपञ्चाङ्ग कल्हारश्च गुडूचिका।
निर्गुण्डी च समाशानि कारयेद्भिषगुत्तम॥
चूर्णीकृत्य च तत्सर्वं पर्पट्याश्चाऽनुपानकम्।
अष्टादश च कुष्ठानि निहन्त्येव न सशय॥
पर्पटी रसराजस्य रोगान्हन्त्यनुपानत.।
अपथ्य नेव चाश्नीयाद्दोषदूष्यव्यपेक्षया॥" इति

सोऽप्यत्रैवान्तर्भावनीय। अनुपानबुभुत्सया समग्र पाठस्तु लिखित एवाऽस्ति। अस्मिन्योगे रससागरे त्रिकट्वादिमेलन विनैव पर्पटीस्वरूपेण स्थापयित्वा तत्तद्रोगपरत्वेन त्रिकट्वादीना योग. कृत, पञ्चषो रोगा अनुपानपरत्वे अधिकाश्च परिगणिता नाम च **विजयपर्पटीति** स्थापितमिति विशेष। र का **अमृतपर्पटीरसायनमिति** नाम। अत्र पारदगन्धकयोर्योगे प्रधानत्व स्वीकृत्य रसपर्पटीति नाम्ना व्यवहार सुष्ठुतर, तदङ्गभूतत्वेनोपरिनिर्दिष्टदिशा लोहताम्रस्वर्णताराणि समायान्ति तत्र प्रधानबुद्ध्या रसपर्पटीति नाम सर्वेषु योगेष्वाधिपत्यमावहति। कैश्चित्तु एत विशेषमनालोच्याऽप्रधाने एव प्रधानता स्वीकृत्य लोहयोगे **लोहपर्पटी**, ताम्रयोगे **ताम्रपर्पटी**, हेमयोगे **हेमपर्पटी**, तारयोगे **तारपर्पटीति** नामानि दत्तानि परन्तु अस्मदुक्तरीत्या रसपर्पटीति नाम प्रधानतयोपतिष्ठते अत उपरिनिर्दिष्टा सर्वेऽपि रसा रसपर्पट्यामेवाऽन्तर्भावनीया। यत्रकुत्रचिद्भावनाया विशेषो लभ्येत चेत्सोऽप्यत्रैवाऽनुष्ठेय, तदनुष्ठाने न काऽपि हानिरिति दिक्।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर भगरेकेरससे एकरोज़ मर्दनकर सुखाकर घी पुतीहुई लोहेकीकड़छीमें डालकर वेरकेकोयलोंपर पकावे। गलनेपर इसपर्पटीकाचतुर्थांश लोह अथवा ताम्रभस्म मिलाकर चलातारहे। एकजीवहोनेपर प्रथमपर्पटीकीतरह ढालदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर प्रथमकीतरह कज्जलीवनाय निर्गुण्डी, जैंत, त्रिफला, घीकुवार, अडूसा, भारङ्गी, त्रिकटु, भंगरा, चित्रक, अगस्त्य, गोरखमुण्डी इनप्रत्येकके स्वरसोंसे १-१ रोज़ मर्दनकर अदरखके रससे ७ भावनाए देकर प्रथमपर्पटीकीतरह स्वेदन देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ४-४ रत्ती अडूसा, सोंठ और हर्रके क्वाथकेसाथ देनेसे श्लेष्माऽधिकसन्निपात और चव्यके क्वाथकेसाथ देनेसे श्लेष्मज्वर नष्टहोताहै॥ ७३॥

७४ रसपर्पटी (चतुर्थी)

भागमेकमिह सूतभस्मनो
भागयुग्ममिह गन्धकस्य च।
सूतपादमपि हेमभस्मकं
तालभस्म यदिवाऽभ्रभस्मकम्॥ ३४२॥
लोहभस्म यदि वाऽर्कजं क्षिपे-
ल्लोहपात्रजठरे प्रपाचयेत्।
द्रावितं भवति तद्यदातदा
नि.क्षिपेच्च कदलीदले ततः॥ ३४३॥
आटरूपसुरसाजयन्तिका-
क्षुद्रिकात्रिफलिकासुभृङ्गिका।
मेघनादकटुकन्यकारसैः
प्रत्यहञ्च परिमर्दयेद्रसम्॥ ३४४॥
वत्सनाभजरसैस्ततस्त्विमं
लोहपात्रनिचितं पचेत्क्षणम्।
जायते स रसपर्पटी रसः
शृङ्गवेरकनके नियोजितः॥ ३४५॥
वल्लयुग्मपरिमाणकस्त्वयं
श्वासकासविनिवृत्तिदायकः।
पिप्पलीभिरनुपाययेत्ततः
क्वाथमत्र सुरसाऽऽटरूपजम्॥ ३४६॥

र क., र मृ., कासश्वासयो।

भाषा—पारदभस्मसे दूने शुद्धगन्धकको गलाकर पारेसे चतुर्थांश सुवर्ण, हरिताल, अभ्रक, लोह और ताम्र इनकीभस्मोंमेंसे किसीएकको डाले। अथवा जैसी योग्यता समझे वैसाकरे। इसको प्रथमपर्पटीकीतरह तैयारकर वारीकचूर्णकर अडूसा, तुलसी, जैंती, भटकटैया, त्रिफला, भगरा, कांटवालीचौलाई, कड़वा घीकुवार और वछनागकेरसोंसे १-१ रोज़ मर्दनकर सुखाकर लोहेके पात्रमें रखकर थोड़ीदेर पकाकर पीसकररखछोड़े। इसकी ६-६ रत्तीकीमात्रा अदरख और धतूरेकेरसकेसाथ देकर तुलसी और अडूसेकेक्वाथमें पीपलकाप्रक्षेपकरके पिलानेसे श्वासकासको यह निवृत्तकरतीहै॥ ७४॥

७५ रसपर्पटी (महा) (पञ्चमी)

वेदमाषो रसो ग्राह्यो गन्धस्तस्माद्विभागिकः।
कृत्वा कज्जलिकां सूक्ष्मां घृताक्तां वह्निनाऽऽदरात् ३४७
लोहपात्रे स्थिता तावत्पर्पटी क्रियते रसः।
जया द्वादशमाषा स्याच्छुण्ठी षण्माषिका भवेत् ३४८
पिप्पली मरिचं चैव सैन्धवं ससुवर्चलम्।
स्वर्जिकाविडमेतानि प्रत्येकञ्च चतुष्टयम्॥ ३४९॥
माषाणां गृह्यते सर्वं पिष्टं प्रत्येकशस्तथा।
तदेकीक्रियते सूक्ष्मं मिश्र्यते युज्यतेतराम्॥ ३५०॥
गन्धयुक्ते शुभेभाण्डे तच्च सर्वं निधीयते।
खादेदग्निवलापेक्षी काञ्जिकेनाऽम्भसाऽथवा॥३५१॥
अर्शःसु गुदपीडासु प्रदरेषु प्रशस्यते।
कामलायां ग्रहण्याञ्च मन्दाग्नौ च प्रयुज्यते॥
महापर्पटिकाऽऽख्योऽयं रसो योगस्य वाहकः॥३५२॥

र का (प्रदराऽधिकारे), यो म रसायने। योगमहार्णवे त्रुटित पाठोऽस्ति।

भाषा—शुद्धपारा ४ माशे, शुद्धगन्धक ८ माशे लेकर दोनोंकी नीलवर्णकज्जलीकर प्रथमपर्पटीकीतरह पर्पटी तैयारकर भाग १२ माशे, सोंठ ६ माशे, पीपल, मरिच, सैन्धव, संचल, सज्जी और विडनमक ४-४ माशे लेकर सबको अलग २ पीसकर एकजगह मिलाकर सुगन्धयुक्तवर्तनमें डालकर रखछोड़े। इसमेंसे १

माशेसे २ माशेतककी मात्रा काञ्जी अथवा जलकेसाथ देनेसे ववासीर, गुदाकीपीड़ा, प्रदर, कामला, ग्रहणी और मन्दाग्निको यह नष्टकरतीहै । तत्तद्रोगोचितानुपानोंकेसाथ देनेसे समस्तरोगोंको दूरकरतीहै ॥ ७५ ॥

७६ रसपर्पटी (लक्ष्मीविलासः) (षष्ठी)

रसभसितमयोऽभ्रगन्धमेतान्
दृढमुदकेन विमर्दयेत्कुमार्याः ।
क्षिप रुवुकदलेषु मध्यलब्धं
त्रिरजनि धान्यचये च पुष्पिताग्रा ॥ ३५३ ॥

र. ग्नि , दीर्घरोगे ।

भाषा—पारा, लोह और अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर धीकुंवारकेरससे १–२ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय एरण्डकेपत्तोंमें लपेटकर ३ दिन धानकीराशिमें रखदे । चौथेरोज़ निकालकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से २ रत्तीतक तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह क्षयादिसमस्तरोगोंको नष्टकरती है ॥ ७६ ॥

७७ रसपर्पटी (सप्तमी)

लोहपात्रेऽथवा ताम्रे पलैकं शुद्धगन्धकम् ।
मृद्वग्निना द्रुते तस्मिन् शुद्धसूतपलत्रयम् ॥ ३५४ ॥
क्षिप्त्वाऽथ चालयेत्किञ्चिल्लोहमुष्ट्यातत:पुनः ।
ढालयेत्कदलीपत्रेऽथवा स्विन्नपटे क्षितौ ॥
इत्येवं पर्पटीवद्धं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ ३५५ ॥

यो. स., रसायने ।

टि०—पारदस्य प्रमाणाधिक्यद्योतनाय पृथक्पाठः कृतोऽस्ति ।

भाषा—लोहे अथवा तावेकेपात्रमें १ पल शुद्धगन्धकको गलाकर ३ पल शुद्धपारेको डालकर लोहेकीकड़छीसे घर्षणकरे । एकजीवहोनेपर गोवरपररक्खेहुए केलेकेपत्तेपर अथवा भीगेहुए कपड़ेपर ढालकर पर्पटीतैयारकरले । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरतीहै ७७

७८ रसपर्पटी (अष्टमी)

लोहस्य पात्रे तु रसेन गन्धं
धत्तूरतोयेन दिनं विमर्द्य ।
किञ्चित्क्षिपेत्तैलमतश्च वह्नौ
प्रद्राव्य ताम्रस्य तु भाजने तत् ॥
चित्रार्द्रतोयेन विमर्दयेच्च
शूलाग्निमान्द्याऽरुचिहा रसः स्यात् ॥३५६॥

र. दी., शूलाग्निमान्द्ययो ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी कज्जली वनाय लोहेकेपात्रमें धतूरेकेरससे एकरोज़ मर्दनकर सुखाकर तावेकेपात्रमें थोड़ा तैल पोतकर प्रथमपर्पटीकीतरह तैयारकर चित्रक और अदरखके रससे १–१ रोजमर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह शूल, मन्दाग्नि और अरुचि इत्यादिकोंको नष्टकरतीहै ॥७८॥

७९ रसपिष्टिका

सूतहेमरविपिष्टिका कृता
दिग्विभागविषसंयुता शुभा ।
सूतभागनयनाञ्जनोपगा
शूलिनीरसविमर्दिता दिनम् ॥ ३५७ ॥
जालिनीरसविमर्दिता तथा
याममेव ससिताऽऽर्द्रजै रसैः ।
सेविता द्विगुणरक्तिकामितोन्मा-
दरोगमखिलं धुनोति सा ॥ ३५८ ॥
अपस्मारविधिश्चात्र वातव्याधिहरस्तथा ।
नारायणं नाम तैलं महापैशाचिकं घृतम् ॥ ३५९ ॥
कल्याणकं तथा सर्पिरदन्तसर्पदंशनम् ।
त्रासनं तु कशाघातै धर्षणं राजसेवकैः ॥ ३६० ॥
आश्वासनं मित्रजनै धनदानैः प्रियादिभिः ।
बुद्धा हेतुप्रतीकारं कुर्यात्तस्योपमर्दनम् ॥ ३६१ ॥

र., उन्मादे ।

टि०—शूलिनीलक्षण रसेन्द्रचूडामणौ–त्रिशूलाकारपत्रा या शम्याकफलवत्फला । त्रिशूलीति समाख्याता प्रसिद्धा रसवन्धने ॥ इति ॥

भाषा—शुद्धपारा, सुवर्ण, ताम्र समभागलेकर सुवर्ण और ताम्रका वारीकचूराकरले अथवा वर्कवनाकर पारेमें थोड़ा २ डालकर घोटे । मिलजानेपर पारेसे दशवां हिस्सा शुद्धवछनाग और पारेसे दूनी सुरमेकीभस्म मिलाय त्रिशूलिनी और जालिनी वूटीकेरससे १–१ रोज़ मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शक्कर और अदरखके रसकेसाथ सेवनकरनेसे समस्त उन्माद, अपस्मार और वातव्याधियोंको यह नष्टकरतीहै । इनतीनों रोगवालोंको नारायणतैल, महापैशाचघृत, कल्याणघृत तथा वहुतपुराना घृत खिलाना । उन्मादवालेको खासकर दांततोड़ेहुए सर्पसे कटवाना, राजपुरुषोंसे डराना, कोड़ेलगवाना, मित्र धनदान और प्रियस्त्रियोंसे आश्वासन देना । कारणको समझकर उसका प्रतीकार करना इत्यादि उपायोंसे उन्मादी प्रकृतिस्थ होजातेहै ॥ ७९ ॥

८० रसप्रयोगः

पारदं दरदं गन्धं वत्सनाभञ्च तालकम् ।
टङ्कणं त्रिकटुञ्चैव समभागानि कारयेत् ॥ ३६२ ॥
आर्द्रकस्याऽम्भसा भाव्यं शिग्रुमूलस्य वारिणा ।
पुनर्नवाचित्रकयो र्भावयेदातपे खरे ॥ ३६३ ॥
द्विगुञ्जं वटकं कुर्याद्धान्यराशौ निधापयेत् ।
अग्निमान्द्यादिकान्दोषांश्छीघ्रमुन्मूलयेद्वलात् ॥३६४॥

र. क यो , अजीर्णाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, शिगरिफ, गन्धक, वछनाग, हरिताल या रसमाणिक्य, सुहागा और त्रिकटु येसव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अदरख, सहिजन, पुनर्नवा और चित्रकके रसोंसे कड़ीधूपमें १–१ भावना देकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाय छायाशुष्ककर एरण्डकेपत्तेमें रख पोट्टलीवनाय धान्यराशिमें ४

रोज़तक रखदे। इसमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह अग्निमान्द्यप्रभृति समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ८० ॥

८१ रसभस्म

शरावनिहितं सूतं छिन्नवङ्गं मुहुर्मुहुः।
दत्त्वाऽग्निं सूर्ययामान्तं निम्बकाष्ठेन घर्षयेत् ॥ ३६५ ॥
एवं भवेत्पीतवर्णा रसराजस्य भूतिका।
यथाऽनुपानं रोगेषु प्रदद्याद्भिषगुत्तमः ॥ ३६६ ॥
अर्जितं विविधोपायै र्जङ्गमाद्भिषजोमया।
इदं तत्त्वं प्रलब्धन्तु पालनीयं चिकित्सकैः ॥ ३६७ ॥

वै.मृ, रसायनसं., र कौ., व. रा., र. सि., नि र, वातव्याधौ, मेदोऽधिकारे च।

भाषा—मिट्टीके मज़बूतपात्रमें दोभागशुद्धवङ्गको गलाय एकभाग पारेको छोड़कर नीमकेताज़े सोटेसे घर्षणकरताहुआ १२ पहर की अग्निदेवे। इसतरह पीतवर्णकी पारदभस्म तैयार होगी। स्वाङ्गशीतलहोनेपर इसमेंसे १-१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरतीहै ॥ ८१ ॥

८२ रसमण्डूरम्

कुडवं पथ्याचूर्णं द्विपलं गन्धाश्म लौहकिट्टञ्च।
शुद्धरसस्याऽर्द्धपलं भृङ्गस्य रसं सकेशराजस्य ३६८
प्रस्थोन्मितञ्च दत्त्वा पात्रे लौहेऽथ दण्डसङ्घृष्टम्।
शुष्कं घृतमधुयुक्तं मृदितं स्थाप्यञ्च भाजने स्निग्धे ॥
उपयुक्तमेतदचिरान्निहन्ति कफपित्तजान्रोगान्।
शूलं तथाऽम्लपित्तं ग्रहणीञ्च कामलामुग्राम् ॥ ३७० ॥

भै.र., र र, यो. म., र चं, च. द, र क, टो. शूलाऽधिकारे

भाषा—हर्रे ४ पल, शुद्ध गन्धक और मण्डूर २-२ पल, शुद्धपारा आधापल लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर हर्रेकाचूर्ण मिलादे। फिर स्याह और सफेद भंगरेके १६-१६ पल रसमें मिलाकर लोहेकेपात्रमें अग्निपर चढ़ाय लोहेकी कड़छीसे घोटताहुआ पकावे। रससूखजानेपर उतारकर ठंढाहोनेपर १-१ पल घी और मधु मिलाकर घोटकर चिकनेवर्तनमें रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ मागे उचितानुपानोंकेसाथ देनेसे कफपित्तजरोग, शूल, अम्लपित्त, सङ्ग्रहणी और कामलाको यह नष्टकरताहै ॥ ८२ ॥

८३ रसमाता

हेमाऽभ्रकरसाः शुद्धाः सिन्दूरञ्च चतुष्टयम्।
कूष्माण्डफलनीरेण भावयेदेकविंशतिम् ॥ ३७१ ॥
मेथिकाक्वाथतः पूर्वमश्वगन्धारसेन च।
कृष्णागोक्षीरसहितै र्हरिणीक्षीरपूरकैः ॥ ३७२ ॥
बहुशो भावयेत्तस्य तवक्षीरी चतुर्गुणा।
द्राक्षा खर्जूरफलकमुस्तकैलाक्षचूर्णकम् ॥ ३७३ ॥
श्रीचन्दनाब्जतक्कोलजातीचूर्णं तथैव च।
क्षिप्त्वा पश्चान्नारिकेलफलनीरेण भावयेत् ॥ ३७४ ॥
कृष्णागोक्षीरसंयुक्तं निष्कमात्रं तु सेवयेत्।
शर्करानवनीताभ्यां सेवयेदेकमण्डलम् ॥ ३७५ ॥
क्षाराम्ललवणं तैलं वर्जयेत्स्त्रीषु सङ्गमम्।
मधुरेष्टान्नपानानि भोजयेद्दिवसत्रयम् ॥ ३७६ ॥
अतिशुष्कस्य कायस्य पुष्टिं वितनुतेतराम्।
स्त्रीणाञ्च पुरुषाणाञ्च कुरुते कायवर्धनम् ॥ ३७७ ॥
आयुष्करी वश्यकरी सत्त्वसन्तानकारिणी।
रसमातेति विख्याता नाम्ना लोके महीयते ॥ ३७८ ॥

र. कौ. (ज्ञा), रसायने।

भाषा—सुवर्ण, अभ्रक और पारा इनकीभस्में तथा रससिन्दूर १-१ तोला लेकर सफेद कोंहलेकेरसकी २१ भावनाएं देकर मेथीकाक्वाथ, असगन्धकारस, कालीगाय और हरिणीका दूध, विजोरेकारस इनकी १४-१४ भावनाएं देकर सुखाकर इससे चतुर्गुणित तीखुर अथवा वंशलोचन मिलाकर द्राक्ष, छुहारे, नागरमोथा, इलायची, वहेड़ा, सफेद चन्दन, कमलगट्टा, कवावचीनी, जावित्री इनसवका १-१ तोलाचूर्णमिलाकर नारियलकेजलसे ६-६ भावनाएं देकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे ४-४ मागेकीमात्रा कालीगायके दूधकेसाथ अथवा शकर और मक्खनकेसाथ ४९ दिनतक देनेसे यह सवतरहके शोषोंको दूरकर पुरुष तथा स्त्रियोंके समस्तदोषोंको नष्टकर आयु और सन्तानको देतीहै। इसके प्रारम्भमें ३ रोज़तक मधुर और इष्ट अन्नपान देवे और क्षार, अम्ल, लवण, तैल इनको प्रयोगसमाप्तितक छोड़देवे और ब्रह्मचर्यसे रहे ॥ ८३ ॥

८४ रसराजरसः (प्रथमः)

गोमये तैलमास्थाप्य त्रिवारं शोधयेत्त्रपु।
द्रावयित्वा समं सूतमेकीकृत्य विचक्षणः ॥ ३७९ ॥
धृत्वाऽपामार्गमूलन्तु मुखे चर्वणमाचरेत्।
गण्डूषं तत्र निःक्षिप्य तैलं त्रिः शोधयेद्बुधः ॥ ३८० ॥
ताम्बूलचर्वणं कृत्वा गण्डूषं निक्षिपेद्बुधः।
दाढर्यमायाति तत्सद्यःपेषयित्वा तु गोलकम् ॥ ३८१ ॥
नागवल्लीदलैनैव योज्यं गुञ्जाचतुष्टयम्।
उपदंशे च दुःसाध्ये रसोऽयं दिनसप्तकम् ॥ ३८२ ॥
ताम्बूलचर्वणं कार्यं विशेषाच्च गदार्तिभिः।
पथ्यं शाल्योदनं देयं घृताक्तं मुद्गसंयुतम् ॥ ३८३ ॥
प्रशस्तं मेथिकाशाकं मुखपाको न जायते।
रसराजइति ख्यात सुखदः सर्वदा नृणाम् ॥ ३८४ ॥

रसायनसं., वै वि, उपदंशे।

भाषा—ताज़ेगोवरमें गर्तकर तिलकातैलभर वङ्गको पिघलाकर तीनवार बुझावे। और समभाग शुद्धपारेको उसमें मिलाकर तैलमें बुझाकर खरलमें डाले। फिर अपामार्गकी ताज़ी जड़को मुखमें रखकर चवावे। लुआवसे मुखभरजानेपर लुआवको खरलमें डालकर मिलेहुए वङ्ग और पारेको घोटे। सूखजानेपर फिर उसीतरहकुल्लाकरके सुखावे। ऐसे तीनवार करके पारेमेंसे तैलकी

चिकनाईको साफकरदे। इसीतरहसे कत्था, चूना लगेहुए पानको चवाकर पारेमें कुल्ले डालकर पारेको तीनवार मर्दनकरके सुखावे। ऐसाकरनेसे गोली कड़ी होजायगी। इसमेंसे ४-४ रत्ती पानमें रखकर ७ दिनतक खिलावे। जी मिचलाने पर पान खिलावे। भूखलगनेपर पुरानेचावलोंको घी और मूंगकेसाथ दे। मेथीका शाक खिलावे तो इससे मुखपाक नहींहोताहै और उपदंशके तमाम उपद्रव नष्टहोजातेहैं ॥ ८४ ॥

८५ रसराज रसः (द्वितीयः)

भागा रसस्य चत्वारो ह्यष्टौ गन्धकभागकाः।
मनःशिला द्विभागा स्याद्धरिद्रा त्रिफला तथा॥३८५॥
अग्नयो जयपालाश्च त्रिवृता च त्रिभागिका।
दन्ती च तुवरं व्योषं पृथगष्टांशकं मतम् ॥ ३८६ ॥
एतेषां चूर्णमादाय दापयेत्सप्त भावनाः।
जयन्त्या वज्रदुग्धस्य वातारिभृङ्गराजयोः॥ ३८७ ॥
जलोदरमपाकुर्याद्वारि तत्र न पाययेत्।
नाभेरुत्तरभागे हि जलस्रावञ्च कारयेत् ॥ ३८८ ॥

र. चं., जलोदरे।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, शुद्धगन्धक ८ भा., मैनसिल २ भा., हल्दी, त्रिफला, शुद्धभिलावेऔरजमालगोटा तथा निशोत ३-३ भाग, दन्तीमूल, तुवरक, सोंठ, मिर्च, पीपल येसव ८-८ भागलेकर सवका वारीकचूर्णकर जेंती, सेहुण्डकादूध, एरण्ड और भंगरा इनप्रत्येकके स्वरसोंसे ७-७ भावनाएं देकर १-१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। जलोदरीकेनाभिके उत्तरभागकी तर्फ जलस्रावकर इनमेंसे १-१ गोली प्रतिदिन देनेसे फिर पानी नहीं भरताहै। खानेकेलिये दूधभात देवे ८५

८६ रसराजरसः (तृतीयः)

पलैकं शुद्धसूतस्य व्योमसत्त्वञ्च कार्षिकम्।
तदर्द्धं काञ्चनं देयं कन्यारसविमर्दितम् ॥ ३८९ ॥
लौहं रौप्यं मृतं वङ्गं वाजिगन्धां लवङ्गकम्।
जातीकोषं तथा क्षीरकाकोलीञ्च तदर्द्धतः ॥३९० ॥
काकमाचीरसैः पिष्ट्वा पञ्चगुञ्जामिता वटी।
क्षीरञ्च शर्करातोयमनुपानं प्रकल्पयेत् ॥ ३९१ ॥
पक्षाघातेऽर्दिते वाते हनुस्तम्भेऽपतन्त्रके।
धनुःस्तम्भेऽपताने च वाधिर्ये मस्तकभ्रमे ॥ ३९२ ॥
सर्ववातविकारेषु रसराजः प्रकीर्तितः।
वल्यो वृष्यश्च भोग्यश्च वाजीकरण उत्तमः ॥ ३९३ ॥

भै र., ध , वातव्याध्यधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा १ पल, अभ्रकसत्त्व १ कर्ष, स्वर्णभस्म आधाकर्ष मिलाकर कुमारीकेरससे १ रोज़ मर्दनकर लोह, चादी और वङ्गभस्म, असगन्ध, लौंग, जावित्री, क्षीरकाकोली येसव ४-४ माशेलेकर सवको इकट्ठे मिलाय मकोयकेरससे २-३ रोजमर्दनकर ५-५ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शक्करमिलेहुए दूध अथवा पानीकेसाथ देनेसे पक्षाघात, लकवा, हनुस्तम्भ, हिस्टीरिया, धनुर्वात, खींचतान, वधिरता, सिरकाघूमना, और समस्तवातविकारोंको नष्टकर वल, वृष्यता और वाजीकरणकोकरताहै ॥ ८६ ॥

८७ रसराजरसः (चतुर्थः)

कस्तूरी हिमरश्मि कुङ्कुमसिते
जातीफलं हाटकं,
चाम्पेयं वृषहेमवीजविजया
यष्टी जयन्ती विषम्।
प्रत्येकं समभागमानविधृत
वल्लं घृतक्षौद्रयुक्,
लीढं तत्क्षणमूर्च्छनं वितनुते
पौण्ड्रादिजैस्तज्जयेत् ॥ ३९४ ॥
स्त्रीणां गर्वाधिकत्वं गमयति सकलं
वीर्यपातं न याति,
लिङ्गान्तो याति वृद्धिं स्थिरतरवपुषां
स्तम्भकृद्योनिभञ्जम्।
सर्वाङ्गं सन्धिवातं व्रणविविधगतिं
ग्रन्थिलताः स्फुटन्ति,
पूयं दुर्गन्धलता स्रवति च वहुलं
तीव्रदुःखेन युक्तम् ॥
दाहं मोहञ्च तृष्णां क्षयकृमिकृशतां
पीनसं पाण्डुरोगान्,
गुल्माऽऽध्माने च शूलं ग्रहणिगुदरुजं
कुष्ठरोगान्निहन्ति ॥ ३९५ ॥

व. रा., व्रणेषु।

भाषा—कस्तूरी, शुद्धकपूर, केशर, शक्कर, जायफल, अकलकरा, चम्पा, अडूसा, धतूरेके वीज, भाग, मुलहठी, जेंती और शुद्धवछनाग येसव समभागलेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा मधु और घृतकेसाथ देनेसे सर्वाङ्गसन्धिवात, समस्त व्रण, गांठ, फैलाहुआमकड़ीका विष, दाह, मोह, प्यास, क्षय, कृमि, कृशता, पीनस, पाण्डु, गुल्म, आध्मान, शूल, ग्रहणी, गुदरोग, कुष्ठ, षण्ढत्व, ध्वजभङ्ग, इनसवको यह नष्टकर स्त्रियोंके गर्वको दूरकरताहै और सवप्रकारके शुक्रदोषोंका नाशकरताहै। इसे वाजीकरणार्थ सेवनकरना हो तो सन्ध्यासमयमें सेवनकरे इसके सेवनसे यत्किञ्चित् मूर्च्छा जैसी प्रतीतहो तो उससमय ईख चूंसनेको दे ॥ ८७ ॥

८८ रसराजरसः (पञ्चमः)

मुक्ताप्रवालरसहेमसिताऽभ्रकान्तं
वङ्गं मृतं सकलमेतदलं विभाव्य।
छिन्नारसेन च वरी सलिलेन सप्त
पश्चाद्देन्मधुहविर्मरिचेन साकम् ॥
लिह्यादुरःक्षतहरं रसराजकाख्यं
माषप्रमाणमतनूद्भवहेतुमेनम् ॥ ३९६ ॥

नि. र., वै. क., र. सु., चि. क., वृ. यो. त., र. चं., यो. र., उर.क्षतक्षयादौ ।

भाषा—मोती, मूंगा, पारा, सुवर्ण, सफेद अभ्रक, कान्तलोह, कान्तपाषाण, वज्र, इनकीभस्में सब समभागलेकर बारीक चूर्णकर इकट्ठे मिलाय गिलोय और शतावरके रसकी ६–७ भावनाए देकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखलेवे । इनमेंसे १–१ गोली मधु, घी और ७ मिर्चोंकेसाथ देनेसे यह उर क्षतको नष्टकरताहै और कामकी पूर्णवृद्धिको करताहै ॥ ८८ ॥

८९ रसराजरसः (षष्ठः)

भृङ्गाऽहिफेनफलिनीविषमुष्टिविलेपिते ।
वस्त्रे निर्बध्य विधिवद्रसगन्धकखर्परम् ॥ ३९७ ॥
गौर्यां पचेद्दोलावपुटे शतेन च नियोज्य तु ।
ऊर्द्ध्वाऽधोहेमबीजानि पेषयेद्दशतः क्रमात् ॥ ३९८ ॥
तेषां तोयैः पुनः कृत्वा पूपिकामर्कशोषिताम् ।
तत्कर्दमैः प्रतिपुटं दिग्धां कृत्वा पुटेच्छतम् ॥ ३९९ ॥
रसराजो भवत्येष सर्वरोगहरो रसः ।
जम्बूवर्णोऽतिकठिनो रूक्षो वीर्यवली भवेत् ॥ ४०० ॥
जातीफललवङ्गाभ्यां रतौ वीर्यं निरोधयेत ।
पटुदीप्यशिवाविश्वे वैश्वानरविवर्द्धनः ॥ ४०१ ॥
क्षयघ्नस्तु तथाऽर्शोघ्नस्तक्रकृष्णाऽभयान्वितः ।
ग्रहण्यां जातिकोशेन रेके कुटजवारिणा ॥ ४०२ ॥
प्रमेहे शाल्मलीद्रावे वेदर्याऽक्षिगदे हितः ।
सामे वाऽपि निरामे वा समे वा विषमज्वरे ॥ ४०३ ॥
देयो नताब्दकटुकाकारचिश्वशृतेन वै ।
रास्नाऽम्भसा वातरोगे पित्तरोगे सिता त्रुटिः ॥४०४॥
अक्षत्वचा कफव्याधौ पाण्डुरोगेऽजमूत्रकैः ।
अश्मर्यामश्मभेदेन कुष्ठे वल्गुजवायसैः ॥ ४०५ ॥
भगन्दरे गुडेनैव व्रणे पौनर्नवायुतः ।
मेदोरोगेऽम्बुमधुना प्रदरेऽशोकवारिणा ॥ ४०६ ॥
शूले हिङ्गुकरञ्जाभ्यामरुचौ रुचकेन वा ।
छर्द्यां धात्रीरसेनैव क्षैण्ये पर्णेन दापयेत् ॥ ४०७ ॥
द्राक्षारसेन शोषे च सञ्ज्ञानाशे किरातकैः ।
मूर्च्छायां चन्दनाम्भोभि विद्रधौ वरुणाऽम्बुना ॥
सर्वेष्वन्येषु रोगेषु ताम्बूलीदलयोगतः ॥ ४०८ ॥

वृ. यो त, र कौ., वाजीकरणाऽधिकारे ।

भाषा—भंगरा, अफीम, मालकागनी, शुद्धकुचिला ६–६ माशेलेकर पानीमें पीस साफमलमलके टुकड़ेपर लेपकरकेसुखाले। फिर पारा, गन्धक और खपरिया १–१ तोला, धतूरेकेबीज १० नग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर ऊपरकहीहुई औषधियोंके द्रवोंसे एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय ऊपरकहेहुएकपड़ेमें रख कच्चेसूतसे खूब लपेटदे । फिर उपर्युक्तद्रव्योंकेरसोंसे पुतीहुई कुल्हड़ीमें बन्दकर शरावसम्पुटदेकर ३–४ जङ्गलीकण्डोंके टुकड़ोंसे ढककर आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर २० नग धतूरेकेबीज मिलाकर पूर्वोक्तद्रव्योंसे मर्दनकर गोलाबनाय उन्हींके कल्कमें धरकर पूर्ववत् शरावसम्पुटकर आंचदे । इसप्रकारपुटमें १०–१० धतूरेकेबीज बढाताहुआ आंचदे । ऐसे १०० आंचें देनेसे यह रसराज जामुनके रङ्गका अत्यन्तकठिन और रूक्ष तैयारहोगा । इसमेंसे आधीरत्तीसे १ रत्तीतक जायफल और लौंगकेसाथ देनेसे वीर्यका स्तम्भनहोताहै । सेंधा, अजवाइन, हर्र और सोंठकेसाथदेनेसे अग्निदीप्तहोताहै । पीपल और हर्रमिलीहुई छाछकेसाथ देनेसे क्षय और बवासीरको नष्टकरताहै । जायफलकेसाथ ग्रहणी; कुड़ाके काढेकेसाथ विरेचन, सेमलके द्रवकेसाथ प्रमेह, वर्धाट्टकेसे अक्षिरोग, तगर, नागरमोथा, कुटकी, अमलतास और सोंठ इनकेकाढेसे साम अथवा निराम और सम अथवा विषमज्वर, रास्नाकेक्वाथसे वातरोग, इलायची और खांडकेसाथ पित्तरोग; बहेड़ेकी छालसे कफरोग, बकरीकेमूत्रसे पाण्डुरोग, पाषाणभेदसे पथरी, बाकुची और मकोयकेसाथ कुष्ठ; गुड़से भगन्दर; पुनर्नवासे व्रण, मधुके शर्बतसे मेदोरोग, अशोककेकाढेसे प्रदर; हींग और करञ्जसे शूल, सञ्चलनमकसे अरुचि; आंवलेके स्वरससे वमन; नागरवेलसे क्षीणता; द्राक्षारससे शोष; चिरायतेसे सञ्ज्ञानाश, सफेदचन्दनकेकल्कसे मूर्च्छा; वरुणकेक्वाथसे विद्रधिरोगको नष्टकरताहै । इनके अतिरिक्त अन्यव्याधियोंमें नागरवेलकेसाथ देना ॥ ८९ ॥

९० रसराजरसः (सप्तमः)

पारदं गन्धकाङ्कोल्लमूलवल्कलमाक्षिकम् ।
विषतिन्दुकतालश्च समङ्गा दुग्धिका तथा ॥ ४०९ ॥
अर्को गन्धर्वहस्तश्च जयन्ती कटुचिञ्चिका ।
पलंपलं समादाय पलमात्रा च पिप्पली ॥ ४१० ॥
अर्कस्नेहुण्डमेषीणां दुग्धैः कुर्याश्च भावनाः ।
तिस्रो वापि चतस्रो वा चूर्णे सूक्ष्मे विचक्षणः ॥४११॥
देवदालीरसैः पश्चात्तिस्रो देयास्तु भावनाः ।
सर्वं विमर्द्य संशोष्य छागीमूत्रेण गोलकम् ॥ ४१२ ॥
कारयेन्मूषिकामध्ये कुक्कुटाख्यपुटे पुटेत् ।
रक्तिकैका प्रदातव्या गुडेन परिवेष्टिता ॥ ४१३ ॥
श्वित्रे तेन भवेयुश्च विस्फोटास्तदनन्तरम् ।
स्फुटन्ति स्फोटास्ते सर्वे विन्दवस्तिलसन्निभाः ४१४
निष्पद्यन्तेऽथ कृष्णास्ते रसराजप्रभावतः ।
माषास्तिला प्रयोगेऽत्र भोक्तव्यास्तिलभोजनम् ४१५
कुलत्थश्चाऽपि वार्ताकं पुण्डरीकं प्रयोजयेत् ।
सूरणं कारवेल्लञ्च कर्कोटीं छागसम्भवम् ॥ ४१६ ॥
मांसं सवेसवारञ्च सतैलबृहतीफलम् ।
नश्यन्ति सर्वकुष्ठानि सङ्ख्यान्यष्टादशैव हि ॥ ४१७ ॥
यकृद्गुल्मोदरप्लीहविद्रधीनपि नाशयेत् ।
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं वृद्धिं तेजोबलस्य च ॥ ४१८ ॥

रसचि, र का., कुष्ठे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अङ्कोलकीजड़कीछाल, सोनामाखी, शुद्धकुचिला, हरितालभस्म, मजीठ, छोटीदूधी, आक और एरण्डकी जड़कीछाल, जेंती, कुटकी, इमलीकेफल

और पीपल येसव १-१ पल लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर आक, सेहुण्ड और भेड़केदूधोंसे ३-३ अथवा ४-४ भावनाएं देकर सुखाकर चन्दालकेपञ्चाङ्गके स्वरसकी २ भावनाएं देकर सुखाकर बकरीकेमूत्रमें पीसकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपड़मिट्टीदेकर कुक्कुटपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती गुड़में कवलितकर निगलवादेवे । कुछदिनके प्रयोगसे श्वित्रमें फोले उत्पन्न होंगे उन्हें फोड़देना । उसके अन्दर चमड़ीमें कालेतिलके सदृश जगह २ चिह्न उत्पन्नहोंगे । इसके प्रयोगमें उड़द, तिल, कुल्थी, बेंगन, कमल, सूरण, करेला, ककड़ी, बकरेकामास, बेसन, तैल, बनभाटा येसब खानेको देने चाहियें । इससे १८ प्रकारकेकुष्ट, यकृत्, गुल्म, उदररोग, प्लीहा, जहरवाद, मन्दाग्नि, तेज और बलका अभाव, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ९० ॥

९१ रसराजरसः (अष्टमः)

शङ्खशुक्तिकयोः कर्षौ द्वौ कर्षौ गन्धकस्य च ।
पिष्ट्वाऽर्कदुग्धैस्तद्गोलं सम्पुटेऽग्नौ दिनाऽर्धकम् ४१९
स्वाङ्गशीतं रक्तिकाऽस्य वेदवेदोषणैः सह ।
गोघृतेन समं लिह्यात्क्षयकासनिकृन्तनः॥ ४२० ॥

चि. र. भ., क्षयकासे ।

भाषा—शङ्ख, मोतीकीसीप १-१ कर्ष, शुद्धगन्धक २ कर्ष लेकर सबकाबारीकचूर्णकर आकके दूधमें १-२ रोज़ मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा ४-४ रत्ती कालीमिर्चोंके चूर्ण और घीकेसाथ देनेसे यह क्षयजकासको नष्टकरताहै ॥ ९१ ॥

९२ रसराजरसः (नवमः)

मृतसूताऽभ्रकं कान्तं विषं ताप्यं शिलाजतु ।
तुल्यांशं मधुसर्पिभ्र्यां लिहेद्गुञ्जाऽष्टकं सदा ॥ ४२१ ॥
षण्मासेन जरां हन्ति जीवेद्ब्रह्मदिनत्रयम् ।
अश्वगन्धामूलचूर्णं सप्तभागं घृतैः समम् ॥ ४२२ ॥
भागाऽष्टकं गुडं तस्मिन् पिप्पलीं तत्समां क्षिपेत् ।
मृद्वग्निना तु तत्सर्वं पिण्डितं भक्षयेत्पलम् ॥ ४२३ ॥

रसायनसं., रसायने ।

भाषा—पारा, अभ्रक, कान्तलोह और सोनामाखी इनकी भस्में, शुद्ध बच्छनाग और शिलाजतु सबसमभाग लेकर सबको इकट्ठे घोटकर चूर्णकररक्खे । इसमेंसे ८-८ रत्तीकीमात्रा मधु और घीकेसाथ खावे और असगन्धकीजड़का चूर्ण ७ भाग, पुरानागुड़ और पीपल ८-८ भाग लेकर गुड़को अग्निपर गलाकर असगन्ध और पीपलकेचूर्णको मिलाकर ४-४ तोलेके मोदक बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ मोदक अनुपानके तौरपर ६ महीनेतक खानेसे बुढापेसे रहित होकर स्वाभाविक आयुसे तिगुनी आयुको भोगसक्ताहै ॥ ९२ ॥

९३ रसराजरसः (दशमः)

पातितं स्वेदितं सूतं पूर्वोक्तविधिना हरेत् ।
खल्वे निक्षिप्य तं सूतं पीतवेणीभवै रसैः ॥ ४२४ ॥
मर्दयेत्त्रिदिनं पश्चाद्यन्त्रे सोमानले क्षिपेत् ।
सम्यङ्निरुद्ध्य तद्यन्त्रं चुल्ल्यामारोपयेद्बुधः ॥ ४२५ ॥
ज्वालयेत्त्रिदिनं पश्चात्पुनर्वेणीभवै रसैः ।
मर्दयेत्सम्पचेदेवं सप्तवारानतन्द्रितः ॥ ४२६॥
निरुत्थं जायते भस्म रसेन्द्रे नाऽत्र संशयः ।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य भावयेद्भूर्तजै रसैः ॥ ४२७ ॥
त्रिजगद्विजयानीरै र्वत्सनाभद्रवैस्ततः ।
भूनिम्बनीरैः सर्वान्ते भावयेत्पारदेश्वरम् ॥ ४२८ ॥
पञ्चविंशतिवारांस्तमेकैकेन विभावयेत् ।
एवं विभावितं सूतं ज्वरे नूत्ने प्रयोजयेत् ॥ ४२९ ॥
मुस्तापर्पटयोः क्वाथै र्ज्वरः सद्यो विनश्यति ।
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन नाऽधिकं वितरेद्बुधः ॥ ४३० ॥
यथेष्टं भोजयेत्पश्चात्सर्वान्नं चाम्लवर्जितम ।
तापाऽधिक्यं यदा कुर्यादुदकं ढालयेद्बहु ॥ ४३१ ॥
अयं रसेश्वरो देयः सर्वरोगेषु युक्तितः ।
गुडूचीसत्त्वसंयुक्तमजादुग्धेन योजितम् ॥ ४३२ ॥
तवराजयुतं दद्यात्क्षयरोगे सुदारुणे ।
लोहचूर्णेन संयुक्तं गवां मथितसंयुतम् ॥ ४३३ ॥
पाण्डुरोगे प्रयुञ्जीत ग्रहण्यां तक्रसंयुतम् ।
धात्रीनीरेण मधुना प्रमेहान् विंशतिं जयेत् ॥ ४३४ ॥
वत्सकाऽरुष्करक्काथै र्जयेदर्शांसि सर्वशः ।
खदिरक्काथवलिना सर्वं कुष्ठं निवारयेत् ॥ ४३५ ॥
हन्ति पञ्चविधं वायुमेरण्डस्नेहसंयुतम् ।
वातव्याधींश्च तेनैव वरीतोयेन वा जयेत् ॥ ४३६ ॥
पाषाणभेदक्काथेन कौलत्थक्काथसंयुतम् ।
अश्मरीं हन्ति यद्वाऽथ विष्णुक्रान्तायुतं हरेत् ॥४३७॥
गोक्षुरक्काथयोगाद्वा चैकपत्र्याघृतं तु वा ।
मूत्रकृच्छ्रेषु युञ्जीत कर्पूरै र्मलयोद्भवैः ॥ ४३८ ॥
शिलाजतुसमायुक्तो भगन्दरनिवारणः ।
उष्ट्रीक्षीरेण संयुक्तो ह्युदराण्निखिलाञ्जयेत् ॥ ४३९ ॥
सर्वैः क्षारैश्च लवणैरुपक्षारैः समायुतः ।
हिङ्गुचित्रकुबेराक्षीयुक्तस्तु परिणामजम् ॥ ४४० ॥
शूलं निहन्ति निःशेषं सामान्यं क्षारसंयुतः ।
षड्लोहभस्मसंयुक्तश्चाऽग्निजारयुतस्तथा ॥ ४४१ ॥
शृङ्गीविषेण संयुक्तो हारिद्रेणाऽथवा युतः ।
धनुर्वातं निहन्त्येव नाऽत्र कार्या विचारणा ॥ ४४२ ॥
सन्धौ सन्धौ प्रदाहस्तु दम्भः कार्योऽथ मूर्धनि ।
पृष्ठवंशे कन्धरायां दाहं दद्याद्विचक्षणः ॥ ४४३ ॥
तैलाऽवगाहं कुर्वीत सेकञ्च कटुतुम्बिजैः ।
दशमूलभवं पश्चात्पाययेदनु पारदम् ॥ ४४४ ॥

एवं हि बहुरोगेषु सूतेन्द्रं युक्तिवित्तमः।
प्रयुञ्जीताऽप्रमत्तस्तु शास्त्रदृष्टेन कर्मणा ॥ ४४५ ॥
रसराज इति ख्यातो भस्मनामा सुविस्तरात्।
देवीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ ४४६ ॥

रसालं., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—इष्टिकाप्रभृतिद्रव्योंमें पारेको घोटकर ऊर्ध्व, अध. और तिर्यक्पातनसे शुद्धकर पीलेफूलकी वन्दालके फूलोंकेरससे ३ रोज़ मर्दनकर डमरूयन्त्रमें वन्दकर ३ दिनकी अग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर पूर्ववत् मर्दन और पाचन-करे। इसतरह ७ वारकरनेसे पारेकी निरुत्थ भस्म होजायगी फिर धतूरा, भाग, वछनाग, चिरायता, इनप्रत्येकके स्वरसोंसे २५–२५ भावनाएं देकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्तीकी मात्रा नागरमोथा और पित्तपापड़ेके क्वाथसे देनेसे यह नवज्वरको नष्टकरताहै। ज्वर उतरनेपर अम्लवर्जित यथेष्टभोजनकरावे। अधिकदाहहोनेपर सिरपर जलकी धारादे। गिलोयसत्त्व, तीखुर अथवा वंशलोचनकेसाथ देकर वकरीका दूध पिलानेसे भयङ्कर क्षयरोगको नष्टकरताहै। लोहभस्मकेसाथ देकर तक्रपिलानेसे पाण्डुरोग; केवल छाछसे ग्रहणी, आंवलेकेरस और मधुसे २० प्रकारके प्रमेह; कुरैया और भिलांवेके क्वाथसे सवप्रकारके ववा-सीर, खदिरकेक्वाथ और गन्धकसे समस्तकुष्ठ, ऐरण्डतैलसे अथवा शतावरके क्वाथसे समस्तवायुरोग, पाषाणभेदके क्वाथमें कुलथी अथवा कोयलका क्वाथ मिलाकर देनेसे पथरी, पानके-साथदेकर गोखरूके क्वाथमें कपूर और चन्दन मिलाकर देनेसे मूत्रकृच्छ्र, शिलाजीतके साथ भगन्दर, ऊंटनीके दूधकेसाथ समस्त उदररोग, समस्तक्षार, उपक्षार, हींग, चित्रक और करञ्जकेसाथ देनेसे परिणामशूल, क्षारकेसाथ देनेसे सामान्यशूल, ६ लोहोंकी भस्म और अम्बरकेसाथ अथवा वछनागकेसाथ अथवा हलदि-याज़हरकेसाथ देनेसे धनुर्वातको यह नष्टकरताहै। इसके देनेसे यदि धनुर्वात शान्त न हो तो तमामसन्धियां, सिर, पृष्ठवंश तथा कन्धोंमें दमदेवे और तैलमें वैठावे। कड़वीतूंवीसे रक्त-निकाले फिर एकखुराक पारदकी देकर दशमूलका काढ़ा देवे। इसीतरह युक्तिमें निपुण वैद्य शास्त्रसहिततर्कसे इसरसका समस्त-रोगोंमें प्रयोगकरे ॥ ९३ ॥

९४ रसराजरसः (एकादशः)

रसेन्द्रभुजगौ तुल्यौ ताभ्यां द्विगुणमञ्जनम्।
ईपत्कर्पूरसंयुक्तं दशांशं सक्तुकं विषम् ॥ ४४७ ॥
वलानागवलाकृष्णामालतीपार्थजैः रसैः।
ताम्रपात्रस्य मध्यस्थं मर्दयेत्त्रिदिनं भिषक् ॥ ४४८॥
युक्त्या नयनमध्यस्थं सन्निपातरुजापहम्।
विख्यातो रसराजोऽयं सर्वनेत्ररुजापहः ॥ ४४९ ॥

रसेन्द्रमं, नेत्ररोगे।

भाषा—पारद और नागभस्म समभाग, शुद्ध सुर्मा इन-दोनोंसे दूना, सक्तुकविष और कपूर दशवा हिस्सा लेकर वला, नागवला (गुलसिकरी), पीपल, मालती और अर्जुनकेरसोंसे ताम्रके वर्तनमें ३ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसका अञ्जनकरनेसे सन्निपात दूरहोताहै और नेत्रके समस्तरोगमिटतेहैं ॥ ९४ ॥

९५ रसराजरसः (द्वादशः)

हरजकनकताप्यं लोहकान्ताऽभ्रतुल्यं
जलजरसविभाव्यं वासराणां त्रयं तत।
हरति च रसराजो वल्लयुग्मः सिताढ्यः
क्षयभवमतितापं रक्तपित्तं स्वपथ्यैः ॥४५०॥

र., रक्तपित्ते।

भाषा—पारा, सुवर्ण, सोनामाखी, लोह, कान्तपाषाण और अभ्रक इनकीभस्में १–१ पललेकर वारीक चूर्णकर कमलके फूलोंकेरसमें ३ रोज़ मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ६–६ रत्तीकी मात्रा शक्करकेसाथ देनेसे क्षयजज्वर और रक्तपित्तको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य रोगानुकूल करे ॥ ९५ ॥

९६ रसराजेन्द्ररसः (प्रथमः)

पलं शुद्धस्य सूतस्य पलं ताम्रमयस्तथा।
अभ्रं नागं पलं वङ्गं पलं गन्धकतालकम् ॥ ४५१ ॥
पलं शुद्धविषं चूर्णं सर्वमेकत्र कारयेत्।
मर्दयेत्काकमाच्याश्च शृङ्गवेररसेन च ॥ ४५२ ॥
मत्स्यवाराहमायूरच्छागमाहिषपित्तकैः।
मर्दयेद्भिन्नभिन्नश्च त्रिकटोरम्बुभिस्तथा ॥ ४५३ ॥
सिद्धोऽयं रसराजेन्द्रो धन्वन्तरिसुसंस्कृतः।
गुञ्जामात्रं रसं दद्यात्सुरसारससंयुतम् ॥ ४५४ ॥
मेघवारिप्रवाहेण धारितं वारिमस्तके।
अनिवारो यदा दाहस्तदा देया च शर्करा ॥ ४५५ ॥
भोजनं दधिसंयुक्तं वारमेकन्तु दापयेत्।
ईश्वरेण हतः कासः केशवेन च दानवः ॥
पावकेन यथा शीतमनेन च तथा ज्वरः ॥ ४५६ ॥

र स, र. सु, यो सं., र च, भै. र, व रा, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और ताम्र, लोह, अभ्रक, नाग, वङ्ग इनकीभस्में, शुद्धगन्धक, हरिताल और वछनाग १–१ पल लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर मकोय, अदरख इनकेरस और मछली, सूअर, मोर, वकरा, भैंसा इनके पित्त और त्रिकटुकेक्वाथसे ३–३ भावनाएं देकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली तुलसीके रसकेसाथ देकर मस्तकपर अखण्ड जलधारादेवे। इससे दाह शान्त न हो तो शक्कर और दहीमिलाहुआ भात देवे। इससे साध्यासाध्य समस्तज्वर नष्टहोतेहैं ॥ ९६ ॥

९७ रसराजेन्द्ररसः (द्वितीयः)

हिङ्गुलोत्थं रसं गन्धं केशराजाम्बुशोधितम्।
रसार्द्धं हेमताराभ्रं नागं हेमार्द्धकन्तथा ॥ ४५७ ॥
क्षिप्त्वा खल्वतले पश्चाद्वासाक्वाथेन भावयेत्।
काकमाच्याश्चित्रकस्य निर्गुण्ड्याः कुटजस्य च॥४५८॥

स्थलपद्मस्योत्पलस्य सप्तकृत्वो द्रवैः पृथक् ।
ततो रक्तिमिताः कुर्याद्वटीश्छण्डांशुशोषिताः ॥ ४५९ ॥
अत्रजान्निखिलान्रोगान् सर्वदोषोद्भवांस्तथा ।
हन्त्ययं रसराजेन्द्रो मृगराजो यथा मृगान् ॥ ४६० ॥

भै. र., अत्रवृद्धयधिकारे ।

भाषा—शिंगरिफसे निकालाहुआपारा और भंगरेके रसमें शोधाहुआ गन्धक १–१ तोला; सुवर्ण और चांदीभस्म ६–६ मासे, नागभस्म ३ मासे लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर अडूसा, मकोय, चित्रक, निर्गुण्डी, कुंदरुयाकी छाल, गोरखमुण्डी, कमल इनप्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर धूपमें सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सबप्रकारके अन्तड़ियोंकेरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ९७ ॥

९८ रसराजेश्वररसः

सुशुद्धं पारदं भागं भागैकं शुद्धतालकम् ।
भागार्द्धं स्फटिकीं दद्यात्खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ४६१
स्नुहीक्षीरे दृढं भाव्यं त्रिदिनं मर्दयेत्तथा ।
अर्कक्षीरे दिनं त्रीणि कुमारीरसतस्तथा ॥ ४६२ ॥
धुस्तूररसकेनैव क्रमाद्भाव्यं पृथक् पृथक् ।
काचकूप्यां विनिःक्षिप्य वालुकायन्त्रके पचेत् ॥ ४६३ ॥
चतुर्यामन्तु पक्वञ्च स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ।
रसराजमिदं भस्म पूर्णचन्द्रसमानकम् ॥ ४६४ ॥
अनुपानविशेषेण सर्वरोगप्रशान्तये ।
व्रीहिमात्रप्रमाणेन सर्वव्याधिनिवारणम् ॥ ४६५ ॥
ज्वरे च जीरकृष्णाभ्यां निर्गुण्ड्याः सन्निपातके ।
नागरेण सितायुक्तं रक्तपित्ते च योजयेत् ॥ ४६६ ॥
गुडूच्या राजरोगेषु लाजचूर्णेन छर्दिषु ।
मन्दाग्नौ जम्भनीरेण सितायुक्तेन तापजित् ॥ ४६७ ॥
नालिकेराम्बुना युक्तं मूर्च्छां कल्याणकाह्वयैः ।
वैदेहीरससंयुक्तं श्वासकासनिवारणम् ॥ ४६८ ॥
पिचुमन्दस्य निर्यासैः शर्कराघृतसंयुतैः ।
प्रमेहविंशतिं हन्यान्मूत्रकृच्छ्राणि सर्वशः ॥ ४६९ ॥
तण्डुलोदकसंयुक्तं मेहतापनिवारणम् ।
शतावरीरसै र्युक्तं पित्तक्षयनिवारणम् ॥ ४७० ॥
व्याघ्रीनागरसंयुक्तं कासक्षयनिवारणम् ।
कार्पासीरससंयुक्तं शुक्रमेहनिवारणम् ॥ ४७१ ॥
केशरै र्घृतसंयुक्तैः पीनसांस्त्रिविधान्हरेत् ।
वाकुचीतैलसंयुक्तं सर्वकुष्ठनिवारणम् ॥ ४७२ ॥
अक्षचूर्णसमायुक्तं शूलानां त्रिशतं हरेत् ।
कन्यागोपीसमायुक्तं महातीसारनाशनम् ॥ ४७३ ॥
मधुबीजसमायुक्तं शिरोबाधानिवारणम् ।
एते रोगा विनश्यन्ति रसराजप्रभावतः ॥ ४७४ ॥

वै. चि (ल), रसायने ।

भाषा—शुद्ध पारा, और हरिताल १–१ भाग, फटकड़ी आधा भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर सेहुण्ड और आककादूध, घीकुंआर, धतूरा इनके द्रवोंसे ३–३ दिनमर्दनकर सुखाकर फिरसेकज्जलीकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमेंभरके वालुकायन्त्रमें पकावे। गन्धकजारणहोनेकेवाद डाटलगाकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर क्रमवृद्ध ४ पहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर चन्द्रोदयविधानसे शीशीको फोड़कर रसनिकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ चावलभरकी मात्रा जीरा और पीपलकेसाथ देनेसे ज्वरको और निर्गुण्डीके क्वाथसे सन्निपातको यह नष्टकरताहै। सोंठ और शक्करकेसाथ देनेसे रक्तपित्त; गुडूचीसे राजरोग, लाजचूर्णसे वमन, जंभीरीकेरससे मन्दाग्नि, शक्करसे दाह, नारियलकेजल अथवा पित्तपापड़ेकेक्वाथसे मूर्च्छा, पीपलकेरससे श्वास, कास, नीमकेगोंद, शक्कर और घीकेसाथ सवप्रकारकेप्रमेह; चावलोंके पानीसे सवप्रकारके मूत्रकृच्छ्र और प्रमेहजनितदाह; शतावरीकेरससे पित्तक्षय, भटकटैयाकेरसऔर सोंठकेसाथ कासजनितक्षय, कपासकेपत्तोंकेरसकेसाथ शुक्रमेह, घी और केशरकेसाथ ३ प्रकारके पीनस, वाकुचीकेतैलसे सवप्रकारके कुष्ठ, वहेड़ेकेचूर्णसे ३०० प्रकारकेशूल, घीकुंवार और गोपीचन्दनसे महातिसार, अनारकेरससे शिरोरोग नष्टहोतेहैं ॥ ९८ ॥

९९ रसराक्षसरसः (प्रथमः)

गन्धकं पलमानेन पारदं कर्षसम्मितम् ।
कुनटी नवसारञ्च रसकं कर्षकर्षकम् ॥ ४७५ ॥
कारवल्लीरसै र्मर्द्यं लेपयेत्सम्पुटोदरे ।
कण्टवेधिप्रकर्तव्यं पलैकं ताम्रसम्पुटम् ॥ ४७६ ॥
सूक्ष्मलेपं वहिः कुर्यात्ततो मृन्मयसम्पुटे ।
कृत्वा मृत्कर्पटान्सप्त वालुकायन्त्रगं पचेत् ॥ ४७७ ॥
यामाष्टकं प्रयत्नेन ज्वलिते खादिराऽनले ।
क्षुधां वहुतरां कुर्यात्सुसिद्धो रसराक्षसः ॥ ४७८ ॥
नागवल्लीदलै र्युक्तं वल्लमानेन दापयेत् ।
ज्ञातव्यो गुरुमार्गेण पक्वाऽपक्वस्य निर्णयः ॥ ४७९ ॥

र. सि, रसायने ।

भाषा—शुद्ध गन्धक १ पल, पारा, मैनसिल, नवसादर, और खपरिया १–१ कर्ष लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जङ्गलीकरेलेकेरससे एकरोज मर्दनकर गोलावनाय एकपलतांवेके कण्टकवेधी सम्पुटमें रक्खे और ऊपरसेभी पतला लेपकरदे। इससम्पुटको शरावसम्पुटमें वन्दकर सात कपड़मिट्टी देकर अच्छीतरह सुखाले। सूखनेपर वालुकायत्रमें रखकर ८ पहर खैरकी लकड़ीकी आचदे और वालूके ऊपर धान अथवा ज्वार रखदे। जववह फूलजाय तव समझना चाहिये कि सिद्धहोगया। सम्पुटको वैसेहीकोयलोंपर रहनेदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सम्पुटसहितखरलकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्तीकी मात्रा पानमें रखकर खानेसे अत्यन्तक्षुधाको करताहै। वात और कफज समस्तव्याधियोंको नष्टकरताहै ॥ ९९ ॥

१०० रसराक्षसरसः (द्वितीयः)

सूतं खल्वे विमृद्याऽथ लशुनेन दिनाऽष्टकम् ।
शोभाञ्जनरसे तावद्राजिकायां दिनाऽष्टकम् ॥ ४८० ॥
काकमाचीरसैस्तावल्लोहद्रावे दिनाऽष्टकम् ।
जलयन्त्रेऽग्निना सिद्धो भवेत्षोडशयामतः ॥ ४८१ ॥
रसराक्षसनामाऽयं कुर्याद्बहुतरां क्षुधाम् ।
एतद्रसप्रभावेण राजमान्यो भिषग्भवेत् ॥ ४८२ ॥

र. सि., अग्निमान्द्ये ।

भाषा—शुद्धपारेको तप्तखरलमें डालकर लहसन, सहिजन, राई, मकोय और लोहद्राव (लोहको गलानेवाला तेजाव) में क्रमसे ८–८ रोज़ मर्दनकर लोहेकीकड़ाहीकेवीचमें गोलेको रख लोहेकीकटोरीसे ढककर जलमुद्रासे वन्दकर वहुतमन्द अग्निजलावे। मुद्रा पिघलकर अच्छीतरह कटोरीको पकड़ले उससमय उसमें धीरजसे पानी भरदे । पानीभरनेके पहिले कटोरीपर कोई वज़नदार चीज़ रखदे जिसमें कि मुद्रा फट न जाय । फिर धीरे २ आच लगावे ऐसे १६ पहर आच देनेसे यह रस तैयारहोगा। स्वाङ्गशीतलहोनेपर जलको कपड़ेवगैरहसे निकालले और मुद्राको धीरजसे खोल्कर रसको निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ चावल से १ रत्ती तक उचितानुपानकेसाथ खानेसे यह अत्यन्त क्षुधाको वढ़ाताहै। इसके प्रभावसे वैद्य राजमान्य होताहै ॥ १०० ॥

१०१ रसराक्षसः (राक्षसरसः) (तृतीयः)

ताम्रं पारदगन्धकौ त्रिकटुकं तीक्ष्णञ्च सौवर्चलं,
खल्वे मर्दनकं विधाय सिकताकुम्भेऽष्टयामं ततः।
स्विन्नं तस्य च रक्तशाकिनिभवं क्षारं समं मेलयेत्,
लुङ्गाऽम्लोत्थरसै र्विभाव्य सकलं नाम्ना रसो राक्षसः
मन्दाग्नौ सततं ददीत हुतभुक्काथेन संयोजितं,
व्याधिग्रस्तकलेवराय नितरां भुक्तोत्तरं शूलिने ।
श्रीसूर्याय महेश्वराय गुरवे कृत्वा नतिं चादरात्,
रुग्णानां क्रमतोऽस्य दानसमये गुञ्जाऽष्टकं वर्धयेत् ॥

र र स., र. को , चि क्र , र. क ल., र स , र क अग्निमान्द्ये ।

भाषा—ताम्र और फोलादभस्म, शुद्धपारा और गन्धक, त्रिकटु, संचल, सव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर आतशीशीशीमें ८ पहर स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर समभागमें लालगुञ्जाके क्षारको मिलाकर विजोरेकेरससे २–३ भावनाएं देकर सुखाकर रखछोड़े । इसके प्रारम्भमें सूर्य, महेश्वर और गुरुको प्रणामकर एकगुञ्जाकीमात्रा चित्रककेकाढेसे देनेसे मन्दाग्नि नष्टहोता है। इसकी १–१ रत्ती ८ दिनतक वढ़ावे और वैसेही ह्रासकरे । परिणामशूलीको भोजनकेवाद देवे १०१

१०२ रसराक्षसः (चतुर्थः)

पलद्वयं रुद्रभवं सुशोधितं
शाखोटतोयेन पुनर्विभावितम् ।
दिनत्रयं तच्च विमर्द्य गाढं
समानगन्धेन पुनर्विचूर्ण्य ॥ ४८५ ॥
यदा भवेदञ्जनसन्निकाशं
पूर्वोक्ततोयेन पुनर्विभाव्यम् ।
तत्कालमस्मारितछागमांसे
संक्षिप्य संलोहितचित्रकस्य ॥ ४८६ ॥
रसेन पूर्णं खलुतालमूली-
निर्यासयुक्तं च विमर्द्य गाढम् ।
तन्मांसपिण्डे त्वपरे निवेश्य
माषस्य पिष्टेन निरुद्ध्य यत्नात् ॥ ४८७ ॥
तत्तप्ततैले विनिवेश्य चूल्यां
मन्दाग्निनैवं विपचेत्प्रयत्नात् ।
पञ्चाऽक्षरीं चात्र जपेद्विधिज्ञो
देवीमिमां सिद्धरसेश्वरीं वै ॥ ४८८ ॥
ऐंक्लींऐंह्रींजपेद्देवीं पच्यमाने रसेश्वरे ।
बलिं दत्त्वा समभ्यर्च्य कुमारीः सर्वसिद्धिदाः॥४८९॥
ततः सिन्दूरवर्णाभं वटकन्तं समुद्धरेत् ।
अष्टोत्तरसहस्रन्तु जप्त्वा पञ्चाक्षरीमिमाम् ॥ ४९० ॥
तस्माद्यत्नात्समुद्धृत्य मुहूर्ते शोभने तिथौ ।
भिषक् सन्तोष्य विप्रादींत्रक्तिकैकन्तु भक्षयेत॥४९१॥
मधुसर्पिर्युतं भक्तं पश्चाद्भोजनमाचरेत् ।
अनुपानं पिबेत्क्षीरं रसायनमतानुगम् ॥ ४९२ ॥
यथेष्टं भोजनं कार्यं कषायकटुवर्जितम् ।
अनेन विधिना कृत्वा नरः स्यात्कामदेववत् ॥४९३॥
योषिच्छतं भजेन्नित्यं सहस्रं काममोहितः ।
अकृत्वा मैथुनं रेतस्स्फुटित्वा लोचनं व्रजेत् ॥४९४॥
सदैव मन्मथाकारो नाऽत्र कार्या विचारणा ।
रसराक्षसनामाऽयं राजयोग्यं रसायनम् ॥ ४९५ ॥

र कौ., टो , र प्र , र. सु , वाजीकरणे ।

टि०—रसराजसुन्दरे रसराक्ष इति नामकरणन्तु भ्रमोत्पादकत्वादनुचित, मूले रसराक्षसनामाऽयमिति स्पष्टतया तन्नामकरणात् ।

भाषा—अच्छीतरह शुद्धकियाहुआ पारा २ पल लेकर सीहोरके दूधमें ३ रोज़ मर्दनकर शुद्धकियेहुए वरावरके गन्धकमें मिलाकर सीहोरके रससे मर्दनकरे अञ्जनके सदृश होनेपर गोलावनाय तत्कालमारेहुए वकरेके मासमें रखकर गोलासा वनाले और उसमें लालचित्रक तथा तालमूलीकारस भरके सुईडोरेसे सींकर एकदूसरे माषपिण्डमें रख उड़दके आटेमें वाटी वनाय गोलाडुवनेलायक तिलकेतैलमें डालकर मन्दाग्निसे पकावे । पकाते समय ॐ ऐं क्लीं ऐं ह्रीं इसमन्त्रका जप करतारहे । इसकेप्रारम्भमें भैरवको वलिदे और कुमारीकन्याओंको भोजन करावे । जव गोला सिन्दूरवर्णहोजाय तव तैलसे वाहर निकालकर रखले । उसीस्थानपर अष्टोत्तरसहस्र १००८ पूर्वोक्त पञ्चाक्षरीकाकरके गोलेमेंसे धीरजसे रसराजको निकालकर रखले। अच्छे मुहूर्त, तिथि, नक्षत्रादिकमें ब्राह्मणभोजन वगैरह कराके १–१ रत्तीकी मात्रा मधु और घीकेसाथ खाकर दूध पीवे। कषाय और कटुको छोड़कर यथेष्टभोजनकरे । इसतरहकरनेसे

मनुष्य साक्षात् कामदेवके सदृश होजाताहै और बहुतसी स्त्रियोंकेसाथ उत्साहपूर्वक रमणकरसक्ताहै । भूलसे इसकासेवनकर स्त्रीसङ्ग न करनेसे तमामशरीरमें शुक्र फूटनिकलताहै और गर्मीकेमारे आंखें चलीजातीहैं इसलिये यह राजालोगोंके योग्य है ग़रीबलोगोंको नही देना ॥ १०२ ॥

१०३ रसराक्षसरसः (पञ्चमः)

सूतं विषं त्रिकटुकोरगफेनयुक्तं
मर्द्य चतुर्गुणमितं मलभागयुक्तम् ।
आर्कैः पयोभिरथ पिष्टतमं दिनैकं
निक्षिप्य पिष्टममलं सितकाचकूप्याम् ॥४९६॥
मुद्रां विधाय सुदृढां भिषगग्र्यामं
पक्त्वा पुनर्दिनचतुष्टयवह्निवृद्ध्या ।
द्वात्रिंशदूर्ध्वमधरे विपरिक्रमेण
कुर्याद्दिनानि दश सावहितो हितार्थी ॥४९७॥
गुञ्जार्द्धकं तु सितया सह नागवल्ल्या
ऋक्षो यथा विधृतमांसचयोऽन्नभक्ष्यात् ।
स्यादिन्द्रियादिषु वृषश्च यथेष्टभोज्ये
तृप्तः कदापि न पुमानपि मन्दवह्निः ॥४९८॥

र.का., अग्निमान्द्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा और वछनाग, त्रिकटु, अफीम येसब १–१ भाग, शुद्धसोमल ४ भाग, लेकर वारीक चूर्णकर आकके दूधसे १ रोज़ मर्दनकर सुखाकर ७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके मुंहपर डाट लगाय ६–७ कपड़मिट्टीसे मुंहको वन्दकर वालुकायन्त्रमें रखकर क्रमवृद्धाग्निसे ८ पहरकी आंचदे । ठंढाहोनेपर निकालकर आकके दूधसे ४ पहर मर्दनकर पूर्ववत् क्रमवृद्धाग्निसे १–१ रोज़ पकावे इसतरह पांचरोज़ पकानेके वाद मर्दनकर ७ पहरकी क्रमाग्निसे पकावे इसतरह १–१ पहर कम करताहुआ ५ दिनतक अग्निसे पकावे । कुल १० दिनकी अग्नि देवे । पहिलीवारजो ऊपर उड़ाहुआ भागहै उसे लेकर नीचेका कचरा फेंकदे । दूसरे दिनसे नीचे ऊपरका सवभाग निकालकर मर्दनकर आंचदेताजाय । इसतरहकरनेसे १० वें दिन वस्तु विल्कुल तलस्थ होगी इसे निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे आधी आधी रत्तीकीमात्रा शक्कर और पानकेसाथ खाकर ककारादिगणको छोड़कर यथेष्टभोजन करनेसे अत्यन्त कृशमनुष्यभी भालूकीतरह मांससेपरिपूर्ण होजाताहै । इन्द्रियां भी प्रवलहोजातीहैं । अत्यन्तमन्दाग्नि भी इसके सेवनकेवाद कभीभोजनसे तृप्त नहींहोताहै ॥ १०३ ॥

१०४ रसवरोरसः

आदौ सूतवरं विमर्द्य सलिलै र्वासाभवै र्वासरं,
पश्चाद्गन्धकताम्रभस्मसहितं खल्वे दृढं मर्दयेत् ।
भार्ग्यग्नित्रिफलाऽऽटरूपककणाकन्याविषावारिभिः,
प्रत्येकं दिवसत्रयं रसवरः सञ्जायते कासहा ॥४९९॥
गुञ्जापञ्चकसम्मितो मधुकणायुक्तोऽथवा वासकं,
द्राक्षायुङ्गनु शृङ्गवेरचपलाशृङ्गीविपाक्षौद्रयुक् ।
वा भार्गी चपलाऽरुणाग्निविजयाक्षौद्रान्वितः पायितः,
क्वाथे वाव्वुलिके शिवामधुयुतः कासं जयेदद्भुतम् ॥
वा कृष्णामधुयुक् शिवामधुयुतो वा नागवल्लीरस-
क्षुद्रातोयसुसैन्धवाऽग्निरसयुग्भार्ग्यम्वुविश्वायुतः ॥

र., कासे ।

टि०—र. र स, व., एतयोर्ग्रन्थयोरुदयभास्करनाम्ना "कर्षमेकं रस शुद्ध गन्धक तच्चतुर्गुणम् । विधाय कज्जलीं श्लक्ष्णा ततो निम्बुकवारिणा ॥ कल्क कुर्वीत खल्वेन यावद्यामचतुष्टयम् । द्विकर्षमथ ताम्रस्य तनुपत्राणि सर्वश ॥ कल्केन तेन निम्बूकरसेनाऽऽप्लाव्य खल्वके । स्थापयेदातपे तीव्रे पिण्डीकृत्य तत परम् ॥ मूषामध्ये निरुद्धयाऽथ कुक्कुटाख्यैस्त्रिभि. पुटै । पचेच्चुल्या विनि क्षिप्य शुष्कैरारण्यकोपलै ॥ तत आकृष्य सम्मर्द्य करण्डे त विनि क्षिपेत् । रसोऽय सर्वरोगघ्नो नृणामुदयभास्कर ॥ हन्ति सर्वाणि शूलानि तमासीव दिवाकर । पर्णखण्डिकया सार्धं देयश्चेत्यपरे जगु ॥ पथ्य रोगोचित देय रसस्यानुचित त्यजेत् ॥" अय योग शूलाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

र. र, ध, व से एषु ताम्रपर्पटीनाम्ना "रसगन्धकताम्राणा चूर्णं कृत्वा समाशकम् । पुटपाकविधौ पक्त्वा मधुनाऽऽलोड्य सल्लिहेत् ॥ सर्वरोगहरश्चैतत्पर्पटाख्य रसायनम् ॥" अय योग. सर्वरोगाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

र र, ध, अनयोर्ग्रन्थयोस्ताम्रयोगेति नाम्ना "काकमाचीशृङ्गवेरजयारुवूकजै पृथक् । सप्तधा मूर्च्छित शैले रम निर्मलताङ्गतम् ॥ सूक्ष्मपत्रीकृत ताम्र गन्धचूर्णेन योजितम् । पुटेत्तदन्धमूषाया चूर्णं तत्रेण कारयेत् ॥ तच्चूर्णं त्रिकटूपेत योजयेन्मधुसर्पिषा । ग्रहणीक्षयरोगेषु हित सोपद्रवेषु च ॥ अम्लपित्ते च कुष्ठे च ज्वरे मेहे च कामले ॥" अय योगो ग्रहणीरोगाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

भैषज्यरत्नावल्या ताम्रयोगेति नाम्ना "ताम्रपत्र रवे क्षीरे निर्गुण्डीस्वरसे तथा । त्रिकण्टजे स्नुहीक्षीरे ताम्र दग्ध्वा क्षिपेत्तत ॥ रसस्यार्द्धपल शुद्ध गन्धकस्य पलन्तथा । कज्जल्यर्द्धेन जम्बीररसेन ताम्रत पलम् ॥ परिलिप्याऽन्धमूषाया दद्यात्पञ्चपुटाल्लघून् । सम्मर्द्य मधुसर्पिर्भ्यां ततो रक्तिमित लिहेत् ॥ भगन्दरे सर्वभवे साध्य सर्वव्रणेषु च ॥" अय योगो भगन्दराऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

रससारे, रसकामधेनौ च **ताम्रेन्द्ररस** इति नाम्ना "मृतशुल्वसम सूत गन्धञ्च क्रमपाचितम् । सम्भाव्य खदिरक्वाथै र्मञ्जिष्ठात्रिगणेन च ॥ भृङ्गजेन वटीं वद्ध्वा कुष्ठाद्युदरनाशिनी । ताम्रेन्द्रो नाम विख्यात कफवातहर स्मृत ॥ एव रसौ प्रकर्तव्यौ वङ्गेन्द्रलोहसुन्दरौ ॥" अय योगः कुष्ठाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

रसायनस, र चि, र. कौ, यो म, रससागर, एषु रसायनाऽधिकारे **त्रिनेत्ररस** इति नाम्ना "रसगन्धकताम्राणि सिन्धुवाररसै र्दिनम् । मर्दयेदातपे पश्चाद्वालुकायन्त्रमध्यगम् ॥ अन्धमूषागत यामत्रय तीव्राऽग्निना पचेत् । पर्णखण्डेन सर्वेषु योज्यो रोगेषु वै रस ॥ गुञ्जामित देहसिद्ध्यै पुष्टिवीर्यवलाय च । रसोऽय हेमताराभ्यामपि सिद्ध्यति कन्यया ॥" अय योगो निहितोऽस्ति ।

रससारसङ्ग्रहरसरत्नसमुच्चययो**स्त्रिनेत्ररस** इति नाम्ना शूलाऽधिकारे "रसताम्रगन्धकाना द्विगुणान्तरवर्धिताशानाम् । हस्तेन मर्दिताना पुटपक्वानां निषेवित भस्म ॥ गुञ्जाप्रमाणमार्द्रकसिन्धूद्भवचूर्णसंयुक्तम् । मैरण्डतैलमाक्षिकमथवा तद्धिङ्गुदुग्धकोपेतम् ॥ शमयति शूलमशेष तत्तद्रसभावित वहुश । उपचूर्णरनुपानैस्तैस्तै सहित कफाऽनिलार्तिहरम् ॥ एतच्च हरिणशृङ्ग मृतकाञ्चनहरिणटङ्कणोपेतम् । मधुतमधु पक्तिशूल शमयति नक्त त्रिनेत्ररस ॥" अय योगो निहितोऽस्ति ।

र म क, र अ, रसायनम., र प्र, र (मा), र का, र सि, एषु ग्रन्थेषु रक्तपित्ताऽधिकारे रक्तारि नाम्ना "सूत गन्ध तथा शुद्ध

क्रमादेकद्विभागिकम् । तुल्यार्कं भावयेदार्द्ररसैश्चाऽपि त्रिसप्तधा ॥ गोलं कृत्वाऽन्धमूषायां रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् । घृतशुण्ठ्या च गुञ्जैकं शीतोदं सस्तितं ह्यनु ॥ त्रिदोषं नाशयेच्छीघ्रं क्रिया शीता प्रयोजयेत् । स्थूलं कृशं कृशं स्थूलं करोत्यग्निप्रदीपनम् ॥ त्रिदोषात्पतितं रक्तं व्रणनाड्यभिघातजम् । यकृत्प्लीहोत्थितं यच्च यच्च कुष्ठकरं त्वसृक् ॥ शोधयेद्दुष्टरक्तं तद्रसो रक्तारिसञ्ज्ञकः ॥" अयं योगोऽस्ति । रसावतारे ताम्रसम्पुटे रसं निवेश्य तत्सम्पुटञ्च मृन्मूषायां निवेश्य पुटं दद्यादिति विशेषः ॥

र र स , रसेन्द्रम , अनयो **रसपिष्टिकेति** नाम्ना "पक्वताम्रे रसः पिष्टो वलिना हिध्मिना हितः ।" अयं योगो हिध्माऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

भै र , वै क अनयो **रसराजेति** नाम्ना "गन्धकेन मृतं ताम्रं शुद्धगन्धेन तुल्यकम् । द्वयोः पादं शुद्धरसं मर्दयेच्छूरणद्रवैः ॥ पुटेद्गजपुटे विद्वान्स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् । गुञ्जाद्वयं लिहेत्क्षौद्रे प्लीहगुल्मविनाशनम् ॥ यकृच्छूलज्वरं हन्ति कान्तिपुष्टिविवर्धनः । रसराज इति ख्यातो रोगवारणकेसरी ॥" अयं योगः शूलाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

रसावतारे **रसेश** इति नाम्ना कासाऽधिकारे "सूतगन्धरवय. समाशका वासकार्द्रकरसेन मर्दिता । जायते त्रिदिवसं प्रयत्नतो क्षालने हरिकथेव रसेश ॥ वल्लयुग्ममशितोऽग्निपिप्पलीप्राणदामधुयुतोऽघनाशनः । पञ्चकासविनिवर्तनक्षमः स्वीयपथ्यसहितो मृगाङ्कवत् ।" अयं योगोनिहितोऽस्ति ।

वृ यो त , रसायनसं , र कं., र सिं , यो र., र चि , नि र , र कौ , र का., र म , यो म , त्रि र भ , र र. कौ , एषु ग्रन्थेषु कुष्ठाऽधिकारे **शशिलेखावटीति** नाम्ना "शुद्धसूतं समं गन्धं तुल्यञ्च मृतताम्रकम् । मर्दितं वाकुचीक्वाथैर्दिनैकं वटकीकृतम् ॥ निष्कमात्रा सदा खादेच्छित्राघ्नी शशिलेखिका । वाकुचीतैलकर्षैकं सक्षौद्रमनुपाययेत् ॥" अयं योगोनिहितोऽस्ति । तत्र र म , यो म , त्रि र भ , एषु ग्रन्थेषु **शशिधररस** इति नाम, र. र. कौ , **कुष्ठघ्नरस** इति नाम । केषुचित्पुस्तकेषु "तुल्यञ्च मृतताम्रकम्" इत्यस्य स्थाने तुत्थञ्च मृतताम्रकमिति पाठो दृश्यते ॥

रसकामधेनौ शूलाऽधिकारे **शूलगजकेसरीति** नाम्ना "रसं पलद्वयं गन्धाऽष्टपलं निम्बुकद्रवैः । विमर्द्य शुद्धताम्रस्य पत्राणि स्थापयेत्ततः ॥ निम्बूरसे च पक्षैकं क्षिपेत्कज्जलिकाञ्च ताम् । शरावसम्पुटे धृत्वा शोषिते मुद्रिते भृशम् ॥ लोहचूर्णं खटीचूर्णं शङ्खचूर्णं गुडैः सह । मृत्कर्पटविलिप्ते च शुष्केऽग्निं वैदयामकम् ॥ स्वाङ्गशीतलमादाय रसः स्याच्छूलकेसरी । अनुपानवशात्सर्वरोगाञ्छूलञ्च नाशयेत् ॥" अयं योगो निहितोऽस्ति ।

एते योगा पृथक्पृथङ्नाम्ना विभिन्नविभिन्नग्रन्थेषु नानाऽधिकारेषु निहिता सन्ति, केषुचिद्ग्रन्थेषु तु द्वित्रादिस्थानेष्वपि पुनः पुनरवस्थापिता सन्ति तत्राऽयमावश्यको विचारः समापततितो यद्ग्रन्थसङ्ग्रहयितैव भ्रमगह्वरे निपत्य नाऽज्ञासीद्यत्कस्मिन्नधिकारे कस्को योगो निहितोऽस्ति । पूर्वोक्तयोगाच्चाऽस्य कथं भिन्नता सञ्जातेति विचारं न कृतवानीदृशेऽज्ञानाऽन्धकारनिरुद्धज्ञानज्योतिषि विषये साधारणवैद्यानामविकत्या छात्राणां का कथेति सुतरां विदुषां हृदि विचारः समुदेति । भ्रमपतनकारणन्तु एकस्याऽपि योगस्य नाना नामकरणं १ छन्दोऽनुरोधेन मूलद्रव्यनामान्तरनियोजनं २ भावनाविशेषा ३ विविधान्यनुपानानि च ४ । एतद्भ्रमनिराकरणाय मूलतत्त्वं गवेषणीयमत्यावश्यकं तद्यथा— गन्धेशार्कस्ययोगेन घटितयोगस्य नानाव्याधिषु कार्यकरणक्षमत्वाधेन येन भिषजा यत्र यत्र रोगे यो यो योगः परीक्षितः स स तत्र तत्र लिखितः , मुख्यन्त्वत्र कारणं प्रकृतिसमवदोषादिविचार एव तन्मूलैव भिषजां सिद्धिरस्तीत्यतो येनकेनाऽपि प्रकारेण गन्धेशसंयोगेन वा ताम्रभस्म निष्पाद्य यत्र योग क्रोऽस्ति तेषां भ्रमनिराकरणाय प्रयोगसौष्ठवाय चोपरिनिर्दिष्टस्मा रसवरनाम्नाऽवबोद्धव्या प्रयोक्तव्याश्च । भावना श्चानुपानानि तु स्वबुद्ध्या न्यूनाऽधिकान्यपि समानुधीयमानानि— न दोषावहानि, इति सुधीभिर्विभावनीयम् । अत्र क्रमेणाऽऽलिखितयोगा एकेनैव योगेन बुद्ध्या रूढा भविष्यन्तीति महल्लाघवम् । एतद्विवरणं हृदि सम्यगाकलय्य एतेषु योगेषु निर्दिष्टसरण्या ते ते रोगा उपक्रमितुं सरला भविष्यन्ति । अन्तर्भावितयोगानां नामानि यथा—उदयभास्कर १, ताम्रपर्पटी २, ताम्रयोग ३, ताम्रयोगो द्वितीय ४, ताम्रेन्द्ररस ५, त्रिनेत्ररस ६, द्वितीयश्चापि त्रिनेत्र ७, रक्तारि ८, रसपिष्टिका ९, रसराज १०, रसेश ११, शशिलेखा वटी १२, शूलगजकेसरीति १३ ।

भाषा—अड्सेकेरससे एकरोज़ शुद्धपारेको घोटकर इसकी बराबर शुद्धगन्धक और ताम्रभस्म मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर भारङ्गी, चित्रक, त्रिफला, अड्स, पीपल, घीकुंवार, अतीस सुगन्धवाला इन प्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ रोज़ मर्दनकर ५–५ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधु, पीपल, अथवा अड्स, अथवा द्राक्ष अथवा अदरख, पीपल, काकडासींगी, अतीस और मधु, अथवा भारङ्गी, पीपल, अतीस, चित्रक, भाग और मधु, अथवा बबूल की छालका काढा, हर्रे और मधु, अथवा पीपल और मधु, अथवा आवला, मधु, अथवा पान, भटकटैया, चित्रकका रस और सैन्धव, अथवा भारङ्गी, सुगन्धवाला और सोंठकेसाथ देनेसे यह दुस्तरकासको नष्टकरता है । इन अनुपानोंमें से जहा जिसकी योग्यता हो वहा उसका योगकरे ॥ १०४ ॥

१०५ रसवीररसः

त्रिगुणं शुद्धसूतस्य योजयेच्छुद्धगन्धकम् ।
लोहपर्पटिकाचूर्णं सूततुल्यं विनिःक्षिपेत् ॥ ५०१ ॥
स्नुह्यर्कपयसा मर्द्य तत्सर्वं दिवसत्रयम् ।
तच्छुष्कं चाऽन्धितं पक्त्वा करीषाग्नौ दिवानिशम् ॥
ततश्च टङ्कणं काचं दत्त्वा रुद्ध्वा धमेद् दृढम् ।
गुञ्जैकं मधुना खादेद्रसवीरो महारसः ॥ ५०३ ॥
अब्दैकेन जरां हन्ति जीवेदाचन्द्रतारकम् ।
मुशलीमूलचूर्णन्तु गुञ्जापत्रद्रवैः पिवेत् ॥
छागीमूत्रेण वातं वै कर्षैकं क्रामकं परम् ॥ ५०४ ॥

र. ख , रसायनसं , रसायने । रसायनसं करवीररसेति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग और गन्धक ३ भाग, लोहपर्पटी १ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर सेहुण्ड और आकके दूधसे ३–३ रोज़ मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर अन्धमूषामें बन्दकर ४–५ कपड़मिट्टी देकर करीषकी अग्निमें एक दिनरात पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर भुनासुहागा और काच समभागमें देकर तीव्र धमनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर बारीक पीसकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथ खाकर सफेदगुञ्जाके रससे मुशलीका चूर्ण एककर्ष पीवे अथवा बकरीके मूत्रसे पीवे । इसरसके सेवनसे एकवर्षमें बुढ़ापेको जीतकर दीर्घायुको प्राप्तहोता है ॥ १०५ ॥

१०६ रसशार्दूलरसः (प्रथमः)

रसस्य द्विगुणं गन्धं शुद्धं सम्मर्दयेद्दिनम् ।
प्रतिलोहं सूततुल्यमष्टलोहं मृतं क्षिपेत् ॥ ५०५ ॥

ब्राह्मी जयन्ती निर्गुण्डी यष्टीमधु पुनर्नवा।
नलिकागिरिकर्ण्यर्कक्रूष्णधूर्ततुरालभाः॥ ५०६॥
आटरूषः काकमाची द्रवैरेषां विमर्दयेत्।
गुञ्जात्रयं चतुर्गुञ्जं सर्वरोगेषु योजयेत्॥
रोगोक्तमनुपानं वा कवोष्णं वा जलं पिबेत्॥ ५०७॥

र सं., र. चि., र. सु., रसायनसं., यो. म., सूतिकारोगे।

टि०—यद्यप्यूनचत्वारिंशताऽग्निकुमारेणाऽस्य मूलद्रव्येषु साम्यमाव-इति परन्तु भावनास्वत्यधिकविशेषत्वात्स्वतन्त्रतयैव पाठो निहितोऽस्ति, इति न विस्मरणीयम्।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भाग, आठोंलोह (सोना, चादी, तांबा, रांगा, सीसा, कान्तलोह, कांसा और पीतल) १–१ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर ब्राह्मी, जेंती, निर्गुण्डी, मुलहठी, पुनर्नवा, नालीशाक, कोयल, आक, कालाधतूरा, जवासा, अड्डसा, मकोय, इनप्रत्येकके यथासम्भव-स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर ३–३ अथवा ४–४ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्त-द्रोगहरानुपानकेसाथ अथवा कदुष्णजलकेसाथ देनेसे यह सम-स्तरोगोंको दूरकरताहै॥ १०६॥

१०७ रसशार्दूलरसः

अभ्रं ताम्रं तथा लोहं राजपट्टं रसं तथा।
ऊषणं टङ्कणश्चैव यवक्षारं समांशकम्॥ ५०८॥
तथाऽत्र तालकश्चैव त्रिफलायाश्च तोलकम्।
तोलकश्चाऽमृतश्चैव पञ्चगुञ्जाप्रमिता वटी॥ ५०९॥
ग्रीष्मसुन्दरकस्याऽपि नागवल्लीरसेन च।
भावयेत्सप्तधा हन्ति ज्वरं कासाङ्गसङ्ग्रहम्॥
सूतिकाऽऽतङ्कशोथादिस्त्रीरोगांश्च विनाशयेत्॥ ५१०॥

र. सं., र चि., र. सु. सूतिकारोगे। र. चि. गन्धकमधिकतया नियोजितम्॥

भाषा—अभ्रक, ताम्र, लोह, राजावर्त (लाजवर्द) और पारा इनकीभस्में, मरिच, सुहागा, यवक्षार, हरितालभस्म, त्रिफला और शुद्धवछनाग १–१ तोला लेकर वारीकचूर्णकर हरमल और पानके रसोंसे ७–७ भावनाएं देकर ६–६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानु-पानकेसाथ देनेसे ज्वर, कास, अङ्गग्रह, सूतिकारोग, शोथ और स्त्रियोंके तमामरोग नष्टहोतेहैं॥ १०७॥

१०८ रसशार्दूलरसः (महान्) (तृतीयः)

अभ्रकं पुटितं ताम्रं स्वर्णं गन्धश्च पारदः।
शिला टङ्कं यवक्षारः त्रिफलायाः पलंपलम्॥ ५११॥
गरलस्य तथा ग्राह्यमर्द्धकर्षकसम्मितम्।
त्वगेलापत्रकश्चैव जातीकोपलवङ्गकम्॥ ५१२॥
मांसी तालीसपत्रञ्च माक्षिकञ्च रसाञ्जनम्।
एषां द्विकार्षिकं भागं देयश्चाऽपि विचक्षणैः॥ ५१३॥
द्रवे किञ्चित्स्थिते चूर्णं मरिचस्य पलं क्षिपेत्।
भावना च प्रदातव्या पूर्वोक्तेन रसेन च॥ ५१४॥

निहन्ति विविधान्रोगाञ्ज्वरान्दाहान्वमिं भ्रमम्।
तथाऽतिसारकञ्चैव वह्निमान्द्यमरोचकम्॥
विशेषाद्गर्भिणीरोगं नाशयेदचिरेण च॥ ५१५॥

र. स., र. सु., र. क. सूतिकारोगे।

भाषा—अभ्रक, ताम्र, सुवर्ण इनकीभस्में, शुद्ध पारा, गन्धक, मैनसिल, सुहागा, यवक्षार और त्रिफला १–१ पल, शुद्धवछनाग ८ माशे, तज, इलायची, पत्रज, जावित्री, लवङ्ग, जटामासी, तालीसपत्र, सोनामाखी, रसौत २–२ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर हरमल और पानकेरसोंसे ७–७भावनाएं देकर कुछ द्रव रहनेपर एकपल मरिचका वारीकचूर्ण डालकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानु-पानकेसाथ देनेसे ज्वर, दाह, वमन, अतिसार, मन्दाग्नि, अरुचि, तथा खासकर गर्भिणीकेरोगोंको यह नष्ट करताहै १०८

१०९ रसशेखररसः

पारदश्चाहिफेनश्च द्विद्वादशकरक्तिकम्।
अयःपात्रे निम्बकाष्ठैः मर्दयेत्तुलसीद्रवैः॥ ५१६॥
तस्मिन् सम्मूर्च्छिते दद्याद्दरदं रससम्मितम्।
मर्दयेच्च तुलस्यैव ततश्चैतानि दापयेत्॥ ५१७॥
जातीकोषफले चैव पारसीकयवानिकाम्।
आकारकरभश्चैव द्वात्रिंशद्रक्तिकाः प्रति॥ ५१८॥
मर्दयेत्तुलसीतोयैरेतेषां द्विगुणं शुभम्।
दद्यात्खदिरसत्त्वञ्च वटिका चणकप्रभा॥ ५१९॥
सायं द्वेद्वे प्रयोज्ये च लवणाऽम्लञ्च वर्जयेत्।
गलत्कुष्ठं तथास्फोटान् दुष्टान् गर्दभिकामपि॥ ५२०॥
ये स्युर्व्रणा नृणामन्ये उपदंशपुरःसराः।
तान्सर्वान्नाशयत्याशु सिद्धोऽयं रसशेखरः॥ ५२१॥

र. सं., ध., भै. र, र. क, उपदंशे।

भाषा—शुद्धपारा २ रत्ती, अफीम १२ रत्ती लेकर लोहेके पात्रमें तुलसीकेरसकेसाथ नीमके ताज़े डण्डेसे घोटे। पारद अच्छीतरह मिलजानेपर पारेकी वरावर शिगरिफ डालकर घोटे। एकजीव होनेपर जावित्री, जायफल, खुरासानी और देशी अजवाइन, अकलकरा ३२–३२ रत्ती मिलाकर एकरोज़ मर्दनकर इनसवकी वरावर उत्तमकत्था मिलाकर चनेप्रमाण गोलियें बना कर रखछोड़े। इनमेंसे २–२ गोली सुवहशाम देकर नमक और खटाई से परहेजकरनेसे गलितकुष्ठ, फोड़े, दुष्टव्रण, गर्दभिका, उपदंशजनित तमामघाव येसव नष्टहोतेहै॥ १०९॥

११० रससिन्दूरम् (प्रथमम्)

पलमात्रं रसं शुद्धं तावन्मात्रन्तु गन्धकम्।
विधिवत्कज्जलीं कृत्वा न्यग्रोधाऽङ्कुरवारिभिः॥ ५२२॥
भावनात्रितयं दत्त्वा स्थालीमध्ये निधापयेत्।
विरच्य कवचीयन्त्रं वालुकाभिः प्रपूरयेत्॥ ५२३॥
दद्यात्तदनु मन्दाग्निं भिषग्यामचतुष्टयम्।
जायते रससिन्दूरं तरुणादित्यसन्निभम्॥
अनुपानविशेषेण करोति विविधान्गुणान्॥ ५२४॥

र. सं., नि र, र. क, र. चं, र. को., आ प्र., यो. र., यो. म., र. क. यो, वै. चि., वै चि. (ल.), र. पा., सर्वरोगाधिकारे ।

टि०—र. को. पारदाद्द्विगुणेन गन्धकेन कज्जलीं कृत्वा सप्तविंशति भिर्यामैरग्निं प्रदाय स्वाङ्गशीतं समाकृष्य द्विगुणं गन्धं निधाय पाकं कुर्यादेवं वारत्रयं कुर्यादित्यभिहितम्, नाम च **हरगौरीति** स्थापितम्। कुत्रचित् त्रिगुणं गन्धं नियुज्य कूपीपाको विहितः ।

"गन्धकं पारदं तुल्यं जम्बीररसमर्दितम्। कुमारीचित्रकञ्चैव तुलसी त्रिफला मधु ॥ हंसपादी सहादेवी पारिभद्रः कुरण्टकः । एतेषां स्वरसैः सम्यक् भावयेत्कुशलो भिषक् ॥ काचकूप्यां विनिःक्षिप्य वालुकायन्त्रमध्यतः । त्रिदिनं पाचयेदेतत्स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ॥ इन्द्रगोपसमच्छायं सिन्दूरं सर्वसिद्धिदम् ॥" इत्याकारकः पाठो रसायनपरीक्षायां रत्नाकरौषधयोगे च निहितोऽस्ति । "पारदस्यैकभागन्तु द्विभागं गन्धकन्तथा । खल्वे हंसपदीद्रावैः कुमार्याश्च विमर्दितम् ॥ दिनार्द्धं वालुकायन्त्रे सिन्दूरं सर्वरोगजित् ।" इति रत्नाकरौषधयोगे द्वितीयः पाठोऽस्ति ॥

"तुल्यं गन्धं रसं शुद्धं खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् । हंसपादीरसैर्मर्द्यं दिनमेकञ्च कज्जलीम् ॥ गुटिकां कारयित्वाऽथ काचकूप्यन्तरे क्षिपेत् । कूप्यन्तरद्वारमितं कृत्वा रजतपत्रकम् ॥ तद्भाण्डान्ते काचकूप्या क्षिपेन्मृद्दरससंयुतम् । लवणं माषमात्रञ्च दद्यात्कूप्योदरे क्षिपेत् ॥ वालुकाभिः पूरयित्वा भाण्डवक्त्रं निरोधयेत् । द्वियष्ट्याम पचेद्देयं स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ॥ षडंशाञ्च मृदं क्षिप्त्वा तत्तुल्यमरिचान्वितम् । चूर्णीकृतं मर्दयित्वा गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् । सर्वे रोगा विनश्यन्ति ह्यनुपानविशेषतः । मनुष्याणां हितकरं रससिन्दूरमुत्तमम् ॥" इत्याकारकः पाठो रत्नाकरौषधयोगेऽस्ति ॥ "गन्धकं पारदं तुल्यं क्षिप्त्वा तन्मूलिकारसैः । रक्तमण्डलधत्तूररसैः सम्मर्द्य निःक्षिपेत् ॥ वालुकायन्त्रमार्गेण काचकूप्याञ्च पाचयेत् । दिनार्धे नयनानन्दं सिन्दूरं भवति ध्रुवम् ॥" इत्याकारकः पाठो रत्नाकरौषधयोगे वसवराजीये वैद्यचिन्तामणौ च निहितोऽस्ति ।

"पारदाद्द्विगुणं गन्धं जम्बीररसमर्दितम् । नागवल्लीरसैर्मर्द्यं दाडिमीकुसुमोद्भवैः ॥ रसैः सम्मर्द्य गुटिकां कारयेत्कूपिकान्तरे । क्षिप्त्वा सन्धिं विलिप्याऽथ पचेद् द्वादशयामकम् ॥ बालसूर्यप्रतीकाशं सिन्दूरं जायते रसः ॥" इत्याकारको रत्नाकरौषधयोगे पाठोऽस्ति ॥ "कुरण्टवास्तुकैरण्डहंसपादीपुनर्नवैः । मण्डूकपर्णीब्राह्मीभ्यां किंशुकद्वयपुष्पकैः ॥ वासाकार्पासपुष्पाभ्यां रसैः सम्यक् प्रमर्दयेत् । पातनाद्वितयं कार्यं ततः उत्तारयेद्रसम् ॥ चतुर्भागं गन्धकञ्च दत्त्वा चैव प्रमर्दयेत् । काचकूप्यां विनिःक्षिप्य मृद्वस्त्रैर्लेपयेद् दृढम् ॥ वालुकाख्येन यन्त्रेण पाचयेद्दिवसत्रयम् । सिन्दूरं जायते शीघ्रमिन्द्रगोपसमप्रभम् ॥ अनुपानविशेषेण सर्वरोगापहारकम् ॥" इत्याकारकः पाठो रत्नाकरौषधयोगेऽस्ति ॥ "गन्धकं धूमसारञ्च शुद्धं सूतं समं समम् । यामैकं चूर्णयेत्खल्वे काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् ॥ रुद्ध्वा द्वादशयामास्तु वालुकायन्त्रपाचनात् । स्फोटयेत्स्वाङ्गशैत्ये तु पूर्ववस्थं गन्धकं त्यजेत् ॥ अधःस्थं रससिन्दूरं सर्वयोगेषु योजयेत् ।" इत्याकारकः पाठो रत्नाकरौषधयोगेऽस्ति ॥ "पलमेकं रसेन्द्रस्य शुद्धगन्धं चतुष्पलम् । हंसपादीरसेनैव मर्दयेद्याममात्रकम् ॥ अर्कमूलकषायेण कुमारीचित्रवारिणा । मधुनाऽऽर्द्रकनीरेण प्रत्येकं याममात्रकम् ॥ वटकान् कारयेच्छुष्कान् काचकूप्यन्तरे क्षिपेत् । भुवनप्रमितैर्वस्त्रैर्मृदा युक्तैश्च वेष्टयेत् ॥ वालुकायन्त्रविधिना पाचयेद्दिवसत्रयम् । पद्मरागप्रभं भाति सिन्दूरं भवति ध्रुवम् ॥" इत्याकारकः पाठो रत्नाकरौषधयोगेऽस्ति ॥

"रसविदाऽपि रसः परिशोधितो विगतदोषकृतोऽपि हि गन्धकः । विमललोहमये कनकर्परे भ्रमरसारसजः परिमुच्यताम् ॥ अतिकृशाऽग्निंयुते द्रवति स्वयं तदनु तत्र रसः परिमुच्यताम् । विशदलोहमयेन च दर्विणा विघट्टयेत्प्रहरत्रयसम्मितम् ॥ तदनु काचघटीं विनिवेश्य वै सिकतयन्त्रवरेण हि पाचित । द्विदशयाममथ कृतवह्निना भवति रक्तरसस्त्वलभस्मता ॥ गतवलेन नरेण हि सेवितो भवति वाजिकरं सुखदः सदा । स च वलीपलितानि च नाशयेच्छतशरत्सु निरामयकृत्परम् ॥" इत्याकारकः पाठो रसप्रकाशसुधाकरेऽस्ति ॥

"पारदं पलमेकं स्याद् द्विपलं शुद्धगन्धकम् । रक्तकार्पासतोयेन घृष्ट्वा काचस्य कूप्यके ॥ निक्षिप्य टङ्कणेनैव मुखं तस्य निरोधयेत् । वालुकायन्त्रमध्यस्थां कूपीञ्च कुर्वता दृढाम् ॥ अहोरात्रं पचेदग्नौ शास्त्रवित्कुशलो भिषक् । शीतञ्चादाय पात्रस्य कूपिकान्तरलम्बितम् ॥ दरदेन समं रक्तं सोज्ज्वलं भस्म यद्भवेत् । भक्षयेन्माषमेकञ्च घृतेन मधुना सह ॥ पश्चाद्दद्यात् गुडं चाज्यं कृष्णेक्षुमपि शर्कराम् । द्राक्षाखर्जूरमधुकप्रभृतीनथ भक्षयेत् ॥ त्रिफलामधुना शान्तिं याति पित्तं चिरोत्थितम् । निर्गुण्डिकारसेनाऽत्र दुर्वारा वातवेदना ॥ प्रशमं याति वेगेन नूतनञ्च वपुर्भवेत् । अर्धाऽऽवर्तितदुग्धेन गृह्यते यदयं रसः ॥ वन्ध्याऽपि च भवत्येव जीववत्सा सुपुत्रिका ॥" इत्याकारकः पाठो र. च., र. त., नि. र., र. स., र. सु., रसपारिजातेचाऽस्ति । र. त., नि. र. एतयो **र्द्विगुणगन्धकजीर्णसिन्दूर** इति नाम । रसपारिजाते भावनायां रक्तकार्पासतोयस्थाने कन्यकातोयं दृश्यते ।

"पारदस्य त्रयो भागा भागैकं गन्धकस्य च । कन्यकाकाकमाच्योश्च तुलसीतण्डुलीयजैः ॥ कण्टकार्याः पलाशस्य द्रवैर्मर्द्य दिनत्रयम् । बदरास्थिप्रमाणेन वटीं कुर्यात्प्रयत्नतः ॥ कूपिकां पूरयेत्ताभिः वस्त्रमृत्तिकया वहिः । पुटं मुखे प्रदातव्यं वस्त्रमृत्तिकया पुनः ॥ एवं सप्तकमादध्यान्मृत्तिकावस्त्रजं पुनः । शुष्कां काचघटीं दत्त्वा वालुकायन्त्रमध्यतः ॥ पचेद् द्वादशयामास्तु स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् । सिन्दूराभं भवेद्रसं गृहीत्वाऽद्य प्रयत्नतः ॥ अनुपानविशेषेण सर्वरोगहरं परम् ॥" इति पाठो रत्नाकरौषधयोगेऽस्ति ॥ र. म. क., र. म. मा., रसायनसः एषु ग्रन्थेषु "पारदाद्द्विगुणं गन्धं दत्त्वा कार्पासिकाद्रवैः । पूर्ववत्पाचितो ह्येषः तदा **मदनकामदः** ॥" इति पाठो **मदनकामदेवरस** इति नाम्ना निहितोऽस्ति । कुत्रचित्सूतसमं गन्धं नियोज्य भावनायां सर्पाक्ष्या द्रवैर्मर्दयित्वा वालुकायन्त्रे पाचितः । "सूततुल्यं घृतं जीर्णं द्वाभ्यां तुल्यञ्च गन्धकम् । रविक्षीरैर्दिनं मर्द्यमन्धयित्वा तु भूधरे ॥ पुटकेन भवेत्सिद्धो रसो हैरण्यगर्भकः ।" इति रसरत्नाकरे पाठोऽस्ति, परन्तु तत्र रससिन्दूरत्वाऽभावाद्यथाकथञ्चित् पर्पट्यामन्तर्भावो भवितुमर्हति । भूधरे पुटदानसमयेऽधिकाऽग्निसंयोगश्चेत्तर्हि श्रम एव हस्तगतो भविष्यति तदपेक्षया रविक्षीरैर्विमृद्य पर्पटीं निष्पाद्य नागवल्लीद्रवे मर्दयित्वा भूधरे प्रस्वेद्य श्वासकासादौ नियोजनीय इत्यस्माकं सम्मतिः ।

एते पाठाः प्रथमरससिन्दूरेऽन्तर्भावनीयाः । द्विगुणत्रिगुणचतुर्गुणगन्धकमानस्य तु चतुर्गुणगन्धकयोगेन रसस्य सम्पादनात्सम्यगन्तर्भावो भविष्यति । अधिकन्तु न तद्धानिरितिन्यायेन गुणवृद्धिरपि सुसाधा भविष्यति, भावनानां विशेषश्चाभीष्टश्चेत् तर्ह्यधोनिर्दिष्टक्रमेण भावनां प्रदाय रससम्पादने सर्वासां भावनानामन्तर्भावोऽलौकिकी गुणसम्पच्च सम्पत्स्यते । एकैकभावनामपेक्ष्य पाठान्तरकल्पने गौरवात्, विशेषगुणाऽलाभाच्च । सम्यक् सुशोधिते रसे रसपाकसमये गृहधूमादिदानस्य तु नात्यन्तौचिती इति प्रतिभाति, अतोर्द्धाऽधस्तिर्यक्पातनानि रसे विधाय गन्धकञ्च भावनाद्रव्येषु निर्वाप्य कज्जलीं कृत्वा अधोनिर्दिष्टद्रव्यैः क्रमेण यावच्छक्यवारान् भावयित्वा रसः सम्पादनीय इत्यस्माकं सम्मतिः । भावनाद्रव्याणि यथा—अर्कमूलक्षीराऽऽर्द्रक-गृहधूम-तण्डुलीयक-कण्टकारी-जम्बीर-कुमारी-चित्रक-तुलसी-त्रिफला-मधु-हंसपादी-सहादेवी-पारिभद्र-कुरण्टक-रक्तमारिष-धत्तूर-नागवल्ली-दाडिमीकुसुम-वास्तुकैरण्ड-पुनर्नवा-मण्डूकपर्णी-ब्राह्मी-किंशुकद्वयपुष्प-वासा-कार्पासपुष्प-पलाशाङ्गद्रवाः । एताभिः भावनाभिश्चन्द्रोदयकज्जलीं भावयित्वा चन्द्रोदयं निष्पाद्य रससिन्दूरस्थाने व्यापारितश्च महान् गुणलाभः । साम्प्रतिकसमये यथाऽशुक्षितपारदेन चन्द्रोदयं जना निष्पादयन्ति तथा करणे तु वैद्यानां क्षतिरपि नाऽस्ति तत्स्थस्वर्णस्य मित्रपञ्चकेन पुनरुत्थानं कृत्वा यथा-

स्थिनमूल्यलाभोऽपि भविष्यति जनानामधिकगुणलाभादायुर्वेदकीर्त्तिरधिका भविष्यति, स्वर्णविक्रयाऽपेक्षा न चेत्तर्हि स्वर्णस्य मयूरशिखाद्रवे कल्के वा कृष्णतुलसीद्रवे कल्के वा पञ्चपदिनानि चन्द्रिकाऽपगमनाऽवधि विमृद्य पूर्वोपयन्तचतुर्गुणवस्त्रमध्ये शुष्कचक्रिका पिधाय शरावसम्पुटञ्च कृत्वा पूर्णगजपुटदानेनैकस्मिन्नेव पुटे स्वर्णं भस्मतामेष्यति तन्मूल्यञ्च स्वर्णाऽपेक्षयाऽप्यधिकमानया लभ्यते इति सहृदयै मेधाकल्योभयश्रेयस्करं यथास्यात्तथाऽनुष्ठेयमित्यस्माक विनीता प्रार्थना । स्वर्णरहितसिन्दूरप्रयोगास्तु धनाऽभावमूल्का सन्तीति स्पष्टतया प्रतिभाति । कृपापरै रसवैद्यैस्तथाविधप्रयोगा धनिकदरिद्रजनोभयसाधारण्येन सुलभा भवेयुरिति बुद्धया दर्शिता । तत्राऽपीदानीमचिरादनन्तरा वैद्युतयन्त्रादिमाहात्म्येन योऽयं चन्द्रोदयादीना प्रकारश्चलितस्तत्र शास्त्रनिर्दिष्टमार्गाऽपेक्षयाऽत्यन्तैव गुणहीनताऽस्ति, इति प्रत्यक्षप्रयोग कृत्वा जनै विवेचनीयमिति साग्रह श्रम । अतश्शास्त्रनिर्दिष्टमार्गेणैव रसोत्पादन कृत्वा शास्त्रनिर्दिष्टगुणाऽऽशा तेषु तेषु कर्त्तव्या नाऽन्यथा । एतत्प्रामाण्यगवेषणेच्छा यस्य कस्यापि हृदि विस्फुरति तर्हि पाश्चात्यवैद्युतादियन्त्रद्वारा निर्मितानि लोहादिभस्मानि व्यवहृत्य प्रत्यक्षीकुर्वन्त्वित्यलमतिविस्तरेण ॥

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ पललेकर नीलवर्णकज्जलीकर वटाङ्कुरोंके स्वरसमे तीनदिनमर्दनकर सुखाकर ६-७ कपड़मिट्टीकीहुई आतशीशीशीमें भर वालुकायन्त्रमें रख अग्नि देवे । गन्धकजारणहोनेकेबाद खड़ियामिट्टी और गुड अथवा मुलतानीमिट्टीसे मुंह बन्दकर ४-५ कपड़मिट्टीदेकर ४ पहरकी तीक्ष्ण अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक मात्रा तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ११० ॥

१११ रससिन्दूरम् (द्वितीयम्)

शुद्धं सूतं शुभं गन्धं प्रत्येकं तु चतुष्पलम् ।
द्विपलं नवसारञ्च फेनञ्चापि पलं ततः ॥ ५२५ ॥
पलार्द्धं वत्सनाभञ्च वत्सनाभसमा खटिः ।
शुण्ठीमरिचपिप्पल्यः पृथक्कर्षं नियोजयेत् ॥ ५२६ ॥
त्रिदिनं मर्दयेत्खल्वे यावत्कज्जलसन्निभम् ।
विजयाधूर्त्तशुण्ठीनां जातसारेण सप्तधा ॥ ५२७ ॥
प्रत्येकं मर्दयेत्खल्वे काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् ।
सप्तभिः मृत्तिकावस्त्रै र्वालुकायन्त्रके पचेत् ॥ ५२८ ॥
क्रमाऽग्निना सप्तदिनं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
इन्द्रगोपसमच्छायं सिन्दूरं सर्वसिद्धिदम् ॥
परं वृष्यतमं पुंसां रमयेत्स्त्रीशतं मुदा ॥ ५२९ ॥

र क.यो ,सर्वरोगेषु ।

टि०—" शुद्धसूतस्य भागैक चूल्लिकालवण तथा । रसतुल्य वत्सनाभ शुकपिच्छ त्रिभागिकम् ॥ त्रिदिन मर्दयेत्खल्वे यावत्कज्जलसन्निभम् । कुसुम्भपुष्पसारेण मर्दयेत्त्रिदिन तत ॥ रक्तकार्पाससपुष्पोत्थरसै रञ्जलिकाद्रवै । ह्रीवेररक्तकल्हारैरुशीरपद्मकेशरै ॥ रसै सम्मर्द्य यत्नेन पृथगेकैकश क्रमात् । विजयाधूर्त्ताऽशोकाना जातसारेण सप्तधा ॥ प्रत्येक मर्दयेत्तेन काचकूप्या विनि'क्षिपेत । सप्तभि मृत्तिकावस्त्रै र्वालुकायन्त्रग पचेत् ॥ क्रमाग्निना सप्तदिनै. स्वाङ्गशीत समुद्धरेत् । इन्द्रगोपसमच्छाय सिन्दूर सर्वसिद्धिदम् ॥ गुञ्जैक सितया सर्पिर्मधुयुक्त निषेवितम् । पर वृष्यतम पुसां स्त्रीशत रमयेन्मुदा ॥ अभ्यासादिति निर्दिष्ट नाम्ना विजयसुन्दरम् । नृपाणा कौतुकार्थाय वैद्यजीवनहेतवे ॥" इति पाठोऽधस्तनग्रन्थयो र क यो, रसायनस, निहितोऽस्ति तत्र पारदादीना समभागत्व गन्धकस्य त्रिभागताऽस्ति, भावनायाञ्च किञ्चिद्विशेषोऽस्ति तत्र पूर्वस्मिन्नेव योगे त्रिगुणगन्धकप्रदान कृत्वा कुसुम्भरक्तकार्पाससपुष्पाऽञ्जलिकाह्रीवेररक्तकल्हारोशीरपद्मकेशराऽशोकाना रसैरधिका भावना प्रदाय एक एव रसः सम्पादनीय इत्यस्माक सम्मति ।

" पारदो दशभागश्च तत्समानश्च गन्धक । नवसारस्तदर्धं स्यात्कज्जलीं कारयेत्तत' ॥ वह्निधूर्त्तजटाकन्यारसेन परिभावयेत् । काचकूप्या विनि क्षिप्य दापयेत्खटिका मुखे ॥ मृत्कर्पटैस्त्रिभि र्लिप्त्वा रात्रौ यामचतुष्टयम । अग्नि प्रज्वालयेन्मन्द रसभस्म प्रजायते ॥" इत्याकारक पाठो वैद्यविलासयोगमहार्णवयोरुद्धृतोऽस्ति । योगमहार्णवे च **रसपर्पटिकेति** नाम्ना व्यवहारस्तु प्रमाददेव सञ्जात इति प्रतिभाति ॥ "रसगन्धकयो कृत्वा कज्जलीं तुल्यभागयो । नरसार समामिश्र्य किञ्चिज्जम्बीरवारिणा ॥ त्रिदिन मर्दयेत्तेन काचकूप्या निवेशयेत् । काचकूप्या अभावे तु वालुकायन्त्रग पचेत् ॥ समुद्धरेन्नालकस्थमिन्द्रगोपेन सन्निभम् ॥" इति रत्नाकरौषधयोगे पाठोऽस्ति ॥ " सूत क्षिप्त्वा समाशेन दिनानि त्रीणि मर्दयेत् । पृथक् पृथक् सम कृत्वा पारद गन्धक तथा ॥ नरसार धूमसार पट्टक याममात्रकम । निम्बूरसेन सम्मर्द्य काचकूप्या विनि क्षिपेत् ॥ मुखे पाषाणगुटिका दत्त्वा मृत्स्ना प्रलेपयेत् । सप्तभिर्मृत्तिकावस्त्रै' पृथक् संशोष्य वेष्टयेत् ॥ सच्छिद्राया मृद स्थाल्या काचकूपीं निवेशयेत् । पूरयेत्सिकतापूरैराग्लान्मतिमान्भिषक् ॥ निवेश्य चुल्ल्या दहन मन्द मध्य खर क्रमात् । प्रज्वाल्यार्कमितान्यामान् स्वाङ्गशीत समुद्धरेत् ॥ स्फोटयित्वाऽथ युक्त्या तामूर्द्ध्वलग्न वर्लि त्यजेत् । अथ स्थ रससिन्दूर सर्वरोगेषु योजयेत् ॥,, इति पाठो रत्नाकरौषधयोगे टोडरानन्दे चाऽस्ति ।

" पारदाच्च तृतीयाश गन्धं दत्त्वा तु मर्दयेत् । दशाशनवसारेण युत चोन्मत्तवारिणा ॥ खल्वे सम्मर्द्य तत्सर्वं काचकूप्या निवेशयेत् । गुरूक्तसम्प्रदायेन वालुकायन्त्रमध्यगम् ॥ पचेत्षोडशयामाश्च मन्दमध्यहठाग्निभि । सुपक्व शीतलो ग्राह्यो हरगौरी रसो भवेत् ॥" इति पाठो र स. क., र.म मा ,रसायनस , र.क , र त , र का., एषु पुस्तकेषु निहितोऽस्ति । तत्र र त पारदाच्चतुर्थांशगन्धक, अष्टमाशनरसार नियुज्य मातुलुङ्गभावनया सम्पादित । अन्य कश्चिद्विशेषोनाऽस्ति नाम च चतुर्थांशगन्धकजीर्णसिन्दूरमिति ।

" सूत पञ्चपल स्वदोषरहितस्तत्तुल्यभागो बलि–, द्वौ टङ्कौ नवसादरस्य तुवरीकर्षश्च सम्मर्दित. । कूप्या काचभुवि स्थितश्च सिकतायन्त्रे त्रिभि र्वासरै , पक्वो वह्निभिरुद्भवत्यरुणभा सिन्दूरनामा रस ॥" इति पाठ आ प्र , र म , व रा., भै सा , वै क , र (मा), र मु , नि. र , रसायनसं , वृ यो त , र त , वै चि (ल), यो र एषु पुस्तकेष्वस्ति । र. म , भै. सा. एतयो' सर्वेषा समभागत्व कृतम्, टङ्कणञ्च न दृश्यते इति विशेष । रसतरङ्गिण्या नरसार चतुर्थांश नियुज्य केचिद्रसान्तर वदन्तीत्यभिहितम् ॥ " कूपी सप्तमृदङ्कै परिवृता शुष्काऽथ गन्धेश्वरौ, तुल्यौ तौ नरसारपादकलितौ सम्मर्द्य तस्या न्यसेत् । तद्यन्त्रे सिकताख्यके तलबिले पक्त्वाऽर्कयाम हिम, भित्त्वा कुङ्कुमपिञ्जर रसवर भस्माऽऽददेद्वैद्यराट् ॥" इति पाठ आ प्र , व रा , र मु , नि र , रसायन स , र त , वै. चि (ल.), वै. चि. , र प्र., एषु पुस्तकेष्वस्ति । वैद्यचिन्तामणौ जम्बीररसेन भावना प्रदत्ता । रसप्रदीपे समभागेन नरसार नियुज्य तलभस्मेति नाम स्थापितम् तदज्ञानात् । स्फोटयेत्त्वाङ्गशीत तदूर्द्ध्वग गन्धक त्यजेत् । तलभस्मरसो योगवाही स्यात्सर्वरोगजिदिति श्लोके ऊर्द्ध्वग गन्धक त्यजेत्तलभस्म रसो ग्राह्य इत्यत्र तु गन्धकापेक्षया तलस्थत्व बोद्धव्य न तु कूप्यपेक्षया तलस्थत्वम् । कदाचिदीदृशमेव तलस्थत्वमभिप्रेतं चेत्तर्हि भवतु नाम रससिन्दूरादीना कूपीपक्वौषधाना सर्वेषां तलस्थत्वम्, परन्तु रसग्रन्थसङ्केतविप्लवभयान्नैतादृश तलस्थत्व स्वीकर्तुमुचितम् उपरिनिर्दिष्टपाठेषु भावनासु मूलद्रव्येषु च

यत्किञ्चिद्विशेषमादाय यत्रतत्र ग्रन्थेषु स्वतन्त्रतया पाठा प्रकल्पिता सन्ति परन्तु उपरिनिर्दिष्टरसेषु या निर्दिष्टा भावनास्तासा सर्वासामपि एकत्रप्रदानेनाऽपि क्षत्यभावादशितानसमयस्याऽप्यधिककालपर्यन्ताऽनुष्ठानेऽपि गुणवृद्धेरेव सत्त्वात्। तथा कृत्वा एकस्यैव रसस्य सम्पादनेन स्वल्पश्रमे विशेषगुणलाभात्तथैवाऽनुष्ठेयमित्यस्माक सम्मति ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ४–४ पल, नवसादर २ पल, अफीम १ पल, शुद्ध वछनाग और खड़ियामिट्टी आधा-आधापल, सोंठ–मिर्च और पीपल १–१ कर्ष लेकर वारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भांग, धतूरा, सोंठ, कुसुम्भ और लालकपासके फूल, लज्जालु अथवा हाथाजोड़ी, हाऊवेर, लालकमल, खस, पद्मकेसर और अशोक इन-प्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाएं देकर सुखाकर ७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें क्रम-वृद्धाग्निसे ७ दिनकी आंचदे । गन्धकजारणके वाद शीशीका मुंह वन्दकरदेनाचाहिये नहीं तो कुछ न मिलेगा, स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती शक्कर, घी और मधुकेसाथ सेवनकरनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै और वहुतसी स्त्रियोंकेसाथ रमणकरनेपरभी शुक्रस्खलित नहीं होताहै ॥१११॥

११२ रससिन्दूरम् (तृतीयम्)

भागो रसस्य त्रय एव भागा
गन्धस्य माषः पवनाशनस्य ।
सम्मर्द्य गाढं सकलं सुभाण्डे
तां कज्जलीं काचघटे निदध्यात् ॥ ५३० ॥
संरुद्ध्य मृत्कर्पटके घटीं तां
मुखे सचूर्णां खटिकाञ्च दत्त्वा ।
क्रमाग्निना त्रीणि दिनानि पक्त्वा
तां वालुकायन्त्रगतां ततः स्यात् ॥ ५३१ ॥
वन्धूकपुष्पारुणमीशजस्य
भस्म प्रयोज्यं सकलामयेषु ।
निजानुपानै मरणं जराञ्च
हन्त्यस्य वल्लः क्रमसेवनेन ॥ ५३२ ॥

र सं., नि र , र. क , रसायनसार , यो र., भै सा., र (मा), वै.द , र प्र , आ.प्र , र. प्र.सु , वै चि , र कौ , वै क , वै. चि (ल), रसायनसं , यो म., र.त., ना वि , र. मं , वृ यो त , सर्वरोगे ।

टि०—रसप्रकाशसुधाकरे मातुलुङ्गभावना प्रदाय काचघटे पाचन विहितम्, नाम च उदयभास्कर इति स्थापितम् । कुत्रचित् षड्गुण-गन्धक जारणे नियोजितम् । रसप्रदीपे एक वैद्यदर्पणे च त्रयोदश-प्रकारा चन्द्रोदयस्य नाम्ना संस्कृते प्राकृते च लिखिता पर ते न चन्द्रोदयस्य प्रकारा अपि तु रससिन्दूरनिरूपणप्रकारा , चन्द्रोदय-शब्दस्य स्वर्णघटितरससिन्दूर एव व्यवहारे प्रयोगात्, पारद संस्कर्तु ते प्रकारा प्रथमत शिशिक्षुणा विद्यार्थिना कृते उपकारकरा इति वोद्धव्यम् ।

"शुद्ध पारद युग्म शुद्ध गन्धञ्च तत्समम् । मत्स्याक्षीचित्रकद्रावैर्हंसपादीपुनर्नवै ॥ कुमारीकाकमाचीजै र्भावयित्वा पुन पुन । काच कूप्यां निनि क्षिप्य वालुकायन्त्रमध्यगम् ॥ क्रमाग्नि त्रिशता यामै सिन्दूर भवति ध्रुवम् । अनुपानविशेषेण सर्वरोगहर परम् ॥" इति वाहटे पाठोऽस्ति ॥ "शुद्ध रस पञ्चपलप्रमाण सुगन्धक पञ्चपलद्वयञ्च । शुद्धी-विष पञ्चपलप्रमाण नाग तथा शुद्धपलैकमेव ॥ कुमारिकाद्भि पुटित त्रिधैव ततोऽग्निमूलस्वरसैस्त्रिसप्त । शुष्क पुन. काचघटे न्यसेत्तत्क्रमाग्निना वासरपञ्चकञ्च ॥ पचेत्प्रयत्नात्सिकतास्ययन्त्रे वन्धूकपुष्पारुणम त्रिभ स्यात् । सेवेत गुञ्जैकमिहार्द्रकेण ज्वरादिपाण्डूदरकुष्ठमेहम् ॥ निजानुपानै ग्रहणीं निहन्ति रसामृतो वाडवतुल्यवीर्यं ।" इति रसेन्द्रकल्पद्रुमे पाठोऽस्ति ॥ "रसराजपलान्यष्टौ गन्धक द्विगुण तत । शुद्धनागस्य चाक्षाणि माक्षिक पलमेव च । सर्वकज्जलिका कृत्वा भावयेज्जलजद्रवै । वटाङ्कुरैस्तथा निम्बै सप्तकृत्वोऽथ भावयेत् ॥ वीरपुष्पी विश्वदेवावला-क्वाथैस्त्रिसप्तधा । सम्मर्द्य शुष्क तत्काचे सिकताया विपाचयेत् ॥ याम-द्वादशक यावत्सर्वरोगहरो रस ॥" इतिरसेन्द्रकल्पद्रुमे पाठोऽस्ति ॥ "विमलनागवरैकविभागिक हरजभागचतुष्टयमिश्रितम् । सततमेव विमृद्य शिलातले वलिवसाञ्च समा कुरु तद्द्विपक ॥ दिनमितञ्च सुविमृद्य च कन्यकास्वरम पेनकरेऽतिविशोषयेत् । तदनु सूतवरस्य तु कज्जली रुचि रकाचघटे विनिवेशय ॥ दिवसयुग्ममथ कृतवह्निना स च भवेदरुण. कमलच्छवि । सकलरोगविनाशनवह्निकृद् वलकर परमोऽपि हि कान्ति कृत् ॥ नयनरोगविनाशकरो भवेत्सकलकामुकविभ्रमकारक । स खलु कर्मविपाकजरोगहा विशदनागयुत खलु पारद ॥" इति र. प्र सु, र. क यो , वा , एषु ग्रन्थेषु पाठोऽस्ति, र क यो नाग सप्तममो नियोजित ॥

"एकभाग रस कुर्याद् द्विभाग हिङ्गुल तथा । त्रिभाग गन्धकञ्चैव रविवीज चतुर्गुणम् ॥ नागो विंशतिभागश्च चित्रकेसरमर्दितम् । काच कूप्या विनि क्षिप्य त्रिवार पाचित क्रमात् ॥ इन्द्रगोपसम वर्णमूर्द्धग रस-मुत्तमम् । तलस्थञ्च भवेद्भस्म राजवल्लभसञ्ज्ञकम् ॥" इति पाठो रत्नाकरौषधयोगवाहटयो दृश्यते । परन्तु नागताम्रयोरध स्थत्वेन सिन्दूरे कश्चि-द्विशेषाऽभावात् सोऽप्यत्रैवाऽन्तर्भावनीय । सिन्दूरपाके पारदे वुभुक्षुता सम्पादनमन्तरा कस्यचिदपि धातो प्रक्षेपे विशेषविशेषाऽनुदयात् । वुभुक्षितपारदसयोगेन रससम्पादनपक्षे नागवङ्गयोगस्य देहे निषिद्धत्वात् तत्प्रक्षेपएवाऽयोग्य । नागसयुक्तपाठास्तु देहलोहविवरणमकृत्वैव सङ्ग्रथिता इति प्रतीयते स्वतन्त्रतया भस्मीकृत्य संयोगकरणे तु नाऽस्ति प्रत्यवायस्तथाविधयोगानां सहस्रशो दृष्टचरत्वात् । सिन्दूरसम्पादने नागवङ्गरहिताऽन्यधातुसयोग कृत्वा पञ्चपवारं पारदस्योर्द्ध्वपातने कृते तल स्थधातूनामुत्तमा भूति र्भवत्यूर्द्धगपारदसिन्दूरञ्च विपुलकार्यकारी भवतीति चिकित्सकै र्न विस्मरणीयम् । एका क्रिया द्व्यर्थकरीति न्यायेन श्रमाल्पत्वञ्च प्रत्यक्षमेव । अत सर्वाऽधिकाऽशिद्रव्यसयुक्तसदृशपाठोपादने 'सर्वं पद हस्तिपदे निमग्न–', मिति न्यायेनाऽत्र नागयुक्तपाठा एकत्रैवाऽन्तर्भाविता इति विवुधैराकलनीयम् ॥

भाषा—शुद्धपारा १ कर्ष, शुद्धगन्धक ३ कर्ष, नाग १ माशा लेकर पहिलेनागको गलाकर पारेको मिलादे फिर गन्धक देकर नीलवर्णकज्जलीकर आतशीशीशीमें भरके पूर्ववत् वालुकायन्त्रमें रख गन्धकजारणकर ३ दिनकी अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसका रंग दुपहरियाके फूलकेसदृश होगा । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे सवरोगोंको दूरकर जरा और मरणसे रहित करताहै ॥ ११२ ॥

११३ रससिन्दूरम् (चतुर्थम्)

पलद्वयं शुद्धसूतं गन्धकञ्च तदर्धकम् ।
स्नुह्यर्कजरसेनैव भावना दिनसप्तकम् ॥ ५३३ ॥

सर्पस्य गरलेनैवं काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् ।
कूप्या दृढं मुखं रोध्यं धृत्वा सैकतयन्त्रके ॥ ५३४ ॥
यामषोडशकं वह्निं ज्वालयेत क्रमसंस्थितम् ।
कूपिकागलसम्बद्धं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ ५३५ ॥
अयं सूतवरः ख्यातो देवै विजयदायकः ।
गुञ्जार्द्धं रोगहृत्सर्वक्षुधार्तो जायते शिवः ॥ ५३६ ॥

नि. र.,।

टि०—अयमपि रस प्रथमरससिन्दूरेऽन्तर्भवितुमर्हति, परन्तु न तथा कृत सर्पगरलभावनयाऽस्य रसस्याऽतितीक्ष्णत्वात् । अतोऽस्य स्वतन्त्रतयैव पाठ स्थापित इति सुधीभि विमर्शनीयम् ।

भाषा—शुद्धपारा २ पल, शुद्धगन्धक १ पलकी नीलवर्ण कज्जलीकर थूहर और आकके दूधसे ७–७ रोज़ मर्दनकर सर्पके ज़हरसे भावना देकर सुखाकर प्रथमरससिन्दूरकी तरह १६ पहरकी क्रमवृद्ध अग्निदेकर पकानेसे यह रक्तवर्णरस तैयार होगा । इसमें से आधीआधीरत्तीकीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह तमाम रोगोंको नष्टकरताहै और इसके खानेसे अत्यन्तभूख जागृतहोतीहै ॥ ११३ ॥

११४ रससिन्दूरम् (पञ्चमम्)

गन्धकं सुदृढं स्थूलं निर्व्रणं जात्यमद्भुतम् ।
वर्तुलं छिद्रितं कृत्वा मध्ये शुद्धं रसं क्षिपेत् ॥ ५३७ ॥
उपरिष्टात्पुनर्गन्धं दत्त्वा कुर्याच्च मुद्रणम् ।
अयः शलाकया पश्चात्तप्तया सन्धिरोधनम् ॥ ५३८ ॥
सूत्रेण वेष्टयेद्गन्धं भिद्यते न यथाऽम्भसा ।
दोलासु स्वेदयेद्गन्धं वेदप्रहरमात्रया ॥ ५३९ ॥
रसं गन्धान्यपाषाणे पुनरेव निधापयेत् ।
दिनसप्ताऽवधि यावत्तावत्सोऽपि क्रमो भवेत् ॥५४०॥
एवं निष्पद्यते स्वच्छः पद्मरागमणिप्रभः ।
अद्भुतः सर्वकार्याणि वाञ्छितानि च साधयेत् ॥५४१॥
एतस्माज्जायते सूतभस्मकं नृपवल्लभम् ।
सर्वरोगहरं श्रीदं सन्मनःकामितप्रदम् ॥ ५४२ ॥
श्वेतं पीतं तथा रक्तं श्यामं कृष्णञ्च कर्बुरम् ।
जायते नाऽत्र सन्देह एवं वर्णक्रमेण वै ॥ ५४३ ॥
सर्वेषां चोत्तमं कृष्णं विज्ञातव्यं प्रयत्नतः ।
पीतगन्धकसंयुक्तं कुमारीरससंयुतम् ॥ ५४४ ॥
कृष्णवर्णं भवेद्रसम देवानामपि दुर्लभम् ।
निर्गुण्डीरससंयुक्तं चपलेन समन्वितम् ॥
रक्तवर्णं भवेत्सूतं वलीपलितनाशनम् ॥ ५४५ ॥

यो म ,-रसायने ।

भाषा—पीतवर्णगन्धकका गोल ढेला लेकर सभालकर वीचमें छिद्रकरे । उसमें शुद्धपारेको भरके गन्धककी डलीकी डाटदेकर लोहेकी गरमशलाकासे दोनोंकी सन्धि वन्दकरदे और कच्चेसूतसे लपेटकर गेंद जैसा वनाले जिसमें कि पानीसे गन्धक घुल न जाय । फिर पारदको रञ्जनकरनेवाली दिव्यौषधियोंका रसभरकर ४ पहर स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् दूसरे गन्धकके ढेलेमें पारेको वन्दकर ४ पहरकी आंचदे इसतरह ७ रोज़तक आचदेनेसे माणिक्यकेसदृश पारेका रङ्गहोजायगा । इसपारेसे तमाम अभीष्टकार्य सिद्धहोते हैं यह राजालोगोंके काममें लानेयोग्य होताहै । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ इसकी १–१ रत्ती देनेसे असाध्यसे असाध्य सवरोग निवृत्तहोते है और लक्ष्मीको देताहै । इसीतरह श्वेत, पीत, श्याम, कृष्ण, कर्बुर इन रङ्गोंको पैदाकरनेवाली दवाओंमेंसे जिसका रसभराजायगा वहीरङ्ग पारेका होगा । दैवसंयोगसे इन २ रङ्गोंका गन्धक भी मिलसके तो वहुत आसानी से काम होगा । सव रङ्गोंमेंसे कृष्णरङ्गका पारद उत्तमकाम करताहै । पीले गन्धकमें पारेको रखकर घीकुंवारके रससे काले रङ्गका पारद होगा यह देवताओंकोभी दुर्लभ है । निर्गुण्डीकेरसमें चपलयुक्त पारेको स्वेदनकरनेसे रक्तवर्णहोताहै । इसके खानेसे वलीपलितका नाशहोताहै ॥ ११४ ॥

११५ रससिन्दूरम् (षष्ठम्)

शुद्धं सूतं समं गन्धं तयोः कज्जलिकां कृताम् ।
महेन्द्रीरससम्पिष्टां सार्द्रां काचघटे न्यसेत् ॥ ५४६ ॥
पलाण्डुस्वरसं तत्र क्षिपेद्वै चूलिकापटुम् ।
रसात्पूर्वञ्च विधिना तद्घटं वालुकाख्यके ॥ ५४७ ॥
यन्त्रे सम्पाचयेद्यावत्प्रहरद्वादशं यथा ।
क्रमाग्निना ततः सम्यग्रसः स्यात्तलसंस्थितः ॥५४८॥
एवं वारत्रयं कुर्यादुत्तमोऽसौ भवेद्रसः ।
निर्गुण्डीस्वरसैरेवं सिद्धो भवति नाऽन्यथा ॥ ५४९ ॥

यो म , रसायनाऽधिकारे ।

भाषा—पारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर महरके रससे २–३ रोज़ मर्दनकर आतशीशीशीमें पारेकी वरावर नवसादर डालकर इसे गीलाही भरके ऊपरसे प्याजका रस भरदे । प्रथमरससिन्दूरकीतरह वालुकायन्त्रमें रख १२ पहरकी क्रमाग्निसे आच देनेसे यह तलस्थ भस्महोगी । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर पूर्वोक्तप्रकारसे मर्दनादि करके आचदे । ऐसे ३ वारकरनेसे यह उत्तम प्रकारका रस तैयार होगा । इसीतरह निर्गुण्डीके रससेभी तैयारहोताहै ॥ ११५ ॥

११६ रससिन्दूरम् (सप्तमम्)

सूतद्विगुणितं गन्धं सूतार्धसैन्धवं खल्वे ।
श्वेतजयन्त्या नीरैस्त्रिदिनं सम्मर्द्य गोलकं कृत्वा ५५०
शुष्के तस्मिन् क्षिप्त्वा मूषायां सन्धिमालिप्य ।
शुष्के च सन्धिलेपे मूषास्थं यावदेकतां याति ॥५५१॥
तावद्धठो किञ्चिद्धृत्वा वा भूधरे पक्त्वा ।
उपलभ्य गन्धकगन्धं क्षिपेज्जले तदिति तां मूषाम् ५५२
तस्मादुद्धृत्य तं रसं त्रिकण्टकरसेन भावितं भूयः ।
सर्वगदेषु नियुञ्ज्यात्सम्मूर्च्छितं तत्तदनुपानैः ५५३

र क , सर्वरोगेषु ।

भाषा—शुद्धपारेसे दूना गन्धक और आधा सैन्धव लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर सफेदजेंतीके स्वरससे ३ रोज़ मर्दनकर गोला-बनाय सुखाकर मूषामें रख सन्धिवन्दकर सुखाकर इतनी अग्नि देवे कि अन्दरका पदार्थ गलजाय अथवा भूधरयन्त्रकी अग्निदेवे जब गन्धकका गन्ध आनेलगे तब मूषाको निकालकर पानीमें बुझादे । शीतलहोनेपर मूषामेंसे निकालकर गोखरूके रससे ६–७ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह सब-रोगोंको दूरकरताहै ॥ ११६ ॥

११७ रससिन्दूरम् (अष्टमम्)

भागाश्चाऽष्टौ पारदस्य द्वादशैव वले मताः ।
तदर्धं तालकं प्रोक्तं तालकार्धा मनःशिला ॥ ५५४ ॥
शुद्धं ताम्रं शिलातुल्यं रसकं ताम्रतुल्यकम् ।
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य कुमारीदाडिमीद्रवैः ॥ ५५५ ॥
त्रिदिनं मर्दयेत्सम्यक् काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् ।
निश्छिद्रं वेष्टयेत्पश्चाद्वस्त्रखण्डैः समृत्तिकैः ॥ ५५६ ॥
शोषयित्वा क्षिपेद्भाण्डे वालुकासहिते भिषक् ।
त्रिदिनं पाचयेच्चुल्यां मृदुमध्योत्तमक्रमैः ॥ ५५७ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य सिन्दूरं रक्तवर्णकम् ।
सिद्धं भवति सिन्दूरं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ ५५८ ॥
सन्निपाते ज्वरे घोरे क्षयकासे तथैव च ।
विशेषाद्वातरक्तञ्च कुष्ठान्यष्टौ दशाऽपि च ॥ ५५९ ॥
उदराणि च सर्वाणि वातरोगान्विनाशयेत् ।
सतताऽभ्यासयोगेन वलीपलितनाशनम् ॥ ५६० ॥
गुञ्जाढ्यं प्रयुञ्जीत तत्तद्रोगानुपानकैः ।
नाशयिष्यति तत्सर्वं शिवेन परिभाषितम् ॥
महाविक्रमरसो नाम भिषगाश्चर्यकारकम् ॥ ५६१ ॥

र क., यो., ।

टि०—अयं योगः पञ्चमतालसिन्दूरेणाऽऽपाततः समानः प्रतीयते । परन्तु तत्र ताम्रखर्परयोरभावाद्भावनाद्रव्याणाञ्च विशेषत्वात्स्वतन्त्र एवाऽयं योगः । तन्मूलादयं निष्पादितश्चेत्तर्हि भवतु नाम तन्मूलकोऽयं योगः परन्तु साम्प्रतिकसङ्कलनया स्वतन्त्र एव प्रतिभाति ॥ रत्नाकरौषध-योग एव वीरविक्रमरसनाम्ना द्वितीयस्थानेऽयमेव रसो निहितोऽस्ति तत्र प्रमादादन्यत् किञ्चिदपि फलं न पश्यामः । "मृदुस्वर्णशिलातालसूत गन्धञ्च योजयेत् । इन्दुवेदाब्धिवृत्तश्चैव वसवो भानवस्तथा" इत्यादिना द्वितीयो वीरविक्रमो निष्पादितः । अत्र स्वर्णस्याऽधिकतया प्रक्षेपः, ताम्र-खर्परयोरभाव इति स्थूलदृष्ट्या विशेषः प्रतीयते परन्तु सूक्ष्मविचारे नाऽस्ति कश्चिद्विशेषः । ताम्रस्वर्णयोरनूर्ध्वगमनात्खर्परयोगस्य गुणवृद्धिकर-त्वात्सर्वेष्वपि रससिन्दूरेषु स्वर्णदानेन क्षत्यभावाच्च नाऽयं योगान्तरता-माप्तुमुचितः । एवं "निष्कैकञ्च सुवर्णस्य निगदितं निष्काष्टकं तालकं, निष्कद्वादशसम्मिता मणिशिला शुद्धञ्च सूतं पलम् । सम्यग्गन्धपलत्रयं सुनिहितं दाडिमिकापुष्पज–,द्रावैरेकदिनं विमर्द्य सुदृढे काचे घटे निक्षि-पेत् ॥ गाढाग्नौ तु दिनत्रयं स्वभिहितायन्त्रे क्षिप्त्वा पाचयेत्–,द्गुञ्जामात्रं सुवी-रविक्रमरसो देयानुपानान्तरम् ॥" इति तृतीयो वीरविक्रमरसः, अत्राऽपि भागस्वर्णप्रयोगाद्वा नाऽस्ति कश्चिद्विशेषः । भागविशेषेणाऽपि स्वकपोल-कल्पितः कोऽपि । एवं "भागानष्टौ पारदस्य चतुः पञ्च द्वादशक्रमात् । शिलातालकगन्धानां भागसङ्ख्या प्रकीर्तिता ॥ सुवर्णं भागमेकञ्च दाडि-मीपुष्पजद्रवै–"रिति चतुर्थो वीरविक्रमः । अत्र तु स्फुटैव सङ्ग्रहकारस्य ज्ञानशून्यता प्रतीयते । रसायनस, वृ यो. त एतयोर्ग्रन्थयोरप्ययमेव पाठो वीरविक्रमनाम्ना निहितोऽस्ति तत्राऽपि पूर्वनिर्दिष्टः पन्था आश्र-यणीय इति दिक् ।

भाषा—शुद्धपारा ८ भाग, शुद्धगन्धक १२ भा., शुद्धह-रिताल ६ भा., मैनसिल-ताम्र और खपरिया ३–३ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर घीकुंवार और अनारकेरसोंसे ३–३ रोज़ मर्दनकर सुखाकर प्रथम रससिन्दूरकीतरह आत-शीशीशीमें वन्दकर वालुकायन्त्रमें मृदु, मध्य और तीक्ष्ण इस-क्रमसे ३ रोज़की अग्निदेवे । इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा तत-द्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात, महाघोरज्वर, क्षयजकास, वातरक्त, १८ कुष्ठ, सम्पूर्णउदररोग, वातरोग इनसबको यह नष्टकरताहै । हमेशाके अभ्याससे वलीपलितादिकोंको नष्टकर दीर्घायुको करताहै । अनुपानविशेषसे अन्य भयङ्कररोगोंकोभी नष्टकरताहै ॥ ११७ ॥

११८ रससिन्दूरम् (नवमम्)

पारदस्य पलं ग्राह्यं शुद्धस्य विधिपूर्वकम् ।
पिष्टं वद्धाऽथ वस्त्रेण पूर्वं सम्यग्यथाक्रमम् ॥ ५६२ ॥
अधरोत्तरगन्धेन निक्षिपेत्सूपिकोदरे ।
श्वेतकुक्कुटरक्तेन टङ्कणक्षारवारिणा ॥ ५६३ ॥
लिप्त्वा वस्त्रं विशोष्याऽथ रुद्ध्वा कर्पटमृत्स्नया ।
वालुकापूर्णभाण्डे तु चुल्ल्यग्नौ पाचयेच्छनैः ॥५६४॥
यामानष्टौ जायते तत्सिन्दूराऽरुणसन्निभम् ।
स्वाङ्गशीतलमादाय करण्डे विनिवेशयेत् ॥ ५६५ ॥

र.क यो., ।

टि०—यथाऽस्थितपाठाऽनुष्ठाने किञ्चिदपि नाऽवशिष्टं भविष्यति अतः श्रमसाफल्यं यथा भवेत्तथा नियोगः कृतोऽस्ति इति विद्वद्भिर्हृद्याक-लनीयम् ॥

भाषा—एकपल शुद्धपारा लेकर अरणी अथवा तिपतियाके रसमें २–३ रोज घोटकर गोला वनाय मुर्गेके अण्डेमें रख दूसरे अण्डेकी खोलसे ढककर गुड़ और सुहागेसे सन्धिवन्दकर १–२ कपड़मिट्टी गुड़सुहागेहीकी करदे। फिर पारेसे चतुर्गुणगन्धक लेकर वारीकपीस शरावमें आधा विछाय ऊपर अण्डेको रख ऊपरसे आधे गन्धकसे ढककर शरावसम्पुटमें वन्दकर अण्डेकी-सफेदी, सुहागा और जल इनसे कपड़मिट्टीकर ऊपरसे मुल्तानी वगैरहसे २–३ कपड़मिट्टीकरदे । सूखनेपर वालुकायन्त्रमें वन्दकर ८ पहरकी अग्निदेकर स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरो-गोंको दूरकरताहै ॥ ११८ ॥

११९ रससिन्दूरम् (दशमम्)

अथ वक्ष्ये रसेन्द्रस्य सिन्दूरक्रममुत्तमम् ।
सूतं पलं समं गन्धं मर्दितं कज्जलीकृतम् ॥ ५६६ ॥
कुमार्याः स्वरसेनैव यामद्वयविमर्दनात् ।
शिलाहिङ्गुलमेघानां विमलाद्वितुलं क्रमात् ॥ ५६७ ॥

प्रत्येकं गन्धकाच्चैव वेदसङ्ख्यतुलां तथा ।
कुमारीस्वरसेनैव द्वियामं मर्दयेद्रसम् ॥ ५६८ ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य वस्त्रमृत्तिकया युतम् ।
वल्मीकमृत्तिकामध्ये कुक्कुटाण्डरसं क्षिपेत् ॥५६९॥
माषयूषसमायुक्तं मर्दयेत्कज्जलोपमम् ।
वस्त्रं संलिप्य तालानां पत्रमानदलान्वितम् ॥ ५७० ॥
सप्तवस्त्रैः समालिप्य पूर्वमृल्लवणान्वितम् ।
तालपत्रोच्छ्रयं कृत्वा कूपिकां लेपयेन्मृदा ॥ ५७१ ॥
सिन्दूरमारणे चैव रसकर्मणि शस्यते ।
तस्यां पूर्वरसं क्षिप्त्वा वटिकां वक्त्रतो न्यसेत्॥५७२॥
मृदा मृल्लवणैः सन्धिं वालुकायन्त्रके क्षिपेत् ।
क्रमाऽग्निनाऽर्कयामं तु सिन्दूरं भवति ध्रुवम् ॥५७३॥
षड्गुणे गन्धके जीर्णे रसो व्याधिहरो भवेत् ।
अथ सिन्दूरवर्णाढ्यं कारयिष्ये समासतः ॥ ५७४ ॥
सर्वरोगहरं नृणां वलीपलितनाशनम् ।
उपपातकसम्भूतकुष्ठादीनां विनाशनम् ॥
महासुखकरश्चैव देवानामपि दुर्लभम् ॥ ५७५ ॥

र क यो., रसायने ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग लेकर नील-वर्णकज्जलीकर २ पहर घीकुंवारकेरससे मर्दनकर मैनसिल, शिंगरिफ और धान्याभ्रक ४-४ भाग, रूपामाखी २ भाग लेकर प्रत्येकको क्रमसे मिलाकर कुमारीकेरससे २ पहरमर्दनकर सुखाकर फिरसे कज्जलीकर आतशीशीशीमें डालदे परन्तु दीमककी मिट्टी, मुर्गीके अण्डेकी सफेदी, उड़दका यूष मिलाकर मोमकेसदृश पीसकर कपड़ेपर लेपदेकर आतशीशीशीपर कपड़मिट्टीकरके सुखावे ऐसे ७ कपड़मिट्टी देकर सुखाईहुई आतशीशीशी होनीचाहिये। रससिन्दूर बनानेमें इसीतरह शीशीपर कपड़मिट्टी करनेसे बहुत मज़बूत शीशीतैयारहोतीहै टूटनेकी शङ्का नहीं रहती। फिर शीशीको वालुकायन्त्रमें चढाकर गन्धकजीर्ण होनेपर खड़ियामिट्टी अथवा पुरानी ईटकी डाटलगाकर पूर्वोक्त-मिट्टीमें सेंधानमक मिलाकर डाटकीसन्धि बन्दकरदे और इसीका कपड़ेपर लेपदेकर मुंहपर ७ कपड़मिट्टी देकर महादेवजैसा बनादे। सूखनेपर मन्द, मध्य और खर इसप्रकारसे १२ पहरकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर नीचे और ऊपरका तमामरस निकालकर पूर्वप्रमाणमें गन्धक डालकर दो अथवा चार पहरतक घीकुंवारकेरससे मर्दनकर सुखाकर पहिलेकीतरह १२ पहर पकावे। इसतरह सातशीशिया उतारकर रखछोड़े। इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतककीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह तमामरोगोंको नष्टकरताहै। प्रायश्चित्तकरके पथ्यपूर्वक इसकासेवनकरनेसे स्वभावत दु साध्य कुष्ठादिककाभी नाशहोताहै सातवींशीशीमें जो नीचेका भागहै उसे फेंकनहीं देना उसमें अभ्रक और रूपामाखीकी तैयारभस्ममिलेगी। इसकी ३-३ रत्तीकीमात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेसे श्वास, कास, षण्ढत्व प्रभृति नष्टहोतेहैं ११९

१२० रससिन्दूराऽनुपानानि

शुभेऽह्नि वल्लमात्रस्य सेवनात्सकलामयान् ।
जयेदाशु प्रयुक्तोऽयं विष्णुचक्रमिवाऽसुरान् ॥ ५७६ ॥
भूयो रोगविशेषेषु ह्यनुपानविधिं यथा ।
ज्वरेषु जीरकृष्णाभ्यां निर्गुण्ड्या सन्निपातके ॥५७७॥
मृद्वीकया सितायुक्तं रक्तपित्तेषु योजयेत् ।
पिप्पल्या मधुना वाऽपि श्वासकासेषु योजयेत्॥५७८॥
घृतेन राजयक्ष्माणमुष्णेषु शीतवारिणा ।
अरुचौ मातुलुङ्गेन लाजाचूर्णेन छर्दिषु ॥ ५७९ ॥
मदात्यये निम्बनीरैः सितायुक्तश्च दापयेत् ।
नारिकेलजलेनैव मूर्च्छां कल्याणकाह्वयैः ॥ ५८० ॥
अपस्मारे च सश्वासे भृङ्गीनीरेण योजयेत् ।
चतुःसमेन युक्तश्च ज्वरे च सन्निपातके ॥ ५८१ ॥
शुण्ठीजीरकजातीभिर्विसूच्याश्च विशेषतः ।
धान्यनागरनिर्यूहैरजीर्णे पर्वभेदके ॥ ५८२ ॥
चाङ्गेर्या ग्रहणीदोषे सात्म्ये भृष्टा हरीतकी ।
अथवा भृष्टशुण्ठ्या च तीक्ष्णैः क्षीणे च पीनसे॥५८३॥
वाकुचीचक्रबीजैश्च कुष्ठेषु खदिरेण वा ।
मांसयूषैश्च वातेषु तैले वा लशुनेन वा ॥ ५८४ ॥
आस्यास्फोटे चन्दनेन वातास्रे कोकिलाक्षजैः ।
दन्तधावनसारेण दन्तरोगे विशेषतः ॥ ५८५ ॥
ऐलेयेन विबन्धेषु हिध्माऽऽध्माने कुलत्थजैः ।
कासघ्नाऽऽर्द्रकषायेण क्षयरोगो विनश्यति ॥ ५८६ ॥
कदलीक्षुरसेनैव शुक्रवृद्धिः प्रजायते ।
मेधावृद्धिर्बलं पुंसां कान्तिपुष्टिविवर्धनम् ॥ ५८७ ॥
आयुःप्रवर्धनश्चैव वलीपलितनाशनम् ।
सतताऽभ्यासयोगेन जीवेद्वर्षशतं नरः ॥
मधुराहारयुक्तस्य देहसिद्धिकरं परम् ॥ ५८८ ॥

र. क यो ।

टि०—"हृद्रोगरक्तोदरनुच वह्न क्षौद्रार्जुनत्वग्मयुग्मेन्द्र । विपाणिकाक्षीरयुतश्च पथ्य मुद्गौदन वा घृतवर्जितश्च ॥" इति रसाऽवतारे दृश्यते ॥

भाषा—अनुकूलचन्द्रनक्षत्रादिकोंमें ३-३ रत्तीके प्रयोगकरनेसे स्वर्णसिन्दूर किंवा रससिन्दूर समस्तरोगोंको इसतरह नष्टकरताहै जैसे विष्णुभगवानका चक्र असुरोंका नाशकरता है। विशेषरोगोंमें अधोलिखितप्रकारसे अनुपान समझना। ज्वरोंमें जीरा और पीपल, सन्निपातमें निर्गुण्डी, रक्तपित्तमें शक्करयुक्त द्राक्ष, श्वास और कासमें मधु तथा पीपल, राजयक्ष्ममें घृत, उष्णरोगोंमें ठण्ढाजल, अरुचिमें बिजोरा, वमनमें लाजचूर्ण, मदात्ययमें नीमकाजल अथवा शक्कर, मूर्च्छामें नारियलका जल अथवा पित्तपापड़ा या कल्याणघृत, श्वास और अपस्मारमें भंगरा, ज्वर और सन्निपातोंमें औचिती देखकर चतु समचूर्णकेसाथ देना। (हरड़, लौंग, सैन्धव, अजवाइन (१) चन्दन, अगर, कस्तूरी और केशर (२) जायफल, लवङ्ग,

जीरा, सुहागा (३) ये चतु सम कहलाते है) । हैज़ेमें सोंठ, जीरा, जावित्री; अजीर्ण और पर्वभेदमें धनियां तथा सोंठका क्काथ, ग्रहणीमें तिपतिया अथवा भुनीहर्रे अथवा भुनीसोंठ, पीनसमें कालीमिर्चे, कुष्ठोमें वाकुची और पवाडकेवीज अथवा खैरका क्काथ, वातव्याधियोंमें मासरस, तैल अथवा लशुन, मुखपाकमें सफेदचन्दन, वातरक्तमें तालमखाना, दन्तरोगोंमें दन्तधावनवृक्षोंका रस, विवन्धोंमें एलवा, हिचकी और आध्मानमें कुलथीकाक्काथ, क्षयरोगमें कसोंजी और अदरखका स्वरस, शुक्रक्षयमें केला और ईखका रस, इसतरह यथौचिति रोग और रोगीकी अवस्था देखकर अनुपानोंको करनेसे यह तमामरोगोको दूरकरताहै । अर्जुनकी छालकेरस और मधुके-साथ रससिन्दूरको ३–३ रत्ती देनेसे हृद्रोग, रक्तश्रुति और उदर-रोग नष्टहोतेहै । मेंढासींगीयुक्त दूधकेसाथ पथ्यदेना अथवा मूगकीदाल और भात देना, घी विलकुल न देना ॥ १२० ॥

१२१ रससिन्दूरवटी

रससिन्दूरटङ्कैकं टङ्कैकं गन्धकस्य च ।
टङ्कणत्रिकटूनाञ्च टङ्ककञ्च प्रदापयेत् ॥ ५८९ ॥
रक्तिकाद्वितयं तुत्थं योजयेद्वैद्यसत्तमः ।
भृङ्गराजरसे भाव्यं वटीं कुर्याद्विचक्षणः ॥ ५९० ॥
आर्द्रकस्याऽनुपानेन प्रदेयं रक्तिकाद्वयम् ।
ऐकाहिकं द्व्याहिकं वा चातुर्थिकतृतीयकौ ॥
विषमञ्च त्रिदोषोत्थं हन्ति सत्यं न संशयः ॥ ५९१ ॥

र सु , विषमज्वरे ।

भाषा—रससिन्दूर, शुद्धगन्धक, भुनासुहागा और त्रिकटु ४–४ माशे, भुना तूतिया २ रत्ती लेकर १–२ दिन भंगरेके रससे मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली २–२ घण्टेके अन्तरसे समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे एकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक, त्रिदोषज विषमज्वर, इनको यह नष्टकरताहै ॥ १२१ ॥

१२२ रसादिगुटिका (प्रथमा)

रसवलिघनसारचन्दनानां
सनलदसेव्यपयोदजीवनानाम् ।
अपहरति गुटी मुखस्थितेयं
सकलसमुत्थितदाहमाशु वाऽति ॥५९२॥

वृ. यो त , रसायन स , वै. र , वै चि , र. सु , चि र. भ , नि. र , व. रा , यो र , दाहाऽधिकारे ।

टि०—अत्र रसशब्देन पारदो ग्राह्य स च भस्मरूप स्यात्तर्हि सर्वोत्तम , तदभावे रससिन्दूरादिरूपो मूर्च्छितो ग्राह्य , तदभावे विशुद्धो द्रतिरूप । वलिर्गन्धक , घनोऽभ्रक स च मृतरूप । सारो लोह, केचित्तु घनसारमित्यमेकपदता स्वीकृत्य कर्पूरमिति व्याख्यानयन्ति । चन्दन शुभ्र, नलदमुशीर, सेव्यत्र तदेव सूक्ष्मरूप कृष्णवर्ण वा, पयोदो मुस्ता, जीवनानि जीवनीयगणप्रोक्तानि औषधानि तान्यथा—काकोलीक्षीरकाकोलीजीवकर्षभकमुद्गपर्णीमाषपर्णीमेदामहामेदाच्छिन्नरुहाकर्कटश्रृङ्गीतुगाक्षीरीपद्मकप्रपौण्डरीकर्द्धिवृद्धिमृद्वीकाजीवन्त्यो मधुकञ्चेति ॥ काकोल्यादिरय पित्तशोणिताऽनिलनाशन. । जीवनो बृंहणो वृष्य· स्तन्यश्लेष्मकरस्तथा ॥ इति सुश्रुते सू. अ ३८।३५–३६ निर्दिष्टान्यष्टादशौषधानि । चरके तु “ जीवकर्षभकौ मेदा महामेदा काकोली क्षीरकाकोली मुद्गमाषपर्ण्यौजीवन्ती मधुकञ्चेति दशेमानि जीवनीयानि भवन्ति ” इति दशकमध्यपातित्वात् दशैव गृहीतानि । एषु यथालाभमौषधानि ग्रहीतव्यानि, सर्वेषा सूक्ष्मचूर्णं विधाय जीवनीयगणक्काथेन जलेन वा वटिका कृत्वा मुखे धारणीया इति तत्त्वम् । साम्प्रतिकवैद्यास्तु जीवनशब्देन केचिज्जल घृतमन्ये नियोजयन्ति, परन्तूपरिनिर्दिष्टसमग्रौषधै निष्पादिता चेद्वटी तर्हि अत्यन्तसीमाक्रान्त ज्वर दाह शीघ्रमेव ज्वरेण सह शमयति जीवनीयद्रव्याणामभावस्तर्हि च्छिन्नरुहाया मधुयष्ट्याश्चाऽवश्य योग कर्तव्य· वटिकास्तुपूर्वप्रकारेणैव वन्धनीया न तु घृतेन, सन्ततादिज्वरे घृतदानस्याऽनुचितत्वादिति दिक् ।

भाषा—पारदभस्म अथवा रससिन्दूर अथवा शुद्धपारद, जीवनीयगणक्काथमें निर्वापित कियाहुआ शुद्धगन्धक, जीवनीयगणकेयोगसे कीहुई अभ्रक और लोहभस्म (अभावमें चाहे जिस योगसे की हो पर सोमलप्रभृति तीक्ष्णवस्तुओंके योगसे निष्पादित न हो), सफेदचन्दन, मोटी–वारीक और काली खस (कालावाला गु०), नागरमोथा और यथालाभ जीवनीयगणकी औषधियां (यदि कोईभी न मिले तो गिलोय और मुलहठी अवश्य लेवें) लेकर सवका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर यथालाभ जीवनीयगणके क्काथसे १–२ रोज़ मर्दनकर वेरवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मुंहमें रखनेसे त्रिदोषजदाह और पिपासाको यह शान्तकरतीहै । रक्तपित्त और गर्मीसे जायमान श्वास और कासको समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे तत्काल नष्टकरतीहै । पारदभस्मके योगसे वनीहुई हो तो सर्वोपद्रवयुक्त क्षयरोगकी रामवाण औषधहै । इसमें घनसारशब्दसे वहुतसेलोग केवलकपूर डालकर कामचलातेहै और जीवनशब्दसे घी अथवा पानीका योगकरतेहैं। इसतरहकरना अच्छा नहीं क्योंकि जीवनीयगणका काम घृत अथवा जल नहीं करसकताहै घृतयोगसे वटी वनानेमें सावधिकज्वरोंमें उपद्रवहोनेका सम्भवहै ॥ १२२ ॥

१२३ रसादिगुटिका (द्वितीया)

रसरजतगुटी पटीयसीं
यो वदनसरोरुहमध्यगां दधाति ।
स जयति तृषितस्तृषं
भृशमवमिव त्रिमार्गगाम्भः ॥ ५९३ ॥

र कौ., वृ., यो त , यो. र , वै चि , नि. र , तृषायाम् ।

भाषा—शुद्ध पारा (जिसमेंकि अत्यन्तरगड़नेपरभी वस्त्रादिकमें कालिमा न आतीहो) और शुद्धचादीकाचूर्ण समभाग लेकर इकट्ठा मर्दनकर मूर्च्छितहोनेपर नीवूकारस डालकर ३–४ रोज़ मर्दनकरे । वीचवीचमें रसको कालाहोनेपर निकालदियाकरे फिर गोली वनाकर ४ तहकपड़ेमें रख नीवू और काञ्जीमें २–२ रोज़ स्वेदनकरनेसे यह कठिनहोजायगा इसे निकालकर रखछोड़े । पहिले गोली वनाते समय एकडोरा वीचमें डाल देना चाहिये जिसमें कि छिद्र हमेशा कायम रहे । ज्वरादि-

कोंकी गर्मीसे जिससमय अत्यन्त प्यासलगे और किसीसे शान्त न होती हो उससमय इसगोलीको मुंहमें रखनेको देनेसे बहुतशीघ्र प्यास चलीजातीहै । इसे अग्निस्थायीकरना हो तो रींठेके वल्कलमें डालकर तिपतियाकारस भरकर तिपतिया और वनगोभीके चतुर्गुणितकल्कमें बन्दकर इतनी आंचदेवे कि कल्कमात्रहीजले । ऐसे जबतक अग्निस्थायी न हो तबतक करताजाय । अग्निस्थायी होनेपर अधिकआंचलगनेसे गोलीका स्वरूप बिगड़नेका सम्भवहै । इसतरह अग्निस्थायी होनेकेबाद इसे दूधमें उबालकर पीनेसे शुक्रदोष निवृत्त होकर तमामधातुओंकी वृद्धिहोतीहै और मन्दाग्नि नष्टहोताहै ॥ १२३ ॥

१२४ रसादिगुटिका (तृतीया)

पारदस्तालको गन्धस्त्रयः शुद्धाः समाः स्मृताः ।
जातीफलं जातिकोषं भङ्गाबीजं लवङ्गकम् ॥ ५९४ ॥
यवानी तुत्थकं शुद्धं शुद्धं त्र्यूषं समं पृथक् ।
नागवल्लीदलरसै मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥ ५९५ ॥
अस्पहानिसोशनस्य नीरैरपि तथाविधम् ।
अष्टगुञ्जामिता कार्या गुटिका च भिषग्वरैः ॥ ५९६ ॥
प्रभाते चैव सायाह्ने वटी देया विशेषतः ।
मधुना नीरयुक्तेन गिलेत्तां वै वटीं शुभाम् ॥ ५९७ ॥
पक्षाघातं निहन्त्याशु रसादिगुटिका त्वियम् ।
चन्द्रटेन समाख्याता योगरत्नसमुच्चये ॥ ५९८ ॥

र. सु , वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और रसमाणिक्य, जायफल, जाविन्त्री, गांजेकेबीज, लौंग, अजवाइन, तुत्थभस्म, सोंठ, मिर्चे, पीपल सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारे, गन्धक और हरितालकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर पान और सोशन अस्पहानी (यूनानी) कीजड़केस्वरस अथवा क्वाथोंसे २–२ पहर मर्दनकर ८–८रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली सुबहशाम मधुकेशर्बतकेसाथ निगलनेसे यह पक्षाघातको नष्टकरतीहै ॥ १२४ ॥

१२५ रसादिचूर्णम् (पारदादिचूर्णम्)

रसगन्धककर्पूरैः शैलोशीरमरीचकैः ।
ससितैः क्रमवृद्धैश्च सूक्ष्मं चूर्णमहर्मुखे ॥ ५९९ ॥
त्रिगुञ्जाप्रमितं खादेत्पिबेत्पर्युषिताम्बु च ।
भृशं तृषं निहन्त्येवमाश्विनेयप्रकाशितम् ॥ ६०० ॥

र कौ , वृ यो त., नि र., व रा., र प्र , यो र., र. चं , र. सु , रसायनसं., र. का., र. क. ल., तृष्णायाम् । र चं., र सु., एतयो शैलोशीरमरीचकैरित्यस्य स्थाने शैलेयोशीरचित्रकै इति पद्यं दृश्यते । र. क. ल. तृष्णारिरस । र. चं., र सु., रसायनसं , र. का. एषु ग्रन्थेषु पारदादिचूर्णेति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और कपूर, छड़ीला, खस और मिर्चे येसब क्रमवृद्धभागसे लेकर बारीकचूर्णकर, पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ पहर मर्दनकर बराबरकी शक्करकेसाथ ३–३ रत्ती प्रातःकाललेकर बासीपानी पीनेसे अत्यन्तबढीहुई तृषाको यह नष्टकरताहै ॥ १२५ ॥

१२६ रसाऽभ्रकम्

भुवने विप्रगेहेषु पत्रिका देवकन्दली ।
पवित्रा सर्वदेवानां मस्तकादिमनोहरी ॥ ६०१ ॥
शुद्धसूतकमानीय सममभ्रेण मेलयेत् ।
तस्या रसं विनिक्षिप्य मर्दयेत्सूतमभ्रकम् ॥ ६०२ ॥
याममात्रेण तत्सर्वं मिलत्येकत्र निश्चितम् ।
पिण्डरूपमिदं सर्वं घृष्यते दिवसत्रयम् ॥ ६०३ ॥
काचकूप्ये विनिःक्षिप्य वालुकायन्त्रमध्यगम् ।
देवकन्दलयष्टीनां ज्वालयेद्याममात्रकम् ॥ ६०४ ॥
पश्चादपरकाष्ठानि ज्वालनीयानि यत्नतः ॥
द्वादशप्रहरस्यान्ते शीतीभूतं तदुद्धरेत् ॥ ६०५ ॥
रक्तिकात्रितयं दत्त्वा मधुना सह भक्षणे ॥
अत्यग्निं कुरुते दीप्तमतिपाकं करोति च ॥ ६०६ ॥
अक्षीणाङ्गश्च जायेत कल्पजीवी भवेन्नरः ॥
जराजर्जरदेहानां पलितानि विनाशयेत् ।
यामादपि भवेच्छ्रीमान्मतिमांश्च भवेद्ध्रुवम् ॥६०७॥

रसचि., रसायने ।

भाषा—शुद्ध पारा और अभ्रक समभागलेकर १–२ दिन शुष्कमर्दनकर देवकदलीके कन्दके रससे मर्दनकरनेसे १ पहरमें येसब मिलकर गोला जैसा बनजायगा पर इसको तीनरोज़तक उसीरसकेसाथ अखण्डमर्दनकरते रहना, अखीरमें यह चूर्णके रूपमें होजायगा । इसे सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई सफेद आतशीशीशीमें भरके बालुकायन्त्रमें रख देवकदलीके सूखे डण्ठलोंसे एकपहर अग्नि देकर फिर किसीभी सारिष्ठकाष्ठकी क्रमवृद्ध १२ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथ देनेसे यह जठराग्निको अत्यन्तप्रदीप्तकर अत्यधिकभोजनको पचाताहै । इसके निरन्तर सेवनकरनेसे वलीपलितोंकेसाथ बुढापा दूरहोकर सर्वाङ्गपरिपूर्ण होताहुआ दीर्घायुको प्राप्तहोजाताहै ॥ १२६ ॥

१२७ रसाऽभ्रगुग्गुलुः

कर्षद्वयं पारदस्य लौहं गन्धश्च तत्समम् ।
लोहगन्धसमश्चाऽभ्रं गुग्गुलुं कुडवद्वयम् ॥ ६०८ ॥
अमृताया रसप्रस्थे रसप्रस्थे फलत्रिकात् ।
सान्द्रीभूते रसे तस्मिन् क्षेपं दत्त्वा विचक्षणः ॥६०९॥
त्रिकटु त्रिफला दन्ती गुडूची चेन्द्रवारुणी ।
विडङ्गं नागपुष्पञ्च त्रिवृता च सुचूर्णितम् ॥ ६१० ॥
प्रत्येकं कर्षमादाय सर्वमेकत्र कारयेत् ।
भक्षयेत्कोलमात्रन्तु छिन्नाक्वाथाऽनुपानतः ॥ ६११ ॥
वातरक्तं महाघोरं स्फुटितं गलितञ्जयेत् ।
अष्टादशविधं कुष्ठं कृमिरोगाऽश्मरीं तथा ॥ ६१२ ॥
भगन्दरं गुदभ्रंशं श्वेतकुष्ठं सकामलम् ।
अपचीं गण्डमालाञ्च पामाकण्डूविचर्चिकाः ॥६१३॥

चर्मकीलं महादद्रुं नाशयेन्नाऽत्र संशयः ।
वातरक्तविनाशाय धन्वन्तरिकृतः पुरा ॥
रसाऽभ्रगुग्गुलुः ख्यातो वातरक्तेऽमृतोपमः ॥६१४॥
भै. र., वातरक्ते ।

भाषा—शुद्धपारा, लोहभस्म और शुद्धगन्धक २–२ कर्ष, अभ्रकभस्म ४ कर्ष, शुद्धगूगल ८ पल लेकर गिलोय और त्रिफलाके चतुर्भागावशिष्ट १–१ प्रस्थ क्वाथमें गूगल और अन्य-चीज़ोंको डालकर मन्दाग्निसे पकावे । चाशनीके सदृश होनेपर त्रिकटु, त्रिफला, दन्तीमूल, गिलोय, इन्द्रायणकीजड़, विडङ्ग, नागकेसर, निसोत, इनका चूर्ण १–१ कर्ष क्रमसे मिलाकर घोटे । एकजीवहोनेपर झरवेर वरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली गिलोयके क्वाथकेसाथ खानेसे तमाम वदनमें फूटकर गलितावस्थाको प्राप्तहुआ वातरक्त, अठारहकुष्ठ, क्रिमि, पथरी, भगन्दर, गुदभ्रंश, सफेदकुष्ठ, कामला, अपची, गण्डमाला, पामा, खुजली, विचर्चिका, मस्से, महादद्रु इनसवको यह नष्ट-करताहै इसके सेवनमें क्षारका त्यागकरना उचित है ॥ १२७॥

१२८ रसाऽभ्रगुटी

सहदेवी वला चैव सूर्यावर्तोऽथ मारिषः ।
अपामार्गोऽमृता चैव सम्यक् सम्पादयेद्भिषक् ६१५
एषां पलानि चत्वारि प्रत्येकं कुट्टयेत्ततः ।
अत ऊर्द्धञ्च तद्दत्त्वा मण्डूरं यत्पुरातनम् ॥ ६१६ ॥
गोमूत्रेण पचेत्तावद्यावद्गोमूत्रशोषणम् ।
तस्मादुद्धृत्य तच्चूर्णं कुर्यात्पलचतुष्टयम् ॥ ६१७ ॥
त्रिकटु त्रिफला मुस्तं गुडूची चित्रकं त्रिवृत् ।
दन्ती विडङ्गमेकैकं कर्षमेषान्तु चूर्णयेत् ॥ ६१८ ॥
पक्वपत्रीकृतस्याऽथ वज्रकाभ्रस्य यत्पलम् ।
वार्यन्नाऽम्भस्त्रिरात्रस्थं वारिपर्णीरसाप्लुतम् ॥६१९॥
आतपे शोषयेत्तीक्ष्णे दिनमेकं सुरक्षया ।
सूरणस्य रसैः पिष्ट्वा तत्र टङ्कणकस्य च ॥ ६२० ॥
दत्त्वाऽष्टौ मापकांस्तत्र पुटपाकेन पाचयेत् ।
मृन्मये सुदृढे पात्रे मृदुना गोमयाऽग्निना ॥ ६२१ ॥
रसाद्वादशमाषाश्च कर्षं गन्धकतः पृथक् ।
रसे मण्डूकपर्ण्याश्च मूर्च्छितौ कज्जलीकृतौ ॥ ६२२ ॥
घृतस्य मधुनश्चाऽपि पृथक् पलचतुष्टयम् ।
तत्सर्वमेकतः कृत्वा स्निग्धे भाण्डे निधापयेत् ॥६२३॥
ततोऽष्टौ माषकान् खादेदथवा द्वादशैव च ।
कर्षं वाऽपि तथा कुर्याद् बुद्ध्वा दोषवलावलम् ॥६२४॥
दुग्धञ्चापि पिवेद्रोगी वह्नौ मन्दत्वमागते ।
तप्तोदकानुपानञ्च सेवेत ग्रहणीगदे ॥
अजाक्षीराऽनुपानञ्च श्वासे कासे प्रयोजयेत् ॥६२५॥
व, र र, रसायने ।

भाषा—सहदेवी, खरेंटी, हुरहुर अथवा सूर्यमुखी, मर्सा, अपामार्ग, गिलोय इनप्रत्येकका स्वरस ४–४ पल लेकर १०० वर्षसे पुरानेमण्डूरका वारीकचूर्णकर पूर्वोक्तरसोंको डालकर लोहेकी खरलमें पीसे । मक्खनजैसा होनेपर १६ अथवा ८ गुने गोमूत्रमें पल ४ डालकर पकावे और वीच २ में चलाताजाय । गोमूत्र सूखजानेपर उतारकर त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोथा, गिलोय, चित्रकमूल, निशोत, दन्तीमूल और विडङ्ग १–१ कर्ष, धान्याभ्रककियाहुआ वज्राभ्रक १ पल लेकर भातडालकर रक्खेहुए अत्यन्तखट्टे पानी और सेवारकेरसमें भिगोभिगोकर कड़ीधूपमें १–१ रोजसुखावे । इसमें ८ माशे सुहागादेकर ज़ह-रीसूरणकेरसमे पीस गोलावनाय ज़हरीसूरणके अन्दर रखकर ६–७ कपड़मिट्टीकर सुखाकर जङ्गलीकण्डोंका हल्का पुटदे जिसमें कि सूरणकारस जलकर गोलेका रससूखजाय । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रक्खे । फिर शुद्धपारा १२ माशे, शुद्धगन्धक १ कर्ष लेकर नीलवर्णकज्जलीवनाय मण्डूकपर्णीकेरसमे १–२ रोज घोट कर कज्जलीवनाय पुराना घी और मधु ४–४ पल, कज्जली और पुटदियाहुआ मण्डूर सवको इकट्ठे मिलाय चिकनेवर्तनमें रखछोड़े । ७–८ रोजकेवाद इसमेंसे रोगी और रोगकावलावल देखकर ३ माशेसे १ तोलेतककी मात्राखिलाकर ऊपरसे दूधपिलानेसे मन्दाग्नि नष्टहोताहै । ग्रहणीमें गरमजलकेसाथ और श्वास, कासमें वकरीके दूधकेसाथ देवे ॥ १२८ ॥

१२९ रसाऽभ्रमण्डूरम्

गन्धकाम्वरसूतानां प्रत्येकं शुक्तिमानकम् ।
संशोध्य चूर्णितं कृत्वा मण्डूरं मुष्टिकद्वयम् ॥ ६२६ ॥
प्रसूतञ्च हरीतक्याः पाषाणजतुनः पिचून् ।
कर्षकं कान्तलोहस्य सर्वं रौद्रे विभावयेत् ॥ ६२७ ॥
भृङ्गराजरसप्रस्थे केशराजरसे तथा ।
निर्गुण्डीमानकन्दानामार्द्रकस्य रसेष्वपि ॥ ६२८ ॥
त्रिकटुत्रिफलाचव्यमुस्तकानां पृथक्पृथक् ।
कर्षंकर्षं क्षिपेच्चूर्णं मर्दयेन्मधुसर्पिषा ॥ ६२९ ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय मात्रया युक्तितः पुमान् ।
निहन्ति सर्वजं शोथं सर्वाङ्गैकाङ्गसंश्रयम् ॥ ६३० ॥
कासश्वासतृषादाहमोहच्छर्दियुतं तथा ।
अम्लपित्तं निहन्त्येव शूलमष्टविधञ्जयेत् ॥ ६३१ ॥
अग्निवृद्धिकरं वृष्यं हृद्यं वातानुलोमनम् ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च श्लेष्मकुष्ठाऽरुचिज्वरम् ॥
प्लीहगुल्मोदरं हन्ति ग्रहणीं सप्रवाहिकाम् ॥ ६३२ ॥
भै र., शोथाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, अभ्रकभस्म २–२ कर्ष, वारीक पिसाहुआ शुद्धमण्डूर और हर्रे २–२ पल, शिलाजतु ३ कर्ष, कान्तलोहभस्म १ कर्ष लेकर सवकी नीलवर्णकज्जलीकर भंगरा, कालाभंगरा, निर्गुण्डी, मानकन्द और अदरखके १–१ प्रस्थरसोंमें डालकर तीक्ष्णधूपमें सुखावे । फिर त्रिकटु, त्रिफला, चव्य, नागरमोथा इनप्रत्येकका १–१ कर्ष चूर्णडालकर अच्छीत-रह घोटकर कपड़छानकरले और मधु तथा घी अन्दाज़से मिला-कर मर्दनकर चिकनेवर्तनमें रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेसे ३ माशेतक सुवहमें खानेसे एकाङ्गज त्रिदोषजशोथ, कास, श्वास,

तृषा, दाह, मोह, वमन, अम्लपित्त, आठप्रकारका शूल, मन्दाग्नि, वातुक्षय, हृद्रोग, उदावर्त, कामला, पाण्डु, श्लेष्मकुष्ठ, अरुचि, ज्वर, प्लीह, गुल्म, उदररोग, ग्रहणी, प्रवाहिका इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १२९ ॥

१३० रसामृतरसः (प्रथमः)

रसस्य द्विगुणं गन्धं माक्षिकञ्च शिलाजतु ।
गुडूची चन्दनं द्राक्षां मधुपुष्पञ्च धान्यकम ॥ ६३३ ॥
कुटजस्य त्वचं बीजं धातकीं निम्बपत्रकम् ।
यष्टीमधुसमायुक्तं मधुशर्करयान्वितम् ॥ ६३४ ॥
विधिना मर्दयित्वा तु कर्षमात्रन्तु भक्षयेत् ।
धारोष्णपयसा युक्तं प्रातरेव समुत्थितः ॥ ६३५ ॥
पित्तं तथाऽम्लपित्तञ्च रक्तपित्तं विशेषतः ।
निहन्ति सर्वदोषञ्च ज्वरं सर्वं न संशयः ॥
रसामृतरसो नाम गहनानन्दभाषितः ॥ ६३६ ॥

र नं., र. क , र. सु , ध., र चं , रक्तपित्ते ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा , सोनामाखी, शिलाजीत, गिलोय, सफेदचन्दन, द्राक्ष, महुएकेफूल, धनिया, कुरैयाकीछाल और वीज, धावड़ीकेफूल, नीमकेपत्ते, मुलहठी १–१ भाग लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १–२ दिन घोटकर शिलाजीत वगैरहको एकजीव करदे फिर सबकी बराबर शक्कर मिलाकर मधुमें आधे आधे तोलेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ से २ गोलीतक प्रात.काल खाकर धारोष्ण दूध पीनेसे पित्त, अम्लपित्त, रक्त-पित्त, त्रिदोपजज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १३० ॥

१३१ रसामृतरसः (द्वितीयः)

त्रिकटु त्रिफला मुस्ता विडङ्गश्चित्रकं तथा ।
एषां सञ्चूर्णितानान्तु प्रत्येकन्तु पलं भवेत् ॥ ६३७ ॥
कर्षद्वयं गन्धकस्य तदर्धं पारदस्य च ।
विडालपदमात्रन्तु लिह्यात्तन्मधुसर्पिषा ॥ ६३८ ॥
शीतोदकं चानुपिवेत्क्रमाद्गव्यं पयस्तथा ।
अम्लपित्ताऽग्निमान्द्यञ्च परिणामरुजं तथा ॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च हन्यादेतद्रसायनम् ॥ ६३९ ॥

यो र., वृ यो. त , र कौ , र. क ल., नि. र , रसायनसं., टो., र. का., वै. चि , चि. क्र., अम्लपित्ते ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोथा, विडङ्ग और चित्रक-मूल १–१ पल, शुद्धगन्धक २ कर्ष और पारा १ कर्ष लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर सबकीबराबर शक्कर, और मधु मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे आधेतोलेसे एकतोलेतक खाकर ठंढापानी अथवा दूध पीवे तो इससे अम्लपित्त, मन्दाग्नि, परिणामशूल, कामला, पाण्डुरोग इनसबको यह नष्टकर आयुको वढ़ाताहै ॥ १३१ ॥

१३२ रसामृतरसः (तृतीयः)

मातुलुङ्गद्रवैः सूतं भावितं वासरावधि ।
गन्धकञ्च पलान्यष्टौ नागं तत्पादसंयुतम् ॥ ६४० ॥
एकीकृत्याऽथ सम्भाव्य हस्तिशुण्डीरसैस्तथा ।
धूमसारैस्त्र्यहं भाव्यं रामठेन त्र्यहं त्र्यहम् ॥ ६४१ ॥
शुष्कं काचघटे न्यस्य यामानष्टौ प्रदीपयेत् ।
सिकताख्येन यन्त्रेण वैद्यो बुद्धिविशारदः ॥ ६४२ ॥
रक्तिकाद्वितयं सेव्यं मदात्ययनिवृत्तये ।
मधुनाऽऽमलकै नित्यं राजार्हन्तु रसामृतम् ॥ ६४३ ॥

र. सु , र प्र., र क , मूर्च्छाऽधिकारे ।

भाषा—८ पल शुद्धपारेको एकरोज़ विजोरेकेरससे मर्दन-कर शुद्धगन्धक ८ पल और नागभस्म २ पल लेकर सबको इकट्ठे मर्दनकर हस्तिशुण्डी, गृहधूम, और हींगके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ दिन भावनाएं देकर सुखाकर आतशी-शीशीमें रख वालुकायन्त्रमें ८ पहरकी अग्निदेकर पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्ती मधु और आवलेकेचूर्णकेसाथ लेनेसे मदात्ययरोग दूर होताहै ।

१३३ रसायनवटी

क्षारं मल्लजमीशजं शुभतरं संशोध्य वस्त्रै घनैः,
कृत्वा पोट्टलिकां सुतन्तुखचितां तां काञ्जिके निम्बुजे ।
दोलायन्त्रगतां पचेच्च सलिले कूष्माण्डजे निर्मले,
नोचेत्सप्तपुटैं विमर्दितममुं तुर्येण गन्धेन च ॥ ६४४ ॥
तुर्येणैव सुटङ्कणेन विपचेन्निर्वातके खातके,
पश्चाच्छीतलमुद्धृतं शुभतरैश्छिन्नारसै मर्दितम् ।
अष्टाविंशतिवारकं दलरसैः श्रीद्रोणपुष्पीभवैः,
ताम्बूलीदलसम्भवैः शुभतरैस्तुर्येण सम्मेलयेत् ६४५
छायायां खदिरोत्थपत्रजनितैः श्रीकारवेल्ल्यारसै,-
रेवं विंशतिवारकं सुवटिकां सिद्धार्थतश्चाऽधिकाम् ।
खादेत्प्रागुदयाद् द्रवैर्दिनमनु श्लेष्मोत्थरोगे ज्वरे,
यक्ष्माणं रुधिरादिसम्भवयुतं रोगं तथाऽऽमादिजम्
अस्थित्वग्विहितं शिरोगतरुजं पादादिजातां रुजं,
विस्फोटादिरुजं रसायनवटी सा नाशयेन्निश्चितम् ।
श्रीधन्वन्तरिणेयमाशु रचिता देवाद्दता तत्क्षणात्,
खाद्या तत्करणैः सदा मतिमता राज्ञां सदा सम्मता ॥

र. प्र , श्लेष्मरोगे ।

भाषा—शोधनकियेहुए पारेको १०८ वार मोटेकपड़ेमें रगड़ २ कर छानले जिसमें कि उसकी तमामकालिमा कपड़ेपर आजाय फिर दूधमें शोधन कियाहुआसोमल और पारा ४–४ तोले लेकर एक जगह शुष्कमर्दनकर नीवूकारस अथवा काञ्जी थोड़ी २ डालकर इसतरह मर्दनकरे कि गोलीहोजाय फिर इस-गोलीको गाढे मलमलके टुकड़ेमें बाधकर दोलायन्त्र बनावे और काञ्जी, नीवू तथा सफेदकोंहळेके रसोंमें डालकर ४–४ पहर स्वेदनकरे परन्तु यह ध्यानरक्खे कि पोंटली द्रवोंसे ४ अङ्गुल

ऊंचीरहे और उफान खाकर द्रवभी उसको स्पर्श न करसके केवल वाष्पहीलगे। फिर इसगोलीसे चतुर्थांशगन्धक और सुहागा मिलाय पूर्ववत् एकदिन खरलकर शरावसम्पुटमें वन्दकर निर्वातस्थानमें एकवालिस्तका गढ़ा वनाकर सेरभर जङ्गली-कण्डोंके टुकड़ोंसे ढककर आचलगावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर गिलोयकेस्वरससे १ रोज़ मर्दनकर पूर्ववत् सम्पुटकर आंचदे। ऐसे २८ आंचें देकर पूर्ववत् चतुर्थांश गन्धक और सुहागा मिलाकर घीकुंवारकीकन्दलसे मर्दनकर पूर्ववत् २८ आचें दे फिर गूमा और पानकेरसोंसे मर्दनकर २८-२८ आचें दे। यहध्यानरहे कि दूसरे-द्रवमें जव मर्दनकरनाशुरूकरें उससमय प्रथमवार मूलद्रव्यसेचतुर्थांश गन्धक और सुहागा मिलालियाकरें फिर २७ वार वैसेही आंच देवें। तदनन्तर खैर और करेलेकेरससे २१-२१ दिन केवल-मर्दनकर कुछ सरसोंसेवड़ी गोलियें वनाकर छायाशुष्ककर रख-छोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे श्लेष्मरोग, ज्वर, राजयक्ष्म, रुधिरविकार, आमवात, अस्थि और त्वग्दोष, शिरोरोग, हस्तपादादिगतरोग, विस्फोटप्रभृति समस्तरोगोंको यह निश्चयरूपसे नष्टकरतीहै ॥ १३३ ॥

१३४ रसायनामृतलोहम्

त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडङ्गं जीरकद्वयम्।
यमानीद्वयभूनिम्बं त्रिवृद्दन्ती च निम्बकम् ॥ ६४८ ॥
सर्वेषां कार्षिकं भागं सैन्धवं कर्षमभ्रकम्।
खण्डं षोडशपलं प्रस्थञ्च त्रिफलाजलम् ॥ ६४९ ॥
जम्बीराणां रसं दद्यात्पलषोडशकं तथा।
पाच्यं सर्वं प्रयत्नेन लौहं दत्त्वा पलद्वयम् ॥ ६५० ॥
सिद्धे पाके पुनर्देयं घृतं पलचतुष्टयम्।
सर्वरोगेषु संयोज्यं महामृतरसायनम् ॥ ६५१ ॥
गुल्मं पञ्चविधं हन्ति यकृत्प्लीहोदराणि च।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शोथं जीर्णज्वरं तथा।
रोगान्सर्वान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥६५२॥

भै र, ध, गुल्मे।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोथा, विडङ्ग, दोनोंजीरे, दोनों अजवाइन, चिरायता, निसोत, दन्तीमूल, नीमकीछाल, सेंधानमक, अभ्रकभस्म, येसव १-१ कर्ष, शक्कर १६ पल, त्रिफलाकाकाढ़ा १ प्रस्थ, जंभीरीकारस १६ पल, लोहभस्म २ पल लेकर सवको इकट्ठे मिलाकर धीमीआंचसे पकावे। लड्डूकी चाशनीहोनेपर ४ पल पुराना घी डालकर उतारले। ६-७ दिन वीतजानेपर ३ मासेसे ६ मासेतक यथाऽग्निवल देखकर समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे ५ प्रकारके गुल्म, यकृत्, प्लीहा, उदररोग, कामला, पाण्डु, शोथ और जीर्णज्वरप्रभृति समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ १३४ ॥

१३५ रसेन्द्रगुटिका (वृहती) (प्रथमा)

कर्षं शुद्धरसेन्द्रस्य गन्धकस्याऽभ्रकस्य च।
ताम्रस्य हरितालस्य लौहस्य च विषस्य च ॥ ६५३ ॥
मनःशिलायाः क्षाराणां वीजस्य कनकस्य च।
मरिचस्य च सर्वेषां समं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ ६५४ ॥
जयन्ती चित्रकं माणं खण्डकर्णोऽथ मण्डुकी।
शक्राशनं भृङ्गराजं केशराजं तथाऽऽर्द्रकम् ॥ ६५५ ॥
निर्गुण्डीस्वरसेनाऽपि घस्रमात्रेण मर्दयेत्।
कलायपरिमाणान्तु वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ ६५६ ॥
आर्द्रकस्वरसेनैव पञ्चकासान् व्यपोहति।
हन्ति हिक्कां तथा श्वासं यक्ष्माणं सभगन्दरम् ॥६५७॥
अग्निमान्द्यारुचिं शोथमुदरं पाण्डुकामलाम्।
रसायनी च वृष्या च वलवर्णप्रसादनी ॥ ६५८ ॥
वृंहणं मधुरं स्निग्धं मत्स्यं मांसञ्च जाङ्गलम्।
घृतपक्वं सदा भक्ष्यं रूक्षं तीक्ष्णं विवर्जयेत् ॥ ६५९ ॥

र. सं, र चं, नि. र, ध, र र., भै. र., र सु., र चि, र. क. कासाऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक, ताम्र, हरिताल, लोह इनकीभस्में, शुद्धवछनाग और मैनसिल, सज्जी, सुहागा, यवक्षार धतूरेकेवीज और मरिच १-१ कर्ष लेकर सवका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर जेंती, चित्रक, मानकन्द, जङ्गलीसूरण, ब्राह्मी, भांग अथवा गाजा, भंगरा, कालाभंगरा, अदरख और निर्गुण्डी इनके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर मटरवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रससे देनेसे ५ प्रकारकेकास, हिचकी, श्वास, राजयक्ष्म, भगन्दर, मन्दाग्नि, अरुचि, शोथ, उदररोग, पाण्डु, कामला इनसवको नष्टकर धातु और वल तथा वर्णकी वृद्धिको करतीहै। धातुओंको वढ़ानेवाला मधुर और स्निग्ध भोजन, घीमें भुनीहुईमछलिया और जङ्गलीमास इनका भोजनकरे। तीक्ष्ण और रूक्षपदार्थोंका त्यागकरे ॥ १३५ ॥

१३६ रसेन्द्रगुटिका (द्वितीया)

माक्षिकञ्च शिखिग्रीवमभ्रकं तालकं तथा।
एतांस्तु मिलितान्सर्वान्भावयेदार्द्रकद्रवैः ॥ ६६० ॥
रक्तिद्वयप्रमाणान्तु कल्पयेद्गुटिकां भिषक्।
जीर्णान्ने भक्षयेदेकां क्षीरमांसरसाशनः ॥ ६६१ ॥
पञ्चकासं क्षयं श्वासं रक्तपित्तं विनाशयेत्।
पाण्डुक्रिमिज्वरहरी कृशानां पुष्टिवर्धनी ॥ ६६२ ॥
शुक्रवृद्धिकरी चैषा अम्लपित्तविनाशिनी।
वह्निसन्दीपनी श्रेष्ठा त्वरोचकविनाशिनी ॥ ६६३ ॥

र. सं, र चं, ध, र र, र सु, भै र, कासाऽधिकारे। भै. र, यक्ष्मरोगे।

भाषा—सोनामाखी, तूतिया, अभ्रक और हरिताल इनकीभस्में सव समभाग लेकर अदरखकेरससे १-२ रोज़ घोटकर २-२ रत्तीकीगोलियां वनाकर रखछोड़े। भोजनके पचजानेपर १-१ गोली देकर दूध और मासरस पिलावे तो ५ प्रकारकेकास, क्षय, श्वास, रक्तपित्त, पाण्डु, क्रिमि, ज्वर, कृशता, शुक्रक्षय, अम्लपित्त, मन्दाग्नि और अरुचि इनको यह नष्टकरतीहै १३६

१३७ रसेन्द्रगुटिका (तृतीया)

कर्षं शुद्धरसेन्द्रस्य स्वरसेन जयाऽऽर्द्रयोः ।
शिलायां खल्वयेत्तावद्यावत्पिण्डं घनं भवेत् ॥ ६६४ ॥
अम्भःकणाकाकमाचीवासाभि र्भावयेत्पुनः ।
सौगन्धिकमलै र्भृङ्गस्वरसेन सुभावितम् ॥ ६६५ ॥
चूर्णितं रससंयुक्तमजाक्षीरपलद्वये ।
खल्वितं घनपिण्डन्तु गुटिः स्विन्नकलायवत् ॥६६६॥
कृत्वाऽऽदौ शिवमभ्यर्च्य द्विजातीन्परितोष्य च ।
जीर्णान्नो भक्षयेदेकां क्षीरमांसरसाशनः ॥ ६६७ ॥
सर्वरूपं क्षयं कासं रक्तपित्तमरोचकम् ।
अपि वैद्यशतैस्त्यक्तमम्लपित्तं नियच्छति ॥ ६६८ ॥

भै. र , च. द , वैं. द , यो. म., टो , राजयक्ष्मणि ।

भाषा—एकतोले शुद्धपारेको भाग और अदरखकेरससे यहातक घोंट कि गोलीवंधनेलायकहोजाय । फिर जलपीपल, मकोय, अडूसा, पीलाकमल, भंगरा इनके रसोंमें १–१ दिन मर्दनकर २ पल वकरीकेदूधसे मर्दनकरे । गाढाहोनेपर फूलेहुए मटरकेवरावर गोलियां वनाकर रखछोड़े । भोजन पचजानेके वाद १–१ गोली दूध अथवा मासरसकेसाथ देनेसे सवप्रकारका क्षय, कास, रक्तपित्त, अरुचि और सैकड़ों वैद्योंसे छोड़ाहुआ अम्लपित्त, इनसवरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ १३७ ॥

१३८ रसेन्द्रगुटिका (चतुर्थी)

रसेन्द्रगन्धाश्मजतुप्रवाल-
लौहानि वैद्यः समभागकानि ।
रसेन्द्रपादप्रमितश्च हेम
विभाव्य निम्बाशनवह्नितोयैः ॥ ६६९ ॥
ततो वटी वल्लमिता विमर्द्य
विधाय बुद्धा बहुवारवारा ।
फलत्रिकक्काथजलेन वाऽपि
प्रातः प्रयुञ्ज्यात्प्रकराम्बुना वा ॥ ६७० ॥
रसेन्द्रवस्त्वास्यगदान्निहन्ति
वातामयान्मेहगणाञ्ज्वरांश्च ।
करोति वह्ने र्बलवीर्ययोश्च
वृद्धिं विशेषेण रसायनीयम् ॥ ६७१ ॥

भै. र., मुखरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और शिलाजीत, प्रवाल और लोह भस्म, सव समभाग लेकर पारेके चतुर्थांश सुवर्णभस्म मिलाकर सवकी नीलवर्णकज्जलीकर नीम, असन, चित्रककी जड़, इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज़मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली जंगलीलसोड़ा, त्रिफला अथवा अगर इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंकेसाथ लेनेसे वातरोग, प्रमेहगण, समस्तज्वर मन्दाग्नि, वलवीर्यहानि इनसवको दूरकर आयुको वढ़ातीहै १३८

१३९ रसेन्द्रचूडामणीरसः (वृहत्तालकेश्वरः) १

कूष्माण्डस्वरसे वराक्वथितके नीरे तथा निम्बुजे,
नीरे शुक्तिजचूर्णजे वटजटाक्काथे ततः काञ्जिके ।
छिन्नायाः स्वरसे रसे मुनिभवे पुन्नागजले स्वेदितं,
गुञ्जावल्गुजतैलकेन मिलितं स्वेद्यञ्च तालं ततः ६७२
एवं शुद्धतमं सकाञ्जिकभरैः खल्वे शुभे मर्दयेत्,
सेहुण्डार्कजदुग्धमेलनपरः शुष्कं रहः सप्तशः ।
कन्यामातुलशुद्धपत्रजरसै र्दुग्धैरजासम्भवै-,
स्तैलैः प्रागुदितै मनाक् समकृतं तच्चक्रिका निर्मिता ॥
मध्ये भस्म पलाशजं शुभतरे यन्त्रे सुमन्थानके,
धृत्वा तत्र च तां ततस्तदुपरि द्वात्रिंशयामं पचेत् ।
पालाशस्य हठाग्निना खदिरजे वैश्वानरैरन्वहं,
निर्धूमं सुपरीक्षितं च वलिना तुर्येण सूतेन च ६७४
पिष्टं खल्ववरे स्नुगादिसकलैस्तुर्येण वङ्गेन च,
सम्यक् सम्पुटयन्त्रके सुविधृतं तद्वालुकायन्त्रगम् ।
यामं द्वादशकं सुखं सुविपचेद्गुञ्जामितं दापयेत्,
तस्मात्तुर्यदिनात्परं दिनमनु ज्ञात्वा तथा वर्धयेत् ६७५
यावद्रक्तिचतुष्टयं न सहते जीर्णे गुडं भक्षयेत्,
द्वात्रिंशन्मरिचैः समं समशनं पथ्यं जलेनोदनम् ।
रोगे भीषणके सुपञ्चकृतिकः साधु भवेद्वक्षणे,
व्याध्याद्यैर्विहितं कफादिजनितं रोगं व्यधादिं हरेत् ॥
दद्रुं सर्वविधं सुमण्डलयुतं सुप्तिञ्च वातासृजं,
कुष्टाऽष्टादशहृद्रसायनमिदं खल्यापहृत्क्षुत्समम् ।
पथ्यं चाऽम्लविवर्जितं त्वलवणं रूक्षं मकुष्टं शुभ-,
माढक्याश्च कुलत्थकः सुचणको रोगान्तकालावधिम्

र. का , कुष्ठाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धतवकीहरितालको सफेदकोंहड़ा, त्रिफला, नीबू, सीपके चूनेका पानी, वटकी जटा, काञ्जी, गिलोय, अगस्त्य, शरपुङ्ख, सफेदगुञ्जा और वाकुचीकातैल इनप्रत्येकके यथासम्भव-द्रवोंसे १–१ दिन स्वेदनकर खरलमें वारीक कपड़छानचूर्णकर सेहुण्ड और आककेदूधसे ७–७ दिन मर्दनकर घीकुंवार और धतूरेकारस, वकरीकादूध तथा गुञ्जा और वाकुचीकातैल इन प्रत्येकसे १–१ दिन मर्दनकर टिकड़ीवनाय पलाशपञ्चाङ्गकी सफेदराखको छानकर एक मज़बूत हण्डीमें भरके वीचमें टिकड़ियोंको थोड़े २ अन्तरपर जमाय वीचमें अभ्रकके टुकड़े लगादे जिसमें कि एकसे दूसरी टिकड़ी मिल न जाय । ऊपरसे पलाशकीराख भरके थोड़ीसी दवादे फिर चूल्हेपर चढ़ाय पलाश, खैर और चित्रककी लकड़ियोंकी तेज आचसे ३२ पहर क्रमसे पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अग्निपर रखकर परीक्षाकरे । अगर निर्धूम मालूम हो तो इससे चतुर्थांश पारा और गन्धक लेकर नीलवर्णकज्जलीकर मिलावे और चतुर्थांश वङ्गभस्म मिलाकर सेहुण्डवग़ैरहद्रव्योंमें १–१ रोज़ मर्दनकर टिकड़िया वनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी लगाय वालुकायन्त्रमें रख

१२ पहरकी अग्नि देकर पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपान के साथ ४ रोज़तक देवे । पांचवेंरोजसे १ रत्ती मात्रा बढ़ावे फिर ४ दिनबाद १ रत्ती बढ़ावे । इसप्रकार ४ रत्तीतक अथवा जितनी सहन करसके उतनी-बढ़ावे पर ४ रत्तीसे अधिक न देवे । इसके ऊपर ३२ काली-मिर्च पुरानेगुड़में मिलाकर खिलावे । जलकेसाथ भात खानेको दे । अत्यन्तभीषण रोग हो तो वमन विरेचनादिपञ्चकर्मकरके समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे कफादिजनितरोग, दद्रु, मण्डल-कुष्ठ, सुप्ति, वातरक्त, अठारहप्रकारके कुष्ट, खल्ली (हाथपैरोंकी ऐंठन) इनसबरोगोंको यह नष्टकरताहै । इसमें पथ्य अम्ल और लवणको छोड़कर रूक्ष, मोठ, अरहर, कुलथी और चने देना जबतक कि रोग निवृत्त न होजाय ॥ १३९ ॥

१४० रसेन्द्रचूडामणीरसः (द्वितीयः)

सूतहेमभुजगाभ्रवङ्गकाःकान्तताप्यविमलासमाक्षिकाः
भागवृद्धिमिलिता विमर्दिता धूर्तपत्रविजयाभवै रसैः
सप्तसप्त चपलामृतवल्लीभार्गिकासुरलताजलतोयैः
वारिवाहमृतयष्टिकावरीवानरीभुजगदष्टिसम्भवैः ॥
अर्धभागमहिफेनकंन्यसेन्मर्दयेत्सुरसपुष्पसम्भवैः ।
चन्दनार्ककरहाटपिप्पलीश्रावणीद्वयसमुद्भवैरसैः ॥
कुङ्कुमेन च ततो विभावयेन्नाभिजद्रवयुतं विभावयेत्
सिद्धिमेति रसराडयं शुभः कामिनीमदविधूननःपरः
शर्करामधुयुतो द्विरक्तिकः स्तम्भकृत्त्रिभुवनेचरेत्ततः ।
संसेव्य सूतं नचरात्रिभोज्यं कुर्वीत पेयं पय एव केवलम्
तृतीययामे रससेवनन्तु
कृत्वा निशायाः प्रहरे व्यतीते ।
सेवेत कान्तां कमनीयगात्रां
घनस्तनीमुज्ज्वलचारुवस्त्राम् ॥
रत्युत्सुकां कातरलोलनेत्रां
विलोलहारावलिमादधानाम् ॥ ६८३ ॥
किं कामे तनुकामिनां मलयजे-
नाऽवश्यकेनाशु किम्,
किं चन्द्रेण परोपतापजनिना
पुंस्कोकिलेनाऽपि किम् ।
सहस्रशः सन्ति यदा तरुण्यो
मदालसाः पीनपयोधरा दृढाः ॥
तदा रसेन्द्रः परिषेवणीयो-
विकारकारी च भवेत्ततोऽन्यथा ॥ ६८४ ॥

र.र स., र चं , वाजीकरणे ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, नाग, अभ्रक, वङ्ग, कान्तलोह, कास्यमाक्षिक, रजतमाक्षिक और सुवर्णमाक्षिक येसब क्रमवृद्ध-भागसे लेकर धतूरा, भाग, पीपल, गिलोय, भारङ्गी, अमरबेल, नागरमोथा, वत्सनाग, मुलहठी, शतावरी, केवाच, सर्पाक्षी इनसेरस अथवा क्काथोंमें ७–७ रोज मर्दनकर समस्तपिण्डसे आधा शुद्ध अफीम डालकर तुलसीकीमञ्जरी, चन्दन, आक, अकलकरा, पीपल, दोनोंगोरखमुण्डी, कुङ्कुम और कस्तूरी इन-प्रत्येकके द्रवोंसे १–१ भावना देकर २–२ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ लेनेमे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै । इसको स्तम्भनार्थ लेना हो तो शामहोनेसे पहिले १ गोली दूधके साथ लेवे और भोजन न करे केवल दूध पीवे । एकपहर रात्रि जानेके बाद मनोभिलपित रत्युत्सुका स्त्रीकेसाथ सम्भोग करनेपर यथेष्ट स्तम्भन होता है । इसरसकेसेवनकरनेकेबाद कामोद्दीपक तमाम हावभावोंकी जुरुरत नहीं रहतीहै । इसरसकासेवन वहीकरे जिसके घरमें कामातुर बहु-तसीस्त्रिया मौजूदहों नहीं तो यह विकार पैदा करेगा ॥१४० ॥

१४१ रसेन्द्रनागरसः

नागं कपालमध्ये क्षिप्त्वा चाग्निं निधापयेत्क्रमशः ।
चिञ्चाकयचक्षारं स्वल्पं स्वल्पं विकीर्य कुन्तलेन ६८५
भागं पारदसीसं घृष्ट्वा घृष्ट्वा विचूर्णितं सम्यक् ।
तिलमानं जग्धि मधुना तरवटबीजेन मिश्रितं क्रमशः
पिडिकासहितविशेषां प्रमेहगणार्ति कुष्ठमनिलश्च ।
हन्त्यल्पदिनाभ्यासात्सुपथ्ययोगाद्रसेन्द्रनागोऽयम्

र चं , र र. स , र. सु , र को , र र कौ. प्रमेहे ।

टि०—अय प्रयोगो यथावस्थितो न सेवनीय , अपरिपक्वनागमयोगा-द्वायतावुपद्रवजनको भविष्यत्यतोऽस्मिन्नरणीस्वरस दत्वा चतुर्यामम‍र्दन विधाय कुक्कुटाण्डे भृत्वा पञ्चपमृत्तिकावस्त्रे वेष्टयित्वा शरावसम्पुटे निधाय वालुकायन्त्रे द्वित्रदिनानि पक्त्वा स्वाङ्गशीतलमस्यो परीक्षणीय । निरुत्थता यातश्चेन्निपिवर्णीयोऽन्यथा द्वित्राऽग्नयो ऽन्ये प्रदातव्या इति तत्त्व न विस्मरणीयम् ।

भाषा—शुद्धनागको मिट्टीकेठीकरेमें डालकर अग्निपर रक्खे गलजानेपर उसकी बराबरके शुद्धपारेको डालकर इमलीके पके फलोंके छिल्केका क्षार थोड़ा थोड़ा डालकर घोटताजाय । इस तरह ४ पहर घोटनेसे उसपारेकेसाथ नागकीभस्म होजायगी । इसमेंसे एकतिलभरमात्रा तुवरकके बीजोंकेसाथ सेवनकरनेसे पिडकासहितप्रमेह, कुष्ठ और वातरोगनष्टहोतेहै ॥ १४१ ॥

१४२ रसेन्द्रमङ्गलरसः

तालसत्त्वं मृतं ताम्रं मृतं लोहं मृतं रसम् ।
हतमभ्रं हतं तारं गन्धं तुत्थं मनःशिला ॥ ६८८ ॥
सौवीराञ्जनकासीसं नीली भल्लातकानि च ।
शिलाजत्वर्कमूलन्तु कदलीकन्दचित्रकम् ॥ ६८९ ॥
त्वचमङ्कोलजां कृष्णां कृष्णधत्तूरमूलकम् ।
आवल्गुजानि बीजानि गौरीमाध्वीफलानि च॥६९०॥
हेमाह्वां फेनमाहेयं फलिनी विषतिन्दुकम् ।
तेजिन्यो लोहकिट्टञ्च पुराणममृतञ्च तत् ॥ ६९१ ॥
त्वचञ्च मीनकाक्षस्य पुनरुक्तपलं पृथक् ।
तैलिन्यो वटकास्तासु सर्वमेकत्र चूर्णयेत ॥ ६९२ ॥
खल्वे निधाय दातव्या पुनरेपाञ्च भावनाः
ब्रह्मदण्डी शिखा पुङ्गा देवदाली च नीलिका ॥६९३॥

वाणशोणा नृपतरु र्निम्बसारो विभीतकः ।
करञ्जो भृङ्गराजश्च गायत्री तिन्तिडीफलम् ॥ ६९४ ॥
मलयूमूलमेतेषां तिस्रस्तिस्रस्तु भावनाः ।
दातव्या कुप्पिकां कृत्वा सम्यक् संशोष्य चातपे ६९५
भाण्डे तद्धारयेद्भाण्डं मुद्रितं चाथ कारयेत् ।
यामं मन्दाग्निना पक्वो पुटमध्ये ह्यसौ रसः ॥ ६९६ ॥
पुण्डरीकं निहन्त्येव नात्र कार्या विचारणा ।
द्विमासाभ्यन्तरे पुंसामपथ्यं न तु भोजयेत् ॥ ६९७ ॥
रोगाः सर्वे विलीयन्ते कुष्ठानि सकलानि च ।
भानुभक्तिप्रवृत्तानां गुरुभक्तिकृतां सदा ॥ ६९८ ॥
रसेन्द्रमङ्गलो नाम्ना रसोऽयं प्रकटीकृतः ।
अनुग्रहाय भक्तानां शिवेन करुणात्मना ॥ ६९९ ॥

रसायनसं , र. मं , र. का , कुष्ठाऽधिकारे ।

भाषा—हरितालसत्त्व, ताम्र, लोह, पारा, अभ्रक और चादी इनकीभस्में; शुद्धगन्धक, तूतिया, मैनसिल, सौवीराञ्जन, कसीस, नीलकीपत्ती, पकेहुए भिलावे और शिलाजीत, आककी जड़कीछाल, केलेकाकन्द, चित्रककीजड़, अङ्कोलकीछाल, पीपल, कालेधतूरेकीजड़, वाकुची, प्रियङ्गु और माधवीलताकेबीज, सत्यानाशी, अफीम, मालकागण, कुचिला, तरहतेजक, तेजवल, तुम्बुल, पुरानामण्डूर, सफेदकनेरकीजड़कीछाल २–२ पल, तिल, सफेदसरसों, राई, कुसुम्भ, अलसी ८–८ माशे लेकर सबका कपड़छान चूर्णकर १ पहर सूखा खरलकर ब्रह्मदण्डी, मयूरशिखा, शरपुङ्ख, वन्दाल, नील, लालकटसरैया, लालकपासकेफूल, अमिलतास, नीमकामद, वहेड़ा, करञ्ज, भंगरा, खैर, इमलीकेफल, कठूमरकीजड़ इनप्रत्येकके रसोंसे ३–३ भावनाएं देकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख मुंहवन्दकर एकपहर मन्दाग्निसे पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा उचितानुपानकेसाथ देनेसे दो महीनेमें यह पुण्डरीककुष्ठको नष्टकरताहै । कुष्ठादिसमस्तरोगोंकेलिये यह परमौषधहै । इसके सेवनकरनेवालेको सूर्य और गुरुकी सेवाकरनी उचितहै ॥ १४२ ॥

१४३ रसेन्द्ररसः (प्रथमः)

वङ्गं रसं ताम्रमयश्च भस्म
सर्वैः समानं गगनं विमर्द्य ।
गोक्षुररम्भाऽऽमलकीगवाक्षी-
रसैः पृथग्वासरकं रसेन्द्रः ॥ ७०० ॥
निष्कार्द्धमात्रो मधुना निपीतो
जयेत्प्रमेहं रुधिरस्रुतिञ्च ।
कूष्माण्डनीरं ससितञ्च पेयं
कूष्माण्डखण्डेन युतञ्च शाकम् ॥ ७०१ ॥

र., प्रमेहे ।

भाषा—वङ्ग, पारा, ताम्र और लोह इनकीभस्में १–१ भाग, अभ्रकभस्म सवकी बराबर लेकर गोखरू, केलेकाकन्द, आंवला, इन्द्रायण इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज़मर्दनकर २–२ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ देकर सफेदकोंहळेका रस, शक्करडालकर पिलानेसे प्रमेह और रुधिरस्रावको यह नष्टकरताहै । इसमें सफेदकोंहळेकाशाक देना पथ्यहै ॥ १४३ ॥

१४४ रसेन्द्ररसः (तृतीयः)

शुद्धं सूतं समश्चाऽभ्रं मृतताम्रं विषं समम् ।
गन्धकञ्च समं पिष्ट्वा सूर्यमूलकषायके ॥ ७०२ ॥
मूषान्ते वालुकायन्त्रे दिनैकं मन्दवह्निना ।
पाच्यं चूर्णीकृतं सूक्ष्मं माषं चैवाऽनुपानतः ॥ ७०३ ॥
खादेद्दोषज्वरं हन्ति सन्निपातनिकृन्तनः ।
रसेन्द्ररसनामाऽयं शम्भुना परिकीर्तितः ॥ ७०४ ॥

वै. चि., ज्वराऽधिकारे

भाषा—शुद्धपारा, वछनाग और गन्धक, अभ्रक और ताम्रभस्म येसव समभागलेकर नीलवर्ण कज्जलीकर आककीजड़कीछालकेकाढ़ेसे १ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय वज्रमूषामें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर वालुकायन्त्रमेंरख एकदिनकी मन्दाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१माशा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह दोषीवुखार और सन्निपातको नष्टकरताहै

१४५ रसेन्द्ररसः (चतुर्थः)

सूतो गन्धो गगनतपनौ द्व्यब्धिनागक्षमांशा,
निम्बव्यम्भःखलितमसकृत्सूर्यतापात्त्रिगुञ्जः ।
वातं गुल्मं ग्रहणिमुदरं कासशूलं ज्वरार्शः,
कुष्ठं पाण्डुं हरति झटिति स्वाऽनुपानाद्रसेन्द्रः ७०५

र शि , सर्वरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा २ भाग, शुद्धगन्धक ४ भा , अभ्रकभस्म ८ भा., ताम्रभस्म १ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर नीबू और चित्रककेरसोंसे ७–७ भावनाए देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे वायु, गुल्म, ग्रहणी, उदर, कास, शूल, ज्वर, ववासीर, कुष्ठ और पाण्डु इनको यह शीघ्र नष्टकरताहै ॥ १४५ ॥

१४६ रसेशरसः

सूतगन्धौ समौ मर्द्यौ धन्वयासरसैस्त्र्यहम् ।
ततो लोहाऽभ्रसंयुक्तौ चन्दनाम्बुविमर्दितौ ॥
सिद्धो रसेशो वल्लेको मूर्च्छां क्षौद्रकणायुतः ॥७०६॥

र , मूर्च्छायाम् ।

भाषा—शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर जवासके रससे ३ रोज़ मर्दनकर पारदके वरावर लोह और अभ्रककी भस्म मिलाकर चन्दनकेद्रवसे ३ रोज़मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधु और पीपलकेसाथ देनेसे यह मूर्च्छाको दूरकरताहै ॥ १४६ ॥

१४७ रसेश्वररसः (प्रथमः)

सूतं गन्धं गैरिकं तुल्यभागं मर्द्यं घस्रं कङ्गुतोयेन पश्चात्
क्षुद्रातोयैर्वासरैकं गुडूचीतोयैस्तावच्छृङ्गवेराम्बुना च

सप्ताहं कटुकारसेन सुरसानीरेण तावद्दिनं,
विश्वायाः स्वरसेन वासरयुगं धात्रीरसे मर्दितः।
सिद्धिं याति रसेश्वरो ससितयुक् सच्छृङ्गवेराम्बुना,
तापं हन्त्यचिरेण वल्लयुगलो मुद्गाम्बुभक्ताशिनाम् ७०८
र, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और गेरू समभाग लेकर मालकागनी, भटकटैया, गिलोय और अदरखके रसोंसे १–१ रोज मर्दनकर कुटकीके रससे ७ दिन, तुलसीके रससे १ दिन, सोंठ और आवलेके रसोंसे २–२ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्करमिलेहुए अदरखकेरसकेसाथ देनेसे ज्वर शीघ्र नष्टहोताहै। भूखलगनेपर मूंगकायूप और भातदेना॥ १४७॥

१४८ रसेश्वररसः (द्वितीयः)

सूतो गन्धकभागिको दिवसयुक् सम्मर्दितो भूशिवा,-
वार्भिः मृतदलाऽहिफेनसहितो विश्वाविषाक्षौद्रयुक्।
वालाश्रीफलधातकीगुडयुतो स्वीयाऽनुपानैरपि,
सिद्धः खल्वतिसारनामहरणः श्रीसूतनामाभिधः ७०९
र, अतिसारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्ण-कज्जलीकर भुईआवलेकेरससे एकदिन मर्दनकर पारेसे आधी अफीम मिलाकर १–२ दिन घोटकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली सोठ, अतीस और मधुकेसाथ अथवा सुगन्धवाला, वेलगिरी, धावड़ीकेफूल और गुड़केसाथ अथवा तत्तद्रोगहरानुपानोंकेसाथदेनेसे यह अतिसारको दूरकरताहै॥ १४८॥

१४९ रसेश्वररसः (तृतीयः)

रसोऽश्वगन्धा मुशली शतावरी
मुस्ता गुडूची मधुकर्कटी च।
गोक्षुरकं कोकिलवीजचूर्णं
केतक्यकन्दस्वरसे दिनैस्त्रिः॥ ७१०॥
त्रिवारभृङ्गेण च भावयेत्त-
द्गुञ्जाऽष्टकं दुग्धसितायुतश्च।
गोधूमपथ्यं निशि सर्वमेहे
रसेश्वरोऽयं स तु कामुकानाम्॥ ७११॥
रसायनस, प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—पारदभस्म, असगन्ध, मुशली, शतावर, नागरमोथा, गिलोयसत्त्व, चकोतरे की जड़, गोखरू, तालमखाना समभाग लेकर वारीक चूर्णकर केतकीकन्द और भंगराके रससे ३–३ रोज भावनाएं देकर १–१ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली शक्करकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको दूरकरताहै। इसमें रात्रिकेसमय गेहू खानेकोदेवे। यह कामियों-केलिये उत्तम वाजीकरणहै॥ १४९॥

१५० रसेश्वररसः (चतुर्थः)

गन्धत्रययुतं सूतं मारयेत्पुटयोगतः।
पचेत्तं चक्रयन्त्रे च गन्धकेन समन्वितम्॥ ७१२॥
विषं कलांशकं दत्त्वा दीपनौषधिभावितम्।
पित्तैश्चोपविषैर्भाव्यं वटी माषप्रमाणिका॥ ७१३॥
ख्यातो रसेश्वरः सूतः सन्निपातविनाशनः।
भिषग्भिश्च प्रदातव्यं शीतस्नानञ्च रोगिणे॥ ७१४॥
अगदः सर्पदष्टस्य मृतसञ्जीवनः परः।
क्रामणेन समायुक्तः सर्वव्याधिविनाशनः॥ ७१५॥

रससार., रसायने।

भाषा—एककर्षपारेमें गन्धक, हरिताल, और मैनसिल १–१ कर्षका वारीकचूर्ण थोड़ाथोड़ा डालकर मूर्च्छितकरे। कुछ वाकीरहनेपर वरावरका शुद्धगन्धक मिलाकर कज्जलीकर चक्रयन्त्रमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पारेसे १६ वा हिस्सा शुद्धवछनाग मिलाकर दीपन औषध, पित्त और उपविषोंके यथालाभस्वरस अथवा क्वाथोंकी भावनाएं देकर उड़द वरावर गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको दूरकरताहै। रसकी तीव्रताकेलिये ठंढेपानीसेस्नानकराना। सर्पदष्टको ३–३ घण्टेके अन्तरसे खिलाना और लेपकरना, नाक–आख और कानोंमें डालना। क्रामण औषधियोंकेसाथ देनेसे यह सव वीमारियोंको नष्टकरताहै॥ १५०॥

१५१ राजयक्ष्मकरिमत्तकेसरीरसः

वत्सनाभरसगन्धमौक्तिकं
चित्रकाऽऽर्द्रकरसेन पेषितम्।
निक्षिपेद्रविजसम्पुटे ततो
लेपितञ्च लवणाद्यमृत्स्नया॥ ७१६॥
पूर्ववच्च परिपाचितो भवे-
द्राजयक्ष्मकरिमत्तकेसरी।
त्र्यूषणार्द्रकरसैः सुभावितं
योजयेच्च सुकणैर्मधुप्लुतैः॥
शृङ्गवेरकणचूर्णितोऽथवा
मागधीमधुगुडूचिकान्वितः॥ ७१७॥
र टी, र प्र. सु., र चं, राजयक्ष्मणि।

टि०–र प्र सु, र च, एतयो र्यक्ष्महरनाम्ना पाठोऽस्ति तस्मिन् सर्वाण्येव वस्तूनि भावनाश्चाप्यनेन रसेन समाना सन्ति, केवल तस्मिन् रसे मुक्तास्थाने सुवर्णमस्ति इतिविशेषो दृश्यते। परन्त्वस्मिन् रसे सुवर्णमधिकतया नियुज्य द्वयो पाठयोरेकपाठ सम्पत्स्यते गुणवृद्धिरपि महती सम्पत्स्यते, अतस्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव करणीय.।

भाषा—शुद्धवछनाग, पारा और गन्धक, मोती और सुवर्णभस्म समभागलेकर सवकी नीलवर्णकज्जलीकर चित्रकमूल और अदरखकेरससे १–१ रोज मर्दनकर औषधके वरावरके ताम्रसम्पुटमें रखकर सन्धिवन्दकर वावीकीमिट्टी और नमकसे कपड़मिट्टीकर सुखाकर कपड़छनकीहुई सफेदराख ४–४ अङ्गुल ऊपर-नीचे देकर हंडीमेंरख चूल्हेपर एकपहर मन्दाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर त्रिकटु और अदरखकेरसकी १–१ दिन भावनादेकर पीपल और मधु अथवा अदरख और पीपल

अथवा पीपल, मधु और गिलोयकेसाथ देनेसे यह राजयक्ष्मको नष्टकरताहै ॥ १५१ ॥

१५२ राजयक्ष्महररसः

रसेन्द्रशृङ्गिणौ तुल्यौ ग्राह्यौ तिन्दुकमानकौ ।
खल्वयेन्मतिमान्वैद्यो प्रहरै र्नागनेत्रकैः ॥ ७१८ ॥
ततस्तत्सिद्धिमायाति दद्यात्तण्डुलसम्मितम् ।
मधुना वा सिताऽऽज्येन लिह्याच्छोषस्य शान्तये ७१९
कुलित्थसूपभक्तश्च शोभाञ्जनदलोद्भवम् ।
शाकं त्वलाबुसम्भूतं मरिचं तुण्डिकेरिकम् ॥ ७२० ॥
द्विसप्ताहं भजेद्यक्ष्मी जीवितुं रोगमुक्तये ।
अनुभूतः प्रयोगोऽयं स्वयं प्रोक्तो पिनाकिना ॥७२१॥

रसायनसं., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारेकीभस्म अथवा रससिन्दूरादि मूर्छितपारा और शुद्ध वछनाग दोनों समभाग लेकर २८ पहरतक खरलकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ चावलकीमात्रा मधु अथवा घी, शक्कर के साथ देनेसे राजयक्ष्मी अच्छा होजाताहै इसमें कुलथीकीदाल और सहिजनकीफली, लौकी, कुंदरू, कालीमिर्चे इनका सेवन करावे । चौदहदिनकेसेवनसे रोगीको अद्भुत फायदा नज़र आनेलगताहै ॥ १५२ ॥

१५३ राजयक्ष्महरयोगः

नवनीतसितामधुप्रयुक्तो
वरखो हेमभवः क्षयं क्षिणोति ।
वितथःप्रभवेदयं प्रयोगो
यदि तन्मे शपथःसदा शिवस्य ॥ ७२२ ॥

वै. मृ , रसायनसं , नि र , र. चं., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—सोनेकावर्क एकनग लेकर मक्खन, मिश्री और शहद उचितमात्रामें शामिलकर रोज़ाना एकवक्तखानेको देवे तो इससे क्षयनष्टहोजाताहै यहप्रयोग जिनको रक्तगिरताहो उनपर अच्छाकामकरताहै ॥ १५३ ॥

१५४ राजराजेश्वररसः (प्रथमः)

आतपे मर्दयेत्सूतं गन्धकं मृतताम्रकम् ।
सुहस्तमर्दितं तालं यावत्तत्र विलीयते ॥ ७२३ ॥
भृङ्गराजद्रवं दत्त्वा दिनमात्रं विमर्दयेत् ।
त्रिफला खादिरंसारममृता बाकुचीफलम् ॥ ७२४ ॥
प्रत्येकं सूततुल्यं स्याच्चूर्णीकृत्य विमिश्रयेत् ।
मध्वाज्याभ्यां लौहपात्रे कर्षं भक्षयेत्सदा ॥ ७२५ ॥
दद्रुकिटिभकुष्ठानि मण्डलानि विनाशयेत् ।
द्विगुञ्जेन निहन्त्याशु राजराजेश्वरो रसः ॥ ७२६ ॥

र स , र. सु., र चि , यो. म , र. क., कुष्ठरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, रसमाणिक्य अथवा शुद्धहरिताल सब समभागलेकर धूपमें बैठकर नीलवर्णकज्जलीकर भंगरेकेरससे एकरोज़मर्दनकर त्रिफला, खैरसार, गिलोय, वाकुची ये प्रत्येक पारेकेवरावरलेकर वारीकचूर्णकर सबको इकट्ठे मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे २ रत्तीकीमात्रा १–१ तोले मधु और घीकेसाथ मिलाकर खानेमे दाद, किटिभ और मण्डलकुष्ठ नष्टहोते है ॥ १५४ ॥

१५५ राजराजेश्वररसः (द्वितीयः)

हरवीर्यं शुद्धगन्धं तालकं माक्षिकं समम् ।
त्रिक्षारं दीप्यकं हिङ्गु मर्दितं दिवसद्वयम् ॥ ७२७ ॥
चित्रमूलकषायेण वालुकायन्त्रके पचेत् ।
द्वियामान्ते समुद्धृत्य मत्स्यपित्तेन भावयेत् ॥ ७२८ ॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ।
अनुपानविशेषेण राजराजेश्वरो रसः ॥ ७२९ ॥

वै चि., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और सोनामाखी; सज्जी, सुहागा, यवक्षार, अजवाइन, भुनीहींग सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर चित्रकमूलके काढ़ेसे दोरोजमर्दनकर २–३ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख दोपहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर यथालाभ मछलीके पित्तकी भावनादेकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सवप्रकारके सन्निपातोंको नष्टकरताहै ॥ १५५ ॥

१५६ राजलीलागुटिका

शिलायाः शुद्धसूतस्य चत्वारिंशच्च रक्तिकाः ।
कणाख्यगुग्गुलोस्तद्धत्तथा सौगन्धिकस्य च ॥७३०॥
रक्तिकाविंशतिर्ग्राह्या जलकामाजयात्वचाम् ।
अशीति दन्तिवीजस्य पयसा शोधितस्य च ॥७३१॥
चूर्णयित्वा ततः सर्वं फलक्वाथेन मर्दयेत् ।
निकुम्भस्य कषायेण कृमिघ्नस्वरसेन च ॥ ७३२ ॥
कारयेद्राजलीलाख्याः षट्त्रिंशद्गुटिकास्ततः ।
एकैकां शीलयेत्प्रातः शीतेनाऽऽलोड्य वारिणा॥७३३॥
वाताद्विमुच्यते प्राणी यावदुष्णं न शीलयेत् ।
पाण्डुज्वरार्शःशोफादीन्नियच्छति गदान्हठात्॥७३४॥

र. मृ , पाण्ड्वधिकारे ।

भाषा—शुद्ध मैनसिल, पारा, कणागूगल और गन्धक ४०–४० रत्ती, अन्धाहूली, भाग और तज २०–२० रत्ती, दूधसे शोधाहुआजमालगोटा ८० रत्ती लेकर सवका वारीकचुर्णकर मैनसिल, पारा और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय त्रिफला, दन्तीमूल और विडङ्ग इनके स्वरस अथवा काढेसे एकदिन घोटकर ३६ गोलिया वनावे इनमेंसे १–१ गोली सुवहमें ठंढे पानी के साथ सेवनकरे । इससे दस्तहोंगे, जवतक ठंढापानी पीतारहेगा तवतक दस्तहोवेंगे और गरमपानीपीनेसे वन्द होजायगे । इसके सेवनसे पाण्डु, ज्वर, ववासीर, और शोथ प्रभृति सवरोग नष्ट होते हैं ॥ १५६ ॥

१५७ राजलीलारसः

अथाऽपरं प्रवक्ष्यामि जलोदरनिवृत्तये ।
गुरुशास्त्रोक्तमार्गेण यथाऽनुभवयोगतः ॥ ७३५ ॥

तोलकांश्चतुरः सूताच्छुद्धाद्गन्धकतस्तथा।
कणागुग्गुलुतस्तद्वत्क्षीरिण्याश्चतुरस्त्वथ ॥ ७३६ ॥
कङ्कुष्ठतश्च चतुरस्तित्तिरीफलतस्तथा।
देवदालीरसैः पूर्वं दन्तीक्वाथेन तत्तथा ॥ ७३७ ॥
त्रिदिनं त्रिदिनं मर्द्यस्त्रिवृताक्वाथतस्ततः।
भावनाश्च ततो देयाः पञ्चविंशतिसङ्ख्यया ॥ ७३८ ॥
एतैरेवौषधैः सूते वटीः पश्चात्प्रबन्धयेत्।
मरिचस्य प्रमाणेन छायायां शोषयेद्बुधः ॥ ७३९ ॥
एवं संसाध्य वटिका रोगिणे सम्प्रयोजयेत्।
आषाढपूर्वपक्षे च पाचनं सम्प्रदापयेत् ॥ ७४० ॥
सैन्धवं मणिमन्थाख्यं घृतेन सह पाययेत्।
दिनत्रयं प्रयत्नेन केतकीस्तनवारि च ॥ ७४१ ॥
मुद्गक्वाथो भवेत्पथ्ये विलेपी शालिजाऽथवा।
त्रिकटुत्रिफलाक्वाथमेकतः पाययेद्भिषक् ॥ ७४२ ॥
त्रिदिनं पूर्ववत्पथ्यं प्रयुञ्जीत विचक्षणः।
एवं संस्वेदितं पश्चाद्रेचयेत्तं रसेश्वरम् ॥ ७४३ ॥
शीतोदकेन वटिकामेकां दद्याच्च रोगिणे।
पलद्वयश्च पानीयं नाऽऽधिक्यं न च हीनता ॥७४४॥
पाययित्वा रसयुतं ताम्बूलं सम्प्रदापयेत्।
यावद्विरिच्यते जन्तुस्तावद्वारांश्च वारिपः ॥ ७४५ ॥
रेचनानि च तावन्ति न हीनान्यधिकानि वा।
मलाश्च प्रथमं यान्ति तत आमानि यान्त्यधः ॥७४६॥
यावच्छीतोपचारः स्यात्तावद्रेचो भवेद्ध्रुवम्।
आतपस्य च सेवायां विरेको विनिवर्तते ॥ ७४७ ॥
कराङ्घ्री तापयेदग्नौ स्तम्भनं तत्क्षणाद्भवेत्।
शाल्यन्नं गोघृतं पथ्यं क्षैरेयमथवा भवेत् ॥ ७४८ ॥
दुग्धौदनं वा भुञ्जीत तवराजेन संयुतम्।
एकवारं दिने देयं पथ्यं रात्रौ न दीयते ॥ ७४९ ॥
निशीथिन्यां प्रयुञ्जीत मधुना पिप्पली दश।
एवञ्च कार्तिकं यावत्क्रिया कार्या विचक्षणैः ॥ ७५० ॥
पाचनं शुक्लपक्षे स्यात्कृष्णपक्षे विरेचनम्।
एवं क्रियायां सिद्धायामुदरं विनिवर्तते ॥ ७५१ ॥
गुल्मप्लीहामवाताश्च पक्तिशूलं भगन्दरम्।
अर्शांसि ग्रहणीदोषानश्मरीं मूत्रकृच्छ्रकम् ॥ ७५२ ॥
निवर्तयेन्न सन्देहः पाक्षिकाष्टकयोगतः।
राजलीलाभिधो नाम रसः परमदुर्लभः ॥ ७५३ ॥
जलोदरादिशान्त्यर्थं सम्प्रदायात्प्रकाशितः।
दृष्टप्रभावः सृष्टोऽत्र लोकोपकृतिहेतवे ॥
देवीशास्त्रानुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ ७५४ ॥

रसालङ्कारे, उदराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, कणागूगल, सत्यानाशीकी जड़, रेवनचीनी, शुद्धजमालगोटा सब ४–४ तोले लेकर बन्दाल, दन्तीमूल और निशोतके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ रोज़ मर्दनकर तीनों भावना द्रव्योंके स्वरससे २५ भावनाए देकर मरिचप्रमाणगोलियें बनाकर रखछोड़े। इसरसका प्रयोग करना हो तो आषाढकृष्णपक्षमें ३ दिनतक घीमें मिलाकर १–१ तोला सीसानमक देवे ऊपर से केतकीकीजड़का पानी ४–४ तोले पिलावे। भूखलगनेपर मूगकायूप अथवा चावलकी काञ्जी देवे फिर तीनदिनतक त्रिकटु और त्रिफलाकाक्वाथ पिलावे, पथ्य पूर्ववत् देवे। इसतरह पाचनदेकर स्वेदनकराके रेचनदेवे। उसके लिये पूर्वोक्त १ गोली देकर २ पल ठढापानी पिलावे फिर १ गोलीपानमें रखकर देवे। इसकेलेनेसे पहिले मल फिर आम निकलताहै। जबतक शीतोपचार करतारहेगा तबतक दस्तहोते रहेंगे, धूपमें बैठने तथा गरमपानी पीनेसे विरेचन बन्द हो जायगा। यदि इससे बन्द न हो तो हाथपैर अग्निसे सेकने चाहियें। भूखलगनेपर गायकाघी, चावल अथवा खीर अथवा दूधचावल अथवा तीखुरकीखीर बनाकर देवे। दिनमें एकवार पथ्यदेनाचाहिये रात्रिमें नहीं। रात्रिमें १० पीपलकाचूर्ण मधुकेसाथदेवे। इसतरह जबतक कार्तिक न आवे तबतक क्रिया करे। शुक्लपक्षमें पाचन और कृष्णपक्षमें विरेचन देवे। इसतरह करनेसे उदररोग, गुल्म, प्लीहा, आमवात, पक्तिशूल, भगन्दर, बवासीर, ग्रहणी, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र इनसबको यह ८ पक्षमें निवृत्तकरताहै ॥ १५७ ॥

१५८ राजवटी (महदाद्या)

रसगन्धकमभ्रञ्च प्रत्येकं कर्षसम्मितम्।
वृद्धदारकवङ्गञ्च लौहं कर्षार्द्धकं क्षिपेत् ॥ ७५५ ॥
स्वर्णं ताम्रञ्च कर्पूरं प्रत्येकं कर्षपादिकम्।
शक्राशनं वरी चैव श्वेतसर्जलवङ्गकम् ॥ ७५६ ॥
कोकिलाक्षं विदारी च मुशली शुकशिम्बिकम्।
जातीफलं तथा कोषं बला नागबला तथा ॥ ७५७ ॥
माषद्वयेन संयुक्तस्तालमूल्या रसेन च।
पिष्ट्वा च वटिका कार्या चतुर्गुञ्जा प्रमाणतः ॥ ७५८ ॥
मधुना भक्षयेत्प्रात विषमज्वरशान्तये।
धातुस्थांश्च ज्वरान्सर्वान् हन्यादेव न संशयः ॥७५९॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम्।
ज्वरं नानाविधं हन्ति कासं श्वासं क्षयं तथा ॥७६०॥
बलपुष्टिकरं नित्यं कामिनीं रमयेत्सदा।
न च शुक्रं क्षयं याति न बलं ह्रासतां व्रजेत् ॥ ७६१ ॥
ऊर्द्ध्वगं श्लेष्मजं हन्ति सन्निपातं सुदारुणम्।
कामलां पाण्डुरोगञ्च प्रमेहं रक्तपित्तकम् ॥
महाराजवटी ख्याता राजयोग्या च सर्वदा ॥ ७६२ ॥

र स, र चं, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रकभस्म १–१ कर्ष, विधारा, वङ्ग और लोह आधा आधा कर्ष; सुवर्ण और ताम्रभस्म तथा कपूर ४–४ माशे, गाजा, शतावर, सफेदराल, लौंग, तालमखाना, विदारी, मुसली, बड़ीसेंम, जायफल, जावित्री, बला, गुलसिकरी, येसब २–२ माशेलेकर सबकाबारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर तालमूलीकेरसमें १–१

रोज़ घोटकर ४–४ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ खानेसे विषम, धातुस्थ, वातिक, पैत्तिक, सान्निपातिक इत्यादि समस्तज्वर, कास, श्वास, क्षय, कृशता, बलहानि, शुक्रनाश, ऊर्द्धगश्लेष्मरोग, दारुणसन्निपात, कामला, पाण्डु, प्रमेह, रक्तपित्त इननयको यह नष्टकरतीहै १५८

१५९. राजवल्लभरसः (प्रथमः)

रसगन्धौ पृथङ्निष्कौ निष्कमात्रः प्रदीपनः।
सार्द्धं पलं प्रदातव्यं चूलिकालवणं भिषक् ॥ ७६३ ॥
खल्वे सम्मर्दयेत्तत्तु शुष्कवस्त्रेण गालयेत्।
माषमात्रः प्रदातव्यो भुक्तमांसादिजारकः ॥
अजीर्णेषु त्रिदोषेषु देयोऽयं राजवल्लभः ॥ ७६४ ॥

र. मं., रसायनसं., र. चं., यो म., र. सु, र. चि., नि. र., भै. सा, ना वि, र का, र. सं, अजीर्णे। र सं. प्रदीपनरसेति नाम।

टि०—त्रैकेण नाक दत्तश्वेदशविदनाशामक।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और वछनाग ४–४ माशे, शुद्धनवसादर ६ कर्ष लेकर पारा–गन्धक और वछनागकी नीलवर्ण कज्जलीकर नवसादरको मिलाकर कपड़ेसे छानकर १–२ दिन शुष्कमर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा तकप्रभृति समयोचितानुपानकेसाथ लेनेसे यह मासादि गरिष्टपदार्थोंको तत्क्षण जीर्णकरताहै। अजीर्ण और त्रिदोषजन्यव्याधियोंमें यह अत्यन्त उपकारकहै ॥ १५९ ॥

१६० राजवल्लभरसः (तालकेश्वरः) (द्वितीयः)

पारदं मौक्तिकं वज्रं गगनं हेमनागकम्।
बलिवज्रश्च शुल्वश्च वैक्रान्तं तालकं शिला ॥ ७६५ ॥
अमृतं म्लेच्छलोहानि प्रवालं चन्द्रभूतिका।
समभागेन तत्खल्वे शुष्कं मर्द्यं दिनद्वयम् ॥ ७६६ ॥
कूष्माण्डकल्कतोयेन भावयेद्दिवसत्रयम्।
मार्कवस्वरसै र्भाव्यमाटरूषरसेन वा ॥ ७६७ ॥
भल्लाततैलेनाऽऽर्द्रेण गायत्रीपारिभद्रकैः।
छिन्नापद्मककर्चूरैर्यमानीवाकुचीभवैः ॥ ७६८ ॥
त्रिजातकैर्दमनकैः सहदेव्या पुनर्नवैः।
त्रिफलागोक्षुरक्वाथै र्भावयेच्च पृथक्पृथक् ॥ ७६९ ॥
पुटेत्तत्सम्पुटे पात्रे घटिका द्वादशावधि।
गर्तायां हस्तसञ्ज्ञायां पुनर्मर्द्यं दिनान्तकम् ॥ ७७० ॥
पश्चात्तत्राऽमृतं शुद्धं पलार्द्धञ्च विनिःक्षिपेत्।
जम्बीरनीरं निक्षिप्य मर्दयेत्तद्दिनद्वयम् ॥ ७७१ ॥
रसः सिद्धो भवेत्पूज्यो रससंस्कारकोविदैः।
तालकेश्वरविख्यातः सर्वकुष्ठविनाशनः ॥ ७७२ ॥
मण्डलं श्वेतदद्रूणि कण्डूमौदुम्बरं तथा।
श्यामत्वं निशि पित्तञ्च ग्रहणीं रक्तपित्तकम् ॥ ७७३ ॥
कण्ठरोधमुरोरोधं पाण्डुं गुल्मं महोदरम्।
रक्तदोषं सर्वशूलं ग्रहणीं सर्वजामपि ॥ ७७४ ॥
वल्लमात्रः प्रदातव्यो दोषाणामनुपानतः।
सर्षपा वाकुची कुष्ठमजाजी च हरीतकी ॥ ७७५ ॥
वराटी मरिचं शुभ्रं रजनीद्वयवालुकम्।
एतत्खल्वे विनिःक्षिप्य वस्तमूत्रेण योजयेत् ॥ ७७६ ॥
दिनत्रयं ततो ज्ञात्वा चूर्णं कृत्वा पुनस्ततः।
ग्रहण्यामतिसारे च वराटी जरणं जया ॥ ७७७ ॥
राजवल्लभविख्यातः पूज्यो गोप्यतमः सदा।
पथ्यं रोगानुसारं स्यात्सर्वकुष्ठकुलान्तकः ॥ ७७८ ॥

र. शं., कुष्ठे।

भाषा—शुद्ध पारा और मोती, वज्र, अभ्रक, सुवर्ण और नागभस्म, शुद्धगन्धक, हीरा, तावा, वैक्रान्त और हरितालभस्म, शुद्धमैनसिल, वछनाग और शिगरिफ, लोह, प्रवाल और चादीकीभस्म समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर सुखादोरोज़ मर्दनकर सफेदकोहळा, भंगरा, अडूस, भिलावेका तैल, अदरख, खैर, नीम, कचूर, पद्मकाठ, गिलोय, अजवाइन, वाकुची, त्रिजात, मरुवा, सहदेवी, पुनर्नवा, त्रिफला, गोखरु, इनप्रत्येककेद्रवोंसे १२–१२ घड़ीमर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर हाथभरके खड्डेमें कण्डोंकीआचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर दूसरे द्रवमें घोटकर आंचदे। इसतरह सवमें पुटदेनेकेवाद दो कर्ष शुद्धवछनागकावारीकचूर्ण मिलाय जंभीरीनीवूकेरससे दोरोज़ मर्दनकर ३–३ रत्तीकीगोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे। १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे मण्डल, श्वित्र, दद्रु, कण्डु, औदुम्वर, श्याम येसवकुष्ठ; रात्रिमें पित्तप्रकोप, सवप्रकारकीग्रहणी, रक्तपित्त, कण्ठ और छातीकाअवरोध, पाण्डु, गुल्म, जलोदर, रक्तदोष, समस्तशूल, येसवरोग नष्टहोतेहै। कुष्ठोंमें सफेदसरसों, वावची, कुठ, जीरा, हर्रे, पीलीकौड़ीकीभस्म, सफेदमिर्च, हल्दी, दारुहल्दी, गेंहुला, येसव समभागलेकर वारीकचूर्णकर जवान वकरेकेमूत्रमें ३ दिनतकमर्दनकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे कुष्ठप्रधानव्याधियोंमें अनुपानरूपसेदेवे। पीलीकौड़ी, जीरा और भाग इनकेसाथ ग्रहणी और अतिसारमें देवे। इसमें पथ्य रोगानुसार देना ॥ १६० ॥

१६१ राजवल्लभरसः (तृतीयः)

लोहभस्मविडङ्गानि त्रिफला च शिलाजतु।
त्र्यूषणं पिप्पलीमूलं चव्यं कृष्णतिलाः समम् ॥ ७७९ ॥
लोहस्य त्रिगुणो वह्नि र्लोहाद्भल्लातकी तथा।
चातुर्जातश्च लोहांशं सर्वस्य द्विगुणो गुडः ॥ ७८० ॥
कर्षं भुक्तो निहन्त्याशु ह्यर्शोमन्दाग्निपाण्डुताम्।
श्वासं भगन्दरं कासं श्वयथुञ्च विनाशयेत् ॥ ७८१ ॥

व रा, अर्श सु।

भाषा—लोहभस्म, विडङ्ग, त्रिफला, शिलाजीत, त्रिकटु, पिपलामूल, चव्य, कालेतिल और चातुर्जात समभागलेकर लोहसेतिगुने चित्रक और भिलावे मिलाकर वारीकचूर्णकर, सबसे दूना गुड़ मिलाय १–१ तोलेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े।

इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे अर्श, मन्दाग्नि, पाण्डु, श्वास, भगन्दर, कास और गांथ इनसबरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ १६१ ॥

१६२ राजवल्लभरसः (शङ्खोदरः) (चतुर्थः)

त्रिभागं मौक्तिकं तालं शिलाहिङ्गुलमाक्षिकम् ।
जाम्बूनदं प्रवालञ्च हेममाक्षिकनागकम् ॥ ७८२ ॥
तारवज्रमयो वङ्गं गगनं शुल्वसत्त्वकम् ।
अष्टौ भागाश्च सूतस्य गन्धकस्य तथैव च ॥ ७८३ ॥
निक्षिपेत्पलमेकं स्याद्दारोटं वत्सनाभकम् ।
सहदेवीमहाराष्ट्रीचित्रकोत्थैं विभावयेत् ॥ ७८४ ॥
कन्यकाङ्कोलसारोष्णमार्कवं देवताडकम् ।
जयन्ती क्षीरकन्दश्च कर्कटी च पुनर्नवा ॥ ७८५ ॥
जातीकोषो यवानी च क्वाथैरेषां विभावयेत ।
नवसूरणकर्चूरशिग्रुकैः श्रीफलाम्बुभिः ॥ ७८६ ॥
अनेन भावना देया प्रत्यहं भावनाद्वयम् ।
निम्बुनीरेण खल्वेतद्गोलकं जायते यदि ॥ ७८७ ॥
शङ्खं शतद्वयं भागं जम्बूनीरेण शोधितम् ।
उदरे निःक्षिपेद्गोलं मुखे दत्त्वा दिनोद्भवम् ॥ ७८८ ॥
वेष्टयेत्सप्तधा लेपं शोषयेद्भास्करे पुटे ।
सामुद्रभाण्डमध्यस्थं दृढे लेपैः सुरन्ध्रितम ॥ ७८९ ॥
दिनार्धं दिनमेकं वा वह्निं प्रज्वालयेत्ततः ।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य मर्दयेच्च दिनद्वयम् ॥ ७९० ॥
पश्चाल्लेपजकल्पेन मरिचं सघृतं क्षिपेत् ।
पलद्वयञ्च निक्षिप्य भावनासुरसाद्रवैः ॥ ७९१ ॥
शतावर्यश्वगन्धाभ्यां जयावत्सकभावितम् ।
जयाबीजस्य कल्केन वज्रिकापयसा तथा ॥ ७९२ ॥
जम्बीरशृङ्गवेराम्बुलवङ्गकटुकैस्तथा ।
एभिः सप्तदिनं भाव्यं मर्दयित्वा पुनः पुनः ॥ ७९३ ॥
वृद्धशङ्खोदरो नाम्ना वल्लैकं योजयेद्रसम् ।
रोगाणामनुपानेनाऽतीसारग्रहणीहरः ॥ ७९४ ॥
जयाकोषातकीबिल्वमजाजीमधुसंयुतम् ।
सर्वातीसारशमनं पथ्यं दध्योदनं हितम् ॥ ७९५ ॥
भृङ्गीमहेन्द्रबीजञ्च वत्सकः कुष्ठमेव च ।
आम्रमूलं मोचरसं धात्रीकुसुमदाडिमम् ॥ ७९६ ॥
एतत्कल्करसो देयो ग्रहणीशोषनाशनः ।
पथ्यं तक्रसमायुक्तमजादुग्धश्च दीयते ॥ ७९७ ॥
सर्वशूलं निहन्त्याशु नागराभयसैन्धवैः ।
कुबेराक्षं यवानी च वराटक्षाररामठम ॥ ७९८ ॥
पाण्डुरोगे च दातव्यः पथ्योग्रारजनीयुतः ।
भूनिम्बशिग्रुनिर्गुण्डीवातारितैलसंयुतः ॥ ७९९ ॥
चपलाक्षारवेल्लञ्च शिलाजतुसमाक्षिकम् ।
क्षये धातुगते तापे पथ्यं गव्यं प्रदापयेत् ॥
रसो धन्वन्तरिप्रोक्तो राजवल्लभसञ्ज्ञितः ॥ ८०० ॥

र. सं, अतिसाराऽधिकारे।

भाषा—मोती, हरिताल, मैनसिल, शिंगरिफ, रूपामाखी, सुवर्ण, मूंगा, सोनामाखी, सीसा, चांदी, हीरा, लोह, वङ्ग, अभ्रक, केंचुओंकातांवा इनसबकीभस्में ३-३ कर्ष; शुद्धपारा और गन्धक ८-८ कर्ष, शुद्धवछनाग १ पल लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर सहदेवी, मराठी, चित्रक, घीकुंवार, अङ्कोल, मरिच, भंगरा, बन्दाल, जैंती, क्षीरविदारी, क्षीरकाकोली, ककड़ी, पुनर्नवा, जावित्री, अजवाइन, ताज़ासूरण, कचूर, सहिजन, नारियल इनप्रत्येकके रसोंकी २-२ भावनाए देकर सुखाकर नीबूके रससे १-२ दिनमर्दनकर गोलाबनाय जामुनकेरससे शुद्धकियाहुआशङ्ख ५० पल वज़नमें लेकर उसके भीतर गोलेकोभरदे । ऊपरसे तावेकेपत्रेसेबन्दकर ६-७ कपड़-मिट्टी देकर धूपमें सुखाकर लवणयन्त्रमें बन्दकर अच्छीतरहसे हण्डीका मुंहबन्दकर एकदिन अथवा ४ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कालीमिर्च और घी १-१ पल डालकर दोरोज़ घोटकर तुलसी, शतावरी, असगन्ध, भाग, कुरैयाकी छाल, गांजेके बीज, थूहरका दूध, जंभीरी, अदरख, लौंग, त्रिकटु इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७-७ रोज़ मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली भाग, मीठीतरोई, बेलगिरी, जीरा और मधुकेसाथ देनेसे सबप्रकारके अतीसारोंको यह नष्टकरताहै । इसमें दही, भात पथ्य देना । भंगरा, इन्द्रजव, कुरैयाकीछाल, मीठीकुठ, आमकीजड़, मोचरस, धावड़ीकेफूल, अनारकेबीज इनके कल्क अथवा क्वाथकेसाथदेनेसे ग्रहणी और शोषको नष्ट-करताहै । इसमें पथ्य छाछ अथवा बकरीका दूध देना । सोंठ, हर्रे और सैन्धव अथवा करञ्ज, अजवाइन, कौड़ीभस्म और हींगकेसाथ देनेसे समस्तशूलोंको नष्टकरताहै । हर्रे, बच और हल्दी अथवा चिरायता, सहिजनकीछाल, संभालू और एरण्डके तैलकेसाथ देनेसे पाण्डुरोग नष्टहोताहै । पीपल, यवक्षार, विडङ्ग, शिलाजीत और मधुकेसाथदेनेसे क्षयमें धातुगत तापको नष्टकरताहै इसमें पथ्य गायका दूध देना ॥ १६२ ॥

१६३ राजविरेचनम् (वैरोचनोरसः)

रसगन्धमरीचानि तित्तिरीफलटङ्कणैः ।
पथ्यापुष्करबीजैः स्याद्राजयोग्यं विरेचनम् ॥ ८०१ ॥

र. सं., टो. विरेचने ।

टि०—टोडरानन्दे "रसगन्धमरीचानि समानि जयपालकैः । दन्तीक्वाथेन यामैकं पिष्टं वैरोचनो रस ॥ ह्विध्म शूलविष्टम्भाऽनिलोत्थाश्च ज्वराञ्जयेत् ।" इति वैरोचननाम्ना रसो निहितोऽस्ति परन्तु तत्र न रसान्तरता, अस्यैव रूपान्तरत्वात् ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मरिच, जमालगोटा, सुहागा, हर्रे, पोहकरमूलकेबीज, येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे इससे रेचनहोकर कोष्ठ साफ होजाताहै । किसीतरहका कष्ट नहीं होता ॥ १६३ ॥

१६४ राजशेखरवटी

भागो मृतरसस्यैको वत्सनाभांशकद्वयम् ।
रसतुल्यं शिवाचूर्णं गन्धकं त्र्यूषणं तथा ॥ ८०२ ॥
विचूर्ण्याऽतिप्रयत्नेन भावयेत्सप्तधा रसम् ।
ताम्बूलीपत्रतोयेन स्वर्णधत्तूरजै द्रवैः ॥
पिष्ट्वा चणमिताः कुर्याच्छायाशुष्कास्तु गोलिकाः ८०३
उष्णाम्भोयुतराजशेखरवटी मन्दाग्निनिर्णाशिनी,
नानाकारमहाज्वरार्तिशमनी निःशेषमूलापहा ।
पाण्डुव्याधिमहोदरार्तिशमनी शूलान्तकृत्पाचिनी,
शोफघ्नी पवनार्तिनाशनपटुः श्लेष्मामयध्वंसिनी ८०४

र र स., र. सु, र. चं, चि क, रसचि, र. का, अजीर्णादिरोगे ।

भाषा—पारदभस्म, हर्रे, शुद्ध गन्धक और त्रिकटु १–१ भाग, शुद्धवच्छनाग २ भागलेकर वारीकचूर्णकर पान और पीलेफूलके धतूरेके पत्तोंकेरसोंसे ७–७ वार भावनाएं देकर चनेप्रमाण गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गरमपानीकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, नानातरहकेज्वर, पाण्डु, जलोदर, शूल, शोथ वात और श्लेष्मविकार इनसवको यह नष्टकरतीहै ॥ १६४ ॥

१६५ राजावर्तरसः (प्रथमः)

मृतं सूतं मृतं शुल्वं यष्टिकां राजवर्तकम् ।
तुल्यांशं मर्दयेदाज्ये क्षणं मृद्वग्निना पचेत् ॥ ८०५ ॥
सितामध्वाज्यसहितं माषार्द्धं भक्षयेत्सदा ।
राजावर्तरसो नाम ग्रहणीरोगनाशनः ॥ ८०६ ॥

र सु, र. र. कौ, ना वि, र र. स, र. का, र क. यो., ग्रहण्यधिकारे र. र स., मदात्यये। र. का. शुल्वस्थाने स्वर्णं नियोजितम् ॥

भाषा—पारा, तावा, लाजवर्द इनकीभस्में और मुलहठी समभाग लेकर वारीकचूर्णकर थोड़ा घी डालकर १–२ दिन मर्दनकर वहुत हल्का पुटपाककर रखछोड़े। इसमेंसे आधे आधे माशेकी मात्रा शक्कर, मधु और घीमें मिलाकर खानेसे यह ग्रहणीरोगको नष्टकरताहै ॥ १६५ ॥

१६६ राजावर्तरसः (द्वितीयः)

राजावर्तो रसः शुल्वं माक्षिकं घृतपाचितम् ।
मध्वाज्यशर्करायुक्तं हन्ति सर्वान्मदात्ययान् ॥ ८०७ ॥

र र. स, र सु., रसेन्द्रम., र चं., र र कौ, र को., मदात्यये। रसेन्द्र मं, मदात्ययहर इति नाम ।

भाषा—ऊपरकहाहुआ राजावर्तरस, ताम्र और माक्षिकभस्म समभाग लेकर थोड़ा घी डालकर पकाकर रखछोड़े। इसमेंसे आधेआधे माशेकी मात्रा मधु, घी और शक्करके साथ देनेसे यह सवप्रकारके मदात्ययोंको नष्टकरताहै ॥ १६६ ॥

१६७ रामचन्द्रपर्पटीरसः

रसं गन्धं विषं ताम्रं दरदं टङ्कणं शिला ।
तालकं खर्परं तुत्थं सिन्दूरं चित्रकं समम् ॥ ८०८ ॥
चित्रकार्द्रकवाराहीरसैः सम्यक् विभाविता ।
पर्पटी रामचन्द्राख्या त्रिदोषोत्थातिसारजित् ॥ ८०९ ॥

वा., अतिसारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, वछनाग, शिंगरिफ, सुहागा, मैनसिल, हरिताल, खपरिया और तुत्थ, ताम्रभस्म, रससिन्दूर चित्रकमूल सवसमभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर चित्रक, अदरख और वाराहीकन्द के यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ भावनाएं देकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह त्रिदोषातिसारको नष्टकरतीहै १६७

१६८ रामज्वरापहारीरसः

रसेन्द्रगन्धौ विषटङ्कणौ च
सहंसपाकं कटुकत्रयञ्च ।
सर्वैः समं स्याज्जयपालवीजं
विमर्दयेदार्द्रकजद्रवेण ॥ ८१० ॥
संशोष्य सम्पेष्य भवेत्सुसिद्धो
रसस्तु धुत्तूरसितार्द्रतोयैः ।
ददीत वल्लं विषमज्वरे वा
जीर्णज्वरे वाऽथ नवज्वरे वा ॥ ८११ ॥
वनान्निवृत्ताय रघूत्तमाय
पुरासुषेणेन स्वयं प्रदिष्टः ।
तदा प्रभृत्येव च रामनाम-
ज्वरापहारीति रसः प्रसिद्धः ॥ ८१२ ॥

र सु., र को, यो सं., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, वछनाग, सुहागा और शिंगरिफ, त्रिकटु सवसमभाग, सवकीवरावर शुद्धजमालगोटा लेकर सबको पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर अदरखके रससे १ रोजमर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली धतूरे तथा अदरखकेरस और शक्करकेसाथ देनेसे विषम, जीर्ण अथवा नवज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ १६८ ॥

१६९ रामवाणरसः (प्रथमः)

त्रपुणा निहतं तारं स्वर्णं नागहतं तथा ।
मृतं सूतं तयोस्तुल्यं मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ ८१३ ॥
अङ्कोलमूलजैः क्वाथैः शोषयित्वा मुहुर्मुहुः ।
ताप्यवैक्रान्तराड्वर्तभस्म सर्वसमं क्षिपेत् ॥ ८१४ ॥
विसृज्य वलिना सार्धं षोढा तुषपुटैः पचेत् ।
अङ्कोलबीजवर्वूरक्वथितै र्भावयेत्त्रिधा ॥ ८१५ ॥
तं रसं परिचूर्ण्याऽथ स्थापयेत्कूपिकोदरे ।
गुडूचीसत्त्वसंयुक्तो वल्लतुल्यो रसस्त्वयम् ॥ ८१६ ॥
निहन्ति सकलं मेहं मोहध्वान्तमिवेश्वरः ।
वाणवद्रामचन्द्रस्य सज्जनस्येव भाषितम् ॥
न याति जातु मोघत्वं रामवाणो रसोत्तमः ॥ ८१७ ॥

र र. स, र सु, र. चं, र को, प्रमेहे ।

भाषा—वङ्ग से मारीहुई चांदी और नागसे माराहुआसोना समभाग, इनदोनोंकी वरावर पारदभस्म लेकर ३ रोज अङ्कोल-

कीजड़केक्काथसे मर्दन और शोपण वारम्वारकरके सोनामाखी, वैक्रान्त, लाजवर्द इनकीभस्में और गन्धक सवकी वरावर डालकर अङ्कोलकी जड़केकाथसे मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर तुपपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर वरावरभागमें गन्धक मिलाकर पूर्ववत् मर्दनकर पुटदेवे । ऐसे ६ पुट देनेकेवाद अङ्कोलवीज और बबूलकी-फली अथवा छालके काढ़ेसे ३–३ वार भावनाए देकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली गिलोयकेसत्त्वके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्टकरताहै॥१६९॥

१७० रामबाणरसः (द्वितीयः)

पारदाऽमृतलवङ्गगन्धकं
भागयुग्ममरिचेन मिश्रितम् ।
जातिकाफलमथाऽर्द्धभागिकं
तिन्तिडीफलरसेन मर्दितम् ॥ ८१८ ॥
मर्दयेत्सकलमातपे खरे
वीजपूरभवनागरङ्गजैः ।
दाडिमोद्भवसदाकुसुमजैः
शृङ्गवेरकरसैश्च मर्दितम् ॥ ८१९ ॥
नूतनश्च यदि वा पुरातनं
सन्निपातमपि पातकोद्भवम् ।
सेव्यतां सकलरोगनाशनं
रामवाणममृतं रसायनम् ॥ ८२० ॥
श्लेष्मा चाऽऽर्द्रकवारिणाऽथ
पवनो निर्गुण्डिकाया द्रवैः,
पित्तं धान्यजलैस्तथा
त्रिकटुकैर्वासोद्भवैः श्वासजाः ।
शुण्ठीसिन्धुहरीतकीभिरुदरं क्वाथैश्च पौनर्नवैः,
शोथाःपाण्डुगदाःप्रयान्ति सकला मूत्रेण माषोन्मितः
व्योषोत्थैश्च फलत्रिकैः क्षयमथो क्षौद्रेण संसेवितः,
वातार्तिःसकलास्तथैव विपमा वातारितैलैर्युतः ८२१

वृ यो त, र स, वै चि, र का, र चि, यो म, र प्र सु, भा प्र, चि र, र च, र क यो., र कौ, र (मा), नि र, वै क, वै र, र सु, रसायनस, र क ल, भै सा, भै र, ध, र क, ना वि, वा., र पा, अजीर्णाऽधिकारे । रसपारिजाते त्रुटितः पाठ ।

भाषा—शुद्ध पारा, वच्छनाग, लवङ्ग, गन्धक १–१भाग, मरिच २ भा, जायफल ½ भाग लेकर वारीकपीस पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर इमलीके पकेफल, विजोरा, नारङ्गी, अनार, आककेफूल, अदरख, इनप्रत्येककेरसोंसे १–१ रोज-मर्दनकर १–१ माशेकीगोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे नया अथवा पुरानाज्वर, सन्निपात और पापजज्वर नष्टहोतेहैं । अदरखकेरससे कफ, निर्गुण्डीकेरससे वायु; धनियेकेपानीसे पित्त, त्रिकटु और वासाकेरससे श्वास; सोंठ, सैन्धव और हरेंसे उदररोग; पुनर्नवाके काढ़ेसे शोथ, गोमूत्र अथवा त्रिकटु और त्रिफलाकेक्काथसे पाण्डुरोग, मधुसे क्षय, एरण्डतैलकेसाथदेनेसे विपम अथवा समस्त वातवेदनाएं नष्टहोतीहैं ॥ १७० ॥

१७१ रामबाणरसः (तृतीयः)

सूतकं गन्धकश्चैव शाणं शाणञ्च गृह्यते ।
दरदं टङ्कणश्चैव मरिचश्च विपं तथा ॥ ८२२ ॥
चत्वार्येतानि सङ्गृह्य द्विद्विटङ्कानि योजयेत् ।
जैपालवीजं संयोज्यं टङ्कैश्च दिक्प्रमाणतः ॥ ८२३ ॥
तिन्तिडयुत्थरसे घृष्टा गुञ्जामात्रा वटी कृता ।
तुलसीपत्रसंयुक्ता सर्वांश्च विपमज्वरान् ॥ ८२४ ॥
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च त्र्याहिकञ्च चतुर्थकम् ।
शीतदाहादिकं सर्वं शीघ्रमेव विनाशयेत् ॥ ८२५ ॥
पथ्यं दुग्धौदनं देयं दधिभक्तञ्च भोजनम ।
रामवाणरसो नाम सर्वरोगप्रणाशकः ॥ ८२६ ॥

र. म., ज्वराधिकारे ।

टि०—अयमपि द्वाद्यज्वरारावन्तर्भाविमागन्तुमर्हति परन्तु भागवृद्धौ महानन्तरोऽस्त्यत पृथगेव पाठ सम्थापित इति विद्भिराकलनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ४–४ माशे, शुद्ध शिंगरिफ, सुहागा और विप, मरिच ८–८ माशे, शुद्धजमालगोटा ४० माशे लेकर सवकावारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर इमलीकेपानीसे २–३ दिनमर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियावनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तुलसीपत्रस्वरसकेसाथ देनेसे ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक, शीतपूर्व अथवा दाहपूर्वप्रभृति समस्तविपमज्वरोंको यह नष्टकरताहै । इसमें पथ्य दूध, चावल अथवा दहीभात योग्यता देखकर देना ॥ १७१ ॥

१७२ रामबाणरसः (चतुर्थः)

तुत्थं गन्धस्तालकः सर्वमेवं
भागै रामैः पञ्च षड्भिः क्रमेण ।
कन्याद्रावे मर्दितः पाचितश्च
वल्लांशोऽयं सेव्यमानो ज्वरघ्नः ॥ ८२७ ॥
क्षाराऽम्लं वर्जनीयञ्च पथ्यं क्षीरौदनं स्मृतम् ।
शर्करासहितो ग्राह्यो रामवाणरसः परः ॥ ८२८ ॥

रसायनसं , वै वि , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध तूतिया ३ भाग, गन्धक ५ भा. और हरिताल ६ भाग लेकर वारीकचूर्णकर घीकुवारकेरससे ३–४ रोज मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें द्रवहोनेतक आचदेकर मुहवन्दकर १ पहरकी आचदेकर रहनेदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर शीशीमेंसे निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ अथवा शक्करकेसाथ देनेसे यह सवप्रकारके ज्वरोंको दूरकरताहै । पथ्यमें दूधभातलेवे, क्षार और खटाईसे परहेजकरे ॥ १७२ ॥

१७३ रामबाणरसः (पञ्चमः)

द्विनिष्कं रसकञ्चैव मयूरं चैकनिष्ककम् ।
निष्कार्धं मूषिकारिश्च कारवल्लयारसैर्दिनम् ॥ ८२९ ॥
मर्दयेद्वटिकीकृत्य भक्षयेद्गुडसंयुतम् ।
मुद्गमात्रप्रमाणेन ह्यपक्वमतिघोरकम् ॥ ८३० ॥
चातुर्थिकज्वरं हन्ति रामबाणश्च नामतः ।
क्षीरान्नमेव पथ्यं स्यादन्यथा विकृति र्भवेत् ॥
मत्स्येन्द्रभाषितं गुप्तं पुत्रायाऽपि न कथ्यते ॥ ८३१ ॥

रसायनसं, र का ज्वराऽधिकारे ।

टि०—शिखितुत्थ सोममल हराग मर्दयेत्यहम् । कृष्णधत्तूरतोयेन मर्दनाच्च ज्वराङ्कुश ॥ साध्याऽसाध्यान्निहन्त्याशु ज्वरांश्च विषमॉल्लघु ॥" इति रसकामधेनौ ज्वराङ्कुशनाम्ना पाठोऽस्ति तत्र खर्परस्थाने पारदो दृश्यते तद्रसमनोऽत्रैव प्रक्षेप दत्त्वा वनूरकारवल्लीभ्यां भावना प्रदाय एक एव रसो निष्पादनीय ।

भाषा—शुद्ध खपरिया ८ मासे, तूतिया ४ मासे, सोमल २ मासे लेकर बारीकचूर्णकर एकदिनकरेलेकेरसमे मर्दनकर मूगवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गुड़केसाथ देनेसे यह अपक्व घोरचातुर्थिकज्वरको नष्टकरताहै। इसमें पथ्य खीर खिलाना अन्यथा उपद्रव करेगा ॥ १७३ ॥

१७४ रामबाणरसः (षष्ठः)

श्वेतं क्षारं च पीतं च पारदं मृतसिंहकम् ।
मनःशिला बलिश्चैषामेकभागं पृथक्पृथक् ॥ ८३२ ॥
त्रिभागं श्वेतखदिरं सर्वं सञ्चूर्ण्य मर्दयेत् ।
नागवल्लीदलरसैश्चतुर्यामं भिषग्वरः ॥ ८३३ ॥
मुद्गमाना वटी कार्या पक्वान्तां भक्षयेन्नरः ।
पथ्यं मुद्गाढकीचूर्णं लवणेन विना कृतम् ॥ ८३४ ॥
चतुर्दशदिनान्येवमुपदंशी चरेन्नरः ।
सोपदंशं सर्ववातं साध्याऽसाध्यश्च नाशयेत् ॥
रामबाणरसो नाम्ना कथितो रससागरे ॥ ८३५ ॥

र सु., वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—सफेद और पीलासोमल, पारद और वङ्गभस्म, शुद्धमैनसिल और गन्धक १–१ भाग, सफेदकत्था ३ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पानकेरससे ४ पहरमर्दनकर मूंगवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे १४ दिनकेभीतर उपदंशसहित साध्य अथवा असाध्य वातरोग नष्टहोताहै । इसमें मूंग और अरहरकीदाल, गेहूंका आटा और घी खानेको देना । नमक भूलकर भी नहीं देना ॥ १७४ ॥

१७५ रामबाणरसः (सप्तमः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं तत्समं चन्द्रपुष्पकम् ।
जातीफलं त्रिकटुकं यवक्षारञ्च तत्समम् ॥ ८३६ ॥
विषं सूतसमं दद्यात्सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।
नागवल्लीदलयुतं रामबाणो महारसः ॥ ८३७ ॥

रक्तिकैकप्रमाणेन सन्निपातेऽतिदारुणे ।
विषमेषु च सर्वेषु प्रयोक्तव्यो महारसः ॥ ८३८ ॥

र प्र, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक १–१ भाग, रसकपूर, जायफल, त्रिकटु, यवक्षार २–२ भाग, शुद्धवछनाग, एक भाग, लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर एकरोज़ पानके रससे घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे दारुणसन्निपात, विषमज्वर इनको यह नष्टकरताहै ॥ १७५ ॥

१७६ रामबाणरसः (अष्टमः)

सूतं टङ्कणमभ्रकञ्च दरदं तीक्ष्णं रविं कान्तजं,
स्वर्णं मौक्तिकविद्रुमं वलिवसां तारं त्रपुं माक्षिकम् ।
भूमिश्चन्द्रकलाब्धिनेत्रमनवः पक्षाब्धृतुः कालपो,
युग्मं नेत्रमिषुप्रमाण ऋतवस्त्वेतानि भागैः क्रमात्॥८३९
कस्तूरी घनसारजातिफलजात्वक्पत्रदिव्यं तथा,
सर्वं पूर्वतनाच्च माननिचयाद्योज्यश्च वेदैर्मितम् ।
श्रीखण्डत्रिफलारुबूकजलजैः पुन्नागजम्बीरवा-,
ह्रीवेरोत्पलमल्लिकाकुमुदजैर्द्रावैर्भृशं भावयेत् ॥८४०॥
माषार्द्धं मधुशर्करात्तपयसा कालद्वयं सेवये-,
द्गुल्मप्लीहभगन्दरज्वरमुखान्दोषाञ्जयेत्सत्वरम् ।
मेहान्मूत्रभवा रुजश्च शमयेत्कृच्छ्रांश्च दोषाञ्जये-,
देतच्चैवमनेकरोगहरणं विश्वेश्वरै र्निर्मितम् ॥ ८४१ ॥

वै चि (ल), रसायने ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, भुनासुहागा १ भा, अभ्रक १६ भा, शिगरिफ ४ भा, फौलाद २ भा., ताम्र १४ भा, कान्तलोह २ भा., सुवर्ण ६ भा., मोती १२ भा., मूंगा २ भा., इनसवकीभस्में, शुद्धगन्धक २ भा ,चादीभस्म ५ भा., वङ्गभस्म ६ भा., सोनामाखी ६ भा, कस्तूरी, शुद्धकपूर, जायफल, जावित्री, पत्रज और लवङ्ग ४–४ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर सफेदचन्दन, त्रिफला, एरण्डमूल, कमल, पुन्नाग, जंभीरी, सुगन्धवाला, ह्रीवेर, सफेद कमल और मोगरा तथा कुमुदकेफूल इनप्रत्येकके द्रवोंसे यथाशक्ति भावनाएं देकर ४–४ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली सुवहशाम मधु और शक्कर मिलेहुए दूधकेसाथ अथवा यथोचितानुपानकेसाथ देनेसे गुल्म, प्लीहा, भगन्दर, ज्वर, प्रमेह, मूत्ररोग, मूत्रकृच्छ्र, इनसबरोगोंको यह नष्टकरताहै॥१७६॥

१७७ रामबाणरसः (शीतमातङ्गकेशरी)९

जाती लवङ्गं तालञ्च द्विनिष्कन्तु पृथक्पृथक् ।
निष्कं मूषिकपाषाणं धत्तूरेण विमर्दयेत् ॥ ८४२ ॥
गुञ्जामात्रा वटीः कुर्याच्छायायां शोषयेत्ततः ।
शर्करामरिचै र्योज्यं शीतं चातुर्थिकं जयेत् ॥ ८४३ ॥
मुद्गसारेण पयसा योजयेद्वा समाहितः ।
रामबाणरसो नाम शीतमातङ्गकेसरी ॥ ८४४ ॥

र क, यो, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—जायफल, लवङ्ग और रसमाणिक्य ८-८ मासे, शुद्धसोमल ४ मासे लेकर वारीकचूर्णकर धतूरेकेरससे १-२ रोज़ मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया वनाकर छायामेंसुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शक्कर, मरिच अथवा मूंगकेयूषकेसाथ देनेमें यह चातुर्थिकज्वरको दूरकरताहै और शीतको तत्काल नष्टकरताहै ॥ १७७ ॥

१७८ रामवाणरसः (दशमः)

नीलाञ्जनञ्च तुत्थञ्च गौरीपाषाणमेव च ।
धुत्तूरपत्रस्वरसे पेषितं गुटिकीकृतम् ॥ ८४५ ॥
क्षीरशर्करया युक्तं भक्ष्यं तिन्तिडिकाकृति ।
रामवाण इति ख्यातो भिषगाश्चर्यकारकः ॥ ८४६ ॥

र क यो , ज्वरे ।

भाषा—सुरमाकीभस्म, शुद्धतूतिया, सोमल समभागलेकर वारीकचूर्णकर धतूरेकेरससे एकरोज मर्दनकर मरिचवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शक्करयुक्त दूधकेसाथ देनेसे यह शीत, विषमज्वर और वारीसे आनेवाले ज्वरोंको निकालकर वैद्यको आश्चर्य करताहै ॥ १७८ ॥

१७९ रामवाणरसः (एकादशः)

रसं तुत्थं शिलां तालं खर्परं मरिचं समम् ।
मर्दयेज्जम्भनीरेण रसोऽयं रामवाणकः ॥ ८४७ ॥

र क. यो , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, तुत्थ, मैनसिल, हरिताल, खपरिया और मरिच समभागलेकर वारीकचूर्णकर जंभीरीकेरससे १ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली जभीरीकेरस अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे तमामविषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ १७९ ॥

१८० रामवाणरसः (शीतकुलान्तकः) १२

नीलाञ्जनञ्च तुत्थञ्च गौरीपाषाणमेव च ।
खर्परीं श्वेतपाषाणं शिलाचूर्णञ्च तालकम् ॥ ८४८ ॥
खल्वमध्ये विनिःक्षिप्य जम्बीरेण विमर्दयेत् ।
वटकान् माषमात्रांश्च शर्कराजीरसंयुतान् ॥ ८४९ ॥
अनुपानविशेषेण शीतज्वरनिवारणम् ।
रामवाण इति ख्यातः सर्वशीतकुलान्तकः ॥ ८५० ॥

र क यो , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—नीलाञ्जन,तुत्थ,सोमल, खपरिया,गोदन्तीहरिताल, मैनसिल और हरिताल इनकीभस्में, (नीलाञ्जनको छोड़कर जिसकी भस्म न हो उसे शुद्धकरके डालना) सव समभागलेकर जंभीरीकेरसमें १-२ रोज मर्दनकर उड़दवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शक्कर और जीरेकेसाथ अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥ १८० ॥

१८१ रामवाणरसः (शीतमातङ्गकेशरी) १३

गौरीपाषाणकं शुद्धं क्षारतुल्यं तथैव च ।
सुधा सर्वसमा योज्या जम्बीरेण विमृद्य च ॥ ८५१ ॥
चणप्रमाणवटकांश्छायायां शोषयेद्बुधः ।
रामवाण इति ख्यातः शीतमातङ्गकेसरी ॥ ८५२ ॥

र क. यो., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्धसोमल और तूतिया समभागलेकर दोनोंके वरावर पत्थरकाचूना मिलाकर जंभीरीके रससे १ रोज़ मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें वनाकर छायामें सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरका नाशकरताहै ॥ १८१ ॥

१८२ रामवाणरसः (अमोघादि) १४

शुद्धं द्वयं टङ्कणतालसञ्ज्ञकम्
नीलाञ्जनं सूतविषे वलेर्वसाम ।
द्वयञ्च पाषाणरसाञ्जनं शिला
पृथक् समं जम्भरसैस्त्रिमर्दितम् ॥८५३॥
निर्गुण्डिकापत्ररसैस्त्रिमर्दितं
पुटं ततः कुक्कुटकप्रमाणकम् ।
अमोघकं विश्रुतरामवाणकम
वल्लद्वयं क्षौद्रसितादिसेवितम ॥ ८५४ ॥
एकाहिकं द्वित्रिचतुर्थकञ्च
शीतज्वरं तद्विषमज्वरञ्च ।
पथ्यञ्च शाल्योदनमुद्गसूपं
दध्ना च तक्रेण रसैश्च जाङ्गलैः ॥ ८५५ ॥
भुक्त्वा चेक्षुरसादिकञ्च कदली खर्जूरिकादाडिमं,
कापित्थं तनुलेपनं मलयजैः प्रौढाङ्गनाऽऽलिङ्गनम ॥

र क यो , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध सुहागा, हरिताल, सुरमा, शुद्धपारा, वच्छनाग, गन्धक, सफेद और पीलासोमल, रसौत, मैनसिल येसव समभाग लेकर वारीकपीस पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर जभीरी और निर्गुण्डीकेपत्रस्वरससे ३-३ रोज़ मर्दनकर गोला-वनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ३-४ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर कुक्कुटपुटकी आंचदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ६-६ रत्तीकीमात्रा शक्कर और मधु वगैरह केसाथ देनेसे ऐकाहिक, द्वयाहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक, शीतज्वर, विषमज्वर इनसवको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य पुरानेचावल और मूंगकीदाल अथवा दही छाछ अथवा जगलीपशुपक्षिओंका मांसरस, ईखकारस, केला, खजूर, अनार, कैथ येसव देवै । चन्दनका लेपकर प्रौढस्त्रियोंका आलिङ्गन करावे ॥ १८२ ॥

१८३ रामवाणरसः (पञ्चदशः)

रसगन्धकताम्राणि टङ्कणं त्रिफला विषम् ।
एतानि समभागानि नेपालं तुल्यभागिकम् ॥ ८५७ ॥
कारवल्लीरसेनैव मर्दयेद्यामसात्रकम ।
गुञ्जाप्रमाणवटिकां भक्षयेदार्द्रकाम्बुना ॥
रामवाण इति ख्यातः सर्वज्वरनिषूदनः ॥ ८५८ ॥

र क यो., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा और वछनाग, ताम्रभस्म और त्रिफला समभाग, जमालगोटा सबकी वरावर लेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर करेलेकेरससे १–२ दिनमर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरस अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त शीत और विषमज्वरोंको नष्टकरताहै ॥१८३॥

१८४ रामबाणरसः (षोडशः)

हिङ्गुलं रसकं रसेन्द्रशिखितुत्थाऽऽलं शिला गन्धकं,
ताप्यं गौरशिला विशुद्धिसहितं सर्वं समं भागतः।
कृष्णोन्मत्तरसेन मर्दितमिदं माषप्रमाणा वटी
भुक्त्वा शीतसमर्पितं ज्वरगणं निर्वासयेत्तत्क्षणात्॥८५९॥

र र कौ, र. पा, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, खपरिया, पारा, तुत्थ, हरिताल, मैनसिल, गन्धक, सोनामाखी और सोमल सबसमभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर कालेधतूरेकेरससे १–२ रोज़ मर्दनकर उड़द वरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तशीतज्वरोको नष्टकरताहै ॥१८४॥

१८५ रामरसः

गन्धकं पारदं तुल्यं मरिचञ्च त्रिभिः समम्।
वीजं नैकुम्भकं मर्द्यं दन्तीकाथेन यामकम्॥
द्विगुञ्जः शूलविष्टम्भाऽनिलं सामज्वरं जयेत्॥८६०॥

भै र, र सु, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक तथा मरिच समभाग, शुद्धजमालगोटा सबकीवरावर लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर दन्तीमूलकेक्काथसे एकपहर घोटकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ लेनेसे शूल, विष्टम्भ, वायु और आमज्वरको यह नष्टकरताहै ॥ १८५ ॥

१८६ रास्नादिलोहम्

रास्नाऽश्वगन्धाकर्पूरभेकपर्णीशिलाह्वयैः।
त्रिकत्रयसमायुक्तं लोहं यक्ष्मान्तकृन्मतम्॥ ८६१ ॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तमपि वैद्यविवर्जितम्।
हन्ति कासं स्वराऽऽघातं राजयक्ष्मक्षतक्षयम्॥
बलवर्णाऽग्निपुष्टीनां वर्धनं दोषनाशनम्॥ ८६२ ॥

र सं, र सु, व., र. च, र. क, र र, यो र, ना. वि, नि र, लो प, भै र, वृ यो. त राजयक्ष्मणि।

टि०—र सु द्वितीयस्थाने दशाङ्गलोहमिति नामस्थापितम्। यो र., वृ. यो त, ना वि, एतेषु चतुर्दशाङ्गलोहमिति नाम। लो प चतुर्दशायस इतिनाम। भै र यक्ष्मान्तकलोहमिति नाम अत्र त्रिकत्रयशब्देन त्रिकटु, त्रिफला, त्रिमदा ग्राह्या', योगरत्नाकरीयपाठे अश्वगन्धास्थाने तालीस नियोजितमिति विशेष, नाम च चतुर्दशाङ्गलोहमिति।

भाषा—रास्ना, असगन्ध, कपूर, ब्राह्मी, मैनसिल, त्रिकटु, त्रिफला, त्रिमद (विडङ्ग, नागरमोथा, चित्रक) सब समभाग, इनसबकीवरावर लोहभस्म डालकर रास्नादिद्रव्योंके क्वाथोंसे १–१ दिनमर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। यद्यपि बहुतसेलोग केवल चूर्णवनाकर रखलेतेहैं लेकिन रास्नादिकी भावना दियेहुएके वरावर कामनहीकरताहै। इसमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे वैद्योंसे त्यागेहुए सर्वोपद्रवयुक्त राजयक्ष्मको यह दूरकरताहै और कास, स्वरभङ्ग, उरःक्षत, धातुक्षय, बलवर्णनाश, मन्दाग्नि इनसवको नष्टकर पुष्टिकोकरताहै और समस्तदोषोंका नाशकरताहै ॥ १८६ ॥

१८७ राक्षसरसः

समांशं योजयेच्छुद्धं पारदं गन्धकं तथा।
नागार्जुनीरसै मर्द्य सुरसावाकुचीभवैः॥ ८६३ ॥
मयूरपर्णीकौमारीमधुयष्टिसमुत्थितैः।
वाराहकर्णीस्वरसै र्बहुफल्यास्तथैव च॥ ८६४ ॥
एतासां रसमादाय भावनायां पृथक्पृथक्।
कुक्कुटाण्डं तत्र वृध्वा छिद्रयुक्तं समाचरेत॥ ८६५ ॥
तत्रास्थितञ्च निष्कास्य तत्र भृत्वा महारसम्।
वस्त्रमृत्तिकयाऽऽलिप्य कौक्कुटञ्च पुटं चरेत्॥८६६॥
पक्वं नीतं पुनर्मर्द्यं पुनः पक्वं पुनस्तथा।
एवं त्रिवारसंस्कारे रसरक्षोऽमृतोपमम्॥
क्षुधाकरं वीर्यकरं बलवर्णाऽग्निवर्धनम्॥ ८६७ ॥

र सु, वातव्याध्यधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर छोटी दूधी, तुलसी, वाकुची, मोरशिखा, घीकुंवार, मुलहटी, असगन्ध, वहुफली इनके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय मुर्गीका अण्डा (जिसमें बचा न पड़ा हो) लेकर युक्तिसे छिद्रकर भीतरकाद्रव निकालकर उसमें गोलेकोरख दूसरे अण्डेकी खोलसे ढककर गुड़चूनेसे वन्दकर ६–७ कपड़मिटीदेकर सुखाकर कुक्कुटपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर उसीतरहकरे। ऐसे ३ वार करनेसे यह अमृतके सदृश होजाताहै। इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह क्षुधा वीर्य, बल, वर्ण और अग्निको बढाताहै ॥ १८७ ॥

१८८ रुद्रपर्पटी

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं सम्मर्द्यैषां द्रवैः पुनः।
वातारिरार्द्रकं भृङ्गी काकमाच्यार्द्रिकर्णिका॥ ८६८ ॥
दिनैकं मर्दयेत्खल्वे पाचयेत्पर्पटीं तथा।
द्वयोः पादं मृतं ताम्रं क्षिस्वा मृद्वग्निना पचेत॥८६९॥
रक्तवर्णं भवेद्यावत्तावत्पाच्यं प्रचालयेत्।
प्रक्षिपेत्कदलीपत्रे स्थाप्यं स्निग्धपुटे पुनः॥ ८७० ॥
आच्छाद्य तेन योगेन ह्यधश्चोर्द्धञ्च गोमयम्।
दग्धं विचूर्णयेत्पश्चाच्चूर्णपादं विषं क्षिपेत्॥ ८७१ ॥
रुद्रपर्पटिका ह्येषा देया गुञ्जाद्वयं द्वयम्।
चूर्णितं कटुनिर्गुण्ड्या मूलं निष्कद्वयं पिबेत॥८७२॥

भृङ्गराजरसेनैव लिहेद्वा मधुना सह ।
वातिकान्सं निहन्त्याशु सर्वथैव न संशयः ॥ ८७३ ॥

नि. र, र को, र र, व रा, र का., वै चि, कासश्वासे।

टि०—द्वितीयताम्रपर्पट्या साकमस्या आपाततः साम्य प्रतीयते परन्तु ताम्रपर्पट्यपेक्षयाऽस्य योगस्याऽतिभीषणत्वात्स्वतन्त्र एवाऽस्य योगोऽनण्वाऽस्य योगस्य रुद्रपर्पटीति नाम करण सार्थकम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक २–२ भागकी नीलवर्णकज्जलीकर एरण्ड, अदरख, भंगरा, मकोय, कोयल इनप्रत्येकके-रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर अच्छीतरह सुखाकर घीपुतीहुई-कड़ाहीमें डालकर वदराङ्गारकी मृदुअग्निसे पकावे । द्रव होनेपर चतुर्थांश ताम्रभस्म डालकर चलाताहुआ पकावे । जव पर्पटीका रग गन्धक न जलकर कुछ ललाईपरहोजाय तवपर्पटीविधानसे पर्पटी तैयारकर सवसेचतुर्थांश शुद्धवछनागका वारीकचूर्ण मिलाकर १–२ पहर खरलकर रखछोडे । इसमेंमे २–२ रत्ती-कीमात्रा भंगरेकेरस अथवा मधुकेसाथ खाकर कटेपत्तोवाली निर्गुण्डीकी जडका चूर्ण ८ मासे मधुकेसाथ ऊपरसे चाटनेसे यह वातजन्य कासको नष्टकरताहै ॥ १८८ ॥

१८९ रुद्ररसः

तीक्ष्णं शुल्वं नागतारं स्वर्णञ्च मरिचं पृथक् ।
एकद्वित्रिचतुष्पञ्च सप्तषट्शुद्धसूतकम् ॥ ८७४ ॥
चाङ्गेरीद्रवकैर्मर्द्यं दिनैकं तच्च गोलकम् ।
गोलकं लेपयेत्तेन ततो वस्त्रेण वेष्टयेत् ॥ ८७५ ॥
मृगाङ्कवत्पचेत्स्थाल्यां वालुकाभिः प्रपूरयेत् ।
उद्धृत्य चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं हरतुल्यो रसोत्तमः ॥
मृगाङ्कवत्क्षयं हन्ति तथा मात्राऽनुपानकम् ॥८७६॥

र मु क्षयाधिकारे ।

भाषा—फोलादभस्म १ भाग, ताम्रभस्म २ भा , नागभस्म ३ भा , रजतभस्म ४ भा., सुवर्णभस्म ५ भा , मरिच ७ भा और रससिन्दूर ६ भाग लेकर वारीकचूर्णकर तिपतियाकेरससे एकरोज़ मर्दनकर गोलावनाय सुखाकर ३–४ तह मलमलके कपड़ेमें रख चारोंओर कच्चासूत लपेटकर गेंदकेसदृश बनाले फिर शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर हंडीमें ४–४ अङ्गुल ऊपरनीचे वालूमें दवाकर ४ प्रहरकी अग्नि देवे । स्वाङ्ग-शीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे उचितमात्रामें यथा-रोगानुपानकेसाथ देनेसे यह सवतरहके क्षयोंको नष्टकरताहै । इसमें पथ्य और अनुपान मृगाङ्ककीतरह देना ॥ १८९ ॥

१९० रुद्रवटी (प्रथमा)

शुद्धपारदकृशानुमरीचैः
पारदाद्द्विगुणगन्धकमत्र ।
वत्ससम्भवमुदुस्वरदुग्धं
वाकुचीभवकषायचयैर्वा ॥ ८७७ ॥
संविभाव्य परिपेष्य दिनैक-
मक्षमानवटिकाः परिकल्प्य ।
माक्षिकैः समगिताऽखिलपामा-
हन्ति रुद्रवटिकाख्यरसोऽयम ॥ ८७८ ॥

चि. क्र., कुष्ठे ।

भाषा—शुद्धपारा, चित्रक, मरिच १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर कुटज, गूलरकादूध, वाकुची इनके यथासम्भव द्रव अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर ६ माशेसे १ तोलेतककी गोलियां वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ खिलानेसे यह सवप्रकारकी पामाओंको नष्टकरताहै ॥ १९० ॥

१९१ रुद्रवटी (द्वितीया)

कान्तलोहं मृतञ्चाऽभ्रं सूतं ताप्यं सतालकम ।
गन्धकं गुग्गुलुं शुद्धं विडङ्गं त्रिफलाकुलम् ॥ ८७९ ॥
व्योषाऽग्निदेवदारूण्युदधिफेननिशाद्वयम ।
गिरिकर्णीपुनर्नव्यामूलचूर्णं समं समम् ॥ ८८० ॥
भृङ्गराजद्रवे मर्द्यं दिनैकं वटकीकृतम ।
सर्वकुष्ठानि हन्त्याशु वटीयं रुद्रनामिका ॥
मासमात्रान्निहन्त्याशु मञ्जरीं सर्वधातुजाम ॥ ८८१ ॥

रसायनसं., यो म, र. का, कुष्ठाधिकारे ।

भाषा—कान्तलोह, अभ्रकभस्म, शुद्ध पारा, सोनामाखी, रसमाणिक्य, गन्धक, गूगल, विडङ्ग, त्रिफला, वेर, त्रिकटु, चित्रक, देवदारु, समुद्रफेन, दोनोंहल्दी, कोयल, पुनर्नवाकीजड़ येसव समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्ज-लीमें मिलाकर भंगरेकेरससे एकरोज़मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली यथोचितानु-पानकेसाथ देनेसे यह तमामप्रकारकेकुष्ठोंको नष्टकरतीहै ॥१९१॥

१९२ रुद्रेश्वररसः (वातशूलहा) १

शुद्धं सूतं समं गन्धं मृताऽभ्रार्कमनःशिलाः
सैन्धवं माक्षिकन्तालं धुत्तूरं हिङ्गु सूरणम ॥ ८८२ ॥
महाराष्ट्र्या च निर्गुण्ड्या वासैरण्डद्रवै र्दिनम् ।
मर्द्यं रुद्ध्वा पुटे पाच्यं कुक्कुटाण्डोदरे भिषक् ॥ ८८३ ॥
वल्लमात्रं लिहेत्क्षौद्रै रुद्रेशो वातशूलजित् ।
हिङ्गु सौवर्चलं शुण्ठीमक्षमुष्णाम्बुना पिवेत् ॥ ८८४ ॥

ना वि, र को, यो म, र क ल, र. र, शूले ।

टि०—रुद्ध्वा मृदुपुटे पक्त्वा कुक्कुटाख्ये तथोद्धरेदिति पाठान्तर दृश्यते परन्तु कुक्कुटाण्डोदरे इति पाठ समीचीनतामावहति पारदा-दीना स्थिरीकरणात् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक तथा ताम्रभस्म, शुद्ध मैनसिल, सैन्धव, सोनामाखी, हरिताल धतूरेकेवीज, हींग और सूरणकन्द समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिला-कर मराठी, निर्गुण्डी, अड्सा और एरण्डके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय मुर्गीके अण्डेमेंभरके दूसरेअण्डेकीखोल चढाय गुड़चूनेसे सन्धिवन्दकर ६–७ कपडमिट्टी देकर वालू अथवा लवणयन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशेकी मात्रा मधुकेसाथ

देकर हींग, संचल और सोंठकाचूर्ण १ तोला गरमपानीके साथ देनेसे सवप्रकारके शूलोंको यह नष्टकरताहे ॥ १९२ ॥

१९३ रुद्रेश्वररसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं कान्तं व्योम च मारितम्।
मण्डूरं वाकुचीवीजं निशा श्लेष्मातवीजकम् ॥ ८८५ ॥
विडङ्गं त्रिफला वह्नि भृङ्गं कृष्णा तिलाऽभये ।
श्योनाककुसुमं तुल्यं चूर्णयेच्च सितायुतम् ॥ ८८६ ॥
कांस्यपात्रस्थितं भक्षेत्कर्षैकं मधुसर्पिषा ।
सर्वकुष्ठहरः सोऽयं महारुद्रेश्वरो रसः ॥ ८८७ ॥

रसायनसं., यो.म., र,का , कुष्ठे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, कान्तलोह, अभ्रक, मण्डूर इनकीभस्में, वाकुची, हल्दी, लसोडेकेवीज, विडङ्ग, त्रिफला, चित्रक, भंगरा, पीपल, तिल, हर्रे, सोनापाठाकेफूल सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर वरावरकी शक्कर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ तोला कासेकेवर्तनमें वरावरके घी और मधुकेसाथ खानेसे यह समस्तकुष्ठोंको दूरकरताहै ॥ १९३ ॥

१९४ रेतोरोधनपोट्टलीरसः

आकल्लजातीफलजातिकैला-
कस्तूरिकाकुङ्कुमहिङ्गुलानाम् ।
पटे पटुः पोट्टलिकां प्रणीय
निक्षिप्य दुग्धे विपचेद्धसन्त्या ॥ ८८८ ॥
ज्ञात्वाऽर्धशेषं ससितं पयस्त-
न्निष्कास्य तां पोट्टलिकां पिवेद्यः ।
भवन्ति भोगाय न तस्य शक्ताः
प्रचण्डकामाः शतशोऽपि रामाः ॥ ८८९ ॥

सि भे म,, वाजीकरणे।

भाषा—अकलकरा, जायफल, जावित्री, इलायची, कस्तूरी, केशर और शिंगरिफ सवसमभागलेकर ४ रत्तीसे १ माशेतक मलमलकेधोयेहुएटुकड़ेमें पोटलीवगाय दूधमें छोड़देवे और चूल्हेपर चढ़ादे। जव अधौटा दूधहोजाय तव पोटलीको निकालकर उस दूधको पीकर सम्भोगमें प्रवृत्त हो तो मदोन्मत्त वहुतसी स्त्रियां उसके तृप्तकरनेके लिये समर्थ नहीं होती हैं ॥ १९४ ॥

१९५ रेतोरोधिनीगुटिका (प्रथमा)

जातीफलस्य फणिफेनभृतोदरस्य
लिप्तस्य सत्पुटमृदा परिपाचितस्य ।
एलाकुरङ्गसुमकुङ्कुमहिङ्गुलाढ्या
रेतो रुणद्धि गुटिका पयसा निपीता ॥८९०॥

सि.भे.म , वाजीकरणे।

भाषा—जायफलमें छेदकर एकमाशा अफीम डालकर गेहूंके आटेके अन्दर वन्दकर पुटपाककरे। शीतलहोनेपर निकालकर इसमें इलायची, कस्तूरी, लौंग, केशर और शुद्धशिंगरिफ ये प्रत्येक अफीमकेवरावर मिलाकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली दूधकेसाथ लेनेसे यह वीर्यको रोकतीहै ॥ १९५ ॥

१९६ रेतोरोधिनी गुटिका (द्वितीया)

धत्तूरबीजविषमुष्टिकगन्धसूत-
जातीफलानि सलिलेन पृदाकुवल्ल्याः ।
पिष्ट्वा विशिष्य मसृणं गुटिकीकृतानि
रुन्धन्तिधातुमधिमन्मथकेलि यूनाम् ॥८९१॥

सि भे. म., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध धतूरेकेवीज, कुचिला, गन्धक और पारा, जायफल सव समभागलेकर पकेपानोकेरससे एकदिनमर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली सम्भोगसे १ घंटा पहिले दूधकेसाथलेनेसे वीर्यका स्तम्भन होताहै १९६

१९७ रेतःस्तम्भकपारदः

शुद्धं सूतमिषुप्रतोलकमितं गन्धं तथाशोधितं,
पश्चाक्षं परिगृह्य संयुतमुखां शुक्तिं समुद्घाट्यताम् ।
तत्कीटं परिहृत्य शुक्तिजठरादन्तः क्षिपेद्गन्धकं,
प्रोक्तस्याऽर्द्धमथान्तरे विनिहितं सूतं समस्तं ततः ॥
सूतस्योपरि शेषगन्धकरजः संक्षिप्य तन्मध्यगं,
सूतं शुक्तिकयान्ययोपरिगया सम्मुद्रय मृद्वस्त्रकैः ।
तां शुक्तिं परिशोष्य सूर्यकिरणात्सन्दीप्यतेऽग्निस्तुषै-,
र्धान्यानां गजसञ्ज्ञके वरपुटे तत्स्वाङ्गसंशीतलम् ॥
सञ्चूर्ण्याशुकगालितं किल भवेद्गुञ्जोन्मितं पुष्टिकृ-,
द्रेतःस्तम्भनकृत्पयोऽनु च पिवेत्सायं सितासंयुतम् ॥

व , चि र. म , रसायनस , र सु., वाजीकरणे । रसायनसङ्ग्रहे **स्तम्भनरस** इति नाम ।

टि०—अत्र योगे शुक्तौ गन्धकमध्ये पारदस्थापनमुद्दिष्टम्। परन्तु प्रथमतस्तस्य यथास्थितिरेव दुस्तरा अतिचञ्चलत्वात्। ततोऽनन्तर तुषपुटे अग्नौ स्थितिरपि दुर्वारा, केवला शुक्तिरेवाऽवशेषता भजिष्यति । अत प्रथम येनकेनापि प्रकारेण पारदस्य नियमन विधाय शुक्तौ स्थापनीय इति गूढ रहस्यम्। अन्योपायाऽभावेऽरणिपत्रे चुक्रे वा नष्टपिष्टता विधाय शुक्तौ स्थापयित्वा शुक्तिञ्च शरावसम्पुटान्तर्गर्भिता कृत्वा पुट प्रदेय इत्यस्माकं सम्मतिः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ५–५ तोलेलेकर गन्धकका वारीकचूर्णकर जीतीहुई सीपका मुंह खोलकर जीवको वाहर निकालकर आधा गन्धक उसमें विछाकर ऊपर पारेकोरखकर वचेहुऐगन्धकसे ढकदे । फिर दूसरी सीपसे ढककर चूना और गुड़से सन्धिको वन्दकर ६–७कपड़मिट्टी देकर सुखाकर चावलकी भूसीकी गजपुटमें आच देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सीपसहित चूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा शक्करडालेहुए दूधकेसाथ लेनेसे यह वीर्यका स्तम्भनकरताहै ॥१९७॥

१९८ रोगनाथरसः

अर्धार्धतुल्यौ रसनागनिष्कौ
पृथक्पृथग्गन्धकटङ्कणश्च ।

शङ्खस्य निष्कौ मृतताम्रतो द्वौ
वराटिकानां नवसम्पुटानाम् ॥ ८९४ ॥
मध्ये च पक्त्वा कदलीद्रवार्द्रा
भूयोऽर्द्धभागेन गजोपकुल्या।
तदर्द्धपादं मरिचं प्रदद्या-
द्गन्धात्सुनिष्कं च घृतेन लिह्यात् ॥८९५॥
अश्नीयात्पूर्ववत्पथ्यं वासराण्येकविंशतिम्।
रोगनाथो रसो नाम्ना रोगराजनिकृन्तकः॥ ८९६ ॥

र को, र.र.स, राजयक्ष्मणि।

टि०—रसेन्द्ररत्नकोषे द्वितीयस्थाने अस्य लोकनाथेतिनाम, तदज्ञानात्, समानयोगस्य द्विनामदानस्याऽनौचित्यात्।

भाषा—शुद्धतूतिया २ माशे, शुद्धपारा, नागभस्म, गन्धक और सुहागा ४–४ माशे, शङ्ख और ताम्रभस्म ८–८ माशे लेकर नीलवर्णकज्जलीकर पीली ९ कौड़ियोंमें भरकर आकके-दूधमें पिसेहुए सुहागेसे सन्धि बन्दकर कौड़ियोंको शरावसम्पुटमें रख ६–७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर समस्तसे आधीगजपीपल और उससे आधीमरिच तथा ४ माशे शुद्धगन्धक मिलाकर केलेकेकन्देकेरससे १–२ रोज़ मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा घीकेसाथ सेवनकरनेसे २१ दिनमें यह राजरोगको नष्टकरताहै ॥ १९८ ॥

१९९ रोगपञ्चाननरसः

सूतटङ्कौ वरागन्धकत्र्यूषणं
वत्सनाभो घनस्तुल्यतो मर्दयेत्।
भृङ्गनीरेण तद्गुल्मवातोदरं
रक्तिकाभा वटी रोगपञ्चाननः॥ ८९७ ॥

रसायनसं., वै वि., गुल्मे।

भाषा—शुद्धपारा, सुहागा, त्रिफला, गन्धक, त्रिकटु, वछनाग और अभ्रकभस्म येसब समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भंगरेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे गुल्म और वातोदर नष्टहोताहै॥१९९॥

२०० रोगभञ्जनरसः

मृतं सूतं मृताऽभ्रञ्च मृतं ताम्रं विषं समम्।
जम्बीरफलजद्रावै मर्दितं प्रहरत्रयम् ॥ ८९८ ॥
दोलायन्त्रेण तत्पाच्यं शिखिपित्तेन भावयेत्।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ॥
सर्वे रोगा विनश्यन्ति रसोऽयं रोगभञ्जनः ॥ ८९९ ॥

वै चि, सन्निपाते।

भाषा—पारा, अभ्रक, ताम्र इनकीभस्में और शुद्धवछनाग समभागलेकर जभीरीकेरससे ३ पहर मर्दनकर गोलाबनाय जभीरीकेही रससे ३ पहर स्वेदनकर मोरकेपित्तसे १–२ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तसन्निपातोंको दूरकरताहै। रसव्याप्तिकेलिये जलधारादेना अत्यावश्यकहै ॥ २०० ॥

२०१ रोगशुरदलनरसः

स्वर्णं रूप्यञ्च ताम्रं सममथहरजं
वार्धिभागञ्च गन्ध-,
स्याऽष्टौ भागान्विमर्द्य त्रिदिन-
मनलजोत्थेन वारार्कघर्मे।
संयोज्याऽजादिपित्तं विषमपि
हरजात्षोडशांशञ्च दत्त्वा,
देयो वल्लद्वयोऽयं गदशुर-
दलनः पावकत्र्यूषणेन ॥ ९०० ॥
तैलाभ्यक्ताय कुर्यात्सलिलविधि-
मथो रोगिणे दध्युपेतं,
भक्तं खण्डं मरीचं यदि भवति
मनोवासना पथ्यभुक्तौ।
उद्वृत्तं सन्निपातं जयति लघुतरं
शैत्यतन्द्राविमोहं,
वातव्याधींश्च सर्वान् कफजनित-
महारोगनाशे प्रसिद्धः ॥ ९०१ ॥

र ल., र. शं., सन्निपाते।

भाषा—सुवर्ण, रजत और ताम्रभस्म १–१ भाग, शुद्धपारा ४ भाग, शुद्धगन्धक ८ भाग लेकर बारीकपीस पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर चित्रकमूलकेकाढ़ेसे ३ रोज़ मर्दनकर धूपमें सुखाकर पाचोंपित्तोंकी १–१ भावनादेकर पारेसे षोडशांश शुद्धवछनाग डालकर ६–६ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली चित्रक और त्रिकटुकेसाथ देनेसे घोरसन्निपात, शीत, तन्द्रा, मोह, वातव्याधिया और कफरोग नष्टहोतेहैं। इसकासेवनकरनेवालेको तैलाभ्यङ्गकराके मस्तकपर जलकी धारादेना। भूखलगनेपर दही, भात, खाड, मरिच, येसब देनेचाहियें ॥ २०१ ॥

२०२ रोगविघ्नगणेशरसः

रसस्त्र्यूषणं गन्धशुल्वाऽऽयसश्च
भुजङ्गः समा वत्सनाभोऽभ्रकश्च।
समं चूर्णितं वल्लकश्चाऽनुपाने-
रशेषैः सदा रोगविघ्नो गणेशः ॥ ९०२ ॥

रसायनसं, वै वि, र ल, र शं, र का, टो, र को., सर्वरोगे। र का, टो, विघ्नगणेश इतिनाम। वै वि अभ्रकस्थाने अनलो दृश्यते। र का. अभ्रकस्याऽभाव।

भाषा—शुद्धपारा, त्रिकटु, गन्धक, ताम्र, लोह और नाग इनकीभस्में, शुद्धवछनाग, अभ्रकभस्म सब समभागलेकर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २०२ ॥

२०३ रोगविदारणरसः

हरवीर्यं वत्सनाभं टङ्कणं माक्षिकं कणाम् ।
तालकं गन्धकं चाभ्रं त्रिपापाणश्च सैन्धवम् ॥ ९०३ ॥
सर्वं भृङ्गस्य नीरेण मर्दयेत्प्रहरत्रयम् ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ॥ ९०४ ॥
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं तृष्णार्थं शीतलं जलम् ।
अयं धन्वन्तरिप्रोक्तो रसो रोगविदारणः ॥ ९०५ ॥

वै चि., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग, सुहागा, सोनामाखी, पीपल, रसमाणिक्य, शुद्धगन्धक, अभ्रकभस्म, स्याह, सफेद और पीलासोमल, सेंधानमक समभाग लेकर वारीकपीसकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भंगरेकेरससे ३ पहर मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त सन्निपातोंको नष्टकरताहै। इसमें दही, भात और ठंढाजल पथ्य देना ॥ २०३ ॥

२०४ रोगान्तकोरसः

दशधा पातितं सूतं स्विन्नं प्रागुक्तयुक्तितः ।
रसेश्वरं समादाय प्रखरीसलिले भृशम् ॥ ९०६ ॥
खल्वमध्ये विनिःक्षिप्य मर्दयेदुपविंशकान् ।
दिवसांस्तद्द्रवैर्मूलैश्चक्रिकां रचयेद् दृढाम् ॥ ९०७ ॥
चक्रिकां दृढभाण्डस्य सन्दध्यान्मध्यभाण्डके ।
उपरिष्टात्सूतकल्कं मर्दितं विनिवेशयेत् ॥ ९०८ ॥
तस्योपरिष्टात्प्रखरीमूलचक्रीं निवेशयेत् ।
दृढं शरावं सन्दध्याद् दृढो लेपः क्रमेण वै ॥ ९०९ ॥
जलपूर्णं विधायाऽथ चुल्ल्यां यन्त्रं निवेशयेत् ।
दिनानि त्रीणि संकाथ्य रसं यन्त्रात्समुद्धरेत् ॥९१०॥
अन्यं भाण्डं समादाय वत्सनाभस्य चूर्णकम् ।
भाण्डमध्ये विनिःक्षिप्य तस्योपरि रसं क्षिपेत् ॥९११॥
उपरिष्टाद्वत्सनाभचूर्णं रससमं क्षिपेत् ।
पूर्ववत्सन्धिलेपञ्च कृत्वा यन्त्रं जलोपितम् ॥ ९१२ ॥
चुल्ल्यामारोपयेद्वह्निं ज्वालयेदुपविंशकान् ।
दिवसान् पारदः सोऽयं भस्मीभवति नाऽन्यथा ९१३
गृहीत्वा भस्मसूतं तं निम्बुद्रावेण मर्दयेत् ।
स्तोकमात्रं तेन लिम्पेद्धेमपत्राणि बुद्धिमान् ॥ ९१४॥
ऊर्द्धाऽधो माक्षिकं दत्त्वा पुटयेद्वन्यगोमयैः ।
भस्मीभूतं भवेद्धेम तद्वद्रजतमारणम् ॥ ९१५ ॥
ताम्रं तीक्ष्णं वङ्गनागौ तया युक्त्यैव मारयेत् ।
मृतानि तानि लोहानि गृह्णीयात्सूतपादतः ॥ ९१६ ॥
माक्षीकं गन्धकं तालं मनोह्वां हिङ्गुलं तथा ।
तुत्थञ्च रसकञ्चैव सूतपादांशतः क्षिपेत् ॥ ९१७ ॥
एकीकृत्य रसैः सार्धं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ।
शुष्कमर्दनयोगेन दिनमेकं विचक्षणः ॥ ९१८ ॥
वाते त्रिकटुना देयः श्लेष्मण्यपि तथैव हि ।
पैत्तिकेषु विकारेषु गुडूचीसत्त्वयुक्तया ॥ ९१९ ॥
युक्तो योज्यः शर्करया मूलजे शिखिवक्त्रया ।
कुष्ठेषु खदिरक्काथं वाकुचीचूर्णसंयुतम् ॥ ९२० ॥
प्रयुञ्जीत रसं वैद्यस्तत्तद्योगोक्तयोगतः ।
रोगान्तक इति ख्यातः सर्वव्याधिविनाशनः ॥९२१॥
दृष्टप्रभावः सृष्टोऽत्र लोकोपकृतिहेतवे ।
देवीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ ९२२ ॥

रसालं, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—नियामक औषधियोंमें मर्दनकरके दशवार ऊर्द्ध्वपातितकियाहुआ शुद्धपारा लेकर कुकरौंधेकीजड़केरससे २० रोज़तकमर्दनकर चक्री वनाय मज़बूत घड़ेकेबीचमें रखकर कुकरौंधेकेमूलके कल्ककीटिकड़ी पारेसे चौगुनेवज़नकी ऊपर ढककर मिट्टीकेमज़बूतढक्कनसे ढककर जलमुद्रासे वन्दकर घड़ेमें पानीभरदे और चूल्हेपरचढ़ाय ३ दिनतक निरन्तर अग्निदेवे। ठंढाहोनेपर यत्नपूर्वक पारेको निकालकर फिरसे पूर्वोक्त औषधिकेरससे घोटकर टिकियाबनाय दूसरे नवीनघड़ेमें पारेकी बराबर वछनागका चूर्ण विछाकर ऊपर रसचक्रिकाकोरख उसीकेबराबर दूसरे वछनागकेचूर्णसे ढकदे और मजबूत शरावसे ढककर जलमुद्राकरपानीसे भरकर चूल्हेपर चढाय २० दिनकी अग्निदेवे। पानीकमहोनेपर दूसरा डालताजाय। बीसवेंरोज पानी विलकुल सुखादे। १–२ अङ्गुलपानी वाकीरहनेपर आचवन्दकरदे और यन्त्रको चूल्हेपर रहनेदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर धीरजसे मुद्राको खोल भीतरसे पारेकीभस्मको निकालकर थोड़ासा नीबूकारस डालकर मर्दनकर सुवर्णके वारीकपत्रोंपर लेपकर सुखाकर शरावसम्पुटमें नीचेऊपर सोनामाखीकाचूर्ण देकर सुवर्णपत्रोंको वन्दकर २–४ कपड़मिट्टीकरदे। सूखनेपर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर सुवर्णभस्मको निकालकर रखछोड़े। इसीतरह चादी, तावा, फोलाद, वङ्ग और नागकी भस्मकरे। येसवभस्में १–१ भाग, पारदभस्म ४ भा; शुद्ध सोनामाखी, गन्धक, हरिताल, मैनसिल, शिगरिफ, तुत्थ और खपरिया १–१ भाग लेकर सवको इकट्ठे मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीकी मात्रा वायु और श्लेष्ममें त्रिकटुकेसाथ, पित्तमें शकरयुक्त गिलोयसत्त्व, ववासीरमें मोरशिखा और कुष्ठमें वाकुचीकाचूर्ण डालेहुए खैरके क्वाथकेसाथ देनेसे येसव नष्टहोतेहैं। इसीतरह तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २०४ ॥

२०५ रोगेभसिंहरसः (श्रीखण्डवटी)

सूतद्वयीघनवराऽनलवेल्लभार्ङ्गी-
तिक्ताकटुत्रयविषैः सवचैः समांशैः ।
रोगेभसिंह इति वातकफामयघ्नः
सान्द्रोऽयमल्पपुटितो विहितो द्विगुञ्जः ॥९२३॥
एतै गुंडप्रमृदितै रसवर्जितैः स्या-
च्छ्रीखण्डनामगुटिका विहिता द्विगुञ्जा ।

शैत्याद्यजीर्णकफवातभवान्विकारा-
न्हन्त्यार्द्रकद्रवयुताऽप्यथ केवला वा ॥ ९२४ ॥

र सं, व, टो., र र.दी, रसायनसं., र. का., वातव्याध्यधिकारे। रसायनसङ्ग्रहे व्याधिगजकेसरीति नाम।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, अभ्रकभस्म, त्रिफला, चित्रक, विडङ्ग, भारङ्गी, कुटकी, त्रिकटु, वच और शुद्धवछनाग समभागलेकर विषको छोड़कर इसयोगमें आईहुई वनस्पतिओंकेकाढ़ेसे १–१ भावना देकर गोलावनाय पकेपानोंमेंरख सूतसेलपेटकर एकवालिस्तकेखड्डेमें रखकर ऊपरसे वालूभर वराहपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह तमामवातव्याधियोंको दूरकरताहै। इसमेंसे धातुओंको निकालकर गोली वनाईजायतो उसकानाम श्रीखण्डवटीहै और उसको अदरखकेरस अथवा केवलपानीकेसाथ देनेसे कफ और वातविकार दूरहोतेहै २०५

२०६ रोमवेधरसः

शृङ्गीविषं सर्पमहाविषञ्च
शुद्धं समं सूतकगन्धकञ्च।
एकाऽधिकं विंशतिवासराणि
निधाप्य यन्त्रे सजलप्रदेशे ॥ ९२५ ॥
गुञ्जैकमात्रं सघृतं प्रपिष्टं
नवज्वरे चाऽष्टविधज्वरार्ते।
अभ्यङ्गमात्रेण निहन्ति सर्वा-
न्यथा भुजङ्गं गरुडो गरीयान् ॥ ९२६ ॥
रामवेध इति ख्यातो रसराजश्चिकित्सकैः।
कौतुकार्थं नरेन्द्राणां धन्वन्तरिविनिर्मितः ॥ ९२७ ॥

रसायनसं., र.सु, भै सा, टो, र.का., यो म., र (मा) ज्वराऽधिकारे। रसायनसङ्ग्रहे सर्वरोगाऽधिकारे। र (मा.) मर्दनज्वरारि।

भाषा—शुद्धवछनाग, सर्पविष, शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें विषोकों मिलाकर १–२ दिन मर्दनकर शीशीमें भरके मुंहपर मोमवगैरहसे इसतरहवन्दकरे कि पानी जानेकी शङ्का न रहे। फिर इसे जहा हमेशा पानी भरारहताहो अथवा गिरता हो उसजगह हाथभर खड्डा खोदकर नीचे गाड़दे और २१ रोज़तक रहनेदे। इसकेवाद इसमेंसे १ रत्तीलेकर घीमेंमिलाय तमाम शरीरपर मालिशकर कपड़ा ओटाकर सुलादे। इससे पसीनाहोकर तत्क्षण आठप्रकारका ज्वर निकलजाताहै ॥ २०६ ॥

२०७ रोहीतकलोहम्

रोहीतकसमायुक्तं त्रिकत्रययुतं त्वयः।
प्लीहानमग्रमांसञ्च यकृतञ्च विनाशयेत् ॥ ९२८ ॥

र म, र. चि, ध, र क, भै र, र सु, र च, र र, र का, रसायनस., यकृत्प्लीहाऽधिकारे।

भाषा—रोहिड़ेकीछाल, त्रिकटु, त्रिफला, त्रिमद (विडङ्ग, नागरमोथा, चित्रक) नव समभाग, इनसबकी वरावर लोह भस्म मिलाकर इन्हींकेक्वाथोंसे २–४ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शरपुङ्खमूलवगैरहके क्वाथसे लेनेसे प्लीहा, अग्रमास, यकृत, इनसव रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २०७ ॥

२०८ रौप्यरसवटी

पारदं राजतं चूर्णं समं शुद्धं विमर्दयेत्।
गोलं कृत्वा च संस्थाप्य दिनमेकं करण्डके ॥ ९२९ ॥
द्वितीये दिवसेऽङ्गारे लोहपात्रे विनिःक्षिपेत्।
लोहदण्डेन सङ्घृष्य शुभ्रं भस्म च कारयेत् ॥ ९३० ॥
तद्रौप्यभस्म निष्कैकं द्विनिष्कं कुङ्कुमं शुभम्।
जातीकोषफले चैव लवङ्गं शङ्खजीरकम् ॥ ९३१ ॥
प्रतिकर्षं तथा नारीकेलमज्जा च भूपला।
भल्लातकाच्च निर्वीजातपलं ग्राह्यं प्रयत्नतः ॥ ९३२ ॥
तिन्तिडीफलमांसञ्च योजयेत्पलपञ्चकम्।
विधिवत्सर्वमेकत्र मर्दयेत्सुदृढं भिषक् ॥ ९३३ ॥
कोलमाना च वटिका तिलतैलेन योजयेत्।
किं वा कौसुम्भतैलेन सद्यो निष्कासितेन वा ॥९३४॥
धेनुदध्नाऽथवाऽऽज्येन सायं प्रातः प्रयोजयेत्।
आम्रशुक्तादिसम्भूतं रसं कर्षञ्च पाययेत् ॥ ९३५ ॥
वटी रौप्यरसा नाम सर्वमेहविनाशिनी।
पूतिमेहं विशेषेण पथ्यं सामान्यमाचरेत् ॥ ९३६ ॥
वर्जयेद्वर्षपर्यन्तं पनसं तुम्बिजं फलम्।
अन्या च वटिका नास्ति पूतिमेहविनाशिनी ॥९३७॥

र चं, प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और चादीका वारीकवेता समभाग लेकर एकदिन मर्दनकर गोलावनाय शीशीमें वन्दकर रखछोड़े। दूसरेदिन लोहेकी कड़ाहीमें डालकर नीचे वेरकीलकड़ीकी आच जलावे और लोहेके डडेसे घर्षणकरताजाय। ऐसे ४ पहर रगड़नेमे जव एकदम श्वेतवर्णहोजाय तव उतारकर रखले। फिर चादीभस्म ४ माशे, केशर ८ माशे, जावित्री, जायफल, लवङ्ग, सङ्गजराहत १–१ कर्ष, नारियलकीमज्जा, वीजनिकालेहुए भिलावे और इमलीकीमज्जा १–१ पल लेकर सवको वारीकपीस वेरवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्काल निकालेहुए तिल अथवा कुसुम्भके तैलकेसाथ अथवा गायकी दही अथवा घीकेसाथ सुवहशाम देकर ऊपरसे आमप्रभृतिके अचारका १ तोलारस पिलावे। इसकेसेवनसे पूतिप्रमेह नष्ट होताहै इसमें पथ्य साधारण रक्खाजाताहै विशेषकी जुरूरत नहीं, पर कटहर और तूमड़ी एकवर्षतक नखाय। इसकेसदृश सुजाकको नष्टकरनेकेलिये दूसरी दवा नहींहै ॥ २०८ ॥

२०९ रौप्यराजरसः

रसेन्द्रभागद्वितयं म्लेच्छक्षारं चतुर्गुणम्।
काकजङ्घारसे मर्द्यं खल्वे दिवसपञ्चकम् ॥ ९३८ ॥
ताम्रसम्पुटके रुद्ध्वा सच्छिद्रे हण्डिकान्तरे।
निवेश्य वालुकां दत्त्वा देयोऽग्निः प्रहराष्टकम् ॥९३९॥

स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य मधुटङ्कणसंयुतम् ।
धमेन्मूषागतं तावद्यावद्भ्रमति तारवत् ॥ ९४० ॥
रौप्यराजरसः सोऽयं भगन्दरकुलान्तकः ।
वल्लमात्रममुं लीढ्वा मधुना सह पथ्यभुक् ॥ ९४१ ॥
त्रिफलायाः पिबेत्क्वाथं पश्चात्पथ्यं हितञ्चरेत् ।
मुक्तः स्वल्पैरहोभिः स्याद्भगन्दरमहागदात् ॥ ९४२ ॥

वृ. यो. त , टो , र. का., वै र , र. क ल , र. कौ., रसायनसं., चि. र. भ., भगन्दरे ।

भाषा—शुद्धपारा २ भाग, सगरास्क ४ भागलेकर वारीकचूर्णकर काकजङ्घाकेरससे ५ रोज़ मर्दनकर ताम्रसम्पुटमें बन्दकर २–४ कपड़मिट्टी देकर छिद्रसहित हंडीकेबीचमें रख ऊपरसे वालुकासे ढककर ८ पहरकी अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मधु और सुहागा मिलाकर मूषामें धमन करावे। जब चांदीकीतरह चक्ररखानेलगे तब टालकर रखछोड़े । फिर इसका वारीकचूर्णकर ३–३ रत्ती मधुकेसाथ खाकर त्रिफलाकाक्वाथ पीकर हितभोजन करनेसे थोड़ेहीदिनमें भगन्दररोगसे निवृत्ति होतीहै ॥ २०९ ॥

२१० लङ्केश्वरोरसः (प्रथमः)

सूताऽभ्रशुल्वानि च मारितानि
सगन्धकं तालशिलाद्रवौ च ।
विषाऽम्लवेतौ च समं समस्तं
दिनत्रयं चाम्लरसैर्विपेष्यम् ॥ ९४३ ॥
समाक्षिकेणैव मृतेन कुर्या-
द्वटींद्विगुञ्जाञ्च शतारुहन्त्रीम् ।
लङ्काऽधिपाख्यस्तु रसः प्रसिद्धो
निहन्ति कुष्ठांश्च शतारुकादीन् ॥ ९४४ ॥
फलत्रयं निम्बवचाऽरुणे च
पटोलमूलं कटुका निशाख्या ।
क्वाथीकृतं चानुपिबेच्च नित्यं
लङ्काधिपाख्यं तु रसं निषेव्य ॥ ९४५ ॥

चि क , र. स., र चि., र सु , र. र , र., व रा., र का , वै चि , रसेन्द्रसं., यो. म , र. र. कौ., शतारुकुष्ठे । यो म. रसादिगुटी । र र कौ कुष्ठदलनेति नाम ।

भाषा—पारा, अभ्रक, ताम्र इनकीभस्में, शुद्ध गन्धक, हरिताल, शिलाजीत और वछनाग, अमलवेत, सोनामाखीकी-भस्म समभाग लेकर वारीकचूर्णकर जभीरीप्रभृतिकेरससे ३ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली त्रिफला, नीमकीछाल, वच, मजीठ, परवलकीजड़, कुटकी और हल्दी समभागके क्वाथकेसाथ लेनेसे यह शतारुष्क-प्रभृतिकुष्ठोंको नष्टकरताहै ॥ २१० ॥

२११ लङ्केश्वरोरसः (द्वितीयः)

भस्म सूतार्कलोहानां कृष्णागन्धकटङ्कणम् ।
कुष्ठं तुत्थञ्च तुल्यांशं मर्द्यं धुत्तूरजै र्द्रवैः ॥ ९४६ ॥
दिनैकं तद्वटीं कुर्यान्माषमात्राञ्च भक्षयेत् ।
रसो लङ्केश्वरो नाम्ना प्रसुप्तिमण्डलप्रणुत् ॥ ९४७ ॥
गन्धकं त्रिफलाचूर्णं निर्विषीं गुग्गुलुं समम् ।
लिहेदेरण्डतैलेन कर्षैकमनुपानकम् ॥ ९४८ ॥

र र., र , र. का., कुष्ठाऽधिकारे ।

भाषा—पारा, तावा और लोह इनकीभस्में, पीपल, शुद्धगन्धक, सुहागा, कुठ और तूतिया समभागलेकर वारीकचूर्णकर धतूरेकेरससे एकदिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली खाकर शुद्धगन्धक, त्रिफला, निर्विषी और गूगल समभागलेकर १ तोला ऊपरसेएरण्डतैलकेसाथ-खिलानेसे सुप्तवात और मण्डलप्रभृति कुष्ठोंको यह दूरकरताहै ॥

२१२ लङ्केश्वरोरसः (तृतीयः)

तालकं माक्षिकं तुत्थं हरवीजं सगन्धकम् ।
कर्कोटीकन्दतोयेन मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ ९४९ ॥
चुल्ल्यां पाच्यं चतुर्यामं सितया च ज्वरापहः ।
अयं लङ्केश्वरो नाम शीतमातङ्गकेसरी ॥ ९५० ॥

र. सु., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध हरिताल, सोनामाखी, तुत्थ, पारा और गन्धक समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर खेखसेकेकन्देकेरससे ७ दिनतक मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें डालकर वालुकायन्त्रमें रख ४ पहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक शक्करकेसाथदेनेसे यह शीतज्वरकानाशकरताहै॥

२१३ लङ्केश्वरोरसः (चतुर्थः)

शिवशिवोषणलोहनभोदरा-
न्द्विजनृपोपलभस्मनिभान् क्रमात् ।
शशिशशीन्दुकृशानुधनेशकै-
रपि मितानथ षोडशभूमितान् ॥ ९५१ ॥
परिविमृद्य तथाम्बुघटीरसै-
र्भवति रावणवासपुरीश्वरः ।
हरति सूतिगदांस्त्रिभवज्वरं
निजधियार्द्रकनीरसितादियुक् ॥ ९५२ ॥

चि क , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, हर्रे और मरिच १–१ भाग, लोहभस्म ३ भा , अभ्रकभस्म २ भा., शङ्खभस्म ११ भा , मोती १६ भा , लाजवर्द १ भागलेकर सबको वारीकपीस नारियलकेपानीसे २–३ रोज़ मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली औचिती देखकर अदरखकेरस अथवा शक्करप्रभृति केसाथदेनेसे यह प्रसूतिरोग और सन्निपातको दूरकरताहै ॥ २१३ ॥

२१४ ललितनाथोरसः

ग्राह्यो बुभुक्षितः सूतः सर्वदोषविवर्जितः ।
सहदेवी च मुशली कर्कटी च कुमारिका ॥ ९५३ ॥

मुण्डी भृङ्गी रसैरेषां प्रत्येकं सप्त भावनाः ।
दुग्धाऽर्मणे पलद्वन्द्वं स्वेदयेत्त्रिदिनं भिषक् ॥ ९५४ ॥
सूरणान्तर्विनिक्षिप्य मृत्कर्पटविलेपिते ।
शरावयन्त्रे वह्निश्च दद्याद् द्वादशयामकम् ॥ ९५५ ॥
मृत्कूपिकायां निक्षिप्य वहावाकाशयन्त्रतः ।
मदिरापुष्पविप्रुड्भिः पाचयेद्दिनसप्तकम् ॥ ९५६ ॥
तत एरण्डतैलेन ज्योतिर्यन्त्रे विपाचयेत् ।
पुनः शीतं गृहीत्वा तत्तैलेनाऽनेन मर्दयेत् ॥ ९५७ ॥
विषतिन्दुकभल्लातनिम्बस्नुग्बीजपञ्चकम् ।
ऋषिज्योतिष्मतीधूर्तनाकुलीकरवीरकम् ॥ ९५८ ॥
अजमोदाफले रेषां तैले पातालयन्त्रजे ।
विषं विभाव्य तत्तैले गन्धं तालं विमर्दयेत् ॥ ९५९ ॥
जैपालं सर्वतुल्यञ्च गन्धतुल्यं लवङ्गकम् ।
जातीपत्रफले कृष्णामेतेषां तैलमाहरेत् ॥ ९६० ॥
तत्तैले मर्दयेत्सूतं तच्च जातीफलान्तरे ।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य वह्निं द्वादशयामकम् ॥ ९६१ ॥
सुसिद्धोऽयं रस. प्रोक्तो नाथस्तु ललिताह्वयः ।
रक्तिकापादमानेन हन्ति सर्वाऽऽमयाञ्जवात् ॥
मदात्ययक्षयश्वासोन्मादकासादिकान्गदान् ॥ ९६२ ॥

र का ,मदात्ययाऽधिकारे ।

भाषा—समस्तदोषोंसेनिर्मुक्त और बुभुक्षित पारा लेकर सहदेवी, मुशली, ककड़ी, घीकुंवार, गोरखमुण्डी और भंगरेके-रसोंसे ७–७ दिन मर्दनकर गरमकाञ्जीसे साफकरले फिर इस-मेंसे २ पल पारेको एकद्रोणदूधमें तीनदिनतक स्वेदनकर पके-हुए मोटे सूरणके कन्दमें खोदकर रखदे और ऊपरसे उसीकी डाटलगाय सन्धिवन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेवे । सूखनेपर किसी-मिट्टीकीनादकेअन्दर रखकर दूसरीनादसे वन्दकर चूल्हेपर रख १२ पहर की साधारण अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे निकालकर ४ तह मलमलके कपड़ेमें बाधकर मिट्टीकेघड़ेमें मद्य-भर नालके मुंहपर इसे लटकादे और नीचे मिट्टीकाही घड़ालगा-कर मुहवन्दकरदे और धीरे २ मद्यकेघड़ेमें नीचे आचदे जिसमें कि मद्यकेफुहारे उसपोट्लीपर लगातार पड़तेरहें । यन्त्र इसतरहका वनावे कि अगाड़ीकेकरावेमेंसे मद्यभरनेपर स्वयं निकलजाय और पीछेकेघड़ेमें समाप्तहोनेपर दूसरीभरसकें, आचवीचमें वन्द न करनी पड़े । ऐसे ७ दिनतक स्वेदितकर स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर एरण्डतैलमें डालकर वहुतमन्दाग्निसे सातरोजतक आचदे पर यह ध्यानरहेकि तैलमें आग न लगनेपावे । आठवें-रोज स्वाङ्गशीतल होनेपर पारेकोतैलसे निकालकर खरलमें डाल कुचिला, भिलावा, निवौली, थूहरकादूध, पिस्ता, वादाम, चिरोंजी, अखरोट, चिलगोजा, गोरोचन, मालकागनी, धतूरेके-वीज, नाकुली ?, सफेदकनेरकीजड़, अजमोद, मैनफल, इनका पातालयन्त्रसे तैलनिकाल उसमें ७ दिनतक पारेको घोटे । वचे-हुएतैलमें पारेकेवरावर वच्छनाग, गन्धक और हरितालको भावना देवे । फिर लोंग, जावित्री, जायफल, पीपल तथा शुद्धजमा-लगोटा ३–३ भाग, इनसबको भावना देकर पातालयन्त्रसे तैल निकालकर पूर्वोक्तपारदको इसतैलमें ७ रोज मर्दनकर पश्चात् जायफलकेसाथ घोटकर ६–७ कपड़मिट्टीकीहुई आतशीशीमें डालकर वालुकायन्त्रमेंरख १२ पहरकी क्रमाग्नि देवे । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ चावल समयोचित अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह मदात्यय, क्षय, श्वास, उन्माद और कासप्रभृतिरोगोंको नष्टकरताहै २१४

२१५ लवङ्गपाकः

प्रस्थमेकं लवङ्गस्य पिष्ट्वा दुग्धाऽऽढके क्षिपेत् ।
घनीभूते च तस्मिंस्तु शर्कराप्रस्थमात्रकम् ॥ ९६३ ॥
जातीफलञ्च कङ्कोलं कृष्णा शुण्ठी मरीचकम् ।
त्रिफला रजनीयुग्मं त्रुटी तगरकेशरम् ॥ ९६४ ॥
जातीपत्र्यश्वगन्धा च पौष्करं ग्रन्थिकं वलाम् ।
अहिफेनं लवङ्गञ्च विषं गोक्षुरकं तथा ॥ ९६५ ॥
कर्पूरं खुरसानञ्च चव्यकं नागकेशरम् ।
एतानि कर्षमात्राणि चूर्णीकृत्य विनिःक्षिपेत् ॥९६६॥
सूतं मृतं तथा ताम्रं शाणमात्रं क्षिपेत्सुधीः ।
भक्षयेच्छुक्तिमात्रन्तु गव्यं दुग्धं पिवेदनु ॥ ९६७ ॥
तुष्टिदः पुष्टिदः प्रोक्तो वीर्यस्तम्भकरो मतः ।
पञ्चकासं तथा पाण्डुं श्वासं गुल्मं प्रमेहकम् ॥ ९६८॥
अश्मरी मूत्रकृच्छ्रघ्नं वातं हन्ति तथाऽर्वुदम् ।
पित्तं प्रदरकुष्ठञ्च हिक्कानेत्रशिरोव्यथाः ॥ ९६९ ॥

रसायनस., चि र.भ , र को ,रसायने ।

भाषा—एकप्रस्थ लवङ्गको ४ प्रस्थ दूधमें डालकर पकावे । गाढा होनेपर एकप्रस्थ शक्कर डालकर चाशनी तैयारकरे । फिर जायफल, शीतलचीनी, पीपल, सोंठ, मरिच, त्रिफला, हल्दी, दारुहल्दी, इलायची, तगर, केशर, जावित्री, असगन्ध, पोह-करमूल, पिपलामूल, वला, अफीम, लौंग, शुद्धवच्छनाग, गोखरू, शुद्धकपूर और खुरासानी अजवाइन, चव्य और नागकेशर १–१ कर्षका वारीकचूर्ण तथा पारद और ताम्रभस्म ४–४ माशेलेकर पूर्वोक्त चाशनीमें मिलाकर जमादे । इसमेंसे आधेतोलेसे २ तोलेतक यथाग्निवलखाकर गायकादूध पीनेसे तुष्टि, पुष्टि और वीर्यका स्तम्भन करताहै । पाचप्रकारकी खासी, पाण्डु, श्वास, गुल्म, प्रमेह, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, वायु, अर्वुद, पित्त, प्रदर, कुष्ठ, हिचकी, नेत्र और शिरकेरोग इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ २१५ ॥

२१६ लवङ्गादिचूर्णम् (वृहत्) (प्रथमम्)

लवङ्गं जीरकं कौन्ती सैन्धवं त्रिसुगन्धकम् ।
अजमोदा यमानी च मुस्तकं सकटुत्रयम् ॥ ९७० ॥
त्रिफला शतपुष्पा च पाठा भूनिम्वगोक्षुरम् ।
जातीकोषफले दार्वी नलदं चन्दनं मुरा ॥ ९७१ ॥
शटी मधुरिका मेथी टङ्कणं कृष्णजीरकम् ।
क्षारद्वयं वालकञ्च विल्वं पौष्करकन्तथा ॥ ९७२ ॥

चित्रकं पिप्पलीमूलं विडङ्गं सप्रनीयकम् ।
रसाऽभ्रगन्धकं लोहं समं सर्वं विचूर्णितम् ॥ ९७३ ॥
उष्णोदकानुपानेन मन्दाग्नेर्दीपनं परम् ।
शीततोयाऽनुपाने वा बुद्ध्वा दोषगतिं भिषक् ॥९७४॥
आमातिसारग्रहणीं चिरकालोत्थितामपि ।
शूलं विष्टम्भमानाहं विसूचीं शोथकामले ॥ ९७५ ॥
हलीमकं पाण्डुरोगं हन्ति कासं विशेषतः ।
लवङ्गाद्यं महच्चूर्णं शर्करासहितं पिबेत् ॥ ९७६ ॥
आध्मानं शमयेच्छीघ्रं लवङ्गस्याऽनुपानतः ।
अश्विभ्यां निर्मितं ह्येतल्लोकाऽनुग्रहहेतवे ॥ ९७७ ॥

भै. र., ग्रहण्याम् ।

भाषा—लौंग, जीरा, रोण (पहाडी), सेंधानमक, तज, पत्रज, इलायची, अजमोद, अजवाइन, नागरमोथा, त्रिकटु, त्रिफला, सोंफ, पाठा, चिरायता, गोखरू, जावित्री, जायफल, दारुहल्दी, खस, चन्दन, मुरामांसी, कचूर, सोआ, मेथी, भुनासुहागा, स्याहजीरा, सज्जी, यवक्षार, सुगन्धवाला (तगरगण्ठोला), वेलगिरी, पोहकरमूल, चित्रककीजड़, पिपलामूल, विडङ्ग, धनियां, शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक और लोहभस्म सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ मासेकीमात्रा शक्करकेसाथ लेकर गरमपानी पीनेसे अग्नि प्रदीप्तहोताहै । पित्तप्रधानरोगोंमें ठंढापानी पिलावे । इसके निरन्तरसेवनसे आमातिसार, पुरानी ग्रहणी, शूल, विष्टम्भ, आनाह, हैज़ा, शोथ, कामला, हलीमक, पाण्डु, कास, आध्मानप्रभृति समस्तरोग नष्टहोतेहै । लवङ्गके अनुपानकेसाथ यह आध्मानको बहुतशीघ्र नष्टकरताहै ॥ २१६ ॥

२१७ लवङ्गादिचूर्णम् (वृहत्) (द्वितीयम्)

लवङ्गातिविषा मुस्तं पिप्पली मरिचानि च ।
सैन्धवं हपुषा धान्यं कट्फलं पुष्करं तथा ॥ ९७८ ॥
जातीकोषफलाऽजाजी सौवर्चलरसाञ्जनम् ।
धातकी मोचकं पाठा पत्रं तालीसकेशरम् ॥ ९७९ ॥
चित्रकञ्च विडञ्चैव तुम्बुरु विल्वमेव च ।
त्वगेला पिप्पलीमूलमजमोदा यमानिका ॥ ९८० ॥
समङ्गा वत्सकं शुण्ठी दाडिमं यावशूकजम् ।
निम्बं सर्जरसं क्षारं सामुद्रं टङ्कणन्तथा ॥ ९८१ ॥
ह्रीवेरं कुटजञ्चैव जम्ब्वाम्रं कटुरोहिणी ।
अभ्रकं पुटितं लौहं शुद्धगन्धकपारदम् ॥ ९८२ ॥
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।
मधुना वा लिहेच्चूर्णं पिबेत्तण्डुलवारिणा ॥ ९८३ ॥
सर्वदोषहरञ्चैव ग्रहणीं हन्ति दुस्तराम् ।
वातिकीं पैत्तिकीञ्चैव श्लैष्मिकीं सान्निपातिकीम् ९८४
पकाऽपकमतीसारं नानावर्णं सवेदनम् ।
कृष्णाऽरुणञ्च पीतञ्च मांसधावनसन्निभम् ॥ ९८५ ॥
ज्वराऽरोचकमन्दाग्निं कासं श्वासं वमिं तथा ।
अम्लपित्तं तथा हिक्कां प्रमेहञ्च हलीमकम् ॥ ९८६ ॥
पाण्डुरोगञ्च विष्टम्भमर्शांसि विविधानि च ।
प्लीहगुल्मोदरानाहशोथाऽतीसारपीनसान् ॥ ९८७ ॥
आमवातं तथा जीर्णं सङ्ग्रहग्रहणीं जयेत् ।
उदरं प्रदरञ्चैव लवङ्गाद्यमिदं शुभम् ॥ ९८८ ॥

भै. र., ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—लौंग, अतीस, नागरमोथा, पीपल, मरिच, सेंधानमक, झाऊ, धनिया, कायफल, पोहकरमूल, जावित्री, जायफल, जीरा, संचल, रसौत, धावड़ीकेफूल, मोचरस, पाठा, तेजपात, तालीसपत्र, नागकेसर, चित्रकमूल, विडनमक, तुम्बुल, वेलगिरी, तज, इलायची, पिपलामूल, अजमोद, अजवाइन, मजीठ, कुरैयाकीछाल, सोंठ, अनारदाना, यवक्षार, नीमकीछाल, राल, सज्जीखार, समुद्रनमक, भुनासुहागा, तगरगण्ठोला, इन्द्रजव, जामुन और आमकीगिरी अथवा छाल, कुटकी, अभ्रक और लोहभस्म, शुद्ध गन्धक और पारा येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ मासेसे ३ मासेतककीमात्रा मधुकेसाथ चाटकर ऊपरसे चावलोंके धोवनकापानी पीनेसे दुस्तरसङ्ग्रहणी, सबतरहका अतिसार, ज्वर, अरुचि, मन्दाग्नि, कास, श्वास, वमन, अम्लपित्त, हिचकी, प्रमेह, हलीमक, पाण्डु, विष्टम्भ, नानातरहके बवासीर, प्लीह, गुल्म, उदररोग, आनाह, शोथातिसार, पीनस, आमवात, अजीर्ण, सङ्ग्रहग्रहणी, प्रदर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २१७ ॥

२१८ लवङ्गादिचूर्णम् (तृतीयम्)

लवङ्गं टङ्कणं मुस्तं धातकी विल्वधान्यकम् ।
जातीफलं सर्जकञ्च शताह्वा दाडिमन्तथा ॥ ९८९ ॥
जीरकं सैन्धवं मोचं नीलोत्पलरसाञ्जनम् ।
अभ्रकं वङ्गकञ्चैव समङ्गा रक्तचन्दनम् ॥ ९९० ॥
विश्वञ्चाऽतिविषा शृङ्गी खदिरं वालकं समम् ।
एतच्चूर्णं प्रदातव्यं सङ्ग्रहग्रहणीहरम् ॥ ९९१ ॥
नानावर्णमतीसारं ज्वरञ्चैव नियच्छति ।
आमरक्ताऽतिसारघ्नं शूलशोथनिषूदनम् ॥ ९९२ ॥
भृङ्गराजरसैः प्लाव्यं भावयित्वा दिनत्रयम् ।
छागीदुग्धेन मतिमान्गर्भिणीमनुपानतः ॥ ९९३ ॥

भै. र., गर्भिणीरोगाऽधिकारे ।

भाषा—लौंग, भुनासुहागा, नागरमोथा, धावड़ीकेफूल, वेलगिरी, धनिया, जायफल, सफेदराल, सोंफ, अनारदाना, जीरा, सेंधानमक, मोचरस, नीलोफर, रसौत, अभ्रक और वङ्गभस्म, लज्जालु, लालचन्दन, सोंठ, अतीस, काकड़ासींगी, खैर, सुगन्धवाला सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १ मासेसे ३ मासेतक अग्निबल देखकर उचितानुपानकेसाथ देनेसे सबतरहके अतिसार, ज्वर, शूल, शोथ, इनसबको

यह नष्टकरताहै। इसको भंगरेकेरससे ३ रोज़ भावनादेकर बकरी-केदूधकेसाथ देनेसे गर्भिणीके तमामरोगोंको दूरकरताहै ॥ २१८॥

२१९ लवङ्गादिवटी

लवङ्गजातीफलधान्यकुष्ठं जीरद्वयं त्र्यूषणत्रैफलञ्च।
एलात्वचं टङ्कवराटमुस्तं वचाऽजमोदं विडसैन्धवञ्च
तदर्द्धकं पारदगन्धमभ्रं लौहञ्च तुल्यं सुविचूर्ण्य सर्वम्।
तन्नागवल्लीदलतोयपिष्टं वल्लप्रमाणा वटिकाश्च कृत्वा
प्रातर्विदध्यादपि चोष्णतोयै
रियं निहन्याद्ग्रहणीविकारम्।
आमाऽनुबन्धं सरुजं प्रवाहं
ज्वरं तथा श्लेष्मभवं सशूलम्॥
कुष्ठाऽम्लपित्तं प्रबलं समीरं
मन्दानलं कोष्ठगतञ्च वातम्॥ ९९६॥

र. सं., अजीर्णाऽधिकारे।

भाषा—लौंग, जायफल, धनियां, कुठ, स्याह-सफेदजीरा, त्रिकटु, त्रिफला, इलायची, तज, भुनासुहागा, कौड़ीभस्म, नागरमोथा, वच, अजमोद, विडनमक, सेंधानमक येसब समभाग; इनसबसेआधी शुद्धपारेगन्धककीनीलवर्णकज्जली और अभ्रकभस्म तथा सबकीबराबर लोहभस्म डालकर अच्छीतरह मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा उचितानुपान केसाथ अथवा गरमपानीसे देनेसे ग्रहणी, पुरानाआम, पीडायुक्तप्रवाहिका, कफ औरशूलयुक्त ज्वर, कुष्ठ, अम्लपित्त, प्रबलवात, मन्दाग्नि, कोष्ठवात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २१९॥

२२० लशुनपाकः (प्रथमः)

रसोनकं प्रस्थमितं विमृद्य
दुग्धार्मणेनापि विपाच्यमानम्।
शुल्वाऽभ्रकं लोहरसं लवङ्ग-
कर्पूरमाकल्ककमश्वगन्धा॥ ९९७॥
द्विनिशा नागरं नागकेसरं त्रिफला समम्।
जातिपत्री जातिफलं मागधी मरिचं समम्॥ ९९८॥
प्रस्थैकखण्डसहितं हरते समीरं,
गुल्मव्यथां विषमसर्वसमीरणार्तिम्।
मन्दाग्निशूलकफहृद्गदनाशकारी,
पाकः स्मृतः सुकविना च रसोनकस्य॥ ९९९॥

रसायनसं, वातव्याध्यधिकारे।

भाषा—एकप्रस्थ एकपोती छिलेहुए लशुनके बारीकटुकड़ेकर १ द्रोणदूधमें पकावे। मावाहोनेपर ताम्र, अभ्रक, लोह और पारा इनकीभस्में, लौंग, शुद्धकपूर, अकलकरा, असगन्ध, हल्दी, दारुहल्दी, सोंठ, नागकेशर, त्रिफला, जावित्री, जायफल, पीपल और मरिच १–१ तोला और शकर १ प्रस्थ लेकर मावेमें मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ तोला अथवा यथाग्निबल सेवनकरनेसे प्रबलवात, गुल्म, विषमवात, मन्दाग्नि, शूल, कफ, हृद्रोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २२०॥

२२१ लशुनपाकः (द्वितीयः)

निस्तुषं लशुनं कृत्वा रात्रौ तक्रे विनिःक्षिपेत्।
तदुग्रगन्धनाशाय प्रातर्ग्राह्यं जलाप्लुतम्॥ १०००॥
प्रस्थमात्रन्तु तत्पिष्ट्वा क्षीरप्रस्थचतुष्टये।
विपाच्य सान्द्रीभूतेऽस्मिन् सर्पिषः कुडवं क्षिपेत्॥
रास्ना सहचरी छिन्ना शटी विश्वा सुरद्रुमम्।
वृद्धदारकटीप्याग्निशताह्वामुपुनर्नवाः॥ १००२॥
फलत्रयं पिप्पली च कृमिघ्नः कर्षसम्मितम्।
विचूर्ण्य कुडवं शीते मधुनस्तत्र योजयेत्॥ १००३॥
सिताप्रस्थचतुष्कञ्च पञ्चलोहरसेन्द्रकम्।
कर्पूरं मृगनाभिञ्च यथालाभं विमिश्रयेत्॥ १००४॥
पालिकीं भक्षयेन्मात्रामाढ्यवातहनुग्रहे।
आक्षेपकादिभङ्गेषु कटयूरुस्तम्भदुर्ग्रहे॥ १००५॥
सर्वाङ्गे सन्धिभङ्गे च प्रबले मारुते हितः।
लशुनस्य सुपाकोऽयं वर्णायुःपुष्टिकारकः॥ १००६॥

पा. व., रसायने।

भाषा—एकप्रस्थ एकपोतीछिलेहुए लहसनको रातको छाछमें डालकर रखदे। सुबहमें धोकर अन्दरका अङ्कुर निकाल बारीकपीसकर ४ प्रस्थदूधमें डालकर मन्दाग्निमे पकावे। गाढ़ाहोनेपर ४ प्रस्थ शकर और पावभर घी डालकर पाककरे। लड्डूकी चाशनी होनेपर उतारकर रखले। उसमें रास्ना, पियावासा, गिलोय, कचूर, सोंठ, देवदारु, विधारा, अजवाइन, चित्रकमूल, सौंफ, पुनर्नवा, त्रिफला, पीपल, विडङ्ग, पांचोंलोह और पारदभस्मका कपड़छानकियाहुआ १–१ कर्ष चूर्ण मिलावे। एकदम ठंढाहोनेपर पावभर शहद तथा शुद्धकपूर और कस्तूरी यथारुचि मिलाकर रखले। इसमेंसे १ तोलेसेलेकर ४ तोलेतक औचिती देखकर खानेसे ऊरुस्तम्भ, हनुग्रह, आक्षेप, लकवा, टुसहकटियुक्त ऊरुस्तम्भ, सर्वाङ्गवात, सन्धिभङ्ग और प्रबल वातवेदना इनसबको यह नष्टकर वर्ण और पुष्टिको करताहै २२१

२२२ लहरीतरङ्गरसः

मृताभ्राऽयोऽर्कवङ्गानां शुद्धपारदगन्धयोः।
पञ्चविंशतिभागाः स्युः पृथक् पञ्च विषस्य च १००७
नवसारकृताः पञ्च भागा द्वादश टङ्कणात्।
भानवो दारुमूष्याश्च भावयेत्कन्यकाद्रवैः॥ १००८॥
एकविंशतिवारांश्च तावदार्द्रकजै रसैः।
सप्तधा धूर्ततैलेन तथा कन्यारसेन च॥ १००९॥
काचकूप्याञ्च संरुद्धय वालुकायन्त्रगं पचेत्।
यामद्वादशकं यावत्स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्॥ १०१०
गुञ्जाद्वयं त्रयं वापि यथायोग्यञ्च भक्षयेत्।
सन्निपातज्वरान्हन्ति राजयक्ष्माणमुद्धतम्॥
योगो ब्रह्माख्यलहरीतरङ्गोऽयं महारसः॥ १०११॥

र सु, भै. सा, यो म., सन्निपाते।

भाषा—अभ्रक, लोह, ताम्र, वङ्ग, इनकीभस्में, शुद्ध पारा और गन्धक २५–२५ भाग, शुद्ध वछनाग और नवसादर ५–५ भाग, सुहागा और दालचिकना १२–१२ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर घीकुंवार और अदरखके रसोंसे २१–२१, धतूरेकेतैल और घीकुंवारके रससे ७–७ भावनाएं देकर अच्छीतरह सुखाकर ६–७ कपडमिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख मुंहवन्दकर १२ पहरकी क्रमाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २ से ३ रत्तीतककी मात्रा औचिती देखकर खिलानेसे सन्निपात,वढ़ाहुआराजयक्ष्म,इनसवको यह नष्टकरताहै २२२

२२३ लक्ष्मणालोहम् (प्रथमम्)

लक्ष्मणायाः पलशतं क्वाथयित्वा यथाविधि।
क्वाथे पूते पुनः पक्के घनीभूते च निःक्षिपेत् ॥१०१२॥
अशोकं कुशमूलञ्च मधूकं मधुकं वलाम्।
पाठां विल्वं पलोन्मानं लौहं सर्वसमं तथा॥ १०१३॥
लक्ष्मणालोहनामेदं भेषजं स्त्रीगदापहम्।
जगतामुपकाराय दस्त्राभ्यां परिनिर्मितम्॥ १०१४॥

भै. र.,स्त्रीरोगाऽधिकारे।

भाषा—लक्ष्मणाकापञ्चाङ्ग १०० पल लेकर चतुर्गुणितपानीमें क्वाथकरे। चतुर्थांशावशेष रहनेपर मसलकर छानकर फिरसे पकावे। घन तैयारहोनेपर अशोककीछाल, कुशकीजड़, महुएकाहीर, मुलहठी, वला, पाठा और वेलगिरी १–१ पलका वारीक चूर्णकर इसकीवरावर,लोहभस्म लेकर सवको सिद्धकियेहुए घनमें मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ४ रत्तीसे १ माशेतककीमात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह स्त्रियोंके समस्तरोगोंको दूरकरताहै॥ २२३॥

२२४ लक्ष्मणालोहम् (द्वितीयम्)

लक्ष्मणाहस्तिकर्णाभ्यां त्रिकत्रयसमन्वयात्।
अश्वगन्धासमायोगाल्लौहं पुंसवनं स्मृतम्॥१०१५॥
पुत्रोत्पत्तिकरं वृष्यं कन्यासूतिनिवर्तकम्।
कृशस्य वलदं श्रेष्ठं सर्वामयहरं परम्॥ १०१६॥

भै.र.,र सु, वृष्याधिकारे, वाजीकरणे

भाषा—लक्ष्मणा, हस्तिकर्णपलाश, त्रिकटु, त्रिफला, त्रिजात और असगन्ध समभाग लेकर सवकी वरावर लोहभस्म मिलाकर १–२ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ रत्तीसे १ माशे तककीमात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह प्रसूतिरोगको दूरकरताहै। कृशको वलिष्ठ वनाताहै और समस्तरोगोंको नष्टकरताहै। इसकेसेवनसेकन्याओंकी उत्पत्ति वन्दहोकर पुत्रोत्पत्तिहोतीहै॥ २२४॥

२२५ लक्ष्मीकान्तरसः (प्रथमः)

कान्तं सूतं ताप्यपाषाणगन्धं
ब्राह्मी वीजैर्मर्दयित्वा धमेत।
गोलान् कृत्वा वेष्टयित्वा मृदाद्यै-
र्ध्मापेत्पश्चाच्छोधयेत्क्षारकाद्यैः॥१०१७॥
कान्ताश्माक्षं वज्रमूषां प्रलिप्य
सूतं दद्यात्षोडशांशञ्च हेम।
ध्मापेद्गाढं सूतराजे तु दद्या-
ज्जीर्णे ग्रासे ग्रासमन्यं तथैव॥ १०१८॥
एवं तुल्यं षड्गुणञ्चाऽपि जार्यं
सूते वीजं ताप्यसत्त्वेन तुल्यम्।
तं सूतेन्द्रं कच्छपे यन्त्रराजे
शुद्धे सूतं जारयेत्तुर्यभागम्॥ १०१९॥
तं सूतेन्द्रं जारयेद्धेमगर्भे
लक्ष्मीकान्तः सूतराजोऽथ सिद्धः।
तुष्टे शम्भौ जायते लक्षवेधी
चन्द्राऽर्कोऽसौ ताप्यसत्त्वेन युक्तः॥
वक्त्रे गोलं धारयेद्वत्सरैकं
तुष्टे शम्भौ देहसिद्धिर्ध्रुवा स्यात् १०२०

र. दी., वाजीकरणे।

भाषा—कान्तलोह, पारा, सोनामाखी, गन्धक सव समभागलेकर पलाशकी फलियोंकेरस अथवा क्वाथसे १–२ दिन मर्दनकर गोलिया वनाय ऊपर कालीमिट्टी पोतकर सुखादे। सूखनेपर सत्त्वपातनयन्त्रमें रखकर धमनकराके सत्त्वपातनकरे। सत्त्वको सुहागावगैरह देकर मलसे रहितकरले। फिर इसका चूर्ण वहेड़ेकेसाथ मिलाकर पानीमें खरलकर वज्रमूषामें लेपदेकर वुभुक्षितपारा डालकर १६ वां हिस्सा सुवर्णवीजदेकर गाढ़धमनकरावे। सुवर्णजीर्णहोनेपर दूसरा ग्रास देकर जीर्णकरे। इसतरह वरावर अथवा षड्गुण पारेमें वीजका जारणकर वरावरका सुवर्णमाक्षिकसत्व मिलाकर रखले। फिर कच्छपयन्त्रमें अग्निस्थायी और वुभुक्षित शुद्धपारेको रख ऊपर रक्खेहुए ताप्ययुक्तपारेका चतुर्थांश जारणकरे और इसपारेको हेमगर्भपारेमें जारण करे यह लक्ष्मीकान्तपारद तैयारहुआ। यह क्रिया शिवजीके प्रसन्न होनेपर होसक्तीहै अन्यथा नहीं। यह रस माक्षिकसत्त्वकेसाथ देनेसे चन्द्रक्रिया अथवा सूर्यक्रियामें लक्षगुणितधातुको रूपान्तरमें परिणतकरताहै। ऊपरकहेहुए लक्ष्मीकान्तरसके पिण्डको एकवर्षभर लगातार मुंहमें रखनेसे देहसिद्धि होतीहै।

२२६ लक्ष्मीकान्तरसः (द्वितीयः)

भूशैलाद्यां पूरयेत्सूतराजं पिष्टीभूतं वज्रगर्भेण हेम्ना।
मासाद्धेधो यत्रतत्र द्विमासादूर्द्ध्वं यत्नात्सूतराजं प्रगृह्य
ध्मापेत्पश्चान्निर्मलः शुक्रतुल्यः
सूतः खोटो जायते लक्षणोक्तः।
उक्तान्मार्गान्मारितो जारितोऽसौ
सूते वीजे सारितः पूर्वतुल्यः॥ १०२२॥

र. दी, वाजीकरणे।

भाषा—पूर्ववत् पारा, सुवर्णमाक्षिक, गन्धक, हीरा और सुवर्ण समभाग मिलाकर पलाशवीजोंके स्वरस अथवा क्वाथसे

एकदोदिन मर्दनकर छोटी २ गोलिया बनाय सुखाकर काली-मिट्टीसे पोतदे। सूखनेपर दृढधमन कराके सत्त्वनिकाले। इस-सत्त्वको सुहागे वगैरहसे शुद्धकर इसके बराबर वंह्ड़ेका चूर्ण मिलाय वज्रमूपामें लेपकर हीरेकासत्त्व और सुवर्णमिलानेसे-पिष्टीभूत अग्निस्थायी और वुभुक्षितपारेको डालकर एक या दो महीनेतक प्रतीक्षाकरे। दियेहुए ग्रासकी एकताहोनेपर धमनक-रावे। ताव आनेपर यह शुक्रके सदृश शुभ्रहोजायगा इसपारेका चौथा हिस्सा शुद्धवुभुक्षित और अग्निस्थायी पारेमें जारणकरे फिर इसपारेको पूर्वपरिष्कृतपारेमें जारणकरनेसे सारणातैलसे सारणसंस्कार देनेपर यह सूर्य और चन्द्रक्रियामें लक्षवेधी होताहै। माक्षिकसत्त्वकेसाथ इसकागोलाबनाय एकवर्पतक निर-न्तर मुहमेंरखनेसे इससे देहसिद्धि होतीहै ॥ २२६ ॥

२२७ लक्ष्मीकान्तरसः (तृतीयः)

ताप्यं गन्धं क्षारकान्ताऽश्मतालं
निम्बूतोये मर्दयित्वा विलिप्य।
तद्वद् ध्मापाद्भस्मतामेति सूतं
गन्धं तुल्यं तेन कृत्वाऽम्लयुक्तम् ॥
हेम्नः पत्रे लेपयित्वा पुटेत
भस्मीभूतं जायते तारमेवम् ॥ १०२३ ॥

र. दी., वाजीकरणे।

भाषा—सोनामाखी, गन्धक, सुहागा, सज्जी, यवक्षार, कान्तपाषाण और हरिताल सबसमभागलेकर नीबूकेरससे १–२ रोजमर्दनकर वज्रमूपामें लेपकर शुद्ध और अग्निस्थायी सुवर्णा-दिवीजसे पिष्टीकृतपारेको डालकर दृढधमनकरानेसे पारदभस्म होतीहै। इसभस्मकीबराबर शुद्ध गन्धकको नीबूप्रभृति अम्लसे मर्दनकर सुवर्ण अथवा रजतकेपत्रपर लेपदेकर शरावसम्पुटकर गजपुटकी आचदेनेसे उत्तमभस्म होतीहै। इसमेंसे आधीरत्तीसे एकरत्तीतक समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २२७ ॥

२२८ लक्ष्मीनारायणरसः (प्रथमः)

शुद्धगन्धकमेनञ्च टङ्कणं विषहिङ्गुलम्।
रोहिण्यतिविषा कृष्णा वत्सकाऽभ्रकसैन्धवम् १०२४
एतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत्।
दन्तीद्रावैः फलद्रावैं मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥ १०२५ ॥
वल्लद्वयां वटीं कृत्वा आर्द्रकस्य जलैर्ददेत्।
दुष्टज्वरे सन्निपाते विसूच्यां विषमज्वरे ॥ १०२६ ॥
अतिसारे ग्रहण्याञ्च रक्तामे मेहशूलजित्।
सूतिकावातदोपांश्च लङ्केशमिव राघवः ॥ १०२७ ॥
दृष्यान्नं भोजयेत्पथ्यमभ्यङ्गं स्नानमाचरेत्।
कर्पूरयुक्ततांम्बूलं प्रसूनं हरिचन्दनम् ॥ १०२८ ॥
नारिकेलोदकं पीत्वा नारीणां सङ्गमेव च।
लक्ष्मीनारायणो नाम रसानामुत्तमो रसः ॥ १०२९ ॥

भै० र० र. स., ज्वरे।

भाषा—शुद्धगन्धक, सुहागा, वछनाग और शिंगरिफ, कुटकी, अतीस, पीपल, इन्द्रजव, अभ्रकभस्म, सेंधानमक सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर दन्तीमूल और त्रिफलाके काथमें ३–३ रोज मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेसाथ देनेसे दुष्टज्वर, सन्निपात, हैज़ा, विषमज्वर, अतिसार, ग्रहणी, रक्तातिसार, प्रमेह, शूल, सूतिकारोग वातव्याधि इनसबको यह नष्टकरताहै। भूखलगनेपर इष्ट और पथ्य भोजन देवे। ठंडेजलसे स्नान, कपूरयुक्ततांम्बूल, फूलोंकीमाला, चन्दनलेप, नारियलकापानी, स्त्रीसहवास इनका सेवनकरे ॥ २२८ ॥

२२९ लक्ष्मीनारायणरसः (द्वितीयः)

पलानां द्विशतं सूतं खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत्।
शङ्खद्रावसमांशेन द्वौ मासौ मर्दयेच्छनैः ॥ १०३० ॥
अथ प्रक्षालयेत्सूतं तोयैस्त्रिशतवारकम्।
तत्सूतं चामृतसमं सर्वकञ्चुकवर्जितम् ॥ १०३१ ॥
अष्टादशस्वसंस्कारैः शोधितं शास्त्रमार्गतः।
तं रसेन्द्रं भाण्डमध्ये निक्षिप्याऽथ पचेद्भिषक् १०३२
निरन्तरमहोरात्रं मन्दमध्यखराग्निना।
मासान् पञ्च विधानेन गन्धकं ग्रासमर्पयन् ॥ १०३३ ॥
गन्धकं शुद्धिमापन्नं सूक्ष्मचूर्णं विधाय च।
भारमात्रन्तु सङ्गृह्य जीर्णे जीर्णे मुहुः क्षिपेत् ॥ १०३४ ॥
अथ तत्स्वाङ्गसंशीतं खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत्।
षोडशैरुपचारैश्च पूजयित्वा जनार्दनम् ॥ १०३५ ॥
शतावरीभद्ररसैः मर्दयित्वाऽथ भावयेत्।
मणिश्च गारुडं नीलं वैदूर्यं वज्रमौक्तिकम् ॥ १०३६ ॥
गोमेदकं पुष्परागं राजावर्तं प्रवालकम्।
चन्द्रकान्तं सूर्यकान्तं नीलाञ्जनरसाञ्जने ॥ १०३७ ॥
वराटशङ्खशुक्तीश्च विमलां माक्षिकद्वयम्।
चतुर्विधञ्च पाषाणं त्रितुत्थं टङ्कणद्वयम् ॥ १०३८ ॥
विषत्रयं सुवर्णञ्च वैक्रान्तं कान्तलोहकम्।
अभ्रकं रजतं वङ्गं नागं कांस्यं सुरीतिकाम् ॥ १०३९ ॥
खर्परं कान्तपाषाणं शोधितं विधिपूर्वकम्।
तत्सर्वं भस्मसात्कृत्वा गन्धकं तालकं शिलाम् ॥ १०४० ॥
मृगनाभिश्च कर्पूरं काश्मीरं गोमतीं क्षिपेत्।
प्रत्येकं मानिकायुग्मं द्वौ मासौ तद्विमर्दयेत् ॥ १०४१ ॥
ह्रीवेरोदुम्बरोशीरकदलीचन्दनद्रवैः।
हिमाम्बुभिश्च प्रत्येकं प्रस्थमात्रैर्विमर्दयेत् ॥ १०४२ ॥
अक्षमात्रां वटीं कृत्वा छायाशुष्काञ्च कारयेत्।
सर्वमेकत्र संयोज्य ताम्रपात्रे सवस्त्रके ॥ १०४३ ॥
पूजयेदुपचारैश्च लक्ष्मीनारायणं स्मरन्।
धूपदीपैश्च नैवेद्यैस्ताम्बूलैर्दक्षिणादिभिः ॥ १०४४ ॥
वैष्णवेन विधानेन होमं तत्र च कारयेत्।
वेदघोषं प्रकुर्वीत स्वस्तिवाचनपूर्वकम् ॥ १०४५ ॥

दद्याद्दानानि विप्रेभ्यो यथाविभवमाचरेत् ।
वस्त्रं शय्यां मणिं छत्रं कपिलां धेनुमेव च ॥ १०४६ ॥
ब्राह्मणान्भोजयेत्तश्चात्तेभ्यो दद्याच्च दक्षिणाम् ।
तत्कर्तारश्च भिषजः पूजनीया विशेषतः ॥ १०४७ ॥
एतद्धान्यपुटे स्थाप्यं मासमात्रात्समुद्धरेत् ।
पूर्ववत्पूजयित्वाऽथ सेवयेत्सुमुहूर्तके ॥ १०४८ ॥
एककालं द्विकालं वा चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः ।
एतस्य चाऽनुपानन्तु लक्ष्मीनारायणं घृतम् ॥१०४९॥
अथवा तु यथासात्म्यमनुपानं प्रकल्पयेत् ।
एतद्देवि महालक्ष्मीनारायणरसो मतः ॥ १०५० ॥
चिरस्त्रीपुंसवन्ध्यत्वं नष्टौजस्यञ्च नाशयेत् ।
पुत्रोत्पत्तिकरं नृणां जरामरणनाशनम् ॥ १०५१ ॥
मेहान्विंशतिसङ्ख्याकानश्मरीपिडिकाव्रणान् ।
विंशतिं कुष्ठरोगाणां राजयक्ष्मादिकान् क्षयान् १०५२
पित्तजानखिलान्रोगान् व्रणान्वै सर्वसन्धिजान् ।
श्लेष्मजांश्चश्वासकासादीन् गुल्मानां पञ्चकं तथा१०५३
अर्शांसि षट्प्रकाराणि जलोदरमहोदरम् ।
अशीतिं वातरोगाणां ज्वरांश्च विविधानपि ॥१०५४॥
मूर्च्छारोगमपस्मारं प्रसेकञ्च भगन्दरम् ।
जिह्वारोगांश्च विषजानन्यांश्च ग्रहजान्गदान् ॥ १०५५ ॥
इत्येतान्निखिलान्रोगान्नाशयेन्नाऽत्र संशयः ।
दण्डवृद्धिकरं नृणां वीर्यवृद्धिकरं तथा ॥ १०५६ ॥
लक्ष्मीनारायणो नाम रसोऽयं लोकपूजितः ।
पूर्वं शिवेन कथितं पार्वत्यै तद्रसायनम् ॥ १०५७ ॥

र. क. यो. वाजीकरणे ।

भाषा—२०० पल पारेको मजबूतपत्थरकी खरलमें डालकर बराबरका तीक्ष्णशङ्खद्राव देकर दोमहीनेतक मर्दनकर ३०० वार गरमपानीमें धोवे । इसतरहकरनेसे यह पारा समस्तकञ्चुकियोंसे दूरहोकर अमृत सदृशहोजाताहै । जहांपर पारदके विशेष संस्कार न करसके वहांपर इसपारेसे कामलेवे अथवा अष्टादशसंस्कारकर, शास्त्रमार्गसे शुद्धकियाहुआपारा लेकर मजबूतमिट्टीकेवर्तनमें डालकर निरन्तर मन्द, मध्य और खर अग्निसे पांचमहीनेतकपकावे । इसमें शुद्धकियेहुए गन्धकका चूर्ण २००० पल लेकर थोडा २ डालताजाय । ऐसे समस्तगन्धक जारणहोनेकेबाद पारेको स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । फिर षोडशोपचारसे जनार्दनभगवानका पूजनकर शतावरीके स्वच्छरससे एकरोज मर्दनकर पन्ना, नीलम, लसनिया, हीरा, मोती, गोमेद, पुखराज, लाजवर्द, प्रवाल, चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त, नीलाञ्जन, रसाञ्जन, कौड़ी, शङ्ख, सीप, रौप्यमाक्षिक, स्वर्णमाक्षिक, कांस्यमाक्षिक, माणिक, स्फटिक, मार्जाराक्ष, फीरोजा, तूतिया, दानेफिरङ्ग, कसीस, दोनोंसुहागे, तीनप्रकारकेविष, सुवर्ण, वैक्रान्त, कान्तलोह, अभ्रक, रजत, वङ्ग, नाग, कास्य, पीतल, खपरिया, कान्तपाषाण इनसवकी भस्में, शुद्धगन्धक, रसमाणिक्य, मैनसिल, कस्तूरी, कपूर, केशर, गोरोचन येसव १०–१० माशेलेकर बारीकचूर्णकर पारा–गन्धक, हरिताल और मैनसिलकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर सुगन्धवाला, गूलरकीछाल, खस, केलेकाकन्द, चन्दन और कपूर इनके १–१ प्रस्थ द्रवोंमें मर्दनकर छोटेरुद्राक्षवराबर गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर तांबेकेपात्रमें मुंहबन्दकर रखछोड़े । इसकेसेवनकेसमय लक्ष्मीनारायणका ध्यानकरताहुआ-धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल और दक्षिणाओंसे पूजनकर वैष्णवविधिसे होमकर वेदध्वनि और स्वस्तिवाचनकराके अपनी शक्त्यनुसार ब्राह्मणोंको वस्त्र, शय्या, मणि, छत्र और गौवगैरह दक्षिणादे । इसरसके बनानेवाले वैद्योंका पूजनकर उस ताम्रसम्पुटको धान्यराशिमें रखदे । एकमहीनेकेबाद निकालकर पूर्ववत् पूजनकर फिर उसताम्रसम्पुटको धान्यराशिमें रखदे । एकमहीनेबादनिकालकर पूर्ववत् पूजनकर अच्छेमुहूर्तमें प्रारम्भकर दिनमें एकसमय या दोवार ४–४ रत्तीकीमात्रा लक्ष्मीनारायण घृत अथवा समयोचितानुपानकेसाथ सेवनकरनेसे बहुतदिनका स्त्री और पुरुषोंका बाझपन, ओजका अभाव, बुढापा, वीसप्रकारके प्रमेह, पथरी, प्रमेहपिडिका, २० प्रकारके कुष्ठ, राजयक्ष्म, क्षय, समस्त पित्तरोग, समस्तसन्धिजव्रण, कासश्वासादिक कफजरोग, पांचगुल्म, ६ प्रकारकेअर्श, जलोदर, ८० वातरोग, समस्तज्वर, मूर्च्छा, अपस्मार, प्रसेक, भगन्दर, जिह्वारोग, विषज, ग्रहज, अण्डवृद्धि इनसवरोगोंको यह नष्टकर पुरुषत्वको पैदाकरताहै २२९

२३० लक्ष्मीनारायणरसः (तृतीयः)

लक्ष्मीनारायणं वक्ष्ये दुर्लभं त्रिदशैरपि ।
सर्वरोगोपशमनं देहसिद्धिकरं परम् ॥ १०५८ ॥
ज्ञात्वैवं पुरुषो लोके ह्यमरत्वाय कल्पते ।
जरामरणनिर्मुक्त आधिव्याधिविवर्जितः ॥ १०५९ ॥
रसभस्मपलैकन्तु गन्धकाच्च पलत्रयम् ।
अभ्रलोहसुवर्णानां भस्म चैकैकशः पलम् ॥ १०६० ॥
वज्रकान्तप्रवालानां भस्म त्वेकं पलं पृथक् ।
शिलावराटमुक्तानां पृथग् भस्म पलं पृथक् ॥१०६१॥
पलंपलं पृथग्रौप्यं भुजङ्गवङ्गजं रजः ।
दरदात्पलमेकन्तु विषं त्रिपलसम्मितम् ॥ १०६२ ॥
एवं भस्मानि सङ्गृह्य सर्वाण्येकत्र कारयेत् ।
शाकवृक्षस्य निर्यासै र्मर्दयित्वा दिनत्रयम् ॥ १०६३ ॥
पुनश्चैवं पुटं दद्यात्पुटसङ्ख्यैकविंशतिः ।
चित्रकार्द्रकनिर्गुण्डीसुवर्णशिग्रुमार्कवैः ॥ १०६४ ॥
किरातकन्दत्रिकटुल्लकार्द्रै र्भावयेत्त्रिशः ।
मत्स्यमाहिषमायूरकोलकुक्कुटपित्तकैः ॥ १०६५ ॥
गरलेनाऽर्कपयसा प्रत्येकं भावयेत्त्रिशः ।
ततः कच्छपयन्त्रे तु विषचूर्णमधो न्यसेत् ॥ १०६६ ॥
ऊर्ध्वपात्रं प्रयत्नेन रसेनाऽनेन लेपयेत् ।
सन्धिलेपः प्रकर्तव्यो मृदा कर्पटकेन च ॥ १०६७ ॥
ततस्तु पूजयेद्यन्त्रं रक्तपुष्पैः सुशोभनैः ।
गणेशपूजनञ्चादौ दुर्गां विष्णुञ्च पूजयेत ॥ १०६८ ॥

कुमारीं पूजयेत्पश्चात्पायसै मधुसर्पिषा।
ततो यन्त्रं समारोप्य चुल्लिकोपरि यत्नतः॥ १०६९॥
दीपाग्निस्तत्र कर्तव्यो याममेकं विचक्षणैः।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य तद्यन्त्रं चोल्लिखेत्पुनः॥१०७०॥
अनेन विधिना सम्यक् प्रयुक्तो रसकोविदैः।
वैद्यानाञ्च नृपाणाञ्च रसज्ञानां कलाविदाम्॥१०७१॥
सर्वेषाञ्च मनुष्याणां चमत्कारो भवेत्क्षणात्।
गुञ्जामात्रमयं दत्तो ह्यनुपानविशेषतः॥ १०७२॥
अनेन विधिना सम्यग्रसो भवति सिद्धिदः।
जलयोगः प्रकर्तव्यो यावत्कम्पः प्रजायते॥ १०७३॥
ततः पथ्यं प्रदातव्यं शर्करादधिभक्तकम्।
चन्दनै र्लेपयेदङ्गं कर्पूराऽऽगुरुमिश्रितैः॥ १०७४॥
तालवृन्ताऽनिलो देयो यावद्भवति विज्वरः।
उन्मादं दन्तवन्धञ्च मौढ्याऽपस्मारतन्द्रिकम्॥१०७५॥
गात्राणाञ्च तथा शैत्यं तत्क्षणाच्छमयेद्रसः।
अशीतिं वातजान्रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान्॥१०७६॥
विंशतिं श्लेष्मजांश्चैव द्वन्द्वजांश्च विशेषतः।
अष्टादशैव कुष्ठानि तथा कासक्षयावपि॥ १०७७॥
श्वासकासौ तथा शोकं कामलाञ्चैव पाण्डुताम्।
प्रमेहविंशतिश्चाऽपि व्रणानां विंशतिं तथा॥ १०७८॥
एवं पञ्चविधान्दोषान्गुल्मस्याऽपि तथैव च।
षड्विधान्यपि चार्शांसि ग्रहणीनां चतुष्टयम्॥ १०७९॥
अर्वुदं गण्डमालाञ्च विद्रधिञ्च भगन्दरम्।
एतेन षड्विधा रोगा विनश्यन्ति रसेन वै॥ १०८०॥
लक्ष्मीनारायणो नाम रसो लोकोत्तरः स्मृतः।
यथा सर्वेषु देवेषु देवो नारायणः स्मृतः॥ १०८१॥
तथा रसेषु सर्वेषु लक्ष्मीनारायणो मतः।
कृपया परया देवि कथितस्तव पार्वति॥ १०८२॥
न चाऽस्य शक्यते वक्तुं प्रभावस्त्रिदशैरपि।
जानाति य इमं लोके स एव परमेश्वरः॥ १०८३॥
ये पूजयन्ति सततं रसराजमेनं
सद्भावभक्तिसहितास्त्वथ भावयुक्ताः।
तेषां कदाचिदपि न ज्वरदाहपीडा
चाऽन्येऽपि केऽपि न भवन्ति शरीरदोषाः॥

र. शं., रसायनाऽधिकारे।

भाषा—पारदभस्म १ पल, शुद्धगन्धक २ पल, अभ्रक, लोह, सुवर्ण, हीरा, कान्त, प्रवाल, मैनसिल, कौडी, मोती, रजत, नाग और वङ्ग इनकीभस्में १–१ पल, शुद्धशिंगरिफ १ पल, शुद्धवछनाग २ पल, लेकर सवका वारीकचूर्णकर सागकी छालकेस्वरस अथवा काथसे २१ दिन मर्दनकर चित्रक, अदरख निर्गुण्डी, धतूरा, सहिजन, भंगरा, चिरायता, सूरण, त्रिकटु, गूगल, अदरख इनकेस्वरस, मछली, भैंसा, मोर, सूअर, और मुर्गा इनकेपित्त, सापकाजहर, आकका दूध इनप्रत्येकद्रवसे ३–३ भावनाएं देकर एकमिट्टीकीकड़ाहीमें भीतरकीतर्फ इसे पोतदे और दूसरीकड़ाहीमें इसकीवरावर वछनागकाचूर्ण विछाकर दोनोंकीसन्धिवन्दकर २–४ कपड़मिट्टी देकर यत्र, गणेश, दुर्गा, विष्णु, कुमारीकन्या इन प्रत्येककी लालपुष्पोंसे पूजाकर अखीरमें कुमारीकन्याका पूजनकर खीर, मधु और घीसे कुमारीकन्याको सन्तुष्टकर यन्त्रको चूल्हेपर चढ़ाय वछनागवाली कड़ाहीके नीचे १ पहर दीपाग्नि देकर पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे यन्त्रको खोल ऊपरकी कड़ाहीमें लगेहुए रसको रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देकर मस्तकपर जलकी धारा डाले। भूखलगनेपर शक्कर, दही और भात खानेको देवे। चन्दन, कपूर और अगरका शरीरपर लेपकरावे। जवतक दाहमालूमहो तवतक ताड़के पङ्खेसे हवाकरे। इसप्रयोगसे उन्माद, दन्तवन्ध, वेहोशी, अपस्मार, तान्द्रिक सन्निपात, शरीरशैत्य, ८० वातरोग, ४० पित्तरोग, २० श्लेष्मरोग, द्वन्द्वजरोग, १८ प्रकारकेकुष्ठ, कास, क्षय, श्वास, शोथ, कामला, पाण्डु, २० प्रकारकेप्रमेह और व्रण, गुल्म, ६ प्रकारका ववासीर, ४ प्रकारकीग्रहणी, अर्वुद, गण्डमाला, विद्रधि, भगन्दर इनसवको यह नष्टकरताहै। जिसतरह देवताओंमें लक्ष्मीनारायण श्रेष्ठहैं वैसेही रसोंमें यह श्रेष्ठहै। जो लोग इसरसको भक्तिपूर्वक जानतेहैं उनको ज्वर, दाहादिजन्य शरीरपीडा कभी भी नहीं होती॥ २३०॥

२३१ लक्ष्मीनारायणरसः (चतुर्थ.)

श्रीखण्डं शिखितुत्थञ्च टङ्कणं तालकं समम्।
पुनर्नवामूलरसे मर्दितं प्रहरत्रयम्॥ १०८५॥
विपचेद्याममात्रञ्च दोलायन्त्रेण बुद्धिमान्।
गुञ्जाद्वयं पिवेच्चाऽनुपानैः सर्वज्वरापहैः॥
दोषज्वरं हरेत्तीव्रं लक्ष्मीनारायणो रसः॥ १०८६॥

वै. चि, ज्वराधिकारे।

भाषा—चन्दन, शुद्ध तुत्थ, सुहागा और हरिताल समभागलेकर वारीकचूर्णकर पुनर्नवाकीजड़केस्वरस अथवा क्वाथसे ३ पहर मर्दनकर पुनर्नवाके रसमें दोलायन्त्रसे १ पहर स्वेदनकरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरकेउपद्रवोको नष्टकरताहै॥ २३१॥

२३२ लक्ष्मीविलासमोदकः

त्र्यूषणं त्रिफला वह्निं श्चातुर्जातककेसरम्।
यवानी नखजातीजं मुशली कपिकच्छुजम्॥१०८७॥
उच्चटाधूर्तवीजानि पर्णमूलाऽहिफेनकम्।
ज्योतिष्मती विडङ्गानि शृङ्गाटकरहाटकम्॥ १०८८॥
कुरण्डशोषगायत्रीलोहवङ्गाऽभ्रभस्मकम्।
वह्न्यष्टादशवाणैश्च विंशत्या भागमाहरेत्॥ १०८९॥
चतुर्थांशां मातुलानीं सितां द्विगुणभागिकाम्।
कर्षमात्रा वटी भुक्त्वा स्तम्भनं परमं भवेत्॥१०९०॥

कासश्वासप्रतिश्यायनाशनं कान्तिवर्धनम् ।
सतताऽभ्यासयोगेन वलीपलितनाशनम् ॥ १०९१ ॥

टो., वाजीकरणे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, चित्रकमूल, चातुर्जात, केशर ३-३ भाग, अजवाइन, दोनोंजीरा, जावित्री, जायफल, मुशली, केवांचकेबीज ८-८ भाग; उटिंगन, धतूरेकेबीज, पानकीजड़, अफीम १०-१० भाग, मालकांगनी, विडङ्ग, सिंघाड़े, अकलकरा ५-५ भाग; बहुफली, समुद्रशोष, खैर, लोह-वङ्ग और अभ्रकभस्म २०-२० भाग, भांग सबसे चतुर्थांश तथा शक्कर सबसे दूनी लेकर शक्करकी चाशनीमें सबका बारीकचूर्ण मिलाकर १-१ तोलेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे आधी अथवा १ गोली दूधकेसाथ लेनेसे अत्यन्त स्तम्भनहोताहै। और श्वास, कास, प्रतिश्याय ये सब नष्टहोतेहैं हमेशाके सेवनसे वलीपलितसे रहितहोकर युवावस्थापन्न होताहै ॥ २३२ ॥

२३३ लक्ष्मीविलासरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतञ्च तालञ्च तालार्द्धं रसखर्परम् ।
वङ्गं ताम्रं घनं कान्तं कांस्यं गन्धं पलंपलम् ॥ १०९२ ॥
केशराजरसेनैव भावयेद्दिवसत्रयम् ।
कुलत्थस्य रसेनैव भावयेच्च पुनःपुनः ॥ १०९३ ॥
एलाजातीफलाख्यञ्च तेजःपत्रं लवङ्गकम् ।
यवानी जीरकञ्चैव त्रिकटु त्रिफला समम् ॥ १०९४ ॥
नतं भृङ्गं वंशगर्भं कर्षमात्रञ्च कारयेत् ।
भावयेच्च रसेनैव गोलयेत्सर्वमौषधम् ॥ १०९५ ॥
छायाशुष्का वटी कार्या चणकप्रमिता शुभा ।
शीताम्बुना पिबेद्धीमान् सर्वकासनिवृत्तये ॥१०९६॥
मत्स्यं मांसं तथा क्षीरं पथ्यं स्यात्स्निग्धभोजनम् ।
क्षयं कासं तथा श्वासं सज्वरं वाऽथ विज्वरम्१०९७
हलीमकं पाण्डुरोगं शोथं शूलं प्रमेहकम् ।
अर्शोनाशं करोत्येव बलवृद्धिश्च कारयेत् ॥
वर्जयेच्छाकमम्लञ्च भृष्टद्रव्यं हुताशनम् ॥ १०९८ ॥

र सं., ध , र.सु., भै.र , कासाऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और हरिताल १-१ कर्ष, खपरिया ८ माशे, वङ्ग, ताम्र, अभ्रक, कान्तलोह, कास्य इनकीभस्में, शुद्धगन्धक १-१ पल लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर कालाभंगरा और कुलथीके स्वरसोंसे ३-३ रोज भावनाएं देकर इलायची, जायफल, पत्रज, लौंग, अजवाइन, जीरा, त्रिकटु, त्रिफला, तगर, भंगरा, वंसलोचन येसब १-१ कर्ष लेकर बारीक चूर्णकर प्रथम औषधमें मिलाय पूर्वद्रवोंसे १-१ रोज मर्दनकर चनेबराबर गोलियें बनाय छायामें सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली ठंढेपानीकेसाथ लेनेसे सबप्रकारके कासनिवृत्त होतेहैं। इसमें मछली, मास और दूध प्रभृति स्निग्धभोजन पथ्यहैं । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे ज्वरसहित अथवा रहित क्षय, कास और श्वास, हलीमक, पाण्डु, शोथ, शूल, प्रमेह, अर्श, निर्बलता इनसबको यह नष्टकरताहै इसमें शाक, खटाई, भुनेहुएद्रव्य और अग्निका परित्याग करे ॥ २३३ ॥

२३४ लक्ष्मीविलासरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं दिनं शुष्कं विमर्दयेत् ।
जम्बीरनीरेण दिनं मर्दयेन्मतिमान् भिषक् ॥१०९९॥
निःक्षिपेद् दृढमूषायां वासोभि र्मुनिसंख्यकैः ।
वेष्टयेत्सिकतायन्त्रे यामै र्द्वादशभिः पचेत् ॥ ११०० ॥
स्वभावशीतमुद्धृत्य श्लक्ष्णे खल्वे विमर्दयेत् ।
ताम्रभस्म कणा कुष्ठं प्रत्येकं सूतभागतः ॥ ११०१ ॥
प्रक्षिप्य मर्दयेद्गाढं त्रिदिनं लुङ्गवारिणा ।
प्रदद्यादस्य सूतस्य श्टङ्गबेररसितायुतम् ॥ ११०२ ॥
वल्लयुग्मं दीर्घतापे वातरोगे महत्यपि ।
निरामं नाशयेदाशु पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥ ११०३ ॥
विषमज्वरजीर्णाऽर्शःक्षयमेहहलीमकाः ।
स्वानुपानाच्छमं यान्ति रसराजप्रभावतः ॥ ११०४ ॥
सेवितो मधुसर्पिर्भ्यां वर्षमेकं जितेन्द्रियैः ।
जरामरणरोगादीन् कुष्ठरोगान् सुदारुणान् ॥
लक्ष्मीविलासनामाऽयं शङ्करेण कृतो हरेत् ॥ ११०५ ॥

र.का., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर कज्जलीकर जंभीरीकेरससे एकरोज मर्दनकर ६-७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशी शीशीमें डालकर मुंहबन्दकर वालुकायन्त्रमें रख १२ पहरकी क्रमाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर ताम्रभस्म, पीपल और कुठ १-१ भाग मिलाकर बिजोरेकेरससे ३ दिन मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अदरख और शक्करकेसाथ देनेसे जीर्णज्वर तथा प्रचण्डवातरोग नष्टहोतेहैं । पीपल और मधुकेसाथ निरामज्वर, और तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे विषम तथा जीर्णज्वर, बवासीर, क्षय, प्रमेह, हलीमक येसब नष्टहोतेहैं। जितेन्द्रियहोकर मधु और घृतकेसाथ एकवर्षतक सेवनकरनेसे भयङ्करकुष्ठप्रभृतिरोगोसे निवृत्त होकर बुढ़ापेसे रहित होताहै ॥ २३४ ॥

२३५ लक्ष्मीविलासरसः (तृतीयः)

पलं वज्राभ्रचूर्णस्य तदर्द्धं गन्धकं भवेत् ।
तदर्द्धं वङ्गभस्माऽपि तदर्द्धं पारदं तथा ॥ ११०६ ॥
तत्समं हरितालञ्च तदर्धं ताम्रभस्मकम् ।
रससाम्येन कर्पूरं जातीकोषफले तथा ॥ ११०७ ॥
वृद्धदारकबीजञ्च बीजं स्वर्णफलस्य च ।
प्रत्येकं कार्षिकं भागं मृतस्वर्णञ्च शाणिकम् ॥ ११०८ ॥
निष्पिष्य वटिका कार्या द्विगुञ्जाफलमानतः ।
निहन्ति सन्निपातोत्थान्गदान्घोरान् सुदारुणान् ११०९
गलोत्थानत्रवृद्धिञ्च तथाऽतीसारमेव च ।
कुष्ठमेकादशविधं प्रमेहान्विंशतिं तथा ॥ १११० ॥

श्लीपदं कफवातोत्थं चिरजं कुलजं तथा।
नाडीव्रणं व्रणं घोरं गुदरोगं भगन्दरम् ॥ १११९ ॥
कासपीनसयक्ष्मार्शः स्थौल्यदौर्गन्ध्यरक्तनुत्।
आमवातं सर्वरूपं जिह्वास्तम्भं गलग्रहम् ॥ १११२ ॥
उदरं कर्णनासाक्षिमुखवैरस्यमेव च।
सर्वशूलं शिरःशूलं स्त्रीरोगञ्च विनाशयेत् ॥ १११३ ॥
वटिकां प्रातरेकैकां मांसं पिष्टं पयो दधि ॥ १११४ ॥
वारिभक्तं सुरासीधुसेवनात्कामरूपधृक्।
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्द्धी न च शुक्रक्षयो भवेत् ॥१११५॥

र चि., र, सु, रसचि., र. स, र क., कफरोगे।

भाषा—वज्राभ्रकभस्म १ पल, शुद्धगन्धक २ कर्ष, वङ्गभस्म १ कर्ष, पारद और हरितालभस्म ८–८ माशे, ताम्रभस्म ४ माशे, शुद्धकपूर ८ माशे, जावित्री, जायफल, विधारा और धतूरेकेबीज १–१ कर्ष, सुवर्णभस्म ४ माशे लेकर सबका बारीक चूर्णकर पानवगैरहकेरससे घोटकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपातज और गलजरोग, अन्त्रवृद्धि, अतिसार, ११ प्रकारकाकुष्ठ, २० प्रकारके प्रमेह, चिरज अथवा कुलज कफवातजश्लीपद, नाडीव्रण, दुष्टव्रण, गुदरोग, भगन्दर, कास, पीनस, राजयक्ष्म, बवासीर, स्थूलता, दौर्गन्ध्य, रक्तदोष, सबप्रकारकाआमवात, जिह्वास्तम्भ, गलग्रह, उदररोग, कान, नाक, आख और मुंहकाबिगाड़, सबप्रकारकाशूल, शिर शूल, स्त्रियोंकेरोग ये सब नष्टहोतेहैं। इसका निरन्तर अभ्यासकरनेसे और मास तथा आटेके बनाए हुए पदार्थ, दूध, दही, भक्ताऽधिवासितजल, मद्य, ताड़ी इत्यादि पदार्थोंकासेवनकरनेसे शुक्रसे परिपूर्णहोकर वृद्ध आदमीभी जवानोंकी बराबरी करने लगताहै ॥ २३५ ॥

२३६ लक्ष्मीविलासरसः (चतुर्थः)

पलं कृष्णाभ्रचूर्णस्य तदर्द्धौ रसगन्धकौ।
तदर्द्धं चन्द्रसञ्ज्ञस्य जातीकोषफले तथा ॥ १११६ ॥
वृद्धदारकबीजञ्च बीजं धुस्तूरकस्य च।
त्रैलोक्यविजयाबीजं विदारीमूलमेव च ॥ १११७ ॥
नारायणी तथा नागबला चातिबला तथा।
बीजं गोक्षुरकस्याऽपि नैचुलं बीजमेव च ॥ १११८ ॥
एतेषां कार्षिकं चूर्णं पर्णपत्ररसैः पुनः।
निष्पिष्य वटिकाकार्या त्रिगुञ्जाफलमानतः ॥१११९॥
निहन्ति सन्निपातोत्थान्गदान् घोरांश्चतुर्विधान्।
वातोत्थान् पैत्तिकांश्चैव नाऽस्त्यत्र नियमः क्वचित् ॥
कुष्ठमष्टादशाख्यञ्च प्रमेहान्विंशतिं तथा।
नाडीव्रणं व्रणं घोरं गुदामयभगन्दरम् ॥ ११२१ ॥
श्लीपदं कफवातोत्थं रक्तमांसाश्रितञ्च यत्।
मेदोगतं धातुगदं चिरजं कुलसम्भवम् ॥ ११२२ ॥
गलशोथमन्त्रवृद्धिमतीसारं सुदारुणम्।
आमवातं सर्वरूपं जिह्वास्तम्भं गलग्रहम् ॥ ११२३ ॥
उदरं कर्णनासाक्षिमुखवैकृतमेव च।
कासपीनसयक्ष्मार्शःस्थौल्यदौर्गन्ध्यनाशनः ॥ ११२४॥
सर्वशूलं शिरःशूलं स्त्रीणां गदनिषूदनम्।
वटिकां प्रातरेकैकां खादेन्नित्यं यथाबलम् ॥ ११२५ ॥
अनुपानमिह प्रोक्तं मांसपिष्टं पयो दधि।
वारिभक्तसुरासीधुसेवनात्कामरूपधृक् ॥ ११२६ ॥
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्द्धी न च शुक्रस्य संक्षयः।
न च लिङ्गस्य शैथिल्यं न केशा यान्ति पक्वताम् ११२७

भै र., र. सु., र सं., र. चं., ध, र म मा., वृ. यो त, र चि, र र., रसायनसं., र. क, यो म, र गि, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—वज्राभ्रकभस्म १ पल, शुद्ध पारा और गन्धक २–२ कर्ष, रजतभस्म, जावित्री, जायफल, विधारा, धतूरा और गाजेकेबीज, विदारीकन्द, शतावर, नागबला, अतिबला (गुलसिकरी), गोखरू और बेतकेबीज १–१ कर्षलेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर पानकेरससे ३–३ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे चार प्रकारका सन्निपात, वात और पित्तजज्वर, १८ कुष्ठ, २० प्रमेह, नाड़ीव्रण, दुष्टव्रण, गुदरोग, भगन्दर, कफवातोत्थ अथवा रक्तमासाश्रित श्लीपद, मेद अथवा धातुगत, चिरज अथवा कुलागत गलशोथ, अन्त्रवृद्धि, दारुणअतिसार, सर्वरूप आमवात, जिह्वास्तम्भ, गलग्रह, उदररोग, कान आख और मुंहका बिगाड़, कास, पीनस, यक्ष्म, बवासीर, स्थूलता, दौर्गन्ध्य, सबप्रकारके शूल, शिर.शूल, स्त्रियोंके रोग, ध्वजभङ्गादि पुरुषोंके रोग इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें मासमिश्रित आटेकेबनेहुए पदार्थ, दूध, दही और भक्ताधिवासितपानी, मद्य, ताड़ी, इनकेसेवनकरनेसे वृद्धभी पुरुषत्वसे परिपूर्णहोकर जवानोंकी बराबरीकरताहै। निरन्तर सेवनकरनेसे लिङ्गकी शिथिलता और केशोकी सफेदी नहीं होती २३६

२३७ लक्ष्मीविलासरसः (पञ्चमः)

कान्ताऽयोऽभ्रकसत्त्वताम्रकनकं वङ्गञ्च ताराहिकं,
तीक्ष्णं विद्रुममौक्तिकं समलवं चैतैः समः पारदः।
सम्मर्द्य मधुना त्र्यहं तदखिलं निक्षिप्य मूषान्तरे,
पाच्यं तार्क्ष्यपुटे ततोऽनलजलै र्यामाष्टकं भावयेत्
शतावरी भूमिसिता विदारी गोक्षुरेक्षुकम्।
बला नागबला चातिबला शाल्मलि कर्कटी ॥११२९॥
पोटाऽमृतोद्भवा यष्टी शुण्ठी द्राक्षेष्टिका जया।
उद्धिङ्गणोदुम्बरश्च खाखसं सारिवाद्वयम् ॥ ११३० ॥
एषां रसैः सप्तवारं भावयेच्च पृथक् पृथक्।
पश्चान्मृगमदै र्भाव्यः सुसिद्धो रसराड्भवेत् ॥११३१॥
गुञ्जात्रयमितः सेव्यः परं वृष्यो रसायनः।
अष्टौ महागदान् मेहं क्षयं पाण्डुञ्च कामलाम् ॥११३२॥
नष्टेन्द्रियं क्षीणशुक्रमतिसारं चिरन्तनम्।
मूत्रकृच्छ्रं गरं शोषं वलीपलितमेव च ॥ ११३३ ॥

हन्यात्कान्तिं वीर्यवृद्धिं पुष्टिञ्च विपुलं बलम्।
दत्ते लक्ष्मीविलासोऽयं पुंसां लक्ष्मीप्रदायकः ॥११३४॥

र पा., नि. र., र. चं., र. सु., रसायनसं., र. प., यो. र., र. क. यो., राजयक्ष्मणि।

टि०—निघण्टुरत्नाकरादौ त्रुटित पाठोऽस्ति, तदनुक्ता जनै पाठद्वयी स्थापिता तदज्ञानविजृम्भितमिति विद्वद्भि विमर्शनीयम्॥

भाषा—कान्तलोह, लोह, अभ्रकसत्त्व, ताम्र, सुवर्ण, वङ्ग, रजत, नाग, फोलाद, प्रवाल और मोती इनकीभस्में समभाग लेकर सबकी बराबर पारदभस्म मिलाकर ३ दिनतक मधुमें खरलकर वज्रमूषामें बन्दकर कुक्कुटपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर चित्रकमूलकेकाथसे दोरोज भावना देकर शतावर, दीमकका मूलघर, (कामेशवत्सरसमें विवरणदेखो) विदारीकन्द, गोखरू, ईख, बला, नागबला, गुलसिकरी, सेमलकामुसला, ककड़ी, तिपतिया, गिलोय, मुलहठी, सोठ, द्राक्ष, ब्रह्मदण्डी, भांग, उस्टिगन, गूलर, पोस्त, अनन्तमूल, घोटवेल (मराठी), इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाएं देकर यथाशक्ति कस्तूरीकी भावना देकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली रोग अथवा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे आठमहारोग, प्रमेह, क्षय, पाण्डु, कामला, इन्द्रिय तथा शुक्रकी कमजोरी, पुराना अतिसार, मूत्रकृच्छ्र, गर, शोष, वलीपलित, कृशता, वीर्यकीहानि इनसबको नष्टकर यह मनुष्यको फिरसे विपुलबलयुक्त बनाताहै २३७

२३८ लक्ष्मीविलासरसः (महान्) (षष्ठः)

लौहमभ्रं विषं मुस्तां फलत्रयकटुत्रयम्।
धुस्तूरं वृद्धदारश्च बीजमिन्द्राशनस्य च ॥ ११३५ ॥
गोक्षुरद्वयकश्चैव पिप्पलीमूलमेव च।
एतत्सर्वं समं ग्राह्यं रसै र्धुस्तूरकस्य च ॥ ११३६ ॥
भावयित्वा वटी कार्या द्विगुञ्जाफलमानतः।
महालक्ष्मीविलासोऽयं [illegible] वारकः ॥ ११३७ ॥

र. सं., र. सु., व रा., र र, शिरा[illegible]।

भाषा—लोह और अभ्रकभस्म, शुद्धवछनाग, नागरमोथा, त्रिफला, त्रिकटु और धतूरा—विधारा—गाजा इनकेबीज, दोनोंगोखरू, पिपलामूल, येसब समभाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर धतूरेकेरससे १–२ रोज मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे सबप्रकारके त्रिदोषजरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २३८ ॥

२३९ लक्ष्मीविलासरसः (सप्तमः)

सुवर्णमुक्ताफलमभ्रकञ्च
रसेन्द्रभस्मायसविद्रुमञ्च।
कस्तूरिकाकुङ्कुमजातिपत्री-
लवङ्गमेलात्वक्तुल्यभागिकम् ॥ ११३८ ॥
सम्मर्दयेन्नागलतारसेन
गुञ्जा त्र्यहं वल्लमितञ्च दद्यात्।
सितामधुभ्यां सह सेवनीयः
सर्वामयं हन्ति न संशयोऽत्र ॥ ११३९ ॥
कामस्य वृद्धिं नितरां करोति
नारीशतं गच्छति नित्यमेव।
षण्ढोऽल्पवीर्यो बहुमूत्रमेही
यथाऽनुपानेन च सेवयेत ॥
क्षयापहं धातुविवर्धनञ्च
लक्ष्मीविलासो रसराज एषः ॥ ११४० ॥

र चं., वाजीकरणे।

भाषा—सुवर्ण, मोती, अभ्रक, पारा, लोह और प्रवाल इनकी भस्में, कस्तूरी, केशर, जावित्री, लौंग, इलायची, तज, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पानकेरससे ३ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्कर और मधुकेसाथ सेवनकरनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै। निरन्तरसेवनकरनेसे शुक्रकीवृद्धिहोकर नपुंसकभी मर्द होजाताहै। मधुमेहघ्न अनुपानकेसाथ देनेसे बहुमूत्र नष्टहोताहै ॥ २३९ ॥

२४० लक्ष्मीविलासरसः (अष्टमः)

हेमभस्म च भागैकं रौप्यभस्म द्विभागिकम्।
शुल्वभस्म त्रिभागञ्च कान्तभस्म चतुर्गुणम् ॥११४१॥
पञ्चभागञ्च तीक्ष्णं स्यान्मण्डूरं षड्विभागिकम्।
निश्चन्द्रं व्योमकश्चैव भस्म स्यात्सप्तभागिकम् ॥११४२॥
अष्टभागञ्च वङ्गं स्यान्नागं स्यान्नवभागिकम्।
दशैकादशभागे च प्रवालमौक्तिके मृते ॥ ११४३ ॥
खल्वमध्ये निधायाऽथ तत्तुल्यं सूतभस्मकम्।
मर्दयेत्प्लावितं द्रव्यै र्भावयेज्जातिपत्रकैः ॥ ११४४ ॥
त्रिकटुत्रिफलाचातुर्जातद्रावैश्च कौङ्कुमैः।
मृगनाभिरसैश्चैव मुनिवारान् पृथक्पृथक् ॥ ११४५ ॥
गुञ्जामात्रं लिहेत्सम्यक् सिताऽऽज्यमधुसंयुतम्।
राजरोगं निहन्त्याशु पाण्डुरोगविनाशनम् ॥ ११४६ ॥
द्वन्द्वजं छर्दिरोगञ्च श्वासं कासञ्च कामलाम्।
दीर्घवातं पञ्चगुल्मान् सर्वशूलं विनाशयेत् ॥ ११४७ ॥
उन्मादञ्च मतिभ्रंशमष्टोदरमहागदान्।
मेहानां विंशतिश्चैव षण्ढत्वञ्च क्षयं नयेत् ॥ ११४८ ॥
अरोचकमग्निमान्द्यं ग्रहणीदोषनाशनम्।
वलीपलितविध्वंसि नाशयेत्कुम्भकामलाम् ॥ ११४९ ॥
दृष्टिपुष्टिकरं वल्यं करपवातञ्च नाशयेत्।
असाध्यरोगनाशाय साध्यो लक्ष्मीविलासकः ११५०

वै. चि (ल), र. स मा., रसायने।

भाषा—सुवर्णभस्म १ भाग, रजतभस्म २ भा, ताम्रभस्म ३ भा, कान्तभस्म ४ भा., फोलादभस्म ५ भा., मण्डूरभस्म ६ भा, निश्चन्द्रअभ्रकभस्म ७ भा., वङ्गभस्म ८ भा, नागभस्म ९ भा., प्रवाल १० भा., और मोती ११ भाग, लेकर सबकी बराबर पारदभस्म मिलाकर जावित्री, त्रिकटु, त्रिफला, चातुर्जात, केशर, कस्तूरी, इनप्रत्येककेद्रवोंसे ७–७

भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इन-मेंसे १ गोलीसे ३ गोलीतक अग्निबल देखकर मिश्री, घी और मधुकेसाथ देनेसे राजरोग, पाण्डु, हृद्रोग, छर्दिरोग, श्वास, कास, कामला, दीर्घकालीन वातरोग, पांचप्रकारकेगुल्म, नव-प्रकारके शूल, उन्माद, मतिभ्रंश (विक्षिप्तता), अपोदरीयमला-रोग, २० प्रकारकेप्रमेह, पण्ढता, अरुचि, मन्दाग्नि, ग्रहणी, वली; पलित, दृष्टिकी कमज़ोरी, कम्पवात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २४० ॥

२४१ लक्ष्मीविलासरसः (नवमः)

रसकनकपविप्रवालमुक्ता
गगनाहित्रपुकान्तताम्रमेतत ।
तनुतरमखिलं विभावितं त्रिः
कनकरसैः स्नुहिजैः सुकाखमर्दैः ॥ ११५१ ॥
कन्येक्षुवज्रीस्वरसे विमर्द्य
पक्वेष्ठ गन्धर्वदले विबध्य ।
निधाय धान्ये त्रिदिनं गृहीत्वा
क्षुण्णं वराक्षौद्रयुतञ्च दद्यात् ॥ ११५२ ॥
प्रमेहञ्च कासं व्रणं पाण्डुहिक्के
महाशूलमन्दानलश्लेष्मवातान ।
अपस्मारकुष्ठे हलीमज्वरञ्च
निहन्याद्य लक्ष्मीविलासो रसोऽयम॥११५३॥

रसायनसं ,वै. वि., प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, हीरा, प्रवाल, मोती, अभ्रक, नाग, वङ्ग, कान्त और ताम्र इनकीभस्में समभागलेकर धतूरा, टंटा-थोहर, करोंजी, घीकुंवार, ईख, थोहर इनकेस्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोला बनाय एरण्डकेपत्तोंमेंलपेट कच्चे सूतसे बांध-कर धान्यराशिमें गाड़दे । चौथेरोज़ निकालकर खरलकर रखछोड़े । इसमेंसे आधीरत्तीसे १ रत्तीतक त्रिफला और मधुके-साथ देनेसे प्रमेह, खासी, व्रण, पाण्डु, हिचकी, महाशूल, मन्दाग्नि, श्लेष्मवात, अपस्मार, कुष्ठ, हलीमक, ज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २४१ ॥

२४२ लक्ष्मीविलासरसः (दशमः)

सूताऽयोऽभ्रकगन्धकं समलवं सूताङ्घ्रितुल्यं सितं,
स्वर्णं भूसितया वृषेण वरया वर्या विदार्या पृथक् ।
मर्द्यं कन्यकया तथैव सितया ज्येष्ठाह्वया मोचया,
तद्गोलं परिरुद्ध्य यक्षकरजैः पत्रैस्त्रिघस्रं न्यसेत् ११५४
राशौ तण्डुलजेऽथवा सुमनजे तुर्ये दिने चोद्धरेत्,
दत्त गुञ्जचतुष्टयं विजयते मेहादिकानामयान् ।
क्षौद्रेण त्रिफलायुतेन मधुना कृष्णायुतेन क्षयं,
कासं पञ्चविधं तथा तदनुजं पाण्डुञ्च हिक्कामयान् ॥
यक्ष्माणं पवनान्हलीमकमहापस्मारमुख्यान्जयेत्,
प्रोक्तोऽयं शशिशेखरेण च मुदा लक्ष्मीविलासाभिधः

रसायनसं., र प ,र.पा., रसायने ।

भाषा—नाग, लोह, अभ्रक इनकीभस्में, शुद्धगन्धक सम भाग लेकर पांचोंको चूर्णित करो और स्वर्णभस्म मिलाकर सफेद मूसली (शालमलीमूसलमें [illegible]), अडूसा, त्रिफला, शतावर, विदारी, घीकुवार, [illegible], [illegible], [illegible] इनके स्वरसोंमें १–१ रोज़ मर्दनकर गोलाबनाय एरण्डकेपत्तोंमें लपेट कर मूसले बांधकर धान्य अथवा फूलोंकी ढेरीमें ३ दिनतक दबादे । चौथेदिननिकालकर खरलकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–८ रत्तीकी मात्रा त्रिफला-मधु अथवा पीपल मधुकेसाथ देनेसे ५ प्रकारकाराग, पाण्डु, हिक्का, [illegible], कासु, [illegible], अपस्मार प्रभृति महारोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २४२ ॥

२४३ लक्ष्मीविलासरसः (एकादशः)

वेदेन्दुनेत्राङ्गरसाङ्कभागा
भ्रमृतगन्धोषणतिन्दुटङ्काः ।
भृङ्गार्द्रशुभ्रायवनीनवाभि-
र्भाव्यं त्रिशः स्वेद्यमहोऽर्कपत्रे ॥
लक्ष्मीविलासः स विशाललक्ष्मीं
तनौ तनोति क्षयिणः प्रयोगैः ॥ ११५६ ॥

र र स ,रसायने ।

भाषा—अभ्रकभस्म ४ भाग, शुद्ध पारा १ भाग., गन्धक २ भा., मरिच, कुचिला और सुहागा ६–६ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भंगरा, अदरक, सफेदगुञ्जा, खुरासानी अजवाइन और पुनर्नवा इनके स्वरसोंमे ३–३ भावनाएं देवे । प्रत्येक भावनाके पीछे आकके पत्तेपत्तोंके दोनेमें रख दो दो अङ्गुल मिट्टीकालेपदेकर जलते हुए कण्डोंमें रक्खे । गोला लालहोनेपर बाहर निकालकर फिर दूसरेस्वरससे भावनादेकर आकके पत्तोंमें रख पूर्ववत् स्वेदनकरे। इसतरह स्वेदनकरनेकेबाद ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली य अथवा रोगोचितानुपान केसाथ देनेसे सबप्रकारके क्षय निवृत्त होकर क्षयग्रस्त रोगीके शरीरमें कान्ति और बल प्रकटहोतेहैं ॥ ३४३ ॥

२४४ लक्ष्मीविलासरसः (द्वादशः)

वङ्गनागौ च भागौ द्वौ भागैकं रसभस्मनः ।
गगनस्य च भागैकं हेमरौप्यं द्विभागिकम् ॥ ११५७॥
वैक्रान्तकान्तभागौ द्वौ मेलयित्वा विमर्दयेत् ।
भावनाः खलु दातव्याः कुमारीरसतः शुभाः ११५८
एकविंशद्वरानीरैः सप्तधा भावयेद्भिषक् ।
योजितो रसवर्योऽयं महालक्ष्मीविलासकः ॥११५९॥
प्रमेहान्विंशतिं हन्याद्वातपित्तकफोद्भवान् ।
यक्ष्माणं पाण्डुरोगञ्च सोमरोगं तथाऽश्मरीम् ११६०
मूत्राघातं मूत्रकृच्छ्रं झटित्येव विनाशयेत् ।
वर्जयेत्स्नानमभ्यङ्गं प्रमेहजनकं गणम् ॥ ११६१ ॥

र पा ,प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—वङ्ग और नागभस्म २-२ भाग, पारद और अभ्रकभस्म १-१ भाग, सुवर्ण, रजत, वैक्रान्त, कान्तलोह इनकीभस्में २-२ भाग लेकर एकजगह मर्दनकर घीकुंवार की २१ और त्रिफलाकेस्वरस अथवा क्राथकी ७ भावनाएं देकर एक या दोरत्तीकी मात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, राजयक्ष्म, पाण्डु, सोमरोग, पथरी, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै । इसमें स्नान, अभ्यङ्ग और प्रमेहजनकगण इनका परित्यागकरें ॥ २४४ ॥

२४५ लाईचूर्णम् (प्रथमम्)

पारदं गन्धकं लोहं त्र्यूषणं लवणानि च ।
क्षारत्रयं यमान्यौ च मुस्तकं गजपिप्पली ॥ ११६२ ॥
कुटजेन्द्रयवा हिङ्गु शतपुष्पाऽहिफेनकम् ।
गृहधूमो वचा कुष्ठं विडङ्गं जीरकद्वयम् ॥ ११६३ ॥
अभ्रकं चित्रकं पाठा लवङ्गं त्रिफला शुभा ।
जातीफलं सकर्पूरं त्वगेला पत्रकेशरम् ॥ ११६४ ॥
एतानि समभागानि शक्रासनसमानि च ।
माषमात्रप्रयोगेण दीपयेज्जठरानलम् ॥ ११६५ ॥
अवश्यं जरयत्याशु भक्ष्यं चैवाति[illegible]नम् ।
नाशयेद्ग्रहणीं शोथमामं[illegible] ॥ ११६६ ॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च कासं श्वासं [illegible]दरम् ।
प्लीहानं पीनसं शूलं कुष्ठं कृमिगदं तथा ॥ ११६७ ॥
सेव्यमाने भवेत्का[illegible]मत्यद्भुतम् ।
जीवेद्वर्षशतं साग्रं वलीपलितनाशनम् ॥
वातश्लेष्मविकारेषु शस्यते [illegible]केः ॥ ११६८ ॥

र. सु , अतिसारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोहभस्म, त्रिकटु, पांचोंनमक, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, देशी और खुरासानी अजवाइन, नागरमोथा, गजपीपल, कूडेकी छाल, इन्द्रजव, भुनाहींग, सोंफ, अफीम, गृहधूम, वच, कूठ, विडङ्ग, स्याह-सफेद जीरे, अभ्रकभस्म, चित्रकमूल, पाढ़ा, लौंग, त्रिफला, गोरोचन, जायफल, शुद्धकपूर, तज, ईलायची, पत्रज, नागकेशर येसव समभाग, भुनीभांग [illegible]वर लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १-२ रोज मर्दनकर रखछोडे । इसमेंसे १-१ माशा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, ग्रहणी, शोथ, आम, आमवात, कामला, पाण्डु, कास, श्वास, जलोदर, प्लीहा, पीनस, शूल, कुष्ठ, कृमिरोग इनसबको यह नष्टकरताहै । इसके सेवनकरनेसे कामका उद्दीपन होताहै और [illegible]सङ्गकरसक्ताहै । अगर जितेन्द्रियहोकर सेवनकरे तो [illegible] निवृत्तहोकर १०० वर्षकी आयुको भोगताहै । वात और श्लेष्मविकारोंमें तुषोदककेसाथ देना २४५

२४६ लाईचूर्णम् (बृहत्) (द्वितीयम्)

दीप्यौ [illegible]त्रिकटुगजकणा वेल्लभल्लातकोग्रा,
[illegible]रसगन्धाभ्रधूमोत्तमाश्च ।
एतेषां तुल्यभङ्गारज उदितमतीसारशूलग्रहण्या-,
नाहप्लीहप्रमेहाऽनलहतिषु बृहल्लाइचूर्णं प्रशस्तम् ११६९

यो. त. अतिसारे ।

टि०—यद्यप्यय योगः प्रथमपाठेऽन्तर्भवितुमुचित परन्तु भल्लातयुक्तत्वात्राऽन्तर्भावित इति हृद्याकल्नीयम्, भल्लातयुक्तयोगस्य सर्वप्रकृत्यसात्म्यत्वात् ।

भाषा—देशी और खुरासानी अजवाइन, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, चित्रकमूल, त्रिकटु, गजपीपल, विडङ्ग, भिलांवां, वच, दोनोंजीरे, भुनीहींग; कुठ, पांचोंनमक, शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रकभस्म, गृहधूम और त्रिफला, येसव समभाग, इनसबकीवरावर भुनीभांगकाचूर्ण लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे १-१ माशा रोग अथवा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे अतिसार, शूल, ग्रहणी, आनाह, प्लीहा, प्रमेह, मन्दाग्नि इनसबरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २४६ ॥

२४७ लाईचूर्णम् (तृतीयम्)

चित्रकं त्रिफला व्योषं विडङ्गं रजनीद्वयम् ।
हिङ्गु भल्लातकं दीप्यं लवणानाञ्च पञ्चकम् ॥ ११७० ॥
गृहधूमो वचा कुष्ठं घनमभ्रकगन्धकम् ।
क्षारत्रयञ्चाऽजमोदा पारदं गजपिप्पली ॥ ११७१ ॥
एतेषां चूर्णितं यावत्तावच्छक्राशनस्य च ।
अभ्यर्च्य लाइकां प्रात योगिनीं कामरूपिणीम् ११७२
माषमात्रप्रमाणन्तु नरं नित्यं निषेवयेत् ।
मन्दाग्निकासदुर्नामप्लीहपाण्डुज्वरापहम् ॥ ११७३ ॥
प्रमेहशोथविष्टम्भसङ्ग्रहग्रहणीहरम् ।
सर्वाऽतीसारशमनं सर्वशूलनिवारणम् ॥ ११७४ ॥
आमवातगदच्छेदि सूतिकातङ्कनाशनम् ।
न तस्मिन् व्याधयस्सन्ति वातपित्तकफोद्भवाः ११७५
काष्ठमप्युदरे यस्य भक्षणाद्याति भस्मताम् ।
गुर्वन्नञ्च व्यवायञ्च स्नानं पिशितभोजनम् ॥ ११७६ ॥
काञ्जिकाऽम्लं सदा पथ्यं दुग्धं मीनं तथा दधि ।
तस्मादिदं सदा सेव्यं गुडेन वटकीकृतम् ॥ ११७७ ॥

यो म , र सु., र क ल , र का , नि. र , टो., र. चि., र र., ध , बृ. यो. त., ना. वि., भै र , अतिसारे ।

टि०—रसराजसुन्दरे रसकामधेनौ च पाठद्वय प्रकल्पितम् । तत्र रसराजसुन्दरे एकस्मिन् स्थाने मोचरसपाठालवङ्गजातीपत्रकाणि अधिकतया निक्षिप्तानि । द्वितीयस्थाने लाविकाख्यचूर्णे अतिविषाजातीफले अधिकतया प्रक्षिप्ते, एतानि सर्वाण्यपि वस्तूनि सम्मिश्रय्य योगे निर्मापिते न काऽपि क्षति प्रतिभाति । रसकामधेनौ द्वितीयस्थाने केवलं जातीफल दृश्यने अतिविषाऽभाव । रजनीद्वयस्थाने जीरकद्वयमिति केचित्पठन्ति ॥

भाषा—चित्रकमूल, त्रिफला, त्रिकटु, विडङ्ग, दोनोंहल्दी, भुनीहींग, शुद्धभिलावे, अजवाइन, पांचोंनमक, गृहधूम, वच, कुठ, नागरमोथा, अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, तीनोंक्षार, अजमोद, शुद्धपारा, गजपीपल येसव समभाग, इनसबकीवरावर भुनीभांग

काचूर्ण अच्छीतरह मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशेकी- मात्रा गुड़ अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, कास, बवासीर, प्लीहा, पाण्डु, ज्वर, प्रमेह, शोथ, विष्टम्भ, सङ्ग्रह-ग्रहणी, सर्वातिसार, समस्तशूल, आमवात, सूतिकारोग, इन सबको यह नष्टकरताहै । इसका निरन्तर सेवनकरनेवालेको वात पित्तकफज व्याधिया नहीं होतीहै । काष्ठभी खाया हुआ भस्म होजाताहै । भारीअन्न, मैथुन, स्नान, मास, काञ्जी, खटाई, दूध, मछली और दही येसव सात्म्यहोतेहै ॥ २४७ ॥

२४८ लाईचूर्णम् (चतुर्थम्)

शाणं शाणं रसं गन्धं तयोः कुर्याच्च कज्जलीम् ।
मृताऽभ्रं भृष्टवाह्लीकं त्रिसुगन्धञ्च वालकम् ॥११७८॥
जातीफलं लवङ्गञ्च कुष्ठं जीरं कुलिञ्जनम् ।
व्योषं मोचरसं विल्वं कारवी पटुपञ्चकम् ॥ ११७९ ॥
एतानि शाणमात्राणि भृष्टा भङ्गाऽखिलैः समा ।
लाईचूर्णमिति ख्यातं रुच्यं दीपनपाचनम् ॥ ११८० ॥
प्रातस्तक्रेण शाणं तद्देयं शाणार्द्धकं निशि ।
सतक्र हन्त्यतीसारं ग्रहणीञ्च प्रवाहिकाम् ॥
कुर्यान्निद्रावलं पुष्टिं यथार्हं वालके पुनः ॥ ११८१ ॥

र (मा.), र.सु , अतीसारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ४–४ माशेकी नीलवर्ण-कज्जली, अभ्रकभस्म, भुनीहींग, तज, पत्रज, इलायची, सुगन्धवाला, जायफल, लौंग, कुठ, जीरा, कुलिजन, त्रिकटु, मोचरस, वेलगिरी, कलोंजी, पाचोंनमक, येसव ४–४ माशे, भुनीभाग सवकीवरावर लेकर वारीकचूर्णकर कज्जलीमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ माशा प्रात काल और १॥–१॥ माशा रात्रिको छाछकेसाथ देनेसे ग्रहणी, प्रवाहिकाइत्यादिकोंको नष्टकर सुखकीनिद्रा और पुष्टिको वढाताहै ॥ २४८ ॥

२४९ लाईचूर्णम् (पञ्चमम्)

पञ्चलवणं त्रिशाणं स्यात्प्रत्येकं त्र्यूषणं पिचुः ।
गन्धकान्माषका ह्यष्टौ चतुरो माषका रसात् ११८२
इन्द्राशनात्पलं शाणत्रितयाऽधिकमिष्यते ।
खादेन्मिश्रीकृताच्छाणमनुपेयञ्च काञ्जिकम् ॥११८३॥
माषकादिक्रमेणैव मनुयोज्यं रसायनम् ।
अत्यन्ताऽग्निकरश्चाऽत्र भोजनं सार्वकामिकम् ॥
प्रसिद्धयोगिनीलाईप्रोक्तं चूर्णं रसायनम् ॥ ११८४ ॥

यो.म , र का , र चि , भै र , अतिसारे । र. चि., भै र नायिकाचूर्णमितिनाम ।

भाषा—पाचोंनमक १२–१२ माशे, सोंठ, मिर्च, पीपल १–१ कर्ष, शुद्धगन्धक ८ माशे, शुद्धपारा ४ माशे, और भुनीभाग १ पल १२ माशे लेकर सवका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशेसे शुरूकर ४ माशेतक वढावे ऊपरसे काञ्जी पीवे, भोजन यथेष्टकरे । इसकेसेवनसे अग्नि अत्यन्त प्रदीप्तहोकर अतिसारादिकोंका नाश होताहै ॥ २४९ ॥

२५० लाईचूर्णम् (लघु) (षष्ठम्)

कर्षं गन्धकमर्द्धपारदमुभौ कुर्याच्छुभां कज्जलीं,
त्र्यक्षं त्र्यूषणतश्च पञ्चलवणं स्यादर्द्धकर्षं पृथक् ।
तच्छक्राशनचूर्णतुल्यनिहितं तत्सर्वमेकीकृतं,
खादेच्छाणमितं सकाञ्जिकपलं मन्दाग्न्यतीसारनुत् ॥

र. को , र.क. ल., चि.र.भ., वै. चि., वै.र., वृ.यो. त , यो. त., र सु , टो., नि.र., र.का , यो म., र र., र. चं , अतिमाराऽधिकारे । र. चि. नायिकाचूर्णेतिनाम ।

—रसराजसुन्दरे निघण्टुरत्नाकरे च भृष्टहिङ्गुजीरकद्वयञ्च यथा-[illegible] । रसकामधेनौ केवल जीरकद्वयमधिकनया न्यस्तम् पार-[illegible] भागो गृहीतौ । वहुपु स्थानेपु सार्धञ्च कर्षं पृथ-गिति [illegible] गदर्द्धकर्षं पृथगित्येव पाठ. साधु प्रतिभाति, माऽर्द्धकर्षं [illegible] स्यात् । र र , र च , एतयो. रसायना-मृतमिति नाम [illegible] विशेषतया निर्दिष्टोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धगन्धक १ कर्ष, शुद्धपारा ८ माशेकी नीलवर्ण कज्जली, त्रिकटु ३ कर्ष, पांचोंनमक ८–८ माशे, भुनीभाग सवकीवरावर लेकर सवका वारीकचूर्णकर एकजगह मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ माशे लेकर काञ्जीपीनेसे मन्दाग्नि और अतिसारप्रभृतिरोग [illegible]

२५१ लाईचूर्णम् [illegible]

सूतं गन्धं त्रिकटुकं दीप्यकं जीरकद्वयम् ।
सौवर्चलं सैन्धवञ्च रामठं [illegible]मेव च ॥ ११८६ ॥
शक्राह्वयस्य चूर्णन्तु चूर्णतुल्यं प्रदापयेत् ।
सङ्ग्रहं शूलमानाहं हन्यान्नानाऽतिसारकम् ॥ ११८७ ॥

यो.र , वै चि , नि र , र चं , र का , यो.त., अतिसारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, त्रिकटु, अजवाइन, दोनों जीरे, सञ्चल, सैन्धव, भुनीहींग, विडनमक येसव समभाग लेकर सवकीवरावर भुनीभागकाचूर्णमिलाकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेसे ४ माशेतक मात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेसे सङ्ग्रहग्रहणी, शूल, आनाह [illegible] नष्टकरताहै ॥ २५१ ॥

२५२ लाङ्गल्यादिगुटिका

लाङ्गली त्रिवृता लोहचूर्णं दशपलं [illegible] ।
त्रिंशत्तु गुटिकाः पथ्याः कुर्याद्भृङ्गरसाप्लुताः ॥११८८॥
छायाशुष्काश्च तत्राऽर्द्धां गुटिकां भक्षयेत्ततः ।
जीर्णे रसेन रूक्षेण पेया पूर्वं न भोजयेत् ॥ ११८९ ॥
यन्त्रितो ब्रह्मचर्याद्यैः क्रमेण गुटिका[illegible] ।
खादेत्प्रातस्तु मासैकं भवेत्कामचरः क्रमात् ॥ ११९० ॥
एवं सर्वाणि कुष्ठानि जयत्यतिवलान्यपि ।
धीमेधास्मृतियुक्तस्तु नित्यं जीवेत्समाः शतम् ११९१

ग नि , कुष्ठे ।

भाषा—शुद्ध करिहारी, निशोत, लोहभस्म १०–१० पल लेकर वारीकचूर्णकर भंगरेकेरससे १–२ रोजघोटकर ३० गोलिया

वनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे आधीआधीगोली खावे। जीर्णहोनेपर सूक्ष्मांसरससे पेया वनाकरदे। पहिले भोजन न दे। इसके सेवनमें ब्रह्मचर्यका पालनकरे। धीरे २ सात्म्यहोनेपर प्रतिदिन १–१ गोली भी खासक्ताहै। एकमहीने वाद यथेष्टभोजनकरे। इसकेसेवनसे समस्तकुष्ठोंसे रहित और बुद्धि, मेधा, स्मृतियुक्तहोकर १०० वर्षतक जीताहै ॥ २५२ ॥

२५३ लाङ्गल्यादिलोहम्

विशुद्धलाङ्गलीमूलकटुत्रयफलत्रयैः ।
द्राक्षागुग्गुलुभिस्तुल्यं लौहचूर्णं नियोजयेत् ॥११९२॥
मातुलुङ्गरसेनैव त्रिफलाया रसेन च ।
विमृद्य यत्नतः पश्चाद्गुटिकाऽङ्कोलसम्मिताम् ॥११९३॥
भक्षयेन्मधुना साऽर्द्धं करोति शृणु यान् गुणान् ।
आजानु स्फुटितं घोरं सर्वाङ्गस्फुटितं तथा ॥
तत्सर्वं नाशयत्याशु साध्याऽसाध्यञ्च शोणितम् ११९४

र सं., र. सु., ध., र. र., वातरक्ते।

भाषा—विशुद्धकरिहारी, त्रिकटु, त्रिफला, द्राक्ष, गूगल येसव-सममाग, लोहभस्म सवकीवरावर लेकर विजोरा और त्रिफलाके-रससे १–१ रोज मर्दनकर ... की गोलियां वनाकर रख-छोड़े। इनमेंसे १–१ गोल... साथलेनेसे घुटनोंतक तथा सर्वाङ्गमें फूटे हुए साध्य अथवा असाध्य वातरक्तको यह नष्टकरताहै॥

२५४ स्के माहेश्वररसः

शार्वं वीर्यञ्च दैत्यं दरदकु[illegible]टिका खर्परं तालकञ्च,
कङ्कुष्ठश्चाश्मजातं रसशशिसकलं तुल्यभागेन ग्राह्यम् ।
जात्याख्यं देवपुष्पाक्कलकरमरिचं शुण्ठिपाञ्चालिके द्वौ
भागौ मर्द्यौ च रविपदजलयो र्भावयेत्सप्त वारान् ११९५
तद्भृङ्गाव्यञ्च भार्ग्या कथमपि सुरसाकासमर्द्दद्रवैश्च,
घर्मे भाव्यं छिवल्लात्मककृतगुटिकं सेवनीयं पयोभिः ।
हन्यात्सर्वोपदंशं व्रणमपि विविधं गण्डमालां भगघ्नं,
पथ्यं गोधूमयुक्तं वहुलघृतयुतं कोष्णनीरञ्च पाने ११९६

रसायनस., उपदंशे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, शिगरिफ, मैनसिल, खपरिया, हरिताल, मुर्दासङ्ग, शिलाजीत, और रसकपूर सवसमभाग, जावित्री, लौंग, अफ्लकरा, मरिच, सोठ, पीपल, २–२ भाग लेकर सवका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर आककीजड़कीछालके स्वरस और दूधसे ७–७ भावनाएं देकर भारङ्गी, तुलसी, कसौंजी, इनप्रत्येकके रसोंसे १–१ रोज मर्दनकर ६ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोला दूधकेसाथ सेवनकरनेसे सवतरहके उपदंश, नानातरहकेव्रण, गण्डमाला, भगन्दर इनसवको यह नष्टकरताहै। इसमें गेहूं, घी, और गरमपानी पथ्यहै ॥ २५४ ॥

२५५ लीलाविलासरसः (प्रथमः)

शुद्धसूतस्य भागौ द्वौ द्वौ भागौ गन्धकस्य च ।
मुक्ता वैक्रान्तकान्ताऽभ्रं हेमभस्म दशांशकम् ॥११९७॥
षोडशांशं ताम्रभस्म भागैकं रौप्यभस्मकम् ।
सम्मर्द्य भावयेत्खल्वे त्रिफलाभृङ्गजै द्रवैः ॥ ११९८ ॥
एकविंशतिवाराणि भावयेच्छोषयेत्पुनः ।
द्राक्षादाडिमपुष्पोत्थनारिकेलाम्बुमर्दितम् ॥ ११९९॥
त्रिगुञ्जं वा चतुर्गुञ्जं मधुना संयुतं लिहेत् ।
पित्तयुक्ते ज्वरे द्वन्द्वे ह्यम्लपित्ते सपित्तके ॥ १२०० ॥
चत्वारिंशत्पित्तदोषे शूले पक्तिसमुद्भवे ।
योनिशूले गुल्मशूले प्रदरे रक्तदोषजे ॥
महालीलाविलासोऽयं पित्तरोगे प्रशस्यते ॥ १२०१॥

र. पा., पित्तरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक २–२ भाग; मोती, वैक्रान्त, कान्त, अभ्रक और सुवर्णभस्म ये प्रत्येक १० वाभाग, ताम्रभस्म १६ वा भाग, रजतभस्म १ भागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण-कज्जलीमें मिलाय त्रिफला और भंगरेकेरससे २१–२१ भावनाएं देकर मर्दन और शोषणकरे। इसकेवाद द्राक्ष, अनारकेफूल, नारियल इनकेस्वरसोंसे १–१ दिनमर्दनकर ३–३ अथवा ४–४ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुमें मिलाकर चाटनेसे पित्तयुक्तद्वन्द्वजज्वर, अम्लपित्त, ४० प्रकारके पित्तदोष, पक्तिशूल, योनिशूल, गुल्मशूल, प्रदर, रक्तदोष इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ २५५ ॥

२५६ लीलाविलासरसः (द्वितीयः)

रसो वलि र्व्योम रविश्च लौहं
धात्र्यक्षनीरैस्त्रिदिनं विमर्द्य ।
तदल्पघृष्टं मृदु मार्कवेण
सम्मर्दयेदस्य च वल्लयुग्मम् ॥ १२०२ ॥
हन्त्यम्लपित्तं मधुनाऽवलीढं
लीलाविलासो रसराज एषः ।
दुग्धैः सुकूष्माण्डरसैः सुधात्र्या
पक्वं शनैस्तत्ससितं भजेद्वा ॥
छर्दिं सशूलं हृदयस्य दाहं
निवारयेदेष न संशयोऽस्ति ॥ १२०३ ॥

र. सं, र. चि., वै चि., यो र, भै सा, र. र. स, र शं., र. सु., चि. र. भ, चि. क, र चं, बृ. यो. त., यो म, नि. र., टो, र मं., र. क ल., रसायनसं., र र. कौ, र. कौ, र. को., र. र. दी, भै. र, यो त, र म. मा, ना वि, र. क., व. रा, र का., र. पा, अम्लपित्ते ॥

टि०—कुत्रचिल्लोहस्थाने रौप्यं दृश्यते, रोचनमपि कुत्रचिद् दृश्यते भावनायाञ्च हरीतक्या मर्दनमधिकतया दृश्यते । रसपारिजाते भावनाया "पञ्चविंशतिवारञ्च तावद्धि र्वह्निजद्रवै" इत्यर्द्धश्लोको विशेषेण दृश्यते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक, ताम्र और लोह-भस्म सव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर आवले और वहेड़े-केरससे ३–३ रोजमर्दनकर भंगरेकेरससे थोड़ीदेरमर्दनकर ६–६ रत्तीकीगोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली

मधुकेसाथलेनेसे अम्लपित्त, वमन, शूलयुक्तहृदयकादाह, इनसव-को यह नष्टकरताहै। दूधमें सफेद कोंहळा अथवा कच्चे आंवलोंका रस डालकर पकावे। फटजानेपर इसकापानी अनुपानमें देवे २५६

२५७ लोकनाथपोट्टलीरसः

पारदभूति र्हेमभूत्या कार्या समानांशा।
द्वाभ्यां समानगन्धः पयसा गव्येन मर्दयेद्दिवसम् १२०४
चित्रकनीरेण ततस्त्रिदिनं पयसाऽथ सूर्यस्य।
त्रिगुणितपीतवराटकगर्भे क्षिप्तं निरोधितं यत्नात् १२०५
कार्पासटङ्कणाभ्यां चूर्णाल्लिप्तेऽथ भाण्डके क्षिप्तम्।
रुद्धं गजपुटसञ्ज्ञे विपाचितं तत् त्रियामायाम् १२०६
इष्ट्वा भैरववटुकान् कुमारिकावृद्धवैद्ययोगीशान्।
प्रातःकाले स्नात्वा इष्ट्वा पूर्वांश्च लेपनमुद्धृत्य ॥१२०७॥
खल्वतले निक्षिप्य सचराचरं मर्दयेद्यत्नात्।
सर्वोपद्रवनुत्यै सिद्धा स्यात्पोट्टली रम्या॥ १२०८ ॥
वल्लद्वयोन्मितैषा मरिचै र्घृतान्वितैश्च संसेव्य।
अनेकज्वराश्च रोगाः सर्वे नाशं प्रयान्त्येव ॥ १२०९ ॥
मुखं विलेप्याऽथ घृतेन पूर्वं
सम्पूज्य गोविप्रभिषक्कुमारीः।
दत्त्वा घृतं स्वर्णयुतं द्विजेभ्यः
संसेवयेन्माङ्गलिकं विधाय ॥ १२१० ॥
शुभे दिने सुनक्षत्रे लब्ध्वा चन्द्रबलं सुधीः।
वस्त्रालङ्करणैः पूज्य प्राणाचार्यं कृतादरः॥ १२११ ॥
कृत्वा स्वस्त्ययनं पूर्वं सर्वतोभद्रसञ्ज्ञके।
लोकेशं पूर्वमभ्यर्च्य प्राङ्मुखोदङ्मुखोऽपि वा १२१२
प्राणाचार्यं नमस्कृत्य लब्धानुज्ञश्चरेद्रसम्।
हाटके राजते पात्रे काचके वाऽपि शौक्तिके॥१२१३॥
इमं मन्त्रं समुच्चार्य प्राङ्मुखोदङ्मुखस्तथा।
भेपजं सेवयेत्प्राज्ञः स्थित्वा चोत्कटकासनः ॥१२१४॥
" ब्रह्मा यक्षश्च रुद्रेन्द्रभूचन्द्राऽर्काऽनलाऽनिलाः।
ऋषयस्सौपधीग्रामा भूतसङ्घाश्च पान्तु मे १२१५ ॥
रसायनमिवर्षीणां देवानाममृतं यथा।
सुधेवोत्तमनागानां भैपज्यमिदमस्तु मे ॥" १२१६ ॥
एवं संसेव्यमाने तु रसे वह्युद्भवो भवेत्।
वमि र्विरेको दाहोऽसशिरोरुग्गात्रगौरवम् ॥ १२१७ ॥
अरोचकाग्नितीव्रत्वशुक्ररेकादयस्तथा।
मुखपाकोऽल्पनिद्रत्वं रसव्यापत्तदुच्यते ॥ १२१८ ॥
प्रतिकार्या पृथगिमे चाऽन्यथा बलहानिदाः।
वमौ गुडूचिकातोयं मधुना वान्तिनाशनम् ॥१२१९॥
मातुलुङ्गाद्वितोयं वा मधुना बर्हिपत्रकम्।
लाजाः कणामधुयुता नाभिगह्वौ जलैःस्पृशेत्॥१२२०॥
शान्तिरुण्टस्तु मधुना दध्ना वा विजया तथा।
विरेकोपद्रवहरा भक्षयेत् तण्डुलाम्बुना ॥ १२२१ ॥
दाघ सुधाजलं शस्तं शीततोयाऽवगाहनम्।
स्वकुष्ठेन घृतेनांऽसलेपनं तद्व्यथापहम् ॥ १२२२ ॥
शिरोरुक्शमनः शल्यफलालेपस्तुपाम्बुना।
घृतेन मर्दनं देहजाड्यापहरणं तथा ॥ १२२३ ॥
मातुलुङ्गफलकेशरं हितं
सैन्धवेन मरिचैश्च संयुतम्।
धान्यकं सगुडशर्करं घृतैः
पाचितं त्वरुचिसङ्गनाशनम् ॥ १२२४ ॥
मोचाफलं घृतसितासहितञ्च तीव्र-
वह्नेः सुशान्तिकरणं घृतमेव शस्तम्।
शुक्रच्युतौ ससितमोचफलाम्बु शस्तं
वा शुक्तपानमथवा सघृतं पयो वा ॥१२२५॥
गुडार्द्रकं वा कफकोपनाशनं
मोचाफलस्यैव च भस्मकं वा।
पलाशबीजं मधुना च वेल्ल-
स्तथा कृमीन्नाशयति प्रसह्य ॥ १२२६ ॥
क्वाथः खदिरमूलत्वक्साधितो मुखपाकहा।
खदिरादिवटी शस्ता या च पूर्वं प्रकीर्तिता ॥
उन्निद्रहरणं सर्पिः पानकं तु मुहुर्मुहुः ॥ १२२७ ॥
एते यदा स्यु र्व[illegible]द्रवा-
स्तदा रसः क[illegible] कुटं भवेत्।
दिनान्तरेणैव रसः [illegible]
मरीचचूर्णं सघृतं [illegible]न ॥ १२२८ ॥
शाणद्वयाऽनुवृद्ध्या रसाऽनुपाने घृतं देयम्।
प्रथमदिवसादारभ्य त्रिसप्तकी भवेद्यावत् ॥ १२२९ ॥
पथ्यं तण्डुलमुद्गमापतुवरीजातं हितं पूर्वतः,
सप्ताहं घृतपूरितं सुमनसां संयावपिष्टोद्भवम्।
शाकं वास्तुकमेवनादसुरसाचुक्राशिवावार्हतं,
नैष्पत्रं करमर्दकं सुरभितं हिङ्ग्वादिभिः साधितम् १२३०
वमि र्विरेको दिवसे तृतीये षष्ठेऽथवा सप्तदिनान्तरे वा।
यदा रसेशः परिवर्जनीयो दिनानि तावन्ति परिक्रमाय
हृद्यं वृष्यं गुरूष्णं दधिघृतबहलं पाययेद्भूरि दुग्धं,
क्षीरं पादाऽवशिष्टं कलमघृतसितापष्टियुक्तञ्च शीतम्।
सेव्यं युक्त्या द्वितीये बहुगुणसहितं सप्तके पुष्टिकामो,
भूमौ चोत्तानशायी मृदुतरशयने रात्रिशेषे न सुप्यात्
तृतीये सप्तकेऽप्येवं ससितं घृतपा[illegible]तम्।
नारिकेलाम्बुसंसिद्धं क्षैरेयं चातिसेवयेत् ॥ १२३३ ॥
सर्पिषा मर्दनं शस्तं स्नानमुष्णाम्बुना हितम्।
क्षुधोद्गमे हितं पथ्यं त्रिचतुःपञ्चवारकम् ॥ १२३४ ॥
पूर्णे त्रिसप्तके रोगी रोगमुक्तः प्रजायते।
पूर्णदेहः पुष्टियुक्तश्चतुर्थे सप्तके भवेत् ॥ १२३५ ॥
सप्तकत्रितये स्वस्थः सेवते पूर्वभावतः।
पुष्टिवीर्यबलाऽऽरोग्यं प्रयाति वपुषि श्रियम् ॥१२३६॥
केचिदिच्छन्ति संलिप्तं जातरूपं रसेश्वरम्।
अहिमिच्छेद् द्विधा सम्यग्जातरूपं महीतले ॥१२३७॥

र, जयाऽधिकारे।

भाषा—पारद और सुवर्णभस्म समभाग, शुद्धगन्धक दोनोंकी बराबर लेकर बारीकचूर्णकर एकरोज़ गायकेदूधसे मर्दनकर चित्रककीजड़केस्वरस और आकके दूधसे ३-३ रोज़ मर्दनकर सबसे तिगुनी पीलीकौड़ियोंमें भरके कपास कौर सुहागेको कूटकर इससे कौड़ियोंकी सन्धि बन्दकर चूनेसे पुतेहुए वर्तनमें रखकर शरावसम्पुटकर समस्तपर ३-४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर रात्रिमें गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर भैरव, वटुक, कुमारिका, वृद्धवैद्य ओर योगिराजोंका पूजनकर प्रातःकाल स्नानपूजनादि करके शरावसम्पुटमेंसे निकालकर खरलकर रखछोड़े। इसमेंसे ६-६ रत्ती २९ मरिच और घीकेसाथ रोज़ाना सेवनकरनेसे अनेकप्रकारके ज्वर नष्टहोतेहैं। इसके सेवनके पहिले गौ, ब्राह्मण, वैद्य, कुमारिका इनकी पूजाकर घी और सुवर्णकी दक्षिणा देवे। स्वस्तिवाचनप्रभृति कराके शुभ वार, नक्षत्रयुक्त मुहूर्तमें चन्द्रबलका विचारकर वस्त्र और अलङ्कारोंसे प्राणाचार्यकी पूजाकर सर्वतोभद्र मण्डलमें लोकेशोंकी पूजा पूर्व या उत्तरमुखहोकरकरे। प्राणाचार्यकी आज्ञा मिलनेपर सुवर्ण, रजत, काच अथवा शुक्तिके पात्रमें औषधको रख आगे कहेहुए मन्त्रको बोलताहुआ वीरासनसेबैठ औषधका सेवनकरे। "ब्रह्मा यक्षश्च रुद्रेन्द्रभूचन्द्राऽर्काऽनलाऽनिलाः। ऋषयस्सौषधीग्रामा भूतसङ्घाश्च पान्तु मे॥ रसायनमिवर्षीणां देवानाममृतं यथा। सुधेवोत्तमनागानां भैषज्यमिदमस्तु मे॥" इसमन्त्रको बोलकर सेवनकरे। इसतरह इसरसके सेवनकरनेसे अग्नि प्रदीप्तहोताहै। इसके बीचमें कर्मवशात् उपद्रवरूप वमन, विरेचन, दाह, अंस और शिरकीपीडा, आखोंकीलाली, शरीरकाभारीपन, अरुचि, भस्मक, शुक्रक्षरण, मुखपाक, निद्रानाश ये विपत्तियां उपस्थितहोतीहैं इनका तत्काल प्रतीकार करना उचितहै नहींतो ये बलकी हानिको करके अनर्थ पैदाकरतीहै। वमनमें मधुकेसाथ गिलोयका पानी, बिजोरेकीजड़कारस, मधुयुक्त मयूरपिच्छभस्म पीपल और मधुयुक्तलाजचूर्ण, नाभि और शङ्खपर जलका पोता देवे। विरेचनमें मधुयुक्त छोटीमांईका चूर्ण, दहीकेसाथ भागका चूर्ण अथवा चावलकेधोवनकेसाथ भूधात्रीकाचूर्णदेवे। दाहमें चूनेकापानी, ठंढेजलका तैरना, कुष्ठकाचूर्ण मिलेहुए घीका अंसोंपर लेप, इनसब उपचारोंको करे। तुषाम्बुसे पिसीहुईवेलगिरीका मस्तकपरलेपरनेसे मस्तकपीडा शान्तहोतीहै। घृताभ्यङ्ग करनेसे देहका भारीपनजाताहै। सैन्धव और मरिचकेसाथ बिजोरेकीमज्जा अथवा गुड़ और शक्करकेसाथ घीमें भुनाहुआ धनिया देनेसे अरुचि नष्टहोतीहै। घी और शक्करकेसाथ केलेकाफल अथवा केवल घी देनेसे भस्मकरोग शान्त होताहै। शुक्रविरेकमें शक्करकेसाथ केलेकेफलका पानी अथवा सिरका अथवा घृतयुक्तदूध देना। गुड़युक्त अदरख अथवा केलेकीभस्म गुड़केसाथ देनेसे कफप्रकोप नष्ट होताहै। मधुकेसाथ पलाशबीज अथवा विडङ्ग देनेसे क्रिमियोंका नाशहोताहै। खदिरकीजड़कीछालका क्वाथ अथवा खदिरादिवटीका सेवन मुखपाकको दूरकरताहै। बारम्वार घीके पीनेसे निद्रानाश दूरहोताहै। ऊपरकहेहुए उपद्रव जिसमनुष्यको उपस्थितहों तो समझना चाहिये कि इसे रस बहुतजल्दी काम करेगा और उसे एकदिनके अन्तरसे औषधदेना। बीचके दिनमें मरिचकाचूर्ण डालकर केवल घी देना। अनुपानमें प्रथमदिन ४ माशे अथवा ८ माशे घीसे आरम्भकरना और २१ दिनतक प्रतिदिन डबलप्रमाणकरतेजाना। पहिलेसप्ताहमें चावल, मूंग, उड़द और अरहरकी दाल देना फिर गेहूंके आटेका हलवा और घेवर, बथुआ, चौलाई, तुलसी, तिपतिया, आंवले, वनभांटा, करीर, करोंदा इनका हींगवगैरहसे छोंकाहुआ शाकदेना। तीसरे, छठे अथवा सातवें दिनकेबाद जब वमन या विरेचन होनेलगें तो उतनेहीदिन रसका अन्तर करदेना। हृद्य, वृष्य, भारी और गरम तथा जिसमें दही, दूध और घी अधिकआवे वह पदार्थ देना। मावा, बासमतीचावल, घी, शक्करयुक्तसाठीचावल ये दूसरे सप्ताहमें सेवनकरे। जिसको पुष्टिकी इच्छाहो वह जमीनमें कोमल शय्यापर चित्त सोवे और ब्राह्ममुहूर्तमें उठजाय। इसीतरह तृतीयसप्ताहमेंभी करे और शक्करकेसाथ घीमें पकाएहुए पदार्थ और नारियलकेजलमें पकायाहुआ दूधपाक खावे तथा घीसे अभ्यङ्ग और गरमजलसे स्नानकरे। भूखलगनेपर ३-८ अथवा ५ वार हित और पथ्य भोजनकरे। तीनसप्ताह पूरे होनेपर रोगी रोगसे रहित होजाताहै चौथे सप्तकमें शरीरसम्पत् से पूर्णहोताहै। तीनसप्ताहमें स्वस्थ होनेकेबाद आगे यदि अधिकसेवनकरनेकी इच्छा हो तो पूर्वक्रमसे सेवनकरे। कितनेहीलोग इसमें पारेसे कीहुई सुवर्णभस्मका योग चाहतेहैं और सुवर्णके अभावमें पारदयोगसे कीहुई नागभस्म द्विगुण डालाकरतेहैं॥

टि०—इसमें मुखपाकको शमनकरनेकेलिये **खदिरादिवटी**का सेवन कहाहै उसका विधान अधोलिखितहै। "गायत्रीत्वक् तुला सार्द्धा द्वयी विट्खदिरस्य च। सप्तद्रोणमिते तोये पाच्यं पादाऽवशेषितम्॥ घनीभूतं वस्त्रपूतं तस्मिन् द्रव्याणि निःक्षिपेत्। प्रत्येकं कर्षमात्राणि पुनरावर्तिते शनैः॥ एलामृणालजलचन्दनरक्तकाष्ठं श्यामा तमाल विकसाघनलोहयष्टयः। लज्जाफलत्रयरसाञ्जनधातकीश्रीश्रीपुष्पगैरिककटङ्कटिकट्फलानि॥ पत्रेष्टरोध्रवटश्रृङ्गयवासमासी त्वग्मात्रिजातिफलकोषलवङ्गकानि। चूर्णीकृतं फलचतुष्टयचन्द्रयुक्तं तस्मिन्क्षिपेत् पलमितं पृथगेव सर्वम्॥ कङ्कोलजातिफलयुक्तमिदं समस्तमेकीकृतं बहुगुणं भवति प्रशस्तम्। जिह्वौष्ठतालुवदनागलदन्तरोगानन्तर्गतानपि जयेद्रुचिमादधाति॥ शीतीकृतस्य गुटिका चणकोन्मिता स्याद्दौर्गन्ध्यदन्तमलताऽरुचिरोगनुत्यै॥"

भाषा—खैरकीछाल १५० पल और विट्खदिरकीछाल २०० पल लेकर जवकुटकर ७ द्रोण पानीमें उबाले। चतुर्थीशाऽवशेषरहनेपर कपड़ेसे छानले। फिर इसमें इलायची, भसींड, खस, सफेदचन्दन, लालचन्दन, अनन्तमूल, पत्रज, मजीठ, नागरमोथा, अगर, मुलहठी, लजवन्ती, त्रिफला, रसौत, धावड़ीकीछाल (अभावमें पुष्प), पद्मकाठ, सोनागेरू, दारुहल्दी,

जायफलकीछाल, तालीसपत्र, पठानीलोध, वड़केदूसे, जवास, जटामासी, तज, हल्दी, जायफल, जावित्री, लौंग इनसवका चूर्ण १–१ कर्ष डालकर मन्दाग्निसे पकावे । गोलीवंधनेलायक होनेपर उतारकर चार मगज़ (बादाम, खीरा, ककड़ी, कद्दू इनके मगज़) शुद्धकपूर, शीतलचीनी, जायफल येसव ४–४ कर्ष मिलाकर रहने दे । ठंढाहोनेपर चनेप्रमाण गोलियां वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मुहमें रखकर चूंसनेसे जीभ, ओष्ठ, तालु, मुख, गला, दन्त, अन्न तथा श्वासनलिकाकेरोग, मुखकीदुर्गन्ध, दन्तमल और अरुचि इनको नष्टकर रुचिको पैदाकरतीहै । यहपाठ प्राचीन रसावतारकाहीहै परन्तु कईजगह क्लिष्ट पाठ होनेकीवजहसे चक्रदत्तने जगह २ पाठमें फेरफारकरदियाहै और उसीको भैपज्यरत्नावलीवालेने यथावस्थित लेलियाहै । चक्रदत्तकी हिन्दीटीकावालेने औरभी दुर्दशा करडालीहै जैसे कि जायफल, कोशफल इत्यादि । इसलिये रसावतारके पाठके अनुसार इसगोलीको तैयारकरनाचाहिये । फलचतुष्टयकीजगह ग्रन्थकारके आशयको न समझकर फलचतुष्टयकपूरका योग करदियाहै वह अत्यधिक योगहोगयाहै । ग्रन्थकारने यूनानीमें प्रसिद्ध चारमगज़के स्थानमें फलचतुष्टय शब्दसे कामलियाहै सो पाठकोंको ध्यानमें रखनाचाहिये । यह गोली शुष्ककासकेलियेभी खास उपयोगी वस्तुहै ॥ २५७ ॥

२५८ लोकनाथपोट्टली (हेमगर्भादिः) २

मृतरसयुगभागौ हाटकं चन्द्रभागं,
वसुगुणशुकपर्दं टङ्कणाद्भागमेकम् ।
सितविषशशिभागं सर्वतुल्यं सुगन्धं,
तिथिदिनमनलाद्भिर्वज्रदुग्धेन घृष्ट्वा १२३८
तदनु च कृतगोलं पक्वभाण्डे च धृत्वा,
गजपुटविधिपक्वं पोट्टलीलोकनाथम् ।
घृतमरिचसमेतं वल्लमात्रं प्रदद्या-,
द्रुपतिभयहारी श्वासहारी त्रिरात्रात् १२३९
वहुकृततनुपुष्टिं वह्निदीप्तिञ्च कुर्या-,
त्कटुकतिलजविल्वं वर्जयेच्चाऽम्लवर्गम् ।
घृतमधुरसुशाकं भोजयेद्युक्तपथ्यं,
मधुकणमनुपानं योजनीयं भिषग्भिः १२४०
यवक्षाराऽऽज्यविश्वञ्च कथितं पोट्टलीक्रमे ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं मान्द्यहृद्गलदोषनुत् ॥ १२४१ ॥
वमनशमनमुक्तं मातुलिङ्गस्यास्तु मूले-,
र्मधुसहितकणा वा दग्धवृन्ताकमज्जा ।
स्वरसमपि गुडूच्या लाजचूर्णं ससिन्धु,
शिशिरसलिलधारा मूर्ध्नि देया क्रमेण १२४२
कफविकृतिनिवृत्त्यै क्षौद्रयुक्तं शृङ्गवेर-
मरिचसहितभक्ष्यं भृष्टरम्भाफलं वा ।
तुवरिसहितधाना हन्त्यसृक्खण्डयुक्त्या,
मरिचमरिचकृतेनाऽरोचकम्मः सदैव ॥१२४३॥

१ र. का., हेमगर्भेति ।

भाषा—पारदभस्म २ भाग, सुवर्णभस्म १ भा., पीलीकौड़ी ८ भा., सुहागा १ भा., शुद्धसफेदसोमल १ भा , शुद्धगन्धक सवकीवरावर लेकर सवका वारीकचूर्णकर चित्रकमूलकेक्वाथ और सेहुण्डकेदूधसे ५–५ दिन मर्दनकर गोलावनाय सुखाकर पकेहुएमिट्टीकेवर्तनमें धरके ६–७ कपड़मिट्टीकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक मात्रा प्रकृतिसात्म्य देखकर घी और मरिचकेसाथ देनेसे ३ दिनमें यक्ष्मा, श्वास, मन्दाग्नि इनसवको नष्टकरताहै । तीक्ष्ण, तिलकेपदार्थ, वेलगिरी और खटाईका त्यागकरे । घीमें पकायाहुआ शाक पथ्यदे । यह मधु, पीपल, यवक्षार, घी और सोंठ इन अनुपानोंसे अग्निमान्द्य, हृदय और गलेके दोषोंको दूरकरताहै । वमनमें विजोरेकीजड़ अथवा मधु–पीपल, अथवा भुनेहुए वृन्ताककी मज्जा, अथवा गुडूचीस्वरस अथवा सैन्धवसहित लाजचूर्णकेसाथ देवे और सिरपर ठंढेजलकी धारा देवे । कफविकारमें मधु, अदरख अथवा भुनाहुआ केलेकाफल मरिचकेसाथदेवे । धनियेके चावल शक्करमें मिलाकर देनेसे रक्तपित्त, तथा इलायची, मरिच और घीसे अरुचि नष्टहोतीहै २५८

२५९ लोकनाथरसः (प्रथमः)

शुद्धो वुभुक्षितः सूतो भागद्वयमितो भवेत् ।
तथा गन्धस्य भागौ द्वौ कुर्यात्कज्जलिकां तयोः १२४४
सूताच्चतुर्गुणेष्वेव कपर्देषु विनिःक्षिपेत् ।
भागैकं टङ्कणं दत्त्वा गोक्षीरेण विमर्दयेत् ॥ १२४५ ॥
तथा शङ्खस्य खण्डानां भागानष्टौ प्रकल्पयेत् ।
क्षिपेत्सर्वं पुटस्यान्तश्चूर्णलिप्तशरावयोः ॥ १२४६ ॥
गर्ते हस्तोन्मिते धृत्वा पचेद्गजपुटेन च ।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य पिष्ट्वा तत्सर्वमेकतः ॥ १२४७ ॥
पड्गुञ्जासम्मितं चूर्णमेकोनत्रिंशदूषणैः ।
घृतेन वातजे दद्यान्नवनीतेन पित्तजे ॥ १२४८ ॥
क्षौद्रेण श्लेष्मजे दद्यादतीसारे क्षये तथा ।
अरुचौ ग्रहणीरोगे कार्श्ये मन्दानले तथा ॥ १२४९ ॥
कासश्वासेषु गुल्मेषु लोकनाथो रसो हितः ।
तस्योपरि घृतान्नञ्च भुञ्जीत कवलत्रयम् ॥ १२५० ॥
मञ्च क्षणैकमुत्तानः शयीताऽनुपधानके ।
अनम्लमन्नं सघृतं भुञ्जीत मधुरं दधि ॥ १२५१ ॥
प्रायेण जाङ्गलं मांसं प्रदेयं घृतपाचितम् ।
सदुग्धभक्तं दद्याच्च जातेऽग्नौ साम्यभोजने ॥१२५२॥
सघृतान्मुद्गवटकान्व्यञ्जनेष्ववचारयेत् ।
तिलाऽऽमलककल्केन सघृतेन विमर्दयेत् ॥ १२५३ ॥
अभ्यञ्जयेत्सर्पिषा च स्नानं कोष्णोदकेन च ।
कचित्तैलं न गृह्णीयाच्च विल्वं कारवेल्लकम् ॥ १२५४॥
वार्ताकं शफरीं चिञ्चां त्यजेद्व्यायाममैथुने ।
मद्यं सन्धानकं हिङ्गु शुण्ठीं माषान्मसूरकान् ॥१२५५॥
कूष्माण्डं राजिकां कोपं काञ्जिकं चैव वर्जयेत् ।
त्यजेद्युक्तनिद्राञ्च कांस्यपात्रे च भोजनम् ॥१२५६॥

ककारादियुतं सर्वं त्यजेच्छाकफलादिकम् ।
पथ्यादिलोकनाथस्य शुभनक्षत्रवासरे ॥ १२५७ ॥
पूर्णातिथौ शुक्लपक्षे जाते चन्द्रबले तथा ।
पूजयित्वा लोकनाथं कुमारीर्भोजयेत्ततः ॥ १२५८ ॥
दानं दद्यात् छिद्रटिकामध्ये ग्राह्यो रसोत्तमः ।
रसात्सञ्जायते तापस्तदा शर्करया युतम् ॥ १२५९ ॥
सत्त्वं गुडूच्या गृह्णीयाद्वंशरोचनया युतम् ।
खर्जूरं दाडिमं द्राक्षामिक्षुखण्डानि चारयेत् ॥१२६०॥
अरुचौ निस्तुषं धान्यं घृतभृष्टं सशर्करम् ।
दद्यात्तथा ज्वरे धान्यं गुडूचीक्काथमाहरेत् ॥ १२६१ ॥
उशीरवासककाथं दद्यात्समधुशर्करम् ।
रक्तपित्ते कफे श्वासे कासे च स्वरसंक्षये ॥ १२६२ ॥
अग्निभृष्टजयाचूर्णं मधुना निशि दीयते ।
निद्रानाशेऽतिसारे च ग्रहण्यां मन्दपावके ॥ १२६३ ॥
सौवर्चलाऽभयाकृष्णाचूर्णमुष्णजलैः पिबेत् ।
शूलेऽजीर्णे तथा कृष्णा मधुयुक्ता ज्वरे हिता॥१२६४॥
प्लीहोदरे वातरक्ते छर्द्याञ्चैव गुदाङ्कुरे ।
नासिकादिषु रक्तेषु रसं दाडिमपुष्पजम ॥ १२६५ ॥
दूर्वायाः स्वरसं नस्ये प्रदद्याच्छर्करायुतम् ।
कोलमज्जा कणा बर्हिपक्षभस्म सशर्करम् ॥ १२६६ ॥
मधुना लेहयेच्छर्दिहिक्काकोपस्य शान्तये ।
विधिरेष प्रयोज्यस्तु सर्वस्मिन् पोट्टलीरसे ॥ १२६७॥
मृगाङ्के हेमगर्भे च मौक्तिकाख्ये रसेषु च ।
इत्ययं लोकनाथाख्यो रसः सर्वरुजो जयेत् ॥ १२६८ ॥

शा. सं., र चं., वै क, यो. चि., नि र, वै चि, र. का., र प्र. सु., भै. सा., यो म, र (मा.), र. म. मा., रसायनप, चि. र भ, टो., र मृ, राजयक्ष्मणि । र. का. लोकेश्वरपोट्टलीतिनाम । रसामृते शङ्खो न दृश्यते तत्यागस्य कारणाऽभावात्सोऽप्यत्रैवाऽन्तर्भवति ।

भाषा—शुद्ध और बुभुक्षित पारा, शुद्धगन्धक २–२ भागकी नीलवर्णकज्जलीकर पारेसे चौगुनी पीलीकौड़ियोंमें भरके एक भाग सुहागेको गायके दूधमें पीसकर कौड़ियोंका मुंह बन्दकरे। फिर शङ्खके टुकड़े ८ भाग लेकर चूनापुतेहुए शरावोंके अन्दर शङ्खखण्डोंके बीचमें कौड़ियोंको जमाकर सन्धिबन्दकर ६–७ कपड़मिटीदेकर सुखनेपर एकहाथके गर्तमें गजपुटदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ६ रत्तीकीमात्रा २९ कालीमिर्च और घीकेसाथ वातरोगमें दे। पित्तरोगोंमें मक्खन और कफरोगोंमें मधुकेसाथ दे। इसतरह रोग अथवा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे अतीसार, क्षय, अरुचि, ग्रहणी, कृशता, मन्दाग्नि, कास, श्वास, गुल्म, इनसबको यह नष्टकरताहै। रसकासेवनकर ३ ग्रास घी और भात देकर थोड़ीदेरतक तकियारहितशय्यापर चित्त सुलावे। अम्लरहित घृतयुक्त अन्न, मधुरदही, घृतमें पकायाहुआ, जंगलीपशुपक्षियोंकामास और दूधभातदे। अग्नि प्रदीप्तहोनेपर सन्ध्यासमय घीमें तलेहुए मूगके वड़ेदे। घृतयुक्त तिल और आंवलेकेकल्क अथवा केवल घीसे अभ्यङ्ककर कदुष्णजलसे स्नानकरे। तैल, वेल, करेला, वेंगन, मछली, इमली, कसरत, मैथुन, मद्य, अचारवगैरह, हींग, सोठ, उड़द, मसूर, कोंहळा, राई, क्रोध, काञ्जी, अयोग्यनिद्रा, कांस्यपात्रमें भोजन, ककारादिशाक और फल इनका परित्यागकरे। इसका सेवनकरतेसमय शुभ नक्षत्र, वार, पूर्णातिथि, शुक्लपक्ष और चन्द्रबल देखकर लोकनाथकी पूजाकर कुमारियोंको भोजनकराके दानदे। रसकेदेनेसे यदि ताप हो तो शक्कर और वंशलोचन मिलाहुआ गिलोयकासत्त्व, छुहारे, अनार, द्राक्ष और ईखका उपचारकरे। अरुचिमें घीमें भुनेहुए शक्करयुक्त धनियेके चावल. ज्वरमें धनिया और गिलोयका क्वाथ, रक्तपित्तमें मधु और शक्कर मिलाहुआ खस और अडूसेकाक्वाथ, कफ, श्वास, कास और स्वरभङ्गमें मधुकेसाथ भुनीभागकाचूर्ण, निद्रानाश, अतिसार ग्रहणी तथा मन्दाग्निमें गरमजलकेसाथ सञ्चल, हर्रे और पीपलकाचूर्ण, शूल, अजीर्ण और ज्वरमें मधुयुक्तपीपल, प्लीहोदर, वातरक्त, वमन, ववासीर और नासिकादिकोंके रक्तस्रावमें अनारके फूलोंका रस अथवा शक्कर डालकर श्वेतदूर्वाके रससे नस्य दे। वमन और हिचकीके प्रकोपमें शक्करयुक्त वेरकीगिरी, अथवा मयूरपिच्छभस्म मधुकेसाथ चटावे। यहप्रकार, मृगाङ्क, हेमगर्भ और मौक्तिकप्रभृति पोट्टलीरसोंमें करना उचितहै ॥ २५९ ॥

२६० लोकनाथरसः (लोकेश्वरः) (द्वितीयः)

पलं कपर्दचूर्णस्य पलं पारदगन्धयोः ।
माषञ्च टङ्कणस्यैकं जम्बीराद्भिर्विमर्दयेत् ॥ १२६९ ॥
पुटेल्लोकेश्वरो नाम्ना लोकनाथो रसोत्तमः ।
ऋते कुष्ठं रक्तपित्तमन्यान्रोगान् बलाज्जयेत् ॥ १२७० ॥
पुष्टिवीर्यप्रसादौजःकान्तिलावण्यदः परः ।
कोऽस्ति लोकेश्वरादन्यो नृणां शम्भुमुखोद्गतात् १२७१
पथ्यं शाल्योदनं सर्पि र्दधि शाकं सहिङ्गुकम् ।
नित्यं यामद्वयादूर्ध्वं कार्यं वारत्रयं दिवा ॥ १२७२ ॥
त्र्यहाद्भ्रान्तेऽरुचौ वाऽपि लग्नः सूतो न चेत्पुनः ।
अष्टमेऽह्नि प्रदातव्यः पूर्ववत्कार्यसिद्धये ॥ १२७३ ॥
प्रथमे सप्तमे देया लावसूरणमुद्गकाः ।
द्वितीये माषगोधूमा भक्ष्याः पूर्वोदितञ्च यत् ॥१२७४॥
देयानि मत्स्यमांसानि तृतीये मर्दनादिकम् ।
तैलबिल्वाऽऽरनालानि कोपस्त्रीस्वप्नजागरान् १२७५
त्यजेत्कादीनि द्रव्याणि हृद्यं स्वादु च शीलयेत् ।
वायौ सेव्यं पयः कोष्णं पित्ते तु ससितं हितम् १२७६
अत्यग्नौ चोरवीजानि तिलेक्षुकदलीफलम् ।
खर्जूरमांसमृद्वीकासितादि सकलं भजेत् ॥ १२७७ ॥
वीर्यच्युतौ नारिकेलजलं तालफलानि च ।
आनाहाऽरुचिमूर्च्छाऽतिधूमोद्गारविसूचिकाः १२७८
एतेषु लघुशाल्यन्नं केवलं सघृतं हितम् ।
अतिवान्तौ पिबेच्छिन्नारसं क्षौद्रेण संयुतम् ॥१२७९॥

सक्षौद्रं वासकं रक्तपित्ते रुचिविपर्यये।
भृष्टधान्यं सितायुक्तमथवा क्षौद्रसंयुतम् ॥ १२८० ॥
यवान्नं मधुसंयुक्तं पिवेद्वा माहिषं दधि।
घृताऽन्नं भक्षयेन्नित्यं सुखोष्णेन च वारिणा ॥१२८१॥
छिन्नाऽम्बुसहितं देयं दाहेऽजीर्णे सुधाजलम्।
आर्द्रकं सर्षपं रम्भाफलं भृङ्गं कफोल्वणे ॥ १२८२ ॥
अन्येऽप्युपद्रवा ये स्युस्तत्तच्छान्त्यै यथौषधम्।
द्वात्रिंशद्दिवसे कार्यं स्नानमामलकैस्तिलैः ॥
युक्तं सेव्यं बले जाते शनैरग्निबलादनु ॥ १२८३ ॥

र. स, नि. र, र. ल., ध, टो., भै. सा, र र दी, र कौ, र. मं, वृ. यो. त., र. चि, र सु, रसायनसं., र (मा.), यो र., यो म., र का., र शि., राजयक्ष्मणि। बहुषु स्थानेष्वयं पाठो लोकेश्वरनाम्ना पोट्ली वेति नाम्ना व्यवहृतः ॥

भाषा—कौड़ीभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक १-१ पल, सुहागा १ माशा लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरीकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय थोड़ासुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलह्वोनेपर निकालकर रखछोड़े। कुष्ठ और रक्तपित्तको छोड़कर अन्यसवरोगोंको यह दूरकरताहै। पुष्टि, वीर्य, प्रसाद, ओज, कान्ति और लावण्यको देताहै। इसमें पथ्य सफेदचावल, घी और दही, हींगसे छोंकाहुआशाक, दो दो पहरकेवाद अत्यन्त भूखलगनेपर दिनमें ३ वार देनाचाहिये। तीनदिनकेवाद वान्ति अथवा अरुचि मालूम पड़े तो समझना चाहिये कि रस अनुकूल नहीं पड़ा, तव ७ दिनका अन्तरकर आठवेंदिनसे फिर शुरूकरे। पहिले सप्तकमें लवा, सूरण और मूंग देवे। द्वितीयसप्तकमें उड़द, गेंहूं और पूर्वोक्तपदार्थ, तृतीयमें मछली और मास अधिकतया देवे और अभ्यङ्ग करावे। तैल, वेल, काञ्जी, कोप, स्त्री, दिनमें शयन, रात्रिजागरण, ककाराष्टक इनका त्यागकरे। हृद्य और स्वादुका सेवनकरे। वातप्रकोपमें केवल दूध और पित्तप्रकोपमें शक्कर डालाहुआ कदुष्ण दूध पीवे। भस्मकमें चिरोंजी तिल, ईख, केलेकाफल, खजूर, मास, किसमिस और मिष्टान्नका सेवनकरे। वीर्यस्रावमें नारियलका जल और तालफल; आनाह, अरुचि, मूर्च्छा, धूमोद्गार और हैजा इनमें हल्के सफेदचावल केवल घीकेसाथ देवे। अत्यन्तवान्तिमें मधुमिलाकर गिलोयका स्वरसदे। रक्तपित्तमें मधुकेसाथ अडूसकारस, अरुचिमें शक्करयुक्त भुनाधनिया अथवा मधुकेसाथ जवकेपदार्थ अथवा मधुमिलाहुआ भैंसका दहीदेवे। दाहमें गिलोयके स्वरसकेसाथ घृतयुक्त अन्नदे। अजीर्णमें चूनेकापानी, कफप्रधानव्याधिमें अदरख, सरसों, केलेकाफल और भंगरा देवे। इसीतरह अन्यभी उपद्रव यदि अन्तरायभूत उपस्थित हों तो उनकी शान्तिकेलिये तत्तदौषध देवे। ३२ वेंदिन आंवले और तिलकाकल्क लगाकर स्नानकरावे। शारीरिक और अग्निवल होजानेकेवाद उचितवस्तुओंका सेवनकरे ॥ २६० ॥

२६१ लोकनाथरसः (लोकेश्वरः) ३.

भस्म सूतस्य भागैकं चतुरः शुद्धगन्धकात्।
क्षिप्त्वा वराटिकागर्भे टङ्कणेन निरुध्य च ॥ १२८४ ॥
भाण्डे रुद्ध्वा पुटे पाच्यं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
लोकनाथरसो नाम क्षौद्रैर्गुञ्जाचतुष्टयम् ॥ १२८५ ॥
नागरातिविषामुस्तं देवदारुवचान्वितम्।
कषायमनुपानन्तु सर्वातीसारनाशनम् ॥ १२८६ ॥
चतुर्गुञ्जो घृते देयो विंशद्भि मरिचैस्तथा।
जातीमूलपलैकन्तु छागीक्षीरेण पाचयेत् ॥
शर्कराम्भोयुतश्चाऽनु पीत्वा कृच्छ्रहरं ध्रुवम् ॥१२८७॥

र सं, चि क, चि. र. भ., र. र. स., ना. वि., नि. र., रस. सं, र. र, वै. चि., र. सु, र. क. ल., रसायनसार, र को., यो. म., र को, चि र, ध., टो., व. रा., र चि, रसायनसं, र. चं., चि सा., र क., वै र., र. का, र. र. कौ., र. म. मा., अतिसारे मूत्रकृच्छ्रे च। मूत्रकृच्छ्राऽधिकारे अस्मिन् पाठे शुद्ध सूतो नियोजित।

भाषा—पारदभस्म १ भाग, शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेसे चौगुनी पीलीकौड़ियोंमें भरकर आक अथवा गौकेदूधमें पिसेहुए सुहागेसे कौड़ियोंकामुंह वन्दकर शरावसम्पुटमेंरख कपड़मिट्टीदेकर सुखाकर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलह्वोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ४-४ रत्तीकी मात्रा घी और २० कालीमिर्चोंकेसाथ अथवा केवल मधुकेसाथ देकर सोंठ, अतीस, नागरमोथा देवदारु और वचकाकाढा पिलानेसे समस्त अतिसारोंको यह नष्टकरताहै। एकपल चमेलीकीजडको वकरीके दूधमें पकाकर शक्कर डालकर पिलानेसे मूत्रकृच्छ्र नष्टहोताहै ॥ २६१ ॥

२६२ लोकनाथरसः (चतुर्थः)

पारदं गन्धकञ्चैव समभागं विमर्दयेत्।
मृताऽभ्रं रसतुल्यञ्च पुनस्तत्रैव मर्दयेत् ॥ १२८८ ॥
रसाद्द्विगुणलौहञ्च लौहतुल्यञ्च ताम्रकम्।
भूतिं वराटिकायाश्च ताम्रतस्त्रिगुणां कुरु ॥ १२८९ ॥
नागवल्लीरसेनैव मर्दयेद्यत्नतो भिषक्।
पुटेद्गजपुटे विद्वान्स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ १२९० ॥
यकृत्प्लीहोदरं गुल्मं श्वयथुञ्च विनाशयेत्।
पिप्पलीं मधुसंयुक्तां सगुडां वा हरीतकीम् ॥
गोमूत्रञ्च पिबेच्चाऽनु गुड वा जीरकान्वितम् ॥१२९१॥

र सं., ध, वै. क, र च., भै र, र चि, र सु, र. का, यो म, प्लीहाऽधिकारे। केषुचिद्ग्रन्थेषु ताम्रलोहयोर्भागे त्रैगुण्यं दृश्यते। यो. म कन्यकाम्बुना मर्दनं कृतं, गजपुटपाकश्च न दृश्यते।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जली, अभ्रकभस्म पारेकीवरावर, पारेसे दूनी लोह और ताम्रभस्म, ताम्रसे तिगुनी कौड़ीभस्म लेकर सवको पानकेरससे १-२ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ६-७ कपड़मिट्टीदेकर सुखनेपर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलह्वोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा मधुयुक्तपीपल अथवा गुडयुक्त हरीतकीकेसाथ देकर गोमूत्र अथवा जीरायुक्तगुड़

देनेसे यकृत्, प्लीहा, उदररोग, गुल्म, और शोथ इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २६२ ॥

२६३ लोकनाथरसः (लघुः) ६

वराटभस्म मण्डूरं चूर्णयित्वा घृते पचेत्।
तत्समं मारिचं चूर्णं नागवल्ल्या विभावितम् ॥१२९२॥
तच्चूर्णं मधुना लेह्यमथवा नवनीतकैः।
मापमात्रं क्षयं हन्ति यामे यामे च भक्षितम् ॥
लोकनाथरसो ह्येष मण्डलाद्राजयक्ष्मनुत् ॥ १२९३ ॥

शा.सं., र.र., वै. द., रसायनसं., र.को , नि. र , यो. म., र. क.यो., र.क. ल., ना वि , क्षयाऽधिकारे।

भाषा—कौड़ी और मण्डूरभस्म समभागलेकर वारीकचूर्णकर चतुर्गुणित घीमें पकावे। घृतसूखजानेपर समभागमरिचकाचूर्णमिलाय पानकेरससे १–२ दिन घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा मधु अथवा मक्खनकेसाथ १–१ पहरवाद देनेसे यह एकमण्डलमें राजयक्ष्मको नष्टकरताहै ॥ २६३ ॥

२६४ लोकनाथरसः (षष्ठः)

वराटतुल्यं मण्डूरं तदर्द्धं तीक्ष्णलोहकम्।
तत्पादांशं मृतं सूतं सूताद्द्विगुणगन्धकम् ॥ १२९४ ॥
खल्वोदरे विनिःक्षिप्य मर्दयेद्दिवसत्रयम्।
वर्षाभूमूलसारेण वज्रवल्लीरसेन च ॥ १२९५ ॥
वासाख्यया तालमूल्या चित्रमूलेन मर्दयेत्।
तद्गोलं चातपे शोष्यं दिनान्ते तत उद्धरेत् ॥ १२९६ ॥
शरावे मृद्भवे स्थाप्यं कुक्कुटाख्ये पुटे पचेत्।
सूक्ष्मं चूर्णं ततः कृत्वा तत्समं मारिचं रजः ॥ १२९७ ॥
भावनाऽनन्तरं द्रव्यं नागवल्लीरसार्द्रकम्।
भृङ्गराजश्च निर्गुण्डी मुण्डी शिग्रुरसस्तथा ॥ १२९८ ॥
फलत्रयकषायेण छायाशुष्कञ्च कारयेत्।
निष्काऽर्द्धं मधुना लेह्यं यामेयामे च भक्षयेत् ॥१२९९॥
क्षयक्षयकृतं व्याधिं वातपित्तकफोद्भवम्।
कासं श्वासं प्रतिश्यायं शोफपाण्डुगुदामयान् १३००
हलीमकं चाऽस्थिगतं विनिहन्ति च सत्वरम्।
दीपनं वीर्यकृत्पथ्यं सर्वरोगनिवर्हणम् ॥
लोकनाथरसो नाम शम्भुदेवेन निर्मितः ॥ १३०१ ॥

वै. चि (ल.), व, रा , क्षयाऽधिकारे।

भाषा—कौड़ी और मण्डूरभस्म १–१ भाग, फोलादभस्म आधाभाग, फोलादसे चतुर्थांशपारदभस्म, पारदसेदूना शुद्धगन्धक लेकर वारीकपीसकर इटसिटकीजड़, सेहुण्डकादूध, अड़ूसा, तालमूली और चित्रकमूल इनके स्वरसोंसे ३–३ दिनमर्दनकर गोला वनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर कुक्कुटपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर उसकीवरावर मरिचका चूर्णमिलाय पान, अदरख, भंगरा, निर्गुण्डी, गोरखमुण्डी, सहिजन और त्रिफला इनके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ माशेकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुमें मिलाकर १–१ पहरके अन्तरसे देनेसे क्षय, वात–पित्त–कफजव्याधियां, कास, श्वास, प्रतिश्याय, शोफ, पाण्डु, ववासीर, अस्थिगत हलीमक, मन्दाग्नि वीर्यनाश प्रभृति सबरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ २६४ ॥

२६५ लोकनाथरसः (बृहन्) ७

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं खल्वे कृत्वा तु कज्जलीम्।
सूततुल्यं जारिताऽभ्रं मर्दयेत्कन्यकाऽम्बुना॥१३०२ ॥
ततो द्विगुणितं दद्यात्ताम्रं लौहं प्रयत्नतः ॥
काकमाचीरसेनैव सर्वं तत्परिमर्दयेत् ॥ १३०३ ॥
सूताच्च द्विगुणं गन्धं वराटीसम्भवं रजः।
पिष्ट्वा जम्बीरनीरेण मूषायुग्मं प्रकल्पयेत् ॥ १३०४ ॥
तन्मध्ये गोलकं क्षिप्त्वा यत्नेनाच्छादयेद्भिषक्।
शरावसम्पुटं कृत्वा मृद्भस्मलवणाम्बुभिः ॥ १३०५ ॥
शरावसन्धिमालिप्य चातपे शोषयेत्क्षणम्।
ततो गजपुटं दत्त्वा स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ १३०६ ॥
पिष्ट्वा तु सर्वमेकत्र स्थापयेद्भाजने शुभे।
खादेद्वल्लद्वयञ्चाऽस्य मूत्रं चाऽनु पिबेन्नरः॥ १३०७॥
मधुना पिप्पलीचूर्णं सगुडां वा हरीतकीम्।
अजाजीं वा गुडेनैव भक्षयेत्तुल्ययोगतः ॥ १३०८ ॥
यकृत्प्लीहोदरोत्थञ्च श्वयथुञ्च विनाशयेत्।
वाताष्ठीलाञ्च कमठीं प्रत्यष्ठीलां तथैव च ॥ १३०९ ॥
कांस्यक्रोडाऽग्रमांसञ्च शूलञ्चैव भगन्दरम्।
वह्निमान्द्यञ्च कासञ्च लोकनाथरसोत्तमः ॥ १३१० ॥

र. सं., भै र, र चि., र सु , प्लीहाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भागकी नीलवर्णकज्जली और अभ्रकभस्म १ भागलेकर घीकुंवारकेरससे एकदिनमर्दनकर, ताम्र और लोहभस्म २–२ भाग मिलाकर मकोयके रससे एकरोज़ मर्दनकर गोलावनाय शुद्धगन्धक और कौड़ीभस्म २–२ भागलेकर जंभीरीकेरससे १ दिन मर्दनकर दोमूपावनावे। उसमें गोलेकोरख शरावसम्पुटमें बन्दकर ४–५ कपड़मिट्टी देकर धूपमें सुखाकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ६–६ रत्तीलेकर गोमूत्र अथवा मधुयुक्तपीपल अथवा गुडयुक्तहर्रे या गुडऔरजीरा समभाग मिलाकर अनुपानरूपसे लेनेसे यकृत्, प्लीहा, उदर, शोथ, वाताऽष्ठीला, कमठी, प्रत्यष्ठीला, कास्यक्रोड, अग्रमास, शूल, भगन्दर, मन्दाग्नि, कास इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २६५ ॥

२६६ लोकनाथरसः (अष्टमः)

भागाः सप्त कपर्दभस्म मरिचं पादाधिकांशं विषं,
चैकांशं रसभस्म विंशतिमिताः स्यु गन्धकांशा दश।
चत्वारो ह्यहिफेनकस्य कनकः पादोन भागःस्मृतः
चूर्णं तन्मृदितञ्च सर्वगदहा स्याल्लोकनाथो रसः१३११

ग्रहण्यां कफजे व्याधौ वातोद्रेके च पैत्तिके ।
प्रमेहे मूत्रकृच्छ्रे च कासे श्वासे भ्रमे तथा ॥
सिताऽऽज्यमोचामरिचैः संयुतो दीयते रसः १३१२

क्रोधं न कुर्यान्न च तैलसेवां
न राजिकां पित्तकरं न किञ्चित् ।
न मैथुनं जागरणं न रात्रौ
न कामचारः क्रियते कदाचित् ॥ १३१३ ॥

रसचि., ग्रहण्याम् ।

भाषा—कौड़ीभस्म ७ भाग, मरिच १। भाग, शुद्धवछनाग १ भाग, पारदभस्म २० भाग, शुद्धगन्धक १० भा, अफीम ४ भा., सुवर्णभस्म $\frac{3}{4}$ भाग लेकर सवका वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक शक्कर, घी, मोचरस और मरिचकेसाथ देनेसे ग्रहणी, कफजव्याधि, वात और पित्त प्रधानव्याधियां, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, कास, श्वास और भ्रम इनसवको यह नष्टकरताहै । क्रोध, तैल, राई, पित्तकारकपदार्थ, मैथुन, रात्रिजागरण, स्वच्छन्दगमन इनसवका त्यागकरे ॥२६६

२६७ लोकनाथरसः (नवमः)

पञ्चभि र्लवणैः सूतं त्रिभिः क्षारैस्तथैव च ।
मर्दयेद्दोषनाशाय गुणाधिक्यविधित्सया ॥ १३१४ ॥
एवं संशोध्य सूतेन्द्रं राजिकाहिङ्गुशुण्ठिभिः ।
चूर्णितैः पिण्डिकां कृत्वा तन्मध्ये सूतकं क्षिपेत् ॥१३१५॥
ततस्तां स्वेदयेत्पिण्डीं वस्त्रे वद्ध्वा तु काञ्जिके ।
दोलायन्त्रगतां यत्नाद्वैद्यो यामचतुष्टयम् ॥ १३१६ ॥
एवं शुद्धं रसं कृत्वा क्रमेणाऽनेन मर्दयेत् ।
गिरिकर्णी तथा भृङ्गराजनिर्गुण्डिके तथा ॥ १३१७ ॥
जयन्ती शृङ्गवेरश्च मण्डूकी चपलच्छदः ।
काकमाची तथोन्मत्तो रुवूकश्च ततः परम् ॥ १३१८ ॥
एतासामौषधीनाञ्च रसतुल्यै रसैः क्रमात् ।
ततस्तत्सूतराजस्य कार्या मरिचमात्रिका ॥ १३१९ ॥
वटिका सन्निपातस्य निवृत्त्यर्थं भिषग्वरैः ।
इयं श्रीलोकनाथेन सन्निपातनिवृत्तये ॥ १३२० ॥
कीर्तिता गुटिका पुण्या दृष्टप्रत्ययकारिणी ।
इमां प्राप्य वटीं यस्मात्सन्निपाताद्विमुच्यते ॥ १३२१ ॥
मयूरमीनवाराहच्छागमाहिषसम्भवैः ।
प्रत्येकेनाऽथ सर्वैर्वा भाविता चेदियं भवेत् ॥ १३२२ ॥
पातयेत्तत्र तोयानि सुशीतानि वहूनि च ।
शर्करादधिसंयुक्तं भक्तमस्मिन् प्रदापयेत् ॥ १३२३ ॥
इक्षवश्च तथा योज्या रसवीर्यविवृद्धये ।
शीतद्रव्यै र्भवेद्वीर्यं पित्तवद्धे महारसे ॥ १३२४ ॥

र चि, र र. स, र. सु, र शं, रसायनसं., र का, वृ यो त, रससागर, र. को., यो. म, सू प्र, र मृ ज्वराऽधिकारे । रससागरे सुवर्णलोकनाथ इति नाम ॥

भाषा—पाचोंनमक और तीनोंक्षारोंसे १–१ रोज पारेको मर्दनकर गरमकाञ्जीमे साफकरले फिर राई, हींग, सोंठका काञ्जीमें गोला वनाय उसके भीतर पारेको रख दोलायन्त्रसे ४ पहर काञ्जीमें स्वेदनकर निकालले फिर गोकर्ण, भंगरा, निर्गुण्डी, जेंती, अदरख, ब्राह्मी, पीपलकीछाल, मकोय, धतूरा, एरण्ड इनसवके पारेकेवरावरस्वरसोंसे क्रमश मर्दनकर मिर्च वरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली रोग अथवा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको निवृत्तकरताहै । इसमें मोर, मछली, सूअर, वकरा और भैंसेके पित्तोंसे भावना देकर गोली वनाई हो तो मत्थेपर ठंढेजलकी धारा देना । शक्कर और दहीयुक्तभात, ईखवगैरह ठंढे पदार्थ खानेको देना इससे यह वहुतही चमत्कृतिको दिखलाताहै ॥ २६७ ॥

२६८ लोकनाथरसः (दशमः)

स्वर्णं सूतसमानकं दृढतरं निम्बूम्बुना मर्दितं,
पिष्टिः क्ष्मागुणसम्मिताऽभ्रकमृदा मूषान्विता भूधरे ।
पक्वा घस्रचतुष्टयं शुभतरं स्याद्भस्म गन्धाश्मना,
तुल्यं चित्रकशृङ्गवेरसलिले वस्रत्रयं मर्दितम् ॥१३२५॥
तद्वारिद्रकपर्दकोदरगतं हालागुडाकल्कतो,
रुद्धं चूर्णविलिप्तभाण्डतलगं संरुध्य चास्यं पुटेत् ।
मर्द्यं तत्सकपर्दकं दृढतरं वल्लद्वयं सर्पिषा,
युक्तः सन्मरिचैश्च सूतकवरः श्रीलोकनाथाभिधः ॥
मृगाङ्कवद्राजयक्ष्महारी सूतवरो भवेत् ।
पथ्यादि पूर्ववत्तस्य सेवनं सप्तकत्रयम् ॥ १३२७ ॥

र., क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—सोनेकेवर्क अथवा वारीकचूर्ण और पारा समभाग लेकर नीवूकेरससे १–२ रोज मर्दनकर सव कालापन निकालदे । दो दो घण्टेकवाद रस वदलताजाय फिर इसपिष्टीके वरावर शुद्धगन्धकमिलाकर एकरोज मर्दनकर गोलावनाय कच्चीअभ्रकके कल्कसे दोमूषावनाय उसके भीतर गोलेको रख सन्धिवन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर भूधरयन्त्रमें ४ पहरकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर वरावरका शुद्धगन्धक मिलाय ३ रोज चित्रक और अदरखके रसोंसे मर्दनकर पारेसे चतुर्गुणित पीलीकौड़ियोंके अन्दर भरके मद्यकल्क और थूअरके दूधसे मुंहवन्दकर चूनेसे पुतेहुए भाण्डमें वन्दकर मुखमुद्रादेकर ३–४ कपड़मिट्टी चढाकर सूखनेपर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ६–६ रत्तीकीमात्रा घी और मरिचकेसाथ देनेसे यह राजयक्ष्मादिसमस्तरोगोंको दूर करताहै । इसमें पथ्यवगैरह २१ दिनतक मृगाङ्ककी तरह करना २६८

२६९ लोकनाथरसः (एकादशः)

धराविभागा रसगन्धताला-
स्त्रिशच्छिलाटङ्कणमाक्षिकाः स्युः ।
ताम्रं शरांशं दिनसप्तकन्त-
जम्बीरनीरैः परिमर्द्य गोलम् ॥१३२८॥

निधाय सम्पुटवरेऽधियामं
पुटं प्रदद्याल्लघु शीतलन्तत् ।
पिबेत्त्रिगुञ्जं मधुदिक्कणायुतं
प्लीहज्वरे धातुगते क्षयादौ ॥ १३२९ ॥
सगर्भयोषिच्छिशुदुर्बलानां
सुखावहोऽयं कथितो गुणाढ्यः ।
स्याल्लोकनाथोऽखिलरोगहर्ता
दोषानुरूपञ्च भजेत पथ्यम् ॥ १३३० ॥

र. गं., क्षये ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, मैनसिल, सुहागा और सुवर्णमाक्षिक ३०–३० भाग, ताम्रभस्म ५ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जभीरीकेरससे ७ रोज़ मर्दनकर गोला वनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर २–३ कपड़मिट्टीदेकर सुखाकर १ प्रहर लघुपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा मधु और १० पीपलके-साथदेनेसे प्लीहा, धातुगतज्वर, क्षयादिरोग, गर्भवती स्त्री और दुर्वलवर्चोंके तमामरोगोंको यह नष्टकरताहै । इसमें पथ्य दोषानुरूप देना ॥ २६९ ॥

२७० लोकनाथरसः (लोकेश्वरः) (द्वादशः)

रसस्य भस्मना हेम पादांशेन प्रकल्पयेत् ।
द्विगुणं गन्धकं दत्त्वा मर्दयेच्चित्रकाम्बुना ॥ १३३१ ॥
चराचरांश्च सम्पूर्य टङ्कणेन निरुद्ध्य तु ।
भाण्डे चूर्णप्रलिप्तेऽथ क्षिप्त्वा सन्धाय मृत्स्नया१३३२
शोषयित्वा पुटेद्गर्तेऽरत्निमात्रेऽपराह्णके ।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य चूर्णयित्वा तु विन्यसेत् ॥१३३३॥
एष लोकेश्वरो नाम्ना पुष्टिवीर्यविवर्धनः ।
गुञ्जाचतुष्टयञ्चाऽस्य पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥ १३३४ ॥
खादयेत्परया भक्त्या लोकेशं सर्वरोगहम् ।
अङ्गकार्श्येऽग्निमान्द्ये च कासे पित्ते रसक्षये ॥१३३५॥
मरिचैर्घृतसंयुक्तैः प्रदातव्यो दिनत्रयम् ।
लवणं वर्जयेत्तत्र साज्यं सदधि भोजनम् ॥ १३३६ ॥
एकविंशद्दिनं यावन्मरिचं सघृतं पिवेत् ।
पथ्यं मृगाङ्कवद्देयं शयीतोत्तानपादधः ॥ १३३७ ॥
वमने सम्प्रवृत्ते तु गुडूचीद्रवमाहरेत् ।
मातुलुङ्गस्य मूलं वा लाजाचूर्णं ससैन्धवम् ॥ १३३८ ॥
पिप्पलीं मधुसंयुक्तां खादयेद्वान्तिशान्तये ।
स्नानं शीतलतोयेन मूर्ध्नि धारां विनिःक्षिपेत् ॥१३३९॥
पैत्ते विकारे सञ्जाते कदलीफलमाहरेत् ।
भृष्ट्वा तन्मरिचैः सार्धं भोजयेत्कफनुत्तये ॥ १३४० ॥
आर्द्रिकां गुडयुक्तां वा गुडार्द्रकमथापि वा ।
भृष्ट्वा कुस्तुम्बरीं जीरं व्योषांशं चूर्णयेत्ततः ॥ १३४१ ॥
शर्करागुडमिश्रं वा दद्यीताऽरुचिशान्तये ।
अजमोदा विडङ्गानि पिष्ट्वा तक्रेण पाययेत् ॥ १३४२ ॥
कृमिकोपप्रशान्त्यर्थं क्वाथं वातघ्नमुस्तयोः ।
संस्कृत्य दुग्धेन दध्ना विरेके सम्प्रयोजयेत् ॥१३४३॥
ईषद्भृष्ट्वा जयाचूर्णं मधुना खादयेन्निशि ।
अङ्गतोदे घृतेनाऽङ्गं मर्दयित्वोष्णवारिणा ॥
स्नापयेद्रोगिणं वैद्यो लोकनाथमनुस्मरन् ॥ १३४४ ॥

र. शं., ध, र. ल, रसायनसं., वृ. यो. त., र. चि., नि. र., र. र. स., र. म. मा, र को., र. चं., यो. र., र. सु, र. सं., र. मं., यो. म., ना. वि., टो., वै. चि., र क. यो., र. का., र. क. ल., चि. र भ., र. (मा.), र. र. क्षये ।

टि०—रसरत्नसमुच्चये द्वितीयस्थाने सूताऽर्द्धभागेन स्वर्णं नियुज्य मृगाङ्कपोट्टलीति नाम स्थापितम् । माणिक्यचन्द्रीयरसावतारे द्वौ पाठौ प्रकल्पितौ, एकस्मिन् पाठे साधारण कनकभस्म नियोजित, द्वितीये षड्गुणगन्धकमारित कनक योजितम् । हेमपारदगन्धाना एकस्त्रय· षड् इतिभागे विशेष । रसायनसङ्ग्रहस्य द्वितीयस्थाने अग्निदीपनीगुटिकेति नाम स्थापित तत्र गन्धकस्याष्टौ भागा कल्पिता जीवच्छम्बूके चाऽवरोध कृत इतिविशेष । रसरत्नदीपिकाया टङ्कणेन कराट्मुद्रणमस्ति अत्र तु मध्ये प्रक्षिप्तमिति विशेषो दृश्यते परन्तु स गणनायोग्यो नाऽस्ति उभयथाऽपि रससाकमेव तन्मेलन क्षीरिण्यर्कमर्दनन्तु विशेषतायामेव पर्यवस्यति, तस्याऽत्राप्यनुष्ठाने क्षत्यभावोऽस्तीति सुधीभिराकलनीयम् । रसकामधेनौ टोडरानन्दे रसायनसङ्ग्रहे च उभयोरपि सङ्ग्रहस्त्वज्ञानतामेव द्योतयति । रसरत्नाकरे"मृत सूत चतुर्भाग भागैक मृतहेमकम् । अष्टभाग शुद्धगन्ध दिनैक चित्रजैर्द्रवै–"रित्यादिना वैरोचननाम्ना एको रसोऽस्ति सोऽप्यत्रैवाऽन्तर्भवति । गन्धकमात्रे भागाऽधिक्यान्नैतावता रसान्तरता प्राप्तुमर्हति वह्निदानेन गन्धकस्योड्डीयमानत्वात् ॥

भाषा—पारदभस्म ४ भाग, सुवर्णभस्म १ भा, शुद्धगन्धक ८ भाग लेकर सवका वारीकचूर्णकर चित्रकके रससे एकरोज़ मर्दनकर पारेसे चौगुनी कौड़ियोंमें भरके सुहागेसें मुहवन्दकर चूनापुतेहुए भाण्डमें रखकर शरावसम्पुटसे वन्दकर ४–५ कपड़मिट्टी देवे । सूखनेपर हाथभरके खड्डेमें दोपहरकेवाद इतनी आचदेवे कि सवेरे तक ठढीहोजाय । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्तीकीमात्रा पीपल और मधुकेसाथ देनेसे यह पुष्टि और वीर्यको वढ़ाताहै । कृशता, मन्दाग्नि, कास, पित्तप्रकोप और रसक्षय इनरोगोंमें ३ रोज़तक मरिच और घीकेसाथदे । इसमें नमकछोड़दे घृत और दधियुक्त भोजनदे । चारदिनकेवाद २१ दिनतक घी और मरिच पीवे, पथ्य मृगाङ्ककीतरह दे ज़मीनपर चित्तसोवे । रसातिव्याप्तिकेकारण वमनहोनेपर गिलोय अथवा विजोरेकीजड़कास्वरस अथवा सैन्धवयुक्तलाजचूर्ण, अथवा रात्रिमें मधुयुक्तपीपल देवे । पित्तविकारमें शीतलजलसे स्नान, मस्तेपर शीतलजलकी धारा और केले देना । कफविकारमें मरिच कच्चाकेला अथवा गुड़युक्त आदीचक (आसामी जंजवील यू०) अथवा गुड़युक्त अदरखदेना । अरुचिमें भुनाधनिया, जीरा और त्रिकटुकेसाथ अथवा शक्कर या गुड़केसाथ देना । क्रिमिप्रकोपमें अजमोद और विडङ्ग छाछमें पीसकर देना । विरेचनमें एरण्डमूल और नागरमोथेकाक्वाथ देना और इसीतरह

क्षीरपाककरके देना अथवा भुनीभागकाचूर्ण रात्रिमें देना। हड़फूटनमें घीसे अभ्यङ्गकरायगरमजलसेस्नानकराना ॥ २७० ॥

२७१ लोकनाथरसः (लोकेश्वरः) १३

द्वौ भागौ गन्धकस्याऽष्टौ शङ्खचूर्णस्य योजयेत्।
एकमेव रसस्यांशमर्कक्षीरेण मर्दयेत् ॥ १३४५ ॥
चित्रकस्य द्रवेणैव शोषयित्वा पुनःपुनः।
एकीकृत्य रसेनाऽथ क्षारं दत्त्वा तदर्द्धकम् ॥ १३४६॥
अर्कक्षीरेण कुर्वीत गोलकानथ शोषयेत्।
निरुद्ध्य चूर्णलिप्तेऽथ भाण्डे दद्यात्पुटं तथा॥१३४७॥
लोकनाथरसो ह्येष ग्रहणीरोगकृन्तनः।
गुञ्जाचतुष्टयञ्चाऽस्य मरिचाऽऽज्यसमन्वितम् ॥
दद्दीत दधिभक्तञ्च ग्रहण्याञ्च विशेषतः ॥ १३४८ ॥

र र.स , र सु , ग्रहणीरोगे।

भाषा—शुद्धगन्धक २ भाग, शङ्खचूर्ण ८ भा., शुद्धपारा १ भागलेकर शङ्खका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमेंमिलाकर आककेदूध और चित्रककेक्काथकी सुखासुखाकर ३–३ अथवा ७–७ भावनाएं देकर सवसे आधेप्रमाणमें सुहागा मिलाकर १–२ दिन आककेदूधसे घोटकर वेरवरावर गोलियें वनाकर अच्छीतरहसुखाकर चूनापुतेहुए वर्तनमें वन्दकर २–४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ रत्ती मरिच और घीकेसाथ देनेसे और दहीभात खिलानेसे ग्रहणीरोग निवृत्तहोताहै ॥ २७१ ॥

२७२ लोकनाथरसः (लोकेश्वरपोट्टली) १४

प्रत्येकं दश गद्याणाः शुद्धगन्धकसूतयोः।
कज्जलीमर्कदुग्धेन पेपयेच्च दिनद्वयम् ॥ १३४९ ॥
द्व्यहं सेहुण्डदुग्धेन पिष्ट्वा कृत्वा च गोलकम्।
वराटेषु च तत्क्षिप्त्वा वेष्टयेद्वज्रमृत्स्नया ॥ १३५० ॥
पुटान्युत्पलकै र्दद्यात्क्रमेणोत्तरवर्धितैः।
दह्यते गन्धको यावत्सूतस्तिष्ठेन्निरत्ययः ॥ १३५१ ॥
कृत्वा ततः कपर्दीनां चूर्णं गद्याणविंशतिम्।
शङ्खचूर्णं क्षिपेन्मध्ये दशगद्याणसम्मितम् ॥ १३५२ ॥
आर्द्रचित्रकमूलानां स्वरसेन च भावयेत्।
मृतसूतञ्च तन्मध्ये क्षिप्त्वा पूगप्रमाणिकाः ॥ १३५३ ॥
गुटीः कृत्वाऽऽतपे शुष्कास्ततो ग्राह्या च कुम्भिका।
चूर्णं लिप्त्वाऽऽतपे शुष्कां तन्मध्ये गुटिकाः क्षिपेत् ॥
मूषिकाया मुखे पश्चाद् दृढं देयं पिधानकम्।
सन्धिं वस्त्रमृदा लिप्त्वा गर्तमध्ये क्षिपेत्ततः ॥१३५५॥
ज्वलिता शीतलीभूता देयो युक्त्याऽपरः पुटः।
कृत्वा चूर्णं गुटीनाञ्च संरक्षेत्कूपिकागतम् ॥ १३५६ ॥
सञ्जातोऽयं रसः सम्यक् सिद्धो लोकेशपोट्टली।
उक्तौपधैः समं देयो रसो वल्लचतुष्टयम् ॥ १३५७ ॥
सङ्ग्रहण्यामतीसारे ह्यामे च सहजे तथा।
द्वात्रिंशन्मरिचै र्मिश्रो घृतयुक्तोऽथवा रसः ॥१३५८॥
गुडूचीसत्त्वसहितः परं ज्वरविनाशनः।
षष्टिकातण्डुला माषा गोधूमा यवशालयः॥ १३५९ ॥
दधि दुग्धं घृतं पथ्यं मधुरं प्रायशो वरम्।
नारङ्गं शर्करा द्राक्षा वर्ज्यं क्षाराऽम्लतैलकम् ॥१३६०॥

रसचि., र. कं. ली., ग्रहणीरोगे।

टि०—रसकङ्कालीयलोकनाथपोट्टलीशङ्खपोट्टल्योश्च पाठ सदृश प्रतिभाति परन्तु पाके भावनासु च विशेषत्वात् पाठद्वयकर्तु कङ्कालयोगिन एकत्वाद् द्वयोरपि स्वतन्त्रतया पाठ. स्थापित इति विद्वद्भिर्विमर्शनीयम् ॥

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक ५–५ तोले लेकर नीलवर्णकज्जलीकर आक और सेहुण्डकेदूधसे ३–३ दिन मर्दनकर १० तोले पीलीकौड़ियोंमें भरके वज्रमिट्टीसे सन्धिवन्दकर चूनापुतेहुए भाण्डमें वन्दकर २–४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर इतनी आचदे कि केवल गन्धकही जले पारा न उड़े। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर पारेकीवरावर गन्धकदेकर पूर्वद्रवोंसे मर्दनकर आचदे, ऐसे षड्गुणगन्धकजारणकर अलगरखदे। फिर कौड़ीभस्म १० तोले और शङ्खभस्म ५ तोलेका वारीकचूर्णकर अदरख और चित्रकमूलकेक्काथसे १–१ रोज मर्दनकर पूर्वोक्तभस्म मिलाकर १–२ पहरमर्दनकर सुपारीकेसदृश गोलियें वनाय धूपमें सुखाकर चूनापोतकर सुखाईहुईकुल्हड़ीमें भरके शरावसम्पुटमें वन्दकर ४–५ कपड़मिट्टी समस्तपर लगाय गजपुटकी आचदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दनकर सुखाकर दूसरापुटदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे डेढ १॥ माशेकीमात्रा घृतयुक्त ३२ कालीमिर्चोंकेसाथ अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सङ्ग्रहणी, आम अथवा सहज अतिसार, नष्टहोताहै। गुडूचीसत्त्वकेसाथ देनेसे यह ज्वरको नष्टकरताहै। साठीचावल, उड़द, गेंहू, जव, सफेद चावल दही, दूध, घृत और मधुरप्रकृति तमामआहार, नारङ्गी, शक्कर येसव इसमें पथ्यहै। क्षार, अम्ल और तैल नहीं खाने चाहियें ॥ २७२ ॥

२७३ लोकनाथरसः (पोट्टली)

गोलं जम्भरसेन गन्धरसयोस्तत्तुल्यताम्राऽऽवृतं,
गोलं लावणयन्त्रगर्भनिहितं रुद्ध्वा पचेत्तं शनैः।
यामानष्ट कपर्दजेन सकलं तुल्येन तद्भस्मना,
युक्तं चित्रकवारिणा लघुतरं पिष्ट्वा पुटं दापयेत्१३६१
संशुद्धामिति पोट्टलीं सहविषां मारीचचूर्णेन ता-,
मश्नीयादिति लोकनाथविधिना दौर्वल्यकासादिषु।
शोफामाऽनिलगुल्मशूलसहजश्वासग्रहण्यर्शसि,
प्रौढे यक्ष्मणि पाण्डुरोगसहिते सन्तापमाग्द्याऽरुचौ॥

नि र., वै चि., र पा , कासाधिकारे।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीको जंभीरीकेरससे मर्दनकर गोलावनाय वरावरकेतावेके सम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर लवणयन्त्रमें वन्दकर ८ पहरकी क्रमाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर उसकी

बराबरकी पीलीकौड़ियोंकीभस्म मिलाय चित्रकमूलकेकाढ़ेसे १–२ रोज़ मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा समभाग अतीस और मिर्चोंके चूर्णकेसाथ मिलाकर समयोचितानुपानकेसाथ लेकर द्वितीयलोकनाथमें कहेहुए पथ्यके अनुसार चलनेसे दुर्बलता, कास, श्वास, शोफ, काम, वातप्रकोप, गुल्म, शूल, सहजश्वास, ग्रहणी, बवासीर, पूर्णरूपराजयक्ष्म, पाण्डु, सन्ताप, मन्दाग्नि और अरुचि इनसबको यह नष्टकरताहै॥ २७३॥

२७४ लोकनायकरसः

पीतस्थूलकपर्दानां ग्राह्यं विंशोत्तरं शतम्।
तक्रे द्रोणमिते क्वाथ्यं मथिते द्विगुणोदके॥ १३६३॥
तक्रजीर्णे च निःसारे गृह्णीयात्तत्पुनः पचेत्।
वारत्रयञ्च सूतस्य क्षुधितस्याऽक्षपञ्चकम्॥ १३६४॥
लेलीतकस्य शुद्धस्य सार्धसप्ताऽक्षकं द्वयोः।
खल्वे कज्जलिकां कृत्वा पूरयित्वा विमुद्रयेत्॥१३६५॥
टङ्कणेनाऽर्कदुग्धेन भावितेन चतुर्दश।
वारान् कुमारिकाद्भिश्च शोपयित्वा पुनः पुटेत्१३६६
विमुद्रय त्रिपुटं दत्त्वा स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत्।
गुञ्जापञ्चोन्मितं दद्यात्पड्गुञ्जासम्मितोपणैः॥ १३६७॥
ततः पलमितं पश्चात्पिबेच्चाङ्गेरिकाघृतम्।
पथ्यं दुग्धौदनं कुर्यात्त्यजेद्व्यायामजागरम्॥
सिद्धोऽयं सिद्धनाथेन कथितो लोकनायकः॥१३६८॥
जयेत्सर्वरोगानशेषानसाध्यान्
विशेषाद्ग्रहण्यामतीसाररोगे।
रसो यक्ष्मकासे च शूले च शोथे
महावह्निकृद्योगवाही प्रदिष्टः॥ १३६९॥

र का., अतीसाराऽधिकारे।

भाषा—पीली और मोटीकौड़ी १२० लेकर दूनापानीडालकर बनाईहुई एकद्रोणछाछमें डालकर धीरे २ पकावे। जब छाछका तमामपानी जलजाय तब कौड़ियोंको निकालकर फिर उसीतरह पकावे। ऐसे ३ वार पकाकर कौड़ियोंको साफकर शुद्धबुभुक्षितपारा ५ कर्ष, शुद्धगन्धक ७॥ कर्षलेकर दोनोंकी नीलवर्णकज्जलीकर कौड़ियोंमेंभर आककेदूध और घीकुंवारके स्वरससे १४–१४ भावनाए दियेहुए सुहागेसे मुंह बन्दकर सुखाकर लघुपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर आककेदूध और कुमारीकेरससे १४–१४ भावनाए देकर टिकड़ीबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आंचदे। ऐसे ३ आंचें देनेकेबाद स्वाङ्गशीतलको निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ६–६ रत्तीकीमात्रा मरिचकेचूर्णकेसाथ लेकर एकपल चाङ्गेरीघृतपीवे, पथ्यमें दूधभात खाय कसरत और रात्रिजागरणको छोड़े तो समस्त असाध्यरोग, ग्रहणी, अतीसार, राजयक्ष्म, कास, शूल, शोथ, अत्यन्तमन्दाग्नि इनसबको यह नष्ट करताहै और योगवाहीहै २७४

२७५ लोकेश्वररसः

तालकं दरदं वत्सनाभं सर्वं समं समम्।
सर्वं भूनिम्बनीरेण मर्दयेद्गोलकीकृतम्॥ १३७०॥
वज्रमूषान्तरे क्षिप्त्वा लेप्या वस्त्राऽनुमृत्तिका।
वालुकायन्त्रके पाच्यं द्वियामं मन्दवह्निना॥ १३७१॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य च्छागपित्तेन भावयेत्।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सन्निपातान्निहन्ति च॥
लोकेश्वररसो नाम्ना शम्भुना परिकीर्तितः॥१३७२॥

वै चि, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्धहरिताल, शिंगरिफ और बछनाग समभाग लेकर चिरायतेकेक्वाथसे एकरोज़ मर्दनकर गोलाबनाय वज्रमूषामें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीदकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें रख दोपहरकी मन्दाग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर बकरेकेपित्तसे १–२ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह तमामसन्निपातोंको दूरकरताहै॥ २७५॥

२७६ लोहगर्भरसः (पित्तपाण्डुरिः)

रसभस्म चतुर्भागं लोहभस्माऽष्टभागिकम्।
वह्निर्मुस्ता विडङ्गञ्च त्रिफला कुटजत्वचः॥ १३७३॥
कटुत्रयञ्च संयोज्य प्रत्येकं भागमेककम्।
मधुना वल्लमात्रञ्च लीढं पाण्डुहरं परम्॥ १३७४॥
रसोऽयं लोहगर्भाख्यः पथ्यं देयं मृगाङ्कवत्।
त्रिफलावृषभूनिम्बतिक्तादार्व्यमृताकृतः॥
क्वाथो मधुसमायुक्तःकामलापाण्डुरोगजित्॥१३७५॥

रसायनसं, चि क, र सु, र.का, ना वि, र र स, र क ल, र को, र क पाण्डुरोगे। र क ल. पाण्डुरोगघ्न॰। र र स, र को, र क एतेषु ग्रन्थेषु पित्तपाण्डुरीतिनाम। पित्तपाण्डुरिवत्या लोहस्य द्वौ भागौ प्रकल्पितौ॥

भाषा—पारदभस्म४ भा, लोहभस्म ८ भा, चित्रककीजड़, नागरमोथा, विडङ्ग, त्रिफला, कुरैयाकीछाल और त्रिकटु १–१ भाग मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथदेकर त्रिफला, अड़ूस, चिरायता, कुटकी, दारुहल्दी और गिलोय इनकाक्वाथ मधुयुक्तपिलानेसे कामला और पाण्डु नष्टहोतेहैं। इसमें पथ्य मृगाङ्ककीतरह देना॥ २७६॥

२७७ लोहगुग्गुलुः (प्रथमः)

स्नुहीत्वक् खादिरं काष्ठं काष्ठोदुम्बरजं फलम्।
वल्कलानां पृथक् पञ्च पलमष्टगुणे जले॥ १३७६॥
पक्त्वा पादावशेषेण लोहं पञ्चपलं पचेत्।
पिण्डीभावे द्रवे किञ्चिदवशिष्टे तु निःक्षिपेत् १३७७
शोभाञ्जनकमूलस्य कल्केनावृत्य पाचितम्।
करीपाग्नौ समुद्धृत्य हरितालं पलद्वयम्॥ १३७८॥
चूर्णितं द्विपलं तच्च गुग्गुलो घृतकल्कितम्।
एकीकृत्य पचेद्भूयो यावल्लेहत्वमागतम्॥ १३७९॥

गुल्मे कुष्ठे क्षये स्थौल्ये शोथे शूले च पाकजे ।
पाण्डुरोगे प्रमेहे च वातरोगे तथैव च ॥
सिद्धमेतत्प्रयुञ्जीत वलीपलितनाशनम् ॥ १३८० ॥

र र., गुल्माऽधिकारे ।

भाषा—सेहुण्डकादूध, तज, खैरकाहीर, कट्मरकाफल, वट, पीपल, गूलर, पाकर और वेतकी छाल १–१ पल लेकर अठगुने पानीमें पकावे । चतुर्थांशरहजानेपर छानले फिर इसमें ५ पल लोहभस्म डालकर पकावे । थोड़ापानी बाकीरहने-पर सहिजनकीजड़कीछालकाकल्क १ पल डालकर करीपाग्निपर रखदे । इसमें रसमाणिक्य और घीमें कुटाहुआगूगल २–२ पल मिलाकर चलाताहुआ पकावे । अवलेहकेसदृशहोनेपर उतारकर चिकनेवर्तनमें रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशेकीमात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे गुल्म, कुष्ठ, क्षय, स्थूलता, शोथ, परिणामशूल, पाण्डु, प्रमेह, वातरोग, इनसबको यह नष्ट-कर वलीपलितका नाशकरताहै ॥ २७७ ॥

२७८ लोहगुग्गुलुः (द्वितीयः)

अयःपलं स्यात्त्रिपलं पुरस्य
व्योषस्य योज्यानि पलानि पञ्च ।
पलानि चाऽष्टौ त्रिफलारजस्तः
कर्षं प्रदेयं ह्यमरत्वसिद्ध्यै ॥ १३८१ ॥

रसायन सं , यो. र , भा. प्र , रसायने ।

भाषा—लोहभस्म १ पल, घीमें कुटाहुआगूगल ३ पल, त्रिकटु ५ पल, त्रिफला ८ पल इनसबका वारीक चूर्णकर गूग-लको घी देकर दोदिनतक घनसेकूटे । द्रवहोनेपर चूर्ण थोड़ाथोड़ा मिलाताजाय, जितना चूर्णमिलसके उतना कूटकूटकर मिलावे । बाकीबचेहुएचूर्णको घीकीमददसे मिश्रितकरे इसमेंसे ३ माशेसे शुरूकर १ कर्षतककीमात्रा धीरे २ बढ़ावे । औषधपाक होनेकेवाद पथ्यदेवे । इससे तमाम वातविकार नष्टहोकर आयु बढ़तीहै २७८

२७९ लोहगुटिका

लोहस्य रजसो भागास्त्रिफलायास्तथा त्रयः ।
गुडस्याऽष्टौ तथा भागा गुडान्मूत्रं चतुर्गुणम् १३८२
एतत्सर्वञ्च विपचेद्गुडपाकविधानवित् ।
लिहेच्च तद्यथाशक्ति क्षये शूलेऽन्नपाकजे ॥ १३८३ ॥

च. द , र र , र का , टो. , यो म. अन्नद्रवशूले । यो. म. मण्डूरवटकेतिनाम ॥

भाषा—लोहभस्म, त्रिफला ३–३ भाग, गुड ८ भा गोमूत्र ३२ भागलेकर गुडकेसदृश चाशनीवनाय रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ माशेकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, और परिणामशूलको यह नष्टकरताहै ॥ २७९ ॥

२८० लोहपञ्चकम् (विडङ्गादिलोहम्)

अयोरजो व्योषविडङ्गचूर्णं
समं पिबेन्माक्षिकसर्पिषाढ्यम् ।
प्रमेहशोथोदरकामलार्शो-
गुल्मग्रहण्यामयपाण्डुरोगान् ॥ १३८४ ॥

लो.प (स) पाण्ड्वधिकारे ।

भाषा—लोहभस्म, त्रिकटु, विडङ्ग येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ मासा घी और मधुके-साथलेनेसे प्रमेह, शोथ, उदर, कामला, बवासीर, गुल्म, ग्रहणी और पाण्डुरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २८० ॥

२८१ लोहपर्पटी (शठ्यादिः)

पलैः षोडशभिः शठ्याः कषायं विधिना चरेत ।
वस्त्रपूते कषायेऽस्मिन् पुराणं गुडमावपेत् ॥ १३८५ ॥
पलैः षोडशभिस्तुल्यं गुडपाकं पचेत्ततः ।
त्रिफला त्र्यूषणं क्षारं त्रिजातं चित्रमूलकम् ॥ १३८६ ॥
दीप्यकं मुस्तकं भार्गी शुष्ककन्दं कलिङ्गकम् ।
अक्षमानेन सञ्चूर्ण्य लोहं पलचतुष्टयम् ॥ १३८७ ॥
उत्तार्याऽथ गुडे क्षिप्त्वा दद्यात्सम्यक् प्रचालनम् ।
घृताक्ते भाजने कृत्वा प्रस्तीर्य तदनन्तरम् ॥ १३८८ ॥
ततः खण्डानि कुर्वीत मानमालोच्य यत्नतः ।
वयोऽवस्थां बलं वह्निं ज्ञात्वा मात्रां प्रकल्पयेत १३८९
हन्ति क्षयांश्च सर्वांश्च पाण्डुरोगं सकामलम् ।
प्लीहाष्ठीले विशेषेण गुल्मशूलाऽऽमयांस्तथा १३९०
सर्वानुदररोगांश्च ग्रहणीञ्च कफामयान् ।
सर्वान् वातविकारांश्च गदान्कफमरुद्भवान् ॥ १३९१ ॥
ततो भक्षण मात्रेण बलं वह्निं विवर्धयेत् ।
पित्ताऽधिके न दातव्या शठी लोहस्य पर्पटी॥१३९२॥
तैलञ्च कारवेल्लञ्च सर्वमेतत्परित्यजेत् ।
इक्षुसारञ्च खर्जूरं नारिकेलोदकं तथा ॥ १३९३ ॥
द्राक्षादाडिमकं पथ्यं कल्पयेद्भिषगुत्तमः ।
अस्योद्रेके समुत्पन्ने सितादुग्धञ्च पाययेत् ॥ १३९४॥

रससागर, सर्वरोगे ।

भाषा—१६ पल कचूरका अष्टगुणितजलमें क्वाथकर चतुर्थी-शावशेष रहनेपर छानकर १६ पल पुरानागुड़ डालकर पकावे । गुडकीचाशनी होनेपर उतारकर त्रिफला, त्रिकटु, सज्जी, यव-क्षार, भुनासुहागा, त्रिजात, चित्रकमूल, अजवाइन, नागरमोथा भारङ्गी, सूरण, इन्द्रजव, येसब १–१ कर्ष और लोहभस्म ४ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर चाशनीमें मिलाकर उतारले । थालीवगैरहमें घीलगाकर ढालकर ठंढाकरले । इसमेंसे ३ माशेसे ६ माशेतककीमात्रा अवस्था, बल तथा अग्निका विचारकर देनेसे समस्तक्षय, पाण्डु, कामला, प्लीहा, अष्ठीला, विशेषतया गुल्म, शूल, समस्तउदररोग, ग्रहणी, समस्त वात और कफ-विकार, मन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै । पित्ताधिक्यमें इसे न देवे । तैल और करेलेका परित्यागकरे । ईखकेपदार्थ, छुहारे, नारियलकाजल, द्राक्ष, अनार येसब पथ्य है । इससे घबराहट मालूमपड़नेपर शक्करमिलाहुआ दूध देवे ॥ २८१ ॥

२८२ लोहभास्कररसः

नीलनीरजसमुत्थकेशरा-
त्पद्मकात्सहकसेरुकाद्रजः ।
तुल्यमेभिरखिलैः समांशकं
लोहभास्कररजः सितासमम् ॥ १३९५ ॥
तण्डुलोदमनुपायिनां नृणां
रक्तपित्तमतिदारुणञ्जयेत् ।
पायुजानि रुधिरात्मकानि वा
यक्ष्मपीनसमसृग्दरन्तथा ॥ १३९६ ॥

लो. प. (स.), रक्तपित्ते ।

भाषा—नीलोफरकीकेशर, पद्मकेशर और कसेरू समभाग इनसवकीवरावर लोहभस्म लेकर सवको इकट्ठे मिलाकर रखछोड़े, इसमेंसे ३ रत्तीसे ६ रत्तीतककीमात्रा वरावरकी शक्कर मिलाय फाककर शक्करमिलाहुआ चावलका धोवन पीनेसे अत्यन्तभीषण-रक्तपित्त, खूनीववासीर, राजयक्ष्म, पीनस, रक्तप्रदर, इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ २८२ ॥

२८३ लोहमृत्युञ्जयरसः (मृत्युञ्जयः)

रसगन्धकलौहाभ्रं कुनटी मृततामृकम् ।
विषमुष्टिं वराटञ्च तुत्थं शङ्खं रसाञ्जनम् ॥ १३९७ ॥
जातीफलञ्च कटुकीं छिक्षारं कानकं तथा ।
हिङ्गु व्योषं सैन्धवञ्च प्रत्येकं सूततुल्यकम् ॥ १३९८ ॥
श्लक्ष्णचूर्णीकृतं सर्वमेकत्र परिभावयेत् ।
सूर्यावर्तरसेनैव विल्वपत्ररसेन च ॥ १३९९ ॥
सूर्यावर्तेन मतिमान् वटिकां कारयेत्ततः ।
प्लीहानं यकृतं गुल्ममष्ठीलाञ्च विनाशयेत् ॥ १४०० ॥
अग्रमांसं तथा शोथं तथा सर्वोदराणि च ।
वातरक्तञ्च कमठं चान्तर्विद्रधिमेव च ॥ १४०१ ॥

र स , र सु , व., र चि , प्लीहाऽधिकारे ।

टि०—कानकेन केचिज्जयपालफलमिच्छन्ति तन्मते धुत्तूरस्थाने जैपालफल नियोज्यम्, अयमत्र निष्कर्ष यत्र रेचनस्याऽत्यवश्यता प्रतीयेत तत्र जयपालफल नियोज्य यत्र तु ज्वरादीना विशेषतयोपस्थान तत्र धत्तूर-बीजान्येव योज्यानि । धत्तूरबीजदानपक्षे उक्तग्रन्थीयमृत्युञ्जयरसस्य स्वतन्त्रतया पाठो न करणीय किन्तूभयपाठयोरुक्तानि वस्तूनि सर्वाण्येकीकृत्य सूर्यावर्तविल्वपत्रार्द्रकगुडूचीना भावनाभिरेक एव रसो निष्पाद्य इति विशेषु विज्ञापनम् ॥

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, लोह और अभ्रकभस्म, शुद्ध-मैनसिल, ताम्रभस्म, शुद्धकुचिला, कौड़ी—तुत्थ और शङ्खभस्म, रसौत, जायफल, कुटकी, सज्जी, सुहागा, शुद्धधतूरेकेवीज, भुनीहींग, त्रिकटु, सेंधानमक, येसव समभाग लेकर वारीकचूर्ण-कर पारेगन्धकको नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय हुरहुर अथवा सूर्यमुखी और वेलपत्रकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर हुरहुरके-रससे ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयअथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे प्लीहा, यकृत्, गुल्म, अष्ठीला, अग्रमास, शोथ, समस्तउदर, वातरक्त, कछुही और अन्तर्विद्रधि इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ २८३ ॥

२८४ लोहयोगः (प्रथमः)

सप्तरात्रं गवां मूत्रे भावितं वाऽप्ययोरजः ।
पाण्डुरोगप्रशान्त्यर्थं पयसा प्रपिबेन्नरः ॥ १४०२ ॥

ग. नि., टो , भा प्र , पाण्डुरोगे ।

भाषा—लोहका वारीकचूर्ण अथवा भस्म ७ दिनतक गोमूत्रमें खरलकर ३–३ रत्तीकीमात्रा दूधकेसाथ लेनेसे पाण्डु-रोग नष्टहोताहै ॥ २८४ ॥

२८५ लोहयोगः (द्वितीयः)

धात्रीफलं शर्करया समानं
पञ्चाङ्गनिम्बेन युतं त्रिसप्त ।
लोहस्य पादेन युतं तु भुक्तं
कण्डूर्तिकां हन्ति च मण्डलानि ॥ १४०३ ॥

र दी , कुष्ठे ।

भाषा—आवले, शक्कर और नीमकापञ्चाङ्ग समभाग लेकर सवसे चतुर्थांश लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे एकमाशेसे ३ माशेतककी मात्रा समयोचितानुपानकेसाथ २१ दिनतक खानेसे खुजली और मण्डलकुष्ठको यह नष्टकरताहै ॥ २८५ ॥

२८६ लोहयोगः (तृतीयः)

पुटितं भावितं लोहं पृथक्क्वाथैरनेकशः ।
उदावर्तहरं युञ्ज्यात् ससितं वा यथामलम् ॥१४०४॥

र क , र चि , उदावर्ते ।

भाषा—उदावर्तहर योगोंसे मारकर उन्हींसे भावनादिया-हुआ लोह शक्करकेसाथ अथवा यथा दोषहरानुपानकेसाथ देनेसे यह उदावर्तको नष्टकरताहै ॥ २८६ ॥

२८७ लोहयोगः (चतुर्थः)

सिद्धं शम्बूकजं भस्म लोहयुक्तं पिबेन्नरः ।
उष्णोदकेन तत्क्षिप्रं हन्ति शूलं द्विधा स्थितम् १४०५

रससागर, शूले ।

भाषा—लोहभस्मयुक्तसखलेकीभस्म ६ रत्ती गरमपानीके-साथ लेनेसे एकाङ्ग अथवा सर्वाङ्गशूलको यह नष्टकरताहै ॥२८७॥

२८८ लोहयोगः (पञ्चमः)

चूर्णानि लोहत्रिफलाशिलानां
क्षौद्रेण लीढानि पृथक् समं वा ।
मेहान्समस्तानपि नाशयन्ति
पीतः कदाचित्स्वरसो गुडूच्याः १४०६

रा मा , ग नि , प्रमेहाधिकारे । गदनिग्रहे शिलानामित्यस्य स्थाने शिवानामितिपाठ ।

भाषा—लोहभस्म, त्रिफला और शुद्धमैनसिल समभाग लेकर वारीकचूर्णकर आधेमाशेसे १ माशेतककीमात्रा मधुकेसाथ-लेकर गिलोयकाक्काथ पीनेसे समस्तप्रमेह नष्टहोतेहै । त्रिफलादि चार चीजोंमेंसे एकएककेसाथ लोहकायोगकरके देने-सेभी प्रमेह नष्टहोतेहै । मैनसिलकेसाथ लोहकीमात्रा १ से ३ रत्तीतकदेना ॥ २८८ ॥

२८९ लोहयोगः (षष्ठः)

श्वाविधः शकृतश्चूर्णं सप्तकृत्वः सुभावितम्।
विडङ्गानां कषायेण त्रैफलेन तथैव च ॥ १४०७ ॥
क्षौद्रेण लीढ्वाऽनुपिबेद्रसमामलकोद्भवम्।
अक्षाऽभयारसञ्चाऽपि विधिरेषोऽयसामपि ॥ १४०८ ॥

सु सं, क्रिमिरोगे।

टि०—अत्र अयसामिति बहुवचनेन सुवर्णादयोऽष्टौ लोहा ग्रहीतव्या, तेषा भस्म चेद्भवति तर्हि विडङ्गाना त्रैफलेन च कषायेण प्रत्येक सप्तभावना दत्त्वा यथाग्निबल मात्रा प्रकल्प्य क्षौद्रेण लेहयित्वा आमलक्य अभयाया वा रस पाययेत्। यथावस्थितरूपाश्चेद्भवन्ति तर्हि तेषा सूक्ष्माणि पत्राण्यग्निसात्कृत्वा विडङ्गाना कषाये त्रैफले च कषाये प्रत्येक त्रि सप्तकृत्वो निर्वापयेदेव कृते यच्चूर्णं निष्पद्यते तस्मिन्पूर्वोक्ताभ्या क्वाथाभ्या सप्तसप्त भावना दत्त्वा अयस्कृतयो निष्पाद्यास्ता यथाग्निबल मात्रा निर्णीय प्रयोजयेत्।

भाषा—जरककी विष्ठाको विडङ्ग और त्रिफलाके काढेसे ७–७ भावनाएं देकर २–२ माशे मधुमें मिलाकर लेवे और ऊपरसे आंवले, वहेड़े अथवा हरेंका रस पीवे तो इससे क्रिमिरोग नष्टहोताहै। अथवा जरककीविष्ठा, विडङ्ग, त्रिफला इन प्रत्येकके क्वाथमें किसी अन्यतम लोहको सातसातवार वुझावे। वारीकचूर्णहोजानेपर उसीकाकल्क और क्वाथ देकर मर्दनकर आंचदेकर भस्मवनावे। अथवा अयस्कृतियोंके विधानसे केवल चूर्णलेकर उसकी यथाग्निबल मात्रा कायमकर सेवनकर ऊपरसे आंवला, विडङ्ग अथवा त्रिफलाकारस पिलावे। इससे समस्त क्रिमिरोग नष्टहोताहै ॥ २८९ ॥

२९० लोहयोगः (सप्तमः)

मूत्रान्तःपाचितां शुष्कां लोहचूर्णसमन्विताम्।
सगुडामभयां दद्यात्सर्वशूलोपशान्तये ॥ १४०९ ॥

वं, चि, र चि, शूले।

भाषा—गोमूत्रमें पकाकर सुखाईहुई हरेंका चूर्ण और लोहभस्म समभाग लेकर बरावरके गुड़में मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ माशेकी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सबप्रकारकेशूल शान्तहोतेहैं ॥ २९० ॥

२९१ लोहरसायनम् (प्रथमम्)

त्रिफलाया रसे मूत्रे गवां क्षीरे च लावणे।
क्रमेण चेङ्गुदीक्षारे किंशुकक्षार एव च ॥ १४१० ॥
तीक्ष्णायसश्च पत्राणि वह्निवर्णानि दापयेत्।
चतुरङ्गुलदीर्घाणि तिलोत्सेधसमानि च ॥ १४११ ॥
ज्ञात्वा तान्यञ्जनाभानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्।
तानि चूर्णानि मधुना रसेनामलकस्य च ॥ १४१२ ॥
युक्तानि लेहवत्कुम्भे स्थितानि घृतभाविते।
संवत्सरं निधेयानि यवपल्ले तदेव च ॥ १४१३ ॥
दद्यादालोडनं मासे सर्वत्रालोडयन्बुधः।
संवत्सरात्यये तस्य प्रयोगो मधुसर्पिषा ॥ १४१४ ॥
प्रातः प्रातर्बलापेक्षी सात्म्यं जीर्णे च भोजनम्।
एष एव च लोहानां प्रयोगः सम्प्रकीर्तितः ॥ १४१५ ॥
अनेनैव विधानेन हेम्नश्च रजतस्य च।
आयुःप्रकर्षकृत्सिद्धः प्रयोगः सर्वरोगनुत् ॥ १४१६ ॥
अभिघाते न चातङ्कैर्जरया न च मृत्युना।
अधृष्यः स्याद्गजप्राणः सदा चातिबलेन्द्रियः ॥ १४१७ ॥
धीमान् यशस्वी वाक्सिद्धः श्रुतधारी महाबलः।
भवेत्समां प्रयुञ्जानो नरो लोहरसायनम् ॥ १४१८ ॥

च सं. रसायने।

भाषा—फोलादके तिलके बरावर मोटे और ४–४ अङ्गुल लम्बे पत्रवनाय अग्निमें लालवर्णकर त्रिफला, गोमूत्र, गोदुग्ध, लवण, इंगोरन और पलाशकेक्षारमेंवुझावे। जव वे जलकर सुरमाके सदृशहोजाय तवउनका वारीकचूर्णकर आंवलोंकेरससे ६–७ रोज़ मर्दनकर कपड़छानचूर्णकरके मधु और आंवलेकारस मिलाय अवलेहकेसदृश वनाकर घीके वर्तनमें डालकर एकवर्षतक जवकीखत्तीमें रखछोड़े। प्रतिमास अवलेहको अच्छीतरह चलादियाकरे। एकवर्षवाद इसमेंसे अग्निबल देखकर ३ माशेसे १ तोलेतककी मात्रालेवे। जीर्णहोनेपर सात्म्य भोजनकरे। इसीतरह तमामलोहोंकी रसायन तैयारकरे। खासकर सुवर्ण और रजतकीरसायनको तैयारकर काममें लावे। इससे हठीले और पुराने तमामरोग नष्टहोकर आयुकी वृद्धिहोतीहै। अभिघात, रोग, बुढापा और मृत्यु इनके डरसे निर्मुक्तहोकर वल, इन्द्रिय और बुद्धिसे परिपूर्णहोजाताहै तथा एकहाथीके वरावर पराक्रम होकर यशस्विता, वाक्सिद्धि और श्रुतिधरता प्राप्तहोतीहै २९१

२९२ लोहरसायम्

गुग्गुलुस्तालमूली च त्रिफला खदिरं विषम्।
त्रिवृताऽलम्बुषा चैव निर्गुण्डी चित्रकं स्नुही १४१९
एषां दशपलान्भागांस्तोये पञ्चाढके पचेत्।
पादशेषन्ततः कृत्वा कषायमवतारयेत् ॥ १४२० ॥
पलद्वादशकं देयं तीक्ष्णलोहस्य चूर्णितम्।
पुराणसर्पिषः प्रस्थं शर्कराष्टपलानि च ॥ १४२१ ॥
पचेत्ताम्रमये पात्रे सुशीते चावतारिते।
प्रस्थार्द्धं माक्षिकं देयं शिलाजतु पलद्वयम् ॥ १४२२ ॥
पलात्वचोः पलार्द्धश्च विडङ्गानि पलद्वयम्।
मरिचञ्चाञ्जनं कृष्णा द्विपलं त्रिफलान्वितम् ॥ १४२३ ॥
पलद्वयन्तु कासीसं श्लक्ष्णचूर्णीकृतं बुधैः।
चूर्णं दत्त्वाऽथ मथितं स्निग्धे भाण्डे निधापयेत् १४२४
ततः संशुद्धदेहन्तु भक्षयेदक्षमात्रकम्।
अनुपानं पिबेत्क्षीरं जाङ्गलानां रसन्तथा ॥ १४२५ ॥
वातश्लेष्महरं श्रेष्ठं कुष्ठमेहज्वरापहम्।
कामलां पाण्डुरोगञ्च श्वयथुं सभगन्दरम् ॥ १४२६ ॥
मूर्च्छामोहविषोन्मादगराणि विविधानि च।
स्थूलानां कर्षणं श्रेष्ठं मेदुरे परमौषधम् ॥ १४२७ ॥

कर्पयेच्चातिमात्रेण कुक्षिं पातालसन्निभम् ।
बल्यं रसायनं मेध्यं वाजीकरणमुत्तमम् ॥ १४२८ ॥
श्रीकरं पुत्रजननं वलीपलितनाशनम् ।
नाश्नीयात्कदलीकन्दं काञ्जिकं करमर्दकम् ॥
करीरं कारवेल्लञ्च षट्ककारादि वर्जयेत् ॥ १४२९ ॥

भै.र ,र.र र को., भा. प्र., टो., च. ट ,वै द.,वै.क. र.प्र , यो.म., र.का., स्थौल्याधिकारे ।

भाषा—शुद्धगूगल, तालमूली, त्रिफला, खैरसार, शुद्धवछनाग, निसोत, गोरखमुण्डी, निर्गुण्डीकन्द अथवा संभालूकीछाल, चित्रकमूल, थूहरकादूध, येसब १०–१० पल लेकर २० प्रस्थ पानीमें पकावे । चतुर्थांशावशेष रहनेपर छानकर फोलादका वारीकरेता १२ पल, पुरानाघी १ प्रस्थ, शक्कर ८ पल डालकर विनाकलई कियेहुए तांवेके पात्रमें पकावे । अवलेहतैयारहोनेपर उतारले । स्वाङ्गशीतलहोनेपर मधु आधाप्रस्थ, शिलाजीत २ पल, इलायची और तज २–२ कर्ष, विडङ्ग मरिच, सुरमेकीभस्म, पीपल, त्रिफला, और कसीस भस्म येसब २–२ पललेकर कपड़छानचूर्णकर अवलेहमें मिलाकर घीके चिकनेवर्तनमें रख ४० रोजतक धान्यराशिमें रखदे। इसकेवाद वमन विरेचनादिकोंसे शरीरकोशुद्धकर इसमेंसे १–१ कर्ष अथवा अग्निवल देखकर मात्रा कायमकर ऊपरसे गोदुग्ध अथवा जंगलीपशुपक्षियोंका मासरस पिलावे । इससे वात, श्लेष्म, कुष्ठ, प्रमेह, ज्वर, कामला, पाण्डु, शोफ, भगन्दर, मूर्च्छा, मोह, विष, उन्माद, नानातरहके वनावटी जहर इनसवको यह नष्टकरताहै। स्थूल और मेदस्वियोंको पतलाकरनेकेलिये यह उत्तम औषधि है । अत्यन्त वढेहुए पेटको यह पातालजैसा वनादेताहै । वल, रसायन मेधा, सम्भोगशक्ति, शरीरकान्ति, पुत्रोत्पादनशक्ति इनसवको देताहै । वलीपलितका नाशकरताहै । इसमें केलाकन्द, काञ्जी, करोंदा, करीर, करेला इन छ. ककारोंका यत्नसे वर्जनकरे ॥ २९२ ॥

२९३ लोहरसायनम् (तृतीयम्)

विडङ्गसारो मेघाख्यो रक्तवह्निररुष्करः ।
हस्तिकर्णः सितार्कस्तु श्वेतवर्षासमुद्भवम् ॥ १४३० ॥
वाकुची मुण्डिका भृङ्गो राजको वृद्धदारकः ।
गुडूच्यतिवला रास्ना तालमूली शतावरी ॥ १४३१ ॥
पिण्डारकश्चैडगजो वडालः केदाराजकः।
एकैकं पलमेतेषां ग्राह्यं सुमधुकं पलम् ॥ १४३२ ॥
रसस्यैकं पलं ग्राह्यं लोहस्य पलविंशतिः ।
चत्वारिंशत्तथाऽभ्रस्य शुल्वस्याऽपि चतुष्पलम् १४३३
गन्धकस्य पलान्यष्टौ षट्पलानि मनःशिला ।
स्वर्णमाक्षिकचत्वारि षट्पलानि शिलाजतोः १४३४
त्रिफला त्रिकटूनाञ्च प्रत्येकञ्च पलत्रयम् ।
सर्वाण्येतानि सञ्चूर्ण्य घृतेन मधुना सह ॥ १४३५ ॥
स्निग्धे भाण्डे समालोड्य स्थापयित्वा विचक्षणः ।
भक्षयेत्क्रमयोगेन लोहं सर्वरसायनम् ॥ १४३६ ॥

वं.से,व ,र र ,रसायने। ध ,र र एतयोरभ्रकस्याऽभावोदृश्यते

भाषा—विडङ्गतण्डुल, नागरमोथा, लालचित्रक, भिलावे, हस्तिकर्णपलाश, सफेदआककीजड़कीछाल, सफेदपुनर्नवा, वाकुची गोरखमुण्डी, भंगरा, अमिलतासका गूदा, विधारेकीजड़, गिलोय, अतिवला (गुलसिकरी) रास्ना, तालमूली, शतावर, पिंडार, पंवाड़, विलाईलोटन, कालाभंगरा, मुलहठी, शुद्धपारा येसव १–१ पल, लोहभस्म २० पल, अभ्रकभस्म ४० पल, ताम्रभस्म ४ पल, शुद्धगन्धक ८ पल, मैनसिल ६ पल, स्वर्णमाक्षिकभस्म ४ पल, शिलाजीत ६ पल, त्रिफला और त्रिकटु ३–३ पल लेकर सवका वारीकचूर्णकर घी और मधु सवकीवरावरलेकर सवको एकजगह मिलाकर घीकेवर्तनमें रखदेवे । ४० दिनवीतनेकेवाद इसमेंसे यथोचित मात्रामें खानेसे यह तमाम रोगोंको नष्टकर दीर्घायुको करताहै ॥ २९३ ॥

२९४ लोहरसायनम् (दासरसायनम्) ४

पारदं विधिना शुद्धं पलद्वितयसम्मितम् ।
चतुष्पलं लोहचूर्णं चतुर्विंशपला सिता ॥ १४३७ ॥
मनोह्वा गन्धपाषाणं हरितालञ्च शुद्धकम् ।
कासीसं हिङ्गु कुष्ठञ्च वचोशीररसाञ्जनम् ॥ १४३८ ॥
सारं खदिरवृक्षस्य जातीफलसमन्वितम् ।
द्विपलं सूक्ष्मचूर्णन्तु सर्वेषां परिकीर्तितम् १४३९ ॥
गगनाद्विपलं कृष्णाल्लोहवत्पुटितं क्षुतात् ।
शास्त्रोक्तपृथगुद्दिष्टैः संयुज्य विधिनोचितम् ॥१४४० ॥
त्रिंशति त्रैफले तोये प्रस्थेन सह सर्पिषा ।
शृङ्गवेररसप्रस्थं निष्काथ्यं वक्ष्यमाणकैः ॥ १४४१ ॥
त्रिवर्णोदितचित्रञ्च चास्थिसंहारसूरणम् ।
वर्षाजातं सगोधूमभूमिकूष्माण्डतण्डुलाः ॥ १४४२ ॥
शोभाञ्जनं तालमूली मोरटं शङ्खपुष्पिका ।
पृथगष्टपलश्चैषां वारिद्रोणे विपाचयेत् ॥ १४४३ ॥
अष्टभागावशिष्टेन कषायं कारयेत्सुधीः ।
मधुनः पलानि द्वात्रिंशत्क्षिपेत्तत्र सुशीतले ॥१४४४॥
त्रिकटु त्रिफला सिन्धु विडं सौवर्चलन्तथा ।
टङ्कणो यावशूकश्च सुरदारुपरम्पराः ॥ १४४५ ॥
अम्लवेतसमृद्वीका महाद्रुमधुयष्टिकाः ।
शृङ्गी दुरालभा मुस्तं विडङ्गं रक्तचन्दनम् ॥ १४४६ ॥
जीरकञ्च सधान्याकं पलार्द्धं चूर्णकं पृथक् ।
दासेनेदं पुरा प्रोक्तं नराणां हितकाम्यया ॥ १४४७ ॥
न चाऽत्र परिहारोऽस्ति विहाराहारयन्त्रणे ।
अन्नपानानि सर्वाणि भक्ष्यभोज्यानि यानि च ॥१४४८॥
तानि प्रकृतिभेदज्ञो बुद्धिपूर्वं प्रदापयेत् ।
सर्वव्याधिहरश्चैतत्स्वस्थाऽस्वस्थहितं सदा ॥१४४९॥

वं से रसायने।

भाषा—विधिपूर्वकशुद्धकियाहुआपारा २ पल, लोहभस्म ४ पल, शक्कर २४ पल, शुद्धमैनसिल, गन्धक और हरिताल, कसीसभस्म, भुनीहींग, कुठ, वच, खस, रसौत, खैरसार, जाय-

फल २–२ पल लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्ज-लीमें मिलावे। लोहेकेप्रकारसे कीहुई कालेअभ्रककीभस्म २ पल, त्रिफलाकाकाढ़ा ३० पल, पुरानाघी, और अदरखकारस १–१ प्रस्थ, स्याह–सफेद और लालचित्रक, हड़जोड़, सूरण, इटसिट, गेंहू, भुईकोंहळा, साठीचावल, सहिजनकीछाल, तालमूली, मोरट (लताकरंज या मोरवेल), शङ्खपुष्पी येसव ८–८ पल लेकर सबको जवकुटकर एकद्रोणपानीमें पकावे। अष्टभागावशेष रहनेपर छानकर पूर्वद्रवमें मिलाकर पकावे। लेह तैयारहोनेपर उतारकर त्रिकटु, त्रिफला, सैन्धव, विड, सञ्चल, भुनासुहागा, यवक्षार, देवदारुकेफल, अम्लवेत, द्राक्ष, सोंठ, मुलहठी, काकडासींगी, जवास, नागरमोथा, विडङ्ग, लालचन्दन, जीरा, धनिया येसव २–२ कर्पलेकर मिलावे। एकदम ठढाहोनेपर ३२ पल मधुमिलाकर ४० दिनतक धान्यराशिमें रख निकाल कर रखछोड़े। इसमेंसे यथाग्निवल मात्रा कायमकर खानेसे यह समस्तव्याधियोंको नष्टकर बुढापेको दूरकरताहै। रोगी और निरोगी दोनोंकेलिये हितकारकहै ॥ २९४ ॥

२९५ लोहरसायनम् (पञ्चमम्)

तत्सिद्धं सिद्धनाथेन निर्मितं सत्यहेतुना ।
आमवातादिनाशाय लिख्यते चाधुनेरितम् ॥१४५०॥
विडङ्गं नागरं धान्यं गुडूचीं जीरकद्वयम् ।
पलाशवीजं कोलञ्च पिप्पलीं मुस्तकन्तथा ॥ १४५१ ॥
त्रिवृच्च त्रिफला दन्ती रालकं वृहतीद्वयम् ।
चविका ग्रन्थिकं चित्रं सवचं वृद्धदारकम् ॥ १४५२ ॥
पञ्चायसां मृतानाञ्च प्रत्येकं तद्द्विकार्पिकम् ।
आमवातघ्नचूर्णञ्च यथाविधि निषेवितम् ॥ १४५३ ॥
२ तस्मिन्नेव पाठे श्वासादिरोगे द्वितीयः प्रक्षेपः—
शिरः शूलमुखश्वासकफपित्तापनुत्तये ।
लिख्यते चाधुना दिव्यं रसायनमनुत्तमम् ॥ १४५४ ॥
शर्करा मधुकं द्राक्षा मुशली त्रायमाणकम् ।
वासा गुडूची कालिङ्गं व्योषञ्च त्रिफला त्रिवृत् १४५५
दन्ती क्रिमिहरं चूर्णं वृद्धदारं द्विकार्पिकम् ।
मृदुपाके विनिःक्षिप्य सम्यक् सिद्धं समाचरेत् १४५६
सेवितं हरते नित्यं रक्तपित्तं सुदारुणम् ।
३ पूर्वस्मिन्पाठे प्लीहादिरोगे तृतीयः प्रक्षेपः—
प्लीहोदरं यकृद्गुल्मं शस्त्रक्षाराग्निभिः विना ॥ १४५७ ॥
विनाशाय प्रयोज्यानि चूर्णानीमानि देहिनाम् ॥
कन्दं कापालिका चव्यं विडङ्गं सवृहद्दलम् ॥ १४५८ ॥
शरपुङ्खा च पाठा च चित्रकं समहौषधम् ॥
पृथगर्द्धपलां मात्रां क्षिपेल्लोहरसायने ॥ १४५९ ॥
लवणानि च सर्वाणि सक्षारं वृद्धदारकम् ॥
दीप्यकञ्च प्रयुञ्जीत पाकार्थमभयासुरी ॥ १४६० ॥
प्लीहोदरविनाशाय कर्पकर्पं पृथक्पृथक् ॥
मानेन खण्डकर्णेन मूरणेनाऽग्निकं पुनः ॥ १४६१ ॥

४ पूर्वस्मिन्नेव पाठे राजयक्ष्मणि चतुर्थः प्रक्षेपः—
राजयक्ष्मणि श्वासे च कासे रक्तोल्वणे हितम् ।
महौषधं सतालीसं काकणं नागकेशरम् ॥ १४६२ ॥
जीवन्तीमभयां मूर्द्धा सर्वाभ्यो द्विगुणान्तथा ।
शर्कराञ्च क्षिपेत्तत्र गुडूचीसत्त्वमेव च ॥ १४६३ ॥

व.से , र का , उदररोगे। रसकामधेनौ तृतीय एव प्रक्षेपोऽस्ति सम्पूर्णपाठो नाऽस्ति।

भाषा—विडङ्ग, सोंठ, धनिया, गिलोय, स्याहसफेदजीरा, पलाशकेबीज, पकेबेर, पीपल, नागरमोथा, निसोत, त्रिफला, दन्तीमूल, सफेदराल, भटकटैया, वनभाटा, चव्य, पिपलामूल, चित्रकमूल, वच, विधारेकीजड़ येसव १–१ पललेकर जवकुटकर अठगुने पानीमें पकाकर चतुर्भागावशिष्टरहनेपर छानकर ३६ कर्प शक्कर मिलाकर पाककरे। चाशनी तैयारहोनेपर कान्त, फोलाद, सुवर्ण, चादी और ताम्रभस्म तथा अलम्वुषादिचूर्ण (गोरखमुण्डी, गोखरू, गिलोय, विधारा, पीपल, निसोत, नागरमोथा, वरुण, पुनर्नवा, त्रिफला और, सोंठ समभागकाचूर्ण) येसव २–२ कर्पलेकर वारीकचूर्णकर अच्छीतरह मिलाकर रखछोड़े। ४० दिनवीतनेकेबाद इसमेंसे अग्निवलदेखकर ३ माशेसे आधेतोलेतक लेवे। औषधजीर्णहोनेपर रोगोचित पथ्यकेसेवनकरनेसे आमवात नष्टहोताहै ॥ १ ॥ इसीहिसाबसे लेह वनाकर शक्कर, मुलहठी, द्राक्ष, मुसली, त्रायमाण, अडूसा, गिलोय, इन्द्रजव, त्रिकटु, त्रिफला, निसोत, दन्तीमूल, विडङ्ग, विधारा पञ्चलोहभस्म २–२ कर्पलेकर वारीकचूर्णकर लेहमें मिलाकर पूर्ववत् ४० दिनवीतनेकेवाद यथाग्निवलमात्रालेकर पथ्य सेवनकरनेसे शिर शूल, मुखरोग श्वास, कफ और पित्तकृतव्याधिया तथा भयङ्कररक्तपित्त नष्टहोताहै ॥ २ ॥ इसीतरह पूर्वलेहमें सूरण, कपूरकाचरी, चव्य, विडङ्ग, कायफल, शरपुङ्खकीजड़, पाठामूल चित्रक, सोंठ और पाचोंलोहोंकीभस्म २–२ कर्प, पाचोंनमक, सज्जी, यवक्षार, सुहागा, विधारेकीजड़, अजवाइन हर्रे, सरसों, मानकन्द, खण्डकर्ण (सरडोकाकन्द म०) येसव १–१ कर्प मिलाकर रखछोड़े। चालीसदिनकेवाद मात्राकायमकर खानेसे और उचितपथ्यपालनसे प्लीहा, उदर, यकृत्, औरगुल्मरोग येसव शस्त्र–क्षार और अग्निकर्मकेविना अच्छेहोतेहै ॥ ३ ॥ इसीतरह पूर्वलेहको द्विगुणशक्करसे तैयारकर सोंठ, तालीसपत्र, काकनज यू०, नागकेशर, जीवन्ती, हर्रे, आवजोश येसव २–२ कर्ष और गिलोयसत्त्व २८ कर्ष मिलाकर ४० रोजतक रखकर यथाग्निवलमात्रा कायमकर सेवनकरनेसे तथा योग्यपथ्य पालनेसे श्वास, कास, रक्तागमनऔर वढाहुआ राजयक्ष्म दूरहोताहै २९५

२९६ लोहरसायनम् (षष्ठम्)

त्रिफलायाः प्रकुर्वीत प्रत्येकं पलसप्तकम् ।
वारिण्यष्टगुणे पक्त्वा पञ्चभागेन शेषयेत् ॥ १४६४ ॥
घदशरावास्तु दुग्धस्य हविषः पलपञ्चकम् ।
पुटितादायसः पञ्च शुद्धाऽभ्रस्य पलद्वयम् ॥ १४६५ ॥

विडङ्गं त्रिफलाजीरद्वयं त्रिकटु चूर्णितम् ।
लोहचूर्णसमं ग्राह्यं क्रमवृद्धं ततः पचेत् ॥
ग्रहणीगदमत्युग्रं हन्त्येतद्वातसम्भवम् ॥ १४६६ ॥

वं. से , र. का , वातग्रहण्याम् ।

भाषा—हरड़, वहेड़ा, आवला ७ पल लेकर अठगुने पानीमें पकावे। पञ्चभागावशिष्टको छानकर दूध ३ प्रस्थ, घी ५ पल, लोहभस्म ५ पल, अभ्रकभस्म २ पल, विडङ्ग ५ पल, त्रिफला ६ पल, स्याहसफेदजीरा ७ पल, त्रिकटु ८ पल लेकर सवकावारीकचूर्णकर इकट्ठेमिलाय पकावे । लेहतैयार होनेपर किसी चिकनेवर्तनमें रखछोड़े । इसमेंसे अग्निवल देखकर मात्रा कायमकर सेवनकरनेसे यह वातजसङ्ग्रहणीको नष्टकरताहै २९६

२९७ लोहरसायनम् (सप्तमम्)

विभीतकाऽभये धात्री प्रत्येकन्तु पलाष्टकम् ।
वारिण्यष्टगुणे साध्यं षडङ्गेनाऽवतारिते ॥ १४६७ ॥
अयःपलानि पञ्चैव पयसोऽष्टौ शरावकान् ।
सर्पिषो दशपलान्यत्र दद्याल्लोहं विपाचयेत् ॥१४६८॥
त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं प्रत्येकन्तु द्विकार्षिकम् ।
विडङ्गं भद्रमुस्तञ्च जीरकद्वयमेव च ॥ १४६९ ॥
पृथगर्धपलं ग्राह्यं कुर्यात्पाकन्तु मध्यमम् ।
पैत्तिके ग्रहणीरोगे योजयेन्मतिमान्भिषक् ॥ १४७० ॥

वं से , र. का , पित्तग्रहण्याम्।

भाषा—हरड़, वहेड़ा, आवला ८–८ पल लेकर जवकुटकर अठगुने जलमें पकावे । छठाभाग वाकीरहनेपर उतारकर छानले फिर इसमें लोहभस्म ५ पल, दूध ४ प्रस्थ, घी १० पल, त्रिकटु, त्रिफला, विडङ्ग, नागरमोथा, स्याहसफेदजीरा येसव २–२ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर पूर्वद्रवमें मिलाकर मध्यमपाक-करे । ४० दिनवाद प्रकृतिके अनुसार मात्रा कायमकर सेवन-करनेसे पित्तजसङ्ग्रहणी नष्टहोतीहै ॥ २९७ ॥

२९८ लोहरसायनम् (अष्टमम्)

प्रत्येकं षट्पलं धात्री शिवा वैभीतकत्वचम् ।
उदकानां शरावैस्तु षड्विंशत्या विपाचयेत् ॥ १४७१ ॥
पञ्चभागावशिष्टेन लोहं पञ्च पलानि च ।
दधि दत्वा च तन्मानं खरपाकं विपाचयेत् ॥ १४७२ ॥
त्रिकटु त्रिफला वह्नि विडङ्गं भद्रमुस्तकम् ।
चूर्णं लोहसमञ्चाऽत्र प्रक्षिपेदवतारिते ॥
श्लैष्मिकं ग्रहणीरोगं हन्यादेतद्रसायनम् ॥ १४७३ ॥

वं से., र का., श्लेष्मग्रहण्याम् ।

भाषा—आंवले, हरें और वहेड़े ६–६ पल लेकर १३ प्रस्थ पानीमें पकावे । पञ्चभागावशिष्ट रहनेपर छानकर लोहभस्म और दही ५–५ पल डालकर खरपाककरे । ठढाहोनेपर उसमें त्रिकटु, त्रिफला, चित्रकमूल, विड्ङ्ग, नागरमोथा इनका वारीक चूर्ण लोहकी वरावर डालकर रखछोड़े । इसमेंसे अग्निवल देखकर उचितमात्रासे खानेसे यह श्लैष्मिक ग्रहणीरोगको नष्टकरताहै ॥

२९९ लोहरसायनम् (नवमम्)

लौहं पूर्वं पुटेच्छुद्धं गृहीत्वा पलपञ्चकम् ।
पुनर्नवावरीमूलं त्रिफला पुटितं पुनः ॥ १४७४ ॥
वराचतुर्गुणं लोहात्पचेदष्टगुणे जले ।
सप्तभागावशेषेण द्विशरावं पयः क्षिपेत् ॥ १४७५ ॥
शतावरीरसञ्चाऽपि लोहतुल्यं प्रदापयेत् ।
पलानि दश चाज्यस्य मृदुपाकेऽवतारिते ॥ १४७६ ॥
द्विजीरकं विडङ्गञ्च पलाशबीजमेव च ।
त्र्यूषणं त्रिफला चव्यं चूर्णमेषां पयःसमम् ॥
वातपित्तोत्तरं हन्ति ग्रहणीगदमुत्कटम् ॥ १४७७ ॥

वं. से , र. का., वातपित्तग्रहण्याम् ।

भाषा—शुद्धकरकेभस्मकियाहुआ लोह ५ पललेकर पुन-र्नवा, शतावर, त्रिफला इनप्रत्येककेस्वरसोंसे मर्दनकर १–१ पुट दे । फिर २० पल त्रिफलाको अठगुनेपानीमें डाल सप्तभागा-वशिष्टक्काथकर छानकर पूर्वोक्त लोहभस्म ५ पल, दूध १ प्रस्थ, शतावरीकास्वरस ५ पल, घी १० पल डालकर मृदुअग्निसे पकावे । कल्ककीस्निग्धगोलिया वननेलगें तव उतारले । फिर उसमें स्याहसफेदजीरा, विडङ्ग, पलाशकेवीज, त्रिकटु, त्रिफला और चव्य इनकाचूर्ण १ प्रस्थ मिलाकर रखछोड़े । ४० दिन वीतनेकेवाद यथाग्निवल मात्रा नियतकर खानेसे वातपित्तप्रधान भयङ्करग्रहणीरोग दूरहोताहै ॥ २९९ ॥

३०० लोहरसायनम् (दशमम्)

अष्टादश पलान्यत्र त्रिफलाया विपाचयेत् ।
सलिले द्व्याढके चास्मिन्नवभागाऽवशेषितम्१४७८
विपचेत्पूर्ववल्लोहं पुटितं वक्ष्यमाणकैः ।
वरायाः केशराजस्य चार्द्रकस्य रसेन च ॥ १४७९ ॥
एतत्पञ्चपलं ग्राह्यं सर्पिर्दशपलानि च ।
शतावरीरसस्याऽष्टौ नारिकेलोदकस्य च ॥ १४८० ॥
पलार्द्धं मरिचं कृष्णा नागरं पलसम्मितम् ।
षड्विंशमाषकं चूर्णं त्रिफलायाःप्रकल्पयेत् ॥ १४८१ ॥
त्रिचत्वारिंशता माषैरधिकं चूर्णितं पलम् ।
चित्रकस्य विडङ्गस्य पचेत्पाकवरं ततः ॥
वातश्लेष्मोत्तरे चैव कुक्षिरोगे तथा हितम् ॥ १४८२ ॥

व. से , र का , वातश्लेष्मग्रहण्याम् ।

भाषा—दोआढकपानीमें १८ पल त्रिफलाको पकाकर नवभागावशिष्टकर छानले फिर त्रिफला, कालाभंगरा, अदरख इनके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे भावनादीहुईलोहभस्म ५ पल, घी १० पल, शतावरकारस और नारियलकाजल ८–८ पल, मरिच और पीपल २–२ कर्ष, सोंठ १ पल, त्रिफला २६ माशे, चित्रककीजड़ ४३ माशे, विडङ्ग १ पल इनसवका कपड़-छानचूर्ण डालकर खरपाककरे । ४० दिनवीतनेकेवाद यथाग्नि-वलमात्रा नियतकर खानेसे वात और श्लेष्माधिक उदररोग नष्टहोताहै ॥ ३०० ॥

३०१ लोहरसायनम् (दासरसायनम्) ११

मूर्च्छितं पुटितं शुद्धमयसः पलपञ्चकम।
शतावरीरसे सम्यक् पुटितं पञ्चधा पुनः ॥१४८३॥
अष्टौ पलानि गृह्णीयात्त्रिफलायाः पृथक्पृथक्।
सलिलस्यार्मणे पक्त्वा पादशिष्टेऽवतारिते ॥ १४८४॥
द्वात्रिंशच्च पलान्यत्र पयसः सर्पिषो दश।
मध्यपाकं ततः पक्त्वा चैषां कर्षद्वयं पृथक् ॥१४८५॥
त्रिकटुं त्रिफलां वह्निं विडङ्गं भद्रमुस्तकम्।
पलाशस्य च बीजानि क्षिप्त्वा कुर्याद्रसायनम् ॥
पित्तश्लेष्माधिकञ्चैव निहन्याद्ग्रहणीगदम् ॥ १४८६ ॥

वं.से ,र का , पित्तश्लेष्मग्रहण्याम्।

भाषा—अयस्कृतिके प्रकारसे मारेहुए ५ पलशुद्धलोहमें शतावरीके अङ्गस्वरससे ५ भावनाएं देवे। फिर हर्रे, बहेड़ा, आवला ८–८ पल लेकर एकद्रोणपानीमें पकावे। चतुर्थांशावशेषरहनेपर छानकर दूध ३२ पल, घी १० पल और पूर्वोक्तलोहभस्म ५ पल डालकर पकावे। मध्यपाकहोनेपर त्रिकटु, त्रिफला, चित्रकमूल, विडङ्ग, नागरमोथा और पलाशकेवीज २–२ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर अच्छीतरह मिलाकर रखछोड़े। ४० दिनवीतनेकेवाद यथाग्निवलमात्रा निर्धारितकर सेवनकरनेसे पित्त और श्लेष्मप्रधानग्रहणीरोग नष्टहोताहै ॥ ३०१ ॥

३०२ लोहरसायनम् (अयोरजीयम्) १२

त्रिफलायास्तु कुडवं पिप्पलीकुडवं तथा।
विडङ्गमरिचानान्तु द्वे द्वे चैव पले स्मृते ॥ १४८७ ॥
पलं पलञ्च कुर्वीत दन्तीचित्रकयोरपि।
एलातः पिप्पलीमूलादष्टावष्टौ पलानि च ॥ १४८८ ॥
शृङ्गवेरपले द्वे च गव्यात्पञ्च पलानि च।
शेषाण्यर्द्धपलानि स्युर्यानि तानि निबोध मे १४८९
रास्ना बला गोक्षुरकं मधुकं देवदारु च।
वचा सातिविषा पाठा मुस्ता कटुकरोहिणी ॥१४९०॥
कट्फलं शारिवे द्वे च श्यामा भल्लातकानि च।
पुनर्नवं सतेजोह्वं त्वक् च पत्रं शतावरी ॥ १४९१ ॥
निदिग्धिकाव्याघ्रनखं मञ्जिष्ठा कुशकं बला।
त्रिफला त्रिवृता भार्गी कुटजस्य फलत्वचः ॥१४९२॥
एतदाहृत्य संभारं द्विस्तावत्स्यादयोरजः।
तथैकध्यीकृतं युक्त्या लेहयेन्मधुसर्पिषा ॥ १४९३ ॥
क्षीरञ्चाऽनु पिवेद्युक्त्या निरन्नं सेवयेत्सदा।
अयोरजीयमित्येतत्ख्यातं सिद्धरसायनम् ॥ १४९४ ॥
संवत्सरप्रयोगेण शतवर्षाणि जीवति।
वर्षद्वयेन मनुजो द्वे जीवेच्छरदां शतम् ॥ १४९५ ॥
निहन्याच्छ्वयथुं घोरं वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा।
पाण्डुरोगमथार्शांसि मन्दमग्निं क्रिमीनपि ॥ १४९६ ॥
भगन्दरं कामलाञ्च कुष्ठानि जठराणि च।
सप्लीहानमपस्मारं शूलानि परिकीर्तिकाम् ॥ १४९७ ॥
अतिसारं प्रमेहांश्च क्षतं श्वासं क्षयन्तथा।
यस्मिन्यस्मिन्विकारे तु योगोऽयं सम्प्रयुज्यते॥१४९८॥
तं तं निहन्ति वै रोगं देवारीन् केशवो यथा।
अनुप्रयोगो लाजानां सक्तुतो मधुना सह ॥ १४९९ ॥
क्षीराऽनुपानलेह्योऽयं दिवसान सप्त पञ्च वा।
अर्शःस्वामातिसारेषु विविधस्यात्परिकर्तने ॥१५००॥
ततः क्षीणेषु कासेषु ज्वरेषु विषमेषु च।
वर्षात्तसञ्चितः श्वयथुरस्मान्मासेन शाम्यति १५०१
रसायनप्रयोगाच्च पूर्वोद्दिष्टाद्यथाविधि।
शालीन् सषष्टिकांश्चैव रसान्नविकृतींस्तथा ॥१५०२॥
क्षाराम्ललवणांश्चाऽपि गोधूमांश्च विवर्जयेत।
आगन्तुश्वयथुर्वाऽपि यो वा स्याट्टोपसम्भवः १५०३
लङ्घनैश्च विलेपैश्च क्षीरसेकैः प्रशाम्यति।
अविपाको ज्वरच्छर्दी दौर्बल्यं परिकीर्तिका ॥
श्वासातिसारो हिक्का च शूनस्योपद्रवाः स्मृताः १५०४

मे स, श्वयथौ।

भाषा—त्रिफला और पीपल ४–४ पल, विडङ्ग और मरिच २–२ पल, दन्ती और चित्रकमूल १–१ पल, इलायची और पिपलामूल ८–८ पल, अदरख २ पल, गायकाघृत ५ पल, रास्ना, बला, गोखरू, मुलहठी, देवदारु, वच, अतीस, पाठा, नागरमोथा, कुटकी, कायफल, स्याहसफेदसारिवा, अनन्तमूल, भिलावे, पुनर्नवा, तेजवल, तज, पत्रज, शतावर, भटकटैया, वघनहा, मजीठ, कुशकीजड़ और बला २–२ कर्ष, निसोत, भारङ्गी, कुरैयाकीछाल और वीज ३–३ पल लेकर वारीकचूर्णकर लोह अयस्कृति सबसे दूनीमिलाय १–२ दिन खरलकर रखछोड़े। इसमेंसे यथाग्निवल मात्रा कायमकर मधु और घीकेसाथ लेकर दूधपीवे। परिपाकहोकर भूखलगनेपर केवलदूधलेवे। इसका १ वर्षतक प्रयोगकरनेसे १०० वर्षतक निरामयहोकरजीताहै। दोवर्षके सेवनसे २०० वर्षकी आयु होतीहै। रोगनिर्हरणार्थ सेवनकरनेसे भयङ्करशोथ, पाण्डु, अश्मरी, मन्दाग्नि, क्रिमि, भगन्दर, कामला, कुष्ठ, उदर, प्लीहा, अपस्मार, शूल, पेटकाकटाव, अतिसार, प्रमेह, उरःक्षत, श्वास, क्षय इनसबको यह नष्टकरताहै। इनके अतिरिक्त जिसकिसीरोगमें इसका प्रयोग कियाजाय उसे यह शीघ्रनष्टकरताहै। लाजाके सत्तू, मधु और दूध इनके लेहकेसाथ ७ या ५ रोजतक लेनेसे अर्श, आमातिसार, पेटकाकटाव, क्षीणता, कास और विषमज्वर नष्टहोतेहैं। एकवर्षका सञ्चितशोथ एकमहीनेमें अच्छाहोताहै। रसायनप्रयोगमें चावल, साठी, रस, अन्नकी वनावटें, क्षार, अम्ल, लवण और गेंहू इनको छोड़दे। इसमें दैववशात् आगन्तु शोथ आजायतो लङ्घन, लेप और दूधकेसेकसे निवृत्तहोताहै। शोथी आदमीको अविपाक, ज्वर, वमन, दुर्बलता, पेटकाकटाव, श्वास, अतिसार, हिक्का ये उपद्रव होतेहैं ॥ ३०२ ॥

३०३ लोहरसायनम् (त्रयोदशम्)

निरग्निमारितं कान्तं त्रिस्त्रिवेलं विभावयेत्।
छिन्ना व्योषं निशा वाला निर्गुण्डी कदलीश्वरी १५०५

दाडिमी विषभूनागौ पलाशालम्बुषे वरी।
कुरण्टी कदलीकन्दवब्बूलफलगोक्षुराः ॥ १५०६ ॥
गाङ्गेरुकी च पातालगरुडस्तद्रसः पृथक्।
लोहपात्रे च सञ्चूर्ण्य तल्लोहं मधुसर्पिषा ॥ १५०७ ॥
लीढ्वा पिबेद्वराक्वाथमनुपानं सुखावहम्।
मासत्रयं तथा क्षौद्रपिप्पलीसंयुतं लिहेत् ॥ १५०८ ॥
कासं श्वासञ्च मन्दाग्निं शोथं वातञ्च कामलाम्।
छिन्नासत्त्वमधून्मिश्रं ग्रहणीं तापजां रुजम् ॥ १५०९ ॥
अण्डवृद्धिञ्च रक्ताऽस्रं मूत्ररोगान्विशेषतः।
सेवितं सर्वरोगघ्नमिदं लोहरसायनम् ॥
पुत्रपौत्रदमायुष्यं वलवर्णप्रसादनम् ॥ १५१० ॥

वै., द. रसायने।

टि०—अय पाठ स्वयमग्निरसात्सदृशोऽस्ति परन्तु निर्गुण्डीविष-भूनागगाङ्गेरुकीणा विशिष्टभावनायुक्तत्वात्पृथक्त्वेन सङ्गृहीत, निम्ना-गाङ्गेरुकीश्वर्योऽन्तर्भावयोग्यतामावहन्त्योऽपि विषभूनागयो विजातीय-द्रव्यत्वात्तदन्तर्भावोऽनुचित इति विद्वद्भि विभावनीयम् ॥

भाषा—स्वयमग्निलोहकी प्रक्रियासे मारेहुए कान्तलोहको गिलोय, त्रिकटु, हल्दी, अड़ूसा, निर्गुण्डी, केला, इसरोड, अनार, वछनाग, केंचुए, पलाशका अङ्गस्वरस, गोरखमुण्डी, शतावर, पियावासा, कदलीकन्द, बबूलकीफली, गोखरू, गुल-सिकरी, पातालगारुडी इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३-३ वार भावनाएं देकर रखछोड़े। इसमेंसे यथाग्निवल मात्रा नियतकर मधु और घीकेसाथ सेवनकर त्रिफलाकाक्वाथ पीने तथा पथ्यपालनेसे ३ महीनेमें कास, श्वास, मन्दाग्नि, शोथ, वातविकार और कामला इनसवको यह नष्टकरताहै। जिसे मधु और घीका अनुपान अनुकूल न हो वह पीपल और मधुके-साथ सेवनकरे। गिलोयसत्त्व और मधुकेसाथसेवनकरनेसे ग्रहणी और ज्वरकादाह शान्तहोताहै। चिरकालतक सेवनकरनेसे अण्डवृद्धि, रक्तपित्त और मूत्ररोग येसव नष्टहोकर वल, वर्ण प्रसाद और पुत्र पौत्र तथा आयुष्यको देताहै ॥ ३०३ ॥

३०४ लोहरसायनम् (चतुर्दशम्)

लोहाऽभ्रसूतकशिलाजतुकान्तलोह-
चक्राङ्गचूर्णसहितं विषचूर्णमत्ति।
यः सन्ततं घृतमधूपहितं मनुष्यः
स स्याज्जरामरणरोगभयैर्विमुक्तः १५११

र. (मा.) रसायने।

भाषा—लोह, अभ्रक, और पारदभस्म, शुद्धशिलाजीत, कान्त-लोहभस्म, गिलोय, शुद्धवछनाग येसव समभाग लेकर वारीक-चूर्णकर एकजगह मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्ती-तक मात्रा घी और मधुकेसाथ मिलाकर निरन्तर सेवनकरनेसे वुढ़ापा, मृत्यु और रोग इनकेभयसे निर्मुक्तहोताहै ॥ ३०४ ॥

३०५ लोहसत्त्वम्

श्वेतं काचञ्च सौभाग्यं माध्वीकं मधु सिक्थकम्।
सावनं सर्षपखलिं पुराणगुडमित्यपि ॥ १५१२ ॥
कुडवानि दशाद्यात्प्रत्येकं तानि सर्वशः।
द्विगुणेऽम्बुनि निःक्वाथ्य लेपयोग्यञ्च साधयेत् १५१३
निरङ्गसारस्यादाय कुडवानि च सप्ततिम्।
तप्ततप्तानि पत्राणि तेन लिप्तानि सन्धमेत् ॥ १५१४ ॥
तावद्धमेद्यावदेतल्लोहलेपः समाप्यते।
चत्वारिंशत्कुडवकं श्वेतसर्जीभवं रजः ॥ १५१५ ॥
क्वाथ्यं दशगुणे तोये पट्शेषेणाऽवतारयेत्।
तथैव नवसारस्य क्षारमेवञ्च साधयेत् ॥ १५१६ ॥
सर्वं संसाधितं वस्त्रपूतं सूक्ष्मं पृथक् पुनः।
अथ तत्पक्वकूष्माण्डशकलेऽर्द्धे सुकोरिते ॥ १५१७ ॥
क्षारन्तु सर्वशः क्षिप्त्वा तत्तुल्यघटमध्यगम्।
कृत्वाऽश्वमलमध्ये तन्निखन्याद्गलपूरणात् ॥ १५१८ ॥
पिधानार्थञ्च तद्दत्तं भिन्नमेव प्रकल्पयेत्।
सपादकुडवं सोमक्षारचूर्णं विनिक्षिपेत् ॥ १५१९ ॥
मुखं पिधाय वृत्तेन दिनानामेकविंशतिम्।
घर्मे संस्थापयेत्तावत्काकपक्षः सितो भवेत् ॥१५२०॥
सिद्धं विज्ञाय गम्भीरमृत्पात्रे विनिधाय च।
आतपे शोषयेत्सप्त दिनान्यश्वमलान्तरे ॥ १५२१ ॥
संस्थाप्य मासषट्कं तु उद्धृत्य स्थापयेत्पुनः।
एकविंशदिनान्येव मुखमुद्धाटयेत्ततः ॥ १५२२ ॥
सप्त लोहस्य पत्राणामुत्तरोत्तरतः स्थितौ।
यदा तच्छेदयेद्बिन्दुस्तदा सिद्धं भवेदिति ॥ १५२३ ॥
न चेत्तदैकविंशत्या दिनानाञ्च पुनस्तथा।
विमुद्र्य स्थापयेद्युक्त्या सम्यगश्वमलान्तरे ॥१५२४॥
सिद्धे खल्लु च तल्लोहं निक्षिप्याऽतिखरातपे।
विमुद्र्य मासत्रितयं स्थापयेत्सावधानतः ॥ १५२५॥
प्रतिमासं तन्मुखं तु समुद्धाट्याऽवलोकयेत्।
ततो मयूरपुच्छानां भाजनं सम्प्रकल्पयेत् ॥ १५२६ ॥
तत्राऽयः स्थापयित्वा तु तच्चापि घटमध्यगम्।
यवकाञ्जिकतः पूर्णं तत्पात्रञ्च पिधापयेत् ॥ १५२७ ॥
मासत्रयं स्थापयित्वा सूक्ष्मखण्डं भवेदयः।
सौवीरेणैव सम्भाव्य वहुशोऽतिखरातपे ॥ १५२८ ॥
पाचयेद्भमरूयन्त्रे सत्त्वमारक्तमग्निना।
षोडशप्रहरं यावद्रक्षीयाच्छीतलञ्च तत् ॥ १५२९ ॥
तत्सत्त्वमर्धे तस्मिंस्तु द्रवसत्त्वे विमर्द्य च।
मासत्रयं पूर्ववच्च स्थाप्यमश्वमलान्तरे ॥ १५३० ॥
गृहीत्वा कान्तलोहस्य पात्रे दृढतरे शुभे।
पिष्टं निम्बूद्रवे सत्त्वं लिप्तं पलमितं पुनः ॥ १५३१ ॥
श्वेतमृत्तिकया वद्धं मुद्रितं सम्पुटञ्च तत्।
विशोष्य पञ्चकुडवशैवालस्थमुपर्यधः ॥ १५३२ ॥
इष्टिकायन्त्रतः पक्वं द्वात्रिंशत्प्रहरं क्रमात्।
लाजाकारञ्च तत्सत्त्वं सर्वरोगहरं भवेत् ॥ १५३३ ॥
अष्टमांशस्तु गुञ्जायाः सर्वगुल्मोदरापहः।
सद्यो राक्षसवद्भुङ्क्ते सर्वव्याधिनिवर्हणः ॥ १५३४ ॥

र का, उदराधिकारे।

भाषा—सफेदकाच, सुहागा, महुएकामय, मधु, मोम, सावुन, सरसोंकी खली, पुरानागुड़ येसव ४०–४० पललेकर दूना पानीदेकर औटावे। लेपकीतरह गाढाहोनेपर उतारकर रखले। फिर १७॥ प्रस्थ निरुद्वलोह (मुण्डभेद)के वारीकपत्र वनवाकर उनपर पूर्वोक्तलेपलगाय धमनकरावे, जवतक कि वहलेप समाप्त न होजाय। फिर १० प्रस्थ सफेदसज्जीको १० गुने पानीमें औटावे, छठाहिस्सा वाकीरहनेपर उतारले। इसीतरहसे १० प्रस्थ नौसादरकोभी पकाकर उतारले और दोनोंको अलग २ छानकर इनका क्षार वनाकर पकेहुए सफेदकोंहळेमें छेदकरके सवक्षार डालदे। ऊपरसे ५ पल सफेदसोमलकाचूर्ण डालकर छेदमेंसे निकालीहुई चकतीसे वन्दकर खूवमजवूत मिट्टीकेवर्तनमें कोंहळेको रख मनुष्यकेगलेतक गहरे खड्डेमें घोड़ेकी ताजीलीद केवीचमें गाड़दे, वहखड्डा ऐसे ठिकानेपर होनाचाहिये कि दिनभर धूपलगतीरहे। २२ वें दिन निकालकर उसमें कौएका-पङ्ख डुवावे, वह सफेद होजायतो सिद्धसमझे। फिर दूसरे गहरे मिट्टीकेपात्रमें रखकर कपड़मिट्टीकर सातदिन धूपमें सुखाकर पहिलेकीतरह गलेप्रमाण गहरे खड्डेमें घोड़ेकी लीदमें दवादे। छ महीनेकेवाद निकालकर फिर ताज़ीलीदमें दवावे। २१ दिनवाद मुंह उघाड़कर लोहेकेवारीक ७ पत्रोंकी तहजमाकर ऊपर एकविन्दु इसक्षारका डाले यदि सातोंपत्रोंमें छेदहोजाय तो सिद्धसमझनाचाहिये। कसररहनेपर फिर २१ रोज़ मुखमुद्रणकर ताज़ीलीदमें दवावे और फिर परीक्षणकरे। जव सिद्ध-होजाय तव मुखमुद्रणकर दूसरे लोहेके पात्रमें रखकर पूर्ववत् सावधानीकेसाथ ३ महीनेतक लीदमें गाड़दे। प्रतिमहीने उसका मुह उघाड़कर देखले कहीं वर्तनमें नुकसान न हुआहो और उसका वाष्पभी निकलजाय। तीन महीनेवाद निकालकर रखले यह द्रवसत्त्व तैयारहुआ। मोरकेपङ्खोंकी छवड़ीमें पूर्वोक्त लोहेके पत्रोंको रखकर मज़वूत घड़ेमें रखदे और जवकीकाञ्जीसे घड़ेको-भर मुंहवन्दकर ३ महीनेतकलीदमें गाड़दे तो इसलोहका वारी-कचूर्ण होजायगा। इसचूर्णको निकालकर सौवीर (काञ्जीवि-शेष) की अत्यन्तकड़ेधूपमें वहुतसी भावनाएं देकर डमरूयन्त्रमें वन्दकर १६ पहरकी कड़ी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकाल कर पूर्वोक्तद्रवसत्त्वमेंसे आधासत्त्व मिलाकर मर्दनकर घड़ेमें भर ३ महीनेतक घोड़ेकी लीदमें दवादे। तीनमहीनेकेवाद निका-लकर रखले। इसमेंसे १ पलसत्त्व निकाल कान्तलोहके मजवूत पात्रमें डालकर नीवूकारस मिलाय इकट्ठापीस समस्त पात्रपर लेपकरदे और इसपात्रको चीनीकेपात्रमें रखकर शरावसम्पुटकर अच्छीतरह सुखाकर पुरानी मोटी ईंटमें खड्डा खोद सवासेर सिवालके वीचमें इससम्पुटको रख नीचे ३२ पहरकी क्रमाग्नि दे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे संपुटको खोलकर निकाले। इसमेंसे धानकी खीलोंकी तरह कान्तभस्म निकलेगी। इसमेंसे एकरत्तीका आठवां हिस्सा देनेसे समस्तगुल्म और उदररोग नष्टहोतेहैं और राक्षसकीतरह जठराग्नि प्रदीप्त होजाताहै। असाध्य वात और कफ व्याधियोंको यह तत्काल नष्टकरताहै। कान्तलोहकीतरह इससे समस्तधातुओंकीभस्म होतीहै और वह अद्भुतकाम करतीहै ॥ ३०५ ॥

३०६ लोहसारकल्पः

आलिप्य तापीकरवीरकाभ्यां
वैश्वानरे प्रज्वलिते निधाय।
तप्तं सुतप्तं विनियोज्य तक्रे
निर्वाप्य वारान् वहुशः सुलोहम् ॥ १५३५ ॥
एभिः प्रकारैः सुमृताच्च लोहा-
चूर्णीकृताच्चाऽपि पलानि चाऽष्टौ।
सर्पिःपलं तैलपलं पलानि
चत्वारि चाष्टौ हि वरारसस्य ॥ १५३६ ॥
तक्रस्य चाम्लस्य चतुःपलानि
कर्षञ्च कर्षं पृथगौषधानाम्।
व्योषाऽजमोदाचविकाऽनलानां-
मूलं प्रदद्यादपि पिप्पलीनाम् ॥ १५३७ ॥
सिन्धुप्रसूतं सविडङ्गचूर्णं
तक्रेण हन्याद्ग्रहणीं समस्ताम्।
अर्शांसि शोथं परिणामशूलं
शूलञ्च दीप्तं तु करोति वह्निम् ॥ १५३८ ॥

र का., सद्ग्रहण्यधिकारे।

भाषा—फौलादके वारीकपत्रोंपर सोनामाखी और सफे-दकनेरकीजड़को पानीमें पीसकर लेपकरे। सूखनेपर खट्टी-छाछमें वुझावे। ऐसे जवतक पत्रोंका चूरा न होजाय तवतक करे। यहलोहचूर्ण ८ पल, घी १ पल, तैल १ पल, त्रिफलाका-स्वरस १२ पल, खट्टीछाछ ४ पल, सोंठ, मिर्चे, पीपल, अज-मोद, चव्य, चित्रककीजड़, पिपलामूल, सैन्धव, विडङ्ग इन-सवका वारीकचूर्ण १–१ कर्ष लेकर सवको मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे यथाशक्ति मात्रालेकर छाछपीनेसे सवप्रकारकी ग्रहणी, ववासीर, शोथ, परिणामशूल, साधारणशूल, मन्दाग्नि इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ३०६ ॥

३०७ लोहसिन्दूरम् (लोहवेधसिन्दूरम्) १

सूताऽभ्रकं विशुद्धञ्च हयमारैः सुमर्दितम्।
त्रीणि पत्राणि नागस्य तत्पिष्टं लेपयेच्छुभम् ॥ १५३९ ॥
पुटितं म्रियते तद्वट्टङ्कणं मधु योजितम्।
लेपयेत्तारपत्राणि तिन्तिडीतगराम्भसा ॥ १५४० ॥
दशवारेण सिन्दूरं जायते सर्वरोगजित्।
हंसपादी जपापुष्पं ताम्बूलं खदिरान्वितम् ॥ १५४१ ॥
खरैः क्रकरकै र्वर्णै रेतैः शुद्धरसं क्रमात्।
गन्धद्विगुणसंयुक्तं द्वौद्वौ वारौ प्रमर्दयेत् ॥ १५४२ ॥
निक्षिप्य काचकूप्याञ्च तन्मुखं सन्निरोधयेत्।
एकविंशति यामेषु वालुकायन्त्रपाचनात् ॥
शुद्धं भवति सिन्दूरं सर्वलोहेषु वेधयेत् ॥ १५४३ ॥

र क यो, सर्वरोगे।

भाषा—शुद्धपारा और अभ्रकसमभाग लेकर लालकनेरके पुष्पस्वरससे मर्दनकर इनकी वरावरके नागके तीन पत्रवनवाकर उनपर लेपकर सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटकी आंचदे तो इसकीभस्महोजायगी। इसभस्ममें वरावरका सुहागा और मधुदेकर इमली और तगरकेपानीसे पीसकर भस्मकेवरावर चांदीकेपत्रोंपर दशमाश लेपकर सुखाकरगजपुटकी आंचदे। इसतरह १० वारलेपदेदेकर आंचदेनेसे सिन्दूरसदृशभस्म होगी। फिर इसकी वरावर शुद्धपारा डालकर लालडंडीका पकाहुआ-हंसराज, ओड्हुलकेफूल, कत्थाचूना लगाहुआपान, चव्य और लालकनेरकेफूल इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर उससे द्विगुण शुद्ध गन्धक मिलाकर हंसराजवगैरहके स्वरससे २–२ दिन मर्दनकर सुखाय नीलवर्णकज्जलीकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें डालकर मुंहवन्दकर वालुकायन्त्रमें रखकर २१ पहरकी क्रमाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। यह रोगोचित अथवा समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्तरोगोंको नष्टकरताहै। धातुवादसम्प्रदायसे समस्तलोहोंके रङ्गको वदलताहै ॥ ३०७ ॥

३०८ लोहसिन्दूरम् (लोहसुन्दरः) २

सूतभस्म मृतलोहगन्धकौ
भागवर्द्धितमिदं विनिःक्षिपेत्।
दीर्घनालदृढकूपिकोदरे
मृत्स्नया च परिवेष्ट्य तां क्षिपेत्॥१५४४॥
चुल्लिकोपरि च कूपिकामुखे
प्रक्षिपेच्च वरशाल्मलीद्रवम्।
त्रैफलञ्च सगुडूचिकारसं
पाचयेत्तु मृदुवह्निना दिनम्॥ १५४५ ॥
स्वाङ्गशीतलमिदं प्रगृह्य च
त्र्यूषणार्द्रकरसेन भावयेत्।
लोहसिन्दुररसोऽयमीरितः
शुष्कपाण्डुविनिवृत्तिदः परः॥ १५४६ ॥

र चि., नि. र., रसायनसं., र सु., र. क., र दी., र का., यो. म., वै. चि., र. मृ., पाण्ड्वधिकारे। र दी. त्रियोनिरितिनाम।

भाषा—पारद और लोहभस्म, शुद्ध गन्धक क्रमवृद्धभागसे लेकर एकदिन शुष्क मर्दनकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई लम्वीनालकी आतशीशीशीमें डालकर आधेतक सेमलकाद्रव भरदे और वालुकायन्त्रमें रख वहुतमन्द आंचसे पकावे। सेमलकाद्रव सूखनेपर त्रिफला और गिलोयकारस भरके पकावे। तमामद्रव सुखजानेपर आचवन्दकरदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर त्रिकटु और अदरखकेरससे १–१ रोज़ मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शुष्कपाण्डुको दूरकरताहै ३०८

३०९ लोहसुन्दररसः

गन्धसूतकलवङ्गदलैलात्वङ्नवायसकणाह्विविषाणाम्।
गोलिका गुडकृता कफहन्त्री क्षुत्प्रवोधजननी क्रमयुक्ता॥
कूष्माण्डं काञ्जिकं तैलं शाकं लावणिकं चणाः।
वर्जनीया रसेऽमुष्मिन् गुटिका चणकाकृतिः॥१५४८॥

र. (मा)., अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लौंग, पत्रज, इलायची, तज, नवायस, पिपलामूल, शुद्धवछनाग सव समभाग लेकर वरावरकेगुड़में मिलाय चनेकीवरावर गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली लेनेसे यह कफजनितरोगोंकोनष्टकर अग्निकोप्रदीप्तकरताहै। इसकेसेवनमें कोंहळा, काञ्जी, तैल, शाक, नमकके पदार्थ, चने येसव त्याज्यहैं॥ ३०९॥

३१० लोहादिमोदकः

मृतलोहमिन्द्रयवं शुण्ठी भल्लातचित्रकम्।
विल्वमज्जा विडङ्गानि पथ्या तुल्यं विचूर्णयेत्॥
सर्वतुल्यो गुडो योज्यः कर्षं भुक्त्वाऽर्शसां जयेत् १५४९

नि र., र. र. स., अर्शोरोगे।

भाषा—लोहभस्म, इन्द्रजव, सोंठ, शुद्धभिलावे, चित्रककीजड़, वेलगिरी, विडङ्ग, हर्रेकीछाल येसव समभागलेकर सवकी वरावर गुड़मिलाकर १–१ तोला खानेसे ववासीर नष्टहोताहै॥ ३१०॥

३११ लोहादियोगः

लोहं ताम्राऽभ्रसूतं सुरकुसुमजलं चन्द्रसज्जातिपत्रं,
पत्रज्ञातीफलैला समरिचकरहाटाऽजमोदाऽहिफेनम्।
सामुद्रं सिन्धुशोषावपि घृतमधुना मर्दयित्वाऽस्य टङ्कं,
खादेदन्नेऽतिजीर्णे नियतमिह रतौ
स्तम्भनं रेतसः स्यात्॥ १५५०॥

वृ यो. त., र का., वाजीकरणे।

भाषा—लोह, ताम्र, अभ्रक और पारदभस्म, लौंग, खस, शुद्धकपूर अथवा रसकपूर, जावित्री, पत्रज, जायफल, इलायची, मरिच, अकलकरा, अजमोद, अफीम, नारियल, विधारेकीजड़ और समुद्रशोष सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर मधु और घीमें एकरोज़ मर्दनकर १ माशेसे ३ माशेतक सम्भोगसमयसे दो घण्टेपहिले खानेसे पूर्णस्तम्भन होताहै॥ ३११॥

३१२ लोहाऽभ्रकरसायनम्

आज्यं चतुष्पलं शुद्धं घनं लोहञ्च विश्रुतम्।
क्षुद्राद्रार्द्रारिष्टवृश्चीवमधूकपर्णिकादिभिः॥ १५५१ ॥
तिग्मांशुकरसंपक्कं पुटितञ्च चतुष्पलम्।
प्रस्थाऽर्द्धं पयसो दद्यान्नारिकेलोदकस्य च॥ १५५२॥
पचेत्पाकविधानज्ञो वह्निना मृदुना शनैः।
त्रिफलात्रिकटु वह्नि विडङ्गं जीरकद्वयम्॥ १५५३॥
जातीफलं जातिकोषं लवङ्गं भद्रमुस्तकम्।
कक्कोलकञ्च सञ्चूर्ण्य शाणमात्रं क्षिपेत्पृथक्॥१५५४॥
पाकं ज्ञात्वा समुद्धृत्य भ्रामराऽष्टपलान्वितम्।
माषकादिविधानेन खादेन्माषाष्टकं पुनः॥ १५५५॥
सर्वव्याधिविनिर्मुक्तो जीवेद्वर्षशतं सुखी।

नागार्जुनेन रचितं रसाख्यमिदमुत्तमम् ॥
विनापि परिहाराद्यै र्लौहोदितफलप्रदम् ॥ १५५६ ॥
वं से., रसायनाऽधिकारे ।

भाषा—पुरानाघी ४ पल, भटकटैया, अदरख, नीम, सफेदपुनर्नवा, महुआ, लघुपञ्चमूल इनके स्वरसोंमें घोटघोटकर सूर्यके तीक्ष्णतापमें सुखाकर गजपुटकी ७–७ आचें देकर सिद्ध-कियाहुआ अभ्रक और फोलाद ४–४ पल, दूध और नारियल कापानी ८–८ पल डालकर मन्द आंचसे पकावे । पानी जल-जानेपर त्रिफला, त्रिकटु, चित्रकमूल, विडङ्ग, स्याहसफेदजीरा, जायफल, जावित्री, लौंग, नागरमोथा, शीतलचीनी इनका-चूर्ण ४–४ माशे डालकर मावेको लालहोनेतकमेकदे । ठंढा-होनेपर ८ पल मौंरोंकामधु मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशासे प्रारम्भकर क्रमसे ८ माशेतक मात्रा वढावे । जीर्ण होनेपर हल्का पथ्य लेवे । इसके एकवर्षके प्रयोगसे समस्तव्या-धियोंसे निवृत्तहोकर १०० वर्षकी आयुको भोगताहै । लोहो-क्तपथ्य नहीं करनेसेभी यह गुणकरताहै ॥ ३१२ ॥

३१३ लोहामृतम् (प्रथमम्)

चित्रकं त्रिफलां दन्तीं विदारीं मार्कवं वलाम् ।
पीवरीं तालमूलञ्च पृथगष्टपलोन्मितान् ॥ १५५७ ॥
अक्षधात्रीशिवानाञ्च प्रस्थंप्रस्थं सुकुट्टितम् ।
विपाच्य सलिलद्रोणे सुपूतेऽष्टांशशेपिते ॥ १५५८ ॥
प्रस्थं चायोरजः शुद्धं गन्धकञ्च तदर्द्धकम् ।
खण्डस्य कुडवं दत्त्वा नारिकेलपयस्तथा ॥ १५५९ ॥
एकीकृत्य पचेल्लोहं रसेन सर्पिषा सह ।
अवतार्य ततः शीते मधुनोऽष्टपलं क्षिपेत् ॥ १५६० ॥
त्रिकटुं त्रिफलां दन्तीं विडङ्गं नागकेशरम् ।
पलाशवीजं त्रिवृतां हपुषां जीरकद्वयम् ॥ १५६१ ॥
तालीसपत्रधान्याकं वराङ्गं वंशलोचनम ।
भागतः पलिकं चूर्णं माक्षिकञ्च पलद्वयम् ॥ १५६२ ॥
शिलाजतुरजस्तद्वत्क्षिप्त्वा भाण्डे निधापयेत् ।
लौहे लौहेन सङ्घृष्य मधु दत्त्वा घृताऽर्द्धकम् ॥१५६३॥
कृत्वा चानु पिवेत्क्षीरं जलं वा नारिकेलजम् ।
त्र्यहं माषमितं कृत्वा वर्धयेद्रक्तिकाक्रमात् ॥ १५६४ ॥
गुरुवृष्यान्नपानानि पयोमांसरसाः शुभाः ।
सेवनीयाः प्रयत्नेन पावकं वीक्ष्य चात्मनः ॥ १५६५ ॥
उत्थिताग्निश्च भुञ्जीत कर्तव्यापेक्षया वलात् ।
एवं कुर्वन्नवं कान्तं प्राप्नुयाद्देहमात्मनः ॥ १५६६ ॥
तेजस्वी वलवान् वाग्मी निर्व्याधिर्भाति देववत् ।
अस्योपयोगात्सततं सुखेन परिहृष्यति ॥ १५६७ ॥
अम्लपित्तं तथा शूलमग्निमान्द्यं क्षयं ज्वरम् ।
ग्रहणीं पाण्डुरोगञ्च परिणामभवं रुजम् ॥ १५६८ ॥
ये च कुक्षिगता रोगा मन्दानलभवाश्च ये ।
तान् सर्वान्नाशयेद्रोगान् लौहामृतरसायनम् ॥१५६९॥
र र., र क., अम्लपित्ते ।

भाषा—चित्रक, त्रिफला, दन्तीमूल, विदारीकन्द, भंगरा, वला, शतावर, तालमूली, येमव ८–८ पल, वहेड़ा, आंवले और हर्रे १–१ प्रस्थ लेकर अच्छीतरह कूटकर १ द्रोण पानीमें पकावे । अष्टांशावशेप रहनेपर छानकर लोहभस्म १ प्रस्थ, शुद्धगन्धक आधाप्रस्थ, खांड और नारियलकाजल ४–४ पल, घी १ प्रस्थ डालकर मन्दआचमे पकावे । लेह तैयारहोनेपर उतारकर एकदम ठंढाहोनेपर मधु ८ पल, त्रिकटु, त्रिफला, दन्तीमूल, विडङ्ग, नागकेशर, पलाशकेवीज, निशोत, हाऊ, स्याहसफेदजीरे, तालीसपत्र, धनियां, तज, वंसलोचन, इनका वारीकचूर्ण १–१ पल, स्वर्णमाक्षिकभस्म और शिलाजीत २–२ पल लेकर सवको इकट्ठे मिलाय चिकने वर्तनमें भरके रखछोड़े । इसमेंसे ६ माशेसे १ तोलेतककीमात्रा लोहेकेवर्तनमें डालकर ४ माशे घी और ८ माशे मधु मिलाकर लोहेके डंडेसे थोड़ी-देर मर्दनकर चाटे और ऊपरसे दूध अथवा नारियलकाजल पीवे । आरम्भमें ३ रोज़तक १–१ माशेकी मात्रा लेकर प्रकृतिके सात्म्यकरे फिर रोज़ाना १–१ रत्तीकी मात्रा वढाकर १ तोलेतक मात्रा वढावे । भारी और वृष्य, दूध, मासरस, ये हितकारकहैं, परन्तु अपनी जठराग्निकावल देखकर सेवनकरे । जैसेजैसे अग्निवढ़ताजाय वैसेवैसे गरिष्ठ अन्नका सेवनकरे । इसतरह प्रयोगकरनेसे नवीन और सुन्दर तेज, वल, वाणी इनसेयुक्त शरीरको प्राप्तहोताहै । निरोगहोकर देवताकेसदृश हृष्टपुष्टरहताहै । अम्लपित्त, शूल, मन्दाग्नि, क्षय, ज्वर, ग्रहणी, पाण्डु, परिणामशूल, कुक्षिरोग, और मन्दाग्निमेजायमान समस्त उपद्रव इनसवको यह शीघ्रही नष्टकरताहै ॥ ३१३ ॥

३१४ लोहामृतम् (द्वितीयम्)

मुस्ताऽमृताकणा यष्टि र्वह्निः शुण्ठी फलत्रयम् ।
विडङ्गञ्च समं चूर्णं सर्वांशं मृतलोहकम् ॥ १५७० ॥
मधुना भक्षयेन्माषं पाण्डुरोगहरं परम् ।
इदं लोहामृतं नाम स्वयमग्निरसोऽपि वा ॥ १५७१ ॥
र र , ना वि., चि क , पाण्डुरोगे ।

टि०—अय रसो द्वितीयनवायसेन तुल्योऽस्ति परन्तु तत्र भागाना वैलक्षण्यादय पृथगेव स्थापित । अय योगश्चिकित्साक्रमकल्पवल्ल्या पाण्ड्वधिकारे मुस्तादिलोहनाम्ना निहितोऽस्ति तत्र यष्टित्रिफल्योरभावो-ऽस्ति नैतावता तत्र योगान्तरता सम्भावनीया इति विद्वत्सु विज्ञप्ति ।

भाषा—नागरमोथा, गिलोय, पीपल, मुलहठी, चित्रक-मूल, सोंठ, त्रिफला और विडङ्ग सव समभाग लेकर बारीक-चूर्णकर सवकीवरावर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा मधुकेसाथ खानेसे यह पाण्डुरोगको दूरकरताहै यह उपस्थित न हो तो स्वयमग्निरससे कामलेसक्तेहैं ॥ ३१४ ॥

३१५ लोहामृतम् (तृतीयम्)

माक्षीकमाक्षिकशिलाजतुपारदानां
चूर्णं सलोहकविडङ्गशिवासितानाम् ।

साज्यश्च विंशतिदिनानि भजेत्प्रकामं
योऽशीतिकोऽपि वनितानिकरे युवेव १५७२

चि. क , र. र स., र. र. कौ , लो. प , चि र. भ , यो. चि , र र. दी., यो. म., ग नि , र म मा., नि र , ना. वि , वृ. सं , र. चं., रसार्णव, रसायनसं , भै र , र. क. ल., च. द , र को , र. का., र. र. रसायनाऽधिकारे ।

टि०—चि क वाजीकरणे। यो म , भै. र , र क ल , च द , र कौ., र का , र र. एतेषु पारदरहित पाठः। भै र यक्ष्मारिलोहम्, र र कौ. पूर्णचन्द्र' नि र , ग नि शिलाजत्वादिलोहम्, र. च., चि र भ शिलाजतुयोग , यो म , माक्षिकयोगः (वाजीकरणे), रसायनसङ्ग्रहे च माक्षिकाद्यवलेह इति नाम स्थापितम्।

भाषा—शुद्धसोनामाखी, मधु, शिलाजतु, पारद और लोहभस्म, विडङ्ग, हर्रे शक्कर समभाग लेकर वारीकचूर्णकर सबको इकट्ठेमिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे यथाग्निवल मात्रा नियतकर घीकेसाथ २० दिनतक सेवनकरनेमे अस्सीवरसका बुड्ढाभी जवानकेसदृश स्त्रियोंके सङ्घको खुशकरताहै ॥ ३१५ ॥

३१६ लोहामृतम् (चतुर्थम्)

तनूनि लोहपत्राणि तिलोत्सेधसमानि च ।
कपिकामूलकल्केन संलिप्य सार्पपेण वा ॥ १५७३ ॥
विशोष्य सूर्यकिरणैः पुनरेवाऽवलेपयेत् ।
त्रिफलाया जले ध्मातं वापयेच्च पुनःपुनः ॥ १५७४ ॥
ततः सञ्चूर्णितं कृत्वा कर्पटेन तु गालयेत् ।
भक्षयेन्मधुसर्पिर्भ्यां यथाग्न्येतत्प्रयोगतः ॥ १५७५ ॥
माषकं त्रिगुणं वाऽथ चतुर्गुणमथापि वा ।
छागस्य पयसः कुर्यादनुपानमभावतः ॥ १५७६ ॥
गवां घृतेन दुग्धेन चतुःषष्टिगुणेन च ।
पक्तिशूलं निहन्त्येतन्मासेनैकेन निश्चितम ॥ १५७७ ॥
लोहामृतमिदं श्रेष्ठं ब्रह्मणा निर्मितं पुरा ।
ककारपूर्वकं यच्च यच्चाऽम्लं परिकीर्तितम् ॥
सेव्यं तन्न भवेदत्र मांसं चानूपसम्भवम् ॥ १५७८ ॥

च द , यो. म , शूले ।

भाषा—फोलादके तिलप्रमाण मोटे पत्र वनवाकर आवलकीछालकेकल्क अथवा सफेदसरसोंकेकल्कसे पत्रोंपर लेपदेकर धूपमें सुखाकर फिरसे लेपकरके धमनकराय त्रिफलाकेकाथमें बुझावे इसतरह जवतक पत्रोंका चूर्ण न हो जाय तवतक करतारहे। फिर काथको हटाकर लोहचूर्णको खरलकरके कपड़छानकर रखलेवे। इसमेंसे अग्निवलानुसार मात्रा कायमकर मधु और घीकेसाथ १ माशेसे ४ माशेतक खाकर वकरीका अभावमें गायकादूध ६४ गुना पीनेसे एकमहीनेमें निश्चितरूपसे यह पक्तिशूलको नष्टकरताहै। इसमें ककारादिगण, अम्ल और आनूपमांस वर्जितहै ३१६

३१७ लोहामृतम् (पञ्चमम्)

गुडूची हंसपादी च रत्नमाला फलत्रयम् ।
गोपालिका गोरसना तुम्बुरु लोहनिम्बकौ ॥१५७९॥
एषां रसे दोलयेत्तद्गिरिदोषनिवृत्तये ।
पलद्वादशकं कृत्वा कृष्णलोहस्य खण्डशः ॥ १५८० ॥
भङ्क्त्वाऽष्टादश गण्डीरमूलैः पिण्डं प्रकल्पयेत् ।
धृत्वा प्रधमयेत्तावद्यावत्सर्वं मृतं भवेत् ॥ १५८१ ॥
सिद्धे रात्र्युषिते वीजं सूर्यावर्तस्य दापयेत् ।
कर्पं त्रिकटुकस्याऽपि त्रिकर्षं चूर्णसंयुतम् ॥ १५८२ ॥
मधुत्रिपलसंयुक्तं यथाग्नि चोपयोजयेत् ।
अर्शांसि कामलां कुष्ठं पाण्डुरोगं कृमींस्तथा ॥ १५८३ ॥
वह्निं गुल्मोदरं शूलं विशेषात्परिणामजम् ।
शोथान्निहन्ति सर्वांश्च विस्तरान्नाऽत्र संशयः ॥
एतल्लोहामृतं नाम सर्वव्याधिषु पूजितम् ॥ १५८४ ॥

र का., अर्शोऽधिकारे ।

भाषा—पर्वतकादोष दूरकरनेके लिये १२ पल फोलादके वारीकपत्रोंको गिलोय, हंसराज, रत्नमाला (रतनजोत), त्रिफला, ग्वालीलता (मराठी), गाजुवा, तुम्वुल, अगर, नीमकीछाल इनके यथासम्भव स्वरस अथवा काथोंमें स्वेदितकर १८ टुकड़े वनाय गण्डीर (कौड़गन्दल पं.) कीजड़केकल्कसे लेपकर धूपमें सुखाकर अग्निमें लालकरके कौड़गन्दलकेहीरसमें बुझावे। इसीतरह जवतकवारीकचूर्ण न होजाय तवतककरे। एकरात्रिकेवाद रसमेंसे चूरेको निकालकर वारीकपीसकर उसमें हुरहुर १ कर्ष और त्रिकटु ३ कर्ष तथा मधु ३ पल मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे अग्निवलके अनुसार १ माशेकीमात्रा खानेसे ववासीर, कामला, कुष्ठ, पाण्डु, क्रिमि, मन्दाग्नि, गुल्म, उदर, शूल, परिणामशूल और शोथ इनसवको यह नष्टकरताहै ॥३१७॥

३१८ लोहेश्वरोरसः

ताम्राऽऽरवङ्गरसकनागलोहाऽऽलसोमकम् ।
गन्धः शिला चैकभागाः सार्धभागस्तु सूतकः ॥१५८५॥
सम्यक् चूर्णीकृतं मर्द्यमेकादशदिनं भृशम् ।
एरण्डभृङ्गनिर्गुण्डीभृङ्गाधुत्तूरकन्यकाः ॥ १५८६ ॥
शिवनेत्रं तुणी द्रेका पाटली मुसली रविः ।
अधःपुष्पी शङ्खपुष्पी गान्धारी गजशुण्डिका ॥१५८७॥
गोमी तेजोवती नीलकण्ठी च वर्वरी तथा ।
काकमाची काकतुण्डी कर्कोटी तालमूलिका ॥१५८८॥
सहदेवी काकपादी त्रिपत्री च त्रिनेत्रकम् ।
रत्नमाला च गोरक्षी चर्मरङ्गारसैरतः ॥ १५८९ ॥
शोषयित्वा पाचयेत्तद् द्वात्रिंशत्प्रहराग्निना ।
पुनः सर्वं समादाय तदेकादशमानकम् ॥ १५९० ॥
तालसत्त्वं सोमसत्त्वं शिलासत्त्वञ्च तत्समम् ।
तृतीयांशकगन्धेन रसैरेषां विमर्दयेत् ॥ १५९१ ॥
मार्कवस्तुलसी कण्टकारी च सहदेविका ।
अर्कक्षीरैस्त्रियामं तु शोषयित्वा विपाचयेत् ॥१५९२॥
यामषोडशकं काचकूप्यां वारद्वयं तथा ।
लोहेश्वररसोऽयं स्यात्सर्वव्याधिहरः परः ॥ १५९३ ॥

र. का., वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—ताम्र, पीतल, वङ्ग, खपरिया, नाग, लोह, हरिताल, सोमल इनकीभस्में, शुद्ध गन्धक और मैनसिल १–१ भाग, पारदभस्म १॥ भाग लेकर सबका वारीकचूर्णकर ११ दिनतक सूखामर्दनकर एरण्ड, भंगरा, निर्गुण्डी, भांग, धतूरा, घीकुंवार, रुद्राक्ष, तृण, वकायन, पाटला, मुशली, आक, अन्धाहूली, शङ्खाहूली, कुकरोंधा, हाथीशुण्डी, वनगोभी, तेजवल, नीलकण्ठी, ववई, मकोय, काकनासिका, वाङ्गखेखसा, तालमूली, सहदेवी, काकजङ्घा, मोरवेल, त्रिनेत्र (हव्वुलकिलकिल), रत्नमाला (रतनजोत पं), गोरखमुण्डी, आवळ इनसवके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे मर्दनकर सुखाकर आतशीशीगीमें डाल ३२ पहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर समस्तको निकाललें। फिर इसमेंसे ११ भाग, हरिताल, सोमल और मैनसिलसत्त्व येतीनों ११ भाग और शुद्धगन्धक सबसे तृतीयांश मिलाकर भगरा, तुलसी, भटकटैया, सहदेवी, आककादूध इनसबमें ३–३ पहर मर्दनकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें डालकर वालुकायन्त्रमें रख शीशीकामुंह वन्दकर १६ पहरकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर भंगरे वगैरहकेरससे मर्दनकर १६ पहरकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ चावलकी मात्रा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तव्याधियोंको दूरकरताहै३ ॥ ३१८ ॥

३१९ वङ्गवद्धपारदगुटिका

वङ्गतीक्ष्णौ समौ कृत्वा ध्माप्यते वज्रमूषया ।
वङ्गमुत्तारयेत्सम्यक् तीव्राऽङ्गारैः प्रयत्नतः॥ १५९४ ॥
अनेनैव प्रकारेण त्रिगुणं वाहयेत्ततः।
वीजं पाषाणगं कृत्वा सूतं पलमितं भवेत् ॥ १५९५ ॥
मर्दयेत्कन्यकाद्रावै मर्द्यमेवं विशोषयेत् ।
गोलस्थस्वेदनं कार्यमहोभिः सप्तभिस्तथा ॥ १५९६ ॥
त्रिफलाक्वाथमध्ये तु त्रियामैः स्वेदयेत्सुधीः ।
कुमार्याः स्वरसेनैव भृङ्गराजरसेन हि ॥ १५९७ ॥
भृङ्गीरसेन च तथा त्रिदिनं स्वेदयेद्धनैः।
एकैकेनौषधेनैव काचकूप्यां निवेशयेत् ॥ १५९८ ॥
भूमिस्थां मासयुग्मेन पश्चादेनां समुद्धरेत् ।
वद्धं सूतवरं ग्राह्यं शुभचन्द्रसमानभम् ॥ १५९९ ॥
मुखस्था कुरुते सम्यग्दढवज्रनिभं वपुः।
कामिनीनां शतं गच्छेद्वलीपलितवर्जितः ॥ १६०० ॥

र मु., रसायने।

भाषा—वङ्ग और फोलाद समभागलेकर वज्रमूषामें रख धमनकरे। वङ्गकेजलजानेपर उतनाही दूसरा डालकर जलावे। इसतरह तिगुनी वङ्गको जलानेसे यह तीक्ष्ण वङ्गवीज तैयार हुआ। इसमेंसे १ कर्ष वीज और १ पल वुभुक्षितपारा खरलमें डालकर घीकुवारकेरससे ७ दिनतक मर्दनकर गोलावनाय ४ तह मलमलकेकपड़ेमें पोटली वनाय घीकुवारके रसमें ७ दिनतक स्वेदनकरे। फिर ३ पहर त्रिफलाकेक्वाथमें स्वेदनकर घीकुवार, भंगरा और भांगकेरसोंसे ३–३ दिन स्वेदनकर काचकीशीशीमें डालकर १–१ औषधिकारसभरके २–२ महीने ज़मीनमें गाड़दे। ऐसा करनेपर यह निर्मलचन्द्रमाकीतरह वद्धहोजायगा। इसको मुंहमें रखनेसे शरीर वलीपलितोंसे रहितहोकर वज्रके समान मज़वूत होजाताहै। और वहुतसीस्त्रियोंकेसाथ रमणकरनेपरभी किसीतरहकाविकारनहींहोता ॥ ३१९ ॥

३२० वङ्गयोगः (प्रथमः)

पूतीकस्वरसं वाऽपि पिवेद्वा मधुना सह ।
पिवेद्वा पिप्पलीमूलमजामूत्रेण संयुतम् ॥
सप्तरात्रं पिवेद्धृष्टं त्रपु वा दधिमस्तुना ॥ १६०१ ॥

सु सं., क्रिमिरोगे।

टि०—अत्र घृष्टमित्यनेन न केवल घर्षयित्वा दापयेत् किन्तु वङ्ग मृत्पात्रे द्रावयित्वा अत्यल्पदधिप्रक्षेप कृत्वा निम्बकाष्ठादिना घर्षयेत्। पूर्वदत्ते दध्नि क्षीणे त्रपुणि च शुष्कता याते पुनरपि दधि दत्त्वा घर्षयेदिति निरन्तर सप्तरात्रमर्थात्सप्ताहोरात्र घर्षणेन भस्म निष्पाद्य दधिमस्तुना यथाग्निबल दद्यादित्यभिसन्धि ॥

भाषा—तैलादिकमें शुद्धकियेहुए वङ्गको गलाकर दही अथवा दहीकापानी देकर नीमके ताज़े डण्डेसे ७ दिनरातमर्दनकर भस्म वनाले। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथदेकर घुड़करञ्जकारस अथवा पिपलामूलको वकरीकेमूत्रकेसाथ अथवा दहीकातोड़ पीनेसे तमाम क्रिमिरोग नष्टहोताहै ॥ ३२० ॥

३२१ वङ्गयोगः (द्वितीयः)

शाल्मलीत्वग्रसोपेतं सक्षौद्रं रजनीरजः ।
वङ्गभस्म हरेन्मेहान् पञ्चानन इव द्विपान् ॥ १६०२ ॥

रसायनसं, प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—मोचरस अथवा सेमलकी छालकारस, हल्दीकाचूर्ण और वङ्गभस्म ३ रत्ती मिलाकर शहदमें लेनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्टकरताहै ॥ ३२१ ॥

३२२ वङ्गयोगः (तृतीयः)

वङ्गभस्मसमं शुद्धं शिलाजत्वमृतोद्भवम् ।
सत्त्वं सितोपलेनाऽथ मधुना सह मर्दयेत् ॥
त्रिमाषं भक्षयेन्नित्यं मूत्राघातनिवृत्तये ॥ १६०३ ॥

र.प्र, मूत्राघाते।

भाषा—वङ्गभस्म, शिलाजीत, गिलोयसत्त्व सवसमभाग लेकर सवसे दूनी मिश्रीमिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ माशे मधुकेसाथ सेवनकरनेसे समस्त मूत्राघात निवृत्तहोतेहैं ॥ ३२२ ॥

३२३ वङ्गयोगः (चतुर्थः)

वङ्गाऽभ्रमथनागाऽभ्रं नागं वङ्गञ्च केवलम् ।
मेहरोगे प्रयोक्तव्यं शिलाजतुसमन्वितम् ॥ १६०४ ॥

र सं, र.चं, र.क, र.सु, प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—वङ्गऔर अभ्रकभस्म अथवा नाग और अभ्रकभस्म अथवा पृथक् २ भाग और वङ्गभस्म समभागशिलाजीतकेसाथ लेनेसे समस्तप्रमेह नष्टहोतेहैं ॥ ३२३ ॥

३२४ वङ्गरसायनम्

वङ्गभस्मसमं कान्तं व्योमभस्म च माक्षिकम् ।
मर्दयेत्कन्यकाम्भोभि निम्बपत्ररसैरपि ॥ १६०५ ॥
भूपालावर्तभस्माऽथ चिनिःक्षिप्य समांशकम् ।
गोमूत्रकशिलाधातुजलैः सम्यग्विमर्दयेत् ॥ १६०६ ॥
ततो गुग्गुलुतोयेन मर्दयित्वा दिनाऽष्टकम् ।
विशोष्य परिचूर्ण्याऽथ सममागेन योजयेत् ॥१६०७॥
भृष्टबब्बूलनिर्यासं वाकुचीबीजचूर्णकैः ।
ततः क्षिपेत्करण्डान्त विधाय पटगालितम् ॥ १६०८॥
गोतक्रपिष्टरजनीसारेण सह पाययेत् ।
चतुर्भिर्वल्लकैस्तुल्यं रम्यं वङ्गरसायनम् ॥ १६०९ ॥
निश्चितं तेन नश्यन्ति मेहा विंशतिभेदकाः ।
शालयो मुद्गसूपश्च नवनीतं तिलोद्भवम् ॥
पटोलं तिक्ततुण्डीरं तक्रं पथ्या प्रशस्यते ॥ १६१० ॥

र. चू., रसायने ।

भाषा—वङ्ग, कान्त, अभ्रक, और स्वर्णमाक्षिकभस्म सम-भागलेकर घीकुंवार और निम्बपत्रस्वरसमें १-१ रोज मर्दनकर तीनोंकी बराबर लाजवर्दकीभस्म मिलाकर गोमूत्र और शिला-जीतकेद्रवसे १-१ रोज मर्दनकर गिलोयवगैरहकेसाथ क्वाथकर द्रवबनाएहुएगूगलसे ८ दिन मर्दनकर सुखाकर घीमें सिकाहुआ बबूलका गोंद और बाकुची सममागमें मिलाकर शीशीमें रख-छोड़े । इसमेंसे १२-१२ रत्तीकीमात्रा गायकीछाछसे पिसी-हुईहल्दीकेसाथ लेनेसे अवश्यही २० प्रकारके प्रमेह नष्टहोते हैं । चावल, मूंगकीदाल, मक्खन, तिल्का तैल, परवल, कड़वी कुन्दरू, छाछ येसब हितकरहैं ॥ ३२४ ॥

३२५ वङ्गाऽवलेहः (प्रथमः)

वङ्गभस्म द्विवल्लञ्च लेहयेन्मधुना सह ।
ततो गुडसमं गन्धं भक्षयेत्कर्षमात्रकम् ॥ १६११ ॥
गुडूचीसत्त्वमथवा शर्करासहितं तथा ।
सर्वमेहहरो वङ्गाऽवलेह उत्तमः स्मृतः ॥ १६१२ ॥

र. सं., र. चि., र. सि., रसायनसं., र. का., र. मु., व., प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—वङ्गभस्म ३ रत्तीसे ६ रत्तीतक मधुकेसाथ लेकर शुद्धगन्धक और पुरानागुड सममाग अथवा गिलोयकासत्त्व बराबरकीशक्करकेसाथ मिलाकर १ तोला लेनेसे समस्तप्रमेह नष्टहोतेहैं ॥ ३२५ ॥

३२६ वङ्गावलेहः (द्वितीयः)

मारितं त्रपुसं सीसं हारिणं शृङ्गमाकुलम् ।
कार्पासबाकुचीतकं माहिषञ्च प्रमेहजित् ॥ १६१३ ॥
पिचुमन्दस्य निर्यासं धात्रीक्वाथेन पेपिनम् ।
शिलाधातुसमायुक्तं शुक्रमेहविनाशनम् ॥ १६१४ ॥

व. रा., शुक्रमेह ।

भाषा—वङ्ग, नाग, हरिणकाश्टङ्ग इनकीभस्में, अङ्कोलके-बीज, बिनौलेकीमींगी, बाकुची, भैंसकीछाछ अथवा आंवलेके-क्वाथसे पिसाहुआ नीमकागोंद और शिलाजीत इनयोगोंमेंसे १-१ अथवा समस्त एकत्रितकर लेनेसे सम्पूर्णप्रमेह तथाखास-कर शुक्रप्रमेह नष्टहोताहै ॥ ३२६ ॥

३२७ वङ्गाष्टकम्

रसं गन्धं मृतं लोहं मृतरूप्यञ्च खर्परम् ।
मृताभ्रकं मृतं ताम्रं सर्वतुल्यञ्च वङ्गकम् ॥ १६१५ ॥
पुटेद्गजपुटे विद्वान् स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
रक्तिद्वयप्रमाणेन मधुना लेहयेन्नरम् ॥ १६१६ ॥
निशाचूर्णं क्षौद्रयुतं पिबेद्धात्रीरसं ह्यनु ।
वङ्गाष्टकमिदं ख्यातं महादेवप्रकाशितम् ॥ १६१७ ॥
प्रमेहान्विंशतिं हन्यादामदोषं विसूचिकाम् ।
विषमज्वरगुल्मार्शोमूत्राघातीसारपित्तजित् ॥
वीर्यवृद्धिं करोत्याशु सोमरोगनिवर्हणम् ॥ १६१८ ॥

भै. र., प्रमेहे ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, लोह, रजत, खपरिया, अभ्रक और ताम्रभस्म येसब सममाग, इनसबकीबराबर वङ्ग-भस्म लेकर पारेगन्धक की नीलवर्ण कजलीकर सब एकजगह शुष्कमर्दनकर प्रमेह और ज्वरहर औषधोंमें ६-७ रोज मर्दन कर गोलाबनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथलेकर १ मासेसे ३ मासेतक हल्दीका-चूर्ण और मधु मिलाकर १ या २ तोले आंवलेका स्वरसपीवे । इससे २० प्रकारकेप्रमेह, आमदोष, हैज़ा, विषमज्वर, गुल्म, बवासीर, मूत्राघात, अतिसार, पित्तविकार, वीर्यह्रास, सोमरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३२७ ॥

३२८ वङ्गेश्वररसः (प्रथमः)

चिञ्चाक्षारेण संसिद्धं वङ्गं सार्धचतुष्पलम् ।
तद्भस्मान्तं तालकस्य पलार्द्धार्द्धैः पुनःपुनः ॥१६१९॥
कन्याद्रिवक्रिकां शुष्कां पुटेद्गजपुटेन च ।
त्रिगुञ्जं सेवितं युक्त्या सर्वमेहहरं परम् ॥ १६२० ॥

र. का., प्रमेहे ।

भाषा—वङ्गको तैलनकादिमें शुद्धकर कड़ाहीमें गलाकर इमलीके क्षारका प्रक्षेपदेकर नीम अथवा बबूलकी ताज़ीलक-ड़ीसे रगड़ताजाय । जब तमाम वङ्गका चूराहोजाय उससमय क्षार डालना बन्दकरदे और एकपहरतक कड़ी आंचदेताहुआ डण्डेसे चलाताजाय । फिर तमामभस्मको इकट्ठाकर ऊपरसे लोहेकेकटोरेसे ढककर ४ पहरकी कड़ी आंचदे । स्वाङ्गशीतल-होनेपर निकालकर पानीडालकर चलावे स्थिर होनेपर पानीको नितारकर दूसरापानीभरदे । इसतरह ३-४ वारकरनेसे इमलीका क्षार तमाम निकलजायगा फिर धूपमें सुखाकर एककर्ष शुद्धहरि-तालका बारीकचूर्ण डालकर घीकुंवारकेरससे १-२ रोज़ मर्दनकर सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकीआंचदे । इसप्रकारजब-तक वङ्गकी मक्खनकेसदृशभस्म न होजाय तबतक वारम्वार

करताजाय। जब विशुद्धभस्म तयार होजाय तब उसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतककी मात्रा मधुकेसाथ खिलाकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको दूरकरताहै ३२८

३२९ वङ्गेश्वररसः (द्वितीयः)

रसभस्मसमायुक्तं वङ्गभस्म प्रकल्पयेत्।
अस्य गुञ्जाद्वयं हन्ति मेहान्क्षौद्रसमन्वितम्॥
गुञ्जामूलं पिवेत्क्षीरैरनु तस्य प्रशान्तये॥ १६२१॥

र सं, र. चि, वृ. यो त, र. क ल, व., भै. र, र. सु, र र., रसायनस, टो., र. क, र. च, चि. र भ., वै. र. वै. द, यो. म., वै चि., र र दी., चि. क, यो र, नि. र, यो त, व रा, र र, भै सा., र (मा), र. पा, चि. सा, र, र. वो, र प्र. सु, र मू प्रमेहाधिकारे।

टि०—यो र, नि र, व रा, वै चि एषु तथा र र, रसायनस एतयोर्द्वितीयस्थाने प्रमेहारिरस इति नाम। भैषज्यसारामृतसंहिताया माणिक्यचन्द्रीयरसावतारे च अस्य प्रयोगस्य प्रातर्निषेवणम् नाय तु मृतायसटङ्क निषेव्य विहितमित्यधिक। रसामृते "मुद्गामलकयूषेण पथ्य देय सतक्रकम्। तिलपिण्टीश्च तक्रेण पक्त्वा दद्यात्स -हिङ्गुकम्॥ घृत बहु न दद्याच्च तिलतैलञ्च भोजयेत। मार्कव चूर्णमादाय मधुट खादयेन्निशि॥" इत्यधिक पाठोऽस्ति। र, र वो एतयो "वङ्गभस्म रसभस्मना सम मर्दित ककुभतोयतो दिनम्। क्षौद्रयुक्तमधुमेहनाशन वल्लयुग्ममशित त्रिसप्तकम्॥ शाल्मल मधुयुत पय पिवन्भोजन मधुरस समुद्गकम्। कुण्डलीरसयुत मधु पेय रात्रिचूर्णमथवा मधुना वा॥" इति पाठोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव करणीय ककुभतोयमर्दनस्याऽत्राऽप्यनुष्ठाने क्षत्यभाव', द्वित्राऽनुपानानामपि तथैव स्थितिरिति सुधीभि र्विभावनीयम्। "शुद्धस्य रसराजस्य भस्म वङ्गस्य भस्म च। अर्जुनस्य त्वच सर्वसम शाल्मलिजे रसे॥ मर्दयेद्वासर घस्र कुर्याद्गुञ्जामिता वटीम्। भक्षयेदनु सक्षौद्र पिवेच्छाल्मलिज रसम्॥" इति पाठो वेदविद्यावटीनाम्ना रसकामधेनावस्ति स च रसावताररसबोधचन्द्रोदयपठितेन पाठेन वहुलांशे समान केवल तयोरर्जुनस्य भावनाऽस्ति रसकामधेनौ तु सर्वसममर्जुनत्वक्चूर्णं मिश्रय्य शाल्मलिजे भावनाऽस्ति तयोस्तु शाल्मलिरसोऽनुपानत्वेन गृहीत इत्यस्ति वहुलांशे समता, अतस्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव करणीय। अनेनप्रकारेण रससम्पादने गुणावहता चाऽस्ति पाठान्तरस्तु न करणीय एव श्रमोत्पादकत्वात्। रसप्रकाशसुधाकरे वातमेहान्तकनाम्ना एको रसो निहितोऽस्ति तत्र जयारसेन भावना अधिकाऽस्ति अतो वर्तमानरसे जयारसस्य भावनायामनुष्ठितायां क्षत्यभावात्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भावोऽस्तु। रसचण्डांशुमङ्ग्रहयित्रा तु पाठद्वयमपि स्वतन्त्रतया स्थापित स तु प्रमाद एवाऽस्ति॥

भाषा—पारद और वङ्गभस्म समभाग मिलाकर अथवा वङ्गयुक्त पारदभस्म करके रक्खे। इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथ मिलाकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको दूरकरताहै। खासकर १ माशेसे २ माशेतक सफेदगुञ्जाकीजड़ दूधमें घिसकर ऊपरसे पिलानेसे विशेषलाभहोताहै॥ ३२९॥

३३० वङ्गेश्वररसः (तृतीयः)

वङ्गभस्म रसं गन्धं रौप्यं कर्पूरमभ्रकम्।
कर्षंकर्षं मानमेषां सूताद्धि हेममौक्तिकम्॥ १६२२॥
केशराजरसै र्भाव्यं द्विगुञ्जाफलमानतः।
प्रमेहान्विंशतिञ्चैव साध्याऽसाध्यमथापि वा॥१६२३॥
मूत्रकृच्छ्रं तथा पाण्डुं धातुस्थञ्च ज्वरञ्जयेत्।
हलीमकं रक्तपित्तं वातपित्तकफोद्भवम॥ १६२४॥
ग्रहणीमामदोषञ्च मन्दाग्निमरोचकम।
एतान्सर्वान्निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनि र्यथा॥ १६२५॥
वृहद्वङ्गेश्वरो नाम सोमरोगं निहन्त्यलम।
वहुमूत्रं वहुविधं मूत्रमेहं सुदारुणम॥ १६२६॥
मूत्रातिसारं कृच्छ्रञ्च क्षीणानां पुष्टिवर्धनः।
ओजस्तेजस्करो नित्यं स्त्रीषु सम्यग्वृषायते॥१६२७॥
वलवर्णकरो रुच्यः शुक्रस्तम्भनः परः।
छागं वा यदि वा गव्यं पयो वा दधि निर्मलम १६२८
अनुपानं प्रयुञ्जीत वुद्ध्वा दोषगतिं भिषक्।
दद्याच्च वाले प्रौढे च सेवनार्थं रसायनम॥ १६२९॥

र. सं, र चि, व, भै. र., र. सु, र च., र. का, प्रमेहे।

भाषा—वङ्गभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक, रजतभस्म, रसकपूर और अभ्रकभस्म १–१ कर्ष, सुवर्ण और मोतीभस्म ४–४ माशे लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय काले भंगरेकेरसमे १–२ रोज़मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे साध्य अथवा असाध्य २० प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, पाण्डु, धातुस्थज्वर, हलीमक, रक्तपित्त, वात, पित्त और कफोद्भव ग्रहणीदोष, आमदोष, मन्दाग्नि, अरुचि, सोमरोग, वहुमूत्र, नानातरहका भयङ्करमूत्रमेह, मूत्रातिसार, मूत्रकृच्छ्र धातुक्षीणता, ओज क्षय, स्तम्भनाभाव, वलवर्णनाश, अरुचि, शुक्रक्षय इनसवको यह नष्टकरताहै। इसमें वकरी अथवा गायकादूध अथवा दही दोषगतिको समझकर देवे। वालक और वुड्ढोंको देनेसे यह रसायनका काम करताहै॥ ३३०॥

३३१ वङ्गेश्वररसः(चतुर्थः)

वङ्गेश्वरं प्रवक्ष्यामि रसं प्लीहोदरापहम्।
मन्दाग्निघातने शस्तमन्त्रवृद्धिविवर्जनम॥ १६३०॥
अनूक्तेन प्रकारेण रसभस्मान्तिकीः क्रियाः।
कृत्वा सूतं समादाय खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत्॥१६३१॥
साधारणोक्तमार्गेण कुटिलं भस्मयेद्बुधः।
पश्चात्तत्र प्रदेयानि पुटानि दश सङ्ख्यया॥ १६३२॥
क्षीरेण भानोः सम्मर्द्य कुक्कुटाख्यानि यत्नतः।
पलमाने सूतभस्मन्येतन्मानञ्च वङ्गजम्॥ १६३३॥
पलञ्च द्वे पले ताम्रात्साधारणमृताद्भवेत्।
सामान्यशुद्धं गन्धञ्च द्वे पले सर्वमेकतः॥ १६३४॥
मर्दयेद्भास्करभवैः पयोभि र्दिवसत्रयम्।
तं सूतं पुटयेत्पश्चाद्वटवीजैरथोत्पलैः॥ १६३५॥
मूषायां तं रसं क्षिप्त्वा कुक्कुटाख्यं पुटं ददेत्।
एष वङ्गेश्वरो नाम्ना रसेन्द्रः सम्प्रकाशितः॥ १६३६॥

गुल्मप्लीहोदरच्छेदशीघ्रकारीश्रुतो भुवि ।
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन रसेन्द्रं सम्प्रयोजयेत् ॥ १६३७ ॥
वसोभरस्य चूर्णेन घृतेन सुरभीभुवा ।
पथ्यञ्च पूर्ववत्कुर्यात्प्लीहगुल्मोदरच्छिदे ॥ १६३८ ॥

रसालं, टो., उदराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धकरके भस्मकियाहुआ पारा और साधारण गन्धभस्म समभागलेकर वारीक चूर्णकर आककेदूधसे मर्दनकर सुखाकर कुक्कुटपुटकी आचदे । ऐसे १० आचें देनेकेवाद एक पल शङ्खचुकपारदभस्ममें वङ्गभस्म १ पल, ताम्रभस्म और शुद्धगन्धक २–२ पल मिलाकर वारीकचूर्णकर आकके दूधसे ३ रोज मर्दनकर कुक्कुटपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर वट और कमलके फलोंकेरससे मर्दनकर १०–१० कुक्कुटपुटदे । इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा पुनर्नवाके चूर्ण और गोघृतकेसाथ देनेसे यह मन्दाग्नि, अन्त्रवृद्धि, गुल्म, प्लीहा और उदररोगोंको नष्टकरताहै ॥ ३३१ ॥

३३२ वङ्गेश्वररसः (पञ्चमः)

तुल्यांशं रसतारहेमगगनं नागञ्च लोहं तथा,
ताप्यं विद्रुममौक्तिकञ्च रसकं वङ्गं समं निःक्षिपेत् ।
सर्वं गोक्षुरवानरीसमुशलीरम्भाविदारीवरी-,
गोदुग्धे मुशलीक्षुवारिमृदितं स्यात्सप्त वारान्पृथक् ॥
विंशन्मेहगणं निहन्ति सहसा वङ्गेश्वरोऽयं महान्,
सद्यो वैद्यहिताय भैरवसमः श्रीपूज्यनाम्नोदितः १६३९

र. पा., प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—पारा, रजत, सुवर्ण, अभ्रक, नाग, लोह, सोनामाखी, विद्रुम, मोती, खपरिया और वङ्ग इनकीभस्में समभागलेकर गोखरू, केवाच, सफेद मुशली, केलाकन्द, विदारी, शतावर, गोदुग्ध, काली मुशली, ईख इनप्रत्येकके रसोंसे ७–७ भावनाएं देकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा समय अथवा उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह तमामप्रमेहोंको नष्टकरताहै॥३३२

३३३ वङ्गेश्वररसः (वासुकिभूषणः) ६

सूतभस्म वङ्गभस्म भागैकं सम्प्रकल्पयेत् ।
गन्धकं मृतताम्रञ्च प्रत्येकञ्च चतुष्पलम् ॥ १६४० ॥
अर्कक्षीरे दिनं मर्द्य सर्वं तद्गोलकीकृतम् ।
रुद्ध्वा तद्भूधरे पक्त्वा पुटैकेन समुद्धरेत् ॥ १६४१ ॥
एष वङ्गेश्वरो नाम प्लीहगुल्मोदराञ्जयेत् ।
घृतै गुंजाद्वयं लेह्यं लिप्त्वा श्वेतपुनर्नवाम् ॥
गवां मूत्रैः पिबेच्चानु रजनीं वा गवां जलैः ॥ १६४२ ॥

र सं., र.क.ल, र.र स, र.को., र. चि., वृ यो त, नि र, ध., र सु, र र, र कौ, र म., चि सा, रसायनसं, टो., र. क, भै सा, र (मा.), व रा., र. का, यो. म, वै. चि., र. र-कौ, ना वि., र. म. मा, र. पा., भै. र, रसचि., र. दी., र. मृ, यकृत्प्लीहाऽधिकारे ।

टि०—यो म. "पुष्परोधे रक्तगुल्मे स्त्रीपु दद्यादमु रसम्,, इत्यधिक पाठ । र. र, र क, यो म, भै र, रसचि., र दी, र. मृ, एपु ग्रन्थेपु उदराधिकारे "सूतेन वङ्ग तु सम नियोज्य तत्तुल्यशुल्वेन च गन्धकेन । विमर्दयेदर्करसेन याम मृदा च सलिप्य पुट दहीत ॥ वामारसैस्त परिभावयेच्च रसो भवेद्वासुकिभूषणोऽयम् । प्लीहश्च गुल्मस्य च शान्तयेऽस्य वल्लञ्च दद्याद्वसुचूर्णयुक्तम् ॥ अर्कस्य पत्राणि ससैन्धवानि लिप्त्वा पुटित्वा ह्यनुपाययेत ॥,, इति रसो निहितोऽस्ति सोऽक्षरशोऽस्मिन्नन्तर्भवति । पृथक् पाठस्थापनस्य कारणे तु उक्तग्रन्थकारा एव प्रष्टव्या ।

भाषा—पारे और वङ्गकीभस्म १–१ पल, शुद्धगन्धक और ताम्रभस्म ४–४ पल लेकर वारीकचूर्णकर आककेदूधसे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय भूधरयन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतल-होनेपर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा घीकेसाथ लेकर ४ मासे सफेदपुनर्नवाकीजड़ अथवा हल्दी गोमूत्रकेसाथ पीनेसे प्लीहा, गुल्म और उदररोगोंको यह नष्टकरताहै ३३३

३३४ वङ्गेश्वररसः (सप्तमः)

वङ्गसूतकयोः कृत्वा सारणां कन्यकाद्रवैः ।
सम्मर्द्य वटिकाः कृत्वा पाचयेत्काचभाजने ॥१६४३॥
यावच्चन्द्रनिभः शुभ्रो वङ्गेश्वरसमो गुणैः ।
पाण्डुप्रमेहदौर्बल्यकामलादिकनाशनः ॥ १६४४ ॥

नि र, र चि, र चं, वै चि, पाण्डुरोगे ।

टि०—यद्यपि रसशास्त्रे प्रकारविशेषेण धातुविशेषसम्मेलनप्रकारस्य सारणाशब्देन व्यवहारस्तथाऽप्यत्र गौणशब्देन सम्मेलनमात्रत्व मभिप्रेतम् ।

भाषा—हरितालकेयोगसे मारेहुए वङ्ग और शुद्धपारेको मिलाय घीकुंवारकेरससे १–२ दिन मर्दनकर गोलिया वनाय सुखाकर आतशीशीशीमें डालकर मुंहवन्दकर वालुकायन्त्रमें रख ४ पहरकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर देखे इसकारंग एकदम सफेदहोजाय तो सिद्ध समझे नहीं तो फिर पूर्ववत् मर्दनकरे । जव मक्खनकीतरह सफेद पारेकीभस्म होजाय तव निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्तीकी मात्रा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह पाण्डु, प्रमेह, दुर्बलता, कामलाप्रभृति रोगोंको नष्टकरताहै ॥ ३३४ ॥

३३५ वङ्गेश्वररसः (महान्) ८

वङ्गं कान्तञ्च गगनं हेमपुष्पं समं समम् ।
कुमारीरसतो भाव्यं सप्तवारं भिषग्वरैः ॥ १६४५ ॥
एष वङ्गेश्वरो नाम प्रमेहान्विंशतिं जयेत् ।
मूत्रकृच्छ्रं सोमरोगं पाण्डुरोगं महाश्मरीम् ।
रसायनवरः श्रेष्ठो नागार्जुनविनिर्मितः ॥ १६४६ ॥

नि. र., व. रा, रसायनस, यो. र., वै चि, प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—वङ्ग, कान्तलोह और अभ्रकभस्म, धतूरेकेफूल समभागलेकर वारीकचूर्णकर घीकुंवारकेरससे ७ दिनतक मर्दनकर १–१रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, सोमरोग, पाण्डु, असाध्य पथरीरोग इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ३३५ ॥

३३६ वङ्गेश्वररसः (बृहन्) ९.

सूतं गन्धं मृतं लोहं मृतमभ्रं समांशिकम् ।
हेमवङ्गञ्च मुक्ता च ताप्यमेवं समंसमम ॥ १६४७ ॥
सर्वेषां चूर्णितं कृत्वा कन्यारसविमर्दितम ।
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन वटिकां कुरु यत्नतः ॥ १६४८ ॥
वृहद्वङ्गेश्वरो ह्येष रक्तमूत्रे प्रशस्यते ।
श्वेतमेहं हस्तिमेहं कृच्छ्रमूत्रं तथैव च ॥ १६४९ ॥
सर्वप्रकारमेहांस्तु नाशयेद्विकल्पतः ।
अग्निवृद्धिं वयोवृद्धिं कान्तिवृद्धिं करोति च॥१६५०॥
क्षयरोगं निहन्त्याशु कासं पञ्चविधं तथा ।
कुष्ठमष्टादशविधं पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥ १६५१ ॥
शूलं श्वासं ज्वरं हिक्कां मन्दाग्नित्वमरोचकम ॥
क्रमेण शीलितो हन्ति वृक्षमिन्द्राशनि र्यथा ॥१६५२॥

भै र., र सु, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अभ्रक, सुवर्ण, वङ्ग, मोती, सुवर्णमाक्षिक इनकीभस्में समभागलेकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर घीकुंवारकेरससे १–२ रोजमर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे रक्तमूत्र, श्वेतमेह, हस्तिमेह, मूत्रकृच्छ्र प्रभृति समस्तमेह, मन्दाग्नि, क्षय, पाचप्रकारका कास और श्वास, १८ प्रकारकाकुष्ठ, पाण्डु, हलीमक, शूल, ज्वर, हिचकी, अरुचि, इनसवको यह नष्टकर कान्ति और आयुकीवृद्धिको करताहै ॥ ३३६ ॥

३३७ वङ्गेश्वररसः (दशमः)

रसेन वङ्गं द्विगुणं प्रगृह्य
विद्राव्य निक्षिप्य समुद्रजञ्च ।
विमर्दयेदम्लजलेन गोलं
कृत्वा सुसंवेष्ट्य पुटेत तीव्रम् ॥ १६५३ ॥
ततः क्षिपेत्तज्जलपात्रमध्ये
नीरं तु सन्त्यज्य गृहाण सूतम् ।
तद्रक्तियुग्मं मधुना समेतं
ददीत पथ्यं मधुरं समुद्रम् ॥ १६५४ ॥
तिलोत्थपिण्डीञ्च विपाच्य तक्रे
ददीत हिङ्गुं दधि वर्जयेच्च ।
मार्कण्डिकाचूर्णमपि प्रदेयं
रात्रौ गुडेनाऽपि घृतेन देयः ॥ १६५५ ॥

र दी., र चि, र. क, र सि, र का, र मृ, वै मृ, र चं, रसायनसं., प्रमेहे ।

टि०—“समानभागे शुचिताम्रवङ्गे तयो समान लवण प्रसिद्धम् । शरावयो र्धेहि विधाय मुद्रा दद्यात्पुट तस्य गजाऽभिधेयम् ॥ ततो भवेद्भस्म विशेषसौम्य यथानुपान ननु सेवनीयम् । समस्तमेहान्तकमग्निदायि कासापहारि श्वसनापहारि ॥ शुक्रस्य दार्ढ्यप्रविधानदक्ष प्रमत्तनारीसुरदानवीजम् । इद हि तत्त्व जटिलस्य सेवां विधाय वैद्येन मया प्रलब्धम् ॥” इति पाठो वै मृ, र च, रसायनस, र सि, एषु ग्रन्थेषु निहितोऽपि यन्नु न संप्राप्तः परीक्षाक्रमेणैव मानुषाणां [illegible] निर्णीतः प्रतीयते, तन्निर्दिष्टोऽसौ मया स्वयमेव विचार्य निर्णय कष्टमन्वभावि, अतोऽन्येन स्वेन कष्टं न करणीयमिति विभाति । [illegible] निःसंशयाऽयातव्यता प्रतीयते येन्यां [illegible] निपुण [illegible] इति मां [illegible] ।

भाषा—शुद्धवङ्गको गलाकर वङ्गसे आधा शुद्धपारा मिलाकर सेंधेनमकका पूर्ववत् प्रक्षेपदेकर भस्म तैयारकर जंभीरीप्रभृतिके रससे एकदिनमर्दनकर टिकियेंबनाय सुखाकर गजपुटमें आंचदे । स्वांगशीतलहोनेपर निकालकर इसे यदि विशुद्धभस्म तैयार होगईहो तो रहनेदे नहीं तो फिर अम्लद्रवमें मर्दनकर आंचदे । इसमें नमकमिलाहुआ है इसलिये पानीमें घोलकर रखदे । स्वच्छपानीको नितारकर फेंकदे । इसतरह २–३ वार करनेसे विशुद्धभस्म अलगहोजायगी । इसे सुखाकर शीशीमें भररक्खे । इसमेंसे १–२ रत्ती मधुकेसाथ देकर तिलकल्कको छाछमें पकाकर ऊपरसे दे, रात्रिमें आवल्ककीजडकीछाल अथवा पुष्पकाचूर्ण गुड अथवा घृतकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको दूरकरता है । इसमें हींग और दहीका निषेध है ॥ ३३७ ॥

३३८ वङ्गेश्वररसः (द्वादशः)

सूताच्च गन्धं द्विगुणं प्रगृह्य
गन्धेन वङ्गञ्च समं विमर्द्य ।
मूषोदरे भूधरयन्त्रमध्ये
विपाचयेत्तत्र समानभागम ॥ १६५६
लोहस्य भस्माऽपि नियोजनीयं
विमर्दयेद्गोक्षुरवारिणा तत ।
गुञ्जाद्वयं शर्करया समेतं
गुडूचिकासत्त्वयुतञ्च दद्यात ॥ १६५७ ॥
मेहाग्निहन्यात्सकलान्समूला-
न्विवर्धयेद्धातुगणं नितान्तम् ।
स्तम्भञ्च कुर्याद्वनिताविलासे
निजानुपानैः सकलामयघ्नम् ॥ १६५८ ॥

र शं, र क, र दी, प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा १भाग, शुद्धगन्धक और वङ्गभस्म २–२ भाग, लोहभस्म ५ भाग लेकर सबको पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय १–२ दिन गोखरूकेकाथसे मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा शक्कर और गिलोयसत्त्वकेसाथ मिलाकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तप्रमेह, धातुक्षय, शीघ्रशुक्रपतन इत्यादिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३३८ ॥

३३९ वङ्गेश्वररसः (त्रयोदशः)

शुद्धं वङ्गरजोऽथ गन्धरसकौ स्थाणुद्रवं तुल्यकं
ख्वाङ्गस्याऽर्द्धपिचुं हि ताप्यकनकौ सौवीरकं मर्दयेत।
आर्द्राद्भिः पिचुमन्दजातपयसा सम्भावयेद्विंशति,
गोलीकृत्य शुभेऽह्नि तञ्च पुटयेच्छीतं समाकर्षयेत ॥

वलङ्गामलकीप्रवालमधुना कृष्णामधुभ्यां त्वथो,
पीतः क्षौद्रयुतामलैः फलरसैर्योज्यो भिषग्जानता ।
विंशन्मेहसुदारुणाऽश्मरिभवान्दुर्मूत्रकृच्छ्राञ्जयेत्,
सद्योऽयं हरते वलीं सपलितां वङ्गेश्वरो रोगहा १६६०

र. श., प्रमेहे ।

भाषा—वङ्गभस्म, शुद्ध गन्धक, खपरिया, पारा और तूतिया १–१ कर्ष. कालासुरमा ८ माशे, सोनामाखी, सुवर्ण, सफेदसुरमा इनकीभस्में १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अदरख और नीमके-स्वरसोंसे २०–२० भावनाएं देकर टिकडिया बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकीआचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा आवलेकेपत्तोंके स्वरस और मधु अथवा पीपल मधु अथवा आंवले और मधु या अन्य अनुकूल फलरसकेसाथ देनेसे दारुण २० प्रकारकेप्रमेह, पथरी, मूत्रकृच्छ्र और वलीपलित इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३३९ ॥

३४० वङ्गेश्वररसः (चतुर्दशः)

रसमेकं त्रयो वङ्गं वङ्गसाम्येन गन्धकम् ।
मर्दयेद्दिनमेकन्तु कुमार्याः स्वरसे बुधः ॥ १६६१ ॥
संस्थाप्य गोलकं भाण्डे रोधयेत्सुदृढं मुखम् ।
पाचयेद्वालुकायन्त्रे दिनमेकं दृढाग्निना ॥ १६६२ ॥
स्वाङ्गशीतलमादाय सम्पूज्य द्विजदेवताः ।
पिप्पलीमधुना युक्तं सर्वमेहेषु योजयेत् ॥ १६६३ ॥
क्षीरान्नं योजयेत्पथ्यमनल्पक्षारवर्जितम् ।
रसो वङ्गेश्वरो नाम सर्वमेहनिकृन्तनः ॥ १६६४ ॥

नि र, वै चि. (ल), वै वि, रसायनस, र च, वै क, यो र, वै चि., र पा, प्रमेहाधिकारे ।

टि०—र च रसचण्डांशुरितिनाम । वै. क, नि र, व चि एषु द्वितीयस्थाने चिकित्सासार प्रथमस्थाने "शुद्धसूतसम गन्ध वङ्गञ्च द्विगुणं भवेत् । एकत्र मर्दयेत्सर्वं वल्लमेकं प्रमेहिणाम् ॥ शर्करामधुसंयुक्तं पथ्यञ्च क्षारवर्जितम् । एष वङ्गेश्वरो नाम सर्वमेहनिकृन्तन ॥" इति पाठो दृश्यते परन्तु स त्रुटित प्रतिभाति, स्वतन्त्रो वाऽस्तु परन्तु तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव करणीय । पाककरणेन शतगुणा शक्तिरभ्युदेष्यतीति विद्वद्भि विमर्शनीयम् । रसायनसङ्ग्रहे द्वितीयस्थाने रससाम्येन नवसारमधिकतया नियोज्य षोडशप्रहराऽग्निना एको योगो निष्पादितस्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव करणीय । गन्धकजारणेन साकं नरसारस्याऽपि सुतरां जारणं भविष्यति । नरसारजारणेन क्षतेरप्यभाव ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धवङ्ग और गन्धक ३–३ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुंवारकेरससे एकदिन मर्दनकर टिकड़ी बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर वालुकायन्त्रमें एकदिनकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर ब्राह्मण और देवताओंका पूजनकर पीपल और मधुकेसाथ १ रत्तीसे ३ रत्तीतक देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको नष्टकरताहै । खीर इसमें पथ्यहै सबतरहके क्षारोंसे परहेज़करे । इसका निरन्तरसेवनकरनेसे समस्तप्रमेह नष्टहोतेहैं ॥ ३४० ॥

३४१ वङ्गेश्वररसः (पञ्चदशः)

शुद्धं तालं शुद्धसूतं वङ्गं शुद्धञ्च गन्धकम् ।
ग्राहयेत्समभागेन सूर्यक्षीरे विमर्दयेत् ॥ १६६५ ॥
दिनसप्तकपर्यन्तं मर्दयेच्च निरन्तरम् ।
काचकूप्यां क्षिपेन्मुद्रां दत्त्वा चैव भिषग्वरः ॥ १६६६ ॥
द्वादशप्रहरं दद्यान्मन्दाग्निञ्च न संशयः ।
पुनरेव प्रकर्तव्यो विधिरेष न संशयः ॥ १६६७ ॥
रसो ग्राह्यः प्रयत्नेन रक्तिकाऽर्द्धं प्रदीयते ।
ताम्बूलपत्रसंयुक्तं वातव्याधिं विनाशयेत् ॥ १६६८ ॥
उन्मादे नष्टशुक्रे च वह्निहीने च दीयते ।
कुष्ठं व्रणं ज्वरञ्चैव नाशयेच्च किमद्भुतम् ॥ १६६९ ॥

र सु, वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—शुद्ध हरिताल, पारा, वङ्ग और गन्धक समभाग-लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर आककेदूधसे ७ रोज़ मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके मुहबन्दकर वालुकायन्त्रमें रख बारहपहरकी मन्दाग्निसे पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर फिर उसीतरह मर्दनकर आच दे । जबतक भस्म सिद्ध न होजाय तबतक इसीतरह आचें दे । सिद्धहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे आधीआधी रत्ती सुबहशाम पानमें रखकर देनेसे समस्तवातव्याधि, उन्माद, शुक्रक्षय, मन्दाग्नि, कुष्ठ, व्रण और ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३४१ ॥

३४२ वङ्गेश्वररसः (वृद्धाद्य.) १६

वङ्गं रसं ताम्रमयोजभस्म
सर्वैः समानं गगनं विमृद्य ।
गोक्षुररम्भाऽऽमलकीगवाक्षी-
रसैः पृथग्वासरकं रसेन्द्रः ॥ १६७० ॥
माषार्द्धमात्रो मधुना गृहीतो
जयेत्प्रमेहं रुधिरस्रुतिञ्च ।
कूष्माण्डनीरं ससितञ्च पेयं
कूष्माण्डखण्डेन युतञ्च शाकम् ॥ १६७१ ॥
प्रमेहं क्षयकासञ्च कृच्छ्रं प्रदरजं रजः ।
सर्वांश्रोगान्हरत्येष वलीपलितनाशनः ॥ १६७२ ॥
वीर्यं तेजो बलोत्साहौ रमयेद्रमणीशतम् ।
अनुपानविशेषेण तत्तद्रोगेषु योजयेत् ॥ १६७३ ॥
वङ्गेश्वराऽनुपानानि लिख्यन्ते कानिचिन्मया ।
श्वासे विश्वमतीसारे जातीफलसुजीरके ॥ १६७४ ॥
मरिचं शिग्रुमूलानां स्वरसेन समन्वितम् ।
शैत्ये दीप्योभये प्रोक्ते करहाटकिरातकौ ॥ १६७५ ॥
अजीर्णे रुचकं शुण्ठी प्लीह्नि गोमूत्रटङ्कणम् ।
सगुडं धातुहानौ च सुरसाधातुखाखसैः ॥
नागवल्लीदलसमं सम्प्रोक्तं ह्यनुपानकम् ॥ १६७६ ॥

रसायनसं, क्षये ।

३३६ वङ्गेश्वररसः (वृहन्) ९

सूतं गन्धं मृतं लोहं मृतमभ्रं समांशिकम्।
हेमवङ्गश्च मुक्ता च ताप्यमेवं समंसमम् ॥ १६४७ ॥
सर्वेषां चूर्णितं कृत्वा कन्यारसविमर्दितम्।
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन वटिकां कुरु यत्नतः ॥ १६४८ ॥
वृहद्वङ्गेश्वरो ह्येष रक्तमूत्रे प्रशस्यते।
श्वेतमेहं हस्तिमेहं कृच्छ्रमूत्रं तथैव च ॥ १६४९ ॥
सर्वप्रकारमेहांस्तु नाशयेदविकल्पतः।
अग्निवृद्धिं वयोवृद्धिं कान्तिवृद्धिं करोति च॥१६५०॥
क्षयरोगं निहन्त्याशु कासं पञ्चविधं तथा।
कुष्ठमष्टादशविधं पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥ १६५१ ॥
शूलं श्वासं ज्वरं हिक्कां मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥
क्रमेण शीलितो हन्ति वृक्षमिन्द्राशनि यथा ॥१६५२॥

भै र, र सु, प्रमेहे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अभ्रक, सुवर्ण, वङ्ग, मोती, सुवर्णमाक्षिक इनकीभस्में समभागलेकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर घीकुंवारकेरससे १–२ रोजमर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे रक्तमूत्र, श्वेतमेह, हस्तिमेह, मूत्रकृच्छ्र प्रभृति समस्तमेह, मन्दाग्नि, क्षय, पाचप्रकारका कास और श्वास, १८ प्रकारकाकुष्ठ, पाण्डु, हलीमक, शूल, ज्वर, हिचकी, अरुचि, इनसवको यह नष्टकर कान्ति और आयुकीवृद्धिको करताहै ॥ ३३६ ॥

३३७ वङ्गेश्वररसः (दशमः)

रसेन वङ्गं द्विगुणं प्रगृह्य
विद्राव्य निक्षिप्य समुद्रजञ्च।
विमर्दयेदम्लजलेन गोलं
कृत्वा सुसंवेष्ट्य पुटेत तीव्रम् ॥ १६५३ ॥
ततः क्षिपेत्तज्जलपात्रमध्ये
नीरं तु सन्त्यज्य गृहाण सूतम्।
तद्रक्तियुग्मं मधुना समेतं
ददीत पथ्यं मधुरं समुद्रम् ॥ १६५४ ॥
तिलोत्थपिण्डीश्च विपाच्य तक्रे
ददीत हिङ्गुं दधि वर्जयेच्च।
मार्कण्डिकाचूर्णमपि प्रदेयं
रात्रौ गुडेनाऽपि घृतेन देयः ॥ १६५५ ॥

र दी., र चि, र. क, र सि, र का, र मृ, वै मृ, र च, रसायनम, प्रमेहे।

टि०—"ममानभागे शुचिताम्रवङ्गे तयो ममान ल्वण प्रसिद्धम्। शरावयो र्धेहि विधाय मुद्रा ददेत्पुट तम्य गजाऽभिधेयम ॥ ततो भवेद्भस्म विशेषमौम्य यथानुपान ननु सेवनीयम्। समस्तमेहान्तकमग्निदायि कासापहारि श्वमनापहारि ॥ शुक्रस्य दार्ढ्यप्रविधानदक्ष प्रमत्तनारीमुखदानवीजम्। इद हि तत्त्व जटिलस्य सेवा विधाय वैद्येन मया प्रलब्धम ॥" इति पाठो वै मृ, र च, रसायनस, र सि, एषु ग्रन्थेषु निहितोऽस्ति परन्तु म मोरश्वरेण परीक्षामकृत्वैव साधुवाक्ये विश्वस्य निहित प्रतीयते, तन्निर्दिष्टदिशा मया स्वयमेव द्वित्रवार निरर्थक कष्टमन्वभावि, अतोऽन्येन जनेन कष्ट न करणीयमिति विज्ञप्ति। ताम्रनिक्षेपस्याऽत्यावश्यता प्रतीयते चेन्मृत ताम्र नियुज्य रसो निष्पादनीय इति सर्व ममश्रम भविष्यति।

भाषा—शुद्धवङ्गको गलाकर वङ्गसे आधा शुद्धपारा मिलाकर सेंधेनमकका पूर्ववत् प्रक्षेपदेकर भस्म तैयारकर जंभीरीप्रभृतिके रससे एकदिनमर्दनकर टिकड़ीवनाय सुखाकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर देखे यदि विशुद्धभस्म तैयार होगईहो तो रखलेवे नहीं तो फिर अम्लद्रवमें मर्दनकर आचदे। इसमें नमकमिलाहुआ है इसलिये पानीमें घोलकर रखदे। स्वच्छपानीको नितारकर फेंकदे। इसतरह २–३ वार करनेमे विशुद्धभस्म अलगहोजायगी। इसे सुखाकर शीशीमें भररक्खे। इसमेंसे २–२ रत्ती मधुकेसाथ देकर तिलकल्कको छाछमें पकाकर ऊपरसे दे, रात्रिमें आवळकीजड़कीछाल अथवा पुष्पकाचूर्ण गुड अथवा घृतकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको दूरकरता है। इसमें हींग और दहीका निपेध है ॥ ३३७ ॥

३३८ वङ्गेश्वररसः (द्वादशः)

सूताच्च गन्धं द्विगुणं प्रगृह्य
गन्धेन वङ्गञ्च समं विमर्द्य।
मृषोदरे भूधरयन्त्रमध्ये
विपाचयेत्तत्र समानभागम् ॥ १६५६
लोहस्य भस्माऽपि नियोजनीयं
विमर्दयेद्गोक्षुरवारिणा तत्।
गुञ्जाद्वयं शर्करया समेतं
गुडूचिकासत्त्वयुतञ्च दद्यात ॥ १६५७ ॥
मेहान्निहन्यात्सकलान्समूला-
न्विवर्धयेद्धातुगणं नितान्तम्।
स्तम्भञ्च कुर्याद्वनिताविलासे
निजानुपानैः सकलामयघ्नम् ॥ १६५८ ॥

र श, र क, र दी, प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा १भाग, शुद्धगन्धक और वङ्गभस्म २–२ भाग, लोहभस्म ५ भाग लेकर सवको पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय १–२ दिन गोखरूकेक्वाथसे मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा शक्कर और गिलोयसत्त्वकेसाथ मिलाकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तप्रमेह, धातुक्षय, शीघ्रशुक्रपतन इत्यादिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३३८ ॥

३३९ वङ्गेश्वररसः (त्रयोदश)

शुद्धं वङ्गरजोऽथ गन्धरसकौ स्थाणूद्भवं तुत्थकं
ख्वाङ्कस्याऽर्द्धपिचुं हि ताप्यकनकौ सौवीरकं मर्दयेत्।
आर्द्राद्भिः पिचुमन्दजातपयसा सम्भावयेद्विंशति,
गोलीकृत्य शुभेऽह्नि तच्च पुटयेच्छीतं समाकर्षयेत् ॥

वल्लश्चामलकीप्रवालमधुना कृष्णामधुभ्यां त्वथो,
पीतः क्षौद्रयुतामलेः फलरसैर्योज्यो भिषग्जानता ।
विंशन्मेहसुदारुणाऽश्मरिभवान्मूत्रकृच्छ्राञ्जयेत्,
सद्योऽयं हरते वली सपलितां वङ्गेश्वरो रोगहा १६६०

र शं , प्रमेहे ।

भाषा—वङ्गभस्म, शुद्ध गन्धक, खपरिया, पारा और तूतिया १–१ कर्ष, कालासुरमा ८ माशे, सोनामाखी, सुवर्ण, सफेदसुरमा इनकीभस्में १–१ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अदरख और नीमके-स्वरसोंसे २०–२० भावनाएं देकर टिकड़िया वनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटकीआचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा आवलेकेपत्तोंके स्वरस और मधु अथवा पीपल मधु अथवा आवले और मधु या अन्य अनुकूल फलरसकेसाथ देनेसे दारुण २० प्रकारकेप्रमेह, पथरी, मूत्रकृच्छ्र और वलीपलित इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ३३९ ॥

३४० वङ्गेश्वररसः (चतुर्दशः)

रसमेकं त्रयो वङ्गं वङ्गसाम्येन गन्धकम् ।
मर्दयेद्दिनमेकन्तु कुमार्याः स्वरसे बुधः ॥ १६६१ ॥
संस्थाप्य गोलकं भाण्डे रोधयेत्सुदृढं मुखम् ।
पाचयेद्वालुकायन्त्रे दिनमेकं दृढाग्निना ॥ १६६२ ॥
स्वाङ्गशीतलमादाय सम्पूज्य द्विजदेवताः ।
पिप्पलीमधुना युक्तं सर्वमेहेषु योजयेत् ॥ १६६३ ॥
क्षीरान्नं योजयेत्पथ्यमनल्पक्षारवर्जितम् ।
रसो वङ्गेश्वरो नाम सर्वमेहनिकृन्तनः ॥ १६६४ ॥

नि र , वैं चि (ल), वै वि , रसायनस., र च , वै क , यो र , वै चि , र पा , प्रमेहाधिकारे ।

टि०—र च रसचण्डांशुरितिनाम । वे क, नि. र, वे चि एषु द्वितीयस्थाने चिकित्सासारे प्रथमस्थाने "शुद्धसूतसम गन्ध वङ्गञ्च द्विगुण भवेत् । एकत्र मर्दयेत्सर्वं वल्लमेक प्रमेहिणाम् ॥ शर्करामधुसयुक्तं पथ्यञ्च क्षारवर्जितम् । एष वङ्गेश्वरो नाम सर्वमेहनिकृन्तन ॥" इति पाठो दृश्यते परन्तु स त्रुटित प्रतिभाति, स्वतन्त्रो वाऽस्तु परन्तु तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव करणीय । पाककरणेन शतगुणा शक्तिरभ्युदेष्यतीति विद्वद्भि विमर्शनीयम् । रसायनसङ्ग्रहे द्वितीयस्थाने रससाम्येन नवसारमधिकतया नियोज्य पोटशप्रहराऽग्निना एको योगो निष्पादितस्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव करणीय । गन्धकजारणेन साक नरसारस्याऽपि सुतरा जारण भविष्यति । नरसारजारणेन क्षतेरप्यभाव ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धवङ्ग और गन्धक ३–३ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुवारकेरससे एकदिन मर्दनकर टिकड़ी वनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर वालुकायन्त्रमें एकदिनकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर ब्राह्मण और देवताओंका पूजनकर पीपल और मधुकेसाथ १ रत्तीसे ३ रत्तीतक देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको नष्टकरताहै । खीर इसमें पथ्यहै सवतरहके क्षारोंसे परहेज़करे । इसका निरन्तरसेवनकरनेसे समस्तप्रमेह नष्टहोतेहै ॥ ३४० ॥

३४१ वङ्गेश्वररसः (पञ्चदशः)

शुद्धं तालं शुद्धसूतं वङ्गं शुद्धञ्च गन्धकम् ।
ग्राहयेत्समभागेन सूर्यक्षीरैर्विमर्दयेत् ॥ १६६५ ॥
दिनसप्तकपर्यन्तं मर्दयेच्च निरन्तरम् ।
काचकूप्यां क्षिपेन्मुद्रां दत्त्वा चैव भिषग्वरः ॥ १६६६ ॥
द्वादशप्रहरं दद्यान्मन्दाग्निश्च न संशयः ।
पुनरेव प्रकर्तव्यो विधिरेष न संशयः ॥ १६६७ ॥
रसो ग्राह्यः प्रयत्नेन रक्तिकाऽर्द्धं प्रदीयते ।
ताम्बूलपत्रसंयुक्तं वातव्याधिं विनाशयेत् ॥ १६६८ ॥
उन्मादे नष्टशुक्रे च वह्निहीने च दीयते ।
कुष्ठं व्रणं ज्वरश्चैव नाशयेच्च किमद्भुतम् ॥ १६६९ ॥

र सु , वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—शुद्ध हरिताल, पारा, वङ्ग और गन्धक समभागलेकर नीलवर्ण कज्जलीकर आककेदूधसे ७ रोज़ मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके मुंहवन्दकर वालुकायन्त्रमें रख वारहपहरकी मन्दाग्निसे पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर फिर उसीतरह मर्दनकर आच दे । जवतक भस्म सिद्ध न होजाय तवतक इसीतरह आचें दे । सिद्धहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे आधीआधी रत्ती सुवहशाम पानमें रखकर देनेसे समस्तवातव्याधि, उन्माद, शुक्रक्षय, मन्दाग्नि, कुष्ठ, व्रण और ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३४१ ॥

३४२ वङ्गेश्वररसः (वृद्धाद्यः) १६

वङ्गं रसं ताम्रमयोजभस्म
सर्वैः समानं गगनं विमृद्य ।
गोक्षुररम्भाऽऽमलकीगवाक्षी-
रसैः पृथग्वासरकं रसेन्द्रः ॥ १६७० ॥
माषार्द्धमात्रो मधुना गृहीतो
जयेत्प्रमेहं रुधिरस्रुतिञ्च ।
कूष्माण्डनीरं ससितञ्च पेयं
कूष्माण्डखण्डेन युतञ्च शाकम् ॥१६७१॥
प्रमेहं क्षयकासञ्च कृच्छ्रं प्रदरजं रजः ।
सर्वान्रोगान्हरत्येष वलीपलितनाशनः ॥ १६७२ ॥
वीर्यं तेजो वलोत्साहौ रमयेद्रमणीशतम् ।
अनुपानविशेषेण तत्तद्रोगेषु योजयेत् ॥ १६७३ ॥
वङ्गेश्वराऽनुपानानि लिख्यन्ते कानिचिन्मया ।
श्वासे विश्वमतीसारे जातीफलसुजीरके ॥ १६७४ ॥
मरिचं शिग्रुमूलानां स्वरसेन समान्वितम् ।
शैत्ये दीप्योभये प्रोक्ते करहाटकिरातकौ ॥ १६७५ ॥
अजीर्णे रुचकं शुण्ठी प्लीह्नि गोमूत्रटङ्कणम् ।
सगुडं धातुहानौ च सुरसाधातुखाखसः ॥
नागवल्लीदलसमं सम्प्रोक्तं ह्यनुपानकम् ॥ १६७६ ॥

रसायनसं , क्षये ।

भाषा—वङ्ग, पारा, ताम्र, लोह इनकीभस्में समभाग, अभ्रकभस्म सबकीबराबर लेकर गोखरू, केलेकाकन्द, आवले और इन्द्रायणके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २ से ४ रत्तीतककी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ लेकर शक्करमिलाहुआ सफेदकोंहलेकारस पीनेसे समस्तप्रमेह, रुधिरस्राव, क्षयजकास, मूत्रकृच्छ्र, रक्तप्रदर, वली, पलित, वीर्य–तेज और बलकाह्रास, नपुंसकत्व इनसबको यह नष्टकरता है। श्वासमें सोंठ, अतिसारमें जायफलऔर जीरा, शीतप्रधानव्याधिमें मरिच और सहिजनकीजडकारस अथवा देशी और खुरासानी अजवाइन, अकलकरा और चिरायता; अजीर्णमें संचल और सोंठ, प्लीहामें गोमूत्र और सुहागा, धातुक्षीणतामें गुड़ अथवा तुलसी, शिलाजीत और पोस्तकेडोडे अथवा पानकेरसकेसाथ देवे ॥ ३४२ ॥

३४३ वङ्गेश्वररसः (सप्तदश·)

वङ्गभस्म त्रयोभागा वङ्गपादं रसं क्षिपेत् ।
रसतुल्यं विषं योज्यं त्रिभिस्तुल्यं मृतायसम् ॥१६७७॥
गन्धकं विषतुल्यं स्यान्मर्दयेद्भृङ्गजद्रवैः ।
कूपिकायां विनिक्षिप्य तेजोयन्त्रे तु पाचयेत् ॥१६७८॥
यामद्वादशपर्यन्तं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
देवपुष्पं सकर्पूरं चातुर्जातं फलत्रिकम् ॥ १६७९ ॥
जातीफलत्रिकं सर्वमेतदेकत्र चूर्णयेत् ।
सर्वं खल्वतले क्षिप्त्वा भृङ्गद्रावैर्दिनत्रयम् ॥ १६८० ॥
मर्दयेन्मधुना गाढं नाम्ना वङ्गेश्वरो रसः ।
प्रमेहेषु च सर्वेषु मूत्रकृच्छ्रे क्षये तथा ॥
मूत्रोत्थवातरोगेषु गुल्मे सर्वहरः स्मृतः ॥ १६८१ ॥

रसायनस., प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—वङ्गभस्म १२ माशे, पारदभस्म और शुद्धवछनाग ३–३ माशे, लोहभस्म १८ माशे, शुद्धगन्धक ३ माशे लेकर सबको मिलाय वारीकचूर्णकर भंगरेकेरससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख १२ पहरकी अग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर लौग, शुद्धकपूर, तज, पत्रज, इलायची, नागकेसर, हर्रे, वहेड़ा, आवला, जायफल, विडङ्ग, नागरमोथा, चित्रक येसब ३–३ माशे लेकर वारीकचूर्णकर पूर्वरसमें मिलाय भंगरेकेरससे ३ रोज मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ सेवनकरनेसे समस्तप्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, क्षय, मूत्राशयोत्थवातरोग और गुल्म इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३४३ ॥

३४४ वङ्गेश्वररसः (अष्टादश·)

रसं वङ्गं समं कृत्वा चतुर्भागं तु गन्धकम् ।
कुमारीरससंयुक्तं दिनमेकं विमर्दयेत् ॥ १६८२ ॥
फलत्रयकषायेण त्रिदिनं मर्दयेद् दृढम् ।
क्षुद्रीपमध्यतीव्राग्नौ वालुकायन्त्रगं पचेत् ॥ १६८३ ॥
स्वाङ्गशीतं समादाय चूर्णयेद्भिषगुत्तमः ।
अश्वगन्धाऽमृतागारमोचाग्निशतावरी- ॥ १६८४ ॥
गोक्षुरधात्रीकूष्माण्डीवाराहीपत्रमागधी- ।
त्रिफलामर्कटीमुस्तायष्टीमधुसमन्वितम् ॥ १६८५ ॥
सर्वसाम्यसितायुक्तं चूर्णं पत्राङ्कसंयुतम् ।
गुञ्जाचतुष्टयं मात्रा गोक्षीररयाऽनुपानतः ॥ १६८६ ॥
प्रातरुत्थाय सेवेत लवणाम्लौ विवर्जयेत् ।
बहुमूत्रं मूत्रकृच्छ्रं रक्तशुक्रप्रमेहकम् ॥ १६८७ ॥
मधुमेहं नष्टशुक्रं नष्टलिङ्गं च नाशयेत् ।
सर्वप्रमेहशमनो वङ्गेश्वर इति स्मृतः ॥ १६८८ ॥

रसायनस., वै. चि, यो. र, र पा. प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा और वङ्गभस्म १–१ भाग, शुद्धगन्धक ४ भागलेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर घीकुंवारकेरससे एकदिनमर्दनकर ३ दिन त्रिफलाकेकाढेसे मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख दीप, मध्य और तीव्रइसक्रमसे १२ पहरकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रसछोडे। फिर असगन्ध, गिलोयसत्त्व, मोचरस, शतावर, गोखरू, आवले, भुईकोंहला, वाराही, पत्रज, पीपल, त्रिफला केवाच नागरमोथा, मुलहटी, येसबसमभागके चूर्णमें बराबरकी शक्करमिलावे। इसमेंसे २ कर्ष चूर्ण और पूर्वरसकी ४ रत्ती मिलाकर गोदुग्धकेसाथ रोजाना सुबहमेंलेनेसे बहुमूत्र, मूत्रकृच्छ्र, रक्तशुक्र, शुक्रप्रमेह, मधुमेह, शुक्रक्षय, ध्वजभङ्ग, इनसबको यह नष्टकरताहै। इसके प्रयोगमें लवण और अम्ल वर्जितकरना ॥ ३४४ ॥

३४५ वङ्गेश्वररसः (ऊनविंश·)

सूतं गन्धकतालसाऽभ्रसशिलं प्रोक्तं तथा माक्षिकं,
सर्वं तुल्यमथापि वङ्गममलं चाऽर्द्धाऽर्द्धभागं नयेत् ।
तत्सम्मर्द्य च दुग्धिकाभवरसैस्तद्धंसपादीद्रवै-,
स्तद्वारिद्रहरीतकीभवरसै र्यावत्त्रयो वासराः ॥
एवं यत्नविधौ परेशकृपया जायेत वङ्गेश्वरः,
सर्वान्मेहगदान्निहन्ति सततं मूत्रादिदोषाञ्जयेत् १६८९

र मु, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, रसमाणिक्य, अभ्रकभस्म, शुद्धमैनसिल और सोनामाखी समभाग और वङ्गभस्म सबसेचतुर्थांश लेकर नीलवर्णकज्जलीकर छोटीदूधी, हंसराज, हल्दी, हर्रे इनके रसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तप्रमेह और मूत्राशयकेदोष नष्टहोतेहैं ॥ ३४५ ॥

३४६ वङ्गेश्वररसः (विंशः)

भागचतुष्कं वङ्गं मृतं हि शङ्कं रसं त्रिभागैकम् ।
पृथग्द्विकं हरितालं काञ्जिकपिष्टं शरावसम्पुटके १६९०
पुटेद्गजाख्ये यन्त्रे वङ्गेश्वरनामतः प्रसिद्धरस ।
वङ्गेश्वरोऽयमवले बलदो नृणां हि रसिकानाम् १६९१

रसचि , वाजीकरणे ।

भाषा—वङ्गभस्म ४ भाग शङ्खभस्म और पारा १–१ भाग, रसमाणिक्य अथवा हरितालभस्म और गोदन्तीभस्म २–२ भाग लेकर एकदिन काञ्जीमें मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ रत्तीसे २ रत्तीतक अग्निवलानुसारमात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको नष्टकर नपुंसकत्वको दूरकरताहै ॥ ३४६ ॥

३४७ वङ्गेश्वररसः (एकविंशः)

रसवङ्गखहेतिभिस्समानं
जतु चाश्मप्रभवं मधुप्रयुक्तम्।
सितयाऽखिलमेहनाशनाय
खलु माषद्वयसम्मितं निषेवेत ॥१६९२॥

चि क, प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—पारद, वङ्ग, अभ्रक, ताम्रभस्म समभाग लेकर सबकी बराबर शुद्ध शिलाजीत मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्तीकी मात्रा मधु और शक्कर मिलाकर देनेसे समस्तप्रमेह नष्टहोतेहैं ॥

३४८ वङ्गेश्वरादिवटी

मृतं वङ्गं मृतं लोहं मृगनाभिश्च कुङ्कुमम्।
अभ्रकं पारदश्चैव हिङ्गुलु गन्धकस्तथा ॥ १६९३ ॥
मस्तकी नागफेनश्च कङ्कोलं जातिपत्रकम्।
जातीफलं प्रियालं त्वक् शुण्ठी मर्कटिवीजकम् १६९४
वला तुगा च कर्पूरो लवङ्गं गजपिप्पली।
आकल्लकरभश्चैव नागो भुजगवल्लरी ॥ १६९५ ॥
नागकेशरमुस्ताग्निचन्दनं चव्यकं शटी।
मरिचं पत्रकं यष्टी शालमलीत्वक्च कट्फलम् १६९६
वर्षाभूर्मुशली चैव क्षीरकन्दः शतावरी।
कृष्णाऽश्वगन्धा कनकं मांसीमोचरसौ वला॥१६९७॥
भृङ्गराजश्च गोकण्टः कुन्दुरुः सयवानिकः।
समुद्रशोषवीजानि त्रिपञ्चाशन्मितं गणम् ॥ १६९८ ॥
योजयेत्समभागञ्च सूक्ष्मचूर्णीकृतं भिषक्।
अष्टांशां विजयां शुद्धां सितां सर्वसमां क्षिपेत् १६९९
गुटिका मधुसर्पिभ्यां कर्षमात्रा विधीयते।
प्रभाते वाऽथ मध्याह्ने सन्ध्यायां वा विशेषतः १७००
पक्कां खादेदनुपिबेत्पयः शर्करया युतम्।
वलवृद्धिमवाप्नोति रेतोवृद्धिं विशेषतः ॥ १७०१ ॥
रेतःस्तम्भं वयःस्तम्भं वलीपलितनाशनम्।
क्षैण्यज्वरातिसारांश्च ग्रहणीं नाशयेदपि ॥ १७०२ ॥
नारीवश्यकरश्चैव नारीद्रवकरन्तथा।
कान्तिदं प्रतिभादञ्च वुद्धिमेधाविवर्धनम् ॥
संवत्सरप्रयोगेण सर्वव्याधिविनाशनम् ॥ १७०३ ॥

वृ यो त, वाजीकरणे।

भाषा—वङ्ग और लोहभस्म, कस्तूरी, केशर, अभ्रक, पारा और हिङ्गुलभस्म, शुद्धगन्धक, मस्तगी, अफीम, शीतलचीनी, जावित्री, जायफल, चिरोंजी, तज, सोंठ, केवांचकीगिरी, वला, वंसलोचन, शुद्धकपूर, लौंग, गजपीपल, अकलकरा, नागभस्म, कुलिंजन, नागकेशर, नागरमोथा, चित्रक, लाल और सफेद चन्दन, चव्य, कचूर, मरिच, पत्रज, मुलहठी, सेंमलकीछाल, कायफल, पुनर्नवा, मुशली, क्षीरविदारी अथवा दूधियाकन्द, शतावर, पीपल, असगन्ध, धतूरेकेवीज, जटामासी, मोचरस, महावला, स्याहसफेदभंगरा, गोखरू, कुंदरू, अजवाइन, समुद्रशोषकेवीज, येसब समभाग, आठवांहिस्सा भाग, शक्कर सबकीवरावर मिलाकर मधु और घीमें १–१ तोलेकी गोलिया वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली प्रातःकाल, मध्याह्न अथवा सन्ध्याकालमें लेकर दूध पीनेसे वल और शुक्रकीवृद्धिहोतीहै शुक्र और अवस्थाकास्तम्भनहोताहै। वली, पलित, क्षय, ज्वर, अतिसार, ग्रहणी इनसवको यह नष्टकरताहै। कान्ति, प्रतिभा, वुद्धि, मेधा, इनसवको वढाताहै। वर्षभरलगातार प्रयोगकरनेसे समस्तरोग नष्टहोतेहैं ॥ ३४८ ॥

३४९ वचालोहम्

वचामयैस्तुल्यमयोमयं रजो
विलीढमाज्येन मधूल्वणेन तत्।
निहन्ति शूलं परिणामसम्भवं
वलोद्धतं कंसमिवासुरं हरिः ॥ १७०४ ॥

लो प., टो., शूलाधिकारे। टोडरानन्दे आमयं न दृश्यते।

भाषा—वच और कुठ समभाग लेकर दोनोंकी वरावर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ रत्तीकी मात्रा घी और मधुकेसाथ लेनेसे परिणामशूल नष्टहोताहै ॥ ३४९ ॥

३५० वज्रकायवटी

भ्रामकं माक्षिकञ्चैव लोहत्रयसमन्वितम्।
शक्तिवीजसमायुक्तं वीजत्रयसमन्वितम् ॥ १७०५ ॥
त्रिदण्डीमर्दितं सूतमेकीकृत्य च गोलकम्।
अन्धमूषागतं ध्मातं समावर्तं तु कारयेत् ॥ १७०६ ॥
पूजां कृत्वा क्षिपेद्वक्त्रे षण्मासात्स भवेत्प्रियः।
अभयः सर्वशत्रूणां वज्रकायो महावलः ॥ १७०७ ॥

रसार्णवे, रसायनाऽधिकारे।

भाषा—भ्रामकलोह, सुवर्णमाक्षिक, सुवर्ण, रजत, ताम्र, शुद्धगन्धक, सुवर्ण–रजत और ताम्रवीज तथा त्रिदण्डी (दिव्यौषधि) के रसमें मर्दनकरके गोलीवनायाहुआ पारा, येसब समभाग लेकर अन्धमूषामें वन्दकर धमनकराके गोलीवाधे। फिर कुमारीवगैरहकी पूजाकर इसगोलीको ६ महीनेतक मुहमें रखनेसे और रसायनोक्त विधिसे रहनेसे वज्रकाय और महावल होकर समस्तशत्रुओंके भयसे रहित होजाताहै ॥ ३५० ॥

३५१ वज्रखेचरीगुटिका (प्रथमा)

शुद्धं सूतं मृतं वज्रं व्योमसत्त्वं सहाटकम्।
अम्लवर्गे समं सर्वं मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ १७०८ ॥

तद्गोलकं दृढं कृत्वा छायायां शोषयेत्ततः।
गोजिह्वा ब्रह्मकार्पासी राजिका यवचिञ्चिका॥१७०९॥
वन्ध्या सर्वं समं पिष्ट्वा पूर्वगोलं प्रलेपयेत्।
रुद्ध्वा गजपुटे पक्त्वा समुद्धृत्याऽथ लेपयेत्॥१७१०॥
रुद्ध्वा मूष्यां धमेद्गाढं गुटिका वज्रखेचरी।
जायते धारिता वक्त्रे वत्सरान्मृत्युनाशिनी॥१७११॥
भूताडवटचूर्णन्तु पलैकं सितया युतम्।
भक्षयेत्कामणार्थन्तु ब्रह्मायुर्जायते नरः॥१७१२॥

र. ख र का, रसायनाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा, हीरा, अभ्रकसत्त्व, सुवर्ण इनकीभस्में सममागलेकर जभीरीवगेरह अम्लवर्गसे ३ रोज मर्दनकर गोला-बनाय छायामें सुखाकर वनगोभी, लालकपासकेबीज, राई, तितली, वाझखेखसा येसब गोलेकी वरावरलेकर अच्छीतरह-पीस गोलेपर लपेट शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आचदे। फिर दूसरा लेपदेकर वज्रमूषामें बन्दकर दृढधमनकरानेसे गुटिका तैयारहोगी इसे एकवर्षतकमुहमें रक्खे और कालीमुसली तथा पाषाणभेद समभागलेकर वरावरकीशक्करमिलाय एकपल लेकर दूधपीनेसे समस्तरोगोंसे निर्मुक्तहोकर पूर्णायुको प्राप्तहोताहै॥

३५२ वज्रखेचरीगुटिका (द्वितीया)

वज्रभस्म समं सूतं हंसपाद्या द्रवैस्त्र्यहम्।
मर्दितं द्वन्द्वलिप्तायां मूषायां चान्धितं पुटेत्॥१७१३॥
भूधराख्ये दिवारात्रौ समुद्धृत्याऽथ तस्य वै।
पूर्वांशं पारदं दत्त्वा हंसपाद्या द्रवैस्त्र्यहम्॥१७१४॥
मर्दितं द्वन्द्वलिप्तायां मूषायां चान्धितं धमेत्।
तत्खोटं धमनाच्छोध्यं काचटङ्कणयोगतः॥१७१५॥
नक्षत्राभं भवेद्यावत्तावद्धाम्यं पुनःपुनः।
तद्रसं व्योमसत्त्वञ्च काञ्चनञ्च समं समम्॥१७१६॥
समावर्त्य ततः कार्या गुटिका वक्त्रमध्यगा।
वज्रखेचरिका नाम वत्सरान्मृत्युनाशिनी॥१७१७॥
वलीपलितनिर्मुक्तो दिव्यकायो भवेन्नरः।
निर्गुण्डीमूलचूर्णन्तु कर्षमाज्यैः पिवेदनु॥१७१८॥

र ख, रसायने।

भाषा—हीराभस्म और अग्निस्थायी बुभुक्षित पारा सम-भागलेकर हसराजकेरससे ३ दिन मर्दनकर गोलावनाय नागवङ्ग-भस्मलिप्त अन्धमूषामें बन्दकर एकदिनरात भूधरयन्त्रमें अग्नि-देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्वप्रमाणमें नयापारा मिला-कर हसराजके रससे ३ दिन मर्दनकर गोलावनाय द्वन्द्वलिप्तमूषामें बन्दकर धमनकरनेसे खोटतैयारहोगा। इसखोटको प्रकाशमूषामें रखकर धमनकरे और सुहागा तथा काचनमककी चुक्टी देता-जाय, इससे तमाममल जलकर एकदमसफेद चमकदार वस्तु जुदी होजायगीफिर उसकीवरावर अभ्रकसत्त्व और शुद्धसुवर्ण मिलाकर एकजगह गलाकर गोलीवनाय मुहमें रक्खे ऊपरसे निर्गुण्डीके-कन्दअथवाजडका एककर्षचूर्ण घीमें मिलाकर लेवे। इसतरह एक-वर्षभर प्रयोगकरनेसे वलीपलितसे निर्मुक्तहोकर वज्रकायहोताहै॥

३५३ वज्रगर्भपोट्टलीरसः

वज्रहेमरसभस्मगन्धकान्मूर्च्छितश्च परिमर्दयेद्दिनम्।
चित्रकार्द्रकरसे वराटकान्पूरयेच्च पुटयेच्च पूर्ववत्
वज्रगर्भवरपोट्टलीरसो जायते क्षयविनाशनः परः।
रक्तिकात्रयमिनं रसं ददेद्वल्लपञ्चमरिचैर्घृतप्लुतैः१७२०
सर्वरोगविनिवृत्तये तथा योजयेच्च कुरु नाऽत्र संशयम्,
रोगलेशरहितोऽपि योजयेत्पुष्टिवुद्धिवलवीर्यवृद्धये॥

र. दी, क्षयादिरोगे।

भाषा—हीरा, सुवर्ण, पारदभस्म, शुद्धगन्धक, ये क्रमवृद्ध-भागलेकर अच्छीतरह शुष्कमर्दनकर चित्रक और अदरखकेरससे एकदिन मर्दनकर समभाग पीलीकौड़ियोंमें भर गाय अथवा आककेदूधमें पिसेहुए सुहागेसे कौड़ियोंका मुहवन्दकर जभीरी अथवा विजोरेके अन्दर कौड़ियोंको डालकर ४ तह मलमल वगैरहके कपडेसे लपेटकर कच्चेसूतसे गेंदकेसदृश वनाय ऊपर ६–७ कपडमिट्टी लगाकर अच्छीतरह सुखाय हाथभर लम्बेचौड़े गढ़ेमें जङ्गलीकण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर खरलकर रसछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा १८ रत्ती-मरिचकेचूर्णकेसाथ घीमेंमिलाकरदेनेसे क्षयादिसमस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै रोगरहितमनुष्यको देनेसे शरीर, वुद्धि, वल और वीर्यकी वृद्धिहोतीहै॥ ३५३॥

३५४ वज्रगर्भरसः

सूतं गन्धं हेमभस्मार्द्धकेन
घृष्ट्वा यामं कान्तमूषान्तुगर्भे।
क्षिप्त्वा रुद्ध्वा भूधरे तं पुटेत
सूतः सिद्धो जायते वज्रगर्भः॥१७२२॥
वर्षदभ्रं नागवल्लीरसेन
मध्वाज्याभ्यां रक्तिकां तस्य दद्यात्।
दिव्यो देहो जायते वत्सराऽर्द्धे
रोगाः सर्वे मासतो यान्ति नाशम् १७२३
क्षारं तीक्ष्णं भूरि चाऽम्लञ्च वर्ज्यं
सूताऽजीर्णं जायते तेन यस्मात्।
सूताऽजीर्णे नाभिदेशे तु शूलं
दाहो मान्द्यं जाड्यमालस्यनिद्रे॥१७२४॥
सत्त्वत्यागो जायते वुद्धिनाश-
स्तत्त्यागार्थं कन्यकाकन्दमाज्यम्।
दद्याद्वा खण्डमाध्वीकयुक्तं
प्रात.काले त्रैफलं चूर्णमत्र॥१७२५॥
व्योषं यद्वा वीजपूरस्य नीरैः
पथ्यं यद्वा शुण्ठिखण्डप्रयुक्तम्।
जीर्णे पश्चात्खण्डमासेवयेत
रात्रौ दुग्धं प्रातराज्यं सभक्तम्॥१७२६॥
दध्याज्यं वा सन्ततं वाऽपि गोजं
त्वेलाजाजीसैन्धवै र्वा मरीचैः।

पथ्यं ग्राह्यं गौल्यबाहुल्ययुक्तं
स्नानं कोष्णेनैव नीरेण कार्यम् ॥ १७२७ ॥
पानं नीरैः शीतलैं र्वासयुक्तै-
र्ध्यानं कुर्यात्पार्वतीवल्लभस्य ।
शक्त्यादानं योगिनीतर्पणञ्च
हिंसा वर्ज्या प्राणिमात्रे च नित्यम् ॥१७२८॥
भक्तिं कुर्याद्ब्राह्मणानां गुरूणां
तैलाभ्यङ्गं वर्जयेच्चाऽतिशीतम् ।
वातं घर्मं रम्यदेहप्रसिद्ध्यै
कुर्यादेतत्सर्वमेव प्रयत्नात् ॥ १७२९ ॥

र. दी , रसायने ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ भाग, सुवर्णभस्म आधाभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर कान्तपाषाणकीमूषामें बन्द-कर भूधरयन्त्रमें आचदेनेसे यह वज्रगर्भरस तैयारहोताहै । पान-केरसमें १ रत्ती अभ्रकभस्म और १ रत्ती वज्रगर्भरस मिलाकर मधु और घीकेसाथ देनेसे ६ महीनेमें दिव्यदेह होजाताहै। एक-महीनेके सेवनसे समस्तरोग दूरहोतेहैं । क्षार, तीक्ष्ण, खटाई इनसे पारेका अजीर्णहोजाताहै इसलिये इन्हें न देवे। दैवसंयोगसे सूताऽजीर्णहोगयाहो तो नाभिमेंशूल, दाह, अग्निमान्द्य, जड़ता, आलस्य और निद्रा होतीहै । शरीर सत्त्वहीन होजाता है । बुद्धिभ्रंश हो तो उसकी निवृत्तिकेलिये घीकुंवारका कंद घीकेसाथ अथवा शक्कर या मध्वासवके साथ, अथवा प्रात काल त्रिफला या त्रिकटुकाचूर्ण विजोरेके रससे देवे । अथवा सोंठ और शक्करके-साथ देवे। जीर्णहोनेपर रात्रिमें शक्कर और दूध देवे । प्रात काल घीकेसाथभातदेवे । अथवा गायका दही और घी देवे । इला-यची, जीरा, सैन्धव और मरिचकेसाथ पथ्य देवे । अथवा गुड़से वनेहुए पदार्थ पथ्यमें देवे । थोड़े गरमजलसे स्नानकरावे सुगन्धद्रव्याधिवासित ठंढाजलपीवे । परमेश्वरकाध्यानकरे और यथाशक्ति दानदेवे । योगिनियोंका तर्पणकरे । प्राणीमात्रकी हिंसासे परहेजकरे । ब्राह्मण और गुरुजनोंमें भक्तिरक्खे । तैला-भ्यङ्ग, अतिशीतवात, धूप इनसबका त्यागकरे ॥ ३५४ ॥

३५५ वज्रगुग्गुलुः

त्रिकटु त्रिफला दन्ती चित्रकं त्रिवृता शटी ।
विडङ्गं मुस्तकं रात्रि र्वाकुचीन्द्रयवं वचा ॥ १७३० ॥
अङ्कोठमूलं कुष्ठञ्च राजवृक्षस्य मूलकम् ।
एतेषां पलिकं ग्राह्यं तत्समं गुग्गुलं गुरुम् ॥ १७३१ ॥
भल्लाततैलं द्विपलं गोघृतेन जडीकृतम् ।
तत्र ताम्रं हरीतालं द्वयोः कुर्यात्पलद्वयम् ॥ १७३२ ॥
सर्वमेकीकृतं यत्नात्पेषयित्वा सुपिण्डकम् ।
घृतभाण्डे तु संस्थाप्य खादेन्माषचतुष्टयम् ॥१७३३॥
गुग्गुलु र्वज्रनामाऽयं गहनानन्दभाषितः ।
देशं कालं वयो वह्निं दृष्ट्वा वा त्रुटिवर्धनम् ॥१७३४॥
वातरक्तं निहन्त्याशु नानादोषसमुद्भवम् ।
श्लीपदं शोथशूलानि मेहमेदोगलामयान् ॥ १७३५ ॥
प्लीहगुल्मोदराष्ठीलाकासश्वासमरोचकम् ।
जीर्णज्वरञ्च सानाहं बलवर्णाग्निवर्धनम् ॥
सद्ग्रहग्रहणीं दुष्टां पाण्ड्वादित्रितयं जयेत् ॥ १७३६ ॥

र. र , वातरक्ते ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, दन्ती, चित्रक, निशोत, कचूर, विडङ्ग, नागरमोथा, हल्दी, बाकुची, इन्द्रजव, वच, अङ्कोलकी-जड़, कुठ और अमिलतासकीजड़ १–१ पल, शुद्धगूगल सबकी बराबर, भिलावेकातैल २ पल, ताम्र और हरितालभस्म १–१ पल लेकर बारीक पीस गूगलको घीकीसहायतासे कूटकर दवा-ओंको एकजीव मिलाकर घीके बर्तनमें रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ माशेकी मात्रामें देश, काल, अवस्था और अग्निबल देखकर कमी अथवा वृद्धिकरके उपयोगकरे । इसके सेवनकरनेसे वातरक्त, श्लीपद, शोथ, शूल, मेह, मेद, गलेकेरोग, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, अष्ठीला, कास, श्वास, अरुचि, जीर्णज्वर, आनाह, बलवर्णाग्निनाश, दुष्टसङ्ग्रहणी, पाण्डु, कामला, हलीमक इन-सबको यह नष्टकरताहै ॥ ३५५ ॥

३५६ वज्रगुटिका (प्रथमा)

शैलस्य धातो रजसां शिलाभ्यः
सूर्यप्रतापाज्जतुसन्निकाशम् ।
कृष्णं स्रवेन्मूत्रसमानगन्धि-
शिलाजतु प्राज्ञतमास्तदाहुः ॥ १७३७ ॥
रूप्यादिधातो र्गलितं दृषद्भ्य-
स्तेभ्यः प्रशस्तं प्रवदन्ति पूर्वम् ।
विशोधयेत्तत्सुदिने सुपूते
द्विपञ्चमूलीसलिले कटाहे ॥ १७३८ ॥
लौहे समालोड्य दिवाकरस्य
सन्तापनं रश्मिभिरेव कुर्यात् ।
प्रणीततापात्सरवद्गृहीत्वा
पुनःपुनस्तत्समथोद्धरेच्च ॥ १७३९ ॥
तावत्प्रदेयं सलिलं क्रमेण
गाढस्य सन्दर्शनमेव यावत् ।
तावच्छिलाजत्वभिसन्निविष्टं
समुद्धृतं यावदशेषतश्च ॥ १७४० ॥
अष्टौ पलान्यस्य विशोधितस्य
ततः क्रमाद्भावयितुं यतेत ।
द्विपञ्चमूल्यौ चिरविल्वमुस्तौ
पटोलनिम्बत्रिफलाः पलांशाः ॥ १७४१ ॥
सुपिप्पली रोहिणि जीरकञ्च
द्रोणेऽम्भसस्तान्द्विपलान्यथोक्तान् ।
प्रक्काथ्य चैवाष्टमभागशेषं
तस्मात्क्षिपेद्भावनमल्पमल्पम् ॥ १७४२ ॥
पात्रेऽथ लौहे परिशोषयेत्त-
त्पुनःपुनर्भावितमेव यावत् ।

पलद्वये मागधिकर्कटाख्ये
चूर्णीकृते लोहरजःसमांशे ॥ १७४३ ॥
पलं वृहत्याः सनिदिग्धिकायाः
सितोपलामष्टपलान्मितां तु ।
पलत्रयं वेणुजरोचनाया-
मधुत्रयं तद्विनिवेश्य कृत्वा ॥ १७४४ ॥
त्रिपष्टिसंख्यान्वटकान्विधिज्ञः
खादेत्सुरावारिपयोऽनुपानात् ।
रसेन वा लावकपिञ्जलानां
तोयेन वा दाडिमसंस्कृतेन ॥ १७४५ ॥
भुक्तेस्तथाऽभुक्तवति प्रदेया
रोगार्दिते निष्परिहारिणी च ।
कुष्टोदरश्वासगलामयाश्च
भगन्दरान्मूत्रविवन्धगुल्मान ॥ १७४६ ॥
यक्ष्माणमर्शांसि सकासहिक्कां
प्लीहाऽग्रमांसं विपमज्वरांश्च ।
वह्नेश्च दीप्तिं परमां करोति
वलींश्च हन्यात्पलितानि चैव ॥ १७४७ ॥
सेव्या त्वियं वज्रकनामधेया
मुनिप्रदिष्टा वटकप्रधाना ।
वर्ज्याः कुलत्थाश्च सकाकमाच्यः
कपोतमांसञ्च सदा प्रयोगे ॥ १७४८ ॥

ग नि कुष्टाऽधिकारे ।

टि०—शिलाजतुशोधन पञ्चाङ्गलोहेऽपीदृशमग्नि परन्तु तत्रार्कादिपञ्चधातुसयोगेन योगस्य सम्पादनमस्त्यत्र तु केवले शिलाजतुनि काष्ठौपधिनिक्षेपेण योगसम्पादनमिति विशेष ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, ताम्र, लोह इनधातुओंका सूक्ष्मांश पर्वतोंमेंसे सूर्यके प्रखरतापसे द्रुतहोकर लाखकीतरह वाहर निकलताहै और उसमें गोमूत्रका गन्धहोताहै उसे जाननेवाले शिलाजतु कहतेहैं। इनमेंसे कृष्णवर्ण जो लोहयुक्तद्रवहै वह सबसे श्रेष्ठ मानाजाताहै। इनकाद्रव स्वकीयधातुकेरंगका हुआ-करताहै। वाहर आकर उसमें वानरविष्ठादि शतश मल मिश्रित होजातेहैं। भूलसे वे खालियेजाय तो नानातरहके उपद्रवोंको करतेहैं। इसलिये उनको शुद्धकरके काममें लेनाचाहिये। दश-मूलके गरमक्वाथको कड़ाहीमें डालकर अशुद्धशिलाजीतको अच्छीतरह घोलकर कड़ीधूपमें रखदे और रोज उसे हिलातारहे। जव तमामद्रव पानीमें मिलजाय तव उसे हिलाना बन्दकरके उसीजगह पड़ारहनेदे। इसद्रवके ऊपर मलाईकी तरह एक थर (पटल) जमजायगा उसे धीरजसे निकालकर दूसरे पात्रमें रखदे और उसद्रवको अच्छीतरह चलादेवे। क्वाथ सूखकर द्रवके गाढे होजानेपर दूसरा क्वाथ डालदियाकरे। इसक्रियाको ग्रीष्म ऋतुके प्रारम्भसे शुरूकरे। जव शिलाजीत निकलआवेगा और केवल मल नीचे रहजायगा तव थर जमना वन्दहोजायगा। उसे मल समझकर फेंकदेवे। निकालेहुए शिलाजीतको सुखाकर रखछोडे इसका चाहे जिस योगमें उपयोगकरे। वर्तमानसमयमें व्यापारीलोग इस प्रक्रियासे तैयार नहीं करतेहैं किन्तु अग्निके अधिकप्रमाणसे यह निकलताहै वहांपर जाकर भाले बनातेहैं और वहांकी मिट्टी तथा पत्थर खोदकर उसे गरमपानीमें औटा-कर छानलेतेहैं उसपानीको फिर आगपर गाढ़ाकरके बना-लेते। इसमें खराबी यह होतीहै कि प्रथमतो इसमेंसे समस्त मल दूर नहीं होता दूसरे यह पदार्थोंमें मंगालनेसेभी पेटमें जाकर जलनेलगताहै उससमय इसमें रहेहुए क्षारादिक बहुतसे पदार्थ जलकर भस्महोजातेहैं और इसका जो असली-स्वरूपहै वहभी नाशहोजाताहै। इसीलिये व्यापारियोंसे लियेहुए शिलाजीतमें शास्त्रोक्तगुण नहीं मिलतेहैं। भावप्रकाशादिकमें जो गुणलिखगयेहैं इसके गुण लिखेहैं ये शुद्ध शिलाजीतकेहैं और ये सच्चेहैं। अस्तु।

पूर्वोक्तप्रकारसे शोधेहुए ८ पल शिलाजीतको लेकरके नार-ङ्गमें डालकर दशमूल, गुडूची, नागरमोथा, परवल, नीम, त्रिफला १-१ पल, पीपल, गोखरू, कालीजीरी २-२ पल लेकर १६ सेर पानीमें क्वाथकरे आठवांभाग शेष रहनेपर छानकर धूपमें रक्खे जिसमेंकि क्वाथ बिगड़ने न पावे इसकोसे थोड़ा २ क्वाथ शिलाजीतमें डालकर धूपमें रखकर सोखे (धूपमें इस जल्दी सूखजावेगा नहीं तो बहुत समय लगेगा) तमामक्वाथ सूखजानेपर पीपल, काकड़ाशींगी १-१ पल, लोहभस्म, २ पल, धनवाढा, भट-कटैया १-१ पल, मिश्री ८ पल, वंशलोचन ३ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर पूर्वोक्त शिलाजीतमें मिलाकर घी, शहद और मधु इतना मिलावे कि गोलिया बनजावें। इसकी ६३ गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली मद्य, जल, दूध अथवा लवा और सफेदतित्तिरोंकामांसरस, अथवा अनारका शरवत तथा भोजन इनमेंसे जैसी योग्यताहो उसकेसाथ देनेसे कुष्ठ, उदर, श्वास, गलरोग, भगन्दर, मूत्रविवन्ध, गुल्म, राजयक्ष्म, ववासीर, कास, हिचकी, प्लीहा, अग्रमांस, विषम-ज्वर, मन्दाग्नि, वलीपलित, इनसवको यहयोग नष्टकरताहै। कुष्ठातिरिक्तरोगोंमें इतनी मोटी मात्राकी जुरूरत नहीं। अग्निबल देखकर मात्राका निर्धारणकरे। कुष्ठरोगमें प्रायःकर अत्यधिक मात्राका उपयोग हुआकरताहै। उसी अधिकारमें इसे ग्रन्थ-कारने लिखाहैइसलिये उसकी इतनी अधिकमात्रा वतलाईहै। इसप्रयोगमें कुलथी, मकोय और कपोतमासको छोड़कर कोई-विशेष परहेज नहीहै ॥ ३५६ ॥

३५७ वज्रगुटिका (द्वितीया)

कान्तं वज्रं हिङ्गुलाभ्रे रसेन्द्रं
कृत्वा खोटं भूधरेपक्षमेकम् ।
मन्दं मन्दं पाचितं स्याद्गुटीयं
शस्त्राशौघं वारयेद्यस्य वक्त्रे ॥ १७४९ ॥

र ल , टो., र. पा , रसायने ।

भाषा—कान्तलोह, हीरा, हिङ्गुल, अभ्रक, वुभुक्षितपारा, इनका खोट वनाय १५ दिनतक भूधरयन्त्रमें मन्दमन्द अग्निपर पकानेसे गोली तैयारहोगी । इसगोलीको मुंहमेंरखनेसे शस्त्र आर अर्शोके समुदायका निवारणहोताहै ॥ ३५७ ॥

३५८ वज्रगुटिका (तृतीया)

रोहिणीं चिरविल्वश्च कुटजश्च फलत्रिकम् ।
मुस्तश्च पिप्पलीमूलं यष्ट्याह्वं निम्बनागरम् ॥१७५०॥
एतत्कषाये विधिवद्भावनाश्च पृथक्पृथक् ।
शिलाजतुपलान्यष्टौ तावती सितशर्करा ॥ १७५१ ॥
वांश्याः कर्कटश्रृङ्ग्याश्च मागध्याश्च पलं पलम् ।
धात्री दशपलार्द्धश्च व्याघ्रीमूलत्वचं तथा ॥ १७५२ ॥
पत्रं त्वगेलां गन्धार्थं दत्त्वा चूर्णानि कारयेत् ।
तं विमृद्य यथान्यायं दद्यान्मधु पलत्रयम् ॥ १७५३ ॥
वर्तयेद्वटकान्धीमानुदुम्बरफलोपमान् ।
तत्रैकं भक्षयेत्काले सानुपानं यथाबलम् ॥ १७५४ ॥
विडङ्गक्काथयूषाम्बुसुरारिष्टरसादिभि ।
क्षीरे वा दाडिमाम्लैर्वा पथ्यभोजी भवेन्नरः ॥१७५५॥
स जयेत्पाण्डुरोगार्शः कुष्ठमेहगलग्रहान् ।
वज्राद्योऽयं समाख्यातो वटको हि महागुणः ॥
नित्यमाश्रमिणां योज्यमेतत्स्याच्च रसायनम् ॥१७५६॥

र. का., पाण्डुरोगे ।

भाषा—रोहण,करञ्ज, कुरैयाकीछाल, त्रिफला, नागरमोथा, पिपलामूल, मुलहटी, नीमकीछाल और सोंठ इनकेक्वाथोंसे यथाक्रम ८ पल शिलाजीतको भावनादेकर ८ पल शक्कर, वंशलोचन, काकड़ासींगी और पीपल १–१ पल; आवले और वनभाटेकी जड़कीछाल ५–५ पल, पत्रज, तज और इलायची १–१ कर्ष लेकर सबका वारीकचूर्णकर शिलाजीतमें मिलावे। और पूर्वक्वाथोंसे १–१ भावना देकर सूखनेपर ३ पल मधुदेकर १–१ तोलेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अथवा अग्निबल देखकर मात्रानियतकर विडङ्गक्काथ, मुद्गयूष, मद्य, अरिष्ट, मासरस, दूध, अनारकारस इनमेंसे किसीएक अनुपानकेसाथ सेवनकरनेसे तथा पथ्यभोजनकरनेसे पाण्डु, ववासीर, कुष्ठ, प्रमेह, गलग्रह इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै। इसके निरन्तरसेवनकरनेसे यह रसायनका कामकरताहै॥३५८॥

३५९ वज्रघनोरसः

कण्टकारीरसैः सप्तदिनं भाव्यन्तु सोमलम् ।
एवं वारत्रयं काचकूप्यां सत्त्वं तु पातयेत् ॥ १७५७ ॥
एतत्सत्त्वे पादसूतं सगन्धं कज्जलीकृतम् ।
कण्टकारी मूषिकायां शरावे पाचयेत्पुनः ॥
यामाष्टकं वज्रघनो रसः सर्वोदरार्तिजित् ॥ १७५८ ॥

र. का., उदराधिकारे ।

भाषा—भटकटैयाके अङ्गस्वरससे ७ दिन सोमलको मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें वन्दकर वालुकायन्त्रमें रख ४ पहरकी क्रमाग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् ७ दिनमर्दनकर सत्त्वपातनकरे। इसतरह ३ वारकरके इससे चतुर्थांश शुद्धपारा और गन्धक मिलाय नीलवर्णकज्जलीकर भटकटैयाके कल्ककी मूषामें वन्दकर शरावसम्पुटमें रख ६–७ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर वालुकायन्त्रमें रख ८ पहरकी क्रमाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे आधे आधे चावलभरकी मात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त उदररोगोंको नष्टकरताहै॥ ३५९॥

३६० वज्रतुण्डावटी (प्रथमा)

स्वर्णताराऽर्कमुण्डश्च वङ्गं नागाऽभ्रसत्त्वकम् ।
एतत्सर्वसमं चूर्णं चूर्णांशं मृतवज्रकम् ॥ १७५९ ॥
सर्वतुल्यं शुद्धसूतं सर्वं दिव्यौषधीद्रवैः ।
मर्दयेद्दिनमेकन्तु वज्रमूषान्धितं धमेत् ॥ १७६० ॥
गुटिका वज्रतुण्डेयं जायते धारिता मुखे ।
जरामृत्युशस्त्रसङ्घं नाशयेद्वत्सरात्किल ॥ १७६१ ॥
वज्रकायो महावीरो जीवेद्वर्षशतत्रयम् ।
कुमार्याः स्वरसं ग्राह्यं गुडेन सह लोडयेत् ॥
पलैकं क्रामकं लेह्यमनुपानं सदैव हि ॥ १७६२ ॥

र. ख., रसायने ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, ताम्र, मुण्ड, वङ्ग, नाग, अभ्रकसत्त्व, इनसवका वारीकचूर्ण समभाग लेकर सवसे चतुर्थांश हीराभस्म और सबकी बराबर शुद्धपारा मिलाकर एकदोदिन शुष्क मर्दनकर दिव्यौषधियोंके द्रवसे एकरोज़ मर्दनकर वज्रमूषामें वन्दकर धमनकरनेसे गोली तैयारहोगी। इसगोलीको एकवर्षतक निरन्तर मुखमें धारणकरनेसे वज्रकाय तथा अत्यन्त पुरुषार्थयुक्त होकर ३०० वर्षतकजीताहै। बुढापा, मृत्यु और शस्त्रसमुदायके डरसे रहितहोजाताहै। घीकुवारका स्वरस गुड़केसाथ मिलाकर १ पल पीनेसे रसका शरीरमें सङ्क्रमणहोताहै॥ ३६०॥

३६१ वज्रतुण्डावटी (द्वितीया)

कान्तपाषाणमाक्षीकं टङ्कणं कर्कटास्थि च ।
स्नुह्यर्कक्षीरभूनागं सर्वमेतत्समं भवेत् ॥ १७६३ ॥
स्त्रीस्तन्येन दिनं मर्द्य तेन मूषां प्रलेपयेत् ।
तन्मध्ये द्रुतसूतन्तु वज्रभस्म समं समम् ॥ १७६४ ॥
क्षिप्त्वा रुद्ध्वा पुटे पाच्यं गजाख्ये याममात्रकम् ।
ततः प्रलिप्तमूषायां क्षिप्त्वा रुद्ध्वा धमेद्धठात्॥१७६५॥
एवं पुनःपुनः कार्यं वज्रसूतं मिलत्यलम् ।
ततस्तस्यैव दातव्यं समं काचं सटङ्कणम् ॥ १७६६ ॥
एवं मूषाशते देयं तुल्यं तुल्यं धमन्धमन् ।
तेजःपुञ्जो रसेन्द्रोऽसौ भवेन्मार्तण्डसन्निभः॥१७६७॥
गुटिका वज्रतुण्डेयं वक्त्रस्था मृत्युनाशिनी ।
वर्षमात्रान्न सन्देहो रुद्रतुल्यो भवेन्नरः ॥ १७६८ ॥
तस्य मूत्रपुरीषाभ्यां पूर्ववत्काञ्चनं भवेत् ।
पञ्चाङ्गं भक्षयेत्कर्षं रुदन्त्या मधुसर्पिषा ॥ १७६९ ॥

र. खं., रसायने ।

भाषा—कान्तपाषाण, सुवर्णमाक्षिक, सुहागा, केंकड़ेकीहड्डी, थूहर और आकका दूध तथा केंचुए समभागलेकर स्त्रीके दूधसे एकरोज मर्दनकर इसकल्कका वज्रमूषामें लेपकर सुखाकर

कल्ककी बराबर शुद्ध द्रुतपारा और वज्रभस्म डालकर मुंहबन्दकर २–४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर गजपुटमें एकपहरकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर फिर उसीतरह मूषामें रख धमनकरावे। ऐसे वारम्वार करनेसे वज्र और पारा मिलजायगा फिर उसकी बराबर काच और सुहागा डालकर धमनकरावे ऐसे १०० वार धमनकरनेसे सूर्यकेसदृश तेज पुञ्जयुक्त रस तैयारहोगा। इस गुटिकाको एकवर्षतक मुहमें रखनेसे रुद्रसदृश पराक्रमवाला होताहै। इसके मूत्र तथा पुरीषसे धातुओंका रंग बदलजाताहै। रुदन्तीका पञ्चाङ्ग १ कर्ष मधु और घीमें मिलाकर रोज़ खावे ३६१

३६२ वज्रधररसः (प्रथमः)

रसगन्धकताम्राऽभ्रं क्षारांस्त्रीन्वरुणो वृषम।
अपामार्गस्य च क्षारं लवणं छिछिमाषिकम् ॥१७७०॥
चाङ्गेर्या हस्तिशुण्डयाश्च रसैः पिष्टं पचेत्पुटे।
भक्षयित्वा ततो गुञ्जां ग्रहण्यां काञ्जिकं पिबेत् १७७१
पक्तिशूले च कासे च मन्दाग्नावार्द्रकद्रवम्।
अम्लपित्ते च धारोष्णं क्षीरं वज्रधरो ह्ययम्॥१७७२॥

र र.स , र र कौ , ग्रहण्यधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, ताम्र और अभ्रकभस्म, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, वरुण, अड्सा, अपामार्गक्षार, सैन्धव, येसब २–२ माशेलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर अम्लोनियां और हाथीशुण्डीके रसोंसे १–१ रोज़ मर्दनकर टिकिया बनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा काञ्जीकेसाथ देनेसे ग्रहणीरोग नष्टहोताहै। पक्तिशूल, कास और मन्दाग्निमें अदरखके रसकेसाथ देना। अम्लपित्तमें धारोष्णदूधकेसाथ देना ३६२

३६३ वज्रधररसः (द्वितीयः)

वज्रसूताऽभ्रहेम्नाञ्च भस्म योज्यं समंसमम्।
सर्वैश्च तालकं तुल्यं शिग्रुधत्तूरजै द्रवैः ॥ १७७३॥
मर्द्यः स्नुह्यर्कजैः क्षीरै दिनैकञ्चाऽथ भावयेत्।
सप्ताहं वाकुचीतैलैस्तन्माषैकन्तु भक्षयेत् ॥
रसो वज्रधरः ख्यातः सर्वकुष्ठनिकृन्तनः ॥ १७७४॥

र र स , रसायनस., र र कौ , र शं , र का , र र दी , कुष्ठाधिकारे।

टि०—रसायनसङ्ग्रहे रसरत्नदीपिकायाञ्च मुशलीदूर्वासहानिर्गुण्डयोऽनुपाने विशेषतयोपन्यस्ता मन्त्योऽपि न रसान्तरताद्योतिका समर्थपरत्वेन रोगपरत्वेन चाऽनुपानानामनियतत्वात्।

भाषा—हीरा, पारा, अभ्रक, सुवर्ण इनकीभस्में समभाग लेकर सबकी बराबर हरितालमिलाकर सहिजन और धतूरेकारस थूअर और आकका दूध इनप्रत्येकद्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर ७ दिन वाकुचीके तैलमे मर्दनकरे। इसमेंसे उड़दबराबरमात्रा वाकुचीके तैलकेसाथ खानेसे यह समस्तकुष्ठोंको दूरकरताहै ॥ ३६३ ॥

३६४ वज्रधररसः (तृतीयः)

वज्रमृताऽभ्रहेम्नान्तु भस्म शुद्धं तु माक्षिकम्।
तुल्यं सप्तदिनं मर्द्य दिव्यौषधिरसै र्दृढम् ॥ १७७५ ॥
रुद्ध्वा तत्त्रिदिनं पाच्यं वालुकायन्त्रगं पुनः।
उद्धृत्य त्रिदिनं भाव्यं भृङ्गसर्पाक्षिजै द्रवैः ॥ १७७६ ॥
माषैकं मधुसर्पिर्भ्यां वज्रधारारसं लिहेत।
मासषट्कप्रयोगेण रुद्रतुल्यो भवेन्नरः ॥ १७७७ ॥
वलीपलितनिर्मुक्तो वायुवेगो महाबलः।
पुनर्नवाभृङ्गतिलवाजिगन्धाः समांशकाः ॥
सर्वतुल्या सिता योज्या चूर्णितं भक्षयेत्पलम् ॥१७७८॥

रसायनसं , र ख , रसायने।

भाषा—हीरा, पारा, अभ्रक, सुवर्ण इनकीभस्में समभाग लेकर सबकी बराबर सुवर्णमाक्षिकभस्म मिलाकर ७ दिन दिव्यौषधियोंके रसोंसे मर्दनकर टिकिया बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ३ दिनतक वालुकायन्त्रकी आंचदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर भंगरा और अन्धाहूलीकेरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर उड़दबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु और घीकेसाथ ६ महीनेतक लगातार सेवनकरनेसे वलीपलितसेरहितहोकर वायुवेग और महाबलयुक्त होताहै। पुनर्नवा, भंगरा, तिल और असगन्ध समभाग लेकर बारीक चूर्णकर सबकीबराबर शक्कर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ पल खानेमे रसका सङ्क्रमणहोताहै ॥ ३६४ ॥

३६५ वज्रपञ्जररसः

वज्रपारदयो भस्म समभागं प्रकल्पयेत्।
सूतपादं मृतं स्वर्णं सर्वं मर्द्यं दिनावधि ॥ १७७९ ॥
हंसपाद्या द्रवैरेवं तद्गोलं चान्धितं पुटेत्।
अर्कक्षीरैः पुनर्मर्द्य तद्वद्गजपुटे पचेत् ॥ १७८० ॥
भक्षयेत्सर्षपै वृद्धं यावन्माषं विवर्धयेत्।
शरण्यः साधकानान्तु रसोऽयं वज्रपञ्जरः ॥ १७८१ ॥
चित्रकाऽऽर्द्रकसिन्धूत्थं मृतं तीक्ष्णं सुवर्चलम्।
समं सर्वं सदा चानु भक्ष्यं स्यात्क्रामणे हितम् १७८२
मासषट्कप्रयोगेण जीवेदाचन्द्रतारकम्।
वलीपलितनिर्मुक्तो दिव्यकायो महाबलः ॥ १७८३ ॥

र ख , रसायनस , रसायने।

टि०—"हंसपादीरसै र्घृष्टं विपचेत पुटानले। तुल्यमभ्ररसं तेन पूर्ववन्मर्दितं पचेत् ॥ यावच्छक्य चतुर्थांशमानेनाऽनेन भस्मना। अम्लपिष्टेन सौवर्णं पत्रमालिप्य मारयेत् ॥ राजिकाऽर्द्धाऽर्द्धमारभ्य यावन्माषं विवर्धितं। चित्रकार्द्रकसिन्धूत्थतीक्ष्णसौवर्चलै सह ॥ सेवितं पलपर्यन्तो रसोऽयं वज्रपञ्जरः। शरण्यं परिभूतानां व्याधिवार्धक्यमृत्युभिः॥" इति पाठो रसरत्नसमुच्चये निहितं परन्तु तस्य मूलं न ज्ञायते कस्माद् ग्रन्थादुद्धृतं। मूलपाठस्तु रसायनखण्डीय एव प्रतिभाति, तत्र च वज्रपारदस्वर्णानां भागविशेषेण त्रयाणामपि योगः स्पष्टतया प्रतिपादितः। रसरत्नसमुच्चयकारेणोद्धृतपाठे तु वज्रपारदभस्मनो लेपं विधाय भस्मी-

कृतस्वर्णपत्रस्योपयोगो वर्णित स कपोलकल्पित इव प्रतिभाति, अतो रसायनखण्डीय एव पाठ साधुरिति सुधीभिर्विमर्शनीयम्।

भाषा—हीरे और पारदकीभस्म १–१ तोला, स्वर्णभस्म ३ माशे लेकर घोटकर हंसराजकेरससे एक दिनरात मर्दनकर गोलिया बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर सुखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर आकके दूधसे एकदिन मर्दनकर पूर्ववत् पुटदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखले । इसमेंसे १–१ सर्षपकी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ सेवनकरे और प्रतिदिन १–१ सर्षपका प्रमाण बढ़ाताजाय । उड़दवरावर मात्रा पूर्णहोनेपर उसेही नियतकर सेवनकरे । इसको ६ महीनेतक लगातार सेवनकरनेसे वलीपलितादिकोंसे रहितहोकर महावल और दिव्यशरीरयुक्त वनकर दीर्घजीवी होताहै । चित्रक, अदरख, सैन्धव, लोहभस्म, संचल समभाग लेकर ३ माशेसे १ तोलेतक अनुपानरूपमें सेवनकरनेसे रसका शरीरमें क्रामण होता है । यह प्रयोग वहुतसभालकर करना उचितहै कहीं जल्दी गुण लानेके लिये उड़द वरावर खुराक शुरूमें सेवनकरजायगा तो 'आचन्द्रतारकम्, का यही अर्थ होगा कि दिनमें खायाहो तो राततक और रातको खायाहोतो सुवहतक आयुको भोगकर यमपुरका वासी वनजाय । ऐसे भीषण प्रयोगोंको संभालकर काममें लानाचाहिये ॥ ३६५ ॥

३६६ वज्रवद्धगुटिका (प्रथमा)

वज्रंव्योमजसत्त्वकं सकनकं चन्द्रं रविं कान्तकं,
नागं वङ्गमथायसं दृढतरं सूतं कृतं तत्समम्।
वक्त्रस्थं रसगोलकं रतिकरं सर्वार्थदं तापहं,
वर्षैकेण निहन्ति दोषनिचयं कल्पायुषा युज्यते १७८४

रसार्णव, र. को , र का रसायने। र को नागार्जुनी वटीति नाम। र का वज्रादिगुटीति नाम।

भाषा—हीरा और अभ्रकसत्त्व, सुवर्ण, रजत, ताम्र, कान्तलोह, नाग, वङ्ग और फोलाद येसव समभाग, दिव्यौषधियोंके योगसे अग्निस्थायीकियाहुआपारा सवकी वरावर लेकर इकट्ठे गलाय गोलीवनाकर मुंहमें रखनेसे दिव्यस्तम्भन होताहै। एकवर्षतक निरन्तर मुहमें रखनेसे समस्तरोगोंसे रहितहोकर दीर्घायु होताहै ॥ ३६६ ॥

३६७ वज्रवद्धगुटिका (द्वितीया)

सुभगं माक्षिकञ्चैव वज्रमभ्रकमेव च।
हेम शुल्वं तथा तारं समभागानि कारयेत् ॥
वज्रवद्धा तु गुटिका वक्त्रस्था सर्वसिद्धिदा ॥१७८५॥

रसार्णव, रसेन्द्रम रसायनाधिकारे।

टि०—रसेन्द्रमङ्गले माक्षिक न दृश्यते तत्केन कारणेन निष्कासितमिति न ज्ञायते।

भाषा—दिव्यौषधियोंसे वाधाहुआपारा, माक्षिक, हीरा और अभ्रक इनकासत्त्व, सुवर्ण, ताम्र, रजत सवसमभागलेकर गोलीवनाय मुहमें रखनेसे यह समस्तसिद्धियोंको देतीहै ३६७

३६८ वज्रवद्धरसः

वज्रभस्मावृते हेमपिष्टिके षड्गुणं वलिम्।
पूर्ववद्भूधरे पक्त्वा वद्धोऽयं योगवाहकः ॥ १७८६ ॥

र शि , सर्वरोगे।

भाषा—सोलहवें अथवा वत्तीसवें हिस्से सुवर्णके ग्राससे पिष्टीवनाएहुएपारेमें चतुर्थांश हीरेकीभस्म डालकर दिव्यौषधियोंके स्वरससे १–२ रोज़ मर्दनकर टिकियावनायसुखाकर वरावरका गन्धक नीचेऊपर रख शरावसम्पुटकर भूधरयन्त्रकी इतनी आचदेवे कि गन्धकमात्र जलजाय पर पारा न उड़े । इसतरह षड्गुणगन्धक जारणकरनेसे यह योगवाहकरस तैयारहोताहै । इसमेंसे १ सर्षपभरसे शुरूकर रोजाना १–१ सरसों वढ़ाकर १ रत्तीतक मात्रा वढानेसे यह तमामरोगोंको नष्टकरताहै ॥३६८॥

३६९ वज्रमूर्तिरसः

कान्ताश्माऽक्षाङ्गारमूषां प्रलिप्य
वज्रं क्षिप्तं ध्मापयेट्टङ्कणेन।
चूर्णं तत्स्याद्वेष्टयित्वा सुहेम्ना
लिप्त्वा ध्मापेत्तेन मूषात्रयं तु ॥ १७८७ ॥
एवं वज्रं पातयेद्धेमगर्भे
तुल्यं यद्वा पादभागक्रमेण।
मूत्रे तक्रे चारनाले कुलत्थे
गव्ये पक्त्वा वासरैकं प्रयत्नात् ॥ १७८८ ॥
निम्बूतोये पेषयित्वा पचेत्त-
त्स्थालीपाके रक्ततामेति यावत्।
लौहे पात्रे निक्षिपेत्तत्र किञ्चि-
न्निम्बूतोयं सूतकं सैन्धवञ्च ॥ १७८९ ॥
घर्षेत्पश्चाल्लोहदण्डेन यत्ना-
त्स्तोकं चान्यन्निक्षिपेत्तत्क्रमेण।
ज्ञात्वा हस्ते मन्थरत्वं क्षिपेत
सोष्णं तस्मिन् काञ्जिकं क्षालयेत ॥१७९०॥
पिष्टिं वस्त्रे वन्धयित्वा निपात्य
पात्रे तं वै गोलकं स्थापयेत।
एवं ग्राह्यं पक्वताप्यस्य सत्त्वं
यद्वा क्षिप्तं माहिषे पञ्चके तत् ॥ १७९१ ॥
क्षारं दत्त्वा गोलकं ध्मापयित्वा
सत्त्वं ताप्यस्येन्द्रगोपप्रभं स्यात्।
श्लक्ष्णं तीक्ष्णं तुत्थकं भागवृद्ध्या
मूषामध्ये ध्मापयेट्टङ्कणेन ॥ १७९२ ॥
किट्टजातं ध्मापयित्वाऽतियत्ना-
त्कन्यातोये निक्षिपेत्सप्तवारम्।
सत्त्वं तस्याऽपीन्द्रगोपप्रभं
स्यान्नागं किञ्चिद्वाहयेन्मार्दवाय ॥ १७९३ ॥
श्लक्ष्णं त्वभ्रं काञ्जिकक्षीरपक्वं
क्षारं लाक्षां माहिषं पञ्चपञ्च।

पिष्ट्वा गोलान् वन्धयित्वा धमेत
गाढं सत्त्वं द्वित्रिवारं पतेत ॥ १७९४॥
एतत्सर्वं वज्रगर्भं सुवर्णं
नीत्थं सत्त्वं माक्षिकस्याऽपि तुल्यम् ।
कृत्वा सूतं दापयेत्पादभागं
निम्बूतोयैः पिष्टिकां तस्य कृत्वा ॥ १७९५॥
वस्त्रे वद्धा क्षारसामुद्रजाद्यैः
सम्यग्रुद्ध्वा स्वेदयेत्सप्तरात्रम् ।
यन्त्रे वाष्पे काञ्जिकेनातियत्ना-
द्रुद्ध्वा पिष्टिं माषके वेष्टयित्वा ॥ १७९६ ॥
तैले यत्नात्पाचयेद्याममेकं
कूप्यां पित्ते वार्हिणे निक्षिपेत ।
शुद्धे सूते कान्तपाषाणमूषा-
गर्भे प्राप्ते पिष्टिकां तां कलांशाम् ॥ १७९७ ॥
दत्त्वा गन्धं निक्षिपेत्पादभागं
रुद्ध्वा मूषां भूधरे तां पुटेत ।
यन्त्रे वाष्पे पिष्टिकां तां विपाच्य
यद्वा यन्त्रे कच्छपे पादभागम् ॥ १७९८ ॥
पश्चाद्गन्धं कान्तपाषाणमूषा-
कोष्ठ्यां शुद्धं षड्गुणं जारयेत ।
गुञ्जामानं सर्वरोगेषु दद्या-
द्योगैस्तैस्तै र्वज्रमूर्तीरसेन्द्रः ॥ १७९९ ॥

र टी ,वाजीकरणे ।

भाषा—कान्तपाषाण और वहेड़ेके कोयलोंकी मूषावनाय कईवार इसीमिट्टीकालेप देदेकर सुखाकर चिकनी वनाकर हीरेको डालकर धमनकरे और वारम्वार थोड़ा थोड़ा सुहागा डालताजाय। हीरेका चूर्ण होजानेपर निकालकर शुद्धसुवर्णके पत्रेमें लपेटकर उसीमूषामें रखकर धमनकरे। इसतरह ३ वारकरनेसे यह हीरा सुवर्णकेसाथ मिलजायगा। प्रतिवार सुहागा डालकर जितना हीरा सुवर्णमें मिलानाहो उतना मिलावे फिर गोमूत्र, छाछ, काञ्जी, कुलथीकाकाढा इनमें १–१ दिन सुवर्णगर्भ हीरेको पकावे। फिर नीबूकेरसमें एकदिन पीसकर गोलीवनाय नीबूकेरसमें लालहोनेतक स्वेदनकरे। इसकेवाद निकालकर लोहेके खरलमें इसकेवरावर शुद्धपारा और सैन्धव डालकर थोडेसे नीबूकेरसकेसाथ मर्दनकरे। गाढा होनेपर थोडाथोड़ा नीबूकारस डालताजाय। जवदेखे कि पारा चञ्चलताको छोड़कर घट्ट होगया तव गरमकाञ्जी डालकर साफकरले और गाढेकपडेमें दवाकर रसमेंसे निकालले। वंधीहुई गोलीको शीशीमें रखले। इसीतरह सुवर्णमाक्षिककाभी सत्त्व निकालले। अथवा भैंसके गोवर, मूत्र, दही, दूध और घीकोमिलाकर इसमें सुवर्णमाक्षिकको १–२ दिन मर्दनकर गोलावनाय मूषामें रख धमनकरे और सुहागा डालताजाय। इसतरह करनेसे वीरवहूटीके सदृश लालरंगका सत्त्व निकलेगा। फौलादका रेता १ भाग और चमकदार तूतिया २ भाग मिलाकर मूषामें रख सुहागेका प्रक्षेपदेकर धमनकरे तो इसका किट्ट होजायगा, इसकिट्टको फिरसे धमनकर घीकुंवारके रसमें वहुतसंभालकर डाले, जिसमें कि वाहर उड़ेनहीं। ऐसे ७ वार करनेसे यह भी लालरङ्गका होजायगा परन्तु यह अत्यन्त कठिनरहेगा इसलिये इसको गलाकर वहुतस्वल्प नागमिलादे जिसमें कि यह कोमल होजाय। उत्तमजातिके अभ्रकको काञ्जी और दुग्धमें १–१ दिन स्वेदितकर वारीक चूर्णकर सुहागा, लाख और महिषपञ्चक मिलाकर १–२ दिन मर्दनकर छोटी छोटी गोलिया वनाकर सुखाकर गाढ़ धमनकरे तो उसका किट्ट होजायगा। उसकिट्टमें फिर पूर्वोक्तचीजें मिलाकर धमनकरे। इसप्रकार २–३ वारकरनेसे इसमेंसे सत्त्व निकलेगा। येसवसत्त्व और वज्रगर्भसुवर्ण समभाग लेकर सवसे चतुर्थांश शुद्धपारा डालकर थोडाथोडा नीबूकारस देदेकर लोहेकी खरलमें लोहेके डण्डेसेघोटे। पारेकी चञ्चलता दूरहोनेपर ४ तह गाढेकपड़ेमें वाध सेंधेनमकके-वीचमें इस पोट्टलीको रखकर काञ्जीसे ७ दिनतक स्वेदनकरे। पर यह ध्यान रक्खे कि काञ्जी पोट्टलीमें लगने-न पावे केवल वाष्प लगे। काञ्जीका स्पर्शहोनेसे नमक वहजायगा। दैववशात् भूलहोजाय तो दूसरे नमककी पोट्टलीमें वाधलेवे और काञ्जीकी हण्डीको रोजाना वदलतारहे। आठवें दिन वज्रपिष्टीको निकालकर उड़दके आटेके गोलेमें वन्दकर १ पहरतिलकेतैलमें पकाकर निकालले। स्वाङ्गशीतलहोनेपर वाटीमेंसे पोट्टलीको निकालकर चौड़ेमुहकीशीशीमें वस्त्रसे जुदीकर धीरजसे रखदे और उसमें पिष्टी डुवनेलायक मोरकापित्त भरकर सुरक्षितरखदे। कान्तपाषाणकीमूषामें शुद्ध वुभुक्षितपारेको डालकर पारेसे षोडशांश पित्तस्थ पिष्टिकाको डालकर पारदसे चतुर्थांश ऊपरसे गन्धक डाल मुहवन्दकर भूधरयन्त्रमें आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सैन्धवनमकमें पूर्ववत् पोट्टलीवनाय ७ रोज़तक वाष्पयन्त्रमें पकावे। फिर कच्छपयन्त्रमें अथवा कान्तपाषाणमूषामें रख षड्गुणगन्धक जारणकरे। इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त असाध्यरोगोंको नष्टकरताहै। इसीतरह पित्तस्थ पिष्टिकाके प्रक्षेपसे १६ गुना रस तैयारहोसक्ताहै। धातुवादकी ग्रन्थकारने कुछ सूचना नहीं दीहै परन्तु उस दशामेंभी यह अवश्यकाम-करेगा। पर कितना करेगा यह साधकोंको साक्षात् करके देखना चाहिये ॥ ३६९ ॥

३७० वज्ररसायनम् (प्रथमम्)

एकं कर्षं मृतं वज्रं तावद्भनागसत्त्वकम् ।
ततश्च द्विगुणं स्वर्णं स्वर्णतुल्यं खसत्त्वकम् ॥ १८०० ॥
तावन्मात्रञ्च कान्ताऽयः सर्वं वारितरं कृतम् ।
अष्टमांशश्च सूतश्च सर्वेभ्यः परिकीर्तितः ॥ १८०१ ॥
शुकपिच्छः समः सर्वैं र्मर्दयेच्चणकाम्लकैः ।
ततो भूनागसत्त्वं हि गन्धकेन समं क्षिपेत ॥ १८०२ ॥
विधाय गोलकं रम्यं छायाशुष्कं समाचरेत् ।
पुटितं शतवारांश्च शतं वारांश्च ताप्यकैः ॥ १८०३ ॥

शुनः पित्तैश्च दुग्धैश्च चारणा विंशतिस्ततः।
गुञ्जाटङ्कणसिद्धेन भूनागेन समायुतम् ॥ १८०४ ॥
वर्तयित्वा तु तं गोलं कल्केनाऽनेन लेपयेत्।
अर्द्धाऽङ्गुलदलेनाऽथ परिशोष्य खरातपे ॥ १८०५ ॥
निक्षिपेद्वालुकायन्त्रे प्रपचेद्दिनपञ्चकम्।
ततस्त्रिकोणसेहुण्डदुग्धे गन्धकसंयुतैः ॥ १८०६ ॥
मर्दयित्वा तु तं गोलं पुटेद्वाराणि विंशतिः
पटेन गालितं कृत्वा क्षिपेदन्तःकरण्डके ॥ १८०७ ॥
गुञ्जामितं भजेदेनं रम्यं वज्ररसायनम्।
ज्ञाताऽज्ञातेषु सर्वेषु गदेषु विविधेषु च ॥ १८०८ ॥
तत्तद्रोगानुपानेन दातव्यं भिषजा खलु।
न सोऽस्ति रोगो लोकेऽस्मिन्यो ह्यनेन न शाम्यति ॥
रसायनप्रकारेण सेवितो मण्डलत्रयम्।
देहसिद्धिं करोत्येव विश्वविस्मयकारिणीम् ॥
बिल्वमेकं विना सर्वं पथ्यमत्र प्रकीर्तितम् ॥ १८१० ॥

र चू, रसायने।

भाषा—हीरेकीभस्म, कैंचुओंकासत्त्व १–१ कर्ष, सुवर्णभस्म, अभ्रकसत्त्व और कान्तलोहभस्म २–२ कर्ष येसव वारितर लेकर इकट्ठे खरलकरे। फिर इनसवसे आठवा हिस्सा पारा और शुद्धगन्धक सवकीवरावर लेकर नीलवर्णकज्जलीकर विशुद्धचणकक्षारसे एकरोज़ मर्दनकर गन्धककी वरावर भूनागसत्त्व मिलाकर एकरोज मर्दनकर गोलावनायसुखाकर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्वोक्तप्रमाणसे गन्धक मिलाय चनेकेखारमें एकरोज मर्दनकर गजपुटकी आंचदे। ऐसे १०० आंचें देनेकेवाद स्वर्णमाक्षिकसत्त्वमिलाकर पूर्वप्रकारसे १०० आंचें दे। फिर कुत्तीके पित्त और दूधसे २०–२० भावनाएं देकर गोला वनाय सुखाकर गुञ्जा, सुहागा और केंचुए समभागका चूर्णकर चनेकेक्षारमें पीसकर उसगोलेपर आधाअङ्गुलमोटा लेपदेकर कड़ीधूपमें सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीकरदे। सूखनेपर वालुकायन्त्रमें ५ दिनकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर वरावरकागन्धकमिलाय तिधारीथूअरकेदूधमें एकदिन मर्दनकर गोलावनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटकी आंचदे। ऐसे २० आंचें देनेकेवाद कपड़ेसे छानकर शीशीमेंरखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ ज्ञात अथवा अज्ञात नानातरहकेजटिलरोगोंमें देनेसे समस्तरोग नष्टहोतेहैं। संसारमें ऐसा कोईभी रोग नहीं जो इससे नष्ट न हो। रसायनप्रकारसे इसका ३ मण्डलतक सेवनकरनेसे समस्तसंसारको विस्मयदेनेवाली देहसिद्धिको प्राप्तहोताहै। केवलविल्वको छोड़कर दुनियामें समस्त पदार्थ इसमें पथ्यहैं ॥ ३७० ॥

३७१ वज्ररसायनम् (द्वितीयम्)

त्रिंशद्भागमितं हि वज्रभसितं स्वर्णं कलाभागिकं,
तारं त्वष्टगुणं शिवामृतवरं रुद्रांशकं चाभ्रकम्।
पादांशं खलु ताप्यकं वसुगुणं वैक्रान्तकं षड्गुणं,
भागोऽप्युक्तरसाद्वरोऽयमुदितः षाड्गुण्यसंसिद्धये ॥

र चू., रसायने।

भाषा—हीराभस्म ३० माशे, सुवर्णभस्म १६ माशे, रजतभस्म ८ माशे, हर्रे और शुद्धवछनाग ११–११ माशे, अभ्रक भस्म ४ माशे, सुवर्णमाक्षिक ८ माशे, वैक्रान्तभस्म ६ माशे लेकर सवको मिलाकर रखछोड़े। इसका चतुर्थांशभी रसायनप्रकारसे खानेसे समस्तरोगोंसे निवृत्तहोकर मनुष्यको दिव्य देहसिद्धि होतीहै ॥ ३७१ ॥

३७२ वज्रवटी

शुद्धसूताग्निमरिचं सूताद्द्विगुणगन्धकम्।
काकोदुम्बरिकाक्षीरैः दिनं मर्द्यं प्रयत्नतः ॥ १८१२ ॥
वराव्योषकषायेण वटीश्चास्य समाचरेत्।
लिह्याद्वज्रवटी ह्येषा पामारोगविनाशिनी ॥ १८१३ ॥

र. स, र चि, र सु, र का., र. क ल, कुष्ठरोगाधिकारे।

टि०—रसकामधेनौ द्वितीय पाठोऽस्मिन्नेवाऽधिकारे वह्निचूडिकेति नाम्ना कृतोऽस्ति तत्र गन्धकस्त्रिगुण, मरिचस्थाने त्र्यूषणमिति विशेष कृतोऽस्ति पाठस्तु एकएवाऽस्ति। त्रिगुणगन्धकक्षेपे शुण्ठीपिप्पल्योश्चाऽधिकतया दाने न काऽपि क्षति, पाठान्तरस्तु नास्त्येव बहुग्रन्थसम्वादात्, नाम तु वज्रवटयेवोचितम्।

भाषा—शुद्धपारा, चित्रक, मरिच १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर कठूमरकेदूध, त्रिफला और त्रिकटुके काढ़ेमें १–१ दिन मर्दनकर ३–३ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली त्रिफला और त्रिकटुकेक्काथकेसाथ खानेसे पामारोग नष्टहोताहै ॥ ३७२ ॥

३७३ वज्रवल्ल्यादिगुग्गुलुः

वज्रवल्ल्यर्जुनौ वासाविशालालोहटङ्कणान्।
रसगन्धकसिन्धूत्थान्समभागेन चूर्णयेत् ॥ १८१४ ॥
चूर्णाद्गुणत्रयं ग्राह्यं गुग्गुलुं घृतपिष्टितम्।
वज्रवल्ल्यादिको नाम गुग्गुलुः परिनिर्मितः ॥ १८१५ ॥
गहनानन्दनाथेन भग्नरोगविनाशनः।
नानाभग्नं निहन्त्याशु वलवर्णाऽग्निवर्धनः ॥ १८१६ ॥
कृमिकुष्ठाऽक्षिरोगाणां हन्ता ग्रन्थिव्यथापहः।
कटिहृद्रोगशमन आमवातनिषूदनः ॥ १८१७ ॥

र. र, भग्नाऽधिकारे।

भाषा—हड़जोड, अर्जुन, अडूस, महर अथवा इन्द्रायण, लोहभस्म, भुनासुहागा, शुद्ध पारा और गन्धक, सैन्धव सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सवचूर्णसे तिगुना शुद्धगूगललेकर घीके योगसे कूटकर द्रव वनावे और थोड़ा २ चूर्णडालकर मिलाताजाय। इसमेंसे १ माशेसे २ माशेतकमात्रा रोग अथवा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे भग्न, वलवर्णाग्निनाश, कृमि, कुष्ठ, अक्षिरोग, ग्रन्थिव्यथा, कटि और हृद्रोग, आमवात इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ३७३ ॥

३७४ वज्रशेखररसः (प्रथमः)

विष्णुक्रान्ताघनरसाः सर्पाक्षी शङ्खपुष्पिका ।
गोजिह्वा क्षीरिणी नीली ब्रह्मवृक्षो रुदन्तिका॥ १८१८ ॥
निचुलः काकमाची च रसैरेषां विमर्दितम् ।
पक्वं तुपकरीपाग्नौ रसाद्विगुणगन्धकम् ॥ १८१९ ॥
पर्पटीरसवत्पक्वं खसत्त्वेनाऽरुणेन च ।
युतं गन्धकतुल्येन ताप्येन च रसाङ्घ्रिणा॥ १८२० ॥
कृतावापं वरीमुण्डीहस्तिकर्ण्यमृतालिका- ।
मूर्वाविदारिकाजातैर्मर्दितं घृतमिश्रितम् ॥ १८२१ ॥
कपाये दशमूलस्य विपक्वं लेहतां गतम् ।
रसतुल्यत्रिजाताऽग्निव्योपयष्टयाह्वसंयुतम् ॥ १८२२ ॥
स्निग्धभाण्डगतं कुष्ठी क्षयी च कृतशोधनः ।
मञ्जिष्ठादिकषायस्य कृत्वा मासं निषेवणम् ॥
मापप्रमाणं सेवेत रसोऽयं वज्रशेखरः ॥ १८२३ ॥
गुञ्जाचित्रकशङ्खचूर्णरजनीभल्लातका लाङ्गली,
स्नुक्क्षीरोत्तमकन्यका घनवरा धूमोद्गमः सूतकः ।
गोमूत्रैडगजौ विडङ्गमरिचे सक्षौद्रक्षाराम्बु च,
पामादद्रुविचर्चिकाकिटिभजित्कण्डूघ्नमुद्वर्तनात् ॥

र र स., कुष्ठे ।

भाषा—विष्णुकान्ता, नागरमोथा, रसौत, अन्धाहूली, शङ्खाहूली, वनगोभी, छोटीदूधी, नील, पलाश, रुदन्ती, जलवेत, मकोय इनसबके रसोंमें शुद्धपारेसे दूनागन्धकडालकर की हुई नीलवर्णकज्जलीको १–१ भावना देकर सुखाकर फिरसेकज्जलीकर तुप अथवा करीपकी अग्निपर घृताक्त लोहेकीकड़छीमें गलाकर पर्पटीतैयारकरले । इसमें गन्धककी वरावर लालअभ्रकसत्त्व और पारेसे चतुर्थांश सोनामाखी मिलाकर शतावर, गोरखमुण्डी, हस्तिकर्णपलाश (टोडाइन हिं०), गिलोय, भगरा, मूर्वा, विदारीकन्द इनकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर अन्तमें गोघृतसे मर्दनकरे । फिर इससे १६ गुना दशमूलकाकाथ देकर मन्द आचसे पकावे । लेह तैयारहोनेपर इसकीवरावर तज, पत्रज, इलायची, चित्रक, त्रिकटु और मुलहठी सवसमभागकाचूर्णमिला कर घृतके भाण्डमें रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा महामञ्जिष्ठादिकाथकेसाथ एकमहीनेतक सेवनकरनेसे और अधोनिर्दिष्ट उवटनकरनेसे कुष्ठ, क्षय, पामा, दद्रु, विचर्चिका, किटिभकुष्ठ और कण्डू नष्टहोतेहैं । सफेदगुञ्जा, चित्रक, शङ्खभस्म, हल्दी, भिलावे, करिहारी, थूहरकादूध, घीकुवार, नागरमोथा, त्रिफला, गृहधूम, शुद्धपारा, गोमूत्र, पवाड, विडङ्ग, मरिच, मधु, सज्जी, सुहागा, यवक्षार और पानी सव समभाग लेकर एकजगह मिलाकर रखछोड़े यह उवटनकी सामग्रीहै ॥ ३७४ ॥

३७५ वज्रशेखररसः (द्वितीय.)

वैक्रान्तं हेमकान्तञ्च वैद्रुमं स्फटिकन्तथा ।
शुद्धगन्धरसाभ्याञ्च समं खल्वे प्रमर्दयेत् ॥ १८२५ ॥
अस्थिसंहारजरसं बुधो दत्त्वा दिनत्रयम् ।
मधुना मापमात्रं वा सेवेताऽग्निवलं प्रति ॥ १८२६ ॥
सद्योव्रणेऽग्निदाहे च भग्ने च विषमज्वरे ।
नाशनार्थं प्रयोक्तव्यो रसोऽयं वज्रशेखरः ॥ १८२७ ॥

टो , व्रणाऽधिकारे ।

भाषा—वैकान्त, सुवर्ण, कान्त, विद्रुम, स्फटिक, इनकीभस्में, शुद्धगन्धक और पारा सव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर हड़जोड़केरससे ३ दिन मर्दनकर सुखाय मधुसे १–१ माशेकीगोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे सद्योव्रण, अग्निदाह, भग्न, विषमज्वर इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ३७५ ॥

३७६ वज्रसुन्दरीवटी

आरक्तं मेघनादन्तु तथा पापाणभेदकम् ।
स्त्रीस्तन्यसहितं पिष्ट्वा तेन मूपां प्रलेपयेत् ॥ १८२८॥
भागैकं मृतवज्रस्य स्वर्णचूर्णस्य पोडश ।
क्षिप्त्वा तस्यां निरुद्ध्याऽथ याममात्रं दृढं धमेत् १८२९
उद्धृत्य निक्षिपेत्खल्वे शुद्धसूतञ्च तत्समम् ।
मर्दयेच्चार्द्रकद्रावै र्यावद्भवति गोलकः ॥ १८३० ॥
चाण्डालीकन्दमादाय स्त्रीस्तन्येन सुपेपयेत् ।
अनेन गोलकं लिप्त्वा वज्रमूष्यां निरोधयेत् ॥१८३१॥
पक्त्वा गजपुटे ग्राह्या गुटिका वज्रसुन्दरी ।
वर्षैकं धारयेद्वक्त्रे जीवेद्ब्रह्मदिनत्रयम् ॥ १८३२ ॥
ब्रह्मवृक्षस्य त्वक्चूर्णं क्षीरैर्नित्यं पलं पिवेत् ।
क्रामणं ह्यनुपानं स्यात्साधकस्याऽतिसिद्धिदम् १८३३
तदुद्भवमलै र्लिप्तं ताम्रन्तु धमनेन हि ।
जायते कनकं दिव्यं सत्यं शङ्करभापितम् ॥ १८३४ ॥

र ख र का , रसायने ।

भाषा—मरसा और पाषाणभेदको स्त्रीके दूधमे पीसकर मूपामें लेपदेकर हीरेकीभस्म १ भाग, सुवर्णकाचूर्ण १६ भाग डालकर एकपहरतक दृढधमनकरावे फिर निकालकर इसकीवरावर शुद्ध और वुभुक्षितपारा डालकर अदरखकेरससे गोला वननेतक घोटकर चाण्डाली (दिव्यौपधि) अथवा सेमलकेकन्दको स्त्रीके दूधसे पीसकर गोलेपर आधाअङ्गुल मोटा लेप देकर वज्रमूपामें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसे एकवर्पतक लगातार मुहमें रखनेसे और पलाशकीछालका १ पलचूर्ण दूधकेसाथ प्रतिदिन लेनेसे रसकी व्याप्तिहोकर दिव्यशरीरहोजाताहै और उसके मलमूत्रसे तावेको लेपदेकर धमनकरनेसे दिव्यसुवर्णहोताहै ॥ ३७६ ॥

३७७ वज्रहेमरसः

गुडटङ्कणगुञ्जाश्लेः शशदन्तान्तरस्थयोः ।
धमेत्पुटेऽन्धमूपायामेकत्वं वज्ररुक्मयोः ॥ १८३५ ॥
निम्बुकाम्बुरसाभ्यासः कल्कः पिष्टीकृतो मिथः ।
यष्टिधुस्तूरतैलाढ्यस्तुल्यगन्धकसंयुत. ॥ १८३६ ॥

जीवनी देवदाली च हंसपादी पुनर्नवा ।
पुटितं भूधरे सप्तवारानासां रसेन च ॥ १८३७ ॥
पुनस्तेनैव गन्धेन रसकल्कोऽथ कल्कितः ।
शुद्धधातुविषोपेतश्चक्रमूषाविनिर्गतः ॥ १८३८ ॥
पित्ताब्धिफेनसंयुक्त आर्द्रकद्रवभावितः ।
राजीप्रमाणा गुटिका रसोऽयं सर्वरोगहृत् ॥ १८३९ ॥

र (मा), सर्वरोगे ।

भाषा—गुड़, सुहागा, गुञ्जा और विजोरेप्रभृतिकारस इनसवका कल्कवनाय अन्धमूषामें लेपकर खरगोशके दांतकाचूर्ण विछाय सुवर्णकेपत्रमें हीरेकेचूर्णको लपेटकर रखदे और ऊपरसे खरगोशके दांतका चूर्ण डालकर मूषाको वन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीदेवे । सूखनेपर दृढ धमन करानेसे हीरे और सुवर्णका मिलाप होजायगा । इसको निकालकर नीबूके रससे २–४ रोज़ मर्दनकर गोलावनाय स्त्रीरज और धतूरेकेतैलमें शुद्धगन्धकको मर्दनकर जीवन्ती, वन्दाल, हसपदी, पुनर्नवा इनकेकल्ककामूषामें लेपकर पिष्टीकेवरावर गन्धकको विछाय पिष्टीको रख उतनाही गन्धक और ऊपररखकर मुंहवन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर भूधरपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर उसीतरह मर्दनकर गन्धकके वीचमें रख भूधरपुटदे । ऐसे ७ पुट देनेकेवाद इसकीवरावर सप्तधातुओं (सुवर्ण, चांदी, कान्त, तीक्ष्ण, ताम्र, नाग, वङ्ग)की भस्में और शुद्धवछनाग मिलाय नीबूकेरससे मर्दनकर टिकड़ी वनाय चक्रमूषामें वन्दकर भूधरपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पञ्चपित्त, समुद्रफेन और अदरखके द्रवोंसे १–१ भावना देकर राईके वरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर दीर्घायुको करताहै ॥ ३७७ ॥

३७८ वज्रक्षाररसः (क्षारयोगः) १

द्वौ क्षारौ टङ्कणं सूतं लवङ्गं लवणत्रयम् ।
पिप्पली गन्धकं शुण्ठी मरिचं पलसम्मितम् ॥१८४०॥
कर्षमेकं विषं दत्त्वा सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
अर्कदुग्धस्य दातव्या भावना सप्तवासरम् ॥ १८४१ ॥
अन्धमूषागजपुटे स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
ततो लवङ्गमरिचस्फटिकानां पलं पलम् ॥ १८४२ ॥
सम्मर्द्य सुदृढं सर्वं दृढभाण्डे निधापयेत् ।
तस्य गुञ्जाद्वयं खादेद्भुक्तं द्रावयति क्षणात् ॥ १८४३ ॥
पुनर्भोजनवाञ्छाञ्च जनयेत्प्रहरोपरि ।
आममांसं द्रावयति श्लेष्मरोगनिकृन्तनम् ॥ १८४४ ॥

वै चि. अजीर्णे ।

भाषा—सज्जी, यवक्षार, सुहागा, शुद्धपारा, लौंग, तीनों नमक, पीपल, शुद्धगन्धक, सोंठ और मरिच १–१ पल, शुद्धवछनाग १ कर्षलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर आकके दूधसे ७ दिन मर्दनकर गोलावनाय अन्ध मूषामें वन्दकर २–४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर लौंग, मरिच, भुनी फिटकड़ी १–१ पल मिलाकर एकदिन अच्छीतरह मर्दनकर शीशीमें भरलेवे । इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे भोजनको तत्क्षण जीर्णकर दुवारा भोजनकी इच्छाको पैदाकरताहै । कच्चामास खाकर यदि इसकासेवनकियाहो तो एक पहरके वादही पचादेताहै । श्लेष्मरोगभी इससे नष्टहोताहै ॥

३७९ वज्रक्षाररसः (द्वितीयः)

सामुद्रं सैन्धवं काचं यवक्षारं सुवर्चलम् ।
टङ्कणं स्वर्जिकाक्षारं तुल्यं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ १८४५॥
अर्कक्षीरैः स्नुहीक्षीरैः शोषयेदातपे त्र्यहम् ।
अर्कपत्रं लिपेत्तेन रुद्ध्वा भाण्डे पुटे पचेत् ॥ १८४६ ॥
तं क्षारं चूर्णयित्वाऽथ त्र्यूषणं त्रिफलारजः ।
जीरकं रजनी वह्नि र्नवकस्य समं ततः ॥ १८४७ ॥
क्षाराऽर्द्धं योजयेत्सम्यगेकीकृत्य विचूर्णयेत् ।
वज्रक्षारमिदं चूर्णं स्वयं प्रोक्तं पिनाकिना ॥ १८४८ ॥
सर्वोदरेषु गुल्मेषु शूले शोफे च योजयेत् ।
अग्निमान्द्ये त्वजीर्णे च भक्षेन्निष्कद्वयं तथा ॥ १८४९ ॥
वाताऽधिके जलैः कोष्णै र्घृतैः पित्ताऽधिके हितः ।
कफे गोमूत्रसंयुक्त आरनालैस्त्रिदोषनुत् ॥ १८५० ॥

यो र, र चि, र. र. स, चि क्र, टो, र क, वै वि., यो. चि, रसायन सं, वै र, चि सा, वै क, चि र भ, र. सु, र का, यो म, नि र, वृ यो त, भा प्र, ना वि., वै द, उदररोगाऽधिकारे । कुत्रचित् त्र्यूषणादिचूर्णं क्षारसम नियोजितम् ।

भाषा—समुद्रनमक, सैन्धव, काचनमक, यवक्षार, संचल, भुनासुहागा और सज्जी समभाग लेकर आक और थूहरके दूधसे ३–३ दिन मर्दनकर आकके पके पत्तोंमें लपेटकर हण्डीमें वन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर त्रिकटु, त्रिफला, जीरा, हल्दी, चित्रककीजड़ सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर क्षारसे आधे प्रमाणमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ८–८ माशेकी मात्रा यथोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त उदररोग, गुल्म, शूल, शोथ, मन्दाग्नि, अजीर्ण प्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै । वाताधिक्यमें गरमजल, पित्तमें घृत, कफमें मूत्र और त्रिदोषमें काञ्जीकेसाथ देना उचितहै ॥ ३७९ ॥

३८० वज्राङ्गसुन्दरीवटी

वङ्गसीसकशुल्वाऽभ्रहेमतारसमन्वितैः ।
वज्रायसादिभिर्युक्तः क्रियते वाद्रिके रसः ॥ १८५१ ॥
वज्राणां द्रावणं वक्ष्ये पारदस्य च वन्धनम् ।
लघुद्रावश्च लोहेषु संयोगार्थं परस्परम् ॥ १८५२ ॥
अस्थिशृङ्खलमध्यस्थं कृत्वा वज्रं निरोधितम् ।
जलभाण्डे विनिक्षिप्य स्वेदयेद्दिनसप्तकम् ॥ १८५३ ॥

वह्निकारससङ्घृष्टं नष्टपिष्टन्तु पारदम्।
स्पृक्काकन्दस्य मध्यस्थं बन्धनार्थं ततः पुटेत्॥१८५४॥
रेतितं लोहचूर्णन्तु टङ्कणेन तु भावितम्।
लघुद्रावि भवेदेवं ताम्रपात्रे न संशयः॥ १८५५॥
सर्वांस्तानेकतः कृत्वा मूषामध्ये स्थिति भवेत्।
गुटिकाजायते रम्या नाम्ना वज्राङ्गसुन्दरी॥ १८५६॥
मुखस्था सिद्धिदा प्रोक्ता जरामृत्युविनाशिनी।
सङ्ग्रामे विजयी वीरो वज्रदेहो महाबलः॥ १८५७॥
सर्वलोकप्रियो नित्यं नारीणां वल्लभस्तथा।
गुटिकेयं समाख्याता यथोक्ता ब्रह्मयामले॥ १८५८॥

न ज, यो म, रसेन्द्र म, र, रसार्णव, र स, र. का, रसायनाऽधिकारे।

टि०—कुमार्या स्वरस ग्राह्य गुडेन सह लेहयेत। पलैकमनुपान स्याज्जरामृत्यूविहन्त्यलम्॥ इत्यधिक पाठो हस्तलिखित रसायनखण्डे दृश्यते। "ममो रमाभ्रको रत्नवर्गेण परिभूषितौ। गुटिकाकारमन्था तु मुखस्था युद्धवारिणी" इति रसावतारे त्रुटित पाठोऽस्ति तस्य वज्राङ्गसुन्दर्यमिवान्तर्भाव॥

भाषा—हड़जोड़के कल्कमें हीरेको वन्दकर दोलायन्त्र बनाय हड़जोड़का अङ्गस्वरस अथवा क्वाथ वर्तनमें भरके ७ दिनतक स्वेदन करनेसे यह शीघ्र द्रुतहोनेके योग्य होजायगा। शुद्धपारेको हिरणखुरीके रससे ७ दिन मर्दनकर पिट्ठी बनाले। फिर इसको स्पृक्का (दिव्यौषधिकाकद) अथवा अनन्तमूलकी जड़केकल्कमें रख शरावसम्पुटमें वन्दकर भूधरपुटकी आंचदे। इसप्रकार वारम्वार करनेपर जवगोली कड़ी होजाय तव निकालकर रखले। तमामलोहोंके वारीकचूरेको तावेकेपात्रमें रख सुहागेके जलसे ७–७ भावनाए देवे फिर वङ्ग, नाग, ताम्र, अभ्रकसत्व, सुवर्ण, रजत, हीराप्रभृतिरत्न और समस्त लोह इनको इकट्ठाकर हड़जोड़के रससे कईवारलेपकीहुई वज्रमूषामें रखकर धमनकरनेसे गुटिका तैयारहोगी। इसको मुहमें रखनेसे बुढापे और मृत्युका भय नहींरहता। सङ्ग्राममें वज्रदेह और महावल होकर विजयी होताहै। समस्तलोक तथा स्त्रियोंका प्रियहोताहै। यह ब्रह्मयामलमें कहीगईहै। एकपल घीकुवारके रसमें गुड़ मिलाकर पीनेसे इसका शरीरमें क्रामणहोताहै॥ ३८०॥

३८१ वज्रिणीगुटिका

कान्तघनसत्त्वकमलं हेम च तारं यथाकृतद्वन्द्वम्।
समजीर्णं वीजवरं वज्रयुतं वज्रिणी गुटिका॥१८५९॥
एषा मुखकुहरगता कुरुते नवनागतुल्यबलम्।
तद्वपुरपि दुर्भेद्यं मृत्युजरारोगनिर्मुक्तम्॥ १८६०॥

र ह, रसायने।

भाषा—कान्तलोह, अभ्रकसत्त्व, ताम्र, सुवर्ण और रजत येसव समभाग, और समभागमें सुवर्णादिवीजजारणकरके समभागमें हीरा मिलायाहुआ पारा सवकी वरावर लेकर द्वन्द्वमेलापकप्रकारसे इकट्ठे गलाय गोलीवनाकर मुहमें रखनेसे ९ हाथियोंके वलको देतीहै। मुहमेंरखनेवालेकाशरीर शस्त्रादिकोंसे दुर्भेद्य और मृत्यु जरादिरोगसे रहित होताहै॥ ३८१॥

३८२ वज्रेश्वररसः (वज्ररसः) (प्रथमः)

कर्षं खर्परसत्त्वस्य षण्माषे हेम्नि विद्रुते।
षण्निष्कसूतं गन्धाश्मन्यष्टनिष्के प्रवेशितम्॥१८६१॥
प्रवालमुक्ताफलयोश्चूर्णं हेमसमांशयोः।
क्रमाद्द्वित्रिचतुर्निष्कं मृतायःसीसभास्करम्॥१८६२॥
चाङ्गेर्यम्लेन यामांस्त्रीन्मर्दितं चूर्णितं पृथक्।
द्वौ निष्कौ नीलिकटुकीव्योमाऽयस्कान्तनालकात्॥
अङ्कोलकङ्गुणीवीजतुत्थेभ्यश्चतुरः पृथक्।
अष्टौ च टङ्कणक्षाराद्वराटानाञ्च विंशतिः॥ १८६४॥
महाजम्बीरनीरस्य प्रस्थद्वन्द्वेन पेषयेत।
एतदष्टशरावस्थं शुद्धं खार्यास्तुपस्य च॥ १८६५॥
करीषभारे च पचेदथ माषद्वयं ततः।
एतावद्गन्धकात्पादं मरिचाद्भावितादपि॥ १८६६॥
मधुनाऽऽलोडितं लिह्यात्ताम्बुलीपत्रलेपितम्।
गतेऽस्य घटिकामात्रे प्रतियामञ्च पथ्यभुक्॥१८६७॥
नोचेदुद्दीपितो वह्निः क्षणाद्धातून्पचत्यत.।
दिनमेकं निषेव्यैनं त्याज्यान्यामण्डलात्यजेत १८६८
ततः परं यथेष्टाशी द्वादशाब्दं सुखी भवेत्।
एकमेकं दिनं भुक्त्वा वर्षेवर्षे महारसम्॥ १८६९॥
वर्षद्वादशपर्यन्तं ज्वरशङ्कां व्यपोहति।
वर्षादौ च त्यजेत्त्याज्यं क्षयपर्वतभेदनः॥ १८७०॥

र र स, र मु, र च, र को, र र, र. का, र पा, राजयक्ष्मणि।

टि०—र र, र को., र का, र पा, एषु ग्रन्थेषु "कर्षं खर्परसत्त्वस्य समांशे हेमविद्रुते। निक्षिपेच्चूर्णयेत्तद्वत्षण्निष्क शुद्धगन्धकम्। अङ्कोल कङ्गुणीवीज तुत्थ ताल चतुश्चतु। मुक्ताप्रवालचूर्णञ्च प्रति निष्काष्टक क्षिपेत्॥ मृतलौहस्य निष्कौ द्वौ टङ्कणस्याऽष्टनिष्ककम्। द्वौ निष्कौ नीलकटुकीवराटीनाञ्च विंशति॥ सिता निष्कत्रय योज्य सर्वं खल्वे विमर्दयेत्। चाङ्गेर्यम्लेन यामैक जम्बीराम्लै दिनद्वयम्॥ रुद्ध्वा पुटाष्टक देय दिनमेकं तुषाग्निना। जम्बीरोत्थद्रवेणैव पिष्ट्वा पिष्ट्वा पुटे पचेत्॥ ततो वनोपलैरेव देय गजपुट महत्। आदाय चूर्णयेच्छ्लक्ष्ण चूर्णार्द्धं शुद्धगन्धकम्॥ गन्धार्धं मारिच चूर्णमेकीकृत्य द्विमाषकम्। लेहयेन्मधुना सार्धं नागवल्लीदलोत्थितम्॥ पथ्याशी प्रतियाम स्यादभुक्ते विषवद्भवेत्। रसो वज्रेश्वर ख्यात क्षयपर्वतभेदक॥" इति पाठोऽस्ति। एतत्कारणन्तु न ज्ञायते, अस्य मूलपाठन्तु पूर्वनिर्दिष्ट एवास्तीति सुधीभि विभावनीयम्॥

भाषा—६ माशे सुवर्णको गलाकर १ कर्ष खर्परसत्त्व मिलावे। २ कर्ष गन्धकको गलाकर १॥ कर्ष पारामिलावे फिर प्रवाल और मोती ६–६ माशे, लोह $\frac{1}{2}$ कर्ष, नाग $\frac{3}{4}$ कर्ष और ताम्र १ कर्ष (इनसवका वारीकचूर्ण) लेकर अमलोनियाके रससे तीन तीन पहर अलग २ मर्दनकरे। फिर इकट्ठेमिलाय नील और कुटकी ८–८ माशे, अभ्रकसत्त्व, कान्तलोह और हरितालकावारीकचूर्ण, अङ्कोल और मालकागनीकी मींगी, शुद्धतूतिया येसव १–१ कर्ष, सुहागा २ कर्ष, कौड़ीभस्म ५ कर्ष लेकर पूर्वोक्तयोगमें मिलाय २ प्रस्थ विजोरेके रससे मर्दनकर

गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीकरदे। सूखनेपर खड्डेमें ६४ सेर भुसकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् दो प्रस्थ विजोरेकेरसमें मर्दनकर ६४ सेर भूसेकी अग्निदेवे। ऐसे ४ आचें देनेकेवाद १२५ सेर करसीकी ४ वार अग्निदेकर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे दो माशेलेकर आधाआधामाशा शुद्धगन्धक और तत्तद्रोगहरद्रवोंसे भावितकीहुईमिर्चें मिलाकर मधुमें थोड़ीदेर घोटकर पकेपानमें लपेटकर खिलावे। एकघड़ी वीतनेपर अत्यन्त क्षुधा लगेगी उससमय पथ्यभोजन देवे और १–१ पहरवाद भोजनकरावे इसमें गल्ती करनेपर जगाहुआ जठराग्नि धातुओंको जलाडालेगा इसलिये इसमें गल्ती न करे। ऐसे एकदिन इसका सेवनकर ४९ दिनतक त्याज्यवस्तुओंका त्यागकरे इसकेवाद यथेष्टभोजनकरे। एकदिनकेहीसेवनसे १२ वर्षतक जवानीकायमरहतीहै। प्रतिवर्ष एकदिन रसकासेवनकर त्याज्यवस्तुओंका मण्डलभर त्यागकरनेसे १२–१२ वर्षकी आयु वढ़तीजातीहै और असाध्यसे असाध्यक्षयको यह तत्कालनष्टकरताहै ॥ ३८२ ॥

३८३ वज्रेश्वररसः (द्वितीयः)

मृतसूताद्द्वादशांशं मृतं वज्रं प्रकल्पयेत् ।
द्वाभ्यां तुल्यं मृतं कान्तं कान्ततुल्यं मृताऽभ्रकम् ॥ १८७१ ॥
तत्सर्वं भृङ्गजैर्द्रावै मर्दितं भावयेत्त्र्यहम् ।
त्र्यहं गोक्षुरकद्रावैः क्षौद्रैर्माषं ततो लिहेत् ॥ १८७२ ॥
रसो वज्रेश्वरो नाम वज्रकायकरो नृणाम् ।
चतुर्मासे जरां हन्ति जीवेद्ब्रह्मदिनं किल ॥ १८७३ ॥
भृङ्गराजस्य पञ्चाङ्गं चूर्णयेत्त्रिफलासमम् ।
पलैकं मधुना लेह्यं क्रामकं परमं रसे ॥ १८७४ ॥

र खं., रसायनसं, रसायने।

भाषा—पारदभस्मसे १२ वा हिस्सा हीरेकीभस्म, दोनोंकेवरावर कान्त और अभ्रकभस्म लेकर भंगरा और गोखरूकेरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर उड़दवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ मिलाकर खानेसे ४ महीनेमें वज्रकाय होकर ब्रह्मनिर्दिष्ट आयुको भोगताहै। भंगरा और त्रिफला समभागकाचूर्ण एकपल लेकर मधुसे सेवनकरनेसे शरीरमें रसकीव्याप्ति होतीहै ॥ ३८३ ॥

३८४ वज्रेश्वरीगुटिका

समुखं पारदं कान्तं मुण्डलोहाऽभ्रसत्त्वकम् ।
ताप्यसत्त्वं मृतं वज्रं सर्वं जम्बीरजै द्रवैः ॥ १८७५ ॥
सप्ताहं मर्दयेत्तुल्यं कृत्वा गोलं समुद्धरेत् ।
निर्गुण्डी सैन्धवं क्षौद्रं गोजिह्वा काकतुण्डिका ॥ १८७६ ॥
पिष्ट्वा तु लेपयेद्गोलं सर्वतोऽङ्गुलमात्रकम् ।
तद्रुद्ध्वा वज्रमूषायां पचेद्यामं तु भूधरे ॥ १८७७ ॥
लिप्त्वा रुद्ध्वा पुनः पाच्यमित्येवं पक्षमात्रकम् ।
यवचिञ्चापलाशोत्थराजीकार्पासवीजकैः ॥ १८७८ ॥
सुपिष्टैर्लेपयेन्मूषां तन्मध्ये पूर्वगोलकम् ।
टङ्कणं श्वेतकाचञ्च दत्त्वा पृष्ठे निरुद्ध्य च ॥ १८७९ ॥
खदिराङ्गारयोगेन धमेद्यावद्द्रुतं भवेत् ।
ततस्तं विडलिप्तायां मूषायाञ्च निवेशयेत् ॥ १८८० ॥
तत्तुल्यं दापयेत्स्वर्णं जारयेत्तं धमन्धमन् ।
जीर्णे स्वर्णे समुद्धृत्य तप्तखल्वे विमर्दयेत् ॥ १८८१ ॥
त्र्यहं दिव्यौषधिद्रावै वज्रमूषान्धितं धमेत् ।
जायते गुटिका दिव्या नाम्ना वज्रेश्वरी परा ॥ १८८२ ॥
वक्त्रस्था सा जरां मृत्युं हन्ति संवत्सरात्किल ।
शस्त्रस्तम्भञ्च कुरुते ब्रह्मायुर्गच्छति ध्रुवम् ॥ १८८३ ॥
कृष्णाऽष्टम्यां समादाय सहदेवीं सुचूर्णयेत् ।
कर्षैकां भक्षयेदाज्यैरनु स्यात्क्रामणे हितम् ॥ १८८४ ॥

र खं., रसायने।

भाषा—वुभुक्षितपारद, कान्त और मुण्डलोह, अभ्रक और स्वर्णमाक्षिकसत्त्व तथा हीरा इनकी भस्में समभागलेकर ७ दिन जंभीरीकेरससे मर्दनकर गोलावनाय निर्गुण्डी, सैन्धव, छोटीमक्खिओंकामधु, वनगोभी, काकनासा इनसवको पीसकर गोलेपर चारोंतर्फ १–१ अङ्गुलमोटा लेपकर वज्रमूषामें वन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर भूधरयन्त्रमें १ पहरकी आचदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर इसीतरह मर्दनकर पुटदेवे। ऐसे १५ दिनकरके तितली, पलाश, राई और कपास इनके वीजोंको वारीक पीस मूषामें लेपकर पूर्वगोलेको उसमें रख सुहागे और सफेदकाचसे ढककर खदिराङ्गारसे द्रुतहोनेतक धमनकरे फिर किसी विशिष्ट विडका मूषामें लेपदेकर उसगोलेको रख उसकी वरावरका सुवर्ण डालकर धमनकरे। सुवर्णजीर्णहोनेपर निकालकर तप्तखल्वमें रखकर तीनरोज यथालाभ दिव्यौषधियोंके द्रवसे मर्दनकर वज्रमूषामें वन्दकर धमनकरनेसे गुटिका तैयारहोतीहै। इसको मुंहमें रखनेसे वुढ़ापे और मृत्युको नष्टकर तमामशस्त्रोंको कुण्ठितकरतीहै। कृष्णपक्षकी अष्टमीकेदिन सहदेवीको निमन्त्रणपुर सर चूर्णकर १ कर्ष घीकेसाथ खानेसे गोलीका शरीरमें क्रामण होताहै ॥ ३८४ ॥

३८५ वटेश्वररसः

वटक्षीरैस्त्र्यहं मर्द्यं गन्धं शुद्धरसं समम् ।
वटकाष्ठाग्निना पाच्यं मृत्पात्रे यामपञ्चकम् ॥ १८८५ ॥
क्षिपन्क्षिपन् वटक्षीरं तत्काष्ठेनैव चालयेत् ।
समुद्धृत्य त्र्यहं भाव्यं देवदालीदलद्रवैः ॥ १८८६ ॥
उष्णकाले तु गुञ्जैकं ताम्बूलीपत्रसंयुतम् ।
चन्द्रवृद्ध्या सदा भक्ष्यं यावत्षोडशगुञ्जकम् ॥ १८८७ ॥
चूर्णमुत्तरवारुण्या वाकुच्या देवदालिजम् ।
मध्वाज्याभ्यां लिहेत्कर्षं क्रामकं ह्यनुपानकम् ॥ १८८८ ॥
वर्षमात्राज्जरां हन्ति जीवेद्वर्षशतत्रयम् ।
रसो वटेश्वरो नाम वज्रकायकरो नृणाम् ॥ १८८९ ॥

र खं., रसायनसं, रसायने।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर वटकेदूधसे ३ दिन मर्दनकर मिट्टीकीकढ़ाहीमें डालकर ५ दिनतक वटकीलकड़ीकी अग्निदेताहुआ पकावे। दूधसूखनेपर दूसरा डालता

जाय और वटकी ताज़ीवरोहसे चलाताजाय फिर ३ दिन वन्दालकेस्वरससे मर्दनकर रखछोड़े। गर्मीकेमहीनेमें १ रत्ती पानमें डालकर खावे और प्रतिदिन १–१ रत्ती बढ़ावे। ऐसे १६ रत्तीहोनेपर मात्राको स्थिरकरे। इन्द्रायणकीजड़, वाकुची, वन्दाल, इनकासमभागचूर्णमिलाकर १–१ कर्ष मधुकेसाथ खानेसे शरीरमें इसका अनुक्रमणहोताहै। एकवर्षतक इसप्रयोगकेकरनेसे ३०० वर्षकी आयु होतीहै और वज्रशरीरहोजाताहै ॥ ३८५ ॥

३८६ वडवाग्निमुखीवटी

शुल्वाऽयोघनभस्म वेल्लहलिनीव्योषाम्बुनिम्बत्वच्छदैः,
संयुक्तैश्च हरिद्रया समलवैः सार्ऽधांशशुभ्राऽमृतैः।
भृङ्गाऽम्भोविषतिन्दुकार्द्रकरसैःसम्पिष्य गुञ्जा मिता,
संशुष्का वडवामुखीति गुटिका नाम्नोदिता तारया॥
क्षिप्रं क्षुत्प्रतिबोधिनी खलु मता सर्वामयध्वंसिनी,
श्लेष्मव्याधिविधूननी कसनहृच्छ्वासापहा शूलनुत्।
क्षुद्वैषम्यहरा च गुल्मशमनी मूलार्तिमूलंकपा,
शोफव्याधिहराऽत्र किं बहुगिरा सर्वामयोत्सादनी॥

र.र.स., र.क., ना. वि., सर्वरोगे। र. क. भक्तविपाकवटीति नाम।

भाषा—तांबा, लोह, अभ्रकभस्म, विडङ्ग, करिहारी, त्रिकटु, नागरमोथा, नीमकीछाल, हल्दी येसव समभागलेकर सवसेंआधी रौप्यमाक्षिकभस्म और शुद्धवछनाग मिलाकर भगरा, खस, कुचिला और अदरखके रसोंसे १–१ दिनमर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे क्षुधाको जाग्रतकर समस्तरोगोंको दूरकरतीहै। श्लेष्मव्याधि, कास, हृद्रोग, श्वास, शूल, भूखकीविषमता, गुल्म, ववासीर, शोथ इत्यादि समस्तरोगोंको यह दूरकरतीहै ॥ ३८६ ॥

३८७ वडवाग्निरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं ताम्रं तालं समं समम्।
अर्कक्षीरै दिनं मर्द्य क्षौद्रै लेह्यं त्रिगुञ्जकम्॥ १८९२॥
वड़वाग्निरसो नाम्ना स्थौल्यमाशु नियच्छति।
पलं क्षौद्रं पलं तोयमनुपानं सदा पिवेत्॥ १८९३॥

र. सं., र.र.स., र.र.कौ., र.म मा, र चि., र को., यो. र., र.(मा.), र क. ल, र र, नि र., वै क., र चं, ध, र. र.दी, र.सं.क, भै सा., व रा, रसायन सं., चि.सा., टो, र सु, वै. र., वै चि., र, कौ, चि.र भ., र.क, र शं., भै.र., मेदोऽधिकारे।

टि०—वै. र, वै चि., चि र. भ, र.कौ, र.क, र श, एषु ग्रन्थेषु वडवानलरस इति नाम स्थापितम्। र स, ध, र सु, र चि, भै र, एषु ग्रन्थेषु द्वितीयस्थाने वडवाग्निलोहमिति नाम्ना द्वितीय पाठ स्थापितोऽस्ति तत्र गन्धकस्थाने लोह नियोजितम्, शुद्धसूतस्थाने तद्भस्म गृहीतम्। अस्मिन्नेव रसे तदुभयमपि गृहीत्वा योगे निष्पादिते भवति द्वयोरप्येकस्मिन्स्थाने निवेश। कुत्रचिद्गन्धकस्थाने वोल गृहीतम्। रसमङ्केतकलिकायां तालस्थाने तार नियोजितमिति।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और हरितालभस्म समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर आककेदूधसे एकदिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथदेकर एकपलमधुमें वरावरकाजल मिलाकर ऊपरसे पीनेसे यह स्थूलताको शीघ्र नष्टकरताहै ॥ ३८७ ॥

३८८ वडवाग्निरसः (द्वितीयः)

कान्तं पद्मरसे घृष्टं पुटपकं वरारसे।
मार्कवस्वरसे घृष्टं सप्तकृत्वस्त्वयोमलम्॥ १८९४॥
निष्कद्वादशकं कान्तं त्रिंशन्निष्कमयोमलम्।
टङ्कणं मरिचं तुल्यं पृथक् कर्षत्रयं भवेत्॥ १८९५॥
चूर्णान्येतानि संयोज्य स्थापयेच्छुद्धभाजने।
शुद्धदेहो नरस्तस्य पानं यद्भोजनोत्तरम्॥ १८९६॥
अथातपथ्यं ततः स्वल्पं ततस्ताम्बूलभाग्भवेत्।
उदराग्निं नरस्याऽस्य वडवाग्निसमो भवेत्॥
बहुनाऽत्र किमुक्तेन रसायनमयं नृणाम्॥ १८९७॥

र. र. स, अजीर्णाऽधिकारे।

भाषा—कान्तलोहका वारीक चूरा वनाय कमलकेफूलोंमें घोटकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर त्रिफलाके रसमें घोटकर आचदे इसतरह वारितर भस्मकरले। मण्डूरको वहेड़ेके कोयलोंमें तपातपाकर ७ वार गोमूत्रमें वुझाकर शुद्धकरले और भंगरेकेरसमें घोटघोटकर पुटदेकर भस्मकरले। फिर कान्तलोहभस्म ३ कर्ष, मण्डूरभस्म ७॥ कर्ष, भुनासुहागा, मरिच और तुत्थभस्म ३–३ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर इकट्ठे मिलाय रखछोड़े वमन विरेचनादिकसे शरीरको शुद्धकर इसमेंसे १ रत्तीमे लेकर १ माशेतककी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देकर स्वल्पपथ्य दे और ऊपरसे पानकावीड़ा खिलावे। इससे अग्नि एकदम प्रदीप्तहोजाताहै और हमेशा सेवनकरनेसे यह रसायनकाकाम करताहै ॥ ३८८ ॥

३८९ वडवानलरसः (प्रथमः)

अधुना कथयिष्यामि वडवानलसञ्ज्ञकम्।
रसेन्द्रस्य च संस्पर्शात्सन्निपातोऽतिदारुणः॥१८९८॥
अवश्यं विनिवर्तेत का कथा ज्वरमात्रके।
पूर्वमुत्पातितं सूतं भस्मीकुर्याद्विचक्षणः॥ १८९९॥
भस्मीकरणयोगोऽयं कथ्यते सम्प्रदायतः।
विष्णुक्रान्तामुत्तराद्यां वारुणीञ्च समाहरेत्॥१९००॥
उत्तरावारुणीदुग्धैः सस्यारिजरसैस्तथा।
हंसपादीरसैस्तद्वदर्कक्षीरैस्ततः परम्॥ १९०१॥
वज्रीक्षीरै र्ब्रह्ममूलरसैः सम्यक् प्रमर्दयेत्।
कपिकच्छुशिफानीरै र्विष्णुक्रान्तारसैस्तथा॥१९०२॥
गोकण्टमूलनीरैस्तु रसैः पौनर्नवैस्तथा।
पाठारसै र्देवदालीरसैश्च यवचिञ्चिजैः॥ १९०३॥
शतावरीकञ्चुकीजैः सूतं यत्नात्प्रमर्दयेत्।
दिनानि दश सम्मर्द्य दिवानक्तमतन्द्रितः॥ १९०४॥

तस्य कल्कस्य गोलं तु यन्त्रे सोमानले क्षिपेत्।
लेपञ्च सुदृढं दत्त्वा यन्त्रं चुल्ल्यां निवेशयेत् ॥१९०५॥
एकविंशदिनं यावदग्निं सञ्ज्वालयेदधः।
यन्त्रादुत्तारयेत्सूतं भस्मीभूतं सुपाण्डुरम् ॥ १९०६ ॥
भस्मैतन्मारयेल्लोहं सुवर्णाद्यमसंशयम्।
लेपेन पुटयोगेन सर्वलोहानि मारयेत् ॥ १९०७ ॥
एतद्भस्म समादद्यात्तोलमेकं महोज्ज्वलम्।
गन्धं मनःशिलां तालं प्रत्येकं तोलमाहरेत् ॥ १९०८ ॥
खल्वमध्येऽथ तत्सर्वं मर्दयेद्वारुणीरसैः।
दिनत्रयं निम्बुकीजैस्त्रिदिनं मर्दयेत्ततः ॥ १९०९ ॥
चक्रधारान्समादध्यात्सजीवान्विंशतिद्वयान्।
पूर्वमर्दितकल्कान्तः क्षिप्त्वा श्लक्ष्णं विमर्दयेत्॥१९१०॥
दिनमेकं प्रयत्नेन तस्य गोलञ्च कारयेत्।
गोस्तनाकारमूषायां षडङ्गुलकमानतः ॥ १९११ ॥
पक्कायां निःक्षिपेद्गोलं मुखं सम्यङ्निरोधयेत्।
मूषार्द्धं धरणीमध्ये निखनेदूर्द्ध्वमूर्द्ध्वतः ॥ १९१२ ॥
विदध्यात्प्रकटां पश्चादुत्पले वनसम्भवैः।
चत्वारिंशत्समाख्यातैश्चतुर्भिरधिकैः पुटेत् ॥ १९१३ ॥
स्वाङ्गशीतलमाकृष्य पूजयित्वाऽथ भैरवीम्।
खल्वे सञ्चूर्ण्य निक्षिप्य करण्डे दन्तनिर्मिते ॥१९१४॥
ततः परीक्षा कर्तव्या रसस्य मतिमज्जनैः।
पात्रिकां जलपूर्णाञ्च कृत्वा तत्र निवेशयेत् ॥ १९१५ ॥
सिद्धं रसं वल्लमानं पात्राऽऽच्छादयेत चाऽन्यथा।
चतुर्भिः प्रहरैः सूतः पानीयं शोषयेद् ध्रुवम् ॥१९१६॥
पानीयशोषणत्वेन वडवानल ईरितः।
ज्वरितस्य ततो देयो गुञ्जामानो रसेश्वरः ॥ १९१७ ॥
प्रदानक्षणमात्रेण देहेऽतिलघिमा भवेत्।
ज्वरवेगो निवर्तेत शिरोऽर्ति नश्यति क्षणात् ॥१९१८॥
बुभुक्षा महती सद्यो जायते भोजयेत्ततः।
दुग्धभक्तं दाधिकं वा यावत्तृप्तिः प्रजायते ॥ १९१९ ॥
सर्वथा न निवर्तेत बुभुक्षा यदि तत्र वै।
अन्यद्रसान्तरं तत्र कथ्यमानं प्रयोजयेत् ॥ १९२० ॥
पूर्वशुद्धं रसं नीत्वा गन्धकेन समांशतः।
प्रमत्तमेषीवसया मर्दयेद्दिवसं ततः ॥ १९२१ ॥
गोस्तनाकारमूषायां क्षिप्त्वाऽथ पुटयेद्रसम्।
पूर्ववत्स्वाङ्गशीतं तं पात्रेऽन्यस्मिन् विनिःक्षिपेत् १९२२
पूर्वप्रयुक्तसूतस्य जायते चेदुपद्रवः।
तदुपद्रवनाशार्थं रसमेनं प्रयोजयेत् ॥ १९२३ ॥
गुञ्जामानेन संहन्यादुपद्रवमसंशयम्।
एतत्सूतप्रयोगेण धनुर्वातो विनश्यति ॥ १९२४ ॥
कण्ठकुब्जकसञ्ज्ञोऽपि दन्तसङ्कीलनं तथा।
अवश्यं नाशमायाति रसेन्द्रस्य प्रभावतः ॥ १९२५ ॥
धनुर्वाते कण्ठकुब्जे शैत्यं वातं विवर्जयेत्।
वडवानलसञ्ज्ञोऽयं रसेन्द्रो रोगभेदकः ॥ १९२६ ॥
सर्वेषामेव रोगाणां चक्रवालं निहन्ति वै।
अनुपानप्रयोगेण सर्वरोगनिवारणः ॥ १९२७ ॥

रसाल., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—ऊर्द्ध्व, तिर्यक् और अधःपातनकियेहुए शुद्धपारेकी भस्मकरे, उसकेलिये विष्णुक्रान्ता (सफेदकोयल) और चमार दूधी पारेके बराबर लेकर कल्कबनाय पारेमें मिलादे। फिर १–२ पहरमर्दनकर गोकर्ण, चमारदूधीकादूध, अगियाघास, हंसराज, आक और थूहरकादूध, पलाशकीजड़कारस, केवांचकीजड़, कालीकोयल, गोखरूकीजड़, पुनर्नवा, पाठा, वन्दाल, तितली, शतावर, क्षीरकञ्चुकी (यहतन्त्रग्रन्थोंमें इसीनामसे आयाकरतीहै यह एक थूअरकी जातिहै इसमें कांटे नहींहोते। पत्ते पानकेसदृश दलदारहोतेहैं डंडी हरी और काली होतीहै वनारस प्रान्तमें इसे नागदौन बोलतेहै। नागदौन यह शब्द प्रत्येकप्रान्तमें अलग २ वनस्पतिमें रूढहै रसौषधियोंमेंभी इसका परिगणन आयाहै) इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा दूधप्रभृतिद्रवसे १०–१० दिन निरन्तर मर्दनकर गोलाबनावे, बीचमें विश्राम न होनाचाहिये दिनरातमर्दनकरे। फिर इसकी रोटीजैसी बनाय सोमानलयन्त्रमें रखकर ६–७ कपड़मिट्टीसे मुंहबन्दकर समस्तपर ६–७ कपड़मिट्टी सुखासुखाकरदेवे। फिर इसयन्त्रको चूल्हेपर रख २१ दिनतक नीचे निरन्तर अग्निदेवे, ऊपरकी हंडीपर पानीकापोता रखताजाय जिसमें कि अग्निकी तेज़ीसे पारा उड़ न जाय (आजकल जो सोमानलयन्त्रके लक्षणमिलतेहैं वे रसालङ्कारकर्ताकेमतसे विरुद्धहैं क्योंकि " यन्त्रं चुल्ल्या निवेशयेत्। एकविंशद्दिनं यावदग्निं संज्वालयेदध." ऐसा वाचनिकमुद्रासे इन्होंने इसवातको सिद्धकियाहै)। २१ दिनकेबाद आगदेना बन्दकरदे और कोयले यथावस्थित रहनेदे, पोतेकोभी हटादे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर यन्त्रको युक्तिसे खोले ऊपरकीहण्डीमें एकदम सफेदभस्म लगीहुई मिलेगी। कभी २ नीचेकी हण्डीमेंभी पड़जायाकरतीहै इससबको कागज़वगैरहसे धीरजसे निकालकर रखछोड़े। इसभस्मको मारकद्रव्योंकेस्वरसमें मिलाकर किसीभी धातुकेपत्रपर लेपदेकर अग्निदेनेसे उत्तमभस्महोतीहै और विशेषगुणप्रदहोतीहै। यह पारेकीभस्म, शुद्धगन्धक, मैनसिल और हरिताल १–१ तोला लेकर एकदिन शुष्कमर्दनकर इन्द्रायणकेपञ्चाङ्ग और निम्बुलताकीजड़केरससे ३–३ दिनमर्दनकर ४० नग जीतेहुए सखलोंको लेकर उनकेरसमें एकदिन निरन्तर मर्दनकर गोलाबनाय ६ अङ्गुलकी पकीहुई गोस्तनीमूषामें बन्दकर मुखमुद्राकर ३–४ कपड़मिट्टीसमस्तपर लगाय सुखाकर आधीमूषाकोज़िमीनमें गाड़दे और ऊपरसे ४४ नग जङ्गलीकण्डोंकीआंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर भैरवीकी पूजाकर चूर्णकर हाथीदांतकी डब्बीमें रखकर जलभरेपात्रमें डब्बीको डुवाकर रक्खे। इसमेंसे ३ रत्ती रस पानीमेंरहुएघड़ेमें डालकर मुंहढकदे तो ४ पहरकेभीतर घड़ेकापानी सूखजायगा, इसीलिये इसको वडवानल कहतेहैं। इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे क्षणभरमें शरीर हलका होजाताहै और ज्वरजनितशिरोवेदनाप्रभृति निवृत्तहोकर

मूखलगतीहै उसवक्त दूधभात अथवा दहीभात तृप्तकरके खिलाना। यदि भूख किसीतरहभी शान्त न हो तो नीचेलिखाहुआ रस देना।

पूर्वप्रकारसे शुद्धकियाहुआ पारा और गन्धक समभाग लेकर मस्तमेढ़की चर्बीसे एकदिनमर्दनकर गोस्तनाकारमूषामें डालकर अच्छीतरह कपड़मिट्टीकर पूर्ववत् ४४ कण्डोंकी आंचदे स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर दूसरेपात्रमें रखछोड़े। अगर पहिलेरससे उपद्रव मालूम हो तो इसमेंसे १-१ रत्ती देनेसे तमाम उपद्रव नष्टहोजातेहैं। इसके अतिरिक्त धनुर्वात, कण्ठकुब्जक, दन्तबन्ध, येसब नष्ट होजातेहैं। धनुर्वात और कण्ठकुब्जकमें ठंढीचीजें और वायुका वर्जनकरे। इसमेंसे तत्तद्रोगहरानुपानोंकेसाथ देनेसे यह तमामरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ३८९ ॥

३९० वडवानलरसः (द्वितीयः)

गद्याणा दश ताम्रस्य तेषां पत्राणि कारयेत्।
तानि कण्टकवेध्यानि द्व्यङ्गुलैकाङ्गुलानि च ॥१९२८॥
शुद्धसूतस्य गद्याणान्स्थाल्यन्तर्विन्यसेद्दश।
विंशति निम्बुकानाञ्च खण्डानि शतशः क्षिपेत् १९२९
ततश्च ताम्रपत्राणि लवणं काञ्जिकेन च।
आरनालभृतास्थालीमारोप्य चुल्लिकोपरि ॥ १९३० ॥
हठाद्वह्निः प्रदीयेत त्रिदिनञ्च दिवानिशम्।
सक्षारे वह्निना दग्धे काञ्जिकं प्रक्षिपेन्मुहुः ॥ १९३१ ॥
जायन्ते तानि पत्राणि श्वेतरूप्यसमानि च।
शुद्धगन्धकगद्याणशतं पिष्ट्वाऽनु चूर्णयेत् ॥ १९३२ ॥
स्थालिकायां क्षिपेच्चूर्णं ततः पत्रं प्रसारयेत्।
पुनश्च गन्धकं दत्त्वा पूर्ववत्पत्रदापनम् ॥ १९३३ ॥
पिण्डीधत्तूरकस्यैवदेयामृद्गीतथोपरि।
पिधायाऽऽस्यं शरावेण दद्यात्कर्पटमृत्तिकाम् ॥१९३४॥
चुल्ल्यां स्थालीं निधायाऽग्निं षड्यामं ज्वालयेद्धठात्।
शीतामुत्तारयेत्स्थालीं ताम्रमेतावता मृतम् ॥१९३५॥
विनाधत्तूरकं पिण्डं याममुग्मं पुनः पचेत्।
दत्त्वा हस्तिपुटं खल्वे क्षिपेत्ताम्रं रसान्वितम् ॥१९३६॥
(आद्यायान्तप्रमाणाः स्यु र्गजलावककुक्कुटाः)
पिष्ट्वा चूर्णं विधायाऽथ निर्गुण्डीस्वरसेन च।
आर्द्रकण्टकशैलस्य त्रिफलाया जलेन च ॥ १९३७ ॥
शुष्केशुष्के पुनर्देयाः प्रत्येकं सप्त भावनाः।
त्रिकटुम्बुभवा देयाश्चैकविंशतिभावनाः ॥ १९३८ ॥
सप्तैकोश्च रसेनैव कनकस्य रसेन च।
निःसहायारसेनाऽपि वत्सनाभविषेण च ॥ १९३९ ॥
सर्वंशुष्कञ्च तच्चूर्णं कूप्यां क्षेप्यं प्रयत्नतः।
रक्षणीयमसौ नाम वडवानलको रसः ॥ १९४० ॥
वल्लैकः शीतनीरेण पञ्चामृतजलेन वा।
प्रत्यहं सततं ग्राह्यः प्रातरुत्थाय रोगिणा ॥ १९४१ ॥
दद्याद्विंशतिमेहेषु शूलेषु विविधेषु च।
अष्टादशसु कुष्ठेषु वाशीतिवातरोगिषु ॥ १९४२ ॥
अर्शःसु सकलेष्वेव गुदरोगे विशेषतः।
मन्दाग्नौ चाऽन्यरोगेषु देयोऽयं रसराजकः ॥१९४३॥
तैलक्षाराऽम्लवर्जञ्च भोज्यं मधुरभोजनम्।
क्रमाद्रोगा विलीयन्ते सेविते वडवानले ॥ १९४४ ॥

रसचि., र. कं. ली., सर्वरोगे।

भाषा—पांचतोले शुद्धतांबेके कण्टकवेधीपत्र बनवाय १-१ अथवा २-२ अङ्गुलके टुकड़े करावे। पांचतोले शुद्धपारेको मजबूतहण्डीमें डालकर पकेहुए ३० नीबुओंके छोटेछोटे सैंकड़ों टुकड़ेकरके डालदे और ऊपरसे उन ताम्रपत्रोंके टुकड़ोंको फैलादे। ऊपरसे ४० तोले सैन्धवको काञ्जीमें पीसकर डालदे। वाकीबचीहुई हण्डीको साधारणकाञ्जीसे भरके चूल्हेपर चढादे और तीनदिनरातकी कड़ी अग्निदेकर पकावे। जब काञ्जीसूखकर नीबू जलनेलगें तब और काञ्जी डालदे, ऐसे वारम्वार काञ्जीको देवे अन्तमें कुछगीलाही उतारले। स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे तांबेके पत्रोंको निकालले, इनकारङ्ग एकदम चांदीकेसदृश होजायगा। फिर ५० तोले शुद्धगन्धक पीसकर थोड़ासा दूसरीहंडीमें विछाकर कुछपत्रोंको विछादे। इसीतरह गन्धक और पत्रोंकी तह जमाकर धतूरेकेपत्रोंकाकल्क हंडीमें मुंहतक भरके शरावसम्पुटकर ६-७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर हंडीको चूल्हेपर रख ६ पहरकी तीक्ष्णाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे सम्पुटको खोलकर कल्कको फेंकदे और अवशिष्टपदार्थको ज्योंका त्यों रखकर दोपहरकी चूल्हेपर अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर दूसरे सम्पुटमें धतूरेकेरससे भिगोकर रखकर सम्पुटबनाकर २-४ कपड़मिट्टीदेकर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अच्छीतरह पीसकर निर्गुण्डी, अदरख, पियावासा, अमिलतास, त्रिफला इनके स्वरसोंकी ७-७ भावनाएं देकर त्रिकटु की २१, ईख, धतूरा, आकाशवेल और वच्छनागके द्रवोंकी ७-७ भावनाएं देकर अच्छीतरह सुखाकर शीशीमें रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा ठंढेजल अथवा पञ्चामृतकेसाथ औचिती देखकर प्रात काल देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, नानातरहकेशूल, १८ प्रकारकेकुष्ट, ८० प्रकारकेवातरोग, समस्तबवासीर, खासकरगुदरोग, मन्दाग्नि इन सबको यह नष्टकरताहै और तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे प्राय. सभीरोगोंको नष्टकरताहै। तैल, क्षार, खटाई, ये इसमें अपथ्यहैं। मधुरभोजन सेवन करानाचाहिये ॥ ३९० ॥

३९१ वडवानलरसः (तृतीयः)

रसवलिकुलिशानि स्युः पट्टन्यग्निजारो,
जलनिधिशुभफेनः कान्तलोहोऽञ्जनञ्च।
भुजगरिपु गराह्वं तालकश्चेति तुल्या-,
नथ रविभवदुग्धे मर्दितं भावयेच्च ॥१९४५॥
गजपुटगतमेतद्भावयेत्काकमाची-,
कनकविषफलाह्वाब्राह्मयशोथघ्ननीरैः।
तरणिवसुजयन्तीशैलकर्णीद्विरेफ-,
त्रिवृदितिसुरसाह्वावासकानां जलेन १९४६

तिमिमहिषमयूरच्छागपित्तै विमिश्रो,
भवति रसवरोऽयं वाडवाग्निः प्रगल्भः।
पवनजनितरोगान्सन्निपातान्कफोत्था-,
ञ्जयति हि निजवल्लःप्रोक्तरोगाऽनुपानैः१९४७

रसायनसं, र र.दी, टो., र.का.,वातव्याध्यधिकारे। र. र. दी., टो. एतयो र्वडवाऽग्निरिति नाम।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, हीराभस्म, पाचोंनमक, अम्वर, समुद्रफेन, कान्तलोह, अञ्जन (कालासुरमा), सुवर्णमाक्षिक इनकीभस्में, शुद्ध वछनाग और हरिताल येसव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर आकके दूधसे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मकोय, धतूरा, कुचिला, ब्राह्मी, पुनर्नवा, आक, सफेदपुनर्नवा, जेंत, कोयल, भंगरा, निसोत, तुलसी, अडूसा, इनके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर सूखनेपर मछली, भैंसा, मोर और वकरेके पित्तोंसे १–१ भावना देकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात, और कफजनित समस्त व्याधिया नष्टहोतीहैं॥ ३९१॥

३९२ वडवानलरसः (चतुर्थः)

शुल्वं तालकगन्धकौ जलनिधेः फेनोऽग्निगर्भाशयः,
कान्ताऽयोलवणानि हेमपवनं गोनिर्गतं तुत्थकम्।
भागो द्वादशको रसस्य तदिदं वज्राम्वुघृष्टं शनैः,
सिद्धोऽयं वडवानलो गजपुटे रोगानशेषाञ्जयेत्१९४८
आर्द्रकस्य द्रवेणाऽमुं दशवाराणि भावयेत्।
दिनद्वयं चित्रकस्य द्रावेणैव तु भावयेत्॥ १९४९॥
पादांशममृतं दत्त्वा चित्रद्रावैः क्षणं पचेत्।
मात्रया योजयेच्चाऽनु दशमूलशृतं पयः॥ १९५०॥
वातश्लेष्मप्रधाने च दद्यात्त्र्यूपणचित्रकम्।
स्वेदश्च कटुतुम्विन्या प्रयुञ्जीताऽतियत्नतः॥
दाहश्च जङ्घयोः कुर्याच्छीतवातञ्च वर्जयेत्॥ १९५१॥

र र स., र चं, र. शि, र शं, र क यो, र (मा.), र. मृ., वाताऽधिकारे। र च, अजीर्णाऽधिकारे।

भाषा—ताम्र और हरितालभस्म, शुद्धगन्धक, समुद्रफेन, अम्वर, कान्तलोहभस्म, पाचोंनमक, भुनासुहागा, गोरोचन, भुनातूतिया येसव १–१ भाग और पारदभस्म १२ भाग लेकर सवको इकट्ठे मर्दनकर थूअरकेदूधसे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अदरखकेरसकी १० दिन और चित्रककेरसकी २ दिन भावनाएं देकर सुखाकर चतुर्थांश शुद्धवछनाग मिलाकर चित्रकके क्वाथसे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय पकेपानोंकेअन्दर लपेटकर एकवालिस्तके भूधरयन्त्रमें रखकर लघुपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर १–१ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली दशमूलकेक्वाथकेसाथ अथवा दूधकेसाथ देनेसे यह तमाम वातरोगोंको नष्टकरता है। वातकफप्रधानव्याधियोंमें त्रिकटु और चित्रककेसाथदे। गृध्रसी प्रभृति वातरोगोंमें कड़वीतूमड़ीकास्वेद और जांघोंमें दाह देवे तथा शीत और वायुसे परहेज़ रक्खे॥ ३९२॥

३९३ वडवानलरसः (पञ्चमः)

वज्रं कान्ताऽभ्रकं शुल्वं रसगन्धकतुत्थकम्।
नीलाञ्जनाब्धिफेनाऽग्निजरायुलवणैः समैः॥ १९५२॥
शनैर्वृत्तं योगघृष्टं पुटितं वडवानलः।
हिक्काञ्च धनुर्वातं सन्निपातोदरादिकम्॥ १९५३॥

र. शं., सन्निपाते।

भाषा— हीरा, कान्तलोह, अभ्रक और ताम्र इनकीभस्में, शुद्ध पारा, गन्धक और तुत्थ, सुरमेकीभस्म, समुद्रफेन, अम्वर, पांचोंनमक, सव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सन्निपातघ्न दशमलप्रभृतिक्वाथोंसे भावनादेकर शरावसम्पुटमें वन्दकर २–४ कपड़मिट्टी लगाकर भूधरयन्त्रमें स्वेदितकर २–२ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे धनुर्वात, सन्निपात और उदररोगोंको यह नष्टकरताहै॥ ३९३॥

३९४ वडवानलरसः (षष्ठः)

कान्तञ्च सूतं हरितालगन्धं
समुद्रफेनं लवणानि पञ्च।
नीलाञ्जनं तुत्थकमेव रूप्यं
भस्म प्रवालानि वराटकाश्च॥ १९५४॥
वैक्रान्तशम्बूकसमुद्रशुक्ति
सर्वाणि चैतानि समानि कुर्यात्।
सूतं भवेद् द्वादशभागकञ्च
स्नुह्यर्कदुग्धेन विमर्दयेच्च॥ १९५५॥
दिनत्रयं वह्निरसैस्ततश्च
निवेशयेत्ताम्रजसम्पुटे तत्।
मृदा च संलिप्य सुसम्पुटे-
तद्रसस्ततः स्याद्वडवानलाख्यः॥ १९५६॥
तत्पादभागेन विषं नियोज्य
कृशानुतोयेन पचेत्क्षणं तत्।
वातप्रधाने च कफप्रधाने
नियोजयेत्त्र्यूपणचित्रयुक्तम्॥
दोषत्रयोत्थेऽपि च सन्निपाते
वाताऽधिकत्वादि निपूदनाय॥ १९५७॥

भै. र., र दी, र सु, र मृ, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—कान्तभस्म, शुद्ध पारा, हरिताल और गन्धक, समुद्रफेन, पाचोंनमक, सुरमेकीभस्म, शुद्धतुत्थ, रजत, प्रवाल, कौड़ी, वैक्रान्त, घोंघा, मोतीकीसीप, इनसवकीभस्में १–१

भाग, पारदभस्म १२ भाग लेकर एकदिन शुष्कमर्दनकर थूहर और आकके दूध तथा चित्रकके क्वाथसे ३–३ दिनमर्दनकर गोला-वनाय तावेकेसम्पुटमेंवन्दकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतल-होनेपर चतुर्थांश शुद्धवछनागमिलाके रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा त्रिकटु और चित्रकके चूर्णकेसाथ देनेसे वात अथवा कफप्रधान अथवा त्रिदोषप्रधानसन्निपातोंको यह नष्टकरताहै । इसमें दोषोंके प्रवलाशको विचारकर अनुपानोंका योगकरे॥ ३९४॥

३९५ वडवानलरसः (सप्तमः)

कान्तं माक्षिकशङ्खनाभिलवणं वैक्रान्तनीलाञ्जनं,
गोलाले रविफेनकर्षमितियुक् शम्बूकसूताऽष्टकम् ।
निष्पिष्याऽथ दिनं सुवज्रिजलतो गर्तान्तरे त्रिःपुटान्,
सिद्धोऽयं वडवानलो विजयते गुञ्जाऽत्र सर्वामयान्॥

र. शि., सर्वरोगे ।

भाषा—कान्त, सुवर्णमाक्षिक, शङ्खनाभि इनकीभस्में, सैन्धव, वैक्रान्त और सुरमेकीभस्म, शुद्धमैनसिल, हरिताल, आककीजड़कीछाल और अफीम १–१ कर्ष, घोंघा और पारा ८–८ कर्ष लेकर सवकी नीलवर्णकज्जलीकर थूहरकेदूधसे एक-दिनमर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़-मिट्टीदेकर सूखनेपर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर सेहुण्डकेदूधसे एकदिन मर्दनकर पूर्ववत् गजपुटकी आचदे । ऐसे ३ आचें देनेकेवाद खरलकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ३९५ ॥

३९६ वडवानलरसः (अष्टमः)

स्वर्णं रौप्यसमं रसो द्विगुणितो द्वाभ्यां तथा गन्धकः
कान्तं स्वर्णसमं तथा विषमपि द्वाभ्यां समस्तालकः।
तद्वत्सिन्धुलता समुद्रजनिता शुक्तिश्च फेनस्तथा,
क्षीरेणाऽर्कसमुद्भवेन दिवसं सम्मर्दितोऽग्न्यम्बुना ॥
सर्वोशाऽर्कजसम्पुटे सुपुटितो मृत्कर्पटैरावृतो,
गर्तान्तर्वडवानलो रसवरः पित्तैश्च सम्भावितः ।
सिद्धोऽसौ धनुषोऽनिलं क्षपयति स्वीयाऽनुपानैर्युतो
गुल्मप्लीहभगन्दरग्रहणिकामन्दाग्निनिर्मूलनः ॥१९६०॥
वल्लोन्मितः सर्ववातमार्द्रकाम्बु सितायुतः ।
जयेदवश्यं सूतेशस्त्वधोभागगतानपि ॥ १९६१ ॥
वृहन्नारायणेनैव मापतैलेन वा तथा ।
मर्दनं वाऽर्कतैलेन धनुर्वातापनुत्तये ॥ १९६२ ॥

र, वातरोगे ।

भाषा—सुवर्ण और रजतभस्म १–१ भाग, पारदभस्म और शुद्धगन्धक २–२ भाग, कान्तभस्म और शुद्ध वछनाग १–१ भाग, हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य, प्रवाल, मोतीकी सीपभस्म और समुद्रफेन २–२ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर आकके दूध और चित्रकके काथसे १–१ दिनमर्दनकर गोलावनाय वरावरकेतावेके सम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पाचोंपित्तोंसे यथाशक्य भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे धनुर्वातमें वातघ्न अनुपानकेसाथ ३ गोली एकसाथ देनेसे हर्जनहीं अन्यत्र औषिनी देखकर १ अथवा २ गोलियां समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे गुल्म, प्लीहा, भग-न्दर, ग्रहणी, मन्दाग्नि इत्यादिरोगोंको यह वहुतशीघ्र नष्ट करताहै साधारणतया समस्तवातविकारोंमें अदरखकेरस और शक्करकेसाथ देना । यह रस अधोभागगत वातविकारोंकोभी नष्टकरताहै । धनुर्वातमें वृहन्नारायण अथवा मापतैल अथवा अर्कतैलसे मालिश करनीचाहिये ॥ ३९६ ॥

३९७ वडवानलरसः (नवमः)

शुद्धसूतस्य कर्षैकं गन्धकं तत्समं मतम् ।
पिप्पलीं पञ्चलवणं मरिचञ्च फलत्रयम् ॥ १९६३ ॥
क्षारत्रयं समं सर्वं चूर्णं कृत्वा प्रयत्नतः ।
निर्गुण्ड्याश्च द्रवेणैव भावयेद्दिनमेकतः ॥
वडवानलनामाऽयं मन्दाग्निञ्च विनाशयेत ॥ १९६४॥

र सं, अजीर्णाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा औरगन्धक, पीपल, पाचोंनमक, मरिच, त्रिफला, तीनोंक्षार, सव समभागलेकर नीलवर्ण कज्जलीकर निर्गुण्डीकेरसकी एकदिन भावना देकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेसे २ माशेतक योग्यता देखकर देनेसे यह मन्दाग्निको नष्टकरताहै ॥ ३९७ ॥

३९८ वडवानलरसः (दशमः)

शुद्धसूतस्यभागःस्यात्ताम्रचूर्णञ्च तत्समम् ।
द्विभागो गन्धकश्चैव त्रिभागञ्च कटुत्रयम् ॥ १९६५॥
वह्निमूलस्यैकभागः कुष्ठं भागसमन्वितम् ।
ज्वालामुखीरसे मर्द्यं वदरास्थिप्रमाणकम् ॥
वडवानलनामाऽयं प्रसूतीवातनाशनः ॥ १९६६ ॥

व रा., यो. म., वै. चि , रसेन्द्रमं , सूतिकारोगे । रसेन्द्रमङ्गले वडवामुखेतिनाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और ताम्रभस्म १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग, त्रिकटु ३ भाग, चित्रककीजड़ और कुठ १–१ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर, ज्वालामुखी ? (अग्निशिखा अथवा करिहारी) केरससे एक-दिनमर्दनकर सुखाकर जङ्गलीवेरकीगुठलीके वरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगो-चितानुपानकेसाथदेनेसे यह प्रसूतिवातको नष्टकरताहै ॥ ३९८ ॥

३९९ वडवानलरसः (एकादशः)

पारदं गन्धकं ताप्यं यवक्षाराऽर्कमभ्रकम् ।
अग्न्यम्बुनाऽहिपत्रेण सम्मर्द्याऽथ द्विगुञ्जकम्॥१९६७॥

भक्षयेत्पर्णखण्डेन हिङ्गुसिन्धुसुवर्चलैः ।
दाडिमञ्च तथा बिल्वं कार्षिकं भृङ्गजद्रवैः ॥ १९६८॥
पिष्ट्वा तु सुरया युक्तं देयं स्यादनुपानकम् ।
सर्वगुल्मं निहन्त्याशु शूलञ्च परिणामजम् ॥ १९६९॥

र सं., ध., र. चं., र. सु , रसायनसं , र. क , टो , र. र. दी., र का., र. र. स., र.क यो., भै. र., र. को., वै चि., व रा., नि र , र.र कौ , गुल्मरोगाऽधिकारे ।

टि०—ध., र का, र. र. स , र क यो , भै र , र को , वै. चि., व रा., नि र , र र कौ , एषु ग्रन्थेषु शिखिवाडवनाम्ना एको रसो निहितोऽस्ति सोऽप्यस्मादभिन्न एवाऽस्त्यतस्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सुवर्णमाक्षिक, यवक्षार, ताम्र और अभ्रकभस्म सबसमभाग लेकर चित्रकमूल और पके पानकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पानकेसाथ खाकर भुनाहींग, सैन्धव, संचल, अनारदाना, वेलगिरी समभागकाचूर्ण बनाय १ तोला भंगरेकेरसमें पीसकर तीक्ष्णमद्यकेसाथ पिलानेसे सबप्रकारके गुल्म और परिणामशूलको यह तत्काल नष्टकरताहै ॥ ३९९ ॥

४०० वडवानलरसः (वृहन्) (द्वादशः)

सूतकं गन्धकञ्चैव हरितालं मनःशिला ।
अभ्रकं वत्सनाभञ्च दारुजङ्गमजं विषम् ॥ १९७० ॥
जैपालात्साऽर्द्धशतकं सर्वं सञ्चूर्ण्य मर्दयेत् ।
मत्स्यमाहिषमायूरच्छागपित्तैः विभावयेत् ॥१९७१॥
घटिकां शीततोयेन कुर्याद्गुञ्जाप्रमाणतः ।
वडवानलनामाऽयं नारिकेलजलेन वै ॥
भक्षयेत्सन्निपातार्तो मुक्तस्तस्मात्सुखी भवेत् १९७२

र सं , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और मैनसिल, अभ्रकभस्म, शुद्धबछनाग, दालचिकना, सर्पविष येसब १–१ तोला, शुद्धजमालगोटा १५० नग लेकर सबका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर मछली, भैंसा, मोर और बकरेके पित्तोंसे १–१ दिन भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली ठंढेपानी अथवा नारियलके जलकेसाथ देनेसे सबप्रकारकेसन्निपात निवृत्तहोतेहै । जुरूरत पड़नेपर जलयोगकरना ॥ ४०० ॥

४०१ वडवानलरसः (स्वल्पः) १३

शुद्धताम्रस्य भागैकं मरिचस्य तथैव च ।
विषं तत्तुल्यकं दद्यात्सर्वं श्लक्ष्णं सुचूर्णितम् ॥१९७३॥
लाङ्गलीरससंयुक्तं तत्सर्वं पुटके पचेत् ।
रक्तिकाऽर्द्धं समग्रं वा वटीमानं प्रकल्पयेत् ॥१९७४॥
दोषे व्योषसमायुक्तो त्रिदोषशमनो भवेत् ।
भक्षयेत्पवने चोग्रे वडवानलसञ्ज्ञितम् ॥ १९७५ ॥

र. सं , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—ताम्रभस्म और मरिच १–१ भाग, शुद्धबछनाग २ भाग, लेकर सबका वारीकचूर्णकर करिहारीकन्दकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय पानमें लपेटकर पुटपाककरे अथवा भूधरयन्त्रमें स्वेदनकर आधी अथवा १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली औचितीदेखकर समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे यह सन्निपातज व्याधियोंको नष्टकरताहै । साधारणत त्रिकटुकेसाथ देनेसे सन्निपात नष्टहोताहै । प्रवलवातव्याधियोंमें वातघ्न अनुपानोंकेसाथ देना ४०१

४०२ वडवानलरसः (चतुर्दशः)

सूतं भुजङ्गममृतं लवणं हरिद्रा
व्योषं धनञ्जयजटाऽवनिभूधरित्री ।
अष्टौ दशद्वयनिधित्रयभागसङ्ख्यैः
शोभाञ्जनाऽर्द्रककरीरकबीजपूरैः ॥
निम्बूफणीश्वरलतोत्थपलाशतोयैः भाव्यं
विशोष्य विशदं प्रविधाय चूर्णम् ॥ १९७६ ॥

रसायनसं., रस. सं , र. (मा.), र सं. क., र. का., यो. चि , वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा और नागभस्म ८–८ भा , शुद्धबछनाग और सैन्धव १०–१० भा., हल्दी और त्रिकटु, ९–९ भा., चित्रकमूल गन्धक और भुईआवला ३–३ भागलेकर वारीकचूर्णकर सहिजन, अदरख, करीर, बिजोरा, नीबू, पान, पलाशकीजड़कीछाल इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा द्रवोंसे १–१ भावना देकर सुखाकर चूर्णबनाय कपड़छानकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, समस्तवातविकार, अरुचि, शूल, वमन इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४०२ ॥

४०३ वडवानलरसः (पञ्चदशः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं मृतं ताम्राऽभ्रटङ्कणम् ।
सामुद्रञ्च यवक्षारं स्वर्जिसैन्धवनागरम् ॥ १९७७ ॥
अपामार्गस्य च क्षारं पालाशं वत्सनाभकम् ।
प्रत्येकं सूततुल्यं स्याच्चणकाम्लेन मर्दयेत् ॥ १९७८ ॥
हस्तिकर्ण्या द्रवैश्चाहो ह्यार्द्रयुक्तं पुटेल्लघु ।
माषैकं भक्षयेन्नित्यं रसोऽयं वडवानलः ॥
सर्वान् गुल्मान्निहन्त्याशु ग्रहणीञ्च विशेषतः ॥१९७९॥

यो. र., रसायनस., र क यो , र म. मा., (गुल्मे) र. सं., व. रा , र को., र का , ग्रहण्यधिकारे ।

टि०—र स , व. रा , र की , र का., एषु वडवामुखरस इति नाम। अत्र पलाश वत्सनाभकमित्यस्य स्थाने पलाशवरुणस्य च इति, तथा हस्तिकर्ण्या द्रवैश्चाहो इत्यस्यस्थाने हस्तिशुण्डीद्रवैश्चाथाविति पाठ ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और अभ्रकभस्म, भुनासुहागा, समुद्रनमक, यवक्षार, सज्जी, सैन्धव, सोंठ, अपामार्ग और पलाशकाक्षार, शुद्ध बछनाग येसब समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर चणकाम्ल, हस्तिकर्णपलाश, अदरख इनके द्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर पुटपाक अथवा भूधरयन्त्रसे गरमहोनेतक स्वेदनकर उड़दबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा

रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त गुल्म, और ग्रहणीरोगको यह नष्टकरताहै ॥ ४०३ ॥

४०४ वडवानलरसः (षोडशः)

हिङ्गूलसम्भवं सूतं गन्धकं मृतताम्रकम्।
सम्यक् शुद्धं तथा कान्तं वङ्गं चापि शिलाजतु॥
तुत्थं रसाञ्जनञ्चैव तालकं शङ्खमेव च।
वराटकञ्चाऽपि तुल्यं जयपालं द्विगुणीकृतम्॥१९८१॥
हपुषां पञ्चलवणं पञ्चकोलकसंयुतम्।
विडङ्गं पिप्पलीमूलं प्रियङ्गुरजमोदकम्॥ १९८२॥
द्वौ क्षारौ कुष्ठमेला च लवङ्गं जीरकद्वयम्।
शटी दन्ती त्रिवृच्चैव त्रिफला गजपिप्पली॥१९८३॥
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य भावयेत्त्रिफलाजलैः।
सप्तधा खलु पाषाणे प्रचण्डातपशोषितम्॥ १९८४॥
हरीतकीरसेनाऽथ पुनः सञ्चूर्ण्य यत्नतः।
पञ्चरक्तिप्रमाणान्तु वटिकां कारयेद्भिषक्॥ १९८५॥
एकैकां खादयेत्प्रातः शृङ्गवेररसाऽऽप्लुताम्।
हन्ति कुष्ठं तथा मेद आममारुतमेव च॥ १९८६॥
श्लीपदं गण्डमालाञ्च गलगण्डं भगन्दरम्।
नाडीं दुष्टव्रणञ्चैव अन्त्रवृद्धिञ्च दारुणाम्॥ १९८७॥
अम्लपित्तं रक्तपित्तं पक्तिशूलं हलीमकम्।
वातरक्तं वातकफमुपदंशं सपीनसम्॥ १९८८॥
पञ्च गुल्मांस्तथाऽऽनाहं प्लीहशोथज्वरानपि।
उदराणि तथा कासान्नसोऽयं वडवानलः॥ १९८९॥

र.र., व.रा., कुष्ठे।

भाषा—हिङ्गुलसे निकालाहुआ पारा और गन्धक, ताम्र, कान्तलोह, वङ्ग इनकीभस्में, शिलाजीत, भुनाहुआ तूतिया, रसौत, हरिताल, शङ्ख, कौड़ी इनकीभस्में १–१ भाग, शुद्ध जमालगोटा २ भाग, झाऊ, पाचोंनमक, पञ्चकोल, विडङ्ग, पिपलामूल, प्रियङ्गु (गेंहुंला), अजमोद, दोनोंक्षार, कुठ, इलायची, लोंग, दोनोंजीरे, कचूर, दन्तीमूल, निशोत, त्रिफला, और गजपीपल१–१भागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर पत्थरकेखरलमें त्रिफला और हर्रेकेकाथोंसे कड़ीधूपमें ७–७ भावनाए देकर ५–५ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथ लेनेसे कुष्ट, मेद, आमवात, श्लीपद, गण्डमाला, गलगण्ड, भगन्दर, नाडीव्रण, दुष्टव्रण, अन्त्रवृद्धि, अम्लपित्त, रक्तपित्त, पक्तिशूल, हलीमक, वातरक्त, वातकफ, उपदंश, पीनस, पाचोंगुल्म, आनाह, प्लीहा, शोथ, ज्वर, उदर, कास इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४०४ ॥

४०५ वडवानलरसः (सप्तदश.)

रसगन्धौ समौ सूतभागतुल्यस्तु टङ्कणः।
त्रिभिस्त्रिकटुकं तुल्यं सैन्धवं टङ्कणांशकम्॥१९९०॥
सूतांशको भीमसेनः विषं सूतचतुर्थांशकम्।
निम्बुनीरेण सप्ताहं कासमर्दरसेन च॥ १९९१॥
पञ्चकोलकषायेण मर्दयेत्सप्तवासरम्।
जम्बीरनीरेण तथा भृङ्गनिर्गुण्डिजद्रवैः॥ १९९२॥
भल्लातकानां क्वाथेन शृङ्गवेराऽम्बुना तथा।
वडवानलसूतः स्यात्सर्वाऽजीर्णविनाशनः॥ १९९३॥
शृङ्गवेराऽम्बुना माषं विसूच्यां सम्प्रयोजयेत्।
विलम्बिकामजीर्णञ्च षड्विधं नाशयेत्क्षणात्॥१९९४॥
दिनं दिनं यः सेवेत भीमाहारः स जायते।
तीव्राग्निर्जायते तस्य षड्रसे न प्रशाम्यति॥ १९९५॥

र., र यो., अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, और सुहागा, सोंठ, मिर्च, पीपल, सैन्धव और शुद्धकपूर १–१ भाग, शुद्धवच्छनाग ¼ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय नीबू, कसोंजी, पञ्चकोल, जम्भीरी, भगरा, निर्गुण्डी, भिलावां; अदरख इनप्रत्येकके द्रवोंसे ७–७ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से ३ गोलीतक औचिती देखकर अदरखकेरसकेसाथ देनेसे हैज़ा, विलम्बिका, ६ प्रकारका अजीर्ण इनसबको नष्टकर तीव्राग्निको करताहै जोकि षड्रसभोजनकरनेपरभी शान्तनहींहोता ॥ ४०५ ॥

४०६ वडवानलरसः (अष्टादशः)

रसं गन्धं शिलां तालं मर्द्य निर्गुण्डिकारसैः।
त्रिदिनं निम्बुनीरेण तावदेव विभावितः॥ १९९६॥
सर्वस्माद्विगुणा मर्द्याः शम्बूका जीवसंयुताः।
गोस्तनाकारमूषायां भूधरे पुटयेत्ततः॥ १९९७॥
सिद्धो भवति सूतेशो वडवानलसञ्ज्ञितः।
गुञ्जा जयेत्सन्निपातान्विषमाऽविषमानपि॥
पथ्यं दुग्धौदनं शस्तमतितापे पृथग्विधिः॥ १९९८॥

र.र.सु., र क.यो., सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मैनसिल और हरिताल समभाग लेकर निर्गुण्डी और नीबूकेरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर सबसे दूनेप्रमाणमें जीतेहुए घोंघे डालकर मर्दनकरे। फिर गोलाबनाय गोस्तनाकारमूषामें बन्दकर २–४ कपड़मिट्टीदेकर सुखनेपर भूधरयन्त्रमें पुटदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात और विषम अथवा नित्यआनेवाले ज्वरोंको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य दूधभातदेना। अत्यन्तदाह मालूमहोनेपर उसके शमनकरनेका उपायकरना ॥ ४०६ ॥

४०७ वडवानलरसः (ऊनविंशः)

त्रिसिन्दूरं समं कृत्वा निश्चन्द्रं शुद्धतालकम्।
अमृतं ताम्रचूर्णञ्च रेणुकां वह्निमूलकम्॥ १९९९॥
समांशेन ततः सूतं गन्धकं मेलयेत्सुधीः।
विषमुष्टिञ्च भागैकं करञ्जत्वग्रसेन तु॥ २०००॥
वारम्वारञ्च तन्मर्द्यमेकविंशतिसङ्ख्यया।
क्षीरत्रयं ततो योज्यं मर्दयित्वा विचक्षणः॥ २००१॥

गुञ्जाऽर्द्धं भक्षयेत्प्राज्ञः सर्वव्याधिं विनाशयेत् ।
वातक्षयाऽश्मरीकुष्ठसन्निपातभगन्दरान् ॥ २००२ ॥
कूर्मासनं लिङ्गभङ्गं कटीशूलं ततः परम् ।
गुदभङ्गमपस्मारं लूतामुन्मादनाशनम् ॥ २००३ ॥
कर्णाऽक्ष्णोश्च शिरःपीडां गलग्रहञ्च छिद्रकम् ।
प्लीहानं पङ्गुतां शोथं लोहजालञ्च पीनसम् ॥ २००४ ॥
प्रमेहग्रहणीश्लेष्मविषमज्वरनाशनम् ।
अन्त्रवृद्धिं शिरःस्वेदमर्शांसिपाण्डुकामलाम् ॥२००५॥
अरुचिं मूत्रकृच्छ्रञ्च देयं जीवस्य संशये ।
हरते सर्वरोगांश्च शृङ्गवेररसैः सह ॥ २००६ ॥
वडवानल इति ख्यातो रसानामुत्तमो रसः ।
सर्वलोकहितार्थाय ह्युक्तोऽसौ यतिकोविदैः ॥२००७॥

र. ज्ञा., रसायने ।

भाषा—त्रिसिन्दूर (अभ्रक, कान्त और लोहसिन्दूर), हरितालभस्म, शुद्धवछनाग, ताम्रभस्म, रेणुका, चित्रकमूल येसब १–१ भाग, शुद्धपारा और गन्धक सबकी बराबर, शुद्धकुचिला १ भाग लेकर सबकावारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर करञ्जकीछालकेरससे २१ दिन मर्दनकर आक, सेहुण्ड और अंगुलियाथूहरके दूधसे १–१ दिन मर्दनकर आधी-आधीरत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे वातक्षय, अश्मरी, कुष्ठ, सन्निपात, भगन्दर, कछुही, ध्वजभङ्ग, कटिशूल, गुदभ्रंश, अपस्मार, मकड़ी, उन्माद, कान-आख और सिरकीपीडा, गलग्रह, तालुछिद्र, प्लीहा, पङ्गुता, शोथ, गलरोहिणी, पीनस, प्रमेह, ग्रहणी, श्लेष्मविकार, विषमज्वर, अन्त्रवृद्धि, सिरकापसीना, ववासीर, पाण्डु, कामला, अरुचि, मूत्रकृच्छ्र इनसवको यह नष्टकरताहै और जिससमय कोईभी दवा काम न करतीहो, जीवन संशयग्रस्तहो, उससमय अदरखकेरसकेसाथ इसका प्रयोगकरना ॥ ४०७ ॥

४०८ वडवानलरसः (विंशः)

तालादेको रसादेक एकः सीसकभस्मनः ।
द्वौ भागौ गन्धकाच्छुद्धान्मरिचात्षोडशांशकः २००८
चूर्णं कृत्वा रक्तिकैका घृतेन सह भक्षिता ।
विसूचीं सर्वशूलानि प्लीहानमुदरन्तथा ॥ २००९ ॥
गुल्मं सङ्ग्रहणीरोगं श्वासकासगलाऽनिलान् ।
अग्निमान्द्यादिकान्रोगान् हन्त्यसौ वडवानलः २०१०

वै. मृ., र. सु., रसायनस., र. पा., नि. र., अजीर्णाऽधिकारे।
र. सु., नि. र., र. पा., एतेषु तालस्थाने वङ्गं नियोजितम् ।

भाषा—हरिताल, पारद और नागभस्म १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भा., मरिच १६ वा भाग लेकर सबका वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा घीकेसाथ देनेसे हैज़ा, सबप्रकारकेशूल, प्लीहा, उदररोग, गुल्म, सङ्ग्रहणी, श्वास, कास, गलरोग, वातरोग और मन्दाग्नि येसब नष्टहोतेहैं ॥४०८॥

४०९ वडवानलरसः (एकविंशः)

तुल्यः पारददारदाम्बुदकृतो मर्द्योऽर्द्धयामाद्रसः,
गृह्णीयादिति सप्तधा रससमं घृष्टं विषं सङ्क्षिपेत् ।
खल्वे स्याद्वडवानलः ससिकतो यस्तण्डुलोन्मीलितः
सुप्ताद्यामयसन्निपातदलनः पथ्यं सिताऽम्भोदधि ॥

र. शं., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, शिंगरिफ और नागरमोथा १–१ तोला लेकर एकपहर मर्दनकर एकतोला शुद्धवछनागका वहुतवारीकचूर्ण डालकर एकदिनभर घोटे, इसीप्रकार दूसरेदिनभी डाले । ऐसे ७ दिनतक नया वछनाग डालकर १–१ दिन मर्दनकरे । इसमेंसे १–१ चावलभर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सुप्तवात और सन्निपात प्रभृतिको यह नष्टकरताहै । इसमेंपथ्य शक्करका शरवत और दहीदेना ॥ ४०९ ॥

४१० वडवानलरसः (द्वाविंशः)

रसांशकं विषञ्च स्यात् षट्षड्गन्धकतालयोः ।
दन्तीवीजस्य षड्भागाः पञ्चभागन्तु टङ्कणम् ॥२०१२॥
चत्वारो धूर्तवीजस्य व्योषभागत्रयं भवेत् ।
एतानि वह्निमूलस्य क्वाथेन परिमर्दयेत् ॥ २०१३ ॥
आर्द्रकस्य रसेनाऽथ देयं गुञ्जाद्वयं द्वयम् ।
वडवानलसञ्ज्ञोऽयं सन्निपातहरः परः ॥ २०१४ ॥
नारिकेलोदकं देयं पिवेच्च शर्करोदकम् ।
क्षीरान्नं दापयेत्पथ्यं वडवानलनामके ॥ २०१५ ॥

र. क., र. क. यो., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और वछनाग १–१ भाग, शुद्धगन्धक, हरिताल और जमालगोटा ६–६ भाग, भुनासुहागा ५ भा., शुद्धधतूरेके वीज ४ भा., त्रिकटु ३ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय चित्रकमूल और अदरखके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तसन्निपातोंको नष्टकरताहै । अत्यन्तप्यास लगनेपर नारियलकाजल और शक्करका शरवत देना । ज्यादा भूख लगनेपर दूधभातदेना ॥ ४१० ॥

४११ वडवानलरसः (त्रयोविंशः)

लम्बितवह्निजरायुजरसाऽभि-
पेकाऽभिमूर्च्छितोरसेन्द्रः ।
गोमयस्थघटिकान्तरसंस्थः
स्वल्पवह्निपुटितो मुहुरेवम् ॥ २०१६ ॥
गन्धके द्विगुणितेऽथ सुजीर्णे
जारयेत्तदनु हेम विशुद्धम् ।
पञ्चपित्तकटुतोयमूर्च्छितः सूतः ॥
एकोऽपि हि त्रिदोषोदधि-
शोषो वडवानलः स्यातः ॥ २०१७ ॥

र. (मा), त्रिदोषे ।

भाषा—मोटा जङ्गलीकण्डा लेकर बीचमें दो अङ्गुलका खड्डा बनाकर गोबरसे लीपकर चिकना बनाले और सूखनेपर नीचेसे आगलगावे। जब कण्डेमें आधेतक आग पहुंचजाय तब खड्डेमें पारेको डालकर ऊपरसे अम्बरको पानीमें डलकरके पारेपर चोवा देवे अथवा अग्निशिखामें १–२ दिनपारेको घोटकर टिकड़ीबनाकर रक्खे और ऊपरसे चोवादे। ऐसे एकघड़ीतक आंचलगनेकेबाद चोवादेना बन्दकरदे और पारेपर दीवलीरख कपड़मिट्टीसे सन्धिबन्दकरदे। अथवा कण्डेमेंसे निकालकर दो दीवोंमें बन्दकर २–३ कपड़मिट्टीदेकर बहुतहल्की आंचदे फिर अग्निशिखाकेरसमें मर्दनकर टिकड़ीबनाय पूर्ववत् चोवादे। ऐसे जबतक भस्म न होजाय तबतक करताजाय फिर कण्डेहीपर दूनागन्धक जारणकरे। इसकेबाद द्विगुण सुवर्णके चूर्णमें मिलाकर अग्निशिखाके रससे घोटकर थोड़ी थोड़ी आंचदे। जब सुवर्णकीभस्म होजाय तब इसमें पाचोंपित्तों और कुटकीके स्वरसकी १–१ दिन भावनाएं देकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह अकेला त्रिदोषरूपीसमुद्रको सुखानेकेलिये वडवानलजैसा कामकरताहै ॥ ४११ ॥

४१२ वडवानलरसः (चतुर्विंशः)

त्रिकटो र्द्वादश भागाः दशाऽष्टौ सैन्धवस्य च।
द्वौच भागौ हरिद्राया एकः केरभकस्य च ॥ २०१८॥
वत्सनाभस्य नागस्य सूतस्य त्रितयं तथा।
प्रबलाऽग्निकरः प्रोक्तो रसोऽयं वडवानलः ॥२०१९॥

र (मा.), अग्निमान्द्ये।

भाषा—त्रिकटु १२ भाग, सैन्धव १८भा., हल्दी २भाग, कहरवा, शुद्धवच्छनाग और नागभस्म १–१ भाग, पारदभस्म अथवा रससिन्दूर ३ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर १–२ दिन शुष्कमर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ से ६ रत्तीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह प्रचण्डाग्निको करताहै और मन्दाग्निजनित समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ४१२ ॥

४१३ वडवानलरसः (पञ्चविंशः)

रसभागो भवेदेको गन्धको द्विगुणो मतः।
त्रिगुणञ्च विषं ग्राह्यं कणाभागचतुष्टयम् ॥ २०२० ॥
लाङ्गली पञ्चधा प्रोक्ता सर्वमेकत्र मर्दितम्।
भावयेन्निम्बुकद्रावै दिनमेकञ्च शोषयेत् ॥ २०२१ ॥
मरिचस्य प्रमाणेन वटिकां कारयेद्बुधः।
वायोश्चतुरशीतिश्च हन्ति श्लेष्मशतानि च ॥२०२२॥
कुष्ठरोगांश्च सर्वांश्च प्लीहगुल्मोदराणि च।
गृध्रसीं कटिशूलञ्च शूलमूलान्यनेकशः ॥ २०२३ ॥
मेदोवृद्धेश्च शमनो वह्निदीप्तिकरः परः।
अयं नागार्जुनप्रोक्तो रसो वै वडवानलः ॥ २०२४ ॥

ना. रि., नि र., वातव्याध्यधिकारे।

टि॰—निघण्टुरत्नाकरे लाङ्गलीस्थाने त्रिभागमरिचसंयोग विधाय नागार्जुननाम्ना गलत्र. पाठ. प्रकाशित, तत्र मह्यमप्येतु भ्रमण्व प्रतीयते ... न्यायमेव भाष।

भाषा—शुद्धपारा १ भा., गन्धक २ भा., शुद्धवच्छनाग ३ भा. पीपल ४ भा., कलिहारी ५ भा., लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर नीबूकेरसकी एकदिन भावनादेकर मरिचबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से २ गोलीतक रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे ८४ वातरोग, समस्त श्लेष्म और कुष्ठरोग, प्लीह, गुल्म, उदर, गृध्रसी, कटिशूल, साधारणशूल, सैकड़ोंशूलोंकेकारण, मेद, मन्दाग्नि, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४१३ ॥

४१४ वडवानलरसः (षड्विंशः)

रसं गन्धश्च दरदं सोमलं जयपालकम्।
तालञ्च वत्सनाभञ्च समभागं विचूर्णयेत् ॥ २०२५ ॥
कारवल्लीरसेनैव गुटिका मुद्गसन्निभा।
शर्करासहिता देया पथ्यं दुग्धौदनं हितम् ॥ २०२६ ॥
वडवानलनामाऽयं वातरोगान्विनाशयेत्।
कफजान् व्रणविस्फोटानुपदंशभवानपि ॥ २०२७ ॥

र सि, वातव्याध्यधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, शिंगरिफ, सोमल, जमालगोटा, हरिताल और वछनाग सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर करेलेकेरसमें एकदिन मर्दनकर मूंगबराबर गोलियेंबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्करकेसाथ देनेसे समस्तवात और कफकेरोग, व्रण, विस्फोट, उपदंश इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें दूधभात पथ्यदेना ॥ ४१४ ॥

४१५ वडवानलवटी (प्रथमा)

पारदस्य त्रयो भागास्तावन्तो गन्धकस्य च।
नागस्य भस्मनस्तद्वच्चत्वारो गगनस्य च ॥ २०२८ ॥
कटुत्रयं त्रिभागं स्यादष्टौ स्युः शङ्खभस्मनः।
द्वौ क्षारौ सैन्धवं हेम विडं सौवर्चलं तथा ॥२०२९॥
खर्परं ग्रावभेदी च पृथग्भागं समाहरेत्।
सञ्चूर्ण्य शृङ्गवेरस्य नीरेण परिभावयेत् ॥ २०३० ॥
मातुलुङ्गस्य नीरेण शमीमूलरसेन च।
ज्वालामुखीरसेनाऽपि चणकक्षारवारिणा ॥२०३१॥
प्रत्येकं भावनास्तिस्रो दातव्या गुरुयुक्तितः।
शृङ्गवेररसेनैव ग्राह्या वल्लमिता वटी ॥ २०३२ ॥
अग्निमान्द्यं निहन्त्येषा वडवानलसञ्ज्ञिता।
मन्देऽग्नावरुचौ गुल्मे ह्यजीर्णे च जलोदरे ॥ २०३३ ॥
विसूच्यां ग्रहणीरोगे तथा वै राजयक्ष्मणि।
वैश्वानरेण विहिता वह्निदीपनकारणात् ॥ २०३४ ॥

र.का, अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और नागभस्म ३–३ भाग, अभ्रकभस्म ४ भाग, त्रिकटु ३ भा, शङ्खभस्म ८ भा., सज्जी, सुहागा, सैन्धव, शुद्ध धतूरेकेबीज, विड्क्षार, सचल, खपरिया, पाषाणभेद येसब १–१ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारे

गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर अदरख, विजोरा, शमीकी जड़कीछाल, हुरहुर अथवा सूर्यमुखी, चनेकाखार, इनप्रत्येकके-द्रवकी ३-३ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, अरुचि, गुल्म, अजीर्ण, जलोदर, हैज़ा, ग्रहणी, राजयक्ष्म, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ४१५ ॥

४१६ वडवानलवटी (द्वितीया)

तालं ताप्यं कनककुनटीकान्तगन्धाऽर्कसूतै-, स्तुल्यांशैस्तैररुणमधुरं दीप्यकं सर्वतुल्यम्।
एतैः सर्वैस्त्रिकटु च समं कज्जलीकृत्य सर्वं, हिङ्ग्वम्भोभि र्मुनिमितदिनै र्भावयेत्सप्तकृत्वः ॥२०३५॥
जयन्त्याः काकमाच्याश्च निर्गुण्ड्याश्चार्द्रकस्य च।
स्वरसै र्भावयेत्पिष्ट्वा सकृदेव दिनेदिने ॥
कर्तव्या माषकैस्तुल्याश्छायाशुष्काश्च गोलिकाः॥२०३६
हन्त्येषा वडवानलाख्यगुटिका संसेवितोष्णाम्बुना, सर्वं शूलगदं क्रिमींश्च सकलान्वैषम्यवृत्तिं क्षुधः।
मन्दाग्निं ग्रहणीगदं श्वयथुरुक् पाण्डुश्च गुल्मार्शसी, वातश्लेष्मगदं तथोदररुजं श्वासञ्च कासं ज्वरम् २०३७

र.र.स., र को, चि.क्र., शूले।

भाषा—शुद्धहरिताल, सोनामाखी, सुवर्णभस्म, शुद्धमैनसिल, कान्तलोह, शुद्धगन्धक, ताम्रभस्म और शुद्धपारा येसव १-१ भाग, निसोत और पुरानागुड़ ८-८ भाग, नई अजवाइन २४ भाग, त्रिकटु ४८ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी-नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर हींगकेजलसे ७ दिन, जैंत, मकोय, निर्गुण्डी अदरख इनकेस्वरसोंसे १-१ दिन भावनादेकर १-१ माशेकी गोलियें वनाय छायामें सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली यथोचितानुपानकेसाथ अथवा गरमजलकेसाथदेनेसे सबप्रकारके शूल, कृमि, क्षुधाकी विषमता, मन्दाग्नि, ग्रहणी, शोथ, पाण्डु, गुल्म, ववासीर, वातश्लेष्मरोग, उदररोग, श्वास, कास, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ४१६ ॥

४१७ वमनामृतयोगः

गन्धकः कमलाक्षश्च यष्टीमधु शिलाजतु।
रुद्राक्षो टङ्कणश्चैव सारङ्गस्य च शृङ्गकम् ॥ २०३८ ॥
चन्दनञ्च तवक्षीरी गोरोचनमिदं समम्।
विल्वमूलकषायेण मर्दयेद्याममात्रकम् ॥ २०३९ ॥
मात्राश्चैव प्रकुर्वीत वल्लस्यैव प्रमाणतः।
नानाविधाऽनुपानेन छर्दिं हन्ति त्रिदोषजाम्॥२०४०॥

नि र, र.सु., र.क. यो, छर्द्याम्।

भाषा—शुद्धगन्धक, कमलगट्टा, मुलहठी, शिलाजीत, रुद्राक्ष, भुनासुहागा, शृङ्गभस्म, सफेदचन्दन, वंसलोचन, गोरोचन, सव-समभागलेकर वारीकचूर्णकर वेलकीजड़कीछालकेकाढ़ेसे १ पहर-मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ लेनेसे यह त्रिदोषज-वमनको नष्टकरताहै ॥ ४१७ ॥

४१८ वमनेश्वररसः (प्रथमः)

अङ्कोलबीजाद्भागौ द्वौ भागमेकञ्च तुत्थकम्।
सूतगन्धकशुल्वञ्च समभागानि कारयेत् ॥ २०४१ ॥
सूक्ष्मचूर्णं विधायादौ भावयेल्लवणाम्बुना।
देवदालीरसेनाऽथ मदनस्य फलाम्बुना ॥ २०४२ ॥
आटरूपवचानिम्बपटोलमधुयष्टिका-।
क्वाथेन भावयेच्चैतैः सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ॥ २०४३ ॥
गुञ्जात्रयं प्रदातव्यं तप्ततोयाऽनुपानतः।
वामयेदम्लपित्तानि देहशुद्धिश्च जायते ॥ २०४४ ॥
सर्वाऽजीर्णं कफं पित्तं वमनं कुष्ठनाशनम्।
अतिक्लेदे च दातव्यं धात्रीफलसितासमम् ॥२०४५॥

र सि, वमने।

भाषा—अङ्कोलकीमींगी २ भाग, तुत्थभस्म १ भाग, शुद्धपारा, गन्धक और ताम्रभस्म १-१ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर नमक, वन्दाल, मैनफल, अडूसा, वच, नीम, परवल और मुलहठी, इनकेक्वाथोंसे १-१ भावना देकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती गरमपानीकेसाथदेनेसे वमन होतीहै और अम्लपित्त, अजीर्ण, कफ, पित्त, वमन, कुष्ठ इनको यह नष्टकरताहै। अतियोग होजानेपर आंवलेकाचूर्ण शक्कर-डालकरदेना ॥ ४१८ ॥

४१९ वमनेश्वररसः (द्वितीयः)

वेणीवीजं रसं गन्धं नृपं चन्द्रेन्दुभागिकम्।
देवदालीरसै र्भाव्यं सप्तधा समतुत्थकम् ॥ २०४६ ॥
योजयेन्मापमात्रन्तु उष्णाम्भःसंयुतं तथा।
ऊर्द्ध्वजत्रुगदार्तानां स्वस्थानां शुद्धिमिच्छताम् ॥
पित्तान्तवमनं सम्यक् कुर्याच्चूनं वमीश्वरः ॥२०४७॥

ना. वि, वमने।

भाषा—वन्दालकेवीज १६ भाग शुद्धपारा और गन्धक १-१ भागलेकर वीजोंका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी कज्जलीमें मिलाकर वन्दालकेरससे ७ भावनाएंदेकर वरावरका शुद्धतुत्थ मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ माशा गरमपानीकेसाथ देनेसे यथेष्टवमनहोकर शुद्धिहोजातीहै और इससे ऊर्द्ध्वजत्रुगत तमामरोग नष्टहोजातेहैं ॥ ४१९ ॥

४२० वरुणाद्यं लोहम्

द्विपलं वरुणं धान्यास्तदर्द्धं धातृपुष्पिकाम्।
हरीतक्याः पलार्द्धञ्च पृश्निपर्णीं तदर्द्धिकाम् ॥२०४८॥
कर्षमानञ्च लोहाऽभ्रं चूर्णमेकत्र कारयेत्।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय शाणमानं विधानवित् ॥ २०४९ ॥
मूत्राघातं तथा घोरं मूत्रकृच्छ्रञ्च दारुणम्।
अश्मरीं विनिहन्त्याशु प्रमेहं विषमज्वरम् ॥ २०५० ॥
वलपुष्टिकरञ्चैव वृष्यमायुष्यमेव च।
वरुणाद्यमिदं लोहं सर्वव्याधिविनाशनम् ॥ २०५१ ॥

र सं., ध., र. चि., र. सु., र. चं, मूत्रकृच्छ्रे।

भाषा—वरुणकीछाल २ पल, आंवले १ पल, धावड़ीकेफूल और हर्रे २–२ कर्ष, पृश्निपर्णी, लोह और अभ्रकभस्म १–१ कर्षलेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे प्रात काल ४–४ माशे समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ लेनेसे अत्यन्तभयङ्करमूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, प्रमेह, विषमज्वर, इनसवको नष्टकर वल और आयुको वढाताहै ॥ ४२० ॥

४२१ वल्लभामृतरसः (प्रथमः)

शुद्धं तालं द्विधा गन्धं तालाऽर्द्धं हाटकं शुभम् ।
दिनैकं मर्दितं कृष्णतुलसीरससंयुतम् ॥ २०५२ ॥
तद्गोलाद्वटकान्कुर्यादेकैकान्मरिचोपमान् ।
पूरयेत्काचकूप्यां तु रुद्ध्वा सम्यङ्मृदंशुकैः ॥२०५३॥
शुष्केऽत्र वालुकायन्त्रे पुटे मन्दाग्निना पचेत् ।
यामद्वादशपर्यन्तं स्वाङ्गशीतं समाहरेत् ॥ २०५४ ॥
शतवेधो भवेत्तेन तारं कृष्णं करोति च ।
तत्तारं जायते स्वर्णं समवीजेन मिश्रयेत् ॥ २०५५ ॥
रसायनमिदं श्रेष्ठं प्रयोगो वल्लभाऽमृतम् ।
तत्तद्रोगाऽनुपानेन तत्तद्रोगनिवर्हणम् ॥
पथ्याशनोपभोगेन वलीपलितनाशनम् ॥ २०५६ ॥

र क.यो ,रसायने।

भाषा—शुद्धहरिताल १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा., सुवर्णकेवर्क आधाभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर कालीतुलसीकेरससे एकदिन मर्दनकर मरिचवरावर गोलियां वनाकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके ४–५ कपड़मिट्टीसे मुंहवन्दकर सुखाय वालुकायन्त्रमें मन्दाग्निसे १२ पहर तक पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे एकभाग लेकर १०० भाग चांदीमें गलाकर छोड़नेसे कालाकरदेताहै । उसचादीमें वरावरका सुवर्ण मिलानेसे सुवर्णहोताहै । यह उत्तम रसायन है । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर वलीपलितादिकसे रहितकर दीर्घायुको देताहै ॥ ४२१ ॥

४२२ वल्लभामृतरसः (द्वितीयः)

वज्रवैक्रान्तताम्राऽभ्रं कान्तं तीक्ष्णञ्च हिङ्गुलम् ।
गन्धकं माक्षिकञ्चैव सूतभस्म समं समम् ॥ २०५७ ॥
वाराही वन्ध्यकर्कोटी मर्दितञ्च पृथक्पृथक् ।
गोलकं छायया शुष्कं वालुकायन्त्रगं पचेत् २०५८ ॥
स्वाङ्गशीतलमादाय खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
मत्स्यमाहिषमायूरच्छागवाराहपन्नगाः ॥ २०५९ ॥
एतेषां पित्ततो भाव्यं पर्यायेण यथाक्रमम् ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ॥ २०६० ॥
दाहपूर्वं ज्वरं हन्ति विषमज्वरनाशनम् ।
क्षयगुल्मश्वासकासान् ग्रहणीमतिसारकम् ॥२०६१॥
द्राक्षेक्ष्वादीनि भक्ष्याणि गुडोदकनिषेवणम् ।
लोकोपकरणार्थाय शङ्करेण सुभाषितम् ॥
वल्लभामृतयोगेन सर्वरोगविनाशनम् ॥ २०६२ ॥

र.क यो , सन्निपाते।

भाषा—हीरा, वैक्रान्त, ताम्र, अभ्रक, कान्त और फोलाद भस्म, शुद्धशिंगरिफ, गन्धक, सोनामाखी और पारदभस्म सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर वाराहीकन्द और वाझखेखसेके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय छायाशुष्ककर वालुकायन्त्रमें वन्दकर एकदिनरातकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मछली, भैंसा, मोर, वकरा, सुअर और सापकेपित्तोंसे १–१ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे दाहपूर्वकज्वर, सन्निपात और विषमज्वर, क्षय, गुल्म, श्वास, कास, ग्रहणी, अतिसार इनसवको यह नष्टकरताहै । अधिकगर्मी लगनेपर द्राक्ष, ईख और गुड़का शरवत पिलाना ॥ ४२२ ॥

४२३ वसन्तकुसुमाकररसः (प्रथमः)

प्रवालरसमौक्तिकाभ्रमिदं चतुर्भागभाक्,
पृथक्पृथगथो मृते रजतहेमनी द्व्यंशके ।
अयोभुजगवङ्गकं त्रिलवकं विमर्द्याऽखिलं,
शुभेऽहनि विभावयेद्भिषगिदं धिया सप्तशः २०६३
द्रवैर्वृषनिशेक्षुजैः कमलमालतीपुष्पजैः,
पयः कदलिकन्दजैर्मृगजचन्दनाद्युद्भवैः ।
वसन्तकुसुमाकरो रसपतिस्त्रिगुञ्जोऽशितः,
समस्तगदहृद्भवेत्किल निजाऽनुपानैरयम्॥२०६४॥
क्षिणोत्यनु मधूषणैःक्षयगदेषु सर्वेष्वपि,
प्रमेहरुजि रात्रिभिः समधुशर्कराभिः सह ।
सितामलयजद्रवै महति रक्तपित्तेऽथवा,
सितामधुसमन्वितैर्वृषभपल्लवानां द्रवैः ॥२०६५॥
त्रिजातगजकेशरैरपि च तुष्टिपुष्टिप्रदो,
मनोभवकरः परो वमिषु शङ्खपुष्पीरसैः ।
अभीरुरसशर्करामधुमिरम्लपित्ताऽऽमये,
परेषु तु यथोचितं ननु गदेष्वमुं सेवयेत् ॥२०६६॥

वृ.यो त ,र क यो.,र स ,रसायन प.,र.र , नि. र, यो र.,र वो.,र.चं.,चि.क्र ,ध ,र का.,र सु , रसायनसं., भै र., टो.,व रा.,र.प ,वै चि ,शा.सं ,वा.,र शि ,र र स , रस. स , र म मा , वै. चि , र पा , रसायने वाजीकरणे च ।

टि०—रसायनसङ्ग्रहस्य द्वितीयस्थानेऽयमेव पाठोऽर्कमूर्तिनाम्ना लिखितस्तथा " विभाव्य गन्धकेनैव सुवर्णस्य रसेन च । विभाव्यमक्षनीरेण दद्याद्गजपुटे तथा । " इति विशेषेण निष्पादितस्तत्र सर्वस्य कज्जलीं विधाय कौपेयवस्त्राऽऽवेष्टिता पोट्टलिका विधाय पोट्टलीपाकवद्गन्धके विपाच्य धत्तूरकमलरसाभ्या पृथग्विभाव्य पोट्टली कृत्वा गजपुटञ्च दत्वा रोगेषु नियोजित इति विशेष । वाहटस्य द्वितीयपाठे वैक्रान्त नीलञ्चाऽधिकतया प्रक्षिप्ते । कश्चिद्रजतादिभस्मना प्रमाणे व्यत्यय सोऽप्यकिञ्चित्कर । "वैक्रान्तस्य च भागैक द्विभाग हेमभस्म च । अभ्रकस्य च भागौ द्वौ मुक्ताविद्रुमयोस्तथा । वङ्गभस्म त्रिभागं स्याद्रसस्य भस्मनस्तथा । चत्वारोऽस्य च भागाश्च सर्वमेकत्र मर्दितम् ॥ जम्बीराद्भिश्च गोदुग्धैश्शीरोद्भववारिभि । वृषद्रवैश्छिन्नीरै सप्तधा भावयेत्पृथक् ॥ भावितो रसराज स्याद्वसन्तकुसुमाकर । वल्लोऽस्य मधुना लीढ सोमरोग क्षयं नयेत् ॥ मूत्राऽतिसारमेहाश्च मूत्राघाताश्मरीरुजम् । तृष्णा दाह तालुशोष नाशयेन्नाऽत्र संशय. ॥ वलपुष्टिकरो वृष्य. सर्वरोग निव-

र्हण । हन्त्यजीर्णं ज्वरं श्वास क्षयरोग कृशाङ्गताम् ॥ नाऽत परतर किञ्चिद्रसायनमिहेष्यते ॥" इति पाठो भैषज्यरत्नावल्या दृश्यते तत्र वैक्रान्तमेवाऽधिकं नियुक्त लोहनागौ च त्यक्तौ । तथा अभ्रस्थानेऽभ्रक गृहीतम् यथावस्थितेनाऽप्येतद्गुणसम्भवात्पृथक पाठकल्पना न युक्तिसहा। वैक्रान्तेऽधिका भक्तिश्चेत्तन्नियोगेऽपि क्षत्यभाव ।

भाषा—प्रवाल,पारा,मोती,इनकीभस्में और अभ्रक४–४ भाग, रजत और स्वर्णभस्म २–२ भाग, लोह, नाग और वङ्गभस्म ३–३ भाग लेकर सवको १–२ पहर मर्दनकर पश्चे-दिन अडूसा, हल्दी, ईख, कमल, माल्तीपुष्प, गोदुग्ध, केले-काकन्द, कस्तूरी, सफेदचन्दन इनकेद्रवोंसे ७–७ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै । साधारणतया मधुमरिचसे समस्तक्षय, हल्दी, मधु और शक्करसे समस्तप्रमेह, शक्कर और सफेदचन्दन अथवा अडूसके स्वरस, शक्कर और मधुसे रक्तपित्त, चातुर्जातसे नपुंस-कत्व, शङ्खपुष्पीके स्वरससे वमन, शतावरीकेस्वरस, शक्कर और मधुसे अम्लपित्तको यह नष्टकरताहै ॥ ४२३ ॥

४२४ वसन्तकुसुमाकररसः (द्वितीयः)

मृतसूताऽभ्रकं स्वर्णं कान्तं तारं समांशकम् ।
प्रवालमुक्तावज्रञ्च भसितं नागवङ्गयोः ॥ २०६७ ॥
तदर्धं मर्दयेत्सम्यक् सेन्दुकस्तूरिकाभवम् ।
जातीपुष्पसमुद्भूतरसेन दिवसत्रयम् ॥ २०६८ ॥
कोकिलाक्षस्य शाल्मल्या आर्द्रगान्धारिसम्भवैः ।
खर्जूरकदलीद्राक्षाकेतकीमधुयष्टिजैः ॥ २०६९ ॥
मधुक्षीरेक्षुजरसै र्वारिवाराहिकन्दजैः ।
रक्तागस्त्यप्रसूनोत्थै मर्द्य स्वेद्यं पयोन्वितैः ॥२०७०॥
सम्मिश्र्य शर्कराद्राक्षामुशलीमाषगोक्षुरैः ।
कण्डूकरैः कोकिलाक्षो धात्री रम्भाफलं मधु २०७१
सूताच्चतुर्गुणं यामं मर्द्य शाल्मलिजैर्द्रवैः ।
वल्लत्रयं सदा खादेत्साक्षात्कामसमप्रभः ॥ २०७२ ॥
गवां क्षीरं पिबेच्चाऽनु वसन्तपदपूर्वकम् ।
रूपयौवनसम्पन्नां स्वानुकूलां स्त्रियं व्रजेत् ॥ २०७३ ॥
मुद्गान्नशालिगोधूमद्राक्षादाडिमशर्कराः ।
नवनीतं कृष्णरम्भाफलं कर्पूरसंयुतम् ॥ २०७४ ॥
मृगनाभीन्दुकाश्मीरयुक्तचन्दनचर्चितः ।
मालतीमल्लिकाकुन्दकेसरस्रग्विभूषितः ॥ २०७५ ॥
विधिमेवं नरः कृत्वा रमयेत्प्रमदाशतम् ।
एकरात्रमतिक्रम्य द्विरात्रे तत्र वर्धयेत् ॥ २०७६ ॥
त्रिपञ्चषड्गुणञ्चैव दशरात्रे तु षोडश ।
पक्षे तु विंशतिं कुर्यान्मासे चैकं शतं व्रजेत् २०७७

र क यो ,वाजीकरणे ।

टि०—रत्नाकरौषधयोगे " सूतगन्धाऽभ्रक स्वर्णं कान्त तार समांशकम् । गोक्षीरेण विमर्द्याऽथ छायायाञ्च विशोषयेत् ॥ काचकूप्यां विनिक्षिप्य वालुकायन्त्रके दिनम् । स्वाङ्गशीतलमादाय विशेषेण विनिःक्षिपेत् ॥ प्रवालमुक्तामसित मृतसूतकवङ्गयो । मानेन मर्दयेत्सम्यक् सेन्दुकस्तूरि-कान्वितम् ॥ जातीपुष्पसमुद्भूतरसेन दिवसत्रयम् । खर्जूरकदलीद्राक्षा वाराहीकन्दधात्रिजै ॥ मर्दयेत्तु पिबेच्चाऽनु वसन्तपदपूर्वकम् । सहस्रनारी रमते पुरुषो वीर्यवान्भवेत् । " इति द्वितीय पाठो दृश्यते तस्याऽन्त-र्भावोऽनायाससिद्ध., कूप्यन्तपाकाऽनुष्ठानेऽपि क्षत्यभावोऽस्ति, पाठान्तर विभ्रमक्षासश्च महत्फलम् ।

भाषा—पारा, अभ्रक, सुवर्ण, कान्त और रजत २–२ भाग, प्रवाल, मोती, हीरा, नाग और वङ्गभस्म १–१ भाग लेकर बारीकचूर्णकर कपूर, कस्तूरी, जावित्री, तालमखाना, सेमलकामुसला, अदरख, फांगली (म०) खजूर, केलाकन्द, द्राक्ष, केवड़ा, मुलहठी, मधु, दूध, ईख, सुगन्धवाला, वाराहीकन्द, लालअगस्त्यकेफूल, इनप्रत्येकके द्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय इनसबकास्वरस और दूध इकट्ठामिलाय दोलायन्त्रसे एकदिन स्वेदनकरे । फिर शक्कर, द्राक्ष, मुशली, उड़द, गोखरू, केवाच, तालमखाना, बहेड़ा, आवला, केलेकाफल और मधु येसब पारेसे चौगुनेचौगुने डालकर एकपहर सेमलकेमुसलेके स्वरससे मर्दनकर ९–९ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली खाकर गोदुग्ध पीकर रूपयौवनसम्पन्न ऐसी स्वाभिलषित एकस्त्रीकेसाथ सङ्गकरनाचाहिये । दूसरीरात्रिको धीरे २ स्त्रियोंकी सङ्ख्या बढ़ावे । १० दिनमें १६ स्त्रियोंके-साथ और १५ दिनमें २० स्त्रियोंकेसाथ सम्भोग करसक्ताहै और इसीतरह हमेशाकेसेवनसे प्रसङ्गशक्ति बढ़तीहीजातीहै । यदि ब्रह्मचर्यकेसाथ इसकासेवनकरेतो तमाम असाध्यरोग और क्षय नष्टहोजातेहैं । इसमें मूंग, चावल, गेंहूं, द्राक्ष, अनार, शक्कर, मक्खन, केला, कपूर, येसब पथ्यहैं । कस्तूरी, कपूर, केशर और चन्दन इनका लेपकरे । माल्ती, मोगरा, कुन्द, केशर इनकी माला पहिने ॥ ४२४ ॥

४२५ वसन्तकुसुमाकररसः(तृतीयः)

हेम तारं प्रवालञ्च वज्रं वैदूर्यमौक्तिकम् ।
अभ्रकं मृतलोहञ्च द्विगुणं सूतभस्मकम् ॥ २०७८ ॥
वङ्गं नीलञ्च वैक्रान्तं नागभस्म प्रयोजयेत् ।
एतद्विशुद्धं युञ्जीत भावनेक्षुगणेन च ॥ २०७९ ॥
शतपत्रप्रसूनोत्थै मालत्याः कुसुमाम्बुभिः ।
पश्चान्मृगमदै र्भाव्यं सुसिद्धो रसराड् भवेत् ॥२०८०॥
मधुना सर्पिषा दध्ना गुञ्जामात्रप्रमाणतः ।
क्षयकासाऽरुचिश्वासशोथपाण्ड्वामयांस्तथा ॥२०८१॥
मूत्रकृच्छ्राश्मरीं हन्ति मेहानां विंशतिं तथा ।
ग्रहणीं कामिलाञ्चैव सर्वरोगव्रजन्तथा ॥ २०८२ ॥
शूलाऽऽध्मानौ वह्निनाशं कामदः पुष्टिवर्धनः ।
रेतोवृद्धिकरः पुंसां प्रजाजननमुत्तमम् ॥
कुसुमाकरविख्यातो वसन्तपदपूर्वकः ॥ २०८३ ॥

वा., वाजीकरणे ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, प्रवाल, हीरा, लसनियां, मोती, अभ्रक और लोह १–१ भाग, पारा, वङ्ग, नीलम, वैक्रान्त और नागभस्म २–२ भाग, लेकर बारीकचूर्णकर तमामजातिके ईख,

गुलाब और मालतीकेफूल, कस्तूरी, इनप्रत्येकके द्रवोंसे ३–३ भावनाए देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु, घी अथवा दहीप्रभृति उचितानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, कास, अरुचि, श्वास, शोथ, पाण्डु, मूत्रकृच्छ्र, पथरी, २० प्रकारकेप्रमेह, ग्रहणी, कामला, शूल, आध्मान, मन्दाग्नि, कृशता, शुक्रनाश, वन्ध्यत्व इनसवको नष्टकर यह आयुको वढ़ाताहै ॥ ४२५ ॥

४२६ वसन्तकुसुमाकररसः (चतुर्थः)

हेमतारविषवङ्गमौक्तिकं विद्रुमायसमिदं विभावयेत्।
वारियुग्मकपयःशतपत्रकदलीकमलकन्दनिशाभिः॥
जातिकामृगमदेन्दुवृषैश्च भावयेन्मुनिदिनं प्रतियोगम्।
सिद्धिदश्च रसनायक एष जायते सकलरोगनिहन्ता
प्रमेहविषपाण्डुके ग्रहणिकाऽम्लपित्ते तथा;
क्षये श्वसनशूलके कसनरक्तपित्ते हितः।
कणामधुविमिश्रितस्तदनु साऽर्द्धगुञ्जामितो,
वसन्तकुसुमाकरो मदगजेन्द्रकण्ठीरवः॥२०८६॥

रसायनसं, वै वि., क्षये।

भाषा—सुवर्ण और रजतभस्म, शुद्धवछनाग, वङ्ग, मोती, प्रवाल और लोह इनकीभस्में सव समभाग लेकर दोनोंखस, गोदुग्ध, गुलावकेफूल, केला और कमलकेकन्द, हल्दी, जावित्री, कस्तूरी, कपूर, अड़ूस इनप्रत्येकके द्रवोंसे ७–७ दिन भावनाएं देकर १॥–१॥ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे प्रमेह, विष, पाण्डु, ग्रहणी, अम्लपित्त, सवप्रकारके क्षय, श्वास, शूल, कास, रक्तपित्त प्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै। साधारणतया श्वास, कास और शूलमें पीपल तथा मधुकेसाथ देना ॥ ४२६ ॥

४२७ वसन्ततिलकरसः

हेम्नो भस्म च तोलकं घनयुगं लौहात्त्रयं पारदात्,
चत्वारो बलिजं सुवङ्गयुगलं चैकीकृतं मर्दयेत्।
मुक्ताविद्रुमयोरसेन समता गोक्षुरवासेक्षुणा,
सर्वं वन्यकरीपकेण सुदृढं तत्तत्पचेत्सप्तधा॥२०८७॥
कस्तूरीघनसारमर्दिततनुः पश्चात्सुसिद्धोभवे-,
त्कासश्वाससपित्तवातकफजित्पाण्डुक्षयादीन्हरेत्।
शूलादिग्रहणीं विषादिहरणो मेहांस्तथा विंशतिं,
हृद्रोगादिहरो ज्वरादिशमनो वृष्यो वयोवर्धनः२०८८

र सं, र र, र मु, भै र., ध., रसायनवाजीकरणयो।

भाषा—सुवर्णभस्म १ तो., अभ्रकभस्म २ तो., लोहभस्म ३ तो, पारदभस्म ४ तो., शुद्धगन्धक और वङ्गभस्म २–२ तोले, मोती और प्रवालभस्म ४–४ तोले लेकर सवका वारीकचूर्णकर इकट्ठेमिलाय गोखरू, अड़ूसा, ईख इनके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर १। सेर करसीकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिरसे मर्दनकर आंचदे। ऐसे ७ वार आंचदेकर कस्तूरी और कपूरके द्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे कास, श्वास, पित्त, वायु, कफ, पाण्डु, क्षय, शूल, ग्रहणी, विष, २० प्रकारके प्रमेह, हृद्रोग, ज्वर, शोष इनसवको दूरकर पूर्ण पुरुषत्वको देताहै और आयुको वढ़ाताहै ॥४२७॥

४२८ वसन्तमालतीरसः (सुवर्णवसन्तमालती) १

स्वर्णं मुक्तादरदमरिचं भागवृद्ध्या प्रदिष्टं,
खर्पर्यष्टौ प्रथममखिलं मर्दयेन्मृद्वुणेन।
यावत्स्नेहो व्रजति विलयं निम्बुनीरेण ताव-,
द्गुञ्जाद्वन्द्वं मधुचपलया मालतीप्राग्वसन्तः॥ २०८९॥
सेवितोऽयं हरेत्तूर्णं जीर्णञ्च विषमज्वरम्।
व्याधीनन्यांश्च कासादीन् प्रदीप्तं कुरुतेऽनलम् २०९०

भै. र., ध, रसायनसं, र मु., र. कौ., र. प., वै चि (ल), वै. द, सि मे म.. वै. वि., रसायनप, र. मु, र. शं, र. वो, र शि, यो. र, नि. र, र. चं, वृ. यो. त, र का, र. सि., र. क ल, र. म मा, र प्र., र पा, ज्वराऽधिकारे। र मु., र.शं., र. शि., र वो, एषु वसन्तराज इति नाम।

भाषा—सुवर्णभस्म अथवा वर्क १ भाग, मोती २ भा, शिंगरिफ ३ भा., मरिच ४ भा., खपरिया ८ भाग लेकर सबका वारीकचूर्णकर सवसे १५ वा हिस्सा अथवा चतुर्थांश मक्खन देकर ३–४ दिन मर्दनकर कागजीनीवूकारस डालकर चिकनाईरहितहोनेतक मर्दनकर टिकड़िया वनाकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा मधु और पीपलकेसाथ देनेसे सबप्रकारके जीर्ण तथा विषमज्वर और श्वासकासादिक उपद्रवोंको दूरकर अग्निको प्रदीप्तकरताहै ॥ ४२८ ॥

४२९ वसन्तमालतीरसः (द्वितीयः)

रसकं वह्निजं सूतं शुद्धं गन्धं समंसमम्।
मर्दयेन्नवनीतेन जम्भनीरेण भावयेत् ॥ २०९१ ॥
यावद्गाव्यश्च शुष्कश्च तावत्तं कारयेद्भिषक्।
वल्लमात्रं ततो दद्यात्पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥ २०९२ ॥
धातुक्षयेऽग्निमान्द्ये च विषमे चाऽतिसारिणि।
दुर्नामप्रदरार्तौ च ग्रहणीरक्तपित्तजे ॥ २०९३ ॥

र मु, धातुक्षये।

भाषा—शुद्धखपरिया, मरिच, पारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर मक्खनडालकर १–२ दिन मर्दनकर जंभीरीकेरससे चिकनाई जानेतक मर्दनकरे फिर इसकी टिकड़ियें वनाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा मधु और पीपलकेसाथ देनेसे धातुक्षय, मन्दाग्नि, विषमज्वर, अतिसार, ववासीर, प्रदर, ग्रहणी और रक्तपित्त इनको यह दूरकरताहै ॥ ४२९ ॥

४३० वसन्तमालतीरसः (तृतीयः)

एकांशो मरिचादुभौ रसकतः सम्मर्दयेन्मसृणे-,
पश्चान्निम्बुरसेन मर्दनविधिं यावद्द्रुतं गच्छति।

पथ्यं दुग्धयुतं कणामधुयुतो वल्लप्रमाणो भवेत्,
प्राचीनज्वरहा तथा विषमहा धातुस्थितध्वंसनः॥
रक्ताऽतिसृतिपायुजप्रदरहा नेत्रामयध्वंसनो,
यावद्रक्तभवामयप्रहरणः पित्तामयध्वंसनः।
रोगानीकगलग्रहो विजयते श्रीमालिनीप्रागयं,
वैद्यानां मतिशालिनां बहुतरं श्रीदो वसन्ताभिधः॥

वै. मृ., रसायनसं., चि र. भ., र. सु., र. कौ., नि. र., र. प., र. चं., र. यो, र. मु, र. शं., रसायनप., वै द., र. को., वै. चि., यो. र., वै. र., रस. सं., र. सि, र. क. ल, र. शि., र. (मा), व. रा, र. ल, टो., र पा., र. क. यो., वै. वि., र. प्र., र. का., ज्वराऽधिकारे।

टि०—नि र., व रा, र. क ल, र. श, र ल., टो, रसायनस, र पा, र क यो, र. को, वै वि. एषु ज्वरमुरारिरिति नवज्वरमुरारिरिति वा नाम। तत्र खर्परशुद्धिरेव विहिता न तु मरिचयोगोऽतस्तन्नाम भ्रमात्स्थापितमिति बोध्यम्। केषुचित्पुस्तकेषु उपरितनपाठ विलिख्य "नराम्बुमध्ये रसकस्य चूर्णं दिनानि सप्त त्रिगुणानि पूर्वम्। धृत्वाऽऽतपे शोषितमेतदेव नवारिजीर्णं भवतीति याव—"दित्यन्तेन पाठान्तरो लिखितस्तत्राऽपि खर्परस्य शुद्धिमात्रविधानान्न रसान्तरतेति बोध्यम्। रस. म, र. (मा.) एतयोः रसराज इति नाम। रसप्रदीपे जीर्णज्वरहर इति नाम। रसकामधेनौ नवज्वरारिरिति नाम। रसपारिजाते द्वितीयस्थाने व्याधिगजकेसरीति नाम।

भाषा—शुद्धखपरिया २ भाग, धोईहुईमरिच १ भाग लेकर वारीकचूर्णकर थोड़ा मक्खनमिलाय १–२ दिन मर्दनकर नीबूकेरससे यहांतकमर्दनकरे कि तमाम चिकनाई चलीजाय, फिर इसकी टिकड़िया बनाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा पीपल और मधुकेसाथ देनेसे और केवल दूधभातपर रखनेसे पुराना, विषम तथा धातुस्थितज्वर, रक्तातिसार, रक्तार्श, प्रदर, नेत्ररोग, दूषितरक्तरोग, पित्तप्रकोप, रोगसमूह, गलग्रह, इनसवको यह नष्टकरताहै॥ ४३०॥

४३१ वसन्तमालतीरसः (अपूर्वमालिनीवसन्तः) ४

वैक्रान्तमभ्रं रवितार्प्यरौप्यं
वङ्गं प्रवालं रसभस्म लोहम्।
सुटङ्कणं कम्बुकभस्म सर्वं
समांशमेतच्च वरीहरिद्रा॥ २०९६॥
द्रवैर्विभाव्यं मुनिसङ्ख्यया च
मृगाङ्कजाशीतकरेण पश्चात्।
वल्लप्रमाणो मधुपिप्पलीभि
र्जीर्णज्वरे धातुगते नियोज्यः॥
गुडूचिकासत्त्वसितायुतश्च
सर्वप्रमेहेषु नियोजनीयः॥ २०९७॥
कृच्छ्राश्मरीं निहन्त्याशु मातुलुङ्गाऽङ्घ्रिजै द्रवैः।
रसो वसन्तनामाऽयमपूर्वमालिनी परः॥ २०९८॥

नि. र, र सु, र. च, र प्र, रसायनसं., यो र, र. र. कौ, र. पा., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—वैक्रान्त, अभ्रक, ताम्र, स्वर्णमाक्षिक, रजत, वङ्ग, प्रवाल, पारा, लोहभस्म, भुनासुहागा, शङ्खभस्म येसव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर शतावरी और हल्दीके स्वरसोंसे ७–७ भावनाएं तथा कस्तूरी और कपूरकेद्रवोंसे १–१ भावना देकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु और पीपलकेसाथ देनेसे जीर्णज्वर और धातुगतज्वर नष्टहोतेहैं। गिलोयकेसत्त्व और शक्करकेसाथ समस्तप्रमेहोंको तथा विजोरेकीजड़के कल्ककेसाथ देनेसे मूत्रकृच्छ्र और पथरीको यह नष्टकरताहै॥ ४३१॥

४३२ वसन्तमालतीरसः (पञ्चमः)

रसस्य भस्मना तारं शुल्वमायसगन्धकम्।
प्रवालं माक्षिकं शङ्खं वैक्रान्तं टङ्कणं समम्॥ २०९९॥
समांशं गव्यदुग्धेन इक्षुवासारसेन च।
निशानिर्गुण्डिकाशिग्रुभावना च पृथक् त्रयम् २१००
पश्चात्तद्गोलकं कृत्वा पाच्यं लवणयन्त्रके।
सङ्ख्याय यामचत्वारि ततः सिद्धो भवेद्रसः॥ २१०१॥
प्रमेहक्षयगुल्मघ्नं वलपुष्टिकरं परम्।
अनिलश्वासकासघ्नं ज्वरे जीर्णे च दापयेत्॥
रसोऽयं मालिनी नाम वसन्तपदपूर्वकः॥ २१०२॥

र. मु., धातुक्षये।

भाषा—पारा, रजत, ताम्र, लोह इनकीभस्में, शुद्धगन्धक, प्रवाल, सोनामाखी, शङ्ख और वैक्रान्तभस्म, भुनासुहागा सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर गोदुग्ध, ईख, अडूसा, हल्दी निर्गुण्डी, सहिजन इनप्रत्येककेरसोंसे ३–३ भावनाएं देकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर लवणयन्त्रमें वन्दकर ४ पहरकी क्रमाग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे प्रमेह, क्षय, गुल्म, वाताधिक्य, श्वास, कास, जीर्णज्वरप्रभृतिसमस्तरोगोंको दूरकर यह शरीरको हृष्टपुष्टकरताहै॥ ४३२॥

४३३ वसन्तमालतीरसः (महामालिनीवसन्तः) ६

स्वर्णं मुक्ता रजतरसकं हिङ्गुलं गन्धसूतं,
नीलं माक्षीकयुग्मं गगनत्रपुविषं नागवैक्रान्तलोहम्।
एतत्खल्वे निधाय कुसुमसुजलजैः
शाल्मलीस्विक्षुदुग्धैः,
रम्भास्त्रीयष्टिमुस्तोभयसलिलवरै
र्मर्दयेत्सप्तवारान्॥ २१०३॥
पश्चात्कर्पूरदिग्धं हरति हिततमं
पैत्यमेहोग्रतापान्,
देहे स्थौल्यञ्च कार्श्यं भ्रममदवथू-
न्मूत्रघाताऽश्मरीश्च।
सर्वान्मेहान्निहन्याद्रतिसुखजनकं योगिनां भैरवोक्तो,
वीर्यं पुष्टिं विधत्ते सुतसुखजनको मालिनीप्राग्वसन्तः

वै चि, रसायने।

भाषा—सुवर्ण, मोती, रजत, खपरिया इनकीभस्में, शुद्ध-शिंगरिफ, गन्धक और पारा, नीलम, सोनामाखी, रूपामाखी, अभ्रक और वङ्गभस्म, शुद्धवछनाग, नाग, वैक्रान्त और लोह-भस्म येसब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर कमलकेफूल, सेमलका मुसला, ईख, गोदुग्ध, केलाकन्द, स्त्रीदुग्ध, मुलहठी, नागरमोथा, दोनोंखस, इनके स्वरसोंकी ७–७ भावनाएं और शुद्धकपूरकी १ भावनादेकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रख-छोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे पित्त प्रमेह, पित्तज्वर, अत्यन्त स्थूलता और कृशता, भ्रम, मद, दाह, मूत्राघात, पथरी, समस्तप्रमेह, नपुंसकत्व, शुक्रदोष, वन्ध्यत्वदोष इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४३३ ॥

४३४ वसन्तमालतीरसः (मालिनीवसन्तः) ७

सुवर्णं मृक्षणञ्चैव भागैकं तत्र योजयेत्।
द्वयोस्तुल्यं मौक्तिकञ्च शुद्धचूर्णञ्च कारयेत् ॥ २१०५ ॥
मौक्तिकाऽर्द्धेञ्च दरदं मरिचं दरदतुल्यकम्।
खर्परं मौक्तिकैस्तुल्यं निम्बुनीरेण घर्षयेत् ॥ २१०६ ॥
यक्ष्मजीर्णज्वरप्लीहपाण्डुमेहाऽतिसारकान्।
अनुपानविशेषेण शीघ्रं नयति भस्मताम् ॥ २१०७ ॥

र. पा., राजयक्ष्मणि।

भाषा—सुवर्ण और मक्खन १–१ भाग, मोती २ भा., शुद्धशिंगरिफ और सफेदमिरच १–१ भाग, खपरिया २ भाग लेकर बारीकचूर्णकर मक्खनमें मिलाय १–२ दिन मर्दनकर नीबूकेरससे चिकनाईरहितहोनेतक घोटकर टिकड़िया बनाकर रखछोड़े। इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक समय अथवा रोगो-चितानुपानकेसाथ देनेसे राजयक्ष्म, जीर्णज्वर, प्लीह, पाण्डु, प्रमेह, अतिसार प्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४३४ ॥

४३५ वसन्तमालतीरसः (सुवर्णमालिनीवसन्त.) ८

स्वर्णं प्रवालं दरदं मरीचं
कस्तूरिगोरोचननागभस्म।
वङ्गाऽभ्रकं कुङ्कुममौक्तिकानां
स्यात्पिप्पलीखर्परराभरामैः ॥ २१०८ ॥
बाणाद्रिभूचन्द्रकराऽग्निरामै
र्धराऽब्धिभूरुद्रयुतैश्च भागैः।
एकत्र सञ्चूर्ण्य कृतं तदेव
कर्षत्रयं गोनवनीतकञ्च ॥ २१०९ ॥
निम्बूत्थतोयेन विमर्दनीयं
घृतेन मुक्तो भवतीह यावत्।
गुञ्जाद्वयं क्षौद्रकमागधीभ्यां
जीर्णज्वरे देयमिदं प्रशस्तम् ॥ २११० ॥
रक्तप्रमेहं बहुमेढ्रशूलं
पाण्ड्वामयं कामलसर्वशूलम्।
सश्वासकासं बहु मूत्रकृच्छ्रं
मूत्राऽश्मरीं हन्ति रुजं क्षयञ्च ॥ २१११ ॥
सर्वाऽतिसारं ग्रहणीविकार-
मर्शोविकारं प्रविणष्टवीर्यम्।
ग्रारव्यथे पित्तभये विकारे
बालग्रहे गर्भयुतासु शस्तः ॥ २११२ ॥
योनीषु शूलं प्रदरातिसारौ
ससूतिकासामगदं निहन्ति।
असौ बृहन्मालिनिकावसन्तः
सुवर्णपूर्वः कथितो मुनीन्द्रैः ॥ २११३ ॥
वसन्ते ऋतौ स्वर्णमालीवसन्तः
प्रशस्तो हितः सज्वरे मानवानाम्।
प्रभाते दिनान्ते कणाक्षौद्रयुक्तो
द्विगुञ्जोऽश्वगन्धाऽभिधेनैव सेव्यः ॥ २११४ ॥

रसायनम्., रसायने ज्वरे च।

भाषा—सुवर्ण ३ कर्ष, प्रवाल ३ कर्ष, शिंगरिफ ५ कर्ष, मरिच ८ क., कस्तूरी १ क., गोरोचन १ क., नागभस्म २ क., वङ्ग और अभ्रकभस्म ३–३ कर्ष, केशर १ क., मोती ४ क., पीपल १ क. और खपरिया ११ कर्ष लेकर सबका बारीकचूर्णकर ३ कर्ष मक्खन मिलाय १–२ दिन मर्दनकर नीबूकेरसमें यहांतक मर्दनकरे कि चिकनाई बिलकुल हटजाय फिर टिकड़िया बनाकर सुखसुखाकर रखलेवे। इसमेंसे २–२ रत्ती पीपल और मधुके साथदेनेसे जीर्णज्वर, रक्तप्रमेह, मेढ्शूल, पाण्डु, कामला, समस्तशूल, श्वास, कास, मूत्रकृच्छ्र, पथरी, क्षय, सम्पूर्णअतिसार, ग्रहणी, बवासीर, नपुंसकत्व, घोरपीडायुक्तपित्तविकार, बालग्रह, गर्भिणीकेरोग, योनिशूल, प्रदर, सूतिकारोग, सोमरोग इनसबको यह नष्टकरताहै। साधारणतया ज्वरोंमें सुबहशाम पीपलकेसाथ और प्रमेहोंमें असगन्धकेसाथ देना ॥ ४३५ ॥

४३६ वसन्तराजरसः

सूतं गन्धकलोहमभ्रकनकं ताप्यञ्च ताम्रं मृतं,
वङ्गं मौक्तिकविद्रुमं विमलकं कान्तञ्च नागं समम्।
वाराहीद्रवभावितं मुनिदिनं कूप्यां न्यसेन्मुद्रितं,
पाच्यं वालुकया सुपूर्णपिठरे घस्रं सुशीतं पुन. २११५
कस्तूरीघनसारकुङ्कुमरसैः श्रीखण्डलामज्जके-,
रम्लानस्य रसेन भावितमिदं त्रिस्त्रिः सुसिद्धो रसः।
नाम्ना राजवसन्त एष कथितः पित्तामयिभ्यो हितः,
क्षीणानां क्षतकासिनां मधुसितायुक्तो द्विवल्लोन्मितः॥

र. प., राजयक्ष्मणि।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अभ्रक, सुवर्ण सोनामाखी, ताम्र, वङ्ग, मोती, प्रवाल, रजतमाक्षिक, कान्त और नाग इनकीभस्में सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर ७ दिन वाराहीकन्दके रससे मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टी-दीहुई आतशीशीशीमें डालकर मुहबन्दकर वालुकायन्त्रमें रख एकदिनकी मन्दाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कस्तूरी, शुद्धकपूर, केशर, सफेदचन्दन, कालीखस, दुपहरिया,

इनकेद्रवोंसे ३–३ भावनाएं देकर रखछोड़े । इसमेंसे ६–६ रत्तीकीमात्रा मधु और शक्करकेसाथ देनेसे पित्तरोग, क्षीणता और क्षतजकास नष्टहोतेहैं ॥ ४३६ ॥

४३७ वसन्तसुन्दररसः

माक्षिकं रजतं व्योम तुगाक्षीरीं महौषधम् ।
यत्नाच्छिरीषतोयेन मर्दयित्वा दिनत्रयम् ॥ २११७ ॥
मुद्गमाना वटीः कृत्वा प्रयुञ्ज्यात्पयसा सह ।
मसूरिकाभिभूतेभ्यः प्रातः सायञ्च नित्यशः॥२११८॥
शीतार्दिता यथा वृक्षा वसन्तस्य समागमे ।
तथाऽस्य सेवनान्मर्त्या सुन्दरत्वमवाप्नुयुः ॥ २११९॥
संयतः प्रयतो नित्यं भवेज्जातमसूरिकः ।
दिवानिद्रां सुरां तैलमामिषञ्च विवर्जयेत् ॥ २१२० ॥

आ वि., मसूरिकायाम् ।

भाषा—सुवर्णमाक्षिक, रजत और अभ्रकभस्म, वंसलोचन, सोंठ, येसव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर ३ दिन सिरसके स्वरसकी भावना देकर मूंगवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली दूधकेसाथ सुवहशाम देनेसे उपद्रवसहित समस्तमसूरिका शान्तहोतीहै । दिनकीनिद्रा, मद्य, तैल और मास इसमें वर्जितहै । शीतसे झुलसेहुए वृक्ष जिसतरह वसन्त ऋतुके आनेपर हरे होजातेहैं वैसेही मसूरिकाओंसे पीडित मनुष्य इसके सेवनसे आरोग्यको प्राप्तहोताहै ॥ ४३७ ॥

४३८ वह्निगर्भरसः

चक्रे वद्धं सूतकं गन्धतुल्यं
पित्तैर्यत्नाद्भावयेदष्टवारान् ।
तद्वच्छिग्रुव्योषचित्राऽऽर्द्रतोयैः
पश्चाल्लौहे पात्रके पाचयेत ॥ २१२१ ॥
सूताऽर्द्धाऽर्द्धं चाऽमृतं क्षेपयित्वा
मन्दे वह्नौ वह्नितोयेन किञ्चित् ।
सिद्धः सूतो वह्निगर्भोऽस्य वल्लं
युक्त्या दद्यादुक्तरोगेषु नूनम् ॥ २१२२ ॥

र दी, अग्निमान्द्ये ।

भाषा—चक्रवद्धकीतरह (अनलरस १२५ में कहेहुएकी तरह) ताम्रचक्रिकापर कायमकियेहुए पारेकी वरावर शुद्धगन्धक मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर पित्तोंसे ८ दिनतक मर्दनकर सहिजन, त्रिकटु, चित्रक और अदरखके द्रवोंसे १–१ दिन मर्दन कर सुखाकर लोहेकेपात्रमें पकाकर पर्पटी वनावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पारेसे चतुर्थांश शुद्ध वछनाग देकर वेरके कोयलोंपर लोहेकेपात्रमें वहुत थोड़ी अग्निदेकर नीचे उतारले और चित्रकमूलकेक्वाथसे थोड़ामर्दनकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह वात आर कफप्रधानरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ४३८ ॥

४३९ वह्निज्वालावटी

नष्टपिष्टिं चतुर्माषमेकैकं रसगन्धयोः ।
अभ्रकं माषमानञ्च मातुलुङ्गाम्लमर्दितम् ॥ २१२३ ॥
शोधितं सप्तधा चैव द्विमाषं त्र्यूषणं पृथक् ।
त्रिशूलीभृङ्गचाङ्गेरीसातलातीक्ष्णपत्रिकाः ॥ २१२४ ॥
श्वेताऽपराजिता कन्या मत्स्याक्षी ग्रीष्मसुन्दरः ।
करिणी कर्णमोटी च रुदन्ती चित्रकार्द्रकौ ॥ २१२५ ॥
धत्तूरकाकमाच्यौ च मुशली च पृथग्रसैः ।
मर्दितं छिपलैः कुर्याद्वटिका माषसम्मिता ॥ २१२६ ॥
ग्रहण्यां पर्णखण्डेन व्योपयुक्ता निषेविता ।
अरुचिं राजयक्ष्माणं मन्दाग्निं सूतिकागदान् ॥
शमयेद्वटिका नाम्ना वह्निज्वालेति गीयते ॥ २१२७ ॥

र. र स, ग्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्धपारे और गन्धककी नष्टपिष्टी ४–४ माशे, विजोरेकेरससे ७ भावनाएं दीहुई अभ्रकभस्म १ माशा, सोंठ, मिर्च, पीपल येसव २–२ माशे, त्रिशूली (दिव्यौषधि), भंगरा, अम्लोनिया, अङ्गुलियाथूहर, राई, सफेदकोयल, घीकुंवार, मछेछी, हरमल, हाथीशुण्डी, ववूल, रुदन्ती, चित्रक, अदरख, धतूरा, मकोय, मुशली इनप्रत्येकके २–२ पल रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियां वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पानकेसाथ खानेसे ग्रहणी और त्रिकटुकेसाथ खानेसे अरुचि नष्टहोतीहै । समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे राजयक्ष्म, मन्दाग्नि, सूतिकारोग इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ४३९ ॥

४४० वह्निदीपनोरसः

नागरं मागधी वेल्ला वह्निः पथ्या सिता समाः ।
तदेकांशं सूतभस्म तेषां चूर्णेन योजयेत् ॥ २१२८ ॥
प्रयोजयेन्निष्कमात्रं तरुणोष्णेन वारिणा ।
अधिकं दीपनं प्राप्य भोजनं कुरुते नरः ॥ २१२९ ॥
गुल्मभेदा विनश्यन्ति सर्वान्सर्पान्विनाशयेत् ।
वातशूलानि शूलानि श्वासकासान्हरेदयम् ॥
वह्निसन्दीपनः ख्यातो गदान्दहति वह्निवत् ॥ २१३० ॥

र कौ (ज्ञा), अग्निमान्द्ये ।

भाषा—सोंठ, पीपल, मिर्च, चित्रकमूल, हर्रे, शक्कर, पारदभस्म, सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ माशे गरमपानीकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, सवप्रकारकेगुल्म, विसर्प, वातशूल, साधारणशूल, श्वास, कास और मन्दाग्नि प्रभृति रोगोंको यह दूरकरताहै ॥ ४४० ॥

४४१ वह्निपुत्ररसः

सूतगन्धौ समौ शुद्धावपामार्गाऽर्कजैर्द्रवैः ।
मर्दयेत्सार्षपं तैलं स्वल्पं तस्योपरि क्षिपेत् ॥ २१३१ ॥
आयसे भाजने क्षिप्त्वा तत्पचेन्मृदुवह्निना ।
निदध्यात्ताम्रपात्रे तन्मर्दयेन्मुद्गरेण च ॥ २१३२ ॥
विषं रसात्षोडशांशं सम्मिश्र्य च विभावयेत् ।
आजमाहिषपित्ताभ्यां प्रत्येकं सप्तधा पुनः ॥ २१३३ ॥
सप्तकृत्वश्च चित्राऽर्कत्रिकटुप्रभवैर्जलैः ।
रसोऽयं वह्निपुत्राऽऽख्यो रुचिदीप्तिविवर्धनः २१३४

आर्द्रजे मधुकोत्थे वा जले वल्लोऽस्य दीयते।
शूलाग्निमान्द्यनाशाय चित्रतिक्ताऽऽर्द्रजे जलैः २१३५
कोष्ठरोधप्रशान्त्यर्थं जयपालाऽऽज्यनागरैः।
समाक्षिकं शङ्खभस्म सजीरं ग्रहणीगदे॥ २१३६॥
आमवातेऽस्याऽनुपाने त्रिफलाक्वाथसंयुतम्।
कोष्णमेरण्डतैलं स्यात्सद्यो वातगदान्हरेत्॥२१३७॥
देवदाल्यग्निकटुकत्र्यकाथैस्तथाऽर्शसि।
गुडूचीजीरककणानागरै ज्वरशान्तये॥ २१३८॥

र दी, शूले।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जली-कर अपामार्ग और आकके द्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर टिकड़ी-बनाय लोहेकेपात्रमें रख थोड़ासा सरसोंका तैल ऊपर डाल मन्दाग्निसे पकावे। जब चटनीके सदृशहोकर पेंदेमें लगनेलगे तब ताम्रपात्रमें निकालकर तावेके डण्डेमे खूबघोटे। एकजीव होजानेपर पारेका सोलहवा हिस्सा शुद्धवछनाग मिलाकर वकरे और भैंसेके पित्तोंसे ७–७ भावनाएं देकर चित्रक, आक और त्रिकटुके द्रवोंसे ७–७ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरख अथवा मुलहठी अथवा चित्रक, कुटकी, अदरख इनके द्रवकेसाथदेनेसे शूल और अग्निमान्द्य नष्टहोताहै। शुद्धजमालगोटा, घी और सोंठकेसाथ-देनेसे कोष्ठवद्धताको दूरकरताहै। शङ्खभस्म, जीरा और मधुके-साथ देनेसे ग्रहणीरोग, त्रिफलाकेक्वाथसे आमवात, कदुष्ण एरण्डतैलसे वातरोग, वन्दाल, चित्रक और त्रिकटुकेक्वाथसे ववासीर, गिलोय, जीरा, पीपल और सोंठकेसाथदेनेसे समस्त-ज्वर नष्टहोतेहैं॥ ४४१॥

४४२ वह्निभास्कररसः

सुवर्णमभ्रं वैक्रान्तं रजतं शाणमानकम्।
लोहं रसं गन्धकञ्च माक्षिकं कर्षसम्मितम्॥२१३९॥
रक्तचित्रकतोयेन तथा ब्राह्म्या रसेन च।
त्रिसप्तकृत्वः सम्भाव्य कुर्याद्वल्लमिता वटीः॥२१४०॥
रसोऽयं सर्वथा हन्ति मस्तिष्कोदकमाशु च।
अन्यांश्च शिरसो रोगान्वह्निस्तृणगणानिव॥ २१४१॥
वह्निवद्भासते यस्माद्वीर्येणैव रसोत्तमः।
ख्यातः पृथ्वीतले तस्मादाख्यया वह्निभास्करः २१४२

आ वि, शिरोरोगे।

भाषा—सुवर्ण, अभ्रक, वैक्रान्त और रजत इनकी भस्में ४–४ माशे, लोहभस्म, शुद्धपारा और गन्धक, माक्षिकभस्म, १–१ कर्ष लेकर नीलवर्णकज्जलीकर रक्तचित्रक और ब्राह्मीके रससे २१–२१ भावनाए देकर ३–३ रत्तीकी गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे मस्तिष्कमेंसञ्चितजल और नानातरहके शिरोरोग नष्टहोतेहै ४४२

४४३ वह्निरसः (प्रथम)

जातीजातं त्रिकर्षं मरिचमपि
पलं चाऽर्द्धकर्षप्रमाणं,
गन्धं सूतं लवङ्गं विषमिद-
मखिलं तिन्तिडीकस्य तोये।
पिष्ट्वा माषैकमात्रा वितरति-
दहनं वह्निमान्द्ये च सद्यो,
रोगांश्छूलाऽनिलादीन्दहति-
कृतगुणो वह्निनामा रसोऽयम्॥ २१४३॥

वै मृ, नि र, र. सु, रसायनसं., अजीर्णे।

भाषा—जायफल ३ कर्ष, मरिच ४ कर्ष, शुद्धपारा, गन्धक, लोग, शुद्धवछनाग आधा आधाकर्ष लेकर वारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाय पकी इमलीकेजलसे एकदिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह तत्क्षण मन्दा-ग्निको नष्टकर शूल और वातरोगोंको नष्टकरताहै॥ ४४३॥

४४४ वह्निरसः (महान्) (द्वितीयः)

चतुः सूतस्य गन्धाष्टौ रजनी त्रिफला शिला।
प्रत्येकञ्च त्रिभागं स्यात्त्रिवृज्जैपालचित्रकम्॥२१४४॥
प्रत्येकञ्च त्रिभागं स्याद्दन्तीत्र्यूषणजीरकम्।
प्रत्येकमष्टभागं स्यादेकीकृत्य विचूर्णयेत॥ २१४५॥
जयन्तीस्नुक्पयोभृङ्गवह्निवातारितैलकैः।
प्रत्येकेन क्रमाद्भाव्यं सप्तवारं पृथक्पृथक्॥ २१४६॥
महावह्निरसो नाम्ना निष्कमुष्णजलैः पिवेत्।
विरेचनं भवेत्तेन तक्रं भुक्तं ससैन्धवम्॥ २१४७॥
दिनान्ते दापयेत्पथ्यं वर्जयेच्छीतलं जलम्।
सर्वोदरहरः प्रोक्तः श्लेष्मवातहरः परः॥ २१४८॥

र सं, वै चि, शा स, र प्र सु, र चि, र. क ल, र र.स., यो म, र सु, र.क, र र कौ., व रा, र र, र. का, रसायनस, र. को, उदराऽधिकारे।

टि०—योगमहार्णवे त्रय पाठा प्रकल्पिता, एकोऽग्निमुखचूर्णनाम्ना व्यवहृत, द्वितीयो जलोदरहर, तृतीय पाठ उपर्युक्त (वह्निरस) नाम्ना व्यवहृत। व रा, र र एतयो वह्निवीर्य इति नाम। रस-कामधेनौ द्वितीयस्थाने उदरारियोग इति नाम।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, शुद्धगन्धक ८ भा., हल्दी, त्रिफला, मैनसिल, निसोत, शुद्ध जमालगोटा और चित्रक ३–३ भाग, दन्तीमूल, त्रिकटु, जीरा ८–८ भाग लेकर सवका वारीकचूर्ण कर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय जैंत, सेहुण्डकादूध, भंगरा, चित्रक, एरण्डीकातैल इनप्रत्येकके द्रवोंसे ७–७ भावनाए देकर रखछोड़े। (तैल वहुत थोड़ाथोड़ा देकर ७ भावनाए पूरीकरे अन्यथा असम्भवहै) इसमेंसे ४–४ माशेकीमात्रा गरमजलकेसाथदेनेसे रेचनहोगा। सन्ध्यासमय लवणयुक्तछाछ-भातदेना। ठंढेजलसे परहेज़ रखना। इसकेसेवनसे समस्तउदर-रोग, कफरोग और वातजन्यरोग नष्टहोतेहै॥ ४४४॥

४४५ वह्निसिद्धोरसः

लोहं गन्धं टङ्कणं भ्रामयित्वा
साधंस्तस्मिन्सूतकोऽन्यश्च गन्धः।

कन्याम्भोभिर्मर्दितः काचकूप्यां
क्षिप्तो वह्नौ सिद्धये वह्निसिद्धः ॥ २१४९ ॥

यो म., र. सि., रसायनसं, रसायनाऽधिकारे ।

भाषा—लोहेको गलाकर समभाग गन्धक और सुहागा डाले । चक्करखानेपर इससे आधा पारा और गन्धक डालकर उतारले फिर घीकुंवारकेरससे १–२ रोज़ मर्दनकर सुखाकर आतशीशीशीमें वन्दकर एकदिनरात वालुकायन्त्रमें अग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह ग्रहणीप्रभृति समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ४४५ ॥

४४६ वाजीकरणयोगः (प्रथमः)

सत्त्वं गुडूच्या गगनं सुलोह-
मेलासितापिप्पलिचूर्णमिश्रम् ।
लीढ्वाऽवलेहं मधुना विमिश्रं
स्त्रीणां शतं याति यदृच्छया ना ॥ २१५० ॥

र. पा., वाजीकरणे ।

भाषा—गिलोयसत्त्व, अभ्रक और लोहभस्म, इलायची, शक्कर और पीपल समभागलेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे अग्निवल देखकर १ माशेसे ३ माशेतक मधुमें मिलाकर सेवनकरे और रातको दूधकेसिवाय कुछ न लेवे तो अभीष्टसमयतक स्त्रीसङ्गकरसक्ताहै ॥ ४४६ ॥

४४७ वाजीकरणयोगः (द्वितीयः)

रसभस्माऽभ्रकं लोहं धूर्तस्नेहैस्त्रिभावितम् ।
विजयावीजतैलेन त्रिर्भाव्यं सिन्धुजद्रवैः ॥ २१५१ ॥
वल्लमात्रं सितायुक्तं रात्रौ च क्षीरभोजनम् ।
रामात्रययुतं रम्यं वाजीकरणमुत्तमम् ॥ २१५२ ॥

र. पा., वाजीकरणे ।

भाषा—पारद, अभ्रक और लोहभस्म समभागलेकर वारीकचूर्णकर धतूरा, भाग और तुवरकके वीजोंके तैलोंसे ३–३ भावनाएं देकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा शक्करकेसाथ खाकर दूधपीवे और रातको भोजन न करे तो तीन युवतियोंको खुश करसक्ताहै ॥ ४४७ ॥

४४८ वाडवरसः

पटुना पूरयेत्स्थालीं तन्मध्ये पटुमूषिकाम् ।
तन्मध्ये रामठीमूषां तन्मध्ये सूतकं क्षिपेत ॥ २१५३ ॥
विषं निघृष्य सूतांशं वारिणाऽऽलोड्य सप्तभिः ।
कृते लेपैः सम्पुटिते तेन चैवं ददेच्छनैः ॥ २१५४ ॥
वह्निं प्रज्वालयेच्चोग्रं हठाद्यामचतुष्टयम् ।
तद्भस्म तिलमात्रन्तु दद्यात्सर्वेषु पाप्मसु ॥ २१५५ ॥
ग्रहण्यां जठरे शूले मन्दाग्नौ पवनामये ।
युक्तमेतन्निहन्त्येव कुर्याद्बहुतरां क्षुधम् ॥
तापे शीतक्रियां कुर्याद्वाडवाख्ये रसोत्तमे ॥ २१५६ ॥

र चि., र सु., रसायनस, यो म, र. का., र सि., वृ. यो त, र. (मा.) ज्वराऽधिकारे ।

टि०—माणिक्यचन्द्रीयरसावतारेऽय, ज्वरारिनाम्ना प्रख्यापित, परन्तु तत्र वत्सनाभलेपनाऽभावात्त्रुटित पाठोऽस्ति, अतस्तस्यात्राऽन्तर्भाव उचित । पाकाऽनन्तर तत्र समजयपालदन्तीवीजानि नियोज्य क्रमाद्द्वित्रिभागतया नियोज्याऽमृतारसेन सम्पिष्य गुटिका कृता सन्ति, इति तु विशेषोऽस्त्येव । अत एव तस्य ज्वरारिनाम्ना पृथक् पाठ कृतोऽस्तीति सुधीभि र्विभावनीयम् ।

भाषा—सेंधेनमकको वारीकपीसकर आधी हंडी भरे और उसमें नमककीमूषावनाकर रक्खे । उसमूषामें शुद्धहींगकीमूषा वनाकर रक्खे । फिर उसमें वरावरके गीलेवछनागकेसाथ घोटाहुआ शुद्धपारा रख हींग और नमक के उसीक्रमसे वन्दकर पानीमें पिसेहुएवछनागसे कपड़ेको भिगोकर मूषापर ७ वार लपेटकर गलेतक हंडीको नमकसे भरदे और ऊपरसे ढक्कनवन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीकरदे । सूखनेपर चूल्हेपर चढ़ाय ४ पहरकी हठाग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ तिलप्रमाण भस्म समस्तपापरोगोंमें देनेसे उनको यह नष्टकरताहै । ग्रहणी, उदररोग, शूल, मन्दाग्नि, वातरोग इनसवको नष्टकर अत्यन्त क्षुधाको वढ़ाताहै । दाहहोनेपर शीतक्रियाकरे ॥

४४९ वातकुलान्तकरसः

मृगनाभिः शिला नागकेसरं कलिवृक्षजम् ।
पारदो गन्धको जातीफलमेला लवङ्गकम् ॥ २१५७ ॥
प्रत्येकं कार्षिकञ्चैव श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।
जलेन मर्दयित्वा तु वटीं कुर्याद्विरक्तिकाम् ॥ २१५८ ॥
यथाव्याध्यनुपानेन योजयेच्च चिकित्सकः ।
अपस्मारे महाघोरे मूर्च्छारोगे च शस्यते ॥ २१५९ ॥
वातजान्सर्वरोगांश्च हन्याद्चिरसेवनात् ।
नातः परतरं श्रेष्ठमपस्मारेषु वर्तते ॥
ब्रह्मणा निर्मितः पूर्वं नाम्ना वातकुलान्तकः ॥ २१६० ॥

र. सं, र चं., ध, र. सु, वाताऽधिकारे ।

भाषा—कस्तूरी, शुद्ध मैनसिल, नागकेसर, वहेड़ा, शुद्धपारा और गन्धक, जायफल, इलायची, लौंग येसव १–१ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय जलसे मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे महाघोर अपस्मार, मूर्च्छा, वातरोग, इनसवको यह नष्टकरताहै

४५० वातगजाङ्कुशरसः (प्रथमः)

मृतं सूतं मृतं लोहं ताप्यगन्धकतालकम् ।
पथ्या शृङ्गीविषं व्योषमग्निमन्थश्च टङ्कणम् ॥ २१६१ ॥
तुल्यं खल्वे दिनं मर्द्यं मुण्डीनिर्गुण्डिकाद्रवैः ।
द्विगुञ्जां वटिकां खादेत्सर्ववातप्रशान्तये ॥ २१६२ ॥
कणाचूर्णयुतञ्चैव जिङ्गीक्काथं पिवेदनु ।
साध्याऽसाध्यं निहन्त्याशु रसो वातगजाङ्कुशः ॥ २१६३
सप्ताहाद्गृध्रसीं हन्ति दारुणं सन्निपातकम् ।
क्रोष्टुशीर्षकवातञ्चाऽप्यववाहुकसञ्ज्ञकम् ॥ २१६४ ॥

ऊरुस्तम्भं हनुस्तम्भं मन्यास्तम्भं विनाशयेत् ।
पक्षाघातादिरोगेषु कथितः परमोत्तमः ॥ २१६५ ॥
रसोऽम्बुशोषणो ह्यत्र युक्तोऽन्यो योगवाहकः ।
रास्नाऽमृतादेवदारुशुण्ठीवातारिजं शृतम् ॥
सगुग्गुलुं पिबेत्कोष्णमनुपानं सुखावहम् ॥ २१६६ ॥

र सं , ध , र. सु , र.क. यो , र क. ल , नि. र , वै चि , र. र स , चि र , र. चं , रसायनसं., टो , र का., र मं , यो म., र. क , चि. क , ना. वि., यो. त., यो. र , र सं. क , शा स , वृ. यो त , र.र , र कौ., र (मा), भै सा , व रा., रसेन्द्रम , र , चि र भ., र सि , र प्र सु , वाताऽधिकारे ।

टि०—यो र , र स क , शा म , वृ यो त , र र , र कौ , र (मा), भै सा , व रा , यो त , रसेन्द्रम , र , चि र भ , र सि , र प्र सु , र पा , एषु तथा च र र स , रसायनस , र च , र सु , नि र , र क. ल , वै चि , र. का , एतेषा द्वितीयस्थाने **स्वच्छन्दभैरवरस** इति नाम स्थापितम् । तत्र प्रक्षेपे शृङ्गीस्थाने निर्गुण्डी गृहीता । रसप्रकाशसुधाकरे मुण्डीनिर्गुण्ट्यौ निष्कास्य वीजपूरद्रवेण भावना प्रदत्ता, कृष्णासर्पि क्षौद्रैरनुपानं नियोजितम् । रसावतारे भावनायां निर्गुण्डीसुरसे गृहीते, प्रक्षेपे पथ्यास्थाने शिला नियोजिता । चिकित्सारहस्ये **वातारिवटीति** नाम । वसवराजीये द्वितीयस्थाने **स्वच्छन्दनायकेति** नाम । रसराजसुन्दरे अतिसाराऽधिकारे व्योष निष्कास्य भावनाया मुण्डीस्थाने शुण्ठी गृहीत्वा **वातारिरस** इति नाम स्थापितम् । नि र , र , वै चि , एतेष्वेकस्थाने **समीरपन्नगेति** नाम स्थापितम् ।

भाषा—पारा, लोह, सुवर्णमाक्षिक इनकीभस्में, शुद्ध गन्धक और हरिताल, हर्रे, काकडार्सीगी, शुद्धवछनाग, त्रिकटु, अरणी, भुनासुहागा, सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर एकदिन शुष्क-मर्दनकर गोरखमुण्डी और निर्गुण्डीकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पीपलकेचूर्णकेसाथ लेकर जिङ्गीकाक्काथ पिलानेसे यह साध्य अथवा असाध्य वातरोगको नष्टकरताहै । सातदिनमें गृध्रसी, दारुणसन्निपात, क्रोष्टुशीर्षक, अववाहुक, ऊरुस्तम्भ, हनुस्तम्भ, मन्यास्तम्भ, पक्षाघात, इनसवको यह नष्टकरताहै । वातरोगमें अम्बुशोषण अथवा अन्यकोई योगवाहकरसदेकर रास्ना, गिलोय, देवदारु, सोंठ और एरण्डकीजड़का कदुष्णक्काथ गूगलकेसाथदेना॥

४५१ वातगजाङ्कुशरसः (वृहन्) (द्वितीयः)

मृताऽभ्रतीक्ष्णकान्तानि ताम्रतालकगन्धकम् ।
स्वर्णं शुण्ठी वला धान्यं कट्फलं चाभया विषम् २१६७
पथ्या शृङ्गी पिप्पली च मरिचं टङ्कणं तथा ।
तुल्यं खल्वे दिनं मर्द्यं मुण्डीनिर्गुण्डिजैर्द्रवैः ॥२१६८॥
द्विगुञ्जां वटिकां खादेत्सर्ववातप्रशान्तये ।
साध्याऽसाध्यं निहन्त्याशु वृहद्वातगजाङ्कुशः ॥२१६९॥

र म., व , र सु , र च , र र , व रा , वातरोगाऽधिकारे ।

टि०—र म , ध , र सु एषु ग्रन्थेषु द्वितीयस्थाने र च , र र , व रा , एषु [illegible] च "मृताऽभ्रतीक्ष्णताम्रञ्च मृततालकगन्धकम् । स्वर्णं शुण्ठी वला धान्य कट्फलं चाऽभया विषम् ॥ सम्पिष्य चपलाद्रावै निष्कैका भक्षयेद्वटीम् । वातश्लेष्महरो ह्येष महावातगजाङ्कुश ॥" इति पाठो दृश्यते तस्य पूर्वस्मिन्पाठेऽन्तर्भाव सुसाध । स्वर्णकान्तयोरभावे तद्धीनोऽपि पाठ प्रकल्पनीय इत्यत्रोपदेशान्तरस्याऽनावश्यकत्वम् । यथा-लाभ प्रयोजयेदित्येतत्सूत्र सर्वत्रैव योगिनोऽनुसरन्तीत्यन्यदेतत् ॥

भाषा—पारा, अभ्रक, फोलाद, कान्त, ताम्र इनकीभस्में, शुद्धहरिताल और गन्धक, सुवर्णभस्म, सोंठ, वला, धनिया, कायफल, हर्रे, शुद्धवछनाग, इन्द्रायण, काकड़ार्सीगी, पीपल, मरिच, भुनासुहागा, ये सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर गोरखमुण्डी और निर्गुण्डीकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त वायुरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ४५१ ॥

४५२ वातगजाङ्कुशरसः (तृतीयः)

अष्टौ भागा रसस्याऽपि विषतिन्दोस्तथैव च ।
गन्धकस्य त्रयो भागाः कटुत्रयफलत्रयम् ॥ २१७० ॥
गुञ्जामात्रां वटीं खादेदशीतिवातनाशनम् ।
ऊरुस्तम्भं निहन्त्याशु ख्यातो वातगजाङ्कुशः॥२१७१॥

व रा , वै चि , वाताऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और कुचिला ८–८ भाग, शुद्धगन्धक, त्रिकटु और त्रिफला ३–३ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय वातघ्नद्रव्योंके द्रवसे एकदिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली वातहरानुपानकेसाथ देनेसे यह ८० वातरोग और ऊरुस्तम्भको नष्टकरताहै ॥ ४५२ ॥

४५३ वातगजेन्द्रसिंहरसः

अभ्रं लौहं रसं गन्धं ताम्रं नागं सटङ्कणम् ।
विषं सिन्धुं लवङ्गञ्च हिङ्गुजातीफलं समम् ॥२१७२॥
तदर्द्धं त्रिसुगन्धञ्च त्रैफलं जीरकन्तथा ।
कन्यारसेन सम्पिष्य वटी कार्या त्रिरक्तिका ॥२१७३॥
सेव्या पयोऽनुपानेन सदा प्रातः सुखान्वितैः ।
अशीतिं वातजान्रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् २१७४
विंशतिं श्लैष्मिकान्रोगान्सेवनादेव नाशयेत् ।
अभिघातेन ये क्षीणाः क्षीणाऽर्द्धाऽवयवाश्च ये २१७५
व्याधिक्षीणा वयःक्षीणाः स्त्रीक्षीणाश्चाऽपि ये नराः ।
क्षीणेन्द्रिया नष्टशुक्रा वह्निहीनाश्च मानवाः ॥२१७६॥
तेषां वृष्यश्च वल्यश्च वयःस्थापनमेव च ।
खञ्जानां पङ्गुकुब्जानां क्षीणानां मांसवर्द्धनः ॥२१७७॥
अरोगी सुखमाप्नोति रोगी रोगाद्विमुच्यते ।
रसस्याऽस्य प्रसादेन नास्ति रोगाद्भयं क्वचित् २१७८

भै र , आमवाते ।

भाषा—अभ्रक और लोहभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और नागभस्म, भुनासुहागा, शुद्ध वछनाग, सेंधानमक, लौंग, हींग, जायफल येसव समभाग, सवसे आधा त्रिसुगन्ध,

त्रिफला और जीरा लेकर वारीकचूर्णकर एकदिन घीकुंवारकेरससे मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली दूधकेसाथलेनेसे ८० वातरोग, ४० पित्तरोग, २० श्लेष्मरोग, अभिघातजन्यक्षीणता, आधे अङ्गकीक्षीणता, व्याधिक्षीणता, आयुकाह्रास, स्त्रीक्षीणता, क्षीणेन्द्रियत्व, नष्टशुक्रत्व, मन्दाग्नि, खञ्जता, पङ्गुत्व, कुब्जत्व, अत्यन्तकृशता, इनसवको नष्टकर यह आदमीको हृष्टपुष्टवनाकर आयुको वढ़ाताहै ॥४५३॥

४५४ वातचिन्तामणिरसः

भागत्रयं स्वर्णभस्म द्विभागं रौप्यमभ्रकम् ।
लौहात्पञ्च प्रवालञ्च मौक्तिकात्त्रयसम्मितम् ॥२१७९॥
भस्मसूतं सप्तभागं कन्यारसविमर्दितम् ।
वल्लमात्रा वटी कार्या भिषग्भि रतियत्नतः ॥ २१८० ॥
यथाव्याध्यनुपानेन नाशयेद्रोगसङ्कुलम् ।
वातरोगं पित्तकृतं निहन्ति नाऽत्र चिन्तनम् ॥२१८१॥
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्द्धी कन्दर्पसमविक्रमः ।
दृष्टः सिद्धफलश्चाऽयं वातचिन्तामणिस्त्विह ॥२१८२॥

भै.र., ध , वातरोगे ।

भाषा—सुवर्णभस्म ३ भा., रजत और अभ्रकभस्म २–२ भा., लोहभस्म ५ भा , प्रवाल और मोती ३–३ भा., पारदभस्म ७ भागलेकर वारीकचूर्णकर घीकुंवारकेरससे एकदिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे वात और पित्तरोगोंको नष्टकर यह वृद्धोंको युवावस्थामें लाताहै ॥ ४५४ ॥

४५५ वातदावानलरसः

पुनर्भूर्वह्निनीरेण रसत्रिगुणगन्धकम् ।
मर्दयेत्त्रिगुणं कान्तपात्रके विनिवेशयेत् ॥ २१८३ ॥
पचेदष्टगुणैः सूर्यपत्रपत्ररसैः शनैः ।
ततो वह्निजलं दत्त्वा विषञ्च रसपादिकम् ॥ २१८४ ॥
शीतवातपरिशोषणक्षमो जायते सकलवातनाशनः ।
त्र्यूषणेन सघृतेन सेवितः श्रृङ्गवेरपयसाऽपि वल्लकः
त्रिभिराद्यं रसं सिद्धं पथ्यं भूरि घृतं हितम् ।
साधितं तिलतैलैश्च मर्दनं वातनाशनम् ॥ २१८६ ॥

र , वातरोगे ।

भाषा—शुद्धपारेकेसाथ तिगुने गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर छटसिट (पं०) और चित्रककी जड़केकाढेसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय गोलेसे तिगुनेवज़नके कान्तलोहकेपात्रमें रखकर आककेपकेपत्तोंका अठगुनारस डालकर धीरेधीरे पकावे । रस जलजानेपर उतनाही चित्रकमूलकाक्काथ सुखावे । फिर रससे चतुर्थांश शुद्धवछनाग मिलाकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली त्रिकटु और घीकेसाथ अथवा अदरखके रसकेसाथ सेवनकरनेसे शीतवातको यह नष्टकरताहै । इसमें पथ्य अधिकघृतवाला अथवा तिल्केतैलमें वनायाहुआ पदार्थदेना और वातनाशकतैलोंकी मालिशकरना ॥ ४५५ ॥

४५६ वातनाशनरसः

सूतहाटकवज्राणि ताम्रं लौहञ्च माक्षिकम् ।
तालं नीलाञ्जनं तुत्थं सिन्धुफेनं समांशिकम् ॥२१८७॥
पञ्चानां लवणानाञ्च भागैकं सुविमर्दयेत् ।
वज्रीक्षीरै दिनैकन्तु रुद्ध्वा तं भूधरे पचेत् ॥ २१८८ ॥
माषैकमार्द्रकद्रावै र्लिह्याद्वातविनाशनम् ।
पिप्पलीमूलकक्वाथं सकृष्णमनुपाययेत् ॥
सर्वान्वातविकारांश्च निहन्त्याक्षेपकादिकान् ॥२१८९॥

र.सं., शा.सं., वृ.यो त., र चं , रसायनप , ध., चि र भ., रसायनसं., र.सु., भै सा , र (मा.), र प्र.सु.एतेपु वातनाशन । वै क., नि र , र म., र.का. एषु **वातारिः** । र र , र.र.स.**वडवानलः** । ना वि **वातगजाङ्कुशः** ।

टि०—रसप्रकाशसुधाकरे पञ्चलवणस्थाने रसोनो नियोजित इति विशेष ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, हीरा, ताम्र, लोह, सोनामाखी, हरिताल, सुरमा, तुत्थ इनकीभस्में, समुद्रफेन, पाचोंनमक येसव समभाग लेकर वारीक चूर्णकर सेहुण्डकेदूधसे १ दिनमर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर भूधरयन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा अदरखकेसाथलेकर पिपलामूलकाक्काथ पीपलकाचूर्ण डालकर पीनेसे आक्षेपकादि समस्त वातविकारोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४५६ ॥

४५७ वातपित्तारिरसः

मृतं सूतं मृतं ताम्रं शिला तालं विषोषणम् ।
कुष्ठं नागवला पथ्या गोक्षुरश्च विदारिकः ॥२१९०॥
एरण्डं मर्दयेत्तुल्यं द्रवैश्चाऽग्निपुनर्नवैः ।
माषमात्रां वटीं खादेद्वातपित्तहरा भवेत् ॥ २१९१ ॥

र र., र चं., व.रा , वै.चि., र.का.वातरोगाऽधिकारे ।

टि०—व रा , वै चि गुल्मवाताऽधिकारे, नाम च त्रिविक्रमेति । व रा , वै चि एतयोर्विपोषण निष्कास्य गन्धक नियोजितम् । गोक्षुरस्थाने शिखिकण्ठ नियोजित, मात्रा चैकगुञ्जा प्रमिता निर्द्धारिता । रसकामधेनौ वातपित्तान्तकवटिकेति नाम्नाऽयमेव पाठो व्यत्यासितस्तस्य न रसान्तरता, ताम्रस्थाने अभ्रकथनन्तु प्रमाददेव सञ्जातम् । एरण्टमूलत्वचो मूलद्रव्ये निवेशोऽस्ति । रसकामधेनौ तु तृतीयान्तदर्शनेन भावनाद्रव्यत्वेन प्रतिभानमपि भ्रमविटपिशाखायमानमित्यवगन्तव्यम् ।

भाषा—पारा और ताम्रभस्म, शुद्धमैनसिल, हरिताल और वछनाग, मरिच, कुठ, गुलसिकरी, हर्रे, गोखरू, विदारीकन्द, एरण्डकीजड़कीछाल, सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर चित्रक और पुनर्नवाके क्वाथोंसे १–१ दिन भावनादेकर १–१ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह वातपित्तकृतरोगोंको नष्टकरताहै

४५८ वातरक्तशोषीरसः

भावयेत्तालकं शुद्धं शरपुङ्खाजलै र्भिषक् ।
एकविंशतिवारं हि सप्तैव त्रिफलाम्बुना ॥ २१९२ ॥

दिनत्रयं सोमराज्या भल्लातेन दिनत्रयम्।
शोषयेदातपे खल्वे न्यस्य सर्वं सुचूर्णितम् ॥ २१९३॥
तालार्द्धं शम्भुवीर्यन्तु तालतुल्यं मृताऽभ्रकम्।
पचेद्गजपुटे वह्नौ काचकूप्यामथापि वा ॥ २१९४ ॥
त्रिवारश्च तदुद्धृत्य स्वाङ्गशीतं सुचूर्णयेत्।
चूर्णेन शरपुङ्खायाः शाणमात्रेण भक्षयेत् ॥ २१९५ ॥
गुञ्जैकं वा द्विगुञ्जं वा त्रिगुञ्जाञ्चाऽधिकं क्वचित्।
वर्जयेल्लवणं यत्नादेतद्धन्त्यचिरेण तु ॥ २१९६॥
वातरक्तमसाध्यं हि कुष्ठमष्टादशाभिधम्।
पामाकण्डूविचर्चीन्तु दद्रुविस्फोटकानि च ॥२१९७॥

र म.मा , ना. वि., वातरक्ते।

भाषा—शुद्धहरितालका रसमाणिक्य बनाकर शरपुङ्खके-क्वाथसे २१, त्रिफलाकेक्वाथसे ७, बाकुची और भिलावेकेद्रवोंसे ३–३ दिन कडीधूपमें रखकर भावनादे। हरितालसे आधा शुद्धपारा और बराबरकी अभ्रकभस्म डालकर गोलाबनाय गजपुटकी आचदे, अथवा आतशीशीशीमें रखकर निकालकर बालुकायन्त्रकी आचदे। ऐसे ३ बार आचँदेकर स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक मात्रा ४ मासे शरपुङ्खके-चूर्णकेसाथदेवे। इसमें लवण बिल्कुलबन्दकरेतो असाध्य वातरक्त, १८ प्रकारकेकुष्ठ, पामा, कण्डू, विचर्चिका, दाद, विस्फोटक इनसबको यह बहुतजल्दी नष्टकरताहै ॥ ४५८ ॥

४५९ वातरक्तान्तकवटी

निष्कद्विसप्ततिः शुद्धा ह्यजमोदा ततो रसात्।
निष्कत्रयं विशल्येन मुशलेनाऽवघातय ॥ २१९८ ॥
उलूखले रसो यावल्लयं गच्छेत्ततो गुडम्।
पुराणं त्वथ तुल्यांशं दत्त्वा सङट्य गोघृतम्॥२१९९॥
गुडतुल्यं विनिःक्षिप्य चतुर्दशवटीः कुरु।
एकैकां भक्षयेत्प्रातस्ताम्बूलाशी मुहुर्मुहुः ॥ २२०० ॥
गोधूमान्नं भूरि घृतं खादेल्लवणवर्जितम्।
पिवन् कोष्णं जलं गच्छ वहिः सञ्चर वा नवा २२०१
मुखपाके च सञ्जाते दीप्यपोट्टलिका शुभा।
मुखे धार्या तथा क्षीरित्वक्क्वाथचुलुकान् कुरु २२०२
लाला स्रवेद्यदि तथा चूषयेश्चुं यदिच्छसि।
स्नानं वाञ्छसि चेत्कर्तुं कुरु तर्हि यथासुखम् २२०३
अनेन योगराजेन वातरक्तसमुद्भवाः।
सन्धिजाश्च शमं यान्ति पीडाः शीघ्रं सुदुस्तराः ॥
अनुवर्तेत चेत्पीडा पूर्वमेव विधिं भज ॥ २२०४ ॥

रसायनत , वातरक्ते।

भाषा—अजमोदकाचूर्ण १८ कर्ष, शुद्धपारा १२ माशेलेकर दोनोंको खरलमें डालकर कूटे जब पारा उसमें मिलजाय तब दोनोंकोबराबर पुरानागुड़ तथा गायका घी डालकर कूटे। एकजीवहोनेपर १४ गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे प्रातःकाल १ गोलीखाकर ऊपरसे पानखावे। मुखजलानेपर अधिक घी डालेहुए गेहूँके पदार्थ खावे। लवण बिल्कुलबन्दकरे। प्यासलगनेपर कदुष्णजलपीवे। इसके प्रयोगमें असह्य मुखपाकहोनेपर अजवाइनको पानीमें भिगोकर बारीकमलमलकेकपड़ेमें पोटली बनाय मुंहमें रक्खे। यदि इससे शान्त न हो तो वट वगैरह दूधवाले वृक्षोंकी छालके क्वाथसे कुल्ले करे। इच्छा हो तो ईख चूंसे। स्नानकरनेकी इच्छा हो तो करे। इससे वातरक्त और सन्धिबन्ध शीघ्र नष्टहोतेहैं। एकप्रयोगसे यदि कुछव्याधि अवशिष्ट रहजाय तो दूसरीवारदेवे ॥ ४५९ ॥

४६० वातरक्तान्तकरसः

गन्धकं पारदं लोहं शिलां तालं घनं तथा।
शिलाजतु पुरं शुद्धं समभागं विचूर्णयेत् ॥ २२०५ ॥
श्वेताऽपराजिता दार्वी वाकुची चित्रकन्तथा।
पुनर्नवा देवकाष्ठं त्रिफला व्योषवेल्लके ॥ २२०६ ॥
चूर्णमेषां पृथक् तुल्यं सर्वमेकत्र कारयेत्।
त्रिफलाभृङ्गराजस्य रसेनैव त्रिधात्रिधा ॥ २२०७॥
भावयेद्भक्षयेत्पश्चाच्चणमात्रं दिनेदिने।
ततोऽनुपानं निम्बस्य पत्रं पुष्पं त्वचं समम् ॥२२०८॥
शाणमात्रं घृतैः कुर्यात्सर्ववातविकारनुत्।
वातरक्तं महाघोरं गम्भीरं सर्वजञ्च यत् ॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तं साध्याऽसाध्यं निहन्त्यलम् ॥२२०९॥

र सं., ध , र च , र सु , भै र , र. र., र. क., वै. क , वातरक्ते

टि०—वै क, वातरक्तारिरस इति नाम। र र वाकुचीस्थाने अग्निफेन नियोजितम्।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, लोहभस्म, शुद्धमैनसिल और हरिताल, अभ्रकभस्म, शिलाजीत, गूगल सब १–१ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर सफेदकोयल, दारुहल्दी, बाकुची, चित्रकमूल, पुनर्नवा, देवदारु, त्रिफला, त्रिकटु, विडङ्ग येसब १–१ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पूर्वोक्त दवामें मिलाकर त्रिफला और भगराकेरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली नीमकेपत्ते, फूल और छाल समभागके ४ माशे चूर्ण और घीकेसाथ लेनेसे सम्पूर्ण वातरक्त और वातविकारोंको यह नष्टकरताहै

४६१ वातरक्तान्तकलौहम् (वृहत्)

अयोभागद्वयं देयं प्रत्येकञ्चैकभागिकम्।
रसगन्धकमुक्ताऽभ्रखर्पराणाञ्च काञ्चनम् ॥ २२१० ॥
भागाऽर्द्धञ्च तथा तालं सर्वमेकत्र मिश्रयेत्।
कुपीलो भेकपर्ण्याश्च द्रोणपुष्प्यारसैस्त्रिधा ॥२२११॥
भावयेद्भावविन्मात्रा ज्ञेया रक्तिद्वयात्मिका।
पथ्यापथ्योऽनुपानञ्च कर्तव्यं हितमिच्छता ॥
वृहद्वातान्तको लौहः सेवितो नितरां हरेत् ॥२२१२॥
सोपद्रवं दारुणवातरक्तं
गम्भीरमुत्तानमथोपदंशम्।
प्रमेहमत्युग्रमथातिकृच्छ्रं
जातं विकारं विविधं नराणाम् ॥ २२१३ ॥

कापालमौदुम्बरमृष्यजिह्वं
सिध्मं तथा मण्डलपुण्डरीके ।
कुर्याद्विशुद्धिं खलु शोणितस्य
वर्णप्रकर्षञ्च बलाऽग्निवृद्धिम् ॥ २२१४ ॥
आ. वि (परिशिष्ट) वातरक्ते ।

भाषा—लोहभस्म २ भाग, शुद्ध पारा और गन्धक, मोती, अभ्रक, खपरिया, सुवर्ण इनकीभस्में १–१ भाग, हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य आधाभाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर खारीजाल(मारवाड़ी), मण्डूकपर्णी, द्रोणपुष्पी, इनप्रत्येककेरसोंसे ३–३ भावनाएं देकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली हर्रे, दूध अथवा पानीकेसाथ लेनेसे उपद्रवसहित गम्भीर अथवा उत्तान वातरक्त, उपदंश, भयंकर प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, कापाल, औदुम्बर, ऋष्यजिह्व, सिध्म, मण्डल, पुण्डरीक, इत्यादि समस्त-कुष्ठोंको दूरकर रक्तको शुद्धबनाय वर्ण, बल और अग्निको देताहै ॥

४६२ वातराजवटी (प्रथमा)

सुशुद्धं पारदं गन्धं लोहं माक्षिकभस्मकम् ।
स्वर्णं तारं ताम्रवङ्गं कान्तं तीक्ष्णन्तु तालकम् ॥२२१५॥
दरदं वत्सनाभञ्च चातुर्जातं सचित्रकम् ।
त्रिकटु त्रिफला भार्ङ्गी ग्रन्थिकं गजपिप्पली ॥२२१६॥
कुष्ठं जातीद्वयं दारु पुष्करं चाम्लवेतसम् ।
शटी दारुहरिद्रे द्वे पद्मकं दाडिमं त्रिवृत् ॥ २२१७ ॥
रास्ना दुरालभा छिन्ना दन्ती जैपालकं विषम् ।
कर्षमात्राणि सर्वाणि द्विपलं गिरिजं मतम् ॥ २२१८ ॥
जातीफलं तुगाक्षीरी वाजिगन्धा सचव्यकम् ।
कङ्कोलकमुशीरञ्च द्वौ क्षारौ लवणत्रयम् ॥ २२१९ ॥
सर्वं सञ्चूर्ण्य विधिवत्खल्वे शोभने दिने ।
निर्गुण्डीवासभृङ्गाद्रिः काकमाच्याद्रकाम्बुना २२२०
तर्कारीसूरणद्रावैस्तथोन्मत्तरसेन च ।
भावनाः खलु दातव्याः सप्त सप्त क्रमादिह ॥ २२२१ ॥
ततः पर्णरसे भाव्यो वटिकां वल्लसम्मिताम् ।
छायाशुष्कां ततः कृत्वा ज्ञात्वा रोगबलाऽबलम् २२२२
सुदिने शुभनक्षत्रे शिवं दुर्गां विभाकरम् ।
प्रणम्य योजयेत्सम्यग्यथारोगाऽनुपानतः ॥ २२२३ ॥
अशीतिवातजान्रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ।
विंशतिं श्लैष्मिकान्रोगाञ्श्वासं कासं भगन्दरम् २२२४
कुष्ठं चोरःक्षतं शूलं ज्वरं पाण्डुं गलग्रहम् ।
प्रमेहं रक्तपित्तञ्च गुल्मं सङ्ग्रहणीं तथा ॥ २२२५ ॥
साध्याऽसाध्यान्निहन्त्याशु सत्यं श्रीशिवभाषितम् ।
वातराजवटी ह्येषा वातरोगकुलान्तिका ॥ २२२६ ॥
र. यु., वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, सुवर्णमाक्षिक, सोने, रूपा, तांबा, बंग, कान्त, फौलाद इनकीभस्में, शुद्ध-हरिताल, सिंगरफ और बछनाग, चातुर्जात, चित्रकमूल, त्रिकटु, त्रिफला, भारङ्गी, पिपलामूल, गजपीपल, कुठ, जायफल, जावित्री, देवदारु, पोहकरमूल, अम्लवेत, कचूर, दोनोंप्रकारकी दारुहल्दी (उत्तरमें दो प्रकारकी मिलतीहै एकको चुतरा और दूसरीको किल-मोडा कहतेहैं), हल्दी, आवाहल्दी, पदमकाठ, अनारदाना, निसोत, रास्ना, जवासा, गिलोय, दन्तीमूल, शुद्धजमालगोटा और बछ-नाग १–१ कर्ष, शुद्धशिलाजीत २ पल, जायफल, वंसलोचन, असगन्ध, चव्य, शीतलचीनी, खस, मन्नी और जवाखार, सैंधा, संचल और समुद्रनमक १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय निर्गुण्डी, अडूस, भंगरा, मकोय, अदरख, तर्कारी ?, सूरण, धतूरा, इनप्रत्येकके यथा-सम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाएं देकर सुखाकर अखीरमें पानकेरसमें १–२ दिनमर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाय छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली रोग और रोगीका बलाबल देखकर शुभनक्षत्रयुक्त शुभदिनमें शिव, दुर्गा और सूर्यभगवानको प्रणामकर समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे ८० वातरोग, ४० पित्तरोग, २० प्रकारके कफरोग, श्वास, कास, भगन्दर, कुष्ठ, उरःक्षत, शूल, ज्वर, पाण्डु, गलग्रह, प्रमेह, रक्तपित्त, गुल्म, सङ्ग्रहणी, इत्यादि साध्यासाध्य तमाम रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४६२ ॥

४६३ वातराजवटी (द्वितीया)

पारदं गन्धकं शुद्धं चातुर्जातं कटुत्रयम् ।
जीरकं युगलं चन्द्रं पत्रं तालीसकेशरम् ॥ २२२७ ॥
जातीफलं लवङ्गञ्च दीप्यकं वह्निवालकम् ।
अमृता चन्दनं द्राक्षा मांसी चव्यं वरी वचा॥२२२८॥
जातीकोषं विडं धान्यं त्रिफला तगरं वृषम् ।
प्रत्येकं कर्षसम्मानं द्विपलञ्च हृतायसम् ॥ २२२९ ॥
शुद्धं नवाहिफेनन्तु पलमात्रं प्रकीर्तितम् ।
सर्वं सञ्चूर्ण्य विधिवन्मर्दयेत्खाखसद्रवैः ॥ २२३० ॥
यामद्वयं ततः कार्या वटिका वल्लसम्मिता ।
दद्याद्बलाबलं वीक्ष्य यथारोगानुपानकम् ॥ २२३१ ॥
ऊरुस्तम्भं वातरोगं ज्वरं दारुणनिद्रताम् ।
प्रमेहं रक्तपित्तञ्च उरःक्षतमरोचकम् ॥ २२३२ ॥
हन्ति सर्वानशेषेण तमः सूर्योदये यथा ।
अस्य प्रभावान्मनुजो रमयेद्रमणीशतम् ॥ २२३३ ॥
र. यु., वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, चातुर्जात, त्रिकटु स्याह-जीरा, सफेदजीरा, शुद्धकपूर, पत्रज, तालीसपत्र नागकेशर, जायफल, लौंग, अजवायन, चित्रकमूल, [illegible], गिलोय, सफेद-चन्दन, दाख, जटामांसी, चव्य, शतावर, वच, जावित्री, बिड-नमक, धनियां, त्रिफला, तगर, अडूसा इनमें १–१ कर्ष, लोहभस्म २ पल, शुद्ध अफीम १ पल लेकर सबका बारीक-चूर्णकर [illegible] [illegible] लेकर १–१ [illegible] [illegible] [illegible]

छोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे ऊरुस्तम्भ, वातव्याधि, ज्वर, दाह, निद्रानाश, प्रमेह, रक्तपित्त, उर क्षत और अरुचि इनसबको नष्टकर उत्तम वाजीकरणको करताहै

४६४ वातराक्षसरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं स्वर्णगन्धं कान्तञ्चाऽभ्रकमौक्तिकम् ।
ताम्रवैक्रान्तकं सम्यङ्मारयित्वा विनिःक्षिपेत् २२३४
पुनर्नवागुडूच्यग्निसुरसाभृङ्गसिन्धुकैः ।
पृथक् पृथक् दिनं भाव्यं दद्याल्लघुपुटं ततः ॥२२३५॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य श्लक्ष्णचूर्णन्तु कारयेत् ।
वातराक्षसनामाऽयं वल्लमात्रं प्रयोजयेत् ॥ २२३६ ॥
मधुपिप्पलिमिश्रश्च अनुपानं यथाबलम् ।
सर्ववातानशेषांश्च क्षयान्पाण्डून् हलीमकम् ॥२२३७॥
पक्षाघातं धनुर्वातं कम्पमुन्मादकं तथा ।
निहन्यात्कुरुते दीप्तिं कान्तिपुष्टिबलप्रदः ॥ २२३८ ॥

र.पा., वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सुवर्ण, कान्त, अभ्रक, मोती, ताम्र और वैक्रान्त इनकीभस्में समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर पुनर्नवा, गिलोय, चित्रक, तुलसी, भंगरा, निर्गुण्डी इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन भावनादेकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ४–५ कपड़मिट्टीदेकर सुखनेपर लघुपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा मधु और पीपलकेसाथ अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त वातविकार, क्षय, पाण्डु, हलीमक, पक्षाघात, धनुर्वात, कम्प, उन्माद और मन्दाग्नि इनसबको नष्टकर कान्ति, पुष्टि और बलको देताहै ॥ ४६४ ॥

४६५ वातराक्षसरसः (द्वितीयः)

मृतं सूतं तथा गन्धं कान्तञ्चाऽभ्रकमेव च ।
ताम्रं भस्मीकृतं सम्यङ्मर्दयित्वा समांशकम् ॥२२३९॥
पुनर्नवा गुडूच्यग्निः सुरसा त्र्यूषणं तथा ।
एतेषां स्वरसेनैव भावयेत्त्रिदिनं पृथक् ॥ २२४० ॥
दत्त्वा लघुपुटं सम्यक् स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
वातराक्षसनामाऽयं वातरोगे प्रयोजयेत् ॥ २२४१ ॥
तत्तद्रोगाऽनुपानेन द्विगुञ्जामात्रसेवनात् ।
ऊरुस्तम्भं वातरक्तं गात्रभङ्गं तथैव च ॥ २२४२ ॥
आमवातं धनुर्वातं वेदनावातमेव च ।
पक्षाघातं कम्पवातं सर्वसन्धिगतं तथा ॥ २२४३ ॥
सुप्तिवातञ्च शूलञ्च ह्युन्मादञ्च विनाशयेत् ।
तत्तद्रोगाऽनुपानेन वाताशीतिविनाशनः ॥ २२४४ ॥

यो र , वृ.यो त., नि.र , र च , रसायनप , रसायनस , र मु , र.म.मा , र.क यो., वै चि , र पा., वातरोगे।

टि०—रसपारिजाते "सतेन मारित तुल्य शातकुम्भ निरुत्थकम्।" इत्यर्द्धश्लोक विशेषेण दृश्यते। तथा च भावनाया त्र्यूषणस्थाने आटरूपकभावना दृश्यते।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धगन्धक, कान्त, अभ्रक और ताम्रभस्म येसब समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पुनर्नवा, गिलोय, चित्रक, तुलसी, त्रिकटु, इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर लघुपुटकी आचदे । स्वाङ्ग शीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे ऊरुस्तम्भ, वातरक्त, गात्रभङ्ग, आमवात, धनुर्वात, आघातवात, पक्षाघात, कम्प, सन्धिवात, सुप्तवात, शूल, उन्मादप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥

४६६ वातविध्वंसनरसः (प्रथमः)

रसं गन्धकं नागवङ्गौ च लोहं
तथा ताम्रजं व्योम निश्चन्द्रकञ्च ।
कणाटङ्कणे चोपणं नागरं वै
पृथग्भागमेकं विमर्द्यैकयामम् ॥ २२४५ ॥
ततो वत्सनाभं चतुःसार्धभागं
दृढं मर्दयेद्भावना व्योपजा त्रिः ।
वराचित्रकै र्मार्कवैः कुष्ठतोयै-
स्तथा कारहाटैः सनिर्गुण्डितोयैः ॥२२४६॥
मनोधात्रिकैरार्द्रकैर्निम्बुनीरै-
स्त्रिभिर्भावयेद्वातविध्वंसनोऽयम् ।
समीरे च शूले महाश्लेष्मरोगे
ग्रहण्यां तथा सन्निपाते च मौढ्ये ॥२२४७॥
अपस्मारमान्द्ये सशैत्ये सपित्तो-
दरप्लीहकुष्ठाऽर्शसि स्त्रीगदे च ।
निषेवेत गुञ्जाद्वयं चास्य तत्त-
द्गदघ्नाऽनुपानैरयं रोगजित्स्यात् ॥ २२४८ ॥

वृ यो.त , यो र , नि.र , र क.यो , वै क , टो , र चं.,र. कौ , र सि., व रा., वै चि., र.मु , रसायनप., रसायनस., वै.वि , र पा , वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, नाग, वङ्ग, लोह, ताम्र, अभ्रक इनकीभस्में, पीपल, भुनासुहागा, मरिच, सोंठ, येसब १–१ भाग, शुद्धवछनाग ४॥ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय त्रिकटु, त्रिफला, चित्रक, भंगरा, कुठ, अक्लकरा, निर्गुण्डी, अमलोनियां, अदरख, नींबू इनसबके रसोंसे ३–३ भावनाए देकर २–२ रत्तीकी गोलियाबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे अग्निवल देखकर १ से ३ गोलीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे, भयंकरवात, शूल, उत्कटश्लेष्मरोग, ग्रहणी, सन्निपात, मूढता, अपस्मार, मन्दाग्नि, शीतपित्त, उदररोग, प्लीहा, कुष्ठ, ववासीर, स्त्रीरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४६६ ॥

४६७ वातविध्वंसनरसः (द्वितीयः)

रसं गन्धं विषञ्चैव ताम्रं लोहं समाक्षिकम् ।
एतत्सर्वं समं योज्यं विषञ्च द्विगुणं भवेत् ॥ २२४९ ॥

जैपालं तालकश्चैव रसेन सह योजयेत् ।
त्र्यूषणञ्च समं योज्यं सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ २२५० ॥
निर्गुण्डीसूरणद्रावै र्भानोश्च पयसस्तथा ।
तर्कारीभृङ्गराजश्च ततो धत्तूरकस्य च ॥ २२५१ ॥
भावना खलु दातव्या सप्तसप्तकमादितः ।
द्विगुञ्जं भक्षयेत्प्रातर्मरिचैश्च समन्वितम् ॥ २२५२ ॥
जानुजङ्घाकटिस्थूलपादगुल्फौष्ठशीर्षकम् ।
मन्यास्तम्भं हनुस्तम्भं त्रिकस्तम्भञ्च शुष्ककम् २२५३
जिह्वास्तम्भं बाहुभवं त्रिकस्तम्भञ्च पादजम् ।
अधोभागे च ये वाताः सर्वाङ्गे विचरन्ति ये ॥
सर्वान्वाताञ्जयेदाशु दैत्यं नारायणो यथा ॥ २२५४ ॥

नि. र., वै. चि , रसायनसं , वातरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, ताम्र, लोह, सुवर्णमाक्षिक इनकी भस्में १–१ भाग, शुद्धवछनाग २ भा , शुद्ध जमालगोटा और हरिताल १–१ भाग, त्रिकटु सबकी बराबर लेकर सबकावारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय निर्गुण्डी, सूरण, आककादूध, तर्कारी [2], भंगरा, धतूरा इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाए देकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली प्रात कालमें ७ अथवा २१ कालीमिर्चोंके चूर्णकेसाथलेनेसे जानु, जघा, कमर, पैर, गुल्फ, ओष्ठ और शिरकेवातरोग, मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ, त्रिकस्तम्भ, शुष्कता, जिह्वास्तम्भ, अवबाहुक, त्रिकस्तम्भ, पादस्तम्भ, अधोभागगत किंवा सर्वाङ्गगतवायु इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४६७ ॥

४६८ वातविध्वंसनोरसः (लघुः) ३

पारदश्टङ्कणं गन्धो वत्सनाभोऽश्मभेदकः ।
वराटस्तालकश्चैव हेमत्र्यूषणजै र्द्रवैः ॥ २२५५ ॥
मर्दयेद्रक्तिकामानो वातविध्वंसनक्षमः ।
श्वासे कासे सन्निपाते शीताङ्गे शूलसङ्कटे ॥ २२५६ ॥

नि र., वै. वि , वै चि , र सु , रसायनसं , वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, सुहागा, गन्धक और वछनाग, पाषाणभेद, कौड़ी और हरितालभस्म, सब समभागलेकर धतूरे और त्रिकटुके यथासम्भवस्वरस अथवाक्वाथोंसे एकएकदिन मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्तवातरोग, श्वास, कास, सन्निपात, शीताङ्ग, समस्त शूल, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४६८ ॥

४६९ वातविध्वंसनरसः (चतुर्थः)

तालकं कर्षमेकञ्च पञ्चकर्षञ्च वह्लिजम् ।
मर्दयेन्मार्कवरसैश्चतुर्विंशतियामकम् ॥ २२५७ ॥
ततः शुष्कं विचूर्ण्याऽथ वसुयामं भिषग्वरः ।
गुञ्जैकं वा द्विगुञ्जं वा केवलं चार्द्रके रसे ॥ २२५८ ॥

प्राप्तं सिद्धमुखादेतद्देयं सर्वेषु पाप्मसु ।
अशीतिं वातजान्रोगान् कफजान्कुष्ठसुप्तिजान् २२५९
संहरेत्सर्वरोगांश्च अग्निमान्द्यादिकानथ ।
सिद्धभाषितमेतस्य गुणान्वक्तुं न शक्यते ॥ २२६० ॥
पण्ढोऽपि कामरूपी स्यान्मासत्रयसुसेवनात् ।
अनुपानञ्च पथ्यञ्च सघृतं मधुरं ददेत् ॥ २२६१ ॥

र. सि , वातरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धहरिताल १ कर्ष, मरिच ५ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर भंगरेकेरससे २४ पहर मर्दनकर सुखाकर ८ पहर शुष्कमर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे २ रत्तीतकमात्रा रोग और रोगीकाबलाबल देखकर अदरखके रसकेसाथ देनेसे समस्तपापरोग, ८० वातरोग, नानाप्रकारकेकफरोग, कुष्ठ, सुप्ति, मन्दाग्नि, पण्ढता इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४६९ ॥

४७० वातविध्वंसनरसः (लघु) ५

रसं गन्धं विषं कृष्णा ह्यद्धात्री शुद्धतालकम् ।
त्रिफला वारुणी व्योषं सुरसा शिग्रु पौष्करम् २२६२
समञ्च भावयेद्दन्तीभृङ्गजैः सप्तधा पृथक् ।
वल्लयुग्मं शृङ्गवेररसैश्च लवणान्वितम् ॥ २२६३ ॥
बाहुके सन्निपाते च तथा सर्वाङ्गजेऽनिले ।
अश्मयुक्ते तथा शूले शुण्ठीक्वाथसमन्वितः ॥
वातविध्वंसनो नाम धनुर्वातं नियच्छति ॥ २२६४ ॥

रसायनसं., वातरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और वछनाग, पीपल, शुद्धमैनसिल और हरिताल, त्रिफला, इन्द्रायणकीजड़, त्रिकटु, तुलसी, सहिजन, पोहकरमूल, येसब समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय दन्तीमूल और भंगरेके रसकी ७–७ भावनाएं देकर ६–६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली लवणयुक्त अदरखके रसकेसाथ देनेसे अवबाहुक, सन्निपात, सर्वाङ्गवात, पथरी, शूल इनसबको यह नष्टकरताहै और सोंठके क्वाथकेसाथ देनेसे धनुर्वातको नष्टकरताहै॥

४७१ वातविध्वंसनरसः (षष्ठः)

सूतमभ्रकसत्त्वञ्च कांस्यं शुद्धञ्च माक्षिकम् ।
गन्धकं तालकं सर्वं भागोत्तरविवर्धितम् ॥ २२६५ ॥
कज्जलीकृत्य तत्सर्वं वातारिस्नेहसंयुतम् ।
सप्ताहं मर्दयित्वा तु गोलकीकृत्य यत्नतः ॥ २२६६ ॥
निम्बुद्रवेण सम्पीड्य तिलकल्केन लेपयेत् ।
अर्धाङ्गुलदलेनैव परिशोष्य प्रयत्नतः ॥ २२६७ ॥
प्रपचेद्वालुकायन्त्रे द्वादशप्रहरं ततः ।
जठरस्य रुजः सर्वास्तथा च मलसङ्ग्रहम् ॥ २२६८ ॥
आध्मानकं तथाऽऽनाहं विसूचीं वह्निमान्द्यकम् ।
आमदोषमशेषञ्च गुल्मं छर्दिञ्च दुर्जयाम् ॥ २२६९ ॥
ग्रहणीं श्वासकासौ च क्रिमिरोगं विशेषतः ।
हन्यात्सर्वाङ्गशूलञ्च मन्यास्तम्भं तथैव च ॥२२७०॥

ज्वरे चैवाऽतिसारे च शूलरोगे त्रिदोषजे।
पथ्यं रोगानुसारेण देयमस्मिन् भिषग्वरैः॥
कथितो नन्दिनाथेन वातविध्वंसनो रसः॥ २२७१॥

र सं., व, र.सु, र.चं., र म मा., र क, र र. स., वातरोगाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा, अभ्रकसत्त्व, कांस्य इनकीभस्में, शुद्ध स्वर्णमाक्षिक, गन्धक और हरिताल येसब क्रमवृद्धभागसे लेकर नीलवर्णकज्जलीकर एरण्डीके तैलकेसाथ ७ दिनतक मर्दनकर गोलाबनाय नीबूकेरसमें पिसेहुए तिलोंके कल्कका आधाअङ्गुलमोटा लेपकरदे। सूखनेपर शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर वालुकायन्त्रमें रख १२ पहरकी अग्निदेकर पकावे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्तीकी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त उदररोग, मलसङ्ग्रह, आध्मान, आनाह, हैज़ा, मन्दाग्नि, आमदोष, गुल्म, छर्दि, दुर्जयग्रहणी, श्वास, कास, कृमिरोग, सर्वाङ्गशूल, मन्यास्तम्भ, ज्वर, अतिसार, त्रिदोषजशूल इनसबको यह नष्टकरताहै इसमें पथ्य रोगानुसार देना॥ ४७१॥

४७२ वातविस्फोटहररसः

गन्धाश्मव्योम हिङ्गुश्च पारसीकयवानिका।
अहिफेनं विषं चार्ककरहाटश्च जीरकम्॥ २२७२॥
गोक्षीरं विंशतिपलं सर्वमेकत्र कारयेत्।
पाच्यं मन्दाग्निना सम्यक् स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् २२७३
तन्मध्ये च क्षिपेद्रौप्यं खल्वे यामचतुष्टयम्।
जायते दधिवत्तत्तु मन्थयेत्तक्रवच्छनैः॥ २२७४॥
आहरेन्नवनीतश्च घृतं कुर्यात्प्रयत्नतः।
गुञ्जामात्रं घृतं तत्तु नागवल्लीदले क्षिपेत्॥ २२७५॥
शुद्धसूतश्च माषैकमङ्गुल्या मर्दयेत्ततः।
पारदो मूर्च्छितस्तेन जायते नाऽत्र संशयः॥२२७६॥
तत्पत्रवीटिकां कृत्वा खादयेद्बुद्धिमान्नरः।
वातविस्फोटकान्सर्वान्नासिकावक्त्रनाशनान् २२७७
अङ्गशूलश्च गुल्मश्च वह्निमान्द्यश्च वातजम्।
किं पुनर्बहुनोक्तेन सर्वव्याधिविनाशनम्॥ २२७८॥
एतद्रसायनवरं शम्भुना कथितं पुरा।
सर्वलोकहितार्थाय सोमदेवेन भाषितम्॥
एतस्मात्परतो नाऽस्ति विस्फोटे वक्त्रगे क्रिया२२७९

रसायनसं, विस्फोटकरोगे।

भाषा—शुद्धगन्धक, अभ्रकभस्म, हींग, खुरासानी अजवाइन, अफीम, शुद्धबच्छनाग, आककीजड़कीछाल, अकलकरा, जीरा येसब १–१ तोला लेकर बारीकचूर्णकर २० पल गायकेदूधमें डालकर मन्दाग्निसे पकावे। अधौटा होनेपर उतारकर ठंढाहोनेपर एक रुपया डालदे और ४ पहरतक खरल करे तो यह दहीकीतरह जमजायगा फिर इसका मन्थनकर घी निकालकर गरमकर छानके रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीके अन्दाज़ घी पके पानपर डालकर एकमाशा शुद्धपारा डाल अङ्गुलीसे घर्षणकरे। मूर्च्छित होजानेपर पानको खिलादे और केवल दूधभात खानेको दे। इसके सेवनसे समस्त वातविस्फोट, नासिका और गलेके घाव, अङ्गशूल, गुल्म, मन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ४७२॥

४७३ वातव्याधिगजाङ्कुशोरसः

रसेन द्विगुणं गन्धं रसैराकाशवल्लिजैः।
बृहतीफलजैश्चाऽथ भृङ्गराजैश्च सप्तधा॥ २२८०॥
भर्जयित्वाऽतसीतैलैः कुक्कुटाण्डरसे पुनः।
अर्कक्षीरेण सम्मर्द्य कूप्यां द्वादशयामकम्॥
वह्निं दत्त्वा रसोऽयं स्याद्वातव्याधिगजाङ्कुशः २२८१

र का, वातरोगाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारेसे दूना गन्धक लेकर-नीलवर्णकज्जलीकर कड़ाहीमें डालकर अमरवेलकारस डालकर मन्दाग्निसे धीरे २ सेके, रस सूखनेपर दूसरा डाले। ऐसे बराबरकारस ७ वार सुखावे। इसकेबाद वनभांटा, भंगरा, अलसीका तैल, कुक्कुटाण्डद्रव और आककादूध पूर्वक्रमसे ७–७ वार मर्दनकर सुखावे फिर इसकी कज्जलीकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें भरके मुंहबन्दकर १२ पहरकी वालुकाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक व्याधि और रोगीका बल देखकर देनेसे समस्त वातव्याधियोंको यह नष्टकरताहै॥ ४७३॥

४७४ वातशूलहररसः

पारदेन च विलिप्य दलानि
ताम्रकस्य बलिना द्विगुणेन।
क्षारकत्रितयमध्यगतानि
वस्त्रखण्डनिविडानि च पङ्कैः॥ २२८२॥
लेपितानि विधिना पुटितानि
मर्दितानि कनकाऽनलतोयैः।
आर्द्रकस्य च कटुत्रययुक्तं
षोडशांशकसुशुद्धविषेण॥ २२८३॥
पेषितश्च खलु वल्लमलं वा
वातशूलरुजि चास्य ददीत।
वातशूलहर एष रसश्च
सेवनान्नयति शूलविनाशम्॥ ३२८४॥

चि क्र., शूलाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारेकी दूने गन्धककेसाथ कज्जलीकर-नीबूवगैरहकेरससे मर्दनकर शुद्धतावेके कण्टकवेधीपत्रोंपर चढ़ावे। फिर सज्जी, सुहागा और यवक्षारकाद्रव बनाय कपड़ोंपर लपेट ताम्रपत्रोंपर चढाकर सम्पुट जैसा बनाय ३–४ तह कपड़ा चढ़ादे। ऊपरसे दो अङ्गुलमोटा मिट्टीका लेपदेकर सुखाकर लवण अथवा भस्मयन्त्रमें बन्दकर तीनदिनकी क्रमाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर धतूरा, चित्रक, अदरख इनकेरसोंसे १–१ दिनमर्दनकर बराबरका त्रिकटुकाचूर्ण और षोडशांश शुद्धबच्छनाग

मिलाकर १-२ दिन मर्दनकर छायाशुष्ककर रखछोडे । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे वातशूल, वातकफजरोग, श्वासकासादिकफरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४७४ ॥

४७५ वातहररसः

रसगन्धाऽभ्रशङ्खाऽयो समांशं मर्दयेत्त्र्यहम् ।
कन्याकनकचाङ्गेरीद्रवै गोलं विशोषयेत् ॥ २२८५ ॥
सप्तवारं मृदाऽऽवेष्ट्य पुटेदारण्यकोत्पलैः ।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य रसो वातहरोऽद्भुतः ॥ २२८६ ॥
द्विवल्लो मधुना योज्यः सर्ववातप्रशान्तये ।
पानार्थं पिप्पलक्षारतोयं पेयञ्च वातहृत् ॥
बलाऽजमोदामधुभिः क्रमो योज्यो रसोत्तमे ॥२२८७॥

र पा, वातरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक, शङ्ख और लोहभस्म समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुंवार, धतूरा, अमलोनिया इनकेस्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर ३-४ तह मोटेकपड़ेमें लपेट सूतसे वेष्टितकर ७ कपड़मिट्टीदेकर सुखाकर जङ्गलीकण्डोंकी लघुपुटमें आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ६-६ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथदेवे और पीपलकेक्षारकापानी पिलावे । अग्निप्रदीप्त होनेकेबाद बला, अजमोद और मधुकेसाथदे । इसतरहकरनेसे सबप्रकारके वातरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४७५ ॥

४७६ वातान्तकरसः

हेमाऽर्ककान्तलोहाऽभ्रं सूतभस्म च गन्धकम् ।
वैक्रान्तं विद्रुमं चैव तारं तालसमन्वितम् ॥ २२८८ ॥
सुमुहूर्ते खल्वमध्ये चित्रमूलस्य च द्रवैः ।
चतुर्यामञ्च सम्मर्द्य छायाशुष्कञ्च कारयेत् ॥ २२८९ ॥
कुक्कुटीपुटपाकेन स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ।
इदञ्च चूर्णितं श्लक्ष्णं तदर्धं सूतभस्मकम् ॥ २२९० ॥
सूततुल्यं मृतं ताम्रं सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।
चित्रकार्द्रकनीरेण निर्गुण्डीवारुणीद्रवैः ॥ २२९१ ॥
वासाजम्बीरनीरेण सप्त भाव्यं पृथक्पृथक् ।
गुञ्जामात्रप्रयोगेण कणामध्वाज्यसंयुतम् ॥ २२९२ ॥
सुप्तवातं वातशूलं वेदनावातमेव च ।
स्नायुकम्पं गात्रभङ्गं पक्षाघातं हनुग्रहम् ॥ २२९३ ॥
वायुं मूर्च्छाञ्च तिमिरं वातशीतञ्च नाशयेत् ।
वन्ध्या च लभते गर्भं नष्टवीर्ये प्रशस्यते ॥ २२९४ ॥
वातान्तकरसो नाम्ना सर्वरोगनिवारकः ।
लोकानामुपकारार्थमश्विदेवविनिर्मितः ॥ २२९५ ॥

व रा, वै चि, नष्टेन्द्रिये ।

भाषा—सुवर्ण, ताम्र, कान्त, लोह, अभ्रक, पारद, वैक्रान्त, प्रवाल, रजत, हरिताल इनकीभस्में और शुद्ध गन्धक सब समभाग लेकर अच्छेमुहूर्तमें खरलमें डालकर चित्रकमूलकेकाढ़ेसे ४ पहर मर्दनकर गोलाबनाय छायाशुष्ककर शरावसम्पुटमें बन्दकर कुक्कुटपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इससे आधी पारद और ताम्रभस्म मिलाकर चित्रक, अदरख, निर्गुण्डी, इन्द्रायण, अडूसा और जंभीरी इनप्रत्येकके-रसोंसे ७-७ भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पीपल और मधुकेसाथ देनेसे सुप्तवात, वातशूल, आघातवात, स्नायुकम्प, गात्रभङ्ग, पक्षाघात, हनुग्रह, वायु, मूर्च्छा, तिमिर, वातशीत, वन्ध्यत्व, नष्टशुक्रत्व इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४७६ ॥

४७७ वातारिपाकः (मधुस्नेही)

तालीसं त्रिकटुत्रिजातकवरा जातीफलं केशरं,
भृङ्गं केस्यमुशीरजीरकयुतं दीप्यद्वयं ग्रन्थिकम् ।
रास्नावह्निकचोरकं करिकणा द्राक्षा तुगा चन्दनं,
कङ्कोलाऽब्दसुगन्धियष्टिधनिकाः खर्जूरमांसी वरी ॥
वाराही हयगन्धगोक्षुरफलं मोचेक्षुरं मर्कटी-,
वीजं कुङ्कुमजातिपत्रकमदाः कर्षप्रमाणाः पृथक् ।
सम्यक्शोधितगन्धकं दशपलं सर्वस्य तुल्यौ मधु-,
स्नेहौ स्याद्दरदोत्थितं शुभरसं कर्षत्रयं योजयेत् २२९७
एकीकृत्य शुभं सिताऽऽज्यमधुना सेव्यं द्विकर्षोन्मितं,
कर्षं वा यदि वाऽर्द्धकर्षसमितं वह्नेर्बलाऽवाप्तये ।
वाताशीतिनिवर्हणं कफमरुत्पित्तापहं यक्ष्मजित्,
दुष्टं ग्रन्थिभगन्दरज्वरहरं कान्तिप्रदं पुष्टिदम् ॥२२९८॥
मेहान्विंशतिमौपदंशसकलान्दुष्टव्रणोन्मूलनं,
लूतास्फोटविसर्पकञ्च सकलान् कुष्ठादिरोगाञ्जयेत् ॥

रसायनसं., वातरोगे ।

भाषा—तालीसपत्र, त्रिकटु, त्रिजात, त्रिफला, जायफल, नागकेशर, भंगरा, कालाभंगरा, खस, जीरा, दोनों अजवाइन, पिपलामूल, रास्ना, चित्रकमूल अथवा खरजवाइन, चोरक ? गजपीपल, द्राक्ष, बसलोचन, सफेदचन्दन, शीतलचीनी, नागरमोथा, छड़ीला, मुलहठी, धनियां, खजूर, जटामासी, शतावर, वाराहीकन्द, असगन्ध, गोखरू, मोचरस, तालमखाना, केवाचकेबीज, केशर, जावित्री, कस्तूरी, गजमद और मार्जारमद १-१ कर्ष, शुद्धगन्धक १० पल, शुद्धपारा ३ कर्ष लेकर सबका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सबकी बराबर घी और मधु मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे आधे कर्षसे १ कर्षतक अग्निबल देखकर शक्कर, घी और मधुकेसाथ मिलाकर खानेसे ८० प्रकारके वायुरोग, कफवातजन्यरोग, पित्तप्रकोप, राजयक्ष्म, दुष्टगाठ, भगन्दर, ज्वर, कान्तिका अभाव, कृशता, २० प्रकारके प्रमेह, उपदंश, दुष्टव्रण, मकड़ी, फोड़े, विसर्प और कुष्ठ इनसबको यह दूरकरताहै ॥ ४७७ ॥

४७८ वातामपाकः

वाताममञ्जः प्रस्थश्च दुग्धे पाच्यश्चतुर्गुणे ।
पुनः प्रस्थघृते पाच्यः शर्कराढकयावके ॥ २२९९ ॥

क्षेप्यानीमानि मात्राणि जाती जातीफलन्तथा।
त्र्यूषणञ्च लवङ्गञ्च चातुर्जातञ्च त्रैफलम् ॥ २३०० ॥
क्षीरकन्दं वत्सनाभमहिफेनं घनं हिमम्।
मदनीं कुङ्कुमं मांसीं कक्कोलमाकल्लकम् ॥ २३०१ ॥
अब्धिशोषं गोक्षुरञ्च शताह्वाकपिकच्छुकम्।
अश्वगन्धा च मुशली मृतपारदमभ्रकम् ॥ २३०२ ॥
वङ्गं लोहञ्च दरदं कर्षकर्षं प्रदापयेत्।
पुनर्भृङ्गाघृतं क्षेप्यं कुडवं तद्विचक्षणैः ॥ २३०३ ॥
खादेत्कर्षप्रमाणञ्च घनं दुग्धं पिबेदनु।
धातुपुष्टिकरं बल्यं वर्णाऽऽयुःकान्तिवर्धनम् ॥२३०४॥
वृद्धो युवायते कामी स्त्रीणाञ्चाऽतीव वल्लभः।
वातरोगानशेषांस्तु नाशयेन्नाऽत्र संशयः ॥ २३०५ ॥
षण्ढोऽपि रमते नारीं गुटिकायाः प्रभावतः।
किंपुनश्चाऽन्यरोगेषु वारणेष्वत्र संशयः ॥ २३०६ ॥
चि. र. भ, रसायने वाजीकरणे च।

भाषा—छिलकेरहित बादामकीगिरी १ प्रस्थलेकर चौगुने दूधमें पकावे। मावाहोनेपर सेरभर घी और ४ सेर शक्कर डालकर चाशनीकरे। पाक तैयारहोनेपर जावित्री, जायफल, त्रिकटु, लवङ्ग, चातुर्जात, त्रिफला, क्षीरकाकोली और विदारी, शुद्ध वच्छनाग, अफीम और कपूर, सफेदचन्दन, कस्तूरी, केसर, जटामासी, शीतलचीनी, अकलकरा, समुद्रशोष, गोखरू, सौंफ, केवाचकेबीज, असगन्ध, मुशली, पारद, अभ्रक, वङ्ग और लोहभस्म, शुद्धशिंगरफ ये सब १-१ कर्ष, धीमें सिकीहुई भाग ४ पल लेकर सबकाबारीकचूर्णकर पाकमें मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे १-१ कर्ष खाकर ऊपरसे अवौटा दूधपीनेसे धातुओंकी पुष्टिहोकर बल, वर्ण, आयु, कान्ति येसब बढतेहैं। बुड्ढा आदमीभी स्त्रियोंमें जवानकीतरह रमणकरताहै। समस्तवातरोग, षण्ढत्व और मन्दाग्नि इत्यादि समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥

४७९ वातारिरसः (प्रथमः)

उपायैः पूर्वमाख्यातै र्यन्त्रै र्डमरुकादिभिः।
येनकेनाऽप्युपायेन भस्मीकुर्याच्च पारदम् ॥ २३०७ ॥
भस्मनो दश गद्याणा दशैव नवसारकात्।
स्फटिका पञ्च गद्याणा वत्सनाभस्य द्वौ मतौ॥२३०८॥
मरिचस्य च गद्याणौ मर्दयेत्खल्वके दृढम्।
विधिना जायतेऽनेन रसो वातारिसञ्ज्ञकः ॥२३०९॥
रक्तिकाऽस्य प्रदातव्या श्लेष्मवातादिरोगिषु।
अष्टादशप्रमेहेषु प्लीहगुल्मोदरेषु च ॥ २३१० ॥
आमवाते च मन्दाग्नौ गुल्मयो र्वातरक्तयोः।
बाह्याऽभ्यन्तरमूलेषु समस्तेषु ज्वरेषु च ॥ २३११ ॥
शूलेऽप्यजीर्णे शोथे च देयो वातारिसञ्ज्ञकः।
तैलक्षाराऽम्लवर्ज्यञ्च भोज्यं मधुरमिष्यते ॥ २३१२ ॥
दिनाष्टकं घृतं स्तोकं भोजने ग्राह्यमुत्तमम्।
रोगाः सर्वे विलीयन्ते मासैकेन न संशयः ॥ २३१३ ॥
रसचि, वातरोगाऽधिकारे।

भाषा—पारदभस्म और शुद्धनवसादर ५-५ तोले, भुनी फिटकरी २॥ तोले, शुद्ध वच्छनाग और मरिच १-१ तोला लेकर बारीकचूर्णकर एकदिन मर्दनकर रखछोडे। इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे वात और कफरोग, १८ प्रकारकेप्रमेह, प्लीहा, गुल्म, उदर, आमवात, मन्दाग्नि, वातरक्त, सबप्रकारकेज्वर, शूल, अजीर्ण और शोथ इनसबको यह नष्टकरताहै। इसकेप्रयोगमें तेल, क्षार और अम्लवर्जितहै। मधुरभोजन कराना और ८ दिनतक घी थोडा देना फिर धीरे २ बढाना। इसके एकमहीना सेवनसे समस्त रोग नष्टहोतेहैं ॥ ४७९ ॥

४८० वातारिरसः (द्वितीयः)

शिलया निहतं नागं ताप्यभस्माऽर्द्धभागिकम्।
पादं पादं क्षिपेद्भस्म शुल्वस्य विमलस्य च ॥२३१४॥
कालाऽभ्रसत्त्वयोश्चाऽपि स्फटिकस्य पृथक्पृथक्।
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य पुटेत्त्रिफलवारिणा ॥ २३१५ ॥
त्रिंशद्वनोपलैश्चैव त्रिंशद्वारान्विचूर्णयेत्।
त्र्योषवेल्लकचूर्णञ्च समांशैः सहमेलयेत् ॥ २३१६ ॥
मध्वाज्यसहितं हन्ति प्रलीढं वल्लमात्रया।
अशीतिं वातजान्रोगान् धनुर्वातं विशेषतः ॥२३१७॥
कफरोगानशेषांश्च मूत्ररोगांश्च सर्वशः।
श्वासं कासं क्षयं पाण्डुं श्वयथुं सूतिकाज्वरम् ॥२३१८॥
ग्रहणीमामदोषञ्च वह्निमान्द्यं सुदुर्जयम्।
सर्वानुदकदोषांश्च नाशयेदनुपानतः ॥ २३१९ ॥
र. क., वातरोगाऽधिकारे।

भाषा—मैनसिलकेयोगसेकीहुईनागभस्म ४ भाग, स्वर्णमाक्षिकभस्म २ भा., ताम्र, रजतमाक्षिक, काले तथा सफेद अभ्रककासत्त्व और स्फटिकभस्म १-१ भागलेकर त्रिफलाकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३० जङ्गलीकण्डोंकी आंचदे। ऐसे ३० आंचें देनेकेबाद त्रिकटु, विडङ्ग समभागकाचूर्ण पूर्वरसकी बराबर मिलाय रखछोडे। इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा मधु और घीकेसाथ लेनेसे ८० प्रकारके वातरोग, खासकर धनुर्वात, कफ और मूत्रकेतमामरोग, श्वास, कास, क्षय, पाण्डु, शोथ, सूतिकाज्वर, ग्रहणी, आमदोष, दुर्जय मन्दाग्नि, समस्त जलदोष इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४८० ॥

४८१ वातारिरसः (तृतीयः)

गन्धकाद्द्विगुणं तालं तालकाद्द्विगुणा शिला।
शिलया द्विगुणं ताप्यं तस्माच्च द्विगुणो रसः ॥२३२०
कल्पयेत्सर्वमेकत्र यावत्स्याद्दिनसप्तकम्।
सर्वस्याऽष्टमभागेन दत्त्वा रक्तामृतं शुभम् ॥ २३२१ ॥
विषतिन्दुकजद्रावैः पिष्ट्वा गोलकमाचरेत्।
विशोष्य वालुकायन्त्रे तद्धर्मे दिवसद्वयम् ॥ २३२२ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य तुल्यहिङ्गुलवष्टकान्वितम्।
भावयेद्बीजपूरस्य सप्तवारं रसेन च ॥ २३२३ ॥

सप्तवारं तथा भाव्यं चित्रमूलस्य वारिणा ।
इति सिद्धो रसेन्द्रोऽयं सर्ववातारिसञ्ज्ञकः ॥२३२४॥
घृतेन सहितो लीढो वल्लद्वयमितो नृभिः ।
निहन्ति शीतवातार्तिं गुल्मानष्टविधानपि ॥ २३२५ ॥
चतुर्विधञ्च मन्दाग्निं स्थूलानुदरजान् क्रिमीन् ।
आध्मानञ्च तथा हिक्कां मूढवातञ्च विड्ग्रहम् ॥२३२६॥

र. क. यो. रसायनस., र सु , र च , वातरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक १ भाग, हरिताल, २ भा., शुद्धमैनसिल ४ भा, शुद्धस्वर्णमाक्षिक ८ भा., शुद्धपारा १६ भाग लेकर सबको ७ दिनतक मर्दनकर सबसे आठवाहिस्सा लालवछनाग देकर कुचिलेके रससे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर २–३ कपड़मिटी देकर सूखनेपर दोदिनतक वालुकायन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर इसकी वरावर हिंगवष्टकमिलाकर विजोरा और चित्रकमूलकेरसोंकी ७–७ भावनाएं देकर ६–६ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे शीतवात, ८ प्रकारके गुल्म, ४ प्रकार की मन्दाग्नि, पेटके मोटे क्रिमि, आध्मान, हिक्का, मूढवात, मलग्रहर इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ४८१ ॥

४८२ वातोन्मूलनरसः

शुद्धं सूतं विषं गन्धं धूर्तबीजं त्रिभिः समम ।
पञ्चकोलकषायेण मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥ २३२७ ॥
मूषयोर्भूधरे पाच्यं स्वाङ्गशीतं विचूर्णयेत् ।
मत्स्यपित्ते भावयेच्च मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥ २३२८ ॥
पञ्चकोलकषायेण गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ।
स्त्यानवातं हरेच्छीघ्रं सर्ववातविकारनुत् ॥ २३२९ ॥

व रा , वै. चि., स्त्यानवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग और गन्धक समभाग, शुद्ध धतूरेकेवीज सवकी वरावर लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय पञ्चकोलकेक्वायसे मर्दनकर मूषामेंरख मूधरयन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मछलीके पित्तसे दोदिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पञ्चकोलकेकाढेसे देनेसे स्त्यानवातादि समस्तवातविकारोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४८२ ॥

४८३ वानरीपाकः

प्रस्थं निस्तुषमर्कटीभवरजो दौग्धेऽर्मणे पाचयेत्,
यावज्जीर्यति मन्दवह्निविधिना सिताऽऽढकं निक्षिपेत् ।
पश्चात्प्रस्थघृते विपाच्य सुधिया शीते त्विमानिक्षिपेत्,
कर्षांशाऽगरुपूगजीरणचतुर्जातं हिमं हंसकम् ॥२३३०॥
जातीपत्रफले त्रुटित्रिकटुकं चन्द्राब्धिशोषं वणिक्,
कङ्कोलं करहाटकैतवविषं गोक्षुरतालीसकम् ।
पादांशं खुरशाणिकञ्च गगनं वङ्गं भुजङ्गं जया,
पालिक्यं त्रिपलं मधुस्थितशुभं भक्षेद्रुतं बृंहणम् ॥

र. को , रसायने ।

भाषा—एकप्रस्थ केवाचकीमज्जाको एकद्रोणदूधमें मन्दआंचपर चलाताहुआ पकावे । मावाहोनेपर ४ प्रस्थ शक्कर और एकप्रस्थ घी डालकर चाशनीकरे । पाकतैयार होनेपर नीचे उतारकर अगर, सुपारी, जीरा, चातुर्जात, सफेदचन्दन, शुद्धशिंगरफ, जावित्री, जायफल, इलायची, त्रिकटु, शुद्धकपूर, समुद्रशोष, गेंहुला, शीतलचीनी, अकलकरा, शुद्धधतूरेकेवीज और वछनाग, गोखरू, तालीसपत्र येसव १–१ कर्ष; खुरासानी अजवाइन, अभ्रक, वङ्ग और नागभस्म ४–४ माशे, वोईहुई भाग १ पल, मधु ३ पल मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ४ माशेसे १ कर्षतक खाकर दूधपीनेसे समस्तशुक्रदोष नष्टहोकर पूर्णपुरुषत्वको प्राप्तहोताहै ॥ ४८३ ॥

४८४ वान्तिहृद्रसः

अयः शङ्खं वली सूतं खल्वे तुल्यं विमर्दितम् ।
कन्याकनकचाङ्गेरीरसै र्गोलं विधीयताम् ॥ २३३२ ॥
सप्तमृत्कर्पटैर्लिप्त्वा पुटितो वान्तिहृद्रसः ।
द्विवल्लः क्रिमिरोगेऽपि साजमोदः सवेल्लकः ॥२३३३॥
वान्तिहारेण मुनिना प्रोक्तोऽयं मधुना युतः ।
पिप्पलक्षारपानीयं पाययेद्वान्तिहृद्रसः ॥ २३३४ ॥

र ल., यो. र., नि. र., र सु , रसायनसं., र चं., र म मा., ना वि., र का , वान्तिरोगे । र. का. वान्तिहर इति नाम ।

भाषा—लोह और शङ्खभस्म, शुद्ध गन्धक और पारा समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुंवार, धतूरा और अम्लोनियाकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिटी देकर सूखनेपर लघुपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ६–६ रत्तीकी मात्रा अजमोद और विडङ्गकेसाथ मिलाकर मधुकेसाथ चटानेसे तमामप्रकारकीवमन शान्तहोतीहै । प्यास लगनेपर पीपलकी राखका पानी पिलावे ॥ ४८४ ॥

४८५ वाराहीलोहम्

वाराहिकाभृङ्गरसं लोहचूर्णं शतावरी ।
साज्यं कर्षं पञ्चशती ॥ २३३५ ॥

आ पु., रसायने ।

भाषा—वाराहीकन्द, भंगरा, पारद और लोहभस्म, शतावर येसव समभागलेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ कर्ष घीकेसाथ खावे और पाचनहोनेपर दूधभातका सेवनकरे । ऐसे एकवर्षके प्रयोगसे ५०० वर्षकी आयुको भोगसक्ताहै ४८५

४८६ वारिनिगडगुटिका

ऐशानी विल्वपेशी च जातीपत्रफले तथा ।
विषा मोचरसो मुस्ता शुण्ठी सामुद्रशोषकम् २३३६
कनकस्य च बीजानि करवीरजटा तथा ।
अहिफेनं गन्धरसौ धूर्तद्रावेण मर्दयेत् ॥ २३३७ ॥

द्विगुञ्जा गुटिका दत्त्वा गुह्यस्तुनिगडाह्वया ।
जयेत्सर्वानतीसारान्नाभिपार्श्वे विलेपतः ॥ २३३८ ॥
र का , अतीसाराऽधिकारे ।

भाषा—ईशानकोणमें रहनेवाले बेलकीगिरी, जाविश्री, जायफल, अतीस, मोचरस, नागरमोथा, सोंठ, समुद्रशोष, शुद्धधतूरेकेबीज, सफेदकनेरकीजड़कीछाल, शुद्ध अफीम, गन्धक और पारा समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय धतूरेकेरससे एकदिनमर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली दहीकेसाथ खिलानेसे और नाभिके बगलमें लेपकरनेसे यह सबप्रकारके अतीसारोंको नष्टकरतीहै ॥ ४८६ ॥

४८७ वारिशोषणरसः

चतुर्विंशतिभागाः स्युर्गन्धाद्वङ्गं तदर्द्धकम् ।
वङ्गभागाद्धवेदर्द्धः पारदः कृष्णमभ्रकम ॥ २३३९ ॥
चतुर्दशविभागं स्यान्मृतं तद्दीयते पुनः ।
मृतलौहमष्टभागं मृतताम्रं नवाऽत्र तत् ॥ २३४० ॥
मृतहेमद्वयं तत्र मृतरौप्यञ्च सप्तकम् ।
अतिशुद्धमतिस्थूलं मृतं हीरं त्रयोदश ॥ २३४१ ॥
भागा ग्राह्या माक्षिकस्य विशुद्धस्याऽत्र षोडश ।
अष्टादशमितं ग्राह्यं नव काशीशकं पुनः ॥ २३४२ ॥
तुत्थकञ्च षडेवाऽत्र नवीनं ग्राह्यमेव च ।
तालकञ्च चतुर्भागं शिलाभागत्रयं मतम ॥ २३४३ ॥
शैलेयं पञ्चभागं स्यात्सर्वमेकत्र नूतनम् ।
मृतमौक्तिकभागैकं सौभाग्यं भागयुग्मकम् ॥२३४४॥
कुट्टयित्वा विचूर्ण्याथ जम्बीरस्य रसेन वै ।
भावयेत्सप्तधा गाढं गुटिका तस्य कारयेत् ॥२३४५॥
पानकद्वितये कृत्वा मुद्रयेत्पानकद्वयम ।
घटमध्ये निवेश्याऽथ दत्त्वा पूर्वञ्च वालुकाम् ॥२३४६
अर्द्धञ्च तां पुनर्दत्त्वा वालुकाम्मुद्रयेन्मुखम् ।
अहोरात्रं दहेदग्नौ स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ २३४७ ॥
वकुलस्य च बीजेन कण्टकारीद्वयेन च ।
गुडूचीत्रिफलावारा भावयेत्सप्तसप्तकम् ॥ २३४८ ॥
वृद्धदारुरसेनाऽपि तथा देयास्तु भावनाः ।
गिरिकर्ण्या रसेनाऽपि मत्स्यरोहितपित्ततः ॥२३४९॥
एवं सिद्धो भवेत्सम्यग्रसोऽसौ वारिशोषणः ।
देवान्गुरून्समभ्यर्च्य यतिनो ब्राह्मणांस्तथा ॥२३५०॥
रक्तिकाद्वितयं देयं सन्निपाते समुच्छ्रिते ।
मरिचेन समं देयं तेन जागर्ति मानवः ॥ २३५१ ॥
श्लैष्मिके च गदे देयं ग्रहण्यामग्निमान्द्यके ।
प्लीहि पाण्डौ प्रयोक्तव्यं त्रिकटुत्रिफलाम्भसा २३५२
शूलरोगे प्रयोक्तव्यमुदावर्ते विशेषतः ।
कुष्ठे सुदुष्टे देयोऽयं काकोदुम्बरिकाम्भसा ॥ २३५३ ॥
अतिवह्निकरः श्रीदो बलवर्णाग्निवर्धनः ।
धन्वन्तरिकृतः सद्यो रसः परमदुर्लभः ॥
सर्वरोगे प्रयोक्तव्यो निःसन्देहं भिषग्वरैः ॥ २३५४ ॥
र सं., र. चि., आ वि , र. मु., रसचि., र का., भै. र , यकृत्प्लीहाधिकारे ।

भाषा—शुद्धगन्धक २४ भाग, वङ्गभस्म १२ भा., पारदभस्म ६ भा., अभ्रकभस्म १४ भा , लोहभस्म ८ भा., ताम्रभस्म ९ भा , सुवर्णभस्म २ भा , रौप्यभस्म ७ भा , अत्यन्त शुद्धबड़ेहीरेकीभस्म १३ भा , शुद्धमाक्षिक १६ भा , नयाकसीस १८ भा., तुत्थ ६ भा , शुद्धहरिताल ४ भा , मैनसिल ३ भा , शिलाजतु ५ भा , मोतीभस्म १ भा., भुनासुहागा २ भाग लेकर सबकावारीकचूर्णकर ७ दिन जंभीरीकेरससे निरन्तर मर्दनकर छोटीछोटीगोलियें बनाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर सुखानेपर वालुकायन्त्रमें एक दिनरातकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मौलश्रीकेबीज, दोनोंभटकटैया, गिलोय, त्रिफला इनकेस्वरसोंसे ७–७ भावनाएं देकर विधारा और कोयलकेस्वरस तथा रोहूमछलीकेपित्तसे १–१ भावनादेकर २–२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली गुरु, यति और ब्राह्मणोंका सत्कारकर उत्कटसन्निपातमें मरिचकेसाथदेनेसे मनुष्य तन्द्रासे उठबैठताहै । इसीतरह कफरोग, ग्रहणी, मन्दाग्नि, प्लीहा, पाण्डु इनमें त्रिकटुकेकाढेसे देना । शूल, उदावर्त, दुष्टकुष्ठ इनमें कठूमरकेरससेदेना । यह अत्यन्त अग्नि, बल और वर्णको करताहै । सबतरहके असाध्यरोगोंमें इसकानि सन्देहप्रयोगकरना ॥४८७॥

४८८ वारिसागररसः (प्रथमः)

अतः परं प्रवक्ष्यामि रसेश्वरमनुत्तमम ।
रोगापहां क्रियां वारिसागरं नाम नामतः ॥ २३५५॥
कृष्णाऽभ्रकं समादाय वज्राख्यं बलवत्तरम् ।
पक्वपत्रं ततः कुर्याद्रसे कार्पासपत्रजे ॥ २३५६ ॥
स्थापयेत्त्रिदिनं यावत्ततो घर्मे निधापयेत् ।
दिनमेकं रसैस्तैश्च व्रीहियुक्तैश्च वस्त्रके ॥ २३५७ ॥
निःक्षिप्य सुदृढे क्षिप्त्वा पोट्टलीं मर्दयेत्करैः ।
तत्सर्वं चूर्णितं कृत्वा प्रयाति न यथा वहिः ॥२३५८॥
चूर्णितं निक्षिपेदभ्रं रसे कार्पासपत्रजे ।
मर्दयित्वा ततश्चूर्णं तद्रसैः सम्पुटे क्षिपेत् ॥ २३५९ ॥
आरण्योत्पलकैः पश्चात्पुटान्येवञ्च विंशतिः ।
दद्याद्वराहसञ्ज्ञानि मर्दनञ्च पुनः पुटम् ॥ २३६० ॥
ऊनविंशे पुटे जाते व्योम खल्वे विनिःक्षिपेत् ।
मर्दयेत्कटुतैलेन ततः सम्पुटके क्षिपेत् ॥ २३६१ ॥
निरुद्ध्य सम्पुटं सम्यङ् मृदा कर्पटयुक्तया ।
पुटयेदुपविंशानि वाराणि च यथाक्रमम् ॥ २३६२ ॥
ततो व्योम समादाय खल्वे सम्मर्द्य यत्नतः ।
कटुतैलेन तद् व्योम दृढे भाण्डे विनिःक्षिपेत् २३६३

उपरिष्टात्पुनर्दद्यात्कटुतैलं घनं यथा ।
अङ्गुलद्वयमानेन व्योमोपरि तथा भवेत् ॥ २३६४ ॥
भाण्डवक्त्रं सन्निरुध्य पिधान्या कर्पटैर्मृदा ।
शुष्कमारोपयेच्चुल्ल्यां काष्ठाग्निं ज्वालयेदधः ॥२३६५॥
तावत्प्रज्वालयेदग्निं यावन्निस्तैलतां व्रजेत् ।
निस्तैलं गगनं कृत्वा कज्जलाभं विचन्द्रिकम् ॥२३६६॥
स्थापयेद्गन्धकं पश्चान्नीरे कार्पासपत्रजे ।
ढालयेदेकवारं तु द्रावयित्वा ततो जले ॥ २३६७ ॥
सिन्धुवारभवे सप्त वारान् संढालयेद्बलिम् ।
पूर्वमार्गेण सूतेन्द्रं पातितं स्विन्नजारितम् ॥ २३६८ ॥
कलांशहेमजीर्णाऽर्कगुणगन्धकभोजिनम् ।
रसं गृहीतभागैकं पक्षभागञ्च गन्धकम् ॥ २३६९ ॥
युगभागञ्च गगनं खल्वे सर्वं विनिःक्षिपेत् ।
मर्दयेत्सिन्धुवारोत्थैः दिनमेकं रसेश्वरम् ॥ २३७० ॥
काकमाचीरसैस्तद्वत्कृष्णधत्तूरवारिभिः ।
जयन्त्यद्भिस्तिलदलानीरैः दण्डोत्पलारसैः ॥ २३७१ ॥
जातीरसैः कदम्बोत्थैः भृङ्गराजरसैस्ततः ।
अनलाद्भिः महाराष्ट्रीनीरैः पिप्पलिमूलजैः ॥ २३७२ ॥
क्रमेण मर्दयित्वैतैस्तत्कल्कं गोलकं नयेत् ।
गोस्तनाकारमूषायां क्षिप्त्वा सम्यङ्निरोधयेत् २३७३
मूषां विनिःक्षिपेद्यन्त्रे वालुकाख्ये ततः परम् ।
वालुकायन्त्रवदनं पिदध्याच्च शरावतः ॥ २३७४ ॥
सन्निरुध्य समारोप्य चुल्ल्यां संज्वालयेत्ततः ।
याममात्रं मध्यवह्निं स्वाङ्गशीतलतां गतम् ॥ २३७५ ॥
ज्ञात्वा यन्त्रं विनिर्भिद्य सूतमूषां समुद्धरेत् ।
मूषावक्त्रं विनिर्भिद्य गृह्णीयाच्च रसेश्वरम् ॥२३७६॥
पूजयित्वा रसेन्द्रं तं विन्यसेच्च करण्डके ।
सिद्धं रसेश्वरं पश्चाद्रोगिणे सम्प्रयोजयेत् ॥ २३७७ ॥
सन्निपाते महाघोरे चतुर्गुञ्जप्रमाणतः ।
अनलोद्भवचूर्णेन दद्यात्तस्याऽनुपानकम् ॥ २३७८ ॥
पट्वनि पञ्च जीरे च त्रयः क्षाराश्च सार्द्रकाः ।
सव्योषाःसोग्रगन्धाश्च यवानीसहिताःसमाः २३७९
प्रत्येकमेकतश्चूर्णं कृत्वा वस्त्रेण गालितम् ।
चतुर्माषप्रमाणेन अनुपाने नियोजयेत् ॥ २३८० ॥
सन्निपातं निहन्त्येष रसेन्द्रस्तत्क्षणाद्ध्रुवम् ।
अग्निमान्द्ये प्रयुञ्जीत ज्वरभेदेऽतिसारके ॥ २३८१ ॥
रोगराजे प्रतिश्याये श्लेष्मव्याधौ च पीनसे ।
सङ्ग्रहण्यां प्रयुञ्जीत निःशङ्कोऽथ रसेश्वरम् ॥ २३८२ ॥
सर्वान्रोगान्निहन्त्येव रसेन्द्रो नाऽत्र संशयः ।
गोक्षीरं गोघृतं गव्यं दधि तक्रं विवर्जयेत् ॥ २३८३ ॥
माहिषन्तु प्रयुञ्जीत पयस्तक्रं घृतं दधि ।
रसवीर्यविवृद्धिस्तु माहिषेणैव नाऽन्यथा ॥ २३८४ ॥
पश्चाच्च शालयः प्रोक्ता व्रीहयो मुद्गसंयुताः ।
गोधूममाषसहिताः सेवनात्सर्वदा हिताः ॥
इत्थमुक्तक्रियोवारिसागरोऽयं रसेश्वरः ॥ २३८५ ॥

र. क. यो., र. चि., र. र., रसायनसं, र. को., ध, यो म, र. सु, र. का, सन्निपाते ।

टि०—र. चि, र र, रसायनसं., र को, ध, यो म, र सु, र.का एपुग्रन्थेपु रत्नाकरौपधयोगे च द्वितीयस्थाने अभ्रादीना विशेपविधानमदत्त्वा भागविशेषञ्चाऽप्रकल्प्य समभागेन द्रव्याणिनियुज्य रस सम्पादित यथा—

शुद्ध सूत द्विधा गन्ध सूततुल्य मृताऽभ्रकम् ।
निर्गुण्डी काकमाची च धत्तूरार्द्रकचित्रकम् ॥
गिरिकर्णी जयन्ती च तिलपर्णी च भृङ्गराट् ।
दन्तीशिग्रुकदम्बस्य कुसुम नागकेशरम् ॥
जयाकृष्णामहाराष्ट्रीद्रवैरासा यथाक्रमात् ।
याम पृथग्विशोष्याऽथ कटुतैलेन भावयेत् ॥
शरावसम्पुटे रुद्ध्वा वालुकायन्त्रग पचेत् ।
यामैक तत्समुद्धृत्य चूर्णित कृष्णलत्रयम् ॥
त्र्यूपण पञ्चलवण द्विक्षार जीरकद्वयम् ।
वचाऽऽर्द्राऽग्नियमान्यश्च समभागानि कारयेत् ॥
अनुपाने चतुर्माप सन्निपातहर परम् ।
माहिप दधि पथ्य स्याद्रसवीर्यविवर्धनम् ॥
साध्याऽसाध्येप्रयोक्तव्यो रसोऽयवारिसागर । इति ॥

भाषा—काले वज्राभ्रकको गरमकर कपासकेपत्तोंकेरसमें बुझावे । अभ्रकका चूरा होजानेपर धूपमें ३ दिनतक रखछोड़े । फिर छिलकेसहित धान डालकर वस्त्रमें पोटली बनाय एकदिन रखछोड़े । फिर धीरे २ इसपोटलीको रसमें मसले । इससे अभ्रकका बारीकचूरा होकर वस्त्रसे बाहर निकल आवेगा पत्थर और कोयले वस्त्रमें रहजायगे । नितरजानेपर पानीको निकालदे और अभ्रकको सुखादे फिर कपासके रससे २–३ दिन मर्दनकर टिकड़ीबनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर जङ्गलीकण्डोंमें वराहपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दनकर पुटदे । ऐसे १९ पुटहोनेपर खरलमें डाल कड़वेतैलसे मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर वराहपुटकी १९ आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर कटुतैलमें मर्दनकर बड़े वर्तनमें डालकर दो अङ्गुल ऊपरतक तैलभरके शरावसम्पुटकर ३–४ कपड़मिट्टी समस्तपर देकर सूखनेपर चूल्हेपर रख लकडीकी आच जलावे । तमाम हण्डी अग्निसात् होजानेपर अग्नि बन्दकरे । भाण्डस्थ वस्तुके पाककी यही पहिचानहै कि बिना अन्दरमें पाकहुए हण्डी लाल नहीं होती । स्वाङ्गशीतल होनेपर तैलरहित निश्चन्द्र कज्जलकेसदृश भस्म निकलेगी । इसके बाद गन्धकको गलाकर कपासके पत्तोंके रसमें बुझावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निर्गुण्डीकेपत्तोंके रसमें ७ वार ढाले । फिर बुभुक्षान्तसंस्कार किये हुए पारेमें १६ वा हिस्सा सुवर्णजारणकर बारहगुना गन्धक जारणकरके रखले । इसपारेमेंसे एकभाग, शुद्धकियाहुआ गन्धक १५ भाग, पूर्वोक्त अभ्रक ४ भाग लेकर निर्गुण्डी, मकोय, कालाधतूरा, जेंत, हुरहुर, ब्रह्मदण्डी, चमेली, कदम्ब, भंगरा, चित्रक, मराठी, पिपलामूल, इनप्रत्येकके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय गोस्तनाकारमूषामें रख मुंह-

वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी लगाकर सुखनेपर वालुकायन्त्रमें रख यन्त्रका मुंहवन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर चूल्हेपर एकपहरकी मध्यम अग्नि दे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रसेश्वरकी पूजाकर शीशीमें रखछोडे । इसमेंसे ४–४ रत्तीकी मात्रा चित्रकमूलके चूर्णकेसाथ देकर, पाचोंनमक, जीरा, तीनोंक्षार, अदरख, त्रिकटु, वच, अजवाइन इनसवको अलग २ पीस कपड़छानकर एकजगहमिलाय ४ माशेलेकर अनुपानमें देनेसे महाघोर सन्निपात एकक्षणमें नष्टहोताहै । इसीतरह मन्दाग्नि, रामस्तज्वर, अतिसार, रोगराज, प्रतिश्याय, श्लेष्मरोग, पीनस, सङ्ग्रहणी इनसवको यह नष्टकरताहै । गायकादूध, घी, दही और छाछका निषेधकरे और भैंसकी सव चीजेंदे । भैंसके तक्रादिकमे रसके वीर्यकी वृद्धिहोतीहै । सफेद और लालचावल, मूग, गेंहूं, उड़द येसव पथ्यहोतेहै ॥ ४८८ ॥

४८९ वारिसागररसः (द्वितीयः)

विषा वलिः सिता तालं टङ्कणं व्योषकं समम् ।
जम्बीररससंयुक्तं मर्दयेत्त्रिदिनं भिषक् ॥ २३८६ ॥
माषमात्रां वटी कुर्याच्छायाशुष्कां तु कारयेत ।
मुस्ताविल्वगुडैर्युक्तं वातज्वरनिवारणम् ॥ २३८७ ॥
जम्वीरशर्करायुक्तं पैत्यज्वरविनाशनम् ।
गुडेन मधुसंयुक्तं कासश्वासज्वरापहम् ॥ २३८८ ॥
आर्द्रकस्य रसैर्युक्तं कुक्षिशूलनिवारणम् ।
कुमारीरससंयुक्तं मेहदाहज्वरापहम् ॥
मूर्वादण्डरसे युक्तं सन्ततज्वरनाशनम् ॥ २३८९ ॥

र क यो , ज्वराधिकारे ।

भाषा—अतीस, शुद्ध गन्धक, हरिताल और सुहागा, शकर, त्रिकटु येसव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर जंभीरीकेरससे ३ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया वनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली नागरमोथा, वेलगिरी और गुडकेसाथ देनेसे यह वातज्वरको नष्टकरताहै । जंभीरी और शक्करकेसाथ पित्तज्वर, गुड़ और मधुकेसाथ कास, श्वास और साधारणज्वर, अदरखकेसाथ कुक्षिशूल, घीकुवारकेरसकेसाथ प्रमेह और दाहज्वर, मूर्वाकेदण्डके रससे सन्ततज्वरको यह नष्टकरताहै ॥ ४८९ ॥

४९० वारिसागररसः (तृतीयः)

सूतटङ्कणविषाऽर्कसुगन्धा-
फेनकं मनशिलाऽम्लविमर्द्यम् ।
भूधरे लघुपुटाद्विनिहन्ति
सन्निपातमितिगुञ्जसितायुक् ॥ २३९० ॥
दुग्धान्नं तक्रमिश्रं वा शिशिरश्च जलं हितम् ।
शीतोपचारैरन्यैश्च रसोऽयं वारिसागरः ॥ २३९१ ॥

र शि , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, सुहागा और वछनाग, ताम्रभस्म, शुद्ध गन्धक, अफीम और मैनसिल समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय जंभीरी वगैरहके रसमे एकदिन मर्दनकर शरावसम्पुटमें वन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर भूधरयन्त्रमें लघुपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे १–१ रत्ती शक्करकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै । भूखलगनेपर दूध, चावल अथवा छाछ, चावल देना । प्यास लगनेपर ठंढाजलदेना और दाहमें शीतोपचार करना ॥ ४९० ॥

४९१ वारिसागररसः (चतुर्थः)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं मृताभ्रं टङ्कणं शिलाम् ।
मुशली हयमारश्च प्रत्येकञ्च विमर्दयेत ॥ २३९२ ॥
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं श्लेष्मपित्तविसर्पनुत् ।
दुरालभा पर्पटकं पटोलं कटुकीं तथा ।
त्रिफला गुग्गुलुं तुल्यं कषायमनुपाययेत ॥ २३९३ ॥

व रा., वै चि , विसर्पे ।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग और गन्धक, अभ्रकभस्म, शुद्ध सुहागा और मैनसिल, मुशली, सफेदकनेरकी जड़कीछाल सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय मुशली और कनेरकी जड़के काढ़ेसे मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली जवास, पित्तपापड़ा, परवल, कुटकी, त्रिफला और गूगल समभागके क्वाथकेसाथ देनेसे श्लेष्मरोग और पित्तविसर्प नष्टहोताहै ॥४९१॥

४९२ वालकादिलोहम्

अम्बुश्रेष्ठाक्रिमिरिपुवरीत्र्यूषणाग्नित्रिजातं,
लोहं खण्डं द्वयमपि समं चूर्णमाद्यैश्च युक्तम् ।
सर्वान्मेहान्मधुघृतयुतं योजयेन्माषमात्रं,
शोथं पाण्डुं हरति सजरं कामलं चामवातम् ॥२३९४॥

र शि , प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—सुगन्धवाला, गजपीपल, विडङ्ग, शतावर, त्रिकटु, चित्रकमूल, तज, पत्रज, इलायची येसव समभाग, लोहभस्म और शक्कर सवकीवरावर लेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा मधु और घृतकेसाथ देनेसे यह शोथ, पाण्डु, कामला, आमवात इनसवकोनष्टकर वुढापेको दूरकरताहै॥४९६॥

४९३ वासाखण्डायसम्

वासारसेनाऽमणसम्मितेन
चूर्णं सितातुल्यमयःसमुत्थम् ।
प्रस्थप्रमाणं कुडवोन्मिताज्ये
पक्त्वा कदुष्णे विनिधाय तस्मिन् ॥२३९५॥
त्रिजातकत्र्यूषणमुस्तधान्य-
द्विजीरकेभ्यः परिचूर्णितेभ्यः ।
पलं पलं दर्विकया विलोड्य
शीतं युतं क्षौद्रचतुष्पलेन ॥ २३९६ ॥
लीढं जयेत्तत्प्रवलश्च कासं
पित्तं सरक्तं क्षयमग्निसादम् ॥

करोति पुष्टिं वपुषः प्रवृद्धिं
बलं परां कान्तिमनामयत्वम् ॥ २३९७ ॥

लो प. कासे ।

भाषा—एकद्रोण अडूसेकेपत्तोंके रसमें १–१ प्रस्थ शक्कर और लोहभस्म तथा ४ पल घी डालकर हलकी आचसे पकावे। घन तैयारहोनेपर तज, पत्रज, इलायची, त्रिकटु, नागरमोथा, धनियां, दोनोंजीरे १–१ पल लेकर इनका वारीकचूर्ण डालकर कड़छीसे मिलावे। ठंढाहोनेपर ४ पल मधु मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ मासे लेनेसे प्रवलकास, रक्तपित्त, क्षय, मन्दाग्नि इनको यह नष्टकरताहै । शरीरकी पुष्टि, वृद्धि, वल और कान्तिको वढ़ाकर सदैवके लिये आरोग्य देताहै ॥ ४९३ ॥

४९४ विकरालवक्त्रभैरवरसः (प्रथमः)

रसगन्धौ रविक्षीरैस्तिथिवारान्विभावयेत् ।
यामद्वादशकं वह्निं वालुकायन्त्रतो मतः ॥ २३९८ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य वज्रीक्षीरेण भावयेत् ।
दद्यात्पूर्ववदग्निश्च ततश्च तिथिभावनाः ॥ २३९९ ॥
भावनाः स्युश्च कम्पिल्लबीजतैलेन चानलः ।
यामषोडशकः सोयं विकरालास्यभैरवः ॥ २४०० ॥

र.का , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर आक और सेहुण्डकेदूधसे १५–१५ दिन मर्दनकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें डालकर मुंहवन्दकर १२–१२ पहरकी वालुकाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कमीलेकेवीजोंकेतैलसे १५ दिन मर्दनकर १६ पहरकी अग्निदेवे। इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे तमामप्रकारकेज्वर, सन्निपात, वात और कफजन्यव्याधि, खासकर उदररोग और कुष्ट इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ४९४ ॥

४९५ विकरालवक्त्रभैरवरसः (नित्योदितः) २

ऋतुभागं सोममलं तालं दिनमितं तथा ।
कन्याद्भिः पञ्च दश च भावनाश्छिक्किकाद्रवैः ॥२४०१॥
अश्वत्थत्वचमध्यस्थं पङ्क्यामं दाहयेत्ततः ।
अरण्योपलकैः शीतमश्वगन्धाम्बुयोजितः ॥ २४०२ ॥
भावयित्वा रसैस्तत्तु तालं कुष्ठहरं भवेत् ।
नित्योदितोरसः सोऽत्र रसं राजीमितं भजेत् ॥२४०३॥

र.का., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धसोमल ६ भाग, शुद्धहरिताल ७ भाग लेकर वारीकचूर्णकर घीकुंवार और नकछिकनीकेरसोंकी १५–१५ भावनाए देकर टिकड़ीवनाय पीपलकीछालके चूर्णकेवीचमें रख शरावसम्पुटकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर जङ्गलीकण्डोंकी ६ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर असगन्धकेरससे १–२ दिन मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ राईके वरावर मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे तमामप्रकारके कुष्ठोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४९५ ॥

४९६ विकरालवक्त्रभैरवरसः (तृतीयः)

तालं मुनिमितं सोमरसो वर्णौ हिंडिम्बिका ।
सौभाग्यं विंशभागश्च निर्विषस्य चतुर्दश ॥ २४०४ ॥
तोरी वारमिता तद्वत्सोमलं तानि निक्षिपेत् ।
कालसर्पमुखे घर्मे शोषयित्वा प्रयत्नतः ॥ २४०५ ॥
विषमेकोनविंशांशमाकल्लं द्वादशांशकम् ।
मरिचाद् द्विस्त्रिर्लवङ्गात्कणा द्वादशभागिका॥२४०६॥
सप्तांशा रजनी सर्वैश्चूर्णैः षोडशधा पुटेत् ।
सप्त त्रिपुटपुष्पस्य कृष्णधूर्तस्य च द्रवैः ॥ २४०७ ॥
छायाशुष्का वटी कार्या रक्तिका सर्वरोगजित् ।
योगिनीभिरयं प्रोक्तो विकरालास्यभैरवः ॥ २४०८ ॥
ऐकाहिके द्व्याहिके च त्र्याहिके विषमज्वरे ।
जीर्णज्वरे च तरुण आगन्तौ धातुजे ज्वरे ॥ २४०९ ॥
उदयाऽस्तं गुटी क्षौद्रत्रिकटुत्रिफलायुता ।
टङ्कोषणसमायुक्ता सप्तरात्रं वटी स्मृता ॥
धूर्तवीजाऽर्ककरभवीजैः सन्निपातजित् ॥ २४१० ॥

र का , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धहरिताल ७ भाग, शुद्ध वछनाग और मैनसिल ४–४ भाग, सुहागा २० भा., निर्विषी १४ भा., फिटकडी और सोमल ७–७ भाग लेकर १–२ दिन मर्दनकर कालेसापकेमुंहमें भरके सुखावे फिर सापका जहर १९ वां भाग, अकलकरा १२ वा भाग, मिरच २ भाग, लौंग ३ भा , पीपल १२ भा , हल्दी सवसे ७ वा भाग लेकर सवका वारीकचूर्णकर त्रिपुट धतूरे (७ या ३ आवर्त जिसके फूलमें आतेहों) केरससे १६ पुट देकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर छायामें सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै । साधारणतया मधु, त्रिकटु और त्रिफला अथवा सुहागा और मरिचकेसाथ अथवा धतूरा, आक और अकलकराकेवीजोंकेसाथ देनेसे ऐकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, विषम, जीर्ण, तरुण, आगन्तुक और धातुगत सम्पूर्णज्वर सूर्योदयसे शामतक नष्टहोतेहै । ७ दिनमें सन्निपात निवृत्तहोताहै ॥ ४९६ ॥

४९७ विक्रमकेसरीरसः

शुल्वमेकं द्विधा तारं मर्दयेद्विधिवद्भिषक् ।
पश्चाद्विषं रसं गन्धं मेलयित्वा तु भावयेत् ॥ २४११ ॥
एकविंशतिवारांश्च लिम्पाकवल्कलद्रवैः ।
रसः सिद्धः प्रदातव्यो गुञ्जामात्रो ज्वरान्तकृत् ॥
सर्वज्वरहरः ख्यातो रसो विक्रमकेसरी ॥ २४१२ ॥

भै र , र. सु , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—ताम्रभस्म १ भाग, रजतभस्म २ भागलेकर एकपहरमर्दनकर शुद्धवछनाग, पारा और गन्धक १–१ भाग मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर अमिलतासकी छालकेरससे २१ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१

गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तज्वरोंको दूरकरताहै ॥ ४९७ ॥

४९८ विचित्रवीर्यरसः

रसं गन्धं विषं तुल्यं माक्षिकञ्च मनःशिला ।
चोलतालकशुल्वञ्च मुण्डं दरदमेव च ॥ २४१३ ॥
हैमरौप्यजभस्माऽपि वाराट भस्म तुल्यकम् ।
कटुत्रयं चित्रकञ्च निर्गुण्डीमूलसम्भवम् ॥ २४१४ ॥
नेपालं पिप्पलीमूलं सौभाग्यं करहाटकम् ।
मात्स्यमाहिषमायूरच्छागवाराहिकैस्तथा ॥ २४१५ ॥
अन्येषां विविधैः पित्तै मर्दयित्वा भिषग्वरः ।
छायाशुष्का वटीः कृत्वा काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् ॥
निरुद्ध्य वालुकायन्त्रे प्रहराऽर्द्धं पचेल्लघु ।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य तत्तद्रोगानुपानतः ॥
शीघ्रं प्रशमयेत्तांश्च चित्रप्रत्ययकारकः ॥ २४१७ ॥

र क यो., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, वछनाग, सोनामाखी, मैनसिल, सुरमकी, हरिताल, ताम्र और मुण्डभस्म, शुद्धशिगरिफ, सुवर्ण-रजत और कौड़ीभस्म, त्रिकटु, चित्रक, निर्गुण्डीमूल, शुद्धजमालगोटा, पिपलामूल, भुनासुहागा, अकलकरा सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय मछली, भैंसा, मोर, बकरा, सूअर तथा इन्हींके सदृश अन्यजानवरोंके पित्तोंसे १–१ दिन भावनादेकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाय छायाशुष्ककर काचकीशीशीमेंभर वालुकायन्त्रमें आधे पहरकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह सबप्रकारके ज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ४९८ ॥

४९९ विजयचूडरसः

मर्दयेन्निम्बुकद्रावै रसं वङ्गञ्च गन्धकम् ।
मूषायां भूधरे पाकं कुर्याद्वासरपञ्चकम् ॥ २४१८ ॥
तत्र गन्धं मृतं ताम्रं सौवर्चलमथो क्षिपेत् ।
गायत्रीतोयसंश्लिष्टं ताम्रोदरविलेपितम् ॥ २४१९ ॥
न्युब्जभाण्डोदरे रुद्ध्वा वालुकाभिः प्रपूरयेत् ।
रुद्ध्वा यामद्वयं पक्त्वा ग्रहण्यां धातुकज्वरे ॥ २४२० ॥
गुल्मप्लीहोदराऽष्ठीलाऽपस्मारे मूत्रकृच्छ्रके ।
परिणामभवे शूले क्षयादौ सम्प्रयोजयेत् ॥
वल्लं रोगाऽनुपानेन रसस्य भिषजांवरः ॥ २४२१ ॥

र क , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, वङ्गभस्म और शुद्धगन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर नीबूकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें रखकर ५ दिनकी आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर शुद्धगन्धक, ताम्रभस्म और सचल पूर्वरसकी बराबर २ डालकर खैरकेक्वाथमें पीसकर बराबरके ताम्रसम्पुटमें भीतर लेपदेकर हडीमें सम्पुटको उलटा रख सन्धिबन्दकरदे। फिर बालूभरके हंडीपर ढक्कन ढंककर ३–४ कपड़मिट्टीसे बन्दकर दोपहरकी तीक्ष्ण अग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ताम्रसम्पुटमेंसे खुरचकर निकाललें। उसमेंसे ३–३ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे ग्रहणी, धातुगतज्वर, गुल्म, प्लीहा, उदररोग, अष्ठीला, अपस्मार, मूत्रकृच्छ्र, परिणामशूल, क्षयादिदुष्टव्याधि, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४९९ ॥

५०० विजयपर्पटीरसः (प्रथमः)

गन्धकं क्षुदितं कृत्वा भाव्यं भृङ्गरसेन तु ।
सप्तधा वा त्रिधा वाऽपि पश्चाच्छुष्कं विचूर्णयेत् २४२२
चूर्णयित्वाऽऽयसे पात्रे कृत्वा वह्निगतं सुधीः ।
द्रुतं भृङ्गरसे क्षिप्तं तत उद्धृत्य शोषयेत् ॥ २४२३ ॥
तञ्च गन्धं पलञ्चैकं गन्धाऽर्द्धं शुद्धपारदम् ।
सूताऽर्द्धं भस्म रौप्यञ्च तदर्द्धं स्वर्णभस्मकम् ॥२४२४॥
तदर्द्धं मृतवैक्रान्तं मौक्तिकञ्च विनिःक्षिपेत ।
एकीकृत्य ततः सर्वं कुर्यात्पर्पटिकां शुभाम् ॥२४२५॥
लौहपात्रे समरसं मर्दितं कज्जलीकृतम् ।
बदराऽङ्गारवह्निस्थे लौहपात्रे द्रवीकृते ॥ २४२६ ॥
मयूरचन्द्रिकाकारं लिङ्गं वा यदि दृश्यते ।
मृदौ न सम्यग्भङ्गः स्यान्मध्ये भङ्गश्च रौप्यवत् २४२७
खरे लघुर्भवेद्भङ्गो रूक्षः सूक्ष्मोऽरुणच्छविः ।
मृदुमध्यौ तथा खाद्यौ खरस्त्याज्यो विषोपमः २४२८
जराव्याधिशताऽऽकीर्णं विश्वं दृष्ट्वा पुरा हरः ।
चकार पर्पटीमेतां यथा नारायणोऽमृतम् ॥ २४२९ ॥
आदौ शङ्करमभ्यर्च्य द्विजातीन्प्रणिपत्य च ।
प्रभाते भक्षयेदेनां प्राग्रक्तिद्वयसम्मिताम् ॥ २४३० ॥
रक्तिकादिक्रमाद्वृद्धि भक्ष्या नैव दशोपरि ।
आरोग्यदर्शनं यावत्तावद्ग्रासस्ततः परम् ॥ २४३१ ॥
अजीर्णे भोजन नैव पथ्यकालव्यतिक्रमः ।
घृतसैन्धवधान्याकहिङ्गुजीरकनागरैः ॥ २४३२ ॥
शस्यते व्यञ्जनं सिद्धं पित्ते स्वाद्वम्लमाक्षिकम् ।
कृष्णमत्स्येन मुद्गेन मांसेन जाङ्गलेन च ॥ २४३३ ॥
जाङ्गलेषु शशच्छागौ मत्स्ये रोहितमद्गुरौ ।
पटोलपत्रञ्च तथा कृष्णवार्ताकजालिका ॥ २४३४ ॥
सुस्विन्नपूगैस्ताम्बूलं लभेत् कर्पूरसंयुतैः ।
क्षुधाकाले व्यतिक्रान्ते यदि वायुः प्रकुप्यति ॥२४३५॥
झिञ्झिनीति शिरःशूले विरेके वमथौ तथा ।
तृष्णायाञ्चाऽधिके पित्ते नारिकेलाम्बु निर्भयम् २४३६
नारिकेलपयः पेयं द्विर्भक्ष्यं क्षीरमेव च ।
स्वप्ने शुक्रच्युतौ चैव चम्पकं कदलीदलम् ॥ २४३७ ॥
वर्ज्यं निम्बादिकं शाकं पाकाम्लं काञ्जिकं सुराम् ।
कदलीफलपत्राऽङ्घ्रि त्रपुषाऽलाबु कर्कटी ॥ २४३८ ॥

कूष्माण्डं कारवेलञ्च व्यायामं जागरं निशि ।
न पश्येन्न स्पृशेद्गच्छेत्स्त्रियं जीवितुमिच्छति ॥२४३९॥
यद्यौषधे स्त्रियं गच्छेत्कर्तव्या तु प्रतिक्रिया ।
दुर्वारां ग्रहणीं हन्ति दुःसाध्यां वहुवार्षिकीम् ॥२४४०॥
आमशूलमतीसारं सामञ्चैव सुदारुणम् ।
अतिसारं षडर्शांसि यक्ष्माणं सपरिग्रहम् ॥ २४४१ ॥
शोथञ्च कामलां पाण्डुं प्लीहानञ्च जलोदरम् ।
पक्तिशूलं चाऽम्लपित्तं प्रमेहान्विषमज्वरान् ॥२४४२॥
वातपित्तकफोत्थांश्च ज्वरान्हन्ति सुदारुणान् ।
जीर्णोऽपि पर्पटीं कुर्वन्वपुषा निर्मलः सुधीः ॥
जीवेद्वर्षशतं श्रीमान्वलीपलितवर्जितः ॥ २४४३ ॥

भै र., र सु , र मृ ग्रहणीरोगाऽधिकारे।

टि०—"रोगशान्त्यै प्रयोक्तव्यो गुञ्जाद्वित्रिप्रमाणत । कल्पार्थे त्रिफलायुक्ता भक्षयेद्रसपर्पटीम् ॥ पञ्चकोलसमोपेता मधुमारसमन्विता । हन्यात्पर्पटिका लीढा सन्निपात सुदारुणम् ॥ पिप्पली मधुसयुक्ता लिढे-त्पर्पटिका क्षयी । त्रिवृत्त्र्यूषणसयुक्ता हन्याद्वा ग्रहणीगदम् ॥ नवकाद्गु-ग्गुलेर्योगात्पाण्डुरोग विनाशयेत् । रुवुवीजेन मयुक्ता वातशूलनिवर्हणी ॥ कन्यात्र्यूषणसयुक्ता हन्ति वातज्वर हि सा । दशमूलम्मायुक्ता श्लेष्म-रोगविनाशिनी ॥ सोमराजीयुता हन्ति तीव्रा पामा विचर्चिकाम् । भल्लातकम्मायुक्ता हन्ति दद्रूणि हिध्मिकाम् ॥ हन्यात्पर्पटिकाऽर्शांसि गवां मूत्राऽनुपानत । शालाऽर्जुनवटाश्चित्र शाल्मलीभृङ्गराजकौ ॥ निम्बपञ्चाङ्गमुण्ट्यौ च कोरण्टी कुण्डलं तथा । निर्गुण्ड्याश्चैव पत्राणि समभागानि कारयेत् ॥ चूर्णयित्वा तत श्लक्ष्णमनुपाने प्रयोजयेत् । कुष्ठरोगनिवृत्त्यर्थं प्रयुञ्ज्यात्पर्पटीरसम् ॥ एव पर्पटिका युक्ता सर्वरोगाश्च नाशयेत । पथ्यमत्र प्रयुञ्जीत यथादोषानुसारत । ज्ञात्वा सत्वविकाराश्च विरुद्धमपि दापयेत् ॥" इति रसामृते अनुपाने विशेषोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धगन्धकका वारीकचूर्णकर भंगरेकेरससे ७ अथवा ३ वार भावितकर चूर्णवनाय लोहेकेपात्रमें गलाकर भंगरेकेरसमें वुझावे । यह शुद्धगन्धक १ पल, शुद्धपारा २ कर्ष, रजतभस्म १ कर्ष, सुवर्णभस्म आधाकर्ष, वैक्रान्तभस्म और मोती ४–४ माशे लेकर सवकी नीलवर्णकज्जलीकर घीपुतीहुईलोहेकी कड़ाहीमें गलाकर प्रथमरसपर्पटीकीतरह तैयारकरे । फिर पर्पटीका वारीक चूर्णकर लोहेकेपात्रमें वेरकेकोयलोंपर गलाय दो कर्ष पारा मिलाकर उतारकर कज्जलीवनाकर रखछोड़े । पर्पटीकापाक तीन-तरहकाहोताहै । मयूरचन्द्रिकाकीतरह जिसमें रङ्ग दिखाईदे और तोड़नेसे अच्छीतरह न टूटे वह मृदुपाकहै । मध्यपाकमें जल्दी टूटजातीहै और चादीकीतरह चमकतीहै । खरपाकमें रंग लाल तथा रूक्षहोताहै और वहुतजल्दी टूटतीहै । मृदु तथा मध्य-पाकका सेवनकरे और खरको ज़हरकीतरह छोड़देवे । अच्छे तिथि-मुहूर्त देखकर शङ्करका पूजनकर ब्राह्मणोंको सन्तुष्टकर सुवहमें २–२ रत्तीसे आरम्भकरे और प्रतिदिन १ रत्ती वढ़ावे । १० रत्तीहोनेपर वहीमात्रा स्थिर रक्खे ऊपर न वढ़े । जव व्याधिरहितहोजाय तव १–१ रत्तीका ह्रासकर वन्दकरदे । अजीर्णमें भोजन और पथ्यकालका लङ्घन न करे । घी, सेंधा-नमक, धनिया, हींग, जीरा और सोंठ इनसे व्यञ्जन सिद्ध-करे । पित्तकेप्रकोपमें स्वादु, अम्ल, मधु, कालीमछली, मूंग और जागलमासका सेवनकरे । जाङ्गलोंमें खरगोश और वकरा श्रेष्ठहै, मछलियोंमें रोहू और मद्गुर, शाकोंमें पटोलपत्र, काले-वेंगन, तरोई, पकीहुई सुपारी और कपूर लगाहुआपान खावे । भोजनका अतिकाल होनेसे यदि वायुका प्रकोपहो तो कानोंमें झिञ्झिनी, शिर शूल, रेचन, वमन और अधिक प्यासहोगी । इसमें पित्तकोशान्तकरनेकेलिये नारियलकाजल और दूधदे । स्वप्नमें शुक्रस्खलनहोनेपर दूधपिलावे । चम्पा, कदलीदल, निम्वादिशाक, खटाई, काञ्जी, मद्य, केलेकाफल–पत्ता और जड़, खीरे, कद्दू, ककड़ी, कोहळा, करेला, व्यायाम, रात्रिजागरण, इनका निषेधकरे । अगर जीनेकी इच्छा हो तो स्त्रीका स्पर्श तकभी न करे । दैवसंयोगसे यदि औषधप्रयोगमें स्त्रीसङ्गहोजाय तो उसका प्रतीकारकरे । इसप्रयोगसे पुरानी घोरग्रहणी, आम-शूल, अतिसार, ६ प्रकारके ववासीर, उपद्रवयुक्त यक्ष्मा, शोथ, कामला, पाण्डु, प्लीहा, जलोदर, पक्तिशूल, अम्लपित्त, प्रमेह, विषमज्वर, वात-पित्त और कफप्रधानज्वर इनसवको यह नष्ट-करतीहै । जीर्णपुरुष इसकासेवनकरे तो वलीपलितसे निवृत्तहोकर पूरे १०० वर्षकी आयुको भोगताहै । साधारणत २ रत्तीसे ३ रत्तीतक त्रिफलाकेसाथ सेवनकरनेसे कल्पसिद्धिहोतीहै । पञ्चकोल और मधुकेसाथ घोरसन्निपात, पीपल और मधुकेसाथ क्षय, निसोत और त्रिकटुकेसाथग्रहणी, गुग्गुलुकेसाथ पाण्डु, एरण्ड-वीजोंसे वातशूल, घीकुंवार और त्रिकटुसे वातज्वर, दशमूलके-क्वाथसे श्लेष्मरोग, वाकुचीसे भयंकर पामा और विचर्चिका; भिलावेसे दद्रु और हिक्का, गोमूत्रसे ववासीर नष्टहोताहै । सखुआ-अर्जुन, वट, चित्रक, सेंमल, भंगरा, निम्बपञ्चाङ्ग, दोनों गोरख-मुण्डी, पियावासा, गिलोय, निर्गुण्डीकेपत्ते सवसमभागकेचूर्णके-साथ लेनेसे यह कुष्ठोंको नष्टकरतीहै । इसतरह समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तरोगोको दूरकरतीहै ॥५००॥

५०१ विजयपर्पटी (द्वितीया)

रसं वज्रं हेमतारं मौक्तिकं ताम्रमभ्रकम् ।
सर्वतुल्येन गन्धेन कुर्याद्विजयपर्पटीम् ॥ २४४४ ॥
दुर्वारां ग्रहणीं हन्ति दुःसाध्यां वहुवार्षिकीम् ।
आमशूलमतीसारं चिरोत्थमतिदारुणम् ॥ २४४५ ॥
प्रवाहिकां षडर्शांसि यक्ष्माणं सपरिग्रहम् ।
शोथञ्च कामलां पाण्डुं प्लीहगुल्मजलोदरम् ॥२४४६॥
पक्तिशूलमम्लपित्तं वातरक्तं वमिं भ्रमम् ।
अष्टादशविधं कुष्ठं प्रमेहान्विषमज्वरान् ॥ २४४७ ॥
चतुर्विधमजीर्णञ्च मन्दाग्नित्वमरोचकम् ।
जीर्णोऽपि पर्पटीं कुर्वन्वपुषा निर्मलः सुधीः ॥
जीवेद्वर्षशतं श्रीमान्वलीपलितवर्जितः ॥ २४४८ ॥
प्रातः करोति सततं नियतं द्विगुञ्जां,
यस्तां स विन्दति कलां कुसुमायुधस्य ।
आयुश्च दीर्घमनघं वपुषः स्थिरत्वं,
हानिं वलीपलितयोरतुलं वलञ्च ॥ २४४९ ॥

जराव्याधिसमाकीर्णं विश्वं दृष्ट्वा पुरा हरः।
चकार पर्पटीमेतां यथा नारायणः सुधाम् ॥ २४५० ॥

भै र., वै. क, र. चं., र सु ग्रहणीरोगे।

भाषा—शुद्धपारा, हीरा, सुवर्ण, रजत, मोती, ताम्र और अभ्रक इनकीभस्में समभाग और शुद्धगन्धक सवकीवरावर लेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीपुतीहुईकड़ाहीमें गलाकर गोवरपर रक्खेहुए केलेकेपत्रपर डालकर दूसरे केलेकेपत्तेमे ढककर गोवरसे दवादे। ठंटाहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीसे १० रत्तीतककीमात्रा वढाकर अथवा २–३ रत्तीकी नियतमात्रा देनेसे पुरानी दु साध्यग्रहणी, आमशूल, पुराना अतिसार, प्रवाहिका, ६ प्रकारके ववासीर, उपद्रवसहित यक्ष्मा, शोथ, कामला, पाण्डु, प्लीहा, गुल्म, जलोदर, पक्तिशूल, अम्लपित्त, वातरक्त, वमन, भ्रम, १८ कुष्ठ, प्रमेह, विषमज्वर, ४ प्रकारका अजीर्ण, मन्दाग्नि, अरुचि इनसवको यह नष्टकरतीहै ॥ ५०१ ॥

५०२ विजयप्रतापरसः

नीलं तुत्थं वत्सनाभं साऽश्मजं हरितालकम्।
रुदन्त्याश्च रसैः पश्चाद्वटकं मुद्गमात्रकम् ॥ २४५१ ॥
विजयप्रतापनामाऽसौ सर्वरोगविनाशकः।
संहरेद्ग्रहणीरोगं ज्वरमैकाहिकं हरेत् ॥ २४५२ ॥

र. ज्ञा, सर्वरोगे।

भाषा—शुद्ध नीलाथोथा, वछनाग, गन्धक और हरिताल समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर रुद्रवन्तीकेरससे ३–४ दिन मर्दनकर मूंगवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै। खासकर सङ्ग्रहणी और एकाहिकज्वरको नष्टकरताहै ॥ ५०२ ॥

५०३ विजयभैरवरसः (विजयानन्दः) १

सप्तकञ्चुकनिर्मुक्तमूर्ध्वशुद्धं रसेन्द्रकम्।
मृत्कटाहान्तरे तत्तु स्थापयेच्च समत्रकम् ॥ २४५३ ॥
सूताद्द्विगुणितं तालं कूष्माण्डद्रवशोधितम्।
दोलायन्त्रेण तैलादौ सप्तधा परिशोधितम् ॥ २४५४ ॥
दत्त्वाऽऽप्लाव्य द्रवैर्झिण्ट्याः किञ्चिदाप्लाव्य युक्तितः।
तयोर्द्विगुणितं भस्म पलाशस्य परिक्षिपेत् ॥ २४५५ ॥
पुनर्झिण्टीद्रवेणैव सर्वमाप्लाव्य यत्नतः।
खाखसार्करसैर्भूयः परिप्लाव्य च पाकवित् ॥२४५६ ॥
पचेदवहितो वैद्यः शालाऽङ्गारेण यत्नतः।
चतुर्विंशतियामन्तु पक्त्वा शीतलतां नयेत् ॥२४५७॥
अवतार्य काचपात्रे विधाय तदनन्तरम्।
प्रयत्नेन कृतप्रायश्चित्तः शोधितदेहकः ॥ २४५८ ॥
सिताहरीतकीयुक्तं खादेद्रक्तिचतुष्टयम्।
रक्तिकैकक्रमेणैव वर्द्धयेद्दिनसप्तकम् ॥ २४५९ ॥
मधूदकं पिबेच्चाऽनु नारिकेलजलञ्च वा।
झिङ्गिनीसम्भवं क्वाथमथवा क्षौद्रनागरम् ॥ २४६० ॥
अभ्यङ्गं सुरभीतैलैः कुर्यात्ताम्बूलचर्वणम्।
पवनाऽनलसूर्यांशुमत्स्यमांसदधीनि च ॥ २४६१ ॥
शाकं ककारपूर्वञ्च वर्जयेन्मतिमान्नरः।
वातरक्तमामभिश्रमामञ्चाऽपि सुदारुणम् ॥ २४६२ ॥
सर्वकुष्ठञ्चाऽम्लपित्तं विस्फोटञ्च मसूरिकाम्।
विजयाख्यो रसो नाम्ना हन्ति दोषानसुन्दरान् २४६३

र सं, र. चि, र सु, र चं, कुष्ठाऽधिकारे।

भाषा—सप्तकञ्चुकीरहित शुद्धपारा १ भाग, कोंहलेके रस वगैरहमे दोलायन्त्रमें शुद्धकियाहुआहरिताल २ भाग लेकर मिट्टीकी कड़ाहीमें रख कटसरैयाका रस दोनोंके द्रवनेलायक डालकर दोनोंमे दूनी पलाशकीराख डाले, ऊपरसे दूसरा कटसरैयाका थोड़ासा रस डाले और चूल्हेपर चढाकर अग्निदेवे। जब कटसरैयाकारस सूखनेलगे तब ताज़ेपोस्तकारस और आककादूध थोड़ा थोड़ा डालताजाय और नीचे सखुएकेकोयलोंकी आचदे। ऐसे २४ पहरकी आचदेनेकेवाद रस डालना वन्दकरे जिसमेंकि तमामरस जलकर सफेद राख होजाय। स्वाङ्गशीतल होनेपर धीरजसे ऊपरके मैलको जुदाकर नीचेसे पारद और हरितालकीभस्मको निकालकर शीशीमें रखछोड़े। अच्छे तिथि, दिन और मुहूर्तमें प्रायश्चित्त और पञ्चकर्मसे देहको शुद्धकर इसमेंमे ४–४ रत्तीकीमात्रा शक्कर और हर्रेकेसाथ देकर मधुका शरवत अथवा नारियलकाजल अथवा झिङ्गिनीकाक्काथ अथवा सोंठ और मधु अनुपानरूपमेदे। प्रतिदिन १–१ रत्ती सातदिनतक वढावे। चन्दनकेतैलकी मालिशकरावे। पान खानेकोदे। वायु, अग्नि, धूप, मछली, मास, दही, ककारादिशाक इनको छोड़देवे। इसके सेवनसे आमयुक्त वातरक्त और भयकर आम वात, समस्तकुष्ठ, अम्लपित्त, विस्फोटक, मसूरिका, रक्तप्रदर येसव नष्टहोतेहैं ॥ ५०३ ॥

५०४ विजयभैरवरसः (अमरसुन्दरी २)

सूतकं गन्धकं लोहं विषं चित्रकमभ्रकम्।
विडङ्गं रेणुका मुस्ता द्राविडीपत्रकेशरम् ॥ २४६४ ॥
फलत्रयं त्रिकटुकं शुल्वभस्म तथैव च।
एतानि समभागानि द्विगुणो दीयते गुडः ॥२४६५॥
कासे श्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे।
सूतायां ग्रहणीमान्द्ये शूले पाण्ड्वामये तथा ॥
हस्तपादादिरोगेषु गुटिकेयं प्रशस्यते ॥ २४६६ ॥

र म, भै र, र चं, र सि, र चि, रस सं, वै क, यो म., रसायनस, र का., र. र, भै. सा, र बो, र (मा.), ध, र सं, र. सु, र क, व. रा., र क यो., यो चि, नि. र., वि. र. भ., र. पा, र क ल कासाऽधिकारे।

टि०—यो चि, नि र, र सु, चि र म, र क ल, रस म एषु ग्रन्थेषु ताम्रस्थाने आकल्लक नियोज्य वाताऽधिकारे अमरसुन्दरीति नाम्ना स्थापितोऽय पाठ ध, र स, र सु, र क, व रा., रस मं एषु ग्रन्थेषु विजयवटीति नाम स्थापितम् अत्र अभ्रकस्थाने, ग्रन्थिक नियोजितमिति विशेष र सु, नि र एतयो द्वितीयस्थाने सूता-

दिवटीति नाम ग्रहण्यधिकारश्च । र स., र सु , र च , एतेषु द्वितीयस्थाने जयवटीति नाम अत्र अभ्रकपत्रकज्जुल्वाना स्थाने वत्सक-ग्रन्थिकजैपालबीजानि क्रमेण नियोजितानीति विशेष । र क यो. चन्द्रप्रभेति नाम । योगमहार्णवे सूताया ग्रहणीमान्द्ये इत्यस्य स्थाने लूताया ग्रहणीमान्द्ये इति पाठान्तरम् । र स , नि. र , र सु , र पा., र. र स , र को., टो , र. क , व रा , र अ , र क यो., वै चि., र क. ल., ना वि , वा एषु ग्रन्थेषु नीलकण्ठ इति नाम रत्नाकरौषधयोगे द्वितीयस्थाने त्रिमूर्तिरिति नाम, वैद्यचिन्तामणौ द्वितीयस्थाने सूतादिवटीति नाम रसराजसुन्दरे एकस्यैव रसस्य नामान्तरेण पञ्चसु स्थानेषु पाठ । रसचण्डांशौ स्थानद्वये, रससारसङ्ग्रहे स्थानत्रये, धन्वन्तरौ स्थानद्वये, रसेन्द्रसारसङ्ग्रहे स्थानचतुष्टये, रसेन्द्रकल्पद्रुमे स्थानत्रये, निघण्टरत्नाकरे स्थानचतुष्टये, बसवराजीये स्थानत्रये, रत्नाकरौषधयोगे स्थानत्रये, चिकित्सारत्नाभरणे स्थानद्वये, रसराजलक्ष्म्या स्थानचतुष्टये, योगचिन्तामणौ स्थानद्वये पाठ । र म ,भै र , र सि., र चि., वै क , यो. म , रसायनस , र का , र र., भै सा , र मा , र र. स., एषु ग्रन्थेष्वेकस्मिन्नेव स्थाने विजयभैरवनाम्ना पाठोऽस्ति, सर्वेभ्योऽधिकतयाऽध पाठो रसराजसुन्दरे दृश्यते नानास्थाने पाठकरण सूचयति ग्रन्थकारस्य बुद्धिराहित्यमिति सुधीभि विभावनीयम् ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और वछनाग, लोह और अभ्रकभस्म, चित्रकमूल, विडङ्ग, रेणुका (पहाड़ीरोण), नागरमोथा, इलायची, पत्रज, नागकेशर, त्रिफला, त्रिकटु, ताम्रभस्म, येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १-२ पहर शुष्कमर्दनकर दूनेगुड़की चाशनी अथवा गुड़ मिलाकर ४ रत्ती अथवा १ मासेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे श्वास, कास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, सूतिकारोग, ग्रहणी, मन्दाग्नि, शूल, पाण्डु और हस्तपादादिरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५०४ ॥

५०५ विजयभैरवरसः (तृतीयः)

हरवीर्यं वत्सनाभं वङ्गं नागं मृताऽभ्रकम् ।
मर्दयेद्दिनमेकञ्च कटुत्रितयजै रसैः ॥ २४६७ ॥
छियामं वालुकायन्त्रे पाचितं वज्रमूषया ।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य शुनीपित्तेन भावयेत् ॥ २४६८ ॥
चणमात्रं पिबेच्चाऽनु नारिकेलोदकेन च ।
तत्क्षणेन विनश्येत्तु ह्यन्तकः सन्निपातकः ॥
इच्छापथ्यं प्रदातव्यं रसो विजयभैरवः ॥ २४६९ ॥

वै. चि , वा , रसायनप., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और वछनाग, वङ्ग, नाग और अभ्रकभस्म समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर त्रिकटुकेरससे एकदिनमर्दनकर वज्रमूषामें बन्दकर ३-४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर वालुकायन्त्रमें रखकर दो पहरकी मन्द आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर कुत्तीके पित्तेकी एक भावना देकर चनेप्रमाण गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली नारियलकेजलकेसाथ देनेसे अन्तकसन्निपात तत्क्षण नष्टहोताहै । इसमें पथ्य इच्छानुसार देना ॥ ५०५ ॥

५०६ विजयभैरवरसः (चतुर्थः)

रसं ताम्रं तीक्ष्णतारं नागवङ्गौ तथैव च ।
साधितं पूर्वयोगेन समं सर्वं विनिक्षिपेत् ॥ २४७० ॥
सत्त्वाऽभ्रं तालकं सत्त्वं कुनटीतुत्थहिङ्गुलम् ।
द्विभागेन कृता ह्येते खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥२४७१॥
लाङ्गलीमेघनादश्च कुमारी काकमाचिका ।
व्याघ्री तथाद्रिः कमठी धूर्तकोऽप्यपचिञ्चिनी ॥२४७२॥
स्नुह्यग्निसुरदाल्यश्च सप्तधा सर्वमौषधैः ।
पचेत्तद्गोलकं कृत्वा वज्रमूषासु भूधरे ॥ २४७३ ॥
स्वाङ्गशीतं ततो नीत्वा मेघनादेन भावयेत् ।
भूधरेण ततः पक्वं तत्समं पारदं क्षिपेत् ॥ २४७४ ॥
अष्टभागं सुतीक्ष्णञ्च पुनः पक्वञ्च भूधरे ।
मेघनादरसे भाव्यं रसेन्द्रः सिद्धतां व्रजेत् ॥ २४७५॥
गुञ्जामात्रं रसं खादेदनुपानेन योजितम् ।
समानममृतासत्त्वं मुशली शतपत्रिका ॥ २४७६ ॥
गजकर्ण्यश्वगन्धा च विदारी व्योषराजतम् ।
गुग्गुलुश्च शिलां शुद्धं पूर्वयोगविनिर्मितम् ॥ २४७७ ॥
सिता समांशा सर्वेण मध्वाज्याभ्यां लिहेदनु ।
इच्छया सर्वभोक्तव्यमामवातनिकृन्तनम् ॥ २४७८ ॥
रसवातं महावातं शोथं मन्दाग्निजं हरेत् ।
प्लीहगुल्मौ तथाऽर्शश्च पाण्डुं कासं महोदरम् ॥२४७९॥
राजयक्ष्माऽतिसारश्च ग्रहणीश्च भगन्दरम् ।
प्रमेहान्विंशतिश्चैव कुष्ठाऽष्टादशकं तथा ॥ २४८० ॥
वलीपलितनिर्मुक्तः सेवितः सज्वरां हरेत् ।
ज्वरं शूलं तथाऽध्मानं सन्निपातांस्त्रयोदश ॥
नाशयेन्नाऽत्र सन्देहो रसो विजयभैरवः ॥ २४८१ ॥

रससागर , सर्वरोगे ।

भाषा—पारा, तावा, लोह, चादी, सीसा और वङ्गभस्म १-१ भाग, अभ्रक और हरितालसत्त्व, शुद्धमैनसिल, तूतिया और शिगरिफ २-२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर करिहारी, कटिवाली चौलाई, घीकुवार, मकोय, भटकटैया, कोयल, कुचिला, धतूरा, भुंईआवला, सेहुण्ड, चित्रक, वन्दाल इनके रसोंसे ७-७ दिन मर्दनकर गोलाबनाय वज्रमूषामें बन्दकर २-४ कपड़मिट्टी देकर भूधरयन्त्रकी अग्निदे। ऐसे प्रत्येकके रसोंमें मर्दनकर अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर काटेवालीचौलाईमें मर्दनकर भूधरपुटकी आचदे । फिर इसकी बराबर शुद्धपारा और ८ भाग फोलादभस्म मिलाकर काँटेवाली चौलाईकेरससे मर्दनकर भूधरपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर चौलाईकेरससे एकदिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बना कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली बराबरके गिलोयसत्त्वकेसाथ लेकर मुशली, गुलाबके फूल, हस्तिकर्णपलाश, असगन्ध, विदारीकन्द, त्रिकटु, रजतभस्म, शुद्धगूगल और मैनसिल सब समभाग और शक्कर सबकी बराबर मिलाकर ३-३ माशे मधु औ

घीकेसाथ अनुपानमें लेवे, पथ्यमें इच्छाभोजनकरे। इसकेसेवनसे आमवात, रसवात, महावात, शोथ, मन्दाग्नि, प्लीहा, गुल्म, बवासीर, पाण्डु, खासी, महोदर, राजयक्ष्म, अतिसार, ग्रहणी, भगन्दर, २० प्रमेह, १८ कुष्ठ, वलीपलित, ज्वर, शूल, आध्मान, १३ सन्निपात और बुढापा इनसबको यह नष्टकरताहै॥

५०७ विजयरसः (प्रथमः)

रसस्यैकं पलं दत्त्वा नागञ्च गन्धकं पलम्।
क्षारत्रयं पलं देयं लवङ्गं पलपञ्चकम्॥ २४८२॥
दशमूलीजयाचूर्णं तद्द्रवेण तु भावयेत्।
चित्रकस्य रसेनाऽथ भृङ्गराजरसेन तु॥ २४८३॥
शिग्रुमूलद्रवैश्चाऽपि ततो भाण्डे निरुद्ध्य च।
याममात्रं पचेदग्नौ मर्दयेदार्द्रकद्रवैः॥
ताम्बूलीपत्रसंयुक्तं खादेन्माषयुगं सदा॥ २४८४॥
र सं, अजीर्णे।

भाषा—शुद्धपारा, नागभस्म, शुद्धगन्धक, तीनोंक्षार, १–१ पल, लौंग, दशमूल और भाग ५–५ पल लेकर सबका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय दशमूल, भाग, चित्रक, भंगरा, सहिजनकी जड़कीछाल इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीदेकर भूधरयन्त्रमें एकपहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अदरखके रससे १–२ दिन मर्दनकर २–२ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पानकेसाथदेनेसे अजीर्णजन्य तमामविकारोंको यह नष्टकरताहै॥ ५०७॥

५०८ विजयरसः (द्वितीयः)

स्वल्पाग्निमान्द्यनुत्यर्थं कथ्यते विजयो रसः।
रसस्यैकं पलं क्षिप्त्वा गृह्णीयाद्गन्धकं पलम्॥२४८५॥
क्षारत्रयं पलं देहि लवणं पञ्चकं पलम्।
जयाचूर्णं दशपलं तद्द्रवेण सुमर्दय॥ २४८६॥
चित्रकस्य द्रवेणाऽथ भृङ्गराजरसेन च।
शिग्रुमूलद्रवं दत्त्वा पच भाण्डे निरुद्ध्य च॥ २४८७॥
याममात्रं ततः सिद्धं भावयार्द्रद्रवैर्मुहुः।
ताम्बूलपत्रसंयुक्तं खादेन्माषयुगं सदा॥ २४८८॥
र सि, र मृ अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, तीनोंक्षार, पाचोंनमक १–१ पल, धोईहुईभाग १० पललेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भाग, चित्रकमूल, भंगरा, सहिजनकीजड़कीछाल इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २–३ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर भूधरयन्त्रमें एकपहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अदरखकेरसकी ७ भावनाए देकर २–२ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पानमें रखकर खानेसे मन्दाग्नि और तज्जन्यविकार नष्टहोतेहैं॥ ५०८॥

५०९ विजयवटी (प्रथमा)

पलत्रयं हरीतक्याश्चित्रकस्य पलत्रयम्।
एलात्वक्पत्रमुस्तानां भागोऽर्धपलिको मतः॥२४८९॥
रेणुकाऽर्द्धपलः प्रोक्तस्तदर्द्धं नागकेशरम्।
व्योषञ्च पिप्पलीमूलं विषञ्च पलमात्रकम्॥२४९०॥
लोहचूर्णपलञ्चैकं त्वक्क्षीर्याश्च पलं स्मृतम्।
रसं पलं पलं गन्धं सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्॥ २४९१॥
पुरातने गुडे पक्वे तुलाऽर्द्धे तद्विनिक्षिपेत्।
हिमस्पर्शे च गृह्णीयाद्घृतेनाक्तां ततो बुधः॥ २४९२॥
प्रकुर्याद्गुटिकां वैद्यो विजयां बदरास्थिवत्।
शुभेऽहनि प्रयुञ्जीत वटीमेकां यथाबलम्॥ २४९३॥
घृतेन भोजयेत्तावद्यावदस्य बलं भवेत्।
तद्बलोपचयं ज्ञात्वा पुनर्द्वे द्वे प्रयोजयेत्॥ २४९४॥
अथवा गुटिकां साऽर्द्धां यथा न परिपीडयेत्।
मासद्वयेन श्लेष्माणं पित्तञ्चैव त्रिभिर्हरेत्॥ २४९५॥
चतुर्भिर्वायुदोषांश्च नाशयेन्नाऽत्र संशयः।
मासैस्तु सप्तभि र्द्वन्द्वजातान्रोगान् व्यपोहति २४९६
सर्वव्याधिविनिर्मुक्तो वर्षेणैकेन जायते।
वर्षद्वयप्रयोगेण वलीपलितवर्जितः॥
जीवेद्वर्षशतं चैव नाऽत्र कार्या विचारणा॥ २४९७॥
वै र, भै सा, र. र स, र सिं, र च, र क. ल, यो. चि., र (मा.), पाण्डुरोगे।

टि०—"लोहचूर्णपलञ्चैकं त्वक्क्षीर्याश्च पलं स्मृतम्" इत्यर्द्धं पद्य बहुषु स्थानेषु न दृश्यते। र क ल चित्रकस्थाने वज्री गृहीता नाम च कामेश्वर इति। भैषज्यसारामृतसहितायां कणामूलस्थाने पौष्कर नियोजितम्, गन्धक निष्काम्य पारद' कर्षमितो गृहीत, नाम च विजयादिगुड इति स्थापितम्।

भाषा—हर्रेकीछाल और चित्रक ३–३ पल, इलायची, तज, पत्रज, नागरमोथा, रेणुका २–२ कर्ष, नागकेशर १ कर्ष, त्रिकटु, पिपलामूल, शुद्धवच्छनाग, लोहभस्म, वंसलोचन शुद्ध पारा और गन्धक १–१ पल लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय ५० पल गुड़की चाशनीकर सबचीजें मिलावे। ठंढाहोनेपर थोड़ा घी डालकर मसले और बेरकीगुठलीकेबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े। शुभनक्षत्रमुहूर्तमें जबतक जठराग्नि प्रदीप्त न हो तबतक घीकेसाथ १–१ गोलीदे। बल बढनेपर डेढ़ १॥ अथवा २–२ गोलियादे। इसबातकाध्यान रक्खे कि रोगीको पीडित न करें। इसकेसेवनसे २ महीनेमें श्लेष्म, ३ महीनेमें पित्त, ४ में वायु, ७ में द्वन्द्वज और एक वर्षमें समस्तव्याधियोंसे निर्मुक्तहोताहै। दोवर्षके प्रयोगसे वलीपलितसे रहितहोकर १०० वर्षतकजीताहै॥ ५०९॥

५१० विजयवटी (द्वितीया)

रेणुका पिप्पलीमूलं वाकुची विषतिन्दुकम्।
अश्वगन्धा पलाशास्थि व्योषादिनवकं वचा २४९८

विशाला गन्धकं कुष्ठसत्तकं रसभस्म च ।
गुडेन गुटिकां कुर्यात्समेन मधुमिश्रिताम् ॥२४९९॥
तां भक्षयेत्सितासर्पिः क्षीरशाल्यन्नभाग्भवेत् ।
जलौदनं वा भुञ्जानो ब्रह्मचर्यपरायणः ॥ २५०० ॥
खादेत्तापे सिताधान्यसर्पिर्नागवलारजः ।
वटिका विजयाख्येयं सप्त कुष्ठान्नियच्छति ॥ २५०१ ॥

र. र. स , र र कौ , कुष्ठाऽधिकारे ।

भाषा—रेणुका, पिपलामूल, बाकुची, शुद्धकुचिला, असगन्ध, पलाशकेवीज, त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोथा, विडङ्ग, चित्रक, वच, इन्द्रायणकीजड़, शुद्धगन्धक, कष्ठ, नीलाञ्जन, मनसिल, हरिताल, फिटकरी, कसीस और सोनागेरू, पारदभस्म सबसमभागलेकर वारीकचूर्णकर बराबरकेगुड़ और मधुकेसाथ १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ खानेसे सप्तमहाकुष्ठोंसे निवृत्तहोताहै । शक्कर, घी, दूध, चावल अथवा जलौदन खावे और ब्रह्मचर्यसे रहे । दाहमालूमहोनेपर शक्कर, धनिया, घी और नागवलाका चूर्णदेवे ॥ ५१० ॥

५११ विजयवटी (तृतीया)

सूतकाह्वौ विषं गन्धं त्रित्र्येकांशेऽब्दकेशरम् ।
रेणुकं ग्रन्थिकं वेल्लं सर्वेषां द्विगुणं गुडम् ॥ २५०२ ॥
कोलप्रमाणां वटिकां खादयेत्प्रातरेव हि ।
कासे श्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ॥ २५०३ ॥
शोफे पाण्ड्वामये कुष्टे ग्रहण्यर्शोभगन्दरे ।
विजया गुटिका ह्येषा रुद्रप्रोक्ताऽधिका गुणैः॥२५०४॥

र. का., भगन्दराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा २ भाग, वछनाग और गन्धक ३–३ भाग, नागरमोथा, नागकेशर, रेणुका, पिपलामूल, विडङ्ग १–१ भाग लेकर सबका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय दूनागुड़ डालकर बेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली प्रातःकाल रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे कास, श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, शोथ, पाण्डु, कुष्ठ, ग्रहणी, ववासीर, भगन्दर इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ५११ ॥

५१२ विजयसिन्दूररसः

रसं गन्धं नागतालं सप्तधाधूर्तभावितम् ।
शुष्कं कूप्यान्तु वह्निः स्याच्चतुर्विंशतियामकम् ॥२५०५॥
शीतं गृहीत्वा त्रिकटुकचूर्णैरहिफेनतः ।
भृङ्गारसेन गुटिका गुञ्जा सर्वाऽतिसारजित् ॥
रसो विजयसिन्दूरो ग्रहणीं हन्ति दुर्धराम् ॥ २५०६ ॥

र का , अतिसारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, नाग और हरिताल समभाग लेकर नागको गलाकर पारद मिलाय नीलवर्णकज्जलीकर कालेधतूरेकेरससे ७ भावनाए देकर सूखनेपर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीमें भरके मुंहवन्दकर २४ पहरकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर त्रिकटु, कचूर और अफीम समभागमें मिलाकर भागकेरससे १–२ रोज़ मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह दुस्तरसङ्ग्रहणीको नष्टकरताहै ॥५१२॥

५१३ विजयादिगुडः

गुडश्चतुर्दशपलः पुराणः पलिका शिवा ।
चित्रकः पलिको व्योषं ग्रन्थिकं नागकेशरम्॥२५०७॥
लोहताम्राऽब्जबीजानि पृथगर्द्धपलानि च ।
त्वग्गन्धविषतालीसतुम्बुरुणि च काहलम् ॥२५०८ ॥
पारदः पुष्करो भार्ङ्गी पृथक्कर्षमितानि च ।
एकीकृतो गुडः स स्याद्द्वितीयो विजयादिकः॥२५०९
ऋते पित्तं सर्वरोगान्विनिहन्ति न संशयः ।
निर्वातस्थायिनां क्षीरयुक्तभक्तभुजां नृणाम् ॥
उपदंशानयं हन्ति तार्क्ष्यः सर्पगणानिव ॥ २५१० ॥

भै सा., र (मा),

भाषा—हर्रे और चित्रक १–१ पल, सोंठ, मिर्च, पीपल, पिपलामूल, नागकेशर, लोह और ताम्रभस्म, कमलगट्टा २–२ कर्प, तज, शुद्ध गन्धक और वछनाग, तालीसपत्र, तुम्बुल, (चिरफड म०,) हीराकसीस, पारदभस्म अथवा शुद्धपारा, पोहकरमूल, भारङ्गी १–१ कर्प लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय १४ पल गुडकी चाशनी बनाय सबचीजें मिलाय उतारकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ लेकर केवल दूधभातखानेसे और निर्वातस्थानमेंरहनेसे पित्तको छोड़कर उपदंशप्रभृतिसमस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै५१३

५१४ विजयानलमण्डूरम्

विजयानलसिन्धूत्थमनोह्वातुत्थमाक्षिकैः ।
पृथक्कर्षे द्विकर्षांशे ग्रन्थिगन्धकटङ्कणैः ॥ २५११ ॥
वरीपद्मरसैः कान्तात्रिफलैः पुटपाचितम् ।
एभिस्तुल्यं क्रमाद्ब्रह्मं शुण्ठीमागधिकोषणम् ॥२५१२॥
गोमूत्राऽग्निनिशाश्रेष्ठावर्षाभ्वार्द्रकभृङ्गजैः ।
पृथक्त्रिपुटितं सम्यक् स्वरसैः सूक्ष्मचूर्णितम्॥२५१३॥
मण्डूरमञ्जननिभं तुल्यमेतैः सुचूर्णितैः ।
सर्वमेकत्र संयोज्य प्रभाते युग्ममापकम् ॥ २५१४ ॥
क्षौद्रेण च घृतेनाऽपि लेह्यं स्यादार्द्रकाम्बुना ।
वातपित्तकफोद्रेकं तज्जान्द्वन्द्वोद्भवान्गदान्॥ २५१५ ॥
सन्निपातोद्भवानग्निमान्द्यजांस्त्वग्गतानपि ।
क्षयक्षयकृतान्व्याधीञ्छूलगुल्ममहोदरान् ॥ २५१६ ॥
पाण्डुशोफप्रमेहांश्च तूनीञ्च प्रतितूनिकाम् ।
ग्रहण्यर्शोऽतिसारांश्च कुष्ठाऽष्ठीलाऽपचीव्रणान् २५१७
श्वासकासप्रतिश्यायजीर्णज्वरमरोचकान् ।
विजयानलमण्डूरो जयत्येष रसायनः ॥ २५१८ ॥

र क यो , अग्निमान्द्ये ।

भाषा—भांग, चित्रक, सेंधानमक, शुद्धमैनसिल, तुत्थ और सोनामाखी १–१ कर्ष, पिपलामूल, गन्धक और सुहागा २–२ कर्षलेकर वारीकचूर्णकर शतावर, कमलकेफूल, प्रियङ्गु, त्रिफला इनकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शराव-सम्पुटमें वन्दकर लघुपुटकी आंचेंदे । फिर सोंठ, पीपल और मरिच क्रमवृद्ध भागसे लेकर रसकी वरावर मिलाय गोमूत्र, चित्रक, हल्दी, गजपीपल, इटसिट, अदरख, भंगरा इनप्रत्येकके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर लघुपुटकी ३–३ आंचेंदे । स्वाङ्ग-शीतल होनेपर सवकीवरावर अत्यन्तवारीक मण्डूरभस्ममिलाकर रखछोड़े । प्रातःकाल इसमेंसे २–२ माशे मधु और घीकेसाथ अथवा अदरखके रसकेसाथ देनेसे केवल वात, पित्त और कफ-जन्यरोग, द्वन्द्वज और सन्निपातजरोगोंको यह नष्टकरताहै । खासकर मन्दाग्नि, चर्मरोग, राजयक्ष्म, वातुक्षय, शूल, गुल्म, महोदर, पाण्डु, शोथ, प्रमेह, तूनी, प्रतितूनी, ग्रहणी, अर्श, अतिसार, कुष्ठ, अष्ठीला, अपची, व्रण, श्वास, कास, प्रतिश्याय, जीर्णज्वर और अरुचि इनसवकोदूरकर बुढापेको दूरकरताहै ५१४

५१५ विडङ्गलोहम् (प्रथमम्)

रसं गन्धश्च मरिचं जातीफललवङ्गकम् ।
शुण्ठी टङ्कं कणा तालं प्रत्येकं भागसम्मितम् ॥ २५१९ ॥
सर्वचूर्णसमं लौहं विडङ्गं सर्वतुल्यकम् ।
लौहं वैडङ्गकं नाम कोष्ठस्थक्रिमिनाशनम् ॥ २५२० ॥
दुर्नामाऽरुचिसद्वातं मन्दाग्निश्च विसूचिकाम् ।
शोथं शूलं ज्वरं हिक्कां श्वासं कासं विनाशयेत् ॥२५२१॥

र.स., र सु , र च , ध , क्रिमिरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, मरिच, जायफल, लवङ्ग, सोंठ, भुनासुहागा, पीपल, हरितालभस्म १–१ भाग, लोहभस्म ९ भाग, विडङ्गकाचूर्ण १८ भाग लेकर सवके वारीकचूर्णको पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ माशेकी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे कोष्ठक्रिमि, ववासीर, अरुचि, मन्दाग्नि, हैजा, शोथ, शूल, ज्वर, हिचकी, श्वास, कास इनसवको यह नष्टकरताहै ॥५१५॥

५१६ विडङ्गलोहम् (द्वितीयम्)

विडङ्गमुस्तत्रिफलादेवदारुषडूषणैः ।
तुल्यमात्रमयश्चूर्णं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ॥ २५२२ ॥
गुटिकां माषमात्राश्च कृत्वा खादेद्दिनेदिने ।
कामलापाण्डुरोगार्तस्सुखमाप्नुयते चिरात् ॥२५२३॥

र स , लो प , र सु , र र , ध , र क , र.च , च. द , यो म , र का , टो , पाण्डुकामलयो ।

१८०—र का मण्डूरवटकेतिनाम, तत्र लोहसम मण्डूर निक्षिप्तमिति विशेष । चरकीयनवायमन्चूर्णाद् देवदारुपिप्पलीमूलचव्यानि त्रीणि द्रव्याण्यधिकानि सन्ति गोमूत्रपाकश्चेति विशेष ।

भाषा—विडङ्ग, नागरमोथा, त्रिफला, देवदारु, षडूषण (पीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, मरिच) सव सम भागलेकर वारीकचूर्णकर सवकी वरावर लोहभस्म मिलाकर अठगुने गोमूत्रमें पकावे । गाढाहोनेपर १–१ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे पाण्डु और कामला नष्टहोतेहैं ॥ ५१६ ॥

५१७ विडङ्गलोहम् (तृतीयम्)

विडङ्गं त्रिफला व्योषं भस्म लोहन्तु तत्समम् ।
पुरातनगुडेनाऽथ लेहयेद्दिनसप्तकम् ॥
श्वयथुं नाशयेच्छीघ्रं पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥२५२४॥

र सं , र सु., ध., र. चं., पाण्डुरोगे ।

भाषा—विडङ्ग, त्रिफला, त्रिकटु समभाग, इनसवकीवरावर लोहभस्मलेकर सवकावारीकचूर्णकर रखछोड़े । पुरानेगुड़केसाथ १–१ माशेकीमात्रा लेनेसे शोथ, पाण्डु और हलीमक येसव नष्टहोतेहैं ॥ ५१७ ॥

५१८ विडङ्गादिलोहम् (चतुर्थम्)

विडङ्गत्रिफलामुस्तैः कणया नागरेण च ।
जीरकाभ्यां युतो हन्ति प्रमेहानतिदारुणान् ॥
लेहो मूत्रविकारांश्च सर्वानेव विनाशयेत् ॥ २५२५ ॥

र. स , र सु., र र., भै र., र. चं , च द , र. चि., र क प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—विडङ्ग, त्रिफला, नागरमोथा, पीपल, सोंठ, दोनोंजीरे, सव सममागलेकर वारीकचूर्णकर सवकीवरावर लोह-भस्म मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा प्रमेहहरानुपान-केसाथदेनेसे भयङ्कर समस्त प्रमेहोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५१८ ॥

५१९ विडङ्गादिलोहम् (पञ्चमम्)

विडङ्गं नागरं क्षारः काललोहरजो मधु ।
यवाऽऽमलकचूर्णश्च प्रयोगः स्थौल्यनाशनः ॥२५२६॥

च सं , अ सं., अ ह , टो यो म , र. का , र. कौं., र र., र. र स , ना वि., च द , मेदोऽधिकारे ।

भाषा—विडङ्ग, सोंठ, यवक्षार, लोहभस्म, इन्द्रजव और आवले समभागलेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह अति-स्थूलताको दूरकर मन्दाग्निप्रभृतिरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५१९ ॥

५२० विडङ्गादिलोहम् (षष्ठम्)

विडङ्गत्रिफलाकृष्णालोहचूर्णाऽऽज्यशर्कराः ।
सक्षौद्राः शीलिता घ्नन्ति वार्धक्यं पलितैः सह२५२७

ग नि., रसायने ।

भाषा—विडङ्ग, त्रिफला, पीपल, लोहभस्म सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा घी, शक्कर और मधुकेसाथ सेवनकरनेसे यह वलीपलितादिकको दूरकर बुढापेको नष्टकरताहै ॥ ५२० ॥

५२१ विदारणनृसिंहरसः

एकेन्दुवेदाऽष्टरविक्षितीशाः
सारं नवं भानुरसाः सुरेशाः ।

मनःशिलाखर्परसंयुतास्ते
जम्भाऽम्भसाऽऽपेष्य तु कूपिकायाम २५२८
विन्यस्य नालं परिरभ्य चैल-
मृत्स्नाऽऽवृतां तां लवणाऽऽख्ययन्त्रे।
भाण्डे पचेद्यामचतुष्टयं तं
सङ्गृह्य सूतं चणकप्रमाणम॥ २५२९॥
गौल्येन केनाऽपि वटी प्रदत्ता
निहन्ति सर्वान्विषमज्वरान्सा।
त्रिःसप्तकं गौल्यमतीव पथ्यं
तैलाऽम्लमुख्यं परिवर्जनीयम्॥ २५३०॥
अयं रसोऽपस्मृतिमाशु हन्या-
न्नस्यं विदध्यान्नृकपालतैलात।
पित्ते च वान्तिर्भवतीह किञ्चि-
द्धठात्प्रदद्याद्विषमज्वरार्तौ॥ २५३१॥
र.ग्र., टो, र वो., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—फौलाद और ताम्रभस्म १—१ भाग, पारदभस्म ४ भा, सुवर्णभस्म ८ भा, शुद्धमनसिल १२ भा., खपरिया १६ भाग लेकर वारीकचूर्णकर जमीरीकेरससे १—२ रोज मर्दनकर ६—७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें डालकर मुहबन्दकर लवणयत्रमें रखकर चारपहर अग्निदेकर चनेवरावरमात्रा हल्वा वगैरहकेभीतररख निगलवाकर २१ ग्रास ऊपरसे हल्वा खिलानेसे समस्तविषमज्वर और अपस्मारको यह नष्टकरताहै मनुष्यके कपालकेतलका नस्यदेना। पित्तप्रकृतियोंको इससे किसीकिसीको वमन होताहै। विषमज्वर और अपस्मारमें इसका खासप्रयोगकरना, तैल और खटाईसे परहेजकराना॥ ५२१॥

५२२ विदारणभैरवरसः

हरवीर्यं ताम्रवङ्गमर्कक्षीरेण मर्दितम्।
दोलायन्त्रे पचेद्याममेणपित्तेन भावितम्॥ २५३२॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं त्रिकटोरनुपानतः।
तत्क्षणेन विनश्येत्तु भुग्ननेत्रं सुदारुणम्॥
रसो विदारणख्यातो भैरवः प्राणरक्षकः॥ २५३३॥
वै चि, वा., भुग्ननेत्रसन्निपाते।

भाषा—पारद, ताम्र और वङ्गभस्म समभागलेकर आकके-दूधसे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय आकके दूधमें एकपहर स्वेदनकर हरिणकेपित्तसे एकभावनादेकर १—१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १—१ गोली त्रिकटुके अनुपानसेदेनेसे यह भयङ्कर भुग्ननेत्रसन्निपातको नष्टकरताहै॥ ५२२॥

५२३ विद्याधरमण्डूरम्

त्रिफलाव्योषजन्तुघ्नं दन्त्यग्निग्रन्थिकाऽमृताः।
कुष्ठं तेजोवती मुस्ता त्रिवृद्भल्लातसूरणौ॥ २५३४॥
शताह्वा नेचुलं बीजं भार्ङ्गी च गजपिप्पली।
शृङ्गी द्विजीरकं धान्यं वृद्धदारुकपत्रके॥ २५३५॥
तुम्बुरूणि भद्रदारु क्षाराश्च लवणानि च।
अजमोदा तालमूली विशाखा भूतिकं वचा॥२५३६॥
कोपातकी फलश्चैतद्वृहत्पत्रकगन्धकौ।
यावन्त्येतानि चूर्णानि मण्डूरं द्विगुणं तथा॥२५३७॥
गोमूत्रे त्रिफलाक्वाथे निषिक्तं श्लक्ष्णचूर्णितम्।
कन्दोत्कटभृङ्गवेरथावणीकेशराजकैः॥ २५३८॥
रसैः सवज्रवल्लीजैर्वन्ध्यातालोत्थसस्यजैः।
भावयित्वैव तच्चूर्णं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत्॥ २५३९॥
चतुर्गुणेन त्रिफलाक्वाथे दर्वीविलेपनात्।
उपयुञ्जीत मतिमान् खादेच्चैव यथावलम्॥ २५४०॥
ये च कुक्षिगता रोगा ग्रहणीमार्दवादयः।
एतद्विद्याधरं नाम मण्डूरं सर्वरोगजित्॥ २५४१॥
र का, अम्लपित्ताऽधिकारे।

भाषा—त्रिफला, त्रिकटु, विडङ्ग, दन्तीमूल, चित्रक, पिपलामूल, गिलोय, कुठ, तेजवलकीछाल, नागरमोथा, निसोत, भिलावा, सुरण, सोफ, वेतकेवीज, भारङ्गी, गजपीपल, काकड़ासींगी, दोनोंजीरे, धनिया, विधारा, पत्रज, तुम्बुल, देवदारु, तीनोंक्षार, पाचोंनमक, अजमोद, तालमूली, पुनर्नवा, खरजवाइन, वच, कड़वीतरोईकेफल, एरण्डकीजड़, शुद्धगन्धक, सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर गोमूत्र और त्रिफलाकेक्वाथमें बुझाकर भस्मकियाहुआ मण्डूर सबसे द्विगुणमिलाकर जङ्गलीसूरण, अदरख, गोरखमुण्डी, कालाभंगरा, हड़जोड़, वाझखेखसा, ताड़फल इनप्रत्येककेरसोंसे १—१ भावनादेकर अठगुना गोमूत्र और चौगुना त्रिफलाकाक्वाथ डालकर पकावे। जब कड़ाहीमें एकदम लगनेलगे तब उतारकर ठढाकरके १—१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १—१ गोली समय अथवा रोगोचिं-तानुपानकेसाथ देनेसे ग्रहणी और तमाम उदररोग नष्टहोतेहै॥

५२४ विद्याधरलोहम्

स्वच्छं पत्रीकृतं लोहं पलं लिप्तञ्च निर्वपेत।
लवणे माक्षिकोपेतैस्त्रिफलाकार्षिकोदके॥ २५४२॥
सुपिक्तं लोहमादाय पूतं सञ्चूर्ण्य यत्नतः।
पुटैर्यथाव्याधिहरैर्द्रव्यैः सम्पादितैः पचेत्॥ २५४३॥
पिण्डेन शर्कराक्वाथः कलम्व्या बहुपत्रतः।
करिकर्णपलाशस्य लवणैरप्यरुष्करैः॥ २५४४॥
चतुर्गुणे फलरसे लोहार्धं घृतयोजितम्।
पाचयेत्त्रिगुणस्तावद्यावत्सर्पि विमुञ्चति॥ २५४५॥
षोडशांशं क्षिपेत्तत्र ततः संशोधितं रसम्।
राजिकापिण्डमध्ये तु व्योषपिण्डस्य मध्यगम् २५४६
गवां मले तुपाग्नौ च वस्त्रावृतञ्च काञ्जिकैः।
सिद्धं सप्ताहमेवन्तु ततः सञ्चूर्णयेत्पुनः॥ २५४७॥
चिञ्चाकषायज्येष्ठाम्बुक्षीरनिर्वापितेन तु।
द्विगुणेन गन्धकशिलासुश्लक्ष्णरजसा पुनः॥ २५४८॥
पाठं विडङ्गमुस्ताग्नि त्रिफलाव्योषजं रजः।
लोहादेकीकृतं पिष्टमनुगुणं निधापयेत्॥ २५४९॥

ततो मात्रां प्रयुञ्जीत यथादोषं यथावयः।
आहारपरिहारौ च लोहान्तरसमानकम् ॥ २५५० ॥
कुलत्थञ्च कपोतञ्च करमर्दककाञ्जिके।
करीरं कारवेल्लञ्च षट् ककाराणि वर्जयेत् ॥ २५५१ ॥
विद्याद्विद्याधरमतं लोहं सर्वगदापहम्।
न सोऽस्ति रोगः कुक्षिस्थो यमिदं न निहन्ति च ॥
जलापकारानर्शांसि सर्वोपद्रववन्ति च।
अम्लकं ग्रहणीमेहान्गुल्मानुदरमष्टकम् ॥ २५५२ ॥

र र, अर्शोरोगे।

भाषा—शुद्धकरके वारीकपत्रेकियेहुए एकपल लोहको लवण और मधुकालेपदेकर गरमकरकरके त्रिफलाके १–१ कर्षपानीमें बुझावे जब इसका एकदमचूर्णहोजाय तब लेकर कपड़छानचूर्णकर अर्शोरोगहरदवाओंकेसाथ मर्दनकर पुटदे। एकदम भस्महोनेके-बाद मैनफल, शक्कर, नाड़ीशाक, शतावर, हस्तिकर्णपलाश, लवण, भिलावा इनप्रत्येकका लोहसे चौगुनाद्रव और आधा घी डालकर मन्दआंचसे पकावे। पानीजलजानेपर १६ वा हिस्सा पारदभस्म मिलाकर घोटकर गोलावनावे फिर राईकेकल्कके-वीचमेंरक्खे और त्रिकटुकाकल्क ऊपरलपेट ३–४ तह मलमलके कपड़ेमेंवाधकर दोलायन्त्र वनाय काञ्जीमें लटकावे और नीचे गोवर तथा तुषकी आंचदे। इसतरह ७ दिनतक पकावे। काञ्जी-सूखनेपर दूसरी डालताजाय। सातदिनकेवाद स्वाङ्गशीतल-होनेपर धीरजसे गोलेको निकालकर इमली, गजपीपल और गायकेदूधमें गरमकरके कईवारशुद्धकियाहुआगन्धक और मैन-सिलकाचूर्ण द्विगुण तथा विडङ्ग, नागरमोथा, चित्रक, त्रिफला और त्रिकटुसमभागकाचूर्ण चतुर्थांशमिलाकर १–२ दिन घोटकर स्निग्धभाण्डमें रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा रोग और रोगीका वलावल देखकर समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे जलदोष, समस्त उपद्रवयुक्तववासीर, अम्लपित्त, ग्रहणी, प्रमेह, गुल्म, उदररोग प्रभृतिसमस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै। पेटका ऐसाकोईभी रोग नहीं जिसे यह न मिटासके। इसमें आहार और परिहार अन्य-लोहोंकीतरह समझना। खासकर कुलथी, कवूतर, करोंदा, काञ्जी, करीर, करेला इनका परित्यागकरे ॥ ५२४ ॥

५२५ विद्याधराऽभ्रम् (प्रथमम्)

विडङ्गमुस्तात्रिफलागुडूच्यो
दन्तीत्रिवृच्चित्रकटुत्रिकञ्च।
प्रत्येकमेषां पिचुभागचूर्णं
पलानि चत्वार्ययसो मलस्य ॥ २५५४ ॥
गोमूत्रशुद्धस्य पुरातनस्य
यद्वाऽयसस्तानि चटाकिकायाः।
कृष्णाऽभ्रचूर्णस्य पलं विशुद्धं
निश्चन्द्रकं शुद्धमतीव सूतात् ॥ २५५५ ॥
पादोनकर्षं स्वरसेन खल्वे
शिलातले मन्युकणादलस्य।
सम्मर्द्य पश्चादतिशुद्धगन्ध-
पाषाणचूर्णेन पिचून्मितेन ॥ २५५६ ॥
युक्त्या ततः पूर्वरजांसि दत्त्वा
सर्पिर्मधुभ्यामवमर्द्य यत्नात्।
निधापयेत्स्निग्धविशुद्धभाण्डे
ततः प्रयोज्योऽस्य रसायनस्य ॥२५५७॥
प्राज्ञापको वाऽप्यथवा द्वितीयो
गव्यं पयो वा शिशिरं जलं वा।
पिवेदयं योगवरः प्रभूत-
कालप्रणष्टाऽनलदीपकश्च ॥ २५५८ ॥
रोगं निहन्यात्परिणामशूलं
शूलं तथाऽन्नद्रवसञ्ज्ञकञ्च।
यक्ष्माऽम्लपित्तं ग्रहणीं प्रवृद्धां
जीर्णज्वरं लोहितपित्तमुग्रम् ॥
न सन्ति ये यान्न निहन्ति रोगा-
न्योगोत्तमः सम्यगुपास्यमानः ॥२५५९॥

र. सं., र चि, रसायनस, ध, भै र., नि र, र सि, र र., र.क., र सु, र का, शूलाऽधिकारे।

भाषा—विडङ्ग, नागरमोथा, त्रिफला, गिलोय, दन्तीमूल, निसोत, चित्रक और त्रिकटु १–१ कर्ष, १०० वर्षसे पुराना और गोमूत्रमें शुद्धकियाहुआ मण्डूर अथवा गरमकरके घनमारते समय चटककर उड़ेहुए लोहके वारीककण ४ पल, कृष्णाऽभ्रक-की निश्चन्द्रभस्म १ पल, अत्यन्तशुद्धपारा १२ माशे, शुद्ध-गन्धक १ कर्ष लेकर सवको पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय १–२ पहर शुष्कमर्दनकर धतूरे और पीपलकेपत्तोंके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर सुखाकर इसकी वरावरका घी और मधु मिलाकर घोटकर चिकने वर्तनमें रखछोड़े। ७ या १४ दिन वीतनेपर इसमेंसे १ अथवा २ माशा रोग और रोगीका वला-वल देखकर गायकेदूध अथवा ठढेजलकेसाथ देवे। इसकेसेवनसे चिरकालसे नष्ट अग्नि, परिणामशूल, साधारणशूल, अन्नद्रवशूल, राजयक्ष्म, अम्लपित्त, वढ़ीहुई ग्रहणी, जीर्णज्वर, रक्तपित्त, इत्यादिसमस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५२५ ॥

५२६ विद्याधराऽभ्रम् (बृहत्) २

शुद्धं सूतं तथा गन्धं फलत्रयकटुत्रयम्।
विडङ्गं मुस्तकं दन्ती त्रिवृता चित्रकं तथा ॥२५६०॥
आखुपर्णी ग्रन्थिकञ्च प्रत्येकं कर्षसम्मितम्।
पलं कृष्णाऽभ्रचूर्णस्य मृताऽयश्च चतुर्गुणम् ॥२५६१॥
घृतेन मधुना पिष्ट्वा वटिकां कोलसम्मिताम्।
एकैकां वटिकां खादेत्प्रातरुत्थाय नित्यशः ॥ २५६२ ॥
अनुपानं गवां क्षीरं नीरं वा नारिकेलजम्।
सर्वशूलं निहन्त्याशु वालपित्तभवं तथा ॥ २५६३ ॥
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव तथैव सान्निपातिकम्।
परिणामोद्भवं शूलमामवातोद्भवं तथा ॥ २५६४ ॥

कार्श्यं वैवर्ण्यमालस्यं तन्द्राऽरुचिविनाशनम् ।
साध्याऽसाध्यं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥
र.सं., र चं , व., र सु , शूलाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, त्रिफला, त्रिकटु, विडङ्ग, नागरमोथा, दन्तीमूल, निशोत, चित्रकमूल, मूषाकर्णी, पिपलामूल, येसब १–१ कर्ष, कृष्णाभ्रकभस्म १ पल, लोहभस्म ४ पल लेकर सबका वारीकचूर्णकर मधु और घृतकेसाथ मिलाकर बेरबरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली प्रात.काल गायकेदूध अथवा नारियलकेजलकेसाथलेनेसे समस्तशूल, परिणामशूल, आमवातोद्भवशूल, कृशता, वैवर्ण्य, आलस्य, तन्द्रा, अरुचि इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ५२६ ॥

५२७ विद्याधरीगुटिका

गन्धम्लेच्छरसाऽमृताऽर्ककटुका व्योषं त्रिवृद्दन्तिका,
हेमाह्वा त्रिफला च टङ्कणमतः सर्वैः समैस्तिन्तिडी ।
सम्यक् पक्वफलैस्त्वगस्थिरहितैस्सम्मर्द्य माषोन्मिता,
पीता केन नवज्वरेषु गुटिका विद्याधरी शस्यते २५६६
र प , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, शिगरिफ, पारा और वछनाग, ताम्रभस्म, कुटकी, त्रिकटु, निसोत, दन्तीमूल, सत्यानाशीकीजड़ अथवा रेवनचीनी, त्रिफला, भुनासुहागा येसव १–१ भाग, सवकीवरावर पकीइमलीका गूदा लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय इमलीकेसाथ अच्छीतरह घोटकर १–१ माशेकी गोलियां वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली जलकेसाथ देनेसे यह नवज्वरोंको नष्टकरतीहै ॥ ५२७ ॥

५२८ विद्याधररसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं तथा गन्धं तालकञ्च शिलाजतु ।
खर्परीताम्रचूर्णानि प्रत्येकं कर्षमात्रकम् ॥ २५६७ ॥
तुलसीद्रवकै र्यामं यामं निर्गुण्डिकाद्रवैः ।
पिष्ट्वा तत्पिण्डमादाय चणमात्रवटीकृतम् ॥ २५६८॥
एकैकं भक्षयेच्चाऽनु मागधीसितया सह ।
नूतने विषमे चैव ज्वराऽऽघाते प्रयोजयेत् ॥ २५६९ ॥
वमनान्ते विरेके च पथ्यं क्षीरौदनं तथा ।
विद्याधररसो नाम सद्योज्वरनिवारणः ॥ २५७० ॥
र क यो , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल, शिलाजीत, खपरिया और ताम्रभस्म १–१ कर्षलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय १–१ पहर तुलसी और निर्गुण्डीकेरसोंसे मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियेंवनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पीपल और शक्करकेसाथदेनेसे नवीन, विषम प्रभृति समस्तज्वरोंको यह नष्टकरताहै । वमन और विरेचन होनेकेवाद दूधभात खानेकोदेना ॥ ५२८ ॥

५२९ विद्याधररसः (द्वितीयः)

शिलातालताप्यानि गन्धोऽथ शुल्वं
मृतं शुद्धसूतश्च तुल्यांशमेनत् ।
कणावारिणा वज्रिनीरेण मर्द्यं
दिनैकं रसो याति विद्याधराऽऽख्याम् २५७१
तमर्द्धनिष्कमात्रकं विलिह्य सारघेण तु ।
पिवेच्च गोजलं नरः सुतीव्रगुल्मशूलवान् ॥ २५७२ ॥
वै र., वृ यो.त., शा सं , र क ल., वै क., र. चि., र. मं , र र , र.चं , नि र., र. प्र , ध., वै चि , रसायनसं., र. कौ , र. चि , भै र , चि. र. भ , भै.सा., व रा., र क , टो , र म मा , र. र दी , र. को , र शं., र सु , र. सं., र.र.स , र का , यो. म , र र कौ , ना वि , गुल्माऽधिकारे ।

टि०—"रक्तगुल्मे रजोरोधे स्त्रीभि पेयोऽनुपानक । तिलक्काथो हितो भार्गी दार्वीन्योषयुटै र्युत ॥" इत्यधिक पाठो भैषज्यसारामृतसहिताया दृश्यते । कुत्रचित्ताम्रस्थाने स्वर्णं नियोजितम् ।

भाषा—शुद्धमैनसिल, हरिताल, स्वर्णमाक्षिक, गन्धक और पारा, ताम्रभस्म सवसमभागलेकर पीपलकेक्काथ और मेहुण्डकेदूधसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथलेकर गोमूत्रपीनेमे तीव्रगुल्म और शूल नष्टहोतेहै । यदि एकगोलीसे काम न हो तो दो गोलीदेना ॥ ५२९ ॥

५३० विद्याधररसः (तृतीयः)

रसोगन्धस्ताम्रं त्रिकटुकटुकीटङ्कणवराः,
त्रिवृद्दन्ती हेम द्युमणिविषमेतत्समसिदम् ।
समस्तैस्तुल्यं स्याद्विमलजयपालोद्भवरजः,
ततः स्नुक्क्षीरेण प्रचुरमृदितं दन्तिसलिलैः ॥२५७३॥
द्विगुञ्जाऽस्य प्रौढं जयति वटिका साममतुलं,
ज्वरं पाण्डुं गुल्मं ग्रहणिगुदकीलोद्भवरुजः ।
मरुच्छूलाऽजीर्णं प्रवलमथ सामं क्रिमिगदं,
विवद्धप्लीहानं प्रवलमपि विद्याधररसः ॥ २५७४ ॥
र सं., र क ल , र र दी , भै. र., वृ यो. त., र सु , ध , र. को , र शं , रसायनसं , र म मा , र का , चि र , र र स , ज्वराऽधिकारे । र शं , र. क ल , रसायनसं , र म मा., र. का., यो. त , चि र , र र स , र को. एषु वृ. यो त , र सु एतयोर्द्वितीयस्थाने विनोदविद्याधरेति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, त्रिकटु, कुटकी, भुनासुहागा, त्रिफला, निसोत, दन्तीमूल, धतूरेकेवीज, आककीजड़, शुद्ध वछनाग येसव समभाग, इनसवकीवरावर शुद्धजमालगोटा लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय थूहरकेदूध और दन्तीमूलकेस्वरससे ३–३ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे साम प्रौढज्वर, पाण्डु, गुल्म, ग्रहणी, ववासीर, वायु, शूल, अजीर्ण, आमसहित क्रिमिरोग, वद्धमूल प्लीहा इनसवको यह नष्टकरताहै ५३०

५३१ विद्यावल्लभरसः

रसो म्लेच्छशिलातालाश्चन्द्रद्वयग्न्यर्कभागिकाः ।
पिष्ट्वा तान्सुपवीतोयैस्ताम्रपात्रोदरे क्षिपेत् ॥२५७५॥

न्युब्जशरावे संरुद्ध्य वालुकामध्यगं पचेत्।
स्फुटन्त्यो व्रीहयो यावत्तच्छिरस्थाः शनैःशनैः २५७६
सञ्चूर्ण्य शर्करायुक्तं द्विवल्लं सम्प्रयोजयेत्।
नाशयेद्विषमाख्यञ्च तैलाम्लादि विवर्जयेत्॥ २५७७॥

र चि, र सु., भै र, रसायनसं, र गं, र. का, यो म, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा १ भा, शिंगरिफ २ भा, मैनसिल ३ भा., हरिताल १२ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर करेलेकेरससे एकदिन मर्दनकर इसकी बराबरवजनके ताम्रपात्रमेंलेपकर कुल्हड़ीमें उल्टारख शरावसम्पुटसे वन्दकर ४–५ कपड़मिट्टीदेकर अच्छीतरहसूखनेपर ४–४ अङ्गुल चारोंतरफ वालुकादेकर चूल्हेपर अग्निदेवे। ऊपरसे परीक्षार्थ थोड़े धान डालदे जब धान फूटनेलगें तब आच वन्दकरके कोयलोंपर रहनेदे। स्वाङ्गशीतल-होनेपर निकालकर ताम्रसम्पुटकेसाथ वारीकपीसकर रखले। इसमेंसे ६–६ रत्ती शक्करकेसाथ देनेसे यह तमामविषमज्वरोंको नष्टकरताहै। इसमें तैल, खटाई वगैरह अपथ्यहै॥ ५३१॥

५३२ विद्यावागीशरसः

मृतसूताऽभ्रनागानां स्वर्णं तुल्यं प्रकल्पयेत्।
महानिम्बस्य चूर्णन्तु चतुर्भिः सममाहरेत्॥ २५७८॥
मधुना लेहयेन्माषं लालामेहप्रशान्तये।
सक्षौद्रं रजनीचूर्णं लेह्यं निष्कद्वयं तथा॥
असाध्यं नाशयेन्मेहं विद्यावागीशको रसः॥ २५७९॥

र स, र क ल, र सु, र चि, रसायनसं, र को, र च, यो म, र का., र र, व रा, चि क्र, प्रमेहे।

टि०—यो म, र का एतयो र्नागस्थाने वङ्गं नियोज्य स्वर्णं निष्कामितम्। रसकामधेनौ अस्यैव योगस्य त्रय पाठा विन्यस्ता। तत्र एकस्य विद्यावागीश्वरेति द्वितीयस्य विद्यावङ्गेश्वरेति तृतीयस्य तारकेश्वरेति त्रीणि नामानि स्थापितानि, एतत्कृतेरछात्राणा बुद्धिव्याकुलीकरणाऽतिरिक्त नाऽस्ति किञ्चित्फलमिति बोद्धव्यम्। र र, व रा, चि क्र एषु ग्रन्थेषु "मृतसूताऽभ्रनागञ्च स्वर्णं तुल्य प्रकल्पयेत्।" इत्यस्य स्थाने "सूत मृताऽभ्रवङ्गाभ्यां तुल्य भाग प्रकल्पयेत्" इति पाठो दृश्यते तत्र भ्रमाद्वा प्रमादाद्वा स पाठ येनकेनाऽपि प्रकल्पित इति प्रतिभाति, नाम च र र, व रा एतयो र्नित्यारोगेश्वर इति, त्रिकिंत्साक्रमकल्पवल्ल्यान्तु मेहारीति नाम।

भाषा—पारा, अभ्रक और नागभस्म १–१ भाग, सुवर्णभस्म सबकीबराबर लेकर बकायनकेबीजोंका चूर्ण सबकीबराबर-मिलाय १–२ दिन सूखे खरलकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा मधुकेसाथ देनेसे असाध्यलालामेह नष्टहोताहै। इसकेऊपर ८ माशे हल्दीकाचूर्ण मधुमें मिलाकर खिलावे॥ ५३२॥

५३३ विद्यावागीश्वरीवटी (प्रथमा)

व्योमसत्त्वं मृतं वज्रं स्वर्णतारार्कमुण्डकम्।
तीक्ष्णं कान्तं तालकञ्च सत्त्वं कृत्वा विमिश्रयेत्२५८०
सूक्ष्मं चूर्णं समं सर्वं चूर्णार्द्धं शुद्धपारदम्।
त्रिदिनं चाम्लवर्गेण मर्दितं चान्धितं धमेत॥२५८१॥
विद्यावागीश्वरी ख्याता गुटिका वत्सरावधि।
यस्य वक्त्रे स्थिता तस्य जरा मृत्यु र्न विद्यते२५८२
कर्षं ज्योतिष्मतीतैलं क्रामणार्थं पिबेत्सदा।
वाङ्मति र्जायते धीरो जीवेच्चन्द्राऽर्कतारकम् २५८३

र खं, र का., रसायने।

भाषा—अभ्रकसत्त्व, हीरा, सुवर्ण, रजत, ताम्र, मुण्ड, फोलाद, कान्त, हरिताल इनकेसत्त्वोंकीभस्म समभागलेकर वारीकचूर्णकर इनसबसेआधा शुद्धपारा मिलाकर एकपहर शुष्कमर्दनकर किसीभी खटाईसे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय अन्धमूषामें वन्दकर धमनकरनेसे इसकी गोली तैयारहोगी। इसको एकवर्षतक मुहमें रखनेसे जरा और मृत्युको जीतताहै। इसका शरीरमें अनुक्रमणहोनेकेलिये एककर्ष मालकागनीका तैल प्रतिदिनपीवे। इसकेसेवनसे बृहस्पतिकेसदृश बुद्धि होजातीहै॥५३३॥

५३४ विद्यावागीश्वरीवटी (द्वितीया)

शुद्धं सूतं विषञ्चाऽभ्रं विषटङ्कणगन्धकम्।
मृतलोहाऽष्टकञ्चैव कर्षमात्रञ्च खल्वके॥ २५८४॥
जम्बीरोन्मत्तवासाभिस्त्रिकटुत्रिफलोद्भवैः।
यामसमात्रन्तु प्रत्येकं मर्दयित्वा तु गोलकम्॥ २५८५॥
काचकूप्यां निवेश्याऽथ सप्तवस्त्रमृदा वहिः।
लवणैः पूरिते यन्त्रे त्रिदिनं मन्दवह्निना॥ २५८६॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य गुञ्जामात्रं प्रदापयेत्।
आर्द्रकस्याऽनुपानेन मञ्जिष्ठाया निकृन्तनम्॥
विद्यावागीश्वरो नाम्ना रसेन्द्रः परिकीर्तितः॥२५८७॥

व. रा, प्रमेहे।

भाषा—शुद्धपारा और वछनाग, अभ्रकभस्म, शुद्धसोमल, भुनासुहागा, गन्धक, आठोंलोहोंकीभस्म १–१ कर्षलेकर नीलवर्णकज्जलीकर जभीरी, धतूरा, अडूसा, त्रिकटु, त्रिफला इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंमे १–१ पहर मर्दनकर गोलाबनाय ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें रख मुंहवन्दकर लवणयन्त्रमें ३ दिनकी मन्दाग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर १–१ रत्ती अदरखकेसाथ देनेसे यह मञ्जिष्ठमेहको नष्टकरताहै॥ ५३४॥

५३५ विरेचनवटी

पारदं गन्धकं विश्वं टङ्कणं विषमुष्टिकम्।
स्वर्जिका मरिचं कृष्णा समभागानि कारयेत् २५८८
विडङ्गञ्चाऽभया दन्ती त्रिवृत्रेपालकन्तथा।
पूर्वचूर्णसमान्येव भृङ्गद्रावेण भावयेत॥ २५८९॥
गुञ्जाप्रमाणवटिका भक्षिता शीतवारिणा।
विरेचयत्यवश्यं हि क्रिमिरोगाञ्ज्वरानपि॥
विनाशयति वै सम्यक् सत्यं गुरुवचो यथा॥२५९०॥

र प्र. सु, विरेचने।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा और कुचिला, सोंठ, सज्जी, मरिच, पीपल येसब १–१ भाग, विडङ्ग, हर्रे, दन्तीमूल,

निसोत, शुद्धजमालगोटा, येसवमिलकर ८ भाग लेकर सवका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरेके-रससे एकदिनमर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलिया वनाकररखछोड़े। इनमेंमे १–१ गोली ठंढेजलकेसाथ देनेसे समस्तक्रिमिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५३५ ॥

५३६ विरेचनरसः

पातितात्स्वेदितात्सूतात्पलं गन्धकतः पलम् ।
तित्तिरीफलतो ग्राह्यं पलश्च त्रिफलात्रयम् ॥२५९१॥
कङ्कुष्ठकात्कर्षमेकं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ।
पक्वं निम्बुकतोयेन दिनमेकं निरन्तरम् ॥ २५९२ ॥
शम्याकफलसारेण मर्दयेत्प्रहराऽष्टकम् ।
त्रिवृत्काथेन दन्त्याश्च रसेनैव प्रमर्दयेत् ॥ २५९३ ॥
एवं सम्मर्दितात्सूताच्छिद्ध्याद्वटिकास्ततः ।
वदरीफलमानेन छायायां शोषयेद्बुधः ॥ २५९४ ॥
वटी सन्धारयेद्यत्नाच्छीतवातविवर्जिताम् ।
दद्यादुदरिणे चैकां कोष्णनीरेण वैद्यराट् ॥ २५९५ ॥
आमान्तिकं रेचयेत्तं स्तम्भनं दुग्धभक्ततः ।
विंशद्वारप्रयोगेण नश्यते च जलोदरम् ॥ २५९६ ॥
अयं विरेचनो नाम रसः श्रेष्ठतमो मतः ।
देवीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥२५९७॥

रसालं, उदराऽधिकारे।

भाषा—ऊर्द्धादि पातनकर शुद्धकियाहुआपारा और गन्धक, शुद्धजमालगोटा १–१ पल, त्रिफला ३ पल, कङ्कुष्ठ (मुर्दासङ्ग अथवा रेवनचीनी) १ कर्ष लेकर सबका वारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय पकेनीवू, अमिलतास, निसोत, दन्ती इनके स्वरस अथवा काथोंसे १–१ दिनमर्दनकर जंगली वेरवरावर गोलिया वनाय छायामें सुखाकर रखछोड़े। इनमें शीत और वायुका स्पर्श न हो । इनमेंमे १–१ गोली गरमजलकेसाथदेनेसे आमनिकलनेतक रेचनहोकर उदररोग नष्ट-होतेहैं। अधिकरेचनहोनेपर दूधभात देनेसे वन्दहोंगे। ऐसे २० वार प्रयोगकरनेसे जलोदर नष्टहोनाहै ॥ ५३६ ॥

५३७ विश्वतापहरणरसः

पथ्याकणाऽर्कविषतिन्दुकदन्तिवीज-
तिक्तात्रिवृद्रसवलीन् सदृशान्विमर्द्य ।
धूर्ताम्बुना सकलवासरमेष सूतः
स्याद्विश्वतापहरणोऽभिनवज्वरघ्नः २५९८

वै जी, र ल, र सु, र को, रसायनसं, चि मा, नि र, वै वि, र वो, रस स, र क ल, यो र, र पा, ज्वराऽधिकारे।

टि०—यो र त्रैलोक्यतापहरणेति नाम । र र, रसचि, र श, र स, र का, र र म, टो, र र दी, र क, यो म, र म मा, र पा एतेषु तथाच रसायनस, र को, र सु, र क ल, एतेषा द्वितीयस्थाने त्रैलोक्यडम्बरेति नाम, तत्र भावनाया धूर्ताम्बुस्थाने वज्रीदुग्ध दृश्यते । रसकामधेनौ कणास्थाने वरा दृश्यते तत्रैव ज्वरध्वान्तदिवाकर नाम्ना एको रसो निहितोऽस्ति । तत्राऽधिकतया नलिका नियोजिता । वज्रीक्षीरेण सम्मर्द्य पश्चादुन्मत्तवारिणा । आर्द्रकस्य रसेनैवेति पद्येन वज्रीक्षीराऽऽर्द्रकयो र्भावनाभ्याञ्च विशेषोऽस्ति, अतस्त विशेषमत्ररसे वर्धयित्वा तस्याऽत्रैवाऽन्तर्भाव समुचित ।

भाषा—हर्रे, पीपल, ताम्रभस्म, शुद्धकुचिला और जमालगोटा, कुटकी, निसोत, शुद्ध पारा और गन्धक सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय धतूरेकेरससे एकदिनरात मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से ४ गोलीतक रोग और रोगीकी शक्तिका विचारकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह नवीनज्वरको नष्टकरताहै ॥ ५३७ ॥

५३८ विश्वाधारापर्पटीरसः (सर्वेश्वरपर्पटी)

रसोपरसलोहानि कार्षिकाणि पृथक्पृथक् ।
तेषु लोहानि सर्वाणि पाषाणकठिनानि च ॥ २५९९ ॥
घनसत्त्वञ्च तत्सर्वं भस्मीकृत्य प्रयोजयेत् ।
रत्नानि वल्लतुल्यानि भस्मीकृत्य च सर्वशः ॥ २६०० ॥
एभिश्चतुर्गुणः सूतो गन्धस्तस्माच्चतुर्गुणः ।
कृत्वा कज्जलिकां ताभ्यां क्षिपेल्लोहस्य भाजने ॥ २६०१ ॥
प्रद्राव्य वदराङ्गारे निक्षिपेत्तदनन्तरम् ।
रसोपरसलोहानां रत्नानामपि सर्वशः ॥ २६०२ ॥
चूर्णं भस्म विनिःक्षिप्य काष्ठेनाऽऽलोड्य मेलयेत् ।
ततश्च षोडशांशेन मिश्रयित्वाऽरुणं विषम् ॥२६०३॥
गोमयोपरि निक्षिप्य निक्षिपेत्कदलीदले ।
पर्णाऽन्येन तु रम्भाया समाच्छाद्याऽतियत्नतः २६०४
कराभ्याञ्चिपिटीकृत्य क्षिपेदुपरि गोमयम् ।
ततः शीतं समाकृष्य चूर्णयित्वा च पर्पटीम् ॥ २६०५ ॥
विनिक्षिपेत्करण्डान्तर्युञ्ज्याच्च रसभेषजम् ।
विश्वाधाराऽभिधानेयं पर्पटी परिकीर्तिता ॥ २६०६ ॥
सर्वरोगविनाशाय नन्दिना परिकीर्तिता ।
रक्तियुक्तिसमानेयं मरिचार्द्रसमन्वितः ॥ २६०७ ॥
विद्रव्यां षट्प्रकारायां देया वृद्धिषु सप्तसु ।
क्षयरोगेषु सर्वेषु पाण्डुरोगे विशेषतः ॥ २६०८ ॥
ग्रहणीरोगभेदेषु गुल्मेष्वष्टविधेषु च ।
मूलरोगेषु शोफेषु प्लीहोत्थे यकृदामये ॥ २६०९ ॥
प्रमेहे सोमरोगेषु प्रदरे जठरार्तिषु ।
विशेषेणैव मन्दाग्नौ सर्वहिक्कावृतेषु च ॥ २६१० ॥
अनुक्तेष्वपि रोगेषु तत्तदौचित्ययोगतः ।
रसोऽयं किल दातव्यः शिवतुल्यपराक्रमः ॥ २६११ ॥
यद्यद्द्रव्यमसात्म्यं हि जन्मना सह जायते ।
तत्सर्वं सात्म्यमायाति रसस्याऽस्य निषेवणात् २६१२
पीत्वा हालाहलं तोयं पर्वताग्रे पयोघृतम् ।
सलिलं तैलतस्तुल्यं तज्जलं स्यात्सुधासमम् ॥२६१३॥
भुक्तं यदि च पाषाणं जीर्यते तत्क्षणात्ततः ।
न तस्मिन्नियतं कापि विहाराहारकर्मणि ॥ २६१४ ॥

र को, र र स, र र कौ, सर्वरोगाऽधिकारे।

टि०—र र स , र र कौ एतयो मर्वेश्वरपर्पटीति नाम । एकस्यैव योगस्य नानानामभिर्व्यवहार सङ्ग्रहकाराणा बुद्धिजाड्य द्योतयति ।

भाषा—रस (शिंगरफ, सोनामाखी, रूपामाखी, चपल, तूतिया, कान्तपापाण, कान्तलोह, वैक्रान्त और नीलम), उपरस (गोदन्ती हरिताल, गन्धक, मैनसिल, तवकी हरिताल, कङ्कुष्ठ (मुर्दासङ्ग), कसीस और फिटकडी), लोह (सुवर्ण, चादी, पीतल, तावा, सीसा, रागा, लोह और कासा), अभ्रकसत्त्व, इनसवकीभस्में १–१ कर्प, सम्पूर्णरत्नों (माणिक, मोती, मूंगा, पन्ना, पुखराज, हीरा, नीलम, गोमेद, लसनिया वगैरह) की भस्में ३–३ रत्ती, इनसवसे चौगुना शुद्ध पारा और पारेसे चौगुना गन्धकलेकर पहिले पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर घीपुतीहुईलोहेकीकड़ाहीमें डालकर वेरकेकोयलोंपर गलाकर रस, उपरस, लोह और रत्नोंकीभस्में क्रमसे मिलाकर लकड़ीमेचलाकर मिलावे । इसकेवाद समस्तसे १६ वा हिस्सा शुद्ध लालवछनाग मिलाकर ताजे गोवरपर रक्खेहुए केलेकेपत्तेपर ढालकर दूसरे केलेकेपत्तोंमे दवाकर गोवरसे ढकदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती मरिच और अदरखकेसाथदेकर रोग और रोगीकी औचिती समझकर २–२ चावल रोज़ाना वढावे । इसतरहदिनभरमें ३॥ रत्ती या ४ रत्तीतक वढाकर वहीं मात्रा स्थिर रक्खे इसे आरोग्यलाभहोनेतक कायमरक्खे । अथवा १० दिनकेवाद ह्रासकर वृद्धिकरे परन्तु इसक्रमकी अपेक्षा आरोग्यलाभहोनेतक स्थिरमात्रारक्खे और आरोग्यलाभहोनेकेवाद धीरें २ ह्रासकर योगको वन्दकरे । इसतरहसेवनकरनेसे ६ प्रकारकीविद्रधि, ७ प्रकारकी वृद्धि, समस्तक्षयरोग,विशेपकर पाण्डु, ग्रहणीभेद, ८ प्रकारके गुल्म, अर्श, शोफ, प्लीहा, यकृत्, प्रमेह, मोमरोग, प्रदर, उदररोग, मन्दाग्नि, हिचकी इत्यादि तमामरोग नष्टहोतेहैं । अनुपान समय अथवा रोगोचिती देखकर नियतकरे । जो जो द्रव्य जन्मसे असात्म्यहों वेसव इसके सेवनसे सात्म्य होजातेहैं । पर्वतोंमें हलाहलभी पीलियाहो तो वह दूध, घीका कामकरताहै । तैलकेसदृशजल पीनेमें आवेतो वहभी अमृतका काम करताहै । भूलकर खाया-हुआ पत्थरभी हजमहोजाताहै इसलिये आहारविहारमें कोईभी परहेज नियत नहींहै ॥ ५३८ ॥

५३९ विश्वमूर्तीरसः (प्रथमः)

स्वर्णनागार्कपत्राणां भागाः पञ्च पृथक् पृथक् ।
त्रयाणां द्विगुणः सूतो जम्बीराऽम्लेन मर्दयेत् २६१५
पिष्टिं तां निम्बुके क्षिप्त्वा दोलायन्त्रे दिनद्वयम् ।
पाचयेदारनालान्तस्तस्मादुद्धृत्य चूर्णयेत ॥ २६१६ ॥
ऊर्ध्वाऽधो गन्धकं दत्त्वा तालकञ्च रसोन्मितम् ।
लोहसम्पुटगं कृत्वा क्षिप्त्वा चैव प्रपूरयेत् ॥ २६१७ ॥
लवणस्य च चूर्णेन त्र्यहं मन्दाग्निना पचेत ।
आदाय चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं दद्याद्गुञ्जाचतुष्टयम ॥ २६१८ ॥
आर्द्रकस्य रसोपेतं शीघ्रं पथ्यं न दापयेत ।
विश्वमूर्तीरसो नाम्ना सन्निपातादिरोगजित ॥२६१९॥
अर्कमूलत्वचः क्वाथं मरिचै मिश्रितं पिवेत् ।
दशमूलकपायं वा ह्यनुपानं सुखावहम् ॥ २६२० ॥

र चि , र को , यो म., रसायनस., र. का , र क. यो., र. सु , ज्वराऽधिकारे । योगमहार्णवे त्रयाणा द्विगुणस्थाने त्रयाणा त्रिगुण इति पाठ ।

भाषा—सुवर्ण, नाग और ताम्रकेवारीकपत्र ५–५ भाग, पारा ३० भाग लेकर खरलमें डाल जंभीरीकेरसमे घोटे । पत्रोंपर सवपारा चढजानेपर गोलावनाय नीवूके अन्दररख दोलायन्त्रमें काञ्जीमे दो दिनतक स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पारेके वरावर शुद्धगन्धक और हरितालका चूर्ण लोहेकेसम्पुटमें पत्रोंके नीचे ऊपररख सम्पुटपर ३–४ कपड़मिट्टी देकर लवणयन्त्रमें वन्दकर ३ दिनकी मन्दाग्निमे पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्ती अदरखके रसकेसाथ देनेसे सन्निपातादि समस्तरोग नष्टहोतेहैं । इसकीमात्रादेनेकेवाद तुर्त पथ्य न दे, नहींतो वमनहोकर हैरानी होगी । सन्निपातमें आककी जड़काक्वाथ अथवा दशमूलकाक्वाथ मिर्चे डालकरदेना ॥ ५३९ ॥

५४० विश्वमूर्तीरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं ताम्रभस्म मनःशिला ।
चन्दनं त्रिफला वासा कुष्ठजीरकदीप्यकम् ॥ २६२१ ॥
एतानि समभागानि हंसपादीरसेन च ।
तत्तत्सर्वं खल्वमध्ये त्रिदिनं मर्दयेद्भिपक् ॥ २६२२ ॥
ततस्तु गोलकं कृत्वा वज्रमूपान्तरे क्षिपेत् ।
भूधरे यन्त्रके पाच्यं स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ॥
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यमुदर्दं नाशयेद्ध्रुवम् ॥ २६२३ ॥

व रा , वै चि , उदर्दे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और मैनसिल ताम्रभस्म, सफेदचन्दन, त्रिफला, अडूसा, कुठ, जीरा, अजवाइन, येसव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय हंसराजकेरससे ३ दिन मर्दनकर गोलावनाय वज्रमूपामें वन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर भूधरयन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह उदर्दको नष्टकरताहै ॥ ५४० ॥

५४१ विश्वम्भरोरसः (प्रथमः)

भूशिग्रुवज्रस्नुह्यर्ककुवेराक्षाऽग्निमूलकम् ।
भूधात्रीविपभृङ्गुञ्जाकरञ्जांशान् समूलकान् ॥ २६२४ ॥
एतेषां भूपुटेनैव तैलं ग्राह्यं विचक्षणैः ।
सूतशुल्वद्वयोर्भस्म हरितालञ्च गन्धकम् ॥ २६२५ ॥
त्रिकटुत्रिफलाहिङ्गुमाक्षिकञ्च समांशकम् ।
नागवङ्गभवं भस्म विपं हिङ्गुलमेव च ॥ २६२६ ॥
एतानि पटपूतानि तेन तैलेन मेलयेत् ।
नागवल्लीदलेनैव वल्लमात्रं प्रयोजयेत् ॥ २६२७ ॥

अथाऽऽर्द्रकरसोपेतसैन्धवेन प्रयोजयेत् ।
अष्टशूलादिगुल्मानि नाशयेदेकमात्रतः ॥ २६२८ ॥
वातान्दुष्टान्पित्तरोगानपस्मारराननेकशः ।
पीनसादिश्लेष्मरोगान्ग्रन्थिरोगांश्च दारुणान् ॥२६२९॥
अश्मरीमूत्रकृच्छ्रादिप्रमेहान्विषमज्वरान् ।
नाशयेच्च गदान्सर्वानन्यानपि निहन्ति च ॥
विश्वम्भररसो नाम्ना सर्वरोगहरः स्मृतः ॥ २६३० ॥

र क यो , र कौ (ज्ञा),

भाषा—सहिजनकेबीज, सेहुण्ड, अङ्कुलिया थूहर और आक इनकादूध, करंज, चित्रकमूल, भुईआवला, वछनाग, सफेद-गुञ्जा, घुड़करञ्जका पञ्चाङ्ग, मूलीकेवीज, सवसमभागलेकर जव-कुटचूर्णकर थूहर और आकके दूधमें मिलाय सुखाकर पातालयन्त्रसे तैलनिकाले फिर पारा और ताम्रभस्म, शुद्धहरिताल और गन्धक, त्रिकुटु, त्रिफला, हींग, सोनामाखी, नाग और वङ्ग-भस्म, वछनाग, शिगरिफ येसव समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारे, गन्धक और हरितालकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय पूर्वतैल-की १–२ भावनाएं देकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती पानमें रखकर देवे अथवा सैन्धव मिलेहुए अदरखकेरसकेसाथ देवे इससे ८ प्रकारकेशूल, गुल्म, दुष्टवातरोग, अपस्मार, पीनस वगैरह कफरोग, दारुणग्रन्थिरोग, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, विषमज्वर इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ५४१ ॥

५४२ विश्वम्भरोरसः

(स्वच्छन्दभैरवः, कासंसहारभैरवः) २

शुद्धं सूतं विषञ्चाऽभ्रं हिङ्गुलं गन्धतालकम् ।
तुल्यं तुल्यं खल्वमध्ये क्षिपेन्मर्द्य दिनद्वयम् ॥ २६३१ ॥
हंसपादीकषायेण कुक्कुटीपुटपाचितम् ।
चूर्णीकृत्य विभाव्याऽथ पुनः कुक्कुटसञ्ज्ञकम् २६३२
कूर्मवाराहतिमिजैः पित्तै र्भाव्यं दिनत्रयम् ।
माषमात्रप्रयोगेण ह्यनुपानविशेषतः ॥ २६३३ ॥
वस्तिवातं सन्निपातं प्रचण्डं नाशयेज्ज्वरम् ।
इच्छापथ्यं ततो भुक्त्वा स्विक्षुखण्डानि भक्षयेत् २६३४
नारिकेलोदकं दाहे पिवेच्छर्करयाऽन्वितम् ।
विष्णुना कथितः पूर्वं विश्वम्भररसोत्तमः ॥ २६३५ ॥

वै. चि , र क यो., व रा., ज्वरे ।

टि०—अयमेव पाठो वस्तिवाते वसवराजीयवैद्यचिन्तामण्यो स्वच्छ-न्दभैरवनाम्ना लिखितस्तत्र गन्धकोऽस्ति, अत्र पाठे स नास्ति विषस्यैव द्विरावृत्तिरासीत् साऽपि प्रमादादेव सञ्जाता इति कृत्वा गन्धकमत्रैव समा-वेश्य स निष्कासित इति । अस्यैव पाठस्य वैद्यचिन्तामणौ त्रिगुण इति नाम स्थापयित्वा छात्राणाङ्कृते भ्रमवागुरा रचिता साऽपि दूरादपास्ता । अस्मिन्नेव रसे पित्तभावना निष्कास्य वैद्यचिन्तामणिवसवराजीययोरस्य कासंसहारभैरव इति नाम स्थापित, पित्तघटितोऽय योगस्तद्विरहितयो-गात्सहस्रगुणो गुणेष्वधिकोऽस्त्यत सोऽपि रसोऽत्रैव समाविशति । पित्तानामभावे तु सर्वेऽपिरमास्तत्तत्कार्याणि कुर्वन्त्येव परमल्पतयेति विशेष सर्वत्रैवाऽस्ति इति दिक् ।

भाषा—शुद्ध पारा और वछनाग, अभ्रकभस्म, शुद्धशिग-रिफ, गन्धक और हरिताल समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर हंसराजके रससे दोदिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर कुक्कुटपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कछुआ, सुअर और मछलीके पित्तोंसे ३–३ दिन मर्दनकर उड़दवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे वस्तिवात, सन्निपात, प्रचण्ड-ज्वर, इनसवको यह नष्टकरताहै । भूखलगनेपर यथेष्ट पथ्यदेना । अत्यन्तदाहहोनेपर ईख और नारियलकाजल शक्कर मिलाकर पिलाना ॥ ५४२ ॥

५४३ विश्वरूपोरसः

त्रिकटुकयवनेष्टं कारवी कृष्णजीरं,
दहनजललवङ्गं पारसीका यवानी ।
सकमलकणमूलं चेतकीक्लीतकानि,
त्रुटिजरणविडङ्गं सैन्धवं पत्रमुस्तम् ॥ २६३६ ॥
मिसित्रिवृदजमोदा मेथिका त्वक् प्रपथ्या,
कलितरुफलधात्री विल्वकालिङ्गमूलीम् ।
अतिविषविडयुक्तं हिङ्गुनिर्यासनागं,
वशिरनलदजातीकोषजातीफलानि ॥ २६३७॥
दृढदृषदि समस्तं प्रक्षिपेत्सर्वतुल्या-,
निह वरविषतिन्दून्साऽभयांस्तक्रसिद्धान् ।
अनुहिममदयुक्तो माषमात्रः स सूतः,
प्रशमयति विकारांश्श्लेष्मवातामजातान् २६३८
प्रवलमलविवन्धानाहमाटोपमुग्रं,
ज्वरमरुचिविसूचीं शूलमन्नद्रवादीन् ।
हरति च सहसाऽयं जाठरान्सर्वरोगान्,
ग्रहणिगरविमुख्यानाहयक्ष्मातिसारान् ॥
गिरिशविहिततन्त्रे मन्त्रयुक्त्या नियुक्तो,
निखिलगुणनिवासो विश्वरूपो रसोऽयम्२६३९

र. का , शूलाऽधिकारे ।

भाषा—त्रिकटु, लहसन, कलोंजी, कालीजीरी, चित्रक-मूल, खस, लौंग, खुरासानी अजवाइन, कमलफूल, पिपलामूल, वड़ीहर्रे, मुलहठी, छोटीइलायची, जीरा, विडङ्ग, सैन्धव, पत्रज, नागरमोथा, सोंफ, निसोत, अजमोद, मेथी, तज, छोटीहरड़, वहेड़ा, आवला, वेल और कुरैयाकीजड़, अतीस, नवसादर, हींग, नागभस्म, सफेदपुनर्नवा, खस, जावित्री, जायफल येसव समभाग, छाछमें हर्रोकेसाथ पकायेहुए कुचिले सवके वरावर लेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े । अथवा अदरखवगैरहके रससे घोटकर १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उशीरासव अथवा कर्पूरासवकेसाथ देनेसे कफ और वात-विकार, प्रवल मलविवन्ध, आनाह, अत्यन्त आटोप, ज्वर, अरुचि, हैजा, शूल, अन्नद्रवशूल, समस्त उदररोग, ग्रहणी, गर, राजयक्ष्म, अतिसार इनसवको यह नष्टकरताहै । शूलमें

प्रयोगकरनाहो तो शूलहर मन्त्रसे अभिमन्त्रितकरके देना। "रामवत्लुरसेनानी मुद्रितेऽपि तथाक्षरम्। हिमालयोत्तरे पार्श्वे अश्वकर्णो महाद्रुम ॥ तत्र शूल समुत्पन्न तत्रैव विलय गतम् ॥' यहमन्त्रहै ॥ ५४३ ॥

५४४ विश्वहितरसः

रसेन्द्रलिप्तताम्रस्य पत्रं गन्धकमारितम्।
तत्ताम्रं पलमात्रं हि पलमात्रं हि पावकम ॥ २६४० ॥
पलं चूर्णितशुद्धाऽऽलं मर्दयेत्तु दिनत्रयम्।
इति सिद्धो रसः प्रोक्तो नाम्ना विश्वहितो हितः॥
वल्लाभ्यां तुलितः सेव्यो मरीचै र्घृतसंयुतैः ॥२६४१॥

र.र.स.,र र कौ ,र क , कुष्ठाऽधिकारे। र र कौ कुष्ठ-दावानल इति। र क विश्वेश्वर ।

भाषा—शुद्धतावेके वारीक पत्रोंपर समभाग पारेको नीबूके-रसकेसाथ मर्दनकर चढाकर उससे द्विगुणगन्धकको नीबूकेरसमें पीस कल्क वनाय पत्रोकेनीचे ऊपर रख गोलावनाय शराव-सम्पुटमें वन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर लवणयन्त्रमें रख गलेतक लवणभर हडीका मुहवन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर ४ दिनकी क्रमाग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ताम्रभस्म और शुद्धहरितालका रस-माणिक्य तथा चित्रककीजड़ १–१ पल लेकर वारीकचूर्णकर ३ दिन इकठे मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ६–६ रत्तीकीमात्रा मरिच और घीकेसाथ देनेसे और कुष्ठोक्तपथ्य पालनकरानेसे समस्त कुष्ठ नष्टहोतेहै ॥ ५४४ ॥

५४५ विश्वेश्वररसः (प्रथमः)

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि रसं सर्वरसोत्तमम्।
क्षणेन गुणदं राजन्सद्यो वह्निप्रदीपकम् ॥ २६४२ ॥
विश्वेश्वरेति विख्यातं सर्वरुक्शमनेन च।
सर्वसिद्धिकरो वैद्ये दुःसाध्यव्याधिनाशनः ॥२६४३॥
शतवर्षाऽधिकस्याऽपि वाजीकरणमुत्तमम्।
विना महारसं चामुं नाऽन्योऽस्ति तादृशो रसः२६४४
पुत्रं वापि प्रियं वापि विक्रीयाऽपि रसं हरेत्।
यामत्रयेण निःशेषसन्निपातविनाशनः ॥ २६४५ ॥
नश्यन्ति दर्शनादस्य डाकिनीब्रह्मराक्षसाः।
हरेदष्टविधं व्याधिं योनिदोषहरः परः ॥ २६४६ ॥
दशाऽष्टकुष्ठरोगघ्नश्चरस्थिरविषापहः।
वृष्यश्च परमायुष्यश्चक्षुष्यो मङ्गलप्रदः ॥ २६४७ ॥
पुत्रदो निर्विकारश्च प्रजावृद्धिविवर्धनः।
सर्वपापहरः श्रीमांल्लोहलस्य विनाशनः ॥ २६४८ ॥
बहुनाऽत्र किमुक्तेन जरामृत्युविनाशनः।
मन्दराधारपृष्ठास्थिक्रौञ्चाऽस्थिमेषशृङ्गकैः ॥ २६४९॥
स्नुहीक्षीरेण सम्पिष्टे वज्रं संवेष्टयेत्ततः।
पुटित्वा निक्षिपेत्क्वाथे कौलत्थे सप्तधा ततः॥२६५०॥
क्षीरकञ्चुककन्दान्ते निक्षिप्याऽस्य च मज्जया।
निरुद्ध्य च पुटित्वा च गन्धर्वाऽम्भसि निक्षिपेत्२६५१
कृत्वेति सप्तवारांश्च ततः स्तन्येन योषिताम्।
पिष्ट्वा वलीन्द्रजितपाटी विलिप्येन्द्रायुधन्तथा॥२६५२॥
रुद्ध्वा सम्पुटमूषायां द्रवं दत्त्वा च मूर्धनि।
प्रथमं वङ्कनालेन ध्माप्यं वारचतुष्टयम् ॥ २६५३ ॥
ततः सञ्चूर्णयेद्वज्रं श्लक्ष्णं खल्वे प्रयत्नतः।
चेत्खण्डं न भवेच्चूर्णं प्रथमेतत्पूर्ववत्ततः ॥ २६५४ ॥
वज्रस्य भस्मना तुल्यं शुद्धं पातितपारदम्।
जीर्णषड्गुणगन्धश्च रसेन्द्रं परिमर्दयेत ॥ २६५५ ॥
अजपादादितोयेन घृष्टं सप्तदिनाऽवधिम्।
ततो निरुद्ध्य यत्नेन मसृणोदरसम्पुटे ॥ २६५६ ॥
प्रतप्तवालुकामध्ये निक्षिप्यैकपुटञ्चरेत्।
द्रवः पूर्वोदितो भूयो मर्दयेत्पुटितं रसैः ॥ २६५७ ॥
तुषैः प्रसृतिमात्रैश्च तद्वच्च पुटयेत्पुनः।
भूयोभूयोरसैस्तैस्तु विमृद्य च विमृद्य च ॥ २६५८ ॥
एकैकपलमारभ्य तथैकपलवृद्धितः।
पुटेद्रसं भवेद्यावद्रसो वज्रायुधोपमः ॥ २६५९ ॥
मृतेन तेन सूतेन तुल्यमन्यं रसं क्षिपेत्।
पूर्वप्रोक्तरसैरेवं विमृद्य च निरुद्ध्य च ॥ २६६० ॥
पुटेत पारदं भूयः पुटैः क्रमविवर्धितैः।
सप्तधेति पुटित्वा तं रसराजमनन्तरम् ॥ २६६१ ॥
पादांशजातरूपेण पिष्टमन्यरसैश्चरेत्।
तस्य पिष्टं चतुर्थांशं दत्त्वा पूर्वं मृतं रसम् ॥ २६६२ ॥
विमृद्य लुङ्गतोयेन रुद्धं सम्पुटके दृढम्।
आरण्यकोपलैर्देयं पूर्वस्मादधिकं पुटम् ॥ २६६३ ॥
भूयोभूयो रसेन्द्रं तु लुङ्गतोये विमृद्य च।
क्रमवृद्ध्या पुटं देयं यावद्गजपुटं भवेत् ॥ २६६४ ॥
तस्य तज्जायते भस्म शक्रगोपशतप्रभम्।
पुनस्तथैव सूतेन समेन सह मर्दयेत् ॥ २६६५ ॥
लुङ्गस्य वारिणा वाऽत्र विनिरुद्ध्य पुटञ्चरेत्।
एवमेव चतुष्षष्टिवाराणि मारयेद्रसम् ॥ २६६६ ॥
ततः प्रकटमूषायां ध्मातो वा पुटितोऽथवा।
उड्डीय न रसो याति क्षीणपक्षश्च जायते ॥ २६६७ ॥
आयुर्वज्रे बलं स्वर्णे रोगनाशश्च पारदे।
एतत्त्रयं रसे यस्मिन्स रसो नाऽपरस्तथा ॥ २६६८ ॥
आभाससञ्ज्ञका ह्येते मूलपाषाणयोगतः।
प्रतप्तखर्परस्याऽस्य यस्य नो हीयते बलम् ॥ २६६९ ॥
निर्धूमो निश्चटत्कारः सुसंस्कृतरसो हि सः।
स रसोऽपि गणान्हन्ति शास्त्रोक्तफलदायकः ॥२६७०॥
एवं सिद्धरसेन्द्रोऽयं विश्वेश्वर इति स्मृतः।
राजिकाऽर्द्धप्रमाणेन मरिचाऽऽज्यनिषेवितः ॥२६७१॥
निर्दहेत्सकलान्रोगान्वनं शुष्कमिवाऽनलः।
सेवनादस्य सूतस्य जीवेद्वर्षायुतं सुखी ॥ २६७२ ॥
न व्याधिर्न जरामृत्यू न चैवेन्द्रियमन्दता।
नोपद्रवास्तथैवाऽन्ये सेव्यमाने रसोत्तमे ॥ २६७३ ॥

प्रतिज्ञा भिषजा कार्या रसेऽस्मिन्संस्थिते करे ।
एष चिन्तामणिः प्रोक्तो भिषजां चित्ततोषदः २६७४
जनयेत्तत्क्षणादग्निं मृतस्याऽप्युदरं गतः ।
अध्वजामातृयोगीन्द्रप्रतिज्ञेयं सुनिश्चिता ॥
नोचेदस्मादुक्तफलं तदैतत्पातकं मम ॥ २६७५ ॥

रससागर, रसायने ।

भाषा—कछुआ और कौञ्चकी हड्डिया, मेंढेकासींग, इनका वारीकचूर्णकर सेहुण्टकेदूधमें वारीकपीस क्रमसे हीरेपर आधा-अङ्गुल मोटा लेपदेवे । फिर २–३ कपड़मिट्टीदेकर सुखाकर दो सेरकण्डोंकी आचदे । लालहोनेपर कुलथीकेकाथमें वुझावे । ऐसे ७ वारकरके क्षीरकञ्चुक कन्दको कोरके गर्तवनाय हीरेको रख ऊपरसे निकलेहुए गूदेसे वन्दकर ४–५ कपड़मिट्टीदेकर सुखाकर कन्दजलनेतककी आचदेकर गर्मसम्पुटको एरण्डकेपत्तोंके स्वरसमें वुझावे । फिर दूसरे कन्दमें वन्दकर पुटदेकर वुझावे । ऐसे ७ वारकरके केवलहीरेको गरमकर ७ वार स्त्रियोंके दूधमें वुझावे । फिर गन्धक और काटेवाली चौलाईकीजड़को पीसकर हीरेपरलेपकर वज्रमूषामें रख दृढ धमनकरे । लालहोनेपर चौलाईकारसदेकर ठंढाकरे । फिर गरमकर ४ वारवुझावे । इसकेवाद पक्की खरलमें फोड़करदेखे अगर न फूटे तो फिर गन्धक और काटेवाली चौलाईकीजड़का लेपदेकर धमनकरे । इसतरह इसकीभस्म होजायगी । फिर इसभस्मकी वरावर षड्गुणगन्धकजीर्ण शुद्धपारा मिलाकर एकदिन शुष्कमर्दनकर मर्यादवेलप्रभृति दिव्यौषधियोंके स्वरससे ७ दिनतक मर्दनकर चिकने शरावसम्पुटमें वन्दकर ४–५ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर लाल कियेहुए वालूमें गाड़दे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर पूर्ववत् मर्दनकर शरावसम्पुटमें वन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर ८ कर्ष धानकेछिल्कोंकीआंचदे । ऐसे प्रत्येकपुटमें १–१ पल छिल्के वढाताजाय । जव रसका रङ्ग इन्द्रधनुषकेसदृश चित्रविचित्रहोजाय तव इसकीवरावर षड्गुणगन्धकजारित दूसरा पारा डालकर पूर्वोक्तरसोंसे मर्दनकर टिकियावनाय धानकेछिल्कोंकी क्रमवृद्ध आचदे । ऐसे ७ पुटहोजानेके वाद इससे चतुर्थांश सुवर्णका वारीकचूर्ण अथवा वर्क और पारेको पूर्वद्रवोंमें घोटे । पिष्टीवननेपर पूर्वरसमें मिलाकर विजोरेकेरससे ७ दिनतक मर्दनकर टिकड़ीवनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर पहिलेसे कुछ अधिक जङ्गलीकण्डोंकी आचदे । इसप्रकार वारम्वार १–१ दिन विजोरेके रसमें मर्दनकर कण्डोंकाप्रमाण वढावढाकर जवतक पूरा गजपुट न होजाय तवतक आचें दे । गजपुटहोनेपर वीरवहुटीसेभी शतगुणित इसकी लालभस्म होगी । फिर इसमें षड्गुणगन्धकजारित वरावरकापारा मिलाय विजोरेकेरससे मर्दनकर आचदे । इसतरह ६४ पुटहोनेकेवाद खुलीमूषामें रखकर पुटदेनेसे अथवा धमनकरनेसे यह नहीं उड़ेगा, इसलिये इसे क्षीणपक्षसमझना । वज्रमें आयु, सुवर्णमें वल और पारेमें रोगकानाश रहताहै ये तीनों जिसरसमें रहतेहों उसीकानाम रसहै और जो मूल अथवा पाषाणकेयोगसे तैयारकियेजातेहैं वे सव रसाभासहैं । रसामार्गोमेंभी अग्निपर खपड़ेमें रक्खाहुआ जो रस न उड़े, धूम और चटचटाकारसे रहितहो वह यदि अच्छीतरहसे शुद्ध कियाहो तो वहभी रोगगणोंको दूरकरताहै दूसरा नहीं । पूर्वोक्तप्रकारसे वज्र और सुवर्णकेयोगसे किया हुआ रस विश्वेश्वरनामको प्राप्तहोताहै । यह रस आधीराईके प्रमाणमें मरिच और धीकेसाथ सेवनकरनेसे तत्क्षण अग्निको प्रदीप्तकरताहै । तीनपहरमें समस्तसन्निपातोंको हटाताहै और साध्य अथवा असाध्य महाव्याधियोंको नष्टकरताहै । सौ वर्षसे अधिक आयुवालेकोभी उत्तम वाजीकरणका कामदेताहै । पुत्रवगैरह प्रियवस्तुकोभी इसके शुल्कमें देकर इसका सङ्ग्रहकरना उचितहै यह रस जिसजगह रहताहै वहापर भूत, डाकिनी, ब्रह्मराक्षस, आठप्रकारके महाव्याधि, योनिदोष, १८ प्रकारके कुष्ठ, स्थावर और जङ्गमविष, सव प्रकारकेक्षय, आयुह्रास, चक्षुरोग, अरिष्ट, वन्ध्यात्व, वुद्धिह्रास, सवप्रकारकेपाप, तोतलापन खड़ेनहींरहते । इसके निरन्तरसेवनसे वहुतलम्वी आयुको भोगताहै उसे व्याधि, वुढ़ापा, मृत्यु, इन्द्रियोंकीमन्दता तथा अन्य कोईभी उपद्रव वाधा नहीं पहुंचाते । अन्यरसोंकेसेवनकरते समय कुपथ्यसे जैसे नानातरहके उपद्रवहोतेहैं वे इसमें नहीं होते । यह रस तैयारहो तो असाध्यसे असाध्य रोगमेंभी "इसको इतने समयमें मिटावेंगे" ऐसी प्रतिज्ञा करसक्ताहै५४५

५४६ विश्वेश्वररसः (द्वितीयः)

रसाद्दश विषात्पञ्च गन्धकाद्दश शोधितात् ।
तुत्थाद्दश पलाशस्य वीजेभ्यः पञ्च कारयेत् ॥२६७६॥
क्षुद्राऽश्वमारधुस्तूरनीलीतः करहाटकात् ।
दशकं दशकं कुर्याच्छोषयित्वा जटात्वचः ॥२६७७॥
दशकं दशकं दत्त्वा कुतिन्दो देश नूतनात् ।
भल्लातकाच्च दशकं चूर्णयित्वा भिषक्ततः ॥ २६७८ ॥
सुदिने च वलिं दत्त्वा वैद्यः पूजापरायणः ।
रक्तिकाद्वितयं दद्यात्सहते यदि वा त्रयम् ॥ २६७९ ॥
वातरक्तं ज्वरं कुष्ठं खरस्पर्शमसौख्यदम् ।
आजानुस्फुटितं हन्ति विषजं वाऽस्थिनिःसृतम् ॥
कुष्ठमष्टादशविधमग्निमान्द्यमरोचकम् ।
विश्वेश्वरो रसो नाम विश्वनाथेन भाषितः ॥२६८१॥
वक्ष्यते कुष्ठरोगे यदौषधं भिषजांवरैः ।
वातरक्ते प्रयुञ्जीत कुर्याच्च रक्तमोक्षणम् ॥ २६८२ ॥

र सं , ध , र सु , र.च., रचि , र का. वातरक्ते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और तुत्थ १०–१० भाग, शुद्ध वछनाग और पलाशवीज ५–५ भा , भटकटैया, कनेर, धतूरेकीजड़, कालादाना, अकलकरा, रुद्रजटा, तज, शुद्धकुचिले और भिलावे १०–१० भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भिलावोंकेसाथ कूटकर कपड़छान करले जिसमेंकि भिलावोंके छिलके न रहजांय । इसमेंसे २ रत्तीसे आरम्भकर जहातक सहनहोसके वहातक वढ़ाकर मात्रा कायमकरे । इसकेप्रयोगसे वातरक्त, ज्वर, घुटनोंतक फूटकर

हड्डिया निकलाहुआ, विपज खरस्पर्श कुष्ठ तथा अन्य १८ प्रकारकेकुष्ठ, मन्दाग्नि और अरुचि इनसवको यह नष्टकरताहै। जिसजगह दवा काम न करतीहो वहा रक्तमोक्ष कराना ॥५४६॥

५४७ विश्वेश्वररसः (तृतीयः)

रसञ्च रौप्यं त्रिदिनं विमर्द्य
जम्बीरनीरेण ततः समस्तम्।
संयोज्य जम्बीररसेन सम्य-
ग्विमर्दयेत्त्रीणि पुनर्दिनानि ॥ २६८३ ॥
कृत्स्नं कुमारीरसतस्त्रिवारं
द्विवासरान्धेनुजमूत्रकेण।
द्विवासरानाजभवे विमृद्य
शुष्कञ्च शुष्कं प्रतिभावनं पुटेत् ॥ २६८४ ॥
धात्रीरसेनैकवारं पुष्करस्य रसैः क्वचित्।
त्रिभिः पुटै र्दग्धशुष्कं भस्म तन्मर्दयेद्दिनम् ॥ २६८५ ॥
ततो भवेत्सप्रमाणः सिद्धो विश्वेश्वरो रसः।
त्रिसप्ताहं त्रिगुञ्जोऽयं देयः कन्यारसान्वितः ॥२६८६॥
दुग्धाशनयुतो हन्यात्कासं श्वासं क्षयं तथा।
भोक्तु र्वास्तुकदुग्धान्नमग्निमान्द्याऽरुची जयेत् २६८७
त्रिगुञ्जो मरिचाऽर्द्धेन कफोद्रेकविनाशनः।
दशमूलगुडक्षौद्रैस्त्रिसप्ताहं त्रिगुञ्जकः ॥ २६८८ ॥
त्रिदोषजं क्षयं हन्याद्दुग्धभक्तभुजो ध्रुवम्।
शुण्ठीचूर्णसमायुक्तं हितं मांसरसं सदा ॥
अयं सर्वेषु रोगेषु योज्यो विश्वेश्वरो रसः ॥ २६८९ ॥

र क, र मृ, सर्वरोगे।

भाषा—शुद्ध पारे और चादीके वारीकरेतेको ३–३ दिन जभीरीकेरससे अलग अलग मर्दनकर इकठ्ठेमिलाय १–२ पहर सुखा घोटकर पिष्टिका वनाय जभीरी और घीकुवारकेरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर गोमूत्र और वकरीकेमूत्रसे २–२ दिन, आवले और पोहकरमूलकेरससे १–१ दिन मर्दनकर आतशीशीशीमें भरकर लवण अथवा भस्मयन्त्रमें रख ४ पहरकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिरसे आवले और पोहकरमूलके रससे मर्दनकर पूर्ववत् आचदे। इसप्रकार ३ आचें देकर शीशीमेंसे निकालकर रखछोडे। यदि चादीसे पारा अलग होजाय तो उसे वारवार चादीमें मिलाकर घोटें और अग्निदेवे। कदाचित् ३ वारमें वरावरभस्म न हुईहो तो १–२ आचें और देवे। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा घीकुआरकेरसकेसाथ देनेसे कास, श्वास और क्षयको यह नष्टकरताहै। इसमें वथुएकाशाक और दूधचावल देना। ३ रत्ती मरिचकेचूर्णकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, अरुचि और कफप्रकोपको नष्टकरताहै। दशमूल, गुड और मधुकेसाथ २१ दिनतकदेनेसे यह त्रिदोपजक्षयको नष्टकरताहै। सोंठकाचूर्ण डालकर मासरस इसमें हितकरहोताहै ॥ ५४७ ॥

५४८ विश्वेश्वररसः (चतुर्थः)

मृतसूतार्कतीक्ष्णञ्च तालं गन्धञ्च कट्फलम्।
मेषशृङ्गी वचा शुण्ठी भार्ङ्गी पथ्या च वालकम् ॥२६९०॥
धान्यकं मर्दयेत्तुल्यं पर्पटोत्थद्रवै र्दिनम्।
मर्द्यं मापं लिहेत्क्षौद्रैः कफपित्तमदात्यये ॥ २६९१ ॥
रसो विश्वेश्वरो नाम प्रोक्तो नागार्जुनेन च।
काकमाचीरसश्चाऽनु सैन्धवेन युतं पिवेत् ॥ २६९२॥

र. स, चि र. भ., रसायनसं., ज्वराऽधिकारे। चि र. भ, रसायनसं., वीरेश्वर इतिनाम।

भाषा—पारा, तावा और लोहभस्म, शुद्धहरिताल और गन्धक, कायफल, मेंढासींगी, वच, सोंठ, भारङ्गी, हर्रे, सुगन्धवाला, धनिया, सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर पटोलपत्रकेक्काथसे एकदिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ देकर सेंधानमक मिलायाहुआ मकोयकारस पिलानेसे कफपित्तमदात्यय नष्टहोताहै ५४८

५४९ विश्वेश्वररसः (पञ्चमः)

स्वर्णाऽभ्रलौहवङ्गानां रसगन्धकयोरपि।
वैक्रान्तस्य च सङ्गृह्य भागांस्तोलकसम्मितान् २६९३
कर्पूरसलिलेनाऽथ भावयित्वा यथाविधि।
रक्तिकैकप्रमाणेन विदध्याद्वटिकास्ततः ॥ २६९४ ॥
अयं विश्वेश्वरो नाम रसः फुफ्फुसजान्गदान्।
हृद्रोगांश्च जयेत्सर्वान् संशयोऽत्र न विद्यते ॥२६९५॥

भै र., हृद्रोगाऽधिकारे।

भाषा—सुवर्ण, अभ्रक, लोह और वङ्ग इनकीभस्में, शुद्ध पारा और गन्धक, वैक्रान्तभस्म येसव १–१ तोला लेकर नीलवर्णकज्जलीकर कपूरकेजलसे २–३ भावनाए देकर १–१ रत्तीकीगोलिया वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे फुफ्फुस और हृदयके तमाम रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५४९ ॥

५५० विश्वेश्वररसः (षष्ठः)

त्रित्रिकाम्बुदवेल्लाग्निकुष्ठाऽऽमोदरसाऽमृतैः।
भृङ्गाम्बुकल्कितै र्विश्वेश्वरो नाम रसो मतः ॥२६९६॥
कासश्वासाऽग्निमान्द्यार्शःकामलावमिपाण्डुहृत्।
कुष्ठाऽजीर्णविसूच्यर्तीर्नाशयेत्तत्तदौषधैः ॥ २६९७ ॥

र (मा), कासश्वासादौ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला और त्रिजात, नागरमोथा, विडङ्ग, चित्रक, कुठ, शुद्ध गन्धक, पारा और वछनाग सवसमभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भगरेकेरससे २–३ दिनमर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे कास, श्वास, मन्दाग्नि, ववासीर, कामला, वमन, पाण्डु, कुष्ठ, अजीर्ण और हैजेको यह नष्टकरताहै ॥ ५५० ॥

५५१ विश्वेश्वररसः (सप्तमः)

रसगन्धककर्पूरत्र्यूषणं टङ्कणं विषम्।
कपर्दिकाभस्म समं सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ २६९८ ॥

तुलसीरससंयुक्तं देयं शीतज्वरे ततः ।
दाहज्वरे च विषमे सन्निपाते तथैव च ॥
अयं विश्वेश्वरो नाम सद्यः प्रत्ययकारकः ॥ २६९९ ॥

र का., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, कपूर, सुहागा और बछनाग, त्रिकटु, कौड़ीकीभस्म सब समभागलेकर तुलसीकेरसमें मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली रोगीका बलाबलदेखकर समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे शीत, दाह और विषमज्वर, सन्निपात येसब नष्टहोतेहै ॥५५१॥

५५२ विश्वेश्वरीवटी

वन्ध्यागन्धकणालसूतकविषाक्षारास्थिका लाङ्गली,
सिंहीबीजमधूकबोलनखरव्यालेन्दुपाठेन्द्रकैः।
निर्गुण्डीरसमर्दितैरथ कृता कोलप्रमाणा वटी,
वातव्याधिविरोधिनी विजयते लोकेऽत्र विश्वेश्वरी ॥

रस.सं ,र.(मा) वातव्याध्यधिकारे

भाषा—बाझखेखसेकाकन्द, शुद्ध गन्धक, हरिताल, पारा, बछनाग और करिहारीकीजड़, पीपल, अतीस, तीनोंक्षार, हड़जोड़, भटकटैयाके बीज, महुआ, हीराबोल, नख, चित्रकमूल, शुद्धकपूर, पाठा, इन्द्रजव सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर सभालूकेरसमे १–२ दिन मर्दनकर बेरबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली वातहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तवातव्याधियोंको नष्टकरतीहै ॥ ५५२ ॥

५५३ विश्वोदीपकाऽभ्रम्

अभ्रं निर्मलमारितं पलमितं चूर्णीकृतं यत्नत-,
श्चव्यं चित्रकमिन्द्रसूरकनकं मालूरपत्राऽऽर्द्रकम् ।
मूलं पिप्पलिसम्भवं मधुरिका नीपोऽर्कमूलं पृथक्,
चैषां सत्त्वपलै विमर्दितमिदं कर्षं क्षिपेट्टङ्कणम् २७०१
गुञ्जासम्मितमेतदेव वलितं तत्पारिभद्रद्रवैः,-
मन्दाग्निं चिरजातगुल्मनिचयं शूलाम्लपित्तं ज्वरम् ।
छर्दिं दुष्टमसूरिकामलसकं श्वासञ्च कासं तृषां,
प्लीहानं यकृतं क्षयं स्वरहितं कुष्ठं महारोचकम्॥२७०२॥
दाहं मोहमशेषदोषजनितं कृच्छ्रञ्च दुर्नामक-,
मामं वातविमिश्रितं नयनजं रोगं समुन्मूलयेत् ।
विश्वोद्दीपकनामरोगहरणे प्रोक्तम्पुरा शम्भुना,
सर्वेषां हितकारकं गदवतां सर्वामयध्वंसनम् ॥
पाषाणं यदि भक्षितं तदपि तं कुर्यात्सुजीर्णं पुन-,
र्बल्यं वृष्यतरं रसायनवरं मेधाकरं कान्तिदम् २७०३

भै.र ,र सु ,अग्निमान्द्ये ।

भाषा—निश्चन्द्र अभ्रकभस्म १ पल लेकर चव्य, चित्रक, कुटज, सूरण, धतूरा, बेलपत्र, अदरख, पिपलामूल, सौंफ, कदम्ब, आककीजड़ इनप्रत्येकके १–१ पल स्वरसोंसे मर्दनकर १ कर्ष भुनासुहागा डालकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली निम्बपत्रस्वरसकेसाथदेनेसे बहुतदिनकामन्दाग्नि और गुल्म, शूल, अम्लपित्त, ज्वर, वमन, मसूरिका, अलसक, श्वास, कास, तृषा, प्लीहा, यकृत्, क्षय, स्वरभङ्ग, कुष्ठ, अरुचि, दाह, मोह, समस्तदोषज मूत्रकृच्छ्र, अर्श, आमवात, नेत्ररोग इनसबको यह नष्टकर बल, वृषता, मेधा, कान्ति और रसायनको करताहै ॥ ५५३ ॥

५५४ विषतिन्दुगर्भागुटिका

ब्रह्मबीजरसराजगन्धका
द्वादशैककरतुल्यभागिकाः ।
आत्र्यहाम्लजलमर्दितोद्धृताः
सूर्यभागविषतिन्दुमर्दिताः ॥ २७०४ ॥
सक्षौद्रस्निग्धभाण्डस्था मासं धान्योषिताः स्थिताः ।
तद्गुटयोऽस्पर्शरोगघ्ना षण्मासाद्विधिसेविताः २७०५

र.(मा.) स्पर्शवाते ।

भाषा—पलाशबीज १२ भाग, शुद्धपारा १ भाग और गन्धक २ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर ३ दिन बिजोरे प्रभृतिके रससे मर्दनकर १२ भाग शुद्ध कुचिलेका चूर्णमिलाय गोली बननेलायक मधु मिलाकर चिकनेबर्तनमें रखकर एकमहीनेतक धान्यकी राशिमें गाड़दे। इसमेंसे १–१ माशा रोगोचितानुपानकेसाथ ६ महीनेतक देनेसे स्पर्शरोग नष्टहोताहै ॥ ५५४ ॥

५५५ विषमज्वरहररसः

शिलालविमलारसं रसकताप्यगन्धाश्मयुक्,
त्रिवारमिति भावितं विमलकारवल्लीरसैः ।
विशोष्य निहितं शुभे लघुनि शुल्वपात्रे दृढं,
कपालपिहिते पचेत्तु सिकताख्ययन्त्रस्थितम् ॥२७०६॥
ज्वलदूर्ध्वशालिवह्नेरुत्तार्यैतत्त्रिवारं तु,
कूष्माण्डकारवल्लीतोयैर्भाव्यं ततस्त्रिवल्लश्च ।
गुडमोचखण्डयोगात्क्षीरान्नैकाशनस्य दाहादीन्,
विषमज्वरान्निहन्यात्सर्वानेव त्र्यहेणैव ॥ २७०७ ॥

रसायनसं ,र शं , विषमज्वरे ।

भाषा—शुद्धमैनसिल, हरिताल, कास्यमाक्षिक, शुद्धपारा, खपरिया, सोनामाखी और गन्धक सबसमभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर करेलेकेरससे सुखा सुखाकर ३ भावनाए देकर करेलेकेरसमें कल्कबनाय बराबरके तांबेके सम्पुटमें भीतरकीतर्फ लेपदेकर ढकनेसे बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर वालुकायन्त्रमें रख आंचदे और ऊपर थोडेसे धान डालदे। जब धानोंकी खीलहोजाय तब उतारकर कोयलोंपर रखदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ताम्र जितना भस्म होगया हो उसको साथमें लेकर सफेदकोंहळा और करेलेकेरसोंमें ३–३ दिन मर्दनकर ९–९ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे ३ दिनमें विषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै। अधिकदाहमालूमहोनेपर गुडकाशर्बत, केला, शक्कर और दूधभातका सेवन करावे ॥ ५५५ ॥

५५६ विषमज्वरान्तकलोहम् (प्रथमम्)

पारदं गन्धकं तुल्यं सूतार्द्धं जीर्णताम्रकम्।
ताम्रतुल्यं माक्षिकञ्च लौहं सर्वसमं नयेत् ॥ २७०८॥
जयन्त्याःस्वरसेनैव कोकिलाक्षरसेन च।
वासकाऽऽर्द्रपर्णरसैः पञ्चधा च विमर्दयेत ॥२७०९॥
पृथक् कलायमानान्तु वटिकां कारयेद्भिषक्।
विषमज्वरान्तनामाऽयं विषमज्वरनाशनः ॥ २७१० ॥
वह्निदीप्तिकरो हृद्यः प्लीहगुल्मविनाशनः।
चक्षुष्यो बृंहणो वृष्यः श्रेष्ठः सर्वरुजापहः ॥ २७११ ॥
भै.र, र.सु., ध., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग, पारेसेआधी ताम्र और सुवर्णमाक्षिकभस्म, लोहभस्म सबकीबराबर लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जैंती, तालमखाना, अडूस, अदरख और पानकेस्वरसोंसे ५–५ दिन मर्दनकर मटरबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे विषमज्वर, मन्दाग्नि, प्लीहा, हृदयकेरोग, गुल्मप्रभृति सबरोगोंको यह नष्टकरताहै। चक्षुष्य, बृंहण और वृष्य है ॥ ५५६ ॥

५५७ विषमज्वरान्तकलोहम् (बृहत्) २

शुद्धं सूतं तथा गन्धं कारयेत्कज्जलीं शुभाम्।
मृतसूतं हेमतारं लौहमभ्रञ्च ताम्रकम् ॥ २७१२ ॥
तालसत्त्वं वङ्गभस्म मौक्तिकं सप्रवालकम्।
सुवर्णमाक्षिकञ्चाऽपि चूर्णयित्वा विभावयेत ॥२७१३॥
निर्गुण्डीनागवल्ली च काकमाची सपर्पटी।
त्रिफलाकारवेल्लञ्च दशमूली पुनर्नवा ॥ २७१४ ॥
गुडूची वृषकश्चाऽपि सभृङ्गः केशराजकः।
एतेषाञ्च रसेनैव भावयेत्त्रिदिनं पृथक् ॥ २७१५ ॥
गुञ्जामानां वटीं कुर्याच्छास्त्रवित्कुशलो भिषक्।
पिप्पलीगुडकेनैव लिहेच्च वटिकां शुभाम् ॥ २७१६ ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति निरामं साममेव वा।
सप्तधातुगतञ्चाऽपि नानादोषोद्भवं तथा ॥ २७१७ ॥
सततादिज्वरं हन्ति साध्याऽसाध्यमथापि वा।
अभिघाताऽभिचारोत्थं ज्वरं जीर्णं विशेषतः ॥२७१८॥
र.स, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, पारा, सुवर्ण, चादी, लोह, अभ्रक, ताम्र, वङ्ग, मोती, प्रवाल सुवर्णमाक्षिक इन सबकीभस्में और हरितालसत्त्व, येसब समभागलेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर निर्गुण्डी, पान, मकोय, पित्तपापडा, त्रिफला, करेला, दशमूल, पुनर्नवा, गिलोय, अडूस, भंगरा, कालाभंगरा इनप्रत्येकके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पीपल और गुड़केसाथदेनेसे ८ प्रकारकाज्वर, निराम अथवा साम, सप्तधातुगतज्वर, सततादि नानादोषजज्वर, साध्य और असाध्य अभिघातज्वर, अभिचारोत्थ और जीर्णज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥५५७॥

५५८ विषमज्वरान्तकलोहम् (तृतीयम)

हिङ्गुलसम्भवं सूतं गन्धकेन सुकज्जलीम्।
रसपर्पटिवत्पाच्यं सूताद्धिहेमभस्मकम् ॥ २७१९ ॥
लौहं ताम्रमभ्रकञ्च रसस्य द्विगुणं क्षिपेत।
वङ्गञ्चैव प्रवालञ्च रसाऽर्द्धञ्च विनिःक्षिपेत ॥२७२०॥
मुक्ताशङ्खं शुक्तिभस्म रसपादिकमेव च।
मुक्तागृहे च संस्थाप्य पुटपाकेन साधयेत् ॥२७२१॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय द्विगुञ्जाफलमानतः।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं कणाहिङ्गुससैन्धवम् ॥ २७२२ ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति वातपित्तकफोद्भवम्।
प्लीहानं यकृतं गुल्मं साध्यासाध्यमथापि वा ॥२७२३॥
सततं सन्तताख्यञ्च त्र्याहिकं चातुराहिकम्।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शोथं मेहमरोचकम् ॥ २७२४ ॥
ग्रहणीमामदोषञ्च कासं श्वासञ्च दारुणम्।
मूत्रकृच्छ्रातिसारञ्च नाशयेदविकल्पतः ॥ २७२५ ॥
र.स, र सु., भै.र, ध, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—४–४भाग शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर रसपर्पटीकी तरह पर्पटी बनाय सुवर्णभस्म १ भाग, लोह, ताम्र, और अभ्रक भस्म ८–८ भा, वङ्ग और प्रवालभस्म २–२ भाग, मोती, शङ्ख और सीपभस्म १–१ भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर मोतीकीसीपमें बन्दकर ३–४ कपडमिट्टी देकर पुटपाकसे स्वेदितकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा पीपल, हींग और सेंधेनमककेसाथ देनेसे वात, पित्त और कफजन्य ८ प्रकारकाज्वर, प्लीहा, यकृत्, गुल्म, सन्तत और सतत, त्र्याहिक, चातुर्थिक, कामला, पाण्डु, शोथ, प्रमेह, अरुचि, ग्रहणी, आमदोष, कास, भयङ्करश्वास, मूत्रकृच्छ्र, अतिसार, इन सबको यह नष्टकरताहै ॥ ५५८ ॥

५५९ विषमज्वरारीरसः (शीतारिः)

शुद्धं सूतं तथा गन्धं ताम्रं लोहं मनःशिलाम्।
समभागं विमृद्याऽथ भावयेत्तुलसीजलैः ॥२७२६॥
कारवल्लीभृङ्गराजधूर्तनीरै र्विमर्दितम्।
अजामूत्रेण दातव्यो वल्लो विषमशान्तये ॥
विषमारीति नामाऽयं विषमोन्मूलनक्षमः ॥ २७२७ ॥
र का, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और लोहभस्म, शुद्धमैंनसिल सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर तुलसी, करेला, भंगरा, धतूरा इनके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली बकरीकेमूत्रकेसाथ देनेसे यह समस्त विषमज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ५५९ ॥

५६० विषनाशनोरसः

भागैकं रसनायकस्य विमलं गन्धं रसं तुत्थकं,
गौरालं नवसादरं त्रिकटुकं गुञ्जा सुजातीफलम् ।
सर्वं कज्जलवद्विमृद्य पयसा वज्रार्कयोरर्पयेत्,
सिद्धः स्याद्विषनाशनो गरुडवत्प्रोक्तोऽगदोऽयं बुधैः
भित्वा निम्बुरसेन गुग्गुलुयुतो देयो वलोने नरे,
हन्याद्दन्तविबन्धनं विषमपि श्वाऽऽखुककीटादिजम् ।
नानामारुतनाशनश्वरुदितं तीव्राश्च पीडाञ्जयेत्,
कौव्ज्याऽपस्मृतिपाण्डुतान्द्रिकहरश्चोन्मादविध्वंसनः

र. वो., विषाऽधिकार ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, रसौत, तुत्थ, सोमल, हरिताल, और नवसादर, त्रिकटु, गुञ्जा, जायफल सवसमभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाय थूहर और आककेदूधोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे दन्तविबन्ध, विषमज्वर, कुत्ता, चूहा और जहरीकीड़ोंका जहर, नानाप्रकार की वायुपीडा, हड़काया-हुआ कुत्तेकाविष, कुब्जता, पाण्डु, तन्द्रा, उन्माद इनसवको यह नष्टकरताहै । निर्वलमनुष्यकेलिये नीवूको चीरकर उसमें गूगलकेसाथ डालकर चुसाना चाहिये ॥ ५६० ॥

५६१ विषमान्तकरसः

रसम्लेच्छालकुनटीगन्धखर्परमाक्षिकम् ।
पिष्ट्वा जम्भाऽम्भसा द्विघ्नताम्रपात्रोदरे क्षिपेत्॥२७३०॥
गन्धकेन च संलिप्य तत्पचेत्कांस्यपाकवत् ।
भाण्डे लवणपूर्णे तु मध्ये पात्रं निरुद्ध्य च ॥२७३१॥
याममात्रं ततः शीते तुत्थपादं विनिःक्षिपेत् ।
विमृद्य वटिकां कुर्याद्रक्तिकात्रयसम्मिताम् ॥२७३२॥
दद्याद्बल्येन केनाऽपि पर्णखण्डोषणै र्युताम् ।
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च तृतीयकचतुर्थकौ ॥ २७३३ ॥
प्रस्कन्दनञ्च शमयेत्क्रूरं मुद्गसितायुतम् ।
पथ्यञ्च वर्जयेन्मासं राजिकां तैलमम्लकम् ॥ २७३४॥

टो , ज्वराऽधिकार ।

भाषा—शुद्ध पारा, शिंगरिफ, हरिताल, मैंनसिल, गन्धक, खपरिया, और सोनामाखी, सब समभाग लेकर नीलवर्ण-कज्जलीकर जंभीरीकेरससे एकदिन मर्दनकर इससे द्विगुणतांवेके-सम्पुटमें लेपकर २–४ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर लवणयन्त्रमें वन्दकर ढकन लगाकर ३–४ कपड़मिटीसे मुहको वन्दकरदे । फिर इसे चूल्हेपर चढ़ाय एकपहरकी कड़ी आचदे। स्वाङ्गशीतल-होनेपर निकालकर इससे चतुर्थभाग तुत्थभस्म मिलाय जभीरी-केरससे १–२ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ से ३ गोलीतक रोग और रोगीका वला-वल देखकर गुड़में गोलीकोलपेट पानमें रखकर देनेसे एकाहिक, द्व्याहिक, तृतीयक और चातुर्थिक इनसवको यह नष्टकरताहै । अत्यन्तशोषमें मुद्गयूष और शक्करकेसाथ देना । एकमहीनेतक राई, तैल और खटाई नहीं देना ॥ ५६१ ॥

५६२ विषमारीरसः (महदादिः)

अशोधितं रसं तालं खर्परञ्च मनःशिलाम् ।
माक्षिकं हिङ्गुलं गन्धं शिखितुत्थं यथाक्रमम् ॥२७३५॥
मर्दयेद्याममेकन्तु भिषक् सम्यग्गुरूक्तितः ।
इन्द्राणिकाभृङ्गराजकारवल्लीजयारसैः ॥ २७३६ ॥
वेदघस्रं विमर्देत ततः कुर्यात्सुगोलकम् ।
भाण्डमध्यगतं ताम्रपात्रेणैनं पिधापयेत् ॥ २७३७ ॥
अभयारुष्करखटीकल्कैः सन्धिं लिम्पेद्गुरूक्तितः ।
सिकतापूरितं कृत्वा पात्रं किञ्चित्प्रदर्शयेत् ॥ २७३८ ॥
तत्र त्रिचतुराः सम्यङ्निवेश्याः शालयः शुभाः ।
दीपाग्निना पचेत्तावद्यावल्लाजा भवन्ति ताः ॥२७३९॥
स्वभावशीतलं ग्राह्यमपकार्कं न मेलयेत् ।
इन्द्राणिकाकारवल्लीस्वरसेन विमर्दयेत् ॥ २७४० ॥
गुञ्जात्रयं कोलकेन तुलसीरसतोऽपि वा ।
निर्गुण्डीमरिचाभ्यां वा रसोनेन गुडेन वा ॥२७४१॥
ज्वरांश्च विषमान्सर्वान्नाशयेच्छीतपूर्वकान् ।
दाहपूर्वांश्छीतयुक्तान्नाशयेद्विषमज्वरान् ॥ २७४२ ॥
पथ्यं ददीत गोक्षीरैः स्नेहाम्लौ वर्जयेद्ध्रुवम् ।
स्त्रीसङ्गो दूरतस्त्याज्यः शीताम्भः सम्परित्यजेत् ॥
विषमारि महान् प्रोक्तः शम्भुना रससागरे ॥२७४३॥

र.का , ज्वराऽधिकार ।

भाषा—अशुद्धपारा, हरिताल, खपरिया, मैनसिल, सोना-माखी, शिंगरिफ, गन्धक, तूतिया सब समभागलेकर नीलवर्ण-कज्जलीकर इन्द्रायण, भंगरा, करेला और भागकेस्वरसोंसे ४–४ पहर मर्दनकर गोलावनाय हण्डीकेवीचमें रख ऊपरसे तांवेके-सम्पुटसेढक दें, मिलावे और खड़ियामिट्टीके कल्कसे सन्धि-वन्दकर ऊपर ४ अङ्गुल वालूभर चूल्हेपरचढ़ाय अग्निदेवे । ऊपर परीक्षार्थ ६–७ धानडालदे । पहिले दीपाग्निसे शुरूकर क्रमसे वढावे । धानोंकीखीलहोजानेपर आच वन्दकरदे । स्वाङ्गशीतल-होनेपर निकालकर जितना तावेकासम्पुटजलाहो उसे साथ घोटकर इन्द्रायणऔर करेलेकेस्वरसोंसे १–१ दिनमर्दनकर ३–३ रत्तीकीगोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली वेर, तुलसी, निर्गुण्डी, मिर्चे, ल्हसन अथवा गुड़केसाथदेनेसे शीत-पूर्वक अथवा दाहपूर्वक समस्तविषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै । पथ्यमें गायकादूध और चावलदे । चिकनाई और अम्लका परित्यागकरे । स्त्रीसङ्ग और ठंढेपानीका सेवन न करे ॥५६२॥

५६३ विषवज्रपातरसः (प्रथमः)

स्फटिकं स्फटिकां क्षारं स्वर्जिकाख्यं नृसारकम् ।
सैन्धवव्रणपाषाणौ तुल्यं सर्वं विचूर्णयेत ॥ २७४४ ॥
मस्तुना कर्षमात्रन्तु पाययेद्विषदूषितम् ।
स्थावरं जङ्गमं यच्च गरं दूषीविषाह्वयम् ॥ २७४५ ॥

तत्सर्वं शमतां याति सत्यं गुरुवचो यथा ।
शिलाऽऽलतिन्दुनेपालवचाहिङ्गूनि लेपयेत् ॥२७४६॥

नू.क , विषाऽधिकारे ।

भाषा—स्फटिकमणिकाचूर्ण, भुनीहुई फिटकड़ी, यवक्षार लोटासज्जी, नोसादरकेफूल, सेन्धव, गोदन्तीहरिताल (घापाण-गुजराती) इनसवको समभागलेकर अलग २ कपड़छानकरके सबको एकजगहमिलाकर रखलेवे । इसमेंसे पूर्णविषवेगाविष्ट प्राणीको १–१ तोला दहीकेपानीकेसाथ अथवा ठंढेपानीकेसाथ पिलावे । यदि विषवेग न हो तो दंशस्थानमें पाछलगाकर दवाको भरदे और मैनसिल, तबकीहरिताल, कुचिला, जमालगोटा, वच और हींग, इनको पानीमें पीसकरलेपकरे । इससे साप, वीछू, कुत्ता, सियार, वाघ, भेडिया या अन्यकोईभी ज़हरी जानवर, तथा अफीम, गाजा, भांग, वछनाग प्रभृतिका-विष, वनावटी अथवा दूषीविष येसव नष्टहोतेहैं ॥ ५६३ ॥

५६४ विषवज्रपातरसः (द्वितीयः)

निशां सटङ्कञ्च सजातिकोषं
तुत्थं समांशं कुरु देवदाल्याः ।
रसेन पिष्टो विषवज्रपातो
रसो भवेत्सर्वविषापहन्ता ॥ २७४७ ॥
निष्कोऽस्य सञ्जीवयति प्रयुक्तो
नृमूत्रयोगेन च कालदष्टम् ।
जटाविषेणाऽऽकुलितं तथाऽन्यै
र्विषै नरञ्चाशु तथाऽऽतुरञ्च ॥ २७४८ ॥

र म , र सु , र ल , वै. वि , र म मा , ना वि , वृ यो. त , ध , आ प्र., र र , र कौ , र चं , भै सा , र.र दी , र का , विषाऽधिकारे ।

टि०—र ल , वै वि , एतयो र्विषप्रहारीतिनाम । र म मा विषघ्न इति नाम । कुत्रचित् "निशा सटङ्कञ्च सजातिकोष–" मित्यन्य स्थाने रङ्ग विष टङ्कणमूषणश्चेति पाठो दृश्यते ।

भाषा—हल्दी, सुहागा,जावित्री, तूतिया सवसमभागलेकर वारीकचूर्णकर वन्दालकेरससे १–२ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ मासेकीमात्रा पानीवगैरहकेसाथदेनेसे यह स्थावर और जङ्गम समस्तविषोंको दूरकरताहै । मनुष्यके मूत्रकेसाथ देनेसे कालदष्टकोभी नष्टकरताहै ॥ ५६४ ॥

५६५ विषसूचिकारसः

रसं विषं सर्पविषं पाषाणं त्रिविधं तथा ।
समांशं पेषयेद्यामं कङ्गुणीतैलमर्दितम् ॥ २७४९ ॥
अज्ञाने सङ्कटे चैव सन्निपाते महाभये ।
दापयेदार्द्रकद्रावैस्तिलमात्रं विचक्षणः ॥ २७५० ॥
सर्वेषु सन्निपातेषु शान्तिमाप्नोति लीलया ।
विषसूचिकनामाऽयं वैद्यानां हितकारणम् ॥ २७५१ ॥
नारिकेलोदकं दद्यात्पिवेद्वा शर्करोदकम् ।
क्षीरान्नञ्च सिता पथ्यं रसराजो महानयम् ॥ २७५२ ॥

र.क यो , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, वछनाग, सर्पविष, सफेद–लाल और पीला सोमल सब समभाग लेकर वारीकचूर्णकर एकपहर माल-कागनीके तैलसे मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे तिलमात्र अज्ञात-सङ्कटसन्निपातमें देनेसे प्राणरक्षाहोतीहै । इसकेदेनेसे दाह उत्पन्नहो तो नारियलकाजल अथवा शक्करका शर्वत देना और पथ्यमें दूधभात तथा शक्कर देना ॥ ५६५ ॥

५६६ विषामृतरसः

निर्विषीं सूतगन्धौ च प्रत्येकञ्च पलंपलम् ।
दन्तीवीजं पलद्वन्द्वं द्विपलं तालकन्तथा ॥ २७५३ ॥
नारिकेलाम्बुना खल्वे मर्दयेत्त्रिदिनं भिषक् ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं दोषज्वरविनाशनम् ॥
नेत्राञ्जनेपूपयोगं विषामृतमिदं स्मृतम् ॥ २७५४ ॥

वै चि , दोषज्वरे ।

भाषा—निर्विषी, शुद्धपारा और गन्धक १–१ पल, शुद्ध-जमालगोटा और हरिताल २–२ पल लेकर वारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय ३ दिन नारियलकेजलसे मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे तथा नेत्रोंमें लगानेसे यह सन्निपात और विषोंको नष्टकरताहै ५६६

५६७ विष्णुपराक्रमरसः

शुद्धौ पारदगन्धौ च टङ्कणञ्च विषं समम् ।
त्रिक्षारं सैन्धवं तुल्यं सर्वं धुत्तूरजै र्द्रवैः ॥ २७५५ ॥
मर्दितं गोलकीकृत्य कुक्कुटीपुटपाचितम् ।
खल्वमध्ये विनिःक्षिप्य मत्स्यवाराहपित्तके ॥ २७५६ ॥
भावितं माषमात्रञ्च देयं शीतोदकं त्वनु ।
सन्निपाते ज्वरे श्वासे दोषे विषमशीतके ॥ २७५७ ॥
अपस्मारे धनुर्वाते कम्पवाते च मूर्च्छने ।
तत्क्षणेन निहन्त्याशु इच्छापथ्यं प्रदापयेत् ॥ २७५८ ॥
मनुष्याणां हितार्थाय सर्वरोगभयापहः ।
विष्णुना कथितः पूर्वं रसो विष्णुपराक्रमः ॥२७५९॥

व रा , वै चि , वा , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा, वछनाग, तीनोंक्षार, सेंधानमक येसव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर धतूरेकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमेंवन्दकर २–४ कपड़-मिट्टीदेकर गीलेहीको कुक्कुटपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोने-पर निकालकर मछली और सूअरके पित्तोंसे १–१ भावनादेकर उड़दवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली ठंढे पानीकेसाथ देनेसे सन्निपात, ज्वर, श्वास, विषमज्वर, अपस्मार, धनुर्वात, कम्पवात और मूर्च्छा इनसवको यह नष्टकरताहै । भूखलगनेपर इच्छानुसार पथ्यदेना ॥ ५६७ ॥

५६८ विसर्पनाशनरसः

तीक्ष्णाऽभ्रकान्तं विषनागगन्धं
तालञ्च ताप्यञ्च मृतं रसेन्द्रम् ।

कौमारकन्दे क्रमभस्मनीतं
विसर्पनाशं प्रवदन्ति सन्तः ॥ २७६० ॥

रसेन्द्रसं., चि. क., विसर्पे ।

भाषा—लोह, अभ्रक और कान्तभस्म, शुद्धवछनाग, नागभस्म, गन्धक, हरिताल, सोनामाखी और पारदभस्म सव समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुंवारकेरससे मर्दनकर गोलीवनाय घीकुंवारकीजड़केअन्दर रखदे और शरावसम्पुटमें वन्दकर २–४ कपड़मिट्टीदेकर सुखनेपर लघुपुटकी आचदे जिसमें कि जड जलजाय और गन्धक वगैरह न उड़नेपावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपरनिकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह विसर्पको नष्टकरताहै ॥ ५६८ ॥

५६९ विसर्पशोषणरसः

तालकं शुल्वकं तुत्थं पारदश्चाऽर्द्धभागिकम् ।
मर्दयेल्लाङ्गलीतोयैः करवीरद्रवैस्तथा ॥ २७६१ ॥
शरपुङ्खाद्रवैश्चैव त्रिवारञ्च पृथक्पृथक् ।
ततो गजपुटे पाच्यं त्रिवारं मारितं शुभम् ॥ २७६२ ॥
गुञ्जाद्वयं प्रदातव्यं विसर्पेषु प्रयत्नतः ।
पिप्पलीमधुसंयुक्तं पथ्यागुडमथापि वा ॥ २७६३ ॥
कल्पयेदनुपानं हि विसर्पतत्त्ववित्सुधीः ।
अयं हन्ति मसूरीश्च विसर्पस्नायुकव्यथाम् ॥ २७६४ ॥

र. म मा., ना वि , विसर्पे ।

भाषा—शुद्धहरिताल, तुत्थ और ताम्रभस्म १–१ भाग, शुद्धपारा आधाभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर करिहारी, कनेर, शरपुङ्ख इनप्रत्येकके रसोंसे ३–३ भावनाए देकर गोला वनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटकी आचदे । ऐसे ३ गजपुटदेकर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्ती रोगोचितानुपानकेसाथ अथवा पीपल और मधुकेसाथ अथवा हर्रे और गुड़केसाथ देनेसे सवप्रकारके विसर्प, मसूरिका और स्नायुरोगोंको यह दूरकरताहै

५७० विसर्पारिरसः

सूतं गन्धं लोहचूर्णं दिनैकं
घृष्ट्वा नीरैः र्यावच्चिञ्च्याः पचेत ।
मूषामध्ये भूधरे तस्य यन्त्रं
मध्वाज्याभ्यां हस्तपादप्रतापे ॥ २७६५ ॥
दद्याद्वा राजवृक्षस्य नीरै-
र्माध्वीकाक्तं त्रैफलेनाऽथवापि ।
घर्षेत्तीव्रे दुष्टतापप्रदेशे
ताम्रे मण्डै र्लेपयित्वा क्षिपेत ॥
स्नुह्यर्कोत्थं दुग्धकं टङ्कणाक्तं
धन्यं सर्पि र्जायते लक्षणोक्तः ॥ २७६६ ॥

र दी., विसर्पे ।

टि०—गौडरसेनाऽयमापाततः समान प्रतिभाति परन्तु भावनाभिपाकेन च वैलक्षण्यात्पृथक्तया निहितोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और लोहचूर्ण समभागलेकर तितलीकेरससे एकदिन मर्दनकर शरावसम्पुटमें वन्दकर भूधरयन्त्रमेंआचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा मधु और घीकेसाथ अथवा अमलतासकेगूदेकेपानीकेसाथ अथवा मध्वासव या त्रिफलाकेक्काथकेसाथदेनेसे विसर्परोग नष्टहोताहै । जलनकेस्थानमें ताम्र अथवा माडकालेपदेकर सेहुण्ड और आककेदूधमें सुहागा मिलाकर रक्खे, अथवा इनचीजोंसे घीवनाकर लगावे ॥ ५७० ॥

५७१ विसूचिमर्दनरसः

शुद्धसूतस्य भागैकं नागजिह्वा तथैव च ।
त्रिभागो मृतनागश्च गन्धकश्चाऽष्टभागिकः ॥ २७६७ ॥
द्वात्रिंशद्भागसम्मानममृतश्चोषणन्तथा ।
सूक्ष्मचूर्णं ततः कृत्वा दातव्यो गुञ्जमात्रकः ॥ २७६८ ॥
अजीर्णे च विसूच्याञ्च ज्वरे सामे मरीचकैः ।
त्रिदोषे रक्तिकायुग्मं पथ्यं देयं सुशीतलम् ॥ २७६९ ॥

ना वि , विसूचिकायाम् ।

भाषा—शुद्धपारा और मैनसिल १–१ भाग, नागभस्म ३ भा., शुद्धगन्धक ८ भाग, शुद्धवछनाग और मरिच ३२–३२ भाग लेकर सवका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय १–१ रत्ती मरिचकेसाथ देनेसे अजीर्ण, हैजा और सामज्वर नष्टहोतेहै । त्रिदोषमें २ रत्तीकीमात्रा देवे और शीतोपचारकरे ॥ ५७१ ॥

५७२ वीरचण्डेश्वररसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं कान्तभस्म विषन्तथा ।
वाकुचीत्रिफलाचूर्णं निम्ववह्निगुडूचिकाः ॥ २७७० ॥
दिनं भृङ्गिद्रवै मर्द्यं वाकुच्याश्च कषायकैः ।
भक्षयेल्लोहपात्रस्थं भूमासे जिह्वकम्प्रणुत् ॥
वीरचण्डेश्वरो नाम्ना षण्मासात्सर्वकुष्ठजित् २७७१

र सु , र. को , र क ल., चि. क , र का , कुष्ठे । र क. ल. वीरचन्द्रेति नाम । कुत्रचित्त्रिफलास्थाने त्रिवृता गृहीता ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और वछनाग, कान्तभस्म, वाकुची, त्रिफला, नीमकीछाल, चित्रककी जड़ और गिलोय सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरा और वाकुचीकेकाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेसे २ माशेतक रोग और रोगीका वलावल देखकर उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह १ महीनेमें ऋष्यजिह्वकको और ६ महीनेमें समस्तकुष्ठोंको नष्टकरताहै ॥ ५७२ ॥

५७३ वीरप्रतापरसः

शुद्धं सूतं विषं गन्धं त्रिक्षारञ्च कटुत्रयम् ।
मृतं ताम्रं मृतं स्वर्णं प्रवालं मौक्तिकं समम् ॥ २७७२ ॥
त्रिफलायाः कषायेण मर्दयेद्दिवसत्रयम् ।
दिनं गजपुटे पाच्यं स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ॥ २७७३ ॥

मत्स्यमाहिषवाराहमयूरच्छागसम्भवैः।
भावयेत्प्रहरान्पञ्च गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ॥ २७७४ ॥
सर्वे रोगा विनश्यन्ति सन्निपातहरं परम्।
तैलाभ्यङ्गञ्च कुर्वीत दध्यन्नं पथ्यमाचरेत् ॥ २७७५ ॥
भक्षयेदिक्षुखण्डानि नारिकेलोदकं पिबेत्।
रसवीरप्रतापोऽयं सर्वरोगहरः परः ॥ २७७६ ॥

वा सन्निपाते।

भाषा—शुद्धपारा, वछनाग और गन्धक, तीनोंक्षार, त्रिकटु, ताम्र, सुवर्ण, प्रवाल और मोती इनकीभस्में सवसमभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय त्रिफला-केक्काथसे ३ दिनमर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ३-४ कपडमिट्टीदेकर सूखनेपर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर मछली, भैंसा, सूअर, मोर और वकरेकेपित्तोंसे ५-५ पहर घोटकर १-१ रत्तीकीगोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानु-पानकेसाथ देनेसे सन्निपातप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै। अत्यन्तदाहहोनेपर तैलाभ्यङ्ग, दही, भात, ईख, नारियलका-जल इत्यादि उपचारकरे ॥ ५७३ ॥

५७४ वीरभद्रभैरवोरसः

सूतटङ्कणमाकल्लनवसारञ्च चित्रकम्।
त्वक्केसरं कणा दीप्यं सुरपुष्पं हरीतकी ॥ २७७७ ॥
त्रिवृच्छम्याकसेहुण्डज्योतिष्मत्यर्कदन्तिजाः।
एतन्मूलरजः सर्वं प्रति पञ्च विभागिकम् ॥ २७७८ ॥
सर्वचूर्णस्य तुल्यं स्याल्लोहं लोहोऽयमीरितः।
लिङ्गीन्द्रवारुणीदन्तीतुम्बीशम्याकजैः फलैः ॥ २७७९ ॥
चूर्णितैः क्वथितै र्लोहचतुर्थांशावशेषितैः।
सर्वमेनं लोहचूर्णं तैलेनाऽनेन भावयेत् ॥ २७८० ॥
अर्कसेहुण्डकम्पिल्लभल्लातकपलाशजैः।
पारिजातकशम्याकजयपालातसीभवैः ॥ २७८१ ॥
फलैश्च शिग्रुजै र्दीप्यविषयुक्तैः समैः सरैः।
अजाक्षीरेण संसिक्तैः शुष्कैस्तैलं समुद्धरेत् ॥ २७८२ ॥
वीरभद्रेश्वरो नाम रसोऽयं भैरवाह्वयः।
सर्वज्वरांश्छूलगुल्मोदरादीन्नाशयेद्भृशम् ॥ २७८३ ॥

र का, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—पारा, सुहागा, अकलकरा, नोसादर, चित्रकमूल, तज, नागकेशर, पीपल, अजवाइन, लौंग, हर्रे, निसोत, अमि-लतासकागूदा, थूहरकादूध, मालकागनी, आककादूध, दन्तीमूल येसव ५-५ भाग लेकर इनसवकीवरावर लोहभस्म मिलाकर शिवलिङ्गी, इन्द्रायण, दन्तीमूल, कडवीतूमडी, अमिलतासका-गूदा ये प्रत्येक पूर्वपिण्डकीवरावर लेकर चतुर्गुणित पानीमें प्रत्येकका चतुर्थांशावशेषकाढावनाय पूर्वपिण्डमें भावनादेकर सुखावे। सवकीभावनाएं देनेकेवाद आक और सेहुण्डकादूध, कमीला, भिलावा, पलाश, हारसिंगार, अमिलतास, जमालगोटा, अलसी, सहिजन, अजवाइन इनसवकेवीज अथवा जड़लेकर वारीकचूर्णकर वकरीकेदूधसे १-२ दिन मर्दनकर सुखाकर कन्दुकप्रभृतियन्त्रोंमे तैल निकालकर पूर्वपिण्डमें भावनादेवे। इसमेंमे ३ रत्तीमे ६ रत्तीतकमात्रा रोग और रोगीका वलावल-देखकर देनेमे समस्तज्वर, शूल, गुल्म और उदरादिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५७४ ॥

५७५ वीरभद्रेश्वरोरसः

रसगन्धाऽऽलकम्पिल्लं त्रिकटुत्रिभागकाः।
हिडिम्बिका पञ्च कृष्णा दश द्वि विषतोऽशकाः २७८४
इन्द्रवारुणिकाचूर्णं विंशतिः सुरसेन तु।
गुडवल्लीतिक्ततुम्बीलिङ्गिनीस्वरसेन च ॥ २७८५ ॥
जैपालबीजमज्जाभि र्भागैश्चैव वचाद्रवैः।
लवङ्गस्य त्रिभिर्भागैः सर्वं भृङ्गरसेस्त्र्यहम् ॥ २७८६ ॥
मर्दितं शोषितं चूर्णं तैलेनाऽनेन भावयेत्।
विशालवल्लीपालाशलिङ्गीकम्पिल्लतुम्बिकाः ॥ २७८७ ॥
जैपालं तैलमेतेषां बीजानां भूधरोद्धृतम्।
वीरभद्रेश्वरो नाम गुञ्जैकस्तप्ततोयतः ॥
सर्वज्वरेषु मधुना शूलेषु विहितः परम् ॥ २७८८ ॥

र. का, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल, कमीला, त्रिकटु ३-३ भाग, शुद्धमैनसिल ५ भा, पीपल १० भा, वछनाग २ भा., इन्द्रायण और तुलसी २०-२० भाग लेकर वारीक-चूर्णकर गिलोय, कडवी तूमडी, शिवलिङ्गी इनकेस्वरसोंसे १-१ भावनादेकर ३ भाग शुद्धजमालगोटा मिलाकर वचकेकाढेसे एकभावनादेवे। फिर ३ भाग लवङ्गमिलाकर भगरेके रससे ३ दिन घोटकर सुखाकर इन्द्रायण, पलाश, शिवलिङ्गी, कमीला, कडवी तूमड़ी और जमालगोटा इनसवकेवीज समभागलेकर जवकुट चूर्णकर भूधरयन्त्रसे तैल निकालकर रसमें भावनादेकर रखछोडे। इसमेंसे १-१ रत्ती गरमपानी अथवा मधुकेसाथदेनेसे सवप्रकारके ज्वर और शूल नष्टहोतेहैं ॥ ५७५ ॥

५७६ वीरभद्रोरसः

त्र्यूषणं पञ्चलवणं शतपुष्पा द्विजीरकम्।
क्षारत्रयं समांशेन चूर्णमेषां पलत्रयम् ॥ २७८९ ॥
शुद्धं सूतं मृताऽभ्रञ्च गन्धकञ्च पलं पलम्।
आर्द्रकस्य द्रवैः खल्वे दिनमेकं विमर्दयेत् ॥ २७९० ॥
वीरभद्ररसः ख्यातो माषैकं सन्निपातजित्।
चित्रकाऽऽर्द्रकसिन्धूत्थमनुपानं जलेन च ॥
पथ्यं क्षीरौदनं देयं द्विवारञ्च रसो हितः ॥ २७९१ ॥

र चि, सु प्र, र सु., रसायनसं, र क ल, र.को, वृ यो त, र का, यो म., र क यो, र चं, नि र, यो त, रससा-गर, सन्निपाते।

टि०—अस्य र चि, रसायनम, र सु, यो म, र का., एषु ग्रन्थेषु पाठद्वयम्, द्वितीये सन्निपाततूलानलेति नाम। रसकामधेना-

वेकत्र सन्निपातोन्मूलन इति, अन्यत्र वीरभद्रेति पाठद्वयम् । रसमार्गे सन्निपातान्तक इति नाम नत्र जाने केन कारणेन भ्रमवागुरा रचिता । वस्तुतस्तु पाठवैचित्र्यात्ते स्वयमपि वागुराग्रस्ता आसन्निति स्पष्टं प्रतीयते । सन्निकारीति नामक पाठोऽप्यत्रैवाऽन्तर्भावनीय ।

भाषा—त्रिकटु, पाचोंनमक, सोंफ, दोनोंजीरे, तीनोंक्षार (सज्जी, सुहागा, यवक्षार) समभागलेकर इनका वारीकचूर्ण ३ पल, शुद्धपारा, गन्धक और अभ्रकभस्म १–१ पल लेकर नीलवर्णकज्जलीकर चूर्णमेंमिलाय अदरखकेरससे १ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली चित्रक, अदरख और सेंधेनमकके साथ अथवा जलकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै । यथार्थ भूखलगनेपर दूध, भातदेना और औषध दिनमें दोवार देना ॥ ५७६ ॥

५७७ वीरभद्रोरसः (द्वितीयः)

समं सूतगन्धाऽमृताऽर्काऽऽलताम्रं
सकङ्कुष्ठमेतत्त्रिधा मीनपित्तैः ।
विमृद्यैवमामज्वरादौ द्विगुञ्जः
सखण्डाऽऽर्द्रजेनाऽम्भसा वीरभद्रः ॥ २७९२ ॥

र चि , टो , र शं , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, वछनाग, हरिताल, सोनामाखी, मुर्दासङ्ग, ताम्रभस्म सव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर मछलीकेपित्तकी ३ भावनाएं देकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली शक्कर और अदरखकेरसकेसाथ देनेसे यह साम अथवा निराम समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै ५७७

५७८ वीरभद्रोरसः (तृतीयः)

मृतं सूतं मृतं ताम्रं मर्दयेत्कण्टकीद्रवैः ।
एकविंशतिवारं वै शोष्यं पेष्यं पुनःपुनः ॥ २७९३ ॥
चणमात्रां वटीं खादेत्सर्वाङ्गे चाऽग्निवातके ।
स्वर्णक्षीरीविषावह्नीन्वारिणा पेषयेत्समान् ॥
ईषन्मात्रघृते पाच्यं लेपाद्वातो विनश्यति ॥ २७९४ ॥

व रा., वै चि , वातरोगे ।

भाषा—पारे और ताम्रकीभस्म समभागलेकर २१ दिनतक भटकटैयाकेरसमें घोटकर चनेप्रमाणगोलियें वनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे जलनयुक्त वातरोग नष्टहोताहै । ऊपरसे रेवनचीनी अथवा सत्यानाशीकीजड़, अतीस और चित्रकमूल इनको पानीमें पीसकर थोड़ा घी डालकर पकाकर शरीरपर लेपकरे ॥ ५७८ ॥

५७९ वीरभद्राऽभ्रकम्

अभ्रकं पुटसहस्रमारितं कर्षयुग्ममतिनिर्मलीकृतम् ।
वासराणि नवतिं विमर्दितं चित्रकस्वरससाधुसिक्तकम्
शृङ्गवेररसमर्दिता वटी
कारिता सकलरोगनाशिनी ।
भक्षिताऽग्निसदनं निहन्ति सा
शृङ्गवेरशकलेन वा पुनः ॥ २७९६ ॥

वह्निमान्द्यमपहृत्य सत्वरं
कारयेत्प्रखरपावकोत्तरम् ।
श्वासकासवमिशोथकामला-
प्लीहगुल्मजठराऽरुचिभ्रमान् ॥ २७९७ ॥
रक्तपित्तयकृदम्लपित्तकं
शूलकोपजगदान्विसूचिकाम् ।
आमवातबहुवातशोणितं
दाहशीतवलहानिकार्श्यकम् ॥ २७९८ ॥
विद्रधिं ज्वरगरं शिरोगदं
नेत्ररोगमखिलं हलीमकम् ।
हन्ति घृण्यतममेतदभ्रकं
वीरभद्रमतिवल्यमुत्तमम् ॥
भक्षितं विविधभक्ष्यमागलं
काष्ठसङ्घमपि भस्मतां नयेत् ॥ २७९९ ॥

भै र , र.सु , अग्निमान्द्ये ।

भाषा—हजारपुटोंसे मारेहुए अभ्रकको ९० दिनतक चित्रकके स्वरससे मर्दनकर सुखाकर अदरखकेरससे ३–३ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसके साथ अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, श्वास, कास, वमन, शोथ, कामला, प्लीह, गुल्म, उदररोग, अरुचि, भ्रम, रक्तपित्त, यकृत्, अम्लपित्त, शूल, वद्धोदर, हैज़ा, आमवात, वातरक्त, दाह, शीत, वलनाश, कृशता, ज़हरवाद, ज्वर, गर, शिरोरोग, नेत्ररोग, हलीमक, धातुक्षीणता, इनसवको यह नष्टकरताहै । कण्ठतक खाकर एकगोलीलेनेसे तत्क्षण जीर्णकरदेताहै

५८० वीररसः (महदादिः)

निष्कौ द्वौ तुत्थभागस्य रसादेकं सुसंस्कृतात् ।
निष्कं विषस्य द्वौ तीक्ष्णात्कर्षांशं गन्धमौक्तिकात् ॥
अग्निपर्णीहरिलताभृङ्गाऽऽर्द्रसुरसारसैः ।
मर्दितं लाङ्गलीकन्दप्रलिप्ते सम्पुटे पचेत् ॥ २८०१ ॥
अर्धपादे च पोट्टल्याः काकिण्यौ द्वे विषस्य च ।
लिहेन्मरिचचूर्णैश्च मधुना पोट्टलीसमम् ॥ २८०२ ॥
क्षयग्रहण्यतीसारवह्निदौर्वल्यकासिनाम् ।
पाण्डुगुल्मवतां श्रेष्ठो महावीरो हितो रसः ॥२८०३॥
अतिस्थूलस्य पूयासृक्कफानुद्वमतः क्षये ।
न योजयेत्क्षीररसान्विरुद्धोपक्रमत्वतः ॥ २८०४ ॥

र र स , र सु , र को , राजयक्ष्मणि ।

भाषा—तुत्थभस्म ८ माशे, शुद्ध पारा और वछनाग ४–४ मा , फोलादभस्म ८ मा., शुद्धगन्धक और मोती १–१ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अगियाघास, पृश्निपर्णी, भंगरा, अदरख, तुलसी इनके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय करिहारीके कन्दके कल्कका लेपदियेहुए सम्पुटमें वन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अष्टमांश रसमें मृगाङ्कपोट्टली और शुद्धवछनाग २–२ रत्ती मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे

१ से २ रत्तीतकमात्रा ८ मिर्चोकेसाथ मिलाकर मधुमें चटानेसे क्षय, ग्रहणी, अतिसार, मन्दाग्नि, कास, पाण्डु, गुल्म, मेद, भयङ्करक्षय इनसबको यह नष्टकरताहै। इसरसमें दूध और मासरसका प्रयोग नहीं करना ॥ ५८० ॥

५८१ वीरविक्रमरसः (प्रथमः)

रसं विषं विषञ्चाऽभ्रं विषं टङ्कणगन्धकम्।
तालकं दरदञ्चैव द्वितुत्थं गजपिप्पली ॥ २८०५ ॥
निर्विषान्ते समं हिङ्गु मधुकं कटुरोहिणी।
दोह्निपर्वतपाषाणं भार्गी मणिशिलात्रयम् ॥ २८०६ ॥
त्रिक्षारं पञ्चलवणं छिशिला च द्विजीरकम्।
कटुत्रयं दन्तिवीजं इन्द्रवर्गिन त्रिरजाजिका ॥ २८०७ ॥
छिकटुकं चविमूलञ्च कुष्ठं कर्कटशृङ्गिका।
कङ्कोलञ्च जटामांसी विषतिन्दुकवीजकम् ॥ २८०८ ॥
तीक्ष्णताम्रभवं भस्म नागं वङ्गञ्च रौप्यकम्।
मृतमारं मृतं स्वर्णं शुद्धमौक्तिकविद्रुमम् ॥ २८०९ ॥
रत्नं मरकतं नीलं गोमेदं पुष्परागकम्।
वैदूर्यवज्रभस्मापि समभागं विचूर्णयेत् ॥ २८१० ॥
धत्तूरवासाखदिरकार्पासैरण्डचित्रकैः।
चिञ्चाऽब्दपाठाहलिनीवृहतीद्वयगोक्षुरैः॥ २८११ ॥
रक्तमुण्डीब्रह्मदण्डीमर्कटीशिग्रुभृङ्गजैः।
विषमुष्ट्या काकमाचीवज्रवल्लीपुनर्नवैः ॥ २८१२ ॥
जम्बीरकन्याकुटजकारवेल्लीपटोलजैः।
जयन्त्या चैव निर्गुण्ड्या तीक्ष्णिकाप्लक्षझिण्टिकैः ॥
न्यग्रोधाऽश्वत्थपालाशपिचुमन्दशिरीषकैः।
चूतपुन्नागपनसैर्वकुलैश्चतुरङ्गुलैः ॥ २८१४ ॥
माधवीमल्लिकाटङ्कनागाह्वसकुमारिकैः।
गाङ्गेरुकीधातकीभ्यां सर्पाक्ष्याः काकजङ्घजैः ॥२८१५॥
पाद्यपामार्गधात्रीभिर्भूदन्त्यक्षशिवोद्भवैः।
भावयित्वा वटी कार्या द्विगुञ्जामानिका भिषक् २८१६
स्नुहीक्षीराऽनुपानेन सर्वरोगान्विनाशयेत्।
नाशयेद्रोगविपिनं तृणपुञ्जमिवाऽनलः ॥ २८१७ ॥
सन्निपातेषु सर्वेषु शीघ्रप्रत्ययकारकः।
वीरविक्रमनामाऽयं सर्वदेशेषु पूजितः ॥ २८१८ ॥

वा सन्निपाते।

भाषा—शुद्धपारा, वछनाग और पीलासोमल, अभ्रकभस्म, सर्पविष, सुहागा, गन्धक, हरिताल, शिगरिफ, तूतिया, दानेफिरग, गजपीपल, निर्विषी, मुलहठी, कुटकी, सफेदसोमल, भारङ्गी, तीनतरहकी मैनसिल, तीनोंक्षार, पाचोनमक, गेरू, सोनागेरू, दोनोंजीरे, त्रिकटु, जमालगोटा, शरपुङ्ख, चित्रककी जड़, तीनोंराई, पिपलामूल, गजपीपल, चव्य, कुठ, काकड़ासींगी, शीतलचीनी, जटामासी, कुचिला, फोलाद, ताम्र, नाग, वङ्ग, रजत, पीतल, सुवर्ण, मोती, प्रवाल, पन्ना, नीलम, गोमेद, पुखराज, लसनिया, हीरा (इनसबकीभस्में) येसव १–१ भाग और भुनीहींग, १३ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धकप्रभृतिकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय धतूरा, अडूसा, खैर, कपास, एरण्ड, चित्रक, इमली, नागरमोथा, पाठा, करिहारी, दोनोंभटकटैया, गोखरू, पलाश, गोरखमुण्डी, ब्रह्मदण्डी, केवाच, सहिजन, भंगरा, कुचिला, मकोय, हड़जोड़, पुनर्नवा, जम्भीरी, घीकुंवार, कुरैया, करेला, परवल, जैंती, निर्गुण्डी, राई, पाकर, कटसरैया, वट, पीपल, पलाश, नीम, सिरस, आम, नागचम्पा, कटहर, मौलश्री, अमिलतास, माधवीलता, मोगरा, जर्दालु, गजपीपल, वाझखेखसा, गंगेरन (गुलसिकरी), धावड़ी, सर्पाक्षी, काकजङ्घा, वरुण, अपामार्ग, आवले, छोटीदन्ती, वहेड़ा और हरेंके स्वरसोंसे १–१ भावना देकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली थूहरकेदूधकेसाथ देनेमे तृणपुञ्जको अग्निकीतरह सन्निपातादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै। बहुतही शीघ्र अपने प्रभावको दिखाताहै और सबदशोंमें बराबर अनुकूल पड़ताहै ॥ ५८१ ॥

५८२ वीरविक्रमरसः (द्वितीयः)

पारदं टङ्कणं गन्धं विषतिन्दुकवीजकम्।
सैन्धवं ग्रन्थिकं हिङ्गु समभागं विचूर्णयेत् ॥२८१९॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं कोलपित्तेन मर्दयेत्।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वान्वै सन्निपातकान् ॥
निहन्ति तत्क्षणाच्छीघ्रं रसोऽय वीरविक्रमः ॥२८२०॥

वै चि., र क. यो , सन्निपाते।

भाषा—शुद्धपारा, सुहागा, गन्धक और कुचिला, सेंधानमक, पिपलामूल, भुनाहींग सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाय वराहकेपित्तसे १ दिनमर्दनकर कपड़ेमें पोटली वनाय धतूरेप्रभृति सन्निपातन्नद्रवोंमें दोलायन्त्रसे १ पहर स्वेदनकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तसन्निपातोंको नष्टकरताहै ॥ ५८२ ॥

५८३ वीर्यस्तम्भनवटी

पारदस्य त्रयः कर्षाः पञ्च लोहस्य कीर्तिताः।
मर्दयेद्याममात्रन्तु धूर्तवीजसमुत्थितैः ॥ २८२१ ॥
तत्कल्कं विषमध्ये तु वस्त्रवद्धं विले क्षिपेत्।
पञ्चवाणपतेस्तैले गुटिकां पाचयेत्सुधीः ॥ २८२२ ॥
वक्त्रमध्ये क्षिपेत्ताश्च स्तम्भनं परमं भवेत्।
नारीसहस्रं रमयेन्मुखमध्ये निधापयेत ॥
पञ्चवाणविवृद्धिः स्याद्गुटिका राजपूजिता ॥२८२३॥

स्त्री. वि., वाजीकरणे।

भाषा—शुद्धपारा ३ कर्ष और लोहभस्म ५ कर्ष लेकर एकदिन शुष्कमर्दनकर धतूरेकेवीजोंकेतैलसे गोलीवननेलायक मर्दनकरे। गोलीको वछनागकेकन्दमें रखकर मुंहको कन्दहीसे वन्दकर ६–७ तहकपड़ेमें वाध उड़दकेआटेमें गोलावनाय धतूरेके-

तैलमें आटाजलनेतक पकानेसे पारेकीगोली तैयारहोगी । इसको मुहमें रखनेसे दृढ वाजीकरणहोताहै और शुक्रकी वृद्धिहोतीहै ।

५८४ वृकोदरवटी

सूतगन्धकतीक्ष्णाऽभ्रैः सताप्यैः समभागिकैः ।
रसांशमपरं सर्वं षड्कोलं जीरकद्वयम् ॥ २८२४ ॥
सौवर्चलं ससिन्धूत्थं विडङ्गञ्च हरीतकी ।
अम्लवेतसकं सर्वं बीजपूराम्बुमर्दितम् ॥
गुटिकास्तेन कल्केन कार्याः कोलास्थिमात्रकाः ॥
योगिन्या बहुघातिनीति सततं त्रैलोक्यविख्यातया,
निर्दिष्टा हि वृकोदरीति गुटिका सोष्णाम्बुना सेविता।
निःशेषाऽनिलदोषगोपजरुजः श्लेष्माऽऽमरोगोद्भवं,
मन्दाग्निं ग्रहणी चतुर्विधमहाजीर्णञ्च चूर्णं जयेत् २८२६

र र.स., र.च , र को , र.क. ल., वातव्याध्यधिकारे । र सु प्रभावती वटीति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा औरगन्धक, फोलाद, अभ्रक और सुवर्णमाक्षिकभस्म, षड्पण (पीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, मिर्च) दोनोंजीरे, संचल, सेन्धव, विडङ्ग, हर्रे, अमलवेत, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय बिजोरेकेरसमे १–२ दिन मर्दनकर बेरकीगुठलीके बराबर गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली गरमपानीकेसाथलेनेसे वातरोग, शोष, कफरोग, आमरोग, मन्दाग्नि, ४ प्रकारकी ग्रहणी, घोर अजीर्ण इनसबरोगोंको यह तत्क्षण नष्टकरतीहै ॥ ५८४ ॥

५८५ वृद्धदारुकल्पः

वृद्धदारुत्रिवृद्दन्तीकदम्बार्जुनगोक्षुराः ।
वाट्यालकाजकर्णा च वाजिगन्धा शतावरी ॥२८२७॥
कार्पासी पृश्निपर्ण्यौ द्वे वह्निश्चैवाऽपराजिता ।
कञ्चुकी तालमूली च वृहत्पत्री पलाशिका ॥ २८२८॥
ग्रन्थिकं चित्रकञ्चैव विश्वदेवा वचाऽमृता ।
वाणपुष्पी च पाठा च विम्बी वरुण एव च ॥२८२९॥
शिग्रुः कुलिशभृङ्गौ च मुण्डी च कोकिलाख्यकाः ।
अर्कक्षीरं शताह्वा च वचा चव्यं फलत्रिकम् ॥ २८३०॥
यवानी चाजमोदा च द्विजीरं धान्यतण्डुलाः ।
विडङ्गमुस्ततालीसं निशे लवणपञ्चकम् ॥ २८३१ ॥
एला पुष्करनागाह्वं त्वक्पत्रं हस्तिपिप्पली ।
फली कुष्ठं शटी रेणु र्जलं हिङ्गु सवालकम् ॥ २८३२ ॥
पाषाणभेदो वृक्षाम्लं भद्रोत्कटवितुन्नकाः ।
पलिका भागतो ग्राह्या गुडूची विश्वदारुके ॥२८३३॥
स्नुहीपलाशमृत्पार्श्वाः शिखरी विडकङ्गुणी ।
स्वर्जिका यावशूकाख्या चैषां क्षाराः पलोन्मिता.२८३४
अभ्रकस्य पलान्यष्टौ चत्वारो गन्धकस्य च ।
पलद्वयं रसं ग्राह्यं लोहं चाष्टपलं तथा ॥ २८३५ ॥
गवाक्षी भृङ्गकेश्यौ च शालिश्चं केशराजकम् ।
मानकन्दः कठिलश्च दहनो हस्तिकर्णकः ॥ २८३६ ॥
भल्लातो मुशली शुण्ठी त्रिफला वज्रवल्ल्यपि ।
एषां रसे पृथग्लोहं पुटयेन्मर्दयेत्तथा ॥ २८३७ ॥
ग्रन्थिमान्मारिषश्चैव क्षारं वृहतिका तथा ।
उत्कटो लोहितो वह्नि र्माणो वाणश्च तद्रसैः ॥२८३८॥
पुटयेदभ्रकञ्चैवमयश्चैव यथाविधि ।
कालशाकिनिपिष्टेन पयसा संयुतेन च ॥ २८३९ ॥
यावत्पिण्डो भवेत्तावच्छास्त्रविन्मृदुवह्निना ।
एकीकृत्य शुभे भाण्डे स्थापयेद्रसमुत्तमम् ॥ २८४० ॥
सर्पिषा मकरन्देन भक्षयेत्प्रत्यहं तु सः ।
पिवेच्चाऽनु पयः क्षीरं यूषं मांसरसं तथा ॥ २८४१॥
भोजनं चाऽग्निसापेक्षं कार्यञ्चैव सहं तथा ।
विहितञ्च मितं चाद्यादौषधे पाकमागते ॥ २८४२ ॥
आहारेण समं कार्यं नित्यमेवाऽल्पवह्निना ।
अग्निवृद्धिकरः कायरोगाणाञ्चाऽपहारकः ॥ २८४३ ॥
वाते पित्ते कफे शूले हृद्रोगे श्वासकासयोः ।
क्षये च विविधे घोरे शोथे चैवाऽङ्गसङ्ग्रहे ॥ २८४४ ॥
आमवाते त्रिके शूले पक्तिशूले च सर्वगे ।
अम्लपित्ते सशूले च शोथे सर्वोदरे तथा ॥ २८४५ ॥
वन्ध्यायै पुत्रप्राप्त्यर्थं पुंसश्चैव भिषक्तमैः ।
अयमेव हितो नित्यं शुक्रवृद्धिकरः परः ॥ २८४६ ॥

व. से , रसायने ।

भाषा—विधारा, निसोत, दन्ती, कदम्ब, अर्जुन, गोखरू, नागबला, मलेबारीसाग, असगन्ध, शतावर, कपास, दोनोपृश्निपर्णी, चित्रकमूल, कोयल, कञ्चुकी (नागदोंन) तालमूली, महुलान (उग्रपदी), पलाशबेल (डोडाइन) पिपलामूल अथवा वाराहीकेफल, लालचित्रक, खरेंटी, वच, गिलोय, कटसरैया, पाठा, कुंदरू, वरुण, महिजन, जंगलीसूरण, भंगरा, गोरखमुण्डी, तालमखाना, आककादूध, सोंफ, कुलिञ्जन, चव्य, त्रिफला, अजवाइन, अजमोद, दोनोंजीरे, धनियेके चावल, विडङ्ग,मोथा, तालीसपत्र, दोनोंहल्दी, पाचोंनमक, इलायची, पोहकरमूल, नागचम्पा, तज, पत्रज, गजपीपल, आवल, कुठ, कचूर, रेणुका, खस, भुनाहींग, सुगन्धवाला, पाषाणभेद, कोकम, नागरमोथा और सुरवारी १–१ पल, गिलोय, सोंठ, देवदारु, सेहुण्ड, पलाशकीजड़कीछाल, गेरू, पारसपीपल, अपामार्ग, नवसादर, मालकागनी, सज्जी, यव इनसबकाक्षार १–१ पल, अभ्रकभस्म ८ पल, शुद्धगन्धक ४ पल, शुद्धपारा २ पल, लोहभस्म ८ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय इन्द्रायण, भंगरा, जटामासी, सरहची, कालाभंगरा, मानकन्द, करेला, चित्रक, हस्तिकर्णपलाश, भिलावे, मुशली, सोंठ, त्रिफला, हड़जोड़, गठिवन, मर्सा, यवक्षार, वनभाटा, ऊटकटाला, लालचित्रक, मानकन्द, शरपुङ्ख इनके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर इस समस्तपिण्डकी बराबर जलनिम्ब (हब्बुलकिलकिल यूनानी) काकल्क और गायकादूध मिलाकर मन्दाग्निसे पकावे । घन तैयारहोनेपर उतारकर धूपमें सुखाय चूर्णबनाकर

रखछोड़े । अथवा ३–३ माशेकी गोलिया बनाकर सुखाकर रखछोड़े । प्रकृति और बलका विचारकर १ गोलीसे २ गोलीतक घी और मधुकेसाथ मिलाकर खिलावे । ऊपरसे दूध, खीर, यूप तथा मासरस औचिती देखकर दे । पाचनहोनेकेबाद हल्का और बलकारक खुराक दे । इसकेसेवनकरनेसे वात, पित्त, कफ, शूल, हृद्रोग, श्वास, कास, नानातरहके धातुक्षय, राजयक्ष्म, शोथ, अङ्गकाजकड़ना, आमवात, त्रिकशूल, पक्तिशूल, सर्वाङ्गशूल, अम्लपित्त और उदररोग प्रभृतिको नष्टकर अग्निको बढाताहै और शरीरको पुष्टकरताहै । यद्यपि ग्रन्थकारने यहापर वैसेही भाण्डमें रखना लिखाहै परन्तु दूधकाप्रयोगहोनेसे सड़नेका भयहै इसलिये इसको सुखाकर रखनाचाहिये ।

विशेषसूचना—ग्रन्थकारने इसपाठको इसतरहलिखाहै कि उससे इतिकर्तव्यता मालूम नहींहोती । इसलिये इसमें जो लोह और अभ्रक आयेहैं उन्हें साधारणरीतिसे तैयार न करना किन्तु इन्द्रायणसे लेकर हड़जोड़तकके रसोंमें मर्दनकर लोहेकीभस्मकरना और गठिवनसे लेकर कटसरैयातकके रसोंसे अभ्रकको तैयारकरना फिर इन्हींके रसोंसे अभ्रक और लोहको २१–२१ भावनाए देकर इसयोगमें मिलाना ॥ ५८५ ॥

५८६ वृद्धदार्वाद्यंलोहम्

वृद्धदारुत्रिवृद्दन्तीगजपिप्पलिमाणकैः ।
त्रिकत्रयसमायुक्तैरामवातात्मकं त्वयः ॥
सर्वानेव गदान्हन्ति केसरी करिणो यथा ॥ २८४७ ॥

र.स , र.र., ध , र चि , यो म , र.सु , र कौ , र.का., आमवाते । र क **आमवातान्तके**ति नाम ।

भाषा—विधारा, निसोत, दन्ती, गजपीपल, मानकन्द, त्रिफला, त्रिकटु, त्रिजात सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर सबकी बराबर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से ४ रत्तीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथलेनेसे यह आमवातप्रभृति समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५८६ ॥

५८७ वृद्धिनाशनरसः (वृद्धयाटवीकुठारः)

रसगन्धौ समौ ताभ्यां द्विगुणं हेममाक्षिकम् ।
पथ्यारसेन त्रिदिनं रुवुतैलेन वासरम् ॥ २८४८ ॥
मर्दितं सिद्धिमायाति रसेन्द्रो वृद्धिनाशनः ।
सपथ्यारुवुतैलेन सेवितो वल्लमात्रकः ॥ २८४९ ॥
मुष्कवृद्धिक्षयत्याशु कर्णस्फोटरसेन वा ।
चलातैलेन वा लिह्याच्चणकक्वाथतोऽपि वा॥ २८५०॥
प्राणदायावशूकाभ्यां पथ्यारुचकतैलयुक् ।
वृद्धयाटवीकुठारोऽयं रसः सर्वाङ्गसुन्दरः॥ २८५१ ॥

रसायनस , र , नि र , व रा , र चं , वृद्धयधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ भाग, सुवर्णमाक्षिक २ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर हर्रोके स्वरससे ३ दिन और एरण्डकेतैलसे एकदिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली हर्रे और एरण्डीका तैल, कनफोड़ी (शिवलिङ्गी) कारस, चलातैल, चनेकाक्वाथ, यवक्षारसुचाहरेंका- क्वाथ, हर्रे तथा कालानमक और एरण्डतैल इनमेंसे किसीएकेसाथ देनेसे अण्डवृद्धि नष्टहोतीहै ॥ ५८७ ॥

५८८ वृद्धिबाधिकावटी

शुद्धं सूतं तथा गन्धं मृतमेतन्नियोजयेत् ।
लोहं वङ्गं तथा ताम्रं कांस्यञ्चाऽथ सुमारितम् २८५२
तालकं तुत्थकञ्चाऽपि तथा शङ्खवराटकम् ।
त्रिकटु त्रिफला चव्यं विडङ्गं वृद्धदारुकम् ॥ २८५३ ॥
शटीं मागधिकामूलं पाठां सहपुषां वचाम् ।
एलावीजं देवकाष्ठं तथा लवणपञ्चकम् ॥ २८५४ ॥
एतानि समभागानि चूर्णयेदथ कारयेत् ।
कषायेण हरीतक्या वटिकां माषसम्मिताम् ॥ २८५५ ॥
एकैकां वटिकां यस्तु निर्गिलेद्वारिणा सह ।
अण्डवृद्धिरसाध्याऽपि तस्य नश्यति सत्वरम् २८५६

भा.प्र , वै र , वै. द., भै र , रसायनस., र.प्र., यो म., र. क ल , र म मा , चि.क., वृद्धयधिकारे ।

टि०—अयमेव पाठ केनाऽपि धूर्तेन त्र वृद्धिपेसरीनाम्ना प्रत्या- पित स चिकित्साक्रमकल्पवल्लीकारेण तन्नाम्ना प्रकाशित , अत्र चिकि- त्साक्रमकल्पवल्लीरचयितु न दोष किन्तु स मतीन्द्रनामधूर्तस्याऽपरा- धोऽस्ति । द्वित्रस्थाने कृत न्यूनाऽधिक्यन्तु न पाठान्तरसाधक महत्त्वाऽ- भावात् । स पाठो यथा—

सूत गन्धकनागकांस्यमसित रङ्ग सलोहं मृत,
तालं तुत्थवराटसंयुतमल सर्पंष्य सर्वं पुन ।
कर्चूर कटुकत्रय त्रिफल्या चव्य विडङ्ग कणा,
पाठालीजटया च पञ्चलवण गीर्वाणकाष्ठत्रुटिम् ॥
अष्टाश रुपुपत्वचञ्च जरठ दारु सम पेषयेत्,
क्वाथेनैव शिवाभवेन बहुश कृत्वैकटङ्का वटीन् ।
एकैका वटिकाञ्च शीतपयसा प्रातर्गिरेन्नित्यश-
स्तस्याशु प्रलय प्रयाति सहसा रोगोऽण्डवृद्धि पर ॥
नित्य पथ्यरतस्य प्रस्तारणी स्याता वटी नामत ,
श्रीमद्धर्मतीन्द्रशास्त्रिरचिता प्रस्तारिणे केसरी ॥ इति ॥

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, वङ्ग, ताम्र, कांस्य, हरिताल, तूतिया, शङ्ख और कौड़ी इनकीभस्में, त्रिकटु, त्रिफला, चव्य, विडङ्ग, विधारा, कचूर, पिपलामूल, पाठा, झाऊ, बचा, इलायची, देवदारु, पाचोंनमक, येसब समभागलेकर बारीक- चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय हर्रेकेक्वाथसे १–२ दिनमर्दनकर १–१ माशेकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली जलकेसाथलेनेसे असाध्यभी अण्डवृद्धि नष्टहोतीहै ॥ ५८८ ॥

५८९ वृद्धिमातङ्गकेसरीरसः

मृतं सूतं ताम्रकञ्च मृतं हेम मृताऽभ्रकम् ।
मृतं शुद्धं गोनसञ्च सर्वमेतत्समांशकम् ॥ २८५७ ॥
शुक्तिप्रमाणं प्रत्येकं पार्वतं पलमात्रकम् ।
यामं प्रमर्दयेच्छुद्धं विपमुष्टिरसे तत ॥ २८५८ ॥

भावनैका प्रदातव्या चित्रकस्य नलस्य च ।
प्रत्येकं भावनास्तिस्रो दत्त्वा संशोष्य चातपे ॥२८५९॥
विषं कर्षमितं चाऽथ मरिचं पलमात्रकम् ।
दत्त्वा माषकसम्मानं पर्णखण्डेन दापयेत् ॥ २८६० ॥
दोषोत्थमेदोमूत्राऽन्त्रवृद्धिव्रध्नगदं तथा ।
गोधिकां विद्रधिं पाण्डुं मूत्रदोषमरोचकम् ॥
जयेज्ज्वरं धातुगतं श्लीपदं नाशयेदसौ ॥ २८६१ ॥

र. म. मा , ना वि., वृद्धयधिकारे ।

भाषा—पारा, ताम्र, सुवर्ण, अभ्रक, वैक्रान्त इनसवकीभस्में २–२ कर्ष, शुद्धगन्धक १ पल लेकर वारीकचूर्णकर शुद्धकुचिलेके रससे १ पहर भावना देकर चित्रक और नरकटके स्वरसोंकी ३–३ भावनाएं देकर शुद्धवछनाग १ कर्ष और मरिच १ पल मिलाकर १–२ दिन मर्दनकर उड़दवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पानकेसाथदेनेसे वात, पित्त, कफ, मेद अथवा मूत्रजन्यवृद्धि, व्रध्नरोग, वद, गुहरखाद, पाण्डु, मूत्रदोष, अरुचि, धातुगतज्वर, श्लीपद इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ५८९ ॥

५९० वृद्धिहररसः

रसं गन्धं विषं व्योषं तथा लवणपञ्चकम् ।
त्रिक्षारं जयपालञ्च मर्दयेद्वह्निवारिणा ॥ २८६२ ॥
रक्तिमानां वटीं कृत्वा पाययेत्पयसा सह ।
अनेन प्रशमं यान्ति वृद्धिव्रध्नादयो गदाः ॥ २८६३ ॥

आ. वि वृद्धयधिकारे ।

टि०—अय रसोऽष्टमनाराचरसेनाऽक्षरशः साम्यमावहति केवल नाराचे जयपालाऽभावोऽस्ति, भावनाऽपि जीरकेण दत्ताऽस्ति, पाकश्च विशेषतया दत्तोऽस्त्यतस्तस्मादस्य स्वतन्त्रताऽस्तीति बोद्धव्यम् ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, वछनाग, त्रिकटु, पाचोंनमक, तीनोंक्षार, शुद्धजमालगोटा येसव समभागलेकर वारीकचूर्णकर चित्रकके रससे एकदिनमर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलिया वनाकर-रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली दूधकेसाथदेनेसे अण्डवृद्धि तथा व्रध्नरोग निवृत्तहोतेहैं ॥ ५९० ॥

५९१ वृषभध्वजरसः

स्वर्णं रौप्यसुनागवङ्गसमयुग्लोहं द्विताम्रं नवं,
कान्तं त्रीरसगन्धयोरमलयोरेकद्विसङ्ख्याकयोः ।
रौद्रे सप्त विभावितं मणिशिला तालद्विभागोऽमलः,
दन्त्याः षट्त्रिकभागकञ्च दरदं कर्कोटकीटङ्कणम् ॥
भार्ङ्गीचित्रककिंहवारुणिवृषा निर्गुण्डिताम्बूलिका,
स्पृक्का सैडगजोरुबूकजरणा रास्नाम्बुविष्णुप्रियाः ।
भाव्यश्चैव पृथक् त्रिभि र्वररसै र्वल्लप्रमाणो रसः,
श्वासं सर्वविधं ज्वरं विषमजं कासञ्च पञ्चात्मकम् ॥
गुल्मं पीनसमार्तवं जठरजं शूलाऽपतानं महा-
मन्दाग्निञ्च वृषध्वजो रसवरो रोगानशेषाञ्जयेत् ॥

र. श , श्वासकासयोः ।

भाषा—सुवर्ण, चादी, नाग, वङ्ग १–१ भाग, लोह और ताम्रभस्म २–२ भा., कान्तभस्म ३ भा., शुद्धपारा १ भा., गन्धक २ भा , अगस्त्यकेरसमेंघोटकर ७ वार धूपमें सुखाईहुई मैनसिल और हरिताल २–२ भा , दन्ती ६ भा , शिगरिफ, खेखसाकीजड़ और भुनासुहागा ३–३ भागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भारङ्गी, चित्रक, भटकटैया, इन्द्रायण, अडूसा, निर्गुण्डी, पान, अनन्तमूल, पंवाड़, एरण्ड, जीरा, रास्ना, खस, तुलसी इन प्रत्येकके रसोंसे ३–३ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकीगोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे श्वास, सवप्रकारकाज्वर, विषमज्वर, ५ प्रकारका कास, गुल्म, पीनस, आर्तवदोष, जठररोग, शूल, अपतानक (खींचतान), घोरमन्दाग्नि इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ५९१ ॥

५९२ वृष्यगणचूर्णम्

वृष्यगणतुल्यं तत्पुटपक्वं घनं सिताद्विगुणम् ।
वृष्यात्परमतिवृष्यं रसायनं चूर्णरत्नमिदम् ॥ २८६६ ॥

रसायनस., रसायने ।

टि०—शतावरी, विदारी, गोक्षुरक, वानरी, इक्षुरक, नागवला, वला, अतिवला इति वृष्यगणेनैतद्ग्राह्यम् । अत्र गन्धमूर्च्छित रसमभ्रादिकञ्च दद्वति दाक्षिणात्या , अनुपेय दुग्धादि ।

भाषा—शतावरी, विदारी, गोखरू, केवांच, तालमखाना, नागवला, वला, कङ्घी और अभ्रकभस्म सवसमभागका चूर्णकर इन्हींके रसोंसे ६–७ भावनाए देकर गोलावनाय एरण्डवगैरहके-पत्तोंमें लपेटकर पुटपाककर सुखाकर दूनीशक्कर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३ माशेसे ६ माशेतक मात्रा वलावलदेखकर दूधकेसाथ-देनेसे यह समस्तधातुविकारोंको नष्टकर फिरसे जवानी देताहै ।

५९३ वृष्यराजवटी (प्रथमा)

कृष्णोन्मत्तजयाबीजान्युरगञ्चाऽहिफेनकम् ।
समुद्रशोषजं वीजं रसगन्धकमेव च ॥ २८६७ ॥
समं सञ्चूर्णयेत्सर्वं स्थूले जातिफले क्षिपेत् ।
माषपिष्टेन लेप्यं तद्वारं सम्यग्दृढं यथा ॥ २८६८ ॥
कृष्णधत्तूरफलगं दुग्धे दोलागतं पचेत् ।
उद्धृत्य कृष्णधत्तूरफलादन्यफले क्षिपेत् ॥ २८६९ ॥
त्रिःपक्वमेवं जात्याश्च पलं श्लक्ष्णं विचूर्णयेत् ।
मरिचेन समान्कृत्वा वटकान्भिषगुत्तमः ॥ २८७० ॥
रात्रौ भुक्तवते दद्यान्मधुना सितया सह ।
वृष्यराज इति ख्यातो योगो वृष्येषु चोत्तमः २८७१

टो , र. म मा , र पा वाजीकरणे । र म. मा वृष्यशशीति नाम ।

भाषा—कालाधतूरा और गाजेकेवीज, नागभस्म, अफीम, समुद्रशोषकेवीज, शुद्धपारा और गन्धक समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय वडेजायफलके-अन्दर कोरकर रखदे । ऊपरसे धतूरेकेरसमें सनाहुआ उड़दका-आटा लगाकर धतूरेकेफलमें गोलेकोरख गोदुग्धमें दोलायत्रसे

एकपहर स्वेदनकरे । फिर पहिलेफलमेंसे निकाल दूसरेफलमें रखकर स्वेदितकरे। इसतरह ३ फलोंमें स्वेदनकरनेकेवाद आटेको निकालदे और जायफलको वारीकपीस मिर्चवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े। थोड़ाभोजनकरनेकेवाद रात्रिमें इसमेंसे १–१ गोली मधु और शक्करकेसाथदेनेसे यह यथेष्ट स्तम्भनकरताहै ५९३

५९४ वेतालरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं हरितालं समाक्षिकम् ।
मर्दयेच्छिलया तावद्यावज्जायेत कज्जली ॥ २८७२ ॥
आर्द्रकस्य रसेनाऽथ कारयेद्वटिकाः शुभाः ।
गुञ्जामात्राः प्रदातव्याः सन्निपाते सुदारुणे ॥२८७३॥
साध्याऽसाध्यं निहन्त्याशु सन्निपातं भयङ्करम् ।
ईशेन कथितो ह्येष वेतालाख्यो महारसः ॥ २८७४ ॥
अस्य मात्रा गुञ्जमिता पिप्पली मधुसंयुता ।
योज्या वाते तथा शिग्रुरसेनाऽऽर्द्ररसेन वा ॥२८७५॥
सितया जीरकेणाऽपि देया पित्तज्वरे बुधैः ।
शर्करामधुयष्टीभ्यां भूनिम्बसितयाऽथवा ॥ २८७६ ॥
शीतज्वरेषु योज्या सा पिप्पलीमधुसंयुता ।
अथवा मधुशुण्ठीभ्यामनुपानेन रोगजित् ॥ २८७७ ॥

रसायनसं, र म., र च., वै क, र.सु., व रा., भै र, ज्वराऽधिकारे ।

टि०—रसायनसङ्ग्रहे रसायनाऽधिकारे । र म माक्षिकस्थाने मरिचं नियोजितम्। तथा च–"दन्तपङ्क्ति र्दृढा यस्य लोचने भ्रान्ततारके। चलिते चेन्द्रियग्रामे वेताल विनियोजयेत् ॥ म्लानेषु लिप्तदेहेषु मोहग्रस्तेषु देहिषु । दातुमर्हति वेताल यमदूतनिवारकम् ॥" इति द्वौ श्लोकावधिकतया दृश्येते, आर्द्रकस्य भावनाया अभाव । कुत्रचिदार्द्रकरसेन त्रि सप्तकृत्वो भावना दृश्यन्ते ।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग, गन्धक, हरिताल और सुवर्णमाक्षिक समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अदरखकेरससे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु और पीपलकेसाथ देनेसे साध्य अथवा असाध्य सन्निपातको यह नष्टकरताहै । सहिजन और अदरखकेरससे वायु, शक्कर और जीरेकेसाथ पित्तजरोग, मुलहठी और शक्कर अथवा चिरायता और शक्करकेसाथ शीतज्वर नष्टहोताहै । अन्यरोगोंमें पीपलमधु अथवा मधु और सोंठकेसाथ देनेसे समस्तरोग नष्टहोतेहैं ॥ ५९४ ॥

५९५ वेतालरसः (द्वितीयः)

अभ्रकं मृतलोहञ्च शुद्धं सूतं शिलाजतु ।
ताप्यं वाकुचिबीजानि त्रिफला मुशली समम्॥२८७८
सव्योषं चूर्णितं लेह्यं मधुना निष्कमात्रकम् ।
माषकं नाशयेत्सिध्म वेतालोऽयं महारसः ॥२८७९ ॥

र र, व रा., र का, वै चि, कुष्ठाऽधिकारे।

टि०—वसवराजीये वाकुचीवीजस्थाने अङ्कोल्वीजानि गृहीतानि । द्वयोरपि प्रक्षेपे क्षत्यभावोऽस्ति ।

भाषा—अभ्रक और लोहभस्म, शुद्धपारा, शिलाजीत, स्वर्णमाक्षिक, वाकुची, त्रिफला, मुसली और त्रिकटु समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ मासेकीमात्रा मधुकेसाथलेनेसे सिध्मरोग नष्टहोताहै ॥ ५९५ ॥

५९६ वेदनान्तकरसः

शुद्धाहिफेनघनसारमदावहाक्षाः
सिन्दूरसूततगरोत्पलशारिवाजाः ।
कर्चूरकेशविजयोत्पलशारिवाजै-
र्द्रावैर्विमृद्य वटिकां कुरु नेत्रगुञ्जाम ॥२८८०॥
जाङ्गलानां रसैर्दुग्धैर्वृष्यैर्वाजीकरैरयम् ।
केवलेन जलेनाऽपि योजितो वेदनान्तकृत ॥ २८८१ ॥
विसूचीग्रहणीगुल्मान् गात्राणां स्फुटनव्यथाम् ।
अध्वश्रमाऽतिसारादीन्स्वानुपानैर्विनाशयेत् ॥२८८२॥

नृ क, विसूचिकादौ ।

भाषा—शुद्धअफीम, कपूर, खुरासानी अजवाइन, वहेड़ा, रससिन्दूर, तगर, कमलगट्टा, सारिवा येसव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर कचूर, सुगन्धवाला, भाग, कमलपुष्प और सारिवाकेस्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली जाङ्गलपशुपक्षियोंके मासरस, दूध, वृष्यगण और वाजीकरण द्रव्योंकेसाथ अथवा अभावमें केवल जलकेसाथ देनेसे हैजा, ग्रहणी, गुल्म, अङ्गोंका फूटना, मार्गगमनादिजनित थकावट, अतिसार प्रभृति समस्त रोगोंको यह अपने अपने अनुपानोंसे नष्टकरताहै ॥५९६॥

५९७ वेदविद्यागुटी

पारदाऽभ्रककान्तानां नागभस्म समं समम् ।
दिनं ब्राह्मीरसैं मर्द्यं वालुकायन्त्रगं पुनः ॥ २८८३ ॥
उद्धृत्य चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं जारिताऽभ्रं शिलाजतु ।
ताप्यं मण्डूरवैक्रान्तं कासीसं तुल्यमेव च ॥ २८८४ ॥
सर्वं सर्वसमञ्चूर्णं कल्कयेच्च ततः पुनः ।
मुस्ताचन्दनपुन्नागनारिकेलस्य मूलकम् ॥ २८८५ ॥
कपित्थरजनीदार्वीचूर्णं सर्वसमं भवेत् ।
जम्बीराणां द्रवै मर्द्यं दिनयामं वटीकृतम् ॥ २८८६ ॥
वेदविद्यावटी नाम्ना भक्षणाद्विश्वमेहजित् ।
मधुधात्री रसञ्चाऽनु क्षौद्रैरपि गुडूचिका ॥
अङ्कोलस्य तु बीजैकं रात्रौ दार्वीरसं पिबेत् ॥२८८७॥

भै. र, र को., र. का, व रा., रसायनस, यो म, प्रमेहाऽधिकारे । यो. म ब्राह्मीरसस्थाने भृङ्गरसेन मर्दन विहितम्।

भाषा—शुद्ध पारा, अभ्रक, कान्त और नागभस्म येसव समभागलेकर वारीकचूर्णकर ब्राह्मीकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर एकदिनकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इसमें अभ्रकभस्म, शिलाजीत, स्वर्णमाक्षिक, मण्डूर, वैकान्त और कासीस येसव समभागलेकर

वारीकचूर्णकर पूर्वचूर्णमें समभाग मिलावे । फिर नागरमोथा, सफेदचन्दन, नागचम्पा, नारियलकीजड़, कैथ, हल्दी, दारुहल्दी, येसब समभागलेकर वारीकचूर्णकर पूर्वराशिकेवरावर मिलाय जभीरीकेरससे २ पहर मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु और आवलोंकेरस अथवा मधु और गिलोयकेरसकेसाथ देनेसे यह इक्षुप्रमेहको नष्टकरतीहै । अङ्कोलकावीज १ नग और रसौत १ माशा रात्रिमें दूधकेसाथदेवे ॥ ५९७ ॥

५९८ वेदविद्यारसः

रसभस्म त्रिभागञ्च भागैकं तारभस्मकम् ।
मृतमभ्रञ्च लोहञ्च कासीसञ्च मनःशिला ॥ २८८८ ॥
एतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
निर्गुण्डीमुशलीवासाजयाजैरग्निमन्थजैः ॥ २८८९ ॥
अभयाऽऽर्द्रकजैं मर्द्य सप्ताहञ्च पृथक्पृथक् ।
तद्गोलं कूपिकायन्त्रे पद्यामं तु तुपाग्निना ॥२८९०॥
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं रक्तमेहप्रशान्तये ।
निम्बवीजकषायञ्च वोलयुक्तं पिवेदनु ॥
वेदविद्यारसो नाम्ना रक्तमेहकुलान्तकः ॥ २८९१ ॥

व. रा, रक्तमेहे ।

भाषा—पारदभस्म ३ भाग, रजत, अभ्रक और लोहभस्म, शुद्ध कसीस और मैनसिल येसव १–१ भाग लेकर वारीकचूर्णकर सभालू, मुशली, अड्सा, भाग, अरणी, हर्रे और अदरखकेरसोंसे ७–७ दिन मर्दनकर गोलावनाय आतशीशीशीमें डाल मुंहवन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर ६ पहरकी तुपाग्निमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा नीमकेवीजोंकेकाढेमें हीरादक्खनका चूर्ण डालकर इसकेसाथदेनेसे रक्तप्रमेह नष्टहोताहै ॥ ५९८ ॥

५९९ वैक्रान्तगर्भरसः

सूतं स्वर्णञ्च वैक्रान्तं मृतं तुल्यञ्च मर्दयेत् ।
चाण्डालीराक्षसीद्रावे द्वियामान्ते च गोलकम् २८९२
शुष्कं रुद्ध्वा पुटे पाच्यं करीषाग्नौ महापुटे ।
माषैकं मधुना लेह्यं मूत्रकृच्छ्रप्रशान्तये ॥ २८९३ ॥
वैक्रान्तगर्भनामाऽयं सर्वकृच्छ्रामयाञ्जयेत् ।
अपामार्गस्य मूलन्तु तक्रे पिष्ट्वाऽनु पाययेत् ॥२८९४॥

यो. र, र चं, र का, वै चि, र क यो, भै र, र र कौ, यो. म, र को, व रा, नि र, रसेन्द्रमं, मूत्रकृच्छ्रे ।

टि०—र का कृच्छ्रान्तकेति नाम । रसेन्द्रमङ्गले हेमरसनाम्ना अयमेवरसो निहितोऽस्ति । कुण्टगोलेद्रवभावनाऽधिकतया दत्ताऽस्ति, तस्याऽत्राऽप्यनुष्ठाने न कापि क्षति पाठस्त्वेक एवाऽस्ति । कुण्टगोलशब्देन काक्षिकं ग्रहीतव्यम् । भै र, र र कौ, यो म, र को, नि र एपु मूत्रकृच्छ्रान्तकेति नाम । वसवराजीये चक्रवर्द्धेति नाम । कुत्रचिन्मृततुल्यमित्यस्य स्थाने गन्ध तुल्यमिति पाठस्तु प्रमादात्समजनि यथावस्थितानां कार्यकरणाऽयोग्यत्वात् ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, वैक्रान्त इनकीभस्में समभाग लेकर चाण्डाली (अभावमें सेमलकाकन्द) और राक्षसी (अभावमेंलालकपास) के फूलोकेरसोंसे २–२ पहर मर्दनकर गोलावनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर कर्षीके गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे उड़दवरावर मात्रा मधुकेसाथ देनेसे मूत्रकृच्छ्र निवृत्तहोताहै । इसपर ३ माशे अपामार्गकीजड़ छाछमें पीसकर पिलाना ॥ ५९९ ॥

६०० वैक्रान्तगुटिका (प्रथमा)

वैक्रान्ताऽभ्रककान्तन्तु सस्यकं तु सुरायसम् ।
विभीतकादिसम्भूतं हेम कान्तसमं भवेत् ॥ २८९५ ॥
समावर्त्य ततः सूते योजयेत्पादयोगतः ।
कुमारीरससंघृष्टा कृतैषा गुटिका शुभा ॥
जरामृत्युहरी ख्याता वक्त्रस्था नाऽत्र संशयः २८९६

रसेन्द्रमं, रसायने ।

भाषा—वैक्रान्त, अभ्रक, कान्त, तुत्थ और सुवर्ण १–१ तोला, वहेड़ा, आवला, हर्रे इनकीमज्जा २–२ तोले लेकर सवका वारीकचूर्णकर त्रिफलाकी मींगीकेसाथ १–२ दिन धमनकर त्रिफलाकी मज्जाके तैलमें वुझाकर अग्निस्थायी तथा वुभुक्षितकियेहुए २० तोले पारेमें गलाकर मिलादे । फिर घीकुवारकेरसमें इसे ६–७ दिन मर्दनकर अभीष्टप्रमाणकी गोलिया वनावे । इनमेंसे १ गोली मुंहमें रखनेसे यह वुढापे और मृत्युको दूरकरतीहै ॥ ६०० ॥

६०१ वैक्रान्तगुटिका (द्वितीया)

पुनरन्यत्प्रवक्ष्यामि प्रयोगं भुवि दुर्लभम् ।
चूर्णयित्वा तु वैक्रान्तं दुग्धमध्वाज्यसंयुतम् ॥२८९७॥
ईषट्टङ्कणसंयुक्तमन्धमूषागतं धमेत् ।
तत्सत्त्वं सहसा सूते मर्दयित्वा विचक्षणः ॥ २८९८ ॥
स्वाभीष्टां गुटिकां वद्ध्वा मुखमध्ये च धारयेत् ।
जायते दिव्यदेहस्तु मासमात्रस्य धारणात् ॥२८९९॥
रसवन्धञ्च कुरुते इन्द्रगोपकसन्निभम् ।
सहस्रवेधी च भवेत्सर्वलोहानि वेधयेत् ॥ २९०० ॥

रसेन्द्रमं, रसायने ।

भाषा—दूध, मधु और घी समभागमें मिलाकर एकपात्रमें रखछोड़े और इसमें वैक्रान्तको गरमकरके यहातक वुझावे कि उसका चूराहोजाय फिर इसचूरेको थोड़े सुहागेकेसाथ मूषामें रख धमनकरे तो इसमेंसे सत्त्व निकलेगा । इससत्त्वको शुद्ध और वुभुक्षित पारेमें मिलानेसे गोली वधेगी । इसगोलीको मुहमें रखनेसे एकमहीनेमें दिव्य शरीरहोजाताहै । इसगोलीको पारेमें डालनेसे वीरवहोटीके सदृश रंग होजाताहै । इस रञ्जितपारेका एकहजारवा हिस्सा किसीभी धातुमें देनेसे उसमें सूर्यक्रिया अथवा चन्द्रक्रिया होतीहै ॥ ६०१ ॥

६०२ वैक्रान्तपोट्टली

वैक्रान्तवज्रगगनं भसितं सुभाव्यं
व्योषाम्वुना लकुचवारि विमर्दनीयम् ।

वैक्रान्तपोट्टलिरसो निखिलां गदालि
कादम्विनीमिव समीरण एव हन्ति ॥२९०१॥
वैक्रान्तस्य यदा स्थाने प्रवालश्च सुमाक्षिकम।
प्रवालताप्यनामादिः पोट्टली सर्वरोगनुत् ॥ २९०२ ॥

र शं , र शि., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—वैक्रान्त, हीरा, अभ्रक इनकीभस्मैं समभागलेकर त्रिकटु और वड़हरकेरसोंमे १–१ दिन मर्दनकर अभीष्ट आकारकी गोलिया वनाय मलमलके टुकड़ेमें वाधकर पिघलाए हुए गन्धकमें डालकर १ या २ पहरकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर खुरचकर गन्धकको निकालदे और गोलियोंको रखछोड़े। इनमेंसे एकसर्षपसे एक उड़द तककी मात्रा रोगी और रोगका वलावल देखकर पानीमें घिसकर देनेसे तमाम सन्निपात, पक्षाघात और धनुर्वातादि समस्त वातव्याधियां तथा कफरोग वहुतशीघ्र नष्टहोतेहै। यह अत्यन्त वाजीकरण और वृष्यहै । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे समस्तरोगोंको नष्टकरतीहै। वैक्रान्तके स्थानमें प्रवालके योगसे प्रवालपोट्टली और माक्षिकके योगसे माक्षिकपोट्टली नामदेना ॥ ६०२ ॥

६०३ वैक्रान्तवद्धरसः (सुवर्णादिः) १

स्वर्णं वैक्रान्तसत्त्वञ्च द्वन्द्वितं जारयेद्रसे।
समांशं तु भवेद्यावत्ततस्तेनैव सारयेत् ॥ २९०३ ॥
समेन जायते वद्धो धारयेत्तं मुखे सदा।
संवत्सरप्रयोगेण जराकालापमृत्युजित् ॥ २९०४ ॥
कुमार्या दलजं द्रावं सितायुक्तं पिवेदनु।
स्वर्णवैक्रान्तवद्धोऽयं ब्रह्मायुर्यच्छते नृणाम् ॥२९०५॥

र ख., रसेन्द्रमं , रसार्णव, रसायनाऽधिकारे।

टि०—रसार्णवस्थोऽयं मूलपाठ. परन्तु तत्र नामाऽनुपानञ्च न दृश्यते। रसेन्द्रमङ्गलेऽपि अनुपान नाऽस्ति नाम च वैक्रान्तगुटिकेति दृश्यते।

भाषा—सुवर्ण और वैक्रान्तसत्त्व समभागलेकर द्वन्द्वमेलापकयन्त्रमें रखकर गलाकर निकालले। इसमेंसे चतुर्थांश सारणायन्त्रमें रख पारेमें मिलावे और जारणकरे। जव समभाग वैक्रान्तवीज जारणहोजायगा तव पारेकी कठिनगोली होजायगी। इसको एकवर्षतक निरन्तर मुखमेंरखनेसे वुढापा, मृत्यु, अपमृत्यु येसव नष्टहोकर दीर्घायु होजाताहै ॥ ६०३ ॥

६०४ वैक्रान्तवद्धरसः (द्वितीयः)

दशनिष्कं रसश्चैकं गन्धकं क्षोदयेच्छनैः।
स्तोकंस्तोकं तत्र दत्त्वा खल्वे कृत्वा च पिष्टिकाम् २९०६
उग्रकन्दे विनिःक्षिप्य वैक्रान्तं भस्मतां गतम्।
अर्द्धनिष्कं तथोर्द्ध्वाऽधः कन्दमध्ये मुखं दृढम् ॥२९०७॥
मृदाऽऽवेष्ट्य पुटेच्चाऽष्टौ कुक्कुटाख्ये पुनः क्रमात्।
दाडिमीकुसुमच्छायो रसःस्याद्योगवाहकः ॥ २९०८॥

र शि., यो म , र र , रसायने।

टि०—अत्र कटुतुम्बीवन्ध्याकर्कोटकीक्षीरकन्दोग्रकन्दाना तत्रतत्र ग्रन्थेषु विकल्पो दृश्यते, तत्र यथालाभ ते सर्वेऽपि ग्राह्या इति।

भाषा—शुद्धपारा २॥ कर्ष, शुद्धगन्धक ४ माशे लेकर थोड़ा २ गन्धकडालकर मर्दनकरतो इनकी गोलीहोजायगी फिर जङ्गलीसूरण, वछनाग, अथवा एककली लहसनके कन्दमें एकमाशा वैक्रान्तभस्म विछाय पारदवटीको रख ऊपरसे एकमाशा दूसरी वैक्रान्तभस्म रख उसीकेमूंदसे मुहवन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर कुक्कुटपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर दूसरेकन्दमें उसीतरह रखकर आंचदे। इसप्रकार ८ आचें देनेसे अनारकेफूल जैसा रङ्ग होजायगा और यह योगवाहकहोगा अर्थात् जिस अनुपानकेसाथ दियाजायगा उसीकामको करेगा ॥ ६०४ ॥

६०५ वैक्रान्तवद्धसूतः

स्वर्णस्य वसुवर्णस्य तोलकं गैतितस्य च।
कर्षञ्च शुद्धवैक्रान्तं रसं षोडशकार्षिकम ॥ २९०९ ॥
शरावमात्रं गन्धस्य खल्वमध्ये विचूर्णयेत।
हस्तिकर्णपलाशस्य पर्णोत्थं रसं दत्त्वा दिनद्वयम ॥२९१०॥
कृष्णधत्तूरकार्पासदलोत्थेन रसेन च।
सुशोधितं गैतितञ्च नागं दत्त्वाऽथ तोलकम ॥२९११॥
कुमारीस्वरसेनैव मर्दयेच्च दिनद्वयम्।
सप्त मृच्चैलसंलिप्ते काचकुम्भे क्षिपेद्रसम् ॥ २९१२ ॥
तन्मुखे खटिकां दत्त्वा लेपयेत्सप्तधा मृदा।
मृत्कर्पटविधानञ्च परिभाषां विलोकयेत ॥ २९१३ ॥
संस्थाप्य वालुकायन्त्रे पचेद्दिनचतुष्टयम्।
शनैः शनैः प्रदातव्यो वीतिहोत्रो भिषक्तमैः ॥२९१४॥
स्वाङ्गशीतो रसो ग्राह्यो यथारोगानुपानतः।
दापयेत्सर्वरोगाणां विनिहन्ता न संशयः ॥ २९१५ ॥
जातीफलं जातिपत्री कुङ्कुमं सलवङ्गकम।
कोलार्ककरभश्चैव स्वस्थे स्यादनुपानकम ॥ २९१६ ॥
अतीव कान्तिजननमतीवोत्साहवर्धनम।
अतीव कामवृद्धिञ्च वह्निवृद्धिं करोत्यसौ ॥ २९१७ ॥
शोषं क्षयं राजरोगं प्रमेहं विषमज्वरम्।
प्रलेपकञ्च जीर्णञ्च तथा मन्दज्वरं जयेत् ॥ २९१८ ॥
वृद्धानां कान्तिजननं पुत्रदं श्रीकरं परम्।
ओजोवृद्धिकरं श्रेष्ठं महावातविनाशनम् ॥ २९१९ ॥
श्लेष्मामयप्रशमनं कर्मजव्याधिनाशनम्।
वैक्रान्तवद्धसूतोऽयं वृंहणं परमो मतः ॥ २९२० ॥

टो , रसायने।

भाषा—एकतोला उत्तमसुवर्णलेकर वारीकचूर्णकर शुद्धवैक्रान्त एककर्ष, शुद्धपारा १६ कर्ष, शुद्धगन्धक ८ कर्ष लेकर नीलवर्णकज्जलीकर हस्तिकर्णपलाश, कालाधतूरा और कपासकेपत्तोंके रसोंसे २–२ दिन मर्दनकर अच्छीतरह शुद्धकियेहुए एक तोले नागका वारीकचूर्ण मिलाकर घीकुवारकेरससे २ दिनमर्दनकर सुखाकर कज्जलीवनाय ६–७ कपड़मिट्टीदीहुईआतशीशीमें भर खड़ियामिट्टीकी डाटलगाय कपड़मिट्टीसे मुहवन्दकर वालुका-

यन्त्रमें ४ दिनकी बहुतमन्द आंचदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतकमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै । जायफल, जावित्री, केशर, लौंग, बेरकीमज्जा और अकलकरा येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा अनुपानकीजगह स्वस्थ आदमीको देनेसे कान्ति, उत्साह, काम और अग्निकीवृद्धिहोतीहै । युक्तिपूर्वक इसकासेवनकरनेसे शोष, क्षय, राजरोग, प्रमेह, विषमज्वर, प्रलेपक, जीर्ण तथा मन्दज्वर, कान्त्यभाव, वन्ध्यत्व, ओज क्षय, वातविकार, श्लेष्मरोग और कर्मजव्याधियां नष्टहोतीहैं ॥ ६०५ ॥

६०६ वैक्रान्तगुटी

वैक्रान्तसत्त्वतुल्यांशं शुद्धं सूतं विमर्दयेत् ।
दिनं दिव्यौषधद्रावैस्तद्गोलं निगडेन वै ॥ २९२१ ॥
लिप्त्वा लवणगर्भायां वज्रमूष्यां निरोधयेत् ।
छायायां शोषयेत्सन्धिं त्रिदिनं तुषवह्निना ॥ २९२२ ॥
स्वेदयेद्वा करीषाग्नौ दिवारात्रमथोद्धरेत् ।
तद्गोलं निगडेनैव लिप्त्वा तद्वन्निरुद्ध्य च ॥ २९२३ ॥
छायाशुष्कं धमेद्गाढं बन्धमायाति निश्चितम् ।
वर्षैकं धारयेद्वक्त्रे जीवेद्ब्रह्मदिनत्रयम् ॥ २९२४ ॥
वैक्रान्तगुटिका ह्येषा सर्वकामफलप्रदा ।
कर्षैकं त्रिफलाचूर्णं मध्वाज्याभ्यां लिहेदनु ॥ २९२५ ॥

र. खं., रसायने ।

भाषा—वैक्रान्तसत्त्व और अग्निस्थायी बुभुक्षितपारा समभाग लेकर यथालाभ दिव्यौषधियोंके स्वरससे गोली बननेतक मर्दनकरे । फिर तिधारीथूहर और आकका दूध, पलाशकेबीज, गूगल १–१ भाग, सेंधानमक २ भाग लेकर घनसेकूटे । कूटतेकूटते जब इसमेंसे तारबंधने लगें तब इसे तैयारसमझे (यहहालत निरन्तर २–३ दिनतक कूटनेसे होतीहै इसकानाम पारदनिगडहै इसकेअन्दर पारेको बन्दकरनेसे उड़नहींसक्ता इसीलिये इसकानाम निगड अथवा प्राचीनव्यवहारमें निगल ऐसा प्रसिद्धहै ॥ रसार्णव ॥) इसका गोलीपर और बिल्वके आकारकी वज्रमूषामें लेपदेकर मूषामें सेंधानमकबिछाकर गोलीको रक्खे और ऊपरसे सेंधेनमकसे ढककर मूषाका ढक्कन लगाय उसीनिगडसे सन्धिबन्दकर शङ्खवगैरहके चूनेका ऊपरसे लेपदेकर छायाशुष्ककर ३ दिन तुषाग्निमें स्वेदितकरे । अथवा करसीकी अग्निमें एकअहोरात्र स्वेदनकर निकालकर फिरसे पूर्ववत् मर्दनकर वज्रमूषामें रखकर पूर्ववत् सन्धिबन्दकर सुखाकर धातुद्रावके चिह्न मालूमहोनेतक दृढ़ धमनकरावेतो इससे पारेकी वैक्रान्तकेसाथ गोली बंधजायगी । इसगोलीको लगातार एकवर्षतक मुहमेंरखनेसे बहुत दीर्घायुको भोगताहै । जबसे इसका प्रयोग आरम्भकरे तभीसे सुबहशाम १–१ कर्ष त्रिफलाकाचूर्ण मधुकेसाथ सेवनकरे ॥ ६०६ ॥

६०७ वैक्रान्तरसः (षडाननः)

मृतसूताऽभ्रवैक्रान्तकान्तताम्रं समं समम् ।
सर्वतुल्येन गन्धेन मर्द्यं भल्लातकान्वितम् ॥ २९२६ ॥
दिनैकं तद्द्रवैरेव वटीं कुर्याद्द्विगुञ्जिकाम् ।
भक्षयेद्द्वन्द्वजान्हन्ति द्वन्द्वजांश्च त्रिदोषजान् ॥ २९२७ ॥
प्रत्यष्टमुशलीवह्निभागाः कुष्ठस्य षोडश ।
पिप्पलीपिप्पलीमूलं क्षिपेद्भागद्वयं द्वयम् ॥ २९२८ ॥
चतुष्कन्तु विडङ्गानां मरिचं कटुशुण्ठिके ।
ब्रह्मदण्डी तथैकैका चूर्णितं द्विगुणं गुडम् ॥ २९२९ ॥
कर्षांशं भक्षयेच्चानु ह्यर्शोरोगप्रशान्तये ।
वैक्रान्ताख्यो रसो नाम साध्याऽसाध्यप्रशान्तये ॥

नि र., र. को., र. सु., व. रा., वै चि., यो म., रसायनसं., र चि., र क. ल., र चं., र शं., र. का., अर्शोऽधिकारे ।

टि०—नि र., र को., र सु., यो म., रसायनस., र चि., र क. ल., र च., र श., र का. एषु ग्रन्थेषु षडानन इतिनाम । तत्रगन्धकोऽपि सर्वसमुदाये पतित । अत्रतु सर्वद्विगुण । अत्र भल्लातकै मर्दन विहित षडानने भावनाचर्चैव नास्ति, अतस्तस्यान्तर्भाव उचित प्रतिभाति ।

भाषा—पारा, अभ्रक, वैक्रान्त, कान्त और ताम्र इनकी भस्में समभागलेकर सबकीबराबर शुद्धगन्धक मिलाय भिलावेकेतैलसे एकदिन मर्दनकर २–२ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे द्वन्द्वज और त्रिदोषजसन्निपातोको यह नष्टकरताहै । मुशली और चित्रक ८–८ भाग, कुठ १६ भाग, पीपल, पिपलामूल २–२ भाग, विडङ्ग ४ भा, मरिच, कुटकी, सोंठ, ब्रह्मदण्डी १–१ भागलेकर बारीकचूर्णकर सबसेदूना गुड़मिलाकर १–१ कर्षके मोदकबनाले । इनमेंसे १–१ मोदक गोलीकेऊपर अनुपानमें देनेसे साध्यासाध्य समस्तबवासीर नष्टहोतेहैं ॥ ६०७ ॥

६०८ वैक्रान्तरसायनम् (प्रथमम्)

वज्राभ्रकीयसत्त्वस्य कर्षमेकं समाहरेत् ।
निष्कार्द्धं भस्म वैक्रान्तं भस्म पारदजं समम् ॥ २९३१ ॥
स्वर्णं रौप्यं प्रवालञ्च माक्षिकं वृद्धदारुकम् ।
तुगाक्षीर्यमृतासत्त्वं कर्षमानं पृथक्पृथक् ॥ २९३२ ॥
पुराणसर्पिषा क्षौद्रसिताभ्यां सह योजितम् ।
धान्यराशौ क्षिपेन्मासं माषमात्रनिषेवणात् ॥ २९३३ ॥
जरा न लभते स्थैर्यं धारोष्णक्षीरपायिनाम् ।
रोगसङ्घाः क्षयं यान्ति वैद्यौषधविवर्जिताः ॥ २९३४ ॥

नू क., रसायने ।

भाषा—वज्राभ्रकसत्त्व १ कर्ष, वैक्रान्त और पारदभस्म २–२ माशे, सुवर्ण, रजत, प्रवाल, सुवर्णमाक्षिक इनकीभस्में, विधारा, वंशलोचन और गिलोयसत्त्व १–१ कर्षलेकर पुराना घी, मधु और शक्कर अन्दाज़से मिलाकर घीकेबर्तनमें रख मुहबन्दकर धान्यराशिमें गाड़दे । एकमहीनेबाद निकालकर १–१ माशेकी मात्रा अथवा रोग और रोगीका बलाबल देखकर मात्रा कायमकर धारोष्णदूधकेसाथ देनेसे बुढ़ापा नष्टहोताहै । और जिनरोगोंमें वैद्य तथा औषधियोंने जवाब देदियाहो वे असाध्यरोग नष्टहोजातेहैं ॥ ६०८ ॥

६०९ वैक्रान्तरसायनम् (द्वितीयम्)

रक्तिकाऽष्टकसम्मानं वैक्रान्तभस्मितं हरेत् ।
षोढा गन्धकसञ्जीर्णं रसं कर्षद्वयं क्षिपेत् ॥ २९३५ ॥
वैक्रान्तपादसम्मानं मृतं हेम विनिःक्षिपेत् ।
विद्रुमं मौक्तिकञ्चैव कर्षमानं पृथक्पृथक् ॥ २९३६ ॥
शाल्मलीसारिवाद्राक्षावाराहीवानरीभवैः ।
प्रत्येकैः स्वरसैः सप्त भावयित्वाऽर्द्धमाषिकम् ॥२९३७॥
नागकेसरतालीसकणाकर्कटशृङ्गिका-
तुगाक्षीर्यमृतासत्त्वसर्पिःक्षौद्रविमिश्रितम् ॥ २९३८ ॥
लिहन्न लिप्यते राजयक्ष्मपङ्कदुरासदम् ।
पुंस्त्वहानिं श्वासकासावग्निमान्द्यमरोचकम् ॥२९३९॥
ग्रहणीं शोषगुदजावुदराणि हलीमकम् ।
निहत्य कुरुते नित्यं पुरुषं दीर्घजीवितम् ॥ २९४० ॥

नृ. क., रसायने ।

भाषा—वैक्रान्तभस्म ८ रत्ती, षड्गुणगन्धकजारितपारदभस्म २ कर्ष, सुवर्णभस्म २ रत्ती, प्रवाल और मोतीकीभस्म १–१ कर्ष लेकर सेमलकामुसला, सारिवा, द्राक्ष, वाराहीकन्द और केवाचके स्वरसोंसे ७–७ भावनाए देकर ४–४ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली नागकेशर, तालीसपत्र, पीपल, काकड़ासींगी, वंसलोचन, गिलोयसत्त्व इनके ३ माशे समभागचूर्णकेसाथ घी और मधुमें मिलाकर सेवनकरनेसे दु साध्य राजयक्ष्म, पण्ढत्व, श्वास, कास, मन्दाग्नि, अरुचि, ग्रहणी, शोष, ववासीर, ८ उदररोग, हलीमक इन सबको दूरकर यह पुरुषको दीर्घजीवी वनाताहै ॥ ६०९ ॥

६१० वैक्रान्तसूतकरसः

पुनरन्यत्प्रवक्ष्यामि वैक्रान्तविधिलक्षणम् ।
वैक्रान्तकरसं प्राप्य कस्य लोके दरिद्रता ॥ २९४१ ॥
ते च सप्तविधाः प्रोक्ताः कर्म तेषामनेकधा ।
श्वेतो रक्तस्तथा पीतो नीलः पारावतप्रभः ॥२९४२॥
मयूरगलकप्रख्यस्तथा मरकतप्रभः ।
तेषां कर्म प्रवक्ष्यामि यादृशं यस्य जायते ॥ २९४३ ॥
श्वेतश्च चूर्णयेत्सूक्ष्मं व्याघ्रीकन्दोदरे क्षिपेत् ।
स्वेदयेच्च दिवारात्रौ यावच्च त्रिदिनं भवेत् ॥ २९४४ ॥
सुस्वेदितं ततो ज्ञात्वा प्रक्षिपेत्पारदं ततः ।
तत्क्षणाज्जायते भस्म हयमूत्रेण मर्दयेत् ॥ २९४५ ॥
सुनिर्वाणं ततो ज्ञात्वा पलं पलशते क्षिपेत् ।
तारन्तु जायते भस्म विशुद्धस्फटिकाकृति ॥२९४६॥
तत्सूते मेलयेद्भस्म समभागं विचक्षणः ।
चारयेद्रजतं सूते हयमूत्रेण मर्दयेत् ॥ २९४७ ॥
अन्धमूषागतं पाच्यं कारीषे वा तुषोद्भवे ।
अहोरात्रं त्रिरात्रं वा भवेदग्निसहो रसः ॥ २९४८ ॥
स्पर्शेन सर्वलोहानि रजतश्च करिष्यति ।
रक्तेऽप्यर्थकृतं कर्म जरादारिद्र्यनाशनम् ॥ २९४९ ॥
स्वेदनं व्याघ्रपद्याश्च कन्दे यामं विधाय च ।
सारयेत्सप्तवारांश्च रसं चैव पलं तथा ॥ २९५० ॥
तच्चैव वल्लमानेन क्षिपेद्धेमपले बुधः ।
प्राप्नोति भस्मतां सर्वं पुनर्हेमशते क्षिपेत् ॥ २९५१ ॥
भस्मतां याति तत्सर्वं शुद्धहेमसमप्रभम् ।
तद्भस्म तु रसेन्द्रेऽथ पुनरर्द्धेन मेलयेत् ॥ २९५२ ॥
भवेदग्निसहो ह्येष ततः सिद्धरसो भवेत् ।
विध्यन्ते सर्वलोहानि कनकं शोभनं भवेत् ॥ २९५३ ॥
दारिद्र्यनाशनं सूतं सर्वलोकानुकम्पनम् ।
पीतन्तु हेमकारि स्यात्स्वेदितो व्याघ्रिकन्दजे ॥२९५४॥
भावितो वाजिमूत्रेण पारदीयो महारसः ।
पलं पलशते क्षिप्त्वा पुनर्हेमशते क्षिपेत् ॥
हेमसूतेन तत्सूते कोटिवेधी भवेद्रसः ॥ २९५५ ॥

रसेन्द्रमं., सर्वरोगे ।

भाषा—वैक्रान्त सातप्रकारका होताहै और उनकेकार्यभी अलग २ है। श्वेत १ रक्त २ नील ३ पीत ४ पारावतकण्ठाभ ५ मयूरकण्ठाभ ६ और पन्नेकेरङ्गका ७। इनमेंसे श्वेत वैक्रान्तको लेकर व्याघ्रीकन्दमें डालकर उसीकेगूदेसे वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर भूधरयन्त्रमें रख ३ दिनतक स्वेदनकरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पारेकेसाथ मर्दनकरनेसे तत्क्षण भस्महोजातीहै। फिर घोड़ेकेताजेमूत्रसे एकदिनरात मर्दनकरनेसे निरुत्थता होजातीहै। इसके १ पलको १०० पल चादीको गलाकर डालनेसे विशुद्धस्फटिककेरङ्गकीभस्म होजातीहै। इसभस्मको समभाग पारेमें मिलाकर घोड़ेकेमूत्रसे मर्दनकर अन्धमूषामें वन्दकर एकदिन कर्सीमें अथवा ३ दिन तुषोंमें अग्निदेनेसे पारद अग्निस्थायी होजाताहै। इसकास्पर्शकरानेसे सवप्रकारके लोहोंकी चादी होजातीहै। इसीतरह यही क्रिया रक्तवैक्रान्तमें करनेसे रक्तता होतीहै और बुढापा तथा दारिद्र्य दूरहोताहै। इसको व्याघ्रीकन्दमें रख एकपहरस्वेदनकर एकपलरसमें सारणकर ३ रत्तीको एकपल गलेहुए सुवर्णमें डालनेसे भस्म होजातीहै। इसभस्मको १०० पल सुवर्णमें डालनेसे शुद्धसुवर्णके रङ्गकी भस्म होजातीहै। इसभस्ममें आधाभाग पारा मिलानेसे अग्निसह होजाताहै और उसके स्पर्शसे सब लोह सुवर्णसदृशहोजातेहैं। इसीतरह पीले रङ्गके वैक्रान्तको व्याघ्रीकन्दमें स्वेदितकर समभागपारा मिलाकर पूर्ववत् घोड़ेके मूत्रमें मर्दनकरनेसे अग्निस्थायी होजाताहै। इसके १ पलको १०० पल सुवर्णमें डालनेसे समस्तकी भस्म होजातीहै। इसका एकभाग कोटिगुणित पारेमें डालनेसे कोटिवेधी होताहै। इसीतरह सभीरङ्गोंके वैक्रान्तोंको इसीप्रक्रियासे स्वकीयरङ्गके धातुमें मिलानेसे उसीरङ्गको पैदाकरतेहै। रोगोंको नष्टकर बुढापेको दूरकरना सबका साधारणकार्यहै। यहापर ग्रन्थकारने कदाचित अर्थवादसे कामलियाहो तो भी यह एकान्तत मिथ्या नहींहै इसवातको ध्यानमें रखना उचितहै ॥ ६१० ॥

६११ वैदूर्यरसायनम्

कान्ताकल्केन वैदूर्यं सहगन्धेन मारितम् ।
तद्भस्मनाऽष्टशाणेन तदर्द्धं मृतहेम च ॥ २९५६ ॥
तयोः समं तीक्ष्णरजो मृतं रूप्यञ्च तत्समम् ।
मृतञ्च विमलं सर्वैः समं सर्वं विमर्दितम् ॥ २९५७॥
मिलितं मोचसारेण गोलीकृत्य विशोषयेत् ।
अङ्गुलार्द्धदलेनैव शिलाजेन विमुद्रयेत् ॥ २९५८ ॥
वालुकायन्त्रमध्यस्थं पक्षार्द्धं शनकैः पचेत् ।
स्वतःशीतं समाहृत्य कुमारीमूलसारतः ॥ २९५९ ॥
मर्दयित्वा विशोष्याऽथ पीलुमूलजलैस्तथा ।
तथैव चित्रमूलाद्भिः कन्थारीमूलसारतः ॥ २९६० ॥
चिरबिल्वरसैस्तोयै विशोष्य च विचूर्ण्य च ।
मृतसञ्जीवनं ह्येतद्वैदूर्यकरसायनम् ॥ २९६१ ॥
आर्द्रकद्रवसंयुक्तं गुञ्जामात्रं रसायनम् ।
दातव्यं चित्रतोयैर्वा सन्निपाते विसञ्ज्ञके ॥ २९६२ ॥
दन्तबन्धे तु सञ्जाते वल्लमात्रममुं रसम् ।
पादयो र्घर्षयेद्यत्नात्ततश्चेष्टामवाप्नुयात् ॥ २९६३ ॥
जातचेष्टस्य सलिलं मूर्ध्नि शीतं विनिःक्षिपेत् ।
शातकुम्भमितं स्वादु तीव्रा क्षुज्जायते ततः ॥२९६४॥
यत्किञ्चिद्याचते तस्मिंस्तत्तद्देयमभीप्सितम् ।
आयुश्चेदवशिष्टं स्यात्सुखी जीवति मानवः २९६५
त्रिदोषजातरोगेषु दातव्यं तण्डुलोन्मितम् ।
पलार्द्धसितया युक्तमन्यथा हन्ति रोगिणम् ॥२९६६॥
एकदोषोद्भवे रोगे संसर्गजनिते तथा ।
देयमेतद्धि भिषजा वैदूर्यकरसायनम् ॥ २९६७ ॥

र. चू., रसायने ।

भाषा—लसनियांसे चतुर्गुणित कोयल और गन्धककाकल्क बनाय बीचमें लसनियाको रख शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिटीदेकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर फिर उसीतरह कल्कमें बन्दकर आचदेवे । ऐसे जवतकभस्म न होजाय तबतक करतारहे । यह भस्म २ कर्ष, सुवर्णभस्म १ कर्ष, लोह और रजतभस्म ३–३ कर्ष, रजतमाक्षिक ९ कर्ष मिलाकर केलेकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय सुखाकर ऊपरसे आधाअङ्गुलमोटा शिलाजीतकालेपकरके शरावसम्पुटमें रख वालुकायन्त्रमें बन्दकर ७॥ दिनकी मन्दआचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर घीकुंवार, पीलु, चित्रक, हंस, घुड़करञ्ज इनप्रत्येकके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती अदरखकेरस अथवा चित्रककेकाथके साथ देनेसे सञ्ज्ञारहित सन्निपात नष्टहोताहै । दन्तवन्धमें ३ रत्ती रसको अदरखकेरसमें मिलाय तलुओंमें मालिशकरनेसे दन्तबन्ध छूटकर वोलनेलगताहै । उसवक्त १०० घड़े ठंढापानी मत्थेपर डालना इसकेवाद तीव्रभूख मालूमहो तव जो कुछ मांगे वह खानेको देना । यदि आयु वाकी होगी तो वह निर्विघ्न जीवेगा नहींतो दवा अपना प्रभाव दिखाकर निवृत्तहोजायगी । साधारणरोगोंमें एकचावलभर मात्रा २ कर्ष शक्करकेसाथ देना । अन्यथा रोगीको मारडालेगी । एक, दो अथवा संसर्गजदोषोंमें वैदूर्यरसायन देनेसे तत्क्षण लाभहोताहै ॥ ६११ ॥

६१२ वैदूर्यादियोगः

वैदूर्यमुक्तामणिगैरिकाणां
मृच्छङ्खहेमामलकोदकानाम् ।
मधूदकस्येक्षुरसस्य चैव
पानाच्छमं गच्छति रक्तपित्तम् ॥२९६८॥

च. सं., रक्तपित्ते ।

भाषा—लसनियां, मोती, माणिक्य इनकीभस्में और सोनागेरू समभाग मिलाकर रोगीका वलावल देखकर १–१ रत्ती मधुवगैरहकेसाथ देकर कालीमिट्टी, शङ्ख, सुवर्ण और आवले इनमें रक्खाहुआ पानी, मधुका शरवत अथवा ईखकारस पिलानेसे रक्तपित्त नष्टहोताहै ॥ ६१२ ॥

६१३ वैद्यनाथरसः

शङ्खस्य वलयं निष्कं चतुर्निष्का वराटिकाः ।
कर्षांशं नीलकटकं तुत्थं गन्धाश्मटङ्कणम् ॥ २९६९ ॥
तारं नागं रसं चाऽर्धं निष्कांशं पूर्ववत्पुटेत् ।
वराटचूर्णमण्डूरकल्पितालेपने पचेत् ॥ २९७० ॥
अस्याऽर्द्धमाषं मरिचाऽर्द्धमाषं
ताम्बूलवल्लीरसभावितञ्च ।
तत्पत्रलिप्तं मधुनाऽवलिह्या-
द्धार्यं नवीनेन घृतेन वाऽपि ॥ २९७१ ॥
नाडीमार्गे निर्गते चाऽल्पमल्पं
पथ्यं भोज्यं लोकनाथोपदिष्टम् ।
यामे यामे चैव मामण्डलान्ता-
त्सिद्धं सद्यः शोषजिद्वैद्यनाथः ॥ २९७२ ॥

र. र. स., र. चं., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शङ्खनाभि ४ माशे, पीलीकौड़ी, नीलेकांचकी चूड़ी, तूतिया, गन्धक, सुहागा १–१ कर्ष, रजत, नाग और पारदभस्म २–२ माशे लेकर वारीकचूर्णकर चित्रककेक्काथसे १–२ दिन मर्दनकर गोलावनाय कौड़ी और मण्डूरभस्मको चित्रककेकाथमें मर्दनकर गोलेपर लेपकर शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्तीकी मात्रा समभाग मरिचके चूर्णकेसाथ मिलाय पानकेरससे मर्दनकर पानपरलगाकर थोड़ासा मधु डालकर खिलावे अथवा मक्खन या घीकेसाथदेवे । आमाशयमें पहुचनेकेवाद २–३ ग्रासभोजनदेकर चित्त सुलावे और १–१ पहरमें भूखलगनेपर थोड़ा २ भोजनदे । इसप्रकार एकमण्डलतक करनेसे यह राजयक्ष्मको नष्टकरताहै ॥ ६१३ ॥

६१४ वैद्यनाथवटी (प्रथमा)

शाणं गन्धमथो रसस्य च तथा कृत्वा द्वयोः कज्जली,
तिक्ताचूर्णमथाक्षमेव सकलं रौद्रे त्रिधा भावयेत् ।

पश्चात्तत्सुपवीशुभेन पयसा क्वाथेऽमले त्रैफले,
संशोष्या गुटिका कलायसदृशी कार्या बुधै र्यत्नतः॥
ज्ञात्वा दोषबलं रसेन सुपवीपत्रस्य पर्णस्य वा,
एकद्वित्रिचतुःक्रमेण वटिकां दद्यात्कदुष्णाम्बुना ।
हन्ति शूलनिचयं नवज्वरं पाण्डुतामरुचिशोथसञ्चयम्,
रेचने च दधिभक्तभोजनं वैद्यनाथसुकुमाररेचनम् ॥

भै र, र सु, ध., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ४–४ माशे, कुटकी १ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय करलेकेपत्तोंके रस और त्रिफलाकेक्काथसे धूपमें २–३ दिन भावना देकर मटरवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ गोलीसे ४ गोलीतक रोग और और रोगीका वलावल देखकर करेले अथवा पानकेरस या गरमपानीकेसाथ देनेसे शूल, नवज्वर, पाण्डु, अरुचि, शोथ, इनसवको यह दूरकरतीहै। जुलावलगनेकेवाद दही, भात देना ॥ ६१४ ॥

६१५ वैद्यनाथवटी (द्वितीया)

पथ्या त्रिकटु सूतश्च द्विगुणं कानकं तथा ।
मन्युमणिरसैरम्ललोणिकाया रसैः कृता ॥ २९७५ ॥
गुटिकोदरगुल्मादीन्पाण्ड्वामयविनाशिनी ।
कृमिकुष्ठगात्रकण्डूपिडकाश्च निहन्ति च ॥
गुटी सिद्धफला चेयं वैद्यनाथेन भाषिता ॥ २९७६ ॥

र सं, भै. र, र. सु, ध, र चि, उदावर्तानाहाऽधिकारे।

भाषा—हर्रे, त्रिकटु और रससिन्दूर १–१ भाग, शुद्धजमालगोटा २ भाग लेकर सवका वारीकचूर्णकर मण्डूकपर्णी और अमलोनियाकेरसोंसे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे उदर, गुल्म, पाण्डु, कृमि, कुष्ठ, कण्डू, पिडिका प्रभृतिको यह नष्टकरतीहै ॥ ६१५ ॥

६१६ वैद्यनाथवटी (दधिवटी) (तृतीया)

पक्केष्टिकाहरिद्राभ्यामागारधूमकेन च ।
शोधितं सूतकं ग्राह्यं तोलकद्वयसम्मितम् ॥ २९७७ ॥
भृङ्गराजरसैः शुद्धं गन्धकं सूततुल्यकम् ।
हरितालं विषं तुल्यमेलवालुकताम्रकम् ॥ २९७८ ॥
खर्परं माक्षिकं कान्तं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
सर्वार्द्धा कज्जली ग्राह्या भावयेच्च पुनः पुनः ॥२९७९॥
सिन्धुवाररसे चैव ज्योतिष्मत्या रसे तथा ।
रसेऽपराजितायाश्च जयन्त्याः स्वरसे तथा ॥२९८०॥
रक्तचित्रकमूलोत्थे रसे च परिभावयेत् ।
वटिकां सर्षपाकारां योजयेत्कुशलो भिषक् ॥२९८१॥
ततः सप्त वटी र्दद्यादुष्णेन वारिणा सह
अनुपानश्च कर्तव्यं कज्जल्याः कणया सह ॥ २९८२ ॥
सन्निपातज्वरे चैव सशोथे ग्रहणीगदे ।
पाण्डुरोगेऽग्निमान्द्ये च विविधे विषमज्वरे ॥२९८३॥
शुक्रमज्जगते दद्यान्न तु कासे कदाचन ।
नित्यं दध्ना च भोक्तव्यं सितया युक्तमेव च ॥२९८४॥
स्नातव्यं ह्यभयान्नित्यं वयोदोषानुसारतः ।
वारिहीनश्चाऽलवणं दधि पथ्यं सदा भवेत् ॥
वैद्यनाथवटीनाम्ना वैद्यनाथेन निर्मिता ॥ २९८५ ॥

भै. र, ध., शोथाऽधिकारे।

भाषा—पकीहुईईंट, हल्दी, घरकेधुंए प्रभृतिसे शुद्धकियाहुआ पारा २ तोले, भंगरेकेरसमें कईवार वुझायाहुआ गन्धक २ तोले, शुद्धहरिताल, वछनाग और तूतिया, गेंहुला, ताम्र, खपरिया, स्वर्णमाक्षिक, कान्तलोह इनकीभस्में १–१ तोला लेकर सवकोपारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय संभाल, मालकागण, कोयल, जेंती, लालचित्रककीजड़ इनसवके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर सर्षपप्रमाण गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे ७–७ गोलियां कज्जली और पीपलकेसाथ मिलाकर गरमजल अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात, शोथसहितग्रहणी, पाण्डु, मन्दाग्नि, नानातरहकेविषमज्वर, शुक्र और मज्जगतज्वर, इनसवको यह नष्टकरतीहै। इसरसको खासीमें भूलकरभी नहींदेना। दही और शक्करकेसाथ पथ्यदेना। अवस्था और दोषोंका खयालकर स्नानकराना। नमक और जल नहीं देना, दही चाहेजितना खावे ॥ ६१६ ॥

६१७ वैश्वानरयोगः

भावितं मातुलुङ्गाम्लैस्ताम्रञ्च मारितं दिनम् ।
आर्द्रकस्वरसैरह्वा विषं तुल्यञ्च चूर्णयेत् ॥ २९८६ ॥
पिप्पलीपिप्पलीमूलद्रवै र्युक्तं विभावयेत् ॥
हिङ्गुं करञ्जबीजञ्च शुण्ठीलशुनसैन्धवम् ॥ २९८७ ॥
एरण्डतैलसम्पिष्टं माषैकं भक्षयेत्सदा ।
योगो वैश्वानरो नाम शूलं हन्ति त्रिदोषजम् ॥
साध्याऽसाध्यञ्च शूलञ्च हन्ति वैश्वानरो रसः २९८८

र. को., यो. म शूलाऽधिकारे।

भाषा—विजोरेकेरससे की हुई ताम्रभस्म और अदरखकेरससे एकदिन भावनादियाहुआ वछनाग समभागलेकर पीपल और पिपलामूलके क्वाथोंसे एकदिनमर्दनकर भुनाहींग, करंजवीज, सोंठ, एककलीलहसन और सेंधव १–१ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पूर्वयोगमें मिलाय एरण्डकेतैलमें मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे साध्य अथवा असाध्य त्रिदोषजशूलको यह नष्टकरताहै ॥ ६१७ ॥

६१८ वैश्वानररसः (वृद्धाद्यः) (प्रथमः)

रसं गन्धं मृतं शुल्वं नागं प्रत्येकतोलकम् ।
एकत्र क्रियते घृष्ट्वा पश्चादिमानि निक्षिपेत् ॥२९८९॥
पिप्पलीपिप्पलक्षारं मरिचं चिञ्चिकाभवम् ।
नागरं स्वर्जिकाक्षारं यवक्षारञ्च टङ्कणम् ॥ २९९० ॥

प्रत्येकं माषषट्कं स्याद्घृते सूरणं तथा।
कूष्माण्डकरसं दत्त्वादिनमेकं विमर्दयेत् ॥ २९९१ ॥
अन्धमूषागतं पक्त्वा यावद्यामचतुष्टयम्।
उत्तार्य शीतलं नीत्वा रसं वल्लचतुष्टयम् ॥ २९९२ ॥
अग्निमान्द्ये ज्वरे दद्यादुदरे पारदं परम्।
अतिपुष्टिकरः सम्यग्वृद्धवैश्वानरो रसः ॥ २९९३ ॥

रसचि., र. का., अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और नागभस्म १–१ तोला, छोटीपीपल, पीपल और इमलीकाक्षार, मरिच, सोंठ, सज्जी, यवक्षार, भुनासुहागा येसव ६–६ माशेलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सूरण और कोंहलेकेरसोंमे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय अन्धमूषामें बन्दकर भूधरयन्त्रमें रख ४ पहर स्वेदनकरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर १२–१२ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, ज्वर, उदररोग, कृशता, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६१८ ॥

६१९ वैश्वानररसः (द्वितीयः)

विष्णुक्रान्ता च जयपालं लाङ्गली सुरदालिका।
यवचिञ्चीजसारेण रसाद्विगुणगन्धकम् ॥ २९९४ ॥
पक्षं विमर्दितं सर्वं स्वेदयेन्मृदुवह्निना।
गुल्मे गुञ्जात्रयञ्चाऽस्य सोष्णाम्बु घृतसैन्धवम् २९९५
वातजे कफजे लिह्यान्मध्वार्द्रकसमन्वितम्।
ससितामाक्षिकं पैत्ते सोऽयं वैश्वानरो रसः ॥२९९६॥

र. र. स, र. को., गुल्मे।

भाषा—कोयल, शुद्ध जमालगोटा और करिहारी, वन्दाल, शुद्धपारा १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय तितलीकेरससे १५ दिनतक लगातार मर्दनकर एरण्डवगैरहकेपत्तोंमें लपेट एकअङ्गुलमोटा कीचड़ लगाकर अङ्गारोंमें स्वेदनकरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली घी और सेंधेनमककेसाथ देकर थोड़ा गरमपानी पिलानेसे वातिकगुल्म नष्टहोताहै। कफजगुल्ममें मधु और अदरखकेसाथ, पैत्तिकमें शक्कर और मधुके साथदेवे ॥ ६१९ ॥

६२० वैश्वानररसः (तृतीयः)

संशुद्धपारदसुगन्धशिलाजतूनां
भागद्वयञ्च मुशलीदशभागयुक्तम्।
खर्जूरकञ्च सुघवी कटुभागमेकं
श्रेष्ठं विषञ्च युगभागसमञ्च चूर्णम् ॥२९९७॥
भृङ्गोदकेन दिनसप्तकमर्दितोऽसौ
मध्वन्विता मरिचमात्रगुटी विधेया।
नानाविधांश्च शमयेत्तु गदान्नराणां
वैश्वानरो हि रसनाम बुभुक्षुतादः ॥२९९८॥

र.(मा.), अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और शिलाजीत २–२ भाग, मुशली १० भाग, छुहारे, मगरैल और मरिच १–१ भाग, शुद्धवछनाग २ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरेकेरससे ७ दिनमर्दनकर मरिचवराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु अथवा समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे अग्निको प्रदीप्तकर नानाप्रकारके रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६२० ॥

६२१ वैश्वानररसः (चतुर्थः)

दशटङ्कमिता शुण्ठी मरिचं पिप्पली वचा।
सौभाग्यञ्च तथा सूक्ष्मं सर्वमेकत्र चूर्णितम् ॥२९९९॥
सूतकं टङ्कमात्रेण गन्धकं तत्समं विषम्।
एकत्र चूर्णितं श्लक्ष्णं कर्तव्यं चैकभागतः ॥ ३००० ॥
एकभागमितं ग्राह्यं सर्वं पर्णेन चाम्भसा।
कासं श्वासं हरेच्छीघ्रमरुचिं तत्क्षणादपि ॥ ३००१ ॥
गुल्मादिकं महाव्याधिं यकृतं ग्रहणीमपि।
नववर्णमितं याति प्रभावो भूमिमण्डले ॥ ३००२ ॥
खण्डवातादिकान्सर्वान् समं कृत्वा व्यपोहति।
वैश्वानरमितिख्यातं क्षेत्रज्ञ कुरुते ध्रुवम् ॥ ३००३ ॥

र. का., अरोचकाऽधिकारे।

भाषा—सोंठ, मिर्च, पीपल, वच, भुनासुहागा ये प्रत्येक २॥ कर्ष, शुद्ध पारा, गन्धक और वछनाग ४–४ माशे लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय पानकेरससे मर्दनकर ३–३ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे कास, श्वास, अरुचि, गुल्मादिक महाव्याधिया, यकृत्, ग्रहणी, समस्त वातविकार, मन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥६२१॥

६२२ वैश्वानररसः (पञ्चमः)

व्योषं विषं गदो वह्निं निर्गुण्डीव्याधिघातकौ।
अजमोदश्च सर्वेषां समान्भागान्समाहरेत् ॥ ३००४ ॥
श्लक्ष्णचूर्णं ततः कुर्याद्भावयेत्पिचुमन्दजैः।
क्वाथैरेकोनविंशत्या वारान्भृङ्गरसैस्ततः ॥ ३००५ ॥
सप्त वारान्भावयित्वा मधुना गुटिकाः किरेत्।
माषैकमानका रात्रौ मधुना सम्प्रयोजयेत् ॥ ३००६ ॥
अयं वैश्वानरो नाम्ना योगो दृष्टप्रभाववान्।
जलोदरादिरोगाणां विनिवारणदक्षिणः ॥ ३००७ ॥

रसालं., उदराऽधिकारे।

भाषा—त्रिकटु, शुद्धवछनाग, कुठ, चित्रकमूल, निर्गुण्डी, अमिलतासकागूदा, अजमोद सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर नीमकेमद अथवा स्वरससे २१ और भंगरेकेरससे ७ भावनाएं देकर १–१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली रात्रिमें मधुकेसाथ देनेसे यह जलोदरादि समस्त उदररोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६२२ ॥

६२३ वैश्वानरलोहम् (प्रथमम्)

द्विपलं तिन्तिडीक्षारं तथाऽपामार्गसम्भवम् ।
शम्बूकभस्मसंयुक्तं लवणञ्च समं तथा ॥ ३००८ ॥
चतुर्णां समभागाः स्युस्तुल्यञ्च लोहचूर्णकम् ।
चूर्णं सम्पिष्य खल्वादौ कारयेदेकतां भिषक्॥३००९॥
शूलस्यागमवेलायां खादेन्माषद्वयं नरः ।
शूलमष्टविधं हन्ति साध्याऽसाध्यं न संशयः ॥३०१०॥

भैं. र , ध., र क., शूलाऽधिकारे ।

भाषा—इमली और अपामार्गकाक्षार, घोंघेकीभस्म और सेंधानमक समभागलेकर सवकी वरावर लोहभस्ममिलाय एकदिन शुष्कमर्दनकर रखछोड़े । शूलआनेकेसमय २–२ माशे उचितानुपानकेसाथ लेनेसे साध्य अथवा असाध्य समस्तशूलोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६२३ ॥

६२४ वैश्वानरलोहम् (द्वितीयम्)

फलत्रिकत्वचो ग्राह्याः सचित्रककटुत्रयम् ।
जातीफलसमायुक्तं चातुर्जातसमन्वितम् ॥ ३०११ ॥
लवङ्गकलिका ग्राह्या गद्याणद्वयसम्मिता ।
विषं गद्याणमेकं स्यात्सिता गद्याणविंशतिः ॥३०१२॥
मृतलोहस्य विंशत्या सर्वमेकत्र कारयेत् ।
मधुना गुटिकां कुर्यान्माषमात्रप्रमाणतः ॥ ३०१३ ॥
एकैकां भक्षयेत्प्रातः पञ्चपाण्डुक्षयापहम् ।
बालस्थविरवृद्धानां स्त्रीणाञ्चैव विशेषतः ॥ ३०१४ ॥
योनिशूलेषु सर्वेषु वह्निमान्द्ये च दापयेत् ।
अरुचिञ्च हरत्याशु सूतिकारुक् प्रणश्यति ॥
वैश्वानरं लोहनाम सद्यो रोगहरं परम ॥ ३०१५ ॥

रसायनसं , पाण्डुरोगे ।

भाषा—त्रिफला, चित्रक, त्रिकटु, जायफल, चातुर्जात, लवङ्ग १–१ तोला, शुद्धवछनाग ६ माशे, शक्कर और लोहभस्म १०–१० तोले लेकर सवका वारीकचूर्णकर इकट्ठे मिलाय मधुके साथ १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ प्रातःकालदेनेसे पांचप्रकारके पाण्डु, क्षय, योनिशूल, मन्दाग्नि अरुचि और सूतिकारोग इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ६२४ ॥

६२५ वैश्वानरवटी (प्रथमा)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं मृताऽर्काऽयः शिलाजतु ।
रसमानं प्रदातव्यं रसस्य द्विगुणं विषम् ॥ ३०१६ ॥
त्रिकटुं चित्रकं वीरां निर्गुण्डी मुशलीरजः ।
अजमोदां विषांशेन प्रत्येकञ्च नियोजयेत् ॥ ३०१७ ॥
निम्बपञ्चाङ्गुलकाथैर्भावना चैकविंशतिः ।
भृङ्गराजरसैः सप्त मुण्डिकाभिश्च द्वादश ॥ ३०१८ ॥
त्रिधा नागलताद्रावे दत्त्वा क्षौद्रे विलोडयेत् ।
भक्षयेद्बदराऽस्थ्याभां वटिकां तां दिवानिशि॥३०१९॥
श्लेष्मोदरं निहन्त्याशु नाम्ना वैश्वानरी वटी।
देवदारुवह्निमूलकल्कं क्षीरेण पाययेत् ॥
भोजनं व्योषदुग्धेन कुलत्थानां रसेन तु ॥ ३०२० ॥

र. सं., र. चं., र र., र. सु., बा., व. रा., र. क. ल., र. चि , चि. र भ , रसायनसं., र. को., र. र स., र. शं., र (मा.), रससारसङ्ग्रह, यो. म , र क. यो., र र. कौ., र. मृ., र.का., उदराऽधिकारे ।

टि०—कुत्रचिद्ग्रन्थकस्य रससमानता, भावनायां पञ्चाङ्गुलस्य भावना निष्कासिता तत्तु न सम्यक् ? उदररोगे तस्याऽत्यावश्यत्वात् । र मृ , र का एतयो वैश्वानररस नाम्ना एको रसोऽस्ति तत्रैयमेव वटी व्यत्यासिताऽतस्तस्याप्यत्रैवाऽन्तर्भावोऽस्ति ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा., ताम्र और लोहभस्म, शिलाजीत १–१ भाग, शुद्धवछनाग, त्रिकटु, चित्रकमूल, शतावरी, निर्गुण्डी, मुशली, कमीला और अजमोद २–२ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय नीम और एरण्डकीजड़केकाथसे २१–२१, भंगरेकेरससे ७, गोरखमुण्डीकेरससे १२ और पानकेरससे ३ भावनाएं देकर सुखाकर मधुमें वेरकीगुठलीकेवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली देवदारु और चित्रकमूलको दूधके साथघिसकर इसकेसाथदेनेसे कफोदर नष्टहोताहै । इसकेप्रयोगमें भोजनकेलिये त्रिकटुयुक्तदूध और तुलसीका यूप देनाचाहिये ॥

६२६ वैश्वानरवटी (द्वितीया)

सैन्धवं नागरं मुस्ता नव भागाः पृथक्पृथक् ।
प्रत्येकं लशुनं हिङ्गुं कुवेराक्षं त्रयस्त्रयः ॥ ३०२१ ॥
एकांशं भस्मसूतञ्च तैलेनैरण्डजेन च ।
भावितं सर्वशूलघ्नं प्लीहि वैश्वानरो भवेत् ॥ ३०२२ ॥

व. रा , शूले ।

भाषा—सैन्धव, सोंठ और नागरमोथा ९–९ भाग, लहसन, भुनीहींग, करञ्ज ३–३ भाग, पारदभस्म १ भाग लेकर सवका वारीकचूर्णकर इकट्ठेमिलाय एरण्डतैलसे एकदिनमर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से ३ गोलीतक रोगीका वलावल देखकर समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे सवप्रकारकेशूल और प्लीहा नष्टहोतीहै ॥ ६२६ ॥

६२७ वैष्णवरसः (ज्वराङ्कुशः)

हिङ्गुलं वत्सनाभञ्च चक्राङ्गीं त्रिकटुं वचाम् ।
चित्रमूलकषायेण मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ ३०२३ ॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं तदुद्धृत्य विचूर्णयेत् ।
गुञ्जामात्रप्रयोगेण शृङ्गवेराऽनुपानतः ॥ ३०२४ ॥
द्वन्द्वज्वरं सन्निपातं पुराणं विषमज्वरम् ।
नाशयेदखिलं घोरं नाम्नाऽयं वैष्णवो रसः ॥३०२५॥

रसायनस., वै. चि (ल.), वै. चि., व रा., र क यो., ज्वराऽधिकारे ।

टि॰—र. क यो त्रुटित पाठोऽस्ति नाम च ज्वराङ्कुश इति स्थापितम्। वै चि., व. रा एतयोर्वातकेसरीनाम्ना एकोरसोऽस्ति सोऽप्यस्मिन्नेवाऽन्तर्भवति।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ और बछनाग, गिलोय, त्रिकटु और वच समभागलेकर वारीकचूर्णकर चित्रककीजड़केकाढेसे ३ दिन मर्दनकर गोलावनाय ६–७ तहकपड़ेमें पोट्लीवनाय एकपहर-चित्रकके क्काथमें दोलायन्त्रसे स्वेदनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथदेनेसे द्वन्द्वज, सन्निपात, जीर्ण और विषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै॥

६२८ व्याघ्रीगुटिका

समांशहेमयुक्सूतो नृपांशमृतवज्रयुक्।
द्विपद्याकाशवल्लीजरसेन परिमर्दयेत ॥ ३०२६ ॥
ततो दिङ्मानतो दद्याट्टङ्कणालककान्तकम्।
मर्द्य नष्टश्च पिष्टश्च धमेदन्धं यथाविधि ॥ ३०२७ ॥
गुटिका जायते दिव्या जरादारिद्र्यनाशिनी।
मुखस्था सिद्धिदा प्रोक्ता सङ्ग्रामे विजयप्रदा॥३०२८॥
वज्रदेहो महावीर्यः सर्वलोकप्रियो भवेत्।
गुटिकायाः प्रभावेण नारीणां वल्लभो भवेत् ॥३०२९॥

र., रसायने।

भाषा—सुवर्णका वारीकरेता अथवा वर्क और शुद्धपारद समभाग, हीरेकीभस्म १६ वां भागलेकर द्विपदी ? और आकाशवेलकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर सुहागा, हरिताल और कान्तलोहकारेता पारेसे दशाश मिलाकर मर्दनकरे। पिष्टीहोनेपर अन्धमूषामें वन्दकर धमनकरनेसे गोली तैयारहोजातीहै। इसे मुंहमें रखनेसे बुढापे और दारिद्र्यको यह नष्टकरतीहै। सङ्ग्राममें जीत होतीहै। इसकेधारणसे वज्रसदृशशरीरहोकर समस्तलोक और खासकर स्त्रियोंका प्रीतिपात्र होजाताहै॥ ६२८॥

६२९ व्याधिगजकेसरीरसः (प्रथमः)

पारदं गन्धकं तालं विषं त्र्यूषणकं समम्।
त्रिफला टङ्कणक्षारं प्रत्येकं शाणमात्रकम् ॥ ३०३० ॥
दन्तिबीजञ्च टङ्कैकं सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्।
भृङ्गराजरसेनैव मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ ३०३१ ॥
काकमाचीरसेनैव निर्गुण्डीरसकैस्तथा।
मरिचाभा वटी कार्या दोषमापेक्ष्य दापयेत् ॥३०३२॥
क्षीरेण सह दातव्या चाऽष्टज्वरनिवृत्तये।
अशीतिं वातजान्हन्ति निर्गुण्ड्या वास्तुकेन वा ॥
गुडेन सह दातव्या चत्वारिंशच्च पैत्तिकान्।
अनुपानेन संयुक्तस्तत्तद्रोगहरः स्मृतः ॥ ३०३४ ॥

नि. र., र. चं, वै. चि., वातरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और बछनाग, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्रे, बहेड़ा, आवले, भुनासुहागा और शुद्धजमालगोटा ४–४ माशे लेकर सबका वारीकचूर्णकर पारे गन्धक और हरितालकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरा, मकोय, और निर्गुण्डीके स्वरसोसे ७–७ दिन मर्दनकर मरिच वरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली दूधकेसाथदेनेसे ८ प्रकारके ज्वर निवृत्तहोतेहैं। निर्गुण्डी अथवा वथुएके स्वरसकेसाथ देनेसे ८० प्रकारके वायुरोग और गुड़से ४० पित्तरोग नष्टहोतेहै। इसीतरह तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे तमामरोगोको यह नष्टकरताहै॥ ६२९॥

६३० व्याधिगजकेसरीरसः (द्वितीयः)

मृताऽभ्रकं मृतं लोहं मृतं सूतं मृतं रविम्।
मृतं नागं मृतं कांस्यं मण्डूरं विमलां शिलाम् ॥३०३५॥
सत्त्वं खर्परजं तालं शङ्खं टङ्कणमाक्षिकम्।
मृतं कान्तञ्च वैक्रान्तं विद्रुमं मौक्तिकन्तथा ॥ ३०३६ ॥
वराटं मणिरागञ्च राजावर्तञ्च गन्धकम्।
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥३०३७॥
मर्दयेत्स्नुग्भानुदुग्धैः पुटयेत्त्रिदिनं लघु।
भावयेत्पुटयेदेभि वारांस्त्रींश्च पृथक्पृथक् ॥ ३०३८ ॥
मातुलुङ्गवरावेतसाऽम्लसूर्याऽऽर्द्रमार्कवैः।
त्रित्रिवेलं भावयित्वा पाचितं लघुवह्निना ॥ ३०३९ ॥
वातपित्तकफोत्क्लिष्टाञ्ज्वरान्संसर्गजानपि।
सन्निपातप्रलपनं सर्वाङ्गैकाङ्गमारुतम् ॥ ३०४० ॥
सेवितोऽन्नसितायुक्तो मागधीरजसा युतः।
मधुकाऽऽर्द्रकसंयुक्तस्तद्व्याधिहरणौषधैः ॥ ३०४१ ॥
सेवितो हन्ति रोगौघान्व्याधिवारणकेसरी।
क्षिप्रमेकादशविधं शोषं पाण्डुक्रिमीञ्जयेत् ॥ ३०४२ ॥
कासं पञ्चविधं श्वासं मेहं मेदोदरं तथा।
अश्मरीं शर्करां शूलं प्लीहगुल्महलीमकम् ॥
सर्वव्याधिहरं वल्यं वृष्यं मेध्यं रसायनम् ॥ ३०४३ ॥

र. क., सर्वरोगे।

भाषा—अभ्रक, लोह, पारा, ताम्र, नाग, कांस्य, मण्डूर, रजतमाक्षिक, मैनसिल, खपरियाकासत्त्व, हरिताल और शङ्ख इनकीभस्में, भुनासुहागा, सुवर्णमाक्षिक, कान्तलोह, वैक्रान्त, प्रवाल, मोती, कौड़ी, माणिक्य, लाजवर्द इनकीभस्में, शुद्धगन्धक सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय थूहर और आकके दूधसे ३–३ दिन मर्दनकर बिजौरा, त्रिफला, अमलवेत, हुरहुर, अदरख, भंगरा इनकेरसोंसे ३–३ भावनाएं देकर गोलावनाय एरण्डवगैरहके पत्तोंमें लपेट पुटपाककरके १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्कर अथवा पीपलके चूर्ण अथवा मधु और अदरखकेरस अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे त्रिदोषोंके पार्थक्य अथवा संसर्गसे होनेवाले जटिलज्वर, सन्निपात, प्रलाप, सर्वाङ्ग अथवा एकाङ्गवातरोग, ११ प्रकारके शोष, पाण्डु, कृमि, ५ प्रकारकाकास, श्वास, प्रमेह, मेद, पथरी, शक्कर, शूल प्लीहा, गुल्म, हलीमक प्रभृति समस्तव्याधियोंको नष्टकर यह बल, वृषता और बुद्धिको बढ़ाताहै॥ ६३०॥

६३१ व्याधिगजपञ्चाननरसः

वर्षाभूधूतकेशलाङ्गलिशिफास्नुग्दुग्धपाठोद्भवैः,
मर्द्यो यामचतुष्टयं रसवरः स्विन्नश्च दीप्तश्च तम् ।
सूतं स्वीयचतुर्गुणेन बलिना युक्तं सहामण्डुकी-,
माचीकाञ्चनलाङ्गलीहरिवधूकासघ्नबिम्बीद्रवैः ॥
पिष्ट्वा वासरयुग्ममेव रचितं तद्गोलकं वालुका-,
यन्त्रे भाण्डगतं तदौषधरसं क्षिप्त्वा मुहुः शोषितम् ।
पश्चादल्पपुटं ददीत च कलांशं त्र्यूषणं टङ्कणं,
देयो वल्लचतुष्टयः सुसितया त्वग्दोषभूतक्रिमीन् ॥
हित्वाऽन्यान्सकलान्गदान्विजयते पथ्यप्रयोगादयं,
श्रीशम्भ्वर्चनपूर्वकं बलिविधिं कृत्वा भिषग्योजयेत् ।
पथ्यं भक्तसितासमूत्रलफलैर्दध्ना च देयं लघु,
क्षीणे मुद्गरसः सिता समुचिता कार्या च शीतक्रिया ॥
त्याज्यं पित्तलमात्रमत्र सकलं मांसञ्च जीरं सदा,
त्याज्यं स्वच्छवतां विशुद्धवपुषां वत्सरत्रयं सेवितः ।
कान्तिं काञ्चनसन्निभां किल बलं भीमस्य तं पावकं,
पुष्टिं वीर्यमयं नृणां वितनुते व्याधीभपञ्चाननः २०४७

र. ल., र. शं., र. का., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—इटसिट, कालाभंगरा, करिहारीकन्द, थूहरकादूध, पाठा इनकेरसोंमें ४–४ पहर मर्दनकर स्वेदनक्रियाहुआपारा १ भाग और शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर माषपर्णी, मुद्गपर्णी, मण्डूकपर्णी, मकोय, कचनार, करिहारी, तुलजी, कसौंजी, कुंदरू इनके रसोंसे २–२ दिन मर्दनकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई चौड़ेमुंहकी आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख पूर्वोक्तरसोंको देदेकर मन्दाग्निसे पकावे । औषधके बराबर प्रत्येकंकारस सूखनेपर निकालकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर १६ वा हिस्सा त्रिकटु और भुनासुहागा मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १२–१२ रत्तीकीमात्रा शक्करकेसाथ देनेसे त्वग्दोष और कृमिप्रभृति समस्तव्याधियोंको यह दूरकरताहै । इसकेसेवनकरनेके पूर्व शङ्करका पूजनकर बलि देकर दवाका आरम्भकरावे । भात, शक्कर, मूत्रलफल और दही खानेकोदेवे । अत्यन्त क्षीण आदमीकेलिये मूंगकायूष और शक्करदेवे तथा शीतक्रियाकरे । पित्तकारकवस्तु, मास, जीरा इनसबका त्यागकरे ... वाद व्याधि कमहोनेलगेगी । वीरे ... ६३४ ॥ विपुल पराक्रम और वीर्यवृद्धिको प्राप्तकरे प्रथमा)

६३२ व्याधिदावानलः शिलाजतु ।

सूतं कान्तं त्वलबलिशिलाक्ष्वेडताम्राविषम् ॥ ...,
कुष्ठं सिन्धुं हलिनिबृकिनागारि तुल्यं रज भाव्यम ।
वह्निव्योषैः क्रिमिरिपुजयाकुष्ठमुस्तायवानी,
ज्वालावक्त्राम्बुधिफलवचाभामिनीशृङ्गवेरैः ॥२०४८॥
मात्रा गुञ्जा निखिलजठरे मेहकुष्ठे ग्रहण्यां,
शोथे शूले सकलगुदजे मान्द्यजीर्णे विसूच्याम् ।
पाण्डौ रोगे सकलपवने सन्निपाते ज्वरेऽसौ,
हन्यादेतांस्तम इव रविः व्याधिदावानलोऽयम् ॥२०४९
नवज्वरे शुण्ठिजलैः सकृष्णैः
परेषु रोगेष्वनुपानयोगात् ।
हितं हिमं चन्दनवारि तत्र
हिताहितं पथ्यविधौ विमृश्यम ॥ २०५० ॥

र. शि., सन्निपाते ।

भाषा—पारद और कान्तभस्म, शुद्धहरिताल, गन्धक, मनसिल और वछनाग, ताम्र, अभ्रक और रूपामाखी भस्म, कुठ, सैन्धव, करिहारीकीजड़, पाठा, सोनामाखी भस्म सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर चित्रक, त्रिकटु, विडङ्ग, भाग, कुठ, नागरमोथा, अजवाइन, अग्निशिखा, समुद्रफल, वच, प्रियङ्गु और अदरखकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली चन्दनकेपानी अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेमे सबप्रकारके उदररोग, प्रमेह, कुष्ठ, ग्रहणी, शोथ, शूल, बवासीर, मन्दाग्नि, अजीर्ण, हैज़ा, पाण्डु, समस्तवातविकार, सन्निपात, ज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै । सोंठ और पीपलके कल्कसे नवज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ६३२ ॥

६३३ व्याधिविध्वंसनरसः

समीरपन्नगस्य स्याद्द्विगुणा जयपालकाः ।
अजादुग्धेन ते पक्वाः क्षुण्णो गुञ्जाद्वयं रसः ॥२०५१॥
खण्डव्योपार्द्रकैर्देत्तः पृथग्वा घृतसम्प्लुतः ।
जाड्यगुल्मोदरप्लीहशूलामविषमज्वरान् ॥ ३०५२ ॥
उष्णेन पयसा स्तम्भो रेकः शीतेन जायते ।
क्षौद्रजातीफलं दद्यादतिरेकोपशान्तये ॥ ३०५३ ॥
पथ्यं भक्तं गवां तक्रं सनीरञ्च ज्वरादिषु ।
तापशोषे गुडूच्यम्बु व्याधिविध्वंसकारके ॥२०५४॥

र. ल., रसायनस., टो , र शं , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—समीरपन्नगरस १ भाग, बकरीकेदूधमें उबालेहुए जमालगोटे २ भागलेकर एकपहरमर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्तीकीमात्रा शक्कर, त्रिकटु और अदरखकेसाथ अथवा घीकेसाथदेनेसे जड़ता, गुल्म, उदर, प्लीह, शूल, आम और विषमज्वर इनको यह नष्टकरताहै । ठंढापानीपीनेसे रेचनहोगा गरमपीनेसे बन्दहोजायगा । अधिकरेचनहोनेपर मधुमें मिलाकर जायफलदेना, भूखलगनेपर छाछभातदेना । ज्वरकीहालतमें पानीकेसाथ और ज्वरजनितशोषमें गिलोयके स्वरसकेसाथ देना ॥

६३४ व्याधिशार्दूलगुग्गुलुः (त्रिफलागुग्गुलुः)

त्रिफलायाः पलान्यष्टौ प्रत्येकं बीजवर्जितम् ।
गुग्गुलोर्द्विपलश्चात्र निःक्षिपेत्तं सुकुट्टितम् ॥२०५५॥
सर्वं संक्षुद्य यत्नेन साऽर्धाढकजले क्षिपेत् ।
एकरात्रौ स्थितश्चैतत् पक्त्वा पादावशेषितम् २०५६
द्विपलं कटुतैलस्य मिलित्वैकत्र पाचयेत् ।
त्रिकटुत्रिफलामुस्तविडङ्गामलकानि च ॥ २०५७ ॥

गुडूच्यग्नित्रिवृद्दन्ती चव्यसूरणमानकम् ।
अष्टाष्टमापकानेतान् प्रत्येकन्तु सुचूर्णितम् ॥ ३०५८॥
सर्वस्यार्द्धतुलं देयं कालकं विधिशोधितम् ।
रसगन्धककर्षार्द्धं प्रत्येकं कज्जलीकृतम् ॥ ३०५९ ॥
सम्यक् सिद्धं तु विज्ञाय स्निग्धे भाण्डे विनिःक्षिपेत् ।
ततो माषद्वयं जग्ध्वा प्रातरुष्णोदकं पिवेत् ॥३०६०॥
प्रथमं कुरुते वह्निं शरीरं स्थिरयौवनम् ।
धातुवृद्धिं वयोवृद्धिं वलं सुविपुलन्तथा ॥ ३०६१ ॥
अश्मरीमूत्रकृच्छ्रञ्च दुर्नाम सभगन्दरम् ।
आमवातं शिरोवातमम्लपित्तं निहन्ति च ॥ ३०६२ ॥
कामलां पाण्डुतां श्वासं प्रमेहं गुदनिर्गमम् ।
प्लीहानं श्लीपदं शोथं कासं पञ्चविधं तथा ॥३०६३॥
शमयत्युदराण्यष्टौ शूलान्यष्टौ विशेषतः ।
भग्नास्थिविद्धवातेषु सक्थिग्रहविमोचने ॥ ३०६४ ॥
हन्यादेवं विधान्व्याधीनामवातं विशेषतः ।
ग्रन्थिवातं तथा कुष्ठं विषमज्वरमेव च ॥ ३०६५ ॥
मेदः कफामयं वातं व्याधिवारणदर्पहा ।
व्याधिशार्दूलविख्यातो योगोऽयममृतोपमः ॥३०६६॥

र. र., आमवाते ।

भाषा—हर्रे, वहेड़ा, आवला ८-८ पल, गूगल २ पल लेकर अच्छीतरहकूटकर ६ प्रस्थपानीमें डालकर एकदिनरात रहनेदे । दूसरेदिन इसको चलाताहुआ पकावे जिसमें कि गूगल पात्रमेंलगकर जल न जाय । चौथाभाग अवशिष्टरहनेपर उतारकर छानले । क्वाथमें सरसोंकातैल २ पल, त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोथा, विडङ्ग, आवले, गिलोय, चित्रकमूल, निसोत, दन्तीमूल, चव्य, सुरण, मानकन्द येसव ८-८ माशे, अच्छीतरहशुद्धकियाहुआ शिलाजीत ८ कर्ष, शुद्धपारा और गन्धक ८-८ माशेकी नीलवर्णकज्जली लेकर वारीकचूर्णकर पूर्वक्वाथमें डालकर पकावे । गोली वंधनेलायक होजाय तव घीकेवर्तनमें रखले । १५ या २१ दिन वीतनेपर इसमेंसे २-२ माशेकीमात्रा प्रातःकाल गरमपानीकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, कृशता, वार्धक्य, धातु-आयु और वलकाह्रास, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, ववासीर, भगन्दर, आमवात, शिरोवात, अम्लपित्त, कामला, पाण्डु, श्वास, प्रमेह, गुदभ्रंश, प्लीहा, श्लीपद, शोथ, कास, उदररोग, शूल, अस्थिभंग, ऊरुस्तम्भ, आमवात, गठिया, कुष्ठ, विषमज्वर, मेद, कफ और वातव्याधि इनसवको यह नष्टकरताहै ॥६३४॥

६३५ व्याधिहरणरसः

सुपक्वं पीनमानीय तिक्ततुम्बीमहत्फलम् ।
उपरिभागे छेत्तव्यं तन्मध्ये नरसारकम् ॥ ३०६७ ॥
कुडवं निक्षिपेत्पश्चाच्छकलं पूर्ववद्न्यसेत् ।
मृत्कर्पटेन संवेष्ट्य छिद्राणि त्रीणि कारयेत् ॥३०६८॥
गर्तमध्ये न्यसेद्भाण्डं तस्योपरि न्यसेत्फलम् ।
वस्त्रमृत्तिकयायुक्तं न्यसेत्सप्तदिनावधि ॥ ३०६९ ॥
पश्चादुद्धृत्य भाण्डस्थं गृह्णीयाद्रसमुत्तमम् ।
कुडवं रसकर्पूरं खल्वे सम्मर्द्य बुद्धिमान् ॥ ३०७० ॥
पश्चात्तद्रससंयुक्तं चतुर्दश दिनावधि ।
अर्कस्य क्षीरसंयुक्तं चतुर्दश दिनावधि ॥ ३०७१ ॥
सम्मर्द्य चक्रिकां कुर्याद्भाण्डे संस्थाप्य युक्तितः ।
तिर्यक्पातनयन्त्रेण गृह्णीयादुत्तमं रसम् ॥ ३०७२ ॥
कृत्वैवं सम्प्रदायेन कर्पूराद्रसमुद्धरेत् ।
तद्रसञ्च समं गन्धं रसार्द्धन्तु विमिश्रयेत् ॥ ३०७३ ॥
खल्वे कज्जलिकां कृत्वा महाकोशातकीद्रवैः ।
रसञ्च भावयित्वा तु पश्चात्कूप्यां विनिक्षिपेत् ॥३०७४
वालुकामध्यगं कृत्वा दत्त्वाऽग्निं खदिरस्य च ।
द्विपादगन्धकं शेषं चूर्णं कृत्वा विचक्षणः ॥ ३०७५ ॥
कूपिकायामुखे धूमं दृष्ट्वा गन्धं पुनः पुनः ।
दीयते सूर्ययामान्तं तदा सिद्धो भवेद्रसः ॥ ३०७६ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य कूपिकाकण्ठगं रसम् ।
तरुणाऽरुणसंकाशं सिन्दूरं जायते वरम् ॥ ३०७७ ॥
नाम्नाऽयं व्याधिहरणो रसो वैद्यैः सुपूजितः ।
उपदंशे तथा मेहे पाण्डुरोगे भगन्दरे ॥ ३०७८ ॥
मन्दानले क्षये कासे श्वासे कुष्ठे व्रणे तथा ।
अनुपानविशेषेण सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ ३०७९ ॥

रसायनसं., रसायने ।

भाषा—अच्छीतरह पकाहुआ पुष्टतूंवीकाफल लेकर ऊपरकी तर्फसे टुकड़ा काटकर ४ पल नवसादर डालकर ढक्कनलगाय ३-४ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर लोहेके खीलेसे ऊपरकी तर्फ तीन छेदकरदे । फिर एक खड्डेमें पात्ररखकर उसमें तूंवीको रख नादसे ढककर मिट्टीसे खड्डेको भरदे । सातदिनवाद तूंवीकेद्रवको निकालले । इसकेवाद ४ पल रसकपूरको इसद्रवसे और आकके दूधसे १४-१४ दिनतक मर्दनकर टिकड़िया वनाय सुखाकर डमरूयन्त्रमें वन्दकर तिर्यक्पातनयन्त्रसे पारेको अलगकरे । यह पारा १ भाग, शुद्ध गन्धक तथा साधारणशुद्धपारा आधाआधाभाग मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर कड़वीलौकीकेरससे ३-४ दिन मर्दनकर सुखाकर ६-७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भर वालुकायन्त्रमें रख खैरकी लकड़ीकी अग्निदेवे । कज्जलीमें डालेहुए गन्धकसे आधा गन्धक और पीसकर रखछोड़े । शीशीमेंसे धूंआ निकलनेपर थोड़ाथोड़ा गन्धक ऊपरसे देताजाय । ऐसे १२ पहरतक अग्निदेनेसे तमामपारा उड़कर शीशीके मुहपर लगजायगा । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २ से ३ रत्तीतक उचितानुपानकेसाथ देनेसे उपदंश, प्रमेह, पाण्डु, भगन्दर, मन्दाग्नि, क्षय, कास, श्वास, कुष्ठ, व्रण प्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६३५ ॥

६३६ व्योममार्तण्डरसः

तुल्यवारिददिवाकरं समं
त्र्यूषणेन सफलत्रिकेण च ।

तुल्यभागमिलितेन सर्पिषा
लीढमेतदपहन्ति पायुजान् ॥ ३०८० ॥
लो. प. (स.), अर्शोरोगे।

भाषा—नागरमोथा, ताम्रभस्म, त्रिकटु और त्रिफला समभाग लेकर वारीकचूर्णकर सवकेवरावर घीमें मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेसे दोमाशेतक देनेसे यह समस्तववासीरोंको नष्टकरताहै ॥ ६३६ ॥

६३७ व्योमसुन्दरीवटी

कार्पास्याः काकमाच्याश्च कन्यायाश्च दलद्रवैः।
शुद्धं सूतं दिनं मर्द्य क्षाल्यमम्लैः समुद्धरेत् ॥३०८१॥
तद्रसान्निष्कचत्वारि निष्कार्द्धं ताम्रचूर्णकम्।
पादोननिष्कमभ्रोत्थं सत्त्वं पादश्च हाटकम् ॥ ३०८२ ॥
हेमतुल्यं मुण्डचूर्णं सर्वमम्लैर्विमर्दयेत्।
दिनान्ते गोलकं कृत्वा जम्बीरस्योदरे क्षिपेत् ॥३०८३
त्रिदिनं दोलकायन्त्रे पाचयेत्सारनालके।
उद्धृत्य धारयेद्वक्त्रे गुटिकां व्योमसुन्दरीम् ॥३०८४॥
वर्षमात्राज्जरां हन्ति जीवेद्ब्रह्मदिनं नरः।
चित्रमूलस्य चूर्णन्तु सक्षौद्रं कान्तपात्रके ॥
आलोड्य भक्षयेत्कर्षमनु स्यात्क्रामणे हितम्॥३०८५॥
रसायनर, रसायने।

भाषा—कपास, मकोय, घीकुंवार इनकेरसोंमें १–१ दिन पारेकोमर्दनकर काञ्जीप्रभृति खट्टेपदार्थोंसे साफ़करके १ कर्ष लेवे। फिर शुद्धताम्रचूर्ण २ माशे, अभ्रकसत्त्व ३ मा, सुवर्ण और मुण्ड १–१ माशा मिलाकर खटाईमें ४ पहर मर्दनकर गोलीवनाय ध्यारतह मलमलके टुकड़ेमें बाधकर जभीरीनीबूमें रख दोलायन्त्र बनाय काञ्जीमें लटकाकर ३ दिनतक पकावे। काञ्जी सूखनेपर नई डालताजाय। स्वाङ्गशीतलहोनेपर गोलीको निकालले, यह कड़ी होजायगी। इसको एकवर्षभर मुंहमें रखनेसे बुढ़ापा नष्टहोकर अत्यन्त दीर्घायुहोताहै। एककर्ष चित्रककी जड़का चूर्ण मधुकेसाथ कान्तलोहकेपात्रमें कुछदेर घोटकर भक्षणकरनेसे इसका शरीरमें अनुक्रमणहोताहै ॥ ६३७ ॥

६३८ व्योपादिलोहम्

व्योपं विल्वं द्विरजनी त्रिफला द्विपुनर्नवम्।
मुस्तान्ययोरजः पाठा विडङ्गं देवदारु च ॥ ३०८६ ॥
वृश्चिकाली च भार्गी च सक्षीरैस्तैः शृतं घृतम्।
सर्वान्प्रशमयत्याशु विकारान्मृत्तिकाकृतान् ॥३०८७॥
न स., अ. ह, वृ. मा, ग. नि., पाण्डुरोगे।

भाषा—त्रिकटु, वेलगिरी, हल्दी, दारुहल्दी, त्रिफला, लाल और सफेदपुनर्नवा, नागरमोथा, फोलादकाचूरा, पाठा, विडङ्ग, देवदारु, विछुआ, भारङ्गी सव समभागलेकर वारीकपीसकर कल्क वनावे। फिर कल्कसे चौगुना घी और घीसे चौगुनादूध डालकर पकावे। घीमात्र अवशिष्ट रहनेपर छानकर रखले और ऊपरकी चीजोंकाही चूर्ण वनाकर रखलेवे। इसचूर्णमेंसे १ से ३ माशेतकमात्रा एकतोले घीमें मिलाकर लेनेसे मृद्भक्षणजनित समस्तविकार नष्टहोतेहै। खानेकेलिये जो चूर्ण वनावे उसमें लोहभस्मका उपयोगकरे ॥ ६३८ ॥

६३९ व्रणगजकेसरीरसः

मृतं सूतं मृतं ताम्रं मृतं स्वर्णं मृतायसम्।
पृथक्पृथक् शुक्तिसमं शुद्धशैलं पलानि षट् ॥३०८८॥
खल्वे शतदलोत्थेन रसेन परिमर्दयेत्।
वारत्रयं तथा जातीदलजेन प्रयत्नतः ॥ ३०८९ ॥
ततो माषमितं नित्यं त्रिफलामधुना लिहेत्।
गुडूचीसारिवानिम्बमञ्जिष्ठात्रिफलोद्भवम् ॥ ३०९०॥
क्वाथं चानु पिबेन्नित्यं व्रणदोषप्रशान्तये।
तान्सर्वान्नाशयेदाशु विद्रधींश्च भगन्दरान् ॥
शोफाध्मानप्रमेहादीञ्जयेच्छ्रीशम्भुशासनात् ॥३०९१॥
र म. मा, ना वि., व्रणाधिकारे।

भाषा—पारा, ताम्र, सुवर्ण और लोहभस्म १–१ पल, शुद्धशिलाजीत ६ पल लेकर गुलाव, कमल और चमेलीके स्वरसोसे ३–३ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली त्रिफला और मधुकेसाथलेकर गिलोय, अनन्तमूल, नीम, मजीठ और त्रिफलाका क्वाथ पीनेसे सवप्रकारकेव्रण, विद्रधि, भगन्दर, शोष, आध्मान, प्रमेह प्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६३९ ॥

६४० व्रणगजाङ्कुशरसः

दरदः पार्वतीपुष्पं कुनटी पुरुपो रसः।
शोणितं गन्धको दैत्यः सैन्धवोऽतिविषा चवी ३०९२
शरपुङ्खा विडङ्गश्च यवानी गजपिप्पली।
मरीचार्कौ च वरुणो धूनकश्च हरीतकी ॥ ३०९३ ॥
मर्दितं कटुतैलेन गुटिकां कारयेदिह।
नाडीव्रणप्रवाहञ्च गण्डमालां भगन्दरम् ॥ ३०९४ ॥
चिरव्रणं दद्रुकुष्ठं पूतिकन्तु शिरोगदम्।
पादस्फोटं तथा हस्तं विचर्चीं वहुकीटजाम् ॥ ३०९५
र र., भै. र, ध, र. चं., व्रणशोथे। भै. र. **नारायणरस** इतिनाम। ध **दरदवटी**तिनाम। र. च **नारायण** इतिनाम-भगन्दराऽधिकारश्च।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, फिटकड़ी, कसीस, मैनसिल, गूगल, पारा, सोनागेरू, गन्धक, वैक्रान्त, सैन्धव, अतीस, चव्य, शरपुङ्ख, विडङ्ग, अजवाइन, गजपीपल, मरिच, आककीजड़, वरुणकीछाल, राल, हर्रे येसव समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सरसोंके तैलसे १–२ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे नाडीव्रण, गण्डमाला, भगन्दर, पुरानाव्रण, दद्रु, कुष्ठ, सड़ाहुआव्रण, शिरोरोग, हाथ और पैरकी फूटन, कीटयुक्तविचर्चिका इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६४० ॥

६४१ व्रणजयमल्लः

मल्लं सङ्गृह्य यत्नेन कर्षमात्रं भिषग्वरः ।
शुद्धं कृत्वा ततः कोष्ठीयुग्मोदरविले क्षिपेत् ॥३०९६॥
मृत्कर्पटेन संवेष्ट्य तत्तश्चुल्ल्यां निवेशयेत् ।
अधो वह्निं ददेताग्रमष्टोत्तरशतावधि ॥ ३०९७ ॥
खरमूत्रे निषेच्याऽथ स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
तण्डुलप्रमितां मात्रां हविषा सह योजयेत् ॥ ३०९८ ॥
व्रणे क्षते महाकुष्ठे शतपोने भगन्दरे ।
महामल्लाभिधः प्रोक्तस्तज्ज्ञै र्व्रणपराजये ॥ ३०९९ ॥

रसायनसं., व्रणाऽधिकारे ।

भाषा—एककर्ष शुद्धसोमलकी डलीको दो ढकनोंमें वन्दकर कपड़मिट्टी देकर चूल्हेपर रख नीचे कड़ी आंचदे । ऊपरसे १०८ कर्ष गधेकेमूत्रका चोवादे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ चावल मात्रा घीकेसाथदेनेसे व्रण, क्षत, महाकुष्ठ, शतपोनक, भगन्दर, इनसवको यह नष्टकरताहै ॥

६४२ व्रणमर्दनरसः

दरदोत्थं रसं शुद्धं गन्धकञ्च पलंपलम् ।
पलत्रयं शुद्धतालं मर्दयेत्तुलसीद्रवैः ॥ ३१०० ॥
दिनत्रयं प्रयत्नेन रेतितं शुक्तिमात्रकम् ।
निक्षिप्य रजतं शुद्धं काचकूप्यां विनिक्षिपेत्॥३१०१॥
प्रमुद्रयास्यं भिषक् पश्चात्सिकतायन्त्रके पचेत् ।
मन्दमध्यक्रमेणैव वह्निं प्रज्वालयेदधः ॥ ३१०२ ॥
दिनत्रयं प्रयत्नेन स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
ततस्तु कूपिकान्तस्थं कश्चिन्माणिक्यसन्निभम् ३१०३
पतङ्गीं चातियत्नेन ग्राहयित्वा पृथक्पृथक् ।
नीत्वाऽधःस्थं समस्तञ्च पृथक्कुर्यादतः परम् ३१०४
सर्षपाभा पतङ्गीनां गुञ्जामात्रं तथा रसम् ।
चूर्णितं पर्णखण्डेन भक्षयेद्वा यथाबलम् ॥ ३१०५ ॥
यावद्गुञ्जापतङ्गी स्याद्रसो माषमितो भवेत् ।
तदूर्ध्वं वर्धनं नव कारयेद्रोगिणं प्रति ॥ ३१०६ ॥
यदाऽग्निरोधान्न भवेत्पतङ्गी
तदा रसः केवल एव नित्यम् ।
सेवेद्व्रणानां प्रशमाय विद्वां-
स्ततः सुखी स्यादसृगामयार्तः ॥ ३१०७ ॥

र. म मा., ना. वि., व्रणशोथे ।

भाषा—शिङ्गरिफसे निकालाहुआ शुद्ध पारा और गन्धक १–१ पल, शुद्धहरिताल ३ पल, चांदीका वारीकरेता १ पल लेकर सवकी नीलवर्णकज्जलीकर तुलसीकेरससे ३ दिन मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें वन्दकर डाटलगाकर वालुकायन्त्रमें रख मन्द, मध्य और खर, इसक्रमसे ३ दिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर सावधानीकेसाथ शीशीको फोड़कर देखे, कहींपर मणिके सदृश कहीं पतङ्गकेसदृश रङ्गदिखाईदेगा । इनको अलग २ निकालकर शीशीमें रखछोड़े और नीचेकाभाग अलग रक्खे । पतङ्गीरङ्गवालेमेंसे १ सर्षप और माणिक्यसदृश तथा तलस्थकी १–१ रत्ती मानमें रखकर खावे । पतङ्गीकीमात्रा वढ़ाकर १ रत्तीतक और दूसरोंकी १ माशेतक करे । इससे अधिक न वढ़ावे । अग्निके अवरोधसे पतङ्गी नजर न आवे तो उसमें नीचे ऊपर जो रसमिले उसीका सेवनकरना चाहिये । इसके सेवनसे समस्त रक्तविकार नष्टहोतेहैं ॥६४२॥

६४३ व्रणवडवानलरसः

समाने द्वे च पापाणे तदर्द्धं बलिपारदम् ।
कुनटीक्षारमेकैकं सूतपादं सुतालकम् ॥ ३१०८ ॥
सर्वं शुद्धं तु खल्वे च मर्दयेद्दिवसत्रयम् ।
नागवल्ली च निर्गुण्डी भृङ्गराजपुनर्नवौ ॥ ३१०९ ॥
प्रत्येकपत्रसारेण मर्दनेन पुनःपुनः ।
वटकान्वदरीवीजमात्रांश्शुष्कांस्तु कारयेत् ॥३११०॥
शुल्वे कारण्डके क्षिप्त्वा सप्तशो वस्त्रमृत्तिकाः ।
सुपक्वं वालुकायन्त्रे द्वादशाहं निरन्तरम् ॥ ३१११ ॥
स्वाङ्गशीतलमादाय सर्वं गोलं विचूर्णयेत् ।
अनुपानविशेषेण व्रणांश्च विविधाञ्जयेत् ॥
शीतिकां विषमान्हन्ति शीतज्वरहरं परम् ॥३११२॥

र. क. यो., व्रणे ।

भाषा—सफेद और पीलासोमल १–१ भाग, शुद्ध गन्धक और पारा आधाआधाभाग, मैनसिल और सुहागा १–१ भाग, शुद्धहरिताल पारेसे चतुर्थांश लेकर सवकी नीलवर्णकज्जलीकर पान, निर्गुण्डी, भंगरा और पुनर्नवाके रसोंसे ३–३ दिन मर्दन कर वेरकीगुठलीकेवरावर गोलियें वनाय सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके डाटवन्दकर वालुकायन्त्रमेंरख १२ दिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सवको पीसकर रखछोड़े । इसमेंसे १ चावलसे २ चावलतक मात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेसे नानाप्रकारकेव्रण, शीत और विषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६४३ ॥

६४४ व्रणहररसः

रसं गन्धं विषं वह्निं लोहमभ्रं समंसमम् ।
सप्तधा पार्थतोयेन काञ्चनाराऽम्भसा तथा ॥३११३॥
भावयित्वा वटीः कुर्याद्रक्तिकाप्रमिता भिषक् ।
रसो व्रणहरो नाम व्रणान्हन्ति रसोत्तमः ॥ ३११४ ॥

र. चं., व्रणाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और वछनाग, चित्रककीजड़, लोह और अभ्रकभस्म समभागलेकर अर्जुन और कचनारकेरसोंसे ७–७ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे, यह समस्तव्रणोंको दूरकरताहै ॥ ६४४ ॥

६४५ व्रणान्तकगुग्गुलुः

कटुत्रयं निशायुग्मं बला वल्या प्रसारिणी ।
मञ्जिष्ठा पार्थयष्टी च देवदारु पुनर्नवा ॥ ३११५ ॥

पृथक् पृथक् शुक्तिसमं पलैकं मृतपारदम्।
अभ्रञ्च द्विगुणं देयं त्रिगुणं तु मृतायसम ॥ ३११६ ॥
चतुर्गुणं शुद्धशैलं सर्वमेकत्र मिश्रयेत्।
अस्थिशृङ्खलिकातोये सम्यक् शोध्यस्तु गुग्गुलुः ॥
सर्वेषां द्विगुणश्चाऽत्र दत्त्वा सम्मर्दयेत्ततः।
अक्षप्रमाणा गुटिका सेव्या नित्यं ततः परम् ॥३११८॥
पिबेन्मांसरसश्चानु दुष्टव्रणनिपीडितः।
पूयरक्तास्थिवाहीनि व्रणान्याशु प्रयान्ति हि ॥
भग्नविश्लिष्टसन्धीनां साक्षाद्भग्नाश्च ये व्रणाः ३११९

टो, व्रणाधिकारे।

भाषा—त्रिकटु, हल्दी, दारुहल्दी, वला, असगन्ध, प्रसारिणी, मजीठ, अर्जुन, मुलहठी, देवदारु, पुनर्नवा, पारदभस्म येसव १-१ पल, अभ्रकभस्म २ पल, लोहभस्म ३ पल, शुद्धशिलाजीत ४ पल लेकर सवका वारीकचूर्णकर हड़जोड़केरसमें शुद्धकियाहुआगूगल सवसे दूना मिलाकरकूटे। एकजीवहोनेपर वेरवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मासरस अथवा जीवनीयगणक्वाथकेसाथ देनेसे पूय, रक्त और हड्डिया जिनमेंसे वहवहकर निकलतीहों ऐसे दुष्टव्रण, भग्न, विश्लिष्टसन्धिया, अस्थिभग्न येसव नष्टहोतेहै ॥ ६४५ ॥

६४६ व्रणान्तकरसः (प्रथमः)

अम्बा हरिद्रा कर्षैकं म्लेच्छदीप्यस्य कर्षकम्।
कीटमाराजमोदायाः कर्षमेकं ततो गुडात् ॥ ३१२० ॥
जीर्णात्सार्धं द्विकर्षं स्याद्भल्लातकफलानि च।
सार्द्धद्विसङ्ख्यया सम्यक् पारदः सार्धमापकः ३१२१
खल्वे सङ्कुट्य प्रथमं भल्लातेशौ ततः परम्।
चूर्णं वस्त्रेण सम्पूतं मेलयित्वा गुडेन तु ॥ ३१२२ ॥
कुट्टयित्वा च तत्सम्यग्गुटिकाश्च चतुर्दश।
बद्धा द्विकालमश्नीयाच्छीततोयानुपानतः ॥ ३१२३ ॥
दन्तस्पर्शं विना ग्राह्यमौषधं पथ्यशीलिना।
गोधूममात्रं घृतस्निग्धं सूपं चाढकिसम्भवम् ॥३१२४॥
ओदनं तिक्तलवणं शाकं सामान्यमेव च।
पथ्यं सप्तदिनं कुर्यादष्टमेऽह्नि तथा वटीम् ॥ ३१२५ ॥
हिङ्गुजीरमरीचादिसंस्कृताश्च निषेवयेत्।
उत्तरार्द्धं स्नानवर्ज्यमेवं कार्यं विजानता ॥ ३१२६ ॥
अपि तालुनि सञ्जाते व्रणे चालनिकानिभे।
यत्रकुत्राऽपि सम्भूते व्रणे ह्येतन्नियोजयेत् ॥ ३१२७ ॥
व्रणान्तकमिदं प्रोक्तं सर्वदुष्टव्रणापहम्।
उपदंशसमुद्भूतं गुह्यस्थानसमुद्भवम् ॥ ३१२८ ॥
नाडीव्रणं निहन्त्याशु भगन्दरमथापि वा।
हस्तपादसमुद्भूता विविधा वातवेदनाः ॥ ३१२९ ॥
ताः सर्वाः प्रशमं यान्ति सत्यमेतन्न संशयः।
ताम्बूलञ्च सदा सेव्यमश्नीयाच्च घृतं बहु ॥ ३१३० ॥

रसायनस., व्रणाऽधिकारे।

भाषा—आवाहल्दी, खुरासानी अजवाइन, कीड़ामारी (गुजराती), अजमोद १-१ कर्ष, पुरानागुड़ २॥ कर्ष, भिलावे २॥ नग, पारा १॥ माशा लेकर पहिले भिलावोंको कूटकर पाराडालकरकूटे। पारामिलजानेपर गुड़डाले। द्रवहोनेपर सबचीजोंकावारीकचूर्णमिलाकर कूटे। अच्छीतरह गोलीबंधनेलायकहोनेपर इसकी १४ गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली सुवहशाम ठंढे पानीकेसाथ दन्तस्पर्शको वचाकर निगलजाय। इसमें गेंहूं, घी, अरहरकीदाल, भात, तिक्त और लवणरस साधारणशाक इनका सेवनकरे। ऐसे ७ दिन वीतनेपर आठवेंदिन हींग, जीरा और मरिच वगैरहकेयुक्त भोजनकरे। इसमें १४ दिनतक स्नान न करे। इसकेसेवनसे चलनीकीतरह सैकड़ोंछेदवाला तालु अथवा गुह्यादिस्थानजव्रण, उपदंश, नाडीव्रण, भगन्दर, नानातरहकी वातवेदना येसव नष्टहोतेहैं। इसके सेवनसे मुंह खरावमालूमपड़े तो हमेशा पानका सेवनकरे ६४६

६४७ व्रणान्तकरसः (द्वितीयः)

दरदश्चैकभागन्तु पञ्चभागश्चाऽपि गन्धकम्।
सूतराजस्य चैकेन तदर्द्धं मृतनागकम् ॥ ३१३१ ॥
हंसपादीरसैर्मर्द्यं पुटमेकञ्च चूर्णितम्।
गुडाज्यमरिचैर्मिश्रं प्रातःकाले च सेवयेत् ॥३१३२॥
व्रणकीटककुष्ठानि मण्डलानि च नाशयेत्।
व्रणान्तक इति ख्यातो दुष्टव्रणहरः परः ॥ ३१३३ ॥

व रा., व्रणे।

भाषा—शुद्धशिगरिफ १ भाग, शुद्धगन्धक ६ भा., शुद्धपारा १ भा., नागभस्म आधाभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर हंसराजके रससे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय एरण्डकेपत्तोंमेंलपेट पुटपाकमें स्वेदितकर निकालले। इसमेंसे ३-३ रत्ती प्रात काल गुड़, मरिच और घीकेसाथ सेवनकरनेसे व्रण, कीट, कुष्ट और चकत्ते नष्टहोतेहैं ॥ ६४७ ॥

६४८ व्रणान्तकरसायनम्

सितमल्लं कर्षमात्रं दरदञ्च द्विकार्षिकम्।
त्रिकर्षं श्वेतखदिरं त्रींश्च खल्वे विचूर्णयेत् ॥३१३४॥
आर्द्रकस्वरसेनैव मर्दयेत्तद् दृढं नरः।
सर्षपप्रमितां मात्रां युञ्जीत भिषगुत्तमः ॥ ३१३५ ॥
घृतानुपानतो दद्यात्तत्क्षणे पथ्यमाचरेत्।
संयावकं घृताढ्यञ्च पथ्याय योजयेद्बुधः ॥ ३१३६ ॥
व्रणाः शुष्यन्ति रोहन्ति प्रभावेणौषधस्य हि।
ततः षण्मासपर्यन्तं मुद्गान्नं कारवेल्लकम् ॥
कूष्माण्डञ्च गुडं रम्भाफलं वै वर्जयेन्नरः ॥ ३१३७ ॥

रसायनसं., व्रणाऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध सफेदसोमल १ कर्ष, शुद्ध शिंगरिफ २ कर्ष, सफेदकत्था ३ कर्ष लेकर सवका वारीकचूर्णकर १-२ दिन अदरखकेरससे मर्दनकर सर्षपप्रमाण गोलियें वनाकर रखछोड़े।

इनमेंसे १ से ३ गोलीतक मात्रा प्रकृति और बलका विचार-कर घीकेसाथदेवे और तत्काल हलवा खिलावे । इसकेप्रभावसे व्रण अच्छेहोजातेहैं । ६ महीनेतक मूंग, करेला, कोंहळा, गुड और केले न खाय ॥ ६४८ ॥

६४९ व्रणापहारीरसः

रसाद्विगुणितो गन्धः शिलातालौ च तत्समौ ।
पलङ्कषा सर्वसमा मर्दयेत्त्रिफलाद्रवैः ॥ ३१३८ ॥
व्रणापहारी सिद्धः स्यात्सेव्यो माषद्वयोन्मितः ।
जेतुं सर्वव्रणान्दुष्टान्नाडीव्रणभगन्दरान् ॥ ३१३९ ॥

र., व्रणे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक, मैनसिल और हरिताल २–२ भाग, गूगल सबकी बराबर लेकर गूगलको घीके योगसे कूटकर सबचीजोंकी कज्जलीको मिलाकर त्रिफलाकेरससे एकदिन मर्दनकर २–२ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्त दुष्टव्रण, नाड़ीव्रण और भगन्दर नष्टहोतेहैं ॥ ६४९ ॥

६५० व्रणारीरसः

गन्धेशाहिफणं तुल्यं त्र्यहं जम्बीरमर्दितम् ।
कुमार्या नरमूत्रेण चित्रकेण च सिन्धुना ॥ ३१४० ॥
सौवर्चलेन च पृथग्युक्त्या सप्तदिनैः पृथक् ।
व्रणरोगेषु सर्वेषु सद्योजातव्रणेषु च ॥ ३१४१ ॥
लूताभगन्दरे गण्डगण्डमालासु योजयेत् ।
क्षौद्रेण वा यथायोगैस्त्रिवल्लं पुरसंयुतम् ॥
पथ्यश्च शालयो मुद्गा गोधूमाः सघृता हिताः॥३१४२

र. सि , र. चि., रसायनसं., व्रणाऽधिकारे ।

टि०—र. चि , रसायनस गन्धेशाहिफण तुल्यमित्यस्य स्थाने गन्धेशौ कणा तुल्यौ इति पाठ । नाम च व्रणरोपणरस इति स्थापितम् ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, पारा और अफीम समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर ३ दिन जमीरीकेरससे मर्दनकर घीकुंवार, नरमूत्र, चित्रक, सैन्धव और सञ्चलनमक इनप्रत्येक-केद्रवोंसे ७–७ दिन मर्दनकर ९–९ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधु, गूगल अथवा रोगोचिता-नुपानकेसाथ देनेसे समस्त व्रणरोग, सद्योव्रण, मकड़ीकाविष, भगन्दर, गांठें, गण्डमाला, येसब नष्टहोतेहैं । इसमें सफेदचावल, मूंग, गेंहू, घी येसब खानेको देना और नमकसे परहेज़ कराना ॥

यदीयसंसर्गविसर्गसद्भवे,
जगत्त्रयस्याऽऽत्मभवाऽभवोद्भवः ।
हरिप्रपन्नेन कृते क्रमान्विते,
अन्तःस्थवर्गोऽजनि योगसागरे ॥

अथ शकारादिरसाः

१ शकटाक्षकिट्टवटी

शकटाक्षकिट्टवट्यः शनैः शनैः पाण्डुरोगघ्नाः ।
तदुपादानपदार्थं कथयामश्चाञ्जवं तैलम् ॥ १ ॥

सि. भे. म., पाण्डुरोगे ।

भाषा—गाड़ीकेपहियेके किट्टकी चनेप्रमाण गोलियां बना-कर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानु-पानकेसाथ देनेसे पाण्डुरोग नष्टहोताहै ॥ १ ॥

२ शक्तिकौमाररसः

दरदरसककृष्णाटङ्कणाऽऽलं शिलांशा
मुनिमिततिमिपित्तै र्भावयेद्वल्लमात्रम् ।
ज्वरहररस आर्द्रैः शक्तिकौमारनामा
दधियुतहितपथ्यं शाकवृन्ताकजश्च ॥ २ ॥

र. शि., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धशिगरिफ, खपरिया, पीपल, भुनासुहागा, शुद्ध-हरिताल और मैनसिल समभागलेकर बारीकचूर्णकर रोहूमछली-केपित्तेकी ७ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथदेनेसे यह समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै । इसमें दही, भात और बेंगनकाशाक पथ्यदेना ॥ २ ॥

३ शक्तिरसः (महा)

मृतसूताऽभ्रकं वज्रं कान्तताराऽर्कहाटकम् ।
तीक्ष्णञ्च तुल्यतुल्यांशं सर्वेषां गन्धकं समम् ॥ ३ ॥
सर्वं पालाशतैलेन मर्दयेद्दिनसप्तकम् ।
महाशक्तिरसो नाम क्षौद्रै र्माषं लिहेत्सदा ॥ ४ ॥
षण्मासेन जरां हन्ति जीवेद्ब्रह्मदिनत्रयम् ।
वत्सरात्सप्तकल्पानि जीवत्येव न संशयः ॥ ५ ॥
इच्छावेगी महासिद्धः पराशक्तियुतो भवेत् ।
तस्य मूत्रपुरीषाभ्यां ताम्रं भवति काञ्चनम् ॥ ६ ॥
पालाशबीजजं तैलं क्षौद्रैर्लेह्यं पलाष्टकम् ।
क्रामकं ह्यनुपानं स्यात्सम्यक् छक्त्या प्रकाशितम् ॥७॥

र. ख., रसायनसं , रसायने ।

भाषा—पारा, अभ्रक, हीरा, कान्त, रजत, ताम्र, सुवर्ण और फोलाद इनकीभस्में समभाग लेकर सबकी बराबर शुद्ध-गन्धक मिलाकर पलाशकेबीजोंके तैलसे ७ दिनतक मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे शुरूकर धीरेधीरे १ माशेतकमात्रा बढावे । ६ महीनेंकेसेवनसे बहुत दीर्घायु होतीहै । एकवर्षके-सेवनसे कल्पजीवी तथा इच्छावेगी महासिद्ध होकर उत्कृष्ट शक्ति-युक्तहोताहै । इसके मूत्र और पुरीषसे ताम्रपर सूर्यक्रियाहोतीहै । इसके प्रयोगमें पलाशकेबीजोंकातैल शक्त्यनुसार आरम्भकर ८ पलतककीमात्रा बढ़ावे तो शरीरमें रसका क्रामणहोताहै ॥ ३ ॥

विदलानि च सर्वाणि ककारादींश्च वर्जयेत्।
लोहराजस्तथा चायं स्वयं रुद्रेण भाषितः॥ ४६॥
जनानामुपकाराय दुर्नामारिरयं ध्रुवम्।
स्थानादपैति मेरुश्च पृथ्वी पर्येति वायुना॥ ४७॥
पतन्ति चन्द्रताराश्च मिथ्या चेदहमब्रुवम्।
ब्रह्मघ्नाश्च कृतघ्नाश्च क्रूराश्चासत्यवादिनः॥ ४८॥
वर्जनीया विदग्धेन भैषज्यगुरुनिन्दकाः।
रक्तिद्वादशकादूर्द्धं वृद्धिरस्य भयप्रदा॥ ४९॥
काले मलप्रवृत्तिर्लाघवमुदरे विशुद्धिरुद्गारे।
अङ्गेषु नावसादो मनःप्रसादोऽस्य परिपाके॥ ५०॥
क्रिमिरिपुचूर्णविलीढं सहितं स्वरसेन वङ्गसेनस्य।
क्षपत्यचिरान्नियतं लोहाजीर्णभवं शूलम्॥
भवेद्यदाऽतिसारस्तु दुग्धं पीत्वा तु तं जयेत्॥ ५१॥

र.र., र.क., भा.प्र., र चि , यो म , र.का., अर्शस्सु।

भाषा—मुण्डादि ६ लोहोंमेंसे किसीएकके पत्रोंको शुद्धकर मैनसिल, सोनामाखी और पारा समभागलेकर वारीकचूर्णकर कुकरोंधेकीजड़केरसमें कल्कबनाय पत्रोंपर लपेटकर सुखाकर सबुएके कोयलोंपर अथवा अन्यसारिष्ठकोयलोंपर धमनकरे। तीव्रज्वाला निकलनेपर पानीकीजगह त्रिफलाकेक्काथसे छींटदेवे। लोहकेगलजानेपर त्रिफलाकेक्काथमें बुझावे। इसप्रकार ७ अथवा २१ वारगलाकर बुझानेसे लोहेकीभस्म होकर पात्रमें राखकीतरह जमजायगी। २१ वार बुझानेपर भी जिसकी भस्म न हो उसे फेंकदेना क्योंकि वह लोहनहींहै। फिर उसभस्मको क्काथमेंसे निकालकर सुखाकर लोहे अथवा पत्थरकी खरलमें घोंटे। बारीकचूर्णहोनेपर कुकरोंधेकेरससे १–२ दिन घोटकर टिकियां बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर साधारणपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर त्रिफला, अदरख, भंगरा, कालाभंगरा, मानकन्द, भिलावे, चित्रकमूल, जङ्गलीसूरण, हस्तिकर्णपलाश, थूहरकादूध इनकेद्रवोंसे १–१ दिन घोटकर स्थालीपाक अथवा सूर्यकिरणपाककरके सुखावे फिर उसीकल्कमें घोटकर टिकिया बनाय साधारण पुटदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पहिलेकीतरह घोटकर पुटदे। इसतरह प्रत्येकद्रवमें पाक और पुटदेनेकेबाद जितनालोहहो उसमेंसे १६ पललेकर १७ पल त्रिफलाका जवकुटचूर्णकर अष्टगुणितपानीमें क्काथकरे। एकभाग अवशिष्ट रहनेपर छानकर इसद्रवमें लोहको घोटकर ८ पल घी मिलाकर लोहेके वर्तनमें लोहेकी कड़छीसे चलाताहुआ मन्दाग्निपर पाककरे। जब पानीका अंश सूखकर घी ऊपर तैरनेलगे और कल्ककी गोली बंधनेलगे तब उतारकर रखछोड़े। ठंढाहोनेपर अच्छीतरह घोटकर घीके चिकनेवर्तनमें रख मुँहबन्दकर यवराशि अथवा धान्यराशिमें एकसप्ताह रखकर निकालले। रोगीको पञ्चकर्मसे शुद्धकर अग्नि, देव, ब्राह्मण और वैद्यप्रभृतिका पूजनकर शुभमुहूर्तमें स्वस्तिवाचनवगैरह मङ्गलकार्यकर इष्टमन्त्रसे अभिमन्त्रितकर एकरत्तीकीमात्रा भौंरेकेमधु और घीकेसाथ मिलाकर लेवे और ऊपरसे गोदुग्धपीवे। प्रतिदिन १–१ रत्ती-मात्रा बढाकर १२ रत्तीतक करे। गायकेदूध और घीका भोजनमें व्यवहारकरे। गायकेअभावमें बकरीका उपयोगकरे। स्निग्ध और वृष्य आहारकरे। नियमपूर्वक इसका सेवनकरनेसे तत्क्षण मन्दाग्नि, भस्मक, वात, पित्त, कुष्ठ, विषमज्वर, गुल्म, नेत्ररोग, पाण्डु, तन्द्रा, आलस्य, अरुचि, शूल, परिणामशूल, प्रमेह, अपबाहुक, शोथ, रक्तस्राव, विशेषतः ववासीर, वलकान्ति और स्वरक्षय, भारीपन, मनोग्लानि, कृशता, अल्पायु, वलीपलित इनसवको यह नष्टकरताहै। सुकुमारमनुष्यकेलिये भोजनकेसाथ पुरानेमद्य देवे। मांसाहारीको लवा, तित्तिर, गोह, मोर, खरगोश, चटक, कलविङ्क, वटेर, हारिल, वाज, सिकरा, विष्किर, कबूतर, मृग, इन जङ्गलीजानवरोंकामास, मद्गुर, रोहु और शकुल मछलियां, बैंगन, परवल, दोनो भटकटैया, चिचोड़ा, शतावर, वेतका अग्रभाग, सेवारकीतरह फैलनेवाले शाक, चौलाई, वथुआ, मरसा, कर्णालुक ? सवसरहके पुनर्नवा, नारियल, खजूर, अनार, हरफारेवड़ी, सिंघाड़े, पकाआम, द्राक्ष, ताड़गोला, जावित्री, लौंग, सुपारी, पान इनका सेवनकरे। वडहर, तमामजातिके वेर, जंभीरी, विजोरा, करोंदा, इमली, आनूपमांस, ऋक्ष, पुण्ड्रक, हंस, सारस, दात्यूह ? पनडुव्वी, कौआ, वलाहक, उड़द, कन्द, करीर, चना, तरबूज, कोंहळा, खेखसा, केवुक (घीतेला गुज०) करेला, कसेरू, ककडी, सम्पूर्ण दाल, ककारादि समस्तपदार्थ इनसवका त्यागकरे। यह लोहराज उत्तमप्रयोगहै खासकर ववासीरकी उत्तम औषधिहै। ब्रह्मघ्न, कृतघ्न, क्रूर, मिथ्याभाषी, दवा और गुरुनिन्दक इनपर इसकाप्रयोग न करे और वतलावे भी नहीं। इसकेसेवनकरनेमें समयपर मलमूत्रकी प्रवृत्ति, पेटका हलकापन, मुखकी शुद्धता, विशुद्धउद्गार, शरीर और मनकीप्रसन्नता रहनेपर समझनाचाहिये कि लोहका परिपाक ठीक होताहै। लोहका अजीर्णहोनेपर विडङ्गकाचूर्ण अगस्त्यके रसकेसाथ लेनेसे बहुतशीघ्र लाभहोताहै। इसकेसेवनमें अतिसारहोनेपर केवल दुग्धका प्रयोगकरके निवृत्तकरे॥

६ शङ्करलोहम् (द्वितीयम्)

पातितं स्वेदितं शुद्धं सुमुखं पारदं नयेत्।
तारबीजं चतुर्थांशं पूर्ववज्जारयेत्क्रमात्॥ ५२॥
गन्धकं षोडशगुणं पूर्ववज्जारयेद्भिषक्।
ततः सूतं कृष्णधूर्तरसैः सम्यक् प्रमर्दयेत्॥ ५३॥
दिनानि सप्त पश्चाद्धि वेणीनीरैः प्रमर्दयेत्।
दिनसप्तकमम्भोभिस्तिलपर्णीभवैस्ततः॥ ५४॥
यन्त्रे सोमानले दत्त्वा कल्कं सर्वं प्रयत्नतः।
चुल्ल्यामारोप्य तद्यन्त्रं हठाग्निं ज्वालयेदधः॥ ५५॥
त्रिदिनं तु ततः सूतं पूर्ववत्सम्प्रमर्दयेत्।
एकैकं तु दिनं पश्चाद्यन्त्रे क्षिप्त्वा च पूर्ववत्॥ ५६॥
क्षालनं त्रिदिनं पश्चान्मर्दनं पूर्ववच्चरेत्।
एवं कृत्वा रसेन्द्रस्य मर्दनं पाचनं ततः॥ ५७॥
यावद्रसेन्द्रो जायेत निरुत्थो भस्मरूपभाक्।
सप्तवारप्रयोगेण निरुत्थो जायते ध्रुवम्॥ ५८॥

पलद्वयं भस्म सौतं द्विपलं तारभस्मकम् ।
कान्तलोहपले द्वे स्तः शुल्वभस्म पलद्वयम् ॥ ५९ ॥
माक्षीकचूर्णं द्विपलं वलेर्दशपलं स्मृतम् ।
विंशतिः कृष्णलोहस्य भस्मीभूतस्य निक्षिपेत् ॥६०॥
लोहपादांशतो दद्यान्मुक्ताचूर्णस्य भागकम् ।
एतत्सर्वं त्रिकटुजैः क्वाथैः सम्मर्दयेद्बुधः ॥ ६१ ॥
आर्द्रकस्य च नीरेण तुलसीवारिणा ततः ।
त्रिजगद्विजयानीरै भृङ्गराजरसैस्ततः ॥ ६२ ॥
गुडूची सलिले मर्द्यो दिनैकैकं भिषग्वरैः ।
निक्षिप्य सागरे यन्त्रे पूर्ववद्विपचेद्दिनम् ॥ ६३ ॥
ततः सिद्धं समादाय रसेन्द्रं तत्र निक्षिपेत ।
द्वात्रिंशद्भागतो दद्याद्वत्सनाभं रसेश्वरे ॥ ६४ ॥
शुष्कप्रमर्दनं कुर्याद्दिनसप्तकमादृतः ।
तच्चूर्णं धारयेद्यत्नात्करण्डे लोहजे क्वचित् ॥ ६५ ॥
रोगिणं पञ्चभिः कर्मयोगतः शोधितं नयेत ।
ततो रसेश्वरं दद्यात्पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥ ६६ ॥
गुञ्जादशकमानेन प्रत्यहं सेवयेद्भिषक् ।
धारोष्णं गोपयो दद्यादनुपानार्थमादृतः ॥ ६७ ॥
पथ्यञ्च पूर्ववत्कुर्याद्रात्रौ च मधुपिप्पलीम् ।
धारोष्णपयसा सार्धं नित्यं सेवेत बुद्धिमान् ॥ ६८ ॥
स्त्रियं परिहरेद्दूरं क्रोधलोभविवर्जितः ।
एवं रसं सेवमानः षड्भिर्मासै. प्रमुच्यते ॥ ६९ ॥
रोगराजविकारेण नाऽत्र कार्या विचारणा ।
पाण्डुरोगादयः सर्वे विलयं यान्त्यसंशयम् ॥ ७० ॥
लोहः शङ्करनामाऽयं रोगराजविनाशनः ।
देवीशास्त्रानुसारेण विविच्यप्रतिपादितः ॥ ७१ ॥

रसालं., क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—पातन और स्वेदनादिसंस्कारकरके शुद्ध और बुभुक्षित कियेहुए पारेमें चतुर्थांश तारवीज जारणकर कच्छपयन्त्रादिकोंसे १६ गुना गन्धक जारणकर कालाधतूरा, वन्दाल अथवा अमरवेल और हुरहुरकेरसोंसे ७–७ दिन मर्दनकर डमरूयन्त्रमें कल्कको वन्दकर ३ दिनकीकड़ी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर १–१ दिन पूर्वरसोंसे मर्दनकर डमरूयन्त्रमें वन्दकर फिर ३ दिनकी कड़ी आचदे । ऐसे जवतक निरुत्थ न होजाय तवतक करतारहे । प्राय ७ वारकरनेसे यह निरुत्थ होजायगा । इसमेंसे पारदभस्म और रजतभस्म २–२ पल, कान्तलोह और ताम्रभस्म २–२ पल, शुद्धसोनामाखी २ पल, शुद्धगन्धक १० पल, कृष्णलोहभस्म २० पल, मुक्तापिष्टी ५ पल लेकर १–२ दिन मर्दनकर त्रिकटुकाक्काथ, अदरख, तुलसी, भाग, भंगरा, गिलोय इनसवकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर कज्जलीवनाय ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आनशीशीशीमें रख वालुकायन्त्रमें वन्दकर एकदिनकी कड़ीआचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ३२ वा भाग शुद्धवछनाग मिलाकर ७ दिनतक सूखामर्दनकर शीशी अथवा लोहेकेपात्रमें रखछोड़े । रोगीको पञ्चकर्मोंसे शुद्धकर पीपल और मधुकेसाथ १०–१० रत्तीदेकर धारोष्णदूधदेवे । रात्रिमेंभी मधु, पीपल और धारोष्णदूधसेवनकरावे । स्त्री, क्रोध और लोभको विल्कुल छोड़ दे । उपरान्त ६ महीनेतक सेवनकरनेसे राजरोगजन्य तमामविकारोंसे निरुत्तहोताहै और पाण्डुप्रभृति रोगभी नष्टहोतेहै

७ शङ्करवटी (प्रथमा)

अङ्कोलाग्नी च गन्धोषण-
रसविषकं पित्तमाजं क्रमात्त,-
त्सामुद्रञ्चार्कदुग्धैस्त्रिमि-
स्थ पुटितं जम्भनीरे विमर्द्य ।
कृत्वा गुञ्जासमानामिपुशर-
रसदिग्वह्निवाणेपुदिग्भि,-
र्दद्याच्छ्लेष्माऽनिलार्शोज्वरजठर-
कफे तां वटीं शङ्कराख्याम् ॥ ७२ ॥

र. सं. क, रसायनसं, र (भा), र. का, रसमारसङ्ग्रह, अर्शः

टि०—रसायनसङ्ग्रहे पित्तमाजमित्यस्य स्थाने निर्विषजमिति पठितम् । तत्र निर्विषस्य विषं ग्राह्यम् ।

भाषा—अङ्कोल और चित्रक ५–५ भाग, शुद्धगन्धक ६ भा, मरिच १० भा, शुद्धपारा ३ भा., शुद्ध वछनाग ५ भा., वकरेकापित्त ५ भा. मछलीकापित्त १० भाग लेकर सबको पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय आकके दूधकी ३ भावनाए देकर सुखाकर जभीरीकेरससे मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे कफ, वातार्श, ज्वर, उदररोग, कफप्रकोप इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ७ ॥

८ शङ्करवटी (द्वितीया)

**अङ्कुलवीजं त्रिकटुं समानमेलीयकं पारदगन्धकौ च ।
सामुद्रजं पाचितमर्कदुग्धैरग्निविशालामृतजम्भतोयैः
नेपालकेनाथ गुटी विधेया गुञ्जाप्रमाणा ज्वरवेगहन्त्री
सा शङ्करी दीप्तहुताशकर्त्री त्रिदोषहन्त्री पटुताञ्च कर्त्री**

र (भा), ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—अङ्कोलकीगिरी, त्रिकटु, एलवा, शुद्धपारा, गन्धक, आकके दूधमें पकायाहुआ समुद्रनमक सब समभागलेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय चित्रक, इन्द्रायण, वछनाग, जंभीरी और जमालगोटेके रसोंसे १–१ भावनादेकर १–१ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे ज्वर, मन्दाग्नि, सन्निपात, उदररोग इनसवको यह नष्टकरतीहै ॥ ८ ॥

९ शङ्करवटी (तृतीया)

**रसस्य भागाश्चत्वारो वलेरष्टौ तथा मताः ।
त्रयो लौहस्य नागस्य द्वावित्येकत्र मर्दयेत् ॥ ७५ ॥
भावयेत्काकमाच्याश्च चित्रकस्याऽऽर्द्रकस्य च ।
स्वरसेन जयन्त्याश्च वासाया विल्वपार्थयोः ॥ ७६ ॥**

ततो गुञ्जाद्वयमिता विदध्याद्वटिका भिषक्,
एकैकां दापयेदासामीषदुष्णेन वारिणा ॥ ७७ ॥
जयेदियं फुफ्फुसजात्रोगान्हृदयसम्भवान् ।
जीर्णज्वरं तथा घोरं प्रमेहानपि विंशतिम् ॥ ७८ ॥
कासश्वासामवातांश्च ग्रहणीमपि दुस्तराम् ।
वटी श्रीशङ्करप्रोक्ता वलपुष्टिविवर्धिनी ॥ ७९ ॥

भै. र., हृद्रोगे ।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, गन्धक ८ भा, लोहभस्म ३ भा., नागभस्म २ भा. लेकर नीलवर्णकज्जलीकर मकोय, चित्रक, अदरख, जेंती, अडूसा, वेलगिरी और अर्जुनके यथासम्भव-स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली कदुष्णपानीके-साथदेनेसे फुफ्फुस और हृदयकेरोग, भयंकर जीर्णज्वर, २०प्रकारकेप्रमेह, कास, श्वास, आमवात, दुस्तरसंग्रहणी, कृशता, निर्बलता इनसवको यह नष्टकरतीहै ॥ ९ ॥

१० शङ्खकल्पः

गन्धेशौ कर्षसम्मानौ कर्षमाना वराटिका ।
शङ्खभस्म भवेत्कर्षषट्कं मागधिका तथा ॥ ८० ॥
यमानी पिप्पलीमूलं प्रत्येकं त्रित्रिकर्षकम् ।
निम्बुधात्रीभवैर्द्रावैर्माषमात्रा वटीश्चरेत् ॥ ८१ ॥
मरिचाज्यसमालीढा ग्रहणीं चिरजां जयेत् ।
तक्रेण सेविता सा हि पाण्डूदरविनाशिनी ॥ ८२ ॥
गात्रवृद्धिं वितनुते खण्डामलकसेविता ।
करञ्जाऽग्नियमानीभिः शूलगुल्मौ व्यपोहति ॥ ८३ ॥
अग्निमान्द्यभवात्रोगान्दुर्जलोत्थान्विशेषतः ।
शङ्खकल्पो महावीर्यो नानारोगकुलान्तकः ॥ ८४ ॥

नृ.क. ग्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, कौड़ीभस्म १–१ कर्ष, शङ्खभस्म और पीपल ६–६ कर्ष, अजवाइन और पिपलामूल ३–३ कर्ष लेकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें सवका चूर्णमिलाय नीवू और आवलोंकेस्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियावनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मरिच अथवा घीकेसाथ लेनेसे वहुतदिनकीसङ्ग्रहणीको यह नष्टकरताहै । तक्रकेसाथलेनेसे पाण्डु और उदररोगका नाशकरताहै । शक्कर और आवलोंकेचूर्णकेसाथ सेवनकरनेसे शरीरको पुष्टकरताहै । करञ्ज, चित्रक और अजवाइनकेसाथलेनेसे शूल, गुल्म, मन्दाग्नि और जलदोषकेविकारोंको नष्टकरताहै ॥ १० ॥

११ शङ्खगर्भपोट्टलीरसः

प्रत्येकं दश गद्याणाः शुद्धगन्धकसूतयोः ।
विंशतिं त्रिदिनं खल्वे पिष्ट्वा कुर्याच्च कज्जलीम् ॥ ८५ ॥
पश्चादर्कस्य दुग्धेन पेषयेत्कज्जलीं त्र्यहम् ।
ततो वज्र्याश्च क्षीरेण पेषयेत्तां दिनत्रयम् ॥ ८६ ॥
आर्द्रकं चित्रकं श्वेतं निःसहायां समानयेत् ।
पेषयेत्तद्रसेनैव कज्जलीं तां दिनत्रयम् ॥ ८७ ॥
पीतानाञ्च कपर्दीनां चूर्णं गद्याणविंशतिः ।
विंशतिः शङ्खचूर्णस्य चत्वारिंशच्च मिश्रितम् ॥ ८८ ॥
त्रिदिनं मर्दयेत्खल्वे पूर्वोक्तैश्च रसैः खलु ।
त्र्यहं चार्कस्य दुग्धेन वज्रीक्षीरेण च त्र्यहम् ॥ ८९ ॥
तन्मध्ये कज्जलीं क्षिप्त्वा चित्रार्द्रकरसेन च ।
खल्वे पिष्ट्वा च तत्सर्वं वट्यो वदरसम्मिताः ॥ ९० ॥
दग्धाश्मचूर्णसंलिप्तपक्वघटस्यन्तरे पुनः ।
प्रक्षिप्य गुटिकास्ताश्च चूर्णलिप्तपिधानकम् ॥ ९१ ॥
दत्त्वा वस्त्रमृदा लिप्त्वा गर्ते हस्तप्रमाणके ।
निधाय सम्पुटं विद्वान्पुटं वन्योत्पलै र्लघु ॥ ९२ ॥
पश्चाच्चित्रकनीरेण स्वाङ्गशीतञ्च पेषयेत् ।
गुटिकाः पूर्वरीत्यैव कृत्वा देयं पुनः पुटम् ॥ ९३ ॥
दग्धानां गुटिकानाञ्च चूर्णं कृत्वा तु कुम्पके ।
क्षेप्यं नाम्ना तु निष्पन्नो रसोऽयं शङ्खपोट्टली ॥ ९४ ॥
आमज्वराऽतिसारे च ज्वरे रक्तातिसारजे ।
मलज्वरातिसारे च श्वासे कासे तथैव च ॥ ९५ ॥
श्लेष्मपित्तादिवातेषु मन्दाग्नौ ग्रहणीषु च ।
विंशतौ मेहरोगेषु जीर्णजीर्णवलेषु च ॥ ९६ ॥
द्वात्रिंशन्मरिचैः सार्कं सघृतं वल्लपञ्चकम् ।
सर्वरोगेषु दातव्यं मरीचाज्यं विना ज्वरे ॥ ९७ ॥
शालयो दधिदुग्धादि भोजनं मधुरं हितम् ।
कट्वम्लक्षारतैलाढ्यं दृष्टितोऽपि विवर्जयेत् ॥ ९८ ॥
विधिनाऽनेन कर्तव्यो रसोऽयं शङ्खपोट्टली ।
क्रमेण विनिवर्तन्ते प्रोक्ता रोगा न संशयः ॥ ९९ ॥

र. कं. ली., र शं, रसचि., नि र, भा प्र., क्षये । भा. प्र. अतीसाराऽधिकार ।

भाषा—५–५ तोलेशुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्ण-कज्जलीकर ३ दिनतक शुष्कमर्दनकर आक और थूहरकेदूध, अदरख, सफेदचित्रक और अमरवेलकेरसोंसे ३–३ दिन मर्दन-करे । फिर पीलीकौड़ी और शङ्खकाचूर्ण १०–१० तोले लेकर पूर्वोक्तद्रवोंसे तथा आक और सेहुण्डकेदूधसे ३–३ दिन मर्दनकर पूर्वोक्त कज्जलीको मिलाय चित्रक और अदरखकेरसोंसे १–२ दिन मर्दनकर जङ्गलीवेरवरावर गोलियें बनाकर पत्थरकेचूनेसे पुतीहुई हण्डीमें गोलियोंको डाल चूनापुतेहुए शरावसे ढककर ४–५ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर एकहाथभरके गर्तमें अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर चित्रककेस्वरस अथवा क्वाथसे एकदिन मर्दनकर पहिलेकीतरह गोलियावनाय पुटदेवे । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर पीसकर रखछोड़े । इसमेंसे १५ रत्ती-कीमात्रा ३२ कालीमिर्चोंकेसाथ घीमिलाकरदेनेसे आमज्वर और अतिसार, रक्तातिसारसे पैदाहुआज्वर, मलज्वराऽतिसार, श्वास, कास, कफ-पित्त और वातरोग, मन्दाग्नि, ग्रहणी, २०

प्रकारकेप्रमेह, वहुतदिनका जीर्णज्वर इनसवको यह नष्टकरताहै। ज्वरको छोड़कर सवरोगोंमें मरिच और घीकेसाथदेवे। पुराने-सफेदचावल, दही और दुग्धप्रभृति मधुरभोजनकरे। कटु, अम्ल, क्षार और तैलयुक्तपदार्थोको आखोसे भी न देखे ॥ ११ ॥

१२ शङ्खचूडरसः

रसाऽभ्रहेमभस्मानि वैक्रान्तं सर्वतुल्यकम्।
सर्वैः पञ्चगुणं शङ्खचूर्णं शुष्कं विमर्दयेत् ॥ १०० ॥
लेहयेन्मधुना मापचतुष्कं सानुपानकम्।
हिक्कां पञ्चविधां हन्ति मुमूर्षोरपि तत्क्षणात् ॥
प्राणायामेनाऽपि हिक्कां जयेदाशु विचक्षणः ॥ १०१ ॥

रसायनसं, र चं, नि र, र.सु., यो र, वै चि, चि. सा., हिक्कारोगे। रसायनसङ्ग्रहस्य द्वितीयस्थाने **शशिचूडरसेति** नाम श्वासकासाऽधिकारे। चिकित्सासारे **हिक्काश्वासारीति** नाम।

भाषा—पारा, अभ्रक और सुवर्णभस्म १-१ भाग, वैक्रान्तभस्म ३ भा, शङ्खभस्म ३० भाग लेकर इकट्ठे मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ४-४ मासे मधुकेसाथलेनेसे मुमूर्षुकीभी ५ प्रकारकी हिचकियोंको यह नष्टकरताहै। जहांपर औषध काम न करताहो वहांपर प्राणायामसे हिचकीका उपचारकरे ॥१२॥

१३ शङ्खचूर्णम्

गन्धकश्चैकभागन्तु द्विभागं सैन्धवं भवेत्।
त्रिभागं टङ्कणं चोक्तं चतुर्भागन्तु तुत्थकम् ॥ १०२ ॥
पञ्चभागं कपर्दश्च षड्भागं शङ्खमाहरेत्।
शिखिबिल्वरसेनैव शृङ्गवेररसेन च ॥ १०३ ॥
वह्निमूलरसेनैव प्रत्येकन्तु पुटत्रयम्।
तद्भस्म मारिचं चूर्णं घृतेन सह भक्षयेत् ॥ १०४ ॥
अर्शांसि गुल्मशूलानि मूत्रकृच्छ्रं सुदारुणम्।
षड्विधं चातिसारञ्च ग्रहणीञ्च चिरन्तनाम् ॥ १०५ ॥
वातजं पित्तजं चैव श्लेष्मजञ्च विशेषतः।
अजीर्णकं पाण्डुरोगं शोफोदरभगन्दरम् ॥ १०६ ॥
पुष्टिकान्तिकरं वल्यमायुष्यञ्च विशेषतः।
शङ्खचूर्णमिति ख्यातं शाण्डिल्येन च भाषितम् ॥ १०७ ॥

र क यो, अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्धगन्धक १ भाग, सैन्धव २ भा, भुनासुहागा ३ भा, तुत्थभस्म ४ भा., कौडीभस्म ५ भा, शङ्खभस्म ६ भागलेकर वारीकचूर्णकर अपामार्ग, वेल, अदरख, चित्रकमूल इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ दिन मर्दनकर टिकिया वनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटकी ३-३ आंचें देनेके वाद निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ रत्तीसे १ माशे तक मरिच और घीकेसाथदेनेसे ववासीर, गुल्म, शूल, दारुणमूत्रकृच्छ्र, ६ प्रकारकाअतिसार, पुरानीसङ्ग्रहणी, वात पित्त और कफजविकार, अजीर्ण, पाण्डुरोग, शोथ, उदररोग, भगन्दर, कृशता, कान्त्यभाव इनसवको यह नष्टकर वल और आयुको देताहै ॥ १३ ॥

१४ शङ्खद्रावरसः (प्रथमः)

अर्कस्नुहीतिलाश्वत्थचिञ्चापामार्गवह्निजम्।
गृहीत्वा भस्म तस्मात्तु वस्त्रपूतं जलं हरेत् ॥ १०८ ॥
मृद्वग्निना पचेत्तत्तु यावल्लवणतां व्रजेत्।
तत्तुल्यावेव सद्ग्राह्यौ द्वौ क्षारौ टङ्कणं तथा ॥ १०९ ॥
सामुद्रश्चाऽपि गोदन्ता कासीसश्चाऽपि सोरकम्।
द्विगुणं पञ्चलवणं शङ्खद्रावरसे तु तत् ॥ ११० ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य सप्ताहं चाम्लयोगतः।
साधितं सकलं चूर्णं वारुणीयत्रमुद्धरेत् ॥ १११ ॥
द्रुतं तेजोजलप्रख्यं स्वच्छं स्रवति तत्तदा।
सर्वान्धातून्द्रावयति वराटानपि शङ्खकान् ॥ ११२ ॥
अजीर्णस्याऽथ मन्दाग्नेः का वार्ता द्रावणे पुनः।
गुल्मप्लीहोदरं शूलमष्टधाऽपि विनाशयेत् ॥
वैद्यजीवनहेतुश्च शङ्खद्रावरसो ह्ययम् ॥ ११३ ॥

वृ यो. त, भै. र, ध., वै वि, र. का., यो त. उदररोगे।

टि०—कुत्रचिदश्वत्थस्थाने आरग्वधो दृश्यते, द्वयोरपि योगे क्षत्यभावोऽस्ति।

भाषा—आक, थूहर, तिल, पीपल, इमली, अपामार्ग और चित्रक इनसवकी अलग २ सफेदभस्म वनाकर समभागलेकर १६ गुने पानीमें स्वच्छवर्तनमें भिगोकर रखदे। चारपहरवाद इसको अच्छीतरहसे डण्डे अथवा हाथसे चलाकर रखदे। दूसरे ४ पहर गुजरनेपर पानीको ३-४ वार छानकर साफकरले। वनसके तो ब्लाटिङ्गपेपरसे छानले अथवा कच्चेसूतकी डोरी डालकर दूसरे पात्रमें नितारले फिर स्वच्छपात्रमें डालकर इसका क्षारवनावे। इसक्षारकी वरावर सज्जी, यवक्षार, सुहागा, समुद्रफेन, गोदन्तीहरिताल, कसीस और शोराखार तथा पाचों-नमक दोभाग लेकर सवका वारीकचूर्णकर काचके मजवूतपात्रमें भरकर चौगुना शङ्खद्रावनीवूकारस डालकर धूपमें रखदे और प्रतिदिन चलादियाकरे। ७ दिनकेवाद वहुतसभालकर भवकेसे इसका तेजाव निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ७ वूदसे ३० वूदतक समय अथवा रोगीकी औचिती देखकर काचकीनलीवगैरहसे इसतरह गलेमें डाले कि जीभ और दातोंमें न लगे। जितनेभी शङ्खद्रावहै सभी तीक्ष्णहोतेहैं इसलिये इनमें चौगुना पानी मिलाकर देना उचितहै इससे किसीतरहका भय नहीं रहताहै। कितनेहीलोग इसकेप्रयोगमें जीभ तथा मुहमें घी लगाकर प्रयोगकियाकरतेहैं पर उसकेकरनेकी कोई जुरूरतनहीं। इसयुक्तिसे गलेमें डालदियाजाय कि दात जिह्वाप्रभृतिमें स्पर्श न हो। इसकेदेनेसे गुल्म, प्लीह, उदररोग, ८ प्रकारकेशूल, अजीर्ण, मन्दाग्नि, येसव नष्टहोतेहैं। इसमें तमामधातु, कौड़ी और शङ्ख डालदेनेसे द्रुतहोजातेहैं अजीर्णवगैरहकी तो कथाही-क्याहै। यह वैद्योंकी आजीविकाकाहेतुहै पर इसका प्रयोग अनुभवीवैद्यके पाससे करानाचाहिये नहीं तो इसमें शतश-उपद्रवहोनेका सम्भवहै ॥ १४ ॥

१५ शङ्खद्रावरसः (द्वितीयः)

फटकीं पलमेकञ्च पलमेकञ्च सैन्धवम्।
द्विपलं यवजक्षारं द्विपलं नवसादरम्॥ ११४॥
चतुःपलं सुराक्षारं कासीसञ्च पलाऽर्द्धकम्।
डमरूयन्त्रयोगेन चुल्यां चै वदरीन्धनैः॥ ११५॥
साधयेल्लाघवाच्चूर्णं शङ्खद्रावरसः परः।
गुल्मादिसर्वरोगेषु देयः सर्वसुखप्रदः॥ ११६॥

वै.वि.,वै.चि.,गुल्मादौ। वै चि.एकद्विवस्तुषु प्रमाणभेदोऽस्ति सोऽकिञ्चित्कर।

भाषा—फिटकड़ी और सेंधानमक १–१ पल, यवक्षार और नवसादर २–२ पल, कल्मीशोरा ४ पल, कसीस २ कर्ष लेकर सबको कड़ेधूपमें सुखाकर जवकुटचूर्णकर भवकेसे तेज़ाव निकाले। इसको प्रथम शङ्खद्रावकीतरह देनेसे यकृत्, प्लीहा, वातगुल्म वगैरह समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै॥ १५॥

१६ शङ्खद्रावरसः (तृतीयः)

स्फटिका नवसारश्च सुश्वेता च सुवर्च्चिका।
पृथग्दशपलोन्मानं गन्धकः पिचुसम्मितः॥ ११७॥
चूर्णयित्वा क्षिपेद्भाण्डे मृन्मये मूर्ध्नि लेपिते।
तन्मुखं मुद्रयेत्सम्यङ् मृद्भाण्डेनाऽपरेण च॥ ११८॥
सरन्ध्रोदरकेणैव चूल्यां तिर्यक् च धारयेत्।
अधः प्रज्वालयेद्वह्निं हठाद्यावद्रसः स्रवेत्॥ ११९॥
शाणैकं सेवयेद्यस्तु दन्तस्पर्शविवर्जितः।
गुल्मोदरयकृत्प्लीहग्रन्थियक्ष्मादिशूलनुत्॥ १२०॥
बलपुष्टिप्रदो ह्येष भुक्तञ्च जारयेत्क्षणात्।
विलोक्यतां जनैरेतद्रसमाहात्म्यमद्भुतम्॥
कपर्दकम्बुलोहानि क्षिप्तान्यस्मिन् गलन्ति हि॥१२१॥

र प्र, उदररोगे।

भाषा—फटकड़ी, नवसादर, सफेदसज्जी १०–१० पल, शुद्धगन्धक १ कर्ष लेकर इनका जवकुटचूर्णकर भवके अथवा डमरूयन्त्रसे तेज़ाव निकाले। इसमें आंच कड़ी होनीचाहिये और पसीजेहुए क्षार न चाहियें। चौगुनापानी मिलाकर इसकी ४ मासेकीमात्रा दांतोंको बचाकर पीनेसे गुल्म, उदर, यकृत्, प्लीह, गाठ, राजयक्ष्म, शूल इनसबको यह नष्टकरताहै। खायेहुएको तत्क्षण जीर्णकरदेताहै। इसमें कौड़ी और शङ्ख वगैरह डालनेसे गलजातेहैं॥ १६॥

१७ शङ्खद्रावरसः (चतुर्थः)

सामुद्रं यवजः सूर्यः पर्पटी नवसादरः।
फटकी सिन्धुसौवर्चौ प्रत्येकं पलपञ्चकम्॥ १२२॥
कासीसं द्विपलं ग्राह्यं सर्वमेकत्र योजयेत्।
वारुणीयन्त्रयोगेन चूल्यां वै खादिरेन्धनैः॥ १२३॥
साधयेल्लाघवाच्चूर्णं शङ्खद्रावरसं परम्।
गुल्मादिसर्वरोगेषु देयः सर्वसुखप्रदः॥ १२४॥

वै वि., गुल्मे।

भाषा—समुद्रफेन, यवक्षार, शोरा, रेह, नोसादर, फटकड़ी, सेन्धव, सञ्चल ५–५ पल, कसीस २ पल लेकर प्रथम शङ्खद्रावकीतरह भवके अथवा डमरूयन्त्रसे तेज़ाव निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे चौगुनापानीमिलाय दन्तस्पर्शको बचाकर लेनेसे गुल्मादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै॥ १७॥

१८ शङ्खद्रावरसः (पञ्चमः)

प्रत्येकं पञ्चलवणं वाणं तुत्थञ्च कर्परम्।
स्फटिका कुडवार्द्धञ्च तदर्द्धं नवसादरम्॥ १२५॥
कासीसं टङ्कणं स्वर्जी यवक्षारं तदर्द्धकम्।
कुडवान्पञ्च भूसारात्सर्वमेकत्र योजयेत्॥ १२६॥
घृष्ट्वा तु मर्दितं सम्यक्काचकूप्यां विनिःक्षिपेत्।
तन्मुखे कूपिकां दद्यात्स्थापयेन्मालिकोपरि॥ १२७॥
यामार्द्धं ज्वालयेदग्निं रसेन्द्रो भवति ध्रुवम्।
शङ्खद्रावमिदं ख्यातं शङ्खद्रावमथो रसम्॥ १२८॥
सेवितं कुरुते देहे तुष्टिं पुष्टिं बलं महत्।
सर्वांश्छूलविकारांश्च निहन्यात्पञ्चगुल्मकम्॥ १२९॥
प्रमेहान्विंशतिं हन्याज्जठराग्निप्रदीपनम्।
सर्वरोगप्रणाशार्थमश्विनीदेवनिर्मितम्॥ १३०॥

वा, शूलेगुल्मे च।

भाषा—पाचोंनमक ५–५ पल, तुत्थ, खपरिया और फटकड़ी २–२ पल, नवसादर १ पल, कसीस, सुहागा, सज्जी और यवक्षार २–२ कर्ष, शोरा २० पल लेकर सबको कड़ीधूपमें सुखाकर बारीकचूर्णकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें डालकर दूसरीशीशीकेसाथ डमरूयन्त्रबनाय चूल्हेपर तिरछीरखकर आचदे। नीचेकी शीशीको पानीमें डुबाए रक्खे। आधेपहरतक अग्निदेनेसे तमाम तेज़ाव तिरछीशीशीमें चलाआवेगा। शीशीके अभावमें घड़ेका डमरूबनाकर कामलेवे। इसको प्रथम शङ्खद्रावकीतरह सेवन करनेसे तमामशूल, गुल्म, प्रमेह और अजीर्ण नष्टहोकर अग्नि प्रदीप्तहोताहै। यह शरीरको पुष्टकर बलको बढाताहै॥ १८॥

१९ शङ्खद्रावरसः (षष्ठः)

क्षाराणां विंशतिः प्रोक्ता लवणानाञ्च पञ्चकम्।
पर्पटी नवसारश्च क्षारत्रितयटङ्कणम्॥ १३१॥
तुत्थत्रयं शिलां तालं गन्धकं स्वर्जिकाख्यकम्।
पाषाणजतु कासीसं मूत्रवर्गं तथा क्षिपेत्॥ १३२॥
भूक्षारं गृहधूमाख्यं पात्रे संस्थाप्य तत्समम्।
अम्लवर्गैस्तथा मासं भावयेच्च मुहुर्मुहुः॥ १३३॥
तेजोयन्त्रविधानेन पाककर्मविचक्षणः।
पातयेन्मूत्रवर्णञ्च तोयाभं शङ्खगालकम्॥ १३४॥
भस्म पारदसंयुक्तं वातरोगेषु योजयेत्।
गुल्मानां पञ्चकं हन्ति ह्युदराणां तथाष्टकम्॥ १३५॥
शीतज्वरं पुराणञ्च शोथं सर्वाङ्गमारुतम्।

प्रमेहान्विंशतिं हन्ति मूत्राघातानशेषतः॥
हितश्च गजवाजीनां पशूनां मृगपक्षिणाम्॥ १३६॥
वा, सर्वरोगे।

भाषा—तीक्ष्णप्रकृति चित्रकप्रभृति २० वृक्षोंकेक्षार, पांचों-नमक, रेह, नवसादर, जव-मूली और चनेकाक्षार, सुहागा, तूतिया, दानेफिरङ्ग, जंगाल, मैनसिल, हरिताल, गन्धक, सज्जी, शिलाजीत, कसीस, आठमूत्रोंकाक्षार, शोरा, गृहधूम येसव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर काचकेपात्रमें डालकर वरावरका अम्लद्रव डालकर धूपमें रक्खे। प्रतिदिन चलातारहे, द्रवसूखनेपर दूसरा डालताजाय। एकमहीनेवाद भवके अथवा डमरूयन्त्रसे इसका तेज़ाव निकाले, वह मूत्रवर्णका होगा। इसमेंसे प्रथम शङ्खद्रावकीतरह पारदभस्मकेसाथलेनेसे समस्तवातरोग, पाचों-गुल्म, आठों उदररोग, शीतज्वर, पुरानाशोथ, सर्वाङ्गवातव्याधि २० प्रकारकेंप्रमेह, समस्तमूत्राघात इनसवको यह नष्टकरताहै। उचितमात्रामें देनेसे, हाथी, घोड़ा, पशु, मृग और पक्षियोंके तमामरोगोंको यह नष्टकरताहै॥ १९॥

२० शङ्खद्रावरसः (सप्तमः)

क्षारा द्वादश सम्प्रोक्ता लवणानाञ्च पञ्चकम।
कासीसं टङ्कणं तुत्थं गन्धकं स्वर्जिकाख्यकम॥१३७॥
एतानि समभागानि प्रत्येकञ्च पृथक् पृथक्।
स्फटिकानवसारौ द्वौ तत्समं योजयेद्बुधः॥ १३८॥
एकीकृत्य तु तत्सर्वं पात्रे संस्थाप्य यत्नतः।
अम्लवर्गं मूत्रवर्गं सर्वमेकत्र लोडयेत्॥ १३९॥
सप्ताहं भावयेदेतत्तेजोयन्त्रे विनिःक्षिपेत्।
दीप्ताग्निना पचेद्यामं पाकसिद्धिविचक्षणः॥ १४०॥
शङ्खद्रावो द्रवत्येवं सर्वरोगेषु योजयेत।
हन्त्यष्टादश कुष्ठानि लेपमात्रेण सत्वरम्॥ १४१॥
सर्वान्दुष्टव्रणान्घोरान्स्पर्शमात्राद्विनिर्हरेत।
अष्टोदराणि गुल्मानि शूलानि विविधानि च॥१४२॥
माषप्रमाणं सेवेत सप्ताहञ्च निवारयेत।
अनुपानविशेषेण सर्वरोगनिवर्हणम॥
महादेवीप्रसादेन भैरवेण विनिर्मितः॥ १४३॥
वा, सर्वरोगेषु।

भाषा—तीक्ष्णप्रकृतिक १२ वृक्षोंकेक्षार, पाचोंनमक, कसीस, सुहागा, तुत्थ, गन्धक, सज्जी येसव समभाग, फटकड़ी और नोसादर सवकी वरावर लेकर वारीकचूर्णकर काचके-वर्तनमें डाल विजोरावगैरह अम्लवर्ग और मूत्रवर्ग जितना मिलसके उतना डाले। धूपमें रखकर प्रतिदिन चलातारहे, द्रव सुखनेपर दूसरा डालताजाय। सातदिनवाद डमरूयन्त्र अथवा भवकेसे एकपहरकी कड़ी आंचदेकर तेजाव निकाले। इसमेंसे प्रथमशङ्खद्रावकीतरह लेनेसे आठप्रकारकेगुल्म और नाना-प्रकारकेशूल ७ दिनमें नष्टहोतेहैं। १८ प्रकारकेकुष्ठोंको लेप-करनेसे नष्टकरताहै॥ २०॥

२१ शङ्खद्रावरसः (अष्टमः)

पारदं दरदं तालं कासीसं रोमकं विषम्।
तुत्थद्वयं शिलां तालं स्फटिकां नवसादरम्॥ १४४॥
क्षारद्वादशकं ख्यातं सौभाग्यं पटुपञ्चकम्।
सूक्ष्मचूर्णं ततः कृत्वा मृन्मये पात्रके क्षिपेत्॥ १४५॥
जम्बीरफलसारेण भावयेत्सप्तवारकम।
तेजोयन्त्रविधानेन पातयेत्पाकवित्तमः॥ १४६॥
पीतवर्णं द्रावकं तच्छङ्खशुक्तिवराटकम।
क्षिप्रं भवति पानीयं विचित्रगुणकारकम॥ १४७॥
द्विकालं माषमात्रञ्च सेवयेद्बुद्धिमान्नरः।
लाजाचूर्णं निष्कयुग्ममनुपाने प्रदापयेत्॥ १४८॥
अष्टावुदरजात्रोगान्गुल्मानां पञ्चकञ्जयेत्।
अर्शांसि षट्प्रकाराणि ग्रन्थिशूलादिमारुतान॥१४९॥
आध्मानञ्चाऽग्निमान्द्यञ्च सर्वं सन्धिव्रणं हरेत।
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रञ्च मेहान्विंशतिसङ्ख्यकान्॥ १५०॥
श्वासकासगलग्रन्थीन्विसर्पं गजचर्मकान्।
कृमिरोगांश्चर्मरोगान्नखकेशसमुद्भवान्॥ १५१॥
अन्नद्वेषमजीर्णञ्च हिक्कासर्वाङ्गशोफजान्।
तिमिरं दद्रुकण्डू च नाशयेन्नाऽत्र संशयः॥ १५२॥
वा, सर्वरोगे।

भाषा—पारा, शिगरिफ, हरिताल, कसीस, कन्वारदेशका-कालानमक, वछनाग, तूतिया, जङ्गाल, मैनसिल, हरिताल, फटकडी, नोसादर, १२ क्षार, सुहागा, पाचोंनमक सवसम-भागलेकर वारीकचूर्णकर काचकेपात्रमें डालकर जंभीरीकेरसकी ७ भावनाएं देकर भवके अथवा डमरूयत्रसे तेजाव निकाले। यह पीलेरङ्गका द्रव निकलेगा। इसमें शङ्ख, सीप अथवा कौड़ी डालतेही गलजायगी। इसमेंसे प्रथमशङ्खद्रावकीतरह सुवहशाम दोनोंसमय सेवनकरके आधातोला लाजचूर्णलेवे। इससे ८ प्रका-रके उदररोग, ५ प्रकारकेगुल्म, ६ प्रकारकेववासीर, ग्रन्थि, शूल, वातवेदना, आध्मान, मन्दाग्नि, सवप्रकारकी सन्धियोंके व्रण, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, २० प्रकारकेप्रमेह, श्वास, कास, गले-कीगाठ, विसर्प, चर्मदल, क्रिमिरोग, नख और केशोंकेरोग, अन्नद्वेष, अजीर्ण, हिचकी, सर्वाङ्गशोथ, तिमिर, दाद, खाज इनसवको यह नष्टकरताहै॥ २१॥

२२ शङ्खद्रावरसः (महान्) (नवमः)

स्नुह्यर्कचिञ्चाऽश्वत्थाश्च ह्यपामार्गेण पञ्चमः।
पृथग्भस्मजलं नीत्वा ह्युद्धृत्य लवणानि च॥ १५३॥
टङ्कणञ्च यवक्षारं स्वर्जी लवणपञ्चकम्।
रामठं तालकञ्चैव सौवीरं नवसादरम॥ १५४
सोमलक्षारगोदन्त्यौ ताप्यं गन्धरसौ तथा।
विषं समुद्रफेनञ्च शोरकं स्फटिका तथा॥ १५५॥
शङ्खचूर्णं मध्यनाभि चूर्णं पाषाणकोद्भवम।
मनःशिला च कासीसं समभागञ्च कारयेत॥१५६॥

अम्लवेतसजैर्भाव्यं काचकूप्यां क्षिपेत्ततः ।
अम्लद्रवान्वहन्द्द्यादुष्णस्थाने विधारयेत् ॥ १५७ ॥
वस्त्राच्छादितस्तत्र यावत्सप्तदिनावधिम् ।
मन्दश्चाग्निः प्रदातव्यो वारुणीयन्त्रमुद्धरेत् ॥ १५८ ॥
काचकूप्यां जले धार्यं रक्षयेद्यत्नतः सुधीः ।
गुञ्जैकं पर्णपत्रेण लिप्त्वा भक्ष्यं दिनेदिने ॥ १५९ ॥
श्वासं कासं क्षयं जीर्णं ग्रहणीश्चात्यरोचकम् ।
उदरं प्लीहगुल्मञ्च ह्यर्शांसि नाशयेत्तदा ॥ १६० ॥
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रञ्च ह्यस्थिशूलं विनाशयेत् ।
आमवातं महावातं पक्षावातं धनुस्तथा ॥१६१ ॥
उदरामयघ्नमामघ्नं कृमिकर्मो विनाशयेत ।
मन्दकादीन्कृमीन्सर्वान्नाशयेन्नाऽत्र संशयः ॥ १६२ ॥
भुक्त्वा च कण्ठपर्यन्तं गुञ्जैकन्तु रसं लिहेत् ।
तत्क्षणात्कारयेद्भस्म तूलराशिं यथाऽनलः ॥ १६३ ॥
यामार्द्धाद् द्रावयत्येवं शङ्खशुक्तिवराटिकाः ।
महदाश्चर्यकर्ता च तत्क्षणाल्लोककौतुकम् ॥ १६४ ॥
पक्वामिषं क्षिपेन्मध्ये घर्मे धारयते यदा ।
यमार्द्धेन जलप्रायं भवत्येव न संशयः ॥ १६५ ॥
योगिन्यै भैरवायाऽथ वीरेभ्यश्च वलीन्हरेत् ।
पश्चाद्यत्नश्च कर्तव्य इत्याज्ञा पारमेश्वरी ॥ १६६ ॥
माषान्नं दधिभक्तञ्च दीपं वेदमुखं सुधीः ।
एवञ्च भैरवे दद्याद्योगिनीभ्योऽथ चामिषम् ॥ १६७ ॥
कार्पासास्थि पीतकृष्णं सिन्दूरं कज्जलं तथा ।
दधिभक्तं धूपदीपं दद्याच्चतुष्पथे निशि ॥
अन्यथा नैव सिद्धं स्यात्तज्जलं लभ्यते क्वचित ॥१६८॥

(अथमन्त्रः—ॐ ह्रीं श्रीं ह्रौं हंस क्षमलवरयूँ असिताङ्गादि इहागच्छ इहागच्छ इमं दधिभक्तमाषान्नवलि दह दह ममशान्ति रक्षा कुरु कुरु स्वाहा । ॐ क्रां क्रीं क्रूँ ह्रँ हूँ छरलवससहया ब्रह्मादित्यादि इहागच्छ इहागच्छ इमं मत्स्यमाससिन्दूरकज्जलवलि गृण्हगृण्ह मम शान्ति रक्षा कुरु कुरु स्वाहा । ॐ ह्रीं श्रीं क्रौं वटुकहनुकादिवीर इहागच्छ इहागच्छ दधिभक्तवलिं गृण्हगृण्ह ममशान्ति रक्षा कुरु कुरु स्वाहा इतिवलिदानम् ।)

अन्यथा ह्रियते तेजो रसो भवति निष्फलः ।
तेनेदं वलिदानेन साफल्यं भवति ध्रुवम् ॥ १६९ ॥
शङ्खद्रावो रसो नाम्ना शम्भुदेवेन भाषितः ।
गुह्याद्गुह्यतरं गोप्यं पित्रा पुत्रे न कथ्यते ॥ १७० ॥

(अथौषधभक्षणमन्त्रः—ॐ ह्रीं सौ ह्रीं स स ॐ नमो भगवते वासुदेवाय धन्वन्तरये अमृतहस्ताय सर्वामयनाशाय त्रैलोक्यनाथाय परोपगणनाय हरये अमृताय स्वाहा ।)

रससागर , सर्वरोगे ।

टि०—भै र , वृ यो त , चि क ,रसायनस., एषु ग्रन्थेषु सौवीरस्थाने लवङ्गजातीफले अधिकतया प्रक्षिप्ते, नैतावता विशेषेण पाठान्तरतामाप्तु योग्यताऽस्ति । शङ्खद्रावे लवङ्गजातीफलप्रक्षेपेण विशेषविशेषानुदयात् । रसायनसंग्रहे अमृतार्णव इति नाम ।

भाषा—थूहर, आक, इमली, पीपल, अपामार्ग इनकी सफेदराखमेंसे प्रथमशङ्खद्रावकीतरह निकालेहुएक्षार, सुहागा, यवक्षार, सज्जी, पांचोंनमक, हींग, हरिताल, सुरमा, नवसादर, सोमल, गोदन्तीहरिताल, सोनामाखी, गन्धक, पारा, वच्छनाग, समुद्रफेन, शोरा, फटकड़ी, शङ्ख, शङ्खनाभि, चूनेकापत्थर, मैनसिल, कसीस येसव समभागलेकर वारीकचूर्णकर शङ्खद्रावनीबूकेरसमें मिलाकर कांचकी शीशीमें भरदे और जहां हरवक्त अग्निजलतीहो उसके सहारेपर रखदे जिसमें कि द्रवका हरवक्त शोषण होतारहे । एकद्रवसूखनेपर फिर दूसरीजातिका अम्लद्रव डालकर सुखावे । ऐसे ७ दिन पूरेहोनेपर भवके अथवा काचके डमरूयन्त्रसे तेज़ाव निकाले । इसमेंसे प्रथमशङ्खद्रावकीतरह लेवे, अथवा एकरत्ती पकेपानपर लेपदेकर भक्षणकरावे । इससे कास, श्वास, क्षय, अजीर्ण, ग्रहणी, अरुचि, उदररोग, प्लीहा, गुल्म, ववासीर, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, अस्थिशूल, आमवात, महावातव्याधि, पक्षाघात, धनुर्वात, पेटकी तमामव्याधियां, आम, क्रिमि, कद्दूदी इनसबको यह नष्टकरताहै । गलेतक गरिष्ठभोजनकरके एकरत्ती इसरसको लेनेसे तूलराशिको अग्निकीतरह भोजनको पचादेताहै । आधेपहरमें शङ्ख, सीप और कौड़ियोंको गलादेताहै । पकाहुआमास इसमें डालकरधूपमें रखनेसे आधेपहरमें जलकेसदृश द्रवहोजाताहै । इसके वनानेसे पहिले तथा पीछे योगिनी, भैरव और वीरोंको वलि देनीचाहिये । वलिमें उड़दके वड़ेवगैरह, दही—भात, चारवत्तीका दीपक यह भैरवको वलि देवे । योगिनियोंको मांसवलि दे । विनौले, पीला और कालासिन्दूर, कज्जल, दही, भात, धूप, दीप, इनकी वलि रातमें चौराहेपर दे अन्यथा सिद्धि नहीं होती । वलिदानमन्त्र ऊपर लिखेप्रमाण समझना ॥ २२ ॥

२३ शङ्खद्रावरसः (लघुः) (दशमः)

सोमलश्च यवक्षारं स्वर्जिका टङ्कणं स्फटी ।
समश्च पञ्चलवणं सोरा च नवसादरम् ॥ १७१ ॥
काचकूप्यां ततः क्षिप्त्वा वारुणीयन्त्रमुद्धरेत् ।
यामार्द्धे द्रावयत्येवं शङ्खशुक्तिवराटिकाः ॥ १७२ ॥
अर्शांसि नाशयेत्तद्वन्मूत्रकृच्छ्राश्मरीशिलाः ।
उदराऽष्टविधं हन्याद्गुल्मप्लीहोदरामयम् ॥ १७३ ॥
अजीर्णं नाशयेच्छीघ्रं ग्रहणीञ्च विसूचिकाम् ।
भुक्तशेषं न भोक्तव्यं माषमात्रं रसोत्तमः ॥ १७४ ॥
क्षणमात्राद्भवेद्भस्म पुनर्भोजनमिच्छति ।
प्रत्यहं भोजनान्ते च संसेव्यश्च रसोत्तमः ॥ १७५ ॥
न रुग्भयश्च भयं क्वापि सत्यंसत्यं मयोदितम् ।
न देयं यस्यकस्याऽपि सदा गोप्यश्च कारयेत् ॥
रसः शङ्खद्रवो नाम्ना वैद्यानामुपकारकः ॥ १७६ ॥

रससागर, उदररोगाऽधिकारे ।

भाषा—सोमल, यवक्षार, सज्जी, सुहागा, फिटकड़ी, पांचोंनमक, शोरा और नवसादर समभागलेकर सबका वारीकचूर्णकर

डमरूयन्त्र अथवा भवकेसे तेज़ाव निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे प्रथमशङ्खद्रावकीतरह सेवनकरनेसे ववासीर, मूत्रकृच्छ्र, पथरी, रेती, ८ उदररोग, गुल्म, प्लीहा, अजीर्ण, ग्रहणी, विसूचिका इनसवको यह नष्टकरताहै । उच्छिष्टरहेहुएको न पीवे । पानी- विना लेनाहोतो पानवगेरहमें एकवूंद डालकर सेवनकरनाचाहिये । भोजनकरनेकेवाद लेनेसे तत्कालमें भूखलगतीहै । नियमपूर्वक इसकेसेवनकरनेवालेको किसीभीव्याधिसे भयनहींरहता ॥२३॥

२४ शङ्खद्रावरसः (एकादशः)

अर्कस्नुक्सातलाचिञ्चापलाशकदलीतिलाः ।
अपामार्गो मोक्षकश्च कपर्दः शङ्ख एव च ॥ १७७ ॥
एतेषां भूतिजक्षारः पारदः पटुपञ्चकम् ।
पञ्च क्षाराः समं सर्वे त्रिभागो गन्धकः स्मृतः॥१७८॥
भूरसा चैव सोरा च कासीसं नवसादरम् ।
एतच्चतुष्टयं सर्वैरौपधैस्तुल्यभागिकम् ॥ १७९ ॥
सर्वेषां कज्जलीं कृत्वा निम्बुनीरेण मर्दयेत् ।
प्रदद्यान्नलिकायन्त्रे वह्निं यामचतुष्टयम् ॥ १८० ॥
दत्त्वा द्रवं तु गृह्णीयात्सूचिकाद्रावकारकम् ।
एकवल्लं द्विवल्लं वा दद्यान्नलिकया रसम् ॥ १८१ ॥
गुल्मार्शःप्लीहमुख्यानां रोगाणामन्तकं परम् ।
शङ्खद्रावरसो ह्येष कृतकर्मा न संशयः ॥ १८२ ॥

रस स०,र.सि.,गुल्माऽधिकारे ।

भाषा—आक, थूहर, अङ्गुलियाथूहर, इमली, पलाश, केला, तिल, अपामार्ग, मोखा, कौड़ी, शङ्ख इनसवकीराखका- क्षार, पारा, पांचोंनमक, पांचोंक्षार सव १-१ भाग, गन्धक ३ भाग, फटकड़ी, शोरा, कसीस और नोसादर येचारों सव दवाओंके वरावर लेकर सवकीकज्जली वनाय नीबूकेरससे मर्दनकर नलिकायन्त्रसे ४ पहरकीअग्निदेकर तेज़ाव निकाले । इसमें सूई टालनेसे गलजातीहै । इसमेंसे ३ रत्तीसे ६ रत्तीतक पानीमें मिलाय कांचकीनलीसे मुहमें डाले । ऐसे दोनोंसमय- लेनेसे गुल्म, ववासीर, प्लीहा वगैरह उदररोग, अजीर्ण और वातव्याधियोंको यह नष्टकरताहै ॥ २४ ॥

२५ शङ्खद्रावरसः (द्वादश)

योगिनीभैरवाभ्यां्च वलिमादौ प्रदापयेत् ।
पश्चाद्यन्त्रञ्च कर्तव्यमेवाह परमेश्वरी ॥ १८३ ॥
रसः शङ्खद्रवो नाम शम्भुदेवेन भाषितः ।
गुह्याद्गुह्यतमं गुह्यमिदानीं कथ्यते मया ॥ १८४ ॥
शङ्खचूर्णं यवक्षारं स्वर्जिक्षारं सटङ्कणम् ।
समञ्च पञ्चलवणं स्फटिका नरसारकः ॥ १८५ ॥
काचकूप्यां ततः क्षिप्त्वा वारुणीयन्त्रमुद्धरेत् ।
यामार्द्धं द्रावयत्येष शङ्खशुक्तिवराटकान् ॥ १८६ ॥
अर्शांसि नाशयेत पट्ट् च मूत्रकृच्छ्राश्मरीस्तथा ।
उदराण्यष्टसङ्ख्यानि गुल्मप्लीहोदराणि च ॥ १८७ ॥
अजीर्णं नाशयेच्छीघ्रं ग्रहणीञ्च विसूचिकाम् ।
भुक्तशेषे च भोक्तव्यो मापमात्रो रसोत्तमः ॥ १८८ ॥
क्षणमात्राद्भवेद्भस्म पुनर्भोजनमिच्छति ।
प्रत्यहं भोजनान्ते च संसेव्योऽयं रसोत्तमः ॥ १८९ ॥
न रुजायां भयं काऽपि सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ।
न देयं यस्यकस्याऽपि सदा गोप्यञ्च कारयेत ॥
रसः शङ्खद्रवो नाम वैद्यानामुपकारकः ॥ १९० ॥

भै.र.,ध.,र.त.,उदराऽधिकारे ।

भाषा—योगिनी और भैरवोंको वलिदेकर शङ्ख, यवक्षार, सज्जी, सुहागा, पांचोंनमक, फटकड़ी, नोसादर, सव समभाग- लेकर वारीकचूर्णकर नलिकायन्त्रसे तेज़ाव निकाले । इसमेंसे १ माशेसे २ माशेतक पानीमें मिलाकर देनेसे ६ प्रकारकी ववा- सीर, मूत्रकृच्छ्र, पथरी, ८ प्रकारके उदररोग, गुल्म, प्लीहा, अजीर्ण, ग्रहणी, हैजा इनसवको यह नष्टकरताहै । गलेतकखाकर इसकोलेनेसे पूर्वकाखायाहुआ पाचनहोकर फिरसे भोजनकी इच्छा होजातीहै । मन्दाग्निवालोंको भोजनकरनेकेवाद इसकासेवन करना चाहिये ॥ २५

२६ शङ्खद्रावरसः (महदादिः) १३

शुद्धं काञ्चनमाक्षिकं मृदुतरं कांस्याभिधं तत्तथा,
सिन्धूत्थं विमलं रसाञ्जनवरं फेनः स्रवन्तीपतेः ।
क्षारौ स्वर्जिकसाम्भलौ सुविमलौ
भागास्त्वमीषां समाः,
सप्तानां सदृशन्तु टङ्कणमिहाऽ-
स्यार्द्धो नृसारः सितः ॥ १९१ ॥
तत्तुल्या स्फटिकारिका त्रिसदृशः शुक्रो यवस्याग्रजः,
कासीसत्रितयं यवाग्रजसमं सञ्चूर्ण्य सर्वं न्यसेत् ।
पात्रे काचमये मृदाम्बरवृते यन्त्रे वकाख्ये भिषक्,
तापेन क्रमवर्द्धिना त्ववहितोऽमीषां रसं पातयेत् ॥
यो द्राग्भस्म वराटिकां प्रकुरुते सोऽयं महाद्रावकः,
को वक्तुं प्रभवेदमुष्य नितरां सम्यग्गुणान्भूतले ।
एतद्वल्लचतुष्टयं सह गिलेच्छुण्ठ्या लवङ्गेन वा,
तत्पश्चात्परिवासितं वहुगुणं ताम्वूलकं भक्षयेत् १९३
प्रासङ्ग्यात्कथयामि तांश्छृणु
गुणानस्यैव कांश्चित्परान्,
निःशेषं विनिहन्त्यसौ
चिरभवानष्टोदराणि ध्रुवम् ।
गुल्मं पाण्डुहलीमकं सुकठिना
मष्ठीलिकां कामलां,
मन्दाग्निं विपमाग्नितां
वहुविधांश्छोथांश्च शूलानपि ॥ १९४ ॥
सर्वार्शांसि भगन्दरान्क्रिमिगदान्पञ्चैव कासांस्तथा,
हिक्काश्लीपदकोपवृद्धिमरुचिं व्याधिं महादारुणम् ।
नव्यं वा चिरजं ज्वरं वहुविधं छर्दिं क्रिमींन्विशतिं ।
यक्ष्माणं चिरजामवातपिडिका वीसर्पविस्फोटकौ ॥

उन्मादं स्वरभेदमर्बुदमपि स्वेदञ्च हस्तपाणिजं,
जिह्वास्तम्भगलग्रहं चिरभवं ग्रीवारुजामुल्वणाम् ।
नासाकर्णशिरोऽक्षिवक्त्रजगदान्क्षुद्रामयांश्चापरान्,
हन्यादेव चिरोत्थितान्बहुविधानन्यांश्च रोगानपि१९६
एकः स्यादपरो हि टङ्कणमुखै र्द्रवैः परैः सप्तकैः,
रन्यस्तु स्फटिकारिटङ्कणयवक्षाराग्रकासीसकैः,
जानीयाद्गुरुतो विभागमनयो र्यन्त्रादिकञ्चाऽपरं,
निर्दिष्टास्त्रय एव भेषजवराः स्वल्पो महान्मध्यमः ॥
टङ्कणादिकासीसान्तैः सप्तद्रव्यैर्मध्यमः,
स्फटिकारिकासीसान्तैश्चतुर्द्रव्यैः स्वल्पः,
स्वर्णमाक्षिकादिकासीसत्रितयान्तै र्महान् ॥ १९७ ॥

भै.र ,उदराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध सुवर्णमाक्षिक और कास्यमाक्षिक, काचनमक, रौप्यमाक्षिक, रसौत, समुद्रफेन, सज्जी और साभरनमक १–१ भाग, सुहागा ८ भा., सफेद नोसादर तथा फिटकडी ४–४ भा , सफेद यवक्षार १६ भाग, शुद्धकसीस, हरिताल और मैनसिल येतीनोंमिलकर १६ भाग लेकर सबका वारीकचूर्णकर कपड़मिट्टी दियेहुए काचके वर्तनमें रखकर नली अथवा डमरूयन्त्रसे बहुत-सावधानीकेसाथ क्रमाग्नि जलाकर तेजाव निकाले । इसमें शङ्ख वगैरह सब गलजातेहैं । इसकी १२ रत्ती सोंठ अथवा लवङ्गकी-गोलीमें कवलितकर निगलवादे फिर सुवासित पान खिलावे । इसकेसेवनसे बहुतदिनकेपुराने आठो उदररोग, गुल्म, पाण्डु, हलीमक, कठिनअष्ठीला, कामला, मन्दाग्नि, विषमाग्नि, नाना-तरहकेशोथ, शूल, सवप्रकारके ववासीर, भगन्दर, कृमि, पाच-प्रकारके कास, हिचकी, फीलपांव, अण्डवृद्धि, अरुचि, नया अथवा पुराना ज्वर, वमन, २० प्रकारके क्रिमि, राजयक्ष्म, पुराना आमवात, पिडका, विसर्प, विस्फोट, उन्माद, स्वरभेद, अर्बुद, हाथपैरोंकापसीना, जिह्वास्तम्भ, गलग्रह, ग्रीवाकीपीडा, नाक, कान, शिर, आख, मुंह इनके समस्तरोग और क्षुद्र-रोगोंको यह नष्टकरताहै । टङ्कणादि कासीसान्त ७ द्रव्योंसे मध्यम, स्फटिकादि कासीसान्त ४ द्रव्योंसे स्वल्प और स्वर्ण माक्षिकादि कासीसान्तद्रव्योंसे महान्, इसतरह इसके विभाग-करनेसे ३ प्रकारकेशङ्खद्राव तैयारहोतेहैं ॥ २६ ॥

२७ शङ्खद्रावरसः (चतुर्दशः)

वृषश्चित्रमपामार्गं चिञ्चा कूष्माण्डनाडिका ।
स्नुही तालस्य पुष्पञ्च वर्षाभूर्वेतसं तथा ॥ १९८ ॥
एतेषां क्षारमाहृत्य लिम्पाकस्वरसेन च ।
क्षालयित्वा क्षारतोयं वस्त्रपूतञ्च कारयेत् ॥ १९९ ॥
चण्डातपेन संशोष्य ग्राह्यं तद्लवणोचितम् ।
एतस्य द्विपलं ग्राह्यं यवक्षारपलद्वयम् ॥ २०० ॥
स्फटिकारिपलञ्चैव नरसारं पलन्तथा ।
पलार्द्धं सैन्धवं ग्राह्यं टङ्कणं तोलकद्वयम् ॥ २०१ ॥
कासीसं तोलकञ्चैव मुद्राशङ्खञ्च तोलकम् ।
दारुमोचं कर्षकञ्च तोलं समुद्रफेनकम् ॥ २०२ ॥
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य वकयन्त्रेण साधयेत् ।
महाद्रावकमेतद्धि योज्यञ्च रसजारणे ॥
हन्ति गुल्मादिकात्रोगान्यकृत्प्लीहोदराणि च ॥२०३॥

भै र , ध , उदररोगाऽधिकारे ।

भाषा—अडूसा, चित्रक, अपामार्ग, इमली, कोहळेकीलता, थूहर, ताड़केफूल, इटसिट, वेत इनसवकीराखको अमिलतासके अङ्गस्वरसमें भिगोकर कपड़छानकर कड़ीधूपमें रखदे । इसके ऊपर जो क्षारकी पपड़िया वंधजायं उन्हें मलाईकीतरह उतारले । ६–७ दिनमें तमामक्षार पपड़ीहोकर निकल आताहै । यह क्षार और यवक्षार २–२ पल, फटकड़ी और नोसादर १–१ पल, सेंधानमक २ कर्ष, सुहागा २ तोले, कसीस और मुर्दासङ्ग १–१ तोला, दालचिकना १ कर्ष, समुद्रफेन १ तोला लेकर सवका वारीकचूर्णकर नलिका अथवा डमरूयन्त्रसे तेज़ाव निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती पानवगैरहमें रखकर देनेसे गुल्म, यकृत् और प्लीहादि समस्त उदररोगोंको यह नष्टकरताहै ॥२७॥

२८ शङ्खनाभिरसः (शङ्खगर्भपोट्टली) १

नाभिं शङ्खभवां गवां शुभपयःपिष्टाञ्च मूषीकृतां,
भागैः षोडशनिष्ककैश्च तुलितामादाय तस्यां भिषक्
निष्काऽर्द्धं भवबीजभस्म च तथा गन्धात्त्रयं निष्ककं,
क्षिप्त्वा तां परिवेष्टयेच्छुभतरैर्वस्त्रैस्ततो मृत्तिकाम् ॥
लिप्त्वा चोपरि पाचयेद्गजपुटे गुञ्जामितं दापयेत्,
पिप्पल्या मधुनाऽथवा घृतयुतै र्मरीचचूर्णैः क्षये ।
जैपालस्य तु चूर्णयुक्तमथवा कोलान्वितै र्गोघृतैः,
शूले गुल्मगदे त्रिदोषशमनस्स्याच्छृङ्गवेरद्रवैः॥२०५॥

चि.क्र., र.र., र को , नि र , यो म , र शं , वै. चि , र. पा , र का., राजयक्ष्मणि । यो म शङ्खगर्भेतिनाम, र.र.स., रसायनसं., ना. वि एषुग्रन्थेषु मृगाङ्कपोट्टलीतिनाम ॥

भाषा—चारकर्ष शङ्खनाभिको गायकेदूधमें पीसकर मूषा-वनाव २ माशे पारदभस्म और १२ माशे गन्धककी कज्जली को रखकर मूषाकोवन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर शराव-सम्पुटमें वन्दकर गजपुटकीआचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकाल-कर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती पीपलमधु अथवा घी और मरिचकेसाथदेनेसे यक्ष्मरोग नष्टहोताहै । शुद्धजमालगोटा अथवा गोघृतयुक्तपञ्चकोलकेसाथदेनेसे शूल और गुल्म नष्टहोतेहैं । अद-रखकेसाथ त्रिदोष शान्तहोताहै ॥ २८ ॥

२९ शङ्खनाभिरसः (द्वितीयः)

भस्मीकृता गजपुटे पुटशङ्खनाभि—
वंज्रार्कदुग्धमृदिता स तु वज्रकल्कः ।
गन्धार्धसूतमृतटङ्कपिधानगर्भा
शम्बूकिकासु पुटिता त्रिदिनं हि शीता ॥
आकर्षशङ्खदलभागयुता च पिष्टा
सद्ग्राहिजिद्रुचिकरा मरिचाऽऽज्ययुक्ता २०६

रस.स., र.(मा) शङ्खगर्भः, ग्रहण्यादौ ।

भाषा—थूहर और आकके दूधमें २–३ दिन शङ्खनाभिके चूर्णको घोटकर गजपुटकी आच दे । अथवा एकभाग पारा और दोभाग शुद्धगन्धककी कज्जलीको घोंघेमें भरके उसीका ढक्कन देकर आक और थूहरके दूधमें पीसेहुए सुहागेसे सन्धिवन्दकर शरावसम्पुटमें रख गजपुटकी आच दे । तीसरेदिन निकालकर चतुर्थांश शङ्खभस्म मिलाकर रखछोड़े । इनदोनोंमेंसे किसीएक भस्मकी एकमाशेकीमात्रा ७–१४ अथवा २१ मरिच और घीकेसाथ युक्तिपूर्वकदेनेसे सद्य ग्रहणी और अरुचि नष्टहोतीहै २९

३० शङ्खभास्कररसः

दग्धं शङ्खं वराटश्च तुल्यार्कं नवनीतयुक् ।
टङ्कार्द्धं भक्षयेत्सर्वशूलार्तः शङ्खभास्करः ॥ २०७ ॥

र सं क, र. को, र. क. ल, टो, रसायनस, र. का., शूलाऽधिकारे ।

भाषा—शङ्ख और कौड़ीभस्म १–१ भाग, ताम्रभस्म दोनोंकीवरावर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे एकमाशेसे दोमाशेतक रोग अथवा रोगीका बलाबल देखकर मक्खनकेसाथ प्रयोगकरनेसे त्रिदोषजशूल नष्टहोताहै ॥ ३० ॥

३१ शङ्खमुखरसः (शङ्खनाभिरसः)

शङ्खनाभेश्चतुर्भागाः कुवज्रस्य तथा द्वयम् ।
भागो गन्धस्य शुद्धस्य चैकभागोऽत्र सूतकः ॥२०८॥
ग्रहण्यतीसारसराजयक्ष्मज्वराञ्जयेच्छङ्खमुखः स एषः ।
रोगोचिताभिः प्रथितक्रियाभि-
र्लोकेश्वरोक्तो विधिरत्र शेषः ॥ २०९ ॥

रस. सं., र. (मा.) क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—शङ्खनाभिभस्म ४ भाग, वैक्रान्तभस्म २ भाग, शुद्धगन्धक और पारा १–१ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे ग्रहणी, अतिसार, राजयक्ष्म, ज्वर इन सबको यह नष्टकरताहै । लोकनाथरसमें कहीहुई प्रक्रियाका अनुष्ठानकर उपद्रवोंको शमनकरना ॥ ३१ ॥

३२ शङ्खवटी (प्रथमा)

पलं चिञ्चाक्षारं पलमितमिदं पञ्चलवणं,
द्वयं सम्यक्पिष्टं तदनु लघुनिम्बूफलरसैः ।
ततः पिष्टं तस्मिन्पलपरिमितं शङ्खशकलं,
क्षिपेद्वारान्सप्त प्रमुदितमनेनैव विधिना ॥ २१० ॥
पलप्रमाणं कटुकत्रयञ्च
वचा च हिङ्गुश्च पलार्द्धमानौ ।
विषं पलद्वादशभागयुक्तं
तावान्रसो गन्धकतोऽपि तावान् ॥ २११ ॥
वदरास्थिप्रमाणेन वटीमेतस्य कारयेत् ।
भक्षयेत्सर्वदा धीमान्सर्वाजीर्णप्रशान्तये ॥ २१२ ॥
सर्वोदरेषु शूलेषु विसूच्यां विविधेषु च ।
अग्निमान्द्येषु गुल्मेषु सदा शङ्खवटी हिता ॥ २१३ ॥

भा प्र, यो म, र क ल, वृ यो त., र. र कौ, टो., र क, ना वि., धं., नि. र., र. सि., चि र भ, र. बो., र को, यो. चि, रसायनसं., यो र, धं. मू., र. का., भै. र., वै. चि., र. मु, र. क., यो., र, र. (मा.), भै. सा., र. सि., र. दी., रस. स., चि. क्र., अग्निमान्द्ये ।

टि०—रत्नाकरापरयोगे चिञ्चाक्षारादिरस इति नाम । रस. स., यो चि एतयोर्हिङ्गुवचयोरपि शङ्खपादमाने गृहीते इति विशेषः । वृन्दयोगतरङ्गिण्यां हिङ्गुवचयोः स्थाने पलार्द्धमानेन स्वल्प गृहीते तत्तु न सम्यक् हिङ्गुवचयोरुभयोरेकस्मिन् स्वल्पे कार्याऽकरत्वात् । विषस्थाने विल्व दृश्यते तदपि लेखकादिप्रमादविलसित प्रतिभाति । विष पलद्वादशभागयुक्तमित्यत्र भवशानां पूर्णा द्वादश इति पूर्णप्रत्ययान्त स चासौ भागश्चेति कर्मधारयात्पलस्य द्वादशो भाग इति समासो बोध्यस्तेन विषरसगन्धानां प्रत्येकं पद् पणापका भवन्तीति ।

भाषा—इमलीकाक्षार और पाचोंनमक १–१ पल लेकर कागज़ीनीबूके रसमें घोलदे और एकपल शङ्खको गरमकरके ७ बार बुझावे । इसकेबाद त्रिकटु १ पल, वच और भुनीहींग २–२ कर्ष, शुद्ध बछनाग, पारा और गन्धक १२–१२ पल लेकर नीलवर्णकज्जलीकर पूर्वक्षारमें मिलाकर ८–५ दिनतक घोटकर वेरकीगुठलीकेवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सव प्रकारके अजीर्ण, उदररोग, शूल, हैजा, मन्दाग्नि, गुल्म इन सबको यह नष्टकरतीहै ॥ ३२ ॥

३३ शङ्खवटी (वृहती) (द्वितीया)

दग्धशङ्खस्य चूर्णं स्यात्तथा लवणपञ्चकम् ।
तिन्तिडीक्षारकञ्चैव कटुकत्रयमेव च ॥ २१४ ॥
तथैव हिङ्गुकं ग्राह्यं विषं पारदगन्धकौ ।
अपामार्गस्य वह्नेश्च क्वाथैं र्निम्बुकजैर्द्रवैः ॥ २१५ ॥
भावयेत्सर्वचूर्णं तदम्लवर्गैर्विशेषतः ।
यावत्तदम्लतां याति गुटिकाऽमृतरूपिणी ॥ २१६ ॥
सद्यो वह्निकरी चैव भस्मकं नाशयेत्खलु ।
भुक्त्वाऽऽकण्ठं तु तस्यान्ते खादेच्च गुटिकामिमाम् ॥
तत्क्षणाज्जारयत्याशु पुनर्भोजनमिच्छति ।
हन्ति वातं तथा पित्तं कुष्ठानि विषमज्वरम् ॥ २१८ ॥
गुल्माख्यं पाण्डुरोगञ्च निद्राऽऽलस्यमरोचकम् ।
शूलञ्च परिणामोत्थं प्रमेहञ्च प्रवाहिकाम् ॥
वक्त्रस्रावञ्च शोथञ्च दुर्नामानि विशेषतः ॥ २१९ ॥

र च, र सं, र सु, र क, भै र, र. का, अग्निमान्द्ये । र. सु, भै र एतयोर्द्वौ पाठौ प्रमादाल्लिखितौ ।

भाषा—शङ्खभस्म, पाचोनमक, इमलीकाक्षार, त्रिकटु, भुनीहींग, शुद्धबछनाग, पारा और गन्धक सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अपामार्ग तथा चित्रकके काथ और नीबूके रसमें मर्दनकर देखे, यदि खटाई अच्छीतरह न आईहो तो २–३ नीबुओंकीभावना और देकर वेरकीगुठलीकेबरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली खानेसे कण्ठतकभरपेट कियेहुए भोजनको तत्क्षण जारणकर फिरसे भोजनकीइच्छाको उत्पन्नकरतीहै । उचितानुपानकेसाथलेनेसे, वात,

पित्त, कुष्ठ, विषमज्वर, गुल्म, पाण्डु, निद्रा, आलस्य, अरुचि, परिणामशूल, प्रमेह, अड्डी, लालास्राव, शोथ, ववासीर येसव नष्टहोतेहै ॥ ३३ ॥

३४ शङ्खवटी (तृतीया)

सार्द्धं कर्षं रसेन्द्रस्य गन्धकस्य तथैव च ।
विषं कर्षत्रयं दद्यात्सर्वतुल्यं मरीचकम् ॥ २२० ॥
दग्धशङ्खश्च तत्तुल्यं पञ्चकर्षाश्च नागरात् ।
स्वर्जिका रामठकणे सिन्धु सौवर्चलं विडम् ॥२२१॥
सामुद्रमौद्भिदश्चैव भावयेन्निम्बुकद्रवैः ।
वटी ग्रहण्यम्लपित्तशूलघ्नी वह्निदीपनी ॥
वह्निमान्द्यकृतान्रोगान्सामदोषं विनाशयेत् ॥ २२२ ॥

र चं, र सं, र क, अग्निमान्द्ये । र. क. द्वौ पाठौ गृहीतौ तत्प्रमादाल्लिखितमिति प्रतिभाति ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक डेढ १॥ कर्ष, शुद्धवछनाग ३ कर्ष, मरिच और शङ्खभस्म ६–६ कर्ष, सोंठ, सज्जी, भुनीहींग, पीपल, सेंधव, संचल, विड, सामुद्र और खारीनमक ५–५ कर्षलेकर वारीकचूर्णकर नीवूकेरसकी ६–७ भावनाए देकर वेरकीगुठलीकेवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे ग्रहणी, अम्लपित्त, शूल, मन्दाग्नि और आमवात इनसवको नष्टकर यह अग्निको प्रदीप्तकरतीहै ३४

३५ शङ्खवटी (चतुर्थी)

चिञ्चावल्कलभूतिः पञ्चपला लवणं तावत् ।
निम्बुरसेन च कल्कं तप्तं शङ्खं निषेचयेत्तत्र ॥ २२३ ॥
त्रिकटुकरामठसहितं पलांशकं मर्दयेद्दिनं सम्यक् ।
कर्षमितौ रसगन्धौ विषञ्च भृङ्गाम्बुना विमर्द्यैतत् ॥
सम्मिश्रय्य च सर्वं सम्यङ् निम्ब्वम्बुना पुनर्मर्द्यम् ।
वदरास्थिमिता वटिका मान्द्याऽजीर्णं
विसूचिकां तीव्राम् ॥ २२५ ॥
शूलाऽऽध्मानोदरजान्व्याधीन्सर्वाञ्जयति वातकृतान् ।
शङ्खाभिधानी गदिता कृपीरसानृपांशविषसंयुक्ता ॥

र, र पा, चि सा, यो चि, र वो, रसायनप, अग्निमान्द्ये।

टि०—चिकित्सासारे हिङ्ग्वादिचूर्णमिति नाम । यो चि भावना न दृश्यते । अस्य योगस्य प्रथमयोगेन समानतायामपि न तदन्तर्भवति प्रमाणे महदन्तरत्वात् ।

भाषा—इमलीकाक्षार और पाचोनमक ५–५ पल लेकर वरावरके नीवूकेरसमें मिलाकर ५ पल शङ्खको गरमकरके बुझावे शङ्खका चूराहोजानेपर त्रिकटु और भुनीहींग १–१ पल देकर एकदिन मर्दनकर शुद्धपारा, गन्धक और वछनाग १–१ कर्षकी नीलवर्णकज्जलीकर भंगरेकेरससे एकदिन मर्दनकरे फिर पूर्वयोगमें मिलाय १–२ दिन नीवूकेरसमें घोटकर वेरकीगुठलीकेवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, अजीर्ण, हैज़ा, शूल, आध्मान, उदर और वातरोग इनसवको यह नष्टकरतीहै । इसमें कितनेहीलोग सोलहवा हिस्सा रससिन्दूर और वछनाग डालतेहै

३६ शङ्खवटी (पञ्चमी)

चिञ्चाऽश्वत्थस्नुहीक्षारादपामार्गार्कतस्तथा ।
क्षाराणि पञ्च सङ्गृह्य ततो लवणपञ्चकम् ॥ २२७ ॥
सैन्धवादिसमादाय सर्वमेतत्पलद्वयम् ।
कर्षं कर्षं विषं गन्धं रसं टङ्कणकन्तथा ॥ २२८ ॥
हिङ्गुपिप्पलिशुण्ठीनां तथा मरिचजीरयोः ।
द्वौ द्वौ कर्षौ पृथक्कार्यौ तथा द्वौ शङ्खचूर्णतः ॥ २२९ ॥
फलत्रयाच्च कर्षैकं द्विकर्षन्तु लवङ्गतः ।
एतत्सर्वं समासाद्य श्लक्ष्णचूर्णीकृतं शुभम् ॥ २३० ॥
भावयेदम्लयोगेन सप्तधा तु प्रयत्नतः ।
रसः शङ्खवटीनाम्ना सेवितः सर्वरोगजित् ॥ २३१ ॥
गुञ्जामात्रमिदं खादेद्वह्निदीपनपाचनम् ।
अजीर्णं वातसम्भूतं पित्तश्लेष्मभवं तथा ॥
विसूचीं शूलमानाहं हन्यादत्र न संशयः ॥ २३२ ॥

टो., र. सु., यो र, वृ. यो. त, र का, वै चि., व. रा, यो. त, नि. र, अग्निमान्द्ये ।

भाषा—इमली, पीपल, थूहर, अपामार्ग और आककेक्षार, पाचोनमक २–२ पल, शुद्धवछनाग, गन्धक, पारा और सुहागा १–१ कर्ष, भुनीहींग, पीपल, सोठ, मरिच, जीरा और शङ्खभस्म २–२ कर्ष, त्रिफला १ कर्ष, लौंग २ कर्ष, लेकर सवका वारीकचूर्णकर विजोरे वगैरहके रससे सातभावनाए देकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली यथोचितानुपानकेसाथ लेनेसे वातज, पित्तश्लेष्मज अजीर्ण, हैज़ा, शूल और आनाहप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ३६ ॥

३७ शङ्खवटी (षष्ठी)

द्वौ क्षारौ रसगन्धकौ सलवणौ व्योषञ्च तुल्यं विषं,
चिञ्चाभस्म चतुर्गुणं रसवरे लिम्पाकजाते कृतम् ।
वारम्वारमिदं सुपाकचरितं लोहं क्षिपेद्धिङ्गुकं,
भृष्टं शङ्खसमं समुद्रितमिदं गुञ्जाप्रमाणा भवेत् ॥२३३॥
ख्याता शङ्खवटी महाग्निजननी शूलान्तकृत्पाचनी,
कासश्वासविनाशिनी क्षयहरी मन्दाग्निसन्दीपनी ।
वातव्याधिमहोदरादिशमनी तृष्णामयच्छेदिनी,
सर्वव्याधिविनाशिनी कृमिहरी दुष्टामयध्वंसिनी२३४

र. सु, र क, भै र., र का, अग्निमान्द्ये ।

भाषा—यवक्षार, सज्जी, शुद्धपारा, गन्धक, सेंधानमक, त्रिकटु और वछनाग १–१ भाग, अमिलतासकेरसमें वनायाहुआ इमलीकाक्षार ३६ भाग, पाचकद्रव्योंमेंकीहुईलोहभस्म और भुनीहींग १–१ भाग, शङ्खभस्म सवकीवरावर लेकर वारीकचूर्णकर विजोरेवगैरहकेरससे ६–७ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे शूल, अजीर्ण, कास, श्वास, क्षय, मन्दाग्नि, वातव्याधि, उदररोग, प्यास, क्रिमि, ववासीर, इनसवको नष्टकर अग्निको अत्यन्त प्रदीप्तकरतीहै ॥ ३७ ॥

३८ शङ्खवटी (महती) (सप्तमी)

कणामूलं वह्निदन्त्यौ पारदं गन्धकं कणा ।
त्रिक्षारं पञ्चलवणं मरिचं नागरं विषम् ॥ २३५ ॥
अजमोदाऽमृता हिङ्गु क्षारं तिन्तिडिकाभवम् ।
सञ्चूर्ण्य समभागन्तु द्विगुणं शङ्खभस्मकम् ॥ २३६ ॥
अम्लद्रवेण सम्भाव्य वटी कोलास्थिसम्मिता ।
अम्लदाडिमतोयेन लिम्पाकस्वरसेन च ॥ २३७ ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय नाम्ना शङ्खवटी शुभा ।
तक्रमस्तुसुरासीधुकाञ्जिकोष्णोदकेन वा ॥ २३८ ॥
शशैणादिरसेनैव रसेन विविधेन च ।
मन्दाग्निं दीपयत्याशु वडवाग्निसमप्रभम् ॥ २३९ ॥
अर्शांसि ग्रहणीरोगं कुष्ठमेहभगन्दरम् ।
प्लीहानमश्मरीं श्वासं कासं महोदरक्रिमीन् ॥ २४० ॥
हृद्रोगं पाण्डुरोगञ्च विबन्धानुदरे स्थितान् ।
तान्सर्वान्नाशयत्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥ २४१ ॥

भै र.,र सु ,वै क ,र का., अग्निमान्द्ये ।

भाषा—पीपल, चित्रक और दन्तीकेमूल, शुद्ध पारा और गन्धक, पीपल, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, पाचोनमक, मरिच, सोंठ, शुद्धवच्छनाग, अजमोद, गिलोय, भुनीहींग, इमलीकाक्षार येसब समभाग और शङ्खभस्म सवसे दूनी लेकर सबका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय नीबूकेरसकी ६–७ भावनाए देकर वेरकी गुठलीकेवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली खट्टे अनार अथवा अमिलतास केरस, छाछ, दहीकापानी, 'मद्य, ताड़ी, काञ्जी, गरमजल, खरगोश और हरिण वगैरहका मासरस इत्यादि अनुपानोंकेसाथ औचितीदेखकर देनेसे मन्दाग्नि, ववासीर, ग्रहणी, कुष्ठ, प्रमेह, भगन्दर, प्लीहा, पथरी, श्वास, कास, जलोदर, क्रिमि, हृद्रोग, पाण्डु, विवन्ध इनसवको यह नष्टकरतीहै ॥ ३८ ॥

३९ शङ्खवटी (अष्टमी)

चिञ्चाक्षारं स्नुहीक्षारमर्कक्षारं पलंपलम् ।
द्विपलं शङ्खभूतिश्च रामठञ्च पलार्द्धकम् ॥ २४२ ॥
लवणानि च सर्वाणि पलमात्राणि योजयेत् ।
क्षारद्वयं पलार्द्धञ्च सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ २४३ ॥
जम्बीरकरसैर्मर्द्यमनलस्य दिनत्रयम् ।
भृङ्गराजस्य निर्गुण्डीमुण्डयोश्चैव द्रवैः पृथक् ॥२४४॥
आर्द्रकस्वरसेनैव प्रत्येकं मर्दयेद्दिनम् ।
वदरीवीजमात्रान्तु वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ २४५ ॥
एकैकां भक्षयेत्प्रातः पञ्चगुल्मान्व्यपोहति ।
सर्वशूलं निहन्त्याशु ह्यजीर्णञ्च विसूचिकाम ॥२४६ ॥
मन्दाग्निं नाशयेच्छीघ्रं पथ्यं तैलाम्लवर्जितम ।
इयं शङ्खवटीनाम ग्रहणीरोगहृत्परा ॥ २४७ ॥

वै.चि., यो र , चि सा , गुल्मे ।

भाषा—इमली, थूहर और आकके क्षार १–१ पल, शङ्खभस्म २ पल, भुनीहींग २ कर्ष, पांचोंनमक १–१ पल, सज्जी और यवक्षार २–२ कर्ष लेकर सबका वारीकचूर्णकर जंभीरी और चित्रकके रसोंमें ३–३ दिन, तथा भंगरा, संभालू, गोरखमुण्डी और अदरखकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर वेरकी गुठलीकेवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली प्रातःकाल उचितानुपानकेसाथलेनेसे पांचप्रकारकेगुल्म, समस्तशूल, अजीर्ण, हैजा, मन्दाग्निप्रभृति समस्तरोगोंको यह दूरकरतीहै । तैल और खटाईको छोड़कर सवचीजें पथ्यहैं ॥ ३९ ॥

४० शङ्खवटी (नवमी)

शङ्खं सप्तदिनानि निम्बुकरसे निर्वाप्य तप्तं पल-,
इन्द्वं चिञ्चिणिभूतितः पलमितः सार्धश्च सौवर्चलात् ।
सिन्धुः स्याच्च पलं समुद्रलवणात्काचाद्विडाच्चकतो,
गद्याणास्त्रिकटौ नव द्विगुणिताः संयोजयेद्यत्नतः२४८
अष्टौ रामठगन्धयो र्मिलितयो र्गद्याणकाः पारदा-,
च्चत्वारोऽत्र विषस्य पञ्च कथिताः कोलास्थिमात्राकृता
एषा शङ्खवटी निहन्ति पवनं शूलान्यजीर्णामयं,
मन्दाग्नित्वमरोचकञ्च शमयेन्मूत्रस्य कृच्छ्राण्यपि २४९

र.कौ., टो., वृ यो त., अग्निमान्द्ये ।

भाषा—दोपलशङ्खको नीबूकेरसमें शीर्णावधि गरमकरकरके बुझावे और ७ दिनतक इसीतरह पड़ारहनेदे । फिर इमलीकाक्षार १ पल, सचल १॥ पल, सेंधव, सामुद्र, काच और विडनमक १–१ पल, सोंठ, मिर्च, पीपल ३–३ तोले, भुनीहींग, शुद्ध गन्धक और पारा २–२ तोले, शुद्धवच्छनाग २॥ तोले लेकर सवका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय १–२ दिन नीवूकेरससे घोटकर वेरकीगुठलीकेवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे वायुरोग, शूल, अजीर्ण, मन्दाग्नि, अरुचि, मूत्रकृच्छ्र इनसवको यह नष्टकरतीहै ॥ ४० ॥

४१ शङ्खवटी (दशमी)

स्नुह्यर्कचिञ्चाऽपामार्गरम्भातिलपलाशजान् ।
क्षारांश्च भिषगादद्यात्प्रत्येकं कर्षमात्रया ॥ २५० ॥
लवणानि पृथक् पञ्च ग्राह्याणि पलमात्रया ।
स्वर्जिका च यवक्षारं टङ्कणत्रितयं पलम् ॥ २५१ ॥
सर्वमेतत्समादाय सूक्ष्मचूर्णं विधाय च ।
निम्बूफलरसे प्रस्थसम्मिते तत्परिक्षिपेत् ॥ २५२ ॥
तत्र शङ्खस्य शकलं पलं वह्नौ प्रताप्य तु ।
वाराន्निर्वापयेत्सप्त सर्वं द्रवति तद्यथा ॥ २५३ ॥
नागरं त्रिपलं ग्राह्यं मरिचञ्च पलद्वयम् ।
पिप्पली पलमाना स्यात्पलार्द्धं भृष्टहिङ्गुकम् ॥२५४॥
ग्रन्थिकं चित्रकञ्चाऽपि यवानी जीरकन्तथा ।
जातीफलं लवङ्गञ्च पृथक्कर्षद्वयोन्मितम् ॥ २५५ ॥

रसो गन्धो विषञ्चाऽपि टङ्कणञ्च मनःशिला ।
एतानि कर्षमात्राणि सर्वं सञ्चूर्ण्य मिश्रयेत् ॥२५६॥
शरावार्द्धेन चुक्रेण सन्नीय वटिकाश्चरेत् ।
माषप्रमाणा सा वैद्ये बृहच्छङ्खवटी स्मृता ॥ २५७ ॥
सर्वाजीर्णप्रशमनी सर्वशूलनिवारिणी ।
विसूच्यलसकादीनां सद्यो भवति नाशिनी ॥ २५८ ॥

भा.प्र., र सु., नि. र , र. क. ल , र. का., यो. म , अग्निमान्द्ये।

भाषा—थूहर, आक, इमली, अपामार्ग, केला, तिल, पलाश इनकेक्षार १–१ कर्ष, पाचोंनमक १–१ पल, सज्जी, यवक्षार, भुनासुहागा ३–३ पल लेकर सबकाबारीकचूर्णकर १६ पल नीबूकेरसमें घोलकर रखले और एकपल शङ्खको गरमकरके इसद्रवमें ७ वार बुझावे । फिर सोंठ ३ पल, मरिच २ पल, पीपल १ पल, भुनीहींग, गठिवन, चित्रक, अजवाइन, जीरा, जायफल, लवङ्ग २–२ कर्ष, शुद्धपारा, गन्धक, वछनाग, सुहागा और मैंनसिल १–१ पल, चुक्र ८ पल लेकर पारेगन्धककी कज्जलीसहित सबका बारीकचूर्णकर पूर्वद्रवमें मिलाय १–२ दिन घोटकर उड़दबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथलेनेसे सबप्रकारके अजीर्ण, शूल, हैज़ा और अलसकप्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ४१ ॥

४२ शङ्खवटी (एकादशी)

शुद्धगन्धरसौ तुल्यौ द्वयोस्तुल्यं विषं भवेत् ।
रामठं मरिचञ्चैव प्रत्येकं सर्वतुल्यकम् ॥ २५९ ॥
प्रत्येकं पञ्चतुल्यानि कणाविश्वाह्वयानि च ।
शङ्खोत्थं स्वर्जिका पञ्च सर्वाण्यम्लै र्विभावयेत् ॥२६०॥
यावदत्यम्लमेतत्स्यात्ततो मात्रां प्रयोजयेत् ।
सर्वाजीर्णहरी चेयं नाम्ना शङ्खवटी शुभा ॥ २६१ ॥
शूलार्शोग्रहणीगुल्मोदावर्तकहृद्ग्रहान् ।
आनाहाष्ठीलिके हन्ति कान्तिवीर्यविवर्धिनी ॥२६२॥

र. क., अग्निमान्द्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ भाग, शुद्धवछनाग २ भा., भुनीहींग और मरिच ४–४ भाग , पीपल और सोंठ १२–१२ भा , शङ्खभस्म और सज्जी ५–५ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर नीबूकेरसकी ६–७ भावनाएं देकर बेरकीगुठलीकेबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे सबप्रकारके अजीर्ण, शूल, बवासीर, ग्रहणी, गुल्म, उदावर्त, हृदयकाजकड़ना, आनाह, अष्ठीला प्रभृति समस्तरोगोंको दूरकर कान्ति और अग्निको बढ़ातीहै४२

४३ शङ्खसुन्दररसः

रसगन्धकयो र्भागं द्वौ भागौ तालताम्रयोः ।
लोहखर्परयोस्त्रिस्त्रि र्भागास्ताप्यास्तथा लवम् ॥ २६३॥
पञ्चांशं गगनं पिष्ट्वा रसैस्त्रिस्त्रि र्विभावयेत् ।
जम्भचित्रककन्यानां विजयास्वर्णयोः पृथक् ॥२६४॥
वृश्चिकायाश्च तं गोलं कृत्वा जम्भाम्भसा क्षणम् ।
मर्दितेन च शङ्खेन सर्वतुल्येन वेष्टयेत् ॥ २६५ ॥
त्रिंशता मृत्पटै र्लिप्त्वा पचेल्लवणयन्त्रके ।
षड्यामं स्वाङ्गशीतन्तु समुद्धृत्य विचूर्णयेत् ॥ २६६ ॥
अर्कांशं सैन्धवं सूताद्विषं द्विगुणितं क्षिपेत् ।
पुनर्जम्भाम्भसा भाव्यः सिद्धः स्याच्छङ्खसुन्दरः २६७
गुञ्जात्रयमितं शूलं ग्रहण्यर्शोऽतिसारकम् ।
जीर्णज्वरारुचिप्लीहकासश्वासक्षयादिषु ॥ २६८ ॥
निजानुपानैः क्षौद्रेण पिप्पलीभिः प्रदापयेत् ।
जातीफलेन मान्द्यादौ विसूच्यादौ प्रदापयेत् ॥२६९॥
गर्भिण्याः शूलविष्टम्भज्वरेष्वतिसृतौ तथा ।
ताम्बूलवल्लीपत्रेण पश्चाच्छागजलेन च ॥ २७० ॥

र. क , शूलादिरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ भाग, हरिताल और ताम्रभस्म २–२ भाग, लोह और खर्परभस्म ३–३ भा., सुवर्णमाक्षिक १ भा , अभ्रकभस्म ५ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरी, चित्रक, घीकुंवार, भांग और धतूरेकेरसोंसे ३–३ भावनाएं देकर विछुआकेरससे एकदिन मर्दनकर गोला बनावे । फिर जंभीरीकेरससे मर्दनकियेहुए सबकीबराबरवज़नके शङ्खका लेपदेकर ३० कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर ६ पहरकी लवणयन्त्रमें अग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर १२ वां हिस्सा सेंधानमक और पारेसेदूना शुद्धवछनाग डालकर जंभीरीकेरससे १–२ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली यथोचितानुपानकेसाथदेनेसे शूल, ग्रहणी, बवासीर, अतिसार, जीर्णज्वर, अरुचि, प्लीह, कास, श्वास और क्षयप्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरताहै । सामान्यत मधु और पीपलकेसाथदेवे । मन्दाग्नि और हैजेमें जायफलकेसाथ तथा गर्भिणीकेशूल, विष्टम्भ, ज्वर और अतिसारमें पानकेसाथ देकर थोड़ासा बकरीकासूत्र पिलावे ॥ ४३ ॥

४४ शङ्खामृतरसः

शुद्धं शङ्खभवं सुचूर्णममलं शाणाष्टकं सन्मृतं-,
तस्यार्द्धं रसभस्म तद्द्वयमिदं चूर्णीकृतं युक्तितः ।
माषार्धं मधुना विलोडितमथो वासाऽमृतापर्पट-,
व्याघ्रीक्वाथमनुप्रपीतमसकृच्छ्वासं सकासं क्षयम् ॥
एतद्वा नितरां ज्वरातिसरणं मूत्रातिसारं वमिं ,
दुर्वारां ग्रहणीं निहन्ति सकलं मेदः प्रमेहं हठात् ॥२७१

यो. म ,ज्वरातिसारे ।

भाषा—शङ्खभस्म २ कर्ष, पारदभस्म १ कर्ष मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथदेकर अड़ूसा, गिलोय, पित्तपापड़ा और भटकटैयाकाकाथ बारम्बार पिलानेसे श्वास, कास, क्षय, ज्वरातिसार, मूत्रातिसार, वमन, दुःसाध्यग्रहणी, मेदोवृद्धि और प्रमेह इनसबको यह हठसे निवृत्तकरताहै ॥ ४४ ॥

४५ शङ्खेश्वररसः

शङ्खस्य वलयान्निष्कं चतुर्निष्कं वराटकम् ।
निष्कार्द्धं नीलतुत्थस्य सर्वतुल्यन्तु गन्धकम् ॥२७२॥
गन्धतुल्यं मृतं नागं नागतुल्यं मृतं रसम् ।
टङ्कणं रसतुल्यं स्यान्मर्द्यं पाच्यं मृगाङ्कवत् ॥
राजयक्ष्महरः सोऽयं नाम्ना शङ्खेश्वरो रसः ॥२७३॥

र र स, ना वि, र. चं, नि र, र. को., र र., र. का., यो. म., वै. चि, र क ल, क्षयरोगे ।

टि०—योगमहार्णवे केवल दुग्धरस मधुना लीढ्वा रात्रौ भर्जितविजया लेह्या इत्यस्य शङ्खेश्वरनाम स्थापितम्, फलभागे च दुर्वारामपि ग्रहणीक्षयेदित्युक्तम् ।

भाषा—शङ्खनाभिभस्म ४ माशे, पीलीकौड़ीभस्म १ कर्ष, तूतिया २ माशे, शुद्धगन्धक, नाग और पारदभस्म तथा सुहागा प्रत्येकसवकीबराबर लेकर सबका बारीकचूर्णकर बकरी अथवा गायके दूधमें १–२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसको प्रथम मृगाङ्ककी तरह देकर उसीतरह पथ्यपालनेसे यह राजयक्ष्मको दूरकरताहै॥

४६ शङ्खोदररसः (प्रथम)

सूतभस्म बलिर्लोहं विषं त्रिकटुकं समम् ।
पिष्ट्वा निम्बुजतोयेन शङ्खे सर्वं चतुर्गुणे ॥ २७४ ॥
क्षिप्त्वा मृद्टङ्कके लिप्त्वा भाण्डे गजपुटे पचेत् ।
शीते प्राग्वद्विषं क्षिप्त्वा वल्लमात्रं प्रयोजयेत् ॥२७५॥
जातीफलञ्च विजया मधुनाऽतिसृतौ ददेत् ।
ग्रहण्यां चित्रकार्द्राम्बु विजया विश्वभेषजम् ॥ २७६॥
पृथग्देयं समधुना मरिचैश्च घृतान्वितम् ।
वह्निमान्द्यक्षये तद्वदुदरात्यनिलामये ॥
पथ्यं दध्ना च तक्रेण क्षीरशाकैश्च संयुतम् ॥ २७७ ॥

नि र, र. सु., टो, र पा अतिसारे ।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धगन्धक, लोहभस्म, शुद्ध बछनाग और त्रिकटु समभागलेकर बारीकचूर्णकर नीबूकेरसमें १–२ दिन मर्दनकर सबसे चौगुने शङ्खमें भरकर बकरीकेदूधमें पीसेहुए सुहागेसे मुंहबन्दकर शरावसम्पुटमें रख ६–७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर षोडशांश शुद्धबछनागमिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती जायफल, भांग और मधुकेसाथ देनेसे यह अतिसारको दूरकरताहै । चित्रक और अदरखकेरस अथवा भांग और सोंठ, अथवा मधु, मरिच और घी इन अनुपानोंकेसाथ औचिती देखकर देनेसे अतिसार, ग्रहणी, मन्दाग्नि, क्षय, उदर और वातरोग येसव नष्टहोतेहैं । दही, छाछ, दूध और शाकोंकेसाथ औचिती देखकर पथ्यदेवे ॥ ४६ ॥

४७ शङ्खोदररसः (द्वितीय.)

जयार्कधूर्तजैः सूतं गन्धं मर्द्यं पृथग्दिनम् ।
भृत्वा शङ्खोदरे वेष्ट्यं पुटं पोट्टलिकाक्रमात् ॥ २७८ ॥
तथापि योजयेन्मान्द्ये शूले वा ग्रहणीगदे ।
विश्वेश्वर इति ख्याता वाताधिक्यरुजापहा ॥२७९॥
रसगन्धकभागैकं शम्बूकाश्चाष्टभागिकाः ।
जयादिमर्दयेद्द्रावैः पुटेत्पूर्वक्रमेण च ॥ २८० ॥
शम्बूकस्य भवेत्स्थाने समुद्रशुक्तिरुत्तमा ।
कपर्दशङ्खयुक्तो वा रसोऽयं चतुराननः ॥ २८१ ॥

र शि, अग्निमान्द्यादौ ।

टि०—रसगन्धकाभ्या शङ्खोऽष्टगुणो योज्य ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धकको भांग, आककेदूध और धतूरेकेरसमें १–१ दिन दोनोंको अलग २ मर्दनकर इनसे अठगुनी शङ्खनाभिपर लेपदेकर शरावसम्पुटमें बन्दकर लवणयन्त्रमें रखकर एकदिनरातकी आंचदे । अथवा अठगुनेघोंघे अथवा मोतीकीसीप या कौड़ोंमें भरके आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा उचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, शूल, ग्रहणी इनको यह नष्टकरताहै । विशेषकर वातप्रधानरोगोंको दूरकरताहै ॥ ४७ ॥

४८ शङ्खोदररसः (तृतीयः)

कम्बो र्भस्म चतुष्कर्षं कर्षैकमहिफेनकम् ।
जातीफलं टङ्कणञ्च कर्षंकर्षं नियोजयेत् ॥ २८२ ॥
चूर्णीकृत्य ततश्चाऽस्य गुञ्जामात्रां प्रयोजयेत् ।
नवनीतेन साकं हि रक्तातीसारहृत्परम् ॥ २८३ ॥
गुदाङ्कुरोद्भवं रक्तमामरक्तं नियच्छति ।
कृच्छ्रसाध्यमतीसारं विविधं शूलमुल्वणम् ॥ २८४ ॥
शमयत्यतिवेगेन रसः शङ्खोदराह्वयः ।
गुडबिल्वकषायेण शूलं पक्वाशयोत्थितम् ॥
आमं पाचयते सद्यः सर्वातिसृतिकृन्तनः ॥ २८५ ॥

रसायनसं, यो र, अतिसारे ।

भाषा—शङ्खभस्म ४ कर्ष, अफीम, जायफल, भुनासुहागा १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर १–१ रत्तीकीमात्रादेनेसे रक्तातिसार, रक्तार्श, आम, कृच्छ्रसाध्य अतिसार, नानातरहका उत्कटशूल इनसबको यह नष्टकरताहै । गुड़ और बेलकेकाढेसे पक्वाशयकेशूलको नष्टकरताहै और आमको पचाताहै ॥ ४८ ॥

४९ शङ्खोदररसः (चतुर्थः)

शुद्धं सूतं गन्धकं वै समांशं
चित्रोन्मत्ते मर्दयेद्वासरैकम् ।
गोलं कृत्वा शङ्खमध्ये निधाय
भाण्डे स्थाप्यं मुद्रितव्यं प्रयत्नात् ॥ २८६ ॥
तस्याऽधस्तादग्नियामं प्रकुर्या-
द्वर्हि शीते कर्षमात्रं विषं हि ।
घृष्ट्वा घर्मे भावनाश्चाऽत्र तिस्रो
दद्यात्तद्वत्कन्यकाया रसेन ॥ २८७ ॥
वल्लं योज्यं जीरकेणाऽथ भृङ्ग्या
क्षौद्रे युक्तं भक्षितञ्च ग्रहण्याम् ।

श्वासे शूले चानिले श्लेष्मजे वा
कासेऽर्शःसु विड्ग्रहे चातिसारे ॥ २८८ ॥

र. प्र सु., र. म मा , र गं , र., र वो., र क यो , र पा., श्वासाऽधिकारे । र. (मा), रस सं. एतयोर्ग्रहणीकपाट इति नाम ग्रहण्यधिकारे ।

टि०—रसावतारे अग्निदानादनन्तर विजयारसेन परिमृद्य सूताष्टमाश विष नियुज्य विजयाधूर्तभूधात्रीकुटजातिविषामुस्ताजीरकार्द्रककस्तूरीह्रीवेरक्वाथैस्तिस्रो भावना प्रदत्ता । मुस्ताक्वाथेनाऽतिविषाम धुम्या वा दध्ना वा कुरण्डेन वा विजयादधिभ्या अतिसारघ्नविविधे पुटपाके वा नियोज्य इति विशेषोदृश्यते । रसदीपिकाया रक्षामणिनाम्ना एक पाठोऽस्ति यथा—"सूत सुगन्ध वदरीजयार्कनीरैर्विमर्द्यैकदिन ततश्च । आपूर्य शङ्ख परिवेष्ट्य सम्यक् शुष्कन्तु भाण्डोदरमध्यसस्थम् ॥ पुटेत त पोट्टलिकाभिधान ददीत वातप्रचुरे गदेऽस्मिन् । त्रैलोक्यरक्षामणिरेष सूत शूलाग्निमान्द्येऽपि च योजनीय । मरीचचूर्णेन घृतप्लुतेन विरेचने जीरकयुग्ममिश्रम् ॥ इति" अस्याप्यत्रैवाऽन्तर्भाव करणीय , भावनास्तु ग्रहीतव्या एव तदनुष्ठाने क्षत्यभाव । प्रकृतपाठे शङ्खप्रमाण नास्ति तत्तु स्वबुद्ध्या कल्पनीय चतुर्गुण वा स्यादष्टगुण वा षोडशगुण वा नियोजनीयम्।"सूत गन्ध क्षुद्रशङ्खेन तुल्य घर्षेद्याम वह्निधत्तूरनीरै । शुष्क कृत्वा ताम्रचक्रेण बद्धा चूर्ण कृत्वा भावयेदार्द्रकेण ॥ दत्त्वा सूत चामृत पादभाग लौहपात्रे पाचयेद्वह्निनीरै । यामार्द्धार्द्धं मोहिनीगिग्रनीरैर्वल्ल दद्यादाज्यमारीचयुक्तम् । वीर्यं पुष्टिं दीपन धातुहाने कुर्यान्नाग शङ्खपाणीरसेन्द्र ॥" इति च पाठो रसदीपिकाया समागत । एषु त्रिषु विशेषविशेषाऽभावात् एकस्मिन्नेव योगेऽन्तर्भावनीया । विविधपाठस्थापने छात्राणा बुद्धिव्यामोहात् ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर चित्रक और धतूरेकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय चतुर्गुणित शङ्खमेंभरके तावे अथवा लोहेकेपत्र अथवा ठीकरेसे मुंहबन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर नमक, वालुका अथवा भस्मयन्त्रमें रखकर ८ पहरकी तीक्ष्णअग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर एककर्ष शुद्धवछनाग डालकर घीकुवारकेरसकी कड़ीधूपमें तीनभावनाए देकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली जीरा, भंगरा अथवा मधुकेसाथ देनेसे ग्रहणी, श्वास, वातशूल, कफशूल, कास, बवासीर, विड्ग्रह अथवा अतिसार इनसबको यह नष्टकरताहै ॥४९॥

५० शङ्खोदररसः (पञ्चमः)

रसगन्धाभ्रकुनटीताललताप्यार्कहिङ्गुलम् ।
अयोहेमरजस्तुल्यं कलांशा शङ्खभस्मनः ॥ २८९ ॥
अयं शङ्खोदरो नाम्ना वल्लमात्रं नियोजयेत् ।
कणाक्षौद्रयुतश्चाऽयं सर्वरोगनिवर्हणः ॥ २९० ॥

र. शं , सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रकभस्म, शुद्धमैनसिल, हरिताल और सोनामाखी, ताम्रभस्म, शुद्धशिगरिफ, लोह और सुवर्णभस्म १–१ भाग, शङ्खभस्म १६ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती पीपल और मधुकेसाथदेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ५० ॥

५१ शङ्खोदररसः (षष्ठः)

शुद्धसूतस्य भागैकं ताम्रभस्मांशकद्वयम् ।
भागत्रयं गन्धकस्य मृतलोहांशकद्वयम् ॥ २९१ ॥
चतुर्गुणं माक्षिकस्य व्योमभस्मांशपञ्चकम् ।
शिलैकांशं प्रगृह्णीयाद्भागौ द्वौ तालकस्य च ॥२९२॥
विशुद्धखर्परांशांस्त्रीन्सर्वं मर्दय खल्वके ।
निम्बार्द्रकाग्निधत्तूरविजयाकनकद्रवैः ॥ २९३ ॥
पृथग्विभावयेदेतैः शोषयेदातपे खरे ।
सर्वौषधादष्टगुणे शुद्धे शङ्खोदरे क्षिपेत् ॥ २९४ ॥
शङ्खोदरं शङ्खनाभिचूर्णेनान्येन लेपयेत् ।
आरण्योत्पलभस्मानि लोहितेष्टकचूर्णकम् ॥ २९५ ॥
सामुद्रलवणं मृत्स्ना तुल्यमेकत्र कारयेत् ।
दद्याच्च कर्पटैर्लेपांस्त्रींश्च शुष्कान् पृथक्पृथक्॥१९६॥
शुष्कं विदध्याल्लवणापूर्णभाण्डोदरे क्षिपेत् ।
निरुध्य पुटके सर्वं स्थापयेच्चुल्लिकोपरि ॥ २९७ ॥
यामद्वयं ददेदग्निं ज्वालयेदथ मध्यमम् ।
यामद्वयं ततो मन्दं मन्दं यामद्वयं पुनः ॥ २९८ ॥
स्वाङ्गशीतं समुत्तार्य लघु निःसारयेन्मृदम् ।
सरसं मर्दयेच्छङ्खं कलांशविषमिश्रितम् ॥ २९९ ॥
त्रिर्भावयेत्त्रिकटुना त्रिरुबूकरसेन च ।
शुष्कः सिद्ध्यति सूतोऽयं रसः शङ्खोदराभिधः ३००
गुञ्जाद्वयमितं दद्यात्पिप्पलीमधुसंयुतम् ।
कासे श्वासे क्षये जीर्णे ज्वरे च मरिचैः सह ॥ ३०१ ॥
सघृतैस्त्वग्निमान्द्ये च विसूच्यामगरेषु च ।
शोफे पाण्डावजामूत्रै र्यथास्वं पाण्डुरोगिणि ॥
ग्रहण्यर्शः सुवातेषु विजयाचूर्णसंयुतम् ॥ ३०२ ॥

र शं , र. का , र वो , वा, ग्रहण्यतिसारयो । वाहटेऽस्य पाठो भ्रष्टतां नीतोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, ताम्रभस्म २ भा , शुद्धगन्धक ३ भा , लोहभस्म २ भा , सुवर्णमाक्षिक ४ भा., अभ्रकभस्म ५ भा , शुद्धमैनसिल १ भा., हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य २ भा , शुद्धखपरिया ३ भाग लेकर सबकीनीलवर्णकज्जलीकर नीबू, अदरख, चित्रक, धतूरा, भाग, धतूरा इनके स्वरसोंसे कड़ीधूपमें १–१ भावना देकर गोलाबनाय अठगुने शङ्खमेंभरके शङ्खनाभिको बकरी अथवा गायकेदूधमें पीसकर मुंहबन्दकर जङ्गलीकण्डोंकीराख, लालईंट, समुद्रनमक, लालमिट्टी सबसमभागको पीस इससे ३ कपड़मिट्टी सुखासुखाकरदे । अच्छीतरह सूखनेपर लवणयन्त्रमें रखकर मुहबन्दकर चूल्हेपर चढ़ाय दोपहर मध्यमाग्नि देकर दोपहर मन्द आंच देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर मिट्टीको दूरकर १६ वा हिस्सा शुद्धबछनाग मिलाकर त्रिकटु और धतूरेकेरसोंसे ३–३ भावनाएं देकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पीपल और मधुकेसाथ देनेसे कास, श्वास और क्षय तथा

मरिच और घीकेसाथदेनेमे जीर्णज्वर नष्टहोताहै। मन्दाग्नि, हैज़ा, आम, गर और शोथमें यथोचिती देखकर देवे। वकरी केमूत्रकेसाथदेनेसे पाण्डुरोग, भागकेसाथदेनेमे ग्रहणी और वातरोग नष्टहोतेहैं॥ ५१॥

५२ शट्यादिलोहम्

शटीपुष्करमूलानां चूर्णमामलकस्य च।
मधुना संयुतं लेह्यं चूर्णं वा काललोहजम्॥ ३०३॥

च सं., हिक्काश्वासयो।

भाषा—कचूर, पोहकरमूल, आवले, फोलादभस्म येसव समभाग लेकर १–१ मासेकीमात्रा मधुकेसाथलेनेमे हिक्का और श्वास नष्टहोतेहैं॥ ५२॥

५३ शतमूलादिलोहम्

शतमूलीसिताधान्यनागकेसरचन्दनैः।
त्रिकत्रयतिलै र्युक्तं लोहं सर्वगदापहम॥
तृष्णादाहज्वरच्छर्दिरक्तपित्तहरं परम्॥ ३०४॥

भै र., र चं, ध, र सु, र. सं, वै. क., रक्तपित्ताऽधिकारे।

भाषा—शतावर, शक्कर, धनिया, नागकेशर, सफेदचन्दन, त्रिफला, त्रिकटु, त्रिमद, और तिल सवसमभागलेकर सवकी वरावर लोहभस्ममिलाकर रखछोडे। इसमेंसे ३ रत्तीसे ६ रत्तीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे प्यास, दाह, ज्वर, वमन, रक्तपित्त, येसव नष्टहोतेहैं॥ ५३॥

५४ शतावरीमण्डूरम् (प्रथमम्)

संशोध्य चूर्णितं कृत्वा मण्डूरस्य पलाष्टकम्।
शतावरीरसस्याऽष्टौ दध्नश्च पयसस्तथा॥ ३०५॥
पलान्यादाय चत्वारि तथा गव्यस्य सर्पिषः।
विपचेत्सर्वमेकस्थं यावत्पिण्डत्वमाप्नुयात्॥ ३०६॥
सिद्धन्तु भक्षयेन्मध्ये प्रान्ते भुक्तस्य चाग्रतः।
वातात्मकं पित्तभवं शूलञ्च परिणामजम्॥ ३०७॥
निहन्त्येव हि योगोऽयं मण्डूरस्य न संशयः।
दुग्धे निर्वापणं कार्यं यद्वा वहुसुतारसे॥ ३०८॥
अथवा चोभयोरेव लोहकिट्टस्य सप्तधा।
रसो गन्धः शुभः पाके वर्तिः स्याद्यदि मर्दनात्॥
तदा पाकं विजानीयान्मण्डूरस्य न संशयः॥ ३०९॥

वृ यो. त, र का, नि र, वै. चि., भै. र, यो. म, वृ मा, र क यो, र., ना वि., टो., रससागर., ध, र. र, च द, यो र, ग नि, शूलाऽधिकारे।

टि०—र क यो मण्डूरयोग इति नाम। रसरत्नाकरे भैषज्यरत्नावल्यात्र द्वितीयस्थाने "चतु शाण रज पृथक्। क्षिपेन्मुस्तकणाजाजीधान्यपथ्याद्विजातकम्" इत्यधिक पाठो दृश्यते। अस्मिन्नप्यस्य प्रक्षेपस्य दाने क्षत्यभावाद् द्वयोरप्येक एव योग करणीय।

भाषा—शुद्धमण्डूर, शतावरीका स्वरस, दहीकापानी और दूध ८–८ पल, गायका घी ४ पल लेकर इकठ्ठे पकावे। घन तैयार होनेपर चिकनेवर्तनमें रखछोडे। इसमेंसे १ मासेसे ३ मासेतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ भोजनसे पूर्व, मध्य अथवा अन्तमें लेनेसे वातज, पित्तज और परिणामशूल इनसवको यह नष्टकरताहै। इसयोगमें मण्डूरको गायकेदूध अथवा शतावरकेरस अथवा क्रमश दोनोंमें वुझाकर शुद्धकरे। कोईकोई नागरमोथा, पीपल, जीरा, धनिया, हर्रे, तज और इलायचीका चूर्ण ४–८ मासे प्रक्षेपमें डालतेहैं॥ ५४॥

५५ शतावरीमण्डूरम् (शर्करामण्डूरम्) २

शतावरीरसप्रस्थे प्रस्थे च सुरभीजले।
अजायाः पयसः प्रस्थे प्रस्थे धात्रीरसस्य च॥३१०॥
लोहकिट्टपलान्यष्टौ शर्करापलषोडश।
दत्त्वा चाष्टपलं सर्पिः पचेन्मृद्वग्निना भिषक्॥३११॥
सिद्धशीते घनीभूते चूर्णानीमानि दापयेत्।
यवानी त्रिफला व्योषं पिप्पली गजपिप्पली॥३१२॥
द्विजीरकघनानाञ्च श्लक्ष्णान्यक्षसमानि च।
मधुनस्त्रिपलश्चाऽत्र सिद्धे शीते प्रदापयेत॥ ३१३॥
भक्षेदग्निवलापेक्षी भक्तस्यादौ विचक्षणः।
शूलं सर्वोद्भवं हन्ति पक्तिशूलं विशेषतः॥ ३१४॥
रक्तपित्ताङ्गदाहञ्च साम्लपित्तं वमिन्तथा।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च कुक्षिवस्तिगुदोद्भवम्॥ ३१५॥
कासं श्वासं तथा शोषं ग्रहणीदोषनाशनम्।
यकृत्प्लीहोदरं गुल्मं राजयक्ष्मज्वरापहम्॥ ३१६॥
विष्टम्भवीर्यदौर्वल्यमग्निमान्द्यं तथैव च।
दुर्नामपाण्डुरोगञ्च कामलाञ्च हलीमकम॥ ३१७॥
सर्वांश्च नाशयत्याशु भास्करस्तिमिरं यथा।
दुग्धे निर्वापणं कार्यं मण्डूरस्य गवां जले॥
सप्तवाराष्टवारं वा रुद्धा निर्मलतां व्रजेत्॥ ३१८॥

र र, भै र, र का, शूले। भै. र, र का 'एतयोः शर्करालोहमितिनाम।

भाषा—शतावरीकारस, गोमूत्र, वकरीकादूध, आवलेका रस १–१ प्रस्थ, मण्डूरभस्म ८ पल, शक्कर २७ पल, घी ८ पल लेकर मन्दाग्निसे पकावे। घनतैयारहोनेपर उतारकर ठंढाकरके अजवाइन, त्रिफला, त्रिकटु, पीपल, गजपीपल, स्याहसफेदजीरे, नागरमोथा येसव १–१ कर्ष, मधु ३ पल मिलाकर चिकनेवर्तनमें रखछोडे। सातदिनवीतनेकेवाद इसमेंसे १ मासेसे ३ मासेतक भोजनकेपहिले रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे त्रिदोषजशूल, पक्तिशूल, रक्तपित्त, अङ्गदाह, अम्लपित्त, वमन, हृदयशूल, पार्श्वशूल, पेट, मूत्राशय और गुदोद्भवशूल, कास, श्वास, धातुशोष, ग्रहणी, यकृत्, प्लीहा, गुल्म, राजयक्ष्म, ज्वर, विष्टम्भ, शुक्रकी दुर्वलता, मन्दाग्नि, ववासीर, पाण्डु, कामला और हलीमक इनसवको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे सूर्य अन्धकारको। गायकेदूध अथवा मूत्रमें ७ या ८ बार वुझावे देनेसे मण्डूर शुद्धहोजाताहै॥ ५५॥

५६ शतावरीमण्डूरम् (शर्करामण्डूरम्)

विधिवच्छुद्धमण्डूरचूर्णं प्रस्थसमन्वितम्।
द्वौ प्रस्थौ शर्करायाश्च पट् पलानि घृतात्तथा॥३१९॥
वर्याश्च स्वरसार्धन्तु धात्रीरसतुलार्धकम्।
एकीकृत्य पचेदेतद्यावत्तत्तन्तुली भवेत्॥ ३२०॥
त्रिफलायाः पृथक्चूर्णं कुडवं तत्र निक्षिपेत्।
त्र्योपं त्रिलवणं कुष्ठं तुम्बुरूणि च दीप्यकम्॥३२१॥
द्विजीरकं विडङ्गानि चातुर्जातकमेव च।
एषां चूर्णीकृतानाञ्च भागं पलमितं पृथक्॥ ३२२॥
पलान्यष्टौ शिवाचूर्णात्कुडवञ्च यवाग्रजात्।
पलं पलं कणामूलं चव्यचित्रकमूलतः॥ ३२३॥
उत्तार्य शीते माक्षीकात्ततस्त्रिपलसम्मितम्।
खादेदग्निवलापेक्षी भोजनादौ विचक्षणः॥
शूलं सर्वोद्भवं हन्ति पक्तिशूलं विशेषतः॥ ३२४॥

र.का., शूलाऽधिकारे।

भाषा—विधिपूर्वकशोधनकियेहुए मण्डूरकाचूर्ण १ प्रस्थ, शक्कर २ प्रस्थ, गोघृत ६ पल, शतावरीका स्वरस १६ पल, पके आवलोंकास्वरस ५० पल लेकर सबकी दोतारी चाशनी तैयारहोनेपर उतारकर हर्रे, बहेड़ा, आवला ४–४ पल, त्रिकटु, तीनोंनमक, कुठ, धनियाँ, दोनोतरहके तुम्बुल (चिरफळ म०), अजवाइन, दोनोंजीरे, विडङ्ग, चातुर्जात १–१ पल, हर्रे ८ पल, यवक्षार ४ पल, पिपलामूल, चव्य और चित्रकमूल १–१ पल लेकर वारीकचूर्णकर चाशनीमें मिलाकर रक्खे। एकदम ठण्डाहोनेपर ३ पल मधु मिलाकर चिकनेवर्तनमें रखछोड़े। इसमेंसे ६ माशेसे १ तोलेतक मात्रा रोग और अग्निकावल देखकर भोजनके आदि, मध्य अथवा अन्तमेंदेनेसे त्रिदोपजशूल और खासकर परिणामशूल नष्टहोतेहैं॥ ५६॥

५७ शतावरीमोदकः

शतावर्यां श्वदंष्ट्रा च वला चातिवला तथा।
मर्कटीक्षुरवीजं च विदारीकन्दजं रजः॥ ३२५॥
एतानि समभागानि पलिकानि विचूर्णयेत्।
चूर्णाच्चतुर्गुणं देयं त्रैलोक्यविजयारजः॥ ३२६॥
सर्वमेकीकृतं यावत्तदर्द्धं माहिषं पयः।
तावन्मात्रेण दातव्यं शतावर्या रसं तथा॥ ३२७॥
विदार्याः स्वरसप्रस्थं सितापलशतं न्यसेत्।
गोलयित्वा सितां दत्त्वा पात्रे ताम्रमये दृढे॥ ३२८॥
पचेत्पाकविधिज्ञो हि मोदकः परमो हितः।
त्र्यूपणं त्रिफला शृङ्गी त्रिजातं सैन्धवं शटी॥३२९॥
धान्यकं वालकं मुस्तं द्विजीरं कुन्दुरु मुरा।
काकोली क्षीरकाकोली द्राक्षा तुङ्गा मृगाण्डजम्॥
जातीकोषफलेमांसी तालाङ्कुरकशेरुके।
शतपुष्पा चवी दारु ग्रन्थिकं सलवङ्गकम्॥ ३३१॥
कुष्ठं यवानिका चात्मगुप्ता कट्फलमेथिके।
खर्जूरानन्तमूले च तालीसं मधुकन्तथा॥ ३३२॥
टङ्कणञ्च विचूर्ण्याथ प्रत्येकं कोलसम्मितम्।
चूर्णार्द्धं शोधितं गन्धं शुद्धं पादांशपारदम्॥ ३३३॥
कज्जलीकृत्य दत्त्वान्तर्लोडयेत्त्रिसुगन्धिना।
यथाशक्त्या मोदकञ्च कर्पूरेणाऽधिवासयेत्॥३३४॥
तदुद्धृत्य स्निग्धभाण्डे स्थापयेच्च भिषग्वरः।
शिवं सम्पूज्य सगणं धन्वन्तरिमुनिं तथा॥ ३३५॥
कोलप्रमाणं कर्तव्यं क्षीरञ्चानु पिबेन्नरः।
प्रात र्भोजनकाले वा सायङ्कालेऽपि भक्षयेत्॥३३६॥
प्रमदाशतञ्च भजते न च शुक्रक्षयं भवेत्।
नातः परतरं किञ्चिद्विद्यते वाजिकर्मसु॥
शतावरीमोदकञ्च वासुदेवेन निर्मितम्॥ ३३७॥

व., र र., वाजीकरणाऽधिकारे।

भाषा—दोनोंतरहकीशतावर, गोखरू, खरेंटी गंगेरन, केवाच और तालमखानेकेवीज, विदारीकन्द १–१ पल लेकर वारीकचूर्णकर सबसे चौगुना भागकाचूर्ण, इनसबसे आधा भैंसका घी और शतावरकारस, विदारीकास्वरस १ प्रस्थ, शक्कर १०० पल लेकर तावेकेपात्रमें सबकी चाशनी वनावे। फिर त्रिकटु, त्रिफला, काकड़ासींगी, त्रिजात, सेंधानमक, कचूर, धनिया, सुगन्धवाला, नागरमोथा, दोनोंजीरे, कुदरू, मुरमकी, काकोली, क्षीरकाकोली, द्राक्ष, वंसलोचन, कस्तूरी, जावित्री, जायफल, जटामासी, ताडवाली, कसेरू, सोंफ, चव्य, देवदारु, गठिवन, लौंग, कुठ, अजवाइन, केवाच, कायफल, मेथी, छुहारा, अनन्तमूल, तालीसपत्र, मुलहठी भुनासुहागा येसब ८–८ माशे, शुद्धगन्धक सवसे आधी और शुद्धपारा चौथाभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सवको ऊपरकी चाशनीमें मिलाकर तज, पत्रज और इलायचीकेचूर्णका यथोचित प्रक्षेप देकर अग्निकावलावल देखकर मोदक वनाय कपूरसे अधिवासितकर चिकनेवर्तनमें रखछोड़े। फिर गणसहितशिवजी और धन्वन्तरिभगवानका पूजनकर आधेतोलेकीमात्रासेशुरूकरे और धीरे २ वढाताजाय, ऊपरसेदूधपीवे। सुवह, भोजनके समय अथवा सायंकाल प्रकृतिकेअनुसार समयका निर्धारणकर मात्राखावे। इसके सेवनसे वहुतसीस्त्रियोंकेसाथ सम्भोगकरनेपरभी शुक्रकाक्षय नहीं होता॥

५८ शतावरीलोहम्

कान्तचूर्णं शतावरीभावितं भृङ्गराजेन
मध्वाज्यं त्रिशती भवेत्॥ ३३८॥

आ पु, रसायने।

भाषा—कान्तलोहभस्ममें यथाशक्य शतावरीकेरसकी भावनाए देकर भंगरेकेरस, मधु और घृतकेसाथ ३ रत्तीसे १ माशेतककीमात्रा लेनेसे और पथ्यपालन करनेसे ३०० वर्पतक जीसक्ताहै॥ ५८॥

५९ शम्बूकभस्मयोगः

शम्बूकजं भस्मपीतं जलेनोष्णेन तत्क्षणात्।
पक्तिजं विनिहन्त्याशु शूलं विष्णुरिवासुरान्॥३३९॥

वै. चि, वृ मा, च द, यो र, नि र, यो त शूले।

भाषा—३ माशे घोंघेकीभस्मको गरमजलकेसाथ लेनेमे यह पक्तिशूलको इसतरहनष्टकरताहै जैसे विष्णुभगवान् असुरोंका नाशकरतेहैं ॥ ५९ ॥

६० शम्बूकरसः (प्रथमः)

अपिधानञ्च शम्बूकं प्रक्षाल्य सलिलैः शुभैः ।
रसगन्धकयोः कृत्वा कज्जली लेपितं तया ॥ ३४० ॥
षण्माषमानसितया द्विमाषेण च हिङ्गुना ।
ततो द्विपञ्चमूलीयसूक्ष्मकाण्डैः सचित्रकैः ॥ ३४१ ॥
पिधाय निखिलं तान्तु पूरयेत्कोद्रवोद्भवैः ।
पलालैः परितो मूषां पुटयेद्गोमयाग्निना ॥ ३४२ ॥
सूक्ष्मचूर्णं ततः कृत्वा गुटिका सक्तुमध्यगा ।
द्विमाषमानगिलिता शूलं जयति दारुणम ॥ ३४३ ॥
अतिसारं महाघोरं ग्रहणीञ्जयति ध्रुवम् ।
कुर्याच्च वह्निमत्युग्रं शम्बूकाख्यो महारसः ॥ ३४४ ॥

टो , ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—जीवरहितघोंघोंको गरमपानीसे धोकर ६ माशे शुद्धपारे और गन्धककीकज्जलीको पानीमें पीसकर चारोतरफ लेपकरदे । सूखनेपर २ माशे हींगकालेपदेकर दशमूल और चित्रकके बारीक टुकड़ोंमें बन्दकर कोदोकीघासमें लपेटकर डोरीसे अच्छीतरह बांधकर गेंदकेसदृश बनादे । फिर २–३ कपड़मिट्टी लगाकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर दशमूल और चित्रककेकाथसे १–२ दिन घोटकर २–२ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली सत्तूकेभीतर रखकर निगलनेसे भयङ्करशूल, अतिसार और सङ्ग्रहणी इनको नष्टकर अग्निको प्रदीप्तकरताहै॥६०॥

६१ शम्बूकरसः (द्वितीयः)

दग्ध्वा शम्बूकसिन्धूत्थं क्षौद्रेण सह लेहयेत ।
निष्कैकेण जयत्याशु ग्रहणीञ्चातिदुःसहाम् ॥ ३४५ ॥
पानं व्यवायं व्यायाममीर्ष्याञ्च गुरुभोजनम् ।
वेगसंधारणं वर्ज्यं ग्रहणीदोषिणा सदा ॥ ३४६ ॥

टो.,र स ,वृ यो त , र च , ग्रहणीरोगे ।

भाषा—घोंघेकीभस्म और सेंधानमक समभागलेकर ४–४ माशेकी मात्रा मधुकेसाथ लेनेसे दु सह सङ्ग्रहणी नष्टहोतीहै । मद्यपान, व्यवाय, कसरत, ईर्ष्या, भारीभोजन, वेगसधारण इनसबका परित्यागकरे ॥ ६१ ॥

६२ शम्बूकादिवटी (प्रथमा)

पलानि त्रीणि शम्बूकाल्लोहचूर्णात्पलद्वयम् ।
रसाञ्जनात्पलञ्चैकं लोहकिट्टात्पुनः पलम् ॥ ३४७ ॥
सर्वैः समां शर्कराञ्च मधुना च परिप्लुताम् ।
सर्वमेतत्समाहृत्य मोदकान्कारयेद्भिषक् ॥ ३४८ ॥
भक्षयेत्तान् प्रयत्नेन शूले गुल्मे हृदामये ।
विशेषत. पक्तिशूले शोफे पाण्डूदरे भ्रमे ॥ ३४९ ॥
दुर्नाम्नि कासे कृच्छ्रे च प्रमेहाश्मरिवृद्धिषु ।
अग्निमान्द्ये स्मृतिभ्रंशे पीनसार्द्धावभेदके ॥ ३५० ॥

ग नि ,यो. म ,टो.,वृ यो त ,लो.प ,ना. वि.,शूलाधिकारे।

टि०—या ग ,टो., वृ. यो त , ना वि. एषु ग्रन्थेषु शम्बूकादिमोदक इतिनाम । नारायणविलास आमवाताधिकार । लो. प. शम्बूकायस इतिनाम ।

भाषा—घोंघेकीभस्म ३ पल, लोहभस्म २ पल, रसौत और मण्डूरभस्म १–१ पल लेकर सबकीबराबर शक्कर मिलाय मधुमें मोदक अथवा अवलेह बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ माशे समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे शूल, गुल्म, हृद्रोग, पक्तिशूल, सूजन पाण्डु, उदर, भ्रम, बवासीर, कास, मूत्रकृच्छ, प्रमेह, पथरी, समस्त अण्डवृद्धि, मन्दाग्नि, स्मृतिभ्रंश, पीनस और अर्धावभेदक येसब नष्टहोतेहैं ॥ ६२ ॥

६३ शम्बूकादिवटी (द्वितीया)

शम्बूकं त्र्यूषणं लोहं पञ्चैव लवणानि च ।
समांशैर्गुटिकां कृत्वा कलम्बुकरसेन च ॥ ३५१ ॥
प्रातर्भोजनकाले वा योज्यं नास्त्यत्र संशयः ।
हन्ति शूलं हि तत्सर्वं पक्तिजं वाप्यपक्तिजम ॥३५२॥

रससागर, भै. र , वै चि , ग. नि , वृ मा , च द , नि र , यो. र , चि सा , शूलाऽधिकारे ।

टि०—कुत्रचिल्लौह न दृश्यते । चिकित्सासारे त्र्यूषणस्थाने ऊषणमिति पाठो दृश्यते तथा च लोहस्याऽभाव ।

भाषा—घोंघेकीभस्म, त्रिकुटु, लोह पाचोंनमक सबसमभाग लेकर नाड़ीशाककेरसमे गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली भोजनकेसमय अथवा प्रातःकालदेनेसे पक्तिशूल अथवा साधारणशूलको यह नष्टकरतीहै ॥ ६३ ॥

६४ शम्भूरसः

शुद्धसूतस्य भागैकं कर्षकञ्च बलेस्तथा ।
अभ्रकस्य च कर्षं स्यात्तथैव शङ्खभस्मनः ॥ ३५३ ॥
विषसिन्धुजगत्कोलाः प्रत्येकं शाणसम्मिताः ।
एकत्र मर्दयेच्चुक्रं सर्वं कज्जलसन्निभम् ॥ ३५४ ॥
भुजङ्गवल्लीपर्णेन गुञ्जैको वह्निमान्द्यजित ।
अरुचौ वह्निमान्द्ये च प्रयोक्तव्यो रसोत्तमः ॥
अयं शम्भुरिति ख्यातो वह्निसन्दीपनः परः ॥ ३५५ ॥

र का , अग्निमान्द्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक और शङ्खभस्म १–१ कर्ष, शुद्धवछनाग, सेंधानमक, सोंठ और बेर ४–४ माशे लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय पानके रससे एकदिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली रोग अथवा समयोचितानुपानके साथदेनेसे मन्दाग्नि और अरुचिको यह नष्टकरताहै ॥ ६४ ॥

६५ शरभेश्वररसः

सुशुद्धं पारदं गन्धं वत्सनाभञ्च हिङ्गुलम् ।
टङ्कणञ्च समं मर्द्यं चित्रमूलकषायके ॥ ३५६ ॥

संशोष्य वालुकायन्त्रे द्वियामं वज्रमूषके।
समुद्धृत्य विचूर्ण्याऽथ देयस्त्रिकटुकद्रवैः॥ ३५७॥
वातपित्तकफैश्चोग्रं ज्वरं हरति तत्क्षणात्।
सन्निपातं निहन्त्याशु रसोऽयं शरभेश्वरः॥ ३५८॥

वै.चि., रसायनस, सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, वछनाग, शिगरिफ और सुहागा समभागलेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर चित्रककीजड़केक्वाथसे एकदिन मर्दनकर वज्रमूषामेंरख ६–७ कपड़मिट्टी देकर २ पहरकी वालुकायन्त्रकी अग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर त्रिकटुकेरसकेसाथ एकरत्तीसे दोरत्तीतक देनेसे त्रिदोषजज्वर और सन्निपात तत्क्षणनष्टहोताहै॥ ६५॥

६६ शर्करालोहम् (प्रथमम्)

सितातिक्तावलायष्टीत्रिफलारजनीयुगैः।
लोहं लिह्यात्समध्वाज्यं हलीमकनिवृत्तये॥ ३५९॥

यो. म., कामलायाम्।

भाषा—शक्कर, कुटकी, वला, मुलहठी, त्रिफला, हल्दी और दारुहल्दी समभागलेकर वारीकचूर्णकर सबकीवरावर लोहभस्म मिलाकर १–२ दिन मर्दनकर रखछोड़े। अथवा कुटकी वगैरहकेक्वाथसे २–४ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली औचिती देखकर मधु और घीकेसाथदेनेसे हलीमक नष्टहोताहै॥ ६६॥

६७ शर्करालोहम् (योगद्वयम्) २

निम्बं धात्री शर्करा लोहचूर्ण
क्षौद्रेणाक्तं गन्धकं वाऽभयाश्च॥ ३६०॥

र. दी., अम्लपित्ते।

भाषा—नीमकीछाल, आवले, शक्कर और लोहभस्म समभाग मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा उचितानुपानकेसाथलेनेमे अम्लपित्त नष्टहोताहै। गन्धक अथवा हर्रे मधुकेसाथलेनेसभी अम्लपित्त नष्टहोताहै॥ ६७॥

६८ शर्करालोहम् (तृतीयम्)

त्रिफलायास्ततो धात्र्याश्चूर्णं वा काललोहजम्।
शर्कराचूर्णसंयुक्तं सर्वशूलेषु लेहयेत्॥ ३६१॥

र चि, र र., ध, र स., र मु, शूले।

भाषा—त्रिफला, आवले और शक्कर समभागलेकर सबकी वरावर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा उचितानुपानकेसाथलेनेसे सवप्रकारके शूल नष्टहोतेहै॥ ६८॥

६९ शलभादिवटी (अर्कादिगुटिका)

रविशलभवेश्मगोधापुरीषकुङ्कुमकुसुम्भहरितालैः।
समनःशिलैः सकर्कटमांसार्करसैः कृता गुटिका ३६२
वृश्चिकदंशस्थाने सकृदपि संश्लेषणं विधायादौ।
अपरस्याङ्गे क्षिप्ता तद्विषसङ्क्रामणी भवति॥ ३६३॥

रा मा., वृश्चिकविषे।

भाषा—आकपरकीटिड्डी और छिपकलीकी विष्ठा, केशर, कुसुम्भके फूल, हरिताल, मैनसिल सबसमभागलेकर वारीकचूर्णकर केंकड़ेकेमांसरस और आकके दूधसे १–१ दिन मर्दनकर छोटीछोटी गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इसगोलीको पहिले विच्छूकाटेहुएस्थानमें एकवार छुवाकर उसीसमय दूसरे आदमीके अङ्गमें स्पर्शकरानेसे विच्छूका ज़हर चढ़जाताहै। यह साक्षात्परीक्षाकरनेकेलिये वतायागयाहै। फिरसे इसगोलीको आकके दूधवगैरहकेसाथ घिसकर वृश्चिकादिकीटोंके डंकपर लगानेसे समस्तकीटविष नष्टहोतेहै॥ ६९॥

७० शशाङ्करसः

जारयेदिष्टिकायन्त्रे शुद्धसूते द्विधा वलिम्।
उद्धृत्य तुल्यगन्धेन जम्बीरै मर्दयेद्दिनम्॥ ३६४॥
भृङ्गवाकुचिझिण्टीनामपामार्गाऽपराजिता-।
सर्पाक्षीणां द्रवे मर्द्य प्रतिद्रावं दिनं दिनम्॥ ३६५॥
तद्गोलं बन्धयेद्वस्त्रे मृल्लिप्तं स्वेदयेल्लघु।
द्वियामं वालुकायन्त्रे स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्॥
अष्टगुञ्जामितं खादेच्छशाङ्कः श्वेतकुष्ठजित्॥ ३६६॥

र. का., कुष्ठाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धपारेको इष्टिकायन्त्रमें रख द्विगुण गन्धक जारणकरे। फिर द्विगुणगन्धककेसाथ नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरी, भंगरा, वाकुची, नीलकटसरैया, अपामार्ग, कालीकोयल, अन्धाहूली इनप्रत्येककेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय ८ तह मलमलकेकपड़ेमें लपेटकर ३–४ कपड़मिट्टी लगाकर सुखनेपर वालुकायन्त्रमेंरख दोपहर मध्यमाग्निसे स्वेदनकरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ८–८ रत्ती उचितानुपानकेसाथ लेनेसे यह श्वेतकुष्ठको नष्टकरताहै॥ ७०॥

७१ शशिप्रभरसः

वृद्धिच्छिन्नाद्भिर्जैर्मर्द्य वङ्गेशायः शशिप्रभः।
तन्माषो मधुयुङ्मेहेऽप्यतिमूत्रे रसोनयुक्॥ ३६७॥

रसायनस., मेहे।

भाषा—शुद्धपारा, वङ्ग और लोहभस्म समभागलेकर विधारा और गिलोयकीजड़केरसोंसे १–१ दिन मर्दनकरे रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा मधुकेसाथदेनेसे प्रमेह और लहसनकेसाथदेनेसे वहुमूत्र नष्टहोताहै॥ ७१॥

७२ शशिशेखररसः (प्रथमः)

रसगन्धाभ्रहेमानि मौक्तिकं विद्रुमं तथा।
कन्याद्भिर्मर्दयेद्धस्रं ततः सिद्धो भवेद्रसः॥ ३६८॥
सर्वान् क्लोमगदान्हन्ति ह्यशीतिं मारुतोद्भवान्।
पैत्तिकान्निखिलांश्चाऽपि श्लैष्मिकानप्ययं ध्रुवम् ३६९

भै. र., क्लोमरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक, सुवर्ण, मोती प्रवाल इनकीभस्में सव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर एक-

दिन घीकुवारकेरसकी भावनादेकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ या २ गोली रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त क्लीमरोग, अस्सी वातरोग, समस्त पित्त तथा कफरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ७२ ॥

७३ शशिशेखररसः (द्वितीयः)

लोहमभ्रञ्च सिन्दूरं मर्दयेत्कन्यकाम्बुना ।
अस्य रक्तिमितं दद्यादन्त्ररोगनिवृत्तये ॥ ३७० ॥

भै. र, अन्त्ररोगे ।

भाषा—लोह और अभ्रकभस्म, रससिन्दूर सब समभागलेकर घीकुंवारकेरससे एकदिनमर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियाबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली घीकुंवारकेरसकेसाथदेनेसे यह अन्त्ररोगोंको नष्टकरताहै ॥ ७३ ॥

७४ शाखाकामलायोगत्रयम्

शाखाकामलिकां वदन्ति मुनयश्चेमां यतस्संस्थितां,
शाखास्वेव शिलाजतु प्रतिदिनं पेयं सकृन्मूत्रकम् ।
मण्डूरं मधुना युतञ्च नियतं सेव्यञ्च लोहं परं,
निष्कैकं खलु कुम्भकामलिगदे युक्तं तु योगत्रयम् ३७१

चि क, कामलायाम् ।

भाषा—रोगीका बलाबलदेखकर शुद्धशिलाजीत ३ माशेसे १ तोलेतक गोमूत्रकेसाथलेवे । अथवा शुद्धमण्डूर १ माशेसे ३ माशेतक लेकर गोमूत्रका सेवनकरे । अथवा लोहभस्म १ रत्तीसे ३ रत्तीतक मधुकेसाथलेकर गोमूत्रपीनेसे कुम्भकामला नष्टहोतीहै ॥

७५ शाम्भवीरसः

शुद्धपारदगन्धौ द्वौ टङ्कणं नागराऽभया ।
एरण्डदन्तिबीजानि गौरीपाषाणकं समम् ॥ ३७२ ॥
मर्द्यं जम्बीरनीरेण खल्वमध्ये दिनत्रयम् ।
शरावे दिनमेकञ्च पुटे कुक्कुटके पचेत् ॥ ३७३ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य मर्द्यमैरण्डतैलके ।
दशांशं मरिचं दत्त्वा मरिचाऽर्द्धं विषं क्षिपेत् ॥३७४॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वज्वरहरं परम् ।
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं तृषार्थे नारिकेलजम् ॥
पार्वतीनिर्मितः पूर्वं नाम्नाऽयं शाम्भवीरसः ॥३७५॥

वै चि, र क. यो, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और सुहागा, सोंठ, हर्रे, एरण्डबीज, शुद्धजमालगोटा और सोमल समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरीकेरससे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें रख कुक्कुटपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर एरण्डतैलमें एकदिनमर्दनकर दशवा हिस्सा मरिच और मरिचसे आधा शुद्ध वच्छनाग मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै । भूखलगनेपर दही, भात खानेकोदे । अधिकप्यास लगनेपर नारियलकाजलदे ॥ ७५ ॥

७६ शार्भेन्द्ररसः

सूतं गन्धकशुल्वभस्म दरदं तालं शिला टङ्कणं,
माक्षीकं त्रिफला विषं त्रिकटुकं नेपालतुत्थं समम् ।
निर्गुण्ड्या रसमर्दितं मुनिदिनं गुञ्जाप्रमाणा वटी,
सर्वव्याधिहरं त्रिदोषहरणं सर्वज्वरे सत्वरम् ॥३७६॥

र. क यो., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, शुद्धशिंगरिफ, हरिताल, मैनसिल, सुहागा और सोनामाखी, त्रिफला, शुद्ध वच्छनाग, त्रिकुटु, शुद्धजमालगोटा, तुत्थभस्म सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर ७ दिन निर्गुण्डीकेरससे मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै । त्रिदोषको शीघ्रकाबूमें लाकर समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै ॥७६॥

७७ शारिवादिलोहम्

शारिवा नीलिनी रास्ना गुडूच्येला च चित्रकः ।
मानसूरणशङ्खिन्यस्त्रिवृद्भल्लातकाऽभयाः ॥ ३७७ ॥
एभि र्युतमयो हन्ति प्रमेहपिडिका दश ।
वातरक्तं षडर्शांसि त्वग्गदान्निखिलानपि ॥ ३७८ ॥

भै र, प्रमेहपिडिकायाम् ।

भाषा—अनन्तमूल, नील, रास्ना, गिलोय, इलायची, चित्रकमूल, मानकन्द, सूरण, कालादाना, निसोत, शुद्धभिलावा और हर्रे समभागलेकर बारीकचूर्णकर सबकीबराबर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े । अथवा अनन्तमूल वगैरहके स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ भावना देकर १-१ माशेकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अनन्तमूलवगैरहकेक्वाथ अथवा समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे १० प्रकारकी प्रमेहपिडिका, वातरक्त, ६ प्रकारकेबवासीर और त्वचाकेरोग नष्टहोतेहैं ॥ ७७ ॥

७८ शिरोरोगहररसः (प्रथमः)

रसं गन्धकमभ्रञ्च लोहं कर्षमितं पृथक् ।
स्वर्णं शाणमितञ्चैव दार्व्याख्यञ्च विषं तथा ॥ ३७९ ॥
भृङ्गराजाम्भसा सम्यङ्मर्दयित्वा विचक्षणः ।
रक्तिकार्धमिताः कुर्याद्वटीश्चण्डांशुशोषिताः ॥ ३८० ॥
शिरोरोगहरो नाम रसोऽयं हरनिर्मितः ।
हरेत्सर्वान् शिरोरोगान्विरामे यदि सेवितः ॥ ३८१ ॥

आ वि, शिरोरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक और लोहभस्म १-१ कर्ष, सुवर्णभस्म और शुद्धदालचिकना ४-४ माशे लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर भंगरेकेरससे १-२ दिन मर्दनकर आधीआधीरत्तीकी गोलिया बनाकर कड़ीधूपमें सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली १-१ दिनके अन्तरसे समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तशिरोरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ७८ ॥

७९ शिरोरोगहररसः (गगनमुखरसः) २

गगनं स्याद्रसे चीर्णं तीक्ष्णं शुल्वं सुरायसम् ।
वज्रयामयरसे घृष्टं सूर्यावर्तविनाशनम् ॥ ३८२ ॥

रसेन्द्रमं, शिरोरोगे ।

भाषा—समभागमें अभ्रकजारणकियाहुआपारा, लोह, तावा और सुवर्णभस्म समभागलेकर थूहर और कुठके द्रवोंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे सूर्यावर्त नष्टहोताहै॥७९॥

८० शिरोवज्ररसः

पलं सूतात्पलं गन्धात्पलं लौहात्पलं रवेः ।
गुग्गुलोः पलचत्वारि तदर्द्धं त्रिफलारजः ॥ ३८३ ॥
यष्टीमधु कणा शुण्ठी गोक्षुरं क्रिमिनाशनम् ।
तोलकं दशमूलञ्च प्रत्येकं परिकल्पयेत् ॥ ३८४ ॥
क्काथेन दशमूल्याश्च यथास्वं परिभावयेत् ।
घृतयोगेन कर्तव्या माषैकप्रमिता वटी ॥ ३८५ ॥
छागीदुग्धेन वा सेव्या मधुना पयसाऽथवा ।
वातिकीं पैत्तिकीञ्चैव श्लैष्मिकीं सान्निपातिकीम् ३८६
शिरोऽर्तिं नाशयत्याशु वज्रं मुक्तमिवासुरम् ।
शिरोवज्ररसो नाम चन्द्रनाथेन भाषितः ॥ ३८७ ॥

र.सं., र.सु, भै.र., ध, शिरोरोगे। भै. र., ध, एतयोः रविस्थाने त्रिवृता नियोजिता नाम च **शिरःशूलादिवज्ररस** इति स्थापितम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और ताम्रभस्म १-१ पल, शुद्ध गूगल ४ पल, त्रिफला २ पल, मुलहठी, पीपल, सोंठ, गोखरू, विडङ्ग और दशमूल १-१ तोला लेकर पारेगन्धकको नीलवर्णकज्जलीमें सवकाचूर्णमिलाकर दशमूलकेकाढ़ेमें घोटकर घीकेयोगसे १-१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली वकरी अथवा गायकेदूध अथवा मधुकेसाथलेनेसे वात, पित्त, कफ और सन्निपातज शिरोवेदनाको यह नष्टकरताहै ॥ ८० ॥

८१ शिलागन्धकवटी (शिलाजतुवटी) १

शुद्धं सूतं समं गन्धं रक्तोत्पलदलद्रवैः ।
यामं मर्द्य पुनर्मर्द्य पूर्वादर्द्धं विनिःक्षिपेत् ॥ ३८८ ॥
कौटजं त्रिफला निम्वं पटोलघननागरैः ।
भावितानि दशाहानि रसे द्वित्रिगुणे तथा ॥ ३८९ ॥
शिलाजतु पलान्यष्टौ तावती सितशर्करा ।
त्वक्क्षीरीपिप्पलीधात्रीकर्कटाख्यान्पलोन्मितान् ३९०
निदिग्धिकाफलैः मूलैः पलं युञ्ज्यात्त्रिजातकम् ।
मधुनः पलसंयुक्तं कुर्यान्माषसमान्गुडान् ॥ ३९१ ॥
दाडिमाम्बुपयःपक्षिरसतोयसुवासितान् ।
तान्भक्षयित्वाऽत्र पिवेन्निरन्नो भुक्त एव वा ॥ ३९२॥
पाण्डुकुष्ठज्वरप्लीहतमकार्शोभगन्दरान् ।
पूतिविण्मूत्रशुक्रादिदोषमेहमहोदरान् ॥ ३९३ ॥
कासाऽसृग्रक्तपित्तञ्च प्रदरं रक्तसम्भवम् ।
तान्सर्वान् सुतरां हन्ति सर्वदोषहरा शिवा ॥ ३९४ ॥

र.र., भै र, प्रदराधिकारे ।

भाषा—१-१ पल शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर लालकमलके फूलोंकेरससे दोपहर मर्दनकर कुटज, त्रिफला और नीमकीछाल २-२ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर कज्जलीमें मिलाकर परवल, नागरमोथा और सोंठके दूने अथवा तिगुने स्वरससे १० दिन भावनादेकर शुद्धशिलाजीत और शक्कर ८-८ पल, वंशलोचन, पीपल, आवले, काकडासींगी, भटकटैयाका पञ्चाङ्ग और त्रिजात १-१ पलका वारीकचूर्ण और मधु १ पल पूर्वपिण्डमें मिलाय १-१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अनारकेरस, दूध, पक्षियोंकेमास अथवा जलकेसाथ औचितीदेखकर लेनेसे पाण्डु, कुष्ठ, ज्वर, प्लीहा, तमकश्वास, ववासीर, भगन्दर, विण्मूत्रगन्धवाला शुक्रविकार, प्रमेह, जलोदर, कास, रक्तपित्त, रक्तप्रदर इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ८१ ॥

८२ शिलागन्धकवटी (द्वितीया)

शिलागन्धकयोश्चूर्णं पृथग्भृङ्गरसाऽऽप्लुतम् ।
सप्ताहं भावयेत्सर्पिर्मधुभ्याञ्च विमर्दयेत्॥ ३९५ ॥
अर्शसश्चाऽनुलोम्यार्थं हताग्निबलवर्द्धनम् ।
रक्तिकाद्वितयं खादेत्कुष्ठादिसहितो नरः ॥ ३९६ ॥

र सं., र.चं, अर्शोरोगे ।

भाषा—शुद्धमैनसिल और गन्धकको भंगरेकेरसकी ७-७ भावनाए देकर इकट्ठेमिलाय घीके संयोगसे एकदिन मर्दनकरे फिर अन्दाज़से मधु डालकर २-२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह ववासीर और मन्दाग्निको नष्टकर वायुका अनुलोमन करतीहै ८२

८३ शिलाजतुचूर्णम् (प्रथमम्)

द्विपलं मार्कवं धातुमाक्षिकञ्च पुनर्नवा ।
तुगा स्पृक्का शालपर्णी वासकञ्च दुरालभा ॥ ३९७ ॥
चूर्णाऽर्द्धेन समं योज्यं त्रिगन्धं मरिचानि च ।
तालीसं मागधी चैव तदर्द्धेन शिलोद्भवम् ॥ ३९८ ॥
शिलाभेदं तदर्द्धेन सर्वं चैकत्र मिश्रयेत्।
समेन तिलचूर्णन्तु शर्करायाः समायुतम् ॥ ३९९ ॥
भक्षयेत्क्षीरपानं वा शस्यते घृतसंयुतम् ।
तेन क्षयो राजयक्ष्मा कामला च विनश्यति ॥ ४००॥
अपस्मारं जयत्याशु वले वीर्येऽधिको भवेत् ।
शाम्यन्ति च महारोगाः शुक्राढ्यो जायते नरः ४०१

हा स, क्षये ।

भाषा—भंगरा, सोनामाखी, पुनर्नवा, वशलोचन, अनन्तमूल, शालपर्णी, अडूसा, जवासा येसव २-२ पल, तज, पत्रज, इलायची, मरिच, तालीसपत्र, पीपल इनसवकाचूर्ण ८ पल, शिलाजीत ४ पल, पापाणभेद २ पल, कालेतिल और

शक्कर सबकीवरावर लेकर सबकावारीकचूर्णकर १–२ दिन इकट्ठे मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ माशेसे ६ माशेतकमात्रा घी मिलेहुए दूधकेसाथलेनेसे क्षय, राजयक्ष्म, कामला, अपस्मार, वलवीर्यनाश इनसबको नष्टकर मनुष्यको शुक्रपूर्णबनाताहै ॥८३॥

८४ शिलाजतुचूर्णम् (द्वितीयम्)

शैलजमाक्षिकयष्टिकयुक्तं त्र्योपविडङ्गफलत्रययुक्तम्।
सर्वसमं तलपोट्टकवीजं चूर्णमिदं दशमेहमपोहत् ४०२

वै चि, प्रमेहे।

भाषा—शुद्धशिलाजीत और सुवर्णमाक्षिक, मुलहठी, त्रिकटु, विडङ्ग और त्रिफला समभाग, इनसबकीवरावर तुवरक केवीजोंकी मज्जा लेकर सबका वारीकचूर्णकर ३–३ माशा दूधकेसाथलेनेसे यह श्लेष्मप्रधान१० प्रमेहोंको नष्टकरताहै॥८४॥

८५ शिलाजतुयोगः (प्रथमः)

छिन्नोद्भवाकषायेण शुद्धं सेव्यं शिलाजतु।
पञ्चकर्मविशुद्धेन वातरक्तप्रशान्तये ॥ ४०३ ॥

र का, वातरक्ताऽधिकारे।

भाषा—विधिपूर्वक सूर्यतापीशिलाजीत उचितमात्रामें गुडूचीकेक्काथकेसाथलेनेसे पञ्चकर्मसे विशुद्धरोगीके वातरक्तको यह नष्टकरताहै ॥ ८५ ॥

८६ शिलाजतुयोगः (द्वितीयः)

पीतं निरुद्धमचिराद्भिनत्ति मूत्रस्य सङ्घातम्।
वीरजतरुगणसिद्धं शिलाजतु त्वतिविशुद्धं तत् ४०४

र का., मूत्राघाते।

भाषा—शुद्धशिलाजीतको वीरतर्वादिगणक्काथकेसाथ देनेसे वहुतदिनके पुराने मूत्राघातको यह नष्टकरताहै ॥ ८६ ॥

८७ शिलाजतुयोगः (तृतीयः)

त्रिःसप्तवारांश्शैलेयं भाव्यं सालादिजाम्भसा।
पिबेत्सारोदकेनैव श्लक्ष्णपिष्टं यथाबलम् ॥ ४०५ ॥
जाङ्गलेन रसेनाद्यात्तस्मिञ्जीर्णे तु भोजनम्।
विजित्य मधुमेहाख्यमातङ्गं रोगसङ्कटम् ॥
वपुर्वर्णवलोपेतः शतं जीवत्यनामयः ॥ ४०६ ॥

र.का, मेहाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धशिलाजीतको सालसारादिगणक्काथकी २१ भावनाएं देकर रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेलेकर १ तोलेतक रोगीका अग्निवल देखकर सालसारादिगणक्काथकेसाथ देवे। भूखलगनेपर जाङ्गलपशुपक्षियोंकेमासरसकेसाथ भोजनदेवेतो उपद्रवयुक्तमधुमेहको जीतकर वलवर्णयुक्त होकर १०० वर्षतक निरोगी रहकर जीताहै ॥ ८७ ॥

८८ शिलाजतुयोगः (चतुर्थ)

शिलाजतुरजः पीत्वा प्रातः क्षीरसितायुतम्।
मुच्यते सर्वमेहेभ्यः त्रिःसप्तदिवसै र्नरः ॥ ४०७ ॥

वै. चि, वै क, प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—शुद्धशिलाजीत ३ माशेसे १ तोलेतक अग्निवल देखकर प्रातःकाल दूध और शक्करकेसाथलेनेसे २१ दिनमें समस्तप्रमेहोंसेरहितहोजाताहै ॥ ८८ ॥

८९ शिलाजतुयोगः (पञ्चमः)

फलत्रिकक्काथविशुद्धमाद्रौ
शुद्धं गुडूच्या दशमूलशुद्धम्।
स्थिरादिकाकोलियुगादिशुद्धं
शिलाजतु स्यात्क्षयिषु प्रशस्तम् ॥ ४०८ ॥

र का, क्षयाऽधिकारे।

भाषा—त्रिफला, गिलोय, दशमूल, स्थिरादि और काकोल्यादिगणोंकेक्काथोंसे क्रमसे भावनाएंदियाहुआ शुद्धशिलाजीत उचितमात्रामें लेनेसे क्षयरोग नष्टहोताहै ॥ ८९ ॥

९० शिलाजतुयोगः (षष्ठः)

शिलाह्वयं वा त्रिफलारसेन
हन्यात्त्रिदोषं श्वयथुं प्रसह्य।
अन्नैः पिबेद्वा गुरुभिन्नवर्चाः
सत्र्योपसौवर्चलमाक्षिकैश्च ॥
विड्वातसङ्गे पयसा रसै र्वा
प्रायः समद्यादुरुबूकतैलम् ॥ ४०९ ॥

र का, शोथाऽधिकारे।

भाषा—त्रिफलाकेक्काथकेसाथ शुद्धशिलाजीत ३ माशेसे १ तोलेतककी मात्रामें औचिती देखकर लेनेसे यह त्रिदोषजशोथको दूरकरताहै। इसके सेवनसे वज़नदार अथवा पतले दस्तहोनेलगेंतो त्रिकटु, संचल और सोनामाखीकेसाथ अन्नदे। मल और वायुका अवरोधहोनेपर दूध अथवा जागल मासरसकेसाथदेवे। यदि इससेमी अवरोध शान्त न हो तो वीचवीचमें एरण्डतैलका औचिती देखकर प्रयोगकरे ॥ ९० ॥

९१ शिलाजतुयोगः (सप्तमः)

शिलाजतुं गुग्गुलुं वा पिप्पलीमथ नागरम्।
ऊरुस्तम्भे पिबेन्मूत्रै र्दशमूलीजलेन वा ॥ ४१० ॥

वै. चि, ऊरुस्तम्भे।

भाषा—शुद्धशिलाजीत, गूगल, पीपल और सोंठ इनसबको समभागमें मिलाकर अथवा अलग २ औचितीदेखकर गोमूत्र अथवा दशमूलकेकाढेकेसाथ देनेसे ऊरुस्तम्भ नष्टहोताहै ॥९१॥

९२ शिलाजतुयोगः (अष्टमः)

लाजाजतुशिलामांसीमधुकैश्चूर्णितैः समैः।
मधुयुक्तैः शिशो र्लेहः सर्वज्वरनिवारणः ॥ ४११ ॥

हितो, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—धानकीखील, शिलाजीत, मैनसिल, जटामासी, मुलहठी, सबसमभागलेकर वारीकचूर्णकर १–२ पहर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक मधुकेसाथदेनेसे बच्चोंके सबप्रकारकेज्वर नष्टहोतेहै ॥ ९२ ॥

९३ शिलाजत्वादियोगः

गोमूत्रेण पिबेत्कुम्भकामलायां शिलाजतु ।
मासं माक्षिकधातुं वा किट्टं वाऽथ हिरण्यजम् ४१२

ग नि., अ सं, अ हृ., सु सं, भा प्र., चि.सा., कामलायाम् ।

टि०—भावप्रकाशे चिकित्सासारे च गोमूत्रेण पिबेत्कुम्भकामलाया शिलाजतु,, इत्यर्द्धश्लोकेन योग प्रकल्पित । सुश्रुते हेमज किट्ट नाऽस्ति ।

भाषा—शिलाजीत, सोनामाखी, सुवर्णकाकिट्ट इनमेंसे किसीएकको गोमूत्रकेसाथ एकमहीनेतक देनेसे कुम्भकामला नष्टहोतीहै ॥ ९३ ॥

९४ शिलाजत्वादिलोहम् (प्रथमम्)

शिलाजतु मधु व्योषं तार्क्ष्यं लोहरजस्तथा ।
क्षीरेण लेहितस्याशु क्षयः क्षयमवाप्नुयात् ॥ ४१३ ॥

र सं, भै र, र. चि., यो म., ध, र. चं, र. सि, र सु, र. (मा), र का, यो. र., र. सं. क, रसायनसं., ग. नि, क्षयाऽधिकारे । र (मा) **शिलासाररस** इति नाम । र. सं. क, रसायनसं., एतयो **क्षयारिरस** इतिनाम ।

भाषा—शुद्धशिलाजीत, मधु, त्रिकटु, सोनामाखी और लोहभस्म समभागलेकर इकट्ठेमिलाय १–२ पहर मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेसे २ माशेतकमात्रा औचितीदेखकर दूधकेसाथदेनेसे क्षय नष्टहोताहै ॥ ९४ ॥

९५ शिलाजत्वादिलोहम् (द्वितीयम्)

शिलाजतुयुतं लोहवल्लन्तु विधिमारितम् ।
पथ्याशी सेवते यस्तु स यक्ष्माणं व्यपोहति ॥ ४१४॥

वृ यो त, र. सु, यो र, क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—२ रत्तीलोहभस्म और ३ माशेसे १ तोलेतक शिलाजीत दोनोंको मिलाकर औचिती देखकर देनेसे और पथ्यका पालनकरानेसे राजयक्ष्मसहित असाध्यरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥

९६ शिलाजत्वादिवटी

शिलाजत्वभ्रहेमानि लौहगुग्गुलुटङ्कणम् ।
केशराजस्य तोयेन मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥ ४१५ ॥
वल्लमानां वटीं कृत्वा शैवालसलिलेन च ।
प्रातः प्रातः प्रयुञ्जीत शुक्रमेहनिवृत्तये ॥ ४१६ ॥

भै. र, शुक्रमेहे ।

भाषा—शुद्धशिलाजीत, अभ्रक, सुवर्ण और लोहभस्म, शुद्धगूगल और सुहागा सब समभागलेकर कालेभंगरेके रससे दोदिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शिवालके पानीकेसाथ प्रातःकालमें लेनेसे शुक्रमेह नष्टहोताहै ॥ ९६ ॥

९७ शिलातालरसः (श्वासकासारिः)

त्रिकण्टकरसै र्भाव्यं तालमेकं चतुःशिला ।
व्योमायस्तारपिष्टिश्च दत्त्वा तद्गुटिकां चरेत् ॥ ४१७॥
दिनं वासारसैः पिष्ट्वा वालुकायन्त्रपाचिताम् ।
छियामान्ते समुद्धृत्य तत्तुल्यश्च कटुत्रयम् ॥ ४१८ ॥
निर्गुण्डीमूलचूर्णन्तु व्योमतुल्यं विमिश्रयेत् ।
शिलातालो रसो नाम माषैकं श्वासकासजित् ॥४१९

कटुत्रयं पावकदेवदारु-
रास्नाविडङ्गत्रिफलाऽमृतानाम् ।
चूर्णं समांशं सितया समेतं
कासं जयेद्विष्णुरिवाशु दैत्यान् ॥ ४२० ॥

र. को, र. सु, वै. चि., र. वो, र. क., रसायनसं., र. सं क., व रा कासाऽधिकारे ।

टि०—रसेन्द्रकल्पद्रुमे त्रिकण्टकस्थाने द्राक्षा गृहीता अन्यत्सर्वं समानम्, नाम च **तालकवटीति** स्थापितम् । र स, क श्वासकामारीति नाम स्थापितम् । वसवराजीये जिह्वकुष्ठे प्रयोग कृतोऽस्ति ।

भाषा—हरितालभस्म १ भाग, गोमूत्रमें १०० वार वुझाई हुई मैनसिल ४ भा, अभ्रक, लोह और तारपिष्टी (शुद्धचादीके गोलपत्रेको कोयलोंपर रख गन्धक और हरितालकेचूर्णका पत्रेसे अष्टमाश प्रक्षेपदेकर जलावे । इसपत्रेके वीचमें थोड़ागर्त बनाले । जिससमय तारपिष्टी वनानीहो तव पत्रेको कोयलोंपर रख गर्तमें पारा छोडदे । आचलगनेसे पारा गाढ़ा होजायगा, इसको मोटेकपड़ेमेंसे छानले जो कड़ाभाग हो उसे रखले और दूसरेको फिर उसीतरह गर्तमें रख गरमकर छाने । इसतरह जितना पारा गाढ़ा करनाहो उतना करले फिर इसपिष्टीको १–२ पहर नीबूके रसमें घोटकर कालिमा दूरकरदे । गोलीको ४ तह मलमलके कपड़ेमें वाधकर काजी अथवा नीबूकेरसमें ४ पहर स्वेदनकरनेसे तारपिष्टी तैयारहोगी । अथवा पारेसे चतुर्थांश रजतभस्म मिलाकर १–२ पहर नीबूके रसके साथ घोटनेसे तारपिष्टी तैयार होगी ।) १–१ भाग लेकर गोखरू और अडूसेकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय ४ तह कपड़ेमें लपेट १–२ कपड़मिट्टी चढ़ाय सुखाकर दोपहर वालुकायन्त्रमें स्वेदितकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इसकीबरावर त्रिकटुकाचूर्ण और अभ्रककीवरावर निर्गुण्डीकीजड़काचूर्ण मिलावे । इसमेंसे १–१ माशा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह श्वासकासको नष्टकरताहै । इसके ऊपर त्रिकटु, चित्रकमूल, देवदारु, रास्ना, विडङ्ग, त्रिफला, गिलोय सव समभाग और सवकीवरावर शक्कर मिलाय एकमाशेसे ३ माशेतक अनुपानमें देनेसे अतिशीघ्र श्वास और कास निवृत्तहोताहै । ऊपरकहाहुआयोग तैयार न होनेपर केवल इस अनुपानसेभी काम चलसक्ताहै ॥ ९७ ॥

९८ शिलादिगुटिका

कर्षैका च मनःशिला द्विगुणिता प्रोक्तोपकुल्याह्वया,
वर्षैश्चापि गतः पुराणपदवीं शुद्धो गुडोऽपि त्रिभिः ।
तान्सम्मेल्य विधाय सप्त गुटिकाः खादेत्क्रमात्सघृतम्।
मुच्येताशु भगन्दराच्चतुरहः कालाद्भमन्नैकशः ॥४२१॥

रसायनसं., भगन्दराधिकारे ।

भाषा—शुद्धमैनसिल १ कर्ष, मगरैल २ कर्ष, पुरानागुड़ ३ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर तीनोंको इकट्ठा कूटकर ७ गोलिया बनावे। इनमेंसे १-१ गोली घीमें मिलाकर खानेसे कईवार वमनहोगी। उपद्रव शान्तहोनेपर गेंहू और चनेकीरोटी घी तथा शक्करकेसाथखाय। पाचवेंदिनसे वमन बन्दहोजायगी। इन ७ गोलियोंके पूरेहोनेपर भगन्दरसे निवृत्तहोताहै॥ ९८॥

९९ शिलापूतरसः

चूर्णं पाठेन्द्रवारुण्यो र्भाण्डे दत्त्वा मनश्शिलाम्।
तत्पृष्ठे शुद्धसूतन्तु कुनट्यंशं प्रदापयेत्॥ ४२२॥
सूतार्द्धं कुनटीचूर्णं तस्योर्द्ध्वं पूर्वमूलिका-।
चूर्णं दत्त्वा पचेच्चुल्ल्यां यामाष्टं मृदुवह्निना॥ ४२३॥
शिलापूतो रसो नाम हन्ति हिक्कां त्रिगुञ्जकः।
रास्नावृहत्यग्निवलाक्वाथं दुग्धञ्च पाययेत्॥
हिक्किनं पाययेद्धूमं पत्रैः शिखिनिशोद्भवैः॥ ४२४॥

र र स, र चं, र को, र का, हिक्कायाम्। र. का शिलाद्यन्तरसेति नाम, परन्तु तत्र भ्रष्ट पाठोऽस्तीति विद्वद्भिरविस्मरणीयम्।

भाषा—पाठा और इन्द्रायणकाचूर्ण घड़ेके पेंदेमें विछाकर इससे चतुर्थांश मैनसिल विछावे। उसपर मैनसिलकेवरावर शुद्धपारा रखकर पारेसेआधे मैनसिलके चूर्णसे ढककर पाठा और इन्द्रायणकेचूर्णसे ढकदे। फिर पात्रका डमरूयन्त्रवनाय ६-७ कपड़मिट्टीदेकर अच्छीतरह सुखाय चूल्हेपररख ८ पहरकी मृदुअग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे डमरूयन्त्रका मुह उघाड़ ऊपरकेपात्रमें लगेहुए जौहरको निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा सोंठकेचूर्णकेसाथ मिलाकरदेवे, ऊपरसे रास्ना, वनभाटा, चित्रक, वला इनकाक्वाथ अथवा दूध पिलावे। इसपर चित्रक और हल्दीका धूमपानकरानेसे हिचकी नष्टहोतीहै९९

१०० शिलावद्धरसः

मृतसूतस्य भागैकं भागैकं शोधितां शिलाम्।
दिनं जम्वीरजै र्द्रावै र्मर्द्यं रुद्ध्वा धमेल्लघु॥ ४२५॥
शिलावद्धो रसो नाम गुञ्जैकः पित्तशूलजित्।
एकं हिङ्गु शतं पथ्या त्रिः शुण्ठी द्विः सुवर्चला।
एतच्चूर्णञ्च कर्षैकमनुस्याच्छूलशान्तये॥ ४२६॥

र.र, टो., यो म, र र कौ, र क.ल, रसायनस., शूलाऽधिकारे। योगमहार्णवे रसायनसङ्ग्रहे च षड्भागा मन शिला नियोजिता। रसायनसङ्ग्रहे शिखिवद्धरस इति नाम।

भाषा—पारदभस्म और शुद्धमैनसिल समभागलेकर एकदिन जमीरीकेरससे मर्दनकर वज्रमूषामें वन्दकर वहुत मन्द अग्निमें धमनकरे। इसमेंसे १-१ रत्ती उचितानुपानकेसाथदेकर भुनीहींग १ तोला, हर्रे १०० तो, सोंठ ३ तो, सज्जी २ तो. इनका वारीकचूर्णकर १ तोला अनुपानकेतौरपर खिलानेसे पित्तशूल शान्तहोताहै॥ १००॥

१०१ शिलायोगः

शिलाव्योषाऽभयाहिङ्गुविडङ्गसैन्धवैः समैः।
लेहोऽयं समधुः कासहिक्काश्वासेषु शस्यते॥४२७॥

हितो, र र.स., कासादौ।

टि०—रसरत्नसमुच्चये व्योषस्थाने केवल मरिच गृहीत कुष्ठञ्चाऽधिकतया नियोजितम्। कुष्ठस्याऽत्रैव योग विधायक एव योगो निष्पादनीय

भाषा—शुद्धमैनसिल, त्रिकुटा, हर्रे, भुनीहींग, विडङ्ग, कुठ और सेंधानमक समभागलेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ माशा घृत और मधुकेसाथलेनेसे यह कास, हिचकी और श्वासको नष्टकरताहै॥ १०१॥

१०२ शिलावीररसः

रसभस्मसमं गन्धं शिलाजत्वम्लवेतसम्।
यामैकं मर्दयेत्सर्वं मधुसर्पिर्युतं लिहेत्॥ ४२८॥
निष्कैकैकं वर्षमात्रं शिलावीरो महारसः।
जराकालं निहन्त्याशु जीवेद्वर्षशतत्रयम्॥ ४२९॥
पलार्द्धं मुशलीचूर्णं भृङ्गराजरसैः पिवेत्।
धात्रीफलरसै र्वाऽथ क्रामकं ह्यनुपानकम्॥ ४३०॥

र स., र.क, रसायनसं, रसायने।

टि०—रसेन्द्रकल्पद्रुमे गन्धकस्थाने माक्षिक गृहीतम्। र को., र म मा, एतयो सर्वरोगघ्न इति नाम, अनुपानञ्च न दृश्यते अतस्तस्यात्रैवाऽन्तर्भाव करणीय, तत्र मात्रा द्वेमाषिकी निर्धारिता सा लक्षिलिकरी, न हि मात्राया निश्चितताऽस्ति तस्या देशकालाद्यपेक्षत्वात्

भाषा—पारदभस्म, शुद्धगन्धक, शिलाजीत और अम्लवेत समभागलेकर वारीकचूर्णकर एकपहर शुष्कमर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेसे ४ माशेतक उचितानुपानकेसाथ एकवर्षतकलेनेसे वुढापेको जीतकर ३०० वर्षकी आयुको प्राप्तहोसक्ताहै। आधापल मुशलीकाचूर्ण भंगरा अथवा आवलेकेरसकेसाथ लेनेसे शरीरमें रसका सङ्क्रमणहोताहै

विशेषसूचना—इसमें ४ माशेकीमात्रा और आधापलमुशलीका जो अनुपानलिखाहै सो ग्रन्थकारने किसीको देकर नहीं देखाहोगा ऐसा प्रतीत होताहै क्योंकि नित्यनाथ कोई सतयुगमें नहीं हुएहै जो कि इतनीमात्रा उससमय लोग सहन करतेहों। इसीलिये साधारणतया इसकी १ माशेकी मात्रा और ४ माशे मुशलीकाचूर्णदेना उचित प्रतीत होताहै। हा कोई भीमाहार हो और पूरीमात्राको हजमकरसक्ता हो तो उसे देनेमें हर्ज नहीं। साधारणलोगोंको पहिले पूरीमात्रा देनेमें आमवात होनेका सम्भवहै॥ १०२॥

१०३ शिलासिन्दूरम् (शिलाचन्द्रोदयः) १

मनःशिलामार्द्रद्रवै र्विमर्द्य-
देकाधिकं विंशतिकृत्व आद्यम्।
संशोष्य संशोष्य तया समेशं
तत्तुल्यगन्धेन मषीञ्च कुर्यात्॥४३१॥

भृत्वा च कूप्यामथ वालुकाख्ये
यन्त्रे पचेद्वासरचतुष्टयं तत् ।
काष्ठाऽग्निना शीतमथावतार्य
गले विलग्नं रसमाददीत ॥ ४३२ ॥
चन्द्रोदयश्चैष मनःशिलादिः
कुष्ठादिरोगापनयाय दिष्टः ।
इष्टश्च गुञ्जाद्वयमात्रमात्रो
हेमन्तकाले पुरुषाय यूने ॥ ४३३ ॥

रसायनसार, कुष्ठे ।

भाषा—शुद्धमैनसिलको २१ दिनतक अदरखकेरसमें घोटकर सूखनेपर बराबरका शुद्ध पारा और गन्धक मिलाय नीलवर्णकज्जलीकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके प्रथम चन्द्रोदयकीतरह वालुकायन्त्रमें रख ४ दिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर युक्तिपूर्वक शीशीमेंसे निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे २ रत्तीतक कुष्ठहरानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तकुष्ठ और शीतपूर्वकज्वरोंको नष्टकरताहै । इसकाप्रयोग शीतकालमें जवानआदमीपर करना उचितहै ॥ १०३ ॥

१०४ शिलासिन्दूरम् (शिलाचन्द्रोदयः) २

नलीडमर्वाख्यविधौ पुरस्तात्
षट्पङ्क्तिगुण्यादिबलिं रसेन्द्रे ।
पक्त्वा ततः शुद्धमनःशिलायां
घृष्ट्वा पचेत्तुल्यसुगन्धकायाम् ॥ ४३४ ॥
एतद्विधानेन यथेष्टमुग्रं
कुर्यान्निकुर्यादपि रोगसङ्घम् ।
वनस्पतिक्वाथरसादियोगे
मेषी विभाव्याऽपि रुगर्तियोग्यैः ॥ ४३५ ॥
शुद्धौ शिलाया अपि कामचारः
सारप्रपश्यस्य भिषग्वरस्य ।
दिग्दर्शनं तालविमूर्च्छनेन
सन्दर्शितं मूर्च्छनसिद्धिहेतोः ॥ ४३६ ॥

रसायनसार , सर्वरोगाऽधिकारे ।

भाषा—नलीयुक्त डमरूयन्त्रमें पहिले पारेमें षड्गुणादि-गन्धकजारणकर उसकीवरावर शुद्धमैनसिल और गन्धक मिलाय नीलवर्णकज्जलीकर ४ दिनकी आचदेकर रससिन्दूर तैयारकरे । इसमेंसे १–१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त रोगसङ्घको दूरकरताहै । तत्तद्रोगहर वनस्पतियोंकेक्वाथसे कज्जलीमें भावनादेकर यदि सम्यक्क्रिया हो तो तत्तद्रोगोंको विशेषकर नष्टकरेगा । इसीतरह मैनसिलकीशुद्धि में भी वैद्य अपनीबुद्धिपूर्वक विचारकरसक्ताहै । बुद्धिमानोंकेलिये केवल दिग्दर्शन पर्याप्तहै ॥ १०४ ॥

१०५ शिलासिन्दूरम् (शिलाचन्द्रोदयः) ३

हारिद्रमल्लालविषोत्थतैले
जेपालभल्लातककुष्ठतैले ।
व्यस्ते समस्तेऽप्युतगालितायां
मनःशिलायां दधिवापितायाम् ॥ ४३७ ॥
उष्णाम्बुसङ्क्षालितशोषितायां
घर्मेऽनितीव्रे समशुद्धगन्धम् ।
सुवर्णसङ्ग्रासितसूतराजं
नीत्वा समं लोहकटाहिकायाम् ॥ ४३८ ॥
मन्दाग्नितप्तं त्रयमेतदेकी-
कृत्य प्रवर्षेण खजेन भूयः ।
चुल्याः कटाहीमवतार्य पङ्कं
निस्सार्य कुर्यात्पटगालितञ्च ॥ ४३९ ॥
समृत्पटायामनुकूपिकायां
भृत्वा मषीं यामचतुष्टयेन ।
सर्वार्थकर्या सिकताख्ययन्त्रे
पक्त्वा गलस्थं रसमाददीत ॥ ४४० ॥
रक्तस्थदोपानपहाय शीघ्रं
धावन्नशेषानुपजीवयेत ।
शिलादिचन्द्रोदयसञ्ज्ञकः स्या-
दुष्णस्वभावो नवनीतसेव्यः ॥ ४४१ ॥

रसायनसार, कफरोगे ।

भाषा—पीलासोमल, हरिताल, वछनाग, जमालगोटा और भिलावोंसे निकालेहुए तैलमें स्वकीय इच्छानुसार मैनसिलको लालकर दहीमें ठंढाकर अत्यन्ततीक्ष्णधूपमें सुखाकर इसकीवरावर शुद्धगन्धक और सुवर्णग्रासदियाहुआपारा समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर लोहेकीकड़ाहीमें रख मन्दाग्निसे पिघलाकर लोहेकीकड़छीसे घोटकर तीनोंको अच्छीतरह मिलाकर खूवघोटकर फिरसे कज्जलीवनाय कपड़छानकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके सर्वार्थकरीभट्ठीपर वालुकायन्त्रमें रख ४ पहरकी कड़ी आचदे । उसकामुंह खुलारखनाचाहिये नहीं तो ४ पहरमें रसतैयार नहीं होगा । पर आचवन्दकरतेसमय शीशीका मुह वन्दकरदेना नहीं तो शीशी खाली मिलेगी । स्वाङ्गशीतलहोनेपर युक्तिसे शीशीको फोड़कर रसको निकालले । इसमेंसे रोगी और रोगका वलावल देखकर आधीरत्तीसे एकरत्तीतक उचितमात्रामें देनेसे यह कासश्वासादि कफप्रधानव्याधियोंको तत्क्षण नष्टकरताहै । अन्य अनुपानोंकेसाथ यह अनुकूल न पड़े तो मक्खनके साथ देना ॥ १०५ ॥

१०६ शिलासिन्दूरम् (चतुर्थम्)

बीजं हरस्य च तदंशमनःशिलाञ्च
धत्तूरमाल्यरसमर्दितमष्टवारम् ।
तत्काचकूपीनिहितं सुमुद्रितं
द्वात्रिंशयामपिहितं सिकताख्ययन्त्रे ॥
तत्पारदं भवति कुङ्कुमपुष्पतुल्यं
तद्योगवाहि फलदं च रसायनं च ॥ ४४२ ॥

यो म , रसायने ।

टि०—"अत्रापि चेत्कनकमाक्षिकमाक्षिपन्ति तद्वेदिन कुनटिसाम्यमतश्च तद्वत् । सम्मर्द्य तेन विधिनाऽपि विपाच्य सम्यग्रम्यं हिरण्यसदृग भवतीति चित्रम् ॥,, अस्य रसस्याऽप्यस्मिन्नेव रसेऽन्तर्भाव करणीय ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और मैनसिलकी नीलवर्णकज्जली कर धतूरेकेफूलोंकेरससे आठभावनाए देकर कड़ीधूपमें सुखाकर फिरसेकज्जलीकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख ४ दिनरातकी क्रमवृद्ध अग्निसे पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर युक्तिसे शीशीको फोड़कर निकालले, इसका केशरके रंगकेसदृश रंगहोगा । इसमेंसे १ अथवा २ रत्तीकीमात्रा औचिती देखकर देनेसे यह तमामव्याधियोंको नष्टकरताहै । इसीमें कज्जली करते समय मैनसिलकीवरावर यदि सुवर्णमाक्षिक मिलादियाजाय तो इसका रंग सुवर्णके सदृश उतरेगा ॥ १०६ ॥

१०७ शिलासिन्दूरम् (पञ्चमम्)

मनःशिला सूतकश्च माक्षिकं तालकं विषम ।
गन्धकश्च समं योज्यं त्रिदिनं मर्दनं ततः ॥ ४४३ ॥
वटशृङ्गद्रवेणैव दिनमेकं प्रयत्नतः ।
हंसपादीरसेनैव मर्दयेत्त्रिदिनं भिषक् ॥ ४४४ ॥
गुटिका वह्निजाकाराः काचकूप्यां निवेशयेत् ।
अधोमुखी घटीं क्षिप्त्वा क्षिपेदुपरि वालुकाम् ४४५
मन्दाग्निना यामचतुष्टयञ्च पचेत्तथा यामचतुष्टयञ्च ।
मध्याग्निना यामचतुष्टयञ्च
तथाग्निमुद्धृत्य ततः प्रयुञ्ज्यात ॥ ४४६ ॥
जपापुष्पनिभं चैव सिन्दूरं रुचिरं भवेत् ।
आर्द्रकस्वरसेनैव सर्वस्मिन् सन्निपातके ॥ ४४७ ॥
पञ्चकोलकषायेण सर्वज्वरनिवारणम ।
शाल्यन्नं मुद्गयूषञ्च पथ्यं तक्रं पयो दधि ॥
कुलत्थयूषसंयुक्तं घटनाविधितो ददेत् ॥ ४४८ ॥

र क.यो ,सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध मैनसिल, पारा, सोनामाखी, हरिताल, वछनाग और गन्धक समभागलेकर ३ दिनकेमर्दनमे नीलवर्णकज्जलीकर वरोहके रसमें एक और हसपादीकेरससे ३ दिन मर्दनकर मरिचप्रमाण गोलिया वनाय सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके ईंटकी डाट लगाय चूना, खड़िया और गुड़से सन्धिवन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर मुंहको मजवृतकरे । फिर मिट्टीकी नादमें शीशीको अधोमुखीरख नादको वालूसेभरदे और ८ पहरकी मन्दाग्नि तथा ४ पहर मध्यमाग्नि देकर पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे आधीरत्तीसे १ रत्तीतक अदरख वगैरह उचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तसन्निपात नष्टहोतेहैं । पञ्चकोलकेकाढेकेसाथ देनेसे समस्तज्वर निवृत्तहोतेहैं । पुरानेचावल, मूग और कुलथीकायूष, छाछ, दूध अथवा दही इनका पथ्यमें औचिती देखकर प्रयोगकरे ॥ १०७ ॥

१०८ शिवागुग्गुलुः

शिवाविभीतामलकीफलानां
प्रत्येकशो मुष्टिचतुष्टयञ्च ।
तोयाढके तत्कथितं विधाय
पादावशेषे त्ववतारणीयम् ॥ ४४९ ॥
एरण्डतैलं द्विपलं निधाय
पिचुत्रयं गन्धकनामकस्य ।
पचेत्पुरस्याऽत्र पलद्वयञ्च
पाकावशेषे च विचूर्ण्य दद्यात् ॥ ४५० ॥
रास्नां विडङ्गं मरिचं कणाञ्च
दन्तीजटां नागरदेवदारु ।
प्रत्येकशः कोलमितं तथैषां
विचूर्ण्य निक्षिप्य नियोजयेच्च ॥ ४५१ ॥
आमवाते कटीशूले गृध्रस्यां क्रोष्टुशीर्षके ।
न चान्यदस्ति भैषज्यं यथाऽयं गुग्गुलुः स्मृतः ॥४५२॥

र स,र.सु , ध , आमवाते ।

भाषा—हर्रे, वहेड़े और आवले १६–१६ पललेकर जवकुटकर एक आढकपानीमें चतुर्थांशावशेषकाढावनाय छानकर एरण्डतैल २ पल, शुद्धगन्धक ३ कर्ष और शुद्धगूगल २ पल डालकर मन्दाग्निपर पकावे । गुड़केसदृश चाशनीहोनेपर रास्ना, विडङ्ग, मरिच, पीपल, दन्तीमूल, सोंठ और देवदारु ४–४ माशे लेकर वारीकचूर्णकर चाशनीमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेसे ६ माशेतकमात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेसे आमवात, कटिशूल, गृध्रसी, क्रोष्टुशीर्ष इनसवको यह नष्टकरताहै १०८

१०९ शिवामृतरसः

रक्तभूमौ तु भूनागान् ग्राहयित्वा परीक्षयेत् ।
छेदे निर्याति रक्तञ्चेत्तान् स्वीकुर्यात्प्रयत्नतः ॥ ४५३ ॥
कृष्णवर्णगवाज्येन समेन सह तान्पचेत् ।
लोहजे चालयन्पात्रे यावत्सिन्दूरवर्णकम् ॥ ४५४ ॥
तत्सर्वं जायते भस्म तत्तुल्यं मृतपारदम् ।
मधुनाऽऽलोडितं सर्वं गुञ्जार्द्धार्द्धं विवर्धयन् ॥ ४५५ ॥
पश्चाद्गुञ्जां सदा खादेद्यावत्संवत्सरावधि ।
शिवामृतो रसो नाम जरामृत्युहरो नृणाम् ॥
आयु ब्रह्मदिनं धत्ते शिवाम्बु पाययेदनु ॥ ४५६ ॥
एवं दिव्यरसायनैः समुचितः सारातिसारैः शुभैः,
सिद्धं देहमनेकसाधनवलाद्येषां तु दृष्टं मया ।
तानाराध्य च तेषु सारमखिलं सङ्गृह्य शास्त्रादपि,
भूपानां विदुषां महामतिमतां प्रोक्तं हितं चिन्तयन्४५७

र ख ,रसायनस , रसायने ।

भाषा—लालजिमीनके केंचुओंको छुरीसे छेदकर देखे, उनमें यदि रक्तनिकले तो उन्हें लेकर वरावरके कालीगायके घीमें लोहेकेपात्रमें लोहेकीकड़छीसे मन्द आचपर पकावे । एकदम लालवर्णहोजानेपर उतारकर उनकीवरावर पारदभस्म

मिलाय १–२ दिन घोटकर मधुमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे २ चावलसे आरम्भकर धीरे २ मात्राबढ़ावे । एकरत्ती होनेपर मात्राकायमकरे । इसका एकवर्षतक निरन्तरसेवनकरनेसे जरा और मृत्युकानाशहोकर दीर्घायुको प्राप्तहोताहै । अनुपानमें हर्रेकापानी देवे ॥ १०९ ॥

११० शीघ्रप्रभावरसः

पारदं गन्धकं व्योम तीक्ष्णं तालं मनःशिला ।
सौवीरमञ्जनं शुद्धं विमलञ्च समांशकम् ॥ ४५८ ॥
एभिः कज्जलिकां कृत्वा स्वल्पतैलेन भर्जयेत् ।
ग्रन्थिकं जीरकं चित्रं दीप्यकं मुस्तकं विषम् ॥४५९॥
वालाम्रं वालविल्वञ्च मोचसारं समांशकम् ।
विचूर्ण्य पूर्ववत्कल्कं तदर्द्धेन विनिक्षिपेत् ॥ ४६० ॥
पुनर्विमर्दयेद्यत्नादेकरूपं भवेद्यथा ।
भावयेत्सप्तवाराणि पञ्चकोलकषायतः ॥ ४६१ ॥
अरलुत्वग्रसेनाऽपि दशवाराणि भावयेत् ।
अनेन क्रमयोगेन रसो निष्पद्यते ह्ययम् ॥ ४६२ ॥
जग्धो विश्वघनाम्बुना स हि रसः शीघ्रप्रभावाभिधो,
निष्कार्द्धप्रमितो महाग्रहणिकारोगेऽतिसारामये ।
आध्माने ग्रहणीभवे रुचिहतौ वाते च मन्दानले,
मुक्ते चापि मले पुनश्चलमलाशङ्कासु हिक्कासु च ४६३

र र स., र. सु, ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, अभ्रक और लोहभस्म, शुद्ध हरिताल, मैनसिल, सौवीराञ्जन और रूपामाखी येसब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर थोड़ा तैल डालकर सेकले । फिर गठिवन, जीरा, चित्रक, अजवाइन, नागरमोथा, वछनाग, अमचूर, बेलगिरी, मोचरस सब समभागकाचूर्ण कज्जलीसे आधेप्रमाणमें लेकर थोड़े तैलमें सेककर कज्जलीमें मिलाय १–२ पहर इसतरह मर्दनकरे कि सब एकजीव होजाय । फिर पञ्चकोलकेकाढेसे ७, और सोनापाठाकीछालकेकाथसे १० वार भावनाएं देकर २–२ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली सोंठ और नागरमोथेकेकाथ अथवा हिमसे लेनेसे भयंकरग्रहणी, अतिसार, आध्मान, अरुचि, वातरोग, मन्दाग्नि, छर्दी और हिचकी येसबरोग नष्टहोतेहैं ॥ ११० ॥

१११ शीतकेसरीरसः

पारदं गन्धकश्चैव तुत्थञ्च दरदं विषम् ।
विषादष्टगुणं योज्यं मरिचं विश्वभेषजम् ॥ ४६४ ॥
अश्वगन्धाऽथ विजया कासमर्दः कठिल्लकः ।
चतुर्णाञ्च रसैरेतैश्चूर्णान्येतानि मर्दयेत् ॥ ४६५ ॥
तुलस्यास्तु दलैः सार्धं भक्षितो रक्तिकामितः ।
हन्ति शीतज्वरं घोरं नाम्नाऽयं शीतकेसरी ॥ ४६६ ॥

भा. प्र., र सु, यो. म, र क ल, शीतज्वरे। यो म शीतगजकेसरीति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, तुत्थ, शिंगरिफ और वछनाग १–१ तोला, मरिच और सोंठ ८–८ तोले लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर असगन्ध, भाग, कसोंजी और करेलेके रसोसे १–१ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तुलसीदलकेसाथदेनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥ १११ ॥

११२ शीतज्वरहररसः

सूतमाक्षिकगन्धानां भागश्चारुष्करस्य च ।
तथाऽष्टौ तालकाच्चूर्णाद्रविदुग्धस्य षोडश ॥ ४६७ ॥
स्नुहीक्षीरस्य चैवाष्टौ सर्वं मृद्वग्निना पचेत् ।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य ततः खल्वे विमर्दयेत् ॥
शीतज्वरहरो नाम्ना रसोऽयं परिकीर्तितः ॥ ४६८ ॥

र सं., र. चं., र क, र. मृ शीतज्वरे ।

भाषा—शुद्ध पारा, सोनामाखी, गन्धक और भिलावा १–१ भाग, रसमाणिक्य ८ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर आककादूध १६ भाग, थूहरकादूध ८ भाग डालकर कड़ाहीमें मन्दाग्निसे गाढाहोनेतक पकाकर उतारले और १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥११२॥

११३ शीतज्वराङ्कुशरसः

रसमूषिकपाषाणशिलातालञ्च खर्परम् ।
समभागमिदं सर्वं धत्तूरस्वरसेन च ॥ ४६९ ॥
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा छायाशुष्कां तु कारयेत् ।
आर्द्रकस्वरसे दद्याच्छीतज्वरकुलान्तकः ॥ ४७० ॥

र पा, ज्वरे ।

भाषा—शुद्ध पारा, सोमल, मैनसिल, हरिताल और खपरिया समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर धतूरेके रसकी १–२ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥ ११३ ॥

११४ शीतज्वराञ्जनम्

सूतं चूर्णमगारधूममलं प्रत्येकगद्याणकं,
धत्तूरस्य रसेन मर्दितमलं पश्चात्कृतं भास्करे ।
जैपालं मरिचं चतुःशतयुतं वातारिबीजं लस-,
द्युक्तं षष्टिभिरन्वितं दृढतरं जम्बीरनीरैर्वरैः ॥ ४७१ ॥
कुर्यान्माषवदाकृतिश्च वटिकां छायासु शुष्कीकृतां,
रात्र्यान्ध्यं ग्रहसर्पसन्धिसकलं शीतज्वरं दुर्जरम् ।
सन्नेत्राञ्जनमौषधं च भुवने चाजीर्णदोषापहं,
सेव्यं तत्प्रबलं महागुणयुतं श्रीपूज्यपादोदितम् ॥४७२॥

चि सा, शीतज्वरे ।

टि०—अञ्जनलेऽपि शीतज्वरादौ प्रबलप्रभावशालित्वात्सङ्गृहीत ।

भाषा—पारा और घरका धूआ ६–६ माशे लेकर दोनोंकीकज्जलीकर काले धतूरेके रससे नष्टपिष्टीहोनेतक मर्दनकर

धूपमें सुखावे। ऐसे १०० भावनाएं देकर जमालगोटा और धोईहुईमिर्च प्रत्येक ४०० नग, एरण्डबीजोंकीमज्जा ६० नग मिलाकर जभीरीकेरससे ७ दिनतक मर्दनकर उड़दबराबर गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली जभीरीके रसमें घिसकर अञ्जनकरनेसे रतौंधी, ग्रहपीडा, सर्पविष, पटलदोष, दुर्जरशीतज्वर, हैज़ा वगैरह अजीर्णदोष येसब नष्ट-होतेहैं। यद्यपि सहकारक द्रवविशेष नहीं बतायाहै परन्तु जभीरी-केरसमें मर्दनकियागयाहै इसलिये लगानेमेंभी उसीसेकामलेवे। इसीतरह शार्ङ्गधरमें जयपालमज्जाको नीबूकेरसमें भावना देकर सर्पविषमें अञ्जनलिखाहै। नीबूकारस इसमें अनुकूलहै परन्तु सर्पविषकेलिये वहांपर मनुष्यलालासे कामलियागयाहै॥ ११४॥

११५ शीतज्वरारण्यकृशानुमेघः (त्रैलोक्यकीर्तिः)

तालेन तुल्या गजमागधी स्या-
त्तदर्द्धभागेन नवं पिचुः स्यात्।
दिनार्धमानं सुदृढं विमर्द्य
शीतज्वरारण्यकृशानुमेघः॥ ४७३॥
भुजङ्गवल्लीछदनेन दद्या-
त्कोलास्थिमात्रा जयति ज्वरौघम्।
दुग्धौदनं पथ्यमिह प्रशस्तं
वारत्रयं केवलमेव दुग्धम्॥ ४७४॥
दिने द्वितीये गुडजीरकन्तु
दुग्धौदनं दाहनिवृत्तये तु।
त्रैलोक्यकीर्ति विषमाग्निहन्ति
प्रकीर्तिता सा गिरिराजपुत्र्या॥ ४७५॥

र., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य, गजपीपल और बिनौलेकीमींगी समभागलेकर ४ पहर शुष्क मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे बेरकीगुठलीकेबराबर मात्रा पानमें रखकरदेनेसे यह समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै। इसे दिनमें ३ बार देना। पथ्यमें दूधभात एकबक्तदेना। बादमें भूखलगनेपर केवलदूध पिलाना। दूसरेदिन गुड और जीरेकेसाथ गोली देना। और अधिकदाह मालूमहोनेपर दूधभात देना। इसकेसेवनसे शीतपूर्व अथवा दाहपूर्व, एकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक समस्त-विषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै॥ ११५॥

११६ शीतज्वरारिरसः (प्रथमः)

पटूपलं तालकं शुद्धं बीजं भल्लातकोद्भवम्।
सञ्चूर्ण्य भावयेद्गाढं भृङ्गराजस्य वारिणा॥ ४७६॥
शुक्लायाश्चाऽपि कृष्णाया काकमाच्या रसेन च।
अर्कस्नुण्डदुग्धेन दातव्या भावनाः क्रमात्॥४७७॥
तत्कल्कं रोटिकाकारं स्थाल्यामारोप्य यत्नतः।
संशुष्कञ्च पुनर्धार्यं शरावे शुभलक्षणे॥ ४७८॥
तच्च वस्त्रमृदा लिप्त्वा सन्धिं रुद्ध्वा विशोषयेत्।
ततश्च वालुकायन्त्रे धार्यं तच्च प्रयत्नतः॥ ४७९॥
चुल्ल्यामारोप्य दातव्यो वह्नि र्यामत्रयं क्रमात्।
स्वाङ्गशीतं गृहीत्वा तद्गोलं सञ्चूर्णयेद् दृढम्॥४८०॥
तस्मिन् मरिचचूर्णस्य द्विपलं चाथ मेलयेत्।
नागवल्लीदलेनाऽयं माषमात्रश्च भक्षितः॥ ४८१॥
हन्ति शीतज्वरं घोरं ध्रुवं तक्रौदनाशिनः।
रसः शीतज्वरारि र्हि वैद्यवृन्दैः सुभाषितः॥४८२॥

रसचि, र श. शीतज्वरे।

टि०—रसराजशङ्करे शीतभैरवनाम्ना "समानभल्लातकताल्कौ-दृढ सक्षोदितावर्कपयोविभावितौ। तच्चक्रिके खर्परयन्त्रमध्यगे पृथग्वि-लग्ने च पुटेदिति त्रिधा॥ एकाहिकाद्यौ तुहिनज्वरेऽस्य प्राक्छीतका-लाद्वितरेच्च वल्लम्। गद्याणकार्धैर्मरिचैः समेत शाल्योदन दुग्धमिह हि पथ्यम्॥ तापो यदि स्यादपरेऽह्नि तोय वटप्ररोहोत्थमुप पिबेच्च। प्रकुञ्च-मान सितया समेत शीतात्पर भैरवनामधेयम्॥" इति पाठो निहितोऽस्ति म उपरितनपाठस्यैवाऽपभ्रंशोऽस्तीति विद्वद्भिर्विभावनीयम्। रसचि-न्तामणौ सिद्धताल्केश्वरनाम्ना "भल्लातक ताल्कतुल्यभाग मद्धण्टिका यन्त्रवरे च दत्तम्। दत्त्वा शरावञ्च सुसन्धिरोध सुपिष्टिकाम्तान्विकिरेत्तु मध्ये॥ यदा च सर्वे स्फुटिता भवेयुस्तदा रस स्यात्खलु ताल्केश॥" इति पाठो निहितोऽस्ति परन्तु शीतज्वरारिणाऽस्य सर्वाङ्गे समान, भाव-नादौ प्रक्षेपे च येय न्यूनता दृश्यते तत्र सङ्ग्रहकर्तुरपराध पाठस्त्वेक एवाऽस्ति इति विद्वद्भिरन्तर्निमज्य विचारणीयम्।

भाषा—शुद्ध हरिताल और भिलावे ६-६ पललेकर बारीक कूटकर भंगरेकेरससे एकदिन मर्दनकर सफेद और कालीमकोय, आक और थूहरकादूध इनप्रत्येकमें १-१ दिन मर्दनकर कल्ककी रोटी जैसी बनाय हंडीके पेंदेपर रखकर सुखाले। फिर शराव-सम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपड़मिट्टी देकर अच्छीतरह सुखनेपर बालुकायन्त्रमें रख ३ पहरकी मध्यमाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर २ पल धोईहुई मरिच मिलाकर खरलकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ माशा पानमें रखकर खानेसे घोर-शीतज्वरको यह नष्टकरताहै॥ ११६॥

११७ शीतज्वरारिरसः (द्वितीयः)

कम्बुः फेनमहेः शिला सरसकं माक्षीकमेकांशकं,
शुल्वं सोमलमक्षिभागमखिलं त्रिःकारवल्लीरसैः।
आर्द्रीकृत्य कृतः सुकृष्णलमितः शीतज्वरारिः सिता-
मिश्रो हन्ति सुदुग्धभक्तकभुजः तृष्णान्लशीतज्वरान्

र प, र. बो. शीतज्वरे।

भाषा—शङ्ख, अफीम, मैनसिल, खपरिया, सोनामाखी १-१ भाग, ताम्रभस्म और सोमल २-२ भागलेकर बारीक-चूर्णकर करेलेकेरसकी ३ भावनाएं देकर १-१ रत्तीकीगोलिया-बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शक्करकेसाथ देनेसे दाह अथवा शीतज्वरोंको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य दूध-भातदेना॥ ११७॥

११८ शीतज्वालारसः

कर्पमात्रं हतं शुल्वं पञ्चांशा खर्परी शिला।
रसद्विगन्धकं तालं कारवल्लीरसैः पुटेत्॥ ४८४॥

वालुकायन्त्रसंपक्वं गुञ्जामात्रां नियोजयेत् ।
सप्तभि र्मरिचै र्युक्तं शीतज्वालां निकृन्तयेत् ॥ ४८५ ॥

र क यो. ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—ताम्रभस्म १ कर्ष, खपरिया और मैनसिल ५–५ कर्ष, शुद्ध पारा, गन्धक और हरिताल २–२ कर्ष लेकर नीलवर्णकज्जलीकर करेलेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ४ पहरकी वालुकायन्त्रमें अग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती ७ मिर्चोकेसाथ देनेसे यह शीतज्वालाको निवृत्तकरताहै ॥ ११८ ॥

११९ शीततापहरणरसः

चूर्णतालमनलेन समानं
वज्रिजेन सलिलेन विभाव्य ।
पाचयेल्लघुपुटेऽस्य च वल्लः
शीततापहरणःससितस्तु ॥ ४८६ ॥

यो चं, शीतज्वरे ।

भाषा—सीपकाचूना और हरिताल १–१ भाग, शुद्धभिलावा २ भाग लेकर सवका अलग २ चूर्णकर भिलांवेकेसाथ मिलाकर थूहरकेदूधसे ३–४ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर लघुपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकी मात्रा शक्करकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥११९॥

१२० शीतपित्तभञ्जनरसः

पारदं गन्धकञ्चैव कासीसं ताम्रमेव च ।
शुद्धं मृतञ्च संयोज्य खल्वे गाढं विमर्दयेत् ॥ ४८७ ॥
भृङ्गराजरसैश्चैव शरपुङ्खाद्रवैस्तथा ।
भावयित्वा तु सप्ताहं ततो गजपुटे पचेत् ॥ ४८८ ॥
वारत्रयं ततो नीतं शीतपित्तप्रभञ्जनम् ।
रसं गुञ्जाद्वयं धीमान्गुडेन सह दापयेत् ॥ ४८९ ॥
अनेन चाशु नश्यन्ति शीतपित्तादयो गदाः ।
कुष्ठान्यपि च सर्वाणि वातरक्तं तथैव च ॥ ४९० ॥
जलावगाहं वायोश्च सेवनञ्च प्रजागरम् ।
विदाहि चाशनं त्याज्यं शीतपित्तादिरोगिणा ॥४९१॥

र म मा, ना वि, शीतपित्ते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, कसीस और ताम्रभस्म समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर भंगरा और सरफोंकाकेरसोंसे ७–७ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिटी देकर सूखनेपर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर भंगरा और सरफोंकाके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर पूर्ववत् गजपुटकी आचदे । ऐसे ३ आचेंदेकर वारीकपीसकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्ती गुड़केसाथदेनेसे शीतपित्त, कुष्ठ, वातरक्त येसव नष्टहोतेहैं । इसके सेवनकरनेवालेको शीतजलस्नान, वायु, जागरण, विदाहीअन्न छोड़देने चाहियें ॥१२०॥

१२१ शीतभञ्जनरसः (प्रथमः)

द्वितुत्थं मरिचं सूतं गौरीपाषाणनागरम् ।
कारवल्लीरसै मर्द्यं कुक्कुटीपुटपाचितम् ॥ ४९२ ॥
मत्स्यपित्तैस्ततो भाव्यं गुञ्जामात्रं प्रयत्नतः ।
शर्करामनुपानेन देयं शीतज्वरं हरेत् ॥
हरप्रकटितः पूर्वं नाम्नाऽयं शीतभञ्जनः ॥ ४९३ ॥

वै चि, वा, शीतज्वरे ।

भाषा—शुद्ध तूतिया, हीराकसीस, मरिच, पारा, सोमल, सोंठ समभागलेकर पारद अदृश्यहोनेतक मर्दनकर करेलेकेरससे एकदिनभावना देकर शरावसम्पुटमें वन्दकर कुक्कुटपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मछलीकेपित्तसे एकदिन मर्दन कर १–१ रत्तीकीगोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शक्करकेसाथदेनेसे यह समस्त शीतज्वरोंको नष्टकरताहै १२१

१२२ शीतभञ्जनरसः (द्वितीयः)

तुत्थमेकं त्रयं तालं शिलाचूर्णं चतुर्गुणम् ।
कुमारीरससम्पिष्टं कुक्कुटीपुटपाचितम् ॥
तुलसीरससंयुक्तं शीतज्वरविनाशनम् ॥ ४९४ ॥

र क यो, र. पा शीतज्वरे । रसपारिजाते पूर्णचन्द्रोदयेति नाम ।

भाषा—शुद्ध तूतिया १ भाग, हरिताल ३ भा, मैनसिल ४ भागलेकर वारीकपीस घीकुवारकेरससे एकदिन मर्दनकर शरावसम्पुटमें वन्दकर कुक्कुटपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती तुलसीकेरसकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ १२२ ॥

१२३ शीतभञ्जीरसः (शीतज्वराररिसः) १

सूतकं गन्धकञ्चैव हरितालं मनःशिला ।
एकनिष्कं द्विनिष्कञ्च चतुर्निष्कं तथैव च ॥ ४९५ ॥
पञ्चनिष्कं रसैः कारवेल्ल्याः सम्यक् प्रकल्पयेत् ।
ताम्रपत्राणि तुल्यानि तेन कल्केन लेपयेत् ॥ ४९६ ॥
शरावसम्पुटे तानि कृत्वा तेषामुपर्यपि ।
दद्यात्तां पिष्टिकां पश्चात्पुटपाकेन पाचयेत् ॥ ४९७ ॥
ततः सञ्चूर्णयेदेवं रसः क्षौद्रेण भक्षितः ।
यवैकमात्रया हन्ति घोरं शीतज्वरं ध्रुवम् ॥ ४९८ ॥

भा प्र, र. स, र. च., र क, र. सु, भै सा, वै द, चि. र, भै र, यो म, र क., रसायनसं., र. क ल, र र दी, टो, र का, रस स, र (मा), र क. यो., रसायनसार, र. र स, र को, यो च, ज्वराऽधिकारे ।

टि०—भै र, र क एतयो शीताररिरिति नाम । रसायनसङ्ग्रहे शीतज्वराङ्कुश इति नाम । र क ल ज्वराङ्कुशेति नाम, यो म शीतज्वरारीति । र र दी, र का एतयो विषमज्वराररिस इति नाम । टोडरानन्दे विषमज्वरेभसिंह इति नाम । भावप्रकाशे क्रमा-

द्रागार्द्धरहितमिति पाठ नियोज्य रसान्तर प्रकल्पितम्। तत्तु न सम्यक प्रतिभाति, केवल क्रमाद्भागविवृद्ध तदित्यस्य स्थाने केनापि कारणेन विभ्रम पतित प्रतिभाति। चिकित्सारहस्ये द्वितीयस्थाने शिलारहित एक पाठ प्रकल्पितस्तत्राऽज्ञानताऽतिरिक्त सूक्ष्ममपि फल न पश्याम। र (मा) सुपवीजलस्थाने करवीररसेन भावना प्रदत्ता। रत्नाकरौपधयोगे गन्धकस्थाने तुत्थ नियोज्य रामवाण इति नाम स्थापितम्, तस्याऽपि पाठस्याऽत्रैवाऽन्तर्भाव कर्तव्य। तुत्थकश्चाऽधिकतयाऽत्रैव नियोजनीय तथाकरणे गुणवृद्धिरेव भविष्यति पाठन्यूनता च महत्फलम्। रसायनसारेऽय पाठो ज्वराङ्कुशनाम्ना निहितोऽस्ति तत्र सर्वेषा द्रव्याणा समताऽस्ति, तुत्थोत्थताम्रचक्रिकामध्ये च पाक विहितम्। र र स, र को, यो च एषु गन्धको न दृश्यते परन्तु तन्निष्कासनस्य फलाभावोऽस्ति प्रत्युत गन्धकप्रक्षेपेण गुणवृद्धिरेव भविष्यति अतस्तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भाव।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा, हरिताल ४ भा, मैनसिल ५ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर करेलेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर इसकी वरावरके शुद्धतावेके पत्रोंपर लेपदेकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २–४ कपड़मिट्टी देकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर खरलकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ यवप्रमाण उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह घोरशीतज्वरको नष्टकरताहै ॥ १२३ ॥

१२४ शीतभञ्जीरसः (द्वितीय.)

रसहिङ्गुलतालानि तुत्थं शम्बूकजं रजः।
कन्याद्भिः सप्तधा भाव्यं पक्तव्यञ्च शरावके ॥४९९॥
अहोरात्रं पुनः शीतं कुम्भाधः सिकतान्तरे।
दत्तः पथ्यन्तु तक्रेण भक्तं क्षीरेण वा पुनः ॥
लवणेन विना सर्वान्नाशयेद्विषमज्वरान् ॥ ५०० ॥

र का, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, शिंगरिफ, हरिताल, तुत्थ और घोंघा समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुवारकेरससे ७ भावनाए देकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख एकदिनरातकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तविपमज्वरोंको नष्टकरताहै। इसमें पथ्य तक्र अथवा दूधभात देना और नमकका परहेज कराना ॥ १२४ ॥

१२५ शीतभञ्जीरसः (तृतीयः)

रसगन्धौ शिला तालं माक्षीकं विषतुत्थके।
तुल्यं स्नुक्क्षीरपुटितं सघृतं कूर्मपाचितम ॥
शीतभञ्जी रसो हन्ति छिगुञ्जो विपमज्वरान् ॥५०१॥

र का, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मैनसिल, हरिताल, सोनामाखी, बछनाग और तुत्थ समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर थूहरकेदूधसे १–२ दिन मर्दनकर सूखीकज्जली वनाय आतशीशीशीमेंभर मुहबन्दकर वालुकायन्त्रमेंरख ४ पहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती घीकेसाथदेनेसे यह समस्तविपमज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ १२५ ॥

१२६ शीतभञ्जीरसः (चतुर्थः)

रङ्गं तालं सोमलकं हारिद्रं शुक्तिचूर्णकम्।
तुल्यं वल्लीरसपुटैः शीतभञ्जीरसः परः ॥ ५०२ ॥

र का, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—नागवङ्गभस्म, हरिताल, पीलासोमल, मोतीकीसीप और तूतिया समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर करेलेकेरसकी ६–७ भावनाए देकर मूगवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तविपमज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ १२६ ॥

१२७ शीतभञ्जीरसः (पञ्चमः)

द्विपञ्च पञ्च पञ्चैव टङ्कालनवसारकम्।
काकमाचीकन्यकाद्भि मर्दितञ्च दिनं दिनम् ॥५०३॥
सूर्ययामैः शरावेण पक्वोऽयं तु रसः परः।
शीतभञ्जी द्विगुञ्जस्तु निहन्ति विषमज्वरान् ॥५०४॥

र का, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध सुहागा १० भाग, हरिताल और नौसादर ५–५ भाग लेकर मकोय और घीकुंवारकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ४–५ कपड़मिट्टीदेकर वालुकायन्त्रमें १२ पहरकी अग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह विपमज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ १२७ ॥

१२८ शीतभञ्जीरसः (षष्ठ.)

पारदं रसकं तालं तुत्थं टङ्कणगन्धकम्।
सर्वमेतत्समं शुद्धं कारवेल्लरसै दिनम् ॥ ५०५ ॥
मर्दयित्वोदरं लिम्पेत्ताम्रपात्रस्य बुद्धिमान्।
अङ्गुलार्द्धार्द्धमानेन तं पचेत्सिकताह्वये ॥ ५०६ ॥
यन्त्रे यावत्स्फुटन्त्येव व्रीहयस्तस्य पृष्ठतः।
ततस्तच्छीतलं ग्राह्यं ताम्रपात्रोदराद्भिषक् ॥ ५०७ ॥
माषैकं पर्णखण्डेन भक्षयेन्मरिचैः समम्।
शीतभञ्जी रसो नाम त्रिदिनान्नाशयेज्ज्वरम् ॥५०८॥

र सं, र सि, र र स, र. क ल, भै र, रसायनस, र को, र. मु, र. च, यो चं., यो म, र मु, र म, र चि, र म क, भा प्र, व रा, र. कं, नि र, चि र भ, र (मा), टो, र का, र क यो, रस. स, र र कौ, शा. स, र प्र सु., र बो, र पा. ज्वराऽधिकारे।

टि०—रसमुक्तावल्या टङ्कणस्थाने कुनटी नियोजिता, अस्मादेव रसात्ताम्रपात्रोद्रलेपनादिक्रिया निष्कास्य **शीतहारीति** स्वतन्त्रनाम स्थापितम्॥ एतत्पाठस्थाने "तुल्य टङ्कणसूतगन्धकविप सत्खर्पर तालक, सर्व खल्वतले विमर्द्य घटिका तत्कारवल्लीरसै। गुञ्जैकप्रमिता सुशर्करयुता मज्जीरकेणाऽथवा, एकद्वित्रिचतुर्थशीतहरण शीताङ्कुशो नामत॥" अय पाठ वै वि, वै ट, चि सा, यो म, र. प्र, यो र, वा, एषु निहितोऽस्ति। र मु, रसायनस, नि र, र को, र बो, र क यो एषु तु पाठद्वयमपि निहितमस्ति तत्र शीताङ्कुशो विषमधिकतयाऽस्ति ताम्रपात्रलेपनादिक्रिया च नास्ति इत्यापानतो मह-

दन्तर प्रतीयते परन्तु प्रकृतरसे विषयोग विधाय रसनिष्पादने फलाधिक्य पाठन्यूनता च महत्फल भविष्यत्यतस्तस्याऽत्रैवाऽन्तर्भाव कृतोऽस्ति इति विद्वद्भिराकलनीयम्। रस स, र क ल, र वो एषु ग्रन्थेषु **शीतारिनाम्ना** "शुल्व गन्धकटङ्कणौ गल्गत तुल्य रस खर्पर, ताल तुल्यमि८०" इत्यादिक स्वतन्त्रपाठो निहितोऽस्ति। उपरि निर्दिष्टसूत्या तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव सुकर। चिकित्सारहस्ये तुत्थ परित्यक्तम्। कुत्रचिद्रसकस्थाने ताम्र नियोजित तत्तु न सम्यक्? अग्रे ताम्रपात्रोदरे लेपविधानात्। दग्धताम्रपात्रसहितस्य रसे प्रयोगात् स्वतन्त्रताम्रदानस्य नास्त्यत्यावश्यकता। ननु ताम्रपात्रोदरादिति पञ्चम्या ताम्रपात्रस्य पृथगवस्थानात्कथ भस्मीभूतताम्रपात्रमद्ग्रह आस्यत इति चेन्न तथासति ताम्रपात्रोदरे लेपविधानस्यैव वैयर्थ्यात्। प्रथमशीतभञ्जिसमानोऽस्य योगोऽस्ति तत्र च ताम्रदग्धभागस्यैव ग्रहणमस्ति इति सुधीभिर्हृद्याकलनीयम्। अपरिपक्वताम्रपात्रभागस्याऽवशेषत्वाद्यथाकथञ्चिदुपादानस्य निर्वाह करणीय। रसकप्रक्षेपणस्य तु नितरामौचिती प्रतिभाति। र स, र क एतयोरनुपाने तुलसीमरिच विहितम्। **तथाच** "धात्रीकल्केन वा युक्त दाहाख्य विषमञ्जयेत्। पथ्य दुग्धौदन दद्यान्मुद्गयूप सशर्करम्। ज्वरे धातुगते दद्यात्पिप्पलीक्षौद्रसंयुतम्। अय पञ्चाननो नाम विषमज्वरनाशन॥" इत्यधिक पाठ कृत नाम च **पञ्चाननरस** इति स्थापितम्। शा स, र प्र सु., एतयो **ज्वरारिरस** इति नाम। रसकामधेनौ द्वितीयस्थाने ताम्रमाक्षिकविषाण्यधिकतया नियुज्यैको रसोऽनयैव प्रक्रियया निष्पादित परन्तु तत्र कामधेनुसङ्कलयितुरज्ञानताऽस्ति। ताम्रपात्रोदर लिम्पेदिति वाक्येन ताम्रयोगस्याऽनायाससिद्धत्वेन स्वतन्त्रप्रक्षेपस्याऽनौचित्यात्। तस्मात्तत्र पाकाऽभावोऽस्तीति प्रतीयते, तन्मूलन्तु पाठोद्धरणपुस्तके त्रुटितपाठाऽऽसादनम्। रसकामधेनावेवैकत्रस्थाने शीतभञ्जीनाम्ना "सूतगन्धार्कतालञ्च माक्षिक टङ्कण विषम्। खर्पर शिखितुल्यञ्च समभागानि मर्दयेत्। कारवल्लीरसेनैव दिनमेक निरन्तरम्। मुद्गमाना वटी दत्ता शीतभञ्जी महारस॥" इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्र समावेशोऽनायाससिद्ध।

भाषा—शुद्धपारा, खपरिया, हरिताल, तुत्थ, सुहागा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर करेलेकेरससे एकदिन मर्दनकर तांबेकेवर्तनमें दो जव मोटा लेपकर मुहपर ढक्कन रख सन्धिवन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर अच्छीतरहसुखाय वालुकायन्त्रमें रख ऊपर धान डालकर अग्निदे। जव धानोंकी खील होजाय तव अग्निवन्दकरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर जितना ताम्रपात्र अच्छीतरह जलगया हो उसकेसहित निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे उड़दवरावर मात्रा ७ कालीमिर्चोकेसाथ पानमें रखकर खानेसे वमनहोकर ३ दिनमें शीतज्वर नष्टहोताहै॥ १२८॥

१२९ शीतभञ्जीरसः (शाङ्करीज्वराङ्कुशः) ८

हरिद्रा च सुधाक्षारौ सिन्दूरं धूर्तवीजकम्।
प्रत्येकं कर्षमात्राणि शोधितानि नवानि च॥ ५०९॥
हरितालञ्च भल्लातं पृथक्कर्षचतुष्टयम्।
सूक्ष्मं चूर्णं विधायाथ भावयेत्त्रिः पृथक्पृथक्॥५१०
काकमाचीभृङ्गराजसूरणानां रसैः क्रमात्।
अर्कदुग्धैः स्नुहीक्षीरैस्तद्वदेयं पुटत्रयम्॥ ५११॥
शुष्कं तद्धण्डिकामध्ये कृत्वा दत्त्वा शरावकम्।
विधाय सन्धिसंरोधं गुडेन लवणाम्भसा॥ ५१२॥
तस्योपर्यागलान्तञ्च भस्मना पूर्य हण्डिकाम्।
तस्या मुखं मर्दयित्वा मृद्भिः पटयुतैर्ध्रुवम॥ ५१३॥
पश्चाच्चुल्यां समारोप्य हठाग्निं यामयुग्मकम्।
स्वाङ्गशीतलमुत्तार्य तोलयेत्सिद्धमौषधम्॥ ५१४॥
तस्य सिद्धस्य षष्ठांशं मरिचं दापयेद्बुधः।
सूक्ष्मचूर्णं विधायाऽथ मात्रां गुञ्जाद्वयात्मिकाम्॥५१५
पर्णपत्रेण मतिमान् दापयेच्छीतकज्वरे।
दाहयुक्ते च विषमे ज्वरान्सर्वान्व्यपोहति॥ ५१६॥

र सु., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—हल्दी, सीपकाचूना, सज्जी और यवक्षार, रससिन्दूर, शुद्धधतूरेकेवीज १–१ कर्ष, हरिताल और भिलावे ४–४ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर भिलावेकेसाथ १–२ पहर घोटकर मकोय, भंगरा, सूरण, आक और थूहरकादूध इनके द्रवोंसे ३–३ भावनाएं देवे। फिर गोलावनाय सुखाकर हण्डीकेवीचमें रख उलटे शरावसे ढककर गुड़ और लवणसे सन्धिवन्दकर कपड़ेमें छानीहुई सफेदराख गलेतकभर ढक्कनलगाय ६–७ कपड़मिट्टीसे सन्धिवन्दकर चूल्हेपरचढाय दोपहरकी कड़ीआचदेकर पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर छठाभाग मरिचमिलाकर १–२ पहर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती पानमें रखकर देनेसे दाहयुक्तज्वर, विषम तथा साधारणज्वर नष्टहोतेहै॥

१३० शीतमातङ्गकेशरीरसः

रसविषशिखिगन्धं खर्परञ्चैकनेत्रा-,
ऽनलनिगमशिवाक्षै र्योजयेच्च क्रमेण।
कनकदलरसेन सूक्ष्मपिष्टन्तु गुञ्जा-
परिमितगुटिकेयं शीतमातङ्गसिंहः॥५१७॥

र क, यो म, ना वि, वा, वै चि, ज्वराधिकारे।

टि०—योगमहार्णवे **शीतारिवटीति** नाम। वाहटो द्वितीयस्थाने गन्धरहितमिम योग शीतगजाङ्कुशनाम्ना प्रख्यापितवान् परन्तु तत्र योगान्तरताया अभाव स्पष्ट एव सुधिया हृदि प्रतिभाति, गन्धकनिष्कासने प्रयोजनाऽभावात्।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, वछनाग २ भा, तूतिया ३ भा., गन्धक ४ भा, खपरिया ३ भाग लेकर सवकी नीलवर्णकज्जलीकर धतूरेकेरससे १–२ दिनमर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै॥ १३०॥

१३१ शीतलपर्पटी

सौरे प्रकुञ्चे द्रवति प्रणीय
माषं वलिं ढालय खल्वकुक्षौ।
सिद्धो रसः शीतलपर्पटीति
कृच्छ्रेऽतिकृच्छ्रे कथितः सजीरः॥ ५१८॥

सि भे म, मूत्रकृच्छ्रे।

भाषा—एकपलशोरेको कड़ाहीमें गलाकर नीचे उतार एकमाशा शुद्धगन्धक डालकर चलादे। गलजानेपर खरलमें डालकर घोटे और वारीकचूर्णवनाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा जीरेकेसाथदेनेसे मूत्रकृच्छ्र नष्टहोताहै॥ १३१॥

१३२ शीतलानन्दरसः

हेमरौप्यरसव्योम गन्धं कांस्यं शिलाजतु।
कन्याद्भिर्मर्दयित्वाऽथ मुद्गमानां वटीश्चरेत् ॥५१९॥
यथादोषानुपानेन प्रयोगादस्य निश्चितम्।
मसूरिकादयः सर्वे नश्यन्ति त्वरया गदाः ॥ ५२० ॥
देव्या शीतलया प्रोक्तः शीतलानन्दनामकः।
मसूरिकाभिभूतानां रसोऽयं हितकाम्यया ॥ ५२१ ॥

आ वि शीतलायाम्।

भाषा—सुवर्ण, रजत, पारा, अभ्रक, कासा इनकीभस्में, शुद्ध गन्धक और शिलाजीत समभागलेकर घीकुवारकेरससे १–२ दिन मर्दनकर मूंगवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह मसूरिकाप्रभृति समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ १३२ ॥

१३३ शीताङ्कुशरसः (चातुर्थिकेभाङ्कुश.)

रसं गन्धकं निर्विषी वत्सनाभं
तुत्थद्वयं गौरिपापाणतालम्।
विमर्द्यापि गोलीकृतोऽयं रसेन्द्रो
महापूर्विकाया वलाया रसेन ॥
रसे धूर्तकस्याऽपि शीताङ्कुशोऽयं
सखण्डस्तु चातुर्थिकेभाङ्कुशोऽयम् ॥५२२॥

र प्र , ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, निर्विषी, वछनाग, तूतिया, हीराकसीस, सोमल, रसमाणिक्य सवसमभागलेकर नीलवर्ण कज्जलीकर कद्दी और धतूरेकेरससे १–१ दिन मर्दनकर मूंगवरावर गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपान अथवा शक्करकेसाथदेनेसे यह चातुर्थिकज्वरको नष्टकरताहै ॥ १३३ ॥

१३४ शीतारिरसः (प्रथमः)

पारदं गन्धकं शुद्धं टङ्कणञ्च समंसमम्।
पारदाद्द्विगुणं देयं जैपालं तुषवर्जितम् ॥ ५२३ ॥
सैन्धवं मरिचं चिञ्चात्वग्भस्म शर्कराऽपि च।
प्रत्येकं सूततुल्यं स्याज्जम्बीरै मर्दयेद्दिनम् ॥ ५२४ ॥
द्विगुञ्जस्तप्ततोयेन वातश्लेष्मज्वरापहः।
रसः शीतारिनामाऽयं शीतज्वरहरः परः ॥ ५२५ ॥

र स , भै र , र सु , नि र , रसायनसं , सू प्र , र क , र सि , चि.र भ , र म , र च , र क ल , र चि , र का , र र कौ , र क यो , वा , भा.प्र , रसचि , यो म , ज्वराऽधिकारे।

टि०—भा प्र रसचि , यो म एपु तथा नि र र सु एतयो द्वितीयस्थाने मृत्युंशेखररस इति नाम। रसेन्द्ररत्नकोषे माक्षिकमधिकतया प्रक्षिप्य ज्वराङ्कुशेति नाम स्थापितम्। माक्षिकेऽधिकप्रीतिश्चेत्प्रक्षिप्यता शीतारिरसे तत् तदाधिक्ये न काप्यनुपपत्ति रसस्त्वेक एव। रत्नाकरौषधयोगे शुण्ठ्यर्कचूर्णञ्च अधिकतया निक्षिप्य ज्वराारिरस इति नाम स्थापितम्। कुत्रचिच्छुल्व अधिकतया दृश्यते। नि. र, द्वितीयस्थाने शीतपित्ताऽधिकारे पाठः।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा १–१ भाग, शुद्ध जमालगोटा २ भाग, सैंधव, मरिच, पकीइमलीकेछिल्कोंकी भस्म और शक्कर १–१ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरीकेरससे एकदिन मर्दनकर २–२ रत्तीकीगोलियावनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गरमपानीकेसाथदेनेसे वातश्लेष्मज्वर और शीतज्वर निवृत्तहोताहै ॥ १३४ ॥

१३५ शीतारिरसः (द्वितीयः)

त्र्यूपणेन समं सूतं गन्धकन्तु तयोः समम्।
मर्दयित्वा तु तत्सर्वं कारवल्या दिनत्रयम् ॥ ५२६ ॥
गुञ्जैकं सितया युक्तं वान्तिशीतज्वरापहम्।
पथ्यं दुग्धौदनं देयमथवा मुद्गसूपकम् ॥
दाहे शीतक्रियां कुर्यादायुर्वेदविशारदः ॥ ५२७ ॥

र पा , ज्वराऽधिकारे।

भाषा—सोंठ, मिर्च, पीपल १–१ भाग, शुद्ध पारा ३ भाग, गन्धक ६ भागकी नीलवर्णकज्जलीकर करेलेकेरससे ३ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्करकेसाथदेनेसे यह वमन और शीतज्वरको नष्टकरताहै। पथ्यमें दूधभात अथवा मूगकायूषदेना। अधिकदाहहोनेपर शीतक्रियाकरना ॥ १३५ ॥

१३६ शीतारिरसः (तृतीयः)

वत्सनाभोपणश्चैवाऽऽकल्लकं मागधी तथा।
दरदं समुद्रशोपश्च तुलसीरसमर्दितः ॥ ५२८ ॥
शीतज्वरं निहन्त्याशु शीतारि र्दुर्लभः परः।
आर्द्रकादिरसैर्देयश्शीतव्याधिविनाशनः ॥ ५२९ ॥

रस स , ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्धवछनाग, मरिच, अकलकरा, पीपल, शिंगरिफ और समुद्रशोष समभागलेकर वारीकचूर्णकर तुलसीकेरससे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखवगैरह उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥ १३६ ॥

१३७ शीतारिरसः (चतुर्थ.)

सूतं गन्धकतालकौ च कुनटी म्लेच्छं रविं मर्दये-,
त्साम्येनाऽथ विभावयेत्तुषविजैः सप्ताहमेतत्सुधीः।
शुष्कश्चाऽथ विमर्दयेद्रसवरं शीतारिसञ्ज्ञान्वितं,
वल्लैकं मरिचै र्हरिप्रियरसे र्दत्तो हिमं नाशयेत् ५३०
शीतज्वरास्तु गच्छन्ति हिमाद्रिं रसपीडिताः।
पथ्यं क्षीरौदनं देयं शीतज्वरविनाशनम् ॥ ५३१ ॥

र श , ज्वरे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, मैनसिल, शिंगरिफ और ताम्रभस्म समभागकी नीलवर्णकज्जलीकर करेलेकेरससे ७ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकीगोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मरिच और तुलसीकेरसकेसाथदेनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै। इसमें पथ्य दूधभातदेना ॥ १३७ ॥

१३८ शीतारिरसः (पञ्चमः)

तालकं तुत्थकं ताम्रं रसं गन्धं मनःशिलाम्।
कर्षं कर्षं प्रयोक्तव्यं मर्दयेत्त्रिफलाम्बुभिः ॥ ५३२ ॥
गोलं न्यसेत्सम्पुटके पुटं दद्यात्प्रयत्नतः।
ततो नीत्वाऽर्कदुग्धेन वज्रीदुग्धेन सप्तधा ॥ ५३३ ॥
क्वाथेन दन्त्याः श्यामाया भावयेत्सप्तधा पुनः।
माषमात्रं रसं दिव्यं पञ्चाशन्मरिचै र्युतम् ॥ ५३४॥
गुडं गद्याणकञ्चैव तुलसीदलयुग्मकम्।
भक्षयेत्त्रिदिनं भक्त्या शीतारिं दुर्लभं परम् ॥ ५३५ ॥
पथ्यं दुग्धौदनं देयं विषमं शीतपूर्वकम्।
दाहपूर्वं हरत्याशु तृतीयकचतुर्थकौ ॥
द्व्याहिकं सततञ्चैव वैवर्ण्यञ्च नियच्छति ॥ ५३६ ॥

रसायनस., र का , र. मु , टो., चि र भ., शा सं., र. को , र. प्र सु., ज्वराधिकारे।

टि०—चि र भ , शा स , र को , ष्पु शीतज्वरारिरिति नाम। रसप्रकाशसुधाकरे तरुणज्वराररिरितिनाम अत्र भावनाया श्यामा न दृश्यते

भाषा—शुद्ध हरिताल, तुत्थ, ताम्रभस्म, पारा, गन्धक और मैंनसिल १–१ कर्ष लेकर नीलवर्णकज्जलीकर त्रिफलाके क्वाथसे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ३–४ कपड़मिट्टीदेकर ४ पहर वालुकायन्त्रमें पकावे। स्वाङ्ग-शीतल्होनेपर निकालकर आक और थूहरकेदूध, दन्तीमूल और निसोतकेक्काथसे ७–७ भावनाएं देकर उड़दवरावर गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली ५० कालीमिर्चे, ६ माशे पुरानेगुड़ और दो तुल्सीकेपत्तोंकेसाथदेनेसे यह शीत-ज्वर, विषम, दाहपूर्व और चातुर्थिकप्रभृति तमामज्वरोंको दूरकरताहै। इसमें पथ्य दूधभातदेना ॥ १३८ ॥

१३९ शीतारिरसः (षष्ठः)

सितमल्लमनःशिलाऽहिफेन-
रसकाम्भोधिजताप्यतुल्यभागैः।
सुषवीरसमर्दितैस्त्रिवारं
भज शीतारिमिमं सितार्द्धगुञ्जम् ॥ ५३७॥
सेवनाद्धरते तीव्रं ज्वरं शीतं महोल्वणम्।
मात्रात्रयेण निःशेषं पथ्यं मुद्गौदनं स्मृतम् ॥ ५३८ ॥

वृ यो त , रसायनस., र कौ , र श , वै वि , ज्वराऽधिकारे।

टि०—रसराजशङ्करे सितमल्लो द्विभागो नियोजित भावनाया अभावो दृश्यते।

भाषा—शुद्ध सफेदसोमल, मैनसिल, अफीम, खपरिया, शङ्ख, सोनामाखी सवसमभागलेकर वारीकचूर्णकर करलेकेरसकी ३ भावनाएंदेकर आधीआधीरत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्करकेसाथ देनेसे यह शीतपूर्व अथवा दाहपूर्वज्वरको ३ मात्राओंमें नष्टकरताहै। पथ्यमें दूधभातदेना ॥

१४० शीतारिरसः (सप्तमः)

मदनफलसुवीजं टङ्कणक्षारतुल्यं,
पलमपि हरवीजं सर्वमेकत्र कृत्वा।
सममिह जयपालं मर्दयेत्स्निग्धखल्वे,
त्रिवृत्त्रिफलदन्ती नागवल्ल्या विमर्द्य ॥ ५३९ ॥
गुडजलमधुयुक्तं वल्लमेकं प्रदद्या-,
न्मलजलकफपित्तं वातदोषेण मिश्रम्।
ज्वरमुदरविकारं श्लेष्मपित्तञ्च रक्तं,
तनुगतवहुरोगान्हन्ति शीघ्रं नराणाम् ॥ ५४० ॥

र र को , ज्वराऽधिकारे।

भाषा—मैनफल (मींढोळ म०), इन्द्रजव, भुनासुहागा और यवक्षार १–१ कर्ष, रससिन्दूर १ पल लेकर सवकावारीकचूर्ण-कर सवकीवरावर शुद्ध जमालगोटा मिलाकर निसोत, त्रिफला, दन्तीमूल, पान इनके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गुड़, पानी अथवा मधुकेसाथदेनेसे मलदोष, जलदोष, कफपित्तविकार, वातदोष, ज्वर, उदरविकार, श्लेष्मपित्त, रक्तपित्त इत्यादि समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ १४० ॥

१४१ शीतारिरसः (अष्टमः)

तालकखर्परसूषिकयुग्मं काञ्चनपल्लवजातरसैश्च।
मर्द्य मर्द्य पुनरपि मर्द्य शीतमयादिनिवारणगुटिका

नि र , ज्वराऽधिकारे।

भाषा—रसमाणिक्य अथवा शुद्धहरिताल, खपरिया, सफेद और पीलासोमल समभागलेकर धतूरेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर सर्षपप्रमाणगोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह शीतप्रधानव्याधियों को नष्ट-करताहै ॥ १४१ ॥

१४२ शीतारिरसः (नवमः)

रसगन्धकद्युमणितीव्रविष-
त्रिकटूनि टङ्कणयुतानि मुहुः।
शिखिशूकरानिमिषवित्तचरैः
परिमर्द्य भावितमदोऽग्निरसैः ॥ ५४२ ॥
गुटिकीकृतं द्विगुणवल्लिमितं
घनसारजीरककणाऽऽर्द्ररसैः।
अतिशैत्यमोहयुतमप्यचिरा-
ज्जयति ज्वरं तमपि मृत्युकरम् ॥ ५४३ ॥
दशमूलाम्भसा सिद्धो दशाङ्गः प्रथितो गणः।
सार्द्रकस्वरसः पीतः सादयत्युद्धुरं ज्वरम् ॥ ५४४ ॥

त्रि०, र सु , ज्वराऽधिकारे। र सु , **सन्निपातान्तक** इतिनाम।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, ताम्रभस्म, सोमल, त्रिकटु, भुनासुहागा सवसमभागकी नीलवर्णकज्जलीकर मोर, सुअर, मछली और सापके पित्त तथा चित्रकके क्वाथसे १–१ दिन मर्दनकर दो मरिचप्रमाण गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे औचिती देखकर १ या २ गोली शुद्धकपूर, जीरा, पीपल और अदरखकेरसकेसाथ देनेसे शीताङ्ग, अत्यन्तशीत और मोहयुक्त

असाध्यसन्निपातको यह बहुतशीघ्र नष्टकरताहै। भटकटैया, वनभाटा, दन्तीमूल, पटोल, काकड़ासींगी, भारङ्गी, पोहकर-मूल, कुटकी, कचूर, इन्द्रजव समभागलेकर जवकुटकर आधे-तोलेका दशमूलके २० तोलेकाथमें फिरसे क्वाथवनाकर ५ तोला बाकीरहनेपर अनुपानकीजगहदेनेमे अत्यन्तवढेहुए सन्निपातको यह नष्टकरताहै ॥ १४२ ॥

१४३ शीतारिरसः (दशमः)

सूतं गन्धकमर्कमल्लकयुतं चेतःशिला खर्परं,
तालः साधुसुधेति कारविरसैः सम्मर्दितं सप्तधा।
मूषापाचितमष्टमांशमिलितं हैयङ्गवीनेन त-,
द्दीप्यत्र्यूषणतुर्यभागघटितं मत्स्याजपित्ताप्लुतम् ॥
प्रत्येकं मुनिभिः सशर्करमिदं दुग्धेन वल्लैककं,
पीतं भक्तपयोभुजो विजयते द्राक् सर्वशीतज्वरम् ५४५

र प , ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, ताम्रभस्म, सोमल, मैन-सिल, खपरिया, रसमाणिक्य अथवा शुद्धहरिताल, मोतीकी-सीप अथवा पत्थरकाचूना येसव समभागलेकर नीलवर्णकज्ज-लीकर कारवी (भुइकरावी गुज०)के रससे ७ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर सुख-नेपर लघुपुटकीआचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अष्टमांश मक्खनमिलाकर १–२ पहर मर्दनकर अजवाइन और त्रिकटु समभागकाचूर्णचतुर्थांशमिलाकर मछली और वकरेकेपित्तोंसे ७–७भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकीगोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्कर और दूधकेसाथदेनेसे यह सवप्रकार-केशीतज्वरोंको नष्टकरताहै। इसमेंपथ्य दूधभातदेना ॥ १४३ ॥

१४४ शीतार्युद्धूलनम्

शिवेष्टफलसम्भूतभस्मभागाष्टकं शुभम्।
मरिचस्य तु चत्वारो रसादेको विषस्य च ॥ ५४६ ॥
सूक्ष्मचूर्णीकृतादस्मान्मर्दनं चातियत्नतः।
असाध्येऽपि हि शीताङ्गे स्वेदनं दीपनं परम् ॥
अन्नपानञ्च वातघ्नं शीतारि दुर्लभः परः ॥ ५४७ ॥

रस सं , ज्वराऽधिकारे।

भाषा—धतूरेके फलोंकीभस्म ८ भाग, मरिच ४ भा , शुद्धपारा और वछनाग १–१ भाग लेकर पारा अदृश्य होनेतक मर्दनकर रखछोड़े। अत्यन्तशीताङ्गआनेपर वहुतसभालकर इसका-मर्दनकरनेसे शीताङ्ग निवृत्तहोजाताहै। यह स्वेदन और दीपनहै इसमें वातघ्न अन्नपानदेना ॥ १४४ ॥

१४५ शीतांशुरसः

कुनटी शुद्धतालश्च तद्द्विघ्नं व्योषकं भवेत्।
मर्दयेन्निम्बुनीरेण गुञ्जायुग्मं तु सेचयेत् ॥ ५४८ ॥
अनुपानं शिवाक्षौद्रमुष्णं वारि तथाऽऽर्द्रकम्।
शीतज्वरं सन्निपातं कामलां गुल्मपञ्चकम ॥ ५४९ ॥
सर्वश्वासञ्च कासञ्च नाशयेदुदरं भृशम।
सन्निपातं तथा छर्दिमशीतिं वातरोगजाम ॥ ५५० ॥
शूलमष्टविधं हन्ति नाभौ कुक्षौ च विद्रधिम्।
आध्मानानाहविष्टम्भं तापं सर्वाङ्गदाहकम् ॥ ५५१ ॥
जङ्गमं स्थावरञ्चैव विषं हिक्कां विनाशयेत्।
शोथञ्च भ्रममूर्च्छे च तिमिरञ्च व्यपोहति ॥ ५५२ ॥
मर्दितं निम्बतोयेन लेपितं गजचर्मनुत।
विसर्पमण्डले चैव दुष्टचर्म व्यपोहति ॥ ५५३ ॥
सेवितं लेपितं कुर्याद्द्रावितं ग्रन्थिमर्वुदम।
लेपितं दन्तरोगांश्च जिह्वानेत्ररुजस्तथा ॥ ५५४ ॥
अर्कपत्ररसैः कर्णे पूरणाद्रोगनाशनम्।
निर्गुण्डीमिश्रितं नस्यमपस्मारं शिरोरुजम् ॥ ५५५
अञ्जनं यवमात्रञ्च नेत्ररोगविनाशनम्।
माषञ्च सन्निपातानां कामलाज्वरशीतके ॥ ५५६ ॥
धनुर्वातश्च भूतश्च शोषरोगे च काकथा
भाषितो रेवणेनैव रसः शीतांशुनामकः ॥ ५५७ ॥

व रा , धनुर्वाते।

भाषा—शुद्ध मैनसिल और हरिताल १–१ भाग, सोंठ, मिर्च, पीपल २–२ भाग लेकर सवकावारीकचूर्णकर नीवूकेरससे एकदिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली हर्रे, मधु, गरमजल अथवा अदरख इनमेंसे किसीएककेसाथ औचिती देखकरदेनेसे शीतज्वर, सन्निपात, कामला, पाचोंप्रकारकेगुलम, श्वास, कास, उदररोग, सन्निपातज-वमन, ८० वातरोग, ८ प्रकारकेशूल, नाभि और कुक्षिका जहरवाद, आध्मान, आनाह, विष्टम्भ, ज्वर, सर्वाङ्गदाह, स्थावर और जङ्गमविष, हिचकी, शोथ, भ्रम, मूर्च्छा, तिमिर इनसवको यहनष्टकरताहै। नीमकेजलमे लेपकरनेसे छाजन, विसर्प, मण्डलकुष्ठ और चर्मरोग नष्टहोतेहै। खाने और लगा-नेसे गाठ और अर्वुदको गलादेताहै। लेपकरनेसे दात, जिह्वा तथा नेत्ररोगोंको नष्टकरताहै। आकके पत्तोंके रसकेसाथ मिला-कर डालनेसे कानकेरोगोंको दूरकरताहै। निर्गुण्डीकेरसकेसाथ नस्यदेनेसे अपस्मार और मस्तकपीडाको यह नष्टकरताहै। यवप्रमाणका अञ्जनकरनेसे नेत्ररोग नष्टहोताहै। एकमाशेकी मात्रादेनेसे सन्निपात, कामला, शीतज्वर, धनुर्वात, भूतवाधा और शोषरोगको दूरकरताहै ॥ १४५ ॥

१४६ शुक्रमातृकावटी

गोक्षुरवीजं त्रिफला पत्रमेला रसाञ्जनम्।
धान्याकञ्चविका जीरं तालीसं टङ्कदाडिमौ ॥ ५५८ ॥
प्रत्येकाऽर्द्धपलं दत्त्वा गुग्गुलोः कार्षिकन्तथा।
रसाऽभ्रलौहगन्धानां प्रत्येकञ्च पलं क्षिपेत ॥ ५५९ ॥
सर्वमेकीकृतं वैद्यो दण्डयन्त्रे विमर्दयेत्।
घृतभाण्डे तु संस्थाप्य मासमेकन्तु खादयेत् ॥ ५६० ॥
दाडिमस्वरसेनैव छागीदुग्धेन वाम्भसा।
चन्द्रनाथेन गदिता वटिका शुक्रमातृका ॥ ५६१ ॥

विंशन्मेहान्निहन्त्याशु वातपित्तादिसम्भवान् ।
द्वन्द्वजान्सन्निपातोत्थान्मूत्रकृच्छ्राश्मरीगदान् ॥
बलवर्णाऽग्निजननी ज्वरदोषनिषूदनी ॥ ५६२ ॥

र. र, भै. र, प्रमेहे ।

भाषा—गोखरू, त्रिफला, तमालपत्र, इलायची, रसौत, धनियां, चव्य, जीरा, तालीसपत्र, भुनासुहागा, अनार येसव २–२ कर्ष, शुद्धगूगल १ कर्ष, शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक और लोहभस्म १–१ पललेकर सबकावारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय गोखरूवगैरहकेकाथसे १–२ दिन-मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियाबनाकर घीकेवर्तनमें एकमहीने-तक रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अनारकेरस, बकरीके-दूध अथवा जलकेसाथलेनेसे वातादिजन्य २० प्रकारकेप्रमेह, द्वन्द्वज तथा सन्निपातज मूत्रकृच्छ्र और पथरी इनसबको नष्टकर बल, वर्ण और अग्निको पैदाकर ज्वरको यह नष्टकरतीहै ॥१४६॥

१४७ शुक्रस्तम्भकरीवटी

कर्पूरमहिफेनश्च कस्तूरी जातिपत्रिका ।
नागवल्लीरसेनैव गुटिका मदनाशिनी ॥ ५६३ ॥
शुक्रस्तम्भकरी नित्यं बलमांसविवर्धिनी ।
नरश्चटकवद्गच्छेच्छतवारान्न संशयः ॥ ५६४ ॥

रस. स, वाजीकरणे ।

टि०—अत्र कर्पूरशब्देन रसकर्पूरमेव ग्राह्यम्, तद्योगेनैव यथोक्त-गुणलाभात् ।

भाषा—शुद्ध रसकपूर, अफीम, कस्तूरी और जावित्री समभागलेकर वारीकचूर्णकर पानकेरससे मर्दनकर उड़दवरावर गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मलाईवगैरह-केसाथलेनेसे यह शुक्रकास्तम्भन करतीहै । बल और मासको बढातीहै तथा सम्भोगेच्छाको वारम्वार जागृतकरतीहै ॥१४७॥

१४८ शुण्ठीखण्डः

नागरस्य रजः सर्पिः पृथग्दशपलोन्मितम् ।
पञ्चाशत्पलिकं क्षीरं खण्डं क्षीरसमं पचेत् ॥ ५६५ ॥
व्योषं त्रिजातकं धान्यं पञ्चन्था जीरकद्वयम् ।
शृङ्गी लवङ्गं लोहञ्च वरा जातीफलं घनम् ॥ ५६६ ॥
प्रत्येकं चूर्णमेतेषां पलार्द्धन्तु विनिःक्षिपेत् ।
पलद्वयं चारबीजं प्रक्षिप्य विपचेत्सुधीः ॥ ५६७ ॥
खादेदग्निबलापेक्षी शिरोरोगविनाशनम् ।
आमवातप्रशमनं बलपुष्टिविवर्धनम् ॥
कफपित्ताऽनिलहरं सेव्यमानं रसायनम् ॥ ५६८ ॥

यो म., शिरोरोगे ।

भाषा—१० पल सोंठके चूर्णको १० पल घीमें सेककर ५० पल गायकेदूधमें डालकर ५० पल शक्कर मिलाकर चाशनी-करे । चाशनीतैयारहोनेपर त्रिकटु, त्रिजात, धनिया, पिपला-मूल, दोनोंजीरे, काकड़ासींगी, लौंग, लोहभस्म, त्रिफला, जायफल, नागरमोथा येसव २–२ कर्ष, चिरोंजी २ पल डालकर अच्छीतरह मिलजानेपर उतारकर रखछोड़े । इसमेंसे अग्निबल-देखकर मात्रा कायमकर देनेसे शिरोरोग, आमवात, बल और पुष्टिकाह्रास, कफ, पित्त और वायुरोग इनसबको नष्टकर यह दीर्घायुको करताहै ॥ १४८ ॥

१४९ शुण्ठीपाकः

प्रस्थार्द्धविश्वाऽष्टगुणञ्च दुग्धं
प्रस्थप्रमाणाज्यगुडञ्च तद्वत् ।
विपाचयेत्तन्मृदुवह्निना च
पश्चात्तदन्तः क्षिप वक्ष्यमाणम् ॥ ५६९ ॥
चातुर्जातं जातिपत्री वासावह्निफलत्रयम् ।
देवपुष्पं गजकणा भार्गी शृङ्गी कटुत्रयम् ॥ ५७० ॥
आकल्लकं लोहचूर्णं वंशलोचनकट्फलम् ।
दारु विश्वाऽश्वगन्धा च चूर्णमेषां कृतं समम् ॥५७१॥
चतुष्कर्षमितं चास्माद्यो भजेद्दिनसप्तकम् ।
तस्य स्वमौलिकर्णाक्षिरोगव्यूहं विनाशयेत् ॥ ५७२॥
सर्ववाताञ्जयत्याशु कफपित्तोद्भवानपि ।
हस्तिना कथितः सम्यक् शुण्ठीपाकेति नामतः॥५७३

रसायनसं, वाताधिकारे ।

भाषा—सोंठकाचूर्ण ८ पल, घी और गुड १–१ प्रस्थ, गायकादूध ४ प्रस्थ लेकर इकट्ठेमिलाय मन्दाग्निसे पकावे । पाकहोनेपर चातुर्जात, जावित्री, अड़ूसा, चित्रकमूल, त्रिफला, लौंग, गजपीपल, भारङ्गी, काकडासींगी, त्रिकटु, अकलकरा, लोहभस्म, वंसलोचन, कायफल, दारुहल्दी, सोंठ और अस-गन्ध इनकाचूर्ण १–१ कर्ष डालकर उतारकर रखछोड़े । इसमेंसे अग्निबलदेखकर १ कर्षसे १ पलतक मात्रा ७ दिनतकखानेसे मस्तक, कान और आखकेरोग, सम्पूर्णवातविकार, कफपित्तरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १४९ ॥

१५० शूलकुठाररसः

टङ्कणं पारदं गन्धं त्रिफला व्योषतालकं ।
विषं ताम्रञ्च जयपालं भृङ्गस्वरसमर्दितम् ॥ ५७४ ॥
द्विगुञ्जं नाशयेच्छूलं मरिचेनार्द्रकेण वा ।
सर्वशूलानिहन्त्येषो विष्णुचक्रमिवासुरान् ॥ ५७५ ॥

नि. र, व रा, वै चि, र क यो, र पा, शूलाविकारे ।

भाषा—शुद्ध सुहागा, पारा, और गन्धक, त्रिफला, त्रिकटु, रसमाणिक्य, शुद्धवछनाग, ताम्रभस्म और शुद्धजमा-लगोटा समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर भंगरेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियाबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मरिच अथवा अदरखके रसकेसाथदेनेसे यह सब-प्रकारके शूलोंकोनष्टकरताहै ॥ १५० ॥

१५१ शूलगजकेसरीरसः (प्रथमः)

शुद्धं ताम्रपलं वह्नौ वह्निवत्तापितं भृशम् ।
एकविंशतिवारांश्च शीतीकुर्याच्च गोजले ॥ ५७६ ॥
पातयेदम्लवर्गेषु तप्तं छिक्कारसे पुनः ।
तद्वत्तप्तं गुडक्षीरे शीतीकुर्यात्पुनश्च तत् ॥ ५७७ ॥

पुनस्तप्ते च गलिते पातयेत्पादपारदम् ।
दरदोत्थं ततस्तालशिलासोमजसत्त्वतः ॥ ५७८ ॥
गन्धसत्त्वेन च पुनर्लिप्त्वा पत्राणि शोषयेत् ।
शरावसम्पुटे धृत्वा वह्निं यामांस्तु षोडश ॥ ५७९ ॥
त्रिहस्तगर्तमध्यस्थे तुषच्छागविडन्तरे ।
शीतं पुनर्गृहीत्वाऽयं रसः शूलेभकेसरी ॥ ५८० ॥

र. का., शूलाऽधिकारे ।

भाषा—एकपल शुद्धताम्रेकेपत्रोंको अग्निसात्कर २१ वार गोमूत्रमें बुझावे फिर अम्लवर्ग, नकछिकनीकेरस और गुड़युक्त दूधमें २१–२१ वार बुझावे । फिर इसे गलाकर चतुर्थांश हिङ्गुलोत्थपारा मिलाय पत्रेवनाकर हरिताल, मैनसिल, सोमल और गन्धक प्रत्येक पारेसे चतुर्थांशलेकर वारीकचूर्णकर नकछिकनीकेरसमें मर्दनकर पत्रोंपर लेपलगाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर अच्छीतरहसुखनेपर ३ हाथगहरे गड्ढेमें तुष और वकरीकीमींगणीकेवीचमें रस १६ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती अदरखवगैरह उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तशूलोंको नष्ट करताहै ॥ १५१ ॥

१५२ शूलगजकेसरीरसः (महदादिः) २

शुद्धताम्रस्य पत्राणि कुर्यात्तनुतराणि च ।
तप्ततप्तानि नरगोजाश्वोष्ट्रखरजेषु च ॥ ५८१ ॥
मूत्रेष्वथद्रवे छिक्काभवे प्रत्येकशः पुनः ।
एकविंशतिवारांश्च शीतीकुर्याद्भृशं नरः ॥ ५८२ ॥
लिम्पेन्नूसारसौभाग्यच्छिक्कास्वरसतो बुधः ।
शुष्काणि पटुमृत्केशमृद्वस्त्रान्तरशोषणात् ॥ ५८३ ॥
पुनस्तप्तानि च भृशं काञ्जिके प्रक्षिपेदपि ।
त्रिवारमेवं हि कृते जायन्तेऽतिसितानि च ॥५८४॥
अथ तानि पुनस्तापयित्वा मूत्रे च सौकरे ।
प्रक्षिपेद्गनपञ्चाशत्किटिविष्ठाद्रवे पुनः ॥ ५८५ ॥
छिक्कातालद्रवे त्रिश्च त्रिर्मूत्रे सौकरे पुनः ।
किटिमांसान्तरे तान्यूनपञ्चाशद्दिनानि च ॥ ५८६ ॥
स्थापयित्वा च गृह्णीयात्पीतवर्णयुतानि च ।
अथ तालं त्रिपलिकं कदलीपुष्पजद्रवैः ॥ ५८७ ॥
दिनत्रयं मर्दयित्वा संशोष्यातिखरातपे ।
दृढस्थलेष्टिकागर्ते चाश्वारिमूलत्वचं क्षिपेत् ॥५८८॥
तत्रालञ्च पुनस्ताञ्च दत्त्वा भूयः पिधापयेत् ।
काचपात्रेण तल्लिप्त्वा हठमृत्तिकया पुनः ॥ ५८९ ॥
मृत्कर्पटै र्विलिप्याऽथ छायाशुष्कञ्च कारयेत् ।
(वल्मीकभूनागभवा कृष्णा पीता मृदिष्टिका ॥५९०॥
चूर्णं लाक्षा च मण्डूरं गुडं भूर्जजपत्रकम् ।
तुल्यञ्च मेषीक्षीरेण सिद्धा छायाविशोषिता ॥५९१॥
इयं हठा मृत्तिका स्यात्सर्वकूप्यादिलेपने ।)
अथ चुल्ल्यामिष्टिकां तां संस्थाप्याऽग्निं प्रदापयेत् ॥
दीपवत्प्रहरं भूयः सामान्यञ्च हठाख्यकम् ।
एकद्वित्रिकपट्टसङ्ख्यायामानग्निं क्रमादिह ॥ ५९३ ॥
शीतीभूतञ्च गृह्णीयाद्धृतवर्णञ्च सत्त्वकम् ।
अथ यामत्रयं मेषीक्षीरे सम्मर्दयेच्छिलाम् ॥ ५९४ ॥
अर्कक्षीरेण च तथा मोचापुष्पद्रवे तथा ।
कर्षं प्रतिश्वेतचित्रबीजेन सह मर्दयेत् ॥ ५९५ ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य यामषोडशकानलम् ।
शीतीभूतञ्च तत्सत्त्वं वैदूर्याभं प्रजायते ॥ ५९६ ॥
काञ्चनाभं तालजं स्यात्स्फटिकाभञ्च सौम्यजम् ।
(अथ शाङ्खिकसौम्यन्तु गृहीत्वा सार्धमुष्टिकम् ५९७
तद्वद्दरदसूतञ्च मोचापुष्पद्रवे त्र्यहम् ।
अर्कक्षीरैस्त्र्यहं श्वेतैरण्डबीजैः पुनस्त्र्यहम् ॥ ५९८ ॥
अथ ऊर्ध्वं लोहताम्रसम्पुटे तन्निरोधयेत् ।
हठमृत्तिकया वस्त्रमृदा लिप्तञ्च सप्तशः ॥ ५९९ ॥
हण्डिकायां छागविशा पूर्णायां स्थापयेच्च तत् ।
यामद्वादशकं गर्ते वह्निं दत्त्वा तदुद्धरेत् ॥ ६०० ॥
हिमवर्णं सौम्यसत्त्वं जायतेऽतिमनोहरम् ।)
अथ तत्ताम्रपत्राणि दशकर्षमितानि च ॥ ६०१ ॥
तालसौम्यशिलासत्त्वं त्रित्रिकर्षप्रमाणतः ।
पञ्चकर्षं तैलविषं गन्धतैलेन मर्दयेत् ॥ ६०२ ॥
(कर्षसप्तकगन्धन्तु मातुलुङ्गरसैस्तु पटू ।
लशुनद्रवतः पट्कं घृष्ट्वा कुर्याच्च वर्तिकाम् ॥ ६०३ ॥
प्रज्वालयेच्च वै तैलं तेन तैलेन मर्दयेत् ।)
अथ वङ्गं सार्धपलं पलार्धं रसकं तथा ॥ ६०४ ॥
पलार्द्धं नवसारञ्च द्रावयेल्लोहभाण्डके ।
मुहूर्तमग्निं दत्त्वाऽत्र तत्र हिङ्गुलसूतकम् ॥ ६०५ ॥
क्षिप्त्वा घृष्ट्वा पुनः पूर्वद्रव्येण सह मेलयेत् ।
स्नुहीक्षीरे मोरटायाः क्षीरे त्रिस्त्रि विमर्दयेत् ॥६०६॥
तत्सर्वं मृत्तिकाकूप्यां क्षिप्त्वा तां पूरयेत्पुनः ।
धुत्तूरैरण्डतैलाभ्यां मुद्रां दत्त्वा पचेदथ ॥ ६०७ ॥
यामद्वादशकं भूयः काचकूप्यां विनिक्षिपेत् ।
मुद्रां दत्त्वा षोडशभि र्यामै र्यन्त्रे च सैकते ॥ ६०८ ॥
पचेत्तं नीलवर्णं स्याद्रसः शूलेभकेसरी ।
तण्डुलप्रमितो दत्तो यथाव्याध्यनुपानतः ॥ ६०९ ॥
सर्वरोगान्निहन्त्याशु शूलरोगे च का कथा ।
वातव्याधिं क्षयं श्वासं कासं वातास्रमामकम् ॥
जित्वा रसायनं वाजीकरमेतत्प्रजायते ॥ ६१० ॥

र का, शूलाधिकारे ।

भाषा—शुद्धताम्रकेबारीकपत्रोंको अग्निसात् कर मनुष्य, गौ, वकरा, घोड़ा, ऊट और गधेकेमूत्र तथा नकछिकनीकेरसमें २१–२१ वार बुझाकर नवसादर और सुहागेको नकछिकनीकेरसमें पीसकरपत्रोंपर आधाजवमोटा लेपकर गोलावनाय सुखाकर नमक, वावीकीमिट्टी, केश इनको अच्छीतरहकूटकर कपड़ेपर लेपदेकर गोलेपर चढाय अच्छीतरह सुखाकर अग्निसात् कर

काञ्जीमें बुझावे । ऐसे ३ वार करनेसे पत्रेअत्यन्तसफेद होजायगे फिर इनको तपाकर सुअरकेमूत्र और विष्ठाके द्रवमें ४९–४९ वार, और नकछिकनीके स्वरस तथा ताड़ीमें ३–३ वार बुझाकर फिर ३ वार सूअरके मूत्रमें बुझावे। इसकेवाद सूअरकेताज़ेमांसमें ४९ दिनतक रखकर निकालले, ये पीलेरङ्गके निकलेंगे। फिर ३ पल हरितालका वारीकचूर्णकर केलेकेफूलोंके रससे ३ दिनमर्दनकर टिकड़ीवनाय अत्यन्त कड़ीधूपमें सुखाकर अच्छीतरह पकीहुई मोटीईंटमें गोलखड्डा खोदकर सफेदकनेरकीजड़कीछालके चूर्णके वीचमें इस टिकड़ीको रख काचकेप्यालेसे मुंहवन्दकर हठमृत्तिकायुक्तकपड़ोंसे सम्पुटकर छायामें सुखावे। (वावी औरकेंचुओंकी मिट्टी, काली और पीलीमिट्टी, ईंटकाचूरा, लाख, मण्डूर, गुड, भोजपत्र सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर भेडकेदूधसे सानकर हथोंड़ेमे कूटकर मोमकेसदृश वनावे । इसीकानाम हठमृत्तिका है)। फिर ईंटको चूल्हेपर रख वेरवगैरहकीलकड़ीसे एकपहर दीपाग्नि, दोपहर मध्यमाग्नि और तीनपहर तीव्राग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर युक्तिपूर्वक यन्त्रको खोलेतो ऊपरके प्यालेमें धीकेरङ्गकासत्त्व मिलेगा, इसे यत्नपूर्वक रखछोड़े यह हरितालसत्त्व हुआ । मैनसिलको वारीकपीस भेड़ और आककेदूध तथा केलेकेपुष्पद्रवमें ३–३ पहर मर्दनकर चतुर्थांश श्वेतचित्रकके वीजोंकाचूर्ण मिलाय ४ पहर मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें डालकर वालुकायन्त्रमें १६ पहरकी क्रमाग्निसे पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर युक्तिपूर्वक शीशीमेंसे वैदूर्यकेरङ्गकेसत्त्वको निकालकर रखछोड़े। फिर सफेदसोमल और शिंगरिफका पारा ६–६ पल लेकर १–२ दिन यहांतक मर्दनकरे कि पारा अदृश्यहोजाय, फिर केलेकेपुष्पकेरस और आककेदूधमें ३–३ दिन मर्दनकर समभाग सफेदएरण्डवीजकीमज्जा मिलाकर ३ दिन मर्दनकर टिकड़ीवनाय कड़ीधूपमें सुखाकर लोहेकेसम्पुटमेंरख ऊपरसे ताम्रसम्पुटसे वन्दकर हठमृत्तिकासे ७ कपड़मिट्टीदेवे । सूखनेपर एकघड़ेमें वकरीकीमींगणियोंके वीचमें सम्पुटको रख अग्निलगाकर घडेको खड्डेमें रखदे । १२ पहरकेवाद स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अलग रखलेवे यह सफेदवर्णका मल्लसत्त्व तैयारहुआ ॥

पूर्वोक्तताम्रपत्र १० कर्ष, हरिताल, सोमल, और मैनसिल इनकेसत्त्व ३–३ कर्ष, वछनाग ५ कर्ष लेकर गन्धककेतैलसे एकदिनमर्दनकरे। (गन्धक ७ कर्षलेकर वारीकचूर्णकर विजोरे और लहसनके ६–६ कर्ष स्वरससे १–१ दिन मर्दनकर धोएहुए सफेदकपड़ेपर लेपकर शिथिलवत्तीवनाय सरसोंके तैलमें वत्तीको डुवाकर एकदिन खूंटीपर टांगकर अधिकतैलको टपकाकर निकालदे। फिर इसवत्तीको लोहेकी शलाकापर रख नीचेकेभागमें अग्निलगावे और नीचे कासेवगैरहकी थाली रखदे। वत्तीजलजायगी और तैल टपकजायगा। यहांपर इसीगन्धकतैलकोलेना।) फिर शुद्धवङ्ग ६ कर्ष, खपरिया और नोसादर २–२ कर्ष लेकर कड़ाहीमें डालकर अग्निदेकर गलावे। गलनेपर शिंगरिफसे निकालाहुआपारा २ कर्ष डालकर कड़ाहीको नीचे उतारकर मर्दनकरे। सवकीकज्जलीतैयारहोनेपर पूर्वपिण्डमें मिलादे। फिर थूहर और मोरटा (थूहरकाभेदहै तन्त्रशास्त्रमें मानवकञ्चुकी) केदूधमें ३–३ दिन मर्दनकर टिकड़िया वनाय सुखाकर मिट्टीके चिकनेकुल्हड़में रख धतूरे और एरण्डकेतैलसे कुल्हड़ीको भरदे और हठमृत्तिकासे ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखनेपर वालुकायन्त्रमें रख १२ पहरकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर थूहर और मोरटाकेरससे ३–३ दिन मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके हठमृत्तिकासे मुंहवन्दकर १६ पहरकी वालुकायन्त्रमें अग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर नीलवर्णकेपदार्थको निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ चावल तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे वातव्याधि, क्षय, श्वास, कास, वातरक्त, आमवात प्रभृति समस्तरोगोंको नष्टकर रसायन और वाजीकरणके कामकोकरताहै। शूलरोगकी तो चर्चा ही क्या ? तत्क्षणनष्टहोजाताहै ॥ १५२ ॥

१५३ शूलगजकेसरीरसः (तृतीयः)

कारस्करफलं स्विन्नं क्षीरप्रस्थद्वयोन्मिते ।
सूक्ष्मं दृषदि सम्पिष्य गृह्णीयाद्विपलोन्मितम् ॥ ६११ ॥
पिप्पली पिप्पलीमूलं मरिचं नागरं वचा ।
विल्वं हरीतकीमज्जा द्वयोरपि करञ्जयोः ॥ ६१२ ॥
स्वर्जिकाञ्च यवक्षारं सैन्धवं रुचकं गडः ।
तथैव क्षारलवणं गन्धकं कर्षमात्रकम् ॥ ६१३ ॥
हिङ्गु टङ्कणदीप्यानां पलार्धञ्च पृथक्पृथक् ।
पृथक् चूर्णीकृतं सर्वं पिष्ट्वाऽऽर्द्रकरसेन च ॥ ६१४ ॥
गुटिकाश्चणकाकाराः कृत्वा संशोष्य चातपे ।
यन्नाम्नैव पलायन्ते शूलप्रभृतयो गदाः ॥
राजते त्रिषु लोकेषु स शूलगजकेसरी ॥ ६१५ ॥

वै द., शूलाधिकारे।

भाषा—दोपल कुचिले लेकर दोप्रस्थ गोदुग्धमें स्वेदनकर छीलकर वारीकपीसे। फिर इसमें पीपल, पिपलामूल, मरिच, सोंठ, वच, वेलगिरी, हरें, दोनोंकरञ्जोंकीमज्जा, सज्जी, यवक्षार, सेंधव, संचल, रेहकानमक, विडनमक, शुद्धगन्धक येसव १–१ कर्ष, भुनाहींग, सुहागा, अजवाइन २–२ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर अदरखकेरससे १–२ दिन मर्दनकर चनेप्रमाणगोलिया वनाय सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ गोलीसे ३ गोलीतक औचितीदेखकर देनेसे यह समस्तशूलोंकोदूरकरताहै १५३

१५४ शूलगजकेसरीरसः (चतुर्थः)

अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि सर्वशूलविनाशनम् ।
क्षयादिरोगहं शूलगजकेसरिसञ्ज्ञकम् ॥ ६१६ ॥
पूर्वोदितप्रकारेण शुल्वमादौ विशोधयेत् ।
ततो वापाः प्रकर्तव्या वक्ष्यमाणौषधीरसैः ॥ ६१७ ॥
वज्रीभानुपयोमूलं पञ्चाङ्गं कनकस्य च ।
मुनिपञ्चाङ्गगुञ्जोत्थं लाङ्गलीकन्द एव च ॥ ६१८ ॥

करञ्जस्य च पञ्चाङ्गं मूलानि करवीरकात्।
आटरूषकपञ्चाङ्गं चित्रकस्य च कञ्चुकी ॥ ६१९ ॥
वाजिगन्धेङ्गुदी चैव वज्रीकन्दोऽथ शिग्रुजः।
गुडूची शक्रखदिरत्रिवृता दन्तिका तथा ॥ ६२० ॥
वज्रवल्ली शिखरिका दद्रुघ्नो मुशली तथा।
पटवः पञ्च क्षाराश्च उपक्षारास्तथैव च ॥ ६२१ ॥
एतत्सर्वं सुसञ्चूर्ण्य पेषयेन्महिषीभवैः।
पञ्चाङ्गै र्दुग्धतक्राच्च दधिमूत्रै र्घृतैस्ततः ॥ ६२२ ॥
स्निग्धे भाण्डे विनिक्षिप्य वासयेत्सप्त वासरान्।
द्रवीभूते च तत्कल्के शुल्बमावृत्य ढालयेत् ॥ ६२३ ॥
त्रिःसप्तवारान्क्षिप्त्वैवं शुल्बं शुद्धिमवाप्नुयात्।
तेन शुल्वेन कुर्वीत पात्रिके पलमात्रिके ॥ ६२४ ॥
सम्पुटाकारधारिण्यौ तत्र सूतं प्रसाधयेत्।
पातितस्विन्नसञ्जीर्णभस्मीभूतस्य कर्षकान् ॥ ६२५ ॥
चतुरो दानवेन्द्रस्य कर्षानष्टौ प्रकल्पयेत्।
पूर्वोक्तयुक्तिशुद्धस्य खल्वे द्वौ निक्षिपेत्ततः ॥ ६२६ ॥
शुष्कमर्दनयोगेन मर्दयेत्तौ दिनत्रयम्।
कज्जलीं ताम्रपात्रस्य मध्ये चैकस्य निक्षिपेत् ॥६२७॥
अन्येन ताम्रपात्रेण सम्पुटं रचयेद् दृढम्।
मृद्भाण्डसम्पुटं ग्राह्यमतीव सुदृढं तयोः ॥ ६२८ ॥
एकस्य मध्ये लवणं दत्त्वा तदुपरि क्षिपेत।
सम्पुटं ताम्रजं पश्चात्तदूर्ध्वं लवणं क्षिपेत् ॥ ६२९ ॥
मार्त्तिकेन द्वितीयेन पटुपूर्णेन सम्पुटम्।
कृत्वा निरुद्धय सुदृढं खटीमृल्लवणैः पटैः ॥ ६३० ॥
भक्तै र्हरीतकीकल्कैः पिष्टैरेकत्र लेपयेत्।
पटुपञ्चकमानेन शोषयेदातपे ततः ॥ ६३१ ॥
जानुदघ्नीं महीं खात्वा समिच्छाणैः प्रपूरयेत।
विन्यसेत्सम्पुटं तेषामुपरिष्टाच्च छाणकान् ॥ ६३२ ॥
पौरुषेण प्रमाणेन ज्वालयेद्वह्निना ततः।
स्वाङ्गशीतं विनिर्धार्य सम्पुटं तं समाहरेत् ॥ ६३३ ॥
भित्त्वा च सम्पुटं मध्याद्गृह्णीयात्ताम्रसम्पुटम्।
त्यक्त्वा यत्नेन लवणं खल्वमध्ये निवेशयेत् ॥ ६३४ ॥
मर्दयित्वाऽथ सुश्लक्ष्णं सिद्धं सूतेश्वरं ततः।
पूजयित्वा भैरवादीन् स्थापयेच्च करण्डके ॥ ६३५ ॥
वल्लमात्रः प्रयोक्तव्यो रसेन्द्रः परिणामजे।
शूले वातभवे गुल्मे फणिवल्लीदलैः सह ॥ ६३६ ॥
अग्निमान्द्ये तथा पाण्डौ रोगराजे हलीमके।
ग्रहण्यां कामलायाञ्च विकारे वाऽथ जाठरे ॥ ६३७ ॥
हरीतक्यनुपानेन दातव्योऽयं रसेश्वरः।
पथ्यमत्र प्रदातव्यं शास्त्रदृष्टेन वर्त्मना ॥ ६३८ ॥
अथवा वटिकां कुर्यादौषधैश्च रसेश्वरात्।
मरिचं पिप्पली शुण्ठी चाजाजी हिङ्गुरेव च ॥६३९॥
पञ्चानां पञ्च भागाः स्युः षष्ठः सूतेश्वरस्य च।
तत्सर्वमेकतः कृत्वा खल्वे सम्यग्विमर्दयेत् ॥६४०॥
भृङ्गराजभवैर्नीरैस्त्रिदिनं सम्प्रकल्पयेत।
तेन कल्केन चणकप्रमाणा वटिकास्ततः ॥ ६४१ ॥
एकैकां भक्षयेद्यत्वाद्वटिकां रोगहारिणीम्।
वातरोगेषु सर्वेषु वटी योज्या भिषग्वरैः ॥ ६४२ ॥
अग्निमान्द्यभवे रोगे शूलजे तु विशेषतः।
तत्सम्प्रदायसम्प्रोक्तः शूलाद्यो गजकेसरी ॥ ६४३ ॥

रसाल., शूलाधिकारे।

भाषा—शुद्धतावेकेवारीकपत्रकराय सेहुण्ड और आकका-दूध, धतूरा और अगस्त्यकापञ्चाङ्ग, गुञ्जा, करिहारीकन्द, करञ्जकापञ्चाङ्ग, सफेदकनेरकीजड़, अडूसेकापञ्चाङ्ग, चित्रक, क्षीर-कञ्चुकी, असगन्ध, इंगोरन, ज़हरीसूरण, सहिजन, गिलोय, कुरैया, खैर, निसोत, दन्तीमूल, हड़जोड़, अपामार्ग, चकवड़, मुशली, पाचोंनमक, पाचोंक्षार, उपक्षार इनसवका वारीकचूर्णकर भैंसकेदुग्धादिपञ्चकमें पीसकर चिकनेवर्तनमेंरख ७ दिनतक रहनेदे। नमक वगैरह गलजानेपर तावेको गलाकर २१ वार इसमें बुझावे। फिर इसतावेमेंसे २ पलवज़नका सम्पुटवनवाकर ४ पल शुद्धपारे और ८ पलशुद्धगन्धककी तीनदिनकेमर्दनसे कीहुई नीलवर्णकज्जली सम्पुटमें डालकर अच्छीतरहवन्दकरदे। और २–३ हठमृत्तिकाकेलेपदेकर सुखादे। फिर इसको मज़बूत घड़ेके लवणयन्त्रमें रख शरावमे टककर खड़िया मिट्टी, लवण, चिथड़े, भात और हर्रे समभागलेकर एकजगहपीसे और इससे शरावसन्धिको अच्छीतरह वन्दकर पाचोंनमक इसकल्कमें मिलाय समस्तयन्त्रपर लेपदेकर १–२ कपड़मिट्टीचढाय सुखावे फिर घुटनेवरावर खड्डा खोदकर खैरवगैरहकी सारिष्टलकड़ी और जङ्गलीकण्डोंसे गड्ढेको भरके इसघड़ेको रख एकपुरुषप्रमाण ऊंचे-कण्डे युक्तिविशेषसे चुनकर आगलगावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर सम्पुटको खोलकर लवण और कपड़मिट्टीको अच्छीतरह साफ़ करदे। जितनाहिस्सा तावेकाभस्म होचुकाहो। उसको पीसकर रखछोड़े। फिर भैरवप्रभृतिका पूजनकर रसकासंस्कारकरे। इसकी ३–३ रत्ती उचितानुपानकेसाथदेनेसे परिणामशूल नष्टहोताहै। पानकेरसकेसाथदेनेसे वातगुल्म, मन्दाग्नि, पाण्डु, रोगराज, हलीमक, ग्रहणी, कामला येसव नष्टहोतेहैं। हर्रेकेसाथ देनेसे उदरविकार नष्टहोताहै। इसमें पथ्य रोगोचितदेना। अथवा मरिच, पीपल, सोंठ, जीरा, भुनाहींग और ऊपरकहाहुआरस समभागलेकर भंगरेकेरससे ३ दिन मर्दनकर चनेप्रमाणगोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्तवातरोग, मन्दाग्नि और खासकर शूलको यह नष्टकरतीहै ॥ १५४ ॥

१५५ शूलगजकेसरी (शूलद्विपघ्नी) ५

पथ्या टङ्कणविश्वहिङ्गुमरिचं वह्निं विडं गन्धकं,
तुल्यं सैन्धवसंयुतं तु कुचिलं सर्वैः समं सम्मतम्।
शूलाऽऽध्मानविबन्धगुल्मकसनश्लेष्मामवातापहा,
चूर्णाऽल्पाग्न्युदराऽरुचिज्वरहरी शूलद्विपघ्नी वटी ६४४

वै र., चि. र. म, वै चि, नि र, शूले। नि र, वै. चि. एतयो पथ्यादिवटीतिनाम।

भाषा—हर्रे, भुनासुहागा, सोंठ, भुनाहींग, मरिच, चित्रकमूल, विडनमक, शुद्धगन्धक, सैन्धव येसव समभाग और सवकी बराबर शुद्धकुचिलेकाचूर्ण लेकर सवका वारीकचूर्णकर नीबू अथवा अदरखकेरससे १–२ दिन घोटकर ३–३ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे शूल, आध्मान, विवन्ध, गुल्म, खासी, श्लेष्म, आमवात, अल्पाग्नि, उदर, अरुचि, ज्वर, और शूल इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ १५५ ॥

१५६ शूलगजकेसरीरसः (षष्ठः)

पारदं गन्धकञ्चैव माक्षिकं पिप्पली तथा ।
आकल्लकं हिङ्गुयुक्तं समभागं विचूर्णयेत ॥ ६४५ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव गुटीं चणकसन्निभाम ।
शृङ्गवेररसे युक्तां दापयेद्भिषगुत्तमः ॥ ६४६ ॥
सर्वशूलहरी प्रोक्ता पथ्यं छिदलवर्जितम् ।
त्रिदिनात्सर्वशूलानि हन्ति सत्यं न संशयः ॥ ६४७ ॥

र सि., शूले ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सोनामाखी, पीपल, अकलकरा, भुनीहींग सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अदरखके रससे घोटकर चनेप्रमाण गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथदेनेसे समस्तशूल नष्टहोतेहै। इसकेप्रयोगमें दाल न देवे ॥

१५७ शूलगजकेसरीरसः (सप्तमः)

रसकं गन्धकं शुद्धं ताप्यं जैपालवीजकम् ।
त्रिकटुं हरवीजं च पथ्यया सह योजितम् ॥ ६४८ ॥
सर्वमेकीकृतं खल्वे शिम्बीपत्रैश्च भावयेत् ।
भावयेत्त्रिवृतातोयैस्तथा दन्तिरसेन च ॥ ६४९ ॥
कौसुम्भैश्च तथा क्वाथै दिनैकं भावयेद्बुधः ।
माषमेकं प्रदातव्यमुष्णवारिसमन्वितम् ॥ ६५० ॥
सर्वशूलहरः श्रेष्ठस्तथा दन्तिरसेन च ।
हस्तिनश्च यथा सिंहस्तथा शूलेषु केसरी ॥ ६५१ ॥

र.को., आमशूले।

भाषा—शुद्ध खपरिया, गन्धक, सोनामाखी और जमालगोटा, त्रिकटु, शुद्धपारा, हर्रे सवसमभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सेंमलकेपत्ते, निसोत, दन्तीमूल, कुसुम्भकेफूल इनकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ माशेकीगोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गरमपानी अथवा दन्तीमूलकेरसकेसाथदेनेसे यह समस्तशूलोंको नष्टकरताहै ॥ १५७ ॥

१५८ शूलगजकेसरीरसः (अष्टमः)

रसविषगन्धकपर्दक्षारेण सिन्धुपिप्पलीविश्वैः ।
अहिवल्ल्यम्बुविघृष्टः शूलेभहरि द्विगुञ्जोयम् ॥ ६५२ ॥

यो.र, नि र, वृ.यो त., वै चि, यो.सं., यो.त., र.का., र र दी, टो, शूलाऽधिकारे।

टि०—"क्षार कपर्दाद्विपमैन्धवौ च व्योषञ्च सम्मर्थ भुजङ्गवल्ल्या । रसेन गुञ्जाप्रमित प्रदिष्ट समीरशूलेभहरि प्रचण्ड ॥" इतिपाठो यो. स, यो त, र का, र र दी, टो एषु ग्रन्थेषु तथा च यो र., नि. र., वै चि एषु द्वितीयस्थाने दृश्यते, तत्र गन्धकेशयोरभावोऽस्ति । पूर्वस्मिंश्च योगे मरिचाऽभाव· कुतोऽस्ति इति व्यत्यास केन कारणेन मज्ञात इति न लक्ष्यते, प्रमाद एव तत्कारणमित्यनुमीयते अतस्तयो पाठयोर्कर्ता सम्पाद्यैक एव पाठ सम्पादनीय·।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग और गन्धक, कौड़ीभस्म, सेंधानमक, पीपल और सोंठ समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर पानकेरससे १–२ दिन घोटकर २–२ रत्तीकीगोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तशूलोंको नष्टकरताहै ॥ १५८ ॥

१५९ शूलगजाङ्कुशरसः

निष्कत्रयं शुद्धसूतं द्विनिष्कं शुद्धटङ्कणम् ।
गन्धकं पञ्चनिष्कं चाप्येकनिष्कञ्च मुस्तकम् ॥६५३॥
चतुर्निष्कञ्च नेपालं तत्समं मृतताम्रकम् ।
सर्वतुल्यं तिलक्षारं वृक्षाम्लक्षारचित्रकम् ॥ ६५४ ॥
तद्वत्पलाशजं क्षारं षण्णिष्कं त्र्यूषसैन्धवम् ।
यवक्षारं द्विनिष्कञ्च विडसौवर्चकाचकम् ॥ ६५५ ॥
समुद्रलवणञ्चैव पिप्पली च त्रिनिष्ककम् ।
चित्रमूलरसै र्युक्तं दिनैकञ्च विमर्दयेत् ॥ ६५६ ॥
सप्तधा चणकक्षारैरार्द्रकद्रवमर्दितम् ।
द्विगुञ्जां वटिकां खादेदार्द्रकस्य च वारिणा ॥ ६५७ ॥
गुल्माष्ठीलाप्लीहशूलप्रत्यष्ठीलास्तुनीद्वयम् ।
उदरं सर्वजां वृद्धिं शोथं पाण्ड्वामयं तथा ॥
सर्वरोगान् हरेच्छीघ्रं रसः शूलगजाङ्कुशः ॥ ६५८ ॥

व रा, शूलाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा १२ माशे, भुनासुहागा ८ माशे, शुद्धगन्धक २० मा, नागरमोथा ४ मा, शुद्धजमालगोटा और ताम्रभस्म १–१ कर्ष, तिलका क्षार ४ कर्ष १२ मा, कोकमकाक्षार, चित्रकमूल, पलाशक्षार, त्रिकटु, सेंधानमक २४–२४ मा., यवक्षार ८ मा, विडनमक, सचल, काचलवण, समुद्रनमक और पीपल १२–१२ माशेलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाय चित्रकमूलकेक्काथसे एकदिन मर्दनकर चनेकेक्षार और अदरखकेरससे ७–७ भावनाए देकर २–२ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथ देनेसे, गुल्म, अष्ठीला, प्लीह, शूल, प्रत्यष्ठीला, तूनी, प्रतितूनी, उदरवृद्धि, शोथ, पाण्डुप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ १५९ ॥

१६० शूलघ्नीवटी

शुद्धशुल्वस्य भागैकं द्विभागमहिफेनकम् ।
विषमुष्टि वेदभागो वल्लिजं वसुभागिकम् ॥ ६५९ ॥
आर्द्रद्रवेण यामैकं मर्दयेद्भिषगुत्तमः ।
वटी गुञ्जोपमा कार्या सिताद्राभ्याञ्च योजयेत् ॥ ६६०

पक्तिशूल उदावर्ते शूले च परिणामजे ।
योज्या युक्तानुपानेन तत्तच्छूलहरी भवेत ॥ ६६१ ॥
सन्धिवाते पार्श्ववाते धनुर्वातेऽपतानके ।
दण्डापतानके चैव व्रध्नरोगे च शस्यते ॥
ग्रहण्यामामवाते च योज्या वैद्यै र्यशोर्थिभिः ॥६६२॥

रसायनस. शूलाविकारे ।

भाषा—ताम्रभस्म १ भाग, अफीम २ भा., शुद्धकुचिला ४ भा., मरिच ८ भा. लेकर बारीकचूर्णकर अदरखकेरससे एकपहर मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली शक्कर और अदरखकेसाथदेनेसे पक्तिशूल, उदावर्त, परिणामशूल, सन्धिवात, पार्श्वशूल, धनुर्वात, अपतान (खेंच), दण्डापतान, व्रध्नरोग, ग्रहणी, आमवात, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ १६० ॥

१६१ शूलदावानलरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं प्रत्येकं पलमात्रकम् ।
मरिचं पिप्पली शुण्ठी हिङ्गु चैव पलद्वयम् ॥ ६६३ ॥
चिञ्चाक्षारं पञ्चलवणं प्रत्येकञ्च पलाष्टकम् ।
सप्तवारं दग्धशङ्खं जम्बीराम्लेन सेचयेत ॥ ६६४ ॥
पलाष्टकञ्च संयोज्यं तत्सर्वं निम्बुकद्रवैः ।
दिनं मर्द्यं कोलमात्रं भक्षयेत्सर्वशूलनुत् ॥
शूलदावानलो नाम्ना शूलरोगनिकृन्तनः ॥ ६६५ ॥

वै र, नि र, टो, चि. र भ, रसायनस., र क. ल., र. चं., र कौ, यो र, र. का, यो. त, र. क यो, र. (मा), शूले ।

टि०—माणिक्यचन्द्रीयरसावतारे शङ्खवटीतिनाम्ना "त्रिभाग पञ्चलवण चिञ्चाक्षार द्विभागिकम् । सर्वेषां द्विगुण निम्बुनीर क्षिप्त्वा विलोडयेत् ॥ तस्मिन् शङ्ख सप्तवार तप्त्वा तप्त्वा क्षिपेदबुध । तस्य षोडशभागाश्च रामठ पञ्चभागिकम् ॥ एतन्मात्र त्रिकटुक भागैक रस-गन्धयो । विष भागैकमानञ्च सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ चणमात्रा वटी कार्या दद्यादार्द्रकजै रसै । अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च नाशयेदविकल्पत ।,, इत्याकारक पाठो निहितोऽस्ति, तत्रास्यैव पाठस्य व्यत्यासमन्तरा स्वतन्त्रता न प्रतीयते मूलन्त्वयमेवाऽस्तीति विद्वद्भिर्विभावनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग और गन्धक १–१ पल, मरिच, पीपल, सोंठ और हींग २–२ पल, इमलीकाक्षार और पांचोंनमक ८–८ पल, नीबूकेरसमें ७ वार बुझाएहुए शङ्खकीभस्म ८ पल लेकर सबको पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर नीबूकेरसमें एकदिन मर्दनकर बेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथलेनेसे यह समस्तशूलोंको नष्टकरताहै ॥ १६१ ॥

१६२ शूलदावानलरसः (द्वितीयः)

चिञ्चाक्षारः शुद्धशङ्खचूर्णं लवणपञ्चकम् ।
क्षाराः पञ्चाग्निसम्भूताः पृथगर्द्धपलान्विताः ॥६६६॥
मरिचं मागधी शुण्ठी हिङ्गु च द्विपलं पृथक् ।
पारदं गन्धकं ताम्रं विषञ्चार्द्धपलं पृथक् ॥ ६६७ ॥
सर्वं जम्बीरनीरेण मर्द्यं तद्दिवसत्रयम् ।
कोलप्रमाणां वटिकां पञ्चगव्यघृतान्विताम् ॥ ६६८ ॥
लेहयेच्छूलशान्त्यर्थं घृतान्नं भोजनं तथा ।
लशुनक्वथितं देयं दुग्धाज्जं गव्यमेव वा ॥ ६६९ ॥
पथ्यं नित्यं प्रयुञ्जीत सर्वशूलनिबर्हणम् ।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्चाऽजीर्णशूलञ्च गुल्मजम् ॥ ६७० ॥
आनाहप्लीहमुदरमश्मरीशर्करादिकम् ।
क्षयञ्चैव न सन्देहो नाशयेद्व्याधिदारकः ॥
शूलदावानलो नाम्ना पूज्यपादेन भाषितः ॥ ६७१ ॥

व ग., र. क यो., शूले ।

भाषा—इमलीकाक्षार, शङ्खभस्म, पांचोंनमक, पांचोंक्षार (सज्जी, सुहागा, यवक्षार, नोसादर और शोरा) २–२कर्ष, मरिच, पीपल, सोंठ और भुनीहींग २–२ पल, शुद्धपारा, गन्धक और वछनाग, ताम्रभस्म २–२ कर्षलेकर सबको बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय जंभीरीके रसमें ३ दिन मर्दनकर बेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली पञ्चगव्य और घीकेसाथलेनेसे सबप्रकारके शूल शान्तहोतेहैं । भोजनमें घी और रोटी देवे अथवा लहसुन डालकर औटाएहुए गाय अथवा बकरीकेदूधका दहीदेवे । इसके सेवनकरने और यथार्थपथ्यपालनेसे हृदयशूल, पार्श्वशूल, अजीर्णशूल, गुल्मशूल, आनाह, प्लीहा उदर, पथरी, शकर, क्षय इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १६२

१६३ शूलध्वंसीरसः

मृतायोरविकुटिलं मुस्तात्रिफलाम्बुना सुदृढम् ।
दिवसत्रितयं मर्द्यं शूलध्वंसी भवेत्सूतः ॥ ६७२ ॥
वल्लद्वयमितोऽसौ रूपणत्रिपटुसंयुक्तः ।
निम्बुक्षारयुतो वा शिग्रुकाथेन युक्तो वा ॥ ६७३ ॥
कफशूलं जयत्याशु द्वन्द्वजं वा त्रिदोषजम् ।
सामुद्रसर्पिषा युक्तो मरीचाज्ययुतोऽथवा ॥ ६७४ ॥
पञ्चकोलेन संसिद्धा पेया पथ्या कफामये ।
विदारीदाडिमरसो सव्योपलवणान्वितः ॥ ६७५ ॥
कफशूलं जयत्याशु घृतसैन्धवसंयुतः ।
विश्वाग्निहिङ्गुसिन्धूत्थबिल्वैरण्डै जयत्यपि ॥ ६७६ ॥
द्वन्द्वजे सर्वशूले च विधिः कार्यो विजानता ।
शूलान्तको रसश्चैष योज्यः स्वीयानुपानके ॥ ६७७ ॥
मण्डूरं गोजले सिद्धं वराक्षौद्रयुतं लिहेत् ।
मुच्यते मनुजः शीघ्रं सर्वशूलादिदोषजात् ॥ ६७८ ॥
हिङ्गु व्योषं सलवणं शङ्खचूर्णं समांशकम् ।
उष्णोदकेन कर्षैकं जयेच्छूलं त्रिदोषजम् ॥ ६७९ ॥
कफशूलहिता कार्या क्रियाप्यामे विशेषतः ।
सर्वमामहरं सेव्यं यदग्निबलवर्द्धनम् ॥ ६८० ॥
बृहत्यौ गोक्षुरैरण्डमुशलीक्षिक्षुखण्डिकाः ।
समाक्षिका जयन्त्याशु शूलं पित्तानिलात्मकम् ॥६८१॥
त्रिफलारिष्टतिक्तानां क्वाथं मधुयुतं पिबेत् ।
श्लेष्मपित्तभवं शूलं दाहच्छर्दियुतं दहेत् ॥ ६८२ ॥

वातश्लेष्मभवं शूलं विश्वहिङ्गुसुवर्चलम् ।
शुण्ठ्यम्बुनाऽनुपातव्यं हृत्पार्श्वजठरञ्जयेत् ॥ ६८३ ॥
वाते निरूहं पित्ते च क्षीरपानञ्च रेचनम् ।
कफे प्रच्छर्दनं तिक्तकषायरससेवनम् ॥ ६८४ ॥

र, शूलाऽधिकारे ।

भाषा—पारा, लोह, तांबा, शङ्ख इनकीभस्में समभाग लेकर नागरमोथा और त्रिफलाकेकाढेसे ३–३ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली एरण्डमूल, मरिच और तीनोंनमककेसाथ अथवा नीबूक्षारकेसाथ अथवा सहिजनकेकाथ, समुद्रनमक, घी अथवा मरिच और घीकेसाथ देनेसे कफज, द्वन्द्वज और त्रिदोषजशूल नष्टहोताहै । कफरोगमें पञ्चकोलसे बनाईहुई पेया पथ्यहै । विदारी और अनारकेरसमें त्रिकटु और नमक मिलाकरदेनेमे अथवा घी और सैन्धवदेनेसे कफशूल नष्टहोताहै । सोंठ, चित्रक, भुनीहींग, सेंधानमक, बेल, एरण्डबीज इनकेकाथकेसाथदेनेसे द्वन्द्वज और त्रिदोषजशूल नष्टहोताहै अथवा गोमूत्रमें सिद्धकियेहुए मण्डूरको त्रिफला और मधुकेसाथलेनेसे समस्त द्विदोषजशूलोंसे निवृत्तहोताहै । भुनीहींग, त्रिकटु, नमक और शङ्खभस्म समभागलेकर एककर्षकीमात्रा गरमजलकेसाथलेनेसे त्रिदोषजशूल नष्टहोताहै । कफशूलकेलिये जो कर्तव्यहै उसका आमशूलमें अनुष्ठानकरनेसे लाभहोताहै । भटकटैया, वनभाटा, गोखरू, एरण्डमूल, मुशली, ईखकीगांठ इनकाकाथ मधुमिलाकरलेनेसे पित्त और वातकेशूलको नष्टकरताहै । त्रिफला, नीमकीछाल और कुटकीकाकाथ मधुमिलाकर पीनेसे दाह और वमनयुक्त श्लेष्मपित्तशूलको नष्टकरताहै । सोंठ, भुनीहींग और सचलकेसाथ वातश्लेष्मशूलको दूरकरताहै । हृदय, पार्श्व और जठरशूलको सोंठकेकाढ़ेकेसाथदेनेसे नष्टकरताहै । वातप्राधान्यमें निरूहवस्ति, पित्तमें क्षीरपान और रेचनकराना । कफमें वमन और तिक्तकषायरसका सेवन कराना ॥ १६३ ॥

१६४ शूलनिर्मूलनरसः

गन्धकं त्र्यूषणं शृङ्गं मरिचं शङ्खभस्मकम् ।
सैन्धवं रससिन्दूरं जीरकञ्चाऽम्लवेतसम् ॥ ६८५ ॥
कारस्करस्य बीजानि सुशुद्धानि तदर्द्धतः ।
वह्न्यास्थिचित्रकनिर्गुण्ड्योः शृङ्गवेरस्य वारिणा॥६८६॥
भावयित्वा वटीं कृत्वा वल्लमानां प्रयोजयेत् ।
विश्वचित्रकजं क्वाथं सहिङ्गुमनुपाययेत् ॥ ६८७ ॥
नानाशूलप्रशमनः शूलनिर्मूलनाभिधः ।
अतीसारग्रहणिकाविसूचीगुल्मविद्रधीन् ॥ ६८८ ॥
यकृत्प्लीहार्तिपाण्डुत्वं शोथान्नानाविधानपि ।
तत्तद्रोगानुपानेन हन्ति रोगान्बहूनयम् ॥ ६८९ ॥

नृ. क, शूले ।

भाषा—शुद्धगन्धक, त्रिकटु, शृङ्गभस्म, मरिच, शङ्खभस्म, सैन्धव, रससिन्दूर, जीरा और अम्लवेत समभागलेकर सबसे आधा शुद्धकुचिला मिलाय बारीकचूर्णकर थूहरकादूध, चित्रक, निर्गुण्डी और सोंठकेकाढेसे १–१ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली सोंठ और चित्रकके क्राथमें हींगका प्रक्षेप देकर इसकेसाथदेनेसे नानाप्रकारकेशूल, अतिसार, ग्रहणी, हैज़ा, गुल्म, ज़हरवाद, यकृत्, प्लीहा, पाण्डु, शोथ इनसबको यह नष्टकरताहै । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे बहुतसेरोगोंको नष्टकरताहै ॥ १६४ ॥

१६५ शूलराजलोहम्

कर्षैकं कान्तलोहस्य शुद्धमभ्रं पलन्तथा ।
सितायाश्च पलञ्चैकं मधुसर्पिस्तथैव च ॥ ६९० ॥
सर्वमेकीकृतं पात्रे लोहदण्डेन मर्दयेत् ।
त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडङ्गं चव्यचित्रकम् ॥ ६९१ ॥
प्रत्येकं तोलकं मानं चूर्णितं तत्र दापयेत् ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय शिशिराम्ब्वनुपानतः ॥ ६९२ ॥
सर्वदोषभवं शूलं कुक्षिशूलञ्च यद्भवेत् ।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च अम्लपित्तञ्च नाशयेत् ॥ ६९३ ॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषं प्रमेहांश्च विसूचिकाम् ।
शूलराजमिदं लोहं हरेण परिनिर्मितम् ॥ ॥ ६९४

र. स, ध., र. सु, शूले ।

भाषा—कान्तलोहभस्म १ कर्ष, अभ्रकभस्म, शक्कर, घी और मधु १–१ पल लेकर सबको इकट्ठेमिलाय लोहेके खरलमें लोहेके डण्डेसे मर्दनकर त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोथा, विडङ्ग, चव्य, चित्रकमूल १–१ तोलालेकर बारीकचूर्णकर पूर्वोक्तरसमें डालकर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेसे २ माशेतक प्रातःकाल ठंढेपानीकेसाथ लेनेसे त्रिदोषज कुक्षि, हृदय और पार्श्वशूल, अम्लपित्त, बवासीर, ग्रहणीदोष, प्रमेह और हैज़ेको यह नष्टकरताहै ॥ १६५ ॥

१६६ शूलवज्रिणीवटी

रसगन्धकलोहानां पलार्द्धेन समन्वितम् ।
त्रिफला रामठं शुल्वं शटी त्रिकटु टङ्कणम् ॥ ६९५ ॥
पत्रं त्वगेला तालीसं जातीफललवङ्गके ।
यमानी जीरकं धान्यं प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ॥ ६९६ ॥
माषैका वटिका कार्या छागीदुग्धेन वा पुनः ।
एकैका भक्षिता चेयं वटिका शूलवज्रिणी ॥ ६९७ ॥
शूलमष्टविधं हन्ति प्लीहगुल्मोदरं तथा ।
अम्लपित्तामवातञ्च पाण्डुत्वं कामलां तथा ॥ ६९८॥
शोथं गलग्रहं वृद्धिं श्लीपदं सभगन्दरम् ।
वृद्धबालकरी चैव मन्दाग्नेरपि दीपनी ॥ ६९९ ॥

र. सं, र च, र. र., ध., र सु., भै र., शूलाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोहभस्म २–२ कर्ष, त्रिफला, भुनीहींग, ताम्रभस्म, कचूर, त्रिकटु, भुनासुहागा, पत्रज, तज, इलायची, तालीसपत्र, जायफल, लौंग, अजवाइन, जीरा और धनिया १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय बकरीके दूधसे १–२ दिन मर्दनकर १–१ माशेकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे ८ प्रकारकेशूल,

प्लीहा, गुल्म, उदररोग, अम्लपित्त, आमवात, पाण्डु, कामला, शोथ, गलग्रह, सवप्रकारकीवृद्धि, श्लीपद, भगन्दर, मन्दाग्नि, इनसवको यह नष्टकरतीहै ॥ १६६ ॥

१६७ शूलविध्वंसिनीवटी

हिङ्गु जातीफलञ्चोषणं वचामुण्डीसमन्वितम् ।
पञ्चानां पञ्च भागाः स्युः सूतः स्यादेकभागकः॥७००॥
भृङ्गराजरसेनैव खल्वमध्ये विमर्दयेत् ।
कल्केन तेन कुर्वीत वटीश्चणकसन्निभाम् ॥ ७०१ ॥
एकैकां भक्षयेत्प्रातः सर्वरोगविनाशिनीम् ।
वातरोगेऽग्निमान्द्ये च शूलेऽजीर्णे कफामये ॥ ७०२ ॥
अरुचौ वेपथावेवं प्रदेया बद्धकोष्ठके ।
व्यथायामुदरस्यापि प्लीहरोगे गुदामये ॥ ७०३ ॥

रससागर., शूले।

भाषा—भुनीहींग, जायफल, मरिच, वच, गोरखमुण्डी ५–५ भाग, पारदभस्म अथवा रससिन्दूर १–१ भाग लेकर सवका वारीकचूर्णकर भंगरेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ प्रात कालदेनेसे वातरोग, मन्दाग्नि, शूल, अजीर्ण, कफव्याधि, अरुचि, कम्प, बद्धकोष्ठता, उदरपीडा, प्लीहा और गुदरोग इनसवको यह नष्टकरतीहै ॥ १६७ ॥

१६८ शूलविनाशनरसः

रससौवीरमाक्षीकशिलाजित्ताम्रभागकः ।
समभागांश्च गन्धेन सिद्धः शूलविनाशनः ॥ ७०४ ॥

र मृ, शूलाधिकारे ।

भाषा—पारा, सफेदसुरमा, सोनामाखी और ताम्र इनकी भस्में, शिलाजीत, शुद्धगन्धक सब समभागलेकर १–२ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ से ६ रत्तीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तशूलोंको दूरकरताहै ।

१६९ शूलशत्रुरसः

शुल्वं संशोधयेत्पूर्वं प्रागुक्तेन विधानतः ।
मारयेत्पूर्वविधिना पुटेदुग्धादिपञ्चकैः ॥ ७०५ ॥
पूर्वोक्तयुक्त्या सूतेन्द्रं भस्मीभूतं समाहरेत् ।
पलद्वयञ्च चत्वारि मृताद्भानोः पलानि च ॥ ७०६ ॥
ताम्रादष्टगुणश्चैव क्षारं निर्धूममाहरेत् ।
तत्सर्वमेकतः कृत्वा मर्दयेद्धिङ्गुवारिणा ॥ ७०७ ॥
कुवेराक्षीरसैश्चैव व्योषनीरैस्ततः परम् ।
लेलीतकेन सम्मर्द्य नीरैरार्द्रकसम्भवैः ॥ ७०८ ॥
जम्बीरवीजपूराद्भि र्नागरङ्गजचुक्रजैः ।
उपक्षारैस्तथा क्षारै र्जम्बीराद्यम्लसाऽपि च ॥७०९॥
एषामद्भिः प्रमृद्नीयात्प्रत्येकञ्च दिनंदिनम् ।
ततः संशोषयेद्यत्नाच्छूलशत्रुं रसेश्वरम् ॥ ७१० ॥
माषमेकं प्रयुञ्जीत रसेन्द्रं शूलशान्तये ।
अनुपानमिदं कुर्यादार्द्रकं व्योषरामठम् ॥ ७११ ॥
रुचकञ्च कुबेराक्षीं सर्वं चूर्णं प्रकल्पयेत् ।
शस्तेन वारिणाऽऽलोड्य पाययेदनु शूलिनम् ॥७१२॥
सर्वेण शूलजातेन मुच्यते नाऽत्र संशयः ।
देवीशास्त्रानुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ ७१३ ॥
शूलशत्रुरितिख्यातः सर्वशूलविनाशनः ।
पथ्ये तु द्विदलं वर्ज्यं नवान्नं सर्वमेव हि ॥ ७१४ ॥

रसाल, शूलाऽधिकारे ।

भाषा—विधिपूर्वकशुद्धकरकेमारेहुए तावेको दुग्धादि पञ्चामृतसे मर्दनकर गजपुटकी आचदे । फिर विधिपूर्वक माराहुआ पारा २ पल, पूर्वोक्तताम्रभस्म ४ पल, कायमशोरा अथवा नोसादर ८ पललेकर हींग, करञ्ज, त्रिकटु, गन्धककातैल, अदरख, जम्बीरी, विजोरा, नारङ्गी, चूका, उपक्षार, क्षार और यथालाभ अम्लवर्ग इनके द्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंमे १–१ गोलीलेकर अदरख, त्रिकटु, भुनीहींग, सचल, करंज सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर इसमेंसे ३ माशेचूर्ण ठंढेपानीमें घोलकर पिलानेसे सवप्रकारकेशूल नष्टहोतेहैं। इसमें पथ्य सवतरहकीदाल और नये अन्नको छोड़कर देना ॥ १६९ ॥

१७० शूलसिंहरसः

विषं कर्षं वचा कर्षं त्रिकटु त्रिफला च षट् ।
भार्गी मुस्ता विडङ्गानां प्रतिकर्षञ्च चित्रकम् ॥७१५॥
गुडेन सर्वतुल्येन गुटिका चणमात्रिका ।
शूलसिंहः प्रयोगोऽयं कफशूलहरो भवेत् ॥ ७१६ ॥
एरण्डतैलशुण्ठीभ्यां हिङ्गु सौवर्चलान्वितम् ।
उष्णोदकैः पिबेच्चानु रसं वाऽऽनन्दभैरवम् ॥ ७१७ ॥

र. र, टो, र च, यो. म, र क ल, र को, ना. वि, शूले।

भाषा—शुद्ध वच्छनाग और वच १–१ कर्ष, त्रिकटु और त्रिफला ६–६ कर्ष, भारङ्गी, नागरमोथा, विडङ्ग और चित्रकमूल १–१ कर्ष लेकर सवका वारीकचूर्णकर समभागगुड़मिलाय चनेप्रमाणगोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तशूलोंको नष्टकरताहै । एरण्डतैल, सोंठ, भुनीहींग और सचलकाचूर्ण ३ माशे गरमपानीकेसाथ मिलाकर इसकेसाथ आनन्दभैरवदेनेसेभी शूल नष्टहोताहै ॥ १७० ॥

१७१ शूलहरीवटी

हिङ्ग्वजाजी समरिचा वचा शुण्ठीसमन्विता ।
पञ्चानां पञ्च भागाः स्युस्तथैव सूतकस्य च ॥७१८॥
भृङ्गराजरसेनैव मर्दयेत्खल्वमध्यतः ।
तेन कल्केन कुर्वीत वटीं चणकसम्मिताम् ॥ ७१९ ॥
एकैकां भक्षयेत्प्रात र्वटिकां रोगहारिणीम् ।
वातरोगे प्रयोक्तव्या वह्निमान्द्ये तथैव च ॥ ७२० ॥

र क., र. मृ, शूलाऽधिकारे ।

भाषा—हींग, जीरा, मरिच, वच, सोंठ, पारदभस्म समभागलेकर वारीकचूर्णकर भगरेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर

चनेप्रमाण गोलियेंवनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह वातरोग और मन्दाग्निको नष्टकरतीहै ॥ १७१ ॥

१७२ शूलहररसः (प्रथमः)

सिन्दूरताम्राभ्रविषाणि गन्धः
समानि तत्तुल्यसहस्रवेधी ।
दीप्या कणाः पञ्च पटूनि हिङ्गु
आर्द्राद्रिरामर्द्य च शूलहानिः ॥ ७२१ ॥

रसायनसार, शूले ।

भाषा—रससिन्दूर, ताम्र और अभ्रकभस्म, शुद्धवछनाग और गन्धक १-१ भाग, अमलवेत ५भाग, अजवाइन, पीपल, पाचोंनमक और हींग १-१ भाग लेकर अदरखकेरससे १ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ लेनेसे यह शूलोंको नष्टकरताहै ॥१७२॥

१७३ शूलहररसः (द्वितीयः)

सूततुल्यन्तु जैपालं क्षिप्त्वैकत्र विमर्दयेत् ।
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं सर्वशूलहरं परम् ॥ ७२२ ॥
यवानीन्द्रयवौ पाठा विल्वशुण्ठीरसाञ्जनम् ।
चूर्णं शूलहरं चानु पिवेदुष्णाम्वुना सदा ॥ ७२३ ॥

र. को., र. क. ल., शूलाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और जमालगोटा समभागलेकर यहां तक मर्दनकरे कि पारा अदृश्यहोजाय अथवा रससिन्दूरडाले । इसकी २-२ रत्तीकी गोली पानीकेसाथलेकर अजवाइन, इन्द्रजव, पाठा, वेलगिरी, सोंठ और रसौत समभागकाचूर्ण ३ माशे गरमपानीकेसाथ अनुपानमें लेनेसे सर्वप्रकारकेशूल और गुल्म नष्टहोतेहैं ॥ १७३ ॥

१७४ शूलान्तकरसः (प्रथमः)

वक्ष्ये शूलान्तकं नाम्ना सर्वशूलविनाशनम् ।
मन्दाग्निमरुचिं चैव निवारयति सत्वरम् ॥ ७२४ ॥
शुल्वेन पातितं सूतं दशधा स्वेदितं ततः ।
ग्रासोन्मुखं स्वर्णजीर्णं स्वरांशेन ततो वलिम् ॥ ७२५
आदित्यगुणतो जार्यं जीर्णार्कं समभागतः ।
अग्नीषोमीययन्त्रेऽथ मारयेत्पूर्वयुक्तितः ॥७२६ ॥
ताम्रं प्रागुक्तमार्गेण सम्यक् शुद्धञ्च मारयेत् ।
पञ्चामृतादिवापेन क्लेदभेदादिवर्जितम् ॥ ७२७ ॥
भस्मीभूताच्च सूतेन्द्रात्पलमेकं समाहरेत् ।
मृताद्रवेः पलं ग्राह्यं सर्वदोषविवर्जितात् ॥ ७२८ ॥
एकत्र मर्दयेत्तौ द्वौ जम्बीराद्यम्लयोगतः ।
तत्र कल्के प्रक्षिपेच्च कल्कसाम्येन लाङ्गलीम् ॥७२९॥
वन्ध्याकन्दञ्च तन्मानं कम्वुकल्कं चतुर्गुणम् ।
निक्षिप्य खल्वे तत्सर्वं जम्बीराद्यम्लयोगतः ॥७३०॥
मर्दयेद्दिवसान्सप्त दिवानक्तमतन्द्रितः ।
सुदृढे सम्पुटे क्षिप्त्वा कल्कञ्च पुटयेत्ततः ॥ ७३१ ॥
आरण्यच्छाणकैर्भारोन्मानकैः स्वाङ्गशीतलम् ।
आक्षिप्य खल्वे निक्षिप्य सूतं सम्मर्दयेद्बुधः ॥७३२॥
मागधीमरिचैः सार्धं योजयेच्छूलशान्तये ।
कुवेराक्षीं तयो र्मानाद्दत्त्वा सूतञ्च खादयेत् ॥ ७३३ ॥
अनुपानमिदं दद्याद्व्योषक्वाथं सहिङ्गुकम् ।
कोष्णं निवर्तते शूलं पक्तिजं वातजं तथा ॥ ७३४ ॥
गुञ्जामात्रप्रमाणेन रसं दद्याद्विचक्षणः ।
अनुपानान्तरं वक्ष्ये रसस्य वलवत्तरम् ॥ ७३५ ॥
दग्ध्वा हरीतकीं क्षारं कुर्यात्तस्यैकभागकम् ।
यवानी भाग एकः स्याद्वाह्लीकाद्भागमाहरेत् ॥७३६॥
मणिमन्थस्य भागः स्याद्व्योषक्वाथे विनिक्षिपेत् ।
सूतेन्द्रं विनियोज्याऽथ क्वाथमेनं पिवेदनु ॥ ७३७ ॥
सर्वेषामेव शूलानां नाशं कुर्याद्रसेश्वरः ।
ग्रहणीञ्च विसूचीञ्च तथाऽजीर्णमरोचकम् ॥ ७३८ ॥
प्लीहानं गुल्ममखिलं नाशयेदेष सेवितः ।
शालयः कृष्णमुद्गाश्च गवां क्षीरं घृतञ्च गोः ॥ ७३९ ॥
पथ्यमत्र प्रयोक्तव्यमनूक्तं वर्तयेद्बुधः ।
अयं शूलान्तको नाम रसः प्रोक्तः क्रमागतः ।
देवीशास्त्रानुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ ७४० ॥

रसालं, शूलाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारेको समभाग शुद्धतावेके चूर्णमें मिलाकर नीबूवगैरहकेरससे घोटघोटकर १० वार ऊर्द्धपातनकरे । फिर विषवर्गकेसाथ मर्दनकर काञ्जीमें स्वेदनकर वुभुक्षुता उत्पन्नकर षोडशांश स्वर्णवीजदेकर वारहगुनागन्धक जारणकरे । फिर समभाग ताम्रभस्म डालकर नीबूवगैरहकेरससे घोटकर डमरूयन्त्रमें अग्निदेकर ऊर्द्धपातितकरे । पारदकेयोगसे भस्मकियेहुए ताम्रको दुग्धादिपञ्चामृतमें घोटघोटकर गजपुटकीआचदे । जव वान्तिभ्रान्त्यादिकोंसे रहित होजाय तव इसकीवरावर पारदभस्ममिलाय जंभीरीवगैरह अम्लद्रवोंसे १-२ दिनमर्दनकर इसकल्ककी वरावर करिहारी और वाझखेखसेकाकन्दमिलाय मर्दनकरे । फिर इससे चतुर्गुणित शङ्खभस्म डालकर लगातार ७ दिनतक मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर हठमृत्तिकासे ६-७ कपड़मिट्टीदेकर अच्छीतरहसूखनेपर एकभार जङ्गलीकण्डोंकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती पीपल और मरिचकेसाथदेकर करंजकेवीजोंकाचूर्ण ३ माशे फकावे ऊपरसे त्रिकटुकेकाथमें हींगकाप्रक्षेपदेकर कदुष्णपिलावे । इससे पक्तिशूल और वातशूल नष्टहोताहै । हर्रेकीभस्म, अजवाइन, भुनीहींग, सेंधानमक समभागलेकर चूर्णवनाकर रखछोड़े । पूर्वरसकोदेकर त्रिकटुकेकाथमें इसचूर्णका प्रक्षेपदेकर पिलानेसे सवप्रकारकेशूल, ग्रहणी, हैज़ा, अजीर्ण, अरुचि, प्लीहा, और सवप्रकारकेगुल्म नष्टहोतेहैं । पुरानेचावल, कालेमूंग, गायकादूध और घी येसव पथ्यहैं ॥ १७४ ॥

१७५ शूलान्तकरसः (द्वितीयः)

भस्मसूतमयश्चापि पलमेकं पृथक्पृथक्।
ताम्रभस्मपले द्वे तु गन्धकस्य पलत्रयम् ॥ ७४१ ॥
हरितालञ्च कर्षाशं विमलाहेममाक्षिकम्।
पलार्द्धं हलिनीकन्दं नागवङ्गौ पलार्द्धकौ ॥ ७४२ ॥
चतुष्पला त्रिवृच्चैतत्सर्वं सम्यग्विचूर्णयेत्।
भूधात्रीस्वरसेनैव भावयेत्सप्तधा भिषक् ॥ ७४३ ॥
तथा दन्तीरसै वल्लं दद्यादार्द्रकवारिणा।
तेन कोष्टे विशुद्धे च दधिभक्तञ्च भोजयेत ॥ ७४४ ॥
सर्वशूलान्हरत्येषो रसः शूलान्तको मतः।
रसः शूलहरः प्रोक्त इति भालुकिभाषितम् ॥ ७४५ ॥

र को., र चं, चि. क., र. र स, शूले।

टि०—यत्र अयस स्थाने रसस्येति पाठो लभ्यते तत्राऽभ्रभस्म नियोज्यम्।

भाषा—पारद और लोहभस्म १—१ पल, ताम्रभस्म २ पल, शुद्धगन्धक ३ पल, रसमाणिक्य अथवा शुद्धहरिताल, रौप्यमाक्षिक और स्वर्णमाक्षिक १—१ कर्ष, शुद्धकरिहारी २ कर्ष, नाग और वङ्गभस्म १—१ कर्ष, निसोत ४ पल लेकर वारीकचूर्णकर भुंईआवले और दन्तीमूलकेस्वरसोंसे ७—७ भावनाए देकर ३—३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १—१ गोली अदरखकेरसकेसाथदेनेसे दस्तहोंगे। पेट साफहोनेपर दहीभात खानेको देवे। इससे तमामशूल नष्टहोतेहै ॥ १७५ ॥

१७६ शूलान्तकरसः (तृतीयः)

मृणालं चन्दनं यष्टी गुडूची वालकं तथा।
एतत्सर्वं समञ्चूर्णं चूर्णांशां शर्करां क्षिपेत् ॥ ७४६ ॥
सिन्दूरं वल्लमात्रेण तण्डुलोदकपानतः।
पित्तशूलविदाहौ च सर्वशूलं प्रशाम्यति ॥ ७४७ ॥

व रा., शूले।

भाषा—भसींड, सफेदचन्दन, मुलहठी, गिलोय और सुगन्धवाला १—१ कर्ष, शक्कर ५ कर्ष, रससिन्दूर ३ रत्ती मिलाकर १—२ पहरघोटकर रखछोड़े। इसमेंसे ३—३ माशे चावलकेधोवनकेसाथदेनेसे पित्तशूल और दाह नष्टहोतेहै ॥ १७६ ॥

१७७ शूलान्तकोरसः (चतुर्थः)

रसहेमाभ्रवङ्गानां भागास्तुल्यांशयोजिताः।
वराघनाम्बुना मर्द्यः सिद्धः शूलान्तको रसः॥ ७४८॥
शतावरीरसक्षौद्रयुक्तो वा शर्करान्वितः।
यष्टयाह्वत्रिफलानिम्बकटुकारग्वधैर्युतः ॥ ७४९ ॥
धात्रीरसक्षौद्रयुतस्सधात्रीचूर्णमाक्षिकः।
शिवाद्राक्षायुतो वापि पथ्याक्षौद्रयुतोऽथवा ॥७५०॥
पाचनं वमनं शस्तं लङ्घनं कफशूलिनाम्।
गोधूमयवरूक्षाणि मधूनि च हितानि च ॥ ७५१ ॥
मातुलुङ्गरसो वापि शिग्रुकाथोऽथवा हितः।
सक्षारो मधुना पीतः पार्श्वहृद्वस्तिशूलनुत् ॥ ७५२ ॥

र., शूलाधिकारे

भाषा—पारा, सुवर्ण, अभ्रक, वङ्ग इनकीभस्में समभाग लेकर त्रिफला और नागरमोथेकेक्वाथसे मर्दनकर १—१ रत्तीकी-गोलियावनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से २ गोलीतक शतावरीकेरस और मधु अथवा शक्कर अथवा मुलहठी, त्रिफला, नीमकीछाल, कुटकी, अमिलतासकागूदा इनकेकाढेकेसाथ, अथवा आवलेकेरस और मधुकेसाथ, अथवा आवलेकेचूर्ण और शहदकेसाथ, अथवा हर्रे और द्राक्षकेसाथ अथवा हर्रे और मधुकेसाथ, अथवा विजोरेकेरस या सहिजनकेक्काथकेसाथ अथवा यवक्षार और मधुकेसाथदेनेसे पार्श्व, हृदय और वस्तिशूलको यह नष्टकरताहै। कफशूलीको पाचन, वमन और लङ्घनकराना। गेहूं, जव, रूक्षपदार्थ और मधु पथ्यमें देना ॥ १७७ ॥

१७८ शूलारिरसः (प्रथमः)

रसं गन्धं समं कृत्वा ताम्रं तुल्यं नियोजयेत।
मरिचं नागरं हिङ्गु वचाऽजाज्यग्निमूलकम् ॥ ७५३ ॥
मार्कवस्वरसेनैव दिनं सूक्ष्मं विमर्दयेत्।
वदरास्थिप्रमाणेन वटिकाः कारयेद्भिषक् ॥ ७५४ ॥
शूलं गुल्ममुदावर्तं वातरोगं निहन्ति च।
रसः शूलारिरित्येष वह्निमान्द्यनिपूदनः ॥ ७५५ ॥

व रा, शूले।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, मरिच, सोंठ, भुनीहींग, वच, जीरा, चित्रकमूल सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भगरेकेरससे एकदिन-मर्दनकर वेरकीगुठलीकेवरावर गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १—१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे शूल, गुल्म, उदावर्त, वातरोग, मन्दाग्नि ये सव नष्टहोतेहैं ॥ १७८ ॥

१७९ शूलारिरसः (द्वितीयः)

रसं गन्धकं टङ्कणं श्वेतकाच-
मलं मारश्रङ्गं विडङ्गं वराटम्।
रविं शम्बुकं मेषजातञ्च शृङ्गं
रविस्नुक्पयोभि दिनं सम्विमर्द्य ॥ ७५६ ॥
पुटे दग्धमेतद्धिपल्योपयुक्तं
मरीचाज्ययुक्तं प्रयुञ्जीत वल्लम्।
महाशूलदोषे सपक्तौ च रोग
इमं मन्दवह्नौ ददीत ग्रहण्याम् ॥
क्षये दुर्निवारे विकारे च पाण्डौ
तथा वातरोगे प्रयुञ्जीत नित्यम् ॥ ७५७ ॥

रसायनसं., र का, नि र, वै चि, र वो, शूलाऽधिकारे। नि. र, वै चि, शूलहर इतिनाम। र. का **महेश्वररस** इतिनाम

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा, काचनमक, वारहसींगे और कौड़ीकीभस्म, विडङ्ग, ताम्र, घोंघा और मेंढेकेसींगकीभस्म सवसमभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय थूहर और आककेदूधसे मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ३—४ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर गजपुटकी

आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर शुद्धवछनाग और त्रिकटु १-१ भाग मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती मरिच और घीकेसाथमिलाकर देनेसे उद्धतशूल, पक्तिशूल, मन्दाग्नि, असाध्य-क्षय, पाण्डु और वातरोग इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ १७९ ॥

१८० शूलारिरसः

शुण्ठी सौवर्चलं टङ्कं सैन्धवं प्रतिकार्षिकम्।
मल्लं माषमितं शिग्रुरसेन परिमर्दयेत् ॥ ७५८ ॥
बदरास्थिप्रमाणेन गुटीं कृत्वा विचक्षणः।
उष्णतोयाऽनुपानेन शूलञ्च विविधञ्जयेत् ॥ ७५९ ॥
अशीतिं वातजान्रोगान्नाशयेन्नात्र संशयः।
मत्स्येन्द्रः कृपया पूर्वं गोरक्षाय ददौ किल ॥ ७६० ॥

रसायनसं, रसायनाऽधिकारे।

भाषा—सोंठ, संचल, भुनासुहागा, सेंधानमक १-१ कर्ष शुद्धसोमल १ माशा लेकर वारीकचूर्णकर सहिजनकेरससे एक-दिन मर्दनकर वेरकीगुठलीकेवरावर गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली गरमपानीकेसाथलेनेसे नानाप्रकारकेशूल और ८० वातरोग नष्टहोतेहै ॥ १८० ॥

१८१ शूलेभसिंहिनीगुटिका

बलेः शुद्धस्य भागार्द्धं भागार्द्धं पारदस्य च।
विषस्य भागो विज्ञेयो मरिचस्य त्रयः स्मृताः॥७६१॥
भागैकं पिप्पलीशुण्ठयोः सर्वमेकत्र चूर्णयेत्।
भावयेच्छृङ्गवेरस्य रसेनैव त्रिवासरम् ॥ ७६२ ॥
रुबुपत्ररसेनैव भावनात्रितयं तथा।
पश्चात्संशोष्य चणकमात्रा कार्या वटी बुधैः ॥ ७६३॥
तप्तोदकेन दातव्या सर्वशूलनिवारिणी।
अञ्जयेच्छीतनीरेण नेत्रस्रावं विनाशयेत् ॥ ७६४ ॥
शूलेभसिंहिनी ख्याता न देया यस्य कस्यचित् ॥
शङ्करेण स्वयं प्रोक्ता गोपालपुरतः पुरा ॥ ७६५ ॥

र.का, शूलाऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा आधाआधाभाग, शुद्ध-वछनाग १ भाग, मरिच ३ भाग, पीपल और सोंठ १-१ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अदरख और एरण्डकेरससे ३-३ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली गरमजलकेसाथ-देनेसे सवप्रकारके शूलोंको यह नष्टकरतीहै। ठढेपानीमेंघिमकर नेत्रोंमें अञ्जनकरनेसे नेत्रस्राव नष्टहोताहै ॥ १८१ ॥

१८२ शृङ्खलावातनाशनरसः

शुद्धं सूतं विषं गन्धं चाभ्रकं चाम्लवेतसम्।
द्विदिनं भावयेत्खल्वे हंसपादीरसैस्तथा ॥ ७६६ ॥
काचकूप्यां निवेश्याऽथ कुक्कुटीपुटपाचितम्।
भावितं मत्स्यपित्तेन द्विगुञ्जं भक्षयेत्सदा ॥ ७६७ ॥
अनुपानविशेषेण शृङ्खलावातनाशनम्।
पथ्यं क्षीरौदनं देयं नारिकेलजलाऽऽप्लुतम् ॥ ७६८ ॥

व. रा., शृङ्खलावाते।

टि०—"देहश्च पाण्डुशुष्कश्च निद्रानाश' शिरोव्यथा। वान्ति हिक्का च विस्फोट' शृङ्खलावातलक्षणम् ॥ इति"

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग, गन्धक, अभ्रकभस्म, अम्लवेत सवसमभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर हंसराजकेरससे दोदिन मर्दन-कर गोलावनाय ३-४ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके कुक्कुटपुटकीआंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मछलीके-पित्तसे एकभावनादेकर २-२ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शृङ्खला-वातको नष्टकरताहै। इसमें पथ्य दूधभात और नारियलका-जल देना ॥ १८२ ॥

१८३ शृङ्खलारसः

रसं गन्धं कम्बो र्भसितमपि कापर्दभसितं,
मरीचं भूचन्द्राम्बुधिरससहस्रांशुलविकम् ॥ ७६९ ॥
रसाङ्घ्र्यंशं टङ्कं सकलमपि चूर्णीकृतमिदं,
क्रमाद्यावन्निष्कं घृतसहितमद्यात्क्षयहरम् ॥ ७७० ॥

र. सि., क्षये।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, शङ्खभस्म ४ भा, कौड़ीभस्म ६ मा., मरिच १२ भा., भुनासुहागा ¼ भागलेकर सवकी नीलवर्णकज्जलीकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ माशा घीकेसाथलेनेसे क्षय नष्टहोताहै। इसकीमात्रा धीरेधीरे वढ़ाकर ४ माशेतककीकरना ॥ १८३ ॥

१८४ शृङ्गाराभ्रम् (प्रथमम्)

शुद्धं कृष्णाभ्रचूर्णं द्विपलपरिमितं
शाणमानं यदन्य-,
त्कर्पूरं जातिकोपं सजलमिभकणा
तेजपत्रं लवङ्गम्।
मांसी तालीसचोचे गजकुसुमगदं
धातकी चेति तुल्यं,
पथ्या धात्री विभीतं त्रिकटुरथपृथक्
त्वर्धशाणं द्विशाणम् ॥ ७७१॥
एला जातीफलाख्यं क्षितितलविधिना
शुद्धगन्धाश्मकोलं,
कोलार्द्धं पारदस्यःप्रतिपदविहितं
पिष्टमेकत्र मिश्रम्।
पानीयेनैव कार्याः परिणतचणक-
स्विन्नतुल्याश्च वट्यः,
प्रातः खाद्याश्चतस्रस्तदनु च हि किय-
च्छृङ्गवेरं सपर्णम् ॥ ७७२ ॥
पानीयं पीतमन्ते ध्रुवमपहरति
क्षिप्रमेतान्विकारान्,
कोष्ठे दुष्टाग्निजातान् ज्वरमुदररुजो
राजयक्ष्म क्षयञ्च।

कासं श्वासं सशोथं नयनपरिभवं
मेहमेदोविकारां-,
श्छर्दि शूलाम्लपित्तं तृषमपि महती
गुल्मजालं विशालम् ॥ ७७३ ॥
पाण्डुत्वं रक्तपित्तं गरलभवगदान्
पीनसं प्लीहरोगं,
हन्यादामानिलोत्थान्कफपवनकृता-
न्पित्तरोगानशेषान् ।
वल्यो वृष्यश्च योगस्तरुणतरकरः
सर्वरोगे प्रशस्तः,
पथ्यं मांसैश्च यूषे घृतपरिलुलितै
र्गव्यदुग्धैश्च भूयः ॥ ७७४ ॥
भोज्यं योज्यं यथेष्टं ललितललनया
दीयमानं मुदा य-,
च्छृङ्गाराभ्रेण कामी युवतिजनशता-
भोगयोगादतुष्टः ।
वर्ज्यं शाकाम्लमादौ दिनकतिपयचि-
त्स्वेच्छया भोज्यमन्य-
द्दीर्घायुः काममूर्ति र्गतवलिपलितो
मानवोऽस्य प्रसादात् ॥ ७७५ ॥

र सं, भै. र, र. चि, र. सु., यो म, रसायनसार, र चं, कामाविकारे। तथा च वै र., र. कौ, र. र, ध, रसायनसं., र. म. मा, वृ यो त, र क., वै द., रसायनवाजीकरणयो ।

भाषा—वज्राभ्रकभस्म २ पल, शुद्धकपूर, जावित्री, सुगन्धवाला, गजपीपल, तमालपत्र, लौंग, जटामांसी, तालीसपत्र, तज, नागकेशर, कुठ और धावड़ीकेफूल ४–४ माशे, हर्रे, आवले, वहेड़े, त्रिकटु २–२ माशे, इलायची, जायफल और कन्दुकीयन्त्रसे शुद्धकियाहुआगन्धक ८–८ माशे, पारदभस्म अथवा रससिन्दूर ४ माशे लेकर वारीकचूर्णकर १–२ दिन शतावरीवगैरहकेरससे घोटकर भीगेहुएचनेप्रमाण गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे प्रात काल ४–४ गोली अदरख और पानकेसाथ खाकर थोड़ा पानीपीनेसे मन्दाग्निजनितरोग, ज्वर, उदरपीडा, राजयक्ष्म, क्षय, कास, श्वास, शोथ, नेत्रपीडा, प्रमेह, मेदोवृद्धि, वमन, शूल, अम्लपित्त, वढ़ीहुईतृषा, असाध्यगुल्म, पाण्डु, रक्तपित्त, विषदोष, पीनस, प्लीहा, आमवात, कफ और वातकृतरोग, समस्तपित्तरोग इनसवको नष्टकर मनुष्यको जवान वनाताहै। थोड़ेदिनतक शाक और अम्लपदार्थोका परित्यागकरे। इसकेवाद यथेष्टभोजनकरे। इसके निरन्तर सेवनकरनेसे वलीपलितादिकसे निवृत्तहोकर पूर्णपुरुषत्वमें आजाताहै ॥ १८४ ॥

१८५ शृङ्गाराभ्रम् (वृहत्) २

पारदं गन्धकञ्चैव टङ्कणं नागकेसरम् ।
जातीकोपञ्च कर्पूरं लवङ्गं तेजपत्रकम् ॥ ७७६ ॥
सुवर्णञ्चापि प्रत्येकं कर्षमात्रं प्रकल्पयेत् ।
शुद्धकृष्णाभ्रचूर्णन्तु चतुष्कर्षं प्रयोजयेत् ॥ ७७७ ॥
तालीसं घनकुष्ठञ्च मांसी त्वग्धातकी तथा ।
एलावीजं त्रिकटुकं त्रिफला करिपिप्पली ॥ ७७८ ॥
कर्षद्वयं वा चैतेषां पिप्पलीक्वाथमर्दितम् ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं चोचं क्षौद्रसमायुतम् ॥ ७७९ ॥
अग्निमान्द्यादिकान्रोगानरुचिं पाण्डुकामलाम् ।
उदराणि तथा शोथमानाहं ज्वरमेव च ॥ ७८० ॥
ग्रहणीं श्वासकासौ च हन्याद्यक्ष्माणमेव च
नानारोगप्रशमनं वलवर्णाग्निकारकम् ॥ ७८१ ॥
वृहच्छृङ्गाराभ्रनाम विष्णुना परिकीर्तितम् ।
एतस्याऽभ्यासमात्रेण निर्व्याधि र्जायते नरः ॥ ७८२॥

र सं, ध, (कासे) र सु, र. चं, वाजीकरणे।

टि०—"जीर्णं सुवर्णं लोह वा यथत्र परिदीयते। तदाय सर्वरोगाणा मार्वभौम प्रकीर्तित" इति केपुचित्पुस्तकेष्वधिकं दृश्यते।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सुहागा, नागकेशर, जावित्री, शुद्धकपूर, लौंग, तेजपात और सुवर्णभस्म १–१ कर्ष, अभ्रकभस्म ४ कर्ष, तालीसपत्र, नागरमोथा, कुठ, जटामासी, तज, धावड़ीकेफूल, इलायची, त्रिकटु, त्रिफला, गजपीपल २–२ कर्षलेकर सवका वारीकचूर्णकर पीपलकेक्वाथसे एकदिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियावनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ या २ गोली तज और मधुकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, अरुचि, पाण्डु, कामला, उदररोग, शोथ, आनाह, ज्वर, ग्रहणी, श्वास, कास, राजयक्ष्म, वल्नाश, इनसवको नष्टकर आदमीको युवावस्थामें लाताहै १८५

१८६ शैलेन्द्ररसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं कान्तभस्म विषन्तथा ।
वाकुचीत्रिफलाचूर्णं निम्बवह्निगुडूचिजैः ॥ ७८३ ॥
दिनं भृङ्गीद्रवै मर्द्यं वाकुच्याश्च कषायकैः ।
भक्षयेल्लोहपात्रस्थं कर्षार्द्धं जिह्विकाप्रणुत ॥ ७८४ ॥
गुञ्जाभल्लाततैलाभ्यां वाकुचीचूर्णलेपनम् ।
अनुपानविशेषेण सर्वकुष्ठविनाशनः ॥ ८८५ ॥

व रा, वै चि., कुष्ठे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, कान्तभस्म, शुद्धवछनाग, वाकुची, और त्रिफला समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमेंमिलाय नीमकीछाल, चित्रकमूल, गिलोय, भगरा, वाकुची इनकेद्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंमे ८–८ माशे लोहेकेपात्रमें मधुकेसाथघोटकर खावे, ऊपरसे वाकुचीकाकाढा पीवे तो ऋष्यजिह्वकुष्ठको यहनष्टकरताहै। गुञ्जा और भिलावेकेतैलसे वाकुचीकेचूर्णका लेपकरे ॥ १८६ ॥

१८७ शोथकालानलरसः

चित्रं कुटजवीजञ्च श्रेयसी सैन्धवं तथा ।
पिप्पलीं देवपुष्पञ्च सजातीफलटङ्कणम् ॥ ७८६ ॥
लौहमभ्रं तथा गन्धं पारदेनैव मिश्रितम् ।
एतेषां कर्षमात्रेण वटीं गुञ्जामितां शुभाम् ॥ ७८७ ॥

भक्षयेत्प्रातरुत्थाय कोकिलाक्षरसेन तु ।
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ॥ ७८८ ॥
कासं श्वासं तथा शोथं प्लीहानं हन्ति दुस्तरम् ।
मेहं मन्दानलं शूलं सङ्ग्रहग्रहणीं तथा ॥ ७८९ ॥
अवश्यं नाशयेच्छोथं कर्दमं भास्करो यथा ।
शोथकालानलो नाम रोगानीकविनाशनः ॥ ७९० ॥

भै. र., ध., शोथाधिकारे ।

भाषा—चित्रकमूल, इन्द्रजव, गजपीपल, सेंधानमक, पीपल, लौंग, जायफल, भुनासुहागा, लोह और अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक और पारा समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर तालमखानेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली प्रात काल तालमखानेकेस्वरसकेसाथ देनेसे ८ प्रकारकेज्वर, साध्य अथवा असाध्यकास, श्वास, शोथ, प्लीहा, प्रमेह, मन्दाग्नि, शूल, सङ्ग्रहग्रहणी इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ १८७ ॥

१८८ शोथहारसः (प्रथमः)

मृतं कृष्णायसं ताम्रं पारदञ्च समांशकम् ।
पार्वतं त्रिगुणं शुद्धं माक्षिकं ताम्रभागिकम् ॥ ७९१ ॥
वैक्रान्तं ताम्रभागञ्च मृतं सर्वं प्रमर्दयेत् ।
ताम्रसमं शङ्खभस्म मृगशृङ्गभवं तथा ॥ ७९२ ॥
सर्वं विमर्द्य खल्वेन सितपौनर्नवैर्द्रवैः ।
दिनसप्तमितं पश्चात्क्षौद्रपिप्पलिसंयुतम् ॥ ७९३ ॥
वल्लमात्रं लिहेदेतत्सर्वश्वयथुनाशनम् ।
दोषजं रोगजं शोफं तथागन्तुसमुद्भवम् ॥
यकृत्प्लीहं क्षयं पाण्डुं ग्रहणीञ्च जयेद्ध्रुवम् ॥ ७९४ ॥

र. म. मा., ना. वि., शोथे । ना. वि., **शोफगजकेसरीरस** इति नाम ।

भाषा— लोह और ताम्र भस्म शुद्धपारा १–१ भाग, शुद्धगन्धक ३ भाग, सोनामाखी, वैक्रान्त, शङ्ख, मृगशृङ्ग इनकी भस्में १–१ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सफेदपुनर्नवाकेरससे ७ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पीपल और मधुकेसाथलेनेसे सवप्रकारका-शोथ, यकृत्, प्लीहा, क्षय, पाण्डु, ग्रहणी इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ १८८ ॥

१८९ शोथहारसः (द्वितीयः)

सूतगन्धरविभस्म तुल्यकं
सर्वतो द्विगुणभस्म लोहजम् ।
रक्तचूर्णसहितं विमर्दितं
काककुष्ठसहितं दिनमेकम् ॥ ७९५ ॥
वल्लयुग्ममशितो गुडाभया
नागरेण सगुडेन कणाभिः ।
विल्वपत्रजरसेन वा तथा
शोथहा भवति विश्वकिरातः ॥ ७९६ ॥
वासामृताकण्टकारीक्वाथो माक्षिकसंयुतः ।
कुष्ठं शोथं जयत्याशु कासं श्वासं वमिं तथा ॥
सेकस्तथाऽर्कवर्षाभू निम्बक्वाथेन शोथजित् ॥ ७९७ ॥

र, र. बो., शोथाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म समभाग, सव सेदूनीलोहभस्म और कमीला लेकर सवकीनीलवर्णकज्जलीकर काकजङ्घा और कुटकेस्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गुड़ और हर्रेकाचूर्ण अथवा सोंठ और गुड़ अथवा पीपलकाचूर्ण या वेल-पत्रस्वरस अथवा सोंठ और चिरायतेकाक्वाथ अथवा अडूसा, गिलोय और भटकटैयाकेक्वाथमें मधुमिलाकर इसकेसाथदेनेसे कुष्ठ, शोथ, कास, श्वास, वमन येसब निवृत्तहोतेहैं। शोथमें आक, पुनर्नवा और नीमकेक्वाथका स्वेदन कराना ॥ १८९ ॥

१९० शोथाङ्कुशरसः

रसेन्द्रगन्धं मृतलोहताम्रं
नागं तथाऽभ्रं समसङ्ख्यकञ्च ।
निर्गुण्डिकास्फोतकपित्थचिञ्चा-
पुनर्नवाश्रीफलकेशराजम् ॥ ७९८ ॥
एषां रसैर्भावितमेकशश्च
कोलप्रमाणा वटिका विधेया ।
शोथज्वरारोचकपाण्डुरोगं
सर्वाङ्गशोथं विनिवारयेच्च ॥
पित्तान्वितान्वातभवान्कफोत्थां-
श्छोथाङ्कुशो नाम निहन्ति रोगान् ॥ ७९९ ॥

भै. र., शोथाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, ताम्र, नाग, और अभ्रकभस्म समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर निर्गुण्डी, कोयल, कैथ, इमली, पुनर्नवा, नारियल, कालाभंगरा इनप्रत्येकके द्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर वेरवरावर गोलियावनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे एकाङ्ग अथवा सर्वाङ्गशोथ, ज्वर, अरुचि, पाण्डु इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ १९० ॥

१९१ शोथारिरसः (शोफारिरसः)

हिङ्गुलजयपालञ्च मरिचं टङ्कणं कणाम् ।
सम्मर्द्य वल्लः सघृतः सर्वशोफहरः परः ॥ ८०० ॥

र. चं., रसायनसं., यो. र., नि. र., शोथाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, जमालगोटा, मरिच, सुहागा और पीपल समभागलेकर वारीकचूर्णकर पुनर्नवा वगैरह शोथघ्नदवा-ओंकेरसमें मर्दनकर ३–३ रत्तीकीगोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली घृतकेसाथ देनेसे यह सवप्रकारकेशोथोंको निवृत्तकरताहै ॥ १९१ ॥

१९२ शोथारिलोहम् (प्रथमम्)

त्रिकटु त्रिफला द्राक्षा पौष्करं सजलं शटी।
लौहं वचा लवङ्गञ्च शृङ्गी त्वक् शतपुष्पिका॥ ८०१॥
विभीतकं विडङ्गञ्च धातकीपुष्पमेव च।
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्॥ ८०२॥
सर्वद्रव्यसमञ्चात्र सुशुद्धं लौहकिट्टकम्।
कुटजस्य रसेनाऽपि म्रक्षयेत्परियत्नतः॥ ८०३॥
वेष्टितं जम्बुपत्रेण पङ्केन परिलेपयेत्।
ततो गजपुटे पक्त्वा स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्॥ ८०४॥
प्रातःकाले शुचि र्भूत्वा भक्षयेच्छक्तिमानतः।
निहन्ति सर्वजं शोथं ग्रहणीञ्च विशेषतः॥ ८०५॥
उदरेषु च सर्वेषु शोथेषु च विधानतः।
विविधा व्याधयश्चान्ये सेवनाद्यान्ति साध्यताम् ८०६

भै र., शोथाऽधिकारे।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, द्राक्ष, पोहकरमूल, सुगन्धवाला, कचूर, लोहभस्म, वच, लौंग, काकड़ासींगी, तज, सौंफ, वहेड़ा, विडङ्ग, धावड़ीकेफूल सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर वरावरप्रमाणमें शुद्धमण्डूरमिलाकर कुटजके रससे भावनादेकर पिण्डवनाय जामुनकेपत्तोंमें लपेटकर ४ अङ्गुल कीचड़ ऊपरचढाय गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेसे ३ माशेतक प्रात काल पवित्रहोकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथलेनेसे सवप्रकारकेशोथ, विशेषकर ग्रहणीरोग, उदररोग और समस्तव्याधिया नष्टहोतीहै॥१९२॥

१९३ शोथारिलोहम् (द्वितीयम्)

अयोरजस्त्र्यूषणयावशूकं
चूर्णञ्च पीतं त्रिफलारसेन।
शोथं निहन्यात्सहसा नरस्य
यथाशनि र्वृक्षमुदग्रवेगः॥ ८०७॥

भै र., च स., सु. सं., आ पु, हितो., र सं., र, र. चि, शोथाधिकारे।

टि०—र स, र सु, र. चि, एपु त्र्यूपणादिलोहमिति नाम। कण्ठसूरिविरचितहितोपदेशे अनुपाने त्रिफलारसस्थाने केवलमुष्णाम्बु गृहीतम्, यावशूकाऽभाव, तद्वयस्याऽपि त्यागे कारण नोपलभामहे।

भाषा—लोहभस्म, त्रिकटु और यवक्षार समभागलेकर त्रिफलाके स्वरस अथवा क्वाथकेसाथ उचितमात्रामें लेनेसे समस्त-शोथ नष्टहोतेहैं॥ १९३॥

१९४ शोथोदरारिलोहम्

पुनर्नवाऽमृता वह्नि र्गवाक्षी मानवज्रिके।
सूर्यावर्तार्कमूलञ्च पृथगष्टपलं जले॥ ८०८॥
पादशेषे शृतं द्रोणे सुपूते वस्त्रगालिते।
लौहचूर्णाष्टपलकं पचेदाज्यसमं भिपक्॥ ८०९॥
अर्कस्य द्विपलं क्षीरं स्नुहीक्षीरं चतुष्पलम्।
पलद्वयं कौशिकस्य माक्षिकाश्मजतोः पलम्॥८१०॥
पलार्द्धं पारदं शुद्धं गन्धकस्य पलन्तथा।
जयपालं ताम्रमभ्रं शुद्धमत्र प्रदापयेत्॥ ८११॥
कङ्कुष्ठवह्निकन्दानि शराख्यं घण्टकर्णकम्।
पलाशस्य च वीजानि कञ्चुकी तालमूलिका॥ ८१२॥
त्रिफला च क्रिमिरिपुस्त्रिवृद्दन्तीभवं तथा।
सूर्यावर्तगवाक्षयौ च वर्षाभू र्वज्रवल्लिका॥ ८१३॥
एषां लौहसमां मात्रां स्निग्धभाण्डे निधापयेत्।
अतोऽस्य भक्षयेन्मात्रामनुपानञ्च युक्तितः॥ ८१४॥
हन्ति सर्वोदरं शीघ्रं नात्र कार्या विचारणा।
ये च शोथाः सुदुर्वाराश्चिरकालानुवन्धिनः॥ ८१५॥
तान्सर्वान्नाशयत्याशु तमः सूर्योदये यथा।
नातः परतरं किञ्चिच्छोथोदरविनाशनम्॥ ८१६॥
उदराणि पाण्डुरोगं कामलाञ्च हलीमकम्।
अर्शो भगन्दरं कुष्ठं ज्वरं गुल्मञ्च नाशयेत् ८१७॥

यो. म, भै र., र क., र.र, र.का, उदराधिकारे।

भाषा—पुनर्नवा, गिलोय, चित्रकमूल, इन्द्रायणकीजड़, मानकन्द, थूहरकादूध, हुरहुर और आककीजडकीछाल ८–८ पल लेकर अठगुनेपानीमें चतुर्थांशावशेषक्वाथकर वस्त्रमें छानकर मण्डूर और घी ८–८ पल डालकर पकावे। पकातेसमय आकका-दूध २ पल, थूहरकादूध ४ पल, गूगल २ पल, स्वर्णमाक्षिकभस्म और शिलाजीत १–१ पल, समभाग शुद्धपारेगन्धककीकज्जली २पल, शुद्धजमालगोटा, ताम्र और अभ्रकभस्म १–१ पल, कङ्कुष्ठ, चित्रकमूल, सूरण, शरपुङ्ख, घण्टपाटला, पलाशवीज, क्षीरकञ्चुकीका-दूध, तालमूली, त्रिफला, विडङ्ग, निसोत, दन्तीमूल, हुरहुर, इन्द्रायणकीजड़, पुनर्नवा, हड़जोड़ सवसमभागकाचूर्ण ८ पल डालकर पकावे। घन तैयारहोनेपर निकालकर चिकनेवर्तनमें रखछोड़े। ६–७ दिन वीतजानेपर १ माशेसे ३ माशेतककी-मात्रा रोग और रोगीका वलावलदेखकर रोगोचितानुपानकेसाथ-देनेसे दुस्तर और पुराना शोथ, उदररोग, पाण्डु, कामला, हली-मक, ववासीर, भगन्दर, कुष्ठ, ज्वर, गुल्म इनसवको यह तत्काल नष्टकरताहै। इससे वढकर और दूसरी दवा शोथहर नहींहै॥१९४॥

१९५ शोधनरसः

शुद्धसूतपलं ग्राह्यं शुद्धगन्धकतः पलम्।
तिन्तिरीवीजपलकं त्रिफलाऽष्टपला भवेत्॥ ८१८॥
सर्वमेकत्र संयोज्य खल्वे दत्त्वा सुमर्दयेत्।
पक्वनिम्बुकतोयेन दिनमेकं निरन्तरम्॥ ८१९॥
दन्तीनीरैस्तथा मर्द्यस्त्रिवृताक्वाथतो दिनम्।
ततो वदरमात्रेण वटिका रचयेद्बुधः॥ ८२०॥
छायाशुष्का विधायाऽथ करण्डे विनिवेशयेत्।
एकां वटीं ददीताऽसामुदरार्तियुजे भिपक्॥ ८२१॥
उष्णोदकेन दत्त्वाऽथ घर्मे तं स्थापयेत्ततः।
विरेचनं प्रजायेत ततो दद्याच्च पथ्यकम्॥ ८२२॥
दत्ते पथ्ये स्तम्भनं स्याद्विरेकस्य न संशयः।
अनेन सूतराजेन विनश्यति जलोदरम्॥ ८२३॥

शोधनो नाम सूतेन्द्रो जलोदरनिवर्तकः ।
त्रिदिनात्त्रिदिनादूर्ध्वं रसेन्द्रं सम्प्रयोजयेत् ॥ ८२४ ॥
अन्यथा नैव योक्तव्यो वलक्षीणो विनश्यति ।
मुद्गयूपः सुपथ्यं स्याद्विलेपीं वा प्रयोजयेत् ॥ ८२५ ॥

रसाल., उदराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और जमालगोटा १–१ पल, त्रिफला ८ पल लेकर सवका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाय पकेनीवू, दन्तीमूल और निसोतकेद्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर छोटेवेरवरावर गोलियें वनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली गरमजलकेसाथ देकर धूपमें वैठानेसे रेचनहोगा । पेटसाफहोनेपर मूंगकायूप अथवा खिचड़ी देवे । प्रतितीसरेदिन इसीतरहदेनेसे जलोदर निवृत्त होताहै । इसका प्रतिदिन प्रयोग नहींकरना क्योंकि जलोदरी प्राय. क्षीणहुआकरताहै और वलक्षीण आदमीका अक्स्मात् मृत्यु हुआ करताहै ॥ १९५ ॥

१९६ शोफमुद्गररसः

रसं गन्धं मृतं ताम्रं पथ्या वालकगुग्गुलुः ।
सममाज्येन संयुक्तं गुटिकाः कारयेत्ततः ॥ ८२६ ॥
एकैकां सेवयेद्वैद्यः शोफपाण्डुपनुत्तये ।
शीतलञ्च जलं देयं तक्रञ्चाम्लं विवर्जयेत ॥
शोफमुद्गरनामाऽयं पूज्यपादेन निर्मितः ॥ ८२७ ॥

वै. चि., व. रा., शोफे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, हर्रे, तगरगण्ठोला और गूगल समभागलेकर सवका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमेंमिलाय गायकाघी डालकर यहांतक खरलकरे कि गोलीवंधनेलायकहोजाय । इसकी १–१ मासेकी गोलिया वनाकर १–१ गोली ठंढेजलकेसाथदेनेसे यह शोफको नष्टकरताहै । इसमें छाछ और खटाईका परहेज़करे ॥ १९६ ॥

१९७ शोफारिरसः

स्वच्छसूतस्य गन्धेन कृत्वा कज्जलिकां शुभाम् ।
ततश्शुल्वं सकान्तञ्च राजावर्तञ्च रौप्यकम् ॥ ८२८ ॥
अभ्रकञ्च शिला तालं विषव्योपाऽपराजिताः ।
विषतिन्दुकवीजाग्नि प्रत्येकं रससम्मितम् ॥ ८२९ ॥
सर्वमेकत्र संयोज्य चूर्णयित्वा ततः परम् ।
भृङ्गराजरसं दत्त्वा मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥ ८३० ॥
शोधनं कारयित्वा च दातव्या चणकोपमा ।
रसः शोफारिनामायं प्रोक्तो मन्थानभैरवैः ॥ ८३१ ॥
स्थौल्यं रोगमरोचकाग्निसदनं शोफञ्च पाण्ड्वामयं,
प्लीहानं ग्रहणीञ्च मूलकरुजं वातं तथानाहकम् ।
हिक्काश्वासकफानिलं क्रिमियकृच्छूलञ्च जीर्णज्वरं,
सर्वान्वातकफामयांश्च हरति क्षिप्रं त्रिदोपामयान्८३२

वै. चि , व रा., शोफे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, तावा, कान्तलोह, लाजवर्द, चादी, अभ्रक इनकीभस्में, शुद्धमैनसिल, हरिताल और वछनाग, त्रिकटु, कोयल और कुचिला समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर भंगरेकेरससे दोदिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें वनाकर रखछोड़े । वमनादिकसे कोष्ठशुद्धकरके इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे स्थूलता, अरुचि, मन्दाग्नि, शोफ, पाण्डु, प्लीहा, ग्रहणी, ववासीर, वातरोग, आनाह, हिचकी, श्वास, कफवातविकार, कृमि, यकृत्शूल, जीर्णज्वर इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ १९७ ॥

१९८ श्रीकण्ठरसः

स्वर्णताराऽर्ककान्तञ्च तीक्ष्णं वा मारितं समम् ।
कृष्णाऽभ्रसत्त्वमाक्षीकं प्रत्येकं स्वर्णतुल्यकम् ॥ ८३३ ॥
तत्सर्वञ्चाऽन्धितं धाम्यं तत्खोटं मृतपारदम् ।
समं सूतान्मृतं वज्रं पादांशं तत्र योजयेत् ॥ ८३४ ॥
सर्वं जम्वीरजे द्रावैस्तप्तखल्वे विमर्दयेत् ।
दिनैकं तन्निरुद्ध्याऽथ भूधरे पाचयेद्दिनम् ॥ ८३५ ॥
उद्धृत्य गन्धकं तुल्यं दत्त्वा रुद्ध्वा धमेद्द्रुतम् ।
तच्चूर्णं मधुनाऽऽज्येन माषमात्रं लिहेत्सदा ॥ ८३६ ॥
रसः श्रीकण्ठनामाऽयं खेचरत्वं प्रयच्छति ।
संवत्सरप्रयोगेण जीवेत्कल्पान्तमेव च ॥ ८३७ ॥
तस्य मूत्रपुरीषाभ्यां सर्वलौहानि काञ्चनम् ।
पलैकं गन्धकं क्षीरैः क्रामकं चानुपाययेत् ॥ ८३८ ॥

र खं., रसायनस , रसायने ।

भाषा—सुवर्ण, चादी, ताम्र, कान्तलोह, फोलाद, अभ्रकसत्त्व, सोनामाखी इनकीभस्में समभागलेकर अन्धमूषामें वन्दकर धमनकरनेसे खोट तैयारहोगा । यह खोट और पारदभस्म समभाग लेकर पारेसे चतुर्थांश हीरेकीभस्म मिलाकर जंभीरीकेरससे एकदिनमर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर भूधरयन्त्रमें अग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर वरावरका शुद्धगन्धक मिलाय अन्धमूषामें वन्दकर धमनकरे । ठढा होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे उड़दवरावर समयोचितानुपानकेसाथलेनेसे समस्तरोगोंमे निर्मुक्तहोकर दीर्घजीवी होताहै । उसके मूत्र और पुरीषसे समस्तलोहोंका रङ्ग वदलजाताहै । एकपल शुद्धगन्धक दूधकेसाथअनुपानमें देनेसे रसका शरीरमें क्रामणहोताहै॥१९८॥

१९९ श्रीपदगजकेसरीरसः

व्योपामृतयमान्यश्च सूतोऽग्नि गन्धकं शिला ।
सौभाग्यं जयपालञ्च चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥ ८३९ ॥
भृङ्गगोक्षुरजम्वीरार्द्रकतोयै विमर्दयेत् ।
अस्य रक्तिद्वयं खादेदुष्णतोयाऽनुपानतः ॥
श्लीपदं दुस्तरं हन्ति प्लीहानं हन्ति सेवितः ॥ ८४० ॥

भै र , ध , वै क., श्लीपदाधिकारे ।

भाषा—त्रिकटु, शुद्ध वछनाग, अजवाइन, शुद्धपारा, चित्रकमूल, गन्धक, मैनसिल, सुहागा और जमालगोटा सम-

भागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरा, गोखरू, जंभीरी और अदरखके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली गरमजलकेसाथदेनेसे दुस्तर फीलपाव और श्लीहाको यह नष्टकरताहै ॥ १९९ ॥

२०० श्लीपदध्वंसीरसः

पारदं टङ्कणं तुल्यं तालकं ताम्रमेव च ।
माक्षिकं कान्तलोहञ्च मृतं शुद्धा शिला तथा ॥८४१॥
एतानि मर्दयेत्खल्वे शिग्रुनिर्गुण्डिकाघृतैः ।
द्विसप्ताहं विशोष्याऽथ सम्यग्गजपुटे पचेत् ॥ ८४२ ॥
शरावसम्पुटे रुद्ध्वा काचकूप्यामथाऽपि च ।
सप्तवारं पुटेद्धीमांस्तत. सिद्धो भवेद्रसः ॥ ८४३ ॥
रसोऽयं श्लीपदध्वंसी प्रणीतो नकुलेन हि ।
अस्य गुञ्जाद्वयं खादेत्त्रयं वाऽथ चतुष्टयम् ॥ ८४४ ॥
पञ्चकोलकषायेण हन्त्ययं सत्वरं गदान् ।
श्लीपदं गलगण्डादीन्कुष्ठं विस्फोटकानपि ॥ ८४५ ॥

ना. वि , श्लीपदाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, सुहागा और हरिताल, ताम्र, सुवर्ण माक्षिक और कान्तलोहभस्म, शुद्धमैनसिल समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सहिजन और निर्गुण्डीकेरस तथा गायके घीसे १-१ दिन मर्दनकर १४ दिनतक कड़ीधूपमें सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्वोक्तद्रवोंसे मर्दनकर शराव अथवा आतशीशीशीमें वन्दकर आचदे। सात आचें देनेकेवाद निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २ से ४ रत्तीतकमात्रा उचितानुपानसेदेकर पञ्चकोलकाकाथ पिलानेसे श्लीपद, गलगण्ड, कुष्ठ, विस्फोटक येसव नष्टहोतेहैं॥

२०१ श्लीपदारिरसः

कणावचादारुपुनर्नवानां
चूर्णं सविश्वं समवृद्धदारु ।
सगन्धसूतस्य निहन्ति वल्लः
सकाञ्जिकः श्लीपदरोगमुग्रम् ॥ ८४६ ॥

र का., श्लीपदाधिकारे ।

भाषा—पीपल, वच, देवदारु, पुनर्नवा, सोंठ, विधारा शुद्ध पारा और गन्धक समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती काञ्जीकेसाथलेनेसे वढेहुए श्लीपदरोगको यह नष्टकरताहै॥२०१॥

२०२ श्लीपदारिलोहम्

हरीतक्या विभीतस्य धात्र्याश्चूर्णं सुचूर्णितम् ।
पट्तोलकप्रमाणेन ग्राह्यमेतद्गुणैषिणा ॥ ८४७ ॥
तोलद्वयं लोहचूर्णं कान्तलोहस्य जारितम् ।
तोलद्वयं ततो देयं विशुद्धञ्च शिलाजतु ॥ ८४८ ॥
कृत्वैकत्र समस्तांस्तु त्रिफलाक्वाथभावना ।
श्लीपदाद्यगदध्वंसी सर्वव्याधिविनाशनः ॥
श्लीपदारिरिति ख्यातो लोहो मुनिभिरादृतः॥८४९॥

भै. र., र र, र सु., टो., श्लीपदाधिकारे । टोडरानन्दे त्रिफलालोहमितिनाम ।

भाषा—हर्रे, वहेड़ा, आवला, लोह और कान्तलोहभस्म, शुद्धशिलाजीत २-२ तोलेलेकर वारीकचूर्णकर त्रिफलाकेकाथसे ६-७ भावनाए देकर १-१ माशेकी गोलियांवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से २ गोलीतक त्रिफलाकेकाथकेसाथदेनेसे सवप्रकारके श्लीपद नष्टहोतेहै ॥२०२॥

२०३ श्लेष्मकालानलरसः (प्रथमः)

रसस्य द्विगुणो गन्धः गन्धकाद्द्विगुणं विषम् ।
विषात्तु द्विगुणं देयं चूर्णं त्रिकटुसम्भवम् ॥ ८५० ॥
रसतुल्या प्रदातव्या चाभया सविभीतका ।
धात्री पुष्करमूलञ्च चाजमोदाऽजगन्धिका ॥ ८५१ ॥
विडङ्गं कट्फलं चव्यं पञ्चैव लवणानि च ।
लवङ्गं त्रिवृता दन्ती सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ ८५२ ॥
भावयेत्सप्तधा रौद्रे स्वरसैः सुरसोद्भवैः ।
हन्ति सर्वं कफोद्भूतं व्याधिं कालानलो रसः ॥८५३॥

र. स , र. सु , र चि , कफरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा , वछनाग ४ भा , त्रिकटु ८ भा , हर्रे, वहेड़ा, आवला, पोहकरमूल, अजमोद, ववई, विडङ्ग, कायफल, चव्य, पाचोंनमक, लौंग, निसोत और दन्तीमूल १-१ भागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय तुलसीकेरससे कड़ीधूपमें ७ भावनाएं देकर ४-४ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली तुलसीवगैरह कफघ्न अनुपानकेसाथदेनेसे यह कफरोगको नष्टकरताहै ॥ २०३ ॥

२०४ श्लेष्मकालानलरसः (महान्) २

हिङ्गूलसम्भवं सूतं शिलागन्धकटङ्कणम् ।
ताम्रं वङ्गं तथाऽभ्रञ्च स्वर्णमाक्षिकतालकम् ॥ ८५४ ॥
धुस्तूरं सैन्धवं कुष्ठं पिप्पली हिङ्गु कट्फलम् ।
दन्तिवीजं सोमराजी वनराजफलं त्रिवृत् ॥ ८५५ ॥
वज्रीक्षीरेण सम्मर्द्य वटिकां कारयेद्भिषक् ।
कलायपरिमाणान्तु खादेदेकां यथावलम् ॥ ८५६ ॥
सन्निपातं निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनि यथा ।
मत्तसिंहो यथाऽरण्ये मृगाणां कुलनाशनः ॥
तथाऽयं सर्वरोगाणां सद्यो नाशकरो महान् ॥ ८५७ ॥

र स , र सु , भै र , र चि , कफरोगे। र सु , ज्वरे कफरोगे च । भै र ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शिगरिफसे निकालाहुआपारा, शुद्धमैनसिल, गन्धक और सुहागा, ताम्र, वङ्ग, अभ्रक और स्वर्णमाक्षिकभस्म, रसमाणिक्य अथवा शुद्धहरिताल, धतूरेकेवीज, सैन्धव, कुठ, पीपल,

भुनीहींग, कायफल, जमालगोटा, वाकुची, केवाच, निसोत, सवममभागलेकर वारीकचूर्णकर धातुओंकी कज्जलीमें मिलाय थूहरकेदूधसे २-३ दिनमर्दनकर मटरवरावर गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ-देनेसे मन्निपातरूपी समस्तरोगोंको यह वहुतशीघ्र नष्टकरताहै ।

२०५ श्लेष्मपित्तान्तकरसः

मृतसूताऽभ्रलोहञ्च वह्निगन्धकटङ्कणम् ।
भूनिम्बेन्द्रयवा रास्ना गुडूची पद्मकं शटी ॥ ८५८ ॥
दिनं पर्पटजै द्रावै र्मर्दितं वटकीकृतम् ।
सिताक्षौद्रै लिहेन्मापं श्लेष्मपित्तान्तको रसः ॥८५९॥
पथ्यां कणां गुडं शुण्ठीं कर्षैकं भक्षयेदनु ।
कफपित्तहरं खादेद्दाडिमं गुडनागरम् ॥ ८६० ॥

चि.र., टो , र. क , श्लेष्मपित्तरोगे ।

भाषा—पारा, अभ्रक, लोह इनकीभस्में, चित्रकमूल, शुद्ध गन्धक और सुहागा, चिरायता, इन्द्रजव, रास्ना, गिलोय, पदमकाठ और कचूर समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय पित्तपापड़ेकेस्वरससे १-२ दिनमर्दनकर १-१ माशेकी गोलियांवनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शक्कर और मधुकेसाथखाकर हर्रे, पीपल, गुड और सोंठ समभागमिलाकर १ कर्ष अनुपानमें लेनेसे श्लेष्मपित्त नष्टहोताहै । ऊपरकहाहुआ अनुपान जिन्हें अनुकूल न हो उनको अनार, गुड़ और सोंठ मिलाकर देना ॥ २०५ ॥

२०६ श्लेष्मवातघ्नरसः

सूतो वलिस्त्रिकटुकं मगधाजटाग्नि
चव्यं विषं लवणकं समभागचूर्णम् ।
सम्मर्द्य भृङ्गपयसा कफरोगलब्धं
हन्त्यग्निवृद्धिकृदशीतिसमीरणघ्नः ॥ ८६१ ॥

रसायनस., कफवातरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, त्रिकटु, पिपलामूल, चित्रकमूल, चव्य, शुद्धवछनाग, सेंधानमक सव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर भंगरेकेरससे एकदिन घोटकर १-१ माशेकीगोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह कफरोग, मन्दाग्नि और समस्त वातरोगोंको नष्टकरताहै ॥

२०७ श्लेष्मशैलेन्द्ररसः

गन्धकं पारदं चाभ्रं त्र्यूषणं जीरकद्वयम् ।
शटी शृङ्गी यमानी च पुष्करं रामठं तथा ॥ ८६२ ॥
सैन्धवं यावशूकञ्च टङ्कणं गजपिप्पली ।
जातीकोषाऽजमोदे च लौहं यासलवङ्गकम् ॥ ८६३ ॥
धुस्तूरबीजं जैपालं कट्फलं चित्रकन्तथा ।
प्रत्येकं कार्षिकञ्चैषां श्लक्ष्णचूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ ८६४ ॥
पापाणे विमले पात्रे घृष्टं पाषाणमुद्गरैः ।
विल्वमूलरसं दत्त्वा चार्कचित्रकदन्तिकाः ॥ ८६५ ॥
शिखरी काञ्जिका वासा निर्गुण्डी गणिकारिका ।
धुस्तूरं कृष्णजीरञ्च पारिभद्रकपिप्पली ॥ ८६६ ॥
कण्टकार्यार्द्रयोश्चैव मूलान्येतानि दापयेत् ।
एषां मूलरसं दत्त्वा घृष्टमातपशोषितम् ॥ ८६७ ॥
गुञ्जाप्रमाणां वटिकां कारयेत्कुशलो भिषक् ।
चतस्रश्च वटीः खादेन्नित्यमार्द्रकवारिणा ॥ ८६८ ॥
उष्णतोयानुपानेन वातव्याधिं व्यपोहति ।
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव शिरोरोगांश्च दारुणान् ॥८६९॥
प्रमेहान्विंशतिश्चैव पञ्चगुल्मनिषूदनम् ।
उदराण्यन्त्रवृद्धिञ्चाप्यामवातविनाशनम ॥ ८७० ॥
पञ्च पाण्ड्वामयान्हन्ति कृमिस्थौल्यामयापहम् ।
सोदावर्तं ज्वरं कुष्ठं गात्रकण्ड्वामयापहम् ॥ ८७१ ॥
यथा शुष्केन्धने वह्निस्तथा वह्निविवर्धनः ।
श्लेष्मामयिकृपाहेतो रसेन्द्रो मुनिभाषितः ॥
श्लेष्मशैलेन्द्रको नाम रसेन्द्रगुटिका स्मृता ॥ ८७२ ॥

भै र., (श्लेष्मज्वरे), र सं., र चि. (कफे), र. सु (ज्वरे कफे च), र र (उदरे)। कुत्रचित्सैन्धवस्थाने गैरिकं पठितम् ।

भाषा—शुद्धगन्धक और पारा, अभ्रकभस्म, त्रिकटु, दोनोजीरे, कचूर, काकड़ासींगी, अजवाइन, पोहकरमूल, भुनीहींग, सैन्धव, यवक्षार, भुनासुहागा, गजपीपल, जावित्री, अजमोद, लोहभस्म, जवास, लौंग, शुद्धधतूरेकेवीज, जमालगोटा, कायफल और चित्रकमूल १-१ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाय वेल, आक, चित्रक, दन्ती, अपामार्ग, एरण्डककड़ी, अडूस, निर्गुण्डी, अरणी, धतूरा, कालीजीरी, नीम, पीपल, भटकटैया, अदरख इनसबकीजड़केरसोंसे धूपमें बैठकर १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे ४-४ गोली अदरखकेरस अथवा गरमजलकेसाथदेनेसे वातविकार, २० प्रकारकेश्लेष्मरोग, भयङ्कर शिरोरोग, २० प्रकारकेप्रमेह, पाचोंगुल्म, उदररोग, अन्त्रवृद्धि, आमवात, पाचप्रकारके पाण्डु, क्रिमि, स्थूलता, उदावर्त, ज्वर, कुष्ठ, खुजली, मन्दाग्निप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २०७ ॥

२०८ श्लेष्मान्तकरसः

अभ्रकं रससिन्दूरं शङ्खभस्म च मौक्तिकम् ।
एकभागो द्वित्रिभागा ह्यर्धभागश्च मौक्तिकम् ॥८७३॥
कर्चूरं मौक्तिकार्द्धं स्यात्त्रिफला कर्षसम्मिता ।
सर्वं सुखल्वे सम्मर्द्य दिनं सिंहास्यतोयतः ॥ ८७४ ॥
छायाशुष्कां वटीं कृत्वा रक्तिकार्द्धप्रमाणतः ।
आर्द्रकस्य रसेनैव मधुना सह लेहयेत् ॥ ८७५ ॥
श्लेष्मोल्वणं वह्निमान्द्यं शूलं सपरिणामजम् ।
श्लेष्मान्तको रसो नाम विनिहन्त्यनुपानतः ॥ ८७६ ॥

र. चं., कफरोगे ।

भाषा—अभ्रकभस्म १ कर्ष, रससिन्दूर २ कर्ष, शङ्खभस्म ३ कर्ष, मौक्तिकभस्म ८ माशे, कचूर ४ मा., त्रिफला १ कर्ष लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर अडूसेकेरससे १-२ दिन मर्दनकर आधीआधीरत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अदरख और मधुकेसाथसेवनकरनेसे कफप्रधान-मन्दाग्नि, शूल, परिणामशूल इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ २०८॥

२०९ श्वदंष्ट्रादिलोहम्

श्वदंष्ट्रा त्रिफला मुस्ता गुडूची फल्गुपल्लवान्।
दर्भं कुशञ्च मञ्जिष्ठां रोहिपस्य च पल्लवान् ॥ ८७७॥
बला पुनर्नवा श्यामा शारिवे देवदारु च।
पिप्पली नागरञ्चैव विडङ्गमरिचानि च ॥ ८७८ ॥
पाठा कम्पिल्लकं भार्ङ्गी द्वे हरिद्रे निदिग्धिकाम्।
एरण्डमूलं दन्तीञ्च चित्रकं कटुरोहिणीम् ॥ ८७९ ॥
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्।
द्विगुणं सर्वचूर्णेभ्यो लौहचूर्णं प्रदापयेत् ॥ ८८० ॥
माषकत्रितयं तस्माच्चतुष्टयमथापि वा।
पिबेदुष्णेन तोयेन मद्येनाऽपि च मद्यपः ॥ ८८१ ॥
मेहशूलोदरप्लीहशोथार्शःपाण्डुरोगनुत्।
गोमूत्रपिष्टैरेतैश्च वटिकास्तद्वदापहाः ॥ ८८२ ॥

र. र, प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—गोखरू, त्रिफला, नागरमोथा, गिलोय, कठूमर, डाभ, कुश, मजीठ, गन्धतृण इनकेपत्ते, बला, पुनर्नवा, कालीनिसोत, दोनोंसारिवा, देवदारु, पीपल, सोंठ, विडङ्ग, मरिच, पाठा, कमीला, भारङ्गी, दोनोंहल्दी, भटकटैया, एरण्डकीजड़, दन्तीमूल, चित्रक और कुटकी समभागलेकर बारीकचूर्णकर सबसे दूनी लोहभस्म मिलाकर १-२ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ अथवा ४ उड़दतकमात्रा गरमजल अथवा मद्यकेसाथलेनेसे प्रमेह, शूल, उदररोग, प्लीहा, शोथ, बवासीर, पाण्डुरोग इनसबको यह नष्टकरताहै। इसलोहको गोमूत्रमें पीसकर गोलीभी बनासक्तेहैं ॥ २०९ ॥

२१० श्वयथुपातीरसः

रसगन्धकलोहकणात्रिवृता
मरिचामरदारुनिशात्रिफलाः।
दलितं मृदुगोसलिलेन पिबे-
दनुरूपममुं श्वयथूदरहम् ॥ ८८३ ॥

यो र, वृ यो त, र कौ, रसायनस, नि र, शोथाधिकारे।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, लोहभस्म, पीपल, निसोत, मरिच, देवदारु, हल्दी, त्रिफला सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेसे २ माशेतकमात्रा बछड़ीकेमूत्रकेसाथदेनेसे शोथ और उदररोग नष्टहोतेहै ॥ २१० ॥

२११ श्वासकालेश्वररसः

मृतं वङ्गं मृतं लोहं मृतार्कं मृतमभ्रकम्।
शुद्धमृतञ्च गन्धञ्च माक्षिकं हिङ्गुलं विषम् ॥ ८८४ ॥
जातीफलं लवङ्गञ्च त्वगेलानागकेशरम्।
उन्मत्तकस्य बीजानि जैपालं रात्रिदुर्लभम् ॥ ८८५ ॥
एतानि समभागानि मरिचञ्च त्रिभागिकम्।
सर्वमेतत्क्षिपेत्खल्वे लोहदण्डेन मर्दयेत् ॥ ८८६॥
तावत्सम्मर्दयेद्यत्नाद्यावत्मृतो न दृश्यते।
शक्राशनस्य स्वरसैः भावयेदेकविंशतिम् ॥ ८८७ ॥
द्विगुञ्जाऽत्युत्तमा मात्रा शृङ्गवेररसैः युता।
तदर्द्धं बालवृद्धेषु पथ्यं देयं तदुच्यते ॥ ८८८ ॥
पञ्चश्वासान्क्षयं कासं यक्ष्माणं विनिहन्ति च।
श्वासकालेश्वरो नाम्ना लोकानामति दुर्लभः ॥८८९॥

वै क, नि. र., व रा, वै चि, श्वासे।

भाषा—वङ्ग, लोह, ताम्र, अभ्रक इनकीभस्में, शुद्धपारा, गन्धक, सोनामाखी, शिंगरफ और बच्छनाग, जायफल, लौंग, तज, इलायची, नागकेशर, शुद्ध धतूरेकेबीज और जमालगोटा, हल्दी, जवासा येसब १-१ भाग, मरिच ३ भागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भांगकेरससे २१ दिन घोटकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अदरखकेरसकेसाथदेनेसे ५ प्रकारकेश्वास और कास, क्षय, राजयक्ष्म इनसबको यह दूरकरताहै। बालक और वृद्धोंको आधीमात्रा देनी ॥ २११ ॥

२१२ श्वासकासकरिकेसरीरसः

तारताम्ररसपिष्टिकाशिलागन्धतालसमभागिकं रसैः।
आटरूपसुरसार्द्रसम्भवैर्मर्दय प्रकुरु गोलकं ततः ८९०

मृत्स्नया च परिवेष्ट्य गोलकं
यामयुग्मसथ भूधरे पचेत्।
गोलकेन कुरु तत्समं तत-
श्चाटरूपकटुकैश्च भावयेत् ॥
श्वासकासकरिकेसरी रसो
वल्लमस्य परिषेवयेद्बुधः ॥ ८९१ ॥

र र स, र. क ल, र च., र दी, यो सं., र. सु, र. कौ, यो च, श्वासकासयोः। योगसङ्ग्रहे नस्यत. पक्वपीनसपूतिनस्यरोगहरत्वमुक्तम्।

भाषा—चादी और तांबेकीभस्म, पारदपिष्टिका, शुद्धमैनसिल, गन्धक और हरिताल सबसमभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अडूसा, तुलसी और अदरखके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३-८ कपड़मिट्टीदेकर अच्छीतरह सुखाय दोपहरकी भूधरयन्त्रमें अग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अडूसा और त्रिकटुकेद्रवोंमें १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे श्वास, कासप्रभृति समस्त कफरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २१२ ॥

२१३ श्वासकासचिन्तामणिरसः

पारदं माक्षिकं स्वर्णं समांशं परिकल्पयेत्।
पारदार्द्धं मौक्तिकञ्च सूताद्द्विगुणगन्धकः ॥ ८९२ ॥

अभ्रश्चैव तथा योज्यं व्योम्नो द्विगुणलोहकम् ।
कण्टकारीरसेनैव छागीदुग्धेन वै पृथक् ॥ ८९३ ॥
यष्टीमधुरसेनैव पर्णपत्ररसेन च ।
भावयेत्सप्तवारञ्च द्विगुञ्जां वटिकां भजेत ॥
पिप्पलीमधुसंयुक्तां श्वासकासविमर्दिनीम् ॥ ८९४ ॥

र. नं., ध., र. सु., र. नं., भै. र. श्वासकासयो. । भै. र., श्वासचिन्तामणीति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा, सोनामारी और सुवर्णभस्म १–१ भाग, मोतीआधाभाग, शुद्धगन्धक और अभ्रकभस्म २–२ भाग, लोहभस्म ४ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर भटकटैया, बकरीकादूध, मुलहटी, पान इनप्रत्येकके द्रवोंसे ७–७ भावनाएं देकर २–२ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली पीपल और मधुकेसाथदेनेसे यह श्वासकासको नष्टकरताहै ॥ २१३ ॥

२१४ श्वासकासारिरसः

सूतगन्धककणाहरीतकी-
मुण्डिकाश्च वृषकं विभीतकम् ।
चूर्णयेत समभागतस्ततो
वत्सनाभजरसे मनाक् पचेत् ॥
श्वासकास विनिवृत्तये त्विमं
भक्षयेत बदरास्थिमानतः ॥ ८९५ ॥

र. टी., श्वासकासयोः ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, पीपल, हर्रे, गोरखमुण्डी, अड्सा और बहेडा समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय बछनागकेस्वरस अथवा क्वाथसे मर्दनकर गोलाबनाय एरण्डपत्रवगैरहमें लपेट पुटपाककरे । स्वाङ्गशीतल होनेपर बेरकी गुठलीकेबराबर गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह श्वास और कासको नष्टकरताहै ॥ २१४ ॥

२१५ श्वासकुठाररसः

रसं गन्धं विषश्चैव टङ्कणश्च मनःशिला ।
एतानि टङ्कमात्राणि मरिचान्यष्टटङ्कम ॥ ८९६ ॥
एकैकं मरिचं दत्त्वा खल्वे सूक्ष्मं विधाय च ।
कटुत्रयं टङ्कषट्कं दत्त्वा पश्चाद्विचूर्णयेत् ॥ ८९७ ॥
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य काचकूप्यां विनिक्षिपेत् ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं पर्णखण्डेन निश्चितम् ॥ ८९८ ॥
सन्निपाते च मूर्च्छायामपस्मारे तथा पुनः ।
अतिमोहत्वमापन्ने घ्राणे दद्याद्विचक्षणः ।
रसः श्वासकुठारोऽयं सर्वकासनिकृन्तनः ॥ ८९९ ॥

र. कौ., र. क. ल., वै. चि., भा. प्र., यो. म., वै. वि., वै. र., वृ. यो. त., रसायनसं., नि. र., भै. र., र. का., चि. र., यो. चि., र. म. मा., ध., टो., वै. द., अं. मा., चि. क., यो. र., र. सु., ना. वि. श्वासे । भा. प्र., ज्वरे ।

टि०—वैद्यदर्पणे अर्द्धगुञ्जापरिमित पर्णे पिण्डितीकृत्य खादयित्वोपरि क्रमवृद्ध्या मरिचानि भक्षयेदितिविशेष । कासश्वासपुरातनापस्मार सन्निपातगोदमूर्च्छारक्तगुल्महृल्लोद्वेष्टनभ्रममस्तकशून्यताउन्मादाध्मान-शूलातिस्वेदप्रलापेष्वय दृष्टप्रत्यय. । र स., र च. एतयोरेक र. सु, ध एतयोर्द्वितीय श्वासकुठारनाम्ना " टङ्कण पारद गन्ध शिला विषकटुत्रिकम् । निष्पिष्य वटिका कार्या गुञ्जामात्रप्रमाणत' । उष्णोदक पिबेच्चानु क्षुद्राक्वाथमथापि वा । कास पञ्चविध हन्ति श्वास श्लेष्मसमुद्भवम् ॥ शिरोरोग निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनि र्यथा ॥ " इति पाठो निहितोऽस्ति । भै र, र म, र च., एषु ग्रन्थेषु द्वितीयस्तथा च र. सु, ध., एतयोस्तृतीय' श्वासकुठारनाम्ना " रस गन्धो विष टङ्क शिलोषणकटुत्रयम् । सर्वं सम्मर्द्य दातव्यो रस श्वासकुठारक' ॥ वातश्लेष्मसमुद्भूत श्वास कास क्षयञ्जयेत् ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । रसेन्द्रसारसङ्ग्रहे " रसो गन्धो विषञ्चैव टङ्कण समन'शिलम् । एतानि समभागानि मरिच तच्चतुर्गुणम् ॥ त्रिभाग त्र्यूषण ज्ञेय खल्वे सर्वं विचूर्णयेत् । रस श्वासकुठारोऽय द्विगुञ्ज श्वासकासजित् ॥ गता सञ्ज्ञा यदा पुसा तदा नस्य प्रदापयेत् । घ्रापयेन्नासिकारन्ध्रे सञ्ज्ञाजननमुत्तमम् ॥ प्रतिश्याय क्षतक्षीणमेकादशविध क्षयम् । हृद्रोग श्वासशूलञ्च स्वरभेद सुदारुणम् ॥ सन्निपात तथा घोर तन्द्रामोहाग्नितञ्जयेत् ॥" इति तृतीय पाठ श्वासकुठारनाम्ना निहितोऽस्ति ।

नि र, भा प्र, वै. द एषु ग्रन्थेषु द्वितीय, धन्वन्तरौ चतुर्थ', रसकिन्नरे त्वेक श्वासकुठारनाम्ना "रसो गन्धो विषञ्चाऽपि टङ्कणञ्च मन शिला । एतानि कर्षमात्राणि मरिचञ्चाष्टकर्षकम् ॥ कटुत्रय कर्षयुग्म पृथगत्र विनि क्षिपेत् । रस श्वासकुठारोऽय सर्वश्वासनिवारण ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । र म मा, ना. वि एतयो श्वासकुठारनाम्ना "शुद्ध सूत विष गन्ध टङ्कणञ्च मन'शिला । कणा शुण्ठी समाश्चैते मरिच सप्तभागिकम् ॥ दत्त्वा सञ्चूर्णयेत्तावद्यावत्कज्जलसन्निभ । रसः श्वासकुठारोऽयमार्द्रकस्य रसै र्युत ॥ श्वास हन्ति तथा कास द्विगुञ्ज सन्निपातजित् ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । र सु, ना वि एतयो **श्वासारिरस** इति नाम्ना "पारदो वत्सनाभश्च गन्धक टङ्कण कणा । समाश द्विगुणा शुण्ठी मरिच पञ्चभागकम् ॥ सूक्ष्मचूर्णमिद कृत्वा वल्लमात्र प्रदापयेत् । श्वासारिसञ्ज्ञको ह्येष सद्य श्वासहर पर ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । एतेषा सर्वेषामपि मूल प्रथमश्वासकुठारोऽस्ति, तत्र यथावस्थितवस्तूना सङ्ग्रहीकरणात् । तदतिरिक्तपाठेषुच्छात्रव्यामोहकरणाऽतिरिक्तफलाऽभावात्परित्यक्तास्त इति विद्वद्भिराकलनीयम् ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, बछनाग, सुहागा औरमैनसिल ४–४ माशे, मरिच २ कर्ष लेकर १–१ मरिच डालकर सबकी-नीलवर्णकज्जलीकरे । इसमें १॥ कर्ष त्रिकटुकाचूर्णमिलाकर १–२ पहर मर्दनकर शीशीमें रखछोडे । इसमेंसे १–१ रत्ती पानमें रखकर खानेसे सन्निपात, मूर्च्छा, अपस्मार, श्वास, कास येसब नष्टहोते है । अत्यन्तबेहोशीमें इसका नस्य देनेसे लाभहोताहै ॥२१५॥

२१६ श्वासगजाङ्कुशरसः (महदादिः)

पलं सूतं पलं गन्धं त्रिकटु त्रिपलं भवेत् ।
वङ्गमेकपलञ्चैव दिनानि त्रीणि मर्दयेत् ॥ ९०० ॥
मूत्रेण च तथा त्रीणि दिनानि परिमर्दयेत् ।
माषप्रमाणवटकं छायाशुष्कन्तु कारयेत् ॥ ९०१ ॥
नित्यमेकन्तु वटकं दिनानि त्रिंशदेव च ।
श्वासकासज्वरहरमग्निमान्द्याऽरुचिप्रणुत् ॥ ९०२ ॥

र. कौ., र. र. स., र. को., र. चं., र. सु., श्वासाऽधिकारे ।

र र. स , र चं , र. सु , एतेषु श्वासहरवटकेति नाम । रसेन्द्ररत्नकोषे सहचरवटीतिनाम ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, सोंठ, मिर्च, पीपल और वज्रभस्म १–१ पल लेकर नीलवर्णकज्जलीकर गोमूत्रसे ३ दिन मर्दनकर १–१ माशेकीगोलियावनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेमे यह सबप्रकारके श्वास और कासको नष्टकरताहै ॥ २१६ ॥

२१७ श्वासहारीरसः

कनकभुजगशुल्वं सूतराजं सुगन्धं,
मुनिरसपरिघृष्टं वल्लमात्रं दिनान्ते ।
हरति सकलकासं श्वासहिक्कासमेतं
त्रिभुवनहितकारी जायते श्वासहारी॥९०३॥

र., श्वासे।

भाषा—सुवर्ण, नाग और ताम्रभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अगस्त्यकेरससे एक-दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह हिचकी और श्वासकासको नष्टकरताहै ॥ २१७ ॥

२१८ श्वासाङ्कुशरसः

शाणत्रयं पारदञ्च गन्धकं शाणपञ्चकम् ।
त्रिशाणं वत्सनाभञ्च मरिचञ्च त्रिशाणिकम् ॥९०४॥
आकल्लञ्च त्रिशाणं स्यात्पञ्च जातीफलं क्षिपेत् ।
लवङ्गञ्च चतुःशाणं पिप्पली दशशाणिका ॥ ९०५ ॥
टङ्कणं वह्निशाणं स्यात्त्रिशाणं कनकाह्वयम् ।
करीरार्द्रकनिम्बूत्थै मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥ ९०६ ॥
वातरोगेषु सर्वेषु कफश्वासे कटीग्रहे ।
नाभिशूलउदावर्ते प्रमेहे वातशोणिते ॥ ९०७ ॥
सर्वसन्धिगते वाते अस्थिगे स्नायुगेऽपि वा ।
रसः श्वासाङ्कुशो नाम श्वासकासनिवारणः ॥९०८॥
वल्लार्द्धं वल्लमात्रं वा दद्याच्छ्वासोपशान्तये ।
अनुभूतो मया सम्यक् प्रयोगः कफकासयोः ॥९०९॥

रसायनस , श्वासे कासे च।

भाषा—शुद्धपारा ३ भाग, गन्धक ५ भा., शुद्धवच्छनाग, मरिच और अक्लकरा ३–३ भा , जायफल ५ भा , लौंग ४ भा , पीपल १० भा., भुनासुहागा और शुद्धधतूरेकेवीज ३–३ भागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय करीर, अदरख और नीबूके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे एक अथवा आधीगोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्तवातरोग, कफजनितश्वास, कटिग्रह, नाभिशूल, उदावर्त, प्रमेह, वातरक्त, समस्त सन्धिवात, अस्थिवात और स्नायुवात इनसबको यह निवृत्तकरताहै ॥ २१८ ॥

२१९ श्वासान्तकरसः

सूतः षोडशभागिकोऽर्कसमकस्तस्यार्द्धभागो वलिः,
सिन्धुस्तस्य समः सुसूक्ष्ममृदितः षट्पिप्पलीचूर्णतः।
जम्बीरस्वरसेन मर्दितमिदं तप्तं सुपक्कं भवेत्,
कासश्वासकगुल्मशूलजठरं पाण्डुं लिहन्नाशयेत्॥९१०॥

र र.स , र.स मा , र. चं , र. को , र. सु , व. रा , श्वासाधिकारे।

टि०—र सु पारदादिरस इति नाम। व. रा पिप्पलीस्थाने टङ्कणं नियोज्य मृतराजीय इति नाम स्थापितम्।

भाषा—शुद्ध पारा और ताम्रभस्म १६–१६ भाग, शुद्ध गन्धक और सेंधानमक ८–८ भा., पीपल ६ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरीकेरससे एकदिन मर्दनकर एरण्डवगैरहके पत्तोंमें लपेट पुटपाककरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखवगैरहके रसकेसाथ देनेसे कास, श्वास, गुल्म, शूल, उदररोग, पाण्डु, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २१९ ॥

२२० श्वासारिलोहम् (महत्)

कर्षद्वयं लोहचूर्णं कर्षार्द्धमभ्रमेव च ।
सिताकर्षद्वयञ्चैव मधुकर्षद्वयन्तथा ॥ ९११ ॥
त्रिफला मधुकं द्राक्षा कणाकोलास्थिवंशजा ।
तालीसपत्रंविडङ्गमेलापुष्करकेसरम् ॥ ९१२ ॥
एतानि श्लक्ष्णचूर्णानि कर्षार्द्धञ्च पृथक्पृथक् ।
लोहे च लोहदण्डेन मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥ ९१३ ॥
ततो मात्रां लिहेत्प्रौढे बुद्ध्वा दोषवलावलम् ।
इदं श्वासारिलोहञ्च महाश्वासं विनाशयेत् ॥ ९१४ ॥
कासं पञ्चविधञ्चैव रक्तपित्तं सुदारुणम् ।
एकजं द्वन्द्वजं चैव तथैव सन्निपातजम् ॥
निहन्ति नाऽत्र सन्देहो भास्करस्तिमिरं यथा॥९१५॥

र. सु , भै र , श्वासे ।

भाषा—लोहभस्म २ कर्ष, अभ्रकभस्म ८ माशे, शक्कर और मधु २–२ कर्ष, त्रिफला, मुलहठी, द्राक्ष, पीपल, वेरकीमज्जा, वसलोचन, तालीसपत्र, विडङ्ग, इलायची, पोहकरमूल और नागकेशर ८–८ माशे लेकर सबकावारीकचूर्णकर लोहेके खरलमें दोपहर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा मधुकेसाथदेनेसे महाश्वास, ५ प्रकारका कास, भयङ्कर रक्तपित्त येसब नष्टहोतेहैं ॥ २२० ॥

२२१ श्वित्रारियोगः (प्रथमः)

गन्धकं त्रिफला भृङ्गं भल्लातकफलानि च ।
कटुतुम्वस्य वीजानि भृङ्गराजद्रवेण वै ॥ ९१६ ॥
भावयेच्छोषयेच्चैतत्तद्दद्यात्सप्तकत्रयम् ।
श्वित्रारिनाम योगोऽयं भिषग्भिःप्रतिपादितः॥९१७॥
टङ्कमात्रममुं दद्याच्छर्कराघृतमिश्रितम् ।
भोजयेद्वै प्रयत्नेन रजन्याञ्च विशेषतः ॥ ९१८ ॥

सूरणक्षीरवार्ताकं मत्स्यमांसं विशेषतः।
वर्जयेदम्लशाकानि श्वित्रनाशविचक्षणः॥ ९१९॥

र. का., रसचि., र मृ, कुष्ठाऽधिकारे। रसामृतेऽयं पाठो व्यत्यस्य निहितोऽस्ति।

भाषा—शुद्धगन्धक, त्रिफला, भंगरा, भिलावे और कड़वी-तूमड़ीकेबीज समभागलेकर वारीकचूर्णकर भगरेकेरससे २१ भावनाए देकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ माशे शक्कर और घीकेसाथदेकर दिनभर भूखा रक्खे, रात्रिको उचितभोजन देवे तो इससे श्वेतकुष्ठ नष्टहोताहै। सूरण, दूध, बेंगन, मछली, मास, खटाई और शाकका परित्यागकरे॥ २२१॥

२२२ श्वित्रारियोगः (द्वितीयः)

सूते पले भूधरयन्त्रमध्ये
सञ्जारयेद्गन्धपलं ततोऽस्मिन्।
सूते च गन्धस्य पलत्रयञ्च
दत्त्वाऽथ निम्बूत्थरसैर्विमृद्य॥ ९२०॥
खरांशिकावाकुचिकाग्निभृङ्ग-
कोरण्टनीरैः परिमर्दयेत।
दिनैकमेकं कटुतुम्बिनीजलै-
र्मर्द्यं ततः काचजकूपिकान्तः॥ ९२१॥
निक्षिप्य भाण्डे सिकतोदरान्त-
र्यामद्वयं स्वेदय तं ततश्च।
ददीत वल्लद्वयमस्य कृष्णपर्णेन
सार्धं त्वथवा तदर्धम्॥ ९२२॥
पलाशमूलं त्वनु पाययीत
तक्रेण सार्धञ्च ददीत पथ्यम्।
उष्णे क्षिपेत्तैलविमर्दितञ्च
स्फोटा यदि स्युः सहसा च गात्रे॥९२३॥

र. र स., र. दी, र. र. कौ, र का., र मृ. कुष्ठाऽधिकारे।

टि॰—रसामृते श्वेतारिरसनाम्ना "रसस्य पलके गन्धमिष्टिकायां सुजारयेत्। अन्यत्पलद्वय दत्त्वा निम्बुनीरेण मर्दयेत्॥ स्वेदयेद्वालुकायन्त्रे रुद्ध्वा यामद्वय बुध। वल्लचतुष्टय चास्य कृष्णपर्णेन दापयेत्॥ काकोदुम्बरिकामूल घृष्ट्वा तदनु पाययेत्। सतक्रञ्च ददीतान्न तैलमार्कातप त्यजेत्॥" इति पाठोनिहितोऽस्ति। अत्र क्रियाया त्रुटिरस्तीति विद्वद्भिर्विभावनीयम्॥

भाषा—एकपल शुद्धपारेमें भूधरयन्त्रमें एकपल गन्धक जारणकरे। फिर ३ पल शुद्धगन्धककेसाथ नीलवर्णकज्जलीकर नीबूकेरससे एकदिन मर्दनकर कठूमर, वाकुची, भिलांवा, भंगरा, कटसरैया, कड़वीतूंबी इनके द्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर आतशीशीशीमेंभरके वालुकायन्त्रमें चढाय दोपहरकी आचसे स्वेदनकरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३ से ६ रत्तीतक कालेपानमें रखकर खिलावे ऊपरसे पलाशकी जड़का क्राथ पिलावे और छाछकेसाथ पथ्यदे। इसकेसेवनसे यदि वदनमें फोड़े होजायं और जलनहोनेलगे तो इस औषधको तैलमें मिलाय शरीरपर मालिशकरावे॥ २२२॥

२२३ श्वित्रारिरसः (प्रथमः)

कासीसं रसगन्धानि मर्दयेत्सुरसारसैः।
सम्पुटे पुटयेद्दत्त्वा चाङ्गेरीमधरोत्तरम्॥ ९२४॥
सर्वमेतच्च सञ्चूर्ण्य तण्डुलान्दश सप्त वा।
आरभ्य वर्द्धयेद्यावत्पञ्च षष्टिं क्रमेण हि॥ ९२५॥
अनुपानाय मध्वाज्यं दध्याज्यं नवनीतकम्।
धात्र्यार्द्रकरसेश्चैव तिन्दुकं कदलीफलम्॥ ९२६॥
श्वित्रारिसञ्ज्ञितो ह्येष श्वित्रकुष्ठनिषूदनः।
निम्बपत्रनिशाकृष्णावाकुचीबीजकं समम्॥
चूर्णयित्वा पिबेद्दुग्धैः प्रभाते श्वित्रनाशनम्॥ ९२७॥

र र स, र. चं, र क, र. र कौ, श्वेतकुष्ठे।

टि॰—चिकित्साक्रमकल्पवल्लीकारेणोपरितनपाठमगृहीत्वा "पल रस हि कासीसै युंत पञ्चगुणै सह। मर्दयेद्यामपर्यन्तमर्जुनस्य त्वचो रसै॥ शरावसम्पुटे रुद्ध्वा पुटेत्क्रोडपुटेन हि। रस कासीसबद्धोऽय मधुना वल्लतुल्यक॥ शाणवाकुचिकायुक्त सेवितो हन्ति निश्चितम्। त्रिभि र्मासै किलास हि दद्रूण्यपि विशेषत॥" इति पाठ कासीसाधिकप्रमाणयुक्तत्वेन कार्यसाधकत्वाद्गृहीत। र र स, र क एतयोस्तु द्वयोरपि ग्रहणम्। अत्रेद रहस्यम्–श्वित्रारौ समभागगन्धकस्यागमनात्कासीसस्याऽधिकमात्रा नापेक्षिता तत्रैव पारदस्य लीयमानत्वात्। कासीसबद्धे तु गन्धकाऽभावादगत्या पारदलयार्थं कासीसस्याऽधिकमात्रा गृहीताऽस्ति परन्तु पाठद्वयस्थापने गौरवात्फलाधिक्याऽभावाच्छ्वित्रारिरसे पारदनियमनस्य विशेषतो दर्शनादस्मिन्नेव रसे कासीसबद्धस्याऽप्यन्तर्भाव करणीय। अर्जुनस्य भावनाया अत्रापि ग्रहणे न कापि क्षति रसस्त्वेक एव करणीय इति विज्ञेषु विज्ञप्ति।

भाषा—कसीस, शुद्धपारा, गन्धक समभागकीकज्जलीकर तुलसीकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय अम्लोंनिया नीचे ऊपर रख शरावसम्पुटमें वन्दकर २–४ कपड़मिट्टी देकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ७ अथवा १० चावलभरसे आरम्भकर ६५ चावलतक क्रमश बढावे। इसमें मधु और घी अथवा दही, घी, मक्खन, आवले और अदरखकारस, तेंद और केलेकाफल अनुपानमें देवे। निम्बपत्र, हल्दी, पीपल, वावची समभागका चूर्णवनाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ तोला दवा लेनेकेबाद दूधकेसाथदेवे॥

२२४ श्वित्रेभसिंहरसः

शुद्धसूतबलिकज्जलं शुभं
वल्लयुग्ममवलिह्य सर्पिषा।
वायसी शशिकला विभीतक-
क्षौद्रमक्षमितमैक्षवान्वितम्॥
शीलयेदनु पयः पिबेदिमं
श्वित्रदन्तिहरिरीरितो रसः॥ ९२८॥

वृ. यो त, र कौ, टो., श्वेतकुष्ठे।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर इसमेंसे ६–६ रत्ती घीकेसाथ सेवनकर काकजङ्घा, वाकुची, वहेडा समभागका चूर्ण एककर्ष मधु अथवा ईखकेरसकेसाथलेकर ऊपरसे ताजादूधपीनेसे श्वित्र नष्टहोताहै॥२२४॥

२२५ श्वेतकुष्ठहररसः

चारुवीजान्ययश्चूर्णं त्रिफला च कटुत्रयम् ।
तवराजोऽशितः सर्पिर्मधुभ्यां श्वेतकुष्ठहृत् ॥ ९२९ ॥

हितो , कुष्ठे ।

भाषा—चिरोंजी, लोहभस्म, त्रिफला, त्रिकटु, वंसलोचन सव समभागलेकर एकजगह मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेसे २ माशेतक मधु और धीमें मिलाकर सेवनकरनेसे श्वेतकुष्ठ नष्टहोताहै ॥ २२५ ॥

२२६ श्वेतकुष्ठारिरसः

निस्तुषीकृत्य वाकुच्या वीजानां पलविंशतिम ।
गोजलस्थं त्रिसप्ताहं लोहं पथ्या पलद्वयम् ॥ ९३० ॥
गृहीत्वा गोजले शोष्यं सूर्यतापेऽतिनिष्ठुरे ।
काकोदुम्बरिकाद्रोणत्वचां क्वाथे त्रिसप्तकम् ॥ ९३१ ॥
भावयेत्तस्य चूर्णस्य गन्धसूतं समं कृतम ।
अम्लेन कज्जलीं कृत्वा सर्वमेकत्र कारयेत ॥ ९३२ ॥
शिग्रुमूलरसेनापि नागवल्लीदलेन च ।
भावनां त्रिदिनं दत्त्वा कर्षार्द्धांशां गुटीं कुरु ॥ ९३३ ॥
एकैकां भक्षयेत्प्रातः श्वेतकुष्ठोपशान्तये ।
चित्रकाद्धित्वचश्चूर्णं रात्रौ गोदुग्धके वरम् ॥ ९३४ ॥
क्षिपेद्दधि विलोड्याऽथ ग्राहयेत्तक्रमुत्तमम् ।
तत्तक्रकुडवं चैकं मध्येऽष्टौ गन्धवल्लकान् ॥ ९३५ ॥
प्रक्षिप्य गुटिकां पश्चात्प्रपिवेद्धित्रिसङ्ख्यकाम ।
नवनीतेन चाभ्यङ्गः कार्यः स्थेयमथातपे ॥ ९३६ ॥
सर्वश्वित्रे प्रजायन्ते स्फोटकाश्चाग्निदग्धवत् ।
प्रथमे सप्तके पाको जायतेऽथ द्वितीयके ॥ ९३७ ॥
रोहणञ्च तृतीये हि कुर्वन्ति च न संशयः ।
निम्बुकस्य रसोपेतं कुङ्कुमालेपनं हितम् ॥ ९३८ ॥
सतक्रा गुटिका वापि रसस्यालेपने हिता ।
श्वित्राणां रोहणं रम्यं वर्णदं जायते भृशम् ॥ ९३९ ॥
त्रिवेलं तक्रभक्तञ्च पूर्वे देयश्च सप्तके ।
मद्धुष्टा अपि रूक्षाश्च देया जाते द्विसप्तके ॥ ९४० ॥
तृतीये सप्तके देया मद्धुष्टास्त्रिफलाघृतम् ।
घृतमल्पं प्रदातव्यं श्वित्रकुष्ठी वरो भवेत् ॥ ९४१ ॥
चम्पकाभं वरं देहं कान्तियुक्तञ्च नीरुजम ।
प्राप्नुयाच्छ्रीयुतः सम्यङ्मनुजो भूमिमण्डले ॥
रसराजप्रभावेण सत्यं सत्यञ्च नान्यथा ॥ ९४२ ॥

र म क , रसायनस , र का श्वेतकुष्ठे ।

भाषा—साफकियेहुए वाकुचीकेवीज २० पलको गोमूत्रमें २१ दिन भिगोकर सूर्यकीकड़ीधूपमें सुखाय एकद्रोण कठूमरकी-छालकेकाथमें २१ दिन भावनादेकर इसकीवरावर शुद्धगन्धक मिलाय कज्जलीकर किसीभी अम्लद्रवमें एकदिन मर्दनकर सहिजनकीजड़ और पानकेरसोंसे ३–३ दिन भावनाएं देकर ८–८ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । रात्रिको ३ माशे चित्रककीजड़काचूर्ण ४ पल गायकेदूधमें औटावे और दहीडाल-कर जमादे । प्रातःकाल दहीकी छाछवनाकर ३ माशे शुद्ध-गन्धकडालकर इसकेसाथ १ या २ गोली प्रतिदिन खाकर मक्ख-नसे मालिशकराके धूपमें वैठे । कुछहीदिनवाद श्वित्रस्थानमें अग्निदग्धकीतरह फोड़े उठेंगे । पहिले और दूसरे सप्ताहमें ये पकेंगे और तृतीयसप्ताहमें स्वयं अच्छेहोजायगे । इनकेदाग मिटानेकेलिये नीवूमें केशर घिसकर लगावे अथवा इसीगोलीको छाछमें घिसकर लगावे । इसक्रियासे व्रणोंका चिह्न नहीं रहेगा । पहिले सप्तकमें दिनमें ३ वार छाछभातदे । दूसरेसप्ताहमें स्नेह-रहित और तीसरे सप्ताहमें त्रिफलाघृतकेसाथ मोठदेवे ॥२२६॥

२२७ श्वेतकुष्ठारिरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं त्रिफलाभृङ्गवाकुचीः ।
भल्लातकं तिलान्कृष्णान्निम्ववीजं समांशकम ॥९४३॥
मर्दयेद्भृङ्गजद्रावैः शोष्यं पेष्यं पुनः पुनः ।
इत्थं कुर्यात्त्रिसप्ताहं रसोऽयं सितकुष्ठहा ॥
मध्वाज्ये निष्कमात्रं तं खादेच्छ्वित्रविनाशनम् ॥९४४॥

रसायनस , भै र., र सि , र. का., र चि , वै. क , रसा-यनसं , र क , यो म , (एषु श्वेतारि), र. क ल , र क , र र कौ , र र स , र दी , श्वेतकुष्ठाऽधिकारे ।

टि०—"फलत्रय गन्धकभृङ्गकृष्णातिलोत्थतैल कटुतुम्बिनी च । भल्लाततैल कटुनिम्बवीज सर्वं समान परिभावयेत ॥" इति रसरत्नसमुच्चये रसदीपिकाया रसरत्नकौमुद्याञ्च पाठो दृश्यते तत्र फलत्रयस्थाने पलत्रयेति प्रमादात्पाठ सञ्जात । कटुतुम्बिनी अधिका रसाऽभावश्च प्रमादात्सञ्जात इति प्रतीयते, अतोऽत्र न रसान्तरतेति वोध्यम् । कटुतुम्बिनीभावनाऽधिक्ये तु न काऽपि क्षति । तिलविशेषणत्वे पर्यवसन्नस्य कृष्णानिति शब्दस्य स्थाने पिप्पलीपरत्वमपि प्रमादविलसितम् । वृ यो त , र कौ. एतयो ग्रन्थयो श्वेतारिनाम्ना "शुद्धसूतसम गन्ध त्रिफला भृङ्गराजकम् । गुञ्जा भल्लातक कृष्णा निम्ववीज सम पृथक् ॥ मर्दयेद्भृङ्गजद्रावै दिनमेक निरन्तरम् । वायसीत्वग्रसै दद्या भावनाश्चैकविंशति ॥ वाकुचीवीजनिर्यूहैस्तत्र तिस्र प्रकल्पयेत् । तत सिद्धो भवेदेष श्वेतारि नामतो रस ॥ मध्वाज्यै निष्कमात्र त खादेच्छ्वित्रविनाशनम् ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । रसमञ्जर्यां श्वेतारिनाम्ना "शुद्ध सूत सम गन्ध त्रिफलाभृङ्ग वाकुची । भल्लातञ्च शिला कृष्णा निम्बवीज सम समम् ॥ मर्दयेद्भृङ्गजद्रावै शोष्य पेष्य पुन पुन । इत्थ कुर्यात्त्रिसप्ताह रस श्वेतारिको भवेत् ॥ मध्वाज्ये खादयेन्निष्क दन्तशूल विनाशयेत् ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । अनयो पाठयोर्मूल प्रथमपाठोऽस्ति तत्र केनाऽपि कारणेन तिलस्थाने शिला सञ्जाता, शिलायाश्च कृष्णशब्देन सम्बन्धो न युज्यतेऽतस्तदर्थं पिप्पली स्यादिति मत्वा स्वतन्त्र पाठ समजनि । वृ यो त , र कौ अनयोरपि स एव भ्रम समापतितोऽतोऽधुना पाठत्रय लभ्यते तस्य वुद्धिव्यामोहकत्वादेकत्रैव समावेश समुचित । अथवा पूर्वस्मिन् पाठे गुञ्जाऽभ्रकपिप्पलीशिलानामधिकतया प्रक्षेप दत्त्वा वायसीत्वग्रसेन वाकुचीवीजनिर्यूहेण च भिन्नतया भावना दत्त्वैक एव रस सम्पादनीय ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, त्रिफला, भंगरा, वाकुची, वृन्तरहितभिलावे, कालेतिल, नीमकीगिरी सवसमभागलेकर वारीकचूर्णकर भंगरेकेरससे मर्दनकर सुखावे और फिर मर्दन-

करे। ऐसे २१ भावनाएं देकर रखछोड़े। इसमेंसे ४-८ मासे मधु और घीकेसाथखानेसे यह श्वित्रको नष्टकरताहै ॥ २२७ ॥

२२८ षडङ्गरसः

लक्ष्मी हरिर्हरः काशी त्रिफला कटुरोहिणी ।
कामिनी गुग्गुलु दन्ती ग्रोपाऽमृता च बालकम् ९४५
सर्वमेतत्समाहृत्य वातारितैलमर्दितम् ।
पुष्पितं स्फुटितं चक्षुः पटलं वातदूषितम् ॥ ९४६ ॥
मुखपाकं दन्तकृमिं रक्तजं पूतिनासिकाम् ।
घ्राणस्तनादिरोगश्च पूतिकर्णं प्रशाम्यति ॥ ९४७ ॥

र. र., नेत्ररोगे ।

भाषा—शुद्धमैनसिल, हरिताल, पारा, कसीस, त्रिफला, कुटकी, दारुहल्दी, गूगल, दन्तीमूल, कड़वीतरोई, गिलोय, सुगन्धवाला सबसमभागलेकर कपड़छानचूर्णकर मैनसिल, हरिताल, पारा और कसीसकी कज्जलीमें मिलाय एरण्डकेतैलमें २-३ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती अथवा उचितमात्राकायमकर तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देने तथा लगाने और नस्यप्रभृतिमें उपयोगकरनेसे आखोंकाफोला, नेत्राविमन्थ, जाला, वातदोष, मुखपाक, दांतोंकेकीड़े, रक्तविकार, पीनस, नाक और स्तनकेसमस्तरोग, कानोंकीसड़न येसबरोग निवृत्तहोतेहैं २२८

२२९ षडङ्गलोहम्

गगनताप्यशिलाजतुकाञ्चना-
दिनकरादयसश्च रजः समम् ।
त्रिफलया बहुभावितमाज्यव-
न्मधुयुतं विनिहन्त्यखिलान्गदान् ॥ ९४८ ॥

लो. प. (स), सर्वरोगे ।

भाषा—अभ्रक, सोनामाखी, शिलाजीत, सुवर्ण, तावा और लोह इनसबकी भस्में लेकर त्रिफलाकेकाथसे २१ भावनाएं देकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा मधु और घीकेसाथखानेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २२९ ॥

२३० षडशीतिगुग्गुलुः

सैर्यासौविषा दारु व्याघ्रीयुक् चविका वृषम् ।
कृष्णाब्दोग्रा धना भीरु वास्यालं मिशि वल्लरी॥९४९॥
पथ्या शुण्ठी छिन्नरुहा शट्यारग्वधगोक्षुरम् ।
विशाखा मोदकी तिक्ता ग्रन्थिर्भार्ङ्गी विदारिका९५०
अलम्बुषा हस्तिकर्णी वस्तगन्धा विषाणिका ।
शिवाक्षं मुशली कौन्ती काकोली दीप्ययुग्मकम् ९५१
त्रिवृद्दन्ती शिखी शृङ्गी कोकिलाक्षो दुरालभा ।
पञ्चमूलं महद्वीरतरुः कुष्ठश्च जोङ्गकम् ॥ ९५२ ॥
जातीपत्री फलैलश्च केशरं त्वक्किरातकम् ।
कुङ्कुमं देवकुसुमं विशाला शशिसैन्धवम् ॥ ९५३ ॥
मन्दारमूलं कृमिजिद्धेमदुग्धा रविप्रिया ।
गजपिप्पल्यपामार्गो वानरी नक्तमालकः ॥ ९५४॥
एते रास्ना समा चाभा द्विगुणा तैः पुरः समः ।
सूतं गन्धं हिङ्गुलञ्च टङ्कणं लोहमभ्रकम् ॥ ९५५ ॥
शुल्वं वङ्गं सूतभस्म नागं ताप्यमयोरजः ।
मिलितं पुरपादश्च सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ ९५६ ॥
पचेच्चतुर्गुणे क्वाथे पुरं षट्कटुजे पुरा ।
तुर्यांशशेषिते क्वाथे पूते चात्र विनिक्षिपेत् ॥ ९५७॥
चूर्णानि पुरमुख्यानि पाचयेन्मृदुवह्निना ।
यावद्घनतरं तावद्गुटिकाः कारयेत्ततः ॥ ९५८ ॥
टङ्कप्रमाणाः सेव्यास्ता मधुसर्पिःसमन्विताः ।
सप्तधातुगतान्वातान् शिरास्नाय्वस्थिसन्धिगान् ॥
सामान्निरामान्संसृष्टाञ्श्लेष्मजान्घ्नन्ति केवलान् ।
यक्ष्माणमग्निमान्द्यञ्च ज्वरं धातुगतं तथा ॥ ९६० ॥
गुल्फजानूरुकट्यूरूदरहृत्कुक्षिकक्षगान् ।
अंसमन्याहनुश्रोत्रभ्रूललाटाक्षिशङ्खगान् ॥ ९६१ ॥
प्रमेहं मूत्रकृच्छ्रञ्च शूलमाध्मानमश्मरीम् ।
किं पुनर्भेदकान्वातान्प्रत्यङ्गस्थाञ्जयत्यलम् ॥ ९६२ ॥
गुग्गुलुः षडशीति वै नाम्ना भोजेन कीर्तितः ।
क्षीयमाणेन शिष्येण प्रार्थितेन पुनःपुनः ॥ ९६३ ॥
स एष राजयोगोऽयं न देयो यस्य कस्यचित् ।
योगेना ऽनेन वर्षेण पण्ढोऽपि प्रमदाप्रियः ॥९६४॥
वाजीकरणमन्यच्च परं नास्माद्विशेषतः ।
गुणोऽस्य सेवनान्नित्यं यःस्यात्स स्याद्ब्रवीमि किम्॥
एष नो परिहार्यस्तु पानभोजनमैथुनैः ॥ ९६५ ॥

यो र, वै चि, वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—कटसरैया, जवास, अतीस, देवदारु, भटकटैया, वनभाटा, चव्य, अडूसा, पीपल, नागरमोथा, वच, धनिया, शतावर, खरेटी, सौंफ, मजीठ, हर्रे, सोंठ, गिलोय, कचूर, अमिलतास, गोखरू, पुनर्नवा, मूर्वा, कुटकी, गठिवन, भारङ्गी, विदारीकन्द, गोरखमुण्डी, डोडाइन, वनतुलसी, मेंढासींगी, रुद्राक्ष, मुशली, रेणुका, काकोली, अजमोद, अजवाइन, निसोत, दन्तीमूल, मोरशिखा, काकड़ासींगी, तालमखाना, धमासा, वेल, सोनापाठा, गभार, पाटला, अरणी, वीरतरु, कुठ, अगर, जावित्री, जायफल, इलायची, नागकेशर, तज, चिरायता, केशर, लौंग, इन्द्रायण, कपूर, सैन्धव, आककीजड़, विडङ्ग, सत्यानाशीकीजड़, हुरहुर, गजपीपल, अपामार्ग, केवाच, करञ्ज येसब समभाग, इनसबकीवरावर रास्ना और दूनी वबूलकी फलिया तथा इनसबकी वरावर शुद्धगूगललेवे । शुद्ध पारा, गन्धक, शिंगरिफ और सुहागा, कान्तलोह, अभ्रक, ताम्र, वङ्ग-पारा, नाग, सुवर्णमाक्षिक, फोलाद इनसबकीभस्में मिलकर गूगलसे चतुर्थांश लेवे फिर गूगलके वरावर षट्कटु (पीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ और मरिच) लेकर जवकुटकर अठगुने पानीमें औटावे। चतुर्थांशावशेष रहनेपर उतारकर इसमें गूगलको पकावे। चतुर्थांशावशेष रहनेपर छानकर धातुद्रव्योंकी कज्जली और सबचीज़ोंका वारीकचूर्णडालकर मन्दआचसे पकावे।

घन तैयार होनेपर ४-४ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मधु और घीकेसाथ सेवनकरनेसे सातों-धातु, शिरा, स्नायु, अस्थि और सन्धिगत साम अथवा निराम वायुरोग, श्लेष्मजन्याधि, राजयक्ष्म, मन्दाग्नि, वातुगतज्वर, गुल्म, जानु, ऊरु, उदर, हृदय, कुक्षि, वक्ष, अंस, मन्या, हनु, कान, भ्रू, ललाट इनसवकेरोग तथा शङ्खक, ऊरुस्तम्भ, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, शूल, आध्मान, पथरी और तमामवातविकारोंको यह नष्टकरताहै। एकवर्षतक लगातार इसकासेवनकरनेसे तमामरोगोंसे रहित और षण्ढत्वसे निवृत्तहोकर उत्तमवाजीकरण होताहै। खानपानमें विशेष रुकावट नहींहै ॥ २३० ॥

२३१ षडाननगुटिका

विषोषणं टङ्कणपारदञ्च
सगन्धचूर्णञ्च समांशयुक्तम्।
जैपालचूर्णं द्विगुणं गुडाक्तं
सम्मर्द्य सर्वं गुटिका विधेया ॥ ९६६ ॥
विरेचनी सर्वविकारहन्त्री
लघ्वी हिता दीपनपाचनीयम्।
कुष्ठे हिता तीव्रतरे हि शूले
चामाशये चाश्मभवे विकारे ॥
संशोधनी शीतजलेन सम्यक्
सङ्ग्राहिणी चोष्णजलेन युक्ता ॥ ९६७ ॥

र सं, र च, र सु, र चि, कुष्ठे।

भाषा—शुद्धवछनाग, मरिच, भुनासुहागा, शुद्ध पारा और गन्धक समभाग, शुद्धजमालगोटा सवसे दूनालेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें सबकाचूर्णमिलाय बराबरकागुड़ डालकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली ठंढे-जलकेसाथदेनेसे पेटसाफ़होताहै। मन्दाग्नि, भयङ्करकुष्ठ, वढा-हुआ आमाशयकाशूल, पथरी इनसवको यह नष्टकरतीहै। शीतजलकेसाथलेनेसे रेचनकरतीहै और गरमजललेनेसेही रेचन वन्दहोजाताहै ॥ २३१ ॥

२३२ षडाननरसः

आरं कांस्यं मृतं ताम्रं दरदं पिप्पली विषम्।
तुल्यांशं मर्दयेत्खल्वे यामं छिन्नासमुद्भवैः ॥ ९६८ ॥
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा स्वानुपानैः प्रदापयेत्।
ज्वरे मन्दानले चैव वातपित्तज्वरेषु च ॥ ९६९ ॥
ज्वरे वैषम्यतरुणे ज्वरे जीर्णे विशेषतः।
मुद्गान्नं मुद्गयूषं वा तक्रभक्तञ्च केवलम् ॥ ९७० ॥
नारिकेलोदकं देयं दाहे चैव विशेषतः।
षडाननो रसो नाम सर्वज्वरकुलान्तकृत् ॥ ९७१ ॥

भै र., र सु, विषमज्वरे।

भाषा—पीतल, कासा, ताम्र इनकीभस्में, शुद्धसिंगरिफ और वछनाग, पीपल सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर एकपहर गिलोयकेस्वरसमें मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली यथोचितानुपानकेसाथदेनेसे ज्वर, मन्दाग्नि, वात और पित्तज्वर, विषम, विशेषकर जीर्णज्वरोंको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य मूंग अथवा मूंगकायूष अथवा छाछभातदेना उचितहै। दाहहोनेपर नारियलकाजलदेवे॥२३२॥

२३३ षण्मुखलोहम्

दिनकराभ्रककाञ्चनपारदं
सुरभिलोहरजश्च समांशकम्।
मृदुहुताशविलासवशीकृतं
सघृतपुष्परसेन निषेवितम् ॥ ९७२ ॥
हरति हृज्जठरामयकामला
ग्रहणिकामयमामसमीरणम्।
गुदजमेहमथानलमार्दवं
रुधिरपित्तमसृग्दरमुद्धतम् ॥ ९७३ ॥

लो. प. (स), सर्वरोगे।

भाषा—ताम्र, अभ्रक, सुवर्ण, लोह इनकीभस्में, शुद्ध पारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीपोतकर वरके-कोयलोंपर रक्खीहुईकड़ाहीमें गलाकर पर्पटी बनालेवे। इसमेंसे १ से २ रत्तीतक घी और मधुकेसाथसेवनकरनेसे हृदय और पेटकेरोग, कामला, ग्रहणी, आमवात, ववासीर, प्रमेह, मन्दाग्नि, रक्तपित्त, रक्तप्रदर इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ २३३ ॥

२३४ षण्मुखरसः (प्रथमः)

सूतं गन्धं समं शुद्धं सूतांशं मृतताम्रकम्।
सौवर्चलञ्च सूतांशं जम्बीरे दिनसप्तकम् ॥ ९७४ ॥
मर्दयेदातपे तीक्ष्णे रुद्ध्वा लघु पुटेत्त्रयम्।
दत्त्वाऽऽदाय तु तच्चूर्णं समं त्रिकटुकं पचेत् ॥ ९७५ ॥
षण्मुखोऽयं रसो नाम त्रिगुञ्जेनामशूलजित्।
एरण्डतैलषड्भागं लशुनस्य दशाष्टकम् ॥ ९७६ ॥
एकं हिङ्गु त्रिसिन्धूत्थं सर्वमेकत्र कारयेत्।
त्रिनिष्कं भक्षयेच्चानु आमशूलप्रशान्तये ॥ ९७७ ॥

र. र, र को, नि र, चि क्र, व. रा, यो म., वै चि., टो, शूले।

टि०—यो म, टो, एतयो सूताश त्रिकटुक निक्षिप्तम्।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म और सञ्चल समभाग लेकर-नीलवर्णकज्जलीकर जभीरीकेरससे ७ दिनतक तीक्ष्णधूपमें मर्दनकर इसचूर्णकेबराबर त्रिकटु मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती यथोचितानुपानकेसाथदेनेसे आमशूलको यह नष्टकरताहै। इसको देकर एरण्डतैल ६ भाग, लहसनकारस १८ भा, भुनीहींग १ भा, सेंधानमक ३ भाग लेकर इकट्ठेमिलाकर इसमेंसे १२-१२ माशे अनुपानमें देवे ॥ २३४ ॥

२३५ षण्मुखरसः (द्वितीयः)

हरार्कायोवङ्गाऽभ्रकबलिकलैकद्विजलधि-,
द्विपद्वाविंशद्भिर्मिलितमनलेऽसौ यदि पुनः।

द्वयहं पक्वः कूप्यां भवति सिकतायन्त्रजुषित-,
स्तलस्थः षण्ढत्वप्रलयकृदयं षण्मुखरसः ॥ ९७८ ॥

र. कौ, वृ यो. त, टो, र. पा, वाजीकरणे।

भाषा—पारा १६ भाग, ताम्र १ भा., लोह २ भा, वङ्ग ४ भा, अभ्रक ८ भा इनकीभस्में और शुद्धगन्धक ३२ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर पर्पटीवनाय फिरसे कज्जलीकर ६–७ कपडमिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके दोदिन वालुकायन्त्रमें पकावे, इसकी तलस्थभस्महोगी। इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह नपुंसकताको नष्टकरताहै ॥ २३५ ॥

२३६ षण्मुखरसः (तृतीयः)

नागवङ्गाऽभ्रकाणाञ्च लोहस्य शुल्वकस्य च ।
सिन्दूराणि च पञ्चानां रससिन्दूरमेव च ॥ ९७९ ॥
एतानि समभागानि समाहृत्य विचक्षणः ।
नित्यं तत्कृष्णकदलीफलयुक्तन्तु लेहयेत् ॥ ९८० ॥
मधुरेष्वान्नपानानि भुञ्जीत च यथेप्सितम् ।
संवत्सरार्द्धमात्रेण जरामरणवर्जितः ॥ ९८१ ॥
दिव्यदेहो भवेन्मर्त्यस्सर्वव्याधिविनाशनः ।
कृष्णगोक्षीरसंयुक्तं क्षयाणाञ्च प्रयोजयेत् ॥ ९८२ ॥
मातुलुङ्गफलाम्लेन सेवयेदर्द्धमण्डलम् ।
श्वासकासादिहृद्रोगपीनसादिप्रशान्तये ॥ ९८३ ॥
अस्य प्रयोगचातुर्यादनुपानविशेषतः ।
सर्वे गदा विनश्यन्ति तूर्णमेव न संशयः ॥
षण्मुखः कथितः सोऽयं रसेन्द्रो देवदुर्लभः ॥९८४॥

र कौ. (क्षा.), र. क. यो., सर्वरोगे।

भाषा—नाग, वङ्ग, अभ्रक, लोह और ताम्र इनसवकासिन्दूर और रससिन्दूर समभागलेकर १–२ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती कालेकेलेकेफलमें रखकर खावे और मधुर अन्नपानका सेवनकरे। ऐसे एकवर्षकेप्रयोगसे बुढापे और समस्तव्याधियोंसे रहितहोकर दिव्यदेह होजाताहै। क्षयमें कालीगायकादूध, और श्वास, कास, हृद्रोग, पीनस इनकीनिवृत्तिकेलिये विजोरेकेरससे आधेमण्डलतक सेवनकरे। इसीप्रकार अनुपानभेदोंसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २३६ ॥

२३७ षोडशकलरसः

रसेन्द्रं सुरभीं शुल्वं शातकुम्भञ्च तारकम् ।
काललोहं रीतिकांस्यं विद्रुमं मौक्तिकन्तथा ॥९८५॥
नागवङ्गमयस्कान्तं सम्यङ्मारितमभ्रकम् ।
शुद्धाऽमृतं शङ्खचूर्णं समभागानि मेलयेत् ॥ ९८६ ॥
जम्बूजम्बीरपाठाग्निश्रृङ्गवेररसेन च ।
ततश्चित्रकतालाभ्यां यथाशक्ति विभावयेत् ॥ ९८७ ॥
कान्तपात्रे विनिक्षिप्य मधुना सितया सह ।
प्राशयेत्कायसिद्ध्यर्थं सर्वरोगहरं परम् ॥ ९८८ ॥
राजयक्ष्मघ्नगुल्मघ्नं श्वासकासोदरार्तिजित् ।
ग्रहणीपाण्डुरोगघ्नं मेहविंशतिकृच्छ्रजित् ॥ ९८९ ॥

त्रिदोषहरणं रक्तपित्तहारि ज्वरान्तकृत् ।
कलाषोडशसम्पूर्णः साक्षान्मृत्युञ्जयो मतः ॥ ९९० ॥

र. क यो., सर्वरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र, सुवर्ण, रजत, फौलाद, पीतल, कासा, विद्रुम, मोती, नाग, वङ्ग, कान्त, अभ्रक इनकीभस्में, शुद्धवछनाग, शङ्खभस्म सवसमभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर जामुन, जंभीरी, पाठा, लालचित्रक, अदरख, सफेदचित्रक, ताडफल, इनसवकी यथाशक्य भावनाएं देकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा मधु और घीकेसाथ कान्तलोहकेपात्रमें रखकर खानेसे राजयक्ष्म, गुल्म, श्वास, कास, उदररोग, ग्रहणी, पाण्डु, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, त्रिदोष, रक्तपित्त और समस्तज्वर, इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ २३७ ॥

२३८ षोडशकलरसायनम्

रसभस्म च भागैकं द्विभागं शुद्धगन्धकम् ।
द्वयोः समं स्वर्णभस्म तारभस्म च भागिकम्॥९९१॥
कान्तं ताम्रञ्च वङ्गञ्च तीक्ष्णकं परमायसम् ।
नागं वैक्रान्तमभ्रञ्च प्रत्येकं भागमेककम् ॥ ९९२ ॥
वज्रवैदूर्यनीलञ्च गोमेदं पुष्परागकम् ।
मरकतं विद्रुमं मुक्तां पद्मरागं वराटकम् ॥ ९९३ ॥
शङ्खभस्म समांशानि खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
भावना गव्यदुग्धेन ह्यजाक्षीरेण भावयेत् ॥ ९९४ ॥
कुङ्कुमाऽगुरुचन्द्रैश्च वालुकापद्मकेसरैः ।
जातीफलेन तत्पत्रैस्त्रिकटुत्रिफलानिशा–॥ ९९५ ॥
जीरकद्वयमञ्जिष्ठाशताह्वाचन्दनद्वयैः ।
चातुर्जातकखर्जूरयष्टीमधुकगोक्षुरैः ॥ ९९६ ॥
प्रियङ्गुकेशरै मुस्ताकार्पासीवाजिगन्धजैः ।
त्रिवलाजैः शतपदीवर्षाभूशिग्रुकद्वयैः ॥ ९९७ ॥
दाडिमीपुष्पजैश्चैव लवङ्गनारिकेलजैः ।
एतेषां सूक्ष्मचूर्णानां कषायांश्च प्रकल्पयेत् ॥ ९९८ ॥
दृढं मर्द्यञ्च भाव्यञ्च सप्तवारं विशोष्य च ।
चतुर्गुञ्जां वटीं कृत्वा प्रातस्सायञ्च भक्षयेत् ॥ ९९९ ॥
दम्पतीभ्यांनिषेव्यञ्च रसायनमनुत्तमम् ।
वलीपलितविध्वंसि कामदं सुखदं तथा ॥ १००० ॥
अशीतिवार्षिको वृद्धः पुनरेव युवा भवेत् ।
सर्ववातामयान्हन्ति सर्वक्षयविनाशनम् ॥ १००१ ॥
प्रमेहान्विंशतिञ्चैव गुल्मशूलशिरोगदान् ।
पाण्डुरोगमुदावर्तं कासश्वासाक्षिरोगकान् ॥ १००२॥
अर्शांसि ग्रहणीञ्चैवमसृग्दरातिसारकान् ।
पित्तरोगविनिर्णाशि सर्वरोगहरं परम् ॥ १००३ ॥
नष्टवीर्ये षण्ढके च पुरुषे पुष्टिदायकम् ।
स्त्रीणां प्रदरदोषञ्च नष्टपुष्पं विनाशयेत् ॥
वन्ध्या च लभते गर्भं सर्वलक्षणसंयुतम् ॥ १००४ ॥
वीर्यवृद्धिकरं चैव सर्वेन्द्रियवलप्रदम् ।
द्विकालभोजनञ्चैव गोक्षीराज्येन युक्तितः ॥ १००५ ॥

वर्जयेल्लवणाम्लौ च पिण्याक तैलकं तथा।
राजकोलादिकं सर्वमुर्वारुकफलं तथा ॥ १००६ ॥
सर्जशाकांश्च लशुनं वर्जयेद्भोजने तथा।
त्रिमासं सेवयेन्नित्यं घृतेन मधुनाऽऽप्लुतम् ॥१००७॥
कलाषोडशपूर्णश्च रसायनमहौषधम्।
संवत्सरप्रयोगेण दिव्यदेहश्च जायते ॥ १००८ ॥

र.क.यो.रसायने।

भाषा—पारदभस्म १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा, सुवर्णभस्म ३ भा. रजतभस्म १ भा., कान्त, ताम्र, वङ्ग, फोलाद, परमायस ?, नाग, वैक्रान्त, अभ्रक, हीरा, लसनियां, नीलम, गोमेद, पुखराज, पन्ना, प्रवाल, मोती, माणिक्य, कौडी और शङ्ख इनकीभस्में १–१ भाग लेकर सवकावारीकचूर्णकर गाय और वकरीकादूध, केशर, अगर, कपूर, सुगन्धवाला, पद्मकेशर, जायफल, जावित्री, त्रिकटु, त्रिफला, हल्दी, दोनोंजीरे, मजीठ, सोंफ, दोनोंचन्दन, चातुर्जात, खजूर, मुलहठी, गोखरू, प्रियङ्गु, केसर, नागरमोथा, कपासकीमज्जा, असगन्ध, तीनोंवला, शतावर, इटसिट (पजावी), दोनोंसहिजन, अनारकेफूल, लौंग, नारियल इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्काथोंसे ७–७ भावनाए देकर ४–४ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली सुवहशाम यथोचितानुपानकेसाथलेनेसे समस्त वातविकार, क्षय, २० प्रकारके प्रमेह, गुल्म, शूल, शिरोरोग, पाण्डु, उदावर्त, कास, श्वास, अक्षिरोग, ववासीर, ग्रहणी, अतिसार, रक्तप्रदर, पित्तरोग, नपुंसकत्व, शुक्रनाश, उदररोग, नष्टपुष्प, वीर्यनाश, इन्द्रियोंकीदुर्वलता, इनसवको नष्टकर वलीपलितादिकोंसे निर्मुक्तहोकर अस्सीवरसकाभी वुड्ढा फिरसे युवावस्थाको प्राप्तहोताहै। इसमें गायके घी और दूधकेसाथ दोवारभोजनकरे। लवण, खटाई, खली, तैल, वेर, कचरी, सवतरहकेशाक, लहसन इनकापरित्यागकरे। घी और मधु विशेष उपयोगमेंलेवे॥२३८॥

२३९ सङ्कोचगोलरसः (प्रथम.)

अमृतविषपटोलं निम्बपञ्चाङ्गयुक्तं,
त्रिफलखदिरसारं व्याधिघातश्च तुल्यम्।
रसपलघनमेकं गुग्गुलो भागयुक्तं,
जयति विषविसर्पं कुष्टराशिं जवेन॥१००९॥

रसेन्द्रमं., कुष्ठरोगे।

भाषा—शुद्ध सफेद और काला वछनाग, पटोलपत्र, निम्वपञ्चाङ्ग, त्रिफला, खैरसार, अमिलतास और शुद्धतुत्थ १–१ कर्ष, पारदभस्म १ पल, अभ्रकभस्म और गूगल १–१ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर निम्वपञ्चाङ्गकेस्वरससे १–२ दिनमर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली निम्वपञ्चाङ्ग अथवा खदिरादिक्काथकेसाथ लेनेसे समस्तविष, विसर्प और कुष्ठोंको यह नष्टकरताहै ॥ २३९ ॥

२४० सङ्कोचगोलरसः (सङ्कोचरस.) २

मृतताम्राभ्रकं तुल्यं तयोः सूतं चतुर्गुणम्।
शुद्धं तन्मर्दयेत्खल्वे नष्टपिष्टं सुगोलकम् ॥ १०१० ॥
त्रिभिस्तुल्यं शुद्धगन्धं लोहपात्रगतं द्रुतम्।
विपचेद्गोलकं मध्ये यावज्जीर्यति गन्धकः ॥ १०११ ॥
तावन्मृद्वग्निना यत्नात्समुद्धृत्य विचूर्णयेत्।
गुग्गुलं निम्वपञ्चाङ्गं त्रिफलाब्धाऽमृताविषम् १०१२
पटोलं खादिरं सारं व्याधिघातं समं समम्।
चूर्णितं मधुना लेह्यं निष्कमौदुम्बरापहम् ॥
रसः सङ्कोचनामाऽयं पुरा नागार्जुनोदितः ॥१०१३॥

र.मं., र सु, र चि, य रा., चि क्र., रससागर, र.का., र को., कुष्ठे। य रा. कनकसङ्कोच इति नाम।

भाषा—ताम्र और अभ्रकभस्म १–१ कर्ष, शुद्धपारा ८ कर्ष लेकर जंभीरीकेरससे मर्दनकरे। नष्टपिष्टीहोनेपर गोलावनाय तीनोंकीवरावर शुद्धगन्धकको लोहेके पात्रमें गलाकर इसगोलेको वीचमें रख मन्दाग्निसे पकावे। तमामगन्धकजलजानेपर उतारकर चूर्णकरले। फिर इसमें गूगल, नीमकापञ्चाङ्ग, त्रिफला, गिलोय, वछनाग, परवल, खैरसार, अमिलतास ये प्रत्येक रसकी वरावर लेकर वारीकचूर्णकर गुग्गुलमें मिलाकर रखछोडे। इसमेंसे ४ माशे मधुकेसाथ लेनेसे यह उदुम्वरकुष्ठकोनष्टकरताहै ॥२४०॥

२४१ सङ्कोचपिष्टिकारसः

शुद्धसूतपलान्यष्टौ शुद्धताम्रपलद्वयम्।
खल्वे सङ्घृष्य यत्नेन कारयेत्पिष्टिकां वुधः ॥ १०१४ ॥
गन्धकस्य पले द्वे तु कटुतैलेन पाचयेत्।
तन्मध्ये पिष्टिका पाच्या भिषजा यत्नपूर्वकम् ॥१०१५॥
तत उद्धृत्य यत्नेन यथा नोड्डीयते रसः।
ततो योज्यानि वैद्येन भैषज्यानि शुभानि वै ॥१०१६॥
कटुत्रयं वचा मुस्ता विडङ्गं चित्रकं विषम्।
समभागानि चैतानि पथ्या च त्रिगुणा विषात् १०१७
मधुना मर्दयित्वा तु गुटिकाः कारयेद्भिषक्।
गुञ्जा गुञ्जार्धमात्रा वा एकैकां भक्षयेद्बुधः ॥१०१८॥
ज्ञात्वा वलावलं सत्त्वं द्वे द्वे वा दापयेद्बुधः।
गुटिका सप्तपर्यन्तं यथायोगेन दीयते ॥ १०१९ ॥
सङ्कोचपिष्टिका ह्येषा प्रसूतौ वातनाशिनी।
अन्ये ये वातजा रोगा तान् कुष्टांश्च व्यपोहति १०२०

रसेन्द्रमं, वातरोगे।

भाषा—आठपल शुद्धपारेमें दोपल शुद्धताम्रकारेता डालकर नष्टपिष्टिका वनाय वारीकमलमलकेकपडेमें वाधकर २ पल शुद्धगन्धकको वरावरके कटुतैलमें गलाकर वीचमें गोलीको रख मन्दाग्निमे पकावे। गन्धकके जलजानेपर पोट्टलीको निकालकर कज्जलीकरे। फिर इसमें त्रिकटु, वच, नागरमोथा, विडङ्ग, चित्रकमूल, शुद्धवछनाग १–१ कर्ष, हर्रे ३ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर कज्जलीमें मिलाय १–२ दिन घोटकर मधुकेसाथ आधी अथवा १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोडे। रोगी और रोगका वलावल देखकर इनमेंसे १–१ गोली यथोचितानुपानकेसाथदेकर प्रतिदिन १ गोली वढ़ाकर ७ गोलीतक वढ़ावे। इसकेसेवनसे प्रसूतवात, अन्यसमस्तवातरोग और समस्तकुष्ठ नष्टहोतेहै ॥२४१

२४२ सङ्कोचरसः (प्रथमः)

शुद्धं रसं लोणिसमुद्भवेन
तुषोदकेनाऽपि दृढं विमर्द्य।
सगन्धकं ताम्रविपाचितश्च
भस्मत्वमायाति कृशानुयोगात् ॥ १०२१ ॥
तद्भस्म गन्धाश्मकतुल्यकञ्च
पुनर्विमर्द्यञ्च रसेन तेन।
मूषागतं तच्च तुषैर्विपक्वं
यावद्भवेद्भस्म ततो गृहीत्वा ॥ १०२२ ॥
मर्द्यं सताम्रं सह टङ्कणेन
सनागरं मागधिकायुतञ्च।
सिद्धो भवेद्वल्लमितो रसेन्द्रो
सङ्कोचनामाऽखिलकुष्ठहारी ॥ १०२३ ॥

र., रसेन्द्रसं., कुष्ठे। रसेन्द्रमङ्गले सङ्कोचगोल इतिनाम पाठस्तु सन्दिग्ध।

भाषा—शुद्धपारेको लोणीकेरस और तुषोदकमे ३–३ दिन मर्दनकर समभाग गन्धककेसाथ नीलवर्णकज्जलीकर जम्भीरीके रसमेंघोटकर गोलावनाय समभाग तावेकीकटोरीमें वन्दकर ३–४ कपडमिट्टीलगाय सुखाकर भस्म अथवा लवणयन्त्रमें रख ८ पहरकी कड़ी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर उस-भस्मकीवरावर शुद्धगन्धक और तुत्थ मिलाकर लोणीकेरस और तुषाम्लमें १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय अन्धमूषामें वन्दकर ६–७ कपडमिट्टीदेकर सुखाकर तुषोंमें गजपुटकीआचदे। स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर भुनासुहागा, सोंठ और पीपल सम भागकाचूर्ण रसकेवरावर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती निम्बपञ्चाङ्ग अथवा खदिरादिकाथकेसाथलेनेसे यह समस्त-कुष्ठोंको नष्टकरताहै ॥ २४२ ॥

२४३ सङ्कोचरसः (द्वितीयः)

कन्यारसेन सम्मर्द्यः सूतो द्विगुणगन्धकः।
संस्थाप्य मृन्मये पात्रे ताम्रपात्रेण रोधयेत् ॥१०२४॥
भस्मना पूरयेदूर्द्ध्वं मुखरोधञ्च कारयेत्।
तद्यामद्वितयं पाच्यं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ १०२५ ॥
भृङ्गद्रवेण सम्मर्द्यो दिवसत्रितयं धिया।
भृङ्गाग्नित्रिफलावेल्लासोमराजीकषायकैः ॥ १०२६ ॥
निवेशयेत्खादिरजं क्राथं राजतरोस्तथा।
बीजं वाकुचिकायाश्च मलयूत्वग्रजस्तथा ॥ १०२७ ॥
आवर्त्य घनतां प्राप्तं शीतीभूतं समाहरेत्।
अनेन कर्षमात्रेण रसं वल्लयुगं चरेत् ॥ १०२८ ॥
त्रिफलायाः पिवेत्तोयं तृष्णार्तोऽपि जलञ्च तत्।
त्रिरात्रेण भवेच्छ्वित्रे स्फोटानामपि सम्भवः ॥१०२९॥

र, कुष्ठे।

भाषा—शुद्धपारेकी दूनेगन्धककेसाथ नीलवर्णकज्जलीकर घीकुंवारकेरससे एकदिन मर्दनकर हण्डीमें रख दोनोंकीवरावरके ताम्रपात्रसे ढककर गुड़चूनावग़ैरहसे सन्धिवन्दकर ६–७ कपड़-मिट्टीदेकर हंडीको राखसे भरके ढकनलगाय ६–७ कपड़मिट्टी-करदे। सुखनेपर २ पहरकी कड़ी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ३ दिन भगरेकेरससे मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। फिर भंगरा, चित्रक, त्रिफला, विडङ्ग, वाकुची, खैर और अमिलतासके क्वाथोंको एकजगह मिलाकर घन वनावे। उसमें वाकुची और कठूमरकीछालकाचूर्ण दशांश मिलाकर १–१ तोलेकी गोलिया वनाकर रखछोड़ें। इसघनकी गोलीकेसाथ पूर्वरसकी १ गोली देकर त्रिफलाकाकाढ़ा पिलावे। अधिकप्यासलगनेपर थोड़ापानीपीवे। इसके अति-रिक्त भोजनवग़ैरह न करे। इसके ३ दिन सेवनकरनेसे श्वित्र-स्थानमें अग्निदग्धकीतरह छाले उठकर रोगनष्टहोताहै ॥ २४३ ॥

२४४ सङ्कोचशुल्वरसः (सङ्कोचखल्वः)

शुल्वं तालकताण्डवं ध्वनिघनं सूतेन्द्रगोलं मृतं,
काश्मीरं सुरदालिराढकटुका कोशातकी सैन्धवम्।
निर्गुण्डीद्रवघृष्टवद्धगुटिका काथैररिष्टोद्भवैः,
श्लेष्माणं विनिहन्ति शीर्षजगदान् सङ्कोचशुल्वोरसः

रसेन्द्रसं., र., कफाधिकारे।

टि०—ताण्डव यशद ग्राह्य, अग्नौ निक्षिप्ते सति यशदान्नानावर्णा ज्वाला शब्दाश्च प्रादुर्भवन्ति अतो लाक्षणिकमेतन्नाम। धातुसमूहमध्ये उपादानादन्ते मृतमितिविशेषणाच्च तत्स्थाने तृणविशेषस्याऽननुप्रवेशात्। गोलशब्देन मन शिला ग्राह्या "गोला गोदावरीसख्यो कुनटीदुर्गयो' स्त्रियाम्" इतिमेदिनी।

भाषा—तावा, हरिताल, जस्त, कासा, अभ्रक, पारा, मैनसिल इनकीभस्में, केशर, वन्दाल, मैनफल, कुटकी, कड़वी-तरोई, सेंधानमक सवसमभागलेकर निर्गुण्डीकेरससे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली नीमकीछालकेकाढ़ेकेसाथ देनेसे कफरोग और मस्तककेरोग नष्टहोतेहैं ॥ २४४ ॥

२४५ सङ्करभैरवरसः

मृतं ताम्रं मृतं तीक्ष्णं त्रिक्षारं पारदं समम्।
पञ्चकोलकषायेण दिनमेकन्तु मर्दयेत् ॥ १०३१ ॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं भाव्यं कुक्कुटपित्तकैः।
द्विमाषमात्रं दातव्यं मधुना कणसंयुतम् ॥
हृद्दाहं हन्ति शैघ्र्येण रसः सङ्करभैरवः ॥ १०३२ ॥

वै चि, वा., रसायनप, हृद्रोगे।

भाषा—तावा, फोलाद, पारा इनकीभस्में, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, सवसमभागलेकर पञ्चकोलकेकाढेसे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय दोलायन्त्रमें पञ्चकोलकेकाढेसे १ पहर स्वेदनकर कुक्कुटकेपित्तसे १ भावनादेकर २–२ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु और पीपलकेसाथलेनेसे यह हृदयकेदाहको शीघ्रनष्टकरताहै ॥ २४५ ॥

२४६ सञ्जीवकरणरसः

रसगन्धकनेपालं पिप्पली सैन्धवं तथा ।
मरिचं हिङ्गुलं ताम्रं मृताभ्रं सर्वतुल्यकम् ॥ १०३३ ॥
समभागानि तुल्यानि भावयेद्वत्सनाभजैः ।
त्रिदिनं कृष्णसर्पस्य मुखे पिष्ट्वा प्रवेशयेत् ॥ १०३४ ॥
वह्निर्नीत्वा च सम्पिष्य तच्चूर्णं रेणुमात्रकम् ।
भोजयेत्सर्वरोगेषु सद्यः प्रत्ययकारकम् ॥ १०३५ ॥
ब्रह्मरन्ध्रप्रयोगेण मृतस्य प्राणदर्शनम् ।
सञ्जीवकरणो नाम्ना सौवर्णकरणस्तथा ॥
सन्तानकरणश्चैव त्रैविध्ये तत्प्रतिष्ठितम् ॥ १०३६ ॥

र क यो , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, और जमालगोटा, पीपल, सेंधानमक, मरिच, शिंगरफ, और ताम्रभस्म सब समभाग, अभ्रकभस्म सबकीबराबर लेकर बछनागकेकाढेसे १–२ दिन मर्दनकर कालेसापकेमुहमेंभरदे । ३ दिनवाद निकालकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे ज्वारकेदानेकीबराबर समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै और तत्क्षण परिचय बताताहै । सन्निपातादिजनित मूर्च्छावस्थामें तालुमें पाछ देकर घर्षणकरनेसे चेतनाको प्राप्तहोताहै । इसकेप्रयोगसे वन्ध्या गर्भधारणकरतीहै ॥ २४६ ॥

२४७ सञ्जीवनरसः (प्रथमः)

पलमात्रं रसं शुद्धं वरनागसमन्वितम् ।
निक्षिप्य पातनायन्त्रे त्रिंशद्वाराणि पातयेत् ॥१०३७॥
समाहरेद्रसं सम्यक् पातनायन्त्रके मृतम् ।
मृते रसे क्षिपेत्तुल्यं भूपालावर्तभस्मकम् ॥ १०३८ ॥
निरुत्थं त्रपुभस्मापि निक्षिपेदष्टमांशतः ।
ततो निम्बदलद्रावैस्त्रिंशद्वारं हि भावयेत् ॥
ततः संशोष्य सञ्चूर्ण्य क्षिपेद्रम्यकरण्डके ॥ १०३९ ॥
सञ्जीवनोऽयं खलु वल्लमानो निशाकुलीचूर्णयुतःसतक्रः
निहन्ति सर्वानपि मेहरोगान्नृणां नितान्तं कुरुते क्षुधाञ्च

र र स , र सु , र को , प्रमेहे ।

भाषा—एकपलशुद्धनागको गलाकर १ पल शुद्धपारा मिलाय ३० वार ऊर्द्धपातनकरे । इससे पारे और नागकी तलस्थ भस्म होगी । फिर इसकीबराबर लाजवर्द और अष्टमांश निरुत्थ वङ्गभस्म मिलाकर नीमकेपत्तोंकेरससे ३० दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा हल्दी और अङ्कोलकीछालके ३ माशे चूर्णकेसाथ मिलाकर छाछकेसाथलेनेसे यह समस्तप्रमेहोंको नष्टकर अत्यन्त क्षुधाको जागृतकरताहै ॥ २४७ ॥

२४८ सञ्जीवनरसः (द्वितीयः)

रसगन्धकताम्रञ्च कान्तभस्म समांशकम् ।
मुशलीरससम्पिष्टं काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् ॥१०४१॥
पाचयेद्वालुकायन्त्रे छियामान्ते समुद्धरेत् ।
सिन्दूरं त्रिफला व्योषं क्षारं लवणपञ्चकम् ॥१०४२॥
हिङ्गु गुग्गुलुवह्नी च कुबेराक्षश्च टङ्कणम् ।
दीप्यत्रयञ्च जाती च सूरणं विश्ववत्सकम् ॥ १०४३ ॥
शिग्रुद्वयं तथा पुङ्खी व्याघ्रीत्रयपटोलकम् ।
राक्षसीवल्लवल्ली च कटभीक्षुरपालुकम् ॥ १०४४ ॥
समभागानि सञ्चूर्ण्य खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
गृञ्जनस्य शृङ्गवेरजम्बीररसभावना ॥ १०४५ ॥
निष्कार्द्धं मधुना लेह्यं यामे यामे च भक्षितम् ।
अम्लपित्तं निहन्त्याशु सर्वव्याधिहरः परः ॥
कुर्यात्प्राणपरित्राणं सञ्जीवनरसः स्मृतः ॥ १०४६ ॥

व रा , वै चि., अम्लपित्ते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और कान्तभस्म समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर मुशलीकेरससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर २–३ कपड़मिट्टीकीहुई आतशीशीमें रख मुंहबन्दकर वालुकायन्त्रमें रख दोपहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रससिन्दूर, त्रिफला, त्रिकटु, यवक्षार, पाचोंनमक, भुनीहींग, गूगल, चित्रकमूल, करजकीमज्जा, भुनासुहागा, खुरासानी और देशी अजवाइन, अजमोद, जावित्री, सूरण, सोंठ, इन्द्रजव, दोनोंसहिजनकीछाल, पुनर्नवा, लाल और सफेद भटकटैया, वनभाटा, परवल, सेंमलकामुसला, हड़जोड़, कदम्ब (काश्मीरीनामहै), तालमखाना, पीलुकीछाल, सबसमभागलेकर वारीकचूर्णकर सलगम, अदरख औरजभीरीकेरसोंसे १–१ भावना देकर २–२ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथलेनेसे अम्लपित्तादि समस्त अग्निविकारोंको नष्टकर मनुष्यको जीवितदानदेताहै ॥ २४८ ॥

२४९ सञ्जीवनाभ्रम्

वज्राभ्रं मारितं ग्राह्यं कर्षमानं सुचूर्णितम् ।
जीरकं कानकं वीजं कर्षं वासारसेन च ॥ १०४७ ॥
कण्टकारीरसेनैव धात्रीमुस्तारसेन च ।
गुडूचीस्वरसेनैव पलांशेन पृथक्पृथक् ॥ १०४८ ॥
मर्दयित्वा वटी कार्या गुञ्जामात्रा नियोजिता ।
विषमाख्याञ्ज्वरान्सर्वान् प्लीहानं यकृतं वमिम् ॥१०४९॥
रक्तपित्तं वातरक्तं ग्रहणीं श्वासकासकौ ।
अरुचिं शूलहृल्लासावर्शांसि च विनाशयेत् ॥ १०५० ॥

र सु , ज्वराधिकारे ।

भाषा—अभ्रकभस्म, जीरा, शुद्धजमालगोटा १–१ कर्ष लेकर अडूसा, भटकटैया, आवले, नागरमोथा और गिलोयके १–१ पलस्वरससे क्रमश मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली यथोचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्त सम या विषमज्वर, प्लीहा, यकृत, वमन, रक्तपित्त, वातरक्त, ग्रहणी, श्वास, कास, अरुचि, शूल, जीमिचलाना, बवासीर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २४९ ॥

२५० सञ्जीवनीवटी

विडङ्गं नागरं कृष्णा पथ्यामलविभीतकौ ।
वचा गुडूची भल्लातं सविषं चात्र योजयेत् ॥ १०५१ ॥

एतानि समभागानि गोमूत्रेणैव पेषयेत् ।
गुञ्जाभा गुटिका कार्या दद्यादार्द्रकजै रसैः १०५२
एकामजीर्णगुल्मेषु द्वे विसूच्याञ्च दापयेत् ।
तिस्रः स्युः सर्पदष्टेषु चतस्रः सन्निपातके ॥
वटी सञ्जीवनी नाम्ना सञ्जीवयति मानवम् १०५३

शा सं., वृ.यो.त., नि.र., भै.सा , रसायनस , वै. र., यो. चि , चि र भ , यो.र., यो.म , वै चि., व रा , चि. क्र., यो त , अजीर्णादौ ।

भाषा—विडङ्ग, सोंठ, पीपल, हर्रे, आवले, बहेड़े, वच, गिलोय, शुद्धभिलावे और बछनाग समभाग लेकर बारीकचूर्णकरे । भिलावे और ताज़ीगिलोयको गोमूत्रमें २–३ दिन घोटकर दूसरीचीजें मिलावे और अच्छीतरह घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथ अजीर्ण और गुल्ममें देवे । हैज़ेमें २ गोली, सर्पदंशमें ३ और सन्निपातमें ४ गोलियोंकी मात्रादेनेसे यह मनुष्यको जीवितदान देतीहै ॥ २५० ॥

२५१ सञ्ज्ञाप्रबोधप्रधमनम्

वचा रसोनकटुकं सैन्धवं बृहतीफलम् ।
रुद्राक्षं मधुसारञ्च फलं सामुद्रिकं मतम् ॥१०५४॥
गन्धेशौ समभागानि ह्यर्कक्षीरेण भावयेत् ।
भावयेन्मीनपित्तेन त्रिवारं चूर्णयेत्ततः ॥ १०५५ ॥
धमनं कथितं श्रेष्ठं सन्निपाते सुदारुणे ।
कफोल्वणे तीव्रवाते अपस्मारे हलीमके ॥१०५६॥
शिरोरोगे नेत्ररोगे कर्णरोगे विधानतः ।
ध्मापयेद्घ्राणछिद्राभ्यां सञ्ज्ञाकरणमुत्तमम् १०५७

रसायनस , सन्निपाते ।

टि०—अत्र मधुसारशब्देन मधुयष्टिका ग्राह्या । केचित्तु चन्द्रमरवक कथयन्ति ।

भाषा—वच, लहसन, कुटकी, सेंधानमक, भटकटैयाके फल, रुद्राक्ष, मुलहठी अथवा चन्द्रमरवक, समुद्रफल, पारा और गन्धक समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय आकके दूध और मछलीकेपित्तसे ३–३ भावनाए देकर सुखाकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । कफोल्वण भयङ्करसन्निपात, तीव्रज्वर, अपस्मार, हलीमक, शिरोरोग, नेत्ररोग और कर्णरोग इनमें इसका नस्यदेनेसे चेतना प्राप्तहोतीहै ॥ २५१ ॥

२५२ सञ्ज्ञाप्रबोधरसः

स्फटिका तुत्थनेपालं मरिचं निम्बवीजकम् ।
पुत्रजीवकमज्जा च निम्बुनीरेऽर्कभाजने ॥ १०५८ ॥
भावनाः सप्त दातव्या गुटी गुञ्जामिता कृता ।
अञ्जनात्सन्निपाताऽहिविषाऽपस्मारनाशिनी १०५९

रसायनस , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध फिटकड़ी, तुत्थ और जमालगोटा, मरिच, नीमकेवीज और पतजीवाकी मज्जा सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर तावेके वर्तनमें डालकर नीबूकेरसकी ७ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मनुष्यलाला अथवा नीबूकेरसमें घिसकर अञ्जनकरनेसे सन्निपात, सर्पविष और अपस्मारको यह नष्टकरताहै ॥ २५२ ॥

२५३ सत्त्वशेखररसः

सूतं रसकसत्त्वेन सारयित्वा समेन च ।
सत्त्वं तालस्य ताप्यस्य सर्वतुल्यबलिं क्षिपेत् १०६०
मर्दयेत्सुपवीनीरे राजकोषातकीजलैः ।
देवदालीरसे यामं यामं लवणयन्त्रके ॥ १०६१ ॥
पचेच्छीतं विचूर्ण्याथ भावयेत्तैस्त्रिभि र्जलैः ।
यवचिञ्चाहरिक्रान्ताकन्यानां सलिलैः पृथक् ॥१०६२॥
द्विवल्ला वटिका चास्य पिप्पली मधुसंयुता ।
प्रयुक्ता हन्ति वेगेन शीतदाहादिकं ज्वरम् ॥ १०६३ ॥

टो०, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारेको समभाग खर्परसत्त्वमें सारणायन्त्रसे मिलाकर समभाग हरिताल और माक्षिकसत्त्वकेसाथ मिलावे । फिर सवकीवरावर शुद्धगन्धक मिलाय नीलवर्णकज्जलीकर करेला, कड़वीलौकी और वन्दालकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोला, वनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर १–१ पहर लवणयन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर करेला, कड़वीलौकी, वंदाल जैंती, कोयल और घीकुवारकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पीपल और मधुकेसाथदेनेसे शीत अथवा दाहादियुक्तज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ २५३ ॥

२५४ सद्योज्वराङ्कुशरसः

रसञ्च नागवङ्गौ च समांशान् मेलयेत्तथा ।
अमृतञ्चाऽपि सदृशं मर्दयेदुष्णवारिणा ॥ १०६४ ॥
कटुत्रयेण दातव्यं गुञ्जामात्रं भिषग्वरैः ।
सद्यो ज्वराङ्कुशो नाम सर्वज्वरविनाशकः ॥ १०६५ ॥

वै. चि , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, नाग और वङ्गको इकट्ठा गलाय पारेकी वरावर शुद्धबछनागकाचूर्णमिलाय १–२ दिन शुष्कमर्दनकर गरमपानीसे घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली त्रिकटुकेचूर्णकेसाथ देनेसे यह तत्क्षणआयेहुए ज्वरको नष्टकरताहै ॥ २५४ ॥

२५५ सन्धिवातहररसः

गोदुग्धे गुटिका कार्या वोलगुग्गुलुहिङ्गुलैः ।
हरेद्वातव्यथां सर्वसन्धिवातञ्च दुःसहम् ॥ १०६६ ॥

रसायनस , वातरोगाऽधिकारे ।

भाषा—हीरावोल, गूगल और शिंगरिफ समभागलेकर १–२ दिन गोदुग्धमें मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह सन्धिवातको नष्टकरताहै ॥ २५५ ॥

२५६ सन्धिवातारिरसः (रत्नगर्भपोट्टली)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं हिङ्गुलं कटुरोहिणी ।
लोहताम्रमयोभस्म तालकञ्च मनःशिला ॥ १०६७ ॥
अर्कमूलकषायेण मर्दितं वटकीकृतम् ।
काचकूप्यां निवेश्याथ लेपयेद्वस्त्रमृत्तिकाम् ॥१०६८॥
त्रियामं वालुकायन्त्रे पचेन्मृद्वग्निना ततः ।
गुञ्जामात्रं प्रयुञ्जीत सन्धिवातं निहन्त्यलम् ॥१०६९॥

व.रा ,वै चि ,सन्धिवाते ।

टि०—वैद्यचिन्तामणौ अस्माद्रसाद्गन्धक मन शिलाद्य निष्कास्य पितामहरस इति नाम स्थापितम्। तथाच "सन्धिवात निहन्त्यल-" मित्यस्य स्थाने अत्युग्र नाशयेज्ज्वरमिति पाठ कृतस्तेन सन्धिवात-शब्देन सन्धिगसन्निपात विवक्षित स्यादिति प्रतिभाति। रसस्य तदनु-पानस्य चात्युग्रवीर्यत्वादुभयस्याऽपि नाशे न कापि विप्रतिपत्ति ।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग, गन्धक और शिंगरिफ-कुटकी, कान्तलोह, ताम्र और फोलादभस्म, शुद्ध हरिताल और मैनसिल सबसमभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर आककीजड़केरससे एकदिनमर्दनकर वेरवरावरगोलियें बनाय सुखाकर आतशीशीशीमें भरके मुहवन्दकर वालुकायन्त्रमें रख ३ पहरकी अग्निदे। इस-मेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह सन्धिवातको दूरकरताहै ॥ २५६ ॥

२५७ सन्निपातकालानलरसः

वद्धन्तु ताम्रपत्रेण सूतं गन्धकतालकम् ।
विषमर्कं सुवर्णञ्च रसकं हेममाक्षिकम् ॥ १०७० ॥
कृशानुतोयसङ्घृष्टं दिनं तद्गोलकं पुनः ।
संस्कृत्य मृत्पटैर्गाढं वालुकायन्त्रगं पचेत् ॥ १०७१ ॥
त्रिदिनं स्वाङ्गशीतन्तु पित्तैर्भाव्यश्च पञ्चभिः ।
देवेशि सर्वतुल्येन धूपितं हि विषेण च ॥ १०७२ ॥
अर्द्धगुञ्जामितं खादेत्सन्निपातं सुदुस्तरम् ।
शैत्यतन्द्राप्रलापोग्रं सान्द्रवातकफोल्वणम् ॥ १०७३ ॥
जयेदग्नेश्च कृशतां ज्वराञ्जीर्णान्नवानपि ।
ग्रहण्युदरशोथार्शोऽरुचिदौर्वल्यपीनसान् ॥ १०७४ ॥

र क , सन्निपाते ।

भाषा—अनलरसकी प्रक्रियासे वाधाहुआ पारा, शुद्ध-गन्धक, हरिताल और वछनाग, तावा, सुवर्ण, खपरिया और सोनामाखी इनकीभस्में सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर चित्रकमूलकेरससे एकदिनमर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी लगाय सुखाकर ३ दिन वालुका-यन्त्रकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पाचोंपित्तोंसे १–१ भावना देकर घड़ेकेभीतरलेपदेकर सवकीवरावर वछनाग-काचूर्ण नीचेकेघड़ेमें विछाय डमरूयन्त्र वनाकर ३–४ कपड़-मिट्टी देकर वछनागवाले घड़ेको चूल्हेपर चढाय इतनी आचदे कि तमामवछनाग जलकर धूआ ऊपरके रसमें समाविष्ट होजाय स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे निकाल आधी आधी रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचि-तानुपानकेसाथ देनेसे सर्वाङ्गशीत, तन्द्रा और अधिकप्रलापयुक्त वातकफोल्वणसन्निपात, मन्दाग्नि, जीर्णज्वर, ग्रहणी, उदररोग, शोथ, ववासीर, अरुचि, पीनस इनसवको यह नष्टकरताहै २५७

२५८ सन्निपातकृतान्तकरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं बृहती कण्टकारिका ।
सक्षौद्रैः पेषयेद्यामं शुष्कं तद्भावयेद्द्रवैः ॥ १०७५ ॥
रक्तशालिनिकावासाभृङ्गीश्वेतापराजिता- ।
रुदन्तीविजयाब्राह्मीनिर्गुण्डीचित्रकद्रवैः ॥ १०७६ ॥
कपिकच्छुकमूलैश्च मरिचानां कषायकैः ।
धत्तूरद्रवकेणैव धूमसारञ्च निक्षिपेत् ॥ १०७७ ॥
रसतुल्यं ततस्तञ्च दिनं पित्तैश्च भावयेत् ।
मात्स्यमाहिषमायूरैर्ज्योतिष्मत्याश्च तैलकैः ॥१०७८॥
चणमात्रां वटीं कुर्याद्भक्षयेत्सन्निपातयुक् ।
अभावे सति पित्तानां विषमुष्टिन्तु षड्गुणम् ॥१०७९॥
क्षिपेद्रसस्य तत्सिद्धिस्सन्निपातकृतान्तकः ।
सेव्यं दध्योदनं पथ्यं घृताभ्यक्तञ्च कारयेत् ॥
धारा शिरसि दातव्या सर्वाङ्गे शीतलै र्जलैः ॥१०८०॥

र सु ,सू प्र ,र का ,र क यो., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, भटकटैया, वनभाटा सव समभागकी नीलवर्णकज्जलीकर मधु, लालगुञ्जा, अडूसा, भगरा, सफेदकोयल, रुदन्ती, भाग, ब्राह्मी, निर्गुण्डी, चित्रक, केवाच कीजड़, मरिच और धतूरेके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर पारेकीवरावर गृहधूम मिलाकर मछली, भैंसा और मोरकेपित्तोंमें १–१ भावना देकर मालकागनीके तैलसे घोटकर चनेप्रमाण गोलिया वनाकर रखछोड़े। पित्तोंके अभावमें पारेसे षड्गुण शुद्धकुचिला डाले। इनमेंसे १–१ गोली सन्निपातमें समयोचितानुपानकेसाथदेवे। दाहमालूमहोनेपर घीसे अभ्यङ्गकराय सिरपर ठंढेपानीकी धारा दे तथा स्नानकरावे। अत्यन्तभूखलगनेपर दहीभातदे ॥ २५८ ॥

२५९ सन्निपातगजव्यालरसः

पूर्ववच्छोधितं सूतं भस्मीभूतं समाहरेत् ।
सुवर्णं रजतं ताम्रं तीक्ष्णं त्रपु च नागकम् ॥ १०८१ ॥
माक्षीकमभ्रकञ्चैव समान्भागान् समाहरेत् ।
भस्मीकृतांश्च तॉल्लोहान् रसेन सह मर्दयेत ॥१०८२॥
गन्धकं वत्सनाभञ्च सर्वैः सममुपानयेत् ।
एकीकृत्याऽथ सर्वं तन्मर्दयेदार्द्रकद्रवैः ॥ १०८३ ॥
त्रिदिनं कृष्णतुलसीनीरैः सम्मर्दयेद्बुधः ।
कृष्णधत्तूरकद्रावैः क्वाथै र्मरिचसम्भवैः ॥ १०८४ ॥
पिप्पल्युत्थैश्च शुण्ठीजै र्भावयेद्व्योषजैस्तथा ।
भृङ्गाद्रीरक्तमुनिजैः पिप्पलीकासजं रसैः ॥ १०८५ ॥
निलपर्णीरसैस्तद्वद्धुत्पर्णीसलिलैस्तथा ।
वह्निनीरैश्च मण्डूकीरसैरर्कस्य पत्रजैः ॥ १०८६ ॥

भृङ्गीरसैः प्रमर्द्याथ पश्चात्पित्तैश्च भावयेत् ।
मयूरमीनवाराहच्छागमाहिषसम्भवैः ॥ १०८७ ॥
धूमपानं ततः कुर्यात्पूर्वोक्तविधियोगतः ।
गुञ्जाप्रमाणवटिकाः कर्तव्यास्त्रिकटोरसैः ॥ १०८८ ॥
त्रिकटुक्वाथयोगेन रसेन्द्रं सम्प्रयोजयेत् ।
अनुपाने प्रदातव्यस्त्रिकटो रस एव हि ॥ १०८९ ॥
पाथांसि ढालयेत्तत्र सुशीतानि बहून्यपि ।
ततः पथ्यं प्रदातव्यं मुद्गक्वाथेन संयुतम् ॥ १०९० ॥
उपचारस्तु पूर्वोक्तः कर्तव्यो नाऽत्र संशयः ।
शीतद्रवै भवेद्वीर्यं पित्तवद्धरसांत्तमे ॥
सन्निपातगजव्यालो रसेन्द्रः परिकीर्तितः ॥ १०९१ ॥

रसालं., सन्निपाते ।

भाषा—ऊर्ध्वपातनादिसंस्कारकर भस्मकियाहुआ पारा, सुवर्ण, रजत, ताम्र, फोलाद, वङ्ग, नाग, सोनामाखी, अभ्रक इनकीभस्में सब समभागलेकर शुद्धगन्धक और वच्छनाग सबकी बराबर बराबर मिलाय बारीकचूर्णकर अदरखकेरससे ३ दिन मर्दनकर कालीतुलसी, धतूरा, मरिच, पीपल, सोंठ, भंगरा, लालअगस्त्य, पीपल, हुरहुर, अम्लोनिया, चित्रक, ब्राह्मी, आकके पकेपत्ते, भांग इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ भावना देकर मोर, मछली, सुअर, बकरा, भैंसा इनके पित्तोंसे १-१ भावना देवे । फिर मिट्टीकीहंडीमें इसका लेप देकर दूसरीहंडीमें बराबरकेवच्छनागकाचूर्णबिछाकर डमरूयन्त्र-बनाय चूल्हेपर वच्छनागवाली हंडीको रख इतनीआचदे कि वच्छनाग जलकर तमाम धूंआ रसमें समाविष्टहोजाय । स्वाङ्गशीतलहोनेपर त्रिकटुकेक्वाथसे मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटुके क्वाथकसाथदेनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै । अत्यन्तगर्मीलगनेपर ठंढेजलकी-धारादे । भूखलगनेपर मूगकायूष और भातदे । शीतजलमे पित्त-युक्तरसोंमे तेजी आतीहै इसलिये तमाम शीतोपचार करे । इसके सेवनसे सन्निपात नष्टहोताहै ॥ २५९ ॥

२६० सन्निपातगजाङ्कुशरसः

मृतं सूतं मृतश्चाभ्रं शुद्धतालकमाक्षिके ।
रामठं तुल्यतुल्यं स्यान्मर्दयेत्खल्वके द्रवैः ॥ १०९२ ॥
वन्ध्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्बचित्रकैः ।
धत्तूरलाङ्गलीपाठाभृङ्गीजम्बीरजै द्रवैः ॥ १०९३ ॥
त्रिदिनं मर्दयेदेभिश्चूर्णं कृत्वा विमिश्रयेत् ।
त्रिक्षारं सैन्धवं व्योषं विषं मधूकसारकम् ॥ १०९४ ॥
तुल्यं तुल्यं विचूर्ण्याथ पूर्वोक्तश्च रसं समम् ।
एकीकृत्य भवेत्सिद्धः सन्निपातगजाङ्कुशः ॥
सन्निपातं निहन्त्याशु गुञ्जामात्रः प्रयोजितः ॥१०९५॥

र सु., र र स, र क यो, र र, नि र, र को र का, सू-ग्र, सन्निपाते ।

टि०—रसरत्नाकरे माक्षिकस्थाने ताम्र नियोजितम् । र सु', र क यो एतयो हिंगुस्थाने हिङ्गुल नियोजित तत्तु न सम्यक्? सर्वत्र रामठस्यैवोपलम्भे । शुद्धपारदस्यागमनाच्च निर्गुण्डीसुगन्धानिम्बचित्रकैरित्यत्र रसरत्नाकरे शुण्ठीगन्धालिचित्रकैरिति पाठो दृश्यते तत्र गन्धालिशब्देन फागळी (मराठी) ग्राह्या यन्महाराष्ट्रदेशे फुर्साख्यजन्तुविषे प्रयुज्यते । यत्र तदभावस्तत्र कुकुरोंधेति प्रसिद्धमौषध योज्यम् । केचित्तु मगधदेशे गेन्धारीतिनाम्ना प्रसिद्धत्वाद्रक्तमारिष गृह्णन्ति, तत्तु न सम्यक्? तत्रोत्कटगन्धस्याऽभावात्तत्सत्त्वेनैव गन्धालीति शब्दप्रयोगात्सन्निपातहरणाऽसमर्थत्वाच्च । रत्नाकरौषधयोगे वातज्वरगजाङ्कुशनाम्ना "रसतालकताप्याभ्रलाङ्गलीवह्निरामठान् । पथ्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्बपल्लवान् ॥ पाठाविडङ्गमुस्तैलावोलधत्तूरतण्डुलान् । भृङ्गीमधूकसारञ्च जम्बीराम्लेन पेषयेत् ॥ कुर्याल्कनकमानेन वटिका सन्नियच्छति । सस्वेददाहाभिन्याम वातज्वरगजाङ्कुश ॥" श्लोक पाठो निहितोऽस्ति । र र स, र को, र क यो. एषु सन्निपातगजाङ्कुशनाम्ना "रसगन्धकताभ्राभ्र लाङ्गलीवह्निरामठम् । वन्ध्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्बपल्लवा ॥ पाठा क्षारत्रय ध्वेतोलधत्तूरतण्डुलै. । शृङ्गीमधूकसाराभ्या जम्बीराम्लेन मर्दयेत् ॥ कुर्याद्धि माषमानेन वटिका सा नियच्छति । सस्वेददाहाऽभिन्यास सन्निपातगजाङ्कुश ॥" इति द्वितीय पाठो निहितोऽस्ति । अनयोर्द्वयोरपि "मृत सूत मृत चाभ्र शुद्धतालकमाक्षिक—"मित्याद्युपरिनिर्दिष्ट पाठ एव मूल प्रतीयते बहुग्रन्थसम्वादात् । रत्नाकरौषधयोगकर्त्रा तु जनान्व्यामोहयितु पाठद्वय चास्माद्भिन्नो प्रकल्पितौ । साम्प्रतिकदशाया महतामपि बुद्धिराकुला भवति यत्कस्को योग सम्पादनीय इति । अधिकन्तु न तद्वानिरिति न्यायमङ्गीकृत्य योगत्रयनिर्दिष्टानि मूलद्रव्याण्येकीकृत्य सर्वाभिर्भावनाभिरपि विभाव्य एक एव रस सम्पादनीय इति विशेषु विज्ञप्ति । स यथा—मृताभ्रताम्रसमानि गन्धकमाक्षिकताललाङ्गलीधत्तूरबीजविषाणि सुशुद्धानि वह्निरामठपथ्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्बपल्लवपाठाविडङ्गमुस्तैलावोलभृङ्गीमधूकसारत्रिक्षारसैन्धवव्योषवन्ध्याकर्कोटकीकन्दाश्चैतानि द्रव्याण्येकत्र सम्पिष्य वन्ध्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्बचित्रकधत्तूरघोषालाङ्गलीपाठाभृङ्गमेघनादशृङ्गीमधूकसाराणां यथासम्भव स्वरसै क्वाथै र्वा एकैका भावना प्रदायान्ते जम्बीराम्लेन त्रिदिन विमर्द्य गुञ्जाप्रमाणवटिका विधाय यथारोगमनुपान विभज्य प्रदेय इति सर्वं समञ्जस भविष्यति ।

भाषा—पारद और अभ्रकभस्म, शुद्ध हरिताल, सोनामाखी, हींग सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर बाझखेखसा, परवल, निर्गुण्डी, फागळी (मराठी) अभावमें कुकरोंधा, नीमकीछाल, चित्रककीजड़, धतूरा, करिहारी, पाठा, भंगरा, जभीरी इनके रसोंसे ३-३ दिनमर्दनकर तीनोंक्षार, सैन्धव, त्रिकटु, शुद्धवच्छनाग, महुएकासार, सबसमभागलेकर पूर्वरसकी बराबर मिलाकर १-२ दिन घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तसन्निपातोंको नष्टकरताहै ॥ २६० ॥

२६१ सन्निपातदावानलरसः (प्रथमः)

तालकं नागवङ्गे द्वे हरवीर्यञ्च टङ्कणम् ।
त्रिक्षारं पञ्चलवणं गरलं पार्वती शिला ॥ १०९६ ॥
एतानि समभागानि निम्बुनीरेण मर्दयेत् ।
पाचितं वालुकायन्त्रे दिनैकं तीव्रवह्निना ॥ १०९७ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य शिखिच्छागाहिपित्तकैः ।
भावितं माषमात्रञ्च दातव्यं दोषनाशनम् ॥ १०९८ ॥
सन्निपातान्निहन्त्याशु दध्यन्नं पथ्यमाचरेत् ।
दावानलरसः ख्यातो वीतिहोत्रप्रकल्पितः ॥ १०९९ ॥

वै. चि., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धहरिताल, नाग और वङ्गभस्म, शुद्ध पारा और सुहागा, तीनोंक्षार, पाचोंनमक, सर्पविष, शुद्ध गन्धक और मैनसिल सब समभागलेकर हरिताल, पारा, गन्धक और मैनसिलकी नीलवर्णकज्जलीकर अन्यसबचीजोंको मिलाकर नीबूकेरससे १–२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर अच्छीतरहसूखनेपर वालुकायन्त्रमें बन्दकर ४ पहरकी कड़ीआचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर मोर, बकरा और सापके पित्तोंसे १–१ भावना देकर उड़दबरावर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह तमामसन्निपातोंको नष्टकरताहै। मूर्च्छाजगनेपर अत्यन्त भूखलगे तो दहीभात खानेको देवे ॥ २६१ ॥

२६२ सन्निपातदावानलरसः (द्वितीयः)

मनःशिलारसौ तुल्यौ मर्दनीयौ गवां जलैः।
ततस्तु गोलकीकृत्य शोषयित्वा खरातपे ॥ ११०० ॥
गोपाययित्वा ताम्रेण सन्धिबन्धं विधाय च।
वालुकायन्त्रसम्पक्वमहोरात्रात्समुद्धरेत् ॥ ११०१ ॥
अष्टमांशं तत्र योज्यं जातीफलकणाविषम्।
मत्स्यमाहिषवाराहमयूरच्छागसम्भवैः ॥ ११०२ ॥
पित्तैस्तु सप्तधा भाव्यं टङ्कणं तत्र निक्षिपेत्।
सन्निपाते महाघोरे दद्यात्तं प्रच्छनादिभिः ॥
व्रीहिमात्रप्रयोगेण सन्निपातविनाशनः ॥ ११०३ ॥

र क यो, सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध मैनसिल और पारा समभागलेकर गोमूत्रमें २–३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय कड़ीधूपमें सुखाकर तावेकेसम्पुटमें बन्दकर वज्रमिट्टीसे सन्धिबन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर वालुकायन्त्रमें ८ पहरकी कड़ी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर जितनी तावेकीभस्महोगईहो उतनी इकट्ठी मिलाय जायफल, पीपल और शुद्धबछनाग अष्टमाश मिलाकर मछली, भैंसा, सुअर, मोर और बकरेकेपित्तोंसे ७–७ भावनाएं देकर दशाश भुनासुहागा मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे यवप्रमाणमात्रा सन्निपातजमूर्च्छामें तालुमें पाछलगाय रक्तमें थोड़ीदेर मसलनेसे मूर्च्छा निवृत्तहोतीहै ॥ २६२ ॥

२६३ सन्निपातभैरवरसः (प्रथमः)

ताम्रं गन्धं रसं श्वेतगुञ्जामरिचपूतनाः।
समीनपित्तजैपालांस्तुल्यानेकत्र मर्दयेत् ॥ ११०४ ॥
युग्मगुञ्जाप्रमाणन्तु नवज्वरहरं परम्।
ज्वराङ्कुशः सन्निपातभैरवोऽयं प्रकाशितः ॥ ११०५ ॥

र स, र च, र म, रसायनस, ना वि, र का, र सु, सन्निपाते। र सु ज्वराङ्कुश इति नाम।

भाषा—ताम्रभस्म, शुद्धगन्धक और पारा, सफेदगुञ्जा, मरिच, वच अथवा जटामासी, मछलीकापित्त, शुद्धजमालगोटा सब समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जली में मिलाय मछलीकेपित्तकी भावना देकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपात और नवज्वरको नष्टकरताहै २६३

२६४ सन्निपातभैरवरसः (द्वितीयः)

रसो गन्धस्त्रिस्त्रिकर्षौ कुर्यात्कज्जलिकां द्वयोः।
ताराभ्रताम्रवङ्गाहिसाराश्चैकैककार्षिकाः ॥ ११०६ ॥
शिग्रुज्वालामुखीशुण्ठीबिल्वेभ्यस्तण्डुलीयकात्।
प्रत्येकस्वरसैः कुर्याद्यामैकैकं विमर्दनम् ॥ ११०७ ॥
कृत्वा गोलं वृतं वस्त्रे लवणापूरिते न्यसेत।
काचभाण्डेऽथवा स्थाल्यां काचकूप्यां निवेशयेत् ११०८
वालुकाभिः प्रपूर्याथ वह्निर्यामद्वयं भवेत्।
तत उद्धृत्य तं गोलं चूर्णयित्वा विमिश्रयेत ॥ ११०९॥
प्रवालचूर्णकर्षेण शाणमात्रविषेण च।
कृष्णसर्पस्य गरले दिवसं भावयेत्तथा ॥ १११० ॥
तगरं मुशली मांसी हेमाह्वा वेतसः कणा।
नीलिनी पत्रकं चैला चित्रकश्च कुठेरकः ॥ ११११ ॥
शतपुष्पा देवदाली धत्तूरागस्त्यमुण्डिकाः।
मधूकजातिमदना रसैरेषां विमर्दयेत् ॥ १११२ ॥
प्रत्येकमेकवेलञ्च ततः संगोप्य धारयेत्।
बीजपूरार्द्रकद्रावे मरिचैः षोडशोन्मितैः ॥ १११३ ॥
रसो द्विगुञ्जाप्रमितः सन्निपाते च दीयते।
प्रसिद्धोऽयं रसो नाम्ना सन्निपातस्य भैरवः ॥ १११४॥

शा स, र प्र, यो र, नि र, त्र यो. त, रसायनम, र का., त्रि, सन्निपाते।

टि०—वृहद्योगतरङ्गिण्या अर्कदेवदारुभावने विशेषेणोपात्ते विषञ्च अर्काशप्रमित दत्तमिति विशेष। त्रिशतया सन्निपातहर इति नाम।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ३–३ कर्ष, चादी, अभ्रक, ताम्र, वङ्ग, नाग और फोलाद इनकी भस्में १–१ कर्षलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सहिजन, हुरहुर अथवा सूर्यमुखी, सोंठ, बेल, काटेवालीचौलाई इनप्रत्येकेकेस्वरसोंसे १–१ पहर मर्दनकर गोला बनाय मलमलके कपड़ेमें लपेट शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर लवणयन्त्रमें बन्दकर दोपहरकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर प्रवालभस्म १ कर्ष, शुद्धबछनाग ८ माशे मिलाकर कालेसर्पकेजहरसे १ दिन मर्दनकर तगर, मुशली, जटामासी, सत्यानाशी अथवा रेवनचीनी, बेत, पीपल, नील, पत्रज, इलायची, चित्रक, जंगलीतुलसी, सोंफ, बन्दाल, धतूरा, अगस्त्य, गोरखमुण्डी, महुआ, जावित्री, मैनफल इन प्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली बिजोरे और अदरखकेरस तथा १६ कालीमिर्चोंके चूर्णकेसाथ देनेसे यह समस्तसन्निपातोंको दूरकरताहै ॥ २६४ ॥

२६५ सन्निपातभैरवरसः (तृतीय)

विषं गन्धं ताम्रभस्म सोमलञ्च समांशकम्।
पारदं सर्वतुल्यं स्यात्कृत्वा खल्वे तु कज्जलीम् १११५

निर्गुण्डीसुरसाद्रावै र्भावयित्वाऽऽर्द्रकद्रवैः।
तिलमात्रा वटी देया सन्निपातादिरोगजित् ॥१११६॥

र. चं., सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध बछनाग, गन्धक और सोमल, ताम्रभस्म सम-भाग, शुद्धपारा सबकीबराबर लेकर नीलवर्णकज्जलीकरनिर्गुण्डी, तुलसी और अदरखके रसोंकी १–१ भावना देकर तिलप्रमाण गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानु-पानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातादि समस्तरोगोंको दूरकरताहै २६५

२६६ सन्निपातभैरवरसः (चतुर्थः)

अष्टलोहभसिताभ्रभागकम
सूतगन्धघनभागमिश्रितम्।
वह्निनीरमृदितं दिनमेकं
षोडशांशविषमायुभावितम् ॥ १११७ ॥
गौञ्जिकं सुमरिचाग्निनीरयु-
क्सन्निपातहरभैरवो रसः।
स्याद्रवोद्धत इवारुणस्तमः
शोषितादिसुजये तथा हिमः ॥ १११८ ॥

र. शि., व. रा., र. क यो., सन्निपाते।

टि०—व रा., र. क यो. एतयोरग्निकुमारनाम्नैको रसो निदि-तोऽस्ति तत्रार्कमूलभावना प्रदाय वालुकाया स्वल्पपाकः कृतोऽस्ति। विषप्रक्षेपो मायुभावना च नास्त्यतस्तुटितः पाठोऽस्ति तस्याऽग्रवाऽन्त-भावो योग्यः, अत्राऽपि पाककरणे क्षत्यभावः।

भाषा—आठों लोहोंकीभस्में शुद्ध पारा, गन्धक और अभ्रकभस्म १–१ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर चित्रककेस्वरस अथवा क्वाथमें एकदिन मर्दनकर षोडशांश शुद्धबछनाग मिलाकर पाचोंपित्तोंकी १–१ भावनादेकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली १४ अथवा २१ कालीमिर्चोंके-साथ देकर चित्रकक्वाथ पिलानेसे अरुणोदयसे अंधेरेकीतरह सन्निपात नष्टहोताहै ॥ २६६ ॥

२६७ सन्निपातभैरवरसः (पञ्चमः)

क्ष्वेडं व्योषं तपनदरदं भागवृद्ध्या प्रदेयं,
कृत्वा क्षोदं विमलमखिलं योजयेद्वल्लमात्रम्।
आर्द्रात्तोयाज्ज्वरहरणकृत् सन्निपातेषु पथ्यं,
भक्तं दध्ना फलकृतियुतं भैरवाख्यो रसोऽयम् ११११९

र. शि., सन्निपाते।

भाषा—कड़वीतरोई, त्रिकटु, ताम्रभस्म और शुद्धशिंगरिफ क्रमवृद्धभागसे लेकर बारीकचूर्णकर कड़वीतरोईकेरससे एकदिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथ देनेसे समस्तसन्निपात नष्टहो-तेहैं। अत्यन्तभूख लगनेपर औचिती देखकर दहीभात देना ॥

२६८ सन्निपातभैरवरसः (षष्ठः)

व्योषं वचाऽभयाक्ष्वेडं विडङ्गं सैन्धवं रसम्।
गन्धकं हरितालञ्च निर्गुण्डीरसमर्दितम् ॥ ११२० ॥

मत्स्यमाहिषवाराहच्छागपित्तैश्च भावयेत्।
व्रीहिमात्रप्रयोगेण सन्निपातस्य भैरवः ॥ ११२१ ॥

र. क. यो., सन्निपाते।

भाषा—त्रिकटु, वच, हर्रे, कड़वीतरोई, विडङ्ग, सेंधानमक, शुद्ध पारा, गन्धक और हरिताल समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर निर्गुण्डीकेरससे एकदिन मर्दनकर मछली, भैंसा, सूअर और बकरेके पित्तोंसे १–१ भावना देकर यवप्रमाण गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तसन्निपातोंको नष्टकरताहै ॥ २६८ ॥

२६९ सन्निपातभैरवरसः (सप्तमः)

सूतं गन्धं लोहकिट्टं विमर्द्य
सर्वैस्तुल्यं वत्सनाभं नियुञ्ज्यात्।
आर्द्रं भृङ्गं वीजपूरञ्जयन्ती
निर्गुण्डीका व्यस्तताजैर्द्रवैश्च ॥ ११२२ ॥
युक्त्या वट्यो भावयित्वा विधेया
गुञ्जाऽर्द्धार्द्धे सन्निपातस्य नूनम्।
शीतैर्वाते निर्मलस्नानमत्र
पथ्यं दुग्धं शर्करामिश्रयुतञ्च ॥ ११२३ ॥

रसायनसं., चि सा, नि र, यो. र., सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, मण्डूरभस्म समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सबकीबराबर शुद्धबछनाग मिलाकर अदरख, भंगरा, बिजोरा, तितली और निर्गुण्डीकेस्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ चावलभर गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त-सन्निपातोंको नष्टकरताहै। अत्यन्तगर्मी मालूमहोनेपर पङ्खेकी हवाकरे और स्नानकरावे। भूख लगनेपर शक्करमिलाहुवा दूधदेवे ॥

२७० सन्निपातभैरवरसः (अष्टमः)

तालकं गन्धकं सूतं वत्सनाभं त्रिभिः समम्।
शिलाञ्च टङ्कणञ्चैव सर्वेषां समहिङ्गुलम् ॥ ११२४ ॥
मर्दयेच्चित्रजम्बीररसैरार्द्रस्य च त्र्यहम्।
गुटिका माषमात्रा स्यात्सन्निपातस्य भैरवः ॥ ११२५ ॥
त्रिदोषोत्थमतीसारकफपाण्ड्वामयादिकान्।
कुक्षिरोगमुदावर्तं सन्निपातं नियच्छति ॥ ११२६ ॥

रसायनसं, वा., र क यो., वै चि., भै. र, र.सु., व. रा., सन्निपाते।

टि०—भै र., र सु, व रा, एषु शिलाञ्च टङ्कणञ्चैवेत्यस्य स्थाने दारुमूषाञ्च गरलमितिपाठ विपर्यस्य योगान्तर स्थापित परन्तु तद्द्वय-स्याऽधिकतयाऽत्रैव निक्षेप कृत्वा रसनिष्पादने न काऽपि क्षतिः प्रत्युत विशिष्टभैरवतैव सम्पत्स्यते सा चाऽभीष्टतमैवाऽस्ति।

भाषा—शुद्ध हरिताल, गन्धक और पारा १–१ भाग, शुद्ध बछनाग, मैनसिल और सुहागा ३–३ भाग, शुद्धशिंगरिफ १२ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर चित्रक और जंभी-रीकेरससे ३–३ दिन मर्दनकर उड़दबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानु-

पानकेसाथ देनेमे सन्निपात, त्रिदोषजअतिसार, कफरोग, पाण्डु, कुक्षिरोग, उदावर्त, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २७० ॥

२७१ सन्निपातभैरवरसः (नवमः)

अथान्यं सम्प्रवक्ष्यामि भैरवं सन्निपातिनाम्।
दरदं शुद्धसूतञ्च काञ्चनं लोहभस्मकम ॥ ११२७ ॥
ताम्रभस्माऽभ्रकञ्चैव त्रपु सीसं तथैव च।
मौक्तिकं विद्रुमं ताप्यं कङ्कुष्ठाले मनःशिला ॥ ११२८ ॥
हद्धात्री चित्रकं व्योषं त्रिफलेन्द्रजरामठम्।
सूतार्द्धममृतं शुद्धं गन्धकञ्च चतुर्गुणम् ॥ ११२९ ॥
एकीकृत्य ततः सर्वं भावयेदातपे खरे।
व्योषाग्निशिग्रुसुरसात्रिफलाभृङ्गदन्तिजैः ॥ ११३० ॥
निशेऽश्वगन्धागायत्रीकुष्ठक्काथैश्च सप्तधा।
भावयेत्पञ्चपित्तैस्तु त्रिदोषभैरवो रसः ॥ ११३१ ॥
शृङ्गवेराऽम्बुनीरेण गुञ्जा सैन्धवसंयुता।
त्रयोदशसन्निपातान्कासश्वासापतानकान् ॥ ११३२ ॥
शूलाऽपस्मारसम्मोहतन्द्राऽऽध्मानवमिक्रिमीन्।
वातश्लेष्मोद्भवान्रोगाञ्जयेत्सर्वान्सुदुस्तरान् ॥ ११३३ ॥
जलयोगादि चाहस्य युक्त्या कुर्याच्च पूर्ववत्।
अहे गरलयोगेन सूच्यग्रेण प्रयोजयेत् ॥ ११३४ ॥

र. शं., सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध शिगरिफ और पारा, सुवर्ण, लोह, ताम्र, अभ्रक, वङ्ग, नाग, मोती, प्रवाल, सोनामाखी, मुर्दासिंग, हरिताल, मैनसिल, अम्लोनिया, चित्रक, त्रिकटु, त्रिफला, इन्द्रजव, भुनीहींग १–१ भाग, शुद्धवच्छनाग आधाभाग, शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर त्रिकटु, चित्रक, सहिजन, तुलसी, त्रिफला, भंगरा, दन्तीमूल, हल्दी, असगन्ध, खैर, कुठ, इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७, और पाचोंपित्तोंसे १–१ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली सेंधेनमक और अदरखकेरसकेसाथ देनेसें १३ प्रकारकेसन्निपात, कास, श्वास, खींचतान, शूल, अपस्मार, वेहोशी, तन्द्रा, आध्मान, वमन, क्रिमि, वातश्लेष्मजरोग इनसबको यह नष्टकरताहै। इसकेदेनेसे मूर्च्छा न जगे तो सर्पके विषमें मिलाकर सूचीकेअग्रभागसे मस्तकपर रक्तमेंयोगकरे और योग्यता देखकर जलकीधारादेवे ॥ २७१ ॥

२७२ सन्निपातभैरवरसः (दशमः)

हिङ्गुलस्य विशुद्धस्य सार्द्धतोलचतुष्टयम्।
गन्धकस्य विषस्याऽपि प्रत्येकं तोलकद्वयम् ॥ ११३५ ॥
समाषकद्वयञ्चैव कनकात्तोलकत्रयम्।
माषैकाधिकतोलैकं टङ्कणस्य तथैव च ॥ ११३६ ॥
सम्मर्द्य जम्बीररसै र्वटीश्छायाविशोषिताः।
गुञ्जैकपरिमाणास्तु कारयेत्कुशलो भिषक् ॥ ११३७ ॥
एकान्तु भक्षयेत्तस्य गोलयित्वाऽऽर्द्रकद्रवैः।
घोरे त्रिदोषे दातव्यः सन्निपातस्य भैरवः ॥ ११३८ ॥

भै. र., र. सु., सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध शिगरिफ ४॥ तोले, शुद्ध गन्धक और वच्छनाग २–२ तो., सुवर्णभस्म ३ तोले २ माशे, सुहागा १ तो. १ माशा लेकर बारीकचूर्णकर जंभीरीकेरससे १–२ दिनमर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाय छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे घोरसन्निपात नष्टहोताहै ॥ २७२ ॥

२७३ सन्निपातभैरवरसः (एकादशः)

तोलकांश्चतुरः सूतादष्टौ गन्धात्तथैव च।
खल्वयेदेकतः कृत्वा जायते कज्जली यथा ॥ ११३९ ॥
मर्दयेत्कज्जलीं तां तु मुण्डीद्रावैस्ततः परम्।
शुण्ठीद्रावैर्द्विधा भाव्यं कज्जलीं शोषयेत्ततः ॥ ११४० ॥
चतस्रो भावना देया भृङ्गराजरसैस्तथा।
तिलकच्छदारसैर्द्रावैस्तद्वद्वास्तुकभावना ॥ ११४१ ॥
कृष्णाशिवाविडङ्गानि मरिचानि तथैव च।
एतान्यर्धपलानि स्युः प्रत्येकं कल्पयेत्ततः ॥ ११४२ ॥
शुण्ठ्याः पलं तथा ताम्रान्मृतात्तद्वत्प्रकल्पयेत।
तोलमेकं विषं ग्राह्यं कर्षैकं कृष्णजीरकात ॥ ११४३ ॥
एतत्सर्वं समं कृत्वा मर्दयेत्कज्जलीयुतम्।
भृङ्गराजस्य तोयेन कृत्स्नं कल्कीभवेद्यथा ॥ ११४४ ॥
स्निग्धभाण्डे गतं कल्कं ततस्तं विपचेद्भिषक्।
मृदुपाको भवेद्यावत्तावत्पाकं प्रयोजयेत् ॥ ११४५ ॥
कार्या सोष्णस्य कल्कस्य वटी चणकसम्मिता।
सन्निपाते त्रिदोषे च कुष्ठरोगे विशेषतः ॥ ११४६ ॥
वटिका भिषजा देया चित्रकार्द्रकसैन्धवैः।
कुष्ठे त्रिभिः फलैर्देया वटिका रोगनाशिनी ॥ ११४७ ॥

र. मृ., सन्निपाते।

भाषा—४ तोले शुद्ध पारे और ८ तोले गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर गोरखमुण्डी और सोंठकेस्वरस अथवा क्वाथोंसे २–२ भावनाए देकर सुखादे फिर भंगरा, हुरहुर और बथुएके स्वरसोंकी ४–४ भावनाएं देकर सुखाकर पीपल, हर्रे, विडङ्ग और मरिच २–२ कर्ष, सोंठ और ताम्रभस्म ४–४ कर्ष, शुद्धवच्छनाग और कालीजीरी १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर कज्जलीमें मिलाय भंगरेकेरससे कल्कबनावे और चिकनेवर्तनमें रख बहुत मन्दआचसे मृदुपाककरे। गोली बंधनेलायक होनेपर उतारकर चनेप्रमाणगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली चित्रक तथा अदरखके रस और सैन्धव केसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै। कुष्ठमें त्रिफलाकेक्वाथकेसाथदेवे ॥ २७३ ॥

२७४ सन्निपातभैरवरसः (द्वादशः)

रसं विषं गन्धकञ्च हरितालं फलत्रयम्।
जयपालं त्रिवृत्स्वर्णं ताम्रसीसाभ्रलौहकम् ॥ ११४८ ॥
अर्कक्षीरं लाङ्गली च स्वर्णक्षीरीजमेव च।
रसैरासां सप्तकृत्वः प्रत्येकञ्च विमर्दयेत् ॥ ११४९ ॥
अर्कः श्वेताऽलम्बुषा च सूर्यावर्तश्च कारवी।
काकजङ्घा शोणकश्च कुष्ठं व्योषं विकङ्कतम् ॥ ११५० ॥

सूर्या मुनिश्चन्द्रकान्तो निर्गुण्डी रुद्रजा जटा ।
धुस्तूरदन्तिपिप्पल्यो दशाष्टाङ्गमिदं शुभम् ॥ ११५१ ॥
रसतुल्यं प्रदातव्यं दत्त्वा तोयं चतुर्गुणम् ।
शिष्टैकगुणतोयेन भावनाविधिरिष्यते ॥ ११५२ ॥
भावनायां भावनायां शोषणं मुहुरिष्यते ।
ततश्च वटिकां कृत्वा भैरवाय बलिं ददेत् ॥ ११५३ ॥
रसोऽयं श्रीसन्निपातभैरवो ज्वरनाशनः ।
सर्वोपद्रवसंयुक्तं ज्वरं हन्ति न संशयः ॥ ११५४ ॥
सन्निपातज्वरं हन्ति जीर्णञ्च विषमं तथा ।
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च चातुर्थिकमपि ध्रुवम् ॥ ११५५ ॥
ज्वरञ्च जलदोषोत्थं सर्वदोषसमाकुलम् ।
भैरवस्य प्रसादेन जगदानन्ददायकः ॥ ११५६ ॥

भै. र., र. सु., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग, गन्धक और हरिताल, त्रिफला, जमालगोटा, निसोत, सुवर्ण, ताम्र, सीसा, अभ्रक और लोह इनकीभस्में १–१ भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर आकका-दूध, करिहारी, सत्यानाशी अथवा रेवनचीनी इनप्रत्येक-केद्रवोंसे ७–७ भावनाएं देवे। फिर आक, वच, गोरखमुण्डी, हुरहुर अथवा सूर्यमुखी, कारवी (मराठी), काकजङ्घा, लाल-पुनर्नवा, कुठ, त्रिकटु, काटी, इन्द्रायण, अगस्त्य, कहरवा, निर्गुण्डी, रुद्रजटा, धतूरा, दन्ती, पीपल १–१ भागलेकर जवकुटकर चौगुनेपानीमें क्वाथकर चतुर्थांशावशेष रहनेपर छानकर इससे पूर्वरसको मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलियें बनाकर रख-छोड़े। फिर भैरवको बलिदेकर इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सर्वोपद्रवयुक्तसन्निपात, जीर्णज्वर, एकाहिकादि विषमज्वर, जलदोषजज्वर, इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ २७४ ॥

२७५ सन्निपातभैरवरसः (त्रयोदशः)

टङ्कणं भर्जितं शुद्धं मरिचं रसकं समम् ।
टङ्कणार्द्धं विषं दत्त्वा गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ॥
प्रातः सायं सन्निपातज्वरं हन्ति न संशयः ॥ ११५७ ॥

र सि, सन्निपाते ।

भाषा—भुनासुहागा, मरिच, शुद्धखपरिया १–१ भाग, शुद्ध वछनाग आधाभाग लेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती सुवहशाम उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै ॥ २७५ ॥

२७६ सन्निपातभैरवरसः (चतुर्दशः)

भस्मीकृतं शुद्धसूतं पूर्वोक्तपरिपाटितः ।
पलमेकं रसः सः स्याच्छुद्धं बलिवसापलम् ॥ ११५८ ॥
पलन्तु दरदस्योक्तं शुद्धस्य तु विधानतः ।
खल्वे कृत्वोभयं मर्द्यं शुष्कमर्दनयोगतः ॥ ११५९ ॥
दिनत्रयं प्रमर्द्याथ ततस्त्रिकटुभावनाः ।
सप्तकृत्वो मातुलोत्थैः भृङ्गीनीरैश्च भावनाः ॥ ११६० ॥
विषस्य भावनाः सप्त दत्त्वा कल्कं समुद्धरेत् ।
संशुद्धं सम्पुटं ग्राह्यमूर्द्धभाण्डे विलेपयेत् ॥ ११६१ ॥
व्योषधत्तूरविजयानीरैः कल्कीकृतं ततः ।
अधोभाण्डे विनिक्षिप्य वत्सनाभं विचूर्णितम् ११६२
पलमात्रं ततः कुर्यात्सम्पुटं सन्धिलेपतः ।
चुल्ल्यामुपरि चारोप्य वह्निं प्रज्वालयेच्छनैः ॥ ११६३ ॥
प्रहरद्वितयं यावद्यन्त्रमुत्तारयेत्ततः ।
निर्भिद्य सम्पुटं पश्चात्तं गृह्णीयाद्रसेश्वरम् ॥ ११६४ ॥
सन्निपाते महाघोरे सर्वचैतन्यवर्जिते ।
ददीत सूतराजं तं मुद्गमानेन बुद्धिमान् ॥ ११६५ ॥
अथवा मधुना कृत्वा वटिकां मुद्गमात्रिकाम् ।
एकां ददीत मधुना सन्निपातेऽतिदारुणे ॥ ११६६ ॥
दाहश्चेदतिभूयिष्ठः सलिलं ढालयेत्ततः ।
बुभुक्षा चेत्प्रजायेत दाधिकं भोजयेद्भिषक् ॥ ११६७ ॥
सन्निपातं निहन्त्येव रसेन्द्रो नाऽत्र संशयः ।
प्रोक्तो रसः सन्निपातभैरवोऽतिमहाबलः ॥
दृष्टप्रभावः सृष्टोऽत्र देवीशास्त्रानुसारतः ॥ ११६८ ॥

रसालं., ज्वराऽधिकारे ।

टि०—र स, भै र, र. च, र क., र सु, र र कौ., एषु विश्वे-श्वरनाम्ना " दरद गन्धक सूत तुल्याश मर्दयेद्द्वे । अश्वत्थजैस्त्र्यह पश्चा-द्रसै' कोल्कमूलजै ॥ निदिग्धिकारसै काकमाचिकाया रसै' पुन । द्विगुञ्ज वा त्रिगुञ्ज वा गोक्षीरेण प्रदापयेत् ॥ रात्रिज्वर निहन्त्याशु नाम्ना विश्वेश्वरो रस ॥,, इति पाठो दृश्यते तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भाव' सुकर'। विशेषभावनानामनुष्ठानेऽपि क्षत्यभावोऽस्ति पाठह्रासश्च महत्फलम्। र र कौ, र सु एतयोर्दरदस्थाने रसक दृश्यते रसरत्नकौमुद्यामनुपाने गोक्षीरस्थाने गोक्षुरो गृहीत । र श, रसायनस, र, टो, र मु, यो स, र म. मा, एषु ग्रन्थेषु " वृद्धा क्रमेण रसहिङ्गुलगन्धकानां भागा रसेन विजयाकनकच्छदानाम्। व्योषस्य सप्त पृथगेव विभावना स्यु' शुष्क पिवेद्द्रवति सिद्धगणेशनामा ॥ उग्र ज्वर ग्रहणिकामपि धातुताप साम निराममतिसारमथो वमिञ्च। श्वासञ्च कासमरुचिं त्वनुपानभेदाद्द्-लोऽस्य वा विजयते मगधामधुभ्याम् ॥ " इति पाठो निहितोऽस्ति तत्र च रसावतारे दरदगन्धकपारदान्समान्भागान्गृहीत्वा सर्वसमा कटुरोहिणीं मिश्रय्य सिन्धुवारस्वरसै सप्त भावना दत्त्वा निष्पादित । रसपारिजाते प्रथमचरणस्थाने " सूत खर्परगन्धकै शिखिभुजा नेत्रोन्मित भावयेदिति पाठ कृतोऽस्ति तत्र रसशब्देन खर्पर कल्पित, हिङ्गुलस्थाने सूतो नियोजित युक्तश्चैतत्प्रतिभाति। रोगाणामनुपानस्य चाकलनया योगे खर्परेणावश्य भवितव्यमिति । एतत्सर्वमपि रसालङ्कारीययोगे सम्मिश्रय्य सर्वा भावना अपि दत्त्वा एको रस सम्पादनीय ।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धगन्धक और शिंगरिफ १–१ पल लेकर ३ दिन शुष्कमर्दनकर त्रिकटु, विजोरा, भंगरा और वछ-नागकेद्रवोंसे ७–७ भावनाएं देकर एकभाण्डमें लेपकरदे। फिर एकपल वछनागके चूर्णको त्रिकटु, धतूरा और भागके रसोंसे मर्दनकर कल्कबनाय दूसरेपात्रमें लेपकर दोनों भाण्डोंका डमरू-यन्त्रबनाय ६–७ कपड़मिट्टीसे मुंहबन्दकर वछनागवाली हण्डीको चूल्हेपर रख दोपहरकी मन्द अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर ऊपरकी हण्डीमेंसे रसको निकालकर मधुसे मूंगवरावर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ अथवा सम-

योचितानुपानकेसाथ देनेसे अत्यन्त भयङ्कर सन्निपात निवृत्त होताहै। इसकेदेनेसे अत्यन्तदाह मालूमहो तो मत्थेपर जलकी-धारा देवे अत्यन्तभूखमालूमहोनेपर दहीभात खिलावे। यह कईवारका परीक्षितयोगहै ॥ २७६ ॥

२७७ सन्निपातभैरवरसः (पञ्चदशः)

सूतं गन्धमृताभ्रटङ्कणविषं द्वौ जीरकौ दीप्यकं,
द्वौ क्षारौ लवणानि पञ्च मरिचं निर्गुण्डिकार्ज पलम्॥
संयोज्यापि गुरूपदेशविधिना गुञ्जात्रयं सार्द्रकं,
जीवत्येवहि सन्निपातवहलस्वेदामृतोऽपि ज्वरी ११६९
ना वि, सन्निपाते।

भापा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा, और वछनाग, अभ्रक भस्म, दोनोंजीरे, अजमोद, दोनोंक्षार, पाचोंनमक, मरिच, निर्गुण्डी १–१ पललेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण-कज्जलीमें मिलाय अदरखकेरससे ३–३ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरख-केरसकेसाथदेनेसे शीतप्रस्वेदयुक्तभी सन्निपाती अच्छाहोजाताहै॥

२७८ सन्निपातभैरवरसः (पोडशः)

शुद्धं सूतं विषञ्चाभ्रं गन्धकं नागटङ्कणम्।
वटक्षीरे दिनं मर्द्यं दोलायन्त्रे दिनं पचेत् ॥ ११७० ॥
मत्स्यमाहिषमायूरपित्ते भाव्यं दिनत्रयम्।
देयं हि मापमात्रञ्च कणाक्वाथानुपानतः ॥ ११७१ ॥
तत्क्षणेन निहन्त्याढ्यै रक्तौष्ठमतिभीषणम्।
प्रसिद्धः सन्निपाताख्यभैरवो रस उत्तमः ॥ ११७२ ॥
वै. चि, वा, रक्तष्ठीविसन्निपाते।

भापा—शुद्ध पारा, गन्धक, वछनाग, अभ्रक और सीसाभस्म, सुहागा सव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर वटकेदूधसे एक-दिनमर्दनकर अदरखवगैरहसन्निपातहररसोंमें एकदिन दोलायन्त्रसे स्वेदनकर मछली, भैंसा और मोरके पित्तोंसे १–१ दिन मर्दन-कर उड़दवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पीपलके क्वाथकेसाथदेनेसे रक्तष्ठीवीसन्निपातको यह नष्टकरताहै॥

२७९ सन्निपातवडवानलरसः

रसादष्टौ विषात्सप्त षड् षड्गन्धकतालयोः।
पड्भागा दन्तिवीजानां पञ्चभागन्तु टङ्कणम् ॥११७३॥
चत्वारो धूर्तवीजस्य व्योपं भागत्रयं भवेत्।
एतानि वह्निमूलस्य क्वाथेन परिमर्दयेत् ॥ ११७४ ॥
आर्द्रकस्य रसेनाऽथ देयं गुञ्जाद्वयं हितम्।
वडवानलसञ्ज्ञोऽयं सन्निपातहरः परः ॥ ११७५ ॥
र, च., र. सं, र. क, सन्निपाते।

भापा—शुद्धपारा ८ भाग, वछनाग ७ भा., शुद्धगन्धक, हरिताल और जमालगोटा ६–६ भाग, भुनासुहागा ५ भा, शुद्धधतूरेकेवीज ४ भा., त्रिकटु ३ भा. लेकर सवका वारीक-चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय चित्रकमूलके क्वाथसे एकदिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रख-छोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथदेनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै ॥ २७९ ॥

२८० सन्निपातविध्वंसनरसः

सूतं गन्धं समं शुद्धं तालकं माक्षिकन्तथा।
मृतताम्राभ्रकं वोलं विषं धुस्तूरवीजकम् ॥ ११७६ ॥
त्रिक्षारं रविपत्रञ्च हिङ्गु पाठा पटोलकम्।
वन्ध्या भृङ्गत्रयं शुण्ठी कन्दं लाङ्गलिकं समम्॥११७७॥
सिन्धुवारद्रवैः सर्वं मर्द्यं जम्वीरजैरपि।
दिनैकं वटिका कार्या चणकाभाञ्च भक्षयेत् ॥ ११७८॥
अत्युग्रं सन्निपातञ्च सर्वोपद्रवसंयुतम्।
निहन्ति चानुपानेन दशमूलार्कजेन वा ॥ ११७९ ॥
कषायेण न सन्देहः पथ्यं दध्योदनं हितम्।
रसो विध्वंसनो नाम सन्निपातनिकृन्तनः ॥ ११८० ॥
र.र., र.सु, र.क, र को, र.का, र क यो., सन्निपाते।

टि०—"प्रतिपादितमार्गेण पात स्वेदञ्च जारणम्।
हेम्नो वलेश्च सूतेन्द्रे कृत्वा पश्चात्समाहरेत् ॥
हरिताल पलञ्चैकमसृत पलमात्रकम्।
वन्ध्याकान्दपल प्रोक्तं हलिनीकन्दज पलम् ॥
रक्षात्रय पल ग्राह्य चित्र शुण्ठी च मागधी।
पाठाधवल्वाह्लीक पटोलञ्च पलपलम् ॥
सर्वं समान व्योम स्याद्रस्मित प्रोक्तयुक्तित।
खल्वे ढत्वा शुष्कमर्दं दिनमेक समाचरेत् ॥
पक्वजम्बीरतोयेन पक्वजम्बूदलेन वा।
फलपूररसै र्वापि मर्दयित्वा दिनाष्टकम् ॥
तेन कल्केन कुर्वीत वटीश्चणकसम्मिता।
अथवा व्योमज भस्म पलमात्र समाहरेत् ॥
मर्दयेदुक्तरीत्या वै सर्वमौपधमण्डलम्।
रचयेद्वटिका प्राग्वच्छायाशुष्काश्च ता किरेत् ॥
पूजयित्वा महादेव भैरव योगिनीयुतम्।
विप्रान् सम्पूज्य विधिवत्सन्निपातेऽति दारुणे ॥
वटीमेका प्रयुञ्जीत भिषग् व्याधिविशेषवित्।
रसेन्द्रसेवामात्रेण सन्निपाताद्विमुच्यते ॥
स्वेदौत्कट्य तथा दाह सद्यो वारयति स्फुटम्।
दष्टावन्ध क्षणादेव निवारयति पारद ॥
सर्वेषु वातरोगेषु श्लेष्मजेषु प्रयोजयेत्।
अग्निमान्द्ये चोदरजे विकारे दीयता रस ॥
ऐकाहिक द्व्याहिक वा ज्वर नाशयते रस।
पथ्य प्रागुदित कुर्यादुपचारादि पूर्ववत् ॥
सम्प्रोक्तोऽय सन्निपातविध्वसनरसेश्वर।
सर्वज्वरहरश्चैव वातश्लेष्मनिवर्हण ॥

अय पाठो रसालङ्कारे निहितोऽस्ति परन्तु तत्र न रसान्तरता, मूलद्रव्याणामेकत्वात्। पारदसंस्काराणान्तु सर्वत्रैवात्यावश्यकता भवति ते यथाशक्य सर्वत्रैवाऽनुष्ठेया, तल्लेखनमात्रेण रसान्तरताकथनाऽयोग्यत्वात्। अवलपिप्पलीचित्रकाणामाधिक्य प्रतीयते परन्तु तेषामप्यत्रैवाऽभिकतया संयोग विधाय एक एव रस' सम्पादनीय इति विद्वत्सु विज्ञप्ति'।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और सोनामाखी, ताम्र और अभ्रकभस्म, मुरसकी, शुद्ध वछनाग और धतूरेकेवीज, सुहागा, सज्जी, यवक्षार, आकके पके पत्ते, भुनी हींग, पाठा,

परवल, वांझखेखसेकाकन्द, स्याह–सफेद और पीला भंगरा, सोंठ, करिहारी सबसमभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय संभाल और जंभीरीके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली दशमूल अथवा आककीजड़के क्वाथकेसाथ देनेसे समस्तोपद्रवयुक्त घोरसन्निपातको यह नष्टकरताहै। दोष शान्तहोनेपर अत्यन्तभूख लगनेपर दहीभात देना ॥ २८० ॥

२८१ सन्निपातसूर्यरसः (सन्निपातभैरवः)

रसेन गन्धं द्विगुणं गृहीत्वा
तत्पादभागं रवितारहेम।
भस्मीकृतं योजय मर्दयेत्त-
द्दिनत्रयं वह्निरसेन घर्मे ॥ ११८१ ॥
विषञ्च दत्त्वाऽत्र कलाप्रमाण-
मजादिपित्तैः परिभावयेच्च।
वल्लद्वयश्चास्य ददीत वह्नि-
कटुत्रयाऽऽर्द्रस्य रसप्रयुक्तम् ॥ ११८२ ॥
तैलेन वाऽभ्यज्य वपुश्च कुर्या-
त्स्नानञ्च तोयेन सुशीतलेन।
यावद्भवेद्दुःसहमस्य शीतं
मूत्रं पुरीषञ्च शरीरकम्पः ॥ ११८३ ॥
पथ्ये यदीच्छा परिजायतेऽस्य
मरीचखण्डं दधिभक्तकं वा।
स्वल्पं ददीतार्द्रमरीचभागं
दिनाष्टकं स्नानविधिश्च कुर्यात् ॥
त्रिदोषजेष्वेव सदा नियोज्यो
ज्वरेषु वै भैरवनामधेयः ॥ ११८४ ॥

र सं., र. क., रसायनसं, र च, र. चि., वृ यो. त., र मु., र दी., यो. म., र. का., र. सि., र. को., भै. र, र मृ, सन्निपाते।

टि०—रसचण्डाशौ द्वितीयस्थाने सन्निपातभैरव इति नाम। रसदीपिकायां पाणिवुडा इति नाम। भैषज्यरत्नावल्यां रसराजसुन्दरस्य च द्वितीयस्थाने तारस्थाने ताल नियोज्य रसेश्वर इति नाम स्थापितम्। रसामृते तु रसेन्द्रराज नामरस, सन्निपातानलश्चेति।

भाषा—शुद्ध पारा ४ भाग, गन्धक ८ भाग., ताम्र, रजत और सुवर्णभस्म १–१ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर चित्रकके-रससे ३ दिन धूपमें वैठकर घोटे। फिर इसमें १६ वां हिस्सा शुद्धवछनागमिलाय बकरावगेरह पांचोंपित्तोंसे १–१ भावना देकर ६–६ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली चित्रक, त्रिकटु और अदरखकेरसकेसाथ देनेसे त्रिदोषज सन्निपात नष्टहोतेहैं। तैलसे मालिशकराके मस्तेपर ठंढेजलकी धारादेवे जब शीत असह्य होजाय और मलमूत्रका त्यागहोकर शरीरकांपनेलगे तव बन्दकरे। अत्यन्त भूखलगनेपर मरिच डालकर खांड अथवा दहीभात खिलावे। मिर्च और अदरस थोडादेवे। दोषशान्त होनेपरभी दाह शान्त न हो तो ८ दिनतक शीतजलसे स्नानकरावे॥

२८२ सन्निपातहररसः (प्रथमः)

रसाभ्रम्लेच्छताप्यानां शिलागन्धकयोः समम्।
भृङ्गधूर्तरसैः पिष्ट्वा पञ्चघस्रं दशोपलैः ॥ ११८५ ॥
पुटेदेतद्द्विभागेनार्काह्वौ लौहाच्चतुर्बलेः।
खल्वे पिष्ट्वा दिनद्वन्द्वं पूर्ववल्लघु सम्पुटेत् ॥ ११८६ ॥
अस्य षोडश भागाः स्युर्नागांशो मर्दयेद्दिनम्।
वल्लमात्रप्रयुक्तोऽयं सन्निपातं नवज्वरम् ॥ ११८७ ॥
जयेदार्द्रकतोयेन द्राक्षाखण्डेन पैत्तिकम्।
क्षयपाण्डूर्तिकासादीन् निजयोगैः सकामलान्॥११८८
शोथं गुडकणायुक्तः सभगन्दरमुद्धतम्।
व्योषक्षौद्रेण चार्शांसि ग्रहणीं गुदजां व्यथाम् ११८९
नागवल्ल्या दलरसैः समं मूत्रै जलोदरम्।
गुल्मप्लीहोदरे वातजठरं त्रिफलोदकैः ॥ ११९० ॥
व्योषेण सर्वकुष्ठानि विसर्पञ्च पयोयुतः।
रुबुतैलेन शूलानि गुडूचीसत्त्वसंयुतः ॥ ११९१ ॥
प्रमेहांश्छिन्नुतोयेन धनुर्भङ्गादिकानिलान्।
सन्निपातहरश्चायं रसः सर्वत्र पूजितः ॥ ११९२ ॥

र. क, सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा, अभ्रकभस्म, शिंगरिफ, सोनामाखी, मैनसिल और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर भंगरा और धतूरेके रसोंसे ५–५ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर १० कण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इससे द्विगुण ताम्र और लोहभस्म तथा चतुर्गुणगन्धक डालकर पूर्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर १० कण्डोंकी आचदे। फिर इसमें १६ वा हिस्सा नागभस्म मिलाकर १–१ दिन पूर्वरसोंसे मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथदेनेसे सन्निपात और नवज्वर नष्टहोताहै। द्राक्ष और खांडकेसाथ पित्तज्वरको, तथा क्षय, पाण्डु, कास, कामला इनको अपने २ अनुपानोंसे, भगन्दर और शोथको गुड़ और पीपलसे, अर्श, ग्रहणी और गुदव्यथाको त्रिकटु और मधुकेसाथ देनेसे यह नष्टकरताहै। जलोदरको पान अथवा मूत्रोंसे, गुल्म, प्लीहा, पेटकावायु, मन्दाग्नि इनको त्रिफलाकेकाढेसे, समस्तकुष्ठोंको त्रिकटुसे, विसर्पकोदूधसे, शूलोंको एरण्डीकेतैलसे, प्रमेहोंको गिलोयसत्त्वसे और धनुर्वातादि भयङ्करवातरोगोंको सहिजनके रससे यह नष्टकरताहै ॥ २८२ ॥

२८३ सन्निपातहररसः (द्वितीयः)

पारदं गन्धकं टङ्कं सोषणं गजपिप्पली।
व्योषञ्च धुस्तूरजलैः पिष्टं गुञ्जाद्वयं द्रुतम् ॥
सन्निपातं निहन्त्यर्ककषायैर्व्योषचूर्णितः ॥ ११९३ ॥

र. स, र. क, सन्निपाते। र. क. धुस्तूरजलैरित्यस्य स्थाने धुस्तूरस्यरसैरिति पाठः।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और सुहागा, मरिच, गजपीपल त्रिकटु सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर धतूरेकेरससे एकदिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली त्रिकटुयुक्त आककीजड़केकाढ़ेकेसाथदेनेसे सन्निपातको यह नष्टकरताहै ॥ २८३ ॥

२८४ सन्निपातहररसः (सन्निपातान्तकः) (तृतीयः)

शुद्धसूतसमोगन्धो दरदं शुद्धखर्परम् ।
रसस्य द्विगुणौ देयौ मृतताम्राम्लवेतसौ ॥ ११९४ ॥
जम्बीरोत्थै दिनं मर्द्य भूधरे पाचयेल्लघु ।
हिङ्गु त्रिकटु कर्पूरं पञ्चैतन्मिलितं समम् ॥ ११९५ ॥
सर्वस्यैतत्समं चूर्णमार्द्रकस्य रसैः सह ।
महाराष्ट्र्याश्च निर्गुण्ड्या जयन्त्याः पिप्पलीद्रवैः॥
भृङ्गराजद्रवैः सप्त प्रत्येकं भावनाः पृथक् ।
दातव्यश्च चतुर्गुञ्जमार्द्रकस्य द्रवैः सह ॥
सन्निपातं निहन्त्याशु सन्निपातहरो रसः ॥ ११९७॥

र.क , र सं , रसायनस., र.को , र. सु , सू प्र , सन्निपाते।

टि०—रसेन्द्रकल्पद्रुम विहाय सर्वेषु ग्रन्थेषु सन्निपातान्तकरस इति नाम। कुत्रचिद्भावनायां जम्बीरस्थाने भृङ्गो नियोजित । र सु , र को , र (मा), नि र ,र का ,र क यो ,यो म ,रस स , एषु “ रसभस्मसम गन्ध ताम्रभस्म तयो समम् । ताम्रांश खर्पर योज्य खर्पराशश्च हिङ्गुलम् ॥,, इत्याकारेण पाठ विन्यस्य सन्निपातानल इतिनाम स्थापित तत्र हिङ्गुलखर्परयो र्द्वैगुण्य, भावनायाञ्च जयन्तीपिप्पलीभृङ्गस्थाने करवीर केवलोनियोजित इति विशेषोऽस्ति परमत्रैव हिङ्गुलुखर्परे द्विगुणे नियुज्य पाठ सम्पादनीय । वस्तुतस्तु अस्मिन्नेव पाठे रसस्य द्विगुण देय मृतताम्राम्लवेतसमितिपाठे स्वीकृते भवतिसर्वेषासमन्वय इति।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, शिंगरिफ और खपरिया १–१ भाग, ताम्रभस्म और अम्लवेत २–२ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरीकेरससे एकदिन मर्दनकर भूधरपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर भुनीहींग, त्रिकटु, शुद्धकपूर सब समभागलेकर पूर्वरसकी वरावर मिलाय अदरख, मराठी, निर्गुण्डी, जेंती, पीपल और भंगरेके स्वरसोंसे ७–७ भावनाएं देकर ४–४ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथदेनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै २८४

२८५ सन्निपाताङ्कुशरसः (प्रथमः)

सूतं तुल्यविषं दिनत्रयमितं जम्भाम्भसा मर्दितं,
प्रोत्थाप्यातपगं ततो दिनहतं हेमाम्बुभिः स्वेदितम् ।
तं सूतं समहिङ्गुलं समवलिं तुल्यालचेतःशिलाः,
ताम्रन्तुल्यविषं विमर्द्यसुजयानीरेण गाढं दिनम् ११९८
हेमार्द्रालिरसैः सुभाव्य मुनिशः पित्तैः पृथक् पञ्चभिः,
सूतात्तुल्यविषेण धूपितमिदं स्यात्सन्निपाताङ्कुशः ।
गुञ्जार्द्धाऽर्द्धमितं सहार्द्रकरसं पीत्वाम्बुयोगं भजेदथ्यन्नं ससितं समुद्गलफलं सत्तालवृन्तानिलम् ११९९
नव्याब्जचललोचनाञ्चललसत्कन्दर्पदर्पाङ्गना-,
प्रेमालिङ्गनमिन्दुचन्दनभरं मालाः सुपुष्पोज्ज्वलाः ।
जीर्णामं विषमं ज्वरं ग्रहणिकां पाण्डुक्षयांश्चाहरे-,
द्गुल्मप्लीहजलोदरानिलशिरःशूलानयं स्वौषधैः १२००

र शं., र सु., सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा और वछनाग समभागलेकर जंभीरीके रससे मर्दनकर टिकड़ी वनाय डमरूयन्त्रसे पारेको उड़ाकर एकदिन धतूरेकेरससे स्वेदनकर शुद्ध शिंगरिफ, गन्धक, हरिताल, मैनसिल और वछनाग, ताम्रभस्म वरावर २ मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर भागकेस्वरससे एकदिन मर्दनकरे। फिर धतूरा, अदरख और भंगरेकेरसोंसे ७ दिन मर्दनकर पांचोंपित्तोंकी १–१ भावनादेकर हडीकेपेंदेमें लेपकर समभागवछनागकाचूर्ण हंडीमें विछाय दोनोंका डमरूयन्त्रवनाकर यहातक आचदेवे कि वछनाग सब जलजाय। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर २–२ चावलभरकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरस अथवा अपने अपने अनुपानोंकेसाथदेकर मत्थेपर ठढेपानीकीधारादेनेसे जीर्ण, आम तथा विषमज्वर, ग्रहणी, पाण्डु, क्षय, गुल्म, प्लीहा, जलोदर वातव्याधि, शिरःशूल इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ २८५ ॥

२८६ सन्निपाताङ्कुशरसः (द्वितीयः)

म्लेच्छं ताम्रं विषं पिष्टं भावयेत्पञ्चमायुभिः ।
गुञ्जा तस्याम्बुना हन्ति सन्निपातं नवं ज्वरम् ॥
अपि सर्वान्गदान्हन्याद्ग्रहणीगदमुल्वणम् ॥ १२०१ ॥

टो , सन्निपाते।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, ताम्रभस्म और वछनाग समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पांचोंपित्तोंसे १–१ भावनादेकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली जल अथवा उचितानुपानकेसाथदेनेसे सन्निपात, नवज्वर, ग्रहणीप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २८६ ॥

२८७ सन्निपाताञ्जनम्

निस्त्वग्जेपालजं बीजं दशनिष्कं प्रचूर्णयेत् ।
मरिचं पिप्पलीं सूतं प्रतिनिष्कं विमिश्रयेत् ॥१२०२॥
भाव्यं जम्बीरजैर्द्रावैः सप्ताहं तत्प्रयत्नतः ।
सन्निपातं निहन्त्याशु अञ्जने यःशिवः स्मृतः॥१२०३॥

र र स , भै. सा., र. प्र. सन्निपाते।

टि०—र ल., रसायनस , यो र , एषु रसायनभैरवनाम्नाधोलिखितनस्यप्रयोगो ऽस्ति यथा–“वचाऽमृताव्योपमधूकसाररुद्राक्षसिन्धूद्भववद्वृहत्या । फल समुद्रस्य रसोन कल्क ध्मात दिनासापुटमध्यदेशे ॥ अपस्मृतिश्लेष्मसरुच्छिरोल्क प्रलापतन्द्राभ्रमजाड्यमोहान् । समन्निपातान् द्युतिकाक्षभङ्ग सपीनस हन्ति हलीमकञ्च । रसायन भैरवनामधेय ज्ञात विचारात्कवि विट्ठलेन ॥” इत्यस्यापि नस्ये प्रयोग करणीय । अयमतिकार्यकारी प्रयोगोऽस्ति।

भाषा—जमालगोटेकी गिरी २॥ कर्ष, मरिच, पीपल और पारा ४–४ माशे लेकर एकदिन शुष्कमर्दनकर ७ दिन जभीरीकेरससे घोटकर रखछोड़े। जंभीरीकेरसकेसाथ इसका अञ्जनकरनेसे समस्तसन्निपात नष्टहोतेहैं ॥ २८७ ॥

२८८ सन्निपातान्तकरसः

मृतं कान्ताभ्रवैक्रान्तं ताप्यं तालं समं समम् ।
मृत्कीटश्च रसो मर्द्य अभयानरमूत्रतः ॥ १२०४ ॥
राजवृक्षफलव्योषकूष्माण्डरसमर्दितः ।
अभिन्यासज्वरं हन्ति सक्षौद्रो माषतुल्यकः ॥१२०५॥

रसायनस., र. को , र. का , सु प्र , चि. र. भ , सन्निपाते ।

टि०—कुत्रचित् "मृत्कीटश्चरसो मर्द्य" इत्यस्यस्थाने "मूर्च्छितश्च रसो मर्द्य" इतिपाठो दृश्यते ।

भाषा—कान्त, अभ्रक और वैक्रान्तभस्म, शुद्धसोनामाखी, हरिताल, केंचुए और पारा समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर नरमूत्र और हर्रे, अमिलतासकागूदा, त्रिकटु, सफेद्कोंहळा इनके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ देनेसे अभिन्यासज्वर नष्टहोताहै ॥ २८८ ॥

२८९ सप्तविंशकगुग्गुलुः

क्षारद्वयं त्रिकटुकं त्रिफलाहरिद्रा-
युग्दारुमुस्तलवणत्रयतुम्बुरूणि ।
त्रुट्यग्निग्रन्थिकहुताशनचव्यकुष्ठ-
माक्षीकपौष्करविडङ्गविषायुतानि ॥ १२०६ ॥
यावन्त्यमूनि गजपिप्पलिसंयुतानि
तावत्प्रमाणमितगुग्गुलुयोजितानि ।
कृत्वा घृतेन गुटिका मनुजैः प्रयोज्या
पीतानुदुग्धजलकाञ्जिकमुद्गयूषा ॥ १२०७ ॥
पाण्ड्वामयं क्षयमपस्मृतिमूर्द्ध्ववात-
मुन्मादमामपवनं श्वयथुं प्रमेहम् ।
हृत्पृष्ठकोष्ठकटिवङ्क्षणकुक्षिकक्षा-
शूलानि नाशयति कुष्ठकिलासरोगान् ॥१२०८॥

चि क , ग. नि., कुष्ठे । गदनिग्रहे क्षारद्वयस्याऽभावो दृश्यते ।

भाषा—सज्जी, सुहागा, त्रिकटु, त्रिफला, हल्दी, दारुहल्दी, नागरमोथा, तीनोंनमक, तुम्वुल, इलायची, चित्रक, पिपलामूल, भिलावा, चव्य, कुठ, सोनामाखी, पोहकरमूल, विडङ्ग, अतीस ये सव समभाग और इन सवकीवरावर, गजपीपल लेकर वारीकचूर्णकर सवकीवरावर शुद्धगूगलको घृतके योगसे कूटकर गूगलकाद्रववनाय धीरे २ समस्तचूर्णको मिलादे और ३–३ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली जल, दूध, काञ्जी और मूंगकेयूपप्रभृति रोगोचितानुपानोंकेसाथ देनेसे पाण्डु, क्षय, अपस्मार, ऊर्द्धवात, उन्माद, आम, वातविकार, शोथ, प्रमेह, हृदय, पीठ, कोष्ठ, कटि, वङ्क्षण, कुक्षि, काख इनकेशूल, कुष्ठ और श्वित्रको यह नष्टकरताहै ॥ २८९ ॥

२९० सप्ताङ्गलोहम्

कनकताप्यरसाम्बुदगन्धक-
द्युमणिलोहरजः सममात्रकम् ।
त्रिफलया समया मधुसर्पिषा
जयति लीढमशेषमथामयम् ॥ १२०९ ॥

लो प. सर्वरोगे ।

भाषा—सुवर्ण, सोनामाखी, पारा, अभ्रक, इनकीभस्में, शुद्धगन्धक, ताम्र और लोहभस्म सव समभाग, इनसवकी वरावर त्रिफला मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती मधु और घीकेसाथलेनेसे समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २९० ॥

२९१ सप्ताभ्रकम्

वरावरीवारिदवारिवीरा-
रजःसमस्तेनसमांशमभ्रम् ।
क्षौद्राज्यलीढं युवतीसहस्र-
लीलासहत्वं कुरुते नराणाम् ॥ १२१० ॥

लो. प , वाजीकरणे ।

भाषा—त्रिफला, शतावर, नागरमोथा, सुगन्धवाला, खस, सव समभागलेकर सवकीवरावर अभ्रकभस्ममिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती मधु और घीकेसाथ सेवनकरनेसे वहुतसी स्त्रियोंकेसाथ सम्भोग करनेकीशक्तिको वढ़ाताहै ॥ २९१ ॥

२९२ सप्तामृतरसः (प्रथमः)

मृतसूताभ्रकं तुल्यं मृतलौहं शिलाजतु ।
गुग्गुलुश्च शिलाताप्यं समांशमधुना लिहेत् ॥
मासमात्रप्रयोगेण मुखरोगं विनाशयेत् ॥ १२११ ॥

र र , मुखरोगे ।

भाषा—पारा, अभ्रक और लोहभस्म, शिलाजीत, गूगल, शुद्धमैनसिल तथा सोनामाखी सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर सवकीवरावर मधु मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ रत्ती खानेसे एकमहीनेमें तमाम मुखरोग निवृत्तहोतेहैं ॥ २९२ ॥

२९३ सप्तामृतरसः (द्वितीयः)

रसकनकवङ्गतीक्ष्णं शिलाजतुम्लेच्छसंज्ञकं गगनम् ।
सममात्रं कटुकत्रयत्रुटिदलजातीफलं लवङ्गञ्च १२१२
कङ्कोलं त्रिफला तद्युगभागं पूर्वभागतश्चूर्णम् ।
माषयुगं मधुसहितं भक्ष्यं क्षयशोषकासहरम् ॥१२१३॥

यो म., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, वङ्ग, फोलाद इनकीभस्में, शिलाजीत, शिंगरिफ और अभ्रकभस्म १–१ भाग लेकर त्रिकटु, इलायची, जायफल, लौंग, शीतलचीनी, त्रिफला सव समभागकाचूर्ण १४ भाग और मधु सवकी वरावर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ माशे प्रतिदिनसेवनकरनेसे क्षय, शोष और कासको यह निवृत्तकरताहै ॥ २९३ ॥

२९४ सप्तामृतलोहम् (प्रथमम्)

मधुकं त्रिफलाचूर्णमयोरजः समं लिहन् ।
मधुसर्पिर्युतं सम्यग्गव्यं क्षीरं पिबेदनु ॥ १२१४ ॥

छर्दिं सतिमिरां शूलमम्लपित्तं ज्वरं क्लमम्।
आनाहं मूत्रसङ्गञ्च शोथञ्चैव निहन्ति सः ॥ १२१५ ॥

च द, भै र, र.सं., र.सि., ध., नि र, रसायनसं., वृ यो. त, टो, र.सु, र.क, र.चि, र.का., र.र, वै.र., शूले चक्षूरोगे च।

टि०—र र. सर्वचूर्णसमलोहमिति नाम स्थापितम्। र सु, र-स एतयो र्द्वितीयस्थाने पद्ममधिक प्रक्षिप्य घृतमधुनो र्नाम निष्कास्य तिमिरहरलोहमिति नाम स्थापितम्, अत स एव प्रयोगो ज्ञातव्य अनुपानमपि तदेव वोध्यम्। भैषज्यरत्नावल्यादौ फलभागेऽतिशयित प्रलपितमतस्तत्परित्यक्तमिति सुधीभिर्विभावनीयम्॥

भाषा—त्रिफला, लोहभस्म, मुलहठी सब समभागमिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा मधु और घीकेसाथ लेकर गायकादूध पीनेसे वमन, तिमिर, शूल, अम्लपित्त, ज्वर, ग्लानि, आनाह, मूत्राघात और शोथ इनसबको यह नष्टकरताहै॥२९४॥

२९५ सप्तामृतलोहम् (द्वितीयम्)

त्रिफला लोहचूर्णञ्च पटोली मधुयष्टिका।
सर्वमेकांशतो रुद्रभागाः स्युस्तवराजतः॥
सर्पिषा भक्षिते यान्ति तस्मिन्नक्षिरुजोऽखिलाः १२१६

हितो०, नेत्ररोगे।

भाषा—त्रिफला, लोहभस्म, परवल, मुलहठी सब १–१ भाग, वंसलोचन ११ भाग लेकर वारीकचूर्णकर वंसलोचनको ४–५ दिन अलग घुटवाकर अन्यवस्तुओंके वारीकचूर्णमें मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा घीकेसाथ लेनेसे नेत्रोंके समस्तरोग नष्टहोतेहैं॥ २९५॥

२९६ सप्तायसम्

सुरभिभास्करलोहरसाभ्रकाः
सजतु हेमसमुत्थरजः समम्।
वरुणकादिगणत्रिफलाजल-
स्नपितमातपशुष्कमनेकधा॥ १२१७॥
दलितमाज्यमधुप्लुतिमागतं
हरति यक्ष्मगदं सपरिग्रहम्।
श्वसनशोथहृदामयपाण्डुतां
कसनमेहमथ ग्रहणीगदम्॥ १२१८॥

लो प, राजयक्ष्मणि।

भाषा—शुद्धगन्धक, और पारा, ताम्र, लोह, अभ्रक, सुवर्ण इनकीभस्में, शुद्धशिलाजीत सब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय वरुणादिगण और त्रिफलाके क्वाथोंसे धूपमें ३–३ अथवा ७–७ भावनाएं देकर वरावरके मधुमें मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती यथोचितानुपानकेसाथदेनेसे उपद्रवसहित राजयक्ष्म, श्वास, शोथ, हृद्रोग, पाण्डु, कास, प्रमेह, ग्रहणी इन सवको यह नष्टकरताहै॥ २९६॥

२९७ समरसुन्दरी गुटिका (स्मरसुन्दरी)

वज्रहेमाभ्रकं ताप्यं कान्तं सूतं समंसमम्।
मर्द्यं जम्बीरजैर्द्रावैर्दिनं खल्वे ततः पुनः॥ १२१९॥
ब्रह्मवृक्षस्य वीजानि कार्पासास्थीनि राजिका।
वन्ध्या च यवचिञ्ची च पिष्ट्वा तन्मध्यगं कुरु॥१२२०॥
पूर्ववन्मर्दितं गोलं लघुसप्तपुटैः पचेत्।
ततो गजपुटे दद्यान्मूषां रुद्ध्वा धमेद्दृढात्॥ १२२१॥
तद्गोलं धारयेद्वक्त्रे शस्त्रस्तम्भकरं भवेत्।
हन्ति रोगं जरां मृत्युं गुटिका स्मरसुन्दरी॥१२२२॥
शस्त्रस्तम्भकरे गोले कुम्भकर्णं स्मरेद्यदि।
आयातं सम्मुखं शत्रुं समोहं स निवारयेत्॥१२२३॥

ॐ अपयति स्वाहा. अनेन मन्त्रेणाष्टोत्तरसहस्रं जपेत्सिद्धि। र. सि., रसायने।

भाषा—हीरा, सुवर्ण, अभ्रक, सोनामाखी, कान्त और पारा समभागलेकर जमीरीकेरससे एक दिन मर्दनकर पलाशकेवीज, कपासकीमज्जा, राई, वाझखेखसेकाकन्द, तितली सव समभाग लेकर १ दिन जंभीरीकेरसमें अच्छीतरहपीसकर गोलावनाय इसके वीचमें पूर्वरसको रख शरावसम्पुटमें वन्दकर लघुपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर फिरसे मर्दनकर पूर्ववत् आचदे। ऐसे ७ लघुपुटदेनेकेवाद एक गजपुटकी आचदेकर दृढ धमनकरावे तो इसकी गोली तैयारहोगी। इसको मुखमें रखनेसे शस्त्रोंका स्तम्भनहोताहै। रोग, वुढापा, मृत्यु इनसवका नाश होताहै। सामनेसे शत्रुको आताहुआ देखकर कुम्भकर्णका स्मरण करनेसे विक्षिप्तहोकर शत्रु निवृत्तहोजाताहै। "ॐ अपयतिस्वाहा" इसमन्त्रका अष्टोत्तरसहस्र जपकरनेसे इसकी सिद्धिहोतीहै

२९८ समशर्कररलोहम् (प्रथमम्)

लोहाद्द्विगुणं क्षीरं सर्पिर्द्विगुणं समे सितामधुनी।
पादं विडङ्गसारं तद्वत् त्रुटिवंशजं पचेल्लोहम् १२२४
त्रिकटु वराङ्गं कनकं धात्री यष्ट्यम्बु चार्धभागश्च।
उग्रं शोणितपित्तं समूत्रकृच्छ्रं क्षतं क्षयं कासम्॥
कृच्छ्राश्मरीञ्चनियमाज्जयति वरं खण्डखाद्यसमवीर्यम्

यो म, अश्मर्यधिकारे।

भाषा—लोहभस्म ४ तोले, दूध ८ तोले, घृत, शक्कर और मधु २४–२४ तो०, विडङ्गतण्डुल, इलायची और वसलोचन १–१ तोला लेकर वारीकचूर्णकर इकट्ठे मिलाकर पाककरे। चाशनी तैयारहोनेपर नीचे उतारकर त्रिकटु, तज, सुवर्णभस्म, आवले, मुलहठी और खस २–२ तोले मिलाकर रखछोड़े। ७ अथवा १४ दिन वीतजानेपर ३–३ माशे समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे अत्यन्तवढाहुआ रक्तपित्त, मूत्रकृच्छ्र, उर क्षत, क्षय, कास, पथरी, इनसवको यह नष्टकरताहै॥

२९९ समशर्कररलोहम् (द्वितीयम्)

लवङ्गं कट्फलं कुष्ठं यमानी त्र्यूषणन्तथा।
चित्रकं पिप्पलीमूलं वासकं कण्टकारिका॥ १२२६॥
चव्यं कर्कटशृङ्गी च चातुर्जातं हरीतकी।
शटी कङ्कोलकं मुस्तं लोहमभ्रं यवाग्रजम्॥ १२२७॥
सर्वं प्रतिसमं चूर्णं तावच्छर्करयाऽन्वितम्।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं स्थापयेत्स्निग्धभाजने॥ १२२८॥

समशर्करकं लोहं चूर्णं तूर्णगुणप्रदम्।
निहन्ति सर्वजं कासं वातश्लेष्मसमुद्भवम् ॥ १२२९ ॥
क्षयकासं रक्तपित्तं श्वासमाशु विनाशयेत्।
क्षीणस्य पुष्टिजननं बलवर्णाग्निवर्धनम् ॥ १२३० ॥

वै. क., भै. र, कासे।

भाषा—लौंग, कायफल, कुठ, अजवाइन, त्रिकटु, चित्रकमूल, पिपलामूल, अडूसा, भटकटैया, चव्य, काकड़ासींगी, चातुर्जात, हर्रे, कचूर, शीतलचीनी, नागरमोथा, लोह और अभ्रकभस्म, यवक्षार सब समभागलेकर वारीक चूर्णकर बराबरकी शक्करकी चाशनीमें मिलाय चिकनेवर्तनमें रखछोड़े। इसमेंसे ३ माशेसे ६ माशेतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सबप्रकारके कास, क्षय, रक्तपित्त, श्वास, बल-वर्णाग्निह्रास, इनसबको नष्टकर आदमीको पुष्टकरताहै ॥ २९९ ॥

३०० समशर्करलोहम् (तृतीयम्)

लोहाच्चतुर्गुणं क्षीरमाज्यं द्विगुणमुत्तमम्।
चूर्णं पादन्तु वैडङ्गं दद्यान्मधुसिते समे ॥ १२३१ ॥
ताम्रपात्रे दृढे पक्त्वा स्थापयेद्धृतभाजने।
माषकादिक्रमेणैव भक्षयेद्विधिपूर्वकम् ॥ १२३२ ॥
अनुपानं प्रयुञ्जीत नारिकेलोदकादिकम्।
रक्तपित्तं जयेत्तीव्रमम्लपित्तं क्षतं क्षयम् ॥
प्रहृष्टकान्तिजननमायुष्यमुत्तमोत्तमम् ॥ १२३३ ॥

र स, भै र, र चं., र. र, ध., र सु, र क, र का, रक्तपित्ते।

भाषा—लोहभस्मसे चौगुना दूध और दूना घी, चतुर्थांश विडङ्गतण्डुल, शक्कर और मधु लोहकीबराबर लेकर तावेकी कढ़ाहीमें मन्दाग्निसे पकावे। चाशनी तैयार होनेपर उतारकर रखले। ६-७ दिन वीतनेपर १-१ माशेसे शुरूकर जहांतक अनुकूलहोसके उतनीमात्रा बढ़ावे। इसपर नारियलकाजलवगैरह जो अनुकूलपड़े वह अनुपानमें देवे। इससे बढ़ाहुआ रक्तपित्त, अम्लपित्त, उर क्षत, क्षय ये सब नष्टहोकर आयुबढ़तीहै॥ ३००॥

३०१ समीरगजकेसरीरसः

नवाहिफेनं कुचिलं नवानि मरिचानि च।
समभागानि सर्वाणि रक्तिकाप्रमितानि च ॥ १२३४ ॥
देयानि प्रातरेतानि पुनस्ताम्बूलचर्वणम्।
कुब्जे च खञ्जवाते च सर्वजे गृध्रसीगदे ॥ १२३५ ॥
अपबाहौ प्रयोक्तव्यः शोषे कम्पेऽपतानके।
विसूच्यामरुचौ देयोऽपस्मारे च विशेषतः ॥ १२३६ ॥

र कौ., र चं, वै. र, र. सु, नि र, रसायनसं, वै. द, र. प्र, वै चि., चि. र भ., वातव्याध्यधिकारे।

टि०—चि र भ, रसचि समीरारिरस इति नाम। रसपारिजाते वातारिरस इति नाम। अत्र नवाहिफेनस्थाने जयाहिफेनमिति पाठो दृश्यते।

भाषा—शुद्ध अफीम, कुचिला और मरिच समभागलेकर बारीकचूर्णकर, पानकेरससे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली पानकेसाथ खानेसे कुब्जता, खञ्जता, गृध्रसी, अपबाहुक, शोष, कम्प, खींचतान, विसूचिका, अरुचि, अपस्मार इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ३०१॥

३०२ समीरपन्नगरसः (प्रथमः)

अभ्रगन्धविषव्योषरसटङ्कान्समांशकान्।
भावयेत्सप्तधा भृङ्गरसेन स्यात्समीरहा ॥ १२३७ ॥
आर्द्रद्रवेण गुञ्जाऽस्य खण्डव्योषयुताऽथवा।
महावाताञ्जयत्याशु नासाध्मातः प्रबोधकृत् ॥ १२३८॥

चि. सा., वै र, र. कौ, र शं., र ल., चि. र., र सु, नि. र, र च, टो., रसायनसं., वै. चि, रस. सं., र. पा., वातव्याध्यधिकारे।

भाषा—अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, बछनाग, पारा और सुहागा, त्रिकटु सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर भंगरेकेरसमें ७ दिनतक मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अदरखकेरस अथवा शक्करयुक्त त्रिकटुकेसाथदेनेसे यह समस्त वातविकारोंको नष्टकरताहै। नस्यदेनेसे मूर्च्छाको दूरकरताहै ॥ ३०२ ॥

३०३ समीरपन्नगरसः

पारदं गन्धकं मल्लं हरितालं तथैव च।
एतच्चतुष्टयं सर्वं तुलसीरसमर्दितम् ॥ १२३९ ॥
वर्तीं कृत्वाऽभ्रकेणैव वेष्टयेद्गोलकन्तु तत्।
शरावयुगले क्षिप्त्वा वालुकायन्त्रगं पचेत् ॥ १२४० ॥
दीपिकाप्रमितं वह्निं दत्त्वा यामचतुष्टयम्।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य नाम्नाऽसौ वातपन्नगः ॥१२४१॥
सन्निपाते तथोन्मादे सन्धिबन्धे कफामये।
नागवल्ल्या दलेनैव भक्षयेद्गुञ्जिकाद्वयम् ॥ १२४२ ॥

र, चं, रसायनसं, वातरोगे।

टि०—अस्यार्कक्षीरेण सप्तदिनानि मर्दन विधाय शुष्ककज्जलिकां विधाय काचकूप्या विन्यस्य चतुर्याम वालुकाग्नौ विपाच्य प्रयोगकरणे महत्फल भवतीति स्वीयानुभवोऽस्तीति विद्वद्भिराकलनीयम्।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सोमल और हरिताल समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर तुलसीकेरससे १-२ दिन मर्दनकर गोला बनाय सफेद अभ्रककेपत्रोंसे लपेटकर शरावसम्पुटमें बन्दकर २-३ कपड़मिट्टीदेकर वालुकायन्त्रमें रख मन्दाग्निसे ४ पहरकी अग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २-२ रत्ती पानकेसाथदेनेसे सन्निपात, उन्माद, सन्धिकसन्निपात और कफरोग नष्टहोतेहै ॥ ३०३ ॥

३०४ सम्मोहलोहम्

त्रिकटु त्रिफला वह्नि विडङ्गं लौहमभ्रकम्।
एतानि समभागानि घृतेन वटिकां कुरु ॥ १२४३ ॥
कामला पाण्डुरोगञ्च हृद्रोगं शोथमेव च।
भगन्दरं कोष्ठक्रिमीन्मन्दानलमरोचकम् ॥ १२४४ ॥

तान्सर्वान्नाशयेदाशु बलवर्णाग्निवर्धनः।
सम्मोहलोहनामाऽयं पाण्डुरोगे च पूजितः॥१२४५॥

र सं, र. चं, र सु., पाण्डौ।

टि०—अय पाठश्चतुर्थनवायसलोहाद्भयत्यासित इति सुधीभिरविस्मरणीयम्।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, चित्रक, विडङ्ग, लोह और अभ्रकभस्म समभागलेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा घीकेसाथलेनेसे कामला, पाण्डु, हृद्रोग, शोथ, भगन्दर, कोष्ठक्रिमि, मन्दाग्नि, अरुचि, बलवर्णाग्निह्रास इनसवको यह नष्टकरताहै॥ ३०४॥

३०५ सर्वगदहरीवटिका

भल्लातं सूतगन्धं त्रिफलविषपुरं
तुल्यभागेन मर्द्यं,
राजार्कभृङ्गवह्नित्रिकटुजलकृता
गुञ्जमात्रा वटी स्यात्।
दुर्जेयाद्यग्निमान्द्ये कृमिकुलदलना
सर्वशूलान्निहन्ति,
पथ्यं दोषानुसारि निखिलगदहरी
मासमेकं प्रयुक्ता॥ १२४६॥

र. शि., सर्वगदे।

भाषा—शुद्ध भिलावे, पारा, गन्धक, वछनाग और गूगल, त्रिफला सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें सवको मिलाय नीलार्कके लोग, भगरा, चित्रक और त्रिकटुकेद्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, कृमि, शूल इनसवको एकमहीनेमें नष्टकरतीहै॥ ३०५॥

३०६ सर्वज्वरसूदनरसः

रसगन्धाग्निकटुकत्वगेलाकल्लकन्तथा।
टङ्कणं सर्पगरलं पृथग्भागेन मिश्रितम्॥ १२४७॥
वत्सनाभो द्विभागः स्याद्भृङ्गराजरसेन वै।
विमर्द्य वटिका कार्या मुद्गमाना सदा बुधैः॥ १२४८॥
अपक्वेऽप्यथवा पक्वे सामे नीरामके ज्वरे।
जीर्णे च विषमे चैव दातव्या चार्द्रकद्रवैः॥
दधिभक्तं सिता पथ्यं तापे शीतोदकक्रिया॥१२४९॥

रसायनसं., ज्वराऽधिकारे।

टि०—रसायनसङ्ग्रह-एव द्वितीयस्थाने मृगराजेन्द्रनाम्ना पाठो लिखित स भृष्टनयोपलभ्य परामर्शमकृत्वा लिखित इति प्रतिभाति।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, चित्रक, कुटकी, तज, इलायची, अकलकरा, भुनासुहागा, सर्पविष १–१ भाग, शुद्धवछनाग २ भागलेकर सवका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाय १–२ दिनभगरेकेरससे मर्दनकर मूगवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेसाथ देनेसे पक्व अथवा अपक्व, साम अथवा निराम, जीर्ण और विषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै। अत्यन्तभूखलगनेपर दही, भात और शक्करदेवे। अत्यन्तगर्मी मालूमहोनेपर ठंढेजलका प्रयोगकरे।

३०७ सर्वज्वरहररसः

फलत्रयं त्रिकटुकं जयपालाहिफेनकम्।
लवणान्यम्बुदश्चैव भार्ङ्गी च पित्तपर्पटम्॥ १२५०॥
एतानि सममात्राणि विषश्चैवार्द्धमात्रकम्।
एषां गुञ्जाप्रमाणेन वन्धनीया गुटी बुधैः॥ १२५१॥
एकाहिके तथा जीर्णे विषमे क्षणदाज्वरे।
भक्षयेत्पयसा प्रातः सर्वज्वरनिवृत्तये॥ १२५२॥

र. को, ज्वराधिकारे।

भाषा—त्रिफला, त्रिकटु, शुद्धजमालगोटा और अफीम, पाचोंनमक, नागरमोथा, भारङ्गी और पित्तपापड़ा १–१ कर्ष, शुद्धवछनाग ८ माशे लेकर वारीकचूर्णकर अदरखवगैरहकेरससे एकदिनघोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तुलसीवगैरहके रसकेसाथदेनेसे एकाहिक, जीर्ण, विषम और रात्रिज्वर नष्टहोतेहैं। साधारणज्वरमें प्रातःकाल दूधकेसाथ देना॥ ३०७॥

३०८ सर्वज्वरहरलोहम् (प्रथमम्)

चित्रकं त्रिफला व्योषं विडङ्गं मुस्तकं तथा।
श्रेयसी पिप्पलीमूलमुशीरं देवदारु च॥ १२५३॥
किराततिक्तकं पाठा कटुकी कण्टकारिका।
शोभाञ्जनस्य वीजानि मधुकं वत्सकं समम्॥१२५४॥
लौहतुल्यं गृहीत्वा तु वटिकां कारयेद्भिषक्।
सर्वज्वरहरं लौहं सर्वरोगहरन्तथा॥ १२५५॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम्।
द्वन्द्वजं विषमाख्यञ्च धातुस्थञ्च ज्वरञ्जयेत्॥१२५६॥
शीतं कम्पं तृषां दाहं घर्मस्रुतिवमिभ्रमान्।
रक्तपित्तमतीसारं मन्दाग्निं कासमेव च॥ १२५७॥
प्लीहानं यकृतं गुल्मं सामवातं सुदारुणम्।
अर्शांसि घोरमुदरं मूर्च्छां पाण्डुं हलीमकम्॥१२५८॥
अजीर्णं ग्रहणीञ्चैव यक्ष्माणं शोथमेव च।
वल्यं वृष्यं पुष्टिकरं सर्वरोगनिषूदनम्॥
सर्वज्वरहरं लोहं चन्द्रनाथेन भाषितम्॥ १२५९॥

र सं, भै र, र. चं, ध, र. सु, ज्वराऽधिकारे

भाषा—चित्रक, त्रिफला, त्रिकटु, विडङ्ग, नागरमोथा, गजपीपल, पिंपलामूल, खस, देवदारु, चिरायता, पाठा, कुटकी, भटकटैया, सहिजनकेवीज, मुलहठी, इन्द्रजव सव समभागलेकर सवकीवरावर लोहभस्ममिलाकर तुलसीकेरससे १–२ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सान्निपातिक, द्वन्द्वज, विषम और धातुस्थज्वर, शीत, कम्प, तृषा, दाह, स्वेदोद्गम, वमन, भ्रम, रक्तपित्त, अतिसार, मन्दाग्नि, कास, प्लीहा, यकृत्, गुल्म, भयङ्कर आमवात, ववा-

सीर, भयङ्कर उदररोग, मूर्च्छा, पाण्डु, हलीमक, अजीर्ण, ग्रहणी, यक्ष्मा, शोथ, कृशता इनसवरोगोंको यह नष्टकरताहै ३०८

३०९ सर्वज्वरहरलोहम् (वृहत्) २

पारदं गन्धकञ्चैव ताम्रमभ्रञ्च माक्षिकम् ।
हिरण्यं तारतालञ्च कर्षमेकं पृथक् पृथक् ॥ १२६० ॥
कान्तलोहं पलं देयं सर्वमेकीकृतं शुभम् ।
वक्ष्यमाणौषधै र्भाव्यं प्रत्येकं दिनसप्तकम् ॥ १२६१ ॥
कारवेल्लरसैर्वापि दशमूलरसेन च ।
पर्पट्याश्च कषायेण त्रिफलाक्वाथकेन वा ॥ १२६२ ॥
गुडूच्याः स्वरसेनैव नागवल्लीरसेन च ।
काकमाचीरसेनैव निर्गुण्ड्याः स्वरसैस्तथा॥१२६३॥
पुनर्नवाऽऽर्द्रकाम्भोभि र्भावना परिकीर्तिता ।
रक्तिकादिक्रमेणैव वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ १२६४ ॥
पिप्पलीगुडसंयुक्ता वटिका ज्वरनाशिनी ।
ज्वरमष्टविधं हन्ति जीर्णज्वरहरं तथा ॥ १२६५ ॥
वारिदोषोद्भवञ्चैव नानादोषोद्भवन्तथा ।
सततादिज्वरं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा॥१२६६॥
क्षयोद्भवञ्च धातुस्थं कामशोकभवन्तथा ।
भूतावेशभवञ्चैव त्रिदोषजनितं तथा ॥ १२६७ ॥
अभिघातज्वरञ्चैव तथाऽभिचारसम्भवम् ।
अभिन्यासं महाघोरं विषमं त्र्याहिकं तथा ॥१२६८॥
शीतपूर्वं दाहपूर्वं त्रिदोषं विषमज्वरम् ।
प्रलेपकज्वरं घोरमर्द्धनारीश्वरं तथा ॥ १२६९ ॥
प्लीहज्वरं तथा कासं चातुर्थिकविपर्ययम् ।
पाण्डुरोगं कामलाञ्च अग्निमान्द्यं महागदम् ॥१२७०॥
एतान्सर्वान्निहन्त्याशु पक्षार्द्धेन न संशयः ।
शाल्यन्नं तक्रसहितं भोजयेद्भिडसंयुतम् ॥ १२७१ ॥
ककारपूर्वकं सर्वं वर्जनीयं न संशयः ।
मैथुनं वर्जयेत्तावद्यावन्न वलवान्भवेत् ॥
सर्वज्वरहरं लोहं दुर्लभं परिकीर्तितम् ॥ १२७२ ॥

र. सं., भै. र., ध , र. सु-, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र, अभ्रक, सोनामाखी, सुवर्ण, रजत इनकीभस्में और रसमाणिक्य १–१ कर्ष, कान्तलोहभस्म १ पल लेकर नीलवर्णकज्जलीकर करेला, दशमूल, पित्तपापड़ा, त्रिफला, गिलोय, पान, मकोय, निर्गुण्डी, पुनर्नवा इनप्रत्येकके रसोंसे ७–७ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ से २ गोलीतक वलावल देखकर पीपल और गुडकेसाथदेनेसे ८ प्रकारकेज्वर, जलदोषोत्थ, कृत्रिम, सततादि विषम, साध्य अथवा असाध्य, क्षयज, धातुस्थ, कामज, शोकज, भूतावेशज, सन्निपातज, अभिघातज, अभिचारज, असाध्य अभिन्यास, शीतपूर्व अथवा दाहपूर्व, प्रलेपक, अर्धनारीश्वर, प्लीहज, चातुर्थिकविपर्यय इत्यादि समस्तज्वर, कास, पाण्डु, कामला, मन्दाग्नि इनसवको ७ दिनमें यह नष्टकरताहै । भूखलगनेपर सफेदचावल, छाछ और संचलनमक देवे । ककारादिगणका वर्जनकरे और जवतक शक्ति न आवे तवतक मैथुन न करे ॥ ३०९ ॥

३१० सर्वज्वरहरलोहम् (वृहत्) ३

द्विपलं जारितं लोहं रसं गन्धं द्विकर्षकम् ।
कर्षकं त्रिफला व्योषं विडङ्गं मुस्तकं तथा ॥ १२७३ ॥
श्रेयसी पिप्पलीमूलं हरिद्रे द्वे च चित्रकम् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ १२७४ ॥
गुञ्जाद्वयीं वटीं कृत्वा भक्षयेदार्द्रकद्रवैः ।
सर्वज्वरहरं लोहं सर्वज्वरविनाशनम् ॥ १२७५ ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
विषमज्वरभूतोत्थं ज्वरं प्लीहानमेव च ॥ १२७६ ॥
मासजं पक्षजञ्चैव तथा संवत्सरोत्थितम् ।
सर्वाञ्ज्वरान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥१२७७॥

भै र., ध., र. सु , ज्वराधिकारे ।

भाषा—लोहभस्म २ पल, शुद्ध पारा और गन्धक २–२ कर्ष, त्रिफला, त्रिकटु, विडङ्ग, नागरमोथा, गजपीपल, पिपलामूल, हल्दी, दारुहल्दी और चित्रक १–१ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर अदरखके रससे १–२ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकीगोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथ देनेसे पृथक्, द्वन्द्व अथवा सन्निपातजज्वर, विषम, भूतोत्थ, मासज, पक्षज, संवत्सरज इत्यादि समस्तज्वर, प्लीहा इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ३१० ॥

३११ सर्वज्वरहरीवटी (लीलावती, जीर्णज्वरारिः)

एकभागो रसो भागद्वयं शुद्धञ्च गन्धकम् ।
गरलस्य त्रयो भागाश्चतुर्भागा हिमावती ॥ १२७८ ॥
जैपालकः पञ्चभागो निम्बुद्रवविमर्दितः ।
क्रिमिघ्नप्रमिता वट्यः कार्याः सर्वज्वरच्छिदः॥१२७९॥
शृङ्गवेरेण दातव्या वटिकैका दिनेदिने ।
जीर्णज्वरे तथाऽजीर्णे सामे वा विषमे तथा ॥
ज्वरं सर्वं निहन्तीयं दावो वनमिवाऽनलः ॥ १२८० ॥

भा. प्र., वृ यो त , रसायनस., र क. ल., टो , र का., वै. र., र. सु., यो. त., चि. र. भ., ना. वि , ज्वराऽधिकारे ।

टि०—वृ यो. त., यो. त , एतयोर्ग्रन्थयो र्लीलावती वटीतिनाम स्थापित रसायनसङ्ग्रहे तु नामद्वयमप्यस्ति स्थानभेदेन । ना. वि., "चतुर्गुणितमरिचै र्भक्षिता क्रमवर्धिता । शूलगुल्मोदरप्लीहक्षयकासादिरोगनुत् ॥" इत्यधिकं पाठं कृत्वा मूलाऽधिकारे हैमवतीवटीति नाम स्थापितम् । पञ्चविंशतिमवचनानन्तेन क्रियद्भेदस्य साम्यमावहति परन्तु वत्सनाभस्थाने हिमावतीमप्रयोगात् टङ्कणस्थाने च जयपालस्यप्रयोगात् मतान्तरेण स्वतन्त्रतयैव पाठो गृहीतोऽस्ति ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा., सर्वविष ३ भा., शुद्धमैनसिल ४ भा., जमालगोटा ५ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर नीबूकेरससे २–३ दिन मर्दनकर मिरचबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसके

साथदेनेसे जीर्ण, अजीर्ण, साम, विषमप्रभृति ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३११ ॥

३१२ सर्वज्वराङ्कुशवटी

शुद्धं सूतं तथा गन्धं मरिचं नागरं कणा।
त्वचं जैपालकं कुष्ठं भूनिम्बं मुस्तकं पृथक् ॥१२८१॥
चूर्णयित्वा समांशन्तु कज्जल्या सह मेलयेत्।
निर्गुण्ड्याः स्वरसे चैवमार्द्रकस्य रसे तथा ॥ १२८२॥
भावनां कारयित्वा तु वटिकां कारयेद्द्विपक्।
एकैकां भक्षयित्वा तु वस्त्रवेष्टञ्च कारयेत् ॥ १२८३ ॥
एषा ज्वराङ्कुशवटी सर्वज्वरविनाशिनी।
पृथग्दोषांश्च विविधान्समस्तान्विषमज्वरान् ॥१२८४॥
प्राकृतं वैकृतं वापि वातश्लेष्मकृतं तथा।
अन्तर्गतं वहिःस्थञ्च निरामं साममेव वा ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनि यथा ॥ १२८५ ॥

भै र, र सु, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, मरिच, सोंठ पीपल, तज, शुद्धजमालगोटा, कुठ, चिरायता, नागरमोथा येसब समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय निर्गुण्डी और अदरखकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से ३ गोलीतक अदरखकेरसके-साथदेकर वस्त्रओढाकर सुलानेसे पसीनाहोकर साधारण, द्वन्द्वज, विषम, प्राकृत, अथवा वैकृत, अन्तःस्थ, वहि स्थ, निराम अथवा साम ये समस्तज्वर नष्टहोतेहै ॥ ३१२ ॥

३१३ सर्वज्वराररिसः

रसं गन्धकं हिङ्गुलं मौक्तिकञ्च
पृथक् टङ्कमानं रविञ्चाददीत।
विचूर्ण्य क्षिपेत्कूपिकायां त्रियामं
खरेऽग्नौ पचेज्ज्वर्तिमेहौ हरेत्तत् ॥ १२८६ ॥

र. (मा), ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और शिंगरिफ, मोती और ताम्रभस्म समभागलेकर सवकी नीलवर्णकज्जलीकर ३–४ कपड़-मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें रख दोपहरकी तीक्ष्णाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तज्वर और प्रमेहोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३१३ ॥

३१४ सर्वतोभद्ररसः (प्रथमः)

सूतं कान्तं गगनतपनं ताप्यकं शुद्धतालं,
राजावर्तं सुरभिमधुकं मानसी चेति तुल्यम्।
व्योषार्तं शिखिकलिककरं भृङ्गतोयेन मर्द्यं,
गोलीभूतं भवति विमलः सर्वभद्राभिधानः ॥१२८७॥
शूलं गुल्मं जठरजरुजो वातजान्सर्वरोगान्,
वह्नेर्मान्द्यं कफकृतगदं पीनसञ्च ज्वरार्तिम्।
प्लीहं पाण्डुं क्षयकृतरुजः कुष्ठरोगानशेषान्,
मूर्च्छारोगान्वदनजरुजं हन्ति रोगांस्तथाऽन्यान्१२८८

र चं, ध., र. र., रससागर, र सु, रसायने। रसराजसुन्दरे भ्रष्टः पाठोऽस्ति।

भाषा—शुद्ध पारा, सोनामाखी, हरिताल, गन्धक और मैनसिल, कान्तपाषाण, अभ्रक, ताम्र, लाजवर्द इनकीभस्में, मुलहठी, त्रिकटु, कुठ, चित्रक, अकलकरा सवसमभागलेकर वारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे शूल, गुल्म, उदररोग, वातरोग, मन्दाग्नि, कफरोग, पीनस, ज्वर, प्लीहा, पाण्डु, क्षय, कुष्ठ, शिर और मुखके रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३१४ ॥

३१५ सर्वतोभद्ररसः (द्वितीयः)

गन्धेशाभ्रकताम्रलोहकुनटीतुत्थं समं तालकं,
भोगीम्लेच्छकशीर्षकं समलवं सर्वांशपादं विषम्।
सम्मर्द्यार्द्रकतोयतोरसमितात्सन्धूपितं तद्विषा-,
द्भाव्यं सप्तदिनं पृथग्वरुणयुग्वासाष्टनिर्गुण्डिका- ॥
व्योषार्द्रत्रिफलासभृङ्गविजयाजेपालजैस्तद्रसैः,
पित्तैर्वापि जयेदयं रसवरो दुःसन्निपातादिकान्।
तन्द्रीमोहविसञ्ज्ञताः किल धनुर्वातं सवातं मिलद्-,
दंष्ट्राबन्धनमस्मृतिं नयनयोः क्षेपाद्विसूचीमपि१२९०

र. क, सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मैनसिल, तुत्थ, हरिताल और शिंगरिफ, अभ्रक, ताम्र, लोह और नाग इनकीभस्में, अगर येसब समभाग, सबसे चतुर्थांश शुद्धवछनागलेकर वारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अदरखकेरससे १–२ दिन मर्दनकर पारेकेवरावर वछनागकी डमरूयन्त्रमें धूनीदेकर वरुण, अडूसा, अष्टा, निर्गुण्डी, त्रिकटु, अदरख, त्रिफला, भंगरा, भाग, जमालगोटा इनकेद्रवोंसे ७–७ भावनाएं देकर यथाशक्य पित्तोंकीभावनादेकर २–२ चावलभरकी गोलिया वनाकर रख-छोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे दुष्ट-सन्निपात, तन्द्रा, मोह, मूर्च्छा, धनुर्वात, वातरोग, दन्तवन्ध, अपस्मार, इनसवको यह नष्टकरताहै। आखोंमें डालनेसे हैज़ेको दूरकरताहै ॥ ३१५ ॥

३१६ सर्वतोभद्ररसः (तृतीयः)

सिन्दूरमभ्रं रजतञ्च हेम
समेन भागेन मनःशिलाञ्च।
द्विरस्तु वांशी निखिलेन तुल्यं
सम्मर्दयेद्गुग्गुलुकं प्रयत्नात् ॥ १२९१ ॥
ततस्तु माषप्रमिता विधाय
वटीं प्रयुञ्जीत यथानुपानम्।

यं सर्वतोभद्ररसो न हन्ति
न सोऽस्ति रोगः खलु देहिदेहे ॥ १२९२ ॥
भै. र. सर्वरोगे।

भाषा—रससिन्दूर, अभ्रक, रजत और सुवर्णभस्म, शुद्धमैनसिल १-१ भाग, वंसलोचन २ भाग, गुग्गुलु ७ भागलेकर वारीकचूर्णकर घृतकेयोगसे गूगलका द्रववनाय चूर्णको मिलाकर १-१ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥

३१७ सर्वतोभद्ररसः (चतुर्थः)

विशुद्धं गगनं ग्राह्यं द्विकर्षं शुद्धगन्धकम्।
कर्षकं कर्षकार्द्धञ्च हिङ्गुलोत्थरसन्तथा ॥ १२९३ ॥
कर्पूरं केशरं मांसी तेजःपत्रं लवङ्गकम्।
जातीकोषफलञ्चैव सूक्ष्मैला करिपिप्पली ॥ १२९४॥
कुष्ठं तालीसपत्रञ्च धातकी चोचमुस्तकम्।
हरीतकी च मरिचं शृङ्गवेरविभीतकम् ॥ १२९५ ॥
पिप्पल्यामलकञ्चैव शाणभागं विचूर्णितम्।
सर्वमेकीकृतं पिष्ट्वा वटीं कुर्याद्विगुञ्जिकाम् ॥ १२९६॥
भक्षयेत्पर्णखण्डेन मधुना सितयाऽपि वा।
रोगं ज्ञात्वाऽनुपानञ्च प्रातः कुर्याद्विचक्षणः ॥१२९७॥
हन्ति मन्दानलान्सर्वानामदोषं विसूचिकाम्।
पित्तश्लेष्मभवं रोगं वातश्लेष्मभवन्तथा ॥ १२९८ ॥
आनाहं मूत्रकृच्छ्रञ्च सङ्ग्रहग्रहणीं वमिम्।
अम्लपित्तं शीतपित्तं रक्तपित्तं विशेषतः ॥ १२९९ ॥
चिरज्वरं पित्तभवं धातुस्थं विषमज्वरम्।
कासं पञ्चविधं हन्ति कामलां पाण्डुमेव च ॥ १३०० ॥
सर्वलोकहितार्थाय शिवेन कथितः पुरा।
सर्वतोभद्रनामायं रसः साक्षान्महेश्वरः ॥ १३०१ ॥
र. सं., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—अभ्रकभस्म २ कर्ष, शुद्धगन्धक १ कर्ष, शिंगरिफसेनिकालाहुआपारा ८ माशे, शुद्धकपूर, केसर, जटामांसी, पत्रज, लौंग, जावित्री, जायफल, छोटीइलायची, गजपीपल, कुठ, तालीसपत्र, धावड़ीकेफूल, तज, नागरमोथा, हर्रे, मरिच, सोंठ, वहेड़ा, पीपल और आवला ४-४ माशे लेकर सवका वारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अदरख वगैरहकेरससे १-२ दिन घोटकर २-२ रत्तीकी गोलियांवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ, पान अथवा मधु और शक्करकेसाथ प्रातःकालदेनेसे मन्दाग्नि, आम, हैजा, वात, कफ और पित्तरोग, आनाह, मूत्रकृच्छ्र, सङ्ग्रहणी, वमन, अम्लपित्त, शीतपित्त, रक्तपित्त, पित्तोत्थजीर्णज्वर, धातुस्थविषमज्वर, कास, कामला, पाण्डु, इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ३१७ ॥

३१८ सर्वतोभद्रलोहम् (प्रथमम्)

लोहचूर्णं मृतं ताम्रमभ्रकञ्च पलं पलम्।
शुद्धसूतञ्च कर्षैकं गन्धकार्द्धपलन्तथा ॥ १३०२ ॥
माक्षिकस्य विशुद्धस्य कर्षं शुद्धा शिला परा।
सार्धं कर्षं विशुद्धञ्च शिलाजतु तथापरम् ॥ १३०३ ॥
गुग्गुलोश्चापि कर्षैकं शाणमानं परस्य च।
चूर्णं विडङ्गभल्लातवह्निश्वेतार्कमूलजम् ॥ १३०४ ॥
करिकर्णपलाशश्च तालमूली पुनर्नवा।
घनाऽमृते नागवला चक्रमर्दकमुण्डिके ॥ १३०५ ॥
भृङ्गकेशशतावर्यौ वृद्धदारं फलत्रिकम्।
त्रिकटुश्चापि सर्वेषां प्रत्येकञ्च नयेद्भिषक् ॥ १३०६ ॥
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य घृतेन मधुना सह।
स्निग्धे भाण्डे विनिक्षिप्य ततः कुर्याद्विधानवित् ॥
माषकादिक्रमेणैव लौहं सर्वरसायनम्।
अम्लपित्तं जयेच्छीघ्रं सर्वोपद्रवसंयुतम् ॥ १३०८ ॥
तद्वदर्शांसि सर्वाणि सर्वमेव भगन्दरम्।
पक्तिशूलञ्च शूलञ्च तथामं कुक्षिसम्भवम् ॥ १३०९ ॥
वातरक्तं तथा कुष्ठं पाण्डुरोगं हलीमकम्।
आमवातं तथा शोथमग्निमान्द्यं सुदुस्तरम् ॥१३१०॥
कामलां वातगुल्मञ्च पिडिकागरगृध्रसीः।
कासश्वासारुचिहरं वृष्यमेतद्विशेषतः ॥ १३११ ॥
सर्वव्याधिहरं प्रोक्तं यथेष्टाहारसेविनः।
यक्ष्माणं रक्तपित्तञ्च वातरोगं विनाशयेत् ॥
संज्ञया सर्वतोभद्रलौहो रसवरः स्मृतः ॥ १३१२ ॥
भै. र., अम्लपित्ते।

भाषा—लोह, ताम्र और अभ्रकभस्म १-१ पल, शुद्धपारा १ कर्ष, गन्धक २ कर्ष, शुद्ध सोनामाखी और मैनसिल १-१ कर्ष, उत्तमशिलाजीत १॥ कर्ष, शुद्धगूगल १ कर्ष, विडङ्ग, भिलावे, चित्रक और सफेदआककीजड़, पलाशवेल, कालीमुशली, पुनर्नवा, नागरमोथा, गिलोय, नागवला, पवाड, गोरखमुण्डी, स्याहसफेदभंगरा, शतावरी, विधारा, त्रिफला, त्रिकटु ४-४ माशे लेकर वारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय मधु और घीकेसाथमिलाकर चिकनेवर्तनमें रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेसे ३ माशेतक औचिती देखकर उचितानुपानकेसाथ देनेसे सर्वोपद्रवयुक्त अम्लपित्त, अर्श और भगन्दरको यह नष्टकर रसायनका कामकरताहै। तत्तद्विशेष अनुपानोंकेसाथदेकर पथ्यविशेषकासेवनकरनेसे पक्तिशूल, साधारणशूल, आम, कुक्षिशूल, वातरक्त, कुष्ठ, पाण्डु, हलीमक, आमवात, शोथ, दुस्तरमन्दाग्नि, कामला, वातगुल्म, पिडिका, गर, गृध्रसी, कास, श्वास, अरुचि, यक्ष्मा, रक्तपित्त और वातरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३१८ ॥

३१९ सर्वतोभद्रलोहम् (द्वितीयम्)

गव्येन नवनीतेन स्वर्णमाक्षिकवृश्चिकौ।
निष्पिष्य लेपयेल्लोहं कान्तपाण्ड्यादिसम्भवम् १३१३
ध्मापयेत्कर्मकाराग्नौ सिक्त्वा सिक्त्वा पुनः पुनः।
त्रिफलाक्वाथतोयेन ततो निर्वापयेत्सुधीः ॥ १३१४ ॥

पश्चात्तमिपष्य तल्लौहं दाहयेत्पुटवह्निना।
अम्लैराकृष्य विधिना जलधौतं प्रयत्नतः ॥ १३१५ ॥
श्लक्ष्णचूर्णं ततः कृत्वा बहुघृष्टन्तु कारयेत्।
पलश्चतुष्टयं तस्य मधुकस्यापि तत्समम् ॥ १३१६ ॥
पथ्याधात्रीविभीतक्यो रसश्च त्रिकटुस्तथा।
वचावह्निविडङ्गानि कृष्णजीरकजीरके ॥ १३१७ ॥
दन्ती पुनर्नवा मूली प्रत्येकं पलसङ्ख्यया।
एलायाः कर्षकं दद्यात्कार्षिकां कटुरोहिणीम् ॥१३१८॥
पलार्द्धं गन्धकं देयं पलार्द्धं गुग्गुलुत्वचम्।
चूर्णयित्वा विधानेन सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ १३१९ ॥
घृतमष्टपलं दत्त्वा क्षीरं चतुःशरावकम्।
चतुर्विंशपलक्वाथे त्रिफलाशेषवारिणा ॥ १३२० ॥
वस्त्रपूतेन विधिवत्पाचयेत्ताम्रभाजने।
लोहोद्भवदर्विकया पाकं कुर्याद्धिपाकवित् ॥ १३२१ ॥
शीतलश्च ततः कुर्यात्स्निग्धे भाण्डे निधापयेत्।
रक्तिकादिक्रमेणैव घृतेन मधुना सह ॥ १३२२ ॥
सम्मर्द्य लोहदण्डेन लोहपात्रे च भक्षयेत्।
क्षीरानुपानं दातव्यं पित्तदुष्टायरोगिणे ॥ १३२३ ॥
तथामकोष्ठिने दद्याद्यवक्षारस्य वारिणा।
मूर्च्छाछर्दितृषारक्तपित्तशूलादिसम्भवे ॥ १३२४ ॥
क्षीरं शर्करया मिश्रमनुपानं प्रयोजयेत्।
चतुर्धा ग्रहणीरोगे वातपित्तकफोद्भवे ॥ १३२५ ॥
ज्ञात्वा कुक्षौ मनाक् शूलमामगन्धं सलोहितम्।
कुक्षौ दक्षिणतः शूलं नाभिमण्डलकोपरि ॥ १३२६ ॥
वातपित्तनिदानं हि लक्षयित्वा प्रदीयते।
नारिकेलश्च समधु पानश्च हितमिच्छता ॥ १३२७ ॥
रक्तच्छर्द्यां विगन्धत्वमीपत्पानन्तुपैत्तिके।
क्षीरं शर्करया युक्तमनुपानन्तु दापयेत् ॥ १३२८ ॥
कटित्रिकोद्भवे शूले कुक्षिशूल अरोचके।
आमवातसमुत्थाने मुखस्रावे च दीयते ॥ १३२९ ॥
ज्वरे सशूले सामे च वायुमामं निवर्तयेत्।
यत्रकुत्र समुद्भूते शूले दद्याद्विचक्षणः ॥ १३३० ॥

वं से, रसायने।

भाषा—सोंनामाखी और पुनर्नवाकेचूर्णको गायके मक्खनमें मिलाय कान्तादिलोहेके वारीकपत्रपरलेपकर लोहारकेयहां धमनकराके त्रिफलाकेकाढ़ेमें वारीकचूर्णहोनेतक बुझावे। फिर वारीकचूर्णको लेकर त्रिफलाकेक्वाथसे मर्दनकर टिकड़ी बनाय सुखाकर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर इसीतरहमर्दनकर आंचदे। भस्महोनेकेबाद अम्लवर्गमें घोटघोटकर २–४ आंचें देकर पानीसे धोडाले और कज्जलकेसदृशघोटले। यह लोहभस्म और मुलहठी ४–४ पल, हर्रे, आंवले, बहेड़े, शुद्धपारा, त्रिकटु, बच, चित्रकमूल, विडङ्ग, कालीजीरी, जीरा, दन्ती और पुनर्नवाकी जड़ १–१ पल, इलायची और कुटकी १–१ कर्ष, शुद्धगन्धक ८ मासे, गूगलकेवृक्षकीछाल २ कर्ष लेकर सबका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय घी ८ पल, दूध २ प्रस्थ, चतुर्थांशावशिष्ट त्रिफलाकाक्वाथ २४ पललेकर सबको तांबेकीकड़ाहीमें लोहेकी कड़छीसे चलाताहुआ मन्दाग्निसे पाककरे। घन तैयार होनेपर चिकने वर्तनमें रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेसे आरम्भकर ३ माशेतक बढावे। मात्राको लोहकेपात्रमें घी और मधु डालकर लोहके डण्डेसे थोड़ीदेर मर्दनकर सेवनकरे ऊपरसे दूधपीवे। इससे दुष्टपित्त शान्तहोताहै। आमविकारसे यवक्षारकाजल, मूर्च्छा, वमन, तृषा, रक्तपित्त और शूलमें शक्कर मिलाहुआदूध, ४ प्रकारकी ग्रहणी, वात, पित्त और कफकी उत्कटतामें औचिती देखकर अनुपानका योगकरनेसे ये सब नष्टहोतेहैं। कुक्षिशूल, नाभिशूल, कटिशूल, त्रिकशूल, अरोचक, आमवात, मुखस्राव, शूलसहितज्वर इत्यादिकोंमें औचितीदेखकर अनुपानोंका योगकरे। आमगन्धरहित रक्तकी वमनमें नारियलकेजलमें मधु मिलाकरदेवे केवलपैत्तिक विकारमें शक्करमिला दूधदेवे। इसकेप्रयोगमें वायु और आमपर विशेष लक्ष्य देवे ॥ ३१९ ॥

३२० सर्वतोभद्रावटी

हेमरौप्याभ्रलोहानि जतु गन्धकमाक्षिकम्।
वटीं रक्तिमितां कुर्याद्विमृद्य वरुणाम्भसा ॥ १३३१ ॥
वटीयं सर्वतोभद्रा निखिलान्वृक्कजान्गदान्।
हरेद्वस्तिभवांश्चापि शूलं वीर्यविवर्धिनी ॥ १३३२ ॥

आ वि, वृक्कामये।

भाषा—सुवर्ण, रजत, अभ्रक, लोह इनकीभस्में, शिलाजीत, गन्धक और सोनामाखी समभागलेकर वरुणकेक्वाथसे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली वरुणके क्वाथकेसाथ देनेसे वृक्क और वस्तिके समस्तरोग और शूलोंको नष्टकर यह वीर्यको बढ़ातीहै ॥ ३२० ॥

३२१ सर्वप्रकाशरसः

पारदगन्धकसैन्धवटङ्कणशीतानि तुल्यभागानि।
प्रथमं पारदगन्धौ कज्जलयित्वा मेलयेत्सर्वम् ॥१३३३॥
त्रिदिनं सुरदालिरसेन घृष्ट्वैकं दिनं बहुरसेन।
पश्चात्पुटेन दग्ध्वा दिनमेकं मर्दयेद्गोमूत्रैः ॥ १३३४ ॥
अजकरिणीमहिषीखरमूत्रे क्रमश एव सम्मर्द्य।
बहुरसकटुकानिम्बैर्बदरामलकीरसैः क्रमान्मर्द्यम् ॥
सिद्धं त्रिदिनं दद्यात्त्रिवल्लमनलार्द्रकमरिचयुतम्।
घृतमुद्गवास्तुकार्द्रकयुक्तं भुक्तं त्रिदोषशमनाय १३३६
मागध्या मधुना चाश्नन्मासद्वयममुं गदी।
वास्तुकार्द्रकमुद्गान्नं त्यज्येत राजयक्ष्मणि ॥ १३३७ ॥
सिन्धुवाररसैन्धवार्द्रकैरेकविंशतिदिनान्यमुं रसम्।
मुद्गवास्तुकघृतार्द्रकाशनान्मुच्यते सपदि गण्डमालया
त्रिफलासैन्धवेनाश्नंस्त्रिसप्ताहं त्रिवल्लकम्।
कूष्माण्डकर्कटीतक्रैर्भुक्त्वा स्याद्गुल्मशूलजित् १३३९
मरिचार्द्रकनागवल्लीपत्रैः-
त्रिदिनं प्राश्य हरेज्ज्वरानशेषान्।

-सशिवार्द्रकण्टकारिकाभिः
कृतया पथ्यमुपाददीत विल्वेन ॥ १३४० ॥
त्र्यहं गुञ्जाजलेनाश्नन् घृतमुद्गाशनो गदी ।
कर्कटार्द्रकशाकेन मूत्ररोधाद्विमुच्यते ॥ १३४१ ॥
सैन्धवगुडसुरदारुभिरश्नन्मांसगुडान्नपथ्याशी ।
चिर्भिटकुरण्टकाभ्यां सैन्धवतक्राज्जयत्यनिलमानम् ॥
इक्षुरसेन च भुक्तं दिनैकविंशाज्जयत्यधिकपित्तम् ।
बृहतीद्वयकर्कटकाऽऽमलकद्राक्षावलायुतान्नाशी ॥
दशमूलकाथेन त्रिसप्तदिवसं निषेव्य रसमेनम् ।
तुण्डीवार्ताकाभ्यां गुडभक्ताशी भगन्दरञ्जयति १३४४
त्रिफलार्द्रकेण जग्धस्त्रिसप्तदिवसमग्निमान्द्यमपहरति ।
पथ्यञ्च पञ्चकोलकशूल्याशनं तस्य कुरवकयुक्तम् ॥
इक्षुरसार्द्रकसेवी दिनैकविंशाज्जयत्यनुक्तरुजाम् ।
तक्रं तस्य च भक्तं शाकं भवतीह तण्डुलीशाकम् ॥

र. मृ., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा, कपूर और सेंधानमक सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर वन्दालकेरससे ३ दिन और घीकुंवारकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर भूधरपुटमें स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर गो, वकरी, हथिनी, भेंस और गधीकेमूत्रोंसे १–१ दिन मर्दनकर घीकुंवार, कुटकी, निम्ब, वेर और आवलेकेरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली चित्रक, अदरख और मरिचकेसाथ अथवा घी, मूंग, वथुआ और अदरखकेसाथदेनेसे त्रिदोष नष्टहोताहै । पीपल और मधुकेसाथ लेनेसे और वथुआ, अदरख तथा मूंगका सेवनकरनेसे दो महीनेमें राजयक्ष्मसे निवृत्तहोताहै । संभालू, सैन्धव और अदरखकेसाथ लेकर मूंग, वथुआ, घी और अदरख भोजनमें लेवे तो गण्डमालासे निवृत्तहोताहै । त्रिफला और सेंधेनमककेसाथ ९–९ रत्ती सेवनकर कोंहळा, ककड़ी और छाछकापथ्यरखनेसे २१ दिनमें गुल्म और शूलको जीतताहै । मरिच अदरख और पानकेसाथ ३ दिनतक लेनेसे तथा हर्रे, अदरख, भटकटैया और वेलसे कीहुई पेया पीनेसे समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै । सफेदगुञ्जाकेजलसे ३ दिनलेकर घी और मूंग पथ्यमें लेनेसे तथा ककड़ी और अदरखका शाक खानेसे मूत्ररोधसे निवृत्तहोताहै । सेंधेनमक, गुड और वन्दालकेसाथ इसका सेवनकर मास, गुड़केपदार्थ, कचरे, कटसैरया, सेंधानमक और छाछ पथ्यमें लेवे तो वढ़ाहुआ वायु नष्टहोताहै । ईखके रसकेसाथ लेनेसे २१ दिनमें वढाहुआ पित्त शान्तहोताहै । दोनों भटकटैया, ककड़ी, आवले, द्राक्ष और वला इनके क्वाथसे वनाएहुए अन्नका सेवनकरे । दशमूलकेक्वाथकेसाथ इसकासेवनकरके कुंदरू, वेंगन, गुड और भात पथ्यमें लेनेसे २१ दिनमें भगन्दर नष्टहोताहै । त्रिफला और अदरखकेसाथलेकर पञ्चकोल, शूल्यमास और कटसैरया पथ्यमें लेनेसे २१ दिनमें मन्दाग्नि दूरहोताहै । ईख और अदरखके रसकेसाथ इसको लेकर छाछ, भात और चौलाईका शाक खानेसे २१ दिनमें समस्तव्याधियोंसे निर्मुक्तहोताहै

३२२ सर्वदीपकरणरसः

समभागं रसं नागं संयोज्यैकत्र मर्दयेत् ।
गन्धकेनात्र संयोज्य दद्याद्रससमां कणाम् ॥ १३४७ ॥
सर्वमेकत्र गृह्णीयात्त्रिदिनं जृम्भणीरसैः ।
कुमार्याश्च तथा माध्या भावयेच्च पृथक् पृथक् ॥ १३४८
त्रिर्भावयेदजामूत्रैस्त्रिर्गोमूत्रेण भावयेत् ।
सैन्धवेन ग्रन्थिकेन भावयेच्च पृथक् पृथक् ॥ १३४९ ॥
सिद्धं शर्करया युक्तं त्रिसप्ताहं त्रिवल्लकम् ।
त्रिवृच्छाकादयो देया देयं गोधूमभोजनम् ॥ १३५० ॥
मेहजव्रणभगन्दरार्वुदान् कौष्ठिकव्रणविपव्रणानपि ।
सर्वदीपकरणो हरत्ययं सूर्यदासकृतिना विनिर्मितः ॥

र. क., र. मृ., कुष्ठव्रणाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, नागभस्म, पीपल सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरी, घीकुंवार, पीपल, वकरी और गायकामूत्र, सेंधानमक, पिपलामूल इनप्रत्येककेद्रवोंसे ३–३ दिन भावनाएं देकरवरावरकीशक्करमिलाकर ९–९ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े अथवा सुखाकर चूर्णकरले । इसमेंसे ९–९ रत्तीकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देकर निसोतप्रभृति रेचक शाक और गेंहूंकाभोजनदेनेसे प्रमेहपिडिका, भगन्दर, अर्वुद, विद्रधि, विषव्रण इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ३२२ ॥

३२३ सर्वमुखरोगारिरसः

लोहाश्मजत्वमृतपारदगन्धकञ्च
क्षारत्रयं त्रिकटुताप्यफलत्रिकञ्च ।
युक्त्या विचूर्णितमिदं मधुनाऽवलेह्यं
सर्वेषु कण्ठगलतालुगदेषु शस्तम् ॥ १३५२ ॥

यो. म., मुखरोगे ।

भाषा—लोहभस्म, शुद्ध शिलाजीत, वछनाग, पारा और गन्धक, सज्जी, सुहागा, यवक्षार, त्रिकटु, सोनामाखी और त्रिफला समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाय शिलाजीतकेसाथ १–२ दिन घोटकर रखछोड़े । इनमेंसे ३–३ रत्ती मधुकेसाथदेनेसे कण्ठ, गला और तालु इनके समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३२३ ॥

३२४ सर्वमुखामयहररसः

नृपमाक्षिकतुत्थशिलालनभः-
शिलजं महिषाख्यरसेन्द्रमितम् ।
विनिघृष्य रसे रविजे त्रिदिनं
वदनस्थगदे तिमिरे च हितम् ॥ १३५३ ॥

यो. म , रसेन्द्रसं., र. क ल , मुखरोगे ।

टि०—रसकल्पलतायां माक्षिकताले न दृश्येते रविरसभावना च नास्ति ।

भाषा—लाजवर्द, सोनामाखी, तुत्थ, मैनसिल, हरिताल, अभ्रक इनकी भस्में, शिलाजीत, भेंसागूगल, शुद्धपारा समभाग-लेकर नीलवर्णकज्जलीकर गूगलको मिलाय आकके पके पत्तोंके-रससे ३ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्तमुखरोग नष्टहोतेहै। अञ्जनकरनेसे तिमिर नष्टहोताहै॥

३२५ सर्वरोगघ्नरसः

मूषा तिन्दुकविस्तारा ह्यायामे षोडशाङ्गुला।
भाण्डपादस्य पादांशं वालुकाभिः प्रपूरयेत्॥१३५४॥
तस्मिन्निवेश्य द्विगुणं गन्धगर्भगतं रसम्।
याममात्रं पचेच्चुल्ल्यां क्षिपेद्गन्धस्य चूर्णकम्॥१३५५॥
वायसीनागिनीमत्तमेघनादरसैः पुटेत्।
स रसः सर्वरोगघ्नो वलीपलितजिद्भवेत्॥१३५६॥

र. को०, रसायने।

भाषा—तेंदकेफलकेबरावरचौड़ी और १६ अङ्गुल ऊंची मूषाका चतुर्थांश वालूमें दवाय एकतोला शुद्धगन्धकका वारीक-चूर्ण मूषामें विछाय १ तोला शुद्धपारा रख १ तोले गन्धकसे ढकदे। फिर वालूभरेहुएपात्रको चूल्हेपर रख १ पहरकी कड़ी आंचदे, जब गन्धक पिघलकर जलनेलगे तब ऊपरसे थोड़ा-थोड़ा गन्धकका चूर्ण डाल्तारहे जिसमें कि पारा न उड़े। एक पहरबाद यन्त्रको नीचे उतारकर रखछोड़े। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मकोय, पान, धतूरे और कांटेवाली चौलाईकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै॥ ३२५॥

३२६ सर्वरोगहररसः (प्रथमः)

पलत्रयञ्चित्रकञ्च चेतकी च पलत्रया।
पारदं व्योषकञ्चैव पिप्पलीमूलमुस्तकम्॥१३५७॥
जातीफलं वृद्धदारु ग्राहयेच्च पलं पलम्।
एला शुभा कुष्ठगन्धं दरदं करहाटकम्॥१३५८॥
ज्योतिष्मती त्वगभ्रञ्च लोहभस्म पलार्द्धकम्।
हालाहलं निष्कमेकं गुडं देयं पलाष्टकम्॥१३५९॥
भृङ्गराजरसेनैव गुटिका कोलसम्मिता।
एकैकां भक्षयेन्नित्यं वाताशीतिं विनश्यति॥१३६०॥
कुष्ठाष्टादशकं नश्येत् प्रमेहा विंशतिस्तथा।
अपस्माराः क्षयं यान्ति सर्वनाडीव्रणा अपि॥१३६१॥
एकादशविधं शोपमूर्द्धश्वासप्रसुप्तिकाः।
शोथामवातपाण्डुत्वं कामलार्शो निहन्ति सः॥
सर्वरोगहरं ख्यातं वाताम्लञ्च विवर्जयेत्॥१३६२॥

र. सु, वातव्याध्यधिकारे।

भाषा—चित्रक और हर्रे ३–३ पल, शुद्धपारा, त्रिकटु, पिपलामूल, नागरमोथा, जायफल और विधारा १–१ पल, इलायची, वसलोचन, कुठ, शुद्ध गन्धक और शिगरिफ, अकल-करा, मालकागनी, तज, अभ्रक और लोहभस्म २–२ कर्ष, शुद्धवछनाग ८ माशे, गुड ८ पल लेकर वारीकचूर्णकर धातुओं-की नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय गुडकेसाथ १–२ पहर घोटकर भंगरेकेरससे १–२ भावनाए देकर वेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपान-केसाथदेनेसे ८० प्रकारकेवायु, १८ कुष्ठ, २० प्रमेह, अपस्मार, समस्त नाडीव्रण, ११ प्रकारकाशोप, ऊर्द्ध्वश्वास, प्रसुप्तवात, शोथ, आमवात, पाण्डु, कामला, अर्श इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें वातल और अम्लपदार्थोंका परित्यागकरे॥ ३२६॥

३२७ सर्वरोगहररसः (द्वितीयः)

हरवीर्यं गन्धताले शिलां टङ्कणमेव च।
दरदं ताम्रभस्माऽथ नागसिन्दूरमेव च॥१३६३॥
रोहिणीव्योपसंयुक्तं तथा त्रिफलया युतम्।
एतेषामष्टमांशन्तु दन्तीवीजञ्च निक्षिपेत्॥१३६४॥
अर्द्धांशं दन्तिवीजानां विषं शुद्धं विनिःक्षिपेत्।
निष्कार्द्धं कुङ्कमञ्चैव तदर्द्धं मृगनाभिजम्॥१३६५॥
निष्कद्वयं देवपुष्पं कर्पूरमर्द्धनिष्ककम्।
खल्वमध्ये विनिःक्षिप्य सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत्॥१३६६
शिग्रुमूलरसैरेनं मर्दयेच्च दिनत्रयम्।
भृङ्गराजरसेनैव मर्दयेच्च दिनत्रयम्॥१३६७॥
केशराजरसेनैव मेघराजरसेन च।
वासारसैश्चन्दनेन मर्दितञ्च दिनं पृथक्॥१३६८॥
वज्रवल्लीरसेनैव ताम्बूलरसमर्दितम्।
गुञ्जामात्रांश्च वटकान्कुर्यादेवं विचक्षणः॥१३६९॥
ज्वरं सप्तविधं हन्ति सन्निपातांस्त्रयोदश।
अष्टाङ्गपाण्डुरोगञ्च श्वासं कासञ्च पीनसम्॥१३७०॥
कुक्षिशूलं पार्श्वशूलं गुल्मरोगमहोदरम्।
प्रमेहं सोमरोगञ्च पक्षाघातञ्च शैत्यकम्॥
अशीतिवातरोगांश्च सर्वरोगहरः परः॥१३७१॥

रसायनप, सर्वरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, मैनसिल, सुहागा, शिगरिफ, ताम्र और नागभस्म, रससिन्दूर, कुटकी, त्रिकटु, त्रिफला १–१ कर्ष, शुद्ध जमालगोटा २ कर्ष, शुद्धवछनाग १ कर्ष, केशर ८ माशे, कस्तूरी ४ माशे, लौंग ८ मा, शुद्धकपूर २ माशे लेकर वारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सहिजनकीजड़कीछाल और भंगरेकेरसोंसे ३–३ दिन और कालाभंगरा, कांटेवालीचौलाई, अडूसा, चन्दन, हड़जोड़, पान इनसबकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचि-तानुपानकेसाथदेनेसे ७ प्रकारकाज्वर, १३ सन्निपात, ८ प्रकारका-पाण्डु, श्वास, कास, पीनस, कुक्षिशूल, पार्श्वशूल, गुल्म, जलो-दर, प्रमेह, सोम, पक्षाघात, शीतता, ८० प्रकारकेवातरोग इनसबको यह नष्टकरताहै॥ ३२७॥

३२८ सर्वलोकाश्रयरसः

शुद्धं सूतं पलं गन्धं गन्धार्धं तालताप्यकम् ।
अमृतं रसकञ्चैव तालकार्द्धविभागिकम् ॥ १३७२ ॥
एतेषां कज्जलीं कुर्याद् दृढं सम्मर्द्य वासरम् ।
त्रिदिनं मर्दयेच्चाथ दत्त्वा निम्बुजलं खलु ॥ १३७३ ॥
वटीकृत्य विशोष्याऽथ काचकूप्यां निधापयेत् ।
निष्कतुल्यार्कपत्रेण पिधायाऽऽस्यं प्रयत्नतः ॥ १३७४ ॥
सार्धाङ्गुलमितोत्सेधं मृत्स्नया तां विलेप्य च ।
ततो भाण्डतृतीयांशे सिकतापरिपूरिते ॥ १३७५ ॥
निधाय सिकतामूर्ध्नि सिकताभिः प्रपूरयेत् ।
रुद्ध्वाऽऽस्यं तदधो वह्निं ज्वालयेत्सार्धवासरम् १३७६
स्वाङ्गशीतलितं काचपुटादाकृष्य तं रसम् ।
पटचूर्णं विधायाथ ताम्रमभ्रं पलद्वयम् ॥ १३७७ ॥
पलार्द्धममृतञ्चैव मरिचञ्च चतुष्पलम् ।
एकीकृत्य क्षिपेत्सर्वं नारिकेलकरण्डके ॥ १३७८ ॥
आज्यो गुञ्जाद्विमानो हरति रसवरः सर्वलोकाश्रयोऽयं
वातश्लेष्मोत्थरोगान्गुदजनितगदं शोषपाण्ड्वामयञ्च ।
यक्ष्माणं वातशूलं ज्वरमपि निखिलं वह्निमान्द्यञ्च गुल्मं
तत्तद्रोगघ्नयोगैः सकलगदचयं दीपनं तत्क्षणेन १३७९

र.र.स , र.मु., र को., अर्शोऽधिकारे । र.को अर्शोघ्न इतिनाम,

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ पल, हरिताल और सोनामाखीभस्म २–२ कर्ष, शुद्ध वछनाग और खपरिया १–१ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय नीबूकेरससे ३ दिन मर्दनकर छोटीछोटीगोलियां वनाय सुखाकर ३–४ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमेंभर डाट लगाकर १॥ अङ्गुल कपड़मिट्टी चारोंतर्फ लगाय लोहे अथवा मिट्टीकीनादमें रख तीसरेहिस्सेतक वालूभरके १॥ दिनकी क्रमवृद्धअग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ताम्र और अभ्रक १–१ पल, शुद्धवछनाग २ कर्ष, मरिच ४ पल लेकर सवका कपड़छनचूर्णकर नारियलमें भररक्खे । इसमेंसे २–२ रत्ती घीकेसाथ अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे वातश्लेष्मजरोग, ववासीर, शोष, पाण्डु, यक्ष्मा, वातशूल, सवप्रकारके ज्वर, मन्दाग्नि, गुल्म इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ३२८ ॥

३२९ सर्वसन्निपातनाशकरसः

रसं गन्धं विषञ्चैव धत्तूरं मरिचन्तथा ।
शोधितञ्च तथा तालं माक्षिकञ्च समांशकम् ॥ १३८० ॥
दन्तीक्वाथेन सम्भाव्य गुञ्जामात्रा वटी कृता ।
साध्यासाध्यान्निहन्त्याशु सन्निपातांस्त्रयोदश १३८१

वै क , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, वछनाग, धतूरेकेवीज, मरिच, हरिताल और सोनामाखी समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर दन्तीकेक्वाथसे मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे साध्य अथवा असाध्य १३ सन्निपातोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३२९ ॥

३३० सर्वसिद्धिदावटी

पूर्वसिद्धरसे देवि पादांशं हेम योजयेत् ।
मृतं वज्रं पलांशेन व्योमसत्त्वं प्रयोजयेत् ॥ १३८२ ॥
क्षीरकञ्चुकितोयेन सुरदालीरसेन च ।
विधिना मर्दयित्वा तु नष्टपिष्टन्तु कारयेत् ॥ १३८३ ॥
कान्तचूर्णत्रुटिं दत्त्वा मूकमूषागतं धमेत् ।
गुटिका जायते दिव्या वक्त्रस्था सर्वसिद्धिदा १३८४

रसार्णवे., रसायने ।

भाषा—ऊर्द्धपातनादि और वीजजारणादिकियेहुए १ पल पारेमें सुवर्णवीज और वज्रभस्म १–१ कर्ष, अभ्रकसत्त्व १ पल मिलाकर क्षीरकञ्चुकी और वन्दालकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर कान्तलोहकाचूर्ण १ कर्ष डालकर थोड़ीदेर घोटकर गोलावनाय अन्धमूषामें वन्दकर दृढधमनकरनेसे इसकी गोली वनतीहै । इसको मुंहमें रखनेसे समस्तसिद्धियें होतीहै ॥ ३३० ॥

३३१ सर्वसिद्धिप्रदरसः

पातिते स्वेदिते सूते जारयेत्तत्र षड्गुणम् ।
बलिं स्वोपक्रमेणैव यन्त्रे भूधरके ततः ॥ १३८५ ॥
चीर्णगन्धरसेशं तं खल्वे दत्त्वा विमर्दयेत् ।
विष्णुक्रान्तारसेनैव हृत्पर्णीसलिलैस्तथा ॥ १३८६ ॥
देवदालीरसैस्तद्वद्बृहत्कन्यारसैस्तथा ।
काकमाचीकृष्णधूर्तै रक्ता च खरमञ्जरी ॥ १३८७ ॥
तिलच्छदा तथा ब्राह्मी शोफघ्नी मेघनिःस्वना ।
चाङ्गेरीनागवल्ली च मुनिपुष्परसोऽग्निकः ॥ १३८८ ॥
मुशली रक्तवह्निश्च रामठं हलिनी तथा ।
अप्रसूतगवीमूत्रं तथैवोत्तरवारुणी ॥ १३८९ ॥
इन्द्रवारुणिका चैव हंसपादी कुवेरदृक् ।
प्रस्तरी च शिलाभेदी सस्यारि मत्स्यलोचना १३९०
वज्रवल्ली वज्रकन्दो वज्रदुग्धं तु दुग्धिनी ।
सोमवल्ली सूर्यभक्ता लज्जालुश्च रुदन्तिका ॥ १३९१ ॥
मर्कटी वृश्चिकदला पुरीषं खञ्जरीटजम् ।
पारावतस्य विष्ठा च भूलतानीरमेव च ॥ १३९२ ॥
पलाशमूलकक्वाथः कञ्चुकी खर्जुसूरणम् ।
शतावरी गोक्षुरकं पाठा च यवचिञ्चिका ॥ १३९३ ॥
मृतसञ्जीववनिता सर्पाक्षी काकतुण्डिका ।
ब्राह्मी मण्डूकपर्णी च भानुमूलरसस्तथा ॥ १३९४ ॥
कुक्कुटी नागिनी नागो जयाऽथ फणिमारकः ।
अश्वमाररसो व्याघ्री वृहती विषतिन्दुकः ॥ १३९५ ॥
शरपुङ्खा सहचरी द्रोणपुष्पी च शाल्मली ।
कोविदारो महानीली नीली च गरुडी तथा ॥ १३९६ ॥
गोपी नागवला चन्द्रवल्ली च सितभारती ।
महाराष्ट्री शिखिशिखा योषित्कुसुममेव च ॥ १३९७ ॥

अश्वगन्धा चक्रमर्दः शिग्रुश्च त्रिवृता निशा।
प्रत्यक्पर्णी वाकुची च जयपालश्च फल्गुकः ॥१३९८॥
शक्रवल्ली पटोलश्च काथश्च त्रिफलोद्भवः।
बहुपुष्पी निकोचश्च द्रवैरेषां विमर्दयेत् ॥ १३९९ ॥
व्यस्तैः समस्तैः सम्मर्द्य द्वौ मासौ च निरन्तरम्।
कल्कीभूतश्च तं सूतं यन्त्रे सोमानले क्षिपेत् ॥ १४०० ॥
मृदुमध्यक्रमेणैव वह्निं प्रज्वालयेदधः।
उपविंशांश्च दिवसान् स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ॥ १४०१ ॥
यन्त्रं निर्भिद्य गृह्णीयात्तं सूतं भस्मतां गतम्।
एतद्भस्म स्पर्शमात्राद्वज्रं भस्मी भवेत्क्षणात् ॥१४०२॥
भस्मीभवन्ति लोहानि रससम्पर्कतो ध्रुवम्।
अनेन भस्मना सर्वान् सत्त्वसङ्घांश्च मारयेत् ॥१४०३॥
एतस्य भस्मनो देया भावना ज्वरवारणे।
मत्स्यादिकानां पित्तानां दशानां वत्सनाभजा १४०४
हृत्पर्णीकृष्णधत्तूरैस्त्रिजगद्विजयारसैः।
महाराष्ट्री तिलदला मण्डूकी तुलसी तथा ॥ १४०५ ॥
एतैः सम्भाव्य सूतेन्द्रं पित्तैः पश्चाद्विभावयेत्।
वत्सनाभं समं दद्याद्रक्तश्रृङ्गीं स्वरांशतः ॥ १४०६ ॥
आदित्यभागं हारिद्रमष्टांशं मेषश्रृङ्गिकम्।
वेदभागं सक्तुकश्च दद्यात्सूतश्च भावयेत् ॥ १४०७ ॥
रक्तश्रृङ्ग्या च सहितो यदि स्यात्पारदेश्वरः।
राजसर्षपमात्रेण सन्निपातं विसञ्ज्ञकम् ॥ १४०८ ॥
निहन्याच्छीततोयानि ढालयेच्छैत्यसम्भवः।
कम्पो भवेच्च सर्वाङ्गे यावत्तावद्विचक्षणः ॥ १४०९ ॥
सर्षपद्वयमात्रेण हारिद्रे दापयेद्रसम्।
सर्षपत्रयमात्रेण मेषश्रृङ्गीयुतं रसम् ॥ १४१० ॥
राजीचतुष्टयं दद्यात्सक्तुकेन च संयुतम्।
वत्सनाभयुतं दद्याद्गुञ्जामानेन पारदम् ॥ १४११ ॥
न न्यूनं नाधिकं देयं शुभेच्छुर्भिषगुत्तमः।
उपचारश्च पूर्वोक्तो यथा लङ्केश्वरे तथा ॥ १४१२ ॥
अनुपानप्रकारं तु रसेन्द्रस्य यथाक्रमम्।
ज्वरादिसर्वरोगेषु शास्त्रयुक्त्या शिवोदितम् ॥१४१३॥
किराततिक्तकाथेन ज्वरान्सर्वान्निहन्त्यसौ।
क्षयरोगं निहन्त्येष मुक्ताभस्मसमन्वितः ॥ १४१४ ॥
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन रसं दत्त्वाऽनुपाययेत्।
धारोष्णमर्जुनीदुग्धं तवराजयुतं तथा ॥ १४१५ ॥
कणागुग्गुलुयोगेन पाण्डुरोगं निवारयेत्।
लोहभस्मसमायुक्तस्त्रिफलाचूर्णसंयुतः ॥ १४१६ ॥
सूरणाम्भोऽनुपानेन सर्वार्शो जयति ध्रुवम्।
सूतेन्द्रं वङ्गजं भस्म भागैरष्टभिरन्वितम् ॥ १४१७ ॥
प्रलिह्य मधुना सार्धं मधुधात्रीरसानुपः।
प्रमेहान्वै शुक्रमेहवर्ज्यं सर्वाञ्जयेद्ध्रुवम् ॥ १४१८ ॥
शुक्रमेहे रसं जग्ध्वा हरिद्राया रसं पिबेत्।
वातव्याधिषु युञ्जीत व्योषसिंहीरसैः समम् ॥१४१९॥
अश्मर्यां पूर्वयोगः स्यान्मूत्रकृच्छ्रे च पूर्ववत्।
कुष्ठे सूतं नियुञ्जीत भस्मना ताम्रजेन वै ॥ १४२० ॥
उत्क्लेदभेदभ्रमिभिर्विमुक्तं दोषवर्जितम्।
निरुत्थं खदिरकाथवाकुचीचूर्णसंयुतम् ॥ १४२१ ॥
सर्वकुष्ठं निहन्त्येष रसेन्द्रो नात्र संशयः।
अथवा निम्बजं चूर्णं पञ्चाङ्गं भावयेज्जलैः ॥ १४२२ ॥
निम्बकाथभवैस्तद्वत्काथैः खदिरसम्भवैः।
सप्त सप्त विभाव्याथ षष्ठांशं लोहभस्मकम् ॥१४२३॥
पङ्गिः प्रमुच्यते मासैः सर्वकुष्ठान्न संशयः।
गुल्मे क्षारैः समं देयः शूलेऽथ परिणामजे ॥ १४२४ ॥
ताम्रभस्म समायुक्तः पटुक्षारादिसंयुतः।
दातव्यो रसराड्हन्ति सर्वं शूलमसंशयम् ॥ १४२५ ॥
अथवा सर्वरोगेषु प्रयोगोऽयं निरूप्यते।
शिलाजतुसमायुक्तो गन्धमाक्षिकयोजितः ॥१४२६॥
षड्लोहभस्मभिर्युक्तो घृतेन मधुना युतः।
सर्वान्रोगान्निहन्त्येव रसेन्द्रो नाऽत्र संशयः ॥ १४२७॥
चिराभ्यासबलेनैव वलिश्च पलितञ्जयेत्।
अजरामरतां याति सर्वदा सेवनान्नरः ॥ १४२८ ॥
पथ्यक्रमस्तु पूर्वोक्तो वर्जयेच्छयनं दिवा।
रात्रौ जागरणं नैव कुर्वीत विषमाशनम् ॥ १४२९ ॥
नोद्घाटयेद्यक्षरक्षःपिशाचग्रहडाकिनीः।
आरनालञ्च मद्यञ्च रसान्तरमुपागतम् ॥ १४३० ॥
ओदनं नैव भुञ्जीत माहिषं दधि वर्जयेत्।
तत्क्षीरं तद्घृतं तज्जं तक्रं यत्नाद्विवर्जयेत् ॥ १४३१ ॥
यावनालञ्च तैलञ्च तैलपक्वं तिलास्तथा।
वर्जयेदतियत्नेन कारवेल्लञ्च चिर्भटम् ॥ १४३२ ॥
कालिङ्गमथ कूष्माण्डं कर्कोटी च कलिङ्गकम्।
इत्यादि सर्वं वर्ज्यं स्यादतिहास्यमति क्रुधः ॥१४३३॥
अतिभोजननिद्रे च घनोष्णमतिशीतलम्।
अतिवातो विवर्ज्यः स्यादातपं सर्वथा त्यजेत् ॥१४३४
प्रवाते च गृहे तिष्ठेद्रोगघातमपेक्षकः।
अयं रसेश्वरः सर्वसिद्धिप्रदसञ्ज्ञकः ॥ १४३५ ॥
दृष्टप्रभावः सृष्टोऽत्र लोकोपकृतिहेतवे।
देवीशास्त्रानुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ १४३६ ॥
रसाल., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—ऊर्द्ध, अध और तिर्यक् पातनकरके यथासम्भव काञ्जिकादिकमें स्वेदनकियेहुए पारेमें षड्गुणगन्धकका भूधरयन्त्रप्रभृतिसे जारणकर तप्तखरलमें डालकर विष्णुकान्ता, हृत्पर्णी (लताविशेष अथवा अम्लोनिया), वन्दाल, घीकुंवार, मकोय, कालाधतूरा, लाल अपामार्ग, हुरहुर, ब्राह्मी, पुनर्नवा, कटिवालीचौलाई, तिपतिया, पान, अगस्त्य, सफेदचित्रक, मुशली, लालचित्रक, हींग, करिहारी, वछड़ीकामूत्र, चमारदूधी, इन्द्रायण, हंसराज, कंजा, पथरी, पाषाणभेद, अगियाघास, मछेछी, हड़जोड़, वज्रकन्द, सेहुण्डकादूध, दूधी, पहाड़ीखीप, सूर्यमुखी,

लज्जालु, रुदन्ती, केवांच, विछुआघास, खञ्जरीट और कबूतरीकी विष्ठा, केंचुए, पलाशकीजड़कीछाल, कञ्चुकी, खजूर जहरीसूरण, शतावर, गोखरू, पाठा, जेंती, गिलोय, प्रियङ्गु, सर्पाक्षी, काकनासा, लालफूलकी ब्राह्मी, मण्डूकपर्णी, आककी जड़कीछाल,कुक्कुटशिखा, नागदौन, चित्रपर्णी, (पृश्निपर्णी) भांग, फणिमार (विट्खदिर), कनेर, दोनोंभटकटैया, कुचिला, सरफोंका, कटसरैया, गूमा, सेंमल,लालफूलका कचनार, दोनोंनील, गरुडबूटी (हिमालयमें इसीनामसे प्रसिद्धहै), अनन्तमूल, नागबला, चादमोगरा, सफेदफूलकी ब्राह्मी, मराठी, मोरशिखा, क्षीरज, असगन्ध, चकवड, सहिजन, निसोत, हल्दी, घनसर (मराठी), वाकुची, जमालगोटा, कठूमर, महर, परवल, त्रिफला, बहुपुष्पी, चिलगोजा, इनसवके यथासम्भव स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकरे। अथवा सवको इकट्ठीमिलाय इनकेस्वरससे २ महीनेतक निरन्तर मर्दनकर डमरूयन्त्रमें रखकर मृदु, मध्य और खर इसक्रमसे २१ दिनकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर पारेकी भस्मको निकालकर रखले। किसीमारकद्रव्यकेसाथ मिलाकर इसभस्मका हीरे अथवा किसीभी लोहपर लेपकरके आचदेनेसे वह फूलजाताहै। इससे तमामधातु और सत्त्वोंकी कीहुई भस्म कल्पोक्तगुणको देतीहै। इसपारदभस्ममें ज्वरकेलिये मत्स्यादि १० पित्त, वछनाग, हृत्पर्णी, कालाधतूरा, भाग, मराठी, हुरहुर, मण्डूकपर्णी और तुलसीकी १–१ भावनादेकर पांचपित्तोंसे फिर भावना देकर समभाग वछनाग और सोलहवा भाग लालवछनाग, १२ वा भाग हारिद्रक और आठवाभाग मेषशृङ्गिक, चतुर्थांश सक्तुक विष अलग २ मिलाकर रखछोड़े। लालवछनाग मिलाया हो तो सर्षपके वरावर मात्रा सञ्ज्ञारहित सन्निपातमें देकर मत्थेपर ठंढेजलकीधारा कम्पहोनेतक देवे। हारिद्रक मिलायाहोतो दो सर्षपभरमात्रा, मेषशृङ्गिकमिलाया हो तो ३ सर्षप, सक्तुक मिलाया हो तो ४ सर्षप और वछनाग मिलाया हो तो १ रत्तीकी मात्रा देवे। इसमें न्यूनाधिकता न करे। उपद्रवोंकी शान्ति लक्ष्मेश्वरोंकी तरह करनीचाहिये। चिरायतेकेक्काथसे समस्तज्वरोंको और मोतीकेसाथदेनेसे समस्तक्षयोंको नष्टकरताहै। क्षयमें २ रत्ती रस देकर धारोष्ण गायके दूधमें १ माशा वंसलोचन डालकर पिलावे। पीपल और गूगलकेसाथदेनेसे पाण्डुरोगको नष्टकरताहै। लोहभस्म और त्रिफलाके चूर्णकेसाथदेकर सूरणकास्वरस पिलानेसे समस्तबवासीरोंको यह नष्टकरताहै। १ रत्ती पारदभस्ममें ८ रत्ती वङ्गभस्म मिलाकर मधुकेसाथचाटकर मधु और आंवलेकारसपीनेसे शुक्रमेहको छोड़कर समस्तप्रमेहोंको नष्टकरताहै। मधुकेसाथ रसको देकर हल्दीकास्वरस पिलानेसे शुक्रमेह, तथा त्रिकटु और भटकटैयाकेरसकेसाथदेनेसे वातव्याधियोंको नष्टकरताहै। पथरी और मूत्रकृच्छ्रमें प्रमेहघ्न अनुपानदेना। वान्तिभ्रान्त्यादिवर्जित ताम्रभस्मकेसाथ देकर वाकुचीके चूर्णका प्रक्षेपदियाहुआ खैरकाक्काथ पिलानेसे समस्तकुष्ठोंको नष्टकरताहै। अथवा नीमके मदसे भावना दियेहुए नीमकेपञ्चाङ्गकेचूर्णमें नीम और खैरकेक्काथोंकी ७–७ भावनाएं देकर छठाहिस्सालोहभस्म मिलाकर रखछोड़े। इसकेसाथ रसकाप्रयोग करनेसे ६ महीनेमें समस्तकुष्ठोंसे निवृत्तहोजाताहै। गुल्ममें क्षारोंकेसाथ, परिणामशूलमें ताम्रभस्मकेसाथ तथा पाचोंनमक और क्षारोंकेसाथदेनेसे तमामशूल नष्टहोतेहैं। शिलाजीत, गन्धक, सोनामाखी, ६ लोहोंकीभस्मोंकेसाथ मिलाकर घी और मधुकेसाथदेनेसे समस्तरोगोंको नष्टकरताहै अधिकदिनके अभ्याससे वलीपलितादिक निवृत्तहोतेहैं। निरन्तरके अभ्याससे अजरामरहोताहै। दिनका सोना, रातका जगना और विषमाशन, यक्ष, राक्षस, पिशाच, ग्रह और डाकिनियोंका निकालना, काञ्जी, विगड़ाहुआ मद्य और अन्यरसकासेवन, भात, भैंसका दही, दूध, घी और छाछ, ज्वार, मक्की, तैलपक्कपदार्थ, तिल, करेला, कचरे, कलींदा, कोंहळा, ककोड़े, इन्द्रजव, अत्यन्तहँसी, क्रोध, अतिभोजन, निद्रा, अत्यन्त गरम या ठंढा, अत्यन्तवायु, धूप इनसवकायत्नसे परित्यागकरे और खुलीहवामें रहे ॥ ३३१ ॥

३३२ सर्वसुन्दररसः (प्रथमः)

पातयेत्स्वेदयेत्सूतं जारयेद्धेमदानवौ।
प्रागुक्तमानतः पश्चाच्छिलां सञ्जारयेत्समाम्॥१४३७॥
तालं ताम्रं समांशेन जारयित्वाऽथ पारदम्।
चतुःपलमितं नीत्वा तालताप्ये मनःशिला ॥१४३८॥
मृतं ताम्रं तथैतानि सूततुल्यानि योजयेत्।
पञ्चानां लवणानाञ्च पलानि दश योजयेत् ॥१४३९॥
तालमेकं हेमभस्म सूतेन सह मर्दयेत्।
ततस्तत्सर्वमेकत्र मर्दयेदौषधीद्रवैः॥ १४४० ॥
जयन्तीसलिलैः पूर्वं रक्तझिण्टिकवारिणा।
सिंहास्यनीरैः सम्मर्द्यो विषतिन्दुकवारिणा ॥१४४१॥
अरणीसलिलै र्नीरै र्वर्वरीजैश्च मर्दयेत्।
महाराष्ट्रीजलैः कृष्णधत्तूरजरसैस्ततः॥ १४४२ ॥
वत्सनाभस्य नीरेण मर्दयित्वा दिनं दिनम्।
तैरेव पुटयेत्पूर्वक्रमेणैव रसेश्वरम्॥ १४४३ ॥
खल्वे निःक्षिप्य सञ्चूर्ण्य स्थापयेदतियत्नतः।
सर्वसुन्दरनामाऽयं रसेन्द्रो गुल्मशूलहा॥ १४४४ ॥
समर्च्य भैरवं सूतं गुल्मिने सम्प्रयोजयेत्।
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन शुण्ठीघृतसमन्वितम्॥ १४४५ ॥
द्विदलं वर्जयेत्सर्वं पथ्ये रूक्षाशनं तथा।
एकमासप्रयोगेण सर्वान्गुल्मान्निवारयेत्॥ १४४६ ॥
शुण्ठीघृतप्रकारोऽयं कथ्यते शास्त्रमार्गतः।
शुण्ठ्याः पलानि पञ्चाशत्पिष्ट्वा वस्त्रेण गालयेत्॥
चूर्णाद्विंशगुणे नीरे चूर्णं तच्च विनिःक्षिपेत्।
वासयित्वा दिनैकञ्च क्वाथयेन्मन्दवह्निना॥ १४४८ ॥
चतुर्थांशेऽवशिष्टेऽथ क्वाथं वस्त्रेण गालयेत्।
गालितक्वाथमध्येऽथ शुण्ठीमानं घृतं क्षिपेत्॥१४४९॥

पचेन्मृद्वग्निना श्रीमान् यावच्छिष्येत वै घृतम्।
शुण्ठीघृतप्रकारोऽयं कथितः सम्प्रदायतः॥ १४५०॥

रसालं., र. मृ., गुल्मे

भाषा—ऊर्द्धादिपातितकियेहुएपारेमें सुवर्ण, गन्धक, मैनसिल, हरिताल, ताम्र येसव समभागमें जारणकर ४ पललेवे। फिर शुद्धहरिताल, सोनामाखी, मैनसिल, ताम्रभस्म येसव ४–४ पल और पाचोंनमक २–२ पल लेवे। इनमेंसे १ कर्ष हरितालको अलगलेकर १ कर्षसुवर्णभस्म मिलाकर पारेका ३–४ दिनतक मर्दनकरे फिर अन्यवस्तुओंकी कज्जलीकर मिलावे। इसकेवाद जेंती, लालकटसरैया, अडूसा, कुचिला, अरणी, ववई, मराठी, कालाधतूरा और वछनाग के यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर लघुपुटकी आचदेवे। ऐसेप्रत्येकरसके मर्दनकेवाद पुटदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर भैरवका पूजनकर रखछोड़े। इसमेंसे ४ रत्तीकीमात्रा शुण्ठीघृतकेसाथदेनेमे १ महीनेमें गुल्म नष्टहोताहै। इसमें सवप्रकारकी दाल और रूक्षभोजनका परित्यागकरे। ५० पल सोंठका चूर्णकर २० गुने पानीमें डालकर एकदिनरात रखछोड़े। फिर मन्दाग्निसे चतुर्थांशावशेष क्वाथवनाकर छानले। फिर ५० पल गायकाघी डालकर मन्दाग्निसे पकावे। घृतमात्र अवशेषरहनेपर छानकर रखछोड़े। इसीकानाम शुण्ठीघृतहै॥

३३३ सर्वसुन्दररसः (द्वितीयः)

गोमूत्रे त्रिफलाक्काथे तप्त्वा तप्त्वा विनिक्षिपेत्।
मण्डूरं भस्मसात्कृत्वा चत्वारिंशच्च रक्तिकाः॥१४५१॥
पञ्चानां लवणानाञ्च वल्लानां शतमाहरेत्।
मर्दयेच्च रसं भस्म हेम्नो गुञ्जाचतुष्टयम्॥ १४५२॥
जयन्ती मण्डुकी वासा विषतिन्दु र्जयाभिधा।
वर्वरी च महाराष्ट्री धत्तूरो वत्सनाभकः॥१४५३॥
भावयेत्स्वरसैरेषां पुटे स्वल्पे विनिःक्षिपेत्।
सर्वसुन्दरनामाऽयं गुल्मशूलविनाशनः॥ १४५४॥
गुञ्जा चतुष्टयञ्चास्य शुण्ठीघृतसमन्वितम्।
दापयेद्रोगिणं वैद्यो द्विदलञ्च विवर्जयेत्॥ १४५५॥

र मृ., गुल्मे।

भाषा—गोमूत्र और त्रिफलाके क्वाथमें गरमकरके वुझाकर भस्मकिया हुआ मण्डूर ४० रत्ती, पाचोंनमक ६०–६० रत्ती, पारा और सुवर्णभस्म ४–४ रत्ती मिलाकर जेंती, गोरखमुण्डी, अडूसा, कुचिला, भाग, ववई, मराठी, धतूरा, वछनाग इनके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन घोटकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर लघुपुटकी आचदेकर शीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ रत्ती शुण्ठीघृतकेसाथ देनेसे गुल्म और शुल नष्टहोतेहै। तमाम दालोंसे परहेजकरे। शुण्ठीघृत पूर्वयोगमें कहागयाहै॥ ३३३॥

३३४ सर्वसुन्दररसः (तृतीयः)

सूतगन्धविषमेव कारयेद्भागवृद्धमथ मर्दयेत्ततः।
आर्द्रवह्निजरसेन यत्नतः पाचितो हि लवणाख्ययन्त्रके॥
भक्षितो हि किल वल्लमात्रया
क्षौद्रकेण सह पिप्पलीयुतः।
पूर्णचन्द्रवदयं हि सेवितो
यक्ष्महा भवति वातरोगहा॥ १४५७॥

र. प्र. सु., यक्ष्मणि।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और वछनाग क्रमवृद्धभागसेलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अदरख और चित्रकके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर लवणयन्त्रमें ४ पहरकी मन्दाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती पीपल और मधुकेसाथ सेवनकर पूर्णचन्द्रकीतरह पथ्यपालनेसे यह राजयक्ष्मको नष्टकरताहै ३३४

३३५ सर्वसुन्दररसः (चतुर्थः)

हेमताररविपत्रिकां भृशं पूर्ववच्च परिपाचयेत्ततः।
सूतभस्म विषगन्धकान्वितं मर्दयेत्तदनु तद्विभावयेत्॥
चित्रकार्द्रकरसेन तत्क्षणं लोहपात्रकुहरे ततः पचेत्।
सर्वसुन्दररसेश्वरं त्विमं योजयेन्निगदितानुपानतः॥
सर्वरोगविनिवृत्तिदो भवेद्रोगयोगविनियोजितो द्रुतम्

र. दी, र. चं, र. (मा), राजयक्ष्मणि।

भाषा—सुवर्ण, रजत और ताम्रके वारीकपत्रोंकी मृतकजीवनरस (सं. ६४८) के विधानसे अलग २ भस्मकर इनकी वरावर २ पारदभस्म, शुद्ध वछनाग और गन्धक मिलाकर १–२ पहर मर्दनकर चित्रक और अदरखकेरससे १–२ दिन मर्दनकर कड़ाहीमें डालकर मन्दाग्निसे पकावे और लोहेकीकड़छीसे चलातारहे। जल सूखजानेपर निकालकर घोटकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह राजयक्ष्मादि समस्तरोगोंको दूरकरताहै ३३५

३३६ सर्वसुन्दररसः (पञ्चमः)

रसं तालं शिलां ताप्यं ताम्रं पञ्च पटूनि च।
द्विशाणिकानि वज्रस्य माषं सञ्चूर्ण्य भावयेत् १४६०
जयन्तीवदरीवासाविषतिन्दुजयाधवैः।
समटङ्कणजै र्द्रावै र्महाराष्ट्रीसुवर्णजैः॥ १४६१॥
शुष्कं लघुपुटे पाच्यं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
रक्तिकैकां ततः खादेदस्माच्छुण्ठीघृतान्विताम्॥
भुक्तं विवर्जयेत्तावद्गुल्मशूलविनाशनः॥ १४६२॥

र. शं, शूलाधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, हरिताल, मैनसिल और सोनामाखी, ताम्रभस्म, पाचोंनमक ८–८ मासे, वज्रभस्म १ माशा लेकर वारीकचूर्णकर जेंती, वेरकीछाल, अडूसा, कुचिला, भांग और धव, समभाग सुहागेका द्रव, मराठी, धतूरा इनप्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ३–४कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर लघुपुटकी आचदे। इसमेंसे १–१ रत्ती शुण्ठीघृतकेसाथखानेसे गुल्म और शूल नष्टहोताहै। रोगसे निर्मुक्तहोनेतक अन्न न खावे केवल दूध और फलोंपर रहे॥

३३७ सर्वसुन्दररसः (षष्ठः)

गद्याणैकं सुकर्पूरं कनकं कङ्गुणीं पुरम् ।
तोलैकैकं समादाय सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ १४६३ ॥
हेमाह्वा सर्पगरलैरेकैका भावना भवेत् ।
अहिफेनरसस्यापि शृङ्गीविषसमुद्भवैः ॥ १४६४ ॥
वृक्षादन्या भवेदेका शोषयित्वा पुनः पुनः ।
मयूरमत्स्यमहिषपित्तानामत्र भावना ॥ १४६५ ॥
आर्द्रकरसेनाऽपि मुद्गमाना वटीश्चरेत् ।
सन्निपाते पुरा देया त्रिदोषोत्थे विशेषतः ॥ १४६६ ॥
ज्वरे घोरे क्षये कासे हिक्कारोगे च शस्यते ।
प्लीहायां यकृतीत्येवमुदरेषु च दीयते ॥ १४६७ ॥
गलग्रहे ग्रहण्यां तमतिसारे प्रयोजयेत् ।
अयमर्शःसु देयः स्याद्वातजेषु पुनः पुनः ॥ १४६८ ॥
कफजेषु तथा द्वन्द्वसमुद्भूतेषु दीयते ।
रोगयोग्यानुपानेन दातव्यः सर्वसुन्दरः ॥ १४६९ ॥
नारङ्गं शर्करां द्राक्षां दधिरम्भाफलन्तथा ।
शृतं दुग्धं प्रयुञ्जीत भक्तं नक्तं प्रशस्यते ॥ १४७० ॥
तत्रौपयौगिकं यच्च प्रयोज्यं तद्भिषग्वरैः ।
शीतलं सलिलं दद्यात्सुवासकुसुमानि च ॥ १४७१ ॥
अतितापो भवेदङ्गे घृताक्तं शीतवारिणा ।
स्नापयेद्रोगिणं पश्चात्ततोऽसौ लभते सुखम् ॥१४७२॥

रसचि., र. का., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धकपूर ६ माशे, शुद्धधतूरेकेवीज, माल्कागनी और गूगल १–१ तोला लेकर वारीकचूर्णकर रेवनचीनी अथवा सत्यानाशी, सर्पविष, अफीम, वछनाग, थूअर इनके द्रवोंसे और मोर, मछली, भैंसा इनके पित्त तथा अद्रखकेरससे १–१ भावना देकर मूंगवरावर गोलिया वनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे त्रिदोपोत्थसन्निपात, भयङ्करज्वर, क्षय, कास, हिचकी, प्लीहा, यकृत्, उदररोग, गलग्रह, ग्रहणी, अतिसार, ववासीर, वातज, कफज और द्वन्द्वजरोग इनसवको यह नष्टकरताहै। नारङ्गी, शक्कर, द्राक्ष, दही, केले, औटाहुआ दूध इनमेंसे औचिती देखकर देवे। अत्यन्त भूखलगनेपर रात्रिमें भोजनदे। अत्यन्तगर्मी मालूमहोनेपर घीका अभ्यङ्गकर ठंढेजलकी धारादे। अच्छेवस्त्र और सुगन्धितपुष्पोंकीमाला पहिनावे ॥ ३३७ ॥

३३८ सर्वाङ्गसुन्दररसः (प्रथमः)

वह्न्यश्वत्थभवं चूर्णं त्रयोदशविभागिकम् ।
दशाष्टौ टङ्कभागाश्च शङ्खभस्म तथा भवेत् ॥ १४७३ ॥
त्रयोदश द्वादश च रसः स्यादमृतं त्रयम् ।
चिञ्चापक्वफलत्वक्च गन्धो द्वादशभागिकः ॥१४७४॥
शृङ्गवेरद्रवै भाव्यमेकविंशतिवारकम् ।
सर्वाङ्गसुन्दरं नाम्ना सर्वव्याधिविनाशनम् ॥१४७५॥
अनुपानन्तु ताम्बूलं त्रिदोषे सन्निपातके ।
आर्द्रकं त्वनुपानं स्याद्भिषिग्यान्यत्प्रदापयेत् ॥१४७६॥

र. क. यो , सन्निपाते ।

भाषा—चित्रकमूल और पीपलकीछाल १३–१३ भाग, भुनासुहागा १० भा., शङ्खभस्म २ भा., शुद्धपारा १३ भा., वछनाग १२ भा., पकीइमलीकेछिल्के ३ भा., शुद्धगन्धक १२ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अदरखकेरससे २१ भावनाएं देकर २–२ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पानकेरसकेसाथदेनेसे त्रिदोषजसन्निपात नष्टहोताहै। अनुपानविशेषसे तमामज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३३८ ॥

३३९ सर्वाङ्गसुन्दररसः (द्वितीयः)

रसालनागशैलानि तुत्थं गन्धकसोमलम् ।
सहदेवीनिम्बविम्बीरसैः सप्त च सप्त च ॥ १४७७ ॥
दिनानि सम्मर्द्य दृढं कूप्यां द्वात्रिंशयामकम् ।
वह्निशीतो मेहहरो रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥ १४७८ ॥

र. का., प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, हरिताल, मैनसिल, तुत्थ, गन्धक और सोमल, नागभस्म सव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सहदेवी, नीमकीछाल और कुंदरूकेरसोंसे ७–७ दिन मर्दनकर सुखाकर फिरसे कज्जलीकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें वन्दकर ३२ पहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेह और ज्वरोंको नष्टकरताहै ॥३३९॥

३४० सर्वाङ्गसुन्दररसः (तृतीयः)

गन्धं रसञ्च तुल्यांशौ द्वौ भागौ टङ्कणस्य च ।
मौक्तिकं विद्रुमं शङ्खभस्म देयं समांशिकम् ॥ १४७९ ॥
हेमभस्मार्द्धभागञ्च सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।
निम्बुद्रवेण सम्पिष्य पिण्डिकां कारयेत्ततः ॥१४८०॥
पश्चाद्गजपुटं दत्त्वा सुशीतञ्च समुद्धरेत् ।
हेमभस्मसमं तीक्ष्णं तीक्ष्णार्द्धं दरदं मतम् ॥ १४८१ ॥
एकीकृत्य समस्तानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
ततः पूजां प्रकुर्वीत रसस्य दिवसे शुभे ॥ १४८२ ॥
सर्वाङ्गसुन्दरो ह्येष राजयक्ष्मनिकृन्तनः ।
वातपित्तज्वरे घोरे सन्निपाते सुदारुणे ॥ १४८३ ॥
अर्शःसु ग्रहणीदोषे मेहे गुल्मे भगन्दरे ।
निहन्ति वातजान्रोगांश्श्लैष्मिकांश्च विशेषतः ॥१४८४॥
पिप्पलीमधुसंयुक्तं घृतयुक्तमथापि वा ।
भक्षयेत्पर्णखण्डेन सितया चार्द्रकेण वा ॥ १४८५ ॥

र स , र.चं , र.सु., र र , ध , भै.र , राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा १–१ भाग, सुहागा २ भा , मोती, प्रवाल और शङ्खभस्म १–१ भा., सुवर्णभस्म आधाभाग लेकर सवकी नीलवर्णकज्जलीकर नीबूकेरससे १–२

दिन मर्दनकर गोलावनाय ३–४ तह मलमलकेकपड़ेमें लपेट शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर सुखनेपर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सुवर्णभस्मकीबरावर लोहभस्म और लोहसे आधा शुद्धशिगरिफमिलाकर १–२ दिन घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीकीमात्रा पीपलमधु, घी., पानकारस, शक्कर और अदरखकारस इनमेंसे औचिती देखकर किसी एक अनुपानकेसाथ देनेसे राजयक्ष्म, घोरवातपित्तज्वर, भयङ्कर सन्निपात, ववासीर, सङ्ग्रहणी, प्रमेह, गुल्म, भगन्दर, वात और कफजरोग इनसवको यह नष्टकरताहै ॥३४०॥

३४१ सर्वाङ्गसुन्दररसः (चतुर्थः)

अभ्रगन्धकरजः पृथगच्छं
तिन्तिरीफलविषाक्षयुतञ्च।
सम्विमर्द्य फणिवल्लिदलेषु
स्वास्तृतेष्वधिषडङ्गुलगर्ते ॥ १४८८ ॥
सन्निधाय रसकल्कमधोर्द्ध्वं तद्दलैः खरवक्त्रपिधानम्।
सन्निधाय लघुवह्निकरीषे दीपयेत्पुटमथाहृतमेतत् ॥
साहिवल्लिदलमुस्तयुगेन प्रागिवान्वितमथातिविमर्द्य।
रक्तिकामितमथार्द्रकवारा चित्रकोषणवरैः सह दद्यात्॥
वाताग्निसादगुदजातिसृतित्रिदोष–,
नानासमज्वरहरो दधिभक्तपथ्यः।
सर्वाङ्गसुन्दर इति प्रथितो रसोऽय–,
मार्यैः पुरातनभिषग्भिरुदीरितस्तु ॥१४८९॥

यो चं., वाताग्निमान्द्यार्शे सु।

भाषा—अभ्रकभस्म, शुद्ध गन्धक, जमालगोटा और वछनाग, वहेड़ा १–१ तोला लेकर वारीकचूर्णकर पानकेरससे १–२ दिन मर्दनकर गोलावनाय पकेपानोंमें लपेटकर डोरेसे लपेटकर गेंदकेसदृश वनाय ६ अङ्गुलके गर्तमें पानोंकेवीचमें रख गर्तकेमुहपर अच्छीतरह पानोंकीतह विछाकर जङ्गलीकण्डोंके टुकड़ोंका वहुतहल्का पुटदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर दोनों मोथोंकाचूर्ण १–१ तोलामिलाय पानकेरससे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली चित्रक, मरिच और त्रिफलाकेसाथ देनेसे वातविकार, मन्दाग्नि, ववासीर, अतिसार, त्रिदोप, नानातरहकेज्वर, इनसवको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य दहीभात देना ॥ ३४१ ॥

३४२ सर्वाङ्गसुन्दररसः (पञ्चमः)

शुद्धसूताभ्रताम्रायो हिङ्गुलं कार्पिकं समम्।
गन्धकश्चैकभागः स्यात्सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ १४९० ॥
सप्तपर्णार्कस्नुक्क्षीरवासावातारिवारिणा।
विषमुष्टिसमं सर्वं पेष्यं तद्गोलकीकृतम् ॥ १४९१ ॥
विपचेद्वालुकायन्त्रे छियामान्ते समुद्धरेत्।
पिप्पलीविषसंयुक्तो रसः सर्वाङ्गसुन्दरः॥
सर्ववातविकारघ्नः सर्वशूलनिषूदनः ॥ १४९२ ॥

र. सं., र. सु., ध., र क. वातव्याधौ।

टि०—शुद्धसूतकताम्राय इत्यादिना सर्वसुन्दरनाम्ना इममेव रस न्यत्यस्य रसेन्द्रकल्पद्रुमे पाठान्तर. स्थापित मोऽकिञ्चिलकर इति न विस्मरणीयम्।

भाषा—शुद्धपारा, अभ्रक, ताम्र और लोहभस्म, शुद्धशिंगरिफ और गन्धक १–१ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर छतिवन, आक और थूअरकेदूध, अडूसा और एरण्डके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर समभाग शुद्धकुचिलेकाचूर्ण मिलाकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर २–४ कपड़मिट्टी देकर सुखनेपर वालुकायन्त्रमें रख दोपहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर १–१ भाग पीपल और शुद्धवछनागकाचूर्ण मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त वातविकार और शूलोंको यह नष्टकरताहै॥

३४३ सर्वाङ्गसुन्दररसः (षष्ठः)

शुद्धं सूतं तथा ताम्रं शिलामाक्षिकतालकम्।
रजतं स्वर्णवङ्गञ्च लोहमभ्रं सनागरम् ॥ १४९३ ॥
चूर्णयेत्पञ्चलवणं देयं सर्वन्तु तुल्यकम्।
गन्धकं सर्वतुल्यांशं रसैरेषां विभावयेत् ॥ १४९४ ॥
शुण्ठीजयन्तीविजयामहाराष्ट्रिकधूर्तजैः।
सर्वाङ्गसुन्दरो नाम्ना रसोऽयं विष्णुनिर्मितः ॥१४९५॥
खादेदेरण्डशुण्ठीभ्यां वल्लमात्रं दिनेदिने।
कफवातामयं हन्ति चानुपानं वदाम्यहम् ॥ १४९६ ॥
व्योषं सौवर्चलं हिङ्गु करञ्जवीजसंयुतम्।
पिवेदुष्णाम्वुना चानु सर्वशूलनिकृन्तनम् ॥ १४९७ ॥

र. सं, र चं, र सु, ध., शूलाधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, ताम्रभस्म, मैनसिल, सोनामाखी, हरिताल, रजत, सुवर्ण, वङ्ग, लोह और अभ्रक इनकीभस्में, सोंठ, पाचोंनमक, सवसमभाग, शुद्धगन्धक सवकीवरावर लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सोंठ, जेंती, भाग, मराठी और धतूरेके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली एरण्डमूलऔर सोंठकेसाथ देनेसे यह समस्त वातविकारोंको नष्टकरताहै। त्रिकटु, संचल, भुनीहींग, करञ्जवीज समभागके चूर्णकेसाथ लेकर गरमपानीपीनेसे समस्तशूल नष्टहोतेहै ॥३४३॥

३४४ सर्वाङ्गसुन्दररसः

मृतं सूतं मृतं ताम्रं शिलामाक्षिकतालकम्।
चूर्णयेत्पञ्चलवणानेतद्दशकतुल्यकम् ॥ १४९८ ॥
मृतं स्वर्णञ्च निक्षिप्य सूताद्दशमभागिकम्।
सूततुल्यं वत्सनाभं चूर्णं भाव्यं दिनावधि ॥ १४९९ ॥
विषशुण्ठीजयावासा विजयारक्तशाकिनी।
वदरीत्वङ्महाराष्ट्रीद्रवैर्धूत्तूरजैस्तथा ॥ १५०० ॥
रुद्ध्वा तुषपुटे पक्त्वा समुद्धृत्य विचूर्णयेत्।
सर्वाङ्गसुन्दरं नाम रसं गुञ्जाचतुष्टयम् ॥ १५०१ ॥
भक्षयेद्धृतशुण्ठीभ्यां शूलगुल्मौ निकृन्तति।
भावयेद्भक्षयेन्मात्रं मुशल्यार्द्रकजैर्द्रवैः ॥ १५०२ ॥

अनुपानं लिहेन्नित्यं कफशूलप्रशान्तये।
अनुपानं शूलहरं योजयेद्रोगशान्तये॥ १५०३॥

र. को., नि. र., र र., शूले।

भाषा—पारा और ताम्रभस्म, शुद्धमैनसिल, सोनामाखी और हरिताल, पांचोंनमक येसव समभाग, सुवर्णभस्म पारेसे दशमाश और शुद्धवछनाग पारेकीवरावर मिलाय वारीकचूर्णकर बछनाग, सोंठ, ओडहुल, अड्सा, भांग, मरसा, वेर, मराठी, धतूरा इनसवकेद्रवोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर २-४ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर तुपपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ४-४ रत्ती घी और सोंठकेसाथ खानेसे शूल और गुल्म नष्टहोतेहैं। मुशली और अदरखकी भावना देकर १ माशालेनेसे कफशूल नष्टहोताहै। शूलविशेषोंमें औचिती देखकर अनुपान वदलदेना॥

३४५ सर्वाङ्गसुन्दररसः (अष्टमः)

मृद्वग्निना द्रुते गन्धे चतुःपाणितलोन्मिते।
लोहसूताभ्रमेकैकं क्षिप्त्वा समवतारयेत॥ १५०४॥
मागधी मरिचं हिङ्गु दीप्यजीरकचित्रकाः।
कर्षैकैकं विषं चूर्णं कृत्वा खल्वे ततः क्षिपेत्॥१५०५॥
सर्वेषां पञ्चगुणितं मृतं ताम्रं परिक्षिपेत्।
आर्द्रकैर्मर्दयेद्द्रावै द्रवैरेरण्डजैश्च त्रा॥ १५०६॥
दिनैकं शोषयेत्तच्च भाव्यं शिग्रुद्रवं दिनम्।
सर्पाक्ष्या वामृताकन्यारविभृङ्गीपुनर्नवैः॥ १५०७॥
आर्द्रकस्य द्रवै भाव्यं दिनान्ते तन्निरोधयेत।
दिनं वा वालुकायन्त्रे समादाय विचूर्णयेत्॥ १५०८॥
जातीफलञ्च कर्पूरं कक्कोलं मधुमिश्रितम्।
रसस्यार्द्धमिदं योज्यं माषमात्रञ्च भक्षयेत्॥ १५०९॥
अनुपानं पिवेच्चास्य क्काथं त्रिकटुसम्भवम्।
सन्निपातहरः सोऽयं रसः सर्वाङ्गसुन्दरः॥ १५१०॥

र का., र. सु., र को., सन्निपाते।

भाषा—४ कर्ष शुद्धगन्धकको वेरकेकोयलोंपर गलाकर लोह, पारा और अभ्रकभस्म १-१ कर्ष डालकर नीचे उतारले। इसमें पीपल, मरिच, भुनीहींग, अजवाइन, जीरा, चित्रक और शुद्ध वछनाग १-१ कर्ष, ताम्रभस्म ७० कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर अदरख, एरण्ड, सहिजनकीछाल, सर्पाक्षी, गिलोय, घीकुंवार, आक, भंगरा, पुनर्नवा और अदरखके रसोंसे १-१ भावना देकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर २-३ कपडमिट्टी देकर सूखनेपर वालुकायन्त्रमें एकदिनकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा जायफल, शुद्धकपूर, शीतलचीनी समभागके १ माशे चूर्णमें मिलाय मधुके साथदेकर त्रिकटुका क्काथ पिलानेसे सन्निपातको यह नष्टकरताहै॥

३४६ सर्वाङ्गसुन्दररसः (नवमः)

हेमाभ्रगन्धरसटङ्कणरौप्यताम्रै-
श्चन्द्राग्निवाणरसयुग्मगुणाऽब्धिमानैः।
जम्वीरनीररससप्तपुटेन पक्कं
चूर्णीकृतं समसुमौक्तिकवल्लजैश्च॥
युक्तानुपानसकलामयनाशनोऽयं
सर्वाङ्गसुन्दर इति प्रथितो रसेशः॥ १५११॥

रसायनसं, र. बो, प्रमेहाविकारे।

भाषा—सुवर्णभस्म १ भाग, अभ्रकभस्म ३ भाग, शुद्धगन्धक ५ भाग, पारा ६ भाग, सुहागा २ भाग, रजत ३ भाग, ताम्रभस्म ४ भाग लेकर जंभीरीकेरससे मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटकी आचदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर जभीरीकेरससे पूर्ववत् मर्दनकर आचदेवे। ऐसे ७ आचें देनेकेवाद निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा मोतीकीभस्म और मरिचकाचूर्ण समभाग मिलाकर रोगोचितानुपानकेसाथ लेनेसे राजयक्ष्मादिसमस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै॥ ३४६॥

३४७ सर्वाङ्गसुन्दररसः (दशमः)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं शुद्धं तालकमाक्षिकम्।
एतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत्॥१५१२॥
हंसपादीरसेनैव द्वियामं मर्दयेद् दृढम्।
काचकूप्यां निवेश्याथ वालुकाभिः प्रपूरयेत्॥१५१३॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य द्विगुञ्जं भक्षयेत्सदा।
चिप्पिकासं निहन्त्याशु सर्वकासं नियच्छति॥१५१४॥
सर्वाङ्गसुन्दरो ह्येष रोगराजनिकृन्तनः।
दशभि मरिचै युक्तां पथ्यां पिष्ट्वाऽम्भसा पिवेत्॥
नाभिजानाति कासञ्च निद्रासुखकरं परम्।
मण्डूरसंयुतं लीढं कफवाताग्निमान्द्यनुत्॥ १५१६॥

व रा, वै. चि, चिप्पिकासे।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग, गन्धक, हरिताल और सोनामाखी समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर हंसराजकेरससे दोपहर मर्दनकर सुखाकर ६-७ कपडमिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें डालकर वालुकायन्त्रमें रख दोपहरकी आचदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २-२ रत्ती उचितानुपानकेसाथलेकर १० मरिच और १ हर्रेको पानीमें पीसकर ऊपरसे पीनेसे शुष्ककासको यह निवृत्तकरताहै। मण्डूरकेसाथलेनेसे कफ, वायु और मन्दाग्निको नष्टकरताहै॥ ३४७॥

३४८ सर्वाङ्गसुन्दरीवटी

अष्टभागमितं शुद्धं दन्तीवीजं कणोषणम्।
पारदं गन्धकं शुद्धं दरदं टङ्कणं विषम्॥ १५१७॥
निर्वाते खदिराङ्गारैश्चूर्णोदकसुमर्दितम्।
स्वल्पपिष्टं त्रिकटुकं फलत्रितयचित्रकम्॥ १५१८॥
प्रत्येकं भागमेकैकं सूक्ष्मचूर्णं प्रकल्पयेत्।
वस्त्रपूतं भृङ्गराजरसैरार्द्रकजैरपि॥ १५१९॥
भावयेत्सप्तशः शुष्कं शुष्कञ्च सावधानतः।
कोलमज्जसमाः कार्याः कलायाकृतयस्तथा॥ १५२०॥

चणकाकृतयो वट्यो देया बलविचारतः।
उष्णतोयानुपानञ्च कर्तव्यं कुडवार्द्धतः॥ १५२१॥
जाते विरेके संशुद्धे पथ्यं देयं हितञ्च यत्।
पीडादिशान्तये नित्यं वटी सेव्या यथोचिता॥१५२२॥
पलमुष्णजलं पेयमामं गच्छति सत्त्वरम्।
उदराणि विनश्यन्ति सर्वं निर्याति किल्बिषम्॥१५२३॥
प्रथमे सप्तके तक्रभक्तं लघु सुशीतलम्।
द्वितीये दधिभक्तञ्च तृतीये सुखभोजनम्॥ १५२४॥
वह्निदं धातुकृत्सेव्यं पथ्यवर्त्मविजानता।
जयेत्पीडादिकं सर्वं वटी सर्वाङ्गसुन्दरी॥ १५२५॥

र. र. कौ, उदररोगे।

भाषा—शुद्ध जमालगोटा, पारा, गन्धक, शिंगरिफ, सुहागा और वछनाग, पीपल, मरिच येसब ८–८ भागलेकर नीलवर्ण कज्जलीकर निर्वातस्थानमें खैरकेकोयलोंपर तप्तखल्वमें चूनेके-पानीसे एकपहर मर्दनकर त्रिकटु, त्रिफला और चित्रकमूलकी छाल १–१ भागका कपड़छनचूर्ण डालकर भंगरा और अदरख-केरसकी सुखासुखाकर ७–७ भावनाएं देवे और वेरकीमज्जा, मटर तथा चनेप्रमाण गोलियेंबनाय छायाशुष्ककर रखछोडे। इनमेंसे बलाबलका विचारकर उचितमात्रामें देकर दो पल गरम, पानी पिलानेसे तमाममल खारिजहोनेकेवाद अवस्थाका विचार-कर उचितपथ्य देनेसे शरीरका मल विशुद्धहोजाताहै। भयङ्कर उदररोगोंकी निवृत्तिकेलिये एकपल गरमपानीकेसाथ प्रतिदिन १–१ गोली लेनीचाहिये। प्रथमसप्तकमें छाछभात, दूसरेमें दहीभात और तीसरेमें हलकाभोजन देवे। इसकेबाद अग्नि और धातुओंको वढानेवाली चीजोंका सेवनकरनाउचितहै॥ ३४८॥

३४९ सर्वापस्मारहररसः

स्रोतोऽञ्जनञ्च सगरं सूतं सूष्टित्रयान्वितम्।
एकीकृत्य तु सम्मर्द्य दशांशं सकुकं विषम्॥ १५२६॥
देवदालीरसे प्राज्ञो यावद्यामत्रयं भवेत्।
कृत्वा तु गोलकं शुष्कं पाचयेद्गन्धमध्यतः॥ १५२७॥
ततस्तु वटिकाः कार्या गुञ्जात्रयप्रमाणतः।
भक्षिता क्रमयोगेन सर्वापस्मारनाशिनी॥ १५२८॥

रसेन्द्रम., अपस्मारे।

भाषा—सुरमेकीभस्म, शुद्धवछनाग, पारा, हरिताल, गन्धक, और मैनसिल १–१ भाग, सकुकविष १० वा भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर वन्दालकेरससे ३ पहर मर्दनकर गोला-बनाय सुखाकर मलमलकेकपड़ेमें लपेट पोटलीवनाय पोटली डूबनेलायक गन्धकको गलाकर उसमें पोटलीको रखदे और मन्दमन्द इतनी आचदे कि धीरे २ गन्धक जलजाय। गन्धक-का थोड़ाहिस्सा वाकीरहनेपर नीचे उतारकर स्वाङ्गशीतल-होनेपर ऊपरका गन्धक खुरचदे और दवाको निकालकर वन्दाल केरससे एकदिन घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली वन्दालकेरसकेसाथ देवे और धीरेधीरे औचिती देनाकर गोलीकीमात्रा बढ़ाकर ३ गोलियाँ तक देनेसे अपस्मार नष्टहोताहै॥ ३४९॥

३५० सर्वारोग्यवटी

रसं पलमितं तुल्यशुद्धनागेन संयुतम्।
द्रावयित्वाऽऽयसे पात्रे सतैले निक्षिपेत्क्षितौ॥१५२९॥
ततो घृतं विनिक्षिप्य गन्धकं तद्विलोड्य च।
पुनरप्यायसे पात्रे क्षिप्त्वा प्रद्राव्य निक्षिपेत्॥१५३०॥
तत्तुल्यं जारयेत्तालं पुनः सञ्चूर्ण्य पूर्ववत्।
तत्तुल्यां जारयेत्सम्यक्कुनटीं परिशोधिताम्॥१५३१॥
तत्तुल्यं चूर्णिते तस्मिन्क्षिपेद्भागं निरुत्थकम्।
तावदेव मृतं ताप्यं सर्वमन्यच्च तत्समम्॥ १५३२।
तीक्ष्णायः खर्परं व्योम हिङ्गुलञ्च शिलाजतु।
पृथक्कर्षप्रमाणेन पट्कोलं षट्पला मिशी॥ १५३३॥
दीप्यकञ्च चतुर्जातं रेणुकोशीरवेल्लकम्।
तुम्बुरु भार्ङ्गिका रास्ना कङ्कोलं चोरपुष्पकम्॥१५३४॥
कण्टकारी किरातञ्च बीजान्युन्मत्तकस्य च।
पलद्वयञ्च लाङ्गल्याः सर्वेषां द्वादशांशकम्॥१५३५॥
वत्सनाभं सितम्भृगि विनिक्षिप्य ततः परम्।
त्रिफलानां दशाङ्गीणां कषायेण ततः परम्॥१५३६॥
जयन्त्यार्द्रकवासानां मार्कवस्वरसैस्तथा।
भावयित्वा च कर्तव्या वटिकाश्चणकोन्मिताः १५३७
एकैका वटिका सेव्या कुर्यात्तीव्रतरां क्षुधाम्।
विसूचीं सर्वतो हिक्कां सेव्यं स्वादु च शीतलम्१५३८
सामाञ्च ग्रहणीं सदाङ्गतुदनं शोफोत्कटं पाण्डुता-,
मार्तिं वातकफत्रिदोषजनितां शूलञ्च गुल्मामयम्।
वाताध्मान विलम्बिकाञ्च कसनश्वासार्शसां विद्रधिं,
सर्वारोग्यवटी क्षणाद्विजयते रोगांस्तथान्यानपि॥

र. सु, र को., र र स, र. र कौ, ग्रहण्यधिकारे। र. र. कौ व्योम निष्कासित तत्प्रमादादेव।

भाषा—एकपल शुद्ध नागको कड़ाहीमें गलाकर थोड़ासा तैल डालकर १ पल शुद्ध पारा मिलाकर ज़मीनपर ढालदे। ठंढा-होनेपर फिर कड़ाहीमें गलाकर थोड़ा घी और १ पल गन्धक डालकर जलावे। गन्धक जल जानेपर पूर्ववत् ज़मीनपर डालकर ठंढाकरे। फिर गलाकर १ पल हरितालका चूर्ण थोड़ा २ डाल-कर जलावे इसकेवाद १ पल मैनसिलको जलाकर १–१ पल निरुत्थ नाग और सोनामाखी डालकर उतारले। फिर लोह और अभ्रकभस्म, शुद्धखपरिया, शिंगरिफ और शिलाजीत १–१ कर्ष, षट्कोल ६ कर्ष, सौंफ ६ पल, अजवाइन, चातुर्जात, रेणुका, खस, विडङ्ग, तुम्बुल, भारङ्गी, रास्ना, शीतलचीनी, खरजवाइन, भट-कटैया, चिरायता, शुद्धधतूरेकेबीज १–१ पल, शुद्धकरिहारी २ पल, सबका १२ वाहिस्सा शुद्ध सफेदवछनाग लेकर बारीकचूर्ण-कर इकठे मिलाय १–२ पहर मर्दनकर त्रिफला, दशमूल, जैंती, अदरख, अडूसा, भंगरा इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा

क्वाथोंसे १-१ भावना देकर चनेप्रमाणगोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे हैजा, हिचकी, सामग्रहणी, अङ्गोंकाटूटना बढ़ाहुआक्षय, पाण्डु, त्रिदोषकी पीडा, शूल, गुल्म, वातरोग, आध्मान, विलम्बिका, खासी, श्वास, बवासीर, विद्रधि इनसबको यह नष्टकरतीहै। और अत्यन्तक्षुधाको बढ़ातीहै ॥ ३५० ॥

३५१ सर्वेश्वरचूर्णम्

त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं चूर्णं शम्बूकजन्तुजम्।
यवक्षारं तथा रक्तकठिनी कामरूपिणी ॥ १५४० ॥
शक्रचूर्णं समधुकं क्षारं दावदलोद्भवम्।
क्रलम्बीस्वरसैः शुद्धं मण्डूरं द्विगुणं ततः ॥ १५४१ ॥
एकीकृत्य प्रयत्नेन चूर्णं सर्वेश्वराह्वयम्।
प्राङ्मध्यान्तक्रमेणैव भोजनस्य प्रयोजयेत् ॥ १५४२ ॥
मात्रया चानुपानञ्च दद्यादार्द्रजलं पयः।
गव्यमर्द्धश्टतं कृत्वा शूलादन्तकसन्निभात् ॥ १५४३ ॥
चिरजात्सर्वतो धीमान्दुस्तरान्मुच्यते नरः।
पक्तिशूलात्तथैवान्नद्रवशूलाच्च सर्वशः ॥ १५४४ ॥
मुच्यते मानवो याद्दग्विष्णोराराधने भवात्।
प्लीहगुल्मोदरादींश्च मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥ १५४५ ॥
कासं पञ्चविधं श्वासमूरुस्तम्भामवातकान्।
हन्यादेव प्रयोगोऽयमश्विभ्यां निर्मितः पुरा ॥१५४६॥

र. र, शूलाऽधिकारे।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, घोंघेकीभस्म, यवक्षार, शुद्ध लालगुञ्जा, असगन्ध, इन्द्रजव, मुलहठी और चित्रकके पत्तोंकी राख १-१ भाग, नालीकेरससे शुद्धकर भस्मकियाहुआ मण्डूर सबसे दूना डालकर १-२ पहर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे भोजनकेपहिले, मध्य तथा अन्तमें १-१ माशाकीमात्रा अदरखके रस अथवा गायके अधौटे दूधकेसाथ लेनेसे बहुतदिनका मृत्युरूपशूल, पक्तिशूल, अन्नद्रवशूल, प्लीह, गुल्म, उदररोग, मन्दाग्नि, अरुचि, ५ प्रकारका कास और श्वास, ऊरुस्तम्भ, आमवात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३५१ ॥

३५२ सर्वेश्वररसः (प्रथमः)

चतुर्गद्याणमानानि शुद्धहेमभवानि च।
पत्राणि कारयेत्सम्यग्विध्यन्ते कण्टकै र्यथा ॥ १५४७ ॥
जलवत्कोमलान्येव स्वच्छान्येकाङ्गुलानि च।
शुद्धसूतस्य गद्याणा अष्टौ तानि दलानि च ॥१५४८॥
मिश्रं द्वादशगद्याणं खल्वे पिष्ट्वा दिनत्रयम्।
ग्रन्थि वस्त्रेण वध्नीयात्क्षिस्वा तां हेमपिष्टिकाम् १५४९
मृन्मय्यां मूषिकायान्तु तद्धार्यमनियत्नतः।
वालुकापूर्णकुहरे यन्त्रे मूषां विनिःक्षिपेत् ॥ १५५० ॥
तच्च चूल्ल्यां समारोप्य मृद्वग्निं ज्वालयेदधः।
शुद्धगन्धकगद्याणान्विंशतिं तत्र निक्षिपेत् ॥ १५५१ ॥
गन्धके गलितेऽतीव जाते तैलस्य सन्निभे।
प्रक्षिपेद्धेमजां पिष्टिं ग्रन्थिबद्धाञ्च यत्नतः ॥ १५५२॥
क्षिपेद्गन्धकगद्याणान्मुहुर्दग्धे च गन्धके।
एवं दिनाष्टकं स्वेद्या पिष्टी यत्नेन हेमजा ॥ १५५३ ॥
स्वाङ्गशीतां क्षिपेत्खल्वे दग्धगन्धकसंयुताम्।
भृङ्गराजरसेनैकं वासरं मर्दयेच्च ताम् ॥ १५५४ ॥
काञ्चनारतरो मूलत्वचा श्रीखण्डमर्दिताम्।
वज्रीक्षीरेण चैकाहमर्कदुग्धेन वासरम् ॥ १५५५ ॥
एवञ्चतुर्दिनं पिष्ट्वा कार्यो वर्तुलगोलकः।
शरावसम्पुटे क्षिप्त्वा चतुर्भिश्छाणकैः पुटः ॥१५५६॥
दह्यते गन्धको यावत्तावद्देयो मुहुर्मुहुः।
मृतं श्वेताभ्रजं चूर्णं चूर्णं स्यान्मृतताम्रजम् ॥ १५५७ ॥
चूर्णं पीतकपर्दीनां शङ्खचूर्णं तुरीयकम्।
गद्याणषट्कं प्रत्येकं क्षिपेत्पिष्टे च हेमजे ॥ १५५८ ॥
खल्वे पिष्ट्वा कृतं पिष्टं वज्रीक्षीरेण वासरम्।
एकाहमर्कदुग्धेन पिष्ट्वा चैकात्मतां गतम् ॥ १५५९ ॥
गोलं कृत्वा विनिक्षिप्य शरावे सम्पुटेच्च ताम्।
वस्त्रमृत्तिकया लिप्त्वा देयो गर्तान्तरे पुटः ॥१५६०॥
स्वाङ्गशीतं नयेद्गोलं खल्वे सञ्चूर्णयेद् दृढम्।
कूपिकायां विनिक्षेप्यं जातः सर्वेश्वरो रसः॥१५६१॥
साज्यं वल्लमितं ग्राह्यं द्वात्रिंशन्मरिचैः समम्।
अष्टादशप्रमेहेषु गुल्मयो र्वातपित्तयोः ॥ १५६२ ॥
बद्धकोष्ठेषु मन्दाग्नौ देयः शूलादिरोगिषु।
कामहीने बलक्षीणे श्लेष्मवातादिरोगिषु ॥ १५६३ ॥
मरिचाज्यैरजीर्णेषु ज्वरेपूष्णोदकेन च।
तैलक्षारादि वर्ज्यं हि भोजनं मधुरं भवेत् ॥ १५६४ ॥
क्रमाद्रोगा विलीयन्ते मासैकानन्तरं ध्रुवम्।
अर्शांसि नाशमायान्ति साध्यासाध्यानि सत्वरम् ॥
गुदकीला निवर्तन्ते बाहुशालगुडान्विता।
दारुणा गुदपीडा च निवर्तेताऽस्य सेवनात् ॥१५६६॥

रसचि, सर्वरोगे।

भाषा—शुद्धसोनेकेवर्क ३ तोले, शुद्धपारा ४ तोलेको खरलमें १-१ वर्क डालकर घोटे। वर्कमिलजानेपर ३ दिनतक घोटकर गोली बनाय वस्त्रमें पोटली बाधकर रखलेवे। फिर वालुकायन्त्रमें गोस्तनाकारमूषाको रख चूल्हेपर चढ़ाय मन्दाग्नि जलावे। मूषा गरमहोनेपर १० तोले शुद्धगन्धककाचूर्ण मूषामें रक्खे जब गलकर तैलकीतरह द्रुतहोजाय तब हेमपिष्टीकी पोटली को उसमें डुबादे। गन्धकके जलजानेपर उतनाही गन्धक और डालदेवे। इसतरह ८ दिनतक गन्धकमें उस पिष्टीका स्वेदनकरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर मूषामेंसे जलेहुएगन्धककेसाथ पोटलीको निकाल खरलकर भगरेकारस, चन्दनकेद्रवमें पिसाहुआ कचनारकीजड़कीछालका कल्क, थूअर और आकका दूध इनप्रत्येकमें १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें

वन्दकर २–३ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर ४ जङ्गलीकण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् द्रवोंमें मर्दनकर आचदे। इसतरह जबतक तमामगन्धक न जलजाय तबतक करतारहे। फिर सफेद अभ्रक, ताम्र, पीलीकौड़ी और शङ्ख इनकी भस्में ३–३ तोले मिलाय थूअर और आकके दूधसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर साधारणपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर चूर्णकर शीशीमें रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती ३२ कालीमिर्च और घीके साथ देनेसे १८ प्रकारकेप्रमेह, वात और पित्तजगुल्म, वद्धकोष्ठता मन्दाग्नि, शूल, षण्ढत्व, कृशता, कफ और वातिकरोग, अजीर्ण इनसबको यह नष्टकरताहै। गरमजलकेसाथदेनेसे ज्वरोंको नष्ट करताहै। तैल और क्षार छोड़कर मधुरभोजनकरे। एकमहीनेकेबाद क्रमश रोग नष्टहोजातेहैं। वाहुशालगुडकेसाथदेनेसे साध्य अथवा असाध्य ववासीर और गुदकीपीडा निवृत्त होजातीहै॥

३५३ सर्वेश्वररसः (द्वितीयः)

पूर्वोक्तस्य रसेन्द्रस्य तोलकांश्चतुरः क्षिपेत्।
अभ्रं मनःशिलां तालं गन्धकं कृष्णलोहकम्॥१५६७॥
शुल्वपत्रं कांस्यभस्म प्रत्येकं सूतमात्रकम्।
सिन्धुजं काचलवणं सौवर्चलविडोद्भवम्॥ १५६८॥
सामुद्रमिति सूतार्द्धमेतत्प्रत्येकमाहरेत्।
अष्टौ वल्लान् सुवर्णस्य रौप्यं तावद्धिधीयते॥१५६९॥
सूतपिष्टी ततः कार्या स्वर्णरौप्योद्भवा ततः।
पिष्ट्या प्रलेपयेच्छुल्वपत्राण्यम्लेन बुद्धिमान्॥१५७०॥
शिष्टानि सर्वद्रव्याणि कल्कीकृत्याऽथ चूर्णयेत्।
दृढं भाण्डं समादाय तन्मध्ये निक्षिपेद्बुधः॥१५७१॥
द्रव्यचूर्णं तदुपरि शुल्वपत्राणि कानिचित्।
दद्यादुपरि चूर्णन्तु तत पत्राणि तद्व्रजः॥ १५७२॥
एवं क्षिप्त्वा ततो दद्यान्मुक्ताचूर्णन्तु कर्षकम्।
प्रवालचूर्णं कर्षं स्यादुपरिष्टात्पिधाय वै॥ १५७३॥
उदीच्यवारुणीनीरं दुग्धिनीरसमेव वा।
दत्त्वा सम्पुटयेद्भाण्डं दृढं सन्धि विलेपयेत्॥१५७४॥
विशोष्य सम्पुटं दद्यात्पुटं गजसमाह्वयम्।
आरण्यच्छाणकै र्दद्याद्ग्राम्यै र्नैव पुटेद्रसम्॥ १५७५॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य सञ्चूर्ण्य स्थापयेद्रसम्।
रसेश्वरञ्च सम्पूज्य योगिनीगणभैरवान्॥ १५७६॥
रसेश्वरः प्रदातव्यो ज्वरिताय नवज्वरे।
वल्लमानेनानुपानं दद्यादार्द्रकजं रसम्॥ १५७७॥
वान्तिश्चेत्सम्प्रजायेत जीवत्येव न संशयः।
न चेद्वान्ति र्भवेत्तर्हि म्रियेतैव ज्वरार्दितः॥ १५७८॥
पथ्यप्रयोगः प्रागुक्तः कर्तव्यो भिषजा सदा।
अयं सर्वेश्वरो नाम रसो ज्वरनिवर्हणः॥ १५७९॥
दृष्टप्रभावः सृष्टोऽत्र लोकोपकृतिहेतवे।
देवीशास्त्रानुसारेण विविच्य प्रतिपादितः॥ १५८०॥

रसालं, ज्वराधिकारे।

भाषा—ऊर्द्धपातनादिसंस्कारोंसे शुद्धकियाहुआ पारा, मैनसिल, हरिताल और गन्धक, अभ्रक, फोलाद और कास्यभस्म, कण्टकवेधी तावेकेपत्र ४–४ तोले, सैन्धव, काचनमक, सञ्चल, नवसादर और समुद्रनमक २–२ तोले, सुवर्ण और चादीकेवर्क ३–३ माशे लेकर पारेमें वर्कोको मिलाय तावेके पत्रोंको डालकर नीबूकेरसमें घोटकर पारेको पत्रोंपर चटादे। वचेहुए द्रव्योंको नीबूके रसमे मर्दनकर सुखाकर चूर्णबनावे फिर एकशरावमें थोड़ासा चूर्ण विछाकर तावेकेपत्रोंकी तह जमाय ऊपर चूर्णको छिड़कदे। इसतरह समस्त पत्र और चूर्णकी तह जमाकर १–१ कर्ष मोती और प्रवालकी पिष्टी क्रमश विछाकर चमारदूधी अथवा साधारणदूधीकेरससे तर करके शरावसम्पुटमें वन्दकर वज्रमिट्टीसे सन्धि वन्दकर २–४ कपड़मिट्टी समस्तपर चढ़ाय सुखाकर जङ्गली• कण्डोंकी गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर योगिनीगण और भैरवोंका पूजनकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती अदरखकेरसकेसाथ ज्वरमें देनेसे यदि वमनहोजाय तो वह अवश्य वचेगा अन्यथा सशयहै। वान्तिहोनेपर अत्यन्त भूखसे त्रस्त हो तो मूगकायूषवगैरह हल्का भोजन देवे॥ ३५३॥

३५४ सर्वेश्वररसः (तृतीयः)

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि रसं परमदुर्लभम्।
नाम्ना सर्वेश्वरं दिव्यं सर्वरोगकुलान्तकम्॥ १५८१॥
पलैकं तालसत्त्वञ्च नागसत्त्वं तथैव च।
व्योमद्रुतिं पलद्वन्द्वांद्विपलां माक्षिकद्रुतिम्॥ १५८२॥
सर्वतुल्यं मृतं सूतं गन्धकञ्चैव तत्समम्।
द्वादशांशञ्च वज्रञ्च तावन्मानञ्च मौक्तिकम्॥ १५८३॥
हेमतारञ्च पङ्गागं प्रवालं हेमतस्समम्।
कान्तलोहं समं योज्यं विमला मणिसप्तकम्॥१५८४॥
कान्तपाषाणद्विभागं ताम्रमष्टमभागकम्।
खल्वमध्ये विनिक्षिप्य मर्द्दयेत्सुरसुन्दरि॥ १५८५॥
गिरिजाकालिकाशुण्डीक्षीरकञ्चुकियोगतः।
सप्तधान्यौषधै र्दिव्यै र्डमरूयन्त्रगं पचेत्॥ १५८६॥
अर्द्धार्द्धं लवणं क्षिप्त्वा शरावदृढसम्पुटे।
यामद्वात्रिंशकञ्चैव दातव्यञ्च हठानलः॥ १५८७॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य पूजयेद्गणयोगिनीः।
गुञ्जामेकां रसस्याऽस्य त्रिगुञ्जं व्योममाक्षिकम् १५८८
महिषाज्यद्विकर्षेण भक्षयेत्सर्वकुष्ठनुत्।
प्रमेहे वातरोगेषु पाण्डुकासहलीमके॥ १५८९॥
आमवाते ह्यतीसारे ग्रहण्यर्शोभगन्दरे।
शोफमन्दाग्न्यजीर्णघ्नं रोगराजनिकृन्तनम्॥ १५९०॥
गुल्मप्लीहमहाशूलमर्शः क्षुद्राश्च नाशयेत्।
वलीपलितनिर्मुक्तः सेवितः स ज्वरं हरेत्॥ १५९१॥
त्रयोदशान्सन्निपाताञ्ज्वरमष्टविधं हरेत्।
वन्ध्याद्यान्सकलान्रोगान्नाशयेन्नात्र संशयः॥ १५९२॥

रससागर, कुष्ठे।

भाषा—हरिताल और नागसत्त्व १–१ पल, अभ्रक और माक्षिकद्रुति २–२ पल, पारदभस्म और शुद्धगन्धक सबकीबरावर, हीरा और मोतीकीभस्म सबसे १२ वा भाग, सुवर्ण, रजत, प्रवाल ६–६ भाग, कान्तलोहभस्म सबकीबराबर, रजतमाक्षिक और माणिक्यभस्म ७–७ भाग,कान्तपाषाण १० भा०, ताम्रभस्म $\frac{1}{2}$ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर कोयल, कालादाना, छोटी हाथीशुण्डी, क्षीरकञ्चुकी सप्तधान्य इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्राथोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय इन्हींद्रवोंसे १–१ दिन स्वेदनकर चतुर्थांश नमकडालकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखनेपर ३२ पहरकी गजपुटकी कड़ीआंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर योगिनीगणोका पूजनकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्ती लेकर ३ रत्ती सुवर्णमाक्षिक और २ कर्ष भेंसका घी मिलाकर प्रतिदिन खानेसे समस्तकुष्ठ, प्रमेह, वातरोग, पाण्डु, कास, हलीमक, आमवात, अतिसार, ग्रहणी, अर्श, भगन्दर, शोथ, मन्दाग्नि, अजीर्ण, राजयक्ष्म, गुल्म, प्लीहा, महाशूल, क्षुद्रहिका, १३ प्रकारके सन्निपात और ८ प्रकारके ज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै । निरन्तरसेवनसे वलीपलितादिकोंको दूरकर पुरुष और स्त्रियोंके वन्ध्यत्वको दूरकरताहै ॥ ३५४ ॥

३५५ सर्वेश्वररसः (चतुर्थः)

सहदेवीरसे मर्द्यो दरदाकृष्टपारदः ।
अहिफेनकभृङ्गाभ्यां शिवनेत्ररसेन च ॥ १५९३ ॥
गोभीविषाभ्यां प्रत्येकं त्र्यहं तच्च क्षिपेत्पुनः ।
कुक्कुटाण्डं पुन नीत्वा सम्यङ्ग् मासत्रयं क्षिपेत् ॥
अर्कक्षीरेण सम्मर्द्य त्रियामं शोषयेत्पुनः ।
दिनैकं डमरूयन्त्रे वह्निं दद्यात्पुनश्च तत् ॥ १५९५ ॥
शीतं गृहीत्वा रसके समं च गलिते पुनः ।
पाययित्वा च मूर्वाया रसं सम्मर्दयेत्पुनः ॥ १५९६ ॥
एकविंशतिवारांश्च गृह्णीयात्पञ्चभागिकम् ।
वङ्गं नागञ्च सारञ्च माक्षिकं सोमजं मलम् ॥ १६९७ ॥
तालसत्त्वं शिलासत्त्वं प्रत्येकञ्च तदर्धकम् ।
ताम्रं सार्धपलं गन्धं गृह्णीयाच्च चतुःपलम् ॥ १६९८ ॥
तत्सर्वं मर्दयेत्त्रिस्त्रिरर्कक्षीरेण वा पुनः ।
धूर्ततैलेन च विषं फेनं सार्धपलद्वयम् ॥ १६९९ ॥
मूर्वारसेन सम्मर्द्य रसैरेतैः पुनस्तथा ।
रविधूर्तजयास्नुग्भिः सप्ताहं स्नुतैलतः ॥ १६०० ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य शुष्कं सम्मुद्र्य यत्नतः ।
गर्ते छागविशा पूर्णे पात्रमध्ये च कूपिकाम् ॥ १६०१ ॥
संस्थाप्याग्निं प्रदद्याच्च यामद्वादशकं तथा ।
गृह्णीयाच्छीतलं तत्तु नीलनीरदसन्निभम् ॥ १६०२ ॥
एवं सर्वेश्वरो नाम्ना रसो भवति दुर्लभः ।
दत्तस्तण्डुलमात्रस्तु सर्वरोगहरः पर ॥ १६०३ ॥
क्षयं क्षतं श्वासकासौ प्रमेहान्विंशतिं तथा ।
ग्रहणीमतिसारांश्च मूत्रकृच्छ्राणि चाश्मरीः ॥
इत्यादिरोगाञ्जित्वा तु भवेद्भृष्यो रसायनः ॥ १६०४ ॥

र. का , राजयक्ष्मणि ।

टि०—अत्रागतधातूनां मारणानि विशिष्य विहितानि सन्ति तान्यधोलिखितरीत्या प्रत्येतव्यानि ।

अथ प्रक्षेप्यरसकमारणम्

अथास्मिस्तु रसे यानि रसकादीनि तानि तु ।
मारितानि हि तानि स्यु कथयामि विधिं तथा ॥
शिरीषपत्रके क्षिप्त्वा रसकं गलित रसे ।
वारमेकोनपञ्चाशत्ततुपत्रीकृत पुन ॥
मधुपालाशगुन्द्राञ्च रसक सार्धमुष्टिकम् ।
पिष्ट्वा तेन च पत्राणि विलिप्य च विशोषयेत् ॥
मृत्पात्रे तानि संस्थाप्य सान्त पालाशगुन्द्रकम् ।
मृत्केशकर्पटै लिप्त्वा शोषयित्वा धमेद्भृशम् ॥
खदिराङ्गारतो वारत्रय कुर्यादमु विधिम् ।
सर्वं मसूरके पिष्ट्वा भोजयेत्सूकर पुन ॥
कुक्कुट वाथ तद्विष्ठा गालयेच्च ततो द्रुतम् ।
रसक तद्भवेदत्र नाम्ना सर्वेश्वराख्यके ॥

अथ प्रक्षेप्यनागमारणम्

शुद्धनागस्य पत्राणि गलितानि क्षिपेदिह ।
शिरीषदन्तिजरसे द्राक्षामूलरसे पुन ॥
तत्प्रत्येकोनपञ्चाशद्गलित प्रक्षिपेदिति ।
पलाशकाष्ठपात्रान्त सूक्ष्मपत्रीकृत पुन ॥
शशशोणितसिन्दूरनिशाभिस्त्वन्तरान्तरा ।
धृत्वा विमुद्र्य मृत्केशकर्पटै शोषित भृशम् ॥
खराग्नौ च धमेद्यामषोडश नितरा भिषक् ।
त्रिवारमेव हि कृते नाग सर्वेश्वरे क्षिपेत् ॥

अथ प्रक्षेप्यवङ्गमारणम्

शुद्ध वङ्ग तु गलित वारानेकोनविंशतिम् ।
क्षिपेच्चणकजे क्षारे रसे मरुवकस्य च ॥
सिन्दूरमिश्रिते क्षिप्त्वा वारांस्त्रिंशत्तथैव च ।
वृश्चिकाया रसे तद्वत्तप्त्वा तप्त्वा पुन क्षिपेत् ॥
शुक्तिचूर्णेन सम्मिश्र्य विषखर्परजद्रवे ।
तद्वन्निक्षिप्य निक्षिप्य वह्निं द्वात्रिंशयामकम् ॥
दत्त्वा च रेतित कङ्गुमिश्रित पेषित पुन ।
किट्टिपोत भोजयित्वा मारयेत्किट्टिपोतकम् ॥
मृत्कर्पटैर्विलिप्त त दाहयेत्खदिराग्निना ।
यामद्वादशक गर्ते वङ्ग सर्वेश्वरे क्षिपेत् ॥

अथ प्रक्षेप्यलोहमारणम्

अथ शुद्ध तीक्ष्णलोह तप्त तप्त पुन क्षिपेत् ।
दन्त्यामेकोनपञ्चाशन्मूर्वाक्षीरेण लेपितम् ॥
तप्त तप्त सोमवल्लीरसैश्चैकोनविंशति ।
तालसत्त्वैरण्डतैललिप्त पत्रीकृत पुन ॥
मूषामध्ये गन्धकेन टङ्कणेन च तापयेत् ।
शङ्खद्रावे क्षिपेदग्निवर्णं तच्च पुन पुन ॥
त्रिक्षार पञ्चलवण नवसारकसोरकम् ।
ताल सोममल तोरीनिम्बुद्रावेण मर्दयेत् ॥
निक्षिप्य वारुणीयन्त्राच्छङ्खद्रावस्तु पूर्ववत् ।
अथ तद्गलित शुष्क मूषाया खदिराऽग्निना ॥
त्रियाम ध्मापित तत्र पादांश पारद क्षिपेत् ।

शीतमेकोनपञ्चाशद्धत्तूरजरसेन च ॥
मर्दयित्वा भवेत्सिद्धः लोके सर्वेश्वराह्वये ।

अथ प्रक्षेप्यमाक्षिकमारणम्

अथ तप्तं माक्षिकन्तु काञ्जिके प्रक्षिपेद्बुधः ।
लिप्त्वोदुम्बरदुग्धेन रुद्रिकाया रसे पुनः ॥
क्षिप्त्वैकविंशतिरिदं मूषाया प्रक्षिपेत्पुनः ।
ऊर्ध्वाऽधो विजया दत्त्वा वह्निं स्याद्यामसप्तकम् ॥
शीतगोदुम्बरे दुग्धे भाव्यं भाव्यं पुनस्तथा ।
उदुम्बरीकन्याभस्म भस्म पालाशजं तथा ।
निक्षिप्य मूषामध्ये तु तन्मध्ये माक्षिकं क्षिपेत् ।
ऊर्ध्वं त्रिक्षारं क्षिप्त्वा तदूर्ध्वं भस्म युग्मकम् ॥
क्षिप्त्वा विमुद्र्य सकलाद्वह्निं द्वात्रिंशयामकम् ।
एवं माक्षिकसिद्धिः स्याद्रसे सर्वेश्वराह्वये ॥ इति

भाषा—शिंगरिफसे निकालेहुए पारेको सहदेवी, अफीम, भाग, रुद्राक्ष, वनगोभी और वछनागकेद्रवोंमें ३–३ दिन रखकर मुर्गीके ताज़े अण्डेमें भरकर ३ महीनेतक रक्खे । खरावहोनेपर अण्डेको बदलताजाय । फिर आकके दूधमें ३ पहर मर्दनकर सुखाकर डमरूयन्त्रमें बन्दकर ४ पहरकी अग्निदेवे । ऊपर भीगाहुआ ४ तह कपड़ा रक्खे । सन्धिको इसतरह बन्दकरे कि पारा उड़ न जाय । स्वाङ्गशीतलहोनेपर सम्पुटको उघाड़कर पारेको धीरजसे रगड़कर निकालले और १०–२० वार कपड़ेमें छान साफकरले । फिर इसकी बराबर खपरियाको गलाकर पारेको उसमें मिलादे और शीतलहोनेपर खरलमें डाल मूर्वाकेरससे २१ दिनतक मर्दन-करे । यहरस ५ पल, वङ्ग, नाग और लोहभस्म, सोनामाखी, सोमल, हरिताल और मैंनसिल इनके सत्त्व २॥–२॥ पल, ताम्र-भस्म १॥ पल, शुद्धगन्धक ४ पल लेकर सबकी नीलवर्ण कज्जली-कर आकके दूध और धतूरेकेबीजोंके तैलसे ३–३ दिन मर्दन-कर शुद्धवछनाग और अफीम ५–५ कर्ष मिलाकर मूर्वा, आक-कादूध, धतूरा, भाग, थूअरकादूध, एरण्डतैल इनप्रत्येकके द्रवों-में ७–७ दिन मर्दनकर ६–७ कपड़मिटी दीहुई आतशीशीशीमें डालकर ईंटवगैरहकी डाटसे शीशीका मुहबन्दकर ६–७ कपड़-मिटी देकर सूखनेपर शीशीको हडीमें रक्खे । इस हंडीको खड्डेमें बकरीकी मींगणियोंके अन्दर रक्खे यह ध्यानरहे कि हडीके चारोंतर्फ ४–४ अङ्गुल मींगणी रहें और १२ पहरमें आच ठंढी होजाय । इससे रसका स्वेदन होगा । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निका-लकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ चावलभर समय अथवा रोगो-चितानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, उर क्षत, श्वास, कास, २० प्रकार केप्रमेह, ग्रहणी, अतिसार, मूत्रकृच्छ्र, पथरी इत्यादि समस्त-रोगोंको यह नष्टकर वृष्य और रसायनका कामकरताहै ॥ ३५५ ॥

३५६ सर्वेश्वररसः (विश्वमूर्ति)

मृताभ्रं मृतलोहञ्च पारदं मृतमेव च ।
समभागं प्रकुर्वीत त्रिभागं विषतिन्दुकम् ॥ १६०५ ॥
हिङ्गुल्याश्च वरं सर्वैः सर्वमेकत्र चूर्णयेत ।
मत्स्यपित्तात्तथा देया भावनाः सप्त चातपे ॥१६०६॥
भागैकं मेलयेत्तत्र पुनः पारदभस्मनः ।
पित्तस्य छागजातस्य माहिषस्य च भावनाः ॥१६०७॥
वराहपित्तस्य तथा प्रदेयाः सप्तसप्त च ।
मयूरस्य क्रमेणैव रसः सर्वेश्वरः स्मृतः ॥
कफोद्रेकं सन्निपातं भूतोन्मादं ग्रहं हरेत ॥ १६०८ ॥

र का , ज्वराधिकार ।

भाषा—अभ्रक, लोह और पारदभस्म १–१ भाग, शुद्ध-कुचिला ३ भा., भीमसेनीकपूर सबकीबराबर लेकर बारीकचूर्णकर मछलीकेपित्तकी ७ भावनाएं कड़ीधूपमें देकर एकभाग पारद-भस्म मिलाकर बकरा, भैंसा, सूअर और मोरकेपित्तोंकी ७–७ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इन-मेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे कफप्रधानसन्निपात, भूतोन्माद, ग्रहपीडा इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३५६ ॥

३५७ सर्वेश्वररसः (षष्ठः)

रसगन्धकयोश्चूर्णमेकीकृत्याऽभ्रकन्तथा ।
हेमभिश्च समं कृत्वा मर्दयेद्यामकद्वयम् ॥ १६०९ ॥
त्र्यूषणाऽनलवङ्गैलाटङ्कणं हेमतुल्यकम् ।
कण्टकार्या रसे भाव्यमेकविंशतिवारकम् ॥ १६१० ॥
शिग्रुबीजार्द्रकरसैः समधा भावयेत्पृथक् ।
रसः सर्वेश्वरो नाम कासश्वासक्षयापहः ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं विभीतकफलत्वचम् ॥ १६११ ॥

र स , र सु., ध , कासे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक और सुवर्णभस्म, त्रिकटु, चित्रक, वङ्गभस्म, इलायची, भुनासुहागा येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भटकटैयाकेरससे २१, सहिजनकेबीज और अदरखकेरससे ७–७ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकररखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे कास, श्वास, क्षय इनको यह नष्टकरताहै ॥ ३५७ ॥

३५८ सर्वेश्वररसः (सप्तमः)

ताम्रं दशगुणं स्वर्णात्स्वर्णपादं कटुत्रिकम् ।
त्रिफलात्रिकटोस्तुल्या त्रिफलार्द्धमयोरजः ॥१६१२॥
अयसोऽर्द्धं विषञ्चैव सर्वं सम्मर्द्य यत्नतः ।
सर्वेश्वररसो नाम रक्तगुल्मविनाशनः ॥ १६१३ ॥

र स , र सु., ध , र चि , गुल्माधिकारे ।

भाषा—स्वर्णभस्म १ तोला, ताम्रभस्म १० तोले, त्रिकटु और त्रिफला ३–३ माशे, लोहभस्म १॥ माशा, शुद्धवछनाग ६ रत्ती लेकर सबको इकट्ठे मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे रक्तगुल्मको यह नष्टकरताहै ॥ ३५८ ॥

३५९ सर्वेश्वररसः (अष्टमः)

रसाद् द्विगुणितो गन्धश्चतुर्भागन्तु टङ्कणम्।
तथाऽष्टभागो जैपालस्त्र्यहं सम्मर्दयेद् दृढम्॥१६१४॥
वल्लो नवज्वरं हन्ति रसः सर्वेश्वराभिधः।
वल्लद्वयं हरीतक्या युक्तं वातज्वरं तथा॥ १६१५॥
द्विवल्लो मल्लखण्डेन लीढः क्षौद्रयुतः कफम्।
गुञ्जा जीर्णज्वरं घोरं सर्वोपद्रवसंयुतम्॥ १६१६॥
वल्लस्तु सूतिकारोगं पिप्पलीमधुसंयुतः।
पञ्चवर्षस्य वालस्य यवमात्रो ज्वरञ्जयेत्॥ १६१७॥
गुञ्जाभिवृद्ध्या विषमान्यावच्चातुर्थिकावधि।
मल्लखण्डेन संयुक्तो हन्याद्दोषत्रयन्तथा॥ १६१८॥
यवानीक्रिमिशत्रुभ्यां वल्लो हन्यात्क्रमीनपि।
एवं सर्वगदान्हन्ति रसो भैरवभाषितः॥ १६१९॥

र सु , नि.र , र , र.र.कौ , र वो , यो स (सुखरेचक), ज्वराऽधिकारे।

टि०—र र स , र च , चि क्र , र को, र म मा. एषु ग्रन्थेषु विद्याविनोदरस इतिनाम्ना "रसेन्द्रवल्लिटङ्कणै सजयपालवीजै समै। रस'सुमृद्भितो भवेत्सलु विनोदविद्याधर॥ पयोगुडयुतो हरेत्मकलरेचनीयामयान्। ज्वरञ्च जठरामयान्गुदगद सशूल नृणाम्॥ सम्यग्विरेचनाऽभावे मुद्गक्काथ पिबेत्तु। मेदाधिक्ये पिवेत्तक्र बव्वूलाना त्वचो रसम्॥" इतिपाठो निहितोऽस्ति अत्र सर्ववस्तुषु समता दृश्यते। रत्नाकरौषधयोगे च मरिचमधिकतया नियुज्य ज्वराधिकारे विद्याधर इति नाम स्थापितम्। अनयोर्द्वयोरप्युपरितन एवान्तर्भाव करणीय। "सूतक्ष्मागुणटङ्कणा समल्वा जैपालकास्तत्समा, मर्द्या वासरक शिवारसयुताश्चित्रारसै मस्तथा। सक्षौद्रेण सुधारसेन सकलान्कोष्ठामयान्नाशये, द्वस्तौ हिङ्गुयवानिकामधुयुत स्नुकपिप्पलीक्षौद्रयुक्॥ उदरारिरसो क्षेप जठरामयनाशन। सङ्ग्राहि वर्जयेत्सर्वं द्रवद्रव्य हित मतम्॥" इत्युदरारि नाम्ना रसावतारे पाठो दृश्यते तत्र वस्तुभागवैलक्षण्य दृश्यते। तदीय भावनानुष्ठानमत्र कृत्वा तदन्तर्भाव सुकर। क्रमविवृद्धभागवस्तुष्वेतदपेक्षया गुणाधिक्य प्रत्यक्ष फलमिति विद्वद्भि र्विभावनीयम्।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा., सुहागा ४ भा, जमालगोटा ८ भागलेकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें सबको मिलाय ३ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह नवज्वरको नष्ट करताहै। ६ रत्तीहर्रेकेसाथदेनेसे वातज्वरको, ६ रत्तीकीही मात्रामें मलाई और मधुकेसाथदेनेसे कफको नष्टकरताहै। १रत्ती-उचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्तउपद्रवोंकेसहित घोरजीर्णज्वरको तथा पीपल और मधुकेसाथ सूतिकारोगको नष्टकरताहै। १–१ गुञ्जा वढाकरलेनेसे एकाहिक, द्व्याहिक, त्र्याहिक और चातुर्थिकज्वरोंको नष्टकरताहै। मलाईकेसाथ त्रिदोषको, अजवाइन और विडङ्गकेसाथ क्रिमियोंको नष्टकरताहै॥ ३५९॥

३६० सर्वेश्वररसः (सर्वेश्वरलोहम्)

शुद्धं सूतं पलं गन्धं द्विगुणन्तु मृताभ्रकम्।
त्रिपलं मृतताम्रञ्च पलार्द्धं स्वर्णमाक्षिकम्॥ १६२०॥
जैपालं चित्रकं मानं सूरणं घण्टकर्णकम्।
ग्रन्थिकं त्रिफला व्योषं त्रिवृता खरमञ्जरी॥१६२१॥
दण्डोत्पलां वृश्चिकालीं कुलिशं नागदन्तिकाम्।
सूर्यावर्तञ्च सञ्चूर्ण्य कर्षमात्रं विमर्दयेत्॥ १६२२॥
आर्द्रकस्य रसेनैव चूर्णयित्वा पुनः क्षिपेत्।
त्रिपलं लोहचूर्णस्य ततः खादेच्छुभेऽहनि॥ १६२३॥
सम्पूज्य भास्करं विष्णुं गणनाथं द्विजोत्तमम्।
माषमात्रञ्च मधुना कृत्वा शीतजलं पिबेत्॥ १६२४॥
चूर्णं सर्वेश्वरं नाम सर्वरोगहरं भवेत्।
कठोरप्लीहनाशाय गुल्मोदरहरन्तथा॥ १६२५॥
कामलां पाण्डुमानाहं यकृत्क्रमिकृतामयान्।
विचर्चीमम्लपित्तञ्च कण्डूं कुष्ठं विनाशयेत्॥१६२६॥

भै र (यकृत्प्लीहाधि०), र.र , ध (रसायने), र. क शूले।

टि०—अत्र पाठे विविधवैचित्र्यदर्शनसत्त्वेऽपि भैषज्यरत्नावलीस्थ एव पाठो ज्यायान्।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ पल, अभ्रकभस्म २ पल, ताम्रभस्म ३ पल, सोनामाखी २ कर्ष, शुद्ध जमालगोटा, चित्रकमूल, मानकन्द, सूरण, मोखा अभावमे हँस, गठिवन, त्रिफला, त्रिकटु, निसोत, अपामार्ग, ब्रह्मदण्डी, विछुआ, जहरीसूरण, घनसर (मराठीनाम) और हुरहुर १–१ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अदरखकेरससे १–२ दिन मर्दनकरे। फिर ३ पल लोहभस्म मिलाकर १–२ दिन अदरखकेरससे मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। सूर्य, विष्णु, गणेश और द्विजातिओंका पूजनकर इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथलेकर ठंढाजलपीनेसे कठोदर, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, कामला, पाण्डु, आनाह, यकृत्, क्रिमि, विचर्चिका, अम्लपित्त, खाज, कुष्ठ इनसवको यह दूरकरताहै॥ ३६०॥

३६१ सर्वेश्वररसः (दशमः)

ताप्यौ टङ्कणहेमताररसकं गन्धं यथाभागिकं,
ताम्रं विद्रुमशुक्तिजं शिखरिजं छिन्नं तथा भागतः।
वङ्गायोऽहिरसेन्द्रभूतिगगनं वैक्रान्तकान्तं त्रिशः,
तत्सम्मर्द्य विभावयेत्त्रिदिवसं यष्टीत्रिजाताम्बुभिः॥
मुस्तोशीरवरावृषाऽमृतशटीकन्याविदारीवरी–,
नीरैः गोपयसेक्षुरैश्च मुशलीगोलंपचेद्यामकम्।
मन्दाग्नौ च मृगाङ्कवत्पुनरसौ भाव्यस्ततो भावने,
द्वे कस्तूरिमृगाङ्कयो र्मधुकणायुक्तोऽस्य वल्लो जयेत्॥
मेहार्शो ग्रहणीज्वरोदरमरुद्व्याधिं रुजं कामलां,
पाण्डुं कुष्ठभगन्दरं ज्वरगणं कृच्छ्रञ्च शुक्रक्षयम् १६२८

वृ यो त , र सु , रसायनस , र.शं , र पं , र वो., र पा., प्रमेहे।

टि०—रसपद्धत्या ताप्यौ टङ्कणमित्यस्य स्थाने माक्षीकद्वितयमिति पाठ त्रिभागमितेषु कास्यमधिक, भावनावस्तुषु चित्रकोऽधिक इति विशेष। रसायनसङ्ग्रहे द्वौ पाठौ नियोजितौ, एकस्तूपर्युक्त पाठ प्रमेहाधिकारे, द्वितीय सिद्धेश्वर नाम्ना क्षयाधिकारे स्थापित।

भाषा—सोनामाखी, रूपामाखी, सुहागा, सुवर्ण, रजत, खपरिया इनकीभस्में, शुद्धगन्धक १–१ भाग, ताम्र, प्रवाल,

मोती,, शुद्ध इनकीभस्में २–२ भाग, गन्धक, लोह, नाग, पारा, अभ्रक, वैक्रान्त और कान्तलोह इनकीभस्में ३–३ भाग लेकर सबको बारीक पीस मुलहठी, त्रिजात, नागरमोथा, नाग, त्रिफला, अडूसा, गिलोय, कचूर, भीडुआर, पित्तपापडा, बालावर, गायत्रीसूल, तालमखाना और मुसलीके क्वाथसम्भावनामें ३–३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय ३–४ तह कपडेमें लपेट बालुकायन्त्रमें बन्दकर ३–८ कपडमिट्टी देकर सुखानेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रसपूरी और कपूरकी २–२ भावनादेकर ३–३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली मधु और पीपलकेसाथदेनेसे प्रमेह, बवासीर, मन्दाग्नि, ज्वर, उदररोग, वातविकार, कामला, पाण्डु, कुष्ठ, भगन्दर, शूल, मूत्रकृच्छ्र और शुक्रक्षयको यह नष्टकरताहै ॥ २६१ ॥

२६२ सर्वेश्वररसः (एकादश)

पलं सूतं चतुर्गन्धं शुद्धं यामं विचूर्णयेत ।
मृतताम्राभ्रलोहानां दरदस्य पलं पलम् ॥ १६२९ ॥
सुवर्णं रजतञ्चैव प्रत्येकं दशनिष्ककम् ।
माषैकं मृतवज्रञ्च तालं शुद्धं पलद्वयम् ॥ १६३० ॥
जम्बीरोन्मत्तवासाभिःस्नुह्यर्कविषमुष्टिभिः ।
मर्द्यं हयारिजै द्रवैः प्रत्येकेन दिनं दिनम् ॥ १६३१ ॥
एवं सप्तदिनं मर्द्यं तद्गोलं वस्त्रवेष्टितम् ।
वालुकायन्त्रगं स्वेद्यं त्रिदिनं लघुवह्निना ॥ १६३२ ॥
आदाय चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं पलैकं योजयेद्विषम् ।
द्विपलं पिप्पलीचूर्णं मिश्रं सर्वेश्वरो रसः ॥ १६३३ ॥
द्विगुञ्जो लिह्यते क्षौद्रैः सुप्तिमण्डलकुष्ठनुत् ।
आजानुस्फुटितं चापि वातरक्तमपोहति ॥ १६३४ ॥
वाकुचीदेवकाष्ठञ्च कर्षमात्रं सुचूर्णयेत ।
लिहेदेरण्डतैलाक्तमनुपानं सुखावहम् ॥ १६३५ ॥

वृ यो त, शा नं, र र म., र प्र सु., र कौ, रसायनम., प रा, यो त, र. का., वातरक्ते ।

टि०—"सुवर्णं रजतञ्चैव प्रत्येकं दशनिष्ककम् । माषैकं मृतवज्रञ्च तालं शुद्धं पलद्वयम् ॥" इत्येकं पद्यं वमरराजीये रसकामधेनौ च न दृश्यते तत्र ग्रन्थकर्त्रा बुद्धिपूर्वकं त्यक्तं वा लेखकप्रमादात्परि त्यक्तमिति वा न ज्ञायते । रसकामधेनौ कुष्ठे पाठद्वयं स्वल्पं तत्र द्वयोरपि पाठत्रुटिः । रसरत्नसमुच्चये द्वितीयस्थाने रसेन्द्रकल्पद्रुमे च सर्वेश्वरनाम्ना "पालिका ताम्रगन्धाभ्र कर्पाश लोहपारदम् । स्नुह्यर्कक्षीरपाठाग्निनिर्गुण्डीरोधीरवारिभि ॥ मर्दित वालुकायन्त्रे स्वेदयेद्दिवसत्रयम् । कर्षं कणाया निष्काञ्च विषस्यास्मिन्विनिक्षिपेत् ॥ एष सर्वेश्वर सद्यो गुञ्जामात्र प्रसुप्तजित् ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । नि र, र क, टो, वै चि, र (मा), रसायनम, र र म, र को, र कौ एषु ग्रन्थेषु सर्वेश्वर नाम्नैव "रसहिङ्गुललोहाना त्रय कर्षा पलद्वयम् । ताम्रगन्धकयो सर्वं जम्बीराद्भिर्विमर्दयेत् ॥ विषमुष्ट्यर्कहेमस्नुह्यग्वीरजलै पुन । सप्तधा गोलकं कृत्वा स्वेदयेद्दिवसद्वयम् ॥ वालुकायन्त्रमध्यस्थ शीते निष्क विषस्य च । कर्षं कणाना सूत स्यात्सर्वेशो वातरक्तजित् ॥ गुञ्जामात्राऽस्य दातव्या द्वय वा मस्तवारिणा । रक्तप्रकोपण तीव्र पित्तल परिवर्जयेत् ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । र म, र चि, र क, र र दी., रसायनम, भै मा, [illegible]

भाषा—शुद्ध पारा १ पल, गन्धक ४ पल, ताम्र, अभ्रक और लोहभस्म, शुद्धहिंगुल १–१ पल, सुवर्ण और रजतभस्म १०–१० [illegible], हीराभस्म १ मासा, शुद्धहरताल २ पल लेकर सबको इकट्ठाकर जंभीरी, धतूरा, अडूसा, थूहर और आक, कुचिला, कनेर इनप्रत्येकके रसमें १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय ३–४ कपडा लपेटकर ३–४ कपडमिट्टी देकर सुखानेपर वालुकायन्त्रमें ३ दिनकी मन्द आंचसे स्वेदित करे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर बारीकचूर्णकर शुद्धवच्छनाग १ पल और पीपल २ पलका बारीकचूर्ण मिलाकर १–२ दिन मर्दनकर रखछोडे । इसमेंसे १–२ रत्ती मधुकेसाथ देकर बाकुची और देवदारु समभाग १ कर्ष चूर्ण एरण्डतैलके साथ अनुपानमें देनेसे सुप्तवात, मण्डल, आजानुवातरक्त इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २६२ ॥

२६३ सर्वेश्वररसः (द्वादशः)

स्वर्णं रौप्यं मौक्तिकञ्च विशुद्धञ्च शिलाजतु ।
लौहमभ्रं तथा तार्प्यं मधुयष्टी च पिप्पली ॥ १६३६ ॥
मरिचं विश्वकञ्चेति सर्वमेकत्र कारयेत ।
विमृद्य प्रहरं यत्नात्कज्जल्याकृतिसन्निभम् ॥ १६३७ ॥
भृङ्गद्वयरसे मर्द्यं शक्राशनरसे पृथक् ।
प्रमेहं विविधं हन्ति मधुमेहं सुदुर्जयम् ॥ १६३८ ॥
वातपित्तसमुद्भूतं तथा कफसमुद्भवम् ।
सर्वेश्वरो रसो नाम्ना प्रमेहकुलनाशनः ॥ १६३९ ॥

भै र, प्रमेहे ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, मोती, लोह, अभ्रक, सोनामाखी इनकीभस्में, शुद्धशिलाजीत, मुलहठी, पीपल, मरिच और सोंठ समभागलेकर बारीकचूर्णकर इकट्ठेमिलाय १ दिन शुष्कमर्दनकर स्याहसफेदभंगरा और गांजेके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १ से २ गोलीतक उचितानुपानकेसाथदेनेसे वात, पित्त और कफज प्रमेह, तथा दुर्जर मधुमेहको यह नष्टकरताहै ॥ २६३ ॥

३६४ सर्वेश्वररसः (त्रयोदशः)

रसभस्माऽऽलतुत्थाहिवङ्गताम्राभ्रचारिणः ।
कटुत्रयाऽमृताश्मानो गोऽहिवेदगजद्विपाः ॥१६४०॥
समुद्रनृपतिथ्यंशाः सप्तद्विर्तिथिमन्मथाः ।
भावयेद्रसकैः सर्वं लुङ्गाम्लैः सप्तधा पृथक् ॥१६४१॥
सर्वेश्वरो भावितः स्याद्द्विगुञ्जः सर्वरोगहा ।
निजानुपानैरथवा सह खण्डेन यक्ष्मणि ॥ १६४२ ॥
आर्द्राम्भसा पञ्चगुल्मे गुडवातारिचित्रकैः ।
क्षौद्रेण शैत्ये निर्दिष्टो व्योषार्द्रैः सान्निपातिके १६४३
ग्रहण्यामप्यतीसारे हितं पथ्यविधौ पयः ।
स्वस्वपथ्यानि वा वैद्यो दद्यात्सर्वेश्वरे रसे ॥१६४४॥

र शं , ग्रहण्याम् ।

भाषा—पारद १ भाग, हरिताल ८ भाग , तुत्थ ४ भाग, नाग और वङ्ग ८–८ भाग, ताम्र ४ भाग, अभ्रक १६ भाग, सोनामाखी १५ भाग, और रूपामाखी ७ भाग (इनसबकी-भस्में), त्रिकटु २ भाग, गिलोय १५ भाग, शुद्धगन्धक ५ भाग लेकर वारीकचूर्णकर धातुओंकीकज्जलीमें मिलाय विजोरे-केरससे ७ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियां वनाकर रख-छोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ, खाड अथवा अदरखके रसकेसाथदेनेसे राजयक्ष्म नष्टहोताहै । अदरखकेरस अथवा गुड़, एरण्डकीजड़ और चित्रककेसाथ देनेसे पाचोंगुल्म, मधुसे शैत्य, त्रिकटु और अदरखकेरससे सन्निपात नष्टहोताहै । ग्रहणी और अतिसारमें दूध अथवा उचितानुपानका योग करना ॥

३६५ सर्वेश्वररसः (चतुर्दशः)

हेमताप्यौ शिलैलाद्रिविषतारैकभागकम् ।
पृथक् प्रवालशुक्त्यर्करसकञ्च द्विभागिकम् ॥१६४५॥
सूतभस्माहिवङ्गायो व्योममुक्ताशिलाजतु ।
गैरिकञ्च त्रिभागं स्यात्सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ १६४६ ॥
विदार्यब्ध्यमृताभीरुशटीकन्यावराघनैः ।
भावनाश्च पृथक् सप्त दद्यान्मृगमदैस्ततः ॥ १६४७ ॥
कणासिताभ्यां मधुना वल्लोऽस्य क्षयमेहजित् ।
ग्रहणीदोषपाण्ड्वर्शोवातव्याध्युदराणि च ॥ १६४८ ॥
कासश्वासौ गुल्मतापकुष्ठानि जयति ध्रुवम् ।
स्वीयानुपानैः सर्वांश्च रोगान्हन्ति रसायनम् ॥
वीर्यवृद्धिवलं दत्ते सर्वेशोऽयं रसो वरः ॥ १६४९ ॥

र श , क्षये ।

भाषा—सुवर्ण, सोनामाखी, मैनसिल इनकीभस्में, इला-ची, दोनों कोयल, शुद्ध वछनाग, रजतभस्म १–१ भाग, प्रवाल, मोतीकी सीप, ताम्रभस्म, शुद्धखपरिया २–२ भाग, पारद, नाग, वङ्ग, लोह, अभ्रक और मोती इनकीभस्में, शुद्धशिलाजीत और गेरू ३–३ भागलेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर विदारीकन्द, चित्रक, गिलोय, शतावर, कचूर, घीकुंवार, त्रिफला, नागर-मोथा इनके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–८ भावनाए देकर कस्तूरी की १ भावना देवे । इसमेंसे ३–३ रत्ती पीपल, शक्कर और मधुकेसाथदेनेसे क्षय, प्रमेह, ग्रहणी, पाण्डु, ववासीर, वातरोग, उदररोग, कास, श्वास, गुल्म, ज्वर, कुष्ठ, इनसबको नष्टकर वीर्य और वुद्धिको वढ़ाताहै ॥ ३६५ ॥

३६६ सर्वेश्वररसः (पञ्चदशः)

कनककुलिशतारं रीतिसौवीरताम्रं,
गगनभुजगसूतं खेचरं तालटङ्कम् ।
शिलनृपवलिलोहं राजतञ्चैव वङ्गं,
त्रिलवणमृतमेतत्सर्वमेकत्र तुल्यम् ॥१६५०॥
एतैः समं तै मृतसूतराजं वज्र्यर्कदुग्धै दिनमेकघृष्टम् ।
कूपीगतं पाचय भूतियन्त्रे दिनं हिमं भावय शृङ्गवेरैः॥
वासा कुरण्टी नृपकुक्कुटी च
धत्तूरचित्रं गजदन्तमेषी ।
भूनिम्बमुस्ता हलिनी च दन्ती
ताम्बूलपर्णी सह ताम्रमूली ॥ १६५२ ॥
एतत्समुद्भूतरसै र्विभाव्यः
सर्वेश्वरो नाम रसेश्वरोऽयम् ।
त्रिगुञ्जमात्रः खलु सन्निपाते
रोगानशेषान्विविधानुपानैः ॥
महोदरं कुष्ठसपाण्डुगुल्मं
सर्वांश्च रोगान्विनिहन्ति नूनम् ॥ १६५३ ॥

र शं , क्षये ।

भाषा—सुवर्ण, हीरा, रजत, पीतल, सफेदसुरमा, ताम्र, अभ्रक, नाग, पारा, कसीस, हरिताल, मैनसिल, लाजवर्द, लोह, रजतमाक्षिक, वङ्ग इनसबकी भस्में, भुनासुहागा, शुद्धगन्धक, तीनोंनमक सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सबकी वरावर पारदभस्म मिलाकर थूअर और आककेदूधसे १–१ दिन मर्दन-कर फिरसे कज्जलीवनाय ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके भस्मयन्त्रमें रख एकदिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोने-पर निकालकर अदरख, अडूसा, पीयावासा, अमिलतास, सेमलकी छाल, धतूरा, चित्रक, घनसर (मराठीनाम), मेंढासींगी, चिरायता, नागरमोथा, करिहारी, दन्तीमूल, पान और ताल-मूलीके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात, महोदर, कुष्ठ, पाण्डु, गुल्म इत्यादि समस्तरोगोको यह नष्टकरताहै ॥ ३६६ ॥

३६७ सर्वेश्वररसः (षोडशः)

एकैकोऽग्निजरायुहीरकलवोऽब्धि नीलमाणिक्ययो-,
स्त्रिःकान्ताहिशिलार्कवङ्गरसकाद्विघ्राः पृथक् स्वर्णतः
वक्रान्तं तपनीभवादपि लवाः पञ्च प्रवालाद्दलेः,
पट् सूतादरदाच्च सप्त गगनाद्रूप्याच्च सर्वं ततः १६५४
चूर्णीकृत्य विभाव्य मार्कवरसै र्मुण्डीकुमारीगुहा–,
वासाम्भोदवरात्रिकण्टमुशलीदुग्धीविदारीद्रवैः ।

वृश्चीवादरिमेदतः शतदलात्त्रिस्तस्य गोलं पयः-,
पिष्टे दग्धवराटके नवलवे छि मौक्तिके लेपयेत १६५५
शुष्कं चाथ मृगाङ्कवल्लवणजे यन्त्रे विपाच्यैणजं,
नाभि सूतलवं निधाय मृदितः सर्वेश्वरः स्याद्रसः ।
स्वैस्वैरस्य गदान्निहन्ति सकलान्गुञ्जानुपाने द्रुतं,
यक्ष्माणं सपरिग्रहं ग्रहणिकातीसारपाण्ड्वामयान् ॥
कासापस्मृतिगुल्ममेहकृशतापण्ढत्ववन्ध्यामयान्,
बीजार्तिप्रदरोदरं भ्रममदश्वासास्रपित्तामयान ।
अन्यान्वातवलासपित्तरुधिरोद्भूतान्समस्तानपि,
व्याधीन्नाशयति प्रसह्य सहसोद्दीप्ताद्यथाऽर्कात्तमः ॥

र शं., क्षये ।

भाषा—अभ्रर और हीराभस्म १–१ भाग, नीलम और माणिक्यभस्म ४–४ भाग, कान्तलोह, नाग, मैनसिल, ताम्र, वङ्ग, खपरिया इनकीभस्में ३–३ भाग, सुवर्णभस्म २ भा, वैक्रान्त और सोनामाखीभस्म ५–५ भा, प्रवालभस्म और शुद्धगन्धक ६–६ भा, शुद्ध पारा, शिंगरिफ, अभ्रक और रजत भस्म ७–७ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर भंगरा, गोरखमुण्डी, घीकुंवार, शालपर्णी, अडूसा, नागरमोथा, त्रिफला, गोखरू, मुशली, दूर्वा, विदारीकन्द, सफेदपुनर्नवा विट्खदिर, गुलाव इनके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे ३–३ दिन मर्दनकर गोलावनाय जलीहुईकौडी ९ भाग, मोतीभस्म २ भाग दूधमें पीसकर गोलेपर लेपदेकर सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर लवणयन्त्रमें एकदिनरातकी आंच देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पारेकीवरावर कस्तूरीमिलाकर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे उपद्रवसहित राजयक्ष्म, ग्रहणी, अतिसार, पाण्डु, कास, अपस्मार, गुल्म, प्रमेह, कृशता, नपुंसकत्व, वन्ध्यत्व, बीजदोष, प्रदर, उदररोग, भ्रम, मद, श्वास, रक्तपित्त, वातवलासक, पित्त और रुधिरकेरोग इन सवको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे प्रचण्डसूर्यसे तम नष्ट होजाताहै ॥ ३६७ ॥

३६८ सर्वेश्वरलोहम्

गिरिजगन्धकताप्यरसाम्बुद-
द्युमणिलोहसुवर्णरजः समम् ।
मधुयुतेन विलीढमिदं नृणां
सकलरोगचयं विनिकृन्तति ॥ १६५८ ॥

लो प, सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्धशिलाजीत, गन्धक, सुवर्णमाक्षिक, पारा, अभ्रक, ताम्र, लोह, स्वर्णभस्म सव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती मधुकेसाथलेनेसे समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३६८ ॥

३७० सर्षपाद्यागुटिका

सर्षपाः पृष्ठपर्णी च तगरं पद्मकेसरम् ।
हरितालं विडङ्गानि रोध्रद्राक्षाप्रियङ्गवः ॥ १६५० ॥
चन्दनं वालकं मांसी विशाला समनःशिला ।
श्रीवासकं निशा दार्वी पद्मकं ध्याममेव च ॥१६६०॥
सुरसप्रसवाः स्पृक्का रोचना गन्धनाकुली ।
अम्लकं कुङ्कुमं दारु स्थौणेयं गिरिकर्णिका ॥१६६१॥
जात्याः पुष्पं प्रवालञ्च पिप्पलीमग्निजानि च ।
सूक्ष्मैलासिन्धुवारञ्च यष्ट्याह्वं गोधमेव च ॥ १६६२ ॥
एतान्यङ्गानि पट्त्रिंशत्पुष्येण परिपेषिताम् ।
गुटिकां कोलमात्राञ्च छायाशुष्कां हि कारयेत १६६३
नस्यपानाञ्जने चैषा सम्यग्लेपे च योजिता ।
पुंसां सर्वविषार्तानां राजद्वारे रणे तथा ॥ १६६४ ॥
वणिजां लाभकामानां विवादे च सदा हिता ।
सरीसृपा न तिष्ठन्ति यत्र तिष्ठति वेश्मनि ॥ १६६५ ॥
अनया सम्प्रलिप्तस्य चोरवह्निभयं कुतः ।
सर्पदष्टभयञ्चापि जलराशिभयं न च ॥ १६६६ ॥

ग नि., विषे ।

भाषा—पीलीसरसों, पृष्ठपर्णी (रानमाल. मराठीनाम), तगर, पद्मकेसर, हरितालभस्म, विडङ्ग, लोध, दाख, प्रियङ्गु, सफेदचन्दन, सुगन्धवाला, जटामांसी, इन्द्रायण, शुद्ध मैनसिल और विरोजा, हल्दी, दारुहल्दी, पद्मकाठ, खस, तुलसीकेबीज, अनन्तमूल, गोरोचन, गन्धनाकुली (सुगन्धरास्ना), कोकम, केशर, देवदारु, छड़ीला, कोयल, जावित्री, प्रवालभस्म, पीपल, मरिच, छोटीइलायची, निर्गुण्डी, मुलहठी, देशीलोध सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर पुष्यनक्षत्रमें इसयोगमेंआईहुई काष्ठौपधियोंके क्वाथसे मर्दनकर ८–८ माशेकी गोलियें वनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनका नस्य, पान, अञ्जन तथा लेपमें उपयोगकरनेसे तमामविष नष्टहोतेहैं । जिसघरमें ये गोलियां रहतीहै वहांपर हिंसक जानवर, सांप, चोर, अग्नि और जलसे भय नहीं होता ॥ ३६९ ॥

३७० सामुद्राद्यं चूर्णम्

सामुद्रं सैन्धवं क्षारौ रुचकं रोमकं विडम् ।
दन्ती लोहरजः किट्टं त्रिवृत्सूरणकं समम् ॥ १६६७ ॥
दधिगोमूत्रपयसा मन्दपावकपाचितम् ।
तं यथाग्निवलं चूर्णं किञ्चिदुष्णेन वारिणा ॥ १६६८ ॥
जीर्णे जीर्णे तु भुञ्जीत मासादिस्निग्धभोजनम् ।
नाभिशूलमुरःशूलं गुल्मप्लीहभवञ्च यत् ॥ १६६९ ॥
परिणामसमुत्थाने शूले च परमं हितम् ।
विद्रध्यष्ठीलजं हन्ति कफवातोद्भवं तथा ॥ १६७० ॥
अन्नद्रवं जरयितुमजीर्णं ग्रहणीमपि ।
शूलानामपि सर्वेषामौषधं नास्त्यतः परम् ॥१६७१॥

यो र, र., ध., नि र, ग नि, ना वि, रसायनस र. का, यो म, र क, टो, भै र, र र., वृ यो. त, वृ मा, च द, शूलाधिकारे ।

भाषा—समुद्र और सेंधानमक, सज्जी, यवक्षार, संचल, रोमक, विड, दन्तीमूल, लोह और मण्डूरभस्म, निसोत,

सूरणकन्द येसव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर दही, गोमूत्र और दूध चौगुना चौगुना डालकर मन्दाग्निपर पकावे, और सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ माशे अग्निवल देखकर गरमजलकेसाथदेनेसे नाभिशूल, छातीकाशूल, गुल्म, प्लीहा, परिणामशूल, विद्रधि, अष्ठीला, कफवातोद्भवशूल, अन्नद्रवशूल, अजीर्ण, ग्रहणी इनसवको यह नष्टकरताहै। शूलोंकेलिये इससे बढ़कर अन्य औषध नहींहै ॥ ३७० ॥

३७१ सारणसुन्दररसः

सूतं गन्धं समं शुद्धं सप्तधा भावयेत्क्रमात्।
स्नुह्यर्कदुग्धैः श्रीखण्डद्वयश्यामाऽभयारसैः ॥१६७२॥
समं नेपालजं चूर्णं देयमेकत्र मर्दयेत्।
उष्णाम्बुना वल्लयुग्मं देयमष्टगुणे गुडे ॥ १६७३ ॥
मलाः पूर्वं जलं पश्चात्ततश्चामः शनैः शनैः।
उदराच्च विनाऽन्त्राणि सर्वं निर्याति किल्विषम् १६७४
जाते विरेके संशुद्धे पथ्यं दध्योदनं हितम्।
जयेज्ज्वरादिकान्रोगान्रसः सारणसुन्दरः ॥ १६७५ ॥

र. सं. क, रसायनसं, र. क., र. वो., उदराधिकारे।

भाषा—समभाग शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर थूहर और आककेदूध, दोनोंचन्दन, निसोत और हर्रोंके द्रवोंसे ७–७ भावनाएं देकर वरावरका शुद्धजमालगोटा मिलाय १–२ दिन मर्दनकर ६ रत्तीकीमात्रा गरमजलकेसाथ अथवा अठगुने गुडकेसाथलेनेसे पेट और अन्तड़ियोंमेंसे तमाममल निकल जाताहै। अच्छीतरह रेचनहोनेकेवाद भूखलगनेपर दहीभात पथ्य देना। इससे तमामज्वरभीनष्टहोतेहैं ॥ ३७१ ॥

३७२ सारस्वतरसः

रसगन्धौ वचां शङ्खपुष्प्यास्त्रिस्त्रिदिनं पुटेत्।
चतुर्विंशतियामांस्तु वह्निं दद्यान्मृदुं भिषक् ॥१६७६॥
माषोऽस्य दुग्धभक्तानुपानेन स्वरभङ्गजित्।
अयं सारस्वतो नाम रसो जाड्यापहारकः ॥ १६७७॥

र का., स्वरभङ्गे।

भाषा—समभाग शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर वच और शङ्खाहूलीकेरससे ३–३ दिन मर्दनकर ४–५ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें डाल मुहवन्दकर वालुकायन्त्रमें रख २४ पहरकी मन्दाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर युक्तिपूर्वक निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा दूध और भातकेसाथदेनेसे स्वरभङ्ग और जड़ताको यह दूरकरताहै ॥ ३७२ ॥

३७३ सारिवादिवटी

सारिवां मधुकं कुष्ठं चातुर्जातं प्रियङ्गुकम्।
नीलोत्पलं गुडूचीञ्च देवपुष्पं फलत्रिकम् ॥ १६७८॥
अभ्रं सर्वसमञ्चाभ्रसमं लोहं विभावयेत्।
केशराजाम्बुना पार्थक्वाथेन यवजाम्भसा ॥ १६७९॥
काकमाचीरसेनापि गुञ्जामूलद्रवेण च।
त्रिगुञ्जाप्रमिताः पश्चाद्विदध्याद्वटिका भिषक् ॥१६८०॥
धारोष्णेनापि पयसा शतमूलीरसेन वा।
एकैकां योजयेत्प्रातः श्रीखण्डसलिलेन वा ॥१६८१॥
निखिलान् कर्णजात्रोगान् प्रमेहानपि विंशतिम्।
रक्तपित्तं क्षयं श्वासं क्लैब्यं जीर्णज्वरन्तथा ॥१६८२॥
अपस्मारमदार्शांसि हृद्रोगञ्च मदात्ययम्।
सारिवादिवटी हन्यात्स्त्रीगदानखिलानपि ॥ १६८३॥

भै र., कर्णरोगे।

भाषा—सारिवा, मुलहठी, कुठ, चातुर्जात, प्रियङ्गु, नीलोफर, गिलोय, लौंग, त्रिफला येसव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर सवकीवरावर २ अभ्रक और लोहभस्म मिलाकर कालाभंगरा, सफेदअर्जुन, जव, मकोय, गुञ्जामूल इनके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावना देकर ३–३ रत्तीकीगोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली धारोष्णदूध अथवा शतावरीकेरस अथवा चन्दनकेजलकेसाथ प्रातःकाललेनेसे कानके समस्तरोग, २० प्रकारकेप्रमेह, रक्तपित्त, क्षय, श्वास, क्लीवता, जीर्णज्वर, अपस्मार, मद, अर्श, हृद्रोग, मदात्यय इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ३७३ ॥

३७४ सार्वभौमरसः

हेमवज्राभ्रकाणाञ्च भस्मनां त्रितयं समम्।
भूनागसत्त्वभस्मापि तत्समं निक्षिपेद्बुधः ॥ १६८४ ॥
कृष्णचित्ररसेनैव मर्दयेच्च दिनत्रयम्।
अमृतस्य कषायेण कुमारीस्वरसेन च ॥ १६८५ ॥
त्रिकटुत्रिफलानाञ्च स्वरसे च विपाचयेत्।
द्राक्षाफलान्वितं नित्यं गुञ्जामात्रं प्रयोजयेत् ॥१६८६॥
सर्वव्याधिविनिर्मुक्तो वज्रदेहो भवेन्नरः।
त्रिवत्सरप्रयोगेण जीवेदाचन्द्रतारकम् ॥ १६८७ ॥
सर्वेषामायुधानाञ्च विषाणाञ्च निवारणम्।
सर्वशत्रुक्षयत्याशु भुवि संकीर्तितो भवेत् ॥
सार्वभौमरसो ह्येष सर्वराजमनोहरः ॥ १६८८ ॥

र कौ (ज्ञा), र क यो, रसायने।

भाषा—सुवर्ण, हीरा और अभ्रकभस्म समभाग, केंचुओंके सत्त्वकीभस्म सवकेवरावर, कालाचित्रक, वछनाग, घीकुंआर, त्रिकटु और त्रिफलाकेस्वरसोंसे १–१ भावना देकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर गजपुटकी आचदे। इसीतरह प्रत्येकके स्वरसमें मर्दनकर गजपुटदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती द्राक्षमें रखकर खानेसे समस्तव्याधियोंसे निर्मुक्तहोकर वज्रदेहहोताहै। इसतरह ३ वर्षतक लगातार प्रयोगकरनेसे समस्त आयुध, विष और शत्रुओंसे निर्मुक्तहोताहै ॥ ३७४ ॥

३७५ सालमपाकः (मुञ्जातक पाकः)

प्रस्थैकं सालिमं चूर्णं दुग्धद्रोणे विनिःक्षिपेत्।
सितोपलाढकं दत्त्वा तन्दुली विनिवर्तयेत् ॥ १६८९ ॥

जातीफलं जातिपत्री लवङ्गं मधुयष्टिका।
शुक्तिमात्रप्रमाणेन पृथग्ग्राह्यं भिषग्वरैः॥ १६९०॥
पिप्पली पिप्पलीमूलं नागकेशरनागरम्।
श्वदंष्ट्रा मरिचं द्राक्षा वाजिगन्धा शतावरी॥१६९१॥
लोहमभ्रकवङ्गञ्च द्वे जीरे धान्यकं घनम्।
पृथक्पृथक् कर्षमात्रमेला चैव त्रिकार्षिका॥ १६९२॥
आक्षोटं मुशलीश्चैव चतुःकर्षप्रमाणतः।
रक्तचन्दनकर्पूरकस्तूरीमांसिकेशरम्॥ १६९३॥
त्वचं कृष्णाऽगरुश्चैव प्रमाणं तस्य निर्दिशेत्।
पञ्च द्वे वह्निभूतानि रसमार्गणमार्गणाः॥ १६९४॥
मापसंख्याप्रमाणेन यथाभागं नियोजयेत्।
सम्यक् पाकं ततो ज्ञात्वा देशकालानुसारतः १६९५
सायं प्रातः पलार्द्धन्तु भक्षयेत्क्षीरसंयुतम्।
वाजीकरो बलकरो कान्तिपुष्टिविवर्धनः॥ १६९६॥
प्रमेहं वातरोगञ्च हृद्रोगमपि नाशयेत्।
अस्य संसेवनान्नित्यं गच्छेच्च वनिताशतम्॥
सर्वव्याधिहरः श्रेष्ठो योगः परमदुर्लभः॥ १६९७॥

रसायनस, वाजीकरणे।

टि०—सालम मुञ्जातको ज्ञेय स संस्कृतनाम्ना लुप्तप्रायो भूत्वा यावननाम्ना जागर्ति।

भाषा—एकप्रस्थ सालमकेचूर्णको १६ सेर दूधमें डालकर पकावे। अधौटादूध होनेपर ४ सेर मिश्री डालकर चाशनी तैयारकरे। फिर जावित्री, लौंग, मुलहठी २–२ कर्ष, पीपल, पिपलामूल, नागकेशर, सोंफ, गोखरू, मरिच, द्राक्ष, असगन्ध, शतावर, लोह, अभ्रक और वङ्गभस्म, दोनोंजीरे, धनिया, नागरमोथा १–१ कर्ष, इलायची ३ कर्ष, अखरोट और मुशली १–१ पल, लालचन्दन ५ माशे, शुद्धकपूर २ माशे, कस्तूरी ३ माशे, जटामासी ५ माशे, केशर ६ माशे, तज ५ माशे, काला अगर ५ माशे इनसबका बारीकचूर्ण मिलाकर उतारकर जमादे। इसमेंसे अग्निबलदेखकर १ तोलेसे ५ तोलेतक खिलाकर दूधपिलावे यह अत्यन्त वाजीकरहै कान्ति और पुष्टिको बढाताहै। प्रमेह, वातरोग और हृदयकेरोगोंको नष्टकरताहै। प्रतिदिन सेवनकरनेसे बहुतसी स्त्रियोंकेसाथ रमणकरसक्ताहै॥ ३७५॥

३७६ सावित्रवटकः

पलद्वयं पले द्वे च कृष्णायश्च पलद्वयम्।
पथ्याऽमृताक्षधात्रीणां पृथगेकैकशः पलम्॥१६९८॥
पूतीकं चव्यव्योपाग्निकारवीक्रिमिनाशनैः।
चूर्णितैरर्द्धपलिकैस्तिलतैलं पलद्वयम्॥ १६९९॥
त्रिफलाया रसप्रस्थे खण्डं प्रस्थयुगं पचेत्।
दर्वीप्रलेपात्पाकश्च चातुर्जातकसंयुतः॥ १७००॥
सावित्रवटका ह्येते यथाग्निबलभक्षिताः।
कृमिकोष्ठाग्निदौर्बल्यशोथगुल्मोदरव्रणान्॥ १७०१॥
कामलापाण्डुरोगार्शोभगन्दरगदव्रणान्।
निहन्त्येतद्धि संसिद्धं वयःस्थैर्यबलप्रदम्॥ १७०२॥
वायुमेहप्रशमनाश्चक्षुषः प्रीतिवर्धनाः।
भवन्त्यतिस्निग्धभुजां वातातपनिषेविणाम्॥१७०३॥

नि र, वै. चि, क्रिमिरोगे।

भाषा—एकप्रस्थत्रिफलाकेकाढेमें २ प्रस्थ शक्कर डालकर चाशनीतैयारकरे फिर शुद्धगूगल और फालादभस्म २–२ पल, हर्रे, गिलोय, बहेडे और आवले १–१ पल, घुडकरञ्ज, चव्य, त्रिकटु, चित्रक, कारवीकेबीज (मराठी नाम) और विडङ्ग २–२ कर्ष, तिलकातैल २ पल, चातुर्जात १–१ कर्ष इनसब चीजोंका बारीकचूर्ण डालकर उतारले। इसमेंसे १–१ तोलेकीमात्रा दूध अथवा समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे क्रिमि, मन्दाग्नि, शोथ, गुल्म, उदरकेव्रण, कामला, पाण्डु, अर्श, भगन्दर, व्रण, वायु, प्रमेह, नेत्ररोग इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें अधिकवायु और धूपका निषेधकरना॥ ३७६॥

३७७ सितामण्डूरम्

धमनविधिविशुद्धं गोजले सप्तवारां-,
स्तरणिकिरणशुष्कं श्लक्ष्णमण्डूरचूर्णम्।
विमलतरपलैकं पञ्चसङ्ख्यं सितायाः,
अनवघृतपलानामष्टकं द्व्यष्टदुग्धम्॥ १७०४॥
मृदुदहनशिखाभि र्मन्दमन्दं कटाहे,
विगतसलिलशेषं पाचयेत्पाकविज्ञः।
वितरितगुडपाके किञ्चिदुष्णेऽवतीर्णे,
दृषदि दृढमभीक्ष्णं चूर्णितं देयमाशु॥ १७०५॥
त्रिकटुकमधुकैलायासवैडङ्गसारं,
प्रतनुपटनिघृष्टं गालितं सम्प्रदद्यात्।
त्रिफलगदलवङ्गं कर्षमेकैकशश्च,
तदनुशिशिरकाले द्वे पले माक्षिकस्य॥१७०६॥
शुभतिथिदिवसादौ भोजनादौ निषेव्यं,
प्रथमदिवसमेनं शाणमानं तदूर्द्धम्।
अहरहरनुवृद्ध्या यावदक्षं प्रयोज्यं
हिमकररुचिशीतं गव्यदुग्धञ्च पेयम्॥१७०७॥
नियतमयमसाध्यानम्लपित्तोत्थशूलान्,
वमिनिवहसदाहानाहमोहप्रमेहान्।
विविधरुधिररोगान् पित्तयुक्तानशेषा-,
नपहरति सिताद्यो दिव्यमण्डूरयोगः॥ १७०८॥

भै र, अम्लपित्ताऽधिकारे।

भाषा—धमनकराके ७ वार गायकेमूत्रमें बुझायाहुआ मण्डूर १ पल, शक्कर ५ पल, पुरानाघी ८ पल और गायकादूध १६ पल लेकर सबको कडाहीमें डालकर मन्दाग्निपर पाककरे। गुडकेसदृश चाशनीहोनेपर उतारकर त्रिकटु, मुलहठी, इलायची, जवासा, विडङ्गतण्डुल, त्रिफला, कुठ, लौंग १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर मिलादे। ठढाहोनेपर २ पल मधु मिलाकर रखछोडे। शुभतिथि और अच्छेदिन इसमेंसे भोजनकेआदिमें ४ माशे सेवनकरे फिर धीरे २ बढ़ाकर १ कर्षकी मात्रा

कायमकरे। चन्द्रमाकी चादनीमें रक्खाहुआ ठंढा दूध पिलावे। इससे असाध्य अम्लपित्त, शूल, वमन, आनाह, मूर्च्छा, प्रमेह, रक्तविकार, वात और पित्तरोग नष्टहोतेहैं ॥ ३७७ ॥

३७८ सिद्धकान्तरसः

कान्तलोहस्य चूर्णन्तु कृत्वा सूक्ष्मतमं बुधः।
गन्धकं पारदं दन्तीवीजान्येकत्र कारयेत् ॥ १७०९ ॥
ततः सम्पेष्य तत्कल्कं मर्दयेत्त्रिदिनं पुनः।
एतत्तुल्येन मत्स्यस्य पित्तेन परिभावयेत् ॥ १७१० ॥
सिद्धकान्तरसो ह्येष प्रयोज्योऽभिनवज्वरे।
शृङ्गवेरानुपानेन वल्लश्च भिषगुत्तमैः ॥
नाशयेच्च ज्वरं सद्यो भास्करस्तिमिरं यथा ॥१७११॥

र को., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—कान्तलोहभस्म, शुद्ध गन्धक, पारा और जमालगोटा समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सबकीबराबर मछलीकेपित्तसे ३ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथदेनेसे अन्धकारको सूर्यकीतरह तत्क्षण ज्वरको नष्टकरदेताहै ॥ ३७८ ॥

३७९ सिद्धदरदामृतम्

हंसपाकस्य खण्डानि सूत्रबद्धानि युक्तितः।
कर्षद्वयप्रमाणानि चन्द्रकर्षमितानि वा १७१२ ॥
लौह्यां भिन्नानि संस्थाप्य वसुभागं विनिक्षिपेत्।
पलाण्डुस्वरसं स्वच्छं वियद्वल्लीभवन्तथा ॥ १७१३ ॥
दरदाद्विगुणं क्षीरं न्यग्रोधस्य विनिक्षिपेत्।
प्रज्वाल्याग्निमधस्तत्र द्रवसंशोषणावधि ॥ १७१४ ॥
उत्तार्य तामधो लौहीं स्वाङ्गशीताञ्च कारयेत्।
युक्त्या दरदखण्डानि सम्यक् सर्वाणि चाहरेत् १७१५
दरदादर्धभागेन चूर्णं देवकुसुमोद्भवम्।
प्रसार्य तानि खण्डानि भल्लातकफलानि च ॥१७१६॥
षड्गुणानि क्रमेणेह चित्याकारतया किरेत्।
सन्धींल्लवङ्गचूर्णेन समाच्छाद्य प्रयत्नतः ॥ १७१७ ॥
हव्यवाहं समाज्वाल्य निर्धूमान्यपसारयेत्।
घृतं ज्योतिष्मतीतैलं माधूकैरण्डजे मधु ॥ १७१८ ॥
रक्ताश्चतुर्गुणानीह शोषयेत्क्रमशः शनैः।
स्वाङ्गशीतानि चाकृष्य सूत्रभस्मादिकं त्यजेत् १७१९
रक्तिकाद्वितयश्चास्य वाजीकरणमुत्तमम्।
ऊरुस्तम्भामवातातिसारपक्षवधादिकान् ॥ १७२० ॥
शीताङ्गं तन्द्रिकप्लीहयकृद्विद्रधिषण्ढताः।
नाशयेत्पक्षमात्रेण श्रीसिद्धदरदाह्वयः ॥ १७२१ ॥

नू क. वाजीकरणे।

भाषा—रूमीशिगरिफके १–१ अथवा २–२ कर्षके टुकडे कच्चेसूतमें लपेटकर साफकड़ाहीमें रक्खे और शिगरिफसे अठगुना सफेदप्याज और अमरवेलकारस तथा दूना बटकादूध डालकर मन्दाग्नि देकर सम्पूर्णद्रवसुखाकर कड़ाहीको नीचे उतारकर रखले। स्वाङ्गशीतलहोनेपर शिंगरिफके टुकड़ोंको निकालकर कड़ाहीको साफकर शिंगरिफसे आधा लवङ्गकाचूर्ण बिछाकर शिंगरिफकेटुकड़ोंको रख ६ गुने भिलावे चुनकर दूसरे लवङ्गकेचूर्णसे भिलावोंको ढकदे और धीरे २ आंचदे। भिलावे तथा लवङ्ग जलकर निर्धूमहोजाय तब कड़ाहीको उतारकर स्वाङ्गशीतलहोनेपर राख-हटाकर टुकड़ोंको निकालले और कड़ाहीको साफकर फिर टुकड़ोंको रख घी, मालकांगनी, महुआ और एरण्डकातैल, मधु, क्रमश. ४–४ गुना डालकर जलावे। अन्तमें कड़ाहीमें इतनी आंच दे कि निर्धूम होजाय। यह ध्यान रहे कि शिंगरिफ उड़ न जाय। फिर कड़ाहीको नीचे उतारकर टुकड़ोंको साफकर पीसकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे ऊरुस्तम्भ, आमवात, अतिसार, पक्षाघात, शीताङ्ग, तन्द्रा, प्लीहा, यकृत्, जहरवाद, नपुसकत्व इनसबको यह नष्टकर उत्तम वाजीकरणकरताहै ॥ ३७९ ॥

३८० सिद्धनाथरसः

द्वादशभागास्त्रिकटोरेकोनषष्टिरिह मनस्विन्याः।
खेचरजलेन मृदिता स्वच्छेन विशोषितेन भृशम् १७२२
तृणशिखिशिखोष्णशृङ्गिक-
भागैकयुता रक्तिमिता गुटिका।
एषा त्रिदोषसागरविशोषिणी
वाडवी गुटिका ॥ १७२३ ॥

र (मा), सन्निपाते।

भाषा—त्रिकटु १२ भाग, शुद्धमैनसिल ५९ भागलेकर बारीकचूर्णकर जलमें घुलीहुई कसीसके नितरेहुए पानीसे १–२ दिन घोटकर चित्रक और जटामासी, मरिच और शुद्धवछनागकाचूर्ण १–१ भाग मिलाकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह त्रिदोषको नष्टकरतीहै ॥ ३८० ॥

३८१ सिद्धभैरवरसः

पारदं तालकं तुल्यं कुमारीरसमर्दितम्।
दोलायन्त्रे पचेद्यामं मत्स्यपित्तेन भावयेत् ॥१७२४॥
चणकद्वयमात्रञ्च देयं मधुकणायुतम्।
जिह्विकासन्निपातघ्नो रसोऽयं सिद्धभैरवः ॥ १७२५ ॥

वै चि., वा., जिह्वकसन्निपाते।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और हरितालकी नीलवर्णकज्जलीकर २–३ दिन घीकुंवारकेरससे मर्दनकर गोलाबनाय घीकुवारके रसमें दोलायन्त्रसे १ पहर स्वेदनकर सुखाकर मछलीकेपित्तकी एक भावना देकर दोचनेप्रमाण गोलियेंबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह त्रिदोषको नष्टकरताहै ॥ ३८१ ॥

३८२ सिद्धमण्डूरम्

मण्डूरस्य पलान्यष्टौ गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत्।
पुनर्नवा त्रिवृद्व्योषं विडङ्गं देवदारुकम् ॥ १७२६ ॥

छिन्निशे पुष्करं यत्ति दन्ती चव्यं फलत्रिकम् ।
कुटजस्य फलं तिक्ता पिप्पलीमूलमुस्तकम् ॥१७२७॥
विषञ्च प्रतिकर्षं स्याच्चूर्णीकृत्य विमिश्रयेत् ।
मण्डूरस्य च पाकान्ते कोलमात्रं वटीकृतम् ॥१७२८॥
पाण्डुशोफोदरानाह शूलार्तिकृमिगुल्मनुत् ।
इत्येवं सिद्धमण्डूरः सर्वरोगविनाशकृत् ॥ १७२९ ॥

नि र, र र, व.रा, वं.चि, र मा., र क.यो, ना रि. पाण्डुरोगे ।

टि०—चरकीयपुनर्नवामण्डूरेण कुशलेन्य भावम्याधावमि सिद्धयुक्तत्वात्स्वतन्त्रतया स्थापितः ।

भाषा—८ पल मण्डूरभस्मको अठगुने गोमूत्रमें पकावे । गाढाहोनेपर पुनर्नवा, निसोत, त्रिकुट, निडङ्ग, देवदारु, दोनोंहल्दी, पोहकरमूल, चित्रक, दन्ती, चव्य, त्रिफला, इन्द्रजव, कुटकी, पिपलामूल, नागरमोथा, शुद्धवच्छनाग, इनसबका चूर्ण १–१ कर्ष मिलाकर उतारले। ठण्डाहोनेपर जरबेर बरावर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे पाण्डु, शोथ, उदररोग, आनाह, शूल, क्रिमि, गुल्म इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३८२ ॥

३८३ सिद्धयोगः

हरीतकीगोक्षुरलोहभस्म
समांशकैरिक्षुरको द्विभागः ।
सिताद्विभागं तुहिनोदपीतं
प्रमेहसन्देहमपाकरोति ॥ १७३० ॥

रसायनस, प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—हर्रे, गोखरू, लोहभस्म १–१ भाग, तालमखाना और शकर २–२ भागलेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इनमेंसे ३–३ मासे दूध अथवा ठंढेपानीकेसाथलेनेसे यह प्रमेहमात्रको दूरकरताहै ॥ ३८३ ॥

३८४ सिद्धरसः

रसं वज्रं स्वर्णकान्तं मुण्डं तन्मारितं समम् ।
माक्षिकं गन्धकं शुद्धं सर्वं जम्बीरकद्रवैः ॥ १७३१ ॥
सप्ताहं मर्दयेत्खल्वे तद्गोलञ्चान्धितं पुटेत् ।
भूधरे दिनमेकन्तु ख्यातः सिद्धरसः परः ॥ १७३२ ॥
माषैकं मधुना लेह्यं वर्षान्मृत्युजरापहम् ।
दिव्यकायो नरः सिद्धो भवेद्विष्णुपराक्रमः ॥१७३३॥
श्वेतापुनर्नवामूलं क्षीरपिष्टं पलम्पिबेत् ।
भक्षयेत्पलिकार्द्धं वा क्रामकं परमं रसे ॥ १७३४ ॥

रसायनसं, रसायने ।

भाषा— पारा, हीरा, सुवर्ण, कान्त, मुण्ड, सोनामाखी इनसबकीभस्में और शुद्धगन्धक सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरीकेरससे ७ दिनतक मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें एकदिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा मधुकेसाथ लगातार १ वर्षतक लेनेसे मृत्यु और बुढ़ापेको नाशकर दिव्यकाय और दीर्घायुको करताहै। एक अथवा आधापल सफेद पुनर्नवाकी जड़को दूधमें पीसकर पीनेसे रसका सर्वांगमें क्रामण होताहै ॥ ३८४ ॥

३८५ सिद्धलक्ष्मीश्वररसः

अष्टांशकमचपले [illegible]
[illegible] षड्गुणयन्ति क्रमशोऽधिकञ्च ।
ऊर्द्धं पयाऽग्निमध्ये विनिधाय धीराः
सिद्धिं [illegible] ॥ १७३५ ॥

र यो.स, रसायनस., यो र., र.सु. पारदकरणे ।

टि०—[illegible] "[illegible]" इत्यादिना [illegible] ।

भाषा—अग्निमें रखनेपर [illegible] पारेको रस अठमाशपुराणं और षड्गुणगन्धक अथवा इससेभी अधिक क्रमपूर्वक जारणकरे । सुवर्णजारण करनेकेवाद पारेका पञ्चनकरके देवे । यदि अधिक यत्न हो तो काशीमें दोलायन्त्रमें स्वेदनकरे । समय आनेपर प्रथमचन्द्रोदयकी विधिसे चन्द्रोदयबनावे और इससे रसायन अथवा धातुवादकी क्रियायें सिद्धहों ॥ ३८५ ॥

३८६ सिद्धवटी

शुद्धं सूतं तथा गन्धं शृङ्गिकं सैन्धवं समम् ।
सद्योगोवत्सविष्ठाञ्च दूर्वाब्राह्मया विमर्दयेत् ॥ १७३६ ॥
गुटिका बदराकारा भक्षिता रोगनाशिनी ।
किराताद्रिगणेनेयं सन्निपातं नियच्छति ॥
कण्ठकुब्जं विशेषेण कण्ठामयविनाशिनी ॥ १७३७ ॥

नि र, र सु, र को, कण्ठकुब्जसन्निपाते ।

टि०—" किराततिक्तकफलाधुपलम्यकरीशटीकलिङ्गकिरिलामपाकट्वलदफलाम्भोधरं । त्रिफलामयकुष्ठकरानन्दुनीरम्बूर्वीरपि महोपधसौरस्य जयति कण्ठकुब्ज गदं ॥ " इति किरातादि गणः ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, वच्छनाग, सेंधानमक और तत्काल जन्मेहुए बछड़ेकीविष्टा समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर ब्राह्मीकेरससे १–२ दिन मर्दनकर बेरवरावर गोलियाबनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली किरातादिक्काथकेसाथदेनेसे सन्निपात, खासकर कण्ठकुब्ज और कण्ठरोगोंको यह नष्टकरतीहै। चिरायता, कुटकी, पीपल, इन्द्रजव, भटकटैया, कचूर, बहेड़ा, देवदारु, हर्रे, मिर्च, कायफल, नागरमोथा, अतीस, आंवले, पोहकरमूल, चित्रक, काकड़ासींगी, अडूसा येसब समभागलेकर जवकुट बनाकर रक्खे । इसमेंसे १–१ तोलेका चतुर्भागावशिष्ट क्वाथ बनाकर १॥ माशे सोंठका प्रक्षेपदेकर पिलावे यह किरातादिक्वाथहै ॥ ३८६ ॥

३८७ सिद्धसावरयोगः

मृताभ्रं विंशतिपलं मृतलोहस्य पञ्चकम् ।
गन्धकं चेपुपलिकं त्रिभि द्विगुणमाक्षिकम् ॥१७३८॥
पथ्या शतपलं योज्यं धात्रीपलशतद्वयम् ।
सर्वमेकत्र तच्चूर्णं जम्बीरै मर्दयेद्दिनम् ॥ १७३९ ॥

भृङ्गीपुनर्नवाद्रावैः पातालगरुडीरसैः ।
भल्लातवह्निकोरण्टा हस्तिशुण्डी तु लाङ्गली॥१७४०॥
क्षीरिणी जलकुम्भी च प्रत्येकं प्रत्यहं द्रवैः ।
भावयेन्मर्दयेदित्थं मध्वाज्याभ्यां विलोडयेत्॥१७४१॥
स्निग्धभाण्डे स्थितं खादेन्नित्यं निष्कद्वयं द्वयम् ।
सिद्धसावरयोगोऽयं त्रिदोषार्शांसि नाशयेत्॥१७४२॥

यो. म , र. का., र. को., अर्शोऽधिकारे ।

भाषा—अभ्रकभस्म २० पल, लोहभस्म और शुद्धगन्धक ५-५ पल, शुद्धसोनामाखी ६० पल, हर्रे १०० पल, आंवले २०० पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर जभीरी, भंगरा, पुनर्नवा, पातालगारुडी, भिलावा, चित्रक, कटसरैया, हाथीशुण्डी, कलिहारी, खिरनी, जलकुम्भी इनप्रत्येकके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर मधु और घी उचितमात्रामें मिलाकर घीके वर्तनमें रखछोड़े। इसमेंसे ८-८ माशे प्रतिदिन उचितानुपानकेसाथ-लेनेसे त्रिदोपजववासीर नष्टहोताहै ॥ ३८७ ॥

३८८ सिद्धसूतरसः

पत्रीकृतं शुद्धसूतं सुवर्णं रौप्यमेकतः ।
मुक्ताफलं यवक्षारं तोलैकैकं प्रकल्पयेत् ॥ १७४३ ॥
रक्तोत्पलदलद्रावै मर्दयेत्पिष्टिकाकृतिम् ।
षड्गुणं गन्धकं दत्त्वा मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥ १७४४ ॥
क्षिप्त्वा काचघटीमध्ये सन्निरुध्य त्रियामकम् ।
सिकताख्ये पचेच्छीते सिद्धसूतन्तु भक्षयेत ॥१७४५॥
पञ्चरक्तिप्रमाणेन मुशलीशर्करान्वितम् ।
शुक्रवृद्धिं करोत्येष ध्वजभङ्गञ्च नाशयेत् ॥ १७४६ ॥
दुर्बलं वपुरत्यर्थं बलयुक्तं करोत्यसौ ।
मुद्गगर्भं घृतं क्षीरं शालयः स्निग्धमामिषम् ।
पारावतस्य मांसञ्च तित्तिरिश्च सदा हितः ॥ १७४७॥

भै र., र क., ध्वजभङ्गे, र. सु. वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्धपारा, सुवर्ण और चादीकेवर्क, मोती, यवक्षार १-१ तोलालेकर पिष्टी बनाय लालकमलकेफूलोंकेरससे १-२ दिन मर्दनकर ६ गुना गन्धक डालकर दोदिन मर्दनकर सुखाकर ६-७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें डालकर वालुका-यन्त्रमें रख ४ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकाल कर रखछोड़े। इसमेंसे ५-५ रत्ती मुशली और शक्करकेसाथ-देनेसे शुक्रहानि, ध्वजभङ्ग, अत्यन्तकृशता, इनसवको यह नष्ट-करताहै । घृतयुक्तमूग, दूध, सफेदचावल, स्निग्धमास, कबूतर और तीतरका मास हितकरहै ॥ ३८८ ॥

३८९ सिद्धाभ्रकरसः (लघ्वादिः)

समांशं रसगन्धाभ्रं दरदञ्च विशेषितम् ।
लोहखल्वे विनिःक्षिप्य गव्याज्येन समन्वितम् १७४८
मर्दकेनाऽपि लौहेन मर्दयेद्दिवसत्रयम् ।
द्रोणीचुल्ल्यां न्यसेत्खल्वं साङ्गारायां प्रयत्नतः १७४९
इति सिद्धरसेन्द्रोऽयं लघुः सिद्धाभ्रकोमतः ।
वल्लतुल्योरसोजीरैः वारिणा सहितःप्रगे ॥ १७५० ॥
पीतो हरति वेगेन ग्रहणीमतिदुस्तराम् ।
अतिसारं महाघोरं सातिसारं ज्वरन्तथा ॥ १७५१ ॥
पाचनो दीपनो हृद्यो गात्रलाघवकारकः ।
नागार्जुनेन कथितः सद्यः प्रत्ययकारकः ॥ १७५२ ॥

र को , र. चं., र सु. ग्रहण्याम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और रूमी शिंगरिफ, अभ्रकभस्म सब समभागलेकर गायका घी डालकर लोहेके तप्तखल्वमें ३दिनतक मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा २ माशेजीरेमें मिलाकर जलकेसाथ प्रातःकाललेनेसे भयङ्कर संग्रहणी, अतिसार, ज्वरातिसार इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ३८९ ॥

३९० सिद्धामृतरसः

सौराष्ट्र्याश्च त्रयो भागा भागैकं स्वर्णगैरिकम् ।
चूर्णं कृत्वा माषमात्रं गोदुग्धस्यानुपानतः ॥ १७५३ ॥
प्रभातकाले संसेव्यमम्लतैलादि वर्जयेत् ।
शिरोभ्रमं शिरोरोगमम्लपित्तं विनाशयेत् ॥ १७५४ ॥
सर्वान् पित्तभवान्रोगान्नाशयेन्नाऽत्र संशयः ।
सिद्धामृतरसः ख्यातः पूज्यपादेन निर्मितः ॥ १७५५॥

रसायनसं , अम्लपित्ते ।

भाषा—भुनीफिटकड़ी ३ भाग, सोनागेरू १ भागलेकर १-२ पहर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ माशा प्रातःकाल गोदुग्धकेसाथ देनेसे शिरोभ्रम, शिरोरोग, अम्लपित्त, पित्तज समस्त उपद्रव इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ३९० ॥

३९१ सिद्धेश्वररसः (महदादिः) १

शुद्धं सूतं शिलां ताप्यं मृताभ्रं मर्दयेत्समम् ।
जातीफलं लवङ्गैले प्रसूनं तद्द्विभागिकम् ॥ १७५६ ॥
चूर्णयेत्सर्वमेकत्र रसः सिद्धेश्वरो महान् ।
द्विगुञ्जं भक्षयेत्क्षौद्रैरनुपानमथोच्यते ॥ १७५७ ॥
पटोलद्विनिशानिम्बतिक्तकोशातकीवचाः ।
पथ्यां यष्टिं समं क्वाथं वस्त्रपूतं तदाहरेत् ॥ १७५८ ॥
क्वाथपादयुतं चाज्यं पचेदाज्यावशेषकम् ।
एतदाज्यं पलार्द्धन्तु ह्यनुपानञ्च कुष्ठनुत् ॥ १७५९ ॥
लेपं सिद्धरसेनैव सुप्तस्थाने नियोजयेत् ।
तत्पृष्ठे लशुनं पिण्डं बद्ध्वा स्फोटः प्रजायते ॥
पुनर्लेपं पुनर्बद्ध्वा विनश्येत्सुप्तिमण्डलम् ॥ १७६० ॥

र का , कुष्ठाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और मैनसिल, सोनामाखी और अभ्रकभस्म १-१ भाग, जायफल, लौंग, इलायची, आककी जड़की छाल २-२ भागलेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय शीशीमें रखछोड़े । अथवा आककीजड़कीछालकेक्वाथ अथवा स्वरसमें १-२ दिन घोटकर २-२ रत्तीकी गोलियाबनाकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती मधुकेसाथदेक

पटोलपत्र, हल्दी, दारुहल्दी, नीमकीछाल, कड़वीतरोईकेफल अथवा बीज, वच, हर्रे, मुलहठी सब समभागलेकर जवकुट चूर्णकर चौगुनेपानीमें पादावशेषक्वाथकर चतुर्थांश गायकाघी डालकर पकावे। घी वाकीरहनेपर उतारकर छानले। इसमेंसे आधापल ऊपर पिलानेसे सुप्त और मण्डलकुष्ठ नष्टहोतेहैं। सुप्त और मण्डलस्थानमें लशुनकेरसमें मिलाकर इसरसकालेपकरे और ऊपरसे लशुनकाकल्कवांधे। ऐसे वारम्वारकरनेसे कुष्ठस्थानमें फोड़ाहोकर अच्छा होजायगा ॥ ३९१ ॥

३९२ सिद्धेश्वररसः (द्वितीयः)

नागं वङ्गं भस्मसूतं लोहं ताम्रं समं समम्।
हालाहलं त्रिभागं स्यादेकीकृत्य विचूर्णयेत् ॥१७६१॥
आटरूपाग्निनिर्गुण्डीमहाराष्ट्रीपुनर्नवैः।
धत्तूरविजयामुण्डीसमुद्रशोषजैरपि ॥ १७६२ ॥
मत्स्यमाहिषमायूरच्छागवाराहसम्भवैः।
पित्तैः समस्तैर्व्यस्तैर्वा भावयेच्च भिषग्वरः॥१७६३॥
गुञ्जामात्रप्रयोगेण चार्द्रकस्वरसेन तु।
रसः सिद्धेश्वरो नाम सन्निपातकुलान्तकः ॥१७६४॥

र. क. यो., सन्निपाते।

भाषा—नाग, वङ्ग, लोह, ताम्र और पारदभस्म १–१ भाग, शुद्ध वछनाग ३ भागलेकर वारीकचूर्णकर अड़ूसा, चित्रक, निर्गुण्डी, मराठी, पुनर्नवा, धतूरा, भाग, गोरखमुण्डी और समुद्रशोषकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर मछली, भैंसा, मोर, वकरा और सूअरकेपित्तोंसे १–१ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै ॥ ३९२ ॥

३९३ सिन्दूरभूषणरसः (प्रथमः)

अभ्रकं रससिन्दूरं विद्रुमं मौक्तिकन्तथा।
ग्रन्थिकं टङ्कणञ्चैव समभागं विनिक्षिपेत् ॥ १७६५ ॥
मातुलुङ्गरसेनैव मर्दितं त्रिदिनं भवेत्।
मधुना सेवयेन्नित्यं कुष्ठाष्टादशकामलाः ॥ १७६६ ॥
विंशतिं श्लेष्मरोगांश्च चत्वारिंशच्च पित्तजान्।
अशीतिं वातजान्रोगान्हन्ति शूलशतत्रयम् ॥ १७६७॥
प्रमेहान्विंशतिं हन्यात्षण्ढोऽपि पुरुषायते।
वालो वाऽपि च वृद्धो वा गर्भिणी वापि सेवयेत्।
सिन्दूरभूषणो नाम रेवणासिद्धभाषितः ॥ १७६८ ॥

रसायनस., वै चि (ल), रसायने।

टि०—रसायनसमुच्चये द्वितीयस्थाने विद्रुममौक्तिकस्थाने गन्धकग्रन्थिकौ नियोज्य धत्तूरस्वरसैश्च भावना दत्वा पाठान्तरं प्रकल्पितो दृश्यते।

भाषा—अभ्रकभस्म, रससिन्दूर, प्रवाल और मोतीकीभस्म, गठिवन, भुनासुहागा सव समभागलेकर विजोरेकेरससे ३ दिनतक मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ देनेसे १८ प्रकारके कुष्ठ, कामला, २० प्रकारके कफरोग, ४० पित्तरोग, ८० वातरोग, ३०० शूल, २० प्रमेह, नपुंसकता इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

३९४ सिन्दूरभूषणरसः (द्वितीयः)

वैक्रान्तं जातरूपञ्च वज्रविद्रुममौक्तिकम्।
भुजङ्गमभ्रकं कान्तं रससिन्दूरकं क्रमात् ॥ १७६९ ॥
पञ्चचैकैकभागाः स्युश्चतुर्भागास्तथाऽपरे।
जातीपुष्परसै रक्तागस्त्यपुष्पेक्षुवालकैः ॥ १७७० ॥
वरीलामज्जवाराहीहिमशाल्मलिवारिभिः।
प्रत्येकैश्च दिनं मर्द्यं माषमात्रन्तु सेवयेत् ॥ १७७१ ॥
दृष्टमुष्णादिकं योज्यं कुष्ठाऽष्टादशकामलाः।
विंशतिं श्लैष्मिकान्रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् १७७२
अशीतिं वातजान्रोगान् हन्ति शूलशतत्रयम्।
प्रमेहार्शो महाव्याधीन्सन्निपातांस्त्रयोदश ॥ १७७३ ॥
अतिसारभवान्रोगांश्छ्लेष्मपाण्डुज्वराञ्जयेत्।
द्वन्द्वोत्थञ्च त्रिदोषोत्थं राजरोगभयङ्करम् ॥ १७७४ ॥
वन्ध्यापि लभते पुत्रं षण्ढोऽपि पुरुषायते।
प्रदरं सर्वग्रन्थींश्च नाशयेद्गलरोगकम् ॥ १७७५ ॥
वालवृद्धादिभिः सेव्यं गर्भिणीभि विशेषतः।
तत्तद्रोगानुपानञ्च हितं पथ्यञ्च दीयते ॥
सिन्दूरभूषणो नाम रेवणासिद्धभाषितः ॥ १७७६ ॥

र क यो सर्वरोगे।

भाषा—वैक्रान्त ५ भाग, सुवर्ण और हीरा १–१ भाग, प्रवाल, मोती, नाग, अभ्रक, कान्त इनकीभस्में और रससिन्दूर ४–४ भाग लेकर वारीकचूर्णकर चमेली और लालअगस्त्यकेफूल, ईख, सुगन्धवाला, शतावर, खस, वाराहीकन्द, कपूर, सेंमलकामुसला इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर उड़दवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली गरमपानी अथवा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे १८ प्रकारकेकुष्ठ, कामला, २० प्रकारकेकफरोग, ४० पित्तरोग, ८० वातरोग, ३०० शूल, प्रमेह, ववासीर, १३ सन्निपात, अतिसार, पाण्डु, ज्वर, द्वन्द्वोत्थ अथवा त्रिदोषज भयङ्कर राजरोग, वन्ध्यापन, नपुंसकत्व, प्रदर, सवप्रकारकीगांठें, गलरोग, गर्भिणीकेरोग, इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ३९४ ॥

३९५ सिन्दूरभूषणरसः (तृतीय·)

सुवर्णं रससिन्दूरं कर्पूरञ्चाहिफेनकम्।
कर्षमानं पृथङ्मोचसारैलावंशरोचनाः ॥ १७७७ ॥
कर्षद्वन्द्वं पृथक्सर्वं मुस्ताक्वाथेन भावयेत्।
द्विगुञ्जां वटिकां कृत्वा दापयेत्कुटजाम्भसा ॥१७७८॥
नाशयेदतिसारांश्च विसूचीग्रहणीगदान्।
वलवर्णाग्निजननो नाम्ना सिन्दूरभूषणः ॥ १७७९ ॥

नृ. क, अतिसारे।

भाषा—सुवर्णभस्म, रससिन्दूर, शुद्धकपूर और अफीम १–१ कर्ष, मोचरस, इलायची, वंशलोचन २–२ कर्ष लेकर

वारीकचूर्णकर नागरमोथेकेक्काथसे १–२ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली कुरैयाकी छालके काढ़ेके साथ देनेसे अतिसार, हैज़ा, ग्रहणी, वल–वर्ण और अग्निकी मन्दता इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ३९५ ॥

३९६ सिन्दूरभूषणरसः (चतुर्थः)

शुद्धं सूतञ्च सिन्दूरं पलैकैकं विमर्दयेत् ।
वासारसेन यामैकं तेन कुर्याच्च चक्रिकाम् ॥ १७८० ॥
सुपक्वां कारयेन्मूषामुत्तानां द्वादशाङ्गुलाम् ।
तन्मध्ये गन्धकं शुद्धं क्षिपेत्पलचतुष्टयम् ॥ १७८१ ॥
पूर्वोक्तां चक्रिकां तत्र धृत्वा लिप्त्वा पुटेल्लघु ।
जीर्णे गन्धे तमुद्धृत्य चक्रिकां तां विचूर्णयेत् ॥ १७८२ ॥
चूर्णाद्दशगुणं योज्यं मृतलोहञ्च मर्दयेत् ।
लशुनेन दशांशेन चणमात्रा वटीः किरेत् ॥ १७८३ ॥
वातपाण्डुहरः सिद्धो रसः सिन्दूरभूषणः ।
पिवेच्चानु ह्यपामार्गस्यैरण्डस्य च मूलिकाम् ॥
तक्रैः पिष्ट्वाऽथ कर्षैकां हन्ति पाण्डुं सकामलम् १७८४

र र स., र चं., र.र., र. सु., व. रा., र. का., वै. चि., र. को कामलापाण्ड्वधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और रससिन्दूर १–१ पललेकर एकपहर अडूसेकेरससे घोटकर चक्रिका वनाय १२ अङ्गुलकी खड़ी मूषामें रख ४ पल गन्धक डालकर लघुपुटकी आंचदे । गन्धक-जीर्ण होनेपर चक्रिकासे दशगुनी लोहभस्म मिलाकर दशांश ल्हसनका कल्क मिलाय घोटकर चनेप्रमाण गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली खाकर अपामार्ग अथवा एरण्डकी-जड़ १–१ कर्ष छाछमें पीसकर पीनेसे वातपाण्डु और कामला नष्टहोतीहै ॥ ३९६ ॥

३९७ सिन्दूरयोगः

सिन्दूरं कानकं वीजं विजयेक्षुरवीजकम् ।
जातीफलं जातिपत्री कटुशिग्रुमफेनकम् ॥ १७८५ ॥
समुद्रशोषसंयुक्तं लवङ्गैश्च युतं तथा ।
भावयेद्विजयाक्वाथैश्छायाशुष्कां कृतां वटीम् ॥
खादेच्च रक्तिकां नित्यं शुक्रस्तम्भः प्रजायते ॥ १७८६ ॥

ध., वाजीकरणे ।

भाषा—रससिन्दूर, शुद्ध धतूरेकेवीज, भाग, तालमखाना, जायफल, जावित्री, कड़वेसहिजनकीछाल, अफीम, समुद्रशोष, लौंग सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर भागके स्वरससे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाय छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शुक्रका स्तम्भन करतीहै ॥ ३९७ ॥

३९८ सिन्दूरादिवटी

सिन्दूरं गोस्तनी क्षौद्रं भक्ष्यते मासपञ्चकम् ।
असृग्दरास्थिप्रदरं नाशमायाति निश्चितम् ॥ १७८७ ॥

व. रा., प्रदरे ।

भाषा—रससिन्दूर २ रत्ती, आवजोश (वड़ीद्राक्ष) और मधु २॥–२॥ माशे मिलाकर प्रतिदिन खाकर दूधपीनेसे रक्त और अस्थिप्रदर नष्टहोतेहैं ॥ ३९८ ॥

३९९ सिंहनादरसः (प्रथमः)

लोहपात्रे शुद्धगन्धे द्राविते तत्र निक्षिपेत् ।
शुद्धं सूतं समं चाल्यं व्याघ्रीद्रावं द्वयोः समम् ॥
निर्गुण्डयुत्थं करञ्जोत्थं तुल्यं द्रावं विनिक्षिपेत् ।
पचेन्मृद्वग्निना तावद्यावच्छुष्कं द्रवत्रयम् ॥ १७८९ ॥
विषं पादयुतं चूर्ण्यं सिंहनादोत्तमो रसः ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सन्निपातज्वरान्तकम् ॥ १७९० ॥
अनुपानैः पिवेत्क्वाथं कण्टकार्याः सपुष्करम् ।
गुडूचीनागरं युक्तमरुचौ श्वासकासयोः ॥ १७९१ ॥

र. को., र. सं., चि. र भ., र र., र. क. ल., र. क, र का., रसायनसं., सन्निपाते ।

टि०—कुत्रचिद् व्याघ्रीस्थाने भार्ङ्गी नियोजिता । र. क. ल. नारसिंहरस इति नाम । र. का मेघनादरस इति नाम ।

भाषा—लोहेकेपात्रमें शुद्धगन्धक डालकर गलावे । गलजानेपर वरावरका पारा डालकर चलावे । एकजीवहोनेपर दोनोंकी वरावर भटकटैयाका स्वरस डालकर चलावे । सूखनेपर उतनाही निर्गुण्डी और करञ्जका स्वरस क्रमसे डालकर चलावे । रससूखनेपर चतुर्थांश शुद्धवछनाग डालकर उतारले और १–२ दिन मर्दनकर रखलेवे । इसमेंसे १–१ रत्ती मधुवगैरहके साथ चटाकर भटकटैयाकेक्काथमें पोहकरमूलका प्रक्षेप देकर पिलानेसे सन्निपात नष्टहोताहै । गिलोय और सोंठकेक्काथकेसाथ लेनेसे अरुचि, श्वास और कास नष्टहोतेहै ॥ ३९९ ॥

४०० सिंहनादरसः (भुवनेश्वरः) २

शुद्धं सूतं विषं गन्धं समं मणिशिलारसम् ।
दन्तीवीजं समं खल्वे मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥ १७९२ ॥
कारवल्लीरसैः सम्यक् पुटपाके च योजयेत् ।
उद्धृत्य चूर्णयेत्खल्वे द्वियामं चानुपानतः ॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं विलोमवातनाशनम् ॥ १७९३ ॥

व. रा, वै. चि., विलोमवाते ।

टि०—वैद्यचिन्तामणौ द्वितीयस्थाने (ज्वराऽधिकारे) गौरीपाषाणमत्रञ्च विष मणिशिलारसमित्याकारको विशेषोऽस्ति । नाम च भुवनेश्वर इति स्थापितम् । अत्यन्तोत्कटवीर्यसम्पादनेच्छा चेत्तर्हि अग्निन्नेवरसे गौरीपाषाणभ्रे निक्षिप्य रस सम्पाद्यतामन्यथा तु यथावस्थित एव-योग श्रेयानिति सुधीभिराकलनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग, गन्धक, मैनसिल, खपरिया जमालगोटा सव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर दोदिनतक-करेलेके रससे मर्दनकर गोलावनाय एरण्डवगैरहके पत्तोंसे लपेट पुटपाककरे । स्वाङ्गशीतल होनेपर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह विलोमवातका नाशकरताहै ॥ ४०० ॥

४०१ सिंहप्रतिपालनम्

सूतं गन्धकवत्सनाभगरलं चैकैकभागान्वितं,
सर्वं हंसपदीद्रवेण मिलितं गुञ्जैकमात्रं भजेत्।
तैलाभ्यङ्गजलोपचारसहितं पथ्यञ्च दध्योदनं,
नानादोपसमुद्भवान्विजयते सिंहप्रतीपालनम् १७९४

व रा., ज्वराधिकारे।

टि०—यद्यपि तृतीयमर्वसुन्दरस्याऽप्यस्मिन्नेव रसेऽन्तर्भावं कर्तुमुचितं तथाऽप्यस्य रसस्य गरलयुक्ततयाऽतितीक्ष्णवीर्यत्वादद्वयोरपि स्वतन्त्रतयैव पाठौ गृहीतौ। अमृतपाले तु ताम्रयुक्ततया स्वतन्त्रता सुतरामेवाऽस्तीति विद्वद्भिराकलनीयम्।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, वछनाग और सर्पविष समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर हंसराजकेरससे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेकर तैलाभ्यङ्गकराके मस्तेपर ठंढेजलकी धारा देवे। अत्यन्त भूख लगनेपर दहीमातका भोजन करावे। इससे नानातरहके दोषोंसे जायमान ज्वर नष्टहोतेहैं॥ ४०१॥

४०२ सिंहशार्दूलरसः

सुवर्णं रजतं कान्तं ताम्रञ्च त्रपु सीसकम्।
भस्मीकृत्य च तत्सर्वं क्रमवृद्धया समांशकम् १७९५
व्योमसत्त्वभवं भस्म सर्वैस्तुल्यं प्रकल्पयेत।
कज्जलीं सूतराजस्य सर्वैरेतैः समांशिकाम् ॥१७९६॥
प्रद्राव्य लोहभस्मादि सर्वं तत्र विनिक्षिपेत्।
काष्ठेनालोड्य तत्सर्वं सद्रवं हि समाहरेत ॥१७९७॥
ततो विचूर्ण्य तत्सर्वं सप्तधा परिभावयेत्।
अङ्कोलीबीजसम्भूतक्काथलेहेन यत्नतः॥ १७९८॥
रुद्ध्वं तदन्धमूपायां सर्वं संस्वेदयेच्छनैः।
इतिसिद्धो रसेन्द्रोऽयं चूर्णितः पटगालितः॥१७९९॥
कान्तपात्रस्थितं रात्रौ जलैस्त्रिपलसंयुतैः।
वल्लद्वयमितः प्रातः पातव्यो मेहरोगिणा॥ १८००॥
मृगचारिमृगेन्द्रेण मेहव्यूहविनाशनः।
निर्दिष्टोऽयं रसश्चैव शार्दूल इति नामतः॥ १८०१॥
दीपनः पाचनो रुच्यो ग्रहणीपाण्डुनाशनः।
आमघ्नो रुचिकृत्सर्वरोगघ्नो योगसंयुतः॥ १८०२॥

र. को, प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—सुवर्ण, रजत, कान्त, ताम्र, वङ्ग, नाग इनकीभस्में क्रमवृद्धभागसे लेकर सबकीबराबर अभ्रकसत्त्वभस्म मिलाकर सबकी बराबर शुद्धपारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीको घीपुतीहुई कड़ाहीमें धरकेकोयलोंपर गलाकर समस्तको मिलाकर उतारले और घोटकर कज्जली बनाले। फिर इसको अङ्कोलकीमज्जाकेक्वाथकेघनसे ७ दिन घोटकर गोलाबनाय अन्धमूषामें बन्दकर भूधरयन्त्रमें स्वेदनकरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर चूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे ६–६ रत्तीकीमात्रा कान्तपात्रमें रातभर रक्खेहुए ३ पल जलकेसाथ प्रातःकालदेनेसे समस्तप्रमेहोंको यह नष्टकरताहै। यह दीपन और पाचनहै, भ्रहणी, पाण्डु और आमको नष्टकरताहै॥ ४०२॥

४०३ सीसरसायनम्

द्रुतद्रावं महाभारं छेदे कृष्णं समुज्ज्वलम्।
पूतिगन्धं बहिः कृष्णं शुद्धं सीसमतोऽन्यथा॥१८०३॥
अत्युष्णं सीसकं स्निग्धं तिक्तं वातकफापहम्।
प्रमेहतोयदोषघ्नं दीपनं चामवातनुत्॥ १८०४॥
सिन्धुवारजटाक्वाथे हरिद्राचूर्णकं क्षिपेत्।
द्रुतनागञ्च निर्गुण्ड्यास्त्रिवारं निक्षिपेद्रसे॥ १८०५॥
नागः शुद्धो भवेदेवं मूर्च्छास्फोटादि नाचरेत्।
तिर्यगाकारचूल्ल्यां तु तिर्यग्वक्त्रं घटं क्षिपेत्॥१८०६॥
तद्वक्त्रञ्च विना सर्वं गोपयेद्यत्नतो मृदा।
भ्राष्ट्रयन्त्राभिधे तस्मिन्यन्त्रे सीसं विनिक्षिपेत् १८०७
पलविंशतिसम्मानमधस्तीव्रानलं क्षिपेत्।
द्रुते नागे क्षिपेत्सूतं शुद्धं कर्षमितं शुभम्॥ १९०८॥
विमृद्य निक्षिपेत्क्षारमेकैकं हि पलं पलम्।
अर्जुनाख्यस्य वृक्षस्य महाराजतरोरपि॥ १८०९॥
दाडिमस्य मयूरस्य क्षिप्त्वा क्षारं पृथक् पृथक्।
एवं विंशतिरात्राणि पचेत्तीव्रेण वह्निना॥ १८१०॥
विघट्टयन् दृढं दोर्भ्यां दर्व्या चाथ प्रयत्नतः।
रक्तं तज्जायते भस्म कपोताभं विवर्जयेत्॥ १७११॥
नागं दोषविनिर्मुक्तं जायते तु रसायनम्।
हतमुत्थापितं सीसं दशवारेण शुद्ध्यति॥ १८१२॥
तन्मृतं सीसकं सर्वदोषमुक्तं रसायनम्।
एवं नागोद्भवं भस्म ताप्यभस्मार्द्धभागिकम्॥१८१३॥
पादं पादं क्षिपेद्भस्म शुल्वस्य रजतस्य च।
कान्ताभ्रसत्त्वयोश्चापि स्फटिकस्य पृथक्पृथक्१८१४
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य पुटेत्तत्त्रिफलाम्भसा।
त्रिंशद्वनगिरीन्द्रैश्च त्रिंशद्वारं विचूर्ण्य तत्॥ १८१५॥
व्योषवेल्लकचूर्णैश्च समांशैः सह योजयेत्।
मध्वाज्यसहितं हन्ति प्रलीढं वल्लमात्रया॥ १८१६॥
अशीतिं वातजान्रोगान्धनुर्वातान्विशेषतः।
कफरोगानशेषांश्च मूत्ररोगांश्च सर्वशः॥ १८१७॥
श्वासं कासं क्षयं पाण्डुं श्वयथुं शीतकज्वरम्।
ग्रहणीमामदोषञ्च वह्निमान्द्यञ्च दुर्जयम्॥
सर्वान्गुदजदोषांश्च तत्तद्रोगानुपानतः॥ १८१८॥

र चू., वातव्याधौ।

भाषा—जल्दी पिघलनेवाला, अत्यन्तवज़नदार, काटनेमें उज्ज्वल, दुर्गन्धयुक्त इसतरहका सीसा कार्यक्षम होताहै। सीसा अत्यन्त गरम, स्निग्ध और तिक्तरसयुक्त होताहै। वात, कफ, प्रमेह, जलदोष, मन्दाग्नि और आमवातको नष्टकरताहै। निर्गुण्डीकी जड़केक्वाथमें हलदीकाचूर्ण डालकर नागको गलाकर ३ वार बुझानेसे मूर्च्छा और स्फोट नहीं करताहै। टेढ़ेचूल्हेमें टेढ़ा घड़ारख गोवरसे तमामको ढकदे केवल मुंह उघाड़ा रहनेदे। इसमें २० पल शुद्धसीसेको डालकर तीक्ष्ण अग्निजलावे। गलजानेपर १ पल शुद्धपारा डालदे और अर्जुन, अमिलतास, अनार,

अपामार्ग इनकाक्षार १–१ पल लेकर थोड़ा थोड़ा डालकर लोहेकीकड़छीसे घोटे। ऐसे २० दिनरात कड़ी आंचदेकर मर्दनकरे। इसतरहकरनेसे लालरङ्गकी भस्म होगी। कपोतवर्ण हो तो उसे न लेवे। इसको मित्रपञ्चकके योगसे उत्थापितकर फिर पूर्ववत् भस्मकरे। ऐसे १० वारकरनेसे यह समस्तदोषोंसे निर्मुक्त सीसरसायन तैयारहोगी। यह भस्म १ भाग, सुवर्णमाक्षिकभस्म आधाभाग, ताम्र, रजत, कान्त और अभ्रकसत्त्व, स्फटिकमणि इनकीभस्मे प्रत्येक चतुर्थांश डालकर त्रिफलाकेक्काथसे एकदिन घोटकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर ३० जङ्गलीकण्डोंकी आंचदे। इसतरह ३० आंचें देकर इसमें त्रिकटु और विडङ्गका समभागचूर्ण मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती मधु और घीकेसाथ देनेसे ८० प्रकारके वातरोग, खासकर धनुर्वात, कफरोग, मूत्ररोग, श्वास, कास, क्षय, पाण्डु, शोथ, शीतज्वर, ग्रहणी, आमदोष, दुर्जय मन्दाग्नि, समस्त उदररोग इनसवको यह नष्टकरतीहै ॥ ४०३ ॥

४०४ सुखभेदीरसः

रसं गन्धं विषञ्चैव हरितालं मनःशिला ।
टङ्कणं हिङ्गुलञ्चैव टङ्कं टङ्कं पृथक् पृथक् ॥ १८१९ ॥
मरिचञ्च त्रिटङ्कं स्याज्जेपालं टङ्कषोडश ।
खल्वे चैतानि निक्षिप्य छागपित्तेन मर्दयेत् ॥ १८२० ॥
कार्या स्विन्नचणाकारा वटिका परमोत्तमा ।
विरेकाय प्रदातव्या शीतञ्चानुपिबेज्जलम् ॥
तावद्विरेचयेज्जन्तुं यावदुष्णं न सेवयेत् ॥ १८२१ ॥

र. र. कौ., विरेचने ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, वछनाग, हरिताल, मैनसिल, सुहागा और शिंगरिफ ४–४ माशे, मरिच १२ माशे, शुद्धजमालगोटा ४ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाय एकदिन वकरेके पित्तसे घोटकर भीगेहुए चने प्रमाण गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली ठंढेजलकेसाथ लेनेसे रेचनहोगा, उष्णोपचारकरनेसे वन्दहोजायगा ४०४

४०५ सुखविरेचनरसः (प्रथमः)

शङ्खं दहेद्धोलिकया तु घर्मे
त्वगङ्कुरैर्वर्जितदन्तिवीजम् ।
सम्यग्विशुद्धञ्च नवं नियोज्यम्
भागाः शराः सूतलवौ वलेश्च ॥ १८२२ ॥
विमर्दितः स्यात्सुखरेकनाम्ना
गुञ्जात्रयं साज्यमनुष्णदेयम् ।
न ग्लानिदुःखं न च कष्टदाहो
ज्वरं निहन्याद्विषमं नवं वा ॥ १८२३ ॥
आमानिलं पाण्डुजलोदरार्ति
संसेवितोऽयं जयतीह रेकः ।
तक्रेण भक्तञ्च घृतेन चास्मि-
न्रोगानुरूपं प्रविचार्य देयम् ॥ १८२४ ॥

र. शं., विरेचने ।

भाषा—कण्डोंमें रखकर कीहुई शङ्खकी सफेदभस्म और शुद्ध जमालगोटे ५–५ भाग, शुद्ध पारा और गन्धक २–२ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर मधुकेयोगसे ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली ठंढेघीकेसाथ देनेसे विनाकिसीउपद्रवके रेचनहोताहै। विषम अथवा नवीनज्वर, आमवात, पाण्डु, जलोदर इनसवको यह नष्टकरताहै। अत्यन्तभूखलगनेपर घृतकेसाथभातदेकर छाछपिलावे। अन्यरोगोंमें औचिती देखकर अनुपानवगैरहकी योजनाकरे ॥ ४०५ ॥

४०६ सुखविरेचनरसः (द्वितीयः)

त्रिकटु त्रिफला सूतं सिन्धुटङ्कणगन्धकम् ।
सर्वैः समानं जेपालं राजयोग्यं विरेचनम् ॥ १८२५ ॥
न ग्लानिदुःखं गुदकण्ठदाहो-
ज्वरं निहन्याद्विषजं विकारम् ।
आध्मानिलं पाण्डुजलोदरार्ति
संसेवितोऽयं जयतीह वेगात् ॥
तक्रेण पथ्यञ्च घृतेन चास्मिन्रो-
गानुरूपं प्रविचार्य देयम् ॥ १८२६ ॥

र. मु., विरेचने ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, शुद्धपारा, सेंधानमक, सुहागा और गन्धक समभाग लेकर सवकीवरावर शुद्धजमालगोटा मिलाय १–२ दिन मर्दनकर अदरखके रसवगैरहमें १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे विषमज्वर, आध्मान, पाण्डु, जलोदर इनसवको यह नष्टकरताहै। गुदा और कण्ठका दाह तथा ग्लानि नहीं होती। अत्यन्तभूखलगनेपर घी और छाछकेसाथ भात देवे ॥ ४०६ ॥

४०७ सुखविरेचनरसः (तृतीयः)

रसः क्षारलोहं गदं गन्धकञ्च
विमर्द्यापि जैपालतैलेन यामम् ।
गुडच्छन्नगुञ्जामिता स्याच्च मात्रा
सदामान्तरेची सुखप्राग्विरेकः ॥ १८२७ ॥

वै. वि., टो., रसायनसं., विरेचने। टोडरानन्दे सुखातिरेक इतिनाम ।

भाषा—शुद्धपारा, यवक्षार, लोहभस्म, कुठ, शुद्धगन्धक समभागलेकर वारीकपीस जमालगोटेके तैलसे एकपहर मर्दनकर १–१ रत्तीकी मात्रा गुड़में लपेटकर देनेसे आमान्त रेचन होताहै॥

४०८ सुखातिरेकीरसः

गन्धानलव्योपरसान्सभृङ्गा-
न्स्वाकल्करान् स्फाटिकटङ्कणाढ्यान् ।
सुखर्पराफेनयुतान्समांशा-
न्द्विवत्सनाभान्दिनसप्तकं तत् ॥ १८२८ ॥
रसेन भृङ्गस्य विभाव्य शुष्कं
श्लक्ष्णं विचूर्ण्यार्धममुष्य चूर्णम् ।

अपक्वसम्बन्धिनि मृत्युनाम्नि
वल्लं प्रदद्यान्नवकेऽनवे वा ॥ १८२९ ॥
नेपालकुष्ठस्य जलेन सार्धं
विभाव्य कृत्वा वटिका प्रदेया।
सुपक्वदोषे गजभाजि पथ्यं
दध्योदनं शर्करया विमिश्रम् ॥ १८३० ॥
तापोद्गमेऽस्मिन्विदधीत शीत-
क्रियाः शुभा भोज्यविलासरम्याः।
यः पूजयेदीशमिमश्च वैद्य-
स्तस्यज्वरै र्नोभिभवः कदाचित् ॥ १८३१ ॥

र.ल, विरेचने।

भाषा—शुद्धगन्धक, चित्रक, त्रिकटु, शुद्धपारा, भंगरा, अकलकरा, फटकड़ी, भुनासुहागा, शुद्धखपरिया और अफीम १–१ भाग, शुद्धवछनाग २ भागलेकर ७ दिनतक भगरेके रससे भावनादेकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्तीकीमात्रा भगरेकेरस अथवा जलकेसाथदेनेसे अपरिपक्वदोष, नवीन अथवा पुरानाज्वर नष्टहोताहै। जमालगोटा और कुठके जलसे भावना-देकर गोलीवनावे और ८ दिनवीतजानेपर ज्वरकी परिपकाव-स्थामें इसकी १ गोली देकर दही और भातखानेको देवे। दैव-संयोगसे ज्वर वढजायतो शीतोपचार करे। जो वैद्य ईश्वरभक्ति-परायणहोताहै उसका ज्वरोंसे पराजय नहींहोता ॥ ४०८ ॥

४०९ सुगन्धमोदकः

भागद्वयं हरीतक्यास्तथा विभीतकस्य च।
एलापञ्चत्रिभागानि वानरीवीजकान्यथ ॥ १८३२ ॥
कर्चूरं ग्रन्थिभारङ्गी वेदभागाश्च रेणुकाम्।
वत्सनाभं जटामांसीं सोमराजीश्च नेत्रकम् ॥१८३३॥
चन्दनं मागधीमूलं गुग्गुलुं पञ्चपञ्चकम्।
जातीफलं चागुरुश्च चित्रमूलं त्रयांशकम् ॥ १८३४ ॥
सुगन्धि जीरकं कुष्ठं गुल्मगुल्मश्च योजयेत्।
यष्टीमधु द्विभागश्च तत्समाश्च वचां शुभाम् ॥ १८३५॥
दिग्भागं पद्मकिञ्जल्कं समुद्रशोषलोचनम्।
दारुकं वीजभागैकं वाह्लीकं त्रिगुणं स्मृतम् ॥ १८३६ ॥
रसगन्धकभागैकं किञ्चिच्चन्द्रश्च भावयेत्।
एतत्समं भागचूर्णं वस्त्रपूतश्च कारयेत् ॥ १८३७ ॥
गुडेन मर्दयेद्धीमान्वटकं कोलमात्रकम्।
एकैकं भक्षयेत्प्राज्ञस्तैलाम्लादीन्विवर्जयेत ॥ १८३८ ॥
वातक्षयाश्मरीकुष्ठगुल्माजीर्णविसूचिकाः।
अरुचिं पाण्डुरोगञ्च गण्डमालां भगन्दरम् ॥ १८३९॥
शीतज्वरं सन्निपातं वमनं विषमज्वरम्।
उन्मादं ग्रहणीरोगं पीनसं मूत्रकृच्छ्रकम् ॥ १८४० ॥
हिक्कां लूतां जृम्भणञ्च व्यथां विस्फोटकादिकम्।
सर्वरोगांश्च वै हन्ति वलवीर्यकरं परम् ॥ १८४१ ॥
रोगी वाप्यथवाऽरोगी योगिनां कल्पसाधनम्।
सुगन्धमोदकः सोऽयमसङ्ख्यातगुणप्रदः ॥ १८४२ ॥
पूर्वोपार्जितभाग्यो यो लभते परमौषधम्।
सर्वग्रन्थार्थतत्त्वानि निष्पीड्यानन्दकारकः ॥
कृपया सर्वलोकानां ज्ञानज्योतिरिमं व्यधात् ॥१८४३॥

र.ज्ञा, रसायने।

भाषा—हर्रे और वहेड़ा २–२ भाग, इलायची ५ भा, केवाचकेवीज ३ भा, कचूर, गठिवन, भारङ्गी और रेणुका ४–४ भाग, शुद्धवछनाग, जटामासी, वावची, सुगन्धवाला, सफेदचन्दन, पिपलामूल और गूगल ५–५ भा., जायफल, अगर, चित्रकमूल ३–३ भा, कपूरकाचरी, कालाजीरा, कुठ, गुल्म ? (आवला और लालकनेरकीजड़), मुलहठी, वच २–२ भा., पद्मकेशर १० भा., समुद्रशोष २ भा, देवदारुकेवीज १ भा, हींग ३ भा., शुद्ध पारा गन्धक और कपूर १–१ भाग लेकर सवका कपड़छानचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सबकेवरावर गुडकी चाशनीमें डालकर ८–८ माशेकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली रोग अथवा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे वातक्षय, कुष्ठ, गुल्म, अजीर्ण, हैजा, अरुचि, पाण्डु, गण्डमाला, भगन्दर, शीतज्वर, सन्निपात, वमन, विषमज्वर, उन्माद, ग्रहणी, पीनस, मूत्रकृच्छ्र, हिचकी, मकड़ीकाविष, जंभाई, अङ्गोंका टूटना, विस्फोट, वल और वीर्यका अभाव इनसवको यह नष्टकरताहै। तैल और खटाईका परित्यागकरे ॥ ४०९ ॥

४१० सुदर्शनरसः (प्रथमः)

मूर्च्छितं मर्दयेत्सूतं दध्ना घर्मे दिनावधि।
तच्छुष्कं निष्कषट्कं तु सिन्दूरं निष्कमात्रकम् १८४४
यवक्षारस्य निष्कैकमम्लपर्णीनिशाद्रवैः।
दिनानां त्रितयं मर्द्य लेह्यं मध्वाज्यसंयुतम् ॥ १८४५ ॥
रसः सुदर्शनाख्योऽसौ ग्रहणीरोगशान्तिकृत्।
धातकीकुसुमं शुण्ठीपाठाविल्वरसाञ्जनैः ॥ १८४६ ॥
मुस्ता चातिविषा तिक्ता कुटजस्य फलत्वचम्।
तुल्यं क्षौद्रैः पिवेच्चानु कर्षं तण्डुलवारिणा ॥ १८४७ ॥

र को, र का, ग्रहणीरोगे।

भाषा—शुद्धपारेको धूपमें वैठकर दहीकेसाथ दिनभर घोटे। सूखनेपर १॥ कर्षपारेमें ४–४ माशे रससिन्दूर और यवक्षार डालकर अम्लोनिया और हल्दीके अङ्गस्वरससे ३–३ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु और घीकेसाथलेकर धायकेफूल, सोंठ, पाठा, वेलकीजड़, रसौत, नागरमोथा, अतीस, कुटकी, कुरैयाकीछाल, इन्द्रजव समभागका १ तोला चूर्ण लेकर चावलके धोवनकेसाथ लेनेसे सङ्ग्रहणी नष्टहोतीहै ॥ ४१० ॥

४११ सुदर्शनरसः (द्वितीयः)

त्रिद्व्येकाणि च शिग्रुकङ्गुतिमिजैस्तैलैश्च पित्तैरुग्रह-
मामृद्यार्करसामृतं द्विवलियुक्तं वालुकायन्त्रगम्।

मण्डूकीविषमुष्टिशिग्रुपयसा पक्त्वा त्र्यहं स्वेदयेत्,
दद्यारे लघुतरसुदर्शनरसः स्यात्सन्निपातादिषु१८४८

टी०, सन्निपाते ।

भाषा—ताम्रभस्म, शुद्ध पारा और वछनाग १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर सहिजनकेरससे ३ दिन, मालकांगनीकेतैलसे २ दिन और मछलीकेपित्तसे १ दिन मर्दनकर आतशीशीशीमें भरके ३ दिनकी आचदे । स्वाङ्गशीतल्होनेपर मण्डूकपर्णी, कुचिला और सहिजनकेरसोंसे ३–३ दिन स्वेदनकर १–१ रत्तीकी गोलियां वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे सन्निपात नष्टहोताहै ॥ ४११ ॥

४१२ सुदर्शनरसः (तृतीयः)

रसस्य भाग एकः स्याद्गन्धकस्य चतुर्दश ।
मर्दयेन्मासमेकन्तु सहदेव्या रसैर्द्वयम् ॥ १८४९ ॥
विषात् त्र्यंशैश्च गोजिह्वारसैः षोडशभावनाः ।
तालकांशौ द्विशः कूष्माण्डोत्थैः पञ्चदशापि च१८५०
भागमेकं सोममलं पञ्चाशद्भृङ्गजै रसैः ।
टङ्कणस्य त्रयो भागा लिङ्गिन्याः षड्रसभावनाः॥१८५१॥
हिडिम्ब्यास्त्रिर्नीलकण्ठीरसैर्द्वादश भावनाः ।
जैपालात्सप्त भागाश्च शिवनेत्रत्रिभावनाः ॥ १८५२ ॥
आकल्लकवचाभार्ङ्गीकणामरिचनागरम् ।
जीरके च लवङ्गानि एकैकांशानि सर्वतः ॥ १८५३ ॥
धूर्तच्छदरसैर्भाव्यं सप्तविंशतिभावितम् ।
छायाशुष्कांश्च गुटिकां गुञ्जामात्रांश्च कारयेत् १८५४
अयं सुदर्शनो नाम रसः सर्वगदापहः ।
तत्तद्रोगानुपानेन विशेषाज्ज्वरजित्परः ॥ १८५५ ॥

र क्रा, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग और गन्धक १४ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर १ महीनेतक सहदेवीकेरससे मर्दनकर दोभाग शुद्धवछनागमिलाय वछनागसेतिगुनी जंगलीगोभीकेरससे १६ भावनाएं देवे । फिर २ भाग शुद्धहरिताल मिलाकर सफेदकोंहलेकेरसकी १५ भावनाएं देकर १ भाग शुद्धसोमलमिलावे और भंगरेकेरसकी ५० भावनाएं देवे । फिर ३ भाग सुहागा मिलाय शिवलिङ्गीकेरसकी ६ भावनाएं देकर ३ भाग शुद्धमैनसिल मिलाकर नीलकण्ठीकेस्वरसकी १२ भावनाए देवे । इसकेवाद ७ भाग शुद्ध जमालगोटा मिलाकर रुद्राक्षके रसकी ३ भावनाए देकर अकलकरा, वच, भारङ्गी, पीपल, मरिच, सोंठ, जीरा, लवङ्ग १–१ भाग डालकर धतूरेकेपत्तोंकेरसकी २७ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाय छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे समस्तज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४१२ ॥

४१३ सुधाकररसः (प्रथमः)

सिन्दूराभ्रकहेमानि मौक्तिकं त्रिफलाम्भसा ।
शतपुत्रीरसेनापि मर्दयेत्सप्तसप्तधा ॥ १८५६ ॥
ततो रक्तिमितां कुर्याद्वटीं छायाविशोषिताम् ।
एकैकां योजयेत्तान्तु यथादोषानुपानतः ॥ १८५७ ॥
रसः सुधाकरः सोऽयं हन्ति दाहं वलाधिकम् ।
प्रमेहानपि वातास्रं वलशुक्रकरः परः ॥ १८५८ ॥

आ. वि., दाहाधिकारे ।

भाषा—रससिन्दूर, अभ्रक, सुवर्ण और मोती इनकीभस्में समभागलेकर त्रिफला और शतावरके स्वरसोंसे ७–७ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे दाह, प्रमेह, वातरक्त, वल और शुक्रकीहानिको यह नष्टकरताहै ॥ ४१३ ॥

४१४ सुधाकररसः (द्वितीयः)

तारं ताम्रं रसं तालं स्वर्णं मौक्तिकविद्रुमम् ।
अम्लवेतसजम्बीररसैर्मर्दनमाचरेत् ॥ १८५९ ॥
शर्करानवनीताभ्यां लीढं शोषक्षयापहम् ।
करोति दिवसांस्तीव्रं सर्वाहारक्षमाऽनलम् ॥१८६०॥
ददाति परमं पुंसां वलं नागवलोपमम् ।
परमं वृष्यमायुष्यं नेत्र्यश्च मुखदार्ढ्यकृत् ॥
सुधाकर इति ख्यातो रसः परमदुर्लभः ॥ १८६१ ॥

वा., वाजीकरणे ।

भाषा—रजत, ताम्र, शुद्ध पारा, हरिताल, सुवर्ण, मोती, प्रवाल इनकीभस्में समभागलेकर अम्लवेत और जंभीरीकेरससे १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शक्कर और मक्खनकेसाथदेनेसे ३ दिनमें यह जठराग्निको प्रचण्डकरताहै । धातु, आयु और नेत्रोंकीज्योतिको वढ़ाताहै ॥ ४१४ ॥

४१५ सुधानिधिरसः (प्रथमः)

गन्धं सूतं माक्षिकं लोहचूर्णं
सर्वं घृष्टं त्रैफलेनोदकेन ।
लौहे पात्रे गोपयःस्थश्च कृत्वा
रात्रौ दद्याद्रक्तपित्तप्रशान्त्यै ॥ १८६२ ॥

यो. र, नि र, ना वि., र चि., वै चि., रसचि., र. प्र., र. सं., र. का., ध, यो म, र सि, र. कौ., र. चं., रसायनसं., वै क., र शं., भै सा., र. क, र सु, र दी., भै. र., चि. सा, रक्तपित्ते।

टि०—ना वि, र दी, भै सा एषु त्रिफलाम्बुना पिष्ट्वा भूधरयन्त्रे पक्त्वा पुनरपि पिष्ट्वा लोहपात्रे वरानीरे गोमयवह्नौ पक्त्वा गुञ्जैकमान समुद्दिष्टम् । टोडरानन्दे माक्षिक निष्कास्य यवतिक्तानीरै र्मृष्ट्वा भूधरे पाक विधाय वल्लमान मध्वाज्याभ्यां दानं विहितम् । राजवृक्षजलेन वा माध्वीकात्क्वराजलेन वेति विकल्पो विहित । अस्य निघण्टुरत्नाकरे गन्धकादिप्राशनमिति नाम स्थापितम् तत्कस्माद्गृहीतमिति तु न ज्ञायते ततोऽप्यधिकमाश्चर्यमेतद्यत्सुधानिधेरपि तत्र पाठो लिखितोऽस्ति, एवमेव कृत्वा वैद्यबन्धुभिरेकैकस्य पाठस्य वहवः पाठाः प्रकल्पिता सन्ति ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, पारा, सोनामाखी, लोहभस्म सब समभागलेकर त्रिफलाकेकाथसे लोहेके पात्रमें नीलवर्णकज्जली

वनाय त्रिफलाका क्वाथ मिलाकर दिनभर रखछोड़े। रात्रिको दूधमें मिलाकर पीनेसे रक्तपित्त शान्त होताहै ॥ ४१५ ॥

४१६ सुधानिधिरसः (द्वितीयः)

धान्यकं वालकं मुस्तं विश्वं सिन्धुं समांशकम्।
मण्डूरं द्विगुणं दत्त्वा भावनास्तु चतुर्दश ॥ १८६३ ॥
गोमूत्रं केशराजश्च शोथघ्नी भृङ्गराजकः।
निर्गुण्डी भेकपर्णी च रसैरेषां विभाव्य च ॥ १८६४ ॥
माषद्वयं प्रयुञ्जीत तक्रेण सह बुद्धिमान्।
केशराजरसै र्वापि भोजनं लवणं विना ॥ १८६५ ॥
तक्रेण भोजयेदन्नं पाने तक्रञ्च दापयेत्।
कामलाज्वरशोथघ्नो वह्निसन्दीपनः परः ॥
ग्रहणीपाण्डुरोगघ्नः सर्वव्याधिविनाशनः ॥ १८६६ ॥

भै. र , शोथे

भाषा—धनियां, सुगन्धवाला, नागरमोथा, सोंठ, सेंधा-नमक, सब समभागलेकर सबसे दूना मण्डूर मिलाकर गोमूत्र, कालाभंगरा, पुनर्नवा, भगरा, निर्गुण्डी, मण्डूकपर्णी इनके स्वरस तथा छाछकी २-२ भावनाएं देकर २-२ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली छाछ अथवा कालेभगरेके रससे देवे। नमकका परित्यागकरे और तक्रकेसाथ अन्न देवे। इसकेसेवनसे कामला, ज्वर, शोथ, मन्दाग्नि, ग्रहणी, पाण्डु येसव नष्टहोतेहैं ॥ ४१६ ॥

४१७ सुधानिधिरसः (तृतीयः)

गन्धकं पारदं चाभ्रमेलाग्रन्थिककेशरम्।
समभागयुतं खल्वे जीरकेण च मर्दितम् ॥ १८६७ ॥
काचकूप्यां निवेश्याथ द्वियामं तु तुपाग्निना।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य द्विगुञ्जं भक्षयेत्सदा ॥
शर्करामधुसंयुक्तमम्लपित्तविकारनुत् ॥ १८६८ ॥

व रा., वै चि , अम्लपित्ते।

भाषा—शुद्धगन्धक, पारा, अभ्रकभस्म, इलायची, गठिवन, नागकेशर, सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर जीरेकेस्वरससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर ३-४ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भर दोपहर तुषाग्निमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती शक्कर और मधुकेसाथदेनेसे अम्ल-पित्त नष्टहोताहै ॥ ४१७ ॥

४१८ सुधानिधिरसः (चतुर्थः)

रसगन्धौ समौ शुद्धौ दन्तीक्वाथेन भावयेत्।
जम्बीरस्य रसेनैव ह्यार्द्रकस्य रसेन च ॥ १८६९ ॥
मातुलुङ्गस्य तोयेन तस्य मज्जारसेन च।
पश्चाद्विशोष्य सर्वांस्तांष्टङ्कणञ्चावचारयेत् ॥ १८७० ॥
देवपुष्पं घाणमितं रसपादं मृताऽमृतम्।
माषमात्रञ्च तत्सर्वं नागरेण गुडेन वा ॥ १८७१ ॥
सर्वारोचकशूलार्ति सामवातं सुदारुणम्।
विसूचीं चाग्निमान्द्यञ्च भक्तद्वेषञ्च दारुणम् ॥
रसोऽयं वारयत्याशु केसरी करिणं यथा ॥ १८७२ ॥

ध , र च , र सं., र क , र. सु , भै. र , अरोचके। भै. र रसकेसरीति नाम।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जली कर दन्ती, जभीरी, अदरख, विजोरा, विजोरेकेवीजोंकीमज्जा इनके द्रवोंकी १-१ भावनादेकर भुनासुहागा और लौंग ५-५ भाग डालकर पारदसे चतुर्थांश सोमलभस्म मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे उड़दवरावर मात्रा सोंठ अथवा गुड़केसाथ देनेसे अरुचि, शूल, भयङ्कर आमवात, हैजा, मन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

४१९ सुधापिप्पलीयोगः

चपलायाः प्रस्थमेकं स्नुहीक्षीरेण भावयेत्।
एकविंशतिधा पूर्वं तदर्द्धं मलमायसम् ॥ १८७३ ॥
तदर्द्धं दरदं क्षिप्त्वा त्र्यमेकत्र भावयेत्।
गोजिह्वाशालमलीक्षीरगोक्षुरेक्षुरसैः पृथक् ॥ १८७४ ॥
श्लक्ष्णचूर्णं पुनः कृत्वा मात्रां युञ्ज्याद्यथावलम्।
क्षीरश्चानुपिवेत्तस्य मधुकेन समायुतम् ॥ १८७५ ॥
सुधापिप्पलिको योगो जीर्णज्वरमपोहति।
मेदो दोषोदरं शोथक्षयक्षयकरः परः ॥
क्षीणान्धातून्वर्धयति प्रोक्तश्चात्रेयसूरिणा ॥ १८७६ ॥

र प , जीर्णज्वरे।

भाषा—एकप्रस्थपीपलके चूर्णको थूअरकेदूधमें २१ भाव-नाए देकर मण्डूरभस्म ८ पल और शुद्धशिगरिफ ४ पल मिला-कर १-२ दिन शुष्कमर्दनकर वनगोभी, सेमल, दूध, गोखरू, ईख, इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ भावना देकर १-१ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मुलहठीडालकर पकाएहुए दूधकेसाथलेनेसे जीर्णज्वर, मेद, शोथ, क्षय, धातुक्षीणता इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४१९ ॥

४२० सुधासाररसः

पृथक्पलिकगन्धाश्मसूतसञ्जातकज्जलीम्।
प्रद्राव्य निक्षिपेद्व्योम पलिकं गतचन्द्रिकम् ॥ १८७७ ॥
काष्ठेनालोड्य तत्सर्वं क्षिपेत्कुटजपत्रके।
पुनः सञ्चूर्ण्य यत्नेन भावयेत्तदनन्तरम् ॥ १८७८ ॥
वालतिन्दुफलद्रावैः क्षीरै रौदुम्वरैस्तथा।
अरलुत्वग्रसैश्चापि दुग्धिनीस्वरसैस्तथा ॥ १८७९ ॥
पुटपकस्य वालस्य दाडिमस्य रसैः शुभैः।
कृष्णकाम्बोजिकामूलरसैः कुटजवल्कलैः ॥ १८८० ॥
तुल्यांशं विश्वगान्धारीचूर्णं द्विपलिकं क्षिपेत्।
मुस्तावत्सकदीप्याग्नि मोचसारं सजीरकम् ॥ १८८१ ॥
वत्सनाभञ्च कर्षांशं प्रत्येकं तत्र निक्षिपेत्।
विचूर्ण्य भावयेद्भूयः शुण्ठीक्वाथेन सप्तधा ॥ १८८२ ॥
इत्थं सिद्धो रसः पिष्टः करण्डे विनिवेशितः।
सुधासार इति ख्यातः सुधासारसमद्युतिः ॥ १८८३ ॥

दीपनः पाचनो ग्राही हृद्यो रुचिकरस्तथा ।
दोषत्रयातिसारञ्च दुर्जयं भेषजान्तरैः ॥ १८८४ ॥
आमञ्चैवामरक्तञ्च ज्वरातीसारमेव च ।
सातिसारां विसूचीञ्च प्रतिबध्नाति तत्क्षणात्॥१८८५॥
मान्यमानव्यतिक्रान्तिरिव पुण्यफलोदयम् ।
पिष्ट्वाविश्वाब्दकल्केन विधाय खलु चक्रिकाम्॥१८८६॥
निक्षिपेत्स्वेदनीयन्त्रे पक्त्वाऽर्द्धघटिकावधि ।
आछाद्य तज्जलैरेवं सम्प्रमर्द्य हरेद्रसम् ॥ १८८७ ॥
सुधासाररसं तत्र क्षिप्त्वा धान्यकसम्मितम् ।
पूर्वोदितेषु रोगेषु प्रदद्यीत भिषग्वरः ॥ १८८८ ॥
गोतक्रेणाजदध्ना वा पथ्यं देयं हितं मितम् ।
वालरम्भाफलं गुर्वीफलं विल्वफलं तथा ॥
आम्रपेशी च मधुकं वृन्ताकञ्च प्रशस्यते ॥१८८९ ॥
सर्वातिसारं ग्रहणीञ्च हिक्कां
मन्दाग्निमानाहमरोचकञ्च ।
निहन्ति सद्यो विहितामपाके
द्वित्रिप्रयोगेण रसोत्तमोऽयम् ॥ १८९० ॥

र र.स, र.क्रो., र सु, र र.कौ, अतिसारे।

भाषा—१–१ पल शुद्ध गन्धक और पारेकी नीलवर्ण कज्जली-कर घीपुतीहुईकढ़ाहीमें वेरकेकोयलोंपर गलाकर १ पल निश्चन्द्र-अभ्रकभस्म डालकर लकड़ीसे चलाकर एकजीवकरके गोवरपर रक्खेहुए कुँरैयाकेपत्तोंपर डालकर पर्पटी वनावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर तेंदकेकोमलफल, गूलरकादूध, सोनापाठा-कीछाल, दूधी, अनारका पुटपाक, कालीकम्वोईकीजड़, कुँरै-याकी छाल इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ भावनादेकर सोंठ और कुकरोंधेकीजड़काचूर्ण १–१ पल मिलावे। फिर नागरमोथा, इन्द्रजव, अजवाइन, चित्रक, मोचरस, जीरा और शुद्धवच्छनाग १–१ कर्ष मिलाकर सोंठकेकाढेसे ७ भावनाए देकर ३–३ रत्तीकीगोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली सोंठ और नागरमोथेके पुटपाककेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, हृद्रोग, अरुचि, योगान्तरसे दुःसाध्य त्रिदोषातिसार, आमा-तिसार, ज्वरातिसार, अतिसारयुक्तविसूचिका, ग्रहणी, हिचकी, आनाह, इनसवको यह नष्टकरताहै। वालक और वृद्धोंको धनिये-केवरावर मात्रा देना। गायकेतक्र अथवा दहीकेसाथ पथ्यदेना। कच्चा केला और वेल, सुपारी, अमचूर, मुल्हठी, वेंगन ये सव पथ्यहै ॥ ४२० ॥

४२१ सुप्तवातारिरसः

पिचुमात्राणि शुद्धानि वीजानि विषतिन्दुतः ।
वलिसूतौ विडङ्गञ्च यमानी त्र्यूषणं शटी ॥ १८९१ ॥
पलाशवीजं निर्गुण्डी मञ्जिष्ठा काकमाचिका ।
शङ्खपुष्प्यग्निसुरसे रसैरासां विभावयेत् ॥ १८९२ ॥
वल्लमानां वटीं कृत्वा निम्बकल्केन दापयेत् ।
मञ्जिष्ठादिकषायेण कौन्तीक्वाथेन वा बुधः ॥ १८९३ ॥
निहन्ति सुप्तिवातार्तिं ग्रहणीक्षयकामलाः ।
भूतोन्मादमपस्मारमपतन्त्रकमुद्धतम् ॥ १८९४ ॥

नू. क., वातव्याधौ ।

भाषा—शुद्ध कुचिला, गन्धक और पारा, विडङ्ग, अजवा-इन, त्रिकुटु कचूर, पलाशकेवीज, निर्गुण्डी, मजीठ, मकोय, येसव १–१ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर शङ्खपुष्पी, चित्रक और तुलसीके स्वरसोंसे १–१ भावना देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली निम्बकल्क, मञ्जिष्ठादि-क्वाथ अथवा रेणुकाके क्वाथकेसाथ देनेसे सुप्तवात, ग्रहणी, क्षय, कामला, भूतोन्माद, अपस्मार, अपतन्त्रक इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ४२१ ॥

४२२ सुरतानन्दरसः

भूतिं कृष्णाभ्रकस्य मृगमदसहितां हिङ्गुलश्चन्द्रकञ्च,
जातीसस्येन्द्रपुष्पं कनकदलयुतं मौक्तिकं तुल्यभागम्।
सम्मर्द्य नागवल्लीदलरससहितं वस्त्रमेकं भिषग्भि-,
र्मात्रा गुञ्जाद्वयी च घृतमधुसहिता सेवनीया सदैव ॥
स्निग्धान्नं भोजयित्वा घृतमधुसहितं धातुपुष्टिप्रदञ्च,
सद्यो यक्ष्मघ्नमेतत्सकलगदहरं कामवृद्धिं करोति ।
मत्तप्रौढाङ्गनानां निधुवनसमये कामगर्वापहारी,
शुद्धासृग्वृद्धिकारी सकलरसवरः सौरतानन्द एषः ॥
वृद्धोऽशीतिकभवति दृढयुवा वीर्यकान्ती विधत्ते,
राज्ञां कामान्धकारी सुरतसुखविधौ
कामिनीनाञ्च तद्वत् ॥ १८९६ ॥

रसायनसं., वाजीकरणे।

भाषा—अभ्रकभस्म, कस्तूरी, शिंगरिफ, कपूर, जावित्री-लौंग, सोनेकेवर्क, मोती सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पान-केरससे १ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें वनाकर रख-छोड़े। इनमेंसे १–१ गोली घृत और मधुकेसाथ लेकर स्निग्ध-भोजनकरनेसे धातुक्षीणता, राजयक्ष्म, षण्ढत्व, रक्तदोष इन-सवको यह नष्टकरताहै ॥ ४२२ ॥

४२३ सुरसुन्दरीवटी (प्रथमा)

अभ्रकं माक्षिकं वज्रं कान्तं हेम समं समम् ।
सर्वाणि समभागानि सूतयुक्तानि कारयेत् ॥ १८९७ ॥
गोलकञ्च ततः कृत्वा पक्वं निचुलवारिणा ।
ततस्तं पुटपाकेन स्तम्भयित्वा प्रयत्नतः ॥ १८९८ ॥
वाह्ये चास्या विलिप्यापि वक्त्रस्था गुटिकोत्तमा ।
स्तम्भयेच्छस्त्रसङ्घातं विषरोगांश्च नाशयेत् ॥१८९९॥
अब्देनैकेन वक्त्रस्था वयःस्तम्भं करोति च ।
वलीपलितहन्त्रीयं गुटिका सुरसुन्दरी ॥ १९०० ॥

भै र., र.र., ध, र चं, वाजीकरणे।

भाषा—अभ्रक, सोनामाखी, हीरा, कान्तलोह, सुवर्ण, इन-कीभस्में और अग्निस्थायी पारा समभागलेकर १ दिन शुष्कमर्द-नकर समुद्रफलकेरससे १–२ दिन मर्दनकर गोलावनाय पानोंमें

लपेटकर भूधरपुटकीआचदे। ऐसे जवतक पारा वंध न जाय तवतक आचें देतारहे। इसको केवल अथवा किसीचीजमें कवलितकर मुखमें रखनेसे शस्त्रसङ्घात और विषका आक्रमण नहीं होता। एकवर्षतक लगातार मुंहमें रखनेसे अवस्थाको स्तब्धकर वलीपलितको नष्टकरतीहै॥ ४२३॥

४२४ सुरसुन्दरीवटी (द्वितीया)

स्वर्णमेकं कान्तमेकं पञ्चतारं द्विपारदम्।
त्रिभागं व्योमसत्त्वं स्यात्षड्भागं शुल्वचूर्णकम् १९०१
सर्वमेतत्कृतं सूक्ष्मं तप्तखल्वे दिनत्रयम्।
मर्दयेदम्लवर्गेण दोलायन्त्रे सकाञ्जिके॥ १९०२॥
तद्गोलं त्रिदिनं पक्कं गुटिका सुरसुन्दरी।
जायते धारिता वक्त्रे वर्षान्मृत्युजरापहा॥
भूताङ्कवटमूलञ्च कर्षं क्षीरैः पिबेदनु॥ १९०३॥

र सं, र का, रसायने।

भाषा—स्वर्ण और कान्तलोह १–१ भाग, रजत ५ भाग., शुद्धपारा २ भाग, अभ्रकसत्त्व ३ भाग, शुद्धतावेकाचूरा ६ भाग लेकर सवको इकट्ठा मिलाय तप्तखल्वमें ३ दिन अम्लवर्गकेसाथ मर्दनकर गोलावनाय ४ तहकपड़ेमें वाधकर ३ दिन काञ्जीमें स्वेदनकरे। इसको १ वर्षतक मुखमें रखनेसे बुढ़ापे और मृत्युको यह दूरकरतीहै। कालीमुशली और पाषाणभेदकाचूर्ण १–१ कर्ष दूधकेसाथ लेवे॥ ४२४॥

४२५ सुरूपोरसः

रसं गन्धकं त्र्यूषणं नागपुष्पं
वरायुक्तमादौ वराजीवनेन।
सुमर्द्य नगे भावितं भृङ्गनीरै-
र्वटी माषमाना विधेया भिषग्भिः॥१९०४॥
जयेदग्निमान्द्यं कुरङ्गाश्वतापं
कफं वातमुन्मत्तभावं क्षणेन।
समस्तेन्दुरुग्वृन्दमक्षिप्रवाहं
स उक्तो रसाब्धौ सुरूपेतिनामा॥ १९०५॥

र. का., ज्वराधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, त्रिकटु, नागकेशर, त्रिफला सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय त्रिफला और भंगरेकेरससे ८–८ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, वात और कफज्वर, उन्माद, क्षय, नेत्ररोग इनसवको यह नष्टकरताहै॥ ४२५॥

४२६ सुरेन्द्राभ्रवटी

अभ्रं सहस्रशो दग्धं रसं दरदसम्भवम्।
केशराजाम्भसा शुद्धं गन्धकं हीरकन्तथा॥ १९०६॥
विद्रुमं मौक्तिकं हेम रौप्यं माक्षिकमेव च।
कान्तलोहञ्च सम्मर्द्य विधिना वह्निवारिणा॥ १९०७॥
वल्लमात्रां वटीं कृत्वा छायायां परिशोषयेत्।
एकैकां योजयेत्प्राज्ञो यथादोषानुपानतः॥ १९०८॥
क्लोमरोगविनाशाय वह्नेः सन्धुक्षणाय च।
न सोऽस्ति रोगो लोकेऽस्मिन्यमियं न विनाशयेत्॥
यो यः समाश्रयेद्व्याधिः क्लोमितं तमवेक्ष्य च।
क्रियां संसाधयेद्वैद्यो यथादोषं यथावलम्॥ १९१०॥
अनुग्राण्यन्नपानानि क्लोमामयनिपीडितः।
सेवेतोग्राणि सर्वाणि यत्नतः परिवर्जयेत्॥ १९११॥

भै. र, क्लोमरोगे।

भाषा—सहस्रपुटीअभ्रक, शुद्धपारा, भंगरेके रसमें शुद्धकियाहुआगन्धक, हीरा, प्रवाल, मोती, सुवर्ण, रजत, सोनामाखी, कान्तलोह इनकीभस्में सव समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय चित्रककेस्वरस अथवा क्वाथसे १–१ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे क्लोमरोग और मन्दाग्निको यह नष्टकरतीहै। क्लोमरोगीको सौम्य अन्नका सेवन करावे। तीक्ष्णवस्तुओंसे परहेजकरे॥ ४२६॥

४२७ सुलोचनाभ्रम्

पलं सुजीर्णं गगनन्तु वज्रकं
तेजोवती कोलमुशीरदाडिमम्।
धात्र्यम्ललोणी रुचकं पृथग्दिशा-
पलोन्मितं मर्दितमेव सेवितम्॥ १९१२॥
अरोचकं वातकफत्रिदोषजं
पित्तोद्भवं गन्धसमुद्भवं नृणाम्।
कासं स्वराघातमुरोग्रहं रुजं
श्वासं वलासञ्च यकृद्भगन्दरम्॥ १९१३॥
प्लीहाग्निमान्द्यं श्वयथुं समीरणं
मेहं भृशं कुष्ठमसृग्दरं कृमीन्।
शूलाम्लपित्तक्षयरोगमुद्धतं
सरक्तपित्तं वमिदाहमश्मरीम्॥
निहन्ति चार्शांसि सुलोचनाभ्रकं
बलप्रदं वृष्यतमं रसायनम्॥ १९१४॥

र सं., ध, र सु, अरोचके।

भाषा—निरुत्थवज्राभ्रकभस्म १ पल, तेजवलकीछाल, वेर, खस, अनार, आवले, अम्लोनिया और संचल १०–१० पल लेकर वारीक चूर्णकर एकदिन शुष्कमर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ माशे समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे अरुचि, त्रिदोषज–पित्तज और गन्धधूमज कास, स्वरभङ्ग, छातीका जकड़ना, श्वास, कफ, यकृत्, भगन्दर, प्लीहा, मन्दाग्नि, शोथ, वातरोग, प्रमेह, कुष्ठ, रक्तप्रदर, क्रिमि, शूल, अम्लपित्त, क्षय, रक्तपित्त, वमन, दाह, पथरी, ववासीर, इनसवको यह नष्टकरताहै॥ ४२७॥

४२८ सुवर्चलाद्यं लोहम्

सुवर्चला व्याघ्रनखं चित्रकं कटुरोहिणी ।
चव्यश्च देवकाष्ठश्च दीप्यकं लोहमेव च ॥
शोथं पाण्डुं तथा कासमुदराणि निहन्ति च॥१९१५॥

र सं., ध., र. सु , र. चि , शोथाऽधिकारे।

भाषा—सज्जी, व्याघ्रनख, चित्रक, कुटकी, चव्य, देवदारु, अजवाइन और लोहभस्म समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेमे शोथ, पाण्डु, कास और उदररोगोंको यह नष्टकरताहै॥

४२९ सुवर्णपत्ररसः

नागं सूतं गन्धकं वत्सनाभं
मर्द्यं वारा कन्यकाया दिनैकम् ।
गोलं कृत्वा निक्षिपेच्छराण्डमध्ये
संछाद्यं वै श्रावकेणापि सम्यक् ॥ १९१६ ॥
मुद्रां दत्त्वा भूतिसामुद्रकेण
यामं चैकं मन्दवह्नौ विपाच्य ।
वल्लश्चैकं भक्षितं क्षौद्रयुक्तं
यक्ष्माणं तन्नाशयेद्धि प्रसह्य ॥ १९१७ ॥

र.प्र सु , यक्ष्मणि।

टि०—सुवर्णाऽभावेपि सुवर्णपत्रेति नामकरणप्रयोजन न शायत इति विद्वद्भिराकल्नीयम्।

भाषा—नागभस्म, शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग, समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुंवारके रससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ४–५ कपड़मिट्टी देकर लवण अथवा भस्मयत्रमें रख एकपहरकी मन्दाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती शहदकेसाथलेनेसे राजयक्ष्म नष्टहोताहै ॥ ४२९ ॥

४३० सुवर्णपर्पटी (प्रथमा)

शुद्धं सुवर्णदलमष्टगुणेन शुद्धसूतेन-
पिण्डितमथो घसुभागभाजि ।
गन्धे द्रुते बदरवह्निषु लोहपात्रे दत्त्वा-
विलोड्य लघुलोहशलाकया तत् ॥ १९१८ ॥
मन्दं निरस्य सुरभीमलमण्डलस्थं
रम्भादले तदुपरि प्रणिधाय चान्यत् ।
रम्भादलं लघु नियन्त्र्य तदाददीत
शीतं सुवर्णरसपर्पटिकाभिधानम् ॥१९१९॥
पित्तोल्वणे तु सितया तुगयाऽथ वाते
श्लेष्मोल्वणे किल तुगामधुपिप्पलीभिः ।
क्षीणे विरेकिणि च शोषिणि मन्दवह्नौ
पाण्डौ प्रमेहिणि चिरज्वरिणि ग्रहण्याम् ॥
वृद्धे शिशौ सुखिनि राज्ञि तदेवमार्यै
भैषज्यमेतदुदितं हितमामयघ्नम् ॥ १९२० ॥

वै. क., र चं , रसायनसं , नि र., यो र , वृ. यो. त., रसायनसार, र सु., क्षयाऽधिकारे।

टि०—निघण्टुरत्नाकरे पिण्डितमथो इत्यत्र पिण्डितमय इति पाठ प्रकल्प्य पारदसमभागमयोऽपि विनियोजितम्। परन्तु बहुषु ग्रन्थेषु अथो इत्येव लाभात्तत्प्रमादादेवेति प्रतिभाति। किञ्च अयोग्रहणे अयसि गन्धके वा भागस्यानवस्था दुर्वारा स्यात्, अनुपानेन सूतसमत्वप्रकल्पन त्वगतेर्गतिरिति न सा भद्रा श्रेणीरितिदिक्। रसायनस., वै. चि , र च , र. कौ , टो , यो र , वृ यो त., र स., वै क , भै. र., र. सु , र क., नि. र , एषु ग्रन्थेषु चतुर्थांशसुवर्णदानेनाऽपि एक पाठ प्रकल्पितोऽस्ति। अत्र सुवर्णदाने कामचारो बोध्यः। पाठान्तर तु गौरवात्परित्यक्तम्। अत्र पाठे कुत्रचित्पारदाद्द्विगुण गन्धक नियुज्य कासे नियोग कृतोऽस्ति।

भाषा—आठभाग शुद्धपारेमें एकभाग सोनेकेवर्क १–१ करके मिलावे। फिर १–२ पहर घोटकर पिट्टी बननेपर नीबूकारस डालकर मर्दनकरे। रस कालाहोनेपर निकालदे, ऐसे जबतक कालिमा निकलतीरहे तबतककरे। पर इसबातका ध्यान रहे कि नीबूकेरसकेसाथ सुवर्णके वर्कोंका भाग न निकलजाय। निकलाहुआ मालूमपड़ेतो जलाकर शुद्धकरले। पारेको कपड़ेसे अच्छीतरह साफकरले पानीका भाग न रहे। फिर अठगुने शुद्धगन्धकको घीपुतीहुई कड़ाहीमें डालकर बेरके कोयलोंपर गलावे। गलजानेपर पारदपिष्टीको डालकर घोटे। एकजीवहोनेपर ताज़ेगोबरपर रक्खेहुए ताज़ेकेलेके पत्तोंपर डालकर दूसरेकेलेके पत्तोंसे दबाकर गोबरसे ढकदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्तीकी मात्रा क्रमवृद्धभागसे पित्ताधिक्यमें शक्कर, वाताधिक्यमें बसलोचन, कफाधिक्यमें बंसलोचन, मधु और पीपलकेसाथ देवे। इससे क्षीणता, दस्तकी अनियमितता, शोष मन्दाग्नि, पाण्डु, प्रमेह, जीर्णज्वर और ग्रहणी नष्टहोतीहै। वृद्ध, बालक और सुखी आदमीकेलिये १–१ रत्तीमात्रा काफीहै॥

४३१ सुवर्णपर्पटी (द्वितीया)

सुवर्णतारताम्राभ्रसत्त्वलोहामृतै र्युता ।
पादांशैस्तत्कृता ख्याता पर्पटी कथिता बुधैः॥१९२१॥
शुद्धगन्धककर्षैकं त्रिगुञ्जा रसपर्पटी ।
षण्मासाभ्यन्तरे चैषा वलीपलितनाशिनी ॥
संवत्सरं यदा सेव्या ज्वरं हन्ति न संशयः॥ १९२२ ॥

रससागर, रसायने।

भाषा—सुवर्ण, चादी, ताम्र, अभ्रकसत्त्व और लोह इनकीभस्में, शुद्धबछनाग ४–४ माशे, शुद्ध पारा और गन्धक १–१ कर्ष लेकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीकर घीपुतीहुईकड़ाहीमें बेरकेकोयलोंपर गलाकर सुवर्णादि सबचीजें मिलाकर लोहेकी शलाकासे चलावे। एकजीवहोनेपर प्रथम रसपर्पटीकीतरह पर्पटीबनाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती समय अथवा तत्तद्रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे ६ महीनेके अन्दर वलीपलितको नष्ट करतीहै। एकवर्षतकके सेवनसे बुढ़ापेको दूरकरतीहै ॥ ४३१ ॥

४३२ सुवर्णपर्पटी (तृतीया)

स्वर्णं रौप्यं रविगगनकं लोहसूतं समांशं,
मुक्ताभागं विमलवलिकं पारदाद्युग्मभागम् ।

मर्द्यं कन्दैः कदलिजनितैः शाल्मलीनां रसैश्च,
कन्याद्रावे मुनिदिनमथो वल्लयुग्मं निहन्यात् ॥
मेहं तापं मधुचपलया माससंसेवितोऽयं,
स्त्रीणां रोगानपि हरति युता पर्पटी काञ्चनीयम् १९२३

र. प, र प्र., र पा प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—सुवर्ण, रजत, ताम्र, अभ्रक, लोह, मोती इनसवकी भस्में १–१ भाग, शुद्ध गन्धक २ भा., पारा १ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर घीपुनीहुईकड़ाहीमें वेरके कोयलोंपर कज्जलीको गलाय सवचीजोंको मिलाकर गोवरपर रक्खेहुए केलेकेपत्तोंपर दवाकर पर्पटी तैयारकरे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर केला और सेंमलकन्द तथा घीकुंवारकेरसोंसे ७–७ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ अथवा मधु और पीपलकेसाथ एकमहीनेतक सेवनकरनेसे प्रमेह, ज्वर और स्त्रियोंके तमामरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ४३२ ॥

४३३ सुवर्णपर्पटी (चतुर्थी)

मृतेन सूतराजेन लोहपर्पटिका समा।
त्रिगुणं गन्धकं सूतात्सर्वं दिव्यौषधीद्रवैः ॥ १९२४ ॥
मर्दितं तद्दिनं रुद्ध्वा ध्मातो बद्धो भवेद्रसः।
तस्मिन्रसे मृतं स्वर्णं क्षिप्त्वा वद्धार्द्रकद्रवैः ॥१९२५॥
मर्द्य यामं विचूर्ण्याथ व्योषजीरकसैन्धवैः।
तुल्यः पूर्वरसस्तुल्यं वल्लमेकन्तु भक्षयेत् ॥ १९२६ ॥
जरामृत्यू निहन्त्यब्दाद्धेमपर्पटिका रसः।
अश्वगन्धासमां यष्टीं धात्रीफलरसैं दिनम् ॥
भावितं लेहयेत्क्षौद्रैः कर्षैकं क्रामणं परम् ॥ १९२७ ॥

रसायनसं, र. खं, रसायने। रसायनखण्डे हेमपर्पटक इति नाम

भाषा—पारदभस्म, लोहपर्पटी और शुद्धपारा १–१ भाग, शुद्धगन्धक ३ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर दिव्यौषधियोंके द्रवोंसे यथाशक्य १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय अन्धमूषामें धमनकरनेसे पारदवधेगा। इसमें एकभाग सुवर्णभस्म मिलाकर अदरखके रससे एकपहर घोटकर त्रिकटु, जीरा और सेंधानमक पूर्वरसकी वरावर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ लेकर असगन्ध और मुलहठी समभागलेकर आवलोंकेरससे ६–७ भावनाएं देकर इसमेंसे १–१ कर्ष मधुकेसाथ चाटनेसे रसका शरीरमें अनुक्रमणहोगा और इससे वलीपलितादिकका नाशहोकर दीर्घायुहोगा ॥ ४३३ ॥

४३४ सुवर्णवद्धरसः

लाङ्गल्या देवदाल्याश्च रसै मर्दितपारदः।
म्रियते स्वर्णपादेन चारितोऽथ समांशतः ॥ १९२८ ॥
रसेन मेलितः पश्चाद्विषतालकगन्धकैः।
धत्तूरवीजतैलेन मर्दितस्त्रिदिने सति ॥
गोमये पाचितो मूषामध्यस्थो वध्यते रसः ॥१९२९॥

यो. म, रसायनाऽधिकारे।

भाषा—करिहारी और वन्दालकेरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर चतुर्थांश अथवा समभाग सोनेके वर्कोंका जारणकर समभाग दूसरे शुद्धपारेमें मिलाकर वछनाग, हरिताल और गन्धक ये प्रत्येक पारेसे चतुर्थांश डालकर धतूरेकेवीजोंकेतैलसे ३ दिन मर्दनकर अन्धमूषामें वन्दकर लघुपुटकी आच दे तो इसकी गोली वंधजातीहै। इसको मुंहमें रखनेसे वलीपलितादिकका नाशहोकर दीर्घायु होताहै ॥ ४३४ ॥

४३५ सुवर्णभूपतिरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं मृतं शुल्वं तयोः समम्।
अभ्रलोहकयो र्भस्म कान्तभस्म सुवर्णजम् ॥ १९३० ॥
रजतञ्च विषं सम्यक् पृथक् सूतसमं भवेत्।
हंसपादीरसै मर्द्य दिनमेकं वटीकृतम् ॥ १९३१ ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य मृदा संलेपयेद्बहिः।
शुष्कां तां वालुकायन्त्रे शनै र्मृद्वग्निना पचेत् ॥१९३२॥
चतुर्गुञ्जमितं देयं पिप्पल्यार्द्रद्रवेण तु।
क्षयं त्रिदोषजं हन्ति सन्निपातांस्त्रयोदश ॥ १९३३ ॥
आमवातं धनुर्वातं शृङ्खलावातमेव च।
आढ्यवातं पङ्गुवातं कफवाताग्निमान्द्यनुत् ॥१९३४॥
कटीवातं सर्वशूलं नाशयेन्नात्र संशयः।
गुल्मशूलमुदावर्तं ग्रहणीमतिदुस्तराम् ॥ १९३५ ॥
प्रमेहमुदरं सर्वामश्मरीं मूत्रविड्ग्रहम्।
भगन्दरं सर्वकुष्ठं विद्रधिं महतीं तथा ॥ १९३६ ॥
श्वासं कासमजीर्णञ्च ज्वरमष्टविधन्तथा।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शिरोरोगञ्च नाशयेत् ॥१९३७॥
अनुपानविशेषेण सर्वरोगान्विनाशयेत्।
यथा सूर्योदये नश्येत्तमः सर्वगतन्तथा ॥
सर्वरोगविनाशाय सर्वेषां स्वर्णभूपतिः ॥ १९३८ ॥

नि. र, र सु, र च, रसायनस, व रा, वै चि., यो. र., र पा, क्षयाऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ भाग, ताम्रभस्म २ भाग, अभ्रक, लोह, कान्तलोह, सुवर्ण, रजत इनकीभस्में और शुद्धवछनाग १–१ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर, सवचीजें मिलाय हंसराजकेरससे एकदिन मर्दनकर फिरसे कज्जली वनाय ६–७ कपडमिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें वन्दकर वालुकायन्त्रमें रख एकदिनकी मन्दाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ रत्ती पीपल और अदरखकेसाथ देनेसे त्रिदोषजक्षय और १३ सन्निपातोंको यह नष्टकरताहै। तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे आमवात, धनुर्वात, शृङ्खलावात, ऊरुस्तम्भ, पङ्गुवात, कम्पवात, मन्दाग्नि, कटिवात, सवप्रकारके शूल, गुल्म, उदावर्त, भयङ्करग्रहणी, प्रमेह, उदररोग, सवप्रकारकी पथरी, मलमूत्रविवन्ध, भगन्दर, सवप्रकारकेकुष्ठ, वढाहुआ जहरवाद, श्वास, कास, अजीर्ण, ८ प्रकारकाज्वर, कामला, पाण्डु, शिरोरोग इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ४३५ ॥

४३६ सुवर्णयोगः (प्रथमः)

मन्त्रौषधसमायुक्तं संवत्सरफलप्रदम् ।
बिल्वस्य चूर्णं पुष्ये तु हुतं वारान्सहस्रशः ॥ १९३९ ॥
श्रीसूक्तेन नरः कल्ये ससुवर्णं दिनेदिने ।
सर्पिर्मधुयुतं लिह्यादलक्ष्मीनाशनं परम् ॥ १९४० ॥

सु. सं, रसायने ।

भाषा—बेलगिरीकाचूर्ण घृतमें मिलाय पुष्यनक्षत्रमें एकहज़ार आहुति श्रीसूक्तसे देकर अभिधारितकियेहुए बिल्वचूर्णको रखले। इसमेंसे १–१ तोला १ रत्तीसुवर्णभस्म मिलाकर घी और मधुकेसाथ एकवर्षभर लेनेसे अलक्ष्मीका नाशहोताहै ॥ ४३६ ॥

४३७ सुवर्णयोगः (द्वितीयः)

सुवर्णं पद्मबीजानि मधुलाजाः प्रियङ्गवः ।
गव्येन पयसा पीतमलक्ष्मी प्रतिषेधयेत् ॥ १९४१ ॥

सु सं., ग. नि., रसायने ।

भाषा—कमलगट्टा, धानकीखील और प्रियङ्गु समभाग लेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ तोला १ रत्तीसुवर्णभस्म मिलाकर मधुयुक्तगोदुग्धकेसाथलेनेसे अलक्ष्मीका नाशहोताहै

४३८ सुवर्णयोगः (तृतीयः)

नीलोत्पलदलकाथो गव्येन पयसा शृतः ।
ससुवर्णतिलैः सार्धमलक्ष्मीनाशनः स्मृतः ॥१९४२॥

सु. सं, रसायने ।

भाषा—१ से ३ रत्तीतकसुवर्णभस्म १ तोले कालेतिलोंकेसाथ मिलाकर सेवनकर नीलकमलकेफूल डालकर औटायाहुआदूध पीनेसे अलक्ष्मीका नाशहोताहै ॥ ४३८ ॥

४३९ सुवर्णयोगः (चतुर्थः)

गव्यं पयः सुवर्णञ्च मधूच्छिष्टञ्च माक्षिकम् ।
पीतं शतसहस्राभिहुतं युक्तरथं स्मृतम् ॥ १९४३ ॥

सु स, रसायने ।

टि०—अत्र मधूच्छिष्ट मिक्थकमस्ति, अस्य भक्षणविधानमन्यत्राऽदृष्टचरमस्ति, स्रोतोऽवरोधनकर्मणा मन्दाग्न्युत्पादकत्वाच्च न बुद्धयारूढ भवति तथापि सुवर्णयुक्तत्वादृषिवाक्यविशेषाच्च दत्त्वाऽनुभव करणीय इति भिषक्षु निवेदनम् । सिद्धसम्प्रदाये तु मद्युक्तसिक्थकतैलं निष्पाद्य ध्वजभङ्गादौ मर्दने भक्षणे च प्रयुज्यत इत्यपि न विस्मरणीयम् ।

भाषा—३ रत्ती सुवर्णभस्म अथवा अयस्कृति, गायकादूध, मोम और मधु मिलाकर एकसहस्रश्रीसूक्तसे अभिधारितकर उचितमात्रामेंलेनेसे दीर्घायुको प्राप्तहोताहै ॥ ४३९ ॥

४४० सुवर्णयोगः (पञ्चमः)

वचाघृतसुवर्णञ्च बिल्वचूर्णमिति त्रयम् ।
मेध्यमायुष्यमारोग्यपुष्टिसौभाग्यवर्द्धनम् ॥ १९४४ ॥

सु स., ग नि, रसायने ।

टि०—गदनिग्रहे बिल्व परित्यज्य मधुनावलेहनमुक्तं तत्र फल मृग्यम् ।

भाषा—वचाघृत, बेलकाचूर्ण १–१ तोला, सुवर्णभस्म १ से ३ रत्तीतक दूधकेसाथलेनेसे मेधा, आयु, आरोग्य, पुष्टि और सौभाग्यकी वृद्धिहोतीहै ॥ ४४० ॥

४४१ सुवर्णयोगः (षष्ठः)

मध्वामलकचूर्णन्तु सुवर्णमिति च त्रयम् ।
प्राश्यारिष्टगृहीतोऽपि मुच्यते प्राणसंशयात्॥१९४५॥

सु म, आ. प्र, रसायने ।

भाषा—मधु और आंवलेकाचूर्ण १–१ तोला, सुवर्णभस्म १ रत्ती मिलाकर लेनेसे उपस्थितारिष्टभी प्राणसंशयसे बचताहै ॥

४४२ सुवर्णयोगः (सप्तमः)

शतावरीघृतं सम्यगुपयुक्तं दिनेदिने ।
सक्षौद्रं ससुवर्णञ्च नरेन्द्रं स्थापयेद्वशे ॥ १९४६ ॥

सु. सं, रसायने ।

भाषा—शतावरीघृत १ तोला, मधु ६ माशे, सुवर्णभस्म १ रत्ती लेकर प्रतिदिन सेवनकरनेसे वलीपलितादिकसे निवृत्तहोकर दीर्घायुको प्राप्तहोताहै और राजाको वशमें करताहै ॥४४२॥

४४३ सुवर्णयोगः (अष्टमः)

गोचन्दना मोहनिका मधुकं माक्षिकं मधु ।
सुवर्णमिति संयोगः पेयः सौभाग्यमिच्छता ॥१९४७॥

सु सं, रसायने ।

भाषा—गोरोचन ३ रत्ती, मेंहदी और मुलहठी ३–३ माशे, सुवर्णमाक्षिकभस्म १ माशा, मधु १ तोला, सुवर्णभस्म १ रत्ती मिलाकर गोदुग्धकेसाथलेनेसे अलक्ष्मीका नाशहोताहै ४४३

४४४ सुवर्णयोगः (नवम.)

पद्मनीलोत्पलक्काथे यष्टीमधुकसंयुते ।
सर्पिरासादितं गव्यं ससुवर्णं सदा पिबेत् ॥ १९४८ ॥
पयश्चानुपिबेत्सिद्धं तेषामेव समुद्भवे ।
अलक्ष्मीघ्नं सदायुष्यं राज्याय सुभगाय च ॥१९४९॥
यत्र नोदीरितो मन्त्रो योगेष्वेतेषु साधने ।
शब्दिता तत्र सर्वत्र गायत्री त्रिपदा भवेत् ॥१९५०॥
पाप्मानं नाशयन्त्येता दद्युश्चौषधयः श्रियम् ।
कुर्युर्नागबलं चापि मनुष्यममरोपमम् ॥ १९५१ ॥

सु स, रसायने ।

भाषा—कमलगट्टा, नीलोफरकाक्काथ, मुलहठीकाकल्क इनसे बनायाहुआ गोघृत यथाशक्ति १ रत्ती सुवर्णभस्मकेसाथ लेकर पूर्वोक्तवस्तुओंमें सिद्धकियाहुआ दूध पीनेसे लक्ष्मी, आयु, राज्य और सौभाग्यको प्राप्तहोताहै। इनयोगोंमें जहा मन्त्रका योग नहीं वहापर त्रिपदा गायत्री समझनी चाहिये। इनयोगोंके सेवनकरनेसे पाप नष्टहोताहै और विपुलबल आकर देवपराक्रम होताहै ४४४

४४५ सुवर्णयोगः (दशमः)

गायत्रिकामन्त्रितमामलक्या
रसेन लीढं कनकस्य चूर्णम् ।
धात्रीरजस्तुल्यमिदं नराणां
रिष्टं समुत्पन्नमपाकरोति ॥ १९५२ ॥

लो. प., अरिष्टनाशे रसायने च ।

भाषा—गायत्रीसे १००० वार अभिमन्त्रितकियेहुए आवलोंकेरसकेसाथ १ से ३ रत्तीतक सुवर्णभस्म और आवलेका चूर्ण लेनेसे उपस्थित अरिष्ट भी नष्टहोताहै ॥ ४४५ ॥

४४६ सुवर्णयोगः (एकादशः)

ससितया वचयामलकैरथ
त्रिफलयाऽथ घृतव्यतिमिश्रया।
कनकजातरजः सततं कृतं
परमिदं हि रसायनमुच्यते ॥ १९५३ ॥

चि क, रसायने।

भाषा—शक्कर, वच, आवले अथवा त्रिफलाकेचूर्णकेसाथ १ से ३ रत्तीतक सुवर्णभस्म घीमें मिलाकरलेनेसे दीर्घायु होताहै ॥

४४७ सुवर्णयोगः (द्वादशः)

उन्मादिनामुन्मदमानसाना-
मपस्मृतौ भूतहतात्मनां हि।
ब्राह्मीरसः स्यात्सवचः सकुष्ठः
सशङ्खपुष्पः ससुवर्णचूर्णः ॥ १९५४ ॥

चि क, यो त, उन्मादे।

टि०—चरके हृदयावरणत्वेन विषग्रस्तावस्थाया सुवर्णरजस' शाणमात्रदानमुक्त यथा "शुद्धे हृदि तत शाण हेमचूर्णस्य दापयेत्। हेम सर्वविषाण्याशु गराश्च विनियच्छति॥ न सजते हेमपाङ्गे विष पद्मदलेऽम्बुवत्॥" इत्यत्र चूर्णशब्देन तद्वयस्कृतिं ग्राह्या सा च रसायनपादे विहिताऽस्ति यथासम्भवञ्च विपन्नौपधिभिस्साक दद्यादिति सम्प्रदाय। यथावस्थितचूर्णस्य रक्तादौ तत्काल प्रवेशाभावात् तदभावे च हृदयावरणस्य दुःसाध्यत्वात्, अथवा विपन्नौपधिभि पुटानि दत्त्वा निरुत्थ भस्म सम्पाद्य तस्य द्वित्ररक्तिका एव विपन्नौपधिस्वरसादिभि र्दत्ता शीघ्र विप निर्णाशयन्ति इति निश्चितम्। चरकीयवाक्यस्यैव चिकित्साकल्किादौ "गरातुरे हेम हित वदन्ति" इत्यादिना अवतार कृतोऽस्ति।

भाषा—ब्राह्मीकारस १ तोला, वच, कुठ, शङ्खपुष्पी ३–३ माशे, सुवर्णभस्म १ से ३ रत्तीतक मिलाकर लेनेसे उन्माद, अपस्मार, भूतबाधा येसब नष्टहोतेहैं ॥ ४४७ ॥

४४८ सुवर्णयोगचतुष्टयम्

सौवर्णं सुकृतं चूर्णं कुष्ठं मधु घृतं वचा।
मत्स्याक्षकः शङ्खपुष्पी मधुसर्पिः सकाञ्चनम्॥१९५५॥
अर्कपुष्पी मधु घृतं चूर्णितं कनकं वचा।
हेमचूर्णानि कैटर्यः श्वेता दूर्वा घृतं मधु ॥ १९५६ ॥
चत्वारोऽभिहिताः प्राशाः श्लोकार्द्धेषु चतुर्ष्वपि।
कुमाराणां वपुर्मेधाबलबुद्धिविवर्धनाः ॥ १९५७ ॥

सुश्रुत, बालरोगाऽधिकारे।

टि०—"मेधाकामश्च वचया श्रीकाम - पद्मकेशरै। शङ्खपुष्प्या वयोऽर्थी तु विदार्या च प्रजेच्छुक ॥ नवायसकवत्पाण्डौ तथाशोगरशान्तये॥" इति गदनिग्रहे आयुर्वेदप्रकाशे च त्रयो योगा अन्ये विहिता सन्ति। इत्थमित्थ सहस्रशोऽपि योगा सम्पत्स्यन्ते तत्त्वबुद्ध्योहनीयमनुपानानामनियतत्वात्।

भाषा—सुवर्णभस्म, कुठ, मधु, घृत और वच (१) मछेछी, शङ्खपुष्पी, सुवर्णभस्म, मधु और घी (२) अर्कपुष्पी, सुवर्ण, वच, मधु और घी (३) सुवर्णभस्म, महारुख, वच, दूवमें पकायाहुआ घी और मधु (४) इन चारों योगोंको औचिती देखकर सयुक्तकर देनेसे छोटेबच्चोंकी मेधा, बल और बुद्धि बढती है ॥ ४४८ ॥

४४९ सुवर्णरसराजरसः

शुद्धं स्वर्णरसं पृथक् पिचुमितं एकत्र सम्मर्दितं।
मुक्ताविद्रुममापयुग्मसहितं मर्द्योऽहिवल्लीरसैः।
गुञ्जाद्वन्द्वमितं सुवर्णरसराट् क्षौद्रेण वा गोघृतै-,
र्जीर्णं यक्ष्मभवं प्रमेहदरणं पाड्वामयं वातजम्॥१९५८॥
नेत्रश्रोत्रगदं ह्यरोचकहरं कायस्य कान्तिप्रदं,
रेतोवृद्धिकरं महाबलकरं दीर्घायुरारोग्यदम्।
पथ्यं शालिघृतं सिता सुकदली गोधूमगोक्षीरकं,
ताम्बूलं विहितं पटोलमरिचं सोष्णाम्बु कोशातकी॥

रसायनसं., क्षये।

भाषा—शुद्ध पारा और सोनेकेवर्क १–१ कर्ष लेकर एक जगहमर्दनकर पिट्टीबनावे। फिर मोती और मूंगेकीभस्में १–१ माशा डालकर पानकेरससे १–२ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु अथवा गोघृतकेसाथ देनेसे जीर्णज्वर, राजयक्ष्म, प्रमेह, प्रदर, वातज पाण्डु, नेत्र और कानकी पीडा, अरुचि, कान्तिका अभाव, शुक्रक्षय इनसबको नष्टकर दीर्घायुको करताहै। पुरानेसफेदचावल, घी, शक्कर, केला, गेंहू, गोदुग्ध, परवल, मरिच, गरमजल, तरोई येसब पथ्यहै ॥ ४४९ ॥

४५० सुवर्णरसायनम्

चतस्रः कृष्णलोहानां पलानि त्रिफला तथा।
उच्चटा चाजमोदा च पयस्या पिप्पली तथा॥१९६०॥
विदारी मधुयष्टी च तच्चूर्णं पालिकं स्मृतम्।
पलं सुवर्णचूर्णस्य सप्ताहेनोपयोजयेत् ॥ १९६१ ॥
बह्वन्तःपुरपत्नीनां राज्ञाञ्च गरनाशनम्।
बृहस्पतिमतं चूर्णमलक्ष्मीहरणं विदुः ॥ १९६२ ॥

ग नि, कल्पे।

भाषा—चारतरहकेलोहोंकीभस्म १–१ पल, त्रिफला, उटंगन, अजमोद, क्षीरकाकोली, पीपल, विदारी, मुलहठी सबसमभागकाचूर्ण १ पल, सुवर्णभस्म १ पल मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ कर्षकी मात्रा प्रात काल दूधकेसाथलेवे। अच्छीतरह पचजानेपर शामको दूधभात भोजनमें लेवे। धीरे २ इसकी मात्रा बढावे। यह पुराने जमानेकेलिये ७ दिनका प्रयोग लिखाहै पर आजकल १ कर्षसे अधिकमात्रा लेनी मुश्किलहै। हा किसीको अधिक पाचन हो सके तो उतनी बढालेवे। जिनके अन्त पुरमें बहुतसी स्त्रियें हों ऐसे राजालोगोंको इसका प्रयोगकरना योग्यहै। इसके साधारणसेवनसे समस्त बनावटी जहर नष्टहोतेहैं ॥ ४५० ॥

४५१ सुवर्णराजवङ्गेश्वररसः

रसाद्द्विगुणितं वङ्गं वङ्गाद्द्विगुणगन्धकम् ।
रसार्द्धं हेमभागश्च तत्समं मौक्तिकन्तथा ॥ १९६३ ॥
रसभागन्तु मरिचं तत्समं कान्तनागयोः ।
कुमारीरससम्पिष्टं खल्वे चूर्णन्तु कारयेत् ॥ १९६४ ॥
सप्त मृद्वसनं कृत्वा काचकूप्यां विनिक्षिपेत् ।
वालुकायन्त्रगं कृत्वा दिनमेकं हठाग्निना ॥ १९६५ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य पुनः खल्वे विमर्दयेत् ।
एवं सप्तदिनं कृत्वा वटिकाः कारयेद्बुधः ॥ १९६६ ॥
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन योजयेदनुपानतः ।
सर्वरोगेषु दातव्या प्रमेहान्हन्ति विंशतिम् ॥ १९६७ ॥
मूत्राघातं मूत्रकृच्छ्रं प्रदरार्शो वमीस्तथा ।
रसायनमिदं श्रेष्ठं स्वर्णवङ्गेश्वरो रसः ॥ १९६८ ॥

रसायनस , रसायने ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, वङ्गभस्म २ भाग, गन्धक ४ भाग, सुवर्ण और मोतीभस्म आधाआधाभाग, मरिच, कान्त और नागभस्म १–१ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर कुमारीके-रससे १–२ दिन मर्दनकर कज्जलीबनाय ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें भर एकदिन वालुकायन्त्रमें तीक्ष्णाग्निसे पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर मर्दनकर पाककरे । ऐसे ७ वार करनेकेबाद घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे सवप्रकारकेप्रमेह, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, वातकुण्डलिका, प्रदर, ववासीर, वमन इसवको यह नष्टकरताहै ॥ ४५१ ॥

४५२ सुवर्णसमर्क (चूर्णम्)

स्वर्णचूर्णं समरिचं द्वौ क्षारौ त्रिफला वचा ।
यवान्यः कुञ्चिका हिङ्गु तिन्तिडीकाम्लवेतसम् १९६९
धान्याजगन्धे त्रायन्ती दाडिमं सुयवार्द्रिकम् ।
कटुका कटुजम्बीरं सैन्धवञ्च समान् भिषक् ॥ १९७० ॥
त्रिवृता समला दन्ती कम्पिल्लं नीलिकाऽभया ।
सुवर्णक्षीरी द्विगुणा सर्वाण्येतानि चूर्णयेत् ॥ १९७१ ॥
आजे गव्येऽथवा मूत्रे सप्ताहं परिभाव्य तम् ।
द्विगुणां शर्करां चात्र दापयेत्त्र्यङ्गुलं पिवेत् ॥ १९७२ ॥
गोमूत्रत्रिफलाक्षाररसैर्मद्यैस्सुखाम्बुना ।
सुवर्णसमकं चूर्णं सर्वरोगार्तिभेषजम् ॥ १९७३ ॥
सर्वोदरे प्लीहशोषगुल्महृद्रोगनाशनम् ।
वाताष्ठीलामथानाहं श्वयथुं सर्वगात्रजम् ॥
हलीमकामलापाण्डुप्रमेहज्वरगुल्महृत् ॥ १९७४ ॥

भै सं , ग नि , उदररोगे ।

टि०—अधुनोपलभ्यमानभैलपुस्तके समरिचमित्यम्मादेव पद्यादय योग उपलभ्यते, अतश्चत्वार्यक्षराणि आदावेव त्रुटितानि सन्ति योगस्य नाम च सुवर्णसमकं चूर्णमिति ग्रन्थकर्त्रैव दत्तम् । अतोऽनुमीयते अनेन योगेन सुवर्णयुक्तेन भवितव्यमन्यथा सुवर्णसमकमिति नामैव नोपपद्यते योगेषु प्रायशो गुणवुद्धया तदन्तर्घटितप्रधानद्रव्यद्योतनबुद्धया वा नामकरणं भवति ७ यथा कामिनीमदभञ्जनादौ सुवर्णसिन्दूरादौचाऽस्ति । गदनिग्रहे पञ्चकोलमिति पदेन रिक्तं स्थानं पूरितं दृश्यते परन्तु तत्पूरणेन सुवर्णसमकमिति नाम्न कान्चित्सङ्गतिर्नायाति । कदाचित्स्वर्णपदेन सुवर्णक्षीरीयवाऽभिप्रेताकृत्वा सुवर्णसमकमिति नाम्न सङ्गतिरस्तीति नेत्र, तत्र सुवर्णक्षीरीद्वैगुण्यसत्त्वात्र सुवर्णसमकमिति नाम उचित जायेत । स्वर्णचूर्णमिति पदेन पूर्णे तु सुवर्णमपि मरिचादिभिरेकैकेन तुल्यतामावहेद्यत्र योगेऽस्ति तत्सुवर्णसमकमिति व्युत्पत्त्या योगनाम्नो यथाकथञ्चित्सार्थक्यात् गदनिग्रहवत्पञ्चकोलमदत्त्वा स्वर्णचूर्णमिति पदेना स्माभिस्त्रुटित स्थान पूरितम् । अन्यच–द्वितीयश्लोकस्य सयवार्पिकमिति वर्तमानपुस्तके उपलभ्यते तत्र सुयवार्द्रिकमिति पाठोऽस्माभि स्थापित , तत्र सुयवा =इन्द्रयवा , आर्द्रिका नागर ग्राह्यम् । शोढलेन तु सुयवाग्रजमिति पाठ स्थापित परन्तु द्वौ क्षारावित्यनेन यवाग्रजस्याऽऽगतत्वात्स पाठो नादेय । एव चतुर्थश्लोकस्य चतुर्थचरणे दापयेत्त्र्यङ्गुल पिवेदिति पाठ उपलभ्यते तत्र त्र्यङ्गुलपदस्यार्थमबुद्ध्वा शोढलेन त्रिदिन पिवेदिति पाठ स्थापित परन्तु उदररोगाणा त्रिदिनाभ्यन्तरे निवृत्तेरसम्भवात्प्रत्यक्षमेव तत्पाठकल्पन विरुद्धम् । त्र्यङ्गुलमिति मात्राप्रमाण निर्दिष्टम् यथा—"तत्र मासादूर्ध्वं क्षीरपायाङ्गुलिपर्वद्वयग्रहसम्मितामौषधमात्रा विदध्यात् । कोलास्थिसम्मिता कल्कमात्रा क्षीरान्नादाय कोलसम्मितामन्नादायेति ॥" सुश्रुत शा १०।३८॥ इत्यत्र अङ्गुलीपर्वग्रहप्रमाणेनैव मात्रा निर्दिष्टा तथाऽत्राऽपि रोगिणोऽङ्गुलीत्रयपर्वत्रयाग्रपरिमिता मात्रा पाययेदिति महर्षेरभिप्राय । सा च साधारणतया अर्द्धाक्षसमा जायते इति यथावस्थित पाठ एव साधुरिति मत्वा तथैवाऽस्माभि स्थापित सुवर्णप्रक्षेपे तु विद्वांस एव विचारयन्तु, अस्माक मते तु उदररोगेषु प्रायशो येन केनापि प्रकारेण कृताकृतस्य स्थावरस्य जङ्गमस्य वा दोपस्यावरोधेन धातूनामेव विपरूपे परिणततया शरीरधातुविपस्य सत्त्वात्सुवर्णस्य च सर्वप्रकारविषागदत्वाद्दपिणा सुवर्णमेव प्रक्षिप्तमत स्वर्णचूर्णमित्येव पाठेन पूरण श्रेयस्कर प्रतिभाति इत्यलमतिविस्तरेण ॥

भाषा—सुवर्णायस्कृति अथवा भस्म, मरिच, सुहागा, यवक्षार, त्रिफला, वच, देशी और खुरासानी अजवाइन, खरजवाइन, कालीजीरी, भुनीहींग, डासरिया (मारवाड़ीनाम, शमाक. यूनानीनाम), अमलवेत, धनिया, ववई, त्रायमाण, अनारदाना, इन्द्रजव, सोंठ, कुटकी, कड़वीजंभीरी, सेंधानमक सब १–१ भाग, निसोत, अङ्कुलिया थूअर, दन्तीमूल, कमीला, कालादाना, हर्रे, रेवनचीनी अथवा सत्यानाशीकीजड़ येसव २–२ भागलेकर वारीकचूर्णकर वकरी अथवा गायके मूत्रसे भावना देकर दूनीशक्कर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे रोगीकी तीन अङ्गुलियोंके अग्रभागपर जितना चूर्ण आसके उतना फकाकर गोमूत्र, त्रिफला, क्षार, मांसरस, मद्य अथवा कदुष्णजल, इनमेंसे औचिती देखकर पिलानेसे उदर, प्लीहा, शोष, गुल्म, हृद्रोग, वाताष्ठीला, आनाह, सर्वाङ्गशोथ, हलीमक, कामला, पाण्डु, प्रमेह, ज्वर, गुल्म, इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ४५२ ॥

४५३ सुवर्णसिन्दूरम् (प्रथमम्)

पारदं गन्धकं स्वर्णं जम्वीररसमर्दितम् ।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य वालुकायन्त्रमध्यगम् ॥ १९७५ ॥
दिनार्धं पाचयेदेतत्स्वाङ्गशीतलताङ्गतम् ।
हेमसिन्दूरकं नाम नागताम्राभ्रसंयुतम् ॥
प्रयोगे सर्वदोषादि हन्ति सत्यं न संशयः ॥ १९७६ ॥

र क यो , सर्वदोषे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सुवर्णका बारीकचूर्ण अथवा वर्क समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरीकेरससे ३–४ दिन मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भर दोपहरकी तीक्ष्ण अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर नाग ताम्र और अभ्रकभस्म समभाग मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै और पूर्ण पुरुषत्वको देताहै ॥ ४५३ ॥

४५४ सुवर्णसिन्दूरम् (द्वितीयम्)

स्वर्णसिन्दूरमभ्रञ्च मौक्तिकं कर्षसम्मितम्।
हेममाक्षिकवैक्रान्तवङ्गायांसि च पित्तलम् ॥ १९७७ ॥
शिलाजतु प्रवालाब्धिफेनगुग्गुलुगन्धकान्।
कोलमानेन सङ्गृह्य भावयेद्वह्निवारिणा ॥ १९७८ ॥
ततो गुञ्जाद्वयोन्मानां विधाय वटिकां भिषक्।
देवदारुकषायेण प्रातः सायञ्च योजयेत् ॥ १९७९ ॥
स्वर्णसिन्दूरसञ्ज्ञोऽयं रसेषु प्रवरो रसः।
स्नायुजान्निखिलान्रोगान्हन्ति नास्त्यत्र संशयः १९८०

भै र, स्नायुरोगे।

भाषा—स्वर्णसिन्दूर, अभ्रक और मोतीकीभस्में १–१ कर्ष, सुवर्णमाक्षिक, वैक्रान्त, वङ्ग, लोह, पीतल, प्रवाल इनकी-भस्में, शुद्धशिलाजीत, समुद्रफेन, गूगल और गन्धक ८–८ माशे लेकर सबका बारीकचूर्णकर चित्रकमूलकेस्वरस अथवा क्वाथसे १–२ दिन घोटकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली सुबहशाम देवदारुकेकाढेकेसाथदेनेसे यह समस्त स्नायुजरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ४५४ ॥

४५५ सुवीर्यरसः

बीजीकृतैरभ्रकसत्त्वहेम-
ताक्ष्यरिकान्तैः सह साधितो यः।
पुनस्ततः षड्गुणगन्धजीर्णः
सुवीर्यनामा ह्यधिकप्रभावः ॥ १९८१ ॥

टों, रसायने।

भाषा—बीजबनाएहुए अभ्रकसत्त्व, सुवर्ण, सुवर्णमाक्षिक, पीतल और कान्तलोह इनका यथाशक्य बुभुक्षितपारेको ग्रास-देकर षड्गुणगन्धकजारणकर सिद्धकियाहुआ पारा देह और लोह दोनोंमें कामकरताहै ॥ ४५५ ॥

४५६ सूचिकाभरणरसः (लघुः) (प्रथम)

विषं पलमितं सूतः शाणिकश्चूर्णयेद्द्वयम्।
तच्चूर्णं सम्पुटे क्षिप्त्वा काचलिप्तशरावयोः ॥ १९८२ ॥
मुद्रां दत्त्वा च संशोष्य ततश्चूल्यां निवेशयेत्।
वह्निं शनैः शनैः कुर्यात्प्रहरद्वयसङ्ख्यया ॥ १९८३ ॥
तत उद्घाटयेन्मुद्रामुपरिस्थः शरावकात्।
संलग्नो यो भवेत्सूतस्तं गृह्णीयाच्छनैः शनैः ॥ १९८४ ॥
वायुस्पर्शो यथा न स्यात्तथा कूप्यां निवेशयेत्।
यावत्सूच्या मुखे लग्नः कूप्या निर्याति भेषजम् १९८५
तावन्मात्रो रसो देयो मूर्च्छिते सन्निपातिनि।
क्षुरेण प्रच्छिते मूर्ध्नि तत्राङ्गुल्या च घर्षयेत् ॥ १९८६ ॥
रक्तभेषजसम्पर्कान्मूर्च्छितोऽपि हि जीवति।
तथैव सर्पदष्टस्तु मृतावस्थोऽपि जीवति ॥
यदा तापो भवेत्तस्य मधुरं तत्र दीयते ॥ १९८७ ॥

शा सं, वृ यो. त, यो. चि, र प्र सु, र सं. क, र. चि, रसायनसं, र सु, ध, नि र, भै सा, रसायनप, र. क, टो, र प्र, व रा., र को, र का, यो म., वै. वि, र क. ल, चि र भ, सन्निपाते।

भाषा—शुद्धवच्छनागकाचूर्ण १ पल और शुद्धपारा ४ माशे लेकर १–२ दिन मर्दनकरे। पारा अदृश्य होनेपर कपड़छान-कियेहुए काचका पोताढेकरसुखाएहुए दो शरावोंमें बन्दकर ३–४ कपड़मिट्टी देकर अच्छीतरह सूखनेपर चूल्हेपर रख दो-पहरकी मन्दाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे शरावको उघाड़कर ऊपरके शरावमें लगेहुए पारेकोधीरजसे उतारकर शीशीमें रखले। हवा न लगे। हवा लगनेसे इसकी ताक़त कम होजातीहै। सन्निपातमें मूर्च्छितहोनेपर तालुमें पाछ देकर सूईके अग्रभागपर जितना रस आसके उतना रक्तमें मिलाकर अङ्गु-लीसे घर्षणकरे। रक्तमें मिलतेही मूर्च्छा निवृत्त होजातीहै। इसीतरह सर्पदष्टमें भी कामलेना। इसके देनेकेबाद अत्यन्त ज्वर बढने पर मधुर पदार्थ खानेको देना और शीतक्रियासे ज्वरको निवृत्तकरना ॥ ४५६ ॥

४५७ सूचिकाभरणरसः (द्वितीयः)

नागं पविं हरिणशृङ्गरसासुरेन्द्रां-
स्तुत्थं शिलाञ्च रसकञ्च समानभागान्।
अर्केरिमेदमुनिकिंशुकतोयघृष्टां-
स्त्रिस्त्रिः पृथक्च पुटयेत विचूर्णयेत्तत् १९८८
भूयो विडङ्गविधिवृक्षजबीजहिङ्गु-
व्याघ्रीसजीरकरजोयुतमेतदेवम्।
सम्मर्दयेच्च पयसा यवचिञ्चिकायाः
शुष्कं सुचूर्णितमिदं विदधीत वैद्यः ॥ १९८९ ॥
पाण्ड्वामवातकृमिमेहसवातरक्त-
शोफांस्तथा कसनगुल्मकमूत्रकृच्छ्रान्।
योग्यानुपानसहितः क्षतजं क्षयञ्च-
गुञ्जामितो हरति रोगगणांस्तथान्यान् ॥

टो, पाण्डुविकारे।

भाषा—नाग, हीरा, हरिणकासींग, फिटकड़ी, गन्धक, तुत्थ, मैनसिल, खपरिया सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर आक, विट्खदिर, अगस्त्य, ढाककेफूल इनके स्वरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी १–१ आंचदेवे। फिर विडङ्ग, पलाशबीज, हींग, वनभाटा, जीरा १–१ भागका बारीक चूर्ण मिलाकर जैंतीके स्वरससे १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े।

इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे पाण्डु, आमवात, क्रिमि, प्रमेह, वातरक्त, शोथ, खासी, गुल्म, मूत्रकृच्छ्र, उरःक्षत और क्षयप्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरताहै ४५७

४५८ सूचिकाभरणरसः (तृतीयः)

रसगन्धकनागञ्च विषं स्थावरजङ्गमम्।
मात्स्यवाराहमायूरच्छागपित्तै र्विभावयेत् ॥ १९९१॥
सूचिकाभरणो नाम भैरवेण प्रकीर्तितः।
सूचिकाग्रेण दातव्यः सन्निपातनिवर्हणः ॥ १९९२ ॥

र स., भै र., ध., र सु, र. क यो, र त, सन्निपाते। केषुचित्पुस्तकेषु अभ्रक विशेषेण नियोजित दृश्यते।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, नागभस्म, यथाशक्य स्थावर और जङ्गमविष समभागलेकर मछली, सूअर, मोर और वकरेकेपित्तोंसे १-१ भावना देकर रखछोड़े। इसमेंसे सुईके अग्रभागसे लेकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तसन्निपातोंको नष्टकरताहै ॥ ४५८ ॥

४५९ सूचिकाभरणरसः (चतुर्थः)

रसवैक्रान्तहेमाभ्रं तीक्ष्णं ताम्रं मृतं समम्।
षड्भिः समं शुद्धगन्धं सर्वं निर्गुण्डिकारसैः ॥१९९३॥
कषायैश्चित्रकस्यापि मर्दयेद्दिवसत्रयम्।
सूर्यावर्त्ताऽगस्त्यभृङ्गैस्तिलपर्णीन्द्रवारुणी ॥ १९९४॥
काकमाची महाराष्ट्री कङ्गुणी गिरिकर्णिका।
धुस्तूरस्तुलसी दन्ती बृहती कण्टकारिका॥१९९५॥
स्नुह्यर्कविजया मुण्डी काकतुण्डी जयाऽमृता॥
एतासां भावयेद्द्रावैश्चतुर्दशदिनावधि ॥ १९९६ ॥
अर्कमूलकषायेण भावयेद्दिनपञ्चकम्।
दत्त्वा सञ्चूर्णितं पञ्चपित्ते भाव्यं दिनत्रयम् ॥१९९७॥
विषमुष्टिकषायेण भावयेद्दिवसत्रयम्।
जेपालवीजमज्जोत्थतैलेन दिवसत्रयम् ॥ १९९८ ॥
भावितं शोषितं चूर्णं मधुना सह मिश्रयेत्।
सूचिकाभरणो नाम रसः स्यात्सन्निपातजित् १९९९
दापयेत्सूचिकाग्रेण सर्वेषां सन्निपातिनाम्।
ज्वरशूलोदराशस्सु प्लीहपाण्डुगदेषु च ॥ २००० ॥
आध्मानशूलमन्दाग्निकासश्वासादिरोगिषु।
श्लैष्मिकस्थूलदेहेषु चानुपानं पृथक्पृथक् ॥ २००१ ॥

वृ यो. त, र सु, र क यो, वा, सन्निपाते।

भाषा—शुद्धपारा, वैक्रान्त, सुवर्ण, अभ्रक, फोलाद, ताम्र इनकीभस्में समभागलेकर सबकी बराबर शुद्धगन्धक मिलाकर बारीकचूर्णकर निर्गुण्डी, चित्रक, सूर्यमुखी, अगस्त्य, भगरा, हुरहुर, इन्द्रायण, मकोय, मराठी, मालकागनी, कोयल, धतूरा, तुलसी, दन्तीमूल, वनभाटा, भटकटैया, थूअर, आक, भाग, गोरखमुण्डी, काकनासिका, अरणी और गिलोयके स्वरसोंसे १४ दिन, आककीजड़केक्काथसे ५ दिन, पाचोंपित्तोंसे ३-३ दिन, कुचिलेकेकाथ और जमालगोटेकेतैलसे ३-३ दिन क्रमशः भावनाएं देकर रखछोड़े। इसमेंसे सूईके अग्रभागसे लेकर समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्त सन्निपात, ज्वर, शूल, उदररोग, ववासीर, प्लीहा, पाण्डु, आध्मान, शूल, मन्दाग्नि, कास, श्वास, कफ, मेद इनसवको यह नष्टकरताहै ४५९

४६० सूचिकाभरणरसः (पञ्चमः)

येन केनाप्युपायेन भस्मीभूतो रसोत्तमः।
तच्चूर्णं वस्त्रनिष्पूतं तेनैव मिश्रयेत्सुधीः ॥ २००२ ॥
शुल्वं विषं तथा चाभ्रं खल्वे मर्द्यं मुहुर्मुहुः।
सेवनाच्च विलीयन्ते सन्निपातास्त्रयोदश ॥ २००३ ॥
सूचिकाभरणो नाम नैव देयो ह्यमूर्च्छिते।
अस्योपयोगमात्रेण सन्निपाती भयङ्करः॥
स्वस्थः स्यादचिरेणैव संशयावसरो न हि ॥२००४॥

रसचि, सन्निपाते।

भाषा—पारेकीभस्म और शुद्धपारा, तावा और अभ्रकभस्म, शुद्ध वछनाग सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारा अदृश्यहोने तक घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे आधीआधीरत्तीकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ मूर्च्छितसन्निपातीको देनेसे भयङ्कर सन्निपात निवृत्तहोताहै। अमूर्च्छितावस्थामें इसे नहीं देना॥

४६१ सूचिकाभरणरसः (षष्ठः)

अमृतं गरलं दारु सर्वतुल्यञ्च हिङ्गुलम्।
पञ्चपित्तैश्च सम्मर्द्य सर्षपाभां वटीं चरेत् ॥ २००५ ॥
प्रदेया सूचिकाग्रेण सन्निपातकुलान्तकृत्।
वर्जयेत्तिलतैलञ्च दापयेद्दधिभक्तकम् ॥ २००६ ॥

भै र, ध, र. सु, र त, सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध वछनाग, सर्पविष, देवदारु १-१ भाग, शुद्धशिगरिफ सवकीवरावर लेकर बारीकचूर्णकर पाचोंपित्तोंसे १-१ दिन मर्दनकर सर्षपप्रमाणगोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तसन्निपातोंको दूरकरताहै। इसमें तिल और तिलकातैल वर्जितकरना। अत्यन्तभूखलगनेपर दहीभात खानेको देना ॥ ४६१ ॥

४६२ सूचिकाभरणरसः (सप्तमः)

खण्डीकृत्य विषं कृष्णं सार्कदुग्धेऽल्पभाण्डके।
सकाञ्जिके सगरले दत्त्वा चुल्यां निधापयेत् ॥२००७॥
सप्ताहं तत उद्धृत्य श्लक्ष्णं सञ्चूर्ण्य यत्नतः।
सूचिकाभरणो नाम रसो गुप्ततमो भवेत् ॥ २००८ ॥
सञ्ज्ञानाशे विचेष्टस्य वल्लः काञ्जिकपेषितः।
ब्रह्मरन्ध्रे प्रयोक्तव्यः शाखास्वतिहिमोदये ॥ २००९ ॥

रसायनस, र सु. र र दी, टो, वृ यो. त., र का, र. क. यो, र क ल, सन्निपाते।

भाषा—कालेवछनागके छोटेछोटे टुकड़ेकर एकवर्तनमें डाले। इससे दूना आकका दूध, चौगुनीकाञ्जी और वरावरका सर्पविष डालकर मुहवन्दकर जहा प्रतिदिन चूल्हा जलताहो वहा एक वालिश्त गहरा खड्डा खोदकर वर्तनको दवादे। आठवेंदिन

निकालकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती काञ्जीमें पीसकर ब्रह्मरन्ध्रपर पाछदेकर लगानेसे सञ्ज्ञानाश और भयंकर शीत नष्टहोतेहैं ॥ ४६२ ॥

४६३ सूचिकाभरणरसः (अष्टम)

अहिफेनं मृतं ताम्रं हिङ्गुलं शृङ्गिकं विषम ।
मत्स्याजगजपित्तेन माहिषेण विभावितम ॥ २०१० ॥
दातव्यं सूचिकाग्रेण शीततोयं पिबेदनु ।
रसश्चार्द्रकतोयेन ह्यनुपानं प्रकल्पयेत ॥ २०११ ॥
शीताङ्गेऽपि सितापयः सहचरे दत्ते पुनर्जीवनि ।
ख्यातो योऽत्र स सूचिकाभरणकः सूच्यग्रमात्रो रसः ।
किंवा द्वादशरन्ध्रचर्मसु भिषक् शस्त्रेण कृत्वा पदं,
दद्याच्चार्द्रकवारिणा द्रुततरं सञ्ज्ञां लभेताशु हि २०१२

र सु , र (मा), ना वि , टो , सन्निपाते ।

भाषा—अफीम, ताम्रभस्म, शुद्धशिगरिफ, सींगियाविष, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर मछली, बकरा, हाथी और भैंसके पित्तोंसे १–१ भावनादेकर रखछोड़े । इसमेंसे सूईके अग्रभागमेलेकर अदरखके रसकेसाथ देकर ऊपरसे ठण्डापानी पिलानेसे समस्तसन्निपात नष्टहोतेहैं । शीताङ्गमें शक्कर, दूध और कटसरैयाकेसाथ देनेसे फिरसे जीवन आताहै । यदि इसतरह सञ्ज्ञाप्राप्त न हो तो ब्रह्मरन्ध्रपर शस्त्रसे काकपदकरके अदरखके रसकेसाथ मिलाकर घिसनेसे तत्काल सञ्ज्ञाको प्राप्तहोताहै ४६३

४६४ सूचिकाभरणरसः (नवमः)

हृद्धात्री दरदं तुल्यं गरलेन सुमर्दितम् ।
मुद्गप्रमाणवटिका नाभिहृत्तालुदेशके ॥ २०१३॥ ॥
कुशेन चर्म निर्भिद्य विघृष्यार्द्रकवारिणा ।
रसप्रवेशमात्रेण नेत्रमुद्घाटयेत्क्षणात ॥ २०१४ ॥
सावधानो भवेद्यद्वा न चैतन्यं प्रवर्तते ।
ततस्त्वेकां सुवटिकां दद्यादार्द्रकवारिणा ॥ २०१५ ॥
सर्वथा सुखमाप्नोति भोजयेद्दधिभक्तकम ।
सूचिकाभरणो नाम रसः परमदुर्लभः ॥ २०१६ ॥

र. सु , र , टो , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध मैनसिल और शिगरिफ सममागलेकर सर्पविषमें मर्दनकर मूगबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली नाभि, हृदय अथवा तालुप्रदेशमें कुशासे चीरकर अदरखकेजलकेसाथ मिलाकर घर्षणकरनेसे सन्निपाती तत्क्षण नेत्रोंको खोलदेगा । उससमय १ गोली अदरखके रसकेसाथ घिसकर खिलादेना इससे एकान्तत. अच्छा होजायगा । अत्यन्त भूखलगनेपर दहीभात खानेको देना ॥ ४६४ ॥

४६५ सूचिकाभरणरसः (दशमः)

रुचकश्चाभ्रकं गन्धं तालकञ्च मनःशिला ।
खर्परी शिखितुल्यञ्च नेपालं विषटङ्कणम ॥ २०१७ ॥
दरदं सैन्धवञ्चैव सर्वतुल्यन्तु पारदम् ।
मधूकबीजतैलेन मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ २०१८ ॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं तन्नीत्वा खल्वमध्यगम् ।
कृष्णसर्पस्य पित्तेन भावयेद्दिवसद्वयम ॥ २०१९ ॥
ब्रह्मद्वारे क्षुरस्पृष्टे गुञ्जामात्रं प्रदापयेत ।
जम्बीरस्य जलं देयं सन्निपातं निहन्ति च ॥ २०२० ॥
हिक्कां मूर्च्छाञ्च कम्पञ्च बाधिर्यं मूकतां तथा ।
ऊर्ध्वश्वासञ्च कासञ्च धनुर्वातं नियच्छति ॥
सूचिकाभरणो नाम प्राणिनां प्राणदायकः ॥ २०२१ ॥

वा , व रा , सन्निपाते । वसवराजीये सूचिकामुख इति नाम ।

भाषा—कालानमक, अभ्रकभस्म, शुद्ध गन्धक, हरिताल, मैनसिल, खपरिया, तुल्य, जमालगोटा, बछनाग, सुहागा, शिगरिफ, सेंधानमक सब समभाग और सबकी बराबर शुद्ध पारा लेकर बारीकचूर्णकर पारेको अच्छीतरह मिलाय महुएकेबीजोंकेतैलमे ३ दिन मर्दनकर उसीतैलसे ३ दिन दोलायन्त्रमे पकावे । फिर दोदिन कालेसर्पकेपित्तमे मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली ब्रह्मरन्ध्रमें चीरा-देकर जभीरीकेरसमें घिसकर मर्दनकरनेसे सन्निपात, हिचकी, मूर्च्छा, कम्प, बहिरापन, गूगापन, ऊर्द्ध्वश्वास, कास, धनुर्वात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४६५ ॥

४६६ सूचिकाभरणरसः (एकादशः)

मृताभ्रहेमवैक्रान्ततीक्ष्णताम्रामृतं समम ।
पारदो गन्धकस्तार्प्यं नागवङ्गौ समंसमम ॥ २०२२ ॥
सर्वं निर्गुण्डिकाद्रावे मर्दितं खल्वके ततः ।
भृङ्गी पुनर्नवा पाठा चित्रकं वालकाऽमृते ॥ २०२३ ॥
अर्कधत्तूरतुलसीमुण्डीजम्बीरलाङ्गलम् ।
कुमारी नागवल्ली च द्रवैरेषां विमर्दयेत् ॥ २०२४ ॥
काचकूप्यन्तरे क्षिप्त्वा विलेप्य वस्त्रमृत्तिकाम ।
दिनैकं वालुकायन्त्रे पचेन्नीत्वा च चूर्णयेत ॥२०२५॥
मत्स्यस्य च वराहस्य कमठ्या महिषस्य च ।
अजायाश्च मयूरस्य कृष्णसर्पस्य कौक्कुटैः ॥ २०२६ ॥
मनुष्याश्वमण्डूकजातैः पित्तैश्च भावयेत ।
दापयेत्सूचिकाग्रेण सर्वेषां सन्निपातिनाम ॥ २०२७ ॥
प्लीहगुल्मोदराणाञ्च ग्रहण्यातीसारिणाम ।
धनुर्वातं कम्पवातं हिक्काबाधिर्यमूकताः ॥ २०२८ ॥
कौब्ज्यं हिमोर्द्ध्वश्वासांश्च ह्यपस्माराऽतिविभ्रमान ।
तत्क्षणेन निहन्त्याशु यथेच्छं पथ्यमाचरेत् ॥ २०२९ ॥
नारिकेलोदकं दाहे दध्यन्नं पथ्यमाचरेत ।
तृषार्ते शीतलजलमिक्षुखण्डानि भक्षयेत् ॥
सूचिकाभरणो नाम सर्वरोगविनाशकृत ॥ २०३० ॥

र. क यो., सन्निपाते ।

भाषा—अभ्रक, सुवर्ण, वैक्रान्त, फौलाद, ताम्र इनकीभस्में, शुद्ध बछनाग, पारा, गन्धक, सोनामाखी, नाग और वङ्गभस्म सब सममागलेकर निर्गुण्डी. भंगरा, पुनर्नवा, पाठा, चित्रक, सुगन्धवाला, गिलोय, आक, धतूरा, तुलसी, गोरखमुण्डी,

जंभीरी, करिहारी, घीकुंवार और पानोंके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ४-५ कपड़मिटीदीहुई आतशीशीशीमें भरके मुंहबन्दकर सूखनेपर एकदिन वालुकायन्त्रमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोने पर निकालकर मछली, सुअर, कछुही, भैंसा, वकरी, मोर, कालासांप, मुर्गा, मनुष्य, घोड़ा, कुत्ता, मेंढक, इनके यथालाभ पित्तोंसे १-१ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे सूईके अग्रभागसे लेकर समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तसन्निपात, प्लीह, गुल्म, उदररोग, ग्रहणी, अतिसार, धनुर्वात, कम्पवात, हिचकी, वहिरापन, गूंगापन, कुबड़ापन, ठंढापसीना, ऊर्द्ध्वश्वास, अपस्मार, विभ्रम इनसवको यह नष्टकरताहै। अत्यन्त भूखलगनेपर यथेष्ट पथ्यदेवे। अत्यन्त दाह मालूम पड़नेपर दहीभातदेकर नारियलकाजल पिलावे और ईखवगैरह चूसनेको देवे ॥ ४६६ ॥

४६७ सूचिकाभरणरसः (द्वादशः)

शुल्वं वङ्गं तथा नागं क्रमेण भागवृद्धितः।
समांशममृतं देयमर्कक्षीरेण भावितम् ॥ २०३१ ॥
अन्धयेन्नलिकायन्त्रे ध्मापयेदेकरात्रकम्।
स्वाङ्गशीतलतां प्राप्तं धूममूर्ध्वगमाहरेत ॥ २०३२ ॥
गरलं क्रुद्धसर्पस्य धृमं सम्मर्द्य खल्वके।
सूचीमुखाग्रेण पुनस्तालुमूले तु दापयेत् ॥ २०३३ ॥
निश्चेतो चेतनाकारः सूचिकाभरणार्पितः।
पार्वतीकान्तनिर्दिष्टः सद्यः प्रत्ययकारकः ॥ २०३४ ॥
र मु , सन्निपाते।

भाषा—ताम्र, वङ्ग और नागभस्म क्रमवृद्धभागसे लेकर सबकी बराबर शुद्धवछनागमिलाकर आकके दूधसे एकदिन मर्दनकर अन्धमूपामें बन्दकर एकरात धमनकरावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर ऊपरका धूआ धीरजसे उतारकर क्रोधितकियेहुए कालेसांपके जहरसे मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे सूईके अग्रभागसे लेकर तालुस्थानमें पाछदेकर रक्तमें मर्दनकरनेसे मृतवत् निश्चेष्ट आदमी उठकर बैठजाताहै ॥ ४६७ ॥

४६८ सूचिकाभरणरसः (त्रयोदशः)

वज्रवैक्रान्तयो र्भस्म प्रत्येकं निष्कसम्मितम्।
शृङ्गीविषं द्विनिष्कञ्च त्रिनिष्कं चूलिकापटु ॥२०३५॥
पञ्चनिष्कोऽग्निजारश्च सर्वमेकत्र मेलयेत्।
तावद्रसमरसं यावन्मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ २०३६ ॥
शार्ङ्गेष्टादिकवर्गस्य क्षारनीरेण भावयेत्।
त्रयोविंशतिवाराणि विमृद्य च विशोष्य च ॥२०३७॥
ततो विमृद्य दिवसं क्षिपेद्दन्तकरण्डके।
मृतसञ्जीवनाख्योऽयं सूचिकाभरणो रसः ॥ २०३८ ॥
सन्निपातेन तीव्रेण मुमूर्षोर्भृगतस्य च।
तालुनि प्रच्छयित्वाऽथ रसमेनं विनिक्षिपेत् ॥२०३९॥
सूच्याऽतिसूक्ष्मया तोयाभिन्नयाऽतिप्रयत्नतः।
ततस्तैलेन तं लिप्त्वा निर्वाते सन्निवेशयेत् ॥२०४०॥
ततोऽर्द्धप्रहरादूर्द्ध्वं मुक्तमूत्रपुरीषकम्।
लब्धसञ्ज्ञं प्रलापाढ्यं दोलायन्तं शिरो मुहुः ॥२०४१॥
आयुष्मन्तं विजानीयादन्यथा चान्यथा खलु।
ततः शीताम्बुसम्पूर्णे कटाहे तं निवेशयेत् ॥ २०४२ ॥
तत्र चोत्क्वथितं तोयमपनीयापरं क्षिपेत्।
याचमानममुं पश्चात्पाययेत्ससितं पयः ॥ २०४३ ॥
दधि वा सितयोपेतं नारिकेलजलं तथा।
रम्भाफलानि दद्याच्च म्रियते सोऽन्यथा खलु ॥२०४४॥
लब्धसञ्ज्ञं प्रभाषन्तं याचमानं फलादिकम्।
तस्मादाकृष्य तैलाक्तं तैलं वस्त्रादिभि र्हरेत् ॥२०४५॥
लेपयेद्गन्धकर्पूरैरापादतलमस्तकम्।
इत्यादिशिशिरै र्द्रव्यैः सप्तरात्रमुपाचरेत् ॥ २०४६ ॥
कर्णाक्षिनासिकावक्त्रे क्षिपेत्पोताश्रयं मुहुः।
अष्टमेऽहनि सम्प्राप्ते दर्दुरीमूलजं रसम् ॥ २०४७ ॥
ससितं पाययेद्वेगमवतारयितुं रसम्।
रसेऽवतारिते पश्चाद्यथेष्टं भोजनं दधि ॥ २०४८ ॥
श्वासोच्छ्वासयुतं चान्यै र्मुक्तजीवनलक्षणैः।
कटाहे जलसम्पूर्णे निक्षिपेद्बोधलब्धये ॥ २०४९ ॥
लब्धबोधं तमाकृष्य पूर्ववत्समुपाचरेत्।
जीवित्वा यावदायुष्यं म्रियते तदनन्तरम् ॥ २०५० ॥
शार्ङ्गेष्टा च तथा व्याघ्री करीरस्तिलपर्णिका।
इन्द्रवारुणिकामुस्ता हरिद्राऽङ्कोलमूलिका ॥ २०५१ ॥
अपामार्गः कणा स्वर्णं कटुतुम्बी च तिन्तिडी।
शार्ङ्गेष्टादिकवर्गोऽयं सन्निपातहरः परः ॥ २०५२ ॥
र र स., र. को , सन्निपाते।

भाषा—हीरे और वैक्रान्तकीभस्म ४-४ माशे, शृङ्गीविष ८ माशे, नवसादर १२ मा , अम्बर २० मा., पारदभस्म सबकी बराबर लेकर ३ दिनतक शुष्कमर्दनकर शार्ङ्गेष्टादिवर्गकेक्षारकेपानीसे २३ दिन तक मर्दनकर सुखाकर एकदिन सूखाघोटकर हाथीदांतकी डिब्बीमें रखछोड़े। भयङ्करसन्निपातसे ग्रस्त मरणासन्न आदमीके तालुमें पाछदेकर बहुतबारीकसूईके अग्रभागको पानीमें डुबाकर उसके ऊपर जितनारस आवे उतना तालुमें मर्दनकर सर्वाङ्गमें तैल पोतकर निर्वातस्थानमें सुलादे। आधेपहरके उपरान्त दस्त और पेशाव होकर सञ्ज्ञाको प्राप्तहोगा और वारम्बार शिरको इधर उधर हिलावेगा उससमय समझना चाहिये कि इसमें जीव वाकीहै। अन्यथा मृत समझना। सञ्ज्ञाप्राप्तको ठंढेपानीसे भरीहुई कड़ाहीमें बैठादे। उसकापानी गरम होनेपर निकालकर दूसरा ठंढाभरदे, इसक्रमको वरावर जारी रक्खे। पानी पीनेको मागे तो शक्कर डाला हुआ दूध अथवा शक्कर मिलाहुआ दही अथवा नारियलकाजल और केलेका फल देवे। इसमें उपेक्षा करनेसे रोगी मरजायगा इसवातपर ध्यान देवे। अच्छीतरह होश आनेपर जो फलादिक मागे सो देवे और कड़ाहीमेंसे वाहर निकालकर कपड़ेसे तैलको पोंछकर चन्दन, केशर और कपूरका समस्त शरीरपर लेप करदे। ऐसे ७ दिनतक शीतोपचारोंसे उसकी रक्षाकरे। कान, आख, नाक और मुह इनमें ठंढेपानीके पोते दे। आठवेंदिन दादरीकी (मुक्तावर्षी व) जड़कारस शक्कर

डालकर पिलावे, इससे रसकाप्रभाव मन्द पड़जायगा। इसकेबाद यथेष्टभोजन और दही दे। रसकाप्रभाव कमहोनेपर यदि श्वासोच्छ्वास अधिक मालूम हों तो जलपूर्ण कड़ाहीमें बेठावे और पूर्वकीतरह उपचारकरे। इसतरह जितना आयु अवशेषहोगा उतनेको भोगकर फिर शरीरत्यागकरेगा। काकजङ्घा, अथवा मकोय, वनभाटा, करीर, हुरहुर, इन्द्रायण, नागरमोथा, हल्दी, अङ्कोलकीजड़, अपामार्ग, पीपल, धतूरा, कडवीतूमड़ी, पुरानीइमली, यह शार्ङ्गष्ठादि गणहै ॥ ४६८ ॥

४६९ सूचिकाभरणरसः (चतुर्दशः)

धातूपधातूपलराजमुक्ता-
रसाभ्रकल्को भृशमर्दितोऽयम्।
उन्मत्ततैलोद्भवगन्धयुक्त्या
कर्के क्रमादष्टपुटे विपक्कः ॥ २०५३ ॥
तदनु भूधरयन्त्रविनिर्गतः
सकलपित्तविषोदधिफेनिलः।
तिलसमोऽपि कृतान्तनिकृन्तनो
जयति चार्द्रकवारिविराजितः ॥ २०५४ ॥
स्वर्णं तारं त्रपुस्ताम्रं सीसकं तीक्ष्णपित्तले।
सप्तैते धातवो मुख्याः कांस्याद्याः कृत्रिमाः परे २०५५
महारसाश्चाल्परसा विज्ञेया उपधातवः।
षोडशैते यथाप्राप्त्या क्षिप्यन्ते रसकर्मणि ॥ २०५६ ॥

र (मा), सन्निपाते।

भाषा—सुवर्ण, रजत, वङ्ग, ताम्र, नाग, फोलाद, पीतल, कासा, फूल, जस्त, शिगरिफ, सोनामाखी, रूपामाखी, चपल, तूतिया, कान्तपाषाण, कान्तलोह, वैकान्त, नीलम, गोदन्ती, गन्धक, मैनसिल, तवकीहरिताल, कङ्कुष्ठ, मुर्दासङ्ग, कसीस, फिटकड़ी, माणिक्य, पन्ना, पुखराज, हीरा, गोमेद, लसनिया, अकीक, मार्जाराक्ष, फीरोजा, संगयशब, स्फटिक, जहरमोहरा, मूगा, लाजवर्द, लालपत्थर इत्यादि रत्न, मोती, पारा, अभ्रक इनसबकीभस्में समभागलेकर धतूरेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर टिकड़ीवनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर कुम्भपुटकी आचदे। ऐसे आठ आचें देनेकेबाद पूर्ववत् मर्दनकर पकेपानोंमें लपेटकर भूधरपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर यथालाभ पित्त और विष तथा समुद्रफेन और अम्बरकी १–१ भावनादेकर रखछोड़े। इसमेंसे तिलप्रमाण मात्रा अदरखके रसकेसाथ खाने तथा रक्तमेंसयोगकरनेसे भयङ्करसन्निपातको यह निवृत्तकरताहै ॥ ४६९ ॥

४७० सूचिकाभरणरसः (पञ्चदशः)

रसं सर्पविषं नाभिं धत्तूररसमर्दितम्।
सूचिकाग्रेण दातव्यं सन्निपातकुलान्तकम् ॥ २०५७ ॥

वै चि , सन्निपाते।

भाषा—पारदभस्म, सर्पविष और कस्तूरी समभाग लेकर धतूरेकेरससे १–२ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे सूचीके अग्रभागसे लेकर खाने तथा रक्तमें मिश्रणकरनेसे घोरसन्निपात निवृत्तहोताहै ॥ ४७० ॥

४७१ सूचिकाभरणरसः (षोडशः)

चत्वारो रसभागाः स्यु र्गन्धको द्विगुणस्तथा।
चत्वारो रसकाद्भागास्तदर्धं नागवङ्गयोः ॥ २०५८ ॥
तीक्ष्णस्य हि तथा चैकं द्विगुणं हेमतारयोः।
गुञ्जाचतुष्टयं वज्रं प्रवालञ्च चतुर्गुणम् ॥ २०५९ ॥
गोमेदकञ्च द्विगुणं मौक्तिकञ्च चतुर्गुणम्।
सर्वांशमिलितात्पश्चात्षोडशांशाभ्रकाद्युतिः ॥ २०६० ॥
खल्वोदरे च सम्मर्द्य यावत्कज्जलसन्निभम्।
नवसारेण संयुक्तं काचकूप्यां निधापयेत ॥ २०६१ ॥
अग्निं प्रदीपयेत्तत्र द्वात्रिंशत्प्रहरेषु च।
स्वाङ्गशीतलमुत्तार्य चूर्णयेद्यत्नतः कृतम् ॥ २०६२ ॥
मत्स्यमाहिषमायूरपित्तैश्च शतभावितम्।
आजेनापि शतं दद्यान्नरवाराहयोरपि ॥ २०६३ ॥
ततोऽग्निगर्भं सर्वेषां समांशं मेलयेद्बुधः।
ततः सिन्दूरवर्णं स्याच्छतवारश्च भावित. ॥ २०६४ ॥
क्रोधिकृष्णाहिसम्भूतैः पित्तैश्च गरलैस्तथा।
सञ्चूर्णितं ततः शुष्कं ताम्रकूप्यां निधापयेत् ॥ २०६५ ॥
शङ्खदुन्दुभिनिर्घोषवीणापटहवेणुभिः।
देवद्विजयोगिवृन्दकुमारीभैरवान्गुरून् ॥ २०६६ ॥
पूजयेन्मतिमान्वैद्यस्तत्र कर्म समाचरेत।
सन्निपाते महाघोरे कालदष्टे विषोल्वणे ॥ २०६७ ॥
शीताङ्गे दृष्टिनाशे च नाड्याश्च विषमे ग्रहे।
स्मृतिश्रुतिमनोनष्टे हिक्काश्वाससमाकुले ॥ २०६८ ॥
मूर्च्छापञ्चेन्द्रियवधे वैकल्ये नष्टचेतसि।
बहुनाऽत्र किमुक्तेन सञ्जीवयति मानवम् ॥ २०६९ ॥
सूच्यग्रेण च दातव्यो नखदन्तान्तरेष्वपि।
कारयित्वा तु जिह्वाग्रे पादाग्रे ब्रह्मरन्ध्रके ॥ २०७० ॥
दीयते शङ्खदेशे सर्वाङ्गे दाहशोणिते।
मोहस्तु विनिवर्तेत रसलक्षणमुत्तमम् ॥ २०७१ ॥
दधिभक्तं सुखं देयं दुग्धहीनन्तु दापयेत्।
द्राक्षाखर्जूरकं दद्यात्सर्वाङ्गे दाहसम्भृते ॥ २०७२ ॥
गाढमोहे समुत्पन्ने सिञ्चेत्क्षीरेण मस्तकम्।
सूचिकाभरणो नाम रसः सर्वज्ञसूचितः ॥ २०७३ ॥

र श , सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा ४ तोले, गन्धक ८ तोले, खपरिया ४ तोले, नाग और वङ्गभस्म २–२ तोले, फोलादभस्म १ तोला, सुवर्ण और रजतभस्म २–२ तोले, हीराभस्म ४ रत्ती, प्रवालभस्म ४ तोले, गोमेदभस्म २ तोले, मोती ४ तोले, अभ्रकभस्म सवसे सोलहवाभाग लेकर सवकी नीलवर्णकज्जलीकर १६ वाभाग नवसादर मिलाकर ६–७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें भरकर वालुकायन्त्रमें रख शलाकासे गन्धकजारणकर मुंह

वन्दकर ३२ पहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर चन्द्रोदयकी-तरह शीशीको फोड़कर ऊपरलगाहुआ सिन्दूर और नीचे रहीहुई भस्में निकालकर इकट्ठीकरले। सिन्दूरकेऊपर कुछ गन्धक या नवसादरकीभस्म रही हो तो उसे फेंकदे। फिर तलस्थभस्म और सिन्दूरको १-१ दिन मर्दनकर मछली, भैंसा, मोर, बकरा, मनुष्य और सूअरकेपित्तोंकी १००-१०० भावनाएं देकर सबकी बराबर अम्बरमिलाकर फणीकालेसापको क्रोधयुक्तकर उसका ज़हर और पित्ता निकालकर उनसे १-१ भावना देकर तावेकी डिब्बीमें रखलेवे। नानातरहके वाजोंकेसाथ देव, ब्राह्मण, योगी, कुमारी, भैरव और गुरुलोगोंका पूजनकरे। महाघोरसन्निपात और भयङ्करसर्पदंशमें शीताङ्ग, दृष्टिवध, नाडीका विषमगमन, स्मृति, श्रुति और सञ्ज्ञाकानाश, हिचकी, श्वास, मूर्च्छा, विकलता इत्यादिचिह्नोंके उपस्थितहोनेपर सूचीके अग्रभागसेलेकर नख और दांतोंके अन्दर अथवा ब्रह्मरन्ध्र, शङ्ख, और हृदयप्रदेशमें कुशपत्रप्रभृतिसे रक्तनिकालकर उसमें शामिलकरनेसे समस्तअङ्गमें दाह और रक्तका निर्गमनहोनेलगे और मोह निवृत्त होजाय उसवक्त समझना कि यह जीवेगा। अधिकभूखलगनेपर दही, भात, द्राक्ष और खजूर खानेकोदे। दूध भूलकर भी न दे। दाहहोनेपर मत्थेपर दूधकीधाराअथवा पोतेदे। इससे मृतप्रायभी अच्छाहोजाताहै ॥ ४७१ ॥

४७२ सूचिकाभरणरसः (सप्तदशः)

पारदं गन्धकं लोहं ताम्रं रौप्यञ्च हेमजम् ।
राजावर्तञ्च गगनं तुत्थकं हेममाक्षिकम् ॥ २०७४ ॥
मित्रञ्च मौक्तिकञ्चैव समभागानि कारयेत् ।
व्योषक्वाथेन सम्मर्द्य वटीं कोलप्रमाणतः ॥ २०७५ ॥
निक्षिपेत्कृष्णसर्पस्य जठरे वटिकां बुधः ।
आस्यञ्च सुदृढं कृत्वा मृत्स्नाभाण्डे विनिक्षिपेत् २०७६
सप्तधा वर्तयेत्तस्य भाण्डं चुल्ल्यामधिश्रयेत् ।
त्रिदिनं तस्य चण्डाग्नौ पक्त्वा शीतं समुद्धरेत् २०७७
खल्वे व्योषाम्बुना मर्द्य पाच्यं यत्पूर्ववत्क्रिया ।
मात्स्यमाहिषमायूरनाकुलच्छागमेव च ॥ २०७८ ॥
सूचिकाभरणं तं हि रसं सर्वत्र योजयेत् ।
पूजयेद्रसराजस्य गुरूणां शिवयोगिनाम् ॥ २०७९ ॥
गणेशं भैरवञ्चैव पूजयेच्च प्रयत्नतः ।
हस्तिदन्तमये भाण्डे निक्षिपेत्सुदृढं बुधः ॥ २०८० ॥
सूच्यग्रेण ददीतास्य ब्रह्मरन्ध्रे च बुद्धिमान् ।
ब्रह्मस्थाने च ह्यङ्गुष्ठे स्रावयेद्रुधिरं तदा ॥ २०८१ ॥
मर्दयेद्धे सुतैलं तु सूचिकाभरणे रसे ।
पथ्यञ्च दधिभक्तन्तु हिमकर्पूरलेपनम् ॥ २०८२ ॥
ईश्वरेण यथा दत्तो धन्वन्तरिरथाऽग्रहीत् ।
धन्वन्तरिं नमस्कृत्य यशः प्राप्नोति दुर्लभम् ॥२०८३॥
दत्तश्चेत्तु नरेन्द्रेऽयं यशस्वी जायते नरः ।
तमेव प्रकरं कुर्यात्सूचिकाभरणो रसः ॥ २०८४ ॥

अपमृत्युविनाशार्थमायुष्यवर्धनाय च ।
जनानां सुखरूपस्तु कथितः शम्भुना स्वयम् २०८५

र. शं., सन्निपाते।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, ताम्र, रजत, सुवर्ण, लाजवर्द, अभ्रक, तुत्थ, सुवर्णमाक्षिक, लसनियां, मोती इनकीभस्में समभागलेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर त्रिकटुकेकाथसे १-२ दिन मर्दनकर बेरबराबर गोलियें बनाकर तत्क्षणमारेहुए कालेसापके पेटमें डालकर मुंहको अच्छीतरह रेशमके डोरेसे सींकर मिट्टीकेबर्तनमें ७ घेरे लगाकर रखदे। फिर तमाम हण्डीपर वज्रमिट्टीसे ७ लेपदेकर मुंहको अच्छीतरह बन्दकरे। सूखजानेपर चूल्हेपर चढ़ाय ३ दिनकी कड़ी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर त्रिकटुकेक्काथसे एकदिन मर्दनकर बेरबराबर गोलियें बनाय दूसरे सर्पके पेटमें रख ३ दिनकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर गोलियोंको निकाल मछली, भैंसा, मोर, नकुल और बकरेकेपित्तोंसे १-१ दिन मर्दनकर गुरू, योगी, गणेश और भैरवकी पूजाकर हाथीदातकी डिब्बीमें रखछोड़े। सन्निपातमें मृतावस्थाहोनेपर ब्रह्मरन्ध्रमें रक्त निकाल सूच्यग्रभागसे लेकर घर्षणकरनेसे सञ्ज्ञाको प्राप्त होगा। इसप्रयोगमें इस बातका ध्यान रक्खेकि चीरा लगनेपर जहा रक्तनिकले वहापर दवाका प्रयोगकरे। पानीनिकले तो निर्जीव समझकर उसपर मेहनत न करे। अत्यन्तभूख और दाह मालूम पड़नेपर दहीभात खानेको देवे। चन्दन और कपूरका लेपकरे ॥ ४७२ ॥

४७३ सूचिकाभरणरसः (अष्टादश.)

तीक्ष्णं मुण्डार्कवैरूप्यनागपारदगन्धकम् ।
ताप्याभ्रालशिलाम्लेच्छविषवैक्रान्तमौक्तिकम् २०८६
सप्रवालं समं सर्वं सप्तधा भावयेत्पृथक् ।
जयाजयन्तीनिर्गुण्डीभूमिजम्बूत्थचित्रकैः ॥ २०८७ ॥
जम्भामृताद्रकव्योषैः काचकूप्यां विनिक्षिपेत् ।
सप्तमृत्कर्पटं कृत्वा सैकतेऽग्निमधो दिनम् ॥ २०८८ ॥
ज्वालयेद्रसराजं तं शीतं कूपीस्थमाहरेत् ।
तदर्द्धममृतं दत्त्वा विषत्रिकटुचित्रकैः ॥ २०८९ ॥
विजयाऽऽकल्लकार्द्रैश्च सप्तधा भावयेत्पृथक् ।
पित्तै र्माहिषमायूरच्छागकोलझषोद्भवैः ॥ २०९० ॥
गरलेन च सिद्धः स्यात्सूचिकाभरणो रसः ।
यवप्रमाणमात्रोऽयं यवत्रिकटुकाम्बुना ॥ २०९१ ॥
सन्निपातेषु सर्वेषु शैत्यस्वेदप्रलापके ।
दातव्यो मूढतायाञ्च दन्तजिह्वागलग्रहे ॥ २०९२ ॥
सूच्याऽङ्गुष्ठनखे भित्त्वा तालुके च विनिक्षिपेत् ।
प्राणे वा काञ्जिकै र्धारा तालुकाङ्गुष्ठमूलयोः ॥२०९३॥
दातव्यो जलयोगश्च क्रमः कार्योऽम्बुयोगिकः ।
महादेवोदितश्चाऽयं रसो रसमहोदधौ ॥ २०९४ ॥

र शं, सन्निपाते।

भाषा—फौलाद, मुण्ड, तांवा, अकीक, नाग इनकीभस्में, शुद्ध पारा और गन्धक, सोनामाखी, अभ्रकभस्म, शुद्धहरिताल, मैनसिल, शिंगरिफ, वछनाग, वैक्रान्त, मोती, प्रवाल इनकीभस्में समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर भाग, जैंती, निर्गुण्डी, जामुन, चित्रक, जमीरी, गिलोय, अदरख और त्रिकटु इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७–७ भावनाएं देकर आतशीशीशीमेंभर मुंहवन्दकर समस्तपर ६–७ कपड़मिट्टीकरदे। सूखनेपर वालुकायन्त्रमें उल्टी रख एकदिनरातकी आंचदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इससे आधा शुद्धवछनाग मिलाकर वछनाग, त्रिकटु, चित्रक, भाग, अकल्करा और अदरखके रसोंसे ७–७ भावनाए देकर भैंसा, वकरा, सूअर, मछली इनकेपित्त और सर्पविपसे १–१ भावनादेकर रखछोड़े। इसमेंसे एकयवप्रमाण मात्रा जव और त्रिकटुकेक्वाथकेसाथ सन्निपातमें देनेसे ठंढापसीना, प्रलाप, मूढता, दांत, जिह्वा और गलेका जकड़ना येसव निवृत्तहोतेहैं। अत्यन्त वेहोशी होनेपर अंगूठा और तालुमेंसे रक्तनिकालकर उसस्थानपर घर्षणकरनेसे जल्दी होशमें आजाताहै। अत्यन्त दाह मालूम पड़नेपर काञ्जीकी धारा देवे और जलकायोगकरावे ॥ ४७३ ॥

४७४ सूचिकाभरणरसः (ऊनविंशः)

माक्षीकनीलाञ्जनतुत्थकाभ्र-
शिलालहिङ्गूलरसायनानि।
सवज्रमुक्ताफलविद्रुमाणि
खल्वे विनिक्षिप्य विमर्दितानि ॥ २०९५ ॥
हरिप्रियस्नेहरजोयुतेन सगन्धकेनाल्पपुटानि चाष्टौ।
दद्याज्जलस्थे कमठाख्ययन्त्रे यन्त्रे पचेद्भूधरसञ्ज्ञके च
मत्स्यकासवाराहमयूरच्छागपित्तविपफेनसमेतः।
आर्द्रकद्रवनिवद्धगुटीकस्सन्निपातरिपुरेप रसेन्द्रः ॥
कर्पूरेणार्द्रकेणाऽथ देयः श्रेयः कृते रसः।
अथवा योग्यमास्थेयं दृष्ट्वाऽवस्थां गरीयसीम् २०९८
रोगियोगीन्द्रदेवद्विजगुरुसुरभीयोगिनीवैद्यकन्या-
अभ्यर्च्याऽमून्खगकुलनकुलद्वीपिवृन्दप्लवङ्गान्।
ध्यायन्भूताधिनाथं शुचिपटपिहितं पट्टमध्यास्य धीरो,
विप्राशीर्वादपूर्वं रसमथरसं मात्रयोपाददीत॥२०९९॥

र. (मा.), सन्निपाते।

भाषा—सोनामाखी, सुरमा, तुत्थ, अभ्रक, मैनसिल, हरिताल, शिंगरिफ, हीरा, मोती, प्रवाल, इनसवकीभस्में समभागलेकर वारीकचूर्णकर आककीजड़कीछाल और शुद्धगन्धक अष्टमांश मिलाकर धतूरेकेतैलसे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर कुम्भपुटकी आंचदे। ऐसे ८ आंचें देनेके बाद कच्छपयन्त्रमें रख षड्गुणगन्धकजारणकर धतूरेकेतैलसे मर्दनकर गोलावनाय पके पानोंमें लपेटकर भूधरपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मछली, भैंसा, सूअर, मोर, वकरा इनकेपित्त तथा अफीम और अदरखकेरसोंसे १–१ दिनमर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली योगी, देव, द्विज, गुरू, गौ, योगिनी, वैद्य और कन्याओंका पूजनकर पक्षी, कुलदेवता, नकुल, व्याघ्र, वानर, भूतनाथ इनको प्रणामकर अच्छेवस्त्र पहिनकर ब्राह्मणोंका आशीर्वाद लेताहुआ कपूर और अदरखकेसाथ अथवा अवस्थोचितानुपानकेसाथ १–१ गोली लेवे। अत्यन्तदाहहोनेपर पित्तघटित तमामयोगोंमें जलधाराका प्रयोगकरे क्योंकि इससे पित्तघटित योगोंका वीर्य वढ़कर रोगको नष्टकरतेहैं। जहां कोई दवा काम न करतीहो वहांपर पित्तघटितयोगदेनेसे इसतरहका दाह उत्पन्नहोताहै कि वह जलाभिपेकविना शान्तहोना मुश्किलहोताहै और उसी गर्मीके मारे तमामधातुओंका शोपहोकर मनुष्यका मृत्युभी होजाताहै। तमामतरहकी चिकित्साए करके जिससमय आदमी निराशहोतेहैं और रक्तप्रसरण वन्दहोताहै उससमयपर वैद्य अन्तिमक्रिया समझकर ऐसेप्रयोगोंका योग करताहै। उससमय तमामधातुएं शुष्कहोजातीहैं और यह एक जलतीआग शरीरमें दाखिलहोतीहै तव जलसेकके अतिरिक्त उसका और इलाजही क्याहै ?। इसीलिये उस ज्वालाको शान्तकरनेकेलिये वाह्याभ्यन्तर शीतक्रिया लाचारीसे करनी पड़तीहै। रिक्तस्रोतहोनेकीवजहसे अत्यन्त विक्रिया न हो इसलिये तैल अथवा घीका अभ्यङ्ग पहिले कियाजाताहै। इस जलाभिपेकका अत्यन्तशीतसे कांपना, मलमूत्रकात्यागहोना, यथास्थितसञ्ज्ञाकी प्राप्ति ये भद्र परिणामहैं। यदि ये परिणाम नजर न आवें तो उसे मृतावस्थ समझकर छोड़दे उसपर अन्य किसीभी दवाका प्रयोग न करे ऐसा यह आयुर्वेदका सिद्धान्तहै। इसको समझकर काममें लावे। वैद्यकी थोड़ीसी गलती और असावधानीपर रोगीका मरना जीना निर्भरहै इसलिये वहुतसंभालकर कामलेवे॥

४७५ सूचिकाभरणरसः (विंशः)

स्वर्णं तारभुजङ्गवङ्गदरदं फेनायसं शुल्वकं,
ताप्यं तालयुतं सुमर्दितदृढं सूतेन्द्रमिश्रीकृतम्।
वारंवारकटुत्रयान्वितमिदं शृङ्गीविषं टङ्कणं,
सम्भाव्यं खरलेन तापितमिदं निम्बूरसै र्जारितम् ॥
छागोत्थेन युतं वराहशिखिजै र्मात्स्येन पित्तेनयुक्,
एकैकेन समाहृतेन नियतं पित्तेन सम्भावितम्।
राजीमानसमं निहन्ति सहसा दोषत्रयं दारुणं,
सञ्ज्ञानाशगतश्च हास्यनिरतं कालान्तकम्पान्वितम्॥
सर्वोपायमिदा विधानविधिना मुक्तस्य वैद्योत्तमैः,
शून्यस्य प्रहितेन्द्रियस्य सहसा भूमौ गतस्याऽधिकम्
शीताङ्गस्य सितापयःसहचरं दत्ते पुनर्जीवितं,
दत्त योऽत्र स सूचिकाभरणकं सूच्यग्रमात्रं रसम् ॥

र. (मा), रससारसङ्ग्रह, सन्निपाते।

भाषा—सुवर्ण, रजत, नाग, वङ्ग, लोह, ताम्र, पारा, इनकीभस्में, शुद्ध शिंगरिफ, अफीम, सुवर्णमाक्षिक और हरिताल सममागलेकर इकट्ठे मर्दनकर त्रिकटु, सींगिया, सुहागा,

नीव्र इनके द्रवोंसे तप्तखल्वमें ७–७ भावनाएं देकर वकरा, सूअर, मोर और मछलीके पित्तोंसे १–१ भावना देकर राईप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अदरखप्रभृतिके रससे सुईके अग्रभागमें आवे इतना खिलाने और रक्तमें संयोग करनेसे सञ्ज्ञानाश, महाहास्य और मरणान्तकम्पयुक्त, तथा इन्द्रियोंकीशून्यतासहित सन्निपातको यह दूरकरताहै । जब दम्भादि उपाय और औषधोपचार निष्फल होनेसे असाध्य समझकर वैद्यलोगोंने छोड़दियाहो और मुर्दासमझकर ज़िमीनपरभी उतारलियाहो उससमय इसकेप्रयोगमे पुनर्जीवितलब्धहोताहै । शीताङ्गमें शक्करयुक्त दूधकेसाथ देवे और जलसेकादि सब यथोचित उपचार करे ॥ ४७५ ॥

४७६ सूचिकाभरणरसः (एकविंशः)

कृष्णोन्मत्तकतैलधूर्तजरसैः सम्मूर्च्छितं गन्धकं,
दत्त्वा हिङ्गुललोहताम्रकनकं सर्वाधिकञ्चाऽमृतम् ।
पित्ते भावय नागराजगरसै र्दद्यात्त्रिदोषे ज्वरे,
गुञ्जामात्रमिदं सितामधुयुतं सेव्यञ्च पथ्यं दधि २१०३

र. क, सन्निपाते ।

भाषा—कालेधतूरेके तैल और पत्तोंकेरससे गन्धकको पकाकर शुद्धशिगरिफ, लोह, ताम्र और सुवर्णभस्म वरावरप्रमाणसे मिलाकर सबकीवरावर शुद्धवछनाग मिलाय यथालाभ पित्तोंकी भावना देकर अदरख और तुलसीकेरसोंकी ३–३ भावनाए देकर १–१ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शक्कर और मधुकेसाथदेनेसे यह समस्तसन्निपातोंको दूरकरताहै । अत्यन्तभूखलगनेपर दहीभात देना ॥ ४७६ ॥

४७७ सूचीमुखरसः (प्रथमः)

रसेन ताम्रपत्रकं विलिप्य गन्धकेन च,
क्षिपेत्तु सूरणोदरे सुवेष्ट्य गोमयेन तम् ।
पचेत तं महापुटे सुशीतलं समुद्धरेत्,
विषाग्निपित्तगन्धकै र्विमृद्य तं पचेद्दिनम् ॥ २१०४ ॥
शरावसम्पुटे रसः सुरक्तरूपमेति सः,
रसस्तु सूचिकामुखो निरूपितोऽस्य तण्डुलम् ।
ददीत वातशान्तये कफाग्निमान्द्यनुत्तये,
यथोक्तभक्तभोजनं त्यजेत चाम्लराजिके ॥ २१०५ ॥

र दी, वातव्याधौ ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर जङ्गलीसूरणके रसमें घोटकर चतुर्गुणित कण्टकवेधी ताम्रपत्रोंपर लेपदेकर सुखाकर पुष्टजङ्गलीसूरणमें रखकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर महापुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर वछनाग, चित्रक और गन्धक प्रत्येक ताम्रके वरावर मिलाय पांचोंपित्तोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर एकदिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर लालरङ्गकी भस्मको निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ चावल तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे वात और कफव्याधि, मन्दाग्नि इनको यह नष्टकरताहै । इसमें खट्टी चीज़ें और राई न खावे ॥ ४७७ ॥

४७८ सूचीमुखरसः (द्वितीयः)

सूतं गन्धकतालकं मणिशिलां ताप्यं शुभं तुत्थकं,
जेपालं विषटङ्कणं मधुफलं कृत्वा समांशं दृढम् ।
कृत्वा कज्जलिकां विषोल्वणफणैः पित्तैश्च सम्भावये-,
त्क्षिप्त्वा सीसककूपिके रसवरं सूचीमुखं नामतः ॥
ब्रह्मद्वारविकीर्णलोहितलवं गुञ्जैकमात्रं ददे–,
द्दत्वा सम्पुटबद्धतन्द्रिकधनुर्वाते सशाखाहिमे ।
कासं श्वासमरोचकं प्रलपनं कम्पञ्च हिक्कामयम्,
मूकत्वं वधिरत्वमुन्मदमपस्मारं जयेत्तत्क्षणात् २१०७

र. र स., र को, यो सं, र क. यो, र शि., सन्निपाते । र. शि. सूचिकाभरणेति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, मैनसिल, सोनामाखी, तुत्थ, जमालगोटा, और वछनाग, भुनासुहागा, महुआ समभाग लेकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीकर सबचीज़ोंको मिलाय ज़हरीकालेसर्पकेपित्तसे १–२ दिन मर्दनकर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती ब्रह्मरन्ध्रपर पाछदेकर रक्तमें घर्षणकरनेसे धनुर्वात, शीताङ्ग, कास, श्वास, अरुचि, प्रलाप, कम्प, हिक्का, मूकता, वधिरता, उन्माद, अपस्मार इनसबको यह तत्क्षण नष्टकरताहै ॥ ४७८ ॥

४७९ सूचीमुखरसः (तृतीयः)

सौवीरं द्विगुणं निधाय तरणिक्षीरे घटे स्नेहले,
ब्राह्मयं नागमनुक्षिपेल्लघुतरं क्षुण्णं कृतं मज्जितम् ।
तद्वक्त्रं परिरुद्ध्य भूमिनिहितं सन्दह्यमानं समु-,
द्धृत्याऽऽचूर्ण्य विनिक्षिपेन्मृतरसं तत्पादभागं भिषक्
पिष्टः खल्वतले भवेद्रसवरः सूचीमुखो मस्तके,
सूच्यग्रेण निवेशितोऽद्भुततरं सौवीरयोगाज्जयेत् ।
तन्द्राशैत्यसुसन्निपातपवनापस्मारभूतग्रहान्,
दध्यन्नंससितं ददीत गदिने शीतोपचारा हिताः ॥

र. शं, र ल., र का सन्निपाते ।

भाषा—मिट्टीके चिकने वर्तनमें दोतोले सुरमाडालदे और ब्राह्मणजातिके एकनागके (मुक्तारूप्यप्रभा ये च कपिला ये च पन्नगाः । सुगन्धय सुवर्णाभास्ते जात्या ब्राह्मणा स्मृता. ॥) छोटे २ टुकड़े करके डालकर आकके दूधसे टुकड़े डूबनेलायक वर्तनको भरके वज्रमिट्टीसे मुंहबन्दकर जिमीनमें गाड़दे और ऊपरसे रातदिन अग्नि जलावे जिसमें कि घड़ेका तमाम पदार्थ जलकर राख होजाय । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इससे चतुर्थांश पारदभस्म मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे सूईके अग्रभागसे लेकर खिलाकर काञ्जीपिलावे और रक्तमें प्रवेशकरे तो तन्द्रा, शीताङ्ग, सन्निपात, वातविकार, अपस्मार, भूतग्रह ये सब नष्टहोतेहै । होश आनेपर अत्यन्तभूख मालूम हो तो शक्करकेसाथ दहीभातदेवे । दाह मालूम पड़नेपर शीतोपचार करे ॥ ४७९ ॥

४८० सूतभस्मयोगः (प्रथमः)

विश्वमैरण्डतैलेन हिङ्गुसौवर्चलान्वितम्।
मृतसूतकसंयुक्तं भक्षितं सर्वशूलहृत्॥
पक्तिशूलं तथैवान्नद्रवशूलं विनाशयेत्॥ २११० ॥

व. रा, शूलाधिकारे।

भाषा—सोंठ, एरण्डतैल, भुनीहींग, सञ्चल, इनकेसाथ पारेकीभस्म उचितप्रमाणमें देनेसे पक्तिशूल, अन्नद्रवशूलप्रभृति समस्तशूल नष्टहोतेहै॥ ४८०॥

४८१ सूतभस्मयोगः (द्वितीयः)

शङ्खपुष्पीवचाब्राह्मीकुष्ठैलाजरसैः सह।
सूतभस्मप्रयोगोऽयं रक्तिकाद्वयमानतः॥
सर्वापस्मारनाशाय महादेवेन भाषितः॥ २१११ ॥

र सं, रसायनस, र सु, र. चं, र म. मा, र का, व., र र दी अपस्मारे।

भाषा—शङ्खाहूली, वच, ब्राह्मी, कुठ, इलायची, मेंढासींगी, इनके स्वरस अथवा क्वाथोंसे २–२ रत्ती पारदभस्म देनेसे सबतरहके अपस्मार नष्टहोतेहै॥ ४८१॥

४८२ सूतभस्मयोगः (विस्फोटकारिः) (तृतीयः)

गुडूचीनिम्बजैः क्वाथैः खदिरेन्द्रयवाम्बुना।
कर्पूरत्रिसुगन्धिभ्यां युक्तं सूतं द्विगुञ्जकम्॥
विस्फोटं त्वरितं हन्याद्वायुर्जलधरानिव॥ २११२ ॥

र. सु., विस्फोटकरोगे।

भाषा—गिलोय और नीमका क्वाथ अथवा खैर और इन्द्रजवका क्वाथ इनमें कपूर और त्रिसुगन्धिका योगकर इनकेसाथ २–२ रत्ती पारदभस्म देनेसे समस्तविस्फोटक नष्टहोतेहै॥४८२॥

४८३ सूतभस्मयोगः (चतुर्थः)

ससूतमरुचिघ्नं स्यात्तिन्तिडीकगुडोषणम्।
कारव्यजाजीरुचकं मृद्वीकाक्षौद्रदाडिमम्॥ २११३॥

यो. म, र स, र र दी, र सु, अरोचके।

टि०—रसेन्द्रसारसङ्ग्रहे शुद्धसूतयोग इति नाम। र स, र सु ग्रन्थयो "कारव्यजाजी रुचक मृद्वीका क्षौद्रदाडिमम्" इत्यस्य स्थाने "मृद्वीका जीरक कृष्णा मातुलुङ्गाम्लवेतसम्" इति पाठ।

भाषा—समाक (यूनानी), गुड, मरिच, कारवी, जीरा, सञ्चल, द्राक्ष, अनार, मधु, इनकेसाथ १–१ रत्ती पारदभस्मका योग करनेसे अरुचि नष्टहोतीहै॥ ४८३॥

४८४ सूतभस्मयोगः (पञ्चमः)

लवणाम्बुवरायुक्तं ससूतं यः पिबेन्नरः।
तस्य नश्यन्ति वेगेन मूत्राघातास्त्रयोदश॥ २११४॥

यो म, र का, र र दी, रसायनस, मूत्राघाते।

टि०—रसकामधेनौ लवणक्षारसम्युक्तमिति पाठो दृश्यते। रसरत्नदीपिकायां वराम्बुलवणोपेतमिति पाठ।

भाषा—सैंधानमक, सुगन्धवाला, त्रिफला और सिरका इनकेसाथ पारदभस्म उचितमात्रामें देनेसे १३ प्रकारके मूत्राघात नष्टहोतेहैं॥ ४८४॥

४८५ सूतभस्मयोगः (श्वयथुनाशनः) (षष्ठः)

मण्डूरतीक्ष्णं सुलभञ्च मारितं
सूतं बलातोयनिघृष्टपक्वम्।
पुनर्नवाया वननादजेन
स्याद्भस्मसूतं श्वयथूपघाति॥ २११५॥

रसेन्द्रमं., शोथाधिकारे।

भाषा—मण्डूर, फौलाद, ताम्र और पारदभस्म समभाग लेकर बलाकेस्वरससे मर्दनकर गोलाबनाय गजपुटकी आंचदे। इसमेंसे १–१ रत्ती पुनर्नवा और काटेवालीचौलाईके रसकेसाथदेनेसे शोथ नष्टहोताहै॥ ४८५॥

४८६ सूतभस्मयोगः (सप्तमः)

कान्तं गन्धकसहितं सूते जीर्णञ्च तत्कृतं भस्म।
मूषायन्त्रे निहितं साक्षाद्यक्ष्मप्रहृत् स्यात्॥२११६॥

रसेन्द्रमं, यक्ष्मणि।

भाषा—शुद्ध बुभुक्षितपारेमें कान्तवीजका जारणकर षड्गुणगन्धकजारणकरके भस्म बनावे। इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह राजयक्ष्मको नष्टकरताहै॥४८६॥

४८७ सूतभस्मयोगः (सुधानिधिरसः) ८

कणामधुयुतं सूतं मूर्च्छायामनुशीलयेत्।
शीतसेकावगाहादि सर्वाङ्गे पीडनं हठात्॥
सुधानिधी रसोनाम मदमूर्च्छाविनाशनः॥ २११७॥

र स, ध, र प्र, र क ल, र. र. दी, र सु, र. क, यो र, नि र, यो. म, यो. त, र का, भा प्र, वै द, र च., रसायनस, मूर्च्छाधिकारे। र का, मूर्च्छाहरसूत इति नाम।

भाषा—पीपल और मधुकेसाथ पारदभस्मका योगकर उचितमात्रामें देकर जलकीधारा, अवगाह और सर्वाङ्गपीडनकरनेसे मद और मूर्च्छाका नाशहोताहै॥ ४८७॥

४८८ सूतभस्मयोगः (शीतपित्तहरः) ९

यवानीगुडसम्मिश्रो भस्मसूतो द्विवल्लकः।
शीतपित्तं निहन्त्याशु कटुतैलेन मर्दितः॥ २११८॥

यो म, र का, शीतपित्ते।

भाषा—अजवाइन और गुड़केसाथ २ से ६ रत्तीतक पारदभस्म देकर कटुतैलकी मालिशकरनेसे शीतपित्तनष्टहोताहै॥४८८॥

४८९ सूतभस्मयोगः (दशमः)

मुस्तापर्पटकैरण्डकषाये भस्मसूतकम्।
गुञ्जामात्रं मूर्च्छितं वा देयं वातज्वरापहम्॥२११९॥

चि र भ, वातज्वरे।

भाषा—नागरमोथा, पित्तपापड़ा और एरण्डकीजड़केक्वाथकेसाथ १ रत्ती पारदभस्म अथवा मूर्च्छितपारा देनेसे वातज्वर नष्टहोताहै॥ ४८९॥

४९० सूतभस्मयोगः (एकादशः)

खदिराष्टकयोगेन भस्मसूतो निहन्ति ताम् ॥२१२०॥

र. का, कोद्रवाख्यमसूरिकायाम् ।

भाषा—खैर, त्रिफला, नीमकी छाल, परवल, गिलोय और अडूसेके क्राथकेसाथ १ से २ रत्तीतक पारदभस्मका योगकरनेसे मसूरिका नष्टहोतीहै ॥ ४९० ॥

४९१ सूतभस्मयोगः (द्वादशः)

चिञ्चापामार्गशिग्रूत्थकुरण्टीस्नुक्पलाशजैः ।
स्वर्जिक्षारै भस्मसूतो जम्भाम्भोमर्दितो द्रवैः २१२१
दन्त्युत्थै भक्षयेदस्मात्सर्वाजीर्णविनाशनः ।
रसे यत्र क्षारयोगस्तत्र क्षारः परिस्रुतः ॥ २१२२ ॥

र. क, अजीर्णे ।

भाषा—इमली, अपामार्ग, सहिजन, कटसैय्या, थूअर, पलाश और सज्जीके क्षारोंकेसाथ अथवा जभीरीकेरसकेसाथ अथवा दन्तीमूल स्वरसकेसाथ १–१ रत्ती पारदभस्म देनेसे समस्त अजीर्ण नष्टहोतेहै ॥ ४९१ ॥

४९२ सूतभस्मयोगः (त्रयोदशः)

आटरूपनवपल्लवद्रवं पालिकं सरसभस्म वल्लकम् ।
कर्षसम्मितमधुप्रयोजितं प्राश्य नाशयति रक्तपित्तकम्

र कौ., रसायनस, यो. र., नि र, वृ. यो त, रक्तपित्ते ।

भाषा—अडूसेकेनवीनपत्तोंके १ पल स्वरसमें १ से ३ रत्ती तक पारदभस्म और एककर्ष मधु मिलाकर प्रयोगकरनेसे रक्तपित्त नष्टहोताहै ॥ ४९२ ॥

४९३ सूतभस्मयोगः (चतुर्दशः)

दशमूलकषायमिश्रितं भवबीजस्य च भस्मकं परम् ।
दशपिप्पलिचूर्णसंयुतं त्रयजातज्वरनाशकारकम् ॥

चि. क्र, र क ल, र. र दी, क्रिम्यधिकारे ।

टि०—दशमूलीजलयुत सूत हिकासु योजयेदिति र. क ल, र र दी एतयो योग कल्पितोऽस्ति परन्तु पिप्पलीयुक्तदशमूलकषायस्याऽधिककार्यकरत्वादेक एव योगो बोध्य ।

भाषा—दशमूलकेकाढ़ेमें १० पीपलकाचूर्ण और २ रत्ती पारदभस्म मिलाकर देनेसे त्रिदोपजसन्निपात नष्टहोताहै ॥४९३॥

४९४ सूतभस्मयोगः (पञ्चदशः)

रसभस्म वल्लमात्रं लीढ्वा मधुना पिबेदनु क्षौद्रम् ।
कोष्णाम्बुना समेतं स्थौल्यं मेदःकृतं जयति २१२५

यो र, वै. क, वै चि, व. रा, रसायनसं., मेदोरोगे ।

भाषा—१ से ३ रत्तीतक पारदभस्मको मधुकेसाथलेकर कदुष्णपानीमें मधुका शरवत पीनेसे मेदसे जायमान स्थूलता नष्टहोतीहै ॥ ४९४ ॥

४९५ सूतभस्मयोगः (षोडशः)

हिङ्गुशुण्ठीयवक्षारपथ्याकृष्णाविडाग्निभिः ।
कुष्ठाग्निमन्थरुचकैः पुष्करेन्द्रस्य वाम्बुभिः ॥
हृद्रोगमग्निमन्दत्वं सूतः पीतो विनाशयेत् ॥ २१२६ ॥

भैं. सा., हृद्रोगे ।

भाषा—हींग, सोंठ, यवक्षार, हर्रे, पीपल विडनमक, चित्रक, कुठ, अरणी, सचल, पोहकरमूल, कुरैयाकीछाल, इनकेकाढेकेसाथ १–१ रत्ती सूतभस्मका योगकरनेसे हृद्रोग और मन्दाग्नि नष्टहोतेहैं ॥ ४९५ ॥

४९६ सूतभस्मयोगः (सप्तदशः)

भस्मसूतमजाक्षीरैः कणानिष्कैः पलैः सह ।
व्योषगन्धककक्षौद्रै र्वा भक्षयेद्धक्षयेत्क्षयम् ॥ २१२७ ॥

र र, र. को, र. क. ल., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पीपल ४ माशे, मास, त्रिकटु, गन्धक और मधु अथवा वकरीकादूध इनमेंसे किसी एककेसाथ १ रत्ती पारदभस्म लेनेसे क्षय नष्टहोताहै ॥ ४९६ ॥

४९७ सूतभस्मयोगः (अष्टादशः)

सभस्मसूतटङ्कणं कणामजापयोयुतम् ।
फलत्रयैः कटुत्रयैः समाक्षिकैः क्षयक्षयः ॥ २१२८ ॥

चि क्र., क्षये ।

भाषा—पीपल और वकरीकादूध, मधुयुक्त त्रिफला अथवा त्रिकटु, भुनासुहागा इनमेंसे किसीएककेसाथ १ रत्ती पारद भस्मका प्रयोगकरनेसे क्षय नष्टहोताहै ॥ ४९७ ॥

४९८ सूतभस्मयोगः (ऊनविंशः)

सक्षौद्रमाम्रजम्बूत्थं पिबेत्क्वाथं रसान्वितम् ।
अथ पित्तज्वरे प्रोक्तं रसमत्र प्रयुज्यते ॥ २१२९ ॥

र क ल., र र दी., तृष्णायाम् ।

भाषा—आम और जामुनकीछालके क्वाथमें मधु मिलाकर उसकेसाथ एकरत्ती पारदभस्म देनेसे पित्तज्वर नष्टहोताहै ४९८

४९९ सूतभस्मयोगः (विंशः)

किराताब्दाऽमृताशुण्ठीक्वाथाढ्या पर्पटाब्दयोः ।
पिप्पलीधान्यचूर्णाढ्या सूतो हन्त्यखिलाल्गदान् २१३०
पथ्यं निरामे दध्यन्नं सामे मण्डोऽथ यूषकः ।
रसवीर्यविवृद्ध्यर्थं मृद्वीका वाथ दाडिमम् ॥२१३१॥

र शि., सर्वरोगे ।

भाषा—चिरायता, नागरमोथा, गिलोय और सोंठ इनकाक्वाथ अथवा पित्तपापड़ा और नागरमोथेका क्वाथ अथवा पीपल और धनियेकेचूर्णकेसाथ १–१ रत्ती पारदभस्म देनेसे समस्तरोग नष्टहोतेहै । निरामव्याधिमें पथ्य दहीभात देना और साममें माड अथवा यूप देना । रसका वीर्य वढानेकेलिये द्राक्ष अथवा अनार खानेको देना ॥ ४९९ ॥

५०० सूतराजरसः (प्रथमः)

गन्धाश्मा सूतमुक्ताफलमखिलमिदं
बीजपूराम्बुमर्द्यं,

यामं गोलं विपाच्यं लवणमुपगतं
चीरमृद्भयां प्रवेष्ट्य।
सिद्धः स्यात्सूतराजो निखिलगदहरः
क्षौद्रकृष्णासमेतो,
यक्ष्माणं पाण्डुगुदजान् श्वसनकसनहृ-
द्व्याधिवातान्निहन्ति ॥ २१३२ ॥

र, क्षयाऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, मोती सब समभागलेकर विजोरेकेरससे मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर एकपहर लवणयन्त्रमें पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती पीपल और मधुकेसाथदेनेसे राजयक्ष्म, पाण्डु, ववासीर, श्वास, कास, हृद्रोग और वातरोग प्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५०० ॥

५०१ सूतराजरसः (द्वितीयः)

गन्धं सूतं शङ्खवैक्रान्तयुक्तं
कार्पासास्थिक्वाथतो वासरैकम्।
घृष्ट्वा गोलं हेमजे ताम्रजे वा
तारोत्थे वा सम्पुटे निक्षिपेत ॥ २१३३ ॥
पश्चात्कुर्यात्कान्तपाषाणलेपं
शुष्कं कृत्वा सम्पुटे तं पुटेत।
भाण्डे स्थूले शुद्धसामुद्रपूर्णे
शीतं पश्चात्सम्पुटं चूर्णयेत ॥ २१३४ ॥
दत्त्वा गन्धं पादभागं विपञ्च
चित्रार्द्रैस्तत्स्वेदयेल्लोहपात्रे।
दद्यात्पश्चाद्भावनां नागवल्ली-
नीरैः पित्तैरूयूपणार्द्रैस्त्रिसप्त ॥
प्रत्येकं स्यात्सूतराजस्ततोऽयं
सिद्धो योज्यः सर्वरोगेषु युक्त्या ॥ २१३५ ॥

र. दी, सर्वरोगे।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, शङ्ख और वैक्रान्तभस्म समभागलेकर विनौलेकेक्वाथसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय सुवर्ण, ताम्र अथवा रजतकेसम्पुटमें बन्दकर कान्तपाषाणका लेपदेकर शरावसम्पुटमें बन्दकर बड़ेमोटे घड़ेमें समुद्रनमककेबीचमेंरख ८ पहरकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर चतुर्थांश शुद्धगन्धक और वछनाग मिलाकर चित्रक और अदरखके रस अथवा क्वाथोंसे लोहेकेपात्रमें १–१ दिन स्वेदनकर पान, पित्त, त्रिकटु और अदरखकेद्रवोंमे २१–२१ भावनाए देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५०१ ॥

५०२ सूतराक्षसरसः

सूतस्य राक्षसमुखं पञ्चाशत्पुटदापनम।
अङ्कोल्लत्वग्रसैर्देयाः पञ्चविंशतिसङ्ख्यया ॥ २१३६ ॥
त्रयोदश पुटानि स्युश्चित्रमूलरसैः पुरा।
राजिकारसतो देयाः पुटा द्वादशसङ्ख्यया ॥ २१३७ ॥
कुमार्यैकादश पुटाः शङ्खकीटे दश ध्रुवम्।
पारिभद्रत्वचा देया नवाष्टौ भृङ्गराजतः ॥ २१३८ ॥
उन्मत्तेन तथा सप्त विजयोत्थैश्च षट् तथा।
विभावर्या तथा पञ्च चत्वारो भानुजा मताः ॥ २१३९ ॥
सोमराज्या त्रयो देया त्रिफलाया द्वयन्तथा।
एकमेकं त्रिकटुकै लवणेनैक एव हि ॥ २१४० ॥
भूमिनागैस्तथा पञ्च देयाः प्रक्षालनं विना।
एवं कृत्वा तथा मर्द्यो यथा स्याद्रेणुवद्रसः ॥ २१४१ ॥
ततः सूतं समुद्धृत्य रक्षयेत्सुप्रयत्नतः।
रहस्यं परमं वक्ष्ये शृणु शिष्य प्रयत्नतः ॥ २१४२ ॥
रसो राक्षसवक्त्रोऽयं सुवर्णं शुल्वतारकम्।
भक्षयेद्विविधान्धातून्समुद्रं वाडवो यथा ॥ २१४३ ॥
तत्पुनः सूतराजोऽपि तोलितोऽयं यथास्थितः।
कौतुकं मम चित्तेऽपि ज्ञानज्योतिरिदं पुनः ॥ २१४४ ॥
भक्षिताः सूतराजेन धातवः कुत्र यान्ति ते।
एतत्सर्वं समाचक्ष्व तत्त्वज्ञोऽसि यतो यते ॥ २१४५ ॥
ज्ञानज्योतिरुवाच—
अगस्त्येन यथा पीतं लीलयोदधिजं जलम्।
देहे न दृश्यते किञ्चिन्महावीर्येण धीमता ॥ २१४६ ॥
तथाऽयं रसराजोऽपि महावीर्यो महाबलः।
मुखबन्धं कथं तस्य रसराजस्य सम्भवेत् ॥ २१४७ ॥
रक्तसौवीरकं नीत्वा तीक्ष्णखड्गे च घर्षयेत्।
वह्नेरुपरि धातव्यं रेखा स्यात्प्रहरार्द्धके ॥ २१४८ ॥
सुवर्णाकारसदृशा तदा ज्ञेयं परीक्षितम्।
पारदस्य पले देयं सौवीरं माषमात्रकम् ॥ २१४९ ॥
वह्नियोगेन सम्मर्द्य ततो वदनबन्धनम्।
तस्य पारदराजस्य पूर्वोक्तगुटिकाश्चरेत् ॥ २१५० ॥
तेनैव रसराजोऽपि बध्यते युतसङ्ख्यया।
धातवो विविधाकारास्तदुक्तश्च यतीश्वरैः ॥ २१५१ ॥
पलमात्रं भवेत्सूतं द्विपलं गन्धकस्य च।
उभयोः कज्जलीं कृत्वा भल्लातकपलाष्टकम् ॥ २१५२ ॥
पलानि कृष्णतैलस्य चतुर्विंशतिसङ्ख्यया।
निम्बत्वग्रसकं प्रस्थद्वितयञ्च तथा स्मृतम् ॥ २१५३ ॥
ग्रीष्मकाले वसन्ते वा घर्मकाले विधीयते।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय छागीदुग्धेन कर्षतः ॥ २१५४ ॥
यामार्द्धं स्थापयेद्धर्मे कुष्ठिनो वैद्यकेसरी।
माषान्नरोटिकां दद्यात्कृष्णतैलेन संयुताम् ॥ २१५५ ॥
पथ्यमेतत्प्रदातव्यमम्लक्षारविवर्जितम्।
जायन्ते स्फोटकास्तस्य शरीरे सप्तवासरैः ॥ २१५६ ॥
एकविंशतिरात्रैश्च श्वेतकुष्ठं प्रशाम्यति।
बिन्दुमात्रमशेषेण सर्वकुष्ठं विनश्यति ॥ २१५७ ॥
हरिद्राविषकाश्मीरकाकमाचीरसस्तथा।
रेणुग्रन्थिसमं कृत्वा पेषयेत्सूक्ष्मभावतः ॥ २१५८ ॥

इष्टिकाग्रघर्षणं कृत्वा तत्र लेपो विधीयते ।
तेन नश्यति तद्बिन्दुस्तत्क्षणादेव निश्चितम् ॥
रसोऽयं कुष्ठकुद्दालः प्रोक्तश्च यतिकोविदैः ॥२१५९॥

र. ज्ञा., कुष्ठे ।

भाषा—शुद्धपारेको लेकर अङ्कोलकीजड़केरससे २५, चित्रकमूलस्वरससे १३, राईकेरससे १२, घीकुवारसे ११, गङ्गकेकीड़ोंसे १०, नीमकीछालकेरससे ९, भंगरेकेरससे ८, कालेधतूरेकेरससे ७, भागसे ६, हल्दीसे ५, आककेदूधसे ४, वाकुचीसे ३, त्रिफलासे २, त्रिकटु और लवणसे १–१, विनाधोएहुए केंचुओंसे ५ भावनाए देकर शुष्कमर्दनकरे । रेतीकीतरहहोजानेपर यह राक्षसमुख पारद तैयारहोगा । इसमें सुवर्ण, तावा, रजत प्रभृति तमामधातु जीर्णहोजातेहैं तोलनेसे इसमें वजन नहीं वढ़ता यह बड़ा आश्चर्यहै । परन्तु जिसतरह अगस्त्यऋषिने इसीमें समुद्रकाजल पीलियाथा और उनके शरीरमें किसीतरहकी विलक्षणता नहीं हुईथी उसीतरह इसपारेमें भी अद्भुतशक्तिहै । पर जब इससे कुछकार्य लेना हो तब इसका मुंहबन्दकरना आवश्यकहै । लाल सुरमेको लेकर फोलादकी तलवार पर घर्षणकर अग्निके ऊपर रक्खे, आधेपहरमें उसपर सुवर्णसदृश रेखा निकलेगी उससमय उसे समझना चाहिये कि यह असलहै अन्यथा खोटा समझना । राक्षसमुख १ पलपारेमें १ माशा लालसुरमा डालकर तप्तखरलमें मर्दनकरनेसे पारेका मुह वन्दहोजाताहै । १ भाग इसपारेकी गोली वनाय अस्तुतभागपारेमें रखकर आधेपहर अग्निपर रखनेसे समस्तपारा बद्धहोजायगा । उसपारेकी संस्कारविशेषसे नानातरहकी धातुए तैयारहोतीहैं । बद्धमुखपारा १ पल, शुद्धगन्धक २ पलकी नीलवर्णकज्जलीकर मिलावेकाचूर्ण ८ पल, कालेतिलोंकातैल २४ पल, नीमकीछालकारस २ प्रस्थ लेकर ग्रीष्म अथवा वसन्तकालमें धूपमें बैठकर तप्तखरलमें घर्षणकरे । एकजीवहोनेपर रखछोड़े । इसमेंसे प्रात काल वकरीकेदूधकेसाथ १ कर्ष देकर कुष्ठीको धूपमें बैठावे, उड़दकीरोटी और काले तिलका तैल खानेको देवे खटाई और क्षारसे परहेज़ करावे । इसके प्रयोगसे ७ दिनमें उसकेशरीरमें फोड़े उठेंगे और २१ दिनमें श्वेतकुष्ठ नष्टहोजायगा । इसका १–१ विन्दुदेनेसे समस्तकुष्ठ नष्टहोतेहैं । हल्दी, वछनाग, केशर, मकोयकारस, रेणुका, गठिवन सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसको पूर्वतैलमें मिलाकर श्वेतकुष्ठपर ईटसे घर्षणकर लगानेसे तत्क्षण नष्टहोजाताहै ॥ ५०२ ॥

५०३ सूतवटी

कृत्वा गन्धकपिष्टिकाञ्च गगनं तापीरुहोदुम्बरं,
कान्तभ्रामकचूर्णसूतकसमं वैकान्ततालान्वितम् ।
पथ्याग्निपणराजवृक्षममरीकूष्माण्डतोयैः कृता,
सिद्धा सूतवटी निहन्ति सहसा सर्वाभिघातं महत् ॥

यो. म, रसेन्द्रमं, व्रणाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक, सोनामाखी, तावा, कान्त, भ्रामक, वैकान्त इनकीभस्में, शुद्धहरिताल येसव समभागलेकर पारेगन्धकको तुलसीवगैरहकेरसकेसाथ घोटकर पिष्टीकरले फिर सवचीजें मिलाकर हरें, त्रिकटु, अमिलतास, अमरवेल अथवा ववई, सफेदकोहड़ा इनप्रत्येककेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तवाधाओंको नष्टकर्ताहै ॥ ५०३ ॥

५०४ सूतवररसः (प्रथमः)

सूतं ताम्रमयोऽभ्रकञ्च कनकं नागं तथा वङ्गकं,
तुल्यांशं परिमर्दितं सुरकृतासत्त्वञ्च धात्रीरसैः ।
वारांस्त्रीन्गृहकन्यकास्वरसतो वासाम्बुना सप्तभिः
सिद्धः सूतवरो जयेद्द्रुततरं रक्तं सपित्तं तथा २१६१
गुञ्जायुग्ममितः सितामधुयुतो वासाम्बुखण्डान्वितो,
वा वासारसशर्कराघृतयुतो लाक्षारसेनैव वा ।
चातुर्जातकणाटरूपकशिवाधात्रीसिताक्षौद्रयुक्,
पथ्यैः क्षौद्रसितान्वितैः सुमधुरैः पित्तास्रशान्तिप्रदैः॥

र, रक्तपित्ते ।

भाषा—शुद्धपारा, ताम्र, लोह, अभ्रक, सुवर्ण, नाग और वङ्गभस्म १–१ भाग लेकर सवकीवरावर गिलोयसत्त्व डालकर आवले और घीकुआरके स्वरसोंसे ३–३ भावनाएं देवे । फिर अडूसेके रसकी ७ भावनाए देकर २–२ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शक्कर, मधु (१) अडूसेका रस और शक्कर (२) अडूसेका स्वरस, शक्कर, और घी (३) लाखका स्वरस (४) चातुर्जात, पीपल, अडूसा, हरें, आवले, शक्कर और मधु (५) इन अनुपानोंमेंसे जहा जिसकी औचिती हो वहा उसकेसाथ देनेसे रक्तपित्त शान्तहोताहै । इसमें मधु और शक्करयुक्त मधुरपथ्यदेने उचितहै ॥ ५०४ ॥

५०५ सूतवररसः (द्वितीयः)

व्याघ्रीजटामुनिजटासुरसाटरूष-
कार्पासिकावृहतिकास्वरसे विपक्वः ।
गन्धोपलो रसयुतो द्रवितो नितान्तं
लुङ्गाम्बुगोक्षुरगतो मृदितः सुसिद्धः २१६३
कणासिताढ्यः करकाम्बुजाजी-
शिवायुतो वा त्रिसुगन्धयुक्तः ।
सितोपलैलामरिचाज्यजाती-
सुवर्चलाकुष्ठयुतस्तथैव ॥ २१६४ ॥
उशीरधान्योत्पलचन्दनैलाकणायुतस्तक्रमधुप्लुतस्तु ।
विनाशयेत्सूतवरो रसेशस्त्वरोचकं वान्तियुतं प्रसह्य॥

र, अरोचके ।

भाषा—भटकटैया और अगस्त्यकीजड़, तुलसी, अडूसा, कपास और वनभाटा इनके स्वरसोंमें पकाएहुए गन्धकको गलाकर वरावरके शुद्धपारेकायोगकर विजोरे और गोखरूकेरसोंसे मर्दनकर सुखाकर पीपल और शक्कर (१) ओलोंकापानी, जीरा और हरें, (२) त्रिसुगन्ध (३) मिश्री, इलायची, मरिच, घी,

जायफल, सज्जी और कुठ, (४) खस, धनिया, कमलगट्टा, चन्दन, इलायची और पीपल (५) छाछ और मधु (६) इनमेंसे किसी एक अनुपानकेसाथ १–१ रत्ती देनेसे अरुचि और वान्ति नष्टहोतीहै ॥ ५०५ ॥

५०६ सूतशेखररसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं मृतं स्वर्णं टङ्कणं वत्सनाभकम् ।
व्योपमुन्मत्तवीजञ्च गन्धकं ताम्रभस्मकम् ॥ २१६६ ॥
चातुर्जातं शङ्खभस्म विल्वमज्जा कचोरकम् ।
सर्वंसमं क्षिपेत्खल्वे मर्द्यं भृङ्गरसे दिनम् ॥ २१६७ ॥
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा भक्षयेन्मधुसर्पिषा ।
रसोऽयमम्लपित्तघ्नो वान्तिशूलामयापहः ॥ २१६८ ॥
पञ्च गुल्मान् पञ्चकासान्ग्रहण्यामयनाशनः ।
त्रिदोपोत्थातिसारघ्नः श्वासमन्दाग्निनाशनः ॥२१६९॥
उग्रहिक्कामुदावर्तं दाहयाप्यगदापहः ।
मण्डलान्नात्र सन्देहः सर्वरोगहरः परः ॥
राजयक्ष्महरः साक्षाद्रसोऽयं सूतशेखरः ॥ २१७० ॥

यो र ,र.चं ,वै क ,नि.र ,रसायनस ,वै चि ,अम्लपित्ते।

भाषा—शुद्धपारा, सुवर्णभस्म, भुनासुहागा, शुद्ध वछनाग, त्रिकटु, शुद्धधतूरेकेबीज और गन्धक, ताम्रभस्म, चातुर्जात, शङ्खभस्म, वेलगिरी, कचूर सवसमभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरेकेरससे एकदिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु और घीकेसाथलेनेसे अम्लपित्त, वमन, शूल, पाचोंगुल्म, कास, ग्रहणी, त्रिदोषजातिसार, श्वास, मन्दाग्नि, भयङ्करहिक्का, उदावर्त, दाह, याप्यरोग, राजयक्ष्म इनसवको यह एकमण्डलमें नष्टकरताहै ॥ ५०६ ॥

५०७ सूतशेखररसः (द्वितीय)

रसं विश्वञ्च कर्पार्द्धं चतुःकर्षञ्च गैरिकम् ।
मर्द्दयेद्दयामं तु ताम्बूलीदलवारिणा ॥ २१७१ ॥
रक्तिकाप्रमितं योज्यं सितया मधुनाऽथवा ।
अम्लपित्तं भ्रमं मूत्रकृच्छ्रञ्च हरति ध्रुवम् ॥ २१७२ ॥

रसायनसं, अम्लपित्ते।

भाषा—शुद्धपारा और सोंठ ८–८ माशे, शुद्धसोनागेरू ४ कर्ष लेकर पारा अदृश्यहोनेतक शुष्कमर्दनकर पानकेरससे ४ पहर घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली शक्कर अथवा मधुकेसाथ देनेसे अम्लपित्त, भ्रम और मूत्रकृच्छ्रको यह नष्टकरताहै ॥ ५०७ ॥

५०८ सूतशेखररसः (रक्ताद्य.) (तृतीयः)

अभ्रकं रससिन्दूरं सुवर्णं शुल्वमुत्तमम् ।
लोहं कम्बुजभूतिञ्च विषं कनकवीजकम् ॥ २१७३ ॥
चातुर्जातं टङ्कणञ्च शुण्ठीं व्योषञ्च केशरम् ।
सर्वं समं तु कस्तूर्यास्तुर्यांशं प्रक्षिपेत्सुधीः ॥२१७४॥
आर्द्रद्रवेण सम्मर्द्य मार्कवस्य रसे दिनम् ।
सूतशेखरनामाऽयं तरुणारुणसन्निभः ॥ २१७५ ॥
गुञ्जामानेन मध्वक्तो मध्वार्द्रकरसेन वा ।
जयेद्वातकफोद्रेकं तथा खण्डार्द्रयोगतः ॥ २१७६ ॥
वातपित्तामयं हन्यात्तथा रास्नाकषायतः ।
वातं गुडूचीसत्त्वेन मधुना सर्वमेहनुत् ॥ २१७७ ॥
गोदुग्धखण्डयोगेन पित्तोद्रेकं जयेद्ध्रुवम् ।
क्षयं पाण्डुं मेहरुजं जीर्णज्वरमथारुचिम् ॥ २१७८ ॥
प्रदरं हन्ति मान्द्यञ्च सोमरोगं शिरोग्रहम् ।
अनुपानविशेषेण तत्तद्रोगहरो भवेत ॥ २१७९ ॥

र. चं., कफरोगे।

भाषा—अभ्रक, सुवर्ण, तावा, लोह, शङ्ख इनकीभस्में, रससिन्दूर, शुद्ध वछनाग, धतूरेकेवीज, चातुर्जात, भुनासुहागा सोंठ, त्रिकटु, नागकेशर सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर सवसे चतुर्थांश कस्तूरी डालकर अदरख और भंगरेकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु अथवा मधु और अदरखके रसकेसाथ देनेसे वात और कफकी अधिकताको यह नष्टकरताहै। खाड और अदरखके रसकेसाथ वातपित्तजन्याधिको नष्टकरताहै। रास्नादिकाथकेसाथ वायु, गिलोयसत्व और मधुसे प्रमेह, शक्करमिलेहुए गोदुग्धसे पित्ताधिक्य, क्षय, पाण्डु, प्रमेह, जीर्णज्वर, अरुचि, प्रदर, मन्दाग्नि, सोमरोग, सिरका जकड़ना इनसवको यह नष्टकरताहै। तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह तमाम व्याधियोंको नष्टकरताहै ॥ ५०८ ॥

५०९ सूतादिवटी (प्रथमा)

सूतगन्धाभ्रमगधाऽम्लिकामरिचसैन्धवैः ।
गुटिकाऽरोचकहरी जिह्वावदनशुद्धिकृत् ॥ २१८० ॥

वृ यो त ,र.चं ,र सु ,र कौ.,रसायनसं , अरोचके।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, अभ्रकभस्म, पीपल, पुरानी इमली, मरिच और सैन्धव समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय झरवेरवरावर गोलियें वनाकर मुंहमें रखनेसे अरुचिको नष्टकरतीहै और जिह्वा तथा मुखकी शुद्धि करतीहै ॥ ५०९ ॥

५१० सूतादिवटी (चन्द्रप्रभा) २

मृतं सूतं मृतं स्वर्णं मृतं ताम्रं समं समम् ।
तुल्यञ्च खादिरं सारं तथा मोचरसं क्षिपेत् ॥२१८१॥
द्रवैः शाल्मलिमूलोत्थैर्मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ।
चणमात्रां वटीं कृत्वा खादेज्जीरकसंयुताम् ॥
त्रिदोषाद्यमतीसारं सत्वरं नाशयेद्ध्रुवम् ॥ २१८२ ॥

र कौ ,र मं ,चि.र भ ,र चं ,र को , नि र.,भै सा.,र सु ,र.म मा.,र (मा),रसायनसं ,वै चि ,टो.,र का ,यो म ,र क ल ,वृ यो त ,ना. वि ,अतिसारे।

भाषा—पारा, सुवर्ण, ताम्र इनकीभस्में समभागलेकर सबकीबराबर खैरसार और मोचरस मिलाकर सेंमलकीजड़केरससे दोपहर मर्दनकर चनेप्रमाणगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली जीरेकेसाथ देनेसे यह त्रिदोषातिसारको नष्टकरतीहै ॥

५११ मृतादिवटी (तृतीया)

शम्भोः कण्ठविभूषणं रविरयः सर्वैः समांशं रसं,
सम्मर्द्य त्रिफलात्रिजातचपलामूलं घनं रेणुका ।
वेल्लत्र्यूषणचित्रकं समलवं त्वेकत्र सम्मर्दयेत्,
कर्तव्या गुटिका गुडद्विगुणिता वल्लोन्मितास्ता हिताः
मान्द्याद्ौ जठरानिले ग्रहणिकाकासे क्षये पायुजे,
या चात्यर्थगलग्रहश्वयथुरुग्गुल्मोदरव्याधिषु ।
अष्ठीलार्दितगृध्रसीयुवतिरुक्श्लेष्मामघातातिषु,
क्षीणानां विषमे प्रमेहनिचये सूतादिकेयं वटी २१८४

र., प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध वछनाग, ताम्र और लोह १–१ भाग, पारदभस्म ३ भागलेकर त्रिफला, त्रिजात, पिपलामूल, नागरमोथा, रेणुका, विडङ्ग, त्रिकटु, चित्रकमूल सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर इकट्ठे मिलाय १–२ दिन शुष्कमर्दनकर दूनागुड़मिलाकर २–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथलेनेसे मन्दाग्नि, उदरकावायु, ग्रहणी, कास, क्षय, बवासीर, गलग्रह, शोथ, गुल्म, उदररोग, अष्ठीला, लकवा, गृध्रसी, स्त्रीरोग, श्लेष्म, आमवात, क्षीणता, विषमरोग, प्रमेह, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ५११ ॥

५१२ मृतादिवटी (चतुर्थी)

शुद्धं सूतञ्च भल्लातपिप्पलीमूलपिप्पलीः ।
आकल्लकं जातिपत्री लवङ्गं वङ्गभस्मकम् ॥ २१८५ ॥
मर्दयेत्समभागेन पुराणगुडमिश्रितम् ।
उपदंशेषु सर्वेषु वटी माषप्रमाणिका ॥ २१८६ ॥

नि र , र च , व रा., वै. चि , रसायनसं , उपदंशे । रसायनसङ्ग्रहे उपदंशहरीवटीतिनाम ।

भाषा—शुद्धपारा, भिलावे, पिपलामूल, पीपल, अकल्करा, जावित्री, लौंग, वङ्गभस्म सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेके अदृश्यहोनेतक घोटकर सबकी बराबर पुराना गुड़ मिलाकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पानीकेसाथ लेनेसे समस्त उपदंश निवृत्तहोतेहैं ॥ ५१२ ॥

५१३ सूतिकाघ्नरसः

रसगन्धकलौहाभ्रं जातीकोषं सुवर्णकम् ।
समांशं मर्दयेत्खल्वे छागीदुग्धेन पेषयेत् ॥ २१८७ ॥
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन वटिकां कुरु यत्नतः ।
ज्वरातीसाररोगघ्नः सूतिकातङ्कनाशनः ॥
सूतिकाघ्नो रसो नाम ब्रह्मणा परिकीर्तितः ॥ २१८८ ॥

र सं , र चि., र चं , र सु , सूतिकारोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अभ्रक और सुवर्णभस्म जावित्री सब समभागलेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय बकरीकेदूधसे पीसकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे ज्वर, अतिसार, सूतिकारोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५१३ ॥

५१४ सूतिकातङ्कनाशनरसः

रसाभ्रगन्धकव्योषं सुवर्णमाक्षिकं विषम् ।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं खादेद्रक्तिचतुष्टयम् ॥ २१८९ ॥
सूतिकाग्रहणीरोगं वह्निमान्द्यञ्च नाशयेत् ।
अतिसारञ्च शमयेदपि वैद्यविवर्जितम् ॥
कासश्वासातिसारघ्नो वाजीकरण उत्तमः ॥ २१९० ॥

र. सं., र. सु., सूतिकारोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सोनामाखी और वछनाग, अभ्रकभस्म और त्रिकटु समभागलेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सूतिकारोग, ग्रहणी, मन्दाग्नि, दु साध्य अतिसार, कास और श्वासको यह नष्टकरताहै ॥ ५१४ ॥

५१५ सूतिकातङ्कनाशिनीवटी (सूतिकारिरसः)

रसं गन्धं मृताभ्रञ्च मृतताम्रञ्च तुल्यकम् ।
चूर्णितं मर्दयेद्यत्नाद्धेकपर्णीरसेन च ॥ २१९१ ॥
छायाशुष्का वटी कार्या कलायसदृशी ततः ।
मात्रया कटुना देया सूतिकातङ्कनाशिनी ॥
ज्वरतृष्णाऽरुचिहरी शोथघ्नी वह्निदीपनी ॥ २१९२ ॥

भै र , र चं , ध , र चि., र. र , र सु., व. रा , र. सं., सूतिकारोगे ।

टि०—केषुचित्पुस्तकेषु मृतताम्रञ्च तुल्यकमित्यस्य स्थाने मृत ताम्रं तदर्द्धकमिति पाठ । तत्र त्रयाणामर्द्धं अध्यर्द्धं वोध्य तेष्वेव पुस्तकेषु अनुपानस्थाने क्षीरत्रिकटुना युक्तेति पाठो दृश्यते तत्र त्रिकटुना सार्धं क्षीरस्य पाक विधाय दातव्यम् । अन्यत्र तु त्रिकटुना सार्द्ध रस मिश्रय्य मध्वादिभि प्रयोक्तव्यमिति विशेष । र , रसेन्द्रम एतयो शुल्वेश्वरनाम्ना "रसगन्धकयो कृत्वा पिष्टिकां समभागयो । ताम्राभ्रके तयोस्तुल्ये मर्दयेद्दिवसत्रयम् । खराशिकारसेनैव गोल सङ्कोचयेच्छनै । औदुम्बराख्य जयति कुष्ठ शुल्वेश्वराभिध ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । अत्र खराशिकाभावनैवाऽधिकाऽस्ति, द्वयोरपि भावनयोरेकत्र समावेश कृत्वाएक एव पाठ सम्पादनीय द्विविधभावनानुष्ठाने क्षत्यभावात् । अधिकारभेदस्त्वकिञ्चित्कर एकाधिकारपठितेषु योगेषु विविधकार्यकरणशक्तिमत्वात् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक और ताम्रभस्म समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर ब्राह्मीकेरसमें १–२ दिन मर्दनकर मटरबराबर गोलियें बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली त्रिकटुकेसाथ देनेसे सूतिकारोग, ज्वर, तृष्णा, अरुचि, शोष, मन्दाग्नि, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ५१५ ॥

५१६ सूतिकाभरणरसः (प्रथमः)

लोहभस्म च मण्डूरं ताम्रं गन्धं पृथक् पलम्
मरीचं वत्सनाभञ्च पृथगेषां पलद्वयम् ॥ २१९३ ॥
पारदं टङ्कणञ्चैव प्रत्येकं कर्षमात्रकम् ।
सर्वं खल्वे विनिक्षिप्य शीततोयेन मर्दयेत् ॥ २१९४ ॥
त्रिफलोग्रस्य कोलस्य रसै र्भाव्यं पृथक्पृथक् ।
क्रमेण त्रिदिनं मर्द्यं चतुर्गुञ्जाप्रमाणकम् ॥ २१९५ ॥
अनुपानविशेषेण सर्वरोगहरं परम् ।
सूतिकावातमत्युग्रं सूतिकाभरणो रसः ॥ २१९६ ॥

रसायनप , सूतिकारोगे ।

भाषा—लोह, मण्डूर और ताम्रभस्म, शुद्ध गन्धक १–१ पल वछनाग और मरिच २–२ पल, शुद्धपारा और भुनासुहागा १–१ कर्ष लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर ठंढाजल, त्रिफला, वच, वेर इनके द्रवोंसे ३–३ दिन मर्दनकर ४–४ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे भयङ्करसूतिकारोगको यह दूरकरताहै ५१६

५१७ सूतिकाभरणरसः (द्वितीयः)

सुवर्णं रजतं ताम्रं प्रवालं पारदं समम् ।
गन्धकं चाभ्रकं तालं शिलात्रिकटुरोहिणी ॥ २१९७ ॥
एतानि समभागानि रविक्षीरेण मर्दयेत् ।
चित्रमूलकषायेण पुनर्नवरसेन च ॥ २१९८ ॥
दिनं गजपुटे पाच्यं मूषायां धारयेत्पृथक्
अनुपानविशेषेण देयं गुञ्जार्द्धकञ्च तत ॥ २१९९ ॥
सूतिकारोगमतुलं धनुर्वातं विशेषतः ।
त्रिदोषोत्थान्हरेद्व्याधीनिच्छापथ्यं प्रदापयेत् ॥
सूतिकाभरणं नाम सर्वरोगहरं परम् ॥ २२०० ॥

यो. र , र च , वातरोगे ।

भाषा—सुवर्ण, रजत. ताम्र, प्रवाल और अभ्रकभस्म, शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और मैनसिल, त्रिकटु, कुटकी सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय आककादूध, चित्रकमूलकषाय, पुनर्नवाकास्वरस इनमें १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे आधीआधी-रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सूतिकारोग, खासकर धनुर्वात, त्रिदोषजव्याधि इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य इच्छानुसार देना ॥ ५१७ ॥

५१८ सूतिकारिरसः

टङ्कणं मूर्च्छितं सूतं गन्धको हेमतारकम् ।
जातीफलं तथा कोषं लवङ्गैले च धातकी॥ २२०१ ॥
वत्सकेन्द्रयवं पाठा शृङ्गी विश्वाजमोदिके ।
गुटीं प्रसारिणीनीरै र्माषमात्रां प्रमाणतः ॥ २२०२ ॥
भक्षयेत्तद्रसैः प्रातः सूतिकातङ्कशान्तये ।
जीर्णज्वरं हन्ति शोथं ग्रहणीप्लीहकासकान् ॥२२०३॥

र स , र सु , सूतिकारोगे ।

भाषा—भुनासुहागा, रससिन्दूर, शुद्धगन्धक, सुवर्ण और रजतभस्म, जायफल,जावित्री,लौंग,इलायची, धायकेफूल,कुरैया-कीछाल और इन्द्रजव, पाठा, काकड़ाशींगी, सोंठ, अजमोद सब-समभागलेकर वारीकचूर्णकर प्रसारिणीकेरससे १–२ दिन मर्दनकर ४–४ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंमे १–१ गोली प्रसारिणीकेरसकेसाथ प्रात कालदेनेसे सूतिकारोग, जीर्णज्वर, शोथ, ग्रहणी, प्लीहा और कास इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५१८ ॥

५१९ सूतिकावल्लभरसः

सूतं गन्धं माक्षिकञ्च व्योमेन्दुहेमतालकम् ।
रजतं फणिफेनञ्च जातीकोषफले तथा ॥ २२०४ ॥
मुस्तकस्य बलायाश्च शाल्मल्याः स्वरसेन च ।
भावयित्वा वटीः कुर्याद्द्विगुञ्जापरिमाणतः ॥ २२०५ ॥
सूतिकावल्लभो नाम प्रयुक्तोऽयं महारसः ।
निहन्यात्सूतिकारोगान्दुर्वारं ग्रहणीगदम् ॥ २२०६ ॥
अतिसारं सुघोरञ्च दौर्बल्यं वह्निमन्दताम् ।
जनयेदाशु पुष्टिञ्च कान्ति मेधां धृतिं तथा ॥ २२०७॥

भै. र , सूतिकारोगे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सोनामाखी, कपूर, हरिताल और अफीम, अभ्रक, सुवर्ण और रजतभस्म, जावित्री, जायफल येसब समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण-कज्जलीमें मिलाय नागरमोथा, वला और सेंमलके स्वरसोंसे १–१ भावनादेकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सूतिकारोग, दुःसाध्यग्रहणी, भयङ्कर अतिसार, दुर्बलता और मन्दाग्नि इनसबको नष्टकर पुष्टि, कान्ति, मेधा और धृतिको पैदाकरताहै ॥ ५१९ ॥

५२० सूतिकाविनोदरसः

शुण्ठ्या भागो भवेदेको द्वौ भागौ मरिचस्य च ।
पिप्पल्याश्च त्रिभागाःस्युरर्द्धभागश्च व्योमकम् २२०८
जातीकोषस्य भागौ द्वौ द्वौ भागौ तुत्थकस्य च ।
सिन्धुवार जलेनैव मर्दयेदेकयामत ॥
मधुना सह भोक्तव्यः सूतिकातङ्कनाशनः ॥ २२०९ ॥

र स , भै र , र सु , व रा , नि र , सूतिकारोगे ।

भाषा—सोंठ १ भाग, मरिच २ भा , पीपल ३ भा , अभ्रकभस्म आधाभाग, जावित्री और तूतिया २–२ भागलेकर वारीकचूर्णकर संभालूकेरससे एकपहर मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह सूतिकारोगको नष्टकरताहै ५२०

५२१ सूतिकाहररसः (प्रथमः)

हिङ्गुलं हरितालञ्च शङ्खभस्माऽयसो रजः ।
खर्परं धूर्तबीजञ्च यवक्षारञ्च टङ्कणम् ॥ २२१० ॥

विभीतककषायेण भावयित्वा विधानतः।
मर्दयित्वा विदध्याच्च कलायसदृशी वटीः ॥ २२११ ॥
यथादोषानुपानेन प्रयुक्तोऽयं रसोत्तमः।
निहन्यात्सूतिकातङ्कान्वह्निस्तृणगणानिव ॥ २२१२ ॥

भै. र., सूतिकारोगे।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, हरिताल, खपरिया, धतूरेकेबीज और सुहागा, शङ्ख और लोहभस्म, यवक्षार येसब समभागलेकर वारीकचूर्णकर धातुओंकेसाथ मिलाय १–२ पहर शुष्कमर्दनकर वहेड़ेकेक्काथसे १–२ भावनाए देकर मटरवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे सूतिकारोगोंको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे कि अग्नि तृणसमूहको ॥ ५२१ ॥

५२२ सूतिकाहररसः (द्वितीयः)

लवङ्गं रसगन्धौ च यवक्षारं तथाऽभ्रकम्।
लोहं ताम्रं सीसकञ्च पलमानं समाहरेत् ॥ २२१३ ॥
जातीफलं केशराजं भृङ्गैला मुस्तकं वरा।
धातकीन्द्रयवं पाठा शृङ्गी विल्वञ्च वालकम् ॥ २२१४ ॥
कर्षमानञ्च सञ्चूर्ण्य सर्वमेकत्र कारयेत्।
वदरास्थिप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ २२१५ ॥
गन्धालिकापत्ररसे त्वनुपानं प्रदापयेत्।
सर्वातीसारशमनः सर्वशूलनिवारणः ॥ २२१६ ॥
सूतिकाशोथपाण्डुत्वसर्वज्वरविनाशनः।
सूतिकाहरनामाऽयं रसः परमदुर्लभः ॥ २२१७ ॥

र. स., र. र., र. चि, व रा. र, सु, सूतिकारोगे।

टि०—रसराजसुन्दरे लवङ्ग रसगन्धौ च यवक्षार तथाभ्रकमित्यस्य स्थाने रसरत्नाकरीयगर्भविनोदात्त्रिभाग त्रिकटु दद्याच्चतुर्भागन्तु हिङ्गुलमिति पाठ उद्धृत्य स्थापित, तथाच गर्भविनोदेति नाम कल्पयित्वा स्वतन्त्र पाठ कृत स एकान्तत प्रमादोऽस्ति।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रक, लोह, ताम्र और सीसा इनकी भस्में, लौंग और यवक्षार १–१ पल, जायफल, कालाभगरा, भंगरा, इलायची, नागरमोथा, त्रिफला, धायकेफूल, इन्द्रजव, पाठा, काकड़ासींगी, वेलगिरी, सुगन्धवाला येसव १–१ कर्ष लेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय कुकरौंधेके रससे एकदिन मर्दनकर वेरकीगुठलीकेवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त अतिसार, शूल, सूतिकारोग, शोथ, पाण्डु और ज्वरको यह नष्टकरताहै ॥ ५२२ ॥

५२३ सूतेन्द्ररसः (प्रथमः)

तारं ताम्रं हेम सूतञ्च ताप्यं
तुल्यं कान्तं त्वभ्रकं लोहजञ्च।
व्याघ्री वर्षाभूयुगं चैव रास्ना
द्राक्षा विश्वं मूत्रयुक्मर्दनीयम् ॥ २२१८ ॥
गोलं कृत्वा भूधरे तं पुटेत्त-
त्क्षुण्णं तस्मिन् पादमानेन गन्धम्।
तत्तुर्यांशं वत्सनाभं नियोज्यं
लुङ्गानीरे मर्दनीयं त्रिघस्रम् ॥ २२१९ ॥
जम्बीराद्भि र्वासरैस्त्रिर्विमृद्य
सूतेन्द्रोऽसौ पाण्डुरोगोपहन्ता।
गुल्माद्युत्थं पञ्चकोलास्बुयुक्तो
वेल्लापथ्यापिप्पलीचूर्णयुक्त्व ॥ २२२० ॥

र., पाण्डुरोगे।

भाषा—रजत, ताम्र, सुवर्ण, कान्त, अभ्रक, लोह इनकी भस्मे, रससिन्दूर, सोनामाखी, तूतिया सवसमभागलेकर १–२ पहर शुष्कमर्दनकर भटकटैया, सफेद और नीली इटसिट, रास्ना द्राक्ष और सोंठके स्वरस तथा गोमूत्रसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय पानवगैरहमें लपेटकर भूधरपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर सवसे चतुर्थांश शुद्ध गन्धक और गन्धकसे चतुर्थांश शुद्ध वछनागकाचूर्ण मिलाकर विजोरे और जभीरीके स्वरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पञ्चकोल अथवा विडङ्ग, हर्रे और पीपलकेचूर्णकेसाथ देनेसे पाण्डु, गुल्मप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५२३ ॥

५२४ सूतेन्द्ररसः (द्वितीयः)

रसगन्धौ समौ मर्द्यौ ताभ्यां द्विगुणमभ्रकम्।
सर्वतुल्यं ताम्रभस्म भावयेन्मार्कवद्रवैः ॥ २२२१ ॥
सप्तवारन्तु निर्गुण्डीद्रवेण दिवसत्रयम्।
वर्षाभूसलिलेनैव ब्रह्मवृक्षरसेन च ॥ २२२२ ॥
सिद्धो भवति सूतेन्द्रः श्लीपदानां विनाशनः।
वल्लद्वयमितः पथ्यासुरदारुमहौषधैः ॥ २२२३ ॥
पलाशमूलनीरेण क्षौद्रयुक्तेन वा जयेत्।
निशागुडाभ्यामथवा सवृद्धदारुनागरः ॥ २२२४ ॥
उरुवूकस्नेहपक्वो वा शिवागोमूत्रयुक्तया।
विश्वामृतादारुयुतः सकट्ः स्नेहयुक्तया ॥ २२२५ ॥
धान्याम्लतैलयुग्वापि पद्ग्रन्थच्छदनीरयुक्।
पुत्रजीवीरसेनापि वृद्धदारुतुपाम्बुयुक् ॥ २२२६ ॥

र, श्लीपदि।

टि०—रससङ्केतसिद्धान्ते शुल्वाङ्कुरसनाम्ना "गतो दिग्गजवारिधीन्दुगलक सङ्ख्याकल माषिन, शुल्व गन्धकमेधपारदयुत यत्नीकृत चूर्णितम्। निम्बस्कन्धेन च मर्दनापदक्ष्ने रसेन सन्मर्दित, माषा वह्निमिताऽनुपानमहिता शुल्वाङ्कनामा रस ॥ याते गुल्मगुदोदरे क्षयहर कामाग्निसन्दीपन, चूताधान्यमहागदौधदलन मिथ्यामयोन्मूलनम्। कुष्ठाष्टादशमूलपाटनपटु दुष्टक्षयध्वसन, घानाऽज्ञानविपाकमूलमथन श्रीपूज्यपादोदित ॥" इति पाठो निर्दिष्टोऽस्ति सोऽप्यस्यैवाश्लोकोऽस्ति। पूज्यपादनाम्ना स्वख्यातिप्रकटनाय स्वन्याम कृत इति प्रतिभाति रसावतारस्यैतद्वचनाऽपूर्वपतितत्वात्। श्लीपदाधिकारोक्तोऽप्ययनुपानभेदेन नानारोगापावरणे समर्थत्वेनापि रसकल्पद्रुमसिद्धान्तीयपाठस्यानावश्यकत्वात्।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ भाग, अभ्रकभस्म ४ भाग, ताम्रभस्म ६ भाग, लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर भंगरेकेरससे ७, निर्गुण्डी, ऊटसिट और पलाशकेस्वरसोंमे ३–३ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली हर्रे, देवदारु और सोंठ काकाढा (१) मधुयुक्त पलाशकी जडकास्वरस (२) हल्दी और गुड (३) विधारा, देवदारु और सोंठ (४) एरण्डतेलमें पकीहुईहर्रे और गोमूत्र (५) सोंठ, गिलोय और देवदारु (६) कुटकी और एरण्डतेल (७) एरण्डतेलयुक्तधान्याम्ल (८) करञ्ज अथवा पतजीयाकेपत्तोंकास्वरस (९) विधारा और तुपाम्ल (१०) इनमेंसे किसीभी अनुपानकेसाथ औचिती देखकर प्रयोगकरनेसे श्लीपद और कुष्ट नष्टहोताहै ॥ ५२४ ॥

५२५ सूतेन्द्ररसः (तृतीयः)

मुक्ताफलं प्रवालञ्च सुवर्णं रौप्यमेव च ।
रसगन्धकतः सर्वं तोलैकैकं प्रकल्पयेत् ॥ २२२७ ॥
रक्तोत्पलपत्ररसे मर्दयेत्तद्धनीकृतैः ।
मर्दयेत्तत्पुनर्दत्त्वा गन्धं माषचतुष्टयम ॥ २२२८ ॥
क्षिप्त्वा काचघटीमध्ये सन्निरुद्ध्य प्रयत्नत. ।
वालुकायन्त्रमध्यस्थां कृत्वा काचघटीं ततः ॥२२२९॥
पाकस्तत्र तथाकार्यो भवेद्यामत्रयं तथा ।
काचपात्रात्समाकर्षेत्सिद्धं सूतं ततः परम् ॥ २२३० ॥
भक्षयेद्रक्तिकाः पञ्च रोगैराक्रान्तपुद्गलः ।
भोजनं सर्वरोगोक्तं यत्नतः कारयेद्भिषक् ॥ २२३१ ॥
दुर्बलं वपुरत्यर्थं बलयुक्तं करोत्यसौ ।
शुक्रवृद्धिं करोत्येष ध्वजभङ्गञ्च नाशयेत् ॥ २२३२ ॥
मासेनैकेन सूतेन्द्रो रोगनाशाय कल्पते ।
शालयो मुद्गयुक्ताश्च गोधूमा भोजने हिताः ॥२२३३॥
घृतं गव्यं तथा क्षीरं स्निग्धं पथ्यं प्रयोजयेत् ।
पारावतस्य मांसञ्च तित्तिरे र्लावकस्य च ॥ २२३४ ॥

र र स, र चं, र को, वाजीकरणे। र को, **मकरध्वजरस** इति नाम।

भाषा—मोती, प्रवाल, सुवर्ण, चादी इनकीभस्में, शुद्ध पारा और गन्धक १–१ तोला लेकर नीलवर्णकज्जलीकर लालकमलके फूलोंकेघनसे १ दिन मर्दनकर ४ माशे शुद्धगन्धक मिलाय एकदिनघोटकर सुखाकर कज्जली बनावे। फिर ४–५ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख ३ पहरकी कड़ी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर शीशीमेंसे निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ५–५ रत्तीकीमात्रा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे कृशता, बल और शुक्रकीहानि, ध्वजभङ्ग इनसबको एकमहीनेमें यह नष्टकरताहै। सफेदचावल, मूग, गेंहू, गायकाघी और दूध इत्यादि स्निग्धभोजनकरे। कबूतर और तीतरकामांस गुणकारकहै ॥ ५२५ ॥

५२६ सूतेश्वररसः (प्रथमः)

मृताऽभ्रायसभूतिगन्धगरलम्लेच्छं सवैकान्तकं,
चित्रिर्मार्कवशिग्रवह्निसरलाऽऽतद्रार्द्रकाम्भःप्लुतम् ।
श्लक्ष्णीकृत्य विलिप्य भाण्डकुहरे प्रात्ऽमानहालाहला-,
न्निर्यद्भूमविधूपितो रसवरस्तद्भाण्डनिष्कासितः ॥
सूतेशः सुरसारसेन रसितो गुञ्जाद्वयीतोलितो,
हन्यादष्टविधाज्वरांश्च विषमांश्छीतोष्णसाधारणान् ॥

र. प., ज्वर।

भाषा—पारा, अभ्रक, लोह इनकीभस्में, शुद्धगन्धक, सर्पविष, ताम्र और वैक्रान्तभस्म समभागलेकर कज्जलीकर भंगरा, सहिजन, चित्रकमूल, निसोन, कुट और अदरखके स्वरसोंमे ३–३ दिन मर्दनकर मिट्टीकेघड़ेमें लेपटकर इसके बराबर बछनागकाचूर्ण दूसरी हंडीमें बिछाय डमरूयन्त्र बनाकर मुंहबन्दकर चूल्हपर रख इतनी आचदेवे कि बछनाग जलजाय। स्वाङ्गशीतलहोनेपर हंडीकेपेंदेमेंसे रसको निकालकर तुलसीकेरससे घोटकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १–१ गोली तुलसीकेरसकेसाथदेनेसे ८ प्रकारकेज्वर, विषम, शीतोष्णप्रधान और साधारणज्वर नष्टहोतेहैं ॥ ५२६ ॥

५२७ सूतेश्वररसः (द्वितीयः)

रसगन्धकयोः कृत्वा कज्जलीं कर्षसम्मिताम ।
स्थूलदर्दुरमांसञ्च वसापित्तञ्च पूर्ववत् ॥ २२३६ ॥
मर्दयेत्पुटयेच्चैव सिद्धः सूतेश्वरो भवेत ।
गुञ्जामात्रं जयेद्दोषं सर्वशैत्यनिवारण. ॥
देहे सोपद्रवञ्चैव वातं दन्तनिबन्धनम ॥ २२३७ ॥

र, वातरोगे।

भाषा—१–१ कर्ष शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर बड़ेमेंडककेमास, चर्बी और पित्तसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टीदेकर सूखनेपर लघुपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे शीताङ्ग, दन्तविबन्ध इत्यादि उपद्रवयुक्त सन्निपातको यह नष्टकरताहै ॥ ५२७ ॥

५२८ सूर्यकान्तरसः

तार्प्यं गन्धं शुद्धसूतं शिलाजत्वम्लवेतसम ।
मृतताम्राभ्रकं तुल्यं मध्वाज्यगुडमिश्रितम ॥ २२३८ ॥
माषैकं जिह्लकं हन्ति सूर्यकान्तो महारसः ।
मुण्डीपञ्चाङ्गचूर्णञ्च वाकुचीतुल्यचूर्णकम् ॥
मध्वाज्यसंयुतं कर्षं लेहयेदनुपानकम ॥ २२३९ ॥

र. र, र सु, चि क, र का. कुष्टाधिकारे।

टि०—र सु, चि क., र का एषु **सूर्यावर्तरस** इति नाम। "रसगन्धकताप्यभानुभि शिलयाऽयो जतुनाऽश्मजेन च। अपि पेष्य तयाऽम्लवेतसे गुडमधांशकमाशुमाक्षिकैः ॥ सघृत परिपेव्य माषक०" मिति पाठ उदयकृष्णनाम्ना चिकित्साक्रमकल्पवल्ल्यामेव निहितोऽस्ति ।

अभित्वत्रकस्थाने शिलानिहिताऽस्त्यम्लवेतमस्य च भावनाया नियोगोऽस्ति एतावद्वेदस्याऽकिञ्चित्करत्वात्प्रत्युत पूर्वपाठादीनवीर्यत्वाच्च पूर्वस्मिन्नेवाऽस्याऽन्तर्भाव करणीय शिलाप्रक्षेपस्त्वत्रापि न विरुद्ध्यते।

भाषा—शुद्ध सोनामाखी, गन्धक, पारा और शिलाजीत, अम्लवेत, ताम्र और अभ्रकभस्म समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर शिलाजीत और अम्लवेतको अच्छीतरहमिलाकर १–२ पहर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा मधु, घी और गुडकेसाथ मिलाकर खानेसे ऋष्यजिह्वकादि कुष्ठोंको यह नष्टकरताहै। गोरखमुण्डीका पञ्चाङ्ग और वाकुची समभागका चूर्ण एककर्ष मधु और घीकेसाथलेनेसे रसका शरीरमें सङ्क्रमणहोताहै ५२८

५२९ सूर्यचन्द्रप्रभावटी

त्रिकत्रयं हरिद्रे द्वे तिक्ता तिक्तं शटी वचा।
वेल्लचित्रकतालीसभार्ङ्गीपद्मकजीरकम् ॥ २२४० ॥
द्वौ क्षारौ पिप्पलीमूलं पटूनि त्रीणि तुम्बुरु।
देवदारु वला चव्यं धान्यकं गजपिप्पली ॥
वत्सकातिविषादन्तीश्यामापुष्करकामृताः ॥२२४१॥
भागोऽमीषां सूक्ष्मचूर्णीकृतानां
भागश्चार्द्धस्तापितीरोद्भवस्य।
तद्वद्व्यांस्या भागवृद्ध्या परे स्यु-
रभ्रं लौहं शैलजं कौशिकश्च ॥ २२४२ ॥
सम्मर्द्य गुटिका कार्या सूर्यचन्द्रप्रभाभिधा।
पूर्वाह्ले तां प्रयुञ्जीत माक्षिकेण परिप्लुताम् ॥२२४३॥
अनुपाने प्रयुञ्जीत तक्रं मधु रसोत्तमम्।
क्षीरं बदरतोयं वा शर्करामिश्रितं जलम् ॥ २२४४ ॥
घृतं मूत्रं तथा चाम्लं स्वादु दाडिमजं रसम्।
कासं श्वासं तथा शोषमरुचिं पार्श्ववेदनाम् ॥२२४५॥
अर्शांसि कामलां मेहं पाण्डुरोगं हलीमकम्।
हृद्रोगं मूत्रकृच्छ्रञ्च श्वयथुं ग्रहणीगदम् ॥ २२४६ ॥
यकृत्प्लीहाभिवृद्धिञ्च कृमिं ग्रन्थिं भगन्दरम्।
श्लीपदं गण्डमालाञ्च व्रणान्नाडीव्रणानपि ॥ २२४७ ॥
अतिस्थौल्यातिकार्श्यञ्च विद्रधीन्पिटिकामपि।
नासानेत्राश्रितान्रोगांश्छिरोरोगान्सुदारुणान् २२४८
मुखरोगानशेषांश्च रक्तपित्तं स्वरक्षयम्।
ज्वरञ्च सन्निपातोत्थं विषमञ्चापि पैत्तिकम् ॥२२४९॥
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव संसृष्टान्सान्निपातिकान्।
निजानृतुभवांश्चैव ये चान्ये नात्रकीर्तिताः ॥
तांस्तान्प्रशमयत्येषा वृक्षमिन्द्राशनि र्यथा ॥२२५०॥
मेधां स्मृतिं कान्तिमनामयत्व-
मायुःप्रकर्षं पवनानुलोम्यम्।
स्त्रीषु प्रहर्षं बलमिन्द्रियाणा-
मग्नेश्च कुर्याद्विधिनोपयुक्ता ॥ २२५१ ॥

ग नि सर्वरोगे।

टि०—"श्रेष्ठा व्योपविडङ्गचित्रकनिशादार्वीकराञ्जाऽमृता-
देवाह्वातिविषा त्रिवृच्च कटुका कुस्तुम्बुरु कारवी।
क्षारौ द्वौ लवणत्रय गजकणा चव्य तथाऽरुष्कर,
तालीस कणमूलपुष्करशटी कुष्ठ किरात घनम् ॥
भार्ङ्गी पद्मकवीजक सकुटज दन्ती वचातुम्बुरू,
शृङ्गी कर्कटकस्य कर्षकमिता' सर्वा समाना मता।
लोहस्य द्विपल पुरस्य च पलान्यष्टौ प्रदद्यात्ततो,
वाङ्गयास्त्वेकपल शिलाजटशक ताप्य तु वाशीसमम् ॥
मत्स्यण्डीपलपञ्चक घृतपले द्वे द्वे च माक्षीकतो,
हेम्नोऽथ त्रिसुगन्धकस्य च पल दत्त्वा गुटी निर्मिता।
सूर्यार्थं परमेष्टिना भगवता सूर्यप्रभा नामत,
कामश्वासभगन्दरोदरक्रिमीन्पाण्डुत्वपण्ढक्षयान् ॥
गुल्म विद्रधिपार्श्वशूलतमकान्सश्लीपदान्कामलाम्,
स्वेद सर्वगत त्रयोदशविध सा सन्निपात हरेत्।
वातोद्भूतमशीतिसन्धिकगद सश्लेष्मपित्तोद्भवम्,
कुष्ठार्शोविषमज्वरानरुचक मूत्रग्रहान्नाशयेत् ॥
सर्वान्रोगगणान्निहन्ति गुटिकामक्षप्रमाणा बुधो,
यूषक्षीररसै प्रयुज्य बलवान्क्षीणक्षयो जायते ॥"

इति पाठो यो॰ म, वृ यो त, यो र, नि र, वै चि एषु ग्रन्थेषु सूर्यप्रभा गुटीति नाम्ना निहितोऽस्ति। अत्र चन्द्रप्रभायामेव त्वगेलाऽरुष्कराण्यधिकतया निक्षिप्य द्रव्यप्रमाणे च व्यत्यय कृत्वा नामान्तर स्थापितम्। वैद्यचिन्तामणौ च व्यत्यस्त पाठोऽस्ति कुत्रचिन्माने भेदो दृश्यते।

भाषा—सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्रे, वहेड़ा, आवला तज, पत्रज, इलायची, हल्दी, दारुहल्दी, कुटकी, चिरायता, कचूर, वच, विडङ्ग, चित्रकमूल, तालीसपत्र, भारङ्गमूल, पद्मकाठ, जीरा, सज्जी, यवक्षार, पिपलामूल, सैन्धव, संचल, समुद्रनमक, तुम्बुल (चिरफळ, मराठीनाम), देवदारु, वला, चव्य, धनिया, गजपीपल, कुरैयाकीछाल, अतीस, दन्तीमूल, निसोत, पोहकरमूल, गिलोय १–१ तोला, सोनामाखीभस्म और वसलोचन ६–६ माशे, अभ्रकभस्म १ तोला, लोहभस्म २ तोले, शिलाजीत ३ तोले, गूगल ४ तोले लेकर सवकावारीकचूर्णकर गूगल और शिलाजीतकेसाथ कूटकर अन्दाज़से मधु देकर १–१ माशेकीगोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुमें मिलाकर सेवनकरे और ऊपरसे मीठीछाछ, दूध, वेरकाकाढा, शरवत, घी, गोमूत्र, खट्टा और मीठा अनारकारस इनकेसाथ लेनेसे कास, श्वास, शोष, अरुचि, पसलीकादर्द, ववासीर, कामला, प्रमेह, पाण्डु, हलीमक, हृद्रोग, मूत्रकृच्छ्र, शोथ, ग्रहणी, यकृत् और प्लीहावृद्धि, क्रिमि, ग्रन्थि, भगन्दर, श्लीपद, गण्डमाला, व्रण, नाडीव्रण, अतिस्थूलता और कृशता, विद्रधि, प्रमेहपिडिका, नासिका, नेत्र, शिर और मुखके भयङ्कररोग, रक्तपित्त, स्वरभङ्ग, ज्वर, सन्निपात, विषमज्वर, पित्तज्वर, द्वन्द्वज और सान्निपातिक २० प्रकारकेश्लेष्मरोग, प्राकृत और वैकृत तमामरोग इनसवको नष्टकर मेधा, स्मृति, कान्ति, आयु, पुरुषत्व, और इन्द्रिय वलको देताहै तथा वायुकाअनुलोमन करताहै ॥ ५२९ ॥

५३० सूर्यपावकरसः

त्रिपाषाणं द्वितुत्थञ्च नेपालं तालकं समम्।
मर्द्यं धुत्तूरकद्रावैः कुक्कुटीपुटपाचितम् ॥ २२५२ ॥

स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य कोलपित्तेन भावयेत् ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं शीतज्वरनिवारकम् ॥
सूर्यपावकनामायमीश्वरेण प्रकल्पितः ॥ २२५३ ॥

वै. चि , वा , ज्वराऽधिकारे ।

टि०—द्वितीयपाठगुपतेनाऽयमापानतस्मान्य विभूदपि न तत्रान्तर्भवति महदन्तरत्वात् ।

भाषा—तीनतरहका शुद्धगोमल, तुल्य और हीराकसीस, जमालगोटा, रसमाणिक्य सबसमभागलेकर वारीकचूर्णकर धतूरे केरससे २–३ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर कुक्कुटपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर सूअरकेपित्तकी १ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥ ५३० ॥

५३१ सूर्यप्रभागुटिका (प्रथमा)

चित्रकं त्रिफला निम्बं पटोल मधुयष्टिका ।
वराङ्गं केशरश्चैव यवानी चाम्लवेतसम् ॥ २२५४ ॥
भूनिम्बकश्च दार्व्येला मुस्तापर्पटकन्तथा ।
तुत्थकं कटुका भार्ङ्गी चव्यपद्मकदीप्यकाः ॥ २२५५ ॥
पिप्पली मरिचं दन्ती शटी शुण्ठी च पुष्करम् ।
विडङ्गं पिप्पलीमूलं जीरकं देवदारु च ॥ २२५६ ॥
पत्रकं कुटजं रास्ना दुरालम्भामृता त्रिवृत् ।
लतारुष्करतालीसं वृक्षाम्लं लवणत्रयम् ॥ २२५७ ॥
धान्यकश्चाजमोदा च कारवी धातुमाक्षिकम् ।
जातीफलं तुगाक्षीरी वाजिगन्धा च दाडिमम् २२५८
कङ्कोलकमुशीरञ्च द्विक्षार रेणुका तथा ।
प्रत्येकं पलमात्राणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत ॥२२५९॥
गिरिजस्य पलान्यष्टौ द्वे पले चैव गुग्गुलोः ।
प्रस्थमेकं सितायाश्च घृतस्य कुडवन्तथा ॥ २२६० ॥
गिरिजस्य समं लोहं प्रस्थार्द्धं माक्षिकस्य च ।
सर्वमेकत्र सम्मिश्र्य स्निग्धभाण्डे निधापयेत॥२२६१
ऊरुस्तम्भं वातरोगं हन्त्यर्दितञ्च गृध्रसीम् ।
विद्रधीं श्लीपदं गुल्मं पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥२२६२॥
कासं पञ्चविधं घोरं मूत्रकृच्छ्रं गलग्रहम् ।
आनाहमश्मरीं वर्ध्म ग्रहणीमपवाहुकम् ॥ २२६३ ॥
अरोचकं पार्श्वशूलमुदरं सभगन्दरम् ।
हृद्रोगं शूलमुत्कम्पविपमज्वरनाशनम् ॥ २२६४ ॥
उरःक्षतभवे दोपे मुखरोगे च दारुणे ।
महौपधवरादस्माद्ग्राह्यं पाणितलोन्मितम ॥ २२६५ ॥
विविधान्नानि भुञ्जीत यथेष्टञ्च यथासुखम् ।
गुटिका भास्करी नाम्ना सृष्टा देवेन शम्भुना २२६६
प्रमेहं रक्तपित्तञ्च वातरक्तं सकामलम् ।
अग्निसन्दीपनं हृद्यं दीर्घायुःपुष्टिदा भवेत् ॥ २२६७ ॥
ये वातप्रभवा रोगा ये च पित्तसमुद्भवाः ।
कफरोगाश्च ये केचिद्द्वन्द्वजा. सान्निपातिकाः १२२६८
ते सर्वे प्रशमं यान्ति भास्करेण तमो यथा ।
रोगविद्राविणी कार्या गुटिका सूर्यवल्लभा ॥ २२६९ ॥

नि र., र.सु., वै. चि, वाते ।

भाषा—चित्रकमूल, त्रिफला, नीमकीछाल, परवल, मुलहटी, तज, नागकेशर, अजवाइन, अम्लवेत, चिरायता, दारुहल्दी, इलायची, नागरमोथा, पित्तपापड़ा, शुद्धतूतिया, कुटकी, भारङ्गी, चव्य, पद्मकाठ, मयूरशिखा, पीपल, मरिच, दन्तीमूल, कचूर, सोंठ, पोहकरमूल, विडङ्ग, पिपलामूल, जीरा, देवदारु, पत्रज, कुरैयाकीछाल, रास्ना, जवासा, गिलोय, निशोत, मजीठ, भिलावा, तालीसपत्र, कोकम, तीनोंनमक, धनिया, अजमोद, कारवी (महाराष्ट्रमेंप्रसिद्ध है), सोनामाखी, जायफल, वंसलोचन, असगन्ध, अनारदाना, शीतलचीनी, खस, दोनोंक्षार, रेणुका येसव १–१ पल, शिलाजीत ८ पल, शुद्धगूगल २ पल, मिश्री १ प्रस्थ, घी ८ पल, लोहभस्म और मधु ८–८ पल लेकर काष्ठौषधियोंका वारीकचूर्णकर शिलाजीत और गूगल को अच्छीतरह मिलाय शक्कर, घी और मधु मिलाकर चिकने वर्तनमें रखदे । इसमेंसे १–१ तोला समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे उरुस्तम्भ, वातरोग, लकवा, गृध्रसी, विद्रधि, श्लीपद, गुल्म, पाण्डु, हलीमक, ५ प्रकारका कास, भयङ्कर मूत्रकृच्छ्र, गलग्रह, आनाह, पथरी, अण्डवृद्धि, ग्रहणी, अपवाहुक, अरुचि, पसलीकादर्द, उदररोग, भगन्दर, हृद्रोग, शूल, उत्कटकम्प, विपमज्वर, उर क्षत, भयङ्कर मुखरोग, प्रमेह, रक्तपित्त, वातरक्त, कामला, मन्दाग्नि, हृदयकीकमजोरी, वातरोग, पित्तरोग, समस्त कफरोग, द्वन्द्वज और सान्निपातिक समस्तरोगोंको यह नष्टकरतीहै आयु और पुष्टिको वढातीहै ॥ ५३१ ॥

५३२ सूर्यप्रभागुटिका (द्वितीया)

भार्ङ्गी वह्निजयायुगाभ्रकदलीपाठावचारोचना-,
श्चव्यं पत्रकचित्रके त्रिकटुकं क्षारद्वयं गन्धकम् ।
त्रायन्ती हरवीजकेशरविपद्वन्द्वं लवङ्गं कणा,
कुष्ठं शल्यफलं फलत्रययुतं फेनः समुद्रादपि॥२२७०॥
ब्रह्मवीजं ज्योतिवीजं वालविल्वं विरूढकम् ।
लवणानि तथा पञ्च जात्यादिकुसुमाष्टकम् ॥२२७१॥
वातारितैलैनैतेपां कल्पिता भिषजांवरैः ।
एपा सूर्यप्रभा नाम गुटिकाऽग्निप्रदीपनी ॥ २२७२ ॥

र र स , र को., र मृ , अग्निमान्द्ये ।

भाषा—भारङ्गी, सफेदचित्रकमूल, भांग, जैंती, अभ्रकभस्म, केलाकन्द, पाठा, वच, गोरोचन, चव्य, पत्रज, लालचित्रक, त्रिकटु, दोनों क्षार, शुद्ध गन्धक, त्रायमाण, शुद्धपारा, केशर, स्याहसफेदवछनाग, लौंग, पीपल, कुठ, मैनफल, त्रिफला, समुद्रफेन, पलाश और मालकांगनीके वीज, पककरफिरसे हरा भया हुआ वेल, पाचोंनमक, चमेली, मालती, जूही, सोनाजूही, चम्पा, मौलश्री, कदम्ब, मोगरा इन आठोंकेफूल, सव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें

मिलाय एरण्डकेतैलसे घोटकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह मन्दाग्निको नष्टकरतीहै ॥ ५३२ ॥

५३३ सूर्यप्रभाताम्रेश्वरः (आदित्यप्रभापाकताम्रम्)

सूतं द्विगुणगन्धेन खल्वे कृत्वा प्रयत्नतः।
सौवर्चलं रसार्द्धेन दत्त्वाऽऽप्लाव्यार्कपत्रकैः ॥२२७३॥
तोयै र्वा शिवकर्णोत्थै र्लिप्त्वा घर्मेषु पत्रकम्।
जम्वीरनीरे सुचिरं गलितं मर्दयेच्छुभम् ॥ २२७४ ॥
दद्याद्रक्तिद्वयञ्चास्य नागवल्लीद्रवै र्युतम्।
गुल्माम्लपित्तशूलामप्लीहपाण्डुज्वरापहम् ॥२२७५॥

र. क., र को, अम्लपित्ते।

टि०—" पल नेपालशुल्वस्य पत्राणि सुतनूनि च।
कृत्वा कण्टकवेधीनि कारयेत्तदनन्तरम् ॥
कर्षकञ्च द्विकर्षञ्च क्रमात्सूतकगन्धयो ।
मर्दितव्य शिलाखल्वे रसै र्दन्तशठस्य वै ॥
कल्कञ्च पङ्कवत्कृत्वा तेन पत्राणि सर्वश ।
लेपयित्वा शिलाखल्वे स्थापयेदातपे खरे ॥
यामैकञ्च समुद्धृत्य द्रवीभवति नान्यथा।
वान्ति विरेचन कृत्वा शुद्धकाय यथाविधि ॥
पूजयित्वा सुरान्विप्रान्वैयान्देमाम्वरादिभि ।
त मृत मधुसर्पिर्भ्यां रक्तिकादिक्रमेण च ॥
लीढ्वा तक्र पिवेचानु धान्याम्लकमथापि वा ।
जीर्णे साय समश्नीयाच्छाल्यन्न तु पुरातनम् ॥
सेव्यमान निहन्त्येतदम्लपित्त सुदारुणम्।
कास क्षय तथा शोपमर्शांसि ग्रहणीगदम् ॥
कामला पाण्डुरोगञ्च कुष्ठान्यष्टादशैव च।
रक्तपित्त सखालित्य शूलञ्चैवोदराणि च ॥
वातरोग प्रतिश्याय विद्रधीं विषमज्वरम्।
मनताभ्यासयोगेन वलीपलितवर्जित ॥
ताम्रवत्कुरुते देह सर्वव्याधिविवर्जितम्।
सर्यप्रभानाम ताम्र सेवनाचाम्लपित्तजित् ॥
जीनेद्दर्पगत साग्र द्वितीय इव पावक ॥"

इति पाठो रसेन्द्ररत्नकोशेऽस्ति, अत्र फलभागे विशेषता दृश्यते। र र. स, र च, र क ल एषु पुस्तकेषु रसेन्द्ररत्नकोशे च द्वितीयस्थाने "पलोन्मितस्य शुल्वस्य सूक्ष्मपत्राणि कारयेत्। तत्सम गन्धक दत्वा खल्वे सर्व विनिक्षिपेत् ॥ जम्वीररससंयुक्त दिन घर्मे निधापयेत्। तत शुल्वे द्रवीभूते रसकर्ष नियोजयेत् ॥ तत्सिद्धमुदरे योज्य शोफे चैव भगन्दरे। नाम्ना हृदयमार्तण्डरस एष प्रकीर्तित ॥,, इति पाठो निहितोऽस्ति, विशेषाऽभावात्सोऽनायासेनैवाऽत्र समाविशति। र र, र च एतयोस्ताम्रयोगनाम्ना " रसगन्धकयो कर्ष प्रत्येक शोधयेद्भिपक। तत कज्जलिका कृत्वा नैपाल ताम्रपत्रकम् ॥ कण्टवेध्य विधातव्य सर्वमेकत्र कारयेत्। पात्रे हि मृत्तिकोद्भूते पर दद्याद्रस शुभम् ॥ पक्वजम्बीरसम्भूत यथाप्लावितमेव तत्। आतपे स्थापयेत्पश्चायावत्पङ्कोपम भवेत् ॥ पाणिना मर्दयित्वा तु वटिका कारयेत्तत । विशोष्य भावयेद्रक्तिद्वय तस्मान्मर्दोपधात् ॥ दिनत्रयान्तरेणैव रक्ति रक्ति विवर्धयेत्। परिहारविधिसेन धान्यजीरानुपानत ॥ प्रातरेतद्विधातव्य हन्ति पित्ताम्लसम्भवम्। ग्रहण्यासुद्धत शूलमम्लपित्तञ्च दारुणम् ॥ अजीर्णं रक्तपित्तञ्च क्षय कुष्ठ विशेषत ॥,, इति पाठो निहितोऽस्ति परन्तु तत्र निष्पादनप्रक्रियाया त्रुटि प्रतिभाति, अतस्तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भाव करणीय। र का, र. चि एतयो स्वयमग्निनाम्ना " विचूर्ण्य गन्धाश्मपल विशुद्ध रसद्विकर्षेण सम च खल्वे। रमार्द्धसौवर्चलचूर्णयुक्त तत्खल्वित खल्वशिला सुयत्नात् ॥ सूर्यावर्तकर्णमोरटरसैराप्लाव्य तत्कज्जली, नेपालोद्भवताम्रक पलमित तत्कण्टवेधायितम्। तेनालेप्य च कज्जलेन सुचिर जम्वीरनीरस्थित, खल्वाश्मार्पितमेतदातपधृत पिण्डीकृत घट्टने ॥ सम्पिष्याशु शुभ सुपर्णनिहित रक्तीत्रय योजयेत्, तत्कालोचितवक्त्रशुद्धिरुचिना चूर्ण विना प्रत्यहम्। हन्त्येतद्वमनाम्लपित्तजगदान्पाण्डुग्निमान्यज्वरान्, रक्ती वर्धितमाप एप नियतो लोहोक्तसर्वो विधि ॥,, इति पाठो निहितोऽस्ति सोऽप्यत्रैवान्तर्भवति विशेषविशेषाऽभावात्।

भाषा—शुद्धपारेकी द्विगुणगन्धककेसाथ नीलवर्णकज्जलीकर पारेसे आधासञ्चल मिलाय आक अथवा हस्तिकर्ण पलाश अथवा मूषाकर्णी या इन्द्रायणके पत्तोंकेरससे कल्कबनाय पारेसे चतुर्गुणित कण्टकवेधी तावेके पत्रोंपर कल्कका लेप देकर पत्थर की खरलमें रख एकदम तीक्ष्णधूपमें रक्खे। अत्यन्तगरमहोनेपर दोपहरवाद पत्रोंकी भस्म होजायगी। पूर्वरस सुखनेपर जंभीरीकारस डालकर कड़ीधूपमें बैठकर घोटे। जब इसकी द्रुति होजाय तब शीशीमें भरकर रखछोड़े। शुभतिथि, नक्षत्र, वारयुक्तमुहूर्तमें वमन विरेचनादिकसे शुद्धकियेहुए रोगीको दोरत्तीकी मात्रा पानमें डालकर खिलानेसे गुल्म, अम्लपित्त, शूल, आम, प्लीहा, पाण्डु, ज्वर येसब नष्टहोतेहैं। रसेन्द्ररत्नकोशमें १ रत्तीसे १ माशेतककीमात्रा मधु और घीकेसाथदेकर छाछ अथवा धान्याम्ल पिलाना। जीर्णहोनेपर पुरानेचावल सायङ्कालको देनालिखाहै और भयङ्कर अम्लपित्त, कास, क्षय, शोष, ववासीर, ग्रहणी, कामला, पाण्डु, १८ कुष्ठ, रक्तपित्त खालित्य, शूल, उदररोग, वातरोग, प्रतिश्याय, विद्रधि, विषमज्वर इत्यादिकोंको नष्टकरताहै तथा हमेशाकेसेवनसे वलीपलितादिकसे निवृत्त करके शरीरको ताम्रकीतरह दृढबनाताहै और १०० वर्षसे ऊपरकी आयुको देताहै। यहफलभागमें लिखाहै ॥५३३॥

५३४ सूर्यप्रभरसः

विष्णुक्रान्ता तण्डुली देवदाली
नीली ब्राह्मी सर्पनेत्री पलाशी।
आसां द्रावं कुम्भजातप्रभूतं
नीत्वा विद्यान्द्धित्रिवारं यथाप्तम् ॥ २२७६ ॥
तस्मिन्सूतं मर्दयेद्वा दिनैकं
गन्धं सूताद्युग्मभागं सहैव।
एकीभूतं लोहपात्रे क्षणं त-
त्पाच्यं तावद्द्रुतं यावदेव ॥ २२७७ ॥
शुल्वं पादं चाभ्रकं चापि सूता-
च्चन्द्रं दत्त्वा तावदेवावतार्य।
निष्कं भुक्तं चास्य पूर्वानुपानैः
कुष्ठं हन्यात्सूर्यपूर्वः प्रभोऽयम् ॥ २२७८ ॥

चि क, र. सु, र. को, र का, वै. चि, व रा., कुष्ठे। वै. चि, व रा एतयो सर्वाङ्गसुन्दरेति नाम।

टि०—"। विष्णुक्रान्तैकमूलाञ्जनजनितरमा क्षीरिणी देवदाली, सर्पाक्षी जीवनीया मुनिवरकुसुम ब्रह्मवृक्षस्य मार । गोकर्णी शङ्खपुष्पी धनरवसुरसे नीलिनी भीमसेन, ब्राह्मी वीरा रुदन्ती मधुमदनशिवा-वाकुचीचक्रमर्दा ॥ एतैरौषधैः सर्वैर्यथालाभ भिषग्वर । रस प्रमर्दयेद्गाढ रसैरपा निरन्तरम् ॥ पश्चात्सम्यग्विशुष्कन्तु द्विगुण गन्धक क्षिपेत् । प्रद्राव्य चायसे पात्रे विधु तुर्यांशक क्षिपेत् ॥ पर्पटीरसवत्पक्क स्वाङ्गशीतलता गत । भवेत्सूर्यप्रभो नाम पुण्टरीकहर पर ॥ ,, इति पाठो रसावतारे रसेन्द्रमङ्गले च सूर्यप्रभनाम्ना ताम्राभ्रकरहित स्थापित परन्तु तयोर्योगेनाऽत्यधिकशक्तिमत्त्वात्पूर्वस्मिन्नेव पाठेऽस्याऽप्यन्तर्भाव उचित । एतन्निर्दिष्टाऽधिकभावनानामप्याधिक्येनाऽनुष्ठाने क्षत्यभाव इति विद्वद्भिर्विभावनीयम् ।

भाषा—कोयल, काटेवालीचौलाई, वन्दाल, नील, ब्राह्मी, अन्धाहूली, कपूरकाचरी, अगस्त्य इनके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे २–२ अथवा ३–३ दिन मर्दनकर दूनागन्धकदेकर १–१ दिन पूर्वद्रवोंसे मर्दनकर सुखाकर कज्जलीवनावे। फिर घीपुतीहुई लोहेकी कड़ाहीमें डालकर बेरकेकोयलेपर पिघलाकर पारेसेचतुर्थांश ताम्र और अभ्रकभस्म तथा शुद्धकपूर मिलाकर नीचे उतारकर घोटे। वारीकचूर्णहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ माशे कुष्ठघ्नानुपानोंकेसाथदेनेसे यह समस्त कुष्ठोंको नष्टकरताहै ॥ ५३४ ॥

५३५ सूर्यरसः (प्रथमः)

एकं भागं वत्सनाभञ्च कुर्या-
द्भागद्वन्द्वं टङ्कणं दन्तिबीजात् ।
त्रीनप्येतद्धिङ्गुलस्याऽपि तुर्यः
सद्यो जूर्तिं नाशयत्येष सूर्यः ॥ २२७९ ॥

र च, र प्र सु, ज्वरे ।

भाषा—शुद्ध वछनाग १ भाग, भुनासुहागा २ भा, शुद्ध जमालगोटा ३ भा. शुद्ध शिगरिफ चतुर्थांशमिलाकर १–२ पहर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ-देनेसे यह नवज्वरोंको दूरकरताहै ॥ ५३५ ॥

५३६ सूर्यरसः (द्वितीयः)

रसमेकं द्विधा गन्धं त्रिस्ताप्यं पञ्च तालकात् ।
सर्वं शुद्धं विचूर्ण्याथ चतुर्भागं मृताभ्रकम् ॥ २२८० ॥
वचा कुष्ठहरिद्राग्नि टङ्कणं सैन्धवं विषम ।
सपाठा लाङ्गली व्योषं प्रत्येकमेकभागकम् ॥ २२८१ ॥
भावितं भृङ्गिसारेण दिनैकं तस्य भक्षयेत् ।
माषं सूर्यरसो नाम हिक्का वैस्वर्यकासजित् ॥ २२८२ ॥
पिप्पल्या सह निर्गुण्ड्याः क्वाथं चानुप्रपाययेत् ।
अष्टगुञ्जामिता भक्ष्या विख्याता रसपर्पटी ॥ २२८३ ॥
त्रिकण्टमूलं शुण्ठी च अजाक्षीरं समोदकम् ।
क्षीरावशिष्टं तं क्वाथं सकणं पाययेन्निशि ॥ २२८४ ॥

नि र, र सु, व रा, र को, र का, वै. चि, र क ल कासे

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भा, सोनामाखी ३ भा, रसमाणिक्य ५ भा., अभ्रकभस्म ४ भा, वच, कुठ, हल्दी, चित्रक, भुनासुहागा, सैन्धव, शुद्धवछनाग, पाठा, कलिहारी और त्रिकटु १–१ भागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्ण-कज्जलीमें मिलाय भंगरेकेरससे एकदिन मर्दनकर उड़दवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से २ गोलीतक पीपल और सम्भालूके क्वाथकेसाथ देनेसे हिचकी, स्वरभङ्ग और कासको यह दूरकरताहै। इसके अभावमें ८ रत्ती रसपर्पटी देवे और रातको गोखरूकीजड़ और सोंठका प्रक्षेपदेकर बकरीकादूध और पानी समभाग पकाकर दूधमात्र अवशेष रहनेपर पीपल डालकर पिलावे ॥ ५३६ ॥

५३७ सूर्यरसः (तृतीय.)

रसगन्धकताम्राभ्रं कणाशुण्ठ्यूषणं विषा ।
भूतमेकं विषञ्चैकं सूर्यः कासादिनाशनः ॥ २२८५ ॥

र र, स., कासे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म ५–५ भाग, पीपल, सोंठ, मरिच, अतीस और शुद्धवछनाग १–१ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीकेसाथ १–२ पहर घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह कासको नष्टकरताहै ॥ ५३७ ॥

५३८ सूर्यवटी

पिप्पली पिप्पलीमूलं विषं हिङ्गुलटङ्कणम् ।
समभागानि चैतानि चूर्णमेकत्र कारयेत ॥ २२८६ ॥
जैपालं पादभागञ्च शुद्धं कृत्वा विनिक्षिपेत् ।
सर्वचूर्णसमो देयः सूर्यक्षारः सुभर्जितः ॥ २२८७ ॥
पुटपाकीकृतं वज्रीस्वरसेन विमर्दयेत् ।
भावनात्रितयं दत्त्वा मुद्गमानां प्रकल्पयेत् ॥ २२८८ ॥
नागवल्लीदलैः सार्धं द्विकालं भक्षयेत्सुधीः ।
अजीर्णज्वरकासघ्नं हिक्काश्वासोदरापहम् ॥ २२८९ ॥
गुल्मप्लीहाम्लपित्तञ्च नलवातविनाशनम् ।
शूलाध्मानहरं सद्यो मूत्रकृच्छ्रामयापहम् ॥ २२९० ॥
वातानुलोमनञ्चैव भेदि दीपनपाचनम् ।
तत्तद्रोगानुपानेन योजयेद्बुद्धिमान्भिषक् ॥
सूर्याह्वा वटिका ह्येषा निर्मिता ब्रह्मणा पुरा ॥ २२९१ ॥

रसायनसं, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—पीपल, पिपलामूल, शुद्ध वछनाग, शिगरिफ और सुहागा समभाग, शुद्धजमालगोटा सवसे चतुर्थांश, हल्दीवगैरहसे अग्निस्थायी कियाहुआ कलमीशोरा सवकीवरावर लेकर पुटपाकसे निकालेहुए थूहरकेरससे ३ भावनाएं देकर मूंगवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पानकेरस अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ सुवहशामदेनेसे अजीर्ण, ज्वर, कास, हिक्का, श्वास, उदररोग, गुल्म, प्लीहा, अम्लपित्त, नलवात, शूल, आध्मान, मूत्रकृच्छ्र, वातोदावर्त, मलविवन्ध इनसवको यह नष्टकरताहै और दीपन तथा पाचनहै ॥ ५३८ ॥

५३९ सूर्यवातरसः

तुल्योपणैरसामोद्‌ताम्राभ्रैः क्रमशो धृतैः ।
सविषांशैः कृतः कल्कस्त्रिगुञ्जः सूर्यवातनुत् ॥२२९२॥

र. (मा.), सूर्यवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा., ताम्रभस्म ३ भा, अभ्रकभस्म ४ भा, शुद्धवछनाग ५ भा., मरिच १५ भागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे ३–३ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सूर्यवात (अर्धावभेद व सूर्यावर्त) को नष्टकरताहै ५३९

५४० सूर्यशेखररसः (विषसिन्दूरम्)

रसो द्वादशगद्याणो गन्धकस्याऽत्र षोडश ।
हिङ्गुलस्य च चत्वारो घृष्ट्वा कूप्यां विनिक्षिपेत् २२९३
द्वात्रिंशदमृतं दद्यात्तस्मिन् सूते विशोधिते ।
मृदा प्रलिप्य तां कूपीं शोषयित्वा खरातपे ॥२२९४॥
धृत्वाऽथ वालुकायन्त्रे वह्निं षट्प्रहरावधिम् ।
दत्त्वोत्तार्य स्वयं शीतं सूतं माणिक्यसन्निभम् २२९५
सन्निपाते च दातव्यस्त्रिदोषोत्थे च सूतकः ।
एकैव गुञ्जिका मात्रा चोत्तमा सन्निपातके ॥ २२९६ ॥
रोगोद्रेकं समीक्ष्याऽथ वर्धयेद्वा विचक्षणः ।
यदि दाहो भवेदेनं स्नापयेद्वोचितश्चरेत् ॥
भोजनं वोचितं कुर्यात्मधुरप्रायमेव च ॥ २२९७ ॥

रसचि., र चं, रसायनसं, र का., वाताधिकारे ।

टि०—यत्रकुत्रचिद्विषस्थाने केवल मल्ल दृश्यते तत्र मल्ल निक्षिप्तव्यं नाय विषसिन्दूरम्, किन्तु मल्लसिन्दूर सूर्यशेखरो वा इत्यादि यथेष्ट नाम स्थापनीयम् ॥

भाषा—शुद्धपारा १२ भाग, गन्धक १६ भा., शुद्धशिंगरिफ ४ भा., शुद्धवछनाग ३२ भागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमेंभर वालुकायन्त्रमें रख ६ पहरकी क्रमवृद्ध अग्नि देकर पकावे । आचवन्दकरतेसमय शीशीकामुहबन्दकरदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर माणिक्यके सदृश यह सिन्दूर निकलेगा इसे शीशीमें रखलेवे । इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे घोरसन्निपातको यह नष्टकरताहै । रोग और रोगीका बलाबल देखकर मात्राको न्यून या अधिक करदेवे । इसकेदेनेसे दाहमालूम हो तो ठंढेजलमें स्नान करावे । अत्यन्त भूखलगनेपर मधुरप्राय भोजन देवे ॥ ५४० ॥

५४१ सूर्यसिद्धरसः

गुडूची भृङ्गराजश्च कुमारी कण्टकारिका ।
त्रिफला काकमाची च कदली वाजिगन्धिका २२९८
वर्गस्यास्य रसैश्चापि वर्षाभूमुशलीद्रवैः ।
प्रत्येकं मर्दयेदेतैः पारदं प्रतिवासरम् ॥ २२९९ ॥
प्रस्थमात्रप्रमाणेन गाढं गाढं निरन्तरम् ।
अनन्तरं सैन्धवेन प्रस्थद्वयमितेन च ॥ २३०० ॥
प्रत्येकं गैरिकं प्रस्थं खटिकां पिष्टरूपिणीम् ।
कन्यकारससंयुक्तां रसं तत्र विमर्दयेत् ॥ २३०१ ॥
दिनत्रयमतिश्लक्ष्णं नष्टपिष्टश्च खल्वके ।
तापिकायन्त्रमारोप्य मुद्रयेच्च मुखं ततः ॥ २३०२ ॥
त्रयोदशदिनं यावद्वह्निं कुर्यान्निरन्तरम् ।
यन्त्रादादाय सूतेन्द्रं कर्तव्यं तस्य पूजनम् ॥ २३०३ ॥
गुरूणां महतां पश्चाद्योगिनां क्रोधवर्जितः ।
मदमात्सर्यमुत्सृज्य मानञ्चाहङ्कृतिन्तथा ॥ २३०४ ॥
ब्रह्मचर्यञ्च कर्तव्यमम्लं द्रव्यं विवर्जयेत् ।
दानं शक्त्या प्रकर्तव्यं वैद्यतोषणमेव च ॥ २३०५ ॥
अर्द्धगुञ्जां रसं दद्यात्सततं क्रमवर्धितम् ।
रक्तिकानवपर्यन्तं दद्याद्वैद्यो विचक्षणः ॥ २३०६ ॥
भक्तदुग्धञ्च भुञ्जीत मुद्गदुग्धशृतं घृतम् ।
शर्करामिक्षुखण्डानि पथ्यार्थं तत्र योजयेत् ॥२३०७॥
एकविंशदिनस्यान्ते नखाश्च निपतन्ति च ।
चत्वारिंशद्दिनेऽतीते तत्केशाः प्रक्षरन्ति च ॥ २३०८ ॥
एवं षष्टिदिने क्रान्ते मला नाशं व्रजन्ति च ।
अशीतिदिवसस्यान्ते तस्य दन्ताः पतन्ति वै २३०९
एवं स्वयं प्राश्यमानं रसायनरसेश्वरम् ।
मासत्रये समायाते नूत्नाः केशा न संशयः ॥ २३१० ॥
दृढा दन्ताश्च जायन्ते नवीनाश्च पुनर्नवाः ।
पुनर्नववपुर्भूत्वा द्वितीयो मीनकेतनः ॥ २३११ ॥
सिद्धमण्डलसिद्धाङ्गो ब्रह्मायुः कालपारगः ।
दृढाङ्गो बलवान्सौम्यो हरिवेगो दृढेन्द्रियः ॥ २३१२ ॥
निरामयो महोत्साहो महाशी च मनोहरः ।
वनितानां शतं गच्छेत्पुत्राणां शतमाप्नुयात् ॥ २३१३ ॥
कालभ्रमरसङ्काशाः केशाः स्यु र्गुच्छरूपिणः ।
विशालबाहुशोभी स्याद् दृढोरःस्थलशोभनः २३१४
कपाटप्रतिमं प्रौढं हृदयं स्त्रीमनोहरम् ।
अत्युन्नतवपुर्यष्टिर्विशालनयनाम्बुजः ॥ २३१५ ॥
निर्गुण्डिकापत्ररसं त्रिकालं वानुपाययेत् ।
औषधस्य क्षणं स्थित्वा काले ताम्बूलचर्वणम् २३१६
कर्पूरकुसुमामोदे निर्मले विनिवेशयेत् ।
अनल्पे सुखदे तल्पे निर्मलास्तरणे शुते ॥ २३१७ ॥
गीतसङ्गीतशास्त्रीयं रामायणपरायणः ।
अपथ्यं न च कर्तव्यं पथ्ये स्थेयं सदा बुधैः ॥
अनिष्टां देहिनां शास्त्रे दौर्मनस्यं सुकर्मणि ॥ २३१८ ॥

रसचि, रसायने ।

भाषा—गिलोय, भंगरा, घीकुंवार, भटकटैया, त्रिफला, मकोय, कदलीकन्द, असगन्ध, इटसिट, मुशली इनप्रत्येकके स्वरसोंसे १ प्रस्थ पारेको तप्तखल्वमें जोरसे मर्दनकरे । फिर दो प्रस्थ सैन्धवसे मर्दनकर पारेको स्वच्छबनाकर गेरू और खड़ियामिट्टी १–१ प्रस्थ मिलाय क्रमसे घीकुंवारकेरससे ३–३ दिन मर्दनकरे । नष्टपिष्टी होनेपर बहुतमजबूत मिट्टीकेवर्तनमें बन्दकर

समस्तपर ७–८ वज्रकपड़मिटी चढाय अच्छीतरह सूखनेपर चूल्हेपर रख १३ दिनकी निरन्तरआंचदे १४ वें दिन अग्निदेना वन्दकरदे औरकोयलोंपर रहनेदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर ऊपरके-भागमें आयेहुए पारेको निकालकर रखछोड़े। क्रोध, मद, मात्सर्य, मान, अहङ्कार इनसवको छोड़कर ब्रह्मचर्यव्रत लेकर गुरु, वृद्ध और योगीका पूजनकर अम्लवर्गका परित्यागकरता हुआ यथाशक्ति दानकरे और वैद्यको सन्तुष्टकर आधीरत्तीगे रसकासेवन प्रारम्भकरे। प्रतिदिन आधीआधीरत्ती वढ़ाकर ९ रत्तीपर मात्रा कायमकरे। भूखलगनेपर दूध, भात, मुद्गयूप, घी, शक्कर और ईखका उचितप्रमाणमें सेवनकरे। २१ वें दिन नख, ४० वें दिन केश गिरने लगेंगे। ६० दिनकेवाद मल नष्टहोंगे। ८० दिनवाद दात गिरेंगे। ३ महीने पूरे होनेपर केश और मजवूतदातोंका प्रादुर्भाव होगा। फिरसे युवावस्थाको प्राप्तहोकर कन्दर्पसदृश होजायगा। अकस्मात् दिव्यविद्याओंकी प्राप्ति होगी और दीर्घायु होगा। इसप्रकार रससेवनकरनेवालेके समस्त अङ्ग मज़बूत, शोभा और वलयुक्त होजातेहैं तथा इन्द्रियोंकीशक्ति वढजातीहै। तमामरोगोंसे निर्मुक्तहोताहै। भूख एकदम वढ़जातीहै। वहुतसी स्त्रियोंकी सम्भोगशक्ति वढ़कर दिव्यपुत्रोंको उत्पन्नकरनेकी शक्तिवढतीहै। केशभौंरेकेसदृश काले और गुच्छेदारहोजातेहैं। विशालवाहु, दृढोरस्क और कपाटसदृश मज़वूत हृदयवाला होजाताहै। शरीरका कद वढ-जाताहै और कमलसदृश विशालनेत्रहोजातेहैं। इसमें तीनोंसमय औषधभक्षणके थोड़ीदेरवाद निर्गुण्डीकारसपिलावे। कपूर और सुगन्धयुक्त पान देवे। विशाल और निर्मलवस्त्रविछीहुई सुख-कारक शय्यापर शयनकरावे। शास्त्रीयगीत और सङ्गीत सुनावे। रामायणकापाठकरे। इसकेसेवनमें अपथ्य भूलकरभी न करे। शास्त्रमें मनुष्योंके अविश्वास और सुकर्ममें उदासीनताको देख-कर विश्वासदिलानेकेलिये यह योग कहागयाहै ॥ ५४१ ॥

५४२ सूर्यावर्तरसः (प्रथमः)

तक्रपिष्टद्विगन्धेन लेपयेद्द्रविपत्रकम्।
शरावसम्पुटे रुद्ध्वा शुष्कं चुल्ल्यामधिश्रयेत् ॥२३१९॥
अग्निः शनैः शनैर्देयस्ततो यामचतुष्टयम्।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य वमनेषु प्रयोजयेत् ॥ २३२० ॥
कासे क्षये तथा श्वासे कण्ठरोगे च हृद्ग्रहे।
मन्देऽग्नौ कफसम्भूते वमेच्चोष्णाम्बुपानतः ॥ २३२१ ॥

रसायनस, श्वासे।

टि०—केवलगन्धकेन मारितत्वाद्द्रविताण्डवेनान्तर्भावित।

भाषा—दोभाग शुद्धगन्धकको तक्रमें पीसकर एकभाग वारीक तावेके पत्रोंपर लेपदेकर शरावसम्पुटमें वन्दकर चूल्हेपर रख क्रम-वृद्ध ४ पहरकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ माशेकी मात्रा वमनकारकयोगोंकेसाथ देकर गरम-पानीपिलानेसे वमनहोगी उससे कास, क्षय, श्वास, कण्ठरोग, हृद्ग्रह, कफसेउत्पन्न मन्दाग्नि येसव नष्टहोतेहैं ॥ ५४२ ॥

५४३ सूर्यावर्तरसः (द्वितीयः)

मृताभ्रं माक्षिकञ्चैव हेमकार्पासबीजकम्।
टङ्कणं मौक्तिकञ्चाथ गुडूचीसत्त्वमेव च ॥ २३२२ ॥
काकविन्ध्युत्थबीजानां चूर्णं गीर्वाणपुष्पकम्।
सर्वैः समं हिङ्गुलञ्च जम्बीररसमर्दितम् ॥ २३२३ ॥
द्राक्षया हिक्किकां हन्ति ग्रहणीगदनाशनः।
सूर्यावर्तरसोनाम देववैद्यविनिर्मितः ॥ २३२४ ॥

वै चि (ल), हिक्काया ग्रहण्याञ्च।

भाषा—अभ्रक और सोनामाखीभस्म, शुद्धधतूरे और कपासकेवीज, भुनासुहागा, मुक्तापिष्टी, गिलोयसत्व, कौआटोंटीके-वीज, लवङ्ग १–१ भाग, शुद्धशिगरिफ सवकीवरावर लेकर वारीक चूर्णकर जभीरीकेरसमें १–२ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से ३ गोलीतक तुलसी-वगैरह उचितानुपानकेसाथ देनेसे हिचकी, ग्रहणी और सूर्या-वर्तको यह नष्टकरताहै ॥ ५४३ ॥

५४४ सूर्योदयरसः

सूतक्ष्मागुणलोहताम्रनलिका माक्षीकतालामृतं,
वेल्लारामठदीप्यकिंशुकफलं कम्पिल्लकं कुष्ठकम्।
तुल्यांशैः परिमर्दितं दिनमथो कन्यावराग्निद्विजा-
भृङ्गाद्भिः सुरपर्णिकाखदिरशक्राद्भिः समङ्गाम्बुभिः॥
सिद्धो वल्लमितो जयेत्क्रिमिरुजं निम्बाम्बुदीप्यान्वितं,
वेल्लारामठयुक्तथा क्रिमिहरः क्षौद्रान्वितो वाऽग्नियुक्।
ग्रन्थ्युग्रातिविषाऽऽखुपत्ररसयुग्वाह्लीकशिग्र्वम्बुयुक्,
शूलाध्मानविवन्धगुल्मजठरान्सूर्योदयोऽसौ रसः॥

र, क्रम्यधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, ताम्र, कङ्कुष्ठ, सोना-माखी, हरिताल इनकीभस्में,, शुद्धवछनाग, विडङ्ग, हींग, अज-वाइन, पलाशपापड़ा, कमीला, कुठ सव समभागका वारीकचूर्ण-कर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय घीकुंवार, त्रिफला, चित्रक, ब्रह्मदण्डी, भगरा, शताव, खैर, भाग, मजीठ इनकेस्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वना-कर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली नीम, सुगन्धवाला और अजवाइन (१) विडङ्ग और भुनीहींग (२) चित्रक और मधु युक्त विडङ्ग, (३) गठिवन, वच, अतीस और मूषाकर्णीकेपत्तों-कारस (४) हींग और सहिजनकारस (५) इनमेंसे किसी एक अनुपानकेसाथ औचिती देखकर देनेसे क्रिमिरोग, शूल, आध्मान, विवन्ध, गुल्म और उदररोग इनसवको यह नष्टकरताहै ॥५४४॥

५४५ सेतुवन्धरसः

रसदरदसुताम्रं फेनगन्धेन तुल्यं,
मुनिदिनमितघृष्टं विश्वतोयेन वल्लम्।
ज्वरजनितविदाहे दापयेदार्द्रकेण,
शृतजलहिमपानं तक्रयूषेण पथ्यम् ॥ २३२७ ॥

हन्याज्ज्वरातिसारञ्च सर्वरूपं सुदारुणम्।
बाले वृद्धे च तरुणे सेतुबन्धो महारसः॥ २३२८॥
र. बो., ज्वरातिसारे।

भाषा—शुद्ध पारा, शिंगरिफ, अफीम और गन्धक, ताम्रभस्म सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अदरखकेरससे ७ दिनतकमर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेरसकेसाथ देनेसे भयङ्करज्वरातिसार और दाहको यह नष्टकरताहै। इसमें गरमकियाहुआजल ठंढाकरकेदेना। छाछ और मूंगके यूषकेसाथ पथ्यदेना॥ ५४५॥

५४६ सेतुबन्धवटी

म्लेच्छोपणाहिफेनं शालूकं खदिरसंयुक्तम्।
कर्षं कर्षं चूर्णं कृत्वा विमिश्रयेत्सर्वम्॥ २३२९॥
कर्षं दग्धकपर्दकचूर्णं दत्त्वा विभाव्यञ्च।
कञ्चटदाडिमजम्बूशृङ्गाटपत्रजरसेन प्रत्येकम्॥२३३०॥
पञ्चवारं विभाव्याऽथ कारयेद्वटिकां शुभाम्।
गुञ्जामात्रामतीसारे सेतुबन्धं प्रयोजयेत्॥
नानावर्णमसाध्यञ्च शूलं पित्तं निवर्तयेत्॥ २३३१॥
ना. वि., सन्निपातातिसारे।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, मरिच, अफीम, कमलकन्द, खैरसार और पीलीकौड़ीकीभस्म १–१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर मरसा अथवा जलपीपल, अनार, जामुन और सिंघाड़ेके पत्तोंके स्वरससे ५–५ बार भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मरसावगैरहके रसकेसाथ अथवा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे नानातरहका अतिसार, असाध्यशूल और पित्तरोगोंको यह नष्टकरताहै॥ ५४६॥

५४७ सेवन्तीपाकः

सेवन्तीसुमसाहस्रं घृतप्रस्थे विपाचयेत्।
घृते पक्वीकृते तत्र निक्षिपेदौषधं भिषक्॥ २३३२॥
सितोपलाचतुष्कञ्च चातुर्जातं पलं पलम्।
मृद्वीकां षट्पलाञ्चैव क्षिप्त्वा मधु पलाष्टकम्॥२३३३॥
धारासत्त्वं तवक्षीरं श्वेतं जीरं पृथक् पृथक्।
नागं वङ्गं पलार्द्धञ्च सर्वमेकत्र कारयेत्॥ २३३४॥
कर्पूरं वल्लमात्रञ्च दत्त्वा स्थाप्यं सुकुम्भके।
भक्षयेत्कर्षमात्रन्तु प्रातरेव हि पथ्यभुक्॥ २३३५॥
जीर्णज्वरे क्षये कासे अग्निमान्द्ये प्रमेहके।
दिनरात्रिज्वरे चैव शिरोरोगे प्रशस्यते॥ २३३६॥
प्रदरं रक्तजान्रोगान् कुष्ठार्शांसि च नाशयेत्।
नेत्ररोगान्सुदुष्टांश्च तथा सर्वान्मुखेस्थितान्॥
नाशयेन्नात्र सन्देहो मण्डलस्य च सेवनात्॥२३३७॥
नि र., क्षये।

भाषा—पीले अथवा लालगुलाबके १००० पुष्पोंको १ प्रस्थ गोघृतमें भूनकर ४ प्रस्थ शक्करकी ३ तारी चाशनी बनाकर चातुर्जात १–१ पल, बीजरहितकालीद्राक्ष ६ पल, मधु ८ पल, गिलोयसत्त्व, तीखुर अथवा वंशलोचन, सफेदजीरा, नाग और वङ्गभस्म २–२ कर्ष, शुद्धकपूर ३ रत्ती डालकर चिकने-वर्तन अथवा काचकेपात्रमें रखछोड़े। ७ दिन बीतनेपर इसमेंसे १–१ कर्ष प्रात.काल सेवनकरनेसे जीर्णज्वर, क्षय, कास, मन्दाग्नि, प्रमेह, दिन और रात्रिकाज्वर, शिरोरोग, प्रदर, रक्तजरोग, कुष्ठ, अर्श, दुष्टनेत्ररोग, समस्तमुखरोग इनसबको १ मण्डल (४९दिन) में यह नष्टकरताहै॥ ५४७॥

५४८ सोमनाथिताम्रम् (प्रथमम्)

शुल्वं सूतसमं द्वयोरपि समो गन्धस्तदर्धः पुन-,
स्तालश्चार्द्धशिलायुतो विरचयेत्पिष्टं ततः कज्जलीम्।
लिप्त्वा ताम्रदलानि मार्तिकदृढे पात्रे निधायाऽथ त-,
त्पाच्यं सैकतयन्त्रकेऽर्द्धदिवसं शीतं स्वतो निर्हरेत्॥
तत्कासश्वसनाग्निमान्द्यगुदजानेकातिपाण्ड्वामय-,
प्लीहोरः प्रतिरोधकोष्ठमरुतो रक्तं जयेद्योजितम्।
वल्लद्वन्द्वमितं कणामधुयुतं क्षारार्द्रवारापि वा,
युक्तं सर्वकफामयघ्नमचिराद्यत्सोमनाथाभिधम्॥
वै र, नि. र., र सु, र. चू, चि. र भ, यो त., टो, र क यो, र. र स, र पा, वा, यो. च., शूले, श्वासे कासे च।

टि०—रसेन्द्रचूडामणौ कज्जलीं ताम्रपत्राणि पर्यायेण विनिक्षिपेदिति विशेष, कज्जल्या ताम्रदलल्लेपने अधरोत्तरनिक्षेपे च फलभागे प्रायश समानतैवास्ति अतस्तत्र स्वेच्छाचारस्यैव प्राधान्यम्।

भाषा—शुद्धतावेके बारीकपत्र और शुद्धपारा १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भा, हरिताल १ भा और मैनसिल आधाभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जभीरीवगैरहके रससे मर्दनकर ताम्रपत्रोंपर लेपदेकर मिट्टीकेपात्रमें नीचे ऊपर रख दूसरे पात्रसे ढककर कपड़मिट्टीकर वालुकायन्त्रमें दोपहरकी कड़ी आंचसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ६–६ रत्ती पीपल और मधु अथवा यवक्षार और अदरखके रसकेसाथदेनेसे कास, श्वास, मन्दाग्नि, अर्श, नानातरहकेपाण्डु, प्लीहा, उर क्षत, मलमूत्रविबन्ध, उदररोग, वातरक्त और कफ रोगोंको यह नष्टकरताहै॥ ५४८॥

५४९ सोमनाथिताम्रम् (द्वितीयम्)

बलिना पलमात्रेण तद्द्रव्यरजसा मितैः।
विषतिन्दुकसाम्येन वत्सनाभपटूत्तमैः॥ २३४०॥
कलिकारिशिलाव्योपतालपूगकरञ्जकैः।
कृत्वा चूर्णं हि जम्बीरद्रवेण विद्रवीकृतम्॥ २३४१॥
तत्लवं खल्वके भाण्डे विनिःक्षिप्य ततःपरम्।
कृतकण्टकवेध्यानि पलताम्रदलान्यथ॥
लिप्तपादांशसूतानि तस्मिन्कल्के निगूहयेत्॥२३४२॥
एतत्सिद्धमुखागतं विनिहतं श्रीसोमदेवोदितं,
गुञ्जायुग्ममितं कणाज्यसहितं सत्पथ्यसंसेवितम्।
गुल्मप्लीहशकृद्विबन्धजठरं शूलाग्निमान्द्यामयं,
वातश्लेष्मसशोपपाण्डुनिचयं जूर्त्यादिकं नाशयेत्।

पथ्यं रोगोचितं देयं रसाघातं विवर्जयेत् ।
एतत्सात्म्यीकृतं येन तस्य मृत्यु र्न विद्यते ॥ २३४४ ॥

र चू, शूलाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और कुचिला १-१ पल, वछनाग, सेंधानमक, करिहारी, मैनसिल, त्रिकटु, हरिताल, सुपारी, और करज २-२ पल लेकर वारीकचूर्णकर जंभीरीकेरससे पीसकर कल्कबनावे। फिर विशेषशुद्धताम्रके कण्टकवेधी पत्र १ पल और शुद्धपारा १ कर्ष खरलमें डालकर घोटे। समस्तपारा पत्रोंपर चढ-जानेपर पूर्वकल्कके भीतर पत्रोंकी तह लगाकर शरावसम्पुटमें बन्द-कर कपडमिटीकर लवणयन्त्रमें ४ दिनकी कड़ी आचदेवे। स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर अच्छीतरह घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे २-२ रत्ती पीपल और घीकेसाथ सेवनकरनेसे गुल्म, श्लीहा, मलविबन्ध, उदररोग, शूल, मन्दाग्नि, वातश्लेष्मरोग, शोप, पाण्डु, ज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य तत्तद्रोगो-चित देवे और रसको मारनेवाली चीजोंका परित्यागकरे। इसको हमेशा सेवनकरनेवालेका दीर्घायु होताहै ॥ ५४९ ॥

५५० सोमनाथरसः (प्रथमः)

कर्षं जारितलौहञ्च तदर्द्धं रसगन्धकम् ।
एलापत्रं निशायुग्मं जम्बूवीरणगोक्षुरम् ॥ २३४५ ॥
विडङ्गं जीरकं पाठा धात्रीदाडिमटङ्कणम् ।
चन्दनं गुग्गुलु लोध्रं शालार्जुनरसाञ्जनम् ॥ २३४६ ॥
छागीदुग्धेन वटिकां कारयेद्दशरक्तिकाम् ।
निर्मितो नित्यनाथेन सोमनाथरसस्त्वयम् ॥२३४७॥
सोमरोगं बहुविधं प्रदरं हन्ति दुर्जयम् ।
योनिशूलं मेढ्रशूलं सर्वजं चिरकालजम् ।
बहुमूत्रं विशेषेण दुर्जयंहन्त्यसंशयम ॥ २३४८ ॥

र सं, र सु, र. च, र चि, सोमरोगे ।

भाषा—लोहभस्म १ कर्ष, शुद्ध पारा और गन्धक, इला-यची, पत्रज, हल्दी, दारुहल्दी, जामुन, खस, गोखरू, विडङ्ग, जीरा, पाठा, आवले, अनारदाना, भुनासुहागा, सफेदचन्दन, शुद्धगूगल, लोध, सखुआ, अर्जुनकीछाल और रसौत ८-८ माशे लेकर वारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय बक-रीकेदूधसे १-२ दिन घोटकर १०-१० रत्तीकी गोलियें बना-कर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथले नेसे दु सह सोमरोग, प्रदर, योनि और मेढ्रशूल, त्रिदोषज और पुरानाशूल, दुर्जयबहुमूत्र, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५५० ॥

५५१ सोमनाथरसः (द्वितीयः)

हिङ्गूलसम्भवं सूतं पालिधारसमर्दितम् ।
रण्डाशोधितगन्धञ्च तेनैव कज्जलीकृतम् ॥ २३४९ ॥
तद्द्वयोर्द्विगुणं लौहं कन्यारसविमर्दितम ।
अभ्रकं वङ्गकं रौप्यं खर्परं माक्षिकन्तथा ॥ २३५० ॥
सुवर्णञ्च समं सर्वं प्रत्येकञ्च रसार्द्धकम् ।
नत्सर्वं कन्यकाद्रावै र्मर्दयेद्भावयेत्ततः ॥ २३५१ ॥
भेकपर्णीरसेनैव गुञ्जाद्वयवटीं ततः ।
मधुना भक्षयेच्चापि सोमरोगनिवृत्तये ॥ २३५२ ॥
प्रमेहान्विंशतिं हन्ति बहुमूत्रञ्च सोमकम ।
मूत्रातिसारकृच्छ्रञ्च मूत्राघातं सुदारुणम ॥ २३५३ ॥

र. सं., र सु, व, र चि., भै. र., सोमरोगे ।

भाषा—शिंगरिफसे निकालेहुएपारेको २-३ दिन निसोत-केरसमें मर्दनकर नष्टपिष्टी बनाय ऊर्द्धपातितकरले। गन्धकको चौगुना वाङ्गखेरसेकेकन्द अभावमें केलेकेकन्दकारस देकर चलाताहुआ पकावे। रसमुखजानेपर गन्धकको धोकर साफकरले। फिर समभाग पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर दोनोंसे दूनी लोहभस्म मिलाकर १-२ दिन घीकुंवारकेरसमे मर्दनकरे। इसकेबाद अभ्रक, वङ्ग, रजत, खपरिया, सोनामाखी और सुवर्ण इनकीभस्में पारेमे आधेआधेप्रमाणमें मिलाकर घीकुंवार और मण्डूकपर्णीके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाथदेनेसे २० प्रकारकेप्रमेह, बहुमूत्र, सोम, मूत्रातिसार, मूत्रकृच्छ्र, भय-ङ्करमूत्राघात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५५१ ॥

५५२ सोमनाथरसः (तृतीयः)

रङ्गच्छदेन तनुना परिवेष्ट्य मुद्रां,
ताम्रस्य सावयवमार्कवकल्कमध्ये ।
सम्यक् पुटेद्दतिपटुः सुरभेः शकृद्भिः,
स्यात्सोमनाथरस एव समीरहर्ता ॥ २३५४ ॥

मि भै. म, शूले ।

भाषा—शुद्धतावेके पैसेपर वारीक रांगेकेपत्रेकोलपेट भंगरेके पञ्चाङ्गके १६ गुने कल्कमें रख गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपड़मिटीदेकर सूखनेपर गायकेकण्डोंकी गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर पैसा फूलाहुआ मिलेगा उसे पीसकर रख-छोड़े। इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह पार्श्वशूलवगैरह तमामवायुरोगोंको नष्टकरताहै ॥५५२॥

५५३ सोमनाथरसः (चतुर्थः)

पारदगन्धककुनटीशशिलेखातुल्यभागपरिमृदिताः ।
लोहवरपात्रनिहितास्त्वेता दृषदि ततो भाव्याः२३५५
स्नुग्जातासितधूर्तकवायसिकास्फोटिकादलस्वरसैः ।
शिग्रुदलैःसोमतिक्तासहितैःक्रमशः स्थिता रौद्रे२३५६
तं शुष्कं सिद्धरसं गुञ्जाद्वद्व्याष्टगुञ्जपरिमाणम् ।
ताम्बूलपत्रसहितं पूर्वोदितं पथ्यं युञ्ज्यात् ॥२३५७॥
श्वित्रोदुम्बरिपिडिकासुप्तिपूतित्वहस्तिचर्माणि ।
श्रीसोमनाथगदितं रसायनं दुर्लभं हन्यात ॥२३५८॥

र. मृ, कुष्टे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मैनसिल और वाकुची समभाग लेकर वाकुचीका वारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय लोहेकेखरलमें १-२ पहर मर्दनकर पत्थरकेवर्तनमें रख थूअर, कालाधतूरा, मकोय, चिरपोटन, सहिजन, वाकुची इनकेपत्ते

तथा कुटकीके स्वरसोंसे तीक्ष्णधूपमें १–१ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पानमें रखकर देवे और प्रतिदिन १–१ रत्ती वढाकर ८ रत्तीपर मात्रा कायमकरे। कुष्ठोक्तपथ्यका सेवनकरनेसे श्वित्र, उदुम्बर, पिडिका, सुनवहरी, सड़न, चर्मदल इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ५५३ ॥

५५४ सोमनाथरसः (पञ्चमः)

शुद्धसूतकपलं पलन्तथा गन्धकञ्च परिमर्दयेद्द्विपक्‌ ।
मर्दकेन च सुलोहजेन तं स्वल्पशेषमवलोक्य कज्जलम्
पादहीनपलमभ्रकं क्षिपेन्मर्दयेदथ च यामसम्मितम् ।
विश्वचूर्णमिह निक्षिपेद्बुधः सिद्धमित्यमहिपत्रवेष्टितम्
रक्तिकाप्रभृतिमाषकं यथा दीयते च फलवर्गसंयुतम् ।
व्योषमुस्तखदिरानुपानतः पथ्यमत्र यवशालिजं भवेत्
अम्लमद्यतिलमैथुनानि वै
मानवो मलयुतानि नो भजेत् ।
श्वित्रं मुक्त्वा हन्ति कुष्ठानि पुंसां
सर्वोद्भूतान्युग्ररूपाणि मासात ॥
षण्मासेन प्राप्तपूयानि जित्वा
धत्ते कान्ति पूर्णचन्द्रोपमानाम् ॥ २३६२ ॥

र मृ, कुष्ठे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ पललेकर नीलवर्ण-कज्जलीकर ३–३ कर्ष अभ्रकभस्म और सोंठकाचूर्ण मिलाय एक-पहर मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती पानमें रखकर खिलावे और क्रमसे मात्रावढाकर १ मासेपर नियतकरे। त्रिफला, त्रिकटु, नागरमोथा और खैरसारकाक्काथ ऊपरसे पिलावे। जव, पुराने-सफेदचावल पथ्यमें देवे। खटाई, मद्य, तिल, मैथुन, मलयुक्त-पदार्थ इनका परित्याग करनेसे सफेदकुष्ठोंको छोड़कर पूर्णरूप समस्तकुष्ठोंको यह एकमहीनेमें नष्टकरताहै। पूययुक्तकुष्ठोंको ६ महीनेमें मिटाकर पूर्णचन्द्रकीतरह शरीरकीकान्तिको वढाताहै ॥

५५५ सोमपाणिरसः

सूतनिष्कं गन्धनिष्कं मर्दयेच्चित्रकद्रवैः ।
माषैकं मृततीक्ष्णं स्यान्मृतशुल्वञ्च माक्षिकम ॥२३६३॥
माषैकैकञ्च सम्मिश्र्य पूर्वसूतेऽथ मर्दयेत् ।
धत्तूरत्रिफलाकन्यावृद्धदार्वाद्रकद्रवैः ॥ २३६४ ॥
कोशाम्रकस्य मण्डूक्या निर्गुण्ड्या भृङ्गचित्रकैः ।
वयःस्थापिचुवातारिशक्राशनद्रवैरपि ॥ २३६५ ॥
प्रतिद्रवं पलैकैकं दत्त्वा खल्वे विमर्दयेत् ।
रसांशं त्र्यूषणं क्षिप्त्वा चणमात्रा वटी कृता ॥२३६६॥
सम्मिश्र्य सन्निपातार्ते दापयेज्जीरकद्रवैः ।
कषायं पञ्चमूलानामनुपानं प्रशस्यते ॥ २३६७ ॥
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं तृषार्ते शीतलं जलम् ।
सन्निपातं निहन्त्याशु सोमपाणी रसेश्वरः ॥ २३६८ ॥

रसचि, र. सु, सू प्र, नि. र, र को, र का., सन्निपाते।

टि०—सूतप्रदीपिकायां पाणिपुट इति नाम । र. को, र का, एतयो पावटरस इति नाम । योगमहार्णवे पाल्टनाम्ना " सूतनिष्क गन्धनिष्क मर्दयेचित्रकद्रवै. । माषैकं मृततीक्ष्णस्य मृतशुल्वाऽऽलमाक्षिकम् ॥ माषैकैकं विनिक्षिप्य पूर्वसूतेन मर्दयेत् । धत्तूरविजयाद्रावै मुस्ताकुटजनागरै· ॥ जातीकोशामृताद्रावैं पर्पटैश्चापि वुद्धिमान् । प्रतिद्रव पलैकैक दत्त्वा खल्वे विमर्दयेत् ॥ रसाश त्र्यूषण मोचरस क्षिप्त्वा वटीस्तत । कुर्याच्चणकमात्रा वै तास्तिस्रो जीरकार्द्रकै ॥ दापयेत्पञ्चमूलोत्थकषायैर्वाऽनुपानकम् । ज्वरातिसारे सकल्टोपोत्थग्रहणीगदे ॥ दध्यन्न दापयेत्पथ्यं तृषार्ते शीतल जलम् । सन्निपात निहन्त्याशु रसोऽय पाल्टाभिध ॥ " इति योगो निहितोऽस्ति । अत्र मूलद्रव्येषु तालक प्रक्षेपे च मोचरस विशेषतया निक्षिप्य विशेष क्तोऽस्ति परन्त्वस्य मूल पूर्वरस एवेनि सुधीभिर्हृधाकलनीयम् ।

भाषा—४–४ माशे शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जली कर चित्रककेस्वरसमे १–२ पहर मर्दनकर फोलाद, ताबा और सोनामाखी १–१ माशा मिलाकर धतूरा, त्रिफला, घीकुंवार, विधारा, अदरख, जगलीआम, ब्राह्मी, सभालू, भंगरा, चित्रक, हर्रे, नीम, एरण्ड और भागके यथासम्भव १–१ पल स्वरस अथवा क्वाथोंसे मर्दनकर सुखाकर छठाभाग त्रिकटुकाचूर्ण मिलाय चनेप्रमाणगोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली जीरेके स्वरस अथवा क्वाथोंसे मिलाकरदेवे और ऊपरसे पञ्चमूलकाक्वाथदेवे तो यह सन्निपातको नष्टकरताहै। अत्यन्तभूखलगनेपर दहीभातदेते और प्यासलगनेपर ठढाजलदेवे ॥ ५५५ ॥

५५६ सोमवाणरसः

हिङ्गुलं मरिचमारिचनागं नागवङ्गमलिनं ज्वलनालम्
पञ्चपित्तगरलं तरलं तत्पुष्पयुक्तमपि मर्दय गाढम् ॥
तत्समानमखिलं घनवारा भावितं घनमदेन मदेन ।
भावितं तदनुपानभेदतस्सन्निपातसततादिनाशनम् ॥

टो, ज्वराऽविकारे ।

भाषा—शुद्धशिगरिफ, मरिच, शीतलचीनी, नागकेशर, नाग और वङ्गभस्म, भाग, शुद्धगन्धक और हरिताल समभाग-लेकर वारीकचूर्णकर पाचोंपित्तों और सर्पविषमे १–१ भावना देकर एकभाग कसीसभस्म मिलाय नागरमोथा, कपूर, कस्तूरी और मार्जारमदकी १–१ भावना देकर आधीआधी रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानु-पानकेसाथदेनेसे सन्निपात और सततादिसमस्तज्वरोंको यह नष्ट-करताहै ॥ ५५६ ॥

५५७ सोमानलरसः (प्रथमः)

गोमूत्रे वाकुचीवीजं त्रिसप्ताहं विभावयेत् ।
त्वग्वर्जं शोषितं चूर्णं तुल्यांशा चाभया तथा ॥२३७१॥
ततः खादिरवीजोत्थकषाये मर्दयेत्क्षणम् ।
कङ्कुष्ठं मृतलोहञ्च तुल्यांशं मधुमिश्रितम् ॥
कर्षैकं सर्वकुष्ठार्तः खादेत्सोमानलो ह्ययम् ॥ २३७२ ॥

र. का, कुष्ठाऽधिकारे ।

भाषा—प्रतिदिन ताजे गोमूत्रसे २१ दिनतक वाकुचीको भिगोवे। इसकी समस्तक्रिया मौनव्रतसेकरे। इसकी वरावर हर्रे मिलाय खदिरकेवीजोंकेक्काथसे मर्दनकर रेवनचीनी और लोह,

भस्म १–१ भाग मिलाकर मधुकेसाथ १–१ तोलेकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ लेनेसे सवप्रकारकेकुष्ठ नष्टहोतेहैं ॥ ५५७ ॥

५५८ सोमानलरसः (द्वितीयः)

विशुद्धः पारदो ग्राह्यो हेमगन्धकजारितः ।
हेमभस्मवलिभ्याञ्च तुल्याभ्यां सह पर्पटीम् ॥२३७३॥
कृत्वा तत्र मृतं सूतं तुल्यं निक्षिप्य मर्दयेत् ।
त्रिफलाव्योषमुस्ताग्निभृङ्गनीरैःपृथक्क्रमात् ॥२३७४॥
ततः सञ्चूर्ण्य मतिमान् रोगदोषानुसारतः ।
सर्वेषु वातरोगेषु ग्रहणीगुल्मपाण्डुषु ॥ २३७५ ॥

र क यो , वा , वातरोगे।

भाषा—विशुद्ध और वुभुक्षितपारेमें यथाशक्य सुवर्णवीज और गन्धकको जारणकर सुवर्णभस्म और शुद्धगन्धक तीनोंसम भागकी नीलवर्णकज्जलीकर पर्पटीवनाय वरावरकी पारदभस्म मिलाय त्रिफला, त्रिकटु, नागरमोथा, चित्रक और भंगरेके-स्वरसोंसे क्रमश १–१ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानके-साथदेनेसे समस्तवातरोग, ग्रहणी, गुल्म और पाण्डुको यह नष्टकरताहै ॥ ५५८ ॥

५५९ सोमेश्वररसः (प्रथमः)

शालार्जुनं लोध्रकञ्च कदम्वागुरुचन्दनम् ।
अग्निमन्थो निशायुग्मं धात्रीदाडिमगोक्षुरम् ॥२३७६॥
जम्वूवीरणमूलञ्च भागमेषां पलार्द्धकम् ।
रसगन्धकधान्याब्दमेलापत्रं तथाभ्रकम् ॥ २३७७ ॥
लौहं रसाञ्जनं पाठा विडङ्गं टङ्कजीरकम् ।
प्रत्येकं पलिकं भागं पलार्द्धं गुग्गुलोरपि ॥ २३७८ ॥
घृतेन वटिकां कृत्वा खादेत्षोडशरक्तिकाम् ।
गहनानन्दनाथेन रसो यत्नेन निर्मितः ॥ २३७९ ॥
सोमेश्वरो महातेजाः सोमरोगं निहन्त्यलम् ।
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव सन्निपातसमुद्भवम् ॥ २३८० ॥
मूत्राघातं मूत्रकृच्छ्रं कामलाञ्च हलीमकम् ।
भगन्दरोपदंशौ च विविधान्पीडकान्व्रणान् ॥
विस्फोटार्वुदकण्डूश्च सर्वमेहं विनाशयेत् ॥ २३८१ ॥

र स , र चि , ध , र सु , र र , भै र , सोमरोगे।

भाषा—सखुआ, अर्जुन, लोध, कदम्व, अगर, सफेद-चन्दन, अरणी, हल्दी, दारुहल्दी, आवले, अनारदाना, गोखरू, जामुन, खसकीजड़ २–२ कर्ष, शुद्ध पारा और गन्धक, धनिया, नागरमोथा, इलायची, पत्रज, अभ्रक और लोहभस्म, रसौत, पाठा, विडङ्ग, सुहागा और जीरा १–१ पल, शुद्धगूगल २ कर्ष लेकर सवकावारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय घीमें घोटकर २–२ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथलेनेसे एकज, द्वन्द्वज और सन्निपातज सोमरोग, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, कामला, हलीमक, भगन्दर, उपदंश, पीडादेनेवालेव्रण, विस्फोट, अर्वुद-खाज, प्रमेह इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ५५९ ॥

५६० सोमेश्वररसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं मृतञ्चाभ्रं गन्धकं मर्दयेत्समम् ।
दिनं निर्गुण्डिकाद्रावे रुद्ध्वाहर्भूधरे पचेत् ॥ २३८२ ॥
उद्धृत्य वाकुचीतैले वाकुच्या वा कषायतः ।
दिनैकं भावयेद्धर्मे निष्कमात्रञ्च भक्षयेत् ॥ २३८३ ॥
वाकुचीं काकमाचीञ्च त्रिफलां चूर्णयेत्समाम् ।
मध्वाज्यैः कर्षमात्रञ्च स्वनुपानमिदं लिहेत् ॥
कापालं विषमं कुष्ठं हन्ति सोमेश्वरो रसः ॥२३८४॥

र. सु , वै चि , र क ल., चि क , र को., व. रा , र का , कुष्ठाऽधिकारे।

टि०—चिकित्साक्रमकल्पवल्ल्या ताम्र विशेषेण दृश्यते तथा च निर्गुण्ड्या द्रावे सप्तदिवसपर्यन्त मर्दन विहितमिति विशेष ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रकभस्म समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर संभालूके रससे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय भूधरयन्त्रमें एकदिनकी अग्निदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर वाकुचीकेतैल अथवा क्वाथसे एकदिनमर्दनकर ४–४ माशेकी-गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली वाकुची, मकोय और त्रिफला समभागके १ कर्षचूर्णकेसाथ मधु और घीमें मिलाकर लेनेसे कपाल और विषमकुष्ठको यह नष्टकरताहै ५६०

५६१ सौगतवटी (सौरतवटी)

पारदगन्धकचम्पककेसरसुरसकुसुमकरहाटाः ।
अजमोदाम्वुधिशोषौ जातीपत्रञ्च जातिफलम् २३८५
प्रत्येकं भागैकं भागद्वितयञ्च शुद्धमहिफेनम् ।
वनवदरसदृशगुटिकाः कार्या मधुनाऽथ भक्षयेदेकाम्
यामेऽतीते ललनासविधे स्थित्वा यवानिकाकर्षम् ।
तैलार्द्रं भुञ्जीयादनुपानं चैतदेतस्याः ॥ २३८७ ॥
लिङ्गं कठिनतरं स्याद्वीर्यस्तम्भं भवेद्यामम् ।
एषा सौगतगुटिका सत्यं सत्यञ्च शुक्ररोधकरी २३८८

वृ. यो त , र कौ , ध , र सु , यो त , वाजीकरणे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, नागचम्पाकेफूलकी केशर, तुलसीकेफूल, अकलकरा, अजमोद, समुद्रशोष, जावित्री, जाय-फल १–१ भाग, शुद्ध अफीम दो भागलेकर सवका वारीक-चूर्णकर मधुकेसाथ जङ्गलीवेरवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली खाकर एकपहरवाद स्त्रीकेपासरहकर १ कर्ष अजवाइनको तैलमें भिगोकर खावे। इससे ध्वज एकदमकठिन-होगा और १ पहर वीर्यकास्तम्भन होगा ॥ ५६१ ॥

५६२ सौभाग्यवटी

सौभाग्याऽमृतजीरपञ्चलवणव्योषाऽभयाऽक्षामलाः,
निश्चन्द्राभ्रकशुद्धगन्धकरसानेकीकृतान्भावयेत् ।
निर्गुण्डीयुगभृङ्गराजकवृषाऽपामार्गपत्रोल्लस-,
त्प्रत्येकस्वरसेन सिद्धगुटिका हन्ति त्रिदोषोदयम् ॥

येषां शीतमतीव देहमखिलं स्वेदद्रवार्द्रीकृतं
निद्रा घोरतरा समस्तकरणव्यामोहमुग्धं मनः।
शूलश्वासबलासकाससहितं मूर्च्छाऽरुची तृड्ज्वरं,
तेषां वै परिहृत्य मृत्युवदनात्प्रत्यानयेज्जीवनम् २३९०
रक्तिकापञ्चकं देयं तरुणस्य शिशोः पुनः।
रक्तिकाघृतमध्वाद्यैरनुपानैः सुखावहैः॥ २३९१॥

र. सं, र. चं., र. सु., भै. र., र. क., व, ज्वराधिकारे। धन्वन्तरौ सौभाग्यचिन्तामणीति नाम। र. म. मा., टो., ना. वि., एषु लीलाविलास इतिनाम।

भाषा—भुनासुहागा, शुद्धवच्छनाग, जीरा, पाचोंनमक, त्रिकटु, हर्रे, वहेड़ा, आवला, निश्चन्द्र अभ्रकभस्म, शुद्ध गन्धक और पारा समभागलेकर वारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय दोनोंनिर्गुण्डी, भंगरा, अड्सा और अपामार्गके स्वरसोंमें १-१ दिन मर्दनकर ५-५ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचित मधुघृतप्रभृति अनुपानोंकेसाथ देनेसे पूर्णरूपसन्निपात, शूल, श्वास, कफ, कास, मूर्च्छा, अरुचि, तृषा और ज्वरको यह नष्टकरताहै। गईहुईचेतना पीछे आतीहै। वच्चेको दोरत्तीकी मात्रादेना ५६२

५६३ सौभाग्यशुण्ठीपाकः (प्रथमः)

त्रिकटु त्रिफला भृङ्गजीरकद्वयधान्यकम्।
कुष्ठाजमोदे लौहाभ्रं शृङ्गी कट्फलमुस्तकम् ॥२३९२॥
एला जातिफलं मांसी पत्रं तालीसकेशरम्।
गन्धमाता शटी यष्टी लवङ्गं रक्तचन्दनम्॥ २३९३॥
एतानि समभागानि शुण्ठीचूर्णन्तु तत्समम्।
सिता द्विगुणिता तत्र गव्यं क्षीरं चतुर्गुणम् ॥२३९४॥
पक्त्वा कर्षप्रमाणन्तु दुग्धेनापि जलेन वा।
अम्लपित्तं निहन्त्येतदरोचकनिषूदनम्॥ २३९५॥
शूलहृद्रोगशमनं कण्ठदाहं नियच्छति।
हृद्दाहञ्च शिरःशूलं मन्दाग्नित्वं विनाशयेत्॥ २३९६॥
हृच्छूलं पार्श्वकुक्षिस्थं वस्तिशूलं गुदे रुजम्।
वलपुष्टिकरञ्चैव वशीकरणमुत्तमम्॥ २३९७॥
विशेषादम्लपित्तञ्च मूत्रकृच्छ्रं ज्वरं भ्रमम्।
निहन्ति नात्र सन्देहो भास्करस्तिमिरं यथा ॥२३९८॥

भै र, घ., अम्लपित्ते।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, भंगरा, दोनोंजीरे, धनिया, कुठ, अजमोद, लोह और अभ्रकभस्म, काकड़ासींगी, कायफल, नागरमोथा, इलायची, जायफल, जटामासी, पत्रज, तालीसपत्र, केशर, कपूरकाचरी, कचूर, मुलहठी, लौंग, लालचन्दन, येसव समभाग, सोंठ सवकीवरावर, शक्कर सवसे दूनी, गायकादूध सवसे चौगुना लेकर औषधियोंका वारीकचूर्णकर सवको इकट्ठे मिलाय मन्दआचसे पकावे। पाकतैयारहोनेपर उतारकर रखले। इसमेंसे १-१ तोला दूध अथवा जलकेसाथ लेनेसे अम्लपित्त, अरुचि, शूल, हृद्रोग, कण्ठ और हृदयकादाह, शिरकादर्द, मन्दाग्नि, हृदय, पार्श्व, कुक्षि और वस्तिकाशूल, गुदाकीपीडा, मूत्रकृच्छ्र, ज्वर और भ्रमको यह नष्टकरताहै। वल और पुष्टिको देताहै। खासकर अम्लपित्तको नष्टकरताहै॥ ५६३॥

५६४ सौभाग्यशुण्ठीपाकः (वृहन्)

नागरं खण्डशः कृत्वा प्रस्थमात्रं भिषग्वरः।
अजादुग्धाढकद्वन्द्वे विपचेन्मन्दवह्निना॥ २३९९॥
घनीभूते तु पयसि शुण्ठीं तस्मात्समुद्धरेत्।
अतिसूक्ष्माञ्च निष्पिष्य शोपयेदातपे दिनम् ॥२४००॥
घृतमानीं समावाप्य तद्दुग्धन्तु पुनः पचेत्।
यावत्पिण्डत्वमायाति ततस्तत्र च मिश्रयेत् ॥२४०१॥
चातुर्जातं तुगां वेल्लं धान्यकं जीरकद्वयम्।
मिशिमाकल्कं कुष्ठं लवङ्गञ्च शतावरीम्॥ २४०२॥
तालमूलीं त्रिकटुकं कपिकच्छुञ्च पद्मकटु।
जातीफलं जातिकोषं शृङ्गाटं वृद्धदारुकम् ॥२४०३॥
त्रिवृतं पद्मवीजञ्च त्रिफलाञ्च वलात्रयम्।
जलं सेव्यं वाजिगन्धा चन्दनागरुकारवीः॥ २४०४॥
कङ्कोलमजगन्धाञ्च द्राक्षामाक्षोटचारजम्।
अजमोदाञ्च वाताम नारिकेलगतं तथा॥ २४०५॥
कर्पूरमभ्रकं लोहं वङ्गं ताम्रं शिलाजतु।
स्वर्णमाक्षिकमप्येतत्प्रत्येकं कर्षसम्मितम्॥ २४०६॥
चूर्णीकृत्य क्षिपेत्तत्र पाणिभ्यां मर्दयेद् दृढम्।
ततः खण्डतुलां पक्त्वा तया तच्चक्रिकां चरेत् २४०७
खण्डनागरकं नाम्ना भैषज्यमिदमुत्तमम्।
यथावलमिदं खादेत्प्रातर्नक्तञ्च भेषजम्॥ २४०८॥
स्त्रीणामतिहितं नाऽत्र पथ्यापथ्यविचारणा।
क्षये पाण्डौ ज्वरे कासे श्वासे मन्दानले तथा २४०९
सङ्ग्रहण्यां रक्तगुल्मे प्रदरे सोमरोगके।
रक्तपित्ते चाम्लपित्ते सर्ववातामयेषु च॥ २४१०॥
पित्तरोगेषु सर्वेषु वातपित्तगदेषु च।
धातुशोषे प्रमेहे च रजोदोषे स्वरक्षये॥ २४११॥
दुग्धक्षये मूत्ररोगे कामलायां गलग्रहे।
सूतिकापवनव्याधौ सत्यमेतन्न संशयः॥
एषा सौभाग्यदा शुण्ठी स्त्रीणां पुत्रप्रदोत्तमा ॥२४१२॥

वृ यो त., रसायनस., टो, यो. र, यो. म., चि. र भ, पा. व., स्त्रीरोगेषु।

टि०—योगमहार्णवे कर्षसम्मितमित्यस्य स्थाने पलसम्मितमिति पाठ। पाकावल्याञ्च "लोवान चोपचीनीञ्च मस्तकीं मोचकन्तथा" इत्यधिक।

भाषा—एकप्रस्थ सोंठके छोटेछोटे टुकड़ेकर दो आढक वकरीके दूधमें मन्दआचसे पकावे। दूध गाढाहोनेपर सोंठकेटुकड़ोंको निकाल चटनीकेसदृशपीसकर कड़ीधूपमें सुखाकर कपड़छानकर ८ पल घीमें मिलाय उसीदूधमें डालकर मावा वनावे। फिर इसमें चातुर्जात, वसलोचन, विडङ्ग, धनिया, दोनोंजीरे, सौंफ, अकलकरा, कुठ, लौंग, शतावर, कालीमुशली, त्रिकटु, केवाचकीमज्जा, पद्दषण, जायफल, जावित्री, सिंघाड़े,

विदारीकीजड़, निसोत, कमलगट्टा, त्रिफला, वला, नागवला, अतिवला, दोनोंखस, असगन्ध, सफेदचन्दन, अगर, काकोली, शीतलचीनी, ववईकेवीज, कालीद्राक्ष, अखरोट, चिरोंजी, अजमोद, वादामकी मींगी, नारियल, शुद्धकपूर, अभ्रक, लोह, वङ्ग, ताम्र, सोनामाखी इनकीभस्में और शिलाजीत १-१ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर मावेमें डालकर हाथसे अच्छीतरह मसलकर मिलादे। फिर एकतुला खाडकी कड़ीचाशनी वनाय सवचीजोंको मिलाकर लड्डूवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे अग्निवलदेखकर उचित-मात्रा कायमकरे। स्त्रियोंकेलिये यह विशेषहितकारकहै। पथ्यापथ्यका विशेष विचार नहींहै। इसके सेवनसे क्षय, पाण्डु, ज्वर, काम, श्वास, मन्दाग्नि, सङ्ग्रहणी, रक्तगुल्म, प्रदर, सोम, रक्तपित्त, अम्लपित्त, समस्तवातविकार, पित्तरोग, वातपित्तरोग, वातुशोष, प्रमेह, रजोदोष, स्वरभङ्ग, दुग्धक्षय, मूत्ररोग, कामला, गलग्रह, सूतिकारोग इनसवको दूरकर उत्तमपुत्रको देताहै॥५६४॥

५६५ संशोपणरसः

वृहतीपाटलामूलं वज्रदण्डी च चित्रकम्।
भूदन्ती श्वेतगान्धारी फञ्जीमञ्जिष्ठिकाऽभयाः॥२४१३॥
काकमाची द्विजिह्वा च गन्धर्वाह्वा द्विकण्टिका।
धात्रीद्वयं चित्रकञ्च श्वेतहिङ्गु सुरद्रुमौ॥२४१४॥
क्षारद्वयं पौष्करञ्च व्योषञ्च तुम्बुरूणि च।
तदेकोत्तरवृद्ध्या च द्रव्याण्येतानि योजयेत्॥२४१५॥
कृत्वा चूर्णं तदेकांशं माक्षिकं लोहभस्म च।
सूतभस्मामृतञ्चूर्णमेकीकृत्याऽखिलन्तथा॥२४१६॥
माषमात्रप्रमाणञ्च योजयेत्कुशलो भिषक्।
संशोपणरसो नाम्ना प्रसिद्धः सर्वरोगहा॥
मेरुमप्यणुमात्रञ्च कुरुते शङ्करोदितः॥२४१७॥

र कौ (ज्ञा), सर्वरोगे।

भाषा—वनभाटा और पाटलाकीजड़, थूअरकादूध, चित्रकमूल, दन्तीमूल, सफेदभटकटैया, फाग, मजीठ, हरें, मकोय, शताव, एरण्डमूल, पीले और लालफूलकी भटकटैया, आवला, भुईआवला, लालचित्रकमूल, दूधियाहींग, चीढ, देवदारु, सज्जी और यवक्षार, पोहकरमूल, त्रिकटु, तुम्वुल येमव क्रमवृद्धभागसे लेकर वारीकचूर्णकर सोनामाखी, लोह और पारदभस्म शुद्ध-वछनाग १-१ भाग मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ माशा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह अत्यन्तमेदको नष्टकर आदमीको सशक्त वनाताहै॥५६५॥

५६६ स्वालित्यारिरसः

रौप्यमभ्रं तुत्थकञ्च मर्दयेत्कन्यकाम्भसा।
मुद्गमात्रां वटीं कृत्वा पाययेत्सह सर्पिषा॥२४१८॥
स्वालित्यारी रसो नाम स्वालित्यं स्नायुजं गदम्।
वातश्लेष्मोद्भवांश्चापि गदानाशु निवारयेत्॥२४१९॥
भेषजान्यत्र योज्यानि वातव्याधिहराणि च।
पथ्यमत्र विजानीयाद्द्रव्यं पुष्टिवलप्रदम्॥२४२०॥

आ नि, स्वालित्ये।

भाषा—चांदी, अभ्रक और तुत्थकीभस्में समभागलेकर कुमारीकेरससे १-२ दिन मर्दनकर मूगवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली घीकेसाथ देनेमे स्नायुओंकी स्थानभ्रष्टता नष्टहोतीहै। इसमें खासकर वातहर औषधें और पथ्यमें पुष्टिकारक पदार्थ देवे॥५६६॥

५६७ स्तम्भनरसः

हंसपादं पलार्द्धन्तु वृन्ताकेन च पाचितम्।
वल्लमानप्रदानेन हीनकन्दर्पवृद्धिकृत्॥२४२१॥

रसायनस, वीर्यस्तम्भने।

भाषा—दोकर्ष शिंगरिफकी डलीको मलमलमें लपेट मोटे-वेंगनमें रख भरताकरे। ऐसे १०८ वेंगनोंमें भरताकरके निकाल-कर रखले। कमसेकम ५० वेंगनोंमें अवश्य रखनाचाहिये। इसमेंसे ३-३ रत्ती उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह नष्टशुक्रकी वृद्धिको करताहै॥५६७॥

५६८ स्तम्भनवटी

सदहिफेनविमर्दितपारदः
कनकवीजरसेन विमर्दितः।
समसिताविजयो यदि भक्षितो
न रजनी न दिवा न दिवाकरः॥२४२२॥

रसायनस, यो त, वृ यो त, व, वीर्यस्तम्भने।

भाषा—शुद्ध अफीम और पारद समभागलेकर कच्चे-धतूरेके वीजोंकेरससे पारा अदृश्यहोनेतक घोटकर इसकेवरावर शक्कर और भागमिलाकर १-१ रत्तीकी गोलिया वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली सम्भोगसे १ घटापहिले लेकर केवलदूध पीनेसे अत्यन्त स्तम्भनहोताहै॥५६८॥

५६९ स्त्रीगदघ्नरसः

पारदं गन्धकं कान्तं हेम लोहं सुमारितम्।
गगनञ्च समांशेन पुटे गजपुटे पचेत्॥२४२३॥
दशमूलानुपानेन त्र्यूषणेनाथ वा पुनः।
दद्याद्गुञ्जाद्वयञ्चास्य यथावलमथापि वा॥
अयं सर्वविकाराणां स्त्रीजातानां विनाशकः॥२४२४॥

र म मा, ना वि., स्त्रीरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, कान्त, लोह, सुवर्ण और अभ्रकभस्म समभागलेकर दशमूलकेकाथसे २-२ दिन घोटकर-टिकड़ियेंवनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २-२ रत्ती दशमूल अथवा त्रिकटुकेकाथकेसाथ देनेसे यह समस्त-स्त्रीरोगोंको नष्टकरताहै॥५६९॥

५७० स्थौल्यगजकेसरीरसः

रसेन्द्रं रजतं ताप्यं गगनं ताम्रलोहकम्।
स्वर्णञ्च क्रमवृद्धानि मर्दयेत्पूरवारिणा॥२४२५॥
अन्येन चाम्लवर्गेण मर्दयेत्सप्तवासरान्।
काचकूप्यां निधायाऽथ पचेद्यामाष्टकद्वयम्॥२४२६॥

स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा गृह्णीयात्तञ्च मर्दयेत् ।
आर्द्रकस्वरसेनैव द्रोणपुष्पीरसेन च ॥ २४२७ ॥
बृहत्याः पत्रतोयेन वीजतोयेन वा पुनः ।
प्रत्येकं दिनमेकं हि भावनां दापयेत्क्रमात् ॥ २४२८ ॥
पिप्पलीमधुना सार्धं चैतद्गुञ्जाद्वयं भजेत् ।
स्थूलदुर्दिनविनाशने मरु-
त्स्थौल्यपर्वतविनाशनेऽशनिः ।
स्थौल्यदोषरसशोषणक्षमः
स्थौल्यरोगगजकेसरीरसः ॥ २४२९ ॥

र. प्र सु , र. म मा., स्थौल्ये ।

भाषा—पारा, रजत, सोनामाखी, अभ्रक, ताम्र, लोह और सुवर्ण इनकीभस्में क्रमवृद्धभागसेलेकर विजोरे तथा अन्य अम्लवर्गकेरससे ७–७ दिन मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदी-हुई आतशीशीशीमें भर मुंहवन्दकर वालुकायन्त्रमें रख ८ पहरकी दृढाग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अदरख, गूमा, वनभाटा, विजोरा इनकेरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पीपल और मधु अथवा मेदोहरानुपानकेसाथदेनेसे यह अत्यन्तस्थूलताको नष्टकरताहै ॥ ५७० ॥

५७१ स्थौल्यान्तकरसः (प्रथमः)

रसगन्धौ समौ ताभ्यां द्विगुणं लोहजं रजः ।
विडङ्गनागरक्षारनीरेण परिमर्दयेत् ॥ २४३० ॥
कर्षार्द्धं नागरक्षारविडङ्गैः परिषेवितः ।
माषैको मधुना युक्तः स्थौल्यमाशु व्यपोहति ॥२४३१॥
हिङ्गुसौवर्चलाजाजीव्याधिघातयुतस्तथा ।
मस्तुसक्तुयुतो वापि व्योषवेल्लायुतोऽपि वा ॥२४३२॥
रसः स्थौल्यान्तकश्चैव क्षौद्रतोययुतस्तथा ।
पथ्यमुष्णन्तु सक्षौद्रं मण्डः सोष्णस्तथा हितः २४३३
स्थौल्यापहरणः सूतो वसन्तकुसुमाकरः ।
सोऽपि क्षौद्रयुतः क्षारतोयमद्येन वा हितः ॥२४३४॥

र , स्थौल्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग, दोनोंसे द्विगुण लोहभस्म लेकर नीलवर्णकज्जलीकर विडङ्ग और सोंठकेक्वाथ तथा प्रतिसारणीय यवक्षारसे १–१ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथलेकर आधाकर्ष सोंठ, यवक्षार और विडङ्गकाचूर्ण (१) हींग, सञ्चल, जीरा और अमिलतासकागूदा (२) दहीकातोड़ और सत्तू (३) त्रिकटु और विडङ्गकाचूर्ण (४) इनमेंसे किसीभी अनुपानकेसाथ सेवनकरनेसे यह वहुतशीघ्र स्थूलताको नष्टकरताहै । इसमें मधुके साथ गरमचीज़ें और गरममांडकासेवन उचितहै । स्थौल्यके-लिये वसन्तकुसुमाकर रसको मधु और क्षारकेपानी अथवा मद्यकेसाथलेना उचितहै ॥ ५७१ ॥

५७२ स्थौल्यान्तकरसः (द्वितीयः)

वन्ध्याकर्कोटकीकन्दद्रवै मर्द्यं दिनत्रयम् ।
तालकञ्च मृतं ताम्रं द्विगुञ्जं मधुना लिहेत् ॥
पिवेत्क्षारोदकं चानु स्थौल्यरोगं विनाशयेत् ॥२४३५॥

वै. चि , व रा , स्थौल्यरोगे ।

भाषा—हरिताल और ताम्रभस्म समभागको वाझखेखसेके-कन्दके रससे ३ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्ती मधुकेसाथलेकर क्षारोदकपीनेसे यह स्थूलताको नष्टकरताहै ॥५७२

५७३ स्थौल्यान्तकरसः (तृतीयः)

सूताश्माभ्रविषं लोहं व्योषञ्च यावशूकजम् ।
मर्दयेत्सुरसावह्निकन्यातोयै दिनत्रयम् ॥
गुञ्जामात्रं प्रयुञ्जीत स्थौल्यादौ स्वानुपानतः ॥२४३६॥

र. सि , स्थौल्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और वछनाग, अभ्रक और लोहभस्म, त्रिकटु, यवक्षार, समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर तुलसी, चित्रकमूल और घीकुंवारकेस्वरसोंसे ३–३ दिन मर्दन-कर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथलेनेसे यह स्थूलताको नष्टकरताहै ५७३

५७४ स्थौल्यापकर्षणरसः

सूतवोलमृततालताम्रकं चार्कदुग्धरसकेन मर्दितम् ।
क्षौद्रयुक्तमपि वल्लमात्रकं भक्षितञ्च ह्यतिवृंहितञ्जयेत् ॥
तोयमेकपलमत्र मात्रया पानतोऽप्यखिलमेहहारकम् ॥

र प्र सु., स्थौल्ये ।

भाषा—शुद्धपारा, हीरावोल, हरिताल और ताम्रभस्म सम-भागलेकर आककेदूध अथवा पत्रस्वरससे एकदिन मर्दनकर सुखा-कर मधुमेंमिलाय ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथलेनेसे यह स्थूलताको नष्टकरताहै ॥ ५७४ ॥

५७५ स्नाय्वन्तकरसः

कासीसञ्च शिला चैव गन्धकेन समन्वितम् ।
वाकुच्या मर्दितं खल्वे मर्दयेच्छोषितं दिनम् ॥२४३८॥
पचेद्गजपुटे माषं भक्षयेदनुपानतः ।
स्नायुकान्तकरो नाम रसो नकुलसम्मतः ॥ २४३९ ॥

र म मा , ना वि., स्नायुकरोगे ।

भाषा—कासीसभस्म, शुद्धमैनसिल और गन्धक समभाग लेकर वारीकचूर्णकर वाकुचीके क्वाथसे एकदिन मर्दनकर टिकड़ी-वनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथलेनेसे स्नायुरोग नष्टहोताहै ॥

५७६ स्पर्शवातारिरसः (स्पर्शगजसिंहः)

अष्टौ भागा रसस्य स्यु विषतिन्दो दशैव च ।
गन्धकस्य दश द्वौ च कटुत्रिफलयोस्त्रयः ॥ २४४० ॥

वह्निचित्रकमुस्तानां वचाश्वगन्धयोरपि ।
रेणुकाविषकुष्ठानां पिप्पलीमूलकेशरात् ॥ २४४१ ॥
एकैकस्तु भवेद्भाग इन्द्राण्या मूलतस्तथा ।
चतुर्विंशद्गुडस्याऽत्र वटिका चणकाकृतिः ॥
क्रमेणैवाऽनुसेवेत स्पर्शवातापनुत्तये ॥ २४४२ ॥

र र.स , चि. सा , र का , वै चि , व रा , रसायनसं , र मृ , स्पर्शवाते ।

टि०—नि र रसादिवटीति नाम शीतपित्ताधिकारे । व रा , वै चि एतयो र्वातारिरस इति नाम विधूमवाते । रसकामधेनौ अस्मात्पाठात्किञ्चिद्वैषम्य दृश्यते यथा "निष्काष्टक मृत सूत निष्कद्वादशगन्धकम् । विषमुष्टि र्गन्धतुल्य सूतकश्च त्रिनिष्कक ॥ त्रिकटु त्रिफला मुस्ता वचा पत्रकरेणुकम् । विष कुष्ठ कणामूलमश्वगन्धेन्द्रवारुणी ॥ नागकेशरमेकैक निष्कैकञ्च सुचूर्णितम् । सर्वतुल्य गुड मिश्र चणमात्रञ्च भक्षयेत् ॥ अस्पर्शगजसिंहोऽय सुप्तिमण्डलकुष्ठजित् ॥" इत्यत्र लेखकप्रमादजन्यो दोष प्रतिभाति । स्पर्शगजसिंहनामापि कल्पितमेव प्रतीयते । व रा , वै चि , एतयोर्द्वितीयस्थाने वातगजाङ्कुशनाम्ना "अष्टौ भागा रसस्यापि विषतिन्दोस्तथैव च । गन्धकस्य त्रयो भागा कटुत्रयफलत्रयम् ॥ गुञ्जामात्रा वटीं खादेदशीतिवातनाशनम् । ऊरुस्तम्भ निहन्त्याशु ख्यातो वातगजाङ्कुश ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति स उपरितनपाठस्यैवापभ्रंश प्रतीयते तत्कारणन्तु त्रुटितपाठासादन स्वकृतित्वाख्यापन वा स्यादित्यनुमीयते ।

भाषा—शुद्धपारा ८ भाग, कुचिला १० भा , गन्धक १२ भा., कुटकी और त्रिफला ३-३ भा , मिलावे, चित्रकमूल, नागरमोथा, वच, असगन्ध, रेणुका, वछनाग, कुठ, पिपलामूल नागकेशर और इन्द्रायणकीजड़ १-१ भागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय २४ भाग गुड मिलाकर चनेप्रमाण गोलियेंवनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह स्पर्शवातको नष्टकरताहै ॥ ५७६ ॥

५७७ स्पर्शवातारिरसः (शीतारिरसः)

रसेन गन्धं द्विगुणं प्रगृह्य पुनर्नवाग्निस्वरसै र्विभाव्य ।
पक्वार्कपत्रस्य रसेन पश्चाद्विपाचयेदष्टगुणेन यत्नात् ॥
रसार्द्धभागञ्च विषञ्च दत्त्वा विपाचयेदग्निजलेक्षणं तत् ।
शीतारिसञ्ज्ञस्य रसायनस्य वल्लञ्च सार्द्धं मरिचार्द्रकेण
मरीचचूर्णेन घृतप्लुतेन सेवेत मांसञ्च घृतञ्च पथ्यम् ॥

र स , र.क , ध , र च , र दी , र सु , र र स , र क ल , चि सा , र को , र प्र सु., वै चि , रसायनसं , वातव्याध्यधिकारे । रसायनसङ्ग्रहे शीतपित्तारिरस इतिनाम ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भागकी नीलवर्णकज्जलीकर पुनर्नवा और चित्रकमूलकेस्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर पके आककेपत्तोंके अष्टगुणितस्वरसमें पकाकर रससे आधा शुद्धवछनाग मिलाय चित्रकमूलकास्वरस देकर थोड़ीदेरतक पकावे फिर घोटकर ३-३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मरिच और अदरखकेसाथ अथवा घृतयुक्त मरिचकेचूर्णकेसाथ देनेसे यह स्पर्शवातको नष्टकरताहै । इसमें घृत और मांस अधिक सेवनकराना ॥ ५७७ ॥

५७८ स्पर्शवातारिरसः (स्पर्शारिरसः)

दिनत्रयं स्याद्विपमुष्टिवीजं शुभारनालीयसुयन्त्रमध्ये ।
सुपाचितं भानुपलश्च तस्य चूर्णं पलैकं परिमूर्च्छितं हि
सूतं द्विगन्धश्च पलाशवीजं
द्विपट्पलं स्निग्धघटीगतञ्च ।
सम्मुद्र्य मासं शुभधान्यराशौ
संस्थाप्य चोद्धृत्य समाक्षिकन्तु ॥२४४६॥
लेह्यं तथा स्पर्शगदारिसञ्ज्ञो
प्रसुप्तवातञ्च हि सूतिकुष्ठम् ।
निहन्ति भूनिम्बविषाणिकानां
मूर्वावचानिम्बफलत्रयाणाम ॥ २४४७ ॥
पटोलपाठाद्विनिशाविशाला-
ब्राह्मीत्रिवृद्दन्तिसुपद्मकानाम् ।
सतिक्तकोषातकिकासमांशं
चूर्णं समध्वाज्यमिहानुपानम् ॥ २४४८ ॥

चि क्र व. रा., र.का , वै. चि., वातव्याध्यधिकारे ।

टि०—रसकामधेनौ विषमुष्टया षट् पलानि नियोजितानि अत्र तु द्वादशेति विशेष । र र स , र को , र , र दी , एषु स्पर्शवातारि नाम्ना र स , र च , ध , र सु , र क , एषु पलाशादिवटीति नाम्ना "पलाशवीजोत्थरसेन सूत गन्धेन युक्त त्रिदिन विमर्घ । श्लक्ष्णीकृत तद्विषतिन्दुवीज सयोजयेदस्य कलाप्रमाणम् ॥ मासद्वय निष्कमित प्रयत्नादर्शांसि हन्त्याशु नियोजनीयम् ॥ वातरक्तं तथा शोथमस्पर्शाख्यानिलामयम् । धातवच्छ्लेष्मरोगेऽपि तत्र पित्तेन भावयेत् ॥ स्पर्शवातारिराख्यातो वातरोगकुलान्तक ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भाव करणीय । "पलैक मूर्च्छित सूत शुद्धगन्ध पलद्वयम् । चूर्णित मधुनाऽऽलोड्य स्निग्धभाण्डे निरोधितम् ॥ धान्यराशौ स्थित मास समुद्धृत्याथ भक्षयेत् । अस्पर्शारिरस कुष्ठान् हन्ति सुप्तिप्रसुप्तिकम् ॥" इति रसेन्द्ररत्नकोशीयपाठस्तु त्रुटित एवास्ति अतस्तस्य रसान्तरताया न भ्रमितव्यम् ॥

भाषा—काञ्जीमें शुद्धकियाहुआ कुचिला १ पल, रससिन्दूर १ पल, गन्धक २ पल, पलाशवीज ८ पल लेकर वारीक चूर्णकर-रससिन्दूर और गन्धकको अच्छीतरह मिलाय चिकनेवर्तनमें रख मुंहवन्दकर सुगन्धितधानकीराशिमें रखदे । ७ अथवा १४ दिन वाद निकालकर ४-४ माशे मधुकेसाथलेनेसे प्रसुप्तवात, सूतिकारोग, कुष्ठ इनसवको यह नष्टकरताहै । चिरायता, मेंढासींगी, मूर्वा, वच, नीमकीछाल और त्रिफला अथवा परवल, पाठा, दोनोंहल्दी, इन्द्रायण, ब्राह्मी, निसोत, पद्मकाठ इनकाथोंको औचिती देखकर अनुपानमें देवे अथवा कड़वीतूमड़ीकागर्भ समभाग मिलाकर मधु और घीकेसाथदेवे ॥ ५७८ ॥

५७९ स्मृतिसागररसः

रसगन्धकतालानां सशिलाताप्यभास्वताम् ।
शुद्धानां मूर्च्छितानाञ्च चूर्णं भाव्यं वचाशृतैः २४४९
एकविंशतिधा पश्चाद्ब्राह्मीवारा तथैव च ।
कटभीवीजतैलेन भावयेदेकवारकम् ॥ २४५० ॥

स्मृतिसागरनामाऽयं रसोऽपस्मारनाशनः ।
सर्पिषा माषमात्रोऽयं भुक्तो हन्यादपस्मृतिम् ॥२४५१

र. कौ , वृ. यो त , नि. र., रसायनसं , यो. र., र क यो , अपस्मारे ।

टि०—केषुचित्पुस्तकेषु सशिलाताम्रभस्मनामिति पाठो लभ्यते, तत्र ताप्याऽभावोऽस्ति । तत्र तदभावो ज्ञानपूर्वको वा स्याद्भ्रममूलको वा स्यादिति सर्वं दृष्ट्वा तत्प्रक्षेपे च न कापि हानि प्रतीयते अतस्ताप्ययुक्त एव पाठो ज्यायान् ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और मैनसिल, सोनामाखी और ताम्रभस्म सब समभागकी नीलवर्णकज्जलीकर वच और ब्राह्मीकेस्वरसोंसे २१–२१ भावनाए देकर मालकागनीके तैलकी एकभावना देकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा घीकेसाथ देनेमे यह अपस्मारका नाशकरताहै और स्मृतिको जागृतकरताहै ॥ ५७९ ॥

५८० स्वच्छन्दगोलकरसः

पथ्या त्र्यूषणवह्निमन्थसुरसाः शृङ्गी विषं टङ्कणं,
गन्धं तालकमाक्षिकायसरजः सूतं द्रवन्तीफलम् ।
निर्गुण्डीस्वरसेन भावितमिदं स्वच्छन्दगोलाभिधं,
गुञ्जायुग्ममितं निहन्ति निखिलं शीतादिपूर्वं ज्वरम् ॥

र. प , ज्वरे ।

टि०—शार्ङ्गधरीयस्वच्छन्दभैरवद्रव्याणि सर्वाण्यस्मिन्सन्ति केवल द्रवन्तीफलस्याधिक्यम् । स्वच्छन्दभैरवे भावनाया मुण्डीनिर्गुण्ड्यावुभे गृहीते अत्र तु निर्गुण्ट्यैव भावना प्रदत्ता इति विशेषोऽस्ति तस्याऽत्रैवाऽन्तर्भावं कर्तुमुचित परन्तु प्रथमवातगजाङ्कुशेनाक्षरशः साम्यात्तत्रैवाऽन्तर्भाव कृतोऽस्ति । अय तु जयपालयुक्ततया स्वतन्त्रतयैव निहित इति सुधीभिराकलनीयम् । वस्तुतस्तु वातगजाङ्कुशस्यैवाऽयमपभ्रंशोऽस्ति ।

भाषा—हर्रे, त्रिकटु, अरणी, तुलसी, काकड़ासींगी, शुद्धवछनाग, भुनासुहागा, शुद्ध गन्धक, हरिताल, सोनामाखी, लोहभस्म, शुद्ध पारा और जमालगोटा समभागलेकर वारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय निर्गुण्डीकेरससे १–२ दिन घोटकर २–२ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे शीत अथवा दाहपूर्वकज्वर नष्टहोताहै ॥ ५८० ॥

५८१ स्वच्छन्दनायकरसः (प्रथमः)

सूतगन्धकलोहानि रौप्यं सम्मर्दयेत्त्रयम् ।
सूर्यावर्तस्य निर्गुण्ड्यास्तुलस्या गिरिकर्णिजैः २४५३
अग्निमन्थार्द्रजै वह्निविजयाह्वि जयासहा– ।
काकमाचीरसैरासां पञ्चपित्तैश्च भावयेत् ॥ २४५४ ॥
अन्धमूषागतं पश्चाद्वालुकायन्त्रगं दिनम् ।
आदाय चूर्णितं खादेन्माषैकं चार्द्रकद्रवैः ॥ २४५५ ॥
निर्गुण्डीदशमूलानां कषायं सोषणं पिबेत् ।
अभिन्यासं निहन्त्याशु रसः स्वच्छन्दनायकः ॥
छागीदुग्धेन मुद्गं वा पथ्यमत्र प्रयोजयेत् ॥ २४५६ ॥

र. चि., र.क , र सं , रसायनस , र का., यो म , अभिन्यासे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और रजतभस्म समभागकी नीलवर्णकज्जलीकर सूर्यमुखी अथवा हुरहुर, निर्गुण्डी, तुलसी, गोकर्ण, अरणी, अदरख, चित्रकमूल, भाग, हर्रे, माषपर्णी अथवा मुद्गपर्णी और मकोयकेस्वरस तथा पाचोंपित्तोंसे १–१ भावना देकर गोलावनाय अन्धमूषामें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख एकदिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा अदरख अथवा निर्गुण्डी और दशमूलके क्राथमें मरिचका प्रक्षेपदेकर इसकेसाथदेनेसे यह अभिन्यासज्वरको नष्टकरताहै । इसमें पथ्य बकरीकेदूध अथवा मूगके यूषकेसाथदेवे ॥ ५८१ ॥

५८२ स्वच्छन्दनायकरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं सूतांशं मृतहेमकम् ।
मृतरौप्यञ्च ताम्रञ्च सर्वं तुल्यं पृथक् पृथक् ॥२४५७॥
सूर्यावर्तस्य निर्गुण्ड्यास्तुलस्याश्चार्द्रकद्रवैः ।
भृङ्गोन्मत्ताखुकर्णीनामग्निकर्ण्यग्निमन्थयोः ॥ २४५८ ॥
तिलपर्णीचित्रकयोः काकमाच्या रसैः सह ।
मर्दयेत्त्रिदिनं खल्वे शुष्कं पित्तै र्विभावयेत् ॥२४५९॥
मात्स्यमाहिषवाराहच्छागमायूरजै र्दिनम् ।
अन्धमूषागतं पाच्यं वालुकायन्त्रगं दिनम् ॥ २४६० ॥
आदाय चूर्णितं खादेन्माषैकं चार्द्रकद्रवैः ।
निर्गुण्ड्या दशमूलानां कषायं सोषणं पिबेत् ॥२४६१॥
अभिन्यासं निहन्त्याशु रसः स्वच्छन्दनायकः ।
पथ्यं स्यान्मुद्गयूषेण क्षीरै र्वाऽऽजैर्विधापयेत् ॥२४६२॥

नि. र , र सु , र को , र का , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भा , सुवर्णभस्म ३ भा , रजत और ताम्रभस्म १–१ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर सूर्यमुखी, निर्गुण्डी, तुलसी, अदरख, भंगरा, धतुरा, मूषाकर्णी, सफेदचित्रक, गोकर्ण, अरणी, हुरहुर, लालचित्रक, मकोय इनकेस्वरसोंसे ३–३ दिन मर्दनकर मछली, भैंसा, सूअर और मोरकेपित्तोंसे १–१ भावनादेकर अन्धमूषामें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख एकदिनकी आचदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा अदरख, निर्गुण्डी और दशमूलकेस्वरस अथवा क्राथोंमें मरिचका योगकर औचितीदेखकर किसी एककेसाथ देनेसे यह अभिन्यासको दूरकरताहै । इसमें पथ्य मूगकेयूष अथवा बकरीके दूधकेसाथ देवे ॥ ५८२ ॥

५८३ स्वच्छन्दनायकरसः (तृतीयः)

मृतं सूतं तीक्ष्णकान्तं तालं माक्षिकगन्धकम् ।
तुल्यांशं मर्दयेद्द्रावै विदार्यार्द्रकसम्भवैः ॥ २४६३ ॥
भृङ्गयुत्थैः काकमाच्युत्थै र्गिरिकर्णीद्रवै र्दिनम् ।
सम्मर्द्य भाण्डगं रुद्ध्वा पचेन्मन्दाग्निना दिनम् २४६४
व्योषाग्निगन्धकविषैररण्युभयटङ्कणैः ।
समांशैश्चूर्णितै र्मिश्रैस्तुल्यांशं पूर्वसंयुतम् ॥ २४६५ ॥
त्रिदिनं मर्दयेद्द्रावै र्मुण्डीनिर्गुण्डिभृङ्गजैः ।
अष्टगुञ्जामितं खादेद्रसः स्वच्छन्दनायकः ॥ २४६६ ॥

सर्ववातहरः ख्यातो ह्यनुपानमिदं पिबेत् ।
लशुनं सैन्धवं तैलं कर्षमात्रं सुखावहम् ॥ २४६७ ॥

र.र, र.का., सन्निपाते। र का स्वच्छन्दभैरवेति नाम।

भाषा—शुद्धपारा, फोलाद और कान्तलोह इनकीभस्में, शुद्धहरिताल, सोनामाखी और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर विदारी, अदरख, भंगरा, मकोय और गोकर्णके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर हण्डीमें वन्दकर एकदिनकी मन्दाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर त्रिकटु, चित्रक मूल, शुद्ध गन्धक, और वछनाग, दोनों अरणी, सुहागा सव समभागकाचूर्ण समभागमिलाकर गोरखमुण्डी, निर्गुण्डी और भगरेके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ८–८ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली लशुन, सेंधानमक और तैल समभागमिलाकर १ कर्षकेसाथ लेनेसे यह समस्त वातविकारोंको नष्टकरताहै ॥ ५८३ ॥

५८४ स्वच्छन्दभैरवरसः (प्रथमः)

ताम्रभस्म विषं हेम्नः शतधा भावितं रसैः ।
गुञ्जार्द्धं सन्निपातादिनवज्वरहरं परम् ॥ २४६८ ॥
आर्द्राम्बुशर्करासिन्धुयुतः स्वच्छन्दभैरवः ।
इक्षुद्राक्षासितैर्वारु दधि पथ्यं रुचौ ददेत् ॥ २४६९ ॥

र स., र चि., र सु., रसायनसं, र क, र. का, यो म., ज्वराधिकारे।

भाषा—ताम्रभस्म और शुद्धवछनागका चूर्णकर धतूरेकेरससे १०० भावनाए देकर आधीआधीरत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरख, शक्कर और सैन्धवकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै। अन्नपर रुचिहोनेपर ईख, द्राक्ष, शक्कर, कचरी और दही इनकेसाथ पथ्यदेवे ॥

५८५ स्वच्छन्दभैरवरसः (द्वितीयः)

रसमेकं द्विधा गन्धं गन्धतुल्यञ्च सैन्धवम् ।
ज्वालामुखीरसैः पञ्च दिनानि परिमर्दयेत् ॥ २४७० ॥
मूषिकायां निरुद्ध्याथ पुटेद्रात्रौ च मध्यमम् ।
सर्वं भस्म यदा याति वल्लं तस्मात्प्रयोजयेत् ॥२४७१॥
ग्रहण्यां सङ्ग्रहण्याञ्च कासे श्वासे विशेषतः ।
उग्रासु ज्वरतन्द्रासु स्वल्पनिद्रासु योजयेत् ॥२४७२॥
अन्यरोगेषु तं दद्याद्रसं स्वच्छन्दभैरवम् ।
तुष्टिं पुष्टिमसौ कुर्यात्सौकुमार्यञ्च कारयेत् ॥ २४७३ ॥

र स, रसचि, र सु, ध, र.च, र का, कासे।

टि०—रसराजसुन्दरे द्वितीयस्थाने ज्वालामुखीस्थाने निर्गुण्डीं विन्यस्य रसान्तरता सम्पादिता सा त्वनादेयैव विशेषाऽभावात्।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक और सेंधानमक २–२ भागकी नीलवर्णकज्जलीकर ज्वालामुखी (जळजामुल मराठी, अथवा अगियाघास)के स्वरससे ५ दिन मर्दनकर वज्रमूषामें वन्दकर रात्रिमें मध्यमपुटदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे ग्रहणी, सङ्ग्रहग्रहणी कास, श्वास, भयङ्करतन्द्रा, निद्रानाश इनसवको नष्टकर आदमीको हृष्टपुष्ट वनाताहै और कान्तिको वढाताहै ॥ ५८५ ॥

५८६ स्वच्छन्दभैरवरसः (तृतीयः)

रसगन्धकयोः शाणं प्रत्येकं कज्जलीकृतम् ।
सुवर्णमाक्षिकं शाणं शुद्धमेकत्र कारयेत् ॥ २४७४ ॥
सिन्धुवारो रुद्रजटा नागरामलकं तथा ।
वृश्चिकाली रसैरासां कार्या मुद्गसमा वटी ॥२४७५॥
आर्द्रकस्य रसैः पेया जीरकश्चानु पाययेत ।
स्वच्छन्दभैरवाख्योऽयं सन्निपातोग्रयहृन्मतः ॥२४७६॥
ग्रहणीसूतिकातङ्कं नाशयेदविकल्पतः ॥

र स, ज्वरे।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सोनामाखी समभागकी नीलवर्णकज्जलीकर सभालू, रुद्रजटा, सोंठ, आवले और विछुआघासके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर मूगवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखकेसाथ देकर जीरेको पानीमें पीसकर पिलानेसे सन्निपातकी उग्रता, सङ्ग्रहणी और सूतिकारोगको यह नष्टकरताहै ॥ ५८६ ॥

५८७ स्वच्छन्दभैरवरसः (चतुर्थः)

रसं गन्धं टङ्कणञ्च विषं वङ्गं मृतं समम् ।
त्रिफलायाः कषायेण मर्दितं दिवसत्रयम् ॥ २४७७ ॥
दोलायन्त्रे याममात्रं पाचितं मन्दवह्निना ।
कोलपित्तेन सम्भाव्य गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ॥ २४७८ ॥
आर्द्रकस्यानुपानेन हन्यात्कण्ठककुब्जकम् ।
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं तृष्णायां शीतलं जलम् ॥
राजोपचारान्कुर्वीत रसः स्वच्छन्दभैरवः ॥ २४७९ ॥

वै चि, वा, सन्निपाते।

टि०—वाहटे टङ्कण न दृश्यते दिवसत्रयस्थाने दिवसद्वयमर्दनं विहितम्।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा और वछनाग, वङ्गभस्म सवसमभागलेकर त्रिफलाकेक्काथसे ३ दिन मर्दनकर १ पहर त्रिफलाकेक्काथमें दोलायन्त्रसे मन्दअग्निपर पकाकर सूअरकेपित्तकी १ भावनादेकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे यह कण्ठकुब्जक सन्निपातको नष्टकरताहै। भूखलगनेपर दहीभात देना। प्यासकी अधिकताहोनेपर शीतलजल पिलाना और शीतोपचारकरना ॥ ५८७ ॥

५८८ स्वच्छन्दभैरवरसः (पञ्चम.)

रसेन द्विगुणं गन्धं शुद्धं सम्मर्दयेद् दृढम् ।
लोहाभ्रकं सूतसमं प्रत्येकञ्च मृतं क्षिपेत ॥ २४८० ॥
ब्राह्मी जयन्ती निर्गुण्डी विषमुष्टिः पुनर्नवा ।
नीलिका गिरिकर्ण्यर्ककृष्णधत्तूरभृङ्गिकम् ॥ २४८१ ॥
वृषभं काकमाची च प्रत्येकैकं समाहितः ।
मर्दयेत्त्रिदिनं खल्वे तत. पित्ते विभावयेत् ॥ २४८२ ॥

मात्स्यमाहिषमायूरैः यावत्सिक्तं द्रवैरसम्।
शताह्वा जीवनी रास्ना वाजिगन्धाहिवल्लरी ॥२४८३॥
कचूरो नागरश्चैला सर्पाक्षी सुरसत्वचः।
जातवालस्य विष्ठा च कणागोक्षुरसंयुतम् ॥२४८४॥
समैरेभिः कृतां मूषां पूर्वोक्तं वेशयेद्रसम्।
तं निरुद्ध्य ततो भाण्डे मृन्मये रोधयेत्पुनः ॥२४८५॥
स्रावकेण दृढं सन्धौ विलिप्य वज्रमृत्तिकाम्।
अल्पाग्निना दिनं पाच्यं रसमादाय चूर्णयेत् ॥२४८६॥
पूर्वोक्तैः भावयेत्पित्तैः रसः स्वच्छन्दभैरवः।
आर्द्रकस्य रसैर्देयः सन्निपाते त्रिगुञ्जकः ॥ २४८७ ॥
दशमूलेन निर्गुण्ड्याः क्वाथश्चानु प्रपाययेत्।
सन्निपातं निहन्त्याशु पथ्यं दद्याद्यथोचितम् ॥२४८८॥

र सु, र. को, टो., र (मा), र का, ज्वराधिकारे।

टि०—मशुद्धात्सूतकाद्ग्राह्यो भागैको द्विगुणो बलि।
लोहाष्टकस्य कुर्वीत भागानष्टौ यथाक्रमम्॥
तच्छुष्कं मर्दयेत्पूर्वं दिनमेकं निरन्तरम्।
जयन्तीपत्रतोयेन मर्दयेच्च दिनत्रयम्॥
कृष्णाया सुरसायाश्च ब्राह्म्या नीरैस्तत परम्।
पुनर्नवारसैस्तद्वद्विषमुष्टिरसैस्तथा॥
नालिकासलिलैर्मर्द्यो गिरिकर्णीरसैस्तथा।
अर्कक्षीरैर्दिनं मर्द्यं सूर्यावर्तरसैस्तथा॥
त्रिजगद्विजयानीरैः सर्वान्ते सम्प्रमर्दयेत्।
मात्स्यमाहिषमायूरपित्तैरपि विभावयेत्॥
ततस्तद्गोलकं कृत्वा छायायां सम्प्रशोषयेत्।
तुलसीरससम्पिष्टतुलसीत्वग्विलेपिते॥
पक्वमूषान्तरे क्षिप्त्वा मुखं सम्यङ्निरोधयेत्।
घटिकाद्वितय यावद्दीपमानप्रमाणत॥
पचेत्त काष्ठशिखिना स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत्।
सन्निपातहर सोऽय रस स्वच्छन्दभैरव॥
नानारोगान्निहन्त्याशु सुविधानेन योजित।
आर्द्रकस्य रसेनैन रस सम्यक् प्रयोजयेत्॥
निर्गुण्डीमलिलेनाथ क्वाथाद्वा दशमूलजात्।
अनुपाने प्रयोक्तव्य क्वाथश्च दशमूलज॥
वल्ल वाथ द्विवल्ल वा शीतप्राधान्यरोगके।
कुर्वीत स्वेदन सम्यगर्कमूलकषायकै॥
रक्तप्राधान्यजे रोगे वक्षसो रुधिरच्युतौ।
मरिचेन विमिश्रन्तु शीतं स्यादनुपानकम्॥
कर्तव्य श्लेष्मजे रोगे नस्य तु लशुनादिभि।
इम प्राप्य रस रोगी सन्निपातान्न नश्यति॥
मुद्गघ्र कुलक कल्प्य पथ्यार्थे भिषजा सदा॥"

इति रसालङ्कारीयपाठस्त्वस्यैवापभ्रंशोऽस्ति। भावनाविशेषेषु प्रीतिश्चेदेवैव तदनुष्ठानं कृत्वैक एव रस सम्पादनीय।

भाषा—शुद्ध पारा और आठोंलोहोंकीभस्में १–१ भाग; शुद्धगन्धक २ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर ब्राह्मी, जेंती, निर्गुण्डी, कुचिला, पुनर्नवा, कालादाना, गोकर्ण, आकका दूध, कालाधतूरा, भंगरा, अड्सा, मकोय इनप्रत्येकके द्रवोंसे ३–३ दिन मर्दनकर मछली, भैंसा, मोर इनकेपित्तोंसे १–१ भावना देवे। फिर सौंफ, जीवन्ती, रास्ना, असगन्ध, पान, कचूर, सोंठ इलायची, अन्धाहूली, तुलसी, तज, तत्कालउत्पन्नहुए वालककी-विष्ठा, पीपल और गोखरू सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर इनकी मूषावनाय पूर्वोक्तरसको इसमें रखकर हण्डीमें वन्दकर वज्रमिट्टीसे मुखमुद्रा देकर १ दिनकी मन्दाग्निसे पकावे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर पूर्वोक्त औषधियोंके स्वरस और पित्तोंसे १–१ भावना देकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ रत्ती दशमूल अथवा निर्गुण्डीके काटेकेसाथ देनेसे यह समस्तसन्निपातोंको नष्टकरताहै। अत्यन्तभूखलगनेपर यथेष्टभोजनदेवे ॥ ५८८ ॥

५८९ स्वच्छन्दभैरवरसः (षष्ठः)

समभागांश्च सङ्गृह्य पारदामृतगन्धकान्।
जातीफलस्य भागार्द्धं दत्त्वा कुर्याच्च कज्जलीम् २४८९
सर्वार्द्धं पिप्पलीचूर्णं खल्वयित्वा निधापयेत्।
गुञ्जैकं वा द्विगुञ्जं वा नागवल्लीदलैः सह ॥ २४९० ॥
आर्द्रकस्य रसेनापि द्रोणपुष्पीरसेन वा।
शीतज्वरे सन्निपाते विसूच्यां विषमज्वरे ॥ २४९१ ॥
पीनसे च प्रतिश्याये ज्वरेऽजीर्णे तथैव च।
मन्देऽग्नौ वमने चैव शिरोरोगे च दारुणे ॥ २४९२ ॥
प्रयोज्यो भिषजा सम्यग्रसः स्वच्छन्दभैरवः।
पथ्यं दध्योदनं दद्याद्वीक्ष्य दोषबलाबलम् ॥ २४९३ ॥

भै र, र. कौ, र. मु, वै र, व रा, र ज्ञा, टो, र का, र क यो., र र कौ, वा, र. पा, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग और गन्धक १–१ भागकी नीलवर्णकज्जलीकर जायफल आधाभाग मिलाकर १–२ पहर मर्दनकर सवसे आधा पीपलकाचूर्ण मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १ अथवा २ रत्ती पान, अदरख अथवा गूमाकेस्वरसकेसाथ देनेसे शीतज्वर, सन्निपात, विसूचिका, विषमज्वर, पीनस, प्रतिश्याय, ज्वर, अजीर्ण, मन्दाग्नि, वमन, भयङ्कर शिरोरोग इनसवको यह नष्टकरताहै। दोषोंका वलावल देखकर दहीभात अथवा अन्यवस्तु पथ्यमें देवे ॥ ५८९ ॥

५९० स्वच्छन्दभैरवरसः (सप्तमः)

तीक्ष्णायस्कान्तगोदन्तमाक्षिकैर्मर्दितो रसः।
समांशगन्धकः पक्वो हण्डिकायन्त्रमध्यगः ॥ २४९४ ॥
व्योषाग्निमन्थसुरसाकन्दशृङ्ग्यभयाविषैः।
समैः समं त्र्यहं मुण्डीनिर्गुण्डीरसपिण्डितः ॥२४९५॥
सेवितः शमयेद्वाताञ्छाम्ना स्वच्छन्दभैरवः।
विशेषाद्वातरक्तश्च द्विवल्लश्चार्द्रकैर्लिहेत् ॥ २४९६ ॥

र र. स, वातव्याध्यधिकारे।

भाषा—फोलाद, चुम्बक, गोदन्ती, सोनामाखी इनकी-भस्में, शुद्ध पारा और गन्धक सबसमभागकी नीलवर्ण-कज्जलीकर चिकनीहंडीमें रख कोयलोंपर लोहेकीशलाकासे चलाताहुआ एकपहर पाककरे। गन्धकजलजानेपर उतारकर रसको निकाललें। फिर इसमें त्रिकुटु, अरणी, तुलसी, सूरण, काकड़ासींगी, हर्रे और वछनाग सब समभागका वारीकचूर्णकर

पूर्वरसकीबराबर मिलाय गोरखमुण्डी और निर्गुण्डीकेस्वरससे ३-३ दिन मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रसकेसाथदेनेसे समस्त वातविकार और विशेषकर वातरक्त नष्टहोताहै ॥ ५९० ॥

५९१ स्वच्छन्दभैरवरसः (अष्टमः)

मृतं नागाभ्रकं लोहं हिङ्गुलं रसगन्धकौ।
जेपालं तुल्यकञ्चात्र कासीसं दशमांशकम् ॥ २४९७ ॥
भावयेत्पञ्चभिः पित्ते जलयोगञ्च कारयेत्।
सन्निपातहरः सूत एषः स्वच्छन्दभैरवः ॥ २४९८ ॥

र. रा., सन्निपाते।

भाषा—नाग, अभ्रक और कान्तलोह इनकीभस्में, शुद्धशिगरफ, पारा, गन्धक और जमालगोटा १-१ भाग, कसीसभस्म दशवाभागलेकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें जमालगोटेको मिलाय पाचोंपित्तोंसे १-१ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै। दाहमालूमहोनेपर जलधाराका प्रयोगकरे ॥ ५९१ ॥

५९२ स्वच्छन्दभैरवरसः (नवमः)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं नेपालं टङ्कचित्रकम्।
अर्कमूलकषायेण मर्दयेद्याममात्रकम् ॥ २४९९ ॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं गुञ्जामात्रं प्रदापयेत्।
कोष्ठवातादिकान्वातान्सर्वानेव विनाशयेत् ॥ २५०० ॥

व. रा., वै. चि., कोष्ठवाते।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग, गन्धक, जमालगोटा, सुहागा और चित्रकमूल सब समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर आककी जड़कीछालकेकाढ़ेसे १ पहर मर्दनकर आकके काढेमें दोलायन्त्रसे १ पहर स्वेदनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तवातविकारोंको नष्टकरताहै ॥ ५९२ ॥

५९३ स्वच्छन्दभैरवरसः (दशमः)

शुद्धसूतस्य गद्याणान्दश यन्त्रे हि भूधरे।
क्षिप्त्वा गन्धकजं देयं षोडशांशं पुटे पुटे ॥ २५०१ ॥
एवं शतपुटे जार्यः षड्गुणः शुद्धगन्धकः।
अधोवक्त्रपिधानेन मुखमाच्छादयेद् दृढम् ॥ २५०२ ॥
मुखं वस्त्रमृदा लिप्त्वा वारम्वारं पुटेच्छतम्।
एकैकञ्च पुटं देयं वेदैर्वेदैश्च गोमयैः ॥ २५०३ ॥
एवं पुटशतं दत्त्वा निष्कास्यो भूधराद्रसः।
तिथिवर्णसुवर्णस्य रूप्यस्याप्युत्तमस्य च ॥ २५०४ ॥
ताम्रस्याप्यतिशुद्धस्य शुद्धकान्तायसोऽपि च।
तथा चाभ्रकसत्त्वस्यैकैको गद्याणकः पृथक् ॥ २५०५ ॥
पञ्चानां पञ्च गद्याणानेकत्रावर्तयेत्सुधीः।
खोटमावर्तयित्वा च कुर्याच्चूर्णं सुसूक्ष्मकम् ॥ २५०६ ॥
पुटोत्तीर्णं रसं क्षिप्त्वा गुप्ते(?)प्यमतिसूक्ष्मकम्।
तिथिगद्याणकानाञ्च पिष्टिः स्यादतिसुन्दरा ॥ २५०७ ॥
विंशते निम्बुकानाञ्च खण्डकानि विनिःक्षिपेत्।
काञ्जिके लवणोपेते स्थालिकायां शनैर्मुहुः ॥ २५०८ ॥
दोलायन्त्रेण तां पिष्टिं स्वेदयेच्च दिनत्रयम्।
काञ्जिकेन समं स्पर्शो निषेद्धव्यः स्वेदने सदा ॥ २५०९ ॥
खल्वे पञ्चदश क्षेप्या गद्याणाः शुद्धगन्धकात्।
पिष्ट्वा पञ्चदश क्षेप्यामिश्रांस्त्रिगद्य पेषयेत् ॥ २५१० ॥
सर्वस्य कज्जलीं खल्वे वज्रीक्षीरेण वासरम्।
दिनैकञ्चार्कदुग्धेन पिष्ट्वा कृत्वा च गोलकम् ॥ २५११ ॥
क्षिप्त्वा सुभूधरे यन्त्रे पिधानञ्च मुखे न्यसेत्।
मुखं वस्त्रमृदा लिप्त्वा अष्टभि र्गोमयैः पुटम् ॥ २५१२ ॥
एकैकं चाष्टभि र्देयं छाणकैः पुटमष्टभिः।
त्रयोदश पुटानि स्यु र्विना कर्पटमृत्तिकाम् ॥ २५१३ ॥
द्वारं नोद्घाटनीयञ्च भस्म सञ्चालयन्मुहुः।
चतुर्दशपुटे जातः सिन्दूराभः सुगोलकः ॥ २५१४ ॥
खल्वे कृत्वा च तच्चूर्णमेभिश्च भेषजैः पुटेत्।
त्रिकटोः वारिणा पूर्वं त्वेकविंशतिभावनाः ॥ २५१५ ॥
समार्द्रकरसेनैव सप्त कण्टकशोल्लिनः।
फणिनागविषस्यापि गद्याणान्पञ्च निक्षिपेत् ॥ २५१६ ॥
श्रीखण्डेन प्रदातव्या पश्चादेकैव भावना।
तच्चूर्णं कुम्भके क्षेप्यं भवेत्स्वच्छन्दभैरवः ॥ २५१७ ॥
प्रत्यहञ्च समुत्थाय रक्तिमात्रश्च रोगिभिः।
अविच्छिन्नो रसो ग्राह्यो शीतेन पयसा समम् २५१८
सर्वेषु च प्रमेहेषु शूलेषु विविधेषु च।
सयक्ष्मसन्निपातेषु समस्तेष्वपि वायुषु ॥ २५१९ ॥
अतीसारेषु सर्वेषु रक्तातीसारवर्जितः।
रोमहर्षेषु मेदस्सु समस्तेषूदरेषु च ॥ २५२० ॥
बद्धकोष्ठे च मन्दाग्नौ गुल्मे च वातरक्तके।
कासे श्वासे तथा शोफेऽजीर्णके श्लेष्मसम्भवे २५२१
श्वेतवर्जितकुष्ठेषु देयः सप्तदशस्वपि।
ज्वरेषु च समस्तेषु पित्तज्वरविवर्जितः ॥ २५२२ ॥
ज्वरेषु रात्रौ दातव्यो न प्रभाते कदाचन।
तैलक्षाराम्लवर्ज्यञ्च भोज्यं मधुरभोजनम् ॥ २५२३ ॥
मासैकानन्तरं रोगाद्विमुच्येत शनैर्ध्रुवम्।
बलवानुद्यमी शूरो तेजस्वी जायते नरः ॥ २५२४ ॥

र. क. ली., ज्वराधिकारे।

भाषा—पाचतोले शुद्धपारेपर सोलहवा हिस्सा गन्धककाचूर्ण छिड़ककर भूधरयन्त्रकी इतनी आचदेवे कि गन्धकमात्र जलजाय (जङ्गली छोटे छोटे ४ कण्डोंसे अधिक आच न दे)। ऐसे १०० पुट देकर षड्गुणगन्धक जारणकरे। फिर विशुद्धसुवर्ण, रजत, ताम्र, कान्त और अभ्रकसत्त्व ६-६ माशेलेकर एकजगह गलाय पारेको मिलाकर खोट तैयारकरे, पर यह ध्यान रक्खे कि पारा पड़नेसे गलीहुई धातुए उड़ाकरतीहैं ऐसा न होनेपावे।

इसके वाद नीबूकेरससे मर्दनकर गोलीवनाय ४ तह मलमलके कपड़ेमें रखकर लवणयुक्तकाञ्जीको हंडीमेंभर २० नीबुओंके टुकड़े करके डालदे और ऊपर गोलीको लटकादे । नीचेसे ३ दिनतक इतनी मन्द आचदे कि पोट्लीको केवल वाष्पही लगे उफान न आवे । स्वाङ्गशीतल्होनेपर निकालकर पिष्टीको खरलमें डाल ७॥ तोले शुद्ध गन्धकके साथ नीलवर्णकज्जली करे । फिर थूअर और आककेदूधसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ८ जङ्गलीकण्डोंकी भूधरपुटमें आचदे परन्तु सम्पुटका मुह न खोले । १४ पुटोंमें यह सिन्दूरवर्णका होजायगा । फिर इसको खरलमें डाल त्रिकटुकेकाथसे २१; अदरख और भटकटैयाकेरससे ७–७ भावनाएं देकर फणीकालेसर्पकाविष २॥ तोले डालकर सुखावे और चन्दनकेपङ्ककी एक भावना देकर सुखाकर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती प्रात काल टढे जलकेसाथ प्रतिदिनलेवे । इससे समस्तप्रमेह, नानातरहकेशूल, राजयक्ष्म, समस्तसन्निपात, वातरोग, रक्तातिसारकोछोड़कर समस्त अतिसार, रोमहर्ष, मेदोरोग, सवप्रकारके उदररोग, वद्धकोष्ठता, मन्दाग्नि, गुल्म, वातरक्त, कास, श्वास, शोथ, कफज अजीर्ण, श्वित्ररहितसमस्तकुष्ठ, पित्तवर्जितसमस्तज्वर इनसवको यह नष्टकरताहै । ज्वरोंमें रात्रिमें देना सवेरे नहीं । तैल, क्षार और खटाईको छोड़कर मधुर भोजनकरे । एक महीनेके प्रयोगसे धीरे २ समस्तव्याधिया नष्टहोजातीहै ५९३

५९४ स्वच्छन्दभैरवरसः (एकादशः)

रसगन्धककुष्ठघ्नैर्भूत्या सहितैश्च मरिचकैर्द्विगुणैः ।
तत्समकपर्दचूर्णं ख्यातः स्वच्छन्दभैरवो नाम॥२५२५॥
कफवातदोषशमनं कुरुते स्वच्छन्दभोजनेनापि ।
प्रतिदिवसमेकमाषप्रमाणतः पुष्टिदो भवति ॥ २५२६ ॥

र. (मा.), रससारसङ्ग्रह, कफवाताधिक्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, वाकुची, जङ्गलीकण्डोंकीराख १–१ भाग, मरिच और कौड़ीभस्म २–२ भागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय एकदिन शुष्कमर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ माशा रोग अथवा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह कफवाताधिक्यको नष्टकरताहै ५९४

५९५ स्वर्जिक्षारादियोगः

स्वर्जिका यावशूकश्च विजयातिविषा समम् ।
दीप्यकं पारदं गन्धं निम्बुनीरेण भावयेत ॥ २५२७ ॥
मापार्द्धं मधुना देयं सितया वा घृतान्वितम् ।
अनुदद्याद्ग्रहण्यर्तिज्वरातीसारशान्तये ॥
सशूलशोथसहितां ग्रहण्यर्तिं प्रणाशयेत् ॥ २५२८ ॥

नि र , ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—सज्जी, यमक्षार, भांग, अतीस, अजवाइन, शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय नीबूकेरसकी १ भावना देकर आधेआधे माशेकीगोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधु, शक्कर अथवा घीकेसाथ देनेसे ग्रहणी, ज्वरातिसार, शूल और शोथसहित ग्रहणी इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ५९५ ॥

५९६ स्वयमग्निरसः

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं कुर्यात्खल्वेन कज्जलीम् ।
तयोः समं तीक्ष्णचूर्णं मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥ २५२९ ॥
द्वियामान्ते कृतं गोलं ताम्रपात्रे विनिक्षिपेत् ।
आच्छाद्यैरण्डपत्रेण यामार्द्धेऽत्युष्णता भवेत् ॥२५३०॥
धान्यराशौ न्यसेत्पश्चात्त्रिदिनान्ते समुद्धरेत् ।
सञ्चूर्ण्य गालयेद्वस्त्रे सत्यं वारितरं भवेत् ॥ २५३१ ॥
भावयेत्कन्यकाद्रावैः सप्तधा भृङ्गजैस्तथा ।
काकमाचीकुरण्टोत्थद्रवैर्मुण्ड्याः पुनर्नवैः ॥ २५३२ ॥
सहदेव्यमृतानीलीनिर्गुण्डीचित्रजैस्तथा ।
सप्तधा तु पृथग्द्रावैर्भाव्यं शोष्यं तथाऽऽतपे २५३३
सिद्धयोगोऽयमाख्यातः सिद्धानाञ्च मुखागतः ।
अनुभूतो मया सत्यं सर्वरोगगणापहः ॥ २५३४ ॥
स्वर्णादीन्मारयेदेवं चूर्णीकृत्य तु लोहवत् ।
त्रिफलामधुसंयुक्तं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ २५३५ ॥
त्रिकटुत्रिफलैलाभिर्जातीफललवङ्गकैः ।
नवभागोन्मितैरेतैः समः पूर्वरसो भवेत् ॥ २५३६ ॥
सञ्चूर्ण्यालोडयेत्क्षौद्रैर्भक्ष्यं माषप्रमाणकम् ।
स्वयमग्निरसो नाम्ना क्षयकासनिकृन्तनः ॥ २५३७ ॥

शा स., वै द , वै क , र. र स , नि र , रसचि , भा प्र , व. रा , र प्र , भै. सा , रसायनस., र खं., र को , र. वो , र का , वै चि , र क ल , र शि , र र., र कौ , क्षयाविकारे ।

टि०—वहुषु पुस्तकेषु “इन्द्रवारुणिकामूल भृङ्गीकृष्णातिलै सह । भक्षयेत्क्षयकासार्तो माषमात्र प्रशान्तये ॥” इत्यधिक पाठो दृश्यते पर तत्र इन्द्रवारुणिकामूलस्य रेचकत्वाद्यत्रौचिति स्याद्रेचनस्य तत्रैव वुद्ध्या विमृश्य योजनीयम् । र प्र , भै सा , एतयो र्जातीफललवङ्गेल्यत्याद्यनुपान विन्यस्य अनग्निमारित लौहं सर्वतुल्य विमिश्रयेदिति सचयित्वा स्वयमग्निरसस्वरूपं प्रदर्शितम् । र चि , यो म , र (मा), र सि , रसायनस , भा प्र एषु ग्रन्थेषु—

“शुद्ध सूत द्विधा गन्ध खल्वे घृष्ट्वा तु कज्जलीम् ।
तयो सम कान्तलौहमभावे तस्य तीक्ष्णकम् ॥
सर्वञ्च देवदेवेशि मर्दित कन्यकाद्रवै. ।
यामद्वय तत पश्चात्तद्गोल ताम्रसम्पुटे ॥
आच्छाद्यैरण्डपत्रैस्तु धान्यराशौ निधापयेत् ।
त्रिदिनान्ते समुद्धृत्य पिष्ट वारितर भवेत् ॥
कुमारीभृङ्गकोरण्टी काकमाची पुनर्नवा ।
नीली मुण्डी च निर्गुण्डी सहदेवी शतावरी ॥
अम्लपर्णी गोक्षुरक कञ्चुमूल वटाङ्कुरम् ।
एतेषा भावयेद्द्रावै सप्तवारान्पृथक्पृथक् ॥
त्र्यूषणत्रिफलाव्योपराजीनाञ्च कषायकै ।
शुष्केऽस्मिंस्तोलित चूर्ण सममेकादशाभिधम् ॥
वरा व्योषाग्निविश्वैला जातीफललवङ्गकान् ।
संयोज्य मधुनाऽऽलोड्य विमर्द्य भजेत्सदा ॥
रात्रौ पिवेद्वा क्षीर कृष्णानाञ्च विशेषत. ।
सवत्सराजरमृत्युरोगजालं निवारयेत् ॥

वीर्यवृद्धिकरं श्रेष्ठं रामाशतसुखप्रदम् ।
तावन्न च्यवते वीर्यं यावदम्लं न सेवते ॥
दीपनं कान्तिदं पुष्टितुष्टिकृत्सेविनां सदा ।
सुगुप्तं कथितं सूत सिद्धयोगेश्वराभिधं ॥”

इति पाठो निहितोऽस्ति तत्र भावनानामेतदपेक्षया बाहुल्यम् । रसनिष्पादनप्रकारस्तु एक एवाऽस्ति । शा स , नि र , र सु , भै सा , रसायनस , र का , एषु ग्रन्थेषु लोहरसायन नाम्ना—

“शुद्धं रसेन्द्रं भागैकं द्विभागं शुद्धगन्धकम् ।
क्षिपेत्कज्जलिकां कृत्वा तत्र तीक्ष्णभवं रजः ॥
क्षिप्त्वा कज्जलिकातुल्यं मर्दयेत्तु विमर्दयेत् ।
तत्र कन्याद्रवैः खल्वे त्रिदिनं परिमर्दयेत् ॥
ततः सञ्जायते तत्र सोष्णो धूमोद्गमो महान् ।
अत्यन्तं पिण्डितं कृत्वा ताम्रपात्रे निधाय च ॥
मध्ये धान्यकराशेस्तु त्रिदिनं धारयेद्बुधः ।
उद्धृत्य तस्मात्खल्वे च क्षिप्त्वा घर्मे निधापयेत् ॥
रसैः कुठारच्छिन्नायास्त्रिवेलं परिभावयेत् ।
संशोष्य घर्मे काथैश्च भावयेत्त्रिकटोस्त्रिधा ॥
वासामृताचित्रकाणां रसैर्भाव्य क्रमात्त्रिधा ।
लोहपात्रे ततः क्षिप्त्वा भावयेत्त्रिफलाजलैः ॥
निर्गुण्डीदाडिमत्वग्भिः विसभृङ्गकुरण्टकैः ।
पलाशकदलीद्रावैः बीजकस्य शृतेन वा ॥
नीलिकाकम्बुपाद्रावैः बब्बूलफलिकारसैः ।
त्रिस्त्रिवेलं यथालाभं भावयेदेभिरौषधैः ॥
भावयेत्त्रिस्त्रिवेलञ्च ततो नागबलारसैः ।
बलावरीगोक्षुराद्भिः पातालगरुडीरसैः ॥
ततः प्रातर्लिहेत्क्षौद्रघृताभ्यां कोलमात्रकम् ।
पलमात्रं वराकाथं पिबेदस्यानुपानकम् ॥
मासत्रयं शीलितं स्याद्वलीपलितनाशनम् ।
मन्दाग्निं श्वासकासौ च पाण्डुतां कफमारुतौ ॥
पिप्पलीमधुसंयुक्तं हन्त्यादेतन्न संशयः ।
वातास्रं मूत्रदोषांश्च ग्रहणीं तोयजां रुजम् ॥
अण्डवृद्धिं जयेदेतच्छिन्नामरत्वमधुप्लुतम् ।
बलवर्णकरं वृष्यमायुष्यं परमं स्मृतम् ॥
कूष्माण्डं तिलतैलञ्च नवान्नं राजिका तथा ।
मद्यमम्लरसञ्चैव त्यजेल्लोहस्य सेवकः ॥,,

इति पाठो निहितोऽस्ति । अत्रापि मूलपाठाद्भावनास्वति विस्तरोऽस्ति । रसनिर्माणशैल्या नाऽस्ति काचिद्विशेषता । त्रिष्वपि पाठेषु क्षयरसायनेऽधिकृते स्त ,भावनाश्च सर्वा अपि एतद्द्वयाऽधिकारोपयुक्ता एव दृश्यन्ते । कस्याश्चिदपि भावनाया प्रतिकूलत्वं न दृश्यते अतस्त्रिविधपाठमनुत्पाद्य सर्वाभिः भावनाभिरेकः एव पाठः समुत्पाद्य इत्यस्माकं सम्मतिः । भावनानां क्रमस्त्वधोनिर्दिष्टक्रमेण करणीयः स यथा—कुमारी, काकमाची, पुनर्नवा, सहदेवी, गुडूची, नीली, निर्गुण्डी, चित्रक, चाङ्गेरी, कुटज, वासा, दाडिम, सोमराजी, त्र्यूषण, त्रिफला, वटाङ्कुर, पातालगारुडी, कदली, मुण्डितिका, मृणाल, गोक्षुरक, कच्छुमूल, कुरण्टक, भृङ्ग, बला, नागबला, बब्बूलफलिका, शतावरी, बीजकनिर्यास, पलाशाङ्गस्वरसैरेभिः प्रत्येकं सप्त भावना दातव्या इति ॥

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भागकी नीलवर्णकज्जलीकर उसकीबराबर फोलादका बारीकरेता डालकर घीकुवारके रसमें दोपहर मर्दनकर गोलाबनाय तावेके पात्रमें रख एरण्डकेताजेपत्तोंसे ढककर कड़ीधूपमें रखदे । आधे पहरमें यह अत्यन्तगरमहोजायगा फिर इसे उन्हीं पत्तोंसे लपेटकर कसोरोंमें बान्ध अनकी राशिमें दबादे । तीनदिनबाद निकालकर सरलकर वस्त्रमें छानलेने इसकी वारितर भस्महोगी । फिर घीकुवार, भंगरा, मकोय, पीयाबासा, गोरखमुण्डी, पुनर्नवा, सहदेवी, गिलोय, कालादाना अथवा नील, निर्गुण्डी और चित्रकके यथासम्भव स्वरस अथवा काथोंसे ७–७ भावनाएं कड़ीधूपमें देवे । यह सिद्धयोगहै सिद्धपरम्परासे चला आताहै और हमें- वारका अनुभूतहै । त्रिफला और मधुकेसाथ उचितमात्रामें देनेसे यह सबरोगोंपर कामकरताहै । इसीप्रक्रियासेसुवर्णादिधातुओंकी भी भस्महोतीहै ।

विशेषसूचना—इसे अग्निसम्पर्क जबतक नहीं होता तभी तक यह वारितर रहतीहै अग्निसंयोगहोनेकेबाद पारद गन्धक उड़जाताहै और केवल धातु पानीमें डूबजातीहै ॥ ५९६ ॥

५९७ स्वरप्रसादकरसः

पारदं गन्धकं तुल्यं तालकञ्च मनःशिला ।
मर्द्यं तुल्यं पञ्चकोलजलैस्तु दिवसत्रयम् ॥ २५३८ ॥
ततः पुटेद्गजपुटे शरपुङ्खाजलैः पुनः ।
सम्मर्द्य पाचयेद्भूयस्ततः सिद्धो भवेद्रसः ॥ २५३९ ॥
स्वरप्रसादको नाम रसोऽयं दृष्टविक्रमः ।
पर्णखण्डेन दातव्यो गुञ्जाद्वयमितो बुधैः ॥
गुडार्द्रकेण मद्येन पिप्पलीमधुनाऽथवा ॥ २५४० ॥

र म. मा , र सु , ना वि , स्वरभेदे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, और मैनसिल समभागकी नीलवर्णकज्जलीकर पञ्चकोलकेकाथमें ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकीआंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ३ दिन शरपुङ्खेस्वरसमें मर्दनकर पूर्ववत् गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्ती पान, गुड, अदरख, मद्यअथवा पीपल और मधु इनमेंसे किसीभी अनुपानके साथ लेनेसे स्वरभङ्ग नष्टहोताहै ॥ ५९७ ॥

५९८ स्वरभेदहररसः (रसराज)

स्वरभेदप्रतीकारो रसराजोऽथ कथ्यते ।
रसद्विगुणितो गन्धो द्रावयेल्लोहपात्रके ॥ २५४१ ॥
ढालयेत्कदलीपत्रे साधयेदपि तेन तु ।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य मर्दयेत्त्र्यूषणाम्बुना ॥ २५४२ ॥
ततश्च जतुतक्रेण दिवसत्रितयं पृथक् ।
सिद्धो भवेदेष सूतः स्वरभेदापहो भवेत् ॥ २५४३ ॥
गुञ्जाचतुष्टयं व्याप्य त्रिसुगन्धगुडेन तु ।
बदरीपत्रकल्केन घृतसैन्धवयुक्तथा ॥ २५४४ ॥

र , स्वरभङ्गे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भागकी नीलवर्णकज्जलीकर घीपुतीहुईलोहेकी कड़ाहीमें गलाकर गोबरपर रक्खेहुए केलेके पत्तोंपर पर्पटीबनाय त्रिकटुकेकाथ, शिलाजीत और तक्रसे ३–३ दिन मर्दनकर ४–४ रत्तीकी गोलियें बनाकर

रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली त्रिसुगन्ध, गुड अथवा वेरके-पत्तोंकेकल्क अथवा घी और सेंधेनमककेसाथ देनेसे यह स्वर-भङ्गकोनष्टकरताहै ॥ ५९८ ॥

५९९ स्वर्णक्षीरीरसः

हेमाह्वां पञ्चपलिकां क्षिप्त्वा तक्रघटे पचेत् ।
तक्रे जीर्णे समाहृत्य पुनः क्षीरघटे पचेत् ॥ २५४५ ॥
क्षीरे जीर्णे समुद्धृत्य क्षालयित्वा विशेषतः ।
तच्चूर्णं पञ्चपलिकं मरिचानां पलद्वयम् ॥ २५४६ ॥
पलैकं मूर्च्छितं सूतमेकीकृत्य तु भक्षयेत् ।
निष्कैकं सुप्तिकुष्ठार्तः स्वर्णक्षीरीरसो ह्ययम् ॥२५४७॥

शा सं., र. को., र प्र. सु , भै. सा , रसायनप., र. र. स., रसायनसं , र. प्र., र. मं , टो., र. का , कुष्ठे ।

भाषा—५ पल सत्यानाशीकीजड़को एकद्रोण छाछमें डालकर पकावे। छाछजलजानेपर एकद्रोण दूधमें पकावे। दूधगाढ़ाहोनेपर निकालकर अच्छीतरह धोकर साफकरके इसकाचूर्ण ५ पल, मरिच २ पल, रससिन्दूर अथवा कज्जली १ पल लेकर १–२ पहर घोटकर रखछोड़े इसमेंसे ४–४ माशे समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सुनवहरीको नष्टकरताहै ५९९

६०० स्वर्णादिगुटिका

स्वर्णरौप्यार्कमुक्ताश्च वार्धिफेनवरामृताः ।
शङ्खव्योषनिशातुत्थप्रवालमधुयष्टिकाः ॥ २५४८ ॥
सर्वं क्लीतनकाम्भोभिः पिष्टं तु वटिका हरेत् ।
अशेषान्नयनातङ्कान्वेगतस्तदुपद्रवान् ॥ २५४९ ॥

रसायनस , र. र. दी., नेत्ररोगे ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, ताम्र मोती, शङ्ख, तुत्थ, प्रवाल, इनकीभस्में, समुद्रफेन, त्रिफला, गिलोय, त्रिकटु, हल्दी, मुलहठी येसव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर मुलहठीकेक्काथसे २–३ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे और लगानेसे नेत्रोंके व्याधि और उपद्रव नष्टहोतेहैं ॥ ६०० ॥

६०१ स्वायम्भुवगुग्गुलुः

शशिलेखा पञ्चपला तावद्गिरिजश्च गुग्गुलो दश च ।
पलत्रिकं ताप्यं स्याद्वे लौहाच्चवणिकायाश्च ॥२५५०॥
त्रिफलाकरञ्जपल्लवखदिरगुडूचीवचात्रिवृद्दन्ती-
मुस्ताविडङ्गरजनीचतुरङ्गुलवह्निकुटजैश्च ॥ २५५१ ॥
पलिकैश्चूर्णं चैतन्मूत्रेण गवां पिबेन्नरः प्रातः ।
कुष्ठी घृतमधुमिश्रं जयत्यसृग्वातमचिरेण ॥ २५५२ ॥
श्वित्राणि कुष्ठकोठौ विषगरगुल्मोदरप्रमेहांश्च ।
उन्मादभगन्दरमपस्मृतिश्लीपदक्रिमिश्वासान् ॥
वलिनायुक्तं पलितं जयति स्वयम्भवेन प्रोक्तः ॥२५५३॥

ग. नि., भा प्र., कुष्ठे ।

टि०—गदनिग्रहे द्वितीयस्थाने विशेषप्रक्षेप निष्कास्य " अलम्बुपालोहचूर्णमनयोर्द्विपले स्मृते। पलत्रयञ्च ताप्युत्थाद्वाकुचीपलपञ्चकम्॥ शिलाजतु तयोस्तुल्य पलानि दश गुग्गुलो । सर्वाण्येकत्र सञ्चूर्ण्य गुटिका कारयेद्बुध ॥ शाण कर्षार्द्धकर्ष वा तत खादेत्प्रयत्नत । वातरक्तञ्च कुष्ठानि श्वित्राणि विविधानि च ॥ भगन्दरान्क्षुद्ररोगानर्शांसि ग्रहणीगदान् । वस्तिजा शुक्रदोषाश्च पाण्डुतामुदराणि च ॥ शोफश्लीपदमानाह यक्ष्माणञ्च विशेपत' । नाडीव्रणाश्च सर्वांस्तु हन्याद्विद्रधिहृद्रदान् ॥ वृष्यो वल्यश्च धन्यश्च केश्यो मेधाग्निवर्धन । आयुर्वर्णकरस्त्वच्य पुत्रसौभाग्यदस्तथा ॥ गर्भसन्धानकृत्प्रोक्तो गर्भपुष्टिकर परम् । कालपादेन विख्यातो नाम्ना स्वायम्भुवो भुवि ॥ ,, इति योगान्तर प्रकल्पितोऽस्ति परन्तु प्रक्षेपयुक्ते गुणाधिक्यात्पाठान्तरकल्पनाया फलाऽभावादेक एव योग. करणीय ।

भाषा—वाकुची और शिलाजीत ५–५ पल, शुद्धगूगल १० पल, सोनामाखी ३ पल, लोहभस्म और गोरखमुण्डी २–२ पल, त्रिफला, करञ्जकेपत्ते, खैरसार, गिलोय, वच, निसोत, दन्तीमूल, नागरमोथा, विडङ्ग, हल्दी, अमिलतासकागूदा, चित्रकमूल, कुरैयाकीछाल १–१ पल लेकर सवका वारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ माशे गोमूत्र अथवा घी और मधुकेसाथ लेनेसे वातरक्त, श्वित्र, कुष्ठ, चकत्ते, ज़हर, गर, गुल्म, उदररोग, प्रमेह, उन्माद, भगन्दर, अपस्मार, श्लीपद, क्रिमि, श्वास, वलीपलित इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ६०१ ॥

६०२ स्वेदशैत्यारिरसः

ताम्रशुण्ठ्यर्कमूलानि द्विनिष्काणि पृथक्पृथक् ।
एकतः पञ्चलवणात्पलं पिष्ट्वा पुटं ददेत् ॥ २५५४ ॥
गन्धेशशङ्खभस्मानि वेदनिष्कमितानि च ।
देवदालीरसैः पिष्ट्वा त्रिदिनं केकिपित्तकैः ॥ २५५५ ॥
स्वेदशैत्यापनुत्यर्थं वल्लमात्रं प्रयोजयेत् ।
दध्ना सम्मर्दयेत्पात्रे जलयोगं समाचरेत् ॥
पथ्यं घृतं सिन्धुमुद्गखर्जूरेक्षुकगोस्तनीः ॥ २५५६ ॥

र. सु , सन्निपाते ।

भाषा—ताम्रभस्म, सोंठ, और आककीजड़ ८–८ माशे, पाचोंनमक १ पल लेकर वारीकचूर्णकर हण्डीमें वन्दकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर शुद्धगन्धक, पारा और शङ्खभस्म १–१ कर्षकी नीलवर्णकज्जलीकर पूर्वरसमें मिलाय वन्दालकेरससे ३ दिन मर्दनकर मोरके पित्तसे १ भावना देकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली दहीकेसाथमिलाकर देनेसे शीताङ्ग निवृत्तहोताहै। अत्यन्तगर्मी मालूमहोनेपर जलधाराका योगकरे। घी, सैन्धव, मूंग, खजूर, ईख और द्राक्ष पथ्यमें देवे ॥ ६०२ ॥

६०३ हरगौरीरसः (पञ्चबाणरसः) १

रसाभ्रं हेमतारञ्च वङ्गमाक्षिकभस्मकम् ।
नागं शुल्वं मृतं कान्तं समभागानि कारयेत् ॥२५५७॥
कोकिलाक्षस्य वीजानि मर्कटीमहिफेनकम् ।
एतच्चूर्णं समांशेन गोक्षीरेण च मर्दयेत् ॥ २५५८ ॥
शाल्मलीरसभागेन तालमूलीरसेन च ।
वल्लयुग्मञ्च दातव्यं सिताज्यक्षीरसंयुतम् ॥ २५५९ ॥

अष्टादशप्रमेहांश्च हन्ति रोगाननेकशः ।
कामान्वर्धयते नृणां स्त्रीणामत्यन्तवल्लभः ॥
कथ्यते हरगौरीशो रसोऽयं पञ्चवाणकृत् ॥ २५६० ॥

रसायनसं , र पा., प्रमेहाऽधिकारे ।

टि०—रसपारिजाते "एलाकुङ्कुमकङ्कोलैश्चन्दनेन च मर्दयेत् ।" इत्यधिक पाठो दृश्यते तथा च गोक्षीरस्थाने गोक्षुरेण मर्दनं विहितम् ॥

भाषा—पारा, अभ्रक, सुवर्ण, रजत, वङ्ग, सुवर्णमाक्षिक, नाग, ताम्र, कान्त इनकीभस्में १–१ भाग, तालमखाने, केवाच और अफीम ३–३ भाग लेकर शुष्कमर्दनकर गायकेदूध, सेमलकामुसला और तालमूलीके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शक्कर, घी और दूधकेसाथलेनेसे यह उपद्रवसहित १८ प्रकारके प्रमेहोंकोनष्टकर पुरुषत्वको देताहै ॥ ६०३ ॥

६०४ हरगौरीरसः (द्वितीयः)

कज्जलीं कारयित्वा तु तुल्ययो र्गन्धसूतयोः ।
वीजपूररसं क्षिप्त्वा मर्दयेत्कज्जलं दिनम् ॥ २५६१ ॥
कज्जल्या गोलकं कृत्वा महाकन्दोदरे क्षिपेत् ।
तस्यैव मज्जया कन्दं मूषावक्त्रं निरोधयेत् ॥ २५६२ ॥
निरोधयेन्मृदा वक्त्रं ततो देयं पुटं तथा ।
यथार्कश्च निदाघे स्यातपच्यते केवलो रसः ॥२५६३॥
समाकृष्य ततः कन्दाज्ज्ञात्वाऽन्ते स्वाङ्गशीतलम् ।
त्रिसप्त भावना देयास्तिलपर्णीनिजद्रवैः ॥ २५६४ ॥
सम्मर्द्य तज्जलैरेव भावनाभावितं रसम् ।
काकमाचीरसैरेव मर्कटीस्वरसैस्तथा ॥ २५६५ ॥
शुष्कं तच्चूर्णितं कृत्वा योजयेत्त्र्यूषणैः समम् ।
पञ्चभि र्लवणैस्तद्वत्क्षाराणां त्रितयेन च ॥ २५६६ ॥
वल्लद्वयं प्रयुञ्जीत शृङ्गवेररसैः प्लुतम् ।
हन्यादग्निभवं मान्द्यं वातरोगमशेषतः ॥ २५६७ ॥

र.क.यो, र मृ , अग्निमान्द्ये ।

भाषा—समभाग अग्निस्थायी पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर विजोरेकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय ज़हरीसूरणके वीचमेंरख उसीकेगूदेसे मुंहवन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर गजपुटकी आचदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालले इसका गर्मीके महीनेमें दोपहरके सूर्यकेसदृश पाकहोगा । इसमें हुरहुर, मकोय और केवाचके अङ्गस्वरसोंसे २१–२१ भावनाए देकर त्रिकटु, पाचोंनमक और तीनोंक्षार पूर्वरसकी वरावर मिलाकर ६–६ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि और समस्त वातरोग नष्टहोतेहैं ॥ ६०४ ॥

६०५ हरगौरीसृष्टिरसः

शुद्धं सूतं चतुर्भागं सूताद्धं मृतताम्रकम् ।
गन्धकञ्च द्वयोस्तुल्यं मस्तुना मर्दयेद्दिनम् ॥ २५६८ ॥
गोलकं वन्धयेद्वस्त्रे वालुकायन्त्रगं पचेत् ।
मन्दाग्निना पचेत्तावद्यावत्तप्ताश्च वालुकाः ॥ २५६९ ॥
स्प्रष्टुं न शक्यते तापमथोद्धृत्य विचूर्णयेत् ।
धात्रीफलरसै र्भाव्यं सप्तधा गोमयेन च ॥ २५७० ॥
श्लक्ष्णचूर्णं ततः कृत्वा सर्वं क्षीरेण गोलयेत् ।
वल्लद्वयीं वटीं कुर्याद्धृतमध्ये विपाचयेत् ॥ २५७१ ॥
स्वाङ्गशीताञ्च तां खादेत्प्रत्यहं पाचितां घृतैः ।
महिषीक्षीरचुलुकीमनुपानञ्च सर्वदा ॥ २५७२ ॥
हरगौरीसृष्टिरसः सर्वमेहकुलान्तकः ।
दुग्धौदनं घृतं पथ्यं शाकञ्चुञ्चुफलं भवेत् ॥ २५७३ ॥

र र., चि.र भ , र.को , व.रा , यो.म , र.का , प्रमेहे ।

टि०—वहुत्र स्थाने ताम्रस्थाने अभ्रक दृश्यते । र का सूताद्धं मृतताम्रकमितिस्थाने तत्तुल्यञ्च मृताभ्रकमिति पाठ । वहुत्र स्थाने गोमयस्थाने गोक्षुर दृश्यते । योगमहार्णवे शुद्धसूतस्य भागैक चतुर्भाग मृताभ्रकमिति पाठो दृश्यते परन्तु द्वयोस्तुल्यगन्धकसमागमनात्पारदस्य चतुर्भागा , ताम्रस्याभ्रकस्य वा पारदार्द्धभागतैव स्वीकर्तुमुचिता प्रतिभाति, मात्राधिक्य तयोराधिक्येन सम्भवतीति विद्वद्भिराकलनीयम् । अत्र निष्कद्वयमात्राया अत्यधिकतया तत्स्थाने वल्लद्वयमिति पाठ प्रकल्पितस्तदनुरोधेन विंशद्भागान्प्रकल्पयेदिति पाठो निष्कासित इति सुधीभिराकलनीयम् ।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, ताम्रभस्म २ भा , शुद्धगन्धक ६ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर दहीकेतोड़से एकदिन घोटकर गोलावनाय ४ तहमलमलके कपड़ेमें लपेट वालुकायन्त्रमें रख वहुतमन्दाग्निसे यहांतक पकावे कि तमामवालू गरमहोजाय और हाथ स्पर्शको सहन न करसके । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर आवले और गोवरकेस्वरसोंकी ७–७ भावनाएं देकर ६–६ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली प्रतिदिन घीमें पकाकर खावे ऊपरसे १ चुल्लू भेंसकादूध पीवे । इससे समस्तप्रमेह नष्टहोतेहैं । इसमें पथ्य दूधभात, घृत और कागलहरीका शाक देना ॥ ६०५ ॥

६०६ हररुद्ररसः (हरनेत्ररसः)

तीक्ष्णं शुल्वं नागतारं स्वर्णञ्च मारितं पृथक् ।
एकद्वित्रिचतुःपञ्च क्रमात्पट् शुद्धसूतकात् ॥ २५७४ ॥
चाङ्गेर्याश्च द्रवै र्मर्द्य दिनैकं कृतगोलकम् ।
मृगाङ्कवत्पचेत्स्थाल्यांवालुकाभिः प्रपूरितम्॥२५७५॥
उद्धृत्य चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं हररुद्रो रसोत्तमः ।
मृगाङ्कवत्क्षयं हन्ति तद्वन्मात्रानुपानकम् ॥ २५७६ ॥

नि र , र र , र.को , वै चि , र.का., क्षये । र का. हररुद्रेति नाम ।

भाषा—फोलाद, तावा, नाग, रजत, सुवर्ण इनकीभस्में और शुद्धपारा क्रमवृद्धभागसे लेकर एकदिन शुष्कमर्दनकर अमलोनियाकेरसमें घोटकर गोलावनाय ४ तह मलमलकेकपड़ेमें लपेट शरावसम्पुटकर वालुकायन्त्रमें रख एक अहोरात्रकी अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से २ रत्ती-

तक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह क्षयको नष्टकरताहै ॥ ६०६ ॥

६०७ हरिवलाङ्कुशरसः

घनभवमृतसत्त्वं कान्तलोहार्कभस्म,
त्रिगुणरससमेतं तुल्यगन्धेन युक्तम् ।
समतुलकृतमेभिष्टङ्कणं ताप्यचूर्णं,
हरिदलमथबोलं खण्डसञ्ज्ञं मनोज्ञम् ॥२५७७॥
हरति सकलकुष्ठं सन्निपातं सुघोरं,
श्वसनकसनसङ्गं सन्धिवातादिसङ्गम् ।
खदिरशशिकलानां क्काथकल्कादियोगै-,
र्मरिचयवजभार्गीक्काथचूर्णादियोगैः ॥ २५७८ ॥

र. र. स, र को., कुष्ठाधिकारे ।

भाषा—अभ्रकसत्त्व, कान्तलोह, ताम्र इनकीभस्में १–१ भाग, शुद्ध पारा और गन्धक ३–३ भाग, सुहागा, सोनामाखी, हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य, हीरावोल और शक्कर ९–९ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय १–२ दिन घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती रोगोचितानुपानकेसाथ अथवा खैरसार, वाकुचीका क्काथ और कल्क अथवा मरिच, यवक्षार और भारङ्गीकेक्काथ अथवा चूर्णकेसाथ औचिती देखकर देनेसे यह समस्तकुष्ठ, घोरसन्निपात, श्वास, कास, सन्धिवातप्रभृतिरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६०७ ॥

६०८ हरिशङ्कररसः (वृहन्) १

रसगन्धकलौहञ्च स्वर्णं वङ्गञ्च माक्षिकम् ।
समभागन्तु सम्पिष्य वटिकां कारयेद्भिषक् ॥२५७९॥
सप्ताहमामलद्रावै र्भावितोऽयं रसेश्वरः ।
हरिशङ्करनामाऽयं गहनानन्दभाषितः ॥
प्रमेहान्विंशतिं हन्ति सत्यं सत्यं न संशयः ॥ २५८० ॥

र सं., र चि., र. सु., र. चं., प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, सुवर्ण, वङ्ग, सोनामाखी इनकीभस्में समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर ताजे आवलोंकेरससे ७ दिनतक मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियेंवनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली आवलेकेरस अथवा उचितानुपानोंकेसाथ देनेसे यह २० प्रकारके प्रमेहोंको नष्टकरताहै ॥६०८॥

६०९ हरिशङ्कररसः (द्वितीयः)

मृतसूताभ्रकं तुल्यं धात्रीफलनिशाद्रवैः ।
सप्ताहं भावयेत्खल्वे योगोऽयं हरिशङ्करः ॥ २५८१ ॥
माषमात्रां वटीं खादेत्कालानलप्रशान्तये ।
महानिम्बस्य वीजानि पूर्ववत्पाययेदनु ॥ २५८२ ॥

र सं, र क ल, र र स, र र कौ, र कौ, नि. र, र. को, र. र, यो. र, र. सु., वै. चि, वृ यो. त, र चं., र का, र चि., यो म., चि र. भ, टी., यो त, रसायनसं., र. क, वै. क., र. र. दी., घ. रा., र. म मा., प्रमेहे ।

टि०—कुत्रचिद्भावनाया निशाद्रवभावना न दृश्यते । र. च., र. का., रसायनस, र. सि, र म, र चि, र सु, एषु ग्रन्थेषु प्रमेहकेतु (सेतु) नाम्ना "सूतमभ्र वटक्षीरै र्मर्दयेत्प्रहरद्वयम् । विशोष्य पक मूषाया सर्वरोगे प्रयोजयेत् ॥ विशेषान्मेहरोगेषु त्रिफलामधुसयुतम् । युञ्जीत वल्लमेकन्तु रसेन्द्रस्याऽस्य वैद्यराट् ॥ ,, इति पाठो निहितोऽस्ति तत्र रससङ्ग्रहसिद्धान्तातिरिक्ता ग्रन्था हरिशङ्करेऽपि सन्ति, वटक्षीरमर्दनमात्रविशेषेण हरिशङ्करात्पृथक् पाठ. कृतोऽस्ति । वस्तुतस्तु हरिशङ्कर एवाऽधिकत्वेन वटक्षीरभावना प्रदायैक एव रस सम्पादनीय. ॥

भाषा—पारा और अभ्रकभस्म समभागलेकर आंवले और हल्दीके स्वरसोंकी ७–७ भावनाए देकर १–१ माशेकी गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली यथोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह काल और नीलप्रमेहको नष्टकरताहै ॥ ६०९ ॥

६१० हरिहररसः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि रसं परमदुर्लभम् ।
रसं हरिहरं नाम्ना मृत्युदारिद्र्यनाशनम् ॥ २५८३ ॥
पूर्वोक्तं संस्कृतं सूतं नागसत्त्वञ्च तत्समम् ।
द्वयोः समं तालसत्त्वं सत्त्वं माक्षिकजं समम्॥२५८४॥
ताम्रभस्माष्टभागेन लोहभस्म तथैव च ।
खर्परं सर्वतुल्यञ्च शिला सर्वसमा तथा ॥ २५८५ ॥
काकमाचीद्रवे र्भाव्यं त्रिदिनं खल्वयेद् दृढम् ।
काचकूप्यां ततः क्षिप्त्वा जलयन्त्रस्य मध्यगम् ॥२५८६॥
हठाग्निं वासरानष्टौ स्वाङ्गशीतं समुद्धृतम् ।
तत्समं गन्धकं योज्यमष्टांशं नवसादरम् ॥ २५८७ ॥
सिंही व्याघ्री मृगी हंसी चण्डी काली च वेणिका ।
एतासां स्वरसै र्भाव्यं सप्तधा च पृथक् पृथक् २५८८
पूर्वोक्तेन च यन्त्रेण पचेत्सूतं हठाग्निना ।
स्वाङ्गशीतं ततो नीत्वा पूजयेद्गणयोगिनीः ॥ २५८९ ॥
सहस्रं वेधयेद्दिव्यं जरामृत्युनिवारणः ।
वेधयेच्चन्द्रसूर्येण करोति कानकीं महीम् ॥ २५९० ॥
राजिकादशमं भागं त्रिदिनं भक्षयेद्बुधः ।
वटच्छायास्थितं कार्यं वासरत्रितयेन च ॥ २५९१ ॥
वलीपलितनिर्मुक्तो वृद्धो भवति यौवने ।
श्वेतकेशो भवेत्कृष्णः साक्षाद् दृष्टं न तु श्रुतम् २५९२
आदौ रहः कृतः सिद्धः पश्चाद्ग्रन्थो मया कृतः ।
गुल्मप्लीही तथा चार्शः पाण्डुकामलश्वासकान् २५९३
कासयक्ष्मक्षयं शूलं कुष्ठाष्टादशकन्तथा ।
प्रमेहान्विंशतिश्चैव ज्वरं सर्वं निकृन्तयेत् ॥ २५९४ ॥
आध्मानशोथग्रहणीरतिसारभगन्दरम् ।
अश्मरीं हन्ति नो चित्रं सन्निपातांस्त्रयोदश ॥२५९५॥
अस्थिशूलं शिरोरोगं विषं स्थावरजङ्गमम् ।
सर्वरोगं निहन्त्याशु देहे लोहे च सिद्ध्यति ॥२५९६॥

रससागर, रसायने ।

भाषा—विशेषशुद्धिसे शुद्धकियाहुआ पारा और नागसत्व १–१ भाग, तालसत्व और माक्षिकसत्व २–२ भा., ताम्र

और लोहभस्म ८-८ भा., शुद्ध खपरिया और मैनसिल २२-२२ भाग लेकर मकोयके रससे ३ दिन मर्दनकर काचकी शीशीमें डालकर जलमुद्रादेकर जलयन्त्रमें रख ८ दिनकी हठाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर उसकीबराबर शुद्धगन्धक और अष्टमाश नवसादर मिलाकर सिंही १, व्याघ्री १, मृगी १, हंसी १, चण्डी १, काली १, वेणिका १, (ये सात औषधियें सङ्केतप्रधान नामोंसे लिखीहैं और योगकर्ताने उनका कोई विवरण नहीं दियाहै इसलिये खास अमुकही वस्तुएंहैं यह कहना बहुतदुस्तरहै। परन्तु रसशास्त्रमें जिनसे कामलियाजाताहै उसहिसाबसे सिंही=सफेदभटकटैया, व्याघ्री=सफेदवनभाटा, मृगी=हिरणखुरी, हंसी=हंसराज, चण्टी=चण्डालिनीकन्द, काली=हीरवी, वेणिका=आकाशवेल इनका ग्रहणकरना उचितहै।) इनकेस्वरसोंसे ७-७ दिन मर्दनकर पूर्वोक्तप्रकारसे ८ दिनकी जलयन्त्रमें हठाग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर गण और योगिनियोंकी पूजाकर रखछोड़े। यह सहस्रवेधी होताहै और जरामृत्युको दूरकरताहै। धातुवाद सङ्केतके अनुसार चन्द्र और सूर्य दोनों क्रियाएं इससे सिद्धहोतीहैं। शरीरको कल्पोक्तप्रकारसे शुद्धकर इसमेंसे १ राईका दशवां हिस्सा एकान्तवटकीछायामें देवे और ३ दिनतक वहीं रक्खे। भूखलगनेपर गोदुग्धदेवे। इसके ३ दिन सेवनकरनेसे वलीपलितसे निर्मुक्तहोकर जराजीर्णभी आदमी पुन युवावस्थामें आजाताहै इसका एकान्तमें सेवन करना चाहिये। गुल्म, प्लीहा, ववासीर, पाण्डु, कामला, श्वास, कास, राजयक्ष्म, क्षय, शूल, १८ प्रकारकेकुष्ठ, २० प्रमेह, समस्तज्वर, आध्मान, शोथ, ग्रहणी, अतिसार, भगन्दर, पथरी, १३ सन्निपात, अस्थिशूल, शिरोरोग, स्थावर और जङ्गमविष, इनसवको यह नष्टकरताहै। देह और लोह दोनोंमें सदृशकाम करताहै। यहाकाली नामकवनस्पतिकेस्थानमें जो हीरवी लिखीहै वह कागानके पहाड़में होतीहै और जङ्गलीलोग इसीनामसे परिचितहैं। इसकी लता दोफुटतकलम्बी होतीहै पत्ते गुड़मारके सदृशहोतेहैं और नीचे तेलियारंगकाकन्दहोताहै तथा ज़हरीहै। यह पारेको हरतरह कायमकरती है ॥ ६१० ॥

६११ हरीतकीपाकः

प्रस्थमेकं शिवानाञ्च जलद्रोणे निधापयेत्।
द्विप्रस्थं दशमूलञ्च सार्धप्रस्था यवाः स्मृताः २५९७
ग्रन्थिकं चित्रको भार्ङ्गी शङ्खपुष्पी शटी वला।
विश्वापामार्गमेघाश्च पुष्करं गजपिप्पली ॥ २५९८ ॥
इमानि तत्र योज्यानि प्रत्येकञ्च पलं पलम्।
अष्टांशे निःश्रुते चैषां पथ्याः पिष्ट्वा पचेत्ततः २५९९
गुडप्रस्थत्रयं योज्यं गोघृतं पलपञ्चकम्।
जातीफलं केशरञ्च चातुर्जातञ्च धात्रिका ॥ २६०० ॥
दीप्याक्षौ जातिपत्री च ताम्रं लोहं कटुत्रिकम्।
चूर्णमेषां क्षिपेत्तत्र प्रत्येकञ्च पलार्धकम् ॥ २६०१ ॥
पथ्यापाक इति ख्यातः कथितो भृगुणा पुरा।
जीर्णज्वरहरः सद्यस्तुष्टिपुष्टिवलप्रदः ॥ २६०२ ॥
रसकोपे ग्रहण्याञ्च क्षीणे धातौ च निःसृतौ।
गुदामये श्वासकासे वातरक्ते हितो मतः ॥ २६०३ ॥

वै. वि, जीर्णज्वरादौ।

भाषा—दशमूल २ प्रस्थ, जव १॥ प्रस्थ, गठिवन, चित्रक, भारङ्गी, शङ्खाहूली, कचूर, वला, सोंठ, अपामार्ग, नागरमोथा, पोहकरमूल और गजपीपल १-१ पल लेकर जवकुट चूर्णकर दोद्रोणजलमें डालकर १ प्रस्थ पकीहुई हर्रे डालकर क्राथकरे। अष्टमाशावशेष रहनेपर उतारले। इसमेंसे हर्रोको निकालकर अलग पीसले और काढ़ेको छानकर ३ प्रस्थ गुड़, गोघृत ५ पल डालकर हर्रेकाकल्क मिलाय पकावे। चाशनी तैयार होनेपर जायफल, केशर, चातुर्जात, आंवले, अजवाइन, बहेड़ा, जावित्री, ताम्र और लोहभस्म, त्रिकटु २-२ कर्षका बारीकचूर्णकर चाशनीमें डालकर उतारले। इसमेंसे आधेतोलेसे १ तोलेतक औचिती देखकर उचितानुपानकेसाथदेनेसे जीर्णज्वर, रसप्रकोप, ग्रहणी, धातुक्षीणता, धातुस्राव, गुदरोग, श्वास, कास, वातरक्त इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ६११ ॥

६१२ हरीतकीलेहः

हरीतकी यवक्वाथद्व्याढके विंशतिं पचेत्।
स्विन्ना मृदित्वा तास्तस्मिन् पुराणगुडषट्पलम् २६०४
दद्यान्मनःशिलाकर्षं कर्षार्द्धञ्च रसाञ्जनम्।
कुडवार्द्धञ्च पिप्पल्याः सलेहः श्वासकासनुत् २६०५

च सं, कासाधिकारे।

भाषा—आठ आढकपानीमें दोप्रस्थ जवडालकर पकावे। दो आढक बाकीरहनेपर छानकर २० मोटीहर्रोंको डालकर पकावे। एकदम पकजानेपर हर्रोंको मसलकर कपड़ेमेंसे छानदे फिर इसमें पुरानागुड़ ६ पल, शुद्ध मैनसिल १ कर्ष, रसौत ८ माशे, पीपल २ पल डालकर अवलेह तैयारकरे। इसमेंसे ३ से ६ माशेतक समयोचितानुपानकेसाथ लेनेसे श्वास और कास नष्टहोतेहैं ॥ ६१२ ॥

६१३ हरीतक्यादिवटी

हरीतकी वचा कुष्ठं पिप्पली मरिचानि च।
विभीतकफलत्वक्च शङ्खनाभि मनःशिला ॥ २६०६ ॥
लोध्रं करञ्जवीजञ्च रजनी रक्तचन्दनम्।
कनकं सावरं शृङ्गी चिञ्चिणीवीजसूतकम् ॥ २६०७ ॥
रसाञ्जनं गन्धकञ्च श्वेतसौवीरकन्तथा।
एतानि समभागानि विशुद्धञ्च महाविषम् ॥ २६०८ ॥
पिष्ट्वा रक्तार्जुनीमूत्रे वल्लमात्रा कृता वटी।
लूताविस्फोटकञ्चैव जालगर्दभमेव च ॥
गलगण्डं व्रणञ्चैव गण्डमालादिनाशिनी ॥ २६०९ ॥
गुर्वम्लपिष्टान्नकिलाटसृक्-
दध्यारनालेक्षुविकारजानि।
भोज्यानि सर्वाणि कफावहानि
विवर्जयेद्वै गलगण्डरोगी ॥ २६१० ॥

ना. वि., गलगण्डे।

भाषा—हरें, वच, कुठ, पीपल, मरिच, वहेड़ा, देशीलोध, करञ्जकेवीज, हल्दी, लालचन्दन, शङ्खनाभि, मैनसिल, सुवर्ण, पारा, सफेदसुरमा इन पाचोंकीभस्में, पठानीलोध, काकड़ासींगी, इमलीकेवीजोंकीमज्जा, रसौत, शुद्ध गन्धक और वछनाग समभागलेकर वारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय लालायकेसूत्रमें १–२ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे मकड़ीकाविष, विस्फोट, जालगर्दभ, गलगण्ड, व्रण, गण्डमाला इत्यादिरोगोंको यह नष्टकरतीहै। गण्डमाला वग़ैरहमें मूत्रमें पीसकर ऊपर लेपभी करना। भारी, अम्ल, पिट्ठीकीवस्तुए, मावा, सिरका, दही, काञ्जी, मिठाई और कफकारक समस्तवस्तुओंका गलगण्डरोगी परित्यागकरे॥

६१४ हलीमककुलान्तकरसः

शुद्धसूताऽमृतं गन्धं हरितालं मनःशिला ।
एतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ॥२६११॥
वासाखदिरधत्तूररसेन परिभावयेत् ।
प्रत्येकञ्च दिनं यामं वालुकायन्त्रके पचेत् ॥ २६१२ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य पञ्चपित्तैश्च भावयेत् ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यमनुपानं पिवेदनु ॥ २६१३ ॥
त्रिकटु त्रिफला चैव लज्जालुर्गिरिकर्णिका ।
अपामार्गश्च सुरसा निर्गुण्डी कर्षमात्रतः ॥ २६१४॥
क्वाथश्चाष्टावशेषस्तु पीयमानो हलीमकम् ।
नाशयेत्सर्वरोगांश्च कामलापाण्डुशोफजित् ॥ २६१५॥

व. रा, पाण्डुरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग, गन्धक, हरिताल और मैनसिल समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अड्सा, खैर और धतूरेके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर एकपहरकी वालुकायन्त्रमें अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पाचोंपित्तोंकी भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली त्रिकटु, त्रिफला, लज्जालु, कोयल, अपामार्ग, तुलसी और निर्गुण्डी समभागका जवकुट चूर्ण वनाकर इसमेंसे १ तोलेके अष्टावशेषक्वाथकेसाथ लेनेसे हलीमक, कामला, पाण्डु, शोथ ये सव नष्टहोतेहैं॥ ६१४॥

६१५ हाटकाख्यरसः

रसकर्षाश्च चत्वारो यशोदं तावदेव तु ।
शोधितं चूर्णितं कृत्वा उभे खल्वतले क्षिपेत् ॥२६१६॥
द्वयोः सम्मेलनं कृत्वा मर्दयेद्याममात्रकम् ।
रसाद्द्विगुणितं गन्धं रसार्द्धं नरसारकम् ॥ २६१७ ॥
सर्वेषां कज्जलीं कृत्वा मर्द्य जम्बीरवारिणा ।
दिनैकं मर्दनं कृत्वा सम्यक् शुष्कं समाचरेत् ॥२६१८॥
मृत्कर्पटप्रलिप्तायां काचकूप्यां विनिक्षिपेत् ।
सिकतायन्त्रके पाच्यं क्रमाद्द्वादशयामकम् ॥ २६१९ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य रसञ्चामीकरप्रभम् ।
गुञ्जार्द्धं मधुना सार्धं लिहेत्प्रातः समुत्थितः ॥२६२०॥
शर्करासंयुतं पेयं द्विकर्षञ्च गवां पयः ।
फणिवल्लीदलेनैव सर्वरोगप्रशान्तये ॥ २६२१ ॥
एककालं द्विकालं वा सायं प्रातर्लिहेत्सुधीः ।
वलवर्णकरं वृष्यं पुंसां पुंस्त्वविवर्धनम् ॥ २६२२ ॥
मेहत्वं षण्ढदोषत्वं नाशयेन्नात्र संशयः ।
क्षयं क्षयकृतं व्याधिं दौर्वल्यं नाशयेत्क्षणात् ॥२६२३॥
अनुपानविशेषेण सर्वरोगप्रशान्तिकृत् ।
हाटकाख्यो रसो नाम सर्वत्र विजयप्रदः ॥ २६२४ ॥

वै. चि, (ल), सर्वरोगे।

भाषा—शुद्ध पारा और जस्त ४–४ कर्ष लेकर जस्तको गलाय पारेमें मिलाकर एकपहर शुष्कमर्दनकर ८ कर्ष शुद्धगन्धक और २ कर्ष नवसादर मिलाय नीलवर्णकज्जलीकर जंभीरीके रससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर ६–७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें रख १२ पहरकी क्रमाग्नि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर ऊपर उड़ेहुए रसको निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे आधीआधीरत्ती मधुकेसाथ सुवहमें लेकर दोकर्ष शक्करडालाहुआ दूधपीवे और ऊपरसे पानखावे। इसकेसेवनसे वलवर्णाभाव, नपुंसकत्व, प्रमेह, षण्ढदोष, उपद्रवसहितक्षय, दुर्वलता येसव नष्टहोतेहैं॥ ६१५॥

६१६ हाटकेश्वरीगुटिका

निष्कमेकं स्वर्णपत्रं त्रिनिष्कं शुद्धपारदम् ।
जम्वीरशरपुङ्खोत्थद्रवै मर्द्यं दिनावधि ॥ २६२५ ॥
तद्गोलं वन्धयेद्वस्त्रे पचेद्गोक्षीरपूरिते ।
दोलायन्त्रे दिवारात्रं गुटिका हाटकेश्वरी ॥ २६२६ ॥
जायते धारिता वक्त्रे जरामृत्युविनाशिनी ।
वर्षमात्रान्न सन्देहो दीर्घमायुरवाप्नुयात् ॥ २६२७ ॥
दिनैकं त्रिफलाचूर्णं क्वाथैः खदिरवीजकैः ।
भावितं मधुसर्पिर्भ्यां पलैकं क्रामकं लिहेत् ॥ २६२८ ॥

र. खं., र. सि., र. का., जरामृत्युनाशने।

भाषा—सोनेकेवर्क ४ माशे, शुद्धपारा १२ माशे लेकर दोनोंको मिलाकर जंभीरी और शरपुङ्खके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोली वनाय ४ तहकपड़ेमें लपेट दोलायन्त्रसे दूधमें एकदिनरात स्वेदनकरनेसे गोली कड़ीहोजायगी। इसको १ वर्षतक मुंहमें रखनेसे दीर्घायुहोतीहै। त्रिफलाकेचूर्णको खैरकेवीजोंकेक्वाथसे १ दिन भावनादेकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ पल मधु और घीकेसाथ चाटनेसे रसका शरीरमें क्रामणहोताहै॥ ६१६॥

६१७ हिक्कान्तकरसः

हेममुक्तार्ककान्तानां भस्म वल्लमितं वरम् ।
वीजपूररसक्षौद्रसौवर्चलरसान्वितम् ॥ २६२९ ॥
हन्ति हिक्काशतं सत्यमेकमात्रा प्रयोगतः ।
का कथा पञ्चहिक्कानां हरणे पुनरुच्यते ॥ २६३० ॥

र. कौ., यो. र, र. चं., र. सु., रसायनसं., र. क ल., हिक्कायाम्।

भाषा—सुवर्ण, मोती, ताम्र, कान्तलोह इनकीभस्में समभाग मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती विजोरेकेरस, मधु और सञ्चलकेसाथ लेनेसे एकहीमात्रासे सबतरहकी हिचकी दूरहोतीहै ॥ ६१७ ॥

६१८ हिक्कानाशनरसः

रसगन्धकधान्याभ्रतालताप्योपलं क्रमात्।
भागवृद्धं वचाकुष्ठहरिद्राक्षारचित्रकैः ॥ २६३१ ॥
सपाठालाङ्गलीव्योपसैन्धवाक्षविषैः समम्।
भावितं भृङ्गनीरेण हिक्कावैस्वर्यकासनुत् ॥ २६३२ ॥

र.र स., र चं., हिक्कायाम्।

टि०—उपलशब्देन गोदन्ती ग्राह्य। रसरत्नसमुच्चये पर्पटी नाम तु प्रमादात्सञ्जातम्।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा, धान्याभ्रकभस्म ३ भा, हरिताल ४ भा., सोनामाखी ५ भा., गोदन्ती ६ भा., वच, कुठ, हल्दी, यवक्षार, चित्रक, पाठा, करिहारी, त्रिकट, सैन्धव, वहेड़े, शुद्धवछनाग येसब १–१ भागलेकर वारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरेकेरससे २–३ दिन घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे हिचकी, स्वरभङ्ग और कास इनको यह नष्टकरताहै ॥ ६१८ ॥

६१९ हिङ्गुलादिगुटिका (प्रथमा)

हिङ्गुलं टङ्कणं नागं मरिचं मृतरौप्यकम्।
पत्रतोयेन सम्मर्द्य मुद्गमाना कृता वटी ॥ २६३३ ॥
कासे श्वासे कफे शीते शीताङ्गज्वरसङ्कके।
मन्दाग्नौ गुल्मवाते च प्रशस्ता गुटिकोत्तमा॥२६३४॥

रसायनसं, अग्निमान्द्ये।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, सुहागा, नाग और रजतभस्म, मरिच, सब समभागलेकर पानकेरससे मर्दनकर मूंगवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे कास, श्वास, कफ, शीत, शीताङ्गज्वर, मन्दाग्नि, गुल्म, वातरोग इनको यह नष्टकरतीहै ॥ ६१९ ॥

६२० हिङ्गुलादिगुटिका (द्वितीया)

हिङ्गुलस्यैकभागश्च द्विभागा जातिपत्रिका।
त्रिभागा धूर्तवीजाश्च चत्वारः श्वेतमारिचाः ॥२६३५॥
पञ्चभागोऽहिफेनः स्यात्षड्भागश्चाजमोदकम्।
एतत्समाना गान्धारी चोचतोयेन मर्दयेत्।
चणमात्रप्रमाणेन स्तम्भनं याममात्रकम् ॥ २६३६ ॥

रसायनस वाजीकरणे।

टि०—रसायनसङ्ग्रह एव द्वितीयस्थाने श्वेतमरिचस्थाने जातिसस्यक नियोज्य निम्बुद्रवेण भावना विधायाऽतिसारे रसान्तरतया हिङ्गुलादिगुटीति नाम्नैव पाठो निर्दिष्टोऽस्ति। एवंत्वत्रैव जातिसस्यक नियोज्याऽनिर्योज्य वा एक एव पाठ करणीय पाठद्वये गौरवात्। अनीमादादावस्यनाया निम्बुद्रवेणदानेनापीष्टसिद्धे.।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, जावित्री, धतूरेकेवीज, सफेदमरिच, अफीम और अजमोद क्रमवृद्धभागसे लेकर सबकी वरावर भुनीहींगमिलाय तजके काथसे मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली रतिसमयसे १ घण्टे पहिले मलाईवगैरहकेसाथ लेनेसे १ पहरका स्तम्भनहोताहै ॥ ६२० ॥

६२१ हिङ्गुलादिगुटिका (तृतीया)

हिङ्गुलजातीफलजातिपत्रिका-
गोरोचनाभि र्जयपालकं समम्।
विभाव्य निम्बूकरसैः कृता गुटी-
रौत्फुल्लिके वालगदे गदन्ति ॥ २६३७ ॥

सि भे. म., वालरोगे।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, जायफल, जावित्री, गोरोचन, सबसमभाग लेकर सबकीवरावर शुद्ध जमालगोटा मिलाय नीवूकेरससे १–२ दिन मर्दनकर मूगवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह वच्चोंके शोथ और जलोदरको दूरकरतीहै ॥ ६२१ ॥

६२२ हिङ्गुलादिगुटिका (चतुर्थी)

हिङ्गुलं देवपुष्पञ्च नागफेनं सितायुतम्।
सशूलां सप्रवाहाञ्च ग्रहणीं हन्ति दुस्तराम् ॥ २६३८ ॥

रससं, ग्रहण्याम्।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, लौंग, अफीम और शक्कर समभाग मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे शूल और प्रवाहिकायुक्त दुस्तरग्रहणीरोगनष्टहोताहै ॥

६२३ हिङ्गुलादिगटिका (पञ्चमी)

हिङ्गुलं जातिकोषञ्च नागफेनं सकुङ्कुमम्।
नागवल्लीदलरसै र्वटी मुद्गसमा कृता ॥ २६३९ ॥
अतिसारं निहन्त्याशु योगोऽयं सिद्धभाषितः।
नाशयेद्ग्रहणीरोगं हिङ्गुलादिवटी वरा ॥ २६४० ॥

र सि., ग्रहणीरोगे।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, जायफल, अफीम और केशर समभागलेकर वारीकचूर्णकर पानकेरससे मर्दनकर मूंगवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह ग्रहणीरोगको नष्टकरतीहै ॥ ६२३ ॥

६२४ हिङ्गुलादियोगः

हिङ्गुलं कर्पमात्रं स्यान्मापं मर्जिततुत्थतः।
सार्धमापलवङ्गन्तु जम्भनीरेण मर्दयेत् ॥ २६४१ ॥
विशोष्य शुष्कं तत्पश्चान्नवनीतेन मर्दयेत्।
ताम्बूलेन सहाश्नीयादौषधं गुञ्जमात्रकम् ॥ २६४२ ॥
पथ्यं साधारणं कार्यं पञ्चसप्तदिनावधि।
उपदंशं पूतिमेहं तद्वत्ये शूलमण्डले ॥
व्रणं तालुनि सञ्जातं हन्यादेतद्धिषग्जितम् ॥ २६४३ ॥

रसायनस., उपदंशे।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ १ कर्ष, भुना तूतिया १ माशा, लौंग १॥ माशा, लेकर बारीकचूर्णकर जंभीरीकेरससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर मक्खनमें घोटकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती पानकेसाथ ५ या ७ दिनतकखानेसे उपदंश, वेदनासहित-सुजाक, तालुमें जायमानव्रण इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य साधारणरक्खे ॥ ६२४ ॥

६२५ हिङ्गुलेश्वररसः (प्रथमः)

तुल्यांशं मर्दयेत्खल्वे पिप्पली हिङ्गुलं विषम् ।
द्विगुञ्जा मधुना देया वातज्वरनिवृत्तये ॥ २६४४ ॥

र.स., चि.र.भ., र.सु., भै र., रसायनसं., र.चि., र मं., र.कं., ध., र का., र.चं., टो., र.को., यो. म., वै चि., र क.ल., र.त., र.र.कौ., र.क.यो., र.पा., वातज्वरे।

टि०—वैद्यचिन्तामणौ पिप्पल्यादिचूर्णमिति नाम्ना स्थापितम्। रसपारिजाते जम्बीरद्रवभावना अधिकतया दृश्यते, अनुपाने सितातोयानुपानं विहितम्, नाम च जीर्णज्वरहर इति स्थापितम्, द्वितीयस्थाने वातभञ्जनेति नाम स्थापितमिति नामभेदेन द्वौ पाठौ दृश्येते। रसचण्डांशुरसेन्द्रसारसङ्ग्रहयोरपि वातज्वरे हिङ्गुलेश्वर, ज्वरातिसारे च मृतसञ्जीवनीति नाम इति कृत्वा पाठद्वयं दृश्यते, रत्नाकरौषधयोगेऽपि मृतसञ्जीवनीति नाम स्थापितम् एतत्सर्वमज्ञानमूलकमेवाऽस्ति ॥

भाषा—पीपल, शुद्ध शिंगरिफ और वछनाग समभाग लेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती मधुकेसाथ देनेसे यह वातज्वरको नष्टकरताहै ॥ ६२५ ॥

६२६ हिङ्गुलेश्वररसः (द्वितीयः)

कर्षैकैकं समादाय शुद्धहिङ्गुलगन्धयोः ।
माषद्वयं जीर्णताम्रं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ २६४५ ॥
शिलायां शिलया यामं शाल्मलीसत्त्वभावितम् ।
गुञ्जाढ्यां वटीं कुर्यात्प्रयत्नेन भिषग्वरः ॥ २६४६ ॥
सम्मर्द्य मधुना खादेदतिसारनिपीडितः ।
ग्रहणीरोगसङ्ग्रस्तः सङ्ग्रहग्रहणीयुतः ॥ २६४७ ॥
प्रवाहिकाक्रान्ततनुरग्निमान्द्यादिसम्प्लुतः ।
धान्यजीरकजं क्वाथमनुपाने प्रयोजयेत् ॥
हिङ्गुलेश्वरनामाऽयं रसः सर्वगदापहः ॥ २६४८ ॥

र सु., ग्रहणीरोगे।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ और गन्धक १–१ कर्ष, ताम्रभस्म २ माशेलेकर सेमलकेस्वरससे १ पहर मर्दनकर २–२ रत्तीकी-गोलियें बनाकररखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुमें मिलाकरलेनेसे ग्रहणी, सङ्ग्रहग्रहणी, प्रवाहिका, मन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै। धनिये और जीरेकाक्वाथ अनुपानमें पिलावे॥

६२७ हिङ्ग्वादियोगः

हिङ्गुगोमेदकव्योषकुष्ठक्रौञ्चास्थि गोक्षुरम् ।
एलावृक्षकपङ्कन्याः खराश्वोपलभेदकम् ॥ २६४९ ॥
तक्रेण दधिमण्डेन पीतं कोलरसेन वा ।
मूत्रकृच्छ्रं कृमीन्मेहं स्थूलताञ्च व्यपोहति ॥ २६५० ॥

अ.सं., स्थौल्याधिकारे।

भाषा—भुनीहींग, गोमेद, त्रिकटु, कुठ, क्रौञ्चकीहड्डी, गोखरू, इलायची, कुड़ाकीछाल, वच, गधे और घोड़ेकीलीद, पाषाणभेद सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे ३–३ माशे छाछ, दहीकेतोड़ अथवा बेरकेक्वाथकेसाथ देनेसे मूत्रकृच्छ्र, क्रिमि, प्रमेह और स्थूलताको यह नष्टकरताहै ॥

६२८ हितप्रभावटिका

पथ्याचतुर्जातकरेणुकाब्द-
व्योषाम्बुदामोदरसाग्निनाभैः ।
गुडेन पक्वै गुटिका विसृष्टा
हितप्रभाख्या दृढपाण्डुहन्त्री ॥ २६५१ ॥
त्र्यब्ध्यर्द्धैकशशाङ्कार्द्धं करैकत्र्येकपालिकाः ।
भागाः प्रत्येकशो ज्ञेया भेषजानामिह क्रमात् ॥ २३५२ ॥

र. (मा.), पाण्डुरोगे।

भाषा—हर्रे ३ भाग, चातुर्जात ४ भा., रेणुका ½ भा, पिपलामूल १ भा, त्रिकटु १ भा, नागरमोथा ½ भा, शुद्धगन्धक २ भा, पारा १ भा., चित्रक ३ भा और शुद्धवछनाग १ भागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय समभागगुड़कीचाशनीमें डालकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली रोगोचितानुपानकेसाथ-लेनेसे भयङ्कर पाण्डुरोगको यह नष्टकरतीहै ॥ ६२८ ॥

६२९ हिममूर्च्छनरसः

इष्टीमध्यविशोभिकूपपिहितं सप्ताहमार्के स्थितं,
क्षीरे शम्बलमष्टयाममनिशं चुल्ल्यग्निना पाचयेत् ।
सिद्धोऽयं हिममूर्च्छनो रस इति प्रस्तूयते पण्डितै-,
र्दत्तस्तण्डुलमानतः शमयतो वेलाज्वरं ज्वालयेत् ॥

सि. भै म., ज्वराधिकारे।

भाषा—पुरानीईटमें खड्ढा खोदकर सोमलकी डलीको रख आककेदूधसे भरके अच्छीतरह मुहबन्दकर चूल्हेपररख ८ पहरकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ चावल उचितानुपानकेसाथ देनेमे यह नियतसमयके ज्वरको नष्टकरताहै ॥ ६२९ ॥

६३० हिमांशुरसः

रसस्य कर्षमादाय खल्वे निक्षिप्य बुद्धिमान् ।
रक्तागस्त्यप्रसूनस्य स्वरसेन विमर्दयेत् ॥ २६५४ ॥
सप्तवारं तथा साधु श्वेतदूर्वारसेन च ।
निष्कद्वयं टङ्कणञ्च कर्षं खादिरसारतः ॥ २६५५ ॥
कर्पूरं रसतुल्यञ्च सर्वमेकत्र मर्दयेत् ।
यावच्चिक्कणतां याति युक्त्या चन्दनवारिणा ॥ २६५६ ॥
हरेणुमात्रान्वटकांश्छायायां परिशोषितान् ।
प्रातः प्रातश्च सेवेत मध्याह्ने च विशेषतः ॥ २६५७ ॥
निशायाञ्च विशेषेण सेवनीयः प्रयत्नतः ।
एतद्धि मेहनुद्द्रव्यं मुखशोषहरं परम् ॥ २६५८ ॥

सोमरोगहरं सर्वपिडिकानाशनं मतम् ।
हिमांशुनामतः ख्यातं तृष्णादाहनिवारकम् ॥ २६५९ ॥

र च, र.र स, र को., र.क, र र.कौ., प्रमेहे। र को रसादिगुटीतिनाम।

भाषा—एककर्ष शुद्धपारेको खरलमें डालकर लालअगस्त्यके फूल और सफेददूवकेरसोंसे ७–७ वार मर्दनकर सुहागा ८ माशे, खेरसार और कपूर १–१ कर्ष मिलाकर चन्दनकेकल्कसे घोटकर चनेप्रमाण गोलियेंवनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली प्रतिदिन तीनोंसमय समयोचितानुपानकेसाथ-लेनेसे प्रमेह, मुखशोष, सोमरोग, पिडिका, तृष्णा और दाहको यह नष्टकरताहै ॥ ६३० ॥

६३१ हिरण्यगर्भपोट्टली (बालाग्निकुमारः) १

उच्चवर्णसुवर्णस्य द्राव्या गद्याणका दश ।
तेषां सूक्ष्माणि पत्राणि कुर्यादेकाङ्गुलानि च ॥२६६०॥
यावन्मानानि पत्राणि तत्तुल्यः शुद्धपारदः ।
मिश्रं विंशतिगद्याणं निम्बुकस्य रसेन च ॥ २६६१ ॥
तप्तखल्वे दृढं मर्द्य यामयुग्माद्विशुष्यति ।
शुष्के शुष्के रसं दद्यात्पेष्या पिष्टिं दिनाष्टकम् ॥२६६२॥
आरनालं क्षिपेत्स्थाल्यां खण्डैर्निम्बुकजैः समम् ।
शिग्रुवृक्षस्य पत्रैश्च तत्क्षणाद्दोः समाहृतैः ॥ २६६३ ॥
वर्तितै र्मूषिकां कुर्यात्तद्गर्भे हेमपिष्टिकाम् ।
क्षिप्त्वा वक्त्रं समाच्छाद्य कृत्वा वर्तुलगोलकम् २६६४
दोलायन्त्रे ततः स्थाल्यां विन्यसेद्वस्त्रवेष्टितम् ।
इत्थमष्टदिनं स्वेद्यं यावन्नश्यति काञ्जिकम् ॥ २६६५॥
चणकाख्यवदर्याश्च मृदुपत्राणि वर्तयेत् ।
तत्पिण्डं प्रक्षिपेद्धीमान्पक्वकुल्हडिकान्तरे ॥ २६६६ ॥
विष्णुक्रान्ताजटानाञ्च श्रीखण्डस्य च सारकम् ।
पिण्डसोपरि मुक्त्वाऽथ श्रीखण्डोपरि पिष्टिकाम् ॥
श्रीखण्डञ्च पुनर्दद्यात्पिण्डं वादरकं पुनः ।
ब्रध्ने सूचीमुखच्छिद्रं मृद्दीपं कारयेद्बुधः ॥ २६६८ ॥
अधोवक्त्रञ्च तद्देयं पिधानं कुम्भिकोपरि ।
खर्परे कुम्भिकां क्षिप्त्वा वेष्टितां वस्त्रमृत्स्नया ॥२६६९॥
वारंवारं पुटं तत्र दद्याच्छगणपञ्चकैः ।
वदर्याः पत्र पिण्डाद्यै र्न्यूनै र्न्यूनै र्मुहु र्विधिः ॥ २६७० ॥
एकविंशतिवारांश्च युक्त्या दद्यात्पुटानि च ।
स्वेदस्य विधिनाऽनेन खटिकासन्निभा भवेत् ॥२६७१॥
भूमौ विलेखिता रेखा श्वेता निःसरति स्फुटा ।
क्षिप्त्वा तद्भूधरे यन्त्रे चतुर्भिश्छाणकैः पुटेत् ॥२६७२॥
प्रदद्यात्स्वाङ्गशीतेऽत्र युक्त्येत्थं पुटपञ्चकम् ।
पञ्चभिश्छाणकैः पञ्च पञ्च षड्भिश्च छाणकैः ॥२६७३॥
छाणकैः सप्तभिः पञ्च त्वष्टभिः पञ्चगोमयैः ।
एवं पञ्चपुटप्रान्ते छाणैकैकं विवर्धयेत् ॥ २६७४ ॥
एकवृद्ध्यादिकं देयं यावत्पुटशतं भवेत् ।
छाणकानि च पञ्चाशच्छतानीह चतुर्दश ॥ २६७५ ॥
गणितानि भवन्त्येव दत्ते शतपुटे ध्रुवम् ।
षोडशांशविभागेन पिष्ट्यधस्तात्पुनः पुनः ॥ २६७६ ॥
षड्गुणो जीर्यते यावद्दातव्यः शुद्धगन्धकः ।
एवं पुटशते दत्ते लाक्षासिन्दूरसन्निभः ॥ २६७७ ॥
जपाकुसुमसङ्काश उद्यदर्कसमप्रभः ।
अतीवारुणतां प्राप्तं कूपिकायां विनिक्षिपेत् ॥२६७८॥
सिद्धो हिरण्यगर्भोऽभूत्तज्ज्ञैः प्रोक्तः पुरा रसः ।
विधिना रक्तिकामेकां ताम्बूलेन च भक्षयेत ॥२६७९॥
विंशतौ च प्रमेहेषु ज्वरेषु विविधेषु च ।
अतीसारेषु सर्वेषु शूलेऽजीर्णे च दुस्तरे ॥ २६८० ॥
कामलायां पाण्डुरोगे हलीमकगदेष्वपि ।
अशीतिवातरोगेषु जीर्णदेहेषु दीयते ॥ २६८१ ॥
सम्यग्रोगं परिज्ञाय देयो वैद्येन रोगिषु ।
क्रमाद्रोगा विलीयन्ते प्रत्यहं सेविते रसे ॥
देहकान्तिः सुवर्णाभा प्रत्यहं जायतेऽधिका ॥२६८२॥

रसचि., र क ली., रसायने।

टि०—रससारसङ्ग्रहे माणिक्यचन्द्रीयरसावतारे च अग्निकुमार-नाम्ना "सूत सुवर्णं दहनोदकेन विधाय पिष्टिं तु पयोघृतेषु । गन्धाश्म-तैले विपचेत्त्रिवस्त्र शास्त्रप्रसिद्धोऽग्निकुमारनामा ॥ दद्यादसु सर्वकुमार-काणा व्योषेण गुञ्जा मधुना घृतेन । दन्तातिसारग्रहणीज्वरौघ हत्वा वलाम कुरुतेऽग्निवृद्धिम् ॥" इति पाठो निर्दिष्टोऽस्ति तस्याऽत्रैवान्तर्भाव करणीय, विशेषगुणदर्शनात् । गन्धाश्मदहनोदकपयोघृतगन्धकतैलेषु च प्रथमत स्वर्णपारदयो स्वेदन विधाय रसकङ्कालीयोक्तेन वर्त्मना रसे निष्पादितेऽप्याहृतवीर्यता निश्चिताऽस्ति अतस्तस्याऽन्तर्भाव करणीय एव । दहनोदकपयोघृतगन्धाश्मतैलपाकमन्तरापि गुणहानि नं भविष्य-त्येव । रसकङ्कालीयप्रक्रियया पारदेऽतिशक्त्युत्कर्षाधानात् ।

भाषा—उत्तमसुवर्णकेवर्क और शुद्धपारा ५–५ तोले लेकर १–२ पहर मर्दनकर तप्तखल्वमें डाल नीबूकेरससे दोपहर मर्दन करे। सूखनेपर फिर रसडाले। इसतरह ८ दिनतक मर्दनकर मजबूत हण्डीमें पकेनीबुओंकेटुकड़े और काञ्जीभरके कड़वे सहिजनके ताज़े पत्तोंको पीसकर दो मूषा वनाय उसमें पिष्टि-काको रख काञ्जीवाली हण्डीमें दोलायन्त्र वनाय ८ दिनतक स्वेदनकरे। काञ्जीसुखनेपर दूसरी डालताजाय। इसवातपर ध्यान रहे कि उफान आकर पोट्टलीको स्पर्श न करे। आठवें दिन आच कड़ी करदे और काञ्जीका डालना वन्द करदे जिसमें कि नीबू और काञ्जी जलजाय। स्वाङ्गशीतलहोनेपर एक मज़-वूतहण्डीमें झरबेरके कोमलपत्तोंका लुगदा रखकर कोयलकी जड़ और चन्दनके हीरका लुगदा क्रमसे रखदे। फिर चन्दनके लुगदे पर पिष्टीको रख चन्दनके हीरके लुगदेसे ढककर झरबेरके-पत्तोंका लुगदा रखदे। ढक्कनमें सुई जानेलायक वारीक छेदकर हण्डीपर उलटा रख २–३ कपड़मिट्टी देकर एक खपड़ेमें हण्डीको रखदे और पाचकण्डोंके टुकड़ोंसे हंडीको ढककर आच लगादे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् पिष्टीको-हडीमें रखदेवे। परन्तु प्रथमकी अपेक्षा वेरके कल्कप्रभृति वस्तु थोड़े थोड़े कम करताजाय। इसतरह २१ पुटें देकर पक्कीज़िमीनपर इसकी रेखा

खींचे तो खड़ियामिट्टीके सदृश रेखा निकलेगी । इसको भूधर-यन्त्रमें रख ४ कण्डोंकी आचदे । ऐसे ५ पुट देनेके बाद ५–५ कण्डोंके ५ पुट देवे । पाचपुटोंके बाद १–१ कण्डा बढ़ाता जाय । ऐसे २३ कण्डोंतक बढ़ाकर १०० पुटें देवे । प्रत्येक-पुटमें पिट्ठीके नीचे ऊपर षोडशांश (७॥ माशे) गन्धक देकर शरावसम्पुटमें बन्दकर आंचदेवे । ऐसे १०० पुटोंमें षड्गुण गन्धक जारण होगा । इसका रग एकदम लालहोगा इसको पीसकर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती पानमें रखकर खानेसे २० प्रकारके प्रमेह, समस्तज्वर, अतिसार, शूल, भयङ्करअजीर्ण, कामला, पाण्डु, हलीमक, ८० वातरोग, बुढ़ापा इनसबको दूरकर रसायनका काम करतीहै ॥ ६३१ ॥

६३२ हिरण्यगर्भपोट्टली (हेमगर्भपोट्टली) २

शुद्धं सूतश्चतुर्भागं द्विभागं गन्धकस्य च ।
भागमेकं सुवर्णञ्च त्रिभागं शुल्वभस्म च ॥ २६८३ ॥
कुमारीरससंयुक्तं सप्ताहं मर्दयेद् दृढम् ।
गुटिकां कारयेत्तान्तु बध्नीयात्त्वरकर्पटे ॥ २६८४ ॥
वस्त्रे किञ्चिद्बलिं दत्त्वा तत्र गोलं निधाय च ।
बध्नीयात्पोट्टलीं गाढां पश्चाद्वस्त्रेण वेष्टयेत् ॥ २६८५ ॥
सर्वभागसमं गन्धं दत्त्वा मृन्मयभाजने ।
तन्मध्ये पोट्टलीं न्यस्य मुखे मुद्राञ्च कारयेत् २६८६
विधाय छिद्रं मुद्रास्थं द्रावं दृष्ट्वा शलाकया ।
पाचयेत्सिकतायन्त्रे रसोऽयं मृदुवह्निना ॥ २६८७ ॥
यामार्द्धेन सुसञ्जातं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
कासे श्वासे क्षये वाते कफे ग्रहणिकागदे ॥
सर्वरोगेषु दातव्या हेमगर्भाख्यपोट्टली ॥ २६८८ ॥

यो र , र चं., कासाधिकारे ।

टि०—रसायनसङ्ग्रहे साधारणहेमगर्भनाम्ना " पारदस्तु द्विकर्षः स्याद्विकर्षोगन्धकस्तथा । ताम्रभस्मद्विकर्षं स्यात्स्वर्णं कर्षार्द्धकं क्षिपेत् ॥ कज्जलीं कन्यकाद्रावैः प्रकुर्वीत प्रयत्नतः । पोट्टलीं वन्धयित्वा तु गन्धं दद्याद्विवस्त्रके ॥ पोट्टलीञ्च पुनस्तद्वत्कुर्याच्च दृढपट्टके । गर्तं मृन्मयपात्रन्तु चार्धपूर्णन्तु कारयेत् ॥ मुखे मुद्रां प्रकुर्वीत वह्निं दद्याच्च युक्तितः । स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य रसः स्याद्धेमगर्भकः ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति-तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीय । यद्यपि तत्र ताम्रे चतुर्थांशस्याधिक्य-मस्ति परन्तु तदाधिक्यमभीष्टञ्चेत्तार्ह्यस्मिन्नेव चतुर्थांशपारदस्याऽधिकतया दानेनापि क्षत्यभावोऽस्ति पाठान्तरे तु महद्गौरवम् ।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, गन्धक २ भा , सुवर्णभस्म १ भा , ताम्रभस्म ३ भा लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर घीकुवारके रससे ७ दिनतक मर्दनकर गोलीबनाय ४ तह कपड़ेपर थोड़ा गन्धक छिड़ककर उसपर गोलीकोरख पोट्टलीबनाय मिट्टीकेबर्तनमें सुवर्णकेबराबर नीचे ऊपर गन्धकदेकर बीचमें पोट्टलीकोरख शरावकेबीचमें छिद्रकर हंडीपर ढक्कनदेकर कपड़-मिट्टी करदे और नीचे मन्दाग्नि जलावे । बीचबीचमें शलाकासे देखताजाय । गन्धक गलजानेपर आधेपहरबाद उतारले । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्ती रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे कास, श्वास, क्षय, वात, कफ, ग्रहणीरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६३२ ॥

६३३ हिरण्यगर्भपोट्टली (हेमगर्भपोट्टली) ३

शुद्धं सूतं त्रिभागञ्च तत्समं शुल्वभस्म च ।
भागैकं गन्धकं दद्यात्तदर्धं स्वर्णमेव च ॥ २६८९ ॥
कज्जली कारयेत्तान्तु खल्वके सप्तवासरम् ।
अथ निर्गुण्डिकाद्रावैः मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ २६९० ॥
अथवा कनकद्रावैः गुटिकां कारयेत्ततः ।
किञ्चिद्बलिसमायुक्ते वस्त्रे गोलं निधाय च ॥ २६९१ ॥
बध्नीयात्पोट्टलीं गाढामेवञ्च त्रिःपुटाञ्चरेत् ।
दृढमृन्मयपात्रे तु गन्धं दत्त्वाऽधरोत्तरम् ॥ २६९२ ॥
तन्मध्ये पोट्टलीं न्यस्य निर्वातभवनान्तरे ।
वितस्तिप्रमितं गर्तं तस्मिन्संस्थाप्य मुद्रयेत् ॥ २६९३ ॥
वरत्रैश्च मृत्तिकाभिश्च ज्वालयेदिन्धनानि च ।
यामेन सिद्धतां याति हेमगर्भाख्यपोट्टली ॥
अनुपानानुसारेण सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ २६९४ ॥

यो. र., रसायनसं., नि. र., वै. वि., कासे क्षये च ।

टि०—निघण्टुरत्नाकरे शुल्वस्थाने लोह नियोजित तज्ज्ञानपूर्वकं वा स्यादज्ञानपूर्वकं वा स्यात् ।

भाषा—शुद्ध पारा और ताम्रभस्म ३–३ भाग, शुद्ध गन्धक १ भा , सोनेकेवर्क आधाभाग लेकर ७ दिनतक शुष्कमर्दनकर निर्गुण्डी अथवा धतूरेकेरससे ७ दिन मर्दनकर गोलीबनाय गन्धकछिड़केहुए कपड़ेमें रख डोरेसे बांधदे । इसीतरह दूसरे कपड़ेपर गन्धकबिछाय दूसरी और तीसरी तह देवे । फिर मिट्टीके दृढपात्रमें पोट्टलीकेनीचेऊपर गन्धकदेकर मुंहबन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देवे । सूखनेपर एकबालिस्तभरके गड्ढेमें १ पहर की आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कपड़े और गन्धक को हटाकर गोलीको भीतरसे निकालले । इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरतीहै ॥ ६३३ ॥

६३४ हिरण्यगर्भपोट्टली (स्वर्णगर्भपोट्टली) ४

स्वर्णस्य भस्मनो भागाश्चत्वारः पारदस्य च ।
अष्टौ गन्धस्य ताम्रस्य वङ्गस्यैकैकभागकः ॥ २६९५ ॥
कपर्दशङ्खयो भस्म भागौ द्वौ द्वौ च टङ्कणात् ।
शुद्धाच्चैकश्च मुक्तानां भागास्स्वर्णसमा मताः ॥ २६९६ ॥
पञ्चकोलशृतेनैव सर्वं तद्भावयेत्त्रिधा ।
शिखरारम्भिका कार्या पोट्टली घर्मशोषिता ॥ २६९७ ॥
वस्त्रबद्धा बलिस्था सा पाचनीयाऽल्पवह्निना ।
घटिकाद्वितयं शीतां पोट्टलीं मञ्जुदर्शनाम् ॥ २६९८ ॥
ग्रहण्यां क्षयरोगे चाऽतिसारे ज्वरकासयोः ।
बाले वृद्धेऽतिमन्दाग्नौ द्वित्रिगुञ्जां प्रयोजयेत् ॥ २६९९ ॥

रसायनसार , ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण और पारदभस्म ४-४ भाग, शुद्धगन्धक ८ भा, ताम्र और वङ्गभस्म १-१ भा, कौड़ी और शङ्ख २-२ भाग, सुहागा १ भाग, मोती ४ भाग लेकर सबकी नीलवर्ण कज्जलीकर पञ्चकोलकेक्काथसे ३ दिन मर्दनकर शिखराकार गोलीबनाकर गन्धकयुक्त ३ तहकपड़ेमें बाध एकवालिस्तके खड्डेमें दोघडीकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इसमेंसे २-२ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह ग्रहणी, क्षय, अतिसार, ज्वर, कास और मन्दाग्निको नष्टकरताहै बच्चे और बुड्ढोंको हितकरहै॥ ६३४॥

६३५ हिरण्यगर्भपोट्टली (हेमगर्भपोट्टली) ५

स्वर्णसिन्दूरकं कर्षं स्वर्णभस्म सुमौक्तिकम्।
तुरीयांशं समं गन्धं त्रयाणामपि मर्दयेत्॥ २७००॥
ताम्रवङ्गभुजङ्गानां भस्मान्यत्र तु पातयेत्।
सिन्दूरसममानानि मर्दयेदर्कदुग्धतः॥ २७०१॥
शुष्कां कज्जलिकामेतां वराटीष्वेव पूरयेत्।
मन्दारपयसा पिष्टटङ्कणेन च मुद्रयेत्॥ २६०२॥
शङ्खचूर्णे धृता एताः पुटित्वा गजसञ्ज्ञके।
पोट्टलीं पूर्ववत्कृत्वा दिष्टरोगेषु योजयेत्॥ २७०३॥

रसायनसार.,

भाषा—षड्गुणगन्धकजारित सुवर्णसिन्दूर १ कर्ष, सुवर्णभस्म और शुद्धमोती ४-४ मासे, शुद्धगन्धक १॥ कर्ष, ताम्र, वङ्ग और नागभस्म १-१ कर्ष लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर आकके दूधसे १-२ दिन मर्दनकर सुखाकर शुद्ध पीलीकौड़ियोंमें भरकर आकके दूधमें पिसेहुए सुहागेसे मुहबन्दकर एकहण्डीमें कच्चेशङ्खकेचूर्णके बीचमें इन कौड़ियोंको बन्दकर शरावसम्पुटदेकर ३-४ समस्तपर कपड़मिट्टी देकर सुखाले फिर इसकोगजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कौड़ियों सहित पीसकर आकके दूधमें मर्दनकर अभीष्ट आकारकी पोट्टली बनाय ४ तहवस्त्रमें लपेट रेशमसे बाधकर हडीमें गन्धकको बिछाय ऊपरपोट्टलीको रखदे। ऊपरसे इतना पिसाहुआगन्धक रक्खे कि पोट्टली अच्छीतरहसे ढकजाय और गन्धक जलनेपर भी पोट्टली खाली न रहे। हडीको अग्निपर रख पूर्वकीतरह पकाकर साफकरके रखले। इसमेंसे उचितमात्रा योग्यानुपानकेसाथ देनेसे सङ्ग्रहणी और राजयक्ष्म प्रभृति रोगनष्टहोतेहैं॥ ६३५॥

६३६ हिरण्यगर्भपोट्टली (महाहेमगर्भपोट्टली) ६

शुद्धं सूतं पलैकं स्यात्पादांशं शुद्धहेमकम्।
शुद्धं गन्धं माषमेकं प्रतिकर्षं प्रयोजयेत्॥ २७०४॥
त्रयमेकत्र कुर्वीत सूक्ष्मं खल्वे विमर्दयेत्।
सुदृढे बन्धयेद्वस्त्रे स्थाप्यं लोहजसम्पुटे॥ २७०५॥
मर्दितं गन्धकपलं तस्योपरि प्रदापयेत्।
सम्पुटं मुद्रितं कृत्वा भूधराख्यपुटे पचेत्॥ २७०६॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य दग्धं गन्धं परित्यजेत्।
वेष्टयित्वा पुनर्वस्त्रे सूत्रे बद्धा च गोलकम्॥ २७०७॥
तत्तुल्यश्च पुनर्गन्धं सम्पुटे निक्षिपेद्भिषक्।
मुद्रितं सम्पुटं कृत्वा पुनर्यन्त्रेण पाचयेत्॥ २७०८॥
हेमगर्भरसो नाम्ना सर्वव्याधिनिवारणः।
रोगराजादिकं हन्यादितरेषां तु का कथा॥ २७०९॥

यो र, नि.र, र. च, वै. चि., रसायनस. क्षये कासे च।

भाषा—शुद्धपारा १ पल, सोनेकेवर्क १ कर्ष, शुद्धगन्धक ४ माशे लेकर सबको नीलवर्णकज्जलीकर चित्रकवगैरहकेरससे मर्दनकर पुष्टवस्त्रमें बाधकर गन्धकयुक्तवस्त्रकी ३ तह लगाकर १ पल गन्धकके चूर्णको लोहेकेपात्रमें पोट्टलीके नीचे ऊपर रख शरावसम्पुटकर भूधरपुटमें आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर गन्धकको साफकर फिर वस्त्रमें बाध उसकीबराबर गन्धकके चूर्णमें रख पूर्ववत् आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से २ रत्तीतक उचितानुपानकेसाथ देनेसे राजरोगप्रभृति समस्तव्याधियोंको यह नष्टकरतीहै॥ ६३६॥

६३७ हिरण्यगर्भपोट्टली (सप्तमी)

शुद्धं सूतं त्रिभागञ्च तदर्धांशेन गन्धकम्।
पादांशं कनकं दद्यात्त्रिभागं शुल्वभस्मकम्॥ २७१०॥
मौक्तिकं दशमांशेन प्रवालं तत्समांशकम्।
कुमारीरससंयुक्तं सप्ताहं मर्दयेद् दृढम्॥ २७११॥
पूगमात्रा गुटीः कृत्वा वेष्टयेत् क्षौमवाससा।
दृढसूत्रेण सम्बध्य छायायां शोषयेत्ततः॥ २७१२॥
सघृते मृन्मये पात्रे गन्धं दद्यादुपर्यधः।
निधाय च्छिद्रमुद्रायं द्रावं दृष्ट्वा शलाकया॥२७१३॥
पाचयेत्सिकतायन्त्रे सुवैद्यो मृदुनाऽग्निना।
घटीद्वये समायाते स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्॥ २७१४॥
कासे श्वासे क्षये वाते कफे ग्रहणिकागदे।
सर्वरोगेषु दातव्या हेमगर्भाख्यपोट्टली॥ २७१५॥

वै चि (ल), सर्वरोगे।

भाषा—शुद्धपारा ३ भाग, गन्धक १॥ भा., सुवर्णभस्म अथवा वर्क पारेसे चतुर्थांश, ताम्रभस्म ३ भा., मोती और प्रवाल पारेसे दशमांश लेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुंवारके रससे ७ दिनतक मर्दनकर सुपारीकेबराबर गोलियें बनाय रेशमीकपड़ेमें बाधकर छायामें सुखाय घीकेबर्तनमें गन्धककेबीचमें रख बालुकायन्त्रकी अग्निदेवे। गन्धक गलनेपर इच्छानुमार गोलीमें छेदकर और दोघडीकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे कास, श्वास, क्षय, वात, कफ और ग्रहणीरोग इनसबको यह नष्टकरतीहै॥ ६३७॥

६३८ हिरण्यगर्भपोट्टली (अपूर्वहेमगर्भः) ८

शुद्धपारदभागैकं तत्समं स्वर्णजं दलम्।
उभयं मर्दयेत्तत्र कलांशं शुद्धगन्धकम्॥ २७१६॥
त्रिभागं रससिन्दूरं गन्धांशं नवसादरम्।
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य भानुक्षीरे दिनावधि॥ २७१७॥

पट्टकूले दृढे बद्धा कर्षमानाश्च वर्तिकाः।
पट्टश्च तन्तुना बद्धा स्थाप्या लोहजसम्पुटे ॥२७१८॥
गुटीभ्यो द्विगुणं गन्धचूर्णं दद्यादथोपरि।
सम्पुटं मुद्रितं कृत्वा भूगर्भे स्थापयेद्बुधः ॥ २७१९ ॥
तस्योपरि ददेद्वह्निमुपलैः पञ्चभिस्तथा।
बद्धा पूर्वक्रमेणैव गन्धं मुद्राञ्च दाहनम् ॥ २७२० ॥
एवं पुनः पुनः सम्पुटिते स्वाङ्गशीतलाः।
ता गुटीर्ग्राहयेद्वैद्यो निष्कास्योर्द्धस्थकिल्विषम् २७२१
तरुणारुणसन्धामे गुणे च रसवद्धवत्।
सर्वरोगेषु दातव्य एकैकस्मिन्द्विदोषजे ॥ २७२२ ॥
त्रिदोषे चार्द्रनीरेण मधुयुग्दापयेत्सुधीः।
पक्षाघाते धनुर्वाते खञ्जादौ दन्तबन्धने ॥ २७२३ ॥
वातजे कफजे रोगे गुञ्जैका त्रिवृदादिभिः।
अपूर्वहेमगर्भोऽसौ रोगराजादिकाञ्जयेत् ॥ २७२४ ॥
रसायनसं., रसायने।

भाषा—शुद्धपारा और सोनेकेवर्क १–१ भाग लेकर पिट्ठी-बनाय १६ गांहिस्सा शुद्ध गन्धक तथा नवसादर, और ३ भाग रससिन्दूर मिलाकर नीलवर्ण कज्जलीकर आकके दूधसे एकदिन मर्दनकर १–१ कर्षकी गोलियेंबनाकर रशमीवस्त्रमें बाधकर गन्धक और रेशमीवस्त्रकी ३ तहदेकर गोलियोंसे दूने गन्धकके चूर्णमें रखकर लोहेके सम्पुटमें बन्दकर भूधरपुटमें ५ जङ्गलीकण्डोंकी आंचदे। ऐसे ७ पुटें देनेकेबाद निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती अदरख अथवा मधु अथवा मधु और निसोत प्रभृतिकेसाथ देनेसे द्वन्द्व, समस्त अथवा पृथक् दोषोंसे जायमान पक्षाघात, धनुर्वात, खञ्जादिक, दन्तबन्ध, वातज और कफज-रोगोंको यह नष्टकरतीहै। राजयक्ष्मकी परमौषधिहै ॥ ६३८ ॥

६३९ हिरण्यगर्भपोट्टली (श्वेतहेमगर्भः) ९

चन्द्रोदयं रसं श्वेतं रसकर्पूरसञ्ज्ञकम्।
नागवङ्गौ मृतौ प्रत्यकर्षं कर्षं प्रदापयेत् ॥ २७२५ ॥
सूक्ष्मं खल्वे विमर्द्याथ दशांशं हेम दापयेत्।
स्वर्णाद्दशांशकं शुद्धं मल्लभस्म प्रदापयेत् ॥ २७२६ ॥
अर्कदुग्धैस्ततस्खल्वे मर्दनीयमहर्द्वयम्।
सूर्यातपे खरे शोष्यं पिष्टिं कुर्यान्मृदुं बुधः ॥२७२७॥
पट्टवस्त्रे दृढां बध्वा गुटिकां पट्टतन्तुना।
गुटिकाषड्गुणं गन्धं चूर्णयेल्लोहपात्रके ॥ २७२८ ॥
तत्पात्रं वेशयेच्चुल्ल्यां निर्धूमाग्निं प्रदापयेत्।
गन्धके गुटिकां पक्त्वा लोहदर्व्या च चालयेत् २७२९
यामैकं पाचयेन्मन्दं गुटिकां तत उद्धरेत्।
स्वाङ्गशीतां छुरिकया गुटिस्थं वस्त्रमुद्धरेत् ॥२७३०॥
चन्द्रकान्ति भवेत्स्वच्छो हेमगर्भो रसोत्तमः।
श्वासे कासे महावाते ज्वरे सर्वगदेषु च ॥ २७३१ ॥
मधुनाऽऽर्द्रवेराद्भिर्वीक्ष्य रोगबलाबलम्।
दन्तबन्धे तथा शूले गुल्मेऽमुं हेमगर्भकम् ॥ २७३२ ॥
रसायनसं., रसायने।

भाषा—तलस्थचन्द्रोदय, शुद्धरसकपूर, नाग और वङ्गभस्म १–१ कर्ष, सुवर्णभस्म अथवा वर्क सबसे दशमाश, स्वर्णसे दशाश मल्लभस्म डालकर आकके दूधसे तप्तखल्वमें दोदिन मर्दनकर गोली बनाय सुखाकर वस्त्रमें रख रेशमके डोरेसे बाधकर पोट्टलीबनाय लोहेके पात्रमें षड्गुणगन्धक के बीचमें रखकर पकावे। पोट्टलीको लोहेकीकड़छी अथवा शलाकासे लोटपोटकर १ पहरतक पकावे फिर कड़ाहीको उतारकर नीचेरखले। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे श्वास, कास, महावात, समस्तज्वर, बवासीर, दन्तबन्ध, शूल, गुल्म इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६३९ ॥

६४० हिरण्यगर्भपोट्टली (हेमगर्भरसायनम्) १०

शुद्धं गन्धं पलार्द्धञ्च सूतं शुद्धं पलाष्टकम्।
श्लक्ष्णां कज्जलिकां कृत्वा मासमेकं प्रयत्नतः ॥२७३३॥
प्रवालं मौक्तिकं चाभ्रं नागं वङ्गं पलार्द्धकम्।
ताम्रञ्च पलमेकञ्च रौप्यभस्म पलार्द्धकम् ॥ २७३४ ॥
शुद्धहेम्नः पलान्यष्टौ मर्दयेच्छ्लक्ष्णवद् दृढम्।
दृढां पोट्टलिकां बद्धा जारयेत्तदनन्तरम् ॥ २७३५ ॥
द्वियामञ्च ततः पश्चात्तीक्ष्णशस्त्रेण घर्षयेत्।
श्यामाक्षौद्रयुतश्चैव वातरोगे प्रशस्यते ॥ २७३६ ॥
शृङ्गवेररसेनैव सन्निपातं निहन्ति च।
नानानुपानयोगेन सर्वरोगनिवर्हणः ॥ २७३७ ॥
श्वासे कासे समीरोत्थे शैथिल्ये चामवातके।
अशीतिवातरोगेषु ह्युन्मादेषु विशेषतः ॥
अश्विभ्यां पूर्वमुद्दिष्टं हेमगर्भरसायनम् ॥ २७३८ ॥
रसायनसं., रसायने।

भाषा—शुद्धगन्धक २ कर्ष, शुद्धपारा ८ पल लेकर एकमहीनेतक मर्दनकरे। फिर प्रवाल, मोती, अभ्रक, नाग, वङ्ग इनकीभस्में २–२ कर्ष, ताम्रभस्म १ पल, रजतभस्म २ कर्ष, सुवर्णभस्म अथवा वर्क ८ पल लेकर १–२ दिन मर्दनकर मलमल अथवा रेशमीकपड़ेमें कड़ी पोटली बाध शरावसम्पुटमें बन्दकर दोपहर जङ्गलीकण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर साफकरके रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती निसोत और मधुकेसाथदेनेसे श्वास, कास, वातरोग, शिथिलता, आमवात, विशेषकर उन्माद ऐसेसब नष्टहोतेहैं ॥ ६४० ॥

६४१ हिरण्यगर्भपोट्टली (एकादशी)

शुद्धो रसो बलिवसाकनकच्छदाश्च
भस्मापि मौक्तिकभवं भिदुरस्य चापि।
कस्तूरिकास्वरदिनाधिपभस्मताल-
भस्मानि कर्षमितभागसमानि कृत्वा २७३९
सप्ताहमार्द्रकरसेऽथ विमर्द्य सर्वं
पूगीफलेन सदृशी वटिका विधाय।
कौशेयवाससि पृथक् चतुरङ्गुले ता-
वद्धाऽर्द्धपक्कसरानिहिता विदध्यात् २७४०

पक्का यदा कृसरिका च निसर्गशीता
कौशेयवाससि पुनर्द्रुतगन्धपक्काः ।
भुञ्जीत कालवलवह्निसमानमानां
मर्त्यो भवेदमरतुल्यवपु र्वली च ॥ २७४१ ॥
अपस्मारेतथोन्मादेसन्निपातेषु योजयेत् ।
अनुपानविशेषैस्तु युक्ता हन्त्यामयान्वहून् ॥ २७४२ ॥

नू. क., अपस्मारोन्मादसन्निपातेषु ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सोनेकेवर्क, मोती, हीरा, ताम्र, हरिताल इनकीभस्में, कस्तूरी और अम्बर १–१ कर्प लेकर नीलवर्णकज्जलीकर अदरखकेरससे ७ दिनतक मर्दनकर सुपारीके वरावर गोलियें वनाय सुखाकर ४ तह रेशमकेकपड़ेमें प्रत्येक गोलीको रेशमसे कड़ीवाधकर मूंग और वासमतीचावलोंकी अधपकीखिचड़ीमें गोलियोंको डालकर मुंहवन्दकर पकावे । खिचड़ी पकनेपर चूल्हेकी आग खींचले । स्वाङ्गशीतलहोनेपर साफ़कीहुई गोलियोंको रेशमकेकपड़ेमें वाध पूर्वकीतरह गन्धकद्रुतिमें दोघण्टे मन्दाग्निपर पकाकर रखछोड़े । इसमेंसेकाल, वल और अग्निका वलावल देखकर १ चावलसे १ रत्तीतक समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे अपस्मार, उन्माद और घोरसन्निपातको यह नष्टकरतीहै । निरन्तरसेवनकरनेसे वलीपलितको दूरकर दीर्घायुको करतीहै ॥ ६४१ ॥

६४२ हिरण्यगर्भपोट्टली (पीतहेमगर्भः) १२

पीता मनःशिला तालं शुद्धं प्रत्यक् पिचून्मितम् ।
कर्षार्द्धं हेम संयोज्यं तत्पादांशं महाविषम् ॥ २७४३ ॥
मर्दयेद्धत्तूरणद्रावैः शुष्कं कृत्वा खरातपे ।
पूर्ववत्पोट्टलीं वद्धा क्रियां पूर्ववदाचरेत् ॥ २७४४ ॥
हेमगर्भो भवेत्पीतः सर्वरोगनिवर्हणः ।
अनुपानैः सदा देयो वाजीकरण उत्तमः ॥ २७४५ ॥

रसायनसं , रसायने ।

भाषा—शुद्ध पीलीमैनसिल और हरिताल १–१ कर्प, सुवर्णभस्म अथवा वर्क ८ माशे, पीलासोमल २ माशे लेकर वारीक चूर्णकर केशरकेद्रवसे एकदिनमर्दनकर कड़ीधूपमें सुखाकर इच्छानुसार गोलियेंवनाय रेशम अथवा मलमलके कपड़ेमें पोट्टली वनाय लोहेकेपात्रमें पड्गुणगन्धकको पिघलाकर वीचमें पोट्टलीको रख १ पहरकी अग्निदेकर पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २–२ चावल समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तसन्निपात नष्टहोतेहैं और उत्तम वाजीकरणहै ॥

६४३ हिरण्यगर्भपोट्टली १३

कर्षैकं रसकर्पूरं दापयेत्खल्वमध्यतः ।
पादांशं हाटकं योज्यं माषैकं शुद्धमल्लकम् ॥ २७४६ ॥
मर्दयेद्याममात्रन्तु सूक्ष्मवस्त्रे निधापयेत् ।
पोट्टलीञ्च दृढां वद्धा जारयेद्गन्धकद्रवैः ॥
याममेकं ततः पश्चाद्योजयेत्सकले गदे ॥ २७४७ ॥

रसायनम , रसायने ।

भाषा—शुद्धरसकपूर १ कर्प, सोनेकेवर्क ४ माशे, शुद्धसोमल १ माशा लेकर एकपहर मर्दनकर सूक्ष्मवस्त्रमें पोट्टलीवनाय गन्धककेद्रवमें १ पहर पाचनकरे । इसमेंसे १–१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातादि समस्तरोगोंको दूरकरतीहै ॥ ६४३ ॥

६४४ हिरण्यगर्भपोट्टली (हेमगर्भपोट्टली) १४

रसवलिरविरजतकनकमुक्तातालप्रवाललोहाभ्रम् ।
वद्धा पटे विपक्का वह्नितैले हेमगर्भपोट्टलिका ॥२७४८॥

सि भे म , पारदप्रकरणे क्षयादौ ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र, रजत, सुवर्ण, मोतीहरिताल, प्रवाल, लोह, अभ्रक इनकीभस्में समभागलेकर चित्रकप्रभृतिके रससे १–२ पहर मर्दनकर गोलीवनाय पूर्ववत् ३ तह गन्धकयुक्तकपड़ेमें पोट्टलीवनाय गन्धककेतैलमें एकपहर पकावे । इसमेंसे १–१ रत्ती रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह क्षयादिसमस्तव्याधियोंको नष्टकरतीहै ॥ ६४४ ॥

अथ पोट्टलीरहस्यम्

अत्र (पोट्टलीविषये) वहवो जना विवदन्ते यत्कस्य योगस्य पोट्टली करणीया कस्य वा न करणीयेति ? तत्र पोट्टलीति प्राक्तननामाऽस्ति तन्निर्माणप्रकारस्य तत्तदौषधभाण्डसङ्ग्रहविपत्–औषधक्षयो भाण्डभग्नताऽल्पसमये गुणराहित्यादि मूलं प्रतीयते पोट्टलीं वद्धा गन्धकद्रुतौ पाककरणेनोक्तदोषाणामभावादियं पद्धति. प्रवृत्ताऽस्त्यतो धातुप्रचुरयोगाना मध्ये कस्यापि योगस्य पोट्टलीविवत्साऽस्ति तत्तन्निर्माणे सर्वेषामपि जनाना कामचारोऽस्ति । पर्वतीया जाङ्गलाश्चाऽधुनाऽप्यौषधाना पिण्ड निर्माय रक्षयन्ति । एतत्प्रकारा प्राधान्येन शृङ्गीग्राहिकतान्यायेनाऽत्र तत्तद्ग्रन्थनामनिर्देशपुर सर केचन प्रतिपादितास्तत्र तद्धटकानि पारद , गन्धकः, सुवर्ण, मुक्ता, शङ्ख , वराटी, टङ्कणं, ताम्रं, नाग , वङ्ग, लोह, अभ्रकं, प्रवाला , रजतं, स्वर्णसिन्दूरं, रससिन्दूरं, नरसार , मल्लं, हरितालं, मन शिला, रसकर्पूर , चन्द्रोदय , वज्रं, मृगनाभि , अग्निजारश्चेति पञ्चविंशतिपरिमितान्यागतानि तेषां मध्ये एकशो द्विशससर्वशो वा प्रस्तारा कृताश्चेदानन्त्यं जायेत । तत्र तत्तद्देशप्रान्तादिव्यवहारभेदेन नानाविधा योगा दृश्यन्ते तेषा सामस्त्येन निर्देश. कर्तुमशक्यस्तथापि दिङ्मात्रप्रदर्शनार्थं केचियोगा. प्रदर्श्यन्ते । यथा–सुवर्णभस्मनोऽष्टसु कर्षेषु सुविशुद्धसमभागपारदगन्धककज्जल्येककर्ष विमिश्रय्येशवगोलाभिधस्य वब्बूलनिर्यासादीना वा द्रवेण द्वित्रघस्रान्विमृद्य शुद्धगन्धकचूर्णं पादकर्षं मिश्रयित्वा मौष्ठवसम्पादनाय द्वित्रवल्लमितान्सूक्ष्मसुवर्णखण्डानूर्द्धस्थितान् स्थापयित्वा शिखरारम्भिका वर्टी विधाय वैद्यौषधना माङ्किता कृत्वा सम्यग्विशोष्य चतुरावृत्तकौशेयवाससि वद्धाऽयस्तन्तुभिर्दोलान्निर्माय चीनपात्रे शुद्धगन्धकं विद्राव्य तत्रैना लोहशलाकादोलिका स्थापयित्वा मन्दाग्निना पाचयेत् कौशेयस्य दग्धाऽवस्था विलोक्य मुचुण्डीद्वयेनैकैकां वर्टी निष्कास्य

वस्त्रखण्डानि युक्त्या दूरीकृत्य गन्धककालिमानमपहृत्य वर्टी भव्यदर्शनाङ्कुर्यात् । एवं सर्वा अपि वटीर्विशोधयेत् । एवं करणे घर्षण्यादिदोषजन्यौषधाऽपक्षयशङ्कैव नोदेष्यति । आधुनिकास्त्वौषधस्य वर्णविपर्ययभीत्या निर्यासादिद्रवमन्तरैव केवल दिव्यजलेन पिष्टिकामापाद्य पोट्टलीं निर्वर्तयन्ति । अनया रीत्या पोट्टल्या काठिन्याऽधिक्यं चित्ताकर्षिणी वर्णसुष्ठुता च सम्पद्यते । प्राचीनपोट्टलीषु तु तुलस्यादिस्वरसभावना प्रायो दृश्यन्ते, एतेन तत्तद्रोगहर्द्रव्यैर्यथाशक्यं विमृश्य वटिकाविधानस्रुति. श्रेष्ठा। ये तु केचिद्द्रवभावनागुणो गन्धकद्रुतिपाकेन द्रवाहितविशेषस्य भस्मीभावात्पोट्टल्यां नागच्छतीति प्रत्यवतिष्ठन्ते ते त्वज्ञानगह्वरे पतिता एव बोध्याः । एवञ्चेत्तर्हि तत्तदौषधविशेषैस्सम्पादितताम्रादिभस्मसु विशेषो वक्तुमेकान्ततोऽशक्य एव स्यात्, इष्टापत्तिस्तु यत्नशतैरपि निर्देष्टुमशक्या प्रत्यक्षविरोधात् । गर्भपातकाद्यौषधनिर्मितधातुभस्मना तत्तत्कार्यस्य प्रत्यक्षदृष्टत्वात् । एवं गर्भरक्षकौषधादिष्वपि प्रत्यक्षताऽस्ति । सिद्धसम्प्रदायिकास्तु कृष्णकुक्कुटाण्डस्य श्वेतद्रव नियोजयन्ति एतेनातिकाठिन्यं भवतिगुणवृद्धिरपि । पोट्टलीषु वर्णभेदस्तु तद्घटितभस्मस्थवर्णभेदादुदेति । एकस्यां पोट्टल्या नानावर्णोत्पत्तिरपि नानाविधौषधपिष्टिकाखण्डाना मेलनात्सम्पद्यते । यथाऽधस्तान्निर्दिश्यमानचतुरष्टपोट्टलीना चत्वारि अष्टौ वा खण्डानि विधायैकैकविजातीयखण्डस्यैकत्र स्थापनाच्चतुर्षु खण्डेषु चतस्रोऽष्टसु खण्डेष्वष्टौ विचित्रवर्णा पोट्टल्यस्सम्पद्यन्ते, परन्त्वियं सृतिर्दर्शकाना स्वचातुरीद्योतनमात्रफला पाकसमये विभिन्नशकलगुणाना साङ्कर्यदोषात्स्वतन्त्र पोट्टलीनिर्माणप्रकार एव ज्यायान् । सुवर्णशलाकाना निधानमपि न सर्वत्रोपयोगि तच्छत्रुभूतमल्लादियोगे वैयर्थ्यात् । बलीयसाऽबलं जीयते इति न्यायेन यद्यपि सुवर्ण शत्रुसमीपेऽप्यपकर्तुं क्षमाऽलं तथापि तत्र दर्शकानां चित्ताऽऽह्लादमन्तराऽन्यत्किञ्चिदप्युपकरत्वन्नाऽस्तीति विद्वत्सु विज्ञप्ति । अल्पप्रमाणगन्धकयोगोऽपि पोट्टलीगतपरमाणूना सयोजकस्तदीयगुणोत्कर्षविधायकश्चेति बोध्यम् । यत्र कज्जल्युल्लेखस्तत्राऽन्यद्वस्तुमेलनाऽनन्तरं तद्योग करणीयोऽन्यथाऽभीष्टवर्णविघातकतायां पर्यवस्यति । यत्र तु कुक्कुटादिपुटदानमस्ति तत्र तु नेय विपदुपतिष्ठति, अग्नियोगेन कालिम्नोऽनुदयात् । पारदस्य मेलनमपि गन्धकातिरिक्तद्रव्यैः सह कृत्वाऽन्ते गन्धकमिश्रणमिति हस्तचातुरी ।

अथ लोकप्रसिद्धाः काश्चित्पोट्टल्यस्सानुपाना अधो निर्दिश्यन्ते ताश्च वैद्यवरेण जयशङ्करशर्मणा निर्दिष्टाः । यथा—

हिरण्यगर्भपोट्टली—सुवर्णभस्म १० कर्षा विशुद्धकज्जली १ कर्षा, शुद्धगन्धकं १ टङ्कमितम्, सुवर्णतनुतन्तुखण्डा ६ रक्तिका, एतद्वस्तुचतुष्टयघटिता । अस्या निर्माणमुपरिनिर्दिष्टरीत्या करणीयम्, इयं माञ्जिष्ठवर्णा सम्पत्स्यते । कृष्णाऽजाजुग्धाऽऽर्द्रकरसादिभिर्यथौचित्यद्वद्विगुञ्जातो रक्तिमानां मात्रा राजयक्ष्मरक्तक्षोभजीर्णज्वरौज क्षयादिषु दद्यात्पथ्यं रोगोचितं विधादिति॥१॥

तारगर्भपोट्टली—इयं श्वेतवर्णा । रौप्यभस्म १० कर्षपरिमितम्, पारदभस्म १ कर्ष, विशुद्धगन्धकचूर्णं १ टङ्कं, सुवर्णतनुतन्तुखण्डा. ६ रक्तिका., एतद्वस्तुचतुष्टयघटिता कार्या, निर्माणं पूर्ववत् । तुलसीपत्ररसमधुभ्यां स्वोचितेनाऽन्येनाऽनुपानेन वा योगे प्रमेहशुक्रदोषपित्तविकृतिमूत्रव्याधयो निवर्तन्ते । श्वेतरजतभस्मयोगेऽस्याश्शनेतवर्णो भविष्यति तदभावेऽन्यथात्वमिति रहस्यम् । अर्धरक्तिकामानादेकरक्तिका मात्रा बोध्या ॥ २ ॥

ताम्रगर्भपोट्टली—मयूरकण्ठाभताम्रभस्म १० कर्षपरिमितं, पूर्ववद्विशुद्धकज्जली १ कर्षा, विशुद्धगन्धकचूर्णं १ टङ्कं, विशुद्धसुवर्णतनुतन्तुखण्डा ६ रक्तिमिता, निर्माणं पूर्ववत् । इयं मयूरकण्ठाभा भवति । श्वेतताम्रभस्मनस्तु शुभ्रवर्णा रक्तस्य रक्ता । आर्द्रकस्वरसमधुभ्यां अवस्थाविशेषवशेन तदुचितानुपानेन वा कफजन्यत्रिदोषश्वासकासज्वरशूलवार्धक्यशोषाः निवर्तन्ते । अर्धगुञ्जात एकगुञ्जामिता मात्रा । पथ्यं रोगोचितं देयम् ॥ ३ ॥

लोहगर्भपोट्टली (प्रथमा)—लोहभस्म १० कर्ष, विशुद्धकज्जली १ कर्षा, विशुद्ध गन्धकचूर्णं १ टङ्कं, सुवर्णतनुतन्तुखण्डा ६ रक्तिमिताः । निर्माणं पूर्ववत् । लोहभस्मवर्णसमवर्णा, एकगुञ्जातस्त्रिगुञ्जापरिमिता मात्रा । आर्द्रकस्वरसमधुभ्यां तत्तद्रोगविशेषाऽनुपानेन वा योजिता सङ्ग्रहणीपाण्डुकामलारक्तक्षोभप्रमेहप्रदरान्नाशयति । रोगोचितं पथ्यम् ॥ ४ ॥

लोहगर्भपोट्टली (द्वितीया)—लोहरौप्यसुवर्णवङ्गनागताम्रमण्डूरसुवर्णमाक्षिकशङ्खभस्मानि प्रत्येकं द्विकार्षिकाणि, कज्जली २ कर्षा, विशुद्धं गन्धकचूर्णमर्धकर्षं, सुवर्णतनुतन्तुखण्डाः १२ रक्तिमिता । निर्माणं पूर्ववत् । इयं कृष्णवर्णा । एकगुञ्जातो द्विगुञ्जापरिमिता मात्रा हरिद्रास्वरसगोमूत्रदुग्धैरनुपानैस्तत्तद्रोगहरानुपानेन वा योजिता क्षयप्रमेहपाण्डुकामलारक्तक्षोभप्रदरनेत्ररोगग्रहणीप्रभृतीन्नाशयति ॥ ५ ॥

मल्लगर्भपोट्टली—विशुद्धं मल्लभस्म ४ पलं, पारदभस्म २ कर्षमभावे शुद्धपारद २ कर्षमित, विशुद्धगन्धकचूर्णं १ टङ्कं, सुवर्णतनुतन्तुखण्डा. ६ रक्तिमिता । निर्माण पूर्ववत् । इयं श्वेतवर्णा । अर्धतण्डुलादारभ्य द्वितण्डुलपरिमिता मात्रा दुग्धेन, दधिसरेण, दुग्धसरेण वा तत्तद्रोगहरानुपानैर्वा दत्ता ज्वरश्लेष्मवातव्याध्युपदंशफिरङ्गभगन्दरनाडीव्रणश्वासकासाग्निमान्द्यप्रभृतीन् नाशयति । पथ्यं रोगोचितम् ॥ ६ ॥

तालगर्भपोट्टली—हरितालभस्म ४ पलं, पारदभस्म २ कर्ष (भस्माऽभावे द्वयमपि सुविशुद्ध ग्राह्यम्), शुद्धगन्धकचूर्णं १ टङ्कं, सुवर्णतनुतन्तुखण्डा ६ रक्तिका, निर्माण पूर्ववत् । भस्मघटिता चेच्छ्वेता सम्पत्स्यते, विशुद्धाभ्यां चेत्पीता । आर्द्रकस्वरसमधुभ्यां तत्तद्रोगहरानुपानैर्वा तण्डुलमानादर्द्धरक्तिका मात्रा प्रयुक्ता चेत् श्वासकासवातव्याधिरक्तश्लेष्मरोगान्नाशयति । पथ्य रोगोचितं देयम् ॥ ७ ॥

शिलागर्भपोट्टली—शुद्धा मन शिला ४ पला, शुद्धपारद २ कर्ष, विशुद्धं गन्धकचूर्णं १ टङ्क, सुवर्णतनुशलाकाखण्डाः ६ रक्तिका, निर्माणं पूर्ववत् । इयं कुङ्कुमवर्णासम्पत्स्यते । मात्राऽ-

द्धैरक्तित एकगुञ्जामिता। अतिविषाकटुरोहिणीमधुभिरवस्थाविशेषानुकूलाऽनुपानैर्वा नियोजिता चेज्ज्वरश्वासकासादीन्नाशयति ॥

विषगर्भपोट्टली—मल्लमनःशिलादरदतालकरसकर्पूराणां भस्मानि प्रत्येकमेकैकपलानि, पारदभस्म १ कर्ष, भस्माऽभावे सुविशुद्धानि ग्राह्याणि। सुविशुद्धगन्धकचूर्णं १ टङ्कं, सुवर्णतनुतन्तुखण्डा ६ रक्तिका., निर्माणं पूर्ववत्। भस्मभि र्घटिता चेच्छ्वेता, अन्यथा तु रक्तपीता भविष्यति। भस्मघटिताचेदर्धतण्डुलादेकतण्डुलमिता मात्रा। विशुद्धै सम्पादिता चेदेकतण्डुलमानाद्वितण्डुलमिता बिल्वपत्रनिम्बार्द्रकस्वरसैस्तत्तद्रोगहरानुपानैर्वा नियोजिता चेदुपदंशफिरङ्गवातव्याधिक्षीणताश्लेष्मविकाररक्तदोषभगन्दरकुष्ठनाडीव्रणादीन्नाशयति ॥ ९ ॥

रसगर्भपोट्टली—दरदभस्म ४ पलं, पारदभस्म १ पलं (भस्माऽभावे विशुद्धौ ग्राह्यौ), विशुद्धगन्धकचूर्णं १ टङ्कं, सुवर्णतनुतन्तुखण्डा ६ रक्तिका, निर्माणं पूर्ववत्। भस्मघटिता चेच्छ्वेता, विशुद्धवस्तुघटिताचेद्रक्तवर्णा। १ रक्तिमानात् ३ रक्तिमाना मात्रा तुलस्यादिस्वरसैर्योजिता पाण्डुं निहन्ति। भस्मघटिता चेत्तण्डुलमानादर्धरक्तिमिता मात्रा तत्तद्रोगहरानुपानैर्योजिता सकलामयान्निहन्ति॥ इत्येका ॥

रसकर्पूरभस्म १० कर्ष, पारदभस्म १ कर्ष (भस्माऽभावे सुविशुद्धौ ग्रहीतव्यौ) विशुद्धगन्धकचूर्णं १ टङ्कं, सुवर्णतनुशकलानि ६ रक्तिमितानि, निर्माण पूर्ववत्। भस्मघटिताचेदेकतण्डुलमानाद्वितण्डुलमिता मात्रा, विशुद्धद्रव्यघटिता चेदेकरक्तिमिता हरिद्रयोपदंश निहन्ति। भस्मघटिता तु तत्तद्रोगहरानुपानै सर्वरोगान्निहन्ति, पर वाजीकरी वृष्या च, उभयथाऽपि श्वेता। इति द्वितीया।

पारदभस्म १ कर्ष, कज्जली ४ पला, विशुद्धगन्धकचूर्णं १ टङ्क, सुवर्णतनुशकलानि ६ रक्तिमितानि, निर्माणं पूर्ववत्। एकारक्तिकामारभ्य त्रिरक्तिमिता मात्रा आर्द्रकस्वरसादिभि सर्वरोगान्निहन्ति ॥ इति तृतीया ॥

दरदभस्म ४ पल, रसकर्पूरभस्म २ पलं, पारदभस्म १ कर्ष, सुविशुद्धगन्धकचूर्णं १ टङ्कं, सुवर्णतनुतन्तुखण्डानि ६ रक्तिमितानि, निर्माणं पूर्ववत्। भस्माऽभावे सुविशुद्धं ग्राह्यम्। भस्मघटिता चेत्तण्डुलैकमानाद्द्वितण्डुला मात्रा। विशुद्धवस्तुघटिता चेद्रक्तिमिता मात्रा दुग्धकनकस्वरसाभ्यां वाजीकरी। तत्तद्रोगहरानुपानैस्तु सर्वरोगान्निहन्ति ॥ इति चतुर्थी ॥ १० ॥

त्रिधातुगर्भपोट्टली—निरुत्थ वङ्गनागयशदभस्मानि प्रत्येकमेकपलानि, पारदभस्म १ कर्ष, विशुद्धगन्धकचूर्णं १ टङ्क सुवर्णतनुशकलानि ६ रक्तिमितानि, पारदभस्मनोऽभावे विशुद्धं पारद भस्मभिः सह मर्दयित्वाऽदृश्यतामापादयेत् पश्चान्निर्माण पूर्ववत्। श्वेतवर्णा पोट्टली भविष्यति। अर्धरक्तितो रक्तिद्वयमाना मात्रा हरिद्रातुलसीस्वरसाभ्यां नियोजिता प्रमेहपूतिमेहप्रदरशुक्रदोषान्नाशयति। दुग्धेन सेविता शुक्रं वर्धयति। पथ्य रोगोचितम् ॥ ११ ॥

रत्नगर्भपोट्टली—वज्रगारुत्मतवैक्रान्तमुक्ताप्रवालपारदमाणिक्यपुष्परागगोमेदनीलशङ्खाना भस्मानि प्रत्येकमेककर्षाणि, विशुद्धगन्धकचूर्णमेकटङ्क, सुवर्णतनुतन्तुखण्डा. १२ रक्तिका., निर्माणं पूर्ववत्। केचित्त्वत्र स्फटिककुरुविन्दवैदूर्यराजावर्तानामेकैककर्षमधिकतया प्रक्षिपन्ति तेषामपि भस्मान्येव ग्रहीतव्यानि। तेषा भस्मप्रकारा अगस्त्यसंहितातोऽवगन्तव्या। इदानीन्तनास्तु वज्र विनाऽन्यरत्नानि शतपत्रपुष्पार्के विशीर्णात्वधि निर्वापान् दत्त्वा तेनैव सार्क विमृद्य चक्रिकां निर्माय अष्टौ दश वा पुटानि ददति। अन्ये पुनर्निर्वापाऽनन्तरं कुमारीद्रवे विमृद्य चक्रिकां निर्माय पूर्ववत् पुटानि ददति। आर्द्रामलकस्वरसेऽष्टोत्तरशतान्निर्वापान् दत्त्वा तेनैव विमृद्य चक्रिका निर्माय क्रमोत्तरविवृद्धोत्पलसङ्ख्येषु त्रिंशद्गजपुटेषु दत्तेषूत्तमं भस्म सञ्जायते इति सर्वेषामेव रत्नाना परिचित प्रकार.। अनेन प्रकारेण क्रियमाणानि भस्मानि हरिद्रावर्णानि सम्पद्यन्ते. पारदभस्माऽभावे चन्द्रोदयस्य रससिन्दूरस्य वा योग करणीय। मुक्तानान्तु शतपत्रपुष्पार्के (गुलाबजल, हिन्दी) पिष्टिरेव श्रेयसी। भस्मीकरणे शङ्खस्तु वराक येन केनाऽप्युपायेन करणीयम्। रत्नभस्मवर्णाधीनो वर्ण। अन्तिमप्रकारेण क्रियमाणेषु भस्मसु तु कुङ्कुमवर्णा पोट्टली सम्पत्स्यते सर्षपमानात्तण्डुलमिता मात्रा मृगमदाभिजारकेशरजातीफलैर्दुग्धादिभिश्च प्रयोजिता रसायोज पर्यन्तधातुक्षयान् राजरोगमन्यौषधदुर्जयसर्वानपि रोगान् नाशयति। परमरसायनी योगवाहिका चेति। पथ्य रोगोचितं दद्यात् ॥ १२ ॥

अभ्रगर्भपोट्टली—निश्चन्द्रवज्राभ्रभस्म ४ पलं, पारदभस्म १ कर्ष (भस्माऽभावे विशुद्ध पारद), विशुद्ध गन्धकचूर्णमर्धकर्ष सुवर्णतनुतन्तुखण्डा ६ रक्तिका॰, निर्माणं पूर्ववत्, इयं रक्तवर्णा सम्पत्स्यते। अर्धगुञ्जामिता मात्रा आर्द्रकमधुभ्यां तत्तद्रोगहरानुपानैर्वा प्रयोजिता श्वासकासक्षयजीर्णज्वरादीन् गर्भिणीरोगांश्च निकृन्तति। पथ्यं रोगोचितं विधात ॥ १३ ॥

माक्षिकगर्भपोट्टली—सुवर्णमाक्षिकरौप्यमाक्षिकमण्डूरकासीसकांस्यरीतिपारदभस्मानि १—१ पलानि, पारदभस्म १ कर्ष, विशुद्धगन्धकचूर्णं १ टङ्कं, सुवर्णतनुतन्तुखण्डा ६ रक्तिका निर्माण पूर्ववत्। भस्मवर्णाधीनो वर्ण। अर्धरक्तिमानादेक रक्तिमिता मात्रा आर्द्रकस्वरसमधुभ्यां तत्तद्रोगहरानुपानैर्वा नियोजिता प्रमेहक्षीणतापाण्डुकामलोदररोगान् निहन्ति। पथ्यं रोगोचितम् १४

प्रवालगर्भपोट्टली (श्वेतपोट्टली)—प्रवालमुक्तास्फोटपीतकपर्दशङ्खभस्मानि प्रत्येक द्विद्विपलानि, गोदन्तभस्म ४ पल, पारदभस्म १ कर्ष (भस्माऽभावे विशुद्धो ग्राह्य), विशुद्धगन्धकचूर्णं १ टङ्कं, सुवर्णतनुतन्तुखण्डाः ६ रक्तिका, निर्माणं पूर्ववत्। इयमतिश्वेता। ३ रक्तिमानान्माषकपरिमिता मात्रा चित्रकमूलाऽऽर्द्रकस्वरसादिभिर्नियोजिता पाण्डूदरकासश्वासगुल्मान्निवर्तयति बालरोगांश्च। पथ्यं रोगोचितम् ॥ १५ ॥

ग्रन्थस्थपोट्टलिका पूर्वं चतुर्दशप्रतिपादितास्तासु पारदगन्धसुवर्णमुक्ताशङ्खवराटीटङ्कणताम्रनागवङ्गलोहाभ्रकप्रवालरजतस्वर्णसिन्दूररससिन्दूरनरसारमल्लहरितालमनःशिलारसकर्पूरचन्द्रोदय-

वज्रमृगमदाऽम्बराणि एतानि पञ्चविंशतिर्वस्तूनि समागतानि तेषु मृगमदाम्बरे द्वे धातुपाषाणभिन्ने वस्तुनी मुक्त्वा त्रयोविंशति र्धातुपाषाणा. समागता । समनन्तरनिर्दिष्टपञ्चदशपोट्टलीषु अष्टत्रिंशद्वस्तूनि समागतानि तेषु अष्टादशपूर्वोक्तान्येव सन्ति विंशतिश्च नूतनानि यथा—मण्डूरयशदसुवर्णमाक्षिकदरदगारुटवैक्रान्तमाणिक्यपुष्परागगोमेदनीलस्फटिकराजावर्तकुरुविन्दवैदूर्यशुक्तिरौप्यमाक्षिककास्यरीतिकासीसगोदन्ताः इत्येतेषा सर्वेषामप्येकस्या पोट्टल्या योगचिकीर्षा चेत्तर्हि भवेदेव, यथा द्वितीयलक्ष्मीनारायणे सर्वेषामपि समावेश कृतोऽस्ति आपातदृष्ट्या त्रिचतुरवस्तूनि तत्र न दृश्यन्ते यथा रसकर्पूर. हिङ्गुल, कुरुविन्द, गोदन्ता , परन्तु लक्ष्मीनारायणोक्तपारदसंस्कारे कृते हिङ्गुलरसकर्पूरयोर्दानस्यात्यावश्यत्वन्नास्ति कुरुविन्दगोदन्तयोरभावोऽपि न दोषावहो लक्ष्मीनारायणे चन्द्रसूर्यकान्तनीलाञ्जनरसाञ्जनमार्जाराक्षफिरोजाख्य (तुत्थमणि) षड्वस्तूनामधिकतया समागमनात् रसकर्पूरादिद्रव्यचतुष्टयस्याधितकया दानेनाऽपि क्षत्यभावोस्ति कान्तपाषाणसमागमनान्मण्डूरस्य तुत्थद्वयसमागमनात्ताम्रस्य पूर्ति सञ्जातास्ति विषादीनामधिकता तु लक्ष्मीनारायणेऽस्त्येवेति सर्वं पदं हस्तिपदे निमग्नमिति न्यायेन सर्वा अपि पोट्टल्यो लक्ष्मीनारायणोदरे सन्निविष्टा जाता सन्ति तत्र रोगा अपि प्राय. सर्वे समागता. सन्ति परन्तु सर्वेषा द्रव्याणा सम्भरण साधारणजनेन कर्तुमतीव दुश्शकमत्युग्रवीर्यत्वाच्च सर्वै. सर्वत्र प्रयोक्तुमपि दुश्शकाऽस्ति अतो यावल्लभ्यद्रव्याणा विषरहिता एका कार्या तस्या सर्वत्रैवोपयोगो निरत्ययेन लाभप्रदो भवति। विषसहिता द्वितीया तस्या घोरसन्निपातावस्थाया कण्ठावरोधादौ योगो लाभप्रदोऽस्ति अतो विषसहिताया लक्ष्मी नारायणपोट्टलीति विषगर्भपोट्टलीति वा नामकरणमुचितम्। विषरहितायास्तु रत्नगर्भपोट्टलीति बृहद्धिरण्यगर्भपोट्टलीति वा नामकरणमुचितं भवति । धातुपाषाणातिरिक्तमृगमदादीना यत्र योग कर्तुमभीष्टस्तत्र एकादशसङ्ख्याकपोट्टलीवत्पाक. करणीय इति रहस्यम्। हिरण्यगर्भेण लोकाना चित्तमत्यन्तमाकृष्टं दृश्यते यथा सामान्यतोऽनाढ्यावस्थामालोक्य साधारणजना अप्युपदिशन्ति यदस्मै हिरण्यगर्भ दातव्यमिति। परन्तु सा विलक्षणताऽधुना निर्मितहिरण्यगर्भेऽदृष्ट्वा प्रशंसार्थवादेन रसशास्त्रं पूरितमिति वदितुं वैद्या अपि साहसं कुर्वन्ति तेन रसशास्त्रे बहुकालाद्बद्धमूला श्रद्धा खपुष्पायिता भविष्यत्यतोऽलौकिकशक्तिमद्भस्मना मृतप्रायप्रकार लोकोपकारैकव्रतै सच्चिकित्सकैरुज्जीव्य लोके प्रचारणीय इति ऋषिसन्ततिषु दृढ विनीता प्रार्थनेत्यलमतिविस्तरेण।

६४५ हिरण्यगर्भरसः (प्रथमः)

एकांशो रसराजस्य ग्राह्यौ द्वौ हाटकस्य च।
मुक्ताफलस्य चत्वारो भागाः षड् दीर्घनिःस्वनात् ॥
त्र्यंशं वले वैराट्याश्च टङ्कणो रसपादिकः।
पक्वनिम्बुकतोयेन सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ २७५० ॥
मूषामध्ये न्यसेत्कल्कं तस्य वक्त्रं निरोधयेत्।
गर्तेऽरत्निप्रमाणे तु पुटेत्त्रिंशद्वनोपलैः ॥ २७५१ ॥
स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा रसं मूषोदरान्नयेत्।
ततः खल्वोदरे मर्द्यः सुधारूपं समुद्धरेत् ॥ २७५२ ॥
एतस्याऽमृतरूपस्य दद्याद्गुञ्जाचतुष्टयम्।
घृतमाध्वीकसंयुक्तमेकोनत्रिंशदूषणः ॥ २७५३ ॥
मन्दाग्नौ रोगसङ्घे च ग्रहण्यां विषमज्वरे।
गुदाङ्कुरे महाशूले पीनसे श्वासकासयोः ॥ २७५४ ॥
अतीसारे महाव्याधौ श्वयथौ पाण्डुके गदे।
सर्वेषु कुष्ठरोगेषु यकृत्प्लीहोदरेषु च ॥ २७५५ ॥
वातपित्तकफोत्थेषु द्वन्द्वजेषु त्रिजेषु च।
दद्यात्सर्वेषु रोगेषु श्रेष्ठमेतद्रसायनम् ॥ २७५६ ॥

र स., र सु, र. चं, भै. र., र क, ग्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा १ भा, सुवर्णभस्म २ भा, मोती ४ भा, शङ्ख ६ भा, शुद्धगन्धक और पीलीकौडी ३–३ भा., सुहागा ¼ भाग लेकर सुवर्णको पारेमें मिलाय १–२ पहर घोटकर गन्धककेसाथ नीलवर्णकज्जलीकरे। फिर अन्य सबचीजोंको मिलाकर पकेनीबूकेरससे एकदिन मर्दनकर वज्रमूषामें गोलेको रख मुंहबन्दकर हाथभरके खड्डेमें ३० जङ्गलीकण्डोंकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ४–४ रत्तीकीमात्रा २९ कालीमिर्चोंकेचूर्णकेसाथ घी और मधुमें मिलाकरलेनेसे मन्दाग्नि, ग्रहणी, विषमज्वर, अर्श, भयङ्करशूल, पीनस, श्वास, कास, ग्रहण्यतिसार, शोथ, पाण्डु, समस्तकुष्ठ, यकृत्, प्लीहा, उदररोग, द्वन्द्वज अथवा त्रिदोषज समस्तरोग नष्टहोतेहैं और आयुकी वृद्धिहोतीहै ॥ ६४५ ॥

६४६ हिरण्यगर्भरसः (द्वितीयः)

सूतात्पादप्रमाणेन हेम्नः पिष्टिं प्रकल्पयेत्।
तयोः स्याद्द्विगुणो गन्धो मर्दयेत्काञ्चनारिणा ॥२७५७॥
कृत्वा गोलं क्षिपेन्मूषासम्पुटे मुद्रयेत्ततः।
पचेद्भूधरयन्त्रेण वासरत्रितयं बुधः ॥ २७५८ ॥
तत उद्धृत्य तत्सर्वं दद्याद्गन्धश्च तत्समम्।
मर्दयेच्चार्द्रकरसैश्चित्रकस्वरसेन च ॥ २७५९ ॥
स्थूलपीतवराटांश्च पूरयेत्तेन युक्तितः।
एतस्मादौषधात्कुर्यादष्टमांशेन टङ्कणम् ॥ २७६० ॥
टङ्कणार्द्धं विषं दत्त्वा पिष्ट्वा सेहुण्डदुग्धकैः।
मुद्रयेत्तेन कल्केन वराटानां मुखानि च ॥ २२७६१ ॥
भाण्डे चूर्णं प्रलिप्याऽथ धृत्वा मुद्रां प्रदापयेत्।
गर्ते हस्तोन्मिते धृत्वा पुटेदारण्यकोत्पलैः॥ २७६२ ॥
स्वाङ्गशीतं रसं ज्ञात्वा प्रदद्याल्लोकनाथवत्।
पथ्यं मृगाङ्कवज्ज्ञेयं त्रिदिनं लवणं त्यजेत् ॥ २७६३ ॥
यदा छर्दि भवेत्तस्य दद्याच्छिन्नाश्रृतं तदा।
मधुयुक्तं तथा श्लेष्मकोपे दद्याद्गुडार्द्रकम् ॥ २७६४ ॥
विरेके भर्जिता भङ्गा प्रदेया दधिसंयुता।

जयेत्कासं क्षयं श्वासं ग्रहणीमरुचिं तथा ।
अग्निश्च कुरुते दीप्तं कफवातं नियच्छति ॥ २७६५ ॥

शा स ,रसायनसं ,र प्र.सु ,टो ,र (मा),भै.सा ,नि र , र.दी., वै चि ,र का ,रससारसङ्ग्रह, क्षयाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, सोनेकेवर्क १ भा , शुद्धगन्धक १० भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर कचनारकेरससे १–२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय वज्रमूषामें रख मुंहबन्दकर ३ दिन भूधरपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर उसकीबराबर शुद्धगन्धक मिलाय अदरख और चित्रककेरसोंसे मर्दनकर बड़े पीलेरङ्गके कौड़ोंमें भरके समस्तऔषधसे अष्टमागसुहागा और षोडशांश वच्छनागको थूअरके दूधसे मर्दनकर कौड़ोंका मुंहबन्दकर चूनापुतीहुईहण्डीमें रखदे । फिर शरावसे हंडीका मुहबन्दकर ६–७कपड़मिट्टी समस्तपरदेकर सुखाकर हाथभरके खड्डेमें जङ्गलीकण्डोंकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे लोकनाथकीतरह देकर मृगाङ्ककीतरह पथ्यपालन करे । ३ दिनतक नमक न खावे । इसके देनेपर वमनहो तो गिलोयकाक्काथ, श्लेष्मप्रकोपमें गुड और अदरख, रेचनमें भुनीभाग दहीमें मिलाकरदेवे । इसके प्रयोगसे कास, क्षय, श्वास, ग्रहणी, अरुचि, मन्दाग्नि, कफ और वातरोग येसब नष्टहोतेहैं ॥ ६४६ ॥

६४७ हिरण्यगर्भरसः (तृतीयः)

रसस्य भागाश्चत्वारस्तावन्तः कनकस्य च ।
तयोश्च पिष्टिकां कृत्वा गन्धो द्वादशभागिकः २७६६
कुर्यात्कज्जलिकां तेषां मुक्ताभागाश्च षोडश ।
चतुर्विंशच्च शङ्खस्य भागकं टङ्कणस्य च ॥ २७६७ ॥
एकत्र मर्दयेत्सर्वं पक्वनिम्बूकजं रसैः ।
कृत्वा तेषां ततो गोलं मूषासम्पुटके न्यसेत् ॥२७६८॥
मुद्रां दत्त्वा ततो हस्तमात्रे गर्ते च गोमयैः ।
पुटेदारण्यजातैश्च स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ २७६९ ॥
वेदरक्तिमितं पिष्ट्वा दद्याद्व्याज्यसंयुतम ।
एकोनविंशदुन्मानमरिचैः सह दीयताम ॥ २७७० ॥
राजते मृन्मये पात्रे काचजे वाऽवलेहयेत् ।
लोकनाथसम पथ्यमतीसारे प्रयोजयेत् ॥ २७७१ ॥
कासे श्वासे क्षये वाते कफे ग्रहणिकागदे ।

शा.स ,र सु ,र प्र.सु ,यो र ,र च ,रसायनस ,र (मा), भै सा ,चि र भ ,नि.र ,र का ,वै चि ,वै वि ,कासाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और सोनेकेवर्क ८–४ भाग लेकर पिष्टीबनाय १२ भाग शुद्धगन्धककेसाथ नीलवर्णकज्जलीकर मोती १६ भा , शङ्खभस्म २४ भा , सुहागा १ भाग लेकर कज्जलीमें मिलाय पकेनीबूकेरससे १–२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय वज्रमूषामें बन्दकर हाथभरके खड्डेमें जङ्गलीकण्डोंकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्तीकीमात्रा २९ मरिचोंके चूर्णकेसाथ गोघृतमें मिलाकर चांदी, मिट्टी अथवा कांचके बर्तनमें सेवनकर लोकनाथकीतरह पथ्यपालनेसे कास, श्वास, क्षय, वातकफ, ग्रहणी और अतिसार इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६४७ ॥

६४८ हिरण्यगर्भरसः (चतुर्थः)

रसभस्म त्रिभागं स्यादेकभागं सुवर्णजम् ।
एकभागं मृतं ताम्रमेकभागञ्च गन्धकम् ॥ २७७२ ॥
मर्दयेच्चित्रकद्रावे दिनयामान्ते समुद्धरेत्
पूर्या वराटिकास्तेन टङ्कणेस्ता विलेपयेत् ॥ २७७३ ॥
वराटान्पूरयेद्भाण्डे रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ।
विचूर्णयेत्स्वाङ्गशीते पोट्टलीं हेमगर्भिकाम् ॥
मृगाङ्कवच्चतुर्गुञ्जाभक्षणाद्राजयक्ष्मनुत ॥ २७७४ ॥

ध.,र.सु ,र च ,र को ,र सं ,राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारदभस्म ३ भाग, सुवर्ण और ताम्रभस्म, शुद्धगन्धक १–१ भाग लेकर कज्जलीकर चित्रककेस्वरससे दोपहर मर्दनकर पीलीकौड़ियोंमें भरकर दूधमेंपिसेहुए सुहागेसे कौड़ियोंका मुंह बन्दकर हंडीमेंरख गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कौड़ियोंसहित पीसकर रखछोड़े । इसमेंसे मृगाङ्ककीतरह ४ रत्तीकीमात्रामें देनेसे यह राजयक्ष्मको नष्टकरतीहै ॥ ६४८ ॥

६४९ हिरण्यगर्भरसः (पञ्चमः)

रसस्य भागाश्चत्वारस्तदर्धं कनकं तथा ।
तदर्धं ताम्रकञ्चैव मौक्तिकं विद्रुमं समम् ॥ २७७५ ॥
तत्समानेन बलिना सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।
कृत्वा तु गोलकं पश्चात्पचेद्भूधरयन्त्रके ॥ २७७६ ॥
मृदुना वह्निना चैव स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
बलिमेवञ्च संशुद्धं षड्गुणं जारयेत्सुधीः ॥ २७७७ ॥
हेमगर्भरसो नाम त्रिषु लोकेषु विश्रुतः ।
कासश्वासेषु सर्वेषु शूलेषु च हितस्तथा ॥
तत्तद्रोगानुपानेन सर्वान्रोगाञ्जयेत्परम् ॥ २७७८ ॥

नि र ,क्षये ।

भाषा—पारदभस्म ४ भाग, सुवर्णभस्म २ भा., ताम्रभस्म, मोती, प्रवाल और शुद्धगन्धक १–१ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर अदरखवगैरहके रससे १–२ पहर घोटकर इच्छानुसार पोट्टली बनाय गन्धकयुक्त कपड़ेकी ३ तहमें लपेटकर भूधरपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर पूर्ववत् गन्धककी तह देकर पकावे । एसे षड्गुणगन्धकजारणहोनेकेबाद साफकर रखलेवे । इसमेंसे १ से २ रत्तीतक समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे कास, श्वास, शूलप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ६४९ ॥

६५० हिरण्यगर्भरसः (षष्ठः)

दरदं कर्षमात्रन्तु मर्दयेत्खल्वमध्यगम् ।
सुवर्णं माषमेकञ्च तत्समं पारदं क्षिपेत् ॥ २७७९ ॥
मर्दयित्वा क्षिपेत्तत्र गन्धकं चार्धमाषकम् ।
मर्दयेदर्कजक्षीरैर्बन्धयेत्पटमध्यगम् ॥ २७८० ॥

भूधरे पाचयेद्यन्त्रे कुक्कुटाख्यपुटेन च ।
पुनर्वस्त्रेण संवेष्ट्य तस्योपरि च गन्धकम् ॥ २७८१ ॥
दत्त्वा वस्त्रेण बध्नीयात्पुनर्यन्त्रे च पूर्ववत् ।
हेमगर्भरसोऽयं स्यादरुणारुणसन्निभः ॥ २७८२ ॥
सर्वरोगेषु दातव्य एकोत्थे वा द्विदोषजे ।
त्रिदोषे शृङ्गवेराद्भि र्मधुयुक्तं प्रयोजयेत् ॥ २७८३ ॥

रसायनसं., यो. र., रसायने ।

भाषा—शुद्धहिंगरिफ १ कर्ष, सुवर्णभस्म अथवा वर्क और शुद्धपारा १–१ माशा, गन्धक ४ रत्ती डालकर १ पहर शुष्क मर्दनकर आकके दूधसे १–२ पहर घोटकर रेशमीकपडेमें इच्छानुसार गोलीवनाय भूधरयन्त्रमें कुक्कुटपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर साफ़कपड़ेपर गन्धक विछाय पोटली बनाकर पूर्ववत् आंचदे। यह लालरङ्गका हिरण्यगर्भ तैयारहोगा। इसमेंसे १ से २ रत्तीतक अदरखवगैरह समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातादि समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६५० ॥

६५१ हिरण्यगर्भरसः (सप्तमः)

सुवर्णं रजतं ताम्रं प्रवालं पारदं समम् ।
गन्धकञ्च मनोगुप्तां तालकं कटुरोहिणीम् ॥ २७८४ ॥
एतानि समभागानि छागीदुग्धेन मर्दयेत् ।
दिनं गजपुटं पाच्यं मृषायां प्रक्षिपेद्भिषक् ॥ २७८५ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य मर्दितं श्लक्ष्णचूर्णितम् ।
अनुपानविशेषेण देयं रक्तिद्वयं हि तत् ॥ २७८६ ॥
वातपित्तकफद्वन्द्वत्रिदोषजनिते ज्वरे ।
राजोपचारं कुर्वीत स्वेच्छापथ्यं प्रदापयेत् ॥
हिरण्यगर्भनामायं रसः श्रेष्ठः प्रकीर्तितः ॥ २७८७ ॥

रसायनसं., वै. चि., र. क यो., ज्वराधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, ताम्र, प्रवाल इनकीभस्में, शुद्ध पारा, गन्धक, मैनसिल और हरिताल, कुटकी सव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर वकरीकेदूधमे १–२ दिन मर्दनकर गोला वनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रसछोड़े । इसमेंसे २–२ रत्ती अथवा औचिती देखकर मात्रा अनुपानविशेषकेसाथ देनेसे पृथक्, द्वन्द्व अथवा त्रिदोषजनितज्वरको यह नष्टकरताहै । दाह अधिकमालूमपड़नेपर शीतोपचारकरे । अत्यन्त भूखलगनेपर अभीष्टभोजनदेवे ॥ ६५१ ॥

६५२ हिरण्यगर्भरसः (अष्टमः)

इष्टिकाविषवह्नितासकुमारी-
व्योषकण्टिकाटकर्णिगणाम्लैः ।
शुद्धिमेति दृढखल्वनिविष्टो
मर्दितः क्रमवशाद्दिति सूतः ॥ २७८८ ॥
काकमाचिरसखर्परतैलं
स्तोकगन्धकयुतोऽथ रसेन्द्रः ।
गोमयस्थवटिकान्तरसंस्थः
स्वल्पवह्निपुटितो मुहुरेवम् ॥ २७८९ ॥
गन्धके द्विगुणिते तु सुजीर्णे
जारयेत्तदनु हेम विशुद्धम् ।
बर्हिपित्तकटुतैलविमिश्रं
प्रागिवार्धतुलितं क्रमवृद्ध्या ॥ २७९० ॥
ततः समुद्धृत्य रसं सुगन्ध-
तिक्ताम्बुघृष्टं शिखिकृष्णभृङ्गैः ।
क्वाथीकृतैः स्विन्नमथाष्टसङ्ख्यैः
पुटै र्भवेद्भस्म रसः सहेमः ॥ २७९१ ॥
स्वर्णपत्रमुपलिप्य कषायै-
र्मिश्रितेन भसितेन च तेन ॥
भस्मतां नय रसांशकदत्तै-
रल्पवह्निपुटनै र्वसुसङ्ख्यैः ॥ २७९२ ॥

र (मा.), रससारसङ्ग्रह, क्षये ।

भाषा—ईंट, वछनाग, चित्रक, घीकुंवार, त्रिकटु, गोखरू, धतूरा, अमिलतास, त्रिफला इनके यथासम्भव द्रव अथवा चूर्णसे १–१ दिन पारेको मर्दनकरे । चूर्णसेमर्दनकरते समय काञ्जीप्रभृति अम्लद्रवदेतारहे । प्रत्येकमें मर्दनकेवाद गरमकाञ्जीसे साफ़कर दूसरीचीजोंका प्रक्षेप देकर मर्दनकरे । फिर त्रिकटु, गोखरू, धतूरा, अमिलतास, त्रिफला इनके स्वरसोंसे पूर्ववत् मर्दनकर साफ़करके मकोयकारस, सरसोंका तैल और षोडशांशगन्धक कुल्हड़ीमें डालकर मुंहवन्दकर इतनी आंच दे कि गन्धक जलजाय पारा न उड़े । इसीतरह दूनागन्धक जारणकर मोरकापित्त और सरसोंकातैल मिश्रितकर पारेसे आधे शुद्ध सुवर्णवीजका जारणकरे । फिर मरुवा, कुटकी, अपामार्ग, कालाभंगरा इनके स्वरस अथवा क्वाथोंसे स्वेदन कर इन्हींमें मर्दनकर गोलीवनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर कुक्कुटपुटकी आचदे । ऐसे ८ पुटोंमें पिष्टीकीभस्म होजायगी। इसभस्मको पूर्वकषायोंमें मिलाकर सोनेकेपत्रपर लेपदेकर लघुपुटकी आंचदे । ऐसे ८ पुटोंमें उत्तमभस्म होगी । यह अनुपान भेदोंसे समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६५२ ॥

६५३ हिरण्यगर्भरसः (नवमः)

शुद्धताम्रस्य पत्राणि कुर्यात्तनुतराणि च ।
निर्गुण्डीनरसाराभ्यां शोधयित्वाऽथ तानि तु २७९३
तालसामलसत्त्वाभ्यां रसगन्धकतैलतः ।
समैः समैः सुपिष्टैश्च सूत्रार्कक्षीरतः पुनः ॥ २७९४ ॥
त्रिक्षारपञ्चलवणसोरतोगीविषैरपि ।
सर्वतुल्यैः शोषयित्वा संरोध्य च शरावके ॥ २७९५ ॥
विमुद्र्य गजगर्ते तु वह्नियामाष्टकं भवेत् ।
शीतानि च गृहीत्वाऽथ रसभस्मालभस्मकम् ॥२७९६॥
गन्धं शुद्धं षोडशकछाद्दशाष्टविभागतः ।
अर्कक्षीरेण सम्मर्द्य वह्निरेकोनविंशतिम् ॥ २७९७ ॥

यामान्सिद्धो रसो नाम्ना सर्वरोगहरः परः।
हिरण्यगर्भो गुञ्जैकः क्षयरोगनिवारणः ॥ २७९८ ॥
श्वासकासौ सङ्ग्रहणीं वातव्याधींश्च सर्वशः।
विशेषान्नाशयत्येव यथारोगानुपानतः ॥ २७९९ ॥

र का, राजयक्ष्मणि।

भाषा—शुद्धतांबेकेवारीकपत्रोंको गरमकर नवमादरमिलेहुए निर्गुण्डीके रसमें ७ वार वुझावे। फिर हरिताल और सोमल-सत्त्व, पारा और गन्धककातैल १–१ भाग लेकर गोमूत्र और आकके दूधसे मर्दनकर पत्रोंपर लेपदेकर गोला वनावे। इसकेवाद तीनोंक्षार, पाचोंनमक, शोरा, फिटकड़ी, और वछनाग येसव पूर्वपिण्डके वरावर लेकर गोमूत्र और आकके दूधमें पीस गोलेपर लेपदेकर सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर २–३ कपड़-मिट्टीदेकर सुखाय गजपुटमें ८ पहरकी आचदे। स्वाङ्गशीतल-होनेपर निकालकर पारा १६ भाग, हरितालभस्म १२ भाग, और शुद्धगन्धक ८ भाग लेकर आकके दूधसे १–२ दिन पीसकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर २१ पहरकी जङ्गलीकण्डोंकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, श्वास, कास, सङ्ग्रहणी, वातव्याधिप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६५३ ॥

६५४ हीरकरसायनम्

वज्रं तार्क्ष्यञ्च माणिक्यं पुष्परागं शनेर्मणिम्।
वैदूर्यमथ गोमेदं मणिश्चान्द्रं प्रवालकम् ॥ २८०० ॥
भागोत्तरमिदं तस्माद्वैक्रान्तं द्विग्विभागिकम्।
माक्षिकद्वयजम्भस्म वैक्रान्तसममानकम् ॥ २८०१ ॥
पूर्वस्मादुक्तसम्भारात्त्रिगुणामीशकज्जलीम्।
आलेन पयसा वन्ध्याकर्कोटीमूलसम्भवैः ॥ २८०२ ॥
श्रावणीद्वयजैं हंसपादीकोकनदोद्भवैः।
पिष्ट्वा पिष्ट्वा पुटेद्धीमान् कौक्कुटाख्ये च कज्जली २८०३
वारम्वारं प्रदातव्या भवेद्वज्ररसायनम्।
गर्भिणीनां प्रसूतानां वन्ध्यानां योनिव्यापदाम् २८०४
गुल्मप्रदरयुक्तानां स्त्रीणामेतद्धितं परम्।
राजयक्ष्मक्षयहरं स्तम्भनं रेतसः परम् ॥ २८०५ ॥

नू क, रसायने।

भाषा—हीरा, पन्ना, माणिक्य, पुखराज, नीलम, वैदूर्य, गोमेद, चन्द्रकान्तमणि, प्रवाल इनकीभस्में क्रमवृद्धभागसेलेकर वैक्रान्त, सोनामाखी और रूपामाखीभस्म प्रत्येक सवसे १० वाहिस्सा इनसवसे तिगुनी समभागपारेगन्धककी कज्जली मिलाय वकरीकादूध, वाञ्झखेखसेकाकन्द, लाल और पीली गोरख-मुण्डी, हसराज, नीलोफर इनकेद्रवोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर कुक्कुटपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतल-होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे गर्भिणी, प्रसूता, वन्ध्या, योनि-दोषग्रस्त, गुल्म, और प्रदरयुक्त स्त्रियोंकेलिये यह अत्यन्त हितकारकहै। राजयक्ष्म और क्षयको दूरकरताहै। सम्भोगसे १ घण्टापहिले लेनेसे शुक्रका अत्यन्तस्तम्भनहोताहै ॥ ६५४ ॥

६५५ हीरवद्धरसः (प्रथमः)

स्यात्कुलत्थरसवज्रकदुग्धै वंज्रमत्र पुटितं जयपालैः।
मेषकन्दकदलीविषकन्दे संस्थितं तदनु किंशुकमूले ॥
मध्ये ततो मुनिपलाशजपिण्डे
पाचनाद्भवति हीरकभस्म।
तत्समं कनकमौक्तिकतारं
तेन पञ्चगुणितं रससारम् ॥ २८०७ ॥
अम्लिकास्वरसमिश्रितमन्तः
सूरणस्य पिहितं पुटितञ्च।
सिद्धलोहघनताम्रसमेतं
मूषयाऽथ विपचेत्पुनरेतत् ॥ २८०८ ॥
इत्थममृतगुणो रसराजो
नामतो भवति हीरकबद्धः।
धीमताऽऽज्यमरिचैरुपयुक्तः
सन्निपातगदनाशनसक्तः ॥ २८०९ ॥
क्षीणजीर्णविषमज्वरपाण्डु-
श्वासशोषकसनानलमान्द्य-।
प्लीहगुल्मजठरादिभिरुग्रं
स्वागतां हृदि रुजं विनिहन्ति ॥ २८१० ॥

टो, ज्वराऽधिकारे।

भाषा—हीरेको कुलथीकेक्वाथ, सेहुंण्डकेदूध और जमाल-गोटेके कल्कमें ७–७ वार वुझाकर मेषकन्द, कदलीकन्द, विष-कन्द, पलाशकीजड़, अगस्त्यमूल, पलाशकेफूल इनमें क्रमशः रखकर शरावसम्पुटमें वन्दकर गजपुटकी आंचें देनेसे भस्म होजातीहै। इसभस्मकी वरावर २ सुवर्ण, मोती और रजतभस्म तथा पांचगुनी पारदभस्म मिलाकर इमलीकेद्रवसे १–२ दिन मर्दन-कर जहरीसूरणके कन्दमें गोलेको रख उसीकी डाटसे वन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर लोह, अभ्रक और ताम्र इनकीभस्में पूर्वपिण्डकी वरावर मिलाय इमलीकेद्रवसे मर्दनकर पूर्ववत् सूरणमें रख गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे दो चावलसे १ रत्तीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ अथवा घी और मरिचकेसाथ देनेसे समस्तसन्निपात, क्षीणता, जीर्ण और विषमज्वर, पाण्डु, श्वास, शोष, कास, मन्दाग्नि, प्लीहा, गुल्म, जठरदोष, हृदयकेरोग इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ६५५ ॥

६५६ हीरवद्धरसः (द्वितीयः)

टङ्काष्टकरसः शुद्धः क्षारिका टङ्कषोडश।
खरमूत्रेण सप्ताहमेकीकृत्य विमर्दयेत् ॥ २८११ ॥
पिण्डिकायां निरुद्ध्याथ काञ्जिके स्वेदयेद्दिनम्।
शुद्धं हीरमथो नीत्वा गुञ्जायुग्मं द्विजातिकम् २८१२

सप्तावृत्तमिदं तप्तं क्षिप्यते खरमूत्रके ।
अथ नो म्रियते चैव कदाचिदपि हीरकम् ॥२८१३ ॥
कण्टकारीरसे चैव पञ्चवेलं प्रवापयेत् ।
धृत्वाऽग्नौ लोहमूषायां म्रियते नान्यथा हि तत् २८१४
मृतं नीत्वा तदा तैले वसुमात्रे विनिक्षिपेत् ।
प्रतप्ते हण्डिकामध्ये रसोऽर्द्धस्तत्र दीयते ॥ २८१५ ॥
नागहेम्नोश्च पत्राणि षण्माषप्रमितानि च ।
पृथक् पृथक् निधाप्यन्ते हीरमूषमुखे ततः ॥२८१६॥
अतिसूक्ष्मा च जायेत पिष्टिः सर्वस्य वस्तुनः ।
पुनरर्धं मृतं सूतं पूर्वमर्धं धृतश्च यत् ॥ २८१७ ॥
निःस्नेहे हण्डिकामध्ये कृत्वाऽग्निं ज्वालयेत्ततः ।
चुल्लिकोपरि विन्यस्य किञ्चित्तप्तां च पिष्टिकाम्२८१८
क्षिप्त्वा तामेकतः कृत्वा खोटरूपो रसस्तदा ।
खल्वे निष्पिष्य किञ्चिच्च मृत्तिकायाश्च सम्पुटे २८१९
निवेश्य भूतले किञ्चित्कोकिलैः परिपूर्यते ।
स्वल्पकैस्तैश्च यावत्स्याज्ज्वलदग्निप्रदीपनम् ॥२८२०॥
एवं सिद्धो भवेदेष रसराजश्च साधितः ।
हीरवद्धो रसो नाम यत्नतः प्रतिपादितः ॥ २८२१ ॥
यत्र तत्र न वक्तव्यो योक्तव्यो रोगशान्तये ।
निःसञ्ज्ञः सन्निपाते यस्तस्य तालुनि दीयते २८२२
रक्तिकार्धार्धमात्रश्च सन्निपातं नियच्छति ।
पुनः सञ्ज्ञां समायाति तदाऽऽस्ये तस्य दीयते२८२३
शर्कराकोशकारश्च खण्डमिक्षुप्रियालकान् ।
पथ्यश्च पायसश्चैव कदलीफलमुत्तमम् ॥ २८२४ ॥
रसालाश्च परूषांश्च पानकं पथ्यमीरितम् ।
अतिलौल्यकरं देयं शीतलं सलिलं तृषि ॥ २८२५ ॥
अग्ने र्बलमसौ कुर्याद्ग्रहणीरोगनाशनः ।
दुष्टकुष्ठक्षयादींश्च विकारान्नाशयत्यसौ ॥ २८२६ ॥
हीरवद्धो रसो नाम्ना यत्र यत्र प्रयुज्यते ।
तान्रोगान्नाशयेन्नूनं रोगयोग्यानुपानतः ॥ २८२७ ॥

रसचि., र का, सन्निपाते । र. का, हीरवेधित इति नाम, पाठश्च भ्रष्टोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धपारा २ कर्ष, क्षारिका (ऊषरभूमिमें निकलेहुए क्षाराङ्कुर) ४ कर्षलेकर गधेकेमूत्रसे ७ दिनतक मर्दनकर गोला-वनाय उसकेवीचमें ब्राह्मणजातिके २ रत्ती हीरेको वन्दकर ४ तह कपड़ेमें लपेट दोलायन्त्रवनाय खट्टीकुलथीकीकाञ्जीमें एकदिन स्वेदनकर लोहेकी मूषामें इसपिण्डिकाको गरमकरके गधेके मूत्रमें ४९ वार वुझावे । पिण्डिका प्रत्येकवार नवीन वनावे । इसतरह करनेपरभी कदाचित् भस्महोनेमें कुछ कसर रहजाय तो इसीतरह पिण्डिकामें रखं पूर्ववत् धमनकरके सुपरिपक्व भटकटैयाके पञ्चाङ्गके स्वरसमें ५ वार वुझावे । इसतरह मरेहुएहीरेको हण्डीमें रख अटगुना पीलीसरसोंका तैल डालकर गरमकरे । तैल खौलनेलगे तव हीरेसे आधेप्रमाणमें शुद्धपारा डालकर ६ माशे वहुत वारीक नागकेपत्रोंसे ढककर उतनेही सोनेके वारीकपत्रोंसे ढकदे फिर यहातक अग्नि जलावे कि तैल जलकर नाग और सुवर्ण गलजाय और हण्डी स्नेहरहितहोजाय । इसकेवाद हीरेसे आधी पारद-भस्म और उतनाही शुद्धपारा डालकर पिष्टीगलनेतक अग्नि दे । गलेहुए धातुद्रवको ईंटप्रभृतिके खड्डेमें डालकर जमाले, यह खोट तैयार होगा इसे खरलमें थोड़ा पीसकर मिट्टीकी मूषामें डालकर सारिष्ठकोयलोंके चूरेसे मूषाको भरकर पङ्खेसे यहातक धमनकरे कि मूषेमेंसे ज्वाला निकलनेलगे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २ चावलसे लेकर ४ चावल तक की मात्रा सन्निपातसे मूर्च्छित रोगीके तालुमें पाछदेकर रक्तमें घर्षणकरे । इससे मूर्च्छा जागृतहोनेपर उतनीही मात्रा उचितानुपानकेसाथ खानेको दे । इससे समस्तसन्निपात निवृत्तहोतेहैं । मूर्च्छा जगने-पर असह्य गर्मी मालूमहोतीहो तो शक्करका शरवत, काली अथवा साधारण ईख, खाड, चिरोंजी, खीर, पकाकेला, अमरस, पेया, फालसे, पना इत्यादिक रुचिकारक पथ्य देवे । अत्यन्त प्यास मालूम पड़नेपर ठंढा जल दे । रोगी और रोगका वलावल देखकर तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ इसका प्रयोगकरनेसे मन्दाग्नि, ग्रहणी, कुष्ठ और क्षयको यह नष्टकरताहै ॥ ६५६ ॥

६५७ हीरवद्धरसः (तृतीयः)

द्वौ भागौ मृतहीरस्य गगनस्य त्रयः पुनः ।
भस्मसूतस्य चत्वारः षट् शुद्धगन्धकस्य च ॥२८२८॥
मृतलोहस्य द्वौ भागौ चत्वारस्तारकस्य च ।
रोचनाया भवन्त्यत्र भावनाः पञ्च सूतके ॥ २८२९ ॥
तथा सुवर्चलायाश्च दातव्या भावनाः क्रमात् ।
अथो दृढायां मूषायां मध्ये दत्त्वा च तं रसम् २८३०
पुनः शरावद्वितये दत्त्वा पश्चाद्विमुद्रयेत् ।
हस्तप्रमाणके कुण्डे पुटो देयः शनै र्लघुः ॥ २८३१ ॥
द्वियामं यावदेवैतच्छीतमादाय तं रसम् ।
विधाय भैरवस्याऽथ पूजनं भेषजस्य च ॥ २८३२ ॥
गुञ्जामात्रममुं दद्याद्धीरवद्धं रसेश्वरम् ।
मरिचेन समं प्रातस्ततस्ताम्बूलभक्षणम् ॥ २८३३ ॥
क्रोधमात्सर्यमुत्सार्य व्यायामं घर्मसेवनम् ।
अतिप्रलपनं चिन्तामभ्यसूयाञ्च वर्जयेत् ॥ २८३४ ॥
असत्यभाषणञ्चैव पथ्यं सेव्यं निरन्तरम् ।
अनेन जायते पुष्टि र्दृष्टयारोग्यञ्च जायते ॥ २८३५ ॥
अनेन सुखमाप्नोति पुत्रं चानेन चोत्तमम् ।
अनेन नश्यते वायुरनेनायुश्च वर्धते ॥ २८३६ ॥
अनेन लभते कान्तिमनेनापि जराञ्जयेत् ।
अनेन पलितं याति खालित्यञ्च विशेषतः ॥ २८३७ ॥
अनेन वज्रकायः स्याद्विशेषेण निराश्रयः ।
स्थावरं जङ्गमञ्चापि कृत्रिमञ्चापि यद्विषम् ॥ २८३८ ॥
अनेन न प्रभवति सेवमानस्य च क्वचित् ।
अनेन देवरूपः स्याज्जायते वुद्धिरुत्तमा ॥ २८३९ ॥
क्षयं कासं प्रमेहञ्च रक्तपित्तं सुदारुणम् ।

विद्रध्यष्ठीलिके गुल्मं ग्रहणीमपि दुस्तराम् ॥
अतिसारं महाघोरं सर्वान् व्याधींश्च नाशयेत् ॥२८४०॥

रसचि , रसायने ।

भाषा—हीरेकीभस्म २ भा , अभ्रकभस्म ३ भा , पारदभस्म ४ भा , शुद्धगन्धक ६ भा , लोहभस्म २ भा., रजतभस्म ४ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर गोरोचनकेरस और बड़ीलोणीके स्वरसकी ५–५ भावनाएं देकर वज्रमूषामें बन्दकर मूषाको दो शरावोंमें रख ३–४ कपड़मिटी देकर एकहाथभरके खड्डेमें दो पहरमें शान्तहोनेलायक लघुपुट दे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर भैरव और दवाका पूजनकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ रत्ती मरिचके साथ देकर पानखिलावे । क्रोध, मत्सरता, कसरत, धूप, अत्यन्तबोलना, चिन्ता, चुगली, असत्यभाषण इनका परित्यागकर पथ्यका सेवनकरनेसे पुष्टि, दृष्टि, आरोग्य, उत्तमसन्तति और वज्रशरीरको प्राप्तहोता है। सबतरहकेवायु, कान्त्यभाव, बुढापा, पलित, खालित्य, स्थावर, जङ्गम और कृत्रिमविष, क्षय, कास, भयङ्कररक्तपित्त, विद्रधि, अष्ठीला, गुल्म, दुस्तरग्रहणी और अतिसार ये सबरोग नष्ट होते हैं ॥ ६५७ ॥

६५८ हुताशनरसः (प्रथमः)

एकद्विकद्वादशभागयुक्तं
योज्यं विषं टङ्कणमूषणञ्च ।
हुताशनो नाम हुताशनस्य
करोति वृद्धिं कफजिज्वराणाम् ॥ २८४१ ॥

र. सं., र चं , यो. र., वृ यो. त , नि र , र. कौ., चि. र. भ , वै. चि , वै. र , टो., अजीर्णे ।

टि०—योगरत्नाकरप्रभृतिषु कुत्रचिद्विङ्गमानभाग टङ्कण नियोजितमस्ति ।

भाषा—शुद्धवच्छनाग १ भाग, भुनासुहागा २ भा , मरिच १२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर अदरखवगैरहके रससे घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि और कफरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ ६५८ ॥

६५९ हुताशनरसः (द्वितीय)

बलिनीलिरसामृतं समं त्रिकटुद्रवतो विमर्दयेत् ।
ज्वलनाम्बुयुतं तथार्द्रकद्रवतोऽपि विभावितं त्र्यहम् ॥
भवतीह रसायनं वरं मरिचैः सहितं भगन्दरम् ।
ग्रहणीमपि नाशयेद्रुतं घृतयुक्मरिचैः निषेवितम् २८४२
तन्मूत्रकृच्छ्रं मधुपिप्पलीभ्यां
धात्रीरसक्षौद्रयुतं प्रमेहम् ।
आमानिलं क्षौद्रहरीतकीभ्यां
वासामधुभ्याञ्च खुडं निहन्यात् ॥ २८४४ ॥
पञ्चाङ्गनिम्बामलकेन कुष्ठं
लूतां कणाक्षौद्रयुतं निहन्यात् ।
घृतोषणाभ्यां गलगण्डरोगं
श्वासाग्निमान्द्यं श्वयथुं हुताशः ॥ २८४५ ॥

र., भगन्दरे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, कालादाना, पारा और वच्छनाग समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पश्चात् नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय त्रिकटु, त्रिफला और अदरखकेरसोंमें ३–३ दिन मर्दनकर आधीआधी रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मरिचकेसाथदेनेसे भगन्दर, घी और मरिचकेसाथ ग्रहणी, गलगण्ड, श्वास, मन्दाग्नि और शोथ; मधु और पीपल केसाथ मूत्रकृच्छ्र और मकड़ीकाविष, आमलेकेरस और मधुसे प्रमेह, हर्रे और मधुसे आमवात, अडूसेकेरस और मधुसे वातरक्त, निम्बपञ्चाङ्ग और आंवलेसे कुष्ठ; येसब रोग नष्टहोतेहैं ॥

६६० हुताशनरसः (तृतीयः)

यावद्भस्म भवेत्फणी हुतवहे संतप्यतैलोहजे,
कम्बो भस्मसमः समो बलिरसौ दत्त्वाऽङ्घ्रिपादांशकौ।
उत्तार्योऽथ तयोः समोषणविषाभ्यां सार्द्धमेतद्दिनं,
पिष्ट्वा स्याद्ग्रहणीरुगादिषु च तद्योगे हुताशो रसः ॥

टो., ग्रहण्याम् ।

टि०—यद्यप्यस्मिन्योगेऽनिर्दिष्टनागरङ्गं मर्दनं विहितं परन्तु निम्बभस्मानन्तरं पक्तव्यो गन्धकः सितारसं कुमारीरसे मर्दयित्वा लघु गजपुटान् दत्त्वा योगे नियोजनीयमिति विद्वत्सु विनीता प्रार्थना ॥

भाषा—शङ्खभस्म १ भा , समभाग पारद और गन्धककी कज्जली आधाभाग मिलाकर रक्खे। फिर एकभाग शुद्ध सीसेको लोहेकीकढाहीमें गलाकर उपर्युक्त तीनोंचीज़ोंका थोड़ा २ प्रक्षेप देकर नीम या बबूलके डण्डे अथवा लोहेकी कड़छीसे घर्षणकरे। प्रक्षेप समाप्त होनेपर सूखा घर्षणकरे । कड़ी आंच देनेपरभी न जमे तब ढकनसे ढककर आगपरही रहनेदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इसकी बराबर मरिच और शुद्धवच्छनाग मिलाकर १–२ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ रत्ती समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह ग्रहणीवगैरहरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६६० ॥

६६१ हृदयेश्वररसः

रसगन्धकलौहाभ्रं विद्रुमं मौक्तिकं तथा ।
कन्याद्रवेण सम्मर्द्य गुञ्जाद्वयमितां वटीम् ॥ २८४७ ॥
कृत्वा संशोषयेद्रौद्रवह्नियोगं विना भिषक् ।
पार्थाम्भसा सर्पिषा च दद्याद्धृद्रोगशान्तये ॥२८४८॥

आ वि , हृद्रोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अभ्रक, प्रवाल इनकीभस्में और मुक्तापिष्टी सममागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुवारके रससे एकदिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली घी डालकर सफेद अर्जुनके कायकेसाथ लेनेसे यह हृद्रोगको नष्टकरता है ॥ ६६१ ॥

६६२ हृद्रोगहरीवटी

सूततारकताम्राणां कृत्वा चैकत्र पिष्टिकाम् ।
तत्समं चाभ्रकं श्लक्ष्णं गन्धकं पञ्चमांशतः ॥ २८४९ ॥
विषञ्च षोडशांशेन द्वौ भागौ सूतकस्य च ।
एकीकृत्य प्रयत्नेन जम्बीररसमर्दितम् ॥ २८५० ॥
भाजने मृन्मये कृत्वा पाचयेत्त्रिफलाश्टते ।
दशमूलशतावर्योः क्वाथे पाच्यं क्रमेण हि ॥ २८५१ ॥
तत उत्तार्य यत्नेन वटिकाः कारयेद्बुधः ।
गुञ्जात्रयप्रमाणेन शूलहृद्रोगगुल्मनुत् ॥ २८५२ ॥

यो म., हृद्रोगाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, रजत और ताम्रभस्म समभागको मर्दन-कर पिष्टिका बनाय समभाग अभ्रकभस्म, पञ्चमाश शुद्धगन्धक और षोडशाश शुद्धवछनाग तथा दोमाग शुद्धपारा पिष्टीमें मिलाय जभीरीके रससे १ दिन मर्दनकर मिट्टीके वर्तनमें रख त्रिफला, दशमूल और शतावरके क्वाथोंसे ४–४ पहर पकाकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली समयो-चितानुपानकेसाथ देनेसे शूल, हृद्रोग और गुल्मको यह नष्ट-करताहै ॥ ६६२ ॥

६६३ हेमनाथरसः

सूतं गन्धं हेम ताप्यं प्रत्येकं कोलसम्मितम् ।
अयश्चन्द्रं प्रवालञ्च वङ्गञ्चार्द्धं विनिक्षिपेत् ॥ २८५३ ॥
फणिफेनस्य तोयेन कदलीकुसुमेन च ।
उदुम्बररसेनापि सप्तधा परिमर्दयेत् ॥ २८५४ ॥
वल्लमात्रां वटीं खादेद्यथाव्याध्यनुपानतः ।
प्रमेहान्विंशतिं हन्ति बहुमूत्रं सुदारुणम् ॥ २८५५ ॥
सोमरोगं क्षयञ्चैव श्वासं कासमुरःक्षतम् ।
हेमनाथरसो नाम्ना कृष्णात्रेयेण भाषितः ॥ २८५६ ॥

भै. र., र च., सोमरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सुवर्ण और सोनामाखी-भस्म ८–८ माशे, लोह, रजत, प्रवाल और वङ्गभस्म ४–४ माशे लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर अफीम और केलेके फूलोंकेरस तथा गूलरके दूधसे ७–७ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानु-पानकेसाथ देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, भयङ्कर बहुमूत्र, सोमरोग, क्षय, श्वास, कास, उर क्षत इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६६३ ॥

६६४ हेमन्तादियोगः

पिप्पली मृतलोहञ्च वाजिगन्धयुताऽभ्रकम् ।
चातुर्जातसमायुक्तं विडङ्गं मधुसर्पिषा ॥
हेमन्तादिप्रयोगेण चिरञ्जीवी भवेन्नरः ॥ २८५७ ॥

र म. मा, रसायने ।

भाषा—पीपल और लोहभस्म (१) असगन्ध और अभ्रक-भस्म (२) चातुर्जात और विडङ्ग (३) इनतीनों योगोंको क्रमशः हेमन्त, शिशिर और वसन्तमें उचितमात्रामें सेवनकर-नेसे मनुष्य चिरञ्जीवी होताहै ॥ ६६४ ॥

६६५ हेमप्रभरसः

शुद्धहेमरसताप्यगन्धकं
शिग्रुतुत्थकशिलोषककल्कः ।
भानुश्टङ्गिवृषवह्निजयन्ती-
पाठालाङ्गलिमुनीन्द्रपयोभिः ॥ २८५८ ॥
प्रत्येकशः प्रतिदिनं प्रविभावितोऽयं
पिण्डस्ततो लवणयन्त्रपुटे विपक्वः ।
व्योषार्द्रकाञ्चिततनुर्भृशमाशु हन्ति
हेमप्रभः क्षयरुजं विधिसेवितोऽयम् २८५९
मधुना पिप्पलीभिर्वा सघृतैर्मरिचैस्तथा ।
गुञ्जाद्वयं त्रयं वाऽस्य देयं यक्ष्मापनुत्तये ॥ २८६० ॥
जयपालरजोभिर्वा शुण्ठ्या गोघृतयुक्तया ।
देयं शूलिनि गुल्मे च रोगेऽस्मिंस्तु विशेषतः २८६१
सन्निपाते ददीतैनमार्द्रकद्रवमिश्रितम् ।
कादिवर्ज्यंचरेत्पथ्यं हृद्यं बल्यञ्च पूर्ववत् ॥ २८६२ ॥

र. (मा) , क्षये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सुवर्ण, सोनामाखी, तुत्थ, मैनसिल इनकीभस्में, अपराङ्कर और सहिजनकी जड़की छाल सब समभागकी नीलवर्णकज्जलीकर आक, काकड़ासींगी, अडूसा, चित्रक, जेंती, पाठा, करिहारी और अगस्त्यके यथा सम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंसे १–१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय भावनाद्रव्योंके अष्टगुणितकल्कके गोलेमें बन्दकर ६–७ कपड़मिट्टी देकर अच्छीतरह सुखाकर ४ पहरकी लवणयन्त्रमें आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ रत्ती त्रिकटु और अदरखकेरस अथवा मधु पीपल अथवा घी और मरिचके साथ देनेसे राजयक्ष्म नष्टहोताहै । शुद्धजयपालके चूर्ण अथवा घृतयुक्त सोंठकेसाथ देनेसे शूल और गुल्म नष्टहोतेहैं । खासकर सन्निपातमें अदरखके रसकेसाथ देना । इसमें पथ्य ककारादिवर्गको छोड़कर हृद्य और बल्य पदार्थ देना ॥ ६६५ ॥

६६६ हेमवद्धगुटिका

शुद्धं सूतं समादाय पादांशं हेम योजितम् ।
मृतं वज्रं षोडशांशं नभःसत्त्वं प्रयोजयेत् ॥ २८६३ ॥
क्षीरकञ्चुकितोयेन सुरदालीरसेन च ।
विधिना मर्दयित्वा तु नष्टपिष्टञ्च कारयेत् ॥ २८६४ ॥
कान्तचूर्णत्रुटिं दत्त्वा अन्धमूषागतं धमेत् ।
गुटिका जायते दिव्या वक्त्रस्था सर्वसिद्धिदा २८६५

रसेन्द्रम , रसायने ।

भाषा—शुद्धपारेमें चतुर्थांश सोनेकेवर्क मिलाकर तुलसी-वगैरहकेरससे १–२ दिन घोटकर पिष्टिका तैयारकरे । फिर इसमें पारेसे १६ वाभाग हीरा और अभ्रकसत्त्वकीभस्म मिला-

कर क्षीरकञ्चुकी और वन्दालकेरसोंसे तप्तखल्वमें नष्टपिष्टी बनावे। इसकेबाद ३० वां अथवा १६ वा भाग कान्तचूर्ण मिलाय अन्धमूषामें बन्दकर धमनकरनेसे गुटिका तैयारहोगी। इसको मुहमें रखनेसे समस्त सिद्धिया होतीहै ॥ ६६६ ॥

६६७ हेमयोगः (प्रथमः)

मधु मागधिकां विडङ्गसारं
त्रिफलां हेम घृतं सिताञ्च खादेत्।
जरया नवलीढदेहकान्तिः
समधातुश्च समाः शतञ्च जीवेत् ॥ २८६६ ॥

र. र स, र र. कौ, रसायने।

भाषा—पीपल, विडङ्गतण्डुल, त्रिफला और सुवर्णभस्म समभागलेकर सबकी वरावर खाँड मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे रोगीका बलाबल देखकर १ माशेसे २ माशेतक मधु और घीकेसाथ मिलाकर लेनेसे बुढ़ापे और धातुओंकी विषमतासे रहितहोकर पूरे १०० वर्षतकजीताहै ॥ ६६७ ॥

६६८ हेमयोगः (द्वितीयः)

सपद्मवीजामलकाभयाक्षं
सर्पिर्मधुभ्यां कनकं लिहन्तः।
दीर्घायुषो मन्दजरोपतापाः
सरीसृपाणाञ्च भवन्त्यगम्याः ॥ २८६७ ॥

र. र. स., र र. कौ, रसायने।

भाषा—कमलगट्टा, त्रिफला और सुवर्णभस्म समभाग मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे २ रत्तीसे ६ रत्तीतककी मात्रा मधु और घीकेसाथ लेनेसे दीर्घायु होतीहै। बुढ़ापे और चित्तशोकादिकोंका असर कमहोताहै। सर्पप्रभृति घातक जन्तुओंकाभी भय नहीं रहताहै ॥ ६६८ ॥

६६९ हेमयोगः (तृतीयः)

सुवर्णचूर्णात्पलमश्वगन्धा-
रजः समानं हविषा विलीढम्।
तनोति पुष्टिं वपुषः सुकान्तिं
बलायुरारोग्यकरं नियोज्यम् ॥ २८६८ ॥

लो प, रसायने।

भाषा—सुवर्णभस्म १ रत्ती और असगन्धकाचूर्ण ३ माशे घीकेसाथ लेनेसे पुष्टि, कान्ति, बल, आयु और आरोग्यकी वृद्धि होती है ॥ ६६९ ॥

६७० हेमलोहम्

तिरीटमोचोत्पलताम्रपुष्पी-
पाठासमङ्गाम्बुदवत्सकानाम्।
समं रजोभि र्द्विगुणं समान-
हेमार्कलोहं मधुना प्रयोज्यम् ॥ २८६९ ॥
पीत्वा ततस्तण्डुलधावनाम्भो
जयत्यतीसारमुदीर्णवेगम्।
प्रणष्टवह्निं कुरुते प्रदीप्तं
बलं वपुःकान्तिविवर्धनञ्च ॥ २८७० ॥

लो प,, अतिसारे।

भाषा—पठानीलोध, मोचरस, कमलगट्टा, बावड़ीकीजड़कीछाल अथवा फूल, पाठा, लज्जालु अथवा मजीठ, नागरमोथा, इन्द्रजव १–१ भाग, सुवर्ण, ताम्र और लोहभस्म मिलकर पूर्वचूर्णसे दूनी डालकर एकदिनमर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक मधुकेसाथ देकर ऊपरसे चावलोंका धोवन पिलानेसे बढ़ाहुआ अतिसार नष्टहोताहै। मन्दाग्निको प्रदीप्त कर बल, शरीर और कान्तिको बढाताहै ॥ ६७० ॥

६७१ हेमसुन्दररसः

मृतसूतस्य पादांशं हेमभस्म प्रकल्पयेत्।
क्षीराज्यमधुसम्मिश्रं माषैकं कान्तपात्रके ॥ २८७१ ॥
लेहयेन्मासषट्कन्तु जरामृत्युविनाशनम्।
वाकुचीचूर्णकर्षैकं धात्रीफलरसप्लुतम् ॥
अनुपानं लिहेन्नित्यं स्याद्रसो हेमसुन्दरः ॥ २८७२ ॥

र. चि, र, सं, रसायनसं., र मं, र सु, यो. म, आ. प्र, वाजीकरणे।

टि०कुत्रचित्क्षीराज्यमधुनम्मिश्रस्य कान्यपात्रे लेहनमुक्तम्। रसराजशिरोमणौ हेमपिष्टिकायोग इतिनाम्ना"पादांशक हेम रसस्य दत्त्वा गोल मर्दने क्षिप कान्तपात्रे। मृद्वग्निना तापितगोनलस्य क्षीरन्य पान मकरामयघ्नम् ॥" इतिपाठो निहितोऽस्ति सोऽप्यस्यैवाऽपभ्रंशोऽस्ति तत्र न पाठान्तरता।

भाषा—पारदभस्म ४ भाग, सुवर्णभस्म १ भाग मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे उड़दबरावरमात्रा कान्तलोहकेपात्रमें मधु और घीकेसाथ लेकर दूधपीनेसे ६ महीनेमें बुढ़ापे और मृत्युका नाशहोताहै ॥ ६७१ ॥

६७२ हेमसुन्दरीगुटिका (प्रथमा)

मृतसूताभ्रकान्तालं कर्षं कर्षं समाहरेत्।
गन्धकञ्च समं सर्वैः सुधातोयेन मर्दयेत् ॥ २८७३ ॥
चन्दनद्वितयेनापि द्रवेणेक्षुभवेन च।
वर्षाभूसहदेव्योश्च रामशीतलिकाम्बुना ॥ २८७४ ॥
गृहकन्यारसेनापि धात्रीफलरसेन च।
दिनं दिनं विमर्द्याथ शोषयेत्तदनन्तरम् ॥ २८७५ ॥
तुण्डीरिकायाः कुण्डल्याः सत्त्वं शुक्रमलप्रभम्।
त्रिफला कटुका मुस्ता कणा सावरकन्तथा ॥२८७६॥
एतानि कर्षमानानि पूर्ववद्भावयेत्समैः।
रसेन सह सम्मेल्य मर्दयित्वा प्रयत्नतः ॥ २८७७ ॥
द्राक्षाजेन कषायेण भावयेद्दिष्टवस्तुजैः।
तत्तद्रोगहरी प्रोक्ता गुटिका हेमसुन्दरी ॥ २८७८ ॥

रससागर, वाजीकरणे।

भाषा—पारद, अभ्रक, कान्तलोह, हरिताल इनकीभस्में १–१ कर्ष, शुद्धगन्धक ४ कर्ष लेकर नीलवर्णकआलोकर चूनेका

पानी, लाल और सफेदचन्दन, ईख, इटसिट, सहदेवी, जंगली-कपास, घीकुंवार, ताजे आवले इनके द्रवोंसे १–१ दिन भावनादेकर सुखाकर कुंदरू और गिलोयकासत्त्व, त्रिफला, कुटकी, नागरमोथा, पीपल, लोध १–१ कर्षलेकर बारीकचूर्णकर पूर्वद्रवोंकी भावनाएं देकर सबको इकठ्ठा मिलाय द्राक्षाके क्वाथ और जिसरोगमें प्रयोगकरनाहो तन्नाशकद्रवोंसे भावनादेकर १–१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १ से २ गोलीतक औचिती देखकर तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरतीहै ॥ ६४२ ॥

६७३ हेमसुन्दरीगुटिका (द्वितीया)

समुखस्य रसेन्द्रस्य पूर्ववत्काञ्चनं समम् ।
जारयेद्बिडयोगेन ततो मर्द्यं दिनत्रयम् ॥ २८७९ ॥
दिव्यौषधैः सगोमूत्रैर्वज्रमूषान्धितं धमेत् ।
उद्धृत्य धारयेद्वक्त्रे गुटिकां हेमसुन्दरीम् ॥ २८८० ॥
पलार्द्धं गन्धकं चाज्यैर्द्विगुणैर्लेहयेदनु ।
वर्षैकेण जरां हन्ति जीवेदाचन्द्रतारकम् ॥ २८८१ ॥

र. ख., र. का., रसायने ।

भाषा—बुभुक्षान्तसंस्कार कियेहुए १ पल पारेमें रसशास्त्रमें कहेहुए चतु षष्ट्यंशादिग्रासोंसे समभागसुवर्णका बिडयोगोंसे जारणकर यथाशक्य दिव्यौषधि और गोमूत्रसे ३–३ दिन मर्दनकर वज्रमूषामें बन्दकर ४ पहर धमनकरनेसे गोली तैयार होगी। इसगोलीको मुंहमें रक्खे और दोकर्ष शुद्धगन्धकको १ पल गोघृतकेसाथ प्रतिदिन सेवनकरनेसे दीर्घायुको प्राप्तहोताहै ॥

६७४ हेमसूतकरसः

रसं हेमसमं मर्द्यं पिष्टिकार्धेन गन्धकम् ।
हिपदीं रजनीं रम्भां मर्दयेट्टङ्कणान्वितम ॥ २८८२ ॥
नष्टपिष्टञ्च शुष्कञ्च अन्धमूषानिवेशितम् ।
तुषाग्निना लघुपुटं दत्त्वा भस्मत्वमानयेत् ॥ २८८३ ॥
भक्षणादस्य सूतस्य दिव्यदेहमवाप्नुयात् ।
सर्वव्याधिं जरां हन्ति वर्षमात्राच्च सूतराट् ॥ २८८४ ॥

रसेन्द्रमं., रसायने ।

भाषा—समभाग शुद्धपारा और सोनेकेवर्क एकजगह मिलाकर दशमूली, हुरहुर, जलपीपल वगैरहके रससे १–२ पहर मर्दनकर पिष्टी बनावे, फिर शुद्धगन्धक, हंसराज, हल्दी, केलेकाकन्द और सुहागा येसब मिलकर पिष्टीसे आधे प्रमाणमें मिलाकर केलेकेकन्दके रससे चमकनष्टहोनेतक मर्दनकर टिकड़ी बनाय अच्छीतरह सुखाकर अन्धमूषामें बन्दकर तुषाग्निका लघुपुटदेनेसे भस्म तैयार होगी । इसमेंसे आधी रत्तीसे १ रत्तीतक मात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे समस्त व्याधि नष्टहोतेहैं । एकवर्षके प्रयोगसे बुढ़ापा दूरहोकर दिव्यशरीरको प्राप्तहोताहै ॥

६७५ हेमाङ्गसुन्दररसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं समं ग्राह्यं लोहं गन्धं सुवर्णकम् ।
कज्जलीकृत्य यत्नेन शुल्वपात्रे भिषग्वरः ॥ २८८५ ॥
राजिकास्वरसं दत्त्वा कृष्णोन्मत्तस्य वै रसम् ।
दत्त्वा दत्त्वा प्रयत्नेन मर्दयेच्च त्रिभिर्दिनैः ॥ २८८६ ॥
त्रिभिश्च सार्षपं तैलं दत्त्वा कल्कं विमर्दयेत् ।
शोषयेद्भानुभिर्भानोर्ज्वालां दद्याच्छनैः शनैः ॥२८८७॥
वालुकायन्त्रयोगे तु प्रोक्तभेषजमध्यतः ।
तावज्ज्वाला प्रदातव्या वालुकात्युष्णतां व्रजेत् २८८८
स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा कर्षयेत्तं भिषग्वरः ।
ततो गुञ्जाप्रमाणेन माषमाषार्धकं पुनः ॥ २८८९ ॥
ज्ञात्वा रोगं शरीरञ्च योजनीयं बुधैः सदा ।
घृतेन मधुना सार्द्धं मर्दयित्वा तु खल्वके ॥ २८९० ॥
रसं वा भक्षयेत्पश्चादाज्यं गव्यं गवां पयः ।
सामान्येन तु कर्तव्यं चित्रकार्द्रकसैन्धवैः ॥ २८९१ ॥
रोगिणामनुपानीयं रसमाज्येन भोजनम् ।
सुस्निग्धं नातिमधुरं मांसञ्चैव विहायसम् ॥२८९२॥
भक्ष्यं छागादिकं मांसं ज्ञातं यस्य तु भक्षणम् ।
एतेनापि विधानेन प्रातः प्रातर्निषेवयेत् ॥
साध्याऽसाध्येषु रोगेषु तथा व्याधिचयेषु च २८९३

र. र , ध., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और सुवर्णभस्म समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर तावेके पात्रमें तावेके डण्डेसे कालेधतूरेकेपत्तोंकारस थोड़ा थोड़ा देकर ३ दिनतक मर्दनकरे । फिर ३ दिन सरसोंके तैलसे मर्दनकर कड़ीधूपमें अच्छीतरह सुखाकर आतशीशीशीमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख क्रमाग्नि देवे । ऊपरकीवालुकेस्पर्शको जब हाथ सहन न करे तब अग्नि बन्दकरदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे बढाकर आधे अथवा एकमाशेकी मात्रा तक रोग और रोगीका बलाबल देखकर नियतकरे । घी और मधुमें कुछदेर खरलकरके दवाका सेवनकरना चाहिये । इसकेबाद गायके दूधमें गोघृत डालकर यथाशक्ति पीना चाहिये । साधारणरोगोंमें चित्रक, अदरख और सैन्धवकेसाथ देवे । भोजनमें घृतयुक्त मासरस, स्निग्धपदार्थ, साधारणमधुर पथ्य, चिड़ियां और बकरी वगैरहका हल्का मास खावे । साधारणरोगोंमें केवल प्रात काल औषध देवे । विधिपूर्वकइसकेसेवनसे साध्य अथवा असाध्य रोग निवृत्तहोतेहै ॥ ६७५ ॥

६४६ हेमाङ्गसुन्दररसः (द्वितीयः)

पूर्वसिद्धे रसे क्षिप्त्वा रसपादेन काञ्चनम् ।
विमर्द्यापि विधानेन सुपिष्टञ्च विनिक्षिपेत् ॥२८९४॥
कान्तवैक्रान्तके चैवं क्षिप्तं तत्र विधानतः ।
मधुरत्रयसंयुक्तं मासमात्रं दिने दिने ॥ २८९५ ॥
लीढ्वाऽनुपानं पातव्यं मन्दं तप्तं गवां पयः ।
त्रिःसप्तदिवसैः क्षीणो भवेदक्षीणधातुकः ॥
ऊर्ध्वलिङ्गः सदा तिष्ठेद्द्रावयेद्वनिताशतम् ॥ २८९६ ॥

र. र , ध., वाजीकरणे ।

भाषा—बुभुक्षान्तसंस्कारकियेहुएपारेमें चतुर्थांश सोनेके वर्क डालकर पिष्टीबनावे । फिर उसमें कान्तलोह और वैक्रान्तकी-भस्म प्रत्येक सुवर्णके बराबर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती मधु, घी और शक्करकेसाथ मिलाकर सेवनकरे और ऊपरसे कदुष्ण गोदुग्धपीवे । इसप्रयोगको २१ दिनतककरनेसे धातु-क्षीणआदमी धातुसे परिपूर्णहोकर पूर्णपुरुषत्वमें आजाताहै ॥

६७७ हेमाद्रिरसः

वेदकर्ष रसं त्र्यक्षं पिष्ट्वा गन्धं पलद्वयम् ।
पलं नागाभ्रयोः सर्वं सञ्चूर्ण्य सिकताघटे ॥ २८९७ ॥
पक्वमूषागतं यामं पचेद्द्रव्यैः क्षिपन्द्रवम् ।
केतकीकुष्ठनिर्गुण्डीशिग्रुग्रन्थ्यग्निचव्यजम् ॥ २८९८ ॥
वन्ध्याहिंस्रेभकर्ण्युत्थं व्याघ्रीलुङ्गबलोद्भवम् ।
अश्वगन्धाभवं वारान्विंशद्द्वित्रीपुसागरान् ॥ २८९९ ॥
पट्सप्तवसुदिग्द्वित्रियुगं भुवनतः क्रमात् ।
कुमार्याः पुटयेत्प्रौढो रसो हेमाद्रिसंज्ञकः ॥ २९०० ॥
भुक्तो माषो निहन्त्याशु सर्वार्शोरोचकग्रहान् ।
मन्दाग्न्युन्मादमेदांसि गण्डमालाऽर्बुदाऽपचीः २९०१
गलगण्डप्रमेहादीन्मुष्कलिङ्गाक्षिकर्णजान् ।
क्षुद्ररोगांश्च विविधान् गरुडः पन्नगानिव ॥ २९०२ ॥

र चि , रसायनसं , र का , र. सि., सर्वरोगे ।

भाषा—जस्त और पारदभस्म १–१ पल, शुद्धगन्धक २ पल, नाग और अभ्रकभस्म १–१ पल लेकर नीलवर्णकज्जली-कर एकघड़ेमें वालूभर बीचमें पक्वमूषामें इसकज्जलीको डालकर केवड़ेका डण्डा, कुठ, निर्गुण्डी, सहिजन, पिपलामूल, चित्रक, चव्य, वाझखेखसेकाकन्द, हंस, हस्तिकर्णपलाश (डोडाइन हिं , फळसवेल म.) भटकटैया, बिजोरा, वला, असगन्ध, घीकुंवार इन प्रत्येकके स्वरसोंसे २०, २, ३, ५, ७, ६, ७, ८, ८, २, ३, ४, १४, १४, १४, इसक्रमसे अग्निपर भावनाए देकर १–१ माशेकी गोलिए बनाकर रखछोड़े । प्रत्येकभावनामें इतनारस देनाचाहिये कि एकवारका डालाहुआरस एकपहरमें सूखजाय । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे सवप्रकारके अर्श, अरुचि, गलग्रह, मन्दाग्नि, उन्माद, मेद, गण्डमाला, अर्बुद, अपची, गलगण्ड, प्रमेह, अण्ड–लिङ्ग–आख–कान इन-केरोग और नानातरहके क्षुद्ररोग इनसबको सर्पकोगरुडकीतरह यह नष्टकरताहै ॥ ६७७ ॥

६७८ हेमाभ्रकम् (हेमाम्बुदम्)

त्र्यूषणाम्बुकरिकेशरत्वचा
तुल्यभागरजसा समीकृतम् ।
हेमवारिदरजो मधुप्लुतं
लीढमग्निजडतां तनोर्हरेत् ॥ २९०३ ॥

लो. प , अग्निमान्द्ये ।

भाषा—त्रिकटु, सुगन्धवाला, नागकेशर, तज १–१ भाग, स्वर्ण और अभ्रकभस्म ३–३ भाग लेकर बारीकचूर्णकर १–२ दिन घोटकर रखछोड़े । इनमेंसे १ से २ रत्तीतक मधुमें मिला-कर सेवनकरनेसे मन्दाग्निप्रभृति रोगोंको यह नष्टकरताहै ६७८

६७९ हेमाभ्रसिन्दूरम्

अभ्रकं रससिन्दूरं मिश्रितं हेमभस्मना ।
सममागं प्रकुर्वीत रसैरार्द्रकजैर्युतम् ॥ २९०४ ॥
क्षयञ्च क्षयपाण्डुञ्च क्षयकासञ्च दारुणम् ।
जयेन्मण्डलपर्यन्तं पूर्वक्रमविधानतः ॥ २९०५ ॥

नि. र , र सु , यो. र , राजयक्ष्मणि ।

भाषा—रससिन्दूर, अभ्रक और सुवर्णभस्म १–१ भाग लेकर १–२ दिन मर्दनकर रखछोड़े । अथवा अदरखके रससे १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ अथवा अदरखकेरसकेसाथ एकमण्डलतक-देनेसे क्षय, भयङ्करपाण्डु और कासको यह नष्टकरताहै ॥ ६७९ ॥

६८० हेमामृतरसः

भागमेकं पारदस्य बलेर्भागद्वयन्तथा ।
हेम्नः पादमितं भागमेकैकं तारवङ्गयोः ॥ २९०६ ॥
अर्जुनस्य कषायेण सम्मर्द्य रक्तिकोन्मिताम् ।
वटीं कृत्वा दापयेच्च सिताऽऽज्यमधुसंयुताम् २९०७
शाम्यन्त्यनेन हृद्रोगाः सर्व एव न संशयः ।
श्रीमद्गहननाथेन निर्मितोऽयं रसोत्तमः ॥ २९०८ ॥

आ. वि., हृद्रोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भाग, सुवर्णभस्म अथवा वर्क चतुर्थभाग, रजत और वङ्गभस्म १–१ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर अर्जुनकेक्काथसे मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली शक्कर, घी और मधुके-साथ देनेसे समस्त हृद्रोग नष्टहोतेहैं ॥ ६८० ॥

६८१ हेमाम्बुदलोहम् (प्रथमम्)

उशीरलोध्रोत्पलपद्मकेशरा-
न्सचन्दनान्मोचरसोपबृंहितान् ।
प्रियङ्गुनागोत्पलतः समं रजः
परिस्रुतं सूक्ष्मतरेण वाससा ॥ २९०९ ॥
समानहेमाम्बुदलोहचूर्णं
समीकृतं तेन मधुप्रलीढम् ।
विलीढमाश्वेव निहन्ति रक्त-
पित्तं गुदातङ्कमसृक्प्रभृतम् ॥ २९१० ॥

लो प., रक्तपित्ते ।

भाषा—खस, लोध, कमलगट्टा, कमलकेशर, सफेदचन्दन, मोचरस, प्रियङ्गु, नागकेशर येसब १–१ भाग लेकर कपड़छान-चूर्णकर सुवर्ण, अभ्रक और लोहभस्म १–१ भाग मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३ से ६ रत्तीतक मात्रा मधुमें मिलाकर देनेसे रक्तपित्त, गुदरोग, रक्तप्रदर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६८१ ॥

६८२ हेमाम्बुदलोहम् (द्वितीयम्)

वरानिशाक्षोदसमं समांशकं
हेमाम्बुदायःप्रभवं रजश्च ।
क्षौद्रेण लीढं विनिहन्ति मेहा-
न्ददाति पुष्टिं वपुषः श्रियञ्च ॥ २९११ ॥

लो. प., प्रमेहे ।

भाषा—त्रिफला और हल्दी समभाग लेकर वारीकचूर्ण-कर सबकीवरावर सुवर्ण, अभ्रक और लोहभस्म मिलाकर रख-छोड़े। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक मधुकेसाथलेनेसे सवप्रकारके-प्रमेह और कृशताको नष्टकर शरीरकी कान्तिको वढ़ाताहै ६८२

६८३ हेमार्कलोहम्

वचाऽब्दपाठाऽतिविषाविडङ्ग-
गदानलग्रन्थिकवारिविश्वम् ।
समं रजस्तद्विगुणानि तुल्य-
हेमार्कलोहानि घृतेन लीढ्वा ॥ २९१२ ॥
पीत्वाऽनुकोष्णं जलमेव जह्या-
द्दोषं ग्रहण्या गुदकीलकांश्च ।
प्राप्नोति वह्निं वपुषः प्रकर्ष-
मुद्दामधामोपचयोपपन्नः ॥ २९१३ ॥

लो. प., ग्रहण्याम् ।

भाषा—वच, नागरमोथा, पाठा, अतीस, विडङ्ग, कुठ, चित्रक, गठिवन, सुगन्धवाला, सोंठ, येसव समभाग लेकर वारीकचूर्णकर सुवर्ण, ताम्र और लोहभस्म चूर्णसे द्विगुणप्रमाणमें मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से २ रत्तीतक घीकेसाथ मिला-कर सेवनकर थोड़ागरमजलपीवे। जलकापीना वन्दकरे। यह ग्रहणी, ववासीर, मन्दाग्नि, इनसवको नष्टकर शरीरको दिव्य-तेजयुक्त वनाताहै ॥ ६८३ ॥

६८४ हेमेन्द्ररसः

अतः परं प्रवक्ष्यामि रसायनमनुत्तमम् ।
नानाव्याधिप्रशमनं वलवृद्धिकरं परम् ॥ २९१४ ॥
शुद्धसूतस्यैकभागं हेमभागसमीकृतम् ।
द्विगुणं गन्धकं दत्त्वा दिव्यौषधिविभावितम् ॥२९१५॥
चक्रराजेन तं पक्त्वा यावदेव स्थिरायते ।
भृङ्गराजेन सम्भाव्य वध्नीयाद्गुटिकां शुभाम् ॥
हेमेन्द्ररसनामाऽयं कामलादिगदापहः ॥ २९१६ ॥

रससार., कामलादौ ।

भाषा—शुद्ध पारा और सुवर्णभस्म १–१ भाग, शुद्ध-गन्धक २ भाग मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर यथासम्भव दिव्यौ-षधियोंकी भावना देकर अनलरस सं. १२५ में कहेहुएके अनु-सार चक्रयन्त्रमें यहातक पकावे कि अग्निस्थायी होजाय। फिर भंगरेकेरसकी २–४ भावनाएं देकर १–१ रत्तीकी गोलियें वना-कर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ सेवनकरनेसे नानाप्रकारकेरोगोको नष्टकर वल और वुद्धिको वढा-ताहै। अधिकदिन सेवनकरनेसे कामलावगैरह नष्टहोतेहै ६८४

६८५ हंसपोट्टली (प्रथमा)

वराटिकाभस्मसमं सुभस्म
वङ्गस्य पादांशरजो रसस्य ।
विमर्द्य सर्वं स्वरसेन गाढं
नागार्जुनीशाल्मलिजेन यामम् ॥ २९१७ ॥
संशोष्य पश्चान्मरिचांशयुक्तं
क्षौद्रेण च व्याधिवलप्रमाणम् ।
खादेत्प्रणश्यन्ति हि तस्य मेहा
ग्रहण्यतीसारगदाः सकासाः ॥ २९१८ ॥

यो. म., प्रमेहे ।

भाषा—पीलीकौड़ी और वङ्गभस्म १–१ भाग, पारदभस्म चतुर्थभाग मिलाकर नागार्जुनी और सेंमलकेस्वरससे १–१ दिन मर्दनकर हिरण्यगर्भपोट्टलीनिर्दिष्टप्रकारसे इसकी पोट्टली वनाकर रखछोड़े। अथवा इसमें षोडशांश मरिचकाचूर्ण मिलाकर रखले। इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक व्याधिवलको देखकर मधुकेसाथदेनेसे सवप्रकारके प्रमेह, ग्रहणी, अतिसार और कास नष्टहोतेहैं ॥

६८६ हंसपोट्टली (द्वितीया)

निष्कैकं मूर्च्छितं सूतं द्विनिष्कं मृततीक्ष्णकम् ।
शिखितुत्थं तीक्ष्णतुल्यं कर्षार्द्धं गन्धमौक्तिकम् २९१९
विषं निष्कञ्च तत्सर्वं भृङ्गार्द्रसुरसाद्रवैः ।
अग्निपर्णी हरिद्रा च लाङ्गलीकन्दजैर्द्रवैः ॥ २९२० ॥
मरिचैर्मधुना लेह्या माषैका हंसपोट्टली ।
हन्ति सङ्ग्रहणीं शीघ्रमतिसारञ्च पाण्डुताम् ॥ २९२१ ॥
श्वासदौर्वल्यगुल्मांश्च कासं हिक्कामरोचकम् ।
क्षौद्रेण विजयानिष्कं लेहयेदनुपानकम् ॥ २९२२ ॥

र सु , चि र , र.क., रसायनसं , र.र दी , ना. वि., ग्रहणी-रोगे ।

टि०—रसायनसङ्ग्रहे औषधप्रमाणे भावनायाञ्च यत्किञ्चिद्भेदः प्रदर्शित स अकिञ्चित्कर प्रतिभाति, अतो न पृथक्पाठ समुद्धृत ।

भाषा—पारदभस्म अथवा रससिन्दूर १ टङ्क, फोलाद और तुत्थभस्म, शुद्धगन्धक और मुक्तापिष्टी २–२ टङ्क, शुद्धवछ नाग १ टङ्क लेकर ३–४ पहर शुष्कमर्दनकर भंगरा, अद-रख, तुलसी, चित्रक अथवा अगियाघास, हल्दी और करि-हारीकन्द इनप्रत्येकके स्वरससे १–१ दिन मर्दनकर उड़दवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु और मरिचकेचूर्णकेसाथलेनेसे सङ्ग्रहणी, अतिसार, पाण्डु, श्वास, कृशता, गुल्म, कास, हिक्का और अरुचिको यह नष्टकरतीहै। यदि पोट्टली वनाई हो तो उसे अन्दाजसे शहदमें घिसकर मरिचकाचूर्ण मिलाकर देना। सङ्ग्रहणी और अतिसारमें १ माशेसे १ टङ्कतक भुनीभागका चूर्ण मधुमें मिलाकर ऊपरसे सेवनकराना ॥ ६८६ ॥

६८७ हंसभैरवरसः

सूकरीक्षीरपुटिते शुक्तिक्षारेण शोधिते।
वङ्गे द्रुते रसं क्षिप्त्वा तृतीयांशश्च हिङ्गुलम् ॥२९२३॥
छिक्कारसेन सम्मर्द्य तदर्धार्धानि बुद्धिमान्।
सौम्यालसिन्दूरशिलाटङ्कणानि च निक्षिपेत् ॥२९२४॥
पलाशवल्कलरसैरर्कक्षीरैश्च सप्तधा।
पलाशवटचिञ्चानां क्षिप्त्वा क्षारांश्छरावके ॥२९२५॥
सिद्धो हठाग्निनाऽयं तु द्वात्रिंशत्प्रहरं पुनः।
द्विगुञ्जं दापयेच्छीत समानं हंसभैरवम् ॥ २९२६ ॥
पथ्याऽर्जुनविडङ्गोत्थं क्वाथं चानु मधुप्लुतम्।
शुक्रमेहादिकान्हन्ति रसोऽयं हंसभैरवः ॥ २९२७ ॥

र. का, प्रमेहाऽधिकारे।

भाषा—हिरणखुरी रागेको पिघलाकर सूअरीकेदूध और मोतीकीसीपकेक्षारजलमें ७–१४ अथवा २१–२१ वार बुझावे। फिर इसको गलाकर समभाग शुद्धपारा और तृतीयाश शिगरिफ मिलाकर नकछिकनीकारस देताहुआ पलाश अथवा सफेद आकके ताजे डण्डेसे यहातक मर्दनकरे कि उसकी भस्म होजाय। फिर शुद्धसोमल, हरिताल, रससिन्दूर, मैनसिल, सुहागा ये प्रत्येक इसभस्मसे चतुर्थांश क्रमश डालकर मर्दनकरे फिर पलाशकीजड़कीछालके रस और सफेद या साधारण आककेदूधकी ७–७ भावनाएं देकर पलाश, वट और इमलीकेक्षार प्रत्येक चतुर्थांश देकर मर्दनकरे। अन्तमें नकछिकनीकेरसमे १–२ दिनमर्दनकर छोटीछोटी टिकिया वनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर इसतरहके महागजपुटकी आचदे जो कि ३२ पहरमें ठढाहोजाय। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २ रत्तीकी मात्रा २ रत्ती भीमसेनी कपूरकेसाथ मधुमें मिलाकर देवे। हर्रे, सफेदअर्जुनकीछाल और विडङ्गका क्वाथ मधु मिला कर पिलानेसे शुक्रमेहादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै॥६८७॥

६८८ हंसमण्डूरम्

मण्डूरं चूर्णयेत्प्रस्थं गवां मूत्राढके क्षिपेत्।
जीर्णान्ते च रविक्षीरं वासानिर्गुण्डिगोक्षुरम् ॥२९२८
भूनिम्बतिन्तिडीकन्यावर्षाभूशिग्रुभृङ्गराट्।
तर्कारी त्रिफला मुस्ता वाजिगन्धा शतावरी २९२९
वज्रवल्ली सूक्ष्ममूला वरुणः किंशुकोऽमृता।
तण्डुलीयं स्थिरा मुण्डी विम्बी चित्रकणावचाः२९३०
शिरीषः पिचुमन्दश्च मत्स्याक्षीक्षुरपुङ्खिकाः।
पृथग्दशपलं सर्वं पाचयेन्मृदुवह्निना ॥ २९३१ ॥
प्रातःकालेऽस्य कर्षैकं मधुतक्रयुतं भजेत्।
शोफपाण्डुक्षयोन्मादश्वासकासककामलाः ॥
अष्टोदराणि गुल्मांश्च नाशयेदरुचिं हठात् ॥ २९३२ ॥

रसायनस, पाण्डुरोगे।

भाषा—एकप्रस्थ शुद्धमण्डूरकेचूर्णको एक आढक गोमूत्रमें डालकर औटावे। कुछ द्रव वाकी रहनेपर आकका दूध, अडूसा, निर्गुण्डी, गोखरू, चिरायता, इमली, घीकुवार, इटसिट, सहिजन, भंगरा, जेंती, त्रिफला, नागरमोथा, असगन्ध, शतावर, तिधारीहड़जोड़, ब्राह्मी, वरुणकीछाल, पलाशपुष्प, गिलोय, काटेवालीचौलाई, शालपर्णी, गोरखमुण्डी, कुंदरू, चित्रक, पीपल, वच, सिरस और नीमकीछाल, मछेछी, तालमखाना और शरपुङ्खका १०–१० पल चूर्ण डालकर मन्द आचसे पकावे। इसमेंसे १–१ कर्ष मधु अथवा छाछकेसाथ प्रात काल सेवनकरनेसे शोथ, पाण्डु, क्षय, उन्माद, श्वास, कास, कामला, ८ प्रकारके उदररोग, गुल्म और अरुचि नष्टहोतेहैं ॥ ६८८ ॥

६८९ क्षयकुठाररसः

रसं गन्धश्च नागश्च लोहकान्तश्च तीक्ष्णकम्।
अभ्रं मण्डूरवङ्गौ च दरदं तालभस्मकम् ॥ २९३३ ॥
कपर्दीभस्म सौभाग्यं सर्वमेकैकभागिकम्।
द्विभागं मागधीचूर्णं वल्लमात्रं निषेवयेत् ॥
क्षयं सोपद्रवं हन्यात्कामलापाण्डुरोगनुत् ॥ २९३४ ॥

वै चि (ल), क्षये।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, नाग, लोह, कान्त, फोलाद, अभ्रक, मण्डूर, वङ्ग, शिंगरिफ, हरिताल और पीली कौड़ी इनकीभस्में, भुनासुहागा, सव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर सवसे दूना पीपलकाचूर्ण मिलाय ३–४ पहर घोटकर रखछोड़े। अथवा अदरखवगैरहकेरससे ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकररखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली अवस्थोचितानुपानकेसाथ देनेसे उपद्रवसहितक्षय, कामला और पाण्डु नष्टहोते हैं।

६९० क्षयकुलान्तकरसः

गुडूचिकासत्त्वरसेन्द्रभस्म
कृष्णाभ्रकं माक्षिकलोहवङ्गम्।
प्रवालमुक्ताफलहेमपत्रं
सर्वं समानं त्रिफलारसेन ॥ २९३५ ॥
सम्मर्दयेत्सप्तदिनानि यत्ना-
द्वल्लैकमात्रं मधुना समेतम्।
भक्षेद्द्विकालं सकलामयघ्नं
सर्वक्षये जीर्णतमे ज्वरे च ॥ २९३६ ॥
पाण्ड्वामये पित्तमये च कासे
सरक्तपित्ते तमके प्रमेहे।
यथाऽनुपानं खलु योजनीयं
पण्ढत्वनाशं प्रकरोति सम्यक् ॥
वाजीकरं पुष्टिबले ददाति
रसायनं सर्वरुजापहारी ॥ २९३७ ॥

र. चं, क्षये।

भाषा—गिलोयसत्त्व, पारा, वज्राभ्रक, सुवर्णमाक्षिक, लोह, वङ्ग, प्रवाल इनकीभस्में, मुक्तापिष्टी, सोनेकेवर्क सव समभागलेकर ७ दिनतक त्रिफलाके क्वाथसे मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधु-

केसाथ साय प्रात लेनेसे समस्त श्लेष्मरोग, क्षय, पुरानाज्वर, पाण्डु, पित्तकास, रक्तपित्त तमकश्वास, प्रमेह, पण्ढता इनसबको यह नष्टकर वल और पुष्टिको वढ़ाकर रसायनका कामकरताहै ॥

६९१ क्षयकृन्तनरसः

शिलासूतोत्थकज्जल्या मारितं शुद्धसीसकम् ।
शुद्धमाक्षिकतुल्यं तत्कज्जलीं द्विगुणां नयेत् ॥२९३८॥
मर्दयेन्मन्दारदुग्धेन चक्रीं शुष्कां धरेत्तले ।
यन्त्रस्यार्द्धं भरेच्चूर्णं शङ्खजं वह्निना पचेत् ॥ २९३९ ॥
मन्दमध्यमतीव्रेण दिवसत्रितयं ततः ।
चक्रीं पिष्ट्वा घने वस्त्रे चालयेत्क्षयकृन्तनम् ॥ २९४०॥
आज्यमाक्षिकयोगेन सिताक्षौद्रेण वा रसम् ।
लिह्याद्गुञ्जाद्वयं रोगी सर्वव्यायामवर्जितः ॥ २९४१ ॥

रसायनसार., क्षये ।

भाषा—मैनसिल और पारेकी कज्जलीसे कीहुई नागभस्म, शुद्धसोनामाखी १—१ भाग, समभाग पारेगन्धककीकज्जली २ भाग लेकर आकके दूधसे एकदिन मर्दनकर चक्रीवनाय सुखाकर हण्डीमें शङ्खकेचूर्णकेवीचमें रख शरावसम्पुट देकर अच्छीतरह सुखाकर मन्द, मध्य और खर इसक्रमसे ३ दिनकी अग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर यत्नसे चक्रीको निकालकर कपड़छानकर रखछोड़े । इसमेंसे २—२ रत्ती घी और मधु अथवा शक्कर और मधुकेसाथ लेनेसे उपद्रवसहित क्षय नष्टहोताहै । इसमें सभीतरहके व्यायामोंका निषेधहै ॥ ६९१ ॥

६९२ क्षयकेसरीरसः (प्रथमः)

मृतमभ्रं मृतं सूतं मृतं लौहं तथा रविः ।
मृतं नागञ्च कांस्यञ्च मण्डूरं विमला शिला॥२९४२॥
वङ्गं खर्परकं तालं शङ्खटङ्कणमाक्षिकम् ।
वैक्रान्तं कान्तलौहञ्च स्वर्णं विद्रुममौक्तिकम् ॥२९४३॥
वराटिका च माणिक्यं राजपट्टश्च गन्धकः ।
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ॥ २९४४॥
मर्दयेदग्निभानुभ्यां प्रपुटेत्त्रिदिनं लघु ।
भावयेत्पुटयेदेभिर्वारांस्त्रींश्च पृथक् पृथक् ॥ २९४५ ॥
मातुलुङ्गवराविह्निस्वम्लवेतसमार्कवैः ।
हयमारार्द्रकरसैः पाचितो लघुवह्निना ॥ २९४६ ॥
वातपित्तकफोद्रिक्तप्राग्ज्वरान्नानाविधानपि ।
सन्निपातं निहन्त्याशु सर्वाङ्गैकाङ्गमारुतान्॥ २९४७ ॥
सेवितश्च सितायुक्तो मागधीरजसा युतः ।
मधुकाऽऽर्द्रकसंयुक्तस्तद्व्याधिहरणौषधैः॥ २९४८ ॥
रोगिभिः सेवितो हन्ति व्याधिवारणकेसरी ।
क्षयमेकादशविधं शोषं पाण्डुं क्रिमीञ्जयेत् ॥२९४९॥
कासं पञ्चविधं श्वासं मेहमेदोमहोदरम् ।
अश्मरीं शर्करां शूलं प्लीहगुल्मं हलीमकम् ॥
सर्वव्याधिहरो वल्यो वृष्यो मेध्यो रसायनः २९५०

र. सं., र. सु., र क, यक्ष्मणि ।

भाषा—अभ्रक, पारा, लोह, ताम्र, नाग कास्य, मण्डूर, रौप्यमाक्षिक, मैनसिल, वङ्ग, खर्पर, हरिताल, शङ्ख, कास्यमाक्षिक, स्वर्णमाक्षिक, वैक्रान्त, कान्त, सुवर्ण, प्रवाल, कौड़ी, माणिक्य, राजावर्त इनकीभस्में, मुक्तापिष्टी, भुनासुहागा, शुद्धगन्धक सब समभागलेकर १—२ पहर शुष्कमर्दनकर चित्रकके स्वरस और आकके दूधसे १—१ दिन मर्दनकर टिकड़ीवनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें वन्दकर लघुपुटकी आचदे । ऐसे ३ आचें देकर विजोरा, त्रिफला, चित्रक, अम्लवेत, भंगरा, सफेदकनेर, अदरख, इनप्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथसे १ दिन मर्दनकर लघुपुटकी आचदे । ऐसे प्रत्येककी भावनाकेवाद पुटदेवे । इसमेंसे १ से २ रत्तीतक मात्रा शक्कर, पीपल मधु, अदरख इनकेसाथ अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे वातपित्त और कफप्रधान नानाप्रकारके ज्वर, सन्निपात, सर्वाङ्ग अथवा एकाङ्गगत वायुरोग, उपद्रवसहितक्षय, शोष, पाण्डु, क्रिमि, समस्तश्वास, कास, प्रमेह, मेद, महोदर, अश्मरी, शक्कर, शूल, प्लीहा, गुल्म, हलीमक, कृशता, वल और वुद्धिकाह्रास इनसबको यह नष्टकर रसायनका काम करताहै ॥ ६९२ ॥

६९३ क्षयकेसरीरसः (द्वितीयः)

नेत्रलोचनचन्द्रेन्दुप्रमाणं भागमाहरेत् ।
वह्निजं स्फटिका भ्रष्टा गरलं नवसागरः ॥ २९५१ ॥
चूर्णमेषां सितायुक्तं गुञ्जार्द्धं योजयेद्भिषक् ।
क्षयकेसरिनामाऽयं रसः परमदुर्लभः ॥ २९५२ ॥

वै वि., र. चं, रसायनसं, नि. र, क्षये ।

भाषा—मरिच २ भाग, भुनीफिटकड़ी २ भा, शुद्धवछनाग और नवसादरपुष्प १—१ भाग लेकर इकट्ठे घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे आधीरत्तीकी मात्रा शक्करकेसाथलेनेसे यह कफक्षयको नष्टकरताहै ॥ ६९३ ॥

६९४ क्षयशामकरसः

तुल्यं पारदगन्धकं त्रिकटुकं ताभ्यां रजः कम्बुजं,
तैस्तुल्यञ्च भवेत्कपर्दभसितं स्यात्पारदाट्टङ्कणम् ।
पादांशं सकलैः समानमरिचं लिह्यात्कमात्साज्यकं,
यावन्निष्कमितं भवेत्प्रतिदिनं मासात्क्षयः शाम्यति ॥

र. चं, र र. स, क्षये । र. र. स. लोकनाथेतिनाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १—१ भाग, त्रिकटु २ भा, शङ्ख और कौड़ीभस्म ४—४ भाग, भुनासुहागा $\frac{१}{४}$ भा., मरिच सवकी वरावर लेकर नीलवर्णकज्जलीकर रखछोड़े । इसमेंसे ३ रत्तीसे ४ मासेतक क्रमवृद्धिसे वढ़ाकर घीकेसाथलेनेसे एकमहीनेमें क्षयका नाशहोताहै ॥ ६९४ ॥

६९५ क्षयसंहाररसः

लीढो व्योषवरान्वितो विमलको युक्तो घृतैः सेवितो,
हन्याद्दुर्जयदद्रुदं श्वयथुकं पाण्डुं प्रमेहाऽरुची ।

शूलार्तिं ग्रहणीञ्च गुल्ममतुलं यक्ष्मामयं कामलां,
सर्वान्पित्तमरुद्भवान्क्रिमपरैर्योगैरशेषामयान् ॥२९५४॥

र. स, क्षये ।

भाषा—रौप्यमाक्षिकभस्म १ रत्तीसे ३ रत्तीतक त्रिकटु और त्रिफलाके चूर्णकेसाथ घीमें मिलाकर सेवनकरनेसे दुर्जय हृद्रोग, भयङ्करशोथ, पाण्डु, प्रमेह, अरुचि, शूल, ग्रहणी, गुल्म, राजयक्ष्म, कामला, पित्त और वायुरोग, इनसवको यह नष्टकरताहै । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६९५ ॥

६९६ क्षयान्तकरसः (प्रथमः)

लोहञ्च रससिन्दूरं प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ।
मौक्तिकं स्वर्णजं भस्म प्रत्येकं शाणसम्मितम् २९५५
अमृतायाः कर्षमात्रं सत्त्वञ्च त्रिफला तथा ।
कर्षपादं कुङ्कमञ्च कस्तूरी माषसम्मिता ॥ २९५६ ॥
आटरूपकषायेण त्रिदिनं भावयेत्पृथक् ।
रसः क्षयान्तको नाम गुञ्जामात्रो मधुप्लुतः ॥२९५७॥
सघृतो राजयक्ष्माणं जयेत्पाण्डुं शिरोग्रहम् ।
जीर्णज्वरं मेहरुजं प्रदरं वह्निमान्द्यकम् ॥ २९५८ ॥
सोमरोगं धातुदोषं वातश्लेष्मोद्भवं गदम् ।
उक्तामयाऽनुपानैश्च सर्वरोगान्क्षयं नयेत् ॥ २९५९ ॥

र. चं, क्षये ।

भाषा—लोहभस्म और रससिन्दूर १–१ कर्ष, मुक्तापिष्टी और सुवर्णभस्म १–१ टङ्क, गिलोयसत्त्व और त्रिफला १–१ कर्ष, केसर ४ माशे, कस्तूरी १ माशा लेकर इकट्ठेमिलाय अडूसेके पत्तोंकेरससे ३ दिन घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधु और घीकेसाथ लेनेसे क्षय, राजयक्ष्म, पाण्डु, सिरकाजकड़ना, जीर्णज्वर, प्रमेह, प्रदर, मन्दाग्नि, सोमरोग, धातुशोष, वातश्लेष्मरोग इनसवको यह नष्टकरताहै ॥ ६९६ ॥

६९७ क्षयान्तकरसः (द्वितीयः)

सूततुल्यं व्योमसत्त्वं तयोस्तुल्यञ्च गन्धकम् ।
कुमारीस्वरसैर्मर्द्यं यन्त्रे सैकतके पचेत् ॥ २९६० ॥
दिनद्वयान्ते सङ्ग्राह्यं भक्षयेद्रक्तिमात्रकम् ।
क्षयं शोफं तथा कासं प्रमेहञ्चापि दुष्करम् ॥
पाण्डुरोगञ्च कार्श्यञ्च जयेच्छीघ्रं न संशयः ॥२९६१॥

टो, क्षये ।

भाषा—शुद्धपारा और अभ्रकसत्त्वभस्म १–१ भाग, शुद्धगन्धक २ भा. लेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीकुआरकेरससे एक दिन मर्दनकर सुखाकर फिरसे कज्जलीकर आतशीशीशीमेंभर वालुकायन्त्रमें दो दिनकी कड़ीआंचसे पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, शोथ, कास, दुष्करप्रमेह, पाण्डु, कृशता इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६९७ ॥

६९८ क्षयारिरसः

भस्मत्वं समुपागतं विधिकृतं हेमामृतेनान्वितं,
पादांशेन कणाऽऽज्यवल्लसहितं गुञ्जोन्मितं सेवितम् ।
यक्ष्माणं ज्वररोगपाण्डुगुदजांश्छ्वासञ्च कासामयं,
दुष्टाञ्च ग्रहणीं क्षतक्षयमुखान्रोगाञ्जयेद्देहिनः ॥२९६२॥

र सं, क्षये ।

भाषा—अच्छीतरह विधिपूर्वककीहुई सुवर्णभस्म में चतुर्थांश शुद्ध वछनाग मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्तीकीमात्रा ३ रत्ती पीपलके चूर्णकेसाथ मिलाकर घीके साथ खानेसे राजयक्ष्म, ज्वर, पाण्डु, अर्श, श्वास, कास, दुष्टसङ्ग्रहणी, उरःक्षत प्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६९८ ॥

६९९ क्षारताम्ररसः (प्रथमः)

शङ्खक्षाराऽर्कभूतिश्च वराटं लोहभस्मकम् ।
अयोमलं यवक्षारं टङ्कणक्षारमेव च ॥ २९६३ ॥
त्रिकटुं सैन्धवं तुल्यं भृङ्गतोयेन मर्दयेत् ।
आटरूषरसैर्मर्द्यमार्द्रकस्वरसेन च ॥ २९६४ ॥
चणमात्रां वटीं कृत्वा रसोऽयं क्षारताम्रकः ।
श्वासे कासे प्रतिश्याये पुराणज्वरपीडिते ॥ २९६५ ॥
मन्देऽग्नौ ग्रहणीदोषे स्वनुपानं यथोचितम् ।
सेवयेत्सप्तरात्रेण नाशयेन्नाऽत्र संशयः ॥ २९६६ ॥
चिरकालानुबन्धे च सेवयेन्मण्डलावधि ।
तत्तद्व्याधिहरं पथ्यं नियमेन समाचरेत् ॥ २९६७ ॥

यो र., र. सु., वै. चि., नि. र., ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—शङ्खभस्म, सज्जी, ताम्र, कौड़ी, लोह, मण्डूर इनकीभस्में, यवक्षार, भुनासुहागा, त्रिकटु, सेंधानमक सब समभाग लेकर १–२ पहर शुष्कमर्दनकर भंगरा, अडूसा और अदरखके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ लेनेसे श्वास, कास, प्रतिश्याय, जीर्णज्वर, मन्दाग्नि और ग्रहणी इनको यह ७ दिनमें नष्टकरताहै । बद्धमूलरोगमें एकमण्डलतक सेवनकराना और तत्तद्रोगोचित पथ्य देना उचितहै ॥ ६९९ ॥

७०० क्षारताम्ररसः (द्वितीयः)

पलमितमृतशुल्वं तन्मितं गन्धचूर्णं,
वसुमितपलमानं तिन्तिडीक्षारचूर्णम् ।
त्रयमिदमभिदिष्टं क्षारताम्राख्यमेत-
द्धरति सकलशूलं पीतमुष्णोदकेन ॥ २९६८ ॥

र र स, र. श., वै. चि., र. चं., र को., नि. र., र. पा., शूले ।

भाषा—ताम्रभस्म और शुद्धगन्धक १–१ पल, इमलीकेक्षारकाचूर्ण ८ पल लेकर तीनोंको इकट्ठामिलाय बारीक पीसकर रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेसे २ माशेतक गरमजलकेसाथ लेनेसे यह समस्त शूलोंको नष्टकरताहै ॥ ७०० ॥

७०१ क्षारवटी

अमृतं मेघभस्माऽथ शङ्खं चिञ्चां सुभास्करम् ।
क्रमाद्द्विगुणितं कृत्वा तत्तुल्यञ्च कटुत्रिकम् ॥२९६९॥
तुलसीभृङ्गराजाब्धि र्मातुलुङ्गार्द्रकद्रवैः ।
भावितं बहुशश्चूर्णं रजो वा गुलिकाऽपि वा ॥२९७०॥
माषमात्रां तु सेवेत गुल्मशूलान्विनाशयेत् ।
मन्दाग्निं ग्रहणीमर्शो गुल्मशूलमरोचकम् ॥
एतत्क्षारवटी नाम कृशदेहेषु युज्यते ॥ २९७१ ॥

र. र. स , विद्रध्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धवछनाग, अभ्रक और शङ्खभस्म, इमली और आकका क्षार क्रमशः द्विगुणभागसे लेकर सबकी बराबर त्रिकटु मिलाकर तुलसी, भंगरा, बिजोरा और अदरखकेस्वरसोंसे कईवार भावनाएं देकर १–१ माशेकी गोलियें बनाले अथवा चूर्ण ही रहनेदे । इसमेंसे १–१ माशा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, ग्रहणी, अर्श, गुल्म, शूल, अरुचि इनसबको यह नष्टकरतीहै । कृशशरीरके लिये बहुत उपकारकहै ॥ ७०१ ॥

७०२ क्षीरमण्डूरम्

मण्डूरस्य पलान्यष्टौ गोमूत्रेऽर्द्धाढके पचेत् ।
क्षीरप्रस्थञ्च तत्सिद्धं पक्तिशूलहरं नृणाम् ॥ २९७२ ॥

वृ मा., रससागर, यो. म., र., यो. र., च. द., र का., रसायनस., र. क. ल., भै र., र. को., टो , नि र., शूलाऽधिकारे ।

भाषा—आठपल शुद्धमण्डूरकेचूर्णको २ प्रस्थ गोमूत्रमें डालकर पकावे । कुछगाढ़ाहोनेपर एकप्रस्थ दूधडालकर पकावे । सिद्धहोनेपर ३–३ माशेकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे पक्तिशूलको यह नष्टकरताहै ॥ ७०२ ॥

७०३ क्षीरसागररसः

मृतरसगगनार्कं मुण्डतीक्ष्णं सताप्यं,
सबलिसममिदं स्याद्यष्टिकावारिपिष्टम् ।
तदनु सलिलजातैर्वासकैर्गोस्तनीभि-,
र्मृदितमथ विदारीवारिणा घस्रमेकम् २९७३
घृतमधुसहितेयं वल्लमात्रा वटीति,
क्षपयति गुरुपित्तं पित्तरोगं क्षयञ्च ।
भ्रममदमुखशोषान्दाहतृष्णासमुत्थान्,
मलयजमिह पेयं चानुपानं सचन्द्रम् २९७४

रसायनसं , र. र. दी , र सु , टो , र. प्र., र. चं , र. का., पित्तज्वरे । र. सं, र सु , ध., एषु ग्रन्थेषु गगनादिवटीति नाम वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—पारा, अभ्रक, ताम्र, मुण्ड, फोलाद, सोनामाखी इनकीभस्में, शुद्धगन्धक सब समभागलेकर १–२ पहर मुलहठी, कमल, अडूसा, द्राक्ष, विदारी इनके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली मधु और घीकेसाथ लेनेसे पित्तरोग, क्षय, भ्रम, मद, मुखशोष, दाह, तृषा, इनसबको यह नष्टकरताहै । अत्यन्तउष्णतामें कपूरमिश्रित चन्दनकल्क पीनेको देना॥७०३॥

७०४ क्षीरोदधिरसः

रसं गन्धकमभ्रञ्च शिलाजत्वयसी शुभे ।
रसार्द्धसानं स्वर्णञ्च गृहकन्याम्बुना भिषक् ॥२९७५॥
मर्दयित्वा वटीः कुर्यात्कलायपरिमाणतः ।
त्रिफलाजलयोगेन प्रातः सायञ्च पाययेत् ॥२९७६॥
गदोद्वेगं महाघोरं रक्तपित्तं क्षतं क्षयम् ।
प्रमेहं वातजान्रोगान्कामलाञ्च हलीमकम् ॥ २९७७॥
पाण्डुताञ्च ज्वरं जीर्णमर्शांसि निखिलानि च ।
रसः क्षीरोदधिर्नाम निहन्यान्नात्र संशयः ॥ २९७८ ॥

भै. र , परिशिष्टे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रकभस्म, शिलाजतु, लोहभस्म १–१ भाग, पारेसे आधी स्वर्णभस्म लेकर सबकीनीलवर्णकज्जलीकर घीकुंवारके रससे एकदिन मर्दनकर मटरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली त्रिफलाकेहिम अथवा क्राथकेसाथ सायप्रात देनेसे अत्यन्त घबराहट, रक्तपित्त, उर क्षत, क्षय, प्रमेह, वातरोग, कामला, हलीमक, पाण्डु, जीर्णज्वर, समस्त अर्श इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

७०५ क्षुधावतीवटी (प्रथमा)

रसाऽयोगन्धकाऽभ्राणि त्र्यूषणं त्रिफला वचा ।
यमानी शतपुष्पा च चविका जीरकद्वयम् ॥ २९७९॥
प्रत्येकं पलमेषान्तु घण्टकर्णपुनर्नवे ।
मानकं ग्रन्थिकं चेन्द्रं केशराजः सुदर्शनी ॥ २९८० ॥
दण्डोत्पला त्रिवृद्दन्ती जामातृरक्तचन्दनम् ।
भृङ्गापामार्गकुलका मण्डूकश्च पलार्द्धकम् ॥ २९८१॥
आर्द्रकस्वरसेनाऽथ गुटिकां सम्प्रकल्पयेत् ।
बदरास्थिसमां चैकां भक्षयित्वा पिबेदनु ॥ २९८२ ॥
वारिभक्तं जलञ्चैव प्रातरुत्थाय मानवः ।
वटी क्षुधावती नाम सर्वाऽजीर्णविनाशिनी॥२९८३॥
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं भस्मकञ्च नियच्छति ।
अम्लपित्तञ्च शूलञ्च परिणामकृतञ्च यत् ॥ २९८४ ॥
तत्सर्वं शमयत्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ।
मधुरं वर्जयेदत्र विशेषात्क्षीरशर्करे ॥ २९८५ ॥

भै र , ध., र. र अम्लपित्ते । रसरत्नाकरेऽग्निमान्द्याऽधिकारेऽस्ति ।

टि०—" अभ्रक रसगन्धौ च यवानी त्र्यूषण तथा ।
त्रिफला शतपुष्पा च चविका जीरकद्वयम् ॥
पुनर्नवा वचा दन्ती त्रिवृता घण्टकर्णकम् ।
दण्डोत्पला सारिवे द्वे चाक्षमात्राणि कारयेत् ॥
मण्डूर द्विगुण दत्त्वा पेषणीय प्रयतत ।
आर्द्रकाद्भि समालोड्य गुटिकां कारयेद्बुध. ॥

प्रत्यह भक्षयेदेका भक्तवारि पिवेदनु ।
वटी क्षुधावती नाम्ना चाम्लपित्तविनाशिनी ॥
अग्निश्च कुरुते दीप्त तेजोवृद्धि वलन्तथा ।
प्लीहान श्वासमानाहमामवात विनाशयेत् ॥
परिणामभव शूल कास पञ्चविध तथा । "

इति भैषज्यरत्नावल्या पाठो दृश्यते सोऽस्यैवाऽपभ्रंश प्रतीयते । लोहस्थाने मण्डूरयोगोऽप्यम्लपित्तेऽयोऽपेक्षया नाऽधिककार्यकारीति विद्वद्भिर्विभावनीयम् । एकादशद्रव्याणा गुणपूर्तिरपि सारिवाद्वययोगेन कर्तुमशक्यैवाऽस्ति, अत सर्वद्रव्यपूर्ण एकएव योगो निष्पादनीय । सारिवाद्वयेऽधिका प्रीतिश्चेत्तत्रैव तद्योगकरणेऽपि क्षत्यभावोऽस्ति ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और अभ्रकभस्म, त्रिकटु, त्रिफला, वच, अजवाइन, सोंफ, चव्य, स्याहसफेदजीरा १–१ पल, मोखाकीछाल, पुनर्नवा मानकन्द, गठिवन, कुरैयाकीछाल, कालाभंगरा, सुदर्शनकन्द, ब्रह्मदण्डी, निसोत, दन्तीमूल, धतूरेकेवीज, लालचन्दन, भंगरा, अपामार्ग, कटुपरवल, मण्डूकपर्णी २–२ कर्ष लेकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीकर अन्यचीजोंके कपड्छानचूर्णमें मिलाय अदरखकेरससे १–२ पहर घोटकर जगलीवेरवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली भक्तजलकेसाथ प्रात काललेनेसे समस्तअजीर्ण, भस्मक, अम्लपित्त, शूल, परिणामशूल इनसवको सूर्योदयसे तमकीतरह नष्टकरतीहै। इसके प्रयोगमें मधुरभोजन खासकरदूध व शक्करका परित्यागकरे ॥ ७०५ ॥

७०६ क्षुधावतीवटी (द्वितीया)

गगनाद्विपलं चूर्णं लौहस्य पलमात्रकम् ।
लौहकिट्टं पलार्द्धञ्च सर्वमेकत्र संस्थितम् ॥ २९८६ ॥
मण्डूकपर्णीवशिरतालमूलीरसैः पुनः ।
वराभृङ्गकेशराजकालमारिपजैरथ ॥ २९८७ ॥
त्रिफलाभद्रमुस्ताभिः स्थालीपाकाद्विचूर्णितम् ।
रसगन्धकयोः कर्षं प्रत्येकं ग्राह्यमेकतः ॥ २९८८ ॥
तन्मसृणे शिलाखल्वे यत्नतः कज्जलीकृतम् ।
वचा चव्यं यमानी च जीरके शतपुष्पिका ॥२९८९॥
व्योपं मुस्तं विडङ्गञ्च ग्रन्थिकं खरमञ्जरी ।
त्रिवृता चित्रको दन्ती सूर्यावर्तः सितस्तथा ॥२९९०॥
भृङ्गमानककन्दाश्च खण्डकर्णक एव च ।
दण्डोत्पला केशराजः काला कर्कटकोऽपि च २९९१
एषामर्द्धपलं ग्राह्यं पट्टघृष्टं सुचूर्णितम् ।
प्रत्येकं त्रिफलायाश्च पलार्द्धं पलमेव च ॥ २९९२ ॥
एतत्सर्वं समालोड्य लौहपात्रे तु भावयेत् ।
आतपे दण्डसंघृष्टमार्द्रकस्य रसैस्त्रिधा ॥ २९९३ ॥
तद्रसेन शिलापिष्टं गुटिकाः कारयेद्भिषक् ।
वदरास्थिनिभाः शुष्काः सुगुप्ताश्च निधापयेत२९९४
तत्प्रातर्भोजनादौ तु सेवितं गुटिकात्रयम् ।
अम्लोदकानुपानञ्च हितं मधुरवर्जितम् ॥ २९९५ ॥
दुग्धञ्च नारिकेलञ्च वर्जनीयं विशेषतः ।
भोज्यं यथेष्टमिष्टञ्च वारिभक्ताम्लकाञ्जिकम् ॥२९९६॥
हन्त्यम्लपित्तं विविधं शूलञ्च परिणामजम् ।
पाण्डुरोगञ्च गुल्मञ्च शोथोदरगुदामयान् ॥ २९९७॥
यक्ष्माणं पञ्च कासांश्च मन्दाग्नित्वमरोचकम् ।
प्लीहानं श्वासमानाहमामवातं सुदारुणम् ॥
गुटी क्षुधावती सेयं विख्याता रोगनाशिनी ॥२९९८॥

र सं, र सु, च द., र. का., र. क., टो., वै. द., र. म., र चि., भै र, अम्लपित्ते ।

टि०—अत्राऽऽगताऽभ्रकादीना शुद्धिरधोलिखितप्रकारेण कर्तव्या सा यथा—

तत्र अभ्रकशुद्धिः

आशु भक्तोदकै पिष्टमभ्रक तत्र सस्थितम् ।
कन्दमाणाऽस्थिसहारखण्डकर्णरसैरथ ॥
तण्डुलीयकशालिञ्चकालमारिषजेन च ।
वृश्चीरवृहतीभृङ्गलक्ष्मणाकेशराजजै. ॥
पेषण भावना कुर्यात्पुटश्चानेकशो भिषक् ।
यावन्निश्चन्द्रक तत्स्याच्छुद्धिरेव विहायस ॥

अथ लौहशुद्धि.

हैममाक्षिकशालिञ्चे ध्मात निर्वापित जले ।
त्रैफलेऽथ विचूर्ण्यैव लौह कान्तादिक पुन ॥
एरण्डगजकर्णोत्थैस्त्रिफलावृद्धदारुजै ।
मानकन्दास्थिसहारशृङ्गवेरभवै रसै ॥
दशमूलीमुण्टितिकातालमूलीसमुद्भवै ।
पुटित साधु यत्नेन शुद्धिमेवमयो व्रजेत् ॥

अथ मण्डूरशुद्धि·

वशिर श्वेतवाट्याल मधुपर्णी मयूरकम् ।
तण्डुलीयञ्च वर्षाह दत्त्वाऽधश्चोर्द्धमेव च ॥
पाच्य सुजीर्णमण्डूर गोमूत्रेण दिनत्रयम् ।
यथाऽन्तर्वाष्पदग्ध स्यात्तथा स्थाप्य दिनत्रयम् ॥
एव विशोधित लौहकिट्ट ग्राह्य विचूर्णितम् ॥

अथ रसशुद्धिः

जयन्त्या वर्धमानस्य शृङ्गवेररसेन तु ।
वायस्याश्चानुपूर्व्यैव मर्दन रसशोधनम् ॥

अथ गन्धकशुद्धि·

गन्धक नवनीताख्य क्षुद्रित लौहभाजने ।
त्रिधा चण्डातपे शुष्क भृङ्गराजरसाऽऽप्लुतम् ॥
ततो वह्नौ द्रवीभूत त्वरित वस्त्रगालितम् ।
यत्नाद्भृङ्गरसे क्षिप्त पुन शुष्क विशुद्ध्यति ॥ इति ॥

भाषा—अभ्रकभस्म २ पल, लोहभस्म १ पल, मण्डूरभस्म २ कर्ष लेकर १–२ पहर शुष्कमर्दनकर ब्राह्मी, रक्तपुनर्नवा, तालमूली, शतावरी, भंगरा, कालाभंगरा, मरसा, त्रिफला, नागरमोथा इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथ मिलाकर हण्डीमें पकावे और चलातारहे। इसतरह प्रत्येकके स्वरसको सुखाकर अखीरमें यहातक अग्नि दे कि सव स्वरस जलजाय। फिर शुद्ध पारा और गन्धक १–१ कर्षकी नीलवर्णकज्जलीकर वच, चव्य, अजवाइन, स्याह सफेद जीरा, सोंफ, त्रिकटु, नागरमोथा, विडङ्ग, गठिवन, अपामार्ग, निसोत, चित्रक, दन्तीमूल, सफेदफूलकी हुरहुर अथवा सूर्यमुखी, भंगरा, मानकन्द, जङ्गलीसूरण,

ब्रह्मदण्डी, कालाभंगरा, कालावाला, (गु०) काकड़ासींगी इनका बारीकचूर्ण २–२ कर्ष, त्रिफला प्रत्येक आधा आधा अथवा १–१ पल लेकर सबको इकट्ठे मिलाय लोहेकेपात्रमें डालकर अदरखके-ससे भिगोकर धूपमें सुखावे। ऐसे ३ भावनाएं देकर जंगली-बेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे ३–३ गोली प्रातः-काल भोजनके आदि अथवा अन्तमें खट्टे पानीकेसाथ सेवनकर-नेसे अम्लपित्त, नानातरहकाशूल, परिणामशूल, पाण्डु, गुल्म, शोथ, उदररोग, गुदामय, राजयक्ष्म, ५ प्रकारकाकास, मन्दाग्नि, अरुचि, प्लीहा, श्वास, आनाह, दुस्तरआमवात इनसबको यह नष्टकरतीहै। इसमें मधुररसको छोड़कर सब पथ्यहै। दूध और नारियलका विशेषतया परित्यागकरे। वारिभक्त और खट्टी-काञ्जीका यथेष्ट सेवनकरे॥ ७०६॥

इसमें जो आये हुए द्रव्यहैं उनकी शुद्धि अधोलिखित प्रका-रसे करनी उचितहै। धान्याभ्रकको भक्तोदक, जङ्गलीसुरण, मानकन्द, हड़जोड़, जहरीसुरण (वामनदडियो म.), काटेवाली चौलाई, सरहंची, मरसा, पुनर्नवा, वनभाटा, भंगरा, लक्ष्मणा, कालाभंगरा इनके स्वरसोंसे १–१ दिन पीसकर टिकड़ी बनाय गजपुटकी आचदे। ऐसे प्रत्येक औषधिमें ७–७ अथवा ३–३ वार पुट देनेसे शुद्धहोकर भस्म होजातीहै कदाचित् इतने पुट-देनेपरभी निश्चन्द्र न हो तो इन्हींके अधिक पुटदेवे॥ १॥

उत्तम लोहचूर्णको धमनकर स्वर्णमाक्षिक, सरहंची, त्रिफला, एरण्ड, हस्तिकर्णपलाश, त्रिफला, विधारा, मानकन्द, हड़जोड़, अदरख, दशमूल, गोरखमुण्डी और तालमूलीके द्रवोंमें बुझाकर इन्हींकेद्रवोंमें घोटकर टिकिया बनाय सुखाकर गजपुटकीआचदे। जबतक वारितर न हो तबतक इसक्रमको चलाता रहे॥ २॥

१०० वर्षसे ऊपर जहातकहोसके पुराने मण्डूरको धोकर साफ करले। फिर अग्निसात् कर रक्तपुनर्नवा, सफेदफूलकीवला, गिलोय, अपामार्ग, काटेवालीचौलाई, इटसिट इनके स्वरसोंमें क्रमशः बुझाकर इन्हींके कल्कोंमें क्रमशः बन्दकर १–१ गजपुट-देवे। फिर गोमूत्रसे ३ दिन घोटकर अष्टगुणित अथवा चतु-र्गुणित गोमूत्र डालकर मुखबन्दकर अग्निपर रख अन्तर्धूमविद-ग्धकर ३ दिनतक उसीचूल्हेपर पड़ा रहनेदे। इसीतरह शुद्धकि-याहुआ मण्डूर काममें लेना॥ ३॥

जैंती, एरण्ड, अदरख, मकोय, इनके रसोंमें १–१ दिन मर्दनकर डमरूयन्त्रमें ऊर्ध्वपातनकरनेसे रस शुद्धहोजाताहै॥ ४॥

आंवलासार गन्धकके छोटे छोटे टुकड़ेकर लोहेके वर्तनमें डालकर भंगरेकारस देकर कड़ीधूपमें रक्खे। ऐसे ३ वारकरके हण्डीमें भंगरेका रसभरकर ऊपरसे वस्त्र बाधदे और लोहेकी कड़ाहीमें गन्धकको गलाकर वस्त्रमेंसे छानदे। अथवा उसवस्त्र-पर गन्धकके चूर्णको बिछाकर शरावसम्पुटदेकर हण्डीको ज़िमी-नमें गाड़दे और ढक्कन पर थोड़ेसे कण्डोंकी आचदे जिसमें कि गन्धक गलकर भंगरेके रसमें पड़जाय। स्वाङ्गशीतलहोने पर भंगरेकेरससे गन्धकको निकालकर पोंछकर सुखाले, इसी गन्ध-कको इस वटीमें डाले॥ ५॥

७०७ क्षुधावतीवटी (तृतीया)

त्रिक्षारं पञ्चलवणं शिग्रुकं वशतालकम्।
अर्कसेहुण्डदुग्धेन भावयेद्दिवसद्वयम्॥ २९९९॥
विलिप्य चार्कपत्राणि रुद्ध्वा गजपुटे पचेत्।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य चूर्णयेत्कज्जलोपमम्॥ ३०००॥
ततो रसं विषं गन्धं त्रिफलां त्र्यूषणं वचाम्।
वह्निपुष्करदन्त्यौ च बृहत्यौ चविका त्रिवृत्॥३००१॥
समञ्चूर्णं प्रकर्तव्यं वस्त्रपूतञ्च कारयेत्।
निर्गुण्डीशिग्रुमूलोत्थरसेन च विभावयेत्॥ ३००२॥
वटीं क्षुधावतीं नाम्ना भक्षयेद्वल्लमात्रिकाम्।
अनुपानं प्रदातव्यमभयागुडसंयुतम्॥ ३००३॥
सर्वाऽजीर्णप्रशमनी वह्निमान्द्यविनाशिनी।
सश्वासवातगुल्मार्शःकासहृद्रोगसूदिनी॥ ३००४॥

ना वि., अग्निमान्द्ये।

भाषा—सज्जी, सुहागा, यवक्षार, पाचोंनमक, सहिजनकी-छाल, हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य १–१ तोलालेकर आक और थूअरकेदूधसे १–१ दिन मर्दनकर दोतोले शुद्धतावेके कण्ट-कवेधीपत्रोंपर लेपकर सुखाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी-आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर कज्जलकेसमान चूर्णकर शुद्धपारा, बछनाग और गन्धक, त्रिफला, त्रिकटु, वच, चित्रकमूल, पोह करमूल, दन्ती, दोनोभटकटैया, चव्य, निसोत, येसब १–१ तोलालेकर कपड़छानचूर्णकर पूर्वकज्जलीमें मिलाय निर्गुण्डी और सहिजनकीजड़कीछालके रसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली हर्रे और गुड़केसाथदेनेसे समस्तअजीर्ण, मन्दाग्नि, श्वास, वातगुल्म, अर्श, कास, हृद्रोग इनको यह नष्टकरतीहै॥ ७०७॥

७०८ क्षुधावतीवटी (अग्निप्रभूतवटी)

गन्धं तालं रसं नागं त्रिकटुं त्रिफलां तथा।
टङ्कणं जयपालञ्च समं शुद्धं विमर्दयेत॥ ३००५॥
दिनैकं निम्बुनीरेण वटिका मरिचाकृतिः।
प्रातः सायं सेवनीया चतुर्दशदिनावधि॥
कफवातादिरोगघ्नी जठराऽनलदीपनी॥ ३००६॥

र सि, अजीर्णे।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, हरिताल और नागभस्म, त्रिकटु, त्रिफला, भुनासुहागा, शुद्ध जमालगोटा सब समभाग-लेकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीकर काष्ठौषधियोंका कपड़छान-चूर्णकर इकट्ठे मिलाय एकदिन नीबूकेरससे मर्दनकर मरिचप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ से २ गोलीतक प्रात और सायङ्काल उचितानुपानकेसाथ १४ दिनतकलेनेसे कफ और वातव्याधि, उदररोग नष्टहोतेहैं॥ ७०८॥

७०९ क्षुधासागररसः

त्रिकटु त्रिफला चैव तथा लवणपञ्चकम्।
क्षारत्रयं रसं गन्धं भागमेकं द्विकं विषम्॥ ३००७॥

गुञ्जामात्रां वटीं कुर्याल्लवङ्गैः पञ्चभिः सह ।
क्षुधासागरनामाऽयं रसः सूर्येण निर्मितः ॥३००८॥

भै. र., र. सु , ध , नि र., वै. र., चि. र भ., रसायनसं., वै चि., अग्निमान्द्ये ।

टि०—आयुर्वेदविज्ञाने वृद्धिहरनाम्नैको रसोऽस्ति तत्र त्रिफलास्थाने जयपाल नियोज्य चित्रकभावनया निष्पादित एतावान्विशेषोऽस्ति जयपालयुक्तत्वेनाऽतितैक्ष्ण्यान्न परस्परमन्तर्भाव ।

" रस गन्धक टङ्कण व्योषवह्नी, वराटान्पटून्पञ्च हिङ्गूलगन्धम् ।
शुपासर्वचूर्णस्य वेदांशभागा, पुटेन्नीरजम्बीर षड्विंशदङ्कि ॥
सुतिन्तिटीक्षारतत्क्षारयुग्म, दलैर्नागवल्लीद्रवैर्भावनीयम् ।
वटीमुद्गमानप्रमाणा च देया, यथेष्टानुपानाच्च भुक्त क्षिणोति ॥
महाश्वासकासौ हरेत्सर्वशूल, क्षुधासागर सागरीयाऽनलाभ ॥ "

इति क्षुधासागरनाम्ना रसामृते पाठ प्रकल्पितोऽस्ति, तत्र विषस्थाने शुपेतिपाठ लेखकप्रमादाद्योगघटकबुद्धिवैचित्र्याद्वा सञ्जात । हिङ्गूलगन्धमिति च द्विरुक्त केनविचारेण कृतमिति बुद्ध्यारूढ न भवति सूतसमागमनाद्धिङ्गूलकथनस्य वैयर्थ्यम् । गन्धकस्य तु नामनिर्देशेनैव योगप्रारम्भिकपादे एव समागमनात्तद्वैयर्थ्यमपि स्पष्टमेव । प्रमाणाऽधिकेच्छया तदस्तीत्यपि वक्तु न युज्यते प्रथमविन्यासे एव द्विगुणयोगस्य कथयितु सुशकत्वात । तस्मादय योग उपरितनयोगे एवान्तर्भावनीय ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, पाचोंनमक, तीनोंक्षार, शुद्ध पारा और गन्धक १–१ भाग, शुद्ध वछनाग २ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय लोंगकेक्वाथसे एकदिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियें वनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १–१ गोलीकाचूर्णकर ५ लौंगोंके साथ लेनेसे यह मन्दाग्निको दूरकरताहै ॥ ७०९ ॥

७१० क्षेत्रपालरसः

हिङ्गुलञ्च विषं ताम्रं लोहं तालकटङ्कणम् ।
जीरमाहेयफेनञ्च समभागं विमर्दयेत् ॥ ३००९ ॥
यवार्द्धा वटिका कार्या पथ्यं दुग्धौदनं हितम् ।
लवणाऽम्भोविवर्ज्यञ्च दातव्यं भिषजां वरैः ॥३०१०॥
अग्निमान्द्यं गुरुं शोथं ग्रहणीमपि दुस्तराम् ।
ज्वरञ्च विषमं जीर्णं नाशयेन्नाऽत्र संशयः ॥ ३०११ ॥

भै र , र चं , शोथे ।

भाषा—शुद्धशिगरिफ, वछनाग, सुहागा और अफीम, ताम्र, लोह और हरितालभस्म, सफेदजीरा सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर पुनर्नवा अथवा मकोयकेरससे १–२ दिन मर्दनकर मूगवरावर गोलियें वनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पुनर्नवादिक्वाथप्रमृतिकेसाथ देनेसे शोथ, मन्दाग्नि, दुस्तरसङ्ग्रहणी, विषम और जीर्णज्वर इनसवको यह नष्टकरताहै । पथ्यमें दूध और चावलदेवे । नमक और जलका परित्यागकरे ॥७१०॥

७११ क्षेत्रीकरणरसः

प्रागुक्तं पातितं सूतं स्वेदितं सुमुखीकृतम् ।
कलांशं हेमजीर्णञ्च षड्गुणं जीर्णदानवम् ॥ ३०१२ ॥
रसमादाय मृद्नीयात्कृष्णधत्तूरनीरतः ।
आखुपर्णीरसैश्चैव नष्टपिष्टो भवेद्रसः ॥ ३०१३ ॥
त्रिफलोत्थरसैर्मर्द्यः सूतः कृष्णसुवर्णजैः ।
विंशतिश्च दिनान्येव कल्कं सोमानले क्षिपेत् ॥३०१४॥
अध ऊर्द्धं वलिं दद्याद्रसेन्द्राच्च चतुर्गुणम् ।
निरुद्ध्य सुदृढं यन्त्रं चुल्लीमधिनिवेशयेत् ॥ ३०१५ ॥
ज्वालयेत्क्रमशो वह्निमेकविंशद्दिनावधि ।
मृदुमध्योत्तमं प्राज्ञो वैश्वानरमतन्द्रितः ॥ ३०१६ ॥
ज्वालयित्वा स्वाङ्गशीतं यन्त्रमुत्तारयेत्ततः ।
निर्भिद्य यन्त्रं गृह्णीयाद्रसं सिन्दूरसन्निभम् ॥ ३०१७॥
एवं भस्मीकृतात्सूताद्ग्राह्यं पलचतुष्टयम् ।
ताप्यं लोहं विडङ्गञ्च शिलाजतु हरीतकी ॥ ३०१८ ॥
सर्वं सूतसमं ग्राह्यं प्रत्येकं मर्दयेत्ततः ।
खल्वमध्ये विनिक्षिप्य सर्वमेकात्मतां यथा ॥३०१९॥
व्रजेत्तथाऽथ मधुना घृतेनाऽथ प्रमर्दयेत् ।
एवं तन्मर्दितं सूतं मध्वाज्येन समन्वितम् ॥ ३०२० ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय वल्यं वृष्यमतन्द्रितः ।
शुक्रवृद्धिकरं पुष्टिवर्धनं वह्निदीपनम् ॥ ३०२१ ॥
गद्याणमात्रं स्वीकुर्याद्राजयक्ष्मविनाशनम् ।
प्रमेहं पाण्डुरोगञ्च कामलाञ्च हलीमकम् ॥ ३०२२ ॥
ग्रहणीमतिसारञ्च नाशयेन्नाऽत्र संशयः ।
वत्सरद्वययोगेन वलीपलितहा भवेत् ॥ ३०२३ ॥
सतताऽभ्यासयोगेन जीवेदाचन्द्रतारकम् ।
क्षेत्रीकरणनामाऽयं रसः परमसुन्दरः ॥ ३०२४ ॥
धारोष्णं सर्वदा पेयं गव्यं शर्करया युतम् ।
न क्वचिद्दधि भुञ्जीत तक्रञ्चापि विवर्जयेत् ॥३०२५॥
गोधूमयवशाल्यन्नं मुद्गं मांसरसन्तथा ।
प्रायेण तिक्तमधुरकषायकटुकात्मकान् ॥ ३०२६ ॥
रसान्भुञ्जीत सततं लवणाम्लं विवर्जयेत् ।
ताम्बूलं सततं खादेत्कर्पूरादिसमन्वितम् ॥
इक्षवः पनसं रम्भाफलादीनि निषेवयेत् ॥ ३०२७ ॥

रसाल , रसायने ।

भाषा—बुभुक्षान्तसंस्कारकियेहुए पारेमें षोडशांशसुवर्णकाग्रासदेकर षड्गुणगन्धकजारणकर कालाधतूरा, मूषाकर्णी, त्रिफला और कालेधतूरेकेरसोंसे यथाक्रम ५–५ दिन मर्दनकर टिकिया वनाय सुखाकर पारेसे चतुर्गुणित शुद्धगन्धक नीचेऊपररख डमरूयन्त्रमें वन्दकर समस्तपर सुखासुखाकर वज्रमिट्टीसे ७ कपडमिट्टीकरके चूल्हेपररख २१ दिनतक मृदु, मध्य और खराग्नि देकर पाककरे । २२ वेंदिन लकड़ियोंको निकालले और यन्त्रको कोयलोंपर रहनेदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर युक्तिसे यन्त्रको खोलकर ऊपरकेघड़ेमें लगीहुई सिन्दूरवर्णभस्मको निकालकर ४ पललेवे । फिर शुद्धसोनामाखी, लोहभस्म, विडङ्ग, शिलाजीत और हर्रे ४–४ पल लेकर वारीकचूर्णकर घी अथवा मधुसे २–३ दिन मर्दनकर कल्कवनाकर रखछोड़े । इसमेंसे २–३ रत्ती, घी और मधुकेसाथ मिलाकर तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ प्रात काललेवे ।

ऐसे ६ माशे दवाके सेवनकरनेपर वल, वृषता, शुक्र, पुष्टि, अग्नि इनकानाश, राजयक्ष्म, प्रमेह, पाण्डु, कामला, हलीमक, ग्रहणी, अतिसार इनसवको यह नष्टकरताहै । दो वर्षतक लगातार सेवनकरनेसे वलीपलित नष्टहोतेहैं । निरन्तर सेवनकरनेमे अत्यन्त दीर्घजीवी होताहै । शक्करमिलाहुआ धारोष्णदूध, गेंहू, जव, चावल, मूंग, मांसरस, तिक्त, मधुर, कषाय और कटुरसकासेवनकरे । लवण, खटाई, विशेषकर दही और तक्रका वर्जनकरे । कर्पूरादि सुगन्धद्रव्ययुक्तपान, ईख, कटहर और केला वगैरह फलोंका सेवनकरे ॥ ७११ ॥

७१२ ज्ञानाढ्यागुटिका

चत्वारस्तुत्थसत्त्वस्य तावन्तः स्वर्णमाक्षिकात् ।
शुद्धरौप्यस्य चत्वारो वल्लैको हेमचूर्णतः ॥ ३०२८ ॥
शुद्धोऽष्टादशसंस्कारैः पूर्वोक्तो यस्तु पारदः ।
तस्य वल्ला नवत्रिंशद्द्विपञ्चाशच्च मीलिताः॥३०२९॥
खल्वे प्रक्षिप्य सर्वं तन्मर्दयेद्दिनसप्तकम् ।
वरुणस्य च मूलानि श्रीखण्डं सूक्ष्मकारितम् ३०३०
मृद्वग्नौ स्वेदयेदेतद्दोलायन्त्रे दिनद्वयम् ।
स्वेदयेद्गुटिकां कृत्वा क्रमात्पञ्चामृतेन च ॥ ३०३१ ॥
मध्वाज्यदधिदुग्धञ्च शर्करा चैव पञ्चमी ।
अस्मिन्पञ्चामृते स्वेद्यं यावद्यामाष्टकं भवेत्॥३०३२॥
कान्तलोहमये पात्रे मधुपूर्णे गुटीं क्षिपेत् ।
तत्पात्रं वालुकापूर्णस्थालिकायाञ्च विन्यसेत् ३०३३
चुल्यां स्थालीं समारोप्य वह्निर्यामाष्टकं भवेत् ।
स्वेदनेऽयं विधिः कार्यः प्रत्येकेनाऽमृतेन च॥३०३४॥
नष्टे नष्टे मुहुः क्षेप्यं क्रमात्पञ्चामृतं सदा ।
मधुयुक्तं क्रमेणैव पञ्चधा स्वेदयेच्च ताम् ॥ ३०३५ ॥
तत्तद्रोगानुपानेन सर्वान्रोगान्नियच्छति ।
त्रिकालज्ञानमाप्नोति नरः सततसेवनात् ॥ ३०३६ ॥

रसचि , रसायने ।

टि०—यद्यप्यत्राऽपक्वधातुभिरेव गुटी निर्मिता परन्त्वेतादृक्प्रक्रियया दिव्यज्ञानप्राप्तेरसम्भवप्रायत्वात्तुत्थमाक्षिकहेमरजतानां वादोक्तप्रक्रियया सुधात्वमापाद्य योगो निष्पादनीय इति रहस्यम् । सुधाप्रकारस्तु अगस्त्यसम्प्रदायादिभिरवगन्तव्य इति ।

भाषा—तुत्थ और सुवर्णमाक्षिकके सत्त्व, शुद्धचांदी ४–४ वाल, सुवर्णचूर्ण १ वाल (३ रत्ती), अष्टादशसंस्कारकियाहुआपारा ३९ वाल लेकर ७ दिनतक शुष्कमर्दनकर गोलीवनावे फिर वरुणकीजड़कीछाल और सफेदचन्दनका पानीमें कल्कवनाय उसमें गोलीको रखदे । फिर चूल्हेपर मिट्टीकी कढ़ाही रख उसमें दोअङ्गुल वालू विछाकर कान्तलोहके पात्रको रख औषधपिण्डका दोलायन्त्रवनाय मधुमें मन्दाग्निमे ८ पहरतक स्वेदनकरे । मधु सूखने पर दूसरा डालता जाय । इसीतरह घी, दही, दूध और शक्करके शरवतमें स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर विशुद्ध वनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १–१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे समस्तरोगनिवृत्तहोतेहैं । निरन्तरसेवनकरनेसे त्रिकालज्ञान प्राप्तहोताहै ७१२

७१३ ज्ञानोदयरसः

कलावेदाङ्कचन्द्रांशैः सर्वांशसितया युतैः ।
शक्राशनरजोजातीफलशुक्रैः सुसाधितः ॥ ३०३७ ॥
सेवितः सात्म्यतो ग्राही जलदोषापनोदनः ।
वातश्लेष्मामयध्वंसी ज्वरातीसारनाशनः ॥ ३०३८ ॥
बृंहणैरनुपानैर्हि योजितः कामवृद्धिकृत् ।
ज्ञानोदयो भवेदेष साधकानन्दसिद्धिदः ॥ ३०३९ ॥

नि र, वै र, र कौ, रसायनसं, र ल, र शं, टो, ज्वराऽतिसारे । र मि वाजीकरणे ।

टि०—र ल, र श, टो, एषु ग्रन्थेषु "विजयाशक्तिसयोगिनटमण्डनशम्भुभि । ज्ञानोदयो भवत्येष साधकानन्दसिद्धिद ॥ कलावेदाङ्कचन्द्राशै' क्रमेण समशर्कर । सेवित सात्म्यतो ग्राही कफवातापनोदन ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति, अत्र नटमण्डनमधिकमस्ति भागाश्च चत्वार एव । अतोऽन्तिमभागस्य द्विरुक्ति करणीया पाठस्तु एक एव करणीय पृथक्त्वे गौरवान्नटमण्डनमेलनेन शक्त्याऽधिक्याच्च । निघण्टुरत्नाकरटीकाया रजस शब्दस्य पर्पटकाऽर्थकरणन्तु हास्यास्पदमेवाऽस्ति, रसराजलक्ष्मीस्थपाठे रज स्थाने शक्तीति स्पष्टोक्तित्वात् । र मि ज्ञानोदयावटीतिनाम । तत्र पारदस्थाने द्विगुणदरद नियोजितम्, पाठस्त्वेकएव ।

भाषा—धोयाहुआ गांजा अथवा भाग १६ भाग, शुद्धगन्धक ४ भाग, जायफल ९ भाग, पारदभस्म अथवा चन्द्रोदय १ भाग लेकर वारीकचूर्णकर सवकी वरावर शक्करमिलाकर रखछोड़े । इसमेंसेप्रकृतिकेअनुसार १ माशेसे २ माशेतककी मात्रा उचितानुपानकेसाथ लेनेसे जलदोष, वायु और कफरोग, ज्वरातिसार, इनसबको यह नष्टकरताहै वाजीकर अनुपानोंकेसाथ लेनेसे यह कामकीवृद्धिको करताहै ॥ ७१३ ॥

अन्तः स्थितोऽस्ति वहिरस्ति रसस्वरूपः,
सिद्धिप्रदोऽस्तु लयसर्गविसर्गभेदैः ।
ऊष्माभिधाम्भजति सर्वजगन्निवासो,
हंसो हरिः सकलकृद्रसयोगशास्त्रे ॥

इत्यूष्मपर्यन्ता रसाः समाप्ताः



द्राविडादिप्रसिद्धा ये कुम्भजव्यासनिर्मिताः योगास्सम्यगिह न्यस्ताः सर्वदेशहितेच्छया॥

१ अग्निकुमाररसः

विशुद्धपारदविषगन्धकटङ्कणदरदान्समभागान् किञ्चिदुष्णीकृतपक्वार्कपत्ररसेन यामद्वयं मर्दयित्वा चक्रीकृत्य मूषायां निक्षिप्य मुखबन्धनं विधाय वालुकायन्त्रे क्रमाग्निना यामचतुष्टयं विपाच्य स्वाङ्गशीतलं गृहीत्वाऽऽर्द्रकरसेनैकगुञ्जाप्रमिते सेविते सति सर्वज्वरनिवृत्तिर्भवति। सङ्ग्रहण्यतिसारादयोऽपि नश्यन्ति। पथ्यं रोगाऽनुरूपम्। (अगस्त्यप्रोक्तवैद्यकशास्त्रे)

टि०—अथ पाठो रत्नाकरौषधयोगे वसवराजीये च सिद्धाऽग्निकुमार नाम्ना गृहीतोऽस्ति परन्तु दरदराहित्यमस्ति। तत्कारण त्रुटितपाठाऽऽमादन प्रतिभाति। व्यासेऽपि अर्धनारीश्वरवटीतिनाम्ना योऽय योगोऽस्ति तत्राऽपि दरदराहित्यम्, भावनायाञ्च निर्गुण्डीकारवल्ल्यौ गृहीते, लवणयन्त्रे पाक, नस्ये भक्षणे चेति द्विविध प्रयोगो दर्शित। अत्राऽपि सर्वासा भावनानामनुष्ठान कृत्वा एक एव योगस्सम्पादितश्चेद्योगलाघव भविष्यति। वालुकालवणयन्त्रयोस्तु कामचार। वालुकालवणमिश्रणेनाऽपि पाकाऽनुष्ठाने क्षत्यभाव प्रत्युत द्वयोस्सयोगादग्निसयोगेन मूषास्थोड्डयनशीलवस्तूना सुतरा दृढमवरोधो भविष्यति, नस्ये भक्षणे चाऽप्यव्याहतवीर्ययोग इति विद्वद्भिरविस्मरणीयम्। विशेषसूचनम्—अनयोर्ग्रन्थयोर्द्राविटलिपिभाषयोर्विद्यमानताऽस्ति तद्देशीयास्तद्वाङ्मयग्रन्थानामन्यलिप्या भाषायां च प्रकटने महापातक मन्यन्ते इत कारणाऽद्यावधि महामहत्त्वयुक्तयोरप्यनयोर्न संस्कृताऽनुवादोऽभूत्, तद्देशीयौषधनाम्नामतिवैचित्र्यात्संस्कृते यथार्थप्रतिशब्दग्रहाभावादस्माभिरपि पद्येषु न प्रतिबद्धा योगा ईश्वराऽनुग्रहेण द्वितीयाऽऽवृत्तौ श्लोकरूपता यास्यन्तीति विद्वत्सु विनीता प्रार्थना गद्यरूपेष्वेषु यत्रयत्रौषधनामसु सन्देह आसीत्तत्रतत्र यथाऽवस्थितान्येव तद्देशीयनामानि निहितानि यथा चेप्पुतट्टाक्वादीनि अत्रायुर्वेदोद्धारव्रतैर्विशुद्धान्त करणैर्विद्वद्भिपरवर्यैरस्माशय्य दातव्य यत्रतत्र जात स्खलनमपि कृपया सूचनीय तद्द्वितीयावृत्तौ दूरीकरिष्यते।

२ अग्निकुमाररसः (स्वयमादिः)

शुद्धमयश्चूर्णं, अमलसारगन्धकं, टङ्कणं, दरदं, कान्तञ्चेति प्रत्येकमर्द्धपलिकं कुमारीरसेन यामचतुष्टयं विमृद्य चूर्णयित्वा ताम्रसम्पुटे निक्षिप्य गाढातपे धूमरेखोद्गमनपर्यन्तं स्थापनीयम्। पुनर्द्वितीयदिने कुमारीरसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा शुष्कीभूतं चूर्णितञ्च ताम्रसम्पुटितं विधायाऽऽतपे शोषणीयम्। सूक्ष्मतया धूमो निःसरति। पुनस्तृतीयदिनेऽप्येवं कृतश्चेत्प्रचण्डाऽऽतपसंयोगात्पक्वीभूय भस्मीभवति। गुञ्जाद्वयपरिमिते भस्मनि कलाद्वयं (द्वादशरक्तिकं) त्रिकटुकचूर्णं मेलयित्वा मधुना सह सेवितश्चेत् सन्निपातगुल्ममूर्च्छाकामलापाण्डुमेहादयो निवर्तन्ते। पथ्यं रोगानुरूपम्। कारवेल्लकशाकः सुतरां वर्ज्यः। अनुपानभेदात्सर्वेषु रोगेषूपयुज्यते॥ (अगस्त्य०)

टि०—एवंविधेषु योगेष्विदानीन्तनैर्गोलमेरण्डपत्रैस्संवेष्ट्य त्रिदिन धान्यराशौ स्थाप्यते। आतपनिधानसमयेऽपि वातारिपत्रैराच्छाद्यते इति विशेष सञ्जातोऽस्ति यथा स्वयमग्निरसे मर्दनमातपनिधानञ्च एकस्मिन्नेव दिने समाप्यते। अत्र तु महर्षिणा त्रिदिनपर्यन्त मर्दनमातपशोषणञ्च कृतमस्ति भस्म तूभयथाऽपि सम्पत्स्यते, गुणवैलक्षण्यन्तु सतिद्वयाऽनुष्ठानेन परीक्षणीयम्।

३ अग्निकुमाररसः (स्वयमादिः)

शुद्धपारदः ३ पलः, गन्धकः २ पलः, कान्तसिन्दूरं ४ पलं, मनःशिला २ पला, दरदं २ पलं, अयोभस्म १ पलं गृहीत्वा कज्जलीकृत्य कुमारीरसेन १५ दिनपर्यन्तं मर्दयित्वा त्रिकटुकचूर्णमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेनाऽर्द्धगुञ्जापरिमितमौषधं सेवितं सद्ग्निमान्द्यगुल्मोदावर्तपाण्डुज्वरश्वासकासश्वयथुप्रभृतिरोगान्नाशयति। आढकी, मुद्गाः, सूरणं, वृन्ताकं, शिग्रुशिम्बी, भिण्डिका, काकमाचीपत्रं, गोक्षीरं, गोघृतञ्च पथ्यम्। अम्लरसो धूमपानं स्त्रीसंसर्गश्च वर्जनीयः॥ (व्यासप्रोक्तवैद्यकशास्त्रे)

४ अग्निकुमाररसः (वातादिः)

विशुद्धपारदरसकर्पूरदरदतालकानि समभागानि गन्धकञ्च द्विभागं गृहीत्वा चूर्णीकृत्य काचकूपिकायां निक्षिप्य वालुकायन्त्रे यामचतुष्टयं पक्त्वा स्वाङ्गशीतलं ग्राह्यम्। मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन सहैकगुञ्जापरिमितः सर्वज्वरेषूपयोजनीयः॥ (व्यास०)

५ अजीर्णमान्द्यवटी

सर्पदंष्ट्रा १ पलं, विडङ्गपारसीकाकृष्णजीरकरास्ना (राष्ट्रक) पिप्पलीमूलरसकर्पूरदरदगोरोचनकेशराणि प्रत्येकं सपादतोलकानि, मृगमदञ्च पादतोलकमाहृत्य ताम्बूलीदलरसेन गर्दभीक्षीरेण चैकैकयामं मर्दयित्वा मुद्गप्रमाणां वटीं स्तन्येन दद्यात्। अनया सर्वे बालरोगा नश्यन्ति। बालस्य मातुः पथ्यक्रमः— उष्णोदकं, पुराणतण्डुलाः, मरीचमिश्रितसैन्धवचूर्णञ्चेति। ताम्बूलं पुरुषसङ्गश्च वर्ज्यः॥ (अगस्त्य०)

६ अण्डवातलेह्यम्

हिङ्गुपारदमनःशिलापिप्पलीगजपिप्पलीसैन्धवटङ्कणतालककटुरोहिणीकृष्णजीरकाणि प्रत्येकं पादतोलकानि, शुद्धं जयपालबीजञ्चैकपलं गृहीत्वाऽऽदौ जयपालबीजानि एकयामपर्यन्तं सम्यग्विमृद्य पूर्वोक्तौषधचूर्णं मेलयित्वाऽऽर्द्रकरसेन द्वियामपर्यन्तं सम्यङ्मर्दयित्वा मरिचप्रमाणा वटीः कुर्यात्। एकां वटीं गुडेन शर्करया वा निगिलेत्। अनेन वातपाण्डुगुल्मश्वयथुज्वरहृच्छूलमेहवातग्रन्थयो नश्यन्ति। महोदरव्याधिग्रस्तानामण्डवातस्य च दिनत्रयाऽभ्यन्तरे एकवारमौषधं देयम्। एवं पञ्चदशाऽऽवृत्त्या औषधे दत्ते पूर्वोक्तरोगा नश्यन्ति। (अगस्त्य०)

७ अमृतसञ्जीवनरसः

स्तन्यशुद्धशलाकाकर्पूररससिन्दूरदरदसव्वीर-(दालचिकना) विषाण्येतानि सुशुद्धानि समभागान्यार्द्रकनिर्गुण्डीकृष्णतुलसीरसैर्मधुना च प्रत्येकदिनं मर्दयित्वा रोगबलाबलादि विज्ञाय प्राचीनतालगुडे द्राक्षाफलमध्ये वा मुद्गप्रमाणमौषधं निधाय एकैकयामाऽनन्तरं देयम् । मात्राचतुष्टयादधिकमपि न देयम् । महासन्निपातादिदोषेषु निवृत्तेषु सत्सु पुनरेतदौषधं न प्रयोक्तव्यम् । उष्णमुदकमन्नम्, गोधूमखण्डयूषश्च पथ्यः । एतच्च नीलमेहग्रन्थ्युपदंशपार्श्वशूलवङ्क्षणग्रन्थ्यादीन्नाशयति । मेहरोगिणां बालतरुणभिण्डिके, औदुम्बरशलाटुः, गोधूमखण्डं, सितोपला, शिग्रुशिम्बी, पटोलद्वयं, शरहश्चिका, प्राचीनतण्डुलाश्च पथ्याः । एतदौषधेन कस्यचिन्मुखपाको भवेत्तर्हि कृष्णवव्वूलत्वक्कषायेण शोधनं कार्यम् ॥ (व्यास०)

८ अश्वकञ्चुकी (कोडासुरीमात्रा)

नागरमरिचाऽऽमलकाकल्कककटुरोहिणीसैन्धवटङ्कणशुद्धतालकदरदाऽऽरतिकर्पूरपिप्पलीहरीतकीविभीतककृष्णजीरकचित्रकत्वग्व्याघ्रीफलाऽमलसारगन्धकमनःशिलाविषपारदा एरण्डबीजमज्जा चेति प्रत्येकं पादतोलकं, शुद्धजयपालबीजमर्धपलं गृहीत्वा रसगन्धकादिधातूनां नीलवर्णां कज्जलीं विधाय वस्त्रशोधितेतरद्रव्यचूर्णेन सहैकीकृत्य भृङ्गराजरसेन यामषट्कं, जम्बीररसेन च यामत्रयं सम्यग्विमृद्य मरिचप्रमाणा वटीः कुर्यात् । एकैका वटी सैन्धवयुक्तमरिचचूर्णेन सह प्रयुक्ता गुल्मरोगं नाशयति । एवं धत्तूरपत्ररसेन शीतज्वराः, नागरक्वाथेन शोणितवातरोगाः, घृतमिश्रितजातीफलचूर्णेन रक्ताऽतिसारः, विम्बीपत्ररसेन धातुह्रासः, गोघृतेन सङ्ग्रहण्यतिसारादयः, निर्गुण्डीपत्ररसेन विंशतिर्मेहाः, मधुना राजयक्ष्मादयः, त्रिकटुचूर्णेन शीताधिक्यजकण्ठावरोधः, शिग्रुत्वग्रसेन गुल्मशूलादयः, मेथिकाबीजकल्केन द्वन्द्वजव्याधयः, भ्रष्टजीरकचूर्णेनाऽतिदाहः, त्रिकटुकचूर्णेन कासः, आर्द्रकरसमिश्रितकर्कटकत्वग्रसेन चित्तविभ्रमसन्निपातः, नवनीतमिश्रितज्योतिष्मतीबीजजातीफलत्वक्चूर्णेनाऽतिमूत्रव्याधिर्नश्यति रक्तकार्पासपुष्परसेन वशीकरणं, ताम्बूलेन च स्त्रीवशीकरणं भवति । एवं तत्तद्रोगानुसारेणाऽनुपानादयः कल्प्याः । (अगस्त्य०)

९ अयःसिन्दूरम् (प्रथमम्)

अयश्चूर्णं, अमलसारगन्धकश्चैकैकपलं गृहीत्वा कन्याद्रवेण यामचतुष्टयं मर्दयित्वा चक्रिकां विधाय शरावसम्पुटितं कृत्वा पञ्चाशदुत्पलकैः पुटो देयः । पुनः कन्यारसेन मर्दयित्वा पूर्ववत्पुटो देयः । ततः खल्वे निक्षिप्य पीतभृङ्गस्वरसेन मर्दयित्वा पञ्चाशदुत्पलकैः पुटो देयः । एतदरुणोदयवत्सिन्दूरं भवति । अर्धगुञ्जापरिमितं मधुना सेवनीयम् । कामलापाण्डुशोफादयो नश्यन्ति सिराश्च दृढा भवन्ति ॥ (व्यास)

१० अयःसिन्दूरम् (द्वितीयम्)

शुद्धमयश्चूर्णं ५ पलं, पारदगन्धककान्तानि प्रत्येकपलानि, तालकं १ तोलकं हंसपाददरदोऽर्द्धतोलकः, एतानि विचूर्ण्य विम्बीपत्ररसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा चक्रिकां विधाय शरावसम्पुटितं कृत्वा शतोत्पलकैः पुटो देयः । पुनर्भृङ्गरसेनेक्षुरक (नीरुगुब्बी) स्वरसेन च यामचतुष्टयं सम्मर्द्य पूर्ववत् पुटो देयः । पुनर्भृङ्गरसेनैको गजपुटो देयः । इदमौषधं चित्रकक्वाथेन दिनद्वयं मर्दयित्वा माषप्रमाणा वटीः कृत्वा रामठत्रिकटुककर्पूराणां समभागचूर्णाऽनुपानेन एका वटी दत्ता चेन्महासन्निपातश्वासकासक्षयमेहपाण्डुगुल्मादयो रोगा निवर्तन्ते । पथ्यादिक्रमो यथोचितः । (व्यास०)

११ अयःसिन्दूरम (तृतीयम)

शुद्धाऽयश्चूर्णकान्तगन्धकान् २-२ पलान्, पारदञ्चैकपलं खल्वे निक्षिप्य जम्बीररसेन दिनद्वयं मर्दयित्वा शुष्कां चक्रिकां शरावसम्पुटेऽवरुद्ध्य शतोत्पलकैः पुटो देयः । एवं रीत्या कुमारीरसेन चत्वारः पुटाः देयाः । एतत् सिन्दूरं भवति । गुञ्जाद्वयपरिमितस्य मधुना सह सेवनादस्थिगतज्वरादयो नश्यन्ति । भृङ्गराजमूलचूर्णेन पित्तपाण्डुगुल्मादयः, त्रिकटुकलेह्येन गर्भशूलाऽजीर्णवातव्याधयः, आर्द्रकचूर्णेन वान्तयोऽन्नद्वेषश्च नश्यति । मण्डलपर्यन्तं सेवनाच्छरीरं वज्रसमं भवति ॥ (अगस्त्य०)

१२ आनन्दभैरवरसः (महदादिः) १

गौरीपाषाणदरदमनःशिलातालकटङ्कणविषगन्धकसव्वीर (दालचिकना) मृद्दारशृङ्गतोट्टिपाषाणानि विधिना शुद्धानि चीनभाण्डे मुखपर्यन्तं बालिकानां मूत्रमापूर्य उपरितनानां सूक्ष्मं चूर्णं निक्षिप्य पञ्चमृत्तिका दत्त्वा हस्तत्रयपरिमिते भूगर्ते भाण्डं निधाय गर्तमापूर्य चत्वारिंशद्दिनान्युपेक्ष्य मुखमुद्रणमुद्धाट्यौषधं गृहीत्वा कुमारीरसेन दिनत्रयपर्यन्तमनारतं मर्दयित्वा चक्रीकृत्य शरावसम्पुटितं कृत्वा मृदा सन्धि निरोध्य भूपुटो देयः (अन्तःपुटो देयः) । पुनश्चैलदौषधं खल्वे निक्षिप्य शुद्धपारदं मयूरतुत्थभस्म चैकैकपलं, गुरुभस्म (सव्वीरभस्म) सपादतोलकं मिश्रयित्वा पीतपुष्पधत्तूरपत्ररसेन यामद्वयं मर्दयित्वा माषमात्रा वटीश्छायाशुष्काः कृत्वा शिवशक्तिगणे-

शानभ्यर्च्य रजतसम्पुटे ओषधं स्थापनीयम्। अनुपानविशेषैः सह सेविता चेज्ज्वराः सर्वेऽपि निर्मूला भवेयुः। गोधूमरोटिका, गोधूमयूषः, उष्णोदकमन्नञ्च पथ्यम्। क्षारलवणतिन्तिडयो यत्नतो वर्ज्याः। अमृतसञ्जीवनरसोक्तशाकादीनि सेव्यानि। (व्यास०)

टि०—कृत्रिमपाषाणेषु व्यासेऽगस्त्ये च नपुंसकत्वमेव स्वीकृतमस्तीति शाब्दिकैरविस्मरणीयम्, शेषे नपुंसकमित्यस्य विषयत्वात्।

१३ आनन्दभैरवरसः (द्वितीय.)

शुद्धपारदधत्तूरबीजाऽमलसारगन्धकलवङ्गविषम्रष्टाऽतिविषादरदसहस्रभेदीनि समभागानि विचूर्ण्य भङ्गाक्काथेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा गुञ्जापरिमितां वटीं छायाशुष्कां विदध्यात्। शुष्कदाडिमीफलत्वक्, श्वेतजीरकं, शाल्मलीनिर्यासः, जातीफलश्चैतानि समभागानि चूर्णीकृत्याऽर्द्धतोलके एकां वटीं संयोज्य महिषीदध्ना सह दद्यात्। एतेन शीतपित्तश्लेष्मातिसारमूलग्रहणीसङ्ग्रहण्यादयो निवर्तन्ते। निम्बकुसुमं, मेथिकाचोष्यं, रम्भाकुसुमं, औदुम्बरफलं, शुष्कतिन्तिडीपत्रादीनि पथ्यानि। (अगस्त्य०)

१४ आनन्दभैरवरसः (तृतीयः)

शुद्धदरदविषनागरक्षुद्रपिप्पलीमरिचटङ्कणानि समभागानि जम्बीरनिर्गुण्डीपत्रस्वरसाभ्यां प्रति यामद्वयं विमृद्य गुञ्जाप्रमितां वटीं कृत्वा मरिचक्काथेन सङ्घृष्य सेविता चेच्छीतमन्दवातज्वरा नश्यन्ति। त्रिचतुरैर्लवङ्गैः सह ताम्बूलदले संवेष्ट्य भक्षिते कण्ठाऽवरोधाऽङ्गशूलशीतरोगा निर्मूलतां यान्ति। रास्नामरिचाऽऽकारकरभाणां क्काथेन सेवितश्चेच्छिरोभारसहितास्सर्वे ज्वरा नश्यन्ति। स्तन्येनाऽञ्जने कृते शिरोभारमान्द्यनेत्रदोषा ज्वरदोषाश्च शाम्यन्ति(व्यास०)

१५ इन्द्रवारुणीरसः

शुद्धरसकर्पूरबब्बूलनिर्यासज्योतिष्मतीबीजलवङ्गैलेय (मुसाम्बरम्) · (मुक्करकुण्टविलु) प्रतिद्वितोलकानि, मरिचशुद्धजयपालचाङ्गेरीबीजानि प्रत्येकतोलकानि, पिप्पली ५ तोलिका चेति द्रव्याणि सम्यक् चूर्णीकृत्य वस्त्रेण शोधयित्वा खल्वे निक्षिप्य सार्धैकशतेन्द्रवारुणिकाफलरसेन मर्दयित्वा मुद्गप्रमाणा वटीः कृत्वा छायाशुष्का विधाय रोगिणां बलाबलं विज्ञायैका वटी दत्ता चेद्रोगभूयिष्ठं मलं निःसारयति। एतेन पक्षवातप्रमेहसन्धिबन्धत्र्याहिकज्वरोपदंशश्वेतपीतनीलमेहाः, पार्श्वशूलाऽपतानकवाय्वादयो निर्मूला भवन्ति। अम्लरसो वर्ज्यः। (अगस्त्य०)॥

१६ ऋतुशूलनिवारिणी वटी

पुरातनस्तालगुडः १२ पलः, इन्द्रवारुणिकाफलरसः ४० तोलकः, अम्लं दधि (पुल्लपेरुगु) २० तोलकं, एतत्त्रयमप्येकस्मिन्मृन्मयपात्रे निक्षिप्य गुडपाकसमयं विज्ञाय तत्र टङ्कणसूर्यक्षारकाचलवणस्फटिकाजीरकौपरक्षारनरसारसैन्धवरामठकान्तसिन्दूराणि एकैकपलिकानि विचूर्ण्य पाके निक्षिप्य लशुनं, शिग्रुमूलत्वक्, श्वेतार्कक्षीरं, शुद्धजयपालबीजञ्च द्विद्वितोलकं सम्यग्विमृद्य पाके मेलयित्वा लेह्यपाको ग्राह्यः। एतल्लेह्यं रजस्वलायै चतुर्थदिने पूगीफलप्रमाणं दातव्यम्। ऋतुसम्बन्धिनस्सर्वे शूला नश्यन्ति। चतुर्थदिने सायं प्रातश्चेति वारद्वयं दद्यात् एवं द्वित्रर्तुषु प्रयोगे कृते ऋतुशूलप्रसूतिवातकटिवातपरिणामशूलादयो रोगा नश्यन्ति। गोतक्र, पुराणतण्डुलान्नं, चाङ्गेरी (पुलिचिन्ता) पत्रलेह्यं, आढकीखण्डयूषः, गोतक्रं, आर्द्रामलकचक्रिकाश्च पथ्याः॥ (व्यास०)

आर्द्रामलकचक्रिकानिर्माणप्रकारः—आमलकानि २० सेटकानि, लवणः ५ सेटकः, भ्रष्टाहरिद्रा १० तोलिका, भ्रष्टानि मेथिकाबीजानि २० तो०, घृतपक्वं रामठं ३ तो०, भ्रष्टजीरकं ५ तो०, लङ्कामरिचं ५ सेटकं, मेथिकापत्रं १० तो०, धान्यकं ५ तो०, कैडर्यपत्राणि ४० तोलकानि गृहीत्वा सर्वाण्युलूखले सक्षुद्य द्वित्राऽङ्गुलाश्चक्रिका निर्माय रक्षणीयाः। एता घृते परिपाच्य भक्षणेऽरोचकादिदोषनिवृत्त्यर्थं व्यवहरन्त्यान्ध्राः, तत्रैतासां नाम "उसिरिकवडियमुलु" इति (पाकशास्त्रे)।

१७ कस्तूरिकावटी (प्रथमा)

मृगमदः पादोनतोलकः, चन्द्रसारः १ तोलकः जातीफलं सपादतोलकं, तक्कोलवङ्गकेशरजातीपत्रमहाराष्ट्रीशुद्धरसकर्पूराणि प्रत्येकं सपादतोलकानि, एलाबीजं मरिचानि चैकैकपलानि, दरदरससिन्दूरगोरोचनानि प्रति पादतोलकानि गृहीत्वा सर्वाण्यपि द्रव्याणि स्तन्येन यामत्रयं मर्दयित्वा अनन्तमूलपलाशमूलयोरष्टभागाऽवशिष्टक्काथेन यामत्रयं विमृद्य मुद्गप्रमाणा वटी कार्या। स्तन्यानुपानेन सर्वे बालरोगा नश्यन्ति। ताम्बूलीदलैः संवेष्ट्य भक्षणे कृते तरुणानां ज्वरनाशो भवति। रोगोचितं पथ्यम्। (अगस्त्य०)

१८ कस्तूरिकावटी (द्वितीया)

मृगमदः पादतोलक., गोरोचनकेशरचन्द्रसारत्र्यग्निमधुकलवङ्गरससिन्दूरदरदचित्रकमूलत्वचः प्रत्येकं सपादपञ्चाणकं, शलाकारसकर्पूरं १४ आणकं, श्वेताऽपराजितामूलत्वक् (तेल्लगण्टिना) द्वितोलिका, सर्वाणि सर्पदंष्ट्रारसेन यामद्वयं विमृद्य चित्रकमूलत्वङ्मरिचाकारकरभव्याघ्रीमूलपिप्पल्यः प्रत्येकपलमा-

नेन मिश्रितानामष्टभागावशिष्टक्वाथेन यामचतुष्टयं विमृद्य गुञ्जामितां वटीं विधाय स्तन्येन मधुना वा बालेभ्यो देया। अनुपानविशेषैः सोपद्रवास्सन्निपातादिरोगा नश्यन्ति। एतस्याऽनुपानक्वाथः—भूनिम्बं, पर्पटकं, वासामूलं, कुष्टं, विष्णुक्रान्ता, तिक्तपटोलः, आकारकरभः, त्रिकटुकं, अमृता, चित्रकं भार्ङ्गी चेति सर्वाणि प्रत्येकपलिकानि सञ्चूर्ण्याऽष्टौ भागान्विधायैकं भागं २४ तोलके जले निक्षिप्याऽष्टभागाऽवशेषितेन क्वाथेन मधुमिश्रितेन सहैका वटी सेवनीया। श्वासकासाद्युपद्रवयुता विषमशीतसन्निपातादयो निवर्तन्ते। आढकीयूषान्नं पथ्यं लङ्घनं वा विधेयम्। (व्यास०)

१९ कान्तसिन्दूरम् (प्रथमम्)

चुम्बकलोहं शकलीकृत्याऽजारक्तेन संयोज्य मृन्मयपात्रे निक्षिप्य सप्तकर्पटमृत्तिका दत्त्वैकविंशतिदिनपर्यन्तं भूगर्ते स्थापनीयम। एतत्पञ्चपलमितं गृहीत्वा गन्धकाऽयश्चूर्णपारदान् पञ्चपञ्च पलिकान् खल्वे निक्षिप्य जम्बीररसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा शुष्कां चक्रिकां क्षुद्रमृन्मयपात्रेऽवरुद्ध्याऽष्टयामपर्यन्तं गाढाग्निना विपचेत्। एतत्तण्डुलमात्रतो गुञ्जापर्यन्तं रोगबलाबलं निरीक्ष्योपयोज्यम्। अजाक्षीरेण सेवितश्चेद्धृदयज्वलनसङ्ग्रहणीकामलापाण्डुश्वयथुवातमेहान्निर्मूलीकरोति। रक्तवृद्धिर्भवति शरीरमयस्सदृशञ्च। मुद्गाः, सूरणं, तुवरी, पटोलं, शिग्रुशिम्बी, भिण्डिका, मेथिकापत्रं, शरहञ्चिका, औदुम्बरफलानि, गोघृतक्षीरतक्राणि, शुष्कमामलककलेह्यञ्च पथ्यम्। तिन्तिडी, मारकवस्तूनि, स्त्रीस्पर्शनञ्च सुतरां वर्जनीयम्। (अगस्त्य०)

२० कान्तसिन्दूरम् (द्वितीयम्)

पूर्वोक्तरीत्या शुद्धकान्तं गन्धकञ्च प्रतिपञ्चपलं गृहीत्वा जम्बीररसेनैकयामं मर्दयित्वा गजपुटं देयम्। पुनः प्रतिपुटे पञ्चपलं गन्धकं नियोज्य त्रीणि गजपुटानि दत्त्वा कूपिकायां स्थापनीयम्। तदनन्तरं चित्रकमूलत्वचं गन्धकञ्च प्रति पञ्चपलं खल्वे स्तन्येनैकयामं कुक्कुटाण्डश्वेतद्रवेण च द्वियामं मर्दयित्वा शरावसम्पुटेऽवरुद्ध्य गजपुटपाकात्पलाशकुसुमवद्रक्तवर्णं भस्म भवति (अत्राऽग्निस्थितौ सन्देहः? मूलमन्वेष्टव्यम्)। एतच्चक्रिकां पूर्वोक्तमौषधञ्च खल्वे निक्षिप्याऽर्कक्षीरेण विमृद्य शुष्कचक्रिकां शरावयोरवरुद्ध्य गजपुटदानात्कृष्णवर्णमिश्रितं सिन्दूरं भवति। एतत्तण्डुलप्रमाणं मधुना मण्डलपर्यन्तं सेवितं सूक्ष्मसिरागतगुप्तवातव्याधिमण्डवातगुल्मजलोदरोदरवायुचण्डमारुतव्याधीन्नाशयति॥ (अगस्त्य०)

२१ कालकण्ठमेहनारायणसिन्दूरम्

रसभस्म ८ तोलकं, गन्धकं तालकञ्चैकैकतोलकं, मनःशिला रससिन्दूरं यशदभस्म चाऽर्द्धाऽर्द्धतोलकं, दरदं, तन्तुरजतं, वङ्गनागताम्रभस्मानि प्रत्येकं पाद तोलकानि, तनुतरसुवर्णपत्रमर्द्धतोलकं, शुद्धं विषमेकतोलकं, एतानि सम्यक् चूर्णितानि खल्वे निधाय पीतपुष्पभृङ्गरसेन कन्यारसेन च प्रतियामचतुष्टयं, पलाशपुष्पद्रवेण पारसपिप्पलपुष्परसेन च प्रतियामद्वयं मर्दयित्वा शोषयेत्। ततो रक्तकार्पासपुष्पाणि दशतोलके जम्बीररसे निधायाऽऽतपे स्थापनीयानि। जम्बीररसो यदा श्वेतरूपो भवेत्तदा पुष्पाणि निष्कास्य तेनैव (जम्भाम्भसा) यामचतुष्टयमनारतं मर्दयित्वा शुष्कं चूर्णं काचकूपिकायामवरुद्ध्य वालुकायन्त्रे दीपमध्यतीक्ष्णाग्निभिः प्रत्यष्टयामं पाकान्नीलवर्णमिश्रितं रक्तवर्णमौषधं सम्पद्यते। एतत्सिन्दूरमर्धगुञ्जापरिमितं मधुना सेवितं चेद्दुष्टगुल्ममहोदरशूलपाण्डुश्वयथ्वग्निमान्द्यदीर्घातिसारमूलग्रहण्यादयो बद्धमूलरोगा निवर्तन्ते। गुडूचीसत्त्वेन सह मण्डलपर्यन्तं सेवितं सदस्थिनाडीमांसगतप्रमेहान् गर्भकारकादीन् (सहजव्याधीन्), स्वप्नस्खलनं, मुखपाकं, सूर्यावर्तादिशिरोरोगान् सर्वान्नेत्ररोगांश्च नाशयति। अनेन रक्तवृद्धिर्धातुस्तम्भौ जायेते। पथ्यं रोगानुरूपम् (व्यास०)

२२ कालाग्निरुद्रभैरवरसः

पारदवैक्रान्ततन्तुरजतताम्रलोहसुवर्णमुक्तानां भस्मानि कान्तसिन्दूरञ्च सर्वाणि समभागानि खल्वे निक्षिप्याऽऽर्द्रकभृङ्गचित्रकमूलत्वग्रसैः प्रत्येकदिनं मर्दयित्वा विशोष्य गुञ्जाप्रमाणं मधुना सेवनीयम्। एतेनाऽजीर्णाऽन्नद्वेषाऽतिसारमेहज्वरा निवर्तन्ते। ग्रहणीपाण्डुमहावातश्वेतहारिद्रबहुमूत्रमधुमेहादयो नश्यन्ति। शरीरं पुष्टं स्वर्णच्छायञ्च भवति। पथ्यक्रमो रोगोचितः। (व्यास०)

२३ कालिङ्ग्यादिलवणम्

इन्द्रवारुणीफलरसः २४ तोलकः, अम्लं दधि १० तो., काचलवणं, सौरपर्पटौषरटङ्कणक्षाराः, कान्तभस्म, शुद्धपारदगन्धकौ चैतानि प्रत्येकं सपादतोलकानि, समुद्रलवणं १२ तो० श्वेतजीरकमर्धतोलकं, शुद्धजयपालबीजमेकतोलकं गृहीत्वा चूर्णीकृत्य पूर्वोक्तरसे दध्नि च मेलयित्वा मृद्भाण्डे क्षाराऽवशेषं पाकं कृत्वा स्थापयेत। एतद्गुञ्जामितं तालगुडेन पुराणगुडेन वा प्रातः सायं सप्ताहपर्यन्तं सेवनीयम्। एतेन वातजलमांसरुधिरपूरितमहोदराणि, मूत्राऽवरोध. लिङ्गनालशोथः, शूलसूतिकावातादयो नश्यन्ति।

अण्डवायुपाणिपादशोथाश्च निवर्तन्ते। वातिकान्विवर्ज्यैच्छापथ्यम्॥ (व्यास०)

२४ कृष्णाभ्रसिन्दूरम्

कृष्णधान्याभ्रकमर्कमूलत्वक्कषायक्षीरसकण्टकमारिपपत्रस्वरसवटजटाकषायक्षीरपीतभृङ्गराजस्वरसैः क्रमेण चतुर्यामं विमृद्य चक्रिकां विधाय सम्यक् शोपयित्वा प्रत्यौपध गजपुटं दद्यात्। अन्ते प्रत्येकपले सार्धसप्तमापिकामूपरक्षारसुधां संयोज्य स्तन्येनैकयामं मर्दयित्वा शुष्कां चक्रिकां विधाय पक्वेष्टिकया मूपां निर्माय तस्यां चक्रिकामवरुद्ध्य गजपुटो देयः। विद्रुमवर्णं निश्चन्द्रिकमभ्रकसिन्दूरं निष्पद्यते। एतच्च सिन्दूरं सर्वरोगहरं भवति। विल्वादिरसायनेन सह पित्तपाण्डुकामलामेहान्नाशयति। खण्डार्द्रकचूर्णेन लेह्येन वा पित्तगुल्मपुराणशूलादीन्नाशयति। श्वेतव्याघ्री (तेल्लवाकुडु) फलचूर्णेन सह श्वासकासाद्युपद्रवसहितक्षयरोगो निर्मूलो भवति। मधुना वातमेहा, गोघृतेन मधुमेहः, त्रिकटुकेन ज्वरादयश्च नश्यन्ति। अयःसिन्दूरमभ्रकसिन्दूरञ्च भृङ्गराजचूर्णे मेलयित्वा मधुना सहैकविंशतिदिनपर्यन्तं मण्डलपर्यन्तं वा सेवनेन मेहज्वरमेहव्रणादयो नश्यन्ति। (अगस्त्य०)

टि०—विल्वादिरसायननिर्माणक्रम = विल्वमूल छायाशुष्क कृत्वा चूर्णीकृत्य ३० पलपरिमित २८८ तोलके जले निक्षिप्य मृत्पात्रे ४८ तोलकावशेष पाक कृत्वा बीजपूररस २० तोल्क, दाडिमफलरस २० तोल्क, पुराणतालगुड १२ तोल्क, पूर्वोक्तपाके निक्षिप्य लेहपाकसमये नागरद्विपल, पिप्पलीमूल ३ पल, पिप्पली १॥ पला, शटी सपादतोलिका, तालीसपत्र सपादतोल्क, नागकेशर २ पल, मरिचानि ४ पलानि, चित्रकैलाबीजे १–१ पले, त्वक् १ तोलिका, श्वेतजीरक ४ तोल्क गृहीत्वा वस्त्रपूत चूर्णयित्वा लेह्यपाके संयोज्य गोघृत ५ पलं, मधु ३ पल मिश्रयित्वा लेह्यपाकेनाऽवतार्य आमलकप्रमाण प्रत्यह सेवनीयम्। एतेन पित्तकामलापाण्डुमेहपैत्यवमनहिक्काश्वासकासशूलपीनससङ्ग्रहण्यन्नद्वेपलालास्रावाऽरोचकोदरज्वलनशरीरभ्रमणादयो रोगा नश्यन्ति। अनेन लेह्येनाऽय सिन्दूर कान्तसिन्दूर वा मयोज्योपयुक्ते सति महती धातुपुष्टी-रक्तवृद्धिश्च भवति॥

२५ क्षयकुलान्तकरसः

तालकमौक्तिकसुवर्णरजतदरदभस्मानि समभागानि, चन्द्रसारः (भीमसेनकर्पूरम्) विद्रुमभस्म च सर्वचतुर्थांशं खल्वे निक्षिप्य वासापत्ररसेन यामचतुष्टयं, श्वेतव्याघ्रीरसेन च यामद्वयं विमृद्य चक्रिकां विधाय वालुकायन्त्रे शिवशक्तिपूजापुरःसरं यामद्वयपर्यन्तं दीपाग्निना पाकं विधाय स्वाङ्गशीतलं ग्राह्यम्। एतदर्धगुञ्जापरिमितं मधुना सहाऽर्द्धमण्डलमेकमंडलं वा सेवितं सन्मेहरक्तश्वासकाससंयुक्तान् सकलोपद्रवयुतान् पण्णवतिसङ्ख्याकक्षयान्नाशयति। मधुमेहबहुमूत्रमेहज्वरकुष्टादीनपि निकृन्तति। शरीरं सुवर्णच्छायं करोति। पथ्यक्रमस्तु यथोचितः। तिन्तिडीरसो धूमपानञ्च दूरतो वर्ज्यम्। (अगस्त्य०)

२६ गण्डौषधम्

कुन्दनपत्राणि (अपरञ्जी), वस्त्ररजततन्तवः, शुद्धमुक्ता, विद्रुमः, यष्टिमधुकं, लवङ्गं, पिप्पली, हद्राक्षः, कुष्टं, आकारकरभः, कृष्णसारशृङ्गम, रससिन्दूरम्, वासामूलञ्चैतानि समभागानि वस्त्रशोधितानि स्तन्येन दिनद्वयं विमृद्य शोपयित्वा मधुनि मेलयित्वा रजतसम्पुटे स्थापनीयम। सन्निपातप्रकोपे रजतशलाकया किञ्चिदुद्धृत्य रसनायां मर्दनीयम्। एतेन जिह्वाकण्टकाः परस्त्रीसाङ्गत्यदोषः वमनहिक्काद्युपद्रवयुतास्त्रयोदश सन्निपातसञ्जातविकारास्सर्वेऽपि नश्यन्ति। एतद्गण्डौपधं तालुमूले निधाय सावधानतया रस आस्वादनीयः। (व्यास०)

२७ गन्धकरसायनम् (प्रथमम्)

अमलसारगन्धकचूर्णं चतुर्थांशघृतेन सह द्रवीकृत्य गोक्षीरे निर्वापयेदिति साधारणी शुद्धिः। विशेषतो गोक्षीरेण भावयित्वा भूपुटविधानेन गालयित्वा गोक्षीरे निर्वापयेत्। अस्य विवरणम्—गोक्षीरेण पादभागन्यूनं मृद्भाण्डमापूर्य मुखोपरि सूक्ष्मं वस्त्रं बद्धोपरि गन्धचूर्णमास्तीर्य शरावेण पिधाय सन्धिबन्धनं कृत्वा एतत्पात्रं गर्ते भूसमं निधाय सन्धिपर्यन्तं मृदाऽऽलिप्य शरावोपरि २५ उत्पलकैः पुटो देयः। गन्धकं द्रवीभूय वस्त्रच्छिद्रैर्मणिवत् क्षीरे निपतति। परेद्युः प्रातरुद्धृत्योष्णोदकेन क्षीरस्थं गन्धकं प्रक्षाल्य चूर्णीकृत्याऽऽतपे शोपयेत् एपैका भावना। एवमेव गोदधि, इक्षुरसः, तण्डुलीयकरसः, जलकुम्भी (अन्तर्तामराकु), भूकूष्माण्डं, वास्तुकं, भृङ्गराजः, त्रिफला, चातुर्जातकं, चित्रकं, आर्द्रकं, (छिन्नियाकु), मधु, पञ्चामृतं, कृष्णतुलसी, गोघृतञ्चैतेषां द्रवेषु पूर्वोक्तप्रकारेण मर्दनादिविधिपूर्वकशोधितं गन्धकं ४ पलं, गोक्षीरे शोधितं हेमक्षीरीचूर्णं ४ पलं, वाकुचीचित्रकमूलत्वग्रास्नाकृष्णहिंस्रामूल (नल्लवुप्पिवेरु) तालीसपत्राऽश्वगन्धापारसपिप्पलकण्टकिपलाशमूलत्वक्चम्पकपुष्पाणां प्रत्येकपलं गृहीत्वा सम्यक् चूर्णीकृत्य पलत्रयां सितोपलां निक्षिप्य मधुना यामचतुष्टयं विमृद्य चीनपात्रे स्थापयेत्। पादतोलकमेतल्लेह्यं प्रातः सायमेकमण्डलमर्द्धमण्डलं वा सेवनीयम्। अनेन मेहग्रन्थयः, क्षुद्रपिडिकाः, कृष्णमेहः, मेहवायवः, मेहशूलाः, उपदंशाः, लिङ्गव्रणाः, योनिग्रन्थयः सूचीमुखीव्यापच्चेत्यादयो रोगा निवर्तन्ते। (व्यास०)

२८ गन्धकरसायनम् (द्वितीयम्)

पूर्वोक्तप्रकारेण शोधितं गन्धकं ६ पलं, त्रिकटुकचित्रकवाकुचीबीजान्येकैकपलानि चूर्णितानि गन्धेन सह मेलयित्वा समभागां शर्करां मिश्रयेत् । अथवा पञ्चदशपलायाः शर्करायास्तन्तुलीं विधाय सर्वमपि चूर्णं पाके निक्षिप्य द्वे द्वे पले घृतमधुनी मिश्रयित्वा प्रत्यहं कलाद्वयप्रमाणं सेवनीयम् । एतेन सर्वोपदंशकुष्ठव्याधयो मेहग्रन्थयश्च निवर्तन्ते । दुग्धान्नं पथ्यम् । (व्यास०)

२९ गन्धकामृतलेह्यम्

शुद्धममलसारगन्धकं ८ पलं, आमलकीचित्रकत्वङ्नागरमरिचाऽश्वगन्धाहरीतकीविभीतकपिप्पल्य एकैकतोलिकाः, पद्मबीजं, चीनहेमक्षीरीं, मुशलीञ्चैकैकपलिकां गृहीत्वा चूर्णीकृत्य २४ तोलके गोक्षीरे १६ पलां सितोपलां संयोज्य मृद्भाण्डे पाकसमये पूर्वोक्तममलसारगन्धकं मेलयित्वा १० पलं मधु निक्षिप्य लेह्यपाकमवतार्य प्रत्यहमामलकप्रमाणं प्रातःसायमेकविंशतिदिनपर्यन्तं सेवनीयम् । एतेन शारीरव्रणविपादिकाकुष्ठोपदंशकुक्कुटशिखोपदंशयोनिकुट्टिमनीलमेहादयो नश्यन्ति धातुवृद्धिश्च भवति । क्षीरान्नं, गोदधि, मुद्गमाषवटकाश्चाऽनुकूलाः । (अगस्त्य०)

३० गोरोचनवटी (प्रथमा)

शुद्धकान्तविभीतकाऽऽमलकबब्बूलपुष्पगोरोचनकुष्ठचित्रकमूलानि एकैकपलानि, मनःशिला रसकर्पूरश्च प्रतिसपादतोलकं खल्वे निक्षिप्य चूर्णीकृत्य (कलिंजरु) रसेनैकादश दिनानि मुक्तावर्षीरसेन च दिनद्वयं मर्दयित्वा मुद्गप्रमाणा वटीः कुर्यात । मधुमिश्रितस्तन्येन बालानां सन्निपाताऽग्निमान्द्यदोषाः शीताधिक्यश्च नश्यति । अनुपानभेदाच्चाऽन्यरोगेषु यथायथमुपयोज्यम् । (अगस्त्य०)

३१ गोरोचनवटी (द्वितीया)

गोरोचनकेशररसकर्पूररससिन्दूराऽभ्रसिन्दूरहिमसारैलाबीजलवङ्गकुष्ठजातीफलाऽऽकारकरभाणि समभागानि विचूर्ण्य षोडशभागाऽवशिष्टेन श्रीचन्दनक्वाथेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वाऽष्टभागावशिष्टेन लवङ्गक्वाथेनैवमेव शतपत्राऽर्केण (गुलाबजल) च यामद्वयं विमृद्य गुञ्जामाना वटी कार्या । बालकानां स्तन्याऽनुपानेन देयाऽनया कण्ठकुब्जप्रभृतयस्सन्निपाता निवर्तन्ते । अनुपानविशेषैः श्लेष्मज्वरशीतज्वरवातसन्निपातदोषधनुर्वातसर्वाङ्गशूलादयो नश्यन्ति । बालानां मातुः पथ्यं देयम् । (व्यास०)

३२ चण्डमार्तण्डरसः

बद्धलवणं, मल्लगौरीपाषाणयोर्भस्म, कान्तसिन्दूरं, गन्धकं, तालकभस्म, मृद्दारशृङ्गं, रसभस्म चैतानि सूक्ष्मचूर्णितानि काचकूपिकायां निक्षिप्य यामचतुष्टयं क्रमाग्निना पक्वौषधं ग्राह्यम् । एतत्तण्डुलपरिमाणं सेवितं सत्सर्वान्रोगान्नाशयति । स्तन्येन, मधुना, त्रिकटुकक्वाथेन वा सेविते विषदोषाः सन्निपातज्वराश्च निवर्तन्ते । पथ्यं यथोचितम् । (व्यास०)

३३ चतुर्विधवन्ध्यत्वहरतैलम्

क्षुद्रैरण्डबीजतैलं, कपिलागोक्षीरं, नारिकेलजलं, षाण्मासिकमम्लमण्डं प्रत्येकं १२० तोलकं, औदुम्बरसीधु कादम्बरी (क्षुद्रखर्जुरीसीधु) च ८०-८० तोलकं, वनतुलसी (रजगुर), कृष्णतुलसी, जलपिप्पली (बुक्किनाकु) कृष्णकाकमाचीकोकिलाक्षक्षुद्रकारवेल्लानां पत्राणि, पारसपिप्पलपुष्पाणि (गेङ्गरावि चेट्टु), भूतुलसीपत्रं (अजगन्धा), ब्राह्मी (वल्लारी), (चेप्पुतट्टाकु), भूकूष्माण्डपत्रं (नेलगुलमडिआकु), वृहदग्निमन्थपत्रं (बुड्डुतकाळी), कर्पूरवल्ली (पत्रयवानिका, कप्परल्ली) चेतिवनस्पतयः । मरिचचीनहेमक्षीरीनागरजातीपत्रकेशरमृगमददरद्खाखसैलाबीजजातीफलमायाफलगोरोचनरसकर्पूराणि प्रत्येकं सपादतोलकानीति आपणद्रव्याणि । नागरङ्ग (चीनापण्डु तै० सन्तरा० हिं०) द्राक्षारक्तरम्भादाडिमीबीजपूरखर्जूरीणां फलरसाः प्रत्येकं ३० तोलकपरिमिताः । अथ तैलपाकक्रमः- आदौ सर्वान्वनस्पतींश्छायाशुष्कान्विधाय चूर्णीकृत्याऽऽपणद्रव्याणि वस्त्रशोधितानि कृत्वा एरण्डतैलादिकादम्बरीपर्यन्तान्, द्राक्षादिखर्जूरीफलान्तान्द्रवान् महति मृत्पात्रे निक्षिप्य तैलावशेषं पाकं कृत्वा पूर्वोक्तचूर्णानि सर्वाणि मेलयित्वा मन्दाग्निना पाकं विधाय स्वाङ्गशैत्ये गोरोचनं, मृगमदं, रसकर्पूरं, हिङ्गुलञ्चैतच्चतुष्टयमपि चूर्णीकृतं तैले निक्षिप्य सम्यगवलोड्य मुखबन्धनं विधाय १० दिनपर्यन्तं निर्वातप्रदेशे संरक्षणीयम् । ततः प्रातः सायं प्रत्यहं पादतोलकपरिमितं तैलं दम्पतीभ्यां मण्डलपर्यन्तं सेवनीयम् । अयं गर्भधारणयोगोऽनुभवसिद्धः । (अगस्त्य०)

३४ चित्रानन्दभैरवरसः

शुद्धदरदविषटङ्कणत्रिकटुकजयपालबीजानि समभागानि जम्बीररसेन यामचतुष्टयं विमृद्य गुञ्जाप्रमाणां वटीं कृत्वा मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन, त्रयोदशसन्निपातेषु प्रयोजयेत ।

३५ चिन्तामणिरसः

शुद्धं पत्रतालकं, सञ्चीरं, मल्लगौरीपाषाणदरदपारदाश्मभेदि (कार्शाम) स्फटिकापालतुत्थौपरक्षारशिलाक्षारटङ्कणानां भस्मानि, सैन्धवं, अयस्ताम्रसिन्दूरे, मनःशिला, लवङ्गं, एलाबीजं, त्रिफला, श्रीगन्धचूर्णं (श्वेतचन्दनं), देवदारु, यवानिका, कुष्ठं, नागकेशरं, विष्णुकान्ता, खुरसानिका, कटुरोहिणी, जातीफलं, द्राक्षा, यष्टिमधुकं, नरसारः, चन्द्रसारः, जातीपत्रं, खर्जूरीफलं, लशुनं, त्रिकटुकं, जयपालश्चेतेषु शोधितव्यवस्तूनि सम्यक् शोधयित्वा भर्जनीयवस्तूनि स्वर्णच्छायं भर्जयित्वा सर्वाणि चूर्णीकृत्य पीतभृङ्गनिर्गुण्डीविष्णुक्रान्तारसैः प्रत्येकेन सप्तदिनं मर्दयित्वा कृष्णतुलसीरसेनैकदिनं विमृद्य मुद्गप्रमाणा वटीः कृत्वा शङ्खे निक्षिप्य शिवशक्तिगणपतिपूजां विधाय सुवासिनीब्राह्मणपूजाञ्च कृत्वाऽन्नदानादिना सन्तोष्याऽनन्तरमेतदौषधमुपयोक्तव्यम । चन्द्रसारतक्कोलशिलातन्त्वा (कलनार) हुल्लीपुष्पमुञ्जातकानां समभागचूर्णे समां सितोपला मिश्रयित्वा पादतोलकपरिमिते चूर्णे चिन्तामणिवटीमेकां संयोज्य मधुना सह दद्यात् । अनेन रक्तक्षयश्वासकासादयो निवर्तन्ते । पुष्करपुष्पक्वाथेनाऽण्डवायवः, अश्वगन्धाचूर्णेनाऽन्त्रवृद्धिर्नश्यति । किञ्च-भृङ्गरसेन श्वासकासौ, जम्बीररसेन भृङ्गरसेन वा वटीं संघृष्य नेत्राञ्जने कृते शुक्लपटलादयः षण्णवतिर्नेत्ररोगा नश्यन्ति। सकलसङ्ग्रहणीनां शर्करायुक्तरम्भापुष्परसेन त्रिफलाकषायेण वा देयः । कामलाश्वयथुरोगयोर्मरीचचूर्णमिश्रितगोमूत्रेण देयम । निम्बपत्रविभीतकीमरिचनागराणां चूर्णेन मधुमिश्रितेन सह विषवातज्वराणां, आर्द्रकरसेन सुखसन्निपातिनां देयम ।ज्वरसञ्जातदाहे शर्करया, चतुष्षष्टिविषाणां जम्बीररसेन सङ्घृष्य क्षतस्थाने लेपनीयम । वृश्चिकदंशे जलेन क्षतस्थाने लेपनीयम । नेत्राञ्जनमपि देयम् । अन्तर्ज्वराणां दध्ना, त्र्याहिकज्वराणां कारवेल्लक्वाथेन, पित्तश्लेष्मज्वराणामार्द्रकरसेन, चतुरशीतिवातानां निर्गुण्डीरसेन, कपालकुष्ठग्रन्थिशूलविषरोगेषु त्रिकटुकचूर्णेन दातव्यम् । (व्यास०)

३६ ज्वरकुठाररसः

एकपलं गौरीपाषाणं सूक्ष्मवस्त्रे पोट्टलीं बद्ध्वा चतुष्षष्टितोलकशिलासुधाखण्डे दोलायन्त्रेण याम द्वयं स्वेदयित्वा ग्राह्यम । एवं शोधितं गौरीपाषाणं, गन्धकं, तालकं, तुत्थं (पालतुत्थं), कटुरोहिणी, जयपालबीजानि प्रत्येकमर्धतोलकानि सम्यग्विचूर्ण्य क्षुद्रकारवेल्लपत्ररसेन यामचतुष्टयं विमृद्य माषप्रमाणां वटीं कृत्वाऽऽर्द्रकरसेन दद्यात । शीतप्रधानज्वरा नश्यन्ति । एतस्याऽनुपानचूर्णम्=नारङ्गीत्वङ्नागरपिप्पलीमरिचाकारकरभानां समभागानां विचूर्ण्याऽस्मात्पञ्चतोलकेन मधुमिश्रितेन चूर्णेन सह दिनत्रयसेवनात् उग्रज्वरसन्निपातादयो निवर्तन्ते । दोषप्राबल्ये सति वक्ष्यमाणं वीरभद्राञ्जनमपि नेत्रयोर्योज्यम । पित्तप्रकृतीनां शुष्कनिम्बितैपथ्योपयोगः कार्यः । (व्यास०)

३७ ज्वरगजाङ्कुशरसः

शुद्धः पारदः, अमलसारगन्धकः, विषं, ताम्रभस्म, हिङ्गुलकं, चित्रकत्वक्, पञ्चलवणानि, यवक्षारः, नवसारः, कान्तभस्म, हरीतकी, आमलकी, बिभीतकी, कटुरोहिणी, त्रिकटु, टङ्कणक्षारानि समभागानि सम्यग्विचूर्ण्य काचपात्रे निक्षिप्य अम्लदाडिमीफलरसेन भृङ्गराजरसेन चाऽऽप्लाव्य दशदिनपर्यन्तमातपे शोषयित्वा पुनः खल्वे निक्षिप्याऽम्लदाडिमीफलरसेन यामद्वयपर्यन्तं मर्दयित्वा शुष्कं चूर्णं काचपात्रेऽवस्थाप्य स्थापनीयम । गुञ्जाद्वयमार्द्रकरसेन सह सेवित विषमशीतज्वरशोषाऽग्निमान्द्यसन्निपातादीन्नाशयति । घृतं, पुराणगुडः, नवनीतं, आर्द्रकरसः, मधु, एतदनुपानैरष्टविधगुल्मरोगा नश्यति । वातपदार्थानन्तरं पथ्यम । तिन्तिडीतक्रधूमपानादया वर्ज्याः। (अगस्त्य०)

३८ ज्वरफणिगरुडरसः

शुद्धपारदगन्धकविषाणि एकैकतोलकानि, हिङ्गुलं ४ तो., जयपालबीजानि ८ तो० गृहीत्वैकत्र सञ्चूर्ण्य धत्तूरमूलक्वाथेन यामचतुष्टयं विमृद्य मरिचप्रमाणा वटिकाः क्रियेत । मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसाऽनुपानेन वातपित्तज्वरः, मरिचचित्रकमलविष्णुक्रान्ताभूनिम्बक्वाथेन सन्निपातदोषज्वरः, भृङ्गराजमूलबिम्बीमूलसकण्टककर्कन्धुमूलत्रिकटुकक्वाथेन विषपाण्डुश्वयथुज्वरा नश्यन्ति । स्तन्येन मधुना वा सङ्घृष्य सन्निपातज्वरेषु नेत्राञ्जनं देयम । पथ्यं रोगोचितम । अल्पमात्रया बालानामप्युपयोक्तव्यम । (व्यास०)

टि०—कृष्णभूपालीये एतन्मधिकं दृश्यते । तत्र सर्वेषां समभागतया योगं विधाय रसञ्च निष्कास्य धत्तूरस्थाने जम्बीरं नियोज्याऽऽश्रेयालेति नाम स्थापितम् । तदभिप्राये ग्रन्थकर्त्तैव प्रष्टव्य. ।

३९ ज्वराङ्कुशभैरवरसः

विशुद्धपारदः, विषं, गन्धकश्चैकैकपलं, जातीफलमर्धपलं, पिप्पली १॥ पला, सर्वं चूर्णीकृत्य ताम्बूलीस्वरसेनाऽऽर्द्रकस्वरसेन च प्रति यामद्वयं विमृद्य गुञ्जाप्रतिमां वटीं कृत्वा मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसाऽनुपानेन प्रयोगे वातपित्तश्लेष्मज्वरा नश्यन्ति । यवानीकल्केन द्रवेण वा शीतज्वरसञ्जातज्वरातिसारा

निवर्तन्ते । ज्वरसञ्जाताऽतिसारसङ्ग्रहण्यादीनामनुपानविशेषः=अतिविषा, मरिचं, नागरं, तालीसपत्रं, पोस्तु चेति प्रतिसपादतोलकं सङ्क्षुण्णं २४ तोलकजले मृन्मयपात्रे निष्क्वाथ्य चतुर्भागाऽवशिष्टमवतार्य भागद्वयं प्रकल्प्यैकभागमेकवटिकया सायमपरं प्रातश्च दद्यादेवं त्रिचतुराणि दिनानि कृते पूर्वोक्तव्याधयो निवर्तन्ते । अम्लदाडिमीफलरसेन वमनहिक्के नश्यतः। अश्वगन्धा, अनन्तमूलं, हेमक्षीरी (परङ्गीचक्का) भूकूष्माण्डं, कुमारीकन्दश्चेति प्रत्येकमेकपलं चूर्णीकृत्य पादतोलकेन चूर्णेन सहैका मात्रा सेविता चेदस्थिगतस्लोपद्रवो ज्वरो नश्यति । शीतपदार्था वर्ज्याः । (व्यास०)

४० ज्वराङ्कुशरसः (महदादिः) १

द्विपलं मल्लपाषाणं कारवेल्लतण्डुलीयकपत्ररसेन प्रति यामचतुष्टयं मर्दयित्वा शरावसम्पुटितं विधाय घनतया सप्त मृत्तिका दत्त्वोत्पलकत्रयेण पुटं दद्यात् । ततः खल्वे निक्षिप्य त्रिकटुककाथेन यामचतुष्टयं विमृद्य मुद्गपरिमिता वटीः कुर्यात् । मधुमिश्रितभ्रष्टजीरकचूर्णे पक्वां वटीं संयोज्य सेवनात्सर्वे ज्वरास्तत्क्षणं निवर्तन्ते। महाज्वरेषु त्रिरावृत्ता वटी योजनीया नाऽधिका । तिन्तिडी वर्ज्या। क्षीरान्नं गोधूमखण्डयूषश्चाऽनुकूलः । अपि चाऽनन्तमूलकाथेन वातज्वरः, नागरक्काथेन पित्तज्वरः, त्रिकटुकचूर्णमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन श्लेष्मज्वरः, धान्यकक्काथेन तापज्वरः, दध्ना सङ्ग्रहण्यतीसारौ, भृङ्गराज (गुण्टगलगरा) रसेन ज्वरसञ्जातसर्वाङ्गशूलादयो नश्यन्ति। नेत्राञ्जनमपि कर्तव्यम्। अतिसाराणां गिट्टिगेड्डुलुरसः (ऊषरे पलाण्डुसदृशकन्दो यस्य पत्राणि तालमूलीसदृशानि वृहन्ति च भवन्ति इति केचिद्वदन्ति अन्ये तु शृङ्गाटकमाहुः), अण्डवाते लताकरञ्जपत्ररसः, स्त्रीसम्भोगाय कामकस्तूरिका (मरुवक) पत्ररसः, सर्वसन्निपातेषु धत्तूरपत्ररसः, अजीर्णस्योष्णोदकम्, अर्शसां मूलकरसः, श्वयथुपाण्डुकामलासु भ्रष्टाऽतिविषाक्काथः, दुष्टसर्पादिदंशनस्य वीजपूररसः, वृश्चिकविषस्य गोमयम्, निम्बवीजतैलं, मयूरपिच्छभस्म च। एवमनुपानं यथोचितं देयम्। सर्वविषाणामपि यत्र क्षतं तत्र मयूरपिच्छभस्मना सह निम्बवीजतैलमिश्रितेन क्षतस्थानं लिम्पेत्। आर्द्रकरसेन नेत्रे अञ्जयित्वा यद्यधस्तात्पश्येत्पातालपर्यन्तं दृष्टिः प्रसरति। पिशाचग्रस्तानां केवलतिलतैलेन मिश्रयित्वा नेत्राञ्जनं कृतं चेद्भूतप्रेतपिशाचादयः पलायन्ते। रक्तमूलाशोंव्याधेर्नवनीतेन सहाऽऽसने लेपनीयम् । वन्ध्यास्त्रीणां परिपक्ववटवीजचूर्णेन ऋतुकाले एकवारं दद्यात्। एवमृतुत्रये। सर्पवृश्चिकोन्मत्तशुनकविषादौ पूर्वोक्तैतैलेन सह क्षतस्थाने नियोजनीयम्। इत्येवमेवाऽनुपानभेदेन सर्वव्याधिषु नियोजनीयम्। शिवशक्तिपूजा कार्या ॥ (अगस्त्य०)

४१ ज्वराङ्कुशरसः (द्वितीयः) २

शुद्धपारदगन्धकदरदटङ्कणविषतालकजयपालत्रिकटुत्रिफलाश्चैतानि प्रत्येकं सपादतोलकानि गृहीत्वा चूर्णीकृत्य भृङ्गराजरसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा मरिचप्रमाणा मात्राः कुर्यात् । कृष्णतुलसीरसेन वालकज्वराणां दातव्यम् । मरिचकल्केन वातशूलाः शीतज्वराश्च नश्यन्ति । चित्रकपिप्पलीमूलतिक्तपटोलभूनिम्बविष्णुक्रान्ताऽनन्तमूलयष्टिमधुकाऽऽकारकरभत्रिकटुत्रिफलाऽमृताखर्जूरीफलतालीसपत्रोशीरश्रीचन्दनानां क्वाथेन पुराणवातपित्तश्लेष्मद्वन्द्वाऽऽहिकाजीर्णज्वरा नश्यन्ति। षाण्मासिकवयस्कमारभ्य त्रिहायणवयःपर्यन्तं बालानामेकवारमौषधं मुद्गप्रमाणं देयम् । तरुणादीनां चणकप्रमाणम्। अम्लरसो वर्ज्यः शीतलवातपदार्थाश्च । अस्मिन्नौषधे रसगन्धकादयो विधिना शोध्याः । प्रसूतस्त्रीणां ज्वरादौ लवङ्गक्वाथेनोपयोजनीयम् । पथ्यं रोगोचितम् । (व्यास०)

४२ ज्वराङ्कुशरसः (महदादिः) ३

शुद्धगन्धकपारदविषमल्लपीतपुष्पधत्तूरवीजमरिचानि प्रत्येकतोलकानि विचूर्ण्य कृष्णधत्तूरपत्रस्वरसेन यामचतुष्टयं सम्यग्विमृद्य गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वाऽऽर्द्रकस्वरसेन सेविता चेद्विषशीतकफप्रधानज्वरा निवर्तन्ते । भ्रष्टक्षारमिश्रितपुराणतण्डुला उष्णोदकञ्च पथ्यम् । सप्ताऽष्टवर्षाभ्यन्तरीणवालानां सर्वपाषाणगर्भितान्यौषधानि वर्ज्यानि। कदाचिन्महावायुकठिनदोषमहासन्निपातकण्ठगतकफवातादिदोषैराक्रान्ताश्चेत्तदा तेष्वपि प्रयोज्यानि (व्यास०)

४३ ज्वराङ्कुशरसः (चतुर्थः)४

सम्यक् शुद्धमेकतोलकं मल्लपाषाणं पट्टतोलके गर्दमीक्षीरे चीनपात्रे मिश्रयित्वा द्वितोलकहिङ्गुले ग्रासो देयः। हिङ्गुलो बद्धो भवति। अयं तण्डुलमात्रो मरिचक्काथेन सह सेवितस्सर्वाञ्ज्वरान्नाशयति । अम्लरसो वर्ज्यः। आढकीयूषः, भिण्डिका, गोधूमखण्डयूपः, शुष्कं काकमाची (कामाता) फल शिग्रुशिम्बी, क्षीरान्नञ्च पथ्यम्। अत्रेयं सूचना=वितस्तिमात्रोच्छ्रिते मृत्पात्रेऽर्द्धभागं सिकतया पूरयित्वा सिकतामध्ये काचपात्रं निधाय तन्मध्ये दरदशकलं निक्षिप्य योगोक्तप्रकारेण ग्रासं दद्यादित्यनुसन्धेयम्। (व्यास०)

४४ तालकमात्रा

शुद्धपारदगन्धकमनःशिलाविषाणि दरदतालकहेममाक्षिकाभ्रकताम्रभस्मानि समानि विचूर्ण्य चाङ्गेरी (पुलिचिन्ता) जम्बीररसाभ्यामेकैकदिनं, अम्लदाडिमीफलचित्रकमूलत्वग्रसाभ्याञ्च द्विद्वियामं विमृद्य शुष्कां चक्रिकां शरावयोरवरुद्ध्य कुक्कुटपुटो देयः । एतद्गुञ्जामितं मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन सेवितं सदुन्मादमदमूर्च्छादीन्नाशयति । पथ्यं यथोचितम् ॥ (व्यास०)

४५ तालसिन्दूरम्

पत्रतालकं, रक्तमनःशिला, गौरीपाषाणं, मल्लं, तुत्थं (मैलतुत्तं), अमलसारगन्धकं, हिङ्गुलः, पारदः, सव्वीरं, रसकर्पूरं, अश्वदन्तपाषाणश्चैतानि खल्वे जम्बीररसेन दिनद्वयं मर्दयित्वा शुष्कीकृत्य कण्टकिपलाशशिग्रुरक्तकार्पासपार्श्वपिप्पलाऽर्ककुन्दनन्दिवर्धन (अनन्त म०) पुष्परसैः प्रत्येकं चतुर्विंशतितोलकैश्चैकत्रसम्मिलितैः स्तोकेन स्तोकेन रसेन मर्दयित्वा सर्वोऽपि रसः शोषणीयः । अन्ते शुष्कां चक्रिकां विधाय शरावसम्पुटितां कृत्वा गजपुटो देयः। स्वाङ्गशीतलं भृङ्गराजरसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा पूर्ववत्पुटो देयः । पुनर्जम्बीररसेन पूर्ववत्पुटदानेनैतदत्यन्तरक्तवर्णं सिन्दूरं भवति । एतन्मुद्गप्रमाणं मधुमिश्रितत्रिकटुकचूर्णेन सह दत्तं चेदसाध्यशूलाः, एकविंशतिमेहास्तद्ग्रन्थयश्च, अष्टादशकुष्टानि, वातपवित्रगण्डमालाराजव्रणगुल्मरोगादयः सङ्क्रामकव्याधिश्चैते सर्वे निर्मूला भवन्ति । आढकी, वालवृन्ताकं, शिग्रुशिम्वी, कृशरा, गोक्षीरं, उष्णोदकश्चेति सर्वं पथ्यम् । अम्लधूमौ वर्ज्यौ । (अगस्त्य०)

४६ त्रिकटुकगुटिका

गन्धकः, तालकं, आकारकरभः, सव्वीरं, विषं, रसकर्पूरं, गौरीपाषाणं, पारदः, जयपालवीजानि, त्रिकटुकं, त्रिफला, पिप्पलीमूलं, रास्ना, भार्ङ्गी, कटुरोहिणी, सैन्धवञ्चैतेषु शोधनीयानि शोधयित्वा सर्वाणि सञ्चूर्ण्य भृङ्गजलेन सप्तदिनानि विमृद्य गुञ्जापरिमितां वटीं कृत्वा छायायां विशोष्य भूनिम्बकषायेण सर्वज्वरेषु देयम् । जम्बीररसेन विषोपविषाणि, भृङ्गाद्भिः श्वयथुपाण्डुकामलावातपित्तमेहपिडिकादयः, आमलककाथेन सर्वाङ्गशूलाः, महिषीदध्नाऽतिसाराः, किञ्चिद्भृष्टजीरकेण गुल्माः, मधुना गर्भयातादयः, अम्लदाडिमीफलरसेन पित्तशूलवमनाऽरोचकभ्रम्यादयो नश्यन्ति । वातपदार्थवर्ज्यं पथ्यम् । (व्यास०)

४७ त्रिनेत्रसिक्थकम्

शुद्धपारदजयपालवीजनारिकेलकपालभस्मप्राचीनतालगुडानेकैकतोलकान् गृहीत्वा नारिकेलदुग्धेन यामद्वयं विमृद्य सिक्थरूपं विधाय रजतसम्पुटे स्थापयेत् । एतत्कण्टकितजिह्विकायां किञ्चिन्मात्रं घर्षणीयम् । कण्टकनीलिमादिदोषो निवर्तते । वमनहिक्के, ऊर्द्धश्वासः, इन्द्रियस्तब्धता, अङ्गशैथिल्यं, चित्तविभ्रमः, सुखसन्निपातज्वरः (स्त्रीसङ्गोत्पन्नः, यत्सकाशादुत्पन्नो ज्वरस्तत्स्त्रीजघनप्रदेशाद्रक्तमानीयाऽञ्जने कृते तच्छान्तिर्भवतीति दक्षिणदेशप्रसिद्धिः) एते नश्यन्ति । अथ सन्निपाते नस्यम्–क्षुद्रव्याघ्री (उस्तिवेरलु), द्रोणपुष्पीमूलं (तुम्मीवेरलु), पूतिकरञ्जपिण्याकश्च समभागमञ्जनवद्विमृद्य नारिकेलपुटके संस्थाप्य नस्यं देयम्। सुखसन्निपातो नश्यति। मत्कुणरुधिरमञ्जने देयम् । (व्यास०)

४८ धातुवृद्धिरसायनम्

भूमिकूष्माण्डं (भूचक्रकन्दम्), कृष्णमुशली, मुञ्जातकं (सालिमं), त्वक्, लवङ्गं, एलावीजानि, कोकिलाक्षः (नीरुगुव्वी), रजतभस्म, जातीफलं, जातिपत्री, ईसवगोलः (ईसवबोल), सुवर्णभस्म प्रत्येक पादतोलकानि चूर्णयित्वा समभागां शर्करां संयोज्य लेह्यपाकं विधाय प्रातः सायञ्च पादतोलकं सेवनीयम् । उपरिष्टाद्दशतोलकं गोक्षीरं पेयम् । वृद्धोऽपि तरुणायते । (अगस्त्य०)

४९ धातुवृद्धिलेह्यम्

भूकूष्माण्डकन्दं, पुष्करकन्दं, त्रिकटुकं, यष्टिमधुकं, कतकवीजं, अश्वगन्धा, भद्रमुस्ता, तक्कोलं, त्वक्, जीरकं, एलावीजं, मस्तगी, कासनीवीजं, नागकेशरं, भार्ङ्गी, जातीफलं, जातीपत्रं, अतिविषा, मुञ्जातकं, मुशलीकन्दं, मञ्जिष्ठा, उशीरमूलं, देवदारु, शतपुष्पा, चव्यं, क्षुद्रहरीतकी, कुटजः, तक्कोलम् (सलवमियालु), कुमुदकन्दं, ज्योतिष्मतीवीजं, पद्मवीजं, मदनकामेश्वरपुष्पं, अहिफेनं, महाराष्ट्री (मराठी मोग्गा), कपिकच्छुमूलकलशुनशरहस्त्रिकाकृष्णतुलसीवीजानि केशरं, चन्द्रसारः, रोचना चेत्यन्तिमत्रयं प्रत्येकमर्धतोलकं, अवशिष्टानि प्रत्येकं सार्धतोलकानि गृहीत्वा चूर्णीकृत्य सितोपलातालीशर्करावातामानि प्रत्येकं १२॥ पलिकानि, आक्षोटं, प्रियाल (सारपप्पु) श्चेति ४–४ पलं ग्राह्यम् । अथ लेह्यपाकविधिः—षण्णवतितोलकं गोक्षीरं शर्कराद्वयस्य चूर्णञ्च भाण्डे निधाय वातामादित्रयं घृतपक्वमहिफेनञ्च क्षिप्त्वा तन्तुलीं विधाय पूर्वोक्तसर्वद्रव्याणां चूर्णं मेलयित्वा १५ पलं गोघृतं, २४ तोलकं मधु च निक्षिप्य लेह्यं कृत्वा

ग्राह्यम् । आमलकप्रमाणं रजतभस्मना वङ्गभस्मना वा मेलयित्वा प्रत्यहं द्विवारं मण्डलपर्यन्तं सेवनीयम् । शतस्त्रीरमणक्षमो भवति । स्वप्नस्खलनं निर्मूलं जायते । रक्तवृद्धिर्धातुपुष्टिश्च भवति । (व्यास०)

५० नवपाषाणद्रावकम्

मल्लसञ्चीरगौरीदोङ्गिमूषिक (यलिका) तालकोङ्किपाषाणानि, विडसैन्धवसामुद्रसौवर्चलौपरलवणानि, स्फटिका, टङ्कणं, मनःशिला चैतान्येकैकपलिकानि खल्वे चूर्णयित्वा उत्तमारणि (चमारदूधी) स्वरसेन मर्दयित्वा शुष्कं चूर्णं भाण्डे निक्षिप्य पूर्वोक्तरसेन कल्कं विधाय यामपञ्चकपर्यन्तमेकजातीयकाष्ठेन पाकं कृत्वा नलिकायन्त्रेण द्रवो ग्राह्यः अत्र (पाषाणद्रवे) सर्वे धातूपधातवो बद्धा भवन्ति । यद्धमूलव्याधिपूपयोक्तव्यम ॥ (अगस्त्य०)

टि०—एतन्निर्दिष्टपाषाणपरिचयोऽगस्त्यग्रन्थादेव कर्तव्य । ईश्वरानुग्रहश्चेद्भारतीयरसशास्त्रतत्त्वे विवेचयिष्याम ।

५१ नवरत्नमिश्रिताऽयोलोहसिन्दूरम्

अयः, ताम्रं, तीक्ष्णं, कांस्यं, लोहकिट्टं, पित्तलं, नागः, वङ्ग, कृष्णसीसकं, रजतं, सुवर्णं, माणिक्यं, मुक्ता, विद्रुमं, मरकतं, वज्रं, वैदूर्यम, नीलम, गोमेदकम, पुष्परागश्चेति प्रत्येकं पादतोलकं खल्वे चूर्णीकृत्य पीतपुष्पभृङ्गराजरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा शुष्कचक्रिकां पङ्कगर्तागर्ते निधाय पञ्चमृद्वस्त्रैर्लिप्त्वा वराहपुटो देयः । एवं पञ्चपुटेषु विद्रुमवर्णं सिन्दूरमुत्पद्यते । शिवशक्तिपूजां विधाय निष्कासनीयम् । अनुक्ताऽज्ञातव्याधिष्वेतदुपयोजनीयम् । गुञ्जाद्वयपरिमितस्य मधुना सह सेवनाद्गुल्मवायुकुष्ठादयो नश्यन्ति । गोघृतेनाऽस्थिगतज्वराः, नवनीतेन शरीरदाहः, जीरकक्काथेनोरःपित्तरोगाः, आर्द्रकरसेन वातपित्तज्वराः, स्तन्येन सन्निपाताः, लशुनतैलेन सङ्ग्रहणी, मरिचक्काथेन श्वासकासयुतो ज्वरः, नागरक्काथेनाऽजीर्णज्वराः, व्याघ्रीक्काथेन श्वासकासयुतः क्षयरोगः, अजाक्षीरेण हृच्छूलं, ब्राह्मी (वल्लारी) पत्रदाडिमीपुष्पस्वरसाभ्यां बालानामस्थिगतज्वराः, तालगुडेन ग्रन्थीभूताः शूलाः, कीटनिष्ठीवन (सञ्जीचिगड्ड) चूर्णेन सर्वे मेहरोगाः, आहुली (तंगेडु) मूलचूर्णेन बहुमूत्ररोगः, गोक्षीरेण पाणिपादशूलानि, शर्करया मेहग्रन्थयः, लशुनतैलमिश्रितत्रिकटुत्रिफलाचूर्णेन मूत्रकृच्छ्रादयः, भृङ्गराजत्रिकटुकचूर्णेन मधुना सह सेवनात्कामलापाण्ड्वादयः, चन्दनक्काथेन सह वातपित्तं, जातीफलचूर्णेन स्त्रीणां श्वेतकुसुमरोगाः, चातुर्जातकचूर्णमिश्रितगोघृतेन सहाऽस्थिमेदकमेहव्याधयः, स्तन्येन सह षण्णवतिनेत्ररोगाः, व्याघ्रीवासाभूनिम्बक्षुद्रमुस्तकक्काथेन चतुष्षष्टिर्ज्वराः,अश्वगन्धाचीनहेमक्षीरीचित्रकजीरकाणां चूर्णेन सह मधुना सेवनात्पङ्गुवातः, शुद्धभल्लातकतैलेन सर्वाणि कुष्ठानि, हैयङ्गवीनेन मस्तकशूलं पीनसश्च, लशुनेन सहाऽतिसारः,नागराऽऽमलकज्योतिष्मतीबीजचूर्णेन सर्वेऽतिसारा निवर्तन्ते । रोगपरिज्ञानपूर्वकं यथोचितं पथ्यं देयम् ॥ (अगस्त्य०)

५२ नवरत्नसिन्दूरम्

वज्रं, मुक्ता, वैदूर्यम्, विद्रुमः, मरकतं, नीलमणिः, गोमेदकं, रक्तवर्णरत्नानि, पुष्परागः, पारदः, वङ्गश्चेति समभागं गृहीत्वा पूर्वं वङ्गेन सह पारदं मेलयित्वा नवरत्नैः सह सञ्चूर्ण्य जम्बीररसेन भृङ्गराजरसेन चैकैकयामं मर्दयित्वा शुष्कचूर्णं विधाय सर्वसमं शुद्धगन्धकं मेलयित्वा काचकूपिकायां निक्षिप्य गन्धकजारणाऽनन्तरं मुखबन्धनं कृत्वाऽष्टयामपर्यन्तं वालुकायन्त्रे पाकं कुर्यात् । स्वाङ्गशीतलं निरीक्ष्य सुब्रह्मण्यगणेशयोरर्चनं कृत्वा कूपिकात औषधं ग्राह्यम् । एतत्तण्डुलपरिमितं मधुना सह सेवनीयम् । अनेन मूत्राऽवरोधाऽश्मरीमूत्रद्वारदुर्गन्धमूत्रकृच्छ्रबहुमूत्रमधुमेहमेहग्रन्थयो लिङ्गद्वारशूलो महाकुष्ठानि अशीतिवातव्याधयो गात्रदौर्बल्यं सर्वाङ्गशूलाश्चैते महाव्याधयो नश्यन्ति । देहं वज्रसदृशं भवति । एतस्मिन्नपथ्यं नास्ति । मांसरसाः, घृतपक्वमांसमिश्रितपदार्थाः, दधिक्षीरघृतवाताम अक्षोटादयो गुरुपदार्थाः सर्वेऽपि सेवनीयाः । (अगस्त्य०)

५३ नवलोहसिन्दूरम्

शुद्धसुवर्णरजताऽयस्ताम्रकांस्यपित्तलनागवङ्गसीसकानि प्रत्येकमेकतोलकानि चूर्णितानि भृङ्गराजरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा चक्रिकां विधाय शरावसम्पुटितं कृत्वा वराहपुटो देयः । स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य पुनर्भृङ्गराजरसेन मर्दयित्वा पुटो देयः । एवं पञ्चपुटा देयाः । विद्रुमवर्णं सिन्दूरमुत्पद्यते । अर्धगुञ्जापरिमितं मधुना सह सेवनीयम् । एतेन कृष्णमेहाऽण्डवातपीनसगुल्मशूलपक्षवातसूतिकावातपाण्डुपार्श्वशूलप्रभृतयो रोगा नश्यन्ति । तत्तज्ज्वरकषायैर्मधुना सह सन्निपातादिषु दातव्यम् । क्वाथद्रव्याणि—किरातः, विष्णुक्रान्ता, मरिचं, आकारकरभः, ईश्वरी, पाठा, शिग्रुमूलत्वक् १–१ पलिकानि गृहीत्वा चतुर्थभागाऽवशिष्टं क्वाथं गृहीत्वा त्रितोलकक्वाथेऽर्द्धगुञ्जापरिमितं सिन्दूरं मधुना सह मेलयित्वा ग्राह्यम् ।(अगस्त्य.)

५४ नागसिन्दूरम्

जम्बीररसे, तिलतैले, गोमयरसे, गोमूत्रे, कुलत्थक्काथे, वालमूत्रे च प्रत्येकस्मिन् सप्तवारं शोधितं

चतुष्पलं कृष्णनागं मृन्मयपात्रे गालयित्वैकतोलकं पारदं मिश्रयित्वा पञ्चाङ्गाऽऽङ्गुलीचूर्णं (तङ्गेडुचेट्ट) यामचतुष्टयपर्यन्तं किञ्चित्किञ्चित्क्षिप्त्वाऽऽङ्गुलीमूलदण्डेन घर्षणीयम्। एतत्सिन्दूरं मधुना, घृतेन, नवनीतेन वा सेवनीयम्। एतेन शुष्कमेहरक्तप्रदरकुल्मादिरोगमूत्रकृच्छ्रबहुमूत्रमूत्राऽवरोधशर्करामेहाऽश्मरीप्रभृतयः सङ्कीर्णरोगा निवर्तन्ते। (व्यास०)

५५ नारिकेलतैलम्

पक्वनारिकेलफलानि द्वादश, हेमक्षीरी ८ पला, हरीतकी चीनमूलिका (रेवन्दचीनी) नागराणि त्रित्रिपलानि, शुद्धं जयपालवीजं द्वितोलकं, शुद्धमृद्दारशृङ्गाऽऽङ्गुलीपत्र (तङ्गेडाकु) रसकर्पूराणि प्रत्येकमेकतोलकानि गृहीत्वा सर्वं सङ्क्षुद्य १२० तोलकजले निक्षिप्यैकरात्रिपर्युषितं विधाय त्रिरावृत्तफेनोद्गमपर्यन्तं पाकं कृत्वा स्वाङ्गशीते जाते जलोपर्यागतं तैलं सावधानतया गृहीत्वा स्थापनीयम्। नारिकेलजलानुपानेनाम्लमण्डेन वा विन्दुद्वयं त्रयं वा दातव्यम्। सुखेन विरेचनं भवति। यदि विरेचनाऽऽधिक्यं स्यादतिविपाभस्मस्रुतं जलं देयम्। क्षीरान्नमाढकीखण्डयूषान्नञ्च पथ्यम्। एतेनोपदंशसन्धिगतप्रमेहश्वयथुपार्श्वपृष्ठवाता हृच्छूलाऽऽहिक्काज्वरादयो नश्यन्ति। एतत्तैलमेकस्मिन्मासे सप्तदिनपर्यन्तं पेयम्। एवं रीत्या मासत्रये जाते पूर्वोक्तरोगा नश्यन्ति। अपि च वन्ध्यास्त्रीणां, अश्वानां, वृषभादीनाञ्च दातव्यम्। पशूनां दानप्रकारः-एकतोलकं वराङ्गं जलेन सम्मर्द्य तन्मध्ये १० विन्दुपर्यन्तं तैलं मेलयित्वा वंशनालमुखात्पाययितव्यम्। सर्वे पशुव्याधयो निवर्तन्ते। (अगस्त्य०)

५६ पञ्चलोहसिन्दूरम्

शुद्धस्वर्णं, रजतं, अयश्चूर्णं, ताम्रं, वङ्गं, पञ्चपाषाणानि (दोड्डि-कार्मुगिल-पगडपुट्ट-शृङ्गि-तिमिरकुलपाषाणानि) समभागानि खल्वे निक्षिप्योपरक्षारं नरसारञ्च ५-५ पलं गृहीत्वैतद्द्वयमपि विचूर्ण्य चीनपात्रे निक्षिप्य रात्रौ जयनीरं गृहीत्वाऽनेन जयनीरेण मर्दयित्वा चक्रिकां विधाय शरावसम्पुटीकृत्य कुक्कुटपुटं देयम्। एवं रीत्या चत्वारि पुटानि देयानि। अस्याऽनुपानचूर्णम्—लघुपिप्पली, मधुयष्टिः, जीरकं, चित्रकं, मरिचं, यवानी, कृष्णतिलाः, अश्वगन्धा चैतानि प्रत्येकपलानि चूर्णीकृत्य वस्त्रशोधितं विधाय समभागां चीनहेमक्षीरीं मिश्रयित्वा भृङ्गराजकामकस्तूरीपत्ररसौ गोक्षीरं प्रत्येकं २४ तोलकं कटाहे निक्षिप्य पाकसमये पूर्वोक्तं चूर्णं क्षिप्त्वाऽवलोड्य गोघृतं २४ तोलकं, मधु च १२ तोलकं संयोज्य लेह्यपाको ग्राह्यः। अर्धतोलकपरिमिते लेह्ये गुञ्जैकं पञ्चलोहसिन्दूरं मेलयित्वा मण्डलान्तं सेवनीयम्। अनेनाऽष्टादशदीर्घशूलानि, कुष्ठमेहविचर्चिकादयो निर्मूला भवन्ति। जम्बीरशुक्तं, कपित्थफललेह्यं, शारहस्त्रिका, गोधूमः, शर्करा, गोघृतं, कोषातकी, चुञ्चु (सर्पशाकं), वस्तमांसञ्चैतानि पथ्यानि। (अगस्त्य०)

५७ परङ्ग्यादिलेह्यम् (महत्)

गोदुग्धशुद्धा चीनहेमक्षीरी ५ पला, नारिकेलजलेन भस्मीकृतं कल्नारभस्म २ पलं, आरण्यमहिषीक्षीरं १ पलं, एलावीजं १ पलं, घृतत्रयं जातीफलं ३ पलं, सितोपला १३ पला, शतावरीरसः ५० तोलकः, केशरं १। तोलकं नीत्वा चूर्णीकृत्य सितोपलायास्तन्तुलीं विधाय गोघृतं ४ पलं विन्यस्य सर्वमपि चूर्णं मेलयित्वा लेह्यपाकेनाऽवतार्य प्रातः सायञ्चेति द्विवारं प्रत्यहमर्धतोलकं सेवनीयम्। अनेन सर्वे मेहविकारा नश्यन्ति, धातुपुष्टिर्भवति रक्तवृद्धिश्च। पथ्यं रोगाऽनुरूपम्। (अगस्त्य०)

टि०—अत्र परङ्गीति शब्दोऽव्यक्तोऽनण्व वैद्यचिन्तामणौ परङ्ग्यादिरसायने वृद्धदारो शक्ति मत्वा, त्रिंशत्पल वृद्धदारविति काव्यग्रन्थे स्पष्टतया कथितम्, अन्यग्रन्थेषु तु परङ्ग्यष्टपलेति यथाऽवस्थितमेवोद्धृतम्। आधुनिकास्त्वान्ध्रादिदेशेर्वशाम्तत्स्थाने चीनहेमक्षीरीं (रेवनचीनी) नियुञ्जन्ति, परङ्गीस्थाने फरङ्गीचेफेति शब्द प्रतिष्ठापयन्ति, फरङ्गी शब्दस्य च गोरण्डेषु रूढिं मन्यन्ते। सर्वमप्येतदज्ञानविलसितम्, न ह्यगस्त्यादिमहर्षिसमये फरङ्ग्यादिशब्दाना सद्भाव किञ्च हेमक्षीर्याश्चीनदेशादारभ्यदेशादेवाऽधुनाऽप्यागमनमस्ति। अतएव रेवन्दचीनी किंवा रेवन्दखतायीति द्विविधनाम्नैव तत्प्रसिद्धि। कोऽप्यंशोऽपि रेवन्दयोरोपीयेति नाम्ना वदितु न प्रभवति, फरङ्गीति योरोपीयदेशोद्भवानामेवाऽधुनाऽप्यपठितजना नामकरणं कुर्वन्ति। चीनाभिजनानामारभ्याणाञ्च तत्तद्देशनाम्नैवाऽऽबालवृद्धेषु व्यवहारोऽस्ति, अत फरङ्गीचक्केति नाम्न प्रादुर्भावोऽज्ञानमूलक एवाऽस्तीति प्रतीयते। पराण्यतिविरलतान्यङ्गानि यस्या इति व्युत्पत्त्या पराङ्गी इति, स्फाराणि अङ्गानि यस्या इति व्युत्पत्तौ स्फाराङ्गीति शब्द उपपद्यते। वृद्धदारुलतायामेतद्द्वयमपि नाम सार्थकनामावहति, तदीयमूलानां शाखाना चातिप्रसरणशीलत्वात्तोऽपभ्रंशे परङ्गी इति फरङ्गी इति वा सिद्ध भवति। अत एव वैद्यचिन्तामणिकारेण वृद्धदारुवाचकनैव स्वीकृताऽस्त्यत एव त्रिंशत्पलानि वृद्धदारोरिति स्पष्टमेवोक्तम्। वृद्धदारुशब्दस्य केलिकदम्बे रूढिरिति तु केषाञ्चिद्दशाना कथन खपुष्पायित वृद्धदारोरेचकत्व चरकादौ सुप्रसिद्धम्, केलिकदम्बस्य तु सर्वाण्यप्यङ्गान्यतिग्राहकाणि शीतलानि च, रक्तप्रदरातिसाराऽर्शोरक्तपित्तादौ ग्राहकत्वेन सर्वदेशीयजाङ्गलानामपि सम्यग्ज्ञानमस्ति। अतो वृद्धदारो केलिकदम्बनामदान सर्वथाऽनुचितम्। अतोऽगस्त्यीययोगेषु व्यासोक्तयोगेषु च यत्र यत्र चीनहेमक्षीरीति नाम दत्तमस्ति तत्र तत्र प्राय परङ्गीशब्दस्थानेऽर्वाचीनजनै स्थापितमस्तीति ज्ञातव्यम्। तद्योगेन गुणप्राप्तिस्तु काकतालीयन्यायेन समानगुणवनस्पतियोगाद्भवतीति विद्वद्भिर्ज्ञातव्यम्। अहो कीदृग्गी कालपरिणतिरीदृशाऽऽयुर्वेदप्रचण्डसूर्यस्याऽप्यज्ञानराहुणाग्रास सञ्जातस्तदुद्धाराय सर्वशक्तिमान् परमेश्वर एवाऽभ्यर्थनीय इति, इदंविप्लवश्च दक्षिणदेश एवाऽस्तीति तु स्वप्नान्तरेऽपि न भ्रमितव्य किन्तु सर्वदेशसाधारणीय विपदिति निघण्टुयाथात्म्यनाम्नि निबन्धेऽस्माभिर्दिग्दर्शन कृतमस्ति, तस्मिन्नेव

विशेषतया द्रष्टव्यम्। कदाचिद्धेमवर्णविशिष्टतयोत्कृष्टतार्थे परशब्दस्य लाक्षणिकार्थं मत्वा पराङ्गीशब्दस्य चीनहेमक्षीर्यामेव रूढिरस्तीति चेत्तत्र विशेषप्रमाणापेक्षाऽस्ति। अस्मन्मते तु वैद्यचिन्तामणिकारस्य मत पोषकमेतेन वैद्यचिन्तामणिरचनसमयपर्यन्त् पराङ्गीशब्दो वृद्धदारुलतायामेव प्रतिष्ठित आसीदित्यनुमीयते। कालक्रमात्परम्पराया लोपाद्धेमक्षीर्यां केनचित्प्रतिष्ठापित इति प्रतिभातीत्यलमतिविस्तरेण।

५८ पाण्डुकामलादिहरतैलम्

शङ्खद्रावकनिम्बूकरसः (नारदव्वकायरसः) २४ तोलकः, जम्बीररसः १२ तोलकः, सेहुण्डक्षीरम्, शिग्रुपत्रजलपिप्पली (बुक्किना) हंसपादीभृङ्गराजानां स्वरसाः, एरण्डतैलम्, कान्तभस्म, अयोभस्म च प्रत्येकं द्विपलं गृहीत्वाऽऽदौ रसान् तैले निक्षिप्य भस्मद्वयमपि जम्बीररसेनाऽऽलोड्य तैले मेलयित्वा पिप्पल्येलाबीजजातीफलमरिचानि प्रत्येकमर्धतोलकपरिमितानि चूर्णितानि निक्षिप्य पाकं कृत्वा स्वाङ्गशीतं कूप्यां निधापयेत्। श्वयथुपाण्ड्वादिव्याधिग्रस्तानां यथोचितानुपानेन दातव्यम्। पथ्यं रोगानुरूपम्। चोष्यतिन्तिड्यौ वर्ज्ये। (अगस्त्य०)

५९ पिप्पल्यादिरसायनम्

क्षुद्रपिप्पली २ पला, विडङ्गनागरे १-१ पले, चव्यमरिचपिप्पलीमूलानि प्रत्येकं पादोनपलानि, उशीरैलाबीजमांसीजातीपत्रीलवङ्गहरीतक्यामलकविभीतकजातीफलत्वचः प्रत्येकं पादोनद्वितोलिकाः, भृङ्गराजमूलचूर्णं २७ तोलकं, कान्ताऽयःसिन्दूरे २-२ पले गृहीत्वा सर्वाणि चूर्णीकृत्य वस्त्रपूतं कृत्वाऽयोभस्म भृङ्गराजरसेनाऽञ्जनवद्विमृद्य चूर्णेन सह मेलयित्वा लोहपात्रे ४८ तोलकं मधु निक्षिप्य १६ पलां शर्करां मेलयित्वा पाकसमये पूर्वोक्तं चूर्णं प्रक्षिप्य लेह्यपक्वं रसायनं ग्राह्यम्। एतन्मृन्मयपात्रे स्थापनीयम्। आमलकप्रमाणमेकमण्डलमर्धमण्डलपर्यन्तं वा सेविते ज्वरवाताऽग्निमान्द्यपाण्डुश्वासकासपित्तक्षयरोगादीन्नाशयति। पथ्यं रोगोचितम्॥ (अगस्त्य०)

टि०—व्यासोक्तपिप्पल्यादिरसायने कान्ताऽय सिन्दूरयोरभावोऽस्ति, चतुष्पल घृतञ्चाऽधिकतया निक्षिप्तमस्ति। श्वासकासवातादिषु विशेषतया ऽस्योपयोगादत्राऽपि चतुष्पलघृतनियोगेऽधिका शक्तिरुदेष्यतीति प्रतिभाति।

६० पुनर्नवादितैलम्

श्वेतपुनर्नवाचित्रकैरण्डशिग्रुपूतीकशाखोटकाऽग्निमन्थ (तकाळी) निर्गुण्डिमूलानि, त्रिफला, कृष्णवालकं (कुरुवेरु) चैतानि प्रत्येकमेकशतपलिकानि सङ्क्षुद्य द्रोणचतुष्टयपरिमिते जले निक्षिप्य चतुर्भागावशेषं विपाच्यैकाढकं गोक्षीरं, ८० तोलकं तिलतलञ्च मिश्रयित्वा विपचेत्। पाकसमये पिप्पली, चित्रक, यवानी, यष्टिमधुकं, भृङ्गराजमूलं, सर्पदंष्ट्राबीजानि, अश्वगन्धा, खादिरम्, अतिविषा, नागरं, सैन्धवं, लवङ्गं, एलाबीजं, वङ्गकान्तभस्मनी, शुद्धगन्धकं, मृगमदः, पुष्करमूलं चैतानि समभागानि चूर्णीकृत्य तैलषष्ठांशं मेलयित्वा पक्वं तैलं ग्राह्यम्। अभ्यञ्जननस्याभ्यां वातपित्तपाण्डुश्वयथुनासाव्रणकपालशोथादयो रोगा निवर्तन्ते। पथ्यं रोगानुरूपम्। (अगस्त्य०)

६१ पुष्पमणिमात्रारसः

शलाकारसकर्पूरं, रससिन्दूरं, शुद्धदरदः, कान्तसिन्दूरश्चैतानि प्रत्येकं द्वितोलकानि, केशरम् २। तोलकं, गोरोचनं १॥ तो०, चन्द्रसारः षडाणकाऽधिकैकतोलकः, तक्कोलं पादोनतोलकं, कुष्ठत्रिकटुकाऽऽकारकरभाः प्रत्यर्धतोलकाः, चित्रकमूलत्वगनन्तमूलश्वेतत्रिवृद्दिक्षुरकमुशलीयष्टिमधुकशिग्रुमूलत्वच एतानि प्रत्येकं द्वितोलकानि गृहीत्वा पीतभृङ्गरसेन चतुर्यामं विमृद्य चित्रकमरिचकण्टकिपलाशमूलत्वचां त्रित्रिपलिकानामष्टभागाऽवशेषितेन क्वाथेन यामत्रयं मर्दयित्वाऽरिष्टबीजप्रमाणा वटीश्छायाशुष्काः कृत्वा स्थापयेत्। शर्करया सह मेहज्वरादिष्वेका वटी देया। त्रिकटुकचूर्णेनाऽशीतिवातव्याधिषु निषेव्या। एवमेकमण्डलमर्धमण्डलपर्यन्तं वा सेवनीयम्। (व्यास०)

६२ प्रभाकररसः

रामठपारदयवानीगन्धकटङ्कणतालकविषत्रिकटुराजिकाशिलाकृष्णजीरकदरदहरीतक्यः सर्वाणि समभागानि, जयपालबीजानि सर्वसमानि गृहीत्वाऽऽदौ जयपालं विमृद्य सर्वमपि पूर्वोक्तसम्भारं निक्षिप्य यामत्रयमनारतं मर्दयित्वा चीनसम्पुटे संस्थापयेत्। अथवाऽऽर्द्रकरसेन गुञ्जामितां वटिकां निर्माय स्थापयेत्। गुञ्जाप्रमाणं नागरक्वाथेन सेवितं सज्ज्वरान्नाशयति। हरीतकीक्वाथेन श्वासकासौ, गोघृतेन रक्तमूलव्याधिः, गोक्षीरेण गुदाङ्कुरा नश्यन्ति। लशुनतैलं, मधु, आर्द्रकरसः, एतदनुपानेन गुञ्जाप्रमाणं सेवितं सजलोदरमहोदरादीन्नाशयति। सर्पदंशादीनां सर्षपप्रमाणं निम्बबीजतैलेनाऽञ्जने दद्यात्। यदि नेत्रयोः शोथः स्यात्कन्याद्रवेण प्रक्षालनीयम्। अपि च दुर्मांसोत्पादकव्रणेषु, राजव्रणेषु, सन्धिग्रन्थिषु, सिराव्रणेषु चैतदौषधं जिह्वाजलेन घृष्ट्वा व्रणोपरि लिम्पेत्सर्वे व्रणा निरङ्कुरा भविष्यन्ति। (व्यास०)

६३ वङ्गकान्तरजतम्

वङ्गसमुद्रलवणं, कान्तं, पारदः, अमलसारगन्धकं, मनःशिला, दरदं, शङ्खभस्म चैतानि खल्वे सम्यग्विचूर्ण्य (गाडिटिगडपाकु) रसेन यामत्रयं विमृद्य संशोष्य चूर्णीकृत्य गङ्गाजलकूपिकायां निधायाऽष्ट-

याम वालुकायां क्रमाग्निना पचेत्। स्वाङ्गशीतमौषधं तण्डुलद्वयपरिमितं प्रयुक्तं चेद्धिपाण्डुज्वरवातोदर-गुल्मक्षयरोगादीञ्जयति। (व्यास०)

६४ वद्धखण्डार्द्रकम्

आर्द्रकस्वरसः २४ तोलकः, शुद्धगन्धकद्रुतिः, सैन्धवं, अपामार्गक्षारः, वंशरोचना चेति प्रत्येकं सपादतोलकं गृहीत्वा गन्धकद्रवेण सह क्षारत्रयमपि चूर्णीकृत्याऽऽर्द्रकस्वरसे मेलयित्वा दिनत्रयपर्यन्तं गाढातपे निक्षिप्येतत् कलामात्रं सेवनीयम। अनेनाऽजीर्णाऽतिसारवमनहिक्काविसूचिकोदरज्वलनाऽरोचकदाहादयो नश्यन्ति। (व्यास०)

६५ वद्धतालकम्

शुद्धतालकं २ पलं, मनःशिला १ पला, अमलसारगन्धकं १ पलं, रसकर्पूरमर्धपलं गृहीत्वा चूर्णीकृत्य काचकूप्यां निक्षिप्य मुखमुद्रां विधाय वालुकायन्त्रविधानेन सार्धैकयामपर्यन्तं पाकं कुर्यात्। स्वाङ्गशीतमौषधं तण्डुलद्वयपरिमितं मधुना त्रिकटुकचूर्णेन वा देयम्। सदोषज्वराः, श्वासकासादिसंयुक्तक्षयाश्च नश्यन्ति। अम्लरसादिकं वर्ज्यम्॥ (व्यास०)

६६ वद्धदरदो रसकर्पूरश्च (प्रथमः)

एकशकलात्मकं शुद्धं दरदं रसकर्पूरश्च ८–८ पलं शरावे निक्षिप्य श्वेतहिंस्रा (तेल्लावुण्पि) पत्ररसेन, लशुनद्रवेण च प्रति चतुर्यामं ग्रासं दत्त्वा आरनिकर्पूरं ५ पलं, तुरुष्कं (साम्राणी, लोवान) ५ पलं, एतद्द्वयमपि विमृद्य लोहकटाहे निक्षिप्य मन्दाग्निना द्रवीकृत्य पूर्वोक्तं द्वयमपि मध्ये निक्षिप्य सम्यक् पाकः कर्तव्यः। खण्डद्वयलग्नं किट्टं दूरीकृत्याऽऽवालवृद्धं यथोचितमुपयोजनीयम्। स्तन्येन, मधुना, पिप्पलीमरिचयोः क्वाथाभ्यां वा सेवनेन गर्भवातकफवातसम्बन्धिनस्सर्वे ज्वरा नश्यन्ति। अजीर्णशूलसन्निपाताः धनुरधीरा(कम्प)ऽन्त्रपक्षसन्धिशिरोऽर्दितडमरुकसर्वाङ्गकण्ठवाताश्च सोपद्रवा नश्यन्ति। क्षीरान्नं पथ्यम्। अम्लरसो वर्ज्यः। (व्यास०)

६७ वद्धदरदः (द्वितीय.)

एकपलां मनःशिलां जम्बीररसेन विमृद्यैकपलिकस्य तुत्थशकलस्योपरि कवचं दत्त्वा सम्यग्विशोष्य हसन्तिकोपरि यथोचिताग्नौ विन्यस्य तुत्थधूमनिर्गमनपर्यन्तं पाकं कुर्यात। एतद्धवलं तुत्थभस्म चीनपात्रे पञ्चतोलकसेहुण्डक्षीरेण सह सङ्कलय्य गाढातपे निदध्यात्। एवं दिनत्रये कृते तुत्थभस्म सिक्थं भवति। तत एकपलिकं हंसपाकदरदं खर्परे विन्यस्य मन्दाग्निना पचन् पूर्वोक्ततुत्थसिक्थेन सावधानतया पञ्चघटिकापर्यन्तं किञ्चित्किञ्चिद्ग्रासं दद्यात्। क्षुद्रतिन्तिडीकाष्ठैर्दीपवज्ज्वालां दद्यात् अनेन दरदो घनीभूय वद्धो भवति। सकलज्वरवाधासु प्रयोज्यम्। स्तनन्धयानां भ्रष्टपरिपक्वसातला (खरसाणी) काण्डनिर्गुण्डीवरुणमूलत्वग्यवानीकल्ककृष्णतुलसीस्वरसानामन्यतमेनाऽर्द्धतण्डुलपरिमाणं देयम। अनेन बालानां सोपद्रवज्वरशान्तिर्भवति। अजीर्णेन्द्रियमान्द्यज्वरातिसारश्वासकाससन्निपाताश्च नश्यन्ति। रोगबलाबलं विज्ञाय दिनत्रयं चतुष्टयं वोपयोज्यम्। अक्षारलवणं पथ्यं मातुर्देयम्। तरुणादीनामेतद्द्विगुणम। पथ्यन्तु यथोचितम।

६८ वद्धदरदः (तृतीयः)

शुद्धदरदः २ पलः, गन्धकः १ पलः, शलाकारसकर्पूरं १ पलं, एतत्त्रयमपि विचूर्ण्य काचकूपिकायां निक्षिप्य पूर्ववन्मुद्रणादिकं कृत्वा वालुकायन्त्रे एकयामं पचेत। स्वाङ्गशीतमर्द्धगुञ्जापरिमितं मधुना तत्तद्रोगोचितक्वाथेन वा सेवितं सर्वान्वातव्याधीन् सविकाराञ्ज्वरांश्च निकृन्तति। (व्यास०)

६९ वद्धदरदः (चतुर्थः)

पञ्चदशतोलकपरिमितं दरदखण्डं मन्दाग्नौ खर्परे निक्षिप्य जम्बीररसस्य यामचतुष्टयं सावधानतया ग्रासं दद्यात्। पुनश्च श्वेतहिंस्राफल (उप्पिपंड्लु) कुमारीजीवन्तिकास्वरसैः प्रत्येकं यामचतुष्टयं ग्रासं दत्त्वा स्वाङ्गशीतं वद्धदरदं तण्डुलपरिमाणं तत्तद्रोगोचितानुपानेन मधुना वा सेवितं सदौपसर्गिकव्याधीनामवातरक्तपित्तादींश्च नाशयति। पथ्यं रोगोचितम्। (व्यास०)

७० वद्धमयः

वद्धं समुद्रलवणं, शुद्धं लोहचूर्णं, तन्तुरजतं, पारदः, गन्धकश्चेतानि प्रत्येकपलानि, शुद्धतालकं मनःशिला चेति प्रत्येकं सपादतोलकं गृहीत्वाऽञ्जनवद्विचूर्ण्य दिनद्वयं कन्यारसेन विमृद्य त्रिदिनं शोषयित्वा काचकूप्यां निक्षिप्य मुखमुद्रां विधायाऽष्टयामं वालुकायन्त्रे विपाच्य स्वाङ्गशीतां घनीभूतां गुटिकामर्धगुञ्जामितां मधुना सह दद्यात्। अनेन सकलसन्निपाता वातमेहादयश्च नश्यन्ति। (व्यास०)

७१ वद्धमहारसः

शुद्धपारददरदमाणिक्यविद्रुममल्लरजतगन्धकरसकर्पूरमुक्तातालकसुवर्णानां समभागानां सूक्ष्मचूर्णं विधाय समूलचित्रकस्वरसेन द्वियामं मर्दयित्वा विशोष्य काचकूप्यां निक्षिप्य मन्दमध्यखराग्निभिर्वालुकायन्त्रे यामचतुष्टयं पाकं कृत्वा खल्वे निक्षिप्य मृगमदः, गोरोचना, चन्द्रसारः, एतान्येकैकतोलकान्यौषधे मेलयित्वा स्तन्येन चित्रमूलस्वरसेन च

मापप्रमाणा वटीः कृत्वाऽनुपानविशेषैः सकलरोगेषूपयोजनीयाः । अज्ञातवद्धमूलरोगाः सर्वे नश्यन्ति । (व्यास०)

७२ वालमान्द्यहरतैलम्

क्षुद्रैरण्डवीजतैलं ४० तोलकं, कामकस्तूरिकापत्ररसः (सरुवक) ४ पलः, शिग्रुकरञ्जश्वेतपुनर्नवापुरुपरत्नव्राह्मीपत्ररसः २-२ पलः, औदुम्बरत्वक्कोमलवटप्ररोहस्वरसः ४०-४० तोलकः, एतान्सर्वानपि रसान् तैले निक्षिप्य जातीफलं, जातीपत्रं, मायाफलं, कर्कटशृङ्गी, कुष्ठं, आकारकरभः, शुद्धजयपालश्चैतानि पादतोलकपरिमितानि, लशुनं पलाण्डुश्चैकैकपलं मेलयित्वा विपचेत् । तत्र सिद्धं रसकर्पूरं, मृगमदं, गोरोचनं, केसरञ्च प्रतिपादतोलकं विपक्वे तैले संयोज्य स्वाङ्गशीतलं ग्राह्यम् । विन्दुचतुष्टयं पञ्चकं वा रोगवलानुसारेण वालानां दातव्यम् । तन्मात्रे भ्रष्टतिन्तिडी, लवणमिश्रितोष्णोदकान्नं पथ्यम् । एतेन वालस्य अत्युग्रग्रहादिदोषा निवृत्ता भवन्ति । महोदरपित्तश्लेष्मज्वरादिनिवृत्तिश्च भवति ।अगस्त्य०

७३ भल्लातकलेह्यम्

गोमूत्रशुद्धानि भल्लातकानि १० पलानि, चीनहेमक्षीर्यश्वगन्धादारुहरिद्रापिप्पलीपिप्पलीमूलचित्रकमूलत्वक्कृष्णजीरकहरीतकीकुष्ठानि १-१ पलानि, शुष्कनारिकेलमज्जा २ पला, निस्तुषास्तिलाः १८ तोलकाः, शुद्धं रसकर्पूरं सपादद्वितोलकं, तालगुडं ५ पलं गृहीत्वाऽऽदौ भल्लातकानि नारिकेलेन सहोदूखले लेह्यानुरूपं विधेयम् । वदरीफलप्रमाणं मण्डलपर्यन्तं प्रत्यहं द्विकालं सेवनीयम् । अनेन कुष्ठशूलवङ्क्षणग्रन्थिगुल्ममेहशूलश्वेतपीतरक्तादिरोगाः सर्वे नश्यन्ति । तिन्तिडीरसः, धूमपानं वातला मादकपदार्थाः स्त्रियश्च वर्जनीयाः । पथ्यं रोगानुकूलम् । (अगस्त्य०)

७४ भल्लातकीवटी (व्रह्मनीभल्लातकी)

शुद्धभल्लातकवीजानि १० पलानि, चित्रकमूलत्वक्, चीनहेमक्षीरी, श्वेतहिंस्रा (तेल्लवुप्पि), अश्वगन्धा, शरपुङ्खमूलं, वरुणत्वक्, दारुहरिद्रा, गजपिप्पली, क्षुद्रपिप्पली, हरीतकी, वाकुची, कुष्ठञ्च १-१ पलं, शुष्कनारिकेलखण्डं २ पलं, तालगुडः ५ पलः, कृष्णतिलाः ५पलाः, रसकर्पूरं दरदञ्च प्रतिसपादतोलकं गृहीत्वा भल्लातकानां नारिकेलखण्डेन कृष्णतिलैश्च सह कल्कं विधाय शेषद्रव्याणां चूर्णं तालगुडञ्च मेलयित्वा रसकर्पूरकज्जलीं मिश्रयित्वा लोहमुशलेन सम्यक् संकुट्य सिक्थरूपतामापाद्यैकमण्डलपर्यन्तमरिष्टवीजप्रमाणं सेवनीयम् । एतेन कुष्ठानि, वङ्क्षणादिसन्धिग्रन्थयः शूलगुल्मसूतिकावातसङ्कीर्णरोगा निर्मूलतामापद्यन्ते । अम्लरसधूमपानस्त्रीसंसर्गमादकद्रव्योपसेवनानि दूरतस्त्याज्यानि । पथ्यं रोगोचितम् (व्यास०)

७५ भूपतिगुटिका (प्रथमा)

शुद्धगन्धकं २ पलं, पारददरदरससिन्दूरसत्वीराण्येकैकपलानि चूर्णीकृत्य काचकूपिकायां निक्षिप्य क्रमाग्निना यामचतुष्टयं पाकं कुर्यात् । स्वाङ्गशीतलं ग्राह्यम् । एतद्भूपतिगुटिकात एकपलमात्रं खल्वे निक्षिप्य १।।। तोलकं गोरोचनं केशरञ्च नवाणकं मिश्रयित्वा स्तन्येन, ताम्बूलीदलेन कृष्णतुलसीपत्ररसेन च प्रत्येकयामं मर्दयित्वा गुञ्जाप्रमाणां वटीं विधाय मधुना सह सेवनात्सन्निपातादयो रोगा निवर्तन्ते । रोगोचितं पथ्यम् । (अगस्त्य०)

७६ भूपतिगुटिका (द्वितीया)

सुवर्णरजतयशदाऽयोमुक्तामाणिक्यभस्मानि,शुद्धगंधकपारदमनःशिलातालकमृद्दारश्टङ्गविषाणि प्रत्येकतोलकानि प्रातरारभ्य सायं पर्यन्तं विचूर्ण्य जम्वीररसेन यामचतुष्टयं विमृद्य शुष्कां चक्रिकां शरावसम्पुटितां कृत्वा सप्तमृत्तिका विधाय वितस्तित्रयोन्नतः पुटो देयः । स्वाङ्गशीते तत्समं शुद्धदरदं मेलयित्वा स्तन्येन दिनद्वयं विमृद्याऽङ्गुलमानां वटीं कृत्वा छायाशुष्कां विधाय स्तन्याऽनुपानेन तण्डुलप्रमाणमौषधं सेवितं सत् सोपद्रवत्रयोदशसन्निपातान्नाशयति । मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन निर्जीवोऽपि सजीवो भवति । (व्यास०)

७७ मण्डूरवटकः

पादोनाऽष्टप्रस्थे गोमूत्रे त्रिफलादारुहरिद्रे ४-४ पले निक्षिप्य प्राचीनलोहकिट्टं ९० तोलकं, वस्त्रशोधितमयश्चूर्णं ९० तोलकं, कान्तचूर्णं ४५ तोलकं एतत्त्रयमपि गोमूत्रे निक्षिप्य शोषणपर्यन्तं पाकं विधाय विडङ्गनागरभृङ्गमूलचित्रकमूलत्वक्पिप्पल्येलावीजमरिचानां प्रत्येकपलानामष्टभागाऽवशेषं क्वाथं कृत्वा तेन दिनद्वयं मर्दयित्वा पादतोलिकां वटीं कुर्यात् । एतद्गोतक्रेण सह सेवनीयोऽथवा चतुर्गुणितवस्त्रपूतगोमूत्रे मरिचप्रक्षेपं विधाय तेन प्रत्यहं २० दिनपर्यन्तं सेवनीयः । आढकीखण्डयूषान्नं पथ्यम् ।एतेन पाण्डुसर्वाङ्गशोथगुल्मोदरशूलादयो निवर्तन्ते । अम्लरसो धूमपानादिकञ्च त्याज्यमुष्णोदकं पेयम् (व्यास०)

७८ महामेहान्तकरसायनम्

शोधितचीनहेमक्षीरी (परङ्गिचक्का)चूर्णं १५ पलं, गोक्षीरशुद्धाश्वगन्धाभूमिकूष्माण्डसारिवाकन्यामूलचूर्णं ५-५ पलं, यष्टिमधुकभार्ङ्गीतालीसैलाराजजाती-

पत्रत्वक्कक्कोलाऽऽकारकरभरास्नालवङ्गजातीफलनागकेशरजटामांसीपुष्करकन्दश्रीचन्दननालीकंदोशीरमूलत्रिफलागजपिप्पलीत्रिकटुकचव्यकपित्थमूलानां वस्त्रशोधितं चूर्णं १–१ पलं, गोक्षीरेण कल्कीकृताः खर्जूरीफलवातामखाखसद्राक्षाप्रियालमज्जानः ५–५ पलाः, चन्द्रसारं, केशरं, रोचना, अयःसिन्दूरं, स्वर्णरजततनुपत्राणि, कान्तसिन्दूरं, पलाशबीजानि सुचूर्णितानि प्रत्येकं सपादतोलकानि गृहीत्वा एकस्मिन्पात्रे पञ्चुत्तरशततोलकं गोक्षीरं, अशीतितोलकञ्च शतपत्रार्कं निक्षिप्य १२० तोलिकां सितोपलां मिश्रयित्वा विपचेत्। पाकं विज्ञाय सर्वमपि पूर्वोक्तं चूर्णं कल्कञ्च मेलयित्वा ६० तोलकं गोघृतं, ९० तोलकं मधु च निक्षिप्य सुवर्णगोरोचनसिन्दूरादिवस्तूनि सर्वाण्यपि यथोचितं निधाय शिवशक्तिपूजां कृत्वा लेह्यं ग्राह्यम्। प्रत्यहमामलकप्रमाणमेकमण्डलपर्यन्तं सेवनीयम्। एतेनैकविंशतिमेहवातज्वरमांसगतज्वराऽङ्गदाहादिविकारैः सह नश्यन्ति। कपालकुष्ठाऽतिसारनीलमेहदद्रुपामादयो निर्मूलतां यान्ति। (व्यास०)

टि०—अगस्त्ये जटामामी त्रिकटुचन्द्रसारा न दृश्यन्ते मृगमदश्च सपादतोलकोऽधिकतया निक्षिप्त। वासिष्ठे चन्द्रसार कस्तूरिका चेति द्वयमपि निक्षिप्तमत सर्वमपि सङ्कलय्यैक एव पाठ सम्पादनीय।

७९ महालवणक्षारः (मुप्पुसुन्नमु)

ऊपरक्षारसव्वीरे प्रति २० पले, मयूरतुत्थनागाऽमलसारगन्धकरक्तमनःशिलादरदोत्थपारदानां प्रतिचतुष्पलानां नीलवर्णां कज्जलीं कृत्वा जम्बीररसेन चतुर्यामं विमृद्य चीनपात्रे निक्षिप्य रात्रौ नीहारे विन्यस्याऽरुणोदयात्प्रागेवाधःपात्रे प्रस्नुतजलमन्यस्यां काचकूपिकायां निधाय मुखमुद्रां कृत्वा स्थापयेत्। दिवा चीनपात्रं निर्वातस्थाने संरक्ष्य रात्रौ नीहारे संस्थाप्याऽवशिष्टद्रवो ग्राह्यः। एवं पञ्चषाणि दिनानि यावज्जयरसग्रहणपर्यन्तमनुष्ठेयम्। तदन्वेनस्मिन्द्रवे सव्वीरशकलं निमज्योन्मज्य चण्डातपे शोषितं सद्बद्धं भवति। एवं पत्रतालकमप्यातपशोषितं सद्बवलवर्णं भवति। त्रितोलके हंसपाददरदे खर्परे विन्यस्याऽनेन जयनीरेणाऽष्टयामपर्यन्तं ग्रासे दत्ते बद्धं सत्सिक्थं भवति। एतद्दरदसिक्थकमर्धमुद्गप्रमाणं मधुना सेवितं सदन्तकाले कण्ठाऽवरुद्धश्लेष्मसान्निपातिकशूलपक्षवातकफरोगादिकान्नाशयति। अपि चोपरक्षारशिलासुधे प्रत्यशीतितोलके महति भाण्डे निधाय द्रोणचतुष्टयं बालकमूत्रं निक्षिप्य सप्ताहमातपे निधाय निर्मलं जलं प्रगृह्य क्षारं निष्पाद्य पुनरपि बालकमूत्रे निक्षिप्य पूर्ववत्क्षारं गृह्णीयादेवं पञ्चवारं कृते कुन्देन्दुसदृशं दिव्यं लवणं सम्पद्यते। एतल्लवणं चीनपात्रे निक्षिप्य दिनद्वयं शोषयित्वा खल्वे जम्बीराद्भिर्यामद्वयं विमृद्य चक्रीकृत्य छायाशुष्कं विधाय शरावसम्पुटितं कृत्वा अष्टभिर्दशभिर्वोत्पलकैः पुटं दद्यात्। पुनः पूर्वोक्तजयनीरेण सह यामचतुष्टयं विमृद्य दशदिनपर्यन्तमातपे शुष्कमेतद्वुरुसुन्नमित्युच्यते। एतच्च श्रीदेवीसन्निधावाधायोपचारैरभ्यर्च्य शाकान्नपायसाम्नादिभिः सुवासिनीब्राह्मणादीन्सन्तर्प्य श्रीत्रिपुरागणेशभैरवमहादेवाऽगस्त्यसिद्धगुरूंश्च सम्पूज्य रोगेपूपयोजनीयम्। एतल्लवणं रसोपरसमारकं भवति। रसपाषाणलोहादयो बद्धा भवन्ति। अनायासेन भस्मसिन्दूरलवणादिरूपतामापद्यन्ते पारदश्च घनीभूय बद्धो भवति।

अथ रोगेपूपयोगप्रकारः—शुद्धपारदवत्सनाभगन्धकसुवर्णपत्राणि प्रत्येकपलानि, पूर्वोक्तमहालवणक्षारञ्चार्धतोलकं मेलयित्वा जम्भाम्भसा चतुर्यामं विमृद्य सावधानतया शोषणचूर्णादिकं कृत्वा दृढकाचकूप्यां निक्षिप्य वालुकायन्त्रे क्रमाग्निनाऽष्टौ यामान्पचेत्। श्रीबालाम्बां सम्पूज्य दीनाऽनाथसाधून् सन्तोष्य कूपिकां स्फोटयित्वा सिन्दूरवर्णं महालवणं ग्राह्यम्। एतेन सर्वे रोगा निवर्तन्ते। एतत्तण्डुलपरिमाणं मधुना सह षण्मासपर्यन्तं सेवितश्चेत्कायसिद्धिर्भवति गोघृतेन सह कुष्ठमूलमेहश्वित्रमधुमेहबहुमूत्रमूत्रकृच्छ्रमेहग्रन्थिसोपद्रवोपदंशभगन्दरपक्षाघातरुद्रवातादिमहारोगा निर्मूला भवन्ति। दिव्यशरीरं भवति मृत्युर्निवर्तते। मण्डलपर्यन्तं सेवनीयम्। यद्वा पूर्वोक्तं लवणक्षारः, शुद्धपारदः, सव्वीरं, दशदीक्षादीक्षितः सौरक्षारः, नरसारश्चैतान् प्रत्येकपलिकान् विचूर्ण्य श्वेतार्कक्षीरमिश्रितेन कुक्कुटाण्डश्वेतद्रवेण मेलयित्वा चीनपात्रे निधाय घनातपे एकदिनपर्यन्तं स्थापयित्वा खल्वे यामचतुष्टयं विमृद्य चक्रिकां कृत्वा विशोष्य शरावसम्पुटितं विधाय सप्त मृत्कर्पटान्कृत्वा पञ्चोत्पलकैः पुटं दद्यात्। एतस्य नितरां तीक्ष्णसुधा (कारसुन्नं) भवति। एवं तीक्ष्णसुधां खल्वे निधाय रसकर्पूरसव्वीरे प्रतिसार्धतोलके मेलयित्वा तेनैव (श्वेतार्कक्षीरमिश्रितेन कुक्कुटाण्डश्वेतद्रवेण) यामचतुष्टयं विमृद्य चक्रीकृत्य शोषयित्वा शरावसम्पुटितं विधाय षड्भिरुत्पलकैः पुटं दद्यात्। एतद्दिव्यं क्षारं भवति। पुनः पूर्ववन्मर्दनसमये वीरं, पूरं, चन्द्रसारं, सुगन्धमार्जारिकामदं प्रत्येकतोलकं मेलयित्वा कुक्कुटाण्डश्वेतद्रवेणैव यामचतुष्टयपर्यन्तं मर्दयित्वा शरावसम्पुटितं विधाय शिवशक्तिगणेशपूजापुरःसरं दशोत्पलकैः पुटं दद्यात्। एतद्दिव्यतरो लवणक्षारो भवति सर्वापधेषु योगवाहि सत्सकलरोगान्नाशयति। (व्यास०)

८० महावीरद्रावकम्

शुद्धं सञ्चीरं, सूर्यक्षारश्च १-१ पलः, स्फटिका ४ पला चूर्णीकृत्य नलिकायन्त्रविधानेन द्रवो ग्राह्यः । विन्दुद्वयं मधुना सह सेवितं सत् कृष्णमेहसन्धिवन्धपार्श्ववातमहोदरादिव्याधीन्नाशयति। श्वेताऽजामांसशाकेन सह विन्दुएकपरिमितं जले निक्षिप्य पीत्वा पुनः पूर्वोक्तमांसशाकाहारः कार्यः । मांसद्वेषिणां त्रिचतुरमाषवटकाननुपाने योजयित्वौषधं ग्राह्यम् । पुनश्च त्रिचतुरान्माषवटकान्भक्षयेत्। अनेन पूर्वोक्तव्याधयो निवर्तन्ते । (अगस्त्य०)

८१ माहेन्द्ररसः

पारदः, गन्धकः, विषं, टङ्कणं, तालकं, ताम्रभस्म, शुद्धजयपालाः, नागरं, पिप्पली, मरिचं, हरीतकी, आमलकी, विभीतकी चैतानि समभागानि भृङ्गराजरसेन दिनद्वयं विमृद्य मरिचप्रमाणां वटीं मधुना सह सेवेत। प्रवलव्याधिषु विष्णुक्रान्ताकिराततिक्तकतिक्तपटोलचित्रकमूलाऽमृताव्याघ्रीपिप्पलीमूलनागरमरिचमुशलीकपिकच्छुवीजखाखसकृष्णवव्वूलवीजानि वराङ्गाऽहिफेने चैतानि सर्वाणि समभागानि चूर्णीकृत्य समभागां सितोपलां मेलयित्वाऽर्द्धतोलकपरिमिते चूर्णे माहेन्द्ररसवटीं संयोज्य मधुना सह सेवनीयम् । पञ्चतोलकं क्षीरमनुपेयम् । अनेन धातुवृद्धी रक्तपुष्टिश्च भवति । (अगस्त्य०)

८२ मेहकुठाररसः

शुद्धपारदगन्धकतालकटङ्कणशङ्खविद्रुमशुक्तिकास्फटिकाभस्मानि शुद्धं विषश्च प्रत्येकपलिकं गृहीत्वा कन्याजम्वीररसाभ्यामेकैकदिनं मर्दयित्वा चक्रिकां निर्मायाऽष्टदिनपर्यन्तं शोषयित्वा वल्मीकमृत्तिकोत्पलभस्मतुषमिश्रितेन निर्मितायां वितस्तिपरिमितसुपरिपक्वमृद्धण्डिकायां कुमारीत्वक्शकलान्यर्धभागपर्यन्तमास्तीर्योपर्येनां चक्रिकां स्थापयित्वा शेषमर्धभागमपि तैरेव शकलैः परिपूर्य शरावसम्पुटं दत्त्वा द्वादशमृत्तिका विधायाऽष्टदिनपर्यन्तमातपे शोषयित्वा चुल्ल्यामधिष्ठाप्य तिक्तकोशातकीशुष्कतृणेन क्रमाऽग्निनाऽष्टयामपर्यन्तं पाकः कार्यः । स्वाङ्गशीतामुद्घाट्य यत्किञ्चिदपि तस्यामुपलभ्यते तत्सर्वमप्याहृत्य खल्वे निक्षिप्य स्वर्णतनुपत्राण्यर्द्धतोलकानि, मुक्ताविद्रुमचन्द्रसारमृगमदरुद्राक्षाऽऽकारकरभतन्तुरजतानि प्रत्यर्धतोलकानि चूर्णीकृतानि पूर्वोक्तौषधे मेलयित्वा स्तन्येन, कृष्णतुलसीरसेन, मधुरदाडिमीफलरसेन च प्रत्येकेन यामचतुष्टयं विमृद्याऽर्धरक्तिकामिता वटीः कृत्वा तुरुष्कधूमेन शोषयेत् । देवीभैरवीविनायकादिपूजां कृत्वा ब्राह्मणेभ्योऽन्नं दत्त्वैकां वटीं मधुना, स्तन्येन तत्तद्रोगानुपानेन वा दद्यात् । व्याघ्रीचूर्णेन लेह्येन वा मेहरक्तक्षयश्वासकासकफवातक्षयादयः सर्वे नश्यन्ति । अश्वगन्धालेह्येन अस्थिगतशल्याऽऽगतपुराणज्वरा नश्यन्ति । तत्तद्रोगहरक्वाथेन चतुष्षष्टिज्वरा नश्यन्ति । वासापत्ररसेन ताम्वूलदलरसेन वा सेवितं सत्काममुद्दीपयति । श्रीचन्दनक्वाथेन रक्तपित्तं, मधुमिश्रितदारुहरिद्राचूर्णेन मेहरोगा अम्लपित्तश्च, शर्करामिश्रितमरिचचूर्णेनाऽजीर्णरोगो निवर्तते । प्रत्यहमपि स्तन्येनैकवर्षपर्यन्तं सेवितश्चेद्दशनागबलो भवति । (व्यास०)

८३ मृगाङ्करसः (महाराजादिः)

स्वर्णरजतताम्रपारदगन्धकतालकदरदमनःशिलारसकभस्मानि समभागान्यादाय पीतभृङ्गरसेन दिनद्वयं विमृद्य शुष्कां चक्रिकां शरावयोरवरुद्ध्य दशोत्पलकैः पुटो देयः। तदनु मधुरदाडिमीपुष्परसेन कृष्णतुलसीस्वरसेन च प्रतियामचतुष्टयं विमृद्य शुष्कचक्रिकोपरि पादोनतोलकमार्जारिकामदेन (पुनुगुपिल्लीमदेन) कवचं दत्त्वा द्वाभ्यामुत्पलाभ्यां पुटो देयः। पुनः स्तन्येन यामद्वयं विमृद्य छायाशुष्कं विधाय चीनपात्रे स्थापयेत् । एतत्तण्डुलपरिमाणं सेवितं सत्सकलरोगान्नाशयति। अथैतदनुपानचूर्णम्—आरग्वधसारिवामूलत्वक्श्रीचन्दनमुञ्जातकभद्रमुस्तानां चूर्णमेकैकपलं गृहीत्वा वस्त्रपूतं समाचरेत् । अर्धतोलकेऽस्मिश्चूर्णेऽर्द्धतण्डुलं रसं मेलयित्वा मधुना सह सेवनीयम् । अनेन कालमेहमेहग्रन्थिमधुमेहवहुमूत्रादिरोगा अष्टादश कुष्ठानि निवर्तन्ते । पूर्वोक्तप्रकारेण पुटत्रयसिद्धमौषधं शतपत्रार्केण यामचतुष्टयं विमृद्य शुष्कां चक्रिकां शरावसम्पुटेऽवरुद्ध्य विंशदुत्पलकैः पुटं विधाय चित्रकक्वाथेन यामद्वयं विमृद्य पादतोलकं मृगमदं मेलयित्वा स्तन्येन विमृद्य मुद्गप्रमाणा वटीः कृत्वा रजतसम्पुटे स्थापयेत् । अनुपानविशेषैः सकलवातव्याधिषूपयोजनीयोऽयं महाराजमृगाङ्कः । (व्यास०)

८४ रजतभूपतिरसः (प्रथमः)

रजतताम्रमनःशिलाभस्मानि, शुद्धगन्धकः पारदश्च प्रत्येकपलः, कान्तभस्म विषश्चेति प्रत्यर्धपलं गृहीत्वा चित्रकमूलस्वरसेन यामद्वयं मर्दयित्वाऽऽतपे विशोष्य काचकूपिकायां निक्षिप्य मुखवन्धनं कृत्वा वालुकायन्त्रविधानेन गणेशपूजापुरःसरं दीपाग्निना यामचतुष्टयं पाकं कुर्यात् । एतत्पादगुञ्जापरिमितं मधुना सह सेवितं विंशतिमेहानशीतिवातविकारानष्टौ

गुल्मांश्चाऽनुपानभेदान्नाशयति । भूकूष्माण्डमुञ्जातककुमारीमूलवातामसुशलीकपिकच्छुवीजखाखसकृष्णवव्बूलवीजवराङ्गाऽहिफेनानि समभागानि चूर्णयित्वा समानां सितोपलां संयोज्याऽर्द्धतोलकपरिमिते चूर्णे पादगुञ्जापरिमितं रसं मेलयित्वा पञ्चतोलकगोक्षीरेण सह मण्डलपर्यन्तं सेवितश्चेन्नितरां धातुवृद्धिलिङ्गोत्थापनमनेकस्त्रीरमणशक्तिश्च सम्पद्यते । पथ्यं रोगानुरूपम् । (अगस्त्य०)

८५ रजतभूपतिरसः (द्वितीयः)

तन्तुरजतचूर्णं २ पलं, वङ्गलवणपारदकान्तभस्मानि प्रत्येकं सार्धतोलकानि, शुद्धमल्लगन्धकतालकृष्णनागसिन्दूराणि प्रत्येकं द्वादशकलामितानि चूर्णीकृत्याऽजापित्तेन यामचतुष्टयं विमृद्य शुष्कां चक्रिकां शरावयोरवरुद्ध्य दशोत्पलकैः पुटो देयः। स्वाङ्गशीतौषधस्य मर्दनसमये मृगमदकेशरगोरोचनानां चूर्णं प्रतिपादतोलकं मेलयित्वा स्तन्येन दिनद्वयं विमृद्य माषप्रमाणा वटीः कुर्यात् । एकैका वटी मधुना सह सेविता चेत्सूतिकारुद्धवाताऽऽनन्दज्वर (पैशाचिकज्वरः) मेहवातादयो निवर्तन्ते । स्तन्याऽनुपानेनाऽऽसन्नमृत्योरपि रक्षा भवति । (व्यास०)

८६ रसकर्पूरवटी

यामद्वयं वज्रीदुग्धस्य दत्तग्रासं रसकर्पूरं त्रिकटूनि च समभागानि चूर्णयित्वा जलेन मर्दयित्वा मरिचप्रमाणा वटीः कार्याः । एकैका वटी मधुमिश्रितस्तन्येन सह प्रयोजिता मेहवातान्नाशयति । बालानामप्युपयोजनीया । वातपदार्था वर्ज्याः । (अगस्त्य०)

८७ रसगुटिका (महती)

रसकभस्म ४॥ तोलकं, शुद्धं गन्धकं कलाषट्कपरिमितं, मल्लपाषाणं कलाद्वयं, मयूरतुत्थपारदावर्द्धाऽर्द्धतोलकौ गृहीत्वा खल्वे निक्षिप्य क्षुद्रकारवेल्लफलरसेन यामचतुष्टयं विमृद्य मुद्गप्रमाणां वटीं कृत्वा पुराणतालगुडेन निर्गिलेत् । चातुर्थिकादयः पलायन्ते । क्षीरान्नं, गोधूमखण्डयूषश्चानुकूलः। अन्यत् किमपि न दातव्यम् । (अगस्त्य०)

८८ रसभूपतिः (प्रथमः)

शुद्धपारदो दरदभस्म च २-२ पलं, रससिन्दूरतालकमनःशिलाताम्रभस्मानि १-१ पलानि, शुद्धोऽमलसारगन्धकः ४ पलः, एतत्सर्वमपि चित्रकमूलस्वरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा गाढातपे शोषयित्वा पुनश्चूर्णीकृत्य गङ्गोदककाचकूपिकायां निक्षिप्य घनतया सप्त कर्पटमृत्तिका विधाय मृन्मयपात्रे वालुकायन्त्रविधानेन यामत्रयं क्रमाग्निना पाकं कुर्यात् । काचकूपीं स्फोटयित्वा गुटिकारूपतां प्राप्तं ग्राह्यम् । एतत्पादगुञ्जापरिमाणेनाऽर्द्धगुञ्जापरिमाणेन वा स्तन्येन सेवितं सत्त्रयोदश सन्निपातान्नाशयति । मधुना पित्तज्वरं, चित्रकक्काथेन सर्ववातान्, त्रिकटुना हृच्छूलादीन्, अतिविषाक्काथेन सङ्ग्रहण्यतिसारादीन्, कृष्णताम्बूलीदलरसेन श्लेष्मावरोधमूर्छाश्वासञ्च, त्रिफलाक्काथेनोष्णज्वरान्, यवानीक्काथेनाऽतिदाहं, स्तन्यमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन कण्ठकजिह्विकासन्निपातं, एवमनुपानविशेषेण सर्वान्रोगान्नाशयति । तत्तद्व्याध्यनुसारेण पथ्यक्रमो ज्ञेयः । (अगस्त्य०)

टि०—अग्निमियोगे तुलसीरसेन मर्दनं द्रव्येषु चाऽयोभस्माऽपि मेलनीयमिति व्यासप्रोक्ते वैद्यकशास्त्रे अधिकं दृश्यते तस्याऽत्रानुष्ठानं कृत्वा एक एव योगो निष्पादनीयः

८९ रसभूपतिः (द्वितीयः)

शुद्धविषपारदगन्धकजयपालवीजानि, त्रिकटुकरामठे चैतानि समभागानि विचूर्ण्य चित्रकक्काथेन सप्तदिनावधि मर्दयित्वा मरिचप्रमाणां वटीं कृत्वा मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन सेवेत । अनया श्वासकासयुता सन्निपातदोषजिह्वादोषा नश्यन्ति । पथ्यं यथोचितम् । (व्यास०)

९० रससिन्दूरम्

पलचतुष्टयं मयूरतुत्थं दिनत्रयं मधुनि भावयित्वा कारवेल्लपत्ररसेन यामचतुष्टयं विमृद्य मूषां निर्माय तस्मिन् रजनीकृष्णधत्तूरकारवेल्लपत्रस्वरसगृहधूमेष्टिकाचूर्णनरसारविषैर्दिनद्वयं शोधितं त्रिपलं पारदं चाङ्गेरीपत्र (पुलिचिन्ताकु) कल्केन सह निक्षिप्य समभागवल्मीकमृत्तिकाशणपट्टसूत्रशिलासुधानां श्लक्ष्णपिष्टानां मूषोपरि कवचं दत्त्वा दिनचतुष्टयमातपे विशोष्य १८० तोलकधान्यतुषमध्ये निर्वातस्थाने रात्रौ पुटं दद्यात् । शिवशक्तिपूजां विधायैतत् सिन्दूरं ग्राह्यम् । एतत्तण्डुलप्रमाणं घृतेन, मधुना, नवनीतेन वा सकलामयेषु प्रयोज्यम् । वज्रदेहो भवति । (व्यास०)

९१ रसानन्दभैरवरसः

शुद्धदरदं ४ पलं, टङ्कणं ८ पलं, शुद्धविषं १६ पलं, पिप्पली १२ पला, चूर्णितान्येतान्यार्द्रकरसेन यामचतुष्टयं विमृद्य माषमितां वटीं छायाशुष्कां विधाय मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसानुपानेन सन्निपातज्वरेषूपयोक्तव्यम् । पथ्यं यथोचितम् । (व्यास०)

९२ राजव्रणतैलम्

पुरुषगलगोडिका (मगतोण्डा. तै०, गिलहरी. हिं०) एका, रसकर्पूरकृष्णखदिरसारग्रन्थिमुस्त-

कानि प्रतिद्विपलानि, तिलतैलं ४० तोलकं गृहीत्वा द्रव्यचूर्णेन सह तैलं विपाच्य चर्माऽन्त्रवक्षोऽस्थिवर्ज्यां गलगोडिकां निक्षिप्य पाकः कर्तव्यः। सिद्धे पाके तन्मांसखण्डादिकं वहिर्निष्कासनीयम । एतत्तैलेन राजव्रणस्याऽऽसनव्रणानाञ्च लेपनं कर्तव्यम् । मुद्गखण्डपरिमाणं शर्करया सह सेवनीयम् । अम्लरसः सुतरां वर्ज्यः । पथ्यं यथोचितम् । (अगस्त्य०)

९३ रुद्रप्रतापरसः

शुद्धसव्वीरगौरीकार्मुगिलमूषिकमल्लपाषाणानि, तालकगन्धकपारदविषाणि च प्रतिसपादतोलकानि गृहीत्वा सेहुण्डक्षीरकृष्णनिर्गुण्डिकारवेल्लरक्तकार्पासनीलीमूलवनशिम्बीपत्रस्वरसैः प्रत्येकं यामचतुष्टयं मर्दयित्वा शुष्कचक्रिकां शरावयोरवरुद्ध्य पञ्चोत्पलकैः पुटं दत्त्वा विद्रुममुशल्यौ २-२ तोलके, आरग्वधपुष्पाणि च ४ तोलकानि विचूर्ण्य भस्मनि संयोज्य १० पलायाः शर्करायास्तन्तुली विधाय यथोचितं घृतं मधु च निक्षिप्य चूर्णं सम्यङ्मिश्रयित्वा लेहपक्वं ग्राह्यम् । एतत्प्रत्यहं द्विवारमरिष्टवीजप्रमाणं सेवनीयम । एतेनैकविंशतिर्मेहाः, मूत्रकृच्छ्रमेहक्षयशल्यगतमेहाश्च निवर्तन्ते । अत्र लेह्ये सुवर्णरजतमुक्तानामन्यतमं भस्म मेलयित्वा सेवने कायकल्पसिद्धिर्भवति शुद्धरसकर्पूररससिन्दूरदरदतालकान्येकैकतोलकानि ..(मिरपगण्ड्रा) भृङ्गराजेक्षुरक .. ... .(चेकुणित्याकु) पत्ररसैः प्रतियामचतुष्टयं विमृद्य शुष्कां चक्रिकां शरावयोरवरुद्ध्य १२ उत्पलकैः पुटो देयः । एतदौषधं पूर्वोक्तं रुद्रप्रतापरसञ्च प्रतितण्डुलपरिमाणं मधुनि मिश्रयित्वा मेहव्याधिषु देयम् । मुद्गप्रमाणमौषधद्वयमपि वालानां गर्भवायुव्याधौ स्तन्येनाऽण्डतैलेन वा देयम्। हरिद्रोपदंशबहुमूत्रादिव्याधिषु केवलनवनीतेन तालगुडमिश्रितेन वा देयम। शर्करया हृच्छूलपित्तवायवः, नवनीतेन शरीरोष्णाधिक्यं, त्रिकटुकचूर्णेन सर्वाङ्गशूलम्, यष्टिमधुकचूर्णेन चित्तविभ्रमः, त्रिफलाक्वाथेनाऽर्शोव्याधयः, विल्वादिलेह्येन पित्तपाण्डुत्यादयो रोगा नश्यन्ति। रोगानुसारेण पथ्यक्रमः। (व्यास०)

९४ रौद्ररसः

शुद्धगन्धकटङ्कणविषाणि, नरमूत्रस्वेदितं मूषिकपाषाणञ्च गृहीत्वा जम्वीररसेन पञ्चयामपर्यन्तं विमृद्य मरिचप्रमाणा वटीश्छायाशुष्का विधाय शीतज्वरसन्निपातवातज्वरादिषु देयाः। (व्यास०)

९५ वङ्गसिन्दूरम्

पूतिकरञ्जतैले गोमये च प्रत्येकादशवारं निर्वापितं ५ पलं वङ्गं मृत्पात्रे गालयित्वा तण्डुलीयकमूलखण्डानि किञ्चित्किञ्चिन्निक्षिप्य कुमारीकन्देन यामचतुष्टयं घर्षणे कृते हरिद्रावर्णं भस्म भवति । पुनः खल्वे निक्षिप्य कुमारीरसेन मर्दयित्वा कुक्कुटपुटं देयम् । एवं पुटत्रयेण सिन्दूरं भवति। एतत्तण्डुलप्रमाणं मधुना सेवनीयम् । अथैतस्याऽनुपानचूर्णम्= मुञ्जातक (सालममिश्री) शाल्मलीमूलत्वग्यष्टिमधुककोकिलाक्षवीजवराङ्गाऽर्जुनत्वक्खाखसानि प्रत्येकं द्विपलानि, आहुलि (तंगेडु) मूलत्वक्पुष्पञ्च प्रति दशपलं छायाशुष्कं गृहीत्वा चूर्णीकृत्य समभागां शर्करां मिश्रयित्वाऽर्द्धतोलकमात्रया अर्द्धगुञ्जवङ्गसिन्दूरेण सह नवनीतेन दिनत्रयं सेवनात्सुरामेहाश्मरीशल्यगतमेहतैलमेहमूत्रकृच्छ्रेन्द्रियस्खालित्यमेहदारुणादयोऽर्द्धमण्डलसेवनान्निर्मूलतां यान्ति । मुद्गमाषवटकाः, रम्भापुष्पं, भिण्डिका, गोक्षीरं, घृतमजामांसञ्च पथ्यम्। अन्यदपथ्यम्। (अगस्त्य०)

९६ वातकुठाररसः

शुद्धपारदगन्धकविषटङ्कणतालकजयपालवीजानि, लवङ्गत्रिकटुत्रिफलाश्च समभागानि भृङ्गाऽऽर्द्रकरसाभ्यां प्रतियामचतुष्टयं विमृद्य मरिचाभां वटीं कृत्वाऽऽर्द्रकरसाऽनुपानेन मधुना सह सकलपित्तज्वरेपूपयोजनीयम्। पथ्यं रोगानुरूपम्। (व्यास०)

९७ विषभैरवीरसः

शुद्धविषदरदटङ्कणनागरमरिचपिप्पलीलवङ्गजयपालान् समभागान् जम्वीररसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा मरिचप्रमाणमात्राः कृत्वा छायाशुष्का विधाय मधुना मरिचक्वाथेन वा सह सेवितं सदेकवारं रेचयति। त्रिरावृत्ते दत्ते ज्वरनिवृत्तिर्भवति । पथ्यं यथोचितम्। (अगस्त्य०)

९८ विषमसङ्ग्रहणीकपाटरसः

शुद्धदरदटङ्कणगन्धकविषमरिचकृष्णधत्तूरवीजानि समभागानि भङ्गाक्वाथेन द्वादशयामं मर्दयित्वा गुञ्जामात्रा वटीः कार्याः। अतिविषचूर्णेन मधुना चैका वटी सेविता चेद्ग्रहण्यतिसारादीन्नाशयति। निम्वकुसुमं, मेथिकाचोष्यं, रम्भाकुसुमं, औदुम्वरफलं, शुष्कतिन्तिडीपत्रञ्चाऽनुकूलम्। (अगस्त्य०)

९९ वीरभद्राञ्जनम्

त्रिकटुकरामठसैन्धवजयपाललवङ्गैलावीजानि समभागानि ताम्बूलीदलरसेन दिनद्वयं विमृद्य छायाशुष्कामङ्गुलप्रमितां वर्तिं विधाय ताम्बूलरसेन जम्वीररसेन वा सन्निपातरोगिणामञ्जनं देयम् । (व्यास०)

१०० शङ्खद्रावः (महदादिः) १

स्फटिकासूर्यक्षारौ ४-४पलौ, शुद्धगन्धकसौवर्चलदरदसैन्धवसामुद्रकाचलवणरसकर्पूरोपरक्षारान् प्रत्येकपलान् चूर्णीकृत्य मृत्पात्रे निक्षिप्य नलिकायन्त्रेण द्रवो ग्राह्यः । शीतोदकेन १० विन्दुपरिमितं सेवितं सपित्तवातशूलादीन्नाशयति । पञ्चावृत्तमग्निसंयोगेन शुद्धः सूर्यक्षारः स्फटिका च प्रति ४० पला, ऊपरक्षारः १ पलः, चूर्णीकृतानेतान् मृन्मयपात्रे निक्षिप्य नलिकायन्त्रविधिना द्रवं गृहीत्वा पञ्चपलं पारदं चीनपात्रे निक्षिप्य तदुपरीमं द्रवं दत्त्वा दिनचतुष्टयं गाढातपे स्थापनीयम् । शुष्के द्रवे पुनर्द्रवो दातव्यः । एवं पञ्चदिनपर्यन्तं कृते शुद्धं पारदभस्म सम्पद्यते । पारदभस्माऽऽपादकेन वस्तुत्रयमिलितद्रावकेण विन्दुदशकं शीतोदकेन सेवितं कुक्षिहृच्छूललिङ्गदाहशूलसहितमूत्राऽवरोधकृच्छ्रादिरोगान्नाशयति । मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन वमनहिक्काऽम्लोद्गारपित्तवायुहृद्दाहोदरज्वलनादिरोगा नश्यन्ति (अगस्त्य०)

१०१ शङ्खद्रावः (महदादिः) २

सूर्यक्षारस्फटिके प्रति १० पले, शङ्खभस्म ५ पलं, काचनीललवणनरसारटङ्कणसद्योऽपामार्गयवपर्पटस्नुहीक्षारान् तुरुष्कञ्चेति प्रत्येकपलिकान् गृहीत्वा खल्वे जम्बीररसेन विमृद्य सम्यग्विशोष्य नलिकादियन्त्रेण द्रवो ग्राह्यः । अनेन द्रवेण गुल्मप्लीहशूलाऽऽध्मानोदावर्तमूत्राऽवरोधमूत्रविकारस्द्रवाय्वादयो रोगा निवर्तन्ते । आर्द्रकरसेन विन्दुपञ्चकप्रमाणं सेवितं चेदुदरस्थ पित्तदाहादिकं नश्यति । सर्वे श्लेष्मरोगाऽष्टगुल्मजलोदराद्यो निवर्तन्ते । सुवर्णपत्रे विन्दुचतुष्टयमौषधं निक्षिप्य वालानां रक्षावन्धने कृते श्वासरोगः कदापि नोत्पद्यते । पथ्यं रोगानुरूपम् । (व्यास०)

टि०—नलिकायन्त्रविधानम्—कृतकर्पटमृत्तिके सुपुष्टभाण्डे क्षारद्रव्य निधाय गलादधस्ताच्छिद्र कृत्वैका द्वे वा वशादिनिर्मितनालिके निवेश्य जलमुद्रया सन्धीनवरुद्धयाऽयस्तन्तुभि सम्यङ्नियन्त्र्य पुनरपि पञ्चपवस्त्रमृत्तिका प्रलिप्यैकान्तत शुष्कतामापाद्य चुल्यामधिष्ठाप्य चण्डाग्नि प्रदद्यात् । नलिकामुख काचजे मार्तिके वा घटे निवेश्याऽऽर्द्रेणाऽनार्द्रेण वा वस्त्रेण समावेष्टय द्राव गृह्णीयात् । नलिकामलग्नघटञ्च जले निवेशनीयम् । तदधस्थजलञ्चोष्णतामापन्न निष्कासनीयम् । यदा च घटसम्भृतद्रव्यान्नि शेषतया द्रवो नि सरिष्यति तदा चटचटाकारशब्द सम्पत्स्यते तदा क्रिया समापयेदग्निञ्च वहिर्नि सारयेत् । यत्र तु नलिकाया अभावोऽस्ति तत्र सुपुष्टघटद्वयस्य डमरुक विधाय वस्तुसम्भृतघट चुल्लिकायामारोप्य रिक्त घटञ्च तत्पार्श्वे किञ्चिदवनते जलपात्रे निवेशनीयम् । ज्वाला च पूर्ववद्देया । शब्दादिपरीक्षा च पूर्ववज्ज्ञेया । गन्धकरहितद्रवा स्वल्पगन्धांशा वा सर्वेऽप्यनया रीत्या सुखेन नि मरिष्यन्ति । यत्र तु [illegible]गन्धस्य गन्धाधिक[illegible]स्य वा द्रव्यस्य नि सारयितुमिच्छा नैतर्हि भाण्डे नलिका चैकैकद्वयमपि कार्यं न भवितव्यम्॥

१०२ सकलविषचोष्यम्

शुद्धपारदगन्धकमल्लतुल्यमनःशिलामरिचकन्द (पामतुण्डगेड्डा. तै०,मिरचियाकन्द.हिं०)रामठनिम्बवीजमज्जानः प्रत्येकं सपादतोलकं, शुद्धं जयपालवीजं १पलं, एतानि चूर्णीकृत्य श्वेतार्कक्षीरेण यामद्वयं, निम्वतैलेन च यामचतुष्टयं विमृद्य शङ्खसम्पुटे स्थापयेत । कालसर्पविषाणां मरिचप्रमाणं कवचीकृततालगुडानुपानेन देयम । निम्ववीजतैलेन सङ्घृष्य नेत्रयोरञ्जनमपि दातव्यम् । एतेन वमनविरेचनादिकं भवति सर्वविषाणि च निवर्तन्ते । सर्पदष्टनामेतदौषधदाने दिनत्रयमम्लवर्ज्यं पथ्यम । मनुष्यश्वजम्बुकमूषिकवृश्चिकविषेषु क्षतस्थाने औषधं लेपयित्वाऽग्निना सेकः कार्यः । वृश्चिकमहावृश्चिकविषेषु क्षतस्थाने लेपनमात्रमेव विधेयमन्तर्न दातव्यम । जम्बुकमूषिकमनुष्यदुष्टसर्पादिदंशेऽन्तर्वहिश्चौषधं योजनीयम् ।

अपि च—एकपलं मल्लं शरावे निधाय...... (गाडिदिगडपाकु. तै०) रसेन श्वेताऽर्कक्षीरेण च प्रति यामचतुष्टयं ग्रासं दत्त्वा वृश्चिकदंशस्थाने लेपनीयम् । विषदोषप्रकोपे सति शुद्धसुवर्णपत्रं, विद्रुमाः, केशरम्, रजतचूर्णं, मुक्ता, मृगमदः, आकारकरभः, शङ्कम, जटामांसी, तक्कोलं, विल्वफलोद्भकायः, लवङ्गं, रससिन्दूरं, विम्वीमूलं, यष्टिमधुकं, रास्ना पलाशवीजानि, एला, त्वक्, कुष्ठं, नागकेशरं, द्राक्षा चेति समभागानि स्तन्येन दिनद्वयं विमृद्य शङ्खसम्पुटे निधाय पूर्वोक्तविषग्रस्तानां जिह्वादोषप्रशान्तये जिह्वायां घर्षणीयम् । पथ्यं यथोचितम । (व्यास०)

१०३ सञ्जीविगुटिका

शुद्धविषतालकपारदगन्धकटङ्कणत्रिकटुविभीतकीगोरोचनतुरुष्कान् प्रत्येकमर्धतोलकान्, शुद्धजयपालवीजानि च ४ तोलकानि गृहीत्वा पटपूतं विधाय कर्पूरवल्ली (कप्परल्ली. तै०, पत्रयवानिका), रक्तपुनर्नवा (पुरुषरत्न तै०) वासातोयपिप्पलीभृङ्गकृष्णतुलसीरसैः प्रत्येकदिनं मर्दयित्वा मुद्गप्रमाणा वटीः कुर्यात् । कृष्टतुलसीपत्ररसेन सहैका मात्रा सेविता चेद्बालकानामपतानकवायुं, सन्निपातदोषं, श्वासकासौ, वायुरोगांश्च नाशयति । (व्यास०)

१०४ सन्निपातभैरवरसः

शुद्धपारदगन्धकटङ्कणतालकजयपालत्रिकटुकत्रिफलाः प्रत्येकपलाः, शुद्धदरदं ४ पलं गृहीत्वा खल्वे ताम्बूलदलरसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा संशोष्य

कृष्णतुलसीरसानुपानेन रक्तिपरिमितः साधारणज्वरेषूपयोजनीयः । स्तन्येन विषमज्वराः, मधुना पैत्यदोषाः, मरिचक्वाथेन वातज्वराः, मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन पित्तवायवो हृदयज्वलनं सर्वशूलानि च नश्यन्ति । सन्निपातदोषेषु स्तन्येन, मधुना, ताम्बूलदलरसेन वा सङ्घृष्य नेत्राञ्जनं देयम् । शिग्रुमूलत्वग्रसेन लशुनतैलेन वाऽनुपानेन महासन्निपातजनितसप्तदोषेषु प्रयोजनीयम् । तत्तद्रोगबलानुसारेण पथ्यक्रमः कार्यः । (व्यास०)

१०५ सन्निपाताङ्कुशरसः (जन्यङ्कुशः) १

शुद्धविषपिप्पल्यावेकैकपले दरदश्च द्विपलं गृहीत्वा जम्बीररसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा मूलकबीजप्रमाणा वटीः कुर्यात् । आर्द्रकरसेन दत्ते सन्निपातादयो निवर्तन्ते । त्रीणि चत्वारि वा दिनानि सेवनीयः । पथ्यक्रमो यथोचितः । (अगस्त्य०)

१०६ सन्निपाताङ्कुशरसः (जन्यङ्कुशः) २

शुद्धपारदगन्धकतालकहेमसाक्षिकविषतारमाक्षिकताम्रमल्लभस्माऽभ्रकसिन्दूराणि, सद्यःक्षारनरसारकर्कटशृङ्गिरामठाऽतिविषक्षुद्रपटोलहरीतकीनागरविजयामुशलीनिम्बनिर्यासाः, सर्वाणि समभागानि काकमाचीरसेन दिनद्वयं विमृद्य जम्बीररसेन च पूर्ववन्मर्दयित्वा चणकप्रमाणा वटीः कृत्वा दशमूलक्वाथेन, आर्द्रकरसेन, शिग्रुमूलरसेन, लशुनरसेन, स्तन्येन, मधुना वा मिश्रयित्वैका वटी सेविता चेत्सोपद्रवांस्त्रयोदश सन्निपातान्नाशयति । शिग्रुमूलत्वग्रसः, अर्कमूलत्वग्रसः, निम्बतैलम्, लशुनरसः, स्तन्यम्, अजगन्धारसः, निर्गुण्डीत्वग्रसः, आर्द्रकरसः, कुक्कुटाण्डतैलम्, मधु चैतानि त्रयोदशसन्निपातानामनुपानानि । (व्यास०)

१०७ सव्वीरवटी

सव्वीररसदरदभस्मानि, कान्तसिन्दूरं, चन्द्रसारः, केशरं, गोरोचनं, मृगमदश्च समभागानि स्तन्येन मधुना च प्रत्येकं चतुर्यामं विमृद्य गुञ्जाचतुष्टयं दोषज्वरसन्निपातकण्ठवायुचित्तविभ्रमादिष्वार्द्रकरसाद्यनुपानेन यथायोग्यं देयम् । (व्यास०)

टि०—अत्र सव्वीरमिति बहुषु योगेषु समागत दृश्यते तस्याऽऽङ्ग्लभाषाया कारोसिव सब्लिमेट् (Corrosive Sublimate) इति नाम । यूनानीवैद्यके "दालचिकना" इति नाम्ना प्रसिद्धि । एतद्देशीयाऽऽयुर्वेदसहितासु दुष्कालविपरिणामेन सुश्रुतभेलचरकेति नाम्ना प्रसिद्धासु त्रिष्वपिसहितासु कुत्राऽप्यस्य विवरण नाऽऽसाद्यते किन्तु सौवीरमथवा सौवीरकमिति नाममात्रमुपलभ्यते यथा—" शीत सौवीरक वाऽपि पिष्ट्वाऽथ रसभावितम् । कूर्मपित्तेन मतिमान्भावयेद्रौहितेन वा ॥ चूर्णाञ्जनमिद नित्य प्रयोज्य पित्तशान्तये । सु उ. १७।१३–१४" इत्यत्र डल्हणेन सौवीरक सौवीराञ्जनमित्युक्तम् । " सौवीरमञ्जन नित्य हितमक्ष्णो प्रयोजयेत् । च. सू. ५।१३, अ स सू ३, अ हृ सू २।४" अत्र सुवीराभव सौवीरमिति वदता चक्रपाणिना येनकेन प्रकारेण स्वपन्था विशोधित । इन्दुरुणदत्ताभ्या तु मौनमालम्बितम् । " सौवीरमञ्जन तुत्थ ताप्यो धातुर्मन शिला । चक्षुष्या मधुक लोहमणय पौष्पमञ्जनम् ॥ च चि- २६।२४३" इत्यत्र तु चक्रेणापि निद्रायितम् । " वल्मीकशिखराकार भङ्गे नीलोत्पलद्युति । सौवीराञ्जनमित्याहुरायुर्वेदविदो जना ॥ च द स्वस्थवृत्ते " इत्यत्र नीलाञ्जने एव रूढि. कृता । शालग्रामेण तु सौवीराञ्जन स्रोतोऽञ्जनञ्चेति द्वयोरेकार्थवाचकत्व स्वीकृतम् । " सौवीरमञ्जन कृष्ण कालनील सुवीरजम् । स्रोतोऽञ्जन तु स्रोतोज नदीज यामुन वरम् ॥ **सर्वौषधिगुणकल्पक** आन्ध्रदेशीयनिघण्टौ"। "अञ्जन यामनञ्चापि कपोताञ्जनमित्यपि । स्रोतोऽञ्जनञ्च द्विविध श्वेतकृष्णविभेदत ॥ तच्च स्रोतोऽञ्जन रूक्ष सौवीर श्वेतमीरितम् । वल्मीकशिखराकार भिन्नमञ्जनसन्निभम् । घृष्टन्तु गैरिकाकारमेतत् स्रोतोऽञ्जन स्मृतम् । स्रोतोञ्जन सम ज्ञेय सौवीर तत्तु पाण्डुरम् ॥ धूम्रवर्णाभमपि वा सौवीराञ्जनमुच्यते । " इति वैद्यचिन्तामणौ प्रदर्शितम् । वसवराजीयेऽञ्जनपञ्चकगुणप्रदर्शने " पुष्पाञ्जन सित शुद्ध हिम सर्वाक्षिरोगजित् । नीलाञ्जन कृष्णवर्ण नेत्रदोषक्षयापहम् ॥ रसाञ्जन तु पीताभ विषनेत्रविकारनुत् । स्रोतोऽञ्जन पाण्डुवर्ण चक्षुष्य सर्वरोगजित् ॥ सौवीर रक्तवर्ण च नेत्रकण्डुविषापहम् ॥ " इति प्रदर्शितम् । तत्र रक्तस्य श्वेतस्य च यथार्थतया वैद्येषु ग्रन्थेषु च परिचयो नोपलभ्यते । एतद्देशीया अतिचाकचिक्यविशिष्टगोदन्तमेव श्वेताञ्जननाम्ना व्यवहरन्ति । अन्ये तु यशदपुष्पवाचकता मन्यन्ते । तैलङ्गद्राविडादिदेशेष्वस्य कर्पूरशिलाजतुनाम्ना व्यवहारोऽस्ति । वसवराजीये च श्वेताञ्जन लिखित्वा तत्स्वरूपपरिचयो नाकारि । एतन्महान्धकारे पतिताना मनागपि सिद्धान्तभा यत्नतो गवेषिताऽपि नाऽऽसाद्यते । अगस्त्यप्रोक्तवैद्यकशास्त्रे यदिद सव्वीरनाम्ना पारदकृतिर्दृश्यते तस्या धातुवादे सर्वशोऽभ्यर्हितकारणत्वाद्यदि महर्ष्यगस्त्यप्रणीतमेव तच्छास्त्रं स्यात्तर्हि अतिप्राचीनकालादेव पारदकृते प्रसिद्धिरपि लोकेषु भवेदेवेत्यत्र न कस्याऽपि शङ्कोदियात् परन्त्वेतद्देशे तत्प्रचारस्यैकान्ततया लुप्तत्वेनाऽस्मिन्विषये कोऽपि सिद्धान्त स्थिरीकर्तुमतीव दु शक । रसप्रकाशसुधाकारेण तु स्वकीयग्रन्थे एकादशाऽध्याये तारक्रियाप्रदर्शनप्रक्रमे " श्वेतसौवीरक शुद्ध पाचित विषमुष्टिना । स्वच्छे सत्ववरे वह्नौ निक्षिप्त रूप्यकृद्भवेत् ॥ " इत्यादिस्थलेऽस्य श्वेतसौवीरकनाम्ना प्रसिद्धिः कृताऽस्ति । उक्तसुश्रुतीयोद्धरणेऽपि शीत सौवीरकमिति पद समागतं तत्र लेखकप्रमादेन श्वेतस्थाने शीतमिति कथन्न सञ्जातमिति बुद्धिर्दोलायिता भवति । तत्र टीकाकारैस्तु शीतशब्दस्याऽर्थ रसाञ्जनमिति केचित्कर्पूरमित्यन्ये इति प्रदर्शितम् । तत्रास्य वस्तुनोऽङ्गीकारे नेत्रीययोगत्वात्सव्वीरस्य चाऽग्निकल्पत्वादनुचित इव सङ्ग्रह प्रतिभाति । कदाचित् तत्रत्यगोमयादिरसभावनाभी रात्र्यान्ध्यादावनुकूलोऽपि भवेत्परन्तु यावता तत्परीक्षा न क्रियेत तावता नि शङ्कतया कोऽपि वदितु न प्रभवत्येव । सव्वीरमिति शब्द सर्ववीरशब्दादथवा सौवीरशब्दाद्भ्रंशाया गत' प्रतीयते । अतएव तद्विषये सर्वेऽपि निघण्टुकारा व्यामोह प्राप्य यद्वा तद्वा प्रलपन्ति । पाश्चात्यविज्ञानभाविताऽन्त कारणास्तु सव्वीरस्योत्पत्तिमतीवाऽभिनवा मन्यन्ते परन्तु तन्न समीचीनम् । यतोऽगस्त्यप्रोक्तवैद्यकशास्त्रे द्वात्रिंशत्क्षारोत्पन्नपाषाणाना तावतामेव पाकक्षारविशेषैरुत्पन्नाना सव्वीरादीना यथाशास्त्र निरूपण कृतमस्ति । अगस्त्यसमयश्च प्रतीच्यवैज्ञानिकप्रादुर्भावादर्वाचीन इति कथनन्तु मत्तप्रलाप इव सर्वेषा सुहृदा हृदि स्फुरत्येव । अत सव्वीरादिपाषाणाना निर्माणमतिप्राचीनकालत एव समागतमस्तीत्यवश्य मन्तव्यमेव । चतु षष्टिपाषाणाना विवरण त्वीश्वराऽनुग्रहाद्भारतीयरसायनयाथातथ्ये समेष्यति ।

१०८ सारिवादिवटी

शुद्धपारदगन्धकौ प्रति दशाणकौ, नागोढ्याणकाधिकैकतोलकः, तीक्ष्णलोहभस्म ४ तोलकं, ताम्रभस्म २ तोलकं, सर्वाण्यपि कुमारीद्रवेण मर्दयित्वा क्षुद्रताम्रपात्रे निक्षिप्य दिनत्रयपर्यन्तं प्रचण्डाऽऽतपे स्थापयेत्। नितरां शुद्धतरं भस्मोपलभ्यते। एतद्गुञ्जापरिमितं प्रातःसायं मधुना सेवितं सत्सकलज्वरपाण्डुकामलाश्वयथुगुल्ममेहवातादीन्नाशयति। अस्यानुपानम्—हेमक्षीरी १० पला, अनन्तमूलं ४ पलं, विल्वकृष्णहिंस्रामूला (नल्लउप्पि. तै०)ऽश्वगन्धाश्वेतहिंस्रामूल (तेल्लउप्पि. तै०) पिण्डालुक (पेद्दमङ्गा तै०) मदन (चिन्नमङ्गा) नागराणि प्रति द्विपलानि, चित्रकमूलत्वक् २॥ पला, मरिचपिप्पल्याचेकैकपले, एलालवङ्गत्वचोऽर्द्धाऽर्द्धपलाः, एतानि सर्वाणि चूर्णीकृत्याऽर्द्धतोलकपरिमिते चूर्णे पूर्वोक्तं भस्म गुञ्जाद्वयपरिमितं संयोज्य मधुना सह सेवनात्सन्ततैकाहिकादिज्वरवातकटिशूलश्लेष्मप्रधानव्याधयो निवर्तन्ते। (अगस्त्य०)

१०९ सुदर्शनरसः

शुद्धपारदगन्धकमनःशिलावत्सनाभदरदाऽभ्रकतालकहेममाक्षिकाणि प्रत्येकं सपादतोलकानि गृहीत्वा चाङ्गेरी (पुलिचिन्ता) जम्बीरबीजपूरनिर्गुण्डीभृङ्गराजरसैः प्रत्येकदिनं मर्दयित्वा शुष्कचक्रिकां शरावयोरवरुद्ध्याऽर्द्धगजपुटो देयः। पुनः खल्वे निक्षिप्य चित्रकपञ्चाङ्गक्वाथेन दिनद्वयं मर्दयित्वा माषप्रमाणा वटीः कृत्वा छायायां शोषयेत्। एतस्यानुपानम्—रामठत्रिकटुककर्पूराणि समभागानि चूर्णीकृत्य पादतोलके चूर्णे मधुना सह पूर्वोक्तवटी सेवनीया। एतेन सन्निपातवातोन्मादपाणिपादस्तम्भश्वासकासरक्तवातकफक्षयपक्षकण्ठडमरुक (धनुर्वात) शिरोवाय्वादयो रोगा नश्यन्ति। क्षीरान्नं पथ्यम्। अन्यत्किमपि न देयम्। (अगस्त्य०)

११० सुवर्णसिन्दूरम्

शुद्धं सुवर्णं मृदुतया चूर्णीकृत्य वीजपूर (मादीफल) रसेन मर्दनसमये किञ्चिन्नरसारं टङ्कणञ्च मेलयित्वा सम्यग्विमृद्य शोषयित्वा पुनर्नीलीपत्ररसेन सेहुण्डक्षीरेण च प्रतियामद्वयं मर्दयित्वा शुष्कचक्रिकां विधाय शरावसम्पुटेऽवरुद्ध्य गणेशमभ्यर्च्य मयूरपुटो देयः सिन्दूरं सम्पद्यते। एतत्तण्डुलपरिमाणं गोघृतेन सह सेवनीयम्। अनेन पाण्डुकुष्ठशूलकपालशूलपीनसा नश्यन्ति। मधुनोन्मादादयः, शर्करया व्रणाः, विचर्चिकावमनादयः, उष्णोदकेन ज्वरादयः, शीतोदकेनाऽतिसारो गुल्मरोगश्च नश्यति। मृगमदेन सह शरीरं सुवर्णच्छायं भवति। एकसंवत्सरसेवनात्पञ्चशतवत्सरं जीवति कायकल्पसिद्धिश्च भवति। क्षीरान्नं माषवटकाः, कन्दपदार्थाश्चैते पथ्या। अम्लक्षारादिकं वर्ज्यम्। (अगस्त्य०)

१११ सूतसिन्दूरम्

शुद्धपारदः १ पलः, रसकर्पूरटङ्कणकस्तूरीहरिद्रा (आंवाहल्दी हि०) दारुहरिद्राः प्रत्यर्द्धतोलिकाः, एतानि सर्वाणि खल्वे निक्षिप्य ताम्बूलकृष्णधत्तूररसाभ्यां प्रतियामत्रयं मर्दयित्वा (मर्दनसमये कलाचतुष्टयमूषरक्षारमपि योजनीयम्) शुष्कां चक्रिकां विधाय शरावसम्पुटितं कृत्वा कुक्कुटपुटं देयम्। एतत्सिन्दूरं नवनीतेन सह पादगुञ्जापरिमितं भोक्तव्यम्। अनेन कुक्कुरकास. (मन्दारकासः कुक्कुरदग्गु तै०), पित्तवायुः, वङ्क्षणग्रन्थिः, दोषज्वराश्च निवृत्ता भवेयुः। यथोचितं पथ्यम्। (अगस्त्य०)

११२ स्वर्णभूपतिरसः

पारदतालकगोदन्त (कर्पूरशिलाजतु तै०) ताम्रगन्धकरसकदरदभस्मानि शुद्धं विषञ्च समभागं गृहीत्वा अनन्तमूलचित्रकेक्षुरकमूलरसैः प्रत्येक याम मर्दयित्वा तण्डुलमात्रं मधुना सह सेवितं सत मेहशूलगुल्ममहासन्निपातादिदोषज्वराम्नाशयति औदुम्बरशलादुसूरणबालवृन्ताकशिग्रुशिम्बीगोक्षीरघृतपुराणतण्डुलाश्च पथ्याः (व्यास०)

११३ हिङ्गुलादिवटी (प्रथमा)

लोहरसकर्पूरभस्मनी, शुद्धपारदगन्धकजयपालकृष्णधूर्तबीजतालमल्लविषाणि कटुरोहिणी श्वेतत्रिवृत्त्रिकटुतिक्ततुम्बीबीजश्वेताऽपराजिता (तेल्लगण्टिना तै०) मूलहरीतक्यः, एतानि समभागानि चूर्णीकृतानि खल्वे ताम्बूलीरसेन सप्तदिनपर्यन्तं मर्दयित्वैकपलं मरिचचूर्णं विमिश्रय्योदकेन विमृद्य मरिचप्रमाणां वटीं कुर्यात्। उष्णोदकानुपानेन दिनत्रयं सेविता सर्वज्वरान्नाशयति। (व्यास०)

११४ हिङ्गुलादिवटी (द्वितीया)

शुद्धदरदविषपारदगन्धकटङ्कणजयपालबीजानि, सैन्धवत्रिकटुकहरीतकी श्वेतत्रिवृदरिष्टबीजमज्जचित्रकमूलानि प्रति सपादतोलकानि स्नुहीक्षीरेण मर्दयित्वा मरिचप्रमाणा वटीः कृत्वोष्णोदकानुपानेन सेविता चेद्वातप्रकोपजनितसन्निपातशूलाः सर्वेऽपि नश्यन्ति। पथ्यमुष्णोदकं तण्डुलाश्च, अन्यत्किमपि न देयम्। (व्यास०)

११५ हेमरसगुटिका

शुद्धदरदविषवराटिकाभस्म त्रिकटुसैन्धवचित्रकान् समभागान् जम्बीररसेन चतुर्यामं विमृद्य मरिचप्रमाणा वटीश्छायाशुष्का विधाय मरिचक्वाथे मधुनि वा सेविता सकलज्वरदोषान्नाशयति। वातशीतलाधिक्ये सति त्रिचतुरैर्लवङ्गैः सह भक्षणीया पथ्यं रोगोचितम्। वातपदार्थास्त्याज्याः। (अगस्त्य०

इत्यगस्त्यव्यासप्रोक्तरसप्रयोगाः समाप्ताः

परिशिष्टो भागः

अथाभ्रादिप्रसिद्धरसप्रयोगाः

(प्रायो ग्रन्थविशेषपरिचयरहिताः)

१ अष्टादशकलरसः

हिङ्गुलोत्थपारदः, रससिन्दूरं, शुद्धगन्धकं, सव्वीरं, गौरीपाषाणं, मल्लः, मृद्दारश्रृङ्गं, रसकर्पूरं, औषरक्षारः, हंसपाददरदः, अहिफेनः, शुद्धकान्तम्, कर्कटश्रृङ्गी, हरीतकीपुष्पं, तुरुष्कः, कर्पूरं, तालकश्चैतेषु षोडशद्रव्येषु शत्रुमित्रभावपरिज्ञानपूर्वकं तत्तत्समभागं खल्वे निक्षिप्य सर्वाणि चूर्णीकृत्य कुक्कुटाण्डतैलेन दिनत्रयं सम्यग्विमृद्य श्रृङ्गसम्पुटे संरक्षणीयम्। एतत्सिक्थरूपमौषधमसाध्यसन्निपातकुष्ठवातश्लेष्मरोगेषु अर्धगुञ्जाप्रमाणमुपयोजनीयम्। पथ्यं रोगानुरूपम्।

कुक्कुटाण्डतैलनिःसारणोपायः—२० अथवा २५ कुक्कुटाण्डानुष्णोदके निक्षिप्य घण्टाद्वयपर्यन्तं मन्दाग्निना विपाच्य उपरितनं त्वचं स्फोटयित्वा तदन्तरवलग्नं श्वेतकञ्चुकं छुरिकया दूरीकृत्य तद्गर्भे विद्यमानपीतगोलकान्येकीकृत्य लोहकटाहे निक्षिप्य मृद्वग्निनाऽर्द्धयामपर्यन्तं पाके कृते गोलकानि सर्वाण्यपि द्रवीभूय तैलरूपतामापत्स्यन्ते। एतदेवाऽण्डतैलं चीनपात्रे स्थापयित्वा तत्तदुचितसमयेषु सन्निपातादिष्वनुपानतया नियोजनीयमिति प्राचीनवैद्यरहस्यम्। अस्य ब्रह्मनादेति वादे सञ्ज्ञा।

२ कालान्तकसिन्दूरम् (महत्)

ताम्बूलस्वरसशोधितं गन्धकं ५तोलकं मूषायामर्द्धं निक्षिप्य तदुपरि तण्डुलाम्लशोधितपारदं १० तोलकं निधायाऽवशिष्टगन्धकचूर्णेनाऽऽच्छाद्य लोष्टचक्रिकया मूषामुखं पिधाय सन्धिबन्धं विनैव ज्वलदङ्गारमध्ये स्थापयेत्। मूषामुखान्नानावर्णधूमोद्गमनपूर्वकविजातीयगन्धकज्वालादर्शनपर्यन्तं निरीक्ष्य बहिः संस्थाप्य पिहितमुद्घाट्य निर्वातप्रदेशे स्वाङ्गशीतमवस्थापयेत्। अत्रेयं सूचना—गन्धकप्रक्षेपात्पूर्वमेव पलैकं गन्धकं ताम्बूलस्वरसेन विमृद्य मूषायाः कण्ठपर्यन्तं विलिप्याऽऽतपे शोषणीयम्। तदनन्तरं गन्धकप्रक्षेपादिक्रिया कर्तव्या। एतच्च दीर्घकुक्षिशूलादिरोगेषु कालमेहादिषु च निरङ्कुशः प्रवर्तते। अत्र शर्करामिश्रितं दुग्धान्नं पथ्यम्। एकमण्डलसेवनात्कुष्ठनिवृत्तिर्भवति। औषधञ्च दधिमण्डेन नवनीतेन वा सेवनीयम्। क्षारधूमपानस्यादिकं त्याज्यम्।

३ गन्धकसिक्थकम्

एकपलामलसारगन्धकचूर्णं लोहकटाहमध्ये निक्षिप्य पात्रस्याऽधस्तादेरण्डतैलेन दीपं प्रज्वाल्य भूम्यामलकीपत्रस्वरसं २४ तोलकं गृहीत्वा गन्धकचूर्णस्योपरि किञ्चित्किञ्चिद्ग्रासं दद्यात्। लोहशलाकया मन्दं मन्दं चालनीयम्। स्वरसस्य समाप्तौ सत्यां गन्धकचूर्णं सिक्थं भवति। एतच्चणकप्रमाणं गोघृतेन सह देयम्। अनेन मेहपिडिकादिव्याधयो निवर्तन्ते।

४ चण्डमारुतरसः

शुद्धं रसकर्पूरं ८ भागं, दरदः ४ भा०, सव्वीरं (दालचिकना) गन्धकञ्च २-२ भा०, रससिन्दूरं १६ भागं गृहीत्वा यामद्वयं मर्दयित्वा तण्डुलप्रमाणं सन्निपातेऽनुपानविशेषैर्देयम्।

५ ज्वरकुलान्तकवटी

दशतोलकं मरिचं सङ्क्षुद्य १५० तोलके जले निक्षिप्यैकतोलकं शुद्धसव्वीरं (दालचिकना) त्रिगुणीकृतवस्त्रे पोट्टलीं बद्ध्वा दोलायन्त्रविधिना १५ तोलकजलावशेषपर्यन्तं विपाच्य भाण्डमवतार्य सव्वीरं मरिचानि च खल्वे निधाय दोलायन्त्रीयाऽवशिष्टजलेनैव विमृद्य माष (उडद) प्रमाणा वटीः कुर्यात्। दिनत्रयाऽनन्तरमेषा वटी न प्रयोज्या। मात्रां भक्षयित्वा किञ्चिदुष्णोदकानुपानं देयम्।

६ ज्वरस्तम्भनवटी (दुराईवटी)

शुद्धपारदं १॥ तोलकं, जीरकभस्मार्धतोलकं, शुद्धगौरीं पादतोलिकां खल्वे निधाय मूर्वामूलस्वरसेन दोलायन्त्रविधानेन रसशोषणपर्यन्तं पाकं कृत्वा मधुना नागरकल्केन वा एका वटी सेविता चेज्ज्वरस्तम्भनं भवति। पथ्यं यथेच्छम्।

७ तरुणार्करसः

स्वर्णं पारदसव्वीरं श्वेतभास्करहिङ्गुलम्।
सिन्दूरञ्च समं व्योषं सर्ववस्तुसमं समम्॥

रक्ततण्डुलयूषेण कुक्कुटाण्डरसेन च ।
वल्लीदलेन सम्मिश्र पुनः कुक्कुटपूरितम् ॥
तरुणार्करसो नाम सन्निपातहरः परः ।
अघोरेति च मन्त्रेण संस्थाप्य पृथिवीतले ॥
वामदेवाय सङ्गृह्य सद्योजातमिदं पचेत् ।
ब्राह्मण भोजयेत्पश्चादौषधं सम्यगर्चयेत् ॥

टि०—स्वर्णपारदरसकर्पूरदरदरससिन्दूरमञ्जीरव्योषाणि समभागानि गृहीत्वा रक्ततण्डुलमण्डेन, कुक्कुटाण्टश्वेतद्रवेण, नागवल्लीदलस्वरसेन च प्रति यामचतुष्टय विमृद्य त्रयो भूपुटा देया । अथ भूपुटस्य विवरणम्—द्वादशाङ्गुलाऽऽयाम अङ्गुलित्रयविस्तृत खात विधाय सार्धकाङ्गुल सिकताभिरापूर्य तदुपरि शुष्का पूर्वौषधचक्रिका विन्यस्य चक्रिकोपरि भूसमा सिकतामापूर्य सिकतोपरि षड्भि सप्तभिर्वोत्पलकै पुट दद्यात् । एकैकस्मिन्पुटे औषध कुक्कुटाण्टश्वेतद्रवेण मर्दयेत् । शुष्कचक्रिकोपरि ताम्बूलदलकल्केनाऽर्द्धाङ्गुल कवच दत्त्वा विशोष्य पुटे निदध्यात् । एव रीत्या पुटत्रय देयम् । तुरीये पुटे रक्ततण्डुलमण्डेन दिनत्रय विमृद्य सर्वपुट दत्त्वा शङ्खसम्पुटे स्थापयेत् । महासन्निपातव्याधिषु गुञ्जामात्र प्रयोक्तव्यम् । पथ्य यथोचितम् ।

८ ताम्रसिन्दूरम्

हंसपाददरदः, पलाण्डुरसे शुद्धो गन्धकः, पारदः, मनःशिला, तुत्थं, तालकश्चैतानि प्रत्येकमर्धतोलकानि खल्वे विन्यस्य रक्तकार्पासपत्रस्वरसेन विमृद्य वर्तुलाकारां शुष्कां चक्रिकां विधाय वितस्ति मात्रोच्छ्रिते मृत्पात्रेऽर्द्धभागपर्यन्तं समुद्रलवणं विन्यस्य लवणस्योपरि चक्रिकां निधाय पट्टतोलक-शुद्धताम्रनिर्मितसम्पुटेन पिधाय कण्ठावधि भाण्डं लवणेन पूरयित्वा शरावेण भाण्डमुखं सम्यङ्निरुद्ध्य चतुर्यामपर्यन्तं गाढाग्निना पाकं कुर्यात् । उपरितनताम्रसम्पुटं मेघवर्णतया भस्म सञ्जायते । एतत्तण्डुलपरिमाणं घृतेन मधुना नवनीतेन वा सेवितं सदसाध्यश्वासकासविषमसन्निपातकुष्ठादिमहारोगान्निवारयति । यथोचितं पथ्यम् ।

९ दरदसिक्थकम्

वितस्तिप्रमाणोच्छ्रितमृत्पात्रतलभागे द्वादशतोलकानि श्वेतार्कपुष्पाण्यास्तीर्य तदुपरि पट्टतोलकं समुद्रलवणं, लवणोपरि त्रितोलकं शुद्धदरदखण्डं निधाय तदुपरि पुनर्द्वादशतोलकानि श्वेतार्कपुष्पाण्यास्तीर्य पट्टतोलकञ्च लवणं निधाय पात्रमुखं शरावेणाऽवरुद्ध्य दृढसन्धिमुद्रणं कृत्वा शतसङ्ख्याकैररण्योत्पलकैः पुटं दद्यात् । स्वाङ्गशीते सत्यौषधं पुष्पक्षारादिकिट्टरूपं गृहीत्वा चीनपात्रे निक्षिप्य दशतोलकपरिमितं जम्बीररसमापूर्य तन्मध्ये रक्तजपाकुसुमदलानि १० तोलकानि मेलयित्वा दिनसप्तकं तथैव संस्थाप्याऽष्टमदिने चुल्ल्यामारोप्य सिक्थकं निष्पाद्य काचकूप्यां रक्षयेत् । असाध्यश्वासकासयोरेतत्सिक्थकं तण्डुलप्रमाणं देयम् ।

१० नवग्रहरसः

शुद्धं सूतं वत्सनाभं लोहभस्म च टङ्कणम् ।
व्योषं गन्धोन्मत्तबीजं सर्वञ्चैव समांशकम् ॥
कृष्णभृङ्गरसैर्मर्द्य वटी मुद्गप्रमाणिका ।
नवग्रहरसो नाम सर्वरोगहरः परः ॥
श्वासे कासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ।
सन्निपातेऽतिसारे च कृष्णसर्पे च वृश्चिके ॥
अशीतिवातरोगाणामामातीसारनाशनः ।

११ पक्षवातविध्वंसनरसः

हिङ्गुलोत्थपारदोल्लिपाषाणे १-१ तोलके, शुद्धमल्लोऽर्द्धतोलकः, सञ्चीरं पादतोलकं, नागरं २ तोलकं, शुद्धहरीतक्याकारकरभरश्ननिकाबीजान्येकैकतोलकानि चूर्णीकृत्य ताम्बूलीदलरसेन दिनत्रयं सम्यग्विमृद्य पञ्चसप्ततिनिम्बुकरसस्य शोषणपर्यन्तं सम्यङ्मर्दयित्वा सर्षपप्रमाणाश्छायाशुष्का वटीः कुर्यात् । प्रातःसायं वटीद्वयं गोघृतानुपानेन परिषेव्य कदुष्णजले तोलैकं मधु मेलयित्वाऽनुपेयम् । आढकीखण्डयूषो गोधूमरोटिका च पथ्या । सप्तदिनपर्यन्तमौषध निषेव्य विंशतिदिनपर्यन्तं पथ्यं पालनीयम् । मासद्वयात्परं मुद्गान्नं भक्षणीयम् । ततोऽन्यच्छाकक्षाराऽम्लधूमपानादिकं सर्वथ त्याज्यम् । यदि बद्धमूलः पक्षवातः स्याद्दिसप्ताहमौषधं सेवनीयम् ।

१२ पूरवटी (रसकर्पूरवटी)

पञ्चतोलकं रसकर्पूरखण्डं गृहीत्वा तदवगाहनपर्याप्तस्त्रीस्तन्ये निधाय दिनत्रयपर्यन्तमातपे शोषयेत् । प्रत्यह नवं स्तन्यं पूरणीयम् । चतुर्थदिवसे कर्पूरशकलान्मलं दूरीकृत्य स्वच्छलोहकटाहे २५ तोलकं शुद्धं मधु निक्षिप्य पूरशकलं निधाय दीपाग्निना मधुशोषणपर्यन्तं पचेत् । ततःपरं पूरशकलं खल्वे निक्षिप्य एलावातामसज्जगोधूमपिष्टानि प्रति सपादतोलकानि मेलयित्वा शुद्धजलेन द्विदिनं विमृद्य मसूरप्रमाणा वटीश्छायाशुष्काः कुर्यात् । प्रातःसायमेकैकां वटीं भक्षयेत् । द्वितीयदिवसादारभ्य त्रिदिनपर्यन्तमेकां वटीं वेलाद्वयं प्रवर्धयेत् । पञ्चमदिवसात्पूर्ववदेकैकवटीह्रासः, एवं सप्तदिवसैः प्रयोगमनुष्ठाय चतुर्दशदिवसपर्यन्तं क्षीरान्नसेवी स्यात् । मासद्वयपर्यन्तं च स्त्रीसङ्गो वर्ज्यः ।

१३ पूर्णचन्द्रोदयरसः

रजतसुवर्णताम्रनागवङ्गाऽभ्रककान्ततीक्ष्णविद्रुममुक्तापारदहेममाक्षिकभस्मानि, शुद्धटङ्कणमनःशिलागन्धकांश्चेति सर्वान्समभागान्गृहीत्वा मुद्गपर्णीरक्तकार्पासपुष्पक्षीरविदारीमाषपर्णीजम्बीरतुलस्यमृ-

तास्त्ररसैरेकैकदिनं विमृद्य शुष्का वटिका विधाय काचकूपिकायामवरुद्ध्य दिनत्रयपर्यन्तं त्रिविधाग्निभिर्वालुकायन्त्रे पाकं कुर्यात् । स्वाङ्गशीतमौषधं खल्वे निक्षिप्य मृगमदजातीपत्रकर्पूरैलामरिचनागकेशरत्वक्कक्कोलवङ्गपिप्पलीजातीफलानां समभागानां चूर्णं समानं मेलयित्वा नागवल्लीदलरसेन विमृद्य गुञ्जाप्रमाणा वटिकाः कुर्यात् । ताम्बूलीस्वरसेन सहैकैका सेवनीया । अनेनोन्मादमूर्च्छाक्षयपाण्डुकामलाहलीमककफवातदुर्ग्रहणीस्वराऽऽमयश्वासकासरक्तपित्ताऽऽनाहराजयक्ष्मप्रमेहादयो नश्यन्ति। गरुडदृष्टिर्देहपुष्टीरक्तवृद्धिश्च भवति । दुग्धशर्करान्नं पथ्यम् ।

१४ पैत्यान्तकरसायनम्

आर्द्रकं ५ पलं, सैन्धवं २॥ पलं, मरिचानि २ पलानि, सूर्यक्षारं १॥ तोलकं गृहीत्वाऽऽर्द्रकं जलेन प्रक्षाल्याऽवशिष्टानि द्रव्याणि विमृद्याऽऽर्द्रकेण सूर्यक्षारं मेलयित्वा यामत्रयं सम्यग्विमृद्य बदरास्थिप्रमाणा वटिकाः कुर्यात् । एकैका वटी सेविता चेत्पित्तवातवमनपाण्डुश्वासकासाऽजीर्णादयो रोगा निवर्तन्ते । गर्भिणीनामपि श्वासकासगलपादशोथादिकं नश्यति । पथ्यं यथोचितम् ।

१५ प्रमेहारिरसः

शुद्धाहिफेनजातीफलमृगमदहिमसारटङ्कणस्फटिकानरसारसूर्यक्षारशुक्तिकाशुद्धश्वेतमल्लानेकैकतोलकान्गृहीत्वा श्वेतार्कक्षीरेण यामचतुष्टयं विमृद्य चक्रिकां विधाय सम्यक् संशोष्य नूतनपुष्टभाण्डे ४० तोलिकां सुधामास्तीर्य तदुपरि चक्रिकां निधाय ४० तोलिकया सुधयाऽऽच्छाद्य २४० उत्पलकैः पुटं दद्यात् । एतदौषधं गुञ्जाचतुष्टयमामिक्षाऽनुपानेन देयम् । पथ्यं यथोचितम् । अनेनौपसर्गिकप्रमेहा नश्यन्ति ।

१६ बिल्वमूलादिवटी (बिल्वमुरारिः)

शुद्धपारदगन्धकबिल्वमूलत्वक्तालीसपत्रपूतिकरञ्जबीजग्रन्थितगरत्रिफलाऽरिष्टबीजमज्जहरिद्रादार्वी १-१ तोलिकाः गृहीत्वाऽजामूत्रेण दिनत्रयपर्यन्तं विमृद्य वटीर्विधाय स्त्रीस्तन्येन नेत्रयोरञ्जनं देयम् । अनेन सर्पवृश्चिकादिविषाण्यर्बुदविसूच्यजीर्णवात्यादिरोगा निवर्तन्ते अम्लवर्ज्यं पथ्यम् ।

१७ मल्लरसः (महदादिः)

गोक्षीरस्वेदितं मल्लं स्तन्यशुद्धञ्च दरदमेकैकतोलकं पृथक् चूर्णीकृत्य शरावे चूर्णद्वयमपि निक्षिप्य पञ्चसप्ततिजम्बीरफलस्वरसग्रासं दद्यात् । एतत्क्रियासम्पादने दिनचतुष्टयं भवति । ततः परं शरावस्थमौषधमेकीकृत्य चतुर्गुणितं भ्रष्टक्षुद्रपिप्पलीचूर्णं मेलयित्वैकदिनपर्यन्तं विमृद्य काचपात्रे रक्षयेत् । विंशतिवत्सरान्तरितश्वासकासव्याधिषु तण्डुलप्रमाणं गोघृतेन सह देयम् । एकवारभक्षणेनैव प्रबलश्वासोपशान्तिर्भवति । दुग्धान्नं पथ्यम् ।

१८ महाप्रतापरसः

एकस्मिन्काचपात्रे सद्योगोमयं विन्यस्य हस्तेन घटिकाद्वयं सम्यग्घृष्ट्वा फुक्कसं निःसार्य कृष्णतुलसीकल्केनैकयामपर्यन्तं घृष्ट्वा त्रितोलिकया शर्करया सहैकतोलकं पारदं मेलयित्वैकतापर्यन्तं हस्तेन घर्षणीयम् । यदा पारदोऽदृष्टः सन् शर्करया सहैकी भवति तदा त्रिंशन्मात्राः कार्याः । मात्राद्वयं गृहीत्वा सूर्याभिमुखत उत्थाय सूर्याय समर्पयित्वा दन्तस्पर्शं विना निर्गिलेत् । किञ्चिच्छीतोदकमनुपानतया पेयमेवं सायमपि दातव्यम् । एवं सप्ताहपर्यन्तमौषधं सेवनीयम् । दुग्धान्नं पथ्यमितरत्किमपि न भक्षणीयम्, यदि मुखपाकः स्यात्ताम्बूलवल्लीदलेन सह गन्धकतैलं भक्षणीयम् । अनेन गण्डमालाऽपचीराजव्रणभगन्दरगलत्कुष्ठादयः सर्वे रोगा निवर्तन्ते । एकसप्तकेन रोगनिःशेषता न स्यात्तर्हि द्वितीयसप्तकेऽपि दातव्यम् ॥

१९ महामूर्च्छान्तकरसायनम्

कान्तलोहयोर्भस्म २-२ पलं, चन्द्रसारत्रिकटुकत्रिफलाकुष्ठाऽऽकारकरभगजपिप्पलीजीरकद्वयविडङ्गधान्यकैलाबीजलवङ्गजातीफलजातीपत्रजटामांसीतक्कोलत्वङ्नागकेशरचव्यत्रिवृतः प्रत्येकपलिका गृहीत्वा वस्त्रपूतं चूर्णं विधाय नागरं ८० पलं, जम्बीररसः ४० तोलकः, बीजपूररसः ४० तोलकः, बृहज्जम्बीर (संगदराज) रसः ४० तो०, मृगमदः पादतोलकः, गोघृतं ४० तो०, मधु २४ तो०, देशीयशर्करा ८० तोलिका, एतानि सङ्गृह्य ३०० तोलकनीलकच्छुरामूलस्याऽष्टभागाऽवशिष्टक्वाथे शर्करां निक्षिप्योपर्युक्तरसान्दत्वा तन्तुपाकं विधाय चूर्णं प्रक्षिप्याऽवलोड्य मन्दाग्निं कृत्वा मध्वाज्यादिकं निक्षिप्याऽन्ते कस्तूर्यादिसुगन्धिद्रव्याणि मेलयित्वा लेह्यपाकेन सिद्धं रसायनं गृहीत्वा स्थापयेत् । दीर्घकालमूर्च्छारोगिभिरेतदामलकप्रमाणं लेह्यं प्रत्यहं प्रातः सायञ्च सेवनीयम् । अनेन चण्डपैत्यपञ्चविधमूर्च्छापित्तकासाऽम्लपित्तसिराऽवरोधश्वासमूत्राऽवरोधपित्तपिडिकाप्रभृतिरोगा नश्यन्ति। पथ्यं रोगानुकूलम् ।

टि०—अत्र कच्छुराशब्देन कण्डूत्पादक क्षुपो ग्राह्यो न तु मर्कटी, आन्ध्रादौ तथैव व्यवहारात्।

२० मेहगजाङ्कुशरसः (महदादिः)

एकतोलकं कङ्कुष्ठं (मृद्दारश्टङ्गं) विशोध्य कृष्णतुलसीपत्रजम्बीररसाभ्यां प्रतिघटिकाद्वयं ग्रासं दत्त्वा पूर्वोक्तरसद्वये एकदिनं विभाव्य परेद्युः सम्यक् प्रक्षाल्य शोषयित्वा विचूर्ण्य मरिचहरिद्रे एकैकतोलके संयोज्यैकयाममर्दनेन कङ्कुष्ठं सिन्दूरं भवति । एतद्गुञ्जाद्वयपरिमितं गोघृतेन सह सेवनीयम्। गोधूमरोटिका दुग्धञ्च पथ्यम् । शर्करा, घृतं, तण्डुलान्नं, क्षारत्रयादिकं सुतरां वर्ज्यम् । यत्र मेहरोगाधिक्यवशात्सर्वमपि शरीरं स्फुटितं सव्रणस्थानेभ्यः क्रिम्यादयः समुद्भूय पूयादिकं प्रसरति एतादृशमेहरोगस्यैनदौषधम् । दिनत्रयमेव दातव्यम्। चतुर्थदिवसे वृहज्जम्बीररसमिलितहरिद्रासंयुक्तं चिञ्चान्नं भक्षणीयमौषधं न सेवनीयम् । एकसप्तके व्यतीते सति शुद्धगन्धकरससिन्दूरपुराणतण्डुलाः १-१ तोलकाः, रसकर्पूरं २ तोलकं, शुद्धकङ्कुष्ठं पादतोलकं सर्वाण्यपि शुद्धजलेन विमृद्य गुञ्जाप्रमाणा वटिकाः कुर्यात्। सप्ताहपर्यन्तं प्रत्यहं प्रातःकाले एरण्डतैले पक्वां वटीं निमज्य भक्षयेत् । आढकीखण्डयूपान्नं पथ्यम्। अन्यत्किमपि न भक्षणीयम् । लवणः सुतरां वर्जनीयः ।

२१ मेघनादरसः

सूर्यक्षारः १६ तोलकः, नरसारः ९ तोलकः, स्फटिका ५ तो०, गोदन्तं (कर्पूरशिलाजतु. तै०) ४ तो०, कलनारभस्म (सङ्गेपलीता यू०) २ तो०, प्रवालभस्म ५ तो०, एतानि सर्वाण्यपि विचूर्ण्य मृत्पात्रे निधायैकशततोलकं नारिकेलजलं निक्षिप्य जलावशोषणपर्यन्तं पाकं कृत्वौषधं ग्राह्यम् । एतदौषधं गुञ्जाचतुष्टयपरिमितं शर्करामिश्रितभद्रमुस्तारसेन, तण्डुलक्षालनोदकेन, नारिकेलजलेन वा देयम्। अनेन लिङ्गदाहोपदंशौपसर्गिकमेहा नश्यन्ति ।

२२ मेहपञ्चामृतवटी

शङ्खभस्म ५ तोलकं, गोदन्त (कर्पूरशिलाजतु) कलनारभस्मैलावीजतक्कोलानि प्रत्येकं सपादतोलकानि गोक्षीरेण नारिकेलजलेन च प्रतियामद्वयं मर्दयित्वा कतकवीजशोधितजलेन सह कतकचन्दनेन वा एका वटी देया। रक्तपीतशुक्लकृष्णमेहादिनिवृत्ति र्भवति । पथ्यं यथेच्छम् ।

२३ मेहाङ्कुशरसः

शुद्धदरदः ५ तोलकः, जातीफलं २॥ तो०, जातीपत्री केशरञ्चैकैकतोलकं, एतानि सर्वाणि विचूर्ण्य शुष्कनारिकेलगोलकान्तर्निक्षिप्य तेनैव गोलकखण्डेन छिद्रं पिधाय पञ्चशेटकगोक्षीरे निक्षिप्य सर्वस्य क्षीरस्याऽवशोषणपर्यन्तं पाकं कुर्यात् । क्षीरसत्त्वेन सह नारिकेलखण्डादिकं मिलित्वा किट्टरूपतयोपलभ्यते । तन्नीलवर्णं किट्टं सम्यग्विमृद्य स्थापयेत । एतद्गुञ्जाद्वयपरिमितं घृतेन मधुना वा देयम् । एतेन रक्तपीतशुक्लहरिद्रातन्तुमधुमेहादयो निवर्तन्ते । पथ्यं रोगानुकूलम् ।

२४ मेहान्तकरसः (महदादिः)

शुद्धपारदगन्धकविषताम्रभस्मत्रिकटुकरेणुकाभद्रमुस्ताजटामांस्येलावीजलवङ्गचित्रकमूलत्वग्जातीफलजातीपत्रकेशरचन्द्रसारविडङ्गानि समभागानि चूर्णीकृत्य विजयापत्ररसेनाऽष्टभावना दत्त्वा छायाशुष्कं विधाय मधुना लेह्यपाकं कृत्वा चणकप्रमाणं सेवनीयम् । अनेन विंशतिर्मेहाः, अजीर्णश्वासकासक्षयातिसारश्वयथुबहुमूत्रादयश्च रोगा नश्यन्ति । पथ्यं यथोचितम्।

२५ मृतोद्धारणरसः

शुद्धमल्लमूषिकगौरीदोड्डिहरिदलपाषाणानि शुद्धपारदहिङ्गुलमनःशिलागन्धकवत्सनाभटङ्कणानि, ताम्राऽभ्रकलोहभस्मानि, क्षारत्रयलवणपञ्चकातिविषाकुष्ठानि च सर्वाणि समभागानि गृहीत्वा त्रिकटुकचित्रकक्काथाभ्यां जयपालवीजतैलेन चैकैकदिनं विमृद्य कृष्णसर्पमयूरकूर्ममहिषीछागपित्तानामेकैकतोलकानां क्रमशो भावना दत्त्वा गुञ्जाप्रमाणा वटिकाः कुर्यात् । भीमसेनकर्पूरानुपानेन यद्वा शर्करया सेवितव्यम् । सोपद्रवाणां सन्निपातदोषाणां निवृत्तिर्भवति । श्लेष्मप्रधानवातरोगोऽपि नश्यति । नारिकेलजलपानं, श्रीचन्दनलेपनं, कामिनीसम्भाषणञ्च न कार्यम् ।

२६ रसराजपर्पटी

समभागपारदगन्धकयोः कज्जलीं द्रवीकृत्य समभागं ताम्रलोहयोर्भस्म मेलयित्वा कमलाग्निना मृदुपाकं विधायैरण्डपत्रेषु पर्पटिकां कृत्वा जम्बीररसेन पञ्चकोलकक्काथेन चैकैकदिनं भावयित्वा संशोष्य तण्डुलमण्डेनैकदिनं विमृद्य पूर्वोक्तौषधसमं टङ्कणं सौवर्चलञ्च मेलयित्वौषधार्द्धभागं मरिचचूर्णं संयोज्य चणकाम्लेन सप्तदिनपर्यन्तं विमृद्य शोषयित्वा वंशनाल्यां स्थापयेत् । एतच्चणकप्रमाणमनुपानविशेषैः सर्वरोगेषु दातव्यम्।

टि०—रसपर्पटीतोऽभिन्नाऽपि भावनावैलक्षण्यात्पृथक्त्वेन प्रदर्शिता।

२७ वसन्तकुसुमाकररसः (प्रथमः)

सुशुद्धं कनकं तारं रसेन्द्रं पञ्चनिष्ककम् ।
वङ्गभस्म च सिन्दूरं ताप्यं लोहमयोमलम् ॥

प्रत्येकञ्च चतुर्निष्कं कान्तं गरलमेव च ।
ताम्रभस्म त्रिनिष्कं स्यात्प्रवालं मौक्तिकन्तथा ॥
कर्पूरञ्च तथा कुर्यात्कस्तूरीं द्वयनिष्किकाम् ।
सम्मर्द्य वासास्वरसे त्रिदिनञ्च भिषग्वरः ॥
शतावरीगोक्षुरजैर्विदारीवट्टरोहजैः ।
सारिवासहदेव्युत्थैश्चन्दनाद्भिश्च खादिरैः ॥
कार्पासपुष्पपत्तङ्कक्रपैर्विक्षुमृणालजैः ।
मालतीपुष्पसेव्योत्थैरेभिर्द्रावैः पृथक्पृथक् ॥
भावयेत्सप्तदिवसान् सेवनीयं प्रयत्नतः ।
गुञ्जाष्टकप्रमाणेन सिताऽऽज्यमधुसंयुतम् ॥
नवनीतेन सम्मिश्रं गवां क्षीरञ्चियोजयेत् ।
प्रत्यहं रक्तिकामात्रं प्रमाणं वर्धयेत्ततः ॥
गुञ्जाषोडशपर्यन्तं वर्धयेत्सर्वरोगजित् ।
कृष्णं रक्तञ्च पीतञ्च श्वेतञ्चैव प्रमेहकम् ॥
अस्थिस्रावं सोमरोगमरोचकमसृग्दरम् ।
मांसधावनसङ्काशं सर्वातीसारमेव च ॥
प्रमेहान्विंशतिविधान्मूत्रदोषांश्च विंशतिम् ।
अशीतिं गुदजान्रोगान्सर्वशूलहरं परम् ॥
ऊर्ध्वशूलं योनिशूलं पार्श्वशूलं विशेषतः ।
विनाशयेत्किं बहुना वृष्यं धातुविवर्धनम् ॥
आयुष्यं पुष्टिदं मेध्यं कान्तिसौभाग्यवर्धनम् ।
महावसन्तनामाऽयं कुसुमाकर ईरितः ॥
वर्षैकं भक्षयेन्नित्यं हन्ति रोगानशेषतः ॥

२८ वसन्तकुसुमाकररसः (द्वितीयः)

गोरोचनं केशरञ्च समभागं, द्वयोः समं शिलाजतुभस्म (सफेदसुरमा), सर्वसमं निम्बनिर्यासम्, एतत्सर्वमपि खल्वे निधाय गोदध्ना दिनचतुष्टयं मर्दयित्वा मुद्गप्रमाणां वटीं कुर्यात् । श्वेतरक्तप्रदरादिषु प्रमेहेषु च तण्डुलोदकेनोपयोज्यम् ।

२९ वातगजाङ्कुशरसः (महदादिः)

पारदं रक्तमुरगं रौप्यकं कनकन्तथा ।
मण्डूरं नागसिन्दूरं त्र्यूषणं भृङ्गमूलिका ॥
गारुत्मतञ्च मुक्ताश्च समं चूर्णं प्रकल्पयेत् ।
वातप्रधानरोगेषु टङ्कणं विषसंयुतम् ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव कृष्णनिर्गुण्डिकारसैः ।
नागवल्लीरसेनैव जम्बीररसमर्दितम् ॥
प्रत्येकं त्रिर्विमृद्यैवं वह्निक्वाथेन मर्दयेत् ।
सर्वेषां वातरोगाणां दद्याद्युक्तरसेन वै ॥
अपस्मारे धनुर्वाते विद्रधौ रक्तगुल्मके ।
अश्मरीमूत्रकृच्छ्रेषु सर्वगात्राङ्गकम्पने ।
प्रसृतवातरोगेषु हनुस्तम्भेषु पार्श्वके ।
महानयं सर्ववातगजाङ्कुश इतीरितः ॥
पथ्यं यथोचितं ग्राह्यं सर्वरोगेषु योजयेत् ।

३० व्रणान्तकरसः (महदादिः)

यवानिका ४ तोलिका, खुरासानिका ५ तोलिका, क्षुद्रहरीतकी ४ तोलिका, अम्लतक्रशोधितभल्लातकाः ४ तो०, पारदः १ तो०, रसकर्पूरम् १ तो०, मयूरतुत्थं १ तो०, एतानि चूर्णीकृत्य १२० निम्बुकरसेन मर्दयित्वाऽरिष्टबीजप्रमाणां वटीं कुर्यात् । एका वटी प्रातर्गोघृतानुपानेन निर्गिलनीया । क्षीरशर्करान्नं पथ्यम् । एवं सप्ताहं कार्यम् । चणकमसूरमुद्गमूलकवार्ताकादयः सुतरां वर्जनीयाः ।

३१ सव्वीरमहाद्रावकम्

शुद्धसव्वीरसैन्धवविडलवणौषरसूर्यक्षारस्फटिकासमुद्रलवणानि १–१ पलानि विचूर्ण्योर्ध्वनलिकायन्त्रेण द्रावकं ग्राह्यम् । महाद्रावकवद्रोगेषूपयोजनीयम् ।

३२ सव्वीरसिक्थकम्

एकतोलकं सव्वीरं परिपक्वकारवेल्लफले विन्यस्य मृद्वस्त्रैः संवेष्ट्य त्रिभिश्चतुर्भिर्वोत्पलकैः पुटं दत्त्वा स्वच्छकटाहे निक्षिप्य शिग्रुद्वयमूलत्वक्कारवेल्लताम्बूलपत्रतुलसीरक्तकार्पासपत्रस्वरसान् प्रतिपञ्चतोलकान् दत्त्वा विपचेत् । शुष्के सति पञ्चतोलकं मधु मिश्रयित्वा काचपात्रे सम्भृत्य स्थापनीयम् । एतत्सव्वीरसिक्थकमसाध्यश्वासकाससन्निपातव्याधिषु महावातप्रकोपे च द्वित्रिवारमुपयोज्यम् । एतदौषधसेविनां मधुरं वर्ज्यम् ।

३३ सिक्थद्रावकम् (महाद्रावकम्)

स्वदेशिसिक्थकं २४ तोलकं, सिकता १६ पलिका, शुद्धमल्लपाषाणरसकर्पूरदरदचन्द्रसारतुरुष्कसैन्धवस्फटिकापिप्पलीमूलजीरकक्षुद्रपिप्पलीयवानीराजिकारास्नाहरीतक्यः प्रत्येकपलिकाः, महिषाक्षगुग्गुलुः २ पलः, एतेषु मल्लरसकर्पूरदरदान् सम्यग्विचूर्ण्य शेषद्रव्यचूर्णे मिश्रयित्वा सिक्थकञ्च सङ्कुञ्च्य सर्वमपि सिकतायां मेलयित्वा पुष्टमृद्भाण्डे निधायोर्ध्वनलिकाविधिना निःशेषं द्रावकं ग्राह्यम् । एतद्बिन्दु चतुष्टयं शुद्धजलानुपानेन दत्त्वोर्ध्वशरावे पतङ्गितं भस्म तण्डुलपरिमितं मधुना सह पञ्चपदिनानि दातव्यम् । श्वयथुरोगिणां तत्क्षणं मूत्रं निःसरति । असाध्यो महानपि करपादादिशोथो दिनत्रयाऽभ्यन्तरे क्षयं याति । पथ्यं यथोचितम् ॥ (भोजप्रबन्धात्)

३४ सुवर्णसूर्यावर्तरसः

स्वर्णभस्म त्वेकभागं स्वर्णार्द्धं मृगनाभकम् ।
मृतरौप्यञ्च कान्तञ्च माक्षीकं मौक्तिकन्तथा ॥
हेमकार्पाससूक्ष्मैला गीर्वाणकुसुमं क्षिपेत् ।
नागरं टङ्कणञ्चैव काकबिम्ब्याश्च बीजकम् ॥

अमृतं सर्वद्विगुणमेतद्द्रव्येषु निक्षिपेत्।
दरदञ्चाऽपि सर्वार्द्धं जम्बीररसमर्दितम्॥
आर्द्रकस्वरसेनैव सप्तवारञ्च मर्दयेत्।
लवङ्गस्य कषायेण पञ्चवारञ्च मर्दयेत्॥
खर्जूरस्याऽनुपानेन क्लीवत्वन्तु विनाशयेत्।
द्राक्षाफलानुपानेन उन्मादक्षयकृत्तथा॥
आर्द्रकस्याऽनुपानेन हिक्काहृद्रोगनाशनम्।
गुञ्जामात्रं द्विगुञ्जं वा अनुपानविशेषतः॥
सर्वशूलप्रशमनं चित्तविभ्रमनाशनम्।
अस्थिहृद्गततापञ्च पुराणज्वरनाशनम्॥
महासूर्यावर्तरसो नानारोगनिषूदनः॥

३५ सूतिकाभरणरसः

शुद्धपारदगन्धकविषदरदटङ्कणमरिचानि समभागानि भृङ्गाऽऽर्द्रकरसाभ्यां प्रति यामद्वयं विमृद्य जयपालवीजतैलेन यामत्रयं सम्यङ्मर्दयित्वा शृङ्गसम्पुटे स्थापनीयम्। एतदौषधं सूचिकाग्रेण किञ्चिन्मात्रमादाय जिह्वायां घर्षणमात्रेण सोपद्रवाः सन्निपाता शान्ता भवेयुः। वाताः शिथिला भवन्ति। पथ्यं यथोचितम्।

३६ स्वच्छन्दरसः (रसस्वच्छन्दः)

समभागञ्च सङ्ग्राह्यं पारदाऽमृतगन्धकम्।
जातीफलञ्च भागार्द्धं पिप्पलीसमभागिका॥
अहिवल्ल्युत्थनीरेण मर्दयित्वा दिनद्वयम्।
षण्मासं भावयेत्प्राज्ञः पक्वजम्बीरसारतः॥
अञ्जनं सन्निपातादौ तमोमोहान्ध्यनाशनः॥

विसृष्टरसाः

३७ अजमोदादिचूर्णम्

अजमोदाऽभ्रकं रास्ना गुडूची विश्वभेषजम्।
शतपुष्पाऽश्वगन्धा च शतमूली समांशतः॥
सुश्लक्ष्णचूर्णमेतेषां भक्षितं सर्पिषा सह।
हत्पृष्ठकटिकोष्ठस्थं मारुतं हन्ति वेगतः॥

हिनो०, वातरोगे।

भाषा—अजमोद, अभ्रकभस्म, रास्ना, गिलोय, सोंठ, सोंफ, देशी असगन्ध और शतावर समभाग लेकर वारीक चूर्णकर रक्खें। इसमेंसे १ से २ माशेतक घी अथवा उचितानुपानके साथ लेनेसे हृदय, पीठ, कमर, और कोष्टस्थवातको यह शीघ्र नष्टकरताहै।

३८ अमरसुन्दरी गुटिका

कान्तचूर्णं पलान्यष्टौ पलान्यष्टौ रसस्य च।
एकीकृत्याऽथ सम्मर्द्य वीजपूराम्लमर्दितम्॥
मर्दयेत्तप्तखल्वेन गोलको भवति क्षणात्।
मृतवज्रस्य भागैकं गोलभागचतुष्टयम्॥
एकीकृत्याऽथ सम्मर्द्य भस्मीभवति सूतकः।
मारयेद्भूधरे यन्त्रे सप्तसङ्कुलिकाः क्रमात्॥
तद्भस्म भागमेकन्तु भागैकं गन्धकस्य च।
अन्धमूषागतं ध्मातं खोटो भवति तत्क्षणात्॥
द्वात्रिंशन्मृतखोटस्य शुद्धहेम्नश्च विंशतिः।
तारं ताम्रं व्योमसत्त्वं कान्तसत्त्वं चतुर्थकम्॥
एकैकं द्वादशांशाः स्युः सर्वमेकत्र कारयेत्।
अन्धमूषागतं ध्मातं खोटो भवति तत्क्षणात्॥
द्वात्रिंशन्मिलतः खोटात सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत्।
तत्खोटसूक्ष्मचूर्णन्तु आरोटरससंयुतम्॥
मर्दयेन्मध्यमाम्लेन गोलको भवति क्षणात्।
गोलकस्य पले द्वे च मृतकान्तस्य तत्समम्॥
एकीकृत्याऽथ सम्मर्द्य मेघनादरसेन च।
मुनिपुष्परसेनैव दिनमेकञ्च मर्दयेत्॥
गुटिकाः कारयेद्देवि षष्ट्यधिकशतत्रयम्।
तत्रैकां गुटिकां सर्पिस्त्रिफलामधुसंयुताम्॥
भक्षयेद्वर्षमेकन्तु ब्रह्मायुर्जायते नरः।
सर्वास्ता भक्षयेत्पश्चाद्रुद्रायुः स भवेन्नरः॥
अथैका धारिता वक्त्रे गुटिकाऽमरसुन्दरी।
हठाद्रोगान् समस्तांश्च पलितानि च नाशयेत्॥

रसार्णव, रसायने।

भाषा—कान्तलोहचूर्ण और शुद्धपारा ८-८ पल मिलाकर तप्तखल्वमें डालकर विजोरेके रससे गोलीवननेतक मर्दनकरे। इसमें चतुर्थांश वज्रभस्म डालकर तप्तखल्वमें मर्दन करनेसे पारेकी भस्म होजाती है। फिर उसका गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर भूधरपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर एकदिन पूर्ववत् तप्तखल्वमें विजोरेके रसकेसाथ मर्दनकर गोला वनाय पूर्ववत् भूधरपुटकी आचदे। ऐसे ७ वार पुट देनेके वाद यह स्थायी भस्म होजाती है। इस भस्मकी वरावर शुद्ध गन्धक मिलाकर अन्धमूषामें धमन करनेसे खोट होजाता है। यह खोट ३२ भाग, शुद्धसुवर्ण २० भा०, रजत, ताम्र, अभ्रक और कान्तसत्त्व ३-३ भाग लेकर सबको इकट्ठा मिलाय अन्धमूषामें धमन करनेसे खोट तैयार होगा। इस खोटकी वरावर शुद्धपारा मिलाकर मध्यमाम्लसे तप्तखल्वमें मर्दन करनेसे गोला तैयार होगा। इस गोलेमेंसे २ पल, कान्तलोहभस्म २ पल लेकर कटिवाली चौलाई और अगस्त्यपुष्पके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३६० गोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली घी, मधु और त्रिफलाके चूर्णके साथ एक वर्षतक लेनेसे ब्रह्मायु होता है। इसीतरह समस्त गोलेकी गोलियोंका सेवन करनेसे रुद्रायु होता है। इसमेंसे १-१ गोली मुंहमें रखनेसे समस्तरोग और वलीपलित नष्टहोतेहैं।

३९ अमीररसः

रसेन्दुर्दरदं दालिचिक्कणं तारतन्तवः।
कर्षं कर्षं समाहृत्य कणिकाः कल्पयेत्तनूः॥
तवके पटुमास्तीर्य तत्र ताः कणिका न्यसेत्।
विधाय पटुना नेमिं पिद्ध्याच्चीनपात्रतः॥
तदधो ज्वालयेद्वह्निं शनकैः प्रहरत्रयम्।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य चीनपात्राऽवलग्नकम्॥
अद्यादमीरनामानं ग्रन्थिवातोपदंशवान्।
अहानि सप्त नव वा मर्यादाऽमुष्य भक्षणे॥
सितासखं पयो गव्यं पथ्यं गोधूमफुल्लिका।
भिषजामुपकारार्थं रसोऽयमत्र कीर्तितः॥
गुञ्जैका वा द्विगुञ्जा वा मात्राऽमुष्य यथामयम्।
पिधाय द्राक्षया प्रातर्गिलेद्दन्तैर्न च स्पृशेत्॥
पट्टोस्त्रीणि पलानीह तत्र त्वास्तरणं पलात्।
द्वाभ्यां पलाभ्यां घटयेत्परितो नेमिबन्धनम्॥

सि. भे. म, वातव्याध्यधिकारे।

टि०—अयं रसकर्पूर एवास्ति भावप्रकाशीयकर्पूरभाण्डेश्वरादत्र विलक्षणगुणोऽपि नास्ति परन्तु मरुद्देशे विशेषतया लब्धप्रतिष्ठोऽस्ति अस्यस्थाने भावप्रकाशीययोगो विशेषतयालाभप्रदोस्ति।

भाषा—एक साफ तवेपर एकपल वारीक सेंधेनमकका चूर्ण विछाकर रसकपूर, शिंगरिफ और दालचिकना १–१ कर्ष लेकर वारीक टुकडे वनाकर नमकपर रखकर एककर्ष चांदीकी जरीको कैंचीसे वारीककाटकर उसपर विछाकर चीनीके प्यालेसे ढकदे और २ पल नमकके चूर्णकी चारोंतर्फ दीवाल वनादे. फिर तवेको चूल्हेपर चढाय वेरकी पतली दो लकडियोंकी मन्दआच देकर ३ पहर पकावे। चार तह भीगाहुआ कपडा प्यालेके पेंदेपर रखतारहे। स्वाङ्गशीतल होनेपर नमककी दीवालको धीरजसे हटाकर प्यालेमें लगेहुए पारदपुष्पोंको निकालकर शीशीमें भरले। इसमेंसे १ से २ रत्तीतक द्राक्षके अन्दर वन्दकर निगलवादे. दांतोंमें न लगे ऐसे ७, ९ या १४ दिनतक सेवन करे। शक्कर मिलाहुआ गायका दूध, गेंहूंकी रोटी और घीके सिवाय कुछभी खानेको न दे। इसके सेवनसे ग्रन्थिवात और उपदंश नष्ट होवे है।

४० अर्धनारीश्वररसः

सूतो गन्धकतालके मणिशिला हिङ्गुलताप्ये विषं,
संशुद्धं विषतिन्दुधूमजनितं नागारियुक् लाङ्गली।
सर्वं श्लक्ष्णशिलातले मुनिदिनं सम्भाव्य भृङ्गद्रवैः,
संशोष्याऽथ विधाय चूर्णमखिलं स्यादर्धनारीश्वरः॥
गुञ्जैका खलु चार्द्रवारिसहितां दद्याज्ज्वरे दारुणे,
द्वन्द्वे वाऽखिलसन्निपातजनिते भूतग्रहे च ज्वरे।
तोयं चाऽथ सुतप्तशीतलमथ क्षारोदकं वा पिबेत्,
तक्रं पथ्यमथाचरेद्धि लवणं शाकादिभिर्वर्जितम्॥

र. बो., सन्निपाते।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल, मैनसिल, शिंगरिफ, सोनामाखी, वछनाग, कुचिला, गृहधूम, वाझखेखसा और करिंहारी समभाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर भंगरेके रससे ७ दिन मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ रत्ती अदरखके साथ देनेसे भयङ्करज्वर, द्वन्द्वज, सान्निपातिक, भूत और ग्रहावेशज ज्वर इन सबको यह नष्टकरता है। गरम करके ठंढा कियाहुआजल अथवा क्षारोदक पिलावे। सेंधानमकडालीहुई छाछ देवे। शाक वगैरहका त्याग करे।

४१ अश्वत्थवल्कलादिलोहम्

अश्वत्थवल्कलश्चैव त्रिकटुर्लोहकिट्टकम्।
गुडेन सह दातव्यं क्षयरोगविनाशनम्॥

नि. र, क्षयाधिकारे।

भाषा—पीपलकी छाल, त्रिकटु और लोहभस्म समभाग लेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े। इसमेंसे १–१ माशा गुड़के साथ देनेसे क्षय नष्ट होताहै।

४२ आहवारिरसः

क्षुद्रैला साभया कृष्णा लोहाभ्रखर्पराणि च।
समभागं प्रकर्तव्यं द्विभागः पारदो मतः॥
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य द्रोणपुष्पीरसेन च।
वल्लमात्रं प्रदातव्यं पुनर्नवरसैर्युतम्॥
प्लीहानं यकृतं शोथमग्निमान्द्यमरोचकम्।
नासाज्वरं विशेषेण सर्वञ्च विषमज्वरम्॥
आहवारिरसो ह्येष नाशयेदविकल्पतः॥

भै. र., ज्वराधिकारे। आहवो नासाज्वरः।

भाषा—छोटी इलायची, हर्रे और पीपल, लोह, अभ्रक और खर्परभस्म १–१ भाग, पारदभस्म अथवा रससिन्दूर २ भाग लेकर वारीक चूर्णकर गूमाकेरससे १–२ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकी गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पुनर्नवाके रसके साथ देनेसे प्लीहा, यकृत, शोथ, मन्दाग्नि, अरुचि, नासाज्वर और विशेषतः समस्त विषमज्वर नष्ट होते है।

४३ कनकसुन्दररसः

कनकशुक्लरसाभ्रकताप्यकं,
त्रपु सवीरविषायसगन्धकम्।
वसुकरार्कयुगद्विकरानल-
त्रितयदिग्गजयुक्कलिकारिकाम्॥
पलमितां विनिधाय विमर्दयेत्
त्रिदिवसं त्रिफलोद्भवकै रसैः।
मृदुपुटे परिताप्य कृतं रजः
कनकसुन्दर एष महारसः॥
वमनरेचनशुद्धतनोः सदा
ऽऽर्द्रकरसेन रसोनरसेन वा।

निखिलकुष्ठकिलासभगन्दरं
ज्वरविसर्पगरालसकाञ्जयेत्।

ना. वि, कुष्ठे।

भाषा—सुवर्णभस्म ८ कर्ष, रजतभस्म २ कर्ष, शुद्धपारा १२ कर्ष, अभ्रक, सोनामाखी और वङ्गभस्म २–२ कर्ष, शुद्ध सज्जीर (ढालचिकना) और वछनाग ३–३ कर्ष, लोहभस्म और शुद्धगन्धक ८–८ कर्ष, करिहारी १ पल लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर त्रिफलाके क्वाथसे मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर मृदुपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे वमनविरेचनादिकसे शुद्ध किये हुए रोगीको १–१ रत्ती अदरख अथवा लशुनकेरसकेसाथ देनेसे सब प्रकारके कुष्ठ, श्वित्र, भगन्दर, ज्वर, विसर्प, गर और अलसकको यह नष्टकरताहै।

४४ कर्पूरतिलकरसः

समभागं रसं नागं संयोज्य प्रथमं ततः।
क्षारस्यैकं गन्धकस्य द्वौ भागौ तत्र मेलयेत॥
तत्सर्वं पञ्चमूत्रेण मर्दयेद्दिवसत्रयम्।
त्रिभिर्गजपुटैर्दग्धं भावयेदार्द्रकद्रवैः॥
मुशलीकन्दजेनापि ततः सिद्धो भवेद्रसः।
द्विवल्लं मधुना मासं कासश्वासातुरो भजेत॥
ग्रहण्यां पाण्डुरोगे च तथाऽऽर्द्रकरसान्वितम्।
विष्टम्भशूलगुल्मार्तस्त्रिफलाक्वाथतो भजेत।
गोदुग्धेन भजेन्मेही सितामरिचवत्क्षयी।
कर्पूरतिलकः सोऽयं कासे श्वासे प्रशस्यते॥

र. मृ., कासश्वासयो.।

भाषा—एकभाग शुद्धनागको गलाकर समभागपारा मिलावे। फिर यवक्षार १ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग मिलाकर थोड़ा २ प्रक्षेप देकर लोहेकी कड़छीसे चलावे। नागकीभस्म होनेपर नीचे उतार क्रमसे गवी, गाय, भेड़, बकरी और भैंसके मूत्रोंसे ३–३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दनकर पुटदे। ऐसे ३ पुट देनेके बाद अदरख और मुशलीके स्वरसोंसे १–१ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथ एकमहीनेतक देनेसे कास, श्वास, ग्रहणी, और पाण्डुरोग, अदरखके रसकेसाथ विष्टम्भ और शूल, त्रिफलाके क्वाथसे गुल्म, गोदुग्धसे प्रमेह, शक्कर और मरिचसे क्षयको यह नष्टकरताहै।

४५ कर्पूरादिवटी

कर्पूरं रसगन्धकञ्च दरदं तीक्ष्णोद्भवं भस्मकं,
कालोडयेन्द्रभवोऽजमोदहुतभुक् धातक्यविल्वाम्लकं
एला मांसलराटशाल्मलिभवं जातीफलं टङ्कणं,
तिक्ता सिन्धुभवं विषा विषमिदं प्रत्येकनिष्कान्वितम्॥
सर्वेषां सदृशं प्रमाणमखिलं कान्ताभ्रसिन्दूरकं,
सिन्दूरस्य समञ्च फेनमहिजं तत्पादतः सङ्क्षिपेत्।
हैमं कोकिलनेत्रबीजसहितं सर्वञ्च चूर्णीकृतं,
धत्तूरस्वरसेन फेनममलं सम्भाव्य यामद्वयम्॥
सार्धं तेन विमृद्य वस्तु सकलं यत्नद्वयं सादरं,
गुञ्जामात्रवटीं निबद्धय नियतं मध्वन्वितां योजयेत।
सर्वेषु ग्रहणीगदेषु सहसा रक्तातिसारेषु च,
आमं शूलयुतं समस्तजनितं नानातिसाराञ्जयेत॥

रसायनप० ग्रहण्याम्।

भाषा—शुद्ध रसकपूर, पारा, गन्धक और शिंगरिफ, फौलादभस्म, कमलकन्द, इन्द्रजव, अजमोद, चित्रकमूल, धावड़ीकीजड़कीछाल, पुरानीइमली, इलायची, जटामांसी, राल, सेमलका मुसला, जायफल, भुनासुहागा, कुटकी, सेंधानमक, शुद्धवछनाग और अतीस ४–४ माशे, कान्तलोह और अभ्रकभस्म, रससिन्दूर, शुद्ध अफीम ये सब २१–२१ माशे, शुद्धधतूरेकेबीज और तालमखाना ५।–५। माशे लेकर सबका बारीक चूर्णकर अफीमको धतूरेकेस्वरससे दोपहर मर्दनकर सबचूर्णको मिलाय धतूरेकेस्वरससे दोदिन घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली मधुकेसाथदेनेसे सबप्रकारकी ग्रहणी, रक्तातिसार, शूलयुक्तआमातिसार, सान्निपातिक अतिसार इनसबको यह नष्ट करती है।

४६ कामेश्वरमोदकः

सम्यक् शोधितमारितं सुभुजगं वङ्गं तथा तीक्ष्णकं,
सूताभ्रं तरणिं शिवां परिमितं प्रत्येकमादाय वै।
धात्रीसैन्धवकुष्ठकट्फलकणाः शृङ्गी यवानीद्वयं,
यष्टीजीरकयुग्मधान्यकशटीशृङ्गीजयाकेशरम्॥
तालीसं त्रिसुगन्धकं समरिचं जातीफलं मेथिका,
चूर्णीकृत्य समस्तमेतदखिलं दत्त्वाऽर्द्धशक्रासनम्।
सर्वैस्तुल्यतमां सितां सुविमलां बद्धाऽक्षमानान्क्षिपेत्,
कर्पूरैरवचूर्णितानपि तथा दत्त्वा तिलाश्रिस्तुपान्॥
सम्यक् शुद्धकलेवरैरहरहो भक्ष्यं सदा कामिभिः,
आधिव्याधिहरं क्षयक्षयकरं कुष्ठापहं बृंहणम्।
स्त्रीणां तोषकरं परं धृतिकरं शुक्राग्निवृद्धिप्रदं,
कासश्वासवलासरोगनिचयप्रध्वंसनं देहिनाम्॥

र. क. ल. (ना.), वाजीकरणे।

भाषा—उत्तम नाग, वङ्ग, फौलाद, पारद, अभ्रक और ताम्र भस्म, शुद्धगन्धक, आवले, सेंधानमक, कुठ, कायफल, पीपल, काकड़ासींगी, दोनों अजवाइन, मुलहठी, स्याह सफेद जीरा, धनियां, कचूर, मेंढासींगी, ओढहुलकेफूल, केशर, तालीसपत्र, तज, पत्रज, इलायची, सफेदमिर्च, जायफल, मेथी ये सब १–१ भाग, इनसबसे आधीभुनीभांग, और साफकियेहुएतिल तथा शुद्धकपूर उचितप्रमाणसे लेकर सबका बारीकचूर्णकर समभागशक्करकी चासनीमें अच्छी

तरह मिलाय १–१ तोलेके मोदक बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ मोदक दूधके साथ खानेसे शारीरिक और मानसिक रोग क्षय,कुष्ठ, नपुंसकत्व, बुद्धिभ्रंश, शुक्राग्निनाश, कास, श्वास, श्लेष्मरोग, इन सबको यह नष्टकरताहै ।

४७ कामेश्वरमोदकः

त्रिकटु त्रिफला शृङ्गी जाती तालीसपत्रकम् ।
कुष्ठसैन्धवधान्याकं नागकेशरकट्फलम् ॥
मधुकं मेथिका भार्ङ्गी यवानी चाजमोदकम् ।
किञ्चिद्भ्रष्टं जीरयुग्मं कर्पूरञ्च त्रिजातकम् ॥
सबीजविजयां भ्रष्टां सर्वतुल्यां प्रदापयेत् ।
अभ्रकं पारदं लोहं स्वेच्छया प्रक्षिपेत्ततः ॥
मधुना घृतमिश्रेण कर्षमात्रन्तु भोजयेत् ।
क्षीरानुपानं निर्दिष्टं भिषजामिष्टकारकम् ॥
वह्निवृद्धिकरो वृष्यो वृंहणो बलवर्धनः ।
सर्वव्याधिहरो ह्येष सङ्ग्रहग्रहणीं जयेत् ॥
कासश्वासास्रशूलघ्नो वलीपलितनाशनः ।

र. क. ल (ना.) रसायने वाजीकरणे च ।

भाषा–त्रिकटु, त्रिफला, काकड़ासींगी, जावित्री, तालीसपत्र, कुठ, सेंधानमक, धनिया, नागकेशर, कायफल, मुलहठी, मेथी, भारङ्गी, अजवायन, अजमोद, अधभुने दोनों जीरे, शुद्धकपूर, तज, पत्रज, इलायची ये सब समभाग, इन सबकी बराबर सबीज भुनीभांग, तथा अभ्रक, पारद और लोहभस्म औचिती देखकर लेवे। फिर सबका बारीकचूर्णकर मधु और घी मिलाकर १–१ कर्षके मोदक बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ मोदक दूधके साथ देनेसे मन्दाग्नि, धातुक्षीणता, सङ्ग्रहग्रहणी, कास, श्वास, रक्तपित्त, शूल और वलीपलितको यह नष्ट करता है ।

४८ कामेश्वरमोदकः

आकारकरभः शृङ्गी मस्तकी दरदो रसः ।
जातीफलं कट्फलञ्च पिप्पली क्रिमिसूदनम् ॥
त्रैलोक्यविजयाबीजं धत्तूरविषतिन्दुकम् ।
जातीपत्रं वङ्गभस्म यवानीयुगलं तथा ॥
वृद्धदार्वहिफेनञ्च मदनञ्चैव कार्पिकान् ।
गृहीत्वा चोत्तमं खण्डं सर्वतुल्यं विमिश्रयेत् ॥
मधुना मोदकं कृत्वा खादेन्निष्कचतुष्टयम् ।
विनाग्निं मोदकं कुर्यादादौ कृत्वा तु कज्जलीम् ॥
रसगन्धकयोर्वैद्यः सम्प्रदायविशारदः ।
शुक्रस्तम्भकरो वृष्य एष उक्तो मनीषिभिः ॥

र. क ल. (ना), रसायनवाजीकरणयो ।

भाषा–अकलकरा, काकड़ासींगी, मस्तगी, शिंगरिफ और पारदभस्म, जायफल, कायफल, पीपल, विडङ्ग, बीजसहित भांग, शुद्ध धतूरेके बीज, कुचिला, जावित्री, वङ्गभस्म, दोनों अजवाइन, विधारा, अफीम, मदनमस्त, शुद्ध पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जली १–१ कर्ष लेकर बारीक चूर्णकर सबकी बराबर शक्कर मिलाकर मधुके साथ १–१ कर्षके मोदक बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ मोदक दूधके साथ लेनेसे धातुवृद्धि और शुक्रस्तम्भन होता है ।

४९ कृमिमेघमातरिश्वारसः

निम्बं चौरं चाजमोदं विडङ्गं
चक्रे बद्धं सूतराजं विमृद्य ।
माध्वीकाक्तं द्रम्ममानन्तु दद्या-
द्धन्याज्जन्तून्मातरिश्वेव मेघान् ।

र मृ, कृमिरोगे ।

भाषा–निम्बबीजमज्जा, खरजवाइन, अजमोद, विडङ्ग, चक्रबद्धपारा (अनलरस १२५ देखो) ये सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर १–२ पहर इकट्ठे मर्दनकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ मोदक दूधके साथ लेनेसे समस्त क्रिमि नष्टहोतेहै ।

५० खञ्जनिकारिरसः

कुपीलुरजतायांसि सम्भाव्यार्जुनवारिणा ।
मुद्गमानां वटीं कृत्वा शोषयेत्सूर्यरश्मिना ॥
पक्षवातं घोरतरं गदं खञ्जनिकं तथा ।
रसः खञ्जनिकार्याख्यो हरेदाशु न संशयः ॥

भै. र, खञ्जवाते ।

भाषा—शुद्ध कुचिला, रजत और लोहभस्म समभाग लेकर सफेदअर्जुनकीछालके क्राथसे एकदिन मर्दनकर मूगबराबर गोलियें बनाकर कड़ीधूपमें सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली यथोचितानुपानकेसाथ देनेसे असाध्य पक्षाघात और खञ्जवात नष्टहोतेहै।

५१ गन्धकादिलेह्यम्

गोक्षीरशोधिता चीनहेमक्षीरी १२ तोलिका, गोदुग्धेक्षुतण्डुलीयकाऽऽकाशवल्लीश्वेतकूष्माण्ड-नागार्जुनीवास्तुकतोयपिप्पलीस्वरसशोधितोऽमलसारगन्धकः १२ तोलकः, वाकुचीचित्रकमूलत्वग्रास्नाकुण्डलीमूलतालीसपत्राऽश्वगन्धापारसपिप्पलकण्टकिपलाशमूलचम्पकपुष्पाणि प्रति १। तोलकानि सञ्चूर्ण्याऽऽदौ गन्धकं खल्वे विमृद्य चीनशर्करां ९ तोलिकां, चीनहेमक्षीरीचूर्णं, पूर्वोक्तवस्तुचूर्णञ्च मेलयित्वा १२ तोलकं मधु निक्षिप्य चीनपात्रे रक्षयेत्। सायं प्रातःपादतोलकं रोगबलानुसारेणाऽर्द्धमण्डलमेकमण्डलं वा सेवयेत्। अनेन मेहव्रणाः, पामाकालमेहोपदंशयोनिव्यापत्पाणिपादवन्धशूलानि श्वेतरक्तहारिद्रमेहाश्च निर्मूला भवन्ति। अम्लधूमपानस्त्रीसङ्गादिकं वर्ज्यमुष्णोदकञ्च पेयम्। क्षीरान्नं, घृतं, शर्करा, आढकीखण्डयूषश्च पथ्यः। (अगस्त्य०)

५२ गुडूच्यादिचूर्णम्

गुडूच्यतिविषा शुण्ठी भूनिम्बं यवतिक्तकम् ।
मुस्तं कणा यवक्षारः कासीसं भ्रमराप्रियः ॥

एतेषां समभागेन चूर्णमेव विनिर्दिशेत् ।
यकृत्प्लीहपाण्डुरोगमग्निमान्द्यमरोचकम् ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ।
नानादोषोद्भवश्चैव वारिदोषभवन्तथा ॥
विरुद्धभेषजभवं ज्वरमाशु व्यपोहति ॥

भै र., प्लीहयकृदधिकारे ।

भाषा—गिलोय, अतीस, सोंठ, चिरायता, तितली, नागरमोथा, पीपल, यवक्षार, कासीसभस्म, स्वर्णचम्पककी छाल सब समभागका चूर्ण बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ माशे तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यकृत्, प्लीह, पाण्डु, मन्दाग्नि, अरुचि, ८ प्रकारका ज्वर, जलदोषज, विरुद्धभेषजजन्यज्वर इन सबको यह नष्टकरताहै ।

५३ चन्दनादिचूर्णम्

चन्दनं शाल्मलीपुष्पं त्रिजातं रजनीद्वयम् ।
अनन्तां सारिवां मुस्तमुशीरं यष्टिकामले ॥
स्वर्णपत्रीं शुभां भार्गीं देवदारु हरीतकीम् ।
सर्वद्विगुणितं लौहश्चैकत्र परिमर्दयेत् ॥
प्रमेहा विंशतिः श्वासः कासो जीर्णज्वरस्तथा ।
प्राशनादस्य नश्यन्ति दुर्नामानि च कामला ॥

भै. र शुक्रमेहे ।

भाषा—सफेदचन्दन, सेमलकेफूल, तज, पत्रज, इलायची हल्दी, दारुहल्दी, अनन्तमूल, सारिवा, नागरमोथा, खस, मुलहठी, आवले, सनाय, भारङ्गी, देवदारु, हर्रे, सब समभाग लेकर वारीकचूर्णकर सबसे दूनी लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े इसमेंसे ३–३ रत्ती प्रमेहहरानुपानके साथ देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, श्वास, कास, जीर्णज्वर, बवासीर, कामला, ये सब नष्ट होते है ॥

५४ चिञ्चादिलेह्यम् (महदादिः)

चिञ्चापत्रं शतपलमायसश्च तदर्धकम् ।
तदर्धं चित्रमूलं स्यात्तदर्धं किट्टमार्द्रकम् ॥
निर्गुण्डी पाटलो विल्वो वासा दारु पुनर्नवा ।
वरुणो बृहती चैव कण्टकारी तथैव च ॥
सहदेवी विदारी च गोपवल्ली च वालकम् ।
अपामार्गश्च खदिरो गणकार्यश्वगन्धिके ॥
वाराही शालपर्णी च वासन्ती सुरसा धवः ।
पाषाणभेदिमूलञ्च सौभाग्यं गोक्षुरं तथा ॥
शृङ्गिका काकनासा च शार्ङ्गी सहचरी शमी ।
श्योनाकवीरवृक्षौ च राजार्क शरपुङ्खिका ॥
भृङ्गं चामलकी दन्ती हपुषा नीलपुष्पिका ।
आरग्वधोऽमृताऽनन्ता कारवल्लीफलन्तथा ॥
त्रिकटु त्रिफला चैव चव्यग्रन्थिकराम्लिकाः ।
दीप्य विडङ्गमधुके जीरकोशीरपत्रकम् ॥
श्रीगन्धो दारु मञ्जिष्ठा वराङ्गं भद्रमुस्तकम् ।
प्रत्येकं वन्यमूलञ्च पलं शतकमाहरेत् ॥
पलाष्टकं त्वापणस्थं भाण्डगर्भे विनिक्षिपेत् ।
द्वादशाढकतोयञ्च क्काथमष्टावशेषितम् ॥
पुराणस्य गुडस्याऽपि पलानां शतमिश्रितम् ।
वस्त्रपूतञ्च तत्क्काथं वीजपूररसन्तथा ॥
भृङ्गराजार्द्रकरसं दुःस्पर्शस्वरसं तथा ।
प्रत्येकं प्रस्थसम्मानं तच्च मन्दाग्निना पचेत् ॥
व्योषतालीसपत्राणि चातुर्जातविडङ्गकम् ।
गजकृष्णा नलं चैव ग्रन्थिकं वत्सकं तथा ॥
त्वक्क्षीरी धान्यकं जाजी दीप्ययुग्मकरेणुकम् ।
जातीफलञ्च तत्पत्रं लवङ्गं मांसिकं मधु ॥
भार्ङ्गी श्वेतं मरीचञ्च त्रिफला कृष्णजीरकम् ।
रास्नाऽब्दोशीरदार्व्यश्च कुङ्कुमं त्रिवृता शटी ॥
तक्कोलं टङ्कणं शृङ्गी कोष्ठकं चाहरेद्भिषक् ।
मञ्जिष्ठा देवदारुश्च प्रत्येकं द्विपलन्तथा ॥
पटगालिततच्चूर्णं पक्के सम्मिश्रितं भवेत् ।
क्षौद्रं शतपलञ्चैव निक्षिपेल्लोहकान्तकम् ॥
मण्डूरञ्च तथैव स्यात्प्रत्येकं पलयुग्मकम् ।
लेह्यं पक्त्वा स्निग्धभाण्डे धान्यराशौ विनिःक्षिपेत् ॥
धन्वन्तरिगणाधीशदिक्पालभिषजोऽर्चयेत् ।
द्विकालमक्षमात्रस्य भक्षणं मासमात्रकम् ॥
शोफकामलपाण्डूंश्च कुम्भकं श्वासकासकौ ।
द्वादशक्षयरोगांश्च क्रिमिं श्लेष्मज्वरं हरेत् ॥
पुराणशूलमत्युग्रं मलमूत्रविबन्धकम् ।
प्रमेहपिडिकारोगमग्निमान्द्यमरोचकम् ॥
अक्षिशूलोदरश्चैव रक्तपैत्यञ्च छर्दिकम् ॥

वै चि. चतुर्विंशतिपैत्यरोगे ।

भाषा—छायाशुष्क इमलीके पत्ते १०० पल, मण्डूरका वारीक चूर्ण ५० पल, चित्रकमूल २५ पल, अदरखकाकल्क १२॥ पल, संभालू, पाटला, वेल, अडूसा, देवदारु, पुनर्नवा, वरुण, बडी और छोटी भटकटैया, सहदेवी, विदारीकन्द, अनन्तमूल, सुगन्धवाला, अपामार्ग, खैर, अरणी, देशीअसगन्ध, वाराहीकन्द, शालपर्णी, माधवीलता, तुलसी, धव, पाषाणभेदकीजड़, सुहागा, गोखरू, काकडासींगी, काकनासा, काकजङ्घा, पीयावासा, शमी, सोनापाठा, वीरतरु, नीलार्क, शरपुङ्ख, भंगरा, आवले, दन्तीमूल, झाऊ, कालादाना, अमलतास, गिलोय, जवासा, करेला, त्रिकटु, त्रिफला, चव्य, गठिवन, रास्ना, अजवाइन, विडङ्ग, मुलहठी, जीरा, खस, पत्रज, सफेद चन्दन, देवदारु, मजीठ, तज, नागरमोथा इनमेंसे जङ्गली चीज़ें १००–१०० पल, दूकानकी चीज़ें ८–८ पल, लेकर जवकुट बनाय १२ आढकपानीमें औटावे । अष्टमाशावशेष रहनेपर छानकर मिट्टीकेपात्रमें चढावे। उसमें १०० पल पुराना गुड़ डालकर विजोरा, भंगरा, अदरख, जवास इनका स्वरस

१–१ प्रस्थ डालकर मन्दाग्निसे पकावे । गोली वननेलायक घन तैयार होनेपर उतारले । फिर त्रिकटु, तालीसपत्र, चातुर्जात, विडङ्ग, गजपीपल, नल, पिपलामूल, कुटज, तीखुर, धनिया, जीरा, दोनों अजवाइन, रेणुका, जायफल, जावित्री, लौंग, जटामासी, मुलहठी, भारङ्गी, सफेदमिर्च, त्रिफला, कालीजीरी, रास्ना, नागरमोथा, खस, दारुहल्दी, केशर, निसोत, कचूर, शीतलचीनी, भुनासुहागा, काकडासींगी, पृश्निपर्णी, मजीठ और देवदारु २–२ पल लेकर कपड़छान चूर्णकर मिलादे । ठंढाहोनेपर मधु १०० पल, कान्तलोह और मण्डूरभस्म २–२ पल डालकर चिकनेवर्तनमें रख मुंहवन्दकर ३ दिनतक धान्यकीराशिमें गाड़दे। चौथेदिन निकालकर धन्वन्तरि, गणेश, दिक्पाल, और वैद्योंका पूजनकर १–१ कर्ष सुवह शाम एक महीनेतक सेवन करनेसे शोथ, कामला, पाण्डु, कुम्भकामला, श्वास, कास, १२ क्षय, क्रिमि, श्लेष्मज्वर, पुराना भयङ्कर शूल, मलमूत्र विवन्ध, प्रमेहपिडिका, मन्दाग्नि, अरुचि, अक्षिशूल, उदररोग, रक्तपित्त, वमन इन सवको यह नष्टकरताहै ।

५५ चिन्तामणिलेह्यम्

भृङ्गराज (चेप्पुतट्टाकु तै०) पीतपुष्पभृङ्गराजविल्वगोक्षुरमूलप्राचीनामलकीकोकिलाक्षपत्राणां स्वरसाः प्रति ३६ तोलकाः, जम्ब्वौदुम्बरत्वङ्नारिकेलपुष्पाणां प्रति ७॥ तोलकानां ४८ तोलके जलेऽष्टावशेषं क्वाथं गृहीत्वा पूर्वोक्तरसैः संयोज्य मरिचनीलीमूलवलातिवलाऽरण्यमरीचिकाकपित्थमूलानि प्रति १० तोलकानि १२० तोलके शुद्धजले निधाय २४ तोलकं तालगुडं निक्षिप्य १४४ तोलकं गोदुग्धं मेलयित्वा द्रवशोषणपर्यन्तं विपाच्य जीरकैलालवङ्गत्रिफलायष्टिमधुकमरिचजातीफलजातीपत्रयवानिकाखुरासानिकातालीसनागकेशरपाटला (करकड्डु तै०) कुष्ठाऽऽकारकरभनागराणां ३–३ तोलकानां चूर्णं घनपाके मेलयित्वाऽवतार्य स्वाङ्गशैत्ये २० तोलकं घृतं २४ तोलकं मधु च निक्षिपेत् । अत्र च त्रिलोहसिन्दूरं ६ तोलकं, मण्डूरसिन्दूरं ३ तोलकं मेलयित्वा पादतोलकं प्रत्यहं द्विवारं पादमण्डलमर्धमेकं वा मण्डलं सेवनीयम् । अनेन पाण्डुशोथकामला सर्ववायुग्रहण्यतीसारवान्तयो निर्मूला भवन्ति । (व्यास०)

५६ जातीपत्र्यादिवटी

टङ्कद्वयमिता जातीपत्री जातीफलं समम् ।
सिन्धुशोषश्च तन्मात्रमाकारकरभं समम् ॥
त्वक्तमालौ च तन्मात्रावेलाकङ्कोलकौ समौ ।
वत्सनाभं तत्समानं टङ्कैकमहिफेनकम् ॥
धूर्तबीजन्तु टङ्कैकमीशनागाजमोदकम् ।
ज्योतिष्मती च कर्पूरी द्विटङ्का टङ्कमात्रकम् ॥
कुचैलं शोधितं ग्राह्यं सर्वं सूक्ष्मं विचूर्णयेत् ।
द्विगुणायाः सितायास्तु पाके चूर्णं विमिश्रयेत् ॥
गुटीं कृत्वा प्रयत्नेन चणकद्वयमानिकाम् ।
महापुंस्त्वकरी ह्येषा वलवीर्यविवर्धिनी ॥

र कु वाजीकरणे ।

भाषा—जावित्री, जायफल, समुद्रशोष, अकलकरा, तज, तमालपत्र, इलायची, शीतलचीनी, शुद्धवछनाग २–२ टङ्क, शुद्ध अफीम और धतूरेके वीज १–१ टङ्क, रससिन्दूर, नागभस्म, अजमोद, मालकागनी, अनन्तमूल २–२ टङ्क, शुद्धकुचिला १ टङ्क लेकर वारीकचूर्णकर सवसेदूनी शक्करकी चाशनीमें मिलाकर दोचने प्रमाण गोलियेंवनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली वृंहण अनुपानकेसाथ लेनेसे नपुसकत्वको दूरकर वल और वीर्यको वढाती है ।

५७ जीवन्त्यादिलेहः

जीवन्तीं मधुकं पाठां त्वक्क्षीरीं त्रिफलां शटीम् ।
मुस्तैले पद्मकं द्राक्षां द्वे वृहत्यौ वितुन्नकम् ॥
सारिवां पौष्करं मूलं कर्कटाख्यं रसाञ्जनम् ।
पुनर्नवां लोहरजस्त्रायमाणां यवानिकाम् ॥
भार्ङ्गीं तामलकीमृद्धिं विडङ्गं धन्वयासकम् ।
क्षारचित्रकचव्याम्लवेतसव्योषदारु च ॥
चूर्णीकृत्य समांशानि लेहयेत्क्षौद्रसर्पिषा ।
चूर्णात्पाणितलं पञ्चकासानेतद्व्यपोहति ॥

च, ग. नि, कासाऽधिकारे ।

भाषा—अर्कपुष्पीकी जड़, मुलहठी, पाठा, तीखुर, त्रिफला, कचूर, नागरमोथा, इलायची, पद्मकाठ, द्राक्ष, छोटी और वड़ी भटकटैया, सोनापाठा, सारिवा, पोहकरमूल, काकडासींगी, रसौत, पुनर्नवा, लोहभस्म, त्रायमाण, अजवाइन, भारङ्गी, भूम्यामलकी, ऋद्धि, विडङ्ग, जवासा, यवक्षार, चित्रकमूल चव्य, अम्लवेत, त्रिकटु, देवदारु, सव समभागलेकर वारीक चूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे ३–३ माशे मधु और घीकेसाथ लेनेसे समस्त कास नष्टहोतेहै ।

५८ ज्योतिष्मान्रसः

कान्तं सुवर्णमभ्रञ्च रसं षड्गुणजारितम् ।
वैक्रान्तं विद्रुमं रुद्रजटामूलं हयाऽप्रियम् ॥
कङ्कुष्ठञ्च समं सर्वं गृहीत्वा यत्नतो भिषक् ।
एकीकृत्य रसेनैडगजपत्रभवेन च ॥
भल्लातमूलखदिरमूलक्वाथेन यत्नतः ।
त्रिधा सम्भाव्य विधिवन्मात्रा चणकसम्मिता ॥
ज्योतिष्मान्नामकरसो वातरक्तं हरेद्द्रुतम् ।
कुष्ठमष्टादशविधं रोगांश्चान्यांस्तदुद्भवान् ॥
तथा गौणोपदंशश्च विकृतिं पारदोद्भवाम् ।
दुष्टव्रणं गण्डमालां भगन्दरमथापचीम् ॥

नातः परतरं किञ्चिद्भेषजं रक्तशुद्धिकृत् ।
सारिवा तन्द्रिका पथ्या पर्पटं गञ्जिनी तथा ॥
चक्राङ्गी क्काथ एतेषां ज्योतिष्मद्रससेवनात् ।
वर्धयेदाशु वीर्यञ्च सर्वरोगकुलान्तकृत् ॥
भाषितः श्रीमहेशेन विबुधानां यथाऽमृतम् ॥

भै. र कुष्ठाधिकारे ।

भाषा—कान्तलोह, सुवर्ण, अभ्रक, षड्गुणगन्धकजारित पारा, वैक्रान्त, विद्रुम, रुद्रजटा और सफेद कनेरकी जड़, रेवनचीनी सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पवाडकेपत्तोंके स्वरस तथा भिलावे और खैरकीजड़केक्काथसे ३–३ भावनाएं देकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली कुष्ठहरानुपानकेसाथ देनेसे भयङ्कर वातरक्त, उपद्रवसहित १८ प्रकारके कुष्ठ, सुजाक, उपदंश, पारदविकार, दुष्टव्रण, गण्डमाला, भगन्दर इन सबको यह नष्टकरता है । रक्तशुद्धिकेलिये इससे बढ़कर दूसरी औषधें कम हैं । सारिवा, भारङ्गी, हरें, पित्तपापडा, भांग, गिलोय, इनके क्काथके साथ सेवनकरनेसे समस्त रोगोंका नाशहोकर वीर्यकी वृद्धिहोतीहै ।

५९ ज्वरचिन्तामणिरसः

तुत्थद्वयञ्च दरदं गन्धकं रसतालकम् ।
शङ्खवीजं दन्तिवीजं ताम्रभस्म हलाहलम् ॥
लोहवङ्गभवं भस्म रौप्यभस्म मनःशिलाम् ।
टङ्कणं श्वेतपाषाणं समभागञ्च योजयेत् ॥
आर्द्रकस्वरसैर्मर्द्य वज्रमूषान्तरे क्षिपेत् ।
स्वर्णभस्म च तीक्ष्णस्य प्रवालं मौक्तिकं तथा ॥
एतैस्सर्वैः समायुक्तमार्द्रकस्वरसैस्तथा ।
गुञ्जाप्रमाणा वटिका सन्निपातज्वरञ्जयेत् ॥

रसायनप०, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध दोनों तूतिये, शिंगरिफ, गन्धक, पारा, हरिताल, कालादाना, जमालगोटा, ताम्रभस्म, बछनाग, लोह, वङ्ग और रजतभस्म, शुद्ध मैनसिल, सुहागा और सोमल समभाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर अदरखकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय वज्रमूषामें बन्दकर भूधरपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सुवर्ण, फोलाद, प्रवाल और मोतीभस्म १–१ भाग मिलाकर अदरखके रससे एकदिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात, श्वास, कास, विषमज्वर, क्षय इन सबको यह नष्टकरताहै ।

६० ज्वराङ्कुशरसः

लोकनाथस्य शुद्धस्य बलेश्चैकैकभागकः ।
शैलूषमण्डनात्षष्टिर्भागा भल्लातकस्य च ॥
चत्वारो नागजिह्वायास्तथाम्लेच्छमुखस्य च ।
चत्वारो माक्षिकस्यापि स्नुहीक्षीरस्य षोडश ॥
एतन्मृद्वग्निना सर्वं पचेद्भाण्डे च मृन्मये ।
स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा समाकर्षेत्ततः परम् ॥
विपक्वं भेषजं सम्यक्ततः खल्वे विमर्दयेत् ।
रसो ज्वराङ्कुशो नाम शीतादिज्वरनाशनः ॥
नागवल्लीदलेनास्य दद्याद्गुञ्जाचतुष्टयम् ।
दद्यान्मण्डादिकं पथ्यं ज्वरिताय ज्वरापहम् ॥

र. मृ., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १–१ भाग, हरिताल और भिलावा ६०–६० भाग, मैनसिल, तावेका चूर्ण और सुवर्णमाक्षिक ४–४ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर १६ भाग थूहर का दूध मिलाकर मिट्टीके वर्तनमें रख मन्दाग्निसे पकावे । दूध सूखनेपर उतारकर खरलमें डाल एकदिन मर्दनकर ४–४ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पानके साथ देनेसे शीतादि समस्त विषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै । इसमें मांड वगैरह हल्का पथ्य देवे ।

६१ ताण्डवारिलौहम्

दारुरामठकर्पूरयशदायो यथोत्तरम् ।
प्रगृह्य चतुरावृत्त्या विभाव्य विजयाम्बुना ॥
कुपीलुजकषायेण पार्थस्य स्वरसेन च ।
पङ्क्तिकां वटीं कृत्वा युञ्ज्यात्ताण्डवशान्तये ॥
बृंहणं पानमन्नञ्च स्नानं स्रोतस्वतीजले ।
शयनं स्वेदशून्यं यत्कर्म तच्चेह शर्मणे ॥
कर्षणाद्यखिलं प्रोक्तमशुभाय पुरातनैः ॥

भै. र. ताण्डवरोगाधिकारे ।

भाषा—देवदारु, भुनीहींग, शुद्धकपूर, जस्त और लोहभस्म ये सब क्रमवृद्धभाग लेकर बारीकचूर्णकर भागकेस्वरस अथवा क्काथसे ४ भावनाएं देकर कुचिलेके क्काथ और अर्जुनके स्वरससे १–१ दिन मर्दनकर ६–६ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे ताण्डववातको यह नष्टकरता है । बृंहण अनुपान देवे । बहती हुई नदीमें स्नानकरावे । पूर्ण ब्रह्मचर्य रक्खे । कर्षणक्रिया इसमें वर्जित है ।

६२ तापाङ्कुशवटिका

सूतसूर्यविषरुक्त्रिफलाग्निव्योषमङ्कुशरसो वटिकैका ।
हन्ति मुद्गसुतुलिता नवमाहाप्यागतेन पवनाखिलतापम् ॥

र. बो , ज्वराधिकारे ।

भषा—पारा और ताम्रभस्म, शुद्धबछनाग, कुठ, त्रिफला, चित्रक, त्रिकटु, ये सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर तुलसीवगैरहकेरससे एकदिन मर्दनकर मूंगबराबर गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली ज्वर आनेसे १ घण्टा पहिले तुलसी वगैरहकेसाथ लेनेसे यह समस्त विषमज्वर और वातवेदनाको नष्टकरतीहै ।

६३ ताम्रयोगः

त्रिफला त्र्यूषणं मुस्तं विडङ्गं चित्रकं तथा।
लवङ्गञ्च पृथक् सर्वं सूक्ष्मं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥
सर्वेभ्यो द्विगुणं ताम्रं मृतं दत्त्वा प्रमर्दयेत्।
माषैकं वा द्वयं वापि लेहयेन्मधुना सह ॥
समस्तशूलशान्त्यर्थं समस्तसुखहेतवे ॥

ना. वि., शूले।

भाषा—त्रिफला, त्रिकटु, नागरमोथा, विडङ्ग, चित्रकमूल और लवङ्ग समभागलेकर वारीकचूर्णकर सबसे द्विगुण ताम्रभस्ममें मिलाय १–२ दिन मर्दनकर रखछोड़े। इसमेंसे १ से २ माशेतक मधुकेसाथ देनेसे समस्तशूल दूरहोतेहैं।

६४ तालकवटी

तालभागो भवेदेको शिला चैव चतुर्गुणा।
चूर्णयित्वा द्वयं चैतद्भावयेत्त्रिफलोदकैः ॥
कृत्वा तद्गुटिकां श्लक्ष्णां कूपीमध्ये विनिक्षिपेत्।
निरुद्ध्य वालुकायन्त्रे यामद्वयमतन्द्रितः ॥
गुञ्जाद्वयं ददीतास्य श्वासकासापनुत्तये ॥

र. मृ., श्वासकासयोः।

भाषा—शुद्धहरिताल १ भाग, मैनसिल ४ भागलेकर वारीक चूर्णकर त्रिफलाकेक्काथसे एकदिन मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियेंवनाकर छायाशुष्ककर आतशीशीशीमें भरके वालुकायन्त्रमें रख दोपहरकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे २–२ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह श्वासकासको नष्टकरताहै।

६५ तालकसुन्दरीगुटिका

तण्डुलाम्बुरजनीपुनर्नवा
धावनी कणजलाग्निजैरलम्।
भूतवृक्षपिचुमन्दसंयुतैः
स्वेदयेदथ पृथक्पृथक् क्रमात् ॥
यामकैकमधिकं विचूर्णितं
शोषयेत्तदनु गन्धकं पुनः।
भृङ्गसम्भवरसेन भावितं
द्रावितञ्च शुभलोहपात्रगम् ॥
प्रक्षिपेच्च बहुधा घृतान्तरे
शुद्धिमेत्यथ सुतकमध्यगम्।
पारदञ्च गृहकन्यकारसै-
र्मर्दितं त्रिफलयाऽग्निना क्रमात् ॥
स्वेदयेत्त्रिकटुहिङ्गुराजिका-
क्षारयुग्मलवणैर्दिनत्रयम्।
काञ्जिकेन वरदोलिकागतं
शुद्धमित्थममलञ्च सूतकम् ॥
अष्टौ भागाः पूर्वशुद्धाच्च ताला-
दर्द्धा भागाः पूर्वशुद्धाद्रसेन्द्रात्।
दत्त्वा खल्वे तालकार्धञ्च गन्ध-
माभूमान्तं मर्दयेत्कज्जलाभम् ॥
तालादर्द्धं सोमराज्याश्च चूर्णं
चूर्णं देयं चाभयायाश्च तावत्।
एलाशुण्ठीकृष्णमुस्ताकराला-
त्वग्युक्तानां सोषणानाञ्च भागाः ॥
देयाः सर्वे सूतराजेन तुल्या
देयास्तालात्सद्विषं षोडशांशम्।
सर्वं सूक्ष्मं पेषितं सिन्धुतोयै-
र्दद्याच्छुद्धानाञ्च सिद्धा वटीस्ताः ॥
दिने दिने माषकसम्मितानां
प्रभावतस्तालकसुन्दरीणाम्।
समभ्यसन्याति नरो विलङ्घ्य
प्रसह्य कुष्ठार्तिसमुद्रमाशु ॥
श्वित्रोदुम्बरशीर्णसुप्तिरकसाऽसृग्वातदद्रुक्रिमी-
नाडीदुष्टभगन्दरग्रहणिकादुर्नामपाण्ड्वामयान्।
कृच्छ्रोन्मादससन्निपाततमकाऽपस्मारमेदोज्वरान्,
हन्यात्तालकसुन्दरीति गुटिका प्रोक्ता स्वयं शम्भुना॥
वलिपलितं क्षयरोगं कुष्ठं ग्रहणीमसाध्यगदविपिनम्।
विदहति विज्ञानानल इव गुटिका तालकसुन्दरीविहिता
अतिलवणतैलकाञ्जिकविषमाशनपानमहीघर्माणि।
जागरकोपनमैथुनमद्यविरूढकानि सर्वाणि॥
परिहरतु यावदेनां करोति पुरुषो तालकेश्वरीं गुटिकां
तावन्ति चाप्युपरितो दिनानि गच्छन्गदान्मुक्तिम् ॥

र. मृ., कुष्ठे।

भाषा—चावलकाधोवन, हल्दी, पुनर्नवा, शालपर्णी, पीपल, खस, चित्रक, वहेड़ा और नीमके स्वरसोंसे अलग अलग १–१ पहर हरितालको स्वेदनकर सुखाले। फिर गन्धकको लोहेकेपात्रमें गलाकर भंगरेके रस और घृतमें निर्वापदेकर शुद्धकरे। पारेको खट्टीछाछ, घीकुंवार, त्रिफला और चित्रकमें क्रमसे मर्दनकर गोलावनाय ४ तह कपड़ेमें वाधकर त्रिकटु, हींग, राई, सज्जी, यवक्षार, पाचोंनमकमिलीहुई काञ्जीमें दोलायन्त्रसे ३ दिन स्वेदनकरके शुद्धकरे। फिर शुद्धहरिताल ८ भाग, शुद्धपारा, गन्धक, वाकुची, हर्रे, इलायची, सोंठ, पीपल, नागरमोथा, कालीजीरी, तज और मरिच ४–४ भाग, शुद्धवछनाग १६ वां भाग लेकर वारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय समुद्रके जलसे १–२ दिन मर्दनकर १–१ माशेकी गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली कुष्ठहरानुपानकेसाथ देनेसे सवतरहकाकुष्ठ, श्वित्र, उदुम्वर, मासकागिरना, प्रसुप्ति, रकसा, रक्तवात, दद्रू, क्रिमि, नाडीव्रण, दुष्टभगन्दर, ग्रहणी, अर्श, पाण्डु, मूत्रकृच्छ्र, उन्माद, सन्निपात, तमक, अपस्मार, मेद, ज्वर, इनसबको यह नष्टकरती है। इसके सेवनमें अत्यन्तलवण, तैल, काञ्जिक, विषमाशन, पान, भूमिशय्या, धूप, जागरण, कोप, मैथुन, मद्य, अङ्कुरित अन्न इनसब-

का परित्यागकरे। जितने दिन इसगोलीका सेवनकरे उतने दिनतक तथा औषधसेवनसमाप्तिके बादभी उतनेही दिनतक उक्तचीजोंका निषेधकरे।

६६ तीक्ष्णादिवटिका

खर्पराभ्ररसास्तुल्यास्तीक्ष्णञ्च द्विगुणं मतम्।
तीक्ष्णपादसमं स्वर्णं जतुक्काथेन सप्तधा॥
भावयित्वा ततः कार्या द्विगुञ्जाप्रमिता वटी।
पलङ्कषाकषायेण रसेनोदुम्बरस्य वा॥
प्रयोज्या वटिका ह्येषा शुभा तीक्ष्णादिनामिका।
रक्तपित्तं क्षयं कासं यक्ष्माणं श्वसनं ज्वरम्॥
निहन्यात्सकलान्रोगान् केसरी करिणं यथा॥

भै र., रक्तपित्ते।

भाषा—खर्पर, अभ्रक और पारदभस्म १-१ भाग, लोहभस्म २ भा०, सुवर्णभस्म ½ भाग लेकर वारीकचूर्णकर लाखकेकाढ़ेसे ७ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली गोखरूकेक्काथ अथवा गूलरके फलोंकेरससे देनेसे रक्तपित्त, क्षय, कास, राजयक्ष्म, श्वास, और ज्वरको यह नष्टकरतीहै।

६७ त्रिकटुकाद्या वटी

त्रिकटुत्रिफलादुरालभा
द्विनिशादारुवचाः सचित्रकाः।
रसगन्धककर्कटाह्वया
रुचककट्फलहिङ्गुपत्रिकाः॥
इति दर्शितभेषजैर्गुटी
मधुना शाणमिता कृता नृणाम्।
प्रणिहन्ति निषेविता नरैः
पवनास्रक्कफकोपजान्विकारान्॥

ग नि, कफरोगे।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, जवास, हल्दी, दारुहल्दी, देवदारु, वच, चित्रकमूल, शुद्ध पारा और गन्धक, काकडासींगी, कालानमक, कायफल, डीकामाली येसव समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय मधुमें ४-४ माशेकी गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली साय प्रात लेनेसे वातरक्त और कफरोगको यह नष्टकरतीहैं।

६८ त्रिनेत्ररसः

टङ्कणं शोधितं गन्धं मृतं शुल्वायसं रसम्।
दिनैकमार्द्रकद्रावैर्मर्द्यं लघुपुटे पचेत्॥
त्रिनेत्राख्यो रसो नाम चासाध्यं श्वयथुं जयेत्।
वल्लमात्रं पिवेच्चानु वातारिशिखरीरसम्॥

भै र, शोथाधिकारे।

भाषा—शुद्धसुहागा, गन्धक और पारा, ताम्र और लोहभस्म, समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर एकदिन अदरखके रससे मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर लघुपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे। इसमेंसे ३-३ रत्ती एरण्ड और अपामार्गके पत्रस्वरसकेसाथदेनेसे असाध्य शोथ नष्टहोताहै।

६९ त्रिपुरुषो रसः

वज्रं गद्याणमितं फणिवल्लिना स्वेदयेद्दिवसम्।
त्रिदिनं क्षिपेत्तुषाम्भसि मूषां कन्यारसेन सम्पूर्य॥
तत्र निधाय च वज्रं रुद्धमुखीं सप्तभिः पुटैर्विदहेत।
भस्म भवेदिति वज्रं भसितमतः कथ्यते प्रवालस्य॥
विद्रुमपलं निदध्याद्दिनमेकं देवदालिरसमध्ये।
प्रहरं तद्रसघृष्टं दिनं निदध्याच्च कृष्णधूर्तरसे॥
अथ यावनालं निदधीत दिनत्रयं जलस्यान्ते।
तेन जलेन तदन्नं पिष्ट्वा मूषोदरं प्रलिम्पेत॥
तत्सलिलपूरितायां मूषायां निक्षिपेत्प्रवालञ्च।
रुद्धमुखीं सप्तपुटैर्विदहेद्भवति विद्रुमभस्म॥
चूर्णजले सिन्दूरिणि निधाय
पलमात्रमौक्तिकं दिवसम्।
तस्मिन्नेव विघर्षेद्दिनमेकमथ प्रकल्पयेन्मूषाम्॥
वत्सतरीशकृतोऽस्याः कृत्वाऽन्तर्लेपनं दशाहानि।
तन्मूत्रपूरितायां मूषायां मौक्तिकं क्षेप्यम्॥
रुद्धमुखीं सप्तपुटैर्दहेदतो मौक्तिकं भस्म।
शुद्धं रसपलमेकं नारङ्गफलोदरे ततः क्षेप्यम्॥
लवणेन पूरयित्वा नारङ्गं स्थालिकोदरे निहितम्।
तां माहिषेण पयसा सम्पूर्य तापयेन्मन्दम्।
यावद्वाऽङ्गुलमानं नारङ्गोपरि स्थितं क्षीरम्।
तावद्भस्म रसस्य स्यादेवं भस्मानि चत्वारि॥
तान्येकत्र विमर्द्य जम्भलरसैर्भस्मानि मूषायाम्।
ततः कृत्वा लुङ्गसमाः क्षिपेत्त-
दाऽखिलं ताञ्च प्रपूर्याम्भसा॥
जम्बीरस्य निरुद्ध्य तन्मुखमथ त्रिःसप्तवारान्दहेत्।
सिद्ध्यत्येवमसौ रसस्त्रिपुरुषो रोगौघविध्वंसनः॥
क्षौद्राक्तो जरणेन शैलजतुना मासैकसंसेवितः।
कृच्छ्रं शर्करया युतोऽपि नितरां पित्तासृजं नाशयेत्॥
तैलेन पक्त्वा वटकान्निपीड्य
तत्तैलमिश्रं दिवसांश्च पञ्च।
दद्यात्तमद्याद्गतचेतनोऽपि
जयेद्दशत्रीनपि सन्निपातान्॥
जीमूतकन्यारसमिश्रितश्च
देयो भिषग्भिस्त्रिदिनं रसेन्द्रः।
दुग्धेन कष्टं विधिनोपविष्टं
विष्टम्भशूलं विनिहन्ति सद्यः॥
श्वासं सकासं क्रिमिशूलजातं
क्षीरेण युग्भृङ्गरसो रसेन्द्र.।

तेनानुपानेन तु तैलपक्को
भुक्तः स्मरोन्मादमपाकरोति ॥

र. मृ., सन्निपाते।

टि०—मूलस्थप्रक्रियया पारदभस्म दुर्वारमत 'सप्तमपाके दुग्धे शुष्के ऽपरां स्थालीं मुखे न्यस्य सप्त कर्पटमृत्तिका दत्वा चतुर्दिवसैः क्रमवृद्धाग्निना पाक' करणीयस्तेन रसकर्पूरासादनं भविष्यति।

भाषा—६ माशे वज्राभ्रकको पानकेरससे एकदिन स्वेदनकर तुपाम्बुमें ३ दिन रख मूपामें डाल घीकुंवारकेरससे मूपाको भरके ७ कपड़मिटी देकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर पूर्ववत् घोटकर आचदे। ऐसे ७ आचोंमें वज्राभ्रककीभस्महोगी। एकपल प्रवालको वन्दालके रसमें एकदिनस्वेदनकर वारीककूटकर एकप्रहरमर्दनकर कालेधतूरेके रसमें डालकर थोड़ीज्वार डालदे। तीनदिनवाद उसीजलमें ज्वारको पीसकर मूपाकेभीतर लेपनकरदे। फिर उसमें प्रवालकी टिकड़ीको रख उसीपानीको अन्दरभरके ७ कपड़मिटीदेकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर पूर्ववत् आंचदे। ऐसे ७ वार आंचें देनेसे भस्महोगी। एकपल मोतियोंको सिन्दूरवर्णचूनेके पानीमें डालकर एकदिन रहनेदे। फिर दूसरेदिन उसीजलमें २४ घण्टा घोटकर खचरकीलीदका रसपुतीहुई वज्रमूपामें रख खचरकेहीमूत्रसेभरदे। १० दिनवाद कपडमिटीकर गजपुटकी आचदे। ऐसे ७ पुटदेनेसे भस्महोगी। एकपल शुद्धपारेको नारङ्गीकेभीतर रखकर लवणसे आधेतकभरीहुई हण्डीमें रख लवणसे ऊपरतकभरके भेंमकादूधभरदे और मन्द आचसे पकावे। नारंगीपर एकअङ्गुलद्रव वाकीरहजानेपर उतारकर नारङ्गीमेंसे पारेको निकाल दूसरेफलमें भरके पूर्ववत् आचदे। ऐसे ७ वार पाककरे। सातवींवार तमामद्रव जलजानेकेवाद हण्डीपर दूसरीहण्डी रखकर ६-७ कपड़मिटीकर सुखनेपर ४ दिनकी आचदे। ऊपरकी हण्डीपर भीगाकपड़ा रक्खे। स्वागशीतलहोनेपर धीरजसे यन्त्रको खोलकर ऊपर लगेहुए रसपुष्पोंको निकाल ले'। इसतरह चारोंभस्मोंको एकत्र मिलाय जंभीरीकेरससे घोटकर टिकड़ीवनाय मूपामेंरख विजोरे अथवा जंभीरीकारस भरके कपड़मिटीकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दनकर आचदे। ऐसे २१ वार गजपुटदेनेसे यह रस तैयारहोजाताहै। इसमेंसे १-१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ एकमहीनेतक सेवनकरनेसे मूत्रकृच्छ्र, शर्कर, सूत्रमेह, रक्तपित्त इनसवको यह नष्टकरताहै। तैलमें उड़दके वड़े वनाकर उन्हें दवाकर तैलनिकाले। उस तैलकेसाथ ५ दिनतक देनेसे चेतनारहितभी सन्निपाती जीवितहोताहै। इसतरह १३ सन्निपातोंको यह नष्टकरताहै। नागरमोथा और घीकुंवारकेरसकेसाथ ३ दिनतक देनेसे भयङ्करविष्टम्भ और शूलको नष्टकरताहै। इसीतरह श्वास, कास, पक्वेव्रण, क्रिमि, शूल इन सवको नष्टकरताहै। दूध और भंगरेकेरसकेसाथ मिलाकर तैलमें पकाकरदेनेसे स्मरोन्मादको नष्टकरता है।।

७० त्रिलोचनवटी

वारिणा मर्दयेत्तालं सीसकं मरिचं विषम्।
मुद्गमात्रा वटी कार्या जलेन सितया सह॥
द्विमुहूर्तान्तरं दद्यात्क्रमेण वटिकात्रयम्।
त्रिलोचनवटी ह्येषा पर्यायज्वरनाशिनी॥
वातिकं पैत्तिकञ्चापि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम्।
सर्वाङ्गिवराग्निहन्त्याशु प्रयुक्ता ज्वरमार्दवे॥

भै र., ज्वराऽधिकारे।

भाषा—शुद्ध हरिताल और वछनाग, नागभस्म, मरिच, येसव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर एकदिन जलकेसाथ घोटकर मूंगवरावर गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली जल अथवा शक्करकेसाथ २-२ घण्टेसेंदेनेसे पालीकेज्वर, वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक और सान्निपातिक ज्वर नष्टहोतेहै।

७१ त्रिविक्रमरसः

शुद्धसूताऽमृतं ताम्रं शिलातालञ्च गन्धकम्।
कुष्टं महावला पथ्या शिखिकण्ठं विदारिका॥
एरण्डतैलं संयोज्य दिनमेकन्तु मर्दयेत्।
पुनर्नवाद्रवेणैवाऽनुपानं सम्प्रकल्पयेत्॥
गुञ्जामात्रां वटीं खादेद्गुल्मवातनिवर्हणम्॥

वै चि गुल्मे।

भाषा—शुद्ध पारा, वछनाग, ताम्रभस्म, शुद्ध मैनसिल, हरिताल और गन्धक, कुठ, महावला (कङ्घी), हर्रे, तुत्थभस्म, विदारी येसव समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर एकदिन एरण्डतैलसे मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली पुनर्नवाके स्वरसकेसाथ देनेसे गुल्मवात नष्टहोताहै।

७२ त्रैलोक्यरक्षामणिरसः

सूताभ्रगन्धं विषतालरौप्यं ताम्रं प्रवालं दरदञ्च वज्रम्
मयूरतुत्थं कनकेन मिश्रं नेपालचूर्णं मृतलोहभस्म॥
निर्गुण्डिवैश्वानरतोयपिष्टं सुवालुकायन्त्रगतं विपक्वम्।
आर्द्रस्य तोये मरिचैर्विमिश्रं
गुञ्जाप्रमाणं विनिहन्ति दोषम्॥
मन्दाग्निजीर्णज्वरमारुतानां
श्वासञ्च कासं वहुरोगसङ्घम्।
चिन्तामणिर्नाम महाप्रभाव-
स्त्रैलोक्यरक्षामणिपारदेन्द्रः॥

रसायनप० ज्वराधिकारे

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, वछनाग और हरिताल, अभ्रक, रजत, ताम्र, प्रवाल, शिगरिफ, हीरा, मयूरतुत्थ, सुवर्ण, लोह इनकीभस्में और शुद्धजमालगोटा समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर संभाल और चित्रककेस्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें वन्दकर वालुकायन्त्रमें रख एकदिनरातकी अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर १-१ रत्ती अदरखके

रस और मरिचकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, जीर्णज्वर, समस्तवायुरोग, श्वास, कासप्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥

७३ दरदादिवटी

दरदं पादपलिकमहिफेनञ्च तत्समम् ।
भृङ्गा पलमिता ग्राह्या माषकद्वयसम्मिता ॥
गन्धकं चोषणं कृष्णा टङ्कणं वत्सनाभकम् ।
धूर्तवीजं कुचैलञ्च दरदस्य समं समम् ॥
सर्वं सम्पेषयेत्सूक्ष्मं नीरेण गुटिका ततः ।
मङ्कुष्ठमाना कर्तव्या दिवारात्रौ प्रदापयेत ॥
तदेकैकाञ्जलेनैवाऽम्लादिकं परिवर्जयेत् ।
षण्ढो पौरुषमासाद्य रमण्या सह मोदते ॥
र. वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ और अफीम १-१ कर्ष, भांग १ पल २ माशे, शुद्धगन्धक, मरिच, पीपल, भुनासुहागा, शुद्ध वछनाग, धतूरेकेबीज और कुचिला १-१ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर १-२ दिन पानीमें घोटकर मोठवरावर गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली पानी अथवा उचितानुपानकेसाथलेनेसे पुरुषत्वको प्राप्तहोताहै ।

७४ द्वियोनिरसः

ग्राह्यं शुद्धरसात्पलं पलमथो सद्गन्धकाच्छोधितं,
मण्डूराच्च पलद्वयं पलमपि स्यात्पूतनाचूर्णतः ।
चूर्णीकृत्य त्रिवृत्पलञ्च सकलं खल्वे निधाय स्थितं,
तं सम्भाव्य सुपीतभृङ्गसलिलप्रस्थेन सञ्चूर्णितम् ॥
दातव्यं मधुसर्पिषा प्रतिदिनं तत्पेयमाषान्वितं,
क्षौद्राम्भोहिमरागदाडिमजलद्राक्षाम्बुपानादिभिः ।
पीत्वाऽम्लं विनिहन्ति मान्द्यमलसश्वासञ्च वक्षोगदान्
छर्दिं सर्वभवामपि क्षयरुजं जीर्णज्वरार्शांस्यपि ॥
र मृ. राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ पल, मण्डूरभस्म २ पल, हर्रे और निसोत १-१ पललेकर वारीकचूर्णकर एकप्रस्थ पीलेभंगरेकेरससे भावनादेकर सुखाकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ माशा द्राक्ष, चन्दन, केशर, अनार, सुगन्धवाला इनके क्वाथकेसाथलेनेसे मन्दाग्नि, अलसक, श्वास, छातीकादर्द, वमन, समस्तवातविकार, क्षय, जीर्णज्वर और ववासीर नष्टहोतेहैं ।

७५ नागार्जुनीवटी

तालेशौ टङ्कणं गन्धं कुष्ठं त्रिकटुकं विषम् ।
करहाटञ्च सर्वाणि समभागानि कारयेत् ॥
भावयेद्भृङ्गराजेन सप्त धत्तूरजेन च ।
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा रात्रौ दद्यात्सुखेच्छया ॥
अशीतिं वातजान्रोगांश्श्लैष्मिकानेकविंशतिम् ।
एषा नागार्जुनीनाम सिद्धश्लाघ्यामवातनुत् ॥
र बो., वातरोगे।

भाषा—शुद्ध हरिताल, पारा, सुहागा और गन्धक, कुठ, त्रिकटु, शुद्धवछनाग, अकलकरा, सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरा और धतूरेकेरससे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलियें वनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली रात्रिमें उचितानुपानकेसाथदेनेसे ८० प्रकारके वातरोग और २१ श्लेष्मरोगोंको यह नष्टकरतीहैं ।

७६ नीलकण्ठरसः

रसस्य भागाश्चत्वारो हेम्नो भागचतुष्टयम् ।
अभ्रं लौहं तथा मुक्ता वैक्रान्तं युग्मभागिकम् ॥
रौप्यं प्रवालं ताप्यञ्च वङ्गमेकैकभागिकम् ।
त्रिधा जीवन्तिलाक्षाग्निमूलक्वाथेन भावयेत् ॥
एरण्डपत्रैः संवेष्ट्य धान्यराशौ निधापयेत् ।
ततो दिनत्रयादूर्ध्वमुद्धृत्य चणकप्रभाः ॥
नीलकण्ठं समभ्यर्च्य शुचिः संयतमानसः ।
प्रयुञ्ज्याद्वटिका धीमान् यथाव्याध्यनुपानतः ॥
रसायनवरः श्रीदो वातव्याधिविनाशनः ।
रसः श्रीनीलकण्ठाख्यो नीलकण्ठेन भाषितः ॥
कुष्ठमष्टादशविधं प्रमेहान्विंशतिं तथा ।
नेत्ररोगं तथा दोषान् रजःशुक्रसमुद्भवान् ॥
सन्निपातज्वरं घोरं हृन्नासामुखकर्णजान् ।
रोगं वहुविधं हन्ति भास्करस्तिमिरं यथा ॥
भै, र., रसायने ।

भाषा—पारदभस्म अथवा रससिन्दूर और सुवर्णभस्म ४-४ भाग, अभ्रक, लोह, मोती और वैक्रान्तभस्म २-२ भाग, रजत, प्रवाल, सुवर्णमाक्षिक और वङ्गभस्म १-१ भाग लेकर अर्कपुष्पी, लाख और चित्रकमूलकेक्वाथोंसे ३-३ दिन मर्दनकर गोलावनाय एरण्डकेपत्तोंमें लपेटकर धान्यकीराशिमें ३ दिनतक रखकर चौथेदिन चनेप्रमाण गोलियेंवनाकर रखछोड़े। नीलकण्ठ महादेवका पूजनकर १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे १८ प्रकारके कुठ, २० प्रकारकेप्रमेह, नेत्ररोग, रज और शुक्रदोष, सन्निपात, हृदय, नाक, मुख और कानकेरोग इनसवको नष्टकर रसायनका काम करताहै।

७७ पानीयवटिका

शुद्धः सूतो गन्धकश्च हरितालं समांशकम् ।
विषाऽयस्कान्तनिम्बानां प्रत्येकञ्च द्विभागिकम् ॥
शेफालीदलजैः क्वाथैर्गुडूचीपर्पटोद्भवैः ।
भावयित्वा ततः कार्या गुञ्जात्रयमिता वटी ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं शीतलं सलिलं ह्यनु ।
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ॥
प्लीहानं यकृतं शोथं पाण्डुञ्च सहलीमकम् ।
पानीयवटिका ह्येषा प्रथिता पृथिवीतले ॥
भै. र. ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और हरिताल १–१ भाग, शुद्धवछनाग, कान्तलोहभस्म, निम्बमज्जा २–२ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर हारसिंगारकेपत्ते, गिलोय और पित्तपापड़ेके स्वरसोंसे १–१ भावना देकर ३–३ रत्तीकी गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली ठंढेजलकेसाथदेनेसे साध्य अथवा असाध्य ८ प्रकारकाज्वर, प्लीहा, यकृत्, शोथ, पाण्डु, हलीमक इन सवको यह नष्टकरतीहै।

७८ पित्तान्तकलोहम्

रसं गन्धकमभ्रञ्च गुडूचीमभयां तथा।
उशीरं वालकं ताम्रसारं सर्वं समं समम्॥
गृहीत्वाऽयः सर्वसमं खल्वे संस्थाप्य मर्दयेत्।
रक्तिकाद्वयमितं खादेद्वटिकामतियत्नतः॥
पटोलपत्रधान्याककाथेनैवानुपानतः।
पाण्डुं पित्तोद्भवात्रोगानशेषान्यकृतं तथा॥
उपदंशं तथा हन्याद्विकृतिं पारदोद्भवाम्।
लोहं पित्तान्तकं नाम वातरक्तं सुदारुणम्॥
दाहञ्च हस्तपदयोर्हन्ति सूर्यो यथा तमः॥

भै. र., वातरक्ते।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रकभस्म, गिलोय, हर्रे, खस, सुगन्धवाला, लालचन्दन येसव समभाग और लोहभस्म सवकीवरावर लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाय पटोलपत्र और धनियेकेकाथोंसे १–२ पहर मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली पटोलपत्र और धनियेके काथकेसाथदेनेसे पाण्डु, समस्त पित्तविकार, उपदंश, पारदविकार, भयङ्करवातरक्त, हस्तपाददाह इनसवको यह नष्टकरताहै।

७९ प्रदराररिसः

वङ्गायःफणिफेनश्च रसः षड्गुणजारितः।
मूलं रक्तोत्पलभवं रक्तचन्दनमेव च॥
समं सर्वमशोकस्य क्वाथैः सम्मर्द्य यत्नतः।
चणकाभा वटी कार्याऽशोककाथं पिवेदनु॥
प्रदराररिसो हन्ति द्विविधं प्रदरामयम्।
वस्तौ च वेदनां रक्तस्रावं घोरज्वरं तथा॥
मूत्राधिक्यादिकांश्चैव भास्करस्तिमिरं यथा।
अथवा त्वगशोकस्य गुडूचीवासकत्वचः॥
रसाञ्जनं मुस्तकञ्च रक्तचन्दनमेव च।
एषामनु पिवेत्काथं सर्वप्रदरशान्तये॥

भै. र., प्रदराधिकारे।

भाषा—वङ्ग और लोहभस्म, शुद्ध अफीम, षड्गुणगन्धकजारित रससिन्दूर, लालकमलकाकन्द, लालचन्दन सव समभागलेकर वारीकचूर्णकर लालअशोककीछालकेकाढ़ेसे १–२ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली लालअशोककीछालकेकाढ़ेकेसाथदेनेसे दोनोंप्रकारकाप्रदर, वस्तिशूल, भयङ्कर रक्तस्राव, घोरज्वर, वहुमूत्र इनसवको यह नष्टकरताहै। किसीजगह यह काम न दे तो अशोककीछाल, गिलोय, अडूसेकीजड़कीछाल, रसौत, नागरमोथा, लालचन्दन इनके काथकेसाथ देवे।

८० प्लीहारिवटी

सहासाराऽभ्रकासीसलशुनानि समानि च।
द्रोणपुष्परसेनैव मर्दयेत्प्रहरत्रयम्॥
वल्लद्वयं प्रदातव्यं प्रदोषे सलिलं ह्यनु।
प्लीहानं यकृतं गुल्ममग्निमान्द्यं सशोथकम्॥
कासं श्वासं तृषां कम्पं दाहं शीतं वमिं भ्रमिम्।
प्लीहारिवटिका ह्येषा नाशयेन्नात्र संशयः॥

भै. र., प्लीहयकृदधिकारे।

भाषा—एलिया, अभ्रक और कासीसभस्म, एकपोती. लहसन येसव समभागलेकर गूमाकेरससे ३ प्रहर मर्दनकर ६–६ रत्तीकीगोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली सायङ्कालकेसमय पानीकेसाथ देनेसे प्लीहा, यकृत्, गुल्म, मन्दाग्नि, शोफ, कास, श्वास, प्यास, कम्प, दाह, शीत, वमन, और भ्रमको यह नष्टकरतीहै।

८१ भृङ्गराजलेह्यम्

४८ तोलके भृङ्गराजस्वरसे ८ तोलकं निर्वीजहरीतकीचूर्णं, १२ तोलकञ्च तालगुडं निधाय घनपाके निवृत्ते त्रिकटुकमयोभस्म च प्रतित्रितोलकं, घृतमधुनी प्रतिसप्ततोलकं संयोज्य लेह्यपाकं गृहीत्वा प्रत्यहं द्विवारं पादतोलकप्रमाणं सेवितश्चेद्वातपित्तपाण्डुदावर्तगुल्मकामलादयो रोगा नश्यन्ति। क्षाराम्लौ स्त्रीसङ्गश्च सुतरां त्याज्यः। (अगस्त्य०)

८२ मालतीकुसुमाकररसः

चन्द्रभागः सुवर्णस्य कर्पूरं युग्मभागिकम्॥
वङ्गसीसकलोहानां भागत्रयमुदाहृतम्॥
अभ्रप्रवालमुक्तानां भागाश्चत्वार ईरिताः।
गव्येन पयसा चैव कदलीपुष्पजै रसैः॥
रसेनेक्षुसमुत्थेन तथा पद्मरसेन च।
उदुम्वररसेनैव भावयेत्सप्तधा पृथक्॥
रक्तिद्वयमिता हन्ति मालतीकुसुमाकरः।
रसः सर्वप्रमेहांश्च वहुमूत्रादिकं तथा।
सोमरोगांश्च संहन्ति भास्करस्तिमिरं यथा॥

भै र, प्रमेहे।

भाषा—सुवर्णभस्म १ भाग, शुद्धकपूर २ भा., वङ्ग, नाग और लोहभस्म ३–३ भाग, अभ्रक और प्रवालभस्म, मुक्तापिष्टी ४–४ भाग लेकर गायकेदूध, केलेकापुष्प, ईख, कमल और गूलरकेफलोंकेरसोंसे ७–७ भावनाएं देकर २–२ रत्तीकी गोलियेंवनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानके-

साथ देनेसे समस्तप्रमेह, बहुमूत्र और सोमरोगको यह नष्टकरताहै ।

८३ माहेश्वरवटी

हेममुक्ताऽभ्रकाङ्क्षीकक्षीरकाकोल्ययांसि च ।
कान्तं महाबलामूलं गृहीत्वा समभागिकम् ॥
शुष्कमूलकगोक्षुरौ तथा श्वेतपुनर्नवा ।
एषां क्वाथेन विधिवद्भावयेत्सप्तधा भिषक् ॥
रक्तिद्वयमिता सेव्या वटी माहेश्वराभिधा ।
ज्ञेयं विशेषतश्चात्र शस्तं दुग्धान्नभोजनम् ॥
पाण्डुं वृक्कामयञ्चैव शोथं सार्वाङ्गिकं तथा ।
जलोदरं तथा मोहं विषमज्वरमेव च ॥
अस्याः प्रयोगान्नश्यन्ति भास्करात्तिमिरं यथा ।
रसायनाधिकारोक्तान्यौषधान्यपि योजयेत् ॥
न चास्ति शमने किञ्चिन्निर्दिष्टमस्य भेषजम् ।
पथ्यैर्बल्यैः सुपाच्यैश्च भिषगेनं प्रपाययेत ॥

भै, र वृक्कामये ।

भाषा—सुवर्ण, मोती और अभ्रकभस्म, भुनीफटकड़ी, क्षीरकाकोली, लोह और कान्तलोहभस्म, बलाकीजड़, सबसम-भागलेकर वारीकचूर्णकर सूखीमूली, गोखरू और सफेदपुनर्नवाके क्वाथोंसे ७-७ भावनाए देकर २-२ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेकर दूधभात खिलानेसे पाण्डु, गुर्दाकादर्द, सर्वाङ्गशोथ, जलोदर, भ्रम, विषमज्वर इनसबको यह नष्टकरतीहै । इसकेप्रयोगमें रसायनाधिकारोक्त औषधोंकाभी योगकरनाचाहिये ।

८४ मृगाङ्कचूर्णम्

मुक्ताशङ्खप्रवालानि वङ्गञ्चैव समांशकम् ।
निम्बक्वाथेन सम्मर्द्य ततो गजपुटे पचेत् ॥
सर्वतुल्या तुगाक्षीरी दरदं तत्कलांशकम् ।
एतत्सर्वं विचूर्ण्याऽथ पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥
रक्तिद्वयं प्रदातव्यं कृच्छ्ररोगप्रशान्तये ।
क्षयं हन्ति तथा कासं यक्ष्माणं श्वासमेव च ॥
स्वरभेदं ज्वरं मेहान् दोषत्रयसमुत्थितान् ।
मृगाङ्कचूर्णमेतद्धि कासरोगकुलान्तकृत् ॥

भै र , यक्ष्मणि।

भाषा—मुक्तापिष्टी, शङ्ख, प्रवाल और वङ्गभस्म सम-भागलेकर नीमकीछालकेकाढेसे मर्दनकर गोलाबनाय शराव-सम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सबकीबराबर बसलोचन और अष्टमाश हिङ्गुलभस्म अथवा शुद्धहिङ्गुलडालकर वारीकचूर्णकर १-२ दिन घोटकर रखछोडे । इसमेंसे २-२ रत्ती पीपल और मधुकेसाथदेनेसे कष्टसाध्यक्षय, कास, राजयक्ष्म, श्वास, स्वरभेद, ज्वर, त्रिदो-षजप्रमेह, इनसबको यह नष्टकरताहै ।

८५ मृगाङ्कवटिका

पारदो गन्धकः शुद्धो लौहमभ्रञ्च टङ्कणम् ।
त्रिकटु त्रिफला चव्यं तालीसं पिप्पली तथा ॥
रक्तोत्पलं तथा लाक्षा सर्वमेकीकृतं शुभम् ।
वासाक्वाथेन सम्भाव्य वल्लमात्रां वटीं चरेत् ।
एकैकां वटिकां खादेद्रक्तोत्पलरसप्लुताम् ।
वासाक्वाथेन पिप्पल्या चोदुम्बररसेन वा ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चापि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
वातश्लेष्मोद्भवं वापि पित्तश्लेष्मसमुद्भवम् ॥
सर्वकास निहन्त्याशु ज्वरं श्वाससमन्वितम् ।
रक्तनिष्ठीवनं तृष्णां दाहं मेहं भ्रमिं वमिम् ॥
प्लीहगुल्मोदरानाहक्रिमिकण्डूविनाशिनी ।
मृगाङ्कवटिका ह्येषा बलवर्णाग्निकारिणी ॥

भै. र , यक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और अभ्रकभस्म, भुनासुहागा, त्रिकटु, त्रिफला, चव्य, तालीसपत्र, पीपल, लाल-कमल और पीपलकीलाख समभागलेकर वारीकचूर्णकर अडूसे-केपञ्चाङ्गक्वाथसे ४-५ भावनाए देकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली लालकमल, अडूसा, पीपल और गूलरके यथासम्भवस्वरस अथवा क्वाथोंकेसाथ-देनेसे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सान्निपातिक, वातश्लैष्मिक, पित्तश्लैष्मिक कास, श्वास, ज्वर, रक्तनिष्ठीवन, तृषा, दाह, प्रमेह, भ्रम, वमन, प्लीहा, गुल्म, उदर, आनाह, क्रिमि, कण्डू, इनसबको दूरकर बलवर्णको करतीहै ।

८६ मृगाङ्कवटी (बृहती)

हेमायस्कान्तसूताभ्रप्रवालमौक्तिकानि च ।
विभीतककषायेण सर्वाणि भावयेत्त्रिधा ॥
एरण्डपत्रमध्यस्थं धान्यराशौ दिनत्रयम् ।
स्थापयित्वा तदुद्धृत्य द्विगुञ्जां वटिकां चरेत् ॥
विभीतकास्थिशस्यञ्च माषार्धं मधुसंयुतम् ।
अनुपानमिह प्रोक्तं क्वाथोवाऽक्षसमुद्भवः ॥
क्षयं हन्ति तथा कासं यक्ष्माणं श्वासमेव च ।
स्वरभेदं ज्वरं मेहं सर्वामयविनाशकृत् ॥

भै र , हिक्काश्वासाऽधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण, कान्तलोह, पारद, अभ्रक, प्रवाल और मौक्तिकभस्म समभागलेकर वारीकचूर्णकर बहेड़ेकेक्वाथसे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय एरण्डकेपत्तोंमेंरख कच्चेसूतसे लपेट-कर कमरबराबर धान्यकीराशिमें ३ दिनतक रक्खे । चौथेदिन निकालकर २-२ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली आधेमाशे बहेड़ेकेचूर्ण और मधुके साथ लेकर अडूसेकाकाथ पिलानेसे क्षय, कास, राजयक्ष्म, श्वास, स्वर-भेद, ज्वर और प्रमेहप्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरतीहै ।

८७ रतिवल्लभमोदकः

शक्राशनस्य बीजानां चूर्णानि पलपञ्च च ।
हविषः कुडवञ्चैकं सिताप्रस्थं प्रगृह्य च ॥
शतावरीरसप्रस्थं तथा शक्राशनस्य च ।
गव्यमाजं पयःप्रस्थं ततः प्रस्थद्वयं पचेत् ।
धात्री द्विजीरकं मुस्तं त्वगेलापत्रकेशरम् ।
आत्मगुप्ता चातिबला तालाङ्कुरकशेरुकम् ॥
शृङ्गाटकं त्रिकटुकं धान्यमभ्रञ्च वङ्गकम् ।
पथ्या द्राक्षा च काकोल्यौ खर्जूरं क्षुरकं तथा ॥
कटुका मधुकं कुष्ठं लवङ्गं सारसैन्धवम् ।
यमानी चाजमोदा च जीवन्ती गजपिप्पली ॥
प्रत्येकं कर्षमेकन्तु चूर्णितानि शुभानि च ।
कुडवार्धं पाकशेषे मधुनः प्रक्षिपेत्ततः ॥
मृगाण्डजं सकर्पूरं यथालाभं विनिक्षिपेत् ।
रतिवल्लभनामाऽयं सेव्यमानो महारसः ॥
परमोजस्करो बल्यो वातव्याधिविनाशनः ।
वातपित्तहरो वृष्यो दृष्टिसन्दीपनः परः ॥
पित्तश्लेष्मास्रपित्तघ्नो विषगुल्मज्वरापहः ।
नाशयेदेषमन्दाग्नि रोगाणां क्षयहेतुकः ॥
न भवेल्लिङ्गशैथिल्यं वृद्धानां पुष्टिवर्धनम् ।
यस्य गेहे सदा बह्वयः पत्न्यः स्युः सुमनोहराः ॥
रसः सेव्यः सदैवाऽयं मोदको रतिवल्लभः ।
ये केचिद्विजया योगा लौहवङ्गाभ्रसंयुताः ॥
युक्ताश्च रसगन्धाभ्यां रसायनवरा मताः ॥

भै. र., वाजीकरणे ।

भाषा—गाजेकेबीज ५ पल, घी ४ पल, शक्कर १ प्रस्थ, शतावर और भागकारस, गाय और बकरीकादूध १–१ प्रस्थ लेकर इकट्ठेकर पकावे । दोप्रस्थ बाकीरहनेपर आवले, दोनोंजीरे, नागरमोथा, तज, इलायची, पत्रज, नागकेशर, केवांचकी मज्जा, अतिबला, तालाङ्कुर (ताडवाली), कशेरु, सिंघाडे, त्रिकटु, धनियां, अभ्रक और वङ्गभस्म, हर्रे, द्राक्ष, काकोली, क्षीरकाकोली, छुहारे, तालमखाना, कुटकी, मुलहठी, कुठ, लौंग, सेंधानमक, अजवाइन, अजमोद, अर्कपुष्पीकीजड़ और गजपीपलका १–१ कर्ष चूर्ण डालकर पकावे । चाशनी तैयारहोनेपर दोपल मधु, कस्तूरी और कपूर यथेष्ठप्रमाणसे डालकर १–१ तोलेके मोदकबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ मोदक दूधकेसाथ सेवनकरनेसे ओज और बलाभाव, वातव्याधि, वातपित्त, नपुंसकत्व, दृष्टिदोष, पित्तश्लेष्म, रक्तपित्त, विष, गुल्म, ज्वर, मन्दाग्नि, क्षय, ध्वजभङ्ग, कृशता इनसबको दूरकरताहै । भागकेयोगोंमें लोह, वङ्ग और अभ्रकभस्म, पारद तथा गन्धक मिलादेनेसे अत्यन्त रसायनका कामकरतेहैं ।

८८ रत्नप्रभावटी

हेमायस्कान्तवैक्रान्तखर्परायांसि विद्रुमम् ।
मुक्ताञ्चैकत्र सम्मर्द्य दार्वीक्काथेन सप्तधा ॥
भावयित्वा वटीं कुर्याद्रक्तिकाप्रमितां भिषक् ।
एषा रत्नप्रभा नाम वटी सततकं हरेत् ॥
प्लीहानं वह्निमान्द्यञ्च कामलां यकृदामयम् ।
स्नायुशूलं महाघोरं केशरी करिणं यथा ॥

भै र., ज्वराधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण, कान्तलोह, वैक्रान्त, खपरिया, लोह, प्रवाल इनकीभस्में और मुक्तापिष्टी समभागलेकर दारुहल्दीकीछालकेकाथसे ७ दिन मर्दनकर १–१ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे सततज्वर, प्लीहा, मन्दाग्नि, कामला, यकृत, स्नायुक, भयङ्करशूल इनसबको यह नष्टकरतीहै ।

८९ रसेन्द्रचूर्णम्

पलोन्मितं शुद्धसूतमाददीताथ शाणकम् ।
प्रत्येकं वंशजा मुक्ता निरुत्थं हेमभस्मकम् ॥
द्रावयेदहिफेनस्य शाणं क्षीरे निमज्जितम् ।
वस्त्रपूतेन तेनैव तत्सर्वं मर्दयेद्भृशम् ॥
छायायामातपे वाऽथ शोषयेच्चूर्णयेत्ततः ।
सक्षीरमन्नमश्नीयान्नाश्नीयाल्लवणाम्भसी ।
शौचमाचमनं कार्यमग्निपूतेन वारिणा ॥
वाससाऽऽच्छादयेद्देहं न स्नायादस्य सेवकः ।
अत्रानुवर्तयेत्सर्वान्नियमान्रससेविनाम् ॥
चूर्णं रसेन्द्रनामेदं रसे श्रेष्ठं रसायनम् ।
नाशयेद्ग्रहणीं कृत्स्नां रक्तातीसारसूतिके ॥
अग्निमान्द्यादिकं जित्वा दीपयेज्जठरानलम् ।
पुष्टं हृष्टं बलिष्ठञ्च नरं कुर्याद्धिताशिनम् ॥

भै. र. ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—रससिन्दूर ४ कर्ष नीलकण्ठीवंशलोचन और निरुत्थ सुवर्णभस्म ४–४ माशे लेकर बारीकचूर्णकर दूधमें मिलाकर कपड़ेसे छानेहुए ४ माशे अफीमसे १–२ दिन मर्दनकर छायामें सुखाकर चूर्णबनाकर रखछोड़े । इसमेंसे ४–४ रत्ती दूधकेसाथ सेवनकर दूधभातखिलानेसे समस्तग्रहणी, रक्तातिसार, सूतिकारोग और मन्दाग्नि नष्टहोकर पुष्टि और बल प्राप्तहोतेहैं । इसके सेवनमें लवण और पानीको बिल्कुल छोड़देवे । शौच और आचमनकेलिये गरमपानीसे कामलेवे । स्नान न करावे । शरीरको खुला न रक्खे । ब्रह्मचर्यादि समस्तनियमोंका यथावत् पालनकरे ।

९० रसेन्द्रवटिका

लोहाभ्रे कोलमाने च तदर्धौ रसगन्धकौ ।
तदर्द्धो विद्रुमो ग्राह्यः खर्परं विद्रुमैः समम् ॥
कण्टकारीरसेनापि सारस्वतरसेन च ।
वासकस्य कषायेण भावयेच्च त्रिधात्रिधा ॥
रक्तिद्वयप्रमाणेन वटिकां कारयेत्ततः ।
सप्तरात्रप्रयोगेण स्वरशुद्धिर्भवेन्नृणाम् ॥
मासमात्रप्रयोगेण किन्नरैः सह गायति ।

मेधाञ्च लभते तीक्ष्णां तुष्टिपुष्टिसमन्विताम् ॥
हन्ति कासं तथा श्वासं प्रमेहं बहुमूत्रकम् ।
रसेन्द्रवटिका ह्येषा धन्वन्तरिविनिर्मिता ॥

भै. र., स्वरभेदे ।

भाषा—लोह और अभ्रकभस्म ८–८ माशे, शुद्ध पारा और गन्धक ४–४ माशे, प्रवाल और खर्परभस्म २–२ माशे लेकर नीलवर्णकज्जलीकर भटकटैया, ब्राह्मी और अडूसेके स्वरसोंसे ३–३ भावनाएं देकर २–२ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली अवस्थोचितानुपानकेसाथ ७ दिनतक देनेसे स्वरभङ्ग दूरहोताहै । एकमहीनेमें मधुरकण्ठ होताहै । इसकानिरन्तरसेवनकरनेसे दिव्यमेधा औरपुष्टि होतीहै । कास, श्वास, प्रमेह और बहुमूत्रका नाशहोताहै ।

९१ वसन्ततिलकरसः

लौहं वङ्गं माक्षिकञ्च सुवर्णञ्चाभ्रकं तथा ।
प्रवालं तारमुक्ताञ्च जातीकोषं फलन्तथा ॥
एतेषां समभागेन चातुर्जातञ्च मिश्रितम् ।
मर्दयेत्त्रिफलाकाथे वटिकां कुरु यत्नतः ॥
रोगांश्च भिषजा ज्ञात्वा अनुपानं यथायथम् ।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥
वायुं नानाविधं हन्ति चापस्मारं विशेषतः ।
विसूचिकां क्षयोन्मादौ शरीरस्तम्भमेव च ॥
प्रमेहान्विंशतिश्चैव नानारोगं विशेषतः ॥

भै. र., प्रमेहे ।

भाषा—लोह, वङ्ग, सुवर्णमाक्षिक, सुवर्ण, अभ्रक, प्रवाल, रजत इनकीभस्में और मुक्तापिष्टी, जावित्री और जायफल समभाग, सबकीबराबर चातुर्जातलेकर बारीकचूर्णकर त्रिफलाके क्वाथसे १–२ दिन मर्दनकर ३–३ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक और सान्निपातिकरोग, नानातरहका वातविकार, अपस्मार, विसूचिका, क्षय, उन्माद, शरीरस्तम्भ, २० प्रकारकेप्रमेह इनसबको यह नष्टकरताहै ।

९२ बहुमूत्रान्तकरसः

शाल्मलीकदलीमूलचूर्णं पारदभस्म च ।
उदुम्बरबीजचूर्णं लौहो वङ्गञ्च विद्रुमम् ॥
मुक्ताहिफेनसारौ च प्रत्येकं समभागिकम् ।
मर्दयेन्मालतीपुष्परसेन कुशलो भिषक् ॥
रक्तिद्वयमितां कुर्याद्वटिकामतिशोभनाम् ।
बहुमूत्रान्तको नाम रसः परमशोभनः ॥
मधुमेहं सोमरोगं हन्ति भास्वान्यथा तमः ।

भै. र. बहुमूत्राधिकारे ।

भाषा—सेंमलकामुसला, केलेकाकन्द, पारदभस्म, गूलरकेबीज, लोह, वङ्ग, प्रवाल, मोती इनकीभस्में और शुद्धअफीम समभागलेकर बारीकचूर्णकर मालतीपुष्पोंकेस्वरससे १–२ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकीगोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे मधुमेह और सोमरोगको यह नष्टकरताहै ।

९३ वह्निभास्वररसः

सुवर्णमभ्रं वैक्रान्तं रजतं शाणमानकम् ।
लौहं रसं गन्धकञ्च माक्षिकं कर्षसम्मितम् ।
रक्तचित्रकतोयेन तथा ब्राह्म्या रसेन च ।
त्रिसप्तकृत्वः सम्भाव्य कुर्यात्त्रिवल्लमितां वटीम् ॥
रसोऽयं सर्वथा हन्ति मस्तिष्कोदकमाशु च ।
अन्यांश्च शिरसोरोगान्वह्निस्तृणगणानिव ॥
वह्निवद्भासते यस्माद्वीर्येणैष रसोत्तमः ।
भूतले प्रथितस्तस्मादाख्यया वह्निभास्वरः ॥
नैव शान्ति गते व्याधौ मस्तिष्कात्सलिलं हरेत् ।
त्रिकूर्चकेन मधुना यत्नतः कुशलो भिषक् ॥

भै.र. शीर्षाम्बुरोगे ।

भाषा—सुवर्ण, अभ्रक, वैक्रान्त और रजतभस्म ४–४माशे, लोहभस्म, शुद्धपारा, गन्धक और सुवर्णमाक्षिक १–१ कर्षलेकर नीलवर्णकज्जलीकर रक्तचित्रक और ब्राह्मीके स्वरसोंसे ७–७ भावनाएं देकर ३–३ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली चित्रक और ब्राह्मीके स्वरसोंकेसाथ देनेसे मस्तिष्कजलप्रभृति समस्त शिरोरोगनष्टहोतेहैं । रोगकीशान्ति न हो तो त्रिकूर्चकशस्त्रसे जल निकाले ।

९४ वातश्लेष्मान्तकरसः

पञ्चकोलं प्रवालञ्च पारदं चाभ्रकं तथा ।
आर्द्रकस्वरसेनैव मर्दयेदतियत्नतः ॥
गुञ्जाद्वयं प्रदातव्यं नागवल्लीरसैर्युतम् ।
वातश्लेष्मज्वरहरो वातश्लेष्मान्तको रसः ॥
वातजं पित्तजं श्लेष्मद्विदोषजमपि क्षणात् ।
सर्वाञ्ज्वरान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥

भै. र., ज्वराधिकारे ।

भाषा—पञ्चकोल (पीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ), प्रवाल, पारद और अभ्रकभस्म समभागलेकर अदरखकेरससे १–२ दिन मर्दनकर २–२ रत्तीकीगोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली पानकेरसकेसाथदेनेसे वातश्लेष्म, वातज, पित्तज, श्लेष्मज, और द्विदोषजप्रभृति समस्तज्वरोंको यह नष्टकरताहै ।

९५ सहकारवटी

सहकारस्य निम्बस्य खदिरस्याशनस्य च ।
तुलां पृथग्विनिष्क्वाथ्य द्रोणमानेन चाम्बुना ॥
पक्वीकृत्य कषायांश्च पादशिष्टान् पुनः पचेत् ।
ततः क्षिपेन्मलयजं बालकं रक्तचन्दनम् ॥
गैरिकं देवपुष्पञ्च धातकीं रजनीद्वयम् ।
लोध्रं जातीफलं श्यामां चातुर्जातं फलत्रयम् ॥

वटप्ररोहा मञ्जिष्ठा विडं मांसी पयोधरम् ।
कटुत्रयमयश्चन्द्रं प्रत्येकं पलयुग्मकम् ॥
ततः कलायसदृशीर्विदध्याद्गुटिका भिषक् ।
रोगान् कण्ठौष्ठरसनादन्ततालुसमुद्भवान् ॥
सहकारवटी हन्यादाश्वेव वदने धृता ।
जनयेन्मुखसौरभ्यं सुरुचिं स्थिरदन्तताम् ॥

भै. र., मुखरोगे ।

भाषा—आम, नीम, खैर, असन इनकीछाल १००-१०० पलको कूटकर एकएकद्रोणजलमें पादावशिष्टक्वाथकरके कपड़ेसे छानकर एकजगह मिलावे। फिर इसमें सफेदचन्दन, सुगन्ववाला, लालचन्दन, सोनागेरू, लौंग, धावडीकेफूल, हल्दी, दारुहल्दी, पठानीलोध, जायफल, अनन्तमूल, चातुर्जात, त्रिफला, वटकीजटा, मजीठ, विडनमक, जटामांसी, नागरमोथा, त्रिकटु, लोहभस्म और शुद्धकपूर २-२ पलका चूर्ण डालकर पकावे। घन तैयारहोनेपर मटरबराबरगोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१- गोली मुंहमें रखकर चूंसनेसे कण्ठ, ओष्ठ, जिह्वा, दन्त और तालुके समस्तरोगोंको दूरकर मुखमें सुगन्धिकोपैदाकरतीहैं, रुचिको बढ़ातीहै और दांतोंको स्थिरकरती है ।

९६ सिद्धशाल्मलीकल्पः

भूकूष्माण्डं तालमूली धात्री चैव पुनर्नवा ।
समभागं समाहृत्य भागार्धं गन्धकं तथा ॥
तदर्धं पारदं शुद्धं कज्जलीकृत्य निक्षिपेत् ।
श्वेतशाल्मलितोयेन सप्तधा भावयेत्ततः ॥
माहिषेण च दुग्धेन तच्चूर्णं भावयेत्पुनः ।
शुष्कं तच्चूर्णयेद्यत्नाल्लेहयेन्मधुसर्पिषा ॥
अनेनाशीतिवर्षोऽपि शतधा रमतेस्त्रिया ।
ऊर्ध्वलिङ्गः सदा तिष्ठेत्कामदेव इव स्वयम् ॥
जरादिरोगनिर्मुक्तः संसारसुखमश्नुते ।
शाणमेकन्तु कर्तव्यं दुग्धमत्रानुपानकम् ॥

भै. र., ध्वजभङ्गे ।

भाषा—भुंईकोंहला, तालमूली, आवले, पुनर्नवा और शुद्धपारा १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय सफेदसेमलकेस्वरससे ७ भावनाएं देकर भैंसकेदूधमें घोटकर चूर्णबनाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ माशा मधु और घीकेसाथ मिलाकरलेनेसे अत्यन्त वाजीकरणहोताहै ।

९७ स्नायुशूलहरचूर्णम्

पलाद्वयमुशीरञ्च चन्दनं सारिवाद्वयम् ।
मेदाद्वन्द्वं निशाद्वन्द्वं गुडूचीविश्वभेषजम् ॥
फलत्रयं यमानीञ्च रौप्यं सर्वसमं तथा ।
एकीकृतं वल्लमानं पाययेद्गव्यसर्पिषा ॥
स्नायुशूलहरं नाम चूर्णमेतद्धरेकृतम् ।
निखिलं स्नायुशूलञ्च सर्वान्वातामयांस्तथा ॥

भै र., स्नायुरोगे ।

भाषा—छोटी और बड़ी इलायची, खस, चन्दन, दोनों सारिवा, मेदा, महामेदा, हल्दी, दारुहल्दी, गिलोय, सोंठ त्रिफला, अजवाइन येसब १-१ भाग, रजतभस्म सबकीबराबर लेकर वारीकचूर्णकर १-२ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती गायकेघीकेसाथदेनेसे समस्तस्नायुरोग और वातविकारोंको यह नष्टकरताहै ।

स्वरादिरसोंकी विशेषसूचनाएं

१—अगस्त्यप्रोक्तवैद्यकशास्त्र (अगस्त्य), व्यासप्रोक्तवैद्यकशास्त्र (व्यास), रसामृत(र.मृ), रसकल्पलता (र.क.ल.(ना.)) रत्नकुतूहल (र.कु.) और रसायनम् इनग्रन्थोंको ग्रन्थसूचीमें दाखिलकरना ।

२—अगस्तिसूतराज (द्वितीय) में र वो.को दाखिलकरना ।

३—अग्निकुमाररस (तृतीय) में चि.र.भ.कोदाखिलकरना ।

४—अग्निकुमार (पञ्चम) में र.वो., र पा.को दाखिलकरना और नीचेलिखीहुई टिप्पणीको टिप्पणीमेंदेना ।

"र.सं., भै.र., र.सु., वै. क., र.सि., रसायनसं., र.का., यो. म., एषु ग्रन्थेषु हुताशननाम्ना "गन्धेशटङ्कणैकैकं विषमत्र त्रिभागिकम् । अष्टभागन्तु मरिचं जम्भाम्भोमर्दितं दिनम् ॥, इति योगो निहितोऽस्ति। यो.र., र.चं. एतयोः "एकांशकाः पारदगन्धटङ्काः कपर्दशङ्खाऽमृतगेहधूमाः । त्र्यंशा इमेऽथो मरिचं त्विभांशं सम्मर्दितं जम्भरसेन गाढम् ॥,, इति पाठो निहितोऽस्ति । अनयोर्द्वयोरपि अस्मिन्नन्तर्भावः सुकरः। यद्यप्यनयोः प्रथमयोगे कपर्दशङ्खयोरभावोऽस्ति द्वितीये च गृहधूमस्याऽधिक्यमस्ति इत्यापाततोऽन्तर्भावो दुष्करः प्रतिभाति। परन्तु प्रथमयोगनिर्दिष्टरोगेषु कपर्दशङ्खयोरौचित्यात्तदाधिक्ये गुणवृद्धिरेवास्ति । द्वितीययोगे यद्गृहधूमाधिक्यं तत्प्रक्षेपमधिकतयाऽग्निकुमारे योजनेनाऽपि क्षत्यभावोऽस्ति पाठन्यूनता च महत्फलमिति विद्वद्भिराकलनीयम् ।

५—अग्निकुमार (षष्ठ) के मूलपाठके स्थानमें नीचे लिखे पाठको रखना और टिप्पणीको टिप्पणीमें देना ।

"सूतटङ्कणविषाऽभ्रकपर्दिका
गन्धकेन मिलिताःसमभागाः ।
वत्सकाग्निविजयाऽतिविषाभिः
श्रीफलाम्बुजलैश्च विमर्द्य ॥
सद्ग्रहग्रहणिकाविनिवृत्त्यै
सिद्धतां समुपैति रसेन्द्रः ।
सातिसारमपि हन्ति दुष्करं
शोफजाड्यगुरुताऽग्निनाशनम् ॥

स्वीयानुपानैरपि योजनीयो
रोगानुरूपैरशनैर्हितः स्यात्।
प्रयत्नतः सद्ग्रहणीनिवृत्त्यै
मन्दाग्नितायां किल पायुजानाम्॥

र., र. सं., ग्रहण्यविकारे।

टि०—रसावतारे रसेन्द्ररस इति नाम। रसेन्द्रसारसङ्ग्रहीयाग्निकुमारे अभ्रकं नास्ति तत्स्थाने त्रिकटुर्नियोजितोऽस्ति। जम्बीराऽम्भसा भावना दत्ताऽस्तीति विशेष। शा, र क, र चि, र च, टो, भै सा, र (सा), रसायनम, र क ल, र सु, यो.म, र र स एषु पुस्तकेषु रसेन्द्रसारसङ्ग्रहे च द्वितीयस्थाने हंसपोट्टलीति नाम। र कयो, ना वि एतयो कपर्दिकारस इति नाम। रसकामधेनौ च गगनसुन्दरेति नाम स्थापितम्। वृ यो त, आ वि, मा.प्र, र सु, यो म, र क ल, नि र, एषु ग्रन्थेषु हुताशननाम्ना "नागर कर्षमात्र स्यात्कर्षमात्रञ्च टङ्कणम्। मरिच सार्धभाग स्यात्तावद्दग्ध वराटकम्॥ विष कर्षचतुर्थांश सर्वमेकत्र चूर्णयेत्॥" इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भाव करणीय। यद्यप्यस्मिन्योगे पारदगन्धयोरकान्ततोऽभावोस्ति विषस्य च त्रिभागन्यूनतेति कृत्वाऽत्यन्तदुर्घटता प्रतीयते परन्तु योगद्वयस्य सदृशकार्यकरत्वात्तस्मिन्योगे सम्पादितेऽस्य योगस्याऽकिञ्चित्करत्वादेकेनैव योगेन सुष्ठुनिर्वाहो भविष्यतीति विद्वद्भिर्विभावनीयम्।

६—अग्निकुमाररस (१८) में टो (प्रतापलङ्केश्वर) और र.पा., र.मृ को दाखिलकरना।

७—अग्निकुमार (२५) में यो.चि को दाखिलकरना।

८—अग्निकुमार (२९) में र मृ को दाखिलकरना।

९—अग्निकुमार (३०) में रसायनप०को दाखिलकरना।

१०—अग्निकुमार (३८) में पित्तकुलान्तक नामान्तर देना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें लेना।

"वसवराजीये विसर्पपित्ताऽधिकारे पित्तकुलान्तकेति नाम्नाऽयमेव पाठो निहितोऽस्ति तत्र द्वियामान्तो पाकः कृतोऽस्ति। आर्द्रकस्थाने जीरकाऽनुपानञ्च निवेशितम्।

११—अग्निकुमार (३९) को निकालदेना वह सन्निपातभैरव (४) में गयाहै।

१२—अग्निकुमार (४०) में व रा और वै.चि.कोग्रन्थोंमें दाखिलकरना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें लेना—

"वसवराजीयवैद्यचिन्तामण्योर्विजयभैरवनाम्नाऽयमेवरसो निहितोऽस्ति केवलं तस्मात्ताम्रमपसारितम्। तत्केन कारणेन सञ्जातमिति न ज्ञायते पाठस्त्वेक एवाऽस्ति"

१३—अग्निकुमार(४३)में रसायनप., र पा को दाखिलकरना।

१४—अग्निकुमार (४६)के पाठकेस्थानमें नीचेलिखेहुएपाठको रखना—

"पारदो गन्धकस्ताम्रकं तालकं
वत्सनाभः समं मर्दयेच्छृङ्गजैः।
याममात्रं रसैस्त्र्यूषणैर्वा त्रिधा
पञ्चकोलेन वा वह्निना च त्रिधा॥
वह्निकुमाररसः किल एषः
शूलकफग्रहणीरनुपानैः।
हन्त्यरुचिं श्वसनं कसनं तत्
सततं जाठरपावकमान्द्यम्॥

रसायनसं., र क.यो, अग्निमान्द्ये।

१५—अग्नितुण्डीवटीकीटिप्पणीमें नीचेलिखीटिप्पणीको और ग्रन्थोंमें रसायनपरीक्षाको दाखिलकरना.

"रसकामधेनावग्निमान्द्याऽधिकारे वैश्वानरनाम्नैको रसो निहितोऽस्ति सोऽप्यत्रैवान्तर्भवति।

१६—अग्निप्रदरसमें सुवर्णपत्ररसका अन्तर्भावकरना।

१७—अग्निमुखचूर्णमें ग नि को दाखिलकरना।

१८—अग्निमुखरस (४)को रसवरकी टिप्पणीमें लेजाना।

१९—अग्निरस (प्रथम)में र को (वज्रेश्वर)को दाखिलकरना।

२०—अग्निरस (४)में व रा (श्लेष्मकासविधूनन)को दाखिलकरना।

२१—अग्निसन्दीपन (५)में र.चि. (भस्मामृत)को दाखिलकरना।

२२—अग्निसन्निभावटी में र पा को दाखिलकरना।

२३—अङ्कोलवद्धवटीमें र. खं को दाखिलकरना।

२४—अचलेश्वरमें नि.र, र त. (गन्धककल्पः), र. को., र म.मा., र र कौ., र क.ल. (एषु नरनारायणः), र र स. (नारायणरसः), इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

२५—अजीर्णकण्टक (२)में र शं (वातारिः), रसायनप को दाखिलकरना।

२६—अजीर्णकण्टक(३)कीटिप्पणीमें अधोलिखितको लेना।

"रसेन्द्रकल्पद्रुमे हुताशननाम्ना "पारदं गन्धकं टङ्कं विषं शुण्ठीञ्च पिप्पलीम्। समं त्रिषञ्च समभागं मरिचं मर्दयेद्दिनम्॥ निर्गुण्डिकारसैर्भाव्यं त्रिधा पर्ण्यनुपानतः॥" इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्राऽन्तर्भावः करणीयः। यद्यप्यापातदृष्ट्या द्वयोरन्तरं प्रतीयते एकत्र पारदगन्धकयोरन्यत्र च दरदस्याऽऽगमनात्। परन्तु सूक्ष्मदृष्ट्या दरदेऽप्युभयोः सत्त्वान्नाऽत्यन्तमन्तरम्। मरिचप्रमाणेऽधिकमन्तरं प्रतीयते तदैकान्तिकमभीष्टञ्चेदजीर्णकण्टके एव तदाधिक्यकरणेनाऽपि क्षत्यभावः। हुताशने निर्गुण्ड्यम्लपर्ण्योर्भावने दृश्येते परन्त्वन्तेऽम्लपर्ण्या एव भावना दत्ताऽस्ति, अजीर्णकण्टके च निम्बूकरसस्याऽस्ति परन्तु तत्र तीक्ष्णाम्लस्य सत्त्वान्निर्गुण्डिकाभावनाऽन्तराऽपि कार्यं सेत्स्यति। यदि च हुताशनोक्तभावनयोरप्यधिका प्रीतिश्चेत्पूर्वं तयोरप्यनुष्ठाने क्षत्यभाव इति बोध्यम्।

२७—अञ्जनभैरव (१)में र.का., र.सु.,टो, रसायनसं (भैरवाञ्जन) र.पा. इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

२८—अतिसारदलन (१)कीटिप्पणीमें नीचेलिखी रसपोट्टलीको ग्रन्थसहित दाखिलकरना।

"रसं वलिं विषं शुभं वराटकं समांशतः। विमर्दयेद्दिनं भृशं कृशानुमूलिकारसैः॥ क्षिपेच्च भाण्डसम्पुटे मृदा च सन्निरोधयेत्। क्षिपेत्तदूर्द्धभाजने मुहुर्मुहुर्जलं ततः॥ पचेच्च यामयुग्मकं शनैस्तु दीपवह्निना। सुशीतलं समुद्धरेदधःस्थिते तु पोट्टली। भवेत्तदोर्द्धभाजने रसस्य भस्म जायते। मरीचकैर्घृतप्लुतैर्ददीत पोट्टलीरसम्॥ विकारपित्तरोगिणे विधानतः सुवल्लकम्। करोति पुष्टिदीपनं गदव्रजं हरेत्सदा॥ रसेन्द्रभस्म वल्लकं नवेऽनवेऽथवा ज्वरे। नियोजयेच्च पिप्पलीमधुप्लुतं तु पैत्तिके॥ कणार्द्रशुण्ठिसंयुतं ददेत्कफानिलाधिके। ज्वरे ददीत यः कषायके निरूपितोऽस्ति ते। ददीत सन्निपातके कटुत्रयाऽऽर्द्रजीरकैः। र दी., र.शं. ज्वराधिकारे"

२९ अनङ्गवर्धकरसको हटादेना वह कामिनीमदविधूननमें गयाहै।

३०—अनलरसमें र मृ.को दाखिलकरना।

३१—अनीलरसमें र.चं, र.को., र दी., र.क., र र स, र क.ल. (एषु **पाण्डुशोषणः**) र. म मा. (**धनपङ्कशोषणः**), र.मृ (**अनलमूर्तिः**), रसायनसं, र.ल., र शं (एषु **मार्तण्डभैरवः**), र.सि., इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और "रसराजशङ्करे चित्रकस्थाने विजया नियोजिता" इसको टिप्पणीमें देना।

३२—अनिलारिरस (१) में र र, भै र., वृ यो त., र.-श्ला, चि क, ध. (एषु **जलोदरारिरसः**), र शं, र दी. (**जलारिः**), र. क. (**जलोदरहरः**) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

३३—अनिलारिरस (२) में र शं (**वातारिः**),र., र.मृ., इनग्रन्थोंको दाखिलकरना

३४—अपस्माराररिसमें र., रसायनसं इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"र., रसायनसं. एतयोरपस्मारारिरसस्य समीरपन्नगेति नाम स्थापितम्। तत्र न रसान्तरतेति बोध्यम्। तथा च रम्भातोयस्थाने उन्मत्तरसो गृहीत इति विशेषः। तत्र द्वयोरपि रसाभ्यां मर्दितश्चेदधिकतया गुणवृद्धिर्भविष्यति तस्मादुभाभ्यामेव मर्दनं विधेयमित्यस्माकं सम्मतिः।

३५—अपूर्वरसको वाडवरसमें लेजाना।

३६—अभिनवकामदेवरसमें र.मृ.को दाखिलकरके मदनोदयकीटिप्पणीमें लेजाना।

३७—अभ्रलोहयोगमें रसायनसं. को ग्रन्थोंमें और अधोलिखितको टिप्पणीमें दाखिलकरना।

"अभ्रस्थाने मृतसूतस्य नियोगो रसायनसङ्ग्रहे प्रमादात्सञ्जात इति विद्वद्भिराकलनीयम्।

३८—अमृतकलानिधिरसमें,सुतराज (प्रथम) और ग्रन्थोंमें र मृ.को दाखिलकरना।

३९—अमृतभल्लातकमें भै.र.को दाखिलकरना।

४०—अमृतमञ्जरीरसमें अधोलिखितटिप्पणीको दाखिलकरना और आनन्दभैरव (द्वितीय)को हटादेना।

"रसेन्द्रसारसङ्ग्रहे द्वितीयस्थाने व्योषमधिकतया नियोज्य आनन्दभैरवेति नाम्ना द्वितीयः पाठः स्थापितस्तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भूतत्वात्पाठान्तरं त्यजनीयम्।"

४१—अमृतमण्डूरकोहटाकर शतावरीमण्डूर (प्रथम) की टिप्पणीमें लेजाना।

४२—अमृतवटी (१)में र क.यो, वै.चि. (हुताशनरस)को दाखिलकरना।

४३—अमृतवटी (२)में यो.र., वृ.यो.त., र.कौ., र.क.-ल., र.चं, नि.र., रसायनसं., वै.र., यो. म, र सि., (एषु **दुर्जलजेतारसः**) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

४४—अमृतस्त्रवीरसमें र मृ.को दाखिलकरना।

४५—अमृतहरीतकीमें र.र.स. (पाण्डुहरीतकी)को दाखिल करना।

४६—अमृताङ्करसमें र.पा., (अमृताङ्कवटी)को दाखिलकरना।

४७—अमृतार्णव (२)में आ.प्र.को दाखिलकरना।

४८—अमृतार्णव (३)में र.क.ल, (ना.)को दाखिलकरना।

४९—अमृतार्णव(६)में र.कौ., र.क ल., वृ.यो.त, यो. त, रसायनसं., वै.र., र सु., वै.चि., यो र. (एषु पारदादिचूर्णम्), चि र.भ. (कासकुठार), र.कि. इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

५०—अमृतेश्वर(३)में रससं. (क्षुधासागर)को दाखिलकरना।

५१—अम्लपित्तान्तकरसमें रसायनसं.को दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"रसायनसङ्ग्रहे सूतार्कादियोग इति नाम स्थापितम्। तत्राऽभ्रकस्थानेऽर्कं नियोजितम्। तथा च "पटोलकटुकीमुण्डीसिताक्षौद्रैर्लिहेदनु" इत्यनुपानविशेषः

५२—अयस्कृति (२)में अ.सं (त्रिवृतादयस्कृति) तथा चि क को दाखिलकरना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें दाखिल करना त्रिवृतादयस्कृतिको मूलपाठोंमेंसे निकालदेना।

"चिकित्साकलिकायां एतन्निर्माणस्य क्लिष्टत्वं बुद्ध्वा स्वतन्त्रतया पाठोनिर्मितः परन्तु तस्या मूलमेवैव, एतदपेक्षया हीनगुणा चास्तीति सुधीभिः सम्यग्विभावनीयम्। तस्याश्च पाठो यथा—

"सतिल्वकविभीतकामलकसत्पलाशह्विनी,
पलाशतरुशिंशपाप्रभृतिभिः पृथक् प्रास्थिकैः।
त्रिवृत्स्थिरदारुकज्वलनमन्थपथ्यायुतै–,
रमीभिरुदकार्मणद्वितयपाचितैरेकशः॥
पुनस्त्वत्रोत्तीर्णे श्रृतचरणशेषौषधिजले,
पलाशद्रोण्यन्तः स्थितवति विनिर्वाप्य बहुशः।
ततस्तप्त्वा सम्यक् तरुणखादिराङ्गारनिकरै–,
रयःपिण्डं तस्मिन्नयसि च विलीने घनतमे॥
अयस्तुला गोमयपावकेन
संसाध्यते सिध्यति चात्र देयम्।
अयस्समं मागधिकादिवर्ग-
चूर्णं घृतं क्षौद्रमतो द्विभागम्॥
इत्यामयैरप्रतिवार्यवीर्या
सैषौषधायस्कृतिरुक्तमात्रा।
प्रयुक्तया प्रत्यहमायुषश्च
बुद्धेर्धियश्चापि भवेद्विवृद्धिः॥
न चानया स्थौल्यमपि प्रमेहः
क्षयश्च कुष्ठानि नृणां न सन्ति।
न पाण्डुता श्लीपदरुङ्न च स्या-
द्दूर्वीर्न च स्तम्भरुजः कदाचित्॥" इति

५३—अयोभस्मयोगमें भा प्र., वै चि., यो.म. (लोहानुपानम्) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

५४—अयोमोदकमें ग नि., र क, चि सा., च द (लोहादिमोदक) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

५५—अयोरज प्रभृतिचूर्णमें वृ मा.को दाखिलकरना।

५६—अर्कमूर्तिरस (३)में र मृ तथा अर्केश्वर (२) को दाखिलकरना।

५७—अर्धाङ्गवातारिरसको हटादेना वह कम्पवातहामें गयाहै।

५८—अर्शोऽरिरसमें र शं.को दाखिलकरना और नीचेलिखेकोटिप्पणीमें देना।

"गुडूच्चिकाशाल्मलिकारसेन बोलेन पित्तप्रभवे प्रदद्यात्। वातारितैलेन कटुत्रयेण वातोद्भवे चात्र मरीचियुक्तम्॥ श्लेष्मोद्भवे वह्निगुडार्द्रमिश्रं त्रिदोषजे मागधिकाघृतेन। हरीतकीशुण्ठिगुडोऽस्तु यद्वा फलत्रयेणाऽऽज्यमधुप्रयुक्तम्॥" इति रसराजशङ्करे विशेषोऽस्ति। भावनायां वसुस्थाने चित्रकोऽस्ति नाम च रसेन्द्ररस इति स्थापितम्।

५९—अर्शोहर (२)में नि.र., वै क., र सु, वै चि, र को. (एषु शिवरस) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और शुद्धाभ्रके स्थानमें शुल्वाभ्र पाठकरना।

६०—अर्श कुठाररस २,४,५ और वज्रकुठार इनरसोंकेद्रव्य प्राय समानहैं थोडा थोडा भेदकरके अल्पपाठकियेहैं इसलिये सबका एकपाठ्यनादेनाचाहिये।

६१—अर्शःकुठार (५)में र पा.को दाखिलकरना।

६२—अश्वकञ्चुकी(४)में रसायनप. र.र.कौ , यो.त ,र पा. इनग्रन्थोंको दाखिल करना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें लेना।

"रसं गन्धं तथा व्योपं टङ्कणं मरिचन्तथा। हरितालं विषश्चैव शाणमात्रं पृथक् पृथक्॥ दन्तीवीजं चतुःशाणं खल्वे चैतानि निक्षिपेत्।" इत्याकारको रसकौमुद्यां पाठोऽस्ति तत्र त्रिफलाऽभावः, दन्तीवीजं चतुःशाणं नियोज्य निम्बुद्रवेण भावना दत्त्वा नाम च नृसिंह इति स्थापितम्। तस्याऽप्यश्वकञ्चुक्यामेवान्तर्भावः। रसपारिजाते द्वितीयस्थाने चित्रकमधिकतया विन्यस्य भानुरेचनमिति नाम स्थापितम्।

६३—अश्वगन्धापाक (२)में रसायनसं को दाखिलकरना।

६४—अश्वगन्धाऽभ्रक (२)में र (मा)को दाखिलकरना।

६५—अष्टमूर्ति (१)में र शि (सन्निपातभैरव)को दाखिलकरना (

६६—अष्टयामिकवटी में र.क यो (ज्वरगजकेसरी) को दाखिलकरना।

६७—अहिवधरस में भै सा., र म.मा. (नागवध)को दाखिलकरना और नागवधके पाठको तवर्गमेंसे निकालदेना।

६८—आगन्तुज्वरहरकेपाठको हटाकर ज्वरहर (८८)में लेजाना और रसेन्द्रमं.को दाखिलकरना।

६९—आज्ञासिद्धरसायनमें र.मु , र.र स., र वो इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

७०—आनन्दभैरवरस (३)में र पा., र वो इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"रसपारिजाते निम्बूकरसेन त्रिदिनं विमृद्यैकः पाठः कृतः, जातीफलकारवेल्लश्रृङ्गवेररसैर्विभाव्य द्वितीयः पाठः प्रकल्पितः, सकलामयघ्नत्वेन गुणश्च प्रदर्शित इतिविशेषः।

७१—आनन्दभैरवरस (११)मेंरसायनप. को दाखिलकरना।

७२—आनन्दभैरवीवटी(१)की टिप्पणीमें "भैषज्यरत्नावल्यां रसराजसुन्दरे च सन्निपातसूर्येति नाम स्थापयित्वा टङ्कणं निष्कास्य त्रिदिनपर्यन्तभावनां दत्त्वा निष्पादितः।" इसको दाखिलकरना।

७३—आनन्दभैरवीवटी (२) में र र , र.क.यो र को, र.सु., र चि., र का , (एषु सन्निपातभैरव) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और "मृतताम्रं सटङ्कणम्" के स्थानमें "मृतताम्राऽभ्रटङ्कणम्" ऐसापाठकरना तथा "कुत्रचिदभ्रकराहित्यमस्ति" इसे टिप्पणीमें देना।

७४—आनन्दरस (१) में आ.प्र. (आनन्दसूत) को दाखिलकरना।

७५—आनन्दरस (२) में रसायनप. को दाखिलकरना।

७६—आनन्दोदयरसमें र सं., र.सु., ध., नि.र., र चि., (एषुलब्धानन्दः) र.क. (आनन्दभैरव) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और आनन्दभैरव (७) को मूलपाठोंमेंसे हटादेना।

७७—आमलक्यादिलोहमें भै.र. (रक्तपित्तान्तकलोह)को दाखिलकरना।

७८—आमवातगजकेसरी (१)कीटिप्पणीमें "भैषज्यरत्नावल्यामस्मिन्नेवाऽधिकारे विडङ्गादिलोहमिति नाम्ना द्वितीयो योगो लिखितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः।

७९—आमवातविध्वंसनमें र.दी, र-चं., र चि, चि.सा, रसायनसं. [वातविध्वंसन] र.कौ., र शं., यो.म., र.सि, र.का., (पवननाशन) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

८०—आमवातारिवटी (२) में र.क.ल, भा.प्र, वै.र., र.र.कौ., र.को. र.चं, नि र, र.र स., टो., रसायनसं., र.कौ., र प्र., र र.दी., चि र भ, व रा, र. (मा.), वै चि., (एषु वातारिरस), वा (वातारिगुग्गुलु) इनग्रन्थोंको दाखिल करना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"वैद्यचिन्तामणौ वसवराजीये च "पुन्नागं वृहतीयुग्मं देवदारुशुचूर्णकम्। एतत्पूर्वौषधसमं मर्दयेद्यामभात्रकम्॥" इति पाठोऽधिकोऽस्ति।"

८१—इच्छाभेदी (४) में र.कि., यो,चि, र.वो., र मृ इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और "योगचिन्तामणौ मरिचाऽभाव" इसको टिप्पणीमें देना।

८२—इच्छाभेदी (५) में र र कौ. को दाखिलकरना।

८३—इन्द्रोक्तरसायनमें रसायनम् को दाखिलकरना।

८४—उड्डामररसमें र.र.स, र र कौ (दीप्तामर), वै.चि., व.रा. (दण्डामर) नि.र., र र.दी., र का., टो, वै.चि. इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और उड्डामाख्यरसको निकालदेना और उसमें दीहुई टिप्पणीको टिप्पणीमें देना।

८५—उदकमञ्जरीरस (१) में चि क्र.को दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"भूयो भूयो भावयेत्तत्त्रिरात्रं" इत्यस्याग्रे "भाव्यः सम्यक् कुष्ठमुण्डी विशालासेहुण्डाग्निब्राह्मिनिर्गुण्डिनीरैः" इत्यधिकः पाठो हस्तलिखितप्रतिषु दृश्यते।

८६—उदयकुष्ठघ्नको निकालदेना वह सूर्यकान्तमें गया है।

८७—उदयभास्कर (२) में र.वों को दाखिलकरना।

८८—उदयभास्कर (४) में र पा को दाखिलकरना।

८९—उदयभास्कर (५) में र मृ को दाखिलकरना।

९०—उदयभास्कर (८) में यो चि को दाखिलकरना।

९१—उदयभास्कर (१०) को निकालदेना वह रसवरकी टिप्पणीमें गया है वहापर र.मृ.को दाखिलकरना।

९२—उदयमार्तण्ड (१) में र वो.को दाखिलकरना।

९३—उदयमार्तण्ड (२) को निकालदेना वह सूर्यप्रभाताम्रेश्वरकी टिप्पणीमें है।

९४—उदयादित्य (३) को निकालदेना वह रविताण्डवकी टिप्पणीमें है।

९५—उदरारिरस (१) में अधोलिखितटिप्पणीको ग्रन्थसहित दाखिलकरना।

"र.सं., ध., भै. र., र.सु., र.चि. एषु ग्रन्थेषु पञ्चाननरस इतिनाम। र.म.मा. (गुल्मगजारातीरसः), र.र.स. (रक्तोदरकुठारः), र.र.कौ. गुल्मघ्न इतिनाम। रसरत्नाकरे गन्धकमधिकतया निक्षिप्य वज्ररस इति नाम स्थापितम्। रसायनसङ्ग्रहे द्विक्षारमभयाञ्चाऽधिकतया निक्षिप्य पारदादिवटीति नाम प्रदत्तमस्ति।

९६—उदरारि (४)को निकालदेना वह सर्वेश्वर (८) की टिप्पणीमें गया है।

९७—उदरारि (७) में वृ.यो त., र कौ (गुल्मारिः), नि र., वै चि., र.का, र.र दी (गुल्मगजाराति), टो. (कुक्ष्युदरारि), रसायनसं (भैरवरसः) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना

९८—उन्मत्तरसमें र पा को दाखिलकरना।

९९—उपदंशघ्नलेप (२)में सुश्रुतको दाखिलकरना और सुश्रुतके पाठको मूलपाठ रखना तथा अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"गुन्द्रा तृणविशेषो दर्भवत्सूक्ष्मशलाकारूपः यत्प्रायो गङ्गायमुनातटे बाहुल्येन लभ्यते। तत्रत्यजना यद्रज्वादिकं निर्माय खट्वाद्याच्छादनं कुर्वन्ति अथवा गृहाद्याच्छादनबन्धनानि कुर्वन्ति तं तृणविशेषं वर्तमानसमये 'वगई' अथवा 'वागेर' इति नाम्ना व्यवहरन्ति। दर्भसजातीयमिदं तृणम्। तद्दग्ध्वा तदीयभस्म प्रयोज्यम्। रसकल्पलतायान्तु गुन्द्रास्थाने गुञ्जेति पाठ उपलभ्यते सः गुन्द्राशब्दस्याऽर्थाऽज्ञानात्तस्थाने कृतोऽस्ति अथवा प्राचीनसुश्रुतीयपुस्तकेषु गुञ्जाया एव विद्यमानतामुपलभ्य तथा कृतोऽस्तीति निश्चयेन वक्तुं न शक्नुमः। परन्तु गुञ्जाया विषघ्नत्वाद्रोपणात्वाजन्तुघ्नत्वाच्च योगः सम्यगेवाऽस्तीति वक्तुं युज्यत एव।

१००—उपदशहरयोगमें र.को, ध., भा प्र, भै.र (सप्तशाणीवटी) को दाखिलकरना।

१०१—उपदशहरीवटीको निकालदेना वह सूतादिवटीमें गई है।

१०२—उमाप्रसादनरसमें र.पा. को दाखिलकरना।

१०३—उमामाहेश्वरमें व. रा को ग्रन्थोंमें दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"संशुद्धं पारदञ्चाभ्रमित्यस्यस्थाने शुद्धं सूतं विषञ्चाभ्रमिति पाठः करणीयः । वैद्यचिन्तामणौ द्वितीयस्थाने तमेव पित्तभावनारहितं पाठं मदनपित्ते उद्धृत्य तस्य रामवाणेति नाम स्थापनात्स रामवाणोऽप्यत्रैवान्तर्भावनीयः केवलं तत्र पित्तैर्भावना न दातव्या, स च मदनजनितपित्तप्रकोपे दातव्य इति विशेषः"

१०४—उमाशम्भुकी टिप्पणीमें अधोलिखितको ग्रन्थसहित दाखिलकरना ।

"र.ल., र.पा., एतयोः क्षीरसमुद्र इति नाम । शक्तिवल्लभविरचितायां रसकौमुद्यां क्षीरार्णव इति नाम स्थापितमस्ति ।

१०५—एकसूतेश्वररसमें र शं को दाखिलकरना और "रसराजशङ्करे भृङ्गवह्निवालकानां भावनाऽधिकतया दृश्यते" इसको टिप्पणीमें देना.

१०६—एकाङ्गवीररसमें र पा को दाखिलकरना ।

अथ कवर्गीयरसोंकी विशेषसूचनाएं

१०७—कज्जलीयोगमें अधोलिखितपाठको दाखिलकरना

"पारदं गन्धकं तुल्यं लवङ्गैर्मर्दयेद् दृढम् । याममात्रं पुटे पाच्यं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ गुञ्जाद्वयं प्रदातव्यं रसो वान्तीभकेसरी । लवङ्गस्यानुपानेन छर्दिं हन्ति न संशयः ॥ र.म.मा., ना.वि. वमनाधिकारे ॥'

इसकेसिवाय अग्निसन्दीपनरस (१), उपदंशेभसिंह, कज्जलीरस, कृम्यङ्कुश, गन्धर्वाख्य, गन्धाश्मगर्भ, त्रैलोक्यसुन्दर (३) पाषाणभेदी (२–३), पाषाणवज्र (१–२), महाकल्प, श्लीपदध्वंसी (२), श्वित्रेभसिंहप्रभृति केवलकज्जलीकेयोगोंको श्री.कज्जलीयोग नामसे दाखिलकरना ।

१०८—कनकसुन्दर (१) में र. चं. (रोगहर) को दाखिल करना ।

१०९—कनकसुन्दर (५) में र पा , र कि , वै जी , अगस्त्य इनग्रन्थोंको दाखिल करना और "अगस्त्यप्रोक्तवैद्यकशास्त्रे पिप्पलीरहितोऽयं पाठो ग्रहणीकपाटनाम्ना निहितोऽस्ति ।" इसको टिप्पणीमें देना ।

११०—कन्दर्पसुन्दरमें रसायनस , र क ल (ना) को दाखिलकरना और "नारायणविरचितरसकल्पलतायां सिताभ्रकमित्यस्यस्थाने शिलाऽभ्रकमिति पाठः ।" इसको टिप्पणीमें देना ।

१११—कपर्दपोट्टलीमें र मृ (विश्वेश्वररस), र. (मा) पोट्टलीसूतको दाखिलकरना ।

११२—कफकुठार (३) को रसवरमें लेजाना ।

११३—कम्पवातारिमें वै चि , व रा. (विजयभैरव) को दाखिलकरना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें लेना

"अस्यैव पाठस्य वैद्यचिन्तामणिवसवराजीययोः कटुकीस्थाने कण्टकारिभावनां प्रदाय विजयभैरवेति नाम स्थापितम् । अग्निवाते वीरभद्रेति च नाम दत्तमस्ति तत्र कटुकीस्थाने गोकण्टभावना प्रदत्ताऽस्ति।

११४—कर्पूररस (५) की टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको दाखिलकरना.

"कस्तूरीहिमकर्णकुङ्कुमसुधा जातीफलं हाटकं, चाब्धेःशोपजहेमबीजविजया यष्टी जयन्ती विषा । प्रत्येकं वल्लमात्रं मधुघृतसितया लेह्यमानं दिनान्ते, किञ्चिन्मूर्च्छाप्रपन्नो भजति हि पयो भक्षयेच्चेक्षुदण्डम् ॥ स्त्रीणां गर्वाधिकत्वं शमयति सकलं वीर्यपातो न जातु, लिङ्गोत्थानं भवति च कठिनं योनिभङ्गं करोति॥" इति टोडरानन्देऽनुपाने विशेषा दृश्यते । यत्राऽस्योपयोगोऽभीष्टस्तत्राऽनुष्ठानं करणीयमतः स्वतन्त्रपाठे भ्रमो न करणीयोऽनुपानानामनियतत्वात

११५—कर्पूररस (७) में र.वो को दाखिलकरना ।

११६—कर्पूररस (११) में आ प्र. (सुधानिधिरस) को दाखिल करना ।

११७—कर्पूररस (१३) में र.पा को दाखिलकरना ।

११८—कर्पूररस (२७) में यो म.को दाखिलकरना ।

११९—कल्पपादपरसमें रसचि को ग्रन्थोंमें दाखिलकरना और मूलपाठमें "धुत्तूरस्य रसस्यापि भृङ्गराजस्यभावनाः" इसके आगे "बीजपूररसस्यापि तिस्रो देयाश्च भावनाः । आर्द्रकस्यरसे घृष्ट्वा पुटेद्गजपुटेन च ॥ स्वाङ्गशीतलतां प्राप्तं पुनस्सम्मर्द्य सम्पुटेत् । नववारान्विधायैवं तत्समं सूततीक्ष्णजम् ॥ निक्षिप्य मर्दयेत्खल्वे सञ्जातोऽयं महारसः ॥" इतना पाठ अधिक दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना.

"रसचिन्तामणौ अस्य रसस्य 'विंशभागमितं ताम्र-मित्यारभ्य 'वान्तिर्भ्रान्तिर्न विद्यते, इत्यन्तस्य ताम्रयोग इति नाम स्थापितम् । अस्मादग्रस्थभागस्य देवभूतिरस इति नाम स्थापितम् ।

१२०—कल्पवृक्षरसमें र वो को दाखिलकरना ।

१२१—कलायवटीमें च द.को दाखिलकरना ।

१२२—कान्तरसमें र शं को दाखिलकरना और "रसराजशङ्करे सिन्दूरपार्वत नाम्नाऽथवा कान्तवद्धनाम्नाऽयमेवपाठो निहितोऽस्ति सः कान्तरसान्नातिरिच्यते ।" इसको टिप्पणीमें देना ।

१२३—कामदरसमें र प्र सु., र च., स्त्री वि., इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

"र.प्र.सु., र.चं., एतयोः "हंसपादकरभश्च जारणम्" इत्यस्यस्थाने "वलिवसाप्यथ चाभ्रभस्मकम्" इति पाठं कृत्वा प्रमेहजित्प्रमेहाङ्कुशेति वा नाम स्थापितम् । स्त्रीविलासे वीर्यस्तम्भनवटीति नाम ।

१२४—कामदेवरस (४)में यो चि.को दाखिलकरना।

१२५—कामदेवरस (५) में र.पा.को दाखिलकरना।

१२६—कामदेवरस (८) में र पा को दाखिलकरना।

१२७—कामदेवरस(९)में र र.स., र.को ,(मन्मथरस) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"रसरत्नसमुच्चये रसेन्द्ररत्नकोशे च मन्मथरस- इति नाम दत्तम्, तत्र "मर्द्य श्वेतहयारिरक्तदहनैस्तालीरसैः सप्तधा" इत्यस्य स्थाने "रक्तचित्रकवाराही पत्रनिर्यासपेषित—"मिति पाठो भिन्नतया दृश्यते। परन्त्वेतावता विशेषेण तत्पृथक्तया पाठो ग्रहीतुमयोग्यः। वाराह्या अपि तत्र भावनादाने न काऽपि क्षतिः। कामदेवो मन्मथश्चेत्युभौ पर्यायवाचकौ, तद्दिशि लक्ष्यमदत्त्वा र.को., र.र.स. एतयोः पृथक् पाठो निवेशित इति सुधीभिराकलनीयम्।

१२८—कामदेवेशरसमें वै.वि (मदनकामेश्वर)को दाखिलकरना।

१२९—कामधेनुरस (२) की टिप्पणीमें नीचे लिखेहुएकोलेना।

"भैषज्यरत्नावल्यां अमृतार्णवनाम्नाऽयमेव रसो निहितोऽस्ति तत्र व्योषाऽभावः, भावनायाश्च त्रिफलास्थाने चित्रकं नियोजितमिति विशेषः प्रतीयते परन्तु सोऽकिञ्चित्करः व्योषयुक्तस्यैव गुणाधिक्यात्। भावनाद्वयस्याऽप्यनुष्ठाने सर्वं समञ्जसमेव स्यात्।

१३०—कामनायकमें र मृ., र.र.स., र.को. इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"र.र.स.,र.को., अनयोर्मदनोन्मत्तनाम्नैको रसोऽस्ति तेन साकमस्य बहुधा साम्यमस्ति। अत्रद्वयोर्मिश्रणं कृत्वा वालुकायन्त्रे पाको विहितस्तत्र तु यथास्थितमेव प्रयुक्तमिति विशेषो दृश्यते। रसामृते मदनकामेश्वरेति नाम।

१३१—कामवाणरसमें रसायनप. को दाखिलकरना।

१३२—कामविलासिनीवटीमें रसायनसं.(मदनविलास)को दाखिलकरना।

१३३—कामसुन्दरीगुटीको हेमवद्धगुटिकाकी टिप्पणीमें दाखिलकरना और र.का (स्वर्णसुन्दरी)को दाखिलकरना।

१३४—कामिनीमदविध्वननमें ग्रन्थसहित अधोलिखित टिप्पणीको दाखिलकरना।

"रसचि., र.सु , रससं., र.क.ल., वै.जी., र.वो., एषु विलासिनीवल्लभेतिनाम। र.सं.क., रसायनसं. एतयोर्मानिनीमानमर्दनेति नाम। र.पा., र.क.ल., एतयोः कामिनीमदविध्वननेतिनाम। रसावतारे प्रमेहमर्दनेतिनाम। चिकित्सारत्नाभरणे धूर्ततैलस्थाने भुजङ्गभृङ्गनीराभ्यां भावना प्रदत्ता नाम च प्रमेहारीति। द्वितीयस्थाने अनङ्गवर्धकनाम्नाऽयमेव रसो निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः।

१३५—कामेश्वरमोदक (१, ३) में र.क. ल. (ना.) को दाखिलकरना।

१३६—कामेश्वररस (२)में र पा. को दाखिलकरना।

१३७—कालकण्टक(२)में र.सं , ध , र.सु. (वातकण्टक) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

१३८—कालवज्रकमें नि र, वै.चि (नागेश्वररस) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

१३९—कालवज्राशनिरसमें र.पा. (विषारि) को दाखिलकरना।

१४०—कार्श्यहरलौहमें र.र. (श्वेतादिलोह)को दाखिलकरना।

१४१—कासकर्तरीरसको निकालदेना वह चन्द्रामृत (३) में गयाहै और "वसवराजीये प्रमादादयमेव पाठः कासकर्तरीति नाम्ना द्वितीयस्थाने निहितोऽस्ति" इसको टिप्पणीमें देना।

१४२—कासकेसरीरसको निकालदेना और उसकेग्रन्थोंको नारायणरसमें दाखिलकरना।

१४३—कासाङ्कुश (२)में वै.र को दाखिलकरना।

१४४—कासीसवद्धरसको हटादेना वह श्वित्रारिकी टिप्पणीमें गयाहै।

१४५—किन्नरकण्ठरसमें भै र.को दाखिलकरना।

१४६—कितादिमण्डूरकी टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना।

"चि.र., वै. क., र.सु., यो.म, वै.चि., एषुग्रन्थेषु लोहामृतनाम्नाऽयमेव योगो निहितोऽस्ति। सङ्गृह्य मृतलोहस्य पलान्यष्टादशानि चेत्यत्र कर्षस्थाने पलं सञ्जातमस्ति तदज्ञानादेवाऽस्ति, मध्वाज्याभ्यां लिहेत्कर्षमिति वदतोव्याघातवदुपस्थितेः, तस्मादेक एव योगोऽस्ति निघण्टुरत्नाकरे द्वितीयस्थानेऽयमेव पाठो भूनिम्बादिवटीति नाम्ना निहितोऽस्ति परन्तु पाठान्तरता नास्त्येव समानवस्तुघटितत्वात्।

१४७—कीटारिरसमें कृमिहर (१)को ग्रन्थसहित दाखिलकरना।

१४८—कुमुदेश्वर (२)को हटाकर मृगाङ्क (१)में दाखिलकरना।

१४९—कुमुदेश्वर (४)में र म. मा., र.पा.को दाखिलकरना।

१५०—कुष्ठकुठाररस (१)में रसायनप.को दाखिलकरना।

१५१—कुष्ठहरलेप (१, २) में र.पा.को दाखिलकरना।

१५२—कुसुमायुधमें र को. (वीर्यमहोदधि)को दाखिलकरना।

१५३—कूष्माण्डपाक (२)में रसायनसं को दाखिलकरना ।

१५४—कृमिद्रुमकुठारमें र वो को दाखिलकरना ।

१५५—कृमिघातिनीगुटिकामें र.शं., यो.सं., र मू , इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और कृमिकुठार (३)का इसमें अन्तर्भावकरना ।

१५६—कृष्णमाणिक्यरस (रसेन्द्रमङ्गलोक्त)को प्रथम कृष्णमाणिक्यमेंसे हटाकर द्वितीयमें दाखिलकरना और कुष्ठाऽधिकार देना ।

१५७—कृष्णाद्यंलोहमूमें ग नि., ना वि को दाखिलकरना ।

१५८—कोलादिमण्डूरमें ग नि.को दाखिलकरना ।

१५९—क्रव्यादरस (१)में र.वो., रसायनप., र.पा.को दाखिलकरना ।

१६०—खदिरादिवटी (लोकनाथपोट्टली (प्रथम)की टिप्पणीमेंहै)को मूलपाठोंमें दाखिलकरना और र., भै र., को ग्रन्थोंमें दाखिलकरना ।

१६१—खमर्पणवटीको हटादेना वह बालरोगान्तकमें गईहै ।

१६२—खेचरीगुटी (१)में र का , (वीर्यरोधिनी), र.ज्ञा. (रसगुटिका)को दाखिलकरना ।

१६३—गगनसुन्दर (१)के स्थानमें अधोलिखित पाठको टिप्पणीसहित रखना ।

"शुद्धौपारदगन्धौ च टङ्कणं चाभ्रभस्मकम् ।
एतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ॥
भद्रमुस्तकषायेण मर्दयेत्त्रिदिनं तथा ।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य पुटमेकन्तुभूधरम् ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य वल्लमात्रं प्रदापयेत् ।
मूर्च्छापित्तविनाशाय सर्वपित्तनिवारणम् ॥

व रा., भै.र , र.सु पित्तरोगे ।

टि०—वसवराजीये मूर्च्छापैत्याङ्कुशेतिनाम । भैषज्यरत्नावली रसराजसुन्दरयोर्ज्वरातिसारे टङ्कणदरदगन्धकाभ्रैर्दुग्धिकारसमर्दनेनाऽय निष्पादित । श्वेतसर्जरसेन ज्वरातिसारयोश्च प्रयुक्त. सोऽस्यैव पाठस्य प्रपञ्चोऽस्ति पाकेनाऽधिकशक्त्युदयात् । दुग्धिकाभावना त्वत्राऽप्यनुष्ठेया ।

१६४—गगनसुन्दर (२)की टिप्पणीमें अधोलिखितको ग्रन्थसहित दाखिलकरना ।

"र चं , र.सु , नि र , वै चि ,यो.म.,एषु पुस्तकेषु सूतराजेतिनाम । द्वितीयत्रिनेत्रेऽपीमान्येव वस्तूनि सन्ति परन्तु भागवृद्धिवैचित्र्यान्न तस्याऽत्रान्तर्भाव इति सुधीभिरविस्मरणीयम् ।

१६५—गगनायसचूर्णमें यो चि को दाखिलकरना ।

१६६—गन्धककल्प (१) में आ प्र., र क ल. को दाखिलकरना ।

१६७—गन्धककल्प (२,६,१९,२१,२३) इनमें आ.प्र. को दाखिलकरना

१६८—गन्धककल्प (१२) में यो म.को दाखिलकरना.

१६९—गन्धकद्रुति (१)में आ.प्र को दाखिलकरना ।

१७०—गन्धकयोग (४) की टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको लेना ।

"भैषज्यरत्नावल्यां रसराजसुन्दरे च द्वितीयस्थाने आमलकानि निष्कास्य शाल्मलीत्वचं निवेश्य हरशशाङ्करसेति नामान्तरं दत्तम् । परन्त्वत्रैव शाल्मलीत्वक्चूर्णस्य प्रक्षेपमधिकतया निवेश्य रसनिष्पादने न कापि हानिः प्रत्युत गुणवृद्धिरेव भविष्यति योगसङ्कोचश्च महत्फलम् ।

१७१—गन्धकरसायन (१)में आ प्र.को दाखिलकरना ।

१७२—गन्धकरसायन (७)में व.रा , वै चि को दाखिलकरना और नीचे लिखेहुएको टिप्पणीमें देना ।

"वसवराजीयवैद्यचिन्तामण्योर्वडवानलनाम्ना एको रसो निहितोऽस्ति तत्र टङ्कणं नागरं कुष्ठञ्च सप्तमांशकमधिकतया निक्षिप्तं तदत्र नियुज्यैक एव रसो निष्पादनीयः । अयोभस्मापगमनन्तु प्रमादविलसितमेव प्रतीयते इति विद्वद्भिराकलनीयम् ।"

१७३—गन्धकलोहमें आ प्र., र क ल को दाखिलकरना ।

१७४—गन्धकवटी (९)में नि.र.को दाखिलकरना ।

१७५—गन्धामृत (१)में आ प्र.को दाखिल करना.

१७६—गरनाशनरसमें वै.चि. (भीमरुद्र)को दाखिलकरना इसमें रसायनाधिकारमें आयाहै ।

१७७—गर्भपाल (१)में र.का. (रघुनाथरस) को दाखिलकरना ।

१७८—गान्धारीवटीमें र का.को दाखिलकरना ।

१७९—गुडूच्यादिमोदकमें र पा को दाखिलकरना ।

१८०—गुडमण्डूर(१)में ग.नि (त्रिफलालोह) को दाखिलकरना ।

१८१—गुडमण्डूर (२)में ग.नि. (गुडायागुटी), च.सं., अ.ह इनग्रन्थोंको दाखिलकरना ।

१८२—गुल्मकुठार [१] में रसायनप. को दाखिलकरना ।

१८३—गुल्महर (१)में र.क , र.मृ. (रसवटी) को दाखिलकरना ।

१८४—गोमूत्रमण्डूर (२) को निकालदेना वह मण्डूरयोग (७)में गयाहै ।

१८५—गोमूत्रमण्डूर (३)में भै.र, (शोथारिमण्डूर) को दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

"भैषज्यरत्नावल्यां गोमूत्रमण्डूरमेव शोथारिमण्डूरनाम्ना स्वकृतित्वद्योतनाय प्रख्यापितम् । तत्र सुरभीशब्दस्य निर्गुण्ड्यर्थं मत्वा सुरभीस्थाने निर्गुण्डीपदं न्यस्तम् । पुनर्नवादिमण्डूरवत् गोमूत्रमण्डूरे तु मण्डूरस्य विशेषप्रमाणस्याऽनिर्देशात् योगे प्रथमागतत्वेनाऽन्यचूर्णसमं मण्डूरमस्माभिः प्रक्षेपणीय-

मिति टीकायां कथितम् । त्रिफलाकटुचव्यानामित्यत्र मूलपाठे कटुशब्देन किङ्ग्रहीतव्यमिति संशय्य त्रिकटुनियोजितः। अस्माभिस्तु कटुशब्देन कटुकी गृहीता शोथरोगे तस्या अधिककार्यकरत्वादिति बोध्यम् ।"

१८६—गोमेदकरसायनकी टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको दाखिलकरना।

"क्रामणं रसराजस्य वेधकाले प्रदापयेत्। क्रामणं यो न जानाति श्रमस्तस्य निरर्थकः॥ रसा० १७।१६॥ अभ्रं वा द्रव्यं वा यथानुपानेन धातुषु क्रमते। एवं क्रामणयोगाद्रसराजो विशति लोहेषु॥ र.हृ० १७।२" इत्यादिवाक्यै र्लोहे देहे च क्रामणयोगैर्विना उग्ररसा नैव क्रामन्ति, इति विचार्य "क्रामणं पादपादेन" इत्युक्तमस्ति। तत्राऽपि क्रामणानि कानिकानि द्रव्याणि भवन्तीत्यपेक्षायां "अलम्बुषाऽयस्कान्तस्य तालकस्य च भक्षणात्। देहे क्रामति सूतेन्द्रो नाऽत्र कार्या विचारणा॥ रसार्णव प० १८।११४॥ "अरिवर्गहतौ वङ्गनागौ द्वौ क्रामणं परम्॥ रसा० प० १७।१४" "इन्द्रगोपो विषं कान्तं दरदं रुधिरं तथा। रसकं तिलतैलञ्च क्रामणं क्षेपलेपयोः॥ रसा० प० १७।७" "शिलया निहतो नागो वङ्गं वा तालकेन शुद्धेन। क्रमशः पीते शुक्ले क्रामणमेतत्समुद्दिष्टम्॥ तीक्ष्णं दरदेन हतं शुल्वं वा ताप्यमारितं विधिना। क्रामणमेतत्कथितं कान्तमुखं माक्षिकैर्वाऽपि॥ माक्षिकसत्त्वं नागं विहाय न क्रामणं किमप्यस्ति। दलसिद्धे रससिद्धे विधावसौ भवति खलु सफलः॥ र.हृ० १७।६,७,८" इत्यादिभिरनेकानि द्रव्याणि क्रामणानि रसग्रन्थेषु निर्दिष्टानि तेषु शरीरौचित्याऽत्र नागवङ्गविषदरदताम्रमाक्षिकसत्त्वस्वर्णगैरिकाणि गृहीतानि सन्तीति विद्वद्भिराकलनीयम्॥"

१८७—ग्रहणीकपाट (५)में रसायनप. को दाखिलकरना।

१८८—ग्रहणीकपाट (१३)में र मृ को दाखिलकरना।

१८९—ग्रहणीकपाट (१९)में र.चं., र सु इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"रसेन्द्रसारसंग्रहे द्वितीयस्थाने भैरवरसनाम्ना कर्णरोगाऽधिकारे एकः पाठो निहितोऽस्ति तत्र त्रिकटुस्थाने केवलं मरिचं नियोजितम्। भावनायां जम्बीरस्थाने आर्द्रकं नियुक्तं तत्र न रसान्तरता भावनाद्वयसत्त्वेऽपि क्षत्यभावात्। मागधीशुण्ठयोर्योगेनापि प्रत्यवायाऽभावात्।

१९०—ग्रहणीमदवारणसिंहमें र.पा. (ग्रहणीकपाट) को दाखिलकरना।

१९१—ग्रहणीहररस (३)में र.कौ., र क ल, इनको दाखिल करना और "मुशलीं पेषयेत्तक्रैरथवा तण्डुलोदकैः। कर्षैकं पाययेच्चानु पथ्यं तक्रौदनं हितम्॥ द्वे निशे च वचा कुष्ठं मुस्तं कटुकरोहिणी। छागमूत्रैः समं पिष्टं रुद्ध्वा गजपुटैः पचेत्॥ कर्षमात्रं पिबेत्तक्रैरग्निदीपनमुत्तमम्॥"इतना पाठ अधिक दाखिलकरना। रसकामधेनुकापाठ अधूराहै दूसरेग्रन्थोंमें शम्बूकाक्ष नामहै।

चवर्गीयरसोंकी विशेषसूचनाएं

१९२—चक्रधररसकी टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना

"रसदीपिकायां वातोदरहरनाम्ना "ताम्रस्यपत्रेण निबद्धयसूतं गन्धेन तुल्येन विषेणयुक्तम्। विमर्दयेद्वह्निविडङ्गकृष्णाऽजाजीगुडूचीसुरसाद्रवेण॥ क्षारत्रयञ्चैलवणानि पञ्च सूतेन तुल्यानि च योजयित्वा। जम्बीरनिम्बोत्थरसेन वाऽपि विमर्दयेद्याममतः क्षिपेत। लोहस्यपात्रेऽथ कृशानुनीरैः संस्वेदयेत्तं घटिकाद्वयञ्च। गुञ्जाद्वयञ्चास्य ददीतशुण्ठी घृतेन युक्तं त्वथवाऽऽर्द्रकेण॥ विरेचने तज्जयपालमिश्रमुष्णञ्च साज्यं परिभोजयेत॥" इति पाठोऽस्ति। रसावतारे च वातोदरारण्यकृशानुमेघ इति नाम्ना "सूतगन्धकविषंविमर्दयेद्वह्निनीरसहितं दिनमेकम्। ताम्रपात्रकुहरं परिलिप्य वालुकान्तरगतन्तु पुटेत॥ कृष्णाग्निवेल्लाः सुरसागुडूचीशुक्ताम्बुभिर्भावय सप्तवारम्। क्षारत्रयं वै लवणानि पञ्च सर्वेण तुल्यं परिमर्दनीयम्॥ जम्बीरनीरेण दिनं विमर्द्य संस्वेदयेल्लोहमये च पात्रे। वातोदरारण्यकृशानुमेघः शुण्ठीघृताभ्यां मधुना च वल्लः॥ कम्पिल्लकमधुयुक्तः स्नुग्रसमधुनाऽपि वा शिवामधुना। वातोदरिणां हितकृद् द्रवलघु सुस्निग्धभोजिनां सततम्॥" इति पाठो निहितोऽस्ति। अनयोश्चक्रधरे एव समावेशः करणीयः। अस्यैव प्रपञ्चभूतावेतौ। यद्यपि छित्रभावनासु स्थूलदृष्ट्या विशिष्टः प्रतिभाति परन्तु योगत्रयघटितभावनानामेकत्राऽनुष्ठानेऽपि क्षत्यभावोऽस्ति विशेषगुणोदयश्च भविष्यति। रसावतारीय पाठे कल्कस्य ताम्रपात्रकुहरलेपनेन वालुकासु पुटोऽस्ति इतरयोस्तु ताम्रपात्रे विन्यस्य सूतनिबन्धनमस्ति परन्तु सूक्ष्मदृष्ट्या तावन्मात्रस्यैव ताम्रसंयोगस्य सञ्जातत्वाद्विशेषविशेषाऽभावोऽस्ति। अतस्त्रयाणां मिलित्वा एक एव रसः सम्पादनीय इति विज्ञेषु विज्ञप्तिः। अनेन छात्राणां विशेषोपकारो भविष्यति। चक्रधरे

वङ्गस्याधिक्यन्तु गुणवृद्धावेव पर्यवस्यति इति सर्वं समञ्जसम् ।

१९३—चक्रबद्धरस (२)में र.का (वातारिरस)को दाखिलकरना

१९४—चक्रेश्वररस (२)के मूलपाठकेस्थानमे रसेन्द्रमङ्गलके अधोलिखित पाठको टिप्पणीसहित लेना ।

"शुल्वं सूतसमं कृत्वा खल्वे दत्त्वा दिनत्रयम् । नागपर्णीवलापार्थमेघनादपुनर्नवैः ॥ अश्वमूत्रैर्गवां मूत्रैर्मर्दयेच्च ततः पुटेत् । चक्रयन्त्रस्थितं प्राज्ञो जारयेद्वस्मसूतकम् ॥ शुल्वचूर्णं रसे जीर्णे दमयन्ती पुनर्नवा । मेषशृङ्गीरसैर्घृष्टं रसःस्याद्व्रणरोपणः ॥ रसेन्द्रमं., व्रणाधिकारे ।

टि०—यो म , र स , र चि , र मि., भै सा , ध , वै नि , नि र , र क ल , र सु., र का , र म , र को , र कौ , रसायनस., व रा , र क , वै क , एष्वर्बुदाधिकारे रौद्ररस नाम्ना "शुद्ध सूत सम गन्ध मर्द्य यामचतुष्टयम् । नागवल्लीदलद्रावैर्मेघनादपुनर्नवा ॥ गोमूत्रपिप्पलीयुक्तैर्मर्द्य रुद्ध्वा पुटेल्लघु । लिहेत्क्षौद्रै रसो रौद्रो गुञ्जामात्रोऽर्बुद जयेत् ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति तत्र प्रमादात्ताम्र न सङ्गृहीतम् । केनाऽपि कारणेनाऽपगतं वा तत्र ज्ञायते ताम्राऽभावे कुत्राऽपि कार्यकरणाऽक्षमत्वात् रसान्तरता तु नोद्भावयितु शक्या मूलद्रव्यैक्यात् । तस्मात्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव' समुचित । र म मा , र र स, ना.वि एतेपु ग्रन्थेपु श्लीपदाधिकारे श्लीपदापहारीरसेतिनाम्ना र को , र क ल एतयोश्च श्लीपदेश्वर नाम्ना "शुल्वचूर्णसम सूत नागवल्लीवलाद्रवै । पाठापुनर्नवामेघनादगोमूत्रसयुतम् ॥ त्रिदिन मर्दयेत्खल्वे ततो गजपुटे पचेत् । भक्ष्य क्षौद्रेणसयुक्त गुञ्जैक श्लीपद जयेत् ॥" इत्यय योगोऽस्ति । बहुपु ग्रन्थेपु भावनाया वला न दृश्यते । रसावतारे भस्मसूतक नाम्ना " सूक्ष्मचूर्णन्तु शुल्वस्य सूततुल्य विमर्दयेत् । नागपर्णीवलापथ्या मेघनादपुनर्नवा ॥ अश्वसूतगवांमूत्रैर्मर्दयित्वा तत पुटेत् । चक्रयन्त्रस्थित प्राज्ञो जायते भस्मसूतक ॥ गुञ्जाद्वय त्रय वापि सेव्य मूलकवीजयुक । विडङ्गसैन्धवाढ्य वा दशमूलेन वा तथा ॥ भस्मसूतकनामाऽय गलगण्डापचीस्तथा । ग्रन्थ्यर्बुद गण्डमाला जयेदाशु न सशय ॥ गोधूमयवमुद्गाश्च पथ्या शोपा पटोलजा । रूक्ष सर्व हितञ्च स्याद्गलगण्डार्तिनाशकृत् ॥" इत्यय योगो निहितोऽस्ति सोऽस्मिन्नेव समावेशनीय स्वतन्त्रताऽयोग्यत्वात् । योगमहार्णवे व्रणरोपणनाम्ना "शुल्व सूत सम कृत्वा खल्वे मर्द्य दिनत्रयम् । नागपर्णीवलापार्थ मेघनादपुनर्नवा ॥ मेपपर्णीरसैर्घृष्टो रस स्याद्व्रणरोपण ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । तस्य भावनायामकिञ्चित्करो विशेपो दत्तो दृश्यते परन्तु तेन पाठान्तरता भवितुमयोग्या अतिगौरवाच्छात्राणां विभ्रमकरत्वाच्चेदृशाना पाठाना सर्वेषामत्रैवान्तर्भाव करणीय । भावनास्वति श्रद्धा चेदत्राऽपि तदनुष्ठाने क्षत्यभावोऽस्ति ।

१९५—चतुर्मुखरस (१) में आ.प्र , र.पा , र क.ल (ना.) इनग्रन्थोंको टिप्पणीसहित दाखिलकरना ।

टि०—अत्र रसपारिजाते "त्रिफलातुलसीब्राह्मीरसैश्चानु विमर्दयेत्" इत्यस्य स्थाने "त्रिकटुत्रिफलादेवपुष्पकच्छूलवायसै ।" इतिपाठो दृश्यते तत्र कच्छूलशब्देन वानरी ग्राह्या । वायसशब्देन काकमाची ग्राह्या । अन्यत्सर्वं समानम् । आ प्र , र क ल (ना) एतयोर्भावनाया त्रिफलातुलस्यादीनामभावो दृश्यते । र म मा , ना.वि एतयोर्विद्रध्यधिकारे विद्रधिहररस इति नाम्नाऽयमेव योग' पठितः परन्तु तत्र "त्रिफला तुलसीब्राह्मीरसैश्चानु विमर्दयेत " इत्यर्धं पद्य त्रुटितमस्ति । "त्रिकटुत्रिफलामुस्ता चव्यचित्रकचूर्णितम । सम मधुयुत लिह्यात्सर्वविद्रधिशान्तये" इत्यनुपाने च विशेपोऽस्ति । परन्त्वेतावता रसान्तरता, अत्रैव तस्याऽन्तर्भाव करणीय । विद्रध्या दृष्टप्रत्ययेन तन्नामान्तर स्थापितमिति रहस्यम् ।

१९६—चन्द्रकलावटी (१) में र.मृ.को दाखिलकरना.

१९७—चन्द्रकान्त (१) में वै.चि. (सूर्यकान्त)को दाखिलकरना ।

१९८—चन्द्रकान्त (२) में नि.र., व.रा., र.र. (सूर्यावर्त) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना ।

१९९—चन्द्रप्रभा (४) में र.मृ.को दाखिलकरना ।

२००—चन्द्रशेखर (२)की टिप्पणीमें भै र. (चन्द्रशेखर)को दाखिलकरना ।

२०१—चन्द्रोदय (१) के मूलपाठकेस्थानमें अधोलिखितपाठको टिप्पणीसहित दाखिलकरना और ग्रन्थोंमें र.पा., र.क ल. (ना.), र.चो , रसायनप. इनको देना ।

चन्द्रोदयः (मकरध्वजः) सिद्धाद्यः

पलमानं रसं सम्यग्बहुसंस्कारसंस्कृतम् ।
तथा पलद्वयं गन्धं शुद्धं हेम द्विकार्षिकम् ॥
कैलासाऽचलसम्भूते सुदृढे च सुचिक्कणे ।
शोणप्रस्तरजे खल्वे सर्वं संस्थाप्य मिश्रयेत् ॥
मर्दयेद्यत्नतो वैद्यो यामानष्टौ निरन्तरम् ।
रक्तकार्पासपुष्पस्य श्वेताङ्कोठफलस्य च ॥
कुमार्याश्चरसैः सम्यग्भावयित्वा पृथक् पृथक् ।
स्थापयित्वा काचकूपीमध्ये सर्वं प्रयत्नतः ॥
रक्ताङ्गसालसरलखदिरश्रीफलोद्भवा ।
काष्ठेनाऽन्यतमेनैव नीरसेन प्रतापयेत् ॥
मृदुनाऽनलयोगेन प्राग्यामद्वितयं पचेत् ।
पुनर्यामद्वयं पाच्यं मध्यतापेन वह्निना ॥
अग्निना प्रखरेणैव ततो यामद्वयं पचेत् ।
भूयो मन्दाग्निना पाच्यमवशिष्टद्वियामकम् ॥
स्वाङ्गशीतमथोद्धृत्य नवचूतदलोपमम् ।
भङ्गुरं लोहितं पिष्टं दाडिम्यकुसुमोपमम् ॥
ततोऽवतार्यगन्धेन द्विगुणेन विमर्दयेत् ।
भावयेत्पूर्ववद्भूयः पाचयेच्च प्रयत्नतः ॥
एवं वारद्वयं कुर्यात्सम्यगौषधसिद्धये ।
सन्निपातं ज्वरं घोरं मन्दाग्नित्वमरोचकम् ।
आमशूलं कटीशूलं हृच्छूलं पक्तिशूलकम् ।
कासं श्वासञ्च यक्ष्माणं शूलं कुष्ठमशेषतः ॥
गलोत्थानञ्चवृद्धिञ्च तथातीसारमेव च ।
श्लीपदं कफवातोत्थं चिरज कुलजन्तथा ॥
नाडीव्रणं व्रणं घोरं गुदामयभगन्दरम् ।
वायुं बहुविधं हन्ति ध्वजभङ्गं विशेषतः ॥

सेवनादस्य नश्यन्ति सर्वे रोगा न संशयः।
करोत्यग्नि बलं वीर्यं वलीपलितनाशनः॥
विधिवत्सेवितो ह्येष मुमूर्षुमपि जीवयेत्।
स्वेच्छाचारविहारोऽपि न कदाचिद्विपद्यते॥
मेधायुःकान्तिजननः कामोद्दीपनकृन्महान्।
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्द्धी स्त्रीषु चापि वृषायते॥
सेवनादस्य सम्राजो गच्छन्ति प्रमदाशतम्।
त्रैलोक्यशुभदं श्रीमदेष एव महौषधम्॥
मृत्युञ्जयो यथाभ्यासान्मृत्युं जयति देहिनाम्।
तथाऽयं साधकेन्द्रस्य जरामरणनाशनः॥
स्वयं त्रैलोक्यनाथेन त्रैलोक्यहितमिच्छता।
समर्पितोऽयं सिद्धेभ्यः करुणार्द्रेण वै यतः॥
अतोऽयं भुवने ख्यातः श्रीसिद्धमकरध्वजः।
भास्वान्यथा तमो हन्ति केसरीकरिणं यथा॥
तुलासङ्गं यथावह्निस्तथा रोगानसौ हरेत्॥

भा. वि., र.त. रसायनाधिकारे।

टि०—वृ.यो त, रसायनत., यो म., र.सं., एषुग्रन्थेषु सिद्धलक्ष्मीश्वरनाम्ना "अष्टांशहेमचयके सितिसूचिकाया सआर्यं पड्गुणवलि क्रमशोऽधिकञ्च। ऊर्ध्वं पयोऽग्निपचं विनिधायधीरः सिद्धि समस्तकरणे स्वकरे कुरुष्व॥" इति पाठो निहितोऽस्ति। योगमहार्णवे च "सगोध्य पिण्डीं शतजातशोष शतागगन्धेऽप्यल्पधवीयं। श्रीसिद्धलक्ष्मीनुविलाननामा पीयूषपिण्टोऽरसः प्रयुक्त॥" इति पद्येन गन्धकस्य शतगुणितजारणमपि विहितम्। सुधापिण्ड इत्यपि नाम स्थापितम् परन्त्वय चन्द्रोदयादभिन्न एव केवल पारदसंस्कारविशेष धृतित इत्यापाततो विशेषः प्रतीयते परन्तु पारदसंस्कारे समागमनाभावे रसान्तरताबोधक इति सुधीभिर्विभावनीयम्॥

२०२—चन्द्रोदय (७)को हटादेना वह मकरध्वज (२)की टिप्पणीमें गयाहै।

२०३—चविकादिमण्डूरमें ग नि (चपलामण्डूर), वृ मा. (मण्डूरवटिका)को दाखिलकरना।

२०४—चातुर्थिकनिवारणमें र पा. (चातुर्थिकगजाङ्कुश)को दाखिलकरना और तालकेश्वर (२३)की टिप्पणीमें लेजाना।

२०५—चातुर्थिकारिरस (४)में र.घो.को दाखिलकरना।

२०६—चातुर्थिकारि (७)में ना वि.को दाखिलकरना।

२०७—चित्रनागान्तकमें र र स, र र.कौ (श्वित्रारि) को दाखिलकरना।

२०८—चिन्तामणितैलकी टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना और ग्रन्थोंमें र.चो.कोदेना।

"टि०—रसकामधेनौ राजवल्लभतैलनाम्ना—

"सूतगन्धकलोहानि दन्तीबीजानि टङ्कणम्।
वारुण्येरण्डबीजानि राजवृक्षाऽभयात्रिवृत्॥
पलाशबीजमेकन्तु जैपाल तत्सम भवेत्।
स्नुहीक्षीरेण सम्पिष्य भावयेत्त्रिदिनञ्च तत्॥
नारिकेलफले क्षिप्त्वा महागाढातपे स्थितम्।
ततस्तैलन्तु जायेत गृहीत्वा नाभिमण्डपे॥
अणुमात्रप्रलेपेन दशवारान्विरेचयेत्।
तत शीतोदकेनैव शीघ्र प्रक्षालयेद्बुध॥
गजान्न भोजयेदम्लमभ्यङ्गञ्च विवर्जयेत्।
गुटिकाऽऽघ्राणमात्रेण सप्तवारान्विरेचयेत्॥
एतत्तैलेन पथ्यादिफल युक्तिविभावितम्।
निष्पीड्य हस्ते विधृत विरेचनकर परम्॥

इति पाठो निहितोऽस्ति। इद तैल चिन्तामणितैलेन समान वर्तते। तैलोपादानद्रव्येषु वारुण्येरण्डराजवृक्षपलाशबीजान्यधिकानि सन्ति। भावनायाञ्चाऽस्मिन् स्नुहीक्षीर दृश्यते, अत उभयोर्योगयोर्द्रव्याणा भावनानाञ्च मिश्रण कृत्वा तैल निष्पाद्यते चेत्तर्हि गुणाधिक्य भविष्यति। अस्मिंस्तैले गुटिकाघ्राणमात्रेति पाठो दृश्यते तत्र तैलनिष्कासनादुर्वरितस्य कल्कस्य गुटिका विधाय तदाऽऽघ्राणेन विरेचनानि भविष्यन्तीति निर्धार्यम्।"

२०९—चिन्तामणिरस (१०) को इच्छाभेदी (६) में लेजाना।

२१०—चिन्तामणिरस (१२) में र.पा को दाखिलकरना।

२११—चिन्तामणिरस (१७) में र मृ को दाखिलकरना।

२१२—चिन्तामणि (२२) की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना।

"भैषज्यरत्नावल्यां चूलिकावटीति नाम्नोदराऽधिकारे "रसो गन्धो विषं तालं त्रिकटु त्रिफला तथा। टङ्कणं समभागञ्च जयपालश्चतुर्गुणम्॥ भृङ्गराजरसेनाऽथ केशराजरसेन वा। मधुना वटिका कार्या गुञ्जाद्वयमिता शुभा॥ चूलिकाख्या वटी ख्याता शोथोदरविनाशिनी। कामलां पाण्डुरोगञ्च आमवातं हलीमकम्॥ हन्याद्भगन्दरं कुष्ठं प्लीहानं गुल्ममेव च।" इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः सुकरः।"

२१३—चैतन्योदयरसमें भै र को दाखिलकरना

२१४—चोडसिद्धरसको ज्वरकुलान्तकमें लेजाना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें देना।

"रत्नाकरौषधयोगे कज्जलीस्थाने द्विभागो दरदो नियोजितः। अत्र त्वेकैकभागौ गन्धकपारदौ स्तः इत्यापाततो रसान्तरता प्रतीयते परन्तु गन्धकपारदसंयोगेनैव दरदस्य जायमानत्वादभिन्नताऽनयोरिति सुधीभिर्विभावनीयम्।

२१५—छर्दिसंहाररसमें यो र (जीरकादिरस), र चं. (सूतभस्मयोग) को दाखिलकरना।

२१६—जयावटीमें आ प्र.को दाखिलकरना।

२१७—जातीफलादिवटी (३)में र पा को दाखिलकरना.

२१८—जीर्णज्वरारिरसमें ताम्रयोग (१०) को दाखिल करना।

२१९—ज्वरकुलान्तकरसकी टिप्पणीमें अधोलिखितकोलेना।

"रसगन्धौ विशुद्धौ द्वौ टङ्कणञ्च कटुत्रयम्। दन्तिबीजञ्च संयोज्य समांशेन भिषग्वरैः॥ प्रदेयो

माषमात्रो वै ज्वरशूलार्दितस्य तु। सज्वरं याममात्रेण शूलं हन्ति कफोद्भवम।" इति नारायणविलासे द्वितीयस्थाने पाठोऽस्ति तस्य पृथक्पाठानर्हत्वम्।"

२२०—ज्वरकेसरी (१)की टिप्पणीमें अधोलिखितको देना।

रत्नाकरौषधयोगे जयपालस्थाने टङ्कणं नियोज्य योगीति नाम्ना रसान्तरतया पाठो निहितोऽस्ति सोऽप्यत्रैवान्तर्भवति। टङ्कणेऽधिकश्रद्धा चेदस्मिन्नेव तद्योगस्य सुकरत्वात्पाठान्तरताऽयोग्यत्वम।"

२२१—ज्वरकेसरी (३)में वा. (शीताङ्कुश) को दाखिलकरना।

२२२—ज्वरगजसिंहमें र.पा को दाखिलकरना।

२२३—ज्वरगजाङ्कुश (२)को निकालदेना वह सन्निपात गजाङ्कुशमें गयाहै।

२२४—ज्वरध्वान्तदिवाकररसको विश्वतापहरणमें दाखिल करना।

२२५—ज्वरभैरव (१) की टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको दाखिलकरना।

"र.सं., र.चं, एतयोः सर्वाङ्गसुन्दरेति नाम दत्त्वा रेचनाऽधिकारेऽयमेव पाठः स्थापितः। र.सं., र, चं., भै र., ध., र क यो, र.सु., नि.र., एषु ग्रन्थेषु ज्वरकेसरीति नाम्ना पाठो निहितोऽस्ति यथा (ज्वरकेसरी १) अत्र टङ्कणाभावोऽस्ति। अत्र टङ्कमित्यस्य स्थाने चैवेति पाठः प्रमादात्सञ्जात इति प्रतिभाति। भृङ्गभावनाऽनुष्ठानन्तु कृतमपि न दोषावहं पाठस्त्वेक एव करणीयः। निघण्टुरत्नाकरेऽजीर्णाऽधिकारे रामबाणनाम्ना "त्रिनिष्कं शुद्धजेपालं विषगन्धेशटङ्कणम्। भृङ्गराजरसैः पिष्ट्वा—" तिपाठोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः। भृङ्गरसेन प्रथमं भावनां प्रदायाऽन्ते द्रोणपुष्पीस्वरसेन भावनायां गुणवृद्धिरेव भविष्यति।"

२२६—ज्वरशूलहरमें र क यो. (पर्पटीरस)को दाखिलकरके मूलपाठोंमेंसे हटादेना वह रतिताण्डवकी टिप्पणीमें गयाहै।

२२७—ज्वरहररस (७)में र वो को दाखिलकरना।

२२८—ज्वराङ्कुश (२) का नाम र र.स में चातुर्थिकहर रक्खाहै।

२२९—ज्वराङ्कुश (४)की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना।

"र.सु, वै वि, रसायनसं, एषु ग्रन्थेषु शीताङ्कुशनाम्ना "तुत्थकाद्भागमेकञ्च तालकं द्विगुणन्तथा। तालात्त्रिगुणितः शङ्खः सर्वमेकत्र कारयेत्॥ भावितं सूर्ययोगेन तोयैश्च चूर्णजैस्तथा। भावितं सप्तवाराणि गोलकं मूषमध्यतः। पुटेद्गजपुटेनाऽथ सिद्धो भवत्यसौ रसः॥" इत्यादि पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽत्रैव पाठेऽन्तर्भावः सुकरः। तालतुत्थकयोर्भागव्यत्यासस्त्वकिञ्चित्करः पुटदानेन तालाधिकभागस्योड्डीयमानत्वात। भावनाविशेषस्याऽत्राऽप्यनुष्ठाने क्षत्यभावात्।

२३०—ज्वराङ्कुश (७) में वै.चि, वा (रामबाणरस)को दाखिलकरना।

२३१—ज्वराङ्कुश (८) को शीतमञ्जी (१) में दाखिलकरना।

२३२—ज्वराङ्कुश (९)की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना।

"रसगन्धटङ्कमसितं समांशकं परिमृद्यजातिफलसप्तभावितम। सितयोपयुज्य नवरक्तिकोन्मितं मथितान्नभुग्विजयते विसूचिकाम॥" इति पाठो रसचण्डांशौ रसरत्नसमुच्चये च निहितोऽस्ति। रसरत्नसमुच्चये "विमृद्य गन्धोपलटङ्कणे च सम्भाव्य वारानथ सप्तजात्याः। तोयैः फलानां०" इति विसूचीविध्वंसनाम्ना द्वितीयः पाठो निहितोऽस्ति सोऽप्यत्राऽनायासेनैव समाविशति॥"

२३३—ज्वराङ्कुश (११) की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना।

"रसेन्द्रकल्पद्रुमे " पारदं गन्धकं टङ्कं विषञ्च मरिचं समम। चूर्णितं सूततुल्यञ्च बीजं नैकुम्भजं शुभम॥ पिष्टं निम्बुद्रवैर्भाव्यं रक्तिकार्द्धं कफज्जयेत्॥" इति हुताशननाम्ना योगो निहितोऽस्ति। योगचन्द्रिकायां ज्वरभेदीति नाम्ना " गन्धटङ्कणविषोषणदन्तीबीजकट्फलमुपेतरसार्धम्। मर्द्यमार्द्रकजलैरथ माषं तत्सितार्द्ररसयुग्ज्वरभेदी॥" इति पाठो निहितोऽस्ति। एतयोरत्राऽन्तर्भावः सुकरः एतदपेक्षया मूलयोगस्याऽधिककार्यकरत्वात्

२३४—ज्वराङ्कुश (१२) में र पा, र.कि, र वो, रसायनप (ज्वराङ्कुश) अगस्त्य, व्यास. (मृतसञ्जीवनी) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

२३५—ज्वराङ्कुश (१७)को वैष्णवरसमें दाखिलकरना।

२३६—ज्वराङ्कुश (१८) में रसायनप (गण्डभैरुण्ड) को दाखिलकरना।

२३७—ज्वराङ्कुश (१९)की टिप्पणीमें अधोलिखितको ग्रन्थसहित दाखिलकरना।

"रसगन्धकनेपालं समं खल्वे विमर्दयेत्। अश्वत्थवल्कलद्रावे दोलायन्त्रेण पाचयेत्॥ याममात्रं ततो नीत्वा गुञ्जामात्रप्रमाणकम्। सिताकणायुतं खादेद्विषमज्वरनाशनम्॥ सर्वज्वरं क्षणाद्धन्ति नाम्नाऽयं भार्गवीरसः॥" इति वैद्यचिन्तामणौ पाठोऽस्ति त-

स्य मूलमयमेव रसः । कटुकीनिष्कासनस्य प्रयोजनं न प्रतीयते। अश्वत्थवल्कलद्रावे स्वेदनेत्राऽप्यनुष्ठिते क्षत्यभावः। स्वेदनाऽनन्तरं भृङ्गरसेन वटिकाकरणे सर्वं सामञ्जस्यं भविष्यति । पृथक्पाठकल्पनन्तु सर्वथाऽन्याय्यमेव ।

२३८—ज्वराङ्कुश (२१)में र.क.यो.को दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना—

"द्वियामं मर्दयेद्गौरीपाषाणं कितवद्रवैः। जीरकेण समायुक्तं शीतिकाज्वरनाशनम् ॥" इति रत्नाकरौपधयोगे पाठोऽस्ति । चूर्णद्रवस्वेदनाऽनन्तरं कितवद्रवेण मर्दनं विधाय जीरकानुपानेन प्रयोगेकृते द्वयोरप्येकत्र समावेशः करणीयः । अनेन गुणवृद्धिरपि भविष्यति पाठह्रासश्च महत्फलम् ।

२३९—ज्वराङ्कुश (२२) में र.का,को दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

"रसकामधेनौ शीतभञ्जीनाम्ना "चूर्णालसौम्यतुत्थानि तुल्यतुल्यार्द्धमर्धकम् । कारवल्याः सप्तपुटः रसः स्याच्छीतभञ्जनः ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः । यद्यपि शङ्खशुक्तिचूर्णस्य भेदो दृश्यते परन्तु सोऽकिञ्चित्करः । द्वयोरपि चूर्णे प्रायशः समानधर्मत्वात् ।"

२४०—ज्वराङ्कुश (२५) को हटादेना वह रामबाण (५)की टिप्पणीमें गयाहै ।

२४१—ज्वरारिरस (२) में भै.र को दाखिलकरना ।

२४२—ज्वरारिरस (१०) की टीकामें "स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर ऊपरलगेहुएपारेको उतारकर उससे द्विगुण-जमालगोटा और त्रिगुण शुद्धवछनाग डालकर" इसतरहका पाठ करना उचितहै ।

२४३—ज्वरारिरस (११) की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना और नारसिंहरस (प्रथम)को निकालदेना।

"वसवराजीय नारसिंहरसस्याऽनेनाऽक्षरशः समताऽस्ति केवलं ज्वरारौ कुमारिरसेनभावनास्ति नारसिंहेऽर्कमूलत्वक्कषायस्य भावनाऽस्तीति विशेषो दृश्यते परन्तु स अकिञ्चित्करोऽस्ति. द्वयोरपि भावनयोरेकत्र समावेशेन गुणवृद्धिरेव भविष्यति पाठद्वयभ्रमो निरस्तो भविष्यतीति महत्फलम् ।

२४४—ज्वरारिरस (१२) में वै र. (रामवाण), र.सि. (लीलावतीवटी) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना ।



तवर्गीयरसोंकी विशेषसूचनाएं

२४५—ताम्रपर्पटी (२) की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना ।

"र.सु, सू.प्र., र को., र का , व.रा , र.क.यो एषु ग्रन्थेषु ज्वराऽधिकारे विजयपर्पटी नाम्नैको रसोऽस्ति तत्र चतुर्भागविषनियुक्तिः कदलीदलपातनञ्चेति विशेषो दृश्यते परन्तु सोऽकिञ्चित्करः, चतुर्भागविषक्षेपेणाऽपि क्षत्यभावात्। मात्रायामपि समानताऽस्ति पाठान्तरनिरसनञ्च महत्फलम् ।"

२४६—ताम्रपर्पटी (३)की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना ।

" रसरत्नमणिमालायां विस्फोटघ्नपर्पटीनाम्ना "मृतं ताम्रं मृतं सूतं गन्धकेन च मर्दयेत् । कुर्यात्पर्पटिकां शुभ्रां ताञ्च खादेद्यथाबलम् ॥ त्रिफलाचूर्णसंयुक्तां विस्फोटार्तः सुखीभवेत् ॥" इतिपाठो निहितोऽस्ति स ताम्रपर्पट्या अभिन्न एव । सर्वत्र सूतयोगेषु मृतश्चेन्नियुज्येत तर्हि शतगुणाऽऽधिक्यमिति वारंवारं सूचितमस्माभिः । अनुपाने त्रिफलाचूर्णप्रयोगस्तु योगस्य स्वतन्त्रतामापादयितुमशक्य एव॥

२४७—ताम्रपिष्टिका (२)के मूलपाठके स्थानमें अधोलिखितपाठको लेना ।

"विशुद्धं तुत्थताम्रञ्च रसं गन्धं समांशकम् । शतावरीरसैर्मर्द्य कटुतैले विपाचितम् । मूत्रकृच्छ्रं जयत्येष रसेन्द्रः शर्करान्वितः । कुण्डलीनीरमधुयुक् पिप्पलीक्षौद्रयुक्तथा ॥ यासपाषाणभित्पथ्या गोक्षुरारग्वधैः कृतः। क्वाथः समाक्षिको हन्ति कृच्छ्रदाहरुजान्वितम् ॥ रसावतारे

२४८—ताम्रयोग (२१)को हटादेना वह रविताण्डवकी टिप्पणीमें गयाहै ।

२४९ताम्रयोग (९)में र सु, (सूर्यप्रभ)को दाखिलकरना ।

२५०—ताम्रयोग (१०)की टिप्पणीमें "यो.म , रसेन्द्रमं. एतयोर्बालरोगाऽधिकारे बालरोगहर इति नाम्ना पठितः" इसको दाखिलकरना ।

२५१ताम्रयोग (१९)को हटादेना वह सूर्यप्रभाताम्रेश्वरमें गयाहै ।

२५२—ताम्ररसायन (१)में च द.को दाखिलकरना और टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना ।

"रसकामधेनौ रसायनसङ्ग्रहे च "गन्धकेन हतं ताम्रं गुञ्जार्द्धाऽर्द्धं प्रकल्पयेत्। रसोऽयं शुद्धमार्तण्डो गलत्कुष्ठविनाशनः।" इत्याकारकः कुष्ठे योगोऽस्ति तस्याप्यत्रैवान्तर्भाव. करणीयः ।

२५३—ताम्रसुन्दररस (अधोलिखित) को रसवरकी टिप्पणीमें लेजाना—

"नैपालशुद्धपत्राणि सूचीवेध्यानि कारयेत् ।
निम्बारनालपट्वाद्यैर्याममेकं पचेत्ततः ॥
तन्मारकैः पचेत्तानि सप्तवारान् सकाञ्जिकैः ।
एवं संशुद्धिमायान्ति जलेन क्षालयेत्ततः ॥

शुद्धानां ताम्रपत्राणां गृह्णीयात्पलपञ्चकम् ।
कर्षेञ्च रसतो ग्राह्यं पक्वनिम्बुकवारिणि ॥
यावच्छुक्लत्वमायाति तावत्तच्च विमर्दयेत् ।
निम्बूकरसयुक्तेन गन्धकद्विपलेन च ॥
पत्राणि तानि संलिप्य यन्त्रे सैकतके क्षिपेत् ।
सम्यक्पचेत्ततस्तानि वह्निना दिनपञ्चकम् ॥
स्वाङ्गशीतं विदित्वा च ततः शुल्वं समुद्धरेत् ।
श्लक्ष्णं तच्चूर्णयेत्खल्वे त्वजाक्षीरेण सम्पुटेत् ॥
दिनत्रयं तथाऽऽज्येन दध्ना च सितया ततः ।
माक्षिकेण तु तच्छुल्वं शुद्धं स्यात्पुटयोगतः ॥
उत्क्लेदभ्रमदाहादि दोषैः सर्वैर्विवर्जितम् ।
शुल्वमात्रानुपानानि वक्ष्यन्तेऽतः समासतः ॥
वल्लमेकं ददीताऽस्य शूले वातजसम्भवे ।
सौवर्चलं कुबेराक्षं रामठं चाक्षसम्मितम् ॥
पिबेत्तक्रेण तदनु गव्येनात्यम्लकेन च ।
दद्याद्वल्लद्वयञ्चास्य शूलजे परिणामजे ॥
स्वर्जिकाटङ्कणेनाऽथ पञ्चैव लवणानि च ।
अश्वत्थचुक्रिकाक्षारोभार्गीपावकरामठम् ॥
एषां चूर्णन्तु लुङ्गेन सप्तवारांश्च भावयेत् ।
कर्षमात्रं पिबेत्पश्चात्तच्चूर्णकृतभावनम् ॥
वल्लद्वयमितं शुल्वं रोगराजे प्रयोजयेत् ।
छिन्नासत्त्वस्य वल्लेन सितागद्याणकान्वितः ॥
अजाक्षीरेण तदनु पातव्यो बलवर्धनः ।
शुद्धं ताम्रं वल्लमात्रं हरीतक्याश्च तिन्दुकम् ॥
पिबेत्कोष्णेन तोयेन शोथगुल्मोदरेषु च ।
वल्लद्वयञ्च शुल्वस्य प्राणदं क्षौद्रसम्मितम् ॥
एकविंशदिनान्येवं सेवयेद्ग्रहणीगदे ।
मधुना भक्षयेत्ताम्राद्विशुद्धाद्रक्तिकात्रयम् ॥
वासारसं पिबेत्पश्चात्कासश्वासापनुत्तये ।
वल्लत्रयञ्च शुल्वस्य त्रिफलामधुमिश्रितम् ॥
प्रातः सम्भक्षयेत्प्राणी ब्रह्मचर्यरतो भवेत् ।
एकोनदशमासेषु वलीपलितवर्जितः ॥
अष्टादशसु कुष्ठेषु ताम्रवल्लचतुष्टयम् ।
पिबेत्खदिरतोयेन वाह्वीरजसा समम् ॥
रक्तिकापञ्चकं शुल्वाद्व्योषचित्रकसंयुतम् ।
न युञ्ज्यात्कादिकं पथ्यं दुग्धं तैलञ्च राजिकम् ॥
सतक्रं भक्षयेत्कन्दं कृत्स्नं वल्यञ्च वास्तुकम् ।
नानारोगेष्विति प्रोक्तो रसोऽयं ताम्रसुन्दरः ॥
दोषादिकं समीक्ष्यादौ शुल्वं दद्याच्च मात्रया ।
येषु रोगेषु ये योगा देयास्ते तदनन्तरम् ॥

र मृ, शूले । अत्रकानिचिदनुपानानि विशेषतया निहितानि सन्ति परन्त्वनुपानानामनियतत्वात्तद्दर्शनार्थं स्वतन्त्रपाठस्थापनस्याऽयोग्यत्वाद्रसवरं एवाऽस्यान्तर्भावः कृतोऽस्ति ।"

२५४—तारसुन्दरीवटीमें रसायनप. को दाखिलकरना ।

२५५—तारामण्डूर (१) में ग नि., र.मृ. को दाखिलकरना ।

२५६—तालकयोग (१)में र क, र का.को दाखिलकरना और टिप्पणीमें "र.क., र.का. एतयोर्मित्रपञ्चकनाम्नाऽयमेव योगो निहितोऽस्ति" इसको देना ।

२५७—तालकेश्वर (२) में र मृ को दाखिलकरना ।

२५८—तालकेश्वर (८)में आ प्र को दाखिलकरना ।

२५९—तालकेश्वर (१०) में र मृ को दाखिलकरना ।

२६०—तालकेश्वर (१५) को तालकेश्वर (२७) में लेजाना

२६१—तालकेश्वर (१७) में र मृ.को दाखिलकरना ।

२६२—तालकेश्वर (२३)की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना ।

"र,र स., र.सु, र र कौ, र को, र.क.ल, एषु चातुर्थिकनिवारणनाम्ना "त्रिभागं तालकं विद्यादेकभागन्तु पारदम् । तदर्धं गन्धकञ्चैव तदर्धा तु मनःशिला ॥ कारवल्लीदलरसैर्मर्दयेत्प्रहरत्रयम् । पाचितो वालुकायन्त्रे चातुर्थिकनिवारणः ॥ इति पाठो निहितोऽस्ति । अनयोस्तालकप्रमाणे भावनायाञ्च विशेषता प्रतीयते परन्तु साऽकिञ्चित्करी विशेषता, त्रिभागं तालकं निक्षिप्य कारवल्लीधत्तूराभ्यामुभाभ्यामपि भावनां प्रदाय निष्पादिते रसे सर्वं सामञ्जस्यं भवेदित्येक एव पाठः स्थापनीयः ।"

२६३—तालकेश्वर (२७) में चि र.भ, र मृ (शीतारि) को दाखिलकरना ।

२६४—तालकेश्वर (२८) में र सु (शुल्वतालेश्वर), र.चो. (विषमसूदन), र मृ इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमेंलेना ।

"रसरत्नसमुच्चये शूलगजकेसरीति नाम्ना रसतरङ्गिण्याञ्च शूलेभकेसरीति नाम्ना "पलप्रमाणसूतेन बलिना द्विगुणेन च । शुद्धत्रिपलतालेन कृत्वा कज्जलिकां त्र्यहम् ॥ पलमानेन कर्तव्यं शुद्धताम्रस्य सम्पुटम् । पिधानपात्रसङ्ग्रस्ततलपात्रस्य वाखलु । कज्जलीं सम्पुटस्यान्तर्निदध्यात्तदनन्तरम् ॥ अधस्तादुपरिष्टाच्च सम्पुटस्याऽऽक्षिपेत्खलु । आकण्ठं पटुचूर्णे तां निधाय च निरुद्ध्य च॥ विशोष्य गजसञ्ज्ञेन पुटेन पुटयेत्ततः । पटुचूर्णं विधायाऽथ क्षिपेद्रम्यकरण्डके पथ्यार्द्रकरसोपेतो वल्लमानो निषेवितः । रसो निःशेषशूलघ्नः स्याच्छूलगजकेसरी ॥" अयं योगो निहितोऽस्ति । यद्यपि द्रव्यप्रमाणे यत्किञ्चिद्विशेषो दृश्यते परन्तु सोऽकिञ्चित्करः, ताम्रमात्रस्याऽवशिष्टत्वात् ।"

२६५—(२९) की टिप्पणीमें अधोलिखितको देना—

"रत्नाकरौषधयोगे रसपारिजाते च शीतभञ्जननाम्ना "तुत्थमेकं त्रयं तालं शिलाचूर्णं चतुर्गुणम् । कुमारीरससम्पिष्टं कुक्कुटीपुटपाचितम् ॥ तुलसीरससंयुक्तं शीतज्वरविनाशनम् ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति तत्र वस्तुषु प्रमाणव्यत्यास इति विशेषः। भावनाद्वयस्य तु द्वयोरपि स्थाने दाने क्षत्यभावोऽस्ति ।"

२६६—तालकेश्वर (३४) में र सु (शीतारि) को दाखिलकरना ।

२६७—तालसिन्दूर (२) के मूलपाठके स्थानमें नीचेलिखेहुए पाठको रखना.

"शुद्धं रसं निष्कशतं तदर्द्धं
शुद्धं बलिं कज्जलिकाञ्च कुर्यात् ।
सौराष्ट्रिकागन्धकतुर्यभागा
देयाऽत्र तद्वद्धरितालभागम् ॥
सम्मर्द्य गाढं नवसादरञ्च
तालात्तृतीयांशयुतञ्च सर्वम् ।
कौमारिकाम्भःपरिमर्दितं वा
तत्काकमाचीस्वरसेन तद्वत् ॥
सार्द्रञ्च तत्काचघटे निधाय
दृढं पचेद्वै सिकताख्ययन्त्रे ।
सपञ्च सप्तप्रहरांश्च याव-
देवं पचेद्भूय इह त्रिवारम् ॥
तत्सिद्धसूतं विनिगृह्य युक्त्या
सर्वेषु योगेषु निवेशनीयम् ।"

इति योगमहार्णवे पाठोऽस्ति । रत्नाकरौषधयोगे रसबलिहरितालटङ्कणनरसारनागभस्मानि समप्रमाणानि गृहीत्वा कज्जलिकां विधाय रविमूलाऽऽर्द्रकाग्निमूललशुनत्रिफलानागवल्लीरसैः प्रत्येकं पञ्चपञ्च भावनाः प्रदाय काचकूप्यां भृत्वा पञ्चपञ्चवासरैश्च पाको विहितः । तस्य रसस्याऽयमेवरसो मूलम् । रत्नाकरौषधयोगकर्ता सर्वत्रैवेत्थमेव मूलपाठेषु कपोलकल्पितां युक्तिं समाहृत्य निष्प्रयोजनां सङ्ख्यां वर्धयति ।"

२६८—तालसिन्दूर (४) में र.शं को दाखिलकरना इसमें शीतारि नामहै ।

२६९—तालसिन्दूर (७) में र क.यो.को दाखिलकरना।

२७०—तालसिन्दूर (८)की भाषामें हरितालका प्रक्षेप छूट गयाहे ।

२७१—त्रिकट्वादिलोह (२) के स्थानमें नीचेलिखापाठ टिप्पणीसहित रखना—

"व्योपं त्रिवृच्चित्रककरोहिणी च सायोरजस्का त्रिफलारसेन । पीतं कफोत्थं शमयेत्तु शोफं मूत्रेण गव्येन हरीतकी वा ॥"

च.सं., भे.सं., अ हृ, र. चि रसायनसं., र.का., ग नि. ना वि. शोथाधिकारे ।

टि०–भेलसंहितायां त्रिफलास्थाने त्रिवृता दृश्यते । नारायणविलासे केन कारणेन त्रिवृन्निष्कासितेति न ज्ञायते । सायोरजस्केति विशेषणन्तु त्रिफल्या निबद्धय साऽपि मूलद्रव्ये निवेशिता । त्रिफल्या विसृष्ट रसेनेति प्रत्यासत्तिन्यायेन त्रिफल्या साकं सबद्धय त्रिफलारसेन पीतमिति स्वतन्त्रतया निहितम् । प्राचीनर्षीणां लिपि प्रायो सूत्ररूपा भवति, अतस्तदीयोक्ति' समीचीना प्रतिभाति योगस्त्वयमेवाऽस्ति स्वतन्त्रताभ्रमो न करणीय इति बोध्यम् ।

२७२—त्रिगुणाख्यरसमें रसायनसं को दाखिलकरना ।

२७३—त्रिदोषनीहारविनाशसूर्यकी टिप्पणीमें अधोलिखितपाठको दाखिलकरना और ग्रन्थोंमें र.सु. दोवार छपगया है सो ठीककरना ।

"रसेन गन्धं द्विगुणं प्रगृह्य पुनर्नवावह्निरसैर्विमर्द्य
पक्वार्कपत्रोत्थरसे प्रयत्ना-
द्विपाचयेदष्टगुणे च पश्चात् ॥
रसार्धभागेन विषञ्च दत्त्वा
विपाचयेद्वह्निजले क्षयञ्च ।
शीतारिसञ्ज्ञाऽस्य रसस्य
वल्लं तदर्द्धमर्धं यदि वार्द्रकेण ॥
मरीचचूर्णेन घृतेन वापि
सेवेत मासं सघृतञ्च पथ्यम् ॥

इति रसामृते पाठो दृश्यते सोऽस्यैव प्रपञ्चः प्रतिभाति । भावनानान्तु ग्रहणमवश्यमेव करणीयम् ॥"

२७४—त्रिदोषशमन में त्रिशक्तिकाञ्चनरसको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

"र.सं , र.र, र चं , र.चि , र सु. र.को., ध , र.का (सूतहेमयोग) र सं क , रसायनसं , र प्र. (स्वल्पमृगाङ्करसः) इति नामभ्यां "रसभस्म हेमभस्म तुल्यं गुञ्जाद्वयं भजेत् । दोषं बुद्ध्वाऽनुपानेन मृगाङ्कोऽयं क्षयापहः ॥ इति योगो गन्धकरहितो निहितोऽस्ति परन्तु गन्धकयोगेन विशेषकार्यकरत्वात्पुटदानेन च गन्धकस्योड्डीयमानत्वादेक एव योगो न्याय्यः नानायोगकल्पने छात्रबुद्धिव्याकुलीभावात् ।

२७५—त्रिनेत्ररस (३) में आ प्र को दाखिलकरना ।

२७६—त्रिनेत्ररस (५) में अश्मरीहर (२) को दाखिलकरना और ग्रन्थोंमें र.क को दाखिलकरना ।

२७७—त्रिपुरभैरवरसकी टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको देना।

"रसरत्नदीपिकायां रसस्य द्वौ भागौ स्वर्णस्य चैकस्तयोः पिष्टयास्ताम्रपत्राणां लेपः, ऊर्ध्वाऽधो गन्धकदानानन्तरं मत्स्याक्षिनीरेण मेचनम् । अनुपाने च मृगश्टङ्गचूर्णस्य योग इति विशेषः ।"

२७८—त्रिफलागुग्गुलुके नामसे शिवागुग्गुलु और व्याधिशार्दूलगुग्गुलुको तकारमें लेजाना ।

२७९—त्रिफलामण्डूर (२) में ग नि (मण्डूरयोग), वृ.मा., चि.सा. इन ग्रन्थोंको दाखिलकरना।

२८०—त्रिफलामण्डूर (३)में कलायवटीको अनुपानमें लियाहै सो अलग कलायवटीमें दाखिलकरना।

२८१—त्रिफलारसायन (३) में वृ मा को दाखिलकरना।

२८२—त्रिफलालोह (२)में सु.सं, हितो, ग नि, र मा. इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और "सुश्रुते पाण्ड्वधिकारे गोमूत्रानुपानमस्ति" इसको टिप्पणीमें देना।

२८३—त्रिफलालोह (५) को हटादेना वह श्लीपदारिलोहमें गयाहै।

२८४—त्रिफलालोह (९) की टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको लेना—

"व्योपं शतावरी त्रीणि फलानि द्वे वले तथा। सर्वामयहरो योगः सेव्यो लोहरजोन्वितः॥ एतद्वक्षःक्षतं हन्ति कण्ठजां विविधां रुजम्॥" इति योगमहार्णवे मुखरोगाधिकारे सप्तामृतलोहनाम्ना योऽयं पाठः सोऽयमेव। र.र, र प्र, भै.र, टो, एषु राजयक्ष्मणि विन्ध्यवासियोगनाम्नैको योगो पठितोऽस्ति सोऽक्षरशोऽत्रान्तर्भवति। फलभागे "एष वक्ष.क्षतं हन्ति कण्ठजां विविधां रुजम्। राजयक्ष्माणमत्युग्रं वाहुस्तम्भार्दितं तथा॥" इति विशेपोऽस्ति सोऽप्यत्रैव निवेशनीयः।

२८५—त्रिफलालोह (१२)में चि सा, ग.नि को दाखिल करना।

२८६—त्रिभुवनकीर्तिमें र पा को दाखिलकरना।

२८७—त्रिमूर्तिरस (१) की टिप्पणीमें अधोलिखितको ग्रन्थसहित दाखिलकरना।

"रसरत्नाकरेऽयमेवपाठो गौडरसनाम्ना निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः सुकरः भावनाविशेषे प्रीतिश्चेदत्रैव तदनुष्ठाने क्षत्यभावः।

२८८—त्रैलोक्यचिन्तामणि (४) में र पा., र यो., रसायनप्र इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

२८९—त्रैलोक्यचूडामणिमें र मृ (त्रैलोक्यरक्षामणि) को दाखिलकरना।

२९०—त्रैलोक्यडम्बररस (२) में र मृ को दाखिलकरना।

२९१—त्र्यूपणादिलोहम् (१) में भै र.को दाखिलकरना और "भैषज्यरत्नावल्यां त्रिफलास्थाने विजया दृश्यते, अभ्रकस्याऽभाव" इसको टिप्पणीमें लेना।

२९२ त्र्यूपणादिलोह (२) में भै र को दाखिलकरना।

२९३—द्विभुजरसकी टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना

"रसामृते क्षुरिकारनाम्ना "दरदो जयपालश्च गुडो संयोजितो समो। त्रिकटुत्रिफलाम्भोभिः सूर्यरश्मिविभावित.॥ चणकद्वयमितो दत्तस्तथा त्रिगुडमिश्रितः। हन्ति गुल्मोदरप्लीहशोफपाण्ड्वामयक्रिमीन्॥ कुष्ठाऽऽनाहज्वरश्वासविस्फोटगुदजानपि॥" इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः।

२९४—धातुज्वराङ्कुशमें र पा को दाखिलकरना।

२९५—धातुपञ्चामृत (१) में र बो को दाखिलकरना।

२९६—धात्रीलोह (१)में ग नि (धात्र्याद्यवलेह), भा प्र, चि सा, र प्र, वृ.मा, च द, नि र, इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और "वृन्दमाधवे धात्रीस्थाने त्रिफलानियोजिता" इसको टिप्पणीमें देना।

२९७—धात्रीलोह (३)में वृ.मा, ग नि को दाखिलकरना।

२९८—नवज्वराङ्कुशमें र.मं, वै.क, र चि, र क, व रा, र.क यो (शीतभञ्जी) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

२९९—नवज्वरारण्यकृशानुमेघको हटादेना वह रविताण्डवकी टिप्पणीमें गयाहै।

३००—नवायसलोह (१) में चि.सा., यो.चि., चि क, र.मृ. इनग्रन्थोंको दाखिलकरना। और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"नवायसायः क्रियया प्रयुक्तं पाण्ड्वामयार्शोग्रहणीविकारान्। नानाविधं स्थावरजङ्गमाख्यं क्षिणोति गुल्मानुदराणि शोथम्।" इति पाठो लोहपद्धतौ हेमनवकमिति नाम्ना निहितोऽस्ति तत्र लोहस्थाने हेम्नो योग इत्येवविशेषः।"

३०१—नवायस(३) में भै र र स, र.चं., र सु., र.क, ध (क्षयकेशरी) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"भैषज्यरत्नावल्यां "नवभागान्वितं लौहं समं सिन्दूरसन्निभ–" मिति येन केनाऽपि प्रकारेण भ्रष्टं पाठमासाद्य समं सिन्दूरसन्निभमित्यस्य कोऽर्थो भवेदिति सन्दिह्य रससिन्दूरं तदर्धं प्रकल्प्य स्वतन्त्रः पाठः प्रकल्पितः तत्र प्रमाद एव मूलम्। ध., र सं., र चं., र सु, र.क, एषु ग्रन्थेषु "नवभागोन्मितैस्तुल्यं लोहपारदसिन्दुर–" मिति पाठं प्रकल्प्य स्वाज्ञानं प्रकटीकृतमिति रसग्रन्थानां शोचनीयता, एवमेव बहुत्र स्थानेषु स्वाऽज्ञानेन प्राचीनपाठा भ्रष्टीकृताः सन्ति। पुनरुक्तपाठे नवीनरसप्रकल्पने च पूर्वोक्तग्रन्थेषु क्षयकेसरीति नाम स्थापितम्। यथार्थतया अयसो नवभागयुक्ततया नवायसमित्येव नामस्थापितमतो नवायसतृतीये स्थापनीयम्।

३०२—नागेन्द्ररस (३)की टिप्पणीमें अधोलिखितरसको दाखिलकरना।

"रसामृते 'नागवद्धोरसः' इति नाम्ना
"नागेनार्द्धं पारदं मेलयित्वा

वह्नौ मन्दे तेन चूर्णेन चार्द्रम्।
दत्त्वा सूक्ष्मं सद्विपं त्र्यंशमस्मा-
च्छ्लक्ष्णीभूतं मारिचं चूर्णकञ्च॥
दद्यात्तस्माद्रक्तिकैकां प्रयत्ना-
द्युक्तां वैद्यो नागपत्रेण पुंसः।
हन्याद्रोगांश्लेष्मवातप्रभूतान्
कुर्याद्देहेः पाटवं देहसौख्यम्॥"

इति पाठो निहितोऽस्ति। तत्र मूलद्रव्येषु समानताऽस्ति केवलं भागेषु व्यत्यासः कृतोऽस्ति तस्याप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः।

३०३—नागार्जुनीवटी (४)को हटादेना वह भ्रमनाशिनी वटीमें गईहै।

३०४—नाराचरस (१)की टिप्पणीमें अधोलिखितको लेना।

"रसचण्डांशौ षोडशगुणे गोमूत्रे पक्त्वा वटिकारूपं प्रणीयाऽग्निकुमार नाम स्थापितं तदकिञ्चित्करम्। तस्याऽत्रैवाऽन्तर्भावः करणीयः। गोमूत्राऽनुपानेन दत्ते तदीयाऽभीष्टसिद्धिरपि सुसाधा भविष्यति पृथक्पाठकल्पने गौरवात्।"

३०५—नाराचरस (२)में र.वो., (नाराच) रसायनप. (ज्वराङ्कुश)को दाखिलकरना।

३०६—नाराचरस (६)में अधोलिखित टिप्पणीको ग्रन्थसहित दाखिलकरना।

"रसपारिजाते कणाविश्वयोर्द्धभागौ, जयपालस्य च दशभागा इति विशेषः।"

३०७—नाराचरस (९)में र.पा.को दाखिलकरना।

३०८—नाराचरस (१४)में यो.चि.को दाखिलकरना।

३०९—नीलकण्ठरसमें र.वो को दाखिलकरना।

पवर्गीयरसोंकी विशेषसूचनाएं

३१०—पञ्चपञ्चामृतमें र.च., र.को. (सूतिकारोगनाशन)को दाखिलकरना।

३११—पञ्चवक्त्र (३)को मन्थानभैरव (१)में दाखिल करना।

३१२—पञ्चामृत (९)में चि सा को दाखिलकरके नीचे लिखेको टिप्पणीमें देना।

"चिकित्सासारे वातरक्तारिरस इति नाम। निघण्टुरत्नाकरे तु नामद्वयमपि स्थापितम् तत्तु प्रमाद एव।

३१३—पथ्यादिलोह (१)में ना.वि.को दाखिलकरना।

३१४—पानीयभक्तवटी (१)में वै.क., रसचि को दाखिलकरना और 'त्रिवृता मुस्तकञ्चैव त्रिफलात्र्यूपणन्तथा'' इसके स्थानमें "त्र्यूषणं त्रिफलामुस्तं त्रिवृता चित्रकन्तथा" ऐसा पाठकरना। भै.र., व, वै क. रसचि. इनमें शूलान्तक नामसे आयाहै।

३१५—पित्तमुद्गरके पाठको रक्तपित्ताङ्कुशमें दाखिलकरना।

३१६—पित्तान्तक (१)में भै.र.को दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना।

"यदाऽत्र माक्षिकं त्यक्त्वा सुवर्णमपि दीयते। महापित्तान्तको नाम सर्वपित्तविनाशकः॥" इति पाठो भैषज्यरत्नावल्यां परिशिष्टेऽधिकतया महापित्तान्तकेति नाम्ना दत्तः।

३१७—पित्तान्तक (२)की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना।

"र.सं, र.चं एतयोर्द्वितीयस्थाने ध., र र स. एतयोश्च स्वतन्त्रतया रक्तपित्तान्तकनाम्ना एको रसो निहितोऽस्ति तत्र ताम्रभस्म नाऽस्ति। यष्टीद्राक्षाऽमृताद्रवैश्च भावना प्रदत्ताऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः सुकरः। "माषमात्रं निहन्त्याशु रक्तपित्तं सुदारुणमित्यर्धपद्यस्य तु समावेशोऽत्रैव करणीयः।

३१८—पीयूषसुन्दररसमें र.मृ. (अमृतसुन्दरीवटी) को दाखिलकरना।

३१९—पुत्रवर्धमानरसमें र.र.स., र को. (वर्धमानरस) र र.कौ. (सन्तानवर्धमान) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

३२०—प्रमेहकेतुको हटादेना वह हरिशङ्कररस (२) में गया है।

३२१—बहुमूत्रान्तक (२)में भै र को दाखिलकरना।

३२२—बालरोगान्तककी टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको दाखिलकरना।

"भैषज्यरत्नावल्यामस्मिन्नेवप्रकरणे रामेश्वररस इति नाम्ना द्वितीयो योगो निहितः सोऽप्यस्माद्भिन्न एव।"

३२३—ब्रह्माण्डगुटिकाकीटिप्पणीमें अधोलिखितको देना

"रसायनसं, र.र दी, वृ यो त., र.म.मा एषु पुस्तकेषु हिरण्यगर्भगुटिकेतिनाम्ना "उत्कृत्य मूलं विषजं विदध्याद्गर्भेऽस्यसूतं कनकांशपिष्टम्। संवेष्टयेत्कोलभवेन तत्तु मांसेन पश्चाद्विपचेद्वियामम्॥धत्तूरबीजोद्भवतैलमध्ये सम्बद्धतां याति मुखस्थितोऽयम्। सम्भोगकाले दृढतां करोति वीर्यस्य दुग्धं भजतां नराणाम्॥" इति पाठो निहितोऽस्ति अत्र चतुर्थांश सुवर्णदानमात्रस्य विशेषः।"

३२४—भास्कररस (२)की टिप्पणीमें "रसकामधेनौ शूलगजकेसरी नाम्ना टङ्कणरहितोऽयमेव पाठोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावोऽस्ति।

३२५—महोदयप्रत्ययसारमें र. को. (सूर्योदय) को दाखिलकरना।

३२६—मानसूरणाद्य लोहमें त्रिकत्रयादिलोह (३) को दाखिलकरना ।

३२७—मिहिरोदयरसमें भै. र. को दाखिलकरना ।

३२८—मृगाङ्करस (१)में कुमुदेश्वर (२) को दाखिल करना ।

३२९—मृतसञ्जीवन (१०)को सन्धिवातारिकी टिप्पणीमें लेजाना ।

३३०—मृत्युञ्जय (१९) को टिप्पणीसहित सुवर्णयोग (१०) में दाखिलकरना ।

अन्तःस्थीयरसोंकी विशेषसूचनाएं

३३१—यक्ष्महर को हटादेना यह राजयक्ष्मकरिमत्तकेमगीमें गयाहै

३३२—रत्नेश्वर (१) में भै र. को दाखिलकरना ।

३३३—रसपर्पटी (१) में गन्धकपर्पटीको ग्रन्थसहित दाखिलकरना ।

३३४—रसपिष्टिकामें रसेन्द्रम (हेमपिष्टिका) को दाखिल-करना ।

३३५—रसवरकीटिप्पणीमें उदयभास्कर (१०), ताम्रपर्पटी २, ताम्रयोग (७), ताम्रयोग (१३), ताम्रेन्द्ररस, त्रिनेत्र (३), त्रिनेत्र (७), इनरसोंका अन्तर्भाव होगयाहै इनको मूलपाठोंमेंसे हटादेना और अधोलिखितको रसवरकी टिप्पणीमें दाखिलकरना—

"र चि, यो र., र. सि., र चं., ध., वै चि , चि सा , र र , नि र., र.कौ. चि क्र , भै.र., र.सं , र त , रसायनसं , र क , व.रा , र. (मा.), भै सा र सु , र का, यो म , एषु पुस्तकेषु हृदयार्णव नाम्ना "शुद्धं सूतं समं गन्धं मृतं ताम्रं तयोः समम् । मर्दयेत्त्रिफलाकाथैः काकमाचीद्रवैर्दिनम् ॥ चणमात्रां वटीं खादेद्रसोऽयं हृदयार्णवः । काकमाचीफलं कर्षं त्रिफलापलसंयुतम ॥ द्वात्रिंशत्तोलकं तोयं क्वाथमष्टावशेषितम । अनुपानं पिबेच्चात्र हृद्रोगे च कफोत्थिते ॥" इति पाठोनिहितोऽस्ति "

३३६—रससिन्दूर (१) में र. स (सर्वाङ्गसुन्दर) को दाखिलकरना और र चि , र.का , र.सु., इनग्रन्थोंकोभी दाखिलकरना ।

३३७—रसेश्वररस (८) में प्रारम्भका "रसोपरसलोहानि धान्याभ्रञ्च विशेषत ," यह आधाश्लोक रहगयाहै उसे जोड़देना और र का. (सर्वेश्वर) को दाखिलकरना ।

३३८—लीलाविलास (२)में चन्द्रकान्त (२)को दाखिलकरना केवल भावनामें अन्तरहै ।

३३९—लोकनाथ (१२) की टिप्पणीमें अधोलिखितको लेना ।

"चि.क्र., नि.र., वै.चि. र.कौ., एषु पुस्तकेषु हिरण्यगर्भ नाम्ना "निष्कद्वयं पारदभस्मनस्तु प्रगृह्य हेम्नश्च तदर्धभागम । निष्कद्वयं शोधितगन्धकस्य हुताशनद्रावयुतं समस्तम ॥ सम्मर्द्य संशोष्य पुनर्द्वियाममन्ते वराटीः खलु तेन पूर्याः । तन्मृन्मये रोध्य सुपुष्टभाण्डे तद्वै गजाख्ये सुपुटे पचेच्च ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । तस्याऽत्रैवान्तर्भावः समुचितः तदपेक्षयाऽत्र सुवर्णस्य द्वैगुण्यं दृश्यते परन्त्वेतद् द्वैगुण्यं लोकनाथे नियोजनेऽपि क्षत्यभावोऽस्ति प्रत्युत गुणवृद्धिरेव भविष्यति ।"

३४०—लोहपञ्चककी टिप्पणीमें अधोलिखितको लेना—"गदनिग्रहे त्रिकटुलोहयोगेति नाम्ना " त्रिकटु लोहचूर्णञ्च द्वयमेतत्समांशकम् । पीतमुष्णाम्भसा हन्ति शोफरोगमसंशयम् ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति विशेषाऽभावादेतस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः ।"

३४१—वह्निरस (२)में रसराजरस (द्वितीय) और र.मृ (जलोदरहर)को दाखिलकरना ।

३४२—वातगजाङ्कुश (१) की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना ।

"वैद्यचिन्तामणौ द्वितीयस्थाने यत्किञ्चिद्भेदं कृत्वा कफवातारिनाम्ना "मृतं सूतं तीक्ष्णकान्तं तालं माक्षिकगन्धकम् । तुर्यांशं मर्दयेत्खल्वे वातारेरार्द्रकोद्भवैः ॥ भृङ्गजैः काकमाच्युत्थैर्गिरिकन्याद्रवैर्दिनम् । मर्दितं भाण्डगं रुद्ध्वा पचेन्मन्दाग्निना दिनम ॥ व्योपाग्निगन्धकविषं सूरणाऽभयटङ्कणम् । समांशं चूर्णितं मिश्रं तुल्यांशं पूर्वपाचितम् ॥ त्रिदिनं मर्दयेद्द्रावैर्मुण्डीनिर्गुण्डिभृङ्गजैः । अष्टगुञ्जामितं खादेत्कफवातनिकृन्तनम् ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति । तत्र विशेषाऽभावादस्मिन्नेवान्तर्भवति ।

३४३—वातगजाङ्कुश (३)को हटादेना वह स्पर्शवातारिकी टिप्पणीमें गयाहै ।

३४४—वातराक्षस (२)में व्यास को दाखिलकरना ।

३४५—विश्वतापहरणरसमें यो च (त्रैलोक्यडम्बर) को दाखिलकरना ।

ऊष्मरसोंकी विशेषसूचनाएं

३४६—शतावरीमोदक में भै र.को दाखिलकरना ।

३४७—शृङ्खलावातनाशनमें वै चि को दाखिलकरना इसमें त्रिगुणाख्यनामहै ।

३४८—सन्निपातसूर्यमें र मृ. (सन्निपातकालानल) को दाखिलकरना।

३४९—सर्वतोभद्रवटीमें भै र.को दाखिलकरना।

३५०—सुवर्णयोग (१०) में र.र.कौ., र र.स.को दाखिलकरना और "एतद्योगार्थयन्त्र्यभिमन्त्रणस्थाने खदिरभावनां प्रदाय योगो निष्पादितः" इसको टिप्पणीमें देना।

३५१—सूतभस्मयोग (१६) में रसायनसं., र का., र.क ल (ह्योगहर) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना।

३५२—स्खाल्त्यारिमें भै र को दाखिलकरना।

आपाततो विभिन्नरसानामेकीकरणदिग्दर्शनम्

(१)—तृतीयाऽग्निकुमाररसे द्वितीयाग्निकुमारस्य द्वितीयविजयरसस्य चान्तर्भावः करणीयः। द्वयोरपि तदपेक्षया विषशिग्रुमूलयोरभावः। द्वितीयाऽग्निकुमारे द्विक्षारस्थाने त्रिकटुर्नियोजितो भावनायाश्च शिग्रुर्नास्ति। विजयरसे भावनासमानता दृश्यते। अतस्तृतीयाऽग्निकुमारे त्रिकटोर्नियोगं कृत्वा एक एव पाठः सम्पादनीयः।

(२)—४२ सङ्ख्याकाग्निकुमाररसे ११, १८, २२, २३, २४, ३८, ४३, ४४, ४५, ४६ सङ्ख्याकाग्निकुमाररसानां, अमृतपालरसस्य, प्रथमचण्डेश्वरस्य, शूलेभसिंहिनीगुटिकायाश्चान्तर्भावः करणीयः। ४२ सङ्ख्याकाग्निकुमारापेक्षया एकादशतमेऽग्निकुमारे मरिचाऽभावः, द्रव्यप्रमाणे ताम्रपारदगन्धकाऽमृतानां ८, १२, २० (अनुपातेन २-३-५) भागाः, भावनायां निम्बुकभृङ्गार्द्रकाऽमृता गृहीताः सन्ति पाकस्य चाऽभावोऽस्ति। अष्टादशसङ्ख्याकाग्निकुमारे ताम्राऽभावः, पारदगन्धकयोः समभागयोः कज्जलीं कृत्वा गन्धकचतुर्थांशं विषं नियोज्य पाकानन्तरं अर्धाऽर्धभागे विषमरिचे मिश्रयित्वा योगो निष्पादितः। द्वाविंशतितमेऽग्निकुमारे पारदगन्धकविषताम्रभस्मनां प्रमाणे समानता मरिचाऽभावश्च दृश्यते, पाकानन्तरं रसार्धममृतं निक्षिप्य चित्रकत्रिकटुसैन्धवयुक्तेनाऽऽर्द्रकरसेन भावना प्रदत्ताऽस्ति। त्रयोविंशेऽग्निकुमारे ताम्राऽभावः, पारदगन्धकमरिचानां समानता दृश्यते। पाकात्प्राक् विषं पारदाच्चतुर्थांशं पाकानन्तरञ्चाष्टमांशं नियोजितम्। चतुर्विंशतितमे त्रिकटुत्रिफलयोराधिक्यं, प्रमाणे च सर्वद्रव्याणां समानता, निर्गुण्ड्यग्निदमनीवह्निव्याघ्रीद्वयपातालतिन्दुकीन्द्रवारुणीनां भावना विशेषतया दृश्यन्ते। अष्टत्रिंशसङ्ख्याके तीक्ष्णमधिकं, मरिचाऽभावः, पाकानन्तरञ्च विषमपि न नियोजितम्। त्रिचत्वारिंशत्तमे पारदगन्धकविषताम्राणां प्रमाणे समानता, पाकानन्तरं पारदसमं मरिचं चतुर्थांशञ्च विषं नियोज्य योगो निष्पादितः। पञ्चचत्वारिंशत्तमे ताम्रमरिचयोरभावः, तालकमधिकं दृश्यते। प्रमाणे च पारदगन्धकतालानां १-२-३ भागाः, पाकानन्तरञ्च षोडशांशं विषं नियोजितमस्ति। षट्चत्वारिंशत्तमेऽग्निकुमारे तालकमधिकम्, मरिचाऽभावः, प्रमाणे सर्वसमता, भावनायाञ्चार्कमधिकतया दृश्यते। अमृतपालरसे मरिचाऽभावः समभागपारदगन्धकविषाणां कज्जलीं ताम्रपात्रेण पिधाय हण्डिकायां पाकः कृतोऽस्ति। प्रथमचण्डेश्वररसे रसगन्धकविषताम्राणि समभागानि गृहीत्वाऽऽर्द्रकनिर्गुण्ड्योः प्रतिसप्तभावनाः प्रदाय योगो निष्पादितः। अत्र कूपिकापाकराहित्यं मरिचाभावश्च। शूलेभसिंहिनीगुटिकायां ताम्राऽभावः, एकैकभागयोः पिप्पलीनागरयोराधिक्यं, प्रमाणञ्च पारदः $\frac{1}{2}$, गन्धकः $\frac{1}{2}$, विषं १, मरिचानि ३ इति क्रमोऽस्ति। भावनायामपि आर्द्रकैरण्डौ गृहीतौ।

उपरिनिर्दिष्टेषु पाठेषु कुत्रचित् तीक्ष्णस्य कुत्रचिद्धरितालस्य पिप्पलीनागरत्रिफलानां वा नियोगो मूलद्रव्येषु दृश्यते। भावनायाञ्च निम्बुकभृङ्गार्द्रकाऽमृतानिर्गुण्ड्यग्निदमनीचित्रकव्याघ्रीद्वयपातालतिन्दुकीन्द्रवारुण्येरण्डार्काः चित्रकत्रिकटुसैन्धवयुक्ताऽऽर्द्रकरसश्चाऽधिकतया दृश्यते। एषां सर्वेषामनुष्ठानं द्विचत्वारिंशत्तमेऽग्निकुमारे कृत्वैक एव योगः सम्पादनीयः। एतेन क्षत्यभावो पाठेषु महती लघुता च भविष्यति।

(३) चतुर्दशाऽग्निकुमारस्याऽग्निप्रदरसेऽन्तर्भावः करणीयः। अग्निकुमारे पाकानन्तरमेव षडंशं विषं निक्षिप्तं त्रिकटुस्थाने मरिचानि नियोजितानि, हंसराजभावनायाश्चाधिक्यं दृश्यते। अग्निप्रदरसे हंसराजभावनानुष्ठानेनैव क्षत्यभावो भविष्यति।

(४) विंशतिचत्वारिंशत्सङ्ख्याकाग्निकुमारयोर्नवमवडवानलरसस्य चान्तर्भावःक्षुधासागररसे करणीयः। यतो विंशतितमेऽग्निकुमारे क्षुधासागराऽपेक्षया विषराहित्यं, गन्धकटङ्कणौ द्विद्विभागौ, त्रिक्षारस्थाने द्विक्षारग्रहणं कृतमस्ति, भावनायाञ्चाऽऽर्द्रकं गृहीतम्। चत्वारिंशत्तमे ताम्राऽधिक्यं, त्रिफलापिप्पल्योरभावः, विषस्यैकभागो भावनायाञ्चार्द्रकं गृहीतमस्ति। वडवानले विषाभावो भावनायाञ्च निर्गुण्डीगृहीताऽस्ति। क्षुधासागररसेऽपि ताम्रं

नियोज्याऽऽर्द्रकनिर्गुण्ड्योर्भावनादाने क्षत्यभावोऽस्ति पाठह्रासश्च महत्फलम् ।

(५)—सप्तचत्वारिंशत्तमेऽग्निकुमाररसे ४,५,७,६, २५ सङ्ख्याकाग्निकुमाररसानां शृङ्खलाख्यरसस्य चान्तर्भावः करणीयः यतश्चतुर्थेऽग्निकुमारे ४७ सङ्ख्याकपाठापेक्षया विषटङ्कणौ सूतसमौ,शङ्खवराटयोश्च द्वौद्वौ भागौ नियोजितौ । पञ्चमेऽग्निकुमारे टङ्कणःसूतसमः, शङ्खवराटकौ द्विद्विभागौ नियोजितौ । षष्ठे शङ्खमरिचयोरभावः, प्रमाणे सर्वेषां द्रव्याणां समानता त्रिकटोराधिक्यञ्च दृश्यते । सप्तमे शङ्खस्थाने स्वर्जिका गृहीता द्रव्यप्रमाणेऽपि पिप्पलिनागरस्वर्जिटङ्कणकपर्दानामेकैको भागो निहितोऽस्ति।पञ्चविंशतितमेऽग्निकुमारे विषटङ्कणयोरभावः, प्रमाणे च पारदः $\frac{1}{2}$, गन्धः $\frac{1}{2}$ शङ्खः १, वराटिका २, मरिचानि ३ इत्यन्तरं कृतमस्ति । शृङ्खलाख्यरसे विषाऽभावः, प्रमाणेऽपि शङ्खः ४, कपर्दः ८, मरिचानि १२, टङ्कणं $\frac{1}{2}$ इति क्रमः प्रदर्शितः । उपरि निर्दिष्टेषु पाठेषु त्रिकटुस्वर्जिकयोराधिक्यं भावनासमानता चास्ति । कुत्रचित् नागवल्ल्यार्द्रकवह्निशिग्रुमूलमातुलुङ्गानां भावनानियोगोऽधिकतया कृतोऽस्ति । प्रथमनिर्दिष्टरससङ्केतकलिकोक्तपाठे त्रिकटुस्वर्जिकयोः सर्वासाञ्च भावनानामनुष्ठानं कृत्वैक एव पाठः कल्पनीयः । एतेन पाठलाघवे महदुपकृतं भविष्यति ।

(६)—प्रथमकुष्ठगजकेसरिरसे द्वितीयाऽग्निगर्भरसस्य १५,२७,२८,३८,६० सङ्ख्याकतालकेश्वराणाञ्चान्तर्भावः करणीयः। अग्निगर्भरसे रसगन्धकौ समौ तालकञ्च द्विगुणं गृहीत्वा गुञ्जारसेन त्रिदिनं विमृद्य समभागताम्रपात्रे लेपं विधाय वालुकायन्त्रे द्वियामान्तः पाकः कृतोऽस्ति । पञ्चदशे सप्तविंशतितमे च तालकेश्वरे समभागौ पारदतालकौ कारवल्लीरसेन सप्तदिनपर्यन्तं विमृद्य समभागताम्रसम्पुटे धृत्वा दिनैकं वालुकायन्त्रेण पाकः कृतोऽस्ति । अष्टाविंशतितमे तालकार्धं पारदं चतुर्थांशञ्च गन्धकं गृहीत्वा कज्जलीकृत्य कारवल्लीरसेन विमृद्य ताम्रपात्रे लेपयित्वा शरावेण मुखं पिधाय अङ्गुष्ठद्वयोन्नतं सूत्रैर्बद्ध्वा वालुकायन्त्रे धान्यस्फुटनपर्यन्तं पाकः कृतोऽस्ति । अष्टत्रिंशत्तमे शुद्धतालकं स्थाल्यां निधाय समभागताम्रपात्रेणाच्छाद्य धान्यस्फुटनपर्यन्तं विपाच्य ताम्रपात्रमुद्घाट्य तालकसमं गन्धकं दत्त्वा पूर्वविधानेन विपाच्य समभागं पारदभस्म मेलयित्वा योगो निष्पादितः । षष्टितमे तालकभस्मगन्धकावेकैकभागौ ताम्रभस्म द्विभागं गृहीत्वा वालुकायन्त्रे पाकः कृतोऽस्ति । एते सर्वेऽपि रसकङ्कालीयोक्तकुष्ठगजकेसरीरसेऽन्तर्भावनीयाः । कुष्ठेषु सोत्थताम्रभस्मनोऽप्युपयोगो न दोषावहः प्रत्युत गुणप्रकर्षायैव । तत्रैव गुञ्जाकारवल्लीभावनानुष्ठानमधिकतयाऽपि न निषिध्यते ॥

(७)—एवमष्टमज्वराङ्कुशे त्रयोविंशतितमतालकेश्वरस्य अष्टत्रिंशत्तम ज्वराङ्कुशस्य चान्तर्भावः कर्तुमुचितः ।

(८)=एवं ७, ९, ३०, ३२, ३६, ३७, ४२, ४६,४८, ४९, ५०, ५१, ५५, ५८, ६४, ६५, ७७ एतत्सङ्ख्याकतालकेश्वराणां षट्त्रिंशत्तमज्वराङ्कुशस्य चाष्टमतालकेश्वरेऽन्तर्भावः कर्तुमुचितः ।

(९)=एवं २२, ३४, ४०, ४५, ५९ सङ्ख्याकतालकेश्वराणामेकषष्टितमे तालकेश्वरेऽन्तर्भावः करणीयः ।

(१०)=एवं ६, १४, १६, ६२ सङ्ख्याकतालकेश्वराणां ७८ तमे तालकेश्वरेऽन्तर्भावः कर्तुमुचितः ।

(११)=एवं प्रथमत्रिकट्वादिलोहे गुडूचीलौहस्य, १, २, ३, ४, ५, सङ्ख्याकत्रिकत्रयादिलोहानां, तृतीयत्रिफलालोहस्य, तृतीयनवायसलोहस्य, द्वितीयलक्ष्मणालोहस्य चान्तर्भावः करणीयः ।

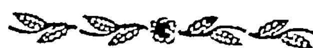
(१२)=एवं द्वितीयत्रिकट्वादिलोहे २, ८, १२, सङ्ख्यांकत्रिफलालोहानां, प्रथमपञ्चमधात्रीलोहयोः, प्रथमपथ्यादिलोहस्य, प्रथमशर्करालोहस्य, षष्ठमण्डूरयोगस्य चान्तर्भावः कर्तुमुचितः ।

(१३)=एवं सप्तमत्रिफलालोहेऽमृतार्णवलोहस्य प्रथमपञ्चमत्रिफलालोहयोश्चान्तर्भावः करणीयः ।

(१४) एवं प्रथमनवायसलोहे चतुर्थनवायसलोहस्य, लोहपञ्चकस्य, २, ३, ४, ६, सङ्ख्याकविडङ्गलोहानां, शोथारिलोहस्य चान्तर्भावः कर्तुमुचितः ।

(१५)=एवं द्वितीयलोहयोगे द्वितीयतृतीयशर्करालोहयोरन्तर्भावः करणीयः ।

(१६)=एवमेव लोहगुटिकायां प्रथमगुडमण्डूरस्य, गुडलोहस्य, प्रथमद्वितीयगोमूत्रमण्डूरयोः, चतुःसममण्डूरस्य, जीवितवर्धनस्य, तक्रमण्डूरस्य, द्वितीयतृतीयत्रिफलामण्डूरयोः द्वितीयपथ्यादिलोहस्य मधुमण्डूरस्य, प्रथमतृतीयपञ्चमलोहयोगानाञ्चान्तर्भावः कर्तुमुचितः ।



नामान्तरसे आयेहुए रसोंकी सूची*

अगस्तिवटी	स्वर	८५
अग्निकुमाररसः	स्वर	९३
अग्निकुमाररसः	पु	५५५
,,	अन्तःस्थ	१०६
,,	ऊष्म	२६६
अग्निगर्भावटी	कु	३७०
अग्नितुण्डी	कु	३२९
अग्निदीपनीवटी	अन्त स्थ	२७०
अग्निप्रभृतवटी	क्ष	७०८
अग्निमान्द्यवटी	स्वर	६३
अग्निमुखचूर्णम्	अन्त.स्थ	४४४
अग्निरसः	तु	३७९
,,	पु	४१९
अग्निसूतरस	स्वर	३२
अग्निसूनुरसः	स्वर	३२
अजीर्णकण्टकरस	तु	२४
अञ्जनरस	पु	७१७
अतिसारस्तम्भनम्	क्षुद्र	१८०
अनङ्गसुन्दरः	कु	१८७
,,	पु	२५
,,	पु	५११
अपूर्वमालिनीवसन्त.	अन्तःस्थ	४३१
अपूर्वहेमगर्भ·	ऊष्म	६३८
अभिनवकामदेवः	पु	५११
अभ्रगर्भपोट्टली	ऊष्म	६४४
अमरसुन्दरी	अन्तःस्थ	५०४
अमृतकलानिधिरस	स्वर	१८५
अमृतपर्पटीरसायनम्	अन्त.स्थ	७३
अमृतप्रभरसः	स्वर	१८९
अमृतार्णव	ऊष्म	२२
अमोघरामवाणरस	अन्तःस्थ	१८२
अयोरजीयम्	अन्त स्थ	३०२
अयोरज. प्रभृतिचूर्णम्	पु	८२
अर्कादिगुटी	ऊष्म	६९
अर्द्धयामिकरस·	क्षुद्र	२०६
अर्द्धाङ्गवातारिरस.	कु	५८
अर्शश्शान्तिरस.	तु	१६६
अर्शोघ्नरस	ऊष्म	३२८
अष्टादशाङ्गलोहम्	कु	२६९
अक्षादिलोहम्	कु	४७४
आदित्यप्रभापाकताम्रम्	ऊष्म	५३३
आनन्दभैरवरस.	स्वर	३१०
,,	पु	६७१
आनन्दरस	स्वर	३१०
आमवातान्तकरसः	स्वर	३२२
,,	अन्तःस्थ	५८६
आज्ञासिद्धरसायनम्	कु	५६
इच्छाभेदीरसः	कु	३९५
इच्छाभेदीरस	तु	४३४
उदग्रकुष्ठघ्न·	ऊष्म	५२८
उदयभास्कररस.	स्वर	३७६
,,	अन्तःस्थ	१०४
,,	अन्त.स्थ	११२
उदयमार्तण्डरस.	ऊष्म	५३३
उदयादित्यरस	अन्त.स्थ	५४
उदरजन्तुविध्वंसनरस.	कु	३३४
उदरारियोग	अन्तःस्थ	४४४
उदरारिरस·	स्वर	३७५
,,	ऊष्म	३५९
उद्दामरस.	स्वर	३५५
उद्भूमाख्यरस	स्वर	३९९
उन्मादाङ्कुशरस	स्वर	४०६
उपदंशहरीवटी	ऊष्म	५१२
उपदंशभेकेसरीरस	स्वर	४१३
उमाशम्भुरसः	पु	२७२
कनकप्रभा	कु	१६
,,	कु	१९
कनकसङ्कोचरस	ऊष्म	२४०
कनकसुन्दरी	कु	१५३
कनकाग्निकुमार	स्वर	३२
कन्दर्पकोकिलरस	कु	३२
कपर्दपोट्टलीरस	कु	२४९
कपर्देशरस	कु	३६
कफकुलकेतुरस.	कु	४८
कफारिरसः	कु	४१
करवीररस	अन्तःस्थ	१०५
कर्पूरचन्द्रोदयरसः	क्षुद्र	७४
काञ्चनमोहनरस·	कु	१२९
कान्तपिष्टीरस·	कु	३५२
कामदीपकरस.	क्षुद्र	१९
कामदेवरस	कु	१८८
कामदेवस्तम्भनम्	कु	१६४
कामधेनुरसः	कु	४०१
कामलाहलीमकविध्वंसनरस·	कु	१७८
कामिनीदर्पघ्नरस	कु	१८८
कामेश्वरमोदक.	पु	२०९
कामेश्वररस.	अन्तःस्थ	५०९
कामेश्वरवटी	कु	१९९
कारुण्याम्भोधिरस	पु	२३६
कारुण्यसागररस	कु	६२
कार्श्यपोट्टली	कु	२४९
कालवज्रेश्वररस	कु	२२१
कालाग्निभैरवरस	पु	३०९
कालाग्निरुद्ररस	स्वर	६३
,,	कु	२४६
कासकर्तरीरस·	पु	४१९
कासकेसरीरस.	कु	२६०
कासघ्नरस	कु	२६२
कासनाशनरस.	कु	२६२
कासमर्दनीवटी	कु	२६२
कासश्वासारिरस.	पु	४१९
कासर्संहारभैरवरसः	अन्तःस्थ	५४२
कासहावटी	कु	२६२
कासीसवद्धरस	ऊष्म	२२३
कीटमर्दरस·	कु	२७१
,,	कु	३२६
कुटजलेह	कु	३८८
कुमुदरस	पु	५६४
कुलवटी	कु	२८३
कुष्ठघ्नरस	अन्त स्थ	१०४
कुष्ठतालकेश्वर	तु	१०२

* जुदे जुदे ग्रन्थोंमें एकही रसका जुदे जुदे नामोंसे ग्रन्थकारोंने सग्रहकियाहै उनमेंसे जिसग्रन्थकापाठ अच्छाहै उसको उसीग्रन्थमें आयेहुए नामसे इसग्रन्थमे सग्रहकरके शेपनामोंको ग्रन्थसहित टिप्पणीमें अथवा शीर्षकमें नामान्तरसे दाखिलकियाहै । इसलिये जो जो रस जिसजिममें दाखिलहैं उनकी यह सूचीहै जैसे 'अगस्तिवटी' यह स्वरसख्या ८५ अर्थात् अग्निसन्निभावटीमे दाखिलहै इमीतरह अन्यत्रभी समझना।



Index of the Introduction

अथ रसयोगसागरस्योपोद्घातीयविषयानुक्रमणिका

अथ प्रथमभागरसयोगसागरीयशुद्धिपत्रकम्

पृष्ठे	पङ्क्तौ	अशुद्धम्	शुद्धम्
२४ (उपोद्घातीये)	७	प्रजापति (दक्ष.) | इन्द्रः	प्रजापतिः (दक्षः) | अश्विनौ | इन्द्रः
९६ (उपो०)	२८–२९	क्लोमभिर्लावां चन्द्रमसां तर्पणेन क्लोम्नो द्रवाधारत्वं गोलत्वं प्रवहद्द्रवत्वञ्च विज्ञापितम् ।	वल्मीकान् क्लोमभिरित्यत्र क्लोम्ना वल्मीकानां तर्पणेन क्लोम्नो गोलत्वमन्तः सावकाशत्वं विलक्षणनाल्याकारत्वं सूचितम् । शतपथादौ नानास्थले चन्द्रसादृश्याद्द्रवाधारत्वं गोलत्वं प्रवहद्द्रवत्वञ्च विज्ञापितं भवति अतएवाऽस्मिन्मन्त्रे क्लोमभिर्लौभिरिति विलक्षणो विन्यासः कृतोऽस्ति ।
९९ (उपो०)	९–१०–११	अत्र तिलमिलनेन क्लोमकथितं तत्पिपासास्थानमित्यभिप्राय इति दीपिकायामाढमल्लेन व्याख्यातम्—तच्च मधुकोशदर्शनसंस्कारमूलकं प्रतिभाति ।	तिलन्तु शोणितकिट्टप्रभवं दक्षिणाश्रितं यकृत्समीपे क्लोमसंज्ञकं भवति तच्च जलवाहिसिरामूलं कथितमतएव तृष्णाच्छादनकं प्रतिपादितम् । तृष्णा पिपासा तस्याश्छादनं करोतीत्यर्थः" इति दीपिकायामाढमल्लः

पृष्ठे	पङ्क्तौ	अशुद्धम्	शुद्धम्
१५२ (उपो.)	१३	प्राणवहेस्रोतसी शा. ९।१२ Pulmonary arteries	प्राणवहे द्वे शा. ९।१२ Two Bronchi
१५२ (उपो.)	२१	सञ्ज्ञावहानि उ. ६१।८	सञ्ज्ञावहानि उ. ६१।८ सञ्ज्ञावहनाड्यः उ. ४६।६
१५२ (उपो.)	२३	उदकवहेस्रोतसी शा. ९।१२ Alimentary and Lymphatic Systems ..	उदकवहे द्वे शा. ९।१२ 1 Mouth; Pharynx & Œsophagus 2 Common Duct formed by Junction of the Bile & Hepotic Ducts and Pancreatic Duct:
७ (र.यो.)	३५	तुचूर्णल्यं	चूर्णतुल्यं
७	६३–६४	और १½ सेर शक्कर डालकर ...	३ सेर शक्कर और २ पल घृत डालकर
९	१२	कचुर, कान्तलोह	कचूर, वेलगिरी, त्रिकटु, धनियां जायफल, लौंग, कपूर, कान्तलोह
१०	४२	र. रा. सु.	र. सु.
१०	४४	गन्धक, प्रत्येक	गन्धक, टङ्कण प्रत्येक
१५	१०	छनकरके	छानकरके
१५	३०	लेकर मसुर	लेकर सवके वरावर चित्रकमूल डालकर मसूर
२५	३४–३५	वछनाग, त्रिक्षार (यवक्षार, सज्जी और सुहागा) और ...	वछनाग, कान्तलोह और
२९	५४	रखना और शीशीके	रखना ऊपरसे २–२ अथवा आधाआधाकर्ष शुद्धवछनाग और हरिताल डालकर शीशीके
२९	६५	पैरोंकासोना	पैरोंकी सूजन
३३	५४	पीतल, गन्धक	पीतल, हरिताल, गन्धक,
४०	८	संचल, हींग, दालचीनी, हल्दी, सुवर्ण	संचल, विष, दालचीनी, हल्दी, मानकन्द और सुवर्णभस्म
४०	२६	एकदिनसागकेक्वाथसे	१–१ दिन साग और खिरनीके द्रवोंसे
४०	४९	गोमूत्रर्वा	गोमूत्रैर्वा
४४	३६	मथेश	महेश
४९	२६	लेना और	लेना, इन तीनोंके वरावर त्रिकटु और
५५	२३	काडौभस्म	कौडीभस्म
५६	७	लेकर धतूरेके	लेकर सवकी बरावर मिरच मिलाकर धतूरेके
६६	२	४२ तोले	२४ तोले
६८	१६–१७	उसमें २–२ तोले	उसमें १–१ तोला
६८	५०	मिलाकर बहुत	मिलाकर घी और मधुके साथ बहुत
७१	३३	साथ खाना	साथ मधुमें मिलाकर खाना
७४	४९	गूलर	वड़

६७४–२ पङ्क्ति १९ के नीचे

शुद्धिपत्रम्

पृ.	पं.	अशुद्धम्	शुद्धम्
१८६	८	मापक	धान्यमाषक
,,	१०	माषकों	धान्यमाषकों
,,	२४	एकमाशेसे ४ माशेतक	एकधान्यमाषकसे ४ धान्य[illegible] अर्थात् आधी रत्तीसे २ रत्तीतक
३६६	२९	३ माशेकी	३ रत्तीकी

धारत्वं गोलत्वं प्रवहद्द्रवत्वञ्च विज्ञापितं भवति अतएवाऽस्मिन्मन्त्रे क्लोमभिर्लो-भिरिति विलक्षणो विन्यासः कृतोऽस्ति ।

९९ (उपो०)९–१०–११

अत्र तिलमित्यनेन क्लोमकथितं तत्पिपासास्थानमित्यभिप्राय इति दीपिकायामाढमल्लेन व्याख्यातम्–तच्च मधुकोशदर्शनसंस्कारमूलकं प्रतिभाति ।

तिलन्तु शोणितकिट्टप्रभवं दक्षिणाश्रित यकृत्समीपे क्लोमसंज्ञकं भवति तच्च जल-वाहिसिरामूलं कथितमतएव तृष्णाच्छादनकं प्रतिपादितम् । तृष्णा पिपासा तस्याश्छादनं करोतीत्यर्थः" इति दीपिकायामाढमल्लः

पृष्ठे	पङ्क्तौ	अशुद्धम्		शुद्धम्
१५२ (उपो.)	१३	प्राणवहेस्रोतसी शा. ९।१२ Pulmonary arteries	...	प्राणवहे द्वे शा. ९।१२ Two Bronchi
१५२ (उपो.)	२१	सञ्ज्ञावहानि उ. ६१।८ ...	...	सञ्ज्ञावहानि उ. ६१।८ सञ्ज्ञावहनाड्यः उ. ४६।६
१९२ (उपो.)	२३	उदकवहेस्रोतसी शा. ९।१२ Alimentary and Lymphatic Systems	...	उदकवहे द्वे शा. ९।१२ 1 Mouth; Pharynx & Œsophagus 2 Common Duct formed by Junction of the Bile & Hepotic Ducts and Pancreatic Duct:
७ (र.यो.)	३५	तुचूर्णल्यं	...	चूर्णतुल्यं
७	६३–६४	और १½ सेर शक्कर डालकर	...	३ सेर शक्कर और २ पल घृत डालकर
९	१२	कचूर, कान्तलोह ...	...	कचूर, बेलगिरी, त्रिकटु, धनियां जायफल, लौंग, कपूर, कान्तलोह
१०	४२	र. रा. सु.	...	र. सु.
१०	४४	गन्धक, प्रत्येक		गन्धक, टङ्कण प्रत्येक
१५	१०	छनकरके	...	छानकरके
१५	३०	लेकर मसूर	...	लेकर सवके वरावर चित्रकमूल डालकर मसूर
२५	३४–३५	बछनाग, त्रिक्षार (यवक्षार, सज्जी और सुहागा) और	...	वछनाग, कान्तलोह और
२९	५४	रखना और शीशीके ...	...	रखना ऊपरसे २–२ अथवा आधाआधाकर्ष शुद्धवछनाग और हरिताल डालकर शीशीके
२९	६५	पैरोंकासोना	...	पैरोंकी सूजन
३३	५४	पीतल, गन्धक	...	पीतल, हरिताल, गन्धक,
४०	८	संचल, हींग, दाल्चीनी, ... हल्दी, सुवर्ण	...	संचल, विष, दाल्चीनी, हल्दी, मानकन्द और सुवर्णभस्म
४०	२६	एकदिनसागकेकाथसे ..	...	१–१ दिन साग और खिरनीके द्रवोंसे
४०	४९	गोमूत्रर्वा	...	गोमूत्रैर्वा
४४	३६	मयेश	..	महेश
४९	२६	लेना और	...	लेना, इन तीनोंके वरावर त्रिकटु और
५५	२३	काडीभस्म	..	कौडीभस्म
५६	७	लेकर धतूरेके	...	लेकर सवकी वरावर मिरच मिलाकर धतूरेके
६६	२	४२ तोले	..	२४ तोले
६८	१६–१७	उसमें २–२ तोले ..	..	उसमें १–१ तोला
६८	५०	मिलाकर वहुत	..	मिलाकर घी और मधुके साथ वहुत
७१	३३	साथ खाना	...	साथ मधुमें मिलाकर खाना
७४	४९	गुलर	...	वड़

पृष्ठे	पङ्क्तौ	अशुद्धम्	शुद्धम्
८१	५	खुरासानी) गजपीपल	खुरासानी) तगरगण्ठोला, गजपीपल
८९	३६	लोहभस्म ३ भाग और मुशली ४ भाग	गन्धक ३ भा०, लोहभस्म ४ भा० और मुशली ५ भाग
८९	४०	एकएक	सातसात
९०	४३	लोहचूर्ण ३ भाग	लोहचूर्ण २ भाग
९४	५०–५१	सुगन्धवाला, जीरा	सुगन्धवाला, नागरमोथा, पाठा, जीरा,
१०२	८	विवर्जयेरिक	विवर्जयेदरिक
१०६	१८–१९	रसर्से और ७ वार सर्पविषसे, ७ वार वन्दाल्केरससे और ..	रससे और
१०६	४४–४५	तीक्ष्णलोह ४ भाग, ताम्रभस्म ५ भाग सोनाभाखी ६ भाग, और शुद्धजमाल-गोटा ७ भाग	तीक्ष्णलोह ४ भाग, हिङ्गुल ५ भाग, ताम्रभस्म ६ भाग, सोनामाखी ७ भाग और शुद्धजमालगोटा ८ भाग
१०६	६७	दूवकेरसमें	दूवके १ सेररसमें
१०७	६३	पञ्चपुष्पैस्तु	पञ्चपुष्यैस्तु
१०८	२७	६ पहर	१२ पहर
११४	६३	मुलहठी	पीपल
१२२	६२	राव १००	राव ८०
१२३	५	प्रत्येक $\frac{१}{२}$ तोला और शुद्धपारा ...	प्रत्येक $\frac{१}{२}$ तोला, अभ्रक, वङ्ग, लोह इनकीभस्में १–१ पल और शुद्धपारा
१२३	१०	सूजन, वादी	सूजन, शूल, वादी,
१२४	६८	खपरिया प्रत्येक	खपरिया, वङ्ग प्रत्येक
१२४	६९	अङ्कुरोंकेरससे १ पहर .. .	अङ्कुरों और घीकुंवारकेरससे १–१ पहर
१२५	१५	हरताल, सवको	हरताल, भुनासुहागा सवको
१२५	२९	कोपं	व्योषं
१२६	१	रोग, ८० वात	रोग, भगन्दर, ८० वात
१२८	४१	डालकर ३ दिन...	डालकर भंगरेकेरससे ३ दिन
१२९	२२	गन्धक, त्रिकटु	गन्धक, शुद्धविष, त्रिकटु
१३२	३६	अनार	खट्टेअनार
१५५	३९	कचूर	खजूर
१७२	१०–११	मिर्च, यवक्षार	मिर्च, पीपल, यवक्षार
१७४	३५	सोंठ	पीपल
१७५	१७–१८	और उसमें ५ पलआक	और उसमें इटसिट, भिलांवां, चित्रक, दन्ती, निसोत, इन्द्रायण, आक, विधारा, क्षीरकंचुकी, कालीमुशली, शतावर, कोयल नील, एरण्डमूल, अमलतास, वला, असन ये प्रत्येक ४ पल लेकर इनका अष्टावशेष क्वाथ और ५ पल आक
१८१	३७	१० तोले	४० तोले
१८६	५२	५ मा.	८ मा.
१८७	३४	१ तो., अथवा	१ तो , गन्धक १ तो., अथवा
१९०	३३	वाला अधिक	वाला दिनको सोना अधिक

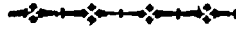
पृष्ठे	पङ्क्तौ	अशुद्धम्	शुद्धम्
१९०	४२	माल्कांगनी	गेंहुला
१९२	५५-५६	निर्गुण्डी, अदरख	निर्गुण्डी, चित्रक, अदरख
१९४	२९	केवीज) लोहभस्म	केवीज) शतावरी, लोहभस्म
२०५	६९	दोरोज़	तीनरोज़
२१०	४५	पारेकीभस्म ३ तोले	पारेकीभस्म १२ तोले
२१८	५१	गन्धक, रसमाणिक्य	गन्धक, ताम्रभस्म, रसमाणिक्य
२१९	४८	(मकोय) इन	(मकोय) कोयल, इन
२२३	१७	जीरा ये सब	जीरा, चित्रक येसब
२३३	२३	निर्गुण्डी, वज्रवल्ली	निर्गुण्डी, अडूसा, वज्रवल्ली
२३४	११	काञ्जी, सोंठ	काञ्जी, हुरहुर, सोंठ
२३४	१४	यवखार ३ पल	यवक्षार २ पल
२३४	६३	कसोंजी, चित्रक	कसोंजी, धतूरा, हंसराज, चित्रक
२४१	२६-२७	समुद्रशोष ये प्रत्येक २ तोलेलेकर ...	येप्रत्येक २ तोले, समुद्रशोष १ तोलालेकर
२४९	६५	चादीभस्म	चादी और सुवर्णभस्म
२५२	३१	वनाकरगुल्मीको	वनाकर गुडकेसाथ गुल्मीको
२५२	३३-३४	इन्द्रजव येसब	इन्द्रजव,देवदारु ये सब
२५४	३	रजतभस्म	सुवर्णभस्म
२५४	५२	सायचाटनेसे	साय १ वर्षतकचाटनेसे
२६४	२०-२१	काचभस्म येसब	काचभस्म, नागभस्म ये सब
२६४	२८	जायफल और	जायफल, धतूरेकेवीज और
२६४	५२	श्वेतकनेर और चित्रककेरसोंसे ...	श्वेतकनेर, चित्रक और कालीमुशलीकेरसोंसे
२६५	५५	जायफल	कायफल
२६५	६६	दन्ती	भांग
२७५	४२-४३	समुद्रशोप, जटामासी	समुद्रशोप, मुशली, जटामांसी
२७६	३१	गजपीपल, सेंधानमक, समुद्रशोप ...	गजपीपल, समुद्रशोप
२७७	५५-५६	सबचूर्णसेदूनी	वङ्ग और लोहसे दूनी
२७७	६५	अष्टम.	सप्तम.
२७८	३०	दालचीनी, खुरासानी	दालचीनी, मूर्वा, खुरासानी
२७८	३१	माल्कागनी, शुद्धकुचिला	माल्कांगनी, केशर, शुद्धकुचिला
२७८	३४	१० तोले	१० पल
२७९	३७	कक्षाकेवीज, येसब	कक्षाकेवीज, जटामांसी, अकलकरा ये सब
२८३	१८	शुद्धवछनाग १ भाग	शुद्धवछनाग ११ भाग
२८४	३५	चित्रक इनप्रत्येकके .. .	चित्रक, कुटकी इनप्रत्येकके
२८६	२५	कर, नीबूकेरसकी सात	कर, सहिजनकीजड़कीछाल, अमरवेल और नीबूकेरसकीसातसात
२९८	६०	ताम्रभस्म, शङ्खभस्म	ताम्र, अभ्रक और शङ्खभस्म
३०६	४४	कीजड़, दारुहल्दी	कीजड़, हल्दी, दारुहल्दी,
३०६	४५-४६	चकवड़केवीज, अगस्त्य	चकवडकेबीज, कटिवालीचौलाईकीजड़, अगस्त्य
३०६	६७	चित्रक, केवांच	चित्रक, गोरखमुण्डी, केवाच
३०९	४३	मधु २० पल	मधु १० पल
३१०	४३-४४	मैनसिल १॥। तो.	मैनसिल ९ माशे,

पृष्ठे	पङ्क्तौ	अशुद्धम्	शुद्धम्
३१३	४७	तोलाकेकाढेमें	तोलासोंठके काढेमें
३१९	१५–१६	नीम, आक और थूअरकादूध इन प्रत्येकसे १-१ रोज़ मर्दनकर	और नीमकेद्रवोंसे १–१, तथा आकऔर थूअरकेदूधसे ५–५ भावनाएं देकर
३२१	३१	वीज ये सब ...	वीज अभ्रकभस्म ये सब
३२६	२	चव्य, अदरख	चव्य, नागकेशर, पीपल, अदरख
३२६	५५	स्वर्णभस्म ३ तोले	शुद्धवछनाग और स्वर्णभस्म ३–३ तोले
३२८	२५	शुण्ठी	मुण्डी
३२८	२६	वस्तु	वसु
३२८	४७	तगर	अगर
३२९	२७–२८–२९	शुद्धगन्धक ३ भा.,सुनासुहागा ४ भा., यवक्षार ५ भा.	ताम्रभस्म ३ भा. शुद्धगन्धक ४ भा. सुनासुहागा ५ भा. यवक्षार ६ भा.
३५६	३२	५ तोले	५ पल
३५६	६०	निसोत ३ भाग	निसोत २ भाग
३८०	१४	पिप्पलीकी १–२	पिप्पली और नीबूके स्वरसकी १–१
३८१	३९	कान्तलोहभस्म	ताम्रभस्म
३८२	२६	सैन्धव	पांचोंनमक
३८२	३१–३२	विडङ्ग १–१ भाग	विडङ्ग और चित्रक १–१ भाग
३९०	६४	मरसाकेपत्ते, दहीकापानी इनप्रत्येकके...	मरसाकेपत्ते इनप्रत्येकके
३९४	१८–१९	निकालकर सेंमर, कुठ, अतीस, केलेकी जड़ इनप्रत्येकके स्वरसोंसे ७–७ पुट	निकालकर इसमें जीरा, सेमलकीछाल और कुठ प्रत्येक समभाग मिलावे फिर इस समस्तकी बरावर अतीसकाचूर्ण मिलाकर केलेकेरसकी ७ भावनाएं
३९४	५०	१–१ गोली दहीके	१–१ गोली विल्वपत्रस्वरस अथवा दहीके
३९६	११	भागरेकेरससे	भांगके रससे
३९७	६८	शिंगरिफ, वछनाग	शिंगरिफ, कसीस, वछनाग
४००	२०	मोती २ तोला, शुद्धगन्धक... ...	मोती २ तोले, लोह, अभ्रक और शङ्खभस्म सुनासुहागा १–१ तोला, शुद्धगन्धक
४०९	४३	होनेपर लोहेकी	होनेपर १६ वाभाग शुद्धवछनाग मिलाकर लोहेकी
४२६	५०	पलाश	कटहर
४२८	७	लेकर नागर	लेकर शुद्धकपूरकेजल, नागर
४४३	६७	२६ तोला	२९ तोला
४४४	२९	१–१ तो.	३–३ तो.
४४४	५२	मिलावां, वाकुची	मिलावां, त्रिफला, वाकुची
४४६	१४	दन्तीमूल ६ भाग	दन्तीमूल और अकलकरा ३–३ भाग
४४९	३२	शुद्धगन्धक १ भाग	शुद्धगन्धक २ भाग
४५५	१५–१६	कौडी, तुत्थ	कौड़ी, सुरमा, तुत्थ
४७४	२२	दूध, मधु	दूध, घृत, मधु
४८४	५१	१ प्रहर	३ प्रहर
४८९	६६	१–१ भाग	२–२ भाग
४९०	२२	गन्धक २ पल	गन्धक और त्रिफला २–२ पल
४९०	६७	नमक, हींग, नीम	नमक, नीम

पृष्ठे	पङ्क्तौ	अशुद्धम्	शुद्धम्
४९३	६–७	मिलावे और अभ्रकभस्म ३–३ भाग ...	शुद्धमिलावे ३ भाग
५०८	६६	निकालकर ५–५ रत्ती	निकालकर थूअरकेदूधसे मर्दनकर भूधरपुटदेकर ५–५ रत्ती
५१८	२८–२९	ताम्रभस्म, शुद्धजमालगोटा और ... सुहागा १२–१२ भाग	ताम्रभस्म और शुद्धजमालगोटा ४–४ भाग भुनासुहागा १२ भाग
५१९	७–८	भंगरा, दन्तीमूल इनके रसोंसे १ १ रोज	भंगराकेरससे ७ रोज़ औरदन्तीमूलस्वरससे १ रोज़
५१९	२८–२९	गन्धक ६ भाग, मुलहठी ८ भाग ...	गन्धक ८ भाग, मुलहठी १६ भाग
५२०	५८	मरिच, सोंठ, समुद्रशोष	मरिच, समुद्रशोष
५२०	६१	भांगरेके	भागके
५२२	६८	सारिवा, मुलहठी, चित्रक ...	सारिवा, ब्रह्मदण्डी, सोंठ, चित्रक
५३९	३७	दूध घी ५–५	दूध घी ८–८
५४४	६४	लेकर मैनसिल	लेकर गुड्चीकेरससे १ पहर मर्दनकर गोला वनाय सुखाकर कुक्कुटपुटकी आचदे । ऐसे २० आचें देनेके वाद समस्तसे चतुर्थांश मैनसिल
५५३	२४	लोहभ्रस्म	लोहभस्म
५५३	४०	ताम्रभस्म २–२...	ताम्रभस्म ३–३
५५३	४३	आंचदेवे । स्वाङ्गशीतल	आचदेवे । ऐसे ६ पुटें देकर सेंधानमक १ पल, मरिच और ताम्रभस्म २–२ पल, लोहभस्म ४ पल मिलाकर एकदिन जंभीरीके रससे मर्दनकर गोलावनाय पूर्ववत् पुटदेवे । स्वाङ्गशीतल
५५८	७८	१–१ तोला	१–१ पल
५६२	५६	पलाश	पीपल
५७१	२९	पलाशकी	पीपलकी
५७२	५४	मूत्रदुग्धै	मित्रदुग्धै
५७६	३५	वड़े	वट अथवा
५७९	१३	पानीमें	पानी तथा तैलमें
५८०	४९–५०	वकरी तथा भेडकादूध, अशोककीछाल... इन प्रत्येकके स्वरस अथवा क्वाथोंसे	और वकरीके दूधसे ५–५ पहर स्वेदनकरे। फिर भेड़के दूध और अशोककीछालके स्वरससे
५८३	२७	चतुर्थांश	सवाया
५८७	२९	तत्सिन्दूरसमं द्रव्यं	सिन्दूरवर्णं गन्धकं
५८७	५४	निकालकर हाथीदातकी	निकालकर शुद्धरक्तवर्ण षोडशांश गन्धकमिलाकर पूर्ववत् द्रवमें खरलकर पाककरे । इसतरह ७ शीशियोंमें सिद्धकरके हाथीदातकी
५९०	३८	आंचदेकर स्वाङ्गशीतल	आचदेकर सफेदकनेरके रससे मर्दनकर पूर्ववत् १ पहरकी आचदेवे । स्वाङ्गशीतल
५९०	४०	सफेदजीरा सव समभागलेकर ...	सफेदजीरा, विडङ्ग सव समभाग मिलाकर
५९१	३२–३३	मैनसिल, मैनफल	समुद्रफल

पृष्ठे	पङ्क्तौ	अशुद्धम्	शुद्धम्
५९५	४५	अपामार्ग	चित्रक
५९५	६५	भटकटैयाका	तीनोंभटकटैयाओंका
६०५	४०	पारदभस्म	ताम्रभस्म
६०७	३४	गन्धक, ताम्र	गन्धक, पारा, ताम्र
६१४	४४	सेलेनेसे	से मधुकेसाथ लेनेसे
६२३	४	ताम्र और सुवर्णभस्म	ताम्र, सुवर्ण और रजतभस्म
६२३	३४	पारा, वङ्ग	पारा, लोह, वङ्ग
६२४	६१	५ भाग	६ भाग
६२५	६५–६६	पारेसे आंधी वैक्रान्तभस्म मिलाकर ... सहिजनकीजड़ और	पारेसे चतुर्थांश वैक्रान्तभस्म मिलाकर सहिजनकी जड़कीछालके स्वरससे ७, और
६२९	२८	स्वर्णको	ताम्रको
६२९	२९	स्वर्णबीजका	ताम्रबीजका
६३३	२१–२२–२३	वाराहीकन्द ये सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर सहिजनकीजड़कीछाल भंगरा इनके रसोंसे १–१ भावनादेकर	वाराहीकन्द, त्रिफला, सहिजन कीजड़कीछाल ये सब समभाग लेकर वारी कचूर्णकर भंगरेके रससे घोटकर
६३४	५२	पारेकीवरावर	पारेसेदूनी
६३५	४८	१–१ सेर देकर	१–१ सेर और गोमूत्र ८ सेर देकर
६४०	३	शक्करकेसाथ	शक्कर और त्रिफलाकेसाथ
६५९	२७	घीकुंवार, त्रिफला	घीकुंवार, भंगरा, त्रिफला
६६२	५६	पारेकी वरावर	पारेसे चतुर्थांश
६६३	४०	सेंधानमक, खपरिया (अभावमें जस्तभस्म) कसीस	सेंधानमक, कसीस
६६९	१२	निशे...	निशा
६७१	११	माशालेकर	माशा मधुसे लेकर
६८६	५१	सोंठ, मरिच, पारा, गन्धक... ...	सोंठ ३ भाग, मरिच, पारा और गन्धक २–२ भाग
६८७	१०	६–६ रत्ती गरमपानी	६–६ रत्ती क्षारोंकेसाथ अथवा गरमपानी
६९०	८–९–१०–११	भगरेकेरसकी २–३ भावनाएं देकर ... स्याहसफेद तुलसी, अभ्रकभस्म आवला येप्रत्येक १ तोला मिलाकर सफेद पुनर्नवाके रससे १–२ भावनाएं देकर इमलीकेवीजवरावर गोलियें बनाकररखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली छाछ	भंगरा, विजोरा, हल्दी, अदरख, प्रसारिणी, दोनोंतुलसी, नागरमोथा, आवले इनके स्वरसोंसे १–१ भावना देकर इमलीके वीजवरावर गोलियेंवनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १–१ गोली सफेद पुनर्नवाकेरस, छाछ
६९१	३२	भगरेकेरससे	अदरखके रससे
६९३	१४	भागरेके	भागके
६९६	२	पत्रोंसे	पुष्पोंसे

द्विविधसूचीरहस्य



इसग्रन्थमें लगभग सवाचारहज़ार रसप्रयोगोंका सङ्ग्रहहोनेसे **रसयोगसागर** यह अन्वर्थ नामहै। इतने अथाह समुद्रमेंसे अभीष्ट योगको निकालना साधारण वात नहींहै। इसलिये इसकी **रोगानुसारिणी** सूची बनाकर इसके अन्तमें लगाई गईहै।सूचीमें प्रथम रोगोंकेनाम दियेगयेहैं जैसे **ज्वरे** इत्यादि। रसोंकीसङ्ख्याकेवीचमें, स्वरा॰,कु,चुट्ट,तु,पु,अन्तःस्थाः, ऊष्म (ऊष्माणः) ऐसे सङ्केत दियेगयेहैं। यद्यपि ये सङ्केत विद्वानोंसे परिचितरहतेहैं परन्तु सर्वसाधारणकेलिये नीचे स्पष्टता की जातीहै जैसे **स्वराः** इससङ्केतसे अ.आ.इ.ई.उ.ऊ.ऋ ॠ.ऌ ॡ. ए.ऐ ओ.औ.अं.अः इन १६ अक्षरोंका वोध होताहै। **कु** से क.ख.ग.घ.ङ. ५। **चुट्ट** से च छ.ज.झ.ञ.ट ठ.ड.ढ.ण. १०। **तु**से त.थ.द.ध.न ५। **पु**से प.फ.व.भ.म ५। **अन्तःस्थाः** से य.र.ल.व. ४। **ऊष्माणः** से श.ष.स.ह.क्ष.ज्ञ. ६ इनका वोधहोताहै। व्याकरणके अनुसार यद्यपि क्ष और ज्ञ ऊष्ममें नहीं आतेहैं। संयुक्ताक्षरहोनेकेकारण ज्ञ का चवर्गमें समावेश होना अत्यावश्यक था क्योंकि ज और ञ के संयोगसे यह वनाहुआहै और वे दोनोंही चवर्गमें आजातेहैं परन्तु **क** और **स**के संयोगसे क्ष वनाहुआहै इसमें वितण्डाका सम्भवहै कि इसे कवर्गमें रक्खाजाय वा ऊष्ममें? । वर्णमालिकाको प्रधान रखकर ऊष्मके अन्त्यमें रक्खागयाहै। **अगस्त्यसंहिता** और मुण्डमाला प्रभृति तन्त्रोंमें वाह्यान्तर्मातृकान्यासादिकोंमें ऐसाही क्रम रक्खागयाहै। वर्णमालिकामें तो क्ष को मेरुस्थानाऽऽपन्न रक्खाजाताहै यहवात तान्त्रिकसिद्धान्तमें प्रसिद्धहै। इनविचारोंसे क्ष को ऊष्मके अन्त्यमें रक्खागया तव उसके आगे ज्ञ कोभी रखदियाहै इसलिये ऊष्मसे श ष.स.ह.क्ष.ज्ञ इन ६ अक्षरोंका विन्यास कियाहुआहै। केवल नामसेही किसी रसका पाठ देखना हो तो समस्त ग्रन्थमें अकारादिक्रमसे रसोंका विन्यास कियाहुआहै उसे निकालकर देखलेवें। यदि किसी रोगकेलिये कोई रस देखना हो तो सूचीमें दियेहुए ज्वरादिरोगोंके नीचेके अङ्कोंको निकालकर देखलेवें। इसग्रन्थमें सौकर्यार्थ स्वर. कु. चुट्ट तु पु. अन्तःस्थ और ऊष्म ऐसे सङ्ख्याके ७ विभाग किये हुएहैं जैसे स्वरमें १ अगदेश्वर, कुमें १ कङ्कालखेचरीवटी, चुट्टमें १ चक्रधर, तु में १ तक्रमण्डूर, पुमें १ पक्तिशूलहर, अन्तःस्थमें १ यकृत्प्लीहारिलोह, ऊष्ममें १ शकटाक्षकिट्टवटी, इसतरह सातसङ्ख्याओंके सङ्केतोंको समझलेना। वस इसतरह यह ग्रन्थ समाप्तहोताहै। इसके वाद सूचीमें **अ व्या.** यह सङ्केत आताहै। इसमें अगस्त्य और व्याससम्प्रदायको लक्षितकियाहै यह आठवीं सङ्ख्या है। इसकेवाद परिशिष्टभाग रक्खागयाहै उसका सङ्केत **परि०** ऐसा रक्खाहै। इसमें दक्षिणदेशप्रसिद्ध कृष्णभूपालीयप्रभृतिग्रन्थोंके योगहैं और सङ्ग्रहकरनेकेसमय कईकारणोंसे छूटेहुए योगोंका सङ्ग्रहहै इसकीभी सङ्ख्या जुदीहै इसतरह ९ विभागोंमें इसकी सूची समाप्तहोतीहै। ऐसी सूची दो है एक **रोगानुसारिणी** दूसरी **अधिकारानुसारिणी**। रोगानुसारिणीसूचीमें योगोक्त प्रधान २ सभीरोगोंका सङ्ग्रहहै इसलिये इसका आकार वहुतवड़ा होगयाहै। केवल ज्वरमें २४००के लगभग रस आगयेहैं। इतनेमेंसे साधारण आदमीका काम नहींहै जो कि अपने अभीष्टयोगको निकाललेवे इसलिये अधिकारपरत्वेन दूसरी सूची वनाई गईहै इसमें १योग एकहीरोगमें आयाहै। तोभी ज्वराधिकारमें लगभग ७०० रस आयेहैं इन्हें देखकर यह कल्पना स्वाभाविक होतीहै कि एकरोगमें इतने योगोंकी भरमार क्योंहुई? पर इसका रहस्य ऐसाहै कि आयुर्वेदमें ज्वरको वहुतही प्रधानता दीगईहै इसके पेटमें वहुतसेरोग आजातेहैं इसीलिये "देहेन्द्रियमनस्तापी सर्वरोगाग्रजो वली। ज्वर प्रधानो रोगाणामुक्तो भगवता पुरा॥" ऐसाकहागयाहै और चरकने तो रोगसामान्यका नाम ज्वर रक्खाहै इसलिये ज्वरके वहुतसेयोग अन्यव्याधियोंमें कामकरतेहैं जैसा कि रोगानुसारिणी सूचीमें दियागयाहै। अन्यरोगोंमें इतनी भरती नहींहै वाज़ २ रोगोंमेंतो एकएकहीयोग आयेहुएहैं जैसे कि मुखसन्निपातप्रभृतिमें। कदाचित् वह योग किसीजगह काम न देवे तो ऐसा न समझना कि इसकेलिये अव दुनियांमें कोईयोगही नहींहै ऐसी जगहमें जितने सन्निपातकेयोगहैं वे प्राय. सभी कामदेतेहैं। वहुत जगह तो जिसरोगका विशेषपरिचय नहींहै पर उसमें ज्वरहै तो उसमें साधारण और विशेषज्वरघ्न सभी औषधें काम देतीहै जैसे कि **इनफ्लूएन्ज़ा** प्रभृतिमें अथवा प्लेगमें हुआथा। इनरोगोंमें अन्य पैथीवाले रास्ताही खोजते रहगये पर आयुर्वेदोपासक दोषोंकी प्रधानताको देखकर सन्निपातभैरव प्रभृति योगोंको देकर रोगियोंके आशीर्वादपात्रहुएथे इसीलिये चरकने कहाहै कि "विकारनामाऽकुशलो न जिह्रीयात्कदाचन। न हि सर्वविकाराणा नामतोऽस्ति ध्रुवा स्थिति॥" अर्थात् अधर्मकीउत्कटतासे जव कि जनपदोध्वंसकारक सङ्क्रामकव्याधिया निकलपड़तीहैं उनका नामविशेष मालूम न होनेसे वैद्य लज्जित न होकर दोषोंकी उत्कटताकी तरफ ध्यान देकर चिकित्सा करै उसमें वैद्यको यश मिलताहै। ऐसी ऐसी सव व्याधियोंके नाम शास्त्रमें नहीं आयाकरतेहैं। **एकविशेषवात** ध्यानमें रखनेलायक यह है कि ज्वरघ्नयोग प्रायः ज्वरोंमें और ज्वरजनित उपद्रवोंमें कामदियाकरतेहैं इसलिये ग्रन्थकारोंने ज्वरके लिये वहुतही योगनिर्माणकियेहैं। उन्हें औचितीदेखकर कास,श्वास,मूर्च्छा,तन्द्रा,वातव्याधि प्रभृतिमें नियुक्तकरना उचितहै केवल अधिकारको पकड़कर वैठे रहना उचित नहींहै। इसीतरह रसायनयोगोंको प्रमेह,शोष,राज-

[illegible], [illegible] और [illegible]स्मृतिमें प्रयुक्तकरना उचितहै । इस- [illegible] में अन्ययोग न मिलें यहांपर घबराना न चाहिये, [illegible] तो सैकड़ोंयोग तैयार होजायगे । [illegible] (समुद्र) रत्नोंका आकर होनेपरभी सबको [illegible] नहीं देताहै किन्तु वे रत्न गोते लगानेवा- [illegible] होतारहै यह (रसयोगसागर) ज्ञाता- [illegible] करनेवाले योगोंका सागरहै तथापि [illegible] उपयोगीहै वैसा अनभ्यासीके- [illegible] तो समुद्रका उपयोग लवणकेलिये मनुष्य-पशुपक्षि सर्वसाधारणहै पर जिस सौष्ठवसे उसके ज्ञाता काम, लेतेहैं वैसा अज्ञ नहीं । इस ग्रन्थकेरहतेहुए किसीभी योगके बनानेके नामसे कोई किसीको ठग नहींसक्ताहै इतना उपयोग तो सर्वसाधारणकेलिये अनिवार्यहै । इसलिये श्रीमन्तोंके घर-मेंभी इसको स्थानदेना अत्यावश्यकहै । इसकेबाद रोगानु-सारिणी और अधिकारानुसारिणी सूची क्रमसे दीहुईहैं उन्हें देखो । इनसूचियोंमें स्त्यानवातादि रोगोंके विचित्रनाम आतेहैं वे दक्षिणदेशप्रसिद्धरोगहै उनके लक्षण माधवनिदानादि-ग्रन्थोंमें नहींहैं इसलिये वे यहीं देदियेजातेहैं यथा—

दक्षिणदेशप्रसिद्धा रोगविशेषाः

(बसवराजीयतोऽवगन्तव्याः)



शृङ्खलावातलक्षणम्

पाण्डुता शुष्कता देहे निद्रानाशः शिरोव्यथा ।
वान्ति हिक्का च विस्फोटः शृङ्खलावातलक्षणम् ॥

विलोमवातलक्षणम्

तन्द्राधिक्यमतिश्वासः पाण्डुता नेत्रशूलनम् ।
स्वेदो हिक्काऽतिवान्तिश्च विलोमवातलक्षणम् ॥

दधिवातलक्षणम्

अक्षिशूलं कर्णशूलं नासाशूलं शिरोभ्रमः ।
हिक्काऽतिसारकं चैव दधिवातस्य लक्षणम् ॥

मन्दवातलक्षणम्

पाण्डुता च भ्रमो मूर्च्छा स्वेदः कण्ठे परिभ्रमः ।
वान्तिरामविकारश्च मन्दवातस्य लक्षणम् ॥

रक्तवातलक्षणम्

रक्तवान्तिश्च हिक्का च मूर्च्छा दाहश्च कम्पनम् ।
देहकान्तिहरः स्वेदो रक्तवातस्य लक्षणम् ॥

सुमवातलक्षणम्

भयं [illegible] रौद्रं दोषः कर्णान्तिकम्भवेत् ।
मूर्च्छाकम्पभ्रमस्वेदाः सुमवातं विनिर्दिशेत् ॥

भोगवातलक्षणम्

[illegible] विदाहः स्यात् [illegible] प्रकम्पनम् ।
[illegible] च [illegible] गात्रकम्पनम् ॥
[illegible] शिरःशूलं भोगवातस्य लक्षणम् ।

किक्किसावातलक्षणम्

कटिप्रदेशशूलञ्च महाशूलाऽवरोधनम् ।
पादे पीडा दिरोघ्राणे किक्किसावातलक्षणम् ॥

क्रोधपित्तलक्षणम्

सदा च तामसाचारो दुर्भाषा तीव्रतागुणाः ।
शिरोभ्रमणदोषश्च क्रोधपित्तं विनिर्दिशेत् ॥

मधुपित्तलक्षणम्

अरुचि मधुरोद्रेकः उषःकाले च कोपिता ।
शिरोभ्रमणमाधुर्यं छर्दीरोम्णाञ्च हर्षणम् ॥

चर्मपित्तलक्षणम्

जिह्वाग्रे चर्मशीर्णत्वं करपादौष्ठकादिके ।
शीघ्रकण्डूयलं हिक्का चर्मपित्तस्य दोषजाः ॥

मूर्च्छापित्तलक्षणम्

अरुचि मधुरं वक्त्रं प्रसेको भ्रममूर्च्छनम् ।
छर्दीरोमाञ्चकश्चैव मूर्च्छापित्तस्य लक्षणम् ॥

कुसुमपित्तलक्षणम्

आतापो नासिकारक्तमतितृष्णा प्रपीडनम् ।
क्वचिच्छोणितवाहश्च कुसुमं शीर्षसम्भवम् ॥

भ्रंशपित्तलक्षणम्

अपभ्रंशो मतिस्तम्भः सदा चिन्तानिरीक्षणम् ।
सम्भाषणमतिक्रोधाद् भ्रंशपित्तस्य लक्षणम् ॥

सुखसन्निपातलक्षणम्

तरुणज्वरमध्ये तु युवतीसङ्गमो यदा ।
तत्क्षणाद्दारुणाद्दोषादङ्गवैकल्यकम्पनम् ॥
वक्षोऽन्तरे च सन्तापः प्रलापस्तापविभ्रमौ ।
पाणिपादतले शीतं दोषस्त्रीसङ्गमे स्मृतः ॥

अथ मानविवरणे सुश्रुतः

"पलकुडवादीनामतो मानं तु व्याख्यास्यामः । तत्र द्वादश धान्यमाषा मध्यमाः सुवर्णमाषकः, ते षोडश सुवर्णं, अथवा मध्यमनिष्पावा एकोनविंशतिर्धरणं, तान्यर्द्धतृतीयानि कर्षः, ततश्चोर्द्ध्वं चतुर्गुणमभिवर्धयन्तः पलकुडवप्रस्थाढकद्रोणा इत्यभिनिष्पद्यन्ते, तुला पलशतं, तानि विंशतिर्भारः। शुष्काणामिदं मानं, आर्द्रद्रव्याणाञ्च द्विगुणमिति ॥ चि.३१।७"

अथ शार्ङ्गधरोक्तं मागधीयं मानम्

त्रसरेणुर्बुधैः प्रोक्तस्त्रिंशता परमाणुभिः ।
त्रसरेणुस्तु पर्यायनाम्ना वंशी निगद्यते ॥
जालान्तरगते भानौ यत्सूक्ष्मं दृश्यते रजः ।
तस्य त्रिंशत्तमो भागः परमाणुः स कथ्यते ॥
जालान्तरगतैः सूर्यकरैर्वंशी विलोक्यते ।
षड्वंशीभिर्मरीचिः स्यात्ताभिः षड्भिस्तु राजिका ॥
तिसृभी राजिकाभिश्च सर्षपः प्रोच्यते बुधैः ।
यवोऽष्टसर्षपैः प्रोक्तो गुञ्जा स्यात्तच्चतुष्टयम् ॥
षड्भिस्तु रक्तिकाभिः स्यान्माषको हेमधान्यकौ ।
माषैश्चतुर्भिः शाणः स्याद्धरणः स निगद्यते ॥
टङ्कः स एव कथितस्तद्द्वयं कोल उच्यते ।
क्षुद्रको वटकश्चैव द्रङ्क्षणः स निगद्यते ॥
कोलद्वयञ्च कर्षः स्यात्स प्रोक्तः पाणिमानिका ।
अक्षं पिचुः पाणितलं किञ्चित्पाणिश्च तिन्दुकम् ॥
बिडालपदकं चैव तथा षोडशिका मता ।
करमध्यो हंसपदं सुवर्णं कवलग्रहः ॥
उदुम्बरञ्च पर्यायैः कर्ष एव निगद्यते ।
स्यात्कर्षाभ्यामर्द्धपलं शुक्तिरष्टमिका तथा ॥
शुक्तिभ्याञ्च पलं ज्ञेयं मुष्टिराम्रं चतुर्थिका ।
प्रकुञ्चं षोडशी बिल्वं पलमेवात्र कीर्त्यते ॥
पलाभ्यां प्रसृतिर्ज्ञेया प्रसृतश्च निगद्यते ।
प्रसृतिभ्यामञ्जलिः स्यात्कुडवोऽर्द्धशरावकः ॥
अष्टमानं च स ज्ञेयः कुडवाभ्याञ्च मानिका ।
शरावोऽष्टपलं तद्वज्ज्ञेयमत्र विचक्षणैः ॥
शरावाभ्यां भवेत्प्रस्थश्चतुष्प्रस्थैस्तथाढकम् ।
भाजनं कंसपात्रञ्च चतुःषष्टिपलं च तत् ॥
चतुर्भिराढकैर्द्रोणः कलशो नल्वणोर्मणौ ।
उन्मानञ्च घटो राशिर्द्रोणपर्यायसञ्ज्ञकाः ॥
द्रोणाभ्यां शूर्पकुम्भौ च चतुःषष्टिशरावकः ।
शूर्पाभ्यां च भवेद्द्रोणी वाहो गोणी च सा स्मृता ॥
द्रोणीचतुष्टयं खारी कथिता सूक्ष्मबुद्धिभिः ।
चतुःसहस्रपलिका षण्णवत्यधिका च सा ॥
पलानां द्विसहस्रञ्च भार एकः प्रकीर्तितः ।
तुला पलशतं ज्ञेया सर्वत्रैवैष निश्चयः ॥
माषटङ्काक्षबिल्वानि कुडवः प्रस्थमाढकम् ।
राशिर्गोणी खारिकेति यथोत्तरचतुर्गुणाः ॥

अथ कलिङ्गदेशीयमानम्

यवो द्वादशभिर्गौरसर्षपैः प्रोच्यते बुधैः ।
यवद्वयेन गुञ्जा स्यात्त्रिगुञ्जो वल्ल उच्यते ॥
माषो गुञ्जाभिरष्टाभिः सप्तभिर्वा भवेत्क्वचित् ।
स्याच्चतुर्माषकैः शाणः स निष्कष्टङ्क एव च ॥
गद्याणो माषकैः षड्भिः कर्षः स्याद्दशमापिकः ।
चतुष्कर्षैः पलं प्रोक्तं दशशाणमितं बुधैः ॥
चतुष्पलैश्च कुडवं प्रस्थाद्याः पूर्ववन्मताः ॥ इति ॥

उपरिनिर्दिष्ट मानोंमें प्रथममान सुश्रुतोक्तहै और द्वितीय तथा तृतीय शार्ङ्गधरोक्तहै । शार्ङ्गधरका प्रथममान मागध है और द्वितीय कलिङ्गदेशीयहै । इनदोनों मानोंमेंसे मागधमान को ही श्रेष्ठवतलायाहै "मानञ्च द्विविधं प्राहु. कालिङ्गं मागधं तथा । कालिङ्गान्मागध श्रेष्ठमेवं मानविदो विदु ॥ च. क. १२।१०२,, इसलिये सुश्रुतीयमानकेसाथ शार्ङ्गधरोक्त मागधमानकी तुलना कीजातीहै । सुश्रुतमें १२ उड़दका १ माषा मानाहै तथा शार्ङ्गधरमें ६ रत्तीका १ माशा मानाहै और कर्षको दोनोंमें १६ माशेका लिखाहै । वज़नकरनेसे १ रत्तीके वरावर दो उड़द होतेहै । सुश्रुतके हिसावसे एककर्षमें १९२ उड़दहोतेहैं और शार्ङ्गधरमें ६ रत्तीके माशेके हिसावसे ९६ रत्तियें होतीहैं । । इन रत्तिओंको द्विगुणकरनेसे १९२ उड़द वनतेहैं इससे यह सिद्ध होताहै कि सुश्रुतको भी ९६ रत्तीका कर्ष और ६ रत्तीकाही माशा मान्यहै सो शार्ङ्गधरके मानके वरावरहै । आजकल व्यवहारमें एकतोलेकीभी रत्तियें ९६ मानी जातीहैं । कितनेही लोग ३२ वालका तोला मानतेहैं वहापर परिपुष्ट लालरंगका वाल लिया जाताहै वह ३ रत्तीके लभभगहोनेसे वेही तोलेमें ९६ रत्तियें गिनी जाती है पर वह प्रमाण ठीक नहीहै । लालरङ्गके वालोंकी विपमताके कारण कितनेही लोग ४० वालोंका तोला मानतेहैं इसीलिये सुश्रुतने मध्यमनिष्पावोंसे वजनको नियत कियाहै वह वरावरहै । वैसेतो हीरेप्रभृतिरत्नोंके तोलमें ६२ रत्तियोंकाही तोला लियाजाताहै पर वह एकदम परिपुष्ट लालरत्ती अथवा साधारण रत्तीफल (यह कालेदानेकी जातिहै इसे पटनेप्रभृतिके जङ्गली-लोग रत्तीके नामसेही पुकारतेहैं उसका वीज लम्वा होताहै) एकतोलेमें लगभग ६२ या ६३ चढ़ते है वह तोला ९६ रत्तीके तोलेसे लगभग १ चावल अधिक होताहै । इसलिये सुश्रुतीय जो कर्पहै उसका सव तोलोंकेसाथ सादृश्य आताहै यह देखकर उन ऋषियोंके वुद्धिवैभवपर किस गुणग्राहीके अन्तःकरणमें पूज्यभाव उत्पन्न न होगा ? निष्कर्षमें उपरिनिर्दिष्टकर्ष और व्यावहारिकतोला एकवरावर होताहै । यदि आजकलके प्रचलित रुपयोंकेसाथ वरावरी करनी हो तो पञ्चमजार्जका जो किल्विष-रहित नया सिक्का है वह उपरिनिर्दिष्ट तोले या कर्षके वरावर वजनमेंहै परन्तु इससे पहिलेके दो सिक्के कुछ कमहैं इसलिये रुपयोंसे तोलनेका कामलिया जाय तो वर्तमान नये सिक्केसे लेना उचितहै पर एकान्ततः उसपरभी भरोसा न रखना उसमेंभी एकदूसरेसें टकसालकी गल्तीसे अथवा घिसनेसे अथवा तेज़ावमें डालकर चादी निकाललेनेकी वजहसे कुछ फेर रहताहै इसवातपर ध्यान रखना । कर्षके १६ माशे मानेगयेहैं और आजकल तोलेके १२ माशे मानेजातेहैं इसजगह आपातत विरोध आताहै परन्तु तोलेमें माषा ८ रत्तीका मानाजाताहै उपरिनिर्दिष्ट कर्पमें ६ रत्तीका मानाहै इसलिये कर्पमें १६ और तोलेमें १२ माशेका आभासमात्रभेद प्रतीत होताहै वास्तविक-भेद नहीं ।

सुश्रुतमें धरणकामान "अथवा मध्यमनिष्पावा धा एकोनविंशतिर्धरणम्, तान्यर्धतृतीयानि कर्पं " इसतरह दियाहै । इसवाक्यसे कर्पका २॥ वा हिस्सा धरणहोताहै और उसमें १ कर्पका २॥ वा भाग ७७ उड़द अर्थात् ३८॥ रत्ती होतीहैं । सुश्रुतने १९ मध्यम निष्पावोंका (सेमकेवीजोंका) १ धरण कहाहै । इसलिये एकनिष्पाव २ रत्तीके लगभगहोताहै यह प्रमाण अन्यकिसीमानसे नहीं मिल्ता । यद्यपि शार्ङ्गधरने शाणकापर्याय धरण दियाहै पर वह सुश्रुतसेविरुद्धहै । इसका भेद आगे कलिङ्गमानके कोष्ठकसे मालूमहोगा । यहापर "पलस्य दशमांशेन धरणं परिकीर्तितम्" इस कृष्णात्रेयके वचनकी तरफ शार्ङ्गधरका ध्यान चलागयाहो और कलिङ्गमानमें पलका दशमांश शाण होताहै इसलिये शाणका पर्याय समझकर धरण लिखदियाहो यह सम्भवहै परन्तु कृष्णात्रेयका मान जुदाहै उसमें पलका दशमाश शाण नहीं आताहै इसलिये यह शार्ङ्गधरकी भूलहै । षड्धरणादियोग खास सुश्रुतकेहैं अन्यग्रन्थोंमेंभी सुश्रुतहीसे गयेहैं इसलिये इसका हिसावकरनेमें शार्ङ्गधरने गल्तीकीहै खवर न पड़नेसे शाणका नाम रखदियाहै । इसीतरह वैद्यकशब्दसिन्धुमें भी "पलदशमांशोऽय योग. पञ्चगुञ्जामापेण प्रत्यादेश्य·" यहांपर सुश्रुतीय माशेको ५ रत्तीका समझाहै यह भी भूलहै । ५ रत्तीकामाषा वैजयन्तीकोष और याज्ञवल्क्यस्मृतिकी मिताक्षराटीकामें दिया हुआहै—"त्रसरेणुभिरष्टाभिर्लिक्षा सैव मरीचिका । रथरेणुश्च रेणुश्च तास्तिस्रो राजसर्षप. ॥ धुरणश्च यवाग्रश्च ते त्रयो गौरसर्षप ॥ तेऽष्टौ यव षोडश तु यवा माषोऽथवा त्रिभि । यवैर्गुञ्जा पञ्च गुञ्जा माष कुप्ये तु सप्त ता· ॥ रूप्यमाषो द्विगुञ्जो वा धरणं षोडशैव ते । शतमानं तु दशभिर्धरणै पलमेव च " इत्यादि वैजयन्तीकोष अथवा "जालसूर्यमरीचिस्थं त्रसरेणू रज स्मृतम् । तेऽष्टौ लिक्षा च तास्तिस्रो राजसर्षप उच्यते ॥ गौरस्तु ते त्रयः षड्भिर्यवो मध्यस्तु ते त्रय । कृष्णल पञ्च ते माषस्ते सुवर्णस्तु षोडश" मिताक्षरा टीका ॥ वैजयन्तीकारने २ गुञ्जाका रूप्यमाषा मानकर १६ रूप्यमाषोंका धरण बनायाहै वह ३२ रत्तीका होताहै और "दशभिर्धरणै· पलमेव च" इसवाक्यसे पलका १० वांभाग धरणहोताहै । इनदोनों वाक्योंमें परस्पर विरोधसा प्रतीत होताहै परन्तु ५ रत्तीके माशेके हिसावसे भी पलके

१०वेंहिस्सेमें ३२ ही रत्ती आतीहै इससे विरोध नहीं आता परन्तु सुश्रुतीय धरण इनसवसे जुदाहै हां "पलस्य दशमांशेन धरणं परिकीर्तितम्" यह कृष्णात्रेयका वाक्यहै सो सुश्रुतसे बरावर मिल्ताहै ।

गद्याणकामान शार्ङ्गधर और यत्रतत्र प्राकृतमें आताहै । प्राकृतमें इसकेलिये खास कोई परिभाषा नहींहै । मालूमहोताहै कि शार्ङ्गधरहीसे उठाकर लोगोंने रक्खा होगा । शार्ङ्गधर और कृष्णात्रेय दोनोंने ६ माशेका इसे वतलाया है और माशेका प्रमाणभी दोनोंका वरावरहै इसलिये जहाकहीं गद्याण आवे वहां ४८ रत्तीका लेना उचितहै ।

उड़दसे नीचेका जो मानहै उसे चरक और शार्ङ्गधर प्रभृतिने दियाहै । उसका आरम्भ परमाणुसे कियाहै परन्तु वह किसीका किसीकेसाथ नहीं मिल्ता । कारणहै कि उसका आरम्भ परमाणुसे किया हुआहै वह आनुमानिकहै उसका तोल कांटेपर होना असम्भवहै । यद्यपि राजिकावगैरहका तोल कांटे प्रभृतिसे होसक्ताहै पर वीजरूपहोनेसे उनकाभी यथार्थ तोल नहीं होसक्ता, कारणकि जव एकफलीमें होनेवाले वीजोंकी भी प्रायः परस्पर सादृश्य नहीं होती तव दूसरे वृक्ष और विभिन्न २ भूमि तथा कालमें उत्पन्नहोनेवाले वीजोंकी सादृश्य कैसे होगी? इसका अन्तर देखनाहो तो वीजोंको तोल्कर खातिरी करलें यही कारणहै कि "यवो द्वादशभिर्गौरसर्षपैः प्रोच्यते बुधैः।" यहापर कालिङ्गमानमें १२ सर्षपका जव वतलायाहै और मागधमानमें "यवोऽष्टसर्षपैः प्रोक्तो" ऐसा पूर्वसे विरुद्ध लिखाहै । यह तो मूर्खभी जान सकताहै कि यह वाक्य विक्षिप्तके सिवाय कौन लिखेगा? परन्तु इसमें ऐसा नहींहै यह वीजोंके फेरसे हुआहै । पुष्ट पीलीसरसोंके अन्दाजसे ८ सर्षपकाही १ जव होताहै और छोटी सर्षप १२ चढ़तीहै वस इतनाही भेद हुआहै । कोई कदाचित् यह कहकर अपना पिण्ड छुड़ावे कि सर्षपादिक पदार्थ काल्पनिकहै और कल्पनामें सव पृथक् पृथक् कहने परभी विरोध नहीं होसक्ता । परन्तु यह वात यथार्थ नहींहै क्यों कि जव कल्पना ही करनी थी तो "जालान्तरगते. सूर्यकरैर्वंशी विलोक्यते" इत्यादि वाक्य लिखनेकी कोई जुरूरत नहींथी । इससे यह स्पष्ट प्रतीत होताहै कि सर्षपादिक पदार्थ काल्पनिक नहींहैं किन्तु सद्हैं। उनके समय, क्षेत्र और देशप्रभृतिके भेदोंसे वीजोंमें भेदहोनेसे यह सव पाप घुसवैठाहै इसीविपत्तिको सोचकर सुश्रुतने नीचेके प्रमाणको न लिखकर केवल उड़दसे प्रमाणका आरम्भ कियाहै । एक और भी कारणहै कि सुश्रुतीय औषधोंमें उड़दसे नीचेके प्रमाणकी अपेक्षाभी नहींहै । हा रसग्रन्थोंमें हीरेप्रभृतिकी भस्मोंमें राजिकाप्रभृतिके मानकी आवश्यकता रहतीहै तव वहापर प्रायः करके वीजोंके आकारसे रोगीके वलावलको देखकर मात्राका निर्धारणकरना यह वैद्यका खास कर्तव्यहै इसीलिये "स्थितिर्नास्त्येव मात्रायाः कालमग्निं वयो वलम् । प्रकृतिं दोषदेशौ च दृष्ट्वा मात्रा प्रकल्पयेत्" इत्यादि वाक्य कहेहुएहैं ।

"षड्वंश्यस्तु मरीचिः स्यात्षण्मरीच्यस्तु सर्षपः । अष्टौ ते सर्षपा रक्तास्तण्डुलश्चापि तद्द्वयम् ॥" चरक ॥ "जालान्तरगतैः सूर्यकरैर्वंशी विलोक्यते । षड्वंशीभिर्मरीचिः स्यात्ताभि. षड्भिस्तु राजिका ॥ तिसृभी राजिकाभिश्च सर्षपः प्रोच्यते बुधैः ॥" इत्यादि शार्ङ्गधरीय पाठ आपसमें मिलते नहींहै उसका कारण यहहै कि सूक्ष्मवस्तुओका विचारहै वह ध्यानमें न आनेसे औपरिष्टिक अनुमानकरके लोगोंने विगाड़ाहै इसलिये परस्पर विरोध मालूमहोताहै शार्ङ्गधरने कोई अपना स्वतन्त्र मत नहीं प्रदर्शित कियाहै किन्तु प्राचीन संहिताओंके आधारही पर ग्रन्थ लिखाहै । चरकीयपाठको न समझनेसे लोगोंने विगाड़ाहै इसीलिये यह विरोध आकर खड़ाहुआहै । चरकीयपाठ "जालान्तरगतैः सूर्यकरैर्वंशी विलोक्यते । षड्वंश्यस्तु मरीचि. स्यात्षण्मरीच्यस्तु राजिका ॥ तिसृभी राजिकाभिश्च रक्तसर्षप इष्यते । अष्टौ ते सर्षपा रक्तास्तण्डुलश्चापि तद्द्वयम् ॥" ऐसाहोनाउचितहै । ३ राईका १ रक्तसर्षप और २ रक्तसर्षपका १ गौरसर्षप प्रत्यक्षहै इसमें सन्देहका कोई अवसरनहींहै ।

वर्तमान चरकीयपाठ " षड्वंश्यस्तु मरीचि· स्यात्षण्मरीच्यस्तु सर्षप· । अष्टौ ते सर्षपा रक्तिस्तण्डुलश्चापि तद्द्वयम् ॥ धान्यमाषो भवेदेको धान्यमाषद्वयं यव । अण्डिकास्ते तु चत्वारस्ताश्चतस्रस्तु माषकः ॥ हेमश्च धानकश्चोक्तो भवेच्छाणन्तु ते त्रयः ॥" ऐसा मिल्ताहै । इसमें रत्ति या रक्ति यह पाठ अशुद्धहै इसकी जगह रक्ता ऐसा चाहिये क्योंकि यह सर्षपोंका विशेषणहै और इसकी साक्षी चक्रपाणिदत्तभी देरहे है । "धान्यमाषद्वयं यव" यह पाठभी अशुद्धहै क्योंकि धान्यमाष और सतुष यवका वज़न एकवरावरहोताहै इसीलिये चक्रपाणिदत्तने पूर्वटीकाकारोंका मत वतलाते हुए **"ते तु चत्वार इति**–यवचत्वारः, अन्ये तु माषाश्चत्वारश्च अण्डिका इति वदन्ति" ऐसा लिखाहै यहापर गौर करके देखिये यव और धान्यमाष समप्रमाणहोनेसेही किसीटीकाकारने ४यवकी अण्डिका वतलाई और दूसरोंने ४धान्यमाषकी अण्डिका वताईहै इनदोनोंका अभिप्राय एकहीहै । चक्रपाणिदत्तको अशुद्धपाठका भेद नहीं मालूम हुआ इसीलिये वेचारे मोहजालमें पड़े । इसकाभी कारण यह मालूमहोताहै कि अण्डिकापदार्थ इनको ज्ञात न हुआ यहाकी अण्डिका सुश्रुतीय निष्पावहै जिसे कि हिन्दीमें सेमकावीज कहतेहैं । उसे समकक्ष ४ यवकेसाथ अथवा ४ उड़दोंकेसाथ तोलकर देखलीजिये वरावरहोताहै । इसलिये "धान्यमाषद्वयं यव." के स्थानमें "धान्यमाषसमो यवः" ऐसा पाठ होना उचितहै । "अण्डिकास्ते तु" यह पाठभी अशुद्धहै क्योंकि ४ यव अथवा उड़दोंकी १ अण्डिका होतीहै एकवचन होनेसे विसर्ग अथवा सकार नहीं रहसकता यह अज्ञान कृत पाठहै । कृष्णात्रेयमें मतान्तरकेनामसे "अण्डिका चापि निर्दिष्टा कैश्चिन्माषद्वयेन वै" यह विलक्षण अण्डिका वतलाईहै यहांपर माषशब्दसे धान्यमाष समझना इसलिये यह गुञ्जाका पर्यायहै अण्डाकृति

होनेसे अण्डिका मानलीहै पर यह चरकसुश्रुतीय अण्डिका नहींहै ।

"हेमश्च धानकश्चोक्तो" यह भी पाठ अशुद्धहै । आचार्यने माषशब्दके दो अर्थ बतलाएहै अर्थात् १ सुवर्णका माप और दूसरा अनाजका माप अर्थात् उड़द । धान्यशब्दसे स्वार्थमें 'कप्' प्रत्ययकरके धान्यक शब्द बनाया हुआहै अर्थात् माप अथवा मापक शब्द जहा आताहै वहां सुवर्ण॰ माष अर्थात् १६ उड़द और एक अन्नविशेष यानी १ उड़दका बोधहोताहै इसभेदको बताना आचार्यका अभिप्रायहै । वह अभिप्राय "हेम्नश्च धान्यकस्योक्तो" इसतरहके पाठहोनेसे व्यक्तहोसक्ताहै ।

कोई दुराग्रहाविष्ट यह कहे कि यहापर "हेमश्च धानकश्च" ऐसाहीपाठहै क्योंकि इसपाठको लिखतेहुए अष्टाङ्गसङ्ग्रहकारने "माषकस्य पर्यायो हेमो धानकश्च" ऐसा लिखाहै इसलिये ये दोनों मापेके पर्यायहै आप जैसा कहरहेहै वैसा नहींहै । इसजगहपर सर्वत प्रथम अकारान्त हेमशब्दका होना सम्भव है या नहीं ? यह विचारणीयहै । "हि गतौ" स्वादिसे मनिन् प्रत्यय करनेसे हेमन् शब्द बनताहै इसलिये हेमन् नकारान्त शब्द होताहै न कि अकारान्त, यह प्रथम विपत्ति है । कदाचित् कोई शब्दशास्त्र पर अनास्थाकरके धृष्टतासे अकारान्त मानभी लेवे तो सुवर्ण शब्दको कर्षका पर्याय मानाहै और सुवर्णकापर्याय हेम है । पर्यायशब्दोंका यथेष्ट प्रयोगहोताहै तब हेम शब्दके प्रयोगमें कर्ष लिया जाय या माषा ? यह भारी विपत्ति होगी । इसलिये जैसा हमने कहाहै सो ठीकहै यह पाठ बहुतदिनका बिगड़ाहुआहै इसीलिये अष्टाङ्गसङ्ग्रहकारने पर्यायवाचकता लिखडालीहै । उसको देखकर शार्ङ्गधरनेभी व्यामोहमें पड़कर "माषको हेमधान्यकौ (धानकौ)" ऐसा पाठलिखाहै । यदि चरकको माषाके पर्याय हेम और धान्यक अथवा धानक अभिप्रेतहोते तो कहींपरभी उनका प्रयोग तो कियाहोता यह निर्विवादहै इसलिये चरकीयपाठको सुधारना अत्यावश्यकहै । इसजगहकी भूलसे देखिये कितना विप्लव होगयाहै । परिभाषाप्रदीपप्रभृतिमें अकारान्त हेमशब्द और धान्यक अथवा धानकशब्दको "माषमिते माने" ऐसा लिखदियाहै सही, पर उसका उदाहरण प्राचीनसहिताओंमें न देसके । किसीने शार्ङ्गधरको बतलाया और किसीने इसी विवादग्रस्त चरकीयकल्पस्थानको निर्दिष्ट किया है परन्तु संहिताओंमें व्यवहारमें लायाहुआ न बतलाया इसलिये इस अन्धपरम्पराको दूरकरना उचितहै ।

इसीतरह शार्ङ्गधरके पाठकोभी सुधारना आवश्यकहै यथा— "षड्वंशीभिर्मरीचि॰ स्यात्ताभिः षड्भिस्तु राजिका । तिसृभी राजिकाभिश्च रक्तसर्षप इष्यते ॥ तद्वयेन भवेदत्र मध्यमो गौरसर्षप । यवोऽष्टसर्षपैस्तैश्च गुञ्जा स्यात्तद्वयेन च ॥ षड्भिस्तु रक्तिकाभिश्च माषको हेमधान्यज ।" बस इसतरहका पाठ रखनेसे "गुञ्जा स्यात्तत्तुष्टयम्" और "यवद्वयेन गुञ्जा स्यात्" इनदोनों पाठोंका परस्पर विरोध नहीं आताहै । नहींतो एकही पुस्तके परस्पर विरुद्ध दो पाठ होनेसे मत्तप्रलाप कहा जायगा । इसीतरह "भाजन कंसपात्रञ्च" इसजगह "भाजनं पात्रकं चैव" ऐसा पाठ होनाचाहिये । कारणकि चरकने दो आढक का नाम कंस रक्खाहै "कंस प्रस्थाष्टकं तथा" प्रस्थाष्टक यह नाम आढकका नहीं होसक्ताहै वह ४ प्रस्थका होताहै इसलिये ऊपरकहाहुआ पाठ रखना उचितहै । उसके आगे चरकमें "कंसश्चतुर्गुणो द्रोण॰" की जगह "कंस द्विगुणितो द्रोणः ऐसापाठकरना । शार्ङ्गधरमें "प्रस्थाष्टके कस आख्यातस्तथा प्रस्थाष्टकं भवेत्" ऐसा पाठ रखनेसे मार्गविशुद्धहोजायगा । "सेहिका घ्याढकोऽस्त्रियाम् । कंसं चाथ" इसतरह सामान्यकाद, गणाध्यायमें वैजयन्तीकोषने इसभ्रमको दूरकरदियाहै । टोडरानन्दमें कृष्णात्रेयके उद्धरणमें "चतुःप्रस्थैर्भवेत्कंसः स स्याद्भाजनमाढकम् । पात्र शूर्पाष्टकं गात्रं पर्यायैः क्रमशो विदुः" ऐसा पाठदियाहै पर वह प्रत्यक्ष विरुद्धहै कारणकि आगे चलकर "द्रोणाम्भ्या शूर्पकुम्भौ च" ऐसा स्वयं कृष्णात्रेयने कहाहै इसलिये वहापर "चतुष्प्रस्थैर्भवेत्पात्रं स स्याद्भाजनमाढकम् । कंसः प्रस्थाष्टकं गात्रं॰" ऐसा पाठकरनेसे मार्ग विशुद्ध होजायगा । इसीतरह "गोणीशूर्पद्वयं विद्यात्खारी भारी तथैव च" इसजगह जिसतरह शूर्पद्वयकी गोणी होतीहै उसीतरह दो गोणीकी १ खारी, २ खारीकी १ भारी, और २ भारीका १ वाह होताहै ऐसा अर्थ तथैवचसे समझना इसी अर्थको स्पष्टकरनेकेलिये "द्वात्रिंशचैव जानीयाद्वाहं शूर्पाणि बुद्धिमान्" ऐसा आचार्यने खुलासा करदियाहै । चरकीय खारीके साथ शार्ङ्गधरकी खारी नहीं मिलती और प्रायः सबकेसाथ समानता आतीहै । वैजयन्ती कोषने मान बहुत दूरतक बतलायाहै वह उसके कोष्ठकमें खारीमे आगे दियाहै ।

ऊपरकहीहुई चरकीयपाठकी अपभ्रष्टतासे बहुतसे लोगोंको यह भ्रमहोगयाहै कि सुश्रुतकेकर्षसे चरकीयकर्ष दूनाहै कारणकि सुश्रुत मध्यम १२ उड़दोंका १ माशा मानतेहै और ऐसे १६ माशेका १ कर्ष मानतेहैं तब सुश्रुतके हिसाबसे १९२ उड़दोंका कर्ष होताहै । चरकमें २ उड़दोंका १ जव, ४ जवकी १ अण्डिका और ४ अण्डिकाओंका १ माशा अर्थात् १६ जव अथवा ३२ उड़दका १ माशा होताहै । ऐसे ३ माशेका १ शाण और ४ शाणका १ कर्ष होताहै । इस १ कर्षके १९२ जव अथवा ३८४ उड़दहोतेहै । इसतरह चरकीयकर्ष सुश्रुतीय कर्षसे ठीक द्विगुणहोताहै । इसतरहका भ्रम लोगोंके मनमें ठंसगयाहै । इसीकारणसे "कालिङ्गमानञ्च चरकाचार्यसंमतं" इतना टुकडा डल्हणने लिखदियाहै सो भूलहै इसका कारण "धान्यमाषद्वयं यव" यह अशुद्धि मात्रहै इसके अतिरिक्त कोई कारण नहींहै देखिये—सुश्रुतीय १९ अण्डिकाओंका १ धरण और २॥ धरणका १ कर्ष होताहै । २॥ धरणकी ४८ अण्डिका होतीहै उतनीही चरकीयकर्षकी होतीहैं इनका नाम सुश्रुतने निष्पाव और

चरकने अण्डिका रक्खाहै ये दोनों एकही वस्तु- है। उड़दके हिसावसे "तत्र द्वादश धान्यमाषा मध्यमा सुवर्णमाषक, ते षोडश सुवर्णम्" इसतरह कर्ष बनायाहै। १२ उड़दका १ माशा और १६ माशेका १ कर्ष अर्थात् १९२ उड़दका कर्षहै। चरकीयकर्षभी १९२ उड़दकाही होताहै क्योंकि यवका वज़न उड़दके बराबरहोताहै इसको जो चाहे सो धरमके काँटेपर रखकर देखलेवे। इसलिये "धान्य-माषद्वयं यवः" की जगह "धान्यमाषसमो यव" ऐसा पाठ सुधारलेनेसे ४ यव अथवा उड़दकी १ अण्डिका, ४ अण्डिका का १ माशा, ३ माशेका १ शाण और ४ शाणका १ कर्षहोताहै अर्थात् १९२ उड़द या यवका १ कर्ष हुआ इसमें अन्तरहीक्याआया ? हा चरकीय १२ माशेकाकर्षहै औरसुश्रु-तीय १६ माशेकाहै यह आपातत भेद मालूमहोताहै परन्तु सुश्रुतीयमाषा ३ अण्डिका (१२ उड़द) काहै और चरकीय ४ अण्डिका (१६ उड़द) काहै इसलिये माषोंमें अवश्य भेदहै चरकीयमाषा बड़ाहै और सुश्रुतीय छोटा। निष्कर्षमें सुश्रुतीय ६ रत्तीका माषा होताहै और चरकीय ८ रत्तीका। इसलिये केवलमाशोंमेंही भेदहै इसकेसिवाय कर्षप्रभृतिमें कोईभेदनहींहै। यदि 'ताश्चतस्रश्च माषक 'की जगह 'तास्तिस्रश्चैकमाषक 'करदिया जाय और 'भवेच्छाणस्तु ते त्रय ' की जगह 'शाण.स्यात्तच्चतुष्ट-यम्' ऐसा कर दियाजाय तो फिर माशोंमेंभी फरक न आवेगा– चरकीयमूलपाठकी अशुद्धिको समझनेकी शक्ति न होनेसे चक्र पाणिदत्तने यहापर अंडबंड लिखमाराहै वह सर्वथा अनादेयहै। चक्रपाणिदत्तकी तरह अष्टाङ्गसङ्ग्रहकारनेभी "परिमाण पुन षड्वंश्यो मरीचि.। ताः षट् सर्षप, तेऽष्टौ तण्डुल·। तौ धान्य-माष.। तौ यव" ऐसी अविचारसे अशुद्धपाठकीही व्याख्या करदीहै। इसीतरह "तुला पुनः पलशतं, तानि विंशतिर्भार·" यह अन्यग्रन्थोंकी चरककेसाथ खिचड़ी पकाडालीहै कारण कि इसभारका नाम चरकमें नहींहै किन्तु सुश्रुत और कृष्णात्रेयमें है। चरकमें भारको वाह वतलायाहै उससे आधेको भारी वताईहै वहभी इसभारसे अधिकप्रमाणकीहै। इसलिये यह प्रतीतहोताहै कि इनसवने इसका तलस्पर्श न करके एक अन्दा-ज़से लिखमाराहै। कितनेही अज्ञलोग सुश्रुतीय धरणमानको अन्यमत वतलातेहैं और यहाका कर्ष ८० रत्तीकाहै इसतरह व्याख्यान करतेहैं सो अज्ञताहै। यहा दो मत नहींहै किन्तु उसीमानको द्वितीयप्रकारसे सिद्धकियाहै इनमें अणुमात्रभी अन्तर नहींहै जैसा ९६ रत्तीका कर्ष पहिलाहै वैसाही यहहै और इसीको षड्धरणादियोगोंमें लियाहै।

"त्रिरजोभिश्च सिकता ताभिः षोडशभिः क्षुधा।
द्वयेन सर्षपो रक्तस्ते चाष्टौ तण्डुलं विदुः॥
तद्द्वयं धान्यमाषः स्यात्तद्द्वयं रक्तिका मता।
चतुर्भिरण्डिका ज्ञेया षड्भिर्वल्लः प्रकीर्तितः॥
पक्वगुञ्जाफलैस्तुल्यैरष्टाभिर्माषकः स्मृतः।
रक्तिभिः पञ्चभिर्माषः षड्भिर्वासप्तभिस्त्रिभिः॥
दशभिर्वा भवेदत्र प्रोत्तमाधममध्यमाः।
अण्डिका चापि निर्दिष्टा कचिन्माषद्वयेन वै॥
चतुर्भिर्माषकैः शाणस्त्रिभिर्वाऽऽत्रेयसम्मतम्।
गद्याणो माषकैः षड्भिः शाणाभ्यां द्रङ्क्षणो मतः॥
कोलश्च घटकश्चैव स भवेत्क्षुद्रसञ्ज्ञकः।
शाणैश्चतुर्भिः कर्ष· स्यादक्षं पाणितलं विदुः॥
पिचुः सुवर्णकं किञ्चिद्बिडालपदकं तथा।
उदुम्बरो हंसपदं करमध्यश्च तिन्दुकम्॥
कवलग्रहः पाणिकश्च स प्रोक्त· पाणिमानिका।
कर्षद्वयेनाष्टमिका शुक्तिः सैव प्रकीर्तिता॥
शुक्तिभ्यां तु प्रकुञ्चः स्यात्पलं मुष्टिश्चतुर्थिका।
आम्रं बिल्व पलाभ्यां स्यात्प्रसृतिः प्रसृतस्तथा॥
पलस्य दशमांशेन धरणं परिकीर्तितम्।
प्रसृतिभ्यामञ्जलिः स्यात्कुडवश्च चतुष्पलम्॥
वेणुवार्क्षायसादीनां भाण्डं यच्चतुरङ्गुलम्।
विस्तीर्णमथ वृत्तश्च कुडवं तं विनिर्दिशेत॥
कुडवाभ्यां शरावः स्यान्मानिकाऽष्टपलं तथा।
चतुर्भिः कुडवैः प्रस्थस्तथा सुप्तमितीरितः॥
चतुष्प्रस्थैर्भवेत्पात्रं तत् स्याद्भाजनमाढकम्।
कंसः प्रस्थाष्टकं गात्रं पर्यायैः क्रमशो विदुः॥
चतुराढकसङ्ख्यातो द्रोणश्च परिकीर्तितः।
कलशो नल्वणो राशिर्मणश्च परिकीर्तितः॥
द्रोणाभ्यां शूर्पकुम्भौ च चतुष्षष्टिशरावकः।
शूर्पाच्च द्विगुणा द्रोणी वहो गोणी च सा स्मृता॥
तुला पलशतं तासां विंशतिर्भार उच्यते।

कृष्णात्रेयसंहिता

उपरिनिर्दिष्ट कृष्णात्रेयसंहिताकाभी यह मान चरकीयमानसे मिलता जुलताहै केवल १–२ स्थानोपर नाममात्रका अन्तरहै यथा—"त्रिरजोभिश्च सिकता ताभि. षोडशभि क्षुधा। द्वयेन सर्षपो रक्तस्ते चाष्टौ तण्डुल विदु॥" अर्थात् ३ रजकी १ सिकता, १६ सिकताकी १ राजिका और २ राजिकाका १ रक्तसर्षप मानाहै इसहिसावसे १ रक्तसर्षपमें ९६ त्रसरेणु होतेहैं। चरकीयमानमें १ रक्तसर्षपके १०८ त्रसरेणु मानेगयेहैं केवल १२ त्रसरेणुका अन्तर आताहै। यह आनुमानिक प्रमाण होनेसे इतने अन्तरका होना सम्भवहै इसलिये यह विशेष ध्यान देने योग्य नहींहै।

आगे चलकर "पक्वगुञ्जाफलैस्तुल्यैरष्टाभिर्माषकः स्मृत। रक्तिभिः पञ्चभिर्माषः षड्भिर्वा सप्तभिस्त्रिभि·॥ दशभिर्वा भवे-दत्र प्रोत्तमाधममध्यमा॥" माशेके उत्तम, मध्यम और अधम तीनभेदोंमें १०, ८, ७, ६, ५ और ३ रत्तियोंके ६ तरहके माशे वतायेहैं। इनमेंसे १० और ८ रत्तीकामाशा उत्तम, ७ और ६ रत्तीका मध्यम, तथा ५ और ३ रत्तीका अधमकोटिमें रक्खाहै। कृष्णात्रेयने उपर्युक्तप्रमाणमें ८ रत्तीका माषालियाहै इसहिसावसे कर्षकी १२८ गुञ्जा या रत्ती होतीहै। यह चरकीयकर्षसे प्रमाणमें ३२ रत्ती अधिक हो

जाताहै । यदि ६ गुञ्जाका मध्यममाषा लियाजाय तो दोनों-कर्ष एकवरावर होजातेहैं । औषधप्रमाणमें ६ गुञ्जाकामाषा-लेना ठीकमालूम पड़ताहै क्योंकि कृष्णात्रेयसंहिताकी परिभाषा में "वम्यादिरक्तमोक्षेषु माने मूत्रवसादिषु । वमनादिषु योज्यश्च मापकश्चाष्टरक्तिक ॥" अर्थात् वामकक्वाथ, रक्तमोक्ष, मूत्र और वसादिकोंकेमानमें ८ रत्तीकामाषालेना ऐसा विशिष्ट रूपसे कहाहै । साधारणतया ६ रत्तीकामाषा मानलेनेसे सुश्रुत, चरक और कृष्णात्रेयके कर्षमें कोई अन्तर नहीं रहता । वैसेतो "कषायादिनिरूहेषु द्रव्यमानविधावपि । ततोऽष्टादश-भिर्मापैर्मापकः परिकीर्तित ॥ लोहरत्नादिविषये दशरक्तिक-मापकः" इत्यादि कार्यपरत्वेन ९ रत्तीकाभी माशा मानाहै उन सवको मान्य करना असम्भवहै । कहीं २ पर १४ रत्तीका माषा भी वनायाहै पर वह व्यवहार्य नहींहै ।

मागधमानमें कुडवका विशेषमान "वेणुवार्क्षायसादीना भाण्ड यच्चतुरङ्गुलम् । विस्तीर्णमथ वृत्तश्च कुडवं तं विनिर्दि-शेत् ॥" इसतरह दियाहै । कुडवसे नीचेका मान यहा नहीं दियागयाहै पर हिसावलगाकर वनाया जासकताहै । इसमें अङ्गुलका मान जानना अत्यावश्यकहै इसकेलिये 'वास्तुविद्या-प्रभृतिमें मान वतलायाहै । यथा-"परमाणुभिरष्टाभिस्त्रसरेणु-रिति स्मृत' । त्रसरेणुश्च रोमाग्रं लिक्षा यूका यवस्तथा ॥ क्रमशोऽष्टगुणा. प्रोक्ता यवोऽष्टगुणितोऽङ्गुलि. ॥" यहापर क्रमश परमाणु, त्रसरेणु, रोमाग्र, लिक्षा, यूका, यव इनकी आरम्भसे उत्तरोत्तर अष्टगुणित सङ्ख्या आतीहै इसहिसावसे १ यवमें ३२७६८ परमाणु होतेहैं और तुलामानमें १ यवके ५१८४० परमाणु होतेहै । इन्ही ८ यवोंकी चौड़ाईका व्यास १अङ्गुलहोताहै। तुलामानमें परमाणुसे आरम्भ तो इसीके सदृशहै पर इसमें तद्वत गुरुत्व (वजन) लियागयाहै और अङ्गुलमानमें तद्वत व्यास लिया गयाहै इसलिये दोनोंका विषयभिन्न होनेसे दोष नहीं आता क्योंकि मान सहस्रधा होताहै इसवातको आगे सूचित करेंगे । अङ्गुलसे आगेका माप यद्यपि यहा अत्यन्त उपयुक्त नहींहै परन्तु किसीको यह अपेक्षा हो कि इसके आगेका माप किसतरहकाहै ? इस आकाङ्क्षाको शान्तकरनेके-लिये तथा भूमिस्थद्रव्यके अद्दिवल तथा धराचक्रादिद्वारा विज्ञानकेलिये उपयुक्तहोनेसे यहा देदियागयाहै ।

यवोदरैरङ्गुलमष्टसङ्ख्यै-,
हस्तोऽङ्गुलैः षड्गुणितैश्चतुर्भिः ।
हस्तैश्चतुर्भिर्भवतीह दण्डः,
क्रोशः सहस्रद्वितयेन तेषाम् ॥
स्याद्योजनं क्रोशचतुष्टयेन,
तथा कराणां दशकेन वंश. ।
निवर्तनं विंशतिवंशसङ्ख्यैः,
क्षेत्रं चतुर्भिश्च भुजैर्निवद्धम् ॥
लीलावती (परिभाषा)

अथ कलिङ्गदेशीयमानम्

कलिङ्गदेश यद्यपि इससमय अप्रसिद्धसा होगयाहै परन्तु "तथा मत्स्यकलिङ्गाश्च कौशिकाश्च समन्ततः । अन्वीक्ष्य दण्डकारण्यं सपर्वतनदीगुहम् ॥ नदीं गोदावरीं चैव सर्वमेवा-नुपश्यत । तथैवान्ध्राश्च पुण्ड्राश्च चोलान् पाण्ड्याश्च केरलान् ॥ वाल्मीकि० किष्कि० ४१।११-१२" एतन्निर्दिष्टमार्गसे गोदा-वरीके उत्तरमें मत्स्य, कलिङ्ग और कौशिक ये देशहैं और गोदावरीके दक्षिण आन्ध्र, पुण्ड्र, चोल, पाड्य और केरलको वतलायाहै इससे यह निर्धारित होताहै कि विजयनगरके समीप कलिङ्गदेश होना चाहिये । वहाका कर्ष १० माशेका प्रथम समयमें होगा ऐसा अनुमान होताहै क्योंकि उसकी कुछ छाया नीचे दियेहुए कोष्टकमें मिलतीहै परन्तु इससमय उसमें फेरफार होकर कईतरहके मान होगयेहैं । आधुनिक कलिङ्गदेशीयतोल इसप्रकारहै जो कि शार्ङ्गवरीय कलिङ्गमानसे मिलताहै ।

कलिङ्गदेशीयमानम्		शार्ङ्ग०
३२ गुञ्जा=१ वरहा	... ..	१ शाण
१० वरहा=१ पल	... ..	१ पल
८ पल=१ सेर	... ...	१ शराव
५ सेर=१ वीसा	... ...	२॥ प्रस्थ
८ वीसा=१ मन	... ...	५ आढक
२० मन=१ भार	... ...	१०० आढक

आन्ध्रदेशीयप्रचलितमानम्

१ भार=२० मन	½ तोला=७½ चिन्नम्
१ मन=८ वीसा	¼ तोला=३¾ चिन्नम्
१ वीसा=५ सेर	१ चिन्नम्=२ अड्गिा
१ सेर=८ पल	१ अड्गिा=२ गुञ्जा
१ पल=३तोला (१०वरहा)	१ गुञ्जा=४ चावल (सतुष)
१ तोला=३० चिन्नम्	१ चावल=२ राजिका
½ तोला= १५ चिन्नम्	

इसमानमें पलके वज़नतक कलिङ्गदेशीयमानहै पलसे नीचे के वज़नमें अन्तर करदियाहै इससमय १ पलके ३ तोले मानकर तोलेको १२० गुञ्जाका वनायाहै इस हिसावसे १ पलकी ३६० गुंजा होतीहैं और कलिङ्गमानके १ पलकी ३२० गुञ्जा होतीहैं इनदोनोंमें ४० गुञ्जाका अन्तर आताहै सो मालूम होताहै कि व्यापारियोंने फरेवीसे इस-भेदको घुसादियाहै कारणकि देनेकेलिये प्राचीनतोल रक्खाहो और लेनेकेलिये वनावटी तोल वनादियाहो यह सम्भवहै । उदाहरणार्थ आजकल इसदेशमेंभी वसराप्रभृतिसे मोती वग़ैरह लाये जातेहैं वे वहाके तोलेके हिसाबसे आतेहैं वहाका तोला यहाके तोलेसे कुछ अधिकहै सो व्यापारी लोग उसतोलसे लाकर यहा इसतोलसे वेचतेहैं यह फर्क हरीफाईकाहै । इसी-तरह दक्षिणदेशमें भी हुआहै तोलमें सवजगहके व्यापारी प्राय ऐसीही युक्ति कियाकरतेहैं इसकी नियत्ता करनी असम्भव जैसाहै स्वार्थप्रधान दुनियासे हरीफाईका जाना असम्भवहै ।

सौकर्यार्थं सुश्रुतादिमानबोधकं कोष्ठकम्

सुश्रुतीयमानम्	चरकीयमानम्	शार्ङ्गधरीयमानम्
... ...	... ...	३० परमाणु=१ वंशी, त्रसरेणु
... ...	६ वंशी=१ मरीचि	६ वंशी=१ मरीचि
... ...	६ मरीचि=१ राजिका	६ मरीचि=१ राजिका
... ...	३ राजिका=१ रक्तसर्षप	३ राजिका=१ रक्तसर्षप
... ...	... ...	२ रक्तसर्षप=१ पीतसर्षप
... ...	८ रक्तसर्षप=१ तण्डुल	... ...
... ...	२ तण्डुल=१ धान्यमाष (उड़द), यव	८ पीतसर्षप=१ यव, धान्यमाष (उड़द)
... ...	... ...	२ यव=१ गुञ्जा, रक्तिका
४ धान्यमाष=१ निष्पाव (अण्डिका)	४ धान्यमाष=१ अण्डिका (निष्पाव)	... ...
१२ धान्यमाष=१ माशा	४ अण्डिका=१ माशा	६ गुञ्जा=१ माशा
... ...	३ माशा=१ शाण	४ माशा=१ शाण, धरण, टङ्क
८ माशा=१ कोल	२ शाण=१ कोल, द्रङ्क्षण, बदर	२ शाण=१ कोल, क्षुद्रक, द्रङ्क्षण, वटक.
१९ निष्पाव (अण्डिका)=१ धरण	... ...	... ...
२ कोल=१ कर्ष, सुवर्ण, अक्ष, बदर, पाणितल	२ कोल=१ कर्ष, सुवर्ण, अक्ष, बिडालपदक, पिचु, पाणितल, तिन्दुक, कवलग्रह	२ कोल=१ कर्ष, पाणिमानिका, अक्ष, पिचु, पाणितल, किञ्चित्पाणि, तिन्दुक, बिडालपदक, षोडशिका, करमध्य, हंसपद, सुवर्ण, कवलग्रह, उदुम्बर
२ कर्ष=१ शुक्ति	२ कर्ष=१ शुक्ति, पलार्द्ध, अष्टमिका	२ कर्ष=१ शुक्ति, अर्द्धपल, अष्टमिका
४ कर्ष=१ पल, पाणिशुक्ति	२ शुक्ति=१ पल, मुष्टि, प्रकुञ्च, चतुर्थिका, बिल्व, षोडशिक, आम्र	२ शुक्ति=१ पल, मुष्टि, आम्र, चतुर्थिका, प्रकुञ्च, षोडशी, बिल्व
... ...	२ पल=१ प्रसृत	२ पल=१ प्रसृत, प्रसृति
४ पल (२ प्रसृत)=१ कुडव	४ पल (२ प्रसृत)=१ कुडव, अञ्जलि, अष्टमान	४ पल (२ प्रसृत)=१ कुडव, अञ्जलि, अर्धशराव, अष्टमान
... ...	२ कुडव=१ मानिका	२ कुडव=१ मानिका, शराव
४ कुडव=१ प्रस्थ	४ कुडव (२ शराव)=१ प्रस्थ	४ कुडव (२ शराव)=१ प्रस्थ
२ प्रस्थ=१ अर्धपात्र	२ प्रस्थ=१ अर्द्धपात्र	२ प्रस्थ=१ अर्द्धपात्र
४ प्रस्थ=१ आढक, पात्र	४ प्रस्थ=१ आढक, पात्र,	४ प्रस्थ=१ आढक, पात्र, भाजन
... ...	८ प्रस्थ (२ आढक)=१ कंस	८ प्रस्थ (२ आढक)=१ कंस
४ आढक=१ द्रोण	४ आढक (२ कंस)=१ द्रोण, अर्मण, नल्वण, कलश, घट, उन्मान	४ आढक (२ कंस)=१ द्रोण, कलश, नल्वण, अर्मण, उन्मान, घट, राशि
... ...	२ द्रोण=१ शूर्प, कुम्भ	२ द्रोण=१ शूर्प, कुम्भ
... ...	२ शूर्प=१ गोणी	२ शूर्प=१ गोणी, द्रोणी, वाह
... ...	२ गोणी=१ खारी	४ गोणी=१ खारी
... ...	२ खारी=१ भारी	... ...
... ...	४ खारी (३२ शूर्प)=१ वाह	. .. .
१०० पल=१ तुला	१०० पल=१ तुला	१०० पल=१ तुला
२० तुला=१ भार	... ...	२० तुला=१ भार

वैजयन्तीकोषोक्तमानम्



त्रसरेणुभिरष्टाभिर्लिक्षा सैव मरीचिका ।
रथरेणुश्च रेणुश्च तास्तिस्रो राजसर्षपः ॥
धुरणश्च यवाग्रश्च ते त्रयो गौरसर्षपः ।
तेऽष्टौ यवष्षोडश तु यवा माषोऽथवा त्रिभिः ॥
यवैर्गुञ्जा पञ्च गुञ्जा माषः कुप्ये तु सप्त ताः ।
रूप्यमाषो द्विगुञ्जो वा धरणं षोडशैव ते ॥
शतमानं तु दशभिर्धरणैः पलमेव च ।
माषस्तण्डुलमात्रो वा हेम्नस्तैरष्टभिः पणः ॥
निष्कोऽस्त्री विंशतिपणस्तेऽष्ट वा दश वा पलम् ।
यः पञ्चकृष्णलो माषः कुप्ये वा सप्तकृष्णलः ॥
तौ द्वौ माषावर्णिका स्याल्लोहितीकं त्रिमाषकम् ।
शाणो मण्डः पिचूलश्च माषास्स्युश्चतुरादयः ॥
मक्षुणं सप्तमाषं स्यादण्डिका स्याच्चतुर्यवा ।
द्रक्षणं द्रक्षुमं कोलं वटकं चाष्टमाषके ॥
तृतीये ध्वानका शाणभागे माषास्तु षोडश ।
सुवर्णोऽक्षः पिचुः पाणिः कर्षोऽस्त्री क्रोडविन्दुके ॥
विडालपदकं हंसपदं ग्रासग्रहं तलम् ।
शतमानं तु कर्षे द्वे शुक्तिरष्टमिका न ना ॥
ते द्वे चतुर्थिका वा क्ली निकुच्याज्यपलानि च ।
विल्वः प्रकुञ्चं मुष्टिश्च हेम्नोऽक्षे विस्तवारटौ ॥
पादिकं ताम्रकर्षं स्यादिन्दु स्याद्राजते पले ।
कुरुविस्तः पले हेम्नः प्रसृतोऽस्त्री द्विमुष्टिके ॥
प्रसृतौ द्वावञ्जलिः स्यात्कुडपो वाहिकोऽभ्युषः ।
तौ द्वौ मान्यष्टमानञ्च ते द्वे प्रस्थस्स कुप्यके ॥
द्वात्रिंशत्पलकोऽन्येषां द्वादशैव पलानि सः ।
चतुष्प्रस्थः पुना राशिर्महोद्रेको वृहाणकः ॥
पात्रं शूर्पावरं पिष्टं सेहिका द्व्याढकोऽस्त्रियाम् ।
कंसं चाथ चतुष्के स्युर्द्रोणोऽस्त्री कलशो घटः ॥
अर्मणं नल्वलं शौर्पमुन्मानं तद्द्वयं पुनः ।
कुम्भश्शूर्पोऽस्त्रियां तौ द्वौ गोणी वाहस्तु तद्द्वयम् ॥
तौ द्वौ खारी परे त्वेनां विदुः कुम्भीं परे पुनः ।
खारीं कंसयुगेनान्ये मानी वाहं परे विदुः ॥
वाहं केचिच्चतुःखारीं खारीभागञ्च गोणिकाम् ।
वाहं प्रस्थद्वयं केचित्कुम्भानां विंशतिर्जटी ॥
दशकुम्भा पाञ्चमिकः कुम्भोऽयमिति केचन ।
धारणं तु पलान्यष्टौ हेम्नस्ताम्रस्य सप्ततिः ॥
दशान्येषां शतं मानं सार्धं रूप्यपलैस्त्रिभिः ।
तुला पलशतं तास्तु दशार्क्षं व्रटिकोऽस्त्रियाम् ॥
तौ तु द्वौ शाकटो भारश्शाकटीनश्शलाटवत् ।
भारा दश समं सङ्गं धारभारं च शाकटम ॥
आचितं द्व्याचितं होढं हेलकं समकं समम् ।
वाहितं भारितं चाष्टावृक्षाद्दशगुणाः क्रमात् ॥
माषश्शाणस्तलं मुष्टिरञ्जलिः प्रस्थ आढकः ।
द्रोणो गोणी च खारी च क्रमादेतच्चतुर्गुणम् ॥
पाय्यं हस्तादिभिर्मानं द्रवयं कुडवादिभिः ।
पौतवं तुलया तस्य सूत्रं स्याद्भागसूत्रकम् ॥

वैजयन्ती० सामान्यकाण्डे गणाध्याये.

वैजयन्तीकोषमें कई मानोंकी खिचड़ी करडालीहै यथा—

८त्रसरेणु=१ लिक्षा (मरीचिका, रथरेणु, रेणु)
३ लिक्षा=१ राई (धुरण, यवाग्र)
३ राई=१पीलासर्षप
८ सर्षप=१ यव
१६ यव=१ माशा
३ यव=१ गुञ्जा } सुवर्णमानहै
५ गुजा=१ माशा
७ गुंजा=१ माशा (ताम्रादिमानहै)
२ गुंजा=१ माशा (रौप्यमानहै)
१० धरण=१ पल (शतमान)

कहींपर तण्डुलमात्र सुवर्णका १ माशा मानागयाहै उन ८ माषोंका १पण अथवा निष्क होताहै।२०,८ अथवा १० पणोंका १पलहोताहै ५ अथवा ७ गुजाके दो माशोंको अरणिका कहतेहैं तथा ३ माशोंको लोहितीक, ४ माशोंको शाण, ५ माशोंको मण्ड, ६ माशोंको पिचूल और ७ माशोंको मक्षुण कहतेहैं ।

४ जव=१ अण्डिका
८ माशे=१ द्रक्षण (द्रक्षुम, कोल, वटक=धटक)
$\frac{1}{3}$ शाण=१ ध्वानका
१६ माशे=१ सुवर्ण (कर्ष, अक्ष, पिचु, पाणि, क्रोडविन्दु, विडालपद, हंसपद, ग्रासग्रह, तल)
२ कर्ष=१ शतमान (शुक्ति, अष्टमिका)
२ शुक्ति=१ चतुर्थिका (निकुच, आज्य, पल, विल्व, प्रकुच, मुष्टि)

सुवर्णकर्षको विस्त और वारट कहते हैं । सुवर्णकर्षसे १ पादहीन ताम्रकर्ष होताहै । रजतपलको इन्दु, सुवर्णपलको कुरुविस्त कहतेहैं । २ मुष्टिका १ प्रसृत, २ प्रसृतिकी १ अञ्जलि (कुडप, वाहिक, अभ्युष), २ अञ्जलि की १ मानी अथवा अष्टमान, २ मानी का १ प्रस्थ होताहै । कुप्यमें ३२ पलका प्रस्थ होता है और दूसरोंका १२ पलका होताहै ।

४ प्रस्थ=१ राशि (महोद्रेक, वृहाणक, पात्र, शूर्पावर और पिष्ट)
२ आढक=१ कंस (सेहिका)
४ आढक=१ द्रोण (कलश, घट, अर्मण, नल्वल, शौर्प, उन्मान)
२ द्रोण=१ कुम्भ (शूर्प)
२ कुम्भ=१ गोणी

२ गोणी=१ वाह

२ वाह=१ खारी (दूसरोंके मतमें कुम्भी)

बहुतोंके मतमें २ कंसकी १ खारी होतीहै इसीको मानी अथवा वाह कहतेहैं। कितनेही ४ खारीका १ वाह वतलातेहैं। खारीके चतुर्थांशको गोणिका कहते है। कितनेही २ प्रस्थको वाहकहतेहै। २० कुम्भको जटी और १० कुम्भको पाञ्चमिक अथवा कुम्भकहतेहैं। सुवर्णके ८ और तावेके ७० पलोंको धारणकहतेहैं। दूसरेलोग तावेके १० पलोंको धारणकहतेहै। रूप्यके ३॥ पलको शतमान, १०० पलको तुला; १० तुलाका १ ऋक्ष अथवा घटिक, २ घटिकका १ शाकटभार अथवा शलाट; १०शाकटभारको सम, सञ्ज, धारभार अथवा शाकट कहतेहैं।

१० तुला=१ ऋक्ष
१० ऋक्ष=१ आचित
१० आचित=१ द्रयाचित
१० द्रयाचित=१ होट
१० होट=१ हेलक
१० हेलक=१समक
१० समक=१ सम
१० सम=१ वाहित
१० वाहित=१ भारित

माप, शाण, तल, मुष्टि, अञ्जलि, प्रस्थ, आढक, द्रोण, गोणी, खारी ये क्रमसे चतुर्गुण समझना। हस्तादिकोंके मानको पाय्यकहतेहैं। कुडवादिकोंके मापको द्रुवय, तराजूके तोलको पौतव और हस्तादिकके मापनेकी डोरीको भागसूत्र अथवा रागसूत्र कहतेहैं।

मानवधर्मशास्त्रमें "जालान्तरगते भानौ यत्सूक्ष्मं दृश्यते रजः" इत्यादि कुछ तत्सामयिक दण्डके मानका उद्देश कियाहै पर वह औषधोपयोगि नहींहै। उससमयभी व्यवहारोंकी भिन्नताको लेकर कईतरहके मान थे उन्हीं सवकी खिचड़ी वैजयन्तीकोषकारने पकाईहै इसे मानवधर्मशास्त्रका मान नहीं समझना। मानवधर्मशास्त्रीयमान नीचे दियाहै उसे देखकर खातिरी हो सकतीहै यथा—

"जालान्तरगते भानौ यत्सूक्ष्मं दृश्यते रजः।
प्रथमं तत्प्रमाणानां त्रसरेणुं प्रचक्षते॥
त्रसरेणुभिरष्टाभिर्लिक्षैका परिमाणतः।
ता राजसर्षपस्तिस्रस्ते त्रयो गौरसर्षपः॥
सर्षपा. षट् यवो मध्यस्त्रियवं त्वेककृष्णलम्।
पञ्चकृष्णलको मापस्ते सुवर्णस्तु षोडश॥
पलं सुवर्णाश्चत्वारः पलानि धरणं दश।
द्वे कृष्णले समधृते विज्ञेयो रौप्यमापकः॥
ते षोडश स्याद्धरणं पुराणश्चैव राजत।
कर्षापणस्तु विज्ञेयस्ताम्रिक कार्षिक पण.॥
धरणानि दश ज्ञेयः शतमानस्तु राजतः।
चतुःसौवर्णिको निष्को विज्ञेयस्तु प्रमाणतः॥
पणानां द्वे शते सार्धे प्रथमः साहसः स्मृतः।
मध्यमः पञ्च विज्ञेयः सहस्रं त्वेव चोत्तमः॥

मनु० ८।१३२–१३८

जिसतरह कलिङ्गमानकी दुर्दशा हुईहै उसीतरह हिन्दी गणितकी पुस्तकोंमें मानकी दुर्दशाहै यथा ८ खसखस=१ चावल, ८ चावल=१रत्ती, ८ रत्ती=१ माशा, १२ माशे=१ तोला इसजगह ८ खसखसका जो १ चावल लिखाहै सो खवरनहीं किसमहाशयने अन्दाज़से लिखडालाहै। तोलमें लाल चावल लियाजाताहै इस १ चावलपर लगभग ७५ खसखस चढ़तेहै और लिखनेवालेने ८ ही खसखस लिखेहैं। इसपर कुछभी विचार न करके पुस्तकोंमें वैसाही भेडियाधसान चलारक्खाहै इसतरफ किसीकी भी दृष्टि नहीं गई। सन् १९२२ में निर्णय सागरप्रेसमें लीलावतीकी सटीक पुस्तक छपीहै उसकी टीकामें भी **'तोलपरिमाणभारतीय'** शीर्षककेनीचे ८ खसखसका १ चावल लिखाहै। वज़नमें तथा आकारमें किसीभीतरह १ चावल के वरावर ८ खसखस नहीं होते। इसकी तर्फ़ देखकर चित्त अत्यन्त खिन्न होताहै इसीतरह सवजगह तोलमें वहुत फेरफार हुआहै उसे सुधारनेकी आवश्यकताहै।

सुश्रुतीयमान प्राचीनकालसे चला आताहै चरकने भी इसीको वतलायाहै। मनुष्योंकी अग्निके ह्रासकेकारण कलिङ्गमानकी पीछेसे कल्पना हुई प्रतीतहोतीहै। इन्हीं दोनोंमानोंका अनुकरण करके लोगोंने नानातरहके तोल वनाए हुएहैं। मागधीयप्रस्थमें १६ रुपयेभर वज़न वढ़ाकर ८० रुपयेका वङ्गाली सेर वनायाहै इसीमें १६ रुपये और मिलाकर ९६ रुपयेका पहाड़में सेर वनायाहै इसीतरह कहीं अधिकता कहीं न्यूनता करके सेर वनाए हुएहैं परन्तु सवका मूल मागधमानही है।

इसजगह गूढरहस्य यहहै कि मागधकीतरह मापादि विभागयुक्त कोईभी तोल लियाजाय तो उसमें किसीतरहका अन्तर या हर्ज नहीं होताहै परन्तु जिसमानसे कामलिया जाय वहापर उसी मानके वज़नोंको काममें लेना चाहिये उसमें साङ्कर्य करनेसे दोष उपस्थित होगा। यदि एकयोगमें ५ वस्तुएं कर्षप्रमाण लिखीहों तो उन पाचोंके तोलनेमें एकही कर्षका उपयोग करना चाहिये जैसे १० रत्तीके माशेसे १६ माशेका कर्ष मानकर दवाए लेवें तो पांचोंको उसीकर्षसे लेना उचितहै और कुडवादिक मापसे कोई चीज़ उसमें आईहो तो उसेभी इसीकर्षके हिसावसे डालना उचितहै ऐसा करनेसे कोईभी अन्तर न पड़ेगा इसीकारण अपने अभिमत मानको दिखलाकर मानविशेषकी नियत्ता दूरकरनेके अभिप्रायसे देखिये सुश्रुत क्या लिखतेहैं यथा—"**तत्राऽ**न्यतमपरिमाणसम्मिताना यथायोगं त्वक्पत्रमूलादीनामातपपरिशोषिताना छेद्यानि खडशश्छेदयित्वा भेद्यान्यणुशो भेदयित्वाऽवकुट्याऽष्टगुणेन

षोडशगुणेन वाऽम्भसाऽभिषिच्य स्थाल्या चतुर्भागावशिष्टं क्काथयित्वाऽपहरेदित्येष कषायपाककल्प । **स्नेहाच्चतुर्गुणो** द्रव स्नेहचतुर्थांशो भेषजकल्कस्तदैकध्यं संसृज्य विपचेदित्येष स्नेह पाककल्पः । **अथवा** तत्रोदकद्रोणे त्वक्पत्रमूलादीना तुलामावाप्य चतुर्भागावशिष्टं निष्क्वाथ्यापहरेदित्येष कषायपाककल्प.। स्नेहकुडवे भेषजपलं पिष्टं कल्कं चतुर्गुणं द्रवमावाप्य विपचेदित्येष स्नेहपाककल्पः ॥ सु. चि ३१।८" यहापर 'अन्यतमपरिमाणसम्मिताना, से यही ज्ञापन करातेहैं कि परिमाण कोई व्यवस्थित वस्तु नहींहै । दुनियामें परमाणुसे लेकर हिमाद्रिप्रभृति समस्त पदार्थ स्वेतरपदार्थपरिच्छेदक होतेहै वे कहींपर ऊंचाई, कहींपर नीचाई, कहींपर घेर, कहींपर विस्तार, कहींपर कृशता, कहींपर स्थौल्य, कहींपर आकार, कहींपर गुण, कहींपर काल, कहींपर गुरुत्वादि विशेष गुण अर्थात् वज़न इत्यादिभेदोंसे कईतरहकी परिच्छेदकताको निष्पन्न करतेहै । इनमेंसे प्रकरणविशेषको देखकर अभीष्ट परिच्छेदकताको निर्धारितकरना यह परिच्छेदकका खास कर्तव्यहै । यहा प्रकरण चिकित्साका है इसमें बहुधा वजन (तोल) की ज़ुरूरत पड़तीहै क्योंकि वज़न (तोल) विना किसीभी चीज़को तैयार नहीं करसकते और न देसक्तेहैं । जो रातदिन व्यवहारमें आनेवाला आहारहै उसमेंभी तोलविना चीज़ोंको तैयार करना चाहें तो नहींकरसक्ते । उदाहरणकेलिये चावलप्रभृतिको लेलेवें जव चावल और जल ठीकवज़नसे डालकर अन्दाज़की अग्नि लगाई जायगी तभी खानेकेयोग्य चावल तैयारहोंगे अन्यथा नहीं । इसीलिये " **न मानेन** विना युक्तिर्द्रव्याणा जायते क्वचित् ॥" शार्ङ्ग० ॥ "**तत्र** सर्वाण्येवौषधानि व्याध्यग्निपुरुषबलान्यभिसमीक्ष्य विदध्यात् ॥ सु. सू ३९।१०" "द्रव्यप्रमाण तु यदुक्तमस्मिन्मध्येषु तत्कोष्ठवयोवलेषु । तन्मूलमालम्ब्य भवेद्विकल्पस्तेषा विकल्प्योऽभ्यधिकोनभाव· ॥ च क १२।८३" इत्यादि वाक्य कहेगयेहैं । इन वाक्योंसे यह निष्कर्ष निकलताहै कि प्रथम वस्तुस्थितिको देखकर जैसी जहा योग्यता मालूमपड़े वैसा व्यवहारकरे । योग्यताके ज्ञानमें आतुरकी शरीरसम्पत्ति, देश और कालादिकोंकी तुलना मुख्यकारणहै । रोगनिर्मूलनकार्यमें औषध मुख्यकारण होताहै और प्रमाणप्रभृति समस्त उपकरण होतेहैं इनकी योग्यता देखकर औषधमात्राका निर्धारण करना वैद्यकी वुद्धिपर निर्भरहै वैद्यकी वुद्धि वढानेकेलिये शास्त्रकारोंने एक दिग्दर्शनकरायाहै न कि तावन्मात्र मर्यादामें उसे निबद्धकियाहै ।

पूर्वोक्तसुश्रुतीय उदाहरणोंमें त्वक्, पत्र, मूल, फल, पुष्पप्रभृतिको धूपमें सुखाकर काढेकेयोग्य कूटकर अठगुने अथवा सोलहगुने पानीमें पकाकर चतुर्भागावशिष्टक्वाथका ग्रहण वतलायाहै और आगे चलकर १ तुलाद्रव्यको एकद्रोण (२५६ पल) जलमें पकाकर चतुर्भागावशिष्ट क्काथलेनेको लिखाहै तथा वीचमें स्नेहसे चतुर्गुण द्रव और द्रवचतुर्थांश कल्क डालकर स्नेहका मृदु, मध्य, खर, यह त्रिविध पाक लिखाहै । इससे कल्क, स्नेह और क्काथका प्रमाणतो विस्पष्ट होजाताहै परन्तु स्नेहापेक्षया क्काथ्य द्रव्यका विस्पष्टीकरण नहींहोताहै कि वह कितना लियाजाय ? इसकेलिये प्रसिद्धयोगोंमें जहा जो प्रमाण लिखाहो उसे लेना और जहा क्काथ्यका प्रमाण नहीं लिखाहै वहापर "**स्नेहभेषजतोयानां** प्रमाणं यत्र नेरितम् । तत्रेयं विधिरास्थेयो निर्दिष्टे तत्तदेव तु ॥ अनुक्ते द्रवकार्ये तु सर्वत्र सलिल मतम् । कल्कक्काथावनिर्देशे गणात्तस्मात्प्रयोजयेत् ॥ सु. चि ३१।९–१०" इसतरह निर्धारण कियाहै यद्यपि स्नेहसे द्रवके चातुर्गुण्य विधानसे क्काथ, क्षीर, मद्य और आसवप्रभृति सभी उपस्थितहोतेहैं तथापि प्रत्यासत्तिन्यायसे ऊपर कषायकल्पका विधान लिखनेसे कषायही सर्वत्र प्रथम वुद्ध्यारूढ होताहै और वह ८, १६ और ५ गुने जलमें पकानेके भेदसे ३ तरहकाहोताहै उनमेंसे अन्यतम कषाय स्नेहसे चतुर्गुणित होनाचाहिये यह निर्द्धारित होताहै ।

यद्यपि तृतीयकल्पमें इससमय "**अथवा** तत्रोदकद्रोणे०" ऐसापाठ सुश्रुतमें मिलताहै परन्तु वह उचित नहीं प्रतीतहोताहै। कारण कि तुलानाम १०० पलकाहै । उसे १ द्रोण अर्थात् २५६ पल जलमें उबालकर चतुर्थांशावशेष रखकर कार्यकरना दुस्तरहै । यद्वा तद्वा करके कियाभी जायगा तो वह निकम्मा होगा । कारण कि अल्पपाकसे क्वाथमें सारका निकलना असम्भव है इसलिये यहापर द्विद्रोण ऐसा पाठ अनुमित होताहै ऐसा होनेसे ५१२ पल जल होगा उसका चतुर्थांशावशेष १२८ पल रहजायगा । इसमें चतुर्थांश ३२ पल स्नेह पकसकेगा । इस (तृतीयकल्पमें) स्नेहसे तिगुनेसे कुछ अधिक क्काथ्य द्रव्य आताहै इसीको लोगोंने चतुर्गुणके नामसे लिखदियाहै देखो इन्दुटीकामें लिखीहुई **पद्यरूपपरिभाषा**–"**चतुर्गुणेन** तोयेन क्काथयेदौषधानि तु । ऋषीणा सुश्रुतादीना सर्वेषा मतमीदृशम् ॥ एतावास्तु विशेषोऽत्र शेषमत्रापि पूर्ववत । क्काथ्यं तु भेषज स्नेहादत्र पक्षे चतुर्गुणम् ॥ १६–१७ अ. सं. कल्प०" यह वारीकीसे विचार न करनेसे लिखागयाहै और सुश्रुतीयपाठकी अशुद्धिका पता न लगनेसे "पलव्यपेक्षयाऽप्यस्ति तथा प्रस्थव्यपेक्षया । सुश्रुतस्य तु य पूर्वमुपन्यस्तश्चिरन्तन· ॥ पाठ पलव्यपेक्षाया ज्ञापकं तदुदाहृतम् । इत्येव त्रिविध प्रोक्त कषायग्रहण प्रति ॥ २१–२२" ऐसी किसीने मनगढन्त कल्पनाभी करडालीहै । इनके कथनानुसार यदि माना जायगा तो ४, ८ और १६ की जगह ८, १६ और ३२ गुण जल लेना होगा और वैसा होनेसे ८ और १६ गुणितकहना अशक्य होगा इसलिये पलव्यपेक्षया और प्रस्थव्यपेक्षयाकाजाल अर्धजरतीन्यायसे दूषितहोनेके कारण सर्वथा त्याज्यहै क्योंकि इन्होंसे अपने कहेहुएकाभी पालन न होसका यथा–' चतुर्गुणोदके पक्षे स्नेहाद्द्रव्य चतुर्गुणम् । अष्टाविंशं पलशत द्रव्यक्काथस्य जायते । स्नेहप्रस्थे विपक्तव्ये शुष्कं तच्च भवेद्यदि । आर्द्रं चेद्द्विगुणं तत्तत्स्यात्पलशतद्वयम् । स्नेहप्रस्थे भवेत्साध्ये षट्पञ्चाशत्पलाधिकम् । एवं बहुत्वाद्द्रव्यस्य यश्चतुर्गुणितोदकः ।

सकल्पोभिमतस्तत्र स्नेहः स्याद्वीर्यवत्तरः।" यहां तुलामानमेंभी द्विगुणपरिभाषाको लगानेसे नियमभङ्ग हुआ इससे हमने जो पूर्वमें रास्ता वतलायाहै वही श्रेयस्करहै। सुश्रुतकेपाठको सुधारलेनेसे राजमार्ग विशुद्ध होजायगा। पञ्चरूपपरिभाषानिर्माताने अच्छीतरह सुश्रुतीयपाठकी अशुद्धिको न विचारकर छात्रोंकेलिये एक नवीन जाल फैलादियाहै वह सर्वथा हेयहै। सुश्रुतने तृतीयकल्पमें द्रव्यापेक्षया पञ्चगुणसे कुछ अधिक जल दियाहै और स्नेहमे नाममात्र अधिक त्रिगुण द्रव्य दियाहै इससे सुश्रुतीय तृतीयकल्पमें स्नेहसे चतुर्गुणित क्वाथ्यका विधानहै एमा कहनाभी भ्रमहै। यहापर कितनेही लोगोंने तृतीयकल्पको नियमार्थ मानकर "तुलाद्रव्ये जलद्रोणो द्रोणे द्रव्यतुलाम्भसि। ततः पलशते द्रव्ये जलद्रोणोऽपि चेष्यते॥" व्याख्या—यत्र तुलाद्रव्य जले पचेदित्युक्तं परं जलप्रमाणं नोक्तं तत्र द्रोणमितं जलं ग्राह्यम्। यत्र तु द्रोणमिते जले द्रव्य पचेदित्युक्तं परं द्रव्यप्रमाणं नोक्तं तत्र द्रव्यं तुलाप्रमाणं ग्राह्यमिति" ऐसा मनगटन्त श्लोक बनाडालाहै। "भक्षितेऽपि लशुने न शान्तो व्याधि" इसन्यायसे ऐसी कुकल्पना करनेपरभी कुछ अभीष्टसिद्धि नहीं होतीहै क्योंकि शुष्कद्रव्यके चूर्णको २॥ गुने जलमें डालनेसे अपने बराबरके पानीको तो स्वयं शोषण करलेगा वाकी १॥ गुना बचेगा वह अग्निपर चढानेसे १–२ उफानके बाद उसीमें लीनहोजायगा तब चतुर्भागावशेषमें क्या बाकी रहजायगा? इसको विचारा होता तो ऐसा न लिखाजाता। कदाचित् कहे कि "लेह यत्राऽस्ति यो भागो निर्दिष्टो द्रवकल्कयोः। तत्रापि पादिक कल्को द्रवात्कार्यो विजानता॥ तुलाद्रव्य जले द्रोणे द्रोणे द्रव्ये तुला मता। देयो गुडः सिता वापि इति सर्वत्र निश्चितम्॥ अवलेहश्च लेहश्च तस्य मानं पलद्वयम्॥ इस गोपुरके वाक्यमें यह कल्पना अक्षरशः मिलतीहै इसे मनगटन्त क्यों कहनीचाहिये? नहीं उक्तोद्धरणमें लेहविधान वतलायाहै वहापर क्वाथनिष्पन्नहोनेकेवाद लेह तैयार करनेके लिये गुड अथवा शक्कर किस प्रमाणसे डालनी चाहिये इसका निर्धारण कियाहै। गुडरूप द्रव्यतुलाको द्रोणपरिमित द्रवमें अर्थात् जलप्रभृतिमें पकाकर चाशनीकरनी यदि शर्करासे लेह तैयार करना हो तो एकतुलाक्वाथमें एकद्रोण शर्करा डालकर चासनी करनी यह विस्पष्टतया कहागयाहै इसलिये गोपुरके उदाहरणसे अथवा सुश्रुतके कथनसे (**अथवा** तत्रोदकद्रोणे त्वक्पत्रमूलादीना तुलामावाप्य चतुर्भागावशिष्टं नि क्वाथ्यापहरेत्) उक्ताभिप्रायको नहीं निकालसक्तेहै। कोई यह कहनेका साहस न करे कि केवल प्रमाणसे यथालब्ध जलमें पाक क्यों नहीं? इसजगह बड़ाभारी रहस्य यह है कि वैसाहोनाही असम्भवहै तब खाली युक्ति या प्रमाण क्या करसकताहै। परोक्षपदार्थ (स्वर्गादिप्राप्तिप्रभृति) में प्रमाण देकर श्रोताओंको खुशकरसक्तेहै परन्तु प्रत्यक्षमें नहीं। कदाचित् कोई यह शङ्का करे कि "**कुडवं** चूर्णितं द्रव्य प्रक्षिप्तं द्विगुणेजले। अहोरात्रं स्थितं तस्माद्भवेत्स्वरस उत्तम॥ कृष्णात्रेय०" इत्यादिस्थानोंमें द्विगुणजल डालकर कषाय ग्रहणकियाहै तब प्रकृतमें तो २॥ गुना जलहै इसमें हर्जक्या? ठीकहै परन्तु यहापर क्वाथ नहीं कियागयाहै इसलिये इसमेंसे पानी निकल आवेगा, यह विषम दृष्टान्तहै। देखिये—"**क्वाथ्य**द्रव्यस्य वाहुल्यादुदकं स्वल्पमेव चेत्। सम्यक् पाकन्न मुञ्चन्ति हीनवीर्यन्तु केवलम्॥ क्वाथ्यद्रव्यं घटसमं जल दशघटं क्षिपेत्। निःक्वाथ्य पादशेषं तु गुडं सार्धघट न्यसेत्॥ विमृद्य सन्धितं यच्च तच्चासवमितीरितम्॥ **वृद्धसुश्रुत" "आसवारिष्टयोर्यत्र** न गुणो लभ्यते यदा। एकद्वित्रिशृतं कृत्वा दापयेद्गुणवृद्धये॥ **गोपुरः" "**प्रसारण्यादिनिर्दिष्टं शतमेकं पृथक्पृथक्। जलद्रोणेन चैकैकं साधयेच्छुष्ककुट्टितम्॥ सम्यग्वीर्यं न मुञ्चन्ति वारा स्वल्पेन निश्चितम्॥ **शौनक** ॥" "दध्नि क्षीरे च रुधिरे ह्यारनालेऽथ पुष्पजे। रसे तयेक्षुधात्रीणा मधुमस्त्वासवादिके॥ एतानि सर्ववस्तूनि स्नेहयोगे विशेषत.। सम्यग्वीर्यं न मुञ्चन्ति जलं देयं चतुर्गुणम्॥ **कृष्णात्रेय०** ॥" "माषकादि पलं यावद्द्यात्षोडशिकं जलम्। तदूर्ध्वं कुडवं यावत्तोयमष्टगुण भवेत्॥ प्रस्थादे कुडवादूर्ध्वं सलिलञ्च चतुर्गुणम्। प्रस्थादित क्षिपेन्नीरं खारीं यावच्चतुर्गुणम्॥ **वराहमिहिर** ॥" चतुर्गुणसे नीचे पानी देकर क्वाथ करनेमें कितने आचार्य निष्फलता वतलारहेहैं तब इन गवेषकोंका निकालाहुआ सिद्धान्त किसतरह मान्य होसकताहै?

कोई यहभी शङ्का न करे कि "**खदिर**सारतुलामुदकद्रोणे विपाच्य षोडशावशिष्टमवतार्याऽनुगुप्तं निदध्यात्, तमामलकरसमधुसर्पिर्भि. संसृज्योपयुञ्जीत। एष एव सर्ववृक्षसारेषु कल्प॥ सु चि. ११।१३" यहापर १ द्रोणका षोडशाशावशेष कियाहै तब चतुर्थांशावशेषकरनेमें आपको क्या विपत्तिहै? हां ठीकहै वहापर सारके छोटेछोटे टुकड़ेकरके कत्थेके निकालनेके प्रकारसे क्वाथकियाहै वहापर सार तत्कालाहृत आर्द्र लियाजाताहै सो वह पानीको नहीं शोषणकरसकता इसलिये वह होसकताहै कारण कि उसमें जैसे जैसे पानी कम होताजाताहै वैसे वैसे टुकड़े निकालदिये जातेहैं शेषमें सवटुकड़े निकालदिये जातेहैं। वचेहुए जलको जलाकर षोडशाशावशेषकरके रखलियाजाताहै वह शिलाजतुकी तरह घन तैयारहोताहै। कत्थानिकालनेवाले भी ऐसाही करतेहैं इसलिये आमलकस्वरस, मधु और घी ये तरल पदार्थ उसके अनुपान वतायेहैं। पर यहाका स्थान विषमहै यहापर टुकड़े नहीं दियेजाते किन्तु जवकुट चूर्ण दियाजाताहै सो वह डालतेही फूलजायगा और बराबरके पानीको शोषणकरलेगा इससे यथार्थ क्वाथकरनेमें विपत्तिहोगी इसलिये उक्तदृष्टान्त कार्यसाधक नहीं होसकताहै।

सुश्रुतके मूलपाठमेंसे द्विशब्द निकलजानेकी गवाही डल्हणभी देरहेहैं "उदकद्रोणविषये तुलाद्रव्यस्याऽऽवापेनैतज्ज्ञापयति—नि.क्वाथ्यं द्रव्यं जले पञ्चगुणे नि.क्वाथयेत्" इस डल्हणकेलेखसे यह स्पष्ट निकलताहै कि मूलस्थपाठ पहिलेका द्विद्रोणे ऐसाहीथा इसलिये पूर्वटीकाओंको देखकर "जले पञ्चगुणे नि.क्वाथयेत्" ऐसा लिखाहै अन्यथा यह लिखना

असम्भवया। कदाचित् कोई यह शङ्का करे कि द्रवद्वैगुण्य परिभाषाको उपस्थितकरके इन्होंने पञ्चगुणजल लिखाहै तो यह उचित नहींहै कारण कि उस परिभाषाको कोई आधार नहींहै। कदाचित् कहें कि "शुष्काणामिदं मानम्, आर्द्रद्रवाणाञ्च द्विगुणम्" (सु चि ३१।७) यहापर आचार्यने स्वयंही वचनरूपसे स्वीकृतकीहै ? सो ठीकनहीं। यहापर का पाठ 'आर्द्रद्रव्याणा' ऐसा है। उसमें कारण यह है कि यदि आचार्य द्रवद्वैगुण्यको मानलेवें तो ग्रन्थभरमें जहाकहीं द्रव आवेगा वहा सवजगह इस परिभाषाकी उपस्थिति होनेमे समस्तग्रन्थ शङ्काप्लुतहोनेसे अनास्था दोष आजायगा और जो शङ्कारहितत्वादि आप्तवाक्योंके गुणहैं वे इसग्रन्थसे निकलजानेके कारण ग्रन्थ आप्तवाक्यत्वसे वञ्चित रहजायगा। चरक और सुश्रुतीय कतिपय आसवारिष्टोंकी सूची आगे दीहुईहै उनमें अधिकसे अधिक ३२, और न्यूनसे न्यून ४ गुणित जलदेकर क्वाथ कियेहैं। ३२ गुणसे अधिकजल किसीनेभी नहीं दिया है देखो–"आसवारिष्टमाध्येषु द्वात्रिंशद्गुणसम्मितम्। खदिरादे. प्रतिपलं जलमाहुश्चिकित्सका" ॥ वृद्धसुश्रुत" वस इसप्रमाणसे आगे कोईभी नहीं वटाहै इसीवातको दिखलानेकेलिये सूची दीगईहै यदि हम द्रवद्वैगुण्यपरिभाषा मानलेंगेतो स्नेह और आसवारिष्टप्रभृति समस्तस्थान अनास्थाग्रस्त होजायगे। जैसे अभयारिष्ट (सु.चि ६।१५) में २१ गुना जल आयाहै वहापर ४२ गुना देना होगा। इसलिये सुश्रुतीय मूलपाठ आर्द्रद्रव्याणा ऐसाही पूर्वमेंथा यह निश्चित होताहै उसकीजगह लेखकप्रमादसे 'द्रवाणा' ऐसाहुआ प्रतीतहोताहै। इसीको देखकर "शुष्कद्रव्येष्विद मानमेवमादि प्रकीर्तितम्। द्विगुणं तद्द्रवेष्विष्टं तथा सद्य समुद्धृते" ऐसा चरकके कल्पस्थानमें दृढवलने वनालियाहै कदाचित् कहें कि अनुक्तस्थानोंके लिये परिभाषाकी आवश्यकताहै ? नहीं वहाकेलिये ८, १६ और पञ्चगुणित पानीकानिर्देश पर्याप्तहै इसलिये सुश्रुतका 'द्रव्याणा' ऐसाहीपाठहै यह निर्विवादहै। इसीतरह चरककोभी द्रवद्वैगुण्य परिभाषा अभिप्रेत नहींहै। यदि हठात् मानलेंगे तो पिण्डासव (च.चि १५।१६१) में विपत्तिहोगी। वहापर चतुर्थांश पानी देकर पिण्डको यवराशिमें रक्खाहै। यदि द्वैगुण्यपरिभाषाको उपस्थितकरेंगे तो अधिक द्रव होजानेसे इसे पिण्ड पागलभी नहीं कहसकेगा। इसलिये चरककोभी यह परिभाषा अभीष्ट नहींहै। चरकके अभिप्रायको न समझकर दृढवलने लिखदीहै। परन्तु इसका उपयोग वे भी न करसके देखिये–स्नेहव्यापत्सिद्धिमें "दशमूलं वला रास्नामश्वगन्धा पुनर्नवाम्।०" इसतैलमें ३३ पल दवाको ४ द्रोणपानीमें पकायाहै यह पानी द्रव्यसे ३२ गुनाहै यदि द्रवद्वैगुण्य परिभाषा लगाकर द्विगुणमानेंगे तो ६४ गुना होजायगा इसको कोई पागलभी युक्त नहीं वतावेगा क्योंकि क्वाथोंमें ३२ गुने जलसे अधिक कहींपरभी नहीं आताहै। इसप्रकृत क्वाथको १ द्रोण शेषरखकर १ आढक तैल पकायाहै इसमें १० पल जीवनीयगणका कल्क दियाहै। यद्यपि वह तैलसे ६॥ अश होताहै परन्तु इसमें १ आढक दूध भी डालागयाहै। पकनेपर उसका कल्क (सीठी) १ प्रस्थ निकलेगा। परन्तु उसमेंसे तृतीयाश घृत जुदा होजायगा और १०॥ पलके लगभग रहजायगा सो इसकोभी कल्कमें गिनलियाजाय तो स्नेहसे लगभग ३॥ वा हिस्सा कल्क (सीठी) आताहै सो वरावरहै। स्नेहकल्कोंमें यही गुप्त रहस्यहै इसको न समझनेसे स्नेहपाकमें लोगोंको धोखाहोताहै। केवल द्रव्यकल्ककी ही गिनती न करना किन्तु स्नेहपाकोत्तर उसमें सीठी कितनी निकलेगी इसवातपर ध्यान रखकर "स्नेहकुडवं भेषजपलं पिष्टं कल्कं चतुर्गुण द्रवमावाप्य विपचेदित्येष स्नेहपाककल्प. (सु चि. ३१।८) अथवा "क्वाथ्याच्चतुर्गुणं वारि स्नेहात्क्वाथ चतुर्गुणम्। क्षीरं स्नेहसम दद्यात्कल्कश्च स्नेहपादिक ॥ शिवसेनस्य ॥" इस प्रक्रियाका अवलम्बनकरके स्नेहोंको सिद्धकरनेमें किसीभी तरहकी विपत्ति उपस्थित नहीं होतीहै और न द्विगुणपरिभाषाका आश्रय लेनापड़ताहै। इस दृढवलोक्त दशमूलादि तैलसे यह निर्धारण होता है कि केवल दृढवलने सुश्रुतीय अशुद्धिको न समझकर द्रवद्वैगुण्य लिखतो दी पर उसका उदाहरण कहींभी न दिखलासके। इसीतरह "शुष्कमेयेष्विदं मानं द्विगुणं तु द्रवार्द्रयो." ऐसा पाठ अष्टाङ्गसङ्ग्रहमें भी कल्पित किया परन्तु "तत्रभेयान्यौषधान्यणुशो भेदयित्वा छेदयित्वा छेद्यानि प्रक्षाल्योदकेन शुचौ स्थाल्यामथ प्रलिप्तायां ताम्रायोमृन्मयान्यतमाया स्थाल्या समावाप्य वह्वल्पपानीयग्राहितामौषधानामाकलय्य यावता मुक्तरसता स्यात्तावदुदकमासेचयेच्छोषयेच। अथाग्रावधिश्रित्य महत्यासने सुखोपविष्ट· सर्वतः सततमवलोकयन् दर्व्याऽवघट्टयन् मृदुना परित समुपगच्छताऽनलेन साधयेत्। अवतार्य च परिस्रुत यथार्हस्पर्शं प्रयुञ्जीत ॥ अ.स.क.८" इसजगह 'वह्वल्पपानीयग्राहितामौषधानामाकलय्य यावता मुक्तरसता स्यात्तावदुदकमासेचयेत् ॥' यही अपना सिद्धान्त दिया परन्तु द्रवद्वैगुण्य परिभाषाका पता इनकोभी न लगा और इन्हींका अनुकरणकरके "गुञ्जादिमानमारभ्य यावत्स्यात्कुडवस्थिति· । द्रवार्द्रशुष्कद्रव्याणा तावन्मान सम मतम् ॥ प्रस्थादिमानमारभ्य द्विगुण तद्द्रवार्द्रयो. । मान तथा तुलायाश्च द्विगुणं न क्वचित्स्मृतम् ॥ शार्ङ्ग० प्र० १।३३–३४" इनको लिखकर "शुष्क नवीन यद्द्रव्य योज्य सकलकर्मसु । आर्द्रञ्च द्विगुण युञ्ज्यादेष सर्वत्र निश्चय ॥ शार्ङ्ग० प्र. १।४६" इसजगहपर जो सुश्रुतीय सिद्धान्तहै उसीको वतलाया किन्तु यहां द्रवका नाम नहींलिया यदि द्रवद्वैगुण्यअभिप्रेत होता तो द्विरार्द्रद्रवक युञ्ज्यात् पाठ किया होता। इससे प्रतीत होताहै कि इन्हेंभी द्रवद्वैगुण्यका कुछ निश्चय नहीं हुआ। इसभ्रमके होनेका मुख्यकारण तो सुश्रुतीय 'द्रव्याणा' कीजगह 'द्रवाणा' होनाहै। दूसरा औरभी कारण प्रतीत होताहै सो यह कि "रक्तिकादिषु मानेषु यावन्न कुडवो भवेत्। शुष्कार्द्रद्रव्ययोस्तावत्तुल्य मान प्रयोजयेत् ॥ शुष्कद्रव्येष्विद मानं द्विगुण तु द्रवार्द्रयोः।

यद् द्रव्यं कुडवादूर्ध्वं प्रस्थादिश्रुतनामकम्। द्विगुणं न तुलामानमिति मानविदो विदुः ॥" यह उद्धरण गोपुररक्षितकेनामसे **टोडरानन्द**में दिया हुआहै सो यह गोपुररक्षितका है या नहीं इसका पता साक्षात् संहिताके मिलेविना लगना मुश्किलहै। परन्तु इतना अनुमान कियाजासक्ताहै कि गोपुररक्षितप्रभृति सुश्रुतसहाध्यायीहैं उनसबमें सुश्रुतको श्रेष्ठ मानाहै देखो "वत्स सुश्रुत! इह खल्वायुर्वेदप्रयोजनं व्याध्युपसृष्टानां व्याधिपरिमोक्षः स्वस्थस्य रक्षणञ्च ॥ सु. सू. १।१३" इत्यादि स्थानोंमें वारम्वार सुश्रुतके प्रति सम्बोधन देकर धन्वन्तरिभगवानका उपदेश आताहै इसलिये इनसबमें सुश्रुतही प्रधान विद्वान् थे इनके प्रतिकूल गोपुररक्षितादि नहीं लिखसक्ते हैं। सुश्रुतमें रक्तिकादि कुडवान्त और प्रस्थादि तुलान्तकी अवधि नहीं दी है इसलिये यह कहींका प्रक्षिप्त वाक्य मालूम होताहै। यदि यह ठीक सिद्धान्तहोता तो कहींपरभी आसव या स्नेहसाधनप्रकरणमें इसका पालन किया होता, सो देखनेमें नहीं आताहै।

कदाचित् यह शङ्का करें कि चरकके सुनिषण्णकचाङ्गेरीघृतमें "चतुःप्रस्थे शृतं प्रस्थं कषायमवतारयेत्। च चि. १४।२३५ के नीचे "त्रिंशत्पलानि प्रस्थोऽत्र विज्ञेयो द्विपलाधिक. ॥" यह श्लोकलिखाहुआ देखनेमें आताहै। सोही प्रमाणहै? नहीं विनायोगकी समाप्तिके इसका यहां रखना अकाण्डताण्डव जैसा मालूम होताहै। योगोंकी विशेपसूचनाएं उनके अन्तमें दीजातीहैं बीचमें नहीं। इससे यह साफ प्रक्षिप्त मालूमहोताहै परन्तु यह आजकलका प्रक्षिप्त नहींहै। इसका रहस्य न समझकर चक्रपाणिदत्तने इसपर "तथा त्रिंशत्पलानि तु प्रस्थो विज्ञेयो द्विपलाधिकः इति विज्ञेयम्। परिभाषासिद्धार्थाभिधायकम्। अत एव दशवलसंस्थानेऽपि द्रवद्वैगुण्याभिधान भविष्यति ॥", ऐसी व्याख्याभी करदीहै यहभी हास्यास्पदहै कारण कि यहांपर इस अर्धपद्यकी कोई आवश्यकता नहींहै देखिये "**अवाक्**पुष्पी वला दार्वी पृश्निपर्णी त्रिकण्टक.। न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थशुङ्गाश्च द्विपलोन्मिताः ॥ कषाय एषां०" एक कषाय यहहै। "कलिङ्गा. शाल्मलं पुष्पं वीरा चन्दनमुत्पलम्। कट्फलं चित्रकं मुस्तं प्रियङ्ग्वतिविषा स्थिरा ॥ पद्मोत्पलानां किञ्जल्कं समङ्गा सनिदिग्धिका। विल्वं मोचरसः पाठा भागा. कर्षसमन्विताः ॥" इस द्वितीयकषायको ४ प्रस्थ जलमें पादावशिष्टक्काथकरनेसे एकप्रस्थ क्काथहोगा इसीतरह सुनिषण्णक और चाङ्गेरीका स्वरस १-१ प्रस्थ होगा। यह सब मिलकर ४ प्रस्थ द्रव रहेगा इसमें स्नेहसे चतुर्गुणित द्रव होनेसे इसकापाक वरावर होजायगा। इसकेलिये "**त्रिंशत्पलानि** प्रस्थोऽत्र०" इस प्रक्षिप्तवाक्यकी आवश्यकताही क्याहै? इसका कुछभी विचार करते तो चक्रपाणिदत्तको इस पद्यकी प्रक्षिप्तता मालूम होजाती। इसयोगमें "पेप्यास्तु जीवन्ती कटुरोहिणी। पिप्पली पिप्पलीमूलं नागरं सुरदारु च ॥" इतना यह आवापहै इसकी कषायमें गिनती नहीं करनी चाहिये। इसभेदको न समझकर मालूम होताहै कि लोगोंने इस प्रक्षिप्त पद्यको वीचमें डालदियाहै। **अथवा** द्रवद्वैगुण्य परिभाषाके भक्तोंने ऐसा काम कियाहो यहभी सम्भवहै। यदि आचार्यको इससे अधिक द्रव अभीष्टहोता तो "चतु.प्रस्थे शृतं प्रस्थं कषायमवतारयेत्" की जगह "अष्टप्रस्थे शृतं चांशं कषायमवतारयेत्" ऐसापाठ करनेमें आचार्यको क्या विपत्ति थी? यह कोई पद्मवद्धवगैरह छन्द नहींहै जिसकेलिये कि इतनी कूटकल्पना करनी पड़ी। एक और विचित्र रहस्य यह है कि इसके पूर्व कई घृत और तैल आयेहैं उनमें कहींपरभी इस पद्यके देनेको जगह न मिली और यहां आकर आचार्यको भान हुआ? इसलिये यह स्पष्ट प्रतीत होताहै कि यह पद्य पीछेसे लगाया हुआहै। इसके अतिरिक्त अन्यस्थलोंमेंभी जुरूरत नहीं मालूम होतीहै। यदि आचार्योंको १ द्रोणकी जगह द्विद्रोण अभीष्ट होता तो दो का नाम लेनेमें कोई पाप थोड़ाही लगता, प्रत्युत इससे विपरीत देखनेमें आताहै देखो पूर्वोद्दिष्ट दशवलहीके उदाहरणमें दशमूलादितैलमें "चतुर्द्रोणेऽम्भस. पक्त्वा द्रोणशेषेण तेन च। तैलाढकं समक्षीरं जीवनीयैः पलोन्मितैः ॥" यहांपर ३२ गुना पानी वतलादिया सो क्काथोंकी परमावधि तक पहुंचगये। यदि **द्रवद्वैगुण्य** परिभाषा अभीष्टहोती तो "युग्मद्रोणेऽम्भसः पक्त्वा" ऐसा पाठ करते। पर वैसा न करनेसे यह भेडियाधसान जैसाही मालूम पड़ताहै।

इसीतरह "**त्रिफलात्वक्** त्रिकटुकं सुरसा मदयन्तिका (सु. चि ९।३४) इस महानीलीघृतमें जलापेक्षया क्काथ्य द्रव्यकी अधिकता होनेसे टीकाकारोंने इसे अनार्ष कहाहै। डल्हणनेभी इसवातका परिचय दियाहै। यदि द्रवद्वैगुण्य परिभाषा होती तो जलापेक्षया क्काथ्यद्रव्यकी आधिक्य डल्हण कभी नहीं कहते। इसलिये द्रवद्वैगुण्य परिभाषा सुश्रुतमें नहींहै अर्थात् 'द्रव्याणां' ऐसाही पाठ प्रतीतहोताहै। हां! इसपरिभाषाका एक रहस्य यह मालूम होताहै कि मानप्रकरणमें एक रक्तिकादि मान और दूसरा कुडवादिमान **अथवा** खारीमान और तुलामान ऐसे दोतरहके मान देखनेमें आतेहैं इनमें रक्तिकादि और तुला यह मान तराजूसे तोलनेकाहै तुला नाम तराजूहीकाहै। "नौवयोधर्मविषमूलमूलसीतातुलाभ्यः (पा० ४।४।९१) तुलया सम्मितं तुल्यम्" इत्यादिस्थलोंमें पाणिनिनेभी तराजूही का नाम लियाहै और१०० पल का नाम तुला (व्यावहारिक पंसेरी) माना जाताहै वह द्रोणोव्रीहि की तरह लाक्षणिकहै क्योंकि साधारणतया अधिक गल्ला तोलनेकेसमय पंसेरीसे काम लियाजाताहै वस इसीलिये १०० पलकाभी नामतुला रखलियागयाहै। अवभी यत्र तत्र देशोंमें तुलामानसे तराजूकातोल और कुडव, प्रस्थ अथवा खारीमानसे माप समझाजाताहै। यह अवभी दोतरहका देशोंमें प्रचलितहै औरमापमें तथा तोलमें वस्तुओंके गुरुत्वमें वहुतसा अन्तर आताहै। उदाहरणार्थ जिसपात्रमें उड़द और अरहरकी धुलीदाल तथा

पीलीसरसों २० तोले आतीहै उसमें चावल, उरद और तेल २३ तोले, जल २५ तो०, मधु ३० तो०, घालू ३५ तो०, लोहभस्म ४५ तोले और लाजा ३१ तोले आतीहै सो देखिये कितना अन्तरहै । प्राचीनसमयमें साधारणव्यवहारमें मापका प्रचार अधिकथा सो कहीं इस मापकोही लेकर तो लोगोंने यह द्रवद्वैगुण्य परिभाषा नहीं मानलीहै । चरक अथवा सुश्रुतमें इसकी चर्चा नहीं कीहै पर कृष्णात्रेयने मानप्रकरणमें "वेणु-वार्क्षायसादीना भाण्ड यच्चतुरङ्गुलम् । विस्तीर्णमथ वृत्त च तन्मानं कुडव विदु." ऐसा कुडवमान बतायाहै । इनकीतरह दूसरोंने भी लिखाहो यह सम्भवहै । उसीको लेकर यह गड़बड़ी हुईहो यहभी होसक्ताहै कारणकि इसका प्रमाण कुडवहीसे कियाहै उसके नीचेका मान या तो अन्दाज़से लेलियाकरतेथे या काटेसे तोलतेथे । वह तोल द्रवार्द्र और शुष्कका बराबरही आया करता था इसको "रक्तिकादिषु मानेषु यावद्धि कुडवो भवेत् । शुष्कार्द्रद्रव्ययोस्ताव-त्तुल्यं मानं प्रयोजयेत् ॥" इसवाक्यसे बतायाहै । यहांपर 'तुल्य मानं, जो दियाहै उसका अर्थही यह होताहै कि कांटेसे तोलकर बराबरकियाहुआ भाग । इसकेबाद "यद् द्रव्यं कुडवादूर्ध्वं प्रस्थादिश्रुतनामकम् । द्विगुणत्र तुलामानमिति मानविदो विदु· ॥" अर्थात् कुडवसे आगे जो प्रस्थादिक-सञ्ज्ञायहै उसे भी जब तराजूमें तोलकर लेना हो तो वहांपर भी सब वस्तुओंका बराबरही मान लेना यह अर्थहै । इसका अभिप्राय यहहै कि तुला (तराजू)से चाहे जिस द्रव्यको तोले उनके तोलमें कोईभी अन्तर नहीं आताहै हा जब इसे कुडवादिमापसे लेंगे तबतो न्यूनाधिक्य होनी अनिवार्यहै यह इसका मुख्य अर्थहै । इसीलिये "रक्तिकादिषु मानेषु यावद्धि कुडवो भवेत् । द्रवार्द्रशुष्कद्रव्याणा तावन्मानं सम मतम् ॥ यद्-द्रव्यं कुडवादूर्ध्वं प्रस्थादिश्रुतनामकम् । द्विगुणं न तुलामानमिति मानविदो विदु ॥" ऐसा विस्पष्टविन्यास कियागयाहै पर बहुतसे लोग इसके रहस्यको न समझकर "यद् द्रवार्द्ररूप द्रव्यं श्रुतनामकं प्रस्थादि तद्द्विगुण ग्राह्यं, तुलामान न, अर्थात् द्विगुणं न कार्यम्" ऐसा अन्वयकरके कुडवसे ऊपर प्रस्थादि प्रसिद्धनामसे आयाहुआ द्रवार्द्ररूप द्रव्य द्विगुण लेना पर साक्षात तुलाकेनामसे आयेहुएको द्विगुण न करना ऐसा अर्थकरतेहैं । कितनेही अज्ञ यह अर्थ करतेहैं कि जहा प्रसृति, अञ्जलिप्रभृतिके नाम आयेहों वहांपरभी द्विगुण न करना । देखो— "विशेषः कथ्यतेऽन्योऽपि माने शुष्कद्रवाश्रये शुष्कद्रव्याश्रयं मान निर्दिष्य यदुदाहृतम् ॥ ६२ ॥ द्रवेषु द्विगुणं मान सद्यश्चै-वोद्धृतेषु च । द्विगुण मानमित्येतदारभ्य कुडवादिति ॥६३॥ शुष्काणाञ्च द्रवाणाञ्च समं तु कुडवादध । तुलायामपि नैवेष्टा द्विगुणा मानकल्पना ॥ ६४ ॥ तुला पलशत चैव तच्छुष्कद्रव-योर्मतम् । पल चतुर्गुणं चेष्ट प्रसिद्धमापकादिदम् ॥ ६५ ॥ सहाचरतुलायास्तु रसे तैलाढक पचेत् । यदुक्त शतमेवात्र पलाना परिगृह्यते ॥ ६६ ॥ चतु सुवर्णमेतच्च पलं नाष्टसुवर्णकम् । द्रव्यस्य द्विगुणत्वे स्यात्पलमष्टसुवर्णकम् ॥ ६७ ॥ नैवाक्षो न प्रसृतो न पले न पलार्धके । द्रवाणामौषधानां हि द्विगुणं मानमिष्यते ॥ ६८ ॥ अ. सं. कल्प इन्दुटीका ॥" इसीतरह औरभी कईलोगोंने प्रयासकियाहै पर वह पूर्णरीतिसे स्पष्टपद नहींहोताहै इसमेंभी शुष्कापेक्षया आर्द्रद्रव्यमें तो सभीभी सहमतहैं परन्तु द्रवकेलिये झगडाहै । इसजगह नहीं किन्तु उसका उपयुक्तताभी नज़र नहीं आतीहै इसलिये इसकी प्रक्षि-प्ततामें कुछभी सन्देह नहीहै । इसीतरह कईतरहके फुटकरशास्त्र और भी मिलतेहैं वे भी छात्रोंकेलिये जालरूपहैं उनमेंसे जो जो उपपत्तिरहितहैं उन्हें प्रक्षिप्तसमझकर अनादेय समझना । उनमेंसे कतिपयके उद्धरण नीचे दिये जातेहैं । यथा— "आर्द्रद्रव्यं द्रवद्रव्यं पलैस्तुल्यैर्मितं च न । शुष्कद्रव्यं चतुष्केण कुडवं समुदाहृतं ॥ हारीत०" "आर्द्रस्याढकस्य मात्रा कुडवस्य प्रमाणतः । मधुनश्चघृतादेश्च शुष्कद्रव्ये चतु.पले ॥ पुष्कलावत०" "गुडगुग्गुलुवार्ताकं. त्रिफलारिष्टनागरैः । कूष्माण्डार्द्रकनिम्बानां कुडवश्चाष्टभि पलै ॥ विश्वामित्र०" "लाजापायसनालिकेरसलिलंमूत्रंस्नपा काञ्जिके मत्स्यपर्दाम-धुतक्रमस्तुमदिरादीना भवेद्द्विगुण । नासानिम्बपटोलिकंनक्कि-यलाकूष्माण्डमेन्दीवरी, वर्षाभूकुटजाश्वमारसहिता व्योषा-श्वगन्धाऽमृता ॥ मार्गी नागबला महाचरपुर द्विवार्द्रकं नित्यशो ग्राह्यास्तत्समेव न द्विगुणिता ये चेक्षुजातास्तथा ॥ रसदर्पण" "गुडरामठशुण्ठीना मांसीकूष्माण्डयोरपि । गुडूच्या गुग्गु-लोश्चैव प्रस्थः षोडशभि पलैः ॥ भेल" "लाजापायस-नारिकेलसलिल मूत्रं जल काञ्जिकं, द्वात्रिंशत्पलकं तदर्ध-मुदित प्रस्थ रसाद्यौषधीः । तैल क्षौद्रघृतञ्च विंशतिपलं क्षीरञ्च त्रिंशत्पल, तद्वत्पञ्चकपञ्चकं गुडपल चाष्टादशं प्रोच्यते ॥ प्रस्थं तु षोडशपल द्रव्ये क्वाथे रसे तथा । क्षौद्रे सर्पिषि तैले च प्रस्थं विंशत्पलं भवेत् ॥ इत्यागमेन द्वैगुण्यं निरामस्य द्रवस्य च । द्वात्रिंशता पलै· प्रस्थं प्रोक्त पायसलाजयोः ॥ मूत्रकाञ्जिकमस्त्व-म्बुनारिकेलाम्भसामपि । मूलत्वग्दारुपत्राणा पुष्पस्य च फलस्य च ॥ शिलालवणमृल्लोष्टलोहानां गोमयस्य च । पलै षोडशभिः प्रस्थो रसस्य औषधस्य च ॥ प्रस्थ पलाना विंशत्या तैले माक्षि-कसर्पिषो । क्षीरे च विंशति प्रस्थो दध्न. स्यात्पञ्चवि-शति । गुडस्य सप्तदशभिरितिभोजमते स्थिति । गुडस्य दशनिष्कं हि पलमात्रेण पूजितम् ॥ शशिकुङ्कुमकस्तूरीशर्करा-स्तुकपयासि च । वमने च निरूहे च तथा शोणितमोक्षणे । सार्धत्रयोदशपलं प्रस्थमाहुर्मनीषिण ॥ षडङ्गुलं तु विस्तीर्णं द्वादशाङ्गुलमायतम् । एतन्मागधिक प्रस्थं मानभाण्डेषु पूजि-तम् ॥" इत्यादिस्थलोंमें जिसवस्तु का एकने ४ पलका कुडव बतायाहै उसीका दूसरोंने ८ पलका बतायाहै वह कहीं तोल और मापकेभेदसे, तथा कहीं तद्गत किट्टके हिसाबसे है जैसे कि गुडका १७ पलका प्रस्थ मानाहै यहांपर गुडको छाननेसे यदि वह विशुद्ध न होगातो कमसेकम १ प्रस्थमेंसे १ पल किट्ट निकलजायगा उसको निकालनेकेलिये १७ पलका प्रस्थ

मानलिया। क्षीरका २० पलका प्रस्थ मानाहै इसमें मापके हिसाबसे ४ पल अधिक आवेगा। इसभेदको दिखानेकेलिये २० पलका प्रस्थ मानलिया। दहीका २५ पलका प्रस्थ मानाहै उसमेंभी मापही का भेद मालूम पड़ताहै इत्यादि अवान्तरभेदों- कोलेकर नानातरहके प्रस्थ और कुडवादिकोंमें भेददेखनेमें आताहै परन्तु यह भेद चरक और सुश्रुतने नहीं मानाहै इसलिये सुश्रुतकी मानपरिभाषामें "द्रवाणां"को प्रविष्टकरना तन्त्रको व्याकुलकरनाहै

अस्तु, इस वितण्डाको छोड़कर प्रकृतविषयकी तरफ ध्यानदी- जिये। कषायमें मृदुता, साधारणता और तीक्ष्णतोत्पादनार्थ सुश्रुतने क्वाथ्यद्रव्यकी त्रिविधयोजना की है यद्यपि मृदुत्वादिगुणोदय द्रव्यबाहुल्यसे अथवा द्रव्यगत व्यवायि विकाशि छेदि मदा- वहाऽऽग्नेयत्वादि गुणोंसे हुआकरताहै तथापि यहापर द्रव्यबा- हुल्यको लेकरही भेद बतलाना आचार्यको अभीष्टहै। एकपलमें १६ पल जलदेकर ४ पलावशिष्ट क्वाथमें १ पल घृतादिस्नेहका पाककरनेसे मृदुप्रकृतिक स्नेह तैयारहोगा क्योंकि स्नेहसम द्रव्यका सार स्नेहमें आयाहै इसे मृदुप्रकृतियोंमें नियुक्तकरना, दोपल द्रव्यको ८ पल पानीमें पकाकर २ पल अवशिष्टक्वाथमें २ कर्ष स्नेह पकानेसे साधारणप्रकृतिकस्नेह तैयारहोताहै क्योंकि स्नेहसे द्विगुण द्रव्यका इसमें सार आयाहै इसे मध्यम प्रकृतिक व्यक्तियोंको देना। इसीतरह ३ पल ८ माशे द्रव्यको ५ पल जलमें उबालकर १। पलावशिष्ट क्वाथमें १। कर्ष स्नेह पकानेसे तीक्ष्णप्रकृतिकस्नेह तैयार होगा, इसे जवान और साहसिक लोगोंको अथवा कुष्ठप्रभृति भयङ्कर व्याधियोंमे देना चाहिये यह आचार्यका अभिप्रायहै। तृतीयकल्पमें सुश्रुतमता- नुसार स्नेहसे ठीक चतुर्गुण क्वाथ्यद्रव्य नहीं आताहै इस बातपर ध्यानरखना चाहिये। हा "क्वाथ्याच्चतुर्गुणं वारि स्नेहात्क्वाथ्यं चतुर्गुणम्। क्षीरं स्नेहसमं दद्यात्कल्कश्च स्नेहपादिक. ॥ द्रवेण केवलेनैव स्नेहपाको भवेद्यदि। तत्राम्बुपिष्ट कल्क स्याज्जलं चापि चतुर्गुणम् ॥ ऐसा शिवमे- खलातन्त्रमें मिलताहै सो पद्यपरिभाषाकीतरह सुश्रुतीयतृतीय- कल्पका आनुमानिक अर्थमानकर लिखाहो अथवा अपनी कल्पनासे कायमकियाहो, इसका पता ग्रन्थनिर्माणकालज्ञान- सापेक्षहै सो होना मुश्किलहै। अन्यलोगोंने द्रव्यगतमृदुता, साधारणता और कठिनताको लेकर जलपरिमाणमें भेद बत- लायाहै यथा—"मृदौ चतुर्गुणं देय कठिनेऽष्टगुणं जलम्। कठिनात्कठिने देय बुधैः षोडशिकं जलम् ॥ मृद्वादिक्वाथसङ्घातै- र्मानानुक्ते चिकित्सकाः। मध्यस्थोभयगामित्वादिच्छन्त्यष्टगुणं जलम् ॥ क्वाथ्यद्रव्यपले वारि द्विरष्टगुणमिष्यते। चतुर्भागावशे- षन्तु पेयं पलचतुष्टयम् ॥ क्षारपाणि ॥" इत्यादिवाक्योंमें क्वाथ्यद्रव्यके परिमाणमें कुछ अन्तर नहींहै उसका प्रमाण तीनोंजगह बराबरहै इसलिये यह विषय पृथक्है इसपर ठीक ध्यान रखना चाहिये। "माषकादिपल यावद्दद्यात्षोडशिकं जलम्। तदूर्ध्वं कुडवं यावत्तोयमष्टगुण भवेत् ॥ प्रस्थादेः कुडवादूर्ध्वं सलिलञ्च चतुर्गुणम्। प्रस्थादित. क्षिपेन्नीरं खारीं यावच्चतुर्गुणम् ॥" वराहमिहिरने तोलकी सीमाबांधकर षोडशादिगुणजलकी व्यवस्थाकीहै परन्तु इसमें बीज क्याहै यह निर्धारित नहीं होताहै तैसेही प्रामाणिक आयुर्वेदीयसंहि- ताओंकेसाथ संवदितभी नहीं होताहै इसलिये यह उतना मूल्य- वान् सिद्धान्त नहीं निर्धारितहोताहै।

रस या गुटिका प्रभृतिमें भावना देनेकेलिये जहापर साक्षात् स्वरस मिलसकताहो वहापर अच्छीतरह आर्द्र होसके ताव- न्मात्र स्वरस देनेका प्रमाण समझना "द्रवेण यावता द्रव्यमेकी भूयार्द्रता व्रजेत्। तावत्प्रमाणं निर्दिष्टं भिषग्भिर्भावनाविधौ ॥ कृष्णात्रेय० ॥" स्वरसाऽभावमें भाव्यद्रव्यसमक्वाथ्यको अष्टगुणितपानीमें उबालकर भाव्यद्रव्यसम अवशिष्ट रहनेपर भावना देना यह साधारणनियमहै। यदि इससे भाव्यमान- द्रव्य अच्छीतरह आप्लुत न होसके तो भाव्यद्रव्यसे द्विगुण क्वाथ्यद्रव्यको १६ गुने पानीमें क्वथितकर भाव्यमानद्रव्यसे द्विगुण अवशिष्ट रखकर उससे भावना देना। देखिये—"भाव्य- द्रव्यसमं क्वाथ्यं क्वाथोऽष्टांशस्तु तेन हि। आर्द्रं यावद्धि तद्भाव्यं सप्ताहं भावनाविधौ ॥" कृष्णात्रेय। उपरिनिर्दिष्ट जलप्रमाण साधारणतया स्नेहपाकविषयक अथवा पानविषयक वा भाव- नाविषयक समझना।

"स्नेहाच्चतुर्गुणो द्रवः, स्नेहचतुर्थांशो भेषजकल्कस्तदे- कध्यं संसृज्य विपचेदित्येषः स्नेहपाककल्प ॥ सु. चि. ३१।८" इसवाक्यमें द्रवचातुर्गुण्यको देखकर यह सन्देह उठना स्वाभा- विकहै कि यह चातुर्गुण्य सङ्घातापेक्षया है या प्रत्येकापे- क्षया? जहा वाचनिक प्रामाण्यनिर्देश किया हो वहाकेलिये तो किसीतरहके विचारको अवकाश ही नहींहै कारणकि विधि- वाक्यमें सन्देहका कोई कारण नहीं रहता इसीलिये "स्नेहभे- षजतोयाना प्रमाणं यत्र नेरितम्। तत्राऽयं विधिरास्थेयो निर्दिष्टे तत्तदेव तु ॥" इससे ऊपरकहाहुआ सिद्धान्त स्पष्ट होजाताहै। परन्तु अनुक्तस्थानमें क्या करनाचाहिये? यह आकाङ्क्षा उठनी स्वाभाविकहै। उसकेलिये "स्नेहाच्चतुर्गुणो द्रव" यह साधारणनियम आचार्यने कियाहै। जिसजगह एकद्रव बतलायाहो परन्तु प्रमाण न दिखायाहो वहापर "स्नेहा- च्चतुर्गुणो द्रव." यह परिभाषा उपस्थितहोकर सन्देहको दूरक- रेगी। परन्तु जहा क्वाथ, क्षार, आरनाल, मासरसादि कईद्रव प्रमाणरहित बतायेहों या डालनेहों तो वहाकेलिये सन्देह उपस्थितहोगा कि यहा चतुर्गुणत्व किसतरह लियाजाय? इसकेलिये "विनिगमनाविरहादविशेषम्" अर्थात् जहा विशेष कोई गमक न हो वहापर अविशेषसे काम लिया जाताहै प्रकृतमें जितने द्रव आयेहों वे प्रत्येक स्नेहसे चतुर्गुणित लेनेचा- हियें यह सिद्धान्त स्थिरहोताहै। इसीलिये "स्नेहाच्चतुर्गुणो द्रव इति वचनात्सर्वेऽप्युदकक्षारादयो गृह्यन्ते। केचिदेवं पठन्ति यत्रैकद्वित्रिचतुर्गुणद्रवद्रव्याणि तत्र सर्वाणि चतुर्गुणानि, पञ्चप्र-

भृतीनि समानानि इति तथा चोक्तम् 'पञ्चप्रभृति यत्र स्युर्द्रवाणि स्नेहसंविधौ। तत्र स्नेहसमान्याहुरन्यत्र स्याच्चतुर्गुणम्॥ इति" ऐसा व्याख्यान डल्हणने कियाहै। डल्हणका मुख्य सिद्धान्त वहीहै जो हमने बतलायाहै। इसीलिये "चित्रकव्योषसिन्धूत्थ० सु. उ. ४२।२५" यहापर "दध्यादीनि मूलकस्वरसान्तानि प्रत्येक घृताच्चतुर्गुणानि' ऐसा डल्हणने व्याख्यान कियाहै। "पञ्चप्रभृति यत्र स्युः०" यह पद्य अग्निवेशसंहिताकाहै इसके चतुर्थपादमें "अर्वाक् तस्माच्चतुर्गुणम्' ऐसा पाठ है जिसजगह चारसे ऊपर द्रवहों वहापर स्नेहके वरावर लेवे और पाचसे नीचे अर्थात् १, २, ३, ४, इन-प्रत्येकको स्नेहसे चतुर्गुणित लेवे, यह स्वरसत अर्थ निकलता है। इसीको स्पष्टकरनेकेलिये "यत्र द्वित्रिद्रवैर्द्रव्यैः कुर्यात्स्नेहाचतुर्गुणम्। क्षीरं स्नेहसम दद्याच्चतुर्भिश्च चतुर्गुणम्,, इसपद्यको जैयटने लिखाहै। टोडरानन्दमें "पञ्चप्रभृति०,, श्लोकको लिखकर "अस्याऽयमर्थ —यत्रैको द्रवस्तत्रैकेन चातुर्गुण्यं, द्वाभ्यामपि चातुर्गुण्यं, त्रिभिरपि चातुर्गुण्यमिति,, ऐसा खुलासा करके 'तत्र जैयट,ः ऐसालिखकर "यत्र द्वित्रिद्रवैर्द्रव्यैः–" इसपद्यको उद्धृतकियाहै इससे हमाराकहाहुआ सिद्धान्त स्थिर होताहै। इसरहस्यको न जाननेवाले कितनेही लोगोंने इसका उलटाही अर्थ कियाहै देखिये–"स्नेहाच्चतुर्गुणो द्रव इति वचनं एकद्वित्रिद्रवेषु चतुर्गुणत्वन्यूने स्नेहसाधननिषेधार्थम्, न तु पञ्चप्रभृतिद्रवेषु चतुर्गुणाधिक्ये प्रतिषेधार्थम्, तेन यत्रैकेन द्रवेण पाकस्तत्रैकेनैव चातुर्गुण्य, यत्र द्वाभ्या द्रवाभ्या स्नेहपाकस्तत्र स्नेहद्विगुणाभ्यां ताभ्या चातुर्गुण्यं, यत्र त्रिभिर्द्रवै स्नेहपाकस्तत्र त्रिभिर्मिलितैश्चातुर्गुण्यम् यत्र तु चतुर्भिर्द्रवे स्नेहपाकस्तत्र स्नेहसमैश्चतुर्भिश्चातुर्गुण्यमिति। यत्र तु पञ्चप्रभृतीनि द्रवाणि तत्र तु सर्वाणि स्नेहसमान्येव ग्राह्याणि॥" इसमें क्या अर्थका अनर्थ कियाहै।

जहा सर्पविष या हारिद्रकप्रभृति द्रवके योगसे स्नेह पकानाहो वहापरभी क्या इसनियमको लगासकेंगे ? यदि स्वीकारेंगे तो महा अनर्थहोगा इसलिये–"स्नेहाच्चतुर्गुणो द्रव इति वचन एकद्वित्रिद्रवेषु चतुर्गुणत्वन्यूने स्नेहसाधननिषेधार्थम्, न तु पञ्चप्रभृतिद्रवेषु चतुर्गुणाधिक्ये प्रतिषेधार्थम" यह मन कल्पित नियम निर्मूलहै कारणकि एकवाक्यसे परस्परविरुद्ध दो नियमनिकालने न्यायविरुद्धहैं। "चतुर्गुणान्न्यूने द्रवे स्नेहो न साध्यः" ऐसा नियम बनावेंगे तब वाक्य निराकाङ्क्ष होनेसे आकाङ्क्षाका उत्थान कैसे होगा ? इसवातको सोचा होता तो ऐसी अडवड कल्पना न की होती इसलिये यह वाक्य अनुक्त द्रवप्रमाणस्थलमें दिग्दर्शनार्थहै। यह न तो द्वित्रादिगुणद्रवमें निषेधकरताहै और न पञ्चप्रभृति द्रवोंमें विधिमुद्रया प्रवृत्तहोताहै। सावारणवाक्यहोनेसे जहाकहींभी द्रव आवेगा वहीं इसकी उपस्थिति होगी वे चाहे जितने क्यों न हों। यदि चतुर्गुणमानका नियमकरते तो "तैलं दशगुणे सिद्धं भृङ्गराजरसे शुभे। सु. उ. ५१।२९" यहांपर दशगुने द्रवमें तैलसिद्धकियाहै। यदि चौगुने द्रवका नियमहोता तो आचार्य अपने नियमका अपनेसे कैसे भङ्गकरते ? और देखो "सुरसा कालिका भार्गी शुकाख्या नैचुलं फलम्।......॥ सु. उ ५१।२३-२४" "गोपवल्ल्युदके सिद्धं स्यादन्यद्द्विगुणे घृतम्॥ सु उ, ५१।२६" इत्यादि स्नेह द्विगुणद्रवमें सिद्धकियेहैं। इसलिये चतुर्गुणसे कम द्रवमें स्नेहसिद्ध नहीं होताहै यह नियमभी निर्मूल हुआ।

चित्रकादिघृतमें दधि, आरनाल, वदर, मूलक इनप्रत्येकद्रवरसोंको डल्हणने चतुर्गुणित वतायाहै इसलिये "यत्र द्वाभ्यां द्रवाभ्या स्नेहपाकस्तत्र स्नेहद्विगुणाभ्या ताभ्या चातुर्गुण्यम्, यत्र त्रिभिर्द्रवै स्नेहपाकस्तत्र त्रिभिर्मिलितैश्चातुर्गुण्यम्, यत्र तु चतुर्भिर्द्रवैः स्नेहपाकस्तत्र स्नेहसमैश्चतुर्भिश्चातुर्गुण्यमिति।" यह व्याख्यानभी निर्मूल ठहरताहै। इससे जहां वाचनिक प्रमाण आवे उसको वैसाही लेना और अन्यत्र जितने द्रव हों उन प्रत्येकको स्नेहसे चतुर्गुण लेना यही सुश्रुतीयसिद्धान्त मालूमहोताहै। हां कृष्णात्रेयने चारसे ऊपर इसका नियन्त्रण कियाहै पर सुश्रुतके मतमें नहीं है। यहापर सुश्रुतके कईतरहके द्रवप्रमाण देखनेसे यही सिद्धान्त निकलताहै कि लेहादि पदार्थ तैयार करनेकेलिये केवल हमारा दिग्दर्शनहै जहां वैद्य जैसी औचिती समझे वहा वैसा योग करे। इन्हीं सब बातोंको विचारकर मालूम होताहै कि "बह्वल्पपानीयमाहितामौषधानामाकल्प्य यावता मृदुकरसता स्यात्तावदुदकमासेचयेच्छोपयेच्च" अर्थात् मृदु, मध्य और कठिनत्वादि भेद समझकर यह निर्धारितकरे कि इन औषधोंमें कितने गुना पानी देनेसे इनका अच्छीतरह सार निकल आवेगा उतना पानी देकर क्वाथकरके उचित शेष रक्खे। ऐसा वाग्भटने निष्कर्ष निकालाहै। इस कषायकल्पके आधुनिक काल्पनिकजालमें न पड़कर आर्षसम्प्रदायसे काम लेना चाहिये।

जहां कल्ककी औषधें निर्दिष्टहैं वहांपर हम जैसा प्रथम कहचुकेहैं उसके अनुसार जितनेभी पदार्थ स्नेहमें आनेवालेहैं उनसबकी सीठीको जोड़कर उससे चतुर्गुणित स्नेहको रखकर कामकरनेसे निर्विघ्न स्नेहसिद्धि होगी। पाकके मृदु, मध्य और खरत्वके लक्षण जैसे सुश्रुतने दियेहैं उसीतरह समझना यथा "अत ऊर्ध्वं स्नेहपाकक्रममुपदेक्ष्यामः। स तु त्रिविध तद्यथा—मृदुर्मध्यम खर इति तत्र स्नेहौषधिविवेकमात्रं यत्र भेषजं स मृदुरिति, मधूच्छिष्टमिव विशदमविलेपि भेषजं यत्र स मध्यम., कृष्णमवसन्नमीषद्विशदं चिक्कणं च यत्र भेषजं स खर इति, अत ऊर्ध्वं दग्धस्नेहो भवति, तं पुन साधु साधयेत्। तत्र पानाभ्यवहारयोर्मृदुः, नस्याऽभ्यञ्जयोर्मध्यम, वस्तिकर्णपूरणयोस्तु खर इति॥११॥ भवतश्चात्र शब्दस्योपशमे प्राप्ते फेनस्योपरमे तथा। गन्धवर्णरसादीना सम्पत्तौ सिद्धिमादिशेत्॥१२॥ घृतस्यैवं विपक्वस्य जानीयात् कुशलो भिषक्। फेनोऽतिमात्र तैलस्य शेषं घृतवदादिशेत्॥१३॥ सु. चि. ३१

जहां कल्कप्रभृतिका निर्देश न कर केवल गणमात्र निर्दिष्ट कियाहो जैसे कि "**सौवर्चल**यवक्षारकट्ुकाव्योषचित्रकैः। वचाऽभयाविडङ्गैश्च साधितं श्वासशान्तये ॥ सु. उ. ५१॥२५" इत्यादिमें "**अनुक्ते** द्रवकार्ये तु सर्वत्र सलिलं मतम् । कल्कक्वाथावनिर्देशे गणात्तस्मात्प्रयोजयेत् ॥ सु. चि. ३१।१०,, इसपरिभाषासे कामलेना ।

आजकल "**अपि**धानमुखे पात्रे जलं दुर्जरतां व्रजेत् । तस्मादावरणं त्यक्त्वा क्वाथादीना विनिश्चय· ॥" अर्थात् ढकेहुए वर्तनमें जल जल्दी नहीं सूखता इसलिये खुलेमुंहके वर्तनमे क्वाथ पकाना चाहिये । कितनेही लोग दुर्जरका अर्थ पाचनमे भारी होताहै ऐसाकरतेहै । इसी धुनमें लोग लगेहुएहै परन्तु यह श्लोक कहांकाहै इसका पता नहीं चलताहै । हा आजकल शार्ङ्गधरमें शामिल कर रक्खाहै परन्तु आढमल्लके समयमें शार्ङ्गधरमें यह श्लोक नहींथा ऐसा अनुमान होताहै यदि होता तो इसकी व्याख्या की होती । इस श्लोककी रचना भी अण्डबण्डहै इसका अन्तिमपाद अपने अर्थको प्रकटनहींकरताहै। किसी योग्य पुरुषका वनायाहुआ होता तो 'विनिश्चय, की जगह 'विधिः स्मृत.' 'भ्रते विधि·', 'क्वाथस्य करणे विधि' इत्यादि पाठ होता । आप्तपुरुष प्राय अध्याहारनिरपेक्ष वाक्यका प्रयोग किया करतेहै इसलिये यह साफ वनावटी नज़र आताहै । यदि यह सिद्धान्त प्राचीन होता तो दाल वगैरह ढकनेकाभी रिवाज न होता प्रत्युत विपरीत देखनेमे आताहै । ढके विना पदार्थपरमाणुओंका पृथक्करण जल्दी नहीं होता और पाचनहोनेमें पृथक्करणही मुख्य कारण होताहै इसलिये द्वितीय जो अर्थहै वह निर्मूलहै । "**वृद्ध**वैद्योपदेशेन पिवेत्क्वाथं सुपाचितम्" यह शार्ङ्गधरने स्वीकृत कियाहै । 'सुपाचितम्' का अर्थही यह है कि अच्छीतरह काथ्यद्रव्यपरमाणुओंका जिसमें विश्लेष होगयाहो और उसके गन्ध, वर्ण तथा रस विकृत न हुए हों इसीवातको आढमल्लने दिखलायीहै यथा—"सुपाचितमिति गन्धवर्णरसान्वितम् । **तदुक्तम्**—द्रव्यस्य गन्धवर्णैश्च तुल्यं कार्यकरं विदु. । तद्विशुद्धं विशुद्धाय कषायममृतोपमम् ॥" यह उद्धरण दियाहै । इसपर अच्छीतरह ध्यानदेकर विचारना चाहिये इस श्लोकसे विल्कुल विपरीतार्थक वह पद्यहै । विना ढकेहुए क्वाथकरनेमें चन्दनादि जो गन्ध द्रव्यहै और उनका गुण गन्धहीपर अवलम्वितहै वह गन्ध उसमेंसे निकल जायगा तव वाकी सीठी रहकर कामही क्या करेगी । इसवातको आजकलके वैद्य भेडिया धसानमें पड़कर भूलगयेहैं परन्तु अर्कखींचनेवाले अत्तार इसकी-तर्फ अच्छीतरह ध्यानदेतेहैं और अर्कनिकालनेकेलिये आजकल नवीनशोधके ज़मानेमेंभी इसतरहके यन्त्र वनाए जारहेहैं कि जिनमेंसे किसीतरहभी गन्ध या वाष्प न उड़नेपावे । जव द्रव्यस्थ गन्धही निकलजायगा तव वाकी रह क्या जायगा ? इसको मूर्खभी समझसकताहै । हां कदाचित् जल्दीवनानेके हिसावसे यह वाक्य वनाया गयाहो तो वह भी मूर्खताहै उसकेलिये उपदेशकी ज़ुरूरत नहीं उसे तो सवलोग जानतेहै । जव जल्दी होतीहै तव गुदप्रक्षालनकाभी पता नहीं चलताहै क्या इसकेलिये किसी विधिवाक्यकी ज़ुरूरतहै ? अर्कखींचनेकासिद्धान्तभी इसीरहस्यको लेकर प्रचलित हुआहै उसका सिद्धान्तहै कि द्रव्यस्थ गुण और गन्ध प्रायः सवके सव वाष्पमें शामिल रहतेहैं इसलिये सुगन्ध द्रव्योंका अर्क जितना कामकरताहै उतना क्वाथ नहीं करता यह प्रत्यक्ष विषयहै ।

आसवोंकेलिये यदि वे खदिरसारकीतरह कठिन द्रव्य हों तो १ पल क्वाथ्यद्रव्यमें ३२ पलपानीदेकर अष्टमांशावशेष रहनेपर उसकी वरावर पुरानागुड़ देवै—"**आसवादिषु** साध्येषु द्वात्रिंशद्गुणसम्मितम् । खदिरादे. प्रतिपलं जलमाहुश्चिकित्सकाः ॥ अष्टावशेषितं कृत्वा गुडं क्वाथसमं क्षिपेत् ॥ **वृद्धसुश्रुतः** ॥" जहा द्रव्य अधिक हो और पानी कम कहाहो अथवा अनुमानसे छोड़ना हो तो कम न छोड़ना । वैसाकरनेमें द्रव्यकासार न निकलनेसे यथार्थ गुणोदय नहींहोगा इसलिये १ द्रोणद्रव्यमें १० द्रोणपानीदेकर उवालनेपर २॥ द्रोण अवशेषक्वाथमें १॥ द्रोण पुराना गुड डालकर अच्छीतरह मर्दनकर सन्धानकरना उचित है ।—"**क्वाथ्य**द्रव्यस्य वाहुल्यादुदकं स्वल्पमेव चेत् । सम्यक् पाकं न मुञ्चन्ति हीनवीर्यन्तु केवलम् ॥ क्वाथ्यद्रव्यं घटसमं जलं दशघटं क्षिपेत् । नि क्वाथ्य पादशेषं तु गुडं सार्धघटं न्यसेत् ॥ विमृय सन्धितं यच्च तच्चासवमितीरितम् ॥ वृद्धसुश्रुतः ॥" मृदुप्रकृतिकरोगियोंकेलिये द्रव्योंका क्वाथ न वनाकर जहा आसव तैयार करनाहो वहांपर औषध चूर्णके वरावर पुराने गुड़को चौगुने पानीमें मिलाकर जवकुटचूर्ण डालकर सन्धानकरे, यह अत्यन्त मृदुप्रकृतिक आसव होताहै इस रहस्यको न समझनेवालोंने क्वाथसिद्धसन्धानको अरिष्ट और क्वाथविनाको आसवकहतेहै ऐसा नियम वनारक्खाहै । और इसकेलिये "**यद**पक्वौषधाम्वुभ्यां सिद्धं मद्यं स आसवः । अरिष्ट क्वाथसिद्धः स्यात्तयोर्मानं पलोन्मितम् ॥" ऐसा वाक्यभी वनारक्खाहै जैसे कि शार्ङ्गधरने लिखाहै और इसीकी छायारूप "**विना** क्वाथेन सन्धानमासवः प्रोच्यते किल" ऐसावाक्य विना नामनिशानका नारायणविलासमें दियाहै । "**पक्वौ**षधाम्वुसिद्धं यन्मद्यं तत्स्यादरिष्टकम् । यदपक्वौषधाम्वुभ्यां सिद्धं मद्यं स आसव· ॥" ऐसा भावप्रकाशनेभी लिखाहै यद्यपिशार्ङ्गधरने अपने लक्षणपर ध्यान देकर वर्तावभी वैसाही कियाहै परन्तु यह आर्षसिद्धान्तनहींहै यदि ऐसा होता तो "**आसवा**ऽरिष्टयोर्यत्र न गुणो लभ्यते यदा। एकद्वित्रिश्शृतं कृत्वा दापयेद्गुणवृद्धये ॥" जहा आसव और अरिष्टोंमें विनाक्वाथकेसन्धानसे यथार्थगुणोदय न होवे तो एक दो वार अथवा तीनवार औषधोंका प्रक्षेपदेकर क्वाथ वनाकर सन्धान करना, अर्थात् प्रथमपाक ३२ गुने जलमें करके फिर दोवार और करना क्योंकि आसवोंमें अधिकसे अधिक ३२ गुने जलका विधानहै इससेभी अधिक तेज़ करना हो तो प्रथमपाक ३२ गुणमें, फिर १६ गुणमें और तृतीयअष्टगुणमें

करना. ऐसा गोपुरके कहनेसे पूर्वलक्षण निर्मूल होजाताहै (सूचना प्रतिपाक योग्यतानुसार नयाजल देना) आसवमें "अष्टावशेषितं कृत्वा गुडं क्वाथसमं क्षिपेत्। गुडं क्वाथौषधसमं जलं चापि चतुर्गुणम्॥ आसवारिष्टमद्येषु प्रावापश्च दशांशक। क्षौद्रञ्च गुडपादोनं प्रदातव्यं भिषक्तमै॥" क्वाथ अथवा क्वाथौषधके बराबर गुड देना। यदि गुडकेस्थानमें मधु देना हो तो चतुर्थांश कम देना यह वृद्धसुश्रुतका सिद्धान्तहै। "अरिष्टेषु च सर्वेषु द्रोणे पलशतं गुडम्। चिरस्थायिष्वरिष्टेषु द्विगुणं गुडमावपेत्॥ क्षौद्रं क्षिपेद्गुडस्यार्द्धं प्रक्षेपस्तु दशांशिक॥ ३२ गुणप्रभृति उचितजलमें क्वाथको बनाकर चतुर्थ अथवा अष्टमांशावशेष रहे हुए १ द्रोण द्रवमें १०० पल गुड देना। यदि उसे बहुतदिन रखना हो तो २०० पल देना और गुडकी जगह मधु देना हो तो गुडसे आधा देना। यह गोपुरका सिद्धान्तहै। दशांशप्रक्षेप दोनोंमें बराबरहै। इसतरह जहा गुडमधुप्रभृतिका निर्देश न हो वहा इसपरिभाषासे कामलेना उक्तकेलिये विचारकरनेकी कोई आवश्यकताही नहींहै जहा जैसा लिखाहो वैसा करना। षुञ् "अभिषवे" स्वादिसे "ऋदोरप्" (पा ३।३।५७) प्रत्ययकरनेसे आसवशब्दसिद्धहोता है। सन्धानकरके द्रव्यस्थसारको जुदा करनेकानाम साधारणतया आसवहै। इसकेभेद और योनि "धान्यफलमूलसारपुष्पकाण्डपत्रत्वचो भवन्त्यासवयोनयोऽग्निवेश ? सङ्ग्रहेणाऽष्टौ शर्करानवम्य. तास्वेव द्रव्यसंयोगकरणतोऽपरिसङ्ख्येयासु यथा पथ्यतमानामासवाना चतुरशीति निबोध॥ च. सू. २५।४८" में चरकने बतलायेहैं। इनमें सुरा १, सौवीर २, तुषोदक ३, मैरेय ४, मेदक ५, धान्याम्ल ६, इनभेदोंसे मद्यके अन्नसंयोगसे खास ६ भेद बताएहै। धान्यासव ६, फलासव १६, मूलासव ११, सारासव २०, पुष्पासव १०, काण्डासव ४, पत्रासव २, त्वगासव ४, शर्करासव १, इसतरह मोटे हिसाबसे ८४ आसव बतलाए है। इनके द्रव्यसंयोग, विभाग और संस्कार नानातरहके होनेकेकारण नानातरहके आसव होतेहै। "एषामासवानामासुतत्वादासवसञ्ज्ञा।" इससे योगरूढसंज्ञा बतलाईहै। इसका अपरपर्याय अभिषवहै। इन दोनों उपसर्गोके अनेकार्थ होनेसे आसव बहुतप्रकारके होतेहै यह अर्थ सिद्ध होताहै उनमेंसे एकप्रकार वहहै जिसमें द्रव्यमेंसे समस्तसार निकल आवे, जैसे कि मद्यका खींचना। दूसरा यहहै कि जिसमेंसे अधिकतर सार निकल आवे, जैसे अरिष्ट। तीसरा वहहै जिसमें कि द्रव्य उससे पृथक् न कियेजावें परन्तु सन्धानकरनेसे मद्यगन्ध और यत्किञ्चित् मादकता उत्पन्न होजावे, जैसे कि मुरब्बे, काञ्जीप्रभृति। इनके अवान्तरभेद हजारों होतेहै पर उन्हें लोकमें मद्यके नामसे नहीं पुकारतेहैं किन्तु काञ्जी, सोंदा, आचार, मुरब्बा प्रभृति नामोंसे जाने जातेहै। परन्तु "आसुतत्वादासवा" यह लक्षण सबजगह व्याप्तहोनेसे सन्धानकरनेपर जिनमें व्यक्त अथवा अव्यक्त मदहो उनसबकी आसवमें गिनतीहै इसलिये "कन्दमूलफलाद्यञ्च तद्वद्विद्यात्तदासुतम्॥ च. सू. २७।२८०" यहा इसबातको स्पष्ट करदीहै। मद्यवर्ग, च. सू. २७।१७६–१९३ में सुरा १, मदिरा २, जगल ३, अरिष्ट ४ ये चारभेद बतायेहै। "न रिष्यत इत्यरिष्टम्" अर्थात् नहीं सड़नेवाला पदार्थ, यहापरभी अर्थापत्तिसे आसवार्थही व्यक्त होताहै। जिसमें मद्यसार उत्पन्नहोताहै वह पदार्थ सड़तानहींहै इसीलिये आजकल आलकोहल या रेक्टीफाइडस्प्रिट यत्किञ्चित्प्रमाणमें डालकर कच्चे (बिनाचासनीके) क्वाथोंके रखनेकी रिवाज़ चलीहुईहै। मद्यवर्गीय समस्तपदार्थोमें यह (मद्यसार) थोड़ेबहुत प्रमाणमें रहताहीहै इसअर्थको व्यक्तकरनेकेलिये अरिष्टसंज्ञा रक्खीहै इसीलिये चतुरशीति आसवप्रदर्शनप्रकरणमें अरिष्टका नाम निशानतक नहीं दियाहै और मद्यवर्गमें जिनका नाम आसव दियाथा उनमेंसे शार्कर १, पक्वरस २, शीतरसिक ३ और गौड ४ इनका अरिष्टशब्दसे निर्देश कियाहै वहापर मधुशब्दका मधुप्रधानासव ऐसा चक्रपाणिदत्तने अर्थ-कियाहै यह उनकी गल्तीहै। मधु स्वयं ही आसवहै इसको अधिकखानेसे नशा होताहै देखो वाल्मीकिरामायण सु० ६१, ६२ सर्ग "मधूनि द्रोणमात्राणि बाहुभिः परिगृह्यते। पिबन्ति कपय केचित्सङ्घशस्तत्र हृष्टवत॥ घ्नन्ति स्म सहितास्सर्वे भक्षयन्ति तथा परे। मधूच्छिष्टेन केचिच्च जघ्नुरन्योन्यमुत्कटा॥ अपरे वृक्षमूलेषु शाखा गृह्य व्यवस्थिताः। अत्यर्थञ्च मदग्लाना पर्णान्यास्तीर्य शेरते॥ उन्मत्तवेगाः प्लवगा मधुमत्ताश्च हृष्टवत्॥ इसप्रकरणको देखनेसे स्पष्ट विदित होगा कि मधुमें कितनी मादकताहै। यह मधुमक्षिकाओंका बनायाहुआ पुष्पासवहै इसलिये "विबन्धघ्न कफघ्नञ्च मधु लध्वल्पमारुतम्।" ऐसा चरकने इसका गुण बतलायाहै। इसके बाद समण्डसुरा, मधूलिका, सौवीरक, तुषोदक और अम्लकाञ्जिकको कहकर मद्यवर्गको समाप्त कियाहै इसलिये **आसव** और **अरिष्ट** एकार्थवाचकहै। इसीकारणसे "दिव्या प्रसन्ना विविधा सुराः कृतसुरा अपि। शर्करासवमाध्वीकाः पुष्पासवफलासवा:॥ वा रा. सुं १४।२२–२३" में रावणकी पानभूमिमें सुरा और कृतसुरा इनदोनोंसे अन्नयोगजन्यमद्य तथा आसवोंसे अन्नरहित मद्यवर्गको कहकर समस्त मद्यवर्गकी सत्ता सूचितकीहै वहापर अरिष्टका पृथक् निर्देश नहीं कियाहै।

अब सुश्रुतके मद्यवर्ग (सूत्र० ४५।१७० से २१६ तक) की तर्फ ध्यानदीजिये इसमें मार्द्वीक (अङ्गूरी) १ खार्जूर (खजूरी) २, श्वेता ३, प्रसन्ना ४, मधूलिका ५, आक्षिकी ६, सुरा (प्रसन्ना अर्थात् स्वच्छभाग) को बतलाकर कोहल १, जगल २ और वक्कस ३ इसतरह क्रमश. असारिष्टभागके गुणोंको कहकर गौड १, शार्कर २, पक्वरस ३, शीतरसिक ४, आक्षिक ५, जाम्बव ६, सुरासव, ७, मध्वासव ८, मैरेय ९, इक्ष्वासव १०, मधूकासव ११, इन ग्यारहसीधुओंको बतलायाहै। यहांपर पूर्वापरमें सीधुको कहा और बीचमें आसवोंका निर्देश कियाहै।

यहां आसवविशेषका नाम नहीं प्रतीतहोता कारण कि इसके समनन्तर "निर्दिशेद्रसतश्चान्यान् कन्दमूलफलासवान्" ऐसा वाक्य आनेसे यहापर आसवशब्दसे सीधुही अभिप्रेत-मालूमहोताहै कारण कि रससे इनके गुणोंका निर्देश कियाहै । रससे प्रायः सीधु (ताडी) या शुक्त (सिरका) ही तैयार किया जाताहै आसवविशेष नहीं । आसवविशेषकानाम इसके आगे अरिष्ट रक्खाहै और इसे तीक्ष्ण मानाहै देखिये—"अरिष्टो द्रव्यसंयोगसंस्कारादधिको गुणैः । बहुदोषहरश्चैव दोषाणा शमनश्च सः ॥ दीपनः कफवातघ्न. रस. पित्तविरोधन. । शूलाऽऽध्मानोदरप्लीहज्वराऽजीर्णाऽर्शसां हितः ॥ इति" खजूर-वगैरहके रसमें यत्किञ्चित् संस्कारदेकर मद्यरूपमें लायेहुएको सीधुमें १, यन्त्रद्वारा खींचकर तैयार कियेहुएको आसवमे २ (कोहल १ जगल२ और वक्कस ३ भी इसीमें शामिलहै) और दशमूलादि दवाओंकेक्वाथमें अथवा शुद्धजल या तक्रादि द्रवोंमें औषधचूर्ण तथा गुडादिपदार्थ देकर सन्धानकिये हुएको अरिष्टमें गिनाहै । "न रिष्यतीत्यरिष्टम् " अर्थात् चिरस्थायिद्रव्य, वस इनतीनविभागोंमें प्रधान मद्यवर्गको समाप्त कियाहै। इसकेवाद शुक्त (सिरका) और उसकेभेद, गौडशुक्त, रसशुक्त, मधुशुक्त, आसुत, मुरब्बे और आचार वगैरह, तुषाम्बु तथा धान्याम्लको गौणमद्यमें दाखिल कियाहै । इससे "यदपक्वौषधाम्बुभ्या सिद्धं मद्यं स आसव. । अरिष्ट क्वाथसिद्ध स्यात्तयोर्मान पलोन्मितम्" यह वाक्य निर्मूल ठहरताहै देखिये सुश्रुत चि० १०।६ अरिष्टको विनाक्वाथके बनायाहै और पलाशक्षारके परिस्रुत जलको क्वथितकर यत्किञ्चित् गाढाहोनेपर ठंढाकरके सन्धानकियाहै इससे उक्तलक्षणकी विपरीतता देखनेमें आतीहै । यहापर यह शङ्का न करें कि वहा साक्षात् क्वाथका विधान नहींहै ? "पलाशभस्मपरिस्रुतस्य उष्णोदकस्य शीतीभूतस्य त्रयोभागा०" गरमकर ठंढे कियेहुएके तीनभाग, इससे क्वाथकरना व्यक्तहोताहै अन्यथा यह कहनेकी आवश्यकताही क्या थी ? यहापर अवान्तर यह शङ्का न करें कि अरिष्ट और आसव दो भेद एकही जगह क्यों बतलाए ? इसका रहस्य यहहै कि इसतरहकेसन्धानके दो प्रकारहैं एक क्वथितकरके निष्पन्नकरना और दूसरा विनाक्वाथका इसीलिये "प्रास्थिकीं पिप्पलीं पिष्ट्वा गुडं मध्व्यं विभीतकात् । उदकप्रस्थसंयुक्तं यवपल्ले निधापयेत् ॥ तस्मात्पलं सुजातात्तु सलिलाञ्जलिसंयुतम् । पिबेत्पिण्डासवो ह्येष रोगानीकविनाशन. ॥ च चि. १५।१६१–१६२" इसप्रकारका चरकने पिण्डासव कहाहै सुश्रुतने "पिप्पल्यादिकृतो गुल्मकफरोगहर. स्मृत. ॥ सु. सू. ४५।१९६" इत्यादिकोंकी अरिष्टसंज्ञा दीहै इससे सीधु और प्रसन्नाऽप्रसन्न द्विविधसुराको छोड़कर प्रधानमद्यका तृतीयजो प्रकारहै उसे साधारणतासे अरिष्ट और आसवके नामसे निर्देशकरतेहैं । वह चाहे क्वथितकरके कियाजाय अथवा क्वाथविना कियाजाय यह तो वैद्यकी बुद्धिपर आधारहै इसे हम प्रथमही सूचितकरचुकेहैं कि क्वथितकी अपेक्षा विनाक्वथित मृदुप्रकृतिकहोताहै । अर्थात् "मृदुप्रकृतिक आसवस्तद्भिन्नमरिष्टम्' इसभेदको लेकर भेदकरें तो अवश्य हो सकताहै पर "पदपक्वौषधाम्बुभ्यां सिद्धं मद्यं स आसव. । अरिष्ट क्वाथसिद्धः स्यात्०। शार्ङ्ग०, भा प्र" "अरिष्टासव सीधूना गुणान् कर्माणि चादिशेत । बुद्ध्या यथास्वं संस्कारमवेक्ष्य कुशलो भिषक् ॥ सु. सू ४५।१९७" की टीकामें 'द्रव्यप्रधानमरिष्टम्, द्रवप्रधान आसव', उभयप्रधानं मद्यम्" इसतरह कियेहुए लक्षण अव्याप्त्यादिदोषत्रययुक्तहोनेसे त्याज्य हैं । अरिष्टलक्षणमें द्रव्यप्राधान्यदीहै सो औषधमात्रमें यह लक्षणहोनेसे निरर्थकहै दुनियामें कौनसा औषधहै जिसमें कि द्रव्यप्रधान न हो ? इसीलिये "नानौषधिभूतं जगति किञ्चित्" यह सिद्धान्त कियाहै इससे (ऊपरका लक्षण) निरर्थकहुआ । इसीतरह द्रवप्राधान्यमेंभीहै प्रधान और अप्रधान दोनोंतरहके मद्यमें यत्किञ्चित् प्रमाणमें द्रवभी अपेक्षितहै उसके विना मद्यभेदका वननाही असम्भवहै कदाचित् कहें कि उक्तलक्षणमें एकदम द्रवकी अधिकता अभीष्ट है तो सीधु और सुरामें अतिव्याप्तिहोनेसे यह लक्षणभी निकम्माहै । चरकीय पिण्डासवमें एकदम द्रव कमहै इसीलिये उसका नाम पिण्डासव रक्खाहै इसलिये यहलक्षणभी दूषितहै । इसीतरह 'उभयप्रधानं मद्यम्, यहभी अग्राह्यहै । जैसाहमने पूर्वमें कहाहै वही भद्रमार्गहै लोगोंके कियेहुए लक्षण छात्रबुद्धिको व्यामुग्ध करनेवालेहै । कुष्ठप्रकरणमें अरिष्ट और आसवका जो पृथक विधानहै वह क्वथिताक्वथित प्रकारको बतानेके लियेहै कुष्ठीकी इच्छाहो तो पलाशासवमें मुरब्बे वगैरह भी तैयार करके देसकतेहैं इसलियेभी आसवप्रकार जुदा बतायाहो यहभी सम्भवहै । इसलिये "सुरामन्थाऽऽसवारिष्टाल्लेहांश्चूर्णान्ययस्कृती । सहस्रशोऽपि कुर्वीत बीजेनाऽनेन बुद्धिमान् ॥" इस उपसंहारमें अप्रयुक्त मन्थकोभी गिनायाहै । कदाचित् कोई द्रव्यप्रधानका प्रक्षेपप्रधान यह अर्थ करै तो वहभी अभयारिष्ट, दन्त्यरिष्ट, गण्डीरारिष्ट प्रभृतिमें अव्याप्तहोनेसे अग्राह्यहै ऊपर दियेहुए व्याख्यानको समझनेकेलिये सुश्रुतीय और चरकीय कतिपय आसवारिष्टोंकी सूची नीचे दीजातीहै । यथा

लोध्रासव (च.चि. ६।४१) में ३२ गुनेजलमें चतुर्थांशावशेष क्वाथकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएको प्रमेहादि रोगोंमें प्रयुक्तकियाहै ।

मूलासव (च चि. १५।१५७)में १४॥ गुन जलमें चतुर्थांशावशेष क्वाथकरके प्रक्षेपदेकर सन्धानकियेहुएको ग्रहणीप्रभृतिरोगोंमें प्रयुक्तकियाहै.

दुरालभासव (च चि १५।१५३) में ११ गुनेजलमें चतुर्भागावशिष्ट क्वाथकरके प्रक्षेपदेकर सन्धानकियेहुएको ग्रहण्यादिरोगोंमें प्रयुक्त कियाहै ।

शर्करासव (च चि १४।१५४)में अठगुनेजलमें चतुर्थांशावशिष्ट क्वाथकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकरके अर्शमें प्रयुक्त कियाहै ।

पलाशक्षारासव (सु चि. १०।७) में पलाशकी भस्मको ६ गुने पानीमें डालकर नितरेहुए जलको अग्निपर गाढावनाय-प्रक्षेपरहित सन्धानकरके कुष्टमें प्रयुक्त कियाहै।

गौडासव (सु सू. ४४।२८) में ५ गुनेजलमें चतुर्भागावशिष्टक्वाथकरके प्रक्षेपरहितका सन्धानकरके विरेचनादिकमें प्रयुक्तकियाहै।

मधूकासव (च चि १५।१४७) में चतुर्गुणजलमें तृतीयाशावशिष्ट क्वाथ करके प्रक्षेपरहितसन्धानकियेहुएको ग्रहण्यादिरोगोंमें प्रयुक्तकियाहै।

पिण्डासव (च. चि. १५।१६१) में चतुर्थांशजलदेकर पाकरहितही सन्धानकरके ग्रहणीप्रभृतिमें प्रयुक्तकियाहै।

पुनर्नवाद्यरिष्ट (च चि. १२।३८) में ३२ गुनेजलमें अर्धावशेषक्काथकरके प्रक्षेपदेकर सन्धानकियेहुएको श्वयथुमें प्रयुक्तकियाहै।

अभयारिष्ट (च. चि. १४।१३९) में २५ गुनेजलमें चतुर्थांशावशिष्ट काथकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकरके अर्शमें प्रयुक्त कियाहै।

अभयारिष्ट (सु चि. ६।१५) में २१ गुनेजलमें चतुर्भागावशिष्ट क्वाथकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएको अर्शमें प्रयुक्तकियाहै।

दन्त्यरिष्ट (सु. चि १४।१४५) में १६ गुनेजलमें चतुर्थांशावशेषक्वाथकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएको अर्शमें प्रयुक्तकियाहै।

फलारिष्ट (च चि. १४।१४९) में १२॥ गुनेजलमें चतुर्भागावशेषक्वाथकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकरके अर्शप्रभृतिमें प्रयुक्तकियाहै।

दन्त्यरिष्ट (सु. चि. ६।१४) में १० गुनेपानीमें चतुर्थांशावशेषक्वाथकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएको अर्शमें प्रयुक्तकियाहै।

गण्डीरारिष्ट (च. चि. १२।२९) में ८ गुनेपानीमें त्रिभागावशेष क्वाथकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएको श्वयथुमें प्रयुक्तकियाहै।

बीजकारिष्ट (च चि १६।१०६) में ·५। गुनेजलमें चतुर्थांशावशेष क्वाथकरके प्रक्षेपदेकर सन्धानकियेहुएको पाण्डुमें प्रयुक्तकियाहै।

मध्वरिष्ट (च. चि. १५।१६४)में पञ्चगुण जलदेकर विनापाककियेही सन्धानकर ग्रहण्यादिरोगोंमें प्रयुक्तकियाहै।

कनकारिष्ट (च चि १४।१५९) में चतुर्गुणजलदेकर पादशेष क्वथितकर प्रक्षेपसहित सन्धानकियेहुएको अर्शमें प्रयुक्तकियाहै।

पूतीकारिष्ट (सु चि. १०।६) में द्रव्यापेक्षया आधेसे कुछ अधिक जल देकर पाकरहित सन्धानकरके कुष्टादिकमें प्रयुक्तकियाहै।

अष्टशतारिष्ट (च. चि. १२।३२)में तृतीयाश जलदेकर विनापाक कियेही सन्धानकिये हुएको श्वयथुमें प्रयुक्तकियाहै।

फलत्रिकारिष्ट (च. चि. १२।३९) में जलरहितकाही सन्धानकरके श्वयथुमें प्रयुक्तकियाहै।

लोहारिष्ट (सु. सं. १२।१२) में १६ गुनेजलमें चतुर्भागावशेष क्वाथकरके सन्धानकियेहुएको प्रमेहपिडकाप्रभृतिमें नियुक्तकियाहै।

धात्र्यरिष्ट (च. चि १६।१११)में आंवलोंकेस्वरसमें विनापाककियेही सन्धानकरके पाण्डुरोगमें प्रयुक्तकियाहै।

आसवोंमें प्राय· घृतभाण्ड लियाजाताथा उसमें चन्दन और अगरका, अथवा जटामासी और मरिचका, तथा कहीं कहींपर केवल अगरका धूपलिखाहै। पीपल, मधु और घृतका लेप सुश्रुतमें वतलायाहै। चरकमें पिप्पली और मधुकालेप (मध्वरिष्टमें), पीपल, चव्य, प्रियङ्गु, मधु और घृतका लेप (शर्करासवमें), तथा इलायची, मृणाल, अगर और चन्दनकालेप (मधूकासवमें) वतलायाहै। मध्वरिष्टमें घृतभाण्डकी जगह कोराघड़ा उपयोगमें लियाहै परन्तु आजकल आसवोंको लकडीके पीपेमें रखनेका प्रचार हुवाहै इसमें प्रथम जो आसव रक्खा जाताहै उसमें जिसतरहकी लकड़ीहोगी उसका विशेष अंश आवेगा। हा वह कई वारका होजायगा तो इतना अंश नहीं आवेगा इसवातका ध्यान रखनाचाहिये। इसीलिये आचार्योंने घृतभाजन लियाहै क्योंकि इसमें कोईचीजमिलनेका सम्भवनहीं रहता और स्नेहके कारण वाहरसे सूक्ष्मककीटोंका प्रवेशभी नहीं होताहै। इसीलिये जन्तुघ्नदवाओंका धूप और प्रलेप लिखाहुआहै। इनका अनुष्ठान करनाभी उचितहै।

आसवोंमें समय अधिकतर १ महीनेका रक्खाहुआहै कहीं-कहीं शर्करासव प्रभृतिमे मासार्ध भी आताहै पर यह अवधि मद्यसार उत्पन्न करनेकीहै। "घनात्यये तथा ग्रीष्मे सन्धान षड्दिनैर्भवेत्। हेमन्ते शिशिरे स्थाप्य भिषजा दिग्दिनावधि॥ प्रावृड्वसन्ते सन्धानं भवेदष्टदिनेन वै॥" इस वृद्धसुश्रुतके वाक्यसे अल्पकालमें सन्धान व्यक्तहोताहै पर वह आसवपरक नहींहै वहांपर तुषाम्बु प्रभृतिका प्रकरणहै अन्नमिश्रितसन्धान वहुत-जल्दी होताहै इसलिये वहा वैसी अवधि वतलाईहै। यद्यपि इसवाक्यमें प्रावृट् समयमें भी सन्धान कहाहै पर वहभी तुषाम्बु प्रभृतिकेलियेहै। येसव सन्धान चिरकालतक रखनेकेलिये नहीं होतेहैं। थोड़े समयकेलिये कियेजातेहैं आसवोंका सन्धान प्रावृट्कालमें कियाहुआ खरावहोजाताहै उसकेलियेसवसे उत्तम वसन्त और ग्रीष्म ऋतुहै। जहापर उष्णता कमहोगी वहापर आसव विगड़जायगे इसवातका ध्यानरखनाचाहिये।

नस्यमें ८ विन्दु (१) शुक्ति (२) और पाणिशुक्ति(३) इसतरह ३ मात्राएं वताईहैं ये प्रत्येकनासापुटकेलिये समझनीचाहियें क्योंकि गयीप्रभृतिने ऐसा स्पष्ट कहाहै यथा—"प्रायोगिके नस्ये प्रत्येकं नासापुटयोरष्टौ विन्दव स्नेहनार्थे

तद्द्विगुणाः शुक्तिप्रमाणा इति ।” यहापर आठके द्विगुणको शुक्तिनाम देनेसे ३२ कानाम पाणिशुक्ति अर्थतः आजाताहै। “प्रायोगिकं स्नैहिकञ्च द्विविधं नस्यमुच्यते । प्रायोगिके बिन्दवोऽष्टौ स्नैहिके शुक्तिरिष्यते ॥” इसभोजके वाक्यमें प्रायोगिकनस्यमें आठ विन्दु वताकर स्नेहनमें शुक्ति वतलाईहै इसलिये यहां प्रायोगिकको द्विगुणकरके शुक्ति नाम दियाहो यह अनुमान होताहै । भोजने उसे द्वित्रिचतुर्गुणभी वतलायाहै सो भी इसीक्रमको मानकर होसकताहै क्योंकि १६ को २,३,४से गुणित करनेसे ३२,४८ और ६४ विन्दुहोतेहैं। ये यथाकथञ्चित् जवान और वृद्धोंके नाकमे डालेजासकतेहैं परन्तु वृद्धहारीतके सङ्केतको लेकर चलें तो भोजका कथन एकान्तत. निरर्थक होताहै देखिये “प्रदेशिन्या निमग्ने द्वे पर्वणी गलितोऽखिलम् । नस्यादिषु तु विज्ञेयो भिषग्भिर्विन्दुसञ्ज्ञकः ॥ विन्दुभिश्चाष्टभिः शाण. प्रोक्तश्चेति भिषक्तमैः । द्वात्रिंशद्विन्दुभिश्चात्र शुक्तिश्चैव विधीयते ॥ द्वे शुक्ती पाणिशुक्तिश्च नस्यकर्मणि पूजिताः॥ वृद्धहारीत ॥

तैलादिद्रवनिमग्नतर्जनीद्वय—

पर्वच्युतसमग्रद्रव=१ विन्दु (४रत्ती)

८ विन्दु=१ शाण (३२रत्ती)

३२ विन्दु=१ शुक्ति (१२८रत्ती)

२ शुक्ति=१ पाणिशुक्ति (२५६रत्ती)

इसहिसावसे १२८ रत्तीकी १ शुक्ति होतीहै उसे २,३,४ गुणितकरनेसे २५६,३८४,५१२ रत्तियोंकीमात्राएं होतीहै। इनका उपयोग मनुष्यपर तो क्या? गोमहिषपरभी होना दुस्तरहै इसलिये वृद्धहारीतके वाक्यमे ‘अखिलं,का अर्थ ८ विन्दुका १ विन्दु नहीं गिनना किन्तु तर्जनीके २पर्व तैलमे डुवाकर टपकानेसे ८ विन्दुतो वरावर गिरतेहैं और दो विन्दु पीछेसे अल्पप्रमाणके गिरतेहैं उन्हें अलग न गिनकर ८ ही विन्दु गिनना, यह अखिलका अर्थकरना कारण कि “**तस्य** प्रमाणमष्टौ विन्दवः प्रदेशिनीपर्वद्वयनिःसृताः प्रथमा मात्रा, द्वितीया शुक्ति, तृतीया पाणिशुक्ति., इत्येतास्तिस्रो मात्रा यथावलं प्रयोज्याः ॥ सु.चि. ४०।२८” यहापर अखिलका नामनिशानतक नहिं है । इसतरहके व्याख्यानकरनेसे हारीतका उद्धरण वरावर लगजाताहै क्योंकि तर्जनीच्युत १ विन्दु आधीरत्ती या १ उड़द या १ जवके वरावर होताहै । इंगलिशमेभी १ मिनिम (विन्दु) १ ग्रेनके वरावर होताहै । २ ग्रेनकी १ रत्तीहोतीहै इसलिये ८ विन्दुओंकी ४ रत्ती हुई । इनका वाल, वृद्ध और जवान सवपर उपयोग होसकताहै परन्तु इन ८ विन्दुओंका १ विन्दु गिनेंगे जैसा कि शार्ङ्गधर और वाग्भटने कहाहै यथा—“**स्नेहे** प्रग्न्थिद्वयं यावन्निमग्ना चोद्धृता ततः । तर्जनीयं स्रवेद्विन्दुं सा मात्रा विन्दुसंज्ञिता ॥ एवं विधैर्विन्दुसञ्ज्ञैरष्टभिः शाण उच्यते ॥ शार्ङ्ग० उ. ८।३९ ॥” “मर्शप्रमाणं तु प्रदेशिन्यङ्गुलिपर्वद्वयात्रिमग्नोद्धृतायावत्पतति स विन्दुः ॥ अ.सं.सू. २९” इनके हिसावसे प्रतिविन्दु ४ रत्तीहोनेसे ८ विन्दुओंकी ३२ रत्तियें होंगी और ६४ विन्दु होंगे । इनका प्रतिनासापुटमें एकवार उपयोग होना दुस्तरहै तव १६ और ३२ विन्दुओंका उपयोग कैसे होसकेगा? यद्यपि “अमी दशाष्टौषड्बिन्दव उत्तममध्यमकनीयस्योमात्राः” ऐसी मनगढन्तमात्रा कायम करके अपने व्याख्यानको सङ्गत करनेका प्रयास वाग्भटने कियाहै परन्तु इसका मूल क्याहै? इसतरहके प्रश्नका उत्तर क्यादिया जायगा इसका कुछभी विचार न किया । इसलिये “न मात्रामात्र मप्यत्र किञ्चिदागमवर्जितम्” इसपर विश्वास रखनेवालोंको सावधान होना उचितहै । देखो यहींपर दशविन्दुकी मात्रा विदेह सुश्रुत और हारीतप्रभृति किसीभी महर्षिने नहीं वतलाईहै और ६ की मात्रा वैरेचनिककीहै ८ स्नेहनकी, सो इनकाभी साङ्कर्य करके ऋषिसिद्धान्तका कितना विप्लव कियाहै इसको विचारके वाग्भटपर अन्धश्रद्धा न रखनीचाहिये । इन्होंने अपना मनगढन्त सिद्धान्त वनाकर लोगोंके मनमें यह ठंसानेकी कोशिश कीहै कि सुश्रुतादि ऋषियोंका इसविषयमे अज्ञानहै इसलिये ये दोनों (शार्ङ्गधर और वाग्भटके) व्याख्यान अश्रद्धेय हैं कारण कि एवंविध व्याख्यान ‘अखिलं’की गैरसमझसे लिखेगयेहैं । भोजका जो निवन्धहै वह सुश्रुतीय गूढरहस्योंके उद्घाटनार्थही है । आचार्यने वैरेचनिकनस्यमें “चत्वारो विन्दव. षड् वा तथाऽष्टौ वा यथावलम् । शिरोविरेकस्नेहस्य प्रमाणमभिनिर्दिशेत् ॥ सु.चि. ४०।३६” यहांपर ४,६ और ८ विन्दुओंकी मात्रा वतलाकर अन्तमें ‘यथावलम्’ को सिद्धान्त मानाहै । इससे यह लक्षितकराया कि चिकित्साका प्रत्यक्ष विषयहै इसमें जैसी जहा औचिती हो तदनुकूल कल्पना करनीचाहिये इसके अतिरिक्त और कोई मार्ग नहींहै। यही वात विदेहने कहीहै देखो “चतुरश्चतुरो विन्दूनेकैकस्मिन् समाचरेत् । अध्यर्द्धो द्विगुणा वापि त्रिगुणां वा चतुर्गुणाम् ॥” अर्थात् प्रत्येक नासापुटमें विरेचनार्थ ४–४ विन्दु डाले, और औचिती देखकर ६,८,१२,१६ इत्यादिकका अनुष्ठानकरे अर्थात् चिकित्साशास्त्र औचितीको देखकर प्रवृत्त होताहै । यहां ध्यानदीजिये विदेहने जैसे वैरेचनिकनस्यकी मात्रा ४ विन्दु एकनासापुटकेलिये नियतकरके डेढ, दो, तीन और चारगुणितका उसमें विकल्प वतलायाहै वैसेही स्नेहनमेंभी यह सिद्धान्त अनायाससे उपस्थित होगा । तव विदेहके सिद्धान्तसे वैरेचनिकसाधारणमात्रा ४ विन्दुओंको द्विगुणकरनेसे ८ विन्दु नियत होतीहै इसमें पूर्व विकल्पोंका योगकरनेसे, १२,१६,२४,३२ इतने विन्दुओंकी मात्राएं आतीहै । सुश्रुतने अध्यर्ध और त्रिगुणको छोडकर उत्तरोत्तरको द्विगुण कियाहै । यथा विदेहनिर्दिष्ट वैरेचनिकसाधारणमात्रा ४ विन्दुहै स्नेहनार्थ स्वभावत. ८ हुए । इन्हें द्विगुणकरनेपर १६ को मध्यम, तथा इनकोभी द्विगुणकरके ३२ को उत्तम मात्रा मानी । इसरहस्यको देखकरभी सुश्रुतने १६ विन्दुओंकाही नाम शुक्ति रक्खाहै यह निःसन्देह अनुमान

होताहै। वृद्धहारीतने साधारणस्नेहनमात्राको अर्थात् ८ विन्दुओंको चतुर्गुणितकरके शुक्ति नामरक्खाहै इतना मतभेद अवश्यहै परन्तु नस्यका विधान ऊर्ध्वजत्रुरोगोंके निर्हरणार्थहै। यह विषय प्रधानतया शालाक्यतन्त्रकाहै इसके प्रधानाचार्य महाराजविदेहहैं। सुश्रुतप्रभृतिनेभी उन्हींके तन्त्रानुकूल रचनाकीहै। इससे यह निर्धारित हुआकि १६ विन्दुओंकानाम शुक्ति और ३२ को पाणिशुक्तिकहतेहैं। भोजने शालाक्यतन्त्रके मूलकी तरफ ध्यान न देकर केवल सुश्रुतहीको मूलनिर्माता समझकर "प्रायोगिकं स्नैहिकञ्च०" इत्यादि पद्यकी रचनाकीहै उसमें "तस्य प्रमाणमष्टौ विन्दव. प्रथमा मात्रा, द्वितीया शुक्ति ०" इसवाक्यको क्रमश विरेचन और स्नेहनमें लगायाहै देखिये—"प्रायोगिके विन्दवोऽष्टौ स्नैहिके शुक्तिरिष्यते।" इति। परन्तु सुश्रुतीयसन्दर्भमें तृतीयमात्रा पाणिशुक्ति रहजातीहै इसकी व्यवस्थाकेलिये "दोषोच्छ्रायं समासाद्य दद्याद् द्वित्रिचतुर्गुणम्' इस चतुर्थपदकी रचनाकी। परन्तु सुश्रुतका यह अभिप्राय नहींहै किन्तु उन्होंने ८,१६ और ३२ की मात्रा निकृष्ट मध्यम और उत्तम भेदोंको लेकर तीनों स्नेहनकेलियेही बताईहैं। रेचनकेलिये आगे स्वतन्त्रमात्राका निर्धारणकियाहै देखिये—"चत्वारो विन्दव. षड्वा तथाऽष्टौ वा यथाबलम्। शिरोविरेकस्नेहस्य प्रमाणमभिनिर्दिशेत्॥ सु.चि. ४०।३६" इसजगहपर भोजसे इतनीही भूलहुईहै कि मूल सुश्रुतहीको मानलिया। इसमें विपत्ति यही आवेगी कि शुक्तिको द्वित्रिचतुर्गुण करनेसे ६४,९६ और १२८ विन्दु आतेहैं सो इनका मनुष्यके प्रत्येक नासापुटमें समावेश होना दुर्घटहै। इसलिये विदेहको मूलपुरुष मानकर व्यवस्थाकरनी श्रेयस्करहै। **द्रव्यादष्टगुणं** क्षीरं क्षीरात्तोयं चतुर्गुणम्। क्षीराऽवशेषः कर्त्तव्य क्षीरपाके त्वयं विधि.॥ यह श्लोक टोडरानन्दमें कृष्णात्रेयके नामसे उद्धृतकियाहै। सुश्रुतीयवाजीकरणाऽधिकारमें "**वस्ताण्डसिद्धे** पयसि भावितानसकृत्तिलान्," इसश्लोककीटीकामें डल्हणने "परिभाषामाह" इसतरहलिखकर इसीश्लोकको लिखाहै और इसे क्षीरपाकविषयक परिभाषा मानीहै परन्तु सुश्रुत अथवा चरकने इसका निर्देश नहिं कियाहै, करें भी क्या? जैसे आर चीजोंके क्वाथोंका विधानहै वैसेहि क्षीरकाहै, हा केवल क्षीरमें कठिनवस्तुओंका पाककरना हो तो उसमें थोडेवहुतजलकी अपेक्षा अवश्य होतीहै क्यों कि दूध गरम होनेसे स्वयं शीघ्र गाढा होजाताहै और उसमे चिकनाई होनेके कारण क्वाथ्यद्रव्यमेंसे तदीयसारका पृथक्करण प्रायः नहिं होताहै इसलिये जैसी जहा योग्यता हो उतना जल देना आवश्यकहै। वस्ताण्डप्रभृतिके पाककेलिये दुग्धसम अथवा दुग्धद्विगुणित जल पर्याप्तहै। कदाचित् जल नदिया जाय तो भी वह सिद्ध होजायगा, इसीलिये सुश्रुतके किसीभी क्षीरपाकमें कोई नियम विशेष निर्द्धारित नहिं कियाहै। प्रत्येक वस्तुपाककेलिये नियम बाधे जाय तो संसारमें यावन्मात्रद्रव्यकेलिये तत्परिमित परिभाषायें बनानीं होंगीं। क्वाथवस्तुपाकके लिये पाकशास्त्रके नियम जाननेकी खास जुरूरतहै पर वह भी क्वाथनियमसे बहिर्भूत नहिंहै। क्वाथोंके लिये ३२ गुने तक पानीका निर्द्धारणकिया हुआहै उसीके भीतर समस्तपाकशास्त्रकाविषय समाप्त होताहै इसीलिये सुश्रुतादिक महर्षियोंने प्रत्येकपाककेलिये स्वतन्त्रनियमनहिं बांधेहैं। उपरिनिर्दिष्टश्लोक यदि यथार्थत कृष्णात्रेयरचित हो तो उसे दिग्दर्शनार्थ समझना किन्तु परिभाषात्वेन नियन्त्रण करना उचित नहिं, इसीतरह क्षीरमष्टगुणं द्रव्यात्क्षीरान्नीरं चतुर्गुणम्। क्षीरावशेष तत्पीत शूलमामोद्भवं जयेत्॥ इसशार्ङ्गधरकेवाक्यकोभी दिग्दर्शनार्थ समझना। अथ स्वरसादिनिरुक्तिः।

स्वरस=सद्य समुद्धृतात्क्षुण्णात्यत्स्ननिष्पीडितात्तु य।
द्रव्यात्रसो विनिर्याति स रस स्वरसश्च स॥

निर्यासः=वृक्षात्स्वय विनिर्याति स निर्यासो जतुश्च स.।

क्वाथः=शुष्कद्रव्यमुपादाय स्वरसानामसम्भवे।
वारिण्यष्टगुणे साध्य ग्राह्य पादाऽवशेषितम्॥ **चन्द्रनन्दनः**

शीतः=कुडव चूर्णितं द्रव्य प्रक्षिप्त द्विगुणे जले।
अहोरात्र स्थित तस्माद्भवेत्स रस उत्तम॥
स्वरसस्य गुरुत्वेन शुक्तिमात्रं प्रदापयेत्।
वह्निसिद्धं रसं चैव पलमात्र प्रदापयेत्॥**कृष्णाऽऽत्रेयः**

फाण्टः=अष्टाऽवशेषितेऽत्युष्णजले क्वाथ्यपलं क्षिपेत्।
विमृद्य पटपूतं तज्जल फाण्टमिति स्मृतम्॥

कल्कः=यः पिण्डश्चार्द्रपिष्टानां स कल्क इति कीर्तित।

चूर्णम्=अत्यन्तशुष्कं यद्द्रव्यं कुट्टितं वस्त्रगालितम्।
चूर्णं स्यात्क्षुद्रको रेणू रजो मात्राऽस्य तिन्दुकम्। **आत्रेयः**

पुटपाकः=पुटेन पच्यते यस्मात्पुटपाकस्ततो मत.।
सुपिष्ट कुडवं द्रव्यं वारिणा काञ्जिकेन वा॥
पुटकान्तर्गतं वद्ध सान्द्रपङ्केन लेपितम्।
अङ्गुष्ठमानतः पश्चाद्गोमयाग्निप्रदीपितम्॥
सिन्दूरवर्णतः प्राप्तं ग्राहयेत्तद्रसं शुभम्।

गुटिका=गुडादिवर्त्तितश्चूर्णो वर्त्ति स्याद्गुटिका गुडः।
मोदको वटक पिण्डी तन्मात्रा चूर्णवन्मता॥ **पराशरः**

रसक्रिया=क्वाथादीना पुनः पाकाद्घनभावो **रसक्रिया**।
मात्रा रसक्रियायाश्च विज्ञात्पाणितलं बुध॥ **गोपुरः**

मण्डादि=सिक्थै विरहितो मण्ड पेया सिक्थसमन्विता।
विलेपी वहुसिक्था स्याद्यवागूर्विरलद्रवा॥
अन्न पञ्चगुणे सिद्धं विलेपी वा चतुर्गुणे।
चतुर्दशगुणे **मण्डो यवागूः** षड्गुणेऽम्भसि॥ **वृ० सु०**

पानकादि=कर्षमात्र ततो द्रव्यं साधयेत्प्रास्थिकेऽम्भसि।
अर्द्धशृत प्रयोक्तव्यं पानपेयादिसंविधौ॥ **अग्निवेशः**

यूषः=भृष्टमुद्गदलानान्तु पलैकेन विपाचित.।
पूताऽपनीतविदलस्तनुर्यूषः कृताऽकृत॥ **नलः**
स्याद्धितः साधितो यूषस्त्वष्टादशगुणे जले। **वृद्धसुश्रुत**

७७ फार्मसे यहांतक "गुजराती प्रिन्टिंग प्रेस"में वै. प० हरिप्रपन्नजीने छपवाया प्रिंटर नटवरलाल इच्छाराम देसाई, कोट बंबई न १

ह्रि

सराः

१९ २० २१ २६ ३२ ३९ ४६ ४८ ४९ ५० ५४ ५५ ८६ ९१ ९२ ११६ १५१ १५३ १५५ १५६ १६८ १७२ १७३ १८२ १८३ १८५ १८७ २०४ २०८ २३० २३१ २३२ २३३ २३४ २३५ २३६ २३७ २३८ २३९ २४० २४१ २४२ २४३ २४५ २४६ २६६ २७३

२७४ २७५ २७६ २७९ २८५ २८६ २८७ २८९ २९२ २९३ २९६ २९७ २९८ २९९ ३०० ३०३ ३१० ३२४ ३२६ ३४६ ३४९ ३५६ ३५८ ३६५ ३७० ३७५ ३७८ ३९५ ४०१ ४०४ ४३५ ४३६

कु.

११ १४ १५ १७ १९ २१ २३ ४१ ५१ ५३ ५५ ६० ९० १०१ १०३ १०५ १०७

१०८ १०९ ११६ ११७ १२० १२२ १३५ १४० १४४ १४५ १८३ २११ २१३ २१५ २२४ २२५ २२८ २३१ २३७ २३८ २४२ २५३ २७९ २८२ २९७ ३६५ ३६९ ३७० ३७३ ३८६ ३९१ ३९२ ३९६ ४५७ ४५९ ४६१ ४७० ४८८ ५१४ ५१६ ५२१ ५२६ ५३५ ५४३ ५४६ ५५४ ५५८ ५५९

क्षुद्र

१ ४ ६ १५ २० २६ ३१ ३६ ४२ ४७ ५८ ६० ६४ ६९ ७२ ९६ ९७ ९८ १०३ १०७ १०८ १११ ११२ ११३ ११४ ११५ ११६ ११७ १२१ १२३ १२४ १२५ १३१ १३३ १३५ १३७ १३८ १४० १४५ १४९ १५० १५१ १५३ १५४ १५७ १५८ १६१ १६५ १८७ १९३

१९६ १९७ १९८ १९९ २०० २०१ २०२ २०३ २०४ २०५ २०६ २०७ २०८ २०९ २१० २११ २१२ २१३ २१४ २१५ २१६ २१७ २२० २२१ २२२ २२३ २२४ २२५ २२६ २२७ २२८ २२९ २३० २३१ २३२ २३३ २३४ २३५ २३६ २३७ २३८ २३९ २४० २४१ २४२ २४३ २४४ २४५ २४६ २४९

२५१ २५२ २५४ २५५ २५६ २५७ २५८ २५९ २६० २६१ २६२ २६३ २६६ २६७ २७० २७१ २७२ २७३ २७४ २७६ २७७ २७८ २७९ २८२ २८४ २८५ २८६ २८७ २८८ २८९ २९० २९१ २९२ २९३ २९४ २९५ २९६ २९७ २९८ २९९ ३०० ३०१ ३०२ ३०३ ३०४ ३०५ ३०६ ३०७ ३०८ ३०९

३१० ३११ ३१२ ३१३ ३१४ ३१५ ३१६ ३१७ ३२२

तु

४ ८ १४ २१ २२ २३ ३० ४९ ६७ ८५ ८६ १०६ १२८ १२९ १३६ १६४ १६७ १६८ १८४ १८५ १८७ १९१ १९५ १९७ २०१ २०२ २०४ २१० २१२ २२७ २३० २३७ २५४ २६० २६१ २६५ २७७ २८५ २८७ २९३

२९९ ३१० ३११ ३१२ ३१३ ३१७ ३१८ ३२२ ३२४ ३२९ ३४३ ३६० ३६१ ३६२ ३६३ ३६४ ३६५ ३६६ ३६७ ३६८ ३६९ ३७१ ३७९ ३८२ ३८३ ३८४ ३९१ ३९४ ३९५ ३९९ ४१३ ४१४ ४१६ ४२३ ४२४ ४४१ ४४९ ४५१ ४५७ ४५८ ४५९ ४६२

पु

३ ८ २१ २२ २८ ३२

३४ ४३ ४५ ८६ ४९ ५८ ६२ ६६ ६८ ११५ ११८ ११९ १४४ १६३ १६९ १८४ १८५ १८८ १९० १९६ १९८ २११ २१९ २२१ २२७ २२९ २३० २३१ २३२ २३३ २३४ २४३ २४५ २६१ २८० ३०९ ३१५ ३१७ ३१८ ३१९ ३२३ ३२५ ३३० ३३२ ३३३ ३३४ ३३८ ३६० ३७१ ३७५

३७६ ३९३ ३९५ ४२१ ८२२ ४३६ ४३९ ४४१ ४४८ ४५० ४५७ ४६३ ४६५ ४७४ ५१५ ५३० ५४७ ५४८ ५५१ ५५८ ५६२ ५६३ ५६४ ५७३ ५७५ ५९३ ६१८ ६२० ६२२ ६२६ ६३९ ६४२ ६४३ ६५१ ६५७ ६६९ ६७० ६७४ ६७५ ६७६ ६७७ ६७८ ६७९ ६८० ६८१ ६८२ ६८३ ६८६ ६८७ ६८८

६८९ ६९१ ६९५ ६९९ ७०० ७०६ ७०७ ७०८ ७०९

अन्न.ग्र्या.

१ ३ २२ ४३ ४५ ५७ ५८ ५९ ६८ ७१ ७२ ७३ ७७ ९२ ९६ ९८ ९९ १०७ १०८ १२९ १३३ १३६ १३८ १४४ १४५ १४७ १५६ १५८ १६४ १६८ १७० १७२ १७६ १८३ १८५ २०६ २१७

२१८ २१९ २२८ २२९ २३१ २३४ २३६ २४१ २४७ २५५ २७२ २९२ २९३ २९४ ३०२ ३१२ ३१३ ३१८ ३३६ ३४१ ३४८ ३८९ ४०४ ४०६ ४२२ ४२७ ४३० ४३३ ४३५ ४४१ ४६२ ४६३ ४७१ ४७७ ४७९ ४८८ ४८९ ४९४ ४९६ ४९७ ४९८ ४९९ ५०० ५०६ ५१५ ५२७ ५२८ ५३७ ५४२ ५४३

५४६ ५४८ ५५१ ५५७ ५५८ ५६७ ५७१ ५७४ ५७५ ५७७ ५७९ ५८१ ५९१ ६०५ ६१४ ६१८ ६२७ ६२९ ६३० ६३१ ६३२ ६३३

कष्म

२ ७ ८ ११ २६ ४३ ५३ ५५ ६५ ७५ ७६ ८१ ९२ १०५ १०६ १०७ १२९ १३४ १४० १४५ १४६ १५५ १६४ १६५ १६७ १९०

१९४ २०५ २०७ २१६ २२२ २२७ २४९ २५१ २५३ २५४ २६३ २६५ २८२ २८६ ३०६ ३०७ ३०८ ३०९ ३१० ३११ ३१२ ३१३ ३१४ ३२१ ३२५ ३२८ ३२९ ३३१ ३३४ ३३५ ३३७ ३३८ ३३९ ३४० ३४१ ३५२ ३५३ ३५४ ३५९ ३६१ ३६५ ३७१ ३७८ ३९४ ४०१ ४०५ ४०८ ४०९ ४१२ ४१६

४२५ ४३५ ४४२ ४४९ ४८९ ४९९ ५१३ ५१५ ५१७ ५२२ ५२६ ५२९ ५३५ ५३८ ५४७ ५४९ ५५६ ५६२ ५६३ ५८० ५८४ ५८९ ५९३ ६१० ६१९ ६२५ ६२९ ६३१ ६३४ ६३९ ६७२ ६९२ ६९८

क्ष. ह्या.

१ ३ ४ ११ १२ १४ १७ २२ २४ २५ ३१ ३५ ३६ ३७

३८ ३९ ४० ४२ ४३ ५१ ५५ ५९ ६३ ६५ ६६ ६७ ६८ ७८ ८२ ८८ ९४ ९६ ९७ ११० १११ ११२ ११३ ११५

परि०

५ ६ ४० ४२ ५२ ६० ६५ ६६ ७० ७७ ७९ ८४ ८६ ९४

विषमज्वरे

स्वराः

२ ४ ६ ७

१५ १७ ४३ ५७ ६० ८७ १५१ १५५ १५६ १८६ २०२ २०४ २०९ २१० २६४ २६५ २६६ २७४ २७५ ३०५ ४१० ४३५ ४४० ४४१ ४४७

कु

५५ ६२ १०४ १०५ ११० ११९ १२१ १२२ १४९ १७२ ३६४ ३९१ ४७० ४८१

क्षुद्र

१३ २१ ३५ ४१ ६१ ६३ ८९ ९०

९१ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ११० १११ ११६ १२५ १२६ १३१ १३३ १३५ १३७ १३८ १४० १५४ १५७ १६० १६५ १८७ १९३ १९७ १९९ २०४ २०५ २०६ २१० २१६ २१७ २२० २२२ २२७ २२९ २३० २३१ २३२ २३३ २३४ २३५ २३७ २४४ २४५ २४६ २४७ २४८ २४९ २५० २५१

२५३ २५४ २५५ २५७ २५८ २६१ २६४ २६५ २६८ २६९ २७० २७१ २७३ २७५ २७७ २७९ २८० २८१ २८२ २८६ २८८ २८९ २९० २९१ २९४ ३०५ ३१३ ३१४ ३१५ ३२३

तु

१२ ३२ ५४ ६७ ६८ ७० ७८ ८८ ९६ १०० १०१ ११९ १२९ १३८ १५७ २१० २३५ २४४

२७६ २७७ ३२१ ३२२ ३४२ ३५७ ३७० ४०५ ४०८ ४०९ ४२५ ४४० ४४७ ४५४

पु

१५ १६ २१ ३६ ५४ ५८ १४५ १४७ १६१ १७२ १८५ १९७ २२१ २४३ २४५ ३०९ ३२८ ३३५ ४३५ ४३९ ४४१ ४५० ४५९ ४६३ ४६९ ४७० ४७१ ५३० ५३७ ५४० ५४१ ५४३ ५४४ ५४९

५५१ ५५३ ५६३ ५६४ ६३१ ६३९ ६५४ ६५८ ६७५ ६८६ ६९५ ७०१ ७०९ ७१० ७११

अन्त.क्षा

११ ६८ ८९ १२१ १५८ १६८ १७१ १७२ १७३ १७५ १७७ १७८ १७९ १८० १८१ १८२ १८३ १८४ २०४ २१२ २२८ २३४ २६९ २७५ २९४ ३०२ ३१८ ३२७ ३५६ ३७५ ३८७

३९१ ४०६ ४०७ ४२० ४२१ ४२२ ४२८ ४२९ ४३० ४८९ ४९६ ४९८ ५०० ५०१ ५०२ ५०४ ५११ ५२१ ५२८ ५२९ ५३१ ५४१ ५५१ ५५५ ५५६ ५५७ ५५८ ५५९ ५६० ५६१ ५६२ ५६७ ५८१ ५९१ ५९४ ६१६ ६२७ ६३४ ६४२ ६४३

ऊष्म

५ १९ ३३ ५० ७६ १०३ १०४ १०५

१११ ११२ ११३ ११४ ११५ ११६ ११७ ११९ १२१ १२२ १२३ १२४ १२५ १२६ १२७ १२८ १२९ १३० १३३ १३४ १३५ १३६ १३७ १३८ १३९ १४० १४१ १४३ १४४ २३२ २४९ २५३ २६५ २७० २७४ २८५ ३०६ ३०७ ३०८ ३०९ ३१० ३११ ३१२ ३१७ ३५९ ४०४ ४०५ ४०६ ४०९ ४९९

५०१ ५१७ ५२६ ५२९ ५३० ५३१ ५३३ ५५६ ५९७ ६४२ ६४३ ६८५ ६५१ ६५५ ६८७ ७१० ७१२

कं. क्लां.

७ ४१ ८५ ८७ १०८

परि०

८ १० ४० ६२ ७० ७७ ८३ ८८

जीर्णज्वरे

स्वरा.

१ २ ६ ७ १९ ४१ ७६ १२० १२८

१५७ १५८ १५९ १६४ १६७ १७४ १७५ १७७ १८१ १८६ १९४ १९६ २०४ २०७ २२४ २६७ २७४ २७५ २८५ २९२ ३०६ ३२५ ३४९ ४४७

कु

९ ८९ १०४ ११२ ११३ १२२ १५१ १५५ १५७ १७२ १७३ १९० २७६ २८२ ३१३ ३१४ ३९१ ४७० ४७७ ४८१ ५०३ ५०५ ५४६ ५४८

क्षुद्र

१५ २२ २३ २६ २७ ६३ ६९ ७० ७४ ७५ ७६ ७७ ७९ ९६ १०९ ११४ ११६ ११८ १२० १२२ १२९ १३० १३१ १३६ १३७ १४० १४१ १५१ १५४ १५८ १६५ १६६ १७९ १८७ १८८ १८९ १९० १९१ २१० २१९ २२० २२१ २२२ २३७ २४५ २५८ २७४ २७७

२८६ २९१ २९२ २९५ ३१३ ३१४ ३१८

तु

४ ५ १२ ६२ ६७ ९१ १६६ १८७ १९० २०९ २३६ २५७ २५८ २८५ २८८ ३११ ३१७ ३२० ३२२ ३२६ ३४१ ३४२ ३४८ ४३८ ४४७ ४५८ ४६२

पु

२ ४९ ५३ ५६ ५९ ६१ ६२ ६४ ७२ ७९ १६१ १७६

१८१ १८५ १९६ २०१ २०२ २०३ २०४ २२१ २६६ २६७ २६९ २९४ २९५ ३०९ ३३० ३७४ ३९४ ४१२ ४१७ ४४४ ४५१ ४६९ ४७० ४७१ ४८३ ५१२ ५१९ ५३३ ५४० ५५४ ५५६ ५५७ ५६० ५८३ ५८५ ५८६ ५८७ ५८८ ५८९ ५९९ ६०२ ६१९ ६२० ६२१ ६२३ ६२४ ६२५ ६२८ ६३३ ६३५

६४० ६४१ ६४६ ६४७ ६४८ ६४९ ६८५ ६८६ ६९० ७०९ ७१९

अन्त.क्षा.

४७ ४८ ४९ ५० ५२ ५९ ७० ८३ ८८ १०६ ११० १११ ११२ ११३ ११४ ११५ ११६ ११७ ११८ ११९ १३४ १६८ १७० २०१ २२७ २२९ २३४ २४५ २५७ २५८ २६८ २६९ २७० ३०७ ३१२

३१८ ३३० ३५३ ३५५ ३६४ ३६५ ३६८ ३६९ ३७० ३७१ ३७५ ३७७ ३८२ ३८३ ४२१ ४२४ ४२८ ४३० ४३१ ४३२ ४३४ ४३६ ४९६ ४९८ ४९९ ५१४ ५२५ ५५७ ५८१ ६०४ ६०५ ६०८ ६११ ६१६ ६२७

ऊष्म

९ ११ १२ २६ ३१ ४३ ५१ १०३ १०४ १०५ १०६ १०७ १९७

१९८ २२९ २३० २३२ २३५ २३६ २५७ २७४ २८५ २९० ३०६ ३०७ ३०८ ३०९ ३१० ३११ ३१२ ३१६ ३१७ ३२० ३२५ ३३५ ३४६ ३५९ ३६८ ३७३ ३७४ ३८४ ३८५ ३८८ ३९४ ४१३ ४१९ ४२२ ४३० ४३१ ४३२ ४३३ ४४९ ४५३ ४५४ ४५५ ४९९ ५०१ ५०८ ५१३ ५१८ ५२३ ५२५ ५२६

५४७ ५६९ ५७० ६०३ ६०६ ६०९ ६११ ६१७ ६३३ ६३६ ६३७ ६४१ ६५० ६५१ ६५२ ६५४ ६५५ ६६२ ६६७ ६६८ ६७२ ६७४ ६७५ ६७६ ६७८ ६८४ ६९० ६९१ ६९६ ६९९ ७०४ ७१० ७१२

परि०

३४ ५३ ७२ ७४ ७७

अस्थिगतज्वरे

तु

३७२

पु

१५

२१७	४१६	९	३१७	५२६	७१०	२४७	२५४	४५१	३	३५	४९०	२६४	५५	४०	३२
२२८	४२२	१०	३१९	५३१	७११	२५१	२५५	४७७	४५	४३	५०५	२७३	६	९२	३३
२३०	४२४	११	३२५	५३३	७१३	ऊष्म	२५६	४७९	४७	४६	५०६	२८०	७७	९३	४९
२३९	४२५	१२	३२६	५४३	अ.व्या.		२५७	४८५	४९	४८	५३५	२८२	८१	परि०	५१
२४०	४२६	१३	३३४	५५८		२९	२५८	४८६	५६	५०	५४७	३०६	८२		५३
२४५	४२७	२२	३३५	५६४	१	१८७	२५९	५०६	६०	६७	५५८	३१०	१६५	२७	५४
२४६	४२८	२३	३३७	५६९	८	५८५	२६६	५१६	८१	६९	५६९	३१७	१९४	६५	५५
२४८	४२९	२५	३४०	५७०	१३	६२६	२६८	५२३	९४	७५	५७३	३२७	१९७	७४	५८
२४९	४३५	३१	३४६	५८५	१९	अर्शोधिकारे	२७२	५२९	९७	८८	५९४	३४६	२०९	गुदभ्रंशे	५९
२५०	४३६	३४	३५०	५८६	२१		२७७	५३३	११८	९९	६१८	३५८	२३३		६२
२५७	४३९	३८	३५४	५९५	२२		२९९	५४७	१२४	११०	६२६	३८६	२३८	कु	६३
२५८	४४१	४२	३५५	५९६	३५		३२३	५५१	१६६	१११	६३८	३९०	२४९	५४०	६४
२५९	४४५	४३	३६१	६०३	३९		३२६	५५६	१८२	११७	६३९	४०७	२५७		६५
२६०	४४८	४४	३६४	६०६	४०	खराः	३७६	क्षुद्र	१९५	१४८	६४२	४१६	२८२	क्षुद्र	६६
२६६	४६२	४५	३६५	६१०	४१		३९७		१९७	१६८	६४४	४२९	३०८	१०३	६७
२७०	४६६	४६	३६७	६११	८८	४	४२२	३	१९९	१८८	६५१	४३०	३२६		७०
२७१	४७१	४७	३६८	६१७	९८	७	४४६	४	२०१	१८९	६८७	४३५	३२८	पु	७४
२७२	४८०	४९	३७०	६२२	परि०	८	कु	५	२२८	१९७	७१६	४४१	३३१	३९८	८०
२७३	४८७	५०	३७४	६२३		९		७	२३०	१९८		४६६	३३७		८२
२७४	४८८	५१	३८४	६२६	१३	१०	८	९	२४५	२०७	कान.श्वे.	५००	३४०	कान.श्वे.	८३
२८०	४९९	५५	३८५	६३२	४४	१६	१४	१०	२५२	२१७		५०१	३४१		८४
२८१	५००	६०	३८८	६३३	५५	२२	१७	१२	२५६	२२७		५०६	३५०		८५
२९६	५०१	६१	३८९	६३४	६५	३६	१८	१४	२६०	२३८	९	५११	३५२		९४
२९७	५०२	११०	३९५	६३५	८९	५५	२५	१५	२७०	२७०	११	५१४	३५४	१२७	९६
२९८	५०४	१५४	४०२	६३६	संग्रहग्रहणी	५९	३१	२४	२७५	२७६	२३	५१५	३६१	४०७	९७
२९९	५०६	१६०	४०३	६३७		६३	९६	२५	२८०	२७८	२४	५२४	३६५	६३४	९८
३००	५०७	१६४	४०९	६४१		६७	१०७	२८	२८४	२८४	२५	५३०	३७३	अग्निमान्द्ये	९९
३०१	५०९	१६५	४१०	६४५		७५	१०९	३७	२८५	२९७	३८	५५०	३७६		१०८
३०३	५११	१७४	४१६	६४६		९६	१३५	४९	३५८	२९८	३९	५५३	३८७		१२०
३०६	५१२	१८३	४२०	६४७	खराः	१२०	१४५	५१	३७६	३१५	४४	६०७	४२७		१३३
३०७	५१४	१८५	४२१	६५०		१३७	१५१	५२	३७७	३१८	६२	६३२	४५१		१३८
३१२	५२३	१८७	४२२	६५३	२८	१४६	१७२	६५	३८०	३१९	६६	६३४	४५९	खराः	१४८
३१३	५२४	१८८	४३०	६५४	कु	१५०	१८३	७२	३९७	३३३	६७	६३६	५००		१५०
३३०	५२५	१९२	४३१	६५६		१६१	१९०	८८	३९९	३३७	७५	ऊष्म	५११	३	१५५
३४८	५२७	१९७	४३२	६५७	१५१	१६९	१९१	१०८	४१९	३६७	८७		५२९	७	१६०
३५३	५३८	२२९	४३३	६५९	३७४	१७५	१९२	१२०	४४५	३७४	८९	५	५३३	८	१७१
३५५	५४३	२३३	४३५	६६०	क्षुद्र	१७६	१९३	१२२	४४६	३७५	९३	७	५४७	१०	१७२
३६३	५४५	२३५	४५३	६६१		१८२	२१२	१२३	४४९	३८३	१२७	१३	५४८	१२	१७५
३६५	५५८	२३६	४५४	६७०	१८७	१८३	२१६	१३८	४५४	३८४	१४५	२१	६१०	१३	१७९
३६८	५६०	२३७	४५५	६७४	पु	१९३	२६९	१५१	४५८	३८७	१५६	२२	६११	१४	१८१
३६९	५८४	२३८	४६६	६७५		१९९	२९०	१५४	४५९	३८८	१५७	२३	६३९	१५	१८२
३७०	५९६	२४९	५०१	६७६	११९	२००	३१९	१६२	४६१	३९४	१५९	२४	६४५	१६	१८४
३७१	६०४	२५७	५०६	६७८	३२०	२०३	३२४	१६५	पु	४०३	१६१	२५	६७७	१७	१९९
३७७	६०९	२८२	५१०	६८३	४३२	२२२	३४३	१८२		४१४	२०४	२६	६८१	१८	२०२
३८३	६११	२८५	५११	६८४	४८०	२२९	३६१	१८४	३	४१५	२१७	३३	६८३	१९	२११
३९५	६१३	२८६	५१३	६८५	५७१	२४८	३७३	१८८	१४	४२४	२२९	३७	६९८	२०	२१४
३९६	६१६	२९०	५१४	६८६	कान.श्वे.	२४९	३७८	१९३	१६	४४७	२३०	३८	७०१	२१	२२२
४०३	६२१	२९४	५१८	६९५		२५०	३८२	२१९	१७	४७६	२३३	४२	७०४	२२	२८८
४०७	६२२	२९६	५१९	६९८		२५१	४२४	३२२	२८	४८१	२३४	४३	७०७	२४	२९०
४०८		३०८	५२३	६९९		२५२	४२७	पु	२९	४८६	२३६	४८	अ.व्या.	२६	२९१
४१५	ऊष्म	३१६	५२५	७०१	२१७	२५३	४३०		३४	४८७	२४७	४९		२९	२९२

२९३ २९४ २९६ २९७ २९८ २९९ ३०२ ३०६ ३१० ३१२ ३१३ ३१४ ३२६ ३२७ ३४९ ३६४ ३७० ३७५ ३७६ ३८७ ३८९ ३९५

कु

८ ११ १४ १७ १८ १९ २१ २३ ५३ ५६ ७३ ७४ ९३ १०३ १०६ १०७ १०९ ११० ११९ १३४ १३५ १४५ १५१ १५२ १८३ १९१ १९२

१९३ १९६ २१४ २१६ २२४ २३२ २७३ २७४ ३१३ ३१४ ३१७ ३१९ ३२५ ३२९ ३४५ ३५३ ३५५ ३६३ ३६४ ३६५ ३७२ ३७८ ३७९ ३८२ ३८४ ४१२ ४२० ४२३ ४३० ४३२ ४३५ ४३६ ४४० ४४१ ४४२ ४५१ ४६१ ४७० ४७२ ४८१ ४८६ ४८७ ४९० ५०३ ५१८ ५१९ ५२९ ५३७ ५३८ ५४० ५४३

५४६ ५४७ ५५२ ५५४ ५५८

चुद्र

२ ४ ९ २४ २५ २६ २७ २८ ३२ ३६ ३७ ५० ५२ ६३ ६९ ७० ७२ ७४ ७७ ८८ १०३ १०९ ११० १११ १२२ १२९ १३८ १४१ १५३ १५५ १६२ १७० १७२ १७९ १८४ १८५ १८७ १९० १९१ १९२ १९९ २१६ २१९ २२०

२२३ २२७ २५७ २६१ २७२ २९५ ३१३ ३१५ ३१८ ३२२

तु

२ १० २४ ४४ ४५ ४६ ४९ ५१ ५३ ६० ६१ ६२ ६५ ६८ ७० १२४ १३९ १४२ १५० १६४ १७० १७३ १७४ १८४ १९३ १९५ १९७ १९९ २०१ २०९ २२८ २३० २३१ २४० २५१ २५२ २५३ २५४ २६०

२६९ २७५ २८१ २८२ २८७ २८८ २९९ ३१० ३२१ ३२५ ३२८ ३२९ ३४१ ३४५ ३५९ ३६० ३७५ ३७७ ३७९ ३९५ ४०९ ४११ ४१८ ४१९ ४२० ४८० ४४५ ४४७ ४५३ ४५८ ४५९ ४६० ४६१ ४६२

पु

३ ४ ८ १२ १८ २९ ३४ ३५ ४१ ४२ ४३ ४६ ४८ ५२ ५३

५८ ६७ ७० ७२ ७४ ७५ ७९ ८८ ९३ ९९ १०३ १०५ १०८ ११० १११ ११२ ११३ ११५ ११६ ११७ ११९ १२७ १४१ १४८ १७२ १७४ १७६ १७७ १८६ १८८ २०० २०७ २०९ २१० २११ २१४ २१५ २४८ २६० ३११ ३१५ ३१७ ३२४ ३३० ३३३ ३३४ ३३८ ३६० ३७८ ४०३ ४०४

४०५ ४२३ ४२५ ४२८ ४३२ ४३३ ४३४ ४३५ ४३९ ४४४ ४४७ ४४९ ४५७ ४६५ ४६६ ४६९ ४७६ ४८० ४८४ ४९१ ४९८ ५०० ५१३ ५१५ ५१६ ५१७ ५३२ ५४० ५४१ ५४४ ५४९ ५५५ ५५६ ५५८ ५६० ५७१ ५७३ ५७५ ५८१ ५८४ ५९४ ६०१ ६०६ ६१२ ६१३ ६१४ ६२० ६२२ ६२६ ६२८ ६३१

६३७ ६३८ ६४२ ६४३ ६४५ ६४६ ६५४ ६७२ ६७९ ६८२ ६८५ ६८६ ६८७ ७१४ ७१६

क्षत.क्षी.

१ ३ ६ ९ १६ १७ ४३ ४८ ४९ ५७ ५८ ६२ ६९ ७० ७५ ७६ ७८ ८० ८३ ८९ ९८ ९९ १०० १०१ १०२ १०३ १०६ १०८ ११० १११ ११२ ११३ ११४

११५ ११६ ११७ ११८ ११९ १२३ १२६ १२८ १३१ १३५ १३६ १३८ १५९ १६१ १८६ १८७ २०२ २१७ २१९ २२० २२७ २४० २४१ २४५ २४६ २४७ २८९ २५० २५८ २५९ २६० २६४ २६५ २७० २७३ २७४ २८१ २९३ २९४ ३०२ ३०३ ३०५ ३०६ ३०७ ३०९ ३१२ ३१३ ३१७ ३१८ ३२० ३२१

३३६ ३४१ ३५५ ३५६ ३६२ ३६४ ३६५ ३६८ ३७० ३७१ ३७३ ३७५ ३७७ ३७८ ३७९ ३८२ ३८३ ३८६ ३८८ ३९० ३९१ ३९२ ३९६ ३९७ ४०२ ४०५ ४०८ ४१२ ४१३ ४१५ ४१६ ४२१ ४२५ ४२९ ४३८ ४३९ ४४० ४४१ ४४३ ४४८ ४५३ ४५४ ४६४ ४६६ ४६९ ४७१ ४७२ ४७८ ४७९ ४८० ४८१

४८७ ४८८ ४९३ ५०१ ५०४ ५०६ ५०७ ५०८ ५०९ ५१८ ५१५ ५१९ ५२५ ५२८ ५४५ ५४६ ५४७ ५५० ५५३ ५५६ ५५७ ५७९ ५८० ५८८ ५८५ ५९१ ६०९ ६१३ ६१६ ६१८ ६२० ६२१ ६२४ ६३२ ६३५

कप्म

५ ८ १० ११ १४ १८ २६ ३२ ३४ ३५ ३७ ३८ ३९ ४०

४२ ४६ ४७ ५० ५१ ५५ ६० ६२ ६४ ८२ १०३ १०४ १०५ १०६ ११० १५४ १५५ १६६ १७१ १७८ १७९ १८३ १८४ १८५ १८७ १९७ २०६ २०७ २०८ २१६ २३० २३१ २३२ २३३ २३५ २३६ २४७ २४८ २५० २५७ २८२ २९० २९९ ३०४ ३०५ ३०८ ३०९ ३१४ ३१६ ३१७ ३१८

३२१ ३२८ ३३४ ३३५ ३४१ ३४७ ३५० ३५१ ३५२ ३५४ ३६८ ३७६ ३९५ ४०२ ४०३ ४०९ ४१४ ४१६ ४१८ ४२० ४२५ ४२६ ४२७ ४३० ४३१ ४३२ ४३३ ४३५ ४५९ ४७७ ४९५ ५०१ ५०६ ५०८ ५१४ ५१५ ५१७ ५१९ ५२३ ५२५ ५३१ ५३२ ५४२ ५४७ ५४८ ५४९ ५६४ ५६५ ५८९ ५९३ ६०३

६०८ ६१० ६२६ ६३८ ६४५ ६४६ ६५५ ६५६ ६५८ ६५० ६६० ६७० ६७२ ६७४ ६७७ ६७८ ६८३ ६८७ ६९६ ६९९ ७०१ ७०६ ७०७ ७०९ ७१० ७११ ७१२ ७१३

क्षिप्तो

कप्म

४२६

अ व्या

३ २१ ३० ३७ ५९ ६७

परि०

५२ ५४ ७२ ७४ ८० ८७

८८ ८९

कुष्ठ

स्नग:

१ ८ ५ ८ ११ १२ २७ २८ २९ ३० ४२ ४३ ४५ ५४ ६७ ७० ८१ ८२ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १०० १०१ १३३ १४५ १५७ १५९ १७१ १७२ १७५ १८४ १८५ १९३ १९४ २०२ २०४ २०६ २०८

२६६ २७२ २९० २९६ ३२७

कु

११ १५ २७६ ३५३ ३५८ ३७८ ४२३ ४३६ ४३७ ४३८ ४४० ४८१ ४८४ ५३७

चुद्र

२५ ३६ ६५ ११० ११५ १३८ १९९ २२५

तु

१४ ४२ ५३ ८५ ९६ १२८ १७४ २०९ २६० २८७ ३४१ ३८१ ३९९ ४०५ ४५८ ४५९ ४६०

२६ ५५ ६६ १९४ २५१ ३०८ ३१८ ३५४ ४५२ ५२९ ५३१ ५५९ ६१४ ६३१ ६९२ ७०४ ७११

परि०

१३ ७७

रक्तपित्तरोगे

स्वराः

१३५ १५० १८३ १८७ १९० १९४ २२२ २२३ २२५ ३१२ ३१५ ३६४ ४०९ ४२९

कु.

१४ २३ २४ २९ ३६

१०० १७२ १९० २६९ ३१३ ३५८ ३५९ ३६३ ४२३ ४२६ ४७७ ४८१

क्षुद्र

२४ ४२ ६३ ७३ १४१ १४८ १५७ १९३ २१६ २८७

तु

४२ १२८ १३९ १५७ १६९ २६० ३११ ३२६ ३९५ ४०९ ४५६ ४५८

पु

१४ २० ४३ १६३ १७३ १८८ १९६ २१० ३२९ ३७० ३७५

३७८ ३८३ ३९२ ४११ ४२३ ५०६ ५१५ ५४९ ६०३ ६२७ ६४२

अन्तःस्थाः

८ २९ ३० ३१ ३२ ३३ ३४ ३५ ३६ ३८ ९५ ९८ १२२ १३० १३६ १३७ १४३ १५८ २५८ २८२ २९५ ३०३ ३३० ४०४ ४२३ ४२६ ४२९ ४६२ ४६३ ४९३ ५२५ ५७९ ६१२

ऊष्म

५३

५५ ८१ १४० १८४ २२० २३३ २३७ २४९ २९१ २९८ २९९ ३०० ३०८ ३१७ ३१८ ३१९ ३६७ ३७३ ४१५ ४२७ ४९२ ५०४ ५२९ ५३१ ५३३ ५६४ ६५७ ६८१ ६९० ७०४

ळं

क्षं

६९ ८२

परि०

१३ ४७ ५४ ६६ ८७

राजयक्ष्मणि

स्वराः

१

२१ २५ २९ ३० ३२ ३३ ४१ ४९ ५० ५१ ५५ ५७ ६५ ६८ ७६ ९२ ९६ ९७ १२० १२४ १२८ १३३ १३७ १३८ १४१ १५० १५१ १५५ १५६ १५७ १५८ १५९ १६३ १६४ १६५ १६७ १७० १७४ १७५ १७७ १८० १८२ १८३ १८७ १८९ १९० १९१ १९३ १९४ १९६ १९७

१९८ १९९ २०४ २०५ २०७ २१२ २१४ २२२ २२४ २६७ २६९ २७० २७१ २७२ २७४ २७५ २७८ २८० २८१ २८२ २८५ २८८ २९१ २९५ ३०६ ३२७ ३४८ ३६१ ३७५ ३७६ ४०० ४१५ ४३४ ४४५ ४४७

कु.

७ ८ ९ १० १२ १४ १६ १७ १८ २० २१ २२ २३ २४

२९ ३० ३९ ५३ ५७ ६२ ८९ १०६ १०७ १०९ ११० १११ ११७ ११९ १२१ १३० १३१ १३३ १३४ १३५ १४२ १४५ १४९ १७३ १७४ १९० १९१ १९३ १९६ २२२ २२४ २३८ २४३ २४७ २५३ २५४ २७६ २७९ २८० ३१२ ३१३ ३१४ ३५८ ३७३ ३८४ ४२० ४२२ ४२३ ४३१ ४४९ ४७७

४८७ ५०३ ५०५ ५१६ ५२० ५२८ ५२९ ५५२ ५५४

क्षुद्र

४ १४ २२ २३ २४ २६ २७ २८ ३३ ३४ ३५ ४० ४९ ५१ ६५ ६६ ६७ ७० ७२ ७४ ७५ ७७ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ९९ १०० ११६ ११७ १२० १२२ १३१ १३९ १४६ १५४ १६६ १७९

१९० १९१ १९२ २१० २२५ ३२२ ३२३

तु

५ ११ १५ ३० ३४ ४२ ४४ ४५ ४७ ४८ ५६ ६२ ७२ ७३ ८५ ८७ १२० १२१ १२४ १२५ १५८ १६५ १६७ १९२ १९५ २०९ २३० २३३ २३९ २५१ २५२ २५३ २५७ २५८ २६० २६२ २६७ २६९ २७० २७२ २७४ २७५

२८७ २८८ ३०० ३०८ ३११ ३१७ ३२४ ३२८ ३४० ३४३ ३४४ ३४६ ३६० ३७५ ३७६ ३७९ ३८१ ३८६ ३८९ ३९१ ३९३ ३९४ ३९६ ३९७ ३९९ ४०९ ४११ ४१२ ४२५ ४४० ४४४ ४४७ ४४९ ४५३ ४५४ ४५५ ४५६ ४५७ ४५८ ४५९ ४६०

पु

२ ७ १६ १७ २८ २९ ३३ ३४ ४३

४६ ४७ ५० ५४ ५६ ५७ ६१ ६४ ६५ ६६ ६७ ६९ ७६ ७८ १०५ १४२ १४८ १६९ १७२ १७४ १७५ १७७ १८८ १८९ १९६ १९८ २०६ २०७ २१० २१३ २१८ २२५ २२७ २३५ २४० २४४ २६७ २६९ २८० २९३ २९४ २९५ ३०५ ३१५ ३१७ ३१८ ३१९ ३२२ ३२९ ३३० ३३२

३३३ ३६७ ३७० ३७४ ३७५ ३८६ ३९४ ४०१ ४२३ ४२५ ४२७ ४३९ ४४४ ४५२ ४५७ ४६९ ४७१ ४७४ ४७८ ४९२ ४९३ ४९४ ५०० ५०६ ५१२ ५१३ ५१५ ५१७ ५४० ५४९ ५५७ ५५८ ५६० ५६१ ५६६ ५६७ ५६८ ५७३ ५७५ ५७६ ५७८ ५८३ ५८४ ५८५ ५८६ ५८९ ५९४ ५९९ ६०१ ६०२ ६०६

६०७ ६०८ ६०९ ६१० ६१२ ६१४ ६१५ ६१६ ६१७ ६२० ६२१ ६२२ ६२३ ६२४ ६२५ ६२६ ६२७ ६२८ ६२९ ६३० ६३१ ६३२ ६३३ ६३४ ६३५ ६३६ ६३७ ६३८ ६३९ ६४० ६४१ ६४२ ६४३ ६४४ ६४५ ६४६ ६४७ ६४८ ६४९ ६७२ ६८५ ६९० ६९२ ७१२

अन्तःस्थाः

५ ६ ७

८ ९ ११ १८ २० २३ ३९ ४१ ४४ ४६ ४७ ४९ ५० ५२ ५५ ६० ६८ ७० ७६ ८३ ८७ ८८ ८९ ९३ ९८ १०६ ११० १११ ११२ ११३ ११४ ११५ ११६ ११७ ११८ ११९ १२२ १३३ १३५ १३६ १३७ १५१ १५२ १५३ १५८ १६२ १७० १८६ १८९ १९८ २१४

२२२ २२७ २२९ २३० २३३ २३४ २३५ २३६ २३७ २३९ २४० २४२ २४३ २४४ २४५ २५७ २५८ २५९ २६३ २६४ २६८ २६९ २७० २७३ २७४ २७७ २७९ २८१ २८२ २९५ ३०२ ३०७ ३१३ ३१५ ३१८ ३३६ ३४३ ३४८ ३५३ ३५६ ३६४ ३६५ ३६८ ३६९ ३७० ३७१ ३७४ ३७५ ३८२ ३८३ ४१५

४२१ ४२२ ४२३ ४२४ ४२५ ४२६ ४२७ ४२८ ४३१ ४३२ ४३४ ४३५ ४३६ ४३९ ४५४ ४६४ ४७७ ४८० ४८८ ४९३ ४९९ ५०० ५०१ ५०४ ५०६ ५११ ५१४ ५२५ ५३८ ५४३ ५४५ ५४७ ५५३ ५५७ ५८० ५८४ ५८५ ६०४ ६०८ ६०९ ६११ ६१३ ६२४ ६३० ६३५ ६३९

ऊष्म

६ १२ २८

४११ ४१२ ४३६ ४४४ ४४९ ४५६ ४५८ ४६०

पु

१३ १६ ३४ ३७ ४२ ५२ ५८ ७० ७७ ९० ९३ १०२ १२१ १२६ १४१ १४८ १७३ १७४ १७६ १८८ १९१ १९४ २०६ २२८ २३५ २३६ २३८ २३९ २४१ २४३ २४४ २५५ २८० ३१५ ३२१ ३२२ ३२४ ३२५ ३२९ ३३३

३६७ ३७४ ३७५ ३९४ ४०० ४०१ ४०३ ४०५ ४१० ४११ ४१२ ४२७ ४२९ ४७४ ५१५ ५१९ ५२९ ५३६ ५३८ ५३९ ५४० ५४१ ५४२ ५४४ ५५३ ५५७ ५५८ ५६० ५६२ ५७३ ५७५ ५८१ ५९१ ५९४ ५९९ ६०१ ६११ ६१९ ६३५ ६३६ ६३७ ६३९ ६४० ६४४ ६४६ ६५१ ६५३ ६५४ ६५७ ६६९ ६७०

६७२ ६८२ ६८६ ६८७ ७०७ ७१३

अन्त स्थाः

९ १० १७ १८ २३ २५ ४४ ४७ ५७ ५८ ६७ ६९ ७९ ८६ ८९ ९३ ११७ १२४ १३८ १३९ १४१ १४५ १६४ १७० १७४ २०१ २०४ २०५ २१५ २१९ २२० २२१ २२८ २२९ २३० २३४ २४० २४२ २६५ २६६ २७३

२७७ २७८ २८१ २९२ ३०३ ३०५ ३१८ ३४१ ३५३ ३६६ ३७३ ३७९ ३८९ ३९० ३९२ ३९३ ३९६ ४०१ ४०२ ४०८ ४१३ ४१४ ४२७ ४३८ ४४१ ४४३ ४४४ ४४८ ४४९ ४५० ४५१ ४५२ ४५३ ४५४ ४५६ ४५९ ४६० ४६२ ४६३ ४६४ ४६५ ४६६ ४६७ ४६८ ४६९ ४७० ४७३ ४७४ ४७५ ४७६ ४७७

४७८ ४७९ ४८० ४८१ ४८२ ४८३ ४९४ ५०० ५०६ ५०९ ५१४ ५३० ५४१ ५४३ ५५२ ५६० ५६७ ५७८ ५८४ ५८५ ५९४ ६०२ ६०४ ६०५ ६०८ ६२१ ६२९ ६३० ६३२ ६३४

ऊष्म

५ ११ १३ १९ २१ २२ २४ ३३ ३५ ३७ ४० ४६ ४७ ५० ५१ ७२ १०८ ११० १४०

१४५ १४८ १४९ १५२ १५४ १६० १६७ १७१ १७८ १७९ १८४ १९७ २०६ २०७ २१८ २२९ २३० २३८ २४१ २५५ २५६ २७१ २८२ २८५ २८९ ३०१ ३०२ ३०३ ३१४ ३१५ ३१७ ३१८ ३२१ ३२६ ३२७ ३२८ ३३१ ३४० ३४१ ३४२ ३४३ ३४७ ३५० ३५२ ३५४ ३६१ ३६५ ३६८ ३७५ ३७६ ३७७

३७९ ३९३ ३९४ ४०३ ४२७ ४३० ४३५ ४५४ ४६५ ४६६ ४७७ ४७८ ४७९ ५०० ५०८ ५११ ५१७ ५२७ ५३१ ५३३ ५४० ५४९ ५५२ ५५८ ५६६ ५७८ ५८३ ५९० ५९२ ५९३ ५९४ ५९६ ६०३ ६०४ ६०७ ६१९ ६३१ ६३२ ६३६ ६३७ ६३८ ६३९ ६४० ६४६ ६४७ ६५२ ६५३ ६५४ ६५७ ६९२ ६९५

६९६ ७०४ ७०८ ७१३

अ.व्या.

६ ११ १५ १६ २० २२ ३१ ४२ ५१ ५२ ५५ ५९ ६१ ६६ ६८ ७० ७९ ८० ८३ ८४ ८८ १०३ १०९

परि०

११ २९ ३५ ३७ ५० ५५ ६२ ७१ ७२ ७५ ७६ ८७ ९१

अपतन्त्रके

स्वरा.

३६

पु

४०१ ४३२ ४७४

ऊष्म

४२१ २११ ४०९ ४६५ ४७६ ५५४

आक्षेपके

तु

२९२

क्षीणवाते

रक्तवाते

अन्त.स्थाः

३७

सुप्त(स्पर्श)वातरोगे

स्वराः

२१९ ३८२

कु

२६ ४५४ ४५५

तु

१०२ ११२ १३५

पु

२४४ ४११ ४३७

अन्त स्थाः

२११ ४०९ ४६५ ४७६ ५५४

ऊष्म

३२६ ३६२ ४२१ ५७६ ५७७ ५७८

विलोमवाते

ऊष्म

४००

मन्दवाते

कु

२०९

दुष्टिवाते

तु

२९१

स्नायुकवाते

पु

३१

स्थानवाते

अन्त स्थाः

४८२

शीतवाते

पु

१४०

अन्त.स्थाः

४५५ ४८१

मधुवाते

पु

१८०

गुल्फवाते

पु

३२१

शुक्रवाते

पु

३४०

शृङ्खलावाते

ऊष्म

१८२ ४३५

ऊरुस्तम्भे

स्वराः

४३८ ४४४

कु

२६९ २७४ ४७१

क्षुद्र

६३

तु

२६० २८० ४०२ ४५८

पु

९९ १०३ २५६ ३२० ३९४ ४८६

अन्त स्थाः

९ २२१ ४५० ४६३ ४६५

ऊष्म

९१ २३० ३५१ ३७९ ४३५ ५३१

ताण्डवरोगे

परि०

६१

अधिकस्नानजन्यपीडायाम्

पु

१९१

आमवातरोगे

स्वरा.

९० ९६ १३७ १४५ १५५ १५७ १५९ १७२ १७९ १८३ १९३ २०४ २७२ २८० २९२ ३१३ ३१४ ३१५ ३१६ ३१७ ३१८ ३१९ ३२० ३२१ ३२२ ३२३ ३६९ ३७२ ३८९ ४१५ ४४५

कु

८३ २२४ २६९ २७४ २७६ २९८ ३८४ ४०० ४२० ४२३ ४२४

क्षुद्र

२७ ३९ ६३ ७४ १२२ १३० १३८ १४६ १४८ १७० १७२ २२५ २३४ ३१५

तु

३ ५६ ७८ ८५ १९३ २३५ २४० २४५ २६० ३०३ ३२९ ३९० ४५८ ४६०

पु

१४ १६ ३७ ४८

६९ ७८ ११३ ११४ ११५ ११६ १२६ १९४ २१५ ३१५ ३३७ ४०३ ४०५ ४२६ ४३२ ४३५ ४७६ ४८० ५१७ ५५६ ६५४ ६७२

अन्त स्थाः

१० ६७ ६९ १३३ १५७ २१७ २१९ २३५ २३६ २४५ २४७ ३७३ ४०४ ४४१ ४६५ ४७९ ४९२ ५०३ ५०६ ५५३ ५७९ ५८५ ५८६

६३४

ऊष्म

९ २२ २६ ३४ १०८ १४८ १५२ १५५ १६६ १८४ २०७ २३३ २८९ ३०८ ३१८ ३१९ ३२६ ३५१ ३५४ ३७९ ४०५ ४१८ ४३५ ४५४ ४५७ ५११ ६४० ६५९ ७०६

अ.व्या.

६९

परि०

७५

वातरक्तरोगे

स्वराः

१ ५१ ६७ १६२

१९ २१६ २१७ २४६ २५१ ३५५ ४०४ ४७१ ५४३

ऊष्म

३६ ४२ १४५ १६२ १८५ १९७ २९४ ३१७ ३६० ३७७ ३८२ ४२० ४५२ ५३१ ७०६

परि०

१३ ८५

आध्मान

स्वराः

६ ३६ ५९ ८५ ३२१ ३२६ ३८६

कु

३२४

क्षुद्र

१०९ ११० १२७

११७ ११९

तु

३५९ ४०५ ४२१ ४२८ ४२९ ४४९

पु

८ १६ १३७ १४१ ३७८ ५१० ५५८ ५८१ ६१३ ७०६

अन्तःस्थाः

८७ २१६ ४२५ ४७१ ४८१ ५०६ ५४३ ६२९

ऊष्म

२१ ३५ ११० १४५ १५५ २३० २७१ ३५० ४०६ ४५९ ५३८ ५४४ ६१०

उदावर्त

स्वराः

५९ ३२६ ३९८

कु

१४ ८३ ४३६

क्षुद्र

११२

तु

२४९ २६६ २८७ ४२८ ४२९ ४३८

पु

१६ २४२ २५५ २९५ ३३७ ३७८ ७१४

अन्तःस्थाः

९ १९ १२९ २८६ ४८७

ऊष्म

४२ १६० १७८ २०७ २१८ २३८ २७० ३

४३५ ५०६ ५३८

अ.व्या.

३ १०१

परि०

८१

गुल्म

स्वराः

२३ ३२ ३३ ३६ ४० ४५ ५३ ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६१ ६६ ६७ ७० ७२ ७४ ८२ ९२ ९७ १०० १०१ १२५ १२८ १४५ १६८ १७५ १८२ १८९ २०० २६७ २६८ २७२ २९१ २९९

२०२ ३१३ ३१४ ३२१ ३२३ ३२६ ३५६ ३६९ ३७३ ३७४ ३७६ ३७८ ३८६ ३८७ ३८९ ३९५ ३९७ ४४६ ४४७

कु

१० १४ २३ २४ २५ १०९ ११० ११७ १२१ १२९ १३५ १६५ १५१ १७२ १९० २६९ २७३ २८९ २९८ ३१९ ३२४ ३२५ ३४३ ३५३ ३६९ ३७३ ४२३ ४३० ४३१ ४३२

४३६ ४७६ ४८० ४८१ ४८२ ४८३ ४८४ ४८५ ४८६ ४८७ ४८८ ४८९ ४९० ४९१ ४९२ ४९३ ४९४ ४९५ ४९७ ४९९ ५२० ५२७ ५४० ५४३ ५५२

क्षुद्र

४ ९ १५ २५ ३४ ३९ ६३ ७० ७२ १०० १०२ १०३ १२२ १२७ १३३ १३४ १३५ १४१ १४८ १५१ १५३ १५४ १५७ १७०

१७२ १९० १९९ २१९ २२५ ३१३ ३१९ ३२२

तु

५ १६ २१ २३ २७ २८ २९ ४५ ४८ ५१ ५२ ५४ ५५ ५६ ६० ६८ ७८ ८४ ८५ ११८ १४० १५५ १५८ १७४ १९२ १९५ २१९ २४५ २५२ २५६ २५७ २६२ २६४ २८५ २८७ ३२५ ३२९ ३५७ ३५८ ३७२ ३९५

३९७ ४०२ ४२१ ४२६ ४२७ ४२८ ४२९ ४३० ४३४ ४३६ ४३८ ४४० ४४९ ४५४ ४५७ ४५८ ४५९

पु

३ ४ १३ ३३ ३४ ४१ ४८ ५३ ५८ ६७ ७९ ८८ १०३ ११० ११३ ११४ १२२ १४२ १७१ १७३ १७६ १८८ २०७ २३६ २४० २४२ २४५ २८० २९४ ३११ ३१८ ३१९

३२३ ३२४ ३२९ ३३० ३३२ ३३३ ३३४ ३३६ ३३७ ३३९ ३६७ ३७५ ३७८ ४०३ ४०५ ४१२ ४१४ ४२५ ४३२ ४५७ ४६८ ५०६ ५१५ ५३० ५४९ ५७३ ५८१ ५९४ ६१८ ६२२ ६३७ ६३९ ६४२ ६५४ ६५७ ६७२ ६७९ ६८२ ६८३ ६८५ ७१४

अन्तःस्थाः

१ २ ३ ९ १९ २२ २५

६९ ८७ ९० ९९ १२९ १३४ १४५ १५७ १६० १७६ १९९ २१५ २१७ २२० २२७ २२९ २३० २४० २४९ २५० २५५ २५९ २६० २६२ २७३ २७७ २८० २८१ २८३ २९३ २९५ ३०५ ३१२ ३१७ ३१८ ३२७ ३३१ ३३३ ३४३ ३५५ ३७९ ३८२ ३८६ ३९१ ३९५ ३९६ ३९९ ४०३ ४०४ ४०८ ४१३

४१५ ४१६ ४२२ ४३२ ४४० ४६२ ४७१ ४७२ ४७९ ४८१ ४९९ ५०१ ५०४ ५०६ ५०९ ५११ ५१४ ५२४ ५२९ ५३० ५३८ ५४१ ५५३ ५५६ ५५८ ५७४ ५७९ ५८० ५८१ ५८६ ५९१ ५९६ ६१५ ६१९ ६२१ ६३०

ऊष्म

५ १० १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३

२४ २५ २६ २७ २८ ३२ ३३ ३९ ४२ ५५ ६२ १४५ १५१ १५२ १५३ १५४ १५५ १५६ १५८ १५९ १६० १६१ १६२ १६३ १६४ १६५ १६६ १६७ १६८ १६९ १७० १७१ १७२ १७३ १७४ १७५ १७६ १७७ १७८ १७९ १८० १८१ १८३ १८४ १९४ २०७ २१९ २३० २३७ २३८ २४८

२५० २८२ २८५ ३०८ ३१४ ३१८ ३२१ ३२७ ३२८ ३३१ ३३२ ३३३ ३३६ ३४० ३४४ ३५१ ३५२ ३५४ ३६० ३६४ ३६५ ३६६ ३६७ ३७० ३७६ ३८२ ४०९ ४११ ४३५ ४५२ ४५७ ४६६ ५०१ ५०६ ५१७ ५२३ ५३१ ५३८ ५४४ ५४९ ५५८ ५६५ ५७० ५७१ ५७३ ५९३ ६०१ ६१० ६१९ ६२९ ६५५

६५७ ६६२ ६६५ ६७२ ६७४ ६८६ ६८७ ६८८ ६९२ ६९५ ७०१ ७०६ ७०७

अ.व्या.

२ ३ ६ ७ १० ११ २० २१ २४ ३७ ४५ ४६ ५१ ५३ ६३ ७३ ७४ ७७ ८४ १०१ १०८ ११० ११२

परि०

१० ४३ ७१ ८० ८१ ८५

वातगुल्म

स्वरा

१२६ २६७ २७३

पित्तगुल्म

स्वरा

७ २६७ ३५५ ३९९

कु

४९३

पु

५०६

श्लेष्मगुल्म

स्वराः

१५ २४ २९ १२५ १२६

रक्तगुल्म

स्वराः

१२५ १२६ १८७

तु

२६६ ३११

पु

२०७ ३२० ४०३

ऊष्म

३५८ ५६४

परि०

२९

शूल

स्वराः

१५० २६८ ३२७

कु

८ १६ १७ ११८ २४१ २६७ ४२३ ४९९

क्षुद्र

१४ २४ ७० ७३ ७४ ९९ १०० ११९ १३४ १४८ ३१५

तु

१७१ १९१ २८८ ३४३ ३५९ ३७६ ३७७ ३८० ३८७ ३९५ ३९९ ४०९

४३८ ४४० ४५९ पु २७ ४६ ६७ ७८ १४८ २१४ २५४ ३११ ४०३ ४९३ ५७३ अन्त स्थाः ५० १२९ २२० २५६ ३७३ ३८३ ३८६ ४२७ ५४९ ५५६ ५८५ ऊष्म ९ ३८ ६२ २२९ २३० २३३ २४५ २८९ २९० २९६ ३०४ ३७३ ३७४ ३७५ ४२० ४५२ ४९५ ५००

५२९ ५३१ ५६३ ६०३ ६५५ ६६१ ६६२ ६८० ६९५ ७०७ अ.व्या. ६ १९ ५५ ८८ ९३ १०४ हृद्ग्रहे तु २३० २४९ मूत्रकृच्छ्रे स्वराः ५४ ५५ १५० १८३ १८७ २११ ३०३ ४४४ कु २६४ २७३ ३१३ ३८४ ४३० ४३१ ४७७ ४९६ ५१६ क्षुद्र

१५ ४२ ५१ ५२ ७३ १३८ १५१ १५७ १६९ २८७ ३३३ तु १९ ४१ ५७ १२४ १५७ १९४ २३० २४५ ३०८ ३११ ३२७ ३४६ ३६० ३९४ ४५८ ४५९ पु १७ ३८ ७६ ८० १७१ १८८ २०४ २०५ २०६ २४८ २६१ २६३ २७० २७८ २८० २९४ ३११ ३१२ ३६० ३६२

३७४ ३७५ ३८६ ४१२ ४४७ ४७६ ५०७ ५८९ ५९४ ५९६ ५९७ ५९८ ५९९ ६०० ६०१ ६०२ ६७२ अन्त स्थाः २४ २५ ९३ ९८ १५७ १७६ २१५ २३७ २४४ २६१ २६६ ३३० ३३५ ३३६ ३३९ ३४२ ३४३ ३४४ ४०७ ४२० ४२५ ४३१ ४३५ ४६१ ४७१ ४९९ ५८१ ५५३ ५५८ ५९९

६३४ ऊष्म १३ २१ २२ २३ २५ ४० ६२ १३१ १४६ २३० २३७ २९८ ३१७ ३३१ ३५५ ३६१ ४०९ ४३५ ४५१ ४५७ ५०७ ५२९ ५३१ ५३८ ५५१ ५५९ ५६३ ६२७ ६५९ अ.व्या. ५२ ५४ ७९ ९३ ९५ १०० १०१ परि० २९ ६९ वृक्कवस्तिरोगे ऊष्म

२२० मूत्राघाते स्वरा ४५ १५० १८७ कु ९० ९१ २६४ ४७७ क्षुद्र ५२ तु ३०८ ३११ ३२६ ३४३ ४५८ पु ३८ ११८ २६३ २६५ २७८ २९८ ३७४ ३८६ ४१२ ४४७ ५९४ ६०१ ६२९ अन्त:स्थाः ८ २३ २५ २४४ ३२२

३२७ ३५६ ४२० ४३३ ऊष्म १९ ८६ २९४ ४३५ ४५१ ४८८ ५५१ ५५९ परि० १९ अश्मर्याम् स्वरा ४५ ५५ १५० १८२ १८३ १८७ १९३ २६० २६१ २६२ ३०३ कु ९० ९१ १९३ २६४ २७३ २८४ ४७९ क्षुद्र १५ ५२ ७३ ११७ १५४

१५७ तु १८२ २४५ २४६ ३२६ ३४३ ४५८ पु १७ ३८ ७६ ११८ १४९ १५० १५१ १५२ १५३ १५४ १५५ २०५ २६१ २६३ २७० २७८ २८४ ३११ ३६० ४१४ ४४७ ४७३ ५०० ५४९ ५९४ ५९९ ६०१ ६३७ ६५७ ६७२ अन्त स्थाः ८ १५ २४ ४४ ८९ ९३

१२७ १५७ २१५ २२९ २४४ ३०२ ३३५ ३३९ ४२० ४२५ ४३१ ४३३ ४३५ ४७० ५४१ ६३० ६३४ ऊष्म २१ २२ २३ २५ २८ ६२ १४६ १६२ २३० २३१ २९८ ३५५ ४२७ ४३५ ५३१ ६१० ६९२ अ व्या. ५२ ५४ ९५ परि० २९ ६९ मेदोरोगे स्वरा

२१३ २१४ २८८ कु २५ ३९ १८८ १५१ २३२ २४९ २७४ ४१४ क्षुद्र ७२ तु ६० १२४ १४८ १७२ १७६ २४० २५१ २८१ २८२ ४१९ पु ६ ४३ १८८ २०८ ३१५ ५६९ ७१५ ७१६ अन्त स्थाः ९ ८९ २३५ २७७ २९२ ३५५ ३८७ ४०४ ४१३

४३३ ५१९ ५८० ६३० ६३४ ऊष्म ४४ १८४ २०७ ४१९ ४५९ ४९४ ५६५ ५७० ५७१ ५७२ ५७३ ५७४ ५९३ ६२७ ६७७ ६९२ परि० ६५ छर्दिरोगे स्वराः ४१ ४९ ५४ ८९ ९२ ११७ १२० १२३ १२८ १३५ १५५ १५६ १५७ १५८ १५९ १६५ १७१ १७४ १७५

१७६ १८० १८१ १८२ १८७ १८८ १९१ १९३ १९४ १९६ १९७ १९८ १९९ २०४ २१२ २२५ २६७ २६९ २७० २७१ २७२ २७४ २७५ २७८ २८० २८२ २९५ ३१२ ३२७ ३४९ ३६१ ४०९ ४१५ ४२२ ४३४ ४३७ ४४५ ४४७ कु ९ ११ १२ १७ २० ३८ ३९ ५७ ८२ ८९ ९०

९१ ९२ ९३ १०१ १०६ १०७ ११० १२३ १२८ १३० १३१ १३४ १३९ १४२ १४५ १५० १५२ १५९ १८४ १८५ १८७ १८८ १९० १९३ १९७ २०५ २३५ २४७ २४९ २६४ २७३ २८३ ३०२ ३१२ ३१३ ३१४ ३४४ ३४५ ३४८ ३५८ ३६३ ४०७ ४२२ ४२७ ४३० ४४९ ४७७ ४८१ ४८६ ४९८ ५०३

५०५ ५०७ ५१६ ५३९ ५८७ क्षुद्र २ ४ २६ २७ २८ ३३ ४० ४८ ४९ ५२ ७० ७४ ७५ ७६ ७७ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ११७ १४१ १४६ १५८ १६४ १७० १७९ १९० १९१ २८९ २९५ ३२२ ३२३ तु ५ ९ १२ ४४ ४८ ५५ ६१ ६२

६५ ६८ ७२ ८४ १२० १२५ १४२ १६७ १९२ १९५ २३१ २६० २७५ २८८ २९५ २९९ ३१७ ३२५ ३२६ ३४४ ३४६ ३५९ ३९४ ३९६ ३९७ ३९९ ४०९ ४११ ४१२ ४१३ ४१४ ४१७ ४१९ ४५६ ४५८ ४६२ पु ९ १३ ३९ ५२ ५६ ६१ ७२ ७४ ७८ १२३ १३२ १७४ १७५

१८७ १८९ १९१ २०१ २०२ २०६ २०९ २१० २१३ २१५ २१७ २१८ २२२ २२३ २२४ २२५ २५८ २६० २६६ २६७ २६९ २७२ २७६ २८० २९३ २९४ २९५ २९७ ३०४ ३३० ३९४ ४०१ ४०९ ४१२ ४१७ ४३३ ४४४ ४५५ ४६९ ४७० ४७१ ४७२ ४९१ ४९२ ४९३ ४९४ ४९५ ४९६ ४९७ ४९९ ५००

४४७
कु
२३ १०१ १०९ ११७ १२९ १३५ १४५ १५१ २८९ २९० २९८ ३१९ ३२४ ३२५ ३५३ ३५८ ३६४ ४२४ ४३० ४५१ ४७० ४७६ ४८१ ४८८ ४८९ ५०६ ५२९ ५४६
चुद्द
१५ २४ २५ ५२ ६३ ७० ७२ ८८ १०१ १०२ १०३ ११६ १२३ १५१ १९३ १९९ २१० २१६

३२५ ३१३ ३२२ ३२३
तु
५ १२ १६ २३ ४५ ४६ ४९ ५४ ५५ ५६ ६८ ११८ १४० १६४ १७४ २१२ २१९ २२० २२६ २४५ २५६ २७५ ३०५ ३११ ३२९ ३४५ ३९९ ४२१ ४२७ ४३४ ४४९ ४५८ ४६०
पु
४१ ४८ ५३ ७५ ७९ ८८ ९९ १०३ ११७ १७३

१७६ १८८ १९७ १९८ ३११ ३२४ ३३४ ३३६ ३३७ ३३८ ३३९ ३७१ ३७५ ४०३ ४२३ ४४७ ४७६ ४८६ ५४९ ६३७ ६३९ ६४२ ६४६ ६५४ ६७२ ६८२ ६८३ ६९५ ७०६ ७१४
अन्न.स्था.
१ २ ३ ४ ७१ ८९ १२९ १३४ १५७ १७६ २०६ २१७ २४५ २४६ २४७ २६२ २६५

२६९ २८१ २८३ २९५ ३०२ ३२१ ३२३ ३५५ ३५६ ३९६ ४०४ ४०७ ४०८ ४१३ ४३४ ४६६ ४७३ ४८७ ४९९ ५०० ५०१ ५०६ ५३० ५३८ ५५३ ५५६ ५५८ ५७९ ६२१ ६२६ ६३० ६३४
ऊष्म
१४ १५ १६ १७ १८ २२ २३ २४ २५ २६ २७ ३८ ४३ ५५ ८१ १५९ १६२ १६४

१६५ १६७ १७४ १८७ १८८ १९७ १९९ २०९ २४९ २८२ २८५ ३०८ ३१० ३१४ ३३७ ३५१ ३५४ ३६० ३७० ३७९ ४२७ ४५२ ४५९ ४६६ ५१८ ५२९ ५३८ ५४८ ५४९ ६१० ६४५ ६५५ ६९३ ७०६
अ.स्था.
१०१
परि०
५२ ७७ ७८ ८० ८५ ८८
जलोदरे
स्वरा.

२ १५ ५७ १०० ३४५ ३६५ ३६९ ३८६ ३८९ ३९० ३९६
कु
३५३ ४२४
चुद्द
११८ १२२ १२३ १५४ १७२ १७३
तु
२३ २६ १७२ १९३ २४१ २४२ २६२ २२९
पु
४८ ५५ २५५ ३१५ ४०३ ४४७ ५४४ ५४८ ५४९ ६५३ ६५४ ६७५ ७०६ ७११

अन्न.स्था.
७१ ८५ १६० १६४ २२९ २४५ ५०० ५०१ ५२६ ६२२
ऊष्म
३८ ८१ १९५ २८२ २८५ ३२७ ४०५ ४०६
अ.व्या.
६ २० २१ २३ ६२ ७२ ८० १०८
परि०
८३
मूत्रकृच्छ्रे
पु
८९
अश्मर्याम्
तु

३९९
पु
३११' ३३०
अन्न.स्था.
५७९
ऊष्म
५९३
मूत्रघाते
स्वराः
२ ४ १६ २६ २७ ४५ ५३ ५९ ६९ १०० १२० १२४ १२७ १२८ १३७ १५० १५५ १६४ १८९ १९३ २०८ २१३ २१४ २२० २६८ २७२ ३१३ ३१४ ३२१ ३२३ ३२६ ३५६

३६५ ३७० ३७२ ३७७ ३९७ ४४६
कु
४ १४ २९ ११२ ११३ ११७ ११९ १२१ १२९ १४९ १५१ १५२ २१४ २२६ २६९ २९० २९७ २९८ ३१९ ३५८ ३५९ ३७१ ३७४ ४८१ ४८९ ५०१ ५०२ ५०६ ५१४ ५२६ ५४६
चुद्द
१५ २५ ३२ ७२ ७४ ८८ १०० १०१ १०३ १०८

११८ १२२ १५० १५४ १५७ १७२ १८२ १९७ १९९ २१० २१६ २२५ २९३ ३१३ ३२३
तु
१ २ ५ १२ ३४ ४५ ४६ ५६ ६० ६८ ९८ १२४ १२८ १३२ १३९ १४८ १६५ १७२ १७३ १७४ १९७ २०१ २१२ २३० २३५ २४० २४३ २५१ २६२ २६७ २७४ २७५ २८० २९९

३२० ३२१ ३२४ ३२५ ३२९ ३३० ३३१ ३३९ ३४३ ३७५ ३७७ ३७९ ३९९ ४०९ ४२१ ४३६ ४४० ४५८ ४५९
पु
४ १७ ३५ ४१ ५१ ७२ ७५ ९९ १०० १०२ १०३ १०५ १०६ १०८ ११० १२६ १३६ १८८ १९६ १९७ १९८ २०५ २०६ २०६ ३१८ ३२० ३३३ ३३४ ३३५ ३३७

३७१ ३७८ ४२३ ४५२ ४७५ ४७६ ४७८ ४७९ ४८६ ४९० ५२५ ५४४ ५४८ ५४९ ६३८ ६३९ ६४४ ६४६ ६७५ ६८२ ६८३ ६८५ ६८६ ७०६
अन्न.स्था.
१ २५ ४६ ६२ ६७ ७० १०७ १२९ १३४ १३५ १५६ १६१ १६४ १७० २१६ २१७ २१८ २३० २३३ २४५ २४७ २६२ २६४

२६५ २७३ २७४ २७७ २८० २८३ २९२ २९३ ३०२ ३०३ ३०६ ३१२ ३१७ ३१८ ३५५ ३७९ ३८६ ३९१ ४०४ ४०७ ४१६ ४७९ ४८० ४९२ ५०० ५०१ ५०६ ५११ ५१४ ५१५ ५१७ ५३८ ५५७ ५५८ ५७९ ५८५ ६१४ ६३२ ६३४
ऊष्म
५ १३ १९ २६ ६२ ९० १४५ १५९ १६४ १६६

१८४ १८७ १८८ १८९ १९० १९१ १९२ १९३ १९४ १९६ १९७ २०९ २१० २४८ २५७ २८२ २९४ २९६ ३०४ ३०८ ३१८ ३२६ ३७६ ३८२ ४०३ ४१६ ४१९ ४२७ ४२८ ४५२ ४५७ ४८५ ५११ ५१८ ५२२ ५२९ ५९३ ५९५ ६१० ६१४ ६४५ ६५९ ६८८ ६९५ ६९७ ७०६ ७१०
क.स्था.
३

६ ९ १९ २१ २३ ३५ ३८ ४० ४६ ५५ ५८ ६० ७७ १०८
परि०
२४ ३३ ५५ ६८ ७७ ८० ८३
बस्तिशोथे
पु
५५६
अन्त्रवृद्धौ
स्वराः
६७ ४४२ ४४४ ४४५
कु
४५१
चुद्द
५२ २९६
तु
३११

३४५ ४४५
पु
४०५ ५५७ ७१४
अन्न.स्था.
६७ ९७ २३५ २३६ ३३१ ४०४ ४०७ ५३८ ५८९
ऊष्म
२०७
अ.व्या.
३५
अण्डवृद्धौ
स्वरा.
२६८ ४४२ ४४४
कु
८ २७६
चुद्द
५२
तु
४५८
पु
१९४
अन्न.स्था.

३२९ ३०३ ५३८ ५८७ ५८८ ५८९ ५९०
ऊष्म
२६ ६२ ५३१
अ व्या.
६ २० ३५ ४० ५३

वध्नरोगे

अन्त स्थाः
५८९ ५९०
ऊष्म
१६०

गलगण्डे

स्वरा
३२१
कु
८ ३९३ ३९४ ४२३ ४६७
क्षुद्र
३२३
तु

३९४ ४५८
पु
३२०
अन्त स्थाः
४०४
ऊष्म
२०० ६१३ ६५९ ६७७

गण्डमालायाम्

स्वराः
२६४ २६५ ३२१ ४२२
कु
८ १५१ २९८ ३९३ ३९४ ४२३ ४३०
तु
१२४ २३४ २११ ३९४ ८४५ ४५८
पु
६ ३७० ४५२

७१६
अन्त स्थाः
२५ १२७ २३० २५८ ४०४ ६४० ६५०
ऊष्म
४०९ ५२९ ६१३ ६७७

अपच्याम्

कु
८ ३९३ ३९४
क्षुद्र
६३ १३९ १५४
पु
३२० ७१६
अन्त स्थाः
१२७ ५१४
ऊष्म
६७७
अ.व्या.
४५
परि०

१८ ५८

अर्बुदे

स्वरा
३२१
कु
८ १५१
क्षुद्र
५२
तु
१२४ २७५ २८४ ३११ ४४५ ४५८
पु
५६१ ७१६
अन्त स्थाः
२५ २१५ २३० ३२२
ऊष्म
५५९ ६७७
परि०
१६ ६९

ग्रन्थिरोगे

स्वरा
४१५

कु
८९
तु
१३२ ३५८
अन्त स्थाः
८७ ४७७ ५४१ ६५०
ऊष्म
२१ ३९४ ५२९

ग्रन्थिवाते

तु
१०२ १०३
अ.व्या.
६ ७ ७३ ७४ ७९ १११
परि०
३९

विद्रधिरोगे

स्वराः
७८८ ३२१ ४४६
कु

२ ५६ १५१ २६९ २९८
क्षुद्र
९ ३१ ६३ ७२ १११
तु
३११ ४२५ ४५८
पु
१८८ १९६ ३३४ ३८४ ६२२ ७१४
अन्त स्थाः
२५ ८९ २३० २८३ ५३८ ६३९ ६४०
ऊष्म
१६४ ३२२ ३५० ३७० ३७१ ४३५ ५२९ ५३१ ५३३ ६५७
परि०
२९

श्लीपदे

स्वरा
३२१ ३८७
कु
१५१
क्षुद्र
११
तु
३११ ४४५ ४५८
पु
६ ३२० ४०५ ५४९ ६५९
अन्त स्थाः
६७ २३५ २३६ ३५५ ४०४ ५८९ ६३४
ऊष्म
२६ १६६ १९९ २०० २०१ २०२ ५२४ ५२९ ५३१ ६०१

भगन्दरे

स्वराः
५५ ९६ १५० ३७७ ४४६
कु
१५ ८९ १५१ १८३ २४६ ३४६ ३६१ ४२३ ४३० ४७७ ४७९ ४९९ ५५६
क्षुद्र
९ ५२ ६३ ७२ १११ १५७ १६२
तु
५ ३६ ८१ ९४ ११८ १२१ १२२ १२३ १२४ १८२ १९५ २१९ २२८ ३११ ३७७ ३७९ ३९९ ४४९

४५८ ४५९
पु
६ ११० १२१ २१५ २४१ २७८ ३३६ ३७४ ३८४ ४०६ ४०७ ४०८ ४३९ ४७४ ४७६ ४७९ ५४९ ५६१ ५६५ ६४२ ७१४
अन्त स्थाः
२३ २४ २५ ४४ ५४ ६७ ८९ ९३ १२७ १३५ १५७ १६१ १७६ २०९ २२९ २३० २३५ २३६ २५४ २६५ २९२ ३५६

३९६ ४०४ ४६२ ४७७ ५०६ ५११ ६३४ ६३५ ६३९ ६४१ ६४६ ६४९ ६५०
ऊष्म
१३ २६ ३८ ८१ ९८ १६६ १९४ २८२ ३०४ ३२१ ३२२ ३४० ३६१ ३७६ ४०९ ४२७ ४३५ ५२९ ५३१ ५५९ ६०१ ६१० ६५९
अ व्या
७९ ९२
परि०
१८ ४३ ५८ ६५

व्रणरोगे

स्वरा.
६१ १८७ २८८ ३४७ ३८९
कु
७४ ७९ २६९ ४२३ ४३० ४५८
क्षुद्र
१५ ६३ १५४
तु
३६ ७९ ११८ १२१ १२२ १२३ १२८ १३६ १४३ १५० ३११
पु
१२१ १२७ १२८ १३४ २७८ ३२० ३४४ ३५९ ४१२ ५६५ ५९४ ६४२ ६९९ ७१४
अन्त स्थाः

६३ ६४ ८७ ८९ १०९ २२९ २३० २३५ २३६ २४१ २५४ ३४१ ३७५ ४०४ ४१४ ५१४ ६३५ ६३९ ६४० ६४१ ६४२ ६४३ ६४४ ६४५ ६४६ ६४७ ६४८ ६४९ ६५०
ऊष्म
२१ ३२२ ३७६ ५०३ ५२९ ५५९ ६१३ ६२४
अ व्या.
२९ ४५ ६० ६२ ९२ ११०
परि०
१८ ३०

५८ ६९

नाडीव्रणे

स्वराः
४४५
तु
७९ ११० ३९९
पु
६ ५४४ ५६५
अन्त स्थाः
२५ २३५ ४०४ ६४० ६४६ ६४९
ऊष्म
३२६ ५२९
परि०
१२

सिराव्रणे

तु
९४

भग्नरोगे

स्वरा
२६८

३११
तु
११८
अन्त स्थाः
३७३ ३७५ ६४५

अग्रमांसे

क्षुद्र
३१३
तु
१२ ३०५
पु
३३४
अन्त स्थाः
२०७ २६५ २८३ ३५६

कांस्यकोठे (लूरसी)

तु
१२
अन्त स्थाः
२६५

उपदंशाधिकारयोः

स्वराः
२८३ २८७ ३६३ ४१२ ४१३ ४१४ ४१५ ४१६ ४१७ ४१८ ४१९ ४२० ४२१ ४२२ ४२३ ४२४ ४२५ ४२६ ४२७ ४२८ ४२९ ४३० ४३१ ४३२ ४३३
कु
६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२

८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९७ ९८ ९९ १५१ ३४६ ३४७
क्षुद्र
६३ ७४ १४६ १६१ २९६
तु
८१ ८२ ९३ ११० १२१ १२३ १२४ १२८ २९४ २९६ २९८ ३११ ४५० ४५८
पु
८६ १२६ १३३ १३९ ३०० ३०१ ३४३ ३४४ ३४५

५२४	४६	९०	३१४	२५८	३९८	४१	१०९	१७८	ध्वजोच्छ्राये	१८२	९८	४२५	१४०	२०४	५७७
५२५	६२	९१	३१५	२७०	३९६	४२	१४७	ध्वजभङ्गे		१८३	११०	४२६	१९२	२०५	५७८
५२६	६३	९२	३१६	२९५	४०९	४७	१५२			१८७	१११	४२७	१९५	२०६	५९१
६२२	१०२	१०६	३४३	३१५	४५५	४८	२३०			१९१	११८	४२८	२१३	२०९	५९४
६४६	परि०	११०	३४४	३१७	४६६	४९	२९१			१९३	११७	४२९	२१५	२१३	६०२
६५३		१२३	३४५	३२६	४६७	६०	३७५		पु	१९४	१२३	४३०	२२१	२१५	६२५
६७४	१०	१२४	३४८	३४६	४६९	६५	३८४	पु		१९६	१२४	४३२	२२२	२१६	६३८
७१४	१६	१२५	३५८	३५१	४७०	८६	३८५	२०६	१३१	१९७	१२६	४३३	२२३	२१७	६३९
	४३	१३२	३६७	३५९	४७१	८७	३८८	४०९		१९८	१३६	४३४	२२४	२१८	६४२
अन्त स्थाः	वाजीकरणे	१५०	३७५	३९४	४७२	८८	३९७	४९६	हस्तकर्मदोषे	१९९	१३९	४४४	२३१	२२५	६६३
		१५२	३७९	४००	४९१	८९	४२२	४९७		२०४	१४१	४४६	२५१	२२६	६६४
		१५४	३९७	४०३	४९२	१०२	४५०	४९८		२०५	१४२	४४७	२५८	२४८	६६५
११		१५९	४०१	४१७	४९३	११०	५६१	५०३		२१३	१४३	४५२	२८८	२५३	६६६
१५०		१६०	४२३	४१८	४९४	१११	५६८	५०५		२१८	१४५	४६९	३१४	२५८	६८१
२३७	स्वरा·	१६१	४३१	४२०	४९५	११२	६२०	५०७		२२४	१४७	४७३	३१५	२६०	६८४
२९२		१६२	४७२	४४८	४९६	११३	६४२	५१३	पु	२६७	१८२	५०३	३१७	३०४	६८५
४२६	८८	१६३	५०३	४४९	४९७	११४	६५४	५३२	१३०	२६९	१८३	५०७	३२५	३२९	६९०
४२७	८९	१६४	५०५	४५८	४९८	११५	६७६	५७०	४०९	२७२	१९३	५२८	३२६	३६७	६९३
५४३	१२१	१६६	५३९		४९९	११६	७१३	६३८	४९६	२७८	२०७		३२८	३६९	६९४
५४५	१२२	१६७		पु	५००	११७		६३९	४९७	२८०	२१७	चुद्द	३३५	३८९	६९६
५६०	१२३	१६८	चुद्र	८	५०१	११८	अ व्या.	६४३		२८२	२२४	२	३९७	४००	७१३
५६३	१३५	१६९	२	९	५०३	११९	४८	६९०	रसायने	२८८	२२७	२६	४००	४०२	७१९
५६४	१५६	१७०	१९	१०	५०४	१४०	४९			३०६	२३८	३३	४४९	४१२	
५६६	१५७	१७४	४४	११	५०५	१४९	५७	अन्त स्थाः		३०८	२७८	७४	४५६	४१३	अन्तःस्थाः
५७९	१५८	१७५	७४	१२	५०६	१९४	८१		स्वराः	३०९	२९८	७५	४५८	४१४	
ऊष्म	१५९	१७६	७५	१३	५०७	१९५	८२			३२८	३१३	७६		४१६	
	१६५	१७९	७६	२५	५०८	१९६	८४	८	१	३५२	३४५	८१	पु	४१७	४१
६९	१७५	१८०	७७	२६	५०९	१९७	९३	८७	४	३५३	३४९	८२	५	४४०	४७
११४	१८०	१८१	८०	२९	५११	२२९	परि०	२३६	१६	३६०	३६४	८३	२९	४४९	४८
१४५	१८१	१८२	८१	३९	५१२	२३२		२३७	४१	३८१	३६६	८४	४०	४५६	४९
१८४	१८७	१८३	८२	४१	५१३	२३९	२७	३४४	८८	४१५	३६७	८५	४१	४६९	५०
२३९	१९९	१८४	८३	१२४	५३१	३११	३८	३४६	८९	४३४	३६८	१५४	४३	४७१	५२
२५०	२६९	१८५	८४	१२८	५३२	३१९	४६	४०७	९०	४४५	३६९	१६४	५६	४९२	५३
२५२	२७०	१८६	८५	१३२	५६१	३३०	४७	४२३	१४२	४४७	३८०	१६६	६५	४९३	५५
३६९	२७१	१८७	१३१	१३८	५६६	३४६	४८	४३३	१४३		३८१	१६७	६७	४९६	७०
४५०	२७२	१८८	१६४	१९५	५६७	३४८	५६	६०९	१४८	कु	३८३	१७९	६९	५००	७१
४७१	२८०	१९०	१६६	२०१	५७०	३६६	५८	ऊष्म	१४९	१	३८५	१९४	७१	५०१	८३
६०१	३०६	१९१	१७९	२०२	५७६	३६८	७३		१५०	९	३९८	२८९	७३	५०४	९२
६१०	३०८	१९२	१८३	२०३	५८३	३८०	८३	२३५	१५२	१२	३९९	३९२	७४	५०५	१०५
६१३	४३४	१९३	२८९	२०४	५८४	४२४	८७	२३८	१५५	१४	४०१	तु	७६	५१२	११४
६५७	कु	१९४	तु	२०५	५८५	४४६	८९	३५२	१५७	१७	४०२	५	७८	५३१	११७
६६७		१९५		२०६	६१०	४४७	९६	३६७	१५८	२०	४०३	९	८४	५३२	१२६
६६८	३२	१९६	५	२०९	६४६	४७८	विद्रावणे	३७३	१५९	२५	४०४	४८	८७	५४६	१३८
६६९	३४	१९७	९	२१०	६४९	४८३		३७९	१६५	२७	४०५	४९	१११	५५७	२२५
अ.व्या	३७	१९९	५९	२१२	६५०	५८३		३८८	१६६	३२	४०६	५८	१३२	५६०	२२६
	३८	२००	६५	२१५	६९०	५९३		३९३	१६७	३८	४०८	५९	१३८	५६६	२३७
३२	३९	२०१	६९	२२२	अन्त.स्थाः	६०२		३९४	१७४	३९	४११	६२	१८९	५६७	२४०
३५	७३	२०२	७२	२२३		ऊष्म	चुद्द	४२२	१७५	८५	४१५	६५	१९२	५६८	२५२
३८	७४	२४८	१७०	२२४			१७५	५२५	१७६	८९	४२१	६८	२०१	५७१	२५७
४०	८२	३१२	१९५	२२५		४	१७६	५६१	१८०	९०	४२२	६९	२०२	५७४	२९१
४२	८९	३१३	२०८	२५८	८	५७	१७७	६१५	१८१	९२	४२३	७२	२०३	५७६	२९२

इति रसयोगसागरे रोगानुसारिणीसूची समाप्ता ।

अथ रसयोगसागरे—अधिकारपरत्वे सूची ।

४०३	२६	२१७	४९५	५३१	८९	३११	५९३	३८५	अ.व्या.	स्तम्भने	५६७	विरेचने	३३८	६२	अन्तःस्थाः
४१७	३९	२१८	४९७	५६१	१०२	३४६		३८८			५६८		३३९	१०७	
४२०	१३२	२२२	४९८	५७०	१४०	३४८	ऊष्माणः	३९७	४८				३४०	१५२	
४४३	१७३	२२३	४९९	५७६	१९४	३६९		४१४	४९		विद्रावणे		३४१	१५३	
	१७४	२२४	५००	६२९	१९५	४२३		४२२	८४	तु		खरा·	३४२	तु	१६३
पु	१९५	२५८	५०१	६४९	१९६	४२४	४	४२३		२०८		३२९	३४३		५३५
	२०१	४०९	५०३	६५०	१९७	४२५	५७	५२५	परि०	पु		३३०	३४४	४३१	ऊष्माण
८	२०२	४५५	५०४		२२४	४२७	१४७	५६१			चुद्द	३३१	३४५	४३७	
९	२०३	४६६	५०५	अन्तःस्थाः	२२५	४४६	१८४	६२०	४६	१२९		३३२	३४६	४३८	
१०	२०४	४६९	५०६		२२६	४४७	१८५	६७१	४७	३९६		३३३	कु	४३९	४०४
११	२०५	४७२	५०७		२२७	४७८	२३५	६७२	४८	४६७	१७५	३३४		पु	४०५
१२	२०६	४९१	५०८	८	२२९	४८३	२९१	६७५	५६		१७६	३३५	३९१		४०६
१३	२०९	४९२	५०९	४१	२३२	४८५	३७५	६७६	७३	ऊष्माण	१७७	३३६	३९५	५३४	४०७
२५	२१५	४९४	५१३	६५	२३९	५८३	३७९	७१३	८७		१७८	३३७	चुद्द	७११	४०८

अत्यन्तोपयुक्तपदार्थोंका शोधन तथा भस्मप्रकार।

भस्मोंका प्रकरण वहुत लम्वा चौड़ाहै इसलिये समस्त इसजगहदेना अशक्यहै। ईश्वरकी दया होगी तो उसे **भारतीयरसायनतत्त्व** नामक ग्रन्थमें दियाजायगा जिसमेंकि यथाशक्य भारतवर्षमें मिलने वाले धातूपधातु, रसोपरस और रत्नोपरत्नोंकी गवेषणा करके उनका शोधन, मारण और अनुपान प्रभृति दिये जायगे। साथ २ यथाशक्य धातुवादका सिद्धविषय भी दिया जायगा। सम्प्रति इसग्रन्थस्थ योगोंके तैयारकरनेमें जिनके विना कार्य नहीं चलसक्ताहै उनका १–१ प्रकार दियाजाताहै। उनमेंसे भी जिन जिनके प्रकार इसग्रन्थमें आचुकेहैं उनकी सूचना दीगईहै और रहेहुओंका शोधन तथा भस्मविधान दिया जाता है।

रत्नोंकीभस्में—द्वितीयभागके ५८२ पृष्ठमें रत्नगर्भपोट्टलीके अन्तर्गत विधानहै।

सुवर्णभस्म—हिरण्यगर्भपोट्टली (प्रथमा) में देखो।

ताम्रभस्म—ताम्रयोग (२३) में देखो।

नागभस्म—नागभस्मयोग (प्रथम) में देखो।

कान्तलोहभस्म—कान्तलोहरसायनमें देखो।

लोहभस्म—अगस्त्यप्रोक्त अयःसिन्दूर (संख्या ९) में देखो।

माक्षिकभस्म—सर्वेश्वर (चतुर्थ) की टिप्पणीमें देखो।

अभ्रकभस्म—अभ्ररसायन (सं० १५०) तथा अभ्रसिन्दूर (सं० १५९) में देखो।

तालभस्म—तालकेश्वर (अष्टम) में द्वितीयप्रकार देखो।

प्रत्येकधातुके शोधन और मारण ग्रन्थभेदोंसे नानातरहके मिलतेहैं। परन्तु तैल, तक्र, गोमूत्र, काञ्जिक और कुलत्थक्वाथ इन प्रत्येकमें ७–७ वार बुझानेसे विशुद्ध होजातेहैं परन्तु गलानेकी खटपटसे लोग इनके पत्रे वनाकर बुझायाकरतेहैं पर जो गुण गलानेसे होताहै वह पत्रोंसे नहीं होताहै। नाग और वङ्ग गलनेमें वहुत आसानहैं पर इन्हें गुले पात्रमें भूलकर नहीं बुझाना, नहीं तो ये उचटकर नुकसानकरतेहैं इसलिये मिट्टीप्रभृतिकेवर्तनको ज़िमीनमें गाड़कर शोधन द्रव्यको भरके ऊपर सच्छिद्रहण्डीको रख उसके छिद्रमेंसे इन्हें डालना चाहिये। इसतरह उचटनेका सम्भव नहीं रहता। परन्तु जहां अधिकप्रमाणमें शुद्धि करनीहो वहापर गर्तस्थ तक्रादिसम्भृतपात्रपर चौकीका पाट धरदेना और ऊपर घासकी लम्बी सीढी रखकर दोनोंतरफ दो आदमियोंको दवानेकेलिये खड़ाकरदेना तव बीचमेंसे गलेहुए द्रव्यको डालनेसे ज़ोरसे

शब्दतो होगा पर किसीतरहका नुकसान नहींहोगा। स्वाङ्गशीतलहोनेपर पाटको दूरकर भीतरका द्रव निकालकर धातुको लेकर फिरसे गलाना और दूसरे नवीन द्रवमें बुझाना। द्रव कमसेकम बुझनेवाली धातुसे चतुर्गुणित होनाचाहिये और प्रतिवार नयाद्रव भरना चाहिये। इसतरह करनेसे सामान्यतया सब धातुओंकी शुद्धि होजातीहै। विशेषकर निर्गुण्डी, भंगरा, आकका दूध, केशरका द्रव इनमें क्रमश. यथाशक्य बुझावे देनेसे धातुओंकी विशुद्धि और विशेष गुणाधान होताहै। नाग और वङ्गको २१–२१ वार अर्कदुग्ध और केशरकेपानीमें बुझावे देनेसे अत्यन्तही गुणोदय होताहै। अर्कक्षीर अधिक न मिले तो एकवारके द्रवमें २–२ बुझावे देनेसेभी हर्ज नहींहै कारण कि साधारणशुद्धिसे विषभाग निकलजाताहै केवल गुणाधानार्थ इनमें बुझाव दिया जाताहै। केशर मंहगी चीजहै इसलिये उत्तमप्रकारतो पानीमें अष्टमांश केशर डालनेकाहै पर कमसेकम द्वादशांश तो अवश्यही पीसकर छोडनी चाहिये।

रजतभस्म—२० तोले विशुद्ध रजतका वारीकरेता बनाकर जङ्गली करेलेके पञ्चाङ्गस्वरसमें ६–७ दिनतक मर्दनकर ४–४ आनेभरकी टिकड़ियें बनाय कड़ेधूपमें सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गढेमें २ सेर कण्डोंकी आचदे। आच अधिक न होनी चाहिये नहींतो चादी गलकर थक्का होजायगी। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर दिनभर पूर्वद्रवमें मर्दनकर टिकडीवनाय सुखाकर २॥ सेर कण्डोंकी आचदे। कदाचित् प्रथमपुटमें आचका प्रमाण अधिक मालूम पडेतो ४–५ आचोंतक उतनाही प्रमाण रक्खे। जैसेजैसे आचको सहन करने लगे वैसेवैसे बढ़ाताजाय। १५–२० आचोंकेवाद आधेमन जङ्गली-कण्डोंकी आचदेनेमेंभी हर्ज नहींहै। ३० आचें देनेकेवाद १ मनकण्डोंकी आचदे। ४० आचोंकेवाद पूरे गजपुटकी आंचदे। ऐसे १०० पुटमें उत्तमोत्तम भस्म होतीहै। रजत और सुवर्ण भस्महोनेमें बडे दुर्जरहैं इनकी भस्मोंकी शार्ङ्गधरवगैरहने वहुतथोडे पुटोंकी आचोंमें सिद्धि लिखीहै परन्तु वह निश्चन्द्र और निरुत्थ नहीं होती इसवातपर ध्यान देना उचितहै।

वङ्गभस्म—दलदार और मजबूत मिट्टीकी कड़ाहीलेकर भट्ठीपर इसतरह रक्खे कि उसका पेंदा भट्ठीमें चलाजाय केवल ४–४ अङ्गुल ऊपर रहे। इसमें ८० तोले शुद्धवङ्गको गलाकर पोस्तके टोडोंके चूर्णका (वनतेतकविना अफीमनिकाले हुए हों तो अच्छाहै) प्रक्षेप देकर ववूलके हरे डण्डेसे घर्षणकरे। जवतक समस्तवङ्गकी भस्म न होजाय तवतक प्रक्षेप देताजाय लगभग ४ पहरमें भस्म होजातीहै (सूचना=इसे कितनेही अज्ञ भस्म समझकर खानेको देतेहैं यह खानेके योग्य-नहींहै ऐसेही जिस्त और नागमें समझना।) इसकेवाद प्रक्षेपदेना वन्दकर २ पहरतक कड़ी आचलगावे और चलाताजाय। इसवातका ध्यान रहे कि भस्म उड़ने न पावे। फिर भस्मको मिट्टीके वड़ेशरावसे ढककर यथावस्थित छोड़दे। २४ घटेवाद स्वाङ्गशीतलहोनेपर धीरजसे निकालकर कुमारीस्वरससे २ दिन मर्दनकर १–१ तोलेकी टिकड़िया वनाकर कड़ीधूपमें सुखावे। फिर ५–५ शेर वजनके दो सूखे कण्डे लेकर एकगर्तमें एक कण्डेको रखकर टाटविछाकर कुटेहुए विनौलोंकी (कार्पासवीजोंकी) एक अङ्गुल मोटी तह जमाकर टिकड़ियोंको इसतरह रक्खे कि एकदूसरीसे अलगरहे। फिर टिकड़ियोंपर एकअङ्गुलमोटी दूसरी तह जमाकर वचीहुई टिकड़ियोंको रखदे, ऐसे ३ तहतक जमासक्तेहैं। फिर इसपर दो अङ्गुल-मोटी विनौलोंकी तह देकर दूसरे कण्डेसे ढककर गोवरसे सन्धिवन्दकरदे। कुछ सूखजानेपर १५ सेर कण्डे ऊपर जमाकर आच लगादे। यह क्रिया निर्वात स्थानमें करनी चाहिये। तीसरेदिन स्वाङ्गशीतल होनेपर सावधानीसे ऊपरकी राखको हटाकर टिकड़ियोंको निकालले। फिर पूर्ववत् कुमारीस्वरसमें एकदिन मर्दनकर शुष्कटिकड़ियोंको शरावसम्पुटमें वन्दकर एकमनकण्डोंकी आचदे। ऐसे ५–६ आंचें देनेकेवाद यदि एकदम सफेद होजाय तो रखले। कदाचित् कुछ कालिमा रहगई हो तो खुलेसम्पुटकी एक आचदेवे। यह अत्यन्त सफेद और निरुत्थ भस्म होतीहै।

यशदभस्म—जिस्तेका वारीक रेता वनाकर मिट्टीकी कडाहीमें मन्द अग्निपर गरमकर क्रमशः द्विगुण तैलादिक द्रव्योंको डालकर सुखावे। सवकेपीछे इतनी आंचदे कि किट्ट सव जलजाय। फिर शोरा, हरिताल, गन्धक, मैनसिल, सुहागा, फिटकडी, नरसार ये प्रत्येक अष्टमांशलेकर वारीकचूर्णकर रखले। इसकेवाद जिस्तके नीचे अग्नि जलावे और नीमके ताजे डण्डेसे चलातारहे। जव जिस्त गलकर उड़ने लगे तव उपर्युक्तचूर्णकी चुटकी देकर डंडेसे चलाताजाय। इस-तरह जवतक समग्र जिस्तकी भस्म न होजाय तवतक यहीक्रम जारी रक्खे। भस्म होनेपर चूर्ण देना वन्दकरके १ पहर-तक अग्निदेकर घोटे। फिर वङ्गकी तरह ढककर रखदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर चीनी अथवा पत्थरके पात्रमें रख जलडालकर चलादे। पानी नितर जानेपर धीरजसे निकालकर दूसरापानी भरदे। ऐसे जवतक भस्ममें क्षारका भाग रहे तवतक इसीतरह करता जाय। फिर स्वच्छभस्मको सुखाकर कुमारीस्वरसमें घोटकर टिकडीवनाय सुखाकर वङ्गकीतरह विनौलोंके वीचमें रखकर आच दे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कुमारीकेरसमें टिकिया वनाय गजपुटकी आचदे। ऐसे ३–४ आचें देनेसे निरुत्थ श्वेत भस्म होगी। धातुवादमें किसीको अग्निस्थायि जिस्तकी जुरूरत हो तो जलमें धोकर रखले आच न दे। यदि उड़नेवाली धातुओंको कायम करने की इच्छा हो तो धोना नहीं वैसेही काममें लेलेना।

पित्तल व कांस्यभस्म—पूर्व रीतिसे विशुद्ध कांस्य और पीतलके टुकडेकरके मूषाकर्णी, ब्राह्मी या अडूसेका यथालाभचूर्ण, शुद्ध गन्धक और मनशिल प्रत्येक अष्टमाश डालकर नींबूकेरसमें घोटकर टुकडोंपर लेपकरे। सूखनेपर ऊपरकहीहुई वनस्पतियोंके चूर्णको ऊपर नीचे तह देकर शरावसम्पुटमें बन्दकर इतनी आच दे कि चूर्ण और गन्धक जलजॉय। इसकेबाद निकालकर पूर्ववत् ३–४ आचेंदे। भस्महोनेपर (नींबूकीजगह काटेवालीचोलाईके रससे कामलेवे) खरलमें घोटकर टिकडियां बनाकर आंचदे। क्रमश. आचको बढाता जाय। २० पुटकेबाद चूर्णकी तह देना बन्दकरदे और गजपुटकी आच दे। ऐसी २–३ आंचोंमें विशुद्धभस्म होगी। रग न आया हो तो अखीरकापुट उघडीहुई टिकडियोंको देदे।

कसीसभस्म—कुमारी, भटकटैया और सत्यानाशीके स्वरसोंमें क्रमश ३–३ दिन घोटकर सुखाकर ३–४ दिनतक बहुतखट्टे दहीमें डालकर रहनेदे। गाढ़ाहोनेपर घोटकर १–१ तोलेकी टिकियां बनाय सुखाकर जलभगरेके चूर्णके बीचमें टिकडियोंको रख गजपुटकी आंचदे स्वाङ्गशीलतलहोनेपर निकालकर रखले।

तुत्थभस्म—५–५ तोलेकी तुत्थकी चमकदार डलियें लेकर कच्चे सूतसे लपेटकर मिट्टीकी हण्डीमें ३ सेर अनबुझ पत्थरके चूनेकी डलियोंमें दबाकर इतना पानी डाले कि सारा चूना फूलजाय। फिर घड़ेको फोडकर डलियोंको निकालकर सुखादे। इसकेबाद १–१ डलीको नारियलके बराबर भैंसके ताज़े गोबरमें रखकर धूपमें सुखावे। जब अन्दरकी डली हिलानेसे खड़खड़ बजनेलगे तब निकालकर डलीपरसे सूतको खोलकर लोहेके तवेपर रखकर तेलियागेरू १ रतलको पीसकर आधेगेरूसे डलीको शिखराकार ढकदे और चूल्हेपर रख नीचे बेर या शमीकीलकड़ीकी १ पहर मन्द आचदे। यह ध्यान रहे कि कहींसे हवा निकलती देखे तो दूसरे गेरूसे दबादे। फिर धीरे २ आच बढाकर २ पहर मध्यमाग्नि और १ पहरकी तीव्राग्नि देकर स्वाङ्गशीतल करके निकालले। जहा कहीं (औषधनिर्माणमें) तुत्थका प्रयोग आवे वहां इसभस्मको काममें लेवे।

मल्लभस्म—नरमूत्र ८० तोले, जवकुटमिर्च १५ तोले, कांटेवाली चौलाईकी जड़का कल्क ५ तोले लेकर सबको मिट्टीकी हंडीमें भरके ३ तोले मल्लकी डलीको दोलायन्त्रविधिसे मूत्रशोषणपर्यन्त वाष्प देवे मूत्रका सम्पर्क न होनेपावे। फिर काचकेबर्तनमें डलीको रखकर डूबनेतक आककादूध भरके धूपमें रक्खे। दूध नया बदलताजाय परन्तु मल्लपर जमीहुई दूधकी तहको अलग न करे। २२ वें दिन अपामार्गके क्षारको आकके दूधमें पीसकर एकलेपलगाकर सुखादे। ऐसे ७ लेपलगानेकेबाद बारीक कपड़ेपर आकके दूधमें पिसे हुये अपामार्गके क्षारका लेपदेकर सुखासुखाकर ७ तह चढ़ावे। फिर मिट्टीकी कुल्हड़ीमें मल्लसे चतुर्गुण अपामार्गके क्षारमें दबाकर ढक्कन लगाय ७ कपडमिट्टीदेकर अच्छीतरह सूखनेपर मिट्टीके घड़ेमें आधेमन बकरीकी मींगणियोंकी निर्वातस्थानमें आचदे। ७ दिनबाद सावधानीसे मल्लको निकालकर रखछोड़े। इसे योग्यचिकित्सककी सलाहसे काममें लेवे उत्कटविषहै।

पारदशुद्धिः—बाजारू पारेमें जिस्त, रागा और शीसा मिले हुए आतेहैं इसलिये जो कुदरती शिंगरिफहै (अभावमें बनावटी) उसे मंगवाकर नींबू और आकके पत्तोंकेरसमें १–२ दिन घोटकर छोटीछोटी टिकड़ियें बनाय अच्छीतरहसुखाकर डमरूयन्त्रमें बन्दकर चूल्हेपर चढाय नीचे बेर, बबूल, खैर, धव वगैरह सारिष्ठलकड़ियोंकी मन्द, मध्य और तीव्र इसक्रमसे ४ पहरकी अग्निदेवे। ऊपरके घड़ेपर ४ तह मोटे कपड़ेकी गद्दीको पानीमें तरकरके रखदे और उसे १–१ घण्टेकेबाद ठंढेपानीमे तरकरके निचोड़कर रखताजाय। इसका मतलब यह है की अत्यन्तगर्मीपानेसे पारा किसी न किसी रास्तेसे निकल जाताहै। तर रहनेसे न जायगा। ४ पहरकेबाद आचदेना बन्द करदे और साधारणकोयलोंपर यन्त्रको रक्खारहनेदे तथा गद्दीको हटादे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर बहुतसभालकर कपड़मिट्टीको दूरकर ऊपरके घड़ेमेंसे बारीक कपड़ेके सहारेसे घिसकर तमामपारेको निकालले। नीचेके घड़ेकीराख जब एकदम श्वेतहोजातीहै उससमय पारा नीचेकी हण्डीमे भी चला आताहै तब ऊपरकीहंडीकीतरह नीचेकी हंडीमेंसेभी पारेको निकालले और राखकोभी देखले उसमें पारा मिला न हो। इसतरह पारेको निकाल खादीके कपडेसे १०८ बार छाननेसे कालिमारहित होजाताहै। यह इसकी कामचलाऊ शुद्धि हुई। विशेष शुद्धिकी इच्छा हो तो लोहेका खरल अथवा मोटेपेंदेकी कड़ाही और लोहेका मूसल लेकर इसतरहके चूल्हेपर रक्खे कि जिसमें आगेपीछे दोनोंतरफसे ईंधन देसके। फिर इसमें अभीष्टप्रमाण पारेको डालकर उससे १६ वा हिस्सा सेंधानमक और अत्यन्त खट्टी काञ्जी अथवा नींबूकारस देकर घोटतारहे। रससूखनेपर नया देताजाय। ४ पहरकेबाद गरमपानीसे इसयुक्तिसे धोवे कि पारेका अश पानीमें न जाय। निकालेहुए पानीको मिट्टी अथवा चीनीकेबर्तनमें रक्खें कारण कि कदाचित् भूलसे पारा चलागया हो तो उसमेंसे निकलसके। दूसरेदिन ३२ वा हिस्सा नोसादर और नींबूकारस देकर ४ पहर उसीतरह घोटकर धोकर साफकरले। तीसरे दिन षोडशाश हल्दीकेचूर्ण और नींबूके रसमें शोधनकरे। इसीतरह चित्रकमूलकीछाल, कड़वे सहिजनकी जड़कीछाल, चाङ्गेरी (तिपतिया), गृहधूम, एकपोती लहसन, त्रिफला, त्रिकटु इनप्रत्येकके षोडशाशचूर्ण और नींबूकेरसमें ४–४ पहर मर्दन और शोधनकरे।

इससेभी विशेष शुद्धिकरनी हो तो मर्दनकेवाद गरमपानीसे न धोकर डमरूयन्त्रमें रस ऊर्ध्व, अधः अथवा तिर्यक्पातन• करतारहे । इससे अत्यन्तविशुद्धहोजाताहै । इसकेवाद विषोपविष जितने मिलसकें उनमें मर्दनकरके शोधनकरे यह समस्तकार्योंकेलिये उपयुक्तहोजायगा । जहां कज्जली हो वहा उसकेसाथ शुद्धगन्धककेयोगसे नीलवर्ण कज्जली वनाकर काममें लेवे और चन्द्रोदयप्रभृति समस्तसिन्दूरोंको तैयार करके पारदभस्मके अभावमें डाले । सिन्दूरोंका प्रकार ग्रन्थमें विस्तृतरूपसे दियाहै ।

गन्धकशुद्धिः—लालिमायुक्त आंवलासार गन्धकलेकर लोहेकीकढ़ाहीमें डालकर अरणी, भंगरा अथवा तुलसीका चौगुना रस देकर साधारण अग्निपर औटावे । कमीकमी चला दियाकरे । थोड़ा रस वाकीरहनेपर उतारकर गरमपानीसे धोकर साफकरले फिर धूपमें सुखाकर वारीकचूर्णकर चतुर्थांश गायके घीकेसाथ गलाकर चौगुने गायके दूधमें छानदे । ठंढाहोनेपर निकालकर गरमपानीसे साफकरके सुखाले । ऐसे तीनवारकरनेसे विशुद्धहोजाताहै ।

मनःशिलाशुद्धिः—लोहेकी कड़छीमें मैनसिलको साधारण गरमकरके चौगुने गोमूत्रमें वुझावे । ऐसे १०० वार वुझानेसे एकान्ततः विशुद्ध होजातीहै । गोमूत्र प्रतिवार नयालेना ।

वत्सनाभशुद्धिः—गोमूत्र और दुग्धमें ४-४ पहर दोलायन्त्रसे स्वेदितकर छोटे छोटे टुकड़ेकरके पीलीसरसोंके तैलमें भिगोएहुए ४ तहकपड़ेमें पोट्लीवनाय ३ दिन रखकर कड़ीधूपमें सुखाकर रखले ।

विषमुष्टिशुद्धिः—परिपुष्टसफेदकुचिलोंको गोमूत्रमें डालकर रखदे गोमूत्र प्रतिदिन वदलतारहे । २१ वें दिन साफ पानीमें डालदे और पानीको प्रतिदिन वदलतारहे । १० दिनवाद कुचिलोंको छीलकर भीतरका अङ्कुर निकालकर पानीमें ही डालताजाय । फिर अत्यन्तखट्टीकाञ्जीमें ४ पहर स्वेदनकर गरमपानीसे धोकर ४ पहर दूधमें उवाले । यदि इनकी तिक्तता दूर करनी हो तो गोखरू, हर्रे और शतावरके क्वाथमें ४ पहर उवालकर छोटे २ टुकडे वनाय सुखाकर रखले ।

मृद्दारश्टङ्गशुद्धिः—मृद्दारश्टङ्गको ७ वार वकरीके मूत्रमें गरमकरके वुझावे । फिर चतुर्थांशसेंधेनमककेसाथ १ पहर पानीमें घोटकर अठगुने पानीमें मिलाकर रखदे । नितरनेपर पानीको निकालकर दूसरा सेंधानमक डालकर पूर्ववत् घोटकर पानीडालकर रखदे । ऐसे २१ वार करके नमकका तमाम हिस्सा निकालकर सुखाकर रखले ।

भल्लातकशुद्धिः—भैंसके गोवरमें चौगुना पानी डालकर भिलावोंकी पोट्लीको दोलायन्त्रमें लटकावे । पोट्ली गोवरमें डूवीरहे । फिर ४ पहर मन्दआंचसे पकाकर गरमपानीसे धोडाले । इसीतरह ४-४ पहर गोमूत्र, दुग्ध और नारियलके पानीमें पकावे । नारियलकेपानीमें पकानेसे पहिले इनकी टोपी उतारदे । इसतरह शुद्धकियेहुए भिलांवोंको काममें लेवे । इसीतरह जयपालकी शुद्धि करे परन्तु नारियलके जलमें न पकावे । अन्तमें उनकी जिह्वाको निकालकर नींवूकेरसमें यहातक घोटे कि चिकनाई निकलजाय ।

धतूरा, करिहारी, कनेरशुद्धिः—गोमूत्र और दुग्धमें ४-४ पहर स्वेदनकरले ।

शैलाजतुशुद्धिः—पवर्गीय रससंख्या २९ में देखो ।

शान्तिं श्रियं सिद्धिमनन्तविश्रुतिं मानं महोत्साहमकुण्ठितोद्यमम् ।
आयुस्तति रोगसमूहवर्जितां विष्णुर्विदध्याद्रसयोगसागरे ॥

इति श्रीरसयोगसागरे परिशिष्टं समाप्तम्

अत्रविषये विशिष्टविदुषामभिप्रायाः ।

अद्य बहोः कालात् प्रतीक्षितस्य ग्रन्थरत्नस्य समवलोकनेन सत्यं महान्तं प्रमोदमावहामि । वम्बईनगरवास्तव्यैः प्रशस्तयशोभिर्भिषग्वरेण्यैः सुहृद्वर्यश्रीहरिप्रपन्नशर्मभिः सुव्यवस्थया शताधिकाना रसग्रन्थानां विकीर्णानि प्रयोगजातानि सुसंगृह्य विरचितोऽयं रसयोगसागरो रसजगति कामप्यतिशायिनीं सुषमां धत्ते । विषमस्थलेषु मार्मिकटीकया संवलितमिदं ग्रन्थरत्नं हिन्दीटीकायाः साहित्येन न केवलं विदुषा भिषजामेवोपयोगि किन्तु साधारणचिकित्सकानामपि, अनल्पमुपयोगीति को नाम विद्वान् विवदेत् ।

इत्यपि वक्तुं सुशकं यदद्यावधि सङ्ग्रहग्रन्थाना निर्माणे य प्रयासः समजनि तत्र मूर्धन्यभूतोऽयं प्रयत्नातिशयः । मन्ये चैकाकिन एवास्य ग्रन्थरत्नस्य सङ्ग्रहणात् पुस्तकनिवहानां निधानं केवलं भारायितमेव स्याद्विद्यानाम् । वैद्यराजमहोदयैर्मुद्रणादिकार्यं स्वयं सावधानतया विहितमिति शुद्धप्रायस्याऽस्योट्टङ्कनं नितरां प्रकाशयति । ग्रन्थेन सहोपोद्घातभागोऽपि दर्शनीयतम. । ध्यानपूर्वकमध्ययनेन भिषग्वरेण्याना न केवलमायुःशास्त्रविषयकं, किन्तु शास्त्रान्तरविज्ञानमपि सुतरा भवति विज्ञातमिति किं बहुना स्वयंगुणगौरस्य विषयेऽनल्पजल्पनेनेति ।

जयपुर, मार्गशीर्ष शुक्ल ११ सं. १९८६	आयुर्वेदमार्तण्ड **लक्ष्मीराम स्वामी.** आयुर्वेदाचार्यः । राजकीय आयुर्वेदिक कालेज

श्रीमान् विविधागममर्मपरिशीलनासमश्रमसमासादितोपादेयवैदुष्यप्रकर्ष , शाब्दन्यायानुरूपवाक्यविन्यासपरिज्ञानपरिनिष्ठितान्तःकरण आयुर्वेदवित्तमोप्यखिलशास्त्रनिष्णातधिषण , भारतवर्षप्रहर्षवर्धिललितलेख. पण्डितप्रवरः वैद्यवरश्श्रीहरिप्रपन्नमहाशयोऽभिनवगवेषणापूर्णं रसयोगसागराभिधं सवस्तुधं प्रबन्धं निर्माय मनोहरं मुद्रापयित्वा चावलोकनार्थं मत्सविधे तदेकं सकृपं पुस्तकं प्राहिणोत् एतदर्थं शुभंयुसौहार्दस्नेहसिक्तपरश्शतधन्यवादा सन्तुतराम् । प्राच्यप्रतीच्यविचारसमन्वयतदुचितचारुविवेचनाचातुर्यसमञ्चितवेदविभूतिरूपायुर्वेदप्रामाण्यव्यवस्थापकोपोद्घातप्रकरणदर्शनश्रद्धानुरागवशीकृतान्तरतयाऽन्यत्रापीदृश एवायमिति समधिकोत्पन्नविश्रम्भ स्तोतव्ये मूकता मूकतैवेति प्रतीयन्नप्येषा द्वित्राणा समर्थानामीदृशानुकृतौ प्रोत्साहदानार्थमत्र प्रावर्तिषि स्तोकलेखाय इति वियोदयोदन्वन्तः सन्त' क्षाम्यन्तुतराम् ।

भारतीयचिकित्साशास्त्रमपरिपूर्णं तात्त्विकशरीरविज्ञानरहितम् शास्त्रचिकित्साशून्यं नातिप्राचीनमित्यादि वैदेशिकचिकित्सकगणैर्लालप्यमानं कुहनाकल्पम्प्रलपनमेतदुपक्रमार्कदर्शिनाम् विच्छिन्नाभ्रविलायं विलीयते इति केषा हृदयजुषां हृदयानि प्रमोदोदयवशम्वदानि न भवेयुः । अस्मिन् ऋगादिमन्त्रैः शरीरावयवविभागस्थाननामगणनादि निर्दिश्य सन्दिग्धस्थलविशेषे मन्त्रान्तरैः सम्वायाऽभिमतार्थविशेषं साधु व्यवातिष्ठिपद् ग्रन्थकारः । अपाचीकरच्च रुचिरमत्र व्याख्यातृपुरुषान्तरभ्रमप्रमादाद्युपजृम्भितमर्थान्तरम्, पराक्रम्य पराचीकरच्चात्र वैदेशिकानां विमतानि मतानि । समतूतुषच्च कारुण्यपूर्णमानसमहर्षिप्रणीतप्राणत्राणतरणिचिकित्सापरायणानि मनीषिणामन्तःकरणानि ।

वैद्यकस्याऽस्य प्रणेतुरर्थविवेचनाचातुर्यं परिशुद्धशब्दप्रयोगप्रागल्भ्यं विविधशास्त्रपरिशीलनकौशलं, पुरातनपुण्यप्रभावोपनतप्रज्ञाप्रतिभावैभवञ्च पश्यतः कस्य सचेतसश्चेतश्चिराय न चित्रीयते ? न तान्यक्षराण्युपलभे यैरस्य वास्तवं संस्तवं कर्तुं पारयेयमित्युपरम्यते । ईदृशाऽपूर्वग्रन्थग्रथनप्रकाशनाभ्यां जगतो महीयानुपकार सम्पद्येत इत्यत्र न कस्यापि विद्याविदाम्विवादः । एवमेव शास्त्रोक्तविधिना रसनिर्माणतदुपयोगप्रकारप्रकाशनमुखैरियन्त ईदृशाश्चोपकारा इति तु अपरिसङ्ख्येयं सङ्ख्यावतामपि ।

पाटलिपुत्र (पटना). सं. १९८६ कार्तिक शुक्ल द्वादशी	महामहोपाध्याय **हरिहरकृपालु** द्विवेदी रामनिरञ्जनदास मुरारकीयविद्यालय

स्वस्ति श्रीमतां निखिलायुर्वेदरसशास्त्रोदधिपारंगतानां वैद्यवर्याणां हरिप्रपन्नशास्त्रिणां चरणकमलेषु जनस्थाननिवासिनो देवधरोपनामकस्य कृष्णशास्त्रिणः सहस्रशः सन्नतयः विलसन्तुतराम् । श्रीमद्भिः सम्पादितस्य रसयोगसागरग्रन्थराजस्य प्रथमं भागं समधिगम्य समालोच्य च प्रामोदततमा नश्चेत. । अपरिमितप्रायाणां रसयोगानामेतस्मिन् सङ्ग्रहात् सर्वथा सार्थमेवाभिधानं **रसयोगसागर** इति । विविधानां रसयोगाना बहवश्चात्र पाठाः प्रदर्शिता' समुपलभ्यन्ते । यथा ग्रन्थारम्भ एव

अग्निकुमारस्य पञ्चाशत् (५०) पाठास्तथा चाग्रे अर्धनारीनटेश्वरस्य सप्तदश (१७) कालाग्निरुद्रस्य दश (१०) चन्द्रोदयस्य सप्त (७) ज्वराङ्कुशस्य नवत्रिंशत् (३९) ताम्रयोगस्य त्रयोविंशति (२३) तालकेश्वरस्य तु एकोनाशीतिः (७९) इत्यादयोऽनेके विविधा पाठाः प्रदर्शिता वर्तन्ते । अधुना मुद्रितग्रन्था न तावद्दुरधिगमा किन्त्वमुद्रिताना दुष्प्राप्याणा प्राचीनलिखितग्रन्थानामेकत्रीकरणं नाम कठिनतमो व्यापारः । सत्यामपि एवमवस्थाया दीर्घोद्योगपरैर्विद्वदग्रेसरैः सम्पाद्य यथाकथंचित्पञ्चाशदधिकानमुद्रितानन्यानन्यान् प्राचीनलिखितग्रन्थान् समाकलय्य तत्रत्यं मुद्रितग्रन्थस्थं च विषयजातं, तत्स्थान् पाठभेदाश्च समालोच्य मुद्रापितास्ति सर्वे अकारादिवर्णानुक्रमेणाऽस्मिन् ग्रन्थराजे ।

ग्रहणीरसाद्यनेकस्थानेषु अनेकाना व्याख्यातॄणामर्थनिर्णये प्रमादस्थानानि प्रदर्श्य युक्तार्थविशदीकरणार्थं पण्डितवर्यैर्विरचिता संस्कृतटीकैव केवलमलं खलु तेषा पाण्डित्यप्रदर्शनाय । अपि च **कासीसादिरस, त्रिदोषाङ्कुशरसादिस्थलेषु** तेषा विस्तृतं भाष्यं तु सुतरा पाण्डित्यपूर्णं वर्तते । तथा चास्मिन् ग्रन्थराजे पण्डितमहाभार्गवैर्नूतनकल्पा इति निर्दिष्टाः *अभ्रकल्प, अश्वकंचुकी, कन्दर्पजीवनः ताम्रयोगाद्यनेकेऽनुभूतयोगा. सुस्पष्टं प्रत्यावेदयन्ति महाभागाना चिकित्सानैपुण्यं* तेषां च्छन्दोनिबद्धत्वेन रचनाचातुर्यञ्च । गुरुपरम्परयैव केवलमस्मत्सकाशमागतानविज्ञातमूलान् कांश्चिदनुभूतयोगान् ग्रन्थराजेऽस्मिन् समुपलभ्य परं हर्षमुपागताः स्म ।

रसयोगसागरस्य पूर्वार्द्धभूतेऽस्मिन् ग्रन्थे १७९६ योगा ७३१४ श्लोकाश्च वर्तन्ते । प्रथमतस्त्वेतदेव सुमहत्कठिनं यच्छतादिकेभ्योऽन्यान्यपुस्तकेभ्य एतेषा रसयोगानामेकत्रीकरणं, तत्तद्ग्रन्थनिर्देशपुरःसरं तेषामकारादिवर्णानुक्रमेण विरचनं च नाम । एतस्मिंस्तु ग्रन्थे एवं विरचिताना योगाना शुद्धाऽशुद्धविचारोऽपि कृतो वर्तते । कार्यमिदं कियन्तं परिश्रममावहति कियतीं च विद्वत्ता प्रकटीकरोतीति अकृतैतादृग्व्यवसायैर्दुःशकं कल्पनापथमप्यानेतुम् । सुविचार्य चास्य ग्रन्थस्योपयोगितां मूल्यमल्पमेवाभाति यदस्य द्वादशरूप्यका इति । ग्रन्थस्याऽस्य उपोद्घात एव केवलमर्हत्येतदधिकं मूल्यमिति मन्यामहे । अतिविस्तृते ग्रन्थस्याऽस्योपोद्घाते "ह्यायुर्वेदस्य **प्राकालः" त्रिदोषविवरणम्**, आर्षशारीरावयवा , सन्दिग्धशारीरविवरणम्, इत्याद्यनेकानामायुर्वेदीयविषयाणा साङ्गोपाङ्गं विवरण कृतं वर्तते । विवरणे चास्मिन् पदेपदे वेदेभ्यः प्रमाणान्युपन्यस्तानि, पाश्चात्यानामपि विदुषामभिप्राया समुद्धृता वर्तन्ते । हृदयङ्गमेन विचारपरिप्लुतेन चैतेन विवरणेन सत्यामपि क्वचित् क्वचिन्मतभिन्नतायामवश्यमेव सर्वेषामायुर्वेदीयाना मनांसि वेदप्रवणानि शारीरावयवविचारप्रवृत्तान्यपि च क्रियेरन्नित्यत्र नास्ति नस्तोकोऽपि सन्देहः ।

नासिक सं. १९८६
माघ शुक्ल अष्टमी

तत्रभवत प्रेमाकाङ्क्षी
देववरोपनामक **कृष्णशर्मा.**
तथा च प. **हरिशास्त्री पराडकर** वैद्यः
आकोला (वरार)

भवतां रसयोगसागरस्य प्रथमभागं दृष्ट्वाऽत्यन्तमाह्लादितोऽस्मि । यथा वेदोद्धाराय व्यासस्य प्रादुर्भाव. समभूत्तथैवाऽऽयुर्वेदोद्धाराय भवदाविर्भाव इति । उपोद्घाते समधिकं वैदुष्यं प्रकटीकृतं गहनस्थलेषु च संस्कृतविवरणमपि कृतम् । ग्रन्थोऽयं वैद्यानामन्येषां चोपादेयो भविष्यतीत्याशासे । विद्यालये वाचनालये चोपयोगितव्योऽयं ग्रन्थ इति शम् ।

अमदावाद आषाढ कृष्ण
सप्तमी १९८६ वि०

वैद्य **नारायणशङ्करो देवशङ्करात्मजः ।**

वैद्य पण्डित श्रीहरिप्रपन्नशर्मभि सङ्गृहीतो रसयोगसागरः परममहान् रसनिबन्धो विधीयते मया चाक्षुषः कृपया ग्रन्थकर्तॄणाम् । अत्रागदेश्वरादीना नेत्राशनिपर्यन्ताना १७९५ रसाना दृश्यते सङ्ग्रह । सङ्ग्रहार्थं सङ्गृहीताना ग्रन्थानां सङ्ख्या अष्टोत्तरं शतम् । तेषु च ५३ ग्रन्था मुद्रिता. ६० ग्रन्थाश्च हस्तलिखिता । एतावता ग्रन्थाना सङ्ग्रहे अपेक्षितस्य कालस्य द्रव्यस्य सर्वेषाञ्च तेषां तात्पर्यावगमे तथाभूताया प्रतिभाया मानसकल्पनायामेतत्कथनीय भवति यदलोकसामान्यवैभवेषु महापुरुषेष्वन्यतमोऽयं वैद्यवर श्रीहरिप्रपन्नपण्डित पण्डितमार्तण्ड. । परममहती भूमिका प्रकाशयन्ती कर्तुर्बहुश्रुतत्वं सुखाय कल्पते पश्यतो देशान्तरवैद्यैः कृता पूर्वजाना कीर्तिं श्रावयन्ती । सन्दिग्धार्थानां शब्दानां तात्पर्यनिश्चयायाऽऽदृतोऽपि यत्नो हस्तावुत्थाय कथयति कर्तुस्तलस्पर्शि पाण्डित्यम् ।

मुम्बापुरी चैत्र शुक्लअष्टमी
सं. १९८४ वि.

पं. **रमापति मिश्रः ।**

अस्माभिः प्राचीना नूतना बहवो ग्रन्था पठितास्तेष्वेकनाम्ना प्रसिद्धा भिन्नक्रियात्मका बहुसङ्ख्यावन्तो रसा दृश्यन्ते । ते कठिनगुप्तशब्दक्रियात्वात्कठिना दुर्लभ्याश्च । तेपु मुद्रितानां लभ्यानां मूल्यमधिकं भारो विशेषश्च । एतत्सर्वं पर्यालोच्य बहूनां विदुषां प्राचीनानां नूतनानां भिषजामग्रे प्रार्थना कृता—कोऽपि रसग्रन्थ एतादृश केनाप्याचार्येण कृतः प्राप्यते ? यस्मिन् सर्वेषां रसानां समावेशः स्यात् परन्त्वद्यावधि न कोऽपि ग्रन्थो लब्ध ईदृश । एतेन शुष्कायामाशालतायां श्रीमद्भिर्वैद्यानुशासनकारिभिर्हरिप्रपन्नशास्त्रिभिः कृतो रसयोगसागरो लब्धः । अस्मिन् एकनाम्नां बहूनां रसानां नानाक्रियावतां समावेशः कृतोऽस्ति । कठिनानां शब्दानां गुप्तानां क्रियाणाञ्च प्रत्यक्षनिदर्शनम् । अयं सर्वैर्वैद्यनामधारिभिस्सङ्ग्रहीतव्योऽनेन पार्श्ववर्तिना कस्याऽपि ग्रन्थस्यापेक्षा न भवति ।

कलकत्ता. पौषशुक्ला प्रतिपदा १९८६ वि०

भगीरथस्वामी

वैद्यप्रकाण्डश्रीयुतहरिप्रपन्नविपश्चिद्भी 'रसयोगसागर' प्रणयनेन न केवलं सामान्यजनता किन्तु भिषग्जनताऽपि चिरमनुगृहीता यतोऽत्र प्राचीनरसग्रन्थानां प्रयोगास्तथा सवर्गिता यथा वर्णानुक्रमेण रसा उपस्थाप्यन्ते येन तत्तद्रसमार्गणमतीव सुकरतामापन्नमुपकरिष्यत्यायुर्वेदविदो रसवैद्यान् ॥

किञ्च टिप्पणीप्रदानेन रसपाठेषु सन्दिग्धानंशान् विवृण्वद्भिर्महाशयैरेतै रसायनशास्त्रपारम्परी परिष्कृता, यथा **रतिकामरसे**—आपातत प्रतीयमानमर्थं पुरस्कृत्य प्रवृत्तिरनर्थावहेति सम्प्रदर्श्य रसशोधनार्थं प्रागुपयुज्य प्रमदाप्रथमार्तवं परिशुद्धरसयोगानन्तरं पालाशमूलरसं गुटिकाबन्धे नियुञ्जाने साङ्केतिकसरणिराविष्कृता परिहृतश्च मालिन्योट्टङ्कनम् ।

एव महता परिश्रमेण सम्पादितोऽयं ग्रन्थः सर्वथा रसग्रन्थेषु प्रधानगणनामर्हति ।

जामनगर श्रावणशुक्ला १० सं. १९८६

महामहोपाध्याय शास्त्री—**हाथीभाई शर्मा.**

काशीनिवासिवैद्यपण्डितश्रीहरिप्रपन्नशर्मविरचितोऽयं "रसयोगसागरो" ग्रन्थो लोकोपकारको वैद्यानान्तु नितरामुपकारकोऽपूर्व उत्तमश्चेति सम्मनुते ।

मुम्बापुरी श्रावणशुक्लापूर्णिमायां संवत् १९८५

यदुनन्दन झा.
बृहन्मन्दिरस्थबालकृष्णशुद्धाद्वैतसंस्कृतपाठशालाप्रधानाध्यापकः ।

रसग्रन्थोऽयम् । अत्रच तेपु तेपु वैद्यकग्रन्थेषु पठिता रसयोगास्सङ्कलितास्सन्ति । एकत्र नानाग्रन्थीयरसयोगपाठा
अत्र द्रष्टुं शक्यन्त इति ग्रन्थस्यास्य विशेषोऽयम् । हिन्दीभाषानुवादेन सार्कं तत्तन्मूलग्रन्थीयसंस्कृतभाषामयपाठा अत्र समुद्धृ-
तास्सन्ति । अकारादिक्रमेण रसयोगानामत्र विन्यास कृतो वर्तते । प्रारम्भे चात्र भूमिकाद्वय संयोजितमस्ति । एकमागल-
भाषामयम् १०४ पृष्ठव्याप्तम्; अन्यत्संस्कृतभाषामयम् १७८ पृष्ठव्याप्तम् । तत्र चायुर्वेदस्येतिहासस्तस्य महत्त्वं चाधिकृत्य
महान्विचारः कृतो वर्तते । घनचिक्कणपत्रेषु देवनागराक्षरैर्मुद्रित ।

मञ्जुभाषिणी काञ्ची, प्रभवसंवत्सरे वृश्चिकमासे १० दिवसः ।

निखिलरसशास्त्रीयदुरवगमाशयप्राचीनरसयोगास्सर्वेऽप्यत्र सप्रपञ्चं पौर्वापर्यसमीक्षापूर्वकं हिन्दीसंस्कृतव्याख्याद्वयेन
परिष्कृताश्च पूर्वोत्तरपरिशिष्टाख्यभागत्रयात्मकतया आदिक्षान्ता यथाक्रमं निबद्धाश्शब्दसङ्ग्रहतो विवृताश्च योगा । आदावु-
पोद्घातोऽयमायुर्वेदनिगमागमसामर्थ्यमाचार्याणां सकलकलापारीणत्वञ्च बोधयति । प्राय आयुर्वेदीयरसशास्त्रीयास्सर्वे रस-
योगा प्राचीना नवीना व्यासागस्त्यप्रोक्ताश्चानेनैव साङ्गोपाङ्गतया सङ्गृहीताश्चरितार्था इव दृश्यन्ते, सलक्षणञ्च विवरणं श्रुति-
स्मृत्यादिसहकृतम् । संस्कृता असंस्कृता आचार्या केवलं भाषामात्रविदो भिषजोऽपि पुरुषार्थं साधयेयु । तस्मादयं रसयोग-
सागरो निखिलभारतीयाऽऽयुर्वेदविद्वज्जनादरणीयो माननीयश्चाचिरादेवाचन्द्रतारकं दिगन्तविकसनमीयादित्यभ्यर्थयतो मे
नमास्यनन्तानि हरिप्रपन्नाचार्याणां समुल्लसन्तुतराम् ।

मुम्बापुरी, विक्रमवत्सरे १९८७ आश्विनशुक्ल २ बुधे

सुब्रह्मण्यशास्त्री.
कृष्णातीरवास्तव्य, श्रीपुष्पगिरिसंस्थानविद्वान् ।

षोडशाऽखिलवैद्यसम्मेलनसम्बन्धिन्या प्रदर्शन्या जयपुरे मोहमयीवास्तव्यैः श्रीपण्डितहरिप्रपन्नाचार्यमहाशयैः पुस्तकविभागे प्रेषितो रसयोगसागरस्य प्रथमो भागः परीक्षणसमितेर्निर्णयमनुसृत्य सबहुमानं सप्रमोदं च प्रशस्यते इति प्रमाणयति उत्तमश्रेणि प्रमाणपत्रमिदम् ।

अखिलभारतवर्षीयवैद्यसम्मेलनम् } चैत्र कृ० १४ स. १९८३ }

पं. मदनमोहनमालवीयः
षोडशायुर्वेदसम्मेलनसभापतिः

वैद्यमहाशयपण्डितहरिप्रपन्नशर्मभिः सम्पादितो रसयोगसागरनामा विशालग्रन्थो निरीक्षितः । अनेकान् दुष्प्राप्यान् हस्तलिखितान्मुद्रितांश्च ग्रन्थान् महाप्रयासेन समाहृत्य, रसानामेको विस्तीर्णसङ्ग्रहोऽस्मिन् रसयोगसागरे कृतो दृश्यते । अस्याऽध्ययनेन रसशास्त्राऽभ्यासकानां तच्छास्त्राध्ययनं सुखसाध्यं सुगमं च भविष्यति इति मे मतिः । अथसौ सर्वेषामुपरि विद्वद्वर्याणां महानुपकारः सञ्जातः । यदस्मिन्ग्रन्थे पण्डितवरैः स्वानुभूतानां रसप्रयोगाणामपि सङ्ग्रहः कृतो विद्यते । किमति-विस्तरेण, सर्वैर्गुणज्ञैः मर्मज्ञैश्च एतदुत्कृष्टं पुस्तकं स्वकीयपुस्तकालये सङ्ग्राह्य पण्डितमहाशयानां श्रमसार्थक्यं कार्यमिति मेऽभिलाषः सर्वेभ्यः प्रार्थना च इति शम् ।

कार्तिककृष्णे अमावस्या } स. १९८७ वि० }

प्राणाचार्य वैद्यराजवासुदेवाचार्यजी पेनापुरे
मुम्बापुर्याम्

उच्छ्वसिताऽऽयुर्वेदस्य श्रेष्ठाङ्गं मृतकल्पं रसतन्त्रमुद्दिधीर्षुराचार्यप्रवरसकलशास्त्रनिष्णातपण्डितहरिप्रपन्नशर्मणश्चिर-कालादनवरतकृतश्रमस्य फलस्वरूपो रसयोगसागराभिधो ग्रन्थो मम दृष्टिपथमारूढस्सम्प्रति । साक्षादयं रसप्रयोगाणामा-करोऽस्ति जलधिरिव मुक्तानाम् । अस्मिन् द्योतमाना रसाः स्वकं गुणोत्कर्षं दर्शयन्तोऽहङ्कारेण परस्परं स्पर्धयन्तीव विलसन्ति, अहमपूर्वोऽहमिति । दशोत्तरशतसङ्ख्याकहस्तलिखितमुद्रितग्रन्थस्थरसप्रयोगाणामपूर्वमिमं सङ्ग्रहमुद्रमवगाहयितुं कस्य प्रवुद्ध-चेतसश्चेतो न कामयेत । सम्प्रत्युपलभ्यमानरसवादविषयकतन्त्राणां निकरोऽस्य विद्यमानत्वे भाररूपएव लक्ष्यते । अनेनैकेनैव मकररूपेण निखिलरसग्रन्थमत्स्याः स्वकीयोदरे प्रतिष्ठापिताः । भाषाटीकया च बालवैद्यानामप्युपयोगिता प्रदर्शिता । बृहत्तमोपोद्घातोऽप्यस्य ग्रन्थस्य ग्रन्थकर्तुः प्रकाण्डपाण्डित्यं द्योतयति विषयविवरणपाटवं च । सन्दिग्धशारीरविवरणद्वारा स्वज्ञैर्व्याकुलीकृतशारीरतन्त्रस्याऽमृतीकरणं कृतं निरस्तं चाज्ञानरूपं तमः । किं बहुना, अस्य ग्रन्थरत्नस्याऽऽदरो विबुधवैद्यसमाजेन कर्तव्य इत्याशासे ।

तिथिः पञ्चमी कार्तिककृष्णा } सवत् १९८७ }

पण्डित जयनारायण दीक्षितः
आगराप्रान्तान्तर्गत टेहू ग्रामाभिजनः

युगेऽस्मिन्वैज्ञानिकेऽन्यदेशेभ्यो भारतस्य हीनां दशां जानन्ति जनाः, परन्तु ग्रन्थरत्नस्याऽस्य प्रभाभरेण समुत्सारितं तदज्ञानतमः । अस्य ग्रन्थस्य सङ्ग्रहीतारः श्रीहरिप्रपन्नाः सन्ति, ते किल मार्मिका विद्वांस आयुर्वेदस्य । अस्य तैरतीवोत्तमो वैदुष्यपूर्णश्चोपोद्घातोऽलेखि, तस्मिन्येषु येषु विषयेषु विचारः कृतः सोऽपूर्व एव प्रतिभाति । आयुर्वेदेतिहाससङ्कलनं सङ्ग्रही-तॄणामगाधपरिश्रमं व्यनक्ति । सर्वदेशगुरुत्वं भारतस्येतिसाधितम् । शस्त्रचिकित्साऽपि वृद्धभारतस्य कृते न नूतनं वस्त्विति गर्भिणीविषयकचिकित्सोल्लेखेन प्रकटीकृतम् । इदमपि भिषग्वरेण साधितं यदेषां रोगाणामर्वाचीनत्वं पाश्चात्या अवगच्छन्ते तेषां रोगाणां निदानचिकित्साप्रभृतयो वैदिककालेपि महर्षीणां कराऽऽमलकवज्ज्ञाता आसन्, समकारि च शारीराऽवयवानामपि पूर्णो विचारः । भिषग्वराणां प्रमाणोपन्यासन्दृष्ट्वा चेतश्चकितं भवति । अधुना ग्रन्थविषये वक्तव्यमवशिष्टम्, शतसङ्ख्याऽधि-केभ्यो मुद्रितहस्तलिखितग्रन्तेभ्योऽस्मिन् सङ्ग्रहः कृतः । महाभारत इव यो रसोऽस्मिन्वर्णितस्तस्यैव सत्त्वं जगति विद्यते, योऽत्र नास्ति स खपुष्पमिवाऽवगन्तव्यः । विशेषसूचनोल्लेखेन प्रयोगकर्तॄणां सङ्ग्रहीतृभिः कुत्रचन रसानां स्वाऽनुभूतत्वसू-चनया च मूलतः समुत्पादितोऽविश्वासः । किमधिकं वदामो वैद्यवर्याणामिमं श्लोकं स्मारयन्तो विरमामः ।

धीरा भूपा धनाढ्याः सुकृतिसहृदया भारतीयाः परे वा नानाविद्याप्रवीणा विविधगुणगणप्राप्तये यत्नवन्तः ॥
आयुर्वेदे स्वकीये परविषयभवे लब्धबोधाश्च वैद्या विज्ञाप्यन्ते भवन्तः सविनयमिह तद्धार्यतां मानसे स्वे ॥ १ ॥

मुम्बई ता० १ । ११ । १९३० }

गोस्वामिकुलकौस्तुभश्री १०८—
श्रीगोकुलनाथ महाराजः

धन्यः स परमकृपालुः परमेश्वरो, यस्य प्रसादान्मयाऽद्य विद्यानयादिगुणैरलङ्कृतस्य समृद्धिमतस्सुहृद्वरस्य बम्बईनिवा-सिनः पण्डितप्रवरहरिप्रपन्नशास्त्रिणो विविधशास्त्रीयरसौषधिविपुलसङ्ग्रहपरिपूर्णं **रसयोगसागर**नामकग्रन्थरत्नस्य खण्डद्वयं दृष्ट्वा नितरां ह्लादितोऽस्मि । ग्रन्थोऽयं वैद्यानामुपादेयो लोकोपयोगी च भविष्यतीति जाने । उक्तशास्त्रिवरोऽतः परमप्युत्तमं ग्रन्थं

निर्मातुं यतिष्यते इत्याशासे । यद्यायुर्वेदविषये चिकित्साविधिविद्वांसो बहवः साम्प्रतं दृश्यन्ते परन्तु ग्रन्थप्रणयनद्वारा तद्विशिष्टगुणदर्शका विरलाः सन्ति, एवं स्थिते शास्त्रिवरेण तादृशो नितरामभीष्ट कार्यभारः शिरसा गृहीत इति परं प्रमुदितोऽस्मि शीघ्रमेवाऽन्यामपि तदीयां यशस्विनीं कृतिं द्रक्ष्यामीत्याशासे ।

इन्दौर ता० २ । ११ । १९३० } वैद्यख्यालीरामशर्म्मा द्विवेदी

मोहमयीवासिश्रीमत्पण्डितवरवैद्यराजहरिप्रपन्नशर्म्ममहोदयनिर्मितोऽकारादिक्षवर्गान्तो **रसयोगसागरो** बलादाकर्षति गुणग्राहिणाममत्सराणां मानसानि । ईदृशैरेव ग्रन्थरत्नैः संस्कृतवाङ्मयं प्रात्यहिकीमभिवृद्धिमाप्स्यति । सोऽयं सर्वैरपि भिषग्भिः संग्राह्यः प्रचारणीयश्चेत्यस्माकमनुरोधो विद्वत्सु इत्यभिप्रैति वेदान्तशास्त्री पञ्चतीर्थो हरिदत्तशास्त्री

२८ । १० । १९३० } प्रधानाध्यापक. महाविद्यालयज्वालापुरीयः

पुस्तकमस्माभिः सर्वतो निभालितमतीवोपकरिष्यति भिषजामिति प्रत्ययं दृढयति । एतत्सम्पादयता भवता बहूपकृतः कविराजसमाज इति शिवम् ।

शङ्कर शुद्धबोधतीर्थस्वामी २८ । १० । ३०

यह ग्रन्थ वस्तुतः रसयोगरत्नोंका सागर ही है । उसमें ग्रन्थकर्ताने बहुमूल्य अनन्त रत्नोंका समावेश कियाहै जो कि वैद्यविद्याके अनुपम अलङ्कार स्वरूपहैं । इसमें आशुतरफलप्रदायी अतएव पूर्णानुभूत अनेक रसयोग विद्यमानहैं । इनयोगोंका भूरिभूरि प्रयत्न करनेपरभी अन्यत्र प्राप्तहोना कठिन ही नहीं असम्भवहै । अत एव यह ग्रन्थ छोटेसेछोटे और बडेसेबडे वैद्योंके तथा जनसाधारणकेलिये परमोपयोगीहै । इस रत्नाकरके रचयिता दर्शनशास्त्रमें निष्णात और आयुर्वेदके सूर्य रसयोगविज्ञानपारङ्गत भिषक्प्रवर **वैद्यपण्डित हरिप्रपन्नजीहैं** । भारतवर्षमें आप आयुर्वेदके अद्वितीय विद्वान् हैं । आपकी रासायनिकक्रिया और भिन्नभिन्नवनस्पतियोंकी अनुभूति पराकाष्ठाको पहुंचीहै । आपने अपने इस आयुर्वेदिक विज्ञानका सर्वसाधारणको लाभपहुंचानेकी शुभकामनासे बहुतवर्षोंके अनवरतपरिश्रमसे इसका सम्पादनकरके असाधारण लोकोपकार कियाहै । ऐसे ग्रन्थकी संसारमें इससमय बडी आवश्यकताथी । इसपुस्तककी समालोचनात्मकभूमिकामें ग्रन्थकारने अपना अप्रतिम पाण्डित्य झलकायाहै । यदि इस पुस्तकके थोडेसे भी प्रयोगोंका अनुष्ठान कियागया तो संसारको आशातीतलाभहोगा । अन्तमें मै आशाकरताहूं की इसग्रन्थसे जनता पूर्णलाभ उठावे और ग्रन्थकर्ता पूर्ण यशस्वी बने ।

स्वामि रघुवराचार्य वेदान्ती
तर्कतीर्थ, वेदान्ततीर्थ, न्यायव्याकरणाचार्य, मीमांसोपाध्याय
वेदान्तशिरोमणि, दर्शननिधि.

वेदान्ताश्रम.
सिद्धपुर. ८।१०।३० }

रसयोगसागरका निर्माण और प्रकाशनकरके वैद्य **पं. हरिप्रपन्नजीने** वैद्यसमाजके ऊपर अतुल उपकार कियाहै । रसशास्त्रमें अब ऐसा योग मुश्किलसे मिलेगा जो इसग्रन्थमें न आयाहो । यह ग्रन्थ पण्डितजीके १० वर्षके अहर्निशके अथाह परिश्रमका फलहै । प्रत्येक वैद्यको यह ग्रन्थ अवश्य खरीदकर इससे लाभ उठाना चाहिये । हम परमेश्वरसे प्रार्थना करतेहैं कि परमेश्वर पण्डितजीको चिरायुकरें और पण्डितजी ऐसे अनुपमग्रन्थ तैयार करके मृतप्राय आयुर्वेदका उद्धारकरें ।

आयुर्वेदमार्तण्ड
वैद्य **यादवजीत्रिकमजी** आचार्य

कालबादेवीरोड.
मुम्बई ता. ४।१०।३० }

वैद्यसम्मेलनपत्रिका.

इस अपूर्व सर्वोपयोगी महद्ग्रन्थका निर्माण पण्डित हरिप्रपन्नशर्मा शास्त्री भिषगाचार्यजी बम्बईनिवासीने कियाहै । संस्कृतमें तथा अंग्रेजीमें उपोद्घात लिखाहै, जोकी सभी वैद्य महानुभावों और आयुर्वेदके विद्यार्थियोंके लिए उपादेयहै । इसग्रन्थके अध्ययनसे रसतन्त्र (रसचिकित्सा) का ज्ञान पूर्ण होसक्ताहै । जिसप्रकार यह ग्रन्थ साधारणत. देखनेमें सर्वोपकारी प्रतीतहोताहै उससे कहीं अधिक इसकी उपादेयता समालोचनात्मकगम्भीरदृष्टिसे देखनेसे ज्ञातहोती है । वास्तवमें आयुर्वेदशास्त्रके विद्वान् ही पण्डितजीके इस अद्वितीय परिश्रमका अनुभव करसक्तेहैं ।

विद्वानेव विजानाति विद्वज्जनपरिश्रमम् । नहि वन्ध्या विजानाति गुर्वीं प्रसववेदनाम् ॥

इससे अच्छा रसविद्याका ग्रन्थ आजतक नहीं प्रकाशित हुआ। इसके महत्त्वको देखते हुए इसकी कीमत जो रक्खीहै सो न्यूनहै।

जो वैद्य इसग्रन्थको पढकर रसचिकित्सा करेंगे उन्हें ज्ञानन्यूनताजन्य प्रत्यवाय नहीं होगा और लोकमें यशके भागी होंगे आयुर्वेदका भविष्य उज्वल होगा। अत मैं समस्त आयुर्वेदप्रेमियोंसे अनुरोध करताहूं की इसग्रन्थरत्नको विना विलम्बके शीघ्र मंगवाकर लौकिक व पारलौकिक लाभ उठावे।

यदि सन्ति गुणा ग्रन्थे विकसन्त्येव ते स्वयम्। नहि कस्तूरिकामोदः शपथेन विभाव्यते॥

इस न्यायके अनुसार यह ग्रन्थ गुणहोनेके कारण स्वयं प्रसिद्धि पावेगा।

कानपुर,
सितम्वर १९२८

सत्यदेवपाण्डेय आयुर्वेदाचार्य वेदान्तशास्त्री
सयुक्तमन्त्री, नि० भा० आ० वि० पी०

विज्ञान

इस वृहद्ग्रन्थमें रसोंके वनानेकी स्पष्टरूपसे विधि दीगईहै।

अनेक आर्ष, अनार्ष, प्राच्य और पाश्चात्यग्रन्थोंकी सहायतासे विद्वान् लेखकने इसमें दो विस्तृत भूमिकायें भी दीहैं। ग्रन्थके आरम्भमें अंग्रेजीकी मनोहर और विद्वत्तापूर्ण भूमिकाहै। सस्कृतकी भूमिकामें कई नवीन विषयोंका समावेश कियागयाहै। अंग्रेजीकी भूमिकासे लेखककी अगाध विद्वत्ताका परिचय होसक्ताहै। प्राच्य और पाश्चात्य इतिहासज्ञोंके वचनोंको उद्धृतकरके वैद्यकशास्त्रका सुन्दर इतिहास और अतीतभारतके गौरवका मनोहरचित्र इसमे अङ्कित कियागयाहै। वेदोंके अवतरण प्रस्तुत करके लेखकने यह प्रदर्शित करनेका प्रयत्नकियाहैकी रसायन और वैद्यक विद्याका आदि मूल वेदोंमे विद्यमानहै। हार्नले आदि पाश्चात्यविद्वानोंकी चरक तथा सुश्रुतके निर्माणकालविषयकभ्रान्तिपरभी **श्रीहरिप्रपन्न**जीने विचारपूर्वक प्रकाश डालाहै।

वैदिक, ब्राह्मण, और सुश्रुतकालमें शरीरावयवोंकी समानान्तरनामोंकी सूची वैदिक साहित्यके अध्ययन करनेवालोंको अवश्य वहुमूल्य सिद्ध होगी। एकसूचीमें शरीरके अवयवोंके चरक तथा सुश्रुतवर्णित नाम तो दियेही गयेहैं उनके साथसाथ अंग्रेजी पदभी रखदिये गयेहैं। इसप्रयासके लिए समस्तपाठकोंको हृदयसे कृतज्ञ होना चाहिए। रसोंके वनानेकी विधि–सङ्ग्रहमे लेखकने वडा परिश्रम कियाहै। भिन्नभिन्न प्राच्यग्रन्थोंके श्लोकोंको उद्धृतकरके उनका भाषानुवाद भी देदिया गयाहै। साराश यह है की ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगीहै और अपने ढंगका निरालाहै। हिन्दी साहित्य इसप्रकारकी पुस्तकों पर गर्वकरसक्ताहै। हमें पूर्ण आशाहै की उदारजनता इसका समुचित समादर करेगी।

इलाहावाद,
अगस्त १९२७

आरोग्यदर्पण

रसप्रयोगोंका एक वृहत्सुन्दर संग्रहकियाहै। उपोद्घातके आरम्भमें पण्डितजीने आयुर्वेदके इतिहासपर अच्छाप्रकाश डालाहै, उपोद्घातका प्रधानभाग शारीरविवेचनसे परिपूर्णहै, यह अश वहुतही खोजके साथ लिखागयाहै। इसग्रन्थमे अनेक उद्धरणों और युक्तियोंद्वारा सिद्ध कियाहै कि वेदोंमे शस्त्रचिकित्सा, रोगविज्ञान, और शरीरका वहुतकुछ वर्णन मिलताहै। वेदोंमे व्यवहृत वहुतसे शब्द दिखलाए गएहैं कि जो शारीरावयववाची हैं परन्तु भाष्यकारोंने उन्हे अन्यअर्थोंमें प्रयुक्तकियेहैं। वेदव्यवहृतशब्दोंकी सुश्रुतमे व्यवहृत तदर्थवोधक शब्दोंसे तुलनाभी की गईहै, अर्थकरनेमें पण्डितजीने पर्याप्तविवेचनाबुद्धिसे कामलियाहै।

क्लोमादि सन्दिग्धशब्दोंपरभी खूव टीका टिप्पणी कीगईहै। सारांशत· यह उपोद्घात स्वतन्त्ररूपेण भी एक अत्यन्त उपयोगी और विद्वान वैद्योंके देखनेयोग्य ग्रन्थहै।

वूंटीदर्पण

वम्बईके प्रसिद्धवैद्य और प्रकाण्डपण्डित श्रीमान् हरिप्रपन्नशर्माजीने एकत्रडेमार्कका, और खोजपूर्ण तथा नितान्त विचारणीय उपोद्घात लिखकर, स्वर्णमे सुगन्धोत्पादनसी सन्निवेशित करदी गईहै। हमारी सम्मतीमें तो, इस अपूर्व रसौपध-समूहके सुविस्तृतसग्रहके विनाभी, यदि केवल, यह वहुगवेषणागवेषित–उपोद्घातमात्रही सद्वैद्योंके सामने उपस्थापित किया-

गया होता, तो, वह अकेलाही समग्र ग्रन्थके मूल्यसे, अधिक न्योछावरका अधिकारी होजाता । इसप्रकारकी गम्भीरगवेषणाओं और पाण्डित्यपूर्ण परिश्रमोंकी सराहना और समादरकाद्वार यदि गुणज्ञोंकी ओरसे बन्द करदियाजाय तो, लोकसङ्ग्रहदृष्टिसे कितनीभारी हानि उपस्थितहोसकतीहै इसका उत्तरतो बहुश्रुत और वृद्धोपासकविद्वान् लोग सहजमेंही देखसकेहैं । इसलिए प्रत्येक विद्वान् वैद्य महानुभावसे हमारी विनीतप्रार्थना है की वे इसग्रन्थको खरीदकर साहसी और बहुशास्त्रनिष्णात वैद्य. पं. **हरिप्रपन्न**जीकी अवश्य उत्साहवृद्धि करें ।

लाहोर, कार्तिक सं० १९८५

इस एकही पुस्तकके साथ रखनेसे चिकित्सकका परमोपकार हो सकताहै । पाण्डित्यकी दृष्टिसे इसका उपोद्घात अत्यन्त महत्त्वका है ऐसी अनेक गूढविषयकी जटिलबातोंपर पण्डितजीने प्रकाश डालाहै कि जिसके मननसे आयुर्वेदके लुप्तप्राय ग्रन्थियोंके उद्घाटनमें बडाभारी सहारा मिल सकताहै । विषय और पाण्डित्यकी दृष्टिसे भी ग्रन्थ परमोपादेय है । आशाही नहीं विश्वास है कि वैद्यबन्धु इस उपादेय ग्रन्थको अपनेपास रखकर अपनी और अपने व्यवसायकी उन्नति करेंगे ।

हिन्दुविश्वविद्यालय
बनारस ४।१।३० } **कविराज प्रतापसिंह रसायनाचार्य**

सङ्ग्रहका प्रकार नयाहै उपयोगी और उपादेयहै ।......ग्रन्थकर्ता विद्वान हैं शास्त्रमर्मज्ञ हैं एकभिक्षुककी हैसियतसे इतना कहसकता हूं कि—

सागरः सागरस्येव प्रथतां पृथिवीतले । यशो गायन्तु विद्वांसो हरिप्रपन्नशर्मणः ॥

वर्द्धवान ता. १४।९।२६ **स्वामी सोमतीर्थ**

रसयोगसागर अत्यन्त हर्ष व उत्साहका कारण हुआ. सैकडों संस्कृत व हिन्दीके ग्रन्थ मंगवाये गये परन्तु **रसयोगसागर**विशेष अपनी भांतिका नया ही अद्भुत ग्रन्थ है, कर्ताकी विद्वत्ता व चतुराई प्रतिपृष्ठसे प्रकट होतीहै.

होशियारपुर (पञ्जाब)
१५।१२।२८ } **हीरासिंह** बी. ए.

माधुरी

"रसयोगसागर" एक सर्वोत्कृष्ट तथा सर्वसुन्दर संग्रहग्रन्थ है । रसयोगोंके सङ्ग्रहके साथ साथ कितनेही स्थलोंपर आयुर्विज्ञानाचार्य, सुयोग्य सङ्ग्रहकर्ता महोदयने रसनिर्माणविधिमें अपनी क्रियाकुशलता, अनुभव, दूरदर्शिता तथा सूक्ष्मबुद्धिसेभी पूरा-पूरा कामलियाहै । एकएक रसके जितने भी भेद तथा उपभेद प्राचीन, अर्वाचीन, प्रकाशित एवं अप्रकाशित ग्रन्थोंमें पाएजातेहैं, वे प्रायः सभी इसग्रन्थमें विद्यमानहैं । संस्कृत श्लोकोंका हिन्दीभाषान्तरभी अन्य प्रकाशित वैद्यकग्रन्थोंकी अपेक्षा शुद्ध तथा सुन्दर हैं । अंग्रेजीमें और संस्कृतभाषामें भूमिका लिखकर अपने प्रकाण्डपाण्डित्य, व्यापक ज्ञान तथा आदर्शगवेषणपरायणताका परिचय दियाहै । हमें मुक्तकंठसे स्वीकार करना पडताहै कि इसग्रन्थके दोनोंही उपोद्घात बहुतही सुन्दर, विचारपूर्ण, मननीय, पठनीय तथा आयुर्वेदप्रेमियोंके लिए बडेगर्वकी वस्तुहैं ।

इसग्रन्थमें कितनेही दुरूहस्थलोंपर मूलश्लोकोंका संस्कृतभाषामें भाष्य, अर्थ तथा टिप्पणी लिखकर लेखकमहोदयने सोनेमे सुहागेका काम कियाहै । फलत. कई दृष्टियोंसे यह ग्रन्थ बहुतही उपयोगी तथा अपने ढंगका एकहै । हमे यह लिखते हुए बडीही प्रसन्नता होती है की "**रसयोगसागर**" का नाम सार्थकहै । यह ग्रन्थ आयुर्वेद प्रेमियोंकेलिये सर्वथा उपादेयहै । इसग्रन्थने एकबडेभारी अभावकी पूर्ति कीहै । अन्तमे हम आयुर्विज्ञानाचार्य, वैद्यवर्य पण्डित हरिप्रपन्नशर्माजी को इसमहत्त्वपूर्ण ग्रन्थरत्नके लेखन व सम्पादनसे किएगए असीम श्रमके लिये अभिनन्दन तथा इसग्रन्थके सम्पादनमें प्राप्तकीहुई सफलताके लिये हार्दिक बधाइयाँ देतेहै ।

लखनऊ, मार्गशीर्ष
सं० १९८४ } गयाप्रसादशास्त्री "श्रीहरि"

सरस्वती ऑक्टोबर १९२८

यह आयुर्वेदशास्त्रसम्बन्धी एक महत्वपूर्ण सङ्ग्रहग्रन्थ है । इसके सङ्ग्रहकार पण्डित हरिप्रपन्नजीने इसकी रचना वडेपरिश्रमके साथ कीहै । इस सङ्ग्रहसे आपकी अध्ययनशीलता ही नहीं प्रकटहोतीहै, किन्तु साहित्यिक सुरुचिभी । अपने इसका सङ्कलन और सङ्गृहीतमूलश्लोकोंका सम्पादन नये ढङ्गसे कियाहै । इससङ्ग्रहकी रचनामें सङ्ग्रहकारने इसका हिन्दीमें भाषान्तरभी कियाहै । इससे इसकी उपयोगिता औरभी बढगईहै । असंस्कृतज्ञभी इसका अच्छीतरह उपयोग करसकेंगे ।

सङ्ग्रहकारने इसकी भूमिकामें अपने पाण्डित्य और अध्ययनशीलता का खासा परिचय दियाहै । इसमें (भूमिकामें) आयुर्वेदकी प्राचीनता वैदिककालसे सिद्धि की गईहै । एवं उसका इतिहास दियागयाहै, साथही शारीरविज्ञानकी सविस्तर विवेचना की गईहै । यह महत्वपूर्णग्रन्थ अनेक ज्ञातव्य वार्तोंसे पूर्णहै ।

यह सङ्ग्रह अपने ढङ्गका निरालाही नहीं, किन्तु विश्वसनीय एवं उपयोगीभी है । आयुर्वेदके ज्ञाताओं तथा उससे प्रेमरखनेवाले लोगोंको इस उत्कृष्टग्रन्थका सङ्ग्रह अवश्य करना चाहिए ।

विश्वमित्र कलकत्ता, २०-१२-१९२७

उपोद्घातमें आयुर्वेदका इतिहास और रहस्य और उसके चरकसुश्रुतादि ग्रन्थोंका माहात्म्य अत्यन्त योग्यताके साथ वर्णितहै । एकएकयोगके जितने भी भेद अवतकके प्रकाशित और अप्रकाशित ग्रन्थोंमें पायेजातेहैं उनसवका इसएकही ग्रन्थरत्नमें सङ्ग्रहहै । **रसयोगसागर** एक अद्वितीय और अनुपम ग्रन्थ वनाहै । इस एक ग्रन्थरत्नकोही अपनेपास रखनेसे वैद्योंकेलिए अन्यरसग्रन्थोंके सङ्ग्रहकी प्रायः कोई आवश्यकता न रहजायगी । संस्कृतश्लोकोंके नीचे सुवोध हिन्दीमें उनके अर्थभी दिये गयेहैं । इतनाही नहीं, जहा कोई गूढार्थहै वहांपर सुयोग्य लेखकने स्वानुभव एवं टिप्पणियादेकर सोनेमें सुगन्धि पैदा करदीहै । यह ग्रन्थरत्न रसचिकित्सकोंके वहुतही कामका है । इसके सहारेसे केवल हिन्दीज्ञान-रखनेवाले चिकित्सकभी पूरापूरा लाभ उठासकतेहैं । वैद्यमात्रको इसकी एकप्रति खरीदकर ग्रन्थकर्ताको उत्साहदान करना चाहिए । हम ऐसे अमूल्य सङ्ग्रहकेलिये ग्रन्थकर्ताको हार्दिक धन्यवाद एवं वधाई देतेहैं ।

प्रताप.

रसप्रयोगोंके इसप्रकारके एक सङ्ग्रहकी परमावश्यकता थी । आयुर्वेदमें रसग्रन्थोंका कोईभी ऐसा सङ्ग्रह नहींहै जो अकारादि क्रमसे हो और जिससे यह जानाजासके कि कौनकौनसा पाठ किसकिस ग्रन्थमेंहै और एकहीनामसे भिन्नभिन्न कितने योगप्रचलित हैं ।

वैद्य **हरिप्रपन्नजीने** श्रम और व्ययसाध्य इसकार्यको करके वैद्यसमाजका वडा उपकार कियाहै, भिन्न २ रसोंके भिन्न २ ग्रन्थों और अधिकारोंके अनुसार कई २ पाठोंका सङ्ग्रह इसमेंहै जिन्हें एकत्रित करना कमश्रमसाध्य नहींहै ।

अंग्रेजी तथा संस्कृत अवतरणिका सङ्ग्रहकर्ताने खोज और विद्वत्तापूर्वक लिखीहै । इसके उपोद्घातमें आयुर्वेदका इतिहास तथा सम्पूर्ण शारीरज्ञानका वर्णन कियागयाहै । साथही पाश्चात्य शारीरका तुलनात्मक वर्णन है । यदि इसका उपोद्घातभागही पुस्तकाकार प्रकाशित होता तो भी यह भारतीय शिक्षितसमाजकेलिए एक आवश्यकवस्तु होती । पुस्तक सभी दृष्टिओंसे उपयोगी है ।

प्रत्येक वैद्यको अपनेपास इस अत्यन्त उपयोगी, पठनीय, मननीय एवं सङ्ग्रहणीय ग्रंथकी एकप्रति रखनीचाहिए ।

कानपुर,
ता. १।४।२८ भिषग्रत्न **शिवनारायणमिश्र,** वैद्यशास्त्री

भगीरथ वंवई ता. १७।११।१९२७

पुस्तकको देखकर हमारे हृदयमें वडाभारी हर्ष होताहै.

इस ग्रन्थके रसप्रयोगोंका सङ्ग्रह तो प्रायः सभीवैद्योंके कामका है. परन्तु उपोद्घातका विषय विद्वान् वैद्योंके लिये अलभ्यरत्न है ।

संस्कृत उपोद्घातमें **आर्षशारीरतत्व** नामक सन्दर्भ वहुतही महत्वका है । भारी मन्थन करके वेदोंमेंसे जहां जो कुछ मिला उतना शारीरतत्व खींच लियाहै । वेदोंमें खासकर अथर्ववेद और शतपथब्राह्मणमें शारीरतत्त्वका उल्लेख विशेष है

इस शारीरतत्त्वको एकत्रित करके सुश्रुतके शारीर और आधुनिक शारीरसे तुलना करनेका पण्डितजीने खूब परिश्रम कियाहै। सन्दिग्धस्थानोंमें सविस्तर प्रमाणदेकर पण्डितजीने अच्छा प्रकाश डालाहै। टिप्पणियोंको देखकरही पाठक जान सकतेहैं कि किन २ सुदृढ प्रमाण और युक्तियोंसे इनके यथार्थ अर्थोंका प्रतिपादन कियाहै।

रसग्रन्थोंमें एकही नामके अनेक प्रयोग हैं और एकही प्रयोगके अनेक नाम रक्खे हुएहैं, ऐसी प्रयोगोंकी अव्यवस्थामेंसे प्रयोगोंको छांटना कितना कठिन काम है, उसको अनुभवी विद्वानही जानसकतेहैं। इस ग्रन्थमें बहुतसे प्रयोग इतने कूटपद्धतोंमें लिखेहुए आयेहैं कि जिनको देखकर मगज चक्कर खाताहै उनकाभी सरल अर्थ पण्डितजीने बडी योग्यतासे कियाहै। हम पाठकगणसे पण्डितजीके कियेहुए वास्तविक विस्तृतभाष्यको देखनेका अनुरोध करतेहैं। सम्पूर्ण वैद्य और आयुर्वेदप्रेमी जनतासे हमारी प्रार्थना है कि ऐसे ग्रन्थको एकवार अवश्य देखें और सङ्ग्रह करें,

---

धर्मभूषण

अयोध्या, जनवरी १९२८

इसमें रसोंका अपूर्व वर्णन है। प्रायः सभी वैद्यकग्रन्थोंके रसोंका इसमें समावेश कियागया है। इसकी विशाल भूमिका तो भारतीय वैद्यविद्याकी प्रमाणभूतही है। इसमें वैद्यकशास्त्रकी सर्वोत्कृष्टमहत्ता और सर्वतोभावेन उपयोगिता दिखाते हुये कतिपय देशान्तरीय वैद्यों (डाक्टरों) के मतोंकी सप्रमाण समालोचना कीगईहै। ग्रन्थकर्ताके अगाधपाण्डित्यक इस भूमिकासे परिचयहोताहै। ऐसी भूमिकाएँ असाधारणगुणविशिष्ट व्यक्तिही लिख सकतेहैं। भूमिका संस्कृतभाषामें है। इसका प्रायः सभी विद्वानोंको अध्ययन करना चाहिए। यह सर्वथा उपादेय है।

सुधानिधि

प्रयाग कार्तिक १९८४

इस ग्रन्थकी उपयोगिता बहुत चढीबढी है। एक इस ग्रन्थके पासरहनेसेही फिर अनेक रसग्रन्थोंकी उतनी अधिक आवश्यकता नहीं रहजाती। यही नहीं एक औषधिके पाठके लिये अनेक पुस्तकोंके पन्ने उलटनेकी आवश्यकता नहीं।

आयुर्वेदविद्याके विलासी और खोजी विद्वानोंके लियेभी इस ग्रन्थकी उपयोगिता बहुत ऊंचे दर्जेकी है। भूमिकामें आयुर्वेदके इतिहास और शारीर तथा रोगविज्ञानसबन्धी अनेक विवादों और उलझनोंकी गुत्थिया सुलझानेका प्रयत्न कियागया है। पण्डित हरिप्रपन्नजी इस पुस्तकको छपाकर वैद्यसमाजके धन्यवादभाजन हुये हैं।

श्रीमान् विद्वद्वर वैद्यराज पण्डित श्रीहरिप्रपन्नशर्माजीने इस अनुपम ग्रन्थरत्नकी रचना करके वैद्यवर्गका वडा उपकार कियाहै–अनेक आकर ग्रथोंमें–(जिनमें बहुतसे अभीतक अप्रकाशित और अप्राप्य हैं) जो 'रसयोग इधर उधर विखरे पड़ेथे उन्हें एक जगह अकारादि क्रमसे इकट्ठे करके इसग्रन्थकी वडी गागर (मटका)में मानो सागरको भर दियाहै।

ग्रन्थके आकार प्रकार और रगढंगको देखकर सग्रह कर्ताके पाण्डित्य और परिश्रमकी प्रशंसा करनी पड़तीहै, ग्रन्थके आरभमे बहुतविस्तृत १७८ पेजका सस्कृतमें उपोद्धातहै, जो वडी खोज और विद्वत्तासे लिखागयाहै, जिसमें ऐतिहासिक और दार्शनिक रीतिसे वैद्यकविषयका विशद विवेचन किया गयाहै, यह उपोद्धात पढ़ने लायकहै,वड़ेकामकी चीज है संस्कृत उपोद्धातका सार १०४ पृष्ठोंमे अंग्रेजीमे भी दियाहै, जिसमें अंग्रेजी जाननेवाले वैद्य और जिज्ञासुडॉक्टरलोगभी लाभान्वित होसकेंगे। ग्रन्थके इस पहिले भागमें 'अ-'से 'न' तक अनुक्रमके कोई दोहजार योगहैं प्रत्येक योगके मूलश्लोकोंका सरल हिन्दीमें अनुवाद है, साथमे सग्रहकर्ता जहातहा अपने अनुभवभी लिखतेगयेहैं कि कौन योग किस रोगपर अनुभूत है। पुस्तक सवप्रकारसे उपादेय और सवतरहसे सुन्दर है।

काव्यकुटीर नायक नगला
चादपुर (विजनौर) कार्तिकसुद ६। ८७ वि.

पद्मसिंह शर्मा.

केसरी

पुणें, ता. २१।२।२८

मुंबईचे प्रसिद्ध वैद्य पण्डित हरिप्रपन्नजी यांनीं ऋग्वेद, अथर्ववेद, यजुर्वेद, शतपथब्राह्मण, उपनिषदें व आयुर्वेदीय ग्रन्थ याचा चिकित्सक व संशोधक बुद्धीनें अभ्यास करून आयुर्वेदाची उत्पत्ति व अभ्युदय याचें ऐतिहासिक दृष्ट्या विवरण करणारा इंग्रजी व संस्कृत उपोद्धात या ग्रन्थाचे प्रारंभीं जोडला आहे तो विशेष मननीय व विचार करण्यासारखा आहे यात सशय नाहीं. अमूल्य रत्नसङ्ग्रह भारतीय वैद्यांपुढें ठेवला आहे. केवळ छापील ग्रन्थाचा सङ्ग्रह करणें सुद्धा किती कष्टप्रद याची कल्पना सामान्य लोकांसद्धि आहे. पण हस्तलिखित ग्रंथ सम्पादन करणें व त्याचा सग्रह करणें हें किती त्रासाचें व किती

दुर्घट काम आहे याची यथार्थ कल्पना इतिहाससंशोधकास किंवा असें सशोधनाचें काम करणारांसच येईल. एकदां अंगिकारिलेलें काम कितीहि अडचणी आल्या तरी त्यांस न जुमानता तें सिद्धीस न्यावयाचें हा त्याचा स्वभावच असल्यानें त्यानीं शक्य तितके छापील रसग्रन्थ मिळवून आपल्या शिष्याकडून त्या त्या ग्रन्थातील रसयोगाचे पाठ लिहून त्यातील शुद्धाशुद्धतेचा निर्णय केला. त्याचप्रमाणें स्वत सपादिलेल्या परहस्तलिखित ग्रन्थातून असलेले रसयोगाचे पाठ लिहून काढून व त्यातील शुद्धाऽशुद्धता निश्चित करून सर्व पाठ अकारादिक्रमानें या ग्रन्थात ग्रथित केले हें त्यास अत्यन्त भूषणावह आहे.

केवळ रसयोगाचा सग्रह या दृष्टीनें विचार केला तरी हा ग्रन्थ रसयोगावरील एक अत्यन्त मोठा ग्रन्थ झाला आहे. औषधाचे अनेक पाठ पाहिले म्हणजे मन थक्क होऊन जातें. पाठाचा अर्थ विशेष काळजीपूर्वक दिला असून औषधी द्रव्यें, त्याचें प्रमाण, गुण, भावना, अनुपान याविषयींचे व सिद्धौषधांच्या गुणाविषयींचे स्वानुभव ग्रन्थकारानें दिले असून अप्रसिद्ध औषधाचें नाव स्वरूप वगैरेंची माहितीहि दिली आहे.

याशिवाय ज्या ज्या ठिकाणीं काहीं वनस्पतींचीं नावें अप्रचलित अशीं दिसलीं त्याचे पर्यायशब्द टीपेंत देऊन ती वनस्पती कोठें होते हेहि सागितलें आहे. भिन्नभिन्न रसौषधें सिद्ध करताना कोणकोणत्या गोष्टी विशेषत ध्यानात ठेवल्या पाहिजेत व तीं तीं औषधें कोणकोणत्या रीतीनें तयार करावींत या विषयाचे आपले अनुभव शक्य तितके स्पष्टपणानें दिले असल्यानें हा ग्रन्थ अपूर्व झाला आहे. कित्येक औषधाचे पाठाचा अर्थ चागल्या व्युत्पन्न वैद्यासहि लागण्यासारखा नाहीं. अशा पाठाचे अर्थही पण्डितजींनीं मोठ्या चातुर्यानें व अनुभविक ज्ञानाच्या साह्यानें दिले आहेत.

अर्थनिश्चयाच्या कामीं पण्डितजींनीं केलेल्या श्रमाचें कौतुक वैद्य जितकें करतील तितकें थोडेंच होईल.

रसग्रन्थातील अनेक पाठात जी गूढता हेतुपूर्वक ठेवलेली आहे तिचें आविष्करण पण्डित **हरिप्रपन्नजींनीं** अत्यन्त स्पष्टपणें केलें असल्यानें हा ग्रन्थ विशेष उपयुक्त झाला आहे अशा प्रकारचा सर्वांगसुन्दर ग्रन्थ जीवापाड मेहनत करून व आर्थिक हानि सोसून पण्डित हरिप्रपन्नजी वैद्य यानीं प्रसिद्ध करून सर्व वैद्यास व विशेषत महाराष्ट्रीय वैद्यास ऋणी करून ठेविलें आहे व ह्या ऋणाची फेड अशत तरी करावी ह्मणून प्रत्येक महाराष्ट्रीय वैद्यानें ह्या ग्रन्थाचा सग्रह जरूर करावा.

नवाकाळ मुंबई, ता. १२।१२।२७

या ग्रन्थात पं. हरिप्रपन्नजी यानीं निरनिराळ्या रोगावरील औषधांची माहिती दिली असून मूळ सस्कृतश्लोक, त्याचें हिन्दी भाषान्तर असा माडणीचा क्रम आहे. सस्कृतात वैद्यकीवर थोडेथोडके ग्रन्थ नाहींत. त्या सर्वांतून अशी औषधाची माहिती गोळा करणें हें काम किती परिश्रमाचें आहे याचें ज्ञान जे त्यांत पडले असतील, त्यानाच होणें शक्य आहे, इतराना होणें शक्य नाहीं. क्रमानें अनुभवाच्या जोरावर विकास पावत गेलेलें शास्त्र असताहि पाश्चात्यवैद्यकशास्त्रांतील प्रयोगादिकाच्या अवाढव्य विस्तारामुळें डोळे दिपलेले लोक आजवर त्यास नावें ठेवीत आले. अलीकडे कित्येक वर्षे ही दृष्टि पालटली आहे व आयुर्वेदातहि ग्राह्यांश बराच आहे, असें पुष्कळ पण्डित म्हणूं लागले आहेत. पण्डितजींनीं इंग्रेजींत आणि सस्कृतभाषेंत आयुर्वेदाचे प्राचीनत्व आणि विकसन याच्या इतिहासासम्बन्धीं एक दाडगी प्रस्तावना लिहिली आहे. शरीरातील निरनिराळ्या अगोपागाची सस्कृत परिभाषा इंग्रेजी पर्यायासह जोडली असल्यानें तुलनात्मक अभ्यास करणाराची चागलीच सोय झाली आहे या प्रस्तावनेचें त्यानीं स्वतन्त्र पुस्तक काढल्यास ज्याना वैद्यकीच्या इतिहासाचें ज्ञान करून घेण्याची आवश्यकता वाटेल, त्याची जिज्ञासा तृप्त होईल. पुस्तक शास्त्रीय असून लेखकाला त्यासाठीं प्रचण्ड परिश्रम करावे लागले आहेत. पुस्तक जसें महत्त्वाचें तसें तें चिरकाल टिकावयाचें असल्यानें छपाई बाधणी वगैरे कामें अत्यन्त सुबक रीतीनें केलेलीं आहेत. असें पुस्तक तयार केल्याबद्दल आयुर्वेदाचा प्रत्येक अभिमानी पं. हरिप्रपन्नजींना धन्यवादच देईल.

संजीवनीप्रकाश. कोचरा (रत्नागिरी) ई० १९२८

आयुर्वेदाचें अनादित्व उपोद्घातरूपानें इंग्रजी व संस्कृत भाषेंत साधार दिलें आहे. रसयोगप्रकरणीं, मूल संस्कृत श्लोक व त्या खालीं त्याचें सुबोध भाषेंत हिंदींत भाषान्तर दिलें आहे. त्यात विशेष हाच कीं, एकाच नावाच्या पाठाचे अनेक ग्रन्थातील निरनिराळे पाठ, विल्हेवारींत एकत्र दिले असून, त्या त्या पाठाखालीं त्या त्या ग्रंथाचा नामनिर्देश केल्यामुळें, वैद्यवर्गास तें अत्यन्त उपयुक्त झालें आहे. म्हणून रसक्रिया करितेवेळीं, अनेक ग्रन्थ धुडाळण्याची जरूरी नाहीं. पण्डितजींनीं अनेक आयुर्वेदीय ग्रन्थांचें मन्थन करून आयुर्वेदाचें प्राचीन विशालत्व लोकांपुढें माडल्यानें आयुर्वेदाचें उच्च स्वरूप लोकाच्या नजरेस येण्यास, हा ग्रन्थ उत्तम साधनभूत झाला आहे यात शका नाहीं.……एकदरींत हें पुस्तक अनन्त परिश्रमानें तयार करून विद्वान् पण्डितजींनीं आयुर्वेदावर अनन्त उपकार केले आहेत यात शका नाहीं.

ગુજરાતી. મુબઈ, તા. ૩૦-૧૦-૨૭.

આ એક ગ્રથ પાસે રાખવાથી રસના પ્રયોગો જાણવામાટે બીજા કોઈપણ ગ્રથની જરૂર પડે તેમ નથી. કેમકે આ ગ્રન્થમાં જે પ્રયોગો આપવામાં આવેલા છે તેથી નવો પ્રયોગ ભાગ્યેજ કોઈ હસ્તલિખિત પુસ્તકમાંથી પણ મળી શકે એકદર રસચિકિત્સા કરનારા તથા તેના જીજ્ઞાસુઓને આ ગ્રથ અવશ્ય સગ્રહમાં રાખવા યોગ્ય છે. ગ્રથની છપાઈ, કાગળો, બાંધણી વગેરે સુન્દર છે ગ્રથ લખવામાં લેવાએલા પરિશ્રમ, ગ્રથનો આકાર અને ખર્ચના પ્રમાણમા કીમત વાજવીજ છે. આ ગ્રન્થના આરભમા આસરે ૩૦૦ સો પૃષ્ઠનો ૧ મોટો ઉપોદ્ધાત અંગ્રેજી અને સસ્કૃત ભાષામાં લખેલો છે આ ઉપોદ્ઘાતમાં આયુર્વેદના પ્રાચીન ઇતિહાસ અને શાસ્ત્રીયતા ઉપર ખહુ સારૂં વિવેચન લખાયેલ છે. વૈદિક શારીરના પ્રકરણમા વેદ અને આયુર્વેદમાં જે શારીરશાસ્ત્રઉપર સૂક્ષ્મજ્ઞાન વર્ણવેલું છે તેનું સારૂં ઉદ્ઘાટન કરેલ છે વેદ અને ચરક તથા સુશ્રુતમાંના કેટલાક શરીર સબન્ધી સન્દિગ્ધ શબ્દોનો નિર્ણય કરવામાટે પડિતજીએ ભારે પરિશ્રમ કરેલો છે એ રીતે આ ઉપોદ્ઘાત આયુર્વેદનું પ્રાચીનત્વ અને શાસ્ત્રીયત્વ જાણવામાટે તથા આયુર્વેદિક શારીરના સન્દિગ્ધ શબ્દોનો નિર્ણય જાણવા માટે તેવા અભ્યાસીઓને અવશ્ય વાંચવા લાયક છે

આયુર્વેદવિજ્ઞાન. મુમ્બઈ, આસો, ૧૯૮૩.

રસયોગસાગરમાં ૫૨ છપાએલા ગ્રન્થોમાંથી અને ૫૮ હસ્તલિખિત ગ્રન્થોમાંથી રસયોગોનો સંગ્રહ કરવામાં આવ્યો છે વૈદકના છપાયેલા ગ્રંથોપણ મેળવવા સહેલા નથી એ જેણે વૈદકના ગ્રન્થો એકઠા કરવામાટે પ્રયાસ કર્યો છે તેને ખબર છે કારણ કે છપાએલા બધા ગ્રંથો એક ઠેકાણે મળવા મુશ્કેલ છે છતા પ્રયત્ન કરતાં છપાયેલા મેળવી શકાય પણ હસ્તલિખિત ગ્રથો મેળવવા એ કાર્યતો અતિ કઠિન છે કેટલાક ગ્રથો આ તરફ એટલે અપ્રસિદ્ધ છે કે રસયોગસાગરમા ઘણા યોગો પહેલીવાર જોવા મળે છે.

સૌથી અગત્યનુ પ્રકરણ **આર્ષશારીરતત્વ** છે. ખૂબ મથન કરી વેદમાથી જેટલુ મળી આવ્યું તેટલુ શારીરતત્વ ખેંચી કાઢ્યુ છે.

રસયોગસાગર જેવો પરમ ઉપયોગી ગ્રથ સગ્રહવાની વાચનારાઓને ભલામાણ કરીને વિરમીએ છીએ.

सम्पादक—**दुर्गाशङ्कर केवलराम शास्त्री.**

ગ્રંથ વાંચી સતોષ અને આનદ થયો છે. . જે જે સગ્રહગ્રન્થો બહાર પડ્યા છે તે સર્વમાં આપનો **'રસયોગસાગર'** અગ્રસ્થાને મૂકવા યોગ્ય છે. ... આ ગ્રથનો ઉપોદ્ઘાત પણ એક વિદ્વાન્‌ને શોભા આપે તેવી રીતે લખાયો છે .. સસ્કૃતટીકા લખીછે તે ઉત્તમ છે અને મૂળ શ્લોકના આશય કરતા વિશેષમા આપે જે અનુભવની ક્રિયાઓ બતાવી તે રસશાસ્ત્રના સર્વ અભ્યાસીઓને ઘણી ઉપયોગી થઈ પડે તેવી છે ...આપનો આ ગ્રથ સર્વમાન્ય અને અગ્રગણ્ય થઈ પડશે

મુબઈ, તા. ૧-૧૨-૧૯૨૯. **ત્ર્યંબકલાલ ત્રિભુવનદાસ મુનિ.**

શ્રીમાન્‌પડિત હરિપ્રપન્નજીએ અનેકાનેક પ્રાચીન અર્વાચીન છાપેલ તથા હસ્તલિખિત ગ્રથોનો મહાન્ પરિશ્રમ વેઠી સગ્રહકરી તેમાંથી બધાએ રસાયનપ્રયોગો ગ્રહણ કરી **"રસયોગસાગર"** નામક ગ્રથ બનાવી સમસ્ત વૈદ્યસમાજ અને આયુર્વેદઊપર મહત્ ઉપકાર કર્યો છે એ સહસા જણાવ્યાવિના ચાલતું નથી. કારણ કે એક ગાડુ ભરી પુસ્તકો રાખવા બરોબર આ એક ગ્રથ છે

પડિતજી આયુર્વેદના તેમજ ઇતરવ્યાકરણાદિક શાસ્ત્રોના સારા વિદ્વાન્ હોવાથી કેટલીક હસ્તલિખિત પ્રતોના ગુચવાડા ભરેલા પાઠો પણ સરલ થઈ ગએલા છે આ ગ્રથ સાથેનો ઉપોદ્ઘાત એ પડિતજીની વિદ્વત્તાનો પ્રત્યક્ષ પુરાવો છે તેમજ આયુર્વેદ અને વેદોક્ત પદ્ધતીથી કરેલો કલોમનિર્ણય પણ માનનીય છે આવા ઉપકારી ગ્રથનો બહોળો પ્રચાર થાય અને પડિતજીથી વારવાર આવા અનેક ગ્રથો પ્રકટ થાય એવી પ્રભુપ્રાર્થના છે —

તા૦ ૧૩-૧૧-૩૦.

લોકસેવક,
વૈદ્ય જયશંકર હરજીવન ભટ્ટ.
(શ્રીનાથજીવાળા રાજવૈદ્ય)

Bombay 13th. July 1928.

It was with great pleasure that I went through your valuable exhaustive book Rasayogasāgara Your collecting and systematic grouping of the various formulae of Āyurvedic prescriptions will be of great help not only to professional Vaidyas, but also to laymen I found your introduction especially instructive and I am sure it will be of great help to all those, who wish to study and understand our ancient medical system.

D. D. SATHAYE.
Ophthalmic Surgeon.

Calcutta, 5 9 1930

The introduction in which you have discussed the progress of medicine and surgery in ancient India will prove highly interesting The commentary in Hindi, "Bhāsā", will prove highly useful to those who are not well acquainted with Sanskrit.

P C ROY.
University College of science and Technology

Bombay, 30-10-1929

Rasayogasāgara (is) the Āyurvedic book of Chemical Pharmacy........This book contains in detail the different Āyurvedic chemical preparations with mercury as their basis This work is full of such preparations collected from different Āyurvedic works .with true authentic names of the drugs Introduction contains a synopsis in English of the origin of the Āyurveda and its spread in different countries Going deep into the matter of the origin of Āyurveda, you have established its superiority . for which you deserve best thanks of the medical public In short you have been able to prove that the origin of Āyurveda dates so far back as that of the Vedas, and that if there is any unrivalled science in this world to heal diseases it is only Āyurveda the oldest and the best . . . different healing sciences came into existence as off-shoots of Āyurveda . . you have . proved the thoroughness of the Āyurvedic science by giving equivalent Āyurvedic terms of different arteries, veins, organs, tissues etc . known to the Āyurvedic practitioners from olden times . its introduction shows your deep knowledge of the science The book is really very useful to Vaidyas, Āyurvedic students, Doctors and Hakims

POPAT PRABHURAM L M & S, PRANACHARYA.
Principal, Prabhuram Ayurvedic College.

Nepal, 24 5-1928.

. Rasayogasāgara Vol I the valuable and welcoming gift . .. This book is one of the best and well suggested and defined books, that I have ever met with and Vaidyas might have met with .. .

A. M VAJRACHARYA
Librarian, Trichandra Collage, Nepal.

Modern Review, March 1928

This is a laudable attempt at the compilation of a Sanskrit-Hindi dictionary of Āyurvedic Rasa medicine. The various medicines are arranged in alphabetic order and original Sanskrit texts, with reference, tika where deemed necessary, and translation in modern Hindi given in each case.........from what we can see it is likely to be a valuable addition to the literature on this subject.........A table of Sanskrit anatomical terms with their English equivalents is given.

K. N. C.

Breslau, 4-1-1930.

Your work will do much in propagating the understanding of Āyurvedic medicine, especially through the table comparing Sanskrit anatomical words with their English equivalents. I congratulate you on what you have done already. And I am looking forward to further issues of your appreciable publication.

Prof. D. CHUNIT
Director of Staats-und Universitats Bibliothek.

Gottingen, 2-5-1930.

I have studied the statement of your Introduction with the most vivid interest, being fully convinced, that also here in Germany the high value of the Indian medical systems and the necessity to study them is more and more recognised For the Sanskrit scholar in my opinion the occupation with the Āyurveda is indispensable in consideration of the better understanding of the Veda, especially the Atharvaveda I wish you the best progress of your meritorious task and should be grateful for informing me about the publication of further parts of your work in order to buy them for the University Library of Gottingen.

Prof. FIK
Director of Gottingen Universitats-Bibliothek.

---

27 French Road Chawpaty Sea-face
Bombay 23-10-1930

I have great pleasure in going over the two Books "Rasayogasagara" and "Klomyathatathya" written by Vaidyaraj Hariprapannaji His control over Sanskrit is very good and the former book is like a treasury of Indian Pharma-copœa In these days of Swadeshism, this should supply a foundation for the Industridal Developement of Indian drugs Panditji also seems to be a thinker of pure reason as one could see from his "Klomyathatathya" His theory is very interesting but his arguments are still more interesting and sound I should congratulate Panditji on production of such useful & instructive Volumes

J. DURLABH DHRUV. M. S. F. R. C. S. D. L. O.
Surgeon to Sir J. J. Hospital.

Bombay 15-10-1930.

I had occasion to read the reply of Pandit Hariprapanji to Vaidyaraj Kawade Shastri re the actual meaning of the word क्लोम. I have come to the conclusion that Panditjee is correcting in weating the क्लोम as Gall-blader.

D. D. SATHAYE.
Ophthalmic Surgeon.

क्लोमयाथातथ्ये अभिप्रायाः ।

पण्डितहरिप्रपन्नजीप्रापित. "क्लोमयाथातथ्यं" नाम प्रबन्धो मया समग्रमवलोकित. । पण्डितमहाशयै· शतपथब्राह्मणवाजसनेयसहिताऽथर्वसहितादीनामतीवपरिश्रमपूर्वकमभ्यास कृत्वा तत्रस्थानि यानि यानि श्रुतिवचनानि अत्र उद्धृतानि तै सर्वैरायुर्वेदीयशारीरसशयास्पदस्थानाना सर्वसशयच्छेदि विवेचनं सञ्जातमिति मन्ये । आयुर्वेदशास्त्रं तदभ्यासकाश्च प्रवन्धलेखकैरुपकृता इति मे मति सर्वभिषग्वरैरयं निवन्ध सूक्ष्मतयाऽभ्यस्य शारीरज्ञानवृद्धिरवश्यं कार्या, येन निवन्धकाराणा परिश्रम सफलो भवेत् । पण्डितमहाशयाना कार्यमभिनन्दनीयम् ।

मुम्बापुरी आश्विन कृष्ण चतुर्दशी स. १९८७ — ऐनापुरे उपाह्व वासुदेवशास्त्री.

इह खलु क्लोमयाथातथ्यमित्याख्यग्रन्थसङ्ग्रहे यथायुर्वेदतन्त्रार्णवमुन्मथ्यालभ्यरत्नं प्रविविच्योद्घाटितमेतद्विनिर्णेयं श्रीहरिप्रपन्नशास्त्रिमहोदयेन भिषक्चक्रचूडामणिना तद्विदितमेवास्ति वैद्यवर्यैरतोऽस्माभिरपि लोकोत्तरोपकारकश्रमकृतेऽस्मै धन्यवादा समर्प्यन्ते ।

हिन्दुविश्वविद्यालय. काशी भाद्रपदशुक्ल अष्टमी सं १९८७ — धर्मदासकविराज, अध्यक्ष आयुर्वेद विद्यालय.

इह खलु 'क्लोमयाथातथ्य'पदाभिधग्रन्थसङ्ग्रहे प्राचेतसाऽभ्यन्तराऽवयवप्रणिगदने यथा प्रवचनशक्तिस्तन्त्राऽन्वेषणचातुर्यचमत्कृति प्रतिभापरिणतिर्विद्वज्जनमनोऽनुरञ्जननीतिर्लेखनरीतिरापामरावगमनप्रीतिर्निदर्शिता । नैतत्सर्वं केनाऽपि तिरोहित वरीवर्ति इति सुविदितमेवास्त्यवलोकितग्रन्थमनीषिभिरतोऽस्मै सूरिसमर्चितचरणसरोरुहरजसे चिकित्सकाय न धन्यवादप्रदानमन्तरा मनोऽवरुध्यत इति दिक् ।

अगस्त्यकुण्ड. काशी. भाद्रपद शुक्ल अष्टमी स. १९८७ — भिषगाचार्य श्रीसत्यनारायणशास्त्री

निर्दिष्टाभिनवनिवन्धाऽभिधानालोचनाव्यवहितोत्तरक्षण एवोद्भूतकुतूहलेन मयाऽयमामूलोपान्तमालोचित एव सकौतुकम् । प्रणेत्राऽत्र नैकश. श्रुतिस्मृत्यगदङ्कारप्राच्यनिवन्धालोडनेन विपश्चिन्मनोविनोदावहं प्रमाणजातप्रचुरं प्रास्थापि यत्क्लोम्नो याथात्म्यं तेन सुगृहीतनामधेयाना वैद्यपण्डित हरिप्रपन्नजी महाशयाना निरुपमवैदुष्येण लेखनपाटवेन च प्रमोदमुदिरस्वान्तः मन् प्रयुज्य तेभ्यो धन्यवादान् अपूर्वोऽयं निवन्ध सर्वैर्विद्वद्भिर्विशेषतश्च भिषग्वरैरवश्यं सङ्ग्राह्य. सादरं परिचेयश्चेत्यभिप्रैति ।

मुम्बापुर आश्विनकृष्ण एकादशी स. १९८७ — पणशीकरोपाधिधारी वासुदेवशास्त्री.

अयि महाशया. "श्रीमतां क्लोमयाथातथ्यम्" साद्यन्तं याथातथ्येनाऽवलोक्य प्रफुल्लितं चित्तं मदीयम् । करालकाललालितेन विप्लवेनाऽऽप्लुत क्लोमतत्त्वं पुनरपि लौकिकरीत्या वैदिकपद्धत्या च सप्रमाण भवता प्रमाणीकृतमित्यत्र नास्ति सशयाऽवकाशलेशोऽपि । ग्रन्थेऽस्मिन् भाषामयेऽपि भावगाम्भीर्यं श्रमशीलता कार्यपटुता लिपिकुशलता चात्मनश्चेन्द्रियाणा च गदगदकर्यैवाऽतो नव्यशारीरतत्त्वजिज्ञासूनामवश्यमिद सहायकरं सम्पत्स्यत इत्याशासे ।

पटना ता० १९।११।३० — पं. हजारीलालसुकुलः । रसायनाऽऽयुर्वैदिकपाठशालाऽध्यापक. । आयुर्वेदाचार्य· ।

पृष्ठ १ से ५२ तक प्रिन्टर–रामचंद्र येसू शेडगे, निर्णयसागर प्रेस, २६।२८ कोलभाट लेन, मुंबई.